वीरश्रेष्ठ हनुमन्तसिंह पठानसेनापति महताबखाँको ५० हजार रुपया लेकर भी प्रतिज्ञा भंग करते हुए देखकर अत्यन्त क्रोधित हुए. और वह शीघ्र ही खंडेलाकी रक्षाके लिये उपयुक्त युद्धकी तैयारी करने लगे। परन्तु विपक्षियोंके नेता लक्ष्मणसिंहने अपने चिरसंचित अगणित धनकी सहायतासे इस समय अपने पक्षको धीरे २ अनेक उपायोंसे प्रबल करलिया था। उसने शीघ्र ही उस धनवृष्टिके द्वारा रेवासो और अन्यान्य नगरों पर अपना अधिकार करलिया। विजयी लक्ष्मणसिंहने शीघ्र ही प्रबल सेनाके साथ खण्डेला नगरमें जाकर नगरपर अधिकार करलिया; परन्तु वीरश्रेष्ठ हनुमन्त खण्डेलाके किलेमें भलीभाँतिसे रहकर दूरवर्ती कोटके किलेमें बहुत दिनोंके लिये बहुतसे खाद्य द्रव्योंको गुप्तभावसे अन्य मनुष्योंद्वारा संचित कराने लगे। शेषमें तीन सप्ताहतक उस प्रबल विपक्षियोंकी सेनाके हाथसे खण्डेलाके किलेकी रक्षा करके जब उन्होंने इनके मुखसे सुना कि कोटका किला सब प्रकारसे धन सम्पत्तिसे पूर्ण करलिया गया है, तब वह सेनासहित नंगी तलवारें हाथमें ले विपक्षियोंके द्वारा विध्वंस होनेवाले खण्डेलाके किलेको छोड़ कर शत्रुओंका संहार करने लगे. और शत्रुओंके डेरोंको भेदन कर सेनाके साथ कोटके किलेमें चले गये। सम्पूर्ण सामन्तोंने अभय और प्रतापसिंहके लिये अपने प्राणतक देनेका निश्चय कर लिया था, और इसीसे वह लोग पहिलेसे ही इस कोटके किलेमें इकट्ठे होगये थे।

सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिंह और शेखावाटीके प्रभु दोनों अधीश्वर अभयसिंह और प्रतापसिंहके नीचे पदपर स्थित सामन्त मात्र थे। इनके नीचे पदपर स्थित होकर उपरि-उन प्रभुके अधिकारको लोप करते हुए देखकर अन्यान्य सामन्त महाक्रोधित होगए, और बहुतसे अभय और प्रतापसिंहकी सहायता करने लगे। परन्तु चतुर लक्ष्मणसिंहने उनमेंसे अनेकोंका बहुतसा धन अपने हस्तगत करलिया। जिन्होंने धन नहीं दिया लक्ष्मणसिंहने उनके अधिकारी देशोंमें पठानोंकी सेनाको भेजा, इससे उन लोगोंने अन्तमें अपना सर्व-नाश जानकर निरपेक्षतासे रहना स्वीकार किया। यद्यपि किसी २ सामन्तने आमेर-राजके निकट यह प्रार्थना की कि सीकरपतिने अन्यायाचरणसे खण्डेलापर आक्रमण किया है, परन्तु आमेरराजने उनकी प्रार्थनाको नहीं सुना. शेखावाटीके दोनों अधी-श्वरोंके दोषसे ही मोमगढ़का अवरोध व्यर्थ होगया है यह जानकर आमेरके महाराज उनके ऊपर अत्यन्त क्रोधित हुए। इस कारण शेखावाटीके दोनों अधीश्वरोंका पतन आमेरराजकी इच्छासे ही हुआ।

वीरश्रेष्ठ हनुमन्तसिंह कोटके किलेमें आकर शीघ्रतासे किलेके बाहरकी दीवारोंको बनाकर कई सौ सेनाके साथ प्रबल बलशाली लक्ष्मणसिंहकी बाट देखने लगे। लक्ष्मण-सिंहने पठानोंकी सेनाकी सहायतासे खंडेलापर अधिकार करनेके पीछे कोटको भी आ घेरा; हनुमन्तसिंहने किलेमें न जाकर उस बाहिरी किलेमें रहकर क्रमानुसार तीन महीनेतक शत्रुओंकी आशाको व्यर्थ किया। अंतमें तीन महीनेके पीछे शत्रुओंने अतुल-विक्रमके साथ उस बाहिरी किलेपर आक्रमण किया। सभीने हनुमन्तको मूलकिलेमें

॥ श्रीः ॥

राजस्थान इतिहास।

दूसरा भाग.

जिसमें

जोधपुर, बीकानेर, जैसलमेर, जयपुर, शेखावाटी, कोटा, बूँदी का
और ग्रंथकारके भ्रमणका वृत्तान्त है.

जिसको

अनेक ग्रंथोंके निर्माता तथा टीकाकार हिन्दीहितैषी जगद्विख्यात
मुरादाबादनिवासी स्वर्गीय पण्डित बलदेवप्रसाद मिश्रने
कर्नल जेम्स टॉड् प्रणीत अंग्रेजी ग्रन्थ राजपूत जातिके
इतिहाससे हिन्दीभाषामे अनुवाद किया,

और

विद्यावारिधि पं० ज्वालाप्रसादजी मिश्रने शुद्ध किया.

तथा

राय मुन्शी देवीप्रसादजी जोधपुरनिवासीने भी टिप्पणी देकर शुद्ध किया,

और

लोकोपकारार्थ

खेमराज श्रीकृष्णदासने
बम्बई
निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-मुद्रणयन्त्रालयमें
मुद्रितकर प्रसिद्ध किया।

संवत् १९६६, शके १८३१.



बून्दी।

(१) सुरजन, १५३३	(५) चतुरसाल १६३१,	(१०) अजीतसिंह, १७७०,
(२) भोज, १५८५	(६) भाऊसिंह, १६५८,	(११) बिशनसिंह, १७७३,
(३) रतन, १६०७,	(७) अनुरुधसिंह १६८२,	(१२) रामसिंह, १८२१
(४) गोपीनाथ, १६१४	(८) बुद्धसिंह, (ना० नहीं मालुम)	(१३) महाराव राजा रघुबीरसिंह, १८८९,
[illegible]	(९) उमेदसिंह १७४९ मरे १८०४,	

॥ श्रीः ॥

श्रीमन्महाराजाधिराज श्री १०८ लेफ्टिनेण्ट कर्नल महाराजा
राजराजेश्वर नरेन्द्रशिरोमणि बीकानेरनरेश श्री महाराजा-
धिराज श्री सर गंगासिंहजी बहादुर जी. सी. आई.
ई.; के. सी. एस. आई. एडीकांग टु हिज़ रायल हाइ-
नेस श्रीमान् प्रिन्स आफ़ वेल्स बहादुर, की सेवामें.

समर्पण ।

मैं यह प्रकाशित करना अत्यंत आवश्यक समझता हूँ कि, मै श्रीमान्की सनातन
प्रजा हूँ । बीकानेर राज्यान्तर्गत चूरू-शहर मेरे पूर्वजोंका वासस्थान और मेरीजन्मभूमि है ।

अन्नजलवशात् मनुष्य कहीं और किसी भी अवस्थामें क्यों न रहे, किन्तु जननी
जन्मभूमि का स्वाभाविक स्नेह और राजा प्रजा का परस्पर संबंध ऐसा दृढ़ और अकाट्य
होता है कि उनसे कोई आजन्म उऋण एवं विमुख नही होसकता । राजा प्रजा के
सर्वस्वका स्वामी और संरक्षक है और प्रजाका सर्वस्व स्वामीकी सेवामे सदा ही स्वयं
समर्पित है ।

तथापि यह ग्रंथरत्न तो खासकर श्रीमान्के ही पूर्वपुरुषोंका एक जंगम
कीर्तिस्तंभ स्वरूप है । इसको देखते ही सर्व साधारणके हृदयमें उन-भूत घटनाओंका
मानचित्र अंकित होना संभव है जिनके हेतु श्रीमान्के पूर्व महानुभाव महाराजाओंका यश
इस भारतभूमिपर अनंत काल पर्यंत अटल रहेगा तथा भावी राजसतान अपने उन पूर्व पुरु-
षोंके धीरता, वीरता, नीतिनैपुण्य आदि राज्योचित गुणोंका अध्ययन कर उनके अनुकरण
करनेकी चेष्टाएं करेंगी । अस्तु इसका भावी फल क्या होगा सो स्पष्ट करनेकी आवश्य-
कता नही है क्योंकि श्रीमान् स्वयं सर्वज्ञ, गुणग्राही, दूरदर्शी और नीतिनिपुण नरेश हैं ।

अतएव मैं यह "राजस्थानइतिहास–द्वितीय भाग" श्रीमान्की सेवामें समर्पण करता
हूँ और आशा करता हूँ कि श्रीमान् मुझे निज प्रजा जान मेरी इस तुच्छ भेंटको सप्रेम
स्वीकार करनेका अनुग्रह कर मेरे उत्साहको इस प्रकारसे उत्तेजित करते रहेंगे कि मैं इसी
प्रकार सदैव नितनव अमूल्य उपहार श्रीमान्की सेवामें समर्पण करनेके लिये सन्नद्ध रहूँ ।

बंबई
ता. ३-१२-०९.

विनीत-
खेमराज श्रीकृष्णदास,



बीकानेर।

THE

ANNALS AND ANTIQUITIES

OF

RAJASTHAN

OR THE

Central and Western Rajpoot States

OF

INDIA



VOL II.

PANDIT BALDAO PRASAD MISHR

OF

MORADABAD

PRINTED BY

KHEMRAJ SHRI KRISHNA DASS

SHRI VENKATESHWAR PRESS

BOMBAY.

1909

॥ श्रीः ॥

भूमिका ।

यद्यपि इस ग्रन्थके प्रथम भागमे भूमिकारूप एक वृहत्‌लेख प्रकाश कर चुके हैं, परन्तु इस ग्रन्थके गौरवसे इस दूसरे भागकी भूमिकामे भी कुछ कहना है, भारतके प्राचीन इतिहासकी खोज अभीतक पूरी नही हुई है, इतिहासका अभाव इतिहासका अभाव चारोंओरसे यह ध्वनि गूंज रही है, पर ईश्वर की कृपासे इस अभावकी पूर्ती शीघ्र ही होनेवाली है, इतिहासका सूर्य शनै २ ऊपरको उठ रहा है, दूसरे देशवासियोंके लिखेहुए पक्षपात पूर्ण इतिहासोसे हमारे देश तथा धर्म कर्मका गौरव कब रहसकता है, इसीसे विदेशीजनोंके निर्मित इतिहास पढ़कर ही हमारे नवयुवक अपने पुरुषाओंको तुच्छ समझतेहुए धर्म कर्मसे हाथ धो बेठते हैं, समयकी कैसी विचित्र महिमा है कि जिन भारतवासी पुरुषाओसे हम अपना गौरव समझते थे, आज उन्हीके नाम और चरित्रसे हम खिजते है, उनको तुच्छ दृष्टिसे देखते हैं, उनके आचार विचार पर श्रद्धा नही करते बल्कि स्वच्छन्द वृत्ति होनाही इतिहासका मर्म प्राप्त होना मानते हैं, पूर्व इतिहासोंमें यदि किसी व्यक्तिके बलविक्रमका विशेष परिचय पायाजाय तो झट उसे कल्पित मानते हैं, पर आज बलके विषयमे तो प्रोफेसर राममूर्तिने बलकी असम्भवताको सम्भव कर दिखाया है कि आप चलतीहुई बडी मोटरकार को हाथसे पकड़कर थाम लेते हैं, छातीपर हाथी पैर रखकर चलाजाता है, पर इस महापुरुषको कुछ पीडा नही होती, इसी प्रकार यदि दूसरे विचारोंमे उन्नति कीजाय तो क्या पुरानी सामग्री हमको असम्भव प्रतीत होगी, कभी नहीं, इस राजस्थानके इतिहासके साथ रजवाड़ेके सिवाय भारतके अन्य प्रान्तोका भी तथ्य वर्णन आजाता है, इन्द्रप्रस्थकी पुरानी बातोका बहुत कुछ पता लगसकता है जोधपुर बीकानेर जेसलमेर जैपुर कोटा बूदी इन कईएक पुरातन राज्योका इसमे बडी खोजके साथ आदिसे वर्णन किया गया है, मैं समझता हू कि मेवाड़ और मारवाड राज्यका तो आदर्श मानो सज्जनोंके सन्मुख तथ्यरूपसे उपस्थित होगया है, इस दूसरे भागमे इन राज्योंके चरित्र किस प्रकारसे सघटित हैं, किस २ भाँतिकी विपत्तियोका सामना इस देशके नरपतियोंको आया है, अथवा कभी २ नरपतिकी अयोग्यतासे प्रजाको कितना कष्ट उठाना पडा है, राजपूत महिलाओने किस प्रकार अपने धर्मोंकी रक्षा की है, यवनोने किस प्रकार छल प्रपन्चोंसे भारतपर आक्रमण किया है इस ग्रन्थके पाठमात्रसे इन सब बातोंका भेद खुल सकता है, इतिहास ही हमको इस बातकी साक्षी देसकता है

कि आदिपुरुष किस रहन सहनके थे, उनका कर्तव्य क्या था किस प्रकारके आचार विचार थे, किन कार्योंके करनेसे वह अपने देशको उन्नतिके शिखरपर पहुंचा सके थे अहा ! उन दिनोंमें यह देश कैसा फूलकी समान खिल रहा था, इसकी सुगंधिसे यही देश नहीं किन्तु बाहरी देश भी सुगंधित हो रहे थे, पर वह बात अब कहां है अब तो अधर्मने ऐसा दबाया है कि समस्त ही कर्तव्य परायण लोग अपना कर्तव्य त्यागन किये बैठे हैं, आलस्य, अकृतज्ञता, अकर्मण्यता, मद्य, आखेट, द्यूत अहिफेन, ईर्षा, द्वेषका एक प्रकारसे चक्रसा वर्त रहा है, फिर किस प्रकारसे देशमें जार्यति हो हमारी समझमें जो देश जिन बातोसे उन्नत था विना उन बातोंके ग्रहण किये ,कभी जाग्रति न होगी इनमे मूलकारण हमारा सनातनधर्मसे ढीलापन है, "सनातनधर्मकी उपेक्षा ही हमारी अधोगतिका कारण हुई है, इसीकी उपेक्षासे भारत अभक्ष्य भक्षणमे प्रवृत्त हुआ है, इसीकी उपेक्षासे अपनी रहन सहन बदल बैठा है, इसीकी उपेक्षासे बड़े बूढोंको भूल बैठा है, इसीकी उपेक्षासे महापुरुषोंके वचनोंमे अविश्वास कर बैठा है, इसीकी उपेक्षासे वर्णाश्रमकी मर्यादा बिगाड बैठा है, इसीकी उपेक्षासे स्वराज्यसे तिरस्कृत होगया है, इसीकी उपेक्षासे ईश्वरज्ञानसे रहित होगया है, यही सब प्रकारकी उन्नतिका मूल है, इसीकी उपेक्षासे द्विजोमे विधवा विवाह, इसीकी उपेक्षासे यवनादिका हिन्दू बनना, तथा इसीकी उपेक्षासे संकरताका बीज शनैः अङ्कुरित होकर वृक्ष आकार धारण करैगा,, सज्जनो ! सावधान इतिहासका आदर करो, तुम्हारे इतिहास पुराणोंमें ऐतिहासिक रत्न बहुतसे भरे पड़े है, परिश्रम कर उनको निकालो देशमे उनका चमत्कार दिखाओ, हम इकले कहातक इस कार्यमे सफल मनोरथ हो सकते हैं, सबकोही थोडा २ परिश्रम करना चाहिये, इस भारत और अष्टादशपुराण रूप रत्नाकरमेंसे मनोनीत इतिहास रूपी रत्नोकी माला गूँथो अपने देशका मुख उज्ज्वल करो, दूसरे देशनिवासी विद्वान् इन्ही ग्रन्थोसे रत्न निकाल २ कर यहांके इतिहास लिखकर अपनी समाजमे गौरव लाभ कर रहे हैं, पर आप किस नींदमे सो रहे हैं इतिहासकी खोजकर भारतवर्षका एक बृहत् अभाव दूर करना भारतवासीमात्रका काम है समय जा रहा है ऐसा न हो किसी प्रकारसे आप लोग पीछे रहजाय.

इस समय जिस इतिहासका गौरव राजस्थानमे विशेषरूपसे पायाजाता है और जिसमे पक्षपात बहुत ही न्यून है, हमने उसी जेम्स टाड्महोदय लिखित राजस्थान ग्रन्थका अनुवाद टिप्पणी सहित करके हिन्दीप्रेमियोको भेट करना उचित जाना और कुछ दिन हुए कि उसका पहला भाग मेवाडका इतिहास हम पाठकोंकी भेट कर चुके हैं, जिन २ महानुभावोने वह पहला भाग देखा होगा वह उसके गौरवकी लेख प्रणालीसे समझ गये होगे कि इतिहाससे देशको कितना लाभ है, और इतिहास हमको क्या शिक्षा देता है, तथा हमारे पूर्व पुरुषा किस प्रकारकी रहन सहनवाले थे। अब यह दूसरे भागका भी विशद शुद्ध हिन्दी अनुवाद पाठकोकी भेट है, पहले बृहत् भागमें दो खण्ड थे, एकमें पुरातन नरपतियोका आरम्भिक वृत्तान्त और दूसरे खण्डमे बाप्पारावलसे आरम्भ करके

सिसोदिया वंशका समस्त वर्णन किया गया है, इस दूसरे भागमे, मारवाड़ जोधपुर बीकानेर जेसलमेर जैपुर शेखावाटी कोटा बूंदी ओर टाड्साहबके भ्रमणका पूरा वृत्तान्त है. यह ग्रन्थ जेसा विशद है वैसाही इसका विषय है, हमने इस ग्रन्थके अनुवादको सर्वांग सुन्दर बनानेमे कोई बात उठा नहीं रक्खी है, ग्रन्थकारसे जो इसमे कहीं भूल हुई है हमने टिप्पणी लिखकर उसका परिहार किया है तथा जितना महात्मा टाडसाहबका लिखा यह ग्रन्थ है हमने उसके आगेका भी बहुतसा वृत्तान्त इसमे संनिविष्ट करदिया है, इतना ही नहीं जो सन्धिपत्र मूलग्रन्थमें ग्रन्थकारने किसी कारणसे नहीं उतारे थे, हमने दूसरे अंग्रेजी ग्रन्थोसे उनकी नकलें लेकर उनका अनुवाद करके इस ग्रन्थमे सन्निविष्ट करदिये हैं तथा कहीं उनपर निजकी तौरसे समालोचना की हैं, कि जिनको पाठ करनेसे पाठकोके हृदयपर इसका बडा प्रभाव होगा, कालचक्रकी कैसी विचित्र महिमा है, राजनीतिका कैसा प्रभाव है; "समयके फेरसे सुमेरु होत माटीको" फूट और परस्पर विद्वेषका कैसा भयकर परिणाम होता है, स्वार्थ मनुष्यको कैसा पक्षपाती बना देता है, न्यायकारिता कैसी सतोपकी नौका है इत्यादि सहस्रो बातोंमे जानकारी और शिक्षा इसके अवलोकनसे प्राप्त होगी । यद्यपि यह ग्रथ अंग्रेजीकी बडी गम्भीर भाषामें लिखा गया है, तथापि हमने इसके अनुवादमें बडी सावधानी रक्खी है कि जिस्से सब कोई इसकी भाषा सरलतासे समझ सके इस बातका पूरा ध्यान इसमे रक्खा गया है और जिस्से अपने देश तथा जातिका गौरव विशेष रूपसे बना रहे, कोई बात न रहजाय सब वृत्तान्त ग्रन्थकारके आशयके अनुसार विशदरूपसे प्रकाश किया गया है इन राज्योके मूल इन जातियोकी उपपत्ति जो अब कुछसे कुछ नामवाली होगई है इन नामोके कारण क्षत्रियोके भेद. उनके उच्चकुल उन २ राजोकी वंशावली, यह सब बातें इस ग्रन्थमे बडे विस्तारसे प्रमाण सहित लिखी गई हैं, सत्य तो यह है कि इस ग्रन्थके अनुशीलनसे पाठकोके हृदयके कपाट खुल जांयगे, और आगेके लिये इतिहासका मार्ग स्वच्छ होजायगा, हम इसकी विशेष प्रशसा क्या करैं पाठक स्वय इसको पढकर जान सकेगे।

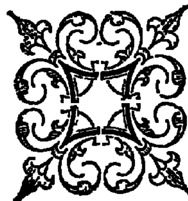
इस ग्रन्थके अनुवादका कार्य मेरे मध्यम भ्राता पण्डित बलदेवप्रसाद मिश्रने अपने हाथमे लिया था, वह जैसी हिन्दी लिखते थे वह जेसी रोचक ओजस्विनी सर्वजन प्रिय होती थी, यह बात किसी महानुभाव हिन्दीसाहित्यप्रेमीसे छिपी नहीं है, इस ग्रन्थको उन्होने बड़े चावसे लिखा था, और इस दूसरे भागको आधेके लगभग तैयार करचुके थे, कि अचानक विकराल कालने उनको आ घेरा और इस कार्यको अधूरा छोड़ अपने कुटुम्बी तथा स्नेही जनोंको सदाके लिये शोकसागरमे निमग्नकर वे इस असारससारसे यात्रा कर जगदीश्वरके चरणोमे सदाके लिये चलेगये, पाठक जानते हैं कि ऐसे पुरुषके उठ जानेपर शोकित हृदयसे उस कामके पूरा करनेमे कैसी अडचन पडती है, उनके इष्टमित्रोके अनुरोधसे तथा भाई साहबकी कीर्तिरूपी पताका चिरकालके लिये फहराती रहै सज्जनमडली इस इतिहाससे वञ्चित न रहे, उनकी आत्माको परलोकमें स्वकार्यकी

पूर्तिसे संतोष हो, इत्यादि कई कारणोसे मुझे इस ग्रन्थकी पूर्तिका भार स्वयं उठाना पड़ा, और उस सर्वनियन्ता परमात्माकी असीम कृपा कटाक्षसे यह देशोपकारी ग्रन्थ सब प्रकारसे पूर्ण होगया हिन्दीभाषाकी शैली यथा साध्य भाईसाहब जैसी पूरी रखनेकी चेष्टा कीगई है, पर यदि कहीं त्रुटि रहगई हो तो पाठकगण अपनी उदारतासे उसको क्षमा करेंगे क्या अच्छा होता जो यह ग्रन्थ उनके सामने प्रकाशित होता, पर हरिइच्छासे किसीको कुछ कहनेकी सामर्थ्य नहीं है। परन्तु उनकी आत्माको सन्तोष हो मुझे यही अभीष्ट है.

इस ग्रन्थके निर्माणमे जगत्प्रसिद्ध हिन्दी हितैषी परोपकारनिरत श्रीवेंकटेश्वर यन्त्रालयाधिपति सेठजी श्रीयुत खेमराज श्रीकृष्णदासजी महोदयका बहुत ही धन्यवाद है कि आपने इसके अनुवादकी सहायतामे किसी प्रकारकी कमी नही की, सब प्रकारसे इसके प्रकाशका प्रबन्ध अपनी ओरसे करके यह अनुपम ग्रन्थ पाठकोंके लाभार्थ तथा हिन्दीभंडार भरनेके अर्थ प्रकाशित किया है, परमात्मासे प्रार्थना है कि वह इसी प्रकारसे हिन्दी तथा संस्कृतकी उन्नतिमे दत्तचित्त रहकर देशका कल्याण करते हुए यशके भागी बनें, धन सन्तानकी वृद्धिके सहित मनोभिलषित कार्योंकी प्राप्ति करें.

अब मैं इस भूमिकाको यहीं पूर्ण करता हुआ परमात्माको प्रणामपूर्वक यही चाहताहू कि इस ग्रन्थका प्रचार समस्त भारतवर्षमे हो और इसका पाठ कर पाठक अपने पूर्वजोके आचार विचारमें श्रद्धा करतेहुए सुखभागी हो।

पण्डित बलदेवप्रसाद मिश्र { सज्जनोका अनुगृहीत ज्वालाप्रसाद
मिश्र दीनदारपुरा मुरादाबाद
सम्वत् १९६६ आषाढपूर्णिमा





अनुवादक-पं० बलदेवप्रसाद मिश्र-मुरादाबाद.

॥ श्रीः ॥

सूचीपत्र।

राजस्थान दूसराभाग ॥

मारवाड़ जोधपुर.

सूचीपत्र-राजस्थान दूसराभाग ।

बीकानेरका इतिहास.

जैसलमेरका इतिहास.

जयपुरका इतिहास.

शेखावाटीका इतिहास।

बून्दीराजका इतिहास ।

कोटाराज्यका इतिहास ।

कर्नलटाड्का भ्रमणवृत्तान्त।

मरुभूमिका वर्णन ।

ग्रन्थकी पूर्ति ।



१ अंग्रेजी पुस्तकमें अमरकोटका वर्णन दूसरे अध्यायमें है और इन्दुवतीसे नागरगुरु तकका वर्णन प्रथम अध्यायमें है लेख प्रमादसे यह परिवर्तन होगया है।



इति
राजस्थान द्वितीयभाग विषयानुक्रमणिका
समाप्त।

राजस्थान.

दूसरा भाग.

जोधपुर, या मारवाड़का इतिहास.



जोधपुर, या मारवाड.

एच्. एच्. राजराजेश्वर महाराजाधिराज सरमद रफ़ाइ
श्री सरदार सिंहजी बहादुर



जोधपुर या मारवाड़

(१) राव सिहाजी, १३३१
(२) से ११, इस सरदार
(१२) राव रीरमल, १४७७
(१३) जोधाजी १५०८
(१४) सूजा १५४०
(१५) उदयसिंह (राज नहीं किया)
(१६) गंगा, १५१५
(१७) मालदेव, १५३१
(१८) उदयसिंह (मोटा राजा) १५८३
(१९) राजा सूरसिंह, १६५२
(२०) गजसिंह १६७६
(२१) महाराजा जसवन्तसिंह, पहला १६९५
(२२) अजीतसिंह १७३६
(२३) अभयसिंह १७७५
(२४) रामसिंह, १७००
(२५) बखतसिंह १८०७
(२६) विजयसिंह, १८०९
(२७) भीमसिंह, १७९४
(२८) मानसिंह, १८६०
(२९) तखतसिंह, १८९९
(३०) जसवन्तसिंह, जी सी एस आई—१८७३
(३१) सरदारसिंह गद्दीपर बैठे १९५२ (चित्र नहीं है)

[illegible]

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

राजस्थानका इतिहास.



दूसराभाग २.

दोहा-सिद्धिसदन आनंदघन, गिरिजासुवन गणेश ।
उमा सहित सुमिरहुँ सदा, जगसुखदान महेश ॥ १ ॥
वीणा पुस्तकधारिणी, देवी गिरा मनाय ।
मारवाड़ इतिहासकी, भाषा लिखत वनाय ॥ २ ॥
वसत रामगंगा निकट, नगर मुरादावाद ।
इंगलिशसे भाषा कियो, द्विज वलदेवप्रसाद ॥ ३ ॥
बुधज्वालापरसाद यह, शोध्यो ग्रंथ महान ।
भूल चूक पुनि होय जो, क्षमिहहिं सन्त सुजान ॥ ४ ॥
वेंकटेश्वर यंत्रपति, खेमराज जगजान ।
जगहित छाप्यो ग्रंथ यह, सकल सुमंगल खान ॥ ५ ॥

मारवाड़का इतिहास ।

अध्याय १.

मारवाड़के भिन्न २ नाम, प्राचीन इतिहासके प्रमाण-पतिकी वंशावली,-मारवाड़ निवासी राठौर जातिकी पारलीपुरके यवन राजाओसे उत्पत्ति, द्वितीयवंशावली। नयनपाल और उसकी तिथि-कन्नौज विजय,-राजपूत वंशावलियोंका काम,-कवि करणीदान रचित सूर्य्य प्रकाश,-राजरूपक इतिहास, ख्यात अजीतसिंहकी वाल्यावस्था और उसके राज्यका इतिहास-विजय विलास अर्थात्, जीवनचरित्र । दूसरी प्रमाणिक वस्तुएं । यवनाश्व अर्थात् इन्डोसिदिक (Indo scythic) जाति, कामध्वज नामधारी तरह राजपूतोंका वंश-कन्नौजाधिपति राजा जयचद मुसल्मानोंके भारतविजयसे पूर्व इस राज्यकी सीमा और चमत्कार,-सेवा प्रबंध, मांडलिक पदवी-राजाकी ईश्वरीय-पदवी । जयचंदका राज-स्वयंवर यज्ञ । स्वयंवरका पूर्ण रहना और उसका परिणाम-भारतकी दशा,-हिन्दुओंकी चार वडी राजधानी-दिल्ली, कन्नौज, मेवाड, अनहलवाडा, उस समय भारतकी क्या दशा थी-गोरके वादशाह शहावुद्दीनका भारतपर आक्रमण-दिल्लीके चौहान राजाओंपर उसकी विजय । कन्नौजपर आक्रमण, सात शताब्दीके पश्चात् कन्नौजका नाश । जयचंदकी मृत्यु और उसकी मृत्युतिथि ।

मारवाड़शब्द मारुवारका अपभ्रंशहै। यथार्थमें इसका नाम मरुस्थल वा मरुदेशहै, जिसका अर्थ होताहै मरेहुए मनुष्योंका देश। इसको मरुदेशभी कहतेहैं, प्राचीन मुसलमान व इतिहासवेत्ताओंने नासमझीसे मारदेशभी लिखाहै। कवियोंने प्रायः इस देशको मुरधरभी कहाहै जिसका अर्थभी मरुदेशहै और कभी २ छन्द ठीक करनेकेलिये केवल मरुही लिखदियाहै। यद्यपि आजकल यह नाम इतने देशकाहै जो राठौर वंशके राज्यमेंहै, परन्तु प्राचीनसमयसे असलमें यह नाम उस भू भागकाहै जो समुद्रसे लेकर सतलज नदीतक फैलाहुआहै। और रेतीसे परिपूर्णहै।

मारवाड़देशाधिपति राठौरवंशका पूर्णवंश-चरित्र प्रथमखण्डके अ० ६ पृष्ठ ४९ में दिया जाचुकाहै, इसलिये इसका उस समयतकका वृत्तान्त, जहाँतक कि, यह वंशावली अपनी जड पुष्ट न करले संक्षेपसे लिखेंगे। अर्थात् वहाँतक जब कि, यह वीर राठौर इस रेतीले स्थानमें आ बसे.. और अपने वंशको सूर्यवंशकी शाखा बतलातेहैं, उचित समझा गयाहै कि, उनके वंशोंका यथार्थ वृत्तान्त उनकेही ग्रन्थोंसे दिखलायाजावे, इसलिये हम उनकेही इतिहासोंका उल्लेख करेंगे। जैसा कि, हमने मेवाडके वृत्तान्तमें सब इतिहासोंको एककेंमें मिलादियाहै, ऐसा हम यहां नहीं करेंगे पाठकोंके चित्तविनोदार्थ हम राठोर ग्रंथोंके रहस्योंका सरल अनुवाद भी करेंगे।

सबसे प्रथम हम ग्रन्थकर्ताओंके प्रमाणोंका उल्लेख करतेहैं। प्रथम नाडलाई जैनमंदिरके पुजारी यतीकी बनाईहुई वंशावली है। यह वंशावली ५० फुट लम्बीहै सबसे पहिले इसमें राठौरवंशकी उत्पत्ति इन्द्रके मेरुदंडसे बतलाई है पारलीपुरके राजा यवनाश्वको कल्पित पिता लिखाहै। पारलीपुरके वृत्तान्तके विषयमें राठौरी इतनाही जानतेहैं कि यह स्थान कहीं, उत्तरमें है, परन्तु इस वंशके पूर्वजोंके अश्व वा असिजातिके यवन राजाके सिदियन जातिसे उत्पन्न होनेके विषयमें हमारे पास प्रमाणहै।

यह इतिहास कान्यकुब्ज वा कन्नौज और कमधजवंशकी प्रारम्भ स्थितिसे प्रारम्भ होता है और राठौरोंकी १३ महाशाखाओं, उनके गोत्राचार्य गौतम गोत्र माध्यंदिनी-शाखा शुक्राचार्य गुरुगणपति अग्नि पंखनी देवी आदिका वृत्तान्त लिखकर समाप्त किया गया है।

दूसरा वंशवृक्षभी उसी प्राचीन समयका है, जिस समयकी बिना चरित्रोंकी वंशावली है। उसकी प्रतिष्ठा उसी प्रकार की है, जिस प्रकारसे उनकी की जाति उसको देवे, नयनपालसे पहलेका वृत्तान्त अब हम यहां छोडते है, इस राजा नयनपालने संवत् ५२६ (सन् ईसवी ४७०) में कन्नौजको विजय किया, और वहांके राजा अजयपालको मारा। उस समयसे इस वंशका नाम कन्नौजिया राठार हुआ। अब यह इतिहास कन्नौजके अंतिम राजा जयचन्दका वृत्तान्त वर्णन करता है, जिसमें उसके भतीजे सियाजीका देशनिकाला (और कन्नौजके राज्यसे भयभीत हुए) बहुतसे भाइयोंका मरुदेशमें बसना, राजा जसवन्तसिंहकी (सम्वत् १७३५ सन् १६७९) मृत्यु और उनकी प्रत्येक शाखाका वर्णन किया है। वास्तवमें पाठकोंको बडाही आनन्द होगा कि, जिस समय वे यह देखेंगे कि, यह वंशवृक्ष फल फूलकर अपनी शाखाओंको बढावेगा।

यद्यपि इतिहासवेत्ताओको यह वृत्तान्त वहुतही शुष्क और नीरस प्रतीत होगा, परन्तु तत्त्वज्ञानियोके लिये मनुष्य जातिका इससे अच्छा रुचिकर इतिहास संसारभरमे न होगा। सन् ११९३ मे हम जयचन्दकी गद्दी लौटीहुई देखते है, उसके भाई भतीजे और सम्वन्धी भारतीय मरुस्थलके छोटे २ सरदारोकी सेवामे प्रविष्ट होते है। चार शताब्दि पहलेसे ही हम इन गंगाके किनारे रहनेवालोको सारे रेतीले स्थानमे वसता हुआ देखते है। जहाँपर इन्होने तीन राजधानी वनाई वडे वडे राजभवन वनाये, और एकही वापकी सन्तानने जो अव ५०००० वीर है रणक्षेत्रमे दिल्लीके वादशाहका मुकावला किया। कन्नौज विजयी मुसल्मान वादशाहोके मनमे जिनकी पांच पुस्ते राठौरोके पराक्रमसे अनभिज्ञ रहीं, क्याही विचित्र विचार इस राठौरवंशकी महोन्नति देखकर हुए होंगे। जव कि, उत्साही शेर शाहने सियाजीकी राठौर सन्तानसे रणक्षेत्रमे भिड़ते समय कहाथा कि, हम एक मुट्ठी जौके वदलेमे भारतका राज खोनेको थे, अर्थात् हम इस देशको गरीव समझकर इसका ध्यान नही करतेथे।

यह देखकर हृदयमे वडा आनन्द उत्पन्न होता है कि यह जातीय विचार इस महासेनाके प्रत्येक योधामे वर्तमान है। यहाँ तक कि, प्रत्येक पुरुष अपना सम्वन्ध उस वंशवृक्षकी शाखासे रखकर समझाता है कि, हम उस वंशसे वहुत दूर नहीं है, और उस वृक्षकी शाखाओको अर्थात् अपने पुरुषाओको भूले नही है। ऐसी सदाचार-युक्त सहानुभूतिका जो कुछ प्रभाव पडा करता है वह सर्व साधारण जानते ही है, इस लिये उसका लिखना उचित नहीं है। इतिहासवेत्ता केवल वहुतसे नामोका लिखना व्यर्थ कागज रंगना समझते है, जो केवल सियाजीकी संतानके ही रहस्यका विषय है।

ऊपर कहीहुई दोनो कुल-तालिकाओके अतिरिक्त जो और भी कई एक भट्ट-ग्रन्थ मारवाडके इतिहासके विषयमे पाये जाते है, उनमेसे "सूर्य्यप्रकाश" "राजरूपाख्यात" और "विजयविलास" ये तीन प्रधान है, अस्तु हम इस समय इन्हीं तीनो भट्ट ग्रन्थोका वर्णन लिखते हैं।

मारवाड़के एक दूसरे राठौर राजा अभयसिंहके राजत्वकालमे उसकी आज्ञानुसार * कर्णीदान नामक भट्टकविने सूर्य्यप्रकाश ग्रन्थ वनाया। इसमे ७५०० छन्द है सन् १८२० मे राजा मानने इसकी नकल मेरे पास भेजी थी। यद्यपि कर्णीदान कविने मनुष्योंकी उत्पत्तिकालसे आरम्भ कर महाराज सुमित्र तक राजवंश वर्णन किया है तो भी उसके उपरान्त नयनपाल तक और किसी राजा वा राजवंशका विवरण नहीं देखा जाता। उक्त ग्रन्थमे लिखा हुआ है कि, महाराज नयनपालने कन्नौजराज्यको जीत उसपर अधिकार कर कमधजकी उपाधि धारण की थी कवि कर्णीदानने राजकीय वृत्तान्तोसेही अपना ग्रन्थ रचा है। किन्तु नाडोलके देवमंदिरमे जो कुलतालिका पाई गई थी, उसमे लिखे हुए वृत्तान्तके साथ सूर्य्यप्रकाशकी विशेष समानता देखी जाती है। परन्तु यह घटनावली भी संक्षिप्त ही है। कन्नौजकी रंगभूमिमे राठौरकुलकी वीरता, वडाई वा

* कर्णीदान भट्ट नहीं था चारण था।

दूसरे किसी कार्य्यका अभिनय हुआ था कि नहीं, आश्चर्य्यका विषय है कि, सूर्यप्रकाश ग्रन्थमें उसका विशेष वर्णन नहीं है; यहांतक कि, कविने कन्नौजके राजा जयचन्दके हारने और उसके मारेजानेके वृत्तान्तको भी छोड़ दिया है। उसने शीघ्रताके वशीभूत हो वहुत जल्दी मारवाड़की रंगभूमिमें उपस्थित हो, महाराज सियाजीके वंशधरोंका संक्षेप वर्णन करके उस कुल–तालिकाको पूर्ण कर दिया है।

"राजरूपकाख्यात" ग्रन्थमे सवसे पहिले सूर्य्यवंशके कई एक वृत्तान्त लिखे हुए हैं इसमे उस समयका संक्षेप वर्णन देखा जाता है जिस समय महाराज इक्ष्वाकुके वंशधर अपनी पुरानी राजधानी अयोध्यानगरीके सिंहासनपर सुशोभित थे, उन सव वृत्तान्तोंके उपरान्त ग्रन्थकर्त्ताने सियाजीके देश छोडने आदि घटनाओंका वर्णन किया है। जिस दिन राठौर वीर सियाजीने कुछेक अनुचरोंको साथ ले राजस्थानको विशाल मरुभूमिमे राठौर वंशका वृक्ष स्थापित किया था, जिस दिन उनके अत्यन्त साहसके प्रभावसे उस दग्ध मरुभूमिमें राजमहल सुशोभित हुए थे, उस दिनसे और महाराज यशवंतसिंहकी मृत्युतक राठौर कुलका भाग्य तरंग किस किस ओरको वहा है, इसका सव संक्षेप वर्णन इस ग्रन्थमें लिखा हुआ है। परन्तु इसके उपरांतकी घटनाओंका वर्णन भली प्रकारसे विस्तारपूर्वक लिखा गया है। महाराज यशवन्तसिंहके अन्यायसे मारे-* जानेके उपरान्त उनके वालक कुमार अजितसिंहने किस २ प्रकारकी घटनाओंमे गिरकर राजसिंहासनपर अधिकार किया और किस प्रकारकी राजनीतिसे राज्य किया। इन सव वातोंकाही वृत्तान्त "राजरूपकाख्यात" ग्रन्थमें क्रमानुसार वर्णन किया गया है। ग्रन्थकारने यहींतकका वर्णनकर लेखनी नहीं छोडी; वरन् उसने राठौर वीर अजितसिंहके और उसके पुत्र अभयसिंहके राजत्वकालसे लेकर गुजरातके सूवेदार सर वुलंदखाँके साथ युद्धके अन्तिमसमयतककी घटनाओंका वर्णन इस ग्रन्थमें किया है। 'राजरूपक' के प्रथम संक्षेप वृत्तान्तके उपरान्त यह इतिहास उस समयकी घटनाओंका है जो सम्वत् १७३५ (१६९६ ई०) से सम्वत् १७८७ (१७३१ ई०) तक हुआ था।

इसके अतिरिक्त "विजयविलास" और "ख्यात" नामक और भी दो भट्टग्रन्थोंमे कुछ २ मारवाड़का वर्णन पायाजाता है। विजयविलासमे एक लाख छंद है। इसमें वख्तसिंहके पुत्र विजयसिंहके राजकालतकका समस्त वर्णन लिखा हुआ है। तथा विजयसिंह उसके भतीजे रामसिंह और अभयसिंहके पुत्रके युद्धका वृत्तान्त है, पीछे मरहठोंके प्रथम मारवाडमे प्रवेश करनेका वृत्तान्त है "ख्यात" भी एक ऐतिहासिकग्रन्थ है। परन्तु टाड् + साहवको यह पूरा २ ग्रन्थ नहीं मिला। जिस अंशमे वादशाह अकवरके मित्र राठौर राजा उदयसिंह, उसके पुत्र गजसिंह और पौत्र यशवंतसिंहका वर्णन लिखा हुआ है, वही अंश उनको मिला था। जो हो इन सव छिन्न भिन्न इतिहासोंको एकत्रित

---

* महाराज यशवन्तसिंह अन्यायसे नहीं मारे गये मृत्युसे मरे। + यह पाठ असल टाड राजस्थानमें नही पाया जाता।

कर जगत्‌वन्धु टाड्साहवने मारवाडके इतिहासकी रचना की है, इस समय दूसरे ऐतिहासिक वृत्तान्तोसमेत उनके अनुवादको लिखते हैं।

राठौरोकी उत्पत्तिका वृत्तान्त राजस्थानके प्रथम खण्डमे लिखा हुआ है। * इस समय हम उनके इतिहासको लिखते हैं। उत्तरकी ओर बसेहुए पारलि + पुरसे उखड कर राठौर वंश-वृक्ष किस प्रकार गंगाके दक्षिण मरुभूमिमे फिर स्थापित हुआ, उसका वृत्तान्त भलीप्रकारसे किसी इतिहासग्रन्थमे नहीं देखा जाता। जान पडता है कि, राठौरोने उस समय राजनीतिमे विशेप विज्ञता प्राप्त नहीं की थी।

इनके सिवाय जोधपुरके दरवारने एक बुद्धिमान् राजकर्म्मचारीसे कुछ यादगारी लिखवाई थी, जिसमे सन् १६२९ मे राजा आजितसिहकी मृत्युसे लेकर सन् १८१८ मे अंग्रेजोके संधिपत्रतकका वृत्तान्त है। इस लेखकके पुरुपा जोधपुर दरवारमे वड़े पदाधिकारी थे, और यह मनुष्य भूत तथा वर्तमान ऐतिहासिक वृत्तान्तोकी मूर्ति था।

इस प्रकार पुस्तकोके वृत्तान्तोसे और राजा महाराजा और दरवारियो राजदूतो और प्रजासे वातचीत करके यह इतिहास संग्रह किया है जिनकी वाह्य अवस्था नीरस जान पड़ती है परन्तु अन्तमे यही चित्ताकर्षक इतिहास प्रतीत होगे।

राठौरोके वंशका सूचीवृक्ष और उनकी शाखा सहित सूची इस पुस्तकमे दिखलाई गई है, जिनकी सन्तान आजकल आपसमे शत्रुता या वैर रखती है। जिसके देखनेसेही प्रत्येक वंशके अधिकार ज्ञात होजायँगे, और उनके परस्परके लड़ाई झगडोसे जो दीन दशा उनकी होगई है, मेरे लेखसे ऐसे समयमे भी महाराजाधिराजको आवश्यकताके समय न्यायदृष्टिसे देखने पर इनके अधिकार स्थिर करनेमे वड़ी सुगमता होगी।

राठौर सूर्य्यवंशी हैं या नहीं इस तर्कके समाधानका उद्योग हम नहीं करना चाहते हैं, प्रथम राठौरकी उत्पत्ति इन्द्रके मेरुदंडसे हुई या नहीं इसपर भी हम वाद विवाद नहीं करना चाहते, और उनके नाममात्र पिताको राजधानीका पता भी हम उत्तरमे नहीं लगाना चाहते है परन्तु हम तो केवल इसी पर संतोप करते हैं कि, राजा पारलीपुरके वंशमे यह दैविक हस्ताक्षेप किसी गुप्त अपयशके ढकनेके लिये निर्माण किया गया था।

यवनाश्वका नाम जो यवन और अश्वकी संधिसे प्रगट होता है कि, इण्डोसिदिक (Indo Scythic) जंगली जाति सिन्धुनदीके दूरदेशी तटोपर निवास करती थी, चंद्रवंशियोकी वंशावलीमे, जिनकी उत्पत्ति बुध देवता और पृथ्वीसे हुई है (देखो चित्र १ खण्ड १) लिखा है कि विजयाश्वके पांचो पुत्र सिंधुनदीके तटस्थ देशोमे निवास करते थे, और वादशाह सिकंदरके आक्रमणके संक्षिप्त इतिहासोमे भी आसासेनी और आसाकानी (Asasenae and Asacani) जातियोका वृत्तान्त आया है, जो इन देशोमे वर्त्तमान समयमे भी वास करती है।

---

* राजस्थान प्रथमखण्ड अ० ६ और ४९ पृष्ठ देखो। + उर्दू तर्जुमेमें प्रलयपुर लिखा है।

इस समयमे इस हिन्दुद्वीपकी स्थाई वंशोंमे बहुतसे उलट फेर हुए जिनमेंसे कुछ जातियाँ हन्स, पारथियन और जेट इत्यादिने अपनी पृथक् २ राजधानियाँ भारत खण्डके उत्तरीय और पश्चिमीय सीमाओंपर बनाई।

सम्वत्(५२६ सन्४७०)में नयनपालने कन्नौजको हस्तगत किया और उस समयसे राठौरोंको कमध्वजकी पदवी प्राप्त हुई उसके पुत्र पदारत और उसके पुत्र पुंजासे उन तेरह महा वंशोकी उत्पत्ति हुई थी जिनमेंसे प्रत्येक (भरत) की कमध्वजकी पदवी थी।

यती संन्यासीकी दी हुई वंशपत्रिकामें इसका नाम भरत लिखा हुआ है परन्तु पुराने वृत्तान्तोंमें यह केवल पदारतहीके नामसे प्रसिद्ध हैं।

उन तेरह राजवंश और उन सबको वंशावलीके नाम नीचे लिखे हुए हैं।

" प्रथम । धर्म्मविम्ब । इसके वंशवाले दानेश्वर । कमधजके नामसे प्रसिद्ध हुए।

" २ । मान । इसने कांगडानामक स्थानमे अफगानोके साथ युद्ध किया था। अभयपुर भी इस कमध्वजके द्वारा प्रतिष्ठित है; इसही कारण इसके वंशवाले अभयपुरी कहे जाते हैं।

" ३ । वीरचन्द्र । इसने अनहलपुर पत्तनके अधिपति हीरा चौहानकी बेटीसे विवाह किया था। वीरचन्द्रके चौदह पुत्र हुए वे अपना देश छोड दक्षिणमे जा बसे। वीरचन्द्रके वंशवाले कपालिया कमधजके नामसे विख्यात हुए।

" ४ । अमरविजय । इसने गंगाके किनारे बसेहुए गौरागढके पमार अधिपतिकी पुत्रीसे विवाह किया। और राज्यके लालचसे अपने श्वसुरके गोत्रवाले सोलह सहस्र पमारोंको मारकर गौरागढपर अधिकार किया था, इसीसे गौरा कमधज उत्पन्न हुए।

" ५ । सुजन विनोद । इसके वंशवाले जल खेडिया कमधजके नामसे प्रसिद्ध हैं।

" ६ । पद्म; यदुवंशी राजा तेजोमानके हाथसे इसने बुगलानाको जीता। उडीसा भी इसीके पराक्रमसे जीता गया था।

" ७ । ऐहर । यदुवंशियोसे इसने बंगालेको जीता था। इससे ही ऐहर कमधज उत्पन्न हुए है।

" ८ । वासुदेव । इसके बडे भाईने इसको बनारस और ४८ गाँव जागीरके तौरपर दिये थे। किन्तु उसने अपनी कीर्ति फैलानेके निमित्त पारकपुर * नामक एक नगर बसाया, बरदेव या वासुदेवके वंशवाले परकरा कमधजके नामसे अपना परिचय देते हैं।

" ९। उग्रप्रभाव। कहते हैं कि उग्रप्रभावने हिंगलाज चंदेल नामक स्थानमें + देवताके मन्दिरमें जाकर कठोर व्रत तप किया था।

इससे देवताने उसपर अत्यन्त प्रसन्न हो उसे एक तरवार दी। कहते हैं कि देवताकी आज्ञासे वह तलवार मन्दिरके सामनेवाले एक कुण्डसे निकली थी। देवताकी

---

* पारकपुरको सिंधुके सम्मुख बसा हुआ टाडसाहबने लिखा है। + यह मेकरानाके उपकूलमें बसा हुआ है।

दी हुई उस तलवारकी सहायतासे उग्रप्रभुने समुद्रके तटस्थ समस्त दक्षिणप्रदेशको जीत लिया था। इसीसे चँदेला कमधजोंका वंश चला।

" १० । मुक्तमान । वा मुकुटमणि । तम्वरवंशी भानुराजाके हाथसे इसने उत्तर भागके कुछेक देशोको जीता था। इसके वंशवाले वीरपुरा कमधजके नामसे प्रसिद्ध हुए।

" ११ । भरत । इसने ६१ वर्षकी अवस्थामें वीर गूजरवंशी रुद्रसेन नामक किसी राजाको परास्त कर उत्तरदेशमें पहाडोंके नीचे बसेहुए कनकसर नामक एक नगर पर अधिकार किया। इसके वंशवाले वरियावर कमधजके नामसे विख्यात हैं।

(रायल एशियाटिक सोसाइटीके पुस्तकालयकी एक पुस्तकमें जो कोरासे प्राप्त हुई थी इस कन्नौजवंशकी शाखाका कुछ वृत्तान्त लिखा है)

" १२ अलनकुलने खैरोदा नामक एक नगर बसाया। अलनकुल एक वीर पुरुप था। अटकमें मुसलमानोंके साथ इसका एक युद्ध हुआ था। इसके वंशवाले खैरोदिया कमधजके नामसे प्रसिद्ध हैं।

" १३ । चंद, इसको उत्तर प्रदेशमें तारापुर नामक एक नगर प्राप्त हुआ था। प्रसिद्ध ताहिरा नामक नगरके चौहान अधिपतिकी पुत्रीके साथ चन्द्रका विवाह हुआ। चन्दने उस स्त्रीके समेत काशीमें आकर वास किया।

"सूर्य्यवंश इस प्रकारसे वढा और पुष्ट हुआ था।" सन ४७० ई० से जिस दिन राठौर वीर नैनपालने कन्नौज जीता, और उसके कुछ दिन उपरांत जिस दिन उनके तेरा पौत्रोंने भारतके चारोंओर नानादेशोंमें फैलकर राठौर वंशकी विजयपताका स्थापित की, उस दिनसे क्रमानुसार सात शताब्दी तक (सन् ११९३) राठौर वीरोंके किसी प्रशंसनीय कार्यका वर्णन नहीं देखा जाता राठौरोंका इतिहास उस समयसे चलता है जब कि उनका अधिकार गंगाजीके किनारे पर जम गया था। इस दीर्घ समयके उपरान्त जयचंद कन्नौजके सिंहासन पर बैठा। इन सात शताब्दियोंमें केवल इक्कीस राजाओंका नाम देखा जाता है। जिस ग्रन्थमें इन इक्कीस राजाओंका नाम लिखा है. उसके देखनेसे पाया जाता है कि, "राजा" की उपाधि वाले कुछेक राजाओंके पहिले "राव" की उपाधिवाले इक्कीस राजाओंने राठौरवंशका राज्य किया था, किन्तु किस राजाने सबसे पहिले उक्त उपाधि धारण की, और कितने "राजा" के नामसे परिचित हुए थे, उसका कोई वृत्तान्त अब तक नहीं देखा जाता। केवल यही बात सही नहीं है। इससे

---

१ तारापुर विजय करनेसे इसकी सन्तानका नाम जयवन्त कमधज हुआ। मे० टी०। २ ताहिराका वर्णन तवारीख फिरिस्तामें अनेकवार देखा गया है। ३ सूर्यप्रकाश। ४ भम्भू त्रा धर्मभम्भू कन्नौजाधिपतिका एक पुत्र अजयचन्द था ११ पीढीतक इस वंशकी राव पदवी रही इसके पीछे राजाकी पदवी हुई। ५ इन कई एक राजाओंने "राजा" की उपाधि धारण की थी; उदयचंद, नृपति, कनकसेन, सहस्रपाल, मेघसेन, वीरभद्र, देवसेन, विमलसेन, दानसेन, मुकुंद, मोदू, राजसेन, त्रिपाल, श्रीपुंज, (विजयचंद) और उसका पुत्र जयचंद, इसकी पदवी दलपंगल हुई।

पहिले संन्यासी को दी हुई वंशावलीमे जो कथा लिखी है, उससे ऐसे अनेक नाम पाये जाते हैं जो सूर्य्यप्रकाश ग्रन्थमें नहीं हैं। संन्यासीकी दी हुई सूचीमे जो कई एक नाम अधिक देखेजाते हैं, उनमेसे एक राजाका नाम अंगदध्वज भी है। लिखा है कि अंगदध्वजने दिल्लीके प्रसिद्ध तोमर राजा यशोराजको एक युद्धमे परास्त किया था। यशोराजके राजत्वकालका भलीप्रकारसे निश्चय हुआ है। परन्तु दुःखका विषय है कि पहले कही हुई संन्यासीको दी हुई तालिकामे अंगदध्वज और उसके पहिले व पिछले राजाओके नाम ऐसे जटिलभावसे (शिकस्ता:) लिखे हुए हैं कि, सूर्य्यप्रकाशमे लिखी हुई नामावलीके साथ उसका कुछ भी सम्बन्ध नहीं होसकता। कन्नौजकी रंगभूमिमे महाराज नयनपालके वंशवाले अर्थात् जयचंदके पूर्व पुरुषोके किसी प्रशंसनीय कार्यका वर्णन भली प्रकारसे नही देखा जाता; किन्तु जो अधूरा और साधारण वृत्तान्त पाया जाता है, उसकी समालोचना करनेसे हम कह सकते हैं कि, वे राठौरपदके योग्य और राठौर वीर नयनपालके योग्य संतान थे। क्योंकि वे सब क्षत्रियोंके उत्तम गुणोसे विभूषित हो अपने २ सन्मान मर्यादाको भली प्रकारसे स्थित रखनेमे समर्थ थे। एक समय उनके गौरवसे भारतभूमि प्रतिष्ठित होगई थी; एक समय भट्टकवि और चारण लोग अभिमानपूर्व्वक उच्चस्वरसे उनका यश गाते हुए भारतके नगरो २ मे घूमते थे किन्तु भारतके अभाग्यसे वह सब प्रकाशित गौरव आज मनुष्यमात्रके नेत्रोंसे दूर हो काल-सागरमें विलीन होरहा है। इस ही कारण आज नयनपालके वंशवालोंकी क्रियाएँ पौराणिक लीलाके स्थानमें प्राप्त हुई हैं।

जैसे बुझनेके समय दीपक एकवारगी प्रज्ज्वलित हो उठता है, वैसे ही मिटतीके समय कन्नौजराज्यका गौरव पहिलेसे दूना हो उठा था। इस अत्युन्नतिका सविस्तर वर्णन मुसल्मानोके इतिहास और महाकवि चंदवरदाईके अमृतमय ग्रन्थमें भली प्रकारसे देखा जाता है। और जब हम देखते है कि राठौरोंके प्रचंड शत्रु चौहानोने भी निश्चल भावसे उनकी उस अत्युन्नतिका वर्णन किया है, तब कन्नौजकी दशाको विचार कर विना आंसू वहाये नहीं रहा जाता। हाय!

जो राठौर वीर नयनपालने अपनी विजयपताकाको जिस कन्नौजमें स्थापित किया था, एक समय उसका विस्तार पन्द्रह कोश (३० मील) मे था। एक समय उस राठौर वंशको विशाल सेना "दलपिंगल" के नामसे प्रसिद्ध थी, इसका तात्पर्य्य यह है कि, इस पराक्रमी सेनाको अधिक संख्याके कारण कूच करनेमे पड़ाव करना पड़ता था, जिसके विषयमे चंदकवि लिखता है कि, कूचमे जब सेनाकी हरावल रण-क्षेत्रमे पहुँच जाती थी तब उस समय चंदावल सेना अपने स्थानसे चलती थी।

वह वलवान और असंख्य राठौर सेना संसारकी किसी जातिकी वलिष्ठ सेनाके साथ हर प्रकारसे लड़ने योग्य थी। सूर्य्यप्रकाशग्रन्थमें उस विशाल सेनाका परिमाण इस प्रकारसे लिखा हुआ है। अस्सी हजार कवच-धारी वीर; तीस हजार सवार पाखरवाले

१ यती। २ घोड़े या हाथीके वख्तरको पाखर कहते हैं। (जिरह बख्तर।)

तीन लाख पैदल, और दो लाख धनुप और फरशाधारी (सफरमैना) सिपाही थे इसके अतिरिक्त कालेवादलोंकी समान मतवाले हाथियोंका भी एक झुण्ड युद्धक्षेत्रमें जाता था।

इस वलवान् विशाल सेनाको लेकर एक समय राठौर वीर सिन्धुनदीके सुदूर-स्थित यवनराजका प्रचंड वल रोकनेके निमित्त भयानक समरभूमिमे गये थे। जिस दिन सिन्धुनदीको पारकर गोर और ईरानके वादशाह भारतवर्षमे आये, उसी दिन समरकुशल जयसिंह उनकी प्रचंड गति रोकनेके निमित्त उनके सन्मुख हुआ। दोनो दलोमे वहुत समयतक घोर युद्ध हुआ। उस युद्धमे दोनो ओरकी असंख्य सेना मारी गई। रक्त वहकर सिन्धुनदीका नीला जल लाल हो उठा। किंतु हवशी राजा और उसके फरंग * वीर कन्नौजपतिकी सेनासे हार गये। नसी दिनसे सिन्धुनदीका सुर्खीव-नाम हुआ।

जो चौहान कि, राठौरोके पुराने शत्रु थ, उनका भट्टकवि चन्द भी महाराज नयनपालके वंशवालोंके गौरवको वखान किये विना नहीं रहा। वह उनको माण्डलीककी उपाधि देकर वर्णन करता है कि, उन्होने उत्तरदेशके माण्डलिक यवन शहाबुद्दीन गोरीको परास्त कर उसके वशवर्त्ती आठ वादशाहोंको कैद कर लिया। केवल यही नही; अनेक वीर पराक्रमी हिन्दू राजा भी इनके प्रकाशित पराक्रमरूपी आगके सामने अपने सन्मान और गौरवकी आहुति देते थे।

अनहलवाड़ा यानी पत्तनके अधिपति सोलंकी राजा सिद्धराज भी इनके अमित भुज-वलसे दो वार पराजित हुआ था। इससे राठौर राज्यकी प्रभुता नर्मदाके दक्षिण किनारे तक फैल गइ थी। गर्वित राठौर राजा जयचंद केवल मनुष्योचित सन्मान पाकर सन्तुष्ट न हुआ। यहाँतक कि, उसने वड़े भारा राजसूय यज्ञका अनुष्ठान कर देवताओकेसे सन्मान पानेकी चेष्टा की थी। पौराणिक हिन्दू-राज समाजमे वह भारी यज्ञ जिस प्रकारकी धूमधामसे होता है. उसका विचार करनेसे किस भारतवासीका हृदय आनन्दसे खिल न उठेगा?

१। इस महायज्ञके सव काम, यहाँतक कि, अतिसाधारण द्वारपाल आदिके कामोको भी राजालोग करते है। महाराज युधिष्ठिरके उपरान्तसे अवतक कोई हिन्दू राजा इस यज्ञको नहीं कर सका था। यहांतक कि, शकाव्द राजा विक्रमादित्यको भी यह असीम देव-सन्मान नही प्राप्त हुआ। भारतके समस्त राजाओंको निमंत्रण पत्र भेजा गया। उसके यज्ञकी धूमधाम और तैयारोकी वात सुनकर समस्त भारतवासी चमत्कृत हुए। सभी लोग जयचन्दको धन्यवाद देने लगे। निमंत्रणपत्रोंमे यह भी

---

१ वरदाई ग्रन्थमे देखा जाता है, कि फरंग गण शहावुद्दीनके दलमें नियुक्त थे किन्तु किस प्रकारसे हवशीराज्यके दलमें आये, इसका भली प्रकारसे निश्चय करना कठिन है, जान पडता है कि, यह जेरुसलमसे भगे हुये किसी क्रूजेट सेनाके होंगे। २ रक्तजल। प्रे० टी०। ३ उत्तर देशके राजाओंसे अभिप्राय सिंधुनदके पश्चिम यवन राजाओंसे है।

लिखा गया कि, राजकुमारी संयोगिताके स्वयंवरके साथ ही इस महायज्ञका समारोह होगा। अर्थात् यज्ञमे आये हुए राजा महाराजाओंमेंसे संयोगिता + अपने लिये इच्छित वर ढूंढ लेगी।

देखते २ यज्ञका दिन आ उपस्थित हुआ। निमंत्रित राजालोग अपनी अपनी सेना-समेत आकर उस यज्ञमें सम्मिलित हुए। उन सबके आनेसे कन्नौजनगरने एक अपूर्व शोभा धारण की। कविवर चंदभट्टने इस अपूर्व शोभाका भली प्रकारसे वर्णन किया है। भारतके सभी हिन्दूराजा आये. परन्तु चौहानराज पृथ्वीराज और गहलोत राजा समरसिंह * जयचन्दके उस सन्मानको अयोग्य विचार यज्ञके निमंत्रणमें न आये इस कारण जयचन्दने उन दोनोंकी सोनेकी प्रतिमाएँ बनवा उन्हें अति नीच और साधारण टहलके स्थानपर नियत किया। पृथ्वीराजको अत्यन्त तिरस्कृत करनेकी इच्छासे जैचन्दने उसकी मूर्त्तिको द्वारपालकी जगहमे खडी करवाया। इन सब समाचारोंको पृथ्वीराजने भी सुना तब क्रोधके कारण उसका वीर हृदय उमड पडा। वह प्रेम और बदलालेनेमें प्रसिद्ध था। उसने अपनी सारी अवस्था धनुर्विद्यामें बिताई थी। अस्तु उसने प्रतिज्ञा की कि-"दुष्ट जयचन्दके यज्ञको विध्वंस करूंगा और उसीके सामने उसकी पुत्रीको हरलाऊंगा।" चौहान वीर पृथ्वीराज इस कठोर प्रतिज्ञाके पालन करनेमें सब प्रकारसे शक्तिसम्पन्न और समर्थ था। किन्तु इससे राठार और चौहानोंमे जो विवाद उत्पन्न हुआ, वह थोडेहीमें शान्त न हो सका। उसके शान्त करनेमें दिल्ली और कन्नौजके जीवनस्वरूप अगणित राजपूत समरक्षेत्रमे मारे गए। इस महाचरित्र वर्णनको चन्दकविने विस्तारसे ६९ खण्डोमे समाप्त किया है। उसने कहा है कि, पृथ्वीराजकी संयोगिताका हरण करलेनेपर क्रमशः पॉच दिनतक घोर युद्ध हुआ था। यह भयानक गृहविग्रह ही भारतका कालस्वरूप हुआ।क्योंकि इस व्यर्थ विग्रहमे दोनों ओरका सेनाबल नष्ट होजानेसे चतुर गोरी सुलतानने हिन्दोस्थान पर हमला किया। उसके उस हमलेके रोकनेके निमित्त दृषद्वतीके तटपर जो युद्ध हुआ, उसीसे हिन्दोस्थानकी स्वतंत्रताका सर्व नाश हुआ।

इस समयमे और इसके बहुत शताब्दी पहलेसे यहाँतक कि, महमूदके आनेके पहिले भारतवर्ष नीचे लिखेहुए चार राज्योंमे बटा हुआ था।

प्रथम। दिल्ली, तँवर और चौहानोंके अधीन।

दूसरे। कन्नौज,-राठौरोंके अधीन।

तीसरे। मेवाड़,-गहलोतोंके अधीन।

चौथे। अनहलवाडा:-चावडा और सोलंकियोके अधीन।

इन प्रत्येक बडे बडे राज्योंकी अधीनतामे छोटे छोटे असंख्य राजा निवास करते थे। वे सब वशवर्ती राजालोग उस समयकी राजनीतिके अनुसार अपने २ स्वामियोंकी

+संजोगिता। * पृथ्वीराज रासोंमें समरसिंहजीकी स्वर्ण प्रतिमा बनाए जानेका वर्णन नहीं है।

आज्ञा पालन करते थे, और युद्धकालमे उनके झंडेके नीचे खडे होजानेपर खेलकर युद्ध करते थे।

दिल्ली और कन्नौज, दोनो स्वतंत्र राज्य होकर परस्पर बहुत ही निकट वसे हुए थे। दोनोके बीचमे केवल कालीनदी बहती थी, जिसको यूनानी भूगोल वेत्ताओंने कालिन्दी लिखा है। दोनो राज्योके वशवर्ती राजा प्राय. समान ही थे। कालीनदीसे सिन्धुनदीके पश्चिम किनारे तक और हिमालय पहाडके नीचेसे मारवाड और अर्वली पर्वतोतक दिल्लीका विशाल राज्य फैला हुआ था। इनमे उत्तराधिकारी चौहानोके १०८ सूबे थे जिनमे बहुतसे अधीन राजा थे, इस बडे विशाल राज्यका राजा अनंगपाल तोमर था। चौहान पृथ्वीराजने इस राज्यको प्राप्त करके * एक समय एक सौ आठ प्रधान सामन्त राजाओपर शासन किया था।

गर्वोन्नति और कन्नौजकी प्रभुता उत्तरमे हिमालय पर्वत, पूर्वमे काशी, और चम्बल नदीसे पार हो "बुन्देलखण्ड तक फैली थी। दक्षिणमे यह मेवाडकी उत्तरी सीमासे रुकीहुई थी। मेवाडकी सीमा उत्तरमे अर्वली पर्वत और दक्षिणमे मुरधर (वशवर्ती कन्नौज) और पश्चिममे अनहलवाडेसे थी, और अनहलवाड़ा दक्षिणमे समुद्र तक व पश्चिममे सिंध व अटकतक फैला था। इसकी उत्तरी सीमामे जंगल था।

भट्टग्रन्थोमे कहा है कि, यह सब राजा प्राय: एक दूसरेके विरुद्ध तलवार लेकर एक दूसरेके हृदयका रक्त गिराते थे। इन कइ एक राज्योंका राजनैतिक जीवन जबसे आरम्भ हुआहै तबसे देखाजाता है कि, गहलोतो और चौहानोंमे प्राय: मित्रता और राठौरोंमे प्राय: प्रचंड शत्रुता रही है। राठौरो और तोमरोंकी शत्रुता ही भारतवर्षके सर्वनाशका प्रधान कारण हुई है परस्पर विवाहोके संबन्धसे नित्यश.के क्लेश शान्त होगये पर आंतरिक वैमनस्य न गया इस कारण फिर उभर खडे हुए। यह बात प्राचीन इतिहासोसे ही पाई जाती है।

महमूद गजनवीके पश्चात् यदि कोई यात्री योरुपके दरबारोंमे घूमताहुआ और बादशाह तैमूरके मार्गपर बेजिनटियम यानी गजनी (जो हिन्दुओकी लूटसे भरा हुआ था) होता हुआ दिल्ली कन्नौज व अनहलवाड़ाकी सैर करता तो उसको राजपूतोंकी सभ्यता व शिल्प-विद्या सबसे बढ चढ़ कर विदित होती। जो शस्त्रविद्यामे भी किसीसे कम नहीं थे।

पश्चिमके नियमानुसार उस समय भारतवर्षमे प्रत्येक राजधानीका अधिकार इस प्रकार था कि, युद्धके समय प्रजामेसे सेनाका चुनाव होता था सौभाग्यवश योरुपमें जम्भूरीराज्य + नियमका प्रवेश होगया था जिससे वहाँके प्रबन्धमे जान पड़ गई, परन्तु भारतवर्षकी वा एशियाकी तृतीय राजधानी राज्यके सर्वाधिकारसे पृथक् रही, जो स्थाईरूपसे सहायता होगई थी हिन्दुस्थानमे उस समय शस्त्रविद्यासे उत्तम कोई काम

* राजा पृथ्वीराज अनंगपालकी लडकीका लडका था इसलिए अनंगपाल उसको अपना उत्तराधिकारी बनाकर आप बद्रिकाश्रमको तप करने चला गया था। + प्रजाधीन राज्यको फारसीमें जम्भूरीसल्तनत कहते हैं।

नहीं गिना जाता था। इस कारणसे वारम्वारके युद्धोंसे राजपूत जाति उत्तरीय बादशाहोंसे लड़कर परास्त हुई। शहाबुद्दीन गोरीने इन झगड़ोंसे लाभ उठाकर भारत पर आक्रमण किया। उसने सबसे प्रथम दिल्लीके चौहान राजा पृथ्वीराको परास्त किया, जो उस समय भारतवर्षका सबसे बड़ा राजा था।

जिस दुर्दिनसे दृषद्वतीके रक्ताक्तजलमें भारतके गौरवका सूर्य्य डूबा उसी दिनसे विजयी शहाबुद्दीनने पाण्डव वीर राजा युधिष्ठिरकी राजधानी पर अधिकार कर जयचंद पर आक्रमण किया। इसके पहले ही जयचंद पृथ्वीराजके साथ युद्धकरके अपने सेना-बलको खो चुका था। इस समय इस आइहुई घोर विपदको देख यथाशक्ति सेना इकट्ठी करके वह शहाबुद्दीनके सन्मुख हुआ। किन्तु उसके सब यत्न व्यर्थ हुए। इस विजयी आक्रमणकर्त्ताके प्रचंड बलको वह रोक न सका। अन्तमें जैचंदने गंगापार भागजानेकी इच्छा की, किन्तु यह भी न होसका गंगाके अथाह जलमें नौका डूबजानेसे जयचंद जीवित ही जल निमग्न हुआ यह शोचनीय घटना सम्वत् १२४९ (११९३ई०) में हुई। वे छत्तीस राजा जो हिमालयसे विन्ध्याचल तक अधिकार रखते थे और जो इतने दिनों-तक राठौर सनाका विजयपताकाके नीचे खडे होते थे, उसी दिनसे वे अपने २ राज्योंको चले गये उसी दिन कन्नौजके विशाल राज्यक्षेत्रसे महाराज नयनपालका लगाया हुआ वंश वृक्ष सदैवको उखड़ गया। किंतु तौ भी वह एकबार ही नाश न होगया। भविष्य भावीको यह स्वीकार था राज्यके वंशज अभी पीढियोंतक स्थित रहें; और इसी वंशकी इकतीसवीं पीढ़ीमें इसी राज्यवंशकी सन्तान राजराजेश्वर राजामान् बड़े प्रताप-शाली तेजस्वी और राजा जयचन्दके समान मरुदेशके रत्नहो, जिनको दवी सन्मानें मिले उनके प्राचीन पुरुषा नयनपाल १४ वीं शताब्दीके पूर्वहुए उसी समय उसने कन्नौजमें राज्य स्थापित किया, इस प्रकार १३६० वर्षोंकी वंशावलीका पता लगाकर जो कुछ अभिमान करें उचित है, और इतनेही इतिहास पर संतोष कर नयनपालके पश्चा-त्का वृत्तान्त कवियोंके छन्दों वा पुराणोंकी गाथाओंमें छोड़ देव। भाग्यवश कुछेक राठौर वीरोंने उस उखडेहुए वंशवृक्षको भारतके रेगिस्तानमें फिर लगाया। वह फिर लगायाहुआ राठौरोंका वंश वृक्ष मरुभूमिकी परम बालूके ऊपर थोड़े ही समयमें सजीव हो उठा और उसकी बड़ी बड़ी साखाओंने चारोंओर फैलकर राठौरोंके गौरवको पुनः प्रकाशित करदिया।

द्वितीय अध्याय २.

जयचंदके पोते सियाजी और सेतरामका देश छोडना; पश्चिमी जंगलमें उनका प्रवेश; सिधुतक फैले हुए मरुभूमिके अधिवासी जनोंका वृत्तान्त; कोलूमढके राजाके निकट सियाजीको पद प्राप्त होना; फूलराके प्रसिद्ध डांकू लाखाफलाणीके साथ उसका युद्ध; सेतरामका माराजाना; सोलंकी राजकुमारीके साथ सियाजीका विवाह; द्वारकाकी ओर उसका जाना; लाखा फूलाणीके साथ घोर युद्ध, महवेकी डावी जाति और खेडधरकी गोहिल जातिका मारा जाना, खेडदेशमे सियाजीका वास पालीके ब्राह्मणोंसे उसका पृथ्वी मांगना; सियाजीका पहाडी जातियोंके विरुद्ध पालीके ब्राह्मणोंकी सहायता करना; ब्राह्मणोका उसको पृथ्वी देना; उसका स्वीकार, पुत्रजन्म, ब्राह्मणोंको मारकर सियाजीका उनके ग्राम छीनना; तीन वेदोंको छोडकर सियाजीकी मृत्यु; उसका विश्वासघातकता; सियाजीके जेठे पुत्र आसमानका राज्याभिषेक सोनग और अज आसथानकी मृत्यु; दूहडका उसके सिहासन पर बैठना, दूहडकी कन्नौज पर चढ़ाई औरपुनरधिकारकी चेष्टा; उसका मारा जाना रायपालका अभिषेक; उसकी प्रति हिंसा; उसके तेरह पुत्रोंका वर्णन; कन्नरावका सिंहासनपर बैठना, राव जालनसी राव छाडो लीजे और दूसरे जातिवालोंके साथ इनका विवाद, भीनथालकी जय; राव सलका, राव वीरभद्रो राव चूडा, और उसका मंडोराधिकार; उसकी अन्यान्य जीतोंका वर्णन मंडोरके परिहारराजकी दुहिताके साथ उसका विवाह, गहलोत कुलके साथ उसका सम्बन्ध सम्बन्धका फलाफल, अडमल और साधूका विवाह, चूडाका मारा जाना; राव रिड़मल्लका सिहासन पर बैठना; उसका चित्तौरमे निवास करना उससे अजमेरका जीताजाना; उसकामारवाड़के विभाग करना; राव रिडमल्लका माराजाना; उसके चौवीस पुत्रोंका वर्णन; और सामन्तोंकी फहरिस्त।

जिस दिन यवनवीर शहाबुद्दीनके प्रचंड बाहुबलसे कन्नौजका राज्य चूर्ण हुआ, जिस दिन स्वदेशद्रोही जयचन्दने गंगाजीके पवित्र जलमे गिरकर अपने कियेहुए पापोका प्रायश्चित्त किया. उसी दिनसे अठारह वर्षके पीछे सम्वत् १२६८ (१२१२ ई०) मे उसके पौत्र सियाजी और सेतराम अपनी जन्मभूमिको छोडकर दोसो साथियोंके साथ मरुभूमिकी ओर गये। वे किस कारण वश अपनी मातृभूमिसे चलेगये, इस विषयम भिन्न २ भट्टग्रन्थोसे भिन्न २ मत पायेजाते है। कोई कहता है कि उनका प्रधान अभिप्राय पुण्यतीर्थ द्वारिकाको जानेका था। किसी ग्रन्थमे देखा जाता है कि, उद्यम और व्यापारकी सहायतासे नवीन स्थानमे जाकर भाग्यकी परीक्षा करै और वहां सुख व स्वाधनितासे दिन वितावे, इसी इच्छासे उन्होने अपने देशको छोडदिया था। इन दोनों मतोमे कौन मत सत्य है, वह सियाजीके भविष्य चारित्रोके देखनेसे सहजहीमे स्थिर किया जासकता है। सियाजी अभिमानी राठौरकुलका योग्य वंशधर था। पितृ पुरुषोके वीतेहुये गौरवकी स्मृतिको अपने हाथसे त्याग कर और नाशहुए गौरवका उद्धार न करके यथार्थ राजपूत कभी भी मुनि वृत्तिका अवलंवन नहीं करसकता अस्तु श्योसियाजी ऐसा नहीं करसका, यदि वह ऐसा करता तो हिन्दोस्तानके नकशेमे मारवाड़देश स्थान पाता या नही इसमे भी सन्देह है।

राठौर कुलका भविष्य भागरूपी प्रकाश जो धीरे २ प्रकाशित होरहा था, उसको सियाजी न जानसका। और वह उसे मुट्ठीभर सेनावलको लेकर मरुभूमिके गरम वालुका–राशिके ऊपर भ्रमण करनेलगा। कहां जाऊं? किस उपायसे सौभाग्य लक्ष्मीकी कृपाकटाक्ष प्राप्त करसकूं? वह इसका कुछ भी निश्चय न कर सका; किन्तु कठोर उत्तम और कामकी सहायतासे मूलमंत्रके साधन करनेमें दृढ़प्रतिज्ञ हो उसने भीषण कार्य क्षेत्रमें प्रवेश किया। इसी मंत्रके साधनके प्रभावसे उसने कुछ ही समयमें जिस विस्तारवाले भूभागपर आधिपत्य स्थापित किया था। वह यमुना, सिंधु और गारानदी तथा अर्वलीकी ऊंची चोटियोंसे चारोओरसे घिराहुआ है। इन चारों सीमाओंसे घिरेहुए विशाल देशमें जो भिन्न२ जातिये निवास करती है उनका संक्षिप्त वृत्तान्त कहा गया है। कछवाहोंनेभी उस समय तक संसारमें राजनैतिक प्रतिष्ठा न प्राप्त की थी। इनके स्वर्गीय राजा पजोनीमें वीतेहुए मुसल्मानी हमलोंमें कन्नौजके युद्धमें प्राणत्याग कियेथे। इस समय उसीका पुत्र मलीसी + कछवाह कुलके सिंहासनपर बैठा अजमेर अमेर साँभर और दूसरे चौहानराज्य मुसलमान राजाओंके हस्तगत होगये थे, किन्तु अर्वलीके अनेक किले इस समयभी राजपूतोंके वशमें रहे। विशेपकर नाडोल नगर मुसल्मानोंके घोर आक्रमणसे अपनी रक्षा करनेमें समर्थ हुआथा। उस समय वीसलदेवका एक वंशधर उस नगरका अधिपति था। इन सबोंमेंसे मरुभूमिका गौरवस्वरूप मडोर नगर, प्राचीन पडिहार कुलके गौरवकी ध्वजाको अपने विकट दुर्गके सिरमें धारण कियेहुए दुर्गसहित खड़ाहै। उस समय पडिहार कुलकी दूसरी शाखाएं ईदां गोत्रमें उत्पन्न हुए राणा मानसिंहके हाथसे मुंदोरके अधीन शासित होतीथीं। मानसिंह अपने राज्यके चारो-ओरवाले सामन्तोंसे पूजित और सन्मानित हो मरुभूमिमें श्रेष्ठ राजा गिना जाता था। उत्त-रमें नागोर कोटके निकट माहिलगण निवास करतेथे। यद्यपि कालके कठोर हाथोंके घोर प्रहारसे आज हिन्दोस्थानके नकशेमें इसका चिह्नतक नहीं पायाजाता, किन्तु उस समय यह अत्यन्त प्रतिष्ठित नगरथा, इसका विवरण बहुतसे भट्टग्रन्थोंमें देखा जाताहै। उस समय इस मोहित कुलके अधिपतिने ओडिटनामक नगरमें अपनी राजधानी स्था-पित कर १४४० गावोंके ऊपर अपने राज्यको फैलाया था। जिस स्थानमें आजकल वीकानेर राज्य स्थित है उस स्थानसे भटनेरतक समस्त प्रदेश उस समय जाट जाति-योंमें बहुतही छोटे २ स्वाधीन हिस्सोंमें वंटा हुआ था। इन सब हिस्सोंके पूर्वसे गारा नदी की रेतीली पृथ्वीतक समस्त पृथ्वीका भाग जो पाया, दया और लंगा* आदि कईएक असभ्य जातियोंके अधीन था। जैसलमेरमें भाटी उसके दक्षिणमें सोल और सिन्धु व कच्छ प्रदेशमें जाडेचा जाति वसती थी. इनके और आबू व चन्द्रावतीके पंवारोंके मध्यस्थलमें

+ पृथ्वीराज रासामें इसका नाम भलैसी लिखाहै। * उस समय इस प्रदेशमें दूसरी जातिये निवास करतीथीं; किन्तु आजकल उनका पतातक नहीं लगता, उनमेंसे बहुतसी तो शत्रुओंके हाथसे मारी गईं और शेषने मुसलमान धर्मको स्वीकार कर अपने प्राचीन नामको तिला-ञ्जली देदी।

सोलंकी रहते थे। इसके अतिरिक्त ईडर और मेवाड़के दैवीगण, खेडधरके गोहिलगण, साचोरके देवडागण, झालोरके सोनगरा ओडिनके मोहिलगण, और सिनलिके सोलागण आदि अनेक प्राचीन जातिएँ समस्त प्रदेशके वीचमें इधर उधर वहुतही टूटी फूटी अवस्थामें वास करती थीं। इनमेसे वहुतौंने तो राठौरोंके जलते हुए विक्रमाग्निमें अपने कुलकी मर्यादा और निवासभूमिकी आहुति दे दी थी। शेष अव उनके स्वाधीन रहकर सामन्त रूपसे निवास कर किसी प्रकार सुख दुःखसे जीवनको विता रहे हैं।

राठौर वीर सियाजीने अपने वाल्यावस्थाके लीलाक्षेत्र कन्नौज नगरको छोडदिया जिस राज्यमें उसके पितृपुरुषोंने बडे गौरवसहित राज्यकार्यको निवाहाथा, आज उसको अत्यन्तही दीन हीन भावसे वहांसे भागना पड़ा। कदाचित आज समस्त जीवनके निमित्त उससे उस भूमिका सम्वन्ध टूट गया। अव वह उस "स्वर्गादपि गरीयसी" जन्मभूमिको न देखने पावैगा, अव उस गंगाजीके किनारे वसेहुए कन्नौजके ऊँचे महलोंकी अट्टालिकाओंपर वैठकर लहराती हुई गंगाजीके अनन्त शब्दको न सुन सकेगा। वह राजपुत्र गौरवान्वित राठौर वंशका एक योग्य वंशधर है। कहाँ तो वह सिंहासनपर बैठता, कहाँ आज निर्वासित और निराश्रयकी भाँति देश देशमें भटकता फिरता है। सियाजीके हृदयमें इस प्रकारकी नाना चिन्ताओंका उदय होनेलगा। परन्तु वह क्षणभरको भी न घवडाया। वह जानता था कि आपत्तिका सहन करनाही राजपूतोंका प्रधान कर्तव्य है, क्योंकि आपत्तिही मनुष्यको सुखकी सूचना देनेवाली है,। उसने उन मुट्ठीभर साथियोंको साथ लेकर अपने वाल्यकालके शांतिनिकेतन, आशाकी विलासभूमि पिताके राज्यसे वाहर हो भारतके विशाल रेतीले मैदानमें प्रवेश किया। चारोंओरसे अनन्त रेतका सागर सूर्य्यकी किरणोंसे झुलसकर उसके जलेहुए हृदयकी समान धुधकार रहा है; सामनेसे अगणित रेतके कण उड २ कर उसके निष्फल आशा भरोसेकी समान उसको अत्यन्त विरूप कररही हैं। तौ भी सियाजी क्षणभरके निमित्त निराश न हुआ। तरंगसे चलायमान काठके टुकड़ेकी समान भाग्यके प्रवल वहावमें वहते २ अन्तमें वह कोलूमढनामक स्थानमें पहुँचा। आजकल जिस स्थानमें बीकानेर नगर वसाहुआहै, कोलूमढ वहांसे दश कोश यानी २० मील पश्चिमकी ओर है। उस समय वहां एक सोलंकी राजा राज्य करता था। वह सियाजीसे वहुत आदर सन्मान शिष्टाचारके साथ मिला।

सोलंकी राजाके आदर करने और उदार व्यवहारसे सियाजी अत्यन्तही प्रसन्न हुआ और उसके कियेहुए उपकारका वदला चुकानेकी इच्छा करनेलगा। उस समय लाखा फूलाणी नामक एक वीर राजपूत उस देशके निवासियोंको अत्यन्त दुःख देरहाथा। लाखा फूलाणी प्रसिद्ध जाड़ेचा कुलमें उत्पन्न हुआथा, उसका फूलरा दुर्ग मरुभूमिकी अनन्त वालुका राशिके ऊपर स्थित हो शत्रुओंके पक्षमें सव प्रकारसे दुर्गम और अटूट भावसे खड़ा था। लाखा स्वयं ऐसा दुर्द्धर्ष था कि सतलजसे लेकर समुद्रके किनारेतकके सव

देश उसका नाम सुनतेही काँप उठते थे। * सोलंकी राजाकी आज्ञासे राठौर वीर सियाजीने आज उस वीर लाखाके विरुद्ध तलवार धारण करनेकी दृढ़ प्रतिज्ञा की। धीरे २ युद्धकी तैयारी हुई। सोलंकी राजाने सियाजीको सेनापति बनाकर समस्त सेनाका भार उसीके हाथमें देदिया। उसका भाई सतराम और राठौरवीर भी उसकी सहायताके निमित्त युद्धक्षेत्रमे आये। धीरे २ दोनो दलोंमें लड़ाई आरम्भ हुई। सियाजी अपने घोर शत्रु लाखाको जीत लिया। परन्तु वह जीत सहजमें न प्राप्त हुई। उसके बदलेमें उसके जीवनका संगी भाई सेतराम और दूसरे राठौर वीरोंके हृदयका रुधिरभी बहा इस युद्धमें जय पानेसे आनन्दित हो कोलूमढका राजा राठौर राजकुमारसे बडे आनन्दसे गद्गद् होकर मिला, और अपनी बहिनका व्याह उसके साथ कर उसे अपने साथ एक दृढ़ सम्बन्ध-सूत्रमें बांधा। तदनन्तर जय पानेके पुरस्कारको साथ ले सियाजी द्वारकाकी ओर बढ़ा। कुछ दिनोंके उपरान्त अनहलवाड़ा पट्टन उसको दिखाई दिया। श्रम दूर करनेके अभिप्रायसे वह उस नगरमे उपस्थित हुआ। वहांके राजाने उसका यथायोग्य सत्कार किया। अनहलवाड़ामें ही सियाजी था कि, उसी समय एक दिन समाचार आया कि दुष्ट लाखा फूलाणीने उस नगरपर आक्रमण किया है। लाखाके आक्रमण करनेसे पत्तनका राजा अत्यन्त भयभीत होगया था; किन्तु सियाजी उसके भयको दूरकर स्वयंही उस दुर्द्धर्प जाडेचा वीरके साथ द्वंद-युद्धमें प्रवृत्त हुआ। पहले लाखा उसके प्राणप्यारेभाई सेतरामको मारकर स्वयं निर्विघ्नतासे युद्धक्षेत्रसे भागगया था। आज उस भाईके मारनेवालेके हृदयके रुधिरसे सियाजी दारुण भ्रातृशोकाग्निको शान्त करना चाहते थे। घोर बदला लेनेकी प्यास और यशकी इच्छासे उत्तेजित हो राठौरवीरने लाखाके साथ भीषण युद्ध आरम्भ किया। दोनों ओरकी सेना दूर रहकर चित्रलिखेकी समान खड़ी हो इन दोनो राजपूतवीरोके अद्भुत रण–कौशलको देखने लगी। उनके घोर असियुद्धसे रणभूमि बारम्बार कांपने लगी। आपसमें तलवार लड़नेके झनझन शब्द और उन दोनों वीरोके ललकारके अतिरिक्त उस समय और कुछभी न सुनाई देता था। किन्तु लासा आज बुरी सायतमे अनहलवाडा पट्टनमें आया था। बुरी साइतमें वह सियाजीके साथ द्वंद युद्धमे प्रवृत्त हुआ था। भाईके शोकसे दुःखित बदला लेनेकी इच्छावाले राठौरवीरके हाथसे वह आत्मरक्षा न करसका। सियाजीकी प्रचंड तलवारके आघातसे उसका शिर दो टुकड़े हो पृथ्वीपर गिरपड़ा। यह देखतेही पट्टनराजकी सेनाके जय २ कार शब्दसे आकाश गूंजउठा।

---

* यद्यपि लाखा फूलाणी अत्यन्त दुर्द्धर्ष था, परन्तु उसने कभी निराश्रयों और निर्बलोंको नहीं सताया। इसके अतिरिक्त उसने दान ध्यान और अनेक अच्छेकामभी कियेथे इस सम्बन्धमें लोनी नदीसे सिन्धु नदीके सागर संगम देशोंतक उसके प्रशंसा सूचक गीत सुनेजातेहैं। राजस्थानके ६ प्राचीन नगर इसके वशमें थे। उन नगरोंके नाम नीचे लिखे पद्यसे भली भाँति जाने जातेहै।

" कशपगढ़ा सूरजपुरा, वशाकगढ़ा ताको। अंधानीगढ़ जगरूपुरा, ये फुलगढ़इ लाखको। "

अर्थात् कश्यपगढ़, सूर्यपुर, बशाकगढ़, अंधानीगढ़, जगरूपुर, और फूलगढ़ी, लाखाके वशमें थे।

यह जयशब्द अनन्त आकाशमे पहुँच वायुके वेगसे चारोओर फैलगया। जो लोग लाखाके अत्याचारसे पीड़ित होरहे थे, उन सबोंने उस जयशब्दको आनन्दित हृदयसे सुना। और सतलजसे लगाकर समुद्र किनारे तकके समस्त देशवासियोंने दोनो हाथ उठा २ कर राठौर वीरको आशीर्वाद दिया।

दुर्घर्ष लाखाके रुधिरसे भाईकी दारुण शोकाग्निको शांतिकर सियाजीका हृदय आनन्दसे फूल उठा। अब उसको तीर्थयात्रा करनी शेष रही। वास्तवमे उसने इस इच्छाको पूर्ण किया या नहीं इसका कोई वृत्तान्त अबतक नहीं पायाजाता। भट्ट ग्रंथोंमे लिखा है कि, उस समय वह राजपूतोंके प्रधान मंत्रसे चलायमान हो अटल प्रतिष्ठा प्राप्त करनेमे तत्पर हुआ था पट्टनसे विदा होकर सियाजीने लूनी नदीके किनारे कुछ दिनो वास किया। वहां महवा नामक एक नगर था वहां छत्तीस राजकुलके मॅकेडावी (* दावी) क्षत्री वास करते थे। सियाजीने उन सबको मारकर उस नगरपर अपना अधिकार किया। राज्यका लोभ धीरे २ उसके हृदयमे दूना बढ़गया। तब उसने निकटही बसेहुए खेरधरके गोहिलोको मारकर उनके देशमे अपनी विजयपताका फहरानेका संकल्प किया और उसका यह संकल्प थोड़ेही दिनोंमे पूर्ण होगया। गोहिलोके राजा महेशदासने उसके हाथसे मरकर उसके सौभाग्यका मार्ग भलीप्रकारसे साफ करदिया। अभागे गोहिल प्राण लेकर भागगये। तब विजयी सियाजीने लूनी नदीके किनारे प्राचीन 'खेडनाथ' की लीलाभूमिमे राठौर कुलकी विजयपताका गाड़ी।

सौभाग्य-लक्ष्मीके प्राप्त होतेही मनुष्यके इच्छित कार्य्य शीघ्रतासे पूर्ण होने लगते है। खेडधरमे निवास करनेके कुछही काल उपरान्त सियाजीको अपनी श्री बढ़ानेका एक और सुअवसर शीघ्रही हाथलगा। उसी समयमें उस प्रदेशके निकट पाली नामक नगरके प्रान्तमें कुछ ब्राह्मण निवास करके अतुल भूमि सम्पत्तिका भोग करते थे, किन्तु पर्वत निवासी मेर और मीना जातिवाले अकसर उनपर आक्रमण कर उन्है अनेक प्रकारसे दुःख देते थे। शांतिकी इच्छा रखनेवाले ब्राह्मण उन दुष्टोसे अपनी रक्षा होनेके किसी उपायको अबतक स्थिर न कर सके थे।इस समयके पराक्रमको सुन उन्होंने उसकी शरण और सहायता लेनेकी इच्छा की। तदनन्तर उन सबोने मिलकर उसके निकट जा अपने समस्त वृत्तान्तको आदिसे अन्ततक कह सुनाया। सियाजीने उनसे सहायता करनेकी प्रतिज्ञा और थोड़ेही दिनोके उपरान्त अपनी प्रतिज्ञाका पालन कर उन शांति प्रिय ब्राह्मणोसे आशीर्वाद और धन्यवादको प्राप्त किया। किन्तु ब्राह्मण इससे भी निश्चिन्त न रहसके उन्होने देखा कि, सियाजीके पाली नगरके निकटसे चले जानेपर दुष्ट पहाडी लोग फिर भी उनके ऊपर आक्रमण कर पहिलेकी समान अत्याचार करेगे।

---

* दावी जाति ३६ जातियोंमेंसे है, उनके स्वतंत्र राज्यका यह अन्तिम वृत्तान्त है, मै इन देशोकी यात्रामें काम्बेकी खाडीमें भावनगरके गोहिलोसे मिला और उनके इतिहासकी अशुद्धि प्रगट की कि, उनका आना खेरधरसे लिखाहै परन्तु यह नहीं लिखा कि, खेरधर कहाहै।

यह विचार उन्होंने सियाजीको अपनेही निकट रखनेकी इच्छा कर उसको कुछेक पृथ्वी दी । सियाजी उस पृथ्वीको आदरसहित ग्रहण कर उन्हींके निकट वास करने लगा । सियाजीने जिस कोलूमढकी सोलंकिनीके साथ विवाह कियाथा, आज उसने यहाँ एक पुत्र उत्पन्न किया । सियाजीने कुलगुरुके कहनेके अनुसार नवकुमारका नाम आसथान, रक्खा ।

यद्यपि सियाजी इस प्रकारसे उन शान्तिप्रिय ब्राह्मणोंके बीचमें निवास तो करने-लगा किन्तु उसकी दुराकांक्षाकी कुछभी तृप्ति न हुई । उसकी यही इच्छा थी कि * पालीनगरी और उसमें मिलीहुई समस्त पृथ्वी मेरे वशमें होजाय किन्तु किस प्रकारसे उसकी इच्छा पूरी हो, इसका वह कुछभी उपाय निश्चय न करसका । यद्यपि ब्राह्मणों-को मारकर उसकी इच्छा पूरी होसकतीहै; किन्तु ब्रह्महत्या महापाप है । साधारण भूमिके निमित्त क्या सियाजी इस महापापमें लिप्त होगा ? किन्तु नहीं, दुःखकी बात है कि, राठौर वीरके हृदयमें यह दुराकांक्षा इतनी बलवती होउठी कि, उसने एकबारभी इस बातको न विचार जिन ब्राह्मणोंसे उसके सौभाग्यका मार्ग खुलाथा, आज उसने छातीमें पत्थर बांधकर कृतज्ञताके पवित्र मस्तकमे लात मार उन्हींके मारनेका संकल्प किया,। सुनाजाताहै कि, उसकी उस सोलंकिनी स्त्रीहीने उसे इस पैशाचिक संकल्पके पूर्ण कर-नेको उभाराथा । जो हो, सियाजी इस अनर्थ करनेवाली दुराकांक्षाके पूर्ण करनेका सुअ-वसर देखने लगा । एक दो दिन कर अंतमें होलीका त्योहार आ पड़ा । इस त्योहारके उत्सवकालमें सभी हिन्दू सब प्रकारकी चिन्ताओंको छोड़ श्रीकृष्णजीकी लीलाके अनुरा-गसे फाग खेलकर समय बिताते रहतेहैं । सियाजीने इस सुअवसरमें पालीके ब्राह्मणोंके अधिपतिको मार उनकी समस्त भूमि और सम्पत्तिपर अधिकार करलिया । इससे सिया-जीके नाममें सदैवको कलंककी कालिमा लगगई, । किन्तु इस दुष्कर्मके उप-रान्त उसकी आयुभी शीघ्रही क्षीण होगई । ब्रह्महत्या और विश्वासघातकताके पाप-रूपी कीचमें हाथोंको फैलाकर उसने जिस सम्पत्तिपर अधिकार किया उसका एकवर्षसेभी अधिक भोग न करसका । ब्रह्माके लेखको पूरा करके उसने इस लो-कसे विदा ली ।

सियाजीके तीन पुत्र हुए थे । उनमेंसे बड़ा आसथान मझला सियाजीसोनग और छोटा अज्ज था । राज्याधिकार पानेके नियमोंके अनुसार जेठा आसथानही पिताकी

* पाली, राजपूतानाके पश्चिम ओर एक बड़ी और प्रसिद्ध वाणिज्यकी मंडीहै । यह प्रायः भीलवाडेके समानहै । यह चारोंओर ऊंची २ दीवारोंसे घिरीहुई है मरहठे शत्रुओंके घोर अत्या-चारसे इसकी रक्षा करनेके निमित्त यह दीवारें बनीथीं । वह दीवारें (शहरपनाह) प्रायः आजकल टूटीफूटी पड़ीहैं । इसके भीतर दशहजारसेभी अधिक घर देखेजातेहैं । पाली अत्यन्त प्राचीन कालसे प्रसिद्धहै, पाली जिस प्रकारसे बसाहुआ है उससे जानाजाताहै कि यह किसी समयमे उत्तर हिन्दो-स्थान और समुद्रके तटस्थ देशोंको एक बड़ी मण्डी थी । तिब्बत और उत्तर हिन्दोस्थानसे बहुतसी सामग्रियें यहीं आकर इकट्ठी होतीं और फिर यहींसे देशदेशान्तर अरब, यूरोप और अफ्रीका आदि देशोंको जातीथीं । पहले प्रतिवर्ष पालीमें ७५००० रुपया चुंगीकी आमदनी थी ।

गद्दीका अधिकारी हुआ। एक भट्टग्रन्थमे देखा जाताहै कि, आसथानने गोहिलोंके हाथसे खेड़धरको छीन लियाथा। पिताके दोष गुणके अनुसार पुत्रमेभी बहुतसी दगावाजी भरीथी। सियाजीने जिस प्रकार विश्वासघातकता और अधर्माचरणसे पालीपर अधिकार कियाथा, आज उसके जेठे पुत्रनेभी उसी प्रकारके आचरणोंसे ईडरको जीत अपने छोटे-भाई सोनगको वहाँका अधिकार दिया।

ईडर नगर गुज़रातकी सीमाके अन्तिम किनारेपर वसाहुआ है उस समय यह डावीवंशीय किसी राजाके अधिकारमे था। आसथानने चतुरता और विश्वासघातकतासे उस नगरके प्रथम राजाके मरनेपर वहाँपर अपना अधिकार करलिया। शोकसे विह्वल नगर निवासी राठौरवीरके ऐसे अन्यायाचरणको न रोकसके सोनग वंशवाले हातौदिया राठौरके नामसे प्रसिद्ध हुए,। तीसरे भाई अज्जलने भी दोनो बड़े भाइयोंके समान घोर हिंसावृत्तिके द्वारा उभड़कर सौराष्ट्रके दूसरे प्रान्ततक अपनी प्रचंड तलवार चलाईथी। सौराष्ट्रके पश्चिमओर ऊखामंडल नामक एक नगरथा प्राचीन सौरवंशी भीखमशाह नामक एक राजा उस समय वहां राज्य करताथा। हिंसक अज्जने उसका वध कर उसके राज्यपर अधिकार करलिया। ऐसा कार्य करनेके कारणही उसके पुत्र पौत्र वाढेलाके नामसे प्रसिद्ध हुए।

इस विचित्र नामसे परिचित हो राठौरवीर अज्जके वंशवाले आज भी द्वारका और उसके निकटके देशोंमें वास करते हैं।

आसथान आठ पुत्रो * को छोड़कर परलोक गया, इनमेंसे जेठा पुत्र दूँहड पिताके राज्य सिंहासनपर बैठा। उस अप्रसिद्ध और थोड़े राज्यसे उसका हृदय तृप्त न हुआ। उसके हृदयमें एक इच्छा और भी बहुत दिनोसे धीरे २ बढ़ रही थी। दूहड़ लडकपन-सेही अपने पूर्व पुरुषोंके प्राचीन लीलाक्षेत्र कन्नौज राज्यके उद्धार करनेकी इच्छाको मनमे पोषण करता आ रहा था। इस समय पिताके राज्यपर बैठ उस इच्छाके पूर्ण करनेका उसने दृढ़ संकल्प किया। परन्तु उसका वह संकल्प पूरा न हुआ। कन्नौजके उद्धार करनेमे निष्फल हो दूहडने पड़िहारोंके हाथसे मंडोर छीननेकी चेष्टा की। किन्तु उस चेष्टाका पूर्ण होना तो दूर रहा, उससे उसके प्राणभी जाते रहे। उसने पडिहार राजके रक्त वहानेको जा स्वयंही उसके देशको अपने रक्तसे सींचा।

---

* दूहड, जोपसाव, खीपसी, भूपसु, धांधल, जैतमल, बांदर, और ऊहड़ यह आठ पुत्र थे। यह आठोंभाई अपने २ नामसे एक २ गिरोहके स्वामी हुए थे। इन गिरोहोंमेंसे धूहड़, धांधल, जैतमल और ऊहर गिरोह, इनकी सन्तानका पता चलताहै शेष नाश होगये।

१ इन नामोंमें बहुत गलती है दूहड़ जोपसाव धांदल ये तीन नाम तो मारवाड़के इतिहासमें मिलते है और ऊहड़ आसथानका पोता और जोपसावका बेटा था। बाकी तीन नाम अशुद्धभी हैं पर इतिहासमें लिखेभी नहीं हैं इनकी जगह हरड़के पेथड़ मैलग और चाचक नाम हैं। और किसी किसी वहीमें वेगड़ सीगण और नापा नामभी आसथानके वेटोंके लिखेहैं (प्रे. टी.)

दूहड़के सात पुत्र* उत्पन्न हुए थे। उनमेंसे जेठा रायपाल पिताके मरनेके उपरान्त राठौर कुलके सिंहासनपर बैठा। सिंहासन पर बैठतेही वह पडिहारके राजाके हृदयके रक्तको वहां पितृशोकको दूर करनेका यत्न करनेलगा। थोड़ेही दिनोंमें उसका यत्न पूरा हुआ। बदला लेनेकी इच्छा रखनेवाले रायपालने एक सेनादल ले मंडोर दुर्गपर आक्रमण किया। पडिहार राजा उसके उस प्रचंड आक्रमणको न रोकसका, इस कारण वह युद्ध खेतमे मारागया। उसके मरतेही विजयी रायपालने मडोर दुर्गपर अधिकार किया। राठौर कुलकी विजयपताका मंडोर दुर्गके शिखरोंमे फहराने लगी; किन्तु यह सब विजय थोडेही दिनके निमित्त थी। हारेहुए पडिहारोंने शीघ्रही फिर अपने पूर्वबलको इकट्ठा कर रायपालको मंडोरसे मारभगाया।

रायपालके तेरह पुत्र थे। उनमेंसे जेठा कन्न रायपालके उपरान्त गद्दीपर बैठा। बाकी सब उसके देशके सब स्थानोंमे फैल गये थे। कन्नका पुत्र जाल्हन. जाल्हनका पुत्र छाडा और छाडाका पुत्र टीडा एक दूसरेके उपरान्त गद्दीपर बैठे। इन राठौर कुमारोंके राजत्वकालका कोई विशेष वर्णन नही देखाजाता। केवल इतना ही विदित होता है कि, हिंसक वृत्तिका अवलम्बन कर वे अपने निकट निवासियोंसे सदैव युद्ध करते रहे। कभी किसीसे हारे और कभी किसीको मारकर उसकी भूमि सम्पत्तिपर अधिकार किया। जैसलमेरके भट्टग्रन्थोंमे पायाजाता है कि इनमेंसे छाडा और टीड़ा ही बड़े दुर्द्धर्ष थे। ये प्रायः भारी लोगोको बहुतही दुःख देते। इसी कारण वे इनसे युद्ध करनेके निमित्त सेना लाए खैडराज्यमें आकर इनके साथ युद्ध करते थे। राव टीडाने राज्यको बढ़ालिया था। उसने सोनगरा सर्दारसे भी नमालनगर और देवड़ा तथा बेलिचाओंके राज्यके कुछ २ अंशको जीत लिया था। टीड़ाके मरनेपर सलखा[2] उसकी गद्दीपर बैठा। भट्टग्रन्थोंमे केवल इसका नामही लिखाहुआ है। इसके उपरान्त वीरमदेव* और वीरमदेवके उपरान्त चूडा राठौर कुलकी गद्दीपर बैठे। वीरमदेवने उत्तर निवासिनी जोया जातिपर हमला कर रणभूमिमें प्राण छोड़े थे। किन्तु इसके वीर पुत्र चूंडासे राठौरकुलकी श्रीवृद्धि हुई चूंडा जैसा वीर था वैसाही एक राजनीतिका जाननेवाला भी था। यह नाम राठौरोंके इतिहासमे बहुत प्रसिद्ध है, केवल इसके ही विक्रमके प्रभावसे वीर सियाजीका वंश उन्नत हो उठा। धीरे २ ग्यारह पीढियोमे यह राठौरवंश राजस्थानके प्रायः समस्त देशोंमें फैल गया था। वीर (चूडा) ने सोचा कि, मै निश्चय करता हूं कि, अपने वंशकी श्री वृद्धिको ऊंची सीढ़ीपर स्थापित करसकता हूं;

* रायपाल, कीरतपाल, विहार, पिटल, जुगल, दालू और विगर यह सात पुत्र थे। २ इसके वंशधर सलखावत नामसे प्रसिद्ध है, महेवा और रारधड़ामे यह अबभी भूमियाकी समान वास करतेहै। ३ इसके वंशधर वीरमोतके नामसे प्रसिद्ध है वीरमदेवके विज्जानामक एक पुत्र था, उसी विज्जाके वंशधर बीजावतके नामसे प्रसिद्ध हो सेतरावा सिवाना देछूनामक तीन स्थानोंमें वास करते हैं।

१ जोधपुर राज्यकी वंशावलीमें राव दूहड़के बेटे रायपाल, चन्द्रपाल, शिवपाल, जीवराज, भोजराज, मनोहरदास, सेधराज, सावतसिंह, सूरसिंह लिखे है.

राठौरोकी वीरताको जगत्में प्रकाशित करसक्ता हूं। किन्तु इतने दिनोंतक किसीने इस कार्य्यके करनेका साहस नही किया। यद्यपि इससे पहिले उनकी जयार्ज्जनके अनेक उदाहरण देखे गयेहै किन्तु इन सबमें उनके उद्यम शीलता आदिका विशेष प्रमाण नहीं पायागया। जो उद्योगी और उद्यमी नहीं है, भाग्य स्रोतके विरुद्ध तलवार पकड़ जो आत्मोन्नतिका साधन कर आगे नही बढ़सकते, उनको जगत्में कुछभी उन्नति प्राप्त नही होती सियाजीका विपुल वंश अवतक कुछ नहीं कर सका, अतएव राठौर कुलकी श्री की वृद्धि भी न होसकी। वीरवर चूडाने यह सब विचारा। समझ बूझकर राठौर कुलके हृदयमे उसने एक विकट ताडित (विजली) वलका प्रयोग किया उस ताड़ित वलके स्पर्श होतेही राठौरकुल मानो फिर नये सिरेसे जीवित होगया। उस समय उसने समस्त राठौरोको इकट्ठा कर बड़े भयानक कार्य्यके करनेका विचार किया। उस कार्य्यकी प्रथम तरंग तो मंडोरका आक्रमण था। मंडोरको१पड़िहारराजा चूडाके उस भीषण आक्रमणको न सम्हालसका। उसके हृदयके रक्तसे समरभूमि सिंच गई। राजाका मरण देखतेही समस्त सेना विना राजाके होकर इधर उधर भागगई। जयलक्ष्मी राठौर वीर चूंडाकी गोदमें सुशोभित हुई। शीघ्रही राठौरकुलकी प्रचंड पताका मरुभूमिके प्राचीन दुर्गकी ऊंची शिखरपर सगर्व फहरानेलगी।

उद्यम, अध्यवसाय और सहनशीलताही राजपूतोंके पराक्रमको उत्पन्न करनेवाले है। इन तीनो श्रेष्ठ गुणोंसे सुशोभित हुए। विना राजपूत कभीभी उन्नति नहीं प्राप्त करसकता। वीरवर (चूडा) इन तीनों श्रेष्ठ गुणोंसे विभूषित था, इस कारण असंख्य विघ्न और संकटोंसे पार होकर उसने अन्तमे मंडोरके सिंहासनको प्राप्त किया। नही तो इस विजय पानेके कुछ दिनोंके पहिले वह इस दीन अवस्थामे गिराथा। उसको देखकर कौन विचार सकता था कि, यही चूंडा मंडोरके सिंहासनको प्राप्त करसकेगा। पहले वह अपने पूर्वपुरुषोंकी प्राप्ति की हुई भूमिसम्पत्तिसे वंचित (वेदखल) होगयाथा, यहांतक कि, प्राण वचानेके लिये उसको छिपकर दिन काटने पडेथे। उस दीन हीन अवस्थामे वह राठौरवीर चूडा अपनी रक्षाके निमित्त कालाऊ नगरमें गया। वहां उसने एक चारणके घरमें शरण ली। कुछ दिन उस चारणके घरमें छिपेहुए वेषमें समय वितायाथा परंतु अवसर पाकर उसने अपनी उन्नतिके मार्गको अपने हाथसे स्वच्छ करलिया। कहा जाताहै कि, चूंडाके मंडोरमे राजा होनेपर वही कालाऊ नगरका चारण कवि उससे मिलने आयाथा। किन्तु चूडाने उसको न पहिचानकर अपने पास न आनेदिया। तब वह चारण अत्यन्त दुखित हो एक कविता रचना राजसभाके समीप गया। वह कविता

---

* राठौरोंके इतिहाससे यह बात सिद्ध नहीं होती है कि चूंडाने पड़िहारोंसे मंडोवर लिया था, किन्तु इंदा जातिके पडिहारोंने तुर्कोंसे मंडोवर लेकर दहेजमें दियाथा जिसकी साक्षीका यह सोरठा मारवाड़में मशहूर है।

चूंटा चंवरी चार, दी मंडोवर दायजे। इंदा तणू उपकार, कमधज कदे न वीसरै॥ १॥ (प्रे. टी)

सोरठा-चूंडा नहिं आवे चीत, काचर कालाऊ तणा। वैठभयो भयभीत, मंडोवर रैमालियें॥

मूल ग्रन्थमें यह कथा यहां नहीं लिखीहै पहले भागके पृष्ठ ६२७ में लिखीहै।

आजभी मारवाड़के भाटोंके मुखसे सुनी जातीहै। उस चारणका वह मर्मभेदी सुन्दर गीत आजभी चूंडाके पूर्व आचरणोका स्मरण करताहै।

मंडोर नगरमे अपनी प्रभुताको दृढ़ करके चूंडाने नागौरमे रहनेवाली बादशाही सेनापर हमला करनेकी इच्छा की उसकी वह इच्छा भी पूर्ण हुई अर्थात् वह नागौ-रमे विजयी हुआ। तदनन्तर वह अपनी विजयिनी सेना लेकर धीरे २ दक्षिणकी ओर मुडा और बडी धूमधामसे गोडवाड राजधानी नाडौल नगरमे पहुँचा। वह अपनी सेना-को रख अपने नगरमें जा राज्य करनेलगा। वह जैसा वीर था, उसही प्रकार उसने सदैव वीरोंकी समान समय विता वीरोचित कार्योंमेही अपने जीवनको समर्पण किया। उसकी मृत्युके उपरान्त उसके वीरत्वका विवरण औरभी प्रकाशित हुआ। चूंडाके चौथे लडके अर्डकमलके चरित्रोंका उसके साथ ऐसा घनिष्ट सम्बन्ध है कि पहले उसका वर्णन न कर यदि पीछे कियाजाय तो वह वर्णन अत्यन्तही अप्रासंगिक और नीरस होजायगा। इससे हम विवश हो पहले अर्डकमलकी वीरताका ही वर्णन करतेहै।

जैसलमेरके भाटीराजाके अधीन पूगलनामक एक नगर है। उस समय उस पूंगलमे राणांगदेव नामक एक भाटीसर्दार राज्य करताथा। राणांगदेवके सादूल नामक एक बडा पराक्रमी पुत्र उत्पन्न हुआ। लाखा फूलाणीके समान सादूलभी अपने भुजवलके ऊपर निर्भर होकर जीवन बितातााथा। नागोरसे लेकर नदीके किनारे तकके सबही प्रदेशो पर समय २ पर आक्रमण करके उसने बहुतसा धन लूटा। मरुभूमिके समस्त मनुष्य साटलसे यमकी भांति भय करते थे। एक समय वह किसी नगरसे कुछेक ऊंटो और घोड़ोंको जीतकर मोहिलोंकी राजधानी ऊडिटके समीपसे होकर अपने नगरको जाता था कि, उसी समय उस नगरके स्वामी माणिकराजने आदरसहित उसका निमंत्रण किया। सादूल उसके निमन्त्रणको स्वीकार कर यथा-समय उसके घर पहुँचा। शीघ्रही खाने पीनेकी सामग्री होने लगी। इधर माणिकराज मोहिलवीर सादूलके निकट बैठ उसकी वीरत्वसूचक अनेक बातें सुननेलगा।उन सब वीरताकी बातोको सुनकर मोहिलराज कुछ विस्मित और प्रसन्नचित्त हुआ। वह समस्त वीरत्वकी कहानी एक जनके कानोमे बारम्बार अमृतकी धारा बरसा रहीथी। वह एकाग्रचित्तसे उस पाहुने भाटीवीरके समस्त वचनामृतका पान कररहीथी। उसका नाम कोडमदे था, वह मोहिलराज माणि-कराजकी पुत्री थी। माता पिताकी जीवनस्वरूपिणी कोडमदे जन्मसेही सुखकी गोदमें पलीथी। मरुभूमिके बीचमे वह एक परम सुन्दरी स्त्री थी। मंडोराऽधिपति चूंडारावके चौथे बेटे अर्डकमलसे उसके विवाहका सम्बन्ध स्थिर होगया था। विवाहभी शीघ्रही होनेवाला था,-इस कारण व्याहकी दोनोओरसे तैयारियें हो रहीथीं। परन्तु वह सम्बन्ध कोडमदेको अबतक न भायाथा। उसने सादूलकी अत्यन्त वीरताका वर्णन सुनाथा; सुननेके पहिलेसेही उसको मनहीमनमे अपना पति स्थिर करलिया था। आज उस इच्छित पतिको सामने देखकर और अपने कानोसे उसकी वीरताको सुनकर वह अपने हृदयके भावको प्रकाश किये विना न रहसकी। उसकी सहेलियोंने उसे बहुत

समझाया परन्तु वह कुछभी न समझी। उसे जिसने जितनाही रोकनेकी इच्छा की उससे वह उतनाही कहनेलगी "तुच्छ राजसिंहासनको लेकर क्या होगा, ऊंचे राठौर कुलकी पुत्रवधू होकर क्या करूंगी ?–मैने जिसको प्राण मन समर्पण कियाहै, उसीकी दासी होकर रहूंगी दूसरेकी स्त्री न हूंगी।" कोडमदेको इस कठोर प्रतिज्ञाको उसके माता पितानेभी सुना। उनका हृदय सहसा भय और दुःखसे व्याकुल होगया। राठौर कुलके साथ अपनी पुत्रीका सम्बन्ध स्थिर कर माणिकराजने ऊँच कुलके गौरवके प्राप्त की आशाको हृदयमे पोषण कियाथा,–किन्तु अभाग्यवश उसकी वह आशा पूर्ण न हुई। यदि कोडमदे राठौर राजकुमारसे विवाह करनेपर राजी न होगी तो मोहिल कुलके विरुद्ध राठौरवीर चूंडाकी रोषाग्नि निश्चयही प्रदीप्त होगी, निश्चयही वह ओडिट नगरपर आक्रमण कर मोहिल वंशको समूल नाश करदेगा। इन सब चिन्ताओने माणिक राजके हृदयमें प्रवेश कर उसको विचलित करडाला। वह कुछ भी स्थिर न करसका कि, मैं क्या करूं। अन्तमें पुत्रीकाही स्नेह बलवान होनेके कारण वह पुत्रीकी सम्मति स्वीकार करनेको विवश हुआ।

खान पान समाप्त हुआ, मोहिलराज माणिकराजने सादूलसे समस्त वृत्तान्त प्रगट किया और राठौर राजकुमारके साथ सम्बन्ध भंग करनेसे विपदकी संभावना है, यह भी प्रकाश किया। तेजस्वी सादूल इससे कुछ भी भयभीत न हुआ। उसने कहा "यदि पूगलसे रीत्यनुसार नारियल भेजाजाय तो मै आपकी पुत्रीके साथ विवाह कर सकता हूं।" इन सब बातोके होनेके उपरान्त सादूल अपने नगरको चलाआया। शीघ्रही उसके यहां विवाहसम्बन्धी नारियल गया और थोडेही दिनोके उपरान्त ओडिट नगरमे व्याहकार्य्य समाप्त होगया। राजा माणिकराजने इस विवाहमे बहुतसा दहेज दिया। बहुमूल्य मणि रत्नादि नानाप्रकारके सोने चांदीके बर्तन, एक सुवर्णकी बैलकी मूर्त्ति और तेरह राजपूत स्त्रियें माणिकराजने वर कन्याको दी।

इस विवाहका सम्वाद ब्राह्मणद्वारा शीघ्रही अर्टकमलने सुना। वह अत्यन्त क्रोध और वैमनस्यसे उन्मत्त सा हो उठा, अस्तु सादूलको दंड देनेकी इच्छासे वह चार हजार राठौर सेनाके साथ उसके मार्गको रोककर खडा होगया। इससे पहिले सादूलने सॉकला मेहराज * नामक एक मनुष्यको मारडाला था। इस समय उस पुत्रके शोकसे व्याकुल वृद्ध पुरुषने भी पुत्रका बदला लेनेकी आशासे राठौर राजकुमारका साथ दिया। माणिकराजने यह सब समाचार पाकर सादूलसे कहा। वीरपुरुष सादूल माणिक-राजकी शंकाकुल बातोसे कुछ भी न डरा, यहांतक कि मोहिल राजने चार सहस्र सेना उसे अपने साथ लेजानेको कहा, परन्तु उसने सेना लेजाना भी अस्वीकार किया। अपनी भुजाओके बल और अपने साथकी सातसौ शंभुरतन भाटी सेनाके ऊपर उसका भलीप्र-कारसे विश्वास था। परन्तु तोभी माणिक राजने अत्यन्त विपत्तिकी आशंका देखकर अपने साले मेघराज और उसके अधीन पचास सैनिकोंको उसके साथ करदिया।

---

* यह विख्यातवीर हड्डू साकलाका पिता था। सादूलके साथ इसने अनेक बार युद्ध किया था।

इन साढ़े सात सौ सैनिकोंके साथ भाटीवीर सादूल चंदननामक स्थानमे पहुँचकर थकावट दूर करने लगा। रोषोन्मत्त राठौर वीर सेनासमेत उस स्थानमें जापहुँचा। यद्यपि उसका सैन्यवल सादूलकी अपेक्षा तिगुना था, परन्तु तोभी उसने अपने शत्रुके साथ केवल द्वंद्वयुद्ध करनेकी इच्छा प्रगट की। दोनो ओरके दल कुछ देर विश्रामकर रणभूमिमे आये। सबसे पहिले भाटीकी ओरका पाहू गोत्रवाला जयतुंग और राठौरकी ओरका जोधा, चौहान ये दोनो परस्पर सामने हुए। दोनोंने अपने २ घोडोको एक दूसरेके विरुद्ध वडे वेगसे दौडाया। दोनो अपने २ हाथमे तीक्ष्ण दुधारी तलवारे लियेथे। थोडीहीदेरमे वे भीषणतलवारे एक दूसरेक ऊपर चलनेलगीं। तलवारोके एक दूसरेको लगनेसे अग्निकी चिनगारिये उडने लगीं, और वह दोनो तलवारे सूर्यकी किरणोंसे विजलीसी चमकने लगीं। अडकमल और सादूल दोनो अपनी २ सेनाके आगे खडे होकर आनन्दसहित उस भीषण द्वन्द्वयुद्धको देखने लगे। देखतेही देखते युद्ध भयानक हो उठा। यकायक जयतुंग एक घोर शब्द कर छलांग मार घोडेसमेत योधाके ऊपर जा टूटा। योधा उस विकट वेगको न सहसका अतएव घोडेसमेत पृथ्वीपर जा गिरा। योधा फिर न उठा; शत्रुके प्रचंड आघातसे उसका प्राणवायु चलवसा। विजयसे उन्मत्तहुआ जयतुंग उस समय उस तीक्ष्ण तलवारको उठाय शत्रुसेनाकी ओर दौडा, और जिसको अपने वरावरका शत्रु समझा उसीके ऊपर आक्रमण करनेलगा किन्तु उसका यथार्थ द्वन्द्वयुद्ध न हुआ। वह एकके साथ युद्धमे प्रवृत्त हो शेष न होते २ दूसरेपर आक्रमण करनेलगा। इससे एक घोर विच्छिन्नता फैलगई और तत्कालही द्वन्द्वयुद्ध वंद होकर दलयुद्धका आरम्भ हुआ। दोनो दलके योद्धा भयानक सिंहकीसी गर्जना करकर एक दूसरेपर प्रचंड वेगसे आक्रमण करने लगे।

अडकमल और सादूल दोनोकी इच्छा परस्पर द्वन्द्व युद्धकरनेकी थी। अतएव सेनाका व्यर्थ नाश होना विचार दोनोंने द्वन्द्व युद्धमे प्रवृत्त होनेकी इच्छा की। युद्ध स्थलसे दूर रथपर वैठीहुई सुन्दरी कोडमदे रणरंग देख रहीथी। सादूल इस समय अन्तिम विदा लेनेके लिये उसके निकट गया। वीरनारी कोडमदेने शांत और गंभीर स्वरसे कहा "जाओ युद्ध करो मै इसी स्थानपर रहकर आपका युद्धकौशल देखूंगी और यदि आप समरभूमिमे मारेगये तो आपहीके साथ मैभी परलोकको जाऊंगी।" कोडमदेकी वीरतासे भरीहुई वाते सुन सादूलका दिल दुगना उभर उठा और वह प्रचंड वेगसे शत्रुदलके ऊपर जा टूटा। उसके हाथमे लियेहुए तीक्ष्ण शूलके प्रहारसे कितनेही राठौर सैनिकोने प्राण गवाँए। इस प्रकार उन्मत्तकी समान भ्रमण करता २ वह राठौर राजकुमार अडकमलके सामने आया। राठौर राजकुमार स्वयं सादूलके हृदयके रक्तसे अपने घोर अपमानके धोने और हृदयकी अग्निको वुझानेके निमित्त इस समय तक गरदन उठाये उसकी राहही देख रहा था सादूलको वह इस समयतक चीन्ह न सकाथा इसही कारण क्रोधसे उन्मत्त और अधीर होकर भी उसके आनेकी राह देखताहुआ भीतर अग्नि भरे हुए पहाडकी समान अचल खडाथा। इस समय उसने अपने समीप खडे हुए

शत्रुको भली प्रकारसे पहिचाना और अपने पंचकल्याण नामक घोडेको प्रचंड वेगसे उसकी ओर चलाया। एक जन दूसरेके सन्मुख खडाहुआ रीत्यनुसार क्षणभर तो सदाचारसे व्यतीत हुआ। परन्तु थोडीही देरमे सादूलने अपने शत्रुके मस्तकको ताककर तीक्ष्ण तलवारका प्रहार किया। किंतु चतुर अडकमलने अत्यन्त शीघ्रतासे उसको रोक कर सादूलके मस्तकके ऊपर तलवार चलाई। उस समय दोनोही वीर वज्रसे टूटे हुए दो मेरुके शिखरोंके समान पृथ्वीपर गिरपडे। राठौरवीर मूर्च्छित होगया था अतएव फिर उठ खडाहुआ, किंतु भाटी वीर सादूल फिर न उठा। गिरतेही गिरते उसके प्राण निकल गये। युद्ध रुकगया। दोनोओरके वीर वज्रसे मारे हुएकी समान क्षणभर खडे रहे। फिर युद्धको रोककर रणभूमिसे कुछ २ दूर हटगये।

पतिव्रता कोडमदेका आशा भरोसा टूटगया। उसने विचारा था कि, स्वामीके साथ रहकर वहुत समयतक सुखसे दिन विताऊंगी, किन्तु उस अभागिनीके सुख सम्बन्धका बन्धन होते न होते वह सदैवके लिये उसे छोडगया। कहां है वह उसकी लावण्यमयी सुन्दर मूर्ति कि, जिस हास्यमयी मूर्तिसे उसने भाटीवीर सादूलके मनको हरण किया था, राठौर वीर अडकमलने जिस मूर्तिको अति यत्नसे हृदय मंदिरमें प्रतिष्टित कियाथा, वह सुन्दर हास्यमयी सरला सुकुमारी मूर्ति कहां है ?—वह सुन्दर कान्तिमान् मूर्ति वरमालाके साथ नवीन लाजके नये रंगसे अभी पूरी २ छूटीभी, नहीं था कि, विधवापनके विपमजालने उसको अपने अधिकारमे करलिया। कमलकली एक दिनमे ही उत्पन्न और विकसित हो कीडेके काटनस गुच्छेसे गिर पडी किन्तु कोडमदे वीरनारी थी। उसने अपने प्राणप्यारेको युद्धमे उत्साहित किया था, आज वह धर्म युद्धकी रणभूमिमे प्राणोंको न्योछावर करती है, उसके स्वर्गका मार्ग स्वच्छ हुआ; स्वर्गकी विद्याधरियें पारिजातकी माला हाथमे लिये उसके सत्कारके निमित्त स्वर्गके द्वारपर आखडी हुई। कोडमदेने मानस नेत्रोंसे यह सब कुछ देखा। उसके हृदयमें विषादकी लहरै उमडने लगी, हृदय स्वर्गकी इच्छासे उत्साहित हो उठा और वह पतिके साथ जानेकी तैयारी करने लगी। शीघ्रही उस रणभूमिमे एक वडीभारी चिता वनाई गई। मोहिल कुमारीने एक तीक्ष्ण तलवार उठाई और एक हाथसे उसको पकड प्रसन्नतापूर्वक उसने अपने दूसरे हाथको काटडाला। उसकी सखियें और सैनिक चुपचाप खडे हुए इस भयानक और शोचनीय कार्यको देखते रहे। कोडमदेने वह कटीहुई भुजा अपने श्वशुरके देनेके निमित्त एक सैनिकको दे धीर और गम्भीर स्वरसे कहा" कहना कि, तुम्हारी पुत्रवधू इस प्रकारकी थी।" तदनन्तर उसने अपने दूसरे हाथको फैलाकर निकटमे खडे हुए एक सैनिकसे कहा " मेरे इस हाथको भी काटडाल।" कोडमदेके मुख मंडलने एक अपूर्व तेजोमयी मूर्त्ति धारण कीथी, उसके दोनो विशाल नेत्रोंसे एक प्रकारकी अद्भुत ज्योति प्रज्वलित होरही थी, इसी कारण उस सैनिकने तुरंत महारानीको आज्ञाका पालन किया। एक ही चोटसेही वॉह कट गई। दर्शक गण शोक और विस्मयके मारे हृदयभेदी शब्द करने लगे। उनके रोनेसे आकाश गूंज गया। परन्तु कोडमदेके उस अपूर्व कान्ति-

मान् मुखमंडलपर उदासी या मलिनताके चिह्नतक न दिखाई दिये। उसने धीर और अकम्पित स्वरसे उस दूसरी कटीहुई भुजाको गोहिल कुलके भाटकविको देनेकी आज्ञा दी और प्राणपतिके मृतक शरीरको ले वह चितापर चढ़ गई। आज्ञाके अनुसार रानी कोडमदेको दोनो भुजाएं जहां तहाँ भेज दी गई। पूँगलके बूढे राव राणंगदेवने उस भुजाको भस्म करके उस स्थानमे एक पुष्करणीकी प्रतिष्ठा की। वह पुष्करणी आज तक भी कोडमदे सरके नामसे पुकारी जाकर उस वीरनारीके नामको अमर कर रही है।

यह अनर्थकारी अपूर्व संग्राम सन् १४०७ में हुआ था। इस घोर युद्धमें राठौरोंके सांकला गणोंने अत्यन्त वीरता प्रगट की थी। उनके ३०० सैनिकोंमेंसे केवल पचास सेनापति मेहराजके साथ युद्धभूमिसे लौटे थे। मेहराज भी अत्यन्त घायल हुआ था अडकमल और उसके चार भाइयोको भी घायल होना पडा था। वह घाव जो उसके शरीरमे हुए थे छः महीनेमें ऐसे विषम हो उठे कि, उनसे ही उस संतप्त राठौर राजकुमारके प्राण निकल गये।

किन्तु इससे भी वह भयानक विवाद शांत न हुआ। रक्तके बदले रक्त बहने पर भी दोनों ओरसे संतोष न हुआ। दोनो ओरका एक एक भी राजकुमार मरा। अस्तु इस समय पिताओंने तलवार धारण की। वीर सॉकला मेहराजके प्रचण्ड प्रभावसे ही सादूलकी सेनाका बल नष्ट हुआ था। इस कारण पुत्रके शोकसे दुःखित राव राणंगदेवने मेहराजको दंड देनेके अभिप्रायसे दल समेत उसके नगर पर आक्रमण किया। सांकलागण साधारण प्रतापशाली नहीं थे; मरुनिवासी कोई वीर भी उनको इस समय तक कभी परास्त नहीं करसके थे। विशेष कर मेहराज एक सुप्रसिद्ध वीर केसरी हडबूसांकलाका पिता था। उसके प्रचंड विक्रमको अबतक कोई नहीं रोक सका। तो फिर क्या पूँगलका राव राणंगदेव आज उसको हरा सकेगा? पुगलपतिने विशाल सेनादल लेकर सांकलके राज्यपर आक्रमण किया। सांकला उस समयमे असावधान था अथवा वह राणंगदेवके प्रचंड बलको न रोक सका था, इसका अबतक कोई विशेष वृत्तान्त नहीं पाया जाता किन्तु वह हारगया। उसकी तीन सौ सेनाके गरम लोहूसे लूनी नदीके किनारेकी वालू भीग गई। विजयी राणंगदेव हारेहुए सांकला राजाका सर्वस्व लूट कर सगर्व अपने नगरको लौट आया। राणंगदेवके मरनेका समाचार शीघ्रही उसके शेष दोनों पुत्र तनु और मेरूके निकट पहुँचा। दारुण हिंसासे उनका मस्तक जल उठा। किन्तु वे निरुपाय थे। उनको ऐसा बल नहीं था कि, जो वे मंडोरके राजाके साथ युद्ध कर सकते। अतएव उस दारुण क्रोधके वेगको रोक कर वे इसका उपाय विचारने लगे। उस समय मुलतानमे खिज़रखाँ मुसल्मान बादशाह था। रोषोन्मत्त तनु और मेरूने इस समय उसीकी शरण ली और सनातन हिन्दुधर्मको छोड मुसल्मानी धर्मको ग्रहण कर वे स्वामीको प्रसन्न करनेका यत्न करने लगे। खिज़रखाँ ने उनपर प्रसन्न हो उनको एक सेनादल दिया। उस

सेनादलको लेकर तनु और मेरू राठौरराजके विरुद्ध युद्ध करनेकी तैयारी करने लगे। उसी समयमें जैसलमेरके राजा रावल केहरके तीसरे पुत्र केलणने उनके साथ मुलाक़ात की। उसने उनके बलाबलकी परीक्षा कर उनको एक गूढ़ उपाय करनेकी सम्मति दी, और कहा कि, यदि इस उपायका अवलम्बन करो तभी अपने बदला लेनेकी प्यासकी शांति कर सकोगे।

तदनन्तर भाटी राजकुमार केलणने[1] उसी गूढ़ उपायकी सहायतासे राठौरराज (चूंडा) को कौशल जालमें फंसानेकी इच्छा की, इसी कारण उसने अपनी एक पुत्री चूंडाको देनेका प्रस्ताव किया परन्तु चूंडाने विश्वास न करके उसके प्रस्तावको अस्वीकार किया, इस कारण केलणने कहला भेजा " यदि आप इसमें किसी प्रकारका संदेह करते हैं, तो आपकी आज्ञा होनेसे मैं अपनी कन्याको नागौर भेज सकता हूं। " चूंडाने इस बातको अच्छा समझा और इसीको स्वीकार भी किया।

विवाहका दिन स्थिर हुआ। कुछ दिन हुए कि, चूंडाने नागौरनगरको जीत लिया था। इस समय वहाँ विवाहकी तैयारी होने लगी। चूंडाभी उस नगरमे आय विवाहके दिनकी राह देखने लगा। धीरे २ वह दिन आ पहुँचा। उस दिन उसके किसी गुप्त ग्रहने उसकी भाग्यकी डोरको पकड लिया था उसको वह न जान सका इधर जैसलमेरके तोरणद्वारको लांघकर पचास ढके हुए शकट बाहर निकले। उन शकटोके पीछे २ कुछेक घुडसवार और सातसौ ऊंटोके रक्षक चले। किन्तु यह विवाहकी यात्रा नहीं थी;—असलमे युद्धकी यात्रा थी। क्योंकि वह सभी घुडसवार और ऊंटोके रक्षक छिपे हुए वेशके राजपूत सैनिक थे और पहिले पचास ढके हुए फाटकोके भीतर स्त्रियोके बदले पूंगलके साहसी वीरगण बैठे हुए थे। इसके अतिरिक्त सबके पीछ राजाकी प्रायः एक सहस्र घुडसवार सेना अतिसावधानीसे आ रहीथी। जो ऊंट इसके साथ आते थे. उनकी पीठमे सैनिकोके खानेकी सामग्री और अस्त्र शस्त्रादि भरे हुए थे। राठौरराज चूंडा यह कुछभी न जान सका। वह विवाहके–योग्य साजसे सजकर उस छद्म भाटी सेनाकी ओर चला। नगरके सिंहद्वारसे कुछ दूर निकलते ही उसने उन शकटोको देखा। उसको विश्वास उत्पन्न हुआ कि, भाटीराजने उस्से दगा नही किया। वह इस विश्वासके ऊपर निर्भर हो निःसन्देह उन शकटोके निकट चलागया। परन्तु एकाएक उसके मनमे विषम सन्देह उत्पन्न होआया। इसलिये वह शीघ्रही नागौरकी ओर लौटा। परन्तु नगरके द्वारके समीप पहुँचते ही पहुचते उसपर शत्रुओंने आक्रमण किया। विश्वासघातक भाटी अपना स्वरूप धारण कर एकाएक उसके ऊपर आ टूटे। अकेले ही कई एक सिपाहियोको संग लिये हुए चूंडा उन सहस्रो प्रचंड भाटीवीरोकी गतिको कैसे रोक सक्ता? इस भयानक आपत्तिके समयमे उसके मनमे आया कि, वह यदि नगरके तोरणद्वारमे पहुँच सके. तो वह अपनी रक्षा भली प्रकार कर सकता है; किन्तु हाय? उसके मनकी इच्छा मनहीमें रह गई। प्रचण्ड शत्रुओंके

---

1 मूल ग्रन्थमें यह एक सहस्र घुड़सवार खिजरखांके लिखे हैं।

साथ युद्ध करते २ (चूंडा) सिंह द्वारकी ओर चला। उसका सब शरीर रुधिरसे भीगगया; उसके शरीर रक्षक सिपाहियोंमेसे अनेकोने ही उसकी रक्षाके निमित्त प्राणत्याग दिये। बराबर रक्तके निकलने और अस्त्रोंके प्रहारसे चूंडाका अंग प्रत्यंग शिथिल हो आया। राठौर कुल तिलक वीरवर चूंडा उस नगरके द्वारपर गिर पडा पाखण्डी भाटी अधर्म्मकी जीतसे प्रसन्न हो विकट सिंहनाद कर उठे, और नगर लूटनेके अभिप्रायसे प्रचंड पहाडी नदीके समान उन्मत्तभावसे उसके भीतर पैठ पडे। राजराजेश्वर चूंडाका पवित्र देह उनके पैरोंसे पिसने लगा, उसकी ओर किसीने एक वार देखा भी नहीं।

इस प्रकार राठौर कुलका एक जलताहुआ दीपक सदैवको बुझगया। चूंडाके और भी कुछ दिन जीवित रहनेसे राठौरकुलकी और भी द्विगणित वृद्धि होजाती। अपने असानुपिक वीरत्वके प्रभावसे वह वीरवर सियाजीके वंशमे जो तडित बलका प्रयोग करगया उसीके कारण पतित राठौरकुल फिर गर्वसहित मस्तकको उठासका। चूंडाके चौद्रह पुत्र और एक कन्या हुई थी। उसकी कन्याका नाम हँसा था। हँसा मेवाडके राजा राणा लाखाके साथ व्याही गई थी। इसके ही गर्भसे कूंभा उत्पन्न हुआ था। इस अयोग्य व्याहसे मेवाड और मारवाड राज्यमें जो विषम अनर्थ उत्पन्न हुआ था, उसका वर्णन मेवाडके इतिहासमे हो चुका है।

महावीर चूंडाकी मृत्युके उपरान्त उसका जेठापुत्र रिडमल्ल मंडोरके सिंहासनपर बैठा। इसकी माता गोहिल वंशकी थी। रिडमल्लका शरीर अत्यन्त दीर्घ और बलवान था; यहांतक कि वह अपने कुलमें सबसे अधिक बलिष्ठ गिना जाता था। चूंडाकी मृत्युके उपरान्त नागौर राठौर कुलके हाथसे निकलगया। राणा लाखाके साथ उसकी अत्यन्त प्रीति उत्पन्न होगई। लाखा उसको अपने सामन्तोंमे सबसे श्रेष्ठ जानता था। इसके अतिरिक्त उसको चालीस गावों समेत धनला नगर और भी दिया। लाखाके जीवित समयमें रिडमल्लने मेवाडका एक बडाभारी उपकार किया था अजमेरके सूबेदारके निकट एक लडके लेजानेके बहाने वह उस पुराने चौहान किलेके भीतर प्रवेश करगया और किलेके पहरेदारों तथा उसमे रहती हुई सेनाको मारकर उस किलेपर अपना कब्जाकर उसको राणाके सिपुर्द करदिया। खीमसी पंचोली नामक एक मनुष्यने रिडमल्लको यह

---

१ चूंडा सम्वत् १४३८ में गद्दीपर बैठा और सन् १४६५ मे मरा चूंडाके गद्दी पर बैठनेका सम्वत् १४३८ मारवाड़के इतिहाससे अशुद्ध है १४५१ उसके मंडोर लेनेका सम्वत् है और वही उसके गद्दीपर बैठनेका भी है। इससे पहले वह कहीं गद्दीपर नहीं बैठा था किन्तु अपने बापके बड़े भाई रावल मलीनाथकी तरफसे मंडोरसे ९ कोशपर गांव सालोड़ी थानेदारके तौरपर रहता था।

२ इसके चाँदह पुत्रोंके नाम रिड़मल्ल, सत्तारणधीर, अड़कमल्ल, पुंज, भीम, कान्हा, भजा, रामदेव, बीजा, सहेसमल्ल, बोधा, लम्बा, शिवराज इनमेंसे रिड़मल्ल, सत्ता, अड़कमल्ल और कान्हका वंश आजभी वर्तमानहै।

३ कूंभा उत्पन्न नहीं हुआ सोकल उत्पन्न हुआ था और कुंभा सोकलका बेटा था।

४ राजस्थान प्रथम खण्ड।

५ कायस्थको कहतेहैं।

यत्न बताया था। इस कारण राणाने इसके इनाममे उसे केटोनामक नगरका अधिकार दिया, जो पहले खानियोसे छीना गया था। रिडमल्ल तीर्थयात्राके निमित्त गयाजीको गया और वहांके यात्रियोपर जो कुछ कर लगता था। वह सब उसने स्वयंही दिया।

रिडमल्ल राजकार्यमें अत्यन्त चतुर था उसने ऐसे अनेक प्रबंध कियेथे जिनसे राज नियमानुसार शासित होवै यद्यपि वीर रसके चाहनेवाले भाटकवि इसका बहुतही थोडा वर्णन करतेहैं, परंतु ऐसा समझना मूर्खताहै कि, मरुदेशके राजपूतोंके यहां कानूनी मिसलें विद्यमान न हो और इस बातमे कविको सम्मतिभी यही है। वह राव रिडमल्लका बडा काम यह बतलाताहै कि, इसने अपने राज्यभरमे बांट और माप एकसे करदिये। और वह अबतक प्रचलित है। राव रिडमल्लका अन्तिम कार्य यह था कि उसने धोखेसे मेवाडके बालक राजाकी गद्दी छीननी चाहीथी, परन्तु चंद (चूंडा) ने उसको प्राण-दंड दिया जिसका वृत्तान्त उस राज्यके इतिहासमे लिखाहै। इस झगडेसे दोनो राज्यो-की सीमा पृथक् २ होगई, और वह उस समयतकही कि जिस समयतक मेवाडकी सीमा अर्वलीतक पहुँच गईथी। किन्तु हम राठौर कुलके भायेके वर्णित कियेहुए वृत्ता-न्तसे जानतेहै, कि,रिडमल्लने अपने राज्यके सब स्थानोमे भूमि और करका निर्णय समा-नरूपसे कियाथा। रिडमल्लका शोचनीय अन्तिम वर्णन मेवाडके इतिहासमें भलीप्रकारसे वर्णित होचुकाहै, इस कारण विस्तार होनेके भयसे हम फिर दुबारा उसका वर्णन नही करते। रिडमल्लके सब मिलाकर चौवीस पुत्र थे; विशेषकर इसके ज्येष्ठ पुत्र जोधाकी सन्तान मारवाडकी प्रजाहै, उनके पुत्र प्रपौत्रोने विशाल मरुभूमिके चारोओर फैलकर अपनी उन्नति की थी। आवश्यकताके कारण उनके नाम, धाम, भूमि, संपत्तिकी सूची नीचे लिखी जातीहै।

नाम	जातिये जो उनके नामसे प्रसिद्ध हुइ	भूसम्पत्ति
१ जोधाजी. [सिंहासनपर बैठे]	जोधा	
२ कांधलजी.	कांधलोत इन्होंने वीकानेरकी भूमि जीती	वीकानेर
३ चाम्पाजी.	चांपावत	
४ अखैराज. इनके सात पुत्र थे जेठा कूंपा	कूम्पावत	आहुवाकेये पलरी हरसौला वशेहट, जावला सथ-लाना, सिनगा, आसोय कंपालिया, चंद्रावल,सिरयारी, खारलो, हरसौर, वनू विजौरिया, श्योपुरा, देवरिया,
५ मंडलाजी.	मांडलोत	सरौदा

१ जोधा ज्येष्ठपुत्र नहीं था कई भाइयोंसे छोटा था सब भाइयोंमे बडा अखैराज था उसने बापकी इच्छासे जोधाको राजतिलक अपने हाथसे दियाथा उसी प्रथासे अबतकभी गाँव वग-डीके ठाकुर जो अखैराजके उत्तराधिकारी हैं जोधपुरके राजाको तिलक देते है।

२ कूंपा अखैराजका बडा बेटा नहीं था। बडा बेटा पचाण था जिसके बेटे जैताकी औलादमें वगडीके ठाकुर हैं कूंपा महाराजका बेटा और महाराज पचाणका भाई था।

नाम	खांपवशाखा	भूसम्पत्ति
६ पाताजी	पात्तावत	कूर्निचरी, नखा वारोह तथा नखदेश*
७ लाखाजी	लाखावत	
८ वालोजी	वालावत	घुनार
९ जैतमालजी	जैतमालोत	पालासनी
१० करनजी	करनौत	लूनावास
११ रूपाजी	रूपावत	चौवला
१२ नाथाजी	नाथावत	वीकानेर
१३ डूंगरजी	डूंगरोट	इनकी भूमिसम्पत्तिका कहीं वर्णन नहीं पायाजाता यह सभी अपने बडे वंशधरोंके अधीन होगये.
१४ सांडाजी	सांडावत	
२५ मांडनजी	मांडनोत	
१६ वीराजी	वीरोवत	
१७ जगमालजी	जगमालोत	
१८ हांपाजी	हांपावत	
१९ शक्ताजी	शक्तावत	
२० कर्मचंद्रजी	कर्मचंदोत	
२१ अडवालजी	अडवालोत	
२२ खेतसीजी	खेतसिओत	
२३ शत्रुशालजी	शत्रुशालोत	
२४ तेजमालजी	तेजमालोत	

तीसरा अध्याय ३.

जोधाजीका सिंहासनपर बैठना, जोधपुरका बसायाजाना; राठौरोंका मंडोरसे जोधपुरको जाना, राजधानीका बदलना. राजधानीके बदलनेका कारण सालमेर, मैडता और बीकानेरकी नई प्रतिष्ठा, जोधाजीका परलोक गमन, उनके चरित्रोंका वर्णन, राठौर वंशकी उन्नति; सूजाजी रावका गद्दीपर बैठना; मुसलमान बादशाहकी सेनासे राठौरोंका प्रथम युद्ध; पठानोंद्वारा पीपाड नगरसे राठौर कुमारियोंका हरण, सूजाजीकी वीरता और मृत्यु; उसके सिंहासनपर उसके पौत्र राव गांगाका बैठना; सिंहासनके निमित्त गांगा और उसके चचा सेखाका युद्ध; गृहयुद्ध; सेखाकी मृत्यु; बाव-

* यहांके सिपाही बडे साहसी और रणनिपुण होते हैं यह जलते रेतेपरभी सहजहीमें घूमा करतेहैं यह साधारण बातपर अस्त्र ग्रहण नहीं करते परन्तु जब अत्यन्त आपत्ति आतीहै तब यह लडाईमें बुलाये जातेहै।

रका हिन्दोस्तानपर आक्रमण करना; सब राजपूतोंकी सम्मतिसे महारथी राणा सांगाका सेनापति हो बाबरसे युद्ध करना; राव गांगाकी मृत्यु; राव मालदेका गद्दीपर बैठना; मालदेका गौरव; उसके द्वारा नागौर, अजमेर, जालोर और शिवानेका उद्धार;—उनका परस्परका विवाद; उसकी प्रतिष्ठा; गद्दीसे हटायेहुए हुमायूंपर उसका अनुचित व्यवहार; शेरशाहका मारवाडपर आक्रमण करना; यवनसेनाको आपत्ति; बुद्धिमानीसे शेरशाहका छुटकारा पाना; राठौर सेनाका पीछे हटना; दो प्रधान सामन्त सम्प्रदायका आत्मत्याग; अकबरका मारवाडपर हमला करना; मेडता और नागौरको जीत बीकानेरके रायसिंहको देना; मालदेका अपने दूसरे पुत्रको अकबरकी सभामें भेजना। सम्राटके साथ उसका असद्भाव; जोधपुरका फरमान अकबरद्वारा रायसिंहको देना; अकबरद्वारा जोधपुरका घेराजाना; मालदेका जोधपुरकी रक्षा करनेका उद्यम; उदयसिंहको अकबरके निकट भेजना; उदयसिंहका सत्कार; चन्द्रसेन, उसके द्वारा राठौर कुलकी स्वाधीनताकी रक्षा; उसका वीरत्व; मालदेका वीरत्व; मालदेका मरना; अ र [illegible] रह पुत्र।

सम्वत् १४८४ के वैशाख मासमें राठौरवीर योधाने मेवाडके अंतर्गत धनला नामक नगरमें जन्म लिया। इनके पिता राव रिडमल्ल थे जोधाजी जिस प्रकार आपत्तिमें फँसे थे और उस आपत्तिसे छूटनेके निमित्त जैसा उनको कष्ट सहना पडा था, उसका समस्त वर्णन मेवाडके इतिहासमें किया जा चुका है। अब इस समय हम केवल उसके जीवन चरित्रका वर्णन करते है इस कारण उसके सम्बन्धमें और कुछ नहीं कह सकते।

गहलौत राजकुमार वीरवर चूंडाने * नये जीते हुए मुंडोर नगरपर अधिकार किया, और उसके बाद रिडमल्ल वहांका राजा हुआ; तब उस रिडमल्लका जेठा पुत्र पराक्रमी जोधाजी अरवलीके घनघोर वनमें छिपेहुए वेपसे जा छुपा। उस दीन हीन अवस्थामें समय व्यतीत करतेहुए राठौरवीर जोधाने क्षणभरको भी न जाना कि, दैवकी कृपासे उसके भाग्य—गगनका मार्ग शीघ्रही स्वच्छ होगा और फिरभी वह मंडोर नगरको पाकर अपने अनंत कीर्तिके स्तंभ जोधपुरको प्रतिष्ठित करेगा। उसकी सहायताका बल अत्यन्तही हीन होगया। अन्तमें धीरे २ उसका बल औरभी निर्बल होतागया,। परन्तु तो भी जोधा क्षणभरके लिये भी निरुत्साह न हुआ। आशाही मनुष्यका जीवनस्वरूप हैं; और दीन, दरिद्र और अभागे मनुष्योको अत्यन्तही शांतिकारक है। विपुल राज्यका उत्तराधिकारी होकरभी जोधा आज दीन हीन अवस्थामें गिरा है। वह उस विराट् अरवलीके भीतरी भांडक—पिराओ नामक गम्भीर वनके निर्जन प्रदेशमें कुछ एक संगियोंके साथ छिपा हुआ उचित अवसर पानेकी बाट देखताहुआ समय बिताने लगा। थोडेंही दिनोमें उसकी इच्छा पूर्ण हुई; भगवती आशापूर्णा अपने वर देनेवाले रूपसे उसके सामने आ खडीहुई। उस दीन हीन अवस्थामें राठौर वीर जोधा कुछ समय व्यतीत कर एक दिन अपने साथियोंके साथ मंडोरके जीतनेकी सलाह करता था। सजे सजाये सबहीके सामने तीक्ष्ण भाले रक्खे हुए थे कि, इतनेही में एक शुभ—शंसी पक्षी जोधाजीके भालेके ऊपर बैठ बारम्बार शब्द करने लगा, उस समय एक चारणने जोधाजीके सामने आकर कहा "महाराज!

* इसी चूडाने राठौरवीर रिडमल्लको माराथा।

आज आपके ग्रह शुभ हैं, आपकी जन्मरात्रिमें जो नक्षत्र उदय हुआथा, आज फिरभी उसका उदय हुआहै, अतएव इस शुभ नक्षत्रके अस्त न होते २ आप यदि मंडोरके उद्धार करनेका प्रयत्न करें, तो आपकी इच्छा अवश्यही पूर्ण होगी। यह देखो; शुभ-शंसी पक्षी आपके भालेके डंडेपर बैठकर आपको अपना काम करनेको कह रहाहै।" इन उत्साह बढानेवाली बातोंको सुनकर राठौरवीर जोधा अत्यन्त उत्साहित हो उठा और हड्वू सांकला तथा प्रभुराय आदि प्रसिद्ध वीरोंको साथ लेकर उसने युद्धकी तैयारी की। सौभाग्यवश उसके समस्त उद्यम शीघ्रही सफल हुए। और उसने बहुत जल्दी मंडोर नगरका उद्धार कर उसपर अपना अधिकार जा जमाया।

यद्यपि जोधाजीको मंडोर दुर्ग फिर प्राप्त हुआ किन्तु उसमें वह अधिक दिन न रहा। उसने शीघ्रही अपने नामका नगर बसाकर अमरत्व प्राप्त करनेकी इच्छा की। किन्तु वह राजपूत थे राजपूत सदैवही संस्कारके वशीभूत रहतेहैं। उनका एक यही प्रधान धर्म है कि, वह सहसा किसी रद्दबदल करनेको अच्छा नहीं समझते; जिस मंडोर दुर्गको जोधाजीके पूजनीय पितामहने अपनी भुजाओंके बलसे जीता था, जहां आजतक उसकी तीन पीढियोंने राज्य किया, जो आजतक मारवाडकी प्रसिद्ध राजधानीके नामसे विख्यात रहा उसही मंडोर नगरको उसने एकसाथ छोड़दिया। उसका विशेष कारण है। वह कारण देवकी आज्ञा वा शकुनका बतायाहुआ ज्ञान अथवा दूसरी कोई दैव घटना न थी; वह केवल एक सिद्ध* योगीपुरुषकी आज्ञा थी। वह योगी मंडोरसे दो कोस दक्षिणकी ओर स्थित भाखर

---

* केल्ट (Celt) के डिरुड (Druid) के अनुसार वानप्रस्थ योगी ऐसे मनुष्योंको उपदेश कियाकरतेहैं, जो सौभाग्यवश उनके निकट निर्जन वन वा पर्वतकी गुफामें पहुंच जाया करतेहैं। इस लिये यह कोई आश्चर्यजनक बात नहीहै कि ऐसे तपस्वी महात्माकी आज्ञाको यह विश्वासी राजपूत शिरोधार्य न समझते हों॥ साधुओंसे हमारा प्रयोजन उन दरिद्रीभिक्षुकोंसे नहीं है जो भारतवर्षमें दरबदर मारे फिरतेहैं, और जिनके देखनेमात्रसे नेत्रोंको घृणा मालूम होती है, परन्तु हमारा प्रयोजन उन तपस्वी योगियोंसे है जो इन्द्रियोंको दमन करते हैं और जिनकी प्राकृतिक इच्छा केवल इतनीही होतीहै कि, जिससे शरीरमें प्राण बनेरहैं। जिन्होने दर्शन शास्त्रोंका विचार करते हुए वेदान्तका अभ्यास कियाहै और जिनका अन्तःकरण मायाकी छायासे शुद्ध होगयाहै, या जिन्होंने अपने आशयके नियमानुसार घोर तपस्या और एकान्तवास कियाहै। ऐसी कठिन तपस्या कीहै जिसको देखकर हमारी बुद्धि चकरागई ऐसे महात्माओंसे भारतके राजा महाराजा उपदेश लेनेके लिये जाया करतेथे। हमने स्वयं एक ऐसे महात्माको देखाहै जिन्होने ४० वर्षतक भूमिपर शयनके त्यागका व्रत कियाथा इन महात्माके व्रतमें केवल तीन ३ वर्ष शेष रहगये। उन्होंने बहुत देशाटन कियाथा और बडे विद्वान् और ज्ञानवान् थे इस कठिन व्रतके शेष रहजानेसे कुछ दुःख प्रतीत नहीं होता था परन्तु उनकी आकृति बडी हंसमुख, तेजभरी सरल और चित्त आकर्षक थी। वह अपनी तपस्याका वृत्तान्त कुछ गर्वसे नहीं कहतेथे और न उनको अपने व्रतकी समाप्तिका कुछ हर्षही था। एक वृक्षपर झूला पटाथा और उस झूलेपर यह महात्मा शयन करतेथे। आरम्भमें कई वर्षतक इस नियम पालनमें कष्ट रहा, अर्थात् शरीरपर सूजन आगईथी परन्तु कुछ दिनों पीछे यह कष्ट जातारहा, इस व्रतमेंभी एक प्रकारका अभिमान है और स्थिर करना बहुतही उत्तमहै कि, ऐसी कठिन तपस्यासे मनुष्यका गौरव ईश्वरीय दृष्टिमें ग्राह्य होताहै।

चिड़िया (विहंगकूट) नामक पर्वत श्रेणीके एक एकान्त गुफामें निवास करताथा। उसका चित्त सदैवही राठौर कुलकी मंगलकामनामे लगा रहताथा। एक दिन जोधा- जीके साथ उसका मिलाप हुआ, उसने राठौर राजासे कहा "महाराज! मंडोरमे आपके राज्यकी दृढता भलीप्रकारसे खटकेसे रहित न होगी इस कारण मेरी इच्छाहै कि, आप वकरचीराकी सीमामे अपने नामका एक नगर वसाओ।" राठौरवीर जोधाने योगिराजकी इच्छानुसारही किया। शीघ्रही उस "विहंगकूट" की ऊंची चोटियों मे नये नगरके प्रतिष्ठित होनेकी तैयारी होनेलगी। जिस सुन्दर पर्वत श्रेणीके ऊपर मंडोर नगर स्थापित था, भाखरचिड़िया केवल उसीका एक अंशहै। यह पर्वत श्रेणी ऐसी है कि, इसपर कोई चढ नही सकता और इसका लम्बावभी अधिक है। इसके चारो ओर वडे २ घने जंगल वृक्षोंसे ढके हुए है, पहाडकी ऊंची चोटियोंसे प्रायः छोटे २ वादल मिले रहतेहैं। इसकी वडी २ ऊंची चोटियोंपर खडे होकर वीरवर जोधाजीके वंशवाले अपने विशाल राज्यके चारोओरको सरलतासे देखसकते हैं वर्षा होकर जब दिशाएं स्वच्छ हो जातीहैं तव अपने विश्राम भवनके खुलेहुए झरोखोंके समीप खडे होकर राठौरकुलके राज्यकी सीमाको देखते रहते; उस समय उनके हृदयमें नाना प्रकारके सुखकी चिन्ताएं उत्पन्न होती और वे सदैवही ऐसी क्रीडा करतेरहते हैं। जोध- पुरके नीचेकी ऊंची पहाड़िये दक्षिणमे जाय अर्वलीकी पर्वत श्रेणियोंसे मिल अनन्त आकाश सागरमे असंख्य अचल लहरोंकी समान विराजमान है। और शेप तीन ओरसे विशाल मरुसागर अत्यन्त वालूको उत्पन्न कर तीव्र सूर्यकी किरणोंसे धुधुकार २ दूर जाती हुई दृष्टिके मार्गको रोकताहै. स्वच्छ जल कि, जो जीवनकी रक्षाका एक प्रधान उपाय है, उसका उस समय जोधाजीने विचार न किया। यद्यपि भाखरचिड़िया सब विषयों व सामग्रियोंसे परिपूर्ण है तौ भी उनमे एक इसही वडे विषयका अभाव देखा जाताहै, इसमे स्वच्छ जल पानेका कोई उपाय न था इस वातकी चिन्ता किला वनानेके समय जोधाजीके मनमे न उत्पन्न हुई। अतएव जोधपुरमें जो यह वडाभारी अभाव रह- गया वह सहजहीमे समझा जा सकताहै। परन्तु पीछे अपरिणामदर्शी होनेके कारण महाराज जोधाजीकी निन्दा न कीजाय इस भयसे मारवाडके भाट लोगोने चतुरताके साथ समस्त दोष उसी तपस्वीके ऊपर डार दिया। वह कहते हैं कि, मिस्त्रियोंने जोधपुरकी चारो सीमाओंको नापकर देखनेके समय उन योगिराजके एकान्त आश्रमको भी सीमाके भीतर लेलिया था। अपने साधन स्थानको दूसरेके हाथमे जाता हुआ देखकर सिद्ध पुरुषने वहुतसी विनय की; परन्तु किसीने एक न सुनी। उसकी प्राचीन कुटी खंड २ होकर जोधपुरमे मिला ली गई तव उसने अत्यन्त क्रोध करके शाप दिया मेरे आश्रमको छीन लेनेसे जोधपुरका समस्त जल सदाही कसैला होकर दूषित रहैगा उसका शाप पूर्णहुआ, राजाने शुद्ध जल पानेका दूसरा उपाय न देखकर एक सरोवरसे जो कि, किलेके नीचे था, कलकी सहायतासे जलका मँगवाना आरम्भ किया। महाराज जोधाजीके आगे जो राठौर राजा हुए उन्होने वारूदकी सहायतासे गिरिशृंगको उडाकर शुद्ध जलके पानेकी वहुतसी चेष्टा की। परन्तु उनका समस्त पारे-

श्रम वृथा गया। यदि इन सब बातोंको छोडकर विचार किया जाय तो यही ज्ञात होगा कि, जोधपुरके बसानेके समय महाराज जोधाजीने नगरवासियोंके सुबीते असुबीते पर कुछ भी ध्यान नहीं किया था। जिस योगीका वर्णन ऊपर कर आये हैं जोधपुरके रहनेवाले आजतकभी उसके आश्रमको दिखाकर उसे भक्तिके साथ प्रणाम करते हैं।

सम्वत् १५१५ के ज्येष्ठ मासमे राठौर वीर जोधाजीने अपने नगरकी प्रतिष्ठा की। यह मंडोरसे चारमील है। इसके उपरान्त वह और तीसवर्ष जीवित रहकर सम्वत् १५४५ मे इकसठ वर्षकी अवस्थामे इस लोकसे विदा होगये। उनके देहकी पवित्र भस्म उनके पितृपुरुषोकी भस्मके साथ मंडोरके महलमे रक्षित हुई। मारवाडके विशाल क्षेत्रमे जोधाजीही राठौर कुलका द्वितीय प्रतिष्ठानकर्त्ता था। उसके प्रतिष्ठित किये हुए जोधपुरने राठौरके इतिहासमे तीसरे युगकी अवतारण की थी। जीवनकी प्रथम अवस्थामे वह जिन असंख्य संकटोंमे पतित हुए थे, सुखका विषय है उन्होने उसकी होनहार उन्नतिके मार्गको साफ करदिया था। वह उन सब आपत्तियोंसे क्षणभरके निमित्त न घबडाये; वरन इससे महत् चरित्र और भी विकसित होगये उन्होने उन विषम आपत्तियोंमें छुटकारा पानेके निमित्त जिन उपायोंको निकाला और अवलम्बन किया थाँ वह सभी उनकी होनहार उन्नति की सीढीस्वरूप हुए। जिन समस्त सामन्तोके बाहुबलके प्रभावसे प्राचीन राठौरोंने अनेक महामहा कार्योंका अनुष्ठान और अनेक वडी कीर्त्तियां स्थापित कीं थीं। इतने दिन उन्होने जोधाजीके पितृ पितामहोसे परित्यक्त हो अत्यन्त दीन और गुप्तभावसे मरुस्थलके दुर्गम प्रदेशोमे समय बिताया था। किन्तु उसने मंडोरमे दूरहुए उन समस्त त्यागेहुए स्वार्थवंचित प्राचीन सामंत कुलके वंशधरोंको ढूंढ २ कर फिर उनके पदपर प्रतिष्ठित किया। पितृपुरुषोंके पूर्वपदको फिर प्राप्त होनेसे वे सामन्त अत्यन्त आह्लादित हुए। उनका हृदय उत्साहसे परिपूर्ण हो उठा अपने स्वामीके निमित्त उन्होंने जीवनतकको न्योछावर करदेनेकी प्रतिज्ञा की और प्रतिज्ञाके अनुसार वे गहलौतोके हाथसे राजधानीके उद्धार करनेमे सबप्रकारसे समर्थ हुए। इन समस्त वीरोसे जोधारावका असीम उपकार हुआ था, उनको वह समस्त जीवन न भूल सका। उस हरबूसांकला, उस पाबूजी और उस रामदेवराठौर की मूर्त्ति पत्थरमे कटवाकर वीरवर जोधाजीने प्राचीन मंडोरके सन्मुख भागमे स्थापित की थी। आजभी उस मरुदेशके रहनेवाले उन समस्त वीरोंकी घोडेपर चढीहुई प्रचंड मूर्त्ति उस स्थानमे जीवि-

---

१ पाबूजी अपने प्रसिद्ध तुरंगनी कालवीके ऊपर बैठाहुआहै। हरवा सांकलाके समान यहभी वीरत्व, राजपूत कवि और देखनेवालोंके आदरका धनहै, उसके समस्त कार्योंकी एक २ तसवीर खींचकर प्रतिवर्ष मारवाडके निवासियोंको दिखाई जाती है। २ रामदेवको राठौर गलत लिखाहै राठौर तो पाबूजी थे और रामदेव तंवर था। प्रे० टी०। ३ वीर रामदेव राठौरका नाम मरुदेशमें यहांतक विख्यात है कि प्रायः सभी राजस्थानमें सुना जाताहै। राजस्थानके प्रायः सभी गांवोंमे इसके नामसे एक वेदिका बनी हुईहै।

तकी समान विराजमान देखते हैं * उन स्वदेशप्रेमी वीरोंका पवित्र नामकोईभी राठौर नहीं भूलसकता । आजभी वे प्रातःकाल सोतेसे उठनेके समय उनके पवित्र नामोंकी मालाका जप करते हैं, आजभी वे प्रतिवर्ष उन पत्थरकी मूर्तियोंकी भक्तिसहित परिक्रमा कर उनके गुणोंका कथन करते २ अत्यन्त आनन्दित और आह्लादित होतेहैं । राठौरवीर सियाजीने जिसदिनसे अपने पितृ पुरुषोंके प्राचीन लीलाक्षेत्र कन्नौज राज्यको छोडकर मरुभूमिकी अनन्त वालुकाराशिके ऊपर राठौर कुलकी विजयपताका स्थापित की, उस दिनसे इस समय तक कुछ कम तीनसौ वर्ष वीतगये । इन तीन शताब्दियोंमे उनके वंशधर इतने विस्तृत और बहुतगोष्ठी (सम्प्रदाय) वाले होगये कि, चालीस सहस्र वर्गकोश भूभागभी इनके निमित्त थोडा स्थान जान पडनेलगा । यद्यपि विधाताकी इच्छासे उसी वीरकेसरी राठौर सियाजी वर्तमान वंशधर अत्यन्त दीन भावसे समय वितातेहैं, परन्तु इनके पूर्व पुरुषोंके प्रचंड बाहुबलके प्रभावसे पराहत होकर जो प्राचीन राजपूतवीर स्वाधीनतासे अनन्तकालके निमित्त राज्यच्युत हुए थे; एकवार उनके विषयोंपर विहार करनेसे किसी प्रकार भी दारुण विस्मय और शोकके वेगको नहीं रोकाजासकता । पडिहार सांकला, ईदा, चौहान, गोहिल, सोनगरा कान्तिजित् और हुल्ल आदि जिन प्राचीन राजपूतोंके अतिमानुप अनुष्ठानसे समस्त भारतभूमि एकसमय गौरवान्वित हुई थी, आज उन्हींके कुछेक मनुष्य राठौरोंके वशमे सामन्त राजाओंके रूपसे विराजमान है शेष सबका अस्तित्व तो ऐसा है कि, उनका नामतक

---

* यह सब मूर्तियें एक २ पत्थरकी चट्टानमें काटकर बनाई गईहैं । यह सभी घोडेपर चढी हुई और सम्पूर्ण योद्धाओंके वेशमें हैं । वे दहिने हाथमें बर्छेको उठाये, बाएं हाथमें घोडेकी लगाम पकडे, पीठमें ढाल लटकाये, बडाभारी धनुष और तरकस बांधे; कमरमे तलवारें और कमरबंदमें छुरी खुसीहुईहै । वह भी उन्हीं मूर्तियोंकी समान सजेहुए हैं देखनेसे यह मूर्तियें जीवित समझ पडतीहैं । मानो सबहीं अहंकारसहित टेढी भौंह करके देख रहीहैं । कालके प्रभावसे भारतकी स्वाधीनताके साथही साथ समस्त शिल्पविद्याका भी लोप होगया है। हमारे पुराणोंमें जो हिन्दोस्थानके प्राचीन शिल्पका वृत्तान्त देखाजाताहै, आजकलकी अवस्था देखनेसे वह सभी कल्पित जानपडताहै । परन्तु उस शिल्पने भारतमें एक समय बडी उन्नति प्राप्त की थी, वर्तमान समयमें भी उसका अधिक प्रमाण पायाजाताहै । यह सब मूर्तियें एक बडे मैदानमें ऊपरकीओर क्रमश. स्थापित हैं । पहिले पाबूजी तदनन्तर रामदेव राठौर और उसके उपरांत राठौरवीर हडबूसांकलाकी[1] मूर्ति हैं, अन्तमें चौहानवंशीय प्रसिद्ध वीर गांगाकी मूर्ति है कि जिसने महमूदका आक्रमण रोकनेको सतलजके किनारे अपने सैतालीस लडकों समेत जीवनको न्योछावर कियाथा । इन सबके पीछे गहलौत कुलमें उत्पन्न हुए मिवेशतिमंगोलियाकी मूर्तिहैं, इसनेभी राठौरराज जोधाजीकी सहायता की थी । इन कईएक वीरोंकी मूर्ति देखनेसे मनमें अत्यन्त उत्साह हो उठताहै । अपने देशकी रक्षाके निमित्त इन्होंने अपने प्राणतक देने स्वीकार किये थे । दु खका विषयहै कि, इनका यथार्थ वर्णन कहीं नहीं देखाजाता ।

---

१ हडबूसांकला राठौर नहीं था, सांकला था जो पवारकी एक शाखा है ।

राजस्थानके नकशेसे लुप्त होगया है, आज भाटोंके काव्यग्रंथ और मनुष्योंके स्मृति-पद (याददास्त) के अतिरिक्त उनका कुछ भी चिह्न दिखाई नहीं देता । उनके वंशका वृक्ष अनन्त कालसागरमें डूबगया है, परन्तु उस अनन्त मरुभूमिमें उनके पैरोंके चिह्न अब भी जीवित भावसे विराजमान है । उन समस्त महापुरुषोंके पवित्र पद चिह्नोंको देखकर कौन उनका अनुसरण करके उनके महत् चरित्रोंके अनुकरण करनेमें अग्रसर न होता ? कौन राजपूत भाट कवियों समेत ऐसे समस्वरसे नहीं कह उठता कि " सबही अनित्य है, जीवन दीपकमें जलनेवाले पतंगोंकी समान है । सब ऐश्वर्यकी सामग्रीका नाश होजायगा, केवल महापुरुषोंका नामही अनन्तकालतक अमर रहैगा । "

जोधारावके चौदह पुत्र * उत्पन्न हुएथे । उनमेंसे जेठे सांतलजीने पिताके राज्यको छोड राजस्थानके उत्तर पश्चिम भाटियाके राज्यमें सातलमेर नामक एक क़िला बनवाया । यह क़िला आजकल पोकर्णसे तीन कोशकी दूरीपर स्थित है । मरुभूमिके एक प्रान्तमें सराई नामक यवनजाति वास करतीथी । उसके अधिपतिके साथ सांतलका घोर विवाद उपस्थित हुआ । इसी विवादमें उसने उस यवन राजा (खान) सराईको मारडाला था; परन्तु आपभी अपनी रक्षा न करसका सगोनामक स्थानमें इसका शव जलायागया । सांतलकी सात स्त्रियेंभी उसके साथ सती होगई ।

जोधा रावके चौथे पुत्र दूदाने मैरताके विशाल क्षेत्रमें अपने वंशतरुको स्थापित किया । इसकेही वंशधर मैडतिया राठौरके नामसे प्रसिद्ध हैं । एक समय यह मरुदेश मे वड़े श्रेष्ठ वीरके नामसे प्रसिद्ध था । जिस वीरकेसरी जयमलने दिल्लीश्वर अकबरकी प्रचंड सेनाके विरुद्ध चित्तौड़गढकी रक्षा की थी, जिसकी पत्थरकी मूर्ति आजभी

* नाम.	गोष्ठी.	भूसम्पत्ति.	कैफियत
१ सांतलजी	+	सातलमेर	पोकर्णसे तीनकोश
२ सूजाजी	+	+	जोधपुरका उत्तराधिकारी
३ जोगाजी	+	+	निर्वंश
४ दूदाजी	मेर्तिया	मैरता	इसने चौहानोंके हाथसे सांभरको छीन लियाथा इसके वरिन नामक एक पुत्र हुआ वरिनके दो पुत्र जयमल और जगमाल हुए इनसे जयमलोत और जगमलोत दो गोष्ठी उत्पन्नहुई
५ वरसिहजी	वरसिंहोत	नैाती	
६ बीकाजी	बीकावत्	बीकानेर	
७ भारमलजी	भारमल्लोत	बीलारा	
८ शिवराजजी	शिवराजोत	दूनारा	
९ कर्मसीजी	कर्मसोत	क्योनसर	रवीमसर
१० रायपालजी	रायपालोत		
११ सांवतसीजी	सांवतसागोत	द्वारो	
१२ बीदाजी	बीदावत	बीदावाटी	जि० नागौर
१३ वनवीरजी			
१४ नींबाजी			

दिल्लीके सिंहद्वारसे विराजमान है, राठौड़ राज कुमार दूदा उसीका पितामह था। दूदाके एक सर्वगुण सम्पन्न और परमविदुषी पुत्री हुईथी। उसका नाम मीरावाई था। उसी मीरावाईके साथ राणा कूंभाका विवाह हुआथा। मीरावाईके गुणोकी प्रशंसा आजतक मेवाड़मे गाई जाती है।

छठवे पुत्र बीकोने अपने चचा कांधलकी चालचलन व रीति भाँतिको स्वीकार किया और अन्तमें उसकेही साथ मिलगया। तदनन्तर जाटोके अधिकृत कईएक गाँव और नगरोको छीनकर उसने प्रसिद्ध नगर वीकानेरकी प्रतिष्ठा की वीकाजीका सविस्तर वृत्तान्त वीकानेरके इतिहासमे प्रगट होगा।

राठौरकुल चूडामणि जोधाके मरनेके उपरान्त उसका दूसरा पुत्र सूजा मारवाडकी गद्दी पर बैठा। जो नियम कि राजगद्दीपर बैठनेका सदासे चला आताथा, उसमे यह विरुद्धता क्यो हुई, इसका कोई कारण नही देखा जाता, ग्रन्थकर्ता भाट-कवियोने भी इस विपयमें कुछ नहीं कहा। जो हो सूजा सवप्रकारसे अपने पिताका योग्य पुत्र था। उसके अधिकारमे मारवाडका राज्य सत्ताईस वर्प रहा, उसने वड़ी सावधानी और चतुरतासे राज्यकार्य किया।

दिल्लीके सिंहासनके लिये जिस समय लोदीवंशीय राजाओमे अत्यन्त विग्रह उपस्थित हुआ, उस समय मारवाड़का सिंहासन यवनोकी दुष्ट दृष्टिसे वचाहुआथा। घरकेही युद्धमे लिप्त होकर लोदियोको देश जीतनेका अवसर प्राप्त न हुआ। किन्तु यवन हिन्दुओके परम शत्रु है। हिन्दुओको भलीप्रकार शांतिसे सुख भोगते देख उनको अत्यन्त असंतुष्टता उत्पन्न होतीहै। मुसलमान् राजाओको हिंदुओके शांति भंग न करनेकी चेष्टा करनेपर भी उनके यहांके स्वार्थी और हिन्दुओके द्वेपी सेनापति समय २ पर हिन्दुओके ऊपर आक्रमण कर उनपर अनेको प्रकारके अत्याचार करतेथे। सम्वत् १५७२ (सन् १५१६ ई) के श्रावण मासके शुक्लपक्षकी पार्वती तृतियाको पीपार

---

१ यह बात गलतहै मीरावाई दूदाकी वेटी थी और कूंभाको विवाही गईथी क्योंकि वास्तवमें मीरावाई दूदाजीके दूसरे वेटे रत्नसिंहकी वेटी थी और महाराना कूंभाके पोते महाराना सांगाजीके कँवर भोजराजको विवाही थी। २ जोधाके पीछे सातल गद्दीपर बैठाथा और उसके पीछे संवत् १५४८मे उसका भाई सूजा उसका उत्तराऽधिकारी हुआ। ३ राजस्थान प्रथम खण्डके अ०२३ पृ० ७३३ मे पार्वती तृतीयाका वर्णन देखो। ४ पीपार यह एक साधारण छोटासा शहर जोधपुरसे १५ कोश है। इसमे कुछ अधिक १५०० घर है। इस शहरमे वहुतसे वनिये रहते है। कहा जाताहै कि, ईसाके जन्मके पहिले उज्जैनमें जो एक गन्धर्वसेन नामक पंवार राजा था, उसहीने इस पीपाडनगरको वसाया था। महात्मा टाडसाहवको यहां एक पत्थरका लेख मिलाथा। उससे विजयसिंह और दूलनजी राजाका नाम पाया जाताहै। यह दोनोंही गहलौत कुलमे उत्पन्न हुएथे और रावलकी उपाधिद्वारा प्रसिद्ध थे। इससे जानाजाताहै कि गहलौतोंने पंवार राजाओंसे उस नगरको जीताथा। इधर मेवाड़के एक प्राचीन इतिहासमें भी देखाजाता है, कि गहलौत कुलमें जो चौवीस शाखाओंमें बटाहुआ है, उन चौवीस शाखाओंसे अतिरिक्त दूसरे "पिपाड़ा गहलौतभी" हैं।

नामक नगरमें एक महोत्सव होरहाथा, उस महोत्सवमे मारवाडकी अनेक दिशाओंसे असंख्य * राजपूत स्त्रिये भगवती गौरीकी पूजा करने आईथीं । उसी समय उस "तीज" के दिन एक पठानोकी सेनाने आकर उस मेलेपर आक्रमण किया, और वे १४० कुमारियोको हरलेगये । कोईभी उनको न रोकसका । इस शोचनीय समाचारको राजा सूजाने सुना । क्रोध और हिंसासे उसका मस्तक जलने और चकराने लगा दुष्टोंको दंड देकर कुमारियोकी रक्षाके निमित्त वह अत्यन्तही कातर हो उठा। अधिक सेनाके सजानेमें विलम्ब होनेके भयसे वह अपनेही साथवाले पहरेदार सिपाहियों समेत पाखण्डी पठानोका पीछा करनेको बाहर निकला सूजाने अत्यन्त वेगसे धावा करके उनका पीछा किया, पीछा करते २ अन्तमे उसने मुसलमान सेनाको देखपाया । वह क्रोध और हिंसासे दुगना उत्तेजित हो उठा । सिंह जैसे अपने बच्चोको हराहुआ देख अति प्रचंड वेगसे हरनेवालेपर आक्रमण करता है । आज मारवाड़के अधिपति राव सूजाने उसही प्रकार कुमारियोके हरनेवाले पठानोके ऊपर अत्यन्त प्रचंड पराक्रमसे आक्रमण किया, शीघ्रही दोनों दलोंमें घोर युद्ध होने लगा । थोड़ेही देर युद्धके उपरान्त सूजाने यवनोको मार कुमारियोको छुड़ालिया । सूजा विजयीहुआ । यद्यपि उसने यवनोको मारकर कुमारियोका उद्धार करलिया, परन्तु शत्रुओके घोर आघातोंसे वह इतना घायल हुआ था कि उन्ही आघातोसे वह अधिक क्षण जीवित न रहसका । राजपूत कुमारियोंके छुड़ानेके कुछ ही देर उपरान्त वह भी रणभूमिमे गिरपड़ा । किन्तु वह मृत्यु उसकी आनन्दकी मृत्यु हुई । वे एक सौ चालीस कुमारियां जब उसको घेरकर उसकी वीरताके गीत गानेलगी, तब उसके आनन्दकी सीमा न रही । उस असीम आनन्दका भोग करते २ वीर सूजाकी आत्मा अनन्त सुखमय अमरधामको चलीगई । राव सूजाकी इस असीम वीरताका वर्णन आजभी राजस्थानके भाटोके मुखसे सुना जाता है; आजभी उसी पार्वती तृतीयाके मेलेमें उस मारवाड़की राजाकी असीम वीरता और महत्वता तथा पीपाड़ नगरकी कुमारियोके हरण किये जानेका वर्णन उत्साह सहित गाया+ जाता है ।

---

* असंख्य राजपूत स्त्रियोंका आना गलतहै क्योंकि न तो असंख्य राजपूत स्त्रियों पीपाड़में आईथीं और न मेलेमे राजपूत स्त्रियोंके आनेका कहीं नियम है । और फिर इसतरह बिनारक्षाके राजपूत स्त्रियां आती जाती नहीं है कि, जिनसे एकदम १४० को मुसलमान पकड़कर लेजावें और एकभी तलवार उसजगह न चले संभवहै कि साधारण प्रजाकी बहूबेटियां है (प्रे० टी०)

+ यह घटना राव सूजाजीके समयमें श्रावणी शुक्ल ३ सं० १५७२ को नहीं हुईथी, किन्तु राव सातलके समयमें चैत्र सुदी ३ सं १५४८ मे हुई थी उस समय राव सातलजीसे और अजमेरके सूबेदार मल्लूखांसे पीपाड़के पास लडाई होरहीथी । तीजके दिन गॉव कोसानेके तालाबपर से जो पीपाड़के नजीक है मल्लूखांका एक सर्दार तीज पूजनेवाली सात बीसी लडकियोंको पकड लेगया सातलजी मल्लूखांके लश्कर पर रातको धावा करके उन लडकियोंको छुड़ा लाया और आपभी बहुत जखमी होनेसे उसी रातको गांव कोसानेमे आकर मरगया । सूजाजी गद्दीपर बैठे ।

सूजाके पांच पुत्र थे। उनमेसे जेठेने तो अकालमेही देह छोड़ दी थी, इस कारण उसका पुत्र गांगा पितामहके सिंहासनपर बैठा। सूरजमलके चार पुत्रोमेंसे दूसरे पुत्र ऊदाके वीर्यसे ग्यारह पुत्र उत्पन्न हुए। इनका वंश उदावतके नामसे प्रसिद्ध हुआ। इनको मारवाड़ और मेवाडमे बहुतसी भूमिसम्पत्ति प्राप्त हुई। उनमेंसे वीमाज, जेतारन गूदोज, वराठिया और रायपुर आदि कुछेक नगर प्रसिद्ध है; तीसरे सांगाको एक स्वतंत्र नगर प्राप्त हुआ था, उसका नाम बरोहमे था। इस सांगाके वंशधर सागावतके नामसे प्रसिद्ध हैं। चौथे प्रयागसे प्रागदास गोत्र उत्पन्न हुआ। पांचवां वीरसदेव[1], इसके नरा नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ था। मारवाड़ निवासी नराको[2] देवताके समान पूजा करते है। सोजत नामक स्थानमे इसकी एक मूर्त्ति स्थापित है तिसकी आजकल भी पूजा होती है नराके वंशधर नरावत जोधाके नामसे प्रसिद्ध है। इसकी एक शाखा हाडोतीके अन्तर्गत पंच पहाड़ नामक स्थानम देखी जाती है।

राठौर वीर सूजाके सम्वत् १५७२ (सन् १५१६ ई०) के भाद्रपद मासमे परलोक गमन करनेपर उसका पौत्र गांगा मारवाडके सिंहासन पर बैठा, उससे गांगाका दूसरा चचा सेरवाजी उसका घोर शत्रु होगया। सेरवा अपनेको पिताका योग्य उत्तराधिकारी कहकर प्रचारित करने और गांगाको गद्दीसे उतारनेके निमित्त एक योग्य सहायताकी खोज करने लगा। लोदीवंशीय दौलतखां[3] नामक जिस विश्वासघातक यवनने दिल्लीश्वर इब्राहीम लोदीका सर्वनाश करनेके निमित्त वीरकेसरी बाबरको भारतवर्षमे बुलाया था, वही इस समय राठौरोंके हाथसे नागोरको छीनकर सुख भोगता था। अपने स्वार्थसे अंधेहुए मनुष्यको अपने हिताहितका ज्ञान एकसाथ भूलजाता, यहां तक कि, वह यथार्थ पशुकी समान होजाता है। आज स्वार्थान्ध सेरवाजी भी ठीक ऐसाही होगया। जिस दौलतखांने उसके पितृपुरुषोके जीते हुये प्राचीन नागौरको बलपूर्वक छीन लिया था। आज सेरवाजी स्वार्थ पूर्ण करनेके निमित्त राठौर कुलके उसी शत्रुके निकट सहायताकी प्रार्थना करने गया। अपनीही जातिकी शत्रुतासे ऐसेही कायरोंद्वारा भारतका सर्वनाश होगया है। जो हो, स्वदेशवैरी स्वार्थान्ध सेरवाजीकी दुष्टतासे मारवाडमे एक बडाभारी झगडा उपस्थित हुआ। इस घरके उपद्रवमें नित्य लिप्त हो आज महाराज जोधाजीके पुत्र प्रपौत्र परस्पर एक दूसरेके हृदय रक्त पीनेको उन्मत्त हो उठे। मारवाडके वीरगण आज दो दलोमे बँटकर दोनो राठौर राजकुमारोके पताकाके नीचे खडेहुये दौलतखाने इनका विचोही होकर झगड़ा दूर करनेकी चेष्टा

---

१ वीरमदेव सूजाका बेटा नहीं सूजाके बेटे वाणाजीका बेटा था। जो कि कँवरपनेमें मर गयाथा। २ नराजी वीरमका बेटा नहीं था, सूजाजीका बेटाथा और वाणाजीसे बडाथा। ३ यह दौलतखां न तो लोदी वंशी था और न इसने राठौरोंसे नागोर छीना था यह तो नागौरका स्वतंत्र रईस नव्वाब कई पीढियोंसे था। और टाक जातिका मुसलमान राजपूत गुजरातके बादशाहोंकी शाखामेंसे था। और खानजादा कहलाताथा। गुजरातके बादशाहोकी सहायतासे इसको नागौरका अधिकार मिलाथा।

को और मारवाडके राज्यको शत्रुओंके बीचमें बाँट देना चाहा। किन्तु तेजस्वी गांगाने अहंकारपूर्वक उस प्रस्तावको अस्वीकार किया और तव दोनों तलवारकीही सहायतासे अपने २ भाग्यकी परीक्षा करनेमें तत्पर हुए। सौभाग्य वश उसको मरुस्थलीके श्रेष्ठ वीरोंकी सहायता प्राप्त हुई। इस कारण उस गृहयुद्धमें उसीने सव प्रकारसे जय प्राप्त की। उसका घोर शत्रु सांगा युद्धस्थलमें मारागया और दौलतखां लोदी अत्यन्त घायल और तिरस्कृत होकर युद्ध क्षेत्रसे भाग निकला।

राज्यको पाकर गांगाने वारहवर्षतक निष्कंटक राज्य किया। इसी समय वीरवर वावरकी प्रचण्ड रणदुन्दुभीके शब्दसे समस्त हिन्दोस्थान कांप उठा। उस भयानक कंपके साथही साथ दिल्लीके वादशाह इब्राहीम लोदीकाभी सिंहासन कांप उठा-उसका राजमुकुट पतित होकर पृथ्वीपर गिरपडा। अकस्मात् इस विप्लवके होजानेसे हिन्दूराजसमाजमे एक घोर भय उपस्थित होगया। सभी राज्यके नाश होनेके भयसे अत्यन्त भयभीत हो इस नये आयेहुए प्रचंड शत्रुके पराजित करनेका यत्न करने लगे-और सवने महारथी राणा संग्रामसिंहकी पताकाके नीचे इकट्ठे हो उस भयानक भारत-शत्रुके विरुद्ध युद्धकी यात्रा की मारवाडपति राव गंगाभी अपने देशकी स्वाधीनताकी रक्षाके निमित्त उस महायुद्धमें सांगाके साथ हुआ। इस भयानक संग्राममें राजपूतोंने जो आश्चर्य्यजनक वीरता दिखाई मेवाडके इतिहासमे उसका भलीप्रकारसे वर्णन हुआहै। यदि राजपूतकलंक तँवर सलहदी विश्वासघातकता कर वावरकी ओर न हो जाता तो राजपूत अवश्यही मुसलमानोके पंजेसे भारतको छुड़ालेते। अन्यान्य राजपूतोको समान राठौरोंने भी इस युद्धमे असीम वीरता दिखाईथी। कहते है कि, इस युद्धमे सव सेनाके सामने इसी सेनाने स्थान पायाथा। उस राठौर सेनाका सेनापति राव गंगाका पोता वीर वालक रायमल[१] हुआथा। रायमलने मैरतिया सरदार खाँतो और रवरत्ननामक दो राठौर वीरो समेत वावरकी तोपोंके सामने हो अतुल वीरताको प्रकाश कर अन्तमें रणभूमिमे प्राण त्यागदियेथे।

इस दारुण पौत्र शोकसे गांगा अधिकदिन जीवित न रहसका उस[२] भयानक युद्धके चारवर्षके उपरान्तही उसने देहको त्याग इस शोक[३]के वोझसे छुटकारा पाया।

---

१ यह रायमल गांगाजीका पोता नहीं था। दूधाजी मेडतीयका वेटा था। और गांगाजीका पोता राममल तो इस लडाईके कई वर्ष पाछे पैदा हुआथा।सवमें वडा पोता राव गंगाजीका राव राम था। वह भी इस लडाईसे दो वर्ष वाद संवत् ११८५ में पैदा हुआथा रायमल मेडतिया अपने भाई मेडतेके राव वीरमदे ही तरफसे अपने भाई रत्नसिंह सहित जो मीरावाईका वाप था राजा सांगाकी मददके लियेरःया उस लड़ाईमें यह दोनों भाई काम आगये थे। २ पतिकी दीहुई कुलतालिकामें लिखाहुआहै कि गांगाको विप दियागयाथा। परन्तु यह विश्वासके योग्य नहीं क्योंकि इसका वर्णन और किसी ग्रन्थमें नहीं पायाजाता। ३ इस शोक सन्तापकी कथा भी नयीगढन्त जैसी मालूम होतीहै जोधपुर राज्यके मूल इतिहासमें इसका कहीं पता नहीं लगता।

गांगाके मरनेपर मालदेव सम्वत् १५८८ (सन् १५३२ ई०) मे उसके सिंहासनपर बैठा । मारवाड़के बड़े २ राजाओंके समान मालदेवभी मारवाडके इतिहासमे एक महत् चरित्रको स्थापित करगयाहै । उसके राज्यकालमें मारवाडकी जैसी उन्नति हुईथी, यदि उसमे कुछभी चेष्टा की जाती तो वह देश रजवाडेमे सब देशोंका सिरमौर गिनाजाता । परन्तु राव मालदेवने अपने यत्नमे न्यूनता न की। यद्यपि वह अपने राज्यमे वावरके आक्रमण करनेकी आशंका करता था, परन्तु उस आशंकासे उसकी कुछ हानि न हुई क्योकि वावरकी तीक्ष्ण दृष्टि उस समयतक मारवाडकी ओर नहीं गई । अन्न उपजानेवाली गंगा किनारेकी भूमि छोड़कर शाक उपजानेवाले महावीर मारवाडकी प्रचंड वालुकाराशिकी ओर जानेकी उसने इच्छा भी न की । इससे मालदेवको अपने राज्यके वढानेका एक अच्छा अवसर हाथ लगा । जिस स्थानसे दिल्ली और मारवाडकी सीमा विभक्त है उस स्थानपर कईएक किले वनेथे, वे किले दिल्लीके राजाओंके अधीन थे । इस समय अवसर पाकर मालदेवने उन सव किलोको अपने वशमे करलिया और दूर वसेहुए ढूढाड़मे राठौरकुलकी विजयपताका स्थापित की । उसका गौरव दिन २ वढ़ने-लगा । उसके गौरववृद्धिके मार्गमे उस समय एकभी कांटा वर्तमान न था । वीरकेसरी राणा सांगाके मरनेपर मेवाड राज्यमे जो घोर उलटपलट और विग्रह उपस्थित हुआ उसमे सभी मुगल, पठान आदि शक्तिमान मुसलमान लिप्त थे उस समयमे मारवाडकी ओर किसीकी भी दृष्टि न पड़ी । अतएव राजा मालदेवने अप्रतिहत प्रभावसे अपनी असीम प्रभुताको प्रगट कियाथा । उसने ऐसे सुअवसरको पाय अपने राज्यके वढ़ानेकी दृढ़ प्रतिज्ञा की, इस कारण जो शत्रु मित्र उसकी उन्नतिके मार्गमे कंटक स्वरूप खड़े हुए थे, उन्हींको अपनी तलवारसे काट उनके राज्यपर अपना अधिकार किया । ऐसेही धीरे२ वह मारवाडका अति श्रेष्ठ राजा होगया । इतिहास लेखक फरिस्ताने इसकी अपेक्षा औरभी उच्च सन्मान दिया है। वह कहताहै कि " मालदेवही उस समयमे हिन्दो-स्थानके प्रसिद्ध राजाओमे गिना जाताथा ।"

मारवाड़पति राव मालदेव जो यथार्थहीमे इस सुनामके योग्य था, उसके महत् चरित्रोंपर विचार करके भलीप्रकार प्रगट होजायगा कि उसके चरित्र वा प्रभाव वहुत वड़े थे । राजपदपर अधिष्ठित होकर उसने मुसलमानोंके ग्राससे पितृपुरुषोके प्राप्त किये दो प्रधान नगर नागौर और अजमेरका उद्धार किया । इसके आठवर्षके उपरान्त सम्वत् १५९६ मे सिंधिलोके अधिकारसे उसने जालोर, सिवाना और भाद्राजून नामक तीन *नगर छीन लिये, और वीकाके वंशधरोको बीकानेरके अधिकारसे च्युत करदिया । लूनी नदीके किनारेवाले जिन नगरोमे राठौरवीर सियाजीने एक समय अपनी विजयपताका स्थापित की थी, उन सव स्थानोके अधिपतियोने इससे पहिले राठौर कुलकी आधीनताको दूर वहाकर स्वाधीनता प्राप्त की, परन्तु इस समय मालदेवने उन

* राव मालदेवने ये तीन नगर स्यन्दल राठौरोंसे नहीं छीनेथे । जालोर तो सं० १५९५ में विहारी पठानोसे छीना गयाथा और सिवाना जेतमालोत राठौर जातिके राना डूगरसी राठौरसे लियाथा ।

सबको पराजित करके उन्हें फिर अधीनताके बंधनमे बांधा । उसका प्रचण्ड प्रताप अत्यन्त प्रकाशित हो उठा । उसके असीम प्रतापके सामने विशाल मरुस्थलीके सभी राजाओने शिर झुकालिया । जो प्राचीन "भूमियांगण" एक समय मरुस्थलीके बीचमें अत्यन्त दुर्धर्ष गिने जाते थे, वे भी राठौरराजके प्रबल प्रतापसे पराजित हुए और उन्होंने उसको समस्त मारवाड़का अधिपति कहकर स्वीकार किया और वे अपने रुधिरका दान कर २ उसकी सेवा करने लगे ।

जब प्राचीन भूमियांगण उसके अधीन हुए, तब वह राठौरराज मालदेव अपनी विजयिनी सेनाको लेकर धीरे २ उत्तरकी ओर बढने लगा और प्रचण्ड प्रतापी भाटियोंके साथ घोरयुद्धमें प्रवृत्त हो अपनी उन्नतिके मार्गको औरभी स्वच्छ करनेकी इच्छाकी । वह युद्ध धीरे धीरे बढ़ताहुआ बहुत दिनो चला। इधर उसने दो एक नगरोंको जीत अपने अधिकारमें किया। विक्रमपुर * ने उसकी अधीनता स्वीकार की । उसने आमेरकी राजधानीसे दशकोश दूर बसेहुए चाटसू नगरपर अधिकार कर उसके आसपास शहर पनाह बनवाई । इससे पहले देवतोंने शिरोहीको जातालयाथा; किन्तु राठौर राजने इस समय उसको जीतकर फिर उन्हींके अधिकारमे कर दिया । उसने गौरवकी इच्छा और हिंसाके वशवर्त्ती हो इनसब ग्राम और नगरोको जीताथा; केवल यही नहीं, वरन किस प्रकारसे जीतेहुए स्थान रक्षित रहसके इसकाभी उसने विशेष प्रबंध किया । इसी अवसरमें मारवाड़के चारोओर किले और बड़े २ महल इत्यादि बनने लगे । जोधपुरके चारोंओर एक बड़ी दृढ दीवार बनाईगई । वीरकेसरी जोधाने अपने बसाये नगरकी शोभा और रक्षाके योग्य जिन महलो और सुन्दर अट्टालिकाओंको स्थापित कियाथा, मालदेवने उनकोभी कुछ मरम्मत करवाई । सांतलमेरको तुड़वाकर उसने उसकी सब सामग्रियोंसे नये जीतेहुए पोकर्ण +को दृढ़ किया और उस नगरके प्राचीन निवासियोंको वहांसे निकाल मारवाडी प्रजाद्वारा उसको सज्जित करनेलगा । सिवाना नगरमे

---

* यहांपर इसके पितृपुरुषोंके गोत्रकी एक शाखा वास करतीथी वह गोत्र इस समय मालदेत मारवाड़में जैसलमेरके साथ मिलगयाहै । वह इस समय मालदोतके नामसे प्रसिद्ध है । मालदेत मारवाड़में बड़े साहसी दस्यु कहेजातेहैं। + पोकर्ण आलामंड और जोधपुरके ठीक बीचोंबीचमें स्थितहै । यह दुर्ग अत्यन्त दृढ़ और सुरक्षित है । सन् १८१९ ई० के २ नवम्बरके दिन मिस्टर टाड्साहब जिस समय झालामंडसे जोधपुरको आरहेथे उस समय मार्गमें पोकर्णके सर्दारने उनका बड़ा आदर सत्कार कियाथा । उस समयके पोकर्ण सामन्त राजाका नाम सालमसिंह था।सालमसिंह मारवाड़के सामन्तोंमें धन और प्रतापमें श्रेष्ठ था। यह चाम्पावतके नामसे प्रसिद्धहैं।यद्यपि चाम्पावत मारवाड़ राजाके अधीन हैं किन्तु राठौर राजा इनके भयसे कांपतेही रहे । इनके प्रचण्ड पराक्रमसे राठौरोंके सिंहासनपर कईवार आपत्ति आई । सालमसिंहका परदादा देवसिंह ऐसा तेजस्वी और बलवान था कि, वह किसी राजासे कुछभी भय न करताथा।वह प्राय: यही कहाकरता, "मारवाड़का सिंहासनतो मेरी तलवारके मियानके भीतरहै ।"

कुंडलकोट और इसके समीपही पीपलोद दो शैलकूटकी कोठीपर भद्राजूनहै, उसके निकट जूँडोजरिया, पीपाड और दूनाडा नगरमे एकर दृढ दुर्ग वनवाया । प्राचीन गढ वीटली (अजमेर) कि, जिसका वुर्ज आजतक "कोटवुर्ज" के नामसे प्रसिद्ध है वह मालदेवहीने वनवायाथा । एक कलके द्वारा उसने किलेके ऊपर पानीको चढ़ाकर अपनी अतुल वुद्धिका परिचय दिया था। इन सव महत् कार्योंमे उसका अतुल धन व्यय हुआथा। केवल मेरता* नगरके किलेकी मरम्मतमे २४००० रुपया व्यय हुआथा । अपने राज्यकी दृढ़ताके योग्य वहुतसे कार्य्य करके मालदेवने उन कार्योंमे जो रुपया व्यय कियाथा, उसका विचार करतेही हृदय आनन्दसे परिपूर्ण होजाताहै । भाट कवि कहते है कि, रत्न उपजानेवाली सांभरके अनंत रत्नोकी सहायतासेही उसने अत्यन्त धन व्यय कर अपने कार्योंको पूरा कियाथा । इससे भलीप्रकार प्रगट होता है कि, इस समय सांभरझीलमे वहुतसा लवण उत्पन्न होता था कि, जिसकी आयसे वहुत धन राठौर राजके कोशमे आता था। इसी लवणसे प्राप्त हुए धन द्वारा मालदेव अपने राज्यकी वृद्धि करसका था + ।

शांतिके फूलोकी शैयापर सोकर राठौरवीर मालदेवने क्रमशः दशवर्ष तक निष्कंटक राज्यका भोग किया। परन्तु इस विमल शांति सुखका भोग भोगना उसके भाग्यमें और अधिक दिन न रहा । इतने दिन वह केवल अपनेही राज्यके वढ़ानेमे लगारहा था । किन्तु इस समय उसको अपने प्राण वचानेमें संकट आ उपस्थित हुआ । वीर केसरी वावरने इसी समयमे देह छोडी और उसका पुत्र हुमांयूँ प्रचंडवीर शेरशाह द्वारा पिताके

---

* यह नगर मडोरके राजा राव दूदाका वसायाहुआ था । मालदेवने इसमे एक दुर्ग वनवाकर अपने नामपर उसका नाम मालकोट रक्खा । मालकोटके दुर्गका व्यास प्राय एक कोशका होगा ।

+ इसका राज्य कितनी दूरतक फैल गयाथा, भट्टग्रन्थोंमे इसका विवरण भलीप्रकारसे देखा जाताहै । यहांपर प्रयोजन समझकर उसका वर्णन कियाजाताहै । जो नगर और गाँव मालदेव के अधिकारमें थे उन सवकाही नाम यहां लिखाजाताहै । सोजत, सांभर, मेरता, खाटू, वदनौर लाडनू, रायपुर, भाद्राजून, नागौर, सिवाना, लोहागढ़, झागलगढ़, वीकानेर, भीनमाल, पोकर्ण, वाडमेर, कसौली, रैवासो, जोजावर, जालौर, वंवली, मलार, नाडोल, फिलोदी, सांचौर, डीडवाना, चाटसू, लुहान, मलारना, देवरा, फतहपुर, अमृतसर, फावर, मीनापुर, टोंक, टोडा, अजमेर, जिहाजपुर, और प्रेमरका, उदयपुर, (शेखावटीके अन्तर्गत) इन अड़तीस जिलोंमे वहुतसे तो जालोर, अजमेर, टोंक, टोडा और विदनौरके अन्तर्गत हैं । मालदेव जैसा विशेष प्रतापी राजा था और जैसा उसका राज्य राजस्थानमे वडीदूरतक फैला था, वह ऊपरके नामोंके पढ़नेसेही भलीप्रकार ज्ञात होजायगा । किन्तु इन सव जिलोंमे मालदेवने कुछही दिनों राज्य करपाया । चाटसू लवान टोंक टोडा और जहाजपुर तो शीघ्रही उसके हाथसे निकल गये । विदनौरकीभी यही गति हुई । यद्यपि विदनौर और उसके अन्तर्गत तीनसौ साठ गांवोमें राठौर राजा वास करतेथे, किन्तु वे सवही मेरता गोत्रसे उत्पन्न हुएथे । वीरकेसरी जयमलनेही इस मैरता कुलको उज्ज्वल कियाथा । इसी कारण उस समयसे विदनौर मेवाडकी भूमिसम्पत्ति गिना जानेलगा ।

राज्यसे भगाया जाकर अपने प्राण बचानेके निमित्त दूरदेशको भागा। कहां तो वह दिल्लीके सिंहासनपर बैठकर निष्कंटक राजसुखको भोगता-सो ऐसा न होकर वह अपने पिताके सिंहासनसे वंचित हो भाग्यके विपरीत स्रोतमें तृणकी समान तैरने लगा। उस भयानक आपत्तिकालमे उसको जो दुःसह दुःख भोगना पड़ा उसका वर्णन मेवाड़के इतिहासमे भलीप्रकारसे किया गया है। उस आपत्तिकालमें उस निस्सहाय हुमायूँने शत्रुद्वारा भगाये जाकर राठौर राजा मालदेवके निकट शरण पानेकी प्रार्थना की थी, किन्तु मालदेवने एकवेर उसके मुँहकी ओर भी न देखा। इसमे संदेह नहीं कि मालदेवने इसमें अत्यन्त निष्ठुरता प्रकाश की थी; किन्तु जिस कारण वश हो वह इस निष्ठुरताके करनेको विवश था उसका हमने वर्णन नहीं किया। मालदेवने जो हुमायूँके साथ असद्व्यवहार किया उसका विशेष कारण है। बीतेहुए बयानांके भीषण युद्धमे मालदेवके* पुत्र रायमलको बाबरने मार डालाथा। इस दारुण पुत्रशोकको वह राठौरराज समस्त जीवन भी न भूलसका। इस कठोर शोकानलके शांत करनेके निमित्त उसने बाबरके हृदयके रुधिरको बहानेकी इच्छा की थी, किन्तु उसकी वह इच्छा इस समयतक न फली। जबसे युद्धमे उसका पुत्र मारागया तबसे वह बाबरको सहस्रोंही गालियां दिया करता था। हुमायूं बाबरका पुत्र है। इस कारण वह चाहैं दुःखी हो चाहैं सुखीही हो उसके साथ सहानुभूति प्रकाश करनेको मालदेवकी इच्छा न हुई। हुमायूं उसकी शरण लेनेकी इच्छासे वहां आया, परन्तु उसके हृदयकी अग्नि कि, जिसमे धुंआ सुलग रहा था अति प्रचंड वेगसे जल उठी। तमोगुणने प्रचण्ड प्रबल हो उसके हृदयके सतोगुणको नाश करडाला, अतएव उसने क्षणमात्रको भी विचार कर न देखा कि निःसहाय हुमायूं शरण लेनेकी इच्छासे उसके निकट आया है। अतिथिसत्कारके ऐसे असद्व्यवहारके कारण मालदेवने जो पाप संचय किया था फिर वह उसका प्रायश्चित्त न करसका। अपने बलके अहंकारसे मत्त हो उसने क्षणभरको भी न विचार देखा कि, वही हुमायूं विपत्तिसे छूटकर समस्त भारतके सिंहासनपर फिर बैठेगा और उसका जेठापुत्र अकबर थोड़ेही दिनोंमे उस असद्व्यवहारका योग्य फल देगा। अकबर + हुमायूंकी उस घोर रात्रिका केवल एक ध्रुवनक्षत्र, उसके छिन्न भिन्न हृदयका केवल एक सांत्वनाका पदार्थ था। वह उस समयमे मरुस्थलकी बालुकाराशिके ऊपर शुक्लपक्षकी शशिकलाके समान दिन २ बढ रहा था। धनके भोग विलासमे सोकर मालदेवने उस समय एकवेर भी स्वप्नमे न देखपाया कि, इसी अकबरके हाथमे राठौरकुलका भाग्यचक्र एकदिन अर्पित होगा; उसीके महत्व और उदारताके गुणसे एकदिन उस मालदेवके वंशधर "राजराजेश्वर" की उपाधि धारण करेंगे। शरण चाहनेवाले हुमायूंपर इस प्रकारका असत् आचरण कर मालदेव किसीभी उपकारको न प्राप्त हुआ, वरन् इससे उसको एक बड़ी आपत्तिमे ग्रसित

* यह रायमल मालदेवका पुत्र नहीं था। जिसके शोकका यह व्यर्थ वृत्तान्त गढ़ा गयाहै। इस विषयमें पहले टिप्पणी होचुकी है। (प्रे० टी०)। + अकबर तो इस समय उत्पन्न भी नहीं हुआथा।

होनापड़ा। हुमायूंके प्रचंड शत्रु शेरशाहने मालदेवके इस सम्पूर्ण वृत्तान्तको जान उसको अपने वशमे करनेकी इच्छा की। सब प्रकारसे इसका यही कारण जाना जासकताहै कि शेरशाह मालदेवके प्रतापको देखकर शंकित होगया था। यवनराजने जब राठौरराजके पराक्रम और प्रतापका वर्णन सुना तब उसके मनमे एकाएक यह चिन्ता उत्पन्न हुई कि, दिल्लीके समीप ऐसे प्रचण्ड प्रतापी राजाके रहतेहुए उसका प्राप्त कियाहुआ वह राज्य कभीभी निष्कंटक नही होसकता। इस विषमयी चिन्ताके दंशनसे अत्यन्त पीड़ित हो शेरशाह मालदेवके परास्त करनेको आतुर हो उठा, और इसी अभिप्रायको पूर्ण करनेके निमित्त अस्सी सहस्र सेनाके संग मारवाड़के राज्यपर आक्रमण किया। मालदेवने इस वृत्तान्तको जान पाया। वह पहिले तो कुछ न बोला और न उसने उसके रोकनेका कोई प्रबंध किया, यवन सेनाने वे रोकटोक अतिवेगसे मारवाड़के भीतर प्रवेश किया। उस समय राठौरराजने उसका आक्रमण रोकनेके निमित्त पचासहजार राजपूत सेनाको इकट्ठा किया। आज पचास हजार राठौर वीरोकी तलवारे एकत्रित हो देशके वैरी मुसलमानोके विरुद्ध उठी। किन्तु रणविशारद मालदेव शीघ्रताके वशवर्ती न हुआ, वरन् अत्यन्त सावधानी और बुद्धिमानीसे सेनादलको चलाने लगा। उसके युद्धकी तैयारीका उत्तम यत्न देख शेरशाह अत्यन्त भयभीत हुआ। युद्ध विषयमे निपुण होकरभी उसके हृदयमे ऐसे भयका संचार हुआ कि, वह अपने ठहरनेके प्रत्येक स्थानपर पहुँचकर अपने डेरेपर बैठ अनेको प्रकारकी चिन्तायें करनेलगा उसने विचारा कि, यदि राजपूतोके हाथसे पराजित हुआ तो फिर युद्धस्थलसे लौट जानेका कोई उपाय न रहैगा। और इससे निश्चयही युद्धभूमिमे प्राण देने पड़ैगे। राजपूत जिस प्रकार दिन २ बल और विक्रमको बढ़ाये भयानक मूर्त्ति धारण करतेथे, इसी कारण उसके हृदयमे इस प्रकारकी चिन्ता उत्पन्न हुई। शेरशाह अपनी शीघ्रताके विषयको विचार अत्यन्तही कातर हुआ। ऐसे २ सोच विचारो मे जितनेही जितने दिन वीतने लगे, उतनाही यवनराजके दुःखकी वृद्धि होने लगी। धीरे २ एक महीना वीतगया। राजपूत और यवनोने परस्पर एक दूसरेके सामने सेना डालकर विना युद्धही एक महीना विताया। धीरे२ शेरशाहका दुःख अधिक बढ़ने लगा; किन्तु वह इससे अज्ञान न हुआ, वरन उससे छूटनेके उपाय खोजने लगा। अनेक चिन्ता और विचारोके उपरान्त अन्तमे उसने अपने कार्यसिद्धिके लिये एक गूढ़ उपाय स्थिर किया। शेरशाह राजपूतोंको भलीप्रकारसे जानता और पहिचानता था कि, उनका हृदय थोड़ेही आघातसे आहत होता और थोड़ीही चेष्टासे दूसरी ओरको नम जाता है। इसी निश्चयके अनुसार उसने राठौर सेनामे अविश्वास और फूट उत्पन्न करादेनेकी प्रतिज्ञा की। और एक पत्र लिखकर यत्नपूर्वक मालदेवके डेरेमे फेकवा देनेकी इच्छा की। यह उसका यत्न बहुत सहजमेही पूर्ण होगया। पत्र इसप्रकारके भावसे लिखा गया कि, जिस्से उसके पढतेही राठौर सर्दारोंपर मालदेवका दारुण अविश्वास उत्पन्न होजाय। पत्र लिखजानेपर यवनराज विचारनेलगा कि, इसको किस प्रकारसे मालदेवके सम्मुख

पहुँचासकूँ परन्तु थोड़ीही देरमें इसका भी उपाय स्थिर होगया। युद्धको और भी कुछदिन रोक रखनेका अनुरोध कर शेरशाहने राठौरराजके निकट एक दूत भेजा। दूतने यत्नपूर्वक उस पत्रको मालदेवके डेरेके समीप डालदिया और अपने कामको पूरा कर अपने स्थानको लौटआया। इसके कुछही देरके उपरान्त वह जाली पत्र मालदेवके सम्मुख पड़ा। उसने विस्मित चित्त हो तत्कालही उस पत्रको आदिसे अन्ततक पढ़ा। उसका मस्तक घूमने लगा, क्रोधसे हृदय कांप उठा। उसने चारोओर अंधकार देखा, जिन सर्दारोंके ऊपर विश्वास कर उसने कठोर कार्यके पूर्ण करनेकी प्रतिज्ञा की है, क्या वे विश्वासघातक हैं ? क्या वे उसका सर्व नाश करनेके निमित्त देशवैरी यवनोंके साथ मेल रखते हैं ?—यह क्या सत्य है ? मालदेव अत्यन्त विस्मित हुआ। सभी सर्दार उसको विश्वास घातक जान पड़ने लगे। उनके समस्त उत्साह और उद्यमको उसने केवल छलही छल जाना।

दो एक दिन करके देखते २ युद्धका वह नियत दिनभी आ उपस्थित हुआ मालदेवका विषादसे गम्भीर मुंह, जड और स्थिर प्रकृति तथा उदास चेहरेको देख राठौरवीर अत्यन्तही चिन्तित हुए। कहां तो उसने उसदिन जलतेहुए उत्साहित वाक्योंसे उन सबको उन्मादित कियाथा, और अब कहां स्वयंही निर्जीवके समान चुपचाप अपनी शय्यापर पड़ेहुए है। इसका कारण क्या है ? सर्दार लोग इसको कुछभी न समझ सके। युद्धका नियत समय आजानेपर उन्होंने राजाकी आज्ञा चाही, परन्तु राजाने आज्ञा न दी। दारुण विस्मय और सन्देहसे राठौर सर्दारोंका हृदय घूमने लगा। शत्रुलोग घरके द्वारपर आकर ललकारते है, क्या इससेभी वह निश्चिन्त रहसकते हैं ? उनके जीवित रहते हुए राठौर कुलका सम्मान गौरव क्या यवनोंके पैरोंसे दलित होगा ? मालदेव क्या राठौर नहींहै ? क्या उसने वीरकेसरी जोधारावके कुलमें जन्म नहीं लिया ? तव देहमें प्राण रहते, भुजाओंमें वल रहतेहुए वह शत्रुओंकी गर्जना क्यों सहन करतेहैं ? इसका कारण क्या है ? आनन्दकी वात है कि, पराक्रमी राठौर सर्दारोंने राजाकी इस उदासीनताका यथार्थ कारण जानलिया, और निश्चय समझलिया कि, इस समय हम वातोंसे उनके संदेहको दूर नहीं करसकेंगे। तव उन्होंने कार्यद्वारा उस संदेहके दूर करनेकी प्रतिज्ञा की, इस कारण उन्होंने तत्कालही अपने २ सेनादलको ले यवनोंकी सेनाके ऊपर आक्रमण किया। बारह सहस्र राजपूत वीरोंने देशवैरी यवनोंके पंजेसे राठौर कुलकी मान मर्यादाके छुड़ानेके निमित्त अत्यन्त उत्साह समेत शेरशाहकी धुस्स वंधीहुई सेनापर धावा किया। साधारण धुस्स उनकी प्रचण्ड गतिको न रोकसका। उनके दलकेदल यवन सेनाके ऊपर पड़कर उनको दलित और त्रसित करनेलगे। इस प्रकार शेरशाहकी अनेक सेना राठौरोंकी तीक्ष्ण तलवारद्वारा कटकर गिरगई। किन्तु जैसे एक २ गिरने लगा वैसेही उसके स्थानपर दूसरा दल कर भीषण उत्साहके साथ युद्ध करनेलगा। इससे यवन सेनाका कुछभी नाश होता न जानपड़ा। इधर प्रधान २ राठौर वीरभी उस भयानक युद्धमें गिरने लगे। धीरे २ राठौरोंका वल न्यून होगया, राठौर सेना धीरे २ नाश

ह्वानपर आगई। राठौर सर्दारोंको इस असीम वीरतासे मरते देख मालदेवके ज्ञान–नेत्र खुलगये। उन्होंने अब समझा कि, मैं छलागया। किन्तु वह असमय था; असमयमे कुम्भकर्णकी मोहनिद्रा भंग हुई, आज उसकी नीच दगाको कोई नहीं रोक सकता। राठौरसेना प्रायः नाश होगई, उस समयभी यवनसेना मानो अक्षत देहसे युद्ध करतीथी। राठौरोंके जीतनेकी अब कुछभी सम्भावना नहीं रही है। देखते देखते हिन्दू मुसलमानोका युद्ध भयानक हो उठा। उस विशाल राठौर सेनाके बचेहुए कुछेक सैनिकोने विस्मयकर वीरता प्रकाशित कर युद्धमे प्राण छोड़दिये। मालदेव हारगया। उसने निश्चयही जानलिया कि, मेरीही मूर्खतासे मुझको यह घोर पराजय स्वीकार करनी पड़ी। सर्दारोंके तिरस्कार और संतापकी ज्वालासे उसका हृदय जलने लगा। यदि वह सर्दारोंका इस प्रकारका अविश्वास न करता, यदि वह अपनी बीरतासे उनके उत्साहकी अग्निको प्रज्वलित किये रहता तो पठानसिंह शेरशाहकी उस मरुभूमिमे निश्चय समाधि होती। राठौरोंने इस भयानक समरमे जो असीम वीरता दिखाई उसको शेरशाह स्वयंही स्वीकार करता है। इस आपत्तिसे छुटकारा पाकर उसने कहा "कि मुट्ठीभर जौके निमित्त भारतराज्यको मैंने अपने हाथसे निकाल देनेका यत्न किया था।"

इस शोचनीय और घोरतर पराजयसे राठौरराज मालदेवको जो विषम मनो-वेदना प्राप्त हुई थी, उससे वह शीघ्रही छुटकारा न पासका। उस दारुण अपमानके उपरान्तभी वह बहुत दिनो जीवित रहा। अपने जीवित कालमे उसने दिल्लीके सिंहा-सनमे दो स्वतंत्र राजवंशोको बैठते हुए देखा। पहिले तो लोदीवंशके अधःपतनके साथ मुगलवंशका गद्दीपर बैठना फिर उस वंशसे राज्यको छीन शेरशाहके वंशका सिंहासन पर बैठना। इन दो राजवंशोके तख्तपर बैठने और उतरनेसे हिन्दोस्थानके राज्यमे दो प्रचण्ड उत्पात हुए थे। शेरशाह भी बहुतादिनो तक भारतराज्यके सुखको न भोग सका, उसकी मृत्युके कुछेक वर्षके उपरान्तही हुमायूंने अपने राज्यका उद्धार करलिया यदि हुमायूं कुछदिनोतक और जीवित रहता तो राठौर अपनी श्रीकी वृद्धि करसकते क्योकि हुमायूं जिस प्रकार शांतस्वभाव और अहिंसा परायण था, उससे राजपूत बेखटके अपने राजकी श्रीको बढ़ा सकते थे। किन्तु उनके दुर्भाग्यसे राज्य पानेके कुछही दिनोके उपरान्त हुमायूंने इस असार संसारको छोड़दिया + उसकी मृत्युके उपरान्त ही वीरबालक अकबरकी रोषाग्निने वज्रानलके तेजसे मारवाड़के ऊपर पतित हो मालदेवकी आशालताका नाश करदिया।

सम्वत् १६१७ (सन् १५६१ ई०) मे वीरबालक अकबरने एक विशाल सेना ले (१५ वर्षकी अवस्थामे माताके द्वारा अमरकोटके कष्ट स्मरण करानेसे

---

१ इसके द्वारा मारवाडकी उपजका कम होना और दारिद्रता प्रगट होतीहै। (२) शेरशाहके मरनेके उपरान्त दो मुसलमान राजा दिल्लीके सिंहासनपर बैठेथे, पहिला तो सलीमशाहशूर, दूसरा मुहम्मद आदिलशाह। (३) हुमायूंकी एक जीवनी एडिनबराके मेजरमुलके पुस्तकागारमें देखी गईहै। जिस समय हुमायूंने पारसके राज्यमें छिपेहुए वेशसे कुछदिनों वास कियाथा उस समय उसके एक साथीने उसकी जीवनी लिखाथा।

मारवाडके अन्तर्गत मालकोट * दुर्गको घेरलिया। उसने मनमे विचाराथा कि, थोडे श्रमसेही दुर्गको अपने वशमे कर सकूंगा। किन्तु जब उसने दुर्गनिवासियोके पराक्रम और रणकी निपुणताको देखा, तब उसके वह मनका विचार दूर होगया। अत्यन्त घोर युद्ध हुआ, दोनोओर के सैनिकोका रुधिर बहा, अन्तमे दुर्ग अकबरके हस्त-गत होगया। मरनेसे शेष रहीहुई राठौर सेनाने जब देखा कि, मुगलोके आक्रमणसे अब दुर्गरक्षाका कोई उपाय नहींहै, तब वे शत्रुसेनासे निकलकर राजाके समीप चलेगये। मेड़ताके अधीन होनेपर विजयी अकबरने अपनी प्रचण्ड सेनाको नागौरकी ओर चलाया। वह नगरभी उसके अधीन होगया। तब उसने जीतेहुए इन दोनो नगरो और उनकी समस्त भूमिमंडलीको बीकानेरके राजा रायसिहको देदिया।

अकबरका प्रताप दिन २ बढ़नेलगा। उसके उस बढ़तेहुए प्रतापके सामने राजपूत-चूडामणि वीरकेसरी प्रतापके अतिरिक्त प्राय: सभी राजपूतोंके मस्तक नीचे होगए अनेको तो षोडशोपचारसे उसकी पूजा करनेलगे और प्राय: राजपूत राज-समाजमे यह रीति फैलगई। दु:खका विषयहै कि, राठौर राजा मालदेवभी इसी रीतिमे आ फंसा। किन्तु उसने इच्छापूर्वक कभी अकबरके निकट मस्तक नहीं झुकाया घटना स्रोतके घोर भँवरमें पड़कर उसको यह तिरस्कार सहन करना पड़ाथा। इसी कारण सं०१६२५ + (१५६९ ई०) में मालदेवने अनेको भेटे दे अपने दूसरे पुत्र चन्द्रसेनको अकबरके निकट भेजा। अकबर उस समय अजमेरमे रहताथा। मालदेव जो स्वयं उससे आकर न मिला इससे वह उसपर अत्यन्त असंतुष्ट हुआ, उसके मनमें यह दृढ निश्चय हुआ कि, गर्वित मालदेव मेरा अपमान करनेके निमित्तही स्वयं मुझसे मिल-नेको न आया। अतएव इस अभिमान और अपमानका बदला लेनेके निमित्त राय-सिंहको केवल बीकानेरका ही स्वाधीन अधिकार देकर वह शांत न रहा, यहाँतक कि, जोधपुरका फरमान और समस्त राठौर कुलके ऊपरका आधिपत्य उसे अर्पण किया गया।

चन्द्रसेन गर्वित राठौरकुलका योग्य राजपुत्र था। यद्यपि पिताकी आज्ञानुसार वह अकबरके डेरेमे गया परन्तु उसकी अकबरके दर्बारमें जानेकी बिल्कुल इच्छा न थी।

---

* मेड़तेके पास मालदेवका बनायाहुआ एक गढ़है। + सम्वत् १६२५ तक राव मालदेवका जिन्दा रहना और चन्द्रसेनको अकबरके पास अजमेर भेजना गलत है। राव मालदेव तो १६१९ में मर चुकेथे। चन्द्रसेन जोधपुरकी गद्दीपर बैठेथे। पर अकबरने फौज भेजी थी। संवत् १६२२ में जिसमें जोधपुर फतह कर लिया और चन्द्रसेन सिवानेके किलेमे चलेगये। सम्वत् १६२७ में अकबर बादशाह अजमेर होकर नागौरमें आये उस वक्त रावचन्द्र सेन भाद्राजूनमें थे। बादशाहके बुलानेसे नागोरमें आकर उनके भाई रायमल सोजनसे उदयसिंह फलोदीसेभी वहाँ आगयेथे। बीकानेरके राव कल्याणमलके कंवर रायसिंहभी बीकानेरसे आयेथे-राव चन्द्रसेनके कुँवर रायसिंहभी उनके साथ थे। राव चन्द्रसेनतो बादशाहसे मिलकर भाद्राजूनको लौटगये उनके कंवर रायसेन भाई उदयसिंह और बीकानेरके कुँवर रायसिंह तीन बाद-शाहके नौकर हुये। रायमल सोजनको चलेगये (-यह वही रायमल हैं कि जिनकी बाबरकी लडा-ईमें माराजाना टाडने गलतीसे लिखदियाहै जैसे कि, मालदेवका सम्वत् १६२७ तक जिन्दा रहना लिखाहै।)

जन्मभूमिकी स्वाधीनता और राठौर कुलकी मानमर्यादाको वह प्राणोसेभी अधिक मूल्यवान् जानताथा और अपने जीवनके वदलेमे उसने चेष्टा की थी। उसके बड़े भाई उदयसिहने अपनी मर्यादाको तिलांजली दे स्वाधीनताकी सुवर्णप्रतिमाको अपने हाथसे विसर्जन कर अकवरके चरणोमे शिर नवाया। तेजस्वी चन्द्रसेनने उसको अपना बड़ाभाई कहकर स्वीकार नहीं किया। यहांतक कि, उसके राजगद्दीपर वैठनेसे राठौर कुलका ऊंचा मस्तक नीचा होगया। अपने यत्नभर उसको मारवाड़की गद्दी पर न वैठने दिया। अनेक तेजस्वी और पराक्रमी राठौरोंने उसका साथ दिया। उन समस्त विश्वासी और स्वाधीनचित राठौर सर्दारोके साथ उसने अपने स्वत्व और स्वाधीनताके दृढ़ रखनेकी प्रतिज्ञा की। राजधानी जोधपुरसे जानेके उपरान्त उसने उन सब विश्वस्त सरदारोंके साथ मारवाड़के पश्चिम प्रान्तमे वसेहुए सिवाना नामक स्थानमे गमन किया और वहां वह कठोर उद्यम व परिश्रमकी सहायतासे अपनी स्वाधीनताकी रक्षा करने लगा।

यद्यपि राठौरवीर चन्द्रसेन राजसे चला तो गया, परन्तु उसने अपनी मान मर्यादाको न छोड़ा। उसके मनमे दृढ़ निश्चय था कि यदि राजसिहासनको प्राप्त करसकूं तो मैं यवनोंके विरुद्ध अपने देशकी स्वाधीनताको अटल रखसकताहूं। जीवनको पोषण करनेवाली आशाकी मोहिनी मूर्त्तिसे मोहित होकर उसने क्षणभरके निमित्त अपने इस निश्चयको न छोड़ा। इसी निश्चयके कारण उसने अपने पिताके सिहासनपर स्वयं वैठनेकी प्रतिज्ञा की। उसको सहायता और सहारा थोड़ा और सेनावल मुट्ठी-भर था, किन्तु उदयसिंहके बड़े सहायक और वड़ी भारी सेना थी विशेषकर स्वयं राजा मालदेवही उसका पोषक था। वरन तोभी तेजस्वी चन्द्रसेन आशाको न छोड़सका, उस दूर वसेहुए सिवाना नगरमें कुछेक साथियोको संग लिये हुए वह सत्रह वरस वरावर जेठेभाई उदयसिंहसे शत्रुता करता रहा। सुखका विषयहै कि उसने अपने कार्यको अधिकतर पूरा करलिया। उसके असीम गुणोसे मोहित हो अनेक राठौरोंने उसको राजाओंके योग्य सन्मान दिया। धीरे २ समस्त राठौर दो भागोंमे वँट चले। परन्तु हा! चन्द्रसेन अपने अभाग्यवश उस सन्मानको अधिकदिनतक न भोगसका। सत्रहवे वर्षके वीतते वीतते उसने यवनोंके प्रचण्ड आक्रमणसे राठौरोकी स्वाधिनताकी रक्षा करनेके निमित्त,

---

१ यह वातमी गलत है कि, चन्द्रसेनने उदयसिंहको गद्दीपर न वैठने दियाहो, उदयसिंह चन्द्रसेनसे तीन चार वर्ष बड़े थे और उनके सगे भाई थे परन्तु बड़े दुःस्वभाव थे, इससे इनकी माताने राव मालदेवजीसे कहकर इनको राजगद्दीसे वंचित रक्खा और चन्द्रसेनको युवराज करादिया। जिससे वे पिताके पीछे उत्तराऽधिकारी हुएथे। और उदयसिंहको फलोदीका परगना मिलगयाथा तो भी वे राव चन्द्रसनसे वैमनस्य रखतेथे। २ जिस समय मुगलोने सिवाना नगरपर आक्रमण किया उस समय उसकी रक्षा करनेमें मारागया।

तलवार धारण की और युद्धभूमिमे अपने जीवनको न्योछावर कर स्वदेशप्रेमी वीरोंकी समान अमरत्वको प्राप्त किया। उस समय उसके तीन पुत्र उग्रसेन, आसकर्ण और रायसिंह जीवित थे। रायसिंह सिरोहीके प्रसिद्ध वीर राव सुरतानके साथ द्वन्द्वयुद्धमें प्रवृत्त हुआथा; परन्तु उस युद्धमे वह जयको प्राप्त न करसका। राव सुरताननें उसको और उसके २४ सर्दारोको दत्तानी नामक स्थानमें मारडाला था।

राठौर राजा मालदेवका अन्तिम जीवन इसी प्रकारकी आपत्तियोंसे पीड़ित रहाथा, इससे वह छुटकारा न पासका फिर भी इसके ऊपर उसको अपने नगरकी रक्षाके निमित्त तलवार पकड़नी पड़ी। बीकानेरके रायसिंहके हाथमें मारवाड़के राज्यका फर्मान देकर मुगल बादशाह अकबर निश्चिन्त न रहा। अन्तमें जोधपुरपर आक्रमण किया। मालदेव कायर नहीं था कि जो मुगलसम्राटकी भौंहसे ही भयभीत हो बिना झगड़ा किये उसके हाथमे आत्मसमर्पण करदेता। मुगलसेनाने आकर उसके नगरको घेर लिया, तब उसने अपने उपायभर अपनी रक्षा करनेके निमित्त चेष्टा की और अत्यन्त पराक्रम और साहसके साथ वह युद्ध करनेलगा। किन्तु उसके यत्न निष्फल हुए। मुगलोंकी अपार सेनाके सामने वह अपनी आत्मरक्षा न करसका। उसकी आशा तथा भरोसा सभी मिट्टीमें मिलगए। उसने विचारलिया था कि, अपने जीवनभर गर्वित राठौर कुलके उन्नत मस्तकको यवनके चरणोंमें न झुकाऊंगा। किन्तु उसकी वह आशा फलवती न हुई। जो राठौरकुल बराबर तीन चारसौ वर्षसे स्वाधीनतापूर्वक असीम प्रभावसे राज्य कररहाथा; आज उसका ऊंचा मस्तक नीचा होगया, आज यवनोंके चरणोंमें वह गर्वोन्नत मस्तक झुकगया। मारवाड़में राठौरोंकी प्रभुताको स्थिर रखनेके निमित्त दूसरा उपाय न देख, मालदेवने अकबरकी अधीनताको स्वीकारकिया और अपने जेठेपुत्र उदयसिंहको मुगलबादशाहके समीप भेजदिया। विजयी अकबरने पूजोपचारसे संतुष्ट हो उसको एक सहस्र सेनाका सेनापति किया।

जिसदिन गर्वित राठौरोका उन्नत मस्तक यवनोंकी सेवामें इस प्रकारसे झुका, उसी दिनसे तेजस्वी मालदेवके हृदयमें जो विषम आघात उत्पन्न हुआ उससे वह फिर छुटकारा न पासका। वह उसी अपमानकी वेदनासे पीड़ित हो शीघ्र ही इस लोकको छोड़गया।

---

(१) यह भी सही नहीं है कि राव चन्द्रसेन युद्धमें काम आयेथे। (२) दोनोंही ओरसे कुछ २ वीर एकत्रित हो युद्धभूमिमें आये थे। इन दोनों ओर दो वीरवंश थे। इधर तो राठौर और दूसरी ओर चौहानकुलकी एक दूसरी शाखा देवड़ा थी। (३) यह अप्रासंगिक कथा फिर यहाँसे मालदेवका पुनर्जीवन करके चलायी गई है, सो मालदेव तो संवत् १६१९ हीमें मरगयेथे दत्तानीका झगडा सम्वत् १६४०में हुआथा, उसके पीछे फिर मालदेव कैसे जीवित होकर अकबरसे लड़े और उदयसिंहको अकबरकी सेवामें भेजा। यह अनुवाद पूर्वापर स्वयं विरुद्धहै। (४) उनसे सिवाना सम्वत् १६३२ में अकबरकी फौजने तीन वर्ष तक लड़कर लेलियाथा। और वह परगना सोजतमें आ रहेथे और बादशाही थानोंपर जो मारवाड़में जगह जगह बैठे थे, धावे किया करतेथे निदान सं० १६३७ में उनको एक सर्दारने जहर देकर मार डाला। मे० टी०।

इससे उसने एक घोर अपमानसे छुटकारा पाया। उसके मरनेके कुछही दिनो उपरान्त उदयसिंह मुग़ल सम्राट अकवर द्वारा मारवाड़की गद्दीपर बैठाया गया। और गद्दीपर बैठनेके कुछही दिनोके उपरान्त उसने अपनी बहिनको अकवरसे व्याह कर स्वामीकी कृपा प्राप्त की। राजपूत होकर देशवैरी और धर्म वैरीके हाथमे कन्या या वहिनका अर्पण करना घोर अपमानका सूचक है। विशेष कर शुद्ध राठौरकुलमे जन्म ले उदयसिंहने जो ऐसा घृणित और अपमानित कार्य किया, उसको किसी राजपूतने स्वप्नमेभी न विचारा था।

मालदेवका यह अनेक पुण्योंका वल था कि, जो उसको यह घोर अपमान न सहना पड़ा। उसका हृदय ऐसा ऊंचा और महत् था कि, वह अपने जीवनभर ऐसे दुष्ट व अपमानित कार्यको न स्वीकार करता। जीवनके गौरवमय मध्याह्नकालमें उसने राजस्थानके चारोओर जो असीम जय गौरव प्राप्त किया था, उसकी प्रकाशित ज्योतिके साथ समानता करनेसे उसका अन्तिम जीवन विषादमयी घोर अंधेरी रात्रिके समान प्रतीत होता है। यद्यपि विधाताके कठोर विधानानुसार गर्वोन्नत राठौरकुल नीचा हो पड़ा; किन्तु इससे मालदेवके महत् चरित्र अणुमात्रभी कलंकित न हुए। मालदेव अपने समयके राजपूतोंमेंसे एक साहसी और प्रचण्ड पराक्रमी राजा था। यदि वह कुछ दिन और भी जीवित रहकर यौवनके प्रचण्ड पराक्रमको स्थिर रखसकता, तो वह वीरचूडामणि महाराणा प्रतापसिंहके साथ उदय होते हुए मुगल पराक्रमके विरोधसे राजपूत जातिकी स्वाधीनता और गौरवगरिमाको अटल देख सकता था। किन्तु मारवाड़का अत्यन्त ही दुर्भाग्य था, इसीसे वीरकुलतिलक राणा प्रतापसे मित्रता होनेके पहिले ही वह राठौरवीर मालदेव इस असार संसारसे चलवसा।

महाराज मालदेव वारह पुत्रोंको छोड़ सम्वत् १६७१ सन् १६१५ ई० मे इस लोकसे विदा होगए। उन वारह पुत्रोंका नाम और वृत्तान्त नीचे लिखा जाता है।

१। रामसिंह, पितासे निकाले जाकर मेवाड़पति राणाके निकट जाय उसके शरणागत हुए। उसके सात पुत्र हुए थे; उनमेंसे पांचवे केशवदासका कुछेक वृत्तान्त पायाजाता है। केशवदासने चोलीमहेश्वर नामक स्थानपर अपना निवासस्थान नियत किया था।

२। रायमल, वियानाके युद्धमे मारागया था।

३। उदयसिंह, मारवाड़का अधिपति।

४। चन्द्रसेन, (झालावंशीय स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न हुआ था) इसका वृत्तान्त

---

१ यह आक्षेप व्यर्थ और अनावश्यक है यदि यह न हो तो कोई हर्जभी नहींहै।

२ यह घोर अशुद्धि है कि मालदेवकी मृत्युका शुद्ध सम्वत् जो १६१९ है उसको १६७१ लिखदिया और इसीको फिर स० १६२७ भी लिखदियाहै। ३ वियानाके युद्धमें नहीं मारागया। इसके बेटे कल्लारायमललोननने १६४५ सम्वत्मे सिवानेके किलेपर उदयसिंह और मुगलोंकी फौजसे घोर युद्ध कियाथा। इसकी औलादमें केसरी सिहांत जोधा लाडनू वगैरह ठिकानोंके मालिकहै।

पहिले हो चुका है। चन्द्रसेनके तीन पुत्र हुए थे। उनमेसे जेठे उग्रसेनको भिनाय नामक स्थानका अधिकार प्राप्त हुआ। उग्रसेनके भी तीन पुत्र कर्ण, कानजी और काहन हुए।

५। आसकर्ण, इसका वंश आज भी जूनियानामक स्थानमें वर्त्तमान है।

६। गोपालदास, ईडर नगरमें मारागया।

७। पृथ्वीराज, इसके वंशधर अवतक जालौरमें जीवित है।

८। रतनसिंह, इसके वंशधर भाद्राजूनमें हैं।

९। भोजराज, इसके वंशधर अहारीमें हैं।

१०। विक्रमायत।

११। भान।
१२। } इनका कुछ वृत्तान्त अवतक नहीं जाना गया।

चतुर्थ अध्याय ४.

मारवाड़के राजाओंकी अवस्थाका परिवर्त्तन, राजा उदयसिंहका राजतिलक, चन्द्रसेनकी मृत्युसे पहिले राजपूतानेके बड़े बड़े नरेशोंको उसका आधिपत्य स्वीकार न करना, इतिहासका पुन. प्रचार, बादशाहके अधीन होनेके समयतक राजपूतानेके तीन बड़े २ वृत्तान्त, राज्याधिकार प्रणालीका परिवर्त्तन, मेवाड़ आमेर और मारवाड़में राजधानियोका बदलो किन शाखाओंतक इस अधिकारका नाम सीमन्त हुआ, ऐसी भूलोंका अंदेशा, उदाहरण, जोधाजीका जागीरोंको नियम बद्ध करना, मारवाड़के आठ बड़े२ राजकीय मनुष्य, इस प्रबंधका मालदेवका कायम रखना और द्वितीय श्रेणीकी जागीरोंका मौरूसी होना, जोधाके बेटे और भाई, जागीरोके भिन्न २ वृत्तान्त, राजपूतोंकी जागीरदारीका नियम, बादशाह अकबरका इस प्रबंधको यूरुपवालोंके अनुसार कायम रखना, राजपूत नरेशोंके वंश महत्वका मिथ्या न होना, छोटसे छोटे राजपूतोंकाभी अपना वंशसम्बन्ध राजासे लगाना, उदयसिंहका नाम राजपूतोंके लिये कष्टदायक, उदयसिंहका अपनी बहिन जोधाबाईको अकबरको देना, राठौरोंको इस विवाहसे लाभ, उदयसिंहकी बहुतसी सन्तान, गोविन्दगढ़ और पीसागढ़में जागीरोंका कायम होना, किशनगढ़ और रतलाम, राजा उदयसिंहकी विचित्र मृत्युका इतिहास, उदयसिंहकी सन्तानका वंशवृक्ष।

जिसदिन राठौरवीर मालदेवने इस लोकसे विदा ली, उसी दिनसे राठौर कुलकी भाग्यतरंग दूसरी ओरको बहने लगी, उसदिन मारवाड़के इतिहासमें एक नए युगका प्रकाश हुआ। उसके साथही साथ राठौर सामन्तोकी भी अवस्था

१ उग्रसेन जेठा नहीं था। जेठा तो रायसिंह था। उससे छोटा उग्रसेन और उससे छोटा आसकर्ण था। इसके बेटे कर्मसेनको अकबरबादशाहने अजमेरके जिलेमें नायका परगना दियाथा।

२ ये तीनों बेटे उग्रसेनके नहीं थे उग्रसेनका तो एक बेटा कर्मसेन जिसको विक्रमसेनभी कहतेथे।

३ आसकर्णका नाम मालदेवके बेटोंमें नहीं आताहै और न उसकी औलाद जूनियोंमें है जूनियोंमें तो उदयसिंहके बेटे माधोसिंहकी औलादहै।

बहुतसी बदल गई। इतने दिन जो उनकी इच्छा सिवाजीके वंशधरोंकी इच्छाके ऊपर सब प्रकारसे निर्भर थी, अथवा उन्हींकी इच्छाद्वारा भलीप्रकारसे परिचालित होतेथे; इतनेदिनतक जिनको समस्त मारवाड़का अधिपति कहकर गर्व करतेथे, आज कर्म दोषसे उस राजाके ऊपर और एकजन राजा मानना पड़ा। राठौरकुलकी जो "पचरंगी" पताका इतने दिनो तक सियाजीके वीर वंशधरोंके ऊंचे मस्तकके ऊपर फहराकर अमरकोटके अनन्त रेतीले मैदानसे लवण सरोवर साँभरतक और गाराके निकटवर्ती मरुस्थलसे अर्वलीकी श्रेणियोंतक राठौरकुलके विजयवार्ताकी घोषणा करतीथी, आज उसको नीचा करके उसके मस्तकके ऊपर मुग़लोंकी अर्द्धचन्द्र शोभित विजयवैजयन्ती पताका गर्वसहित फहराने लगी। अब उस फहराती हुई पंचरंगी पताकाकी वह शोभा, वह तेज, वह प्रकाशित ज्योति नहीं है, सभी मानो तेजरहित होगये, मानो सभीका लोप होगया; मानो यह राठौरकुल उस महापुरुष सियाजीका वंश नहीं है, मानो उस वीरकेसरी जोधाके विकट शरसाधनाका अमृतमय फल नहीहै, नहीं तो उन्होंने तलवारकी सहायतासे जिस मारवाड़का अधिकार प्राप्त किया था, आज दूसरेकी आज्ञा लेकर उसी मारवाड़के सिंहासनपर उन्हें क्यो बैठना पड़ता? नही तो उनको दूसरेका प्रसाद पानेके निमित्त जीवन और सर्वस्व स्वाधीनता क्यो बेचना पड़ती? इसीसे कहते है कि, मारवाड़के इतिहासमे आज एक दूसरे नये युगका प्रकाश हुआ। राठौर कुलकी भाग्यतरंग दूसरी ओरको प्रवाहित हुई। एक समयके स्वाधीन राठौर आज मुसलमानोकी आज्ञामे बँधेहुए दास हैं; एक समयका उन्नत मारवाड़ आज गिरीहुई अवस्थामें है, आज वह उन्नत और स्वतंत्र राठौरकुल पृथ्वीपर दीनके वेशसे लोट रहा है। इसी कहेहुए वर्त्तमान कालसे राठौरकुलका भाग्यचक्र मुग़लोकी भौंहके साथ चलने लगा, उसके भावी उत्तराधिकारी गण राठौरसेनाको ले जेताकी आज्ञानुसार अपनी हो जातिका रक्त बहानेलगे। इसी समयसे सम्राटकी इच्छानुसार उनका भाग्यचक्र परिचालित होने लगा, उनके कार्योंकी उत्तमताको देख आनन्दित हो सम्राट् उनको राजसन्मान देनेलगे। जो हो, यदि नीच और हिंसक कार्य ही पदोन्नतिके प्रधान सीढ़ी स्वरूप होते, यदि मोल लिएहुए दासके समान स्वामीके पैर चाटनेसेही उन्नतिका मार्ग खुलता तो राठौर राजागण राजसरकारसे उच्चपदको कभी भी न प्राप्त करसकते और उदयसिह सबसे पहिले जिस "मनसब" पदको प्राप्त हुआ था, उससे उसके वंशधर गण और उन्नतिको न प्राप्त करसकते। राजपूत स्वभावसेही तेजस्वी होते हैं, विशेपकर राठौरोकी तेजस्विता और पराक्रम अत्यन्त प्रबल होता है। यद्यपि भाग्यकी कठोर आज्ञासे उनकी स्वाधीनता तो छिनगई किन्तु उन्होंने अपनी तेजस्विताका परित्याग न किया। इस श्रेष्ठ गुणके प्रभावसेही उन्होंने बादशाहके दरबारमें दाहिनी ओर बैठकके गौरवका अधिकार प्राप्त किया। और इसीसे मारवाड़की सुविस्तृत मरुभूमिको रत्नोंके अलंकारोंसे सुशो-

---

१ राठौरोंकी पचरंगी पताका नहींहै कछवाहोंकी है।

भित करदिया। किन्तु इससे राठौरराजकुमार कभी क्षणभरके निमित्त भी हृदयमें शान्तिको न प्राप्त करसके। सम्राट्के ७६ सामन्तोंके ऊपर उच्च सन्मानको पाकर भी-गोलकुंडा और विजयपुरके अनंत रत्नभंडारसे मरुमय जोधपुरको अमरनगरसे बदल करके भी वे एकदिनके निमित्त भी सुखी न होसके। क्योंकि उन्होंने जानलिया था कि, वह सम्राट्के अधीन हैं और अमूल्य रत्न स्वाधीनताके बदलेमें उस समस्त तुच्छ धनको प्राप्त करसकते हैं। जब यह दृढ निश्चय औरभी दृढ होता, तब वे एक साथ उन्मत्त हो उठते और सम्राट्के दियेहुए सन्मान मर्यादाको विषकी समान जान अपने आपको सैकडो वार धिक्कार ते थे। उस समय स्वयं सम्राट् उनके सामने उपस्थित होकर भी उनके उस प्रचंड मानसिक वेगको न रोकसकतेथे। राठौर राजा मालदेवका सम्वत् [1]१६२५ मे परलोकवास हुआ। उसने अपने जेठ पुत्र उदयसिंहको अपना उत्तराधिकारी मानलिया था। किन्तु भाटग्रन्थोंमें देखाजाताहै कि, तेजस्वी चन्द्रसेन जब तक जीवित रहाथा, तब तक उदयसिंहको राजगद्दी न प्राप्त हुई। उदयसिंहने जो कायरोंके योग्य उपायका अवलम्बन कर दिल्लीश्वरके हाथमें अपनी बहनको अर्पण किया इससे राज्यके प्रधान २ सामन्तोंने उसपर अत्यन्त विरक्त हो चन्द्रसेनके पक्षका अवलम्बन किया था। अब हम उदयसिंहके राजत्वकी समालोचना करनेके पहिले एकवार मारवाड़की बीतीहुई घटनापर विचार करतेहैं। जिस समय राठौर वीर सियाजीने पितृपुरुषोंके लीलाक्षेत्र कन्नौज राज्यको छोड़ा, उस समयसे ही आरम्भ करके उदयसिंहके राजत्वकाल तक मारवाड़के इतिहासको हम तीन प्रधान युगोमें विभक्त देखते हैं वह तीनों युग नीचे लिखेहुए क्रमसे विभक्त हुए हैं।

प्रथम-खेड़राज्यमें सियाजीका आगमन १२१२ खृष्टाब्द से चण्डद्वारा मंदोर जय ([2]१३८१ ई०) तक द्वितीय-मंदोरके जयसे जोधपुरके स्थापन ([3]१४५४ ई०) तक; और तृतीय-जोधपुरके बसनेसे उदयसिंहके गद्दीपर बैठनेके समय तक। सन् १५८४तक इन कुछ कम चारसौ वर्षोंके बीचमे राठौर कुलका भाग्यतरंग किस२दिशाको प्रावाहित हुआहै, हम इस समय उसीकी आलोचनामे प्रवृत्त होतेहैं। देखा जाताहै कि प्राचीन भूमियांओके निकटसे मरुभूमिका पश्चिमभाग जीतनेमे पहिले दो युग बीतगयेहैं। उस समय उनको उस छोटे प्रदेशकोही लेकर संतुष्ट होना पड़ाथा। अन्तमें चौहानोके अधःपतनसे चूड़ाद्वारा जिस समय मंडोर नगर जीतागया, उस

---

(१) इस ग्रन्थमें राव मालदेवकी मृत्युका वर्णन, कहीं सं० १६२७ और कहीं १६२५ और कहीं दत्ताना युद्धके पीछे लिखाहै जो सं० १६४०में हुआथा। और१६२५ यहां लिखाहै सो यह बड़ी भूल है यथार्थ वर्णन मारवाड़के इतिहासोके अनुसार सं०१६१९ है। (२) यहभी गलतहै, क्योंकि राव मालदेवने उदयसिंहको नहीं, चन्द्रसेनको अपनाउत्तराधिकारी मानकर युवराज पदपर नियत कियाथा। (३) यह सन् सही नहीं मालूम होता क्योंकि मारवाड़के इतिहासमें १४५१ में सन् १३९४ में चूडाजीका मंडोर प्राप्त करना लिखाहै। (४) यह सन्भी गलतहै क्योंकि जोधपुर सं० १५१५ सन् १४६८ में बसाथा।

समयमे लूनी नदीके दोनो किनारोकी सव उपजाऊ भूमि रणमल और जोधाके पुत्रोके अधिकारमे आई। इसके उपरान्त जोधपुर वसा। इस कारण पुराना नगर छूटकर राठौर राज्यकी राजधानी नये वसाये हुए जोधपुरमे स्थापित हुई। राजपूत स्वभावसेही स्थितिशीलताके अनुरागी होतेहै, विशेषकर इनको अपनी पुरानी राजधानीके छोड़नेकी इच्छा नहीं होती। राजपूत समाजका यह एक सदैवसे ही नियमहै कि, राजधानी बदलनेके साथही साथ राजपूत राजाओंकी शासनविधि और कौलिक उपाधिका प्रायः परिवर्तन होता रहताहै। मारवाड़के इतिहासमे इस नियमका कोई दोष नहीं देखा जाता। जोधाने अपने नामसे जोधपुरको वसाया। मारवाड़के इतिहासमे एक दूसरे नवीन युगका प्रकाश हुआ, राठौर कुलकी भीतरी शासनविधिका भी अदलवदल हुआ। जोधाके तेईस भाई थे। योग्य उत्तराधिकारीके अभावसे सिंहासन किसी दूसरे निकटवर्ती राज्यपानेके सम्वन्धीके हाथमे दिया जासकताहै; किन्तु जोधाने नियम करलियाथा कि उसके वंशधरके अतिरिक्त और कोई जोधपुरके सिंहासनको प्राप्त नहीं होसकेगा। विशेप जो राठौर कि मारवाड़के सामन्त गिनेजातेहैं वे तो कभी राठौर कुलकी राजगद्दीपर न वैठ सकेगे। राजपूत शासन नीतिका एक विचित्र भावहै। इसका विस्तारसे वर्णन अजमेरके इतिहासमे होगा।

जोधाराव जानताथा कि राठौरवीर सियाजोके वंशधरोंमें वही प्रधान प्रतिष्ठावान् नरपति है। अपने ऊंचेपनको विचारकर वह मनहीमनमे गर्वित भी हो गयाथा[१]। कुछ गर्व और कुछ अभिप्रायके वशवर्ती हो उसने अपने राज्यकी सामन्त प्रथाको नवीन आकारसे वनानेकी इच्छा की और उपसामन्तोंकी भूमिवृत्तिको एक नियमित सीमामे विभक्त करनेके निमित्त एक योग्य नियमावली (कानून) भी वनाई। उसके पिता रणमल्लके चौवीस और अपने चौदह पुत्रोके विपयमे विचार करते २ उसके मनमें सहसा यह चिन्ता उत्पन्न हुई कि,-"इनके पुत्र प्रपौत्र वहुत सम्प्रदायोके होजाँयगे; और फिर उनमेंसे भी वहुतसे उपसामंत होगे, ऐसी अवस्थामे भूमि सम्पत्तिके पीछे विवाद होनेकी सम्भावनाहै; अतएव जिससे किसी प्रकार उनमें विवाद न होवै उसीको ही प्रवंध करना कर्तव्य कर्म है।" मनमे इस प्रकारका विचार कर जोधाने प्रत्येक उपसामन्तोंकी भूमिवृत्तिकी संख्या और सीमाको नियमित करदियाथा। उसके वड़े भाई कांधलने हिंसकवृत्ति द्वारा प्रेरित हो वीकानेरका स्वाधीन राज्य स्थापित किया। वह उसके वंशधर कांधलोतके नामसे प्रसिद्ध हो स्वाधीनतापूर्वक राज्य करने लगे। जोधाका तीसरा भाई चाम्पाजी, कूंभाजी दोनो पुत्र दूदो और करमसिह तथा दूसरा पौत्र ऊदो अपने २ नामानुसार चांपावत, कूंपावत, मेरतिया (दूदोके वंशधर) करमसोत और ऊदावत नामक छह गोत्रोंके अधिपति हो मारवाड़ राज्यके खम्भ स्वरूप राज करने लगे * मरुदेशके प्रथम चांपा सामन्तमें गिनागया। इसके वंशधर इस

---

१ कूंभाजीपर पहले नोट करचुके हैं उसको देखो।

* आठ वड़ी २ भूमिसम्पत्तियां इनके हाथमें अर्पित हुई। वह आठ भूमिसम्पत्तियां आठ ठकुरायतोके नामसे प्रसिद्ध हैं। उनमेंसे प्रत्येककी वार्पिक आय ५० हजार रुपया है। इसके अतिरिक्त उनको औरभी उपसामन्तोसे द्रव्य प्राप्त होताथा।

उच्च सन्मानको सदैवसे भोगते आते है । इनके प्रचण्ड विक्रमसे राठौर राजाओंके सिंहासन अनेकों वार तितर बितर होनेपर आगये । इसके अतिरिक्त जोधारावने अपने भाई पुत्र और पौत्रोंको भी सामान्य २ भूमिसम्पत्ति दी थी । यह भी भूमिसम्पत्ति मौरूसी मुस्तहकुम (जो छीनी न जाय) दीगई। राजा जैसे अपने सिंहासनको पवित्र जानता है वैसेही भूमिके अधिकारी भी अपनी भूमिवृत्तिको पवित्र जानते हैं । राजाके साथ अति निकटका रुधिर सम्बन्ध होनेसे वे अपनेको उसका वृत्तिभोगी कहकर स्वीकार करनेमें कुण्ठित नहीं होते, वरन् वह इससे स्वयं गर्वित हो इस प्रकार राजाके सम्बन्धमें कहा करते हैं "जबतक हम सेवा करते हैं तबतक वह हमारा स्वामी है और जब सेवाकी आवश्यकता नहीं होती तो हम उसके भाई और कुटुम्बी है और पितृराजमें समान हक़दार भी है।"

राव मालदेवने जोधाजीके इस विभागको स्वीकार किया । यद्यपि उसने छोटे दरजेकी जागीरें बटाईं और जो कि, मारवाड़ देशकी सीमा उसके समयमे पूरी होगई थी इस कारण इन जागीरोंकी संख्या नियत करदेना परम आवश्यक समझा गया । इस लिये जोधाजीसे लेकर मालदेवकी सन्तानोंतक यह जागीरें मौरूसी (स्थायी) रहीं; परन्तु पहली दी हुई और पिछली दी हुई जागीरोंमे इतना भेद रखागया कि, जो जागीरें शस्त्रबलसे विजय की गई थीं, वे इस प्रकार मौरूसी रक्खी गई कि यदि जागीरदारके पुत्र न हो तो गोद लियाहुआ बेटा भी उसका अधिकारी हो सकता था, परन्तु पिछली जागीरें कुछ दिनोके पश्चात् मुख्य राज्यमें मिला ली जाती थीं। राजपूतोंकी मालगुजार अर्थात् कर देनेवालीं थी । जागीरें किसी जिमीदारको केवल उसके जीवन तकके लिये ही उसके इतिहासके अनुसार दी जातीं थीं ।

यद्यपि यह उत्तम नियम उनके प्राचीन इतिहासोंमें देखा जाताहै; परन्तु जब तब प्रबन्ध न होनेके कारण इस नियमका खण्डनभी देखागयाहै । इन उदाहरणोंसे मालगुजार और बिना करको जागीरोंमे दो प्रकारका भेद पाया जाताहै । सियाजीसे लेकर जोधाजी तक बहुतसी वंशशाखाओंने जो उस राज्यके उत्तरीय और पश्चिमीय खण्डोंमे निवास करतेथे अपनी आर्थिक अवस्था अल्प होनेके कारण वा बहुतोने अपने पूर्व पुरुषोंके अभिमानके कारण उन जागीरोंको स्वतंत्ररूपसे भोगाहै । तो भी यह जागीरदार मारवाड़ नरेशको अपना राजा मानतेहैं और जबकभी उनके राजापर संकट आताहै, तो वे सहायता करते हैं । यह वंशशाखा कोई 'कर' वा दण्ड नहीं देतीहैं, और इसलिये उनकी जागीरें बिना करवाली कहलाई जासकतीहैं, उन जागीरोंकी संख्यामें हम बाढ़मेर कोटड़ासे और फलसूंदकी गणना करतेहैं । दूसरे जागीरदार यद्यपि पूरे स्वतन्त्र नहीं हैं तो भी वह छोटे माफीदार कहलाये जासकते हैं, जो आवश्यक समयपर सहायता देतेहैं और बड़े २ उत्सवोंपर स्वयं राजाकी भेटको उपस्थित होते हैं । महेवा और सनदरीभी इन माफ़ीदारोंमेसे हैं । प्राचीन वंशज जो राजपूतानाभूमिमे फैलेहुए हैं; और जो वर्तमान राजाके यहांभी नौकर हैं, वह अपने बड़ेबूढ़ोंकी उपाधिसे पहचाने जातेहैं । यद्यपि बहुतसे मनुष्य दूहड़िया, मांगलिया,

ऊहड़ और धांदलके नाम सुने जातेहैं, परन्तु यह कोई नहीं जानता कि यह राठौर हैं। विवाहके समय कवि वा भाटकी छन्छवद्ध पुस्तक देखी जातीहै, जिससे कि, समधियोंकी वंशपरम्परामें हानि न हो, जिनका पालन बड़ी दृढ़तासे होता है और उसमें उनके और दूसरे वंशोंके इतिहास विद्यमान होते हैं, जो दूसरी दशामे नष्ट भ्रष्ट होजाते हैं।

इस जोधा जातिके लिये किसी उपाधिसे क्यों न पुकारा जावे, हमने समझनेके सुभीतेके लिये जागीरदारके नामसे याद कियाहै और आगेभी जागीरदार नामसे ही स्मरण करेंगे। इसमे कुछभी सन्देह नहीं है कि यह परम्परा जागीरदारीकी उपाधि राठौरजातिमे प्राचीनकालसे अर्थात् उनके पुरुषा सियाजीके समयसे प्रचलित है, जो कन्नौजकी राजधानीसे लायेथे, अन्तिम राजा जयचंद और चौहानोके युद्धसे बढ़कर कोई मनोहर दृश्य इस सहायक सेनाकी धूमधाम और सजावटका इतिहासमे विद्यमान नहींहै। राजपूतानेके प्रत्येक रजवाड़ेकी प्रणाली उनके इतिहासोंके अनुसार योरुपकी परपरासे मिलती चली आतीहै और विशेषत: मेवाड़की जहां १३०० वर्ष पूर्व सारे जागीरदार राज्यके अपने महाराजाको नजर भेंट नही करते थे और जवतव वदला लेनेकी धमकी भी देतेथे तौ भी अपने नरेशका नमक खानेके कारणसे उन्होंने एक वर्षतक कुछ शत्रुता नहीं की और एक वर्षकी अवधि समाप्त होनेपर उसको गद्दीसे उतार दिया (देखो खण्ड १ सूची)। बादशाह अकवर जो हिन्दूधर्मका पक्ष करता था, उसने वहुतसे नियम अपने राज्यके इनको देखकर वनाये।

पश्चिमीय राजनीति और भारतीय राजनीतिका मुकाबला करतेहुए पाठकोंको एक वातका ध्यान रखना उचित है, अर्थात् यह कि जागीरदारका नियम सव देशोंमे जैसे कि राजपूतोंमे पाया जाताहै, और राजपूतोंमें सव जागीरदार कुटुम्वी होतेहै (सिवाय वाहरके जागीरदारोंके) और जिस प्रकार योरुपमें राजाके प्रभुत्वको मानतेहैं, उसी प्रकार राजपूतानेके ठाकुर भी मानतेहैं। इस प्रकार चांपाके पुत्रसे लेकर जो वड़ा राजा था एक गरीव पेटपालनेवाले तक सव राजाके साथ वंश-सम्वन्ध रखतेहैं। यह जानना वड़ा कठिन है, कि इस प्रणालीसे हानि है वा लाभ, क्योंकि मानुषिक इतिहासोंमे अच्छे और वुरे दोनो प्रकारके उदाहरण मिलतेहैं। जोधाकी ५००००० सन्तानोंमेसे १२०००० हजार राजपूतोंके राजा मालदेवके लिये युद्धमें प्राण देदेना उनकी अचल राजभक्तिको प्रगट करताहै। जिसकी आजतक प्रशंसा होती है।

जोधारावके प्रसंगमे हमने उसकी प्रतिष्ठित कीहुई सामन्तप्रथाका वर्णन किया। मारवाड़की समस्त प्रथाका यथास्थान वर्णन किया जायगा। अव इस समय फिर उदयसिंहका वृत्तान्त लिखनेमे प्रवृत्त होते हैं।

पहले ही कह आये हैं कि उदयसिंहके राजगद्दीपर वैठनेके सम्वन्धमें पृथक् २ भाटग्रन्थोंमे पृथक् २ मतभेद देखे जातेहैं। कोई कहताहै कि वह राजा

मालदेवके मरनेके थोड़े ही काल उपरान्त सम्वत् १६२७, सन् १५६९ ई० मे मारवाड़के सिहासनपर बैठा। इन दोनो मतोमे कौन सत्य है उसका हम भली प्रकारसे निर्णय नही करसकते। परन्तु भलीप्रकार विचारकर देखनेसे अन्तिम बात ही मानने योग्य होसकती है क्योंकि चन्द्रसेन जैसा तेजस्वी था वैसे ही उसने अपने यत्नभर उदयसिंहको मारवाड़की गद्दीपर न बैठने दिया होगा। जो हो, हम अन्तिम मतको स्वीकार कर उदयसिहको सन् १५८४ ई० मे ही मारवाड़के सिंहासनपर बैठाहुआ मानते हैं।

राजस्थानके "उदय" नाममे एक महा अनर्थकारी शक्ति देखीजाती है। आश्चर्यका विषय है कि जो कोई उदय नाम धारण कर जिस किसी सिहासनपर बैठा, उसके ही द्वारा उस राज्यका सर्वनाश हुआ।

उदाहरण स्वरूपमे शिशोदिया उदयसिहकी कायरता मेवाड़के इतिहासमे वर्णित हुई है, इस समय अभिप्रायवश राठौर कुलका अयोग्य राजा और तेजस्वी जोधारावका अयोग्य वंशधर था। यद्यपि वह भाग्यकी कठोर आज्ञासे पितृपुरुषोकी स्वाधीनतासे विच्युत हुआ था; किन्तु उसने क्षणभरके भी निमित्त उस स्वर्गीय रत्नके पानेकी फिरसे चेष्टा न की, वरन् उस पराधीनताकी जंजीर अपने हाथसे दृढ़ बांध ली थी, वह स्वभावसेही विलासप्रिय और सुखका चाहनेवाला था। सहिष्णुता और तेजस्विता यही राजपूतोके दो प्रधान गुण है। इन दोनो श्रेष्ठ गुणोकी सहायतासे ही राजपूत अति भयानक अत्याचारियोके प्रचण्ड अत्याचारको सहन करके भी बदला लेनेके निमित्त योग्य अवसरकी राह देखते रहते हैं। किन्तु दुःखका विषय है कि इन दोनो गुणोंमें से उदयसिंहमें एक भी न था। यद्यपि अकबर उसको अधीन राजाकी समान नहीं देखता था, और उसने उसको लोहेकी जंजीरमे बांधनेके बदले फूलोके हारोसे बांध रक्खा था, किन्तु ऐसा होनेपर भी क्या वह फूलोका हार दासत्वकी जंजीर नहीं है? स्वामी, सेवकका चाहै जितना आदर क्यो न कर चाहै जितने मणि मुक्ता देकर उसको सोनेकी जंजीरसे क्यों न सजादे, परन्तु जो दासहै वह तो सदा दासही रहैगा। वह आदर और वह स्नेहानुराग तो केवल अभागे दासत्वका पुरस्कार है। वीरचूड़ामणि प्रतापसिह अकबरके उस आनन्द और स्नेहानुरागके कर्मको जानता था; इसी कारण उसने विजातीय घृणाके साथ मुग़लसम्राट्के सैकड़ों हजारो लोगोका तिरस्कार कियाथा और राजधनसे वंचित होकर भी वह कठोर वनवासव्रतका अवलम्बन कर गहलौतकुलकी स्वाधीनता और गौरव गरिमाको स्थिर रखनेमे शक्तिमान् हुआथा। यदि उदयसिह चाहता और उसकी ओर जाकर मिलजाता तो वह अपने देशकी स्वाधीनताका उद्धार करसकता था, किन्तु क्या कहाजाय वह तो स्वाधीनताके मर्मको ही नहीं जानता था। नहीं तो वह अपने देशकी माया ममताको भूल और अपनी जातिवालोके मुखकी ओर न देखकर टुकड़े खानेवालोकी समान मुग़लसम्राट्का कृपापात्र बननेके निमित्त इतना आतुर क्यों होता? मुग़ल साम्राज्यके आश्रयकी छायाके नीचे सुख प्राप्तकर वह जिस समय अपनी स्वाधीनताके मार्गमे अपने हाथसे कांटे बिखेररहाथा, वीरकेसरी

प्रतापसिंह उसी समयमे असह्य वनमें वसनेके क्लेशोका सहन करताहुआ कठोर अत्याचारसे पीड़ित हो अपने देश और अपनी जातिकी स्वाधीनताके मार्गको स्वच्छ कररहा था। इसी कारण उस शिशोदिया महापुरुषकी पवित्र प्रतिमूर्ति आज भी प्रत्येक राजपूतोके हृदयमंदिरमे प्रतिष्ठित हो रही है, । इसी कारण प्रत्येक राजपूत प्रात.काल सोकर उठनेके समय उनके पवित्र नामका स्मरण करता है।

मुग़ल सम्राट्के कृपापात्र होनेके निमित्त उदयसिंहने किसी कार्य्यके करनेमें कमी न रक्खी। यहांतक कि अपने जातीय गौरवको भी जलाञ्जली दे अपनी वहिन जोधावाईको अकवरके साथ व्याह दिया था। इससे अकवरने उसपर संतुष्ट हो केवल अजमेरके अतिरिक्त मुग़लेके अधीन मारवाड़के समस्त नगर परगने और गांव उसको लौटादिये। इसके अतिरिक्त मालवेके वहुतसे वड़े २ नगरोको भी उदयसिंहने अपने अधिकारमे करलियाथा। राजमुकुटधारी माननीय मुग़लवहनोईका सेनावल पाकर उदयसिंहने गर्वित सामन्तोंकी शक्तिको नीचा करदिया। प्रधान२सर्दारोंके वलको व्यर्थ करदिया और प्राचीन भूम्यधिकारी तथा उपसामंतोकी भूमिसम्पत्तिको छीन लिया। इस प्रकार उदयसिंहके राज्यकी आमदनी पहिलेसे दूनी होगई। ऐसा वर्णन है कि नया वंदोवस्त करके उसने ऐसेही एकसाथ चौदह सौ गांव सर्कारी खजानेमे लगा लियेथे। दूदाकी संतानवालोसे उसने प्राय. समस्त जमीन छीन ली थी। और ऊदावत लोगोसे जैतास तथा चांपा और कूंपाके खानदान वालोसे भी कितनेएक साधारण नगर छीन लियेथे।

वादशाह अकवरने जो सलूक उदयसिंहके साथ किया उसका हमेशा उदयसिंह कृतज्ञ वनारहा, क्योकि इसीके कारणसे वीर राठौरोने वादशाहके वड़े २ काम कियेथे। राजा स्वयं युद्धमे नहीं जाता था। इस जंगली राजा (वादशाह अकवरने उसको यही उपाधि दी थी) के ३४ लड़के लड़कियां थे, जिनसे नवीन वंश और जागीरदारियां मरुदेशमे कायम होगई, जिनमेसे वड़ी जागीरें गोविन्दगढ़ और पीसागढ़की हैं, और कुछ जागीरें राजसीमासे वाहर आवाद की गई जो स्वतंत्र होगई और उनका नाम उनके स्थापकोके अनुसार रक्खा गया इनमेसे किशनगढ़ और रतलाम मालवेमे है।

उदयसिंहका शरीर उसी योग्य था कि जैसी उसके हृदयकी वृत्ति थी। राजपूत लोग उसे "मोटा राजा" कहकर पुकारते थे। उसका शरीर यहांतक मोटा होगयाथा कि फिर वह घोड़ेपर नही चढ़सकताथा, चढ़े भी तो वैसी सामर्थ्य किसी घोड़ेमे नहीं थी कि जो उसे उठाकर लेचलता। सिंहासनपर वैठकर उसने तेरह वर्ष राज्य कियाथा। उसकी मृत्युका एक अद्भुत वर्णन पाया जाताहै, इस वर्णनसे उदयसिंहके चरित्रकी और राजपूत संस्कारकी एक प्रकाशमान छवि नेत्रोके आगे दिखाई देजातीहै। प्रयोजन समझकर उसका यहां वर्णन करतेहै। मारवाड़के प्राय: समस्त भाटग्रन्थोमे देखा-

---

१ वीरचूड़ामणि प्रतापसिंहका जीवनचरित्र टाड्राजस्थानके प्रथमखण्ड पृ० ३१२ में देखो।

जाताहै कि राठौर कुलके राजकुमारोंकी नीतिशिक्षा उत्तम रीतिसे हुआ करतीथी और वे अपने २ चरित्रकी नैतिक उत्कर्षताको प्राप्त करलेतेथे—उनकी नीतिशिक्षाका भार विश्वासी और बुद्धिमान् सर्दारोंको सौंपा जाता था। सबसे पहले वे सर्दारलोग उनको इन्द्रियदमन करना सिखलाते थे। राजकुमारलोग इस शिक्षामें अत्यन्त निपुण होजाते थे, वालकपनसेही वे इन्द्रियोका दमन करना सीखते थे। और वीस वर्षसे पहिले कभी स्त्रीका मुंह नहीं देखते थे। परन्तु स्थूलशरीर उदयसिंहको यह शिक्षा प्राप्त हुई थी या नहीं सो हमको ज्ञात नहीं। यदि यह शिक्षा उसने पायी भी हो तो इस परिणत अवस्थामें वह उसको भूल गया था। यद्यपि उसकी सत्ताईस रानियां थीं. तथापि उसने. बुढ़ापेमें इन्द्रियोके वश हो, एक पवित्र हृदयवाली ब्राह्मणकुमारीकी ओर कामपूर्ण नेत्रोंसे देखा था यह कुमारी ही उदयसिंहके नाशका कारण हुई।

"ख्यात्" नामक एक भाटग्रंथमें देखा जाता है कि एक दिन उदयसिंह वादशाहके दरवारसे अपने राज्यको लौट रहा था, इसी समय मार्गमें उसने वीलाड़ा नामक गांवके वीच एक परमसुन्दरी स्त्री देखी। उस वालाके अद्भुत सौंदर्यको देखकर पंचशरने राजाके हृदयमे सुमनवाण मारे। राजाने उस मनमोहिनीका नाम धाम पूंछा। उस स्त्रीके उत्तर देनेसे ज्ञात हुआ कि वह आईपंथी सम्प्रदायके किसी उत्तम ब्राह्मणकी लड़की है। आईपंथी ब्राह्मणलोग कालिकाकी अपरामूर्त्ति आईमाताके उपासक हैं। वे घोर तान्त्रिक होनेके कारण मद्य मांसके द्वारा अपने उपास्य देवताकी पूजा किया करते थे। जिस लावण्यपतीके रूपपर राजा उदयसिंह मोहित हुए थे, उसका पिता उग्र सम्प्रदायका अग्रणी होनेपर शुद्ध और निर्मलचरित्रवाला था। उस काममोहित राठौर राजाने एकवार भी अपनी अवस्था और पद मर्यादाका विचार न किया, राजपूत होकर भी उसने क्षणभरके लिये भी ब्राह्मणोंके मुखकी ओर नही देखा। जिन ब्राह्मणोको उसके दादा परदादा देवताओंकी समान पूजते आये थे, जिनके साधारण भ्रुकुटी कटाक्षको वे वज्रपातकी समान समझते थे, आज उदयसिंहने उसी पवित्र और निर्मल राठौर कुलमें जन्म लेकर और विशाल राज्यका अधीश्वर होकर एक विमल—चरित्रवाली ब्राह्मण कन्याको वलपूर्वक हरण करनेका विचार किया। ब्राह्मणोने दुष्ट राजाके अभिप्रायको शीघ्र ही जानलिया, ब्राह्मणने विचारा कि आज तो रक्षक ही भक्षक होगया है, जिसके ऊपर दुर्वल प्रजाका मान और प्रतिष्ठा निर्भर है, आज वही अपने हाथसे उसका नाश किये डालता है। क्या मेरे जीवित रहते ही एक राजपूत इस कन्याको वलपूर्वक हरण करके लेजायगा। और मेरे पवित्र कुलमें सदाके लिये कलंक लगावैगा। चारों ओर वदनामी होगी और कोई ब्राह्मण मुझसे हेलमेल भी न करेगा। मैं जातिसे निकाला जाऊंगा। इस प्रकारकी चिन्ता वारंवार उसके हृदयमें उदित होनेलगीं। वह एकसाथही उन्मत्त होकर राजाके

१ पहिले कहेहुए वीलाड़ा गांवमें इनका एक मंदिर था।

नामपर सैकड़ो धिक्कारे देनेलगा। अनंतर यह विचारकर कि अपने वंशका कलंक अब किसी उपायसे नहीं छूटसकता, वह स्वयंही अपनी पुत्रीके संहार करनेका विचार करनेलगा। जिस कन्याको अपने रुधिरसे पालन पोषण किया, जिसका मुंह देखनेसे उसके प्राण प्रसन्न होतेथे, संसारमे केवल जिसको ही वह अपना समझताथा, आज उसी प्राणप्यारी कन्याका संहार करनेके लिये ब्राह्मणका हाथ उठा । सबसे पहिले उसने एक बड़ा होमकुंड खोदा, पीछे पुत्रीका वध करके उसकी सुकुमार देहके टुकड़े २ किये और अपने हृदयका भी कुछ थोड़ासा मांस काटकर कन्याके अंगोमे मिलादिया। शीघ्रही प्रचण्ड होमकुण्ड जलनेलगा, लकड़ियोके साथ बहुतसा घी भी उस होमकुंडमे डालागया, शोकसे उन्मत्तहुआ ब्राह्मण इस प्रकार अपने देवताकी पूजा करनेको बीभत्स होम करनेलगा। दुर्गन्धिमय विकट धूमराशि उसके घर आंगनमे भर गई, अगणित लहरें निकलकर आकाशको चूमनेलगीं, उस समय अचानक ब्राह्मणने खड़े होकर गंभीर वाणीसे राजाको शाप दिया "तुझको अब कभी शान्ति न प्राप्त होगी। आजसे तीन वर्ष, तीन दिन, तीन प्रहरके मध्यमे प्रतिहिंसा अवश्य पूर्ण होगी। आईमाता साक्षी है, मै जाताहूं। देवी वावड़ी ही मेरा होनहार स्थान होगा।" इस भयंकर शापके शेष होतेही वह तांत्रिक ब्राह्मण जलते हुए अग्निकुंडमे कूद पड़ा। अग्निकी अगणित लपटोने शीघ्रही उसको भस्म करदिया।

यह भयानक और बीभत्स समाचार राजा उदयसिंहने भी सुना। अपने घोर अपराधको विचार उसका हृदय कम्पित होने और शरीर लड़खड़ाने लगा। उसी दिनसे वह क्षणभरके भी निमित्त शांति न पा सका। वह सोनेके समय स्वप्नमे सदैव उस ब्राह्मणकी विकट मूर्त्तिको मानसिक नेत्रोसे देखने लगा, सदैव उसका भीषण शाप उसके कर्णछिद्रोमे गूँजने लगा। उसका वह अत्यन्त मोटा शरीर बहुतकुछ सूख गया। अन्तमे वह अभागा राठौर उस ब्राह्मणके दियेहुए शापके नियत समयमे ही इस लोकको छोड़गया।

बहुत दिन वीतगये, परन्तु उस बीलाड़ावासी आईपंथी ब्राह्मणके विकट प्रतिहिंसाका चित्र अबतकभी कोई मारवाड़ी नहीं भूलसका। उसके इस भयानक होमका वृत्तान्त व्यभिचारी राजाओके पक्षमें एक कठोर आज्ञाकी समान विराजमान होरहाहै। जो कोई राजा अपनी मर्यादाको भूलकर इस प्रकारके पाप पंकमे फँसनेकी

---

१ यह कहानी सही नहीं मालूम होती। बीलाडेमें आईजीका मंदिर तो है पर आईपन्थी कोई ब्राह्मण नहीं पायाजाता। सीरवी जातिके किसान विशेषकर आईपंथी हैं, जिस ब्रह्मराक्षसका उल्लेख कियाहै, उसका एक पडिहार राजाके मंडोरमें ऐसे ही अत्याचारसे ब्रह्मराक्षस होना सुनाजाता है। मोटा राजा उदयसिंहका देहान्त लाहौरमें बीमारीसे हुआथा। उसके मरनेकी ऐसी कथा शायद चारणोंने गढ़ीहै क्योंकि उन्होंने इन लोगोंके कई शासन गाँव एक कसूरपर छीन लियेथे जिससे नाराज होकर बहुतसे चारणोंने गाँव आवे तो वहांके जागीरदार चंपावत गोपालदासकी सहायतासे धारी अर्थात् आत्महत्या की थी।

इच्छा करताहै, तो वही प्रेतात्मा ब्राह्मण उसी समय उसके सामने प्रगट हो उसको पापके मार्गसे हटादेताहै।

वहम भी कभी २ सदाचारी बना देताहै। बीलाड़ाके आईपन्थी ब्राह्मणके ब्रह्मराक्षस होनेका भय बहुत समयतक मनुष्योंपर छाया रहा; और जिस समय और किसी प्रकारसे राजकुमारोंके चरित्रोंका सुधार नहीं हुआ, उस समय यही ब्रह्मराक्षसका भय राजकुमारोंको सदाचारी बनाता था। उदयसिंहके प्रपौत्र प्रसिद्ध जसवन्तसिंहका अपने एक कर्म्मचारीकी कन्यासे प्रेम होगया और उसको वह बावड़ी-देवीमें लेगया, परन्तु इस बदला लेनेवाले ब्रह्मराक्षसके भयने उसकी कामनाओंमें बाधा डाली, इस समय संकल्प विकल्पोंका उसके मनमें महायुद्ध हुआ; जिससे जसवन्त पागल होगया, परन्तु किसी उद्योगसे भी उसके मनसे प्रेमभाव नहीं हटा। ब्रह्मराक्षसकी चिन्ता भी मनमें बनीरही। सर्व साधारण रीतिपर यह विचार था कि, इसके ऊपर किसीका आवेश है, क्योंकि जिस समय उसको खेलाया जाता था तो वह यह कहता था कि यदि जसवन्तसिंहके बराबर कक्षाका कोई सरदार इसके बदलेमें अपनी जान देदे तो मैं जसवन्तपरसे उतर जाऊंगा। कूंपावत् जातिका अधिपति नाहरखाँ जो इसके निमित्त सदा युद्धमें सेनापतिका कार्य्य करता था, स्वामीके बदलेमें अपना शिर देनेको राजी हुआ और जिस समय कि उसने अपनी यह इच्छा प्रकट की, स्यानेने जो इसको खेलाताथा भूतको पानीके कटोरेमें उतारा और तीनवार जलको उसके शिरके चारोंओर घुमाकर वह जल नाहरखांको पीनेके लिये देदिया। जसवन्त उसी समय अच्छा होगया। आश्चर्य्ययुक्त बदला इस भूतका राजस्थानके राजकुमारोंपर पूरा विश्वास रखता है और इसी कारणसे नाहरखांका नाम ईमानदारका ईमानदार रहा। नाहरखांने मरनेसे पहिले अपने पुत्रको बुलवाया और सौगंध दिलाई कि अब ऐसे राज्यकी प्रधानताको छोड़ देना जिसके कारणसे यह प्राण समर्पण हुआ है, उस दिनसे आसोपके कूंपावतोंके स्थानमें आहवाके वे चांपावत अधिकारी हुए, जिन्होंने अपने राजकुमारके दाये स्थानको गद्दीकी बाई तरफ बैठना स्वीकार किया।

तेजस्वी मालदेवके अयोग्य पुत्र उदयसिंहके सम्बन्धमें अब अधिक कहनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है, पहिले ही कह आये हैं कि वह वीरपूज्य जोधारावका अयोग्य वंशधर था, गर्वोन्नत राठौरकुलका अयोग्य राजा था। उसीसे सियाजीका विपुल वंश नीचेको गिरने लगा। मारवाड़का गौरवसूर्य विपादसागरमें डूबनेके निमित्त मध्य आकाशको परित्याग कर धीरे २ नीचेको उतरने लगा।

हम एक राजावली पुस्तकसे उल्लेख कर २ उदयसिंहका वृत्तान्त उसके सन्तानोंकी सूची देकर समाप्त करेंगे। ऐसे पाठकोंको जिनको इन वंशोंसे प्रयोजन है उनके लिये यह इतिहास बहुत ही रुचिकर होगा और विशेषकर ऐसे पाठकोंको जिनको इनके जातीय अधिकारमें हस्ताक्षेप करनेकी आवश्यकता पड़ती हो।यहाँपर उस महापितृवृक्षकी शाखायें एकही शताब्दीमें सब देशोंमें फैली विदित होती हैं और जिनमेंसे किशनगढ़ रूपनगढ

और रतलामके स्वतन्त्र शासक और गोविन्दगढ़ खरवा पीसागढ़के ताल्लुकेदार जो सब उदयसिंहकी सन्तान हैं रक्षादृष्टिसे देखते हैं।

१। सूरसिंह, सिंहासनपर बैठा।

२। अखैराज।

३। भगवानदास-इसके वल्लु, गोपालदास और गोविन्ददास नामक तीन पुत्र थे। इसने गोविन्दगढ़ स्थापन किया।

४ नरहरदास
५ शक्तसिंह[1]
६ भूपनसिंह
} इनके कोई सन्तान नहीं हुई।

७ दलपत,-इसके चार पुत्र हुए थे, उनमेसे जेठे महेशदासके रतननामक पुत्रने रतलाम नामक एक गढ़ वसाया था और २ यशवंतसिंह, ३[2] प्रतापसिंह ४ कुनीरैन हुए।

८ जयतके चार पुत्र हरसिंह अमर, कन्हीराम, और प्रेमराज हुए, इनकी संता-नोको वलूंता और खरवाकी पृथ्वी प्राप्त हुई थी।

९ किशनसिंहने सम्वत् १६६९-सन् १६१२ ई० मे किशनगढ़ स्थापित किया। इसके सहसमल, जगमाल, भारमल नामके तीन पुत्र हुए। भारमलका पुत्र हरिसिंह और हरिसिंहका पुत्र रूपसिंह हुआ। रूपसिंहने रूपनगर वसाया था।

१० यशवन्तसिंह-इसके पुत्र मानने मानपुर बसाया। मानकी औलाद मनरूप जोधाके नामसे प्रसिद्ध हुई।

११ यशवन्त, केशो, इसने पीसानगढ़को वसाया था।

१२ रामदास.
१३ पूरनमल.
१४ माधोदास.
१५ मोहनदास.
१६ कीरतसिंह.
१७ — — —
} इनके नामोंके अतिरिक्त कुछ वृत्तान्त नही पायाजाता।

इनके अतिरिक्त उदयसिंहके सत्रह पुत्रियां भी हुई थी, परन्तु उनका कोई वर्णन भाटग्रन्थोंमे नही देखाजाता।

---

१ यह गलत लिखाहै क्योंकि शक्तसिंहकी औलादमें खरवा इलाका अजमेरके इस्तमुरारदार है।

२ रतलाम, किशनगढ़, और रूपनगढ़ तीन स्वाधीन परगने है। और तीनों स्वतंत्रतापूर्वक सुखसे समय वितातेहै।

पंचम अध्याय ५.

राजा शूरसिंहका अभिषेक; उसके द्वारा सिरोहीके राव सुरतानका पराभव; गुजरातके राजाके विरुद्ध उसकी युद्धयात्रा; धुंधकाके युद्धमें शूरसिंहका जय पाना; उसको धन और सन्मानकी प्राप्ति; उसका भाटोंको धन देना; अमर बलेचाके विरुद्ध उसकी युद्धयात्रा; नर्मदाके तटपर युद्ध; अमरकी हार और उसका माराजाना; नवीन २ सन्मानोंकी प्राप्ति; अपने पुत्र गजसिंहके साथ राजा शूरसिंहका सम्राट्की सभामें जाना; मारवाड़के होनहार उत्तराऽधिकारीको सम्राट्का अपने हाथसे सजाना; जालोरके किलेको लांघना; राणा अमरसिंह; मेवाड़के विरुद्ध खुर्रम शाहजादेके साथ गजसिंहकी युद्धयात्रा; राजा शूरसिंहकी मृत्यु; नर्मदाके किनारे उसके द्वारा तलाक देनेपर मीनारका बनाना; राठौरपतिका बहुत समयतक जन्मभूमिसे बाहर रहनेके कारण मन न लगाना; जोधपुरकी शोभाकी वृद्धि; राजा शूरके पुत्र प्रपौत्र; गजसिंहका सिंहासनपर बैठना; बुरहानपुरके राजत्वमें और दक्षिणावर्तके प्रतिनिधित्वमें अभिषेक; उसकी परम्परा; दलथम्मनकी उपाधि मिलना; राजपूत कुमारियोंका वर्णन; राज्याधिकारके लिये बेगमोंकी चालाकी; सुलतान परवेज और खुर्रम; परवेजके विरुद्ध खुर्रमका षड्यंत्र रचना; राजा गजसिंहसे उसकी सहायता मांगना; प्रार्थनाकी निष्फलता; राजमंत्री गोविन्ददासकी गुप्तहत्या; गजसिंहका पदत्याग; खुर्रम द्वारा परवेजका माराजाना; जहाँगीरको तख्तसे उतारनेका यत्न करना; जहाँगीरका राजपूतोंसे सहायता मांगना; बनारसका युद्ध; गजसिंहके आचरण; विद्रोहियोंकी पराजय; सुलतान खुर्रमका भागजाना; गुजरातकी सीमापर राजा गजसिंहकी मृत्यु; उसके दूसरे पुत्र यशवंतसिंहका अभिषेक; सदैवके उत्तराधिकारित्वके नियमोंका अदलबदल; अकबरको सन्तानसे राजपूतोंका पृथक् होना; उसका देशसे निकाला जाना; मुगल सम्राट्के निकट अमरका आश्रय लेना; उसकी प्रतिष्ठा होना उसकी शोचनीय मृत्यु।

उदयसिंहके मरनेके उपरान्त उसका जेठापुत्र[1] शूरसिंह सम्वत् १६५१—सन् १५९५ में मारवाड़के गौरवहीन सिंहासनपर बैठा। जिस समय पिताके मरनेका समाचार उसके निकट पहुँचा. उस समय वह बादशाहकी फौजको लियेहुए लाहौर नगरमें भारतकी सीमावाले देशोंकी रक्षा करता था। जिस समय सन् १६४८ में सिंधु जीतागया, उस समयसे वह वहीं था। शूरसिंह एक पराक्रमी और रणकुशल राजा था। पिताके जीवित समयमें उसने इतनी रणकुशलता और वीरता दिखाई कि जिससे बादशाहने उसपर प्रसन्न हो उसको एक ऊँचापद और " सवाईराजा " की उपाधि दी थी।

मुगल बादशाह अकबरने राठौरवीर शूरसिंहके बल विक्रमका भलीभांतिसे परिचय पाया था; इस समय उन्होंने उसको एक कठोर कार्यके पूरा करनेपर नियत किया। सिरोहीका अधिपति राव सुरतान अपने पर्वतमय प्रदेशोंके स्वाभाविक किलोंके ऊपर निवास करताहुआ अत्यन्त गर्वित हो गया था। उसने सोच रक्खा था कि मुगल बादशाहकी कोपाग्नि उसके अभेद्य पर्वतोंको भेदकर उसको न जला सकेगी। इसी कारण वह अकबरके अधीन न हुआ था। शूरसिंहने उस गर्वित राजपूतके विरुद्ध लड़ाई की। इसके पहिले सिरोहीराजके साथ उसका घोर विवाद हुआ था। शूरसिंहको इस सुअवसरमें

१ शूरसिंह जेठा पुत्र नहीं था, कई भाइयोंसे छोटा था।

उस पुराने झगड़ेके वदला लेनेका अच्छा मौका मिलगया। भाटगण उसके सम्बन्धमें ऐसा कहते हैं कि शूरसिंहने उस पुराने विवादका वदला सिरोहीराजसे भलीप्रकार लिया और उसका सिरोही नगर लूटलिया। यहांतक कि राव सुरतानके पास चारपाई व बिछौना तक न रहा, उसकी स्त्रियोको पृथ्वीपर सोना पड़ा था, इससे जाना जाता है कि शूरसिंहके पराक्रमसे सिरोहीपतिका घमंड और आत्माभिमान चूर्ण होगया था और उसका ऊँचा मस्तक नीचा होगया था। एक समय वह संसारमें किसीको भी श्रेष्ठ न जानता था। उसकी शेखी और गर्वकी अधिकता क्या कहें "सूर्यभगवान साहस करके उसके ऊपर किरणोका विस्तार कर रहे थे, इससे उसने एक समय उनको वाणसे बेधनेकी इच्छा की थी।" आज राठौरराजा शूरसिंहके प्रवल पराक्रमसे उसका समस्त गर्व दूर होगया। आज उसको मुगल बादशाहकी अधीनता स्वीकार करनी पड़ी। सामंतोंकी प्रथाके अनुसार सुरतानरावने सम्राट्के भेजेहुए फरमानको स्वीकार किया और अपने सेनादलको लेकर वह दिल्लीश्वरकी सेवा करनेको प्रस्तुत हुआ। इसी समय बादशाहकी आज्ञानुसार राजा शूरसिंहने गुजरातके शाह मुजफ्फ़रके विरुद्ध युद्धको यात्रा की। हाराहुआ सिरोहीपति भी उसकी सहायताको सेना समेत गया। धुंधकानामक स्थानमें दोनों दल एक दूसरेके सामने खड़े हुए। राठौरवीर शूरसिंह समस्त देवर और राठोर सेनाका सेनापति हो युद्धखेतमें गया। दोनो ओरसे वहुत देरतक घोर युद्ध होतारहा। इस भयानक युद्धमें वहुतसे राठौर मारे गये; किन्तु अन्तमें शूरसिंह ही जीता और मुज़फ्फ़र अपमानित और पराजित होकर राजपदसे विच्युत हुआ। उसके सत्रह सहस्र नगर विजयी राठौरोंके अधिकारमें आये। उन नगरोंका धन रत्न लूटकर शूरसिंहने दिल्लीको भेजा, उसने उस धनमेसे केवल कुछ थोड़ासा अपनें यहां भी रख छोड़ा था। इस जीतसे अकवरने उसपर अत्यन्त प्रसन्न हो उसके पदको वढ़ा दिया और उसको एक तलवार वहुतसा इनाम और नई भूमिसम्पत्ति पुरस्कारमें दी।

गुजरातकी जीतमें राजा शूरसिंहको जो अतुल धन प्राप्त हुआ था उससे उसने जोधपुर नगर और दुर्गोके कुछ भागोकी वृद्धि की, और नगरको नवीन शोभासे सजाया, शेष धन उसने मारवाड़के छः भाट कवियोको बाँट दिया। वह भी साधारण नहीं था, प्रत्येकको एक २ लाख रुपया मिलाथा।

जिस दिन राठौरवीर शूरसिंहने अपने पराक्रमसे दुष्ट मुज़फ्फ़रका विषदंत तोड़डाला उसी दिनसे उसका यश राजस्थानके चारोओर फैल गया। मारवाड़के भाटगण आनंदमें

---

१ मुज़फ्फ़रकी लड़ाई तो शूरसिंहके राजा होनेसे वर्ष छ महीने पहले ही खानखानाने जीतकर गुजरात फतह करली थी। इस लड़ाईमें शूरसिंहके बाप उदयसिंह भी शामिल थे और यही कारण विशेष करके उनको जोधपुर मिलनेका हुआ था। शूरसिंहने अकबरके मरेपीछे जहाँगीरके बादशाह होनेके समय मुज़फ्फ़रके बेटेको हराया था, उसीके वृत्तान्तको गड़वड़ करके भाटों तथा टाड्ने ऊपर लिखी कथा यहाँ गढ़लीहै जो इतिहाससे मेल नहीं खाती।

पुलकित हो पंचम तानसे उसकी वीरत्व कहानी नगर २ में घूम २ कर गाने लगे। बादशाहने उसका और भी यश बढ़ानेके निमित्त उसे और एक कठोर कार्यके करनेको प्रेरित किया। नर्मदाके किनारे अमरबलेचा नामक एक तेजस्वी राजपूत वास करता था। उसने अबतक बादशाहकी अधीनता स्वीकार नहीं की थी। अकबरकी आज्ञानुसार शूरसिंहने उस राजपूत राजाको अधीन करनेके निमित्त उसपर चढ़ाई की। तेरह हज़ार घुड़सवार, दस बड़ी २ तोपें और बीस बड़े २ मदमत्त हाथी, इतनी सेना लेकर राठौरराज शूरसिंहने नर्मदाके किनारे चौहान वीर अमरके ऊपर हमला किया। अमर पांच हज़ार घुड़सवार लेकर उसके प्रचंड आक्रमणके रोकनेके निमित्त आगेको बढ़ा। दिल्लीश्वरकी अपार सेनाके सामने अमरकी पांच हज़ार सेना बहुतही थोड़ी थी; परन्तु तो भी अपने राज्यकी स्वाधीनताकी रक्षाके निमित्त वह बड़े उत्साहके साथ राठौर राजके सन्मुख हुआ। दोनों ओरसे लगातार तीन महायुद्ध हुए। पहिले दो युद्ध हुए। पहिले दो युद्धोंमें किसीकी हार जीतका निश्चय न हुआ परन्तु तीसरे युद्धमें अमर बलेचाने राठौरवीरोंके हाथसे युद्धमें प्राण त्याग किये। उसका समस्त राज्य विजयी शूरसिंहके हाथमें आया। इस जयका समाचार शीघ्र ही दिल्लीश्वरके निकट पहुँचा। बादशाहने शूरसिंह पर अत्यन्त प्रसन्न हो उसको नौबत भेजी तथा धार और उसमें मिला हुआ समस्त राज्य उसके अर्पण कियो।

शूरसिंहके अमित पराक्रमसे मुग़ल बादशाह नए २ राज्य जीत रहा था, कि उसी समयमें कराल कालने उसपर आक्रमण किया। वह अपने पुत्र जहांगीरके हाथमें विशाल मुग़लराज्यकी सलतनत दे आप इस लोकसे विदा हुआ। नवीन बादशाहके सिंहासनपर बैठते ही शूरसिंह अपने जेठे पुत्र और होनहार उत्तराधिकारी गजसिंहके साथ उसको प्रीति और राजभक्तिकी भेंट देनेके निमित्त सभामें आया। तरुण वीर गजसिंहको देखकर जहांगीर अत्यन्त प्रसन्न हुआ। राठौर राजकुमार गजसिंह शूरसिंहका योग्य पुत्र था। उसने बालक पनसेही युद्धविद्या सीखी थी, इससे पहिले जहांगीरने जालौर क्षेत्रमें उसकी वीरताका विशेष परिचय पाया था। इस समय उसी वीरताकी बात मनमें आते ही बादशाहका आनन्द दूना हो उठा। उसने उसी सभामें उसको अपने हाथसे तलवारकी मूठ पकड़ाई और जालौर युद्धके विषयमें कहकहकर वह बारंबार उसकी प्रशंसा करनेलगा।

---

१ बलेचो, चौहान कुलकी एक शाखाहै।

२ इस युद्धका अकबर तथा मारवाड़के गये इतिहासोंमें कुछ पता नहीं लगता। बालीसा चौहानकी एक खांप है जिसको नालौचा भी कहते हैं। वे गोडवाड़ाके पहाडोंमें मारवाड़ और मेवाड़की सीमापर रहते हैं। इनमें ऐसा कोई पराक्रमी नहीं हुआ जो नर्मदातक राज्य करके अकबरसे लड़ने के योग्य हो। उस समय तो अम्बरचम्पू नाम विजन मंत्री दक्षिण अहमदनगरके बादशाहक इतना प्रबल था कि वह सम्राट् अकबरकी फौजोंसे लड़ा करता था। उनके किसी युद्धसे इस कथाका सम्बन्ध हो तो कुछ आश्चर्य नहीं है। भाट लोगोंने बेसमझीसे इसी अम्बरचम्पूको अमराबालेसा समझ लिया होगा। महात्मा टाड्ने भी विना सोच विचारे वह कथा अपनी तवारीखमें नकल करदीहै।

गजसिंहको जालौरके रणक्षेत्रमे अपनी वीरता दिखानेका पहला ही अवसर था। उसी साधन भूमिसे उसकी होनहार उन्नतिका मार्ग क्रमशः स्वच्छ होता रहा। उसने जालौरको गुजरातके बादशाहके अधिकारसे छीनकर मुग़ल सम्राट्के अधिकारमे करदिया। वीररसके चाहनेवाले भाट कवियोंने उसकी वीरताका भलीभांतिसे वर्णन किया है। दुष्ट पठानोंके विरुद्ध युद्धयात्रा करनेके निमित्त गजसिंहको आज्ञा हुई। उसके युद्धके बाजे बजने लगे, अर्बुदगिरिने वह शब्द सुना, उसका सर्वांग कांप उठा। जो काम अलाउद्दीनने कई एक वर्षोंमे किया था, गजसिंहने उसको तीन ही महीनेमें पूरा किया। अपनी तलवार उठाकर वह जालन्धरके ऊपर कि जिसका नाम जालौर है चढ़ गया। उस युद्धमे अनेक राठौरवीर मारे गये, किन्तु उसने सात हजार पठान सेनाको मारकर वहांके असवावको लूट लिया और उसे बादशाहकी सेवामे भेजदिया।

भाट ग्रन्थोंके पढ़नेसे जानाजाता है कि जबसे गुजरात विजय हुआ और मुजफ्फ़रखांकी औलादका नाश हुआ तबसे शूरसिंह केवल राजधानीहीमे रहने लगा। इधर उसका जेठा पुत्र गजसिंह अपने साथकी फौजको लेकर बादशाहकी आज्ञाके पालन करनेमे प्रवृत्त हुआ। जालौर जीतनेके कुछ ही समयके उपरान्त गजसिंहने मेवाड़के अधिपति राणा अमरसिंहके विरुद्ध अपनी विजयिनी सेनाको चलाया। उस समय गहलोत कुलके स्वाधीनताका सूर्य्य धीरे २ छिप रहा था उसी समयमे अर्वलीके दूसरे द्वारस्वरूप प्रसिद्ध क्षेमतर क्षेत्रमे उस वीरपूज्य गहलोत कुलकी बुझतीहुई पराक्रमाग्नि जैसे प्रचंड तेजसे जलरही थी उसका विस्तारित वृत्तान्त मेवाड़के इतिहासमे लिखा हुआ है किन्तु दुःखका विषय है कि मारवाड़के भाट कवियोंने इसके विषयमे कुछ विशेष नहीं लिखा, उनके ग्रन्थोंमे केवल इतना ही देखाजाताहै कि खुर्रमशाह शाहकी आज्ञामे बद्ध होकर कर्णने बादशाहकी सेवा करना स्वीकार किया और गजसिंह तारागढ़ में लौट गया। बादशाहने गजसिंह और उसके पिता दोनोंका ही मंसब बढ़ा दिया।

राजस्थानके भाट कवियोंको अपने देशके राजाके गौरव और वीरताका वर्णन करना अच्छा लगता है। किन्तु जो समस्त मनुष्य उनके उस गौरवके प्रधान द्वारस्वरूप हैं–उस वीरताकी प्रधान सामग्री हैं, जिनकी सहायता न पानेसे वह कभी भी प्रतिष्ठा नहीं प्राप्त करसकते, दुःखका विषय है कि उन्होंने उन मनुष्योंके नामतक नहीं प्रकाशित किए। जिनको इतिहासमे भली प्रकारसे जानकारी

---

१ जालौर एक पृथक् राज्य विहारी पठानोंका था जिनकी सन्तानमें अब पालनपुरके नव्वाबहै।

२ राजस्थान प्रथम खण्ड–अ० ११ पृ० ३५९

३ अजमेरका दुर्ग तारागढ़के नामसे प्रसिद्ध है, किन्तु यह अजमेरके बदले लिखा गयाहै। जहांगीरके जीवनचरित्रमें देखाजाता है कि उसने अजमेरमे दौलतबागके नामसे एक सुन्दर बाग बनवायाथा। इस दौलतबागमें ही वह रहता था।

४ गद्य इतिहासोंमे इस प्रकारके सब नाम हिन्दू मुसल्मान और राजपूतोंके लिखे मिलते हैं, परन्तु टाड्को वे ग्रन्थ प्राप्त नहीं हुए जिससे ऐसे ऐसे आक्षेप किये गयेहैं।

नहीं है, उक्त एकदेशदर्शी ऐतिहासिकोंके सूक्ष्म वर्णनका पाठ करनेसे उनको सहसा यह निश्चय होगा कि राठौर राजाओंने ही उस समयकी बड़ी घटनाओंका अभिनय किया है। उदाहरणके स्वरूपमें एक युद्धके वृत्तांतका वर्णन किया जाता है गहलोतवीर राणा अमरसिंहने अपने देशकी रक्षाके निमित्त प्राणपणसे चेष्टा की, परन्तु विधाताकी विडं-बनासे उसके सब श्रम निष्फल होगये;उसका सब बल और आश्रय छिन्न भिन्न होगया,वह अपनी थोड़ीसी मुट्ठीभर सेना लेकर मुग़ल सेनाके अनंत बलके रोकनेको गया,परन्तु पराजित हुआ। विवश हो राणाने बादशाहकी अधीनता स्वीकार की। उस प्रचण्ड मुग़ल अक्षौ-हिणीमे राजकुमार गजसिंह जो दूसरा सेनानायक था उसका वर्णन उस समयके इति-हासोंमे भलीप्रकारसे वर्णित हुआ है; किन्तु जो उन समस्त वृत्तान्तोको न पढ़कर केवल मारवाड़के ही भाटग्रन्थोंका अनुशीलन करते हैं उनके मनमे यही निश्चय होगा कि गज-सिंहसेही मेवाड़का पराक्रम हीन होकर जगन्मान्य गहलोतकुल स्वाधीनतासे च्युत होगया था। राठौर कवियोंके इस प्रकार पक्षपात युक्त इतिहासका एक साधारण कलंक नहीं है। उन्होंने अपने देशके राजाको एक बड़ा ऊँचा आसन दिया है, किन्तु दुःखकी बात है कि जहांगीरने अपने रोजनामचेतकमे उसका नाम नही लिखा; वरन् उसने कोटा और दतियाके राजाओंको शाहजादे खुर्रमके साथ भेजनेका हाल लिखाहै; परन्तु तौभी उस युद्धमें राठौर राजकुमारके नामकी गंध भी नहीं देखी जाती। इससे विल-क्षण विवाद उत्पन्न होता है कि जिस प्रचण्ड मुग़ल सेनाने उस समय मेवाड़राज्यपर आक्रमण किया था। अन्यान्य राजपूतोंकी समान राठौर राजकुमार गजसिंहने भी उसकी पुष्टि साधन की थी।

सम्वत् १६७६–सन् १६२० ई० मे राठौर राजा शूरसिंहने दक्षिणमें प्राण त्यागकिये। वह गर्व्वोन्नत राठौर कुलका एक योग्य राजा था। उदय-सिंहकी कायरताके कारण राठौर कुलका जो बहुतसा गौरव प्रभारहित होगया था, शूरसिंहकी वीरतासे वह फिर महातेजसे उज्ज्वल हो उठा। किन्तु जो तेज वीरवर जोधारावके रोमकूपोंसे निकला था, जिसके प्रभावसे एक समय समस्त भारतभूमि प्रकाशित हो उठी थी, वह तेज इसमें नहीं था। परन्तु तौ भी यह दाहिका और उज्ज्वल-कारी शक्ति है। राजा शूरसिंहका शौर्य्य वीर्य्य क्या स्वदेशीय क्या विदेशीय अनेक वीरोंको आदरणीय हुआ था। उसके वीरोचित गुणोसे मोहित होकर अनेक विदेशी यहां तक कि स्वयं बादशाह भी उसका भक्ति सहित सन्मान करते थे। उसके भयसे दक्षि-णके निवासी सदैव कांपते रहते थे। उसके अन्तिम जीवनमे एक विचित्र प्रतिष्ठाका विवरण देखा जाता है। कहा जाता है कि उसने अन्तिम कालमे नर्मदाके किनारे एक खंभ (मीनार) बनानेकी आज्ञा दी और उसमें एक तलाक लिखदेनेको कहा कि जो कोई उसका वंशधर नर्मदाके दक्षिणओर जाय तो उसको उस शापका भागी होना पड़ेगा। इस मीनारके बनानेका कोई विशेष कारण नही दिखाई देता। कोई कहते हैं

१ क्यों नहीं! लिखाहै।

कि वह बहुधा नर्मदाके दक्षिण ओर ही लड़ता रहा था, व्यर्थ युद्धोमे लगे रहकर वहाँ उसने बहुतसे मनुष्योका रक्त बहाकर दक्षिणके निवासियोका सर्वनाश किया था। अपनी की हुई असंख्य नरहत्या और असीम अपकारके विषयपर ध्यान देकर अन्तिम जीवनमे उसके हृदयमे विषम शोच और आत्मद्रोहका उदय हुआ था,इसी कारण उसने अपने वंशधरोको उस नृशंस कार्यसे निवारण करनेके निमित्त उस तलाकको लिखवाया था। और किसी भाटग्रन्थमे देखाजाता है कि समस्त जीवनभर वह कार्य्यवश हो दक्षिणमे ही फँसा रहा था। इस कारण उसको एक वार भी अपनी जन्मभूमिके देखनेका अवसर न मिला। सुविधा और सुयोग पाकर जब वह अपने देशके लौटनेका उद्योग करता तभी कोई एक अकस्मात् घटना आकर उसको उस नर्मदाके दक्षिण किनारेसे ही फंसा रखती। इच्छा होतेहुए भी कार्य्य करनेके अनुरोधसे वह नदीकी सीमाको पार न करसका। क्रोधमे आकर उसने नर्मदाको अनेको शाप दिये थे, वह दक्षिण तटसे छुटकारा पानेके निमित्त सदैव ही देवताओसे प्रार्थना किया करता था। किन्तु उस समयमे उसकी कोई भी प्रार्थना स्वीकार न हुई। वह अपने जीवनमें कभी भी मनभर जन्मभूमिकी ठंडी छायाके नीचे रहकर शान्ति सुख प्राप्त न करसका। वादशाहके प्रसन्न रखनेके निमित्त वह जन्मभर विदेशमे ही रहा। उसने वचपनसे ही अपने पिताके साथ समय विताया था। उसका पिता जिस देशमे अपनी सेना लेगया, मरुभूमिके युद्धक्षेत्रोंमे भीषण मैदान व पहाड़ोमे जहां उसने युद्ध किया, वालक शूरसिंहने क्षणभरके लिये भी उसका साथ न छोड़ा। वालकपनसे ही प्रतिपद उसने पिताका अनुसरण किया, जवानीमे राठौर सेना लेकर वादशाहकी आज्ञा पालनेके निमित्त दूर २ देशोमे गया, उसने कितने समयमे कितना दुःख पाया, उसकी सीमा नही है। उसके पिताने प्राण त्याग किया, उस अन्तिम कालमे शूरसिंहने एक वार भी पिताके चरणोंको न देख पाया,एक वारही जन्मभरको विदा ली,शूरसिंहके भाग्यमे उसके देखनेका अवसर भी न वदा था। क्योकि उस समय वह पंजावमे निवास कर रहा था। पिताकी मृत्युके उपरान्त वह पिताकी राजगद्दीपर वैठा, उसने विचारा था कि राज्यमे रहकर मातृभूमिकी श्रीवृद्धि करूंगा, परन्तु दुःखका विषय है कि वह आशा भी आकाशके फूलोमे वदल गई। राज्यशासन और प्रजापालन तो केवल नाममात्रको था वादशाहकी आज्ञापालना ही उसको अपना कर्त्तव्य कर्म माननापड़ा।

---

१ ये वातें बहुधा गद्य इतिहासोंके विरुद्ध हैं। शूरसिंह कई दफे जोधपुरमें आये और उन्होंने कई अच्छे२ महल, मकान, वाग, तालाव, कुंड आदि बनाये, जो अवतक विद्यमान हैं। तलाक मीनारकी वात भी कहानी जैसी मालूम होती है, क्योंकि उनके पीछे उनके वेटे गजसिंह यशवन्तसिंह आदि दक्षिणकी वादशाही नौकरियोंपर जाते रहे हैं, जिनसे मारवाड़को द्रव्यका विशेष लाभ होता रहा है।

२ वादशाहको प्रसन्न रखना नहीं, अपनी नौकरीपर जाना था; मसल मशहूर है कि नौकरी कि भाई बन्दी।

बादशाहकी आज्ञा पालनमें ही उसका समस्त जीवन बीत गया। अपने देशको छोड़ दक्षिण देशमें ही उसका समस्त काल कटा। अंतमें उस दूर देशमें ही उसका देह छूटा। कहां, वह आशाका विलासक्षेत्र, जीवनका आश्रयकेन्द्र, शांतिकी लीलानिकेतन जन्मभूमि, और कहां उसकी मृत्युशय्या, उस अन्तिम सेजपर लेटेहुए वह उस " स्वर्गादपिगरीयसी " जन्मभूमिकी वार्ता विचारने लगा था। उसके पूजनीय पूर्वपुरुषोंने जिस मारवाड़ राज्यके निमित्त प्रसन्नमनसे आत्मत्याग किया था; और बुद्धिमानीसे वे राजनीतिका परिपालन करगये, किन्तु उस मारवाड़ राज्यके निमित्त उसने क्या किया? अधीन कर्म्मचारियोंके हाथमें राज्यका भार देकर समस्त जीवन दूसरेकी सेवामें ही विताया, अन्तमें दूर देशमें देह त्याग करनी पड़ी; अन्तिम समयमें एक बार भी मातृभूमिका मुख न देखपाया। यह सब चिन्ताएं जब प्रबल वायुके समान उसके छिन्न हृदयमें टकराने लगी तब उसे चारोओर अंधकार देख पड़नेलगा। वह अपनी प्रतिष्ठा और राजसन्मानको सैकड़ों धिक्कार देनेलगा। अन्तमे उस तलाकनामेके मीनारके बनानेकी आज्ञा देकर वह सदाके लिये संसारके दुःखोसे छूट गया।

राजा शूरसिंहने दिल्लीश्वरके निमित्त जो असीम आत्मत्याग स्वीकार किया था, यथार्थमें बादशाह उसको कभी न भूलसका।बादशाहने यथार्थ ही उसको बड़ेरपुरस्कार दियेथे, उसने राठौर राजको सोलह बड़ी २ जागीरें देदी थीं, उसको 'सवाई' की उपाधिसे विभूषित कर समस्त सभासद राजाओंके ऊपर बैठनेका उच्च आसन दिया था; परन्तु उसने जिस मातृभूमिसे वंचित हो समस्त जीवन दूरदेशमे ही विताया, अपने राजकार्य्यको नौकरोंके ही हाथमें दे दिल्लीके कल्याणके निमित्त बहुतसे राठौरोंके रक्तको बहाया, उसके बदलेमें क्या उसको योग्य दान मिला था ? बादशाहके दियेहुए कई एक सन्मानोंसे क्या उन समस्त कार्योंका योग्य बदला होसकता है ? उसके साथ ही साथ उसके सामंतगण भी इसी प्रकारसे परदेशके अनंत क्लेशोंसे पीड़ित होगये थे; स्त्री पुत्र कुटुम्बियों और अपनी २ सम्पत्तिको छोड़कर उनको भी

---

१ शूरसिंह उनके पास लाहौरमें थे और अकबर बादशाहने वहीं उनको राजतिलक दियाथा।

२ इन सोलहोंमेंसे नौ तो उनके पितृराज्य मारवाड़के अन्तर्गत थीं। जैसा कि मारवाड़ प्रायः (नौकोटी) मारवाड़के नामसे भी प्रसिद्ध है। शेष सात भागोंमेंसे पांच गुजरातमें, एक मालवेमें, और एक दक्षिणमें थी। यह सात विभाग अवश्य मारवाड़के अन्तर्गत नहीं थे, यही बादशाहने दिये थे, किन्तु उस नौ हिस्सोंमें बटेहुए मारवाड़मे यह सात जागीरें क्यों मिलाईगईं?इसका विचार करते ही मारवाड़का शोचनीय वृत्तान्त स्मरण हो आताहै और हृदय व्याकुल हो उठता है।भाग्यकी कठोर आज्ञासे जिस दिन राठौर राजा मालदेवने मुसल्मानोंके हाथमें आत्मसमर्पण किया, उसी दिन उसके पितृपुरुषोंका स्वाधीन राज्य पराधीन होगया। उसी दिनसे मारवाड़का राज्य मुगल साम्राज्यकी एक प्रधान जागीरमें गिना गया। उसी समयसे राठौर राजा सामंतप्रथाके अनुसार उसको जागीरकी समान भोगने लगे। और प्रत्येक नवीन अभिषेकमें बादशाहके निकटसे उनको नये २ फर्मान लेने पड़े।

राजाके साथ उसी प्रकार देश २ मे घूमना पड़ा था, इससे उनका भी हृदय सदैव व्यथित रहता था। यद्यपि राजाकी सन्मानवृद्धिके साथ ही साथ उनका भी सन्मान और पद बढ़ता था, किन्तु उनको जब जन्मभूमिकी वात याद आती तव वे सम्राट्के दिये-हुए उन समस्त सन्मानोंको तुच्छ जानकर उनसे घृणा करने लगतेथे। जन्मभूमिकी गोदमें रहकर यदि उनको समस्त जीवन अनन्त दुःख भोगना पड़ता तो भी वे उससे ऐसे दु.खी न होते जैसे कि वादशाहकी कृपासे सब भोगविलास पाकर पेटभर रोटी खाकर और कोमल सेजपर सोकर एक दिन भी सुखसे न वितासके। इसलिये वादशाहकी दीहुई वह सम्पत्ति-वह राजभोग और वह सुन्दर सुकोमल शय्या उनके पक्षमे दुर्गन्धिमय नरक और दारुण कण्टकशय्या जान पड़ती थीं। वादशाहके आश्रयकी छायाके नीचे बैठकर विलासभोग और भोजनकी सामग्रीका सेवन करते २ जब उनको मरुक्षेत्रकी सूखी जुंवार और रावड़ी या गेहूंकी रोटीकी याद आती तो वे भोजनके पात्र दूर फेंक-कर अधखाईहुई अवस्थामें ही आसनसे उठकर चल देते थे।

राजा शूरसिंह जैसा वीर था वैसा ही प्रतिष्ठित भी था। उसके द्वारा जोधपुरकी शोभा व सुन्दरता अधिक बढ़गई थी। उसने अपने नामके वहुतसे कुएँ, वावड़ी, और मंदिर तालाव आदि वनवाये थे, उनमे अवतक भी वहुतसे देखे जातेहैं। उसके वनवाये हुए सरोवरोमेसे केवल एक 'शूरसागर' ही प्रसिद्ध है। जो इस मरुभूमिमे कुछ कम लाभकी वस्तु नही है। इसके पानीसे इसके किनारेके वाग आदि सींचे जाते है।

महाराज शूरसिंहने ६ पुत्र और सात कन्यायें छोड़कर परलोक वास किया। उसके मरनेके उपरान्त उसका जेठा पुत्र गजसिंह सन् १६२० ई० मे पिताके सिंहासन पर बैठा। गजसिंहने लाहौरमे जन्म लिया था पिताकी मृत्युसमयमे वह वुरहानपुरमें था उसी समय दाराबखाँ वादशाहका प्रतिनिधि हो कर उसके डेरेमे पहुचा और उसके मस्तकपर मुकुट, ललाटमे राजतिलक और कमरमे तलवार सजाई। पितृराज्य नौकोट मारवाड़के अतिरिक्त उसको राजगद्दीपर बैठनेके दिनसे गुजरातके "सप्तविभाग" ढूंढाड़के अंतर्गत झिलाय और अजमेरके निकटका मसूदानगर भी जागीरमे दियेगये। इन सब पुरस्कारोके अतिरिक्त उसे एक और भी बड़ा सन्मान प्राप्त हुआ, वह यह कि वादशाहने उसको दक्षिणकी सूवेदारी दी, और उसी समयसे यह नियम करदिया कि

(१) गजसिंह (सबसे जेठा) सबलसिंह, वीरमदेव, विजयसिंह, प्रतापसिंह और यशवंत यह छ: पुत्र थे। उनकी सात पुत्रियोंके सम्बन्धमें कोई वृत्तान्त नहीं पाया जाता।

(२) आमेरका आदि और प्राचीन नाम ढूंढाड़ है। आमेर या जयपुर केवल इसकी राजधानी है। पश्चिमी ऐतिहासिकोंमेंसे अनेकोंहीने अपनी इच्छाके वशसे राज्यके नामका लोप कर उसको अपनी राजधानीके नामसे प्रसिद्ध कियाहै। इसी कारण आज हम प्राचीन मेवाड़ और मारवाड़के बदले उदयपुर और जोधपुरका उल्लेख पातेहैं। किन्तु इसके द्वारा जो इतिहासका अपमान हुआहै उसको उन्होंने एक वार भी विचारकर नही देखा। महात्मा टाड साहबने इसके विषयमें जो श्रेष्ठ मार्ग दिखाया है, उसका उनको अवलम्बन करना उचितहै।

अबसे इसके सर्दारोंके घोड़े न दागेजावें। इस नियमसे मुगलबादशाहने राठौर सामन्तोंकी एक घोर अपमानसे रक्षा कीथी।

बालपनसे ही पिताके साथ देशदेशांतरोंमें भ्रमण करके गजसिंह उसके सुन्दर गुणों और रणदक्षताका अनुकरण करनेमे समर्थ हुआ था। वह दक्षिणकी सूबेदारीपर नियत हो उन समस्त श्रेष्ठ गुणोका परिचय देनेलगा। उसकी तीक्ष्ण तलवारके मुखमे अनेक नगर और ग्राम पतित हुए। खिड़कीगढ़, गोलकुण्डा, कोलिया, परनाला, कंचनगढ़, आसेर और सितारा। थोड़े ही दिनोमें राठौरराज द्वारा विजय हो मुगलराज्यमे मिलालिये गये। इन सब स्थानोंमे उसने जो असीम वीरता और रणदक्षता दिखाकर विपुल जय प्राप्त की, इससे बादशाहने प्रसन्न होकर उनको 'दलथंभन' की उपादि दी थी। इन सब युद्धोंमें गजसिंहके ज्येष्ठ पुत्र अमरसिंहने भी उसके साथ रहकर विस्मय-कर वीरता और रणदक्षता दिखाई थी।

बहुतसे विवाह करना राजसमाजमे महा अनिष्टका मूल है। जो राजा विलास अथवा पितृपुरुषोंकी प्राचीन प्रथाके वशवर्ती हो बहुतसी स्त्रियोंमे विवाह करते हैं, तो पुत्रवती होनेपर वे सब स्त्रियां प्रायः राजमाता होनेकी इच्छा करती हैं। पुत्रकी आयु बढ़नेके साथ ही साथ उनकी इच्छा भी बलवती होती जाती है। उस बलवती प्रवृत्तिकी वशवर्तिनी होकर वे एक वार ही ज्ञानरहित होजाती है; वे राज्यके होनहार मंगल अमंगलका विचार नहीं करसकतीं। स्वार्थसाधनके निमित्त वे एक साथ ही इतनी उन्मत्त होजाती हैं कि स्वयं राजा भी यदि उनके स्वार्थके विरुद्ध खड़ा हो तो समय पाकर उसे भी विष देकर या किसी दूसरे प्रयोगसे नाश करडालती हैं। पिताके दिखायेहुए मार्गका अवलम्बन कर जहांगीर बादशाहने भी कछवाह कुलकी दो स्त्रियोसे पाणिग्रहण किया था। राजपूतोको इस सम्बन्धके कारण शाही सलतनतमें हस्ताक्षेप करनेका अवसर मिलता था। उनमेंसे राठौर-वंशीया स्त्रीके गर्भसे उसके परवेज नामक एकपुत्र उत्पन्न हुआ। वही जेठा और सदैव प्राचीन प्रथाके अनुसार सिंहासन पानेका योग्य पात्र था। किन्तु आमेरराजकुमारीके गर्भसे बादशाहके वीर्यसे खुर्रम नामक जो पुत्र हुआ था वह सिहासन पानेके निमित्त परवेज़का घोर शत्रु हो खड़ाहुआ। और अपने. स्वार्थसाधनके निमित्त योग्य अवसर ढूंढने लगा। यद्यपि खुर्रम छोटा था किन्तु परवेज़की अपेक्षा वह गुण और बुद्धिमें बड़ा

---

(१) इस प्रकारकी प्रथासे राजपूत अपनेको बहुत अपमानित समझते थे। वीराचरणके प्रधान सहायक प्रिय घोड़ोंकी पीठमें जब वे उस कलंकको देखपाते तब उनके मनमें दासत्वका कलंकित चिह्न मूर्तिमान होकर दर्शन देजाता था।

(२) परवेज नहीं खुर्रम उत्पन्न हुआ था।

(३) यह जेठा नहीं था, खुसरोसे छोटा था।

(४) खुर्रम नहीं; खुसरो हुआथा, परन्तु खुसरो बापके प्रतिकूल होगयाथा, जिससे कैद डालियागया था। और परवेज उसका प्रतिनिधि हुआथा।

था । वह एक निपुण और साहसी योद्धा था, विशेषकर अनेक मोहित करनेवाले गुणोसे अलंकृत था । इसी कारण वह वहुतसे मनुष्योका प्रीतिभाजन होगया था । भाग्यवश उसको योग्य मित्रो और सलाह देनेवालोकी सहायता भी प्राप्त होगई थी । शिशोदीय वीर तेजस्वी भीमसिह और विख्यात सेनापति महावतखाँने उसके असीम गुणोपर मोहित होकर उसके पक्षका अवलम्बन किया,और उन्होने उसके कार्यके पूरा करनेमे सहायता देनेको भी प्रतिज्ञा की । उनके उत्साह और परामर्शसे उत्साहित हो खुर्रम अपनी अभीष्ट–सिद्धिके वाधक परवेज़के मारनेको व्यस्त हो उठा ।

राजकीय सेनाको लेकर खुर्रम जिस समय दक्षिणदेशमे उपस्थित हुआ, उसी समयसे उसका भाग्यमंडल धीरे २ स्वच्छ होनेलगा और उसके कार्यसिद्धिके कंटक एक२ करके दूर होने लगे । अवतक वह केवल कल्पनाकी ही गोदमे सो रहा था, किन्तु इस समयसे यथार्थ कार्यक्षेत्रमे अवतीर्ण हुआ । मारवाड़के राजा गजसिंहका मर्तवा वादशाहज़ादोके सिवाय शाही दर्वारमे वढ़ा हुआ था, वह दक्षिणमे खुर्रमके ही साथ था । सुलतान खुर्रमने उससे अपने मनके भावको प्रकाशित किया और अपने कार्यके पूरे होनेके निमित्त उससे सहायता चाही । गजसिंह स्वभावसे ही परवेज़को चाहता था । अपने प्रियपात्रके होनहार भाग्यको अथवा वादशाहके कियेहुए असीम उपकारोको विचारकर किसी कारणवश उसने खुर्रमकी प्रार्थनाको न सुना । उसकी असम्मति और उदासीनता देखकर खुर्रम निराश हुआ, वरन् जिस प्रकार कार्यकी सिद्धि हो उसी प्रकारके यत्नकी खोज करनेलगा । गोविंददासनामक एक भाटी राजपूत मारवाड़के विदेशीय सामंतोमे था । गजसिह उसका विशेप विश्वास और आदर करते और सव विपयोमे उसकी सम्मति लेते थे । खुर्रमने इस समय उसकी सहायता चाही और उसके मनको गजसिंहसे फिरानेका वहुत यत्न किया । किन्तु भाटीसरदारके सामने उसकी कुछ भी न चली, उसने उसकी एक भी वात न मानी । इससे खुर्रम उसपर भी अत्यन्त क्रोधित हुआ। साधारण उप सामंत होकर गोविन्ददासने

(१) महात्मा टाड्साहव कहते हैं कि महावतखाँ शिशोदिया कुलांगार पापिष्ठ सगरजीका पुत्र वह था, अपने धर्मको त्यागकर महावतखांके नामको प्राप्त हुआ था (राजस्थान प्रथमखण्ड, अ० ११) किन्तु जहांगीरके जीवनचरित्रमे देखागया कि वह कावुलका रहनेवाला गयूरवेग नामक एक मुसलमानका पुत्र था । इसका असली नाम जमानावेग था । टाड्ने इसको मिथ्या सगरका पुत्र वनाकर सगरपर व्यर्थ आक्षेप किया ।

(२) यहांपर पढ़नेसे भलीप्रकार जानाजाताहै कि महावतखां पहिलेसे ही खुर्रमका शत्रु था; किन्तु वास्तवमें यह वात नहीं है। सन् १६२४ ई० में जव खुर्रम पहले विद्रोही हुआ तव वादशाहकी आज्ञासे महावतखांने परवेजके साथ उसके विरुद्ध युद्धयात्रा की थी। उसी समयसे महावत खुर्रमके विरुद्ध नानाप्रकारकी शत्रुता करनेलगा । अन्तको सन् १६२६ ई० मे जहांगीरके मरनेके एकवर्ष पहिले वह खुर्रमके साथ मिला ।

(३) गोविन्ददास इस समयसे वहुत पहले शूरसिंहजीके जीतेजी मारा जा चुका था। खुर्रम की यह राजचेष्टा करनेके समय जीवित नहीं था ।

(४) विदेशी नहीं, देशी था ।

बादशाहज़ादेकी बात न मानी, इससे क्या खुर्रमका अपमान न हुआ ? खुर्रम उसी दिनसे उस अपमानका बदला लेनेके निमित्त व्यग्र हो उठा और उसके मारनेके निमित्त उसने किशनसिंहनामक एक राजपूतको नियत किया। किशनसिंहने अपने हत्यारे अभिप्रायको थोड़े ही दिनोंमें पूरा करदिया। इससे गजसिंहको अत्यन्त दुःख हुआ। खुर्रमके आचरणको देखकर उसपर उसकी अत्यन्त विषम घृणा उत्पन्न होगई। बादशाहके कार्यों में लगे रहनेकी फिर उसकी इच्छा न रही। विकट घृणा और रोषसे उसका हृदय टकराने लगा और वह इस दुःखसे दक्षिणमें ही सेनाको छोड़कर अपने राज्यको लौट आया।

इस घटनाके कुछ ही दिनोंके उपरान्त अभागा परवेज, खुर्रमकी हिंसाग्निसे पतंगकी समान जलगया। तो भी उसके कार्य पूर्ण होनेका केवल एक कंटक रहीगया; वह कण्टक उसका जन्मदाता बादशाह जहांगीर था। उसके गद्दीसे उतारने पर ही उसके सब बाधा विघ्न दूर होसकते थे। आश्चर्यका विषय है कि खुर्रमने उस बुरे कर्मके करनेका भी संकल्प करलिया और एक बलवानसेना इकट्ठी करके वह अपने कार्यसिद्धिका सुअवसर देखने लगा। उसका यह जघन्य अभिप्राय बादशाहको मालूम होगया। अपने पुत्रके ऐसे बुरे अभिप्रायको जान जहांगीर अत्यन्त ही दुःखित हुआ। उसने स्वप्नमें भी यह न विचारा था कि खुर्रम ऐसी पितृभक्तिका परिचय देगा। जो हो इस समय उसको विषम संकट उपस्थित हुआ। एक ओर उसका जीवन और सन्मान दूसरी ओर हिन्दुस्थानके सुख और शांतिमें बाधा, उस संकटसे छुटकारा पानेके निमित्त उसने राजपूत राजाओंसे सहायता चाही। शीघ्र ही उनके पास पर्वाने भेजे-गये। उन पर्वानोंके पहुँचते ही मारवाड़, आमेर, कोटा और बूंदीके राजा लोग अपनी अपनी सेना लेकर सम्राट्की सहायताके निमित्त आ उपस्थित हुए।

इस भयानक घरेलू झगड़ेके शांत करनेके निमित्त राठौर राजा गजसिंहने सबसे अधिक उत्साह प्रकाश किया। विद्रोही दलको निकट आता देखकर बादशाह अत्यन्त भयभीत हुआ था, किन्तु आज गजसिंहके उत्साह और धैर्यप्रद वचनोंसे उसका हृदय बहुत कुछ शांत हुआ। वह राठौरराजपर इतना संतुष्ट हुआ कि

---

(१) किशनसिंह*द्वारा किशनगढ़ स्थापित हुआ। गोविन्ददासको मारकर किशनसिंहने राजाके अनुग्रहसे अपने बसायेहुए नगरमें स्वाधीन राज स्थापित कियाथा। इसके वर्तमान वंशधर अब भी ब्रिटिशगवर्नमेंटके साथ मैत्रीके सूत्रमें बंधेहुए हैं।

(२) जहांगीरके इतिहासमें परवेजका दक्षिणमें मौतसे मरना लिखाहै। खुर्रम तो उस समय भागा २ सिन्धमें फिरता था। परवेजका मरना सुनकर वहांसे दक्षिणमें काठियावाड़ होकर लौट गया था।

---

* किशनसिंहने खुर्रमके कहनेसे गोविन्ददासको नहीं मारा था, गोविन्ददासने सरवनसिंहके भतीजे गोपालदासको अजमेरमें महाराज सूरसिंहके डेरेपर जाकर रात्रिके समय जेठसुदी ८ सं० १६७१ को मारा था। जिसके बदलेमें तड़के ही कुंवर गजसिंहने बापके हुक्मसे पीछा करके अपने काका किशनसिंहको किशनगढ़ जातेहुए रास्तेमें मारडाला।

उससे केवल हाथ ही नहीं मिलाया वरन् उसके हाथको चूमा भी। विद्रोही पुत्रके दमन करनेके निमित्त बादशाहने उन समस्त राजपूत राजाओंसे उसके विरुद्ध युद्धयात्रा करनेको कहा। तदनन्तर सभी अपनी २ सेनासहित विद्रोहके दमन करनेको आगे बढ़े। बनारसके निकट जाकर उन्होंने खुर्रमके दलको देखा, तब बादशाहने समस्त फ़ौजको श्रेणीबद्ध करके सजानेकी आज्ञा दी और उस समस्त विशाल वाहिनी सेनाका आधिपत्य आमेराधिपति मिर्ज़ाराजाको दिया। गजसिंहके रहते-हुए भी जहांगीरने उसको छोड़ आमेरराजको क्यों सन्मानित किया इसका गूढ़ कारण नहीं समझ पड़ता। कोई कहते हैं कि खुर्रमने कछवाह कुलमें उत्पन्नहुई एक स्त्री-के गर्भसे जन्म ग्रहण किया था, मिर्ज़ाराजा भी कछवाह था; सजातीय होनेके कारण खुर्रमपर उसका अधिक अनुराग होनेकी सम्भावना थी, इससे उसको सन्मानित न करनेपर फिर वह पीछेसे विद्रोहीके ही पक्षका अवलम्बन करे इस भयसे बादशाह-ने पहिलेहीसे उसके मुखको बंद करदिया। किन्तु मारवाड़के भाटग्रंथमें देखाजाताहै कि आमेरराज सबकी अपेक्षा अधिक सेना लेगया था। इसी कारण बाद-शाहने उसको सबका सेनापति नियत किया। जो हो, इसके भीतर जो कोई कारण छिपा हुआ हो उसकी दलील करना इस समय निष्प्रयोजन है, यहांपर केवल इतना ही कहाजाता है कि बादशाहके ऐसा करनेपर एक विषमय फल फला। तेजस्वी गजसिंहने इस बातसे अपना अपमान होना विचारा और अपनी ध्वजाको नीचा कर राजकीय सेनाको छोड़ उसने दूर डेरा जा डाला। उसने विचारा था कि चुपचाप उदासीनभावसे दूरसे ही युद्धके फलाफलको देखता रहूंगा, किन्तु ऐसा न हुआ; शिशो-दिया वीर तेजस्वी भीमसिंहके तीव्र वाक्यबाणोंसे अत्यन्त मर्माहत हो अन्तमें उसने बादशाहके ही पक्षका अवलम्बन किया। यदि भीम राठौरराजको इस प्रकारसे उत्तेजित न करता, यदि गजसिंह उस दिन उसी प्रकार चुपचाप युद्ध देखाकरता तो खुर्रम ही उस दिन भारतके राजमुकुटको प्राप्त करता, किन्तु विधाताने अदृश्यमें रहकर वृद्ध बाद-शाहकी इस दारुण अपमानसे रक्षा की। भीमसिंहने एक पत्रद्वारा गजसिंहसे कहला भेजा था कि या तो खुर्रमहीके पक्षका अवलम्बन करो, नहीं तो उसके विरुद्ध तलवार धारण कर अपने पराक्रमका परिचय देनेमें प्रवृत्त होओ। इस पत्रका एक२ अक्षर एक २ विषसे बुझेहुए तीक्ष्ण शरकी समान राठौरराजके हृदयमें विंध गया। इससे उसको इतना कष्ट जानपड़ा कि वह उससे शत्रुके अत्याचारको भी साधारण जानने लगा। यहाँ तक कि बादशाहके उस निरादरसे जो उसे कष्ट हुआ था उसको भी उस समय वह भूलगया, और अपनी पताकाको फिर खड़ाकर उसने बड़े उत्साहके साथ विद्रोहियोंके ऊपर आक्रमण किया। उसके प्रचंड उत्साह और वीरतासे उत्साहित हो राठौर और

(१) उस युद्धमें बादशाह था ही नहीं, परवेज़ था।

(२) समस्त सेनाका सेनापति उस युद्धमें शाहज़ादा परवेज़ था। या उसका गार्डियन महावतखाँ था। जिसने हिरावल अर्थात् अगाली फौजका सेनानी जयसिंहको किया था। इसीपर गजसिंहने बुरा माना था, क्योंकि राठौर उस सेनाके अग्रगामी रहाकरते थे।

उसकी सेना अपने प्राणपणसे युद्ध करने लगी। तेजस्वी भीम मारागया, गोविन्द-दासकी हत्याकी प्रतिहिंसाका भागी हुआ, प्रचंड विद्रोहानल शांत हुआ, अभागे खुर्रम-का मान मथागया और वह पराजित होकर दूर भाग गया।

इस वीर कार्यके उपरान्त राजा गजासिंहका सन्मान और गौरव अधिकतर बढ़-गया, किन्तु दुःखका विषय है कि वह इस सन्मानको अधिक दिनतक न भोग सका। सम्वत् १६९४–१६३८ ई० मे वह गुजरातके एक युद्धमें मारा गया। वादशाहकी आज्ञा पालनेके निमित्त अथवा अपने राज्यके दक्षिण प्रान्तवाले डांकुओंका नाश करनेके निमित्त ही उसने जो तलवार धारण की थी इसका कोई वर्णन किसी भाटग्रंथमे नहीं देखा जाता। गजसिंह राठौरकुलका एक योग्य राजा था। अपने देशके प्रसिद्ध २ राजाओंके वीच वही अपना नाम अटल करसका था। उसने अमर और यशवन्तनामक दो पुत्रोंको छोड़ परलोक गमन किया। उसके अचलनामक और भी एक पुत्र उत्पन्न हुआ था किन्तु वह वचपनमें ही मर गया।

राजपूत स्वभावसे ही प्राचीन संस्कारोके वशीभूत होते हैं। वे कभी२ पितृपुरुषोके आचारों और व्यवहारोंके विरुद्ध भी करते हैं। और उनकी समाजमे कभी२ उत्तराधिकार-प्रथाका भी रद्दवदल देखा जाता है। राठौर कुलका इतिहास देखते २ हमने दो उदा-हरण पाये है, इस समय और भी एक उदाहरण पाया जाता है। पहिले ही कह आये है; कि गजसिंहके जेठे पुत्रका नाम अमर था। इस कारण उत्तराधिकारत्वकी प्राचीन प्रथाके अनुसार अमर ही राजसिंहासनका योग्य पात्र था, किन्तु गजसिंहने उसे वंचित कर अपने दूसरे पुत्र यशवंतसिंहको राजगद्दीपर विठाया। जेठेके वर्तमान रहतेहुए छोटेको क्यो राजसिहासन मिला, इसका विशेष कारण यह है कि अमरसिंह प्रचण्ड, उद्धत और उत्कट स्वभावका मनुष्य था। इस कारण राज्यके प्रायः सव ही मनुष्य उसे चाहते न थे। विशेष कर उसमे राज्योचित कोई भी गुण न था कि जिसकी सहा-यतासे वह पचासहजार राठौरोंके ऊपर राज्य करसकता। किन्तु ऐसा होनेपर भी वह असाहसी और पराक्रम रहित न था। उसकी तेजस्विता और पराक्रमके सामने उसके शत्रु तृणकी समान जलजाते थे। गजसिंह दक्षिणदेशके जिन युद्धोमे लगा रहता था अमर ने उन सवमे अपनी विशेष वहादुरी दिखाई थी, वरन् वही सव युद्धोमे सवके आगे तलवार पकड़कर शत्रुओके सामने हुआ था। अमर झगड़ोमें अगुआ, युद्धमे निडर और रणचतुर पुरुष था। इन सव गुणोंके साथ ही जिसके मनकी वृत्तियोंकी समानता होतीथी उन सवने ही उसके साथ योगदान किया था। उन सव प्रचंड स्वभाववाले मनुष्योंके साथ मिलकर अमरसिंह विना कारण ही इधर उधर वलवा करने लगा, जिस तिसको अपमानित करने लगा। उसके अत्याचारोसे देशके सव मनुष्य दुःखित हो कर गजसिंहके निकट फरियाद लाये। प्रजाहितैषी राजाने अपनी प्रजाके सुखके निमित्त अन्तमे उद्धत स्वभाव अमरसिंहको सिंहासनसे वंचित करदिया।

---

(१) यह भी गलत है महाराज गजसिंहजी तो आगरेमें जेष्ठ सुदी १३ संवत् १६९४ को बीमार होकर मरेथे।

सम्वत् १६९०-१६३४ ई० के वैशाखमासमे एकदिन गजसिंहने मारवाड़के समस्त सामंत और मित्रोके साथ सभामें बैठकर जेठे पुत्र अमरसिंहको अपने उत्तराधिकार पदसे रहित किया।

इस प्रकारकी शोचनीय घटना राजपूतोद्वारा कभी ही होती हैं। अन्त्येष्टि विधानकी प्रायः समस्त ही प्रक्रिया इसमे देखी जाती हैं। जिस दिन ऐसी शोचनीय बात होती है वह दिन राजपूतो द्वारा शोकका दिन मनायाजाता है। गजसिंह ऊँचे सिंहासनपर बैठा है, दोनो पार्श्वोंमे राज्यके सामंतगण अपने २ पदमर्यादाके अनुसार बैठे है, सामने कुछेक दाहिनीओर अमरसिंह खड़ा है। सभामें बैठे हुए सब सभासद् चुपचाप है। सभी विस्मययुक्त नेत्रोसे राजाके गम्भीर और तेजोमय मुखकी ओर देख रहे है। सभी उनकी आज्ञा जाननेके निमित्त उत्सुक हो रहे हैं। उसी समय उस गंभीर निस्तब्धताको भंगकर उसके मुहँसे यह आज्ञा उच्चारित हुई कि "अमरसिंह उत्तराधिकारित्वके पदसे पृथक् कियागया। वह अब भविष्यमें राजा न हो सकेगा। मारवाड़का होनहार उत्तराधिकार उसके छोटे भाईको अर्पित हुआ है। अमरसिंह निकालागया, वह इसी समय देश छोडकर चलाजाय।" इस कठोर आज्ञाके होते ही उसके निकालेजानेके वस्त्र आभूषण आदि आये।अमर उन सब वस्त्र आभूषणोंसे सज्जित हुआ।सभी वस्त्र कालेरंगके थे। काला पायजामा, काला अँगरखा, माथेके ऊपर कालेरंगकी टोपी और काली ही ढाल तलवार थी। अमरने उन सब कालेरंगके कपड़ोंको पहिना, एक कालेरंगका घोड़ा उसके पास आया वह उसपर चढ़कर तत्काल ही वहांसे बाहर चलागया। उसने एकबार भी किसीकी ओर न देखा, और न किसीके साथ चलनेका भी अनुरोध किया।

यद्यपि तेजस्वी अमरने किसीकी भी सहायताकी अपेक्षा न की, किन्तु उसको देशसे अकेला न जाना पड़ा। जो सामंत और परिवारगण उसको भावी राजा जानकर उसका सन्मान करते थे वे सब एक साथ ही राजसभासे विदा लेकर उसके पीछे होलिये। अमर उन सब विश्वासी सर्दारोके साथ मारवाड़से बाहर हो बादशाहकी सभामे पहुँचा। यद्यपि बादशाहने भी उसके निकालेजानेको स्वीकार किया था तौ भी निराश्रय राजकुमारको आश्रयमे आया देख उसने उसपर दया प्रगट की, और उसको एक सेनापतिके पदपर नियत किया। अमर पराक्रमी और रणदक्ष पुरुष था। कुछ ही दिनके भीतर बादशाह उसपर अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उसको तीन सहस्रके मनसब पदपर आरूढ़ कर 'राव' की उपाधि दे नागौरको जिला उसके अधीन करदिया। इन सब

---

(१) अमरसिंहके इस तरह देशनिकालेकी कथा इतिहाससे सिद्ध नहीं है। महाराज गजसिंहने जसवन्तसिंहकी माके कहनेसे अमरसिंहको राजसे अलग रखनेके वास्ते बादशाही नौकर पहले ही करा दिया था। और मरनेसे कुछ पहले लाहौरमें बुलाकर अलग रखा था। उनकी मा, स्त्रियों और सन्तानोंको भी जोधपुरके किलेसे उनकी बादशाहकी दी हुई जागीरमे भिजवादिया था।

(२) गजसिंहके मरनेपर अमरसिंहको रावकी पदवी और तीनहजारी मनसब मिलाथा। पहले मनसब कम था।

सन्मानोंको प्राप्त हो राठौर अमरसिंह अत्यंत उग्र स्वभावका होगया और उसका वह उग्र और प्रचंड स्वभाव ही उसका काल हुआ। जिस उग्रता और प्रचण्डताके कारण वह उत्तराधिकारसे वंचित हुआ था अंतमें उसीसे उसकी अकाल मृत्यु भी हुई। पदोन्नतिको प्राप्त होकर वह अपने कार्यमें अत्यन्त ही असावधान हो उठा। यहांतक कि एक समय व्याघ्र शूकर आदिके शिकारमें प्रवृत्त रहकर राजसभासे एक पक्षतक गैरहाज़िर रहा। इस गैरहाज़रीके कारण बादशाह शाहजहाँने उसको धमकी दी और जुर्मानेका भय दिखाया। परंतु तेजस्वी अमर इससे कुछ भी भयभीत न हुआ; वरन् बादशाहके सामने ही धीर और अकंपित कंठसे उसने उत्तर दिया "मैं शिकार करनेको बाहर चलागया था, इसी कारण सभामें न आ सका।" तदनन्तर अपनी तलवार छूकर उसने उसी स्वरसे कहा "आप मुझपर जुर्माना करना चाहते है,-करिये, केवल यह तलवार ही मेरा धन है।"

अमरकी इन प्रचण्ड और दुर्विनीत बातोंको सुनकर बादशाह अत्यन्त क्षुभित हुआ और जुर्माना वसूल करनेके निमित्त बखशी सलावतखांको उसके निकट भेजा खजानची नियत समयमें अमरके घरपर गया और उसने कटुवचनोंसे उससे जुर्माना मांगा। उसके ऐसे अयोग्य व्यवहारसे अमर अत्यन्त क्रोधित हुआ और उसको अपने सामनेसे दूर चलेजानेको कहा, और जुर्माना देनेसे साफ इनकार किया। कर्मचारीके अपमान होनेसे बादशाहने स्वयं अपना अहमान समझा और उसने तत्काल ही अमरको बुलवा भेजा। अमर उसी समय आमखासमें जा पहुँचा और उसने दूरसे बादशाहके लाल नेत्र और गंभीर मुखमंडलको देखा और उसने देखा कि सलावतखां भी उसके सामने हाथजोड़े खड़ाहै। इससे अमरका हृदय क्रोधके आवेगसे थरथराने लगा, उसकी नस २ में गर्म खूनके पनाले बहने लगे, उसके रोम रोमसे मानो जलतीहुई अग्निशिखाएँ निक-

---

(१) सलावतखां बखशी कहलाता था। बखशीका काम केवल वेतन बांटनेका ही नहीं था परन्तु देखभाल व जांच पड़तालका काम भी उसके हाथमें रहता था। हमारे विचारमें बखशीका पद हाज़री लेने और वेतन बांटनेका बहुत सम्मानित था, और विशेषकर ऐसा जैसा कि उमराका पद था जिसके अधिकृत सिपाही ऐसे उग्र थे कि यदि उनके सेनाध्यक्षकी मूंछका बाल भी हवासे हिलजाय तो वह बदला लेनेको तैयार थे। इतिहासमे लिखा है कि अमरा अर्थात् अमरसिंह*और सलावतखामें द्वेष रहता था जिसका प्रयोजन शायद, यही होगा कि सलावतखां अपने कर्तव्यको बादशाहके विश्वासके अनुसार करता था।

(२) यह बात आमखासमें नहीं हुई मारवाड़के इतिहास और शाहजहाँकी तवारीखके अनुसार शाहजादे दाराशिकोहकी वेलीमें सावन सुदी ३ सम्वत् १७०१ को हुई। जहाँ बादशाह कुछ दिन पहले कारणविशेषसे जारहे थे।

---

* अमरसिहने बखशीसे परवाहरा बादशाहका मुजरा कर लिया था, जिसपर बखशीने नाराज होकर गिल्ला किया और गंवार कहा—जिससे रोषमें आकर अमरसिंहने बखशीको कटारीसे मारडाला। मूलबात यही थी बाकी कवियोंकी गढन्त है।

लने लगीं। उसने सोचा वादशाहने ही मेरा तिरस्कार किया है, गाली दी है, निकाले-जानेका दंड किया है, अतएव वादशाह ही इन सव उपद्रवोंकी जड़ है। इस भावनाके मनमें निश्चित होते ही वह पंचहज़ारी सप्तहज़ारी मनसवदार सरदार उमरावोंके वीचमेंसे निकलकर शीघ्रतापूर्वक एक वारही सम्राट्के पास पहुंचगया, मानो कुछ कहेगा। परंतु उसने छलांग मारकर सलावतके ऊपर आक्रमण किया और उसकी छातीमें[1] छुरी मार दी। तदनन्तर तलवार खींचकर उसने वादशाहपर आक्रमण किया परन्तु सौभाग्यवश वह तीव्र तलवार तख्तके पायेपर लगकर पृथ्वीपर गिरपड़ी। वादशाह भयसे सिंहासन छोड़ कर महलके भीतर भागगया। राजसभामें महा हाहाकार मचगया। अमरकी संहारमूर्ति देखकर सव भयसे चारोंओरको भागने लगे। उसकी प्रचंड तलवार विजलीकी समान चारोंओर चमचमाने लगी। उसको भले वुरेका विचार न रहा। उसने जिसीको सामने पाया उसीपर आक्रमण किया। इस प्रकारसे उसने पांच उच्चपदाधिकारी मुग़ल सेनापतियोंको मारडाला। रक्तकी धाराओंसे तमाम सभामें कीच ही कीच होगई। तौ भी उस प्रचण्ड राठौरने कल न ली। उसके रोकनेका उपाय न देख अन्तमें उसके साले अर्जुनगोरने उसको प्रसन्न करनेके वहानेसे उसपर एक शस्त्र प्रहार किया। यद्यपि उस प्रहारसे अमर पृथ्वीपर गिरपड़ा किन्तु जवतक उसके शरीरमें स्वासा रही तवतक वह तलवार चलाता रहा, अंतमें वह उसी लोहूकी शय्यामें अनन्तकालके लिये सोगया।

अमरकी उस शोचनीय और लोमहर्षण मृत्युका वदला लेनेके निमित्त उसके सर्दारोंने अपने जीवन न्यौछावर करनेकी प्रतिज्ञा की, और उन्होंने पीले वस्त्र पहिनकर मुग़लोंके ऊपर प्रचंड वेगसे आक्रमण किया। चांपावतगोत्रीय वल्लू और कूंपावतगोत्रीय भाऊ नामक दो तेजस्वी राजपूत उस सेनाके सेनापति हुए। देखते २ उन कुछेक राजपूतोंकी प्रचंड वीरतासे लालकिले भीतर और एक वीभत्सकाण्डके अभिनयका आरम्भ हुआ। दलके दल युद्धविशारद असंख्य यवनसैनिक आआकर उस मुट्ठीभर राजपूत सेनाके ऊपर आक्रमण करनेलगे। अस्त्रोंको झनकार और वीरोंके सिंहनादसे सारा आगरा गूंजउठा। देखते २ थोड़ी देरमें सभी थमगया। असीम मुग़लसेनाके निकटसे कुछेक राजपूत सर्दारोंने पराजित होकर प्राण त्यागदिये। तदनन्तर अमरकी व्याहता स्त्री वूँदीकी राजकुमारी उस भीषण रंगस्थलमें उपस्थित हो प्राणपतिके मृतक देहको उठा लेगई और एक चिता वनाकर स्वामीके मृतक देहको गोदमें धर उसीके साथ सती होगई।

अमरसिंहके कुछेक विश्वस्त सेवकों और सर्दारोंको प्राण छोड़े वहुत दिन होगये, "किन्तु उनकी अप्रतिम राजभक्ति, आत्मोत्सर्ग और वीरताका प्रकाशित चित्र आज भी आगरेके खम्भोंमें वर्तमान है। कालके विशाल ग्रन्थसे उसके महत् चरित्रोंका जीवित

---

(१) अमरसिंहके सरदारोंने अपने डेरेसे अर्जुन गोड़के डेरेपर वदला लेनेको जाना चाहा था। उनके रोकनेको वादशाहकी फौज आई थी, उससे उनकी लड़ाई हुई।

चित्र कोई भी न हटासका । " वह बुखारानामक जिस सिंहाद्वारसे लालकिलेके भीतर गये थे वह ईटोसे बंदकर दियागया और वह उसी दिनसे "अमरसिंह-फाटक" के नामसे प्रसिद्ध हुआ । उस दिनसे वह द्वार बहुत दिनोंतक बंद रहा था। अन्तमें ज़ार्ज स्टील नामक एक अंग्रेजने सन् १८०९ में उसे खोला २ ।

(१) ऐसे चरित्रोंका लिखना, पश्चिमीय राजनीतिसे मिलान करनेके लिये बहुत उपयोगी होगा । और इसलिये भी कि जब कभी कोई अधिकृत राजा भारतकी वर्तमान महाशान्ति बृटिश गवर्नमेण्टके साथ करे, उनको किसप्रकार उसके साथ सलूक करना चाहिये, जैसी कि अमराने अपने प्रभुकी आज्ञाका उल्लंघन किया।इस स्वतंत्र आज्ञा उलंघनेवालोंको राजपूत जातिसे एक उपदेश मिलता है, क्योंकि राजपूत किसी शासकके द्वेषको चिरस्थाई नहीं रखते थे, और एक कड़ीके बिगड़ जानेसे कुल जंजीरको नहीं बिगाडते थे, अर्थात् यदि वंशमें किसी एक मनुष्यसे द्वेष होजाय तो सारे वंशसे द्वेष नहीं रखते थे । शाहजहांने उसके पुत्रसे उसका बदला नहीं लिया, परन्तु उसके पुत्रको नागौरकी गद्दीपर बिठलाया । इसका नाम रायसिंह था, और फिर यह जागीर उसके वंशपरम्परामें बहुत समयतक रही, अर्थात् हठी *सिंह, उसका बेटा अनूपसिंह उसका बेटा इन्द्रसिंह, उसका बेटा महकमसिंह इनके पास रही । इसकी चौथी पीढीमें अर्थात् जब इन्द्रसिंहको निकालकर राठौरोंने नागौरराज्यको राठौर राज्यमें मिलालिया तब निकली । परन्तु हम अभी इन मुगल और राजपूतोंके समान व्यवहार करनेको तैयार नहीं हैं, क्योकि जबतक अपनी प्रजाके स्नेह और प्रेमपर हमारा पूर्ण विश्वास न हो, हम दयाभाव नहीं रख सकते, इसलिये हमारा बदला तो इन्द्रवज्रकी समान शत्रुके कलेजेको विगलित करता है । देखिये बहुतसे सरदार अपनी रियासतोंसे खारिज किये गये, रुहेलोंकी गुप्त चालोंके समयसे भरतपुरके विध्वंसके समयतक हमने पंच बनकर ऐतिहासिक संसारमें सिंहके समान कार्य किये । अब वर्तमान समयमें हमारा राजप्रताप भलीभांति छागया है । हम दयाभाव दिखा सकते हैं और यदि दुर्भाग्यवश राजपुतानेमें इसकी आवश्यकता हो तो हम यह भाव प्रगट कर सकते हैं, क्योंकि वहांपर इसका प्रभाव बहुत पड़ता है, और आकाशकी ओसकी समान वह प्रभाव हमपर फिर लौटेगा, परन्तु यदि हम आगामी खटकेकी चिन्तासे अपने प्रबंधको ठीक नहीं रक्खेंगे तो एक दिन हमको भी उसी अवस्थामें फंसना पड़ेगा। हमारा प्रबन्ध हमारी प्रजाको प्रिय नहीं है, जहां कि अल्प समय रहनेवाले पोलिटिकल एजेण्टो (रजवाड़ोंपर जो अंग्रेजोकी तरफसे निरीक्षक रहते है उनको पोलिटिकल एजेन्ट कहतेहैं) की उद्दण्डता एक ऐसे विवाद और क्लेशकी उत्पादक होसकती है । जो सैकड़ों वर्षोकी जमीहुई रियासतको एकदम उखाड़ दे ।

२ इसके विषयमें कप्तान स्टील साहबने टाड् महोदयसे कहा था कि जब वह अमरसिंहनामक फाटक खुलवाते थे तब नगरवालोंने उनको रोककर कहा " आप इसको न खुलवाइये, इसमें एक बड़ाभारी अजगर इसका रक्षकबनकर रहताहै।फाटक खोलनेसे निश्चयही आपको विपदमें पड़ना होगा।" कप्तान साहबने इसको उन सब मनुष्योंकी भूल समझकर उसबातपर ध्यान न दिया । फाटक खुदवाते २ थोड़ासा रहगया कि उसी समय एक बड़ा भारी सर्प उसके भीतरसे बाहरको निकला और उसने स्टील साहबपर आक्रमण किया । साहब बड़ी मुश्किलसे उसके काटनेसे छुटकारा पाकर भागे और दूर जा खड़े हुए ।

* हठीसिंह और अनूपसिंह तो रायसिंहके भाई थे। और इन्द्रसिंह रायसिंहका बेटा था।

छठा अध्याय ६.

राजा यशवंतका राज्याभिषेक, उसके द्वारा सब प्रकारके शास्त्रोंकी उन्नतिविधान, उसकी माता मेवाड़की राजकुमारी; गोंडवॉनामे उसकी प्रथम राजसेवा; शाहजहांसे औरंगज़ेबका विद्रोह; उसके दमनार्थ सेनाका सजाना और राजा यशवंतको समस्त सेनाका सेनापति करना, फ़तेहाबादका युद्ध; यशवंतका पीछेको लौटना; रावरत्नकी वीरता; आगराकी ओर औरंगज़ेबका आना; जाजवका युद्ध; राजपूतोंका हारना, शाहजहॉंका तख्तसे उताराजाना, औरंगजेबका बादशाह होना; यशवंतको क्षमाकर पास बुलाना; शूजाका प्रतिपक्ष अवलम्बन करनेके निमित्त उसको आज्ञा देना; खजवाका युद्ध; यशवंतका आचरण, औरगज़ेबको विपत्तिमे डालकर उसका डेरा लूटना; दाराके साथ मित्रता; दाराकी खराबी; औरगज़ेबका मारवाडपर चढ़ाई करना; दाराके निकटसे यशवंतका अलाहिदा करना; राठौरराजको गुज़रातका प्रतिनिधि करना; उसका दक्षिणकी ओर जाना; शिवाजी के साथ यशवंतका परामर्श; बादशाहके लफटेन्ट शाइस्ताखॉंका माराजाना; उसके पदपर यशवंतका मुकर्रर होना; उसके पदपर आमेर राजका अभिषेक; दक्षिणदेशमें यशवंतका पुन.अभिषेक; राजकुमार मुअज़्ज़मका विद्रोह; दिलेरखॉंका युद्ध; उसपर आपत्तिका आना; यशवंतका दक्षिणसे गुजरातको लौटना; सम्राट्की आज्ञासे काबुलके अफ़गानियोंकी युद्धयात्रा; जोधपुरमें पृथ्वीसिंहकी अवस्थिति; उसपर औरंगज़ेबका क्रोध; उसे दरबारमें बुलाकर विषमिला वस्त्र पहिननेको देना; पृथ्वीसिंहकी आकस्मिक मृत्यु, यशवंतको पुत्रके मारेजानेका समाचार मिलना; पुत्रशोकसे उसकी मृत्यु; राजपूतोंकी प्रकृतिके इतिहास; यशवंतके चरित्रोंका वर्णन; नाहरखॉं उसका सिंह और सिरोहीके सुलतानसे युद्ध।

अमरसिंहके निकालेजानेपर यशवंतसिंह मारवाड़की राजगद्दीपर बैठा। उसने एक शिशोदिया राजकुमारीके गर्भसे जन्म ग्रहण किया था। पवित्र शिशोदिया कुलमें व्याह करपाने पर राजपूत राजा अपनेको पवित्र और कृतार्थ समझते थे। इस व्याहसे यदि पुत्र उत्पन्न हो तो वह पुत्र छोटा होनेपर भी बड़ेके सिवाय राजसिंहासन प्राप्त करता था और यदि कन्या उत्पन्न होती तो वह प्राणोके चलेजानेपर भी उसको मुग़लोके हाथमे न देते थे। इस नियममें कुछ भी हेरफेर नहीं होता था, और यदि होता तो हेरफेर करनेवाला उसके विषमय फलको भोगता। गहलोतवंशीय-राजकुमारीके गर्भसे जन्म लेनेके कारण जो छोटा भाई यशवंत जेठे भाईके हक़के राजसिंहासनपर बैठा, इसका कोई भी वर्णन भाटग्रन्थोंमें नहीं देखाजाता। इससे जानाजाता है कि अमरसिंह की प्रचंड और ढीठ प्रकृतिही उसके देश निकालेका एकमात्र प्रधान कारण है।

भाटकवि कहते हैं कि "यशवंत अपने समयवाले राजाओमे अद्वितीय था। उसके जगमगाते हुए ऐश्वर्यसे देशकी मूर्खता और अज्ञानता दूर होगई थी। जहॉंपर उसने राज्य किया था वहां हिन्दूशास्त्रकी बहुत बढ़ती होगई थी। उसीके अनुग्रहसे बहुतसे ग्रन्थ बनाये गये थे।"

जो दक्षिण देश शूरसिंह और गजसिंहका प्रधान रणस्थल था, आज यशवंतने उसको ही अपनी कार्य्यसिद्धि होनेका स्थान समझा। बालकपनसे ही उसके हृदयके भीतर अपनी जातिकी गौरवेच्छा अदृश्य भावसे धीरे २ बढ़ रही थी। योग्य सहायताके पानेसे ही वह बलवती इच्छा सफल होकर भारतसन्तानकी उन्नतिके मार्गको स्वच्छ कर सकती है। किन्तु वह सहायता सम्राट्की इच्छापर निर्भर है। बादशाह यदि यशवंतके हृदयका यथार्थ भाव समझता और समझकर यदि उसके कहे अनुसार उसे सहायता देता तो फिर मारवाड़का इतिहास दूसरी मूर्ति धारण करता। किन्तु वह उस समय स्त्रीका अंचल पकड़कर केवल अन्तःपुरमें ही वास करता था और उसके पुत्र प्रतिनिधि हो हो मुग़ल साम्राज्यके अन्य २ विभागोंमें निवास करते थे। इस कारण शाहजहांने राठौर वीर यशवंतके महत् चरित्रोंको विचारकर एकवार भी न देखा। बादशाहने सबसे पहिले उसको गोंडवानेमें भेजा। यह गोंडवाना ही यशवंतकी प्रथम साधनभूमि था। इस स्थानमें और इसके समान और भी दूसरे स्थानोंमें वह औरंगज़ेबके अधीनस्थ विशाल सेनाके एक अंशका सेनापति हो युद्ध कार्यमें लगा रहा था। इस सेनाका बड़ा अंश बाईस भिन्न २ सामन्त सेनासे युक्त था। यद्यपि वह इन सब युद्धोंमें अपनी स्वाधीनतापूर्वक युद्धकार्य न करसकाथा तो भी जो सब सामंत राजा मुग़ल बादशाहकी सहायताके निमित्त युद्धभूमिमें आये थे उनमेंसे राठौर राजा और उसकी वशवर्ती सेनाहीने सबसे अधिक वीरता दिखाई थी। इस प्रकारसे राठौर वीर यशवन्तसिंहका शौर्य, वीर्य धीरे २ प्रकाशित होता रहा, इस प्रकार उसने बहुत दिनोंतक नीचकर्मचारीकी समान अपने भाग्यकी परीक्षा की। ऐसेही धीरे२बहुत दिन कटगये। धीरे २ बादशाहके बढ़तेहुए रोगके साथ ही यशवन्तका भाग्य बढ़नेलगा। सन् १६५८ ई० में जब शाहजहां सांघातिक रोगमें आक्रान्त हुआ तब उसने अपने पुत्र दाराको प्रतिनिधि किया। दाराने राजा यशवंतसिंहकी बहादुरीका परिचय पाय उसको "पंचहजारी" का खिताब दिया और उसको मालवाप्रदेशका अपना प्रतिनिधि बनाया।

जिस दिनसे बादशाहकी पीड़ा अत्यन्त सांघातिक कहकर प्रचारित हुई उसी दिनसे उसके पुत्र नानाप्रकारके कूट उपायोंका अवलम्बन कर राजसिंहासनके पानेकी चेष्टा करनेलगे। किसीने खुल्लमखुल्ला विद्रोह किया, किसीने अपनी इच्छाको छिपाकर शीघ्रतापूर्वक राजधानीकी ओर पैर बढ़ाया। सिद्धान्त यह कि उस समय राज्यमें एक भयानक झगड़ा उपस्थित होगया। इस भयानक झगड़ेके शांति करनेकी आशा वृद्ध और पीड़ित बादशाहको केवल राजपूत वीरोंहीके ऊपर निर्भर थी। बीमारीकी सेजपर लेटाहुआ बादशाह जिस ओरको देखता, उसी ओर मानो उसके दुष्ट पुत्रोंकी विकट भौंहें उसको सैकड़ों विभीषिकायें दिखानेलगीं। जो उसके वीर्यसे उत्पन्न हुए पुत्र उसके बुढ़ापेका

(१) लफटिनेण्ट करनल विग्गकी अनुवाद कीहुई तारीख फ़रिस्तामें पाठक इस युद्धके विषयमें यवन इतिहासवेत्ताओंकी सम्मतियोंका वृत्तान्त जान सकतेहैं।

अवलम्ब हैं, जिनके मुखकी ओर देखनेसे वह सैकड़ों दुःखोंको भूल जाता था, जिनके ऊपर विश्वास कर इसने विचारा था कि हिन्दुस्तानका राज्य सर्वथा निर्विघ्नतासे भोगूंगा, अन्तिम समयमें अत्यन्त आनन्दपूर्वक परलोक यात्रा करूंगा, आज क्या वही उसकी उस शोचनीय अवस्थामें उसको गद्दीसे उतारनेकी चेष्टा करते है ? जिसके अन्नसे वह इतने दिनोतक प्रतिपालित हुए, जिसके गौरवसे गौरवान्वित हो इतने दिनतक प्रजाकी भक्ति भेटमें पाई, आज वही पाशवीवुद्धिका अवलम्बन कर परम गुरु पिताका तिरस्कार करनेपर उद्यत हुए है ? यद्यपि वादशाहके पुत्रोंने उसके विरुद्ध तलवार उठाई, किन्तु इस वादशाहने जिनकी सहायता चाहीथी, वह परम विश्वस्त राजपूत उसके दियेहुए विश्वासका निरादर न करसके। विपद् पड़नेपर उसने उन राजपूतोंको वुलाया और उनकी सहायता चाही, इससे क्या वह निश्चिन्त रह सकते है ? शीघ्रही समस्त राजपूत समाजने वादशाहकी रक्षाके निमित्त अपनी २ फौज लेकर शाहज़ादोंके विरुद्ध यात्रा की। उन सव राजपूतोंमेंसे आमेरके राजा जयसिंह शूजाके[1] विरुद्ध और यशवंतसिंह औरंगजेवके[2] विरुद्ध आगेको वढ़े।

औरंगजेवके दमन करनेके निमित्त राठौर राज यशवंतसिंह तीस सहस्र राजपूत और मुग़लकी सेनाका सेनापति हो आगरेसे वाहर हुआ। उसकी विशाल सेनाके भारसे पृथ्वी हिलने लगी और शेषनाग थरथराने लगे। वह इस वृहत् सेनाके भीषण पराक्रमसहित नर्मदाकी ओर वढ़ा। उज्जैनके लगभग आठकोस दक्षिणकी ओर वह पहुँचा कि उसी समय समाचार आया कि औरंगजेव भी उसके निकट ही आ पहुँचा है। तव यशवंतने भी आगेको न वढ़कर वहींपर ठहर अपने डेरे जमाये। देखते २ विद्रोहीदल नर्मदाको पारकर यशवंतके अति निकट आ पहुँचा, किन्तु सहसा उससे सामना करनेका साहस न किया। यदि राठौर राज चाहता तो वहीपर उस सेनाको भगा देता; किन्तु वह उस समय चुपचाप स्थिर रहा। इससे औरंगजेवकी फौजको मौका मिलगया। इसी मौकेमें उसने अपने भाई मुरादसे मिलकर अपने वलको और भी दृढ़ करलिया। इस वृत्तान्तको जान वूझकर भी यशवतने कुछ न कहा, एकवार भी उसके रोकनेका यत्न न किया। अपने वलके मदसे मत्त होकर उसने विचारलियाथा कि एक साथ ही विद्रोही भाइयोंके वलको नाश करूंगा, इस कारण उसने उन दोनोंको एक होजाने दिया किन्तु उसका वह अभिप्राय पूर्ण न हुआ। काम पूर्ण होना तो दूर रहा वरन् उससे जो विषमय फल उत्पन्न हुआ उससे उसका सन्मान व गौरव वहुत कुछ घट गया। चतुर

---

(१) शूजा उस समय वंगालेका सूवेदार था। पिताको अत्यन्त वीमारहुआ सुनकर राजसिंहासनके पानेकी आशासे वह वंगालेसे आ रहाथा, कि उसी समय वनारसके निकट दाराके पुत्र सुलेमान शिकोहने उससे युद्ध कर उसको परास्त किया। राजा जयसिंहने सुलेमान शिकोहको वहांपर सहायता दी थी।

(२) औरंगजेव उस समय दक्षिणका सूवेदार था। वह अत्यन्त कपटी था। अपनी इस दुरभिसंधिको उसने वहुत दिनोंसे अपने कपटी हृदयमें छिपा रक्खाथा।

औरंगजेव भाईके साथ मिलकर चुपचापही न रहा, वरन् यशवंतके साथवाली मुगल-सेनाके साथ भी यह षड्यंत्र करनेलगा। उस चक्रांतका फल शीघ्र ही प्रकाशित हुआ। क्योंकि राठौरराजने जैसे ही विद्रोहियोंके साथ युद्ध आरम्भ करनेकी आज्ञा दी, वैसेही उसके अधीन मुगल घुड़सवार उसको छोड़कर औरंगजेवकी ओर चले-गये। दुष्टोंकी ऐसी विश्वासघातकतासे तेजस्वी यशवंतसिंह क्षणभरके लिये भी निरुत्साह न हुआ, वरन उसका उत्साह पहिले की अपेक्षा और भी अधिक उमरउठा। यवनगण जव उसको छोड़कर चले गये तव केवल ३० सहस्र राजपूत ही उसकी फहराती हुई पताकाके नीचे खड़े रहगये। उसको इन समस्त राजपूत वीरोंपर दृढ़ विश्वास था कि शत्रुसेना चाहैं जितनी वड़ी क्यों न हो, उसको इन वीरोंके सामने हारना ही पड़ेगा। उसकी सव सेना आज्ञा पाते ही सिंहकी समान गरज उठी, और प्रचंड पहाड़ी नदीके समान शत्रुसेनाकी ओर वढ़नेलगी। "राजा यशवंतने भयानक शूल हाथमें ले अपने रणतुरंग महबूवके ऊपर चढ़ वादशाहके दोनो पुत्रोंपर आक्रमण किया। उस भयानक युद्धमें दश हज़ार मुसलमान मारे गये। इन यवनोंके संहार करनेमें सत्रहसौ राठौर इसके अतिरिक्त गहलोत, हाड़ा, गोड़ और सामंतोंके कुछेक वीर मारे गये। औरंगजेव और मुराद अति कष्टसे प्राण लेकर भगे, क्योकि उनकी मृत्यु निकट थी। महवूव और यशवंतसिंह खूनसे भीग गयेथे; यशवंतसिंह भूँखसे कातरहुए सिंहकी समान देख पड़ता था, और अपने भागेहुए शिकारको देखता था।"

इस भयानक युद्धके सम्वन्धमें जो भाटोंने वर्णन किया है, मुसलमान ऐतिहासिक और वर्नियर द्वारा वर्णन कियेहुए वृत्तान्तके साथ उसकी वहुत समानता देखी जाती है। यहांतक कि इन्होने उन्हींके वृत्तान्तका समर्थन किया है। वर्नियर स्वयं उस समय युद्धस्थलमें उपस्थित था। वह कहता है कि, यद्यपि दोनो शाहज़ादोंने वहुत सेना और फ़रासीसी गोलन्दाजोंको साथ लेकर वहुतसे घुड़सवारों और तोपोंके साथ राजपूतोंके विरुद्ध युद्धयात्रा कीथी, किन्तु रात्रिके आते ही उसके समस्त उद्यमोका अन्त होगया। उस दिन दोनों ही पक्षवालोंने वह रात्रि युद्धभूमिमें विताई। यद्यपि तारीख फ़रिस्ताके पहले अनुवादकके लेखसे जो लिखता है कि रातको जशवन्त रणक्षेत्रमें रथ पर सवार होकर घूमता रहा हमको कुछ जानकारी नहीं है तो भी यह निश्चय है कि बुद्धिमान् औरंगजेवने दूसरे दिन युद्ध नहीं किया और उसकी जन्मभूमिकी ओर जाती-हुई सेनासे छेड़छाड़ भी न की। इस फतेहावादके युद्धमें राजपूतोंकी ही वीरता अधिक प्रकाशित हुई; इस स्थानपर उनकी पराक्रमाग्नि जिस प्रचंड तेजसे जल उठी थी, उससे विद्रोही औरंगजेव निश्चय ही अत्यन्त भयभीत हुआ थाँ। यद्यपि केवल अनुप्रासके

(१) कोटा इतिहाससे प्रगट होताहै कि राजा कोटा और उसके पांचोंभाई इस युद्धमें काम आये।

(२) वर्नियर और खाफ़ीखाँ दोनों ही कहते हैं कि कासिमखाँ नामका जो मनुष्य यशवंतके अधीन मुग़लसेनाका सेनापति होकर गयाथा, उसकी ही विश्वासघातकतासे यशवंत पराजित हुआथा।

(३) यह युद्ध सन् १६५८ ई० के अखीर मार्चमें हुआ था।

अनुरोधसे भाटकवियोने मेवाड़ और शिवपुरके दो वीरवंश गहलोत और गौड़ क्षत्रियोंका वारंवार उल्लेख किया है तौ भी निश्चय ही जानाजाता है कि उस भयानक युद्धभूमिमे राजस्थानके प्रायः समस्त ही वीरवंश वृद्ध शाहजहांके सन्मानकी रक्षाके निमित्त आये थे। इसमे प्रत्येक राजपूतवंशकी एक २ वीरनारीके मांगका सिन्दूर सदैवके लिये उठ गया, प्रत्येक वीरवंशने स्तम्भस्वरूप एक २ वीरको सदैवके निमित्त खोदिया था। यहां-तक कि मुगल इतिहासवेत्ताओने वर्णन किया है कि कुछ कम पन्द्रह हजार वीरोंने उस दिन रणभूमिमे प्राण छोड़े थे। यह युद्ध राजपूतोकी वीरता और विश्वस्तताका एक प्रत्यक्ष उदाहरण है। राजपूत विश्वासघातक नहीं हैं, जो उनके विश्वासके ऊपर निर्भर रहता है वे उसको अपने मरणकाल तक विपदमे नहीं गिरासकते। वे अपने ऊपर विश्वास करनेवालेका कभी निरादर नही करते। भग्नहृदय वृद्ध शाहजहांने विपदमें पड़कर उनके ऊपर विश्वास स्थापन किया, यहांतक कि वह केवल उन्हींके मुखकी ओर देखतारहा अस्तु, वीरहृदय राजपूतोने मरण कालतक उस सरस विश्वासका अपमान न किया। दुष्ट औरंगजेवने उनको अपने वशमे करनेके निमित्त कितने लोभ दिखलाये, होनहार आशाके मोहनीयमालचित्र उनके नेत्रोंके सामने दिखाय गये किन्तु वह छणभरके निमित्त भी उससे मोहित न हुए, क्षणभरके निमित्त भी उनके हृदयने औरंगजेवके मंगलकी इच्छा न की। उन्होने अपनी२ प्रतिज्ञा अपनी शक्तिभर पालन की थी। किन्तु विश्वासघातक यवनोंके विषयको विचारते ही मनमे विजातीय घृणा उत्पन्न होती है। वे वादशाहके अन्नसे पलेथे, उसी अन्नदाता पिताकी समान वादशाहकी आज्ञाको माथेपर चढ़ाय आगरेसे वाहर हुएथे, किन्तु कहते घृणा होती है कि उन्होने उस आज्ञाका किस प्रकारसे पालन किया। जिस आज्ञाका सवप्रकारसे पालन करेंगे यह कह तलवारको छूकर सौगंध की थी, उस आज्ञाका पालन करना तो दूर रहा वरन् विश्वासघातकताका अवलम्बन करके वे उसके विरुद्ध आचरण करनेमे प्रवृत्त हुए। क्या यही राजभक्ति है? क्या यही पवित्र स्वामि-धर्म है कि जिसका पालन करनेके निमित्त राजपूतोंने अपनी स्वच्छन्दताको भूल अपने जीवनको प्रसन्नतापूर्वक न्योछावर किया? इस फ़तहावादके युद्धक्षेत्रमे राजपूतोने स्वामि-धर्मके पालनका जो प्रत्यक्ष चित्र स्थापित किया है, उन्होने विश्वासका जो योग्य फल दिया है, विजातीय राजाके निमित्त संसारकी और कौन पराधीन जाती इस प्रकार कर सकती है? इसमे एक २ वंश एकवार ही प्रायः नष्ट होगया था। यहांतक कि एक प्रसिद्ध राजवंशके छः जनोंने तलवार धारण की, उनमेसे केवल एक जनको छोड़ पांचने रणभूमिमे प्राण छोड़े थे।

---

(१) यह छहों जन बूंदीके राजपुत्र थे। इनमेंसे जिसने अधिक वीरता प्रकाशित की थी, उसका नाम छत्रशाल था। राजा छत्रशालने जैसी अद्भुत वीरता प्रकाशित की थी उसका वृत्तान्त बूंदीके इतिहासमें लिखाहै। ख़ाफीख़ाँ, और वर्नियर दोनोंका कथन टाड्साहवके कथनसे मिलता है, किन्तु मिस्टर एलोफिने कहाहै कि उस वीरवरका नाम रामसिंह था। हम ठीक नहीं कहसकते कि एलीफि-नेस्टन साहवका वयान कहांतक भ्रमोत्पादक है। क्योंकि हम देखते हैं कि रामसिंहनामक कोई राजा राजपूत सेनाका सेनापति हो युद्धभूमिमें नहीं गया। रामसिंहनामक एक राजा इस घटनाके प्रायः ५० वर्ष उपरान्त कोटाकी राजगद्दीपर बैठा था। वह जाजवकी लड़ाईमें औरंगजेवके लड़के मुअज्ज़मके हाथसे मारा गया था। इसका वृत्तान्त कोटाके इतिहासमें लिखा जायगा।

इस भयानक युद्धमे जिन समस्त राजपूतोने अतुल वीरता और रणदक्षता दिखाई थी, उनमेंसे रतलामका रतनसिह ही प्रधान था। उसकी अप्रमेय वीरतापर मोहित होकर सबहोने मुक्तकंठसे वारंवार उसकी प्रशंसा की है।उसका वीरत्व वीररसके चाहनेवाले भाट-कवियोके विशेप आदर की वस्तु है; उन्होने उसकी अक्षय कीर्तिको "रासाराव-रत्न" नामक ग्रन्थमे लिखा है। वीररत्नने राठौरकुलमे जन्म ग्रहण किया था। वह उदयसिहका प्रपौत्र था। स्वाधीनताके साथ राठौर कुलकी वीरता रत्नसिहके द्वारा ही भलीभांतिसे प्रमाणित हुई थी। उसने अपनी असीम वीरता और पराक्रमसे शत्रुसे-नाका तहस नहस किया था।

यद्यपि राठौरराजा यशवंतसिहने युद्धक्षेत्रको परित्याग करदिया, किन्तु इससे उसका कुछ अपयश न हुआ क्योंकि एक दिनके घोर युद्धके उपरान्त दोनो ही सेना-ओने रणस्थलको छोड़ा था। यद्यपि दोनों ओरको हारजीतका कोई लक्षण नहीं देखाजाता तो भी भलीप्रकारसे विचारकर देखनेपर जानपड़ेगा कि औरंगजेब ही जीता था। यद्यपि उनके दमन करनेको राजपूतोने बहुतसे यत्न किये थे किन्तु विद्रोही शाहजादोकी विशाल सेनाके निकट उनकी वीरता विशेप फलदायक न हुई, क्योंकि उनमेंसे बहुत वीर युद्धभूमिमे मारे गये थे। जो बचरहे थे उन्हें लेकर यशवंतने फिर औरंगजेबपर आक्रमण करना न चाहा। चतुर औरंगजेब भी प्रसन्न हो चुपचाप रहकर आगेको न बढ़ा। जो हो दोनो ही ओरके वीर फिर और कुछ झगड़ा न कर युद्धभूमिसे चले गये। पहिले ही कह आये हैं कि राजा यशवंत अपनी राजधानीकी ओर लौटा किन्तु वह सहजसे ही जोधपुरमे प्रवेश न करसका, उसके जानेके मार्गमे एक जनद्वारा एक प्रचंड बाधा उपस्थित हुई थी। वह जन उसकी प्यारी स्त्री ही थी।

राजा यशवंतने शिशोदियाकुलकी एक स्त्रीसे विवाह किया था। उसकी स्त्री जेसे ऊंचे कुलमें उत्पन्न हुई थी, उसी प्रकार ऊंचे गुणो और अलंकारोसे विभूषित थी। जब उसने फतेहाबादके युद्धका वृत्तान्त सुना कि उसके पतिकी प्रायः समस्त सेना नष्ट होगई है और वह शत्रुका पराजय न कर रणभूमिसे चला आया है, तब उसके हृदयमें विपम क्रोध और घृणा उत्पन्न हुई। कहां उसे रणमे थकेहुए राजाको सांत्वना के वाक्योसे धीरज देना चाहिये, परन्तु यह न करके उसने उसी समय किलेके द्वार बंद करदेनेकी आज्ञा दी। इस विचित्र आज्ञाको सुनते ही उसकी सब सहे-लियें विस्मित होगई। उसके लाल नेत्र और गंभीर मुखमंडलको देखकर सभीके हृदयमे विपम भयका संचार हुआ। अत्यन्त क्रोधसे कांपतीहुई मनके विकारको न रोककर वह सर्पिणीके समान फुफकार कर कहनेलगी "राजपूतकुलमे जन्म ग्रहण करके वीरपूज्य शिशोदिया कुलमे विवाह करके जो मनुष्य प्राण रहतेहुए शत्रुको पीठ दिखाता है, वह क्या वीर पुरुष है ? नही, कभी नहीं, वह कायर है; कायरसे भी अधम है। उस अधम मनुष्यको मै कभी इस किलेमें प्रवेश न करने दूंगी।उससे कहना कि

में ऐसे मनुष्यको अपना स्वामी स्वीकार नही करसकती। क्योकि शिशोदीय राजाके दामादका मन कभी इस प्रकारका नीच नही होसकता। उसको इस बातका विचार करना चाहिये था, कि ऐसे ऊंचे वंशमे विवाह करनेपर इस वंशके असीम गुणोका अनुकरण करना होगा। या तो वह युद्धमें जीतता ही, नहीं तो शत्रुके हाथसे प्राणत्याग कर रणस्थलही मे मर जाता,परन्तु उसको हार मानकर प्राण बचा कभी घरको न आना था।" कहते २ रानीके मुखमंडलने और ही मूर्ति धारण की, दोनो आंखोसे आसुओकी धारा बहने लगी, वह पागलनीकी तरह रोनेलगी। रोते २ उसने एक बड़ीभारी चिताके बनानेकी आज्ञा दी। अब वह जीवनको धारण न करैगी। अपमानित और कलंकित होकर अपने स्वामीको भी जीवित न रहने देगी, अवश्य ही राजाको मरना पड़ेगा, वह उसका अनुगमन करैगा, उसके साथ मिलकर उस चितानलमे जीवन त्याग करेगी। क्षणभरके भीतर वह शोकसे उन्मादिनी हुई मूर्ति भी बदलगई। उसके स्थानमे और भी भयानक मूर्ति दिखाई दी। वह स्वामीको सैकड़ो धिक्कार देनेलगी। इसी प्रकार ऐसी अवस्थामे उसने आठ नौ दिन विताए। अन्तमे उसकी माताने उसके पास आकर उसे नानाप्रकारसे समझाया और कहा कि राजा थकावट दूर करके ही फिर युद्धभूमिमे जांयगे और औरंगजेबको हराकर फिर नष्ट हुए गौरवको प्राप्त करेंगे।

यह वृत्तान्त सब सत्य है, इसको फरिस्ता और बर्नियर दोनोने ही मुक्तकंठसे स्वीकार किया है। बर्नियर स्वयं उस समयमे उपस्थित था। उसने देख और सुनकर जो वर्णन किया है उसीका मर्म ऊपर लिखागया है। जो हो स्त्रीकी कोपाग्निके शान्त होनेपर राजा यशवन्तसिंह रणकी थकावट दूर कर अपने राज्यकार्यमे लगा, इधर औरंगजेबने मालवेके मांडूनगरमे पहुँचकर कईएक दिन आमोद प्रमोदसे विताये, तदनन्तर जय पानेकी इच्छासे उत्सुक हो शीघ्रतापूर्वक वह राजधानीकी ओर बढ़ा। उसको आगे बढ़ता देखकर वृद्ध शाहजहांका हृदय अत्यन्त थरथरा उठा, उसका राजमुकुट स्खलित हो सहसा पृथ्वीपर गिर पड़ा। उसने फिर परम विश्वस्त राजपूतोको बुलाया। उसके बुलावेका कोई भी तिरस्कार न करसका। राजपूतोंके रणतुरंग फिर छलांग मार बड़े जोरसे हिनाहिनाने लगे, राजपूत वीरोने और एकबार वृद्ध शाहजहांकी सन्मानरक्षाके निमित्त उसके विद्रोही पुत्र औरंगजेबके विरुद्ध तलवार उठाई। आगरेसे पन्द्रह कोस दक्षिणकी ओर बसेहुए जाजवनामक गांवमे राजपूतोका औरंगजेबसे सामना हुआ।

---

(१) बर्नियरसाहब कहते हैं कि " इसप्रकारके वृत्तान्तसे भलीभांति जानाजाता है कि राजस्थानकी स्त्रियां अत्यन्त साहसी और ऊंचे हृदयवाली है।" महात्मा टाड् साहबने भी बर्नियरके इतिहाससे संकलन कर जो अपने बनायेहुए ग्रन्थमे लिखाहै, उसीका अनुवाद दिया है। Bernier's History of the late revolution of the Empire of the mogul P. 13, ad. 1684.

(२) मूल फरिस्तामे तो, अकबरके पीछे मुगल बादशाहोका इतिहास ही नहीं है और न फरिस्ताका लिखनेवाला जो अकबरका समकालीन था औरंगजेबके समय तक जीता रहसकता था।

(३) कोई २ इसको सामगढ़ भी कहते हैं।

शीघ्रही उस युद्धका आरम्भ हुआ कि जिससे बुढ़ापेसे दुःखित बादशाहकी कठोर होनहारका निश्चय हुआ; भारतका राजमुकुट उसके मस्तकसे छिनगया, वह तख्त ताऊससे उतारा जाकर दीन हीन शोचनीय अवस्थासे अंधे कारागारमें डाला गया।

वृद्ध शाहजहांके साथ ही साथ उसके प्रियपुत्र दाराका भी अधःपतन हुआ। वह मुगलसाम्राज्यके प्रतिनिधित्व (नायावत) से दूर हो भागनिकला। अनन्तर पितृद्रोही औरंगजेबने पिता भाई और आत्मीय स्वजनोंके आंसुओंकी बूंदोंके साथ सिंहासनपर अधिकार कर अपने हाथसे अपनी उन्नतिके मार्गको साफ करनेकी प्रतिज्ञा की। उसकी दृढ़ प्रतिज्ञा थी कि जो कोई उसके उन्नतिके मार्गमें प्रतिरोधस्वरूप खड़ा होगा, पिता, भाई यहांतक कि पुत्र होनेपर भी वह उसके हाथसे निकाला जावेगा। सिंहासनपर बैठते ही उसने अपने भाई शुजाको दमन करनेके निमित्त एक बड़ी भारी सेना सजाई और आमेरके राजकुमार द्वारा क्षमा प्रगट कर राठौरराज यशवन्तको बुलाभेजा "आपके सब कसूर माफ किये जावेंगे, अगर आप जल्दीसे आकर शुजाके खिलाफ तलवार उठाओगे।" शाहज़ादा शुजा उस समय अपना स्वत्व दृढ़ करनेके निमित्त आगरेकी ओर बढ़रहाथा यशवन्तने यह जानपाया। इस उपद्रवको अपनी कार्य-सिद्धिका योग्य अवसर और बदला लेनेका अच्छा समय विचारकर वह औरंगजेबकी आज्ञापालन करनेमें सम्मत हुआ। और शुजासे अपनी समस्त इच्छा प्रगट की।

शीघ्र ही युद्धकी तैयारी हुई। (प्रयाग) इलाहाबादके १५कोस उत्तरकी ओर बसेहुए खजुवानामक स्थानमें दोनों एक दूसरेके शत्रु शाहज़ादे अपनी २ सेनाको ले एक दूसरेके सन्मुख हुए। राजा यशवंत अपने राठौर घुड़सवारो समेत थोड़ीदेर इधर उधर घूमकर सहसा राजकीय सेनाके पीछेकी ओर दौड़ा, देखा कि शाहजादा उस स्थानकी रक्षा कररहाहै। राठौरराजने अकस्मात् उसकी रक्षित सेनाके ऊपर आक्रमण किया। उसके भीषण प्रहारसे शाहज़ादेकी वह विशाल सेना छिन्नभिन्न होगई। तब यशवंत तीव्र वेगसे वादशाहके डेरेके सन्मुख दौड़ा और उसकी सब सामग्री लूटकर अच्छी २ सामग्रियें बांध २ उसने अपने नगरको भेजदीं। परस्पर के शत्रु दोनो भाइयोंके युद्धसे जो भयानक अग्नि उत्पन्न हुईथी, उससे दोनों ही पतंगोंकी समान जलजांय यही यशवंतकी भीतरी इच्छा थी। उस इच्छासिद्धिका विचार करते २ वह एकसाथ ही आगरे नगरमें उपस्थित हुआ। उसके आगरा पहुँचने के बहुत पहले वहां यह अफवाह उड़ी थी कि औरंगज़ेब हार गया है। इस अफ-वाहके सुनते ही औरंगजेबकी सेनाके मनमें विषम भयका संचार होगया था। इस समय यशवंतको दलसमेत निकट आया देख उनका यह भय और भी दृढ़ होगया और वे सैनिक इतने व्याकुल होगये कि यदि यशवंत वहां पहुँचते ही उनको आत्म-समर्पण करने की आज्ञा देता तो उसकी वह आज्ञा तत्काल ही पाली जाती; और फिर वह शाहजहांको कारागारसे निकालकर औरंगज़ेबको उन्नतिके मार्गमे ऐसी वाधा स्थापित करसक्ता कि कभी कोई उस बाधाको दूर न करसकता।

किन्तु वृद्ध शाहजहाँके अभाग्यसे उस समय राठौरराजकी ऐसी मति न हुई; इस कारण उसने आगरामें पहुँचते ही तत्काल उसको छोड़ दिया।

राजा यशवंत जो आगरेसे पहुँचतेही तत्काल उसको छोड़कर बाहर निकलपड़ा उसका भी विशेष कारण है। उसने देखा कि यदि औरंगज़ेब जीतगया और जीतके गौरवके साथ नगरमे आकर उसने मुझको देखा, तो फिर बड़ी विपद् आनेकी सम्भावना है। इस कारण नगरके बीचमे बंद रहना किसी प्रकारसे भी उचित नहीं। इसके अतिरिक्त उसका और भी एक गूढ़ आशय था। राजाने इसके पहिले दाराके साथ परामर्श किया था। दाराही सिंहासनका योग्य उत्तराधिकारी था, अतएव उसको सिंहासनपर बैठानेके अभिप्रायसे यशवंतने उसको युद्धभूमिमें आनेकी सलाह दी थी। साधारण यही दोनो विषय माने जासकते हैं। राजधानीसे बाहर होकर वह औरंगज़ेबके पीछेकी ओर घूमनेलगा। पहली सम्मतिके अनुसार उसी स्थानपर दाराके आनेकी बात स्थिर हुई थी। वह उत्कंठितचित्तसे बारंबार दाराके आनेका मार्ग देखने लगा, किन्तु दारा न आया। वह उस समय मारवाड़के दक्षिण ओर घूमताहुआ आशावैतरणीकी लहरोंकी गिनती कर रहा था। किन्तु उसकी सब आशाएं निष्फल हुई और यशवंतके समस्त यत्न वृथा हुए। उसने लूटका माल और शाही डेरे इत्यादि सब जोधाके किलेमे बंद करदिये। दाराने लाचारीसे मेरता आकर मेलकिया; क्योंकि शुजाको पराजित कर चतुर औरंगज़ेब दल समेत उसके निकट आ उपस्थित हुआ था। अनिश्चयात्मक असिबलकी अपेक्षा वह कौशल और कूट नीतिका अधिक आदर करता था; क्योंकि उसका दृढ़ निश्चय था कि कार्य प्रायः कौशलसेही सिद्ध होते रहते हैं। इसी निश्चयके कारण उसने यकायक तलवारकी सहायता न लेकर कौशल का ही अवलम्बन किया। मेरता नगरमें पहुँचते ही उसने यशवंतको दूतद्वारा बुला भेजा कि यदि राठौरराज दाराके निकटसे सब सेनाको लौटाकर इस युद्धसे हाथ खींच-कर चुपचाप होजायँ तो केवल उसके दोषोंको ही क्षमा न करूंगा वरन उसको गुजरात का प्रतिनिधि भी बनाऊंगा। औरंगज़ेबके इस प्रस्तावको यशवंतसिंहने स्वीकार किया और वह राजकुमार मुअज़्ज़मके अधीन अपनी सेनाको लेजाकर महाराष्ट्रसिंह शिवाजीके विरुद्ध युद्धभूमिमे आया।

यद्यपि लोभके वशवर्ती हो अनेक राजपूतोने योग्य उत्तराधिकारी दाराको छोड़ औरंगज़ेबका पक्ष अवलम्बन किया था किन्तु ऐसा होनेसे क्या यशवंत उन नीच मनवाले राजपूतोंके अन्तर्गत है? क्या वह भी चतुर औरंगजेबके लोभोंमें भूलकर दाराको छोड़कर चलागया? यद्यपि पाठकोंके मनमे सहसा यह प्रश्न उठसकता है किन्तु इसके उत्तरमें हम केवल इतना ही कहसक्ते हैं कि ऐसे लोभोंसे राजा यशवंत क्षणभरको भी मोहित न हुआ। तो फिर उसने क्यो दाराका संग छोड़दिया, उसका कारण दाराकी अयोग्यता ही है। दारा शाहजहांका योग्य उत्तराधिकारी था, उसका हृदय अतिमहत् और उच्च था; विशेषकर वह भीतरसे राजपूतोकी भक्ति और

श्रद्धा करता था। उसके उन समस्त महत्‌गुणोंसे मोहित हो यशवन्त और दूसरे प्रधान राजपूतोंने उसके पक्षका समर्थन किया था। राजा यशवन्त अन्तःकरणसे उसके मंगल की कामना करता था और अपनी शक्तिभर उसनें उसके हितकार्य करनेमें भी कमी न की थी। इसी कारण उसने अनेक समयोमे अपने आत्मत्यागको भी स्वीकार किया था, यहाँतक कि वह सदैवके निमित्त औरंगज़ेबकी आंखोका शूल होगया था। किन्तु उसके समस्त उद्यम और त्याग स्वीकार निष्फल हुए। उसने देखा कि आलसी दारा चतुर और शीघ्रकर्म्मा औरंगज़ेबके विरुद्ध कभी न जीत सकेगा, इस कारण जान वूझकर उसने विवश हो उसको छोड़ा। नहीं तो यदि दारा चतुर और कार्यदक्ष होता तो फिर समस्त भारतवर्ष चाहे एकओर होजाता परन्तु यशवन्तको उ के पक्षसे कोई पृथक् न करसकता।

दक्षिणमे पहुँचते ही यशवन्तसिंह महाराष्ट्रवीर शिवाजीके साथ मिलकर कपट-जाल रचने लगा। उस कपटजालका फल थोड़े ही समयके भीतर फला। थोड़े ही दिनोंके वीचमें औरंगज़ेवका सेनापति शाइस्ताखां शिवाजोके हाथसे मारा गया इसके मारेजाते ही यशवन्त उसके पदपर नियत हो प्रधान सेनापतिके कार्यको करनेलगा। इन सब समाचारोको औरंगज़ेवने अत्यन्त ही शीघ्र सुना, यशवन्तने जो शिवाजीके साथ मिल-कर शाइस्ताखांको मरवाया था उसका भी सत्य समाचार एक विश्वासी दूतसे उसको मिला इससे उसके हृदयके भीतर छिपीहुई विद्वेषकी अग्नि एकवार ही धधक उठी। किन्तु वह देशकाल पात्रका विचारकर काम करना जानता था। यशवन्तको इस समय उभारनेसे वहुतसे अनिष्टोंके होनेकी सम्भावना थी, अतएव उसने मनकी आग मनहीमें रखकर राठौरराजसे कुछ न कहा, यहांतक कि उसके नवीन पदोन्नतिके विषयमे लिखकर उसपर अपनी विशेष प्रसन्नता प्रकाश कर भेजी। किन्तु औरंगज़ेव उस प्रचंड विद्वेषाग्निको अधिक दिनतक न छिपासका। दोही वर्षके न वीतते २ उसको उस पदसे हटा उसकी जगहपर अम्वरराज जयसिंहको नियत किया। दक्षिणमे पहुँचते ही थोड़े दिनोंके वीचमें राजा जयसिंहने महाराष्ट्रवीर शिवाजीको कौशलजालमें फाँसकर वंदी-भावसे राजधानीमें भेजा। जयसिंहने शिवाजोको अभयदान देकर धीरज वँधाया था कि वादशाह भी उसके प्राणोंको कुछ भी वाधा न देसकेगा। किंतु शिवाजीके कैद होते ही औरंगज़ेवके आचरण देख उसके मनमे विपम सन्देह उत्पन्न होगया। उसने देखा कि निष्ठुर मुग़ल महाराष्ट्रवीरके प्राणघातकी चेष्टा करता है। तव उस समय राजा जयसिंह अपनी प्रतिज्ञाके पालनेमें तत्पर हुआ। सुखका विषय है कि शिवाजी उसी समयमें स्वयं भागनेका उद्योग कर रहा था। राजा जयसिंह यह जानकर भी अनजान होगये। वरन् उसके भागनेमें और भी सहायता की। दुष्ट मुग़लराजकी इच्छा व्यर्थ हुई; उसने जिस शठताका अवलम्वन कर शिवाजीके मारनेकी चेष्टा की थी, चतुर महाराष्ट्र उस शठताका योग्य प्रतिफल दे उसकी आखोंमे धूल डाल आप वेखटके वहांसे भाग खड़ाहुआ। औरंगज़ेब जानगया कि जयसिंहने जानकर

भी उसको वाधा न दी। इससे वह अमेरराजके ऊपर अत्यन्त विरक्त हुआ और यकवारही उसने यशवंतको अपना प्रतिनिधि किया। सुयोग पाकर राजा यशवंतसिंह अपने कार्यसाधनमें तत्पर हुए और वादशाहके विपरीत मुअज्जमके साथ नानाप्रकारके कपट-जाल करने लगे। उसकी कार्रवाई देखकर चतुर औरंगज़ेवके मनमें अनेको प्रकारके संदेह उत्पन्न हुए। उन सव सन्देहोसे चलायमान होकर उसने राठौरराजको भी पदच्युत करदिया।

अनंतर दिलेरखाँ प्रधान सेनापतिके पदपर नियत हो वादशाहकी आज्ञा पालनमे तत्पर हुआ। उच्चपदके लोभसे गर्वित हो उसने औरंगावादमे प्रवेश किया। जिस-दिन वह उस नये वसे हुए नगरमे पहुँचा उसी दिन उसको ऐसे घोर संकटमें फंसना पडा कि यदि गुप्त दूतद्वारा अपनी विपदकी वार्ता सुनते ही वह पीछे न लौटआता तो निश्चय ही उसको वहांपर अपना प्राण देना पड़ता। किन्तु उस नगरको छोड़ भागनेपर भी वह संकटसे न छूटसका। राजा यशवंत और मुअज्ज़म भी प्रचंड दावानलकी समान उसके पीछे २ चले। वह प्राणोके भयसे नर्मदाकी ओर भगा। मुअज्ज़म और यशवंत भी शीघ्रतापूर्वक चलकर वही पहुँचे। अपने सेनापतिको इस विपम संकटसे वचानेका उपाय न देख औरंगज़ेवने राठौरराजको उस स्थानसे हटाया और उसको गुजरातका सूबेदार नियतकर शीघ्र ही वहां जानेका फर्मान भेजा। यशवंतसिंह उसकी आज्ञाको न टालसका, परन्तु अहमदावादमे पहुँचते ही उसने देखा कि शठ औरंगज़ेवने उसके साथ शठता कर उसे धोखा दिया है। यशवंतने समझलिया कि मैने अपने ही दोपसे धोखा खाया। यदि सोच समझकर काम करता तो कभी न धोखा खाता। जो हो अपने ठगेजानेके विपय पर विचार करते २ वह सम्वत् १७२६ सन् १६७० ई० मे अपने नगरकी ओर रवाना हुआ और नियत समयमे वहां पहुँचकर अपने वदला लेनेके उपाय ढूंढ़ने लगा।

दुष्ट निष्ठुर औरंगजेवने पहिले कहेहुए विपयोमे राठौरराजको धोखा देनेकी चेष्टा की थी और यदि भाटोकी वातपर विश्वास कियाजाय तो भलीभाँतिसे जानपड़ेगा कि इन सव चेष्टाओके पूरा करनेमे उसने अति नीच और हिंसक उपायोका अवलम्वन किया था। उसके विद्वेपका पात्र हो यशवंतने अनेक समयमे अनेक विपदोमे पड़कर भी अपने विश्वासी और भक्त सामन्तोकी सहायतासे उन विपदोसे छुटकारा पाया था और उस दुष्टके कौशलजालको छिन्नभिन्न करडालता था। किन्तु अन्तमे वह जिस चतुरताके जालमे जड़ित हुआ उससे फिर छुटकारा न पासका। अन्तमे "औरंगज़ेवने विश्वासघातसे अपने अभिप्रायको न पूरा करसकनेके कारण उसने उसके गलेमें कल्पित वंधुवा संवंधकी फॉस डाल उसको अटकके पास मरनेको भेजदिया।"

औरंगजेव जानगया था कि राजा यशवंत उसका परम शत्रु है। जानवूझकर उसकी शत्रुताका वदला देनेके निमित्त उसने नानाप्रकारके घातक उपायोके करनेमे कसर न की, किन्तु वह सव उपाय इस समय व्यर्थ होगये। इसलिये इस समय उसने

उसको ऐसे स्थानपर भेजनेकी इच्छा की कि जहांसे यशवंत सैकड़ो चेष्टा करने पर भी उसका अनिष्ट न करसके। मन ही मनमे इस प्रकार स्थिर कर औरंगज़ेव अवसर ढूंढ़ने लगा। सौभाग्यवश वह अवसर भी आप ही आप आ उपस्थित हुआ। उसी समय दुष्ट अफ़ग़ानोंने विद्रोही हो कावुल राज्यमे घोर उत्पात उत्पन्न करदिया। औरंगज़ेवने इस उत्पातके होनेसे अत्यन्त प्रसन्नहो राजा यशवंतको वड़े मान सन्मान से उस उत्पातके दवानेको कावुलकी सीमा पर भेजा। राजा यशवंत उसके मान सन्मान और वड़ाईकी वातोंमें ऐसा आगया कि उसको वीती वातोंपर विचार न हुआ। अतएव वह दुष्ट अफ़ग़ानोंको दमन करनेके निमित्त दूरदेश जानेको सम्मत हुआ। थोड़े ही दिनोंके वीचमे जानेकी सव तैयारी पूरी हुई। उस समय यशवंतने अपने जेठे पुत्र पृथ्वी सिंहके हाथमें राजकार्यका भार दे स्त्री और कुटुम्बियो तथा मारवाड़के वड़े २ वीरोंको साथ लेकर वह कावुलकी ओर चला। हाय! उस ही महायात्रासे फिर वह अपने देशको न लौटसका।

मारवाड़के भाटग्रन्थमे लिखा है कि औरंगजेवने यशवन्तसिंहके उत्तराधिकारीके राजसभामें आनेका फ़र्मान भेजा। पृथ्वीसिंह उसकी आज्ञाको न टालसका। उसके सभामें पहुँचनेपर वादशाहने उसको वड़े आदर सन्मानसे लिया। नियमित रीतिके अनुसार पृथ्वीसिंह वादशाहके निकट ही आसन ग्रहण करता था। एक दिन वह सभामें पहुँचकर वादशाहको सलाम कर अपने आसनपर वैठने जाता था कि उसी समय औरंगजेवने कुछ हँसकर उसको वुलाया। राठौर राजकुमार उसके समीप जाय हाथजोड़ खड़ा होगया, तव वादशाहने दृढ़तापूर्वक उसके हाथ पकड़ धीरे २ कहा, "राठौर! सुना है कि इन भुजोंमें तुम अपने पिताके समान वल रखते हो, अच्छा इस समय तुम क्या करसकते हो?" पृथ्वीसिंहने उचित अभिमानके साथ उत्तर दिया "ईश्वर दिल्लीश्वर का कल्याण करे, वादशाह! जव साधारण राजा प्रजाके ऊपर आपका आश्रयरूपी हाथ फैलाते है तव उनकी इच्छाएँ पूरी होती है, किन्तु आज मेरे सौभाग्यवश जव आपने ही स्वयं अपने हाथोंसे इस सेवकके हाथ पकड़े है तव मुझे ऐसा जानपड़ता है कि मे समस्त पृथ्वीको जीत सकूंगा।" वात कहनेके साथ ही साथ प्रचंड वीरतासे मानो उसमें नया वल हो आया। उस समय वादशाह कहउठा कि, "देखते हो यह जवान दूसरा कुट्टन[२] है।" इस वातमें जो भीतर कुटिलभाव भरा था उसको पृथ्वीसिंह अवतक न जानसका, अतएव रीतिके अनुसार वह वादशाहके सामने ही उस खिलतको पहिन सलाम कर उस सभासे विदा हुआ।

हाय! वही दिन उसके उस उल्लासमय जीवनका अन्तिम दिन हुआ। राजसभा से वाहर होते ही अपने डेरेमें पहुँचते २ राजकुमार पृथ्वीसिंह अत्यन्त व्यथित हो उठा। उसके हृदयमें अत्यन्त ऐठन होनेलगी। इस दुःखसे पीड़ित होकर वह क्षणभर भी स्थिर न रहसका। उसका सम्पूर्ण मस्तक कांपने लगा और वह हाथ पैर फटफटाने लगा

(१) कवियोंने मुसलमान वादशाहोंको अश्वपतीके नामसे भी पुकारा है।

(२) यशवंतको औरंगज़ेव इसी नामसे पुकारता था।

धीरे २ उसके सब अंग निस्तब्ध और निस्तेज होगये। और वह सुन्दर स्वर्ण वर्ण मुख-मण्डल सुन्दर चम्पेकीसी मूर्त्ति मलीन होगई। यशवन्तके हृदयका आनन्द, राठौर कुलकी होनहार आशा भरोसाका लक्षराज-कुमार पृथ्वीसिंह विश्वासघाती पाखण्डी औरंगजेवकी हिंसकतासे आकालमें ही इस लोकसे चलबसो।

---

(१) मारवाड़के इतिहासोंमें पृथ्वीसिंहका इस तरहसे मरना नहीं पायाजाता।

(२) इस प्रकारके उपायोंसे जो शत्रुका नाश कियाजाता है, राजपूत उसका विलक्षण विश्वास करते हैं। राजपूत जातिके इतिहासमें ऐसे अनेकों उदाहरण पायेजाते हैं। उन सबमेंसे गन्नौरकी रानीका वृत्तान्त जो अत्यन्त मनोहर है यहांपर लिखाजाता है। जब गन्नौरका राजा मुसल्मानोंसे हारगया, तब वहांकी रानीने बहुत दिनोंतक मुसल्मानोंके हमलोंको रोका किन्तु उसका सेनाबल धीरे २ नाश होता गया इस कारण गन्नोरका एक २ किला शत्रुओंके हाथमें पड़ने लगा। परन्तु तौभी राजपूत कुलकमल वीरनारीने मुसल्मानोंको आत्मसमर्पण न किया। धीरे २ उसके सब किले छिन गये; अन्तमें अपनी आत्मरक्षाका कोई उपाय न देख वह अन्तिम आश्रयस्वरूप नर्मदाके किनारे बनेहुए एक दूसरे किलेमें भागगई; किन्तु दुष्ट मुसलमानोंने वहां भी उनका पीछा किया। वह वीरांगना नावसे उतरकर नर्मदाके किनारे आरहीथी कि उसी समय मुसल्मानोंकी सेनाने आकर उसपर आक्रमण किया। वह किसी प्रकारसे किलेमें वो प्रवेश करपाई किन्तु किलेके द्वारके बंद होते २ शत्रुसेना भी किलेके भीतर घुसगई और बचे बचाये राजपूतोंको मारडाला। गन्नौरकी रानी जैसी वीर थी वैसी ही स्वरूपवान्भी थी। उस समय दक्षिण देशमें उसकी समान स्वरूपवान् कोई भी स्त्री न थी। किन्तु यह असाधारण सुन्दरता ही उसका काल हुई। इसी रूपके लालचसे खिंचकर उसको अपनालेनेके अभिप्रायसे यवनराजने उसके राज्यपर हमला किया था। गन्नौरराज्यको जीत-कर यवनराजने दूतद्वारा वीरनारीको कहलाभेजा कि "प्यारी! तुम्हारा राज्य तुम्हींको लौटा दूंगा, तुम मेरे हृदयराज्यकी मालकिनी हो, मुझसे अपना विवाह करो। मैं तुम्हारा दास होकर रहूंगा।" इस पत्रके पढ़ते ही वीरनारीका समस्त शरीर क्रोधाग्निसे जल उठा; किन्तु वह क्या करे! यवनराज उस समय महलके नीचे उत्तर पानेकी आशासे बैठाहुआ था। दूसरा उपाय न देखकर वीरनारीने काम विमोहित यवनराजके प्रस्तावको स्वीकार किया और कहलाभेजा कि "मुझको दो घण्टेका समय देना होगा, मैं विवाह योग्य सब वस्त्र आभूषण तैयार करलूं, तब फिर तुम्हारे पास प्रस्तुत हो सकती हूं।"

दो घंटा बीतगये। गन्नौरकी रानी विवाहके योग्य सुन्दर सामग्रियोंसे सुसज्जित हो अपने गोलमहलमें जा बैठी। उसने यवनराजके पास भी व्याहके वस्त्र भेजे अस्तु वह यवन सरदार उन्हीं वस्त्रोंसे सुसज्जित हो कर मन मोहिनी रानीके सामने जा पहुंचा। वीरनारीको देखते ही उसे ऐसा भ्रम हुआ कि मानो वह विद्याधरी है। दोनोंमें नानाप्रकारकी बातें होने लगीं। यवनराज मोहित हो उस चित्तविनोदिनीके वचनामृतका पान करने लगा। उसके हृदयमें सुखकी अनेकों चिन्ताएं उठनेलगीं, किन्तु उसके हृदयमें अकस्मात् दारुण यंत्रणा भी उत्पन्न हुई उसका माथा घूमनेलगा और चारोंओर अंधकार दिखाई देनेलगा। वह उन्मत्तसा होकर अपने शरीरके वस्त्र फेंकनेलगा। "सब शरीर जलाजाता है" यह कहकर वह चिल्लानेलगा। तब उस वीरनारीने सम्बोधन करके कहा, "यवनराज! जानलो कि अब तुम्हारा अन्तिम काल आ पहुँचा, आज मेरा विवाह और काल एकसाथ

कुमार पृथ्वीसिंह यशवन्तकी आंखोकी पुतली और बुढ़ापेकी लकड़ी था। वह राठौर कुलका योग्य राजपुत्र, वीरकेशरी योधारावका योग्य वंशधर था। बूढ़े यशवंतने विचारा था कि अन्तसमयमे उसके हाथमें राठौरकुलका राज्यकार्य दे संसारसे विदा लूंगा, किन्तु अभाग्यके कारण उसकी वह इच्छा पूरी न हुई। पृथ्वीसिंह जवान होते ही दुष्ट औरंगजेवकी रोषाग्निमे पतंगेकी समान जलाया।

यशवंतका आशा भरोसा नष्ट होगया। अत्याचारीके प्रचंड अत्याचारोंको सहन करके भी जो हृदय इतने दिनोंतक अटूट था, आज वह इस पुत्रशोक रूप दारुण शैलके प्रहारसे सौ टुकड़े होगया। उसके मनमें यह विचार कभी भी न हुआ था कि पाखण्डी औरंगज़ेव उससे ऐसा बदला लेगा। तौ भी मनुष्यके अत्याचारोंको सह-कर वह जो कुछ दिनों जीवित रहसकता, सो निठुर यमने उसके बचेहुए दोनों पुत्र जगत् सिंह और दलथम्मनंको हरणकर उसको उन कईदिनभी न बचने दिया शोक; दुःख दारुण मनोवेदनासे भग्नहृदय राठौर राजने उस सुदूर हिन्दूकुशकी तराईमें सम्वत् १७३७–१६८१ ई० में परलोकको गमन किया। उसके मरनेके पहिले ही उसकी आशाका दीपक बुझगया था। उस महा प्रस्थानमें यात्रा करनेके समय वह ऐसे किसी उत्तराधिकारीको न रखगया कि जो उसकी उस शोचनीय मृत्युका बदला लेता, और औरंगज़ेवके प्रायश्चित्तका विधान करसकता।

जिस वर्ष राजा यशवंतने इस लोकसे गमन किया। महाराष्ट्रीय वीर शिवाजीका भी उसी वर्षमें कई महीनोंके उपरान्त परलोकवास हुआ। अतएव औरंगज़ेवने दोनों भयानक शत्रुओंसे छुटकारा पाया। इन दोनो महावीरोंसे वह साक्षात् यमकी समान भय मानता था। इसका विशेष प्रमाण उसके रोज़नामचेके देखनेसे पायाजाता है। मेवाड़ाधिपति वीरवर राणा राजसिंहके जीवनचरित्र लिखनेवालेने राठौरवीरके सम्बन्धमें

—ही होगा, तेरे अपवित्र ग्राससे क्योंकि साररत्न सतीत्व धनकी रक्षा करनेका और दूसरा उपाय न देख मैंने तुझे विपके वस्त्र पहननेको दिये हैं।" यह कहते २ वह राजपूतसती दुमंजिले मकानसे फांदकर नीचे खाईके गंभीर जलमें कूदपड़ी। कामपीड़ित दुष्ट यवनने भी शीघ्रही प्राण त्यागन किये

शत्रुके मारनेकी ऐसी गुप्त रीति यूरोपमें भी बहुत पुराने समयसे प्रचलित थी, हरक्यूलसके लेखमें इसका वर्णन पाया जाता है। वह कि जिसने डिजेनीटाको ज़हर वा विषसे लिपटी हुई कमीज़पर लपेटकर अग्निपर रखदिया। वास्तवमें इस विषका प्रभाव मसामोंमें होता होगा और गरमी की ऋतुमें जब कि एक पतला कुरता पहना जाता है अधिक हानि होतीहोगी। यद्यपि यह समझना कठिन है कि इस प्रकार मृत्यु क्यों होती है, परन्तु प्राचीन समयका विश्वास है इससे हमको भी विश्वास करना चाहिये।

(१) यह दलथंभन तो महाराज यशवन्तसिंहके मरे पीछे पैदा हुआ था उनके जीतेजी वह कैसे मरगया।

(२) हिन्दुकुशपहाड़ तो काबुल और बदख्शांके आगे बलखके पास है और महाराज यशवन्तका देहान्त खेबरके घाटेके नीचे जमरोद नाम स्थानमे हुआ था।

कहा है "यशवंत जवतक जीवित रहा, तवतक औरंगजेवका दीर्घ निस्वास एक दिनके लिये भी न थमा।

राजा यशवंतसिंहने सव समेत ४२ वर्ष राज्य किया था। वीरस्थान राजपूतानामें जिन समस्त स्वदेशप्रेमी महापुरुषोंने जन्म लिया था, जिनके जीवनचरित्र जीवित अक्षरोंमे आज भी प्रत्येक राजपूतके हृदयपटमे लिखे हैं, जिनकी अतिमानुष कीर्ति-कलाप आजभी राजस्थानके द्वार २ पर भाटोंद्वारा गायी जारही है, राठौरराज यशवंत-सिंह उन सवके मध्यमें एक ऊंचे आसनको प्राप्त होसकते है। यद्यपि यशवंतकी कार्यकुशलता ऊंची श्रेणीकी थी, किन्तु यदि वह उसके अमित भुजवल साहस और प्रतिष्ठाके समान होती तो वह दुष्ट औरंगजेवके प्रचंड शत्रुओंकी सहायतासे भारत-वर्षसे निश्चय ही मुग़लराज्यको उखाड़ देता। उसका जीवन अपूर्व घटनाओंसे परिपूर्ण था। नर्मदाके किनारे जिसदिन वह वृद्ध शाहजहांकी रक्षाके निमित्त अपने राठौरवीरोंको ले पितृद्रोही औरंगजेवके विरुद्ध अवतीर्ण हुआ, उसी दिनसे उसके जीवनके अन्तिम कालतक घटनाके ऊपर घटनास्रोतने पतित हो उसको दूर दूरान्तरमें विक्षिप्त किया उन स्रोत समूहोंको कभी वह अपने अमानुषिक शक्तिके प्रभावसे वशमे करता और कभी उनके भीषण वलसे थकित हो तृणकी समान तैरने लगता। किन्तु वह क्षण-भरके लिये भी व्याकुल नहीं हुआ। सहस्रों वाधा और विपत्तिये उठकर भी उसको उसकी इच्छासे न हटासकीं। वह जहांपर जिस प्रकारकी अवस्थामे गिरता वहीपर ही अपने प्रधान अभिप्रायके साधन करनेकी चेष्टा करता। यद्यपि वह शाहजहाँके सव पुत्रोंमेसे दाराको अधिक चाहता था, किन्तु ऐसा होनेसे क्या हुआ?—वह समस्त मुसल्मान जातिको हृदयसे घृणा करता था। जो मुसल्मान हिंन्दूधर्म और हिंदू स्वाधी-नताके प्रचंड शत्रु थे यशवंत उन्हे भलीप्रकारसे जानता था, इस कारण वह उनसे जन्मभर घृणा करता रहा और उसने अपनी शक्तिभर औरंगजेवके सर्वनाश करनेकी चेष्टा की, किन्तु अभाग्यवश उसकी वह चेष्टा फलवती न हुई। औरंगजेवके नर्मदा युद्धसे लेकर काकेशश पर्वतपर कर्कश पठानोंके युद्धतक उसने वड़े २ काम किये।

मुगल सिंहासनके लिये जवजव शाहजहाँके पुत्रोंमे झगड़ा हुआ तव २ चतुर यशवंतने उनमेसे किसी न किसी एक जनके पक्षका अवलम्वन किया उसके मनमें यह दृढ़ निश्चय था कि इस प्रकारके घरेलू झगड़ोंके होनेसे अन्तमे उन सभीका नाश होजायगा। नर्मदाके युद्धमें यदि वह वलके मदसे मतवाला हो वृथा समय न विताता तो निश्चय उसका वहुतकुछ श्रम फलीभूत होता। किन्तु इससे भी यशवंत निरुत्साह न हुआ। उसके हृदयके पर्तपर्तमे जो प्रवृत्ति मिली थी नर्मदाके किनारे व्यर्थ होनेपर भी उसका नाश न हुआ, वरन वही पराजय स्वीकार कर और भी प्रचंड हो उठी थी उसकी तीव्रता मानो और भी दूनी हो उठी थी। उस प्रचंड प्रवृत्तिकी साध पूर्ण करनेके निमित्त वह योग्य अवसर ढूंढ़ने लगा। जव खजवेमे परस्पर

(१) नर्मदा नहीं, सपरा।

के शत्रु दोनों शाहजादेंने भाग्यकी परीक्षा करनेको एक दूसरेके विरुद्ध तलवार धारण की;तभी उस घटनाको राठौरराजने अपने कार्य सिद्धिका योग्य अवसर कहकर आदरपूर्वक उसका सन्मान किया, किन्तु दाराके आलस्यने उसको उस सुयोग अवसरसे भी वंचित किया उसका सब कौशलजाल छिन्न भिन्न होगया।विजयी औरंगजेबने यह सब जानलिया, किन्तु वह कुछ न बोला । चतुर औरंगजेबके ऐसे आचरणोंसे वह उसपर संतुष्ट न हुआ, वरन उसकी घृणा और विद्वेप और भी वढगया, वदला लेनेकी प्यास अत्यन्त वढ़गई । उस वदला लेनेकी प्यासको शान्त करनेके निमित्त वह कोई सुयोग अवसर ढूँढ़नेलगा । औरंगजेबने जिस पदपर उसको अभिषिक्त किया, यशवन्त उस पदको ग्रहण कर अपनी कार्य सिद्धिके यत्नमें तत्पर हुआ । और प्रत्येक कार्यमें अपने स्वतंत्र विचार की गंध उठाई । क्रमशः उसके सब कार्योंकी आलोचना करनेपर उसके हृदयकी प्रचंड प्रवृत्तिका भलीप्रकारसे परिचय पाया जाता है। जिसके साथ लड़नेको भेजागया था उसी शिवाजीसे उसने भेंटकी । शिवाजीके साथ मिलकर कपटजाल किया; कारण कि शिवाजी भी मुगलराजका परम शत्रु था, शाइस्तांखांका माराजाना, दिलेरखांपर आक्रमण और पिताके विरुद्ध मुअज्ज़मका उभड़ना, यह एक २ कार्य उसके उस विकट वदला लेनेकी प्यासका प्रकाश्य उदाहरण है ।

यशवंतकी उस गूढ़ और प्रचंड प्रवृत्तिका विषय वादशाह औरंगजेवको भलीप्रकार विदित था, उसने जानलिया था कि कठिन वदला लेनेकी प्यास और विद्वेषद्वारा चलायमान हो राजा यशवन्तने उसके साथ समस्त जीवन बुरे आचरण किये हैं । किंतु वह क्या करे ? यह जान बूझकर की वह केवल अपने अभिप्रायके पूरे होनेके निमित्त उन सबको सहन करता जाता था । उसने सदैव यशवंतकी विद्वेषाग्निसे दूर रहनेकी चेष्टा की और सावधानीके साथ उसके सब कपटजालको छिन्न भिन्न कर वह प्रकाशमें उसके साथ सदाचरण करता रहा । वह जो यशवन्तका भीतर ही भीतर भय करता था इसीसे उसके सब कार्योंमें विलक्षणरीतिसे रद्दबदल होतेरहे । औरंगजेबने उसको ऊंचे २ पदोंमें अभिषिक्त किया गुजरात, दक्षिण, मालवा, अजमेर और काबुल इन एकएक प्रदेशमें क्रमशः वादशाहने उसको सूबेदार नियत किया, यह पद उसको कहीं स्वतन्त्ररूपसे कहीं सेनाध्यक्ष और कहीं किसी शाहजादेकी नीचे दियेगये थे । वादशाह की यह सब कृपाएं दूसरेके पक्षमें माननीय हो सकती थीं; किन्तु तेजस्वी राठौर राजाने उन सबको अपने अभिप्राय सिद्धिका प्रधान साधन स्वरूप ग्रहण किया था । उसके इस प्रकारके आचरणोंपर विचार करनेसे सहसा यही मालूम होता है कि वह एक विश्वासघातक जन था । परन्तु यदि उस वादशाहके चरित्रोंपर ध्यान दिया जाय तो साफ मालूम हो जाय कि यशवंत विश्वासघाती नहीं था, जिसने धर्मरक्षामें आत्म समर्पण करदिया उसको हम विश्वासघाती कभी नहीं कहसकते । यद्यपि यह बात

(१) शाइस्ताखां नहीं मारागया उसका बेटा मारागया था । शाइस्ताखां तो इस घटनाके बहुत वर्षों पीछे तक बंगालेमें सूबेदार रहा थो ।

सत्य है कि वह बादशाहके अधीन होकर उसीके विरुद्ध आचरण करतारहा, पग २ मे उसने उसके अनिष्टकी चेष्टा की, किन्तु ऐसा होनेपर भी वह विश्वासघातक नहीं होसकता। बादशाहके चरित्रोंके देखनेसे इस बातकी सत्यता प्राप्त होसकती है। बादशाह हिन्दूधर्म्मका परम शत्रु और हिन्दूजातिका परम विरोधी था। उसके अपवित्र ग्राससे अपने जातिके गौरव पितृपुरुषोके सनातनधर्मकी रक्षा करनेके निमित्त ही राजा यशवंतने इन सब उपायोंका अवलम्बन किया था, यह क्या विश्वासघातकता है? विश्वासघाकता करना किसे कहते हैं? औरंगज़ेबने विश्वास करके यशवंतको किसी बड़े काममें नहीं नियुक्त किया, यद्यपि उसने राठौरराजको बड़े २ पदोपर नियत किया था, और उसको बड़े २ सूबोका सूबेदार किया था; किन्तु यह सब उसने विश्वास करके नही किया था। क्रमशः उसके आचरणेके देखनेसे भलीभांति प्रतीत होता है कि उसने एक दिनके भी 'निमित्त यशवंतका विश्वास नहीं किया। वह यशवंतको भलीप्रकार पहिचानता था, और यह भी जानता था कि राठौरराज अवसर पाते ही बिना मेरा अनिष्ट किये न मानेगा; फिर जो उसने उसको ऊंचे २ पदोपर नियत किया था तो केवल उसको अपने अधीन रखनेके निमित्त, उसके मनमे यही गुप्त इच्छा थी कि समय पाते ही उसको कमलकी समान तोड़ मरोड़ डालूंगा। इसी इच्छाके पूरी होनेके निमित्त उसने बराबर चेष्टा की, किन्तु यशवंतकी सावधानीके कारण उसकी वह समस्त चेष्टाए निष्फल होगई। यह सब सावधानियां विश्वास घातकता नही हैं यह केवल शठके साथ शठताका आचरण करना है।

यशवन्तसिंहका जीवनचरित्र एक असाधारण, प्रकारका है और उनकी पूरी जीवनीसे पूरे २ वृत्तान्त प्रगट हो सकते है। जिससे उस समयके रहस्यजनक रहन सहन और प्रत्येक प्रणालीका चरित्र चित्रित होसकता है। इसमें सन्देह नही कि कभी २ यशवन्तसिंह बादशाहके उन सलूकोसे जो वह उसके पुरुषार्थ देखने निमित्त करता था आश्चर्यमे आजाता था और जब कभी उसके साथी राजकुमार बादशाहके कृपापात्र बनना चाहते थे, तो उस समय राजपूतानेके राजकुमारोमे यशवन्त अग्रणी समझा जाता था। इसी प्रकार इन विवादोमे दोनोका इतना समय व्यतीत होगया जो मनुष्य-जीवनके लिये पूरा होता है। औरंगज़ेबका भी यह काम कुछकम प्रशंसाके योग्य नहीं है कि इतने दीर्घ समयतक उसने यशवन्तसिंहके घृणास्पद विचारोको काममे नहीं लानेदिया, परन्तु इसका प्रयोजन उसका अभिमान था, और एक कारण यह था कि बादशाहके महाबलको वह अपनी राजधानीमे काममे लायेथे और बादशाहने इन राजकुमारोको सूबेदार बनाकर गुलाम व अधीन करलिया था, नही तो उसके सहयोगी आमेर नरेश जयसिंह मारवाड़नरेश राना राजसिंह और शिवाजी यह सब मिलकर अपने जातिशत्रु औरगज़ेबको तहसनहस करदेते। यदि यशवन्तसिंह उतने दिली सदमोपर संतोष करता जो उसने दुष्ट औरगज़ेबके दिलपर पहुंचाये थे तो उसको सफलता होती, क्योंकि बेगमातके महलोमे भी औरंगज़ेबके आखोके सामने यशवन्तकी मूर्ति विराजमान

रहती थी; परन्तु उसके पुत्रका प्राणघात और उसके निरपराध वंशके साथ पशु-व्यवहार करनेसे प्रगट है कि वादशाहको कितना भय यशवंतसे रहता था। राठौरवीर यशवंतसिंहके मरनेके उपरान्त उसके शोकार्त कुटुम्बियोको औरंगजेवने जिस प्रकार घोररूपसे दुःखित किया उसका वृत्तान्त और उसके साथकी घटनाओका वर्णन करनेके पहिले हम परमविश्वस्त राठौरसरदारोंके दो एक वर्णन लिखते हैं। जो सामन्त औरंगजेवके विरुद्ध राजा यशवंतके निमित्त प्रसन्नतापूर्वक सहायता देनेमे तत्पर हुए थे उनमेंसे केवल नाहरराँवकी जीवनी उन सबके उदाहरणस्वरूप गृहीत होसकती है नाहरराव प्रसिद्ध कुम्पावत सम्प्रदायका शिरोमणी था। वही सब राठौर सर्दारोंके बीचमें श्रेष्ठ था। आशोप उसकी आदि भूमिसम्पत्ति थी, उसका आदि नाम मुकुन्ददास था;

नाहरखां नाम तो केवल वादशाहका दियाहुआ था। इसकी योग्यता वीरता और वहदुरीसे यशवन्तके प्राणघातके उपाय निरर्थक होजाते थे। किस प्रकार उसको यह नाम प्राप्त हुआ था उसका वर्णन नीचे लिखाजाता है। इसके पास एक शाही अहदीकी मार्फत वादशाहने एक पैगाम भेजा, इसने उसका उत्तर वड़ी वीरतासे अपमान जनक शब्दोंमे दिया इस कारण वह निष्ठुर वादशाह उस्से अप्रसन्न हुआ और उसके दंडस्वरूपमे उसको एक प्रचंड व्याघ्रके पिंजरेमें नंगे वदन और विना हथियार लेकर जानेकी आज्ञा दी। इस कठोर आज्ञाके सुनते ही तेजस्वी मुकुन्ददास कुछ भी भयभीत न हुआ वरन हँसते २ उस भीषण वाघके समीप जा पहुँचा; उसने देखा कि वह भयानक वाघ गर्व सहित इधर उधर पैर वदलताहुआ पिंजरेके भीतर फिररहा है। उसके सामने पहुँचते ही राठौर सरदारने गर्वसहित उससे सम्बोधन करके कहा, "रे यवनके वाघ! आ, यशवन्तके वाघके सामने हो" मुकुन्ददासके दोनो नेत्रोसे आगकी लपटें निकल रहीं थीं। उसकी ऐसी भारी ललकार सुनकर वाघ चौकन्ना हुआ और पूँछ फुलाकर विकराल गर्जन करताहुआ शत्रुकी ओर देखने लगा। अग्निसे जाज्वल्यमान चारोंनेत्र परस्पर मिले; थोड़े ही देरके उपरान्त वाघ मुख फिराकर मुकुन्ददासके सामनेसे चलागया। व्याघ्रको भागताहुआ देख पराक्रमी राठौरसर्दार ऊँचे स्वरसे कहउठा "यह देखो, वाघ साहस करके भी मेरे साथ युद्ध न करसका, रणसे भागेहुए शत्रुपर आक्रमण करना राजपूत धर्म्मके विरुद्ध है।" ऐसी अनोखी घटना देखकर सब देखनेवाले वज्रसे मारेहुएकी समान खड़े रहे। यहांतक कि औरंगजेवका पाषाण हृदय भी विस्मय रससे पिघलगया। उसी समयसे उसने उसका नाम नाहरखाँ, (वाघपति) रखकर उसे वहुतसा इनाम दिया और अत्यन्त प्रसन्न होकर पूछा "राठौर! इस असीम वाहुवलके अधिकारी होनेके निमित्त तुम्हारे कितने पुत्र उत्पन्न हुए?" नाहरने कुछेक हँसकर उत्तर दिया "वादशाह! जब आपने मुझको मेरी स्त्री परिवारसे जुदा कर अटकके पार पश्चिमओर भेजदिया, तब मेरे किस प्रकार पुत्र होसकते हैं?" तेजस्वी मुकुन्ददासके इस निर्भय वाक्यको

(१) सही नाम नाहरखान है यह कूँपावत सरदार था।

सुनकर सभी चमत्कृत होगये। बादशाह भी मनमे कुछ क्षुभित हुआ, किंतु उससे कुछ कह न सका। इस प्रकार राठौरवीर मुकुन्ददासको नाहरखाँकी उपाधि प्राप्त हुई थी।

नाहरखांके इसी प्रकारके निर्भय और तेजोव्यंजक वाक्योद्वारा एकवार शाहज़ादा उससे अप्रसन्न भी होगया था। एक समय राजकुमारने तमाशा देखनेके निमित्त नाहरखाँ से कहा "राठौरवीर ? मैंने आपकी रणदक्षताका विशेप परिचय पाया है, किन्तु आपकी एक और क्रीड़ाके देखनेकी मेरी अत्यन्त इच्छा है। आप क्या घोड़ेको सरपट दौड़ातेहुए उस दौड़तेहुए घोड़ेकी पीठसे एक लम्बी पेड़की डालीको पकड़ उसमे झूल सकतेहो ?" ऐसी क्रीड़ामे वल और फुर्ती दोनो ही की आवश्यकता है। किन्तु ऐसी क्रीड़ामे वहुतसे अकृत कार्य हो गिरते रहते हैं। अनेक राजपूतोंकी ऐसी क्रीड़ामें विशेप आसक्ति देखीजाती है। जो हो राजकुमारकी वातके सनुते ही तेजस्वी नाहरने घमंडसहित उत्तर दिया "मैं वंदर नहीं हूँ, राजपूत हूं,–राजपूतोंकी जो कुछ क्रीड़ाएं है सव तलवारकी सहायतासे होती हैं, योग्य शत्रु पानेपर उसके साथ तलवारका खेल दिखासकता हूं।" शाहज़ादेने जो इच्छाकी थी वह पूरी न हुई। इससे वह अत्यन्त क्रोधित हुआ किन्तु प्रकाशमे कुछ कह न सका वह मन ही मनमे मुकुन्ददासके सर्वनाशकी इच्छा कर उसको सिरोहीके देवड़ा राजा सुरतानके विरुद्ध भेजा। वीर नाहरखां इससे कुछ भी भयभीत न हुआ वरन् दूने उत्साहके साथ शाहज़ादेकी आज्ञा पालनमे यत्नवान् हुआ। इस युद्धमे वह राठौरराजकी समस्त सेनाको लेगया था।

मुकुन्दके युद्धकी तैयारी सुनकर सुरतानने युद्धकी आशाको छोड़ अपने दुर्गम गिरिशिखरमे आश्रय ग्रहण किया। उसने विचारा था कि शत्रु इस दुर्गम स्थलमे प्रवेश कर उसपर आक्रमण नहीं कर सकते। इस आशासे धैर्य्यवान हो वह निश्चिन्त मनसे वहां आराम करनेलगा। किन्तु राठौरवीर मुकुन्ददासकी प्रचंड विद्वेपाग्निके तेजने उसके रक्षित घरमे भी प्रवेश कर उसको शीघ्र जला डाला। एक दिन रात्रिके समय सुरतान अपने दुर्गमे निश्चिन्त होकर सो रहा था, समस्त किलेमे सन्नाटा छायाहुआ था केवल एकओर एक पहरेदार दीवारपर खड़ाहुआ थोड़ी२ देरमे चिल्ला रहा था। वीच२ मे दो चार सियारो और हिंसक प्राणियोंका शब्द सुन पड़ता था, कही झीनी२ हवासे पेडोके हिलते हुए पत्तोकी खड़खड़ाहट सुनाई देती थी। मुकुन्दने अपनी सेना लेकर सावधानोंके साथ दीवारके ऊपर चढ़ उस अकेले जागतेहुए पहरेदारको मारा और तदनन्तर सुरतानके घरमे जाय उसकी फैलीहुई पगड़ीसे शय्यासमेत उसे बांधकर अपनी सेनाके हाथमें अर्पण किया। जव राठौरसेना सुरतानको वंदी करके ले चली तव मुकुन्दने वड़ाभारी शब्द किया। उसको मेघकी समान गर्जनासे सव किला गूँज उठा और क्षणभरमे ही समस्त

---

(१) यह वड़ी असंगत कथा है क्योंकि देवड़ासुरतान वहुत पहले मरचुका था। नाहरखांके समयमें तो उसका पोता देवड़ा अखैराज सिरोहीका राव था।

देवड़ा सेना जाग उठी। जागते ही, वह अपने स्वामीपर विपत्ति आई जान सब इकट्ठे हो उसको छुड़ानेकी चेष्टा करनेलगे। किन्तु वीर मुकुन्ददासने बड़ीभारी गर्जना करके कहा "देवड़ा सेनिको! शांत हो, शांत हो, वृथा उद्यमकर अपने और अपने प्रभुके जीवनको न खोओ। यदि तुम मेरी वात मानोगे तो सुरतानके अंगमे काँटातक न लगैगा; मैं एकवार केवल राजाके निकटतक ले जाऊँगा और यदि मोहवश मेरे विरुद्ध कार्य करोगे तो इसी क्षण तुम्हारे स्वामीका शिर काटडालूंगा, निश्चय जानना कि इनका जीना मरना मेरी इच्छाके ऊपर निर्भर है। इस समय मै इनको कैसे निर्विघ्न वंदी करके ले चलाहूं यह दिखानेके निमित्त ही मैंने तुम्हैं जगाया।" इन तेजोव्यञ्जक वातोंके सुनते ही देवड़ासैन्यगण मंत्र और औषधिसे रुकेहुए पराक्रमी सॉपके समान स्थिर-भावसे खड़े रहगये, किसीको भी एकपग आगे वढ़नेका साहस न हुआ। राठौरवीर मुकुन्द वंदी सुरतानको ले प्रचंड पराक्रमसहित किलेसे वाहर निकला और राजा यशवंतके निकट पहुँच सुरतानको उसके हाथमे अर्पण किया।

राजा यशवंतने सिरोही राजको वादशाहके यहां लेजानेकी इच्छा प्रकाशकर उसको यह कहकर धीरज दिया कि "आपके गौरव व सन्मानमें कुछ भी फर्क न आने पावैगा। आप केवल एकवार वादशाहसे मुलाकात करैं"। देवड़ाराज इसपर राजी हुआ। इसी अनुसार वह योग्य कर्म्मचारीके साथ राजमहलमे पहुँचा। राजाको राजमहलमे लेजानेके पहिले कर्मचारियोंने उससे कहा "देखो वादशाहको सलाम करना न भूलजाना विना उन्हैं सलाम किये कोई नही जासकता"। यह वात तेजस्वी सुरतानके हृदयमे वज्रकी समान लगी। उसने निर्भय मनसे उत्तर दिया "मेरा जीवन वादशाहके हाथमें है किन्तु मेरा सन्मान मेरे ही निकट है; भाग्यमें जो होगा वही होगा, मैं कभी मनुष्यको मस्तक न झुकाऊंगा इस जीवनमे यह कभी नही होसकता"। राजा यशवंतने प्रतिज्ञा की थी कि वह सुरतानको अपमानित न होनेदेगा, इस कारण वह कर्म्मचारी उसका सन्मान न नष्ट करसके। किन्तु यह विचारकर कि वादशाहके निकट माथा झुकाना ही पड़ेगा, उन्होंने अपने अभिप्रायको यत्नपूर्वक पूरा किया। जिस मार्गसे प्रत्येक आदमी वादशाहसे मिलने जाता था उस मार्गसे न लेजाकर उसे एक अति छोटी खिड़कीसे लेगये। वह खिड़की पृथ्वीसे जानूकी वरावर ऊंची थी। कर्मचारियोंके इस गूढ़ अभिप्रायको न समझकर देवड़ाराजने उसी खिड़कीसे सभामे प्रवेश किया। इससे उसको आगे पैर वढ़ाय फिर मस्तकको निकाल उसमे प्रवेश करना पड़ा यही उसका यथार्थ अभिवादन कहकर स्वीकार हुआ। उसकी तेजस्विनी आकृतिको देख तथा वीरोचित व्यवहार, स्वाधीनताकी रक्षाका कठोर उद्यम और यशवंतकी प्रतिज्ञाका वृत्तान्त स्मरण कर वादशाहने उसको केवल क्षमा ही नहीं किया वरन् उसकी इच्छानुसार जागीर देनेको भी वह सम्मत हुआ। यद्यपि वादशाहने उसपर उदारता प्रकाश की किन्तु उस उदारताके भीतर जो एक गुप्त रहस्य छिपा था उसको देवड़ाराजने उसी समय जानलिया। वह भलीभांति जानगया कि वादशाहने

उसको अपने अधीन सामन्तराजाओंमे शामिल करनेकी इच्छा की है, इस अभिप्रायके समझते ही तेजस्वी सुरतानने निर्भय होकर कहा "वादशाह। मेरे अचल गढ़के' समान और क्या भूमि वा रत्न दान करसकतेहो ?—मैं और कुछ नहीं चाहता केवल यही कि आप मेरा राज्य मुझे दे दें। और मैं वहां चलाजाऊं।

तेजस्वी देवड़ाराजकी इस वातसे वादशाह कुछ भी क्षुभित वा असंतुष्ट न हुआ वरन् उसने प्रसन्नतापूर्वक उसकी वातको स्वीकार किया। उसे आवूकेकिलेको जानेकी आज्ञा दी। सुरतान अपने अचल गढ़को लौट आया। उस दिन उस सभामे वैठेहुए समस्त राजाओंके सामने उसे जो सन्मान प्राप्त हुआ, उससे वह वंचित न हुआ। उसकी उस तेजस्विता, उस निर्भयता, उस स्वाधीनप्रियताके अमृतमय फलको उसके वंशधर गण आज भी निर्विघ्नतासे भोग करते हैं और अपनेको स्वाधीन समझते हैं।

राठौरवीर नाहरखांको तेजस्वी सामन्तोके वीचमे उदाहरणकी भाँति ग्रहण किया जा सकता है। यह लोग स्वभावसे ही निर्भय और तेजस्वी होते हैं। राजभक्ति इनके रोम २ मे जड़ी रहती है। स्वदेशके उपकारके निमित्त राठोरकुलकी गौरवगरिमाकी रक्षा करनेके निमित्त यह प्रसन्नतासे अपने प्राणोको देसकते है। इनके प्राण वलिदेने और जाति प्रियताका एक प्रदीप्त उदाहरण आगेके अध्यायमे दिखलावेगे।

---

(१) आवू और शिरोहीके राजाओंके प्रसिद्ध किलेका नाम अचलगढ़ है।

(२) यह कथा निरी गप्पाष्टक है इसका कोई अंश इतिहाससे सिद्ध नहीं है, जिसने इसको गढ़ा है वह इतिहास कुछ नही जानता था। सुरतान महाराज जसवन्तसिंहके समयमें क्या इनके वापके समयमें भी जिन्दा नहीं था। फिर नाहरखा उसको कहासे पकड़लाया और वादशाही दर्वार किसीका घर नहीं था कि जिसके दरवाज़ेमेसे सुलतान टांग आगे करके निकलता वहाँ तो जयपुर जोधपुरके राजाओंके भी शिर झुका करते थे, सुरतान किस गिनतीमें था जो वहाँ वुलाया जाता और ऐसे यमदण्डसे जाता। सिरोहीवाले तो हमेशा जयपुर जाधपुरके अधीन रहे हैं। टाडूसाहवको ऐसी गप्पसप्प कथाएं मूर्ख चारण भाटोकी गढ़ीहुई वहुत पसन्द थी इसीसे उन्होने उनको खूव घुमाघुमाकर अपनी कितावमें वड़े आनन्दपूर्वक लिखा है और सच झूठका कुछ निर्णय नहीं किया। एसी निर्मूल कथाओंका गढ़न आरम्भ पृथ्वीराज रासेसे हुआ है जो आजतक चली आती है। चारण भाटोकी इन वातोंसे भोलेभाले राजपूतोंकी सरकारोकी खूव वनआई है।

सप्तम अध्याय ७.

यशवंतकी मृत्युसे उसकी पटरानीके सती होनेका उद्योग करना और सर्दारोंका उसे निवारण करना; राजाके साथ अन्यान्य रानियोंका सती होना; चन्द्रावतीका मंडोरमें सती होना; यशवंत की मृत्युसे सबको खेद; अजितका जन्मग्रहण; यशवंतके परिवार और सामन्तोंका काबुलसे मारवाड़को लौटना; औरंगज़ेबद्वारा उनका मार्गमें रोकाजाना, अजीतसिंहकृत औरंगज़ेबकी प्रार्थना; साथवाली स्त्रियोंको मारकर सर्दारोंकी आत्मरक्षा; बालक राजपुत्रकी जीवन रक्षा; ईंदागण द्वारा मंडोराधिकार; उनको दूर करना; औरंगज़ेबका मारवाड़पर आक्रमण करना और लूट करना; बड़े२ नगरोंका नाश करना; हिन्दुओंके मंदिर आदिको तोड़कर राठौरोंको धर्म्म छोड़नेकी आज्ञा देना; उसके इस प्रस्तावकी अयोक्तिता; जिजियाकर स्थापन; औरंगज़ेबके विरुद्ध राठौर और शिशोदियोंका एक होकर कपटजाल करना; युद्धके उपरान्त मेड़तिया सम्प्रदायकी वीरता; नाडोलमें राजपूतोंका युद्ध; माराजाना; राजपूतोंके विरुद्ध युद्धमें अकबरका अनुमोदन; संधिबंधन; अकबरको बादशाह कहकर राजपूतोंका ज़ाहिर करना; तैव्वरखांकी विश्वासघातकता और मृत्यु; अकबरका भागकर राजपूतोंकी शरणमें जाना; अकबरकी रक्षा करते २ दुर्गादासका दक्षिणमें जाना; सोनगका राठौर सेनाको चलाना; जोधपुरमें युद्ध; सोजतमें युद्ध; विशूचिका और महामारीका होना; औरंगज़ेबको संधिकी प्रार्थना करना; सोनगकी संधिमें अनुमोदन; सोनगकी मृत्यु; औरंगज़ेबका संधिसंधान; युद्धनिर्वाहका भार आज़मके अर्पण करना; मारवाड़में सर्वत्र मुसल्मान सेनाका फैलना; अवेली पर्वतमें राठौरोंका निवास; स्थान २ पर असंख्य युद्धविग्रह और अगणित प्राणियोंका नाश; राठौरोंके साथ भाटोका मिलाप; मेड़तिया सर्दारोंका अन्यायसे माराजाना; सिवानेका अवरोध; मुसल्मान सेनाका नाश; नूरअली-द्वारा रुलानीजातिकी स्त्रियोंका हरण और उसका माराजाना; सांभरमें यवनसेनाका संहार; राजपूतों द्वारा जालौरका रोकाजाना।

पुत्रशोककी शोकाग्निमें आत्मजीवनकी आहुति दे जिसदिन महाराज यशवंतसिंहने इस लोकसे विदा ली, जिसदिन पापी औरंगज़ेबका एक कांटा उखड़गया, उसी दिनसे भारतका एक उज्ज्वल नक्षत्र अनंतकाल सागरमें डूब गया भारतका भाग्य गगनकालके मेघजालमें आवृत्त होगया और समस्त हिन्दू समाज घोर विषादमें व्याकुल होगई। यशवंतकी पटरानी प्राणपतिके शोकसे व्याकुल हो उसके साथ सती होनेको तयार हुई। शीघ्र ही प्रशस्त चिता सजाई गई। शोकातुर रानीने स्वामीके मृतक देहको ले चितापर बैठनेका उद्योग किया। वह उस समय सात महीनेकी गर्भवती थी;—मारवाड़का होनहार उत्तराधिकारी अजीत उस समय सीपके भीतर रहेहुए मोतीकी समान उसके पवित्र गर्भमें[1] था। उस समय उसका सती होना अयोग्य और पाप विचार कर कूपावत् गोत्रीय ऊदाने उसे सती होनेसे रोकनेकी चेष्टा की। किन्तु सतीने उसके निवेदनको स्वीकार न किया। उसकी दृढ़ प्रतिज्ञा देख

---

(१) पटरानी उनके साथमें नहीं थी, दूसरी दो छोटी रानियाँ जादमजी और नरूकीजी साथमें थी आर दोनों ही गर्भवती थीं।

राठौर सर्दार अत्यन्त शोकातुर हुए। उन्होंने सोचा कि विपुल राठौरकुल आज निर्मूल हुआ चाहता है, अब महाराज यशवंतके वंशकी रक्षा कौन करेगा? उसके जो कईएक पुत्र हुए थे वे सब अकालमृत्युके मुखमे पतित होगये; उसकी स्त्रीके गर्भमे रहेहुए बालकपर आशा भरोसा रखकर राठौरसर्दार उसके मृत्यु शोकको बहुतकुछ भुला-सके थे; किन्तु इस समय रानी भी उस आशाके निर्मूल करनेको तैयार है। तब फिर कौन यशवंतके सन्मान व गौरवकी रक्षा करेगा? कौन राठौरकुलका राज्यकार्य कर दुष्ट औरंगज़ेबके पापाचरणोका योग्य प्रायश्चित्तविधान करेगा?—यह सब चिन्ताएं शीघ्रता-पूर्वक ऊदा कूंपावत सर्दारके मनमे उदित हुई। और जब उसने अपने विनयको व्यर्थ देखा तब अन्तमे उसने बलपूर्वक उसको सती होनेसे निवृत्त किया।

यद्यपि यशवंतकी पटरानी सती न होसकी किन्तु राजाकी अन्यान्य स्त्रियें उसकी मृतदेहके साथ सती होगई। इस समयमे उसकी दूसरी रानी चन्द्रावती मंडोर नगरमे रहती थी। प्राणपतिके मरनेका समाचार पाते ही उसने भी राजाकी एक पगड़ी ले जलतीहुई चितामे प्रवेश करके शरीर त्यागकिया। जो यशवन्त इतने दिनोतक अपनी शक्तिभर सनातन हिन्दूधर्म्मकी रक्षा करता आया था, उसको आज मराहुआ देख समस्त हिन्दूसमाज अत्यन्त शोकसे व्याकुल होगया। राज्यके छोटे वड़े, स्त्री पुरुष सभीने हँसी दिल्लगी और भोगविलास छोड़ शोक करना आरम्भ किया। आज मारवाड़ गम्भीर शोकान्धकारसे ढकाहुआ है। आज यहां सब स्थानोपर गम्भीर शून्यता और स्थिरता तथा उदासीनता छाईहुई है। यहांके मन्दिरोमे अब घंटा नही बजता, सूर्य्योदय और सन्ध्याकालमे अब घर २ शंख नहीं सुनाई देते। मानो समस्त मारवाड़में एक युगान्तर उपस्थित है राज्यके सब मनुष्य भयभीत और निराश हैं। कोई २ तो भयसे व्याकुल हो आत्मरक्षाके निमित्त मुसल्मान धर्म्मका अवलम्बन करनेलगे; किसी २ ब्राह्मणने भी सनातन धर्मको छोड़कर मुसल्मानोके धर्म व नीतिके सीखनेमें चित्त लगाया।

यशवन्तकी विधवा रानीसे यथासमय एक पुत्र उत्पन्न हुआ। सबकी सम्मतिके अनुसार उस नये उत्पन्नहुए पुत्रका नाम अजित रक्खागया। प्रसवका दुःख जब दूर हुआ और रानीने अपनेको चलने फिरनेमे शक्तिमती समझा, तब राठौर सर्दार उसको राठौर राजपुत्रको राजकुमारियोको तथा राजपरिवारके अन्तर्गत अन्यान्य मनुष्योको साथ ले अपने देशकी ओर चले; किन्तु हिंसक औरंगजेबने उनको सुखसे घरको न आने दिया। यशवन्तके जीवितकालमे भी बदला ले वह पापी उसकी मृत देहमे खड्गाघात करनेपर उद्यत हुआ। उसके एकमात्र वंशधर राजकुमार अजितके छीन लेनेका उसने उद्योग किया। जिस समय राठौरसर्दार परिवार समेत दिल्लीमे आये कि उसी समयमें निर्दयी मुग़ल बादशाहने आज्ञा दी कि राजकुमारको मेरे हवाले करदो। उसने सामंतोको नानाप्रकारके लोभ दिखाये, उसने उनसे कहा कि "यदि तुम राजपुत्रको मुझे देदोगे तो मैं समस्त मारवाड़ तुमको बांटदूंगा।" औरंगजेबने यह न जाना कि इसप्रकारके लाखो मारवाड

यहाँतक कि, इन्द्रकी अमरावतीके समान एक २ इन्द्रपुरी भी उनको देनेपर वह प्राण जानेतक अपने राजपुत्रको शत्रुके हाथमें न देंगे। उसकी इस पापकथाके सुनते ही वे सरदार अत्यन्त क्रोध और हिंसासे एकवारगी उन्मत्त हो उठे और अहंकारसहित मेघके समान गंभीर स्वरसे उन्होंने उत्तर दिया "हमारी मातृभूमि हमारी अस्थिमज्जाके साथ मिली हुई और नस २ में जड़ित है; आज वही अस्थि मज्जा और नसें उस जन्मभूमि और हमारे राजाकी रक्षा करेंगे।"

रोषसे उन्मत्तहुए सर्दार "आमखास" को छोड़कर शीघ्रतापूर्वक अपने २ डेरोंमें आए। उनके डेरोंको शीघ्र ही यवन सेनाने घेर लिया। पाखण्डी औरंगज़ेबकी ऐसी विश्वासघातकतासे राठौरवीर अत्यन्त क्रोधित हुए। किन्तु ऐसे आपत्तिकालमें क्रोधसे अधीर होनेपर सब ही नष्ट होगा; ऐसा विचारकर उन्होने धैर्य धारण किया और राजपुत्रके जीवनकी रक्षाके निमित्त वे कोई सदुपाय ढूँढ़ने लगे। उन्होंने अपनी तीक्ष्ण बुद्धिसे शीघ्र ही उपाय भी सोच लिया। सर्दारगण राजधानीमें आनेवाले हिन्दुओंको मिष्टान्न भेंटमें देनेके बहानेसे अनेक संदेश और अनेक प्रकारके पकवान चारोंओरको भेजने लगे वह सब पकवान जिस टोकरेमें जानेलगे उनमेंसे एकमें राजकुमार अजितको भी गुप्त करदिया। इस बार राठौरवीर अपनी जातिके सन्मान रक्षाके निमित्त दृढ़प्रतिज्ञ हुए। नियमित पूजा आदिकी क्रिया समाप्तकर सबोंने दूनी २ अफीम खाई और अपने २ रणतुरंगोंपर बैठकर अपनी शक्तिभर राठौलकुलकी गौरवगरिमाकी रक्षा करनेमें वे उद्यत हुए। एक ही समयमें पांच प्रचंड वीर रणछोड़ गोविन्ददास, रघुपुत्र दारावत, चन्द्रभान निर्भीक, उदावत भारमल, और सुजावत् रघुनाथ, दारुण रोष और हिंसासे उन्मत्तहो गम्भीर स्वरसे कह उठे "आओ, वीरो! आओ, हम समरसागरसे पार होवें आओ इस असुर कुलको नाश करो; इसमें यदि प्राण जातेरहें तो हानि नहीं है, क्योंकि मरनेपर हम अप्सराओंके साथ स्वर्गलोकमें सुख भोगेंगे उनके इस गंभीर बातके कहते ही भाट कवि सूजा गंभीर स्वरसे उत्साहके साथ कहउठा "राठौरवीरो! आज आपलोगोंका राजानुग्रह भोगकरना सार्थक होगा। आजके समान दिनमें अपने राजा और स्वदेशके गौरव रक्षाके निमित्त तलवार धारण कियेहुए देह त्यागकर दलसहित स्वर्गमें जानेके निमित्त आपलोग इतनेदिनोंसे जागीरोंका भोग करते आते हैं। आओ, आगे वढ़ो, मैंभी आपलोगोंके साथ चलताहूं, मैंने महाराजकी बन्धुता और प्रभुताके अनुग्रहका भोग किया है; आज उसकी सार्थकताको पूर्ण करूंगा आज मैं पिताके नाम और गौरवकी रक्षा करूंगा और मृत्युको शिरपर बुलाकर निर्भयहो युद्धभूमिमें विचरण करूंगा। आगे होनेवाले कविलोग अमृतमय तानसे हमारे यशका गान करेंगे।" तदन्तर आशाका पुत्र वीर दुर्गादास क्रोधसे ज्वलित होकर कहउठा "हिन्दुओंके अस्थि मांसका चर्वणकर राक्षस यवनोंकी डाढ़ें अत्यन्त तीक्ष्ण होगई है, किन्तु यह सब थोड़े दिनोंके निमित्त हैं। आज हम सब उनको इसका दण्ड देंगे; आज हमारी तीक्ष्ण तलवारसे जो जलतीहुई बिजलीकीसी चिनगारियाँ निकलेंगी, उनसे समस्त दिल्ली जल जावेगी;

आज दिल्ली स्थिर होकर हमारी वीरता देखैगी, आज राजपूतोंकी रोषाग्निसे मुसल्मानोंकी सेना भस्म हो जावेगी।"

राजपुत्रके जीवनकी रक्षा कर राठौरवीर इसवार अपनी सहगामिनी स्त्रियोंके सन्मान और गौरवकी रक्षा करनेके निमित्त तत्पर हुए। किस प्रकार उनका पवित्र कुलगौरव रक्षा पावैगा, किस प्रकार उनकी प्राणप्यारी स्त्रियां मुसल्मानोंके अपवित्र स्पर्शसे रक्षा करसकेंगी; इसका उपाय ढूंढ़नेलगे। यवनसेना उनके चारों ओर अस्त्र लिये खड़ीहुई है। उनके बीचसे स्त्रियोंको बेखटके लेजानेका कोई उपाय नहीं है। तब फिर इस समय राठौर स्त्रियोंकी मानरक्षाका केवल एक उपाय उनके प्राणोंके नाश करनेका है। इस समय भयानक हिंसाके अतिरिक्त राजपूत नारियोंकी पवित्रताकी रक्षाका और कोई उपाय नहीं है। राठौर सर्दार आज उसी भयानक कार्यके करनेमे प्रवृत्त हुए। घरके भीतर एक कमरेमें बहुतसी बारूद और काठ कवाड़ इकट्ठा किया गया। वीरनारी राजपूत स्त्रियोंने इष्टदेवका नाम लेते २ उस भयानक घरमें प्रवेश किया, घरका द्वार बंद करदियागया और घरके एक झरोखेसे बारूदमें अग्नि देदीगई। सैकड़ों वज्रकी समान शब्द कर बारूदका ढेर जलउठा और क्षणमात्रमे उन कमलकी समान स्त्रियोंको भस्म करदिया। रूप यौवन लावण्य सब ही क्षणभरमें अग्निसे भस्म होगया।

राठौरवीर एकवार निश्चिंत हुए, जिनके निमित्त प्राण रोरहे थे; जो आदरकी सामग्री थी, जिनके सन्मानमें कुछ भी फर्क पड़नेसे राजपूतोंके हृदयमें सैकड़ों वज्रकीसी चोटें लगती थीं, आज उन्हीं सुन्दर ललनाओंने जलती आगमें शरीर भस्म करदिया। राठौर वंशका एकमात्र उत्तराधिकारी, महाराज यशवंतका वंशधर शिशु अजित भी रक्षा पागया है, तो फिर अब इस समय रणक्षेत्रमें मरनेसे राजपूत वीरोंको क्या चिन्ता है? इस समय सब ही निश्चिन्त होकर मुसल्मानोंके सन्मुख भयानक युद्धमे तत्पर हुए। इस प्रकारके लोमहर्षण युद्धका वृत्तान्त जैसा भाटग्रन्थोंमें लिखाहुआ है उसका ही अनुवाद नीचे लिखाजाता है। "यमकी समान राठौरगण हाथमें शूल उठाकर शत्रुदलके विरुद्ध दौड़े। उसी समय तलवारोंकी झनझनाहट और ढालोंका चट्चट् शब्द होनेलगा। युद्धभूमिमें रुधिरकी धारासे कीच ही कीच होगयी। दिल्लीके राजमार्गमें दूहड़के वंशधरोंने जो युद्ध किया, मुण्डधारी शंकरने स्वयं उस युद्धभूमिमें विचरण कर अपने भयानक मुण्डमालको पूर्ण किया। नौंजाहर शत्रुसेनाके साथ रत्न

---

(१) रनवास बारूदसे नहीं उड़ाया गया तलवारसे काटा गया था।

(२) राव दूहड़ मारवाड़का एक प्राचीन अधिपति था। यहांपर वह राठौरकुलके एक प्रधान पुरुषके रूपसे वर्णित हुआ है। अनुप्रास अथवा शब्द लालित्यके अनुरोधसे भाट कवि प्रायः इसी प्रकार अनेक प्रसिद्ध पुरुषोंके नामकी विनाश होनेसे रक्षा करते रहते हैं।

(३) मारवाड़के भाट कवि कहते हैं कि महादेवजीकी नरमुंडमाला अबतक असम्पूर्ण थी; किन्तु इस युद्धमें शत्रुके शिरोंसे गूंथकर उन्होंने उसको पूर्ण कर लिया था।

युद्ध करनेलगा; किन्तु उसकी तलवार जय न प्राप्त करसकी अतएव वह रणभूमिमे मारा गया। रणभूमिमें गिरते ही रम्भा उसको लेकर चलीगई। दारावत्वीर दलूने आत्मजीवन उत्सर्ग किया; आज उसने स्वामीके नमकको रणके लोहूसे मिलादिया। चन्द्रभान अप्सराओंसे घिरकर चन्द्र लोकको गया। भट्टीवीर सौ टुकड़े हो सुरतानके पुत्रके निकट शस्त्र शय्यापर अनंत निद्रामें सो रहा, प्रभुपरायण उदावत् वीर कमलकी समान लाल रंगका हो यशवंतसे मिलनेके निमित्त स्वर्गमें गया। कविवर शन्द दोनों हाथोसे दो तलवारें चलाताहुआ सेनाके सामने युद्ध करने लगा, अन्तमें वह भी देह छोड़कर चन्द्रलोकमे जा वसा। राजवंश और गोत्रके प्रत्येक वीरोंने तलवार चला २ कर अपने कर्तव्यको पूरा किया, अंतमें वीर दुर्गदास दुष्ट वैरियोंका गर्व चूर्ण कर अपने सन्मान और गौरवकी रक्षा करनेमें समर्थ हुआ" ।

राठौर कुलकी सन्मान रक्षाके निमित्त यह प्रचण्ड उद्यममय युद्ध सम्वत् १७३६ के श्रावणकृष्ण ७ को हुआ। वीररसके प्रेमी भाट कवि इस भीषण युद्धको स्पष्ट शब्दोंमें वर्णन कर राठौरवीर सियाजीके पवित्र वंशका असीम गुण गाते है। वह दिन राठौर कुलके इतिहासमें एक पवित्र दिन कहागया है। उस पवित्र दिनमें अत्याचारी यवनराजके पैशाचिक अत्याचारोका वदला लेनेके निमित्त राठौरोंने जो एक प्रचंड उद्यम किया था; उस उद्यमके सफल होनेसे दुष्ट औरंगजेवका सिंहासन चूर्ण होजाता, तथा भारतका इतिहास नई मूर्त्ति धारण करता इसमे कुछ भी सन्देह नही; परन्तु भारतवासी सदैवसे ही राजभक्त हैं; राजभक्ति इनकी अस्थि मज्जामें नस नसमें प्रत्येक रक्तके बूँदमे मिली हुई है। विद्रोहिता किसे कहते है, उसे यह नहीं जानते न कभी जानना चाहते है। किन्तु ऐसा होनेपर भी इनका हृदय पत्थरसे नहीं वना है इसी कारण ये अत्याचार सहन नही करसकते। इसी कारण जिसकी यह देवताकी समान पूजा और सन्मान करते हैं, उसको हिंसक और

---

(१) भाट कवियोंद्वारा वर्णित संक्षिप्त और सारगर्भित युद्ध विवरणका अनुवाद ही यहांपर प्रकाशित हुआ है। स्वदेश, स्वधर्म, अथवा स्वदेशीय राजाओंके सन्मान रक्षाके निमित्त रणक्षेत्रमें जीवन विसर्जन करनेसे वीरगण जो परम पुण्यका संचय और श्रेष्ठ पदकी प्राप्ति करते रहते हैं, उसका स्पष्ट वर्णन इस युद्ध वर्णनकी प्रत्येक पंक्तिमें देखा जाता है। किन्तु यह नई रीति नहीं है। इन भाटग्रन्थोंके रचेजानेके वहुत शताब्दी पहिलेसे आये शास्त्रकारोंने कुहकिनी वर्णनकी सहायता से युद्धमें गिरेहुए वीरोंके जिस पुरस्कारके विषयका उल्लेख किया है उसके पाठ करते ही अति निर्जीव मनुष्य भी अपने देशके निमित्त रणक्षेत्रमें प्राण छोड़नेको उत्साहित हो उठता है।

" जितेन लभ्यते लक्ष्मीर्मृतेनापि सुरांगना। क्षणविध्वंसिनि काये का चिन्ता मरणे रणे? "

इस प्रकारके प्रचंड उत्साहसे जो श्लोक लिखेहुए हैं, उनका पाठ करनेसे स्वदेश, स्वधर्म और स्वजातिकी गौरवगरिमाकी रक्षाके निमित्त कौन नहीं प्रसन्नतापूर्वक रणस्थलमें प्राण छोड़ सकता! क्षणभंगुर मानवदेह धारण कर कौन अनन्त और अक्षय स्वर्गसुखका तिरस्कार करसकता है। चाहे जो करसके परन्तु वीररसके चाहनेवाले राजपूत कभी ऐसा नहीं करसकते। यह सब उत्साह वढाने-वाले लोग ही राजपूतोंके रणविलासिताका एक प्रधान उद्बोधक हैं।

निष्ठुर मूर्त्ति धारण करते देख इनके हृदयमे सहस्र वज्रानल प्रज्वलित होजाती है; वह उनकी अग्नि उस दुष्ट राजाके हृदयकी ही अग्निसे शांति होती है। राजपूतोंका धर्म-शास्त्र यही बातैं स्पष्ट शब्दोंमे अनुमोदन करता है। किन्तु ऐसा होनेसे क्या इसको विद्रोहिता कहाजासकता है। जिसकी देवताके समान पूजा कीजाय, जिसको रक्षक जानकर जीवन और जीवनकी अपेक्षा प्यारी स्वाधीनता और सन्मानको अर्पण किया जाय, वह यदि पत्थरका हृदय करके पिशाच और पाखण्डकी मूर्त्ति धारण कर अपने स्वार्थमे तत्पर हो उस आश्रित मनुष्यके उस श्रेष्ठ प्राण मनुष्यके उस अनुग्रह चाहनेवालेके सर्वनाश करनेकी चेष्टा करे तो उस चेष्टाके रोकनेका उद्यम क्या विद्रोह कहाजा-सकता है,? भासुरक सिहके पंजेसे निर्वल खरहोंकी रक्षा कीगइ थी तो क्या वह विद्रोह था ! उन निर्वल खरहोंके साथ श्रेष्ट प्राणवाले राजभक्त राजपूतोंकी तुलना करनेसे इन दोनोंमे अत्यन्त समानता पाईजाती ह । राजपूतोने समस्त जीवनके निमित्त सुखको आशाको छोड़ सगे सम्बन्धी और जन्मभूमिको त्याग औरंगज़ेवके ऊपर समस्त आशा भरोसेका भार रख उसीके कल्याणके कारण प्राणोको न्यौछावर करके उन्होंने दूरदेश काबुलको पयान किया था। उनके मनमे दृढ़ विश्वास था कि मुग़ल बादशाह उनके असीम आत्मत्यागका उचित पुरस्कार देगा, उनके मंगलकी ओर दृष्टि रक्खैगा । ऐसा ही विश्वास कर उन्होंने दुष्ट मुसल्मानोके बीचमे निर्भयरूपसे प्रवेश किया था औ अपने राजपूत रक्तको व्यय करके वे बादशाहके बड़े २ कार्य करनेलगे थे। किन्तु बादशाहने उनके कियेहुए उपकारका उन्हे क्या पुरस्कार दिया ? उसने इन महोपकारी विश्वस्त राजपूतोको जो पुरस्कार दिया, उसका विचार करनेसे हृदय सहम उठता है और औरंगजेवको एक हिंसक कहाजासकता है। औरंगजेवने उनके जेठे राजकुमारको कायरकी समान मारकर बड़े यशवंतके हृदयमे तीक्ष्ण शूलका प्रहारकिया, उसके विषम आघातसे दूरदेशमे राजाका प्राण भी जातारहा। परन्तु इससे भी औरंगजेवकी छाती ठंढ़ी न हुई, अन्तमे महात्मा यशवंतके प्रेतात्माको साधारण जलगंडूप (कुल्ले) से वंचित करनेके निमित्त उसके एकमात्र उत्तराधिकारी बच्चे अजितको भी उसने मारना चाहा। क्या यही राजाका धर्म है? इस प्रकारका नरराक्षस क्या राजा कहलाया जासकता ह ? जिस राजाने प्रजाके सुखकी ओर न देखा, जाति वर्ण और धर्म्म भेदसे जिसने भिन्न दृष्टि रखकर शासन किया वह क्या राजाके नामके योग्य है ? हिन्दुस्तान इस प्रकारका राजा कभी नही चाहता, भारतवासी ऐसे अयोग्य राजाको अत्याचारी प्रजापीड़क जान उसके पापी मस्तकमे भीम वज्रका प्रहार करते है और वे इसको विद्रोह नही समझते ।

राजपुत्र अजितने राक्षस औरंगज़ेवके हाथसे छुटकारा पाया। सर्दारोने उसको लड्डुओसे भरेहुए टोकरेके भीतर छुपायकर एक विश्वासी मुसल्मानके हाथमें अर्पण किया। वह सत्यपरायण मुसल्मान बड़े यत्नपूर्वक राजकुमारको नियत स्थानपर

लेगया । इसकी सत्यपरायणता और विश्वासका विचार करनेसे इसके पक्षमे बड़ी भक्ति उत्पन्न होती है । उन्हीं हिन्दू मुसल्मानोंके प्रचण्ड युद्धकालमें जब कि हिन्दू विद्वेषी उस निठुर राजाके राज्यमे थे तब उस समयमें स्वयं मुसल्मान हो जिस मनुष्यने एक हिन्दू राजकुमारके जीवनकी रक्षा की, उस मनुष्यका यह काम साधारण नहीं कहा जासकता । निश्चय ही उसका हृदय बड़े २ महत् गुणोसे भूषित था। दुःखका विषय है कि भाट कवियोंने ऐसे उपकारी बन्धुके नामको प्रकाशित नहीं किया। जो हो जिस समय वह राजकुमारको लेकर नियत स्थानमे पहुँचा उसके थोड़ी ही देरके उपरांत वीरवर दुर्गादास भी बचेहुए सर्दारोको साथ ले वहां जा पहुँचा। पराक्रमी दुर्गादास अपने अमित भुजबलसे अकेले असंख्य यवनोंके बीचस बाहर निकलसका था। उसकी प्रचंड तलवारके भीषण प्रहारसे अनेक यवन सैनिक पृथ्वीपर गिरे थे, बहुतोंने उसको दूरसे ही कालमूर्त्ति देख भयसे मार्ग छोड़दिया था। दुर्गादासका सब शरीर क्षत विक्षत और रुधिरसे भराहुआ था । तौ भी वह क्षणभरके निमित्त श्रमित और क्लान्त नहीं हुआ, क्षणभरके निमित्त भी वह इस बड़े कार्यके करनेमें विचलित न हुआ । विधाताने उसको इस असीम आत्मत्यागका योग्य फल भी भोगने दिया अर्थात् जिस राजकुमारकी वह विवश अवस्थामें इतने श्रमसे रक्षा करसका था उसे वह मारवाड़की गद्दीपर भी बिठला सका था । राजकुमार अजित उसके कियेहुए उन असीम उपकारोंको जन्मभरतक न भूलसका और यह बड़े हर्षका विषय था कि एक ओर तौ औरंगजेबने इतना कष्ट दिया; और उसी जातिके एक निर्धनी मुसल्मानसे उसका सम्बन्ध बराबर बना रहा, वह अजितका रक्षक उसकी युवा अवस्था और उसके परंपरा प्राप्त अधिकारको भोगनेतक जीता रहा । उसने यह जानलिया था कि राजालोग उपकार भूलनेवाले नहीं होते इस कारण वह दरबारमे प्रतिष्ठित हुआ, और काका शब्दके सिवाय अजितने उसको दूसरे शब्दसे नहीं पुकारा और उसका मान बढ़ानेके लिये जो जागीर उसको दीगई वह अबतक उसके वंशधरोके अधिकारमें हैं ।

राजकुमारको लेकर वीरवर दुर्गादास कुछेक विश्वासी सर्दारोके साथ अर्बुद पहाड़की तराईमे चलागया और वहां एक एकान्त मंदिरमे आश्रय ले उस राजकुमारका बड़े यत्नके साथ लालन पालन करनेलगा। उसके उस असीम यत्नसे लालित हो पिताहीन राजकुमार शुक्लपक्षके चन्द्रमाकी समान दिन २ परिपुष्ट होनेलगा । उसको पाखण्डी औरंगजेबकी विद्वेषाग्निसे बेखटके रखनेके निमित्त दुर्गादास गुप्त वेषसे वास करनेलगा । इस प्रकारसे कुछ समय बीतगया । किन्तु अग्निकी चिनगारी वस्त्रके दामनमें कबतक ढकी रहसकती है। कुछ ही दिनोके बीचमें राजपूतोंमें यह अफवाह उड़ी कि यशवंतका एक पुत्र जीवित है और वीरवर दुर्गादास तथा कुछेक राजपूत सर्दार उसकी रक्षा करते हैं । तीव्र दावानलकी समान यह अफवाह बहुत शीघ्र राजपूतोंमें फैलगई, इस अफवाहके फैलते ही दलके दल राठौरगण राजकुमारके ढूंढ़नेको बाहर निकले, सबसे पहिले वह दुर्गादासको ढूंढ़ने लगे और इधर उधर घूमते २ अन्तमे वे आबू पहाड़की

तराईमे जा पहुँचे। ढूनाड़ाका सर्दार उस समय गुप्तवेशी राजकुमारको धनी कहकर पुकारा करता था; अतएव उसको पहिंचान लेनेमें राठौरोंको कुछ भी दिक्कत न हुई। इस प्रकारसे राठौर अपने राजकुमारको पाकर अत्यन्त आनन्दित हुए और उसको मारवाड़की गद्दीपर बिठानेके निमित्त दृढ़ एकताके सूत्रमें बँधकर जातीय बल इकट्ठा करने लगे।

वह शान्तिमय आश्रम शीघ्र ही वीरोंकी निवासभूमि होगया। उस शून्य गुफामे और वृक्षोंकी छायाके नीचे वीर-रसराते राठौरगण भाट और चारण कवियों-द्वारा गाए जातेहुए जातीय गानको सुनकर अत्यन्त उत्साहसे उत्साहित हो राठौर राजकुमारका स्वत्व दृढ़ रखनेका यत्न करनेलगे। इस समय उनको एक प्रचंड जातिका आक्रमण रोकनेके निमित्त युद्धखेतमे जानापड़ा। अति प्राचीन कालमे ईदा नामक एक प्राचीन राजपूतवंश मरुभूमिमे राज्य करता था। ईदा प्रसिद्ध पड़िहार कुलकी एक शाखा है राठौर वीरोंके मारवाड़मे जानेके समयसे वे अपने पुराने राज्यसे दूर होगये थे क्योंकि राठौरवीर चूंडाने मारवाड़के वालुकामय क्षेत्रसे इनके वंशवृक्षको जड़से उखाड़ दियाथा। राज्यहीन पड़िहारगण उसी समयसे हारेहुए सामंतोकी समान दीनभावमे समय विताने लगे थे। किन्तु वे क्षणभरके निमित्त भी राज्यके उद्धार करनेको आशाको न छोड़सके थे इस समय अवसर पाकर वे उस आशाके सफल करनेमे कृतकार्य हुए। ईदा वीरोंकी इच्छा शीघ्र ही पूर्ण हुई। अर्थात् थोड़े ही समयके वीचमे प्राचीन मंडोरमे पड़िहार कुलकी राज्यध्वजा फहराने लगी।

पड़िहार कुलवाले इस विजयसे अत्यन्त उत्साहित हुए, इस विजयके पाते ही रत्न[२]नामक एक राठौरने जोधपुरके जीतनेकी इच्छा की। जो राठौरवंशी अमरसिंह अपनी चंचलता और प्रचण्ड प्रकृतिके कारण राजसिंहासनसे वंचित हो पिताद्वारा निकाला गया था, और जो बादशाह शाहजहांके मारनेको जाकर स्वयं ही उस सभामे मारा गया था, ऊपर कहाहुआ रत्न[३] उसीका पुत्र था कहाजाता है कि औरंगजेबने ही

---

(१) राजस्थान प्रथमखण्ड प्रथमभाग अ० ६ पृ ६५ देखो।

(२) रत्न नाम गलत लिखा है, सही नाम रायसिंह है जो राव अमरसिंहका बेटा और महाराज जसवन्तसिंहका भतीजा था।

(३) उदारहृदय शाहजहाँने अमरसिंहकी ढीठताको क्षमा करके उसके पुत्र रत्नको नागौर का राज्य देदिया था। यह राज्य उसके कुलमे चार पीढ़ीतक रहा, फिर इन्द्रसिंह राठौर राजाने इसके खान्दानवालोंको वहांसे निकाला। अमरके वंशको नागौरमें फिर बसाकर प्रजावत्सल मुगलस-म्राट्ने जिस माहात्म्यका परिचय दिया था, हिन्दुस्तानमें और किसी विजातीय राजासे वैसी उदारता और सुव्यवहार हुआ है या नहीं टाड्साहबने इस बातको पूर्णरीतिसे मानलिया है कि यदि भारतवर्षमें वृटिश राज्यको अचल रखनेकी इच्छा हो तो इसी प्रकारकी उदारता और महात्म्या का परिचय देना आवश्यक है। इस विषयमें उन्होंने जो कुछ अपने ग्रन्थमें लिखा है उसका यथार्थ अनुवाद यहां दियाजाता है। मुगल क्या वरन महाराष्ट्रलोग भी जिन दृष्टान्तोंको रखगये है

रत्नको जोधपुर जीतनेके लिये उत्साहित किया था, जो हो रत्नकी चेष्टा फलीभूत न हुई। विश्वासी राठौरसर्दार बालक अजितके स्वत्वकी रक्षा करनेके निमित्त उसके साथ युद्धमें प्रवृत्त हुए। उस युद्धमें रत्नकी हारहुई। उसने भागकर नागौरके किलेमें अपने प्राणोंकी रक्षा की। तदनन्तर सर्दारोंने ईंदा वंशवालोंपर आक्रमण कर उन्हें मंडोरसे दूर भगादिया। औरंगज़ेबने जिस अभिप्रायसे रत्नको जोधपुरके जीतनेमें उत्साहित किया था वह सफल न हुआ। इसके पहिले उसने गुप्त वेषसे अपने दुरभिप्रायके साधन करनेकी चेष्टा की थी, किन्तु उन सब चेष्टाओंको निष्फल होताहुआ देख इसबार वह स्वयं कार्यक्षेत्रमें अवतीर्ण हुआ। एक विशाल सेनाको लेकर उसने

—हमने अबतक उनके अनुकरण करनेका साहस नहीं किया; इसी कारणसे हमारा प्रतिशोध भयंकर वज्रकी समान दौड़कर शत्रुका हृदय फाड़डालता है। पहिले लोगोंके विरुद्ध जिसदिन घृणित मैत्री कीगई, उस दिनसे लेकर तबतक, कि जबतक हमलोगोंने भरतपुरके बीच पिछले संहार कार्य्यकी मध्यस्थता करके कहानीमें कहेहुए शेरकी तरह व्यवहार किया था, वहांतक देखजाओ तो ज्ञात होगा कि कितने सर्दार अपने २ पितृपुरुषोंकी सम्पत्तिसे वंचित होगये हैं। हमारी वर्तमान अवस्था ऐसी प्रभुता शालिनी होगई है कि इस समय हमलोग क्षमा शीलताका परिचय देसकते हैं। ईश्वर न करे यदि राजपूतानेमें हमको इस सद्वृत्तिकी कार्य्यकारितामें आवश्यकता पड़े तो यह बहुतायतसे दी जायगी; कारण कि वहाँ इसके मंगलमय प्रभावका विशेष आदर देखाजाता है, और ऐसा होनेपर यह ओसके बिन्दुकी समान फिर हमारे शिरपर आकर पड़ेगी। परन्तु यदि हमलोग दिन रात केवल विपत्तिकी शंका करके प्रजाका विश्वास बिना किये राजनीति को चलावेंगे तो एक समय यह भयंकर प्रतिशोधस्वरूप हमारे मस्तकपर गिरेगा। हमारी आधुनिक शासनरीति विजित लोगोंके अमंगलसे यदि पूर्ण होगई है; ऐसी अवस्थामें यदि किसी क्षणकाल स्थाई पुलिटकल एजंटका मिज़ाज गरम होजाय, तो उसके द्वारा कदाचित् ऐसा विवाद उत्पन्न होसकता है कि जिससे एक बहुतदिनोंके राज्यके बिगड़जानेकी सम्पूर्ण सम्भावना है। ❋

❋ इन नोटोंमें इतनी बातें अशुद्ध हैं।

(१) एक तो अमरसिंहके बेटेका नाम रत्न नहीं था। रायसिंह था मारवाड़के इतिहास और औरंगजेबके इतिहासमें रत्न नहीं लिखा है।

(२) रायसिंहके कुलमें यह राज चारपीढ़ी नहीं रहा दोही पीढ़ी मुशकिलसे रहा।

(३) इन्द्रसिंह रायसिंहका बेटा था। इसने किसके खानदानवालोंको निकाला यह कुछ समझमें नहीं आता। असली बात यह है कि महाराज अजीतसिंहने इन्द्रसिंह और उसके बेटोंको परास्त करदिया था।

(४) रायसिंहको जोधपुरका राज्य औरंगजेबने उज्जैनकी लड़ाईके पीछे यशवन्तसिंहसे नाराज होकर दिया था। मगर फिर दाराशिकोहके गुजरातमें आकर यशवन्तसिंहसे मेल करलेनेसे और रायसिंहको तो मौकूफ रक्खा और यशवन्तसिंहको मनालिया। रायसिंह यसवन्तसिंहसे पहले मरगया था, इसलिये अब औरंगजेबने जोधपुरके राज्यका फरमान इन्द्रसिंहको लिखदिया था, मगर राठौरोंने उसको लड़ाईमें हरादिया जिससे औरंगजेब भी नाराज होगया और इन्द्रसिंहका जोधपुरमें अमल न रहसका। रत्नका नाम रायसिंह वा इन्द्रसिंहकी जगह इस पुस्तकमें गलत लिखा है।

मारवाड़ राज्यपर चढ़ाई की। शीघ्र ही जोधपुर घिरगया;-कोई भी उस आक्रमणको न रोकसका और कोई भी उसके कराल ग्राससे राजधानीका उद्धार न करसका। जोधपुर औरंगजेबके अधिकारमे आगया, जोधपुरकी शोभा सौन्दर्य्य आज नाशहो यवनोके पैरोसे दलित हुई। आज यमकी समान यवन सैनिकौंने नगरके भीतर घुसकर राठौरकुलके समस्त धनरत्नको हरलिया। शीघ्र ही वड़े २ तीन नगर मेरता, डीडवाना, और रोहत भी, जोधपुरकी दशाको प्राप्त हुए।

मारवाड़को अपने अधिकारमे करके मुसल्मानोने उसकी दुर्दशाकी सीमा न रक्खी। नगर, गाँव और कसवोको तोड़ फोड़कर जलाडाला। देवमंदिर, स्तंभ आदि गिरादियेगये, और देवमूर्तियाँ टूट २ कर पाखण्डी यवनोके पैरोसे कुचली जानेलगीं। किसीने उस ओरको देखातक भी नहीं; और न कोई उन पवित्र मूर्तियोके उद्धार करनेमें अग्रसर हुआ। जो कईजन हिम्मतकर उस कार्यके करनेमे साहसी हुए, उनमेसे अधिकोने मुसल्मानोके हाथोसे प्राण गँवाए जो जीवित रहे, दुष्ट यवनोने उनको जातिभ्रष्टकर वलपूर्वक मुसल्मान बनालिया। मारवाड़देशके घरघरमें अराजकता, प्रजाहत्या, और महामारी भीषणमूर्ति धारण कर भ्रमण करनेलगी। आज समस्त मारवाड़ मानो वीभत्स महास्मशानमे वदल गया; नगरपर नगर, शहरपर शहर, गांवपरगांव, जलाये जाने लगे। कोई भस्म होगया और कोई पृथ्वीमे मिलगया। कहीं तो धुंवाँ और जलतीहुई अग्निकी लपटैं मकानोसे बाहर निकलने लगीं, कहीं दो चार मंदिर टूटे फूटे पड़ेहै, और वहीं पर उनके ऊपर मसजिदे बन रहीहैं, मदमत्त मुसल्मान पृथ्वीपर गिरीहुई देवप्रतिमाओंके मस्तकोपर पिशाचोकी समान पदाघात कररहे है, कहींपर पृथ्वीमे गिरेहुए राजपूत हृदयविदारक स्वरसे आर्तनाद कररहेहैं। औरंगजेव अपने इस पाशवी अत्याचारके कियेहुए वीभत्स चरित्रको देखते २ प्रसन्नतापूर्वक अपने नगरको लौटआया। उसका हृदय क्षणमात्रको भी न कम्पित हुआ। निश्चय ही उसका हृदय पत्थरकी समान कठोर होगया था; नहीं तो क्या वह इस वीभत्स दृश्यको देखकर क्षणभरको भी कातर न होता? कातर होना तो दूर रहा वरन उसने उस अत्याचारके दुगुने वढ़ानेका संकल्प कर लिया और समस्त हिन्दूप्रजाके ऊपर कठोर जिजिया कर स्थापनकर उसने अपने पैशाचिक संकल्पको पूर्ण किया। इसी दु.खदायी अत्याचारके समयमें वीरकेसरी राणा राजसिंह शिशोदिया राठौरोंको मिलाय अत्याचारियोंके विरुद्ध युद्धक्षेत्रमें अवतीर्ण हुआ था, उसी समयमे उसकी क़लमसे ऐसे तेजयुक्त असाधारण पत्र लिखेगये थे, कि जिनका अनुवाद इस ग्रन्थके प्रथमखण्डमे लिखाहुआ है[१]।

राजपूतोके नाश करनेकी आज्ञा पाय सत्तरहज़ार सेनाके साथ तहव्वरखाँ युद्धक्षेत्रमे आया। इसके उपरान्त औरंगजेव स्वयं अजमेर गया मेरतिया सामन्त दलसमेत

(१) राजस्थान प्रथमखण्ड, अ० २२ पृ० ४४६ देखो।

(२) इस स्थानसे अजितके राज्य प्राप्तिपर्यंत समस्त वृत्तान्त टाड्साहबने भाटग्रन्थसे संग्रह कर उसका अनुवाद लिखा है। यहांपर उनका वह अनुवाद ज्योंका त्यों लिखागया है। इस प्रकार के अनुवादमे जो मूल ग्रन्थकी सुन्दरता विनष्ट हुई है उसका विदित करना चतुर पाठकोंके लिये

इकट्ठे हो उसका आक्रमण रोकनेके निमित्त पुष्करके सामने अग्रसर हुए। भगवान् बराहके पवित्र मंदिरके सामने युद्धका आरम्भ हुआ। वहां वीराग्रगण्य चिरंजव मेरतीयगणके कराल कृपाणने सहजसे ही असुरोंके मस्तक काटे। इसी युद्धस्थलमें सम्वत् १७३६ के भाद्रमासकी एकादशीको मेरतिया गणोंने प्राण त्याग किये।

तहव्वरखां धीरे २ आगे बढ़नेलगा। मुरधरके निवासी प्राणोंके भयसे पहाड़ोंकी ओर भागनेलगे। यवन सेनापतिकी गति रोकनेके निमित्त रूपा और कूँपानामक दोनो भाई अपनी फौजको ले गुड़ानामक स्थानमें आये। किन्तु उनकी इच्छा पूर्ण न हुई। पचीस जन भाइयोंके साथ वह रणभूमिमें मारेगये। कालमेघ जिस प्रकार जगत्में जल वरषाते हैं, औरंगजेवने उसी प्रकार अपनी म्लेच्छ सेनाको देशके ऊपर चलाया। वह अजय दुर्गमे केवल पांचदिन रहा। इसके अनन्तर उसने चित्तौड़की ओर कूँचकिया। उसके चित्तौड़में पहुँचते ही चित्तौड़की अत्यन्त शोचनीय अवस्था होगई, जानपड़ा कि मानों आकाश टूटकर माथेके ऊपर गिरा है। शिशु राजकुमार अजित राणाद्वारा रक्षित हुआ, और राठौरगण शिशोदिया सेनाको आगे चलाकर युद्धक्षेत्रमें अवतीर्ण हुए। मुसल्मानोके बलको अधिक देखकर उन्होंने राजकुमारको एक गुप्तस्थानमें छिपारक्खा। दिल्लीपति देहवाड़ीके समीप आया; इधर कुंभा उग्रसेन और ऊदो आदि राठौरवीर गणोने उस गिरि मार्गमें खड़े हो उसकी प्रचंड गतिको रोका। उस गिरिमार्गमे होकर औरंगजेवने जब उदयपुरपर आक्रमण किया, तब आज़म चित्तौड़में था इसी समय समाचार आया कि दुर्गादासने जालोर राज्यपर आक्रमण किया है। इस समाचारके सुनते ही औरंगजेव अजमेरकी ओर लौटा। जाते समय मुकर्रमखांको यह आज्ञा देगया कि वह जालोर युद्धमें बिहारीकी सहायता करे। किन्तु दुर्गादास युद्धका कर इकट्ठा करते २ जोधपुरमें आया। गर्वसे औरंगजेवके मस्तकने आकाशको स्पर्श किया; उसने प्रण करलिया कि देशमें केवल एक ही धर्म्म रक्खूंगा, और वह धर्म मुसल्मानधर्म है इस पाशवी प्रतिज्ञाको वह बहुत कुछ पालन करसका था। राजकुमार अकबर तहव्वरखांके निकट भेजागया। लूटना, मारना, जलाना आदि देशमें सर्वत्र फैलगया। देशशून्य महा-श्मशानकी समान होगया। सभी स्थानोंमें एक घोर विभीषिका विजयके अहंकारसे भ्रमण करनेलगी। किन्तु क्या होगा? दैवेच्छासे आज भारत सन्तानोको वह दुःख भोगनापड़ा है। ईदागणोंने जोधपुरमें अधिकार करलिया। किन्तु कूंपावत् वीरोंने नंगी तलवार ले खत्तापुरमें उनके सामने हो उनका नाशकिया। मुरधरदेशाधिपति और

—व्यर्थ है। महात्मा टाडसाहब कहते हैं, "भाटकवियोंने यह सब वर्णन जिस प्रकारके मनोहर शब्दोंमें नियमानुसार किया है उस नियमके विरुद्धाचरण करनेसे ही मूलग्रन्थकी सौन्दर्य्यता और सारवत्ता के भलीप्रकारसे नष्ट होनेकी सम्भावना है। अतएव यहांपर उस ही नियमका अनुसरण करना उचित है।" इस ही कारण यहांपर भी उस ही नियमका अनुसरण हुआ है।

(१) इस स्थान देहवारी जहाँ वे वधहुए थे वहां अबतक वह स्मरणीय लक्ष्य उन योधाओं के दाहिनी ओर द्वारमें प्रवेश करनेके समय दिखाई देता है।

भी एकवार रावकी पदवीसे वंचित हुआ। यद्यपि वादशाहकी इच्छा थी कि परिहारगण मारवाड़के अधिकारी हों परन्तु उसकी यह इच्छा सम्वत् १७३६ के ज्येष्ठमासकी त्रयोदशीको विफल हुई।

अर्वलीपहाड़ने राठौरोंको आश्रय दिया। इस दुर्गम और निर्जन प्रदेशसे समय २ मे वाहर हो वे मुसल्मानोंको धानकी समान काटते और उनकी लाशोको ढेरके ढेर कर रखते, तथा उनका अन्नधन हर लेते थे। औरंगजेवको कुछ भी शान्ति प्राप्त न हुई, और राठौरोंका स्वामिधर्म्म दिन २ वढ़नेलगा; वे दिन २ स्वदेशके निमित्त विपुल त्यागस्वीकार करनेलगे। उन्होंने दुष्ट औरंगजेवके तहसनहस करनेकी दृढ़ प्रतिज्ञा की। एक दलने जालौर पर आक्रमणकिया। दूसरा दल सिवानाके आक्रमण पर तत्परहुआ। उस समय औरंगजेवने राणासे युद्ध करना छोड़ समस्तसेना मारवाड़को भेजी। वीरकेसरी राणा राजसिंहने अजितको आश्रयदे वादशाहकी क्रोधाग्नि भड़काई थी। इस समय उसने अपने पुत्र भीमके हाथमे शिशोदियासेनाका भार अर्पणकर उसे राठौरोकी सहायताको भी भेजा। उस समय इन्द्रभान और दुर्गदास राठौर सेनाको लिये गोड़वाड़ामें निवास कररहे थे। शिशेदियावीर भीमसिंह दलसहित वहां पहुंच कर उनके साथ मिलगया। राजकुमार अकवर और सेनापति तहव्वरखां मुगलसेनाको लेकर उनके सन्मुख हुए, शीघ्र ही नाडोलनगरमे युद्ध आरम्भहुआ। शिशोदियागण राजपूतसेनाके दक्षिण ओर हुए। वहुत देरतक युद्ध होतारहा, इसमें वहुतसे सैनिक मारेगये, राजकुमार भीम भी युद्धक्षेत्रमे मारागया, राणा भीमकी सेना राठौरोकी प्रचंड दुर्गस्वरूपथी। वीर इन्द्रभान अत्यन्त विस्मयकर वीरता प्रकाशकर ऊदावत जैताके साथ रणस्थलमें पतित हुआ। सोनग और दुर्गदासने भी उस दिन आश्चर्यकर वीरता दिखाई!

वह दिन राजपूतोको वीरता दिखानेका एक प्रसिद्ध दिन था। उस दिनके वीतते ही राठौरकुलकी गौरवगरिमा भी लोप होगई; एक वार ही गौरवोन्नत मारवाड़ आज हीनदशामे पतित होगया, तौ भी राठौरगण उस दिनकी घटना नहीं भूलसके और यह भी जानपड़ता है कि न कभी भूलसकेंगे। जिस दिन वह भूलेंगे, उसी दिन राठौरोका नाम जगत्से लोप होजायगा। उस पवित्र दिनमे राजपूत वीरोने स्वदेशस्वाधीनता और स्वजातीय राजाकी गौरवरक्षाके निमित्त जो अतुल आत्मत्याग जो विपुल वीरता प्रकाश की, उसको देखकर राजकुमार अकवर भी मोहित होगया था, उसका भी पत्थरसा हृदय पिघल गया था। अपने वलके मदसे मत्तहो दुराकांक्षाकी परितृप्तिके निमित्त उसने राजपूतोको नानाप्रकारसे उत्पीड़ित किया था, इस समय अपने कियेहुए उन समस्त अत्याचारोको विचार २ वह मन ही मन सताप करनेलगा। उसके पिताने इस वीरजातिके ऊपर क्यो ऐसा अत्याचार किया उसको वह न समझसका। वास्तवमे

---

(१) मेवाड़के भाट कवि कहते है कि राठौरोंके साथ इस समय मुसल्मानोंका और भी एक युद्ध हुआ था; उस युद्धमें राजपूतोंने बड़ी बहादुरी और बुद्धिमानीसे जय पाई थी। [राजस्थान-प्रथमखण्ड अ० १२ पृ० ४५५ देखो]।

पराक्रमी राजपूतोंकी वीरता देखकर उसके हृदयमे क्षोभ उत्पन्न हुआ होगा; और क्षोभके स्निग्ध रससे उसके हृदयकी कठोरवृत्तियें भी पिघलगई। उसने सेनापति तहव्वरखांसे अपने हृदयका भाव प्रगट करदिया, और पिताकी निठुरताका वर्णन कर दुःख सहित कहा "ऐसे साहसी और विश्वासी सामंतोको मुगलोंके स्नेहबन्धनसे अलग कर बादशाहने अच्छा काम नहीं किया"। उसके दुःखसे तहव्वरखांका भी हृदय पिघल गया; उसने उसके साथ अपनी भी सहानुभूति प्रगट की। तदनन्तर राजकुमार अकबरने दुर्गादासके पास एक दूत भेजकर कहला भेजा कि "राज्यमे शान्तिस्थापन होना चाहिये, अतएव एकबार राजपूतोका मेरे साथ मिलना आवश्यक है।

राठौरवीर दुर्गादासने राठौर सर्दारोंको इकट्ठाकर सबके सामने अकबरके इस प्रस्तावको प्रगट किया। किन्तु उस प्रस्तावमें प्रायः सबने ही असम्मति प्रकाश की। किसी २ ने कहा, 'कपटी यवन विश्वासघातकता कर राठौरकुलका सर्वनाश करेंगे' किसी २ ने विचारा कि दुर्गादासका ही उससे कुछ अभिप्राय है, नही तो वह संधिके निमित्त इतना आग्रह क्यों करता? उन सबको इस प्रकारके अनेको सन्देह करते देख तेजस्वी दुर्गादास बोलउठा, "सरदारो! क्यों तुम वृथा भयभीत होकर नानाप्रकारके संन्देह करते हो? मनमे भय और सन्देह करना क्या वीरोका काम है? क्या राठौरोंका भुजबल लोप होगया है? शत्रुपक्षके जब संधिस्थापन करनेको कह कर स्वयं ही मिलना चाहते हैं तब उनके साथ न मिलनेसे वे हमको डरपोक कहैंगे। हृदयमें बल रहतेहुए क्यो हम इस प्रकारके कलंकके भागी होवें? आओ, हम सब इकट्ठे हो मुसलमानोंके डेरोंपर चले; यदि मुसलमानोंके मनमे छल होगा, तो हम सब क्या उनका संहार नहीं करसकते। क्या कभी सुना है कि मनुष्योंने मेघमालाको रोक रक्खा है?" वीरवर दुर्गादासके तेजोमय और गम्भीर वाक्योंने सर्दारोंके हृदयका सब अंधकार दूर करदिया। उन्होंने राजकुमार अकबरसे मुलाकात की। एक दूसरेके हृदयका भाव एक दूसरेपर प्रकाशित होगया युक्ति प्रगट करके कर्तव्य स्थिर किया गया। शीघ्र ही संधिबंधनका भी शेष होगया। तत्काल ही दोनों ओरकी सम्मतिसे अकबरके मस्तकके ऊपर राजछत्र शोभितहुआ, उसी दिनके निमित्त सभा भंग हुई। इसके अनन्तर अकबरने अपने नामका सिक्का चलाया तथा राज्यकी सर्वत्र सीमा नियत की। आज अकबर हिन्दोस्तानका बादशाह हुआ, मुगल साम्राज्यके श्रेष्ठ सामन्तोंने उसको "भारतेश्वर" की उपाधि दी। बंदीजन उसकी कीर्तिका गान करनेलगे। इस संवादने अजमेरमे औरंगजेबके कर्णमे वज्रकी समान प्रवेशकर उसके हृदयमें दारुण आघात किया। उसका हृदय व्यथित हुआ। उसको कहीं भी शांति न प्राप्त हुई; जिधर उसने देखा उधरहीसे मानो नाना विभीषिकाएं आकर उसे भय दिखानेलगी। इसके ऊपर यह भी समाचार आया कि राठौरवीर दुर्गादास अकबरके साथ मिलगया है। औरंगजेबकी सब आशाएँ निर्मूल होगई दारुणक्रोध, विषाद और मनो-वेदनासे वह अपनी मूछोंके बाल और होंठ काटनेलगा। यह सब सम्वाद थोड़े ही दिनोमे समस्त देशमे फैलगया। देशके जिस स्थानपर जितने राठौर थे सब अकबरकी स्वार्थरक्षाके निमित्त

उसकी पताकाके नीचे आ खड़ेहुए। भारतका राज्य आज दो हिस्सोमे बँटकर दो राजाओका राज्य कहा जानेलगा। अब भगवान्की कृपासे मृतप्राय सनातनधर्म पाखण्डी औरंगज़ेवके लोह बंधनसे छूटकर पुनः जीवित हो उठा।

आज औरंगज़ेव बड़ी विषम विपदमे पड़ा है। आज इकट्ठेहुए राजपूतोके क्रोधसे उसका सिंहासन वारम्वार कांपनेलगा; उसके राजमुकुटने पृथ्वीपर गिरनेकी तैयारी की। उसको भय हुआ कि निश्चय ही मैं सिहासनसे उतारा जाऊंगा। क्योकि वह जिधर देखता उधर ही राजपूतोकी क्रोधाग्नि प्रचण्डतेजसे प्रज्ज्वलितहो उसको जलाती हुई देखपड़ती थी। उसे उससे वचनेका कोई भी उपाय न दिखाई दिया, समीपी वन्धु, वांधव सहायक आदि किसीका भी आसरा न रहा। अतएव उसने समझलिया कि शीघ्र ही मुझको गद्दीसे उतरना होगा। किन्तु तौ भी औरंगज़ेव निरुत्साह न हुआ। उसको वन्धु, वान्धव, सहायक, संबल सबने ही छोड़दिया, किन्तु आशा उसको छोड़कर भी न छोड़सकी; उसके हृदयसे उत्साह दूर न हुआ। उस आशा और उत्साहसे उत्साहित हो औरंगज़ेवने विपदसे छुटकारा पानेके निमित्त शठताका अवलम्बन किया और कपट तो उसके जीवनका साथी था, उसको जब संकट पड़ा, तभी उसने शठता और कपटकी सहायतासे उस विपत्तिसे छुटकारा प्राप्त किया,—उसी समय भी उसके दोनो संगियोने दो विशालसेनाकी समान उसकी सहायताकी। आज चतुर मुग़लवादशाह इन्हीं दोनोकी सहायताद्वारा इस विपत्तिसे छुटकारा पागया। यह सब वृत्तान्त मुग़लोके इतिहासमे और मेवाड़ तथा मारवाड़के भाटग्रन्थोमे विस्तारपूर्वक वर्णित है। किन्तु उन सबमे भली प्रकारसे एकता नहीं पाईजाती; इस कारण हमने भाटग्रन्थोसे ही उक्त वृत्तान्तका अनुवाद किया है।

"अगणित राजपूतोके साथ अकबर अजमेरकी ओर बढ़ा। औरंगज़ेवने समझा कि अब शीघ्र ही पिता पुत्रमे घोरयुद्ध होगा, इस कारण वह भी सावधान होरहा, किन्तु अकबर तहव्वरखांके हाथमे समस्तभार अर्पणकर आप स्त्रियोसे परिवेष्टित हो नृत्य, गानके आनन्दमे समय वितानेलगा। हम भाग्यके सेवक हैं, हम भाग्यके खिलौने है, भाग्य डोरेमे बांधकर जैसा हमको नचाता है हम नाचते है। अस्तु तहव्वरखां विश्वास-घातकताकी कल्पना करनेलगा। उसके निकट गुप्त समाचार आया कि यदि वह अकबरको बादशाहके हाथमें अर्पण करसके तो वह बहुत पुरस्कार पावेगा। इस समाचारके ऊपर विश्वासकर उसने रात्रिको गुप्तभावसे बादशाहसे मुलाकात की और उसी स्थानसे राठौरोको लिखभेजा कि, 'आपलोगोके साथ जो अकबरकी संधि हुई थी उसमे मैं ग्रन्थिस्वरूप था, किन्तु जिस बाँधने जलका भाग कररक्खा था, वह टूटगया है,—पिता पुत्र फिर मिलकर एक होगये है। हमने परस्परमे जो प्रतिज्ञा की थी उसका पूर्णहोना कठिन है, अतएव मै जानताहूं कि आप अपने देशको लौट जाओगे'। पत्र लिखकर शेष हुआ, विश्वासघातक तहव्वरने उसके ऊपर अपनी मुहरकी ओर एक विश्वासी दूतद्वारा उसे राठौरोके निकट भेजकर स्वयं पुरस्कारकी आशासे औरंगज़ेवके

निकट आया। किन्तु दुष्टको पाशवी विश्वासघातकताका योग्य फल मिला। बादशाहके सामने वह बात भी न करनेपाया कि बादशाहने स्वयं अपने हाथसे उसकी गर्दन काट डाली, उसकी पापात्माने नरकका आश्रय ग्रहणकिया। इधर अर्द्धरात्रिके समय दूतने राठौरोंके डेरेमें जाकर वह पत्र दिया और कहा कि तहव्वर मारागया। डेरोंमे बड़ी हाहाकार पड़गई, त्रासित राठौर शीघ्र ही अपने २ घोड़ोपर चढ़ राजकुमार अक्बरके डेरेसे एक कोश दूर जाकर ठहरे। राजकुमारकी सेनामें भी इस बातका समाचार फैलगया। वह भी हवासे गिरेहुए सूखे ईखके पत्तेकी तरह चारोओरको भागनेलगे, किन्तु उस समय भी अक्बरकी मोहनिद्रा न टूटी, उस समय भी वह नचैयो गवैयोंसे घिरकर आमोद प्रमोदमे लगारहा"।

भाट कवि लिखित उपरोक्त वर्णनके पाठ करनेसे राजपूतोंकी अनसमझी भली प्रकारसे विदित होती है। राजपूत घटनास्रोतके पक्षमें केवल सामान्य तृण है वे आगा पीछा न विचारकर प्रायः प्रत्येक काममे ही प्रवृत्त होजाते है। दूतसे समाचार पाते ही उनको दृढ़ विश्वास होगया था। यद्यपि अकबर उनके समीप ही ठहराहुआ था तथापि इस बातके जाननेको उन्होंने एकबार भी चेष्टा न की कि यह समाचार सत्य है या मिथ्या। उन्होने जो सुना उसपर विना विचारे ही विश्वास करलिया और उसी ख्याली विचारके वशीभूत हो वे क्षणमात्रमे वहांसे दूसरे स्थानको कूंच करगए। यहांतक कि जबतक दशकोश न निकलगये तबतक घोड़ेकी बाग न ढीली की। किन्तु इस प्रकारके चरित्र राजपूतोंके स्वाभाविक चरित्र नहीं हैं। विश्वासघाती मुसल्मानोसे बारम्बार ठगे जानेपर उन्होंने मुसल्मानोका विश्वास करना ही छोड़दिया। विशेषकर झगड़ा होनेके समय तो वे ऐसे मूढ़ होजाते है कि किसका विश्वास करना होगा, यह भी नहीं जानते। यद्यपि वह अक्बरको चाहते थे और उसके स्वार्थ रक्षाके निमित्त उन्होने तलवार भी उठाई थी, तथापि अक्बर मुसल्मान था इस कारण उन्हें यह भी विश्वास था कि यह भी विश्वासघातक होसकता है। वे इसी विश्वासके वशीभूत हो अक्बरके डेरेको छोड़ रातोंरात वहांसे चलेगये।

अब राजकुमार अक्बरकी मोहनिद्रा भंगहुई जब राठौरसेना उसका डेरा छोड़कर चली गई, वह अपनी सेनाको भी भागाहुआ जान कर समझ गया कि मै केवल अपने ही दोषसे विपदग्रस्त हुआ हूं। विश्वासघातक तहव्वरको जो योग्य फल मिला इससे वह संतुष्ट हुआ और उसके प्रेतात्माको सैकड़ों शाप देता हुआ भागीहुई सेनाके खोजमें अग्रसर हुआ। उस समय उसके साथ एक सहस्र मनुष्य भी न थे। बड़ी देरतक घूमनेके उपरान्त राजकुमार भागीहुई सेनाके निकट पहुँचा; तत्पश्चात् वह उसको ले अपने मित्र राजपूतोंकी खोज करनेलगा। उसने उनको पाकर अपने और अपने

---

(१) औरंगजेबने खुद तहव्वरखांको नहीं मारा, विश्वासदेकर बुलाया था पर जब वह हथियार बांधेहुये दर्बारमें जानेलगा तो उसको रोकागया इसपर वह पीछा लौटा और डेरेकी रस्सियों से बाहर निकलते ही ड्योढीदारोंके हाथसे मारागया।

परिवारको उनके समर्पण करके कहा-"कि यदि आप चाहैगे तो मुझे मार सकते हैं और रख भी सकते हैं। राजपूत यह बात सुनकर उसको न त्यागसके और फिर उसके साथ होगये।

राठौरोंने जिस प्रकार शरणमें आयेहुए राजकुमार अकबरको रक्खा था कवि कर्णीदानने उसका श्रेणीवद्ध वर्णन किया है। जब अकबरने आश्रयकी प्रार्थना की तब राठौर इस बातका विचार करने लगे कि राजकुमारका सन्मान किस प्रकार करना चाहिये। चांपावत और कूंपावत् पातावत, लखावत्, कर्णौत डूंगरोत्, मेरतिया वरसिंहोत तथा ऊदावत् और वीदावत् आदि सामंतगण अपने २ पदानुसार मंत्रागारमें बैठे। समय पाकर भाट कवि एक २ करके उन सामन्तोके पितृपुरुषोका गुणानुवाद वर्णन करनेलगे। जिस समय राठौर सर्दारगण यथा योग्य आसन पर बैठगये, उस समय अकबरके सत्कारके विषयमे अनेको तर्क वितर्क होनेलगे। प्रत्येक सर्दारने सारगर्भित और तेजस्विनी वक्तृताद्वारा मुसल्मानोंके आचार व्यवहार और अपने २ मन्तव्यको प्रकाशित किया। बहुतसा तर्कवितर्क होनेके उपरान्त सभा भंगहुई। अन्तमे सबकी यही सम्मति हुई कि शरणमे आयेहुए अकबरकी प्राण रहतेहुए रक्षा की जायगी। चांपावत सम्प्रदायके सर्दारका छोटा भाई जैत अकबरके कुटुम्बका रक्षक नियत हुआ इस प्रकारसे उस दिन राठौरकुलके जीवन नाट्यका एक वृहत् अंक आरम्भ हुआ। वीरवर दुर्गदास उस अंकका अगुआ हुआ। उसके महत् चरित्र कविके ओजमय वर्णनके प्रभावसे यथार्थ हृदयग्राही हुए है। कविने दुर्गदासकी महिमाका इस प्रकारसे वर्णन किया है कि,-

"जननी सुत ऐसा जने, जैसा दुर्गादास। वांध मुड़ासो राखियो, विनखम्वा आकाश॥"

वीरवर दुर्गदास राजपूतचरित्रका एक अनुपम नमूना था;वह जैसा वीर था वैसा ही चतुर भी था। उसकी असीम वुद्धि और विक्रमके प्रभावसे मारवाड़की भूमिकी ध्वंश होनेसे रक्षा हुई, उसने ही आत्मत्याग स्वीकार कर राजकुमारकी प्राणरक्षा की थी और अंतमे भीषण समरसागरको पार कर असंख्य विषम संकटसे उसका उद्धार किया था। औरंगजेव इस राठौर वीरसे वहुत डरता था, इसके सम्बन्धकी कई एक वाते सुनी जाती हैं। वे वाते बड़ी ही मनोहर हैं। उन वातोमेसे एक वात यहां भी लिखी जाती है। औरगंजेवने अपने भीषणशत्रु शिवाजी और दुर्गदासका चित्र लानेकी आज्ञा दी। चित्रकार उन दोनोके चित्र लेकर उसके निकट आया। दोनो चित्र पूर्ण अंगोसे युक्त थे। शिवाजी एक आसन पर बैठाहुआ था, और दुर्गदास अपने भालेकी नोकमें एक रोटी छेदकर उसे आँच पर सेंक रहा है। उन दोनो प्रचंड शत्रुओंका चित्र देखते ही औरगजेव चिल्लाकर कह उठा "मैं इस पहाड़ी चूहेको (शिवाजीको) जालमे वांध सकता हूं, परन्तु यह कुत्ता मेरा कालस्वरूप होकर उत्पन्न हुआ है"।

राजकुमार अकबरसे मिलकर वीरवर दुर्गदास उस समेत अपनी सेनाको लेकर औरंगजेवके पीछे पड़ा। वह मन ही मन विचारता था कि लूनी नदीके

किनारे पर बादशाह पर आक्रमण करूंगा। परन्तु चतुर औरंगजेबने अपना अभिप्राय पूर्ण करनेके निमित्त दूसरा ही यत्न किया अर्थात् वह दुर्गदासको लोभ दिखलाकर उसे वशीभूत करनेकी चेष्टा करनेलगा। उसने सबसे प्रथम उसको आठहजार मुहरें (भाटग्रन्थमे ४० हजार लिखा है) भेज दीं। चतुर राजपूत वीरने तत्काल ही उन्हें लेकर अकबरको देदिया। दुर्गदासका यह कर्म देखकर यवन राजकुमार उस्से अत्यन्त ही प्रसन्न हुआ और उसने उस पायेहुए धनका कुछ अंश उसके सर्दारो और और सेनापतियोको बांटदिया। औरंगजेबकी इच्छा पूरी न हुई। जब उसने देखा कि, राजपूत वीर लोभके वशीभूत न होगा तब उसने अपने विद्रोही पुत्रको लानेके लिये एक सेना भेजी। अकबर अत्यन्त ही भयभीत हुआ। वह समझ गया कि पिताके हाथमें जानेसे अनुग्रह प्राप्त होनेकी आशा नहीं है। मुझको अपमानित होना पड़ेगा और मेरी होनहार उन्नतिका मार्ग सदैवके लिये रुकजायगा। मनमे इस प्रकारका निश्चय होते ही उसने पिताकी रोषाग्निसे दूर रहनेका विचार किया उसको भयभीत देखकर दुर्गदासने कहा कि—"आपके जीवन मरणका मै उत्तरदाता हूं विना मुझको मारे बादशाह आपका वध नही कर सकता"। राजपूत वीरने केवल प्रतिज्ञा ही न की वरन जिस प्रकार वह प्रतिज्ञा पूरी हो यही यत्न करनेमें तत्पर हुआ। जेठे भांई सोनगदेवके हाथमे शिशु राजकुमारका रक्षणभार अर्पण कर आप एक सेनाके साथ दक्षिणकी ओर चला। जो प्रसिद्ध राजपूत वीर राजकुमार अकबरके शरीररक्षक होकर युद्धके निमित्त गये थे कवि कर्णीदानने उनका नाम लिखकर उनकी असीम कीर्तिका वर्णन किया है। इन सब राजपूतोमें चॉपावतो ही की संख्या अधिक थी। इसके अतिरिक्त जोधा और मैरतिया आदि देशी तथा यदु, चौहान, भाटी, देवड़ा, सोनगरा और मांगलिया आदि विदेशीय सर्दार दुर्गदासके साथ गए थे।

बादशाहने उनका पीछा किया। उसकी सेनाने राठौरोको चारो ओरसे घेर लिया, किन्तु दुर्गदासने एक सहस्र सैनिकोके साथ उसके पीछे २ आकर उत्तर दिशाको त्याग किया, और पक्षीकी समान शीघ्रतापूर्वक उसके डेरेको छोड़ गया। औरंगजेब उसका पीछा करते करते झालोरमे आया, उस नगरमे आते ही वह समझ गया कि इतने दिनतक मुझे भ्रम हुआ है, दुर्गदास झालोरकी ओर नहीं गया, वरन गुजरातकी दक्षिण ओर और चम्बलकी बाईं ओर राज कुमार समेत नर्मदा तीर पर जापहुँचा है। उसके क्रोधकी सीमा न रही, वह दारुण क्रोधसे अधीर होकर धर्म कर्म सब भूल गया यहॉतक कि उसने कुरानतक उठा कर फेक दिया। अनन्तर उसने आज़मको आज्ञा दी कि "उदयपुरके जीतने व अन्य किसी अभिप्रायसे मै वहाँ रहूंगा, तुम सबसे पहिले राठौरोंको निर्मूल कर अपने दुराचारी भाईको बंदी करो"। वायु जैसे प्रकाशके रोकनेवाले मेघोको छिन्न भिन्न कर देता है उसी प्रकार कमधज

---

(१) किसका जेठा भाई ? नाम नहीं लिखा। यदि दुर्गदासका जेठा भाई समझा जाय तो सोनग दुर्गदासका जेठा भाई नहीं था क्योंकि सोनग चॉपावत था और दुर्गदास करणोत।

(जो पदवी राठौरकी थी) वीरानुष्ठानने मेवाड़के समस्त क्लेश दूर कर दिये। बादशाह अजमेर पहुँचनेके दसदिन उपरान्त ही जोधपुर और अजमेरमें सेना रख स्वयं आगेको बढ़ा दुर्गा नामकी महिमाके प्रभावसे सैकड़ो शत्रु खेत छोड़ गये। दुर्गा स्वयं वासुकि और अकबर मंदरगिरि था; इन दोनोने एक दूसरेकी सहायतासे औरंगजेब रूपी सागरको मथन कर उससे १४ रत्न निकाले। इन १४ रत्नोमे हम लक्ष्मी और धन्वन्तरी-रूप धर्मको प्राप्त हुए।

खीची वशीय शिवसिंह और मुकुन्दकी अपेक्षा और कौन अधिक विश्वासी होगा? जबतक शिशु राजकुमार अजित आबू पहाड़की कन्दराओमे छिपा हुआ था तबतक उन्होने एक क्षणके निमित्त भी उसका संग न छोड़ा। दुर्गादासने केवल इन दोनो जनोकी और विश्वस्त सोनगरा सर्दारके छिपे रहनेकी बात कही थी। मारवाड़के समस्त सामन्त जानते थे कि वह कहीं छिपे हुए थे परन्तु कहां और किसके आश्रयमे थे यह किसीको भी ज्ञात न था। किसीने विचारा था कि वह जैसलमेरमे हैं किसीने सोचा था कि वह विक्रमपुरमे हैं और किसीने निश्चय किया था कि वह सिरोहीमे छिपे है। राठौर सामन्त अत्यन्त ही प्रशंसाके पात्र हैं क्योंकि यथार्थ वीरोके समान ही उन्होने वनवास व्रत लिया था। उनकी नाड़ियोने मारवाड़के गौरवकी रक्षा की थी। उनकी वीरतासे मोहित होकर राजा, राव और राना आदिने मुक्तकंठसे उनकी प्रशंसा की थी। उस प्रचंड आक्रमणमें मुसल्मानोंके पैशाचिक अत्याचारसे सभी ध्वंश होगया था, मारवाड़-के नौ सहस्र और मेवाड़के दश सहस्र नगरोमे मनुष्य न रहे थे। सभी शून्य वीभत्स श्मशानकी समान होगये थे, उसी वीभत्स श्मशानके ऊपर विचरण कर इनायतखांने दश सहस्र सेनाके साथ जोधपुरमें प्रवेश किया, और वह उसकी रक्षा करनेके निमित्त वहीं रहनेलगा। परन्तु चांपावत सर्दार मरुभूमिमे मेरुकी समान अटल और दुर्गादासका भाई सोनगरा निर्भय और दृढ़प्रतिज्ञ रहा। यवनग्राससे जोधपुर उद्धार करनेके निमित्त आज राजपूत वीर भयानक कार्यक्षेत्रमे अवतीर्ण हुए। कर्णोत क्षेमकर्ण, जोधावंशीय सबल, महेचा विजयमल, सूजावत जैतमाल, कर्णोत केसरी और जोधावंशीय शिवदान तथा भीम नामक दोनो भाइयोने अपनी २ सेनाऐं एकत्रित की, और जब उन्होंने सुना कि यवनराज अजमेरके चारकोस दूरपर आ उपस्थित हुआ है, उसी समय जोधपुरमे इनायतखांको रोक रक्खा। किन्तु शीघ्र ही बीस सहस्र मुग़ल सैनिक उसके उद्धारके निमित्त वहां आये। जोधपुरके द्वारपर और एक भयानक युद्ध हुआ। उसमे यदुवंशी केसरी और अनेक राजपूत सर्दार मारे गये। युद्धमे मारेजानेसे पहिले उन्होने सैकड़ो शत्रुओको मारा था।

यह भयानक युद्ध विक्रम सम्वत् १७३७ आषाढ़ वदी ७ के दिन हुआ था। शूरवीर सोनगने[1] अपनी प्रचण्ड तलवार और आग्नेयास्त्र चारो ओर चलाये औरंगजेब आगेको भी न बढ़ सका और न पीछेको हट सका; परन्तु एक स्थानमें खड़ा रहा। छछूंदर पर आक्रमण करके सांप जिस प्रकार विषके भयसे न तो उसको

(१) सोनग दुर्गादासका भाई नहीं था।

निगल सकता है, और न अन्धे होनेके डरसे उसको त्याग सकता है; उसी प्रकार औरंगज़ेव की अवस्था राठौरों पर आक्रमण करके हुई हरनाथ और कान्हसिंह (कान्हा-शंकर) सोजतको ओर अग्रसर हुए और गवादि पशुओंको लेकर दूर कर आये। अनन्तर एक भयानक युद्ध आरम्भ हुआ; इस युद्धमे मुसल्मानोंका सेनापति मारा गया, किन्तु हरनाथ और कर्ण तथा उनके अनेक जातीय कुटुम्बवालोने अपने२ हृदयका रुधिर देकर समरभूमिको गीला किया। इस युद्धका अन्त सम्वत् १७३८ के प्रारम्भमे हुआ था। इस भयानक विप्लवकालमे तलवार और महामारीने एकत्रित हो राज्यको शून्य करदिया था।

वीर सोनग इस भयानक समरक्षेत्रमे भीमाकार रुद्रकी समान विचरण करने लगा, उसके वीरानुष्ठानसे दिल्ली और आगरा वारंवार कम्पित होने लगे; वह वीर औरंगज़ेवको दुर्वल शशाकी समान देखता था। यवनराजने उसके निकट दूत भेजा। उसके दूत भेजनेका अभिप्राय संधिप्रार्थना और शान्तिकामना थी। उसने राजकुमार अजितको सातहज़ारी पदकी पदवी दी और उसके सजातीय भाइयोंको अजमेर देकर सोनगको वहाँका अधिकारी नियुक्त किया। उसने संधिपत्रमें यह भी लिख दिया था कि—"मैं ईश्वरको साक्षी करके इस संधिपत्र पर मुहर करता हूँ कि इसके विरुद्ध कदापि न होगा"। उस संधिपत्रको लेकर दीवान असदखाँ मध्यस्थ होकर वहाँ आया। उसने वहाँपर शपथ करके कहा कि इस संधिपत्रके अक्षर २ का प्रतिपालन होगा। संधिबंधन शेष होगया; किन्तु औरंगजेव एक क्षणके निमित्त भी न भूल सका; अकबरकी चिन्ता सैकड़ों विषैले सर्पोंकी समान उसके हृदयको डसने लगी। अन्तमे उसने दक्षिणकी ओरको यात्रा की। असदखाँ अजमेरमे और सोनग मेरता नगरमे निवास करने लगे; किन्तु सोनग औरंगज़ेवका कंटक था। उसने उस कंटकको दूर करनेके लिये ब्राह्मणको धन प्रदान किया ब्राह्मण मारण मंत्रसे दीक्षित हो सोनगको सूर्यमंडल भेजनेके लिये होमकुंडमें औषधिये और कालीमिरच डालने लगा। होमका अन्त हुआ, संधिबंधनके कुछ ही दिनोंके उपरान्त मारण मंत्रके प्रभावसे सोनगकी (प्रसिद्धिमें यह मृत्यु जादूसे बतलाते है पर अनुमान है कि उसे विष दिया गया) प्राणवायु शरीरसे बाहर होगई। (६ वीं आश्विन १७३८)

असदखांने औरंगज़ेवके निकट इस समाचारको भेजा। उसका कंटक दूर हुआ। आज वह निश्चित हुआ, वह निश्चित हृदयसे संधिपत्रके विरुद्ध होगया और प्रसन्नता पूर्वक दक्षिणकी ओर वढ़ने लगा। सोनगकी मृत्युसे देशमें अन्धकार छागया। मेरतिया

---

(१) भीषण विशूचिकाके आक्रमणसे इस महामारीका प्रादुर्भाव हुआ था। इससे प्रथम मेवाड़के इतिहासमें हमने वर्णन किया है कि राणा राजसिंहके राजत्वकालमें सन् १६६१ ई०में मेवाड़भूमि इस प्रकारके भयानक महामारीके आक्रमणसे उजाड़ होगई थी। इस समय मारवाड़ के इतिहासमे जो महामारीका वर्णन किया गया है इससे २० वर्ष पहले भी मेवाड़मे उक्त सर्व-नाश हुआ था।

कल्याणका पुत्र मुकुंदसिंह अपनी उपाधि (पदवी) को त्यागकर मातृभूमिके कल्याणसाधनमें दृढ़ प्रतिज्ञ हुआ। मेरताके निकट असदखाँकी सेनासे एक घोर युद्ध हुआ। विट्ठलदासका पुत्र अजवसिंह सेनाके अग्रभागमें युद्ध करते २ अनेक वीरोंके साथ रणभूमिमें मारा गया। इससे मुसल्मान अत्यन्त प्रसन्न हुए; किन्तु प्रभुभक्त राजपूतोंको दुःखकी सीमा न रही।

यह घनघोर संग्राम सम्वत् १७३८ कार्तिक शुक्ल २ को हुआ था। राजकुमार आज़म असदखाँके साथ रहा; इनायत जोधपुरमें रहने लगा और उसकी सेना देशके चारो ओर फैल गई; आज भी उनकी कबरें इधर उधर दिखाई दे रही हैं। चंडावलका स्वामी कूंपावत् शम्भु, वख़शी उदयसिंह और दुर्गादासके पुत्र तेजसिंह (जिसे महादेव की भुजा कहते थे) के साथ राठौर सेना ले रणस्थलमें पहुँचा। इसी समयमें फतहसिंह और रामसिंह यवन राजकुमार अकबरको दक्षिणमें रख आप स्वयं कूंपावत्की सहायताको आये। इनके अतिरिक्त और भी बहुतसे निर्भय राजपूत वीर उनके झंडाके नीचे आ इकट्ठे हुए। यह देशके चारो ओर, यहाँ तक कि मेवाड़तक फैल गये और उन्होने पुर मांडल नगरको ध्वंश कर वहाँके हाकिम क़ासिमखाँको मारडाला।

इन भीषण और वारंवारके युद्धोसे निर्भय राठौरोकी पराक्रमाग्नि अत्यन्त प्रचंडतासे क्षुभित हो उठी और यवन सेना अधिकतर क्षीण होगई थी। किन्तु मारवाड़के वीरकुल प्रायः निर्मूल होनेपर आगये थे। उस समय राठौरोंको पुनर्वार पहाड़ोका आश्रय लेना पड़ा। उन दुर्गम पहाड़ियोंकी कन्दराओके भीतर रहकर वे सुअवसर देख रहे थे, और समय २ पर शत्रुओंके ऊपर आक्रमण करके उन्हें छिन्न भिन्न करदेते थे। इसी प्रकारसे कई एक महीने बीत गये तब उन्होने जेतारनमे स्थित सेनाके ऊपर आक्रमण करके उन्हें दलित, वित्रासित और ताड़ित करदिया, और फिर तत्काल ही उन्हीं कन्दराओमे जाछिपे। इसी प्रकारसे सम्वत् १७३९ विक्रमीमें राठौरोने फिर जोर पकड़ा। इसी समयमे सोजतका दुर्ग चांपावत वंशीय विजयसिंह द्वारा विध्वंश हुआ और ठीक इसी समयमें योधावतोकी सेना लेकर रामसिंह उत्तर प्रदेशके युद्धमे लिप्त रहा। इस समय मिर्जातूर अलीनामक एक मुसल्मान चेराईका हाकिम था, राठौर

(१) यह अजवसिंह सोनगका भाई था और सोनगके पीछे राठौरोंने इसको अपनी सेनाका सेनापति बनाया था।

(२) पुरमाडल, दो भिन्न २ स्थान हैं। इन दोनोंका नाम पुर और मांडल है। यह दोनों ही मेवाड़के अन्तर्गत है। पुर मेवाड़का एक प्राचीन नगर है। कहा जाता है कि यह विक्रमादित्यके प्रथमसे ही प्रतिष्ठित है। यह दोनों नगर देखनेमें अत्यन्त सुन्दर हैं और इन दोनों ही स्थानमे जहाँ तहाँ चाँदीकी सामग्री गड़ी हुई पाई जाती है। पुर नगरकी अपेक्षा मांडल देखनेमें अत्यन्त ही रमणीय है। माडल मेवाड़के अन्तर्गत एक छोटा सा द्वीप है। यह चारोंओर बड़े २ बांधोसे घिरा हुआ है, उसके ऊपर नानाप्रकारके फल फूल हैं। निठुर मरहठोंके अत्याचारसे मांडलद्वीपकी शोभा बहुत ही न्यून होगई है। मांडलमें एक प्राचीन जय स्थंभ देखा जाता है। अजमेराधिपतिने महाराज विशाल देवको जीतकर यह जयस्तम्भ बनवाया था।

वीरोने उदयभान योधावत्‌को सेनासमेत लेकर आक्रमण किया । तीन घंटे तक बड़ा ही घनघोर संग्राम हुआ; रणभूमिमे हज़ारों मुसल्मानोकी लाहाशोका ढेर लगगया ।

जिस जेतारण युद्धमे चांपावत् उदयसिंह और मेरतिया मुहकमसिंहने राठौर सेनाको रणस्थलमें भेजा था, उसके लौटते ही दोनो वीर गुजरातकी ओर रवाना हुए । खैराल् नगरमे पहुँचते ही गुजरातके हाकिम सैयदमुहम्मदने उनको रत्नपुरकी पहाड़ियोमे घेर लिया । वह सारीरात अस्त्र शस्त्र लिये खड़े रहे । प्रातःकाल होते ही दोनो ओरसे युद्ध आरम्भ हुआ । कर्ण केसरी और भाटी गोकुलदास दीवानी विभागके समस्त कर्म्मचारियों समेत युद्धभूमिमे मारे गये । और रामसिंहने भी उसी दिन यहांपर प्राण त्यागे; किन्तु अगणित सेना और सामन्तोके मारे जाने पर भी अन्तमें मुसल्मानोंकी पराजय हुई । इसी साल भाद्रोके महीनेमे पाली नगर पर मुसल्मानों ने आक्रमण किया । तब नूरअलीके साथ युद्ध आरम्भ हुआ । तीनसौ राठौरोंने पांचसौ मुसल्मानोसे युद्ध करके उनको पराजित किया; उनका सेनापति अफ़ज़लखाँ घनघोर संग्रामके उपरान्त रणक्षेत्रमे मारा गया । जिस राठौर वीरने इस युद्धमें मुसल्मानोको पराजित किया था उसका नाम वल्लू था, इसके उपरान्त उदय-सिहने सोजतपर आक्रमण किया । जेतारण फिर नवीन बलसे बलवान हुआ । वैशाखमे मेड़तिया मोकमसिहने मेरतामे रहीहुई मुसल्मान सेनापर आक्रमण किया और सैयदअलीको मारकर मुसल्मानोको दूर भगादिया ।

इस प्रकारके अविश्रांत युद्ध और नरहत्याके साथ सम्वत् १७३९ भी अनन्त कालसागरमे लीन होगया । कालचक्रका एक चक्र पूरा हुआ; किन्तु इसके साथ राठौरोका अदृष्ट चक्र अनेक बार अनेको ओरको परिवर्त्तित हुआ । इस दीर्घकाल व्यापी युद्धमे राजपूत और यवनोका बहुतसा रुधिर व्यय हुआ; अनेक राठौर वीरोने स्वदेश रक्षाके निमित्त युद्धभूमिमे प्रसन्नतापूर्वक प्राण न्यौछावर कर दिये । किन्तु वह यथाशक्ति चेष्टा करनेपर भी मुसलमानोको निर्मूल न करसके । राठौराके अमित भुजविक्रमसे सैकड़ों मुसल्मान मरने लगे, परन्तु फिर उनके रक्तविन्दुसे मानो हज़ारो मुसल्मान उत्पन्न हो हो मुग़लसेनाको दृढ़ करने लगे किन्तु राजपूतोकी ओर जिन वीरोने प्राण त्याग किया, उनकी पूर्ति फिर किसी प्रकारसे भी न हो सकी; उनके अभावसे राठौर वंशकी जो हानि हुई उस हानिको कोई भी पूरा न कर सका । हिन्दू मुलल्मानोके इस भयानक संग्राममें राजस्थानके प्रायः सभी राजपूत राठौरोके साथ मिलगये थे; परन्तु जो इतने दिनोंतक उनके साथ न मिले थे वे भी धीरे २ मिलने लगे । सम्वत् १७३९ के अन्तमे जैसलमेरके भाटियोने राठौरोका साथ दे उनका सन्मान व गौरव स्थित रखनेके निमित्त प्रसन्नतापूर्वक अपने हृदयके रुधिरसे रणभूमिको गीला किया था ।

---

(१) जिन कुछेक राजपूत वीरोने वीरवर दुर्गादासके साथ जाकर राजकुमार अकबरको औरंगजेबकी रोषाग्निसे बचाया था । रामसिंह उनमेंका एक दूसरा सर्दार है ।

देखते २ नवीन वर्ष सम्वत् १७४० का आगमन हुआ, उसके साथ ही साथ मुसल्मानोंका उत्साह नवीन हो उठा। वे नये २ जय प्राप्त होनेके यत्न करने लगे। आजम और असदखाँ दक्षिणमे औरंगज़ेबसे जा मिले और इनायतखाँ अजमेरका हाकिम नियत होकर वहीं रहा। उस समय उसको यह आज्ञा दी गई थी कि राठौरोके साथ बराबर युद्ध होता रहे यहाँतक कि वर्षाकाल आनेपर भी युद्ध बंद न हो। इसी आज्ञानुसार इनायतखाँ युद्धमे तत्पर हुआ। मारवाड़के समस्त नगर और ग्राम मुसल्मानोके अधिकारमे थे यवनोके भारसे मारवाड़ थरथर कांपता था, जिस ओर देखो उसी ओर अनगिन्ते यवनोंकी भीषण भृकुटीं मानो अनेको बिभीषिऐं दिखाती थीं। इस विपुल यवन बलके विरुद्ध तलवार लेकर कुछेक राजपूत वीर किस प्रकारसे समरभूमिमें जा सकते है? अतएव देख सुनकर भी वे मेरवाड़ाको एक रक्षित स्थान जान उसीमे आश्रय ग्रहण करने लगे। देखते २ राठौर गण अपने २ कुटुम्बियों समेत उस मेरवाड़ाकी दुर्गम पहाड़ियोके भीतर एकत्रित हुए। इस निविड़ पर्वतश्रेणीके बीचमे छिपे रहकर वे सुविधा पाते ही यवनोके ऊपर आक्रमण करते और नगर व गाँवोको लूटकर पुनर्वार उसीमे प्रवेश करजाते। वे मुसल्मानोके असीम अत्याचारका बदला लेनेके लिये किसी भी सुअवसरको हाथसे न जाने देते थे। इस प्रकारसे पाली सोजत और गोड़वार आदि कई एक नगर और गाँव राठौरोसे दलित हुए। प्राचीन मंडोर नगर ख्वाजह शालहनामक एक मुसल्मान सेनापतिके अधिकारमें था, परन्तु भाटियोने उसपर आक्रमण करके उसे वहाँसे निकाल दिया। वैशाख महीनेमे बगड़ी नामक स्थानमे एक घोर युद्ध हुआ। उस युद्धमे रामसिंह और सामंतसिंह नामक दो भाटी सर्दारोने हज़ार मुसल्मानोको मारकर दोसौ सैनिकोके साथ समर भूमिमें प्राण त्यागकिये। इधर अनूपसिंहनामक एक सर्दार कमरसोत और कूंपावतो को ले लूनीके किनारेवाले मुसल्मानोका संहार करने लगा। उसके असीम पराक्रमसे उस्तरां और गांगाणी नामक दो दुर्गोसे मुसल्मान भाग गये। मोकमसिंह अपनी मेड़तिया सेनाके साथ अपनी प्राचीन पितृभूमिमे आकर मुसल्मानोपर आक्रमण कर २ उनको दलित और त्रसित करने लगा। उसके आक्रमणोंसे दुःखित होकर यवनसेनापति मुहम्मद अलीने दल सहित उसपर आक्रमण किया। तेजस्वी राठौर गण उस आक्रमणसे कुछ भी भयभीत न हो उससे युद्ध करनेपर कटिबद्ध हुए। उनके अमित पराक्रम और साहसको देखकर यवनसेनापतिने भयभीत हो युद्ध रोक रखनेका अनुरोध किया। सरल हृदय राजपूत उसके अनुरोधको अस्वीकार न करसके। किन्तु वह कुछ न समझ कर कपटीके कपटजालमे जड़ित हुए। संधिबंधन दोनो ही ओरसे एक समान हुआ। तत्पश्चात् दुष्ट यवनोने मेड़तियाँ सम्प्रदायके सेनापतिको विश्वासघातकता करके गुप्तभावसे मारडाला।

यवनोकी विश्वासघातकतासे राठौरोकी क्रोधाग्नि द्विगुणित प्रज्वलित हो उठी; वे अपना बदला लेनेके लिये मुसल्मानोपर जहाँ तहाँ आक्रमण करने लगे। हिन्दू मुस-

ल्मानोंका विग्रह धीरे २ और भी बढ़ उठा। सम्वत् १७४१ के प्रारम्भमे युद्ध विग्रह और विभीषिकाकी कुछ भी शांति न हुई । सुजानसिंह राठौर सेनाको ले दक्षिणकी ओर गया, इधर लाखा चांपावत और केशर कूपावत् भाटी और चौहानसेनाकी सहायतासे जोधपुरमे रही हुई मुसल्मानसेनाको निरंतर भय दिखाने लगे। सुजनसिंहके मारे जाने पर भाट कविने सेनापति संग्रामके निकट जाकर विनीतभावसे निवेदन किया कि आप अपने जातिवाले भ्रातृदलमे संयुक्त होकर यवनोको पराजित करो ।

संग्राम उस समय मंसब पदपर अभिषिक्त हो कुछेक भूमिसम्पत्तिका भोग करता था। वह कविकी प्रार्थनाको अस्वीकार न कर सका, शीघ्र ही राठौरसेना उसके झंडेके नीचे आ पहुँची। उसने शिवाणची पर आक्रमण कर वह नगर और वालातरा तथा पचभद्राको लूट लिया । इधर नगरमें मुसल्मानसेना रुकी हुई थी, इस कारण वह राठौरोंके सामने न आ सकी । सूर्य्यअस्त होनेके एक घंटा पहिले मरुस्थलीके समस्त द्वार वंद होगयेथे। यद्यपि दुर्ग असुरोंहीके हाथमें रहे परन्तु आवादियो मे अजितका ही जयनाद हुआ । वीर उदयभान अपनी योधावत् सेनाके साथ भाद्राजूनके सामने आ पहुँचा और उसने शत्रुपर आक्रमण कर उनके धन दौलत वा रसद आदिकी सामग्री लूट ली । जोधपुरमे रहेहुए मुसल्मान सैनिकोंने अपने उस धन आदि पर अधिकार करनेके लिये पुनर्वार चेष्टा की तथापि जोधावतोको जयके ऊपर जय प्राप्त हुई ।

पुरदिलखांने सिवाना और नाहरखांने मेवात तथा कुनारी पर अधिकार करलिया था। उनपर आक्रमण करनेके लिये चांपावत् दल मुकुलसरनामक स्थानमे इकट्ठा हुए। उसी समय समाचार आया कि नूरअली खानदान अगानीकी दो स्त्रियोंको बलपूर्वक हर लेगया है। इस समाचारके सुनते ही राठौरोको और भी क्रोध हो आया। शीघ्र ही रत्नसिंह राठौर सेनाको लेकर युद्ध क्षेत्रमे पहुँचा । उसने कुनारीपर पहुँचकर पुरदिलखाँपर आक्रमण किया। अभागा मुसल्मान सेनापति उसके आक्रमणको न रोक सका और ६०० सैनिकोंके साथ रणभूमिमे मारागया। उस दिन चैत्रमासकी नवमीको राठौरोंके केवल १०० मनुष्य मारे गये । यह हारनेकी वात सुनकर मिरजा, आशानीकी दोनो स्त्रियोको ले अति भयभीत हो तोदादा गांवकी ओर गया। तदनन्तर उसने कुकोचालमे पहुँचकर डेरा डाला। यह समाचार आसकर्णके पुत्र सवलसिंहके

---

(१) संग्रामसिंह किस खानदानमें पैदा हुआ था, और कैसे उच्चपद अभिषिक्त हुआ था; हम इसको प्रमाणित करनेमें असमर्थ हैं। तथापि इसके हृदयकी उदारतासे जाना जाता है कि इसने किसी वड़े वंशको उज्ज्वल किया था। *

(२) सिवाना इसका प्रधान नगर है।

---

* संग्रामसिंह जुझारसिंहका वेटा था। और वादशाही नौकर था। मगर नौकरी छोड़कर राठौरोंके दुःखमें शामिल होगया था। (प्रे० टी)

कानमें पहुँचा। वैसे ही वह अफीम खाकर यवनसेनापतिके विरुद्ध दौड़ा। यद्यपि मिरज़ाके यहां बड़े २ वीर थे तथापि सवलसिंहकी तीक्ष्ण तलवारने उसके हृदय श्रोणित को पानकर लिया। किन्तु भाटी सर्दार खण्ड खण्ड हो उसी स्थानपर मारा गया। रुधिरके कीचसे मार्ग निकलना कठिन होगया, और मुसल्मानोंके एक २ थाने उनके हाथसे निकल गये।

देखते २ सम्वत् १७४१ भी बीत गया तौ भी हिन्दू मुसल्मानोंके घोर संग्रामका अन्त न आया। इसके उपरान्त सम्वत् १७४२ के आरम्भमें लाक्षावतो और आशावतोंने सांभरमें आकर मुसल्मानोंके विरुद्ध युद्ध करनेकी तैयारी की। इधर दूसरे सामंत भी गोड़वारसे बाहर हो अजमेरके सिंहद्वार तक मुसल्मानों पर आक्रमण करते चले आये। इन सब साधारण युद्धोंसे राठौर वीरोंकी क्रोधाग्नि शांत न हुई। अन्तमें उन्होंने मेरताक्षेत्रमें इकट्ठे होकर यवनसेना पर आक्रमण किया। किन्तु उस युद्धमें मुसल्मानोंने विजयी होकर राठौरसेनाको छिन्न भिन्न करदिया। इस पराजयसे संग्रामसिंहकी क्रोधाग्नि और भी भड़क उठी। वह उनसे अपना बदला लेनेके लिये अत्यन्त आतुर हुआ। उसने सेना समेत जोधपुरके आसपासके गांवोंमें जाकर उनको जला दिया। तदनन्तर दूवाड़ानामक नगरमें पहुँच कर उसने अपनी सेना इकट्ठी की। उसके विकट उत्साहसे राठौरसेना उत्साहित हो गगनभेदी शब्द करने लगी। उसने शीघ्र ही जालौर पर आक्रमण किया। उस समय वहाँके हाकिमको विवश होकर वह नगर छोड़ना पड़ता, परंतु उस अवस्थामें उसपर किसीने भी अधर्माचरण नहीं किया। इस प्रकार १७४२ सम्वत् भी अनन्त कालसागरमें लीन होगया।

---

(१) कर्नल टाड्साहबका विचार है कि जब एक जन भाटीवीरने अपने इस कठोर अपमान का बदला लिया था। तब जानपड़ता है कि आशानी भटी खान्दानकी एक शाखा होगी।

आठवां अध्याय ८.

शिशुराजकुमार अजितके देखनेके लिये सर्दारोंकी प्रार्थना; राठौरोंके साथ कोटाके दुर्जनशाल का मेल, आबूकी ओर उनका बढ़ना; सर्दारोंसे अजितकी मुलाकात; सर्दारोंके साथ अजितका स्थान प्रतिस्थानमें घूमना; औरंगज़ेबका भयभीत होना; उसकी सहायताके लिये और भी कईएक राजाओंका आना; एकत्र हुए राठौरों और हाड़ाओंके प्रभावसे मारवाड़से मुग़लोंकी सेनाको दूर करना, पुरमांडलमें विप्लव; हाड़ा राजाका मारा जाना; दक्षिणावर्त्तसे दुर्गदासका आना; उसके हाथसे सफीखाँकी हार; सफीखाँका अजितको धोखा देनेकी चेष्टा करना; उसकी अकृतकार्यता और अपमान; मेवाड़के राजकुमार अमरसिंहका विद्रोह; राठौर. पर रानाकी अनुकूलता; अकबरकी दुहिताके लिये औरंगज़ेबकी संधिप्रार्थना; पहाड़ोंमें अजितका पुनर्वार आश्रय ग्रहण करना; विजयपुरका कांड; राठौरोंकी विजय; अपनी पौत्रीके लिये औरंगज़ेबकी आशंका; रानाके चाचाकी लड़कीके साथ अजितका ब्याह; युद्ध रोकनेके लिये पुनर्वार उद्योग; राजकुमारीका प्रत्यर्पण; राठौरोंका जोधपुरमें पुनर्वार अधिकार करना; दुर्गदासकी महानुभावुकता; अजितका राज्याधिकार; उसकी पुनर्वार दुर्गति; हिन्दुजातिकी दुर्दशा; अजितका पुत्रलाभ; दूनाड़ेकी लड़ाई; औरंगज़ेबकी मृत्युसे हिन्दुओंको आनन्द; अजितका जोधपुरमें फिर अधिकार करना; मुसल्मानोंकी दुर्गति; बहादुरशाहके नामसे आज़मका दिल्लीकी गद्दी पर बैठना; आगरा युद्ध; सम्राट्‌का मारवाड़ पर आक्रमण करनेका उद्योग; अजमेरमें उसका आगमन; वैविलारमें आना; अजितके निकट दूतका भेजना; मुसल्मानोंकी विश्वासघातकता; एकाएक जोधपुर पर आक्रमण करना; बादशाहके साथ अजितका जाना; राजाओंका असंतोष; उनका उदयपुर जाना; राजाओंका मेल; अजितका पुनर्वार जोधपुरमें अधिकार; अजमेरके सिंहासनपर जयसिंहको फिर गद्दीपर बिठानेके लिये अजितका उद्यम; सांभरका युद्ध; अजितकी विजय; जयसिंहके साथमें आमेरार्पण; अजितका बीकानेर पर आक्रमण, नागौरेंका उद्धार; राजाओंके ऊपर बादशाहका क्रोध; फिर मेल; अजमेरमें आगमन; बाहशाहके समीप राजाओंका जाना; और फर्मानका प्राप्त करना; कुरुक्षेत्रमे अजितकी तीर्थयात्रा; तीस वर्षके युद्धोंकी समालोचना; दुर्गदासका गुणकीर्तन; अभयसिंहकी जन्मपत्रिका।

जिस समय प्रभुभक्त राठौर वीर पूर्वोक्त प्रकारसे मुसल्मानोंके साथ युद्ध कर रहे थे, उस समय राठौरकुलका आशा भरोसा राजकुमार अजित उस घने वनमे धीरे २ बढ़ रहा था। उस दीर्घकालव्यापी युद्धमें जिसके लिये वीरोने प्रसन्नतापूर्वक अपना रुधिर बहाया था, अवतक उन्होने उसको नहीं देखा। सदैव युद्धभूमिमें रहनेके कारण उनको इतना भी अवसर न मिला कि, वे राजकुमारका एक बार भी दर्शन करते। इसीसे वे अवतक अपनी इच्छाको रोके हुए थे, किन्तु अब वह न रोक सके। सम्वत् १७४३ के प्रारंभकालमे ही चंपावत, कूंपावत्, ऊदावत, मेड़तिया, जोधा, करमसोत, और मरुभूमिके दूसरे सर्दार गण अपने राजाको देखनेके लिये अधीर हो उठे। उन्होंने खीची वंशीय मुकुंदके यहाँ दूत भेजकर उसको बुला भेजा और कहा कि—"हम एक बार अपने

राजाको देखेंगे, किन्तु मुकुन्दने उत्तर दिया कि जिसने विश्वास करके राजाको मेरे हाथमें समर्पण किया है, वह इस समय भी दक्षिणमें है। सरदार कुछ भी शांत न रह-सके। खींचीवीरका उत्तर सुनते ही उन्होंने एक स्वरसे कहा कि जबतक हम एकबार अपने स्वामीको नहीं देखेंगे तबतक भोजन पानमें हमारी रुचि नहीं होगी। उनका ऐसा आग्रह देख कर मुकुन्दने उनकी इच्छा पूर्ण की। तदनुसार वे सब एकत्रित हो आबू पहाड़के आश्रमकी ओरको चले। कोटाराज्यके हाड़ा राजा दुर्जनशालने दो हजार घुड़सवारो समेत उनका साथ दिया इस समय वह भी राजाके देखनेको बाहर निकला। सम्वत् १७४३ चैत्रमासकी अंतिम तिथिको सर्दारोंने राजाके दर्शनकर अपने नेत्र सार्थक किये थे। जिस प्रकार सूर्यकी किरणोंसे कमल खिल उठता है, उसी प्रकार शिशुराज कुमारको देखते ही राठौरोंका मानसकमल विकसित हो उठा, और जिस प्रकार भौंरा कमलरसको पान करता है, उसी प्रकार वे सब राजकुमारके रूपसुधाका पान करने लगे। उस सभामें उदयसिंह, संग्रामसिंह, विजयपाल, तेजसिंह, मुकुन्दसिंह और नाहर आदि चंपावत, राजसिंह जगतसिंह और सामन्तसिंह आदि ऊदावत और रामसिंह, फतहसिंह, और केसरी आदि कूंपावत, सरदार गण उपस्थित थे। इन सर्दारोंके अतिरिक्त पुरोहित, खीचीमुकंद, पड़िहार, और जैनश्रावक यती ज्ञानविजय उस राजमंडलीकी शोभाको बढ़ा रहे थे। शुभलक्षणमें अजीत सबके सामने प्रगट हुआ। पहले हाड़ारावने नए राजाको अभिवादन किया। अनंतर मारवाड़के समस्त सामंतोंने उसे स्वर्ण, मणि, मुक्ता और अश्वादि भेटमें दिये।

इनायतखाँ द्वारा यह सब समाचार औरंगजेबको विदित हुए, राजसभामें उपस्थित होकर मुसल्मान सेनापतिने ऊँचेस्वरसे कहा "महाराज! अधिपतिके न रहते हुए भी जिन्होंने आपसे बहुत समयतक युद्ध किया है, वे अब अपने राजाको पाकर इतने उत्सोहित होगये है कि जिसको आप स्वयं ही विचार सकते हैं अब बिना अधिक सेना के उनका सामना नहीं होसकता"।

आनंदसे प्रसन्न हो जय २ कार करते हुए राठौर सरदार शिशुराजाको आहोरमें लेगये, आहोरके अधिपतिने मौक्तिकके साथ "बाधू" विधान कर बहुतसे घोड़े भेटमें दिये। उस राठौर सामंतशिरोमणिके दुर्गमें अजितसिंहका बड़ाभारी सत्कार किया गया; और उसी स्थानपर टीकादोड़की रीति पूरी की गई। उसने आहोरके दुर्गसे विदा ली। मार्गमें रायपुर, बीड़ा और बारोद उसके अधिकारमें आये, वहाँके सरदार गणोंने उनके निकट उपस्थित हो पूजा भेट आदि की। अनंतर वह आसोप दुर्गमें पहुँचा, वहाँ कूंपावत् सर्दारने उसका बड़ाभारी सत्कार किया। आसोपसे भाटी सरदारकी जागीर लवेरा लवेरेसे मैरतियोंकी निवास-भूमि, रियाँ और, और रियाँसे करमसोतोंके खीमसरमें पहुँच कर वह वहाँके सरदारोंकी पूजाको प्राप्त हुआ। अजित इस प्रकारसे जिस स्थानको गया, उसी स्थानपर सरदार उसका सत्कार कररउसके झंडेके नीचे इकट्ठे होने लगे, वह खीमसरसे पाबूराव धांधलके

(१) राठौर वीर पाबूराव शूलकी युद्धविद्यामें प्रसिद्ध वीर था।

निवासस्थान कोल्ह नगरमे पहुँचा। उस समय पावूरावने अपनी सेना लेकर उसका साथ दिया। अंतमे सम्वत् १७४४ भाद्रमासकी दशमीको राजकुमार पोकरणमें पहुँचा, वहाँ दुर्गदासने दक्षिणसे लौटकर उसके दलको पुष्ट किया।

वधावना और टीकाडोरसे अजितकी होनहारता प्रगट हुई। इन दो मांगलिक अनुष्ठानोसे राठौरोंका उत्साह और साहस दूना वढ़ गया। पराक्रमी दुर्जनशाल आदि वीरोने जव उस जलते हुए उत्साह और साहसकी अग्निमें इंधन दिया तव राठौरोंका पराक्रम अत्यन्त ही वढ़गया, इसको पाठक सहज ही समझ सकते हैं।

इनायतखाँ अत्यन्त ही भयभीत हुआ। राजपूतोके इस नवीन सेना वलको दमन करनेके अभिप्रायसे उसने एक नवीन सेना सजाई, परन्तु मृत्युने उसपर आक्रमण कर उसकी समस्त आशाको तोड़ दिया, इससे औरंगजेव अत्यन्त ही दुःखित हुआ। उस समय उसने एक और भी यत्न किया, मुहम्मदशाहनामक एक मनुष्यको राजा यशवंतका पुत्र कह कर उसे मारवाड़के आधिपत्यमे नियुक्त किया; और अजितको पंचहजारी पदपर प्रतिष्ठित कर उसकी स्वाधीनता स्वकिार करनेको कहा। परन्तु अभागा महम्मदशाह उस राजसन्मानको न भोगसका। जोधपुरकी ओर आते २ उसने मार्गमे प्राणत्याग किये। अनंतर इनायतखाँके वदलेमे सुजावतखाँ मारवाड़का सेनापति नियुक्त हुआ। तत्पश्चात् राठौर और हाड़ा एकताके सत्रमे वँधकर मारवाड़का शत्रुओके हाथसे उद्धार करनेके लिये मुसल्मानो पर आक्रमण करने लगे, मालपुरा और पुरमांडलमे जो मुसल्मान सेना थी वह सव राजपूतोकी तीक्ष्ण तलवारसे छिन्न भिन्न होगई। इस पुरमांडलके किलेको घेरनेके समय हाड़ा राजाने एक गोलेसे प्राणत्याग किया; विजयी राजपूत इस स्थानमें ८ सहस्र मुहर मेना व्ययके लिये लेकर मारवाड़को लौटे। इधर पुरोहित और दीवान गण अजितके राज्यमे धन इकट्ठा कर उसकी सहायता करने लगे। इस प्रकार सम्वत् १७४४ भी वीत गया।

सम्वत् १७४५ के प्रारंभकालसे ही सुजाअतखाँने मारवाड़पर कर वाँधनेका प्रस्ताव किया। प्रस्तावके समयमे उसने प्रतिज्ञा करली थी कि अगर राठौर विदेशी वाणिज्यका

---

(१) इस अनुष्ठानमें एक मनुष्य मोतियोंसे भरा हुआ एक पीतलका वर्तन नवीन राजाके मस्तक पर रख उसकी परिक्रमा करता है।

(२) इस समयमें वीर दुर्जनशाल चम्पावत् सर्दार सुजानसिंहकी लड़कीसे व्याह करनेके निमित्त आया था। यद्यपि वह विवाह करनेको आया था परन्तु उसने युद्धमें साथ देनेके लिये कुछ भी टालाटूली न की; उस समय किसीने भी उसके हृदयको उत्तेजित न किया था। वह स्वयं ही साहस और स्वदेशानुरागसे उत्तेजित और उत्साहित हो उठा था।

(३) जब दिल्लीमें महाराज जसवन्तसिंहके कबीलोंकी रक्षाके वास्ते राठौर औरंगजेबकी सेनासे घोर युद्ध करके मारवाड़को चले आये थे तब दिल्लीके कोतवालने एक बालकको ले जाकर बादशाहको दिखाया था कि यह जसवन्तसिंहका लड़का है। बादशाहने उसको मुहम्मदीराज नाम रखकर, पाला था। वह सम्वत् १७४५ में प्लेगसे मर गया।

आदर करेंगे तो जो कुछ वाणिज्यपर कर आवैगा उसका एक चतुर्थांश मिलैगा, इसी बातमें वह सम्मत हुआ। अनंतर इनायतका लड़का जोधपुर छोड़कर दिल्लीकी ओर बढ़ा। उसके रैनवल नामक स्थानमें पहुँचते ही जोधा हरनाथने उसपर आक्रमण कर उसकी धन दौलत और उसके साथकी स्त्रियोंको छीन लिया। खाँसाहब भयभीत हो शरण पानेके अभिप्रायसे कछवाहोंके निकट गये। उसे संकटसे उद्धार करनेके लिये सुजाअतबेग अजमेरसे निकला, किन्तु उसे भी दुर्दशाग्रस्त होना पड़ा। चांपावत् मुकुन्ददासने उसपर आक्रमण कर उसका सर्वस्व छीन लिया।

सम्वत् १७४७ में सफीखाँ अजमेरका सूवेदार नियत हुआ। दुर्गादासने उसपर आक्रमण करनेकी इच्छा की। सफीखाँ एक पहाड़ी मैदानमें सेना समेत खड़ा हुआ। दुर्गादासने उसी स्थानमें उसपर आक्रमण कर उसे अजमेरकी ओर भगा दिया। यह सब समाचार औरंगजेबको भी ज्ञात हुआ। उसने सफीखाँको लिख भेजा कि अगर तुम दुर्गादासको परास्त कर सकोगे तो राज्यमें तुम्हारा सबसे बड़ा दर्जा किया जायगा और अगर तुम्हीं परास्त होगे तो तुमको वाला भेजकर पदच्युत किया जायगा, और तुम्हारे स्थान पर शुजाअत नियत किया जायगा।" सफीखाँ, बड़ी विपतमें पड़ा उसने अपना कार्य सिद्ध होनेका उपाय न देखकर अजितको छलकर अपनी प्रतिष्ठा स्थिर रखनेका यत्न किया, और शीघ्र ही राठौर राजकुमारको इस आशयका एक पत्र लिखा कि-"आपका पितृराज्य आपको देनेके लिये मुझे सनद मिली है, अतएव राजाके प्रतिनिधि स्वरूप आप यहाँ आकर उसे लेजावें।" इस पत्रके पाते ही अजित बीस सहस्र राठौर सेनाके साथ अजमेरकी ओरको बढ़ा "परन्तु शत्रुकी कुछ बदनियत है या नहीं" यह जाननेके लिये उसने मुकुंद चांपावतको आगेसे भेजदिया। पर्वतश्रेणीके दूर स्थित संकीर्ण मार्गके सामने ही आकर मुकुंदने शत्रुकी दुरभिसंधिको जान लिया; उसने लौटकर समस्त ब्योरा अजितको कह सुनाया परंतु राजकुमार कुछ भी भयभीत न हो अपने सरदारोंसे कहने लगा कि-"सरदारो! जब हम इतने निकट आ पहुँचे हैं तब आओ एक बार अजय दुर्गको भली प्रकारसे देखकर खाँनसाहबका सन्मान ग्रहण करें; यह कहकर अजित दल समेत नगरकी ओर बढ़ा। उस समय अजितकी वश्यता स्वीकार करनेके अतिरिक्त दुष्ट सफीखाँसे और कुछ न बन पड़ा, उसको तड़फानेके लिये एक जनने कहा कि-"आओ! हम नगरको जला डालें; नगर और आत्मरक्षाकी चिन्तासे व्याकुल हो सफीखाँ काँपने लगा, और अजितको संतुष्ट करनेके लिये उसने धनरत्न और अश्वादि भेंटमें दिये।

सम्वत् १७४८ के साथ ही साथ मेवाड़में नाना प्रकारका विप्लव उत्पन्न हुआ; राजकुमार अमरने अपने पिता राना जयसिंहके विरुद्ध तलवार उठाई। मेवाड़राज्यके समस्त सरदार उसके साथ एकत्रित हुए। राना भयसे गोड़वाड़ राज्यमें भाग गया; और घाणेरावमें सेना इकट्ठी करने लगा, अमर उसपर आक्रमण करनेमें तत्पर हुआ,

(१) एक घृणा दिखानेवाली वस्तु।

तव राना जयसिंहने राठौरोंसे सहायताकी प्रार्थना की, शीघ्र ही मेड़तिया गण उसकी सहायताको आये, थोड़े ही समयमें अजितने दुर्गादास और भगवान्को भी भेजा, वे दोनों जोधावंशी रिड़मल और मारवाड़के आठ सामन्त सम्प्रदायोंको एकत्रित कर राणाकी सहायताके निमित्त मारवाड़से बाहर हुए किन्तु उनकी सेनाकी हानि न हुई। चूंडावत और शक्तावत् तथा झाला और चौहानोंने विदेशियोंकी सहायता ग्रहण न करनेसे पहिले ही पिता पुत्रके विवादको दूर कर दिया। इस प्रकार सिंहासनरक्षाके निमित्त राना मारवाड़के निकट कृतज्ञताके पाशमे वंध गया था।

राठौरोका साहस और वल देखकर औरंगजेबके मनमें अनेक प्रकारकी शंकाएं उठ रही थीं, इस समय और भी एक नवीन शंकाने उसपर आक्रमण किया। 'राजकुमार' अकवरकी एक पुत्री दुर्गादासके आश्रयमें थी, अजितको युवा अवस्थामे देख औरंगजेव उस समय उस लड़कीकी इज्जतके लिये शंकित हुआ, इस लिये उसने राठौरोंके साथ संधि करलेनेकी इच्छा की। नारायणदास कुलवी मध्यस्थ हुआ, इस संधिवंधनकी कथा वार्ता जवतक हुई तवतक सफीखॉं भी शत्रुभावको छोड़े रहा। इस प्रकारकी वातोंसे सम्वत् १७४९ भी वीत गया।

किन्तु मुसल्मान चुपचाप न रहे। १७५० मे जोधपुर जालौर और सिवानाके मुसल्मान हाकिमोंने अपनी २ सेनाको एकत्रित कर अजितपर आक्रमण किया। अजित पुनर्वार पहाड़ोंमे आश्रय लेनेको विवश हुआ, वह वल्लभवंशी अक्षोके साथ यवनोंके सन्मुख हुआ, परन्तु प्रति मास उसको पराजित होना पड़ा। इसी समयमे मुसल्मनोंने एक वड़े भारी पवित्र सांड़को मार डाला, इससे चांपावत् वीर मुकुंदघासने उनपर आक्रमण किया। मोकलसर नामक स्थानमें दोनों दल परस्पर सन्मुख होकर खड़े हुए, मुकुन्ददासने जय प्राप्त कर चांकके हाकिम और उसकी सेना व सामंतोंको वंदी कर लिया।

इस पराजयको मुसल्मानोंके कुग्रहका अग्रदूत कहना चाहिये। क्योंकि इसके थोड़े ही दिन उपरान्त अर्थात् सम्वत् १७५१ में वह ऐसे संकटमे पतित हुए कि अनेक जनपद और नगरोंके निवासियोंने राठौरोंकी अधीनता स्वीकार की, उसमेंसे किसीने चौथ और किसीने कर दिया, और वहुत तो इस युद्धसे दुःखित हो तथा खानेपीनेकी सामग्री इकट्ठा न कर सकनेके कारण राठौरोंके दलमें संयुक्त होने लगे। इस साल कासिमखॉं और लश्करखॉंने अजितके विरुद्ध युद्धकी यात्रा की, अजित उस समय विजय पुरमें था; उनका आक्रमण रोकनेके लिये दुर्गादासका पुत्र सेना समेत उनके सन्मुख हुआ। शीघ्र ही युद्धका आरंभ हुआ, अंतमें सफीखॉंको पराजित होना पड़ा। वर्षके उपरान्त वर्षके वीतनेसे जैसे २ अजितकी अवस्था वढ़ने लगी वैसे ही वैसे राठौरोंका उत्साह भी वढ़ने लगा, इधर औरंगजेव अपनी पौत्रीकी वयोवृद्धिके साथ ही साथ दुःखी होने लगा, अकवरकी पुत्रीके लिये वह क्षणभरको भी कभी निश्चिन्त न रहसका। उसने क्षणभरके लिये भी उसके छुटानेकी चेष्टा न छोड़ी। उसने जोधपुरके हाकिम

सुजाअतखाँको लिखा कि जिस किसी उपायसे हो और जितना व्यय करनेसे हो, मेरे सन्मानको रक्खो।

इसी वर्ष राणाने अपने छोटे भाई गजसिंहकी लड़कीके साथ अजितका सम्बन्ध स्थिरकर मुक्ताजटित नारियल और रत्नजटित अम्बाड़ियोंसे सुसज्जित दो हाथी और दश घोड़े भेजे, यह सब भेट आदरपूर्वक ग्रहण की गई, और ज्येष्ठ मासमें राठौर राजकुमारने उदयपुर जाकर शिशोदिया कुमारीसे पाणिग्रहण किया, और आषाढ़मासमें अजितने एक और व्याह देवलियामें किया।

बादशाह औरंगजेब अपनी पौत्रीका ध्यान क्षणभर भी न भूल सका, वह सुलतानी के छुटानेके लिये रात दिन व्याकुल रहता समय २ पर अजितको भी पत्र लिख भेजता, और समय पर दूतद्वारा उसके छोड़ देनेकी भी प्रतिज्ञा करता। सम्वत् १७५३ मे दुर्गादाससे उसका पत्रव्यवहार होने लगा; अंतमें सुलतानीको लौटा कर अजित अपने पितृसिंहासनको प्राप्त हुआ। सम्राट्ने दुर्गादासको पंचहजारी पदपर प्रतिष्ठित करना चाहा परन्तु दुर्गादासने उसे स्वीकार न करके कहा कि "आप इस पदके बदले मुझे जालौर सिवानची सांचोर और थिरादको देदो"। दुर्गादासने सुलतानी की जिस यत्न और सन्मानसे रक्षा की थी उसे जानकर औरंगजेबने उसकी बड़ी प्रशंसा की।

सम्वत् १७५७ के पौषमासमें अजित पुनर्वार अपने पितृसिंहासनको प्राप्त हुआ। जोधपुरमें पहुँचकर उसने उस नगरके पाँचों द्वारोंके मध्यमें एक २ भैंसा बलि दिया था। सुजाअतखाँके मरजानेसे शाहजादा सुलतान उसके आगे २ मार्ग दिखलाता हुआ चला था।

---

(१) प्रतापगढ़ देवलिया यह छोटी रियासत मेवाड़की है इसे महाने बसाया था इसकी उत्पत्ति और प्रतिष्ठाका वर्णन राजस्थान प्रथमखण्डमें देखो।

(२) अजितने सुलतानीको लौटाई और न उसके पलटेमें पितृसिंहासन प्राप्त किया। दुर्गादासने लौटाई थी और उसीको मनसबमें ऊपर लिखे परगने मिले थे और यही कारण अजितसिंह के दुर्गादाससे नाराज होनेका हुआ था। उर्दू अनुवादमें भी अजितसिंहका सुलतानीको लौटाना नहीं लिखा।

(३) यहांपर एकबार ही चार वर्षका वृत्तान्त छूट गया है, हम नहीं कह सकते कि, यह चार वर्ष क्योंकर रह गये, और पता नहीं लगा। टाड्साहबने लिखा है कि कवि कर्णीदानके मूलग्रंथमें इन चार वर्षोंका कोई विवरण नहीं है, अथवा कोई लिखने योग्य बात न होनेसे अनावश्यक समझ कर छोड़ दिया है, इससमय यह बात ध्यानमें नहीं आती कि क्यों ऐसा हुआ, विदित होता है कि मुसल्मान उस समयमें दक्षिणकी लड़ाइयोंमें लगे रहे थे, इससे राजपूत जातिके लिये शांति हुई थी। और यही कारण है कि उस समय मारवाड़मे कोई वर्णनीय बात नहीं हुई।

(४) निश्चय राजकुमार आजितको यहां शाहजादेके नामसे लिखा गया है, उस समय वही गुजरातका प्रतिनिधि सरदार था।

सम्वत् १७५९ में आजमशाहने पुनर्वार जोधपुरपर आक्रमण किया और अजित जालौरमे वास करनेको विवश हुआ, उसके कोई २ सरदार शत्रुओंकी सेवा करने लगे। और किसी २ ने राठौरोंका आश्रय ग्रहण किया। राना भी इस समय विवश व निरुपाय था; उस समय केवल एक लिंग भगवान्के अतिरिक्त और किसीपर उसका आशा भरोसा न था। इधर आमेरेश्वर दक्षिणमें यवनराजकी सेवामे तत्पर था। मुसल्मानोंके पापभारसे चारौं पाद पूर्ण हो उठे; वह यहाँ वहाँ, यहाँतक कि, मथुरा, प्रयाग और ओकामंडलमे भी गो हत्या करने लगे, दारुण अत्याचारसे पीड़ित होकर योगी और वैरागी देवताओंके आश्रयकी प्रार्थना करने लगे; परन्तु उससे कुछ भी फल न हुआ, हिन्दुओंका प्रताप जितना ही जितना क्षीण पड़ता जाता था मुसल्मानोंका अत्याचार उतना ही उतना बढ़ता जाता था, इसी वर्ष अर्थात् सम्वत् १७५९ माघमासमे मिथुन लग्नमे अजितकी प्रधान महिषी (रानाके भाईकी पुत्री) ने एक पुत्र उत्पन्न किया। अजित पुत्रका मुख देखकर आनन्दके सागरमे मग्न हुआ और उसका नाम अभयसिंह रक्खा।

इसके पीछे कविश्रेष्ठ कर्णीदानने लिखा है कि "यूसुफखाँ इतने दिनोंतक जोधपुरके हाकिम अर्थात् प्रधान शासन कर्त्ता पदपर नियत था। इन्होंनें जोधपुरमे आते ही बादशाहकी दी हुई मेरतादेशकी शासनसनद अजितके हाथमे देकर उक्त देशके शासनका अधिकार भी अजितके करकमलमे अर्पण किया। मेरतिया सरदार कुशलसिंह एवं धांधल गोविन्ददासने भारको ग्रहण करनेकी आज्ञा दी, इन्द्रसिंहके पुत्र मोहकमेसिंह जो अजितकी बाल्यावस्थासे ही उसकी रक्षा करते थे वह अजितकी यह अवस्था सुनकर महादुःखी हुए। जब उनको यह भार न मिला तब विचारने लगे कि अजितने हमै उचित पुरस्कार नहीं दिया है। अस्तु उन्होंने बादशाहको इस मर्मका पत्र लिखा कि यदि आप मुझे मारवाड़के सेनापतिका पद दें तो मैं वहाँ हिन्दू मुसल्मान दोनो जातियोंके लिये संतोषप्रद शासन कर सकता हूँ"।

"सम्वत १७६१ में राठौर जातिके चिर शत्रु यवनोंके सौभाग्यका सूर्य मानो अस्त होगया। दुरात्मा औरंगजेबने समस्त भारतवर्षमें हिन्दुओंके ऊपर जो लोमहर्षण

---

(१) अभयसिंहका जन्म शिशोदिया रानीसे नहीं हुआ था किन्तु चौहान रानीसे हुआ था जो महाराज अजितसिंहकी पटरानी, गांव होटल् परगना सांचौरके चौहान चतुर्भुज दयाल दासोत् की बेटी थी। उर्दू तर्जुमेमें भी अभयसिंहका जन्म चौहानरानीसे होना लिखा है। शिशोदिया रानीके पुत्रका नाम तो सुरतानसिंह था।

(२) उर्दू अनुवादसे इस सनदका मुरशिदकुलीखाके हाथसे दिया जाना लिखा है जो यूसुफकी जगह पर जोधपुरमे आया था।

(३) उर्दू अनुवादमें यों लिखा है कि, कुशलसिंह मेड़तिया और धांधल गोविन्ददासको मेड़तेमें जाकर कबजा करनेका हुक्म हुआ।

(४) यहां भी कुछ भूल मालूम होती है क्योंकि इन्द्रसिंह और मोहकमसिंह तो ठेठसे ही अजितसिंहसे शत्रुता रखते थे।

अत्याचर,उत्पीड़न और निग्रह करके कालान्तकके समान अकबरके सिंहासनको कलंकित किया था तथा चारोओर अपने प्रबल प्रतापका विस्तार कर पाशविक बलके कठिन स्वभावका परिचय दिया था, इस समय मानो उनका वह पैशाचिक बल विक्रम क्रमशः क्षीण होचला। हिन्दूजातिके हिन्दूधर्मके सौभाग्य द्वारके मानो फिर खुलनेके पूर्व लक्षण दृष्टि आनेलगे, जो मुगल शासनकर्ता मुरशिदकुलीखाँ प्रबल पराक्रमके साथ मारवाड़को शासन करता था, इस वर्षमे माफरखाँ उसी पदपर नियुक्त होकर जोधपुरके राठौर राजके यहाँ आया। मोहकमसिंहने अजितके आचरणसे क्रोधित हो सम्राटके पास गुप्तभावसे जो पत्र लिखा था इस समय वह अजितके हाथमे आया। मोहकमसिंह अजितसे अत्यन्त भयभीत हो अपने सेवकोंके साथ राठोरोंके डेरोंको छोड़कर मुगल बादशाहकी सेनाके साथ जा मिले(१)। अजितने बड़ी शीघ्रतासे यवनोंकी सेनाके विरुद्धमे युद्धकी यात्राकर दूनाडा नामक स्थानमे महायुद्ध प्रज्ज्वलित करदिया, उस भयंकर युद्धमे बादशाहकी सेनाके एक वार ही परास्त होनेसे और ईंदावत सम्प्रदायके उक्त मोहकिमसिंहसे निहत होकर अपनी राजद्रोहिताके उपयुक्त फलको पालिया(२)। "सम्वत् १७६२ मे यह संग्राम हुआ था।"

"सम्वत् १७६३ मे बादशाहके लाहौरमे स्थित प्रतिनिधि इब्राहीमखा(३) लाहौरसे गुजरातमे जाकर कुमार आजिमके हाथसे वहाँके शासनका भार ग्रहण करनेके लिये मारवाड़से चले गये(४)। चैत्रमासके कृष्णपक्षकी द्वितीयाको(५) राठौरोंने आनंददायक समाचार पाया कि औरंगज़ेबकी मृत्यु होगई। इसको सुनते ही भारतके प्रत्येक हिन्दूकी समान राठौर अत्यन्त आनदके समुद्रमे मग्न होगये, औरंगज़ेबकी मृत्युसे हिन्दुजातिने मानो कृतान्तके कराल ग्राससे उद्धार पाया। अजित स्वजातिके प्रधान शत्रुकी मृत्युका समाचार पाते ही सेना सजाकर चैतमासकी पंचमीको घोडेपर सवार हो जोधपुरकी ओरको चले गये। और राजधानीके तोरणद्वारपर जाते ही उन्होने जातिकी रीतिके अनुसार

---

(१) उर्दू तर्जुमेमे राठौरोंके डेरोंको नहीं वरन् शाहजादेसे अलग होकर बादशाही फौजके शामिल होना लिखा है।

(२) ऐसा जाना जाता है कि ईंदावत सम्प्रदायका विशेषण मुहकमसिंहके साथ कहा गया है क्योंकि मारवाड़ी महावरेसे वा बोलचालसे मुहकमसिंह इन्द्रावत यानी इन्द्रसिंहका बेटा था। बादशाही सेना मुहकमसिंहसे नहीं निहत हुई, उर्दू तर्जुमेसे स्वयं मोहकमसिंहका निहत होना पाया जाता है। पर मोहकमसिंह उस लडाईमें निहत नहीं हुआ था, भागा था। यह बात मारवाड़के नव्य इतिहासोंसे सिद्ध होती है।

(३) इब्राहीमखाँ बादशाहका साला था।

(४) उर्दू अनुवादमें यों लिखा है कि सं० १७६३ में लाहौरका बादशाही सूबेदार इब्राहीमखाँ जो बादशाहका समधी था गुजरातीकी सूबेदारीका चार्ज अजीमसे लेनेके लिये रास्ते चलता हुआ मारवाड़से निकला।

(५) शुक्लपक्ष द्वितीया चाहिये क्योंकि औरंगज़ेबका देहान्त चैत्र कृष्ण अमावस्याको हुआ था।

तुरन्त ही भैंसोका वलिदान किया, असुरगण (यवन) अजितको सेनासहित आता हुआ देखकर अत्यन्त भयभीत होकर अपने प्राणोकी रक्षाके लिये महाव्याकुल होगये। उनमेंसे वहुतसे तो प्राणोके भयसे भागने लगे और वहुतसे मारे भयके गुप्तभावसे छिपने लगे। अजितको आता हुआ देखकर यवन शाशनकर्त्ता मारेडरके योधगिरीसे नीचे उतर आये और अजितने अपने पिताकी राजधानी जोधपुरके महलमे प्रवेश किया। छत्तीस वर्षतक दारुण कष्टको भोग कर जो राठौर जाति यवनोंके प्रति अत्यन्त क्रोधित हुई थी, उनके हाथमें पड़कर उन्हें यवनोपर किंचितमात्र भी दया न आई। यवन निराश हो प्राणोके भयसे चारो ओरको भागने लगे। उन्होने मारवाड़मे जो घोर अत्याचार करके अतुल धन संग्रह किया था वह समस्त धन आज फिर राठौर जातिके हस्तगत होगया। राठौर गण अपना वदला लेनेके लिये उन भागे हुए वर्वर यवनोको वंदी करने लगे। यद्यपि वहुतसे यवनोंने उस घोर विपत्ति से अपनी रक्षा भी की। परन्तु अन्तमें वह सभी छिन्नभिन्न देह होकर भाग गये अनेक तो राठौर सामन्तोंके निकट तथा हिन्दुओके देवमंदिरोंकी शरणमे गये। राजपूतोंका यह स्वभाव ही था कि वे निराश्रयको अवश्य ही अपने यहाँ आश्रय देते थे, इस कारण वे शरणागत यवन सरलतासे आश्रय पाने लगे। यवनोकी सेनाके प्रधाननेताने स्वयं कूंपावतोके अवतारितद्वार देवालयोंकी शरणमे जाकर अपने प्राणोकी रक्षा की। इस समय राठौर गणोंने सव प्रकारसे जय प्राप्तकी, समस्त राठौरोने उन भागे हुए यवनोंके ऊपर आक्रमण करके अपना वदला लेलिया, उस समय यवनोंने अपने प्राणो की रक्षाके लिये भागनेके अतिरिक्त और कोई उपाय न देखा। यवनोंने हिन्दूभिखारियों का भेष धारण कर "सीताराम हरगोविन्द" देवताओंके नाम उच्चारण करतेहुए भिक्षा माँगकर प्राण वचाए और रात्रिके समय एक करके एक ग्रामसे दूसरे ग्रामको भागने लगे। मुल्लाओकी स्फटिक माला इस समय राम नाम जपने लगी, यवनोंने विचारा कि डाढ़ी देखकर हमारी पहचान होजायगी, तव हम अवश्य ही पकड़े जायँगे इस भयसे गुप्तभावसे रुपये देदेकर उन्होंने दाढ़ी मुड़वाली। मुरधरके प्रत्येक प्रान्तमे केवल म्लेच्छोका आर्तनाद सुनाई देने लगा, जिधर देखो उधर यवन भाग रहे है यही दृष्टि आता था। यवनगण मेरताको छोडकर भाग गये, और जो घायल हुए थे वे नागौरको चले गये सोजत और पाली दोनो प्रदेश फिर अजितके हस्तगत होगये म्लेच्छ यवनोंके जोधगढ़मे वहुत समयतक रहनेसे वह अपवित्र होगया था इससे वह गंगाजल और तुलसीदलसे पवित्र कर लिया गया और अजितने राजतिलक धारण किया।

"औरंगजेवके पापी जीवनके पंचभूतमें लीन होते ही उसके पुत्र पिताके सिंहासनपर अधिकार पानेके लिये राजधानीकी ओर चले। कवि लिख गये है "कि दक्षिणसे आज़िम और उत्तरसे मुअज्ज़मन भारतके सिंहासनको हस्तगत करनेके

---

(१) महामान्य टाड महोदय लिखते हैं कि औरंगजेवके शाशन समयमे यवनोकी डाढ़ी मूंछोंको देखकर हिन्दू और राठौरोने यवनोंके चिह्नस्वरूप डाढ़ी मूंछतकको नहीं रक्खा था।

लिये सेना सहित दर्शन दिए। आगरेमें जाकर दोनो असुरदलोंमे भयंकर युद्ध उपस्थित हुआ। औरंगजेबके बड़े पुत्र शाहआलम इस युद्धमे जय प्राप्त करके पिताके सिंहासन पर विराजमान हुए। नवीन बादशाहने शीघ्र ही यह समाचार पाया कि अजितने मारवाड़में सभी यवनोंको विध्वंस करके छिन्न भिन्न करदिया है और उनके समस्त धन रत्न छीन कर वह अपने पिताके सिंहासन पर विराजमान हुए है।

"सम्वत् १७६४ में वर्षाऋतुके बीतते ही नवीन मुगल बादशाह शीघ्र ही अपनी प्रबल सेना साथ लेकर अजमेरमे आगया। इस समय भगवानके पुत्र हरिदास ऊहड़ और मांगलीयके दोनो सामन्त, ऊदावतोंके नेता रत्नसिंहने अपनी सम्प्रदायके आठसौ योधाओंके साथ जोधपुरमे जाकर अजितके नामसे शपथ करके कहा कि हमने जीवन दान करके आपकी राजधानीकी पापी यवनोंके हाथसे रक्षा करनेकी प्रतिज्ञा की है बादशाहकी सेनाने शीघ्र ही भाभी बीलाड़ानामक स्थानमे डेरे डाल दिये। महाराज अजित भी बादशाहकी सेनाके आक्रमणको निवारण करनेके लिये शीघ्र ही तैयार होगये। धूर्त्त औरंगजेबने जिस प्रकार समयके परिवर्तनमें सबसे पहले चातुरीजालसे अपने उद्देशको सिद्ध कर लिया, उसके पुत्र नवीन बादशाहने भी इस समय उसी प्रकारसे पिताके मार्गका अनुसरणकिया। उसने अपनी चातुरी जालका विस्तार कर मारवाड़ेश्वर अजितको अपने हस्तगत करनेके लिये उनके निकट सन्धिका प्रस्ताव भेज दिया। अजितने बादशाहके दूतके आते ही अपने दूतको उस बादशाहके दूतके साथ बादशाहके यहाँ भेजकर संधिके प्रस्तावमे अपनी सम्मति प्रगटकी। सम्राट्ने फिर उसी दूतके हाथ अजितके पास मारवाड़की सनद देनेके लिये भेजी, परन्तु अजितने उस राजसनदको लेनेके पहले ही एक वार बादशाहसे साक्षात् करनेकी अभिलाषाकी। एक मतसे फाल्गुन मासकी पहली तारीखको अजित सेना सहित योधगिरि छोड़कर बीसलपुरकी ओर चले। खानखाना (प्रधान अमात्य) के पुत्र सुजाअतखाने कितने ही अमीर और भदावरके राजा तथा बूँदीके राववुधसिंहके साथ बादशाहकी ओरसे पीपाड़ नामक स्थानमें इनका बड़ा आदर सत्कार किया। किस प्रकार से संधि होगी, रात्रिमे केवल इसी प्रस्तावकी मीमांसा हुई, दूसरे दिन प्रात काल ही अजित मरुक्षेत्रकी समस्त सेनाके साथ आगे बढ़े। और आनंदपुरनामक स्थानमे म्लेच्छों के अधीश्वरके साथ उनका साक्षात् हुआ। बादशाहने इनको "तेगबहादुर" की उपाधिसे विभूषित किया। परन्तु बादशाहने जिस समय अजितको उपाधि देकर उसका सन्मान बढ़ाया था उस समय उनकी चतुरता सफल होगई। अजितके बीसलपुरसे सेना सहित आते ही बादशाहने अच्छा मौका पाकर गुप्तभावसे महारानखाँको सेनासहित जोधपुर पर अधिकार करनेके लिये भेज दिया था। विश्वासघाती मोहकम भी उसके

(१) यही बहादुरशाह नामसे सिंहासन पर बैठा।

(२) उर्दू तर्जुमेमे यों लिखा है कि फागुनकी १ तिथिको उसने (अजीतसिंहने) जोधाके पहाड़से कूच किया और रवाना होकर बीसलपुर पहुंचा, वहाँ उसके पास खानखाना शुजाअतकी मारफत संदेशा आया, उसके साथ भदोरिया राजा और राव बुधसिंह बूंदीके थे। पीपाड़मे मुलाकात ठहरी।

साथ गया था। इस कारण उन्होने अजितके न होनेपर बड़ी सरलतासे जोधपुर पर अधिकार कर लिया। अंतमें अजितने जब बादशाहकी इस चालाकीको जाना तब वह अत्यन्त क्रोधित हो मतवाले हाथीकी समान उन्मत्त होगया। परन्तु बुद्धिमान् बादशाहने उस समय भी अजितको इस प्रकारसे अपने हस्तगत कर लिया था कि, वह उस क्रोधको अपने हृदयके भीतर ही रखकर बादशाहके साथ कुमार कामबख्शके अधीन करनेको दक्षिणको चले गये। आमेरके महाराज मिरजा[1] राजा जयसिंह भी इस समय इस स्थानपर बादशाहके साथ थे; वह भी मारवाड़के महाराजकी समान प्रतारित होकर अत्यन्त रुष्ट होगये। बादशाह शाहआलमने गुप्तभावसे आमेरमें एक दल यवनोकी सेनाका भेजकर उस पर अपना अधिकार कर जयसिहके छोटे भ्राता विजयसिंहके शिरपर आमेरराजकी पताका शोभायमान कर दी थी, उस समय जयसिंह भी अजितके समान बादशाहके साथ दक्षिणको गये थे। अनंत जलसे पूर्णनदी जिस प्रकारसे अपनी तरंगोके वेगसे किनारोंको तोड़ती हुई महागर्जना करके अपने अंगका विस्तार करती है उसी प्रकारसे बादशाहकी सेनाने राजपूतोकी सेनाके साथ मिलकर शीघ्र ही यात्रा प्रारंभ की। यवन बादशाहके शीघ्र ही उस नदी[2]के पार होते ही[3] दोनो राजपूत राजाओने निर्द्धारित कल्पनाकार्यके सफल करनेमे किंचित् भी विलम्ब न किया। वे बादशाहसे कुछ न कहकर सेना और सामन्तोंकी मंडलीके साथ सीधे रजवाड़ेकी ओरको चल पड़े। वे सबसे पहले उदयपुर पहुचे, महाराणा अमरसिह आगे बढ़कर बड़े आदर सन्मानके साथ उनको अपनी राजधानीमे ले आये। तीनो राजा एक साथ बैठे तीनो राजाओके मस्तक पर राजछत्र शोभायमान होने लगा, वे लोग मानो त्रिमूर्तिसे ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वररूपसे अनुपम सुखमा प्रकाश करने लगे–इन तीनो महाबली राजाओके संमिलन तथा मित्रतासे असुरोके भाग्यका पतन होना प्रारंभ हुआ, और अपने धर्मकी महिमाका विस्तार हुआ[4]।

उदयपुरसे महाराज अजित और महाराज जयसिह भी मारवाड़में आये थे। दोनों राजाओके आहोयामे आते ही चांपावत् सम्प्रदायके नेता उदयभानुके पुत्र संग्राम सिहने अपने मस्तकपरसे पगड़ी उतार कर बिछा दी। दोनो महाराज उसके ऊपर चलकर सामन्तके यहाँ गये।

"१७६५ सम्वत्के श्रावण मासमे प्रतीत हुआ कि असुरोंका आशा भरोसा एकवार ही लुप्त होगया। अजित अपनी जन्मभूमिमे आगये है, यह समाचार पाते ही महरावखा अत्यन्त भयभीत हुआ। सात तारीखको तीस हजार राठौरोकी सेनाने जोधपुर राजधानीको जा घेरा और १२ वी तारीखको महरावखॉने आत्म समर्पण किया। आसकर्णके पुत्रने उस समय उसके जीवनकी रक्षाकी थी, इसीसे उसने उसको

---

(१) मिरजा राजा तो मर चुके थे, इस समय सवाई जयसिंह थे।

(२) अर्थात नर्मदा।

(३) यवन इतिहासवेत्ता लिखते हैं कि यह सम्राट इस समय लाहौरकी ओर गये थे।

(४) हमारे पाठकोंने प्रथम कांडमें इन तीनों राजपूत राजाओंके संमिलनसूत्रसे विवाहिक सम्बन्ध बंधनके विषयमे पढ़ा होगा। ज्ञात होता है कि उसका उल्लेख करना भूल गये थे।

धन्यवाद दिया। महरावखाँ बड़े आदरभावके साथ सेना सहित उसकी रक्षामें लग गया। अजित अत्यन्त ही आनन्दित हो मरुक्षेत्रकी राजधानीमे आगये।"

इसके पीछे राठौरोंके कविने लिखा है कि "महाराज जयसिंह सूरसागरके किनारे रहने लगे, वे राज्यसे भ्रष्ट थे, इस कारण अत्यन्त विषादित हृदयसे असंतोषकी अवस्थामें अपने भाग्यकी परीक्षा करने लगे। परन्तु वर्षाऋतुके बीतते ही कछवाहोंके प्रधान सामन्त अजयमल्लने जयसिंहको फिर सिंहासन पर बैठालनेका प्रस्ताव किया। अजित शीघ्र ही जयसिंहके साथ सेना सहित मेरतानामक स्थानमें आ पहुँचे, उनके भयसे आगरा और दिल्ली कंपायमान होने लगा, दोनो राजाओंके अजमेरमे आते ही वहाँका यवन शासनकर्त्ता प्राणोंके भयसे अत्यन्त भयभीत हुआ, उसने ख्वाजा कुतबनामक महम्मदी साधूकी मसजिदका आश्रय लिया, और अजितसे अपने प्रति दया करनेके लिये कहला भेजा। शासन कर्त्ताने अजितके प्रस्तावके मतसे बहुतसा रुपया भी दंडमें दिया। इसके पीछे अजित बाज पक्षीकी समान आमेर देशपर जा टूटे। इस स्थानपर आमेर राजके प्रत्येक श्रेणीके सामन्त सेना सहित आकर उनके अधीश्वर जयसिंहके साथ जा मिले। आमेरकी यवनसेनाके नायक सैयदहुसेनने बारह हजार यवनसेनाके साथ उस सांभर झीलके तीर भूमिपर अग्रसर हो अजीतसिंहके साथ संग्रामानल प्रज्वलित कर दी। सबसे पहले कूपावत् सामन्तोंने यवनोंपर आक्रमण किया; घोर युद्ध होने लगा। हुसेनने ६ हजार यवनोंकी सेनाके साथ रणभूमिमें सर्वदाके लिये शयन किया। और बची बचाई सेना अपने प्राणोंके भयसे जिधर तिधर भाग गई। सैयदहुसेनके सहकारी पडिहार जातिके नेता इस समरभूमिमे अजितकी तलवारसे आहत होकर हताश होगये। अजित उस परिहार पतिका प्राण नाश करके मन्दोर राज्यको चले जाँयगे-यह विचार करने लगे। इस युद्धमे पराजयका समाचार पाते ही असुर गण साँभर छोड़कर चारोओरको भाग गये। साँभरसे एक सेना रखकर अजितने माघमासमे जयसिंहको आमेरका राज्य देदिया। अजित बीकानेरपर आक्रमण करनेके लिये पहलेसे ही तैयार होगये थे, इस कारण विश्वासी रघुनाथ भंडारीको दीवानकी उपाधि देकर उसके हाथमें सांभरके शासनका भार अर्पणकर आप बीकानेरकी ओरको चल गये।"

"सम्वत् १७६६ भादोंके महीनेमे सम्राट् औरंगजेबने कामबक्सका प्राण नाश

---

(१) दुर्गादासने महरावखांके आत्म समर्पणके प्रस्तावको ग्रहण करके उसके प्राणोंकी रक्षा की थी।

(२) उर्दू तर्जुमे से जाना जाता है कि कछवाहोंने अजमल अर्थात् अजीतसिंहको आमेरमें फिरसे विठलाना चाहा।

(३) उर्दू तर्जुमेंमें यहां आमेरका छोड़ना लिखा है।

(४) यहा औरंगज़ेबका नाम भूलसे लिखा गया है मुअज्ज़म अर्थात् शाहआलम बादशाह का नाम चाहिये।

किया। जंयसिंहने इस समय फिर यवन बादशाहके साथ संधि करनेका प्रस्ताव उपस्थित किया। मारवाड़के महाराज अजितने इस समय सेना सहित नागोर पर अधिकार कर लिया था। नागौरपति इन्द्रसिंह² अपनेको अत्यन्त दुर्बल और असमर्थ जानकर अग्रसरहो अजितके चरणोंमें आत्म समर्पण करनेकी प्रार्थना करने लगे। अजितने अपने आत्मीय भ्राताको शरण आयाहुआ देख उसके ऊपर दया प्रकाश कर नागौरके वदले में लाडनूको उसके वंशानुक्रमसे शाशन करनेके लिये दे दिया। परन्तु इन्द्रसिंह इससे संतुष्ट न हुए, कारण कि वह सम्पूर्ण नागौरके अधीश्वर होकर एक सामान्य देशको लेकर किस प्रकारसे संतुष्ट होसकते थे?—इन्द्रसिंहने वड़ी शीघ्रतासे अजितके इस आचरणसे रुष्ट हो दिल्लीके वादशाहके यहाँ जाकर इस समाचारको कहा। मुगल बादशाह अजितके उस समाचारको सुनकर अत्यन्त क्रोधित हुआ, राजपूतजातिने भी बादशाहके क्रोधका समाचार सुना, और फिर सबने एकत्र संमिलनसे अपने २ स्वार्थकी रक्षा करना अवश्य कर्तव्य समझा। समस्त राजपूत राजा वड़ी शीघ्रतासे डीड़वाना नगरके पास कोलियानामक स्थानपर इकट्ठे हुए, और यवन बादशाह भी वड़ी शीघ्रतासे अजमेरसे आते हुए, दिखाई दिये। यवनसम्राट्नें अजमेरसे मित्रभावके चिह्नस्वरूप अर्थात् हाथके चिह्नकी लगी हुई सनद राजाओंके पास भेजी। सम्राट्का प्रधान अनुचर नाहरखाँ उस सनदको लाया। आषाढ़मासकी पहली तारीखको मारवाड़ और आमेर राज वह सनद लेकर वादशाहसे साक्षात् करनेके लिये अजमेरको गये। बादशाहने सबके सन्मुख बड़े आदरभावसे दोनो महाराजाओंसे साक्षात् की। उन्होने अजितको नौदुर्ग युक्त मरुभूमि और जयसिंहको आमेरके शाशनकी सनद देकर बड़े सन्मानके साथ विदा किया। दोनो राजा वादशाहसे विदा होकर पूर्वकी ओर पवित्र पुष्कर तीर्थमें स्नान करनेके लिये गये। तीर्थकर्मके समाप्त होजानेपर दोनो राजा परस्पर मित्रभावसे विदा होकर अपने अपने राज्योंकी ओर चले गए। अजित सम्वत् १७६७ के श्रावणमासमें जोधपुरकी राजधानीमें आकर अपने पिताके सिंहासन पर बैठकर राज्य करने लगे। इस वर्ष अजितने गौड़सम्प्रदायकी राजकुमारीके साथ पाणिग्रहण किया। अर्ज्जुनसिंहनें दिल्लीके आमखास नामक दरवारमे अमरसिंहकी हत्या करके राठौर जातिके साथ जातीय शत्रुताका बीज बो दिया था, अजितने

---

(१) कामवख्स औरंगजेबका पुत्र था, एक राजपूत राजकुमारीके गर्भसे उत्पन्न हुआ था। कामवख्स औरंगज़ेबकी वृद्धावस्थाका पुत्र था, इसीसे यह उसको बहुत प्यारा था। औरंगज़ेबने मृत्युकी शय्यापर पड़कर इसको जो स्नेहपूर्ण पत्र लिखा था हमारे पाठकोंने प्रथम कांडमे उसे पढ़ा होगा।

(२) इन्द्रसिंह यशवन्तसिंहके बड़े भ्राता महातेजस्वी अमरसिंहके पुत्र और अजितके विश्वासहन्ता मोहकिमसिंहके पिता थे। मोहकिमसिंहने अजितसे मेरताके शाशनका भार न लियाथा। इसी कारण वह उनके विरुद्ध बादशाहके साथ जामिले थे।

उस शत्रुताको भी उन्मूल करदिया। अजित इसके पीछे महाभारतमें लिखे हुए कुरु पांडवोंके महा युद्धस्थल कुरुक्षेत्रको चले गये, और भीम कुंडपर जाकर पुण्यको संचय करनेलगे। इस प्रकारसे १७६७ सम्वत् व्यतीत होगया"।

---

(१) राजपूतोंका यह और एक विचित्र निदर्शन है। और वे राजाके घोर शत्रु होनेपर भी जातीय सत्वकी रक्षाके लिये उसीका पक्ष लेते है। हमारे पाठकोंने पहले ही पढ़ा होगा कि महाराज यशवन्तसिंहके बड़े भ्राता अमरसिंह एक मात्र उद्धत स्वभावके कारण अपने पितासे छोड़ दिये गये थे, और जातिके समस्त अधिकारसे रहित करके अंतमें मारवाड़से निकाल भी दिये गए थे; तब दिल्लीके सम्राटकी सभामें प्रशंसनीय वीराभिनय करके उक्त अर्जुनके द्वारा मारे गये। अमरसिंहके पुत्र इन्द्र-सिंहने और पौत्र मोहकिमसिंहने जो यशवन्तसिंहके बड़े भ्राताके वंशधर थे, जोधपुरका सिंहासन पानेके लिये जन्मभर तक विशेष चेष्टा की, और अजितके स्वार्थ नाश करनेमें कुछ भी कसर बाकी न रक्खी, परन्तु कैसा विचित्र जातीका स्वभाव है कि जब समस्त राठौरजाति स्वजातिके स्वार्थकी रक्षाके लिये यवनोंके विरुद्ध खड़ी हुई, तब अजितके शत्रु इन अमरसिंहके वंशधरोंने बड़ी शीघ्रतासे अजितका पक्ष लिया। यद्यपि यह बादशाहके यहाँसे स्वतंत्र शासनकी सनद पाकर नागौर को शासन करते थे तथापि इन्होंने अजितका साथ * दिया। राठौरोंका जातीय विधान कैसा हृदय हारी है!

(२) कर्नल टाडसाहबने इस स्थान पर लिखा है। "कि भारतवर्षके इस प्राचीन महा युद्धके समय इस कुंडके सम्बन्धमें जो एक प्रवाद वचन प्रचलित है, उसको पढ़कर वीर व्रताव-लम्बी राजपूत जाति किस प्रकारसे संस्कार युक्त थी, यह सरलतासे जाना जा सकता है। भारतके प्राचीन महावीरोंके अभिनय क्षेत्रस्वरूप इस संग्रामस्थलको देखनेके लिये सम्राट् बहादुरशाह संभवतः अपनी राजपूत रानी और राजपूत जननीकी प्रेरणासे वहाँ गये। कुरुओंके प्रधान नेता भीष्म कुंडपर कि जिसको एक बड़ाभारी वृक्ष ढके हुये था, बहादुरशाहने चारोंओर कनात रोक कर अपनी रानीको बिठाला था। कि इसी अवसरमें एक गृद्ध हड्डीका टुकड़ा चोंचमें दबाये हुए उस वृक्षकी शाखा पर आबैठा, और थोड़े ही समयमें वह अस्थि भीष्मकुंडमें गिर गया, तब वह ऊंचे स्वरसे हंसने लगा। चारों ओरसे घेरे हुए स्थानमें अचानक मनुष्यके हँसनेका शब्द सुनकर सम्राट् बहादुरसाह अत्यन्त विस्मित हुए। और ऊपरको देखकर उस पक्षीको मनुष्यकी समान बोलता हुआ सुनकर और भी विस्मित हुए। पक्षीने बादशाहको बुलाकर मनुष्यकी बोलीमें यों कहना प्रारंभ किया, "पूर्व जन्ममें मैं योगिनी था। मैने इस कुरुक्षेत्रके महायुद्धमें से एक महाबली वीरकी कटी हुई भुजा उठा ली। और वृक्षके ऊपर आन कर बैठ गया। उस बाहुमें एक बड़ा कीमती स्फटिक मणिका अलंकार था। मेरे हाथमेंसे कुछी समयके पीछे वह मणियोंसे जड़ा हुआ अलंकार इस कुंडमें गिर गया। और आज भी इसी प्रकारसे इस कुंडमें हड्डी गिरी है, इस समय मुझे वही पहली बात स्मरण हो आई, इसी लिये मैं ऊँचे स्वरसे हँसने लगा"। यह हम अवश्य ही अनुमान कर सकते हैं; कि गृद्ध संस्कृत वा देशी भाषामें जो यह बातें कह रहा था। रानीने उसका यथार्थ अर्थ करके बादशाहको समझा दिया। बादशाहने शीघ्र ही उस अलंकारको लानेके लिये गोतेखोरोंको कुंडमें घुसनेकी आज्ञा दी। गोतेखोर तुरन्त ही बादशाहकी आज्ञासे उसके भीतर घुसे और बड़ी शीघ्रतासे

---

* इन्द्रसिंह मोहकमसिंहने कभी अजितसिंहका साथ नहीं दिया। हमेशा शत्रुता करते रहे साथ देनेकी बात गलत और इतिहास विरुद्ध है। (प्रे० टी०)

हिन्दुओंके आशा भरोसा मध्याह्नमार्त्तण्ड यशवन्तसिंहके काबुलमे अकालमृत्युसे स्वर्गवासी होनेपर अजितके पिताके सिंहासनपर अभिषेकके समयतकका इतिहास हमने राठौर कवियोंके इतिहाससे अविकल अनुवाद कर दिया है। इस तीस वर्ष व्यापी महा युद्धका वृत्तान्त हमारे पाठकोंको सरलतासे ज्ञात होजायगा. तब वह अवश्य जान जाँयगे कि राठौर जाति इस दीर्घकालमें किस प्रकारसे अपने जातीय सत्वकी रक्षाके लिये कैसी राजभक्ति दिखाती थी। तथा किस प्रकारका बल विक्रम प्रकाश कर गई है। वर्तमान अध्यायकी समाप्तिके पहले हम इस स्थानपर महात्मा टाड्साबकी शेष उक्तिको अविकल प्रकाश करनेकी अभिलाषा करते है। अतीत तीस वर्षकी घटनावलीकी समालोचनासे कर्नल टाड्साहबने जो कुछ लिख दिया है—हम उसके अतिरिक्त कुछ नहीं कह सकते। महत्मा टाड्साहब लिख गये हैं, कि "दीर्घकाल स्थायी समरके समयमे राठौर गणोने जिस प्रकारकी अटल राजभक्ति दिखाकर अपने

उस महा युद्धका चिह्नस्वरूप स्फटिक मणियोंसे जटित अलंकारको निकाल लाये। उसकी बड़ी २ मणियोंको देखकर बादशाहने कहा। इसको गलीचेके ऊपर रक्खो, इससे सब कार्य सरलतासे पूरे हो जॉयगे। बादशाहके साथ उस स्थानपर जो समस्त हिन्दू राजा थे, उनमे राजा अजित और जयसिंह सम्राटकी इस आज्ञासे अत्यन्त दु:खित हुए, उन दोनोने बादशाहसे एक एक स्मरणीय रत्न मांगा। मिरजा राजा सवाईसिंहको दो मणिय दी गईं, वे दोनो मणी इस समय जयपुरमें हैं। एक तो वहाँ सिलादेवीके मंदिरमे है।और दूसरी गोविन्दजीके मंदिरमे रक्खी गई है।अजितने जो एक रत्न पाया था। वह भी आजतक जोधपुरमें गिरिधारीजीके मंदिरमे रक्खा है, और वहाँ इसकी पूजा होती है। हमारे प्राचीन शिक्षक और मित्र यतिज्ञानचंद्रने जो इस प्रवादके श्लोकको पढ़ कर व्याख्याकी है। मैंने उसका अनुवाद कर लिया, उन्होंने इन तीनो मणियोंको देखा था, और इन तीनोंके प्रति प्रीति भक्ति दिखा कर उनकी पूजा की थी। उन्होंने अनुमान किया था; कि कोटा वा बूंदीमे इस प्रकारका और भी एक रत्न है, राणाने किस उपायसे उक्त रत्नोंमेसे आर एकको संग्राह कर लिया, सो विदित नहीं इन पवित्र सफेद मणियोमेसे एक २ मणि वजनमें आध सेर होगी। कुरुक्षेत्रके युद्धके समयमें अवश्य ही विराट शरीरवाले मनुष्य थे। नहीं तो इस प्रकारके वजनवाली तेरह मणियोंका हाथमे पहरना कुछ साधारण बात नहीं थी। यही कहा जायगा कि कविश्रेष्ठ होमरके * वीर कुरु वीरोंके निकट वामन स्वरूप थे। "तब यह संदेह हो सकता है कि कुरुओंकी भुजाओंके अलंकारोंको वह तोल सकते थे अथवा नहीं। हमारे पूजनीय शिक्षक यद्यपि उदार मतावलम्बी थे; परन्तु उन्होंने पूर्वकालके विराटकाय मनुष्योंके सम्बन्धमें साधारण मतके विपरीत मत दान नहीं किया। उन्होंने कहा कि मनुष्योंकी आकृति क्रमानुसार युग २ में छोटी हो गइ है। इसमें कुछ भी संदेह नहीं"।

---

* होमर नामका कवि यूनानमें हो गया है, वह सिकन्दरसे कई सौवर्ष पहले हुआ था। परंतु उसकी वीरसपूर्ण परम ओजमय काव्यका समस्त यूरपमें अब भी बड़ा आदर होता है।होमर काव्यकी एक प्रति ऑडैसीका अंग्रेजी गद्यानुवाद मैंने देखा है। उससे मुझे वह कथा कविकल्पना मालूम होती है। इतिहास नहीं है।

जातीय चरित्रके महत्वको प्रकाश किया था, संसारके अन्य किसी जातिके इतिहासमे हमने ऐसी राजभक्ति दूसरी जगह नही देखी। राठौरोंके कविने लिखा है। कि इस दीर्घस्थायी युद्धके समयमे एक सामन्तने भी स्वाभाविक मृत्युशय्या पर शयन नही किया " (अर्थात् रोगी होकर कोई सामन्त नही मरा) जो मनुष्य विचारते है कि हिन्दू वीरोके हृदयमें स्वदेश हितैषिता नहीं थी वह इस वर्षके अलंकृत इतिहासको पढ़ै, और वह जगत्‌के अन्य किसी जातिके इतिहासके साथ इसकी तुलना करके देखैं, और राजपूत जातिके असीम साहसके लिये धन्यवाद दें। यह उद्धृत इतिहास अत्यन्त सरलस्वभावसे रचागया है, और इसको सत्यताका विशेष समर्थन करना है। इस समरके समयसे अत्याचारी यवन सम्राट् साम्राज्यके ऊँचे पदपर नियोगका लोभ दिखाकर राजपूत जातिकी मूलनीतिको नष्ट करनेके लिये उद्यत हुए थे, जिससे वे स्वजाति, स्वधर्म, स्वदेश और अपने अधीश्वरोंके विरुद्ध सम्राट्की सहायता करे; वादशाहने एक२ समयमे एक२ मनुष्यको इतना लोभ दिखाया कि वह लोभ अपरिहार्य होगया। परन्तु ऐसी घटना अत्यन्त सामान्य हुई कि जिससे राजपुत जातिने उस लोभके प्रति घृणा न दिखाई हो। राजपूत जातिके गौरवकी गरिमा स्वरूप महावीर दुर्द्धर्ष साहसी दुर्गादासके आचरण कैसे उज्ज्वल दृष्टान्तका स्थान है। वलविक्रम राजभक्ति और विश्वास आदि गुण उनकी गाढ़ बुद्धिके साथ मिलकर महा विपत्तिमे भी उनकी महोच्चताका चूडान्त प्रमाण दिखा गये है, और वही सद्गुणावली आजतक राठौर जातिके स्मृति मार्गमे पडकर उनकी कीर्तिको वढ़ा रही है। यवन सम्राट्ने उनको जो लोभ दिखाया था, वह सव प्रकारसे अपरिहार्य है—वादशाहकी केवल सुवर्णकी मुद्रा ही नहीं वरन् उन्होने स्वजातिकी दृष्टिसे सहस्रो मुद्राओको घृणाकी दृष्टिसे फेंक दिया था, वे उसी मुहूर्त्तमे मरुक्षेत्रके अधीन सामन्तपदसे एक वार ही देशीय राजाओके संमान पद मर्यादा और सामर्थ्यको प्राप्त करते थे पर उन्होने उस लोभके प्रति भी आग्रह न किया, राठौर कविने यथार्थ ही कहा है कि वह अमूल्य और अतुलनीय थे। राजपूत जातिके आजीवन पालनीय एक मात्र प्रतिहिंसाके लिये उन्होंने उस महोच्च सन्मानको ग्रहण न किया था। उन्होने शत्रुओंके षड्यंत्रसे उनके साहसी अग्रज सोनगके प्राण हननका वदला लेनेके लिये इतनी दया प्रकाश की थी, कि वह जिस युद्धमें जाते उसी मे[1] अपनी भ्रातृहत्याको उचित प्रतिहिंसा सफल कर लेते थे। कुमार अकवर जिस समय अपने महा क्रोधित पिताके कराल कवलसे पतनोन्मुख हुए थे, उस समय उन्होने जिस प्रकार असीम साहस और महान् वीरतासे उनका उद्धार करके अनिवार्य मृत्युके मुखसे उनकी रक्षा कर जिस प्रकार प्रवल विक्रमका परिचय दिया, उसी प्रकारसे अकवरके परिवारकी रक्षाका भार उनके हाथमें सौंपा गया; वह इनके ऊपर जिस

(१) इसका अर्थ यह है कि इस युद्धमें मारवाड़के जितने सामन्तोंने प्राण त्याग किये सभीने रणभूमिमे स्वजातिके लिये जीवनका वलिदान किया था।

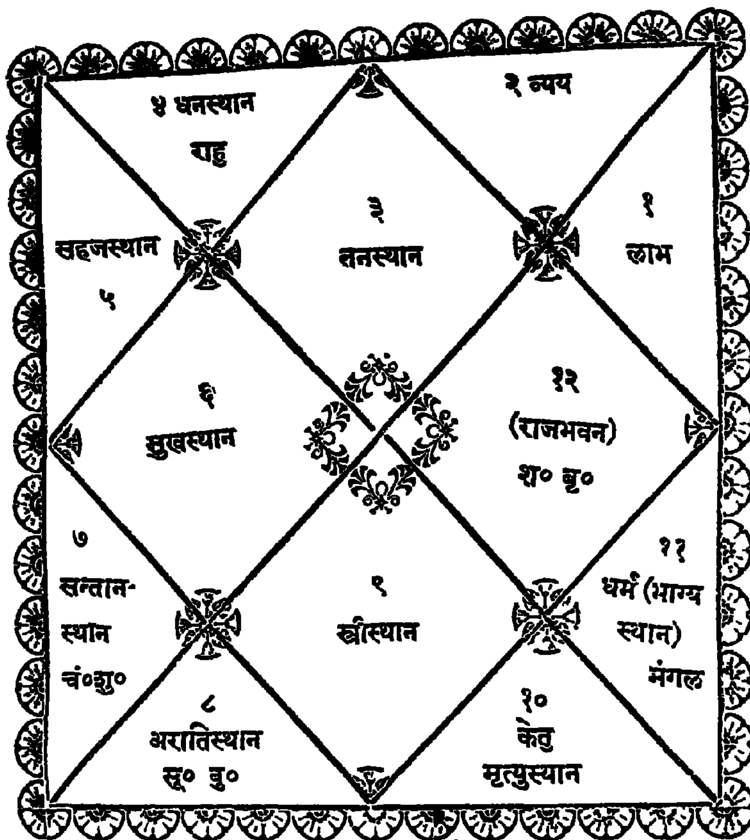
प्रकारसे दया और स्नेह करते थे वह भी उनके अतुलनीय गुणग्रामोंके पूर्ण परिचायक थे; वे विपरीत धर्मावलम्वी भिन्न जातिके शत्रुको इस प्रकार प्रतिज्ञा पालनमें और उसकी विश्वासकी रक्षामें कैसे दक्ष थे उनके साथ यदि इसकी तुलना की जाय तो क्यों नहीं; दुर्गादासकी हृदयके अनलसे ऊँची प्रशंसा की जायगी? दुनाड़ाके देवालयमें औरंगजेवकी पुत्रीके सतीत्वको जिस भावसे निर्विघ्नतासे रख आये थे, यहाँ यह संदेह है, कि आगरे के तीन प्रकार वेष्टित अंतःपुरमें भी उसे उस भावसे रक्खा था या नहीं। वालक अजितको पहले छः वर्षतक सवसे छिपाकर स्वजातीय भ्राताकी अपेक्षा तीक्ष्ण शक्ति और विज्ञताका कैसा चमत्कार दिखा गये है। राठौर कवियोंने दुर्गादासकी जो प्रशंसा की गाथा रचना की थी। हम यहाँ पर उसका अवलम्बन कर उपसंहार करनेकी अभिलाषा करते हैं। राठौर कवियोंका कहना है कि अगणित शुभ अनुष्ठानोंसे दुर्गादासने अक्षय यश प्राप्त किया था। उनकी स्मृतिको सभोंने वड़े आदरभावके साथ हृदयमें स्थान दिया था। उनकी उस वलविक्रम और साहसकी प्रतिमासे पूर्ण कार्यावलीकी ऊँची प्रशंसा प्रत्येक प्रान्तमें सुनाई देती है। वह वीरोंकी मूर्तियोंमें श्वेत अश्वपर चढ़े हुए हैं। उनकी वह वृद्ध महावीर मूर्ति राजपूत जातिके परम प्रिय रूपसे विराजमान होरही है।"

महाराज अजितके ज्येष्ठ पुत्र अभयसिंहकी जन्मपत्रिकामें ४ थं, ७ म, ८ म, १० म, ११ श, एवं १२ श अंकवाला अर्थात् धन, सन्तान, शत्रु, मृत्यु, भाग्य और राजभवनके ग्रह उनके भाग्यका निश्चय करते है। सातमें अर्थात् पंचम सन्तान स्थानमें चंद्रमा और शुक्रने अधिकार किया है: आठमे अर्थात् शत्रुस्थानमें सूर्य और वुध विराजमान होरहे हैं; दशमेमे केतु है, इस कारण ४ र्थ और १० दशम अंकमें राहु केतु दोनों ही अमंगल मूलक है। सौभाग्यके गृहमे मंगल और राजभवनमे शनि और वृहस्पति वैठे हुए है। अभयसिंहकी इस जन्मपत्रीसे जाना जाता है, कि उनका भाग्य शुभाशुभ दोनों लक्षणोंसे घिरा हुआ था।

---

(१) दुर्गादास लूनी नदीके किनारे दूनाड़ाके सामन्त थे। उनकी पत्थरकी मूर्ति वहाँ स्थापित है।

राजा अभयसिंहकी जन्मपत्रिका।



महात्मा टाड्साहबने इस स्थान २ पर लिखा है कि "ज्योतिषी यदि अभयसिंहकी जन्मपत्री देखकर यह बता देता कि अभयसिंह पिताकी हत्या करनेवाले होंगे; तो उसकी गणना शक्तिकी प्रशंसा होसकती थी।" कर्नल टाड्साहबने जन्मपत्रीकी गणनाका विश्वास नहीं किया, कारण कि उन्होंने पीछे लिखा है कि "जो मनुष्य इस निर्बुद्धिताके परिचायक गणनाके सम्बन्धमें दृष्टि रखते हैं वे देखेंगे कि यूरूपके ज्योतिषियोंने हिन्दुओंके यहाँसे इस रीतिको ग्रहण किया है; मैंने उसका प्रमाण दिखानेके लिये विलायतमें जिस प्रकारके हितकारी विषय लिये हैं, उसी प्रकारसे भ्रान्त विषयोंको भी ग्रहण किया है, यही दिखानेके लिये इस स्थानपर इसे प्रकाशित किया है" पर हमें ऐसा बोध होता है कि कर्नल टाड्साहबको हिन्दुओंके ज्योतिष शास्त्रकी प्रकृत परीक्षा करनेका सुअवसर नहीं मिला था।

नवम अध्याय ९.

नाहन और सवालक पर्वतके विद्रोही सामन्तोंके दमन करनेके लिये सम्राट्का अजितको भेजना; अजितकी जय प्राप्ति; अजितका गंगा स्नानार्थ जाना; दिल्लीके बादशाह बहादुरशाहकी मृत्यु; सम्राट्कुमारोंका आत्मविग्रह; अजीमुस्सानका हत्या करना; मुइज्जुद्दीनका सम्राट्के पदपर अभिषेक; सम्राट्का अजितको गुजरातके राजप्रतिनिधिपद पर नियोजित करना; फर्रुखसियरको सम्राट् पदकी प्राप्ति; अजितका अपने पुत्र अभयसिंहको सम्राट्के यहाँ भेजना; नागौरके सामन्त मुकुन्दकी * असीम साहससे हत्या करना; सैयदके दोनों भ्राताओंका महा क्रोध; सम्राट्की सेनाका मारवाड़ पर आक्रमण; संधिबंधन; अभयसिंहका सम्राट्की सभामे जाना, अजितका दिल्लीमें जाना; सम्राट्के दोनो सैयद मंत्रियोंके साथ अजितका गुप्त संधिबंधन; फर्रुखसियरके साथ अजितकी कन्याका विवाह; जोधपुरका प्रत्यावर्तन; जिजियाकरका रहित करना; राजप्रतिनिधिरूपसे अजितका गुजरातमें जाना; वहाँकी शासन व्यवस्था और शांति स्थापन; अजितका द्वारका तीर्थमें जाना; जोधपुरकी राजधानीमें आना; दोनो सैयदोंकी आज्ञासे दिल्लीकी यात्रा; दोनो सैयदोंके साथ अजितका गुप्त षड् यंत्र; अजितके साथ साक्षात् करनेके लिये सम्राट्का जाना; भार्या कुलक्षण; दक्षिणसे हुसेनअलीका आगमन; सैयद और अजितके शत्रुओंका भयभीत होना; राठौरोंकी सेनाके द्वारा अजितका दिल्लीमें प्रासाद वेष्टन; सम्राट् फर्रुखसियरकी हत्या साधन; परवर्ती सम्राट मुहम्मदशाह आमेरराजके विरुद्ध मुहम्मदशाहकी युद्धयात्रा; अजितके निकट आमेरके महाराजका आश्रय ग्रहण करना; अजितका मुहम्मदशाहसे देश प्राप्त करना; जोधपुरमें फिर जाना; अजितकी कन्या सूर्य कुमारीके साथ आमेरपतिका विवाह, दोनों सैयदोंका निधन, अजितका अजमेर पर आक्रमण; वहाँके शासनकर्त्ताका प्राणनाश; वहाँकी मसजिदोंका विध्वंश करना; हिन्दूधर्मकी पुनः प्रतिष्ठा; अजितका यवन सम्राट्की अधीनता स्वीकार करके सम्पूर्णतः स्वाधीन रूपसे आत्मघोषणा अपने नामसे मुद्रा चलाना; तुलादण्ड परिमाण निर्द्धारण और विचारालयकी प्रतिष्ठा; राठौरोंके सामन्तोंमे श्रेणी विभाग करना; सम्राट्की सेनाका मारवाड़ पर आक्रमण; तीस हजार राठौरोंकी सेनाके साथ अभयसिंहका सम्राट्की सेनाके आक्रमण निवारण करनेके लिये जाना, सम्राट्का युद्ध करनेके लिये निषेधका विज्ञापन देना; राठौरोंकी सेनासे सम्राट्की शस्य सम्पन्न देशावलीका विध्वंश होना; अभयसिंहका धौंकलकी उपाधि ग्रहण करना; जोधपुरको लौट जाना; सांभरके युद्धमें बदला देनेके लिये सम्राट्का समस्त सेनाके साथ अजितके विरुद्ध युद्ध यात्रा करना; अजमेरका घेरना, अजितकी आत्म रक्षा; सम्राट्के करमें अजमेरको समर्पण करनेमें अजितकी सम्मति; सम्राट्के डेरोंमे अभयसिंहका जाना, उनकी सन्मान पूर्वक अगौनी, उसका उद्धत आचरण; पुत्रके हाथसे अजितका प्राणनाश; राठौर कविकी कर्तव्यपालनमें विमुखता; ऐतिहासिक विचरण; अजितकी अन्त्येष्टि क्रिया, छः रानी और ५८ उपनायकाओंका अजितके संग चितापर आरोहण; नाज़िर, कवि और पुरोहितोंद्वारा पटरानियोंको समझायाजाना और चितापर चढ़नेको निषेध करना, रानियोंकी दृढ़ प्रतिज्ञा; चितापर चढ़ना; अजितकी जीवनी और उनके शासन विचरणकी समालोचना।

---

* सही नाम मोहकमसिंह चाहिये ।

मारवाड़के स्वामी महाराज अजितके जन्मसे सिंहासन पानेतकके समयका जो इतिहास हमको राठौर कवियोंके ग्रंथोसे मिला वह पहले अध्यायमे प्रकाशित होचुका है, वर्तमान अध्यायमे भी हम उस जातिके इतिहासके अवलम्बसे राजा अजितके समयकी प्रशंसनीय लीलाओका दृश्य और अन्त समयका शोचनीय वियोगान्त दृश्य पाठकोंको दिखाना चाहते हैं। राठौर कविकुल चूडामणिने लिखा है, "संवत् १७६८ मे बादशाह बहादुरशाहने अजितको नाहन प्रदेश पर अधिकार और महावर्षवाले कैलास पर्वतके राजद्रोही सामन्तोको दमन कर अपनी अधीनताकी साँकलमे बाँधनेके लिये भेजा। वीर शिरोमणि अजितने बादशाहकी आज्ञा पालनेके लिये शीघ्र ही वहाँ सेना लेजाकर बड़ी वीरतामे शत्रुओंको पराजित किया। विजय लक्ष्मीको प्राप्त कर महा आनन्दसे महाराज अजित पीछे पवित्र जलवाली गंगाजीमें स्नान करनेके लिये सेना सहित चले। गंगास्नान और दान पुण्य करके राजा वसंत ऋतुमें अपनी राजधानी जोधपुरको लौट आये"। कविने इस वर्षकी और कोई विशेष घटना नहीं लिखी।

महाराज अजितने भारतके आगे होनेवाले दृश्यका जो अभिनय किया है इस अगाड़ीके सालमें वही काम आरंभ हुआ। कविने लिखा है, "संवत् १७६९ में दिल्लीश्वर शाहआलम स्वर्ग सिधारे। बादशाहके पुत्रोमे अहंताके कारण द्वेपाग्नि प्रज्ज्वलित हुई। अजीमुस्सान शोचनीय रूपसे मारे गये, और भारतका राजछत्र मुईजुद्दीनके मस्तक पर शोभित हुआ। मारवाड़के राजा अजितने नए बादशाहके पास शीघ्र ही भंडारी खीमसीको उपहारी द्रव्योके साथ भेजा। नए बादशाहने प्रसन्न होकर उसी भंडारीके साथ अजितको गुजरातके राजप्रतिनिधि पदपर नियुक्तकर सनद भेज दी। सम्वत् १७६९के माघ महीनेमे अजितने सत्रह हजार नगर पूर्ण अहमदाबादके अधिकारके लिये बड़ी सेना बनाई, किन्तु इस समय दिल्लीके सिंहासन पर फिर गोलयोग हुआ। दोनो सैयद भाइयोने बादशाह मुइजुद्दीनको मारकर फरुखसियरको उनके सिंहासन बिठा दिया। जुलफ़कारखाँ भी उसी समय मारे गये, इस कारण उस समय मुगलोकी प्रभुता एक साथ ही जाती रही। इस ओर दोनो सैय्यद भाई राजसिंहासनको अपना जान स्वामीभावसे शासन शक्तिको अपने हाथमें ले फिर अपना प्रताप प्रकाशित करने लगे। दोनो सैय्यदोंकी सलाहसे नये बादशाह फर्रुखसियरने अजीतसिंहसे यह कहला भेजा कि तुम अपने पुत्र अभयसिंहको शीघ्र ही राठौर सेनाके साथ दिल्ली भेज दो। अभयसिंहकी इस समय सत्रह वर्षकी अवस्था थी। परन्तु अजीतसिंहको इस समय यह समाचार मिला कि विश्वासघाती नागौरपति मुकुन्द[1] दिल्लीके बादशाह की सभामे रहता है, और बादशाहके यहां उसका अधिक सन्मान भी है। इस लिये अजितसिंहने उस विश्वासहन्ताके जीवनविनाशके लिये शीघ्र ही कितने ही

(१) कर्नल टाडसाहबने एक स्थान पर मुकुन्द और एक स्थान पर मोकम लिखा है। परंतु सही नाम मोकम या मोहकमसिंह ही है।

विश्वासी सेवकोको दिल्लीमें भेज दिया। गुप्त अनुचरने अजितसिंहकी आज्ञासे उस दिल्ली नगरमे जाकर असीम साहसके साथ मुकुन्दके जीवनका नाश कर डाला। अजीतसिंहकी आज्ञासे उनके सेवक उस असीम साहससे निर्भय हो नागौरपतिके जीवनका नाश होनेसे महा क्रोधित हो शीघ्र ही सेना सहित मारवाड़ पर आक्रमण करनेके लिये आगये। महा प्रतापशाली दोनो सैयदोंको सेना सहित आता हुआ देख कर अजितने पहलेसे ही अपनी धनवान् प्रजाको उंयानोतमें और अपने पुत्र अभयसिंहको कुटुम्ब सहित राड़धड़ानामक मरुस्थान पर भेज दिया। बादशाहके सेनादलने शीघ्र ही राजधानी जोधपुरको जा घेरा, बादशाहकी ओरसे शीघ्र ही अजितके पास यह हुक्म आया कि उनको भविष्य सच्चरित्रताके प्रतिभूस्वरूप अभयसिंहको बादशाहके घर रखकर उनको भी सम्राटकी सभामे जाना होगा। परन्तु महाराज अजीतसिंहने इन दोनों प्रस्तावोमे से किसीको भी नहीं माना। परन्तु दीवानसाहबकी सम्मतिसे विशेष करके कविश्रेष्ठ केसरके उपदेशसे अंतमे इस प्रस्तावमे अपनी सम्मति प्रकाशित की, कविने कहा कि दौलतखाँने जिस समय मारवाड़ पर आक्रमण किया था, उस समय मारवाड़-प्रति राव गांगाने अपने पुत्र मालदेवको इस भाँति नियुक्त करके भेजा था। राजा अजितसिंहने पहले प्रमाण पाकर फिर कोई आपत्ति न की। अभयसिंहको राड़धड़ासे बुलाया, तब यह "सम्वत् १७७० के आषाढ़ महीनेके अंतमें हुसेनअलीके साथ दिल्लीमें भेजे गये। मरुक्षेत्रके युवराजको बादशाहके यहाँसे पाँच हजार सेनाके नायक पदकी पदवी प्राप्ति हुई।"

"अजित शीघ्र ही अपने पुत्रके पीछे २ दिल्लीकी सभामे गए। अजितकी शैशव अवस्थामें जिन सम्पूर्ण राठौर सामन्तोंने दुष्ट औरंगजेबके कराल कवलसे रक्षा करनेके लिये दिल्लीमे युद्धकर प्रबल विक्रम प्रकाश करके जीवन त्याग किया था, उसी दिल्लीमें उन महाबली राजभक्त वीरोंकी समान समाधि चिह्न देखकर अजितके हृदयमें निद्रित प्रतिहिंसा मानो प्रबल वेगसे फिर प्रज्ज्वलित होगई, उन्होने उसी समय तैमूर-सम्राट् वंशको लोपकर प्रतिहिंसा सफल करनेकी मनही मनमे दृढ़ प्रतिज्ञा की, महाराज अजित सिंहने हिन्दू जातिके प्रतिनिधि स्वरूपसे इस समय चार विषयोपर यवन सम्राट्के विरुद्ध प्रबल अनुयोग उपस्थित किया,—

१ म—नौरोजा।

---

(१) उर्दू तर्जुमेमें सिवानेके किलेमें भेजना लिखा है।

(२) राड़धड़ा लूनी नदीके पश्चिम तीरपर स्थित एक देश है।

(३) नौरोजा नवां दिन, प्रति महीनेके नवेदिन एक मेला होता था। जिसमें राजमहलके और२ भी बड़े बड़े अमीर उमरावोंके घरके लोग अपनी दस्तकारीके सामान लाते थे, और परस्पर क्रय विक्रय होता था। इसी नौरोजेका सालभरमें एक ऐसा मेला होता था; जिसमें केवल स्त्रियां इकट्ठी होती थीं, बड़े छोटे सबघरोंकी स्त्रियोंके सिवाय कोई पुरुष वहां न जा सकता था। परंतु बेगम साहबाके साथ बादशाह वेष बदलकर जाया करता था, इस मेलेमे प्रायः बहुत सी अनरीतें भी हुआ करती थीं। इस मेलेको अकबरने जारी किया था।

२ य-बादशाहके साथ कन्या और भगिनियोका परिणय दान करनेके लिये देशीय राजाओको वलपूर्वक राजी करना।

३ य-गोहत्या।

४ र्थ-जिजियाकर।"

स्वजातीय राजाओके गौरवकी रक्षाके लिये हो या राठौर वंशके कलंककी प्रच्छन्न भावसे रक्षा करनेके अभिलाषी होनेसे हो, राठौर कवि इस स्थानपर एक विषयका भी उल्लेख करनेके लिये आगे नहीं बढ़े। सैयदके मारवाड़ पर आक्रमण करनेके पीछे अजितके निकट जो कई एक प्रस्ताव उपस्थित किये गयेथे, उनमेसे अजितकी एक कन्याके साथ बादशाह फर्रुखसियरके विवाहका प्रस्ताव भी एक था। इस विवाहके कारण जो राजनैतिक घटना हुई थी, हमारे पाठकोने उसे प्रथम कांडमे पढ़ा होगा। अजितकी किंचित्मात्र भी इच्छा न थी, कि वह पापी यवनके करकमलमे कन्या देकर अपने वंशको कलंकित करे। केवल सम्राट्की ओरका प्रवल वल देखकर और राज्यकी रक्षाका अन्य उपाय न देख वह फर्रुखसियरको कन्या देनेके लिये राजी हुए थे। यवन वादशाहने वलपूर्वक उनको इस कन्यादनके लिये राजी करके सम्राट् वंशके विनाशका साधन अपने आप करलिया। अजित शीघ्र ही अपने स्वर्गीय पिताकी समान राठौर तेजके साथ स्वाधीनता प्रभुत्व और यवन सम्राट्के प्रवल् प्रतापरूपी सूर्यको अस्त करनेके लिये दोनो भाई सैयदोके साथ जा मिले। अजितने दोनो सैयदोके साथ मिलकर उन्हे चिरकाल तक हस्तगत रखनेकी इच्छासे शीघ्र ही नौरोज उत्सवमे राजपूत राजकुमारियोके आगमनका निवारण, देशीय राजाओको सम्राट्के करमे कन्यादानकी रीतिको रहित करना, गोहत्या निवारण तथा जिजियाकरको एक बारही दूर करदेनेके प्रस्ताव किए थे। सब बातें स्वीकृत हुई और इसके अतिरिक्त अजितके द्वारा बादशाहने यह भी स्वीकार किया कि "राजपूत गण दिल्लीकी राजधानीके जिस प्रान्तमे निवास करते थे, उस प्रान्तके देवमंदिरोमे नियम सहित शखध्वनि होती रहै। बादशाहकी ओरसे इसमे कोई बाधा नहीं होगी। और हिन्दुओके देवमंदिरोको यवन किसी समय भी अपवित्र नही कर सकेंगे। महाराज अजितसिंहने उसके साथ ही साथ अपने पिताके राज्यकी सीमाको भी बढ़ा लिया"।

कालकी कैसी विचित्र गति है! कठिन औरंगजेबने जिस अजितके जीवननाशका तथा राठौर राजवंशके एक बार ही विनाशका यत्न किया, जो वाल्यावस्थामे बड़े यत्नसे पाले गये थे। और युवावस्थातक प्राणोंके भयसे दूरदेशके जंगल पहाड़ोमें मारे मारे फिरते रहे थे। उन्हीं अजितने इस समय दिल्लीके वादशाहकी सभामे प्रवल अधिकार प्राप्त करके हिन्दुओ के अभिलषित प्रत्येक अनुष्ठान सिद्ध कर लिये। राठौर् कविने इसके पीछे लिखा है कि "समस्त आशाओके सफल होने पर अजित सम्वत् १७७२ के ज्येष्ठ मासमे

(१) राजस्थानके प्रथम कांडके तेईसवें अध्यायके २१५ पृष्ठमे इनके विवाहका वृत्तान्त वर्णन किया गया है।

गुजरात राज्यके प्रतिनिधि पदपर नियुक्त होनेके पीछे नई सनद पाकर दिल्लीको छोड़कर जोधपुरको चले गये। मंत्री खीमसीकी सहायतासे शीघ्र ही जिजियाकर सब स्थानोंसे उठा दिया गया। हिन्दूकुलतिलक महाराज यशवन्तसिहके उपयुक्त कुमार अजितके द्वारा उसे घृणित करके रहित होनेसे सर्वत्र हिन्दूमात्रने महा आनंदित हो अंतःकरणसे अजितकी जय ध्वनिसे भारतवर्षको प्रतिध्वनित करदिया। यद्यपि अजित अपनी अनिच्छा से फर्रुखसियरके करकमलमे कन्यादेनेसे मन ही मन महा दुःखित हुए थे, परन्तु उसके पलटेमें इस समय समान धर्मावलम्वी स्वजातिके प्रार्थनीय अनेक विषयोंमें सफलता प्राप्त करनेसे उनका शोक अवश्य ही विशेप कर घट गया था।"

"अजितसिहने सम्वत् १७७२ मे अपने पिताके राज्यके प्रधान २ देशोमे स्वयं जाकर सुशाशनकी व्यवस्था की। दक्ष होनेकी इच्छासे कुमार अभयसिहको अपने साथ लेकर चले। सबसे पहले वह जालोरमें गये। इस समय वर्पाऋतुका प्रवल वेग देखकर महाराज़ अजितसिहने वह समय जीलोरमे ही व्यतीत किया। शरद्ऋतुके आते ही प्रकृति देवीने प्रसन्न मूर्ति धारण की। तव मारवाड़पतिने शीघ्र ही अपनी सजी हुई सेना साथ लेकर सवसे पहले मेवासा देशके आवू और सिरोहीकी देवड़ा जाति पर आक्रमण किया। अजितके नीमाजपर अधिकार करते ही समस्त देवड़ाओने उनकी अधीनता स्वीकार की, और उन्होंने कर देनेमें भी किंचित् विलम्व न किया। इस समय पालन-पुरसे फीरोजखॉने आगे जाकर अजितके साथ साक्षात् करके उसका यथोचित सन्मान किया। थिराद देशके राणा अजितको एक लाख रुपया करमे दिया करते थे, और कलवी जातिके नेता क्षेमकर्ण सव प्रकारसे अधीनताकी जंजीरमें वंध गये। शक्ता चांपावत् और विजयभंडारी गत वर्पमे पाटन देशमे सुशाशनकी व्यवस्थाके लिये भेजे गये थे, वे भी इस समय पाटनसे आकर महाराज अजितसिहके साथ मिले।"

"सम्वत् १७७३ में महाराज अजितने हलवदके झालाको परास्त किया। और उनको अधीनताके जालमे जड़ित करके नवानगरके जाम लोगोपर आक्रमण किया। नवा नगरके जाम एक महावली और पराक्रमी अजितके द्वारा आक्रान्त होकर अपने राज्य और प्राणोकी रक्षाके लिये इसकी शरणमे गए, और करस्वरूपमे तीन लाख रुपया और पचीस श्रेष्ठ घोड़ी देकर उन्होने प्रवल विपत्तिसे उद्धार पाया। अजितसिह अपने राज्यके समस्त भागोमे सुरीति स्थापन करनेके पीछे अपनी सेना सहित द्वारका तीर्थको चले गये। गोमतीमे स्नान कर तथा तीर्थक्षेत्रमे पुण्य संचय करनेके पीछे वह अपनी राजधानी जोधपुरको लौट आये, आते ही उन्होंने सुना कि इन्द्रसिहने हमारे पीछे नागौर पर अधिकार किया है। इस समाचारसे क्रोधित हुए सिहकी समान शीघ्र ही सेना सहित नगरमें जाकर उन्होने इन्द्रसिहको फिर सिहासनसे उतार दिया"।

---

(१) आवू शिखरके दुर्गम पर्वत दुर्गको मेवासा नामसे कहा है। यहांके आदि भूमियां कोल मीना माहीर आदि थे और समय २ पर राजपूत गण भी इस दुर्गम प्रदेशमें भागकर अपनी क्षा करते थे।

अगले वर्ष अर्थात् सम्वत् १७७४ मे, महाराज अजितसिंह भारतके क्षेत्रमें चिरस्मरणीय अभिनय करनेमे प्रवृत्त हुए। फर्रुखसियरके शासनके समयमें दिल्लीके बादशाहकी सभामे मंत्रियोमें परस्पर झगड़ा मचा। एक ओर मुगल अमीर उमराव, और दूसरी ओर दोनो भाई सैयद खड़े हुए। उन्होने जिस प्रकारका शोचनीय काण्ड उपस्थित किया, वह इतिहास-पाठकोसे छिपा नहीं है। उस मुग़ल ओर सैयदोके आत्म-विग्रहके समयमे,महाराज अजितसिंह एक प्रधान अंशोका अभिनय करनेके लिये शीघ्र ही रंगभूमिमे बुलाये गए। हुसेनअली इस समय दक्षिणमे था, और अवदुल्ला बादशाहके विरुद्धमें गुप्तभावसे षड्यंत्रका विस्तार कर रहा था। दोनों सैयद इस समय महाराज अजितको एक प्रवल वलशाली देख कर सबसे पहले उन्हींको हस्तगत करनेके लिये चेष्टा करने लगे। उन्होंने अजितको राजधानींमं सेनासहित आनेके लिये उनके पास क्रमानुसार पत्रके ऊपर पत्र भेजे। अजित अपना वदला लेनेका सुअवसर जानकर विक्रम वाहिनी सेनाके साथ नागर, मेरता, पुसकर, मारोट और सांभरसे होकर दिल्लीमें आ पहुँचे। सांभरके किलेमे बहुत सी राठौरसेनाको रख आये। आनेके समय अजितसिंहने अपने पुत्र अभयसिंहको मारोटसे जोधपुर राजधानीकी रक्षाके लिये वहाँ भेज दिया। अजित अपनी प्रवल सेना साथ लेकर आये है, यह सुनते ही सैयद उनको वड़े सन्मानके साथ लेनेके लिये दिल्लीसे चले। अजितके अलीवुर्दीखाँकी सरायमे उतरते ही सैयद वहाँ जा पहुँचा; और उनका भलीभॉतिसे आदर सत्कार किया। सैयदने अजितसिंहके साथ मिलकर शीघ्र ही अपने गुप्त अभिप्रायको उनसे कहदिया। इस समय जयसिंह और मुगल अमीर वादशाहकी ओर थे, उन्होंने सैयदके दोनो भ्राताओंको एक बार ही सामर्थ्यसे रहित करके वादशाहको निष्कंट करनेकी चेष्टा की थी। उन्हीं जयसिंहने मुगलोंका नाश करनेके लिये शीघ्र ही अजितके निकट यह प्रस्ताव उपस्थित किया कि अपना मनोरथ इसीसे पूर्ण होगा, इनसे वदला लेनेके लिये विशेप सुअवसर जानकर अजितने सैयदके साथ उस गुप्त संधिके करनेमे किंचित् भी विलम्ब न किया। राठौर कविका वचन है कि "विषधारी सर्प जिस प्रकार पिटारीमें वंद होता है सम्राट् फर्रुखसियर उसी भावसे इस समय रहने लगा, दोनों सैयदोने अपने प्रधान प्रतिद्वन्दी शत्रुओंके नेता जुल्फकारखाँको सबसे पहले इस संसारसे विदा करके अजितके प्रथम कार्यको स्थिर कर लिया"।

जिस कठिन औरंगज़ेवने महा प्रताप और विपुल विक्रमके अकथनीय अत्याचारोसे तथा भारतवर्षमें पाशविक वलकी पूर्ण सहायतासे मुगलोकी शासन शक्तिको अक्षय रखनेकी विशेष चेष्टा की थी। जिसके उस पैशाचिक शासनसे भारतवर्षमे हिन्दू जातिके हिन्दूधर्मके और हिन्दू समाजकी दुर्गतिका एक शेप होगया था। जिस शासन शक्तिने भारतवर्षके प्रत्येक राजाको कंपायमान करदिया था। कालचक्रकी गतिसे इस समय मुग़लोकी वही शासन शक्ति विपरीत अवस्थामे पड़ गई। जिस

औरंगजेबने अजितको वाल्यावस्थामे ही हत्या करके अपनी पाप प्रतिहिंसाको सफल करनेके लिये विशेष यत्न किये थे, जिसे अजितने अपने प्राणोके भयसे वड़ी दूर जाकर पर्वतोके शिखर पर निवास किया था, वही अजित आज दिल्लीमें आये है, और दिल्लीके सिंहासनपर विराजमान वादशाह फर्रुखसियर उन अजितके साथ मिलनेके लिये अधीर होगया । अजित राजधानीमे आये है, यह सुनकर वादशाहने शीघ्र ही कोटा राज्यके हाड़ाराव भीम और खान दौरानखाँको अजितके पास, जिससे अजित वादशाहके साथ शीघ्र साक्षात् करे ऐसा प्रस्ताव करके, भेजा । राजनीतिमे चतुर अजितने अपनी इच्छासे ही फर्रुखसियरको जामातृ पद पर वरण नही किया था, वह जिस अनिवार्य कारणसे अपनी असम्मतिसे कन्या देनेके लिये राजी हुए थे, पाठकोको वह पहले ही विदित होगया है । जामाता वताकर भी वादशाहके ऊपर जिस स्नेहके वदले उसे राठौर वंशीके कुलमे कलंककी निशानी चिह्न समझते थे, और इसीसे वे मनमे वादशाहसे अत्यन्त रुष्ट थे । वह जो कुछ भी हो उन्होने अपने अभिप्रायकी सिद्धिके लिये मनकी वात मनहीमे रखकर वादशाहके प्रस्तावसे उसके साथ साक्षात् करनेकी सम्मति प्रगट की। मोतीवाग नामक रमणीक वगीचेके महलके ऊपर वादशाहके साथ अजितका साक्षात् स्थान नियुक्त हुआ । अजित इकले न जाकर अपने अधीनमे स्थित समस्त माननीय सामन्त और वीरोको साथ ले महा समारोहके साथ चले । राठौरोकी सामन्त मंडलीके अतिरिक्त उनके साथ जयसलमेरके राव विष्णुसिंह देरावलके पद्मसिंह, मेवाड़के फतेसिंह, सीतामऊके राठौर नेता मानसिंह, रामपुराके चन्दावत् गोपाल, खंडेलाके उदयसिंह, मनोहरपुरके शक्तसिंह, खिलचीपुरके कृष्णसिंह तथा और भी वहुतसे वुद्धिमान् मनुष्य अजितके साथ २ चले । अजितके केवल मारवाड़पति होनेसे ही नहीं, वरन् इस समय गुजरातके राजप्रतिनिधि पदपर नियुक्त होनेसे समस्त राजपूत सामन्त उनको नेता जानकर उनके अधीनमे रहनेके लिये तैयार हुए, अजित उस समय कितने वलवान् होगये थे, शत्रु उनको किस प्रकारसे भयमय नेत्रोसे देखते थे, उसका अनुमान सरलतासे होसकता है, वादशाह फर्रुखसियर ने महाराज अजितको वड़े सन्मानके साथ लिया । उनसे मिल कर वादशाहने उन्हे "सप्तहजारी मनसव" अर्थात् सात हजार सेनाके नायक नियत कर उनके राज्यकी सीमा वढ़ाई, साथ ही इसके और भी एक करोड़ रुपयेकी जागीर उन्हे दी ।

इसके अतिरिक्त माहीमरातव नामक सन्मान चिह्न, हाथी, घोड़े, मूल्यवान् हीरे सुवर्णके म्यानसे ढकीहुई तलवार, किरीच, हीरोके सिरपेच और दो मूल्यवान् मोतियोकी माला उपहारमे दी । इस प्रकारसे महाराज अजित वादशाहसे सन्मानित होकर शीघ्र ही सैयद अवदुल्लाखांके साथ साक्षात् करनेके लिये चले । अजितके आनेकी वार्ता सुनकर अवदुल्लाखांने आगे वढ़कर उन्हें वड़े आदरभावके साथ लिया । अजित और उनके सेवकोकी सामन्त मण्डली परस्पर मिली । राठौर कविके मतसे वह अत्यन्त ऊँचा सन्मान था । सैयदके साथ इस साक्षात् स्थानमे दोनोमे यह धारणा होगई कि उपस्थित राजनैतिक

अभिनयसे यातो जय ही होगी नहीं तो दोनो ही अपने जीवनको त्याग देंगे, अजितके साथ सैयद अबदुल्लाके इस गुप्त साक्षात् और परामर्शकी वार्ता सुनकर मुगल अमीर भय-भीत चित्तसे अनेक अनिष्टोंकी शंका करनेलगे, तथा अजितके जीवनरूपी दीपकको निर्वाण करनेके लिये मुगल गण गुप्तभावसे अस्त्र हाथमें लेनेका समय ढूँढ़नेलगे।

राठौर कवि इस वातको लिख गये है "सम्वत् १७७५ पूस मासके शुक्लपक्षकी दूजके दिन वादशाह फर्रुखसियरने अजितके यहां जाकर साक्षात् किया। अजितने वादशाहके योग्य सन्मान करनेमे कोई कसर न की। उन्होने एक लाख रुपयेको एक जगह रख उसके ऊपर वादशाहका आसन बिछाया, और उसके ऊपर बड़े आदरभावके साथ उसे बैठाला। इसके अतिरिक्त हाथी, घोड़े मूल्यवान् हीरे और रत्नोंके जड़े हुए अलंकार भी उपहारमे दिये। वादशाह फर्रुखसियर अजितके सन्मानसे अत्यंत संतुष्ट हो विदा होकर अपने स्थानको चले आये। दिल्लीकी राजधानीमें इस समय एक मात्र अजित ही सबसे अधिक सन्मानित और सामर्थ्यवान् गिने जाकर सबसे पूजित होने लगे। फागुनके महीनेमे अजित और सैयदोंने वादशाहके साथ साक्षात् करनेके पीछे आपसमे एक गुप्त सलाह करके एक पत्रमे अपने एक षड़यंत्रके प्रत्येक विषय लिखकर दक्षिणमे हुसेनअलीके पास भेज दिया। और उसको यथाशक्ति शीघ्रतासे आकर मिलनेके लिये अनुरोध किया।" कविने इस स्थान पर लिखा है कि "इस समय आकाश मंडलमे भावी कुलक्षण दिखाई देने लगे। चारोओर मानो घोर लोहित दावानल प्रज्वलित होगई। गधोका असमयमें चिल्लाना-तथा कुत्तोके भयंकर चित्कार चारोओर सुनाई देने लगे। विना मेघोके ही वज्रध्वनिने पृथ्वीको कंपायमान कर दिया। जिस वादशाहकी सभामे एक समय वरावर उत्सव होते रहते थे, जिस सभामें कुसुम कोमल लावण्यमयी युवतियोके नाचनेसे नूपुरकी झनकार सुनाई देती थी, किन्नरियोके कंठसे निकलीहुई संगीतध्वनि सभीके नेत्र और मनको तृप्त करती थी, उस उज्वल सम्राट्की सभामे आज घोर सूनसान, होकर अंधकार छा रहा है। मानो आनेवाली विपत्तिके पूर्ण लक्षण दिखाई देरहे हैं। बीसदिनमे हुसेन संहारमूर्तिसे दिल्लीसे आ पहुँचा। महलके पास आते ही जयका डंका वजा; मानो वह पाशविक वलके पतनके पहले ही घोषणा करने लगा। हुसेनके साथ जो अगणित अश्वारोही आये थे उनके खुरोकी उड़ी हुई धूरिसे दिल्ली मानो घोर अंधकारसे पूर्ण होगई। अपनी सेना दिल्ली नगरके उत्तरकी ओर डेरे डाल कर हुसेनअली शीघ्र ही अपने भ्राता अवदुल्ला और अजितसे साक्षात् करनेके लिये गया। हुसेनअलीके सेना सहित आनेकी वार्ता सुनकर फर्रुखसियर पहलेसे भी अधिक भयभीत होगया, उसने शीघ्र ही हुसेनअलीके पास उपहार द्रव्य भेज दिए। इस समय राजधानीके मुगलनेता अपने २ स्थानोमे मौनभावसे रहने लगे थे। आकाशमे वाज पक्षीको उड़ता हुआ देखकर चिड़िया जिस प्रकार क्षेत्रमे नव दूर्वादलके साथ मिलकर प्राणोके भयसे अत्यन्त संकुचित भावसे रहती है, हुसेनके दिल्लीमे आते ही अमीर उमराव

भी उसी भावसे भयभीत होकर रहने लगे। आमेरके अधीश्वर मिरजा राजा सवाई जयसिंह इस समय तेलहीन दीपककी समान प्रभाहीन होगये थे। दूसरे दिन सैयद इत्यादि सभी यमुनाके किनारे अजितके डेरोंमें आकर मिले, और उन्होने अपने गुप्तकार्यको सिद्ध करनेके लिये सलाह की। सलाह होनेके पीछे यथार्थ कार्यका आरंभ होना स्थिर हुआ। अजितसिंह अपनी रणतुरंगिनीकी पीठपर चढ़े, और शीघ्र ही विपुल पराक्रमी राठौरोंकी सेनाके साथ उन्होने उन डेरोंमेंसे दिल्लीके महलमें जाकर महलके प्रत्येक द्वार पर अपनी राठौर सेनाके पहरे बिठाकर सब प्रकारसे महल पर अपना अधिकार कर लिया"। हाय! इतिहासने किस प्रकारका फिर अभिनय किया। जिस औरंगज़ेबने मारवाड़के महाराज यशवन्तसिंहको काबुलमें विष देकर उनकी हत्या करनेके पीछे योधगिरिके महल पर अधिकार करके अजितको एक वार ही राज्य हीन कर दिया था, उसी अजितने आज उस मुग़ल बादशाहके दुर्जेय महल पर अपना अधिकार कर लिया। इस बातको कौन विचारता था कि सर्वस्वान्त प्राणभयसे भयभीत हुआ बालक अजित एक समय इस प्रकारके असीम साहससे उत्साहित होकर प्रशंशनीय कार्य करैगा, क्या कोई भूलसे भी ऐसा अनुमान न करसकता था? कि वह दुर्वल अजित इस प्रकारसे प्रवल स्वजाति शत्रु मुग़लबादशाहके वंशको विध्वंश करनेके लिये संहारमूर्तिसे दिल्लीके महलको अपने हस्तगत कर लेगा? राठौर कवि पीछे लिखते हैं कि "अजितने मानो महाप्रलयके प्रचंड सूर्यकी समान दर्शन दिया। प्रदीप्त दिन मणिरूपी सिंहके आगमनसे जिस भाँति अंधकार रूप हाथियोंके यूथ दूर भाग जाते है, तेलके अभावसे दीपककी शिखा जिस प्रकार बुझ जाती है, उसी प्रकारसे राजा अजितके विचारमय और प्रजाके मंगल उद्देशके लिये राज्यशाशन रूपी उज्ज्वल प्रकाशसे अराजकताका अंधकार एक वार ही दूर होजाता, परन्तु उस तेलरूपी न्यायविचारके अभावसे ही उनके शाशनका दीपक सरलतासे निर्वाण होगया। दिल्लीका राजछत्र इस समय जिस महा आघातसे कंपित और चंचल होगया था, भारतवर्ष भी शीघ्र ही उसी संघात ध्वनिसे शब्दायमान होगया। दिल्लीका खजाना सब लूटलिया गया, मुग़ल अमीर उमराओमेंसे कोई भी साहस करके बादशाह फर्रुखसियरकी रक्षा करनेके लिये आगे न बढ़ सके और आमेरके महाराज जयसिंह इस महा विपत्तिको आता हुआ देखकर शीघ्र ही नररक्त प्लावित दिल्लीको छोड़कर अपने राज्यको चले गये। फर्रुखसियरके प्राणनाशके पीछे शीघ्रही एक मनुष्य दिल्लीके राज्यसिंहासनपर अभिषिक्त किया गया, परन्तु चार महीनेमें ही उसने पागलपनेकी दशामें प्राण त्याग किये। इसके पीछे दौलाके शिरपर भारतका राजमुकुट शोभा पानेलगा। परन्तु दिल्लीके मुगल अमीर गणोंने इकट्ठे होकर इस समय

---

(१) सम्राट् फर्रुखसियरकी हत्याका वृत्तान्त प्रथम कांडमें यथास्थान् वर्णन किया गया है।

(२) सम्राट् रफिउल दारा जात।

(३) सम्राट रफ़िउद्दौला।

आगरा नगरके नेकोशाहको भारतके सम्राट् पदपर अभिषिक्त किया। अजित और अवदुल्लाको सम्राट् रफिउद्दौलाके निकट रखकर हुसेनअलीने उन मुगलोंपर सेना सहित आगरेको पयान किया"

"सम्वत् १७७६ मे, अजित और सैयदने दिल्लीसे यात्रा की, परन्तु इस समय जिन मुगलोंने नेकोशाहको सम्राट्रूपसे अभिषिक्त करके सलीमगढ़की रक्षा कीथी, वही उसे इस समय अजितको लौटा देनेके लिये राजी होगये। इस समय सम्राट् रफिउद्दौलाके प्राण त्याग करनेपर अजित और सैयदके दोनो भ्राताओने फिर एक नवीन बादशाह मोहम्मदशाहको दिल्लीके विश्व विदित सिंहासनपर बैठाल दिया। जिस समय मारवाड़ पति अजितने दोनो सैयदोंके साथ मिलकर समस्त भारतमें, एकमात्र सबमे प्रधान सामर्थ्यवान् वीरस्वरूपसे दिल्लीके सिंहासनपर अपनी इच्छानुसार मनुष्यको अभिषिक्त किया था, उस समयमें प्रवल आत्मविग्रहसे यवनराज्याके अनेक समृद्धिवान् नगर विध्वंश और दूसरे पक्षमे अनेक नगर स्वाधीनभावसे मस्तक उठासके थे। बादशाह फर्रुखसियरके स्वर्गारोहणके साथ ही साथ जयपुरके महाराज जयसिंहकी आशा भरोसा एक वार ही लीन होगया। दोनो भ्राता सैयद इस समय विशेप सुभीता पाकर अपने शत्रुपक्षके उन महाराज जयसिंहको उचित दंड देनेको शीघ्र ही सुसज्जित होगये। आमेरपति जयसिंह कमलपत्र पर स्थित जलकी समान चंचल होगये। जब नवीन सम्राट् महोम्मदशाह और दोनो सैयद अजितके साथ सेना सहित जयपुर पर आक्रमण करनेके लिये आगे बढ़कर सींकरीनामक स्थानमे पहुँचे, तब जयपुरके सम्पूर्ण सामन्तोंने अपने प्राणोके भयसे अजितके पास जाकर उनकी शरण ली। उन्होंने अजितको बुलाकर कहा, यदि आप जयपुरके महाराजकी सैयदोंके हाथसे रक्षा न करसकें तो जयपुर राज्यके साथ हमारा सर्वनाश होजायगा। द्वापरमें श्रीकृष्णने जिस प्रकार अर्जुनको अभय देकर उनकी रक्षा की थी, अजितने भी उसी प्रकारसे जयसिंहको अभय दान देकर उन्हें बुला भेजा। उन्होंने चांपावत् सम्प्रदायके नेता और अपने मंत्रीको जयसिंहके निकट भेज कर कहला भेजा कि महाराज अब कुछ भय नहीं है। अभय पाकर जयपुरपति जयसिंह उस चांपावत् नेता और अजितके मंत्रीके साथ तुरन्त ही उनके पास चले आये। जयपुरके महाराजने मानो प्रलयके मुखसे उद्धार पाया। अजितने जिस प्रकार अपने बाहुबलसे मोहम्मदशाहको दिल्लीके सिंहासन पर बैठाया था, उसी प्रकारसे राजा जयसिंहको महा विपत्तिसे उद्धार कर दिया। बादशाह मोहम्मदशाहने इस समय अजित पर अत्यन्त संतुष्ट हो उनको अहमदाबाद देशकी एक कालीनदानकी सनद देकर उन्हें अपने राज्यमे जानेकी आज्ञा दी। अजित आमेरके जयसिंह और बूंदीके बुधसिंह हाड़ाके साथ महा आनंदित हो अपनी राजधानी

(१) उर्दू तर्जुमेंमें यों लिखा है कि सम्वत् १७७६ में अजीत और अबदुल्लाखाँ भी दिल्लीसे रवाना हुये, पर मुगलोंने नीकोशाहको सौंप दिया और वह सलीमगढ़में कैद किया गया।

जोधपुरकी ओरको चले गये । और जाते समय रास्तेमे मनोहरपुरके सेखावत नेताकी एक परम सुन्दरी कन्याके साथ विवाह कर लिया । सुखदाई शरद्ऋतुके पहले आश्विन मासमे महाराज अजीत जोधगिरिमें गए, वहॉ आमेर पतिने सूरसागरके किनारे और हाड़ा रावने नगरके उत्तरकी ओर डेरे डाल दिये ॥ "

राठौरोंके कवि कर्णीदानने इससे पीछे लिखा है "ऋतुराज वसन्तके आते ही शरद् ऋतु विदा होगई । नवीन आम्रमुकुलके अमृतमय सौरभसे भौंर मतवाले होगए । पादपराजि नवीन रसके आनेसे नवीन पत्तोके आभूपणोसे अपने सर्वाङ्ग शरीरको भूपित करके कमनीय दृश्य दिखाने लगी । भौरोने गूँ गूँशब्द करते २ ऋतुपति माधवके जयका कीर्तन प्रारंभ कर दिया । चारोओर आनन्द ध्वनि होने लगी, देवता तथा स्त्री पुरुष सभी आनन्दके समुद्रमे मग्न होगये । ऐसे सुख समयमे आमेरपतिने लालरंगके वेस्र धारण किये, रमणीय अजितकी कन्या सूर्यकुमारीके साथ पाणिग्रहण किया । चिर प्रचलित रीतिके अनुसार महाराज अजितने इस कन्यादान करनेके पहिले इसके सम्बन्धमे चांपावत् सम्प्रदायके आदिप्रधान अर्थान् प्रधानमंत्री कूँपावत् संप्रदाय भंडारी दीवान और अपने गुरुदेवकी अनुमति ले ली । यदि हम इस विवाह संवन्धके संपूर्ण वृत्तान्तको वर्णन करै तो एक बड़ा भारी ग्रंथ वन जायगा, इस कारण इसके सम्बन्धमे कुछ थोड़ा सा ही लिखते है " ।

अगले वर्ष, अर्थात् संवत् १७७७ महाराज अजितके जीवनके पक्षमे एक चिर-स्मरणीय वर्ष हुआ था । महावीर मालदेवके पुत्र उदयसिंहने वादशाह अकवरकी अनुकूलता स्वीकार करनेके पहले "राजा" की उपाधि धारण करनेसे अकवरके चरणोमे जिस जातीय स्वाधीनताको वेच दिया था, अजितने इस वर्षमे उसी जातीय स्वाधीनताको पुनः संचय करके भारतवर्पमे अपनी कीर्त्तिको अक्षय रखनेका उद्योग किया । सूर्यप्रकाशनामक ग्रंथसे जाना जाता है कि सम्वत् १७७७मे वर्षाऋतुके आने पर आमेरके महाराज जयसिंह और बूंदीके राव बुधसिंह इस वर्षाकाल तक अजितके ही पास रहे, इसी समयमे यह समाचार आया कि मुगलोने वलवान होकर वादशाह मुहम्मदशाहकी सहायतासे दोनो भ्राता सैय्यदोकी हत्या की है, और महाराज अजितका सर्वनाश करनेके लिये वह उद्योग कर रहे है । वीर श्रेष्ठ अजितने यह समाचार पाते ही क्रोधित हुए सिंहकी समान रुद्रमूर्तिसे तलवार उठाकर शपथ की, चाहे जिस रीतिसे हो मै अजमेर पर अवश्य ही अपना अधिकार कर लूगा नरेश्वर अजितने शीघ्र ही आमेरके महाराज जयसिंहको विदा दी । वारह दिनके वीचमे ही मारवाड़पति अपनी वलवान् सेनाके साथ मेरतामे आ पहुँचे । और अत्यन्त शीघ्रतासे उन्होंने सेनादलके साथ मुसल्मानोको अजमेरसे भगाकर अजमेरके किलेके ऊपर राठौरराजकी पताकाको लगा दिया । अजमेरमे स्थित सम्राट्की ओरके प्रधान

---

(१) दोनों सैयदोंकी हत्याका वृत्तान्त प्रथम कांडमे प्रकाशित हो चुका है, इसी कारणसे हमने यहाँपर उसको दुवारा नहीं लिखा है ।

शाशनकर्ताका प्राण नाश करके अभेद्य किले तारागढ़ पर अधिकार कर लिया। हिन्दुओंके देवमंदिरोमे आज फिर शंख और घंटेका शब्द सुनाई देने लगा, और मुसल्मानोकी मसजिदोमें (बांगदेना उपासनाके अर्थ बुलानेका स्वर) एक वार ही बंद होगया, जिस अजमेरमे केवल कुरानोका पाठ ही सुनाई देता था, इस समय उसी अजमेरमें पुराणोके पाठ आरंभ हुए। और मसजिदोके स्थलमे मन्दिरावलीने अधिकार कर लिया, समस्त काजी भाग गये, और ब्राह्मणोने इस समय फिर अपनी पूर्ण सामर्थ्य प्राप्त कर ली। जिस अजमेरमें केवल गोहत्या हुआ करती थी, उसी अजमेरमे इस समय पवित्र होमकुंड स्थापित होने लगे। विजयी अजितने सांभरके लवण ह्रद, डीडवाना देश और अन्यान्य बहुतसे देशोंको एक २ करके अपने अधिकारमे कर लिया। मारवाड़पति अजित चारो ओर अपने जयभेदी शब्दसे विजयकी पताका उड़ाकर अपने पिताके सिंहासन पर सम्पूर्ण स्वाधीनरूपसे विराजमान हुए। उनके मस्तक पर स्वाधीन राजछत्र शोभायमान होने लगा। अपने ही नामका सिक्का चलाया, और स्वतंत्र तुलादंडको नियुक्त किया, और अपना स्वतंत्र परिमापक गज चलाया, स्वतंत्र ही सेर इत्यादिके बॉटखाराकी सृष्टिकी, और सर्वत्र स्वतंत्र विचारालयके स्थापन करनेमे किंचिन्मात्रका भी विलम्ब न किया। अपने अधीनके सामन्तोकी पद मर्यादा भी नियुक्त कर दी। और उन सामन्तोके सन्मानके लिये, सोटा नौवत पताका आदि नियत करके अपनी स्वाधीन अवस्थाका समस्त अनुष्ठान कर लिया। दिल्लीके अश्वपतिकी समान अजित अजमेरमें पूर्ण स्वाधीन भावसे रहने लगे। शीघ्र ही यह समाचार समस्त भारतवर्षमे अधिक क्या मक्के और ईरानमे भी फैल गया सम्पूर्ण मुसलमानोने जान लिया कि अजितने अपने जातीय धर्मकी उन्नति फिर कर ली, और समस्त मरुक्षेत्रसे मुसलमान धर्म एक वार ही दूर होगया"।

सूर्यप्रकाशकारने आगे लिखा है सम्वत् १७७८ मे मुग़ल सम्राटने अजमेर देश पर फिर अपना अधिकार करनेका विचार किया। मुजफ्फ़रखॉं सम्राट्के द्वारा सेनापति पद पर नियत होकरवर्षाऋतुमें ही सेना लेकर अजमेरकी ओर चला। मुग़ल सम्राट्की अधीनताकी शृङ्खलाको छेदन करनेवाले वीर श्रेष्ठ अजितने सम्राट् की सेनाका समाचार पाकर अपने असीम साहसी पुत्र अभयसिंहको शत्रुओका नाश करनेके लिये भेज दिया। कुमार अभयसिंहके साथ मारवाड़के आठ वीर सामन्त और तीस हजार अश्वारोही चले। वाहिनीके दक्षिणमे चांपावत गण बाँई ओर कूंपावत गण, तथा करमसोत मेरतिया जोधा इंदा भाटी सोनगरा देवडा खीची धांन्धल

(१) अजितने दिल्लीके मुग़ल सभाके आदर्शमें यह समस्त ध्वजा, दंड, नौबत, आशा सोंटा आदि इन सबको सामन्तोंकी श्रेणीमें विभाजित कर दिए थे, जोधपुरमें आज तक वह रीति विराजमान है। राजपूत गण सर्व साधारणके पहले दिल्लीके प्रबल प्रतापान्वित बादशाहको अश्वपति कहकर उल्लेख करते थे। उनके मतसे अश्वपति दूसरी श्रेणीका सन्मान सूचक है। और गजपति प्रथम श्रेणीका सन्मान सूचक है।

और गोगावत् इत्यादि सम्प्रदायकी सेनाके प्रधान, वाहिनी रूपसे कुमार अभयसिंहके अधीनमें जय २ कारके स्वरसे पृथ्वीको कंपित करते हुए यवनोका संहार करनेके लिये चले। आमेरमें राठौर और सम्राट्की सेनाका परस्पर मुकावला हुआ। परन्तु मुजफ्फरने राठौर सेनाकी संहारमूर्ति देखकर विना समय ही भयके मारे भाग कर अपने नामको कलंक लगा दिया। महावीर अभयसिंह वादशाहके सेनापति और सेनाको भीरु कापुरुषोकी समान आचरण करता हुआ देख कर उत्तेजित हो वादशाहको दमन करनेके लिये उस प्रवल सेनाके साथ आगे वढ़े, अभयसिंहने एकादि क्रमसे शाहजहानपुर पर अधिकार कर नारनोलको लूटा और पटना अर्थात् तंवरावाटी और रिवाड़ीसे वहुतसा धन संग्रह कर लिया। यह जानेके समय प्रत्येक ग्राम २ नगर २ मे अग्नि लगाकर जाने लगे। अलीवरदीकी सराय तक वह अग्नि जल उठी। अभयसिहके उस महा पराक्रमसे सारी दिल्ली और आगरा मारे भयके कंपायमान होने लगे। अभयसिहके इस असीम साहसको देखकर असुर गण पादुका छोड़कर प्राणोंके भयसे चारों ओरको भागने लगे। और अभयको यवन वंशकाः विध्वंश करते हुए देख कर उनको 'धौंकल' अर्थात् वंशविलोपक उपाधि दी। कुमार अभयने इस प्रकारसे चारों ओर अपने वीर विक्रमको प्रकाशकर सांभर और लूधानासे जाकर नरूकापतिकी एक कन्याके साथ पाणिग्रहण किया।

कवि इसके पीछे लिख गये है, सम्वत् १७७९ मे विजयीकुमार अभयसिहने सांभरमे जानेके समय वहांकी सेनाकी संख्याको वढ़ाकर किलेको अभेद्य कर लिया। इस वर्षमे महाराज अजित अजमेरसे आकर अपने पुत्र अभयसिहके साथ मिले। कश्यपके साथ जिस प्रकार सूर्यका साक्षात् हुआ था। उसी प्रकार अजितके साथ उनके पुत्र अभयसिंहका साक्षात् हुआ। अभयसिहने प्रचंड सूर्यकी समान ध्वान्तस्वरूप मुजफ्फरको परास्त करके हिन्दू जातिके सुखकिरणको प्रभासित करदिया था, मुग़ल सम्राट् मोहम्मदशाह फिर पिता पुत्रका मिलन देखकर महा भयभीत होगये। उन्होंने अजितके उद्धत आचरणको निवारणकर अजितके साथ फिर मित्रताके होनेकी आशासे चार हजार सेनाके साथ नाहरखांको अजितके निकट सांभरमे भेज दिया। परन्तु नाहरखां दौत्यकार्यमे अनुपयुक्त था। विशेप करके वह मनुष्य अत्यन्त उत्कट भाषाका प्रयोग करके शीघ्र ही चार हजार यवनसेनाके साथ उस सांभरके रणक्षेत्रमे निहत

---

(१) धान्धलआर गोगा सम्प्रदाय मरुक्षेत्रके अत्यन्त प्राचीन अनधीन सामन्त हैं। धांधल* गण राउ गांगाके वंशधर और गोगावत् गण प्रसिद्ध चौहान गोगाके वंशमें उत्पन्न हुए। सतलजके किनारे जवतक पहले पहल यवनोंने आगमन नहीं किया था, उस समय तक इस वीर श्रेष्ठ गोगाने महा वीरता प्रकाश करके सतलजकी रक्षा की थी। गोगाका नाम राजस्थानमें सर्वत्र प्रसिद्ध है।

(२) नरूका सम्प्रदाय जयपुर राज्यमें एक प्रधान सामन्त वंशीय था, इनका विवरण यथा समय प्रकाश किया जायगा।

---

* धांधल तो राठौर हैं गांगाके वंशके नहीं है। राव आसथानके वेटे धांधलके वंशज है।

होगया। इस समय चूड़ामणि जाटके पुत्रने आकर अजितकी शरण ली। बादशाह मुहम्मदशाहने इस समय राज्यके चारोओर असंतोषकी अग्नि प्रज्वलित देख कर तथा हिन्दू जातिकी पुनर्वार उन्नति और अपने बलको अत्यन्त क्षीण होता हुआ देखकर भारतका राजमुकुट छोड़कर मक्के तीर्थमें जाकर वहाँ रहनेका विचार किया। परन्तु मारवाड़पति स्वाधीन नरश्रेष्ठ अजितने जो नाहरखाँकी हत्या की थी, इससे बादशाह महाक्रोधित होकर एक बार ही इनसे बदला लेनेके लिये उत्तेजित होगया। जितनी सेना भारतराज्यके बाईस राजप्रतिनिधियोंके अधीनमें थी, मोहम्मदशाहने अजितको दमन करनेके लिये उस सब सेनाको इकट्ठा किया। उस प्रबल वाहिनीके अधिनायक पदपर आमेरके महाराज जयसिंह, हैदरकुली, इरादतखाँ बङ्गस इत्यादि प्रधान २ वीर नेताओंको नियुक्त करके अजितके विरुद्ध अजमेरको भेज दिया। श्रावणके महीनेमें उस सेनाने अजमेरके तारागढ़को जाकर घेर लिया। अभयसिंह उस किलेकी रक्षाका भार अमरसिंहके हाथमें सौंप सेना लेकर चले। यवनोंकी सेना चार महीने तक इस किलेको घेरे रही। परन्तु तो भी अपना अधिकार न कर सकी। सम्पूर्ण भारतके साम्राज्यकी सेना तो एक ओर, और मारवाड़पति अजित अकेला एक ओर था। उन चार महीनोंमें अजित असीम साहस करके राठौरोंके बाहुबलको प्रकाश करनेसे शान्त न हुआ। अंतमें आमेरपति जयसिंहके प्रस्तावसे महाराज अजितने बादशाहके साथ संधि करनेकी सम्मति प्रकाश की। बादशाहकी ओरके यवन और अमीरोंने कुरान हाथमें लेकर संधिके नियमोंको पालन होनेके लिये शपथ की, अजित बादशाहको अजमेर देनेके लिये राजी होगये। इसके पीछे अभयसिंह जयसिंह के साथ तुरन्त बादशाहके डेरोंमें गये, डेरोंमें यह प्रस्ताव हुआ कि अभयसिंह जो बादशाहकी अधीनता स्वीकार करैंगे तो इसके प्रमाणमें उनको बादशाहकी सभामें जाना होगा। आमेरपति जयसिंहने कहा कि अभयसिंहकी ओरसे कोई आपत्ति नहीं होगी, और वही इसके साक्षी भी बन गये, परन्तु अभीत हृदय अभयसिंहने तलवार हाथमें लेकर कहा कि यह तलवार ही हमारे जीवनकी साक्षी है"!

इस स्थान पर कर्नल टाड्साहब लिखते हैं कि मारवाड़के युवराज बादशाहकी सभामें आशातीत ऊँचे सन्मानके साथ ग्रहण किये गये थे। अभयसिंहने विचारा कि उनके पिता ही एक मात्र बादशाहकी दहिनी ओर प्रधान आस पानेके अधिकारी हैं, इस कारण जब कि मैं उनके प्रतिनिधि स्वरूपसे आया हूँ, तब मैं भी उसी प्रकारसे उस सन्मानसूचक आसनका अधिकारी हूँ। समस्त भारतवर्षमें दिल्लीके बादशाहकी सभाका नियम और वहांकी रीति सबसे कठिन है, परन्तु अभयसिंहने इस पर तनिक भी ध्यान न दिया, और गर्वित हो सभामें पैठ समस्त महामान्य प्रधान २ अमीर और उमरावको पीछे छोड़ कर वे आगे बढ़े, अधिक क्या कहैं सिंहासन की एक सीढ़ी पर पैर रखते ही एक अमीरने देख लिया तब उसने इनको रोका;

---

(१) भरतपुर राज्यके प्रतिष्ठाता।

इससे अभयसिंहने अत्यन्त क्रोधित हो तलवार अपने हाथमें ले ली। सम्राट् मोहम्मद शाहने इस समय भयंकर विपत्ति देख कर अपनी बुद्धिवलसे उसी समय अपने गलेमेंसे हीरोंका हार उतार कर अभयसिंहके गलेमे डाल दिया, इसीसे वह शोचनीय कांड दूर होगया। मोहम्मदशाह यदि इस समय ऐसा व्यवहार न करते तो जिस प्रकार अमरसिंहने अपनी तलवारके वलसे सभामे रुधिर वहा दिया था, उसी प्रकारसे अभयसिंह भी करते।

हम यहां तक जिन अजितके प्रशंशनीय वीर लीलाओका अभिनय वर्णन करते आए है, यहाँ पर उन्हीं राठौर राजकुलके मध्याह्न मार्त्तंड अजितके उस पूर्ण प्रकाशमय जीवनावसानको वर्णवद्ध करनेके लिये विवश होते हैं। हमने जिन राठौर कविके इतिहासकी सहायतासे अजितकी जीवनी—अजितका वल विक्रम—अजितकी यवनपराधिनताके छेदनसे स्वाधीनताके अमृतमय सौरभकी सुगंधि—अजितके द्वारा स्वजाति और अपने धर्मका जीवन साधनसे प्राणपणकी समान महा शक्तिकी आराधनाको वर्णन किया, अत्यन्त दुःखका विषय है कि वह कवि मारवाड़पति राठौर अजितके जीवन नाटकके उस वियोगान्त अभिनयको वर्णन करके एक वार ही मौन होगये! ऐसा वोध होता है कि उस वियोगान्त कथाको वर्णन करके, राठौर राजवंशकी कलंककालिमाको प्रकाशित करनेके अत्यन्त ही अभिलाषी होकर कवि अपने कर्त्तव्य पालनसे विमुख होगये। महामान्य टाड् साहव लिखते है कि कुमार अभयसिंह अपने पिता अजितकी असम्मतिसे दिल्लीके वादशाहकी सभामें गये। अभयसिंह इस वातको भली भाँतिसे जान गये थे, कि उनके कलुषित हृदयमे जो गंभीर पापकल्पना विराजमान होरही है वह शीघ्र ही सफल होजायगी, इसी लिये वह अपने जन्मदाता पिताकी आज्ञाको न मानकर दिल्लीको चले गये। अभयसिंह महावीर महायोधा असीम साहसी और प्रवल पराक्रमी थे। परन्तु राठौर राजकुलाङ्गार भी थे। यद्यपि यह महामान्य टाड् साहवने नहीं कहा है, तथापि हम मुक्तकण्ठसे कह सकते हैं कि अभयसिंहने जिस घृणित कार्यको करके पिताकी प्राणहत्याके द्वारा राठौर राजवंशमें जिस प्रकारका कलंक लगा दिया था पाठकोंने उसे प्रथम कांडमे पढ़ा होगा, इसी कारण यहांपर उसके दुवारा उल्लेख करनेका प्रयोजन नही है। यद्यपि अभयसिंहने स्वयं अपने हाथसे अपने पिताका प्राण नाश नहीं किया। परन्तु उनके प्राणनाशका मूलकारण वही थे—वही पितृ हत्याके पापके महा पातकी थे। अभयसिंहने [1]राज्यप्राप्तिकी आशासे अपने भाई वख्तसिंहको लोभमे डालकर पिता अजितको अकालमे ही इस लोकसे चिरकालके लिये विदा किया था,

हमने जिन राठौर कवियोके लिखे हुए काव्यके इतिहासके अवलम्वनसे इन अजितकी जीवनीको वर्णन किया, वह दोनों इतिहास ही उन अजितके प्राणहन्ता अभयसिंहकी आज्ञासे और उनकी अध्यक्षतामें लिखे गये थे! सूर्यप्रकाश ग्रंथमे अजितके इस अकालमृत्युके विषयमे केवल इतना ही वर्णन लिखा है

(१) प्रथम कांड २९ अध्यायके ९२८ पृष्ठमें देखो।

कि "अजित इस समय स्वर्गको चले गये" परन्तु किसने उनको वैजयन्त धाममें भेजा, यह नहीं लिखा है। परन्तु राजरूपक ग्रंथकारने एक वार ही मौन न रह कर अजितके उस शोचनीय निधनसे प्रवल शोकके वेगको अपने मन ही मनमें रख कर सत्यकी उज्ज्वल प्रभाको गुप्त रख कर लिख दिया है कि "दूसरे अजित स्वरूप अभयसिंहका अश्वपतिके निकट परिचय हुआ। अजित इस समाचारको पाकर महा आनंदित हुए। परन्तु इस संसारमें स्वल्पस्वरूप सभी वस्तु असार है। पहले हो अथवा पीछे हो समय आने पर करालकालके ग्रासमें एक दिन सभीको जाना होगा। अखंड प्रतापशाली बादशाह वा अमित बलशाली महाराज क्या मृत्युके मुखसे अपनी रक्षा कर सके थे? इस ससारमें हमारे रहनेका समय पहले ही नियत होगया है, हम कभी भी अपनी इच्छानुसार नियत किये हुए समयके अतिरिक्त एक मिनटको भी जीवित नहीं रहसकते। हमारे इस पृथ्वी पर जन्म लेनेके समय विधाताने हमारे मस्तक पर भाग्यकी लिपि-परमायु नियत करदी है। उस नियमके घटाने बढ़ानेकी किसीको भी सामर्थ्य नहीं है, भाग्यमें जो लिखा है वह अवश्य ही होगा। गोविन्दकी आज्ञासे इन्द्रके अवतार स्वरूप अजित इस समय मृत्युलोकमें अपने प्रवल यशको फैला कर अपने नामको अक्षय कर सुरलोकको चले गये। सारांश यह है कि शत्रुओंके कुलकंटक स्वरूप महाराज अजित भगवान् की उस आज्ञासे इस संसारसे विदा होकर परलोकको चले गये। इन्होंने मुसल्मानोको उचित दंड देकर अपने जातीय धर्मके गौरवके सूर्यको भलीभाँतिसे उदित कर दिया था। मरुक्षेत्रके महाराज वैकुंठधामको चले गये, राजधानी जोधपुर गाढ़शोकसे परिपूर्ण होगई, चारो ओर हाहाकारका शब्द सुनाई देने लगा। प्रत्येक प्रजाने भयभीत हृदयसे नेत्रोंमें जल भरकर पस्पर रुदन किया "हमारा सूर्य अस्ताचलको चला गया है।" यमराजके अधिकारका समय उपस्थित होते ही कौन उसको रोकनेकी सामर्थ्य रखता है?-क्या पाँचों पांडवोंने हिमालयके प्रवल हिमानीमंडित देशमें प्राण त्याग नहीं किये? दाताकुल चूडामणि महाराज हरिश्चंद्र भी अपने भाग्यकी लिपिका खंडन नहीं कर सके। इस संसारमें कौन ऋषि, मुनि, साधु, कौन मनुष्य कौन पशु, पक्षी, कीट, पतंग ऐसा है, जो मृत्युके हाथसे अपनी रक्षा करनेमें समर्थ हो, अधिक क्या महाराज विक्रम और कर्णको भी यमका दंड स्वीकार करना पड़ा अस्तु महाराज अजित् किस प्रकारसे उस कालके गालके जालसे उद्धार पानेकी आशा कर सकते थे"।

राठौर कुल धुरन्धर अजितकी जीवनीकी समालोचनाके पहले हम यहाँ पर राठौर कविका अनुसरण करना ही उचित समझते हैं। कविश्रेष्ठने लिखा है, सम्वत १७८० के आषाढ़ महीनेके कृष्णपक्षकी त्रयोदशीको मरुक्षेत्रके "आठ ठाकुरौत्" अर्थात् प्रधान अष्ट सामन्तोके अधीनमें स्थित सत्रहसौ राठौरवंशी वीर नंगा सिर किये नंगे पैरो नेत्रोंमें जल भरे शोक संतापित हृदयसे अपने स्वर्गको गये हुए

महाराज अजितसिंहके शवके निकट अंतसमयमें इकट्ठे हुए। उन्होंने मृतक महाराजके शवको एक नौकोकृति रथीमें रखकर चिर प्रचलित रीतिके अनुसार बड़ी धूमधामके साथ राजश्मशान भूमिमें लाकर रक्खा। चंदन काष्ठ अनेक प्रकारके सुगंधित द्रव्य, भारी भारी तुला, वहुतसे घी और कपूरसे शीघ्र ही महाराजकी चिताको सजा दिया। कविकी लेखनी किस प्रकारके हृदयसे इस हृदयभेदी शोककी घटनाका वर्णन करै? नाजरने (रावँल) महलमें जाकर "रावसिधारे" कहा। यह सुनते ही चौहानी रानी सोलह दासियोके साथ आकर राजपूत रानियोके कहने योग्य वचन वोली, आज हमारे वड़े सौभाग्यका दिन है कि जिस वंशमें हमने जन्म लिया है वह वंश आज उज्ज्वल होगा। जिनके साथ चिरकाल तक एक सग जीवन विताथा आज किस प्रकारसे उनको परित्यागे करूं?"

जेसलमेरकी शाखामें उत्पन्न हुई रावलभीमकी कन्या महा ऊँचे वंशकी भट्टियानी रानीने चक्रधारी श्रीकृष्णके चरण कमलोंमे प्रार्थना करके कहा, "मै आनंदित होकर अपने प्राणपतिके साथ जाती हूं, हे प्रभो! मैने तुम्हारे चरणोकी शरण ली, मेरे सतीत्वकी रक्षा करो। देरावरकी राजनंदिनी रानी मृगावती, निष्कलङ्क वंशीय तँवर रानी चावड़ा रानी और सेखावत रानी, ये सभी भट्टियानी रानीके समान पतिके साथ जानेके लिये हरिका नाम कीर्तन करनेलगीं। इन छाहो रानियोके हृदयमें मृत्युका भय तथा प्रज्वलित चिताकी अग्निमें दग्ध होनेका भय किञ्चित् भी नहीं हुआ। यही महाराज अजितकी प्रधान रानियां थीं, इन्हींके समान महाराजकी ५८पट प्रणयिनी उपस्त्रियोंने भी इसी भांतिसे चिताकी अग्निमे भस्म होनेका विचार किया वे वोली "ऐसा सुअवसर ऐसा सुदिन अव कव आवैगा; यदि हम जीवित रहै तो रोग आकर हमे आक्रमण करैगा, हम कमरेमे शय्याके ऊपर शयन करके अपने प्राणोको खोदेगी। जैसे कि समस्त जीवोको यमराज ग्रास करलेते हैं, । जव कि एक समय हमें भी उसी यमके करालग्रासमे पतित होना होगा; तव फिर क्यों हम इस समय अपने स्वामीका साथ छोड़कर अपयशकी भागी वनें? इस घोर कलिकालसे हमै विदा लेनी ही उचित है।" गंगाजीकी रेणुकाको मस्तक पर लगाकर गलेमे तुलसीकी माला पहरते समय भट्टियानी रानीने कहा, "हमारे

(१) वैतरणी नदीके पार होनेके लिये राजपूतलोग राजाके शवको तरीकी समान आकृति वाली रथीमें रक्खा करते हैं।

(२) रायलएशियाटीक सोसाइटीकी पुस्तकके प्रथम वाल्मके १५२ पृष्ठमे इस रीतिका वर्णन हुआ है।

(३) अन्तः पुर अर्थात् जनाने महल।

(४) अजितने अप्राप्त व्यवहार अवस्थामे ही इस रानीके साथ विवाह किया था। यही पितृहन्ता अभयकी माता थी।

(५) भाटी जातिकी प्राचीन राजधानीका नाम देरावर है।यह रानी उसी राजवंशमें उत्पन्न थी।

(६) इनके पिता दिल्लीके प्राचीन स्वाधीन हिन्दू राजवंशीय थे।

(७) अनहलवाड़ा पत्तनक प्रथम राजवंशधर इन्हींके पिता थे।

प्राणपतिके अतिरिक्त हमारा जीवन ही मरण स्वरूप है" इसी प्रकारसे प्रत्येक रानीने ही पतिके साथ जानेकी इच्छा प्रकाश की, नाजिरने उनको बुलाकर कहा, "इस समय तुम्हारा संग जाना सुखदाई नहीं है। आप जानती हैं कि चंदनकाष्ठ अति शीतल है, परंतु प्रज्वलित अग्निका संयोग होते ही उसकी वह शीतलता दूर हो जायगी, तब क्या आप इस इच्छाको अव्याहत रख सकेंगी? जिस समय वह भयंकर अग्निकी शिखा आपके कोमल शरीरको दग्ध करेगी, तब या तो आप उस दारुण पीड़ासे अधीर होकर चितासे भागनका उद्योग करेंगी और या आप उस दारुण पीड़ाको सहन न करके उठकर चल देंगी, तब आपके पतिके वंशको कलंक लग जायगा। आप सब विषयोंको भली भाँतिसे विचार करके देख लीजिये, और मेरे कहनेसे आप जिस महलमें रहती हैं उसीमें निवास करिये। आपके चिरजीवनने इन्द्रानीकी समान सुख भोग करके शरीरमें विविध भाँतिकी सुगंधित वस्तुओंका शरीरमें लेप कर, फूले हुए फूलोंकी सुगंधिको सूँघा है, तब अग्निकी किरणको आपका कोमल शरीर सहन न कर सकेगा, चिताकी प्रज्वलित अग्निकी बात तो फिर कौन कहै।" अंतःपुरके रक्षकको विशेष आग्रहके साथ निवारण करते हुए देख कर रानीने कहा "हम समस्त संसारको छोड़ सकती है, पर अपने प्राणपतिको नहीं छोड़ सकतीं।" इसके उपरान्त समस्त रानियोंने स्नान करके सुन्दर वस्त्राभूषण धारण किये, और महाराज अजितके चरण कमलोंमे इस जन्मका अंतिम प्रणाम किया। मंत्री श्रेष्ठ, कविवृन्द, तथा पुरोहित यह सभी प्रत्येकरानीको चितापर चढ़नेसे निषेधकरनेलगे। पटरानीने चौहानराज-नंदिनीको बुलाकर कहा-कि आप स्वामीके साथ न चलिये, कारण कि आपके दोनो पुत्र अभय और बख्तको कौन स्नेह सहित पालन करेगा? आप उनके लिये जीवित अनाथोंको अन्नदान दरिद्रियोंको धनदान और साधुओंको धनदेकर धर्मकर्म करतीहुई पवित्र भावसे अपने जीवनको व्यतीत कीजिये।" रानीने उत्तरदिया "यद्यपि यह बात सत्य है परन्तु महाराज पांडुकी रानी कुंती अपने पतिके साथ नहीं गई, उन्होने जीवन धारण करके अपने पाँचो पुत्रोंके सुख और ऐश्वर्यको देखना चाहा था, परन्तु इससे क्या उनके जीवनकी लालसा पूर्ण हुई? यह जीवन असार है, छायावत् है, यह देह मंदिर केवल दुःखमय है। हमें अब आप न रोकिये, प्राणपतिके साथ प्रज्वालित अग्निमे इस दुःखमय देहके समर्पित होते ही हमारे शोकका अंत होजायगा।"

इसके पीछे कविने उनके सहगमनके सम्बन्धमें लिखा है, कि "शीघ्र ही बाजा बजने लगा, महाराज अजितके शवके साथ स्मशानभूमिमे जानेवाली हजार२ सेना सहस्र २ प्रजा एक स्वरसे हरिका नाम लेती हुई जाने लगी। वर्षाऋतुमे जिस प्रकार

(१) जोधपुर राजदरबारमें समस्त कर्मचारियोंका दिल्लीके सम्राट् महलके समान यावनी नाम रक्खा गया था। इसी लिये अन्त पुरके रक्षक एक राठौरके होने पर भी उसका नाम नाजिर होता था।

जलकी धारा वर्षा करती है, उसी प्रकारसे जानेके समय रास्तेमें दीन दुःखियोंको धन लुटाया जाने लगा । रानियोंके मुखमंडल पर प्रभातकालके सूर्यकी समान सतीत्वकी पवित्र ज्योति प्रकाशमान होने लगी । स्वर्गसे, उमाने उन अजितकी रानियोंकी ओर देख कर उनको आशीर्वाद दिया कि तुम्हारे उस जन्ममे भी अजित तुमको पतिस्वरूपसे मिलैं । अजितकी चितासे धुँएके निकलते ही सहस्रों मनुष्य खमां खमां (शावास २) कह कर धन्यवाद देने लगे । आग्नेय पर्वतकी समान चिताकी अग्निके भयंकर मूर्तिसे प्रज्वलित होते ही देवकन्याओने जिस प्रकार मानसरोवरमें स्नान किया था, सती रानियोंने भी उसी प्रकारसे प्रज्वलित चिताकी अग्निमें अपने शरीरको डाल दिया । उन्होने अपने पतिके साथ जाकर जिस २ वंशमें जन्मलिया था, अपने उसी २ वंशको पवित्र किया । "अजित तुम धन्य हो ! धन्य हो ! तुमने अपने गौरवकी गरिमाको बढ़ाकर असुरोंका नाश किया था । " सावित्री, गौरी, सरस्वती, गंगा और गोमती इन सबने एक साथ मिलकर उन पतिकी अनुगामिनी सती रानियोंको बड़े आदरभावके साथ वरण किया । महाराज अजितसिंह पैंतालीस वर्ष तीन महीने और बाईस दिन तक मृत्युलोकमे रह कर पीछे स्वर्गधामको चले गये ।

मरुक्षेत्रके सिंहासन पर यहाँ तक जितने राजा बैठे थे, उनमें जन्मभूमिकी कृतज्ञ संतान स्वजातिके परम हितैषी स्वधर्मके अभ्युदयसाधक अजित ही सबसे अधिक प्रसिद्ध और सबमें श्रेष्ठ हुए । पाठकोंने उनकी जीवनीको पढ़कर भली भाँतिसे जान लिया होगा कि अजितके जन्मसे लेकर मृत्यु तक समस्त जीवनमें अनेक प्रकारकी विचित्र घटनाएँ हुई है । घोर तुषार मंडित पर्वतमय काबुलसे जिस समय अजित इस जगत्मे आये, उसके पहले ही इनके पिता हिन्दूकुलचूड़ामणि महाराज यशवन्तने कालयवनके दिये कालकूट सेवनसे आकालमें ही मायामय शरीरको त्याग दिया था, इसी कारणसे अजितने अनाथ अवस्थामें ही उन दूरके देशोंमे जन्म लिया । उनके जन्म होनेका समाचार पाते ही नवराक्षसस्वरूप औरंगज़ेव उनके उस सुकुमारजीवनके नाश करनेका अभिलाषी हुआ । जन्मसे ही उस ज्ञानहीन बालक अजितके भाग्यमे मानो मरणकी भयंकर मूर्त्ति आकर दिखाई दी । केवल एक मात्र चिर राजभक्त राठौर सामन्तोंकी वीरतासे तथा राजभक्तिके बलसे शिशु अजितने उस कालके कराल ग्राससे रक्षा पाई । उसके जीवनकी रक्षाके लिये स्वजातीय राजवंशको रक्षाके लिये राठौरोकी सामन्त मण्डलोने सम्मुख संग्राममें महा वीरता दिखाकर अपने २ प्राणोको त्यागकर दिया । अजितके ही द्वारा भविष्यतमें भारतकी रंगभूमिमें चिरस्मरणीय वीरलीलाका अभिनय होगा, इसीसे हिन्दू जाति हिन्दूधर्म हिन्दू समाजकी शोचनीय दुर्गति उनके द्वारा दूर होजायगी, इसी कारणसे बालक अजितने अत्यन्त विचित्र उपायोंसे नरपिशाच औरंगजेबके हाथसे छुटकारा पाया था । यद्यपि उद्धार पा लिया था, परन्तु उसके प्राणोंका भय दूर नहीं हुआ था,

समस्त रजवाड़ेके न्यायमतके अधीश्वर होने पर भी महान् राजद्रोही महा अपराधीकी समान उस सुकुमार अजितको आबूके पर्वतपर अत्यन्त गुप्तभावसे निवास करनापड़ा, अर्वलीको दुर्गम चोटी पर यवनोने छद्म वेषसे उसके ढूंढ़नेमे कसर न की । समस्त मारवाड़के महाराजका यह शैशव भाग्य कैसा हृदयभेदी था। बालक अजितसिंह विक्रमी यशवन्तसिंहका पुत्र था, इसी कारण ज्ञान प्राप्त होते ही उस सुकुमार बालक अवस्थामे ही उसने वीर नेताके समान अपने साहसी अनुरक्त और महा विक्रमी सामन्तोके साथ पिताके राज्यका उद्धार करने तथा पिताका सिंहासन पानेके लिये बाहर जानेमे एक मुहूर्त मात्रका भी विलम्ब न किया। " महात्मा टाड् साहब लिखते हैं " कि अजितके जन्मसे लेकर जबतक उसके भाग्यने पलटा खाया तथा वह जब जन्मभूमिका उद्धार करनेको समर्थ हुये थे उस दीर्घ समय तक राठौर सामन्त मण्डलीने तथा राठौर जातिने उनके ऊपर जिस प्रकारकी राजभक्ति दिखाई थी, समस्त जगत् और समस्त मनुष्य समाजके इतिहासोमे इस प्रकारकी राजभक्तिका उज्वल चित्र और दूसरा दिखाई नहीं देता । जो सामन्त शासनकी रीति शुभ फलकी अपेक्षा अधिक अशुभ फलदायक है, उसी सामन्त शासन रीतिके तमोमय चित्रके ऊपर इस प्रकारकी घटनाने ही उज्वल रमणीक किरणे फैला दीं । वास्तवमे राजपूत गण एक वंशजाति और सामन्त शासन रीतिके अन्यान्य अनेक प्रकारके सम्बन्धोसे बंधे हुए थे, बाहरी दृश्य मानो एक बड़े परिवारके समान था । महाराज अजितके सत्रह वर्षकी अवस्थामे पहुँचनेके पहले ही जब राजपूत वीर सामन्तोने अजितको एक बार भी आखोसे न देखा था और बराबर उसके लिए लड़ते मरते रहे तब उनकी राज्यभक्ति वा देशभक्ति कहांतक तारीफ की जावे । वे इतिहासमे अपने गौरवका एक अद्वितीय नमूना छोड़ गए हैं । उनका यह कथन है कि " हम अपने स्वामीके दर्शन पाये बिना अन्नजलमे किंचित भी रुचि नहीं रखते-हमको सभी पदार्थ स्वाद हीन हैं " विशेष भक्तिभाव सूचक है । राठौर कवि भी अपनी अमृतमयी कवितामे उन सामन्तोके मनके भावोंको कैसे चमत्कारतासे वर्णन कर गये हैं-तरुण अरुणोदय जिस भाँति फूल कुलरानी पद्मिनीके नेत्रोको उन्मीलन करता है, उसी भाँति उन बालक अधीश्वर अजितके दर्शनमात्रसे ही प्रत्येक राठौरका हृदयरूपी कमल अत्यन्त प्रफुल्लित होता था । जिस भाँति पपीहा सुखदाई शरद् ऋतुमें चम्पेका अमृत मनभर कर पीता है । उनके नेत्र भी उसी भाँतिसे अजितके रूपामृतको पान करने लगे " ।

इतिहासवेत्ता टाड् साहबने पुनर्वार लिखा है कि राठौर जातिकी प्रत्येक सम्प्रदायने छब्बीस वर्ष तक निरन्तर चलनेवाले भूपालके युद्धमे किस प्रकार अधिकतासे अपना रुधिर बहाया था, राठौरोके इतिहासमें उसके कितने ही वृत्तान्त विदित होनेकी संभावना है, और स्वधर्म तथा नरपतिकी स्वाधीनता संचय करनेके लिये उन वीरोंने जिन्होने अपना जीवन तक दे दिया था, उनके स्मरणके लिये मंदिर स्थापित किये और चिह्न समूहोके स्थानो पर उज्वल

भापामे जो स्मारक लिपि लिखी गई है, वह सभी भलीभाँतिसे उनकी कीर्तिका परिचय दे रही है। यदि अन्य किसी प्रमाणकी आवश्यकता हो तो उन राठौरोके निवासी मेवाड़ आमेर इत्यादि राजाओके कवियोके इतिहासोमे तथा उन राठौरोके जन्मके शत्रु यवनोके इतिहासोमें भी भलीभाँतिसे प्रकाशमान हैं। दूसरी ओर राठौर कवियोके कुलकी काव्यावली तथा प्रवाद वचनकी समान वंशानुक्रमसे राजस्थानमे सर्वत्र जो गीत आज तक गाये जाते है, उनसे भी उन राठौर जातिके पूर्व पुरुषोके बलविक्रम तथा उनके गौरवकी गरिमा अक्षय हो रही है।" कर्नल टाड् साहबकी इस सत्यतापूर्ण उक्तिके साथ हम और अधिक कुछ लिखनेकी आवश्यकता नहीं समझते। राठौर सामन्तोंने जन्मभूमिके लिये, अपने धर्मके लिये, किस प्रकार प्रफुल्लित मुखसे जीवन देकर अपना जन्म सार्थक किया था, वे किस प्रकार स्वाधीनताको संग्रह करनेके लिये निर्भय हो पाशविक बलके विरुद्ध न्यायकी महाशक्तिकी सहायतासे खड़े हुए थे। यह राठौर सामन्त गण जो जीवन्तका निदर्शन दिखा गये है, आर्यरुधिर धारण करनेवाले उसको चिरकाल तक स्मरण करे। यही हमारा अन्तमें कहना है।

महात्मा टाड् साहबने इस स्थान पर अजितके सम्बन्धमे लिखा है कि "अजित जिस प्रकारके दृढ़प्रतिज्ञ राजा थे, वैसे असीम साहसी भी थे, उनके शरीरका गठन भी उसी प्रकार वीरपुरुषोके समान बलवान् था। उन्होने अपने पिताकी ही समान दुर्द्धर्ष साहस करके अपने पिताके गुणोको प्राप्त किया था। ग्यारह वर्षकी अवस्थामें जिस समय वह अपने पिताकी राजधानीमे शत्रुओंके सन्मुख आये थे, उसी समयसे इस साहसके प्रतिभारका पूर्ण परिचय दिया। और उनके उस समयके विनय और नम्रता युक्त आचरणके यथार्थ अभिप्रायके जाननेमें केवल राजपूत ही समर्थ हुए थे। तीस वर्ष तक बराबर जिस खंडमे प्रत्येक वर्षमे युद्ध होता था, उसमे कई युद्धोमे अजितने स्वयं समस्त राठौर सामन्तोंके साथ अपने बल विक्रमका परिचय दिया था। सम्वत् १७६५मे आमेरमे दोनो सैयद भ्राताओंके साथ जो संग्रामकी अग्नि प्रज्ज्वलित हुई थी, जिस संग्रामसे दोनो सैयदोके साथ अजितका गुप्त संधिबन्धन होगया था, उस युद्धमे भी अजित स्वयं उपस्थित थे। अजितके जीवनका शेप अंश केवल बादशाहकी सभामे ही व्यतीत हुआ था, परन्तु अजीत जैसे बलवान् और प्रबल साहसी थे, यदि वह इस प्रकारसे गुप्त षड़यन्त्र विद्याको सीखलेते तो निश्चय ही सबमे प्रधान नेता रूपसे दोनो सैयदोसेको दमन करके अपने प्रबल प्रतापको विस्तार करनेमे समर्थ होते। उन दोनों सैयदोके साथ संधि बंधनसे उनको मृत्यु तकके षड़यंत्र ही अजितकी सहायताके विशेप प्रार्थनीय है, और प्रयोजन होने पर फर्रुखसियरसे लेकर मोहम्मदशाह तक तैमूरके सिहासनपर जितने बादशाह अभिपिक्त हुए, मारवाड़पति अजित ही उन सबके अभिपेकके दूसरे नेता थे। उनके पिता जिस भांति मुसल्मानोको अपने जन्मका शत्रु मानते थे, उसी भांति यह भी मुसल्मानोको घृणाकी दृष्टिसे देखते तथा सम्पूर्ण

विपरीत धर्म कर्म आचार व्यवहार युक्तयवनोंके नाश करनेका सुअवसर पाकर सरलतासे उस सुयोगको न छोड़ते थे। जिन प्रकाशित कारणोंसे अजित मुसल्मानोंके नाम तकसे क्रोधित होते थे, यदि उन्हीं कारणोकी ओर हम देखते हैं तो जो बादशाह फर्रुख-सियरके निकट उन अजितका पारिवारिक सम्बन्ध बंधनसे अधीनताके सूत्रमे बँधे थे, उसने उसी सम्बन्धके प्रति उपेक्षा दिखाकर उस फर्रुखसियरके विरुद्धसे दोनो सैयदोंके साथ मिलकर फर्रुखसियरके ऊपर ही कठोर आचरण किये। हम कठिन समालोचनाके मुखमे अजितके उन व्यवहारोंको नहीं डाल सकते।"

कर्नल टाड् साहबने निम्नलिखित उक्तिसे अजितकी जीवनीका उपसंहार किया है, "परन्तु अजितके जीवनमे एक कलंककी रेखा प्रकाशमान है। यद्यपि राठौर कवियोंके काव्यमे उस कलंकका कोई भी उल्लेख दृष्टि नहीं आया। परन्तु वह इस प्रकारसे प्रमाणित होता है कि उनकी जीवनीकी समालोचनाके समय वह घटना–जो घटना राजपूत जातिके तथा समयके पूर्ण चित्रको प्रकाशित कर देती है, तथा जिस घटनासे राजपूत सामन्तोंके शासनके अपूर्ण भारका परिचय मिलता है, उस घटनाका उल्लेख करनेमे भूलना उचित नही। महावीर दुर्गदास जो अजितके बाल जीवनके रक्षक थे–तथा अजितके बाल्यजीवनके शिक्षादाता थे–अजितके यौवन जीवनके उपदेष्टा थे, वही चिरप्रचलित प्रवाद वाक्य 'राजाके ऊपर कदापि विश्वास करना ठीक नहीं है' इसी उक्तिको समर्थन करनेके लिये मानों जीवित थे। दुर्गदासने एक बार नहीं दो बार नही, अनेक बार बहुतसे स्थानोपर प्रशंसनीय रूपसे स्वार्थ त्याग किया था, बहुत बार धनका लोभ तथा ऊँचे सम्मानको भी त्याग दिया था। उस धन और सम्मानसे–उस निर्लोभतासे वह मोहित होगये। वह मारवाड़के सामान्य अधीन सामन्तपदसे अपने अधीश्वर प्रभु अजितके समान पद पर स्थित और सामर्थ्यवान् होसकते थे। जिस दुर्गदासने अपने बाहुबल, पराक्रम, तथा बुद्धिबलसे यवनोंके ग्राससे मारवाड़ राज्यका उद्धार कर दिया था, वही दुर्गदास इस मारवाड़से निकाल दिये गये थे। अजितने किस समय और किस कारणसे इस कलंकके भारको धारण किया था, यह नहीं जाना जा सकता। बहादुरशाहके डेरोंसे जो मूलपत्र भेजे गये थे, उन सबका अनुसंधान करनेके समय घटनाके क्रमसे ये विषय प्रकाशित हुए,–"उस मूलपत्रावलीमें एक खंडके ऊपर इस प्रकारका लिखा हुआ देखा कि–'दुर्गदासने अपने कुटुम्बके सेवकोंके साथ उदयपुरमे पिछोला नदीके किनारे निवास किया था, और अपने पालनके लिये उन्हें राणाके पाससे प्रतिदिन पाँचसौ रुपये मिला करते थे। सम्राट् बहादुरशाहने उनको समर्पण करने की आज्ञा दी; परन्तु राणाने एक बार ही उसमें असम्मति प्रकाश की।' ऐसा जाना जाता है कि अजितने किसी भारी कारणसे यह शोचनीय व्यवहार किया

(१) कर्नल टाड् साहबको उदयपुरके महाराणाके महलमें उक्त पत्र खोज करनेके समयमें मिले थे।

था। लेखकने यह अनुमान करके मारवाड़ राज्यके इतिहासको विशेष रूपसे जाननेवाले एक यतिसे यह वात पूछी। यति इस विषयको भली भाँतिसे जानता था, उसने इस वातको नीचे लिखी हुई कवितामे कहा था " दुर्गा देशां काढ़ियां गोला गांगानी " अर्थात् दुर्गदासको निकाल कर गांगानी गांव गोलोंको दिया गया था।"

"यह गांगानी लूनी नदीके उत्तरकी ओर स्थापित था। और यह कर्मसोत सम्प्रदायका प्रधान नगर था; दुर्गदास उस सम्प्रदायके नेता थे। यह गांव इस समय मारवाड़के महाराजके खास अधिकारमें होगया है; परन्तु दुर्गदासके समयमे यह राजाके ही अधिकारमें था, फिर पीछे किसका हुआ यह हमै विदित नहीं है, करणोत सम्प्रदायने उन महावीर दुर्गदासके स्मरणके निमित्त उस गांगाणीमें एक मंदिर वनाया गया उस मंदिरमे आज तक वीर पूजा किया करते है"।

इतिहासवेत्ता टाड् साहव सत्यके सन्मानकी रक्षाके लिये वीर श्रेष्ठ दुर्गदासके निकालनेकी कथाका उल्लेख कर गये हैं, यह अवश्य ही मानना होगा, कि दुर्गदास जो निकाले गये थे इसको भी प्रमाणित करदिया है, परन्तु किसलिये और किस समय दुर्गदास निकाले गये थे, उस सम्वन्धमे उन्होंने कुछ भी नहीं लिखा। इस कारण संदेहके स्थानोपर अजितके चरित्रोमें दोप लगानेके लिये हम आगे नही वढ़ते। जिस विधर्मी यवनने अजितको दिल्लीसे झाड़ीमे लेजाकर उसकी रक्षा की थी। जव कि अजितने जीवन पर्यन्त उस मुसलमानको काका कहकर उसका सन्मान वढ़ाया था; तव राजपूतोके जीवनकी अपेक्षा श्रेष्ठ स्वाधीनता और स्वदेश जो दुर्गदासकी सहायतासे अजितको मिले थे, उन्हीं दुर्गदासको इन्होंने एक सामान्य कारणसे विना अपराधके निकाल दिया हो, राजपूतोके चरित्र जाननेवाले इसका कभी अनुमान नही करसकते। हम कह सकते है जव किसी ओरके अपराधीको उस संदेह भाजनका कोई उपाय नहीं मिला, तव किसी पक्षके ऊपर भी कलंकका भार अर्पण करनेकी हमारी इच्छा नही है। मारवाड़पति अजितकी जीवनीके सम्वन्धमे हमारा अन्तिम कहना यही है कि केवल राजपूत जातिमे ही नही, वरन् आर्यवंशधरमात्रके पक्षमे अजितकी जीवनी चिरकाल तक स्मरण करनेके योग्य है।

---

(१) कर्नल टाड् साहव।

(२) अर्थात् गुलाम।

(३) कर्नल टाड् साहवने पूर्वाध्यायमे लिखा है, कि दुर्गदास दुनाराके सामन्त थे। *

---

* दुर्गदास कर्मसोतजातिके राठौरोंके नेता नहीं थे, करणोत जातिके थे। खींमसर गाव अब भी वसता है। वह प्रधान नगर न कर्मसोतोका था न कर्णोतोंका खालसेका एक गाँव था। उसको महाराजा अजितसिंहजीने सम्वत् १७६५ में खीची मुकुन्ददासके वेटे गोकुलदासको जागीरमे देदिया था। खीची मुकुन्ददासने महाराजकी वहुत अच्छी सेवा की थी, दुर्गदासके किसी पक्षपाती चारणने जलनसे गोकुलको गोला (गुलाम) कह दिया है।

दशम अध्याय १०.

पितृहत्यारूप महापापके कलंक स्वरूप मारवाड़की शोचनीय अवस्था; यवन सम्राट्का अपने हाथसे पितृहन्ता अभयसिंहका अभिषेक करना; दिल्लीके बादशाहकी सभासे राजा अभयसिंहका जोधपुरको जाना, प्रजाका उनके प्रति सन्मान दिखाना, पुरोहित और कवियोंको अभयसिंहका धनादि देना; मारवाड़के कवि इतिहास वेत्ता कर्णीदान; अभयसिंहका नागोर पर अधिकार; अनुज बख्तसिंहको पुरस्कार स्वरूपमें नागौरराज्य देना; उद्धत स्वभाव मूरियादिकोंका दमन; बादशाहका अभयसिंहको दिल्लीमें बुलाना; दिल्लीमें जानेके समय अभयसिंहका अपने राज्य को देखना; अभयसिंहको विषफोटक रोग; दिल्लीमें जाना; गुजरातमें स्थित राजप्रतिनिधि और दाक्षिणमें कुमार जंगलीके साथ विद्रोह; इस समयके मुगल सम्राट्की सभाका चित्र; शत्रुओंके दमन के लिये बीड़ेका उपस्थित करना, उपस्थित अमीरगणों तथा सामन्तोंका बीडा उठानेमें असामर्थ्यता दिखाना; राठौरराज अभयसिंहका बीडा ग्रहण करना, अभयसिंहका अजमेरमें जाना; और वहाँ सेना स्थापित करना; आमेरके महाराजसे पुष्करतीर्थमें अभयसिंहका साक्षात् करना; भारतमें यवन राज्यके विनाशके लिये गुप्त परामर्श करना; मेरतानामक स्थान पर अभयसिंहके साथ इनके अनुज बख्तसिंहका मिलन, जोधपुरमें जाना; राठौर सामन्तोंका सेना सहित इकट्ठे होना, अस्त्रपूजा; मीना गणोंका अभयसिंहकी सेनाके पशुओंका हरण करना, फिर लौट जाना; रणक्षेत्रमें यात्रा; अभयसिंह का मीनाओंके नेता सिरोहीके सामन्तोंके किले पर अधिकार, सिरोहीपतिकी वश्यता स्वीकार और संधिबंधनके लिये अभयसिंहके साथ अपने भाईकी पुत्रीका परिणय होना, अभयसिंहके साथ सिरोही की सेनादलका योगदान; अहमदाबादकी ओरको जाना, राजप्रतिनिधिको आत्मसमर्पण करनेके लिये आज्ञा देना, राजपूतोंके युद्धकी सभा; बख्तसिंहका वीर सामन्तोंके देहपर कुंकुम जल बसाना; सरबुलन्दखाका अपनी रक्षाके लिये तैयारी करना; यूरोपियनोंका उसकी तोपोंपर अधिकारी होना, सरबुलन्दके यूरुपिय बंदूकधारी शरीर रक्षक गण; युद्ध; राजपूतोंकी विजय; सरबुलन्दका आत्मसमर्पण, अभयसिंहका उसको बंदीकरके बादशाहकी सभामें भेजना; अभयसिंहका गुजरात पर शासन; अभयसिंह का जोधपुरमें जाना; ।

साधनसे ही सिद्धि है। कार्यकुल तिलक आजित एक मात्र महाशक्ति साधनाके बलसे ही उस अनाथ अवस्थामें मनुष्यजीवनकी शेष प्रार्थनीय अवस्था तथा सम्पूर्ण स्वाधीनताका अमृतमय फल प्राप्त करके अपने दुर्भाग्य वशसे कुलाङ्गार दोनो कुमारोंके पापरूपी कामनाके मुखमें अपने जीवनका बलिदान करनेमें सन्नद्ध हुए। जो अजित एक मात्र अपने बाहुबलके पराक्रमसे दृढ़प्रतिज्ञता और अपने तेजके बलसे उस अनाथ अवस्थामें शेष यवनसम्राट्की स्वाधीनताका नाश करनेमें सम्पूर्ण रूपसे स्वाधीन होगये थे; जिन्होने राठौर राजवंशके मारवाड़के आर्यजातिके सन्मानको भली भांतिसे बढ़ाया था, वही मुगल सिंहासनके तथा मुगल सम्राट् पदके अभिषेककर्ता होकर चिरस्मरणीय अभिनय करगये हैं, हमारी यह क्षुद्र लेखनी उन महावीरोंकी जीवनी प्रकाश करनेके पीछे, इस समय मारवाड़के राजा उन अजितके वंशधरोंकी शासनके विपरीत हृदयवाले

शोचनीय वृत्तान्तसे परिपूर्ण. इतिहासको वर्णन करनेके लिये आगे बढ़ी है। मरुमय क्षेत्रमे आदि राठौरके अभिनेता सियाजीने जिस स्वाधीनताका बीज बोया था, उदयसिंहके समयमें उस अमृतमय फलसे पूर्ण नन्दनमन्दारको अकबरके चरणकमलोमें उपहार देकर जगत्में पहले ही राठौरने क्रीतदासकी उपाधि ली। समयके आते ही महावीर अजितने उस घृणित एवं जघन्य उपाधिको छोड़कर उस अमृतमय पादपका यवनोंके हाथसे उद्धार कर लिया था। परन्तु उन्हीं अजितके वंशधर फिर उसी क्रीतदास पदपर नियुक्त हो विचित्र अभिनय करनेमें प्रवृत्त हुए।

राजाके दोषसे ही राज्य नष्ट होजाता है। राजाके पापसे ही राज्य विध्वंश होजाता है। कलुषित जीवनवाले अभयसिंह और बख्तासिंह पितृहत्याके पापसे पापी और महा पातकी होगये थे। पवित्र राठौर राजवंशमे पवित्र मारवाड़ राज्यमे उन दोनों भ्राताओंने जिस महा पापका सर्वनाशकारी बीज बोया था; समय आतेही उस पाप पादपकी विकट जड़ने-समस्त मारवाड़में फैलकर सारे देशको आकर्षण करके कंपायमान कर दिया। उसी महा पापके विषमय फलसे उन महा पातकी दोनोंके अधीन बहुतसे मनुष्योंको जर्जर कर दिया। उन दोनों महापापियोंमेंसे एक नरश्रेष्ठ इकले ही महाराष्ट्रोंको दमन करनेमें समर्थ होकर भी एकमात्र उसी पितृहत्याके पापके फलसे मनुष्यजीवनके प्रार्थनीय धनको प्राप्त नहीं कर सका।

यद्यपि अभयसिंह पिताकी हत्या करके महापातकी होगया था। परन्तु हम सत्य और सन्मानकी रक्षाके लिये अवश्य ही इस बातको स्वीकार करते है कि वह एक अत्यन्त बलवान और प्रबल पराक्रमी तथा अत्यन्त प्रभावशाली वीर पुरुष था। अजितकी जीवित अवस्थामें ही अभयसिंहने कई बार यवनोंके साथ प्रबल संग्राम करके अत्यन्त बल विक्रमप्रकाश कर अपने गौरवको बढ़ा लिया। परन्तु वह एक महावीर भी था। तथा राठौर जातिके स्वभाव सुलभ समस्त गुणोसे विभूषित था, तथापि उसके एक ही दोषने इसके उस बलविक्रमको उज्ज्वल नहीं करने दिया। वह दोष केवल पिताकी हत्याका ही नहीं है, वह दोष एक और प्रकारका है। जिस दोषसे उदयसिंहने पिताकी आज्ञाको उल्लंघन कर अकबरके चरणोमें अपनी स्वाधीनताको बेचदिया था। उस दोषसे ही अभयसिंह केवल पितृहत्यारे नहीं हैं, वरन् उसने स्वजातिके गलेमें फिर अधीनताकी जंजीर डाल दी। असमयमें अन्याय, प्रभुभक्ति चलानेकी इच्छा यही एक प्रधान दोष है। उदयसिंह मारवाड़के सिंहासन पर अभिषिक्त होनेके लिये ही पिताकी अनिच्छासे अकबरके चरणोमें प्रणत हुए थे, अब एक अभयसिंह भी उसी पापकी आशाके वशवर्ती हो पितृहत्याके महा पापमें लिप्त हुए। अभयसिंहके चरित्रोके सम्बन्धमे विना कुछ कहे हुए पहले हम उसके शासन वृत्तान्तको प्रकाश करना चाहते हैं।

राठौर कवि कर्णीदानने लिखा है; सम्वत् "१७८१ मे मारवाड़के महाराज अजित जब स्वर्गधामको चले गये। तब दिल्लीके बादशाह मोहम्मदशाहने अपने

हाथसे अभयसिंहके मस्तक पर राजतिलक किया, कमरसे कनककोपवद्ध तलवार बाँधी, मस्तक पर राजमुकट बँधाया और हीरे और मणिमुक्तोंसे जड़े हुए रत्नजड़ित फिरचको देकर उनको मारवाड़के अधीश्वर पदपर अभिषिक्त कर दिया। छत्र, चमर, नौबत और नगाड़े आदि वाजे तथा अनेक प्रकारके मूल्यवान् द्रव्य उपहारमें देकर वादशाहने अजितपुत्रका पद योग्य सम्मान बढ़ाया। अधिक क्या कहें जो नागौर देश अमरसिंहको दिया गया था, सम्राट् मोहम्मदशाहने उस देशकी शासन सनदतक अभयसिंहको दे दी। मारवाड़के नवीन महाराज अभयसिंह वादशाहसे यह ऊँचा सम्मान पाकर वहाँसे विदा हो अपने पिताकी राजधानी जोधपुरको लौट आये।" जिन महावीर अजितने अपने वाहुवलसे यवनोंकी पराधीनताको छिन्न भिन्न कर सम्पूर्ण स्वाधीनताका संग्रह किया था; और उसी स्वाधीनभावसे इस संसारको छोड़ गये थे, उन्हीं अजितके पुत्र अभयसिंहने आज फिर अपने गलेमें पराधीनताकी जंजीरको धारण किया। अजितके शेष जीवनमें मारवाड़में जो शान्तिका चंद्रमा प्रकाशमान हुआ था तथा स्वाधीनतारूप अनन्त तारागणोंसे जो विभूषित हुआ था, आज फिर वही मारवाड़ घोर अंधकारसे ढक गया।

राठौर जातिकी कैसी अखंड राज्यभक्ति है। राजाके महापापी और अपराधी होने पर भी एक मात्र राजभक्तिने राठौर जातिको किस विचित्र रूपसे अंधा कर दिया। यद्यपि वख्तसिंहने अपने हाथसे जन्मदाता पिताके पवित्र वक्षस्थलमे तीक्ष्ण तलवार मारी थी और इस हत्याके समयमें अभयसिंह विदेशमें वादशाहकी सभामें था, परन्तु एकमात्र अभयसिंहके लोभ दिखानेके उपदेशसे तथा इसकी आज्ञासे अथवा इसकी ताड़नासे ही जो वख्तसिंहने नरकके कीड़ोंकी समान अपने पिताके जीवनरूपी कमलको काट लिया, यह वृत्तान्त मारवाड़ निवासियोंसे कुछ छिपा नहीं था। किन्तु तौ भी राठौर जातिके हृदयमें राजभक्ति इतनी प्रवल थी कि अभयसिंहके मारवाड़में आते ही राठौर जातिके प्रत्येक सम्प्रदायके वाल वृद्ध सभीने मानों एक मनुष्यकी समान खड़े होकर नवीन राजाको वड़े आदर सम्मानके साथ लिया। सभी उस पितृहत्याके महा पापको भूल गये! राठौर कविने अभयसिंहको अभ्यर्थनाके सम्बन्धमे लिखा है," ग्रामके दूसरे ग्रामोको उलंघन करके राजा अभयसिंह राजधानीकी ओरको आगे वढ़े, वैसे ही प्रत्येक स्थानकी कुलवधुएं जलसे भरे हुए कलशोको शिरपर रखकर गीत गाय गायकर उनका सत्कार करनेलगीं। इन्होंने जोधपुरमें जाकर समस्त राठौर सामन्तोंको उपहारमें अनेको द्रव्य दिये, तथा कवि और चारणोंको धन देकर पुरोहितको पृथ्वी दान की।"

महामान्य टाड् साहवने नवीन मारवाड़ेश्वर अभयसिंहके शासनवृत्तान्तको वर्णन करनेके पहले इस स्थानपर कवि कर्णादानके सम्वन्धमे कई एक कथाओंको लिखा है, इस कारण हम भी उनका अनुसरण करते हैं। कवि कर्णादान कान्यकुब्ज देशके

(१) कर्णादान कवि जातिका चारण था। न तो उसके वंशज स्वयं उसे कन्नौजके राजकविसे उत्पन्न हुआ बतलाते हैं और न और कहीं ऐसा प्रमाण देखा गया है। चारण जातिके लोग कभी कन्नौजमें न थे और न अब हैं।

शेष हिन्दू सम्राट् जयचँदकी सभामे स्थित प्रधान कविके वंशसे उत्पन्न अपनी लेखनीसे उसे प्रकाशित कर गये हैं। कर्नल टाड् शाहवने कहा है कि " कर्णीदान जिस प्रकार पहली श्रेणीके कवि थे, उसी प्रकार राजनीतिमे भी चतुर, योधा और गाढ़ पण्डित थे, और प्रत्येक विषयमें ही वह अपनी चतुरताका चूड़ान्त प्रमाण दिखाया करते थे। मारवाड़के आत्मविग्रहके समय प्रत्येक राजनैतिक घटनाका उन्होंने प्रशंनीयरूपसे अभिनय किया। दूसरे उनके वलविक्रमके सम्बन्धमें हमें केवल इतना ही कहना है कि राजपूत जातिके अतुलनीय प्रवल युद्धमे लिप्त हुए वीरोंमे जो कईजने अपने जीवनकी रक्षा करनेमें समर्थ हुए थे, कवि कर्णीदान भी उन्हींमेंसे एक थे। तीसरे सात हजार पांचसौ कवित्तोसे पूर्ण " सूर्यप्रकाश " ग्रंथ उनके पांडित्य और कवित्वका अक्षय परिचय दे रहा है। वही सूर्यप्रकाश केवल उनका पैतृक गुण है। हृदयहारी कविताभाला तथा ग्रंथ शक्तिका प्रज्ज्वलित प्रमाण दिखा रहा है, यही नहीं कि उन्होंने अपनी गौरवगरिमाको वढ़ानेके लिये ही इस श्रेष्ठ नीतिका अवलम्वन किया था, इसके भी वहुतसे उपदेश मूलक प्रमाण विद्यमान हैं।" राठौर राजकवि कर्णीदान विक्रमाजीतकी सभामे कालिदासकी समान अथवा महामान्य भारतेश्वरीकी सभामें वर्त्तमान लार्ड हेनिसकी समान केवल वीणाध्वनिसे प्रकृतिको प्रसन्न ही नहीं करसके किन्तु वह अपनी अमृत निःस्यन्दनी लेखनीकी समान जन्मभूमिके लिये तलवार भी चला सकते थे। कर्नल टाड्ने इसीको प्रकाशित किया है। इस वातको हम कह सकते है कि कर्णीदानने केवल अपनी लेखनीके वलसे, अथवा तल्वारके वलसे, या नीतिज्ञताके वलसे अपने यशकी किरणोंको नहीं फैलाया था, वरन् उनके द्वारा आर्यजातिका एक कलंक दूर होगया है। विलायतके निवासी शिक्षित गणों और उन पश्चिमी शिक्षाके उपासक देशी गणोंको दृढ़ विश्वास था—कि भारतमे इतिहास रचनाकी प्रणाली किसी समय भी प्रचलित नहीं थी। परंतु कवि कर्णीदानका वनाया हुआ इतिवृतमय सूर्यप्रकाश उस भ्रान्तिकी जड़मे अवश्य ही एक दारुण आघात करता है। कविकर्णीदान राजपूत जातिके लिये ही गौरव स्वरूप नहीं थे, वरन् यह सम्पूर्ण भारतके अलंकार स्वरूप थे, इतिहास अनन्तकाल तक इस वातका प्रचार करता रहेगा। इसमे कुछ भी संदेह नहीं।

इस स्थान पर मारवाड़पति अभयसिंहका ही अनुसरण करना होगा, कर्नल टाड् साहव लिख गये हैं कि नरपतिके अभिषेकका उत्सव थोड़े दिनोंमें ही समाप्त होगया। अभयसिंहने नागौर पर अधिकार करनेके लिये तैयारी कर दी। जिस समय वीर श्रेष्ठ अजितके साथ मुगलवादशाह मोहम्मदशाहका झगड़ा होनेसे युद्ध हो रहा था। उस समय वादशाहकी ओरसे राव अमरसिंहका उत्तराधिकारी इन्द्रसिंह उक्त नागौरराजके पद पर फिर प्रतिष्ठित किया गया था।

कवि कर्णीदानने इसके सम्वन्धमे लिखा है कि जिस समय यवन साम्राटके अधीनमे

(१) ऐसा वोध होता है कि टाड् साहब कविके लिखे काव्यसे अनुवाद करनेके समय भ्रमसे इन्द्रके वदलेमें इन्दु लिखगये है।

स्थित भारत साम्राज्यके वाइस जनोंने राज प्रतिनिधिकी सेनाको लेकर अजितके विरुद्ध अजमेरको घेर लिया। इस काल समय पाकर जिजियाकरके ग्राहक इरादतखाँ बंगसने राव इन्द्को नागदुर्गके सिंहासन पर अभिषिक्त किया, परन्तु होली उत्सवके समाप्त होते ही ज्वालामुखीकी बड़ी धूमधामसे पूजा करके और श्रीभगवतीके निमित्त बकरोका बलिदान करनेके पीछे उन सबके शरीरोको घृत, रुधिर और लालचंदनसे शोभायमान करदिया। अभयसिंहकी चतुरंगिनी सेना शीघ्र ही नवीन महाराजके अधोनमे नागौर पर अधिकार करनेके लिये चली। अभयसिंहके आनेका समाचार सुनकर राव इन्द्रने उसके सम्मुख सम्राट्के हस्ताक्षर सहित नागौरकी शासनसनदको उपस्थित करके कहा कि बादशाहने हमै नागौर देदिया है, दूसरा कोई भी नागौर पर अधिकार नही कर सकता। इसके साक्षी आमेरके महाराज हैं, इस कारण न्यायके अनुसार हमीं नागौरके यथाथ अधिकारी है। अभयसिंहने इनके वचन पर किंचित् भी ध्यान नहीं दिया, और नागौरको जाकर शीघ्रतासे घेर लिया। प्रवल पराक्रमी, अभयसिंहके विरुद्ध युद्ध करना असंभव है, तथा उनके ग्राससे नागौरकी रक्षा करना भी असंभव जानकर राव इन्द्रसिंहने शीघ्र ही आदरभावके साथ नागौरके किलेको छोड़ दिया। अभयसिंहने थोड़े समयमे ही नागौर पर अधिकार करके अपने अनुज बख्तसिंहको वहांका अधिकार अर्पण कर दिया।" इस नागौरराज्यके लोभसे ही पापात्मा वख्तसिंहने अपने पिताके जीवनको नष्ट किया था। पाठक यथास्थान उसको पढ़चुके होगे। अभयसिंहने उस पितृहत्याके पुरस्कार स्वरूपमे वख्तसिंहको नागौर देकर प्रतिज्ञाके ऋणसे मुक्ति प्राप्त की। राठौर कविने लिखा है, कि अभयसिंहके नागौर पर अधिकार करते ही, मेवाड़ जयसलमेर, बीकानेर और आमेरके तीनो अधीश्वरोंने उनको बड़े आदरभावके साथ बुला भेजा। विजयकी इच्छासे उत्साहित हुई सेनाके साथ अभयसिंह अपनी राजधानीको लौट आये, सारी प्रजा महा आनंद प्रकाश करने लगी। सम्वत् १७८१ मे इस प्रकारसे नागौरको विजय किया था।

दूसरे वर्ष अर्थात् सम्वत् १७८२ मे अभयसिंह अपने राज्यके दक्षिण सीमाके अनुवर्ती देशोंमे उद्धत स्वभाव भूमीयादिकोको दमन करनेके लिये चले। अभयसिंहके प्रवल प्रतापसे सिन्धलदेवड़ा, वाला बोड़ा, वालिसा और सोढ़ा-जाति समूहने एक २ करके मस्तक झुकाकर उनकी अधीनता स्वीकार की।

कविने लिखा है, "सम्वत् १७८३ मे बादशाहका आज्ञापत्र राजा अभयसिंहके निकट आया। अभयसिंहने उन अनुमति पत्रोंको अपने शिरके ऊपर रखकर शीघ्र ही अपने अधीन समस्त सामन्तोंको सेना सहित बुला भेजा। सामन्त भी तुरन्त ही अपनी २

(१) नागौरका प्रकृत नाम नागदुर्ग है।

(२) यह अग्निपूजन ज्वालामाईका पूजन है, यह कालीका उपनाम है।

(३) उर्दू तर्जुमेमें बधाई भेजना लिखा है।

सेना साथ लेकर आ पहुँचे। अभयसिंह दिल्ली जानेके पहले एक वार अपने राज्यके संपूर्ण प्रधान २ स्थानोंको देखनेके लिये गये और इन्होंने प्रत्येक देशमें तथा दुर्ग और सेनाकी शिक्षामें शासनकी उत्तम व्यवस्था करके प्रजाकी समान उसकी प्रार्थनाको पूर्ण किया। पर्वतसरनामक स्थानमें जाते ही राजा अभयसिंहको चेचक रोग होगया। जगत् रानीने मानों उनकी समस्त आपत्तियोंके दूर करनेके लिये वसन्तद्वारा उनके शरीरको आवृत करदिया।"

"संवत् १७८४ में अभयसिंह दिल्लीमें आये। अभयसिंहको आदरभावके साथ राजधानीमें बुलालेनेके लिये वादशाहने भारत साम्राज्यके सबमें प्रधान अमीरखान दौराखांको अपने प्रतिनिधिरूपसे भेजदिया। जब अभयसिंह महामान्य वादशाहके सम्मुख आये तब वादशाहने इनको बड़े सम्मानके साथ अपने पास बैठाकर कहा। "खुशवख्त महाराज राजेश्वर! आज वहुत दिनोंके पीछे आपके साथ भेंट हुई है। आज मैं अत्यन्त ही प्रसन्न हुआ हूं। आज इस आम और खास सभाका सुख दूना वढ़ गया।" इस प्रकारसे अभयसिंहने शिष्टाचार पाकर वादशाहसे विदा ली। उनके निवासस्थान अभयपुरमें उनके सम्मानके लिये वादशाहने शीघ्र ही उत्तर देशमें होनेवाले अनेक भांतिके स्वादिष्ट फल सुगंधित तेल और गुलावजल आदि उपहारमें भेज दिये।"

वादशाह अकवरने उदयसिंहका जिस प्रकार सम्मान किया था, अभयसिंहके प्रति वादशाह मुहम्मदशाहका इससे भी अधिक सम्मान हुआ। यद्यपि महात्मा टाड् साहव और राठौर कविने इस ऊँचे सम्मानका कारण प्रकाश नहीं किया, परन्तु विचारवान् पाठक इसको सरलतासे समझ गये होंगे कि दिल्लीके वादशाहका वह प्रवलप्रताप वलविक्रम इस समय अधिक घट गया था, इसी कारणसे उसने महावली अभयसिंहको अपने हस्तगत करनेके लिये इस प्रकारके आशातीत सम्मानसे विभूपित किया था। कर्नल टाड् साहवने लिखा है कि वादशाहने इस समय अभयसिंहको समस्त अमीर और सामन्तोंमें सबसे प्रधान नेता पदपर वरण किया। सम्वत् १७८४ के अन्तमें गुजरातका राजप्रतिनिधि सरवुन्दलखाँ वादशाहका विद्रोही होगया। इस कारण उसी सूत्रसे राठौर जातिका वाहुवल, और संग्राममें निपुणता प्रकाश करनेका एक सुअवसर उपस्थित हुआ, और राठौर कविकी काव्यरचना भी उपयुक्त उपकारणसे संग्रह की गई। राठौर कवि उसके सम्बन्धमें नीचे लिखे हुए अनुसार वृत्तान्तको काव्यरचनामें वर्णन कर गये हैं।

दक्षिणमें बड़ीभारी हलचल पड़गई। शाहजादा जंगलीने विद्रोही होकर

---

(१) राजपूत शीतला देवीको जगत्रानी कहा करते थे।

(२) महाराष्ट्रोंकी * प्रथम उन्नतिके समय यह यवन राजकुमार उनके नेतास्वरूपसे था। इस समयके किसी मुसल्मान इतिहासवेत्ताने उसे नहीं लिखा।

* जंगली शाहजादा, कर्णादानने शायद वाजीराव पेशवाको लिखा है। जिसकी फौजने मालवेका सूबा मुगलोंसे फतह किया था।

छः हजार सेना साथ ले, मालवा, सूरत, और अहमदपुरके शासनकर्ताओंपर आक्रमण किया तथा गिरिधरबहादुर, इब्राहीमकुली, रुस्तमअली, और मुगल शुजाअत बादशाहके इन कई एक प्रतिनिधियोंकी हत्या कर डाली"।

बादशाहने इस विद्रोह समाचारको पाते ही इसको शांत करनेके लिये तुरन्त ही सरबुलन्दखाँको प्रधान सेनापतिरूपसे भेज दिया। सरबुलन्दखाँ पचीस हजार सेना और उसके भोजनके लिये एक करोड़ रुपया लेकर विद्रोही दलको दमन करनेके लिये चला। परन्तु इसके अधीनकी आगे जानेवाली दश हजार सेना शत्रुओंके साथ युद्धमें परास्त होगई, तब इसने शत्रुओंके साथ संधि करनेका प्रस्ताव उपस्थित किया। संधिपत्रके मतसे सरबुलन्दखाँके अधिकारी देशोंको विद्रोही दलकेनताके साथ भाग करलेनेकी सम्मति प्रगट की और शीघ्र ही सरबुलन्दखाँने शत्रुओंके साथ मिलकर संधिपत्रके प्रस्तावके कार्योंको परिणत कर लिया"।

महात्मा टाड् साहब लिख गये हैं कि इस समय मारवाड़के महाराज अभयसिंहने अपने पिताके राज्यमें जानेके लिये बादशाहसे आज्ञा माँगी। सरबुलन्दखाँकी विद्रोहिता के उपलक्षमें कविकर्णीदान इस समयके बादशाहकी सभाके जिस चित्रको अंकित करगये हैं, हम यहाँ पर उसीको आदर सहित वर्णन करनेकी अभिलाषा करते हैं। कविने लिखा है, "कि सम्राट् मुहम्मदशाह दिल्लीके जगद्विख्यात् सिंहासन पर, और सभाके यथास्थान पर साम्राज्यके दोसौ उच्च कक्षाके सामन्त उमराव बैठे हुए थे, इसी समयमें समाचार आया कि सरबुलन्दखाँ, विद्रोही होगया है। सभास्थान पर प्रधान राजमंत्री कमरुद्दीनखाँ ऐत्तमादुद्दौला, खाँनदौरान, मीरबखशी समसामउद्दौला अमीरउलउमरा मनसूरअली, रोशनउद्दौला तुर्राबाजखाँ, रुस्तमजंग, अफगानखाँ, ख्वाजासैयदउद्दीन (गोलन्दाजदलके सेनापति) सआदतखाँ (खासदरोगा) बुरहानउल मुल्क, अबदुलसम्मदखाँ, दलीलखाँ, जफरयावरखां (लाहोरके शासनकर्ता) दलेलखाँ मीरहमला, खानखाना जफरजंग, इरादतखाँ, मुरशिदकुलीखाँ, जाफरखाँ, आलीवर्दीखाँ और अजमेरके शासनकर्ता मुजफ्फरखाँ इत्यादि बहुतसे अमीर उमराव उस स्थान पर विराजमान थे"।

उस सभामें सबके सम्मुख ऊँचे स्वरसे यह पढ़ागया कि सरबुलन्दखाँने सब प्रकारसे गुजरात पर अपना अधिकार करके अपनेको उन देशोंका स्वाधीन अधीश्वर प्रख्यात किया है, और मंडला झाला, चौरासमां बघेला और गोरिल जातिको एक ही बारमें परास्त करके वाला जातिको सहसा विध्वस करदिया है, और हाला जातिने उसको कर देनेकी सम्मति प्रकाश की है-सरबुलन्दने इस प्रकारसे बलविक्रम प्रकाश किया है, कि भूमीयां गण अपने २ किले छोड़ कर उसकी शरण हुए है, और उसको

(१) उर्दू तर्जुमेंमें साठ हजार लिखा है।
(२) यही पीछेसे अवधका वजीर हुआ।
(३) शेषमें यही बंगालेका नव्वाब हुआ।

" सत्रह हजार देशका" अधिकार देकर मान्य दिखाया था; और सरबुलन्द अपनेको अहमदाबादका अधीश्वर बताकर दक्षिणके महाराष्ट्रोंके साथ जा मिला ।

इससे पीछे कविने लिखा है, " कि बादशाह मोहम्मदशाहने विचारा कि यदि विद्रोही सरबुलन्दखांको दमन न किया जायगा तो इसके आदर्शमें भारतके अन्यान्य देशके राजप्रतिनिधि भी अधीनता छोड़कर स्वाधीन हो अधीश्वर रूपसे मस्तक उठावेंगे। इतिहासमें उत्तर देशके जकरियाखाँ, पूर्वाञ्चलमें सआदतखाँ, और दक्षिणमें निजाम-उलमुल्कने अपने पापकी इच्छासे मुगल बादशाहकी अधीनता छोड़कर स्वाधीनरूपसे राज्यशासन करनेके पूर्वलक्षण प्रकाशित किये थे। मुगल सम्राट्का प्रबल प्रताप इस समय एक बार ही अत्यन्त क्षीण होगया था। इस कारण मोहम्मदशाहने शासनशक्तिको दृढ़ करनेके लिये विशेष अभिलाषा की । निर्वाणोन्मुख दीपककी शिखा जिस भांतिसे अंतमें एक बार प्रबल मूर्ति धारण करके कुछ ही समयमें बुझ जाती है; उसी प्रकारसे भारत साम्राज्यके मुगलशासनकी शक्ति औरंगजेबके शासनसे एकबार ही भयंकर मूर्ति धारण कर उस औरंगजेबकी मृत्युके साथ ही साथ प्रभाहीन होगई । यद्यपि परिवर्ती बादशाह उस जगत्विख्यात् दिल्लीके सिंहासनपर बैठकर तथा जगत् विदित भारत सम्राट्की उपाधि धारण करके शासनशक्तिको चलाते आये थे, परन्तु इससे उनके उस प्रताप, प्रभुत्व, विक्रम, वीरत्व, और गौरवगरिमा प्रभात कालके चंद्रमाकी समान घड़ी २ में हीन तेज होती जाती थी ।

हम जिस समयके इतिहासका वर्णन करते हैं, उस समय भारतके प्रत्येक प्रान्तमें, क्या यवनराजके प्रतिनिधि शासनकर्ता, क्या देशी राजा सभीने मुगलराज्यकी अधीनताकी जंजीरको छेदन करके स्वाधीनभावसे छोटे २ राज्योंकी प्रतिष्ठा करनेकी कल्पना की थी और सरबुलन्द ही सबमें प्रथम दूसरे राजप्रतिनिधियोंके उदाहरण स्वरूप हुआ ।

सरबुलन्दखांने विद्रोही दलके साथ मिलकर स्वयं स्वाधीन अधीश्वररूपसे अपने नामका प्रचार करदिया । इससे बादशाहका हृदय अत्यन्त भयभीत हुआ; सरबुलन्दको दमन करनेके लिये तुरन्त ही उसने तैयारी कर ली। सभासे सरबुलन्दखांके राजविद्रोहिताके समाचारका प्रचार होतेही बादशाहकी आज्ञासे मीर तुज़क एक सोनेके पात्रमें बीड़ा अर्थात् ताम्बूल रखकर हाथ फैलाये उन बैठे हुए अमित बलशाली अमीर उमराव और देशी, राजाओंके बीचमें होकर धीरे २ जाने लगा। परन्तु हाय ! उसका वह कार्य निष्फल होगया !-कोई भी साहस करके उस ताम्बूलको ग्रहण न कर सका !-किसी २ अमीरने तो शिर झुका लिया, किसी २

---

(१) आर्य शासनके समय यह देश सत्रह हजार ग्राम और नगरोंसे पूर्ण था । इसीसे सर्वसाधारणमें सत्रह हजार नामसे विदित था

(२) दिल्लीके बादशाह हिन्दुओंका सर्व नाश करनेवाले थे तो भी बादशाहको सभी ईश्वरके समान माना करते थे ।

का शरीर मारे डरके थर २ काँपने लगा। किसीको भी उस बीड़ेकी ओर देखनेका साहस न हुआ।

राठौर कविने लिखा है, "कि परमेश्वर, बादशाह जो एक मात्र भिखारीको इच्छा करते ही बारह हजार सेनाके नेता और अमीर कर सकते थे, तथा अमीरको भिखारी कर सकते थे, वही अतुल शक्तिमान् सम्राट् आज एक उपयुक्त साहसी वीर शून्य हैं। अमीर गणोंमेंसे एक जनने कहा, जिसको दारुण वज्राघातके सहन करनेकी सामर्थ्य है, वही सरबुलन्दके विरुद्ध आगे बढ़नेका साहस करेगा, फिर और एक अमीरने कहा 'जो प्रबल नावको पकड़ कर उस नावके साथ समुद्रमें जाय वही सरबुलन्दके साथ युद्ध करनेमें समर्थ होगा।' तीसरे अमीरने कहा 'कालकूटधारी सर्पका मुख पकड़नेकी जिसमें सामर्थ्य है वही सरबुलन्दको दमन करनेके लिये तैयार होगा।' अमीरोंके इस भाँतिके वचन सुनकर सरबुलन्दके विरुद्ध युद्धके लिये जानेमें सभोंको असमर्थ देखकर बादशाह मोहम्मदशाहने अत्यन्त दुःखित हो मीरतुजकको इशारेसे बुला उसको लोटजानेके लिये कहा ।

राठौर कवि इसी समयके बादशाहकी सभाका यथार्थ चित्र अंकित करगये हैं। सरबुलन्दखाँ जैसा एक अमित तेजस्वी और दुर्द्धर्ष साहसी वीर था, दूसरी ओर, दिल्लीके उमराव भी इस समय विलासिताके इतने वशीभूत होगये थे, कि उनका बल विक्रम और शूरवीरता एक बार ही दूर होगई थी। जिस बादशाहकी सभासे एक समय अमीरोंने शत्रुओंके साथ युद्ध करनेके लिये बादशाह की आज्ञा मिलनेकी इच्छासे सेनापति पदपर नियुक्त होनेके लिये विशेष चेष्टा की थी, और सहयोगी अमीरोंके साथ प्रतियोगिता दिखाई थी, कालवश उसी बादशाहकी सभाके वह अमीरगण इस समय प्राणोंके भयसे अत्यन्त भयभीत होरहे हैं।

कर्नल टाडने लिखा है। कि राठौर राज अभयसिंह बादशाहकी यह दुखदाई अवस्था देखकर मन ही मनमें अत्यन्त दुःखी हुए; और जब बादशाह आमखास नामक सभास्थानको छोड़नेके लिये उद्यत हुए, तब उसी समय वीरश्रेष्ठ अभयसिंहने गर्वित हो साहसमें भर कर उस बीड़ेको उठानेके लिये हाथ फैला दिया। बीड़ा ले मस्तकके ऊपर रखकर बादशाहको सम्बोधन देकर अभयसिंह बोले, "जगत्के सम्राट्! आप दुःखित न हूजिये, आपकी कृपासे मैं इस विद्रोही सरबुलन्दको अवश्य ही परास्त करदूंगा; निश्चय ही उसके स्वाधीन होनेकी आशाकी जड़में दारुण कुठारका आघात करूंगा, और उसके मस्तकको आपके जगत् विख्यात सिंहासनके नीचे उपहारमें दूंगा।"

अभयसिंहने जिस समय अपने हाथसे बीड़ा उठाया उस समय पका. हुआ

(१) जो साहसी वीर ताम्बूल ग्रहण करते हैं वह शत्रु दमन करनेका सेनापतिके पदपर नियुक्त होते हैं।

अनार जिस भाँति खोल २ होजाता है, उसी प्रकारसे सभामें बैठे हुए समस्त अमीरोंका हृदय हिंसाके प्रवल वेगसे मानो विदीर्ण होगया। कुछ ही समयके उपरान्त वादशाह मोहम्मदशाहने अभयसिंहको गुजरातके शासनकी सनद दी, तव तो अमीरोंका द्वेष और भी प्रवल होगया। परन्तु मोहम्मदशाहने उपस्थित अमीर और देशी राजाओंके वीचमे एकमात्र राठौरपति अभयसिंहको विद्रोही सरवुलन्दके विरुद्धमे युद्ध करनेका अभिलाषी देख अत्यन्त प्रसन्न चित्तसे अभयसिंहको वुलाकर कहा- दिल्लीके सिंहासनकी रक्षाके लिये आपके पूर्वपुरुष भी इसी प्रकार वीरोंकी समान आचरण करगये है, वादशाह जहाँगीरके राज्यमे आपके पूर्वपुरुषोंकी सहायतासे कुमार खुर्रम और भीमकी विद्रोहिता दूर होगई थी। और दक्षिणके उपद्रव भी शान्त होगये थे, तथा मैं विश्वास करता हूँ कि, इसी प्रकारसे आपके द्वारा मोहम्मदशाहके सिंहासन और उनके सन्मानकी रक्षा होगी।" अभयसिंहके लिये यह सम्मान अवश्य ही ऊँचा कहना होगा। जिस सभामें वादशाहके अधीनमे स्थित प्रत्येक वीर और अमीर इकट्ठे थे। जिन अमीरोंकी मर्यादा वादशाहकी सभामें महासम्मानवाली गिनी जाती थी, जो अपने महावीर कहकर अभिमान करते थे। अभयसिंहने उनको लज्जित करके इस वीड़ेको उठाकर केवल राठौर जातिका गौरव वढ़ाकर अपने असीम साहसका चूड़ान्त प्रमाण ही नहीं दिखाया था, वरन् उन्होंने केवल यही दिखाया था कि विजयी यवनोंकी अपेक्षा विजित जाति ही अधिक राजभक्तिके वशीभूत है।

राठौरोंके इतिहाससे जाना जाता है कि "सम्राट् मोहम्मदशाहने शीघ्र ही प्रसन्न चित्तसे राठौरपति अभयसिंहको वहुतसे द्रव्य और महामूल्यवान् सात हीरोंके अलंकार उपहारमें दिये। राजखजानेको खोलकर सेनाके खर्चके लिये इकतीस लाख रुपया अभयसिंहको दिया। तोपगोदामसे वन्दूकें और वहुतसे युद्धके अस्त्र सेनाने आनंदित होकर ग्रहण किये। सम्वत् १७८६ के आषाढ़ मासमे अभयसिंहने वादशाह मोहम्मदशाहके द्वारा अहमदावाद और अजमेरके राजप्रतिनिधि पदपर नियुक्त हो शासन सनदको ले विदा ली"।

इतिहासवेत्ता टाड् साहव लिख गये है. 'कि मुगलवादशाहके साथ मारवाड़का राजनैतिक विनाश इसी समयसे आरंभ हुआ; कारण कि सरवुलन्दकी विद्रोहितामे ही यवनराजको खंड २ मे विभक्त होनेके पहले ही सूचित होगया था। सन् १७३० ईसवीके जून मासमे मारवाड़के अधीश्वर महाराज अभयसिंहने वादशाहसे विदा मागी। अभयसिंह जिस अजमेरके राजप्रतिनिधि पदपर नियुक्त हुए, सवसे पहले उसी अजमेरमें जानेके उनके दो अभिप्राय थे, पहला यह था—कि मारवाड़मे जानेके मार्गका अभेद्य दुर्गस्वरूप (केवल मारवाड़मे ही नहीं वरन् राजपूतानेके प्रत्येक राज्यका पथस्वरूप) अजमेर पर अधिकार तथा दूसरा उस संदेहजनक राजनैतिक अवस्थाके सम्वन्धमे आमेरके महाराजके साथ परामर्श। आमेरके महाराज जयसिंह किस अभिप्रायसे

इस समय अजमेरमे आये थे, राठौरोके इतिहासमे उसका कोई उल्लेख दिखाई नही देता, परन्तु अन्यत्र इनके सम्बन्धमे जो कारण निर्दिष्ट हुआ है उससे अनुमान किया जा सकता है कि पुष्कर तीर्थमें अपने पित्रोके लिये श्राद्ध तर्पणका करना ही उनके आनेका कारण था। राठौर कवि इन दोनो राजाओके साक्षात् संवन्धको भली भांतिसे वर्णन करगये है। उन्होंने लिखा है कि हिन्दुओके दोनो राजाओने एक दूसरेके निमित्त अपनी २ पगड़ी फैलादी, उसीके ऊपर होकर आये, तथा दोनो जनोने एक ही साथ भोजन कर विश्राम किया। और वे यवनराज्यको विध्वंस करनेके लिये गुप्त सलाह करने लगे, इससे हम अनुमान कर सकते है कि कविकर्णीदानको इस गुप्त राजनैतिक परामर्शके विपयमे भली भांतिसे जानकारी थी।

बादशाहकी सभामे महासम्मानित हो मारवाड़पति अभयसिंह अजमेरमे जा अपने कर्मचारियोको यथायोग्य पदपर नियतकर मेरताको चलेगये। अनुज बख्तसिंहने मेरतामे पहले जाकर अपने बड़े भाई अभयसिंहको भक्तिपूर्वक अधिक सम्मानके साथ ग्रहण किया। इस समय बख्तसिंहको नागौरराज्यके शासनकी पूर्ण सनद मिलगई। दोनों भ्राता शीघ्र ही मेरताको छोड़कर सेना और सामन्त मण्डलीके साथ जोधपुरकी ओरको जानेलगे। रास्तेमे महाराज अभयसिंहने समस्त सामन्तोको सेना सहित विदा दकर कह दिया, कि विद्रोही सरबुलन्दके साथ शीघ्र ही युद्ध करनेको जाना होगा, इस कारण आप विलम्ब न करिये, और शीघ्रतासे अपनी अपनी सेना साथ लेकर जोधपुरमे इकट्ठे हूजिये। राठौर गण फिर इस समय अपने बाहुबलको प्रगट करनेका सुअवसर पाकर आनंदित हो अपने २ देशोंको चले गये। नरश्रेष्ठ अभयसिंह और नागौरपति बख्तसिंह जोधपुरमें जाकर सरबुलन्दके साथ युद्धकी तैयारी करनेलगे। इस ओर ठीक समय पर मारवाड़के प्रत्येक प्रान्तके राठौर सामन्त अपनी २ सेना सजाकर जोधपुर नगरमें आनेलगे। राठौर कवि, सामन्तोके सेना सहित आगमन और युद्धकी तैयारी के विषयको भली भाँतिसे वर्णन कर गये है। समस्त सेनाके इकट्ठा होते ही शास्त्रके अनुसार "बड़वानल" "मगरमुखन" जमरा जदंष्ट्र, इत्यादि तोपोकी पूजा प्रारंभ हुई। राठौर वीरोंने उन तोपोकी श्रेणी तथा अस्त्रोके सम्मुख अपने हाथसे बकरोका बलिदान कर उन बलिदान किये हुए बकरोंके रुधिरसे तथा लाल चंदन और घृतसे तोपोको शोभायमान कर दिया।

युद्धकी समस्त तैयारी होगई, अभयसिंहका प्रधान उद्देश यह था कि वह सरबुलन्दखाँको दमन करनेके पहले और भी एक अभिलापाको पूर्ण करनेके लिये उद्यत हो। अभयसिंह अजमेरके राजप्रतिनिधि थे, इस कारण उनके अधीनकी जितनी सेना इकट्ठी हुई वह उस सेनाके साथ प्रतिवासी सिरोहीपतिको दमन करने और उसका प्रतिफल देनेके लिये व्यग्र होगये। सिरोहीका अधीश्वर जिस भाँति उग्र स्वभावका था, उसी प्रकारसे अमित तेजस्वी और स्वाधीन वीर था। वह किसी समय भी किसीकी अधीनताके जालमे न फसा था, तथा सब प्रकारसे इस

समय स्वाधीनताका अमृतमय फल भोग करता था । सिरोही देश दुर्गम पहाड़ोंके ऊपर स्थापित है, उसके तीनो ओर पहाड़ी आदमी रहते थे; इस कारण सिरोहीराज उन असीम साहसी पहाड़ी निवासियोंकी मित्रतासे और उनकी सहायतासे सब प्रकारसे स्वाधीनताकी रक्षा करता था । सिरोही राज्यका जो अंश मारवाड़की ओर था, केवल उसी अंशकी रक्षा करके वह विशेष वीरता दिखाया करता था ।

"सिरोही राज्यके तीनो ओर जो पार्वती जाति निवास करती थी वह मीना नामसे विदित थी । वही मीना गण इस समय अभयसिहके भयंकर कोपमें पतित हुए । अभयसिह जिस समय सेना सहित दिल्लीसे जोधपुरमें आकर सामन्तोंको विदाकर अफीमका सेवन करके उन्मत्त होगये, उस समय शुभ सुअवर पाकर उक्त मीना गण अभयसिहके पशुओंको चुराकर अपने अधिकारी पहाड़ी देशको लेगये । मीनोंके द्वारा पशुओके हरण होनेका समाचार अभयसिह तक पहुचा, तब उन्होने हँसते २ कहा, "अच्छा हमारे पशुओंको लेजाओ, उन्होंने यह जाना होगा, कि "धान्य और घासके न मिलनेसे हमारे पशुओको अत्यन्त कष्ट होरहा है, इस कारण वह उन पशुओको अपने देशमे भोजन देनेके लिये लेगये है, तुम कुछ न कहना ।" महामान्य टाड् साहबने लिखा है कि वड़े आश्चर्यका विषय है कि महाराज अभयसिंहके युद्धका उद्योग करते ही मीनागणोने वह चुराये हुए पशु उसी समय ला दिये। अभयसिंहने ! मीनागणोके इस आचरणसे कहा, कि यह हमने पहले ही कह दिया था कि यह मीनागण हमारी अनुगत विश्वासी प्रजा हैं ।"

तुरन्त ही रणभेरी वजने लगी; चतुरंगिनी सेनाका दल वीरगर्वसे गर्वित हो पृथ्वीको कंपायमान करता हुआ भारतक्षेत्रके चिरस्मरणीय वीरोंका अभिनय करनेके लिये संहारमूर्तिसे आगे वढ़ा । राठौर कविने इस स्थान पर इकट्ठी हुई सेनादलका विशेष वृत्तान्त वर्णन किया है । सेनादलमें केवल मारवाड़के राठौरोंका सेनादल ही नहीं वरन् रजवाड़ेके अन्य कितने ही देशोकी राजपूतसेना और दो यवनसेनापतियोके अधीनमें यवनसेना भी इकट्ठी हुई थी । कविने लिखा है, कि " कोटा और वूंदीके हाड़ासैन्यदल, गगरौनकी खीची सैन्य, शिवपुरकी गौड़सेना, आमेरकी कछवाही सेना और मरुक्षेत्रकी सोढासैन्य अपने २ अधीश्वरोंके अधीनमे इकट्ठी हुई । मारवाड़के अधीश्वर उस सम्मिलितवाहिनीके प्रधान सेनापतिरूपसे उनको चलाकर लेगये, मारवाड़के सम्मिलित राठौर, सेनादलके, वॉई ओर वीरश्रेष्ठ वख्तसिंहके अधीनमे चले ।"

राठौर कविने लिखा है, सम्वत् १७८६ चैत्रमासकी दशमी तारीखको जोधपुरको छोड़ कर भाद्राजून मालगढ़ सिवाना और जालौरमें होकर अभयसिंह सेना सहित आगे वढ़े । वह सबसे पहले रिवाड़ा पर आक्रमण कर अस्त्रोंकी वर्षा करने लगे । महा संग्राम होनेके पीछे चांपावत्के नेता अपने जीवनको त्याग कर शवराशिके ऊपर जा गिरे । देवड़ागण परास्त होकर प्राणोंके भयसे पर्वतको छोड़कर भागने लगे । वहाँका एक दल सेनाकी रक्षाके पीछे अभयसिहके साथ पूसालियाको चलागया । पीछे

आबूसिखर उस विजयी वाहिनीके आगमनसे कंपायमान होगया। सिरोहीपतिने जब यह सुना कि रिवाड़ा और पोसालिया यह दोनो देश अभयसिंहकी सेनाने विध्वंश करदिये हैं, तब वह एकवारही निराशाके समुद्रमे मग्न होगये। सिरोहीपति चौहानराव नारायणदासने अन्य उपाय न देखकर वीरश्रेष्ठ अभयसिंहके हाथमें अपनी भ्रातृपुत्रीको देकर राज्यकी रक्षा करनेका विचार किया"।

चावडा जातीय राजपूत सामन्त मायारामकी मध्यस्थतामे सिरोहीपति राव नारायणदासने अभयसिंहके निकट संधिका प्रस्ताव भेज दिया। और उसके साथ ही अपने भाई मानसिंहकी कन्या उन्हे देनेकी अभिलाषा भी प्रगट की। उस भयानक रणभूमिमे शीघ्र ही राजपूत जातिके विवाहके पूर्वोपहारस्वरूपमे एक नारियल, आठ श्रेष्ठ तुरगनी और चार हाथियोंका मूल्य राव नारायणदासने अभयसिंहके पास भेज दिया। अभयसिंहने उसको वड़े आदरके साथ ग्रहण करके विवाह करनेमें तुरन्त ही अपनी सम्मति प्रगट की। कुछही समयमे युद्धका वाजा वंद होकर विवाहके आनंदका कोलाहल होने लगा। शुभ मुहूर्त्तमे महाराज अभयसिंहने मानसिंहकी कन्याका पाणिग्रहण किया। इस विवाहके फलस्वरूपमे अभयसिंहके औरससे इस रानीके गर्भसे दश महीने पीछे जोधपुरमे रामसिंहने जन्मलिया। राठौर कविने लिखा है कि राव नारायणदासने इस परम सुन्दरी भाईकी पुत्रीको अभयसिंहके करकमलमें अर्पण करनेके अतिरिक्त कर देकर संधिवंधन समाप्त करलिया।

देवड़ा जातीय सामन्त मंडली अपनी २ अधीनकी सेनाके साथ मारवाड़के महाराज अभयसिंहके अधीनमें स्थित प्रबल वाहिनीके संग जा मिले, मारवाड़पतिने विद्रोही सरवुलन्दखाँको दमन करनेके लिये सरस्वती नदीके निकटवर्ती पालनपुर और सिद्धपुर होकर सेना सहित यात्रा करनेमे क्षणमात्रका भी विलम्ब न किया। वीर श्रेष्ठ अभयसिंहने विद्रोही नेता सरवुलन्दके निकट जाकर वहाँ अपने डेरे डाल दिये, और उसके पास एक दूत भेज दिया। सरवुलन्दने दिल्लीके वादशाहके अधिकारी जिन समस्त सामरिक और अन्यान्य द्रव्यो तथा तोपों पर अधिकार कर रक्खा था, उन सबको लौटादे, अधिकारी राज्यकी आमदनी तथा उसके खर्चका हिसाव, और समस्त राजस्व देदे, और अहमदावाद और उस देशके अन्यान्य किलोमे जो सव विद्रोही सेना ठहर रही थी, उसको निमंत्रण कर विदा देनेके लिये प्रधान सेना पति अभयसिंहने उस दूतके हाथ सरवुलन्दके निकट यह आज्ञा कहला भेजी। सरवुलन्द अभयसिंहकी उस आज्ञाके विरुद्ध गर्वित हो अहकारसे पूर्ण उत्तर देनेमे कुछ भी भयभीत नही हुआ। उसनें कहला भेजा कि "मै अहमदावादका राजा हूँ जवतक मेरे शरीरमे प्राण रहैंगे तवतक किसी प्रकार भी अहमदावादको नही देसकता।"

विद्रोही नेता सरवुलन्दखाँका उत्तर सुनकर महाराज अभयसिंहने तुरन्त ही एक महती सभा की। समस्त राठौर सामन्त सभास्थलमे इकट्ठे होगये, सरवुलन्दके पास

जो प्रस्ताव भेजा गया था, उसका उसने जो उत्तर दिया था, तथा इसके सम्बन्धमे जिस भावसे तर्कबाद और वक्तृता हुई, तथा सबसे पीछे जिस नीतिका अवलम्बन किया गया राठौर कविने उसका विशेष वर्णन किया है। उसने मरुक्षेत्रके सबमे प्रधान आठ राठौरोके सामन्तोकी वक्तृताका संक्षिप्त मर्म भली भाँतिसे प्रकाशित किया है।

राठौर कविकी लेखनीसे जाना जाता है, कि "चांपाके वंशधर अहवाके हरनाथके पुत्र सामन्त कुशलसिह जो मारवाड़के महाराजके दहिनीओर आसन पर बैठनेके अधिकारी थे। सबसे पहले उन्होने अपने मनके भावको प्रकाशित कर दिया। इसके पीछे कूंपावत सम्प्रदायके नेता आसोपके सामन्त कन्हीराम, जो मरुक्षेत्रपतिके बाँई ओरके आसन पर बैठनेके अधिकारी थे उन्होने कहा, "आओ किलकिलोंके समान हम समररूपी समुद्रमे कूद पड़े। इसके पीछे मेरताके सामन्त केसरीसिहने अपने मन्तव्यको प्रकाशित किया, ऊदावत सम्प्रदायके वृद्ध असीम साहसी और बहुतसे युद्धोमे महावीरता प्रकाशक नेताओंने "इस समय क्या करना उचित है" अपने २ मनके भावको इस विषयमे प्रकाशित करदिया इसके पीछे योधा सम्प्रदायके प्रधान नेता खैरवाके सामन्तने कहा "मै सबसे पहले रणभूमिमें अपना जीवन देकर अप्सराओकी वर मालाको ग्रहण करनेकी अभिलाषा करता हूं। आओ मेरे शरीरको लालरंगके वस्त्रोसे शोभायमान करो, पीछे शत्रुओके रुधिरसे तलवार और भालोको रंगकर सरबुलन्दका मस्तक लेकर क्रीड़ा करूंगा। जेतावत फतेसिह और कर्णोत अभयमल्लने योधा नेताकी इस युक्तिको भली भांतिसे समर्थ न किया, समस्त वीर एक स्वरसे युद्ध! युद्ध! कहकर चिल्ला उठे। कोई २ वीर लाल वस्त्रोंको धारण करके मानों सूर्यलोकके जीतनेको तैयार हुए। ऊँचेस्वरसे चांपावत कर्णसिहने कहा, "अप्सरा गण अमृतके पूर्ण पात्र हाथमे लिये सूर्यलोकमे हमारे साथ आदर सहित सम्भाषण करेगी। प्रत्येक राजपूत सामन्त और समस्त कवियोने एक स्वरसे कहा—'युद्ध! युद्ध!'।

---

(१) किलकिला एक छोटे पक्षीका नाम है। यह खंजनके बराबर होता है, और प्रायः रूपरंग मे भी उससे मिलता जुलता होता है। यह अकसर नदी या तालमें पानीसे दो चार हाथ ऊपर मडराया करता है, और ज्योंही देखता है कि उसके भक्ष योग्य कोई छोटी मछली बूंद लेनेको उठ रही है त्यौंहीं वह तीरकी तरह पानीमे गोता मारकर इस मछलीको पकड़ लेता है। वह प्राय. किलकिल शब्द करता है इसीसे उसे किलकिला कहते हैं।

(२) सही नाम अभयकर्ण है। यह दुर्गादासका बेटा था। इसीकी मिलावटसे कि उस रातको यह चौकी पर था, जब बख्तसिहने ज़नानेमे जाकर अपने बापको मारा था।

(३) महात्मा टाड् साहबने यहां पर टीकेमें लिखा है, "कि हमारे प्राचीन शिक्षक जिस समय सरबुलन्दके साथ इस युद्धका वृत्तान्त पढ़ रहे थे, और मै उसका अनुवाद करता जाता था, उस समय मेवाड़के सबमे प्रधान माननीय सलूमरके २२ वर्षके एक युवक सामन्त मेरे पास बैठे हुए मन लगाकर इसको सुनतेजाते थे। इन्हीं सलूमरके सामन्तवंशी किसी विशेष कारणसे (वह कारण—

इसके पीछे बख्तसिंहने उठ कर अपने भाई अभयसिंह और सामन्तोको बुलाकर कहा, "कि आपलोग सभी इस स्थान पर विश्राम करिये, मैं अकेला ही सबसे पहले सेनाको चलाकर सरबुलन्दके अहंकारको चूर्ण करता हूं। आप इन्हीं डेरोंमे विश्राम कीजिये" तुरन्त ही एक बडे पात्रमें लाल जल लाया गया, वह पात्र मारवाड़के महाराजके सम्मुख रक्खा गया। अभयसिंहने उस पात्रमेसे जल लेकर उन बैठे हुए वीरोंके ऊपर उसे छिडकते हुए कहा, "इस युद्धमें प्राण त्याग करनेसे अवश्य ही अमरपुरमे जाना होगा"।

इस स्थान पर कविने इकट्ठी हुई अश्वारोही सेनाके अश्वोंकी प्रशंसा की है। दक्खनकी भीमरथालीनामक अश्वश्रेणी सबसे अग्रणीय थी, इसके पीछे मारवाड़के अन्तर्गत घाट और राड़धड़ा और सौराष्ट्रके अन्तर्गत काठियावाड़के अश्वोंकी प्रशंसा की थी। सरबुलन्दखांने अपनी रक्षाके लिये सम्मिलित राजपूत वाहिनीके करालग्राससे नवजीतराज्यकी रक्षाके लिये जिन सब उपायोका अवलम्बन किया, राठौर कविने उसका भी वर्णन किया है। उसने नगरके जानेके प्रत्येक मार्गपर दो२ हजार सेना और पाँच पांच तोपे रख दी। इन तोपोको यूरूपवाले चलाते थे। एक दल यूरूपीय बंदूकधारी सेना शरीररक्षकरूपसे उसके पास रहती थी। अभयसिंहने युद्धकी सभामे नियत किये हुए मतसे सरबुलन्द पर आक्रमण करना विचार कर शीघ्र ही समरानल प्रज्वलित करदी। पहले दोनों ओरसे तोपोंके भयंकर गोलोंकी वर्षा प्रारंभ हुई, क्रमानुसार तीन दिन तक इस प्रकारसे गोलोंकी वर्षा होनेके पीछे सरबुलन्द का पुत्र मारा गया। महावीर बख्तसिंहने सबसे पहले संहार मूर्तिसे राठौरोंकी सेनादलके साथ शत्रुपक्ष पर भयंकर वेगसे आक्रमण किया, राजपूतोकी सेनाका दल उस प्रथम आक्रमणसे ही अपना प्रशंसनीय बलविक्रम दिखाने लगा, प्रत्येक

—हम इस समय भूल गये हैं) किसी भांति भी अफीम सेवन नहीं करते थे। विशेष शपथ करके सलूमरके सामन्तोंने अफीम सेवनसे घृणा की थी। इस सामन्तके पितामह यहांतक अफीम सेवनसे घृणा करते थे कि एक समय प्रकाश्यप्रीतिकी सभामें उनके शरीरके किसी स्थान पर अफीम मिले हुए पानीकी एक बूंद गिर पड़ी थी। उन्होंने तुरन्त ही अपनी तलवारसे शरीरके उस स्थानको काटडाला। मुझे यह पहले ही ज्ञात था, तब मैंने उस युवक सामन्तको बुलाकर कहा, "अच्छा रावतजी आप अप्सराओंके हाथसे अमृतपूर्ण प्यालेके ग्रहण करनेकी अभिलाषा करोगे या अपने कुलकी प्रतिज्ञाको रखनेके लिये निषेध करोगे" उसी समय युवक सामन्तने उत्तर दिया, मैं अवश्य ही अप्सराओंके हाथसे अमृतमयपात्रका ग्रहण करनेकी इच्छा करता हूं, पर वह इस अफीम पूर्ण-पात्रसे अवश्य ही भिन्न है। मैंने कहा "तब क्या आप विश्वास करते हैं, कि जो रणभूमिमें जीवनदान करते हैं? अप्सरा गण उनकी आत्माको आदर सहित सूर्यमंडलमें ले जाती है? उत्तर मिला इस बातको न माननेमें किसको साहस है। जब हमारा समय आवेगा तब हम अवश्य ही अप्सराओंके हाथसे उस पात्रको आदर सहित ग्रहण करेंगे। वीरके लिये कैसा उज्ज्वल विश्वास है। इस युवक सामन्तने दीर्घकाल तक हमारे प्राचीन शिक्षक और मित्रोंके पास बैठकर समस्त कविता सुनी थी।"

राजपूत सामन्त ही इस समय नंगीतलवारें और भाले हाथमें लेकर शत्रुओंका संहार करनेमें उन्मत्त होगयथे । चांपावत सम्प्रदायके नेता कुशलसिंह रणक्षेत्रमें अपना जीवन देकर सूर्यलोकको चलेगये । अहमदावादके इस भयंकर युद्धमें राजपूतानेके जिन महावीरोंने अपना जीवन दिया था; महात्मा टाड् साहवने इस स्थान पर कविके ग्रंथसे उसको उद्धृत करनेकी अभिलाषा नहीं की, इसी लिये हम भी उन्हींके पीछे चलते है । प्रत्येक राठौर वीर ही, अधिक क्या अभयसिंह और वख्तसिंह दोनों भ्राता भी शत्रुपक्षके एकसे अधिक नेताके प्राण नाश करनेको समर्थ न हुए ! अमरा जिसने वहुत वार अजमेरकी रक्षा करके महा वीरता प्रकाशित की थी, उसने ऊंचे पदपर स्थित पांच नेताओंके जीवनको निर्वाण कर दिया और दो या तीन हजार सवार मारडाले ।

कवि लिख गये है, " जिस समय आठ घड़ी दिन वाकी रहा उसी समय सरवुलन्दखॉं भाग गया । परन्तु उसकी अग्रवर्ती सेनादलका नेता अलियार तव भी महा विक्रम और असीम साहसके साथ वरावर युद्ध करता रहा । अंतमें वीरश्रेष्ठ वख्तसिंहकी तलवारने उस अलियारके मस्तकके दो खंड करदिये । तुरन्त ही राजपूतोंकी सेनादलमें जयका डंका वजनेलगा । अहमदावादका स्वतःसृष्ट नरपति सरवुलन्दखॉं पहलेसे ही घायल होगया था, वह जिस सवारी पर चढ़ा हुआ जा रहा था, वह सवारी मानो हरिनीकी समान शीघ्रतासे चली । इस युद्धमें शत्रुओंकी ओरके ४४९३ जने घायल हुए, इनमेंसे एकसौ तौ पालॅकीनशीन[1] थे तथा आठ हाथीनशीन[2] और तीनसौ ऐसे थे कि जो दीवान आमनामक सभाके कमरेमें जानेके समय ताजीमी सन्मानके अधिकारी थे । "

"एकसौ वीस ऊंची श्रेणीके राठौर सेनानायक और पांचसौ अश्वारोही सैनिक अभयसिंहकी ओरके मारे गये और सातसौ सिपाही घायल[3] हुए । "

उपरोक्त विवरणसे प्रकाशित होता है कि अहमदावादका यह युद्ध अत्यन्त प्रवलरूपसे प्रज्ज्वलित होगया था । और इस युद्ध क्षेत्रमें विद्रोही यवनसेना दलकी अपेक्षा राठौरोंकी सेनाने अधिक वीरता दिखाई थी । इसके पीछे कविने लिखा है " कि दूसरे दिन प्रभात होते ही अन्य उपाय न देखकर सरवुलन्दखांने अभयसिंहके कर कमलमें आत्म समर्पण करदिया । उसके अनुचर तथा सहयोगी भी उसीके साथ वंदी होगये । विजयी अभयसिंहने अपनी प्रतिज्ञाको पूरण करनेके लिये विद्रोहियोंके नेता सरवुलन्दको वंदीभावसे आगरेमें भेज दिया । सरवुलन्दके सहयोगी जितने मुग़ल

---

(१) इनको नरयानमें चढ़नेका अधिकार वादशाहसे प्राप्त हुआ था ।

(२) उन्होंने वादशाहसे ही हाथी पर चढ़नेका अधिकार पाया था ।

(३) कविश्रेष्ठने इस स्थान पर घायल हुए प्रधान २ वहुतसे सेनापतियोंके नाम लिखे है, उन सवको आवश्यकता न जानकर कर्नल टडाने उनको प्रकाशित नहीं किया । उन घायल हुओंमें 'वुलाक' नामक एक अँगरेज भी था ।

घायल होगये थे, बंदीभावसे जाते समय उनमेंसे बहुतसे ऐसे थे कि जिन्होंने मार्गमें ही अपने प्राण छोड़ दिये। इस भयंकर युद्धमे राठौर सेनाके अनेक सामन्त तथा कुटुंबियोंके जीवन नाशसे वीर श्रेष्ठ अभयसिंह अत्यन्त ही शोकित हुए। अभयमल्लने सत्रह हजार नगरोंसे पूर्ण गुजरात, और नौ हजार ग्राम नगरसे पूर्ण मारवाड़, और एक हजार ग्राम नगरोंसे पूर्ण अन्य और एक देश पर राज्य किया। ईडर, भुज, वागड़, सिन्ध, सिरोही, फतेपुरके चालुक झुझनू जैसलमेर, नागौर डूंगरपुर, वासवाड़ा, लूनावाड़ा, हलवथ इत्यादि देशके अधीश्वर प्रतिदिन प्रातःकाल ही महाराज अभयसिंहके चरणोंमे अपना मस्तक नवाया करते थे"।

"इसी प्रकारसे महाराज रामचंद्रने जिस विजयादशमीके दिन लंकाको जय किया था, सम्वत् १७८७ सन् १७३१ ईसवीमें उसी विजया तिथिको बारह सहस्र सेनावाले सरबुलन्दखाँके साथ युद्ध करके विजय प्राप्त की थी।

विजयी अभयसिंहने गुजरातकी राजधानी पर अधिकार करके शान्तिरक्षाके लिये सत्रह हजार सेना रखकर गुजरातके समस्त धन रत्नोंको लूट लिया, और महा आनंदित हो अपनी राजधानी जोधपुरमें उन सबको लेकर चले आये, ऐसा जाना जाता है कि अभयसिंह गुजरातको जीत कर ही नगद चार करोड़ रुपये, नानाजातीय अनेक प्रकारके एक हजार चारसौ तोपें तथा अगणित सामरिक द्रव्य गुजरातसे लाये। मुग़लराज्यकी शासनशक्ति इस समय अत्यन्त ही हीन होगई थी, इस कारण अभयसिंह उन समस्त तोपों और सामरिक द्रव्योंसे मारवाड़के किलेको भली भाँतिसे दृढ़ करके अपने स्वार्थ साधनके साथ ही साथ मुग़लशासनशक्तिके लोप होनेकी राह देखने लगे।

रणविजयी वीर अभयसिंहने सरबुलन्दखांको परास्त करके उसे बंदीभावसे आगरेमें भेज दिया था, यद्यपि महात्मा टाड् साहबने इस प्रकारसे लिखा तो है परन्तु अभयसिंह गुजरातको जीतनेके पीछे बादशाहकी सभामे गये थे या नहीं, उन्होंने

---

(१) मारवाडकी राठौर सामन्तमंडली तथा अन्य समस्त राजपूत अधिनायकोंके अधीनमें स्थित सामन्त और वीर गणोंने मारवाड़पति अभयसिंहके अधीनमें होकर महा वीरता प्रकाश करके जीवन दान किया, राठौर कविने उनके बल विक्रमकी अत्यन्त ऊँची प्रशंसा करते उनके नामोंका भी उल्लेख किया है। इस संग्राममें सम्पूर्ण सम्प्रदायोंके कई नेता मारे गये। उक्त सम्प्रदायके पालीके सामन्त करनसिंह सनदरीके किशनसिंह,जालोरके गोवर्द्धन तथा कल्याणने भी अपने प्राण त्याग किये थे। कूंपावत् सम्प्रदायके नरसिंह, सुरतानसिंह और दुर्जनके पुत्र पद्म इत्यादि भी घायल हुए। योधा सम्प्रदायके तीन नेता थे, हठीसिंह गुमान और योगीदास तथा प्रसिद्ध असीम साहसी मेड़तिया वीरवृन्दोंमेसे तीन जने, भूमसिंह, कुशलसिंह, और हाथीके पुत्र गुलाबने अपने प्राण त्याग किए। जादों सोनगरा धांधल और खीची इत्यादि अनधीन सामन्तोंमें भी अनेक महाबली वीर सूर्यलोकको चले गये। इनके सिवाय कवि और पुरोहित भी मारे गये। कविने छन्दके अनुरोधसे एक २ स्थान पर अभयसिंहके बदलेमें अभयमल्ल कहकर उल्लेख किया है।

उसका कोई उल्लेख नहीं किया, हमैं ऐसा बोध होता है कि मारवाड़पति अभयसिंहने इस समय दिल्लीश्वरको अत्यन्त हीन वल देखकर गुजरातको फतह करके जो समस्त धन रत्न और द्रव्य अपने अधिकारमे किये थे, उन सबको वड़े यत्नसे रक्खा। और स्वजातिकी स्वाधीनता बढ़ानेके लिये वह विशेष यत्न करने लगे। वास्तवमे मोहम्मद-शाहकी शासनशक्ति इस समय अत्यन्त हीन होगई थी। केवल मारवाड़पति ही नहीं वरन् दिल्लीके अधीनके सभी यवन राजप्रातिनिधि और देशीयराजा कईसौ वर्ष तक अधीनता स्वीकार करनेके पीछे भी फिर स्वाधीन रूपसे मस्तक उठाकर नवीन २ राज्यों के स्वतंत्र अधिकारी वनगए।

ग्यारहवाँ अध्याय ११.

राठौरराजके दोनो भ्राताओंके मनमें मलीनता; वख्तसिंहके वाहुवल और वीरताको देख कर अभयसिंहको महा भय; वख्तसिंहकी अवलम्वित नवीन राजनीति; राठौर कवि कर्णका जोधपुर छोड़कर नागौरमें जाना, और वख्तसिंहके साथ मिलकर षड़्यंत्र करना; अभयसिंहका बीकानेर पर आक्रमण; अभयसिंहके अधीनस्थ सामन्तोंके विचित्र आचरण; शत्रुपक्षकी सहायता करना; आमेरके महाराजके साथ अपने भाई अभयसिंहका विवाद उपस्थित करनेके लिये वख्तसिंहका षड़्यन्त्र; अभयसिंहके न होने पर आमेरपति जयसिंहका जोधपुर पर आक्रमण रोकना; आमेरपति जयसिंह; आमेरकी सामन्त मण्डलीका अभयसिंहके प्रस्ताव विचारको बदलदेना; वख्तसिंहके भेजे हुए दूतका आमेरके महाराजके साथ साक्षात् होना; दूतके उद्देशको पूर्ण करना; जयसिंहका अभयसिंहके निकट अपमान कारक पत्र भेजना; अभयसिंहका क्रोधपूर्ण उत्तर देना; जयसिंहका सेना सहित सामन्तमण्डलीको बुलाना; जयसिंहका वैदेशी राजाओसे सहायता पाना; आमेरनगरमें एक लाख सेनाका इकट्ठा होना, मारवाड़की सीमाके अन्तमें सेनादलका जाना; अभयसिंहका वीकानेरके अवरोधको छोड़ देना; वख्तसिंहका विचित्र आचरण; नागौरके समस्त सामन्तोंका प्रतिज्ञामें बांधना; आमेरकी प्रवल सेनाके साथ युद्धके लिये वख्तसिंहका केवल सामान्य संख्यक अनुचरोंके साथ यात्रा; गगवाणामें युद्ध; साठ जनोंकी सेनाके साथ वख्तसिंहका आमेरपति के ऊपर आक्रमण; आमेरपतिका उद्देश पूरण आमेरके कवियोंका वख्तसिंहकी वीरताकी प्रशंसा करना; अनुचरोंकी सेनाके विनाशसे वख्तसिंहका अनुताप; मेवाड़ेश्वर राणाके द्वारा विवाद करनेवाले राजाओंमें भिन्नता स्थापन; अभयसिंहका परलोक गमन; उनकी जीवनीकी समालोचना;

महाराज अभयसिंहके सरवुलन्दको पराजय और गुजरात पर अधिकार करते ही उनके यशका गौरव चारो ओर संपूर्ण रूपसे फैल गया—राठौर जातिकी गौरव-गरिमा दूनी बढ़ गई, इसका अनुमान हमारे पाठक सरलतासे करलेगे। विजयी वीर

---

* इनको भक्तसिंह नामसे भी लिखा है

अभयसिंह गुजरातको जय करके वहांसे वहुतसा धन और तोपें आदि पाकर अपने राज्यमे स्थित किलोको दृढ करके आनन्दपूर्वक शांति सुख भोगने लगे। परन्तु इस शांतिके आलिंगनमे वह बहुत दिनतक न रहसके। अभयसिंह अवस्था वृद्धिके साथ ही साथ अफीम सेवनके अधिकाधिक वशवर्त्ती होगए। दूसरी ओर वीर श्रेष्ठ वख्तसिंहका असीम साहस, महा वीरता सामरिक प्रतिभा अधिक बढ़ गई, और इसीसे अभयसिंहके हृदयमे महा भय उपस्थित होगया। एक ओर अभयसिंह जिस प्रकार अपने भाईके बल और गौरवक विषय विद्वेषके वशीभूत होगये, दूसरी ओर अपने भाईको पूर्ण स्वाधीनता असीम सामर्थ्य और शांतिको संभोग करते हुए देखकर वख्तसिंहके हृदयमे भी विद्वेषकी अग्नि धीरे २ प्रज्वलित होगई। दोनों राठौर राजभ्राताओंके मनोमालिन्य होनेमे कुछ भी बाकी न रहा। दोनो भाइयोके हृदयमे विद्वेषकी अग्निका वृक्ष धीरे २ चढ़नेलगा, यद्यपि वख्तसिंह नागौरके अधीश्वर पदपर प्रतिष्ठित होगये थे, परन्तु वह जैसे महावीर, प्रतिभाशाली, तथा ऊँची आशाओंके वशवर्ती थे, इससे उस सामान्य राज्यखडके शासनमे उनकी तृप्ति होना कहाँ संभव थी? परन्तु इस वातको वख्तसिंह भली भाँतिसे समझ गये थे, कि असीम साहसिक आचरण, या कठिन स्वभाव, तथा वीरताके बलसे उन्होंने राठौर जातिके सर्वसाधारणके ऊपर अपना प्रबल अधिकार स्थापित किया है, इनको सभी विद्वेषपूर्णनेत्रोंसे देखते थे, उद्धतस्वभाववाली राठौर जाति इनका किंचित् भी विश्वास नहीं करती थी। इस कारण विशेप सावधानी के विना यह तीनसौ साठ खंड नगरोसे पूर्ण नागौर राज्यकी निर्विघ्नतासे रक्षाकर अपने गौरवको पूर्णतासे अचल न रख सकते थे।

वख्तसिंह केवल असीम साहसी वीर ही नहीं थे, वरन् यह एक चतुर और नीतिज्ञ पुरुप भी थे। विदेशिय मित्र राजगणोकी सहायतासे अथवा मारवाड़मे आत्मविग्रहकी अग्नि प्रज्वलित करके इन्होने अपनी सामर्थ्य बढ़ानेकी इच्छा नहीं की थी। वह इस वातको जानते थे कि इससे स्वजाति और अपने ही अनिष्ट होनेकी संभावना है, परन्तु वख्तसिंहने इस समय विख्यात् राठौर कविकर्णीदानके प्रस्ताव वा उपदेशके अनुसार एक विचित्र राजनीतिका अनुसरण करना प्रारंभ किया। वह राजनैतिक अनुष्ठान राजपूत चरित्रोके नवीन लक्षण और विचित्रताको प्रकाशित करता है। कवि श्रेष्ठ कर्णीदान सरबुलन्दके साथ अभयसिंहके युद्धका वृत्तान्त ऐतिहासिक काव्यमे वर्णन करलेके पीछे जोधपुरको छोड़कर नागौरमे जाकर वख्तसिहके साथ मिलगया। यह तो हम पहले ही कह आये हैं कि कवि कर्णीदान एक ऊँची श्रेणीका राजनीतिज्ञ मनुष्य था। राठौर जातिके अन्यान्य वर्णोंकी समान यह कविश्रेष्ठ भी पड़यंत्र विद्यामें विशेप पारदर्शी था, इस कारण इसने ऊँची अभिलापापूर्ण हृदयको वख्तसिंहके साथ मिलाकर अभयसिहके विरुद्ध पड़यंत्र जालके विस्तार करनेकी पूर्व सूचना कर दी। वह कवि एक महामान्य मनुष्य था। इस कारण वह अत्यन्त सरलतापूर्वक गुप्तभावसे पड़यंत्र जालका विस्तार करने

लगा। कवि कर्णीदानने बख्तसिंहके साथ मिलकर बहुतसी सलाह करनेके पीछे यह निश्चय किया कि मारवाड़ेश्वर अभयसिंहके साथ आमेरके अधीश्वरका विवाद उपस्थित होनेसे सहजमे ही आशा पूर्ण होजायगी, और इससे सरलतासे बख्तसिंहका उद्देश सफल होजायगा। कविके इस प्रस्तावके कार्यको पूर्ण करनेका अवसर भी शीघ्रतासे आ पहुंचा।

महावीर सियाजीने मरुक्षेत्रमे जिस राठौर वंशका बीज बोया था; उस वंशरूपी वृक्षकी एक शाखासे बीकानेरका राजवंश उत्पन्न हुआ। बीकानेरके राठौर राजा इस समय सम्पूर्ण स्वाधीनभावसे राज्य करते थे। मारवाड़पति अभयसिंह बीकानेरपतिके नाममात्रके प्रभु थे। बीकानेरराज्य किसी विषय पर इस समय अभयसिंहके साथ अप्रीतिकारक आचरण करता था। अभयसिंह इसको बदला देनेके लिये तैयार हुए। दिल्लीके अधीश्वर सम्पूर्ण देशीय राजाओके प्रभु थे। परन्तु उन दिल्लीपतिके इस समय प्रवल प्रताप और प्रभुत्वकी विक्रमशक्ति एकवार ही हीन होगई थी, अतः अभयसिंहने निर्भय होकर सेनासहित बाहर जा बीकानेरको घेर लिया। मारवाड़के राठौरोकी सेनाने प्रवल रूपसे बीकानेरको घेरा तथापि बीकानेरकी सेनाने सरलतासे राठौरोको जय प्राप्त करने नहीं दी; वे बड़ी वीरताके साथ शत्रुपक्षके कराल ग्राससे बीकानेरकी रक्षा करनेलगे। महाराज अभयसिंह सेनासहित कई सप्ताह तक इस प्रकार बीकानेरको घेरे रहे, बख्तसिंहने विचारा कि इस सुअवसरमे बीकानेरको आक्रमणसे उद्धार करसकेंगे तो सरलतासे मनकी कामना पूर्ण होजायगी। वास्तवमे उनके लिये यह सुअवसर विशेष सुखकारी विचारा गया।

अभयसिंहने मारवाड़के समस्त सामन्तोंके अधीनमे स्थित समस्त राठौर सेनाके साथ बीकानेरको घेर लिया था। परंतु वह घेरना ही था अभयसिंहके साथी उन लोगोसे सहानुभूति रखते थे, और यथासमय उन्हे सहायता भी देते थे। कर्नल टाड् साहव लिखते है कि अवरोधकारी राठौर यदि बीकानेरकी सेनाको अफीम, लवण और लड़ाईका सामान न देते तो अवश्य ही वह आत्म समर्पण करदेते। मारवाड़के राठौर गणोने किस कारणसे बीकानेरके निवासियोके ऊपर यह करनेके अयोग्य नीति विरुद्ध आचरण किया था, हमारे विचारवान् पाठक इसको सरलतासे समझ गये होंगे—यह तो हम पहले ही कह चुके है। कि बीकानेरके निवासी मारवाड़की राठौर जातिके समान समरक्तवाही और एक ही वंशमे उत्पन्न थे। इस कारण अभयसिंह बीकानेरपतिको अधीनताकी जंजीरमे बांधनेके लिये उद्यत हुए, तो भी राठौर गणोने चुपके २ अपने जातिवाले बीकानेर निवासियोको जातीयप्रेमके वशसे सहायता दी। इसी लिये अभयसिंहके अधीनकी प्रवलवाहिनीने एकत्रित होने पर भी बीकानेरकी संख्यावद्ध सेनाको सरलतासे अपनी रक्षा करनेमे समर्थ होने दिया।

कवि कर्णीदानके प्रस्तावके मतसे कार्य करनेका सुअवसर पाकर अर्थात् मारवाड़पति अभयसिंहको बीकानेरके आक्रमणमें प्रवृत्त देखकर नागौरपति बख्तसिंह शीघ्र ही

आग्रहके साथ कार्यक्षेत्रमें अवतीर्ण हुए। कवि कर्णीदानने वख्तसिंहसे कहा, "कि आप आमेरके महाराजको इस भावका पत्र लिखिये कि अभयसिंहने वीकानेरके आक्रमणसे आमेरके महाराजका अपमान किया है। आमेरके महाराज ही वीकानेरपतिके रक्षक स्वरूप हैं, इस कारण वीकानेरके आक्रमणसे अभयसिंहने प्रकाशमें आमेरके महाराजकी शक्तिको अस्वीकार किया है। अभयसिंहने इस समय वीकानेरको घेर लिया है, इस कारण इस सुअवसरमें आमेरपति सरलतासे जोधपुर पर आक्रमण कर सकते हैं।"

कविकी आज्ञासे वख्तसिंहने शीघ्र ही जयसिंहके नाम एक पत्र भेजा। और उसी समयमें आमेरपतिकी सभाका जो श्रेष्ठ दूत रहता था उसको भी पत्रके द्वारा यह लिख भेजा कि इस समय क्या करना उचित है।

आमेरपति जयसिंह बुढ़ापेमें अत्यन्त ही अफीमके भक्त होगये थे, और इससे राजकार्यमें भी अनेक विघ्न होनेकी संभावना थी, इस बातको वह भी भली भाँतिसे जान गये थे इसीसे उन्होंने अपने राज्यमें इस आज्ञाका प्रचार किया, कि जिस समय हम अफीम सेवन करके उसके नशेमें संज्ञाहीन हों, उस समय राजनैतिक अथवा राज्यकार्यका कोई विषय भी हमारे सम्मुख उपस्थित न किया जाय। इस आज्ञाके प्रचारका कारण यह था कि वह अफीमके नशेमें उन्मत्त होकर कहीं कोई अन्याय न कर बैठें। नागौरपति वख्तसिंहका पत्र आमेरराजकी सभामें आया, आमेरके समस्त सामन्तोंने एकत्रित होकर उस पत्रको पढकर तर्कवितर्क करनेके पीछे प्रकाश्यरूपसे यह निश्चय करदिया, कि मारवाड़पति अभयसिंह और वीकानेरपति दोनों ही स्वजाती और अपने है, इस कारण इस विषयमें आमेरके महाराज किसी ओर भी हस्ताक्षेप करनेकी अभिलाषा नहीं करते। सामन्तोंके ऐसा निश्चय करनेसे वख्तसिंहकी आशालता एकवार ही मुझारगई। परन्तु वीकानेरके जो दूत आमेरके महाराजकी सभामें थे, वह जैसे चतुर थे उसी भाँति नीतिज्ञ भी थे। आमेरराजके शासनविभागके प्रधानमंत्री विद्याधर उक्त दूतकी मित्रताकी जंजीरमें भली भाँतिसे बंधगये थे, उसी मित्रताकी सहायतासे दूतश्रेष्ठने आमेरके महाराजके साथ साक्षात् करके कई एक बातें जवानी निवेदन करनेकी आज्ञा प्राप्त की। शीघ्र ही आमेरपतिके सम्मुख दूत आया, उसने हाथ जोड़ कर नम्रतापूर्वक कहा, "महाराज! इस समय वीकानेरके ऊपर महा विपत्ति उपस्थित है, हमारे प्रभु मारवाड़पतिको अधीश्वर कह कर स्वीकार नहीं करते, वह अपनेको ही अधीश्वर जानते हैं।" उस दूतके इन कई एक वचनोंने आमेरके महाराजके हृदयमें अधिक गर्वका संचार करदिया। दूसरे अफीमकी प्रवल शक्ति भी इस समय उनकी कुछ विशेष सहायता न करसकी। आमेरके महाराजने दूतके निवेदनको,

(१) महात्मा टाड् साहबने टीकेमें लिखा है; कि यह विद्याधर एक बंगाली ब्राह्मण थे। यह जिस भाँति अनेक शास्त्रोंके पंडित थे उसी प्रकार ज्योतिष शास्त्रमें भी विशेष विद्वान् थे। वर्तमान जयपुर नगरकी आकृति उन्हींके द्वारा निश्चय हुई थी, अर्थात् उन्हींकी सम्मतिसे जयसिंह नगर बनाया गया था।

सुनकर कलम हाथमें ले मारवाड़पतिको लिखा "हम सभी एक प्रवल परिवारके अधिकारी हैं; बीकानेरपतिको क्षमा करके बीकानेरके आक्रमणको रहित कीजिये"। जयसिहने इन कई एक पंक्तियोंको लिखकर, एक पात्र पूर्ण अफीमका सेवन कर पत्रको बंद करके दूतके हाथमें देदिया, चतुर दूतने विनय करके कहा, महाराज! दो बातें और लिख दीजिये "नहीं तो मेरा नाम जयसिह है यह स्मरण रखिये"। अफीमसेवी जयसिहने विना ही कुछ कहे हुए दूतकी प्रार्थनाको पूरण करदिया।

इधरतो आशातीत सफलताकी प्राप्तिसे अत्यंत प्रसन्न हो उक्त राजदूतने वहांसे विदा होकर एक शीघ्रगामी ऊँट पर वह पत्र वाहकद्वारा अभयसिहके डेरोंमें भेज दिया। इधर बीकानेरके दूतके विदा होते ही कुछ ही समयके पीछे अमेरके अन्यतर प्रधान सामन्त अमेरराजाके सामने आ पहुँचे। जयसिहने उसी समय उन लोगोंसे उस पत्रका सम्पूर्ण विषय वर्णन करदिया। सामन्तोंने अत्यन्त दुःखित होकर कहा, "यह पत्र आपके सगेगासे विलक्षण विरक्तिका कारण होगा। यदि कछवाह वंशके रक्षा करनेकी इच्छा है यदि प्रवल पराक्रमी अभयसिंहके क्रोधसे अमेर राज्यको रखना चाहते हो, तो इसी समय उस पत्र लेजानेवालेको लौटाये जानेकी आज्ञा दीजिये। जयसिहने सामन्तके वचन सुन चैतन्य हो पत्र वाहकको मार्गमेंसे ही लौटानेके लिये दूतके ऊपर दूत भेजे। परन्तु पत्रवाहक अपने कार्यसाधनमें विशेष चतुर था। इस कारण जयसिंहके भेजे हुए दूत उस पत्रवाहकको न पकड़ सके।

मध्याह्नकाल ही भोजनके समय समस्त सामन्त रसोवड़ा अर्थात् भोजनगृहमें इकट्ठे हुए, वृद्ध सामन्त दीपसिहने अन्यान्य सामन्तोंके प्रतिनिधिस्वरूप जयसिहसे कहा कि आपने अत्यन्त ही अन्याय और अविचारका कार्य किया है; आपके इस अविचारसे हम सभीको कष्ट भोगना होगा।"

जिस प्रकारसे एक शीघ्रगामी ऊँटपर चढ़ाकर जयसिहका पत्र अभयसिहके डेरोंमें भेजा गया था, उसी प्रकार यथासंभव शीघ्र समयमे उन डेरोंमसे अभयसिहका भेजा हुआ गर्वपूर्ण उत्तर भी आया। जयसिहने पत्रको खोलकर सामन्तोके सामने पढ़ा। अभयसिहने महाक्रोधित होकर पत्रमे लिखा था "हमे आज्ञा देनेका तथा हमारे सेवकके साथ हमारे विवादमे हस्ताक्षेप करनेका आपको क्या अधिकार है?—यदि आपका नाम जयसिह है, तो याद रखिये कि मेरा नाम भी अभयसिह है।

पत्रको पढ़ चुकते ही वृद्ध सामन्त द्वीपसिहने कहा "महाराज! जो होना था वह मैने आपके श्रीचरणोमे पहले ही निवेदन कर दिया था। जो होना था वह होगया है, परन्तु इस समय अब और कोई उपाय नही है; शीघ्र ही अपने मित्रोंको इकट्ठा होनेकी आज्ञा दीजिये"। प्रधान सामन्तोंके यह वचन सुनते ही अन्यान्य सामन्तोंने एक स्वरसे आमेरराजके सम्मानकी रक्षाके लिये अभयसिहको तलवारसे

(१) वैवाहिक सम्बन्ध बंधनका नाम सगा है। यही सगाई कहाती है।

प्रत्युत्तर देनेके लिये अपनी सम्मति प्रगट की। शीघ्र ही आमेरराजके द्वारा अनेक स्थानोंसे सामन्तोंके पास सेनासहित आनेके लिये दूत भेजे गये–प्रत्येक कछवाहोंको असि, भाले हाथमें लेनेके लिये आज्ञा दी गई, तथा प्रतिवासी राजाओंकी सहायता प्राप्तिकी आशासे दूत भी भेजे गये। तुरन्त ही राजधानीके बाहर पंचरंगी जयपुरकी राजपताकाके उड़ते ही चीटियोंकी श्रेणीके समान समस्त कछवाहोंका दल आकर उसके नीचे इकट्ठा होने लगा। बूंदीराजके हाड़ा सैन्यगण, करौलीके यादो, शाहपुराके सिसोदियागण, खीचीगण तथा जाटगण आकर आमेरपतिके साथ मिले। बहुत थोड़े समयमें ही उस राजधानीके बाहर एक लाख सेना इकट्ठी होगई। यवन शासन शक्तिके लोप होनेके समयमें उन पितृहन्ता बख्तसिंहकी पापकल्पनाके दोषसे इस प्रबल आत्मविग्रहानलके प्रज्वलित होनेके पूर्ण लक्षण प्रकाशित होने लगे। आमेरके महाराज जयसिंहभी अपनी प्रभुताका विस्तार कर अभयसिंहको बदला देकर बीकानेरपतिका उद्धार करनेके लिये तुरन्त ही अपनी सेनाके साथ मारवाड़की ओर चले। नगारे भेरी आदि बाजोंके शब्दसे पृथ्वीको कंपायमान करती हुई वह सम्पूर्ण सेना शीघ्र ही मारवाड़की सीमामें स्थित गगवाना नामक ग्राममें आ पहुँची, और अपने डेरे डाल कर निर्भय हो अभयसिंहके आनेकी बाट देखने लगी।

महाराज जयसिंहको उस प्रबल बाहिनी सेनाके साथमें बहुत दिनोंतक बाट न देखनीपड़ी। आमेरके महाराज सेनासहित युद्ध करनेको आये हैं, यह सुनते ही अभयसिंह क्रोधित हुए सिंहके समान उन्मत्त होगये। जयसिंहने अन्यायके आचरणसे इस युद्धकी तैयारी की है, इससे अभयसिंहका क्रोध और भी दूना होगया। वह इस समय कई दिनकी अपेक्षा करके सरलतासे बीकानेर पर अधिकार कर सकते है, परन्तु जयसिंहकी युद्धयात्राका समाचार पाकर वह अत्यन्त ही व्यथित हृदयसे बीकानेरके अवरोधको छोड़कर संहारमूर्तिसे जयसिंहका आक्रमण रोकने और अपने "अभय" नामको प्रमाणित करनेके निमित्त शीघ्रतासे कछवाह सेनाकी ओरको चले।

जो नागौरपति बख्तसिंह इस महा अनिष्टका कारण था, जो निज अवलम्बित नीति और पापके षड्यंत्रसे इस विषमय फलको उत्पन्न करनेके लिये उद्यत था, वही बख्तसिंह इस समय इस महा असंभव व्यापार देखकर अत्यन्त भयभीत होगया। उसके षड्यन्त्रसे इस प्रकारका भयंकर कांड उपस्थित होगा, उसकी मातृभूमि और स्वजातिके भाग्यमें जो इस प्रकार कालरात्रि उपस्थित करैगा–इस बातका विचार उसने स्वप्नमें भी नहीं किया था। केवल उसने अपने भाई अभयसिंहके साथ विदेशी राजाओंकी विषम अनबन उपस्थित करनेकी अभिलाषा की थी, परन्तु इस प्रकारके महा आत्म विग्रहानल, तथा जातीय महासमर उपस्थित होनेकी उसे किंचित् भी आशा नहीं थी। वह जिस षड्यंत्रसे मारवाड़के भाग्यमें इस कालरात्रिकी भयंकर भ्रुकुटी देखनेलगे कि यदि यह षड्यंत्र प्रकाशित होजायगा तो कैसा होगा, इस भयसे भी वह इतना

भयभीत नहीं हुआ था, पर जब उसने सोचा कि आमेरपतिकी प्रबल सेना इकले अभयसिंहपर आक्रमण करके मारवाड़को विध्वंस करदेगी, तब उसकी जन्मभूमि और स्वजातिके भाग्यमें घोर कलंकका टीका लगेगा, इस भय और दुःखसे अनुतापित हो वह अत्यन्त ही अधीर होगया; वख्तसिंह समझगया था कि उपस्थित जातीय विषम युद्धमे उसका उद्देश पूर्ण होना तो दूररहा वरन् विशेष अनिष्ट होनेकी संभावना है। इसलिये वह शीघ्र ही नागौरसे अपने अग्रज और अपने अधीश्वर प्रभु अभयसिंहके निकट जाकर विनयपूर्वक यह वचन बोला, " आपने बीकानेरको जिस भावसे घेरलिया है उसी भावसे घेरे रहिये, सेनाके वहांसे लानेकी कुछ भी आवश्यकता नहीं है, मैं अकेला ही नागौरके सामन्तोंके साथ रणक्षेत्रमे जाकर भगोतियाको पराजयकर भगवान्के अनुग्रहसे उनको उचित शिक्षा दूंगा।" अनुज वख्तसिंहने पापकी आशाके वशीभूत होकर जिस षड्यंत्रजालके विस्तारसे इस जातीय युद्धका सूत्रपात किया था उसने उसी अपराधसे उचित दंड पाया। अभयसिंहके हृदयमे इस भावका विशेष उदय हुआ, इस कारण वे वख्तसिंहको आमेरके महाराजके साथ युद्धकी आज्ञा देकर आन्तरिक घृणाके साथ उस गुप्त षड्यन्त्रके लिये विशेष भर्त्सना करके भी वह शान्त न हुए।

राठौरोंके इतिहाससे जानाजाता है कि "नागौरके वीर सामन्तोंके इकट्ठा होते ही शीघ्रतासे नगाड़े बजने लगे। नागौरपति वख्तसिंह नागौरसे दिल्लीको जानेवाले तोरण द्वारपर खड़े होगये। अफीम, शरबत, और कुंकुम जलसे पूर्ण दो बड़े पीतलके पात्र एकओर रखकर सामन्तोंकी सेनाको आनेके बाट देखनेलगे। एक २ सामन्त जिस प्रकारसे प्रवेश करनेलगे, वख्तसिंह वैसे ही उन्हे एक पात्रमे अफीमका शरबत देनेलगे और दहिने हाथसे कुंकुमका जल लेकर उनके वक्षस्थल पर छिड़कने लगे। वख्तसिंहने इस प्रकारसे आठ हजार राजपूतोंकी सेना अपने अधिकारमे कर ली। वह सभी उनके साथ यह प्रतिज्ञा करके आये थे कि या तो युद्धमे प्राण देंगे या विजय ही होजायगी। उनमे जो असीम साहसी वीर थे उनको निकाल लेनेका विचार कियागया। समस्त इकट्ठी हुई राजपूत सेनाको नागौरके बाहर एक बड़े भारी बाजरेके खेतके निकट लेजाकर वहां सबको कुछ कालके लिये खड़े होनेकी आज्ञा देकर वख्तसिंहने ऊँचे स्वरसे कहा "आप सब लोगोंमेंसे हमारे साथ जय पराजयके अंशभागी होनेमें जो लोग तैयार हो केवल वही हमारे साथ चलै, यदि आपमेसे कोई भी वहांसे लौटनेकी इच्छा करता हो तो हम ईश्वरका नाम लेकर आज्ञा देते है कि वह इस स्थानसे चलाजाय। कुछी समयमे वीरश्रेष्ठ वख्तसिंहने उस बाजरेके खेतमे घोड़ा चलाया। खेतमें होकर जानेका यह अभिप्राय था, कि जो चलेजानेकी इच्छा करते है वे बिना किसीके देखेभाले खेतके बीचमे होकर चुपचाप जासकते है। वख्तसिंहने खेतमे जाकर देखा कि आठ हजार

(१) साधू संन्यासीको भगतिया कहते हैं। जयसिंह अत्यन्त धार्मिक और साधु थे। इसीसे वख्तसिंहने उनको भगतिया कहा।

सेनामेंसे पांच हजारसे अधिक सेना उनके साथ चलनेको तैयार है और शेष सब भागगई है।"

हाय! राठौरजातिका कैसा अतुलनीय साहस है कि समस्त जगत्के प्रत्येक जातिके प्रत्येक इतिहासके एक २ पन्नेको देखनेसे जीवन मरण, तथा रणमे भयहीन वख्तसिंहकी समान असीम साहसी वीर एक भी देखनेमें नही आया। अंग्रेजोके लिखेहुए बंगालेके भारतके प्रत्येक इतिहासको हमने देखा है। संख्यावद्ध अंग्रेजोंकी सेनाने असीम साहसमे भरकर दशगुणा अधिक शत्रुओंकी सेनाको परास्त किया है। हम देखते है कि पलासीके उस चिरस्मरणीय युद्धक्षेत्रमे कर्नल क्लाइवने प्राय एक हजार गोरे और २१०० सिपाही सेनाके साथ अभागे नवावकी ३५००० पैदल और १५००० अश्वारोही सेनाको परास्त करके भारतवर्षमे लोहमय वृटिश शासनदंड प्रचलित किया था। अंतमें आत्महत्याकारी वंगविजेता क्लाइव समस्त जगत्मे अतुल वीर तथा असीम साहसी पूजित हुए, परन्तु जो सत्यके सन्मानके रखनेकी अभिलाषा करते हैं, जो न्यायकी पूजा करनेमें आगे वढे हैं वे लोग अवश्य ही जानजॉयगे कि क्लाइवका वह साहस,वह विक्रम, वह वीरत्व किस प्रकारकी प्रवंचना, प्रतारणा, तथा शठता और धर्मनीतिके साथ संश्रवशून्य, राजनीतिके ऊपर निर्भर था। मनुष्य पशुराज सिंहके चित्रको अंकित करते है, इस कारण सिंह जगत्में सबकी अपेक्षा महावली जीव होकरभी उस चित्रमे मनुष्यके निकट परास्तरूपसे चित्रित हुआ है। किन्तु उस पशुराजको यदि वह चित्र अंकित करने दियाजाय तो न्याय तथा सत्यके सम्मानकी रक्षा होसकती है। वंगालके भारतके अंग्रेज इतिहास लेखकगण उस सिंहके चित्रको अंकित करनेवाले मनुष्यकी समान आलेख्यको चित्रित करगये है। सत्य और न्यायकी तुलना वाइविलके साथ टैम्स नदीके वीचमे डालकर उन्होने भारतमें आकर केवल असत्य और अन्यायके मलीन अंगारोसे उस इतिहासके चित्रको अंकित किया है। इस स्थानकी समान और कहां सत्यकी प्रज्ज्वलित हुई दीपकशिखा दिखाई देती है कि राठौरवीर वख्तसिंह कुछएक पॉच हजार सेनाके साथ उस आमेरपतिके अधीनमे स्थित एकलाख सेनाके संग युद्ध करनेके लिये चले। क्या वख्तसिंह भी क्लाइवकी समान प्रवंचना, शठता, धर्मनीति शून्य राजनीतिकी सहायतासे रणक्षेत्रमे आगे वढ़े थे? नहीं कभी नहीं। वह केवल एक मात्र आर्यरक्तके प्रवल तेजवलसे, जातीय गर्व दर्प वीरता और विक्रमके वलसे, स्वजातीय स्वभाव सुलभ अतुलनीयसाहसके वलसे मुट्ठीभर सेनाके साथ उस एक लाखसे भी अधिक शत्रु सेनाके संहारमें तत्परहुए थे। आजकल अंग्रेजोंकी कृपासे अंग्रेजी भाषाके प्रसादसे देशीय कृतविद्य युवकगण म्याटासिनि, ग्यारिवाल्डी, क्रमवेल, नेपोलियन, वलिंटन इत्यादि विलायतके महारथियोंके नाम सुनकर मिसर, ग्रीस, रोम, कार्थेज, ट्रय, फ्रान्स, इंगलेन्ड, स्पेन, डेनमार्क, जर्म्मनी आष्ट्रिया और आजकलके अमरीका इत्यादि पाश्चात्य और नवीन जगत्के इतिहासमे महावीरोंकी असीम वीरता पढ़कर विचार करलेते है कि उनकी समान वीर संसारमे

दूसरा उत्पन्न नहीं हुआ, उनका और भी विचार है कि भारतके रावण राम, भीम, दुर्योधन, कर्ण, भीष्म इत्यादि कवि कल्पित वीर है; परन्तु हम उनसे कहसकते है कि अठारहवीं शताब्दीके सामान्य मारवाड़ राज्यके इन वख्तसिहकी समान असीम साहसी बीर विलायत और नवीन जगत्‌मे कहीं भी दिखाई नहीं देते ? एकलाख शत्रुओंकी सेनाके मुखमे थोड़ी पॉचहजार सेना लेकर कौन विलायतका वीर साहसमे भरकर पतित हुआ था ? वह एकलाख सेनाके विरुद्ध पॉचहजार सेनाके साथ प्राणोके भयसे अपनी रक्षा करसकता है, परन्तु आक्रमण करनेका साहस उसको नहीं होसकता। चाहे वख्तसिह पितृघातकहो। चाहे भाईके विरुद्ध षड्यंत्रकारी हो। परन्तु जगत्‌के वीर इतिहासमे वह एक अतुल साहसी सराहनीय वीर थे।

राठौर इतिहास लेखकोने पीछे लिखा है कि आमरेश्वर जयसिह गगवाँना नामक स्थानपर उस प्रवल सेनाके साथ शत्रुओंके आनेकी बाट देखरहेथे। वख्तसिहको आता हुआ देखकर आमेरकी सेना आगे वढ़ी। कुछ ही समयमे वख्तसिहने शत्रु दलपर आक्रमण करनेकी आज्ञा दी, तुरन्त ही मानो घनघोर मेघकी समान वह विक्रमी राठौरोकी सेना तलवार भाले हाथमे लेकर आमेर महाराजकी अगणित सेनाके ऊपर छूटे और वे शत्रुओपर आक्रमण करते २ प्रत्येक सेनाका संहार करते हुए अपने भयंकर गर्जनसे रणभूमिको कंपायमान करते हुए रुधिरकी नदीसे संग्रामस्थलको प्लावित करते व्यूहको भेदन करनेलगे। वख्तसिहने उस संहारमूर्तिसे शत्रुओंकी सेनाका नाश करतेहुए व्यूहके प्रत्येक प्रान्तको छिन्नभिन्न करके एकवार ही पीछा फिरकर देखा कि उस पॉचहजारसे अधिक सेनामे केवल अव साठ जने ही जीवित रहे है। शेष सभी उस युद्धक्षेत्रमें जीवन देकर वीर नामका परिचय देगये है। इसी समय नागौरके समस्त सामन्तोमे सबमे श्रेष्ठ सामन्त गजसिंह पुरापतिने वख्तसिंहसे कहा, महाराज ! पिछले भागमे गहनवन होरहा है, चलिये वहांका आश्रय लीजिये। असीम साहसी वख्तसिहने कहा, "क्यो ?—सम्मुख यह कौन सा मार्ग है ? हम जिस मार्गसे आये है, उस मार्ग होकर नहीं जॉयगे ? दूरसे ही सामने आमेरपतिकी पचरंगी राजपताकाको उड़ती हुई देखकर वख्तसिह जानगये कि आमेरपति स्वयं ही इस स्थानपर विराजमान है, उन्होने उसी समय उस बची हुई साठ जनोंकी सेनाके साथ उन आमेरराजके डेरोपर आक्रमण करनेकी आज्ञा दी और आपने भी रुधिरसे भीगे हुए शरीरसे अपने घोड़ेको कालान्तक कालमूर्तिसे उसी ओरको चलादिया। वख्तसिंहको आता.हुआ देखकर कुन्तानी सम्प्रदायके वासवो सामंत दीपसिंहने महा विपत्ति देखकर उसी मुहूर्त्तमे आमेरपतिको रणक्षेत्र छोड़नेकी सम्मति दी। आमेरराज जयसिह भी वख्तसिहको आताहुआ देखकर कुछ देरतक इधर उधर करके अंतमे सामंतोके मतसे वख्तसिहके आक्रमणको रोकनेके लिये रणभूमिको छोड़कर अपने मस्तकपर कलंकका टीका लगाकर भागगये। पीठ दिखाते ही युद्धमे सब प्रकारसे पराजय और कलंक लगा विचारकर उन्होने कुछ ही समयमें वाम

और उत्तरकी ओर कुण्डला नामक ग्राममें आकर आश्रय लिया। भागनेके समय जयसिंहने कहा 'सत्रह युद्ध किये थे। परन्तु आजके युद्धकी समान किसी युद्धमें भी तलवारके बलसे किसी पक्षको जय प्राप्त करतेहुए नहीं देखा।' महाराज जयसिंहने समस्त जीवनमें अतुल गौरव और असीम यशको संग्रह किया था। जो परमज्ञानी गाढ़पंडित तथा भारतमें एक प्रबल प्रतापान्वित राजा थे, उन्हीं महाराज जयसिंहने आज साठ राठौरोंकी सेनाके भयसे रणक्षेत्रको छोड़कर अपने नामको कलंकित किया। 'एक राठौर दस कछवाहोंकी समान है' वह इस प्रवादवाक्यका प्रत्यक्ष प्रमाण दिखागये।

राठौर कविकी लेखनीने इन सब सत्यवृत्तान्तोंको वर्णन किया है सो हमारे पाठकोंको भलीभाँतिसे विदित होगा। वीरश्रेष्ठ वख्तसिंहने इस युद्धमें किस प्रकारका अतुल वीराभिनय किया और राठौरजातिके बाहुबल तथा विक्रम और साहसका कैसा अद्वितीय प्रत्यक्ष प्रमाण दिखाया। वख्तसिंहकी समान असीम साहसी वीरनेता संसारमें किसी जातिमें भी उत्पन्न नहीं हुआ? बख्त और अभयसिंहको उत्पन्न करके भारतभूमिने जिस प्रकारसे यथार्थ जननीनामको सार्थक किया है और किसी भूमिको इस प्रकारकी वीरजननी नामको सार्थक करते हुए नहीं देखा? कोई २ यह विचारसकते हैं कि वख्तसिंहके बल विक्रमको हमने अत्युक्तिसे अनुरंजित किया है; परन्तु उनकी उस भ्रान्तिको दूरकरनेके लिये हम उन वख्तसिंहके विपक्षी आमेरपतिके सहकारी कछवाहे कविकी लेखनीको, जो इस युद्धमें वख्तसिंहके बल विक्रमकी ऊंची प्रशंसा करगई है, यहां उद्धृत करदेते है।

वख्तसिंहका वह प्रशंसनीय वीरत्व, वह दुर्द्धर्ष साहस, वह संहारमूर्ति, वह भयंकर जयशब्द, वह कालान्तक कालकी समान सैनाका संहार और वह निर्भयता देखकर आमेरके महाराज जयसिंहके कवि एकबारही मोहित होकर सत्यके सन्मानकी रक्षाके लिये शत्रुपक्षके नेता वख्तसिंहकी वीरताका कवितामें कीर्तन करगये है, "यह क्या कालीके उस श्रवणभैरव युद्धका स्वर है? नहीं यह तो वीर श्रेष्ठ हनूमानजीके युद्धका चीत्कार है? या यह अनन्तकी अनन्तमुखसे निकलीहुई ध्वनि है? नहीं यह तो कपिलेश्वरके रुद्रका स्वर है?" वख्तसिंहकी उस संहारमूर्तिको देखकर कविने लिखा है, "यह वीर क्या नृसिंहका अवतार है? नहीं यह प्रचंड सूर्यकी विदग्धकारी किरण है?—नहीं डाकिनीकी वह क्रोधदृष्टि है? नहीं यह तो त्रिनेत्रके मध्यनयनसे निकलीहुई अग्निकी राशि है? प्रलयकालकी भयंकर अग्निकी समान वख्तसिंहकी तलवारसे जो अग्निकी राशि निकली थी, ऐसी किसमें सामर्थ्य थी कि जो उसको सहन करसकता?" शत्रुओंके ओरके कविकी लेखनीसे निकलेहुए प्रमाणको पढ़कर पाठक अवश्य ही इस बातको स्वीकार करसकते हैं कि वीरश्रेष्ठ वख्तसिंहका यह वीरताका वृत्तांत अन्य प्रकारसे नहीं लिखा है, अर्थात् वह यथार्थमें ऐसे ही वीर थे और साथमें यह भी मानना होगा कि वख्तसिंहने उस डाइवकी समान जय

प्राप्त नहीं की थी इन्होने प्रतारणा, प्रवंचना शठता और पड्यंत्र जालका विस्तारकर धर्मनीतिके साथ संस्कारशून्य राजनीतिकी सहायतासे जय प्राप्त नहीं की, एकमात्र अपने बाहुबलसे तथा असीम साहससे जयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त किया था। अंग्रेज इतिहासवेत्तागण जिस प्रकार पलासीके युद्धमे क्लाइवकी उस जय प्राप्तिकी ऊँची प्रशंसा करके आकाशको विदीर्ण करगये है राठौरकवि वा शत्रुपक्षके कविने उस भावसे वख्तसिंहकी जयप्राप्तिको कीर्तन नहीं किया, पाठक इसको अवश्य ही स्वीकार करेंगे।

इस समय वीरनेताओका ही अनुसरण करना होगा। वख्तसिंहने डरकर भागी हुई शत्रुओकी सेनाके ऊपर तीसरीबार वार करनेका उद्योग किया, पर राठौरकवि कर्णीदानने उनको मना करादिया। जो दृढ़प्रतिज्ञ महाविक्रमी सेना वख्तसिंहके साथ उस महा युद्धमे लिप्त हुई थी, कवि कर्णीदान भी उसमेसे एक थे, उन कविकी तलवारने भी शत्रुपक्षकी अनेक सेनाका प्राणनाश किया था। कवि कर्णीदानके निषेध करते ही उनको शीघ्र ही अनिच्छा होगई। जयपुरपति जयसिंह अपनी सेनाके साथ चलेगये। वख्तसिंह उस समय जानगये कि हमारी राजपूत सेनामेसे कितनी सेनाने अपने प्राण दिये है। इस स्थानपर महात्मा टाड् साहव लिखगये हैं, "इसके कुछी समय पीछे कैसा विचित्र दृश्य दृष्टि आनेलगा। जो मनुष्य कई मुहूर्तोंके पहले रणभूमिके प्रत्येक प्रान्तमे मृत्युकी भयंकर मूर्ति देखकर भी भयभीत नहीं हुआ था, वह इस समय केवल अपने सेवकोके मारेजानेसे बालककी समान रुदन करनेलगा। उन कुटुम्बी जनोके तथा सामन्त वीरोके वियोग होनेसे उसके हृदयपर भयंकर आघात लगा। उस भावने मनके दुःखसे जैसी कातरता दिखाई थी, इसका विचार वख्तसिंहको स्वप्नमें भी नहीं था। इस भयंकर युद्धमे भाई अभयसिंह उनकी सहायता करनेमे एक बार ही असम्मत होगये थे। वख्तसिंहने विचारा कि मारवाड़के विध्वंश होनेका उपाय होरहा है, इस कारण वह इस दुः से उस महावीरत्वको प्रकाशकर, अगणित शत्रुओकी सेनाका नाश कर तथा विजय पानेके पीछे उन लाशोंसे परिपूर्ण युद्ध-भूमिमे बैठकर शोक करनेलगे"। कुछी समयके उपरान्त भाई अभयसिंहने सेना सहित इनके पास आकर प्रीतिपूर्ण वचनोंसे भाई वख्तसिंहको संतुष्ट किया। 'आजके इस महायुद्धमें तुमने अकेलेने ही विजय प्राप्त की है, इस समय आपकी सहायता करनेके लिये मै न आसका।' वीरनेता वख्तसिंहने भाईके वचनोंसे प्रसन्नहो उसी समय यह प्रतिज्ञा करी कि 'भागेहुए जयपुरके महाराजको मै आमेरके किलेमेसे बाल पकड़कर लेआऊंगा।' वख्तसिंह कैसे तेजस्वी और साहसी वीर थे, उनकी यह शोकोक्तिभी वीरताका विलक्षण प्रमाण दिखाती है।

आमेरपति जयसिंहने अफीमके उस विषमय फलसे उत्पन्न हुए मत्तताके वश होकर अभयसिंहको जो पत्र लिखा था, यद्यपि इसी पत्रके फलस्वरूपमे युद्धभूमिमे उन्होने घोर कलंक संचय करलिया था, परन्तु उनका एक उद्देश्य यह भी था कि वह बीकानेरके महाराजका उस महाविपत्तिसे उद्धार करले। ऐसा करनेसे वह अभिप्राय

इस समय पूर्ण होजायगा पर मेवाडके महाराणाने मध्यस्थ होकर जयपुरके महाराजके साथ मारवाडपतिकी मित्रता करादी। अभयसिंहने वख्तसिंहके बाहुबलसे अपने अभिप्रायको पूर्ण करालिया। और जयसिंहने युद्धमे परास्त होकर बीकानेरके महाराजका उद्धार किया। बीचमे मेवाड़के महाराजने आकर उन विवाद करनेवाले स्वजातिके दोनो राजाओंको मित्रताकी शृङ्खलामे बांधदिया।

हमारे पाठकोंने इस विस्तृत इतिहासके अनेक स्थानोंमे पढ़ाहोगा कि राजपूत जिस समय युद्ध करनेके लिये बाहर जाते थे, उस समय केवल सेनाही नहीं वरन् गुरु, पुरोहित, कवि, भाट, चारण और कुलदेवताको भी अपने साथ ले जाते थे। इस समय मूर्तिका दर्शन करके राजपूतवीर निर्भयहो युद्ध करते थे। इस विग्रहके समय युद्धमे वख्तसिंह भी इसी भाँति अपनी कुलदेवीकी मूर्ति साथ लेगये थे। ऐसा विदित होता है कि युद्धके समय जयसिंहने वख्तसिंहकी कुलदेवीकी मूर्ति भी अपने हस्तगत करली। जयसिंह उस कलंककारी युद्धमे एकमात्र जयके चिह्नस्वरूप उस देवीकी मूर्तिको बड़ी धूमधामके साथ जैपुरमे ले आये। पीछे एक देवताकी मूर्तिके साथ उस देवीकी मूर्तिका बड़ी धूमधामसे विवाह करके उन दोनो मूर्तियोंको फिर वख्तसिंहके पास भेजदिया। 'हा! राजपूत वीरोंके हृदयका कैसा हृदयहारी व्यवहार है, कैसी प्रीतिदायक सौजन्यता है, इस युद्धके पीछे मेवाड़, मारवाड़ और आमेरके तीनो राजाओंमे मित्रतामूलक संधिबंधनके समाप्त होजानेके पीछे उस मित्रताको स्थाई करनेके लिये मेवाड़ राजकुटुम्बके साथ मारवाड और आमेरराजके परिवारमें वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित होगया। उस विवाहकी सभामे उन मेवाड़पतिके महलमे फिर जयसिंह, अभयसिंह, और वख्तसिंहने एकसाथ मिलकर मनुहारका प्याला हाथमे लेकर उस शत्रुताको विस्मृतिके जलमे डालदिया और जातीय ममतामे भरकर वे फिर परस्पर आलिंगन करके एकताका साधन करने लगे। ओहो! यह दृश्य कैसा कमनीय है, कि स्वर्गीयभावसे पूर्ण सभीकी नाडी २ मे आर्यरक्त प्रवाहित हुआ है, सभी समानधर्मके अवलम्बन करनेवाले हैं, सभी महावीर हैं, इस कारण सभीने एक हृदय होकर वैरके विस्मरणमे इस एकताकी पूजा की, इससे आर्यसंतानका कैसा गौरव बढ़ा'! हा भारतवासी गण! तुम कब इस प्रकार हृदयसे हृदय मिलाकर इस अनन्त स्मशानमे इस प्रकारसे एकताकी पूजा करनी सीखोगे?

राठौरोंके इतिहाससे जानाजाता है कि उपरोक्त युद्ध ही मारवाड़पतिके शेष जीवनमे स्मरण करने योग्य घटना हुई। मेवाड़, आमेर, और मारवाड़ इन तीनो राज्योंमे मित्रता होजानेके पीछे अभयसिंहने फिर कोई युद्ध नहीं किया। संवत् १८०६—१७५० ईसवी मे, अभयसिंहने जोधपुरमे प्राण त्याग किये। महात्मा टाड् साहब लिखगये हैं, "कि अभयसिंह उग्र तेजस्वी थे, यद्यपि ऐसा कहा जासकता है, परन्तु अधिक आलस्यके वशीभूत होजानेसे उनकी संपूर्ण उग्रता एक भांतिसे क्षीण होगई थी। अभयसिंहके स्वभावके सम्बन्धमे अनेक प्रकारके प्रवाद प्रचलित हैं। राठौरोंके

इतिहाससे जानाजाता है कि जब मारवाड़पति अजितसिंह चौहानीका विवाह करनेके लिये गये थे उस समय उन्होने रास्तेमें एक सिंहको तो सोताहुआ और एकको जागतेहुए देखा। वह देखकर ज्योतिषीने कहा कि इन चौहानी रानीके गर्भसे महाराजके औरससे दो पुत्र उत्पन्न होगे, उनमेंसे एक तो आलसी और एक महावीर होगा। यदि ज्योतिषी महाराज यह भी कहदेते कि दोनो पुत्र पिताके रुधिरसे हाथोको कलंकित करैगे तो वह अवश्य ही मारवाड़का उद्धार करसकते, उन अजितकी हत्यासे ही मारवाड़का विध्वंश होना प्रारंभ हुआ था।"

महात्मा टाड् साहबकी इस युक्तिको समर्थन करके इतना तो हम अवश्य ही कहैगे कि कर्नल टाड् साहबको उक्तिके मतसे अभयसिंह सर्वथा आलसी नहीं थे। युवा अवस्थाके आते ही अभयसिंहने अपने पिताकी समान बराबर युद्धोमे जैसा बल विक्रम दिखाया था, इससे उनके आलसी होनेका कोई लक्षण नही पायाजाता। अभय-सिंहकी तेजस्विता वीरता, विक्रम और इनके साहसका पूर्ण परिचय बराबर कई युद्धोमे प्रकाश पाचुका है। उनके उस साहसका और भी एक प्रत्यक्ष प्रमाण कर्नल टाड् साहबने दियाहै। टाड् साहबने पीछे लिखा है, कि "कछवाहे अर्थात् जयपुरके राजपूतोंकी जातिकी वीरता कहना तो दूर रहा वरन् राठौर भी इनको साहसहीन और दुर्बल बताकर इनसे घृणा करते थे और अभयसिंहभी जयपुरके महाराज जयसिंहको घृणित दृष्टिसे देखते थे। दोनोमे विवाहिक सम्बन्ध होनेसे एक दूसरेकी श्रेष्ठताकी रक्षासे परस्पर एक दूसरेके विशेष अभिलाषी थे। अभयसिंहने बादशाहके सामने भी जयसिंहको वाणीके छलसे कहा था, कि आपका कुश्य नाम धरागया है, कुशका आघात जैसा तीक्ष्ण और गंभीर है आपकी तलवारका आघात भी उसी प्रकारका है। यह सुनकर आमेरके महाराज अत्यन्त क्रोधित हुए, परन्तु यथार्थ उत्तर देनेमें असमर्थ हो उन्होने अभयसिंहसे बदला लेनेके लिये षड्यंत्र फैलाया। जिस भांति जयसिंह विलायतके विज्ञानियोके साथ भारतीय विज्ञानियोके मिलन साधनसे भारतके अद्वितीय विज्ञानी राजा मानेगये थे, अन्य पक्षमे अभयसिंह भी उसी प्रकारसे राजवाड़ेमें सबसे प्रधान असिचालक वीरवर गिने गये थे। जयसिंहने दिल्लीपतिके कोशाध्यक्ष कृपरामको अपने हस्तगत करलिया था। कृपाराम दावक्रीड़ामें विशेष चतुर थे, इसीसे बादशाहके विशेष प्रियपात्र थे। कृपाराम जिस समय बादशाहके पास बैठकर क्रीड़ा करते उस समय देशीय राजा और अमीर भी खड़े होजातेथे। जयसिंहने उन्हीं कृपारामके साथ पहले सब बातोको स्थिर कररक्खा था कि एक समय जिस बादशाहने कृपारामके साथ क्रीड़ा की थी और अभयसिंह इत्यादि राजा खड़े हुए थे, उस समय कृपाराम जयपुरपतिके पूर्व उपदेशके मतसे अभयसिंहके बाहुबलकी ऊँची प्रशंसाको कीर्तन करनेलगे। एक समय अभयसिंहने अपने बाहुबलसे तलवारके द्वारा एक अत्यन्त बलवान उग्र भैंसेका शिर काटडाला था। उसका उल्लेख करके उन्होंने और भी प्रशंसा की थी। बादशाहने कहा-'मैंने सुना है कि आप तलवार चलानेमें विशेष चतुर है।' राजा अभयसिंहने उनको उसी समय उत्तर दिया, 'हाँ

हजूर ! मैं एक दिन आपको तलवारका बल दिखाऊंगा ।' अभयसिंहकी प्रतिज्ञाके अनुसार एक बड़ा तेजस्वी बलवान् भैंसा रंगभूमिमें लाया गया । अभयसिंह तलवारके बलसे उस महाक्रोधी भैंसेका वध करदिखावैंगे, इस समाचारके प्रकाशित होते ही रंगभूमिमें बहुतसे दर्शक आआकर इकट्ठे होनेलगे । अंतमें रंगभूमिमें जब वह बड़ाभारी भैंसा आया तब उसी समय अभयसिंहने बादशाहसे कुछकालके लिये विश्रामगृहमें जानेकी आज्ञा मांगी, बादशाहकी आज्ञा पाते ही मारवाड़के महाराजने उस विश्रामगृहमें जाकर दो गिलास भरकर अफीमजलका सेवन किया । अभयसिंह भलीभाँतिसे समझगये थे कि जयसिंह ही मुझे विपत्तिके चक्रमें डालनेके लिये इस जालको फैलारहे हैं, इस कारण वह मारे क्रोधके उन्मत्त हो लाल २ नेत्र करके रंगभूमिमें आतेहुए दिखाई दिये । अभयसिंहने कुछ ही कालके पीछे महाक्रोधान्ध अवस्थामें उस बलवान् भैंसेके दोनों सींगोको भलीभाँतिसे पकड़ लिया और जिस ओर महाराज जयसिंह बैठे थे, उसी ओरको बड़ेवेगसे उसे खैंचतेहुए लेजाने लगे, सन्मुख ही विपत्तिको आताहुआ देखकर जयसिंह महाभयभीत हुए । अभयसिंहको बादशाहने,जयसिंहके पास जानेके लिये मना किया तथापि इन्होंने.क्रोधोन्मत्त भैंसेको जयसिंहके पास लेजाकर दोनों हाथोंमें खङ्ग धारणकर एक आघातसे ही भैंसेका शिर काटडाला । जिस समय भैंसेका शिर कटकर अभयसिंहकी गोदमें गिरा उसी समय उसका महाकाय शरीर महाराजके ऊपर गिरा।सबने इस बातको सराहा, पर लिखनेवाला,कहता है कि बादशाह ने फिर कभी अभयसिंहसे.दूसरे भैंसाके मारनेको नहीं कहा ।

जिस स्थानपर उग्रता, तेजस्विता, साहस और विक्रम विराजमान रहते हैं उस स्थानपर आलस्यका होना सर्वथा असंभव है।ऐसा विदित होता है कि महात्मा टाड् साहब ने अभयसिंहकी वृद्धावस्थामें विशेषकर अफीमके सेवनसे विलासिताके वशीभूत होता हुआ देखकर उनके चरित्रोंमें आलस्यका समावेश दर्शन किया था ।

अभयसिंहके मारवाड़पर शासन करनेके समयमें, विख्यात् नादिरशाहने भारतपर आक्रमण किया । तब तैमूरके उस चंचल सिंहासनकी रक्षाके लिये बादशाह मुहम्मदशाह ने राजपूत राजाओंको सेनासहित नादिरके साथ संग्राम करनेको बुलाया पर अन्यान्य राजपूत राजाओंकी समान अभयसिंह बादशाहकी सहायता करनेके लिये नहीं गये । करनालके युद्धमें जिस प्रकार एक भी राजपूत राजा नहीं आया था, उसी प्रकारसे नादिर शाहने दिल्लीको घेर लिया, तथा उसपर अपना अधिकार कर मोहम्मदशाहको सिंहासन से उतार दिल्लीमें अत्यन्त शोचनीय हत्याकाण्ड किया । और समस्त धन रत्नोको हरण करलेनेसे भी किसी राजपूत राजाने इनके लिये शोकका एक श्वांस भी त्याग नहीं किया । मारवाड़पति अभयसिंहके शासनके आरंभके पहले इन्होंने दिल्लीपति मोहम्मद-शाहकी अधीनतामें बँधकर जिसभाँति स्वजातीयताके मस्तकपर कलंकका टीका दिया था, जीवनकी अंतिम दशामें उन्होने उसी प्रकारसे यवनसम्राट्की अधीनताको अस्वीकार कर महाराज अजीतसिंहकी समान प्रशंसनीय राजनैतिक अभिनय कर,

महाबल विक्रम प्रकाश करनेके पीछे यवनकी अधीनताको जड़से काटडाला था।

सियाजीसे लेकर जो समस्त राठौरवंशके राजा मरुक्षेत्रमे राजनैतिक और वीराभिनय करगये है, अभयसिह भी उनमेसे अवश्य ही एक योग्य वीरपुरुष थे। इस बातको हम मुक्तकंठसे कहसकते है कि अभयसिंहने अपने पिताको मारकर जो अपने नामको कलंक लगाया था, यही नही, वरन् राठौर राजवंशके तथा मरुक्षेत्रके और आर्यजातिके नामको भी उन्होने घोर कलंकित किया था और एकमात्र उसी महापापके लिये मारवाड़के भाग्यमे कालरात्रि उपस्थित हुई थी। अभयसिंहने जिस प्रकार एक पक्षमे दिल्लीके बादशाहकी अधीनताको छेदन कर स्वजातिके स्वाधीन नामका परिचय देकर अपने अधिकारको संग्रह किया, दूसरे पक्षमे उसी प्रकारसे उनके उस महापापकी फल रूप उस स्वाधीन अवस्थामे भी मारवाड़के चारो ओर भयंकर आत्मविग्रहकी अग्नि प्रज्वलित होगई, इसीने राठौरजातिका सर्वनाश किया। हमारे पाठक परवर्ती इतिहासको पढ़कर जानसकेगे कि पितृहत्याके पापके विषमय फलने शीघ्र ही उत्पन्न होकर हृदयभेदन करनेवाले दृश्यको नेत्रोके सम्मुख उपस्थित किया था।

बारहवाँ अध्याय १२.

रामसिहका मारवाड़के सिंहासनपर बैठना; उनका क्रूरस्वभाव; रामसिंहके अभिषेकके समयमें उनके चचा बख्तसिहका न होना; बख्तसिंहका धात्रीको प्रतिनिधिस्वरूपसे अभिषेकके समय भेजना; उससे रामसिंहका अपमान जानना; उनका क्रोध प्रकाश तथा जालौर देशको लौटानेकी आज्ञा देना; चांपावत्के नेता कुशलसिंह; रामसिंहके द्वारा कुशलसिंहका अपमान; कुशलसिंहका जोधपुर छोड़ना; जोधपुरके प्रधान राजकविके साथ कुशलसिंहका साक्षात्; बख्तसिंहके साथ कुशलसिंहका मिलना; आत्मविग्रह; मैरतामें युद्ध; रामसिंहकी पराजय; बख्तसिंहका जोधपुरके सिंहासन पर अधिकार; बगड़ीके सामन्तका मारवाड़के नवीन महाराज बख्तसिंहकी कमरमे तलवार बांधना; पदसे रहित मारवाड़पति रामसिंहके साथ राजपुरोहित जगूका योगदान; महाराष्टोकी सहायताकी आशासे उनका दक्षिणमें जाना; राजा बख्तसिंहका पुरोहितके निकट कविता भेजना, पुरोहितका उत्तर देना; बख्तसिंहकी अभिज्ञता; विज्ञता; शिक्षा और शारीरिक बल; महाराष्टोका मारवाड़पर आक्रमण करनेका उद्योग; समस्त राठौर सामन्तोंका बख्तसिंहके अधीनमें इकट्ठा होना; महाराष्ट्रोके साथ युद्धके लिये बख्तसिंहका जाना; बख्तके साथ युद्ध करनेमे महाराष्टोकी अनिच्छा; बख्तसिंह का अजमेरके मार्गमें रहना; आमेरकी रानीका बख्तसिंहको विषमय वेष देना; उस वेषधारणसे बख्तसिंहका जीवन त्याग; बख्तसिंहके चरित्रोंकी समालोचना।

अभयसिंहका स्वर्गवास होते ही उसके पुत्र रामसिंह युवा अवस्थामें अपने पिताके सिंहासनके अधिकारी रूपसे राजनैतिक रंगभूमिमें आये। जिस समय अभयसिंहने प्राण त्याग किये, उसके ठीक बीसवर्ष पहले सिरोहीके मानसिंहकी कन्याने अभयसिंहके औरससे रामसिंहको उत्पन्नकर अपने पतिके वंशकी रक्षा की। सिरोहीके देवड़ा सम्प्रदाय चौहान जातिकी एक शाखा विशेष है। चौहान जाति अग्निकुलसे उत्पन्न है। उस चौहान नंदनीके गर्भसे राठौरवंशके औरससे जन्म लेकर आपने यौवन कालमें रामसिंह महा तेजस्वी और उग्रस्वभावके हुए। रामसिंह अपने पिताकी समान केवल महाक्रोध ही नहीं थे वरन् उनकी उस बीसवर्षकी अवस्थाके समयमें, उस नवीन यौवनके आगमनके समयमें उनके चारित्रोंके प्रति दृष्टि डालनेसे ज्ञात होता है कि उनके चरित्र सब प्रकारसे भयंकर होगये थे। रामसिंहने पिताके सिंहासनपर अभिषिक्त होकर अपने उस उग्र स्वभावका भयंकर परिचय देना आरंभ किया। रामसिंहके अभिषेकके समयमें मरुक्षेत्रके प्रत्येक प्रान्तमें प्रत्येक श्रेणीके प्रत्येक सामन्त, तथा प्रत्येक जातिके आत्मीय जनोंने राजधानी जोधपुरमें आकर, उनके प्रति सम्मान दिखाकर अनुगत्यता स्वीकार की। 'परन्तु नागौरपति महावीर बख्तसिंह किस कारणसे अपने भतीजेके अभिषेकके समय नहीं आये, राठौर कविने उसका कोई कारण नहीं दिखाया'। बख्तसिंह समस्त राठौरगणोंमें सबसे अधिक निकट आत्मीय तथा सबसे अधिक ऊँचे पदपर स्थित थे, इस कारण उनके लिये उस सभामें जाकर नवीन मारवाड़पति महाराज रामसिंहके मस्तकपर राजतिलक देना कर्तव्य था, परन्तु बख्तसिंह स्वयं न गये, और न किसी चतुर सामन्तको अपने प्रतिनिधि स्वरूपसे भेजा, पर अपनी धात्रीको प्रतिनिधि स्वरूपसे जोधपुरमें भेजदिया। रजवाड़ेकी धात्री माताकी समान पूजनीय होती है। महातेजस्वी वीरश्रेष्ट बख्तसिंहने अपने भतीजेको बालक जानकर ही धात्रीको भेजा था या नहीं, राठौरकविने इसका कोई लेख नहीं लिखा। परन्तु उस पूजनीय धात्रीके प्रति रामसिंहने उचित सम्मानके बदलेमें अत्यन्त निन्दनीय आचरण करके उसे अपनी उग्रताका विशेष परिचय दिया। वृद्धा धात्रीको देखकर रामसिंहने अत्यन्त क्रोधित होकर कहा, "चचासाहबने मुझे बानर जानाहै? इसी कारण उन्होंने मुझे राजतिलक देनेके लिये इस डाकिनी को भेजदिया है।" नवीन महाराज रामसिंहने तुरन्त ही महाक्रोधित हो जालौर देश लौटादेनेके लिये अपने चचाके पास एक दूत भेजदिया। अभिषेकके कुछ ही कालके उपरान्त चचा भतीजोंमें यह विद्वेषाग्नि प्रज्वलित होगई।

नवीन महाराज रामसिंहने महा क्रोधमें भरकर एक पत्र लिखकर भी दूतके हाथ भेजा था और क्रोधानलके शीतल होनेके पहले ही सेना सजाकर डेरे डालनेकी आज्ञा देकर अपने चचाको उचित शिक्षा दे अपने पद और मर्यादाकी रक्षा करनेके लिये वे तैयार हुए। रामसिंहने इस समय अपने राज्यके प्रधान २ नीतिजाननेमें चतुर परम

(१) उर्दू तर्जुमेंमें सिरोहीके देवड़ेकी जगह कोटेके चौहानका उल्लेख है परन्तु गद्य इतिहासके अनुसार रामसिंहका जन्म रुदानेके ठाकुर नरूका केसरीसिंहकी बेटीसे हुआ था।

हितैषी सामन्त और मंत्रियोंकी बातको भी न सुना, और अपने राज्यके अत्यन्त नीची श्रेणीके कर्मचारीके साथ सलाह करके कार्य करना प्रारंभ किया। इस मनुष्यका[1] नाम अमियां था। इसके पूर्व पुरुष जोधपुरमें प्रधान तोरण द्वारपर नगाड़े बजानेमें नियत थे। यह मनुष्य भी अपने पिताके पदपर नियत होकर नवीन महाराजका अत्यन्त प्रियपात्र, और प्रधान सलाह देनेवाला होगया। रामसिंहके समान इसका भी अत्यन्त क्रोधी स्वभाव था; इस कारण दोनोंकी खूब पटती थी। रामसिंह अमियांके परामर्शसे अपने चचाके विरुद्ध लड़नेको खड़े होगये। नवीन अधीश्वर रामसिंहने ज्ञानहीन उन्मादी की समान अपने चचाके पास क्रोधपूर्ण पत्र भेजकर युद्धकी तैयारी की, मारवाड़के प्रधान सामन्त चांपावत् सम्प्रदायके नेता आहवापति कुशलसिंहने यह समाचार पाकर महाविपत्ति देख शीघ्र ही महलमे जा रामसिंहको समझाने की चेष्टाकी। परन्तु उनके निर्दिष्ट आसनपर न वैठते २ राजारामसिंहने क्रोधित भावसे कहा, "आपके इस विकट कुत्सित मुखको जितना न देखे उतना ही अच्छा है" नवीन महाराजकी इस उक्तिसे महाक्रोधित हो आहवाके सामन्तने अपनी पीठपरसे ढाल लेकर शय्याके ऊपर विपरीत भावसे रखकर कहा. "युवकराज! इस ढालको आप जिसभाँति विपरीत भावसे गिराहुआ देखते हैं, राठौर वख्तसिंह भी समस्त मारवाड़को इसी प्रकार विपरीत भावसे निक्षेप करनेमे सामर्थ्यवान् हैं, आपने उन्हीं महावीर वख्तसिंहका अपराध किया है आप शीघ्र ही इसका फल भोगेंगे" लाल २ नेत्र करके यह वचन कहते हुए उठकर कुशलसिंह सभास्थानको छोड़कर शीघ्र ही अपने अधीनमे स्थित समस्त सेनाको साथ ले जोधपुरके प्रधान राजकविके निवासस्थान मूंधियाड़को चलागया। कनौजसे सियाजीके साथ जो कवि सबसे पहले मरुक्षेत्रमे आया था, उसीके वंशधर उसमे रहते थ। यह राजकवि मरुक्षेत्रमे किस प्रकारसे सम्मानित था, उसके प्रमाणमें हम केवल इतना ही कहसकते है कि उसके अधिकारी ग्रामोमे वार्षिक आमदनी मरुक्षेत्र के प्रधान सामन्तोकी आमदनीके समान एक लाख रुपयेसे भी अधिक थी। सामन्त मंडलीको समान इन कविका सम्मान पदमर्यादा और सामर्थ्य थी, कुशलसिंह सबसे पहले उसी कविके पास गये।

कर्नल टाड् साहबने लिखा है, "कि राजनीतिज्ञ वख्तसिंहने जब सुना कि मरुक्षेत्रके सबमें प्रधान सामन्त कुशलसिंह जोधपुरको छोड़कर हमारे राज्य नागौरकी सीमाके अंतमें आये है, तब वह तुरन्त ही उन माननीय सामन्तको आदरसहित ग्रहण करनेके लिये आगे बढ़े; वख्तसिंह विना विश्राम किये ही गंभीर रात्रिमे आकर जहाँ कुशलसिंह सोनेके लिये जा रहे थे वहीं जा पहुँचे और निद्रित सामन्तको न जगाकर

---

(१) यह गलत लिखा है कि मूंधवाड़का बारहठ कन्नौजसे आये हुए कविकी सन्तानसे था। कन्नौजसे कोई कवि नहीं आया था सियाजीकी चौथी पीढ़ीमे चांदा नाम एक भाटीको पकड़कर जबरदस्ती अपना पोलपात बारहट बना लिया था, और उसका विवाह चारणोंमे करादिया था उसकी औलादमें मूंदियाड़के बारहट जोधपुरके पोलपात है।

थकेथकाये बख्तसिंह उसी सामन्तकी शय्याके ऊपर एक ओरको लेट रहे। प्रभात होते ही कुशलसिंहने नेत्र मलतेहुए सेवकोंको हुक्का लानेकी आज्ञा दी, सेवकोंने अँगुलीका इशारा किया कि शय्याके ऊपर बख्तसिंह सो रहे है। कुशलसिंह तुरन्त ही चौकन्ने होकर उठ बैठे। उसी समय बख्तसिंहकी भी निद्रा जाती रही। आहवाके सामन्तने बख्तसिंहका भलीभाँतिसे आदर सत्कार किया, अंतमें वार्तालाप होनेके उपरान्त सामन्तने कहा, आजसे हमारा मस्तक आपकी इच्छाके अधीन हुआ, आजसे आपकी आज्ञाका पालन ही हमने जीवनमें प्रधान व्रतरूपसे स्वीकार किया। जब यह बातचीत होरही थी, उसी समय जोधपुरके प्रधान कवि भी वहीं थे। वह भी दोनोंके मिलनेसे विशेष पोषकता करने लगे। बख्तसिंहने कविश्रेष्ठको आहवामें जाकर सामन्तके पुत्र और कुटुम्बको लानेके लिये आज्ञा दी, कविने प्रफुल्लित हो उसी समय उस कार्यसाधनमें तैयार होकर कहा, 'आजसे मैंने भी जोधपुरसे सर्वदाके लिये विदा ली।' तुरन्त ही बख्तसिंहने कहा। जोधपुर और नागौरमें आप किंचित् भी भेद न समझिए। जबतक एक टुकड़ा बाजरेकी रोटीका भी मिलैगा तबतक हम उसको बाँटकर खांयगे, राजनीतिमें चतुर बख्तसिंहने इस प्रकार मारवाड़के प्रधान सामन्तको अपने हस्तगतकर अपनी भविष्य उन्नतिका द्वार खोललिया"

युवक अधिपति रामसिंह अपने चचाको सेना संग्रह करनेका भी अवकाश न देकर अपनी प्रबलवाहिनीके साथ उनपर आक्रमण करनेके लिये चले। सबसे पहले खेरली नामक स्थानमें दोनों पक्षमें एक महायुद्ध हुआ। इसके पीछे बराबर छः स्थानोंपर मेरताके समतलक्षेत्रमें लूनावास नामक स्थानमें भयंकर संग्रामानल प्रज्वलित होगई, इस भयकर युद्धका विशेष वृत्तान्त यथास्थान पाठकोंने पढ़ा होगा। इस युद्धमें उद्धतस्वभाव रामसिंह अपनी निर्बुद्धि और अज्ञानताका फल पाकर परास्तहो प्राणोंकी रक्षाकेलिये भाग गये। वीरश्रेष्ठ बख्तसिंह जैसे ही उस भयंकर युद्धमें विजय प्राप्तकर जोधपुरकी ओरको चले, वैसे ही राठौरोंने सब नगरोंके तोरणद्वार खोलदिये। वीरश्रेष्ठ बख्तसिंह जोधपुरमें अधिकार करके शीघ्र ही सिंहासनपर विराजमान हुए। बगड़ीके जेतावत् सामन्त, जिसके पूर्वपुरुषगण प्रत्येक अभिषेकके समय नवीन राजाके मस्तकपर राजतिलक देते थे, उसने ही बख्तसिंहके मस्तकपर राजतिलक दिया। बगडी सामन्तवंशको राजटीका देनेका अधिकारी कहकर, "मारवाड़का मारकिवाड़" की उपाधिसे भूषित किया।

(१) महात्मा टाड् साहबने मारवाटमें जानेके विवरणमें प्रथमकाण्डके २९ अध्यायमें लिखा है कि चांपावत् और आसोप दोनों देशोंके दोनों सामन्त रामसिंहसे विरक्त होकर नागौरमें चलेगए। और बख्तसिंह तथा रामसिंहके साथ उनके मिलन होनेकी चेष्टासे उसमें दोनों सामन्तोंके सम्मत न होनेपर भी शेषमें बख्तसिंहने उनको अपने दलमें मिलालिया, ऐसा जानाजाता है कि उन्होंने भूलसे यहांपर आसोपके सामन्तोंके नाम नहीं लिखे।

(२) कर्नल टाड् साहबने मारवाड़में इस युद्धका विवरण प्रथमकाण्डके २९ अध्यायमें किया है।

महावीर वख्तसिंह एकमात्र राजनीतिज्ञता और तलवारके वलसे चिरप्रार्थनीय राजसिंहासनपर स्थित हो अपने जीवनको सार्थक माननेलगे। मरु क्षेत्रके वहुतसे सामन्तों का उनके साथ योगदान होनेसे वख्तसिंहने यह सरलतासे स्थिर करलिया कि भ्रातृपुत्र रामसिंह कभी भी जोधपुरपर अधिकार करनेमें समर्थ नहीं होसकते। यद्यपि वख्तसिंहने तलवारके वलसे सिंहासनपर अधिकार करलिया और उनके स्वजातीयवीर राठौरगण भी उनके पक्षपाती थे। वे उस सिंहासनकी दृढ़भावसे रक्षा करसकते थे, पर तो भी निश्चय जानते थे, कि उस सामन्त मण्डलोके अतिरिक्त अन्यान्य सामर्थ्यवान् मनुष्योंको हस्तगत करना हमारा मुख्य कर्त्तव्य है।

रजवाड़ेके राजदरवारके मंत्री, पुरोहित, कवि इत्यादि पदोंको पुरुपानुक्रमसे भोगते है। मंत्रीके पदपर मंत्रीका पुत्र, पुरोहितके पदपर पुरोहितका पुत्र, इस प्रकारसे पिताके पदपर पुत्र ही नियत होते है। पिताके पदपर नियत होना होगा इसीसे पुत्रोंको वालकपनसे ही उचित शिक्षा दीजाती है, इन समस्त पिताके पदके अधिकारियोंको अपने हस्तगत करना नवीन महाराजका सबसे पहला कर्त्तव्य था; अधिक क्या कहैं वख्तसिंहने स्वयं अपनी तलवारके वलसे ही अपने भतीजे रामसिंहको सिंहासनसे उतारकर स्वयं मारवाड़का राजछत्र धारण किया। समस्त वीर सामन्तोने जिसभांति उनके पक्षका अवलंबन किया उसी प्रकार सामरिक प्रधानमंत्री; शासनविभागके प्रधानमंत्री और प्रधान कविने भी उनके पक्षका अवलम्बन किया। परन्तु राजदरवारमे एकमात्र प्रधान कुल पुरोहित जगूने रामसिंहको अत्यन्त उद्धतस्वभाव और राजपदके अनुपयुक्त और वहुतसे दोपोसे युक्त देखकर भी राजभक्तिको अपना कर्त्तव्य विचार कभी उसने वख्तसिंहके पक्षका अवलम्बन न करके सिंहासनसे भ्रष्टहुए रामसिंहके पक्षका ही अवलम्बन किया। रामसिंहने सिंहासनसे भ्रष्ट होकर जयपुरके महाराजका आश्रय लिया, पुरोहित जगू अपने प्रभुको राज्यपर फिर अधिकृत करनेके लिये महाराष्ट्रोंकी सहायताकी आशासे दक्षिणको चलागया।

नीति चतुर वख्तसिंहने देखा कि जगू पुरोहित होकर मारवाड़के विध्वंसकी सूचना करनेके लिये उद्यत हुआ है, विदेशीय महाराष्ट्रोंको मारवाड़में लाना चाहता है जिससे मारवाड़का सर्वनाश होजाय। अस्तु पुरोहितको ही अपने हस्तगत करना एकान्त कर्त्तव्य विचारकर उन्होने शीघ्र ही अपने हाथसे एक कवितापूर्ण पत्र लिखकर उसके पास भेजदिया। वख्तसिंह केवल नीतिज्ञ साहसी और वीर ही नहीं थे, वरन् वह विशेप विद्वान् भी थे। उन्होंने पुरोहितके पास अपने हाथसे कवितामें जो पत्र लिखभेजा उसका सारांश यों है:-

"हे मधुकर! जिस फूलके सौरभपर आप मोहित होरहे हैं वह उस फूलका पेड़ प्रवल आँधीके आनेसे छिन्नभिन्न होगया है, उस गुलावके वृक्षपर अव एक पत्ता भी नहीं रहा, फिर क्यों वृथा काँटोंमें वँध रहेहो ?"(१)

---

(१) इसी आशयके ये दो दोहे विहारी सतसईमें लिखे हैं।

दोहा-जिन दिन देखे वे सुमन, गई सु वीत वहार। अब अलि रही गुलावमें, निपट कटीली डार॥
यहीं आस अटक्यौ रहै, अलि गुलावके मूल। हुइहैं फेर वसंत ऋतु, इन डारन वे फूल॥

पुरोहितने उत्तरदिया कि "सूखे हुए गुलाबके वृक्षके ऊपर भौंरा केवल इसी आशासे बैठा है कि नवीन बसंतऋतुके आगमनसे नवीन खिलेहुए फूलोंकी सुगंधिसे पुनः मनको प्रसन्न करूंगा ?"

पुरोहितको यथार्थ विश्वासपालक देखकर महाराज बख्तसिंहने प्रसन्न हो उसका यथोचित सम्मान किया। यद्यपि पुरोहित बख्तसिंहके पक्षका अवलम्बी नहीं था तौ भी बख्तसिंह उसके इस आचरणसे किंचित् भी दुःखी न हुए।

महात्मा टाड् साहबने लिखा है, "कि बख्तसिंह जैसे सदानंदचेता थे, उसी प्रकार उनके स्वभावसे असीम साहसिकता और असीम वदान्यताके मिलनेसे उनको राजपूत जातिने आदर्शस्वरूप करदिया था। इन श्रेष्ठ गुणावलीकी समान उनकी मूर्त जैसी शान्त थी और शरीर बलिष्ठ था उसी भाँतिसे देशकी समस्त विद्याओंमे भी वह पंडित थे; विशेष करके उनमें कविता रचनाकी शक्ति भी सामान्य नहीं थी। यदि वह एकमात्र पिताकी हत्या न करते तो रजवाड़ेमें यहांतक जितने राजाओंने जन्म लिया है उनमें एकमात्र यही सबसे श्रेष्ठ और चिरकालतक सम्मानित होते और इनका नाम भी अक्षय हो सकता। बख्तसिंहने अपने श्रेष्ठ गुणोंसे स्वजातीय राठौरोंको अपने अनुगत करलिया था। इन्होंने केवल समरक्तवाही वीरोंको प्रीतिके सूत्रमे बांधलिया था, यही नहीं, वरन् समस्त रजवाड़ेकी सब जातियां इनके गुणोंपर मोहित होगई थीं, बख्तसिंहने सभीके हृदयपर अधिकार करलिया था। जिस समय सिंहासनसे भ्रष्टहुए रामसिंहका दूत महाराष्ट्र लुटेरोंके नेता सैंधियाको अपने हस्तगत कर उसकी सेनाकी सहायतासे रामसिंहको फिर जोधपुरके सिंहासनपर बैठालनेके लिये तैयार हुआ; उस समय महाराज बख्तसिंहने एकमात्र अपने प्रीतिमय आचरणसे और संतोषदायक व्यवहारसे तथा अपने बल विक्रमके बलसे इस भांति अगणित सेनाका संग्रह किया कि महाराष्ट्रोंका दल, उस सेनाश्रेणीमें समस्त रजवाड़ेके श्रेष्ठतम वीर सम्प्रदायको इकट्ठाहुआ देखकर अत्यन्त भयभीत होगया। महाराष्ट्रोंके दलको इस प्रकारसे उपस्थित देख और इनके द्वारा जन्मभूमिके सर्वनाशकी संभावना देखकर, सियाजीके वंशधर प्रत्येक शाखाके राठौर सामन्त एक मनुष्यकी समान खड़े होकर वीरश्रेष्ठ बख्तसिंहके अधीनमें उस रुद्रमूर्ति महाराष्ट्रनेता माधोजीके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये चले। महाराष्ट्रोंका दस्युदल केवल अपने बाहुबलको प्रकाश करके विजय तथा गौरव उपार्जन करनेके लिये नहीं आया था, वरन् वह लोग केवल मारवाड़को लूटकर तथा उसको विध्वंश करनेकी इच्छासे ही रामसिंहको ले आये थे, परन्तु महावीर बख्तसिंहको उस प्रबल सेनाके साथ आताहुआ देखकर वे समझगये कि जिसभाँति युद्धमें विजय करना असंभव है, उसी भाँति मारवाड़को लूटना भी असंभव है, इस कारण महाराष्ट्रगण राजपूत वीरोंको साथले सांग और सिरोहीके साथ अपने बरछोंके बलकी परीक्षा दिखानेकी इच्छा करनेलगे।

(१) यह दशफुट लम्बी होती हैं सिरोही देशमें सांग एक प्रकारका भाला है, इसीसे उसका-

कर्नल टाड् साहवने इससे पीछे वर्णन किया है, "तलवारके वलसे जो उद्देश्य साधन नहीं हुआ कालकूट विपयने उस उद्देश्यको पूर्ण करदिया; अजमेरके निकट जिस मार्गसे मारवाड़के राज्यमें सरलतासे प्रवेश कियाजासकता है, शत्रुओंको उसी मार्गसे किसीभाँति भी न जानेदेनेकी इच्छासे वीरश्रेष्ठ वख्तसिंहने सेनाके साथ वहां अपने डेरे डालदिये और शत्रुओंके आगमनकी प्रतीक्षासे वह वहां रहने लगे। आमेरपति माधोसिंहकी राठौरजातीया रानीने वहां जाकर वख्तसिंहके साथ साक्षात्कर भ्रातृपुत्र रामसिंहके स्वार्थसाधन करनेके लिये वख्तसिंहके जीवनरूपी दीपकको अपनी चतुरतासे बुझादिया । किस उपायसे आमेरकी रानीने अपने उद्देश्यको पूर्णकिया था ? उन वीरश्रेष्ठ वख्तसिंहकी अन्तिम दशाका वृत्तान्त पहले ही वर्णित होचुका है । वख्तसिंहने सम्वत् १८०९ स० १७५२ ईसवीमें इस मायामय शरीरको त्यागकिया । उनकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र विजयसिंहके साथ रामसिंहका महायुद्ध होनेसे मारवाड़के चारों ओर आत्मविग्रहानलके प्रज्वलित होनेसे मारवाड़देश विध्वंस होगया।

इतिहासवेत्ता टाड् साहवने वख्तसिंहकी जीवनीके उपसंहारमें लिखा है, "कि वीरश्रेष्ठ वख्तसिंह जव तीनवर्षतक मारवाड़के सिंहासनपर अभिषिक्त रहे, उस थोड़े समयमें ही उन्होंने मारवाड़के दुर्ग समूहोंको दृढ़ और सुसज्जित करनेका अवकाश तथा उपाय प्राप्त किये थे, उन्होंने राजधानीमें वड़े २ किले वनादिये, तथा अहमदावाद

—सिरोही * नाम हुआ । इसकी धार अत्यन्त तीक्ष्ण होती है । कलकत्तेकी प्रदर्शनीमें जोधपुरके कई एक प्राचीन विशाल भाले रक्खेगये थे, ऐसा विहित होता है कि उनको पाठकोंने अवश्य ही देखाहोगा ।

(१) महात्मा टाड् सावहको इस स्थानपर भ्रम होगया है । हमने उनकी उक्तिके मतसे " कर्नल टाडके मारवाड़में जानेका वृत्तान्त " २९ अध्याय पृ० ९४० में लिखा है, कि जयपुरके महाराज ईश्वरीसिंहकी स्त्रीने महाराज वख्तसिंहको कालकूट विपमय वस्त्र दिये थे, वख्तसिंहने उसी वेशको धारणकर प्राण त्याग किये । परन्तु महात्मा टाड् साहवने यहां कहा है कि माधोसिंह की स्त्रीने वेकालकूटमय वस्त्र दान किए थे। इसकी सत्यताका निर्णय करना अत्यन्त कठिन + है ।

(२) प्रथमखंडमें कर्नल टाड्के मारवाड़से आनेका वृत्तान्त २९ अध्यायके ९४० पृष्टमें देखो ।

---

* सिरोही एक किस्मकी फौलादी तलवार होती है । यह काट करनेमें बड़ी तीक्ष्ण होती है पर साथ ही यह वात भी है कि चलाने वाला कुशल नहीं है तो टूट भी जाती है इसीसे कहा वत है (कि सर नहीं कि सिरोही नही) । यह तलवार राजपूतानेके सिरोहीनामक स्थानमें वनती है इसीसे इसका नाम सिरोही पड़ा ।

+'ख्यातमें' माधवसिंहका गांव सोनेली परगने मालपुरा इलाके मारवाड़में वख्तसिंहसे मिलनेको आना लिखा है सो उस समय माधोसिंह ही जयपुरके राजा थे । उसी ग्राममें भादो वदी १३ सं० १८०९ को महाराज वख्तसिंहका देहान्त हुआ था ।

वादको जीतकर जो समस्त उपकरण लायेथे वख्तसिंहने उन सब उपकारणोंसे जोधपुरके महलोको अत्यन्त सुन्दरतासे सजायाथा। कठिन यवनोने हिन्दुओंके प्रति और विशेष करके मारवाड़निवासी राठौरोके प्रति एक समयमें जो अकथनीय निग्रह, दारुण अत्याचारको किये थे,महावीर वख्तसिंहने उन सब अत्याचारोका उन्हे उचित फल दिया। उन्होंने अपने मुख्य अधिकारी नागौरराज्यकी यवन मसजिदोंको तोड़ फोड़ कर उन स्थानोपर पूर्वकालके आदि मंदिरोको वनादिया। एकमात्र उन असीम साहसी वख्तसिंहने समस्त मारवाड़में ऐसी आज्ञा दी कि जो कोई मुसलमान ऊँचे स्वरसे खुदाको पुकारैगा उसको प्राणदंड दियाजायगा। वख्तसिंहकी उसी आज्ञाके अनुसार ही समस्त मारवाड़मे तथा सारी मसजिदोमे वह चीत्कार शब्द एकवार ही वंद होगया, और आजतक उस प्रवल नियमका पालन होताहै। उस समय भारतवर्षमे जिस भाँतिका राजनैतिक विप्लव होरहाथा दिल्लीके प्रवल प्रतापशाली यवनसम्राट्की वह जगत् विख्यात् गौरवगरिमा लुप्त होगई थी, तथा इनके शासनकी शक्ति भी एकवार ही हीनप्रभा होगई थी। कृष्णाके किनारे कृषिजीवी महाराष्ट्रदलने मस्तक उठाकर सबमे प्रधान शासन शक्तिका संचय किया था, यदि वीरश्रेष्ठ वख्तसिंह कुछ कालतक और जीवित रहते तो अवश्य ही राजपूतजाति प्राचीनकालकी समान समस्त भारतमे उस शासनशक्तिको प्राप्तकर पहलेकी समान स्वाधीनभावसे स्वजातिके गौरवरूपी सूर्यको फिर उदित करनेमे समर्थ होती। जिस यवनराजकी शासनशक्तिने भारतके देशीय राजाओंकी स्वाधीनताको नष्ट करदिया तथा उनको एकवारही मोल लियेहुए दासकीभाँति पदपर स्थित करदिया था, उसी यवनसम्राट्के वंशको विनाश करनेकेलिये सभी राजपूत राजा एकसाथ मिलसकते थे, परन्तु उन देशीय राजाओने अनेक प्रकारके राजनैतिक पापोके कारण उस अभिलषित सुअवसरको पाकर भी खोदिया. और वे अपने मनोरथको सिद्ध न करसके"।

सत्यप्रिय टाड् साहव स्पष्ट अक्षरोमे लिखगये हैं कि पाठकगण इस स्थानपर वख्तसिंहके पिताका प्राणनाश और आमेरकी रानीके द्वारा उस पित्रहन्ताके जीवनका विनाश देखकर यह न विचारैं कि राजपूतजाति इसीप्रकारसे जीवनको नाशकर अपने वंशको कलंकित करनेका अभ्यास रखती है। इस प्रकारका हत्याकाण्ड यही एकमात्र दिखाई दिया है। कर्नल टाड् साहवने इसके पीछे लिखा है, " पाठकगण एकवार पाश्चात्य इतिहासकी ओर दृष्टि उठाकर देखैं। ग्यारहवीं शताब्दीमे जिस समय प्रवल प्रतापशाली जयचंद यवनोंके द्वारा सिंहासनसे भ्रष्ट हुए थे, जिस समय सियाजीने मरुक्षेत्रमे राठौरोके शासनकी प्रतिष्ठा की उस समय विलायतवासी असभ्यता और अंधकारसे मुक्ति प्राप्तकर रहे थे। जिस समय आर्यराजवंशका प्रताप, प्रभुत्व, स्वाधीनता एकवार ही विजातियोके आक्रमणसे हीन होगई थी, उसी समय विलायतनिवासियोने नवीन सभ्यता और शिक्षाके वलसे मस्तक उठाया था, विलायत निवासी नाइट अर्थात् वीर कुलीन उपाधिवाले मनुष्य जिन गुणोसे विभूषित हो

जिस भाँतिसे अपने साहस और बल विक्रममें प्रशंसनीय हुए थे, राजपूत वीर भी उन सभी गुणोसे विभूषित थे; वरन् विलायत वासियोकी अपेक्षा राजपूत वीरनेता मानासिक उत्कर्षतासाधनमे अधिकतर शिक्षितथे। ऐसा कोई समय भी नहीं हुआ कि जिस समय राजपूत राजा अपने नामके हस्ताक्षर न करसकते हो, वरन् वह सभी अपनी सुशिक्षाके बलसे अपने हाथसे राजनैतिक पत्र तथा मन्तव्य लिखा करते थे, और आवश्यकता होनेपर वह कविता भी बना लेते थे। तब रजवाड़ेके हत्या काण्डका उल्लेख करके युरोपके मध्यसमयके हृदयभेदी अगणित हत्याकाण्ड क्या शोचनीय नहीं होसकते ?"

उदार स्वभाव टाड् साहब इस स्थानपर सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये स्वदेशके नाइटकी उपाधि धारण करनेवाले वीरोंकी अपेक्षा राजपूतवीर नेताओके प्रति ऊँचा सम्मान दिखागये है। महात्मा टाड् साहबने पीछे कहा है, किं बख्तसिंहने जो अपने पिताको मारा था राजपूत कवियोने उस महापापकारी हत्याकाण्डके प्रति किसी प्रकारका भी मन्तव्य प्रकाशित नहीं किया। पाठक इस प्रकारका सिद्धान्त न करै। रजवाड़ेके राजाओसे लेकर दीन दरिद्री किसानतक भी कविकी लेखनीसे निकलेहुए "विपगर्यद्योको" आजतक पढ़ा करते है, इससे भलीभाँति प्रमाणित होता है कि राठौरके कविने निर्भय हृदय हो स्वाधीनभावसे सत्यके सम्मानकी रक्षा करनेमे किसी भाँतिकी भी त्रुटि नही की। बख्तसिंहने जो अपने पिताको मारडाला था, इस विषयमे आजतक एक प्रवाद प्रचलित है। एक समय महाराज अभयसिंह आमेरपति महाराज जयसिंहके साथ पवित्र पुष्करतीर्थको जारहे थे। तीसरे पहरके समय दोनो महाराज अपने अपने परिषदोके साथ बैठे हुए आनन्द भोग रहे थे, इसी समयमे दोनों राजाओने प्रधान कवि कर्णीदानको नवीन कविता बनाकर सुनानेकी आज्ञा दी। कविश्रेष्ठने तुरन्त ही दोनो राजाओकी आज्ञासे निर्भय हो यह कविता पढ़ी।

जोधपुरा आमेरिया; दोनो थाप उथाप।
कूरम मार्‍यो डीकरो, कमधज मार्‍यो बाप॥

कविताका यह अर्थ था कि जोधपुर और आमेरके महाराज यह दोनो ही साखा

---

(१) यूरोपके मध्यसमयके नाइट (Knight) अत्यन्त ही मूर्ख थे। वे अपना नामतक नहीं लिखसकते थे।

(२) मालूम होता है कि यहाँ अनुवादकर्त्ताकी मुराद विसरसे है मारवाड़में कविताके दो भेद हैं सर और विसर, सर प्रशंसामयी कविताकी संज्ञा है और विसर निन्दापूरित कविताकी, इसी साशब्दसे विप पद्य गढ़ा गया होगा।

ठीक नहीं हैं दोनों ही सिंहासनसे भ्रष्ट हुए और दोनो ही फिर अभिषिक्त हुए। कूर्मोने अपने पुत्र शिवासिंहकी हत्या की थी, और कमध्वजने अपने पिताका विनाश किया।

असीम साहसमे भरी इस नवीन कविताके सुनते ही सभी आश्चर्यमे होगये। उसी समयसे रजवाड़ेके प्रत्येक मनुष्योंके मुखसे यह कविता सुनाई देनेलगी।

उपसंहारमे हमारा कर्त्तव्य यही है कि यदि महाराज बख्तसिंह अपने भाई अभयसिंहकी आज्ञासे तथा उनकी ताड़ना, उपदेश और लालचमे आकर अपने पिताके प्राणनाश न करते तो कर्नल टाड साहबकी समान हम भी उनको राठौरवीरोमे अग्रणीय कहकर महान उच्च सम्मान दिखासकते थे।

तेरहवाँ अध्याय १३.

विजयसिंहका राज्याभिषेक; मेरता नामक स्थानमें नवीन महाराजके प्रति राठौर सामन्तोंका सम्मान दिखाना, जोधपुरकी राजधानीमें विजयसिंहका जाना; सिंहासनसे भ्रष्ट रामसिंहका जयपुरपतिके साथ मिलकर महाराष्ट्रोंके साथ संधिबंधन; आक्रमणकारी सेनाका संमिलन; आक्रमणकारियोंके विरुद्धमें युद्धके लिये मारोठनामक स्थानमें विजयसिंहका सेना इकट्ठा करना; रामसिंहका सिंहासन देनेके लिये विजयसिंहके पास आज्ञा भेजना; विजयसिंहका उत्तर देना; युद्ध, विजयसिंहकी पराजय, राठौरोंकी अश्वारोही सेनाका नाश, सेनाके साथ सामन्तोंका भागना रणक्षेत्रमें विजयसिंहका इकला रहना; उनका भागना, रामसिंहका किलेपर अधिकार करना; महाराष्ट्रोंके सेनानायकके जीवनका नाश; उस हत्याकी हानिको पूर्ण करना; अजमेरमें जाना; महाराष्ट्रोंका चौथ संस्थापन, महाराष्ट्रोंका रामसिंहके पक्षको छोड़ना; कविलिखित पद्य, रामसिंहकी मृत्यु, उनके चरित्र, मारवाड़में अराजकता, राठौरराजाके प्रति पोकर्णके सामन्तोंका दुर्व्यवहार, सामन्तोंकी शासनशक्तिको घटानेके लिये मारवाड़पतिकी कल्पना; सामन्तोंकी समिति; गोवर्द्धनखीची; राजाके प्रति उनका उपदेश; सामन्तोंके साथ राठौरपतिका असम्भ्रममूलक संधिबंधन, वेतनभोगी विदेशीय सेनाको विदा देना, राजगुरुकी मृत्यु, गुरुके भविष्यवाणी; प्रधान २ सामन्तोंका प्राणनाश, सुबलसिंहका अपने पितृहन्ताके प्रति बदला लेनेका उद्योग करना, सुबलसिंहकी मृत्यु, सामन्तोंकी शासनशक्तिका रोकना, सिन्धुदेशसे अमरकोटको छीनलेना, मेवाड़से गोड़वार राज्यका ग्रहण करना, महाराष्ट्रोंके विरुद्ध मारवाड़ और जयपुरके दोनों राजाओंका मिलन; तुंगानामक स्थानमें पराजय, राठौरोंका अजमेरपर फिर अधिकार करना, पाटन और मेरतामें युद्ध; अजमेरमें जाना; अजमेरके शासनकर्ताकी आत्महत्या, विजयसिंहकी उपस्त्रीका मानसिंहको गोद लेना, उनके असदाचरणसे सामन्तोंका क्रोधित होना, उनकी हत्या करना, विजयसिंहकी मृत्यु।

---

(१) जयपुरेश्वर, यहापर कुइयसे कूर्मा हुआ है।

(२) कामध्वज कान्यकुब्ज पतिकी प्राचीन उपाधि है। मारवाड़के राठौरोंको यह उपाधि मिला करती थी।

जब वीरश्रेष्ठ वख्तसिंहने अपने पिताकी हत्याके फलस्वरूपमें अपने राज्यकी सीमाके बाहर कालकूट विषमय वेशको पहरकर एक शोचनीय दशामे प्राण त्याग किया, तब उनके पुत्र विजयसिंह बीसवर्षकी अवस्थामें मारवाड़के राज्यसिहासनपर अभिषिक्त हुए। यद्यपि दिल्लीके बादशाह इस समय नाममात्रके बादशाह थे, इस समय उनके शासनकी शक्ति एकबार ही लुप्त होगई थी, देशीय राजा और यवन शासनकर्त्ता गणोने पहलेकी समान उनकी अधीनताको स्वीकार कर महाराजकी आज्ञा पालन नही की थी, और वख्तसिहके समयसे ही मारवाड़मे दिल्लीश्वरका प्रभुत्व लुप्त होगया था, तथापि नवीन मारवाड़पति विजयसिंहने प्राचीन रीतिके अनुसार दिल्लीके बादशाहके निकट अपने अभिषेकका समाचार भेजदिया। दिल्लीश्वरने उसी समय उस अभिषेकमें पूर्ण सम्मति प्रकाशित कर भेजी। केवल दिल्लीश्वर ही ने नहीं वरन् राजवाड़ेके अन्यान्य राजाओने भी नवीन मरुक्षेत्रपति विजयसिंहके अभिषेकमें आनंद प्रकाशके साथ अभिनंदनपत्र भेजे। मारवाड़की सीमामें स्थित मारोठ नामक स्थानमें विजयसिंहका अभिषेक किया गया। नवीन महाराज विजयसिंहने मारोठसे मेरतामें जाकर वहां अशौचकालतक समय व्यतीत किया। उस समय बीकानेर कृष्णगढ़ और रूपनगरके स्वाधीन राजा भी अपने २ अधीनकी सेनाको लेकर,वहां आये और सबने विजयसिंहका उचित सम्मान किया, तथा सम्पूर्ण सामन्तोंने भी वहाँ जाकर विजयसिंहके सम्मान बढ़ानेमें त्रुटि न की। नवीन नागोरेश्वरने इस प्रकारसे सबका सम्मान बढ़ाया। और राजधानी जोधपुरमे जाकर बड़ी धूमधामके साथ अपने स्वर्गीय पिताका श्राद्ध किया। इस श्राद्धकार्यमे उसने बहुतसा धन खर्च करके कवि, भाट, चारण, ब्राह्मण और अनाथोको अधिक धन देकर विशेष यश प्राप्त किया।

बीसवर्षकी अवस्थामें विजयसिंह जिस समय पिताके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए, उस समयको अवश्य ही विपदमय कहना होगा। यद्यपि प्रतिवासी राजगण और सामन्तमंडलीने उनके पक्षका अवलम्बन किया, परन्तु अभयसिंहका पुत्र रामसिंह मारवाड़के राज्यसिंहासनका प्रधान दावादार राजनैतिक बंगाल भूमिमे आपहुंचे। बख्तसिंह अपने एकमात्र असीम साहस, अतुल सामर्थ्य, प्रबल पराक्रम और कूट राजनीतिके बलसे ही रामसिंहको भगाकर स्वयं सिंहासनपर विराजमान हुए थे। परन्तु इस समय विजयसिंहकी अवस्था केवल बीस वर्षकी थी, उनके लिये राजनैतिक रंगभूमि और संग्रामभूमिमें पिताकी समान सामर्थ्य दिखाना असम्भव व्यापार था। जो हो विजयसिंहने पिताके सिंहासनपर बैठकर रामसिंहकी आशाको व्यर्थ करदिया।

बख्तसिंहके द्वारा मारवाड़से निकाले जाकर रामसिंह जैपुरमे रहने लगे। यदि बख्तसिंह जीवित रहते तो उनके मनकी आशा कभी पूर्ण न होती, यह उन्होने भलीभाँतिसे समझलिया था। इस समय उन्हीं सिंहविक्रमी बख्तसिंहकी मृत्युसे रामसिंहने

महासंतुष्ट हो फिर पिताके राज्यका उद्धार करनेकी विशेष चेष्टा की। रामसिंह और जयपुरके महाराज भी भलीभाँतिसे जानगये थे, कि विजयसिंहकी वीस वर्षकी अवस्था होते ही जब कि राठौर जातिने इनको अधीश्वररूपसे स्वीकार करलिया है; जब कि प्रतिवासी राजाओंने इनके अभिषेकमें अपनी सम्मति प्रकाश की है, तब एकमात्र जयपुरकी सेनाकी सहायतासे विजयसिंहको सिंहासनसे भ्रष्ट करना असंभव है। इस कारण रामसिंहने अन्य उपायसे अपनी अभिलाषाको पूर्ण करनेकी चेष्टा की। इस समय महाराष्ट्रोंके दलने भी प्रबल होकर भारतभूमिमें विशेष शक्ति स्थापित करली थी। रामसिंह उन्हीं महाराष्ट्रोंके दलकी सहायतासे अपनी अभिलाषाको पूर्ण करनेके लिये आगे बढ़े। रामसिंहके पुरोहितने यद्यपि एकवार ही महाराष्ट्रोंकी सहायताको संग्रह किया था, यद्यपि महाराष्ट्रोंके दल मारवाड़के विध्वंस करनेको दस्युमूर्तिसे अग्रसर हुए थे, परन्तु उस समय पुरुषसिंह बख्तसिंहकी अमित बलशालिनी सेनाको देखते ही उन्होंने मनकी कामना पूर्ण होना असंभव विचार शीघ्रतासे पीठ दिखादी थी। किन्तु इस समय बख्तसिंहके न होनेसे अपने पापके उद्देश्य पूर्ण होनेमें किसी प्रकारके उपद्रव न होनेकी संभावना विचारकर महाराष्ट्र दलके नेताने सरलतासे रामसिंहके प्रस्तावमें अपनी सम्मति प्रकाश की। रामसिंहकी ओर महाराष्ट्रदलके नेताके साथ शीघ्र ही संन्धिबंधन होगया, दोनों ओरके नेताओंने उस संधिकी सम्पूर्ण धाराओंके पालन करनेमें सौगंध की। महाराष्ट्रोंकी सेना शीघ्र ही कोटासे होती हुई जयपुरमें आ पहुंची। उस समय रामसिंह जयपुरमें ही रहते थे। सहायकारी महाराष्ट्रोंके आते ही रामसिंह शीघ्र ही जयपुरकी सेनाके सहित महाराष्ट्रोंके साथ मिलकर विजयसिंहको सिंहासनसे उतारनेके लिये आगे बढ़े।

"महाराष्ट्रोंका तस्करदल मारवाड़में जाते ही देशका सर्वनाश करदेंगे, यहांका सर्वस्व लूटकर सारी धनसम्पत्ति लेजायँगे"। महाराज विजयसिंहकी राठौर सामन्त मण्डली और सर्वसाधारण प्रजाने इस बातको भलीभाँतिसे जानलिया था। इस कारण मरुक्षेत्रके प्रत्येक राठौर नवीन महाराजकी आज्ञासे शीघ्र ही महाराष्ट्रोंके दस्युदलको भगाने तथा रामसिंहकी आशाको व्यर्थ करनेके लिये दलके दल आकर मेरताके समतलक्षेत्रमें इकट्ठे होनेलगे। समस्त राठौर जातिको उस रणभूमिमें इकट्ठाहुआ देखकर राठौरकवियोंने उनकी बड़ी प्रशंसा की है। विशेष करके इस समय अनधीन पातावतगण तक कठिन महाराष्ट्र-दस्युदलके हाथसे स्वदेशकी रक्षाके लिये उपस्थित हुए। कवियोंने उनके यशको भलीभाँतिसे गायाहै।

रामसिंहने महाराष्ट्री सेनाके साथ पुष्करतीर्थमें जाकर विजयसिंहके पास यह कहला भेजा, "कि तुम इसी समय मरुक्षेत्रके सिंहासनको छोड़ दो, नहीं तो निस्तारा

---

(१) यह संधि "हलदी वा बलपत्र" (पक्काकागज) नामसे विदित है। महाराष्ट्र दलके समस्त प्रधान नेताओंने उसपर हस्ताक्षर करदिए थे उनका नाम इस प्रकार है-जनकोजी सोंधिया, माल्जी तांतिया, चित्तेजी रघुपागिया, वोपालिया, जादोन, मुल्ला यारमली, और फीरोजखा।

नहीं है।" महाराज विजयसिंहने उन समस्त सामन्तोके सामने रामसिंहके उस आज्ञापत्रको पढ़ा; जिसे सुनते ही समस्त राठौर अत्यन्त क्रोधित होगये। और "युद्ध होगा! युद्ध होगा!" यह कहकर महावीरता प्रकाश करतेहुए वोले, "यह कौन आप्पाहै जो हमें भय दिखाता है? हजार वज्रपात होनेपर भी हम अपनी रक्षा करेंगे।" उत्तेजित राठौरोने इस प्रकार एकस्वर और एकमतसे युद्धपक्षका समर्थन किया। महाराज विजयसिंहने उसी समय रामसिंहके निकट यथोचित उत्तर भेजादिया; महात्मा टाड् साहव लिखते हैं कि शत्रु सेनाकी संख्या राठौरोकी सेनाकी संख्यासे अधिक थी। राठौरगण कछवाहोकी सेनासे तो कुछ भी भयभीत न हुये, कारण कि वह जानते थे कि हम कछवाहोंको सरलतासे परास्त करसकैगे, परन्तु महाराष्ट्रोंके साथ जय प्राप्त करनेके विषयमें उनको कितनी ही वातोकी चिन्ता करना पड़ी। जो हो राठौरोकी सेना महाराष्ट्रोंके साथ प्रवल विक्रम प्रकाश करके अपने वाहुवल और पराक्रमका चूड़ान्त प्रमाण दिखानेमे असमर्थ न हुई।

राठौरोके कवियोने, जो जो सम्प्रदाय इस युद्धमें नियुक्त थीं, उन सबकी यथायोग्य प्रशंसा कीहै।

इस प्रवल युद्धके समयमे राठौरोमे दो आकस्मिक घटनाएं उपस्थित हुई। यदि यह दोनो घटनाएं न होती तो इस भयंकर युद्धमे विजयसिंह ही विजयलक्ष्मीका आलिंगन करसकते। एकदल राठौरोकी अश्वारोही सेना शत्रुपक्षके व्यूहको भेदन कर लौटा जारहा था। इसी समयमे उसको शत्रुओंकी सेनाका जानकर राठौरोंने उसके ऊपर वाण और गोलोकी वर्षा करके उसे विध्वंस करदिया। इस दुर्घटनाका वर्णन यथास्थान किया गया है, यदि विजयसिंहका भाग्य मंद न होता तौ ऐसी दुर्घटना क्यो होती?—दूसरी दुर्घटना भी इसो प्रकारकी थी। सेधिया इस समय रणक्षेत्रको छोड़कर भागनेके लिये तैयार होगया था, यदि राठौरगण कुसंस्कारके वशीभूत होकर छिन्नभिन्न न होजाते तो इन्हींके विजयकी पताका उड़ती।

कृष्णगढ़ और रूपनगर इन दोनो राज्योके राजा भी मारवाड़ राजवंशसे उत्पन्न है। परंतु दोनो ही स्वाधीनभावसे राज्यशासन कर दिल्लीके वादशाहसे सम्वन्ध रखते थे। कृष्णगढ़के महाराजने अपने कुटुम्वी रूपनगरके महाराजको सिंहासनसे उतारकर उक्त राज्यको अपने अधिकारमे करलिया था। 'रूपनगरके महाराज सानन्तसिंहने वृद्धावस्थाके कारणसे हो अथवा वैराग्यधर्मसे हो' जव कृष्णगढ़पतिने उनके राज्यको अपने अधिकारमे करलिया तव वह यमुनाके किनारे श्रीवृन्दावनधाममे जाकर

---

(१) महाराष्ट्रनेता जय आप्पाजी सेंधिया।

(२) राजस्थानके प्रथमकांडमे कर्नल टाड् साहवके मारवाडसे आनेका वृत्तान्त २९ अध्याय में देखो।

(३) उर्दू तर्जुमेमें यों लिखाहै कि सिन्धियेकी वखतरी (पाखरवाली) फौज राजपूतोंपर हमला करके पीछे आती थी उसपर दुश्मनोंकी फौजका भ्रम हुआ और वह आपसे* उड़ादी गई।

---

* तोपका छर्रा।

आनंदसहित हरिनामका कीर्तन करतेएहु जीवनके शेष दिनोंको व्यतीत करनेलगे। राज्यकी चिन्तासे छुटकारा पाकर श्रीभगवानके चरणकमलोंमें कृतज्ञता प्रकाश करके उन्होंने अपने मनको पुण्यपुंजके संचयमे लगाया, परन्तु रूपनगरके महाराज सामन्तसिंहके पुत्रने पिताके उस वैराग्यभावसे दुःखित हो, कृष्णगढ़पतिके हाथसे अपने राज्यका उद्धार करनेके लिये पिताको वारम्वार उत्तेजित किया। सामन्तसिंह उस समय यहांतक संसारसे वासनाहीन होगये थे कि उन्होंने पुत्रकी वात किंचित्मात्र भी न सुनी, वरन् 'विषयवासना अनेक प्रकारके पापोंकी जड़ है' इस कारण उसका चित्र अंकित करके पुत्रको राज्य प्राप्तिकी आशाके छोड़नेकी सलाह दी। पुत्रने पिताके वचन सुन अत्यन्त दुःखित होकर कहा, "हे पिता! आप सम्पूर्ण विषय वासनाओंसे तृप्त होकर इस समय शान्त होगये हो, इसीसे मुझे ऐसा उपदेश देते हो, परन्तु मेरेलिये तो राज्यका शासन सव प्रकारसे अनुकूल है।" पिताके पाससे निराश हो रूपनगरके महाराज सामन्तसिंहके पुत्र पिताके राज्यका पुनर्वार उद्धार करनेके लिये सुसमयकी वाट देखनेलगे। इसी समय विजयसिंहके साथ रामसिंहकी विवादानल प्रज्वलित होगई। युवकने इस सुअवसरमें रामसिंहके साथ मिलकर उनके दूतके साथ महाराष्ट्रोंकी सहायताके लिये दक्षिणको गमन किया। महाराष्ट्रनेताने जिस प्रकारसे रामसिंहके स्वार्थ साधनको सुना था, इसी प्रकार रूपनगरपतिके युवक पुत्रकी कामनाको पूर्ण करनेमें भी सम्मति प्रकाशित की।

जिस समय मेरताके युद्धक्षेत्रमें विजयसिंहकी सेनाने महाराष्ट्रोंकी सेनाको छिन्नभिन्न करादिया, जिस समय महाराष्ट्रोंकी सेनाने अपने प्राण वचाकर भागनेका उपाय किया था, उस समय उस महाराष्ट्रनेता जय आप्पाने उक्त युवकको बुलाकर कहा, "रामसिंहके भाग्यके साथ आपका भी भाग्य जड़ित है। परन्तु रामसिंहका भाग्य अत्यन्त मद देखता हूं। इस कारण अव हम यहांसे भागनेके पहले आपका और क्या उपकार करसकते हैं?" युवक महाराष्ट्रनेताके यह वचन सुनकर एकवार ही आशा-हीन होगया। यद्यपि वह राजनीतिमें और युद्धविद्यामें अज्ञान था तथापि वह इस वातको भलीभाँतिसे जानता था कि स्वजातिका स्वभाव किस प्रकारका है, इस कारण जिस समय महाराष्ट्रनेता युद्धको भंग करनेके लिये उद्योग कररहे थे, उस समय उसने एक विचित्र उपायसे अपने मनोरथको पूर्ण करनेका सुअवसर प्राप्त किया। युवकने देखा कि यदि प्रवल राठौरोंकी सेनाको किसी उपायसे भी रणसे शान्त नहीं करसकैंगे तो किसी प्रकार सुभीता नहीं है, इस कारण उसने एक स्वजातीय अश्वारोहीको शत्रुओंके डेरोंमें अन्य मार्गसे भेजदिया।

जिस स्थानपर राठौरोंकी सेना प्रवल पराक्रमके साथ युद्ध कररही थी वहां माईनोत सम्प्रदायके नेता सेनापति पद्पर थे। उक्त अश्वारोहीने वहां वड़ी तीक्ष्णतासे जाकर सामन्तको बुलाकर कहा "अव क्यो वृथा युद्ध करतेहो, विजयसिंह शत्रुओंके गोली से रणभूमिके अन्य पार्श्वमें हत होगये हैं।" सामन्तने उस अश्वारोहीको

अपने पक्षका जानकर उसके कहनेपर विश्वासकर बिना खोजकिये रणको भंग करदिया। दावानलकी समान विजयसिंहकी मृत्युका समाचार चारोओर फैलगया। राजपूत जातिके इतिहासमे ऐसी घटनाके हजारो प्रमाण होनेपर भी वह किसी प्रकारसे किसी समय भी उसका निर्णय नही करसके। उस अश्वारोहीका वचन सत्य है अथवा मिथ्या, इस बातका किसीको भी कोई प्रमाण नही मिला और न किसीने जांचा परताल करनेकी चेष्टानकी, सभी प्राणोके भयसे चारोओरको भागनेलगे। इस समय विजयसिंहने महावीरता प्रकाश करके इस प्रकारका युद्ध कियाथा कि कई मुहूर्तमें ही उनकी विजय होनेकी संभावना थी,—परन्तु उन्होने सहसा देखा कि उनके अधीनमे स्थित समस्त सामन्त संग्रामभूमिको छोड़कर चारोओरको भाग रहे है। मारवाड़के महाराज विजयसिंह जो एकलाख सेनाके साथ युद्ध कररहे थे, वह इस समय समस्त सेनासे त्यागेजाकर महाविपत्तिमे पड़गये। महाराष्ट्रीने सरलतासे जयलक्ष्मी का आलिंगन किया। मारवाड़पति विजयसिंहने जिस भावसे असहाय अवस्थामे रणक्षेत्रसे भागकर एक कृषककी सहायतासे अपने जीवनकी रक्षा की थी, उसे पाठक पहले ही पढ़चुके है[१]।

यदि सिंहासनसे पतित रूपनगरके महाराजके युवकपुत्र इस प्रकारसे अपनी चतुरता जालका विस्तार करके राठौरोकी सेनाको वृथा भ्रममे न डालते तो महाराष्ट्रनेताओको अवश्य ही रणक्षेत्र छोड़देना पड़ता, और रामसिंहके भाग्यमे वह युद्ध ही निर्धारित होजाता। अधिक क्या कहैं, यद्यपि इस युद्धमे महाराष्ट्रगणोने अधिक चतुरता करके जय प्राप्त की, परन्तु राठौर सामन्तोने भागनेके पहले जिस भावसे वीरता प्रकाश की थी कविने उसकी अत्यन्त प्रशंसा की है[२]।

महाराष्ट्रीने धोखेवाजीसे ही युद्धमे जय प्राप्त की और राठौरोकी सेना छिन्न-भिन्न होकर चारो ओरको भागगई; रामसिंहके भाग्यका सूर्य मेघसे मुक्त होगया। एक २ करके अनेको किलोके ऊपर रामसिंहकी विजयपताका फहराने लगी। इसी समय महाराष्ट्रीके तस्कर दलने पंगपालकी समान मरुक्षेत्रमे आकर लूटमार करनी प्रारंभ करदी। परन्तु महाराष्ट्रदलके प्रधान नेता जयआप्पा सहसा शोचनीय रूपसे मारेगये, अंतमे विपरीत काण्ड उपस्थित होगया[३] महाराष्ट्रगण रामसिंहकी सहायता

---

(१) प्रथमकांडके २९ अध्यायमे यह वृत्तान्त वर्णन कियागयाहै, विजयविलास नामक ग्रंथमे प्रकाशित हुआहै कि जिस जाट किसानने महाविपत्तिमे आश्रय देकर उनकी सहायता की थी विजयसिंहने उसको ५०० बीघे भूमि उसके वंशतकको भोगनेके लिये देदी, आजतक उस किसानके वंशधर उस भूमिको भोगते है।

(२) इस युद्धमें मारेहुए वीरोंमे चांपावत् सम्प्रदायके नेता वीरसिंह, संगावतके नेता लालसिंह, और कूम्पावत् सम्प्रदायके नेताने सबसे अधिक बल प्रकाश करके अपने जीवनका बलिदान किया।

(३) प्रथमकांड २९ अध्याय ९५१ पृष्ठमें इस हत्याकाण्डका वर्णन कियागयाहै। विजय विलास ग्रंथसे जानाजाताहै कि जिस समय जयआपाने राठौरोंके किलेको घेरलिया था, उसी युद्धमें

करनेके लिये आये थे। केवल धन प्राप्ति और मारवाड़का लूटना ही उनका प्रधान उद्देश था, परन्तु इस समय जयआप्पाके मारेजानेसे माहाराष्ट्रोंने संहारमूर्ति धारणकर उस हत्याकाण्डके बदला लेनेका पूरा विचार करलिया। वे लोग रामसिंहके स्वार्थको छोडकर इस समय अपने स्वार्थसाधनके कार्य करने लगे। प्रबल युद्ध और वादानुवादके पीछे जयआप्पाके प्राणनाशके दंडस्वरूपमे विजयसिंहने अजमेरको एक बार ही महाराष्ट्रेके करकमलमे समर्पण करदिया, और मारवाड़की खास भूमि और सामन्तोकी अधिकारी भूमिके ऊपर त्रैवार्षिक कर देनेके लिये वह राजी हुए। महाराष्ट्रगण उस हानिको पूर्ण करनेकेलिये रामसिंहका पक्ष छोड़कर अजमेरमे अपनी अतुलशक्तिको बढ़ाने लगे।

अजमेरदेश मारवाड़के राजमुकुटका उज्वल मणिस्वरूप था, महाराष्ट्रोंने जिस दिन उस मुकुटसे मणिको छीनलिया उसी दिनसे मारवाड़की स्वाधीनता चंचल होगई। महातेजस्वी अजितकी प्राणहत्याके फलस्वरूप मारवाड़ने प्राय: एक शताब्दीतक इस प्रकारसे आत्मविग्रह, विजातीय आक्रमण, तथा अनेक प्रकारके अत्याचार और पीड़ाओंसे अत्यन्त कष्टसे भोगा। जिस समय रूपनगरपतिकी चतुरतासे राठौरोकी सेना रणको छोड़करके भागगई, उस समय राठौरकविने मनके दु:खसे दु:खी होकर उसका उल्लेख किया था।

याद घनेदिन आवसी, आपावाला हेल।
भागा तीनोभूपती, माल खजाना मेल ॥

इसका अर्थ यह है कि समस्त धन रत्न और युद्धके अस्त्रोको छोड़कर तीनोजने भूपति (विजयसिंह, बीकानेरपति और कृष्णगढ़पति) जयआप्पाके भयसे भयभीत होकर भागगये, यह बात चिरकालतक हमको याद आती रहैगी।

सत्य कहना होगा, अवश्य ही स्वीकार करना होगा, रूपनगरपतिके युवक पुत्रकी चतुरतासे जिस युद्धमें महाराष्ट्रोंने सरलतासे जय प्राप्त की थी, राठौरोकी सेनाद्वारा रणभंग होनेसे रूपनगरपतिके युवकपुत्र आनंदितहो गर्वमे भरकर जय आप्पाके निकट जाकर बोले, "आपने देखा कि मैने इस स्थानपर खड़े होकर अपने हाथपर सरसोंके बीजको बोए थे।" सरसोंका बीज जैसे थोड़े समयमें वृक्ष होजाता है वैसेही अल्प समयमें यह चातुरी चलगई। जय युवकने रूपकसे यह बात

—वह मनुष्य महासंकटमें पड़ा था वहा वह रोगी होगया। जय आपाको आरोग्यकरनेकेलिये महाराज विजयसिंहने अपने प्रधानवैद्य सूर्यमल्लको उसके डेरामें भेजकर उनको आरोग्य करनेके लिये कहा, राजवैद्यने कहा महाराज यदि आप कहो कि तुम जयआप्पाको जाकर विष दो तो हम यह आपकी आज्ञा नहीं मानेंगे, इसपर विजयसिंह बोले, मैं वह आज्ञा नहीं दूंगा। आप यथाशक्ति उनकी चिकित्सा करके उनको आरोग्य करदीजिये। चारदिनमें आराम होनाहो तो दो दिनमें आराम करो, चिकित्सक जयआपाके पास गये, यद्यपि वह शत्रुपक्षके वैद्य थे तथापि जयआप्पाने इनसे चिकित्सा करानेमें कुछ आपत्ति न की। और वैद्यकी दवासे वह आरोग्य भी हुए।

कही तुरन्त ही जयआपाने कृष्णगढ़पतिके हाथसे रूपनगरका उद्धार करके उस सिंहासनपर उक्त युवकको वैठालनेके लिये इच्छा की तब युवकने कहा "यह करनेका प्रयोजन नही है, पहले हमारे प्रभु रामसिंहका स्वार्थ साधनकर उनको जोधपुरके सिंहासनपर वैठालिये तौ हमारी आशा सरलतासे पूर्ण होजायगी।" परन्तु कई दिनोंके पीछे जिस समय जयआप्पा मारेगये, उस समय महाराष्ट्रोंके डेरोंमे रामसिंहके अधीन जितने राजपूत थे सभीके ऊपर महाराष्ट्रोंको महासंदेह उपस्थित हुआ। और उक्त युवकके प्रति भी महाराष्ट्रोंने संदेह प्रकाश करनेमे त्रुटि न की। जयआप्पाकी मृत्यु होते ही डेरोंमे समस्त राजपूतोंको षड्यंत्रकारी कहकर महाराष्ट्रोंने सबके ऊपर आक्रमण किया। विशेषकरके मेवाड़के महाराणाके दूत रावत् कुबेरसिंह जो विजयसिंह के साथ संधिबंधन करानेके लिये महाराष्ट्रोंके डेरोंमे गयेथे, वह भी इसी कारणसे मारे गये। ताऊसरमे जयआप्पाकी भस्मराशिके ऊपर एक स्मृति मंदिर बनायागया। महात्मा टाड् साहबने कहा है कि महाराष्ट्र और राठौर दोनो उस स्मृति मंदिरके प्रति अधिक सम्मान दिखाते है।

जो हो महाराष्ट्रोंके दलने राठौरोंके साथ संधिबंधन करके रामसिंहके पक्षको छोड़दिया। रामसिंहके भाग्यमे फिर दुर्दिन आगये। रामसिंहने पिताका सिंहासन पानेके लिये बाईस वर्षतक युद्ध किया था, परन्तु महाराष्ट्रोंके छोड़ते ही वह शीघ्र ही असहाय अवस्थामें विजयसिंहकी दयादृष्टिके अभिलाषी हुए। विजयसिंहने सामरका जो अंश मारवाड़ राज्यके अधीनमे था वह अंश उनको देदिया, जयपुरके महाराजने भी दया करके सांभरके जो अंश अपने अधिकारमे थे उन सबको तुरन्त ही रामसिंहको दे दिया। रामसिंह उस सांभरके अधिकार को पाकर अत्यन्त दीनभावसे रहनेलगे। वह युवा अवस्थामें जैसे ऊधमी, क्रोधी और तेजस्वी थे भाग्यपतनके साथ ही साथ वह उसी भाँतिसे विनयशील और नम्र होगये, उन्होने सम्वत् १७७३ में जयपुरमे प्राण त्याग किये। कर्नेल टाड् साहबने कहा है, कि रामसिंहका शरीर वीरोंके समान बलवान था, तथा इनकी मूर्ति सौम्य थी। वह अपराधियोंके ऊपर अत्यन्त दया प्रकाश करते थे। उनकी वुद्धि अत्यन्त तीक्ष्ण थी। और उनकी मानसिक उत्कर्षता तो विशेषरूपसे दृष्टि आती थी। परन्तु एकमात्र अत्यन्त उग्रतेज और कठिन स्वभावके लिये ही यह मरुक्षेत्रके सामन्तोंके अत्यन्त अप्रियपात्र होगये थे। और इसी लिये वह सिंहासनसे भ्रष्ट होकर, निकाले जाकर जन्मभरतक अनेक प्रकारके कष्ट भोगते रहे। राठौरकविने विजयसिंहकी अपेक्षा रामसिंहको अत्यन्त साहसी और वीर कीर्तन किया है। कविने कहा है कि विजय सिंह हजारों सेना साथ लेकर भी युद्धमे विजय न पासके थे। परन्तु रामसिंहने बहुत थोड़ी सेना लेकर भी युद्धमें विजय प्राप्त की थीं। कविने एक एक विषयपर रामसिंहको अजितके समान वर्णन किया है। रामसिंहके उग्र और तेजस्वी होनेसे

(१) ताऊसर एक साधारण गाँव नागौर परगनेके एक परगने मे है।

समस्त मारवाड़के सामन्त इनसे भयभीत रहते थे। जिन सामन्तोंने मारवाड़के महाराजसे कभी भय नहीं किया था, वे लोग भी रामसिंहके अभिषेकके पीछे अति शंकित रहे। यह अवश्य ही स्वीकार करना होगा कि रामसिंहके अभिषेकके समयसे मारवाड़के भाग्यमें घोर कालरात्रि दिखाई दी। रामसिंहने ही कठिन महाराष्ट्रोंके दलको मरुक्षेत्रमें लाकर मारवाड़के विध्वंसका जो बीज बोया था, इसका कहना बाहुल्यमात्र है।

समस्त आशा भरोसेसे हीन होकर रामसिंहने निर्वासित अवस्थामें जयपुरमें प्राण त्यागकिये। तब मारवाड़के महाराज विजयसिंह एकबार ही निश्चिन्त होकर सुखसहित राज्यशासन करने लगे। पाठक ऐसा विचार न करैं कि रामसिंहकी मृत्युसे मरुक्षेत्रकी हानि लाभ कुछ भी नहीं हुई। रामसिंहकी अपेक्षा अत्यन्त प्रबल शत्रु इस समय मारवाड़को विध्वंसकर चारोंओर भयंकर अग्नि प्रज्वलित करके अजितके प्राणनाशका फल प्रकाश करनेलगे। महाराष्ट्रगण अजमेरपर अधिकार करके, मारवाड़से चौथका संग्रह करके और राजवाड़ेके प्रत्येक प्रान्तमें प्रबल प्रभुताका विस्तार करके एक २ देशको लूटकर धनका संग्रह करते २ मतवाले होगये। उन्होंने राजपूतोंमें विवादानल प्रज्वलित करदी। किसी न किसी पक्षका अवलम्बन करके उन्होंने अपनी आशाको सफल करलिया। इस विजातीय अत्याचारसे मारवाड़के चारोंओर घोर अशान्ति छागई। उस अराजकता और स्वेच्छाचारसे प्रजा कृषिक्षेत्रके कर्षणकार्यमें नियुक्त न रहकर प्राणोंके भयसे चारोंओरको भागने लगी। मरुक्षेत्रके प्रत्येक सामन्त इस समय महाराज विजयसिंहको अत्यन्त हीनबल और साहसहीन देखकर अपने २ अधिकारी देशोंमें असीम शक्तिका विस्तार कर अपनी इच्छासे अत्याचारकी अग्निको प्रज्वलित करनेलगे। उनकी इच्छासे ही अनेक स्थानोंमें वाणिज्य द्रव्यके ऊपर दूना महसूल होगया और वे स्थान २ पर समस्त वाणिज्य द्रव्योंको लूटने लगे। राज्यमें वाणिज्य एकबार ही बंद होगया। अपने दुर्भाग्यसे ही विजयसिंह इस समय इतने हीनबल होगये, कि सामन्त उनसे कुछ भी भय नहीं खाते थे। यहांतक कि अपने महलमें भी विजयसिंहका प्रभुत्व मानो एकबार ही प्रभाहीन होगया।

मारवाड़के चारोंओर राजपूत राज्यमें अन्य सामन्तोंकी अपेक्षा मारवाड़के सामन्त स्वाधीनभावसे अधिक प्रभुत्व, शक्ति और सामर्थ्यको चलाते आये हैं। उनको इस सामर्थ्यके अधिकारका प्रधान कारण यह है कि उनके पूर्वपुरुषा इसी मरुक्षेत्रमें अपने २ बाहुबलसे देशोंपर अधिकार करगये हैं। एकमात्र महाराजकी कृपासे ही वृत्तिस्वरूपमें देशोंको न पाकर, उन राजवंशवालोंने अनेक विस्तारित और मरुक्षेत्रके अनेक स्थानोंमें वहांके निवासियोंको परास्त कर और भगाकर अपनी २ शासनशक्तिको स्थापित किया, इस कारण मारवाड़में जयपुरकी अपेक्षा इनकी स्वाधीनता अधिक है। महाराज अजित जिस समय अज्ञान अवस्थामें थे उस समय सामन्तोंने सब प्रकारसे स्वाधीनभावसे रहकर अजितके दृढ़पक्षको अवलम्बन किया था। मारवाड़के सामन्त प्रबल सामर्थ्यवान थे, इसीसे विजयसिंहके शासनके आरंभ

समयमे वह अपनी इच्छानुसार कार्य करते थे। इस समय और भी एक कारणसे सामन्तोके साथ विजयसिंहका झगड़ा होगया। समयके गुणसे ही यह कारण उपस्थित हुआ था; इसका अनुमान सरलतासे होसकता है।

पोकरणके असीम साहसी चांपावत् सम्प्रदायकी मुख्य भूमि थी। पोकरणके सामन्त पुत्रहीन अवस्थामे मरगये, वह मृत्युके पहले महाराज अजितके दूसरे पुत्र देवीसिंहको गोदलेनेके लिये अपनी स्त्रीसे कहगये थे। किस प्रकारकी रीतिसे राजवाड़ेमें दत्तक पुत्र गोद लियाजाता है, इसको हमारे पाठक भलीभाँतिसे जानते हैं। पोकरणके सामन्त मृत्युके समय अजितके पुत्र देवीसिंहको क्यों दत्तकरूपसे गोद लेनेके लिये कहगये, उसके सम्वन्धमे महात्मा टाड् साहवने अनुमान किया है कि अजितके अनेक पुत्र थे इस कारण उनमेंसे एकको गोद लेनेमे राजवंशका ही सुभीता होगा, जव वह राजकुमार एक देशका सामन्त होजायगा, तव सभी आनन्दसहित रहसकैंगे, यही विचारकर उन्होंने यह आज्ञा दी थी। रजवाड़ेकी चिरप्रचलित रीतिके अनुसार जिस समय पुत्रके गोद लेनेपर मृतक सामन्तकी पगड़ी उसके शिरपर रक्खीजाती है उसी समयसे वह अपने जन्मदाता पिताको भूलजाता है। जिस सामन्तके आसनपर स्थित होता है उसीको अपना पिता मानता है। इस कारण अजितनंदन देवीसिंह जिसदिन पोकरणके सामन्तके यहां दत्तक हुए, उसी दिनसे राजपुत्रके समस्त अधिकारोंसे रहित होनेपर उनके हृदयमें एक विचित्र वासना उत्पन्न होनेलगी। यदि देवीसिंहको पोकरणके सामन्त गोद न लेते तो वह किसी समय भी मारवाड़के सिंहासनपर वैठनेके लिये एक मुहूर्त्तको भी आशा वा चिन्ता नहीं करसकते थे, परन्तु जव उन्होने मरुक्षेत्रके एक प्रवल सामर्थ्य-शाली सामन्तके पदको पाकर अपने पितृहन्ता दोनो भ्राता और उनके उत्तराधिकारियों को पिताके सिंहासन लेनेके लिये निरन्तर युद्ध करतेहुए देखा कि वह पिताके सिंहासनकी ओर कातर दृष्टिसे देखरहे है; तव उन्होंने भी राजदरवारमे अपनी प्रवल सामर्थ्यका विस्तार करके महाराज विजयसिंहको हस्तगत करनेकी चेष्टा की। महात्मा टाड् सावने इस स्थानपर एक विचित्र मत प्रकाश किया है, उन्होंने कहा है, "यदि मारवाड़के अधीश्वरने पुत्रहीन अवस्थामे प्राण त्याग किये हों, तो स्वाधीन ईडरराज्यके

(१) यह वात झूठी है देवीसिंह न महाराज अजितसिंहका बेटा था और न पोकरणमें दत्तक हुआ। वह पोकरणके ठाकुरका वेटा था।

(२) ईडर राज्य सियाजीके भ्राताके द्वारा अधिकृत कियागया था। पाठकोंको यह स्मरण होगा। ईडर राज मारवाड़के राजके अत्यन्त निकट जातिवाले होकर मारवाड़पतिके सिंहासनपर वैठनेके अधिकारी * हैं।

* यह नोट भूलसे लिखागया है क्योंकि न तो ईडर सियाजीके भाई द्वारा प्राप्त कियागया और न सियाजीके सम्वन्धसे ईडरवाले मारवाड़पतिके सिंहासनपर वैठनेके अधिकारी है। सही वात यह है कि पहले ईडरको सियाजीके दूसरे वेटे सोनगने जीता था, परन्तु उसकी औलादसे ईडर छूटगया था, वह महाराज अभयसिंहने वादशाहसे लेकर अपने भाई आनन्दसिंहको दे दिया था, इसी निकटस्थ सम्वन्धसे आनन्दसिंहके वंशज जोधपुरका राज्य पानेके अधिकारी थे।

अधीश्वरका पुत्र मारवाड़के सिंहासनपर बैठनेका अधिकारी है। ईडरके महाराजके यदि एक भी पुत्र उत्पन्न होजाय तो वह एक पुत्र ही मारवाड़के साथ ईडरराज्यमें मिलकर मारवाड़का राज्य करेगा और यदि मारवाड़के महाराजका कोई पुत्र किसी प्रकारके अपराधसे भी अपराधी न हो पर वह अन्य सामन्तके द्वारा दत्तकपुत्ररूपसे ग्रहण कियाजायगा, तो उसका सिंहासनके ऊपर कोई अधिकार नहीं होगा। यह नियम विचित्र है।" इस बातको हम कहसकते हैं कि कर्नल टाड् साहवके मतके अनुसार दत्तकपुत्र यदि फिर जन्मदाता पिताके सत्वका अधिकारी होजाय, तो हमारे शास्त्रीय विधानके मतसे दत्तक ग्रहणकी रीति अव्याहत नहीं होसकती

चांपावत्के नेता देवीसिंह, मारवाड राज्यमें मारवाड़पतिके ऊपर अधिकारकी रक्षा करनेके अभिलाषी होगये। 'जिससे मरुक्षेत्रके अन्य किसी सम्प्रदायके नेता उनके साथ प्रतियोगिता दिखाकर वा उनपर न्यायकी सामर्थ्य न चलासके'। चतुर देवीसिंह इसलिये आहवाके सामन्त और चांपावत् सम्प्रदायकी अन्यान्य शाखाओंको एकत्रित करके राज्यमें अतुल सामर्थ्य उपार्जन करनेलगे। राजदरबारमें प्रभुत्वके कारण देवीसिंहने अपनी सम्प्रदायमेंसे एक प्रवल वलशाली सेनाकी सृष्टि करके मारवाड़पति विजयसिंहके शरीरकी रक्षाके लिये आधी सेनाको किलेमें रक्खा और आधीको नगरमें रखदिया। इसी समयमें मारवाड़के चारोंओर अराजकता और पर्वतियोंके द्वारा प्रजाके ऊपर अत्याचार, तथा राठौरके सामन्तोंको स्वेच्छाचारी देखकर विजयसिंहने अत्यन्त व्यथित हृदयसे शोक प्रकाशित किया,—"पोकरणपति देवीसिंहने कहा, "हे महाराज! मारवाड़के लिये आप इतनी चिन्ता क्यों करते हैं, आप यह निश्चय जानिये कि मेरी तलवारके म्यानके भीतर ही मारवाड़का सिंहासन है"।

सामन्तोंको तथा विशेष करके देवीसिंहको प्रवल सामर्थ्य चलाते, तथा मारवाड़के चारोंओर अशान्तिका विस्तार होतेहुए देखकर राजा विजयसिंह अपने मनही मनमें महा दुःखित होनेलगे। उद्धतस्वभाव सामन्तोंका दमन और अपनी प्रवल शक्तिका विस्तार यह उनको एकमात्र कर्त्तव्य होगया; परन्तु उन्होंने ऐसा कोई उपाय न देखा कि जिससे वह इस मनोरथको सिद्ध करसकते। पाठकोंको अवश्य ही विदित होगा, कि रजवाड़ेके राजकुमारोंकी धात्रियोंको देशमें अधिक सम्मान और पृथ्वी तथा वहुतसा धन दियाजाता था। राजकुमार भी उस धात्रीका माताकी समान सम्मान करते थे। उस धात्रीके गर्भसे उत्पन्नहुए पुत्र राजकुमारोंके भ्राता अर्थात् धाभाई नामसे विख्यात् होते थे। इन धाभाइयोंने अवस्थाके आते ही राज्यमें ऊँचे पद पर अधिकार करलिया। महाराज विजयसिंहकी धात्रीका एक पुत्र था उसका नाम जग्गू था। इसने विजयसिंहका धाभाई होकर राज्यमें अधिक सम्मान पाया। यह जग्गू विशेष सावधान और दूरदर्शी मनुष्य था, उसने

(१) ऐसा नियम मारवाड़में नहीं है और न कभी हुआ।

विजयसिंहको भी अपने उपदेश और सलाहोंसे सावधान और दूरदर्शी करदिया। विजयसिंह जग्गूमे जिस भाँतिकी श्रद्धा करते थे, उसी प्रकारसे उसको एकमात्र अपना हितैषी जान संकटके समयमें उसीकी आज्ञाके अनुसार कार्य करते थे। विजयसिंहने जग्गूसे धीरे २ अपनी शोचनीय अवस्थाका समस्त वृत्तान्त कहदिया, यह सुनकर जग्गूने उनको भलीभाँतिसे धीरज बँधाया। चतुर जग्गूने प्रवल सामन्तमंडलीके साथ प्रगटमें मिलकर उनकी अवलम्बित नीति और कार्यमे दृढ़ समर्थन करके उन्हे धोखा दिया, कोई भी किसी प्रकारसे न जानसका कि जग्गूने उनकी शक्तिको घटानेके लिये भीतर ही भीतर कैसा कांड उपस्थित किया है। बुद्धिमान् जग्गू महाराज विजयसिंहके प्रताप, प्रभुत्वका विस्तार तथा उसके साथ ही साथ सामन्तोकी सामर्थ्यको लोप करनेके लिये एक नवीन अनुष्ठान करनेलगा। रजवाड़ेमें जो रीति किसी समयमे भी प्रचलित नहीं थी, जिसका अनुष्ठान सामन्त शासन रीतिके सम्पूर्ण विपरीत था, जग्गूने उसीके अनुष्ठानसे अपने उद्देशको पूर्ण करनेका उद्योग किया।

बिना किसी प्रबल युद्धके हुए अन्य समयमे अफीमका सेवन करके राजपतलोग केवल आलस्यके वश होकर समय व्यतीत करते थे। विशेप करके राजपूतोंकी जातीयशक्ति इस समय एकबार ही विपरीत होगई थी। जग्गूने स्वजातिको अत्यन्त आलसी देखकर सामन्तोके निकट यह प्रस्ताव किया, कि "राजधानी की रक्षाके लिये एक वेतनभोगी सेना रक्खीजाय, वही सब आज्ञाओंका पालन करै, आप इच्छानुसार रहसकते हैं, तथा आपकी सेनाको वृथा कार्य करना नही होगा।" आलसी सामन्त इस बातको न समझे कि चतुर जग्गू हमारी ही सामर्थ्य की जड़मे कुल्हाड़ी मारनेके लिये नवीन सेनाके तैयार करनेको उद्यत हुआ है। सामन्तोंने सरलस्वभावसे जग्गूके इस प्रस्तावमें अपनी सम्मति देदी। विशेष करके प्रकाशमे जग्गूको इस प्रकारकी रीतिसे कार्य करतेहुए देखकर सामन्तोने विचारा कि यह हमारे हितका करनेवाला है, इसीसे नवीन सेनाको तैयार करनेके लिये कहता है। जग्गूने सामन्तोको यहांतक अपने हस्तगत करलिया था कि उसने नवीन सेनाके वेतनको भी इन्हींसे लेना स्वीकार कराया। इस प्रकारसे जग्गूने अपनी कूट राजनीतिके जालका विस्तार कर सिन्धुदेशके कईसौ मनुष्योको अपनी उस नवीन सेनामे रखलिया। मरुक्षेत्रमे राठौर शासनमे मासिक वेतनभोगी विजातीय सेनाकी यही प्रथम सृष्टि हुई थी। हम यह नही कहैंगे कि राजपूत राजा अपने अधीनमें स्थित सामन्तोंको सेनाके अतिरिक्त विदेशीय और किसी सेनाको नही रखते थे; रजवाड़ेके सभी राज्योंमें विदेशीय राजपूत ही सेनारूपसे नियत होते आये थे, परन्तु इनको किसी समय भी मासिक वेतन नहीं देनी पड़ी थी, वेतनके वदलेमें उनको भूवृत्ति दीजाती थी। जग्गूने जिस नवीन सिंधी सेनाकी सृष्टि की यह सभी पैदल थीं। यह पश्चिमी युद्धकी रीतिके अनुसार बहुतसी शिक्षा पाई हुई थी। महात्मा टाड् साहवने कहा है कि जिस कारणसे मारवाड़मे

इस वेतनभोगी सेनाकी सृष्टि हुई थी, उदयपुर और जयपुरके दोनो अधीश्वरोंने भी उसी कारणसे इस प्रकारकी वेतनभोगी सेनाकी सृष्टि की। इस वेतनभोगी सेनाकी सृष्टि होनेसे समस्त राजस्थानसे सामन्त शासनकी मूल नीति एकवार ही छोड़ दीगई।

जग्गूने जिस नवीन सेनाकी सृष्टि की, उनमे राजपूत, सिन्धी अरब और रुहेले गणोंके दलके दल नियत हुए। वह सेना सामन्तोंके अधीनमे न रहकर मारवाड़के महाराजकी आज्ञामे रहनेलगी। मारवाड़के महाराज उन शासनसंक्रान्त राजपुरुषोंकी आज्ञा पालनके लिये नियुक्त करके उन राजपुरुषोंके द्वारा उस नवीन सेनादलके ऊपर आज्ञा चलानेमे प्रवृत्त हुए। थोड़े ही समयमे उस नवीन सेनाका बल ऐसा प्रबलहोगया कि सामंत मण्डली उनकी उपस्थितिमे अपनी सामर्थ्य और शक्तिको लोप होताहुआ देखकर महा असंतुष्ट हो अपना अमंगल विचारनेलगी। इसी कारण उनका उस नवीन सेनादलके साथ नित्य झगड़ा होनेलगा। महात्मा टाड् साहब लिखते है, कि " जिस उद्देश्यके वश होकर विजयसिंहके शासन समयमे मारवाड़मे वेतनभोगी सेना रक्खी गई थी, उसी उद्देश्यके साधनसे अर्थात् प्रबल प्रतापशाली सामन्तोको दमन करने और आवश्यकता पड़नेपर स्थान २ पर सामन्तोंकी सामर्थ्यको एकवार ही लुप्त करनेके लिये मेवाड़ जैपुर और कोटा इत्यादि राज्योमे भी इसी भाँति वेतनभोगी सेनारक्खी गई थी, परन्तु एकमात्र कोटेके अतिरिक्त अन्य किसी राजपूत राज्यमे इस वेतनभोगी सेनाके द्वारा कोई उद्देश्य सिद्ध नही हुआ। एकमात्र कोटेके महाराजने ही इस वेतनभोगी शिक्षित सेनाको रखकर अपने उद्देश्यको पूर्ण करलिया। "

राजा विजयसिंहके धा भाईने सातसौ विदेशीय सैनिकोको रखलिया, और सामन्तोसे ही उनका वेतन संग्रह कर पहले उस सेनाको शासनकर्ताके अधीनमे नियुक्त रखकर शेषमे क्रम २ से वह उसको किलेकी रक्षामें रखने लगा। उस समय भी सामन्त यह न जानसके कि जग्गूने किस उद्देशको सिद्ध करनेके लिये इस नवीन सेनाकी सृष्टि की है। मारवाड़के महाराज विजयसिंह इस सेनाकी सहायतासे पुष्ट होकर अपने धाभाई और दीवान फतेचंदके साथ सलाह करके मरुक्षेत्रके चारोओर फैलीहुई भयकर अराजकता और अत्याचारको दूर करके राज्यमें शान्तिकी स्थापना करनेके लिये तैयार हुए। परन्तु महाराजका खजाना इस समय इतना खाली होगया था कि उससे शान्ति स्थापन और पहाड़ियोंको दमन करनेके लिये आवश्यकता होनेपर खर्चका चलना कठिन होगया। तथापि विजयसिंहके मंगलसाधनके लिये धाभाई जग्गूने इतना यत्न किया था कि वह उस दुःसमयमे भी किसी उपायसे उस प्रयोजनीय धनको संग्रह करनेमे क्षान्त न होसके। जग्गूकी माता विजयसिंहकी धात्री थी, इसी कारण उसको बख्तसिंहके पाससे पाँचहजार रुपये मिला करते थे। जग्गूने विजयसिंहके लिये अपनी मातासे उस धनको मांगा और साथमे यह भी कहदिया कि यदि तू रुपये न देगी तो मैं आत्मघात करके मरजाऊंगा। इस प्रकारका भय दिखानेपर माताने तुरन्त ही पुत्रके प्राणकी रक्षाके लिये पचासहजार

रुपये देदिये। जग्गूने उस धनको पाकर राज्यमे शान्ति स्थापन और पहाड़ियोंको दमन करनेके लिये सम्पूर्ण तैयारी करदी। दुर्भाग्यका विषय है कि इस समय मारवाड़मे घोड़ोंका यहाँतक लोप हुआ कि जग्गूकी नवीन सेनाके लिये बहुतसे घोड़ोंकी आवश्यकता थी परन्तु घोड़ोंका मिलना कठिन होगया तब यह सातसौ सैनिकों-को गाडियोंपर चढ़ाकर नागौर राज्यमे ले आया। अश्वारोही सेनादलको शकटों पर चढ़कर जाना अत्यन्त अप्रीतिकारक था। परन्तु नीतिज्ञ जग्गूकी आज्ञासे उन्होंने घोड़ोंके न मिलनेसे नागौरतक उसी सवारीपर चढ़कर जानेमें कुछ उजर न की। जग्गू जिस समय वेतनभोगी सेनाको नागौरमें लेगया उस समय सामन्तोंने इसका कारण पूछा, इसने उसी समय उत्तर दिया कि पहाड़ियोंको दमन करनेके लिये इस सेनाको लियेजाते हैं जग्गूके ऊपर सामन्तोंका उस समय भी पूर्ण विश्वास था, इस कारण वह इसके वचनको सत्य मानकर मौन होगये। इधर जग्गूने उस सेनाको नागौरमें लाकर वहांके किलेके ऊपर जो कईसौ तोपै रक्खीहुई थीं उनको उतारकर शीघ्रतासे पहाड़ियोंको दमन करनेके लिये गमन किया। अत्याचारी पर्वती इस सेनादलसे शीघ्र ही परास्त होगये। उनको उचित दंड देकर विजयसे गर्वितहुए जग्गूने सेनासहित आ थलनगरी नामक स्थानके किलेपर धावा किया। उस किलेपर आक्रमण करते ही सामन्त समझगये कि जग्गूने इतने दिनोंतक किस प्रकारकी चातुरी जालका विस्तार करके हमारे नेत्रोंमें धूल डालकर हमारा ही सर्वनाश करनेके लिये इस नवीन सेनाकी सृष्टि की है। उस किलेपर अधिकार करते ही मरुक्षेत्रके समस्त सामन्त अपनी भावी विपत्तिके लक्षण देखकर भयभीत हो अपने स्वार्थ, सामर्थ्य और शक्तिको पहलेकी समान अक्षतभावसे रखनेके लिये, जोधपुर राजधानीसे दशकोस पूर्वको, बीसलपुरनामक स्थानमें इकट्ठे हुए; और विजयसिंहके विरुद्ध सम्मति करने लगे।

सामन्त मंडलीको एकत्रित होते देखकर विजयसिंह अत्यंत भयभीत हुए। धाभाई जग्गूने जिस नीतिका अवलम्बन किया है, इससे हमारा मनोरथ पूर्ण न होगा, वरन् इसके विपरीत फल होनेके लक्षण दिखाई देरहे हैं, यह विचारकर वह अत्यन्त ही व्याकुल होगये, और सामन्तोंके क्रोधको शांत करनेका विचार करनेलगे। खींची जातीय गोर्धननामक एक विदेशीय राजपूतवीर अपने बाहुबल तथा वीरता और नीतिज्ञतासे मृतक महाराज वख्तसिंहका परम प्रियपात्र होगया था। वख्तसिंहका वह अत्यन्त विश्वासी था। अनुगत और प्रबल बलशाली वीरको देखकर वख्तसिंह मृत्युके समय उसको विजयसिंहके अधीनमें रहनेके लिये अंतिम आज्ञा देगये थे, उस बुद्धिमान गोर्धनको बुलाकर महाराज विजयसिंहने पूछा कि इस महाविपत्तिके समय अब क्या करना उचित है? गोर्धन सामन्तोंके चरित्र और उनके मनके अभिप्रायको भलीभाँतिसे जानता था, अतः वह यथार्थ राजपूतोंके समान विजयसिंहसे बोला "कि सामन्तोंके हृदयमें क्रोधानलका प्रज्वलित

---

(१) इसको विदेशीय गलत लिखा है यह मारवाड़का रहनेवाला था।

करना किसी प्रकार भी उचित नहीं है, उनका पदोचित सन्मान करके और न्यायमतसे सामर्थ्य देकर उनके साथ सद्भावसे रहना तथा राज्यशासन करना यही यथार्थ राजनीति है, नहीं तो राज्यकी भुजा स्वरूप उन सामन्तोको असन्तुष्ट कर उनकी न्यायसामर्थ्यके लोप करनेसे घोर अनिष्टकी संभावना है। आप सेनाको साथ न लेकर उन सामन्तोके समितिस्थानमे जाकर उनको मधुर वचनोसे संतुष्ट करनेकी चेष्टा कीजिये। जब यह आपके अनुगत रहैंगे तब राज्यका कोई अमंगल न होसकेगा। गोर्धन विजयसिंहको यह सलाह देकर महाराजको साथ ले शीघ्र ही उन क्रोधित सामन्तोंके डेरोमे गये।

तरुण अरुणोदयके साथ ही साथ वीरश्रेष्ठ गोर्धन उन सामन्तोके डेरोमे जा पहुँचा। इसने शीघ्र ही उस सामन्त समितिमे जाकर कहा "आपके महाराज प्रभु विजयसिंह आपकी राजभक्तिके ऊपर पूर्ण विश्वास स्थापित कर आपसे मिलनेके लिये आये हैं, इस कारण आप भी आगे बढकर महाराजका यथोचित सम्मान कर उनको अभिनन्दन करनेके लिये चलिये। गोर्धनके इस प्रकार विनीतभावसे बारम्बार अनुरोध करनेपर भी कोई फल दिखाई न दिया। सामन्त विजयसिंहसे अधिक रुष्ट होगये थे, इस कारण उनके स्वार्थ साधनके लिये स्वभावसिद्ध राजभक्तिको प्रकाश करनेके लिये वे एक पग भी आगे न बढे। गोर्धनने कार्यमे सफलता न देखी तब अपने डेरोमे आकर सुना कि महाराज विजयसिंह उसकी सलाहसे इकले आरहे है, इस कारण वह तुरन्त ही उन सामन्तोसे तिरस्कार किये हुए महाराज विजयसिंहको मरुक्षेत्रके सबमे प्रधान सामन्त आहवापतिके डेरोमें लेगया तुरन्त ही और भी सब सामन्त इसके डेरोमे आये। सबके इकट्ठा होते ही महाराज विजयसिंहने सबसे पहले यह प्रश्न किया, "सामन्तोने किस कारणसे हमैं छोडदिया है?"

चांपावत् सम्प्रदायके नेताने तुरन्त ही उत्तर दिया कि "महाराज! हमलोग अनेक सम्प्रदायोमे है पर भिन्न २ देहधारी होकर भी हमारा मस्तक एक ही है, यदि हमारा कोई दूसरा मस्तक होता तो उसको आपके अधीनमे अर्पण करते।" इस उत्तरके पीछे बराबर तर्कवितर्क होतारहा। इस बातसे विजयसिंहका अभिप्राय पूर्ण होना कठिन होगया। अतमे दीर्घ तर्कवाद और आन्दोलनके पीछे व्याकुल होकर महाराज विजयसिंहने कहा, 'किस प्रकारकी व्यवस्था करनेसे सामन्तमंडली पहलेकी समान हमारी अनुगतता स्वीकार कर राज्यमे सुशासन और शान्ति स्थापन करनेमे सम्मत होसकेगी, मै इसके जाननेकी इच्छा करताहूं।' राजाके इस प्रश्नपर सामन्तोने उसी समय तीन प्रस्ताव उपस्थित किये,-

१-बाभाईके अधीनमे जो वेतनभोगी सेना है उसके अस्त्र छीन लियेजॉय, तथा उसे सर्वदाके लिये विदा देनी होगी।

२-राजाको पट्टा वही हमारे हाथमे देनी होगी।

३-किलेके बदले नगरमे राजकार्य किये जॉयगे।

महाराज विजयसिंहने सामन्तोके इन तीनों प्रस्तावोंको सुनकर विचारा कि सामन्त

जिस भावसे उत्तेजित हुए है और सबने एक सम्मतिमे बँधकर जिस भावसे भावी अनिष्ट साधनके पूर्व आभासको प्रकाश किया है, इससे इन तीनों प्रस्तावोमे यदि अपनी सम्मति प्रगट नहीं करताहूं तो अवश्य ही राज्यमे आत्मविग्रह उपस्थित होजायगा, मारवाड़ विध्वंस होजायगा, सिंहासन चंचल हो उठैगा, अशान्तिका स्रोत प्रबल वेगसे बहने लगेगा। विशेष विचार करनेके पीछे महाराज विजयसिंहने सबसे पहले पहल प्रस्तावके कार्यको पूरण करादिया। धाभाईके अधीनकी सेना जो प्रबल होगई थी इसीसे सामन्त अधिक क्रोधित हुए थे, इस कारण उन्होंने शीघ्र ही सेनाको विदा देनेकी आज्ञादी, सामन्तोके पहले और तीसरे प्रस्तावमे महाराजको कुछ भी आश्चर्य न हुआ और न वह कुछ असंतुष्ट हुए; परन्तु दूसरे प्रस्तावसे राज्यशक्तिको घटता हुआ देखकर वह अत्यन्त ही खेदित हुए। भूवृत्तिका देना अथवा भूस्वामीके ऊपर अधिकारका चलाना राजाकी प्रधान शक्ति है, सामन्तोने उसी शक्तिकी जड़मे कुठाराघात किया है इससे विजयसिंह अत्यन्त ही व्यथित हुए। परन्तु क्रोधित सामन्तोको संतुष्ट करनेके लिये अन्य उपाय न देखकर उसमें भी उन्होने अपनी सम्मति दी। इस प्रकारसे सामन्त मंडलीके नेता अपने स्वार्थकी रक्षा कर अपनी पूर्व सामर्थ्यको पाकर संतुष्ट चित्तसे अपने २ निवासस्थानको चलेगये, परन्तु चांपावत् सम्प्रदायके नेता अपनी सेना लेकर पहलेकी समान विजयसिंह और स्वदेशके ऊपर पूर्ण सामर्थ्य चलानेके लिये अधीश्वरोके साथ राजधानी जोधपुरमे आये।

गोर्धनकी सलाहसे इस भाँति क्रोधितहुए सामन्त उद्धत भावको छोड़कर पहलेके समान चुपचाप हुए। इसके कुछदिन पीछे महाराज विजयसिंहके गुरु आत्मारामको संघातिकपीड़ा उपस्थित होगई। विजयसिंह अत्यन्त गुरुभावसे मृत्युके मुखमे पतित गुरुदेवके निकट गये, गुरुदेवने मृत्युके समय विजयसिंहको अभय देकर कहा, "महाराज! कुछ चिन्ता न कीजिये; मेरे प्राण त्यागनेके साथ ही साथ आपके सम्पूर्ण शत्रुओंका जीवन नष्ट होजायगा"। गुरुदेवके प्राणत्याग करते ही धाभाई जग्गूने विजयसिंहके निकट गुरुकी उस उक्तिके अर्थकी व्याख्या करदी। धाभाईकी इस व्याख्याको एकमात्र विजयसिंहने ही जाना, और किसीने किंचित भी न पाया। इन पारत्रिक मंगलविधाता गुरुदेवके स्वर्ग चलेजानेसे महाराज विजयसिंह प्रकाशमें विषम शोक प्रकाश करने लगे; और गुरुके प्रति अचल भक्ति दिखानेके लिये समस्त सामन्तोमें यह प्रचार करादिया कि, राजधानीके किलेमे गुरुदेवकी प्रेतक्रिया होगी, इस आज्ञाके प्रचारित होते ही राजरानी और राजाके अन्तःपुरकी अन्यान्य स्त्रिये गुरुदेवके प्रति भक्तिप्रकाश करनेका बहाना करके बहुतसी सेना और सहचरोसे युक्त हो उस किलेमे आतीहुई दिखाई दी। वह सेनादल और सहचरगण मानो उन राजबालाओंके शरीरकी रक्षा करनेके लिये आये। पहले ही विजयसिंहकी आज्ञासे सामन्तोके निकट आदमी भेजे गये थे। इस कारण वह भी राजगुरु आत्मारामकी मृतक आत्माके प्रति सम्मान दिखानेके लिये किलेमे आनेलगे। वह उस समय भूलसे भी यह नहीं जानसके थे कि

गुरुदेव मृत्युके समय क्या आज्ञा देगये है, धाभाई जग्गूने उस आज्ञाकी क्या व्याख्या की है और महाराज विजयसिंहने किस अभिप्रायसे किलेके भीतर गुरुके क्रिया कर्म होनेकी आज्ञा दी है, इस कारण वह लोग निर्भय होकर आनेलगे। इस शोकके समयमें नरेश्वर किसी प्रकारके चातुरीजाल तथा षड्यन्त्रका विस्तार करके सामन्तोका कोई अनिष्ट करेंगे इस सम्वन्धमें कोई भी सन्देह न करसका, और यदि किसीके मनमे यह सन्देह उपस्थित भी हुआ हो तो उसे कहनेका साहस न हुआ।

यह तो हमारे पाठकोको विदित ही है कि जोधपुरका किला पर्वतोके ऊपर स्थापित था। उन पहाड़ोंको खोदकर किलेपर जानेके लिये सीढ़ियां वनाई गई थीं। सामन्तोमें अग्रणीय देवीसिंह अन्यान्य सामन्तोंके साथ जैसे ही उन सीढ़ियोपर चढ़े कि वैसे ही सहसा उनके हृदयमें अमंगलकी चिन्ता उदय हुई। इन्होने कहा, "आज मै सुलक्षण नहीं देखता हू।" पासके सभी सामन्त धीरज वँधातेहुए वोले, "आप मरुक्षेत्रके स्तभस्वरूप हैं, ऐसा किसमे साहस है जो आपकी ओरको आंख उठाकर देखसके ?" सामन्तमण्डलीने धीरे धीरे किलेमे प्रवेश किया। परन्तु प्रवेश करते ही उन्होने देखा कि पीछेके नक्कारेका द्वार बंद होगया, तुरन्त ही सभी एकस्वरसे भयभीत हो कह उठे, "यह विश्वासघातकता!" कुछ कालमें आहवाके सामन्तने अपनी कमरसे तलवार निकालकर राजसेनाका संहार करना प्रारंभ करदिया। परन्तु राजाकी ओर की अधिक सेना थी, विशेष करके सभी सामन्त निशंकचित्तसे अपनी २ सेनासहित नहीं आये थे, इस युद्धमें कई एक सामन्त मारेगये, और सव धाभाईकी सेनाके द्वारा वंदी होगये। वंदी होते ही वीर सामन्त सरलतासे समझ गये कि, हमारे भाग्यमे क्या होगा। इस षड्यन्त्रका विस्तार करनेवाले धाभाईने विजयके गौरवसे अहंकारके वशहो उन वंदी सामन्तोसे कहा कि "आपलोग जीवनका वलिदान देनेके लिये तैयार होजाओ।" असीम साहसी राजपूतसामन्त मृत्युसे भय करना वचपनसे ही नहीं सीखे इस कारण वे धाभाईके वचनसे कुछ भी विचलित नहीं। हुए उन्होने केवल यही कहा कि "हम राजपूत हैं, राजाकी समान सम रक्तवाही राठौर है इस कारण हमारा अंतिम कहना यही है, कि हमारा जीवन इस वेतनभोगी सेनाकी वदूककी गोलियोंसे नष्ट न किया जाय, तलवारके द्वारा हमारा मस्तक काटकर वीरोंकी समान हमारी आत्माको छुटकारा देना चाहिये।" वास्तवमें वंदी सामन्तोंकी यह अभिलाषा पूर्णकी गई थी या नहीं, विजय विलास ग्रंथमें इसका कोई उल्लेख दृष्टि नहीं आता, धाभाईकी आज्ञानुसार शीघ्र ही चांपावत् सम्प्रदायके तीन प्रधान नेता, आहवाके जगतसिंह[1], पोकरणके देवीसिंह, हरसोलावके सामन्त, कूंपावतके नेता चद्रसिह, चन्द्रायणके केसरीसिंह, निमाजके सामन्तकुमार, रासके सामन्त और ऊदावत् गणोके प्रधान २ नेताओका जीवन नष्ट कियागया[2]। परन्तु

(१) उर्दू तर्जुमेमें अजीतसिंह लिखा है।

(२) गद्य इतिहासमें इनमेंसे किसी भी सरदारका मारा जाना नहीं लिखा है। इसके अनुसार पोकरणका देवीसिह महासिंहोत, आसोपका कूंपावत् चरणसिंह, रासका केसरीसिंह ऊदावत्—

देवीसिंहकी अंतिम अवस्थाका वृत्तान्त जैसा हृदयभेदी है उसी प्रकार राजपूतवीरोचित गर्वका प्रकाशक भी है। देवीसिंह महाराज अजितसिंहके औरसजातपुत्र थे, इस कारण उस राजरक्तधारीको गोली अथवा तलवारसे मारनेमें किसीको भी साहस न हुआ। अंतमें एक बड़ेपात्रमें विषमिलाहुआ अफीमका पानी उनके पास भेज दिया गया और उन्हें यह आज्ञा मिली कि तुमको यह सब पानी पीकर प्राण त्यागने होंगे, परन्तु देवीसिंह इस आज्ञाको सुनते ही क्रोध उन्मत्तहुए सिंहकी समान उस बंदी दशामें ही हुंकार करके बोले; "क्या देवीसिंह इस मट्टीके पात्रमें अफीम सेवन करेंगे? मेरा सुवर्णका पात्र ला दो मैं इसी समय इस सब अफीमको सेवन करके राजाकी आज्ञाका पालन करूंगा"। परन्तु बंदी देवीसिंहकी वह प्रार्थना पूर्ण न की गई; उन्होंने तुरन्त ही अफीमके पात्रको दूर फेंकदिया, और पत्थरकी दीवारपर अपने शिरको देपटका, मस्तकके चूर्ण २ होते ही उनके प्राण पयान करगये। महात्मा टाड् साहब लिखते हैं कि इस प्रकारसे आत्महत्या करनेके पहले देवी सिंहसे एक मनुष्यने पूछा "आपकी जिस तलवारमें मारवाड़का सिंहासन स्थित है वह तलवार इस समय कहाँ है?" इसपर उस वीरने तुरन्त ही उत्तर दिया "इस समय वह तलवार पोकरणमें मेरे पुत्र सवलसिंहकी कमरमें बँधी हुई है"।

महाराज विजयसिंह उद्धतस्वभाव सामन्तोंमें सबसे प्रधान नेताओंको इस प्रकारसे संहार करके निर्विघ्नतासे अपनी शासनशक्तिका विस्तार कर राज्यमें शान्तिस्थापनका उद्योग करनेलगे। परन्तु धाभाई जग्गूके उपदेश और परामर्शसे ही इन सामन्तोंके प्राण नाश हुएथे—जो सामन्तवंश चिरकालसे मरुक्षेत्रके लिये युद्धमें जीवनदान करके राजभक्तिकी पराकाष्ठा दिखाते आये हैं, उन्हीं सामन्तवंशके प्रति इस प्रकारका हृदयभेदी आचरण करके, इससे कुछ भी संदेह नहीं कि, उन्होंने अपने दुर्बल हृदयका परिचय दिया। यदि वह अपने पिताके समान प्रभावशाली साहसी, नीतिज्ञ और पराक्रान्त होते तो उद्धत सामन्तोंको इस भावसे न मारते, और किसी उपायसे उनको दमन करके अपनी अभिलाषाको पूर्ण करसकते थे, अन्य पक्षमें हम यह भी कहसकते हैं कि सामन्तमंडली यदि विजयसिंहको हीन-बल देखकर अपने राज्यमें अतुल शक्तिके विस्तारसे राजाकी सामर्थ्यको घटाकर तथा चारोओर इच्छानुसार अत्याचार न करती, तो कभी भी उनके भाग्यमें इस प्रकारकी शोचनीय अवस्था नहीं होसकती और न उनको इस बंदीभावसे प्राणत्याग करनेपड़ते। यद्यपि इस स्थानपर विजयसिंहका धाभाई जग्गू ही इस मरु-क्षेत्रके स्तंभस्वरूप प्रधान २ सामन्तोंके प्राणनाशका कारण स्वरूप कहकर निन्दित

—और नीमाजका दौलतसिंह ये चार सरदार कैद किये गए थे। इनमेंसे २४ दिन पीछे देवीसिंह एक महीने पीछे छत्रसिंह और तीन वर्ष पीछे केसरीसिंह कैदमें ही मरे और दौलतसिंहको महाराजने छोड़ दिया था, क्योंकि वह इन तीनोंके बराबर कसूर वार नहीं था।

(१) देवीसिंह अजीतसिंहका पुत्र नहीं था पोकरणके ठाकुर महासिंहका बेटा था।

होसकता है, परन्तु यदि हम विशेष विचार करके देखते है तो अवश्य ही हमे यह मानना होगा कि धाभाईने केवल निस्वार्थभावसे एक उद्देश साधन करनेके लिये यह संहारमूर्ति धारण की थी। विजयसिंहकी जिससे शक्ति और सामर्थ्यका विस्तार होजाय, उद्धत सामन्तोके अत्याचार जिससे दूर होजाँय, राज्यमे जिससे फिर शान्ति स्थापित होजाय, जग्गूने केवल उसी लिये इस चातुरीजालका विस्तार कर विजयसिंहके राज्यके कण्टकस्वरूप सामन्तोंका जीवन समाप्त करदिया। यदि सामन्तमण्डली विजयसिंहकी राजसामर्थ्यको लुप्त करनेमें अग्रसर न होती, यदि राज्यमे अन्यायके अतिरिक्त आधिपत्यके विस्तारमे यत्न न करते, तो जग्गूके द्वारा यह शोचनीय अनुष्ठान अवश्य ही तीक्ष्ण समालोचनाके योग्य होजाता। धाभाई जग्गूने इस स्थानपर अन्य उपायके अभावसे ही एकमात्र निःस्वार्थभावसे जब कि इस कार्यका अनुष्ठान किया, तब उसको पूर्ण अपराधी मानना ठीक नही है। इस प्रकारसे राजनैतिक उद्देशको साधन करनेके लिये विलायत वासियोमे केवल सामन्तोका ही क्यों वरन् राजाओके जीवनका भी नाश होजाता था, यह इतिहास कुछ पाठकोसे छिपा नहीं है। परन्तु हम यह भी अवश्य कह सकते हैं कि विजयसिंह यदि अपने पिताकी समान सभी गुणोसे विभूषित होते तो कभी भी इनको इस प्रकारके उपायसे उद्देश पूर्ण नहीं करना पड़ता। विजयसिंह युवा अवस्थामे अत्यन्त हीनबल होगये थे, इसी कारण देवीसिंह इत्यादि सामन्तगण इस प्रकारसे मस्तक उठानेमें समर्थहुए।

देवीसिंहने इस शोचनीय रूपसे प्राण त्याग किये। बड़ी शीघ्रतासे यह समाचार पोकरणमे उनके पुत्र सबलसिंहके कानमे पहुँचा। सबलसिंह अपने पिताकी समान महातेजस्वी और वीर थे। विजयसिंहने इनके पिताको चातुरीजालमे बाँधकर उनके प्राण लिये है यह सुनते ही मानो उसके शरीरसे आगकी चिनगारियां निकलनेलगीं। वह किंचित् भी विलम्ब न करके पोकरणके सम्पूर्ण वीरोको अपने साथ ले अपने पितृहन्ता विजयसिंहको उचित फल देनेके लिये रुद्रमूर्त्तिसे चला। सबलसिंहने सबसे पहले रजवाड़ेके अन्यतर वाणिज्यप्रधान पालीनगरको लूटकर उसको अग्निद्वारा भस्म करदियां। परन्तु इससे उनका वह मनोरथ पूर्ण न हुआ। वह तुरन्त ही क्रोधित हुए केसरीकी समान लूनी नदीके निकट प्रसिद्ध समृद्धिशाली वाणिज्यस्थल बीलाड़ापर भी आक्रमण करनेके लिये आगे बढ़े। परन्तु इस स्थानपर भी उनको वह कामना पूर्ण न हुई; वरन् उनको इसका विपरीत फल मिला। बीलाड़ा नगरके प्राकारको उल्लंघन करनेकी चेष्टा करते ही प्रज्ज्वलित गोलेके आघातसे उसने इस संसारको त्यागकिया। दूसरे दिन इसकी देह उस लूनी नदीके किनारे भस्म कीगई।

विजय विलास ग्रथसे जानाजाता है कि उन सामन्तोके प्राणत्याग करनेके पीछे मारवाड़के भाग्यका चक्र मानो फिर बदलगया। सामन्तोके अन्यायके अतिरिक्त शक्ति चलानेकी इच्छाके दूर होते ही सरलतासे अराजकता निवृत्ति हो, फिर वाणिज्यस्रोतकी

(१) उर्दू तर्जुमेमें लिखा है कि पाली लूटनेका इरादा किया था, परन्तु पूरा नहीं हुआ।

वृद्धि प्रजा साधारणकी दैन्य अवस्था धीरे २ बदलनेलगी। राठौरकविने लिखा है कि "प्रजाके निर्भय शांति संभोग करनेसे शेर बकरी एक घाटपर जल पीनेलगे।" कविकी इस उक्तिसे भलीभाँति जानाजाता है कि सब सामन्तोंने उद्धत आचरणसे उनकी राजशक्तिकी तीक्ष्णताका साधन किया था, उनके अविद्यमान रहनेपर वह स्वच्छन्दता-पूर्वक फिर राज्यमे शांतिस्थापन करनेके लिये समर्थ हुए। यद्यपि राजाविजयसिंह उद्धत सामन्तोंके प्राण संहार करके साधारण सामंतश्रेणीके विरागभाजन हुए थे, परन्तु उन्होंने फिर अपनी सामर्थ्य पाकर तथा बराबर २ कईएक प्रयोजनीय युद्धोमे उन सामन्तोको रखकर अत्यन्त ही अल्प समयमे उनके हृदयमे स्वभावसिद्ध राजभक्ति को प्रबल करदिया। राजा पहलेकी समान उनके प्रियपात्र होगये, विजयसिंहकी अवस्था अत्यंत अल्प थी, इसीसे असीम साहसी महावीर सामंतोने उनकी सामर्थ्यको घटाकर अपने प्रभुत्वको बढ़ानेका यत्न किया था। परन्तु अवस्थाकी वृद्धिके साथ ही साथ विजयसिंहके चरित्र भी बदलने लगे। उन्होने अपने पिताकी समान फिर राजनैतिक क्षेत्रमे प्रशंसनीय अभिनय आरंभ करदिया। उनके बल विक्रमकी पूर्ण मूर्तिने तीक्ष्ण किरणजालका विस्तार करना आरंभकिया। विजयसिंहने निष्कंटक होकर सामन्त और सेनाके साथ शीघ्र ही मरुक्षेत्रके अत्याचारी दस्युस्वरूप खोसा और सराईजातिके विरुद्ध युद्धके लिये पयान किया। इन दोनों जातियोंके दमनसे सिन्धुदेशके नाममात्र अधीश्वरोके साथ भी उनका महासंग्राम हुआ। परन्तु विजयसिंहने उस युद्धमे सम्पूर्ण जय प्राप्त करके सिन्धुदेशके द्वारस्वरूप विख्यात् अमरकोटके किलेपर अधिकार करलिया। यह अमरकोट मारवाड़राज्यकी शेप सीमारूपसे परिणतहुआ।

मारवाड़पति विजयसिंहका भाग्य इस समय अत्यन्त प्रसन्न होगया। उनके बल विक्रमकी ऊँची प्रशंसा इस समय चारोओर गुंजारने लगी। उन्होंने विजय दर्पित हृदयसे उस विजयी सेनादलके साथ शीघ्र ही मारवाड़की सीमाका जो अंश जेसलमेर राज्यमे था; उस अंशको बाहुबलसे मारवाड़के अधिकारमे करलिया। विजयसिंह केवल यही करके शान्त न हुए उन्होंने समृद्धिशाली गोड़वाड़राज्य मेवाड़ेश्वर राणाके हाथसे छीनकर अपने अधिकारमे कर गौरवको अधिक बढ़ालिया; मरुक्षेत्रके अधीनमे यह मुख्य भूमि है, कर्नल टाड् साहब लिखते है कि यह गोड़वाड़देश सब मारवाड़के समान मूल्य युक्त था। राठोर जातिके मरुक्षेत्रमे प्रादुर्भावके पहले मेवाड़के अधीश्वरने मंडोरमे प्राचीन अधिपतिके हाथसे इस देशको छीन लियाथा। उसी समयसे पॉच शताब्दीतक यह गोड़वाड़ मेवाड़के अधीनमे शासित होता आया था, परन्तु मेवाड़पति राणा आत्मविग्रहके समय इस गोड़वाड़ देशको विजयसिंहके देनेके लिये बाध्य होगये और उनको यह देश दे दिया। तभीसे यह देश मारवाड़पतिके अधिकारमे हुआ है, इसके ऊपर मेवाड़ेश्वरका और कोई अधिकार नहीं है"।

विजयसिंह अपने पिताके स्वर्गवासी होनेके पीछे जिस भाँति रामसिंहके साथ युद्धमें लिप्त और परास्त होकर महाराष्ट्रोको अजमेर देश तथा चौथ कर देनेमे सम्मत

हुए, इसीसे वह एकवार ही हतवीर्य और लुप्त तेज होगये थे, उसी प्रकार देवीसिंह इत्यादि उद्धतस्वभाव सामन्तोंके इच्छानुसार उत्पीड़नसे वह अपनी राजशासन शक्तिके चलानेमें एकवार ही असमर्थ होगये, परन्तु उन देवीसिंह इत्यादिको चतुरतासे वंदी करने और मारडालनेके पीछे विजयसिंहने पुनर्वार अपने सामन्तोंकी सहायता पाकर कई एक युद्धोंमें जयलक्ष्मीका आलिंगन पाकर अपने लुप्ततेजको पुनरुद्धार करके विशेष शूरवीरता प्रकाश कर कई वर्षोंतक मारवाड़का सुख शान्ति रूपी सौरभ प्रकाश करदिया। मारवाड़के दुर्दिन मानो एकवार ही दूर होगये, परन्तु विजय-सिंहको शीघ्र ही फिर राजनैतिक रंगभूमिमें प्रवल युद्धक्षेत्र अवतीर्ण होगया। यद्यपि विजयसिंहने अपने राज्यमें शान्तिस्थापन कर अपने गौरवको वढाया था, परन्तु इस समय महाराष्ट्रोंके कवलसे अजमेरराज्यको पुनर्वार अपने अधिकारमें करने तथा उनके करसे अपनेको छुड़ानेमें वे समर्थ न हुए।

महाराष्ट्रलोग इस समय अत्यन्त वलवान् होकर भारतके प्रत्येक प्रान्तमें घोर अत्याचार, उत्पीड़न, और लूट मार करके आर्यक्षेत्रको एकवार ही विध्वंश करके उसे रमण करनेके लिये उद्यत हुए। वह इस समय इतने शक्तिशाली थे कि भारतके प्रत्येक राजा प्रजाके भयके कारण स्वरूप होगये। प्रत्येक जन उनके भयसे धन प्राणकी रक्षाके लिये अत्यन्त व्याकुल होगये थे। भारतके प्रत्येक प्रान्त पर अधिकार करके नवीन राज्यकी प्रतिष्ठा वा प्रवल प्रतापशाली सम्राट् स्वरूपसे प्रत्येक राजाको अधीनता की जंजीरमें वाँध कर समस्त शासन शक्तिसे हीन मुगल वादशाहके आसनपर वैठने की उनको कुछ भी इच्छा नहीं थी। केवल तस्करदलका संहार मूर्तिसे प्रत्येक देशको विध्वंस कर समस्त धनरत्नोंको लूटनेका ही उनका अभिप्राय था। मनुष्योंका सर्व-नाश कर दस्युवृत्तिको चारितार्थ करनेमें वह पहलेसे भी आग्रहके साथ अग्रसर हुए इसीसे उन्होने सब प्रकारका सुवीता पाकर भी दिल्लीके नाममात्रके वादशाहके आसन पर अधिकार नहीं किया। वह यदि अन्य जातिकी समान अधिकारका विस्तार करके सुशासनका आश्रय लेते, तो निश्चय ही उस समय भारतमें महा शक्तिका संग्रह कर अपने अधिकारका विस्तार कर सकते थे। दिल्लीके वादशाह उस प्रवल प्रताप-शाली औरंगजेवके आसन पर विराजमान होकर भी इस समय कुछ भी सामर्थ्य वा शक्तिमान् नहीं थे। वह नाममात्रके वादशाह थे, दूसरी ओर भारतके प्रवल प्रतापशाली देशीय राजा भी इस समय वहुकालव्यापी आत्मविग्रहसे जातीय युद्धोंमें लिप्त होकर विजातीय यवन सम्राटकी स्वेच्छाचारिताके मुखमें विदलित हो समस्त जातीय श्रेष्ठ गुणोंसे रहित होगये थे। इस समय महाराष्ट्रोंमें किसी शिक्षित और वीर नेताने भी जन्म नहीं लिया, नहीं तो वह सरलतासे भारतका राजमुकुट अपने मस्तक पर धारण कर सकते थे। विशेष करके महाराष्ट्रोंके दलमें फिर भिन्न २ सम्प्रदायों की सृष्टि होनेके कारण एकताके अभावसे उनको उस महान् शक्तिका अभिलाषित फल प्राप्त न हुआ। महाराष्ट्रोंने इस समय प्रवलरूपसे मस्तक उठाकर, रजवाड़ोंमें फिर

घोर अत्याचार करना प्रारंभ कर दिया, तब समस्त राजपूत राजा इनको दमन करनेके निमित्त मिलकर सम्मति करने लगे। यवन बादशाहके हाथसे जातीय स्वाधीनताकी रक्षाके लिये इन राजाओके पूर्व पुरुष जिस प्रकार एक २ समय एक साथ मिलकर महायुद्धमे लिप्त हुए थे, इस समय आर्यरक्तधारी, आर्य धर्मावलम्वी इस दस्युसम्प्रदायके विरुद्ध भी उसी प्रकारसे इकट्ठे होकर वे अपने राजनैतिक सत्वकी रक्षाके लिये विशेष यत्न करने लगे।

इस समय जयपुरके राजसिंहासन पर महाराज प्रतापसिह विराजमान थे। प्रतापसिह जैसे तेजस्वी वीर थे, वैसे ही असीम साहसी, प्रतिभाशाली और उद्यमशील भी थे। उन्होने महाराष्ट्रोंको प्रवलतासे राजवाड़ेके प्रत्येक राज्यका सर्वनाश करनेमे उद्यत देखकर सम्वत् १८४३ मे सन् १७८७ ई० मारवाड़पति विजयसिहके पास यह प्रस्ताव एक दूतके हाथसे भेजा कि "महाराष्ट्र गण जिस प्रकारसे सर्वसाधारणके ऊपर घोर अत्याचार कर रहे है इससे उनको एकवार ही दमन करना हमारा परम कर्त्तव्य है, और इन शत्रुओंको दमन करनेके लिये सभी राजपूत राजाओंको एक साथ मिलकर महाराष्ट्रोंको परास्त करके निश्चिन्त होना उचित है। मैने स्वयं युद्धभूमिमे जाकर महाराष्ट्रोको उचित फल देनेकी इच्छा की है, इस कारण यदि आप इस समय राठौरोकी सेनाको सहायताके लिये भेज देंगे, तो सरलतासे हम अपने जातीय शत्रुओका गर्व दूरकर एकवार ही रजवाड़ेको निष्कंटक करदेंगे।" महाराज विजयसिह अत्यन्त संकट और असहाय अवस्थामे पड़कर महाराष्ट्रनेताके साथ संधि करके मारवाड़के राजमुकट उज्ज्वल मणिस्वरूप अजमेरको महाराष्ट्रनेताको समर्पण कर चौथ देनेके लिये राजी होगये थे। इस समय उन्हीं महाराष्ट्रोको उचित फल देनेकें साथ अजमेर पर पुनः अधिकार और चौथसे छुटकारा पानेकी आशा देखकर प्रसन्न हो उन्होने वीर विक्रमी राठौरोंकी सेनाको प्रतापसिहकी सहायता करनेके लिये तुरन्त ही भेजदिया। एक समय जयपुरके महाराज ईश्वरीसिहकी स्त्रीने यद्यपि विजयसिहके पिताका प्राणनाश किया था, यद्यपि वही ईश्वरीसिह एक समय उन विजयसिहको वंदी करकें उनका जीवन नष्ट करनेको सन्नद्ध हुये थे। परन्तु विजयसिह उन सब बातोंको भूलकर जातीय शत्रुओका नाश करनेके लिये सेना भेजकर भी निश्चिन्त न हुए। वियारके महावीर सामन्त जवान दास राठौरोकी सेनाके नेतास्वरूपसे तुरन्त ही जयपुरकी सेनाके साथ आ मिले, इनके आते ही तुंगानामक स्थानमें महाराष्ट्रोंकी सेनाके साथ राजपूतोंकी सेनाका भयंकर युद्ध होनेलगा। इस युद्धभूमिमें जयपुरकी सेनाकी अपेक्षा राठौरोकी सेना अधिक वलशाली थी, महाराष्ट्रोकी सेना फरासीसी सेनापति डिवाइनके द्वारा शिक्षा पाई हुई थी। तथापि वह किसी प्रकारसे अपनी रक्षा करनेमे समर्थ न हुई। विख्यात् वीर जवानदासने उस

(१) प्रथमकांड २९ अध्याय, ९४० पृष्ठ देखो।

(२) प्रथम कांड, २९ अध्यायका ९४८ पृष्ठ देखो।

उत्तेजित राठौरोंकी सेनाको महाराष्ट्रीय गोलन्दाज-दलके ऊपर चलाकर उसी मुहूर्त्तमें उनको विध्वंस करदिया। महाराष्ट्रनेता सिन्धिया सम्मिलित राठौरोंकी सेनाके निकट एकवार ही परास्त होगये; और युद्धके समस्त द्रव्योंको रणभूमिमें छोड़कर प्राणोंके भयसे भाग गये। कठिन अत्याचारी सिन्धियाकी सेना सम्मिलित राजपूत सेनाके निकट परास्त होकर प्राणोंके भयसे भाग गई, उसी समय विजयी राठौर दलके नेता रियांके सामन्त जवानदासने शीघ्र ही महाराष्ट्रोंके कराल कवलसे अजमेरपर फिर अपना अधिकार करके वहां मारवाड़के महाराज विजयसिंहकी विजयपताका स्थापित कर दी।

मारवाड़ राज्यमुकुटका उज्ज्वल मणिस्वरूप अजमेरराज्य फिर मारवाड़पतिके हस्तगत होगया; महाराष्ट्र नेताके साथ विजयसिंहका जो संधिबंधन होगया था, अथवा उन्होंने जो कर देना स्वीकार किया था उन्होंने उस संधिपत्रको रहित करदिया, तथा वह कर भी बन्द करदिया। महाराज विजयसिंह फिर सम्पूर्ण स्वाधीनभावसे राज्य करनेलगे। महाराष्ट्रोंके दलको एकवार ही परास्त कर उनकी सम्पूर्ण शक्तियोंको खंड २ करदिया; राठौरोंकी सेनाने भारतवर्षमें ऊँची प्रशंसाको संग्रह कर मारवाड़में फिर शांति स्थापित कर दी।

तुंगाके युद्धमें महाराष्ट्रनेता माधोजी सिन्धियाने एकवार ही परास्त होकर उस बचीहुई सेनाके साथ भागकर अपने भाग्यमें घोर कलंकका टीका लगाया था, परन्तु उनका हृदय बदला लेनेके लिये भयंकर रूपसे प्रबल होगया। कूटबुद्धि माधोजीने एकवार ही अधीर न होकर अपने अधीन फरासीसी सेनापति डिवइनकी सम्मतिसे फिर एक नई सेना तैयार करके उनको पश्चिमी युद्ध विद्याकी शिक्षा देनी प्रारंभ की। माधोजी भलीभाँतिसे जानता था कि राजपूतोंकी सेनाका दल एकसाथ मिलकर भलीभाँतिसे युद्ध प्रारंभ करेगा, तब महाराष्ट्रोंकी सेना किसी प्रकारसे भी जय प्राप्त नहीं करसकेगी। इस कारण माधोजी चिर-वीर-व्रतावलम्वी असीम साहसी राजपूत अश्वारोहीकी समान सुशिक्षित अश्वारोही सेनाकी ओर भलीभाँतिसे ध्यान देनेलगा। क्रमानुसार चार वर्षतक उस सेनाको भलीभाँतिसे शिक्षा दी। अंतमें तुंगाके युद्धके उस महाकलंकको दूर करनेके लिये राठौरोंसे बदला लेनेके लिये तथा रजवाड़ेको विध्वंस करनेके लिये माधोजी सिन्धिया और डिवाइन प्रावृट संगममें उत्ताल तरंग मालामय जलधिकी समान भयंकर गर्जन करती हुई, चारोओरको विध्वंश करती हुई सेनाके साथ आगे बढ़े। माधोजी इस प्रकार अधिक सेना साथ लेकर आते हुए दिखाई दिये कि राजवाड़ेमें बहुत दिन पीछे इस प्रकारकी अगणित सेना रणभूमिमें कभी नहीं आई थी। माधोजीके आगमनका समाचार सुनते ही महाराज विजयसिंहने फिर जयपुरके महाराजके यहां एक दूत भेजा, और कहला भेजा कि पहलेकी समान इस समय भी हमारी सहायताके लिये अपनी सेना भेज दो। जयपुरके महाराजने विचारा कि उनके कहनेसे विजयसिंहने जब तुंगाके युद्धमें राठौरोंकी सेनाको भेज दिया था, तब इस समय

(१) इस युद्धका वृत्तान्त प्रथम कांडके ३० अध्यायके ९५६ पृष्ठमें वर्णन किया गया है।

वर्तमान युद्धमे जयपुरकी सेनाका भेजना अवश्य ही संगत है । विशेप करके महाराष्ट्र यदि पहलेकी समान फिर प्रबल होगये तो जयपुरके भी अधिक अनिष्ट होनेकी संभावना है; इस कारण इस युद्धमे महाराष्ट्रोंको पहलेकी समान किसी प्रकारसे व्यर्थ मनोरथ करना उचित ही है। यह विचार जयपुरके महाराजने शीघ्र ही बहुतसी सेना भेज दी । सम्मिलित राजपूतोकी सेना पहलेकी समान एकताके सूत्रमें शोभायमान होकर जय शब्दसे रजवाड़ेको प्रतिध्वनित करती हुई शत्रुओका संहार करनेके लिये आगे बढ़ी। परन्तु इस समय रजवाड़ेका भाग्य अत्यन्त ही मंद होगया था, इस कारण युद्धके पहले अति सामान्य कारणसे राठौर और जयपुरकी सेनामे कुछ झगड़ा होगया । पाटन नामक स्थानके युद्धमें केवल राठौरोकी सेना महावीरता प्रकाश करके महाराष्ट्रोकी अधिक सेनाके होनेसे अंतमे परास्त होगेई । महाराज विजयसिंह राजधानीके ही भीतर थे जब उन्होंने उस परास्त हुई सेनाके मुखसे जयपुरकी सेनाकी विश्वासघातकताका समाचार सुना तब वह जयपुरकी सेनाके ऊपर अत्यन्त कुपित हुए। अंतमे बहुतसे तर्कवितर्क करनेके पीछे महाराष्ट्रोको फिर रणभूमिमे बुलाकर उन्होंने अपने पराक्रमके दिखानेका निश्चय कर लिया। सम्वत् १८४३ मे सन् १७९१ ईसवीमे मेरतामे फिर एक भयंकर युद्ध हुआ। यद्यपि राठौरोकी सेनाने इस संग्रामभूमिमे पहलेकी समान अकथनीय वीरता प्रकाश की तथापि वह इस समय जयलक्ष्मीका आलिंगन न कर सके। विजयी महाराष्ट्रनेताने बदला लेनेके लिये साठ लाख रुपये दंडमे महाराज विजयसिंहको देनेके लिये आज्ञा दी। परास्त हुए विजयसिंहने कुछ उपाय न देख कर शीघ्र ही रुपया देना स्वीकार कर लिया । मारवाड़का खजाना इस समय एकवार ही खाली होगया था। साठ लाख रुपया इकट्ठा एक ही साथ देना इस समय असंभव होगया, परन्तु दुराचारी महाराष्ट्रोंने कुछ भी रुपया कम न किया । अंतमे सारी प्रजाकी धनसम्पत्ति लूट ली। जब इससे भी धनकी पूर्ति न हुई तब उन्होने प्रधान २ सामन्तो और प्रजाको बंदी करके उनके घरकी वस्तुओका बेचना प्रारंभ किया । विजयी माधोजीने मानो कालान्तक कालकी समान मारवाड़में जाकर अपने सेवकोको मारवाड़के विध्वंस करनेकी आज्ञा दी। मारवाड़के घर २ में हाहाकार मच गया–चारोओर भयंकर रोनेका शब्द सुनाई देने लगा। सती स्त्रियोंका हृदयभेदी चीत्कार। बालकोके अन्तिम रोनेकी ध्वनि–प्रजाकी कातरताने मानो मारवाड़को नरकका कुंड कर दिया। परन्तु दुष्ट माधोजीका हृदय कुछ भी विचलित न हुआ। उसके सेवकोने मारवाड़की समस्त धनसम्पत्ति लूट ली ।

माधोजी सिन्धियाने मारवाड़मे जानेके पहले ही अजमेर राज्यपर फिर अपना अधिकार करलिया था, जिस समय फरासीसी सेनापति डिवाइनने अजमेरमे

---

(१) प्रथम कांड ३० अध्याय ९५९ पृष्ठको देखो।

(२) प्रथम कांडके, ३० अध्यायके ९६० पृष्ठको देखो।

प्रवेश किया था, उस समय अजमेरके शासनकर्ता दुमराजने विजातीय सेनाके हाथमें अजमेरको लौटादेनेमें कलंक सचयकी अपेक्षा आत्महत्या करना ठीक जान, उसने अफीम खाकर प्राण त्याग दिये। इसी समयसे अजमेर चिरकालके लिये मारवाडसे अलग होगया। समय आते ही महाराष्ट्रोंके हाथसे अंग्रेजी सेनाने इस अजमेर पर अधिकार कर लिया, और आजतक इस अजमेरके किलेपर अंग्रेजोंकी पताका उड़ रही है।

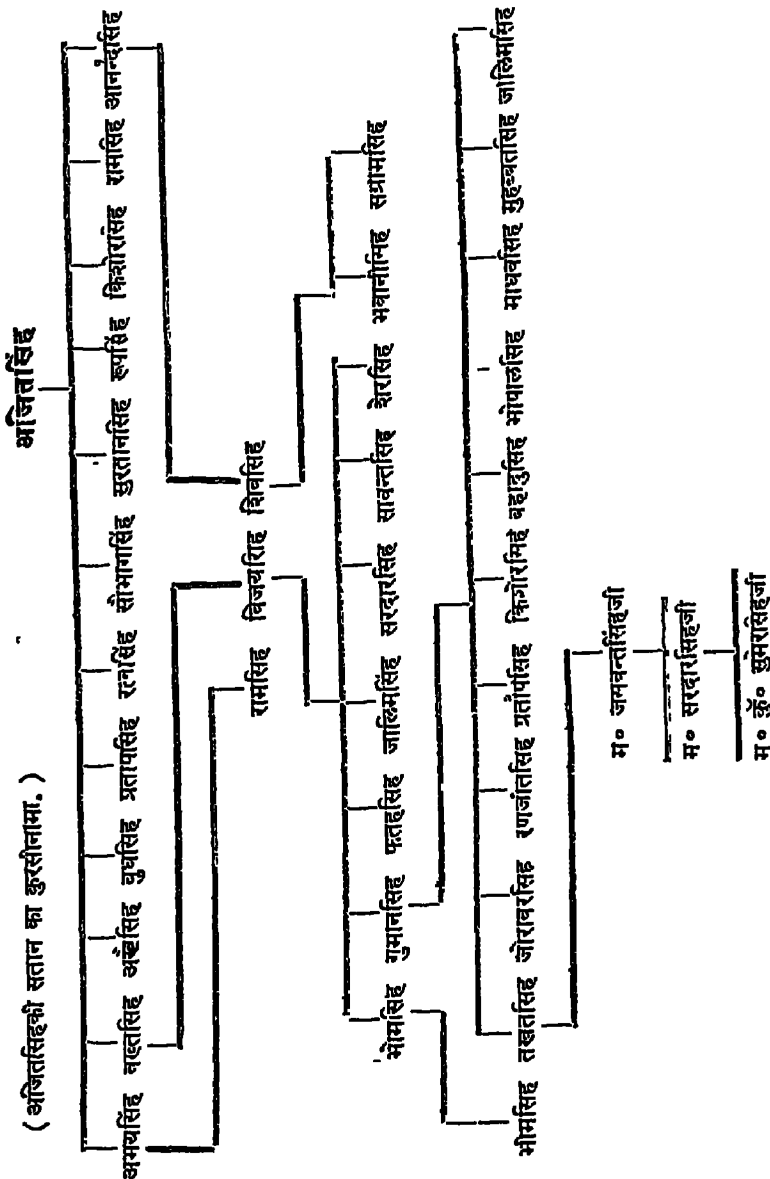
मेरताके रणक्षेत्रमें महाराष्ट्रोंके तस्करदलके द्वारा विजयसिंहकी पराजयके पीछे मारवाड़के सौभाग्यके सूर्यने मानो चिरकालके लिये अस्ताचलका आश्रय लिया-घोर कालरात्रिने आकर शीघ्र ही मारवाड़ पर अधिकार करलिया। मारवाड़ मानों स्मशानकी समान होगई। नष्ट गौरव, हतवीर्य, विजयसिंह मानो निर्वाणोन्मुख दीपशिखाकी समान स्तम्भित तेजसे मरुक्षेत्रका शासन करने लगे। परन्तु अवस्थावृद्धिके साथ ही साथ उन्होंने और एक विचित्र अभिनय आरंभ कर दिया। इसीसे मारवाड़के भावी सर्वनाशका बीज बोया गया। विजयसिंहके जीवनकी शेष दशाका बल विक्रम-राजपूतस्वभाव सुलभ साहस, शूरता मानों विस्मृतिके जलमें डालकर कन्दर्पके प्रिय उपासक होगये। ओसवाल जातिकी एक सुन्दरी युवतीके प्रेममें वह अत्यन्त मोहित होगये थे-वह एकवार ही हतज्ञान होकर अपने हाथसे अपने पैतृक राज्यके नाशका कारण संचय करने लगे। विजयसिंह युवतीके प्रेममें इतने मोहित होगये थे कि जो पटरानी ऊँचे सम्मानकी अधिकारिणी थी उन्होंने उस विलासनीको उस सम्मानका भागी किया[1] प्रकाशमें इस चतुरा ललनाने विजयसिंहको अपने रूपयौवनके बलसे मानो मोल लियेहुए दासकी समान अपना अनुगत करलिया था। कर्नेल टाड् साहब लिखते हैं "कि इस युवतीने विजयसिंह पर इतना अधिकार करलिया था-कि वह उसके प्रेममें इतने व्याकुल थे कि वह युवती मारवाड़पति विजयसिंहको बारम्बार पादुकासे प्रहार करती थी और महाराज फिर उसकी शरण लेते थे! विजयसिंह उस कामिनीके कालकूटमय प्रेमसे मोहित होकर चेतनाहीन होगये; और उस पादुकाके प्रहारसे वह कुछ भी अपना अपमान नहीं जानते थे, वरन् वह उस चंद्रमुखीकी प्रत्येक आज्ञाके पालन करनेमें अपनेको विशेष चरितार्थ मानते थे। विजयसिंहकी इस कन्दर्पसेवा और विलासिताके कारण मारवाड़के चारोंओर फिर घोर अराजकताने आकर दर्शन दिया।

उस युवतीने विजयसिंहको अपना दास बनाकर राज्यमें अपनी प्रबल सामर्थ्यका चलाना प्रारंभ करदिया। यद्यपि यह स्त्री विजातीय थी तथापि विजयसिंहके निकट उसने यह प्रस्ताव किया कि आपके पुत्रको कभी राजसिंहासन नहीं मिल सकैगा, मैं एक पुत्र गोद लूंगी, और वही पुत्र आपके भविष्य उत्तराधिकारी

(१) जाटजातिकी थी।

(२) परंतु ऐसा तो कभी सुननेमें नहीं आया, बल्कि लोग उसकी धर्म निष्ठा और उदारता की अबतक तारीफ करते हैं। उसने मारवाड़में वैष्णवधर्मको बहुत पुष्ट किया था। उसके बनाये हुए अच्छे अच्छे मन्दिर महल बाग हाट और तालाब जोधपुरमें विद्यमान हैं। इसका नाम गुलाबराय था।

रूपसे राज्यमे रहेगा । विजयसिंहने युवतीके इस प्रस्तावमे कुछ भी आपत्ति न की।। मारवाडमे भावी [अनिष्टका वीज वोनेके लिये उसी] समय उसमे अपनी सम्मति प्रकाश की । जो चिर प्रचलित रीतिके अनुसार मारवाड़के सिंहासन पर उत्तराधिकारी नियुक्त होते आये थे, विजयसिंहने इस युवतीके मतसे उस रीतिकी जड़में भयंकर कुठाराघात किया । पाठक गणोको इस होनेवाली घटनाके पहले उस समयके मारवाड़राजवंशकी कारिका पाठ करना उचित जानकर हम उसे यहां लिखते है ।



(१) ईडर नरेश (२) ईडरके वर्तमान महाराज.

पशु प्रवृत्तिक क्रीतदास विजयसिंहने उस पासवानी स्त्रीकी इच्छा पूर्ण करनेके लिये जिस पौत्र मानसिंह (गुमानसिंहके पुत्र) को दत्तक स्वरूपसे ग्रहण किया था, उसी मानसिंहको उन्होंने उक्त कामिनीकी गोदमें डालकर उसको युवतीका दत्तक पुत्र तथा अपना भविष्य उत्तराधिकारी कहकर घोषणा कर दी, मरुक्षेत्रके समस्त सामन्तोंको बुलाकर और उक्त मानसिंहको उनका भविष्य प्रभु कहकर उन्हें नजर देनेके लिये आज्ञा दी। सामन्तोंने राजाकी इस आज्ञासे अत्यन्त ही क्रोधित होकर कहा, कि हम दासीके पुत्रको अपना भविष्य प्रभु कदापि नहीं मानसकते। अज्ञानी विजयसिंहने कुछ उपाय न देखकर शीघ्र ही मानसिंहको शास्त्रकी रीतिके अनुसार दत्तक पुत्ररूपसे ग्रहण कर अपने औरसजात पुत्रको सिंहासनके अधिकारसे एकबार ही वञ्चित करदिया। युवतीने अपनी कामनाको पूर्ण हुआ देखकर प्रसन्नचित्त हो दत्तककुमार मानसिंहको जालौरके किलेमें विद्या पढनेके लिये भेज दिया; किन्तु इसके पीछे शेरसिंह (जिन्होने पहले मानसिंहको दत्तक-स्वरूपसे ग्रहण किया था) की प्रभुताके अधीनमें मानसिंह उन्हींके अनुगत हुए, परन्तु उक्त युवतीने मानसिंहको फिर अपने यहां बुलाकर अपने सेवकोंके हाथमें उनकी रक्षाका भार अर्पण किया। मारवाड़के भविष्य अधीश्वर मानसिंहका इस प्रकारसे पालन होने लगा। परन्तु हतज्ञान विजयसिंह इस समय युवतीके हाथमें कठपुतलीकी समान रहते थे, युवतीने अपने राज्यमें इच्छानुसार व्यवहार करनेकी अभिलाषा की, इसीसे मरुक्षेत्रके समस्त सामन्त फिर राजा पर अत्यन्त रुष्ट होगये, और सभी अपने स्वार्थकी रक्षाके लिये मालकोसनी नामक स्थानमें इकट्ठे हुये।

सामन्तोंने देखा कि विजयसिंहने एक साधारण स्त्रीके प्रेममें फँसकर जैसा कार्य करना प्रारंभ किया है, उससे पवित्र मारवाड़का सिंहासन कलंकित होता है, विना इनको सिंहासनसे उतारे हुए किसी भांति भी राज्यका मंगल नहीं होसकता। तब सब राठौर सामन्तोंने मिलकर यह निश्चय किया कि विजयसिंहके पञ्चम पुत्र भोमसिंहके युवक पुत्र भीमसिंहको मारवाडके सिंहासन पर बैठाना उचित है। असंतुष्ट हुए सामन्तोंने चुपके २ इस प्रकारका सिद्धान्त करके इस प्रस्तावके अनुसार कार्य करनेका उद्योग भी किया। जब विजयसिंहने देखा कि इस समय समस्त सामन्त रुष्ट होकर एकत्रित होरहे हैं तौ पहले जिस भाँति सामन्तोंके डेरोंमें स्वयं जाकर इन्होंने उनको अपने हस्तगत कर लिया था इस वार भी उसी प्रकारसे सामन्तोंको अपने हस्तगत करनेके लिये वे शीघ्र ही उनके डेरोंमें गये। महाराज विजयसिंहने सामन्तोंके डेरोंमें जाकर उनको जिस समय संतुष्ट कर अनेक प्रकारके वचनोंसे धीरज दिया उसी समय सामन्तोंने गुप्तभावसे एक पत्र लिखकर रासके सामन्तके पास भेजदिया। उस समय वह सामन्त जोधपुरके महाराजकी रक्षामें नियतथे। सामन्तने तुरन्त उस युवतीसे जाकर कहा कि महाराज विजयसिंह सामन्तोंके डेरोंमें आये है। उन्होंने आपको भी वहाँ शीघ्र ही बुलाया है। शरीर रक्षक सेना तैयार है आप शीघ्रतासे चलिये। युवती उस सामन्तके वचनों पर

विश्वास कर जैसे ही इकली महलसे निकल कर सवारी पर चढ़ी कि वैसे ही पीछेसे एक मनुष्यके इशारा करते ही, एक मनुष्यने उसके शिरके दो टुकड़े कर दिये। सामन्त उसी समय मारवाड़के उस सर्वनाशकी कारणस्वरूपा उस नारीकी सम्पूर्ण धन सम्पत्तिको लेकर, विजयसिंहके पंचम पुत्र भोमसिंहके युवक पुत्र भीमसिंहको लेकर सेनासहित नागौरके मार्गमें अपने डेरोमे जा पहुँचे। यदि रासके सामन्त भीमसिंहको उक्त डेरोमे न लेजाकर बराबर इकट्ठे हुए सामन्तोंके डेरोमे लेजाते तो सरलतासे सामन्त गण पहले विचारसे उस स्थान पर विजयसिंहको सिंहासनसे रहित कर भीमसिंहको मारवाड़के सिंहासन पर बैठाल सकते थे। जिस दिन सब सामन्तोने यह समाचार पाया कि वारवधूका प्राण नाश करके रासके सामन्त भीमसिंहको लेआये है, उसी दिन विजयसिंहको भी यह समाचार मिला और वे तुरन्त ही बड़ी शीघ्रतासे भीमसिंहके निटक आये।

विजयसिंह सामन्तोके डेरोको छोड़कर भीमसिंहके डेरेमे गये, इनके वहां जाते ही सामन्तोके षड्यंत्रका जाल एकबार ही छिन्नभिन्न होगया। उन्होंने भीमसिंहको वशीभूत करनेके लिये सोजत और सिवाना एकबार ही देकर भलीभाँतिसे धीरज दे उसी समय उनको सिवानेके किलेमें भेज दिया। भीमसिंहको यद्यपि मारवाड़का सिंहासन नही मिला परन्तु उन दोनो देशोके मिलनेसे प्रसन्न हो उन्होने वहाँ जानेमें कुछ आपत्ति न की। चतुर विजयसिंहने इस प्रकारसे भीमसिंहको संतुष्ट कर उनको पीछे भेज दिया और अपने पुत्र जालिमसिंहको निकट बुलाया। जालिमसिंह ही मारवाड़के सिंहासनके यथार्थ उत्तराधिकारी थे। विजयसिंहने मानसिंहको दत्तकपुत्ररूपसे ग्रहण किया था, और उनको उस अधिकारसे वंचित किया था, जालिमसिंह उससे महा असंतुष्ट हुए थे। विजयसिंहने उनको हस्तगत करनेके लिये उसी समय उन्हे समृद्धिशाली गोड़वाड़देशका पूर्ण अधिकार देदिया, और उनको वहाँ भेज दिया। तथा विदाकरनेके समय चुपके से यह भी कह दिया, कि तुम शीघ्र ही भीमसिंहपर आक्रमण करके उनको मारवाड़से निकालदो।

जालिमसिंह गोड़वाड़ राज्य पाकर महासंतुष्ट हो शीघ्र ही वहाँ चले गये, और पिताकी आज्ञा पालन करनेके लिये उन्होने अपने भ्रातुष्पुत्र भीमसिंह पर सेना सहित आक्रमण किया। भीमसिंह पहलेसे ही विजयसिंहकी गुप्त आज्ञाके विषयको जान गये थे, कि वह युद्धके लिये तैयार होगये थे, इस कारण जालिमसिंहके आक्रमण करते ही उन्होंने महायुद्धकी अग्नि प्रज्वलित कर दी। जालिमसिंहकी सेना प्रबल थी। भीमसिंहने अंतमें परास्त होकर प्राणोके भयसे पोकरणके सामन्तका आश्रय लिया। परन्तु उस स्थानपर निर्विघ्नतासे रहना असंभव जानकर वह जैसलमेरको भाग गये।

जिस समय जालिमसिंहके साथ भीमसिंहका युद्ध होरहा था; जिस समय मरुक्षेत्रके समस्त सामन्तोंने विद्रोही होकर अराजकता उपस्थित की थीं; जिस समय पुत्र पौत्र गणोंने आत्मविग्रहमें लिप्त होकर राठौरोंके राजवंशको कलंक लगाया

था उसी समयें ३१ वर्ष मारवाड़का राज्यकरके महाराज विजयसिंहने अपनी प्राणप्यारी उक्त पासवान युवतीके शोकमें सम्वत् १८५० में आषाढ़के महीनेमें शरीर त्याग दिया।

विजयसिंहकी जीवनीके सम्बन्धमें हमें केवल इतना ही कहना है कि उन्होंने युवा अवस्थामें जिस भांति बल विक्रम दिखाया था उनका शेष जीवन उसी भांति घोर कलंकसे पूर्ण था। वह यदि अपने पाटन तथा मेरताके युद्धक्षेत्रमें जाकर महाराष्ट्रोंके साथ युद्ध करते तो कभी भी उस क्षेत्रमें राठौरोंकी उस भांति पराजय न होसकती थी, और न जयपुरकी सेना इस प्रकार कृतघ्नता दिखा सकती थी। राजाके आलस्य और भोगविलासिताके वश होनेसे जातिके भाग्यमें क्या फल होता है, विजयसिंह वृद्धावस्थामें एक कुलटा स्त्रीके प्रेममें मोहित हो उसका चूड़ान्त प्रमाण दिखागये हैं। सारांश यह है कि मारवाड़के सौभाग्यका सूर्य विजयसिंहके शासन समयसे एकवार ही अस्त होगया।

---

(१) इकतीस वर्ष नहीं, महाराज विजयसिंहने इकतालीस वर्ष राज्य किया क्योंकि उनका जन्म संवत् १७८८ में हुआ था और जिस वक्त वे राज्य सिंहासनपर बैठे उस समय उनकी अवस्था २० वर्षकी थी।

(२) इस अध्यायका यह पिछला अंश बहुत गड़बड़ लिखा गया है और महाराज विजयसिंह पर कई ऐसे कलंक लगाये हैं जो सर्वथा झूठे हैं। महाराज विजयसिंहका ठीक इतिहास ग्रन्थ कर्त्ताओंको ज्ञात न होनेसे उन्हें बहुत सी कल्पनाएं करनी पड़ी हैं। ऐसे ही महाराज अजितसिंहका इतिहास भी उनको मालूम नहीं था इसीलिये उन्होंने पोकरणके ठाकुर देवीसिंहको उक्त महाराज का बेटा माना है महाराज विजयसिंहके बेटोंके नाम भी यथार्थरूपसे नहीं लिखे। बड़ा बेटा उनका युवराज भौमसिंह ही था। वह जब मरगया तो उसके बेटे भीमसिंहको महाराज विजयसिंहने युवराज बनाया। जालिमसिंहका कोई हक युवराज बननेका नहीं था उसकी मा उदयपुरकी जरूर थी मगर उदयपुरवाले जयपुर और जोधपुरके राजाओंसे जो यह शर्त कराया करते थे कि उनका दोहिता या भानजा ही गद्दीका मालिक हो सो कभी वह पूरी नहीं हुई। यह एक नाममात्रकी बात राणाजीको राजी रखनेके लिये थी और इसीसे कर्नल टाडने जालिमसिंहको गद्दीका मालिक मानकर तर्कवितर्क किए हैं। पर जालिमसिंह, भौमसिंह गुमानसिंह और फतहसिंह तीनोंसे छोटा था इस लिये महाराज विजयसिंहने इन तीन बेटोंके होते हुए उसको कभी युवराज नहीं किया था। भीमसिंहको युवराज करनेके पीछे उसका क्रूर स्वभाव और भाई बन्धुओंसे द्वेष देखकर महाराजने अपने दूसरे कुंवरके बेटे मानसिंहको, जो बापके मरजानेसे अनाथ अवस्थामें था, पासवान गुलाबरायको सौंपा कर उसे गुप्तरूपसे जालौरमें भेजदिया था। क्योंकि वह जानते थे कि भीमसिंह राजा होकर सांपिंड्योंको जीता नहीं छोड़ेगा। भीमसिंह गुलाबरायका भी द्वेषी था और पोकरणके ठाकुर सवाईसिंहके कहने पर चलता था जो अपने बाप दादोंके हरामखोरीसे मारेजानेसे महाराज विजयसिंहका द्वेषी था और जैसे उसके दादा देवीसिंहने उपद्रव उठाया था वह भी वैसेही किया चाहता था। उसीने मारवाड़के कई सरदारोंको बहकाकर भीमसिंहके सानुकूल और महाराजके प्रतिकूल करदिया था। उसी बखेड़ेमें पासवान गुलाबराय भी मारी गई थी और अन्तमें भीमसिंह भी जोधपुरसे निकाला गया। यह सब वृत्तान्त महाराज विजयसिंहके गद्य इतिहासमें यथा समय लिखे गये हैं।

चौदहवाँ अध्याय १४.

भीमसिंहका मारवाड़के सिंहासन पर अधिकार; उनके प्रतियोगी जालिमसिंहका हताश होना; भीमसिंहका मानसिंहके अतिरिक्त मारवाड़सिंहासनके प्रार्थी अन्यसबके जीवनका नाश करना; जालौर पर आक्रमण; भोजनसंग्रहकरनेके लिये बंद किलेमेंसे सेनाका बाहर जाना; कुमार मानसिंहका उस सेनापर नेतृत्व; मानसिंहके बंदीदशामें पतन होनेकी संभावना; आहोरके सामन्तों का मानसिंहका उद्धार साधन; राजा भीमसिंहके आचरणसे सामन्तोंको असंतोष; सामन्तोंका मारवाड़को छोड़ना; नीमाजपर आक्रमण; जालौर देशमें आत्म समर्पणकी पूर्व सूचना; राजा भीमसिंहकी अकस्मात् मृत्यु; मानसिंहका सिंहासन पर अधिकार; पोकरणके सवाईसिंहकी विद्रोहिता; चोपासनी नामक स्थानमें षड्यंत्र; राजा भीमकी रानीके गर्भसमाचारका प्रचार; राजा मानसिंहके साथ व्यवस्था करना; भीमसिंहकी कन्याका जन्म; नवजात राजकुमारका गुप्तभावसे पोकरणमें भेजना और उनके जन्मसंवादको गुप्त रखना; नवीन राजकुमारका धौंकलसिंह नाम रखना; पूर्व नियत किये हुए व्यवस्थाके मतसे कार्य करनेके लिये राजा मानसिंहके निकट सामन्तोंका प्रस्ताव; भीमसिंहकी रानीका धौंकलसिंहको अपने अधीश्वर अभयसिंहके पास भेजना; सवाईसिंहका फिर गुप्तभावसे षड्यंत्रका विस्तार करना; सवाईसिंहका आमेर और मेवाड़के दोनों अधीश्वरोंके साथ मानसिंहका विवादानल प्रज्वलित करना; उनका धौंकलसिंहको लेकर जयपुरमें जाना; उसको मारवाड़का अधीश्वर कहकर घोषणा करना; धौंकलसिंहके पक्षमें अधिकतर राठौरके सामन्तोंका मिलना; बीकानेरके अधिपतिका धौंकलसिंहका पक्ष समर्थन; रणक्षेत्रमें सेनाका बुलाना; हुलकरकी नीचता; उनके द्वारा राजा मानसिंहके पक्षका छोड़ना; युद्ध प्रारंभ; सामन्तोंका मानसिंहके पक्षको छोड़ना; मानसिंहकी आत्महत्याका उद्योग; राजा मानसिंहका भागजाना; मानसिंहका जोधपुरमें जाना; अपनी रक्षाकी तैयारी; समस्त कुटुम्बियोंके ऊपर मानसिंहका संदेह; उनको किलेकी रक्षामें नियत करनेके लिये असम्मति देना; शत्रुओंके साथ उनका सम्मिलन और जोधपुर का घेरना; जोधपुर नगर लूटकर उसपर अपना अधिकार करना; अवरोधकारियोंको कष्ट; मीरखाँके आचरणसे आक्रमण करनेवालोंमें अनैक्यता; उनका मारवाड़से भागना; जयपुरके सेनापतिका उनका अनुसरण; युद्ध; जयपुरकी सेनाको विध्वंस करके नगरका घेरना; जयपुरके महाराजका विपत्ति देखकर महाभयभीत होना; जोधपुरका अवरोध छोड़ना; जयपुरमें निर्विघ्नतासे जानेके लिये २०००००० रुपये देनेमें बाध्य होना; जयपुरकी सेनाने जोधपुरके जो द्रव्य लूट लिये थे राठौरगणोंका उनपर फिर अधिकार करना; मीरखाँका राजा मानसिंहके अधीनमें नियुक्त होना, तथा चार राठौर सामन्तोंके साथ जोधपुरमें जाना।

जिस समय महाराज विजयसिंहकी मृत्यु होगई उस समय उनके पौत्र भीमसिंह जो राज्यसे निकाले जाकर जैसलमेरमें रहते थे। वह विजयसिंहकी मृत्युका समाचार पाते ही तुरन्त ही अपने सेवकोंके साथ बाईस घंटेके भीतर शीघ्रतासे जोधपुरमें आगये, और उन्होने सिंहासनपर अपना अधिकार करलिया। विजयसिंहके मध्यम पुत्र जालिमसिंह जो शास्त्रके मतसे मारवाड़के सिंहासनके उत्तराधिकारी थे वह भी

पिताकी मृत्युका समाचार पाते ही राजधानीमे आनेके लिये चले। उन्होंने भेरता नामक स्थानमे आकर शुभदिन और शुभ मुहूर्त्तमे प्रवेश करनेका विचार किया था; यह उन्हे स्वप्नमे भी ध्यान नहीं था कि चतुर भीमसिंह इतनी जलदी जैसलमेरसे आजांयगे, इस कारण जैसे ही वह शुभ मुहूर्त्तमें राजधानीको ओरको बढ़े कि वैसे ही तोरणद्वारके नक्कारेके शब्दसे तथा प्रजाके मुखसे सुना, कि भीमसिंहने अपने शिरपर मारवाड़का राजमुकुट धारण किया है। जालिमसिंहकी सम्पूर्ण आशा मानो एकवार ही विलीन होगई, पिताके सिहासन पर अब अधिकार करनेकी उनको कुछ भी आशा न रही। जालिमसिंह सिंहासन प्राप्तिके लिये आये हैं, यह सुनते ही महाराज भीमसिहने तुरन्त ही एक प्रबल सेना भेजकर उनको पकड़ लानेकी आज्ञा दी। सिंहासन पाना तो दूर रहा, अपने प्राणोका बचना कठिन जानकर जालिमसिंह शीघ्र ही नगर द्वारसे प्राणोके भयसे भागने लगे। मारवाड़के सामन्त यदि उनकी सहायता करते, यदि प्रजा उनको मरुक्षेत्रका उत्तराधि कहकर उन पर राजक्ति दिखाती तो कभी भी वह इस भावसे पीठ नही दिखाते, अवश्य ही पिताके सिंहासनपर अधिकार करनेके लिये रणक्षेत्रमे अन्तिम बल प्रकाश करते। जालिमसिह जोधपुरको छोड़कर बीलाड़ा तक बराबर भागे, भीमसिहकी सेनाने वहीं जाकर उनपर आक्रमण कर उन्हे एकवार ही परास्त करदिया। परास्त हुए जालिमसिह अपने प्राणोंके भयसे उक्तस्थानसे उदयपुरमे आकर राणाकी शरणमे गये। मेवाड़के महाराणा भी इस समय हीनबल होगये थे, मेवाड़के चारोंओर अशान्तिका पूर्ण अधिकार होगया था, इसी कारण उन्होंने अपने भानजे जालिमसिहको न्यायपूर्वक स्वार्थ पूर्ण करनेके लिये सीसोदिया सेनाको मारवाड़मे नहीं भेजा। उन्होने जालिमसिहको आजीविकाके लिये अपने राज्यके एक बड़े देशका अधिकार देदिया। जालिमसिंह एक बड़े विद्वान और पण्डित पुरुष थे, नीतिके जाननेवाले कवि और इतिहासवेत्ता भी थे! वह उस अधिकारको पाकर काव्यशास्त्रकी आलोचनामे समय व्यतीत करनेलगे। परन्तु वह बहुत दिनतक जीवित न रहे, उन्होने अपने हाथसे एक नसकाट डाली थी तथा एक रक्त वाहिका नाड़ीको काट डाला था, इसी कारण अधिक रुधिरके निकलनेसे युवा अवस्थामें ही वह इस ससारको छोड़ गये।

महाराज भीमसिंह जैसे ही मारवाड़के सिंहासनपर बैठे वैसे ही दुष्टाचारी औरंगजेबकी समान सहारमूर्ति धारण करके, राठौर राजवंशमे जो शोचनीय कांड कभी नहीं हुआ था इन्होने उसी प्रकारके निन्दनीय कार्य करने प्रारंभ किये। ऐसा विदित होता है कि मानो औरंगजेबकी प्रेत आत्माने आकर भीमसिंहके शरीरका आश्रय लिया था। इनका जैसा भीम नाम था उसी प्रकारसे इन्होंने कार्योंमे भी भीम

(१) जालिमसिंहका वृत्तान्त पाठकोंने प्रथम कांडमें यथास्थान पढ़ा होगा। पाठकोंको यह स्मरण होसकता है, कि महात्मा टाड् साहबके गुरु यति ज्ञानचंद्र इन जालिमसिंहके विद्यार्थी थे; ज्ञानचंद्रने इनसे ही रजवाड़ेके समस्त जानने योग्य विषयोंकी शिक्षा पाई थी।

अभिनय प्रारंभ करदिया। जिस भांति औरंगजेबने भारतवर्षमें निष्कंटक राज्य भोगनेके लिये अपने जन्मदाता पिताको वन्दी कर अपने सगे भाइयोंकी हत्याकी थी, उसी प्रकारसे भीमसिंहने भी निर्विघ्नतासे मारवाड़का राज्य भोगनेके लिये उन म्लेच्छ यवनोंके अनुकरणसे पवित्र राठौर वंशके नामको कलंकित करनेमें किंचित्‌मात्र भी विलम्ब न किया। मारवाड़के सिंहासनके यथार्थ उत्तराधिकारी जालिमसिंहको भगाकर उन्होंने विचारा कि चचा गणोंके जीवित रहते हुए निष्कंटक होनेका उपाय नहीं है, इस कारण वह हृदयभेदी उपायसे स्वार्थसाधन करनेके लिये अग्रसर हुए। विजयसिंहने जिस समय प्राण त्याग किये उस समय उनके सात पुत्रोंमें केवल जालिमसिंह और सरदारसिंह ही जीवित थे; फतेसिंह, सामन्तसिंह, भीमसिंहके पिता भूमसिंह और गुमानसिंह इनकी मृत्यु पहले ही होगई थी। भीमसिंहने जालिमसिंहको भगाकर देखा कि सरदारसिंह और शेरसिंह जिन्होंने इनको दत्तकरूपसे ग्रहण किया था, यही दोनों जने सिंहासनके कंटकस्वरूप हैं इस कारण भीमसिंहने सबसे पहले अपने चचा सरदारसिंहके प्राणोंका नाश करके अपनी पिशाच प्रकृतिका परिचय दिया। पीछे शेरसिंहको मारा जिसने भीमसिंहको दत्तकरूपसे ग्रहण किया था। भीमसिंहने समस्त माया ममता और बाध्यबाधकताके सम्बन्धको छोड़कर नरराक्षस औरंगजेबकी समान उन शेरसिंहके दोनों नेत्र निकलवा लिए। शेरसिंहने अत्यन्त दुःखित हो अपने दत्तकपुत्रके द्वारा ऐसा भयंकर दंड पाकर दीवारमें अपना शिर देमारा; इसीके आघातसे उनके प्राण पयान करगये। पिशाचप्रकृति भीमसिंहने इस प्रकारसे अपने तीन तातोंको मारकर अंतमें विचारा कि सामन्तसिंहके पुत्र सूरसिंह और गुमानसिंहके पुत्र मानसिंह जिन्हें पासवान युवतीने गोद लिया था, और विजयसिंहने जिनको मरुक्षेत्रका भावी अधीश्वर नियुक्त किया था; यह दोनों अभी जीवित हैं। सूरसिंह अपने गुणोंसे सभीके प्रियपात्र होगये थे, और यह भीमसिंहके बड़े भाईके भी पुत्र थे इस कारण राजसिंहासन पर सबसे पहले इन्हींका अधिकार होसकता था यह विचारकर पापात्मा भीमसिंहने उनका संहार करनेमें भी क्षणमात्रका विलम्ब न किया!

राठौर राजकुल कलंक भीमसिंहने पापकलुपित आत्मा औरंगजेबकी समान इस प्रकारसे लोमहर्षण हत्याकांड करनेके पीछे देखा कि उनके संकटस्वरूप एकमात्र मानसिंह जीवित है। युवक मानसिंह उस समय जालौरके अभेद्य किलेमें थे, इस कारण पापात्मा भीमसिंहने उनके प्राणनाशका सरल उपाय न देखकर शीघ्र ही सेना साथ ले उस किलेको जा घेरा। मारवाड़में जालौरका किला जैसा मजबूत था उसी भाँति अभेद्य भी था। शत्रुओंका उस किलेपर सरलतासे अधिकार नहीं होसकता था; भीमसिंहने यद्यपि उस किलेको जाकर घेर लिया परन्तु उनका मनोरथ पूर्ण न होसका, वह शीघ्र ही जान गये कि मरुक्षेत्रकी अधिकसंख्यक राठौर सामन्तों-की अधीन सेना और वेतनभोगी सेना जालौरको घेर कर कई महीनेतक अनेक

उपाय करके भी अपने मनोरथको सफल न करसकी थी। भीमसिंह जानगये कि इस किलेपर अधिकार करना कुछ सरल वात नहीं है, तव सेना नायकको इस किलेके घेरनेका भार सौंप कर आप अपने नगरको लौट आये। वह सेनानायक दीर्घकालतक किलेको घेरे हुए पड़ा रहा, भीमसिंहकी सेना नियमित रूपसे किलेकोचारो ओरसे घेरकर छिन्नभिन्न भावसे रहने लगी। युवक मानसिंहके अधीनमे इतनी अधिक सेना नही थी, न इतने अधिक सामन्त ही थे कि उनकी सहायतासे वह किलेसे वाहर होकर भीमसिंहकी सेनाके साथ युद्ध करके सिंहासन पर अधिकार कर लेते इसी कारण अपनी रक्षा करलेना ही उन्होंने अपना कर्तव्य समझा। इस प्रकारसे धीरे २ कई महीने व्यतीत होगये, किलेमे भलीभाँतिसे वँधकर रहना असम्भव था, अधिकतर भोजनकी सामग्रीके विना वहुत कालतक रहनेकी किसीमे भी सामर्थ्य न थी। भोजन की आवश्यक सामग्री भलीभाँतिसे किलेमें नहीं मिल सकती थी। भीमसिंहने जव देखा कि अधिक सेनाके होनेसे भी इस अभेद्य जालौरके किलेपर अधिकार करना सर्वथा असंभव है तव उन्होने दीर्घकाल तक किलेको घेर कर मानसिंहको सेनासहित भूखोमार कर नष्ट करनेका विचार किया था परन्तु पहले ही कहचुके है कि अवरोधकारी सेनादल दीर्घकाल तक अवरोधताके सूत्रसे अपने कार्यसाधनमे हतउद्योग होगया था, युवक मानसिंह यह सुभीता पाकर कितनी ही सेना साथले मारवाडकी खास भूमिमें जाकर प्रजाकी समस्त धन सम्पत्तिको लूटने तथा प्रयोजनीय खाद्य पदार्थोका संग्रह करके लानेलगे, भीमसिंहकी सेना इनपर कुछ भी हस्ताक्षेप न करसकी। एक वार नहीं, दो वार नहीं, जभी खाद्यद्रव्योंके संग्रह करनेका प्रयोजन होता था मानसिंह उसी समय सुभीता पाकर गुप्तभावसे अपने अनुचरोके साथ वाहर जाकर अपना कार्य साधन करके फिर किलेमे आकर रहने लगते थे। परन्तु वारम्वार इस प्रकारसे कार्य करनेके कारण एकवार मानसिंहका जीवन महा संकटमे पड़ गया, मानसिह पहलेवारकी समान अपने सेवकोके साथ पालीनामक वाणिज्य-प्रधान नगरको लूटनेके लिये वाहर गये, कार्यसाधन करके जैसे ही लौटे, कि वैसे ही भीमसिंहकी सेनाने इनके ऊपर आकर आक्रमण किया। मानसिंह वालकपनसे ही किलेमे रहते थे, इस कारण राजपूत जातिकी समान उनमे पूर्ण साहस तथा वलविक्रम होनेपर भी उन्हे युद्धकी रीति नीति और विपत्तिके समयमें क्या करना कर्तव्य है वह कुछ भी मालूम न था केवल विद्याकी शिक्षासे ही उनकी मानसिक उन्नति हुई थी। जिस समय भीमसिंहकी सेनाने मानसिंह पर आक्रमण किया, उस समय मानसिंह घोड़ेपर सवार नहीं थे, इस कारण शत्रुओकी सेना उनको पकड़नेके लिये तैयार होगई। मानसिंहको शत्रुओके हाथमे पड़ाहुआ देखकर जो सामन्त मानसिंहके साथमे थे, उन्होने अपनी वुद्धिवलसे उसी समय मानसिंहका हाथ पकड़ कर उनको अपने घोड़ेपर चढ़ा लिया, और शीघ्रतासे भगाकर अपने और उनके प्राणोकी रक्षा की। आहोरके सामन्त इस प्रकार निर्विघ्नतासे जालोरके किलेमे आगये, तव भीमसिंहकी सेनाकी आशा व्यर्थ होगई।

राजस्थानके राज्यसिंहासनको लेनेके लिये जव कभी दो राजकुमारोमे वड़ा

झगड़ा मचता था तभी अपना प्रताप तथा प्रभुता विस्तार करनेके लिये सामन्तश्रेणी भी भिन्न भिन्न पक्ष अवलम्बन करके दल वद्ध होजाती थी। भीमसिंह और मानसिंहने इस समय मारवाड़के सिंहासनकी प्राप्तिके लिये विशेष चेष्टा की थी, इसीसे मरुक्षेत्रके सामन्तोने भी उसी प्रकारसे दोनो ओरका साथ दिया था। परन्तु भीमसिंहको अधिक प्रवल, साहसी, और वीर देखकर वहुतसे सामन्त इनके पक्षको छोड़कर मानसिंहके पक्षमें जा मिले। परन्तु जिन सब सामन्तोने भीमसिंहका साथ दिया था, वह राजसिंहासन लेनेके लिये दोनोंमें झगड़ा होता हुआ देखकर शुभ और सुअवसर जान अपनी अधिक सामर्थ्यको संचय कर तथा राजाके ऊपर प्रभुत्व करनेवाले होगये। सारांश यह है कि " भीमसिंह जिससे हमारी सम्मतिके अनुसार कार्य करै, जिससे उनकी सहायता इस समय विशेष उचित जानकर उनकी प्रार्थनाको पूर्ण करनेमें आग्रहके साथ नियुक्त रहैं; " सामन्तोंकी एकमात्र यही इच्छा होगई, परन्तु राजा भीमसिंहनें, सामन्तोंके अधिकार वढ़ानेमे कुछ सहायता न करके स्वयं पग २ पर उनको अपने पैरोंके नीचे मोल लियेहुए दासकी समान रखनेकी विशेष चेष्टा की, इससे सामन्त इनके ऊपर अधिक अप्रसन्न होने लगे। रामसिंह जैसे उद्धत स्वभावके मनुष्य थे, तथा सामन्तोके ऊपर जैसा अप्रीतिकारक व्यवहार करते थे, भीमसिंह भी उसी प्रकारसे उद्धत आचरण करने लगे। इन्होने जिन सामन्तोंको जालौरमें अधिकार करनेके लिये नियुक्तकर रक्खा था उनको हतउद्योग देखकर (वर्षके ऊपर वर्ष वीत गया, तथापि मानसिंहको वह लोग वंदी न करसके, तव) महा क्रोधित होकर आज्ञा दी " कि जो सामन्त जालोर पर अधिकार करनेके लिये नियुक्त है, वह कदापि वीर नहीं होसकते, वे लोग घोड़ोपर चढ़ने योग्य नहीं हैं, इसलिये घोड़ेके वदलेमें उनके चढ़नेके लिये वैल दिए जॉय ?। " भीमसिंहसे इस प्रकार अपमानित हो, सामन्तोका शरीर क्रोधानलसे प्रज्ज्वलित होने लगा। महात्मा टाड् साहव कहते है कि " राजा भीमसिंहके साथ यदि सामन्तोंका इस प्रकार झगड़ा न होता तौ इस भावसे दीर्घकाल तक जालौरके किलेकी रक्षा करना मानसिंहके पक्षमें अवश्य ही असंभव होजाता और उन्हे भी अन्यान्य कुटुम्बियोंके समान भीमसिंहकी क्रोधाग्निमें भस्मीभूत होना पड़ता। राजा भीमसिंहने सामन्तोको उस भावसे घोड़ोंके वदलेमें वैल देनेकी आज्ञा देकर उनको अपमानित किया था। इससे सामन्त उसी समय रणभूमिको छोड़कर सकुटुम्व गोड़वाड़के प्रधान देश घाणेरावको चलेगये। भीमसिंह और मानसिंह इन दोनोंके ही ऊपर सामन्त अत्यन्त अप्रसन्न हुए, इसीसे अपनी जन्मभूमिको छोड़कर पासके ग्राममे जाकर रहने लगे। इधर भीमसिंह सामन्तोके इस आचरणसे अत्यन्त ही क्रोधित होगये, और उनकी वहुत सी जमीन अपने अधिकारमें कर ली। और मरुक्षेत्रके अन्य प्रधान वीर नेता ऊदावत् सम्प्रदायके सामन्तोके अधिकारी नीमाज पर आक्रमण और अधिकार करनेके लिये आज्ञा दी। परन्तु उदावत सम्प्रदाय क्रमानुसार एक वर्ष तक अतुल वलविक्रम प्रकाश करके भीमसिंहकी सेनाके हाथसे नीमाज दुर्गकी रक्षाके

पहले ही पराजय स्वीकार करचुकी थी। नीमाज दुर्गपर अधिकार करते ही भीमसिंहने उसे तुड़वाकर एकसा मैदान करदिया। नीमाजके किलेपर अधिकार करनेके लिये वेतनभोगी विजातीय बहुत सी सेना नियुक्त थी, भीमसिंहने उसको वहांसे जालौरपर अधिकार करनेके लिये भेज दिया।

विजयी वेतनभोगी सेना दुगने उत्साहके साथ जालौर और वहाके किलेपर अधिकार करनेके लिये बड़ी शीघ्रतासे चली और थोड़े दिनोमे ही उसने जालौर नगर पर अधिकार करलिया। मानसिहका आशा भरोसा इस समय मानो एकवार ही लुप्त होगया। उस सख्यावद्धसेनाके साथ किलेमे आवद्ध रह कर वे उसी समय अपने भाग्यपतनके तथा संसारको छोड़नेके पूर्व लक्षण देखने लगे। मरुक्षेत्रकी जो सामन्त मंडली तथा प्रजावर्ग मानसिहके अनुकूल पक्षकी थी, राजा भीमसिंहने इस समय उसको मरुक्षेत्रसे निकाल दिया था, इस कारण किलेके बाहरी भागसे किसीसे भी सहायता मिलनेकी आशा न रही। किलेके भीतर जो सेना वरावर कई वर्ष तक घिरी हुई थी, जिसने मानसिंहके साथमे अनेक प्रकारके कष्ट भोग किये थे, उसने न जाने किस भाँति आधे पेट भोजनके मिलनेसे प्राण धारण करके उनके जीवन की रक्षामें सहायता की थी, इस समय समस्त भोजनकी सामग्री समाप्त होगई, तथा भीमसिहकी सेनाने प्रवल रूपसे किलेको घेर लिया, अब पहलेकी समान वाहर जाकर भोजनका सग्रह करना भी एकवार ही असंभव होगया। क्या तो भोजनके न मिलनेसे इस समय प्राणत्याग करने होंगे, और क्या शत्रुओंके हाथमे आत्म समर्पण करना होगा, यह विचार करनेलगे; विषादित्त हृदयसे मानसिंह उस संख्यावद्ध सेनाके साथ घोर दुर्दिनमे चारोओर निराशाकी भयकर मूर्ति देख रहे थे, इसी समयमे अवरोधकारी सेनादलके प्रधान नेताने एक दूतको किलेमे भेजकर उसके द्वारा कहला भेजा, "महाराज! आप किलेको छोड़कर डेरोमे आजाइये, आप ही इस समय हमारे प्रभु हैं, आपकी आज्ञा पालन करना ही हमारा कर्त्तव्य कर्म है।" इष्ट मित्र और बंधु बांधवोंको छोड़कर निःसहाय सम्पत्तिहीन मानसिंह क्रमानुसार ग्यारह वर्षतक जालौरके किलेके भीतर महा कष्ट भोगते हुये रहे, पीछे उसी सम्वत्मे कार्तिक मासके आठवे दिन (सन् १८०४ ईसवीके दिसम्बर महीनेमे) यह समाचार मिला, कि राजा भीमसिंहकी मृत्यु होगई है। इस शुभ समाचारको सुनकर मानसिंहको पहले तो किसी भांति भी विश्वास न हुआ। यद्यपि यह अवरोधकारी सेनादलके प्रधान नायकका दूत था, इसने राजमंत्री इन्द्रराजके हस्ताक्षर सहित पत्रको लाकर मानसिंहके हाथमे दिया; तथापि मानसिंहके हृदयमे विषम संदेह उपस्थित होने लगा। उन्होने विचारा कि भीमसिंहने अपनी चातुरीजालका विस्तारकर उनको वंदी करनेके लिये ही इस प्रकारका उपाय किया है। अंतमे राजगुरु देवनाथको राजाभीम सिंहकी मृत्युके समाचारके सत्या-सत्यकी जांचकरनेके लिये, शत्रुओंके डेरोमे भेज दिया, उनके लौट आनेपर मानसिंह सत्य ही अपनी भाग्य-लक्ष्मीको प्रसन्न जानकर आनंदके मारे व्याकुल हो किलेसे बाहर हुए।

जो राठौरोकी सेना उनको वंदी करनेके लिये ग्यारह वर्षतक नियुक्त थी, वह इस समय मानसिंहको देखकर महा आनंदित हुई, और उसने खड़े होकर इनका सम्मान वढ़ाया।

सम्वत् १८६० में माघमासके पांचवे दिन, शुभदिन और शुभ मुहूर्त्तमें मानसिंहके मस्तकपर राजतिलक दिया गया। यद्यपि मानसिह मरुक्षेत्रके सिंहासनपर अभिपिक्त हुए, परन्तु उनके ही शासन समयसे मारवाड़के इतिहासका शोचनीय अध्याय आरंभ हुआ है उनकी विचित्र लीला और गुणोंसे मारवाड़ एकवार ही विध्वंस होगया था; उन्हींके शासनसे राठौर जातिका चिर प्रसिद्ध वलविक्रम शूरवीरता मानो चिरकालके लिये अस्त होगई; और उन्हींके शासनसमयसे राठौर जातिकी स्वाधीनताका सूर्य एकवार ही अस्त होकर गिरिगुफामे जा छिपा। राजा मानसिंहके शिर पर राजछत्र शोभायमान होनेके कुछ ही दिन पीछे भविष्यके लिये महा अनिष्टकारी मारवाड़के विध्वंसका वीज वोया गया। आशा है कि पोकरणके महा तेजस्वी सामन्त देवीसिंहका नाम पाठकोको भलीभाँतिसे स्मरण होगा। मानसिंहके पितामह विजयसिंहने किस प्रकारके उपायसे देवीसिंहको वंदीकरके उनके जीवनका विनाश किया था; और उन्ही देवीसिहके प्राणनाशके कारण उनके पुत्र सवलसिंह उनसे वदला लेनेके लिये किस प्रकार रुद्रमूर्तिसे रंगभूमिमें गये थे, तथा अंतमें जीवन त्याग किया था, उसका वर्णन पहले ही करचुके है। पोकरणके सामन्त-वंश मारवाड़की दूसरी श्रेणीके सामन्तरूपसे चुनेगये है, और इन्होने अपनी अतुल सामर्थ्य चलाई, इसका फिर उल्लेख करना निष्प्रयोजन है, मानसिंह जिस समय सिंहासन पर विराजमान हुए उस समय उन निहत देवीसिंहके पौत्र सवलसिंहके पुत्र सवाई सिंह पोकरणके सामन्त पदपर चांपावतोकी सहायतासे प्रवलपराक्रमके साथ रहते थे। देवीसिहने जिस प्रकार गर्वपूर्ण वचनसे कहा कि "मारवाड़का सिंहासन मेरी तलवारमें है" और मृत्युके समय कह गये कि "पोकरणमे मेरे पुत्र सवलकी तलवारमे मरुक्षेत्रका सिहासन रहैगा" इस प्रकारसे सवाईसिहने अपने पितामह देवीसिंह और पिता सवल सिंहका वदला लेनेके लिये मानसिहके अभिषेकके पीछे सवसे पहले मारवाड़के विध्वंशका वीज वोदिया। पितृपुरुपोके प्रतिहिंसावृत्तिको चरितार्थ करना यदि इस संसारमे धर्म कहा गया है तव तो इस विपयमे सवाईसिंह अत्यन्त धार्मिक होसकते हैं। मानसिंहके अभिपेकसे उनकी मृत्युके समय तक सवाईसिंहने मानसिहके शिरपर तीक्ष्ण तलवार रक्खी थी। मानसिहके सिहासन पर वैठनेके कुछ ही काल पीछे शान्तिसुख न भोगकर सवाईसिह असंतुष्टहो राजसभाको छोड़कर अपना मनोरथ पूर्ण करनेकी चिन्तामे उन्मत्त होगये। इन्होने सवसे पहले जोधपुरको राजधानीसे ढाई कोस दूर चोपासनी नामक स्थानमे अपनी सव सम्प्रदायोको वुलाकर षड्यंत्र जालका फैलाना आरंभ कर दिया। उपस्थित सामन्तोको वुलाकर कहा, "मृतमहाराज भीमसिहकी रानी गर्भवती हैं, इस कारण आप सभी एकमत होकर यह प्रतिज्ञा कीजिये कि यदि रानीके पुत्र उत्पन्न होगा तो मानसिहको सिंहासनसे उतार कर उसीको

राजतिलक दिया जायगा।" सवाईसिंह रणकुशल योधा थे, तथा महावीर और नीतिके जाननेवाले भी थे, इस कारण उनके उद्देश, उपदेश और उत्तेजनासे सभी सामन्तोंने एकमत होकर अपनी सम्मति प्रकाशित की, कि हम सभी लोग आपके प्रस्तावमें सम्मत हैं, अंतमें सम्मतिपत्र पर अपने२ नामके हस्ताक्षर भी करदिये। सवाई-सिंहने इस प्रकार सबसे पहले सफलता प्राप्त करके शीघ्र ही उस सामन्त मंडलीके साथ किलेमें से भीमसिंहकी गर्भवती रानीको लाकर नगरमें बड़ी सावधानीसे एक महलमें रख दिया। अंतमें उस सामन्त मंडलीने एक सम्मतिमें राजा मानसिंहके सामने उन भीमसिंहकी रानीके गर्भका समाचार कहा, यदि रानीके पुत्र होगा तो उनको मारवाड़के सिंहासनका भावी उत्तराधिकारी रूपसे स्वीकार करना होगा। चतुर मानसिंह इस बातको भलीभाँतिसे जान गये थे कि यदि इस विषयमें मैंने अपनी असम्मति प्रकाश की, तो सभी सामन्त मुझसे विरुद्ध होजॉयगे, इस कारण उन्होंने उसी समय कहा, कि "यदि रानीके पुत्र होगा तो वही मरुक्षेत्रका उत्तरा-धिकारी होगा, और कुमारके जन्म लेनेसे उनकी पद मर्यादा बढ़ानेके लिये नागौर और सिवाना यह दोनों उनको दियेजाँयगे," और यदि रानीके कन्याहुई तो ढूंढारके राजकुमारके साथ उसका विवाह करदिया जायगा।" राजा मानसिंहकी इस प्रतिज्ञासे सामन्तोंने किसी प्रकारकी आपत्ति करनेका प्रयोजन न समझा, और पोकरणके सामन्तने भी उस समय अपनी प्रतिहिंसा वृत्तिको चरितार्थ करनेका कोई उपाय न देखा। रानीने यदि पुत्र उत्पन्न किया तो उनकी आशाके पूर्ण होनेमें विशेष सुभीता मिल जायगा, इसी आशासे धीरज धरकर वे समयकी बाट देखने लगे।

राजाके परलोकवासी होनेके पीछे विधवा रानियोंके औरस जात सन्तान उत्पन्न करते ही राजपूत राज्यमें बड़ी हलचल मच जाती थी, उन नवप्रसूत राजकुमारके स्वार्थ साधनके लिये सामन्त मण्डलीकी प्राय: एक २ सम्प्रदाय उनके पक्षमें जाकर आत्मविग्रह और अंतमें जातीय युद्धतक उपस्थित कर देती थीं। ऐसी अवस्थामें गर्भवती रानियां प्राय. पुत्र ही उत्पन्न करती हैं, "और जो रानीके कन्या उत्पन्न हुई तो उसी समय किसी और के गर्भजात पुत्रको लाकर, रानीके यह पुत्र उत्पन्न हुआ है, ऐसा प्रचार करते थे या नहीं" यद्यपि महात्मा टाड साहबने इसका वर्णन नही किया है, परन्तु उनकी कथाके भावसे यही समझा जाता है। वह जो कुछ हो, ठीक समयमें भीमसिंहकी रानीके पुत्र उत्पन्न हुआ। राजा मानसिंह नवीन कुमारके कोमल जीवनकमलको नष्ट करदेंगे, इस भयसे राजमहिषीने कुमारको एक टोकरीमें रखकर अत्यन्त विश्वासी सेवकके द्वारा उसे पोकरणमें सवाईसिंहके पास भेजदिया। पोकर्णके सामन्त उस नवीन कुमारको पाकर अत्यन्त प्रसन्न चित्त हुए, और बडी सावधानीसे उनका लालन पालन करनेलगे। परन्तु प्रकाशमें उन्होने दो वर्षतक राजकुमारके जन्मका वृत्तान्त गुप्त रक्खा। कर्नल टाड साहब लिखते है "कि यदि महाराज मानसिंह अतीत घटनाको भूलकर सबके ऊपर न्याय करते, और सामन्तोंसे विद्वेशभाव प्रकाश कर भीमसिंहके शासन समयमें जिन

सामन्तोंने उनका साथ न देकर भीमसिंहके पक्षका अवलम्बन किया था, उनके साथ असद्व्यवहार न करते, तो इन नवीन कुमार धौंकलसिंहके जन्मका वृत्तान्त चिर दिन तक गुप्त रक्खा जासकता। राजा मानसिंहने राज्यमें अपनी शासन शक्तिको भलीभांतिसे दृढ़ करके, जिन सामन्तोंने इनके साथ जालौरके किलेमे वंदीभावसे रहकर इनकी विशेप सहायता की थी, केवल उन्हीं सव सामन्तोको ऊचापद सम्मान और मर्यादा दी थी तथा जो सामन्त भीमसिंहकी आज्ञाके अनुसार उनके विपक्षमें खड़े हुए थे, उन्होंने सरलतासे उनके ऊपर विराग दिखाना प्रारंभ करदिया। राजा मानसिंहका साथ केवल उनके स्वजातीय दो प्रधान सामन्तोंने दिया था। उनके पक्षका अवलम्बन करनेवालोंमे भाटी जातीय राजपूत सेना तथा महन्त कायमदासके अधीनमे स्थित विष्णुस्वामी नामक सेनादल भी था।

राजा मानसिंहने अपने अनुगत सामन्तोंके प्रति विशेप कृपा प्रकाश की और अन्य सामन्तोके ऊपर वे अधिक रुष्ट रहने लगे, इस व्यवहारसे पोकरणके सामन्त सवाईसिंहके हृदयमे वह भस्माच्छन्न प्रतिहिंसाकी अग्नि फिर प्रवल होगई। वह इतने दिनोतक मानसिंहको किसी भाँति भी सामन्त मंडलीका अप्रियपात्र होता हुआ न देख कर मौन थे, परन्तु दो वर्पके पीछे मानसिंहको पक्षपातमूलक, आचरण करते हुए देखकर तथा अन्यान्य सामन्तोंको उससे महा असंतुष्ट देखकर सवाईसिंहने शीघ्र ही अपनी सम्प्रदायके प्रधान २ नेताओंके निकट धौंकलसिंहके जन्मका वृत्तान्त, और "दो वर्षतक मैंने उनका पालन किया है" यह समाचार कहला भेजा, और उसके साथ ही साथ सवको यह भी याद दिलाई कि राजा मानसिंहने राजकुमारको जो नागौर और सिवाना देनेके लिये कहा है वह इस समय अपनी उस प्रतिज्ञाको भी पूर्ण करै। अत्यन्त अल्प समयमें ही सामन्त गण सवाईसिंहके द्वारा भेजे हुए समाचारको पाकर एक साथ मिलगये। सवाईसिंहने उनके साथ महलमे जाकर धौंकलसिंहके जन्मका समाचार राजा मानसिंहको सुना दिया, "महाराज! आपने कुमारको नागौर और सिवाना देनेके लिये कहा था, इस समय आप अपनी प्रतिज्ञाको पालन कीजिये।" भीमसिंहकी रानीके पुत्र उत्पन्न हुआ है; दो वर्ष तक मानसिंहको यह समाचार विदित नहीं हुआ था; परन्तु इस समय धौंकलसिंहके जन्मका समाचार सुनकर वह चैतन्य होगये। मानसिंह और कोई उपाय न देखकर वोले, "धौंकलसिंह यदि वास्तवमे ही राजा भीमसिंहके औरस जात पुत्र हुए है, तो भलीभाँति खोज करलेने पर मै अवश्य ही अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण करूँगा।" भीमसिंहकी विधवा रानी, पुत्रको पोकरणमे भेजकर आप जोधपुरके महलमे रहती थीं। राजा मानसिंह यथार्थ वातके जाननेके लिये उद्यत हुए हैं, यह सुनते ही रानी महाभयके समुद्रमें निमग्न होगई। उन्होने विचारा कि

(१) यह सेनादल विष्णुका भक्त था। महन्तके स्वार्थकी रक्षाके लिये इसने प्राणपणसे युद्ध किया था. आवश्यकता होनेपर महन्तकी आज्ञासे दूसरोंका साथ भी देते थे। यद्यपि धर्मार्जन ही इनके जीवनका प्रधान उद्देश था पर वे युद्धकार्यसे भी कदापि विमुख न होते थे।

यदि मैं इस बातको स्वीकार करती हूँ कि धौंकलसिंह मेरे गर्भजात पुत्र हैं तो राजा मानसिंह अवश्य ही इनको अपना शत्रु जानकर मार डालेंगे। यह विचार कर रानीने धौंकलसिंहके जीवनकी रक्षाके लिये सबके सामने कहा, कि धौंकलसिंह मेरे गर्भजात पुत्र नहीं है। रानीके इस प्रकार कहते ही राजा मानसिंहकी समस्त आपत्तिये मानो दूर होगई, तथा पोकरणके सामन्त सवाईसिंहकी ऊँची आशालता भी मानो उसके साथ ही साथ एकबार ही भस्म होगई। भीमसिंहकी रानी निश्चय ही गर्भवती थीं पहले उन्होंने इसका कोई प्रमाण नहीं लिया था, इस कारण सामन्त गण रानीके इस वचनको सत्य जान कर राजाके सम्मुख तैयार होगये, और पोकरणके सामन्त भी चारोंओर अंधकार देखने लगे।

प्रतिहिंसा दानार्थी सवाईसिंह यद्यपि भीमसिंहकी रानीकी उक्तिसे व्यर्थ मनोरथ होगये, यद्यपि उन्होंने प्रकाशमे राजा मानसिंहके समीप कोई प्रार्थना नहीं की, यद्यपि उनको उसी समय अपने सहयोगी सामन्तोंके साथ मिलकर मानसिंहके विरुद्धमे तलवार धारण करनेका सुअवसर नहीं मिला, परन्तु वह शीघ्र ही अन्य उपाय न देखकर अपनी अभिलाषाको पूर्ण करनेके लिये सावधान होगये। पितृहिंसाको चरितार्थ करनेके लिये सवाईसिंह इस समय कूट राजनीतिका अवलम्बन कर जिस प्रकारके विषोक्त षड्यंत्र जालकी सृष्टि करने लगे, उस षड्यत्र सूत्रसे क्या विष उत्पन्न होगा उसको वह स्थिर न करसके। उसी षड्यत्रसे केवल मारवाड विध्वंस कर दिया, यही नहीं, उसीसे सवाईसिंहने अपने धन और प्राणको भी खो दिया-विश्व विदित राठौर जातिकी स्वाधीनता रूप अमृतराशि विजातीय विधर्मी और अत्याचारियोंके द्वारा अपहृत हुई, और राठौर जातिका वह अंतिम क्षीण गोरव भी एकबार ही चिरकालके लिये लुप्त होगया। सवाईसिंहने एकमात्र प्रतिहिंसा वृत्तिको चरितार्थ करनेके लिये विध्वंसकारी नीतिके अवलम्बनसे सबसे पहले अपनी भविष्य उन्नतिके आशा भरोसा और प्रताप प्रभुत्वको सञ्चय करनेके लिये एकमात्र उपायस्वरूप धौंकलसिंहकी निर्विघ्नतासे रक्षा करना एकान्तकर्त्तव्य जान लिया था। पोकरणका किला यद्यपि भलीभांतिसे मजबूत था तथापि वहां इनको दीर्घकालतक रखना असंभव जानकर उन्होंने धौंकलसिंहको शेखावाटीमे खेतड़ी ले जाकर छत्रसिंहभाटीके प्रतिभू अभयसिंहके पास भेज दिया। धौंकलसिंह अभयसिंहके पास निर्विघ्नतासे रह सकेंगे, यह जानकर सवाईसिंहने अपनी गुप्त अभिलाषाको पूर्ण करनेके लिये चातुरी जालका विस्तार प्रारंभ करदिया, सवाईसिंह जैसे असीम साहसी वीर थे, उसी प्रकारसे षड्यन्त्रके कौशलका फल भी शीघ्र ही प्रकाशित हुआ।

सवाईसिंहने इतने दिनोतक मानसिंहके विरुद्ध खड़े होकर उनको यह विदित करदिया कि यही उनके राज्यके कण्टक स्वरूप है और इन्हींके द्वारा विघ्नकी विशेष संभावना है, पर अब परम नीतिज्ञ चतुर सवाईसिंह अपने स्वार्थ साधन करनेके

(१) यह सेखावत सम्प्रदायके एक अत्यन्त बलशाली प्रधान नेता थे।

लिये इस समय उस शत्रुताको छोड़कर प्रकाशितरूपसे मानसिहके अत्यन्त अनुगत होकर उनके मनको प्रसन्न करनेमें प्रवृत्त हुए । जिससे एक शुभ सुअवसर इस समय उपस्थित हुआ । सवाईसिह उस सुयोगका अवलम्बन करके अपनी समस्त अभिलाषाओंको पूर्ण करनेकी विशेष संभावना जानकर मानसिंहके निकट मित्रता और अनुगत्यता प्रकाश कर छिपे २ उनके सर्वनाश करनेका उपाय करने लगे । मानसिंहने विचारा "ऐसा बोध होता है, कि पोकरणके उद्धत सामन्तोने इतने दिनोंमें अनन्य उपाय होकर सब प्रकारसे अनुकूलता स्वीकार करनी उचित जानी है, इस कारण उन्होंने सवाईसिंहके प्रति अत्यन्त प्रीतिमूलक व्यवहार करना प्रारंभ किया । बुद्धिमान् सवाईसिहने जिस घटनाको लक्ष्य करके अपने षड्यंत्रजालकी सृष्टि गुप्तभावसे की थी, इस समय वही घटना प्रवल होगई । मारवाड़के मृत महाराज भीमसिंहने मेवाड़के महाराणाकी अत्यन्त रूपलावण्यमयी कृष्णाकुमारीके विवाहके लिये महाराणाके निकट प्रस्ताव भेजा था; परन्तु विवाहका प्रस्ताव भलीभांतिसे स्थिर भी न होचुका था कि इसके पहले ही मारवाड़पति भीमसिंहने शरीर त्याग दिया । सवाईसिहने अपने विध्वंसकारी नीतिकार्यको सिद्ध करनेके लिये गुप्तभावसे जयपुरके अधीश्वर महाराज जगत् सिंहके पास यह प्रस्ताव भेजा कि राणा भीमसिंहकी कन्या अत्यन्त सुन्दरी है, इस कारण आप उससे विवाह करनेके लिये राणाके निकट प्रस्ताव भेज दीजिये । जयपुरपति जगत्सिंहने कृष्णाकुमारीके रूपलावण्यका समाचार सुनकर उस रमणी रत्नकी प्राप्तिकी इच्छासे शीघ्र ही महामूल्यवान् उपहारके द्रव्य और चार हजारसेना उदयपुरकी ओरको भेज दी। जगत्सिंहको इस प्रकारसे द्रव्य संभार भेजनेमें उद्यत देख कर सवाईसिहने उसी समय मारवाड़पति मानसिहसे कहा, कि "महाराज! मेवाड़पति राणाकी रूपवती कन्या कृष्णकुमारीके साथ मृतमहाराज भीमसिहके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित हुआ था, इस समय जयपुरपति जगत्सिहने उसके साथ विवाह करनेके लिये उपहारके द्रव्य भेजे है । यदि जगत्सिहको कृष्णकुमारी मिलजायगी तो इस संसारमें अपने माथेपर कलंकका टीका लगैगा । मारवाड़के अधीश्वर रूपसे ही भीमसिहके साथ कृष्णाकुमारीके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित हुआ था, आप भी उसी मारवाड़के सिंहासन पर विराजमान है; इस कारण आपके बदलेमें जगत्सिंह यदि कृष्णकुमारीका पाणिग्रहण करैंगे तो मारवाड़के सिंहासनको घोर कलंक लगेगा ?" पोकरणके सामन्त सवाईसिहने किस गुप्त उद्देशसे यह बात कही थी मानसिंहकी वह कुछ भी समझमें न आई; उन्होंने विचारा कि मावाड़के सिंहासनकी रक्षाके लिये सवाईसिह इस प्रकारसे उत्तेजना प्रकाश करते है, इस कारण सवाईसिहकी उक्तिने उनको भलीभाँतिसे जयपुरके महाराज जगत्सिहके विरुद्धमें उत्तेजित करदिया ।

मानसिहने शीघ्र ही सामन्तोको सेनासहित इकट्ठा होनेकी आज्ञा दी । राजा मानसिहने तीन हजार राठौरोंकी अश्वारोही सेनाके साथ चलकर मेवाड़की सीमामें

स्थित हीरासिंहके अधीनमें धनलोलुप सेनाके साथ मिलकर जयपुरके महाराजके भेजे हुए उपहार द्रव्योंको लूट लिया, तथा जयपुरकी सेनाको परास्त करके भगा दिया। महाराज जगत्सिंह मानसिंहके इस आचरणसे अत्यन्त ही क्रोधित होगये, और शीघ्र ही उन्होंने इनके साथ युद्ध करनेकी तयारी करदी।

चतुर सवाईसिंहकी अभिलाषा पूर्ण होगई। जयपुर और मेवाड़ इन दोनो देशोंके राजाओंके साथ मानसिंहके द्वारा विवादानल प्रज्ज्वलित कराके उन दोनो राजाओंके द्वारा मानसिंहको सिंहासनसे उतार धौंकलसिंहको मरुक्षेत्रके सिंहासन पर अभिषिक्त कर अपना बदला लेनेके लिये सवाईने यह कार्य किया था। इस समय मानसिंहके साथ जगत्सिंहके युद्धका समाचार सुनते ही सवाईसिंह मानसिंहके प्रति मौखिक मित्रता दिखाकर शीघ्र ही खेतड़ीको चले गये, । धौंकलसिंह खेतडीमें अभयसिंहके आश्रयमें रहते थे, सवाईसिंह शीघ्र ही धौंकलसिंहको लेकर एकवार ही जयपुरमें आकर राजा जगत्सिंहसे मिले। चतुर सवाईसिंहने मानसिंहको उत्तेजित करके, जगत्सिंहने जो उपहारके द्रव्य भेजे थे उन सबको लुटवा लिया, जयपुरके महाराजको यह समाचार नहीं मिला था, वरन् मानसिंहके विरुद्धमें युद्ध करनेका समाचार सुनते ही सवाईसिंह धौंकलसिंहको लेकर उनकी सहायताके लिये आये हैं, इन्होने सवाईसिंहको अपना मित्र जानकर बड़े आदरमानके साथ ग्रहण किया। मानसिंहके आचरणसे जगत्सिंह अत्यन्त क्रोधित होगये थे, अधिक क्या कहै सवाईसिंहने मानसिंहको सिंहासनसे उतार कर धौंकलसिंहको उस सिंहासन पर बैठालनेका प्रस्ताव किया, तथा इससे ही अपनी प्रतिहिंसा वृत्तिको सफल हुआ जाना, जगत्सिंहने शीघ्र ही उसमें अपनी सम्मति प्रकाश की और साथहीमें यह भी स्थिर कर लिया कि इससे राठौरोंके सामन्त मानसिंहका पक्ष छोड़कर धौंकलके पक्षके लेनेसे मानसिंहके परास्त करनेमें वह विशेष सहायता करेंगे। धौंकलसिंह मृतमहाराज भीमसिंहके औरस जात पुत्र थे, तथा यही शास्त्रके अनुसार मारवाड़के सिंहासनके अधिकारी हैं, इसको प्रमाणित करनेके लिये सवाईसिंहके प्रस्तावसे जगत्सिंहकी भगिनीके साथ भीमसिंहका विवाह किया था, उस विधवा रानीकी गोदमें धौंकलसिंहको बैठाल दिया, और राजपूत रीतिके अनुसार धौंकलसिंहके साथ जगत्सिंहने एक थालमें भोजन करके इनको अपना भानजा और मरुक्षेत्रका अधिकारी कहकर विख्यात् किया। मानसिंहके आचरणसे समस्त सामन्त असंतुष्ट होगये थे, जिन्होंने धौंकलसिंहको मारवाडके सिंहासन पर बैठालनेके लिये पहले सम्मति पत्रपर हस्ताक्षर किये थे। जगत्सिंहकी इस आज्ञाके प्रचारित होते ही वह सभी सामन्तमंडली शीघ्रतासे आकर जयपुरमें सजी हुई सेनाके साथ आ मिली।

---

(१) प्रथम कांडके १६ वें अध्यायमें मारवाड़ राजके साथ जयपुरके महाराजके युद्धका वृत्तान्त, तथा कृष्णकुमारीकी शोचनीय मृत्युका वृत्तान्त वर्णन किया गया है।

(२) उर्दू तर्जुमेमें फूंफा लिखा है।

धौंकलसिंहका पक्ष समर्थन करनेके लिये मानसिंहके विरुद्ध जगत्सिंहकी सेनाके साथ जो समस्त राठौर नेता जा मिले थे, उनमे राठौर वंशमे उत्पन्न हुए वीकानेरके स्वाधीन राजा सवमें अग्रणीय थे। वीकानेरके महाराजको मानसिंहके विरुद्ध खड़ा हुआ देखकर मरुक्षेत्रके अन्यान्य सामन्तोने भी एक २ करके जगत्सिंहका साथ दिया। राजा मानसिंह इकले ही उस महा विपत्तिके जालमे फँस गये। पोकर्णके सामन्तोकी प्रतिहिंसावृत्तिके चरितार्थ होनेके पूर्व लक्षण भलीभाँतिसे प्रकाशित होनेलगे। यद्यपि मानसिंहको सम्पूर्ण सामन्तोंने छोड़ दिया था, यद्यपि वह चारोओर केवल निराशाकी विभीषिकामयी मूर्त्तिको देखने लगे थे, परन्तु उन्होने स्वजातिके स्वभाव वश साहसके साथ धीरज धर कर अपनी रक्षा करने और जगत्सिंहने भी उनकी सहयोगी राठौर सेनाके साथ युद्धके लिये तैयार होनेमे किञ्चित्मात्रका विलम्व नही किया। जगत्सिंह सम्मिलित सेनाके साथ मारवाड़में जाकर उपस्थित हुए, मानसिंह इससे पहले ही अपने अधीनकी सेनाके साथ वलविक्रम प्रकाश करके सीमाके अन्तमें आ पहुँचे। इधर जयपुरपति जगत्सिंहने अपनी सेनाके अतिरिक्त मरुक्षेत्रके प्रायः सभी राठौर सामन्तो की सहायता पाकर लाखसे भी अधिक सेनाको युद्धके लिये तैयार करलिया! मारवाड़ विध्वंसके पूर्व लक्षण प्रकाशित होने लगे। जगत्सिंह जिस प्रकार अनुपम रूपवती कृष्णकुमारीको पानेके लिये तथा मारवाड़पतिको प्रतिहिंसा देनेके लिये वलविक्रम प्रकाश करते हुए आगे वढ़े; उसी प्रकारसे धौंकलसिंहके अनुगत सामन्त भी मानसिंहको सिंहासनसे उतार कर धौंकलसिंहको मरुक्षेत्रके राज्य गद्दी पर वैठानेके लिये, आग्रहके साथ आ मिले। इसी कारणसे मानसिंहका प्रतिद्वन्दी पक्ष अत्यन्त प्रवल होगया। अधिक क्या कहै, जयपुरके महाराजने इकले ही अपनी सेनाके साथ मारवाड़ पर आक्रमण करनेका उद्योग किया, मानसिंह इससे कुछ भी भयभीत न हुए, परन्तु उनके स्वजातीय महावीर राठौर सामन्तोने जो जयपुरके महाराजका साथ दिया, इससे मानसिंहका हृदय अत्यन्त भयभीत हुआ। महाराज अजितके जीवन विनाशका फलस्वरूप क्या मारवाड़ एकवार ही विध्वंस होजायगा, इसी लिये राठौर सेनाके सामन्त अपने स्वभावसे राजभक्तिकी जडमे दारुण कुठाराघात करके अपने राजाके विरुद्ध खड़े होगये है? मारवाड़ और जयपुरके दोनो राजाओमे इस महा युद्धकी तैयारी होते ही रजवाड़े और भारतके अन्यान्य प्रान्तोसे अनेक सम्प्रदायोने आ आकर किसी न किसी पक्षका साथ दिया। जिन महाराष्ट्रोने इस समय भारतमे केवल दस्यु वृत्ति राज्यको लूटना, और राजपूत राजाओमे विवाद प्रज्वलित करादिया था; वे अंतमे किसी न किसीके पक्षके योगसे दोनो ओरके निकटसे अधिक धनके संग्रह करनेमे नियुक्त होते थे, वही इस समय इन दोनो राजपूत राजाओके विवादसे महा प्रसन्न हो स्वार्थ साधन करनेके लिये दलके दलै आकर दोनो पक्षोका साथ देनेलगे। कई वर्षके पहले माधोजी सिन्धिया मारवाड़मे सर्वस्व लूटनेके लिये गये थे; इस कारण मारवाड़के खजानेकी अवस्था इस समय अत्यन्त शोचनीय होरही थी, अन्य पक्षमे जयपुरपतिके अर्थ वल प्रवल होनेसे

अधिकांश महाराष्ट्र उनके साथ मिल गये। जिस समय अंग्रेजी सेनाके नायक लार्ड लेक दूसरे महाराष्ट्रनेता हुलकरके विरुद्ध धावमान हुए थे, उस समय हुलकर मारवाड़पतिका आश्रय लेकर अपने कुटुम्बको मारवाड़मे निर्विघ्नतासे रख, आप अटकके किनारेको चले गये। मानसिहने उस समय हुलकरकी अधिक सहायता की थी, इसीसे इस समय उन्होने महा विपत्तिमे हुलकरसे सहायता माँगी, तुरन्त ही महा विपत्तिमें आश्रय दाता मानसिहकी सहायताके लिये हुलकर अपनी सेनाके साथ आ गये। हुलकरने मानसिहके डेरोसे नौ कोस दूर पर अपने डेरे डाले और कहला भेजा कि कल प्रभात होते ही आपके साथ साक्षात् किया जायगा, परन्तु बुद्धिमान् सवाईसिहने मानसिहकी वह आशा भी व्यर्थ कर दी। सवाईसिहने जब देखा कि प्रबल पराक्रमशाली हुलकरने मानसिहका साथ दिया है, इस कारण इनको युद्धमे जीतना असम्भव होजायगा, तब इसने सबसे पहले हुलकरको ही अपने हस्तगत करना उचित जाना। शीघ्र ही हुलकरके साथ उसने स्थिर किया; वह मानसिहकी सहायताके लिये किंचित् भी सेना न भेजे, और तुरन्त ही कोटेकी ओरको चले जाँय। वहाँ जाते ही इनको भेटमे १००००० रुपये प्राप्त होगे। धनका लोभी हुलकर मानसिहके उन उपकारोंको एकबार ही भूल गया, और बिना ही युद्धके १००००० रुपया मिलता जानकर तुरन्त ही सवाईसिहकी हस्ताक्षर सहित हुन्डी लेकर कोटेकी ओरको चला गया। महा दुःखके समय घोर विपत्तिके समयमे महाराज मानसिहने जो हुलकरको आश्रय दिया था, हुलकर उसको एकबार ही भूल गया। हुलकरके इस आचरणको देखकर महाराज मानसिह अत्यन्त ही निराश होगये। परन्तु उस समय भी उनके पक्षमे मरुक्षेत्रके सबमे प्रधान वीर मेरतिया सम्प्रदाय तथा अन्यान्य राठौरोकी सम्प्रदाय भी नियुक्त थी, वह सभी साहसमे भरकर युद्धकी अग्नि प्रज्ज्वलित करनेके लिये आगे बढे।

हुलकरके भागते ही जगत्सिह और धौकलसिह उस लाखसे भी अधिक सेनाके साथ मानसिहकी सख्यावद्ध सेनाको एकबार ही विध्वस करनेके लिये महा बल विक्रमके साथ आगे बढे। मानसिह इस समय अपनी सेनादलके साथ गागोलीनामक स्थानमे थे, दोनों ओरकी सेनाके सम्मुख होते ही जो सब राठौर सामन्त उस समयतक राजा मानसिहके पक्षमे नियुक्त थे उन्होंने घोड़ोंपर सवार हो भलीभाँतिसे सम्मान कर प्रणाम करके विदा ली, राजा मानसिहने विचारा कि ऐसा बोध होता है कि सामन्त अपने २ अधीनकी सेनाके साथ युद्धमे जानेके लिये विदा लेते हैं, परन्तु तुरन्त ही उनका वह भ्रम जाता रहा, जगत्सिहकी सेनाने जिस समय गोले वर्षाने प्रारंभ किये उसी समय समस्त सामन्त सवाईसिहके साथ पूर्व निर्द्धारित सम्मतिसे मानसिहका पक्ष छोड़कर शत्रुपक्षके साथ जा मिले। अधिक क्या कहै, जो मेड़तिया मरुक्षेत्रमें राजभक्तिमे सबसे अधिक प्रसिद्ध थे, कोई भी सिहासन पर

बैठै, कितना ही अत्याचारी क्यो न हो पर तथापि वे उसका साथ नही छोड़ते थे मेड़तियाके दलके ईहाईघूया तथा सरदार चम्पावत जयतावत गण, जो शूरवीरताभे विख्यात् गिने जाते है—तथा अन्यान्य नीची श्रेणीके सामन्तोके साथ मानसिहका पक्ष छोड़कर धौकलसिंहके स्वार्थ साधन करनेके लिये उनके आधीनमे स्तित अन्य स्वजातीय राठौर सेनाके साथ जा मिले। इस युद्धके प्रारंभमें ही भयंकर विपत्तिके मुखमे पड़े हुए मानसिह् अपने आधीनके समस्त सामन्तोसे त्यागे जाकर चारोंओर अन्धकार देखने लगे। क्रोध अनुताप तथा विपाद् और भयके मारे मानसिंह मानों उन्मत्त होगये, और इस समय क्या करै ! इसका कुछ भी स्थिर न करसके। मरुक्षेत्रके सम्पूर्ण सामन्तोमे केवल कुचामन आह्वा जालौर, और नीमाज इन्हीं चारों सामन्तोने राजा मानसिंहको इस महा विपत्तिके समयमे नहीं छोड़ा था, वह लोग विपत् सम्पत्के अंशके भागी होनेके लिये उनके साथ ही रहे थे। मानसिंह उन चारो सामन्तोके आधीनकी सेनाके साथ, और अपने संगवाली बूंदीकी संख्यावद्ध सेनाको साथ लेकर शत्रुओकी अगणित सेनाके विरुद्ध अंतिम साहसके साथ युद्ध करनेके लिये आगे चले। परन्तु उन विश्वासी चारों सामन्तोने देखा कि शत्रुओकी अगणित सेनासे युद्धमे जय पाना तो एक ओर रहा वरन् प्राणोकी रक्षा भी कठिन होगी; इस कारण उन्होने मानसिहको इस असीम साहसके कार्यमे हाथ डालनेसे निपेध किया। तव मानसिह मारे दुःखके आत्मघात करनेको तैयार हुए;परन्तु कुचामनके शिवनाथसिंहने आगे जाकर महाराज मानासिहको हाथी परसे उतार लिया और तुरंत ही उन्हे एक वेगगामी घोड़ेपर विठाकर रणखेतसे चले जानेका अनुरोधकिया। राजा मानसिंहने देखा कि इस समय यहांसे भागनेके अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं है. तव वह शीघ्र ही, विपाद, क्रोध, लज्जा, घृणा और अनुतापसे विदग्ध हृदय हो घोड़ेपर चढ़कर वहाँसे चले गये। उन्होने जानेके समय नेत्रोमे जलभर कर कहा, " हाय ! राठौर राजवंशमे एक मैंने ही कछवाहोके सम्मुख युद्धमे पीठ दिखाकर राठौर राजकुलमे कलंक लगाया। " वास्तवमे राठौर जाति मरुक्षेत्रमें अपनी प्रभुताके विस्तारके समय अन्यान्य राजपूत जातियोंको अपनी उपेक्षा वलविक्रममे अत्यन्त हीन जानकर उनके प्रति अपेक्षा दिखाती थी, इस कारण मानसिंहके हृदयमे इस समय ऐसा पश्चात्ताप होनेमे आश्चर्य ही क्या है।

राजा मानसिंहने अपना पक्ष अत्यन्त दुर्वल जानकर पहलेसे ही सावधान होकर पर्वतसर मार्गसे आधे कोश आगे जाकर अपने डेरे डाल दिये। सरलतासे भागने और शत्रुपक्षके आक्रमणको निवारण करनेके लिये यह स्थान वड़े सुभीतेका था। इस कारण वह अंतमें अत्यन्त निरुपाय होकर उसी मार्गसे पर्वतसरमें आगये। राजा मानसिहने जव उनियाराके रावके साथ पीठ दिखाई तव उनके पक्षके बूंदीके गोलन्दाजो तथा हिंदालखॉ नामके मनुष्यने धनके लोभके वशीभूत होकर इनका साथ दिया था,

---

(१) जालौर तो खालसेका गॉव है वहॉ कोई सामन्त नहीं है और न पहले था।

उसके आधीनकी गोलन्दाज सेना बराबर भयंकर वेगसे गोलोकी वर्षा कर शत्रुओके पक्षके आक्रमणको निवारण करने लगी। जिस समय दोनो ओरसे गोलोकी वर्षा होने लगी, उस समय मानसिह निर्विघ्नतासे मेरतामे आ पहुँचे। राजा मानसिंहको इस प्रकारसे शत्रुओके करालग्राससे उद्धार करके उनको औरका उक्त गोलन्दाज दल भी धीरे २ चलकर राजा मानसिंहके निकट आ पहुँचा। मानसिहने मेरतामे आकर देखा कि एक लाखसे भी अधिक सेनाके हाथसे अपनी रक्षा होगई, पर मेरताकी अपेक्षा किसी अभेद्य किलेमे रहना ठीक है, इस कारण वह शीघ्र ही मेरतासे पीपाड़ होकर राजधानी जोधपुरमें आ पहुँचे। वे चार सामन्त, जिनके पास बहुत थोड़ी सेना थी, और जो उनके साथ सुख दुःख सबमें अंशके भागी होनेके लिये मिले थे, उस समय भी उनको न छोड़कर साथ ही साथ जोधपुर राजधानीमे चले गये। मानसिंहके युद्धक्षेत्रसे भागते ही जगत्सिंह और धौंकलसिंहके साथ महाराष्ट्र नेता सेंधियाके अन्यतर सेनापति बालारावने मानसिहके डेरोको लूटकर अठारह तोपैं अपने अधिकारमे कर लीं, और अमीरखांनामक अन्य एक पठान सेनापतिने, जो शत्रुओंके यहां नियुक्त था, मानसिहके डेरोमेंसे बहुत सा द्रव्य लूटलिया। विजयी सेनाने मानसिहके भागनेसे पर्वतसर और उसके निकटवर्ती ग्रामोंको लूट लिया। मारवाड़के विध्वंशका यह प्रथम ही कारण प्रारंभ हुआ।

पोकरणके सामन्त सवाईसिहने मानसिहके भाग्यमें यह कालरात्रि उपस्थित कर दी। जिसने अपने पैतृक प्रतिहिंसावृत्तिको चरितार्थ करनेके लिये इस भयंकर समरानलको प्रज्वलित किया था, प्रथम युद्धमे ही मानसिंहके भागजानेसे उसकी वह आशा पूर्ण हो गई और जयपुरके महाराज जगत्सिहकी प्रतिहिंसावृत्ति सफल हुई। मानसिंहके भागते ही जगत्सिंहने सवाईसिहको बड़े आदर सम्मानके साथ बुलाकर कहा, "आपका मनोरथ सिद्ध होगया, मानसिह जिस भावसे परास्त होकर भाग गये हैं इससे अब धौंकलसिहको सिंहासनकी प्राप्तिमे वह कुछ भी बाधा नही देसकेंगे। आप सेनाके साथ राजधानी जोधपुर पर अधिकार कर धौंकलसिंहके शिरपर मारवाड़का राजमुकुट धारण कीजिये, मैं भी राणाकी कन्याके साथ पाणिग्रहण करनेके लिये मेवाड़को चलता हूं।" बुद्धिमान् सवाईसिंह जगत्सिंहकी अपेक्षा अधिक नीतिज्ञ और विचारवान् थे। जगत्सिंहका स्वार्थ पूरण करना उनका मुख्य अभिप्राय न था। केवल जिससे जगत्सिहकी सहायतासे धौंकलसिंहका स्वार्थ सिद्ध होजाय इसीलिये उन्होने उस अभेद्य षड्यंत्र जालके विस्तारसे जगत्सिंहको विजड़ित करदिया था। उन्होंने जगत्सिहको उत्तर दिया कि "मानसिह इस समय भी परास्त नही हुए है, अभी उनको उचित फल नही मिला है; वह इस समय भी हतवीर्य नहीं हुए है। मानसिहको सब प्रकारसे परास्त करके मेवाड़मे जाकर कृष्णकुमारीके साथ विवाह करना आपको उचित है।" सवाईसिहके इस वचनसे जगत्सिहने उसी समय मेवाड़मे जाकर उनकी संमतिके अनुसार कार्य करना प्रारंभ किया। सवाईसिह जगत्सिहके उपदेशसे विजयी सेनाके

साथ शीघ्र ही राजधानी जोधपुरमे न जाकर मेरता नामक स्थानमे तीन दिन तक अपेक्षा करने लगे। बुद्धिमान् सवाईसिहने विचारा था कि मानसिंहके अधीनमे जितनी अल्प संख्यक सेना है, उससे वह राजधानी जोधपुरकी रक्षा कभी नहीं कर सकते; अवश्य ही जोधपुरको छोड़कर जालौरके अभेद्य किलेका आश्रय लेगे, इस कारण उनके जालोरमे जाते ही जोधपुर पर अधिकार करेगे। वास्तवमं सवाईसिहका यह अनुमान अवश्य ही सत्य था। राजा मानसिंह सेनाके साथ भागकर सबसे पहले जालौरका आश्रय लेनेके लिये वीसलपुरमे आ पहुँचे। चैनमल सिंघवी नामक एक राजकर्मचारीने मानसिहको जालौरमे आश्रय लेनेके लिये उद्यत देखकर कहा, "महाराज! यहांसे दहिनीओर नौ कोस दूरी पर राजधानी जोधपुर और सोलह कोस दूरपर जालौरका किला स्थित है, जालौरकी अपेक्षा जोधपुरमे बड़ी सरलतासे पहुँचा जा सकता है। आप यदि अपने बाहुबलसे राजधानीकी रक्षा करनेमे समर्थ न होगे तो अन्यत्र स्थानमे रहकर सिंहासनके अधिकारकी आशा कहाँ है ? आप जबतक राजधानीमे रहकर सिंहासनकी रक्षाके लिये चेष्टा करते रहैगे, तबतक सम्पूर्ण सर्वसाधारण प्रजा अवश्य ही आपके पक्षका अवलम्बन करैगी, नहीं तो जालौरका आश्रय करैगी; आपको कभी उनसे सहायता नहीं मिलैगी" राजा मानसिहने इस कर्मचारीके उपदेशको न्यायसंगत जानकर, कई घंटोके बीचमे जोधपुरमें आकर, शत्रुओंके करालग्राससे सिंहासनकी रक्षाके लिये दृढ़ किलेके भीतर रहनेका उद्योग किया। इस प्रकारसे मानसिंह जालौरमें न जाकर राजधानीमे लौट आये, इससे सवाईसिहकी कल्पना व्यर्थ होगई, इस कारण जगत्‌सिंह उस समय मेवाड़मे जानेकी आशा छोड़कर शीघ्र ही राजा मानसिहको एकबार ही सिहासनसे रहित कर धौंकलसिंहको अभिषिक्त करनेके लिये सम्मिलित सेनाके साथ राजधानी जोधपुर पर अधिकार करनेके लिये चले। वास्तवमे मानसिंह यदि पहले विचारके मतसे जोधपुरमे न आकर जालौरमे चले जाते तो धौकलसिहको राज्याभिषेक करनेमे कोई उपद्रव नहीं होता। राजा मानसिंहके युद्धमे परास्त होकर भागते ही अत्यन्त पीड़ा उपस्थित हुई थी, इस समय उनका राजपूत वीर स्वभाव तथा बलविक्रम मानो एकबार ही लुप्त होगया था, अपने अधीनके सामन्तोको अपने ही विरुद्ध खड़ा हुआ देखकर वह हतोत्साह और ज्ञान हीन होगये थे; परन्तु उनके राजधानीमे आते ही, वह विध्वंश हृदय वह जातीय गर्व दर्प फिर शीघ्रतासे आता हुआ दिखाई दिया, उस समय इन्होंने अपने दुगने उत्साहके साथ सिंहासनकी रक्षामे प्राणपणसे चेष्टा की।

मरुक्षेत्रके जो सब सामन्त शत्रुओकी सेनाके साथ मिले थे इससे महाराज मानसिंह उनके ऊपर अत्यन्त रुष्ट हुये। राठौर सामन्तोके ऊपर अब उनको किञ्चितमात्र भी विश्वास नहीं रहा, अधिक क्या, जो चार सामन्त इस समय तक उनके अनुगत भावसे रहते थे, यह भी किसी समय हमारा साथ छोड़ कर शत्रुओमे जा मिलैंगे, वह यह

---

(१) वीसलपुरसे जालोर ४० कोसके करीब होगा। नकी सोलह कोस।

विचारने लगे। यद्यपि वह चार सामन्त इनके जातिके थे, तथापि उन्होने शत्रुओके कराल कवलसे, जोधपुरके किलेकी रक्षाका भार भी उनके हाथमे नहीं दिया। सबसे पहले इन्होने विजातीय वेतन भोगी हिन्दालखांके अधीनमें स्थित सेनाके तीन हजार साहसी वीरोंको नियुक्त करके, उनके साथ नेता कायमदासके अधीनका विष्णुस्वामीनामक धर्मयोधा दल तथा चौहान, भाटी और मडोरके आदिमें राजवंशीय ईदाजातीय एक हजार सेनाका संग्रह कर उसके हाथमें किलेकी रक्षाका भार सौप दिया, इस प्रकार सव समेत पांच हजार सेना संग्रह करके मानसिंहने विचारा कि जोधपुरके किलेकी रक्षाके लिये इससे अधिक सेनाका प्रयोजन नहीं होगा, इस कारण उन्होने शत्रुओके हाथसे राज्यके अन्यान्य अभेद्य किलोंकी रक्षाके लिये चेष्टा की। सवसे पहले जालौरका किला तथा राज्यकी सीमावर्ती अमरकोटके किलेको रक्षाके लिये कितनी ही सेना भेज दी। जिससे सिन्धी सेनादल राजा मानसिंहको महा विपत्तिमे देखकर अमरकोट पर अधिकार न करले, इसी लिये उन्होने पहले ही सावधान होकर वहां सेनाको भेज दिया।

मानसिंह इस प्रकारसे जोधपुरके किलेको दृढ़बद्ध तथा जालौर और अमर कोटमे सेनाको भेजकर साहस पूर्वक शत्रुओके आनेकी राह देखने लगे। परन्तु जो चार सामन्त इनकी महा विपत्तिके समयमे भी सुख दुःखके साथी हुए थे, वह विजातियोके हाथमे जोधपुरके किलेकी रक्षाका भार अर्पण हुआ देखकर अत्यन्त ही दुःखित हुए और उन्होने अनेक भाँतिसे विनय करके मानसिंहके निकट प्रार्थना की कि हमारे हाथमे किलेकी रक्षाका भार अर्पण कियाजाय, मानसिंहने किसी भाँतिसे भी उनकी प्रार्थनाको पूर्ण न किया, अर्थात् किलेकी रक्षाका भार उनको नही दिया। परंतु जव चारो सामन्तोने अनेक वार प्रार्थना करी तव अंतमे इन्होने कहा "यदि आपकी इच्छा हो तो जोधपुर नगरकी रक्षाके कार्यमे नियुक्त होजाइये।" महाराजको वृथा सन्देहित देखकर अतमे वह चारो सामन्त अत्यन्त दुःखित होकर राजधानीको छोड शीघ्र ही शत्रुओके साथ जा मिले। इस प्रकारसे महाराज मानसिंह सव सामन्तोसे छोडे जाकर केवल वेतनभोगी सेनाको लेकर सिंहासनकी रक्षाके लिये चेष्टा करने लगे। इन्होने विचारा कि यद्यपि शत्रुपक्षकी सेनाकी संख्या एक लाखसे भी अधिक है, यद्यपि समस्त राठौर सामन्त तथा विजाती महाराष्ट्र और पठान उस सेनामे मिले है तथापि वह किसी भाँतिसे भी अति अल्प समयमे सरलतासे सिंहासन पर अधिकार नही करसकते। मानसिंह इस अनिश्चित आशापर विश्वास करके रहने लगे। जातिगत पतन होगया चारो ओरसे सव हृदय भेदी लक्षण स्वतः ही प्रकाशित होगये यह सव कांड अभिनय अनिवार्य होगये-मारवाडके प्रत्येक प्रान्तमें-राठौर जातिमे वह सव लक्षण-वह सकल काड-वह सकल अभिनय-अविश्रान्त गतिसे इस समय नेत्रोके सन्मुख दृष्टि आने लगे। जातिगत पतन जातिके द्वारा ही होता है, जातीय स्वाधीनता विलुप्त, जातीय समस्त अधिकारसे रहित, जातीय गौरवके सूर्य अस्त करनेको यदि जाति स्वय अग्रसर न हो तो, कभी अन्य जातिके द्वारा यह

कार्य सिद्ध नही होता, जो महाशक्ति जातिकी प्राणप्रतिष्ठा करदेती है, जातिकी नस २ मे अपना अव्यर्थ तेज भर देती है, जातिने जिस दिनसे उस महाशक्तिका अपमान किया, तथा आलस्य विलासिताके वशीभूत होकर जातीय भ्रातृभावकी जड़में कुठार मारनेके लिये उद्यत हुई कि उसी दिनसे अविश्रान्त गतिसे जातिका पतन साधित हुआ । उस समय जातिने ही एकता, वीरता, विक्रम, और साहके विनाश साधनमे विनियुक्त होकर हृदय विदारक दृश्य उपस्थित करदिये थे । मारवाड़के भाग्यमे भी इस समय वही दशा आकर उपस्थित होगई । एकमात्र मानसिंहको लक्ष्य करके, चिरवीर-व्रतधारी राठौर सामन्त जन्मभूमिका विध्वंश करके जातिके समस्त अधिकारको लोपकर अपना स्वार्थ नाश करनेके लिये उद्यत हुए । उन्होने भूलसे भी इसका विचार न किया—उस उद्योग नेता सवाईसिंहने एकबार चिन्ता करके भी न देखा कि यह विध्वंस करनेवाली नीति किस प्रकारसे सर्वनाश उपस्थित करदेगी !

पोकर्णके जो सामन्त एकमात्र अपने पितामह, और पिताकी प्रतिहिंसाको चरितार्थ करनेके लिये इस जातिका सर्वनाश करनेको उद्यत हुए, एकमात्र अपने नीति कौशल तथा षड्यंत्रकी चतुरतासे इन हज़ारो मनुष्योका सर्वनाश होनेपर भी मानसिंहको जोधपुरके किलेमे आश्रय ग्रहण करते हुए देखकर, उसने जयपुरके महाराज जगत्सिंहको पुनः मरुक्षेत्रकी राजधानी पर आक्रमण करनेके लिये उत्तेजित किया । पहले युद्धमे ही मानसिंहको भागाहुआ देखकर, जगत्सिंहने विचारा कि इनको उचित फल मिलगया । तब आप उसी समय उदयपुरकी ओर जाकर कृष्णकुमारीके साथ विवाह करनेके अभिलाषी हुए थे, परन्तु इस समय मानसिंहको प्रबलभावसे किलेमे रहता हुआ देखकर और सवाईसिंहके मोहनी मंत्रमे मोहितहो जयपुरनरेशने एक लाखसे भी अधिक सेनाके साथ भयंकर मेघगर्जनकी समान उत्तालतरंगमालाका विस्तार करते हुए मरुक्षेत्रकी राजधानी पर आक्रमण किया । मानसिंहने मारवाड़की राजधानी जोधपुरमे सेना नही रक्खी थी, इस कारण आक्रमण कारियोने सरलतासे नगरको जीत लिया । जो महाराष्ट्र और पठानोकी सेना जयपुर तथा राठौरोंकी सेनाके साथ आई थी, वह नगर पर अधिकार करके जयपुरकी सेनाके साथ उस मनोहर राजधानीको लूटकर अनेक प्रकारके अत्याचार करने लगी, चारोओर अत्याचार भयंकर रूपसे प्रबल होगये, जो राठौर सामन्त शत्रुपक्षमे थे वह भी स्वजातिका सर्वनाश होता हुआ देखकर उसके दूर करनेमे किंचित्मात्र भी उद्योगी न हुए । उनकी प्रत्येक नस मे राठौरोका रुधिर प्रवाहित हुआ था, तथापि वह उस समय एकबार ही हत ज्ञान होरहे थे, वे स्वजाति वात्सल्य और ममतासे रहित होकर उन अत्याचारियोंके साथ जा मिले, और अपने अंतःसार शून्यताका परिचय देनेमे मतवाले होगये । फलोदी नामक स्थानके अतिरिक्त राजधानी तथा अन्य समस्त नगर और देशोको बहुत थोड़े समयमे ही आक्रमण कारियोंने विध्वंस कर दिया । केवल फलोदीके निवासियोने तीन महीने तक विशेष वीरता

प्रकाश करके अपनी रक्षा कर अंतमें उस प्रवल शत्रुदलके हाथमें आत्म समर्पण कर दिया। बीकानेरके अधीश्वरने स्वयं आकर प्रथमसे ही शत्रुपक्षके साथ मिल, सहायता करनेसे उनके पुरस्कार स्वरूप उस फलोदी देशको अपने अधिकारमें करलिया। सवाईसिंहने इस प्रकारसे राजधानी और मरुक्षेत्रके अन्यान्य नगरोंपर अधिकार कर धौंकलसिंहको मारवाड़के अधीश्वर रूपसे स्वीकार कर उनका साथ देनेके लिये मरुक्षेत्रमें सर्वत्र घोषणा पत्रका प्रचार करदिया। राजा मानसिंह इस समय किलेमें दृढ़भावसे रहनेके अतिरिक्त वाहर होकर शत्रुओंके साथ युद्ध करने अथवा किसी प्रकारकी वाधा देनेके लिये आगे नहीं वढ़े। परन्तु, शत्रुगण शीघ्र ही किलेपर अधिकार करलेंगे, यह विचार कर वह अत्यन्त भयभीत होगये, महाराष्ट्रों और पठानों इत्यादिकी जो सव विजातीय सेना लूटनेके कार्यमें प्रवृत्त थी उसने शीघ्र ही धौंकलसिंहको मारवाड़का अधीश्वर कहकर प्रचार करनेके लिये दूने उत्साहके साथ तैयार हो किलेपर अधिकार करनेके लिये गोलोंकी वर्षा करनी प्रारंभ कर दी। विपत्तिके जालमें पड़े हुए मानसिंहने उस संख्यावद्ध सेनाके साथ किलेमें रह कर अपने जीवन देनेका सकल्प किया; और असीम साहससे किलेकी रक्षा करनेमें किसी भाँतिकी भी कसर न की, परन्तु उनको किलेकी रक्षाकी आशा दिन २ क्षीण होने लगी। वह इसी मुहूर्त्तमें शत्रुओंके द्वारा किलेपर अधिकार करनेकी संभावना विचारने लगे। परन्तु मानसिंह ग्यारह वर्षतक जालौरके किलेमें घिरे रहे, फिर जिस प्रकारसे भाग्य लक्ष्मीकी प्रसन्न दृष्टिसे उस विपत्तिरूपी समुद्रसे पार होकर अपने शिरपर राजमुकुट धारण करनेमें समर्थ हुए थे, उसी प्रकार इस भयंकर विपत्तिके जालके मध्यसे हठात् मानो आशाकी ज्योतिर्मयी मूर्ति उनके नेत्रोंके सम्मुख दृष्टि आनेलगी। शत्रुओंका दल इस समय आत्मविच्छेद तथा स्वतः सृष्ट विपत्तिके जालसे जड़ित होगया था, महाराज मानसिंह सरलतासे उसी कारण अपने उद्धारका पूर्ण विश्वास करनेलगे। विजयी जगत्सिंह धौंकलसिंह और सवाईसिंहआदिके भावी विपत्तिके पूर्ण लक्षण तथा उनके विनाश साधनके पूर्वानुष्ठान भी सूचित होने लगे।

जयपुरपति जगत्सिंह उस प्रवल सेना श्रेणीके द्वारा जोधपुरके किलेको वरावर पांच महीने तक घेरे रहे। परन्तु उस दीर्घ समयमें जोधपुर राजधानीके पार्श्ववर्ती अन्य नगर और ग्रामोंपर अपना अधिकार कर वहांकी धन सम्पत्ति लूटकर तथा उनको विध्वंस करनेके अतिरिक्त वह अवरुद्ध मानसिंहका और कुछ भी अनिष्ट न करसके। मानसिंह इस संख्या वद्धसेनाको लेकर महावीरता प्रकाश कर असीमसाहसके साथ उस अभेद्य किलेकी रक्षा करने लगे। यद्यपि जगत्सिंह उन विक्रमी राठौरोंकी सहायता से उन राठौरोंकी राजधानीके किलेके उत्तर पूर्व प्रान्तमें निरन्तर गोलोंकी वर्षाके द्वारा उस अंशको भग्न करनेमें समर्थ हुए, परन्तु भग्न स्थानके सम्मुख ८० फुट ऊँची पत्थर की दीवारको न लांघ सके, उस भग्न स्थानमें प्रवेश करना असंभव जानकर आक्रमणकारी हताश होगये। राजा मानसिंह निर्भय होकर उस भग्नस्थानकी दृढ़भावसे रक्षा

करने लगे। इसी समय आक्रमण करनेवालोंके डेरोमें इस प्रकारकी एक घटना उपस्थित हुई कि उस घटनाने मानसिंहको शत्रु पक्षके कराल कवलसे उद्धारका भावीसूत्र पात करदिया। जगत्सिंह और धौंकलसिंहके अधीनमें जयपुर और राठौरोंकी सेनाके अतिरिक्त पठान इत्यादिकी अन्यान्य वहुत सी धनलोभी सेना भी नियुक्त थी क्रमानुसार पाँच महीने तक निरन्तर उस रणक्षेत्रमें उपस्थित रहने तथा रीतिके अनुसार वेतनके न मिलनेसे वह सभी सेना महा असंतुष्ट होकर उद्धत होगई, विशेष करके घोड़ोंकी घास भी इस समय समाप्त होगई थी। शत्रु पक्षके इतने घोड़े आगये थे कि पाँच महीनेमें उनके उसनगर और पार्श्ववर्ती ग्रामोंके सम्पूर्ण तृण चुक गये थे इस कारण घोड़ोंको दक्षिणपर्वतमें दूर २ जाकर घास खिलाया करते थे। सवाईसिंहकी उत्तेजनासे अमीरखाँ नामक एक कठिन नरपिशाच पठान धौकलसिंहकी सदा सहायता करनेके लिये अपनी पठान सेनाके साथ जोधपुरके किलेके घेरनेमें नियुक्त था। अमीरखाँ महाराष्ट्रोंकी समान व्यवसाई और उन्हींकी तरह पक्का लुटेरा था। उसने घोड़ोंको दूर घास चुगानेका वहाना करके समस्त सेनाको अवरोधकारियोंकी सेनासे अलग कर अपनी विकट मूर्ति धारण करनेमें एक मुहूर्त्तमात्रका भी विलम्ब न किया। अमीरखाँके अधीनमें सामान्य पठान सेना नहीं थी। वह जैसे लुटेरे थे वैसे ही निठुर प्रकृति भी थे, इस कारण नेता अमीरखाँने सवसे पहले मारवाड़की खास भूमि और वाणिज्यके प्रधान स्थानोंको लूटकर तथा उन सव देशोंसे अधिक धन संग्रह करनेके लिये अमित अत्याचार करना प्रारंभ किया। वह सवसे पहले राजा मानसिंहको खास भूमिसे अधिक धन संग्रह करके शेपमें पाली, पीपाड़, वीलाड़ा और अन्यान्य नगरोंको लूटने लगा। जिन सामन्तोंने मानसिंहका पक्ष छोड़कर धौकलसिंहका पक्ष अवलम्बन कर उस जोधपुरके किलेको घेर लिया था इस धनके लोभी अमीरखाँने उन्हीं सामन्तोंके अधिकारी देशोंमें भी जाकर प्रजाका सर्वनाश करना प्रारंभ कर दिया। अमीरखाँके इन अत्याचारोंसे महा असंतुष्ट हो सामन्तवर्ग अवरोधकारी दलके प्रधान नेताके निकट उनके इस आचरणके विरुद्धमें अनुयोग उपस्थित करने लगे। दीर्घकाल तक जोधपुरके किलेको घेररहने, तथा महाराष्ट्री पठान इत्यादिकोंको अपने पक्षमें मिलानेके कारण जयपुरके महाराजका खजाना इस समय एकवार ही खाली होगया, इस कारण मारवाड़ विध्वंशके प्रधान नेताने पोकरणके सामन्त सवाईसिंहको शीघ्र ही अपने यहाँसे प्रयोजनीय धन लानेके लिये कहा, सवाईसिंहने तुरन्त ही विना कुछ कहे सुने अपना समस्त संचित किया धन तथा अपनी सम्प्रदायके अन्यान्य सामन्तोंके यहाँसे लाकर इनके सम्मुख रख दिया। परन्तु थोड़े दिनोंमें ही वह सव धन समाप्त होगया, जिन चार राठौर सामन्तोंके ऊपर मानसिंहको संदेह था जो अत्यन्त दुःखी होकर इनका पक्ष छोड़कर शत्रुओंके साथ जा मिले

(१) इस नरपिशाच अमीरखाँका विस्तृत वृत्तान्त पाठकोंने प्रथम कांडमें यथास्थान पढ़ा होगा।

थे, सवाईसिंहने उनसे धन माँगा । परन्तु यह चारो सामन्त वास्तवमें मानसिंह के विरुद्ध तलवार धारण करनेके अभिलाषी नही थे, जब मानसिंहने इनको अपने यहाँ आश्रय नही दिया, तव यह इच्छा न होने पर भी अपनी रक्षा करनेके लिये धौंकलसिंहके साथ जा मिले थे। परन्तु इस समय जब उनसे धन मांगा गया तब वे धनके देनेमे राजी न हुए, और असंतुष्ट हो उसी समय धौंकलसिंहका पक्ष छोड़कर अमीरखॉके साथ जा मिले । उन चारो राठौर सामन्तोने विचारा कि वर्तमान अवस्थामे किसी प्रकार भी मानसिंहका उपकार कर सके तो राजाने जो हमारे ऊपर संदेह करके अविश्वास किया है, वह दूर होजायगा । यह चारो जने एकमत हो अमीरखॉके द्वारा अपनी उस आशाके पूर्ण होनेकी विशेष संभावना जानकर सबसे पहले उसको हस्तगत करनेका उपाय करने लगे । अमीरखॉ केवल धनके लालचसे ही इस युद्धभूमिमे आया था, इस कारण उस मनुष्यने उक्त चारो राठौर सामन्तोके प्रस्तावसे सरलतासे मानसिंहका पक्ष स्वीकार करनेकी सम्मति दी । सामन्तोने प्रस्ताव किया, कि जयपुरके महाराज जगत्सिंह अपनी सम्पूर्णसेनाके साथ इस समय जोधपुरमें है, इस कारण इस सुअवसरमे अ रक्षित जयपुर राज्यपर सरलतासे ही आक्रमण किया जासकता है, निर्विघ्नतासे विना युद्ध किये बहुत सा धन मिल सकता है। अमीरखां इस वातको भलीभांतिसे जानगया था कि पीपाड़, पाली और बीलाड़ा आदिको लूटनेसे जयपुरके महाराज मेरे ऊपर अत्यन्त रुष्ट होगये है । इस कारण वह मनुष्य राठौरके चारो सामन्तोकी सम्मतिसे उसी समय जयपुर पर आक्रमण करनेके लिये सेना लेकर चला । वे चारो सामन्त भी उसके साथ चले ।

अमीरखांके अत्याचारोका वृत्तान्त राठौरके सामन्तोने जयपुरके महाराजसे पहले ही कह दिया था, जयपुरके महाराजने अमीरखांको दमन करनेके लिये अपने प्रधान सेनापति शिवलालको कई हजार सेनाके साथ भेजा । जिस समय अमीरखां उन चारो राठौर समान्तोके साथ सलाह करके जयपुर पर आक्रमण करनेके लिये जारहा था, उसी समयमें शिवलालने अपनी प्रवल सेनाके साथ आकर इसपर आक्रमण किया । शिवलालके पास अधिक सेना थी । अमीरखां चारो सामन्तोके साथ शीघ्रतासे लूनी नदीके किनारे२ भागने लगा । शिवलालने लूनी नदीके पास आते ही इसको उसके परली पार करादिया । अमीरखां और चारो सामन्त गोविन्दगढमे चले आये, शिवलालके उस स्थानमें आक्रमण करते ही अमीरखां हरसोर नामक स्थानमे चलागया । वह चारो सामन्त भी इसके साथ २ गये । अमीरखॉं एकवार भी युद्धमें सम्मुख न होकर न जाने किधरको भाग गया, विजयीसेनापति शिवलाल इसका कुछ भी अनुभव न करसका । इसने अमीरखांको सेना सहित वंदी करनेकी इच्छासे रात्रिके समय हरसोर नामक स्थानपर फिर आक्रमण किया । अमीरखां चारों सामन्तोके साथ जयपुर राज्यकी शेष सीमाके अन्तवाले फागी नामक स्थानमे भाग गया । शिवलालको भ्रमसे भी यह विचार नहीं हुआ था कि प्रवल पराक्रमकारी पठानपति अमीरखांको

इतनी जल्दी २ प्रत्येक स्थानसे भगा देंगे। अमीरखां किस गुप्त अभिप्रायके वशीभूत होकर इस प्रकार अपनी इच्छासे ही शिवलालको मारवाड़से क्रमानुसार जयपुरकी सीमामें लाया; उसको उस समय इसका अनुमान भी नही हुआ था। अमीरखां समस्त भारतवर्षमें इस समय एक प्रवल अत्याचारी और पिशाच-प्रकृतिका मनुष्य विख्यात् था। शिवलालने उसको क्रमानुसार इस प्रकारसे मारवाड़से भगा दिया; इसका विचार करके वह मनही मनमें अत्यन्त गर्वित होगया। अंतमें अमीरखॉ चारों राठौर सामन्तोंके साथ फागी नामक स्थानको भाग गया, विजयी शिवलालने विचारा कि जयपुरके महाराज जगत्सिंहकी आज्ञासे अमीरखॉको जव कि मारवाड़की सीमासे भगा कर उनकी आज्ञाका पालन किया है, तव अव उसका पीछा करनेकी आवश्यकता नहीं है,। वह अपने मनही मनमें इस प्रकारका सिद्धान्त कर विजयी सेनादलको उसी स्थानमें डेरोंके भीतर रख स्वयं अकेला ही उस उत्सवमें संमिलित होनेके लिये जयपुरमें चला गया। इस ओर अमीरखॉ राठौर सामन्तोंके साथ टोंकके निकटवर्ती पीपलूनामक स्थानमें आया, और इसने सुना कि शिवलाल अपनी सेनाको सीमाके अंतमें रखकर जयपुरको चलागया है। इस सुअवसरमें वह अपनी अभिलापाको पूर्ण करनेके लिये उद्योग करने लगा। अमीरखॉ इसे भली भॉतिसे जानता था कि इन राठौर सामन्तोंके अधीनमें जो सामान्य संख्यक सेना है उसके द्वारा सरलतासे कार्य सिद्ध नहीं होसकता; इस कारण उसने विचारा कि इस समय अन्य सहायकारियोंकी सहायता लेना अवश्य कर्त्तव्य है। इस समय मुहम्मदहसाहखॉ और राजा वहादुर दोनों जने प्रवल सेनादलके साथ ईसरदा नामक स्थानको घेरे हुए थे, अमीरखांने उनको हस्तगत करके हैदरावादी रिसालानामक सेनादल जो इस समय भारतवर्षमें लूटके कार्यमें विशेप विख्यात होगया था, उसको भी अपने हस्तगत किया और शिवलालके न होने पर प्रवल पराक्रमके साथ जयपुरकी उस सेना पर आक्रमण किया। जयपुरकी सेना उस समय प्रधान सेनापतिसे हीन होकर अत्यन्त ही दीन अवस्थामें पड़ी हुई थी, तथापि उसने अतुल वल विक्रम प्रकाश किया। हीरासिंहको सेनाने इस समय इतने साहसके साथ युद्ध किया कि युद्धके अंतमें उन सभोंने रणभूमिमें अपने प्राण देदिये। भयंकर युद्ध होनेके पीछे जयपुरकी सेना एकवार ही परास्त होकर विध्वंस होगई, और विजयी अमीरखांने उनके डेरोंमें जाकर समस्त युद्धके द्रव्योंको अपने अधिकारमें करलिया। राठौरके चारों सामन्तोंकी सम्मतिके अनुसार कार्य करके अमीरखांने इस प्रकारसे जय प्राप्त की। अमीरखांका प्रधान उद्देश यही था-वह सेनाको साथ लेकर जैसे ही जयपुरको लूटनेके लिये आगेवढ़ा वैसे ही जयपुरके निवासी महाभयके समुद्रमें निमग्न होगये। तव वुद्धिमान् चारों सामन्तोंने इस प्रकारसे अमीरखांको प्रधान सेनापतिके पदपर वरण किया, इसीसे राजा मानसिंहकी मुक्तिका द्वार खुलगया, सम्मिलित राजपूतोंकी सेनादलमें वड़ी हलचल पड़गई। चक्र-भंग और मारवाड़-विध्वंसके प्रधान कारण स्वरूप प्रधान नेता सवाईसिंहके भाग्यमें घोर कालरात्रि उपस्थित होगई।

छः महीने तक जोधपुरके किलेको घेरे रहनेके पीछे सवाईसिंह और धौकलसिंहके षड्यंत्रजालके छिन्नभिन्न होनेके पूर्व लक्षण भलीभांतिसे प्रकाशित होनेलगे। वेतनके न मिलनेसे सेनामे असंतोष वृद्धिके साथ ही साथ अवरोधकारियोंके प्रधान२ नेताओंमे भी झगड़ा होना प्रारंभ होगया। बीकानेर और शाहपुराके राजा यह दोनो ही झगड़ा होनेके कारण अवरोधकारियोके पक्षको छोड़कर अपने २ राज्यको चले गये। सवाईसिंह और जगत्सिंह इससे किंचित्मात्र भी निराश न हुए राठौरोकी सेनादलकी सहायतासे जगत्सिंह मारवाड़को विध्वंस और जोधपुरको घेरनेमे समर्थ होनेसे अपनेको महा गौरववान् जानते थे। परन्तु अमीरखां और संख्यावद्ध राठौरोकी सेनासे अपनी सेनाका विध्वंस होना और राजधानीको घेरनेका समाचार मानो वज्रघातकी समान उनके गर्वोन्नत शिरपर पतित हुआ। जयपुरकी सेनाके इस पराजयका समाचार सवाईसिंहको पहले ही विदित होगया था, परन्तु जयपुरके दीवान रायचन्दको घूँस देकर उसने अपने वशीभूत करलिया था, इसीसे जगत्सिंहको यह समाचार विदित न हुआ, कारण कि जगत्सिंह इस समाचारके पाते ही शीघ्र ही अवरोधको छोड़कर चलेजाते, सारांश यह है कि उनका मूल उद्देश पूर्ण न हुआ। रायचँदने सवाईसिंहके इस कथनको गुप्त रक्खा। परन्तु जगत्सिंहकी माताने इस समय कई एक गुप्त सेवकों द्वारा उनके पास यह समाचार भेज दिया, वह सवाईसिंहके ऊपर अत्यन्त ही क्रोधित हुए, और अब क्या करें, इसका कुछ भी उपाय स्थिर नहीं करसके। उन्होने जिस समय माताके भेजे हुए दूतके मुखसे यह समाचार सुना उसी समय वह किलेको छोड़कर चले गये। जिन जगत्सिंहने कुछ समयके पहले अपनेको महा गौरवान्वित माना था। जयपुरका कोई भी महाराज जिस कार्यके करनेको समर्थ न हुआ, यह उसी मारवाड़को विजय करने तथा जोधपुरके किलेको घेरनेमे समर्थ हुए, इसीसे महान् गर्व प्रकाश किया था, वही जगत्सिंह इस समय चारोओर विभीषिकाकी भयंकर मूर्ति देखने लगे, किस प्रकारसे वह निर्विघ्नतापूर्वक मारवाड़से अपनी राजधानीमे चले जॉय; किस प्रकारसे विजयी अमीरखॉं और राठौरोके आक्रमणसे अपनी रक्षा कर सके, यह चिन्ता उनके हृदयमे प्रबल होगई। जगत्सिंहने जोधपुरकी राजधानीको लूट कर जो बीस तोपें और अन्यान्य बहुतसे अमूल्य द्रव्योंको संग्रह किया था, सबसे पहले उन सबको अपने सामन्तोंके पास भेजकर महाराष्ट्रोंके नेताओंको बुलाभेजा। जगत्सिंहने

(१) सन् १८०६ ईसवीमें जिस समय जगत्सिंहने महाराष्ट्र नेता सेन्धियाके समीप सहायता मांगनेके लिये एक दूत भेजा, उस समय कर्नल टाड् साहब सेंधियाके डेरेमें थे। बापू सेंधिया, बालाराव तथा जानवेपटिस्ट इस समय अपनी २ सेनाके साथ सेंधियाके अधीनमें नियुक्त थे। जगत्सिंहकी प्रार्थनानुसार जिस समय महाराष्ट्रोकी सेना उनको सहायता करनेके लिये जा रही थी उस समय महात्मा टाड् साहबने वहां जाकर उस सेनाको स्वयं देखा था। और १८०७ ईसवीमें रजवाड़ेके भौगोलिक तत्त्वकी खोज करनेके लिये कर्नल टाड् साहब जिस समय जयपुरमें गये, उस समय जयपुरकी उस सेनाके विनाश होनेके अगणित चिह्न भी देखे थे।—

विचारा कि जोधपुरसे चलते ही शत्रुओंसे परास्त होनेकी पूरी संभावना है, अधिक क्या-ऐसा होनेसे प्राणतक भी नष्ट होसकते हैं, इसी कारण महाराष्ट्र नेता गण उनके बुलाते ही आगये। उन्होंने उन्हींके सामने यह प्रस्ताव किया "कि यदि आप हमें निर्विघ्नतासे जयपुरमें पहुँचा देंगे तो हम आपको इसके पुरस्कारमें १२००००० रुपये देंगे।" धनके लोभी महाराष्ट्र नेताने तुरन्त ही इस बातको स्वीकार कर लिया। यद्यपि महाराष्ट्र नेता सारी सेना सहित इनको निर्विघ्नतासे जयपुरमें पहुँचाने के लिये तैयार होगये थे, परन्तु पठान नेता अमीरखाँ उस समय मार्गमें ही ठहरा हुआ था, इस कारण जगत्सिंह किसी भाँतिसे भी निर्भय हो आगे न बढ़ सके। जगत्सिंहकी सम्मतिसे उनके इस हठात् भाग्य पतनका कारण स्वरूप अमीरखाँ ९००००० लेनेके लिये राजी होगया, "वह जगत्सिंहके जयपुरमें जानेके समयमें कुछ भी विघ्न नहीं करेगा" जयपुरके महाराजने इस प्रकारसे बहुतसा रुपया खर्च करके अपनी रक्षाका उपाय स्थिर किया, और जोधपुरकी राजधानीको छोड़कर वह अपनी राजधानीको चल दिये। जगत्सिंहने जिस प्रकारसे महा गर्वमें भरकर जोधपुरको घेरा था उसी प्रकारसे घोर कलंकका टीका अपने यशरूपी मस्तक पर लगा हुआ देखकर अत्यन्त क्रोधित हो दुःख, अपमान, और लज्जासे उन्होंने अपने डेरोंमें आग लगा दी, और अंतमें स्वयं अपने हाथसे अपने प्राणप्रिय हाथीके प्राण नाश कर दिये। हाथी उनको शीघ्रतासे लेजानेमें समर्थ न हुआ इसीसे जयपुरके महाराजने अत्यन्त क्रोधित हो उस अज्ञान पशुके जीवनका विनाश किया।

यद्यपि महाराष्ट्र नेताने जगत्सिंहको निर्विघ्नतासे जयपुरमें पहुँचा देनेका वादा किया था, और वह उनके साथ भी गये थे, और अमीरखाँने धन लेकर यह वचन भी देदिया था कि अब किसी प्रकारका अत्याचार तुम्हारे साथमें न किया जायगा, तथापि महाराज जगत्सिंह निर्विघ्नतासे अपने राज्यमें न पहुँच सके। जोधपुरके घेरनेवालोंने उसी प्रकार इनके भागते ही महा अपमान और कलंकके अतिरिक्त इनको और भी घोर कलंकित किया था। जिन राठौर सामन्तोंने अमीरखाँके साथ मिलकर राजा मानसिंहकी मुक्तिका द्वार खोल दिया था। इस समय उन्हीं सबने मिलकर यह निश्चय किया, कि किसी प्रकारसे भी हो जयपुरके महाराजको विजयमें पाये हुए तथा लूटे हुए द्रव्योंको लेकर हम लोग नहीं भागने देंगे। यह विचार कर समस्त सामन्तोंने मेरतासे दस कोस पूर्वकी ओर जाकर जगत्सिंहके आनेके मार्गमें उपस्थित हो अपनी सम्प्रदायके सम्पूर्ण राठौरोंको इकट्ठा कर इन्द्रराज सींघीको अपने सेनापति पदपर वरण किया। इन्द्रराज, सींघी राजा

—जो सेना जगत्सिंहके साथ जोधपुरपर अधिकार करनेके लिये आई थी, उसने अंतमें जयपुरके बाहर ठहर कर अपने वेतनके न मिलनेसे मारे भूखोंके प्राण त्याग कर दिये। महात्मा टाड्साहबने नगरके बाहर हज़ारों घोड़ोंके ढाँचेके ढेरके ढेर तथा सेनाके मनुष्योंकी हड्डियोंके ढेर स्वयं अपनी आँखोंसे देखे थे। प्रथम कांडमें यथास्थान इसका वर्णन होचुका है।

मानसिंहके पहले दो राजाओंके शासन समयमे मारवाड़मे दीवान पदपर नियुक्त थे। उन चारो सामन्तोंको केवल वृथा संदेह करके ही मानसिंहने छोड़ दिया था, इसी कारणसे वह भी दीवानके पदसे रहित हुए थे। इन्द्रराज तथा समस्त सामन्तोंने सेना सहित इकट्ठे होकर यह प्रस्ताव किया कि राजा मानसिंहने जो हमको शत्रुओंके साथ मिला हुआ जानकर अन्याय किया है, तथा उनको जो हमारे ऊपर संदेह हुआ है, उस संदेहका दूर करना हमको अवश्य कर्त्तव्य है। राजा मानसिंहके शत्रुपक्षके रुधिरसे उस संदेहकी कालिमाको धोकर. जगत्सिंह मारवाडको लूटकर जो स्मृति चिह्न तथा वहुतसे मूल्यवान् द्रव्योंको लिये जारहे है उन सबको छीनकर राजा मानसिंहके चरणकमलोमे उनका उपहार देते ही महाराज अवश्य ही हमारे ऊपर प्रसन्न होकर पहले ही की समान विश्वास करलेंगे। यह विचार करके समस्त सामन्त अतुल वलशाली राठौरोंको सेनादलको साथ लिये हुए जगत्सिंहके आनेकी वाट देखने लगे। जगत्सिंहके सेना सहित आगे चढ़ते ही वदला लेनेवाले राठौरोंने संहारमूर्तिसे उनके ऊपर भयंकर वेगसे आक्रमण किया। दोनों ओरसे युद्धकी आग भड़क उठी। जगत्सिंहने केवल राठौर सामन्तोंकी सहायतासे ही जोधपुरको घेरा था, इस समय सवाईसिंह और राठौर सेनादलके न होनेसे केवल जयपुरकी सेना सहित जगत्सिंहको देखकर वीरव्रतावलम्बी राठौरोंकी सेनाने सरलतासे अत्यन्त अल्प समयमे ही उन्हे परास्त करदिया। जयपुरकी सेना पहलेसे ही हतवीर्य और हीन साहस थी, इस कारण दोनों राज्योंकी सीमामें स्थित होकर उस युद्धमे केवल यही नहीं हुआ कि महाराज जगत्सिंह ही परास्त हुए हों, वह जिन द्रव्योंको लूटकर लिये जा रहे थे, विजयी राठौरोंने अपनी पहली प्रतिज्ञाके अनुसार उन सब द्रव्योंपर फिर अपना अधिकार करलिया। जयपुरकी सेना चारोओर छिन्नभिन्न होकर भाग गई। विचारे जगत्सिंह मारे भयके प्राण लेकर अपने राज्यमें भाग गये। जगत्सिंह जोधपुरसे जो चवालीस तोपैं लाये थे, राठौर गण उन सब तोपोंको लेगये। उन राठौरोंने इस प्रकारसे महाराज जगत्सिंहका अत्यन्त अपमान कर उन्हे मारवाड़से भगा दिया। जयकी आशासे फिर मानसिंहकी सहायताके लिये एक और उपाय किया। जगत्सिंहके जयपुरको भागनेसे पहले ही धौंकलसिंह और सवाईसिंह जोधपुरको छोड़कर दूसरे राठौर सामन्तोंके साथ मिलकर नागौरमे चले गये थे। इससे राठौरगण धौकलसिंह और सवाईसिंहको सहसा हतवीर्य न कर सके। इसी कारणसे महाराज मानसिंहका कल्याण न विचार कर धौंकलसिंहके पक्षमें प्राय: समस्त राठौर सामन्त तथा जितनी अधिक सेना थी उसको देखकर वे चारो सामन्त फिर अमीरखांको अपने हस्तगत कर उसीके द्वारा अपने कार्य सिद्ध होनेका उपाय करने लगे। जव इन्होने देखा कि विना वहुत सा धन दिये अमीरखांसे सहायता नहीं मिल सकती तब उन्होंने सबसे पहले धनके संग्रह करनेका यत्न किया। यद्यपि कृष्णगढ़के राजा एक राठौर थे। परन्तु उन्होंने इस जातीय युद्धमें किसीकी भी सहायता न की, वह निरपेक्ष भावसे रहे। अमीरखांसे सहायता लेनेके लिये विजयी सामन्तोंने कृष्णगढ़के महाराजसे दो लाख

रुपये माँगे महाराजने तुरन्त ही इनको दे दिये । अमीरखाँ उन दो लाख रुपयोको लेकर यह प्रतिज्ञा की, "कि मै राजा मानसिहकी तन मनसे सहायता करूँगा ।" विजयी सामन्त शीघ्र ही अमीरखाँको साथ लेकर जोधपुरमे आ पहुँचे, महाराज मानसिहने इनको विश्वासी और राजभक्त जानकर बड़े सन्मानके साथ अपने यहाँ रक्खा, और इनके अधिकारके जिन २ देशोको पहले अपने अधिकारमें कर लिया था, इस समय इनको वह सभी देश देदिये, और इन्द्रराजको बख्सी अर्थात् प्रधान सेनापतिके पदपर नियत किया । राजा मानसिंहका इस समय भाग्योदय हुआ ।

पंद्रहवाँ अध्याय १५.

जोधपुरमें अमीरखाँकी अभ्यर्थना; सवाईसिंहके दलको भंग करनेके लिये अमीरखाँकी प्रतिज्ञा; अमीरखाँका नागौरमे जाना; सवाईसिहके साथ उनका साक्षात् होना; धौंकलसिंहकी ओरसे सहायता करनेके लिये अमीरखाँका सौगंध खाना; राजपूत सामन्तोंका हत्याकाढ; धौंकलसिंहका भागना; अमीरखाँके द्वारा नागौरका लूटा जाना; पुरस्कारमें राजा मानसिहके पाससे अमीरखाँको दश लाख रुपया मिलना तथा कुछ जमीनकी भी प्राप्ति होना; अमीरखाँकी सेनाका जयपुरके भिन्न २ देशोंको लूटना; बीकानेर पर आक्रमण; मारवाड़में अमीरखाँके प्रभुत्वका विस्तार होना तथा उसके अत्याचारोंका प्रारंभ; नागौरके किले पर अमीरखाँका पठान सेनाको रखना; अमीरखाँका मेरताके भागको अपने अधीन नेताओंको देना; अमीरखाँका नावांके किलेपर सेना रखना तथा वहां और सांभरके लवण हृदपर अधिकार करना; इन्द्रराज और राजगुरुका देवनाथकी हत्या करना; राजा मानसिंहके चित्तकी विकृति; उनका एकान्त निवास; अपने पुत्र छत्रसिंहको राज्य देना; छत्रसिंहके दुश्चरित्र; राजा मानसिंहकी उन्मत्तताका बढ़ना; उसका कारण; राजा मानसिंहकी सलाहसे इन्द्रराज हत होगये है सर्व साधारणका इस प्रकारसे संदेह करना; पोकरणके मृतक सामन्त सवाईसिंहके पुत्र सालमसिंहका राज्यमें अधिकार पाना; बृटिश गवर्नमेन्टके साथ मारवाड़के महाराजका संधि करनेका प्रस्ताव करना; छत्रसिहका प्राणत्याग; राजा मानसिंहके हाथमे फिर राज्यका भार पहुँचते ही अपने अनिष्टकी विशेष संभावना जानकर, सामर्थ्यवान् सामन्तोंका मारवाड़के सिंहासन पर ईडरके राजकुमारको अभिषिक्त करनेका प्रस्ताव करना; उस प्रस्तावका परिहार; उसका कारण; राजा मानसिंहको फिर राज्य ग्रहण करनेके लिये अनुरोध करना; राजा मानसिंहका फिर राज्य ग्रहण करना; संधिकी कई एक धाराओंपर मानसिहका असंतोष प्रकाश और उनमे आपत्ति; एक अंग्रेज प्रतिनिधिका जोधपुरमे जाना; अखैचन्दका मारवाड़के प्रधान राजस्वभागपर मन्त्रित्व करना; प्रधानमंत्री पोकरणके सालमसिंह; फतेराजका उपद्रव करना; राजा मानसिंहकी सहायताके लिये बृटिश सेनाको उनके हाथमे अर्पण करनेका प्रस्ताव उठाना; उस प्रस्तावका स्वीकार न करना; उसका कारण; अंग्रेजी एजन्टका अजमेरको लौट जाना; जोधपुरके महाराजकी सभामें स्थाई गवर्नमेन्ट एजन्टका नियोग; जोधपुरमें आना; राजधानीकी अवस्था; मानसिंहके साथ साक्षात्; एजन्टका जोधपुर छोड़ना; सामन्तोंकी भूवृत्तिपर अपना अधिकार करना; राजा मानसिंहका प्रकाश में फिर पहलेकी समान राज्यशासनमें उदासीनता दिखाना; मानसिंहकी प्रबल धोखेबाजी; राजा

का सामन्तोंकी धन सम्पत्तिको हरण करना, उनके कलंकसे मृत्यु, राजा मानसिंहके मारनेमें बुद्धिका लगाना, सामन्तोंके विपत्तिजालमें लगी हुई चेष्टाका व्यर्थ होना; नीमाजके सामन्तपर आक्रमण, उक्त सामन्तोंका साहसके साथ अपनी रक्षा करना, उनका वधसाधन होना, पोकरणके सामंत का भागना, फतेराजको प्रधान मंत्रित्व पदकी प्राप्ति; फतेराजको राजमानसिंहका उपदेश, नीमाज पर आक्रमण, नीमाजका लुटाजाना, राजा मानसिंहका अपनी प्रतिज्ञाको भंग करना, वेतनभोगी सेनाके नेताका प्रशंसनीय आचरण, मारवाड़के समस्त सामन्तोंका इच्छानुसार विदेशमे जाना, प्रतिवासी राजाओंका सामन्तोको आदर सहित स्थान देना, ओनाड़सिंहके प्रति मानसिंहकी अत्यन्त अकृत-ज्ञताका प्रकाश करना, बृटिश गवर्नमेन्टके निकट निकाले हुए राठौर सामन्तोंकी मध्यस्थताकी प्रार्थना करना, बृटिश गवर्नमेन्टका मध्यस्थता करनेमें असम्मति प्रकाश करना, अतीत घटनाकी समालोचना।

जिस पठान नेता अमीरखाँकी सहायतासे महाराज मानसिंहने उस जातीय विपत्तिके समुद्रसे कुछ एक उद्धार पाया था, जिस चातुरी जालसे अवरोधकारी जगत्-सिंह अतमें प्राणोंके भयसे भागकर कलंकित हो अपनी राजधानीमें लौटगये थे, जिसके उस वल विक्रमसे मारवाड़ विध्वस हुआ था, और सवाईसिंह धौंकलसिंहको लेकर जोधपुरको छोड आये थे—उस पठान सेनापति अमीरखाँको मानसिंहके अत्यन्त विश्वासी चारों राठौर सामन्त ही अपने हस्तगत कर जोधपुरमे लाये। महाराज मानसिंहने उसका वडा आदर मान किया। यद्यपि उस समय जगत्सिंह अपनी सेना सहित जारहे थे, यद्यपि शत्रुपक्षका वल अत्यन्त हीन होगया था तथापि सवाईसिंह उस समय तक मरुक्षेत्रके सिंहासनकी आशासे धौकलसिंहको लिये हुए अन्यान्य राठौर सामन्तों और सेनाके साथ पहलेके समान मानसिंहके विरुद्ध खड़े रहे, उस समय मानसिंह एकवार ही उस विपत्तिके समुद्रसे पार न होसके थे, विपत्तिकी तरंगोंमे फसे हुए मानसिंह वारम्वार हिलोरे लेते थे। इस कारण मानसिंहने शत्रुकुलको निर्म्मूल तथा अपनी शासन शक्तिको प्रवल करनेके लिये उस महा दुःसमयमे स्वजन मित्र वान्धव और प्रजासे त्यागे जाकर शीघ्र ही उस विजातीय विधर्मी तथा कठिन तस्कर—अर्थ और क्षमता लोलुप पठान सेनापति अमीरखाँकी सहायता स्वीकार करनेका विचार किया। यद्यपि अमीरखाँ अत्यन्त सामान्य वंशका 'पठान था, यद्यपि वह मनुष्य पवित्र आर्य रक्तधारी राठौरोंकी राजसभामे आसन पानेका अधिकारी नही था, परन्तु महाराज मानसिंहने अपने स्वार्थकी रक्षाके लिये उस पतित और शोचनीय अवस्थामे उस अमीरखाँको केवल आदरके साथ नहीं ग्रहण किया वरन् उसके भाग्यमें कभी भी जो सन्मान प्राप्त नहीं हुआ था आज मानसिंह ने उसे वही सम्मान दिया। जिन राठौर सामन्तोंने सियाजीके समयमें एकता की जीवन्त मूर्त्तिकी पूजा करके संसारमें अपनी अक्षय कीर्तिको संचय किया था, इस समय अपने भाग्यके दोपसे—तथा राठौरजातिके भाग्य—दोपसे उनके वंशधरोंके परस्पर उस एकताकी छातीमें लात मारनेसे अपने देश और स्वजातिको अवनतिके समुद्रमे डालनेके लिये अत्यन्त उन्मत्त होकर महाराज

मानसिंहने शीघ्र ही विजातीय विधर्मीको ऊँची पदवी देकर अपने राज्यमे शान्ति स्थापन की।

महाराज मानसिंहने अमीरखाँको आदरसहित ग्रहण करके उसके रहनेके लिये योधगिरिके किलेमे एक मकान देदिया; और बहुतसे मुल्यवान् द्रव्य उसे उपहारमे दिए। अंतमे दोनोमे यह निश्चय हुआ कि अमीरखाँ अपनी सेनाके द्वारा सवाईसिंह और धौकलसिंह दोनो शत्रुओकी सेनाको भगाकर उन्हे विध्वंस करदें, यदि ऐसा हुआ तो महाराज मानसिंह उस कार्यके पुरस्कारमे उसे यथोचित धन और भूवृत्ति देगे। अमीरखाँने शीघ्र ही महाराज मानसिंहके प्रस्तावके मतसे अपनी भविष्य उन्नति तथा सामर्थ्य प्राप्तिकी विलक्षण संभावना जान कर, शपथ करके यह प्रतिज्ञाकी, कि "मे निश्चय ही सवाईसिंहके चक्रजालको भेद कर शत्रुपक्षको निर्मूल करदूँगा।" महाराजने केवल प्रतिज्ञा ही नहीं की वरन चिर प्रचलित राजपूत रीतिके अनुसार उस विधर्मी पठानके साथ पगड़ी बदल कर प्रतिज्ञा दृढ़ की, और उसी समय उसको इसकार्यके व्यय स्वरूपसे तीन लाख रुपये दे दिये। हाय! कालकी कैसी विचित्र गति है! जिस मरुक्षेत्रके स्वाधीन राठौर राजगण मुगल पठानोको स्वजाति तथा स्वदेश और स्वधर्मके प्रबल शत्रु जानकर हृदयसे घृणा करते थे, उसी मरुक्षेत्रके राजवंशधर उस राठौर राजसिंहासन पर विराजमान हुए मानसिंह विजातीय पठानोके साथ पगड़ी बदलनेम कुछ भी लज्जित न हुए! आज जातिका पतन होगया, केवल एकमात्र प्रजाही नहीं वरन् स्वयं महाराज तकने कहाँतक हीनता स्वीकारकी। इस स्थानपर उसका विलक्षण परिचय दिया गया है।

एकमात्र पिताका बदला लेनेकेलिये पोकरणके सामन्त सवाईसिंहने अपनी जन्मभूमिके चारोंओर इस हृदयभेदी दृश्यको उपस्थित करादिया था; जिससे मारवाड़ यथार्थमें मरुक्षेत्रकी समान होगया, अपने प्रधान सहायक जयपुरपति जगत्सिंहके भागते ही सवाईसिंहने शीघ्र ही धौकलसिंह और समस्त राठौर सामन्तोके साथ जोधपुरको छोड़कर नागौरदेशको यात्रा की। जिस समय सवाईसिंह नागौर देशमे आकर फिर षड्यंत्रका विस्तार कर जोधपुरपर फिर अधिकार करनेके निमित्त उपाय कर रहा था उसी समय चतुर पठान सेनापति अमीरखाँने अपने भविष्य कर्त्तव्यका निश्चय कर लिया, और अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेके लिये वह आगे बढ़ा।

साक्षात् नरपिशाचस्वरूप पठान सेनापति अमीरखाँ अपनी प्रतिज्ञा पालन करनेक लिये अग्रसर होनेके पहले ही इस बातको जान गया था कि धौकलसिंह और सवाई-सिंहको युद्धमे परास्त करना सब प्रकारसे असंभव है, कारण कि अत्यन्त बलशाली राठौरोंकी सेनाके साथ युद्धमे सम्मुख होकर जय प्राप्त करना कोई साधारण बात नहीं है। और फिर विशेष कर धौकलसिंहकी ओरसे इस समय मरुक्षेत्रके समस्त राठौर सामन्त सेना सहित नागौरमें ठहरे हुए है, इस समय मेरे अधीन बहुत थोड़ी सेना है,

तिसपर अधिक बलशाली भी नहीं है, इस कारण जयलक्ष्मीका प्राप्त होना अत्यन्त कठिन देख पड़ता है बुद्धिमान् अमीरखाँने अत्यन्त घृणित और निन्दनीय उपायसे अपनी अभिलापाको पूर्ण करनेका उपाय स्थिर किया। अमीरखाँ अपनी सेनाको साथ लेकर नागौरसे दसकोस दूरीपर मूँधियाड़ स्थानमे डेरे डालकर अपनी प्रतिज्ञा पूरण करनेके लिये उपाय करने लगा। अमीरखाँने मुंधियाड़में आकर यह विख्यात कर दिया कि महाराज मानसिंहने इस समय मेरे प्रति अत्यन्त अप्रिय आचरण किये हैं। अमीरखाँने राजा मानसिहको जिस प्रकारसे महा विपत्तिके समय सहायता की थी, उसके बदलेमें उन्होंने उसे उचित पुरस्कार न देकर उसके साथ अत्यंत निंदनीय आचरण किया है। सवाईसिंह और धौकलसिंहको इस समाचार पर विश्वास होगया और वे मनहीमन अत्यन्त प्रसन्न होने लगे। इस प्रकारसे अमीरखाँ पहले अनुष्ठानके पीछे सवाईसिंहके साथ साक्षात् करनेके लिये चेष्टा करने लगा। बहुत कुछ सोच विचार कर अमीरखाँने एक दूतको सवाईसिंहके निकट भेजकर उनसे यह कहला भेजा कि, "नागौरमे पीर तारकीन नामक पीरकी एक मसजिद है, यदि आप आज्ञा दे तो मैं उस मसजिदमे जाकर अपना नित्त-नियम कर आया करू।" जिस समय मारवाड़से दिल्लीके बादशाहका प्रताप और उनकी प्रभुताई लुप्त होगई थी, उस समय से मरुक्षेत्रमे मुसलमानोकी जितनी मसजिदे और दरगाहे थीं वे सब एकवार ही विध्वंस कर दी गई थी. विशेप करके महाराज बख्तसिहने मारवाडसे यवनोके समस्त चिह्नोको एकवारही लुप्त करदिया था। केवल एकमात्र पीरतारकीनकी मसजिदको किसी विशेप कारणसे विध्वंस नहीं किया था। उस कारणको महात्मा टाड् साहबने इस स्थानपर प्रकाश नहीं किया परन्तु हमैं ऐसा अनुमान होता है कि यवनराज्यमें बहुतसे हिन्दू अनेक पीरोंमें, मसजिदोंपर अनेक प्रकारके कारणोंसे भक्ति प्रकाश करते थे। बहुतसे पीरोको हिन्दू जागृत देवता कहते थ और उन पर विश्वास करते थे-यहांतक कि इस समय भी वह विश्वास उसी भावसे प्रबल है। अनेक हिन्दू अब भी ऐसे हैं जो इन पीरोंकी भक्तिभावसे पूजा करते हैं. ऐसा बोध होता है कि उन पीरोंकी उसी प्रकारसे राजपूतोंमे जागृत देवता रूपसे पूजा होती थी, इसी कारणसे अपनी जन्मभूमिसे यवनोंके समस्त चिह्नोको लोप करनेकी अभिलापासे बख्तसिंहने प्रजाकी इच्छानुसार उस मसजिदको विध्वंस नहीं किया। जिस समय सवाइसिंहने जगत्सिंहके साथ मिलकर जोधपुरको घेरा था, अमीरखाँने उस समय उनके पक्षको छोड़कर मारवाड़को विध्वंस करनेका विचार किया। सवाईसिंह तथा अन्यान्य सामन्तमंडली उसके ऊपर अत्यन्त कुपित हुई थी, और उसको दमन करनेके लिये जयपुरके सेनापति शिवलाल गये थे हमारे पाठकोसे यह बात छिपी नहीं है कि अमीरखाँकी ऐसी अवस्थामे मानसिहका पक्ष लेनेसे सवाईसिंह उसको शत्रु जानते थे। परन्तु अमीरखाँ अपनी पाप अभिलापाको पूर्ण करनेके लिये बकध्यानी की समान इस समय धीरे २ आया, सवाईसिंहने इसके प्रति पूर्वभावको प्रकाशित न करके विना संदेह किये हुए उसकी उस प्रार्थनाको स्वीकार कर-

लिया. सवाईसिहने विचारा कि निश्चयही महाराज मानसिहने अमीरखॉंका तिरस्कार किया है, इसी लिये वह राजधानी छोड़कर धर्मकार्य साधन करनेके लिये पीरकी मसजिदमे आनेके लिये कहता है। इसका उन्हे भूलसे भी अनुमान न हुआ कि पिशाचवुद्धि अमीरखॉं किस गुप्त और भयंकर अभिप्रायको सिद्ध करनेके लिये धर्मका वहाना कर घोर अधर्मको संचय करनेके निमित्त तैयार हुआ है।

पिशाच वुद्धिअमीरखॉं तुरन्तही सवाईसिहकी आज्ञा पाकर, प्रसन्न हो उसी समय कुछ अश्वारोहियोंके साथ मूंधियाड़से उस पीरकी मसजिदमे गाया। पीरकी मसजिदमे उपासना और वंदना करनेसे उसका कुछ भी प्रयोजन न था उसके हृदयमे उस समय और एक भयंकर कामना विराजमान थी। इस कारण उसने उस मसजिदमें जाकर दिखानेके लिये नाममात्रकी उपासना करके, जानेके समय विना वुलाये ही सवाईसिहके डेरोमें जाकर उनसे साक्षात् की। सवाईसिहने अमीरखॉंका वड़ा आदर सन्मान किया. कारण कि उस समय अमीरखॉंको अपने दलमे भरती करनेके लिये उनकी विशेप इच्छा थी। आमीरखॉंने साक्षात् होनेके पीछे विदा मागी और कहा, कि "मैने महाराज मानसिहके जितने उपकार किये है महाराजने उसके शतांशमे के एक अंशका भी पुरस्कार नहीं दिया, यदि मै इस प्रकारसे दूसरेकी इतनी सहायता करता तो अवश्य ही मुझे वहुतसा पुरस्कार मिलता।" अमीरखांके यह वचन सुनकर सवाईसिहने प्रसन्नचित्त हो उसी समय यह प्रस्ताव किया, कि "यदि आप धौकलसिहका पक्ष लेकर राजा मानसिहको सिहासनसे उतार दे तो म प्रतिज्ञा करता हूं कि धौकलसिंह जिस दिन मारवाड़के राजसिहासनपर शोभायमान होगे उसी दिन म आपको भलीभातिसे पुरस्कार देकर संतुष्ट करूंगा। यह कहिये कि आप कितने रुपये लेंगे" अमीरखॉंने कहा, "मुझे २०००००० वीस लाखकी आवश्यकता है।" सवाईसिहने कहा, "मै फिर शपथ करके कहता हूं कि जिसदिन धौकलसिहके शिरपर मारवाड़का राजछत्र शोभायमान होगा उसी दिन आपको २०००००० रुपये दूंगा।" शीघ्र ही यह संधिपत्र लिखकर तैयार किया गया, अमीरखॉंने कुरानको स्पर्श करके उस प्रतिज्ञाको पालन करनेके लिये शपथ करी और उसी समय सवाईसिहने प्रचलित राजपूत रीतिके अनुसार अमीरखॉंके साथ पगड़ी वदल ली। इस प्रकारसे सवाईसिहने प्रवल पराक्रमशाली अमीरखॉंको अपने हस्तगत कर धौकलसिंहके साथ भी उसका परिचय करादिया। अमीरखॉंने धौकलसिंहके समीप शपथ करके फिर प्रतिज्ञा की कि "मैने आपके स्वार्थसाधनमे इस जीवनतकको उत्सर्ग किया। आपको जोधपुरके सिहासनपर वैठालनेके लिये मै प्राणपणसे चेष्टा करूंगा।" अमीरखॉंकी इस प्रतिज्ञा पर विश्वास कर उसी समय उसे वहुतसे मूल्यवान् द्रव्य उपहारमे दिये

---

(१) महाराजा मानसिहके इतिहाससे धौकलसिहका इस युद्धमे मौजूद होना कहीं नही पाया जाता। और वह आभी कैसे सकता था, क्योंकि वह अभी २ वर्षका वच्चा था। सवाईसिंह ने उसके नामसे यह सव प्रपंच रचा था।

गये। इस प्रकारसे अमीरखाँ अपने गुप्त अभिप्रायके सिद्ध करनेकी पूर्व सूचना करके धौंकलसिंह और सवाईसिंहसे विदा हो मूधियाड़को लौट आया। धौकलसिंह और सवाईसिंहके प्रति मित्रता प्रकाश करनेके लिये उन दोनोके यहां जो राठौर सामन्त सेनासहित उनके अधीनमे नियुक्त थे, उनको भी अमीरखाँने अपने यहां बुला भेजा. सवाईसिंहने इस आमंत्रणके ग्रहण करनेमें कुछ भी आपत्ति न की वरन अत्यन्त प्रसन्न हो समस्त राठौर सामन्तोको अपने साथ लेकर आप स्वयं अमीरखाँके डेरेपर गये।

सवाईसिंहके इस निमंत्रणके स्वीकार करतेही नरपिशाच अमीरखाँने अपना दुष्ट अभिप्राय साधन करनेके लिये किंचित् भी विलम्ब नहीं किया। मारवाड़पति मानसिंहके निकट अमीरखाँ साहबने जो प्रतिज्ञा की थी उस प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेके लिये वह भयंकर मूर्तिसे रुधिर प्रवाही अभिनय करनेकी वाट देखने लगा। सम्वत् १८६४ के चैत्रमासमे उस चिरस्मरणीय उन्नीसवे दिन सवाईसिंह नागौरसे समस्त राठौर सामन्तोके साथ पाँचसौ अनुचरोको लेकर अमीरखाँके उत्सवमे शामिल होनेके लिये तथा उससे परस्पर मित्रता वढ़ानेके लिये उसके डेरेपर आये। वुद्धिमान् अमीरखाँने निमंत्रित सवाईसिंह और अन्य समस्त सामन्तोको वड़े आदर सन्मानके साथ सभामे वैठाला। तुरन्त ही परस्पर पगड़ो वदलीगई। सवाईसिंहके हृदयमे मानो आनंदकी तरगें उठने लगी, वह अपने मनहीमनमे विचारने लगा कि अव अवश्य ही अमीरखाँकी सहायतासे मानसिंहको सिंहासनसे रहित कर धौकलसिंहको राजगद्दी पर वैठाल स्वयं राज्यमे अपनी प्रवल सामर्थ्य चलाऊंगा, वह मनहीमन इस प्रकारकी कल्पना करके प्रसन्न होने लगा। सभामे शीघ्र ही नृत्यगीत प्रारंभ होगया। अत्यन्त रूपलावण्यमयी नर्तकी गण कोयलकी समान वाणीसे गानद्वारा राजपूतोके नेत्र और मनको प्रसन्न करने लगी। सभी अपार आनन्दरूप जलमे मग्न होगये, मानो सभी दर्शक उस महोत्सवमे मतवाले होगये। किसीको अपने शरीरका कुछ भी ध्यान न रहा। उसी समय अमीरखाँ किसी कार्यका वहाना करके अचानक सभासे चलागया। नाँच, गान पहलेकी समान होतारहा। आयेहुए सभी सामन्त प्रसन्नचित्तहो उस उत्सवको देखने लगे। उनको यह स्वप्नमे भी ध्यान न था, कि उनपर किस प्रकारकी विपत्ति आनेवाली है? उनके भाग्यमे किस प्रकारसे भयंकर कालरात्रि उपस्थित होनेवाली है। उनको इसका जरा भी संदेह न हुआ कि, वह मित्र अमीरखाँ किसप्रकार कालान्तक मूर्तिसे, किस प्रकारके छल कपटसे और किस प्रकारकी चातुरी जालसे उनको अपने हस्तगत कर कैसा वियोगान्त अभिनय करनेके लिये तैयार हुआ है। सहसा उस सभाका वाजा ऊँचे स्वरसे चीत्कार कर उठा, उसी समय सव नर्तकी सावधान होकर न जाने किधरको भाग गये, और तुरन्त ही अचानक सैकड़ो पठान अपने भयंकर स्वरसे डेरोंको कपायमान करते हुए नंगी तलवार हाथमे लिये हुए डेरोमें आ पहुँचे। और उन्होने उस मारवाड़ विध्वंसके मूल कारण सवाईसिंह और वयालिस राठौर सामन्तो

पर आक्रमण किया, सवाईसिंह और समस्त सामन्तोने पठानोंको अचानक आक्रमण करते हुए देखकर समझ लिया कि नरपिशाच अमीरखाँने मित्रताका बहाना करके कुरानको स्पर्श कर जगदीश्वरका नाम ले शपथ करके प्रतिज्ञा की थी; वह सब कपट था. उसने मित्रताकी चिह्नस्वरूप पगड़ीको बदलकर कैसा भयंकर लोमहर्षण अभिनय किया है! आक्रमणकारी पठानोकी संख्या अधिक थी। बहुत थोड़े समयमे ही उन आयेहुए सामन्तोके शरीर खंड २ होगये–ऊंची अभिलाषा तथा बदला लेनेकी इच्छावाले सवाई सिंहका शिर भी काटा गया। अमीरखाँने तुरन्त ही उस पापीके शिरको तथा सामन्तोसे ऊँची श्रेणीके सामन्तके शिरको महाराज मानसिंहके समीप उपहारमे भेज दिया। सवाईसिंह और सामन्तोके साथ जो पाँचसौ सिपाही आये थे वे अकस्मात् इस भयंकर घटनाको देखकर आश्चर्यान्वित हो भागनेके लिये तैयार हुए, परन्तु पठानोने उनको भी विध्वंस करदिया; और जो सेना भाग गई थी वह तोपोके गोलोके आघातसे एकवार ही भस्म होगई! नरराक्षस अमीरखाँ इस प्रकारसे सवाईसिंह और समस्त राठौर सामन्तोका संहार करके अपनी प्रतिज्ञा पूरण कर उसी समय नागौरपर अधिकार करनेके लिये आगे बढ़ा। अपने भाग्यसे ही धौकलसिंह इस पाखण्डीके डेरोमे नही आये थे, वह नागौरमे ही थे। परन्तु अमीरखांके इस हृदयभेदी राक्षसी आचरणके समाचारको पाकर, प्राणोके भयसे वे भी उसी समय वहांसे चलदिये, और जो अन्यान्य राठौर सामन्त तथा सेना नागौरमे थी वह भी तुरन्तही छिन्नभिन्न होकर चारों ओरको भागगई। अमीरखाँ इस प्रकारसे सामन्तोके प्राणनाश करके सेनाके साथ नागौरमे आया, और उसने धौकलसिंह तथा अन्यान्य समस्त सामन्तोके धन और अनेक प्रकारकी वस्तुओंको लूट लिया। मारवाड़के महाराज बख्तसिंहने नागौरके किलेमे जिन बहुतसे युद्धके द्रव्योंको संग्रह कर रक्खा था, उन सबको अमीरखांने बड़ी सरलतासे लूटलिया। अमीरखांने इससे पहले जिन कईएक किलोंको अपने अधिकारमे करलिया था, उसने नागौरके किलेमेसे तीनसौ तोपे लेकर उनको उन किलोमे भेजदिया। इस प्रकारसे नरपिशाच अमीरखां महाराज मानसिंहके शत्रुओंको एक साथही निर्मूल कर राजधानी जोधपुरमे गया. महाराज मानसिंहने इस समय उसका पहलेसे भी अधिक सम्मान किया, और इस चिरस्मरणीय पैशाचिक अभिनयके पुरस्कारमे शीघ्र ही उसे दशलाख रुपये दिये, तथा मूंडवा और कुचेरा नामक तीस हजार रुपये वार्षिक आमदनीवाले दो बड़े २ गांव दिये। इसके अतिरिक्त अमीरखांको महाराजके यहांसे प्रतिदिन खर्च करनेके लिये सौ रुपया मिलने लगा।

मानसिंह पूर्वजन्मके पुण्यबलसे जिस प्रकार महाराज भीमसिंहके त्राससे ग्यारह वर्षतक अपनी रक्षा करके अंतमे ईश्वरकी कृपासे सहसा मारवाड़के सिंहासन पर विराजमान हुए थे, उसी प्रकारसे उस जगदीश्वरकी कृपासे फिर भी इन्होने इस भयंकर विपत्तिसे उद्धार पाया. इसका अनुमान सरलतासे हो सकता है

कि सवाईसिंहने किस भावसे मानसिंहके विरुद्ध प्रवल षड्यंत्र जालका विस्तार किया था, समस्त राठौर सामन्तोको अपने हस्तगत करके किस भावसे मानसिंह का अनिष्ट करनेके लिये वह उद्यत हुए थे। यदि क्रूरकर्मचारी अमीरखॉ राजधर्मके विरुद्ध, नीतिके विरुद्ध तथा युद्धकी रीतिके विरुद्ध उस हृदयभेदी उपायसे सवाईसिंहका तथा अन्यान्य सामन्तोका प्राण नाश करके अपनी आत्माको कलंकित न करता तो किसी प्रकारसे भी महाराज मानसिंह अधिक दिनतक किलेमें वंद रहकर अपनी रक्षा न कर सकते। अधिक क्या कहैं सवाई सिंहने अपने पितामह और पिताकी प्रतिहिंसावृत्तिको चरितार्थ करनेके लिये अपनी जन्मभूमि और स्वजातिको जिस प्रकार दुर्गतिमे डाला उसका प्रतिफल भी उन्हें मिला उनकी इस भॉति शोचनीय मृत्युने राठोर जातिको दिखा दिया कि अपने स्वार्थसाधनके लिये स्वजातिकी दुर्गति करनेके लिये उद्यत होनेसे किस प्रकारका दंड भोगना पड़ता है। यद्यपि मानसिंहने अपने भाग्यवलसे ही छुटकारा पाया, परन्तु जिस प्रकारके घृणित और हृदयभेदी उपायसे विजाती और विधर्मी पठान अमीरखॉकी सहायतासे उन्होने स्वजातीय राठौर कुलके सामन्तोका प्राण नाश किया, और आप निष्कंटक होकर रहे, इसी कारणसे उस महापातकके फलस्वरूपमे उन्हे भी अपार क्लेश भोगना पड़ा, तथा मारवाड़के गौरवका सूर्य भी एकवार ही अस्त होगया। यद्यपि मानसिंहने एक ही कंटककी सहायतासे बहुतसे कंटकोको उखाड डाला था-परन्तु उनके आश्रय स्वरूप उस कटकने उनका भी विशेप अनिष्ट करनेमे कुछ कसर न की।

महाराज मानसिंहने अमीरखॉकी सहायतासे सवाईसिंह तथा अन्यान्य सामन्त मंडलीको इस प्रकारसे मारकर फिर प्रवल प्रतापसे मारवाड़मे अपनी शासन शक्तिका विस्तार किया। प्रतिद्वन्द्वी धौंकलसिंह निराशाके अगाध जलमे पड़कर प्राणोके भयसे नागौरसे चले गये, परन्तु जो सामन्त तथा राजा धौंकलसिंहका पक्ष लेकर जीवित थे, मानसिंह ने इस समय ठीक सुअवसर जानकर उनको भी उचित फल देनेमे किंचित् भी विलम्ब न किया। जयपुरके महाराजके ऊपर महाराज मानसिंह अत्यन्त अप्रसन्न होगये थे अधिक क्या कहैं, मानसिंहने इस समय उनके साथ युद्धका विचार न करके अमीरखॉके अधीनकी पठान सेनाके द्वारा जयपुरराजके वहुतसे देशोको विध्वस करदिया मानसिंहके दूसरे शत्रु वीकानेरके महाराज इससे पीछे उनके ऊपर अत्यन्त कुपित हुए। यद्यपि वीकानेरके महाराज शेप अवस्थामे धौकलसिंहके पक्षको छोड़कर केवल फिलोदीको पाकर अपने राज्यको लौट आये थे, परन्तु उन्होने पहली अवस्थासे सेना सहित जयपुरके महाराजके साथ मिलकर धौंकलसिंहको मारवाड़के सिंहासन पर वैठानेके लिये जोधपुरको घेरा था, इसीसे उस समयकी सहायताके पुरस्कारमे फलोदीको वीकानेरके राज्यमे मिला लिया था, इसी कारणसे महाराज मानसिंहने उनको भी विशेप दंड देना निश्चय किया। शीघ्र ही महाराज मानसिंह अपनी वारह हजार सेनाके साथ प्रधान सेनापति इन्द्रराज तथा अमीरखॉ और हिन्दालखॉ अपनी २

सेनाके साथ पैंतीस तोपैं लेकर वीकानेरके स्वाधीन राजा पर आक्रमण करनेके लिये चले। वीकानेरके महाराज पास आईहुई विपत्तिको देखकर शीघ्र ही यथाशक्ति सेना इकट्ठी करके अपनी रक्षा करने लगे। उनके अधीनकी जितनी सेना इकट्ठी हुई, वह मानसिंहकी सेनाके वरावर ही होगी। वापरी नामक स्थानमें दोनो सेनाओंका युद्ध हुआ।वीकानेरके महाराज इस युद्धमे परास्त होकर अपनी रक्षा करनेके लिये राजधानीको चले आये। उस पहले युद्धमें वीकानेरके महाराजके दोसौ योद्धा नष्ट होगये थे। वीकानेरके महाराजके भागते ही महाराज मानसिंहके प्रधान सेनापति इन्द्राज अमीरखॉ और हिंदालखॉ उनका पीछा कर गजनेर नामक स्थानमें आ पहुँचे। वीकानेरके महाराजने देखा कि यद्यपि उनकी सेनाकी संख्या शत्रुओकी अपेक्षा कुछ कम नहीं है परन्तु पठानोंकी सेनाके साथ समभावसे वीरता प्रकाश करके अपनी रक्षा करना असंभव है, इस कारण उन्होंने उस अवस्थामे युद्धके बदले संधि करनेमे अपना विशेप कल्याण देखा। तव उन्होने सन्धिका प्रस्ताव उठाया। वीकानेरके महाराजने युद्धके व्ययके वदलेमें दो लाख रुपये देना स्वीकार किया और जिस फलोदीको अपने अधिकारमे करलिया था, इस समय उसे भी लौटा दिया, मारवाड़के महाराज मानसिंह उस प्रस्तावमे सम्मत होगये, और दोनोंमे उसी समयसे मित्रता होगई।

जिस पठान सेनापति अमीरखांने जगत्सिंहके साथ मिल कर सामान्य नेता स्वरूपसे मारवाड़के अवरोधमे नियुक्त हो अंतमे भयंकर कार्य करके इस समयके इतिहासमें भयानक एक राजनैतिकरीति अभिनय किया था उसी अमीरखांने अपने सौभाग्यवलसे कूट राजनीतिके वलसे अपने पड्यंत्रके वलसे तथा महा पातकके वलसे मारवाड़मे धीरे २ अपनी सामर्थ्यका विस्तार करके अंतमे वह मरुक्षेत्रका एक हर्त्ता कर्त्ता विधाता होगया, और सर्वत्र ही उसके अधिकारका विस्तार होगया। राजाके यहां अपनी सामर्थ्यके विस्तार करनेमें तथा राठौर सामन्तोंने ऊपर अपने प्रभुत्वका विस्तार करनेमे उस मनुष्यने कुछ भी कसर न की। महाराज मानसिंहके महा विपत्तिमे पड़नेके समय अमीरखांने अनेक उपकार किये थे, उसीकी सहायतासे वह राज्यकी रक्षा करसके थे इसी कारणसे महाराजने इस समय अमीरखांके घोर अन्याय करने पर भी उससे अपनी सामर्थ्यका विस्तार करनेके समय कुछ भी कहनेका साहश न किया। सारांश यह है कि अमीर-खांका भाग्य सर्वथा प्रसन्न होगया। अमीरखांको वृत्तिस्वरूपमे मानसिंहके यहांसे अच्छी आमदनीवाले दो देश मिले थे, इसके अतिरिक्त क्रम २ से मारवाड़के अनेक देशोको भी उसने अपने अधिकारमे करलिया। उसने अपने अधीनके सेनापति गाफूरखांको एक सेनाके साथ नागौरके किलेमे रखकर समृद्धिशाली मेरता देशको विभक्त करके अपने अधीनके नेताओको देदिया। वह इतना करके भी शान्त न हुआ, उसने नावा के किलेमे अपनी सेनाको रखकर नावा और सांभरके लवणक्षेत्र भी अपने अधिकारमे करलिये। सारांश यह है कि अमीरखॉ इस समय वास्तवमें मरुक्षेत्रके राजाओकी

समान अपनी इच्छानुसार व्यवहार करके राठौर सामन्तोके ऊपर घोर अत्याचार करने लगा। मानसिंह अपनी शासनशक्तिकी पुनर्वार प्रतिष्ठा करके केवल प्रधान सेनापति इन्द्राज और अपने गुरु देवनाथकी सम्मतिसे सम्पूर्ण कार्य करने लगे। अन्यान्य राठौर सामन्तोने पूर्व पुरुषोकी समान राजसभामे कुछ भी बोलनेका अवसर न पाया, वरन पग पग पर विजातीय अमीरखॉके द्वारा उनका घोर तिरस्कार होने लगा। क्रमशः वह अत्याचार अत्यन्त प्रबल और असहनीय होगये, तब सब सामन्तोने मिलकर यह प्रस्ताव किया कि महाराज मानसिंह केवल इन्द्राज और राजगुरु देवनाथकी सम्मतिसेही कार्य करते हैं, इस कारण अमीरखांने जो घोर अत्याचार करने प्रारंभ किये है उन सबके कारण इन्द्राज और देवनाथ ही हैं, उन्हींको सम्मतिके अनुसार अमीरखॉने निर्भय हो इस प्रकारके भयंकर अत्याचार करने प्रारंभ किये हैं। अनेक भांतिसे विचार करनेके पीछे शेषमे सभोने मिलकर यह निश्चय किया कि इन्द्रराज और देवनाथको मारे बिना किसी भांतिसे अपना मंगल नही होसकता, परन्तु उन्होंने अपनी सामर्थ्यको हीन अवस्थामे देख राजद्रोही होकर इन्द्राज और देवनाथको नाश करनेका साहस न किया, अंतमें यह निश्चय किया, कि जब महा पापी अमीरखांको सब सामर्थ्य है, अर्थात् वह सभी कुछ कर सकता है और वह धन लेकर सभी काम करनेके लिये तैयार होजाता है तब उसीकी सहायतासे इन्द्राज और देवनाथका प्राणनाश करना उचित है। सामतोके नेताने शीघ्र ही यह अपना प्रस्ताव अमीरखांसे कहा, इनके यह वचन सुनकर अमीरखांने कहा, "कि इसके पुरस्कारमे आप हमैं सात लाख रुपये दीजिये। मैं आपके शत्रु इन्द्राज और देवनाथका इसी समय नाश कर सकता हूं।" सामन्तोने सात लाख रुपये देना स्वीकार कर लिये तब अमीरखॉने शीघ्र ही एक षड्यन्त्र विस्तार करना प्रारंभ किया। इन्द्राजकी पठान सेनाने अपने बाकी वेतनके लिये जो झगड़ा किया। उसीमे उसका और राजगुरु देवनाथका सर्व-नाश हुआ।

यद्यपि राजगुरु देवनाथने राज्यमें अपनी प्रबल सामर्थ्यका विस्तार किया था, परन्तु महाराज मानसिंहको उसके द्वारा अनेक विषयोमे भलीभॉतिसे सहायता मिली थी इसलिये वह गुरुदेवकी उस सामर्थ्यके चलानेसे किंचित् भी दु.खित न हुए, वरन् वे गुरुदेवके उपकारोंके परमकृतज्ञ थे। मानसिंहने विचारा था, कि अपने समस्त कुटुम्बी और सामन्तोके बीचमे एकमात्र गुरुदेव देवनाथ ही हमारे प्रधान हितैषी मित्र हैं। गुरुदेवके ऊपर उनकी जैसी भक्ति थी, फिर क्यों गुरुदेवने उसी प्रकारसे अपने स्वार्थको सिद्ध करनेके लिये कोई कार्य न किया। उन्हीं गुरुदेवको जैसे ही दुराचारी अमीरखॉने मारा कि वैसे ही मानों मानसिंहके हृदय पर सहस्रो वज्र टूट पड़े। महाराज मानसिंह गुरुशोकसे इतने कातर हुए कि सर्वसाधारण भी उनके चित्तकी विकृतिको जानगये, गुरुदेवकी मृत्युके पीछे महाराज मानसिंहने राज दरबारमे जाना छोड़ दिया, और एक निर्जन स्थानमे अकेले रहने लगे। धीरे २

समस्त राजकार्य छोड़कर तथा समस्त धर्म कर्मोंको भी त्याग करके वह उन्मत्तकी भाँति रहने लगे। क्या आत्मीय क्या कुटुम्वी, क्या मंत्री क्या परिवार उन्होंने सभीके साथ वातचीत करनी छोड़ दी। महाराजके इस दारुण शोकको देखकर समस्त मंत्री तथा सामन्त राज्यमें शांतिकी रक्षाके लिये चिन्ताके समुद्रमे मग्न होगये। महाराजकी राजकार्यमे उदासीनता देखकर सभीनें एकमत होकर उनके एकमात्र पुत्र छत्रसिहको सिहासन पर वैठाकर राज्यमे शान्ति करनेका विचार स्थिर किया। राजा मानसिहने सामन्तोंके उस प्रस्तावमें सम्मत होकर अपने हाथसे कुमार छत्रसिंहके मस्तक पर राजतिलक देकर उनको मरुक्षेत्रके सिहासन पर वैठाला।

कुमार छत्रसिह युवा अवस्थामे सिहासन पर विराजमान होकर अत्यन्त निन्दनीय कार्य करने लगे, इन्होंने राज्यशासनकी ओर किंचित् भी ध्यान न दिया, और भोग विलासमें रत होनेसे यह शीघ्र ही सर्व साधारणके अप्रियपात्र होगये; और इसी कारण से वह अधिक दिनतक सिहासन पर न वैठ सके। ऐसे ऊधमी छत्रसिहने पशुओंकी समान आचरण करनेके कारण उस युवा अवस्थामे ही ज्वरसे पीड़ित हो इस संसारको छोड़कर परलोकका रास्ता लिया। ऐसा भी जाना गया है कि, कुमार छत्रसिहने एक महीने तक एक सुन्दरी युवतीके कमनीय रूपसे मोहित हो उसके सतीत्वको नाश करनेकी चेष्टा की थी इसीसे वह मारेगये; और यह भी कहा जाता है कि वह विषम ज्वररोगसे मृत्युको प्राप्त हुए, अब यह नहीं कह सकते कि कौन सी वात सत्य है, इस वातको महात्मा टाड् साहवने भली भाँतिसे प्रकाशित नहीं किया, परन्तु हमे ऐसा वोध होता है कि छत्रसिहको इस अवस्थाके पहले ही उनको विषमज्वरने इस संसारसे विदा करदिया।

महान् शोकग्रस्त महाराज मानसिंह अपने एकमात्र पुत्रकी अकालमे ही मृत्यु होनेसे और भी उन्मत्त होगये। उन्होंने विचारा कि उसके जीवन–नाशके लिये सभीने षड्यंत्रका विस्तार किया है। इसलिये सभीके ऊपर महाराजका अविश्वास होगया। अधिक क्या कहै, अपनी अर्द्धांगिनी रानी तकको भी वह अपना शत्रु जानने लगे। विचारा कि रानीने मेरे भी प्राण नाशमे वहुतसे उपाय किये होंगे। महाराज मानसिह इस प्रकारसे अपने प्राणनाशके लिये सवको उद्यत हुआ जान कर अत्यन्त चिन्तित हुए और उनके हाथका भोजन तक करना छोड़ दिया। केवल एक अत्यन्त विश्वासी सेवक जो कुछ खानेके लिये लाता था केवल उसीको खाकर जीवन निर्वाह करने लगे। उस इकले कमरेमे वह उन्मत्तकी समान रहकर दिन रात केवल चिन्ताकी अग्निमे भस्मीभूत होने लगे, इससे उनकी उन्मत्तता और भी दूनी वढ़ने लगी। उन्होंने स्नान करना तथा हजामत वनवाना भी छोड़ दिया। इससे उनको मूर्ति भी अत्यन्त भयंकर होगई। धीरे २ सवसे वातचीत करना भी छोड़ दिया। इस समय मंत्रियोंने उन्हींके नामसे राज्यकार्य किया। जव कोई विशेष प्रयोजनीय कार्य होता

तो महाराजके समीप जाकर निवेदन करते परन्तु महाराज मौनभावसे सुन लेनेके अतिरिक्त उनको कुछ भी सम्मति नहीं देते थे। महात्मा टाड्साहव लिखते हैं कि मरुक्षेत्रके अनेक सामन्तों और प्रजाका ऐसा दृढ़ विश्वास था कि महाराज मानसिंहके जीवनको नष्ट करनेके लिये शत्रुओंरके असंतुष्ट हुए सामन्तोने षड्यंत्रका विस्तार किया है-परन्तु इन्होंने प्राणरक्षाके लिये केवल प्रकाशमें उन्मत्तताका वहाना किया है। वास्तव मे इनको उन्माद नहीं हुआ था, और किसी किसीको ऐसा भी विश्वास है कि, महाराज ने स्वयं इन्द्राजके प्राणनाशमें गुप्तभावसे अपनी सम्मति दी थी, इसीसे उन इन्द्राज के प्राणनाशसे गुरुदेव देवनाथके प्राण भी गये; तव उन्होंने अनुतापकी अग्निसे दग्ध होकर इस प्रकारसे उन्मत्तता प्रकाश की थी। महात्मा टाड् साहवका स्वयं यह मत है, कि महाराज मानसिंहने नृशंस हृदय नरराक्षस अमीरखांके साथ मिलकर जो शोचनीय वियोगान्त अभिनय किया था और जिसमे कि सैकड़ों प्राणियोका जीवन नष्ट हुआ था इसीसे इन्द्राजके प्राणनाशमे भी सर्वसाधारणको इनके ऊपर संदेह हुआ था। छत्रसिंहके परलोक जानेके पीछे मानसिंहकी उन्मत्तता और भी वढ़गई, तव मारवाड़के विध्वंसके कारणस्वरूप पोकरणके निहत सामन्त सवाईसिंहके पुत्र सालमसिंह नेता-स्वरूपसे सामन्तोंके साथ मिलकर मारवाड़को शासन करने लगे। यद्यपि सवाईसिंह मानसिंहके प्रधान शत्रु थे पर उनके पुत्र सालिमसिंहको फिर राज्यमें शासन शक्तिको चलाता हुआ देखकर हमारे पाठक विस्मित होसकते हैं, परन्तु राजपूत रीतिके अनुसार पिताका अपराध पुत्रपर न लगायागया इसीसे सालिमसिंहने राज्यमें फिर अपनी प्रभुता विस्तार की, इसके पीछे महाराज मानसिंह भी इस भावसे अधिक दिन तक न रहसके।

"इस क्षीणप्राण दुर्वलहृदय हिन्दूजातिके प्रस्तावसे, हिन्दूजातिके वुलानेसे, हिन्दूजातिके उपदेशसे एवं उनकी मंत्रणा-और सहायतासे कर्नल क्लाइव और वाट्सनने एक मुट्ठी अंग्रेजी सेनाके साथ सन् १७५७ ईसवीमे पलासीके युद्धमे जिस शासन शक्तिको जन्म दिया, जिस शासनशक्तिने क्रम २ से प्रवल होकर कूट राजनीतिजालका विस्तार कर साम, दान, दंड और भेद-मय राजनीतिके द्वारा देशीय राजाओंमें भेद डालकर अपना प्रभुत्व स्थापन किया था, इस समय १८२७ ईसवीमे दिल्लीके अखंड प्रतापशाली यवन सम्राट्को दमन कर वह वृटिश शासनशक्ति वीरभूमि रजवाड़ोंमें अपने अधिकारको विस्तार करनेकी इच्छासे, उस कूटराजनीतिके वलसे आगे वढ़ी। जो शासनशक्ति सम्पूर्ण भारतकी पचीस करोड़ प्रजापर शासन करती थी, जिस शासनशक्तिने न्याय विचार और अपक्षपातकी भेरीका शब्द करके स्वेच्छाचारकी पराकाष्ठा दिखा दी थी, जिस शासनशक्तिने स्वजातिके स्वार्थ साधनके लिये भारतीय प्रजाका अनिष्ट करनेम मुहूर्त्तमात्रका भी विलम्व नहीं किया, जो शासनशक्ति एकमात्र ईश्वरकी कृपासे तथा शुभग्रहोंके वलसे सत्तासी

(१) क्लाइवके समयमे भारतकी मनुष्य गणना पचीस करोड़ नहीं थी। मुश्किलसे दश बारह करोड़ होगी।

हज़ार अंग्रेजी सेनाको लेकर पचीस करोड़ प्रजासे पूर्ण संसारमे सबसे प्राचीन वीर वंशधरोंकी जननी आर्यभूमिका शासन करती थी, उसी शासनशक्तिने यवनराज्यके लोप होजानेके पीछे राजस्थानके वीरव्रतावलम्वी राजपूत राजाओंके ऊपर प्रभुत्व स्थापन करनेके लिये मरुभूमिकी ओर पदार्पण किया। मारवाड़के महाराज उदय सिंहने जिस प्रकार सबसे पहले वादशाह अकबरके सम्मुख जातीय स्वाधीनताको वेचकर मरुक्षेत्र की राजनैतिक अवस्थाको वदल दिया था, उसी प्रकार महाराज मानसिंहके राज्यसमयमे मारवाड़ने अंग्रेजोंकी अधीनता स्वीकार की। यवनराज्य के लोप होनेके समयसे यद्यपि मारवाड़के महाराज फिर भी स्वाधीन होगयेथे, परन्तु जगदीश्वरकी महिमा अत्यन्त विचित्र है! कुछही वर्षोंके बीतने पर उस राठौर जातिने भी भारतवर्षके अन्यान्य आर्यसंतानोकी. समान वृटिशशक्तिकी अधीनता को स्वीकार किया। महाराज मानसिंहने उदयसिंहकी समान सवसे पहले उस शृंखला को धारण किया, और उसी कारणसे मरुक्षेत्रकी राजनैतिक अवस्था फिर वदलगई। यद्यपि वख्तसिंहके परलोक चलेजानेके पीछे मारवाड़ आत्मविग्रहके षड्यंत्र तथा जातीय युद्धोंसे विध्वंस होगया था, यद्यपि महाराष्ट्रोंने राठौरोंके उन बुरे दिनोमे तथा महा-विपत्तिके समयमे उनके ऊपर अत्याचार करनेकी पराकष्टा दिखाई थी, यद्यपि राठौरोंका पहला प्रताप और उनका प्रभुत्व उस समय एकवार ही लोप होगया था, यद्यपि धनका लोभी सैंधिया उस समय राठौर राजके यहांसे वहुत सा धनसंग्रह कर रहा था, परन्तु सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये इतना तो हम अवश्यही कहैंगे कि, उस समय भी राठौर गण "स्वाधीन" नामका परिचयदेनेमें सब प्रकारसे अधिकारी थे। वृटिशगवर्न-मेन्टके साथ उस स्वाधीन राठौर जातिके संधिवंधनसे उस जातिकी वह उपाधि वदल गई थी या नहीं, इसको हमारे बुद्धिमान् पाठक अवश्यही जानते होंगे, इस कारण उस विषयके सम्वन्धमे यहांपर हम अधिक कहनेकी अभिलाषा नहीं करते।"

इस समय महात्मा टाड् साहवकीही वातको ठीक मानना होगा। टाड् साहव लिखते हैं, कि "१८१७ ईसवीमे जिस समय लुटेरे महाराष्ट्रोंके साथ के समस्त सम्वन्ध-वंधनोको छेदन कर भारतवर्षमें शान्ति स्थापन करनेके लिये हम राजपूतोंको अपने साथ मिलनेके लिये बुलाते है, उस समय महाराज मानसिंहने अपने कुमार छत्रसिंह वा उनके मंत्रीगणोंने हमारे उस प्रस्तावके मतसे दिल्लीमे अपने दूतको भेजा। परन्तु वह संधिवंधन भली भांतिसे ठीक भी न होसका था कि इसके पहले ही कुमार छत्रसिंह परलोकवासी होगये। महात्मा टाड्साहवकी युक्तिके विरुद्ध कौन वोल सकता है? किसी प्रकारसे भी झगड़ा करतेहुए हमारा हृदय अत्यन्त दुःखित होता है; परन्तु सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये उस झगड़ेको विना कहे हुए भी नहीं रह सकते। इसको हम मानते है कि वृटिश-शक्ति समस्त भारतवर्षमे शान्ति स्थापन करनेके लिये माराष्टोंके अत्याचारोको रोककर उनकी शासनशक्तिको हीनवल करनेके लिये राजपूतोको बुलाती है. परन्तु हम पूंछते ह कि उनके बुलानेका क्या यही मुख्य

उद्देश है ? राजपूतोंके साथ संधि होजानेमें क्या और कोई उद्देश गौरांगशक्तिके हृदयमें नहीं छिपा था ? सम्पूर्ण देशीय शासनशक्तिको लोप करके अपनी शासनशक्ति की प्रवलता बढ़ाकर देशीय राजाओंको उस संधिके मोहमय पाशमें फाँस कर प्रकाशमें उनको स्वाधीनताकी उपाधि दे भीतर ही भीतर क्या उनके प्रधान प्रार्थनीय स्वत्व-अधिकार और सामर्थ्यको लोप करनेका उनका आशय नहीं था ? इस प्रश्नके उत्तरका अब प्रयोजन नहीं है। जिस समय स्वयं कर्नल टाडसाहब उक्त शान्ति स्थापनके उद्देशके विषयको वर्णन करगये हैं, उसके पीछे भी बहुत वर्ष बीत गये हैं। उन प्रत्येक वर्ष-प्रत्येक मास-प्रत्येक दिन तथा प्रत्येक मुहूर्तमें इस समय देखा जाता है कि वह स्वाधीन राजपूत राजा इस समय किस प्रकारकी अवस्थामें विद्यमान हैं।"

कर्नल टाडसाहब इससे पीछे लिखते हैं कि "छत्रसिंहके प्राणत्याग करते ही पोकरणके उस समयके सामन्त सालिमसिंहने जिन अन्य सामन्तोंके साथ मिलकर मारवाड़में अपनी शासनशक्तिका प्रयोग किया था, वे अत्यन्त ही भयभीत होगये। उन्होंने विचारा कि, यदि महाराज मानसिंहके करकमलमें फिर मारवाड़के शासनका भार दियाजायगा तो उनकी निजकी समस्त शक्तियोंका फिर लोप होजायगा, और मानसिंह पुनर्वार अपनी पूर्व मूर्तिसे शोचनीय अभिनय आरंभ करैंगे। इस कारण नेता सालिमसिंहके अधीनकी सामन्त मंडलीने एकमत होकर यह निश्चय करलिया कि, मानसिंहके बदलेमें ईडरके महाराजके एक कुमारको मारवाड़के सिंहासनपर अभिषिक्त करना सब प्रकारसे कर्त्तव्य है"। सामन्तोंने शीघ्र ही ईडरके महाराजके पास यह समाचार भेजा। महाराजने यह उत्तर भेजा, कि "हमारे एकमात्र पुत्र है, यदि मारवाड़के प्रत्येक सामन्त ही एकमत होकर उस कुमारको मारवाड़के सिंहासन पर अभिषिक्त करनेकी अभिलाषा करते हैं तो उनके इस प्रस्तावमें मैं सम्मत हूँ, नहीं तो दो चार सामन्तोंके कहनेसे उस एकमात्र कुमारके देनेकी मेरी इच्छा नहीं होती।" ईडरके महाराजका यह उत्तर पाकर सब सामन्तोंने एकमत होकर फिर महाराज मानसिंहको ही शासनशक्तिके चलानेके लिये इच्छा प्रगट की, और वह प्रस्ताव खंडित होगया। सामन्तमंडलीने हताश होकर महाराज मानसिंहके करकमलमें राज्यका भार अर्पण होनेके अतिरिक्त दूसरा उपाय न देखा। महाराज मानसिंह इस समय अत्यन्त उन्मत्त भावसे रहते थे, संसारके सभी सुखोंको उन्होने एकवार ही छोड़दिया था। राज्यमें अराजकता-विशेष करके अंग्रेजोंकी जो ईस्टइण्डिया कंपनीके साथ नवीन संधिबंधनमें बँधकर मारवाड़के भाग्यमें फिर नवीन व्यापार होसकता था, यही विचार कर सामन्त गण महाराज मानसिंहके उस इकले कमरेमें जाकर मारवाड़की अत्यन्त शोचनीय अवस्था उनको समझाने लगे। यद्यपि महाराज मौनभावसे सब सुनते जाते थे परन्तु किसीका कुछ उत्तर नहीं देते थे। अंतमें ईस्टइण्डिया कंपनीके साथ जो संधि होगई थी, उसमें उनकी सम्मतिकी आवश्यकता थी 'यह भी कह दिया गया' इस विषयमें सभी उनसे कहने

लगे कि "हे महाराज! इस समय यदि आप राज्यभार ग्रहण न करेंगे तो अवश्य ही मारवाड़ देश विध्वंस होजायगा।" महाराज मानसिंहने उनके उन वचनोंपर कुछ भी ध्यान न दिया; और वे सिंहासनपर बैठनेके लिये भी राजी न हुए। परन्तु सामन्त-मंडलीने दूसरा उपाय न देखकर हताश हो महाराज मानसिंहको सिंहासनपर बैठनेके लिये वारम्वार कहा। यद्यपि मानसिंह अपने राज्यकी राजनैतिक नवीन शोचनीय अवस्थाको भलीभांतिसे जानगये थे और उसी कारणसे वह एकान्तमें रहने लगे थे। इस समय फिर उनको स्वाधीनभावसे राज्यशासनका सुअवसर मिला; परन्तु अपनी दृढ़ प्रतिज्ञाके बलसे फिर भी वह ऐसा भाव प्रकाशित करने लगे कि उनके चित्तकी विकृतिका कोई भी लक्षण दूर नहीं हुआ. जब महाराजने देखा कि अब राजनैतिक परिवर्तनका पुनर्भाव होगया है, और सामन्त राज्यके भारको मेरे हाथमें देनेके लिये विशेष आग्रह करते हैं, तब आप राज्यभारको ग्रहण करनेमें राजी होगये, उस समय उनका गवर्नमेण्टके साथ कुमार छत्रसिंहके शासन समयमे जो संधिबंधन होगया था, उस सन्धिपत्रको देखकर यह कुछ सन्तुष्ट न हुये, वरन् उन्होंने सन्धिपत्रकी किसी २ धारापर विशेष असंतोष प्रकाश किया. विशेष करके सन्धिपत्रकी जिस धारामें यह लिखा हुआ था कि उनके अधीनके सामन्तोंकी सेनाको आवश्यकता होनेपर ईस्टइण्डिया कम्पनी अपने अधीनमें कर लेगी, उसी धाराके ऊपर विशेष असम्मति प्रकाश की। वह इस वातको भलीभाँतिसे जान गये थे कि इस धारासे अंतमें अधिक असंतोषदायक अग्निके प्रज्वलित होनेकी संभावना है।

महात्मा टाड् साहवने जिस भावसे अपना मन्तव्य प्रकाशित किया है उसमे मारवाड़के महाराज मानसिंहकी उन्मत्तताके सम्बन्धमें वे सन्देह प्रगट करते हैं, परन्तु महाराज मानसिंह जो एक सामान्य कारणसे इस भांति उन्मत्तकी समान रहते थे, उन्होंने परम धार्मिक हिन्दू होकर भी अपने सभी धर्म-कर्मोंको त्यागदिया था, इस बातको हम ठीक नही मान सकते। कर्नल टाड्साहवका दूसरा मत यह कि असंतुष्ट सामन्त लोग महाराजके प्राणनाश करनेमें लग रहे थे, इसी कारणसे महाराजने उन्मत्तताका वहाना करके अपने प्राणोंकी रक्षा की थी। इस मन्तव्यको पुष्ट करनेके लिये भी हम आगे नहीं बढ़ सकते। जब कि मानसिंहको अपनी भार्याके ऊपर भी संदेह हुआ, जब कि उन्होंने केवल एकमात्र अपने एक विश्वासपात्र सेवकके अतिरिक्त दूसरेके हाथका भोजन तक करना छोड़ दिया, तब उनका केवल सामन्तोंके भयसेही उन्मत्तताका वहाना करना किस प्रकारसे सिद्ध होसकता है? हमारा ऐसा अनुमान है कि इस समय मारवाड़के चारोंओर प्रत्येक सामर्थ्यवान मनुष्यने जिस प्रकार षड्यंत्रका विस्तार किया था और पापी अमीरखॉने उस षड्यंत्रजालमें लिप्त होकर जिस प्रकारसे पैशाचिक कार्य किये थे उसने जिस भाँति धनके लालचसे अनेक मनुष्योंके प्राणनाश किये थे, उससे लुप्तप्रताप सामर्थ्यहीन महाराज मानसिंहका चित्त विकृत होनेमें आश्चर्य ही क्या है? गुरु देवनाथ मानसिंहके

एक प्रधान सहायक और परम हितैपी मित्र थे। उनकी इस शोचनीय मृत्युसे ही महाराजका स्वभाव एकवार ही बदल गया, और इसके पीछे अपने इकलौते पुत्र छत्रसिंहके परलोक जानेपर उनका शोक और भी प्रवल होगया। दारुण भय और शोकसे महाराज मानसिंहकी जैसी अवस्था होगई थी उसका वर्णन कहाँतक किया जाय, परन्तु वास्तवमे उनको उन्माद नहीं हुआ था, यह वात भी सर्वथा सत्य है। देशकी दुर्दशा-जातिकी पतित दशा-सामन्तोके व्यवहार-और अपने कियेहुए दुष्कर्मोंको स्मरण करके उन्होने सभी विषयोमे उदासीनता प्रकाश की थी। किन्तु अनेक साध्यसाधना-अनेक उपरोध अनुरोध, अनेक व्याख्याओंके पीछे उन्होंने राज्यभार को ग्रहण किया। और वृटिशसिंहको धीरे २ समस्त भारतवर्षपर आक्रमण करतेहुए देखकर उन्होने उस समय फिर पहलेकी समान उदासीनता प्रकाशित नहीं की।

सन् १८१७ ईसवीमे, जिस समय कुमार छत्रसिंह पिताके प्रतिनिधिस्वरूपसे सिंहासनपर विराजमान थे, उस समय सामन्तोने अपनी पूर्ण सामर्थ्यका विस्तार किया था, जिस समय मारवाड़के चारोंओर अराजकता विराजमान होगई थी, जिस समय अमीरखाँने प्रजापर घोर प्रभुत्व जमाकर अपने अत्याचारोकी पराकाष्ठा दिखा दी थी, उस समय ईस्टइण्डिया कम्पनीने महाराष्ट्रोंको दमन करनेका बहाना करके महाराष्ट्र और पठानोसे पददलित रजवाड़ेके हतवीर्य्य राजाओंको संधि करनेके लिये दिल्लीमे बुलाया। इससे पहले ईस्टइण्डिया कंपनीके साथ रजवाड़ोके अन्यान्य राजाओकी समान मारवाड़के महाराजका कोई सम्बन्ध नहीं था। वृटिशसिंहने विचित्र राजनीतिकी चतुरतासे अत्यन्त सामान्य अंग्रेजी सेना तथा अपनी ही वरावर देशी सेनाकी सहायतासे धीरे २ देशीय राजाओंका प्रताप लोप करके उनको अपने अधीनताकी जंजीरमे बाँधना आरंभ किया। राजपूतोके महाराज यह देखकर शीघ्र ही ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ मित्रता करके संधि करनेके लिये अग्रसर हुए। विशेष करके महाराष्ट्रोंके अत्याचार अत्यन्तही असहनीय होगये थे, और अंग्रेजोंकी ईस्टइण्डिया कम्पनीने उन महाराष्ट्राको एकवार ही परास्त करके उन्हे उचित दंड दिया. यह देखकर देशी राजा और भी आग्रहके साथ कंपनीसे संधि करनेके लिये राजी होगये. परन्तु ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ संधि करनेसे अंतमे क्या फल होगा इस वात पर उन्होने किंचित् भी ध्यान नहीं दिया। एकमात्र भारतवर्षमें शान्ति स्थापन तथा महाराष्ट्रोंको दमन करना ही इस संधिका प्रधान कारण तथा मूल उद्देश था। इसके जो और उद्देश थे, उनको कोई भी न जानसके। विशेष करके इससमय राजपूतानमे जितने राजा थे उन सवकी अवस्था अत्यन्त शोचनीय होगई थी, सभी हीनवल और लुप्तप्रताप होगये थे। यदि ऐसा न होता तो विना युद्धके तथा विना कारणके एक विजातीय कम्पनीके साथ संधि क्यो कर-लेते? जव राजपूत राजाओंकी लाख २ सेनाका नाश होजाता था और फिर भी वे अतुल वल प्रकाश करके यवनवादशाहके साथ संधि करने पर राजी न होते थे, आज वही

राजपूत इस प्रकार बिना किसी दबावके भी क्यो सन्धि करनेके लिये तैयार हुए? उनके अंग्रेजकम्पनीके साथ संधि करनेसे भलीभांति जानाजाता है कि इस समय राजपूत राजाओकी अवस्था कैसी शोचनीय थी। मारवाड़के महाराज मानसिंहके प्रतिनिधि स्वरूपसे उनके पुत्र छत्रसिंहके दूत बनकर व्यास विष्णुराम नामक एक ब्राह्मणने सन् १८१७ ई० मे दिल्लीमें आकर ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ निम्न लिखित संधिपत्र तैयार किया।

सन्धिपत्र।

माननीय अंग्रेजी ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ जोधपुरके राजा महाराज मानसिंह बहादुरके प्रतिनिधि स्वरूप राजकुमार युवराज—महाराज कुमार छत्रसिंह बहादुरका सन्धि-पत्र भारतवर्षके गवर्नर जनरल अर्थात् प्रधान शासनकर्त्ता महामाननीय मार्किस आफ हेष्टिन्स के० जी० द्वारा सामर्थ्य प्राप्त चार्लस थियोफिलास—मेटकाफ माननीय कम्पनीके पक्षमे तथा ऊपर लिखेहुए महाराज कुमारके द्वारा पूर्ण सामर्थ्य पाकर व्यास विष्णुराम और व्यास अभयराम—महाराज मानसिंह बहादुरके पक्षमे नियत हुए।

पहली धारा—माननीय अंग्रेज ईस्टइण्डिया कम्पनी और महाराज मानसिंह तथा उनके उत्तराधिकारी और इनके स्थानपर जो अभिषिक्त हों उनमें चिरकालके लिये मित्रता संधिबंधन और परस्पर स्वार्थकी एकता विराजमान कीजाय, तथा किसी ओरके जो मित्र और शत्रु होंगे वह दोनो ओरके मित्र तथा शत्रुरूपसे गिने जॉयगे।

दूसरी धारा—बृटिश गवर्नमेण्टने जोधपुरके साम्राज्य तथा अन्य अधिकारी देशोंको शत्रुओके हाथसे रक्षा करनेका भार ग्रहण किया।

तीसरी धारा—महाराज मानसिंह और उनके उत्तराधिकारी तथा उनके स्थानपर जो अभिषिक्त हो वह गवर्नमेण्टके अधीनमे रहै, और उस गवर्नमेण्टकी प्रभुताको स्वीकार करैं; तथा अन्य किसी राजा वा किसी देशके साथ वह किसी प्रकारका संवन्ध नही करसकते।

चौथी धारा—महाराज और उनके उत्तराधिकारी जो इनके स्थानपर अभि-षिक्त हों वह गवर्नमेन्टकी आज्ञाके विना अन्य किसी महाराज अथवा साम्राज्यके साथ किसी प्रकारका भी संधिबंधन नहीं करसकेगे। परन्तु अपनी जाति तथा मित्र राजाओ के साथ प्रचलित रीतिके अनुसार पत्रव्यौहार कर सकैंगे।

पॉचवी धारा—महाराज या उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त अन्य किसी के ऊपर अत्याचार अथवा विवाद न करसकैगे। यदि अचानक किसीके साथ कुछ झगड़ा होजाय तो उस झगड़ेमें मध्यस्थ होने तथा दंड देनेका भार गवर्नमेन्टके हाथमे दिया जायगा।

छठी धारा—जोधपुरराज्य, जो कर सैधियाको देता आया है, जिन्होंने एक स्वतंत्र तालिका उसके साथमें लगाकर दी है, वह कर सर्वदाके लिये बृटिश गवर्नमेन्टको देना होगा और जोधपुर राज्यके साथ सैधियाके करके सम्बन्धमें जो संधिबंधन होगया है वह तोड़दिया जायगा।

सातवीं धारा-महाराज इस बातको स्वीकार करते हैं कि जोधपुरराज्यसे जो कर सेंधियाको दियाजाता है उसके अतिरिक्त और किसी राजाको किसी प्रकारका कर नही दिया जाता था, और वह उपरोक्त करको वृटिश गवर्नमेन्टको देनेके लिये सम्मत हुए हैं, यद्यपि सेंधिया तथा अन्य कोई राजा महाराजके समीपसे कर मांगेगा तो वृटिश गवर्नमेन्ट उस करके मांगनेवालेको उत्तर देगी।

आठवीं धारा-आवश्यकता होने पर जोधपुरके महाराज पाँचसौ अश्वारोही सेना देंगे और जबतक आवश्यकता होगी तबतक जोधपुर राज्यके आभ्यन्तरिक शासनकार्य की सुविधा और शान्तिकी रक्षाके लिये प्रयोजनीय संख्यक सेनाके अतिरिक्त राज्यकी अन्य समस्त सेना अंग्रेजी सेनाके साथ मिलानी होगी।

नौमी धारा। महाराज और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त उनके शासित देशोमे पूर्ण सामर्थ्य होकर स्वाधीन शासनकर्तास्वरूपसे रहैंगे और जोधपुर राज्यमे वृटिश गवर्नमेन्टके शासनकी सीमा वा उसकी सामर्थ्य प्रचलित नही होसकैगी।

दशवीं धारा। यह दश धाराओंसे युक्त संधिपत्र दिल्लीमे तैयार हुआ तथा एम. चार्लेस मेटकाफ और व्यास विष्णुराम तथा व्यास अभय रामके हस्ताक्षरों सहित तथा मोहर लगा हुआ आजसे छः सप्ताहके बीचमे महामाननीय गवरनर-जनरल और राज-राजेश्वर महाराज मानसिंह बहादुर और युवराज महाराज-कुमार छत्रसिंह बहादुरके द्वारा स्वीकार कियाजाय।

दिल्ली, आजकी तारीख ६ जनवरी सन् १८९७ ईसूवी।
(हस्ताक्षर) सी. टी. मेटकाफ,
रेज़ीडेण्ट।
व्यास विष्णुराम।
व्यास अभयराम।

"उपरोक्त संधिपत्रको पढ़कर हमारे हृदयमें किस भावका उदय हुआ? इसे क्या हम विश्वास करसकते हैं कि सियाजीके वंशधरोंने उस स्वाधीनताकी अत्यन्त ऊँची अवस्थामें रहकर वृटिश गवर्नमेन्टके साथ संधि की थी? जिस वीरव्रतका अवलम्बन करनेवाली राजपूत राठौर जातिने औरंगजेबको भी तंग करदिया था; जिस राठौर जातिने सैकड़ो शत्रुओका विना ही संहार किये अकबरकी स्वाधीनताको स्वीकार नहीं किया था, जिस राठौर जातिने अपने बलविक्रमके प्रकाशसे भारतवर्षको प्रतिध्वनित करदिया थां, जिस राठौर जातिने उस यवन सम्राट्की अधीनताकी अवस्थामे भी सुअवसर पाकर स्वाधीनतारूपी रत्नके लेनेकी चेष्टा करनेमे कसर नही की थी; वही राठौर जाति विना कारण गवर्नमेन्टके साथ संधि करनेके लिये राजी होकर वृटिश गवर्नमेन्टकी अधीनताको स्वीकार कर, वृटिश गवर्नमेन्टके सेवकभावसे रहनेके लिये तैयार होकर, गवर्नमेन्टको कर देनेके लिये राजी होगई है, इससे हमारे विचारवान् पाठक

क्या समझे होंगे ? सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये क्या हम इस वातको नही कह सकते हैं कि राठौर जातिके भाग्यके अत्यन्त ही दुर्दिन उपस्थित हुए थे-राठौर जातिके स्वाभाविक समस्त गुणोंका लोप होकर राठौर जातिका विध्वंस होनेपर राठौरोके राज सिंहासन पर एक अयोग्य महाराज विराजमान थे, इसीसे वुद्धिमान् कम्पनीने सरलतासे विना झगड़ेके मारवाड़मे अपनी प्रधानता विस्तार करके यवनोंकी अधीनतासे मुक्त हुई राठौर जातिके गलेमे फिर अधीनताकी माला डाल दी ? सियाजीसे वख्तसिहतक जिन राजाओने मारवाड़के सिहासनपर विराजमान होकर अपने प्रवलप्रतापसे जातीय स्वाधीनताकी प्रदीप्त प्रकृतिको उज्ज्वल करलिया था, अपने भाग्यके दोषसे अन्तिम अवस्थामें यवनोंकी अधीनताको स्वीकार करके भी शूरसिह, यशवन्तसिह, अजितसिंह, अभयसिह, ओर वख्तसिह इत्यादि महारथी जिस भावसे वीरताका अभिनय करगये है; यदि उनमे से एक भी आज इस मारवाड़के सिंहासनपर विराजमान होता तो माननीय ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ इस प्रकारसे संधि नही होसकती थी। हम इस वातको मुक्तकंठसे स्वीकार करते है कि वृटिश शक्तिके साथ संधि करके राठौर जातिका उस समय एक वड़ा उपकार हुआ। राठौर जातिकी उस समय जैसी शोचनीय अवस्था होगई थी। आत्मविग्रह स्वजाति विद्वेप-विजातीय अत्याचार-उत्पीड़नोंने उस समय राठौरजातिको जिस भावसे हतवीर्य और वलहीन कर दिया था; महाराष्ट्र और पठानोने जिस भावसे मारवाड़को विध्वंस कर उसका सर्वस्व लूटलिया था उससे उस समय राठौर जातिको एक प्रवल सामर्थ्यवान् शक्तिकी सहायतासे प्रार्थनीय होना अवश्यक था परन्तु पूर्वोक्त सन्धिवंधनके कारणसे मरुक्षेत्रके चिरवीरव्रतावलम्वी स्वाधीन राजाओंके वंशधर उस समयसे कैसी अवस्थामे पड़े उसका स्मरण करनेसे ही हृदयपर वज्राघात होता है।

इस समय कर्नल टाड्साहवकी ही वातको ठीक मानना होगा। १८१७ ईसवीके दिसम्वर महीनेमें ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ जोधपुर राज्यका संधिवंधन होनेके एक वर्प पीछे अर्थात् १८१८ ईसवीके दिसम्वर मासमें वृटिश गवर्नमेण्टके प्रतिनिधि स्वरूप अजमेरके सुपरिंडेण्ट मि० विलडर (Mr. Wilder) जोधपुर राज्यमे गये। राज्यकी यथार्थ अवस्था कैसी थी, किस भावसे राज्यशासन होता था, महाराज किस प्रकारसे शासनकार्य करते थे, सामन्तमंडली कैसे आचरण करती थी, तथा राठौर जातिकी शक्ति कैसी थी इसीको जाननेका उनका प्रधान उद्देश था। कर्नल टाड् साहव लिखते है, "यद्यपि इस समय पूर्व वर्णित कारणोसे स्वजाति-द्वेष और आत्मविग्रहसे मारवाड़का शासनविभाग वहुतही गड़वड़ अवस्थामे था, तथापि मारवाड़ राज्यसभाकी उज्ज्वलता, ऐश्वर्यका आडम्वर और राजसी रीति नीतिमे कुछ भी अदल वदल नहीं हुई थी। अर्थात् राजसिहासनके सम्मान और प्रतापके ऊपर राठौर जातिका सम्मान निर्भर था। इस कारण वे लोग उस राजसिहासनपर सुशोभित अप्रिय अविश्वासी तथा घृणित मनुष्यका भी सर्वसाधारणके सामने उचित

आदर और आडंबर करनेके लिये पहिलेसे ही सुशिक्षित थे।" महात्मा टाड् साहबकी इस युक्तिसे जानाजाता है, कि राठौर जाति अपने राजाओके ऊपर विराग और अभक्ति होते हुए भी विदेशी दूतके निकट विदेशी राजाके प्रतिनिधिके सम्मुख ऐसे दुर्दिनोमे भी राजसभामे उज्ज्वलप्रभा, महिमा और महत्वको प्रकाश करके शांत नहीहुई। इतिहास वेत्ता पीछे लिख गयेहै कि "इस समय मारवाड़राज्यके दीवान पदपर अखैचंद और सामंतमंडली के प्रतिनिधि स्वरूप पोकरणके अधीश्वर सालिमसिंहने भांजगड़की उपाधि धारण करके प्रधान सामरिक नेतास्वरूपसे नियुक्त हो प्रवल प्रतापके साथ अपनी शासनशक्तिको चलाया। महाराज मानसिंहके अधिवासी सामन्तोने इस समय अखैचंद और सालिमसिंहको नेता पदपर वरण करके राज्यके समस्त किलोमे अपनी अधिकारी सेनाको स्थापित कर राजकीय प्रधान२ पदपर अपनी इच्छानुसार कर्मचारियोको नियुक्त किया, और अपने स्वार्थसाधनमे विशेष चेष्टा थी। परस्परमे मनान्तर, आत्मनिग्रह, विवाद विसम्वाद इस समय प्रवल रूपसे प्रज्वलित होगये थे। सामन्तोने अपनी इच्छानुसार शक्तिको संचय करनेके लिये अत्याचारोके करनेमे किंचित् भी कसर नहीं की थी, परन्तु उन सामर्थ्यवान् सामन्तोके विरुद्धमें हतमंत्री इन्दराजके बेटे फतहराजने खड़े होकर अनेक विषयोमे भयंकर उत्पात किये थे। फतहराज जोधपुरकी राजधानीमें अध्यक्ष पदपर नियुक्त थे। उन्होने अपने निहत पिताका वदला लेनेके लिये सामन्तोकी प्रत्येक कामनाको व्यर्थ करनेकी चेष्टा की थी। उद्धत हुए सामन्तोके उन अप्रीति मूलक स्वाधीन आचरणोसे महाराज मानसिंहकी शासनशक्ति एकवार ही दुर्वल होगई थी, माननीय ईस्टइण्डिया कम्पनीके उक्त दूत मि. वेलडरले राजधानीमें जाकर राज्यकी उस अवस्थाको देख उक्त कंपनीकी आज्ञानुसार तीन दिनके पीछे वे गुप्त भावसे महाराज मानसिंहसे जा मिले और उनसे कहा कि, सामन्तोके उस अन्याय और स्वेच्छाचारको निवारण करनेके लिये ईस्टइण्डिया कम्पनी उनको सहायता स्वरूपसे वृटिश सेना देनेके लिये तैयार है।" कर्नेल टाड् साहव पीछे लिख गये हैं, कि "महाराज मानसिंह कितने सावधान थे, उन्होंने इस प्रस्तावके सम्बन्धमें जो व्यवहार किया वह तो सभीको विदित है। वह भली भाँतिसे जानते थे कि असंतुष्ट और उद्धत सामन्तोको एकवार ही विध्वंस करनेके लिये बड़े भारी मुदगरोको उठाना पड़ेगा; पर उन्होंने यह भी स्थिर करलिया था कि इन मुदगरोंको प्रयोग करनेके वदले केवल इन्हे पास रखनेसे ही सब उद्देशोको पूर्ण कर सकूंगा। सामन्तगण इन मुद्गरोको देखकर ही इनके भयंकर वलका अनुभव कर उद्धत आचरण छोड़ देंगे, उन्होने और भी विचारा कि इस विराटकाय यंत्रके चलानेसे अकस्मात् प्राप्तहुई विपत्तिके भोगनेके वदलेमे यदि इस यंत्रके अस्तित्वसे ही सम्पूर्ण सुविधा और सुयोगको प्राप्त होकर अपनी इच्छानुसार फल पा सकें तो और भी अच्छा है।" कर्नल टाड् साहवकी उपरोक्त उक्तिसे भलीभाति जाना जाता है कि महाराज मानसिंहने माननीय ईस्टइण्डिया कंपनीके प्रस्तावके अनुसार अंग्रेजी सेनाकी सहायतासे उद्धत हुए सामन्तोको दमन करना न विचारा पर उसी समय नहीं आवश्यकता होने पर विश्वविजयी अंग्रेजी

सेनाकी सहायता लूँगा यह वात कहकर उन्होने अंग्रेजी दूतको धन्यवाद दिया और सामन्तोंको केवल भय दिखाकर अपने उद्देशको पूर्ण कर लिया । उन्होने अंग्रेजी दूतको धन्यवाद देकर कहा कि अव इस समय इस उद्देशको साधन करनेके लिये अंग्रेजी सेनाकी सहायताकी कुछ अवश्यकता नहीं है । मैं स्वयं ही राज्यके प्रार्थनीय संस्कारोंका साधन कर असंतुष्ट हुए सामन्तोको दमन करनेकी सामर्थ्य रखता हूँ । सामन्तोंने भी महाराजके उस व्यवहारसे भयभीत होकर आगेको घोर अनिष्टकी संभावना विचार स्वयं नम्रता स्वीकार करली । महाराज मानसिंह ने वालकपनसे ही राजनीति विद्यामें विशेष शिक्षा प्राप्त की थी । उन्होंने कई वर्षतक राज्यशासनमें वैराग्य प्रकाशित किया था, और उन्मत्तकी तरह निर्जन स्थानमें रहनेके पीछे वह फिर सिंहासन पर विराजमान हुए, पर उन्होंने वड़ी चतुरताके साथ धीरे २ अपनी शासन शक्तिको पूर्ववत् संचय करलिया । वह समस्त सामन्तोके सम्मुख उनके अत्यन्त अप्रिय कार्योंको मानो भूलकर प्रगटमें उनके प्रति उदारता तथा दयाभाव दिखाने लगे । सामन्तोंकी दो श्रेणी होगई थीं, एक श्रेणी तो इनके विपक्षमें खड़ी हुई और दूसरी श्रेणी इनके अनुकूलमें इनके ऊपर भक्ति दिखाती थी । महाराज मानसिंहने सवसे पहले उन दोनों श्रेणियोंमेसे प्रयोजनीय मनुष्योंको निकाल कर राज्यके भिन्न २ भागोमें नियुक्त करदिया । उसीसे दोनों श्रेणी उनके ऊपर प्रसन्न होगई । विशेप करके महाराज इस समय दोनों श्रेणियोके ऊपर तथा जिसने उनका विशेष अनिष्ट करनेमें कसर नहीं की थी उसके ऊपर भी उन्होंने ऐसी दया और कृपा प्रकाशित की किं जिससे अत्यन्त संदिग्ध सामन्तोको भी किञ्चित्मात्र सन्देह करनेका अवसर न मिला, कर्नल टाड् साहव लिख गये है कि अंग्रेजी दूतने इस समय महाराजको वारम्वार अनुरोध किया । " कि, वृटिश गवर्नमेण्टकी सेनाकी सहायता लेनेके विना आप किसी प्रकार भी राज्यमें शान्तिस्थापन और अपनी शासन शक्तिको प्रवल न करसकेगे, परंतु महाराजने उस प्रस्तावका वारम्वार निषेध करदिया कि, गवर्नमेण्टकी सेनाकी सहायताके विना ही म स्वयं अपनी सामर्थ्य वलसे शांति स्थापन कर सकता हूं । जव दूतने देखा कि महाराज किसी प्रकारसे भी अंग्रेजी सेनाकी सहायता लेनेमें राजी नहीं होते तव वह शीघ्र ही मारवाड़को छोड़कर अपने स्थानको चलागया । " यह हम दावेके साथ कह सकते है कि महाराज मानसिंह इस वातको भली भांतिसे जान गये थे कि अंग्रेजी सेनाको मारवाड़में वुलानेसे अंतमें विपरीत राजनैतिक काण्ड उपस्थित होनेकी संभावना है । भारतवर्षके वृटिश शासनके इतिहासको हमारे पाठकोने भलीभांतिसे पढ़ा होगा कि जिस जिस राज्यमे इस शक्तिने शान्त स्थापनका वहाना करके प्रवेश किया है उसी २ राज्यके अंतमे कैसे २ परिणाम हुए हैं । म० वेलडर किसी भांति भा महाराज मानसिंहको कम्पनीके कूट राजनीति जालमें न फाँस सके, और वहाँसे चले जानेके पीछे १८१९ ईसवीमें महात्मा टाड् साहव भारतवर्षके गवर्नर जनरलके द्वारा उदयपुर कोटा वूँदी और शिरोही देशके समान इस

मारवाड़ राज्यमे भी वृटिश पक्षकी ओरसे राजनैतिक एजण्टके पदपर नियुक्त हुए, परन्तु कई विशेप कारणोंसे महात्मा टाड साहबने कई महीने तक मारवाड़मे चरण रखनेका अवसर न पाया। टाड् साहब नवम्बरके महीनेमे मारवाड़मे आये। कर्नेल टाड् साहब लिखते हैं कि मि० वेलडर मारवाड़मे जाकर राज्यकी जैसी शोचनीय अवस्था तथा चारों ओरको अशान्ति और सामन्तोकी सम्प्रदायके अन्यायके अतिरिक्त प्रभुत्व देख गये थे उन्होंने भी इसी भाँतिसे जोधपुरमे जाकर वह सभी अप्रीतिकारक कार्य देखे। वह वर्णन कर गये है, "वह उद्धत सामर्थ्यवान् सामन्तोकी सम्प्रदाय राजाके ऊपर उसी प्रकारसे अपने प्रभुत्व और शक्तिको चलाती थी, तथा राज्यके सभी कर्मचारियोको उसी भाँतिसे अपने सेवक भावसे आज्ञा पालनमे नियत कर रक्खा था; महाराज मानसिंहने केवल साक्षी गोपालस्वरूपसे सिंहासन पर स्थित होकर उन सामन्तोके प्रत्येक कार्यमें संतोप प्रकाशित किया था, उन्होने किसी विषयमे भी स्वाधीन भावसे हस्तक्षेप करनेका साहस न किया। महाराजके अधीनमें जो धनके लोभी तथा वेतनभोगी सिन्धु देशकी सेना तथा पठानसेना नियुक्त थी वह इस समय अत्यन्त शोचनीयरूपसे दारुण कष्ट भोगती थी, विशेष करके अगले तीन वर्षोंका वेतन जो उनको नहीं मिला था उसी वेतनके लिये आर्त्तनाद करके भयंकर असंतोप प्रकाश करती थी, -उसकी अवस्था इतनी हृदयभेदी होगई थी, कि उस समय वह जोधपुरकी राजधानीमे प्रत्येक मनुष्यके दरवाजे पर जाकर भिक्षा माँग अतिकष्टसे अपने दिन व्यतीत करती थी; और बहुतसी सेना अनाहार रहकर प्राणोंके भयसे बड़े कष्टसे धान्योका संग्रह कर उनको खाकर जीवन निर्वाह करती थी, वृटिश गवर्नमेन्टके एजेण्ट कर्नल टाड साहबने जोधपुरकी राजधानीमें जाकर महान् उद्योगकर उस कष्टमें पड़ीहुई वेतनभोगी सेनाके पिछली वेतनका हिसाव करके उस सेनासे कह दिया कि तुम्हारे पिछले वेतनमे सैकड़ा पीछे ,३० रुपया मिलैगा और इसके अतिरिक्त कुछ नहीं मिलसकता, सेनाने उसमें अपनी सम्मति दी, परन्तु एजेन्ट तीन सप्ताहके पीछे जोधपुर छोड़कर चले गये, इसलिये उस सेनाकी वह आशा भी निष्फल होगई।" कर्नल टाड् साहबके उक्त वर्णनसे भलीभाँति जाना जाता है कि यद्यपि महाराज मानसिंह फिर सिंहासन पर विराजमान हुए थे परन्तु वह स्वयं किसी सामर्थ्यको न चलाकर उन सामर्थ्यवान् सामन्तोके द्वारा ही सम्पूर्ण कार्य करते थे। इस वातको हम कह सकते हैं कि मानसिंहके इस प्रकारके आचरण करनेका एक गूढ़ कारण था, वह कारण समय पर स्वयं प्रकाशित होजायगा।

इतिहासवेत्ता टाड् साहब पीछे लिख गये हैं, कि "इस समय जिसको विचार कहा है जोधपुरके निवासी उसको एकवार ही भूल गये थे। यदि कोई इस समय

(१) कर्नल टाड् साहबके मारवाड़में जानेका वृत्तान्त महाराज मानसिंहका उनकी अभ्यर्थना करना, इत्यादि प्रथम काण्डके २८ अध्यायमें भलीभाँतिसे वर्णन कियागया है।

किसी मनुष्यको जानसे मारडालता तो उसको विचार करके दंड देना तो दूर रहा वरन कोई उस हत्या करनेवालेके विरुद्धमें कुछ वाततक भी नहीं कह सकता था । उस समय अन्नके न मिलनेसे सेना प्राणत्याग करने लगी—तथा राजपूत धर्मकी विधिको त्यागकर भक्ष्य अभक्ष्यका विचार न कर सव प्रकारके मांस खाकर अपने प्राण धारण करनेलगी, सारांश यह है कि जव सामन्तोंकी सम्प्रदायने अपनी इच्छानुसार कार्य करने आरंभ किये और महाराज मानसिंह सव प्रकारसे उनके हस्तगत होकर विन्दुमात्र भी स्वाधीनभावसे कुछ कार्य न करसके, तभी वह समस्त गर्हित उपायोके अवलम्वनमे नियुक्त हुए थे। एजेण्ट तीन सप्ताह तक जोधपुरमे रहे इस वीचमें उन्होंने कईवार महाराज मानसिहके साथ गुप्तभावसे साक्षात् किया। उस साक्षात्को देखकर महाराज मानसिहने अपनी अवस्था तथा जिस कारणसे उनकी यह अवस्था हुई थी उसके सम्वन्धमें वातचीत होकर दोनोमे अत्यन्त ही मित्रता उत्पन्न हुई। उनकी उस वार्ताके समय मारवाड़ राज्यके प्राचीन ऐतिहासिक विवरण और महाराजके उस समयकी अवस्थाकी आलोचना हुई। एजेण्ट साहवने निम्न लिखित उक्तिसे विदा ग्रहण की,—" आपने जिन समस्त विपत्तियोसे उद्धार पाया था वह मुझे भलीभांतिसे विदित है, आप किस प्रकारसे उन भयंकर विपत्तियोके उद्धार करनेमे समर्थ हुए थे, वह कुछ हमसे छिपा नही था। आपकी सुमतिसे ही आपके वाहरी शत्रुओका नाश हुआ है; आप इस समय वृटिश गवर्नमेण्टके मित्र हुए हैं, आप उसी प्रकार साहसके साथ उस वृटिश गवर्नमेण्टके ऊपर निर्भर रहिये, तथा वहुत थोड़े दिनोमें ही आपके सभी मनोरथ पूर्ण होजांयगे।"

कर्नल टाड् साहव इससे पीछे लिखते है कि " राजा मानसिहने वड़े आग्रहके साथ इन सव वातोंको सुना; पर उन्होंने उस सौन्दर्य सौम्यमूर्तिसे अपने हृदयके भावका कोई भाव भी प्रकाशित नहीं किया, उन्होने उसी मूर्तिसे आनन्द प्रकाश करके कहा, कि " मित्रभावसे आप हमारे राज्यमे जिन संस्कारोंकी इच्छा करते हैं, आप देखैंगे कि वह इसी वर्षके वीचमें ही पूर्ण होजांयगे, । " इसके उत्तरमे एजेण्टने कहा, "यदि आप इच्छा करेंगे तो इसके आधे समयमे ही प्रार्थनीय संस्कार पूर्ण होसकते है।" सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये इतना तो हम अवश्य कह सकते है कि राजपूत वांधव महात्मा टाड् साहवने मि० वेलडरके समान महाराज मानसिहको एकमात्र वृटिश सेनाकी सहायतासे मारवाड़में शांति स्थापन करनेके लिये विशेष अनुरोध किया। राजा मानसिंहके उस अनुरोधको पालन न करनेसे कर्नल टाड् साहव अपने दौत्यकार्यको सफल न होता हुआ देखकर अत्यन्त दुःखित हुए थे। हमारे पाठक इसका अनुमान वड़ी सरलतासे कर सकते है कि यदि १८१९ ईसवीके वदले वर्त्तमान समयमे ऐसा अनुरोध न माना जाय तो और ही प्रकारका फल उपस्थित होसकता है।

इतिहास वेत्ता टाड् साहव लिखते है कि इस समय निम्न लिखित कई विषयो पर महाराज मानसिंहको अधिक ध्यान देनेकी आवश्यकता थी।

१ उचित शासन रीतिका प्रचार।

२ राज्यकी आमदनीपर विशेष दृष्टि।

३ खास भूमिकी व्यवस्थाका संस्कार।

४ सामन्तोंके अधिकारी देशोंपर जो अन्याय करके अपना अधिकार करलिया है यह असन्तोषकी भयंकर अग्नि उसीसे प्रज्वलित हुई है उसके सम्बन्धमें सन्तोषदायक व्यवस्था करना उचित है।

५ महाराज मानसिंहने जो विदेशी वेतनभोगी सेनाको अपने यहाँ भरती करके प्रधानतः उसके द्वारा शासनशक्तिको चलाया है उस सेनाका संस्कार करके उसकी फिर व्यवस्था करनी उचित है।

६ मारवाड़के दक्षिण देशके मेर गण उत्तरके लरखारी गण, मरुक्षेत्रके सराई गण, और पश्चिमकी खोसा जातिने जिन ग्रामोंको लूटकर चारोंओर उपद्रव मचा रखा है उनके उपद्रव निवारण तथा शान्तिरक्षाके लिये विशेष पहेरेवाले रक्खे जाँय।

७ वाणिज्य पर महसूल बहुत लिया जाता है इसीसे वाणिज्यका काम प्रायः बन्द होगया है और जो व्यापारकी वस्तु प्रायः इस अवस्थामें भी लाई जाती है चोर उनको लूट लेते हैं अस्तु इन सब बातोंके भी उचित प्रबंधकी व्यवस्था करना।

महात्मा टाड् साहब उपरोक्त सात विषयोंका उल्लेख करगये हैं, इससे भली भाँति जानाजाता है कि उस समय मारवाड़में अराजकता इतनी प्रबल होगई थी और वहां वही सब लक्षण भलीभांतिसे विद्यमान थे जो कि एक स्वाधीन जातिकी पतन अवस्थासे होते हैं। विलासिता, अनैक्यता, स्वजातिमें वैरभाव आदि कारणोंसे इस समय राजपूतोंका बल विक्रम मानो एकहीबार मोहकी निद्रासे ढक गया था। इस महा दुःसमयमें भी जो राठौर-सामन्त-नेता जीवित थे, वे केवल विध्वंस करनेवाली नीतिके अवलम्बनसे राजशक्तिको घटानेके साथ आत्मस्वार्थको पूर्ण कर जन्मभूमिका सर्वनाश करनेके लिये अग्रसर हुए थे। महात्मा टाड् साहब पीछे लिख गये हैं कि उनके जोधपुरको छोड़ते ही सामर्थ्यवान् सामन्तोंने पहलेकी समान पुनः पैशाचिक मूर्ति धारण कर राज्यमें फिर अशान्ति और उपद्रव प्रारंभ करदिये। या तो धनपानेकी इच्छासे ऐसा किया हो, अथवा प्रतिहिंसाको सफल करनेके लिये, जोहो, पर प्रधान मंत्री और उनके अनुगत सामन्तोंने इस समय राज्यके चारोंओर घोर अत्याचार और इच्छानुसार उत्पीड़नकी अग्नि प्रज्वलित कर दी। जातीय ममता मानो एकबार ही उनके हृदयरूपी आकाशसे न जाने कहाँ चलीगई। जातिमें विद्वेषके वशीभूत होकर वे स्वेच्छाचारी मंत्री और सामन्त तथा अन्यान्य अनुगत सामन्त महा निग्रह भोग करानेके लिये विभीषण साजसे सजने लगे। मानसिंहने कर्नल टाड् साहबके निकट यद्यपि यह प्रतिज्ञा की थी कि एक वर्षमें ही आवश्यक सुधार कर लूंगा, परन्तु एक पक्षके बीतते न बीतते मंत्रीश्रेष्ठके संहार मूर्ति धारण करने तथा अन्यान्य सामन्तोंके यथेच्छ व्यवहार करनेपर भी उनको कुछ कहनेका साहस न हुआ। प्रधान मंत्रीने सबसे पहले गोड़वाड़ देशके प्रधान स्थान घाणेरावको अपने

अधीनमें करलिया, उस अशान्ति पूर्ण अवस्थामें गोड़वाड़की असल जागीर घाणेरावको कुड़क करलिया, और एक सालकी मालगुजारीसे अधिक लेकर उसको पीछेसे मुक्त किया, यह क्या थोड़ा अत्याचार है। घाणेराव ठाकुरने जिस भाँतिसे दंड भोग किया था उसी प्रकारसे उनके अधीनके नीची श्रेणीके सामन्तोने भी सरदारोंको दंड दिया। विशेष करके अत्याचारी दीवानके एक भ्राताने उस समृद्धिशाली गोड़वाड़ देशके सामन्तोंके ऊपर करका भार ऐसा लगाया कि उनके कष्टकी सीमा न रही। गोड़वाड़ राज्यके चाणोद मुकामको भी अपना कर दीवान और प्रधान मंत्री अखैचंदने इस प्रकारसे स्वेच्छाचारका एक विशेष प्रदर्शन दिखाकर सामन्तोपर घोर अत्याचार कर सफल मनोरथ हो साहसमे भर अंतमें मरुक्षेत्रके सवमें प्रधान सामन्त आहवापतिके प्रति भी हस्ताक्षेप किया। परन्तु महावीर चांपाके वंशधरोंने गर्वित होकर यह उत्तर दिया, " कि हमारे अधिकारी देश कुछ आजके नहीं हैं और न आप भय दिखाकर अपना स्वार्थ पूर्ण कर सकते हैं। "

दीवान अथवा प्रधान मंत्री अखैचंदने इस प्रकारसे मारवाड़के प्रत्येक प्रान्तमें घोर अत्याचार तथा हृदयभेदी उपद्रवोंको प्रारंभ करके जिन सामन्तोंको अपने दलमें भरती नहीं किया था, इस समय वही घोर विपत्तिके आनेकी आशंका करने लगे। उन्होंने देखा कि अखैचंद कुछ थोड़ेसे सेवक सामन्तोंको अपने साथ लेकर मानो प्रवल शासनशक्तिकी सहायतासे मारवाड़को विध्वंस करनेके लिये तैयार हुआ है। विशेष करके जब टाड् साहव चलेगये, तव महाराज मानसिंह पहलेकी समान निर्जन स्थानमे रहकर उदासीनता प्रकाश करने लगे, इसीसे सामन्तोंकी आशालता मानों एकवार ही सूखगई। कर्नल टाड् साहवने कहा है कि महाराज मानसिंहके इस समय राज्यके किसी विषयकी ओर भी ध्यान न देनेसे अखैचंद और फतहराजमे परस्पर घोर वैमनस्व होगया। यद्यपि फतहराज मानसिंहके समीप मित्रभावसे रहता था; और वह मानसिंहका प्रियपात्र था, यद्यपि मानसिंहकी प्यारी रानी फतहराज पर विशेष प्रसन्न रहती थी, यद्यपि वहुतसे सामन्त उसकी सहायतामे नियुक्त थे, परन्तु चतुर अखैचंदने समस्त सेनाको अपने हस्तगत करके राज्यके समस्त किले अधिक क्या जोधपुरके किलेतकको भी अपने हस्तगत करलिया, और अपना प्रवल प्रताप प्रकाशित किया फतहराजको किसी प्रकारसे भी अपने शत्रु तथा स्वदेशमें अरातिस्वरूप अखैचन्दके उस अत्याचारको निवारण करने तथा उसके प्रतापको लोप करनेका साहस न हुआ—अखैचन्द अपने वलको प्रवल जानकर फतहराजका तिरस्कार कर पहलेकी समान निर्भयहो घोर अत्याचार करने लगा। तव फतहराजने उसको मारनेके लिये षड्यंत्र जालका विस्तार किया। यह वात जानकर वह राजधानी छोड़कर किलेमें चलाआया।

देखते २ इस प्रकारसे छः महीने वीतगये। सारे मारवाड़में अखैचन्दका दौर्दंड-प्रताप क्रमशः वढ़ गया। अखैचन्दकी आज्ञाके उल्लंघन करनेमे किसीको

भी साहस न हुआ। महाराज मानसिंहको मानो इस समय अखैचन्द काठकी पुतलीकी समान नचाने लगा। टाड् साहव लिखते हैं कि जिस समय अखैचंदने उस शासन शक्तिके अपव्यय, अत्याचार, और उत्पीड़नसे समस्त सामन्त और सारी प्रजाका नाश करके केवल अपने सेवकोंको धनसे परिपूर्ण कर दिया था, उस समय सहसा राज्यमे इस वातका प्रचार हुआ कि अखैचंदका पतन होगया है! महाराज मानसिंह जो इतने दिनोतक उन्मत्तकी समान रहे थे, उनका इस प्रकारसे रहना केवल अखैचंदसे बदला लेनेके लिये ही था। हम पहले ही कह आये ह कि महाराजने जब पहले ही अखैचंद तथा अत्याचार करनेवाले सामन्तोके ऊपर किंचित् भी ध्यान न दिया था, उसका एक गूढ़ कारण था, उस गूढ़ कारणको क्या हमारे पाठक नहीं जानते हैं? परन्तु नीतिज्ञ मानसिंह केवल सुअवसरकी ही बाट देख रहे थे, वह समय आते ही महाराजने अखैचन्दको उसके साथियों सहित अपनी राजधानीमे बुलाया और सबको वंदी करके, कहा गया तुमने जितना धन राज्य और प्रजाका लूटा है वह सब वताओ नहीं तो तुमको प्राणदण्ड होगा, तब उन्होंने राजा प्रजाका माल बतान आरंभ किया। दीवान और उसके साथियोने एक सूची चालीस लाखकी तैयार की, महाराजने वह सब धन हस्तगत करके वड़े कष्ट दे देकर उनको इस संसारसे विदा किया; नगजी किलेदार जो छत्रसिंहको विगाड़नेवाला था, मूलजी धांधलके सहित (जो जागीरदार था) विपका प्याला पिलाकर संसारसे विदा किया गया, और फतहपोल द्वारपर उनके शरीर फैंक दिये गये। धांधलके भाई जीवराजका बिहारीदास खीची और एक दरजीके सहित गिरकाट कर मोरीसे नीचे फेंक दिया गया, वदपाठी व्यास शिवदास भी श्रीकृष्ण ज्योतिषीके साहित उस सूचीमे उसी दंडके भागी हुए, नगजी किलेदार और मूलजी जो पहले राजाके मरनेसे अपने स्थानोको चले गये थे और पूर्व राजासे जो धन उन्होंने ठगा था उससे उन्होंने वहां किले आदि वनाये। जब महाराजा मानसिंह गद्दीपर वैठे और अपराध क्षमाका विज्ञापन निकला तो वे अपने कामोपर आये उनपर महाराजकी कृपा हुई उनको यह ध्यान न रहा कि हम कभी विद्रोही हुए थे, मानसिंहने उनको भी इस समय वंदी करके अपने पूर्वके जवाहरात उनसे मांगे। अपने पुत्रका धन उनसे लेकर उनको किलेके उन्हीं बुर्जोंसे नीचे फैंक दिया गया। जिनकी वह रक्षा करते थे, उस समय दीवानके इलाकेके उसके मित्र भी वंदी किये गये और उनमेंसे जिन्होंने राज्यका रुपया वतादिया था अकसर छोड़ दिये गये। कहा जाता है कि महाराज मानसिंहने अत्याचारियोंसे एक करोड़ रुपया संग्रह किया था पर टाड् साहव कहते हैं कि इससे आधा भी मिला हो तो अच्छा।

टाड् साहव कहते हैं यदि महाराज मानसिंह केवल अत्याचारी अखैचंदको ही प्राण दंड देते और जिन कर्मचारियोंने उनके साथ विश्वासघातकता की थी उनके अपराधो के अनुसार उनको दंड देते और जो सामन्त उद्धत होकर शान्ति स्थापनमें वाधा देते थे केवल उन्हींके अधिकारके देशोको अपने हस्तगत करके सन्तुष्ट रहते तो वड़ी सरलतासे

दूसरे सामन्तोंके हृदय पर अधिकार करके उनकी सहायतासे प्रशंसा पासकते थे। परन्तु उन्होंने पहले ही अखैचंद इत्यादिको दंड देकर अपना मनोरथ पूर्ण कर लिया, इसी कारणसे अन्यान्य संदिग्ध मनुष्योंसे भी बदला लेनेकी आग भड़क उठी। वह धीरे २ बड़ी सावधानीके साथ छलकपटके जालका विस्तार करने लगे। जिन ऊँची श्रेणीके सामन्तोंने कई दिन पहले राजसभामें महा ऊँचा सम्मान पाया था, तथा जिन्हें पुरस्कारमें बहुतसे देश मिले थे उनके प्राणनाश करनेका भी महाराजने अपने मनमें निश्चयकर लिया था। केवल एक अचानक घटनासे ही वह अखैचंदके साथ न मारेगये; कारण कि वे वहांसे भाग गये थे। पोकरणके सामन्त सालिमसिंह निमाजके सामन्त सुरतानसिंह, आहोरके सामन्त ओनाड़सिंह तथा उनकी सम्प्रदायके अन्य नीची श्रेणीके कितने ही सामन्त अखैचंदके साथ मिलकर राज्यके शासनकार्यमें नियुक्त थे। वह प्रतिदिन राजसभामें जाकर राज्यशासनमें अपनी सुसन्मति देकर दीवान अखैचंदकी विशेष सहायता करते थे। महाराज मानसिंहके अखैचंदको बन्दी करते ही वे समस्त सामन्त अत्यन्त ही भयभीत होगये; उनके उस भयको दूर करनेके लिये महाराज मानसिंहने उनके समीप एक दूतके हाथ कहला भेजा कि उनके ऊपर किसी प्रकारका हस्तक्षेप न होगा, एकमात्र अत्याचारी तथा दुश्चरित्र अखैचंदको उचित दंड देकर महाराजकी अभिलाषा पूर्ण होगई है। परन्तु महाराजने जिस छलकपटके जालका विस्तार करके उनका सर्वनाश करनेके लिये अनुष्ठान किया था, सामन्त इससे पहले ही इस बातको भली भाँतिसे जानगये थे। महाराज मानसिंहने पोकरणके सामन्त सालिमसिंहके वंशको एकवार ही लुप्त करनेके लिये यथार्थमें उद्योग किया था। ओनाड़सिंह मानसिंहके अत्यन्त प्यारे मित्र थे। उन ओनाड़सिंहके एक विश्वासी सेवकको महाराज मानसिंहने स्वयं आज्ञा दी कि तुम समस्त सामन्तोंको अपने साथ लेकर राजसभामें आओ परन्तु सामन्त सावधान थे उनके बुलाने पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया। उसी रात्रिमें मानसिंहकी प्रतिहिंसारूप अग्नि भयंकर वेगसे प्रज्ज्वलित होगई—उसी रात्रिमें जोधपुरकी राजधानी भयंकर मूर्ति धारणकर हृदयभेदी विभीषण वियोगान्तका अभिनय दिखाने लगी।

नीमाजके सामन्त सुरतानसिंह राजधानीमें अपनी सेना सहित एक घरमें रहते थे। इन सुरतानसिंहने यद्यपि महाराज मानसिंह पर घोर विपत्ति पड़नेके समय उनके विशेष उपकार किये थे परन्तु महाराज मानसिंह उन सभी उपकारोंको भूलगये और उनसे भी बदला लेनेके लिये उन्होने इच्छा की। उस राजधानीमें आठ हजार वेतनभोगी सेना तोपें और बहुतसे गोलोंको अपने साथमें लेकर सुरतानसिंह नगरके जिस स्थानमें रहते थे उसी स्थान पर आक्रमण किया। वीरश्रेष्ठ सुरतानसिंहने केवल एकसौ अस्सी अनुचरोंके साथ अपनी रक्षा की; और जब तोपोंके मुखसे गोले निकल २ कर पृथ्वीपर गिरने लगे तब यह नंगी तलवारें हाथमें

(१) प्रथम कांड अध्याय २७ पृष्ठ ८८९ में देखो।

ले वाहर निकल समरभूमिमे आ डटे। और महावीर पुरुषके समान उस सत्यवीरने सैकड़ो मनुष्योका प्राणनाश करके अन्तमे युद्धक्षेत्रमें अपने प्राण त्यागदिये। जो कई सेवक जीवित थे वह सुरतानके शिशु पुत्रके जीवन और स्वार्थकी रक्षाके लिये रणक्षेत्रको छोड़कर नीमाजकी ओरको भाग गये। नीमाजके सामन्तोकी समान सालमसिंहकी भी इस प्रकारसे हत्या करनेका महाराज मानसिंहका विशेष अभिप्राय था, परन्तु पहले आक्रमणसे ही सुरताननें विशेष वीरता प्रकाश करके उस युद्धमें वहुतसे नगर निवासियोके प्राण नष्ट करदिये, इससे महाराज सालिमसिंह पर आक्रमण न करसके। सालिमसिंह रातभर विशेष सावधानीके साथ रणशय्या पर रह कर शेषमे सुभीता पाय मारवाड़की ओरको चलेगये। यदि पोकरणके सामन्त पकड़ेजाते अथवा मारेजाते तो इन सामन्तवंशके चार पुरुष, देवीसिंह, सुवलसिंह, सवाईसिंह और सालिमसिंह जो मारवाड़के सिहासनको नष्ट करनेके लिये तथा अपनी सामर्थ्य विस्तार करनेके लिये निरन्तरभावसे जिस निन्दनीय कार्यको करते आये थे, इसमें कुछ भी संदेह नही कि उस अभिनयकी यवनिका गिरजाती।

जिस रात्रिमें जोधपुरकी राजधानीमे वह शोचनीय अभिनय हुआ उस समय फतहराजको बुलाकर उनको राज्यके दीवान अर्थात् प्रधान मंत्री पदपर अभिषिक्त करदिया। फतहराज और मारे हुए प्रधान सेनापति इन्द्राजके पुत्र वह इस समयतक महाराजके अत्यन्त प्रियपात्र होकर रहते थे। महाराजने फतहराजको प्रधान मंत्रीपद पर अभिषिक्त करके कहा, कि "आप इस समय अवश्य ही जानगये है कि मैं आपको इतने दिनोतक क्यो अभिषिक्त नहीं करसका था।" महाराजके इन वचनोका यथार्थ अर्थ हमारे पाठक सरलतासे जानगये होगे, महाराज मानसिंहने अखैचंद और उसके सहायकोको प्राणदंड देकर नीमाजके सामन्तोका जीवन नाश तथा पोकरणके सामन्तोको भगाकर नवीन संग्रहाकिये हुए धनसे 'जो वेतनभोगी सिन्धी सेना अपने वाकी वेतन के लिये अवतक भयंकर चीत्कार शब्दके साथ अत्यन्त असंतोष प्रकाश करके दारुण कष्ट भोग रही थी' उसको तुरन्त ही वेतन देकर संतुष्ट किया, और जो सामन्त पहलेसे ही महाराज मानसिंहके ऊपर अत्यन्त क्रोधित होगये थे, विशेष करके जो अखैचंदके प्राणनाशसे अधिक असंतुष्ट हुए थे, महाराज मानसिंहकी चतुरनीतिके वलसे उनको महाभयके जालमे विजड़ित करलिया गया। शीघ्र ही राज्यमे इस वातका प्रचार होगया कि महाराज मानसिंहने इस समय अपने राज्यमे शांति स्थापन करनेके लिये वृटिश सेनाकी सहायता मांगी है। इस समाचारके प्रचार होनेका फल लगगया, नहीं तो समस्त सामन्त उस अवस्थामे महाराज मानसिंहको सिंहासनसे रहित कर सकते थे परन्तु वह वृटिश सेनाके आनेका समाचार पाते ही अपने प्राणोकी रक्षाके लिये महा भयभीत होगये।

नीमाजके सामन्त सुरतानसिंहके जोधपुरकी राजधानीमे मारेजाते ही उनके चिरकालके विश्वासी सेवक उनके वालक पुत्रके प्राणोकी रक्षाके लिये तथा स्वार्थरक्षाके

लिये नीमाजमें चलेगये थे। महाराज मानसिंहने शीघ्र ही नीमाजपर आक्रमण करनेके लिये सेनाको भेज दिया; नीमाजके निवासी सब प्रकारसे अपनी रक्षामे सावधान हुए अंतमे महाराजके नामकी मुहरका लगा हुआ पत्र सुरतानके बालक पुत्रको सुनाया गया कि महाराजने उनको क्षमा करके नीमाज देशको उनके हाथमें देना स्वीकार करलिया है। "महाराजकी वह प्रतिज्ञा सत्य है या नहीं वास्तवमे वह प्रतिज्ञा पालन कीजायगी या नहीं" सुरतानके पुत्रके मनमें जब यह संदेह हुआ तब जो वेतनभोगी सेना नीमाजपर आक्रमण करनेमें नियुक्त थी उस सेनाके नेताने प्रतिज्ञा की कि इस प्रतिज्ञाको मैं अवश्य ही पालन करूंगा। परन्तु अत्यन्त लज्जा और राजपूतोके लिये अत्यन्त कलंकका विषय है कि सुरतानका पुत्र सब प्रकारसे विश्वास करके किलेसे होकर जैसे ही वह राजाके डेरोंमें पहुँचा कि वैसे ही महाराजकी वह प्रतिज्ञा भंग होगई। बालक सामन्तके राजाके वचनोंपर विश्वास करके डेरोंमें आते ही एक राजपुरुषने महाराजके हस्ताक्षर सहित अनुज्ञापत्र उसके हाथमे अर्पण करके कहा कि महाराजने आपको वंदीकरके राजदरवारमे लानेकी आज्ञा दी है। महाराज मानसिंहके यह आचरण जैसे असंतोषदायक थे, धनके लोभी वेतनभोगी सेनाके प्रधान सेनापतिके आचरण भी उसी भाँति अत्यन्त प्रशंसनीय थे। प्रधान सेनापति नहीं जानता था कि महाराज मानसिंह अत्यन्त कलंकदायक आचरण करके इस बालक सामन्तका सर्वनाश करेंगे, इस कारण उस कर्मचारीने ऊपर लिखी हुई राजाकी आज्ञाको पढ़कर सुनाया और क्रोधित होकर कहा; "ना, यह कभी नहीं होसकता, मेरे कहने पर सब प्रकारसे विश्वास करके इस बालक सामन्तने हमारे हाथमें आत्मसमर्पण किया है; यद्यपि महाराजने अपनी प्रतिज्ञाको भंग करनेकी इच्छा की है, परन्तु मैं अपनी प्रतिज्ञाको अवश्य ही पालन करूंगा और इनको किसी निर्विघ्न स्थानमे रख आऊंगा।" प्रधान सेनापतिने जो कुछ कहा था उसीको किया। उसने महाराजकी उस आज्ञाको उल्लंघन करके अभागे बालक सामन्तको साथ ले उसे अर्वली पर्वतके पार कर आया। वह बालक सामन्त वहांसे मेवाड़राज्यको चलागया।

जो महाराज मानसिंह इतने दिनोतक वैराग्यभावसे उन्मत्तकी समान एक कमरेमें रहकर उद्धत सामन्तोंके अत्याचार स्वेच्छाचार—उत्पीड़न और धनकी लूटको चुपचाप देख रहे थे, जो महाराज मानसिंह अंग्रेज गवर्नमेन्टके द्वारा वारम्वार अनुरुद्ध होकर भी वृटिश सेनाकी सहायता ग्रहण करके राज्यमें शान्ति स्थापन करनेके लिये राजी नहीं हुए थे, वही महाराज मानसिंह इस समय यथार्थ राजपूत वीरमूर्तिसे रंगभूमिमें आ विराजमान हुए। यद्यपि महाराज मानसिंहने अत्यन्त कठोर नीतिका अवलम्बन कर लोहेके शासनदंडको धारण करके एक वियोगान्त अभिनय किया था, एक पक्षमें यद्यपि यह अत्यन्त निन्दनीय कार्य था, तथापि हम सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये इतना तो अवश्य कहेंगे कि उस समय मारवाड़के चारोंओर जैसी अराजकता फैल रही थी सामन्तोंने उसी भावसे अपने स्वार्थकी रक्षाके लिये गर्हित उपायोके अवलम्बन करनेमें भी कसर नहीं की, इसीसे महाराज

मानसिंहकी कठोर नीति न्याययुक्त थी । इस प्रकारकी कठोर नीतिका अवलम्बन किये बिना उस अवस्थामे महाराज मानसिंह कभी भी राज्यमें सरलतासे शांति स्थापन करनेको समर्थ नहीं होते । जब महाराज मानसिंह एकवार ही शासनसामर्थ्यसे हीन होगये थे, तब उस शासनशक्तिको संग्रह करनेसे उदारनीतिका अवलम्बन कर कभी कार्य नहीं करसकते थे ।

"कर्नल टाड् साहब पीछे लिखगये हैं, कि महाराज मानसिंहने अखैचंद इत्यादिको प्राणदंड देकर नीमाज इत्यादिके देशोंपर अधिकार करनेकी समान क्रमानुसार, छलकपट, और अत्याचारोंसे एक २ करके सभी सामन्तोंको हतवीर्य कर दिया । सभी सामन्त इस समय स्वतंत्र भावसे रहते थे, इस कारण उन्होंने महाराज मानसिंहके अधीनकी दश हजार वेतन भोगी सेनाके विरुद्धमें इकले खड़े होकर अपने स्वार्थकी रक्षा करनेमे किसी प्रकारका भी साहस न किया । अन्य पक्षमें उस अवस्थामें एकसाथ मिलकर भी वह खड़े न होसके, कारण कि उन्होंने विचारा कि सब मिलकर भी महाराज मानसिंहके विरुद्ध खड़े न होसकैंगे क्यो । कि ऐसा करनेसे महाराज मानसिंह अंग्रेजी सेनाकी सहायता लेकरके हमको एकवार ही विध्वंस कर डालैंगे । इस प्रकारसे कई महीनोमें मारवाड़के समस्त सामन्त महाराज मानसिंहके निष्ठुर आचरणसे पीड़ित हो अंतमे अपने २ अधिकारी देशों अर्थात् अपनी जन्मभूमिको छोड़कर आसपासके राज्योंमें भाग गये । महाराज मानसिंहने वृटिश गवर्नमेन्टके साथ संधि करली थी इसी उपायसे उन्होंने अपनी अवलम्बित नीतिको सफल कर लिया, नहीं तो वह किसी प्रकारसे भी अपना अभीष्ट सिद्ध नहीं कर सकते । राजा मानसिंहने गवर्नमेन्टके साथ संधिबंधन करके सब कार्य्य सिद्ध करलिये तथा मारवाड़के सभी सामन्तोको इच्छानुसार निकालदिया, मारवाड़के पूर्ववर्ती प्रबल प्रतापशाली असीमसाहसी किसी राजाने भी इस प्रकारके कार्य करनेका साहस नहीं किया था ।"

इतिहासवेत्ता टाड् साहब निम्न लिखित उक्तिसे मारवाड़के इतिहासको समाप्त करगये हैं, "उन साहसी वीर सामन्तोने वहांसे निकलते ही, कोटा, मेवाड़, बीकानेर, और जयपुरमे आकर निवास किए । अधिक क्या कहैं उस चिर विश्वासी ओनाड़सिंह के प्रति भी किसी प्रकारकी कृतज्ञता प्रकाश करके उसकी विश्वासताका पुरस्कार न दियागया, वह ओनाड़सिंह भी वहाँसे निकल कर दूसरे राज्यमे चलेगये । मानसिंह जिस समय भीमसिंहसे परास्त होकर जालौरके किलेमे रहते थे, उस समय यह ओनाड़सिंह ही मानसिंहके प्रधान सहायकरूपसे रहते थे । और इन्हीं ओनाड़सिंह ने अपनी स्त्रीके सम्पूर्ण अलंकार अधिक क्या नाकमेकी नथ भी जो किसी प्रकारसे भी नहीं उतारी जाती और जिसका उतारना महा अशुभ जाना जाता है उस नाककी नथतकको भी लेकर बेचडाला, और उस समस्त धनको मानसिंहके आत्मपालन तथा शत्रुओके ग्राससे अपनी रक्षा करनेके लिये देदिया था । जिस समय मानसिंह पाली नामक वाणिज्यके प्रधान स्थानमे विना घोड़ेके गये थे और उस सुअवसरमे शत्रुओंने

उनको बंदी करनेका उपाय किया था उस समय एकमात्र ओनाड़सिंहने ही मानसिंहका उद्धार किया था। धौकलसिंहके साथ युद्धके समय जिस समय मारवाड़में समस्त सामन्तोंने मानसिंहका पक्ष छोड़कर धौंकलसिंहका पक्ष लिया था उस समय जो चार सामन्त मानसिंहके पक्षमे थे यह ओनाड़सिंह भी उन्हींमेके एक है, जिस समय जयपुरके महाराज जोधपुरको लूटकर वे पदार्थ अपने राज्यमे लिये जाते थे, उस समय इन्ही चारों सामन्तोने महावीरता प्रकाश करके उनके सभी द्रव्योको छीन लिया था। जब छत्रसिंहकी मृत्यु होगई तब मानसिंहके हाथमें राज्यशासनका भार देनेके लिये इन्हींमेंसे एकने प्रधान उद्योग किया था। इस प्रकारसे १८२१ ईसवीमें मारवाड़के अधिकांश प्रधान २ सामन्तोंने निकाले जाकर अत्यन्त कष्टमें पड़कर अंतमें गवर्नमेण्टकी शरणमे प्रार्थना पत्र भेजकर उसे मध्यस्थ होनेका प्रस्ताव उपस्थित किया, परन्तु और एक वर्ष व्यतीत होगया, तथापि गवर्नमेण्टने उनकी उस शोचनीय अवस्था पर कुछ ध्यान न दिया। उन्होंने बड़ा भारी साहस करके बृटिश गवर्नमेण्टके कर्मचारीके द्वारा जो पत्र भेजा था उसे हमारे पाठक भलीभांति पढ़ चुके है। उन्होंने कर्नल टाड् साहबको भी अपनी बात सुनानेमें कुछ आनाकानी न की, वहांसे उत्तर मिला कि यदि यथा समयमें मध्यस्थता स्वीकार न कीजाय तो अन्तमे वह अपनी हानि मानसिंहसे पूर्ण कर लें।"

"१८२३ ईसवीतक मारवाड़की राजनैतिक अवस्था इस प्रकार थी। यदि वह राजा मानसिंहको पैशाचिक हिंसावृत्तिसे मोहित न करते तो महाराज स्थाई शांति स्थापनका बीज वोसकते थे; और अपने मंगल तथा राज्यके मंगलके लिये जो संस्कार अवश्य प्रयोजनीय होगये थे उन संस्कारोंको भी पूर्णरीतिसे कर सकते थे, प्रयोजन होनेपर शासनरीतिका संस्कार तथा सामन्तोको विना विध्वंस किये उनका दमन और उस समय राज्यकी जैसी अवस्था होगई थी उस अवस्थाके लिए उपयोगी समस्त व्यवस्थाको ठीक करनेकी भी उनको सामर्थ्य थी, पर उन्होंने अपने राज्यमें शासन नीतिके समयके उपयोगी नवीन भावके गठनसे यश और गौरवके उपार्जनके बदले एकमात्र गवर्नमेन्टके साथ संधिकरके बाहरी शत्रुओंसे निर्भय हो स्वदेशकी सामन्त श्रेणीका एकसाथ ही नाश किया और उसी कारणसे उन्होने उस राजशक्तिके प्रति सर्वसाधारणकी अनुरक्तिको विना प्रकाशित किये घृणा दिखाई थी।"

साधु टाड् साहबने मारवाड़-इतिहासके उपसंहारमें निम्न लिखित मन्तव्य प्रकाशित किये है, "राजपूत जातिकी एक प्रधान शाखाके अत्यन्त प्राचीन साम्राज्य, कान्यकुब्ज वंशकी, छः शताब्दियोंके पहले, मारवाड़के नवीन उपनिवेश स्थापनसे वर्तमान समयके इतिहासको संक्षेपसे वर्णन करके, बृटिश गवर्नमेण्टके साथ उस राजके संधिबंधनसे इस समय जो अस्थिरनीति विद्यमान है, तथा राज्यकी जैसी शोचनीय अवस्थाका वर्णन हुआ है उसकी बिना आलोचना किये इतिहासका

---

(१) प्रथम कांड, परिशिष्ट पृ० १११२ देखो।

उपसंहार करना असंभव है। राजपूतोंके साथ हमारी जो संधि होगई हैं, उन समस्त संधियोंकी मूलनीति किस प्रकारकी अस्थिर और अपूर्ण थी, मारवाड़की उक्त अवस्था उसको प्रकाशित कर रही है। यदि शीघ्र ही इस रोगकी औषधी न कीजायगी और राजपूतोंकी दशा शीघ्र ही न बदलेगी तो असंभावी महाकष्ट उत्पन्न होगे कि जिनका वर्णन न होसकेगा, और हमारे लिये भी घोर विपत्ति आनेकी आशंका होगी। इन राजपूतोंने जिस साहससे अपनी भूमिके अधिकारको अविनाशी कह कर प्रचार किया था; उसी प्रकार वे स्वत्वरक्षा-प्राचीन चिरप्रचलित पैतृक स्वत्वाधिकार-और सामर्थ्यको भली भाँतिसे रक्षा करनेमें समर्थ थे। उस सत्वाधिकारकी रक्षाके लिये समय २ पर हजार २ राठौरं, एक २ पुरुषकी मृत्यु होनेसे घोर अत्याचार और उपद्रवोसे अपने अधिकारकी रक्षा करते आये थे। वह अत्याचारी और पीड़ा देनेवाले इस समय कहाँ है? गजनी और गिलजई, लोधी-पठान-तैमूर तथा कठिन महाराष्ट्रोके वंशधर इस समय कहां हैं? देशीय राजपूत उस समस्त राठौरोंके विप्लवमे भी अपने स्वार्थकी रक्षा करते आये थे-उन्होंने अत्याचार करनेवालोंका पतन भी देखा था। यदि उन राजपूतोमे स्वजातिकी विद्वेष-रूपी अग्नि प्रज्वलित न होती तो जिन अत्याचारियोंके सहवाससे राजपूतोने आत्म-निग्रहकी शिक्षा ली थी उस आत्मनिग्रहकी अग्निको प्रज्वलित न करते तो राजपूत-गण अवश्य ही अत्याचार करनेवालोके साथ ही साथ अपने नवीन बलसे बलवान हो भारतवर्षमे वीरमूर्तिसे मस्तक उठा सकते थे। राजपूतोंके आत्मविच्छेद तथा अनैक्यतासे ही लूटनेवालोका दल रजवाड़ोमें गया; तस्कर महाराष्ट्रोका दल, पिशाचबुद्धि पठान गण, पंगपालकी समान रजवाड़ेके प्रत्येक प्रान्तमे गये; और राजपूतोंकी निर्बुद्धिताकी सहायतासे उन्होने प्रबल बलशाली होकर शुभ फल संचय करलिया, परन्तु इन राज-पूतोंने अंग्रेजोके साथ मित्रता करली थी, न्याय विचार, क्षमा और सत्यता अंग्रेज जातिकी महाशक्तिकी मूलभित्ति है। परन्तु अंग्रेज जातिने उन राजपूतोंसे किसी प्रकारकी भी आशा नहीं की थी, केवल उन्हीं राजपूतोंकी आत्मरक्षाकी सहायता, तथा शांति स्थापन करनेके लिये जिस विधिका प्रयोजन था, उसी अनुरागकी आशा की थी, उस अंग्रेज जातिकी सहयोगितासे राजपूत जातिका वह अभाव दूर होसकता था। "हमने मारवाड़की जिस शोचनीय अवस्थाको अंकित किया है, रक्षा करनेवाली बृटिश गवर्नमेण्टने कई वर्ष तक उस शोचनीय अवस्थाका परिवर्तन करनेके लिये किसी प्रकारके उपायका अवलम्बन न करके अपनी प्रतिज्ञाको कैसा पालन किया? इसका हमारे पाठक भलीभाँतिसे विचार कर सकते हैं। यदि कम्पनी कहे कि हमने राजपूत राजाओंके साथ जो संधि की है उसमें यह व्यवस्था है कि हम उस राज्यके भीतरी विषयमें हस्तक्षेप न करेंगे, वे भीतरी शासनकार्य अपनी इच्छाके अनुसार करसकते हैं इस कारण हमको इस विषयमे हस्तक्षेप करनेका अधिकार नहीं है, तो हम कह सकते हैं कि यदि राजाकी समान राजपूत सामन्त गणोंपर राजपूत राजा अत्याचार करैं, उनका स्वत्वाधिकार तोडदें, तो ऐसे समयमे गवर्नमेण्ट उनकी सहायता

नहीं करना चाहती तो राजपूतोंकी शासनप्रणालीमें जो हम परामर्श देते है उस परामर्शसे भी रुकजाना हमाराकर्तव्य है तभी राजपूत राजगण यथार्थमे स्वाधीनतापूर्वक भीतरी शासन करनेमें समर्थ होंगे। और किसी वातमें हस्तक्षेप किया जाय और किसी बातमें उदासीनता दिखाई जाय तो इसमें न्यायमें वाधा आती है। इस प्रकार अपनेको न्यायी जाननेके निमित्त हमको निस्वार्थभावसे दोनो पक्षोंपर ध्यान रखना चाहिये राजपूतोंकी राजनैतिक अवस्था वदलनेके लिये और भी विज्ञता मूलक दयामूलक उदार–नीतिका अवलम्बन करना उचित है जिससे राजपूतोकी भीतरी उन्नति और मंगलकी वृद्धि हो, इस विषयकी हमें सदा चिन्ता रखनी चाहिये। ऐसा करनेसे हमारे राज्यमें भी शान्ति और श्रीवृद्धि होगी वहुतसे राठौर सामन्तोंने इस नीतिपक्षका समर्थन किया। इस अवसरके आते ही अभयसिंहके वंशधर राजाओंने मारवाड़के भाग्यमे मानो इस अविश्रान्त निग्रहको वुलादिया है, उसी वंशको सिंहासनसे उतारकर ईडरराजके कुटुम्वसे मृत महाराज जोधाके एक वंशधरको मारवाड़के सिंहासन पर बैठा देना हमारा पहला कार्य है। यदि हम राठौर सामन्तोंकी समाजमे अपनी राजतंत्रकी रीति वा स्वेच्छाचारकी नीतिका प्रयोग करै और उनके अत्याचारोंके निवारणमें हस्तक्षेप न करै, तो हम इन असीम साहसी सामन्तोंको एकवार ही निराश और क्रोधोन्मत्त करसकते है, हमने इन राठौर सामन्तोके कियेहुए जिन भयंकर कार्योंका वर्णन किया है उसका फल क्या हुआ है यह सामन्त किस कार्यको नहीं करसके, इसका विचार करना हमें उचित है, धावामारनेवाले पिंडारों और लूटनेवाले मरहठोंने जो शोचनीय कार्य किये है, निगृहीत राठौर सामन्त उनकी अपेक्षा अवश्य ही लोमहर्षण कार्य करनेको उद्यत होजाते तो कैसा हृदयभेदी काण्ड उपस्थित होता! कैसी अराजकता और कैसे अत्याचार दिखाई देते! ऐसी किम्वदन्ती है कि निगृहीत राठौर सामन्त–मण्डलीने उस असह्य अकथनीय कष्ट अविचार और स्वेच्छाचारको सहनेमें असमर्थ होकर गवर्नमेण्ट कम्पनीसे इस विषयमें सहायता चाही थी, सरकारके मध्यस्थ न होने पर उद्दीप्त हृदयहो उन्होंने अपनी आशाको उत्कटरूपसे सफल करलिया तथा राजा मानसिंहके हृदयमे छुरी घुसेड़दी। यदि यह कहावत सत्य है तो ऐसी प्रतिहिंसा उचित दंडरूपसे मानी जायगी, यह आशा की गई थी कि इस प्रकारके उद्योगके विना निगृहीत सामन्त कभी अपने कार्यको पूरा नही करसकते वह सत्य निकली; यह भी जाना गया है कि जोधपुरके सिंहासन पर इस समय भीमसिंहके पुत्र विराजमान है। यह वात भी विचारके योग्य है। पहले जिस सम्प्रदायने धौंकलसिंहका पक्ष लिया था, इस

---

(१) टाड् साहवने अपने देश जानेके समय जो यह कहावत लिखी है यह सब अंशोंमें सत्य नहीं जान पड़ती हमने जिस पिछले इतिहासको संग्रह किया है पाठक उसे पढ़कर उस आशय को समझ लेंगे।

समय वही उनके साथी होंगे, पोकरणके सामन्तने भी उनका मंत्री होना स्वीकार किया है, पर न्यायके अनुसार प्रधान मंत्रीपदपर चांपावत सम्प्रदायके नेता आहुवाके सामन्तके बैठनेका अधिकार है और इस वंशकी चिर-प्रचलित रीति भी ऐसी ही है, ऐसा न होनेसे ही विवाद विसम्वाद रक्तपात षड्यंत्र चारोओर दिखाई देरहा है, यदि कोई ईडरका राजकुमार मारवाड़के सिंहासन पर आरूढ़ होता तो यह सब बखेड़े दूर होजाते, यदि समस्त राठौरोंकी एक जातीय सभा होकर इस प्रश्नकी मीमांसा कीजाय तो निश्चय है कि दश संख्यासे नौजनोंकी सम्मति ईडरके किसी राजकुमारको मारवाड़के सिंहासन पर बैठानेकी होगी, ऐसा करलेनेसे बृटिश सरकार भी निर्भय ही भीतरी विषयोंमे हस्तक्षेपकी सब विपत्तियोसे छुटकारा पालेगी सहस्रों राठौरोंको शान्ति प्राप्त होगी और हमारी चिन्ता भी मिटजायगी।

सोलहवाँ अध्याय १६.

मारवाड़के आधुनिक इतिहासकी सूचना; मानसिंहके साथ बृटिश गवर्नमेण्टके सबसे पहले संधिपत्रका उल्लेख, संधिपत्र, उस संधिपत्रमें मानसिंहकी असम्मति; मानसिंहका गवर्नमेण्टके विरुद्ध आचरण; निकली हुई राठौर मंडलीका गवर्नमेण्टसे विचारके निमित्त सहायता मागना; गवर्नमेण्टका इसमें असम्मति प्रकाश करना; एजेण्टकी मध्यस्थतामें सामन्तोंके साथ महाराजका सम्मिलन; संधिपत्र, महाराजका सामन्तोंपर क्षमा प्रकाश करना; मेरवाड़ेके सम्बन्धमें गवर्नमेण्टके साथ महाराजका संधिपत्र, राठौर सामन्तोंका पुनरुत्थान; धौंकलसिंहका मारवाड़के सिंहासनकी फिर इच्छा करना; जयपुरके महाराजका मारवाड़पर आक्रमणके लिये उद्योग; मानसिंहका बृटिश गवर्नमेण्टकी सहायता मागना; सहायतामें असम्मति; गवर्नमेण्टका मानसिंहकी भर्त्सना करना, गवर्नमेण्टका मत परिवर्तन, धौंकलसिंहका पलायन, गवर्नमेण्टका जयपुरके महाराजकी भर्त्सना करना; मानसिंहका उद्धार पाना; संधिपत्रके मतसे मानसिंहका सहायताके लिये गवर्नमेण्टको पंद्रह सौ सेनाका देना; उस सेनाकी चतुरताके सम्बन्धमें सरकारका दोषारोपण; उसकी एवजमें मानसिंहका एक लाख पन्द्रह हजार रुपया वार्षिक देना स्वीकृति करना; संधिबंधन; मेरवाड़ेके सम्बन्धमें दूसरी बार व्यवस्था; बुढ़ापेमें मानसिंहका धर्मराजकोंके ऊपर भक्ति प्रकाश करना; उनके उपदेशसे राज्यमें असंतोषकारी रीतिका अवलम्बन; राठौर सामन्तोंका शेष उत्पात; मारवाड़में राजनैतिक उपद्रव; बृटिश सेनाका मारवाड़में प्रवेश; गवर्नमेण्टके साथ महाराजका संधिबंधन; संधिपत्र; राज्य संस्कार; मेरवाड़ेके सम्बन्धमें शेष व्यवस्था, महाराजमानसिंहकी मृत्यु।

राजपूत बंधुमहात्मा टाड् साहबने रजवाड़ोंके जिस समयतकके इतिहासको वर्णन किया है हमको उस विस्तारित वर्णनके सिवाय उस समयसे इस समयतकका

(१) सन् १८२३ ई० में कर्नल टाड् साहब जिस समय भारतको छोड़कर चिरकालके लिये अपने देशको चले गये थे उस समय आहवाके सामन्त निकाले जाकर मेवाड़में रहते थे।

इतिहास भी पाठकोंके सम्मुख रखना उचित है, और पहले भी हमारी इच्छा शेष इतिहासके संग्रह करनेकी थी। हमने उस प्रतिज्ञा-पालनकी अपनी सामर्थ्यभर चेष्टा की, हम नहीं कह सकते कि हमारे पाठक उसको पढ़कर प्रसन्न हुए थे या नहीं, महात्मा टाड् साहबने रजवाड़ेके पोलिटिकल एजेण्ट स्वरूपसे राजपूतोंमे दीर्घकालतक निवास कर राजस्थानके प्रत्येक राजा प्रत्येक प्रधान प्रधान कवियो प्रत्येक नीतिज्ञ, प्रत्येक प्रधान २ भाट और चारणोंकी सहायतासे, स्वयं रजवाड़ेके प्रत्येक प्रान्तोंमें घूमकर राजपूत कवियोंकी लिखी हुई ग्रंथावलीको संग्रह करके उन्होने इस विस्तृत इतिहासको संपादन किया, परन्तु हमारे लिये इतना सुबीता कहाँ है, इस कारण हमने यथाशक्ति परिश्रम और चेष्टा करके जहाँतक इतिहासका संग्रह किया है वह अपनी प्रतिज्ञा की रक्षाके लिये पूर्वमें भी पाठकोंके आगे रक्खा है और इस समय भी रखते हैं, पर हमारा यह कार्य ऐसा है कि जिस प्रकार सबसे श्रेष्ठ सुवर्णमंडित पर्वतराज हिमालयकी उँचाईकी बराबरी करनेके लिये सामान्य दूर्वा उपस्थित हो। इस बातको हम स्वीकार करते है कि महात्मा टाड् साहबकी शिक्षा ज्ञान, दूरदर्शिता और राजपूतोंके चरित्रोंकी अभिज्ञताके साथ साथ उनकी सामर्थ्य बहुत बढ़ी हुई थी, इस कारण हमारे पाठक इस अनुवादकके लिखे हुए परिशिष्टको पढ़कर किसी प्रकार भी टाड् साहबके लिखे हुए इतिहासकी समान सन्तोष लाभ नहीं करसकेंगे यह तो हमको विदित ही है, हम अपनी प्रतिज्ञा पूर्तिके लिये दृढ़ विश्वाससे इस संक्षिप्त और अपूर्ण इतिहासको वर्णन करनेमें अग्रसर होते हैं।

इतिहास वेत्ता महात्मा टाड् साहब जबतक इन भारतीय रजवाड़ोमें रहे; उसी समय तकके इतिहासको उन्होंने वर्णन किया है पीछे अपने देशमें जाकर वह इस विस्तारित्त इतिहासको छपाकर इसके प्रचार करनेके निमित्त जीवनके शेषभागको विश्राम देकर केवल राजपूत जातिके मंगलकी चिन्तामें लगेरहे। उनको पिछले इतिहासके संग्रह करनेमें इतना यत्न नहीं था; अथवा उनके इतिहासके प्रकाशित होनेसे परवर्ती घटनावलीको उसके साथ संग्रह करनेका अवसर नहीं मिला। मानसिंह जिस समय मारवाड़के सिंहासनपर विराजमान थे उस समय उदारहृदय टाड् साहब रजवाड़ेको छोड़कर इंगलेण्डको चलेगये, इस कारण मानसिंहके शेष इतिहासको उन्होंने प्रकाशित नहीं किया।

महाराज मानसिंहके शासनके इतिहासको सम्पूर्ण करनेके पहले हमारी यहां एक और विषयके उल्लेख करनेकी अभिलाषा है। महात्मा टाड् साहबने उन विषयोंका उल्लेख या तो भूलसे न किया होगा, या उसका प्रयोजन न समझा होगा परन्तु इतिहासके सम्मानकी रक्षाके लिये हम उन विषयोंका उल्लेख करना अत्यन्त कर्त्तव्य जानते ह। सन् १८१८ ईसवीमें महाराज मानसिंहके साथ महामान्य अंग्रेज ईस्टइण्डिया कम्पनीका जो संधिबंधन हुआ था महात्मा टाड् साहबने केवल उसीका उल्लेख किया है, परन्तु इसके पहले १८०३ ईसवीमें मारवाड़के महाराज मानसिंहके साथ कंपनीका जो संधिबंधन हुआ था उस विषयका उन्होंने कोई उल्लेख

नहीं किया। महाराज मानसिंह ग्यारह वर्षतक जालौरके किलेमें रहकर, अंतमे महाराज भीमसिंहके परलोक चलेजाने पर जिस समय मारवाड़के सिंहासन पर अभिषिक्त हुए, उस समय अर्थात् १८०३ ईसूवीमे ईस्टइण्डिया कम्पनीने भारतके कठिन महाराष्ट्र तस्करदलके दो प्रधान नेता सेंधिया और हुलकरकी शासनशक्तिको एकवार ही लोप करनेके लिये महा समराग्नि प्रज्वलित की। प्रवल पराक्रमशाली अंग्रेजी सेना उस युद्धमें सेंधियाको एकवार ही परास्त करके भागे हुए हुलकरके पीछे शीघ्रतासे गई। रजवाड़ेके राजाओंने उस समय तस्करोंके दोनो नेताओंको अपने यहां आश्रय न दिया। ईस्टइंडिया कम्पनीने इस प्रकारके उपायकी खोजमे प्रवृत्त हो मारवाड़के नवीन महाराजके साथ संधि करनेका निश्चय करलिया। कम्पनीने विचारा कि यदि इस समय मारवाड़पतिके साथ संधि कर ली जायगी तो वृटिश शासनशक्तिके विरुद्धमें खड़े होनेसे सेंधिया और हुलकरकी शासनशक्ति वड़ी सरलतासे लुप्त होजायगी और रजवाड़ेके राजाओंके साथ भी चिरस्थाई सम्वन्ध होजायगा।

महा माननीय ईस्टइण्डिया कम्पनीके नेता जनरल लेक जो सेंधियाको परास्त करके हुलकरको पकड़नेके लिये सेना सहित गये थे उन्होने भारतवर्षके उस समयके गवर्नर जनरल लार्ड वेलसलीकी सम्मतिसे महाराज मानसिंहके निकट संधिका प्रस्ताव भेजा। महाराज मानसिंहने उस समय ऐसी कोई आपत्ति न करके संधिपत्र पर हस्ताक्षर करने की सम्मति दी। इस प्रकारसे अकवरावाद सूवेक अधीन सरहिन्द नामक स्थानमे संवत् १८६० की ६ तारीखको पूसके महीनेमें यह संधिपत्र तैयार किया गया।

संधिपत्र।

महा माननीय ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ महाराजाधिराज राजराजेश्वर मानसिंह वहादुरकी मित्रता तथा संधिके सम्वन्धका पत्र माननीय अंग्रेज ईस्टइण्डिया कम्पनीके पक्षमे महामहिम वर रिचार्ड मार्किस वेलेसली, सेण्टपाटिक नामक महोच्च कौलीन्य उपाधिके नाइट, ग्रेटवृटिनके महामान्य अधीश्वरके माननीय प्रिविकाउन्सर भारतवर्षके अंग्रेजोंके अधिकारी समस्त देशोंकी सेनादलके कप्तान जनरल और प्रधान सेनापति और सूवा वंगालेके अंतःपाती फोर्ट विलिइम किलेके सकाउन्सल गवर्नर जनरलके द्वारा सामर्थ्य प्राप्त होकर भारतवर्षके वृटिश सेनादलके प्रधान सेनापति महा मान्यवर जनरल-जिवर्ड लेक द्वारा और स्वयं महाराजाधिराज राजराजेश्वर मानसिंह वहादुर द्वारा निर्धारित सन्धिपत्र।

प्रथम धारा-माननीय अंग्रेज ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ महाराजाधिराज मानसिंह वहादुर और उनके उत्तराधिकारी और स्थलाभिषिक्त गणोंमे दृढ़ और चिरस्थायी मित्रता तथा सन्धि सम्वन्ध स्थापित हुआ।

दूसरी धारा-जिस कारणसे दोनों राज्योंमें मित्रता स्थापित हुई है तव दोनों पक्षके शत्रु और मित्र दोनों पक्षके शत्रु और मित्ररूपसे माने जाँयगे। इस नियत की हुई व्यवस्थाका मान्य चिरकालतक दोनो राज्य करेंगे।

तीसरी धारा—माननीय कम्पनी महाराजाधिराजके अधिकारी देशोंके शासनके सम्बन्धमें किसी प्रकारका हस्तक्षेप न करेगी, और उनसे कर भी नहीं माँगेगी।

चौथी धारा—कम्पनीने हिन्दुस्थानके जितने देशोंको अपने अधिकारमें कर लिया है, यदि माननीय कम्पनीका कोई शत्रु उन देशोंपर फिर अधिकार करनेके लिये तैयार हो तो महाराजाधिराजको कम्पनीकी सहायताके लिये अपने अधीनकी समस्त सेना भेजनी होगी, और शत्रुको भगानेके लिये यथाशक्ति चेष्टा करनी होगी, मित्रता और कृतज्ञता प्रकाश करनेमें कोई सुअवसर न छोड़ा जायगा।

पाँचवीं धारा—जिस कारण वर्तमान संधिपत्रकी दूसरी धाराके मतसे दोनों राज्योंमें मित्रता स्थापित हुई है, जिससे कोई विदेशीय शत्रु महाराजाधिराजके शासित देशपर आक्रमण न करसके कम्पनी इसी कारण महाराजके समीप दायी रहैगी; इसमें महाराजाधिराजने अपनी सम्मति प्रकाशित की है कि यदि किसी समय किसी कारणसे किसी भिन्नराज्यके अधीश्वरके साथ किसी विषयपर उनका मत भेद वा विवाद उपस्थित होजाय तो पहले महाराजाधिराज उस विवादके कारणको कम्पनी गवर्नमेण्टके निकट उपस्थित करै, गवर्नमेण्ट उस विवादकी सरलता से मित्रभावसे मीमांसा करनेकी चेष्टा करेगी, परन्तु यदि शत्रुपक्षके दोषसे उस भावसे मीमांसा करनेका सुभीता न मिलै तो महाराजाधिराज उस मीमांसाके लिये कम्पनी गवर्नमेण्टके निकट सहायता की प्रार्थना करैं। उपरोक्त घटनाके होनेसे वह प्रार्थना ग्रहण की जायगी और उस सहायता देनेमे जितना खर्च होगा, हिन्दुस्थानके अन्यान्य राजाओंके साथ जो हारे उसीको व्यय देनेकी व्यवस्था हुई ह, वही यहाँ रहैगी। महाराजाधिराजने उस हारेहुएको व्यय देनमे अपनी सम्मति प्रकाश की है।

छठीं धारा—महाराजाधिराजने इसमें जो सम्मति प्रकाश की है यद्यपि वास्तवमें वह अपनी सेनाके प्रभु है, परन्तु जिस समय युद्ध होगा, अथवा युद्धकी पूर्व सूचना होगी उस समय अंग्रेज सेनाके साथ उनकी सेना नियुक्त रहैगी, उस अंग्रेजी सेनादलके प्रधान सेनापतिकी आज्ञा और उसकी सम्मतिके अनुसार कार्य किया जायगा।

सातवीं धारा—कम्पनी गवर्नमेण्टकी आज्ञाके अतिरिक्त किसी अंग्रेज वा फरासीसी प्रजाको अथवा यूरूपखंडके किसी जातीय निवासीको महाराज अपने अधीनमे कर्मचारी स्वरूपस नियुक्त नहीं करसकें गे, अथवा अपने राज्यमें किसी कारणसे भी उनका प्रवेश नही होने देगे।

उपरोक्त सात धाराओंसे युक्त यह संधिपत्र, महामान्यवर जनरल जिवार्ड लेकका अकवरावादसूबेके अधीन सरहिन्द नामक स्थानमें १८०३ ईसवीके दिसम्वर मासकी बाईसवी तारीख हिजिरी सन १२१८ सालके १ रमजानमे संवत् १८६० के पूस मासकी नौमी तारीखको हस्ताक्षर सहित और महाराजाधिराज मानसिह बहादुरकी

१८०३ ईसवीकी २२ दिसम्बरको मोहर लगा हुआ, हस्ताक्षरकी रीतिके अनुसार नियत होकर स्वीकार कियागया।

जिस समय उक्त सात धाराओंसे युक्त संधिपत्र महामहिमवर सकान्सेल गवर्नर जनरलके हस्ताक्षर सहित मोहर लगा हुआ महाराजाधिराजके हाथमें दिया गया उस समय माननीय जनरल जिराई लेकने इस संधिपत्रको उन्हींको लौटा दिया।

कम्पनीकी मोहर।

(हस्ताक्षर) वेलसली सकाडेन्सेल गवर्नर जनरलका

१८०४ ईसवीमे १५ जनवरीको यह संधिपत्र तैयार होगया।

(हस्ताक्षर) जी. एन. वार्लो।

(ऐ) जि. डवनि*।

यद्यपि महाराज पहले संधिपत्रपर अपनी सम्मति देकर उस पर हस्ताक्षर करते थे, परन्तु भारतवर्षके अंग्रेज गवर्नर जनरलने संधिपत्रपर हस्ताक्षर करके उनके पास भेजदिया। उन्होंने सन्धिपत्रकी कई धाराओ पर विशेष आपत्ति प्रकाश की। वरन् उस सन्धिपत्रको खारिज करके और एक नवीन सन्धिपत्रको तैयार करनेकी इच्छा प्रकाश की। ईस्टइण्डिया कंपनी महाराजके प्रस्तावके अनुसार वृटिश गवर्नमेण्टके प्रार्थनीय और एक कार्यके करनेमें लगी। मारवाड़के महाराज जिससे हुलकरको किसी प्रकार भी सहायता न दे इस लिये गवर्नमेण्ट मानसिंहके साथ वह सन्धि करनेको तैयार हुई थी—परन्तु महाराज मानसिंहने १८०४ ईसवीमे अंग्रेजोके द्वारा निकाले हुए हुलकरको अपने राज्यमे आश्रय दिया उसकी सहायता करनेसे गवर्नमेण्ट महा क्रोधित हुई और महाराज वृटिश गवर्नमेण्टके विरुद्धमे खड़े हुये, १८०४ ईसवीके जिस महीनेमे यह सन्धिपत्र खारिज किया था, ईस्टइण्डिया कंपनीको उस समय मारवाड़के महाराजके साथ किसी प्रकारका संवन्ध करनेकी इच्छा नहीं थी। इतना तो हम अवश्य ही कह सकते हैं कि जव महाराज मानसिंहने केवल जातीय स्वाधीनताकी रक्षाके लिये—अपने प्रताप और प्रभुत्वको प्रवल रखनेके निमित्त ही पहले सान्धिपत्र पर हस्ताक्षर नही किये थे परन्तु १८१८ ईसवीके जनवरी महीनेमे दिल्लीमे जव दूसरा सान्धिपत्र तैयार होगया यदि उसके साथ इसका मिलान किया जाय, तो यह पहला सन्धिपत्र महाराजके लिये अनेक वातोमे हितकारी था। यद्यपि इस पहिले संधिपत्रमे मानसिह ईस्टइण्डिया कम्पनीके निकट वश्यता स्वीकार करनेको राजी होजाते, परन्तु दूसरे सन्धिपत्रके मतसे उनको जो कर देनेकी व्यवस्था हुई इस संधिपत्रमे उसका कोई उल्लेख नहीं था। यदि मानसिह इस संधिपत्र पर हस्ताक्षर करके ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ मित्रता करलेते, तो अमीरखाँके द्वारा मारवाड़राज्य क्षार खार न होता, सवाईसिहके षड्यंत्रसे धौकलसिंह और जयपुरके महाराज भी मारवाड़को विध्वंस नहीं कर

* Aitchison's Treaties Vol. IV. Page 45. सि. इ.
अचिसनकी वनाई भारतवर्षकी संधिपत्रावली पुस्तकके ४५ पृष्ठमें देखो।

सकते थे, और न सेंधिया ही मारवाड़को जीतकर चौथके ग्रहण करनेमें समर्थ होसकता था। विधाताको यही करना था कि मारवाड़के महाराजको अंग्रेजोंके करद रूपसे रहना होगा, इसी लिये मानसिंहने पहिले संधिपत्रको अपनी निर्बुद्धिके वशसे स्वीकार नहीं किया था।

इतिहासवेत्ता टाड् साहव १८२३ ईसवीतक मारवाड़राज्यके इतिहासके चित्रको अंकित करगये है। १८२४ इस्वीसे हमने इस इतिहासको प्रारंभ किया। महात्मा टाड् साहवने मारवाड़के चारोंओर प्रबल अशान्ति, अत्याचार, अविचार और स्वेच्छाचारकी अग्निकी प्रवल शाखाको प्रज्वलित कर सामन्तोंको निकाल प्रजाको अत्यन्त दीन हीन अवस्थामें डाल महाराज मानसिहको उग्र मूर्तिसे दूसरी वार राज्य करते हुए देखा। पिछले वर्षमे मारवाड़की आभ्यन्तरिक अवस्था भी उसी प्रकार थी। परन्तु महाराज मानसिहको इस समयसे क्रीत दासत्वंता स्वीकार करनेके पीछेसे राज्यमे शान्ति स्थापन करनेकी विशेष अभिलाषा होगई। वह इस लोक और परलोकके उद्धारकर्त्ता गुरु देवनाथकी मृत्युके पीछे दीर्घकालतक उन्माद अवस्थासे एकान्तमें रहे थे, तथा जिस समय इनके इकलौते पुत्र छत्रसिह मारवाड़के सिंहासन पर पिताके प्रतिनिधि स्वरूपसे विराजमान होकर राज्यशासन करते थे; उस दीर्घ समयमें जिन सामन्त नेता राजपुरुषोंने सुअवसर पाकर भी राज्यका सर्वनाश कर खजानेको लूटकर सामन्तोंके ऊपर घोर अत्याचार किये थे, महाराज मानसिंहने दूसरी वार शासनभारको ग्रहण करके उन सभी अत्याचार करनेवालोंके ऊपर किस प्रकारका आचरण किया, महात्मा टाड् साहव उसे स्वयं ही वर्णन करगये है। मेवाड़, कोटा, बीकानेर और जयपुर इत्यादि राज्योमें भागकर उन सामन्तोने इससे पहले महाराज मानसिंहके विरुद्धमे वृटिश गवर्नरके दूत कर्नल टाड्के पास एक अनुयोग पत्र भेजो वृटिश गवर्नमेण्ट जिससे मध्यस्थ होकर उनकी प्रार्थनाको पूर्ण कर उनके पैतृक अधिकारको फिर उन्हींको देदें, जिससे महाराज मानसिंह उनके ऊपर फिर किसी प्रकारके अत्याचार न करसकें, इस लिये प्रार्थना की परन्तु गवर्नमेंण्टने उस समयकी प्रचलित रीतिके अनुसार मारवाड़के आभ्यन्तरिक किसी विषय पर भी हस्तक्षेप नहीं किया, संधिपत्र जैसी प्रतिज्ञासे बंधा हुआ था, उसके अनुसार महा विपत्तिमे पड़े हुए उन सामन्तोंकी उस प्रार्थना पर कुछ भी ध्यान न दिया। परन्तु १८२४ ईसवीमें उन सामन्तोंने फिर गवर्नमेंण्टसे सहायता मॉगी, अबकी बार गवर्नमेण्ट मौन न रहसकी।

मि० एफ विलडर इस समय साधू कर्नल टाड् साहवके पदपर राजपूतानेके पोलिटिकल एजेंटरूपसे नियुक्त थे। जब स्वतः निकाले हुए सामन्तोंने इस भॉतिसे वारम्वार प्रार्थना की तव वह भारतवर्षके गवर्नर जनरलकी सम्मतिके मतसे महाराज

(१) गवर्नमेण्टसे मुराद ईस्टइण्डिया कम्पनीसे है।

मानसिंहके साथ उन सामन्तोंके उपद्रवोंका विचार करने लगे। मि० वेलडरने वृटिश गवर्नमेण्टके पक्षसे महाराज मानसिंहके निकट यह प्रस्ताव किया "कि इन सामन्तोके ऊपर दया करके तथा इनके अपराधोको क्षमा कर इनके जो देश छीन लिये है इस समय वह इनको दे दिये जाँय।" इन सामन्तोंके ऊपर मानसिंहका अत्यन्त क्रोध था, विशेष करके इन सामन्तोने पहलेसे ही उनकी शक्तिको लोप करनेकी चेष्टा की थी, इसीसे महाराजने निश्चय करलिया था कि इनके ऊपर किसी समय भी दया नहीं की जायगी यदि ऐसा होगया तो यह फिर भी मारवाड़मे आकर हमारी शासनशक्तिके विरुद्ध पहलेकी समान षड्यंत्रजालका विस्तार कर हमारा सर्वनाशके लिये चेष्टा करेंगे। इसी कारणसे उनके अधिकारी देशोको अपने अधिकारमें कर उनको चिरकालके लिये निकाल देनेका विचार किया था। परन्तु मि० वेलडरने वृटिश गवर्नमेंण्टके प्रतिनिधिस्वरूपसे वारंवार महाराज मानसिंहको दया प्रकाश करनेका अनुरोध किया, महाराज मानसिंहने शीघ्र ही कहा, कि यदि स्वतः निकाले हुए सामन्त अपने पहले अपराधोको स्वीकार करके प्रतिज्ञा मे बंधे हैं अथवा वह अब कभी हमारी शासनशक्तिके विरुद्ध षड्यंत्रका विस्तार कर पहलेकी समान कोई अपराध नहीं करेंगे, और वृटिश गवर्नमेण्ट यदि उन सामन्तोके सच्चरित्रताके विषयमें साक्षीस्वरूपसे रहेगी तो मै उनको क्षमाकर उनके देशोंको दे सकता हुं, और सबके अंतमें महाराजने यह भी कह दिया कि यदि यह सामन्त फिर किसी प्रकारका असंतोषदायक व्यवहार करेंगे तो उनको अपनी इच्छानुसार दंड दूंगा। वृटिश गवर्नमेण्ट उसपर किसी प्रकारका हस्ताक्षेप न करसकेगी, गवर्नमेण्टको इस प्रकारका एक स्वीकार पत्र लिखना होगा। मि० वेलडरने महाराज मानसिंहका यह उत्तर पाकर भारतवर्षके गवर्नर जनरल बहादुरके निकट इसको प्रकाशित करादिया। अन्य पक्षमे जिन सामन्तोंने वृटिश गवर्नमेंण्टसे सहायता मांगी थी उनको भी सुनादिया। गवर्नर जनरल बहादुरने महाराज मानसिंहके प्रत्येक प्रस्तावमें ही अपनी संमति प्रकाश की। ओर एक और सामन्तोमे आहवा आसोप नीमाज तथा रियां इत्यादि समस्त सामन्त ही मि० वेलडरके प्रस्तावके मतसे समस्त कार्य करनेके लिये संमत होगये। केवल वूडस् और चंडावलके ठाकुर अर्थात् यह दोनों सामन्त उस महा निग्रहको भोग करके भी मि० वेलडरके प्रस्तावके मतसे महाराज मानसिंहकी वश्यता स्वीकार कर प्रतिज्ञा पत्रपर हस्ताक्षर करनेके लिये सम्मत न हुए, मि० वेलडरने उनके कल्याण साधनके लिये महाराज मानसिंहको अनुरोध किया। उक्त सामन्तोने वृटिश गवर्नमैण्टके एक मतसे महाराज मानसिंहके प्रस्तावमे सम्मत हो अंतमें नीचे लिखा हुआ संधिपत्र तैयार किया। महाराज मानसिंहके प्रधान मंत्री फतहराजने निम्न लिखित संधिपत्र पर महाराजकी ओरसे हस्ताक्षर करदिये,-

स्वतः निकले हुए ठाकुरोके प्रति दया प्रकाशके सम्बन्धमें महाराज मानसिंहका संधिपत्र।

वूडस् और चंडावलके दोनों ठाकुरोकी राजअनुग्रह और क्षमा प्राप्तिके लिये

बृटिश गवर्नमेण्टके द्वारा अनुरोध करानेकी इच्छा नहीं थी; और आहवा, आसोप, नीमाज और रासके सामन्त यद्यपि किसी प्रकारसे क्षमाके योग्य नही थे परन्तु बृटिश गवर्नमेण्टके संतोष साधनके लिये महाराज बख्तसिहके शासन समयमें वह जिन २ भागोंके अधिकारी थे, आजकी तारीखसे छः महीनेमे उनके वह देश लौटा दिये जॉयगे; परन्तु महाराजके संतोषके लिये गवर्नर जनरल बहादुरको निम्नलिखित उद्देशमूलक एक खलीता लिखदेना होगा—यदि यह ठाकुर अपनी प्रतिज्ञा पालनमे असमर्थ हुए अथवा इन्होंने कोई अपराध किया, तो महाराज अपनी इच्छानुसार कार्य कर सकेंगे।

वर्तमान समयमें केवल एकमात्र बृटिश गवर्नमेण्टके अनुरोध और अनुग्रहसे क्षमा दिखाई गई, यदि इसके पीछे यह ठाकुर वशमें रहैगे, अथवा महाराजकी आज्ञानुसार स्वदेशके कार्यमे नियुक्त होनेकी इच्छा करैगे, तो उनको और भी पुरस्कार दिया जायगा और जो नीची श्रेणीके ठाकुर स्वतः निकाले गये है वह जिस समय महाराजसे संतोषदायक व्यवहार करैंगे उसी समय उनको फिर पूर्व अधिकार देदिया जायगा, परन्तु गवर्नमेंण्ट उनकी ओरसे किसी प्रकारका अनुरोध नहीं करसकैगी।

(हस्ताक्षर) फतहराज दीवान।

मारवाड़के प्रधान राजमंत्री फतहराजने महाराज मानसिहकी ओरसे उक्त सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर करादिये, और महाराजके पूर्व प्रस्तावके मतसे पोलिटिकल एजेण्ट मि० वेलडरने निम्नलिखित प्रतिज्ञापत्र लिखदिया।

महाराज मानसिहने बृटिश गवर्नमेंण्टके अभिप्रायके अनुसार जिन ठाकुरोंको पहले अपराधके लिये निकाल दिया था उनको उनके पैतृक अधिकार देनेमे राजी हुए। मैं इस कार्यको साधन करनेके लिये गवर्नमेण्टकी ओरसे भेजा हुआ आया हूं, यदि इससे पीछे इनमेंसे कोई मनुष्य भी किसी प्रकारका अपराध करैगा या महाराजकी इच्छाके विरुद्ध कोई कार्य करैगा तो सन्धिपत्रमे प्रकाश कियागया है कि उस समय महाराज अपनी पूर्ण शक्तिका प्रयोग करेंगे. इस कारण बृटिश गवर्नमेण्ट उन सामन्तोकी ओरसे किसी प्रकारसे हस्तक्षेप न करसकेगी। फिर महाराजको और भी संतोषके कारण गवर्नर जनरलकी ओरसे इस प्रतिज्ञाका एक पत्र देना होंगा।

२५ फर्वरी, १८२४ ईसवी।
(हस्ताक्षर) एफ, वेलडर।
पोलिटिकल एजेण्ट।

यद्यपि उपरोक्त सन्धिपत्रके अनुसार कार्य करनेको महाराज मानसिंह राजी होगये थे, यद्यपि अत्यन्त अनिच्छासे एकमात्र बृटिश गवर्नमेण्टके संतोपके निमित्त निकाले हुए सामन्तोंमेंसे केवल उपरोक्त लिखे हुए सामन्तोंमेंसे कितनो ही पर कृपा प्रकाश की, परन्तु नीची श्रेणीके अन्यान्य समस्त ठाकुर जो स्वतः निकाल दिये गये थे, उनके ऊपर दया न की। यद्यपि नीमाज इत्यादिके सामन्तोंने फिर बृटिश

गवर्नमेण्टकी कृपासे पैतृक अधिकारको प्राप्त किया था, परन्तु महाराज मानसिंह उनके ऊपर अत्यन्त ही विरक्त होगये थे इस कारण उन्होने उनके ऊपर दया प्रकाश न की।

१८२४ ईसवीमें और भी एक प्रधान घटना वर्णन करनेके योग्य थी। १८१८ ईसवीमें वृटिश गवर्नमेण्टके साथ मारवाड़पति महाराज मानसिंहकी जो संधि हुई थी, उसके अनुसार वृटिश गवर्नमेण्टने मारवाड़के आभ्यन्तरिक किसी उपद्रव पर भी हस्तक्षेप न किया, महाराज मानसिंहने अपनी इच्छानुसार अपने देशको शासन किया। परन्तु उन सामन्तोंके पक्षसे वृटिश गवर्नमेण्टका अनुरोध करना स्पष्ट ही दिखाता है कि गवर्नमेण्टने संधिकी धाराको भंग करके आभ्यन्तरिक शासन पर हस्तक्षेप किया। इसी लिये महाराज मानसिंहने सामन्तोके ऊपर अनुग्रह प्रकाश करके संधिपत्रमे कहदिया था कि वृटिश गवर्नमेण्ट और ऐसे विषयोपर किसी प्रकारका अनुरोध नहीं करैगी। भारतवर्षके गवर्नर जनरलको इस प्रकारके पत्रपर हस्ताक्षर करने होंगे। मि० वेलडरने जिस प्रतिज्ञापत्र पर लिखदिया था उसमे भी उस तारीखका उल्लेख है, परन्तु गवर्नर जनरल वहादुरने उस प्रकारके खलीतापत्रको दिया था या नहीं, उसका कोई संधान नहीं पाया जाता, राज्यके मंगलसाधनके अभिप्रायके वशसे वृटिश गवर्नमेण्टने जव अनुरोध किया था तव प्रतिज्ञाभंगका दोष प्रवल नहीं होसकता, परन्तु एक वर्षमे वृटिश गवर्नमेण्टने और एक विषय पर प्रकारान्तरसे प्रतिज्ञाको भगकर भीतरी शासन पर हस्तक्षेप किया।

१८१८ ईसवीके संधिपत्रके अनुसार यद्यपि महाराज मानसिंह वृटिश गवर्नमेण्टकी अनुगत्यता स्वीकार करके वार्षिक १०८००० रुपया देनेके लिये राजी होगये, परन्तु १८२४ ईसवी तक वृटिशसिंहको मारवाड़की सूचीमुखपरिमाण पृथ्वीपर पैररखनेका भी अधिकार प्राप्त नहीं हुआ। या तो मारवाड़मे प्रवेश करनेके लिये ऐसा किया हो, अथवा किसी राजनैतिक उद्देशको सफल करनेके लिये ऐसा किया हो (उस उद्देशके विपयको इस स्थानपर वर्णन करनेकी हमारी इच्छा नहीं है) १८२४ ईसवीमे गवर्नमेण्टने मेवाड़ेश्वर महाराणाकी समान मारवाड़के महाराज मानसिंहके निकट भी प्रस्ताव किया कि मेरवाड़के पर्वती मीना और मेरगण अत्यन्त उद्धत और ऊधमी हैं, वह लोग जोधपुर राज्यकी सीमामें जाकर लूटमार कर अनेक प्रकारके उपद्रव करते है, इस कारण गवर्नमेण्टको उनके दमन करनेकी अभिलापा हुई है। अंग्रेजोकी एक सेना भी वहाँ जानेके लिये तैयार है। यह समाचार सुनते ही महाराज मानसिंहने अनुगतकी समान गवर्नमेंण्टकी इच्छानुसार कईएक सामन्तोको सेना लेकर वृटिश गवर्नमेण्टकी सहायताके लिये भेजदिया। अंग्रेजी सेनाके द्वारा उक्त पर्वतियोका दमनकार्य समाप्त होगया, गवर्नमेण्टने फिर प्रस्ताव किया कि पर्वती मीना, और मेरोको दमन करनेके लिये वृटिश गवर्नमेण्टने एक स्वतंत्र सेनाकी सृष्टि करनेकी अभिलापा

की है और उस सेनाके खर्चको पूरा करनेके लिये महाराजको वार्षिक पंद्रह हजार रुपये देने होगे। ऊपरके मेरवाड़ेमे महाराज मानसिंहके अधिकारी चाङ्ग और कोट किराना नामक दो परगनोंमें जो इक्कीस ग्राम है, उनको भी वृटिश गवर्नमेंण्टके हाथमे आठ वर्षके लिये देना होगा। गवर्नमेण्ट स्वयं वहाँ शासनशक्तिको चलाकर उक्त वार्षिक पाँच हजार रुपयेके अतिरिक्त वाकी समस्त कर महाराजको दिया करेगी। हतवीर्य लुप्तप्रताप मानसिंह विना कुछ कहे सुने शीघ्र ही वृटिश गवर्नमेण्टके प्रस्तावमें सम्मत हुए। उसीके अनुसार निम्नलिखित संधिपत्र दोनोंकी ओरसे तैयार होगया।

मेरवाड़के मारवाड़के राजोंके अधिकारी अंशके सम्बन्धमें जोधपुर राज्यका संधिपत्र।

यह राजदरबार सम्पूर्ण संतोपजनक रूपसे विदित है कि मेरवाड़ेके सब अंशोमे उपयोगी प्रहरी एवं रक्षक सेनाका नियोग अथवा वहाँके सब प्रकारके उपद्रवोंको निवारण करनेकी सामर्थ्य रक्खे, परन्तु वृटिश गवर्नमेण्टको संतुष्ट रखनेकी इस रजवाड़ेकी एकान्त इच्छा है, और गवर्नमेण्टकी इस समय उन देशोपर अपनी श्रेष्ठ रीतिके चलानेकी इच्छा है उसमें शान्ति स्थापनके लिये जो नई सेना तैयार होगी, मि० वेलडरके प्रस्तावसे उस सेनाके व्यय निर्वाहके लिये आठ वर्षके लिये वार्षिक पंद्रह हजार रुपये देने होंगे। इस प्रकारसे मारवाड़के अधिकारी चाङ्ग चितार और अन्यान्य खालसा ग्राम जिन ग्रामोंके निवासियोके दमन करनेके लिये अंग्रेजी सेना भेजी जायगी, इस दरबारके ठाकुरोंने जिस वृटिश सेनाकी सहायता से उनको दमन करके समस्त ग्रामोंपर अपना अधिकार कर लिया है, वह सभी ग्राम उक्त आठ वर्षके लिये गवर्नमेण्टको देने होंगे—परन्तु जो कर अदा किया जायगा उसका हिसाब देखने और परीक्षाके लिये इस दरबारकी ओरसे एक प्रतिनिधि वहाँ रहनेके लिये भेजा जायगा, उनमेंसे उक्त रुपया छोड़कर वाकी हिसाब करके इस दरबारमें लाना होगा। जो परिमित समयके लिये ग्राम दे दिये है उस समयके बीतते ही उक्त वार्षिक पाँच हजार रुपया और नहीं देना होगा, तथा उन ग्रामोंको फिर लौटा देना होगा।

४ था रजब, १२३९ हिजरी।
(हस्ताक्षर) व्यास सूरतराम।
वकील।

महाराज मानसिंहकी ओरसे वकील व्यास सूरतरामने उक्त संधिपत्र पर हस्ताक्षर किये, वृटिश गवर्नमेण्टके पोलिटिकल एजेन्ट मि० एफ वेलडरने निम्नलिखित संधिपत्रपर हस्ताक्षर करदिये।

वृटिश गवर्नमेण्टको विश्वासके साथ मारवाड़ मेरवाड़ेके जो ग्राम दिये गये थे, उनमेसे जितना रुपया करस्वरूपसे संग्रह होगा, उक्त पंद्रह हजार रुपयेके अतिरिक्त सभी लौटा देना होगा, तथा आठ वर्षके पीछे उक्त ग्राम फिर जोधपुरके महाराजको दे देने होंगे और वह पंद्रह हजार रुपया ग्रहण नहीं किया जायगा।

उपरोक्त तारीख ५ मार्च सन् १८२४ ईस्वीके, पोलिटिकल एजण्ट मिस्टर एफ़. वेलडर साहबके हस्ताक्षर युक्त संधिपत्रसे भली भाँति जाना जाता है कि महाराज मानसिंहने पार्वत्य मीना और मेरोंके दमन करनेमें समर्थ होकर भी वहाँ स्वयं शांति स्थापनमें समर्थ होकर भी केवल गवर्नमेण्टके संतोषके लिये उन ग्रामोंको गवर्नमेण्टके करकमलमें समर्पण किया। गवर्नमेण्टने मेरवाड़ेपर अधिकार करके अंतमें किस प्रकारसे स्वार्थसाधन किया था। उसका वर्णन आगे किया जायगा।

जिस भाँति महाराज उदयसिंहने सबसे पहले बादशाह अकबरकी अधीनता स्वीकार करके राठौर जातिको यवनोंकी दासश्रेणीमें गिनाया था, उसी भाँति महाराज मानसिंह भी सबसे पहले अंग्रेजोंकी शरण हुए, परन्तु उदयसिंह ही यवनोंके साथ सन्धिबंधन करके अपने राज्यकी उन्नति करनेमें समर्थ हुए थे. अब मानसिंहने वृटिश गवर्नमेण्टके साथ सन्धि करके केवल स्वदेश-स्वजाति और अपने भाग्यमें घोर रात्रिको बुलाया। अपनी बुद्धिके दोषसे तथा उच्च अंगकी राजनीतिज्ञताके अभावसे महाराज मानसिंह बालकपनसे ही विपत्तिके समुद्रमें मग्नहुए थे। उन्होंने मानो विपत्तिको अपना साथी मित्र बनाकर इस संसारमें जन्मलिया था। स्वजातिका विध्वंस, स्वराज्यका नाश, और जातिके गौरवकी सीमाको एकबार ही लोप करनेका भार लेकर ही मानो वह राजसिंहासन पर विराजमान हुए थे। रजवाड़ेके अन्यान्य राजाओंकी समान सामन्तोंके साथ राजाकी अनैक्यता आत्मनिग्रह विलासिता, और स्वजातिमें विद्वेष यही मारवाड़के पतनकी जड थी। कुछ समयके पीछे महाराज मानसिंहने अपनी शासनशक्तिको प्रबल करनेके लिये पहलेसे ही सामन्तोंके ऊपर कठोर व्यवहार करना प्रारंभ किया था। १८२४ ईसवीमें, यद्यपि महाराज मानसिंहने गवर्नमेण्टके कहनेसे स्वतः निकाले हुए सामन्तोंमें से कितने ही पर क्षमा प्रकाश की थी, परन्तु उनके साथमें व्यवहार अच्छा नहीं किया, और नीची श्रेणीके सामन्तोंको भी क्षमा न किया-इसीसे महाराज मानसिंहके विरुद्धमें फिर षड्यन्त्र जालका विस्तार होने लगा, मानसिंह ने वृटिश गवर्नमेण्टके साथ संधि कर भी ली थी, परन्तु अब गवर्नमेण्टने सुना कि मारवाड़के बाहरी देशोंमें पडीहुई सामन्त मंडली १८२७ ईसवीमें फिर महाराज मानसिंहको सिंहासनसे उतारनेके लिये दल बाँधरही है।

पोकरणके सामन्त सवाईसिंहने धौंकलसिंहको अवलम्बन कर जयपुरके महाराजकी सहायतासे जिस प्रकार मारवाड़को विध्वंश कर दिया था; असंतुष्ट सामन्तमंडलीने फिर भी उसी प्रकारसे धौंकलसिंहका पक्ष अवलम्बन करके जयपुरके अधीश्वरकी सहायतासे फिर मारवाड़ पर आक्रमण कर मानसिंहको सिंहासनसे उतार धौंकलसिंहको महाराज जोधाके आसन पर बैठालनेकी तनमनधनसे चेष्टा की है। प्रत्येक सामन्त अपनी सेनाके दलके दल लेकर जयपुरकी राजधानीमें इकट्ठे होने लगे हैं। हतउद्योग धौंकलसिंह फिर मारवाड़के सिंहासनपर विराजमान होंगे, इसीसे उन सामन्तोंके साथ मिलनेमें उन्होने एक मुहूर्तका भी विलम्ब न किया,

और जयपुरपति महाराज सवाई जयसिंहने भारतवर्षके किसी देशीय राज्यपर आक्रमण नही किया था, वृटिश गवर्नमेण्टके साथ इस प्रकारसे संधि करके भी साहससे भर धौंकलसिहकी सहायतासे वह मारवाड़ पर आक्रमण करनेके लिये उद्यत हुए है।

इस समय प्रवल प्रतापशाली अंग्रेजी सरकार लाल २ नेत्र कर संहारमूर्तिसे भारतवर्षके प्रत्येक प्रान्तकी ओर देखती, और महा सिंहनाद करके गर्जती थी, राठौर सामन्त, धौकलसिंह, तथा जयपुरके महाराज इससे कुछ भी भयभीत न हुए। इसी समयमे रणभेरी वजने लगी; फिर राठौर सामन्त स्वजातिकी उस शोचनीय दशा पतन अवस्थामे जातिके शेष अस्तित्वके लोपके निमित्त तथा, स्वदेशका नाम भारतवर्षसे लोप करनेके निमित्त फिर नंगी तलवार हाथमे लेकर सजने लगे। मारवाड़का राजनैतिक आकाश देखते २ काले २ वादलोसे ढक गया, महाराज मानसिंहको चारोओर अंधकार दृष्टि आने लगा, उस घोर अंधकारमे शत्रुके ओरकी भयंकर भृकुटीरूप चपला चमकने लगी, परन्तु इन दुर्दिनोमें इस भयंकर तरंगमालासे युक्त विपत्तिके समुद्रमे उनका आशा भरोसा, सहाय-वल केवल अंग्रेज ही थे। उन्होने विचारा कि अंग्रेजोकी वश्यताका भार शिर पर धारण किया है, दस्तखत कर दिये हैं, प्रत्येक वर्षमे कर देते है, गवर्नमेण्ट संधिकी धाराको भंग करके भी जव जो कुछ कहती है वही करते है। इस कारण, १८१८ ईसवीमें संधिपत्रकी दूसरी धाराके मतसे उन्होंने गवर्नमेण्टसे सहायता माँगनेका विचार किया, और सोचा कि गवर्नमेण्ट अवश्य हमारा इस उठती हुई तरंगमालामय विपदजालके भयंकर आक्रमणसे उद्धार करैगी। मानसिंहने इसी आशासे हृदयको धीरज दे वृटिश गवर्नमेण्टसे सहायता मांगनेके लिये समाचार भेजा। परन्तु वृटिश राजनीतिका चक्र किस अभिप्रायसे किस मूर्तिसे किस समय घूमा करता है, इसको मानसिंह कुछ भी नहीं जानते थे। उन्होंने करदमित्र राजरूपसे सहायता माँगी, परन्तु गवर्नमेण्टने उनकी आशाके विपरीत उत्तर दिया, कि मारवाड़के आभ्यन्तरिक किसी उपद्रव पर गवर्नमेण्ट हस्तक्षेप वा किसी प्रकारकी सहायता न करैगी। मानसिंहको निष्कंटक कर मारवाड़के सिंहासन पर वैठालनेमे तथा उनके शत्रुओके दमन करनेके लिये गवर्नमेण्ट तैयार नहीं है! पाठक! क्या आपने इतिहास नही पढ़ा है, अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ संधि होजानेके पीछे अंग्रेजोकी कंपनीके दूत मि० वेलडरने मारवाड़मे जाकर इन महाराज मानसिहसे वारम्वार कहा था, कि मारवाड़मे शान्ति स्थापन करनेके लिये, तथा ऊधमी सामन्तोको दमन करनेके लिये अंग्रेजोकी सहायता लीजिये। परन्तु जव फिर विचित्र राजनैतिक लीलाका दृश्य दृष्टि आया, और महाराज मानसिहने स्वयं उनसे सहायता माँगी? तव यह क्या उत्तर पाया? वृटिश राजनीतिके चक्रका मर्म कुछ भी समझमें नहीं आता।

माननीय गवर्नमेण्टका उत्तर पाकर मानसिंह चैतन्य होगये और वह इस वातको

जानगये कि उनके पूर्ववर्ती कई पुरुष दिल्लीके यवन बादशाहके साथ संधि करके जिस भावसे राज्यशासन करगये हैं इनके भाग्यमे वह बात असम्भव है। उन्होंने कहला भेजा कि "इस समय संधिपत्रकी दूसरी धाराके अनुसार कार्य करनेका समय उपस्थित है। आभ्यन्तरिक उपद्रवोको निवारण वा शान्ति स्थापनके लिये गवर्नमेण्टसे सहायता नहीं मागी गई है। जो सामन्त असंतुष्ट हैं और वह उन्हींके अधिकारी देशमे रहते हैं, तथा वह उन्हींके विपरीत षड्यंत्रका विस्तार करके उपद्रव उपस्थित कर उनको सिंहासनसे उतारनेकी चेष्टा करते हैं। मारवाड़राज्यके बाहरी भिन्नराज्य-जयपुरराज्यसे, जयपुरराज्यकी सहायतासे शत्रुओंका दल उनको आक्रमण करनेकी अभिलाषा करता है। इस कारण जब कि बिना कारणके ही जयपुरके महाराज हमारे राज्यपर आक्रमण करनेके लिये उद्यत् हुए हैं, तब क्या वृटिश गवर्नमेण्ट इसको बाहरी शत्रुके द्वारा आक्रमण मानकर स्वीकार नहीं करैगी ? संधिपत्रकी दूसरी धाराके अनुसार हमारे राज्यकी रक्षारूपसे प्रतिज्ञा पालन करना क्या अपना कर्त्तव्य नहीं मानेगी ? " मानसिंहने विचारा कि अब गवर्नमेण्ट सहायता देनेमें कुछ आपत्ति न करसकैगी, परन्तु ! विस्तारित वृटिश राजनीतिके चक्रका कोन स्थान किस प्रकारकी ग्रन्थियोसे पूर्ण है, महाराज मानसिंह उस समय भी इस बातको न जान सके, जाननेका तो बडा सुबीता प्राप्त नहीं हुआ था, इसी लिये उस समय भी उनका वह चिन्ता और भयसे जडा हुआ हृदय आशाके अस्फुट प्रकाशको मानो ऊषाके खेलकी समान देखने लगा।

वृटिश गवर्नमेण्टने महाराज मानसिंहको क्या उत्तर दिया था! अंग्रेजोंने भयंकर मूर्तिसे भृकुटिको चढाकर गर्जकर कह दिया कि "यदि सर्वसाधारणमे इसी भाँतिसे राजविद्रोह फैल उठा है तो ऐसा समझ पड़ता है कि सामन्तमंडली और प्रजा राजाको सिंहासनसे उतारनेकी इच्छा करती है यदि ऐसा है तो जोधपुरके राजा अपने दोषसे सब प्रकारसे प्रजाकी सहायता और अनुरागसे हीन होगये है इस जोधपुरके सिंहासन पर विराजमान होकर यदि कोई अन्यायके साथ प्रजाके ऊपर भयकर विद्रोहकी अग्नि प्रज्वलित करै तो हम उस विद्रोहके विरुद्धमे, तथा उस अप्रिय राजाको बलपूर्वक सिंहासन पर बैठालनेका कोई कारण नहीं देखते हैं। जिन देशीय राजाओंने राज्यकी रक्षा करनेमे हमसे प्रतिज्ञा करली है वह सभी राजा अपनी रक्षाके लिये हमसे सहायताकी प्रार्थना करसकते है और जो राजाके अविचार, अयोग्यता, तथा कुशासनसे ही प्रजा असंतुष्ट हुई है, तथा राजाके दोषसे ही प्रजामे विद्रोह फैला है, उसको निवारण करनेके लिये हमारी सहायता नहीं मिल सकैगी। देशीय राजा अपनी प्रजाके ऊपर शासनशक्तिको चलावेगे, ऐसी आशा की जाती है, परन्तु यदि उन्होंने अपने आचरणोसे ही प्रजामें विद्रोह फैला दिया, तो राजाको उसका फल स्वयं भोगना होगा। यह* राजनीतिसे पूर्ण कैसा विचित्र उत्तर है। मानसिंहको क्या ऐसे उत्तरकी आशाथी ? रक्षण और पीड़नकी संधिमे बँधकर कौन

---

* Malleson's Native States of India Part I Chap III Page 56.

राजा इस प्रकारका उत्तर दे सकता है ? सन् १८१८ ईसवी मे जो संधि दोनोंके बीचमे हो गई थी, कौन साहससे कह सकते हैं कि यह उत्तर उसी संधिपत्रके मतसे दिया गया है ? "आभ्यन्तारिक शासन पर हस्तक्षेप नही करैगे" इस वातका क्या यही अर्थ है कि जव सामन्त अपने स्वार्थसाधनके लिये तुमको सिंहासनसे उतार कर महा विपत्तिमे डालैं तो हम तुम्हारी सहायता नहीं करैगे ? मि० वेलडर और कर्नल टाड् साहवको जिस समय वृटिशसेनाकी सहायता लेनेमे अत्यन्त इच्छा हुई थी, उस समय असंतुष्ट हुए सामन्तोने जो काण्ड उपस्थित किया था, इस समय भी वह उसी मतसे काण्ड उपस्थित करेगे। इस प्रकार वृटिश गवर्नमेण्टने किस प्रकारसे राजनीतिकी मित्रता की यह नवीन व्याख्या की ? यद्यपि महाराज मानसिंह प्रजाके अप्रियपात्र हो-गये थे तथापि गवर्नमेण्टको उनकी सहायता करनी उचित थी।ऐसी अवस्थामे क्या उनके ऊपर भयंकर गर्जन करना न्यायसंगत था ? इस समय यदि साधू टाड् साहव पोलिटि-कल एजेण्टके पदपर नियुक्त होते तो वह ऐसा उत्तर कभी नहीं दे सकते थे। मानसिंह उक्त उत्तरको सुनकर इस वातको भलीभांतिसे जानगये कि संधिपत्रका मूल्य कितना है।

सौभाग्यसे शीघ्र ही वृटिश गवर्नमेण्ट इस वातको भली भांतिसे जानगई कि इस समय जयपुरके महाराज और धौकलसिंह असंतुष्ट हुए राठौर सामन्तोको साथमें लेकर मारवाड़ पर आक्रमण करनेके लिये उद्यत हुए है तव इनको अवश्य ही वाहरी शत्रुका आक्रमण मानना होगा। कम्पनी सरकारने मानसिंह से कुछ न कहा, केवल राजनैतिक सम्वन्ध विस्तार कर उपस्थित उपद्रवोका विचार करनेमें लगी। जयपुरके महाराजके साथ वृटिश सरकार की जो संधि पहले ही होगई थी जिससे कि वह भारतवर्षके किसी देशीय राज्यपर आक्रमण या किसी देशीय राजाके साथ युद्ध नहीं करसकते थे। जयपुरके महाराज उस संधिको भंग करके मारवाड़ पर आक्रमण करनेके लिये उद्यत हुए इसीसे वृटिश गवर्नमेण्टने विशेष असंतोष प्रकाश कर उनके पास एक पत्र भेजा तथा जिससे वह सेनाको विदा देकर मारवाड़ पर आक्रमण न करैं, ऐसी आज्ञा भी लिख भेजी। वृटिशसिंहके उस भयंकर गर्जनसे भयभीत हो जयपुरके महाराज शीघ्र ही मारवाड़के आक्रमणसे विमुख होगये। जयपुरके महाराजकी समान धौकलसिंहको भी गवर्नमेण्टने भय दिखाकर अन्यत्र जानेकी आज्ञा दी, वह भी भयभीत होकर झज्जूर नामक स्थानमें चलेगये। जातीय शक्तिके शेष अस्तित्वको लोप करनेके लिये मारवाड़को समभूमि करनेके लिये जो असंतुष्ट सामन्त श्रेणी वीर साजसे सजी थी, इस समय जयपुरके महाराज और धौकलसिंहको वृटिश गवर्नमेण्टकी ताड़नासे पीठ दिखाते हुआ देख कर शीघ्र ही गंभीर निराशाके जलमें मग्न होगई। कोई २ सामन्त फिर मारवाड़मे जाकर मानसिंहकी वश्यता स्वीकार कर पहलेकी समान निग्रह भोग करने लगे। और मानसिंह पहलेकी विपत्तियोकी समान इस वार भी अनेक विपत्तियोसे उद्धार पाकर मनहीमन अपने भाग्यकी प्रशंसा करके निर्भय हो राज्य-शासन करने लगे।

यद्यपि वृटिश गवर्नमेण्टने इस समय राजवाड़ेके प्रत्येक प्रान्तमे. अपने पूर्ण प्रताप और प्रभुत्वका विस्तार करलिया था, यद्यपि भारतके सर्व प्राचीन राजरक्त-धारी राजपूत एकवार ही कपनोंके वशीभूत होचुके थे, यद्यपि अंग्रेजोके भयंकर गर्जनसे भारतवर्ष कंपायमान होगया था, तथापि स्वाभाविक तस्करदल इस समय सुवीता पाकर भी अपनी जातीय वृत्तिको सफल न करसका। १८३२ ईसवीमे एक अधिक वलवान् तस्करदलने नागौरकी सीमामे भयंकर अत्याचार करने प्रारंभ करदिये। उसके अत्याचारोसे चारोओर हाहाकार मच गया। वृटिश गवर्नमेण्टने उन लूटनेवाले तस्करोंको दमन करना अपना कर्त्तव्य विचारा। १८२८ ईसवीमें मारवाड़पति मानसिंहके साथ जो वृटिश गवर्नमेण्टकी सधि हुई थी उसकी आठवीं धारामे यह वात लिखी गई थी कि गवर्नमेण्टकी आज्ञा पाते ही महाराज पंद्रहसौ अश्वारोही सेना उनकी सहायताके लिये भेजे गे। उस तस्करदलको दमन करनेके लिये वृटिश गवर्नमेण्टने संधिपत्रकी उसी धाराके मतसे महाराज मानसिंहको शीघ्र ही पंद्रहसौ अश्वारोही सेना भेजनेके लिये आज्ञा दी। संधिवंधन होजानेके समयसे ही मानसिंह गवर्नमेण्टकी आज्ञा पालनमे नियुक्त थे, इस कारण उन्होंने विना कुछ कहे सुने शीघ्र ही डेढ़ हजार अश्वारोही सेना उन लूटनेवालोंको दमन करनेके लिये वृटिश गवर्नमेण्टके पास भेज दी। राठौर अश्वारोही दलने अंग्रेजोकी सेनाके साथ मिलकर शत्रुदलको शीघ्र ही दमन करदिया, परन्तु इस समय गवर्नमेण्टने भारतके प्रत्ये प्रान्तमें अपनी राजनीतिको विस्तारकर जिस भावसे अपनी शासनशक्तिको प्रवल करके, देशकी दुर्वल शासनशक्तिको एकवार ही अवनत करदिया था, उसी राजनीतिके गुप्त उद्देशको साधन करनेके लिये इस समय फिर विचित्र राजनीतिका अभिनय करने लगी। यह तो हमारे पाठक टाड् साहवकी उक्तिसे पहले ही जानगये होंगे कि भारतमे राठौर अश्वारोही वल विक्रम और रणकी चतुरतामें अद्वितीय थे, परन्तु इस समय वृटिश गवर्नमेण्टने महाराज मानसिंहको विदित किया कि तुमने जो सेना भेजी थी, वह युद्धविद्यामे सवप्रकारसे अशिक्षित, किसी कामकी नही है। उसके वदलेमें वृटिश गवर्नमेण्टने जोधपुरके नामसे एक स्वतंत्र सेनाके तैयार करनेकी अभिलाषा कोहै और उस सेनाका सम्पूर्ण खर्चा महाराजको देना होगा!! पाठक! इस प्रस्तावका अर्थ कुछ समझे, इस राजनैतिक रहस्यके मर्मको कुछ हृदयङ्गम किया या नहीं?—१८१८ ईसवीके सन्धिपत्रकी आठवीं धाराके मतसे मारवाड़के महाराजको आवश्यकता होनेपर १५०० अश्वारोही सेना देनी होगी, यह वात लिखरही थी, परन्तु वह सेना महाराजके अधीनमे रहैगी। इस समय वृटिश गवर्नमेण्ट उस सेनाको अपने अधीनमे चिरकाल तक रखनेके लिये उस धाराको वदलनेके लिये तैयार हुई। भारतवर्षके अंग्रेज गवर्नर जनरलके राजपूतानेमे स्थित असिस्टेण्ट पोलिटिकल एजेण्ट मि० एच० डवल्यू० ट्रिवेलियनने वृटिश गवर्नमेण्टकी ओरसे महाराज मानसिंहके समीप उस प्रस्तावको उपस्थित करके कहा कि आप जो पंद्रहसौ अश्वारोही सेना देनेके लिये राजी होगये हैं, गवर्नमेण्ट उससे आपको मुक्ति देनेके लिये तैयार है, परन्तु जो नई सेना तैयार होगी उसके लिये आपको वार्पिक एक लाख पंद्रह

हजार रुपया देना होगा। इस स्थानपर उसका उल्लेख करना केवल वाहुल्य मात्र है, पोलिटिकल एजेण्टने अवश्य ही महाराज मानसिंहको भलीभांतिसे समझा दिया था कि वृटिश गवर्नमेण्ट केवल महाराज मानसिंहकी मंगलकामनाके लिये, जोधपुरमें शांतिकी रक्षाके लिये एक नई सेनाको जोधपुरके नामसे तैयार करनेकी इच्छा करती है। क्या तो महाराज मानसिंह वृटिश राजनीतिके उस मधुर अर्थसे मोहित हुए होंगे या और कोई गति देखकर मौन हुए हों, उन्होने तुरन्त ही उस प्रस्तावमें अपनी सम्मति दी। इस प्रकारसे १८३५ ईसवीमे निम्नलिखित उपायोसे १८१८ ईसवीके सन्धिपत्रकी आठवीं धाराका वदला होगया।

" जिस कारण जोधपुरके महाराज मानसिह वहादुरने वृटिश गवर्नमेण्टके साथ १८१८ ईसवीके जनवरी महीनेकी छठवी तारीखको दिल्लीमें जो सन्धि की थी उस सन्धिपत्रके ही मतसे वह आवश्यकता होनेपर पंद्रहसौ अश्वारोही सेना देनेके लिये राजी हुए थे, अव इस समय उस डेढ़ हजार सेनाके वदलेमें संवत् १८९२ में पूस सुदी पूर्णमासीसे वार्षिक एक लाख पंद्रह हजार रुपये देनेके लिये राजी हुए है; इस कारण वृटिश गवर्नमेण्टकी ओरसे इस स्वीकार पत्रके द्वारा उपरोक्त संधिपत्रकी आठवीं धारामे लिखा हुआ "जोधपुरराज्यको जव आवश्यकता होगी तभी डेढ़ हजार अश्वारोही सेना देना होगी" इस धाराको वदल कर उस स्थान पर यह लिख दिया कि उपरोक्त कारणसे उक्त सेनाके वेतनके हिसावसे जोधपुर राज्य अजमेरको नगद "वार्षिक एक लाख डेढ़ हजार रुपया" देगा सम्वत् १८९३ के पूस मासकी पहली तारीखको यह एक लाख डेढ़ हजार रुपया देना होगा, और भविष्यत्में प्रत्येक वर्षमे उक्त तारीखको उतना ही रुपया देना पडा करैगा।

जोधपुर २ पूस वदी सम्वत् १८९२— } (हस्ताक्षर) एच–डवल्यू० ट्रिवेलियन।
अंग्रेजी १ दिसम्बर १८२५ ईस्वी। } गवर्नर जनरलकी ओरके असिस्टेण्ट एजेण्ट।

सकाउन्सेल गवर्नर जनरलका १८३६ ईसवी की ८ फरवरीको स्वीकार किया।

इस प्रकारसे वृटिश गवर्नमेण्ट महाराज मानसिंहके पाससे एक लाख पन्द्रह हजार रुपया वार्षिक पानेकी व्यवस्था करके एक स्वतंत्र सेनाको निर्माण कर अजमेरको अपने अधीनमें रखने लगी।

उपरोक्त संधिपत्र तैयार होनेके एक महीने पहिले महाराज मानसिंह गवर्नमेण्टकी एक और आज्ञाके पालन करनेमें सम्मत हुए। महाराजके अधिकारी मेरवाड़ेके मीनों और मेरोको दमन करनेके लिये वृटिश गवर्नमेण्ट १८२४ ईस्वीमें वहांके २१ ग्रामोको आठ वर्षके लिये अपने अधीनमे ग्रहण करके शांति स्थापन करनेके लिये पन्द्रह हजार रुपये लेते थे, परंतु १८३५ ईसवीमें वह आठ वर्ष वीत गये। वृटिश गवर्नमेण्टने १८२४ ईसवीमें संधिपत्रके अनुसार उन ग्रामोंको नही लौटाया। असिस्टण्ट पोलिटिकल एजेण्ट एच० डवल्यू० ट्रिवेलियनने फिर महाराज मानसिंहके निकट यह प्रस्ताव किया कि वृटिश गवर्नमेण्ट फिर मेरवाड़ेके उन ग्रामोको ९ वर्षके लिये अपने अधीनमें रखनेकी अभिलापा करती है, मीना और

मेरोको दमन करनेके लिये जो सेना तैयार हुई है, और महाराज जिसको वेतनके हिसाबसे गत आठ वर्षतक वार्षिक पंद्रह हजार रुपया देते आये हैं उसी प्रकारसे अब भी उनको नौ वर्षतक देना होगा, और जो सुवीता मिला तो उन ग्रामोंके अतिरिक्त उसीके समीपवाले और भी सात ग्राम उक्त नियमके अनुसार दिये जॉयगे। महाराज मानसिंहने वृटिश कम्पनीको सर्वदा संतुष्ट रखनेके लिये व्रत किया था, इसी कारणसे उन्होंने विना कुछ कहे सुने उक्त असिस्टेन्ट पोलिटिकल एजेन्टके प्रत्येक प्रस्तावमे अपनी सम्मति दी। १८३६ ईसवीकी २३ वीं अक्टूबरको फिर उक्त प्रदेशके सम्बन्धमें पूर्वमतसे नवीन संधिपत्र तैयार होगया। महाराजकी ओरके वकील व्यास सवाईराम और गवर्नमेण्टकी ओरके मि० एच० डवल्यू० ट्रिवेलियनने परस्पर हस्ताक्षर करदिये।

जिस देशमे राजतंत्रकी शासनरीति प्रचलित है, उस देशमे नरपति यदि अपनी नीतिके वलसे वलवान हो, सर्व साधारण प्रजाकी अभिमातिके प्रति सम्पूर्णतः आदर दिखाकर राज्यशासन करता रहे तो उस देशमे से शांति कभी नहीं जासकती, और उस राजाको भी शासनके विरुद्धमें किसी प्रकारकी विपत्ति नही होसकती, परन्तु जिस राजतंत्र शासनप्रणाली युक्त देशमें राजा अपनी इच्छानुसार पूर्ण अभिनय करते हैं, पाशविक वलकी सहायतासे प्रजाकी साधारणमति पर पदाघात करके शासनदंडको चलानेकी अभिलापा करते हैं उस देशकी शांति शीघ्र ही लुप्त होजाती है; तथा उस यथेच्छाचारकी शासनशक्ति, उस पाशविक वलके विरुद्धमे साधारण प्रजाकी नैतिकरूप महाशक्ति अत्यन्त प्रवल होकर समय पर अवश्य ही उस पाशविक वलको दमन करलेती है, संसारके प्रत्येक इतिहासकी ओर देखनेसे जाना जासकता है कि पहिले पहिल पाशविक वल विशेप प्रवलता विस्तार करनेमे समर्थ था, परन्तु इस समय वह एकवार ही विध्वंस होगया। जातिकी पतनदशामे-अंतिम शोचनीय दशामे पाशविक वल तथा प्रभुत्व प्रकाश करनेमे पहले तो विघ्न नहीं होता परन्तु वह पतितजाति उस पाशविक वलसे विदलित जाति अनन्त निग्रहको भोग करते २ अंतमें ज्ञानशून्य होकर प्रतिक्रियाके वलसे उस पाशविक वलको इस प्रकारके भावसे आक्रमण करती है कि उसी समय पाशविक वलका पतन अनिवार्य होजाता है। औरंगजेवके प्रचंड पाशविक वलका प्रयोग करना ही भारतसे यवनशासनके लोपका कारण था। प्रथम ही पाशविक वलके प्रयोगसे महाराष्ट्र जाति कई वर्षोंमे एकवार ही क्षीण प्राण होगई। महाराज मानसिंह सामन्तोमेंसे वहुतोंके ऊपर पाशविक वलका प्रयोग करके निरन्तर विपत्तिके अगाध जलमे मग्न होगये थे; उनके उस पाशविक वलने ही उनके शासनके लोप होनेका सवसे पहिला अनुष्ठान रच दिया उसके जव पूर्वलक्षण दिखाई दिये तो सर्वसाधारण प्रजाके ऊपर वह पाशविक वल प्रयोग न करके उन्होंने वड़े कष्टसे वहुतसे रक्तपातोसे उद्धार पाया था, परन्तु इस समय उनकी वार्द्धक्यदशा उपस्थित हुई है, कुसंस्कार युक्त धर्मयाजकोंके मोहमंत्रके वश होकर उन सामन्तोके ऊपर फिर इस प्रकारके

अत्याचार करने प्रारंभ करदिये, फिर इस प्रकारका पाशविक बल प्रयोग करने लगे। उसी कारणसे शीघ्र ही मारवाड़के प्रत्येक प्रान्तमे फिर असंतोषकी अग्नि प्रज्ज्वलित होगई, विद्रोहके बढ़ते ही शांतिके दूर होनेसे अराजकता उपस्थित होगई। धर्मयाजक वृन्दोंकी आज्ञाने तथा उनकी मंत्रणा और परामर्शके उपदेशने मानसिहके वक्षस्थल पर पदाघात कर उनकी वृद्धा अवस्थामे राज्यमें फिर इस प्रकारका विप्लव उपस्थित करदिया कि जिससे राठौर जातिके वंश सहित नाश होनेके पूर्वलक्षण दृष्टि आनेलगे।

इस पुण्यमय भारतक्षेत्रमे क्या राजा, क्या धनी, क्या सामन्त, क्या निर्धन, क्या प्रजा, सभी वृद्धा अवस्थामे पारलौकिक पुण्यको संचय करनेके लिये झुकजाते है, वृद्धा अवस्थामे हमारे महाराज मानसिहने भी वही किया, महाराजकी भक्ति धर्मकी ओर अधिक थी, सो यह कुछ विचित्र बात नहीं है। परन्तु भारतकी पतन दशामे धर्मयाजक गण शास्त्रज्ञानसे हीन होकर केवल धनको संग्रह कर अपना प्रभुत्व प्रकाश करनेमे सावधान रहते थे।प्राचीन आर्य ऋषि मुनियोके समान उनका ज्ञान, विद्या, विचार, अभिज्ञता और उनके चरित्रोमे उस प्रकारकी निर्मलता नही थी, परन्तु तौ भी वह एकमात्र धन और प्रभुत्वके प्रयासी होकर प्रबल प्रतापशाली राजासे लेकर सामान्य कृषक तक सभीके ऊपर एकभावसे प्रभुत्वका विस्तार करते थे। राज्य और समाजकी ओर उनका किंचिन्मात्र भी ध्यान न था, वह केवल अपने ही स्वार्थको पूरण करनेमे प्रमत्त हो जाते थे। महाराज मानसिह इस वृद्धा अवस्थामे धर्मयाजक श्रेणीके मोहमंत्रसे मोहित होगये। उस राजनीति-शिक्षा हीन धर्मयाजकोंके परामर्शसे शासन दंडके चलाते ही मारवाड़मे वह विद्रोहानल प्रबल होगई।

वृटिश राजनीतिकी कैसी विचित्र महिमा है? १८२४ ईसवीमे जयपुरके महाराज धौंकलसिंह और अन्यान्य राठौर सामन्तोको अपने साथ लेकर मारवाड़ पर आक्रमण करनेके लिये तैयार हुए, कम्पनीने भयंकर हुंकारके साथ भृकुटी चढ़ाकर मानसिंहको कैसा भर्त्सनापूर्ण पत्र लिखा था कि समस्त प्रजा उनके विरुद्ध होगई है इससे गवर्नमेण्ट उनकी सहायता नही करैगी, इस समय वह वृटिश गवर्नमेण्ट अपनी उस उद्गीरित उक्तिको फिर उदरस्थकर नवीन राजनैतिक अभिनय करने लगी। यद्यपि महाराज मानसिंहने वृटिश गवर्नमेण्टको कर देनेमे राजी होकर संधि कर ली थी, परन्तु यहां तक एक भी अंग्रेजी सेनाको मारवाड़में जाकर वृटिशसिहको संहारमूर्ति दिखानेका सुअवसर नही मिला। वृटिश कम्पनी इस समय राठौर जातिको वह संहारमूर्ति दिखानेके लिये महाराज मानसिंहको अपना कीड़नक रूपसे परिणत कर वृटिश कर्मचारीके द्वारा मारवाड़को शासन कर अपनी सामर्थ्यको प्रबल करनेके लिये-तथा मानसिंहको यथार्थ वशीभूत बनानेके लिये सुसज्जित हुई!

१८३९ ईसवीमे वर्षाऋतुके शेषमे-तथा शरदऋतुके प्रारंभमें कर्नल सदरलेण्डने विश्वविजयी वृटिश वाहिनीके साथ दर्पसे मारवाड़में प्रवेश किया। यद्यपि मारवाड़में विद्रोह निवारण करके शांति स्थापन करनेके लिये तथा सुशासनकी व्यवस्था करके असंतुष्ट सामन्तोको पैतृक अधिकार दिलानेके लिये गवर्नमेण्टने सदरलैण्डको भेजा था

यदि प्रसन्न हृदयसे यह महात्मा उस महान् उद्देशको पूर्ण करते तो हम उस उद्देशकी ऊँची प्रशंसा करते, परन्तु हम देखते है कि सन् १८३९ ईसवीसे भारतके अन्यान्य देशीय राज्योंके समान यह मारवाड़ भी अंग्रेजी एजेण्ट द्वारा जिस प्रकारसे सामर्थ्यहीन किया गया, उसका वर्णन नही होसकता। उसे एकमात्र देशीराजा ही कह सकते हैं। इस एजेण्टने उनको किस प्रकारसे अपने हस्तगत करलिया। चिर वीरव्रतावलम्वी, स्वाधीनताकी प्रिय उपासक जिस राठौर जातिने अपने घोर दुर्दिनोमें तथा महा विपत्तिमे पडकर भी दिल्लीके बादशाहकी सेनाको भी कुछ न गिना था, आज वही राठौर जाति अंग्रेजी सेनाके जोधपुरमे आते ही क्षीण प्राण दुर्बल हृदयके समान रहने लगी। महाराज मानसिंहने महा भयभीत होकर उस अंग्रेजी सेनाको वड़े आदरभावसे ग्रहण किया! हा! कालकी कैसी विचित्र गति है!-जातिकी पतनदशामे जातिके चरित्रोंका कैसा हृदयभेदी चित्र होताहै। अंग्रेजी सेनाने जोधपुरके किलेपर अधिकार करलिया, महाराज मानसिह भी मस्तक झुकाकर कर्नल सदरलैण्डकी आज्ञा पालन करने लगे। महाराज मानसिहके साथ वृटिश कम्पनीका फिर निम्नलिखित नवीन संधिपत्र तैयार हुआ,-

वृटिश गवर्नमेण्टके साथ महाराज मानसिंहका संधिपत्र।

माननीय वृटिश गवर्नमेण्टके साथ जोधपुर राज्यकी अत्यन्त प्राचीन कालसे मित्रता है सन् १८१८ ईसवीके संधिबंधनके मतसे वह मित्रता दृढ़ता पूर्वक स्थापित हुई है, इस प्रकारसे दोनो राज्योंमे परस्पर मित्रभाव वर्तमान समयतक विराजमान है और भविष्यत्में भी इसी प्रकारसे दोनोंमे मित्रभाव रहेगा।

वर्तमान समयमें वृटिश गवर्नमेण्ट और जोधपुरके महाराज मानसिहमे कर्नल जान सदरलैण्डके द्वारा नीचे लिखीहुई कई धाराओंसे युक्त एक संधिपत्र तैयार हुआ।

प्रथम-इस समय राज्यमे सुशासन स्थापन करनेके लिये परस्पर सहयोगिता ग्रहण करनेमे स्वीकृत होकर महाराज कर्नल सदरलैण्ड तथा सरदार और अहलकार एवं शासन विभागके खवास पासवान गण एक साथ सम्मिलित हो और राज्यके सुशासनके लिये नियम सहित रीतिको नियुक्त करें; उसी नियमकी रीतिके मतसे इस समय और भविष्यत्में शासनकार्य किया जायगा। उन्होने और भी कितने ही सामन्तों के, राज्यके, राजकर्मचारियोके तथा उनके अधीनमे स्थित मनुष्योंके स्वत्वाधिकार और सामर्थ्यको प्राचीन रीतिके अनुसार निर्द्धारित, प्रकाशित एवं स्थापित करदिया।

दूसरी धारा-वृटिश पोलिटिकल एजेण्ट तथा जोधपुरराज्यके अहलकार परस्पर पहिले एकसाथ मंत्रणा करके महाराजके साथ परामर्श कर उस नियत कियेहुए नियमके मतसे राजकार्य करें-

तीसरी धारा-उक्त पंचायती लोग चिरप्रचलित प्राचीन रीतिके मतसे राज्यके समस्त कार्योंको करें।

चतुर्थ धारा–कर्नल साहव कहते हैं कि जोधपुरके किलेमें अंग्रेजी सेना रखनी होगी, तथा उसमें महाराज सम्मत होते है। राजस्थानके अन्यान्य राज्योंके जिन २ स्थानोमे पोलिटिकल एजेण्ट रहते है, वह नगरके वाहर रहै। यहाँके किलेमें केवल वस्ती और घर है, तथा स्थान वहुत संकीर्ण है। इस कारण इस विषयमें कुछ व्याघात हुआ है; वृटिश गवर्नमेण्टको संतुष्ट रखनेके लिये जव अंग्रेजी सेनाको रखनेके लिये सम्मति दी है, और उस सेनाके रखनेके लिये उचित स्थान नियत करदियागया है, तव सेना वहाँ रहैगी; जोधपुरके महाराजको तथा गवर्नमेण्टको इस विषयमें किसी प्रकारके भयका कारण नहीं है।

पाँचवी धारा–श्रीजीका मंदिरस्वरूप विग्रह तथा जोगीश्वरके (विग्रह) एवं देशीय अथवा विदेशीय धर्मयाजक गण, अनुचर और उमराव, कका गण, मुसद्दी (कुशलराज फौजराज इत्यादि) एवं पासवान गण (राजकर्मचारी) अन्यान्य सभी इस समय जिस प्रकार पदमर्यादा स्वत्व अधिकार और क्षमता संभोग करते हैं, इसमे कुछ भी घटती वढ़ती न होगी।

छठीं धारा–जो नियम लिखे गये है, राजकर्मचारी उन्हीं नियमोके अनुसार अपने २ कर्त्तव्योको पालन करते रहैंगे, यदि उनमेसे कोई किसी समयमें उस कर्त्तव्यके पालनमे असमर्थ हुए तो महाराजके साथ परामर्श करके उनके पदपर दूसरे मनुष्यको नियत किया जायगा।

सातवीं धारा–जिनकी जागीर और स्वत्वाधिकारको राजाने अपने अधिकारमे करालिया है; न्याय विचारकी मूलनीतिसे उनको फिर वह अधिकार प्राप्त होगा, और उस सत्वाधिकारीको राजाके यहाँ आनुगत्यभावसे कार्य करना होगा।

आठवीं धारा–मारवाड़की राजशासनशक्तिको चिरस्थाई करना और मारवाड़का स्वार्थ रक्षण तथा महाराजका सन्मान और उनके यशकी रक्षा करना कम्पनीका मुख्य उद्देश है इस कारण गवर्नमेंण्टने महाराजके मान वा उनकी शासनशक्तिको न घटाया; इसी लिये गवर्नमेण्ट साक्षी होकर रहैगी।

नवीं धारा–वृटिश गवर्नमेण्ट और मारवाड़के अहलकार आपसमें एकसाथ परामर्श करके महाराजकी आज्ञासे तथा जिन नियमोकी रीति नियत हुई है उन्हीं नियमोकी रीतिसे वृटिश गवर्नमेण्टको जो कर मिलता है, उस करको नियमित रूपसे देनेके लिये तथा सेनाका खरच (जोधपुरके नामसे जो सेना वृटिश गवर्नमेण्टने तैयार की है) जो इस समय मिलता है वह देना होगा; और आगेको नियमित रूपसे देनेकी व्यवस्था की जायगी। जिनको अधिक हानि हुई है, उन्होने जिनके द्वारा हानिको उठाया है, यदि उसका प्रमाण मिल गया, तो उन हानि पहुँचानेवालोसे उस हानिको भर लिया जायगा, अन्य थां मारवाड़ राज्यको अन्यान्य राज्योके निकट जो दायी किया, यदि उस दायीको रीतिके मतसे प्रमाणित कर दिया तो उस राज्यसे आदाय करके देना होगा।

दसवीं धारा-जिस प्रकारसे महाराजने सरदारोंके अधिक अपराधोंको क्षमाकर उनको अनुगत बना फिर उनको जागीरोंकी सनदें दी थीं, उसी भाँतिसे बृटिश गवर्नमेण्ट भी स्वरूप एवं योगेश्वरके मंदिरमें जो सब धर्मयाजक गण, उमराव और अहलकारोंके चरित्रोंसे असंतुष्ट हुई थी उनको भी क्षमा करती है।

ग्यारहवीं धारा-राजधानीमें एक अंग्रेजी एजेण्ट नियुक्त रहैगा। किसी मनुष्यके प्रति कोई किसी प्रकारका भी अत्याचार नहीं करसकेगा। जो छः धर्म सम्प्रदाय हैं; उनके किसी विषय पर भी हस्ताक्षेप नहीं किया जायगा, और जो पशु पक्षी मारवाड़में पवित्र गिने जाते हैं उनका जीवन नाश नहीं किया जायगा।

बारहवीं धारा-यदि छः महीने, वा एक वर्ष अथवा अठारह महीनेमें महाराजके शासनविभागकी सुव्यवस्था होजायगी तब पोलिटिकल एजेण्ट और समस्त अंग्रेजी सेना जोधपुरके किलेको छोड़कर चली जायगी, यदि उक्तकार्य उसकी अपेक्षा थोड़े समयमें ही शेष होगया तो गवर्नमेण्ट अत्यन्त प्रसन्न होगी, कारण कि उस कार्यसे बृटिश गवर्नमेण्टकी प्रतिपत्तिकी वृद्धि होगी।

तेरहवीं धारा-उपरोक्त वर्णन किया हुआ यह संधिपत्र सन् १८३९ ईसवीके सितम्बर मासकी २४ वीं तारीखको जोधपुरमें तैयार हुआ था, इसको लेफ्टिनेण्ट कर्नल सदरलैण्ड द्वारा महामहिम वर भारतवर्षके गवर्नर जनरलके पास स्वीकृत और संशोधित होनेके लिये भेजा जायगा-और उक्त संधिपत्रके मर्मसे युक्त एक खरीता उक्त महामान्य गवर्नर जनरलके पाससे महाराजको मिलैगा।

भारतवर्षके गवर्नर जनरल महा महिम वर जार्ज लार्ड आकल्यांड जि. सि. वि. के द्वारा सामर्थ्य प्राप्त होकर, यह संधिपत्र कर्नल सदरलैण्डका नियत किया हुआ।

"ऋद्धमल वकीलके हस्ताक्षर। फौजमलके हस्ताक्षर।"

उपरोक्त संधिपत्रके नियत होते ही कर्नल सदरलैण्ड राज संस्कारमें प्रवृत्त हुए। जिन दो मनुष्योंने राजपुरुषोंकी सम्मतिसे महाराज मानसिंहके राज्यमें यह असंतोषकारी काण्ड उपस्थित किया था, कर्नल सदरलैण्डने उनको पदसे उतार दिया। श्रीजी स्वरूप जी योगेश्वरजी इत्यादिक जो जो प्रधान २ धर्मयाजक अशान्तिके कारण स्वरूप होगये थे कर्नल सदरलैण्डने उन पर भी हस्ताक्षेप किया, परन्तु महाराज मानसिंहने किसी प्रकारसे भी उसमें अपनी सम्मति न दी। विशेष करके उन्होंने कर्नल सदरलैण्डके प्रस्तावके मतसे अपने चिरशत्रु सामन्तोंको भी क्षमा कराया, कर्नल सदरलैण्डने भी उसके आदर्शमें धर्मयाजकोंको भी क्षमा कर दिया। कर्नल सदरलैण्डने प्रस्ताव किया था कि धर्मयाजक गण जिससे राजदरबारमें किसी राजनैतिक वा शासनविषय पर हस्तक्षेप न करसकें, संधिपत्रमें ऐसी एक धारा नियत करनी अवश्य कर्त्तव्य है, परन्तु मानसिंहने उसमें आपत्ति करके कहा, कि जब धर्मयाजकोंको राजपुरुष वा राजकर्मचारी नहीं गिना जाता है, तब उस धाराके शामिल करनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है। जिससे कर्नल सदरलैण्ड मारवाड़की देवोत्तर भूमिके ऊपर अथवा मारवाड़में प्रचलित छः धर्मसम्प्रदायोंके ऊपर किसी प्रकारका हस्तक्षेप न करसके; इस कारण

महाराजने पहले ही उन छः सम्प्रदायोंके आग्रहसे संधिपत्र तैयार किया था, इस कारण विषयमें कर्नल सदरलैण्ड कुछ भी न कह सके। मारवाड़की अशान्तिके मूलस्वरूप सामन्तोंके असंतोष निवारण करनेके लिये शीघ्र ही महाराजने उनके अधिकारको देदिया। इतने दिनोंके पीछे सामन्तोंने भी अपने २ अधिकारको पाकर महाराजकी आनुगत्यता स्वीकार की। इसके पीछे कर्नल सदरलैण्डने संधिपत्रके मतसे राज्यके प्रधान २ कर्मचारी मन्त्री और सामन्तोंको शीघ्रही सभामें बुलाकर मारवाड़में सुशासन स्थापन करनेके लिये चिर प्रचलित रीतिके मतसे नियमोंकी रीति नियत कर दी, और एक २ करके अपने सभी अभिलषित मनोरथ पूर्ण करलिये। मारवाड़के प्रत्येक प्रान्तमें आज फिर शांति देवी विराजमान होगई। पाँच महीने तक अंग्रेजी सेना जोधपुरमें रहकर फिर अपने स्थानको चलीगई; महाराज मानसिंह निर्विघ्न हो शांति संभोग करनेलगे। परन्तु उनकी स्वेच्छाचारकी शासनशक्ति घट गई तथा पाशविक बलकी सामर्थ्य भी एकबार ही दूर होगई। बृटिश पोलिटिकल एजेण्ट मारवाड़के हर्ताकर्ता विधाता होकर राज्यके सब भागोंमें अपनी सामर्थ्य चलाने लगे। इनके द्वारा यद्यपि विध्वंस मारवाड़में फिर शांतिने आकर दर्शन दिया, परन्तु मानसिंहके समयसे राठौर राज्यकी शक्ति जो एकबार ही दूर होगई थी उसका स्मरण करनेसे ऐसा कौन है कि जिसके हृदयमें वेदना उपस्थित न हुई हो? चिर वीर व्रतावलम्बी राठौर राजवंशका स्वाधीन शासन इन मानसिंहही के समयमें समाप्त होगया, यद्यपि उक्त सन्धिकी प्रत्येक धारा केवल मानसिंहके शासन समयमें ही पाली जायगी, इसके पीछे नहीं. यह मत निश्चय होगया, परन्तु आजतक बृटिश एजेण्टने मारवाड़में जाकर राठौर राजकी शासनशक्तिको किस प्रकारसे सीमाबद्ध कर रक्खा है उसका स्मरण करनेसे किसका हृदय प्रसन्न होगा।

बृटिश एजेण्टने सन् १८३५ ईसवीमें महाराज मानसिंहके अधिकारी मेरवाड़में जो अट्ठाईस ग्राम थे उनको दूसरीवार अपने अधीनमें नौ वर्षके लिये रक्खा था। १८४३ ईसवीमें वह अवधि बीतगई। यह हम पहले ही कह आये हैं कि बृटिश गवर्नमेण्टने किस कारणसे इन कई एक ग्रामोंको अपने अधीनमें करके उन ग्रामोंकी आमदनीमेंसे वार्षिक पंद्रह हजार रुपये लिये थे, महाराज मानसिंह इस बातको न जानसके। १८४३ ईसवीमें महाराज बृटिश गवर्नमेण्टके आशयको भलीभाँति जानगये थे। उन्होंने दूसरीवार जो सात ग्राम दिये थे इसबार भी उन सातों ग्रामोंको लेकर बाकी कई एक ग्रामोंको इस आशयसे दिया कि गवर्नमेण्टकी जबतक इच्छा हो तबतक इनको अपने अधीनमें रक्खे। इसके सम्बन्धमें कोई नवीन संधिपत्र नहीं तैयार हुआ। बृटिश गवर्नमेण्टने तबसे यहांतक उन ग्रामों पर अपना अधिकार किया था कि उक्त कई ग्रामोंके अतिरिक्त महाराजके मालानीनामक देशको भी ले लिया, जो जोधपुरके पोलिटिकल एजेण्टके अधीनमें शासित होता आया था। यद्यपि मालानी देशके अधिनायकने जोधपुरपतिकी आनुगत्यता स्वीकार की परन्तु वह पोलिटिकल एजेण्टकी आज्ञा पालनमें नियुक्त थे। एजेण्टने केवल उक्त देशोंसे वार्षिक ६८८२ रुपया संग्रह कर जोधपुरके महाराजको दिया था।

महाराज मानसिंह और अधिक दिनतक इस संसारमे न रह सके। उन्होने १८४३ ईसवीमे सितम्बर मासकी ५ तारीखको पुत्रहीन अवस्थामें इस मायामय शरीरको त्यागदिया। महाराज मानसिहके चरित्रोकी समालोचना करनेका हम कुछ प्रयोजन नही देखते, कारण कि महामान्य टाड् साहबने १८२३ ईसवीतक मानसिंहके शासनको वर्णन किया है, पाठक उसको पढकर उनके चरित्रोके सम्बन्धमें स्वय न्यायसंगत मंतव्य गठन कर सकते है।

सत्रहवाँ अध्याय १७.

मारवाड़के सिंहासनके अधिकारीको चुननेके लिये बृटिश गवर्नमेण्टका मानसिहकी रानी और राठौर सामन्तोंको अनुरोध करना; मारवाड़के सिहासन पर अभिषिक्त होनेके लिये धौंकलसिंहकी प्रार्थना, उनकी प्रार्थनाका अस्वीकार होना; अत्यन्त कुटुम्बी अहमदनगरके महाराज तख्तसिंहके अभिषिक्त करनेके लिये रानी और सामन्तोंका प्रस्ताव, तख्तसिहका परिचय; ईडर और अहमदनगरका संक्षिप्त विवरण, कर्नल टाड् साहबकी पूर्वकामनाका सफल होना; बृटिश गवर्नमेण्ट का सम्मति देना; महाराज तख्तसिंहका अभिषेक, महाराज तख्तसिंहका अहमदनगरको अपने अधीन करनेके लिये कामना करना; उसके सम्बन्धमें ईडरपतिकी आपत्ति; महाराज तख्तसिंहका अहमदनगरका स्वत्वाधिकार छोड़ना, कुमार यशवन्तसिहका मारवाड़से लौटना; ईडरराज्यके साथ अहमदनगरका मिलना; महाराज तख्तसिंहके शासनमें सामन्तोंका असंतोष प्रकाश, बृटिश गवर्नमेण्टका अमरकोटके किलेपर अधिकार करना; मारवाड़पतिका उस किलेके पानेकी प्रार्थना करना; सुनकर भी महाराजको उस किलेके देनेमें गवर्नमेण्टका असम्मति प्रकाश करना, किलेके बदलेमे हानि पूरण करनेका प्रस्ताव करना; दुर्ग सम्बन्धी शेष मीमांसा; उसके सम्बन्धका स्वीकार पत्र, सन् १८५७ के सिपाही विद्रोहके समय महाराज तख्तसिंहका बृटिश गवर्नमेण्टको सहायता देना; उस सहायताका पुरस्कार स्वरूप अंग्रेज राजप्रतिनिधिका मारवाड़ राजवंशको दत्तक पुत्रके ग्रहण करनेकी सनद देना, सनदपत्र; तख्तसिंहका घाणेरावपर अधिकार करना; सामन्तोंकी आपत्ति, असंतोप, फिर विद्रोहके लक्षण प्रकाश; उसके सम्बन्धके उपद्रवोंका निवारण; अजमेरके दरबारमें महाराज तख्तसिंहका अशिष्टाचरण, कलंकसंचय, दंड, महाराज तख्तसिंहकी मृत्यु।

महाराज मानसिंहकी मृत्यु होते ही मारवाड़का राजसिहासन सूना होगया। महाराजके एकमात्र प्राणप्यारे पुत्र छत्रसिंह पहले ही परलोक सिधारगये थे, तथा महाराजने किसीको भी अपने उत्तराधिकारी स्वरूपसे दत्तक नहीं लिया था। इस कारण सबसे पहले तो यह प्रश्न उठा कि उनके पीछे कौन सिंहासन पर बैठेगा। बृटिश गवर्नमेण्टने इस प्रश्नकी मीमांसा करनेके लिये, मानसिंहकी रानी, सामन्त, और राजकर्मचारियोंके निकट यह प्रस्ताव किया कि चिरप्रचलित जातीयरीतिके मतसे किसको मारवाड़का राजतिलक देना उचित है, इसका आपही विचार कर लीजिये।

जिस समय यह प्रश्न मारवाड़के चारोंओर उठ रहा था उस समय अभागे धौकलसिंहने फिर मारवाड़के सिंहासन पर अभिषिक्त होनेके लिये वृटिश गवर्नमेण्टके समीप एक प्रार्थनापत्र भेजा । गवर्नमेण्टने देखा कि सर्व साधारण ही इनसे अप्रसन्न है, इस कारण धौकलसिंहकी प्रार्थना स्वीकार न की गई । इसी समयसे धौकलसिंहकी आशा चिरकालके लिये एकबार ही लुप्त होगई । राजरानी और सामन्तोने चिरप्रचलित रीतिके अनुसार बम्बई प्रसिडेन्सीके अन्तर्गत अहमदनगरपति महाराज बख्तसिंहको मारवाड़के सिंहासन पर अभिषिक्त करनेके लिये वृटिश गवर्नमण्टके निकट प्रस्ताव उपस्थित किया ।

महाराज तख्तसिंह कौन हैं और क्यो वह निर्धारित हुए हैं ? पाठकोंके कौतूहल निवारण करनेके लिये हम इस स्थानपर उनके सम्बन्धके कई ज्ञातव्य विषयोंके वर्णन करनेकी अभिलाषा करते हैं । मारवाड़पति महाराज अजितसिंहके तीसरे पुत्र आनंदसिंहको ईडरके महाराजने, तथा चौथे पुत्र रायसिंहको मालेवेके अन्तर्गत जीवरेके महाराजने दत्तकपुत्ररूपसे ग्रहण किया था । महात्मा टाड् साहबने अजितकी वंशावलीमे अपना यह मत प्रकाशित किया है, तथा टाड् साहब भ्रमसे रायसिंहके नामको इस प्रकारसे लिख गये हैं । परन्तु कर्नल म्यालिसन और अचिसन इत्यादिकी पुस्तकोंसे जाना जाता है कि महाराज अजितके दो पुत्र १७२९ ईस्वीमे अपनी सेना साथ ले ईडर और अहमदनगरमे जा उन दोनो देशोंपर अपना अधिकार कर स्वाधीनभावसे राज्य करने लगे थे । तख्तसिंह उक्त अहमदनगरपति रायसिंहके प्रपौत्र थे । अहमदनगरपति पृथ्वीसिंहने तख्तसिंहके पुत्र यशवन्तसिंहको दत्तक पुत्रस्वरूपसे ग्रहण किया था । पृथ्वीसिंहके प्राण त्याग करते ही महाराज तख्तसिंह जसवन्तसिंहके नामसे राज्यशासन करते थे; मारवाड़की राजरानी और सामन्तोंने देखा कि महाराज अजितके वंशमे यह तख्तसिंह ही सिंहासन प्राप्तिके अधिकारी हैं; निकट आत्मीय और योग्य पात्र है, इस कारण उनको मारवाड़ राज्यका भार देनेके लिये सभीने एकमत होकर वृटिश गवर्नमेण्टके निकट यह प्रस्ताव किया । महात्मा टाड् साहब मारवाड़के इतिहासके अंतमें कह गये है कि पितृहन्ता अभयसिंह और बख्तसिंहके महापापोंके फलस्वरूप उनके उत्तराधिकारी मारवाड़को छार–खार करते है, इस कारण मानसिंहको सिंहासनसे रहित कर अजितके अपर पुत्रोंसे उत्पन्न ईडरके राजा किसी एक पुत्रको मारवाड़के सिंहासनपर अभिषिक्त करना उचित है । साधू टाड् साहब १८२३ ईस्वीमें इस प्रकारसे वर्णन कर गये हैं, १८४३ ईस्वीमे वह कार्य पूरा होगया, वृटिश गवर्नमेण्टने महारानी और सामन्तोंके उक्त मतमे शीघ्र ही सम्मति दी, महाराज तख्तसिंह मारवाड़के सिंहासनपर विराजमान हुए । इनके अभिषेकका कार्य बड़ी धूमधामसे होगया ।

---

(१) यह बात गलत है ।

(२) रायसिंहके प्रपौत्र नहीं थे अनन्तसिंहके प्रपौत्र थे ।

महाराज तख्तसिंह मारवाड़के सिंहासन पर विराजमान हुए, परन्तु अहमदनगर राज्यको भी अपने अधीनमें रखनेके लिये इन्होंने अपने पुत्र यशवन्त सिंहको शीघ्र ही वहां भेजदिया। परन्तु इस समय ईडरके महाराजने इसके सम्बन्धमें एक भयंकर काण्ड उपस्थित किया। उन्होने कहा कि महाराज तख्तसिंह जब कि मारवाड़के सिंहासन पर विराजमान हुए हैं, तब अहमदनगर राज्यपर उनका कुछ भी अधिकार नहीं है, अहमदनगर ईडरमें शामिल है, इस कारण उक्त देश इस समय ईडरके अधिकारमें होजायगा। महाराज तख्तसिंहने कहला भेजा कि मैं स्वय अहमदनगरका अधीश्वर नहीं हूं मेरे पुत्र यशवन्तसिंहको अहमदनगरके भूतपूर्व अधीश्वर पृथ्वीसिंहने दत्तकपुत्र और उत्तराधिकारीरूपसे ग्रहण किया था, इस कारण वह अहमदनगरका अधिकारी है। मैंने केवल यशवन्तसिंहके नामसे अहमदनगरको शासित किया था, इस कारण मेरे मारवाडके सिंहासन पर अभिषिक्त होनेसे भी यशवन्तसिंहका अधिकार नष्ट नहीं हुआ। ईडरपतिने इसका उत्तर भेजा कि यद्यपि यशवन्त सिंह दत्तकपुत्र रूपसे ग्रहण किये गये थे, परन्तु आपने जब गत वर्षतक अहमदनगरके अधीश्वर नामसे परिचय देकर अधीश्वररूपसे समस्त शासनकार्य किये थे, तब यशवन्त सिंहका अधिकार पहिले ही लुप्त होगया। इस कारण आपके मारवाड़के सिंहासन ग्रहण करनेके साथ चिर प्रचलित रीतिके मतसे अहमदनगर पर जो आपका अधिकार था, यह लुप्त होगया है, कई वर्षतक इस प्रकारसे आन्दोलन होता रहा; वृटिश गवर्नमेण्टने ईडरके महाराजकी उक्तिको न्यायसंगत तथा चिर प्रचलित रीति संगत कहकर स्वीकार किया, महाराज तख्तसिंहने शीघ्रही अहमदनगरको छोड़दिया; कुमार यशवन्तसिंह छः वर्षके पीछे अहमदनगरको शासन करके मारवाड़को लौटआये। अहमदनगर १८४८ ईस्वीमे ईडरराज्यके अधिकारमें होगया।

महाराज मानसिंहके दीर्घ शासनसे मारवाड़ एकवार ही क्षार-खार होगया था इस कारण नवीन मारवाड़ेश्वर तख्तसिंहके शासनके आरंभसे सम्पूर्ण राठौर जाति आशा करनेलगी कि महाराज अपने न्यायशासनसे शांतिकी जल वर्षाकर जातिका कल्याण करेंगे, परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि महाराज तख्तसिंहने सर्वसाधारण प्रजाकी वह आशा फलवती न की। वह राजकार्यके प्रत्येक भागकी ओर स्वयं दृष्टि, न रखकर केवल मंत्रियोंके ऊपर समस्त भार अर्पण कर निश्चिन्त हो बैठे। मत्रीगण यह सुअवसर पाकर फिर अपनी इच्छानुसार शासन प्रारंभ कर केवल महाराजके मनको संतुष्ट रखनेमें नियुक्त हुए। इसी कारणसे समस्त मारवाड़में फिर असतोषकी अग्नि प्रज्वलित होगई। पर जैसे, महाराज मानसिंहने विशृंखल शासनसे चारोओर जिस प्रकारसे पीड़न अत्याचार, उपद्रव और अंतमें विद्रोह तकको दिखा दिया था, सत्यके सन्मानकी रक्षाके लिये इतना तो हम अवश्य कहेंगे कि महाराज तख्तसिंहके शासनमें वह दृश्य आकर उपस्थित नहीं हुआ। इतना अवश्य कहा जायगा, कि प्रजाने जितनी आशा अपने कल्याणकी की थी, महाराज तख्तसिंहके शासनके प्रारंभमें उतनी शांति प्रजाको न मिलसकी।

विख्यात अमरकोटका किला और उसके अधीनके देश सन् १७८० ईस्वीमे मारवाड़के अधीश्वरके अधिकारी तथा मारवाड़के राज्यमे मिल गये थे परन्तु मारवाड़के अत्यन्त दुर्दिनोंमे सिन्धदेशके अन्तर्गत तालपुरके अमीरने सन् १८२३ मे उक्त किले और देशको जीत लिया। पीछे वृटिश गवर्नमेण्टने सिधदेशको जीतनेके समय उस किले पर भी अपना अधिकार करलिया। प्रचलित संधिपत्रके मतसे गवर्नमेण्टने उस किलेको मारवाड़पतिको देनेका विचार किया। परन्तु वृटिश राजनीतिकी चतुरता को कौन समझ सकता है ? यद्यपि गवर्नमेण्टने प्रतिज्ञा की; और शेष समयके उपस्थित होते ही महाराज तख्तसिंहने उस प्रतिज्ञाको पूर्ण करानेका उद्योग किया, तब गवर्नमेण्टने यह न चाहा, स्वार्थ साधन करनेके लिये निश्चय करलिया कि अमरकोटका किला और उसके अधीन के देश जो उसके स्थान पर स्थापित हैं, और दुर्ग जैसे अभेद्य है, इससे उसको महाराजको न देकर अपने अधीनमे रखना कर्त्तव्य है। गवर्नमेण्टने इसकी कुछ भी परवाह न कर महाराज तख्तसिंहसे कहला भेजा कि अमरकोटकी सीमाके दुर्ग हमारे अनेक काममे आवेंगे, और दूसरे आपको इस देशसे किसी भाँति भी शांति नही मिल सकेगी, इस कारण किला हमारे ही अधिकारमे रहेगा; इसमें जो आपकी हानि होगी उतना रुपया देनेके लिये हम तैयार हैं। यद्यपि महाराज तख्तसिंह कम्पनीको प्रथम प्रतिज्ञा वद्ध और शेषमें उस प्रतिज्ञाको भंग करनेके लिये उद्यत हुआ देखकर अत्यन्त विस्मित हुए; परन्तु उनकी क्या सामर्थ्य थी कि जो वह इसमें विचार करनेके लिये कहते? वह मस्तक झुकाकर फिर गवर्नमेण्टके उस प्रस्तावको ग्रहण करनेके लिये सम्मत हुए। १८४७ ईस्वीकी ६ मार्चको ग्रटहेड साहबने महाराज तख्तसिंहकी ओरके वकीलसे प्रस्ताव करके भेजा कि महाराज तख्तसिंह पहिले संधिपत्रके मतसे सेनाके वेतनके हिसाबसे जो वार्षिक एक लाख पंद्रह हजार रुपया देते है उसमेंसे वार्षिक दश हजार रुपया छोड़ दिया जायगा। अर्थात् सेनाके वेतनके हिसाबसे महाराजको वार्षिक एक लाख पांच हजार रुपया देना होगा। वकीलने महाराज तख्तसिंहके निकट उस प्रस्तावको उपस्थित किया, कि महाराजको प्रकारान्तरमे उस क्षतिको पूरण करनेसे अमरकोटका सत्वाधिकार चिर कालके लिये गवर्नमेण्टको देना होगा। वृटिश गवर्नमेण्टने इसके सम्बन्धमे स्वतंत्र किसी संधिपत्र पर हस्ताक्षर न करके उक्त वकीलके निम्नलिखित पत्रमें सम्मति देकर इसको स्वीकार करलिया।

१८४७ ईसवी १९ मईका जोधपुरराज्यके वकीलका पोलिटिकल एजेण्टके निकट भेजा हुआ पत्र।

आपने विगत मार्च मासकी छठी तारीखको जो पत्र लिखकर उसमे अमरकोटके किलेको गवर्नमेण्टको लौटा देना, और उसकी हानिके पूर्णस्वरूपमे, वार्षिक जो ११५००० रुपया सेनाके खर्चके लिये महाराज देते है, उसमेंसे वार्षिक १०००० रुपया छोड़नेका जो प्रस्ताव किया है, मैं महाराजको उस पत्रका मर्म सुनाता हूं।

महिमवर महाराज कहते है, "कि अमरकोटका किला हमारा है, और इसमे जो हमारे सम्पूर्ण अधिकार हैं, वह सब प्रकारसे प्रकाशित हैं, साहब वहादुर (वृटिश गवर्नमेण्ट) को वह भली भाँतिसे विदित है। यह अमरकोटका किला जितने दिनोंतक गवर्नमेण्टके अधिकारमे रहेगा उतने दिनतक वह इसको अपना ही कहकर अनुभव कर सकेगे, परन्तु किसी समयमे गवर्नमेण्ट इसको और किसीको देनेकी इच्छा करै तो वह हमको दे और किसीको न दे, कारण कि अमरकोट हमारा है, इस कारण हमको देना होगा। हम राजस्थानकी भूमिके स्वत्वाधिकारको सबसे श्रेष्ठ मानते है, इस कारण जिस दिन अमरकोटा हमारे हाथमें आजायगा वह दिन हमारी वड़ी प्रसन्नताका होगा।"

"इस समय १०८००० रुपये वृटिश गवर्नमेण्टको जो कर दिये जाते हैं उसमेंसे वार्षिक १०००० रुपया छोड़ देना होगा। कारण कि भूमि के वदलेमे यह दश हजार रुपया छोडा जाता है, और भूमिके ऊपरका कर ग्रहण करनेके योग्य है, इस कारण उस करसे यह रुपया छोड़ देना उचित है।"

(यथार्थ अनुवाद)

(हस्ताक्षर) एच. एच. ग्रेट हेड,

पोलिटिकल एजेण्ट।

सन् १८४७ ईसवीकी १७ जूनको सकाउन्सेल गवर्नर जनरलको स्वीकृत और धार्य हुआ*।"

सन् १८५७ ईसवीमे समस्त भारतवर्षमें प्रवल सिपाही विद्रोहाग्नि प्रज्वलित होगई। जिस समय नाना साहव कानपुर और इलाहावादमे सौ २ अंग्रेज तथा सैकड़ो अंग्रेज महिलाओ और सैकडों छोटे २ वालकोका प्राण नाशकर अपनी महापापकी प्रतिहिंसावृत्तिको सफल करने लगे, जिस समय मेरठ, दिल्ली, एवं लखनऊ इत्यादि देशोपर सिपाहियोंकी सेना संहारमूर्ति धारणकर अंग्रेज राजपुरुष और अंग्रेजी सेनाको वंदीकर उनके सम्मुख उनकी स्त्रियोका सतीत्व नाश करके उनके वालकोंको नंगी तलवारोके अग्रभागसे भेदनकर अंतमे सवका संहार करने लगी, जिस समय प्रत्येक अंग्रेज अपने २ प्राणोके भयसे जहां तहां भागने लगे, जिस समय दिल्लीके नाममात्रके वादशाहने भारतमे यवनराज्यका विस्तार करनेके लिये उस विद्रोहके उपलक्षमे मस्तक उठाया, जिस समय भारतमे प्रत्येक अग्रेजके मुखसे हाहाकारकी ध्वनि उठने लगी, जिस समय सिपाहियोकी सेनाने नगर २ और ग्राम २ पर अपना अधिकार करना प्रारंभ करदिया, जिस समय भारतसे वृटिश शासनशक्ति प्राय: लोप होतीचली उसी समयमे वृटिश गवर्नमेण्टने भारतके अन्यान्य राजाओंकी समान मारवाड़के महाराज तख्तसिहके निकटसे भी सहायता मागी। महाराज तख्तसिंहने तुरन्त ही १८१८ ईस्वीके सधिपत्रके अनुसार गवर्नमेण्टकी उस महाविपत्तिमे सहायता करनेके लिये

* Aitchison's Treaties

अपनी सेना भेज दी । १८३५ ईस्वीमे वृटिश गवर्नमेण्टने जोधपुरमे शान्तिकी रक्षाके लिये महाराजके नामसे जो नवीन सेना तैयार की गई थी वह अजमेरमे रक्खी गई थी, जोधपुरके महाराजके यहाँसे उस सेनाके वेतनके हिसावसे एक लाख पंद्रह हजार रुपया लिया जाता था, भारतके इस विद्रोहके समयमें वह सेना भी विद्रोही होगई । महाराज तख्तसिहने उस विद्रोही सेनाको दमन करके अपनी राजधानी मे अंग्रेजोको आश्रय दिया, विद्रोहके शान्त होजानेपर वृटिश गवर्नमेण्टने इसके पुरस्कारमें अन्यान्य देशीय राजाओके समान महाराज तख्तसिहको निम्नलिखित सनद दी।

" महारानी विक्टोरियाकी अभिलाषा है कि भारतवर्षके जो राजा इस समय अपने २ राज्यको शासन कर रहे हैं उन सवका राज्य उनके वंशधरोके द्वारा शासित हो; और उनके वंशके पदसम्मानको अक्षतभावसे रखना होगा, उस अभिलाषाको पूर्ण करनेके निमित्त मै आपको इसपत्रके द्वारा प्रगट करती हूं,कि आप और आपके भावी स्थलाभिषिक्तोंके पुत्र न होनेपर आप अथवा आपके राज्यके भावी उत्तराधिकारी हिन्दूविधान और अपने वंशकी रीतिके अनुसार दत्तकपुत्र ग्रहण करसकैंगे, गवर्नमेण्ट उसमे अपनी सम्मति देगी ।

जवतक आपका वंश राजभक्तरूपसे स्थित रहैगा, और जो संधिके द्वारा वृटिश गवर्नमेण्टके साथ वाध्यता हुई है उस संधि इत्यादि पर जवतक विश्वास रक्खा जायगा तवतक किसी कारणसे भी इस अंगीकारको भंग नहीं किया जायगा ।

(हस्ताक्षर) केनिग* ।

राठौंरोकी सामन्त मंडलीमे जो सम्प्रदाय राजाके यहां प्रतिपत्ति प्राप्तकर एवं शासनकी सामर्थ्य चलानेमें समर्थ न होकर महाराज तख्तसिंहके ऊपर विरक्त हुई थी, १८६७ ईस्वीमें उन्होने मारवाड़मे फिर एक शोचनीय कांड उपस्थित करनेका सुअवसर पाया, इसी संवत्‌में घाणेरावके सामन्तने पुत्रहीन अवस्थामें प्राण त्याग किये,उनके भ्राताने सामन्त पदको ग्रहण किया । परन्तु महाराज तख्तसिंहने उसे चिरप्रचलित रीतिके विरुद्ध जानकर घाणेराव देशपर अधिकार करनेके लिये एक सेना भेज दी । शीघ्रही राजसेनाके दलने घाणेराव पर अधिकार कर लिया, समस्त असंतुष्ट सामन्त दल वांधकर फिर राज्यमें विद्रोह उपस्थित करनेके पूर्वलक्षण प्रकाश करनेलगे । तव महाराज तख्तसिहके जो अनेक पुत्र उत्पन्न हुए थे, उन्होंने उनमेसे एकको घाणेरावके देनेकी इच्छा प्रकाश की, वस यही काण्ड उपस्थित हुआ, परन्तु सामन्तोंने इसको अत्यन्त अन्याय जानकर वृटिश गवर्नमेण्टके निकट प्रवल अनुयोग उपस्थित किया । "उनका प्रधान अनुयोग यह था कि महाराजने जो अन्याय करके घाणेराव पर अधिकार किया है, उन्होंने सामन्तोको राजसभामे नहीं बुलाया है, तथा अपनी इच्छानुसार सभीको पीड़ित किया है" । इसीसे अप्रसन्न सामन्त राज्यमे विद्रोह फैलानेके लिये सव प्रकारसे उद्योगी हुए थे, परन्तु एकमात्र वृटिश गवर्नमेण्टके भयसे उनकी वह कामना मनकी मनमे ही

* Artchison's Treatres.

रहगई। और दूसरी ओर राज्यमे शांति स्थापन तथा सामन्तोके असंतोष निवारण करनेके लिये वृटिश गवर्नमेण्टने महाराज तख्तसिंहको अनुरोध किया। गवर्नमेण्टने उसी अनुरोधके मतसे महाराज तख्तसिंहके समस्त उपद्रवोके निवारणके साथ ही साथ अपना भी प्रयोजन सिद्ध करलिया।

सन् १८७० ईस्वीमे महाराज तख्तसिंहने अभिमानके वश हो अपनी दुर्वुद्धिसे एक अत्यन्त ही निन्दनीय कार्य करके अपनेको कलंकित और अपमानित किया। इसी सनमे भारतवर्षके भूतपूर्व मृत अंग्रेज राजप्रतिनिधि तथा गवर्नर जनरल अर्ल मेओने राजपूतानेमे भ्रमण करनेके समय अजमेरमे जाकर एक दरवार किया। राजस्थानके सभी देशीय राजाओंको उस दरवारमे बुलाया गया। उनके आमंत्रणसे राजस्थानके अन्यान्य राजाओंके समान महाराज तख्तसिंह भी अपने पुत्र यशवन्तसिंहके साथ अजमेरमे आये। दरवार अनुष्ठानके पहले ही चिरप्रचलित रीतिके अनुसार यह प्रस्ताव हुआ कि जिस २ राजकीय दरवारके समय सव राजा इकट्ठे होगें उस समय उदयपुरके महाराणा जोधपुरपति सवसे आगे आसन पावैंगे। यह समाचार सुनते ही महाराज तख्तसिंहने अत्यन्त अप्रसन्न होकर कहा कि जो उदयपुरके महाराणांके आगे मुझे आसन नहीं दिया जायगा तो मै दरवारमें नहीं जाऊँगा। महाराज तख्तसिंहकी इस आपत्ति पर गवर्नमेण्टकी ओरसे उनको यह समाचार भेजा गया; कि इस आसनके सम्वन्धमे वहुत कालके पहले विचार होकर जो निश्चय होगया है उसका विचार अव दूसरी वार किसी प्रकारसे भी नहीं होसकता, परन्तु महाराज तख्तसिंहने इस वातको कुछ भी न सुना। इन्होने अपनी प्रतिज्ञाको ही प्रवल रखनेका यत्न किया। पोलिटिकल एजेण्ट और कुमार यशवन्तसिंह तख्तसिंहको वारम्वार समझाने लगे कि आप इसमें कुछ आपत्ति न कीजिये। गवर्नमेण्टने जो निश्चय कर दिया है उसी प्रकारसे उदयपुरके राणाके परिवर्ती आसनको ग्रहण कर उनके मानकी रक्षा कीजिये। तथापि महाराज तख्तसिंह किसी प्रकार भी सम्मत न हुए।

ठीक समयमे सभास्थलमें एक २ करके सभी राजा आकर अपने २ आसन पर बैठ गये। क्रमानुसार दरवारका समय उपस्थित होगया, महाराज तख्तसिंहके आनेकी वाटमे सभी बैठे रहे परन्तु तौ भी महाराजने दर्शन न दिया। महामान्य अंग्रेज राजप्रतिनिधि अर्ल मेओ वहादुर दरवारके प्रारंभ होनेका समय वीतजाने पर महाराज तख्तसिंहके आनेकी ओर एक घंटे तक राह देखने लगे, दृढ़ प्रतिज्ञ महाराज तख्तसिंह तथापि न आये, यह देखकर अंतमें राजप्रतिनिधि अर्ल मेओने शीघ्रही महाराज तख्तसिंहके आसनको सूना रखकर दरवारका कार्य प्रारंभ करादिया दरवार समाप्त होजानेके पीछे अंग्रेज राजपुरुष गणोंने यह व्यवस्था की कि मारवाड़पति महाराज तख्तसिंहने महामान्य राजप्रतिनिधि अर्ल मेओके निमंत्रणका तिरस्कार कर उनके ऊँचे पदका अपमान किया है। अस्तु महाराज तख्तसिंहके साथ भी उसी प्रकारका व्यवहार करना कर्त्तव्य है, तुरन्त ही राजप्रतिनिधिके डेरोमेसे महाराज तख्तसिंहके निकट इस मर्मका एक आज्ञापत्र भेजागया, "महाराज! कल प्रभात

होते ही अपने अनुचरोंको साथ ले अजमेरको छोड़कर अपने राज्यको चले जॉय। प्रचलित नियम यही है। इस प्रकारसे दरबारके समयमे देशीय राजा आये थे चलते समय उन सभीने विदा लेकर राजप्रतिनिधिके डेरोंमे जा सन्मान ग्रहण किया, और राजप्रतिनिधिने भी राजाओंके यहाँ जाकर साक्षात् किया; परन्तु यहाँ यह निश्चय हुआ कि महाराज तख्तसिंहके प्रति वह सन्मान नही दिखाया जायगा। वह जिस समय अजमेरसे जाने लगे उस समय प्रचलित नियमके साथ विदा होनेके समय तोपोंकी ध्वनि भी नहीं कीगई। महाराज तख्तसिंहके सन्मानमें जितनी तोपोंकी संख्या नियत की गई थी इस समय उसमेंसे दो तोपै घटा दी गई। महाराज तख्तसिंह इस प्रकारसे अपमानित, कलंकित, और दंडित होकर दूसरे दिन प्रातः काल ही अपने राज्यको चले गये। परन्तु यहाँपर इतना हम अवश्य कहैंगे कि यद्यपि महाराज तख्तसिहने अत्यन्त अशिष्टाचरण करके कलंकको संचय किया परन्तु उनके पुत्र कुमार यशवन्तसिंहने पहिलेसे ही पिताको राजप्रतिनिधिकी आज्ञापालन करनेके लिये विशेष अनुरोध किया था। पिताको मंदबुद्धि देखकर कुमार यशवन्तसिंहने दरबार भंग होजानेके पीछे राजप्रतिनिधिके डेरोंमे जाकर उनके साथ साक्षात् कर अनेक भाँतिसे विनय कर उनका सन्मान किया, इससे राजप्रतिनिधि इनसे परमसंतुष्ट हुए।"

इस प्रकारसे महाराज तख्तसिंह बहादुर जीवनकी शेष दशामे वृथा कलंकित होकर थोड़े ही दिनोंमे अर्थात् १८७३ ईस्वीमें इस मायामय शरीरको छोड़कर चलबसे।

अठारहवाँ अध्याय १८.

महाराज यशवन्तसिंहका अभिषेक; शासनविभाग संस्कार; महाराजका कलकत्तेमे आना; भारतके भावी सम्राट्के साथ साक्षात्; महाराजको प्रथम श्रेणीके भारतनक्षत्रकी उपाधि प्राप्ति; दिल्लीकी राजसूय समितिमें महाराजका जाना; स्मारक पताका और पदककी प्राप्ति; सम्मान सूचक तोपसंख्यावृद्धि; मारवाड़के इतिहासका उपसंहार।

महाराज तख्तसिंह बहादुरका स्वर्गवास होनेपर उनके ज्येष्ठ कुमार जसवन्तसिंह १८७३ ईसवीमे पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए, और इस समय बड़ी सावधानीसे

---

(१) महाराज तख्तसिंहको दरबारमें महाराणा उदयपुरके नीचे बैठना मंजूर नहीं था, इस लिये दर्बारमें नहीं गये। इसमें कोई बात कलंककी नहीं थी। दो तोपे जो उस समय सलामी की घटा दी थी तो उनकी उन्होंने कुछ परवाह नही की थी। बल्कि उन्होंने लाट साहबकी इस तजवीजकी शिकायत पार्लेमेंट तक की थी और यह दलील की थी कि जब हम उनके बुलानेसे अजमेरमें चले गये थे तो फिर हमारी बैठक क्यों ऐसी तजवीज की कि जिससे हमारा अपमान हुआ। हमारा और राणाजीका दरजा आपसके वर्तावमे बराबर है। इसका कुछ खयाल नहीं किया गया।

निर्विघ्न हो मारवाड़का शासन करने लगे। वर्तमान महाराज जसवन्तसिंह बहादुरने सच्चरित्रता, नीतिज्ञता, विज्ञता तथा शासन विषयमे विशेष अभिज्ञता अपने पिताके शासनसमयमें ही भलीभाँतिसे प्रकाशकी। भारतवर्षकी गवर्नमेण्ट इनके आचरणोंसे पहलेसे ही संतुष्ट होगई थी, इसकारण इनके राजपदपर अभिषिक्त होते ही राजप्रतिनिधि बहादुरने विशेष आनंदप्रकाशक पत्र द्वारा भारतेश्वरीके नामसे महाराजको अभिनन्दन करनेमे भी त्रुटि न की। बड़ी धूमधामके साथ अभिषेक कार्य होजानेके पीछे महाराज जसवन्तसिंह बहादुरने अपने राज्यके उत्कर्ष साधनमे भलीभाँतिसे मन लगाकर सभीके मनोरथ पूर्ण किये। सामन्तोका विद्वेष निवारण और राज्यके प्रत्येक प्रान्तमें शांति स्थापन करनेके लिये यथायोग्य पहरेवालोंको नियत करना, राजस्वकी वृद्धिके लिये श्रेष्ठ उपाय करना इत्यादि विषयोंसे महाराजने थोड़े दिनोमें ही सफलता प्राप्त की।

भारतके भावी सम्राट् प्रिन्स आफ वेल्स बहादुरके १८७५ ईस्वीमे भारतमे आनेके समय भारतवर्षकी गवर्नमेण्टने उनके सम्मानको बढ़ानेके लिये भारतवर्षके प्रधान २ राजाओको कलकत्तेसे बुलाया। राजप्रतिनिधि लार्ड नार्थब्रुकके बुलानेसे महाराज जसवन्तसिंह अनुचरोको साथ ले कलकत्तेमे आये। १८७५ ईस्वीकी २३ वीं दिसम्बर को प्रिन्स आफ वेल्स बहादुरके कलकत्तेमे आते ही, मारवाड़पतिने अन्यान्य राजाओके साथ भारतके भावी सम्राट्को बड़े आदरभावके साथ ग्रहण किया। इसके पीछे कलकत्ते के गवर्नमेण्टके यहाँ जाकर भावीसम्राट्के साथ साक्षात् कर फिर सन्मान दिखाया; भावी सम्राट्ने भी महाराजके यहाँ जाकर साक्षात् किया। १८७६ ईस्वीकी १ जनवरी को कलकत्तेके किलेमें भावी सम्राट्ने एक बड़ाभारी दरबार किया। उस दरबारमे महाराज जसवन्तसिंह बहादुरको बड़े आदरभावके साथ ग्रहण किया। इस दरबारमे भारतके प्रथम श्रेणीके कितने ही देशी राजाओको भारतके भावी सम्राट्ने अपने हाथसे महा सन्मानसूचक उपाधियां दीं थी। इन्हींमे महाराज जसवन्तसिंह भी थे। मरुक्षेत्र विजयी सियाजीने केवल अत्यन्त सामान्य "राव" की उपाधि धारण कर संसारसे अक्षय कीर्तिको प्राप्त किया था, इसके पीछे उन्हीं सियाजीके वंशधर उदयसिंहको बादशाह अकबरसे "राजा" की उपाधि मिली; इससे पीछे दिल्लीके यवनसम्राट्ने इन मारवाड़ पतिको "महाराजाधिराज राजराजेश्वर" कहकर संभाषण किया, परन्तु महाराज जसवन्तसिंह इस दरबारमें सबसे पहले विजातीय उपाधिके भूषणसे भूषित हुए। देशीय राजा, अथवा राजकर्मचारी और सम्भ्रान्त प्रजाका सन्मान बढ़ानेके लिये भारतेश्वरी विक्टोरियाने, "भारतनक्षत्र" नामकी एक श्रेणीकी नूतन उपाधिकी सृष्टि की थी। वह तीन श्रेणीमें विभक्त हुई। महाराज जसवन्तसिंह बहादुरको वह प्रथम श्रेणीकी उपाधि मिली। भारतके भावी सम्राट्ने अपने हाथसे महाराजके गलेमे वह उपाधिका पदक पहिनादिया। विदेशी सेक्रेटरीने सभास्थानसे ऊँचे स्वरसे कहा-"महाराज सर जसवन्तसिंह बहादुर, नाइट ग्रांड कमाण्डर स्टार आफ इण्डिया।" मारवाड़पति इस प्रकारसे महासन्मानित हो अत्यन्त प्रसन्न हो अपने राज्यको चले आये।

वृटिशराज्ञी महारानी विक्टोरियाके सन् १८७७ ईस्वीमें भारतेश्वरी उपाधि धारणके उपलक्षमें दिल्लीमें जो राजेसूय समिति हुई थीं, महाराज सर जशवन्तसिंह बहादुर भी उस राजसूयमें अपने पारिषद आत्मीय जन और सेनाके साथ आमंत्रित होकर गये थे। १८७६ ईस्वीमे २८ दिसम्बरको महाराज सर जसवन्तसिंह बहादुर महिमवर राजप्रतिनिधि लार्ड लिटन बहादुरसे साक्षात् करनेके लिये उनके स्थानपर गये, इनके सम्मानके लिये सत्रह तोपैं छूटीं, स्थानके सम्मुख खड़े होकर अंग्रेजी सेनाने युद्धकी रीतिके अनुसार महाराजकी सलामी ली, भारतवर्षकी गवर्नमेण्टके वैदेशिक सेक्रेटरीने आगे बढ़कर महाराजको सन्मानके साथ ग्रहण किया, और बड़े आदरभावके साथ वह उन्हें अपने यहां ले गये। राजप्रतिनिधि लार्ड लिटन बहादुरने सिंहासनसे कुछ दूर आगे बढ़कर महाराजको बड़े आदरके साथ उनका हाथ पकड़कर अपनी दहिनी ओर सिंहासनपर बैठाला; इसके पीछे कुशल प्रश्न पूंछनेलगे। मारवाड़ राजवंशने भारतमे वृटिश शासनमे जो सहायता की थी उसका वृत्तान्त सुनकर अत्यन्त संतोप प्रकाश किया, दो अंग्रेजी सैनिकोंने एक सुवर्णके डंडेपर लगी हुई अत्यन्त रमणीय पताकाको लाकर सम्मुख खड़ा किया। राजप्रतिनिधि शीघ्र ही सिंहासन छोड़कर उस पताकाकी ओर गये, और बड़े संतोषके साथ निम्नलिखित उक्तिसे उन्होंने महाराजके हाथमें वह पताका दी।

" महाराज! आपके वंशके राजचिह्नोसे अंकित यह पताका महामान्या राज्ञीकी स्वकीय उपहारस्वरूप है—वह भारतेश्वरीकी उपाधि धारणके चिह्नस्वरूप महिमवरको उपहारमें देती है "।

" इंगलैण्डके सिंहासन और आपके राजवंशके साथ जो दृढ़ सम्बन्ध विराजमान है तथा प्रधान शासनकी सामर्थ्य (अंग्रेज गवर्नमेण्ट) आपके वंशकी प्रबलता सुख स्वच्छंदता और अविनाशिताके दर्शनकी अभिलाषी है। आप जबतक इस पताकाको उड़ावेगे, तबतक वह आपके स्मृतिमार्गमे उदित होगी महामान्याका ऐसा विश्वास है। "

महाराज सर जसवन्तसिंह बहादुरने बड़े आदरमानके साथ उस पताकाको ग्रहण किया; फिर लार्ड लिटन बहादुरने भारतेश्वरीकी मूर्तिसे अंकित एक सुवर्णका पदक महाराजके गलेमें डालकर कहा;—

" महाराज! राज्ञी एवं भारतेश्वरीकी आज्ञानुसार मैंने इसके द्वारा आपको विभूपित किया, मै ऐसी आशा करता हूं कि आप इसको दीर्घकाल तक धारण करैगे;

---

(१) देहली दरबार।

(२) सुवर्णके डंडेके शिरोभाग पर सुवर्णका राजमुकुट, उसके नीचे सुवर्ण रंजित दो मुखका बरसा समान्तरालभावसे स्थित था, उसके नीचेके भागमें ताम्बूलके आकारकी झालर युक्त पताका लटक रही थी। पताकाके एक ओर जोधपुरराजका चिह्न अंकित था, और दूसरी ओर कैसरहिन्द लिखा हुआ था। सन् १८७७ ई० के देहली दरबारमें इसी प्रकारके निसान सब स्वतंत्र राजाओंको दिए गये थे।

और जो तारीख इसमें अंकित हुई है उसके स्मरण करनेके लिये आपके वंशधर उत्तराधिकारी इसको दीर्घकाल तक पदक रूपसे रखनेमें समर्थ होंगे "।

मारवाड़के महाराजने इस स्मारक-पदकको बड़े आदरके साथ अपने गलेमें पहिन लिया, राजप्रतिनिधिने फिर हँसते २ कहा, कि आज आपकी तोपोंकी सलामीकी संख्या बढ़ा दी गई, अर्थात् जितनी तोपोंकी सलामी हुआ करती थी उनसे भी अधिक बढ़ाई गई। महाराज इस दिनसे पहिले बृटिश अधिकारी किसी देशमें जाते तो इनके सन्मानके लिये सत्रह तोपें छूटा करती थीं, परन्तु इस समय यह नियत होगया कि महाराज जबतक जीवित रहैं गे तबतक इनके सन्मानके लिये उन्नीस तोपें छूटा करेंगी। इस प्रकारसे महाराज जसवन्तसिह सन्मान पाकर अपने स्थानको चलेगये।

दूसरे दिन २७ दिसम्बरको अंग्रेज राजप्रतिनिधि बहादुरने मारवाड़पति महाराज सर जसवन्तसिंह बहादुरके यहाँ जाकर साक्षात् किया, महाराजने बड़े आदरभावके साथ इनको ग्रहण किया। इसके पीछे दो जनवरीको महाराज राजसूय समितिमें जा अपने कर्त्तव्य पालनके पीछे स्वयं अपनी राजधानीको लौटआये; महाराजके वर्तमान दीवान, अर्थात् मारवाड़के प्रधान मंत्री मेहता विजयसिहने अपनी दक्षता, विज्ञता और शासनकार्य की कुशलतासे उस १८७७ ईसवीकी पहली जनवरीको राजसूय समितिमें सन्मानसूचक " रायबहादुर " की उपाधि प्राप्त की। पंडित शिवनारायण इस समय महाराजके गुप्तमंत्रीका कार्य करते थे।

मारवाड़के प्रत्येक प्रान्तमें इस समय शांतिसती देवी विराजमान हो रही थी, सुशासनके गुणसे राजा और प्रजामें कुछ भी झगड़ा नहीं था। आत्मविग्रह नहीं, स्वजातिमे विद्वेप नहीं; सामन्तोमें षड्यंत्र नहीं, पहाड़ियोंके अत्याचार भी नहीं हैं। इस समय चारोंओरसे यही शब्द उठ रहा है शांति! शांति! शांति! वाणिज्यकार्य अटलभावसे चल रहा है, किसान लोग निर्विघ्नतासे धान्य उत्पादन कररहे हैं, प्रत्येक कार्य न्यायके अनुसार होता है। राजकीय करके संग्रहमे कोई बाधा नहीं होती। राजधानीमें विद्यालय स्थापित होरहे हैं, उन विद्यालयोंमें अंग्रेजी भाषावककी शिक्षा दीजाती है, राज्यके भिन्न २ प्रान्तोमें शिक्षालय स्थापित हुए हैं, राजधानीमे अंग्रेजी चिकित्सालयोंका अभाव नहीं है, राज्यकी श्रीवृद्धिके लिये पूर्त्तकार्य विभाग भी स्थापित हुआ है। इन सब बातोंको देखकर और सुनकर जैसा महान् सुख होता है वैसेही स्मरण होताहै कि जिस राठौर जातिने शूरवीरता और बलविक्रम प्रताप प्रभुत्व एकता उद्दीपना, प्रतिभा, नीतिज्ञता एवं साहस और दृढप्रतिज्ञताके बलसे चिर-वीर-व्रतका अवलम्बन कर राठौर-राज्यके प्रतिष्ठाता सियाजीके समयसे स्वाधीन अवस्था तथा यवनोंकी पराधीनतामे भी भारतक्षेत्रमे चिरस्मरणीय अभिनय करके अनन्त यश और कीर्त्तिको संचित किया था, उन राठौरोंके वर्तमान वंशधरोंके वह समस्त सद्गुण इस समय कहाँ हैं? गवर्नमेण्टकी छत्र छायाके सहारे राठौर जातिको वह अपने सम्पूर्ण गुण संग्रह करने चाहिये।

उन्नीसवाँ अध्याय १९.

मारवाड़का विस्तार और जनसंख्या; भिन्नजातीय अधिवासी; जाट राजपूत, ब्राह्मण वैश्य और दासजाति; मृत्तिकाके गुणागुण; फलमूल, खानिज पदार्थ; लवणह्रद; मर्मर पत्थर और चूड़ेकी खान; टीन सीसा और लोहेकी खानें; फटकड़ी; शिल्पकौशल; वाणिज्यस्थली; वाणिज्य के द्रव्योंकी आमदरफ्त; पश्चिम भारतके वाणिज्य प्रधान स्थान; पाली; वणिकजाति; खैरतरा और ओसवाल; कूता; वाणिज्य द्रव्यवाही वणिकदल; आमदरफ्तीका परिमाण; वाणिज्य द्रव्यरक्षक चारण गण; वाणिज्यकी अवनति; उसका कारण; अफीमके वाणिज्यकी एक चोटिया; मूँढ़वा और वालोतरा; मिलोतका मेला; विचार विभाग; दंडदेनेकी रीति; साधारण व्यय; प्रतिपालित कैदियोंके ऊपर महाराजकी दया प्रकाश; सूर्य और चंद्र ग्रहण, राजकुमारका जन्म और राजाके अभिषेकके समय कैदियोंका छोड़ा जाना; सोगन अर्थात् अग्नि जल और तत्ते तेलसे अपराधियोंकी परीक्षा; पंचायत; राजस्व और उसकी रीति; बटाई वा धान्यका कर; सेहना और कनवारिया; साधारण कर; अंग कर; घासका कर; किवारी अर्थात् द्वार कर; द्वार करकी सृष्टिका मूल, भिन्न प्रकारका कर, उसका परिमाण; धनी वा करसंग्राहक; लवणह्रदका राजस्व; मारवाड़का मोट; राजस्व; सेनाकी संख्या वेतनभोगी सेनाका दल; सामन्तोंके अधीनकी सेना; सामन्तोंकी तालिका; आधुनिक विवरण।

महात्मा टाड् साहबने मारवाड़के इतिहासको वर्णन करके अन्यान्य ज्ञातव्य विषयोंसे पूर्ण एक और अध्याय लिखा है। यद्यपि वह अध्याय उस समयकी अवस्था का पूर्ण चित्र है, यद्यपि वर्तमान समयमे प्रायः उन सबकी गति वदल गई है, तथापि इस स्थानपर उसका वर्णन करना हमारा कर्त्तव्य है। हमारे पाठकोको इसके पढ़नेसे उस समयके सभी विषय भलीभाँतिसे ज्ञात होजॉयगे। हमारे पाठक आजकलकी अवस्थाके साथ उसका मिलान करके तृप्त होजॉयगे;–इस दीर्घ समयमे मारवाड़की आभ्यन्तरिक अवस्था श्रेष्ठ हुई है या नहीं; राजाका राजस्व, साधारण वाणिज्य और विचार विभागकी किस प्रकार उन्नति हुई है, यह भी उन्हे सरलतासे ज्ञात होजायगा। इस समय हमने इसके सम्बन्धमें किसी प्रकारसे भी मतामतको प्रकाश न करके केवल टाड् साहबकी उक्तिका अविकल अनुवाद करदिया है।

कर्नल टाड् साहबने मारवाड़ राज्यका इसप्रकार विस्तार लिखा है, "मारवाड़की राजधानी जोधपुर समान्तरालभावसे पश्चिममे गिराप और पूर्वकी ओर आरवलीके शिखरपर स्थित श्यामगढतकके देशके बीचमे स्थित है। इस समान्तराल रेखाका परिमाण अँग्रेजी २७० मील है। मारवाड़का और कोई अंश इतना विस्तारवाला नही है। सिरोहीकी सीमासे मारवाड़की उत्तर सीमातकके देश सभी दीर्घ विस्तारवाले है। इनका परिमाण दोसौ वीस मील है। डीडवाना और जालौरके उत्तर पूर्वकोनसे सॉचोरकी सीमाके अन्तमें दक्षिण पश्चिम कोनतक पृथ्वीका परिमाण

१ टाड् साहबके ग्रंथमें यह १६ वां अध्याय है दो अध्याय बीचमें अनुवादकके संगृहीत हैं।

साढ़े तीनसौ मील है। मारवाड़की चार सीमा एं इस प्रकारसे असरल हैं एवं एक २ अंश इस भावसे भिन्न २ राज्यके भीतर गया है कि त्रिकोण मितिकी सहायताके अतिरिक्त मारवाड़के विस्तारका ठीक निश्चय और पृथ्वीके परिमाण और उसकी सीमाका निर्णय करना असंभव है, इस समय उसका प्रयोजन नहीं है।"

"केवल लूनी नदीने ही प्रधानत: मरुक्षेत्रकी आकृतिके स्थान २ मे विभिन्न देश परिणत कर दिये हैं। यह लूनी नदी मारवाड़की पूर्वसीमाके अंत पुष्करसे निकलकर पश्चिमकी ओरको जाकर राज्यको दो भागोंमे विभक्त कर उर्वर और अनुर्वर देशकी सीमारूपसे गई है। यद्यपि इस तरगिनीसे दक्षिण किनारेसे अर्वलीके शिखरतकके विस्तारित भूखंड मारवाड़में अधिक समृद्धिशाली हैं, परन्तु ·वाहिनीके उत्तर प्रान्तके भूखंड क्या अनुर्वर हैं? यह नहीं कहा जा सकता। पाठक और पाठिका गण! नागौर देशको बीचमे छोड़ जोधपुर होकर बालोतरा देशतक एक कल्पित रेखा खैंचे तो यह भलीभाँतिसे समझ जाँयगे कि कौन देश उर्वर है, और कौन देश अनुर्वर है। उस रेखाके दक्षिणमे डीडवाणा, नागौर, मेरता, जोधपुर, पाली, सोजत, गोडवाड़, सिवाना, जालौर, भीनमाल और साञ्चोर पड़ते है। इन देशोंमेंसे बहुतसे उर्वर हैं उनमे वस्ती घनी है, हमें यह निश्चय है, कि इन सब देशोके प्रति वर्ग-माईलमे ८० मनुष्य वास करते हैं। उस कल्पित रेखाके उत्तर प्रान्तवर्ती देश इससे भिन्न हैं, उसको भी उपविभागमे विभक्त करनेका प्रयोजन है, कारण कि उत्तर पूर्व अंशमे नागौरके कितने ही अंश फलोदी और पोकरण इत्यादि प्रधान २ नगर हैं इनकी संख्या ३० दरजे है, परन्तु दक्षिण पश्चिमकी सीमाके अन्तमे गोगादेवका थल या गोगाश्थो० वाड़मेर, कोटड़ा, और यह दश दरजेसे कम हैं और चोहटन मारवाड़की सब मिलाकर जनसंख्याका अनुमान वीस लाख है।"

कर्नल टाड् साहब इसके सम्बन्धमें लिख गये है कि मारवाड़मे कौन २ जाति और कौन २ वर्णके निवासियोकी संख्या कितनी है, "जाट जातिकी संख्या आठ अंशोंमेसे पाँच अंश है, राजपूतोकी संख्या दो अंश है और बाकी सब ब्राह्मण है, वाणिज्य व्यवसायी दास हैं। यदि यह अनुमानिक प्रमाण सत्य है तो राजपूत स्त्री पुरुष और बालकोंकी संख्या पाँच लाख होगी, इनमे पचास हजार राजपूत अस्त्र धारणकी सामर्थ्य रखते हैं।"

राठौर जातिके चरित्रोके सम्बन्धमे इतिहासवेत्ता टाड् साहबने लिखा है, कि "हमने राठौर जातिके द्वारा अनुष्ठित प्रदर्शित और संसाधित जिन जातियोके चरित्र जानकर जिस घटनाका वर्णन किया है, राठौर जातिके चरित्रोके सम्बन्धमे उसके अतिरिक्त और कुछ कहना केवल बाहुल्यमात्र है। भारतवर्षकी छत्तीस जातियोमे केवल इस राठौर जातिने ऊँचा आसन पाया है। यद्यपि इस समय इस राठौर जातिने अफीमका सेवन करके अपनी जातीयशक्तिकी अवनति की है तथापि प्रबल-

(१) सांचोर देशम केवल ब्राह्मण ही निवास करते हैं, उनका साचोरा ब्राह्मण नाम विख्यात हैं।

प्रतापशाली यवन शासनक समयमें यह राठौर जाति अपने उसी ऊँचे सन्मानकी अवस्थामें थी, उस यवनशासन शक्तिने जिसप्रकार पग २ पर इसका आग्रह किया था इस समय उसीप्रकार किसी एक उद्दीपक घटनाके उपस्थित होते ही उसी भावसे यह राठौर जाति फिर उद्दीपानलसे उद्दीप्त होकर अपने उसी भावसे जातीयताका तीक्ष्ण तेज दिखा सकती है। सम्राट् औरंगजेबने घोर अत्याचार करके राठौर जातिकी अवनति कर उनकी जातीय शक्तिको घटा दिया था। वर्तमान महाराज मानसिंहके द्वारा वह जातीय शक्ति उससे भी अधिक विध्वंस होगई थी। जब मारवाड़के प्रत्येक प्रान्तमे शान्ति सती अचलभावसे दीर्घकाल तक नृत्य करैगी, तब क्षयको प्राप्त हुई राठौरोंकी जनसंख्या फिर भी बढ़जायगी, परन्तु अश्रुतपूर्व प्रतारणा, शठता, षड्यंत्र, स्वेच्छाचार, और प्रत्येक राठौरके परिवारके ऊपर अविश्वास प्रकाश करनेसे राठौरोंके जातीय चरित्र एकबार ही दूर होगये तथा जातिका नैतिक बल एकसाथ लोप होगया; राठौरोंका वही नैतिक बल, वही जातीय महत्व और वही जातीय पवित्रता बहुत थोड़े दिनों पूर्वतक रजवाड़ेके अन्यान्य जातिकी अपेक्षा भलीभांतिसे विदित थी। कई वर्ष पहिले इस मरुक्षेत्रके प्रजारंजन सर्व प्रिय राजा अत्यन्त सरलतासे प्रबल वीरतेजा बाहिनीके संगठन-"एक बापका बेटा पचास हजार तरवार राठौरान" अर्थात् एक पिताका वंश सम्भूत पचाश हजार राठौरोंकी सेनाके संग्रह करनेमें समर्थ है। इनमेसे पांच हजार अश्वारोही है। इस समय मानो वह वाक्य चरितार्थ होगया है। उस इकट्ठी हुई आधे लाख राठौर सेनाके अतिरिक्त मारवाड़ेश्वर अपनी सेना और खास भूमिकी वृत्तिभोगी सेना; तथा वेतनभोगी विदेशी सेनाको भी एकत्र कर सकते थे। भारतवर्षमे एकमात्र राठौर अश्वारोही सेना सबसे श्रेष्ठ साहसी और वीर विदित थी। मरुक्षेत्रके कई स्थानोंपर विशेप करके बालोतरा और पुष्करमें जो घोड़ोका मेला होता है, उसमे कच्छ, काठियावाड़, जंगल, और मुलतानसे बहुतसे उत्तम २ घोड़े आते हैं। मारवाड़के पश्चिम सीमाके अन्तमे लूनी नदीके किनारेके कई देशोमे मूल्यवान् अत्यन्त श्रेष्ठ घोड़े उत्पन्न होते हैं, इनमें राड़धड़ाके अश्व प्रथम श्रेणीके गिने जाते हैं परन्तु गत बीस वर्षसे राजनैतिक शोचनीय घटनाओंके कारण उन घोडोके संग्रह करनेके प्रत्येक मार्ग बंद होगए है। राड़धड़ा, कच्छ और जंगलके अश्व संग्रह करके जो अश्व उत्पन्न कराये जाते थे वह एक साथ ही बंद होगये। सिन्ध नदीके पश्चिमसे जो घोड़े लायेजाते थे, सिक्खोंके द्वारा उनमे भी व्याघात हुआ है-पहिले मरुक्षेत्रमे जिस समय लूटनेकी वृत्ति भयंकर रूपसे प्रचलित थी उस समय अधिकतासे घोड़ोका प्रयोजन होता था। इस कारण बहुतसे मनुष्य उन घोड़ोके लानेकी अनेक चेष्टाएं करते थे, और अब वह लूटनेकी रीति एकबार ही दूर होगई है, इस कारण घोड़ोंका भी प्रयोजन नही होता; अंग्रेजोके द्वारा जो शांति हुई है यह उसीका फल है।"

जिस समय राज्यमे आत्मविग्रह उपस्थित होनेसे अथवा शत्रुओंके कराल ग्राससे मारवाड़की रक्षा करनी कठिन होगई थी, हमने सुना है, कि उस समयमे केवल राठौरोंकी सम्प्रदायने ही युद्धभूमिमें चार हजार अश्वारोही सेनाको इकट्ठा किया

था। चांपाके वंशधर यद्यपि उस प्रकारसे बहुत सी सेना इकट्ठी करसकते थे, परन्तु जन्मभूमिकी विशेष विपत्तिके समयके अतिरिक्त अन्य समयमे उस भावसे इकट्ठे नहीं होसकते थे। चांपावत् नेताने युद्धभूमिमे इस प्रकारसे बहुत सी अश्वारोही सेनाके साथ जाकर राजभक्ति नहीं दिखाई। राठौर सामन्त जितनी आमदनीवाली पृथ्वीको उपभोग करते थे, उसकी आमदनी प्रतिवर्ष पाँचसौ रुपया थी उन्होंने एक अश्वोकी सेना और दो पैदल सेना युद्धके समय भेज दी थी। उच्चश्रेणीके सामन्तोकी एक तालिका यथास्थान दीगई है"।

मृत्तिकाके गुणागुण-कृषिकार्य और कृषिजात द्रव्योंके सम्बन्धमें कर्नल टाड् साहब लिख गये हैं, "कि मारवाड़में निम्नलिखित चार श्रेणीकी मृत्तिका है,-बेकलू, चिकनी, पीली, और सफेद, प्रथमोक्त मृत्तिका देशके अधिकांश स्थानोमे पाईजाती है। इसमें मिट्टीका असर बहुत थोड़ा है, देखनेमे छोटे २ अणु और रेतीली है, इसमे केवल बाजरा, मूंग, मटर, तिल, और ज्वार आदि धान्य उत्पन्न होते हैं। खरबूजा भी होता है। चिकनी मट्टीका वर्ण काला है; यह मट्टी डीडवाना, मैरता, पाली और गोड़वाड़के सामन्त शासित देशोमे पाई जातीहै। इसमे गेहूँ और दूसरे प्रकारके भी धान्य उत्पन्न होते है, पीलीमट्टी हलदीके रंगकी समान है। इसमें बालू मिलाहुआ है, यह विशेषकर बनसर, जोधपुर, जालौर, बालोतरा और दूसरे देशोके किसी किसी स्थानमे पाईजाती है। इसमें जौ नये गेहूँ (कोकनागेहूँ) तम्माखू प्याज और दूसरे शाकभी उत्पन्न होतेहै सफेद रंगकी मट्टीमे खेती नहीं होती हां घोर वर्षाके पीछे उस भूमिमे कुछ अन्न होताहै, तिजारतके लायक यहां बाजरा कम होताहै"।

"लूनी नदीके दक्षिण किनारे पाली सोजत और गोडवाड़ इत्यादि स्थानोकी मट्टी पर्वतके शिखरसे निकली हुई छोटी छोटी नदियोंके प्रवाहसे उर्वरहोजातीहै। उस मट्टीमे बाजरेके सिवाय और सब प्रकारके नाज अधिकतासे उत्पन्न होतेहैं। नागौर और मेरता के देशमे कुएके जलसे खेती होती है और उसमे बहुतसे कीमती धान्य उत्पन्न होते हैं। पश्चिमाचलमे पाँचसौ दश ग्राम है। जालौर, सांचोर, और भीनमालके विस्तारित देश, खालसा अर्थात् मरुक्षेत्रके अधीश्वरोकी स्वयं अधिकारकी खास भूमि है। उस भूमिकी मट्टी अत्यन्त श्रेष्ठ है, विशेष करके आबू शिखरसे निकलीहुई छोटी २ स्रोतस्वती उस भूमिके ऊपर होकर जातीहैं। और दक्षिणकी विस्तारित नदियोने इसकी उर्वरताको अधिकतासे बढ़ादिया है, परन्तु यह भूमि जितना धान्य उत्पन्न करनेमे पहिले समर्थ थी, राजा मानसिंहके अराजकतामय शासनमें उससे एक तिहाई अंशभी उत्पन्न नही होती थी। और सोहराई तथा सिन्धु देशके दस्युओंका दल इस खालिसाकी भूमिमे आकर किसानोके यहांसे अधिक धन और धान्य लूटकर लेजातेथे। इस देशकी श्रेष्ठ भूमिमें गेहूं, जौ, धान्य, ज्वार, मूंग और तिल यह अधिकतासे उत्पन्न होते हैं। और रेतीली जमीनमे केवल बाजरा, मूँग और तिल ही उत्पन्न होते है। इसी उत्तरदेशके पिशाचोंने जो भयंकर मुख फैलाकर हजारों जीवोंका प्राणनाश किया था, यदि मारवाडके सिंहासनपर कोई योग्य राजा विराजमान होते, यदि चारोओर सुशासनका प्रचार होता

तो मारवाड़के इसप्रकार धान्य संग्रहकरनेके बहुतसे उपाय थे। जिससे बड़ी सरलतासे दुर्भिक्ष निवारण होसकताथा। यद्यपि दक्षिणाचलके कुओंमें अधिकतासे जल भराहुआ है, परन्तु मेवाड़में जितने कुए है, यहां उस भाँति नहीं है। पाँचसौ छः नगर और ग्राम नागौरप्रदेशमे हैं, जो मारवाड़के बड़े राजकुमारके अधिकृत सम्पत्तिरूपसे निर्द्धारित है। उस देशकी यथार्थ अवस्था सुविधाजनक थी परन्तु अत्यन्त प्राचीनकालसे वहां खेतीके सुभीतेके लिये कुए अधिकतासे खुदवाये गये तथा मारवाड़के अन्यान्य देशोकी अपेक्षा वहांके किसानभी अधिकतासे जलकी सहायता पातेथे।"

"खनिजपदार्थ–यद्यपि मारवाड़की भूमि उर्वरता रहित है, परन्तु यहां एक बहुमूल्यवान् खानि विराजमान है। उसके लिये भारतके अन्यान्य प्रान्तवर्ती तथा उर्वरदेशके निवासी भी उस खनिज पदार्थको विशेष प्रयोजनीय कहकर उसे ग्रहण करते है। पचभद्रा, डीडवाणा और साँभरका लवणह्रद धनके आगमनका प्रधान द्वार है; उसी मे से लवण भारतवर्षके सम्पूर्ण स्थानोंमे जाताहै। अन्य पक्षमे मारवाड़की पूर्व सीमामे स्थित मकरा नामक स्थानमे मर्मर पत्थर खानसे निकलता है। इस पत्थरके द्वारा ही यवनशासनके समयमें भारतके प्रधान २ नगरोंमे बड़े २ ऊँचे महल बनाये गये थे। दिल्ली और आगरेके सारे मकान, मसजिदें, शिवालय, और समाधिमंदिर इत्यादि जो कुछभी बनायाजाता उस सबके लिये मारवाड़से पत्थर लायाजाताथा। मारवाड़के महाराजने बहुत थोड़ेही समयमे इस समस्त पत्थरकी खानसे यथेष्ट राजस्व संग्रह करलिया। परन्तु समयके हेर फेरसे यवन शासनकी समान इससमय लाखो रुपये खर्च करके बड़े २ मकान और महल बनवानेका समय जातारहा, इसी कारणसे पहलेकी समान राजस्वके प्राप्त होनेकी इस समय संभावना नहीं है। जोधपुर और नागौरके निकट श्वेत पत्थरके टुकड़े और कितनी ही खाने हैं, महल बनानेके कार्यमे:विशेष प्रयोजनीय कंकर मारवाड़ के अनेक देशोमे अधिकतासे पायाजाता है। सोजत नामक स्थानमें टीन और सीसा उत्पन्न होते हैं। पाली नामक स्थानमे फिटकरी, और भीनमाल तथा गुजरातके पासके देशोमे लोहा पायाजाता है।"

"शिल्पकौशल–वाणिज्यदृष्टिसे देखनेसे मालूम होता है कि मारवाड़मे शिल्प कौशल (दस्तकारी) श्रेष्ठ नहीं है। सूतका मोटा वस्त्र और कम्बल बनायेजाते है, यद्यपि इसी देशके सूत और रेशमसे बहुतसा कपड़ा तैयार होता है, परन्तु वह परदेशको नहीं भेजाजाता। अपने देशमें ही खर्च होजाता है। बंदूक, तलवार तथा और भी युद्धके अनेक शस्त्र राजधानीमें और पालीमें बनते है और पालीसे ही एक प्रकारके लोहेके संदूक और यूरूपके टीनके बक्सोकी समान बक्स बनते है। रंधन०कार्यके लिये लोहेका बनाहुआ कड़ाह और कड़ाई इत्यादि यहांतक उत्तम बनते हैं कि इनके बनानेवाले किसी समय भी निश्चिन्त नहीं रहते"।

वाणिज्यका प्रधान स्थान–"समस्त राजपूत राज्य ही एक एक वाणिज्यके प्रधान स्थान है। मेवाड़मे भीलवाड़ा, बीकानेरमें चुरु और जयपुरमे मालपुरा जिस भाँति वाणिज्यके प्रधान स्थान हैं उसी भांति मारवाड़ोंमें पाली भी वाणिज्यका प्रधान स्थान है।

यह केवल रजवाड़ेके उक्त वाणिज्यप्रधान स्थानोका प्रतिद्वन्दी नही है, यह समस्त रजवाड़ेमें प्रधान वाणिज्यका स्थान विख्यात है। वास्तवमे हम इस वातको अधिकतासे सत्य मानते है, कारण कि भारतवर्षके महाजन तथा वणिक व्यवसाइयोमेसे दश अंशोमेसे नौ अंश इस मरुक्षेत्रमे जैनधर्मका अवलम्वन करते थे। खेतरा नामक वणिक् सम्प्रदायके हजारो मनुष्य वाणिज्यके लिये भारतके अनेक प्रान्तोमे जाते हैं, और ओसिया नामक स्थानमे जो सम्प्रदाय ओसवाल नामसे विख्यात है उन ओसवाल वणिक् और महाजनोके परिवारकी संख्या प्रायः एक लाख होगी। यह सभी राजपूत रक्तधारी है, परन्तु जिन अँग्रेजोने हिन्दुओके चरित्र और हिन्दूजातिके सम्वन्धमें खोज की है उनको यह वात विदित नहीं है। शतद्रुसे भारतके महासागरतक विस्तारित देशोमेसे यह मारवाड़के वणिक् जो धन लाया करते हैं वह सभी उनके देशसे आता है। जैन समाजमे यह रीति प्रचलित है कि पिताका पैदा किया हुआ धन केवल वड़े पुत्रको ही नहीं मिलता, अर्थात् पिताके पास जितना धन हो उसमेसे वरावर २ सव पुत्रोको वाँट दियाजायगा। तव केवल मध्य एशियामे जिस जाति और केल्टर की जूट जातिकी समान सवसे छोटे पुत्रको दूना हिस्सा दियाजाता है। यदि पिताके जीवित रहते ही धन वाँटदियाजाय तौ सवसे छोटे पुत्रको इस प्रकार मिलेगा, अर्थात् पिता सव धनका भाग करके सव पुत्रोको समभावसे वाँट दे और अपने जीवन निर्वाहके लिये एक अंश अपने पास रखले, पिताकी मृत्युके पीछे पिताका वह हिस्सा भी छोटे ही पुत्रको मिलेगा। यह नही कहाजासकता कि इसभाँतिसे धनका विभाग समस्त चराचरमे है या नहीं। परन्तु एकसमय जो इस प्रकारकी रीति वाहुल्यतासे प्रचलित थी उसका प्रत्यक्ष प्रमाण विराजमान है। मारवाड़मे कितनी जातियां वाणिज्य व्यवसाय करती हैं, उनके नामकी एक वड़ी तालिका दीजाय तो एक वड़ा अध्याय होजायगा एक जैनियोके पुरोहित जो कई वर्षोंसे विशेष परिश्रम करके असियाँ तालिकाको वना रहेथे, उन्होने अठारहसौ वाणिज्य व्यवसायी वर्णोंके नामोंको संग्रहकर पीछे वड़े२ दूरके देशोसे और भी डेढ़सौ वाणिज्य व्यवसायी वर्णोंके नामप्राप्तकर शेषमे तालिकाको समाप्त करनेमें संतोष न प्राप्तकर इस कार्यको अधूरा ही छोड़दिया"।

इस स्थानपर कर्नल टाड साहव मारवाड़के वाणिज्यप्रधान पाली नगरके सम्वन्धमे वर्णन करगयेहैं, "कि पाली पूर्व और पश्चिमके देशोमें सर्वप्रधान वाणिज्यका स्थान था, यहां भारतवर्ष, कश्मीर और चीनसे वाणिज्यके द्रव्य आतेथे, और उन सवके पलटेमे यूरूप, अफरीका, फारिस और अन्यान्य देशोको वाणिज्यद्रव्य लेजाते थे। कच्छ और गुजरातसे हाथीदाँत, ताँवा, खर्जूर, गोंद सुहागा, नारियल, वनात, रेशमी और पशमीनेके वस्त्र, चंदनकाष्ठ, कपूर, रंग, औषध, काफी, मसाला, गंधक इत्यादि वहुतसे पदार्थ छकड़ोंमें भरकर यहां लाये जाते थे, और उन सवके वदलेमे यहांसे छींटके वस्त्र, सूखेफल, जीरा, मुलतानी हींग, चीनी, सोडा, और मासवेकी अफीस, पसमीनेके वस्त्र, श्रेष्ठ वस्त्र, क्षार, साल, रंगेहुए कम्वल, वस्त्र और इस देशका नमक दूसरे देशोको जाता था"।

"सुइंवाह सांचौर भीनमाल और जालौर होंताहुआ वाणिज्यद्रव्य छकड़ोंमें भरकर पालीमें आता था, राजपूत जातिमें जिन कवियोंको परमपूजनीय माना है, वही सैकड़ों वाणिज्यके छकड़ोंके साथ रक्षक होकर जाते थे। इन कवियोंके ऊपर सर्वसाधारणकी जैसी भक्ति थी, जैसा इनका मान और इनसे भय माना जाता था इतना और किसीका नही था, इनके छकड़ोंके साथमे होनेसे दस्युदल भी वाणिज्य द्रव्योके लूटनेका साहस न करसकते थे। यद्यपि यह चारणगण तलवार तथा ढाल लेकर अपने बाहुबलसे वाणिज्यके द्रव्योंकी रक्षा करनेमे असमर्थ थे, परन्तु यह अपने शरीरके आघातसे तस्करोको इस भांति नरकका भय और परलोकका भय दिखाते कि जिससे कुसंस्कारके भयसे लुटेरे आक्रमण नही करसकते थे। यदि कोई तस्कर वाणिज्यके छकड़ेपर आक्रमण करता तो यह कवि ब्राह्मण भाटोंकी समान उसी तस्करके सम्मुख सबसे पहले अपनी देहके एक स्थानपर छुरी मारलेते यदि तस्कर इससे भी शान्त न होते तब अंतमे अपनी हत्या करते। पीछे स्त्री पुत्र परिवार सभी अपने प्राण त्यागनेका तस्करोंको महा भय दिखाते थे-और कहदेते कि इस नर हत्याके पापका भयंकर फल तस्करोंको अवश्य भोगना होगा। हमारा यह शाप किसी समय मिथ्या नहीं होगा। इसी कारणसे वाणिज्यके शकटोंके साथ कवि जाया करते थे, इसीसे तस्कर उन छकड़ोंपर आक्रमण वा लूट नहीं करसकते थे।" इतिहास लेखक टाड् साहब पीछे लिखगये हैं "कि गत बीस वर्षसे यह विस्तारित वाणिज्यकार्य एकबार ही लोप होगया था। यद्यपि इस समय भारतवर्षके चारोंओर शांति विराजमान है परन्तु उस समय समस्त भारतमें लूटनेकी रीति भयंकरतासे प्रचलित थी पर उस समय वर्तमान समयकी अपेक्षा यह वाणिज्यका स्रोत दशगुणा अधिक बह रहा था। बहुतसे मनुष्य यद्यपि इस बातको असत्य मानेंगे परन्तु यह बात सर्वथा सत्य है। वर्तमान समयमें एक चेटिया वाणिज्यसें मारवाड़मे जैसी हानि पहुँची है पर्वती सराई और दुर्दान्त बर्बटियों के तथा दस्युओंके आक्रमणसे भी वैसी हानि नहीं पहुँची थी, यह ठीक है कि दस्युओंके भाले और तलवारोंसे चारणगण द्रव्यवाही शकटोंकी रक्षा करके अपना रक्तपात करते थे, परन्तु वर्तमान समयमें इस प्रकारका रक्तपात न करके उस रक्तको सुखादिया है, ईस्टइण्डियाकम्पनीने उस समय अफीम और लवणके वाणिज्यका एक चेटिया करके भारतका लवण और अफीम जिससे भारतसे अन्यत्र पूर्णरूपसे न जासके और विदेशको चालान न हो इस कारण उसपर विशेष महसूल लगा दिया था इसी कारणसे मारवाड़ की अफीम और लवणके व्यापारमें बहुत विघ्न उत्पन्न हुआ, और यह दोनों वाणिज्य धीरे धीरे बहुत न्यून होगये। इस्टइण्डियाकम्पनीने अपने प्रयोजन सिद्ध करनेको राजाओंके राजस्वका यह अनिष्ट किया, उदारनीति टाड्साहबने इस कार्यका भलीभाँतिसे खंडन किया है।

मेलेके सम्बन्धमें साधू टाड् साहब लिखते हैं; इस देशमें प्रत्येक वर्षमें दो मेले हुआ करते हैं, एक तो मूँड़वा नामक स्थानमें और दूसरा बालोतरामें। पहले मेलेमें तो साधारण हाथी, घोड़े, गौ आदि पशु बेचे जाते थे। इसकें अतिरिक्त भारतके और भी

अनेक देशोंसे वणिक् और व्यवसायी वहांके योग्य बहुत प्रकारके पदार्थ लाते हैं। और पासके राज्योंमे वह वणिक् उन सबको बेच जाते हैं। यह मेला प्रथम माघके महीनेसे प्रारंभ होकर छः सप्ताहतक रहता है। दूसरे मेलेमें उक्त विधिसे सब प्रकारके पशु लायेजाते हैं और भी अनेक प्रकारके वाणिज्य द्रव्योंके आनेसे पाली नगरका वाणिज्यकार्य बड़ी श्रेष्ठतासे होता है। इस मेलेमे भारतके अनेक स्थानोंसे बहुतसे मनुष्य आते हैं परन्तु इस समय उस श्रेष्ठताका चिह्न एकबार ही लुप्त होगया है।

मारवाड़के उस समयके विचार विभागके सम्बन्धमे महात्मा टाड् साहब लिखते हैं, "कि इस राठौर समाजमे विचारकार्य बड़ा ही शिथिल देखा जाता है। यदि कोई मनुष्य राजद्रोह तथा राजनैतिक अपराध करता तो उसीको दंड दिया जाता था। और राजनैतिक अपराधके अतिरिक्त अन्य किसी अपराधमे प्राणदंड नही किया जाता था। इस सामन्त शासन प्रणाली प्रचलित समाजमे वह राजनैतिक अपराध करनेवाला मनुष्य अपराधी रूपसे गिनाजाता था, और महाराज अपनी राजशक्तिसे उस अपराधीको दंड देते थे। परन्तु कोई मनुष्य यदि किसी सामन्तके विरुद्ध अथवा किसी मनुष्यके विरुद्ध उस प्रकारका अपराध करता तो उसको सहसा क्षमा न करते वरन् धीरेधीरे दयाप्रकाश करते थे। अधिक क्या कहै, यदि कोई मनुष्य किसी मनुष्यको जानसे मारदेता तो उसके बदलेमें शारीरिक दंड दिया जाता, कारागार दंड अथवा उसकी समस्त धनसम्पत्तिको महाराज अपने हस्तगत करलेते, या उसको देशसे निकालदेते। चोर इत्यादि सामान्य अपराधीको अर्थ दंड और कारागारमें जानेका दंड दियाजाता और उसके भोजन वसनका खर्च उसी चोरकी संपत्तिसे वसूलकियाजाता था। यदि चोर उस हानिके पूर्ण करनेमे असमर्थ होता तो उसको शारीरिक दंड दियाजाता, तथा उस समयमें मारवाड़के खजानेकी अवस्था अत्यन्त शोचनीय थी और उसी कारणवश ऐसा होता था। राजा विजयसिंहकी मृत्युके पीछे विचारासन शून्य होगया था; यद्यपि महाराज विजयसिंह अपराधियोंपर विशेष दया करते थे, परन्तु प्रजा उनके सुविचारकी आजतक मुक्तकंठसे प्रशंसा कर रही है। उन्होने किसी समय भी किसी मनुष्यको प्राणदण्ड देनेकी आज्ञा वा उसमे अपनी संमति, नहीं दी। वह कैदियोंके ऊपर इतने दयालु थे कि आजतक यह बात प्रसिद्ध है और बहुतसे मनुष्य कहते हैं कि "हमै घरमे रावड़ी भी खानेको नहीं मिलती, परन्तु कारागारमे लड्डू खानेको मिलते हैं" जयपुरके समान इस जोधपुरके कारागारवासी अपराधी नगरवासी दानियोंकी सहायतासे पालेजाते थे। यह बात सभीको विदित है, शेषोक्त स्थानमे वणिक् श्रेणी विशेष करके जैनधर्मका अवलम्बन करनेवाले यदि दयाकरके कैदियोंको भोजन न देते तो वे बंधुए अनाहारसे मरजांय, धनवान व्यापारी साधारण कैदियोको भोजन देते हैं इस कारण स्वयं महाराज उनके भोजनके लिये अपना धन खर्च नहीं करते, यदि दें तो काराध्यक्ष कैदियोंके लिये राजाके यहांसे धन लेकर अपने पास रख लेंगे। एकबार किसीको कारागारमे भेजकर फिर उसकी कोई खबर नहीं लेता। इसी कारण कैदियोंके कष्टकी सीमा नही रहती थी। परन्तु इस महाकष्टको पाकर कैदियोंकी मुक्तिकी दूसरी प्रकारसे

आशा है। प्रत्येक सूर्यग्रहण, चंद्रग्रहण, नवीन राजकुमारोंका जन्म और राजाओके अभिषेकके समयमें चिरप्रचलित रीतिके अनुसार कैदियोंको छोड़ाजाताहै। कैदीलोग इसी आशासे इस शुभ समयके आनेकी बाट देखते रहते है"।

माहात्मा टाड् साहब इस स्थानपर "सोगन" नामक 'एक प्रकारकी विचाररीतिका उल्लेख करगयेहै, "इस सोगन विचारका यथार्थ अर्थ निरपराधियोके प्रमाणके लिये परीक्षादेना है। यह रीति राजपूतानेके अन्यान्य राजाओकी समान आज-तक मारवाड़में भी प्रचलित है, यद्यपि यह रीति इस समय अधिकतासे अचल होगई है, परन्तु यहांके निवासियोंका भगवान्के प्रति इस समय भी विश्वास नही हो ऐसा नहीं पर समाजकी अवस्था और नगरवासियोंके मनका भाव बदलजानेसे सभी इस भाँति परीक्षा देनेमें अग्रसर नहीं होते। एकमात्र कोटाके जालिमसिह ही इस समयकी रीतिके अनुसार अपराधियोंकी परीक्षा लेतेहै, परन्तु वह भी हाड़ोतीकी डायनोके प्रति इस समय उदासीन होगयेहै। डायनोकी परीक्षा केवल जलसे ही लीजाती है। इसप्रकार परीक्षाकी रीति-इसप्रकारसे अपराधियोंके अपराधको निर्णय करनेकी प्रथा चिरकालसे भारतवर्षमे प्रच-लित थी। रावण सीताजीको हरकर लेगयाथा, इस कारण महारानी सीताजी अपने सतीत्व की रक्षा करसकी है अथवा नहीं इसका निर्णय करनेको भगवान् रामचंद्रजीने उनकी अग्निसे परीक्षा लीथी। जल और अग्निके द्वारा परीक्षाकी समान और भी एक प्रकार का उपाय है अर्थात् अपराधी मनुष्यके हाथपर गरम तेल डालकर परीक्षा लीजाती थी परन्तु यहां इस बातका उल्लेख करना सब प्रकारसे कर्त्तव्य है-कि यह नहीं था, किसी भी मुकदमेंमें वादी और प्रतिवादी इसो भाँतिकी परीक्षा देनेकी इच्छा प्रगट करतेहों बरन जब पंचायतसे विचार नही होसका तथा अन्य किसी प्रकारसे भी विचार करनेका सुबीता नही मिलता तब सबके अंतमे यह उपाय कियाजाता था। यदि अपराधीको न्याय विचार न प्राप्त होता अथवा उसे घूंस देकर गुरुदंडसे छुटकारा पानेमे समर्थ न होता तो सबके पीछे इस सोगन परीक्षाके देनेकी इच्छा करता था"।

पंचायतकी रीतिके सम्बन्धमें कर्नल टाड् साहब लिखते हैं कि "दीवानीके सभी मुकद्दमोंका विचार पंचायतके द्वारा होता है। यदि कोई उस पंचायतके विचारसे संतुष्ट न होकर राजाके समीप फिर उसका विचार होनेकी प्रार्थना करसकता है, परन्तु इस प्रकारके विचारकी प्रार्थना करनेसे समस्त पंचायतकी सम्मति लेनी होती है और राजाके समीप विचार होनेके पहले उसके निमित्त नियमित रुपया देनेकी व्यवस्था है, राज्यमें ऐसे मुकद्दमोकी संख्या सरलतासे नही बढ़सक्ती। इस पंचायतके नियोग की रीति अत्यन्त सरल है। वादीको सबसे पहले जिलेके हाकिम अर्थात् वह जिस ग्राममें निवास करता है उस ग्रामके पटेलके समीप अभियोग उपस्थित करना होगा। इसके पीछे वादी और प्रतिवादी अपनी २ इच्छानुसार एक २ दो २ ग्रामोका नाम उल्लेख करदे, तब उसी ग्राममें पंचायत की जायगी। जिस ग्रामका उल्लेख कियागया है, उसी ग्रामके पटेलके समीप समाचार भेजा जायगा, पटेल अपने २ पटवारियोंको लेकर अथाई अर्थात् ग्राम विचारागारमें इकट्ठे होते हैं। पीछे साक्षियोको बुलाकर उनसे शपथ

कराकर साक्षी लेते हैं। साक्षीगण "गादीकी आन" अर्थात् राजाके नामसे शपथ करते हैं। हिरोडाटस इस बातको लिखगया है कि प्राचीन सीदियन भी इसी प्रकारसे शपथ करते थे। परन्तु केवल राजपूत ही राजाका नाम लेकर शपथ करनेके अधिकारी हैं अन्यान्य जातिके पक्षमें अपराधियोंके शपथकी व्यवस्था उनके धर्मानुसार है। विचार कार्य होजानेके पीछे पंचायतकी राय देनेसे हाकिम उसपर अपनी मुहर लगा देते है, और उसी सम्मतिके अनुसार कार्य करते हैं, अथवा वादी या प्रतिवादीके विरुद्धमें राजाके यहां फिर विचार होनेकी प्रार्थना कीजाती है तो उसीके योग्य कार्य करते है। यह प्रमाणित होगया है कि राजपूतानेमें प्राचीन सुखशांतिके समयमें प्रत्येक मुकदमा इसी प्रकारकी सरल रीतिसे निबट जाता था, उसके विरुद्धमे फिर कोई भी कुछ न बोल सकता था।"

राजस्वकी रीतिके सम्बन्धमे साधू टाड् साहब वर्णन करते हैं कि "मारवाड़मे राजस्व अनेक उपायोंसे सग्रह होता है, उनमेसे यह चार प्रधान हैं।

१-खालसा वा राजाकी स्वयं अधिकारी भूमिका कर।

२-लवण ह्रद।

३-आमदरफ्ती वाणिज्य शुल्क।

४-हासिल नामक नानाविधिका कर।

यद्यपि अर्द्ध शताब्दीके पहले राजा विजयसिंहके शासन समयमें मारवाड़के राजस्वका सोलहलाख रुपया संग्रह होता था और उसका अर्द्धांश एकमात्र लवणह्रदसे प्राप्त होजाता था, परन्तु वर्तमान समयमें मारवाड़पतिका समस्त राजस्व दशलाख रुपयेसे अधिक नही है। सामन्तोंके अधिकारी देशोंको मिलाकर वार्षिक राजस्व पचास लाख रुपयेका अनुमान होता है। परन्तु इतना संदेह है कि वर्तमान समयमें उससे आधा रुपया संग्रह होता है या नहीं। शामन्तोंकी जो सेना है उसमे पैदलके अतिरिक्त अश्वारोही सेनाकी संख्या पांच हजार है। जिन सामन्तोंकी जितने रुपयेकी आमदनी है उनमेसे प्रत्येक वर्षमें हजार रुपयेपर एकजन अश्वारोही और दो पैदलोंकी सेना रखनी पड़ती है" सामन्त शासनकी रीतिका नियम ही इस प्रकार है, यदि किसी सामन्तकी प्रत्येक वर्षमें दश हजार रुपयेकी आमदनी है तो दश अश्वारोही और बीस पैदलोंकी सेना उस आमदनीसे रख सकता है। युद्धके समयमे वा अन्य किसी समयमें राजाकी आज्ञानुसार उनको उस सेना दलके साथ राजाकी आज्ञा पालन करनी होती है।

"मारवाड़पतिकी जो ठीक आमदनी दश लाख रुपया निश्चय हुई है, यह वह है जो खजानेमे रक्खी जाती है। राजदरबारके कर्मचारीगण राजाकी खास भूमिके जिस २ अंशको वृत्तिस्वरूपसे भोग करते हैं, उस भूमिका राजस्व इसके साथ नही लिया जासकता।" वह दशलाख रुपयेमें सम्मिलित नहीं है।

---

१ मारवाड़में यह दस्तूर है कि जागीरदार लोग एक हजारकी जागीरपर एक घोड़ा पाँचसौकी जागीरपर एक पैदल और सात सौकी जागीरपर एक ऊंट राजसेवामें देते हैं।

" प्रजाके पाससे भिन्न प्रकारका राजस्व लिया जाता है। सस्यका कर जो भारतवर्षमें चिरकालसे प्रचलित है उसका नाम बटाई अर्थात् विभागकर है। समान अंशका आधा धान्य महाराजको दिया जाता है और शेष आधा भाग किसानोको मिलजाता है । प्राचीन कालसे राजा चार अंशोंमेंसे एक अंश वा छः अंशोंमे का एक अंश धान्य लेते थे, इस समय उसके बदलेमें समान अंश ग्रहण किया जाताहै । जितना धान्य किसानोंके क्षेत्रमें उत्पन्न होता है इस प्रकारसे उसका अर्द्धांश राजाको विनादिये राजाकी ओरके सब पहरेवाले उस खेतकी रखवाली करते हैं । और जो धान्यका विभाग करते है उनका खर्चभी यही देते है । दश मन धान्यपर दो रुपया लिया जाता है । उस रुपयेमेसे पहरीका वेतन और कोतवारी अर्थात् सस्य विभागकारीका वेतन देकर वाकी जो कुछ बचताहै, ग्रामके पटेल और पटवारी उसका भाग करलेते है। महाराजके घोड़े और गौ आदि पशुओके भोजनके निमित्त प्रत्येक किसान से एक २ गाड़ी चरी वा ज्वार ग्रहण करते है । परन्तु इस समय उसके बदलेमे इस हिसाबसे प्रत्येक किसानसे एक २ रुपया लिया जाता है । जिस समय काल पड़नेकी संभावना होती है, उस समय रुपया नही लियाजाता, कड़वी (चरी) लीजाती है । पटवारी और पटेल इत्यादिको अन्यान्य कर्मचारियोके समान व्यय निर्वाहके लिये किसान ओर राजा दोनोंके अंशोमेसे धान्य दियाजाता है । प्रति मनभर धान्यमे से एक पावसेर अथवा जितना धान्य उत्पन्न हो उसके अस्सी अंशोंमेंका एक अंश मिलताहै । पटवारी अथवा सामन्तोके अधीनके किसान खालसा अर्थात् राजाकी निज अधिकारभुक्त-भूमिके किसानोंकी अपेक्षा बहुत सुभीतेसे है, कारण कि उनके यहां जितना धान्य उत्पन्न होता है उसके पाँचवें अंशमेसे केवल दो अंश ग्रहण करते हैं और इसके अतिरिक्त किसान जितनी पृथ्वीमें खेती करते है, उसमे प्रति एक सौ बीघा भूमिके ऊपर वह सामन्तगण वार्षिक बारह रुपया करस्वरूपसे ग्रहण करते है । किसान लोग बड़ी सरलतासे इस सामान्य करको आनंदित होकर देदेते है । "

किसानोंसे जो धान्यका कर लियाजाता है उसके अतिरिक्त मारवाड़के प्रचलित अन्यान्य कर आदिके सम्बन्धमे कर्नल टाड साहब लिखते है, " कि सम्पूर्ण मारवाड़मे जितनी अवस्थाके स्त्री पुरुष निवास करते है उनमेंसे सभीसे एक २ रुपया कर लिया-जाता है " यह " अंगकर " नामसे विदित है ।

" घांसमारी नामक पशुके प्रति भी प्रचलित एक प्रकारका कर है । प्रत्येक बकरी और भैसके ऊपर ‑) आना, प्रत्येक भैसेके ऊपर ॥) आना और प्रत्येक ऊंटके ऊपर तीन रुपया कर लियाजाता है । "

" किवाड़ी नामक कर सबकी अपेक्षा उत्पीड़क है । किवाड़ शब्दका अर्थ द्वार है । महाराज विजयसिंहने सबसे पहले इस करको चलाया था । उनके शासनकी शेष अवस्थामें मारवाड़के सभी सामन्त विद्रोही होकर पालीमें इकट्ठे हुए, और उन्होने महाराजको सिंहासनसे रहित करनेके लिये षड्यंत्रका विस्तार किया, इस समय महाराज विजयसिंह उनको धीरज देकर हस्तगत करनेके लिये वहां गये । परन्तु सामन्तों,

ने किसी प्रकारसे भी उनकी अनुगत्यता स्वीकार न की। उन्होंने वहांसे लौटकर जोधपुरके नगर द्वारपर आकर देखा कि नगरमें जानेका कोई उपाय नहीं है, भीमसिंहने सिंहासनपर अभिषिक्त होकर नगरका द्वार बंद करदिया है। तब उन्होने घोर विपत्ति मे पड़कर सेना संग्रह करनेके निमित्त प्रजासे धनकी सहायता माँगी। प्रजाने प्रत्येक घरसे तीन ३ रुपया देनेका प्रस्ताव किया और शीघ्रही वह सब रुपया इकट्ठा भी करदिया। परन्तु जिस प्रजाने भीमसिंहका पक्ष लिया था उसको दंडित करनेके लिये अथवा राजस्वको बढ़ानेकी इच्छासे ऐसा किया हो, महाराजने उस समय एकवार तो इस भाँतिसे सहायता लेकर फिर उसको चिरस्थाई करस्वरूपसे प्रचलित करदिया। प्रजा उसी दिनसे बरावर कर देती आती थी। परन्तु जिस समय महाराज मानसिंहके विरुद्ध षड्यंत्र फैला, और पठानोंने महाराजकी खास भूमिपर अधिकार करलिया, उस समय महाराज मानसिंहने उस तीन रुपयेके स्थानमें दश रुपया कर नियत करलिया। परन्तु यह कर समभावसे सबसे नहीं लिया जाता। सबसे पहले प्रत्येक नगर और ग्राममें जितने घर होते हैं, उनकी गिनती की जाती है इसके पीछे घरके अध्यक्षोंकी जिसकी जैसी अवस्था है उसीके अनुसार उससे कर ग्रहण कियाजाता है, दरिद्री दो रुपया कर दे तो धनीको वीस रुपये देने होंगे। महाराज कृपा करके मुक्तिदान न करेंगे तो सामन्तो के अधिकारके भी किसी देशको कर देनेसे छुटकारा नहीं मिलैगा"।

वाणिज्य शुल्कके सम्बन्धमें महात्मा टाड् साहव अतीत वर्षोंकी सूचीको उद्धृत करके वर्णन करगये हैं, "मारवाड़में वाणिज्य करका कितना रुपया दिया जाता है, उसकी अनुमान की हुई सूचीको नीचे लिखते हैं, इससे हमारे पाठक अवश्यही समझ लेंगे कि इतना धन पूर्वकालमें शुल्कस्वरूपसे संग्रह होताथा और इस समय नहीं होसकता इससे परिणाम निकलसकता है कि सभी देशोंमें वाणिज्यकी व्यवस्थाके अनुसार यह शुल्क घटता वढ़ता रहता है, परन्तु जिन देशोमें लूट अत्याचार, पीड़न, विजातियोका आक्रमण और दुर्भिक्ष हो उस समयमें उसकी कैसी अवस्था होसकती है, इसका विचार वडी सरलतासे होसकता है। प्राचीन राजकीय पुस्तकके हिसावसे यह तालिका उद्धृत कीगई है। मारवाड़की उन्नतिकी अवस्थामें इतना वाणिज्य शुल्क संग्रह होताथा, इसके सम्बन्धमें संदेह करनेका कुछ भी प्रयोजन नहीं है।

निम्न लिखित स्थानोंसे नीचे लिखाहुआ वाणिज्य शुल्क अदा कियाजाताथा:-

जोधपुर	७६००० रुपया।
नागौर	७५००० "
डीडवाणा	१०००० "
परवतसर	४४००० "
मेरता	११००० "
कोलिया	५००० "
जालौर	२५००० "

पाली	....	७५००० रुपया।
जेसोल और बालोतराकामेला	....	४१००० "
भीनमाल	....	२१००० "
सांचोर	....	६००० "
फलोदी	....	४१००० "
		जोड़ ४३०००० रुपया।

ढाणी अथवा जिलाकलेक्टर प्रधान २ नगरोंमें जाकर अपनी नियत की हुई वेतनको पाते है। और उनके अधीनके नीची श्रेणीके कर्मचारी जितना महसूल मिला-कर देते हैं उनमेसे सौ रुपये पर कुछ पाते हैं। यह वाणिज्य महसूल धान्यके ऊपर भी प्रचलित है; परदेशसे जितनी आमदनी होती है उसके ऊपर भी कर है। मारवाड़के एक जिलेसे दूसरे जिलेमें जो धान्यकी आमदरफ्त होती है उसके ऊपर भी महसूल लियाजाता है। "

लवणके करके सम्बन्धमे इतिहासवेत्ता टाड् साहब लिखते हैं " वाणिज्य शुल्क और भूमिका राजस्व जिस प्रकार घटगया है। लवण ह्रदकी आमदनी भी उसी प्रकार पहिलेसे बहुत कम होगई है तथापि इसकी एक बँधी हुई आमदनी है। इससे पहले कितना धन आता था उसकी सूची नीचे प्रकाश करते है,–

पचभद्रा	....	२००००० रुपया।
फलोदी	....	१००००० "
डीडवाणा	....	११५००० "
सांभर	....	२००००० "
नांवा	....	१००००० "
		जोड़—७१५००० रुपया।

" इस आमदनीके विभागमें आजतक हजारों श्रमजीवी तथा लाखों गौ आदि पशुओंका पालन होता है। बंजारा नामकी एक श्रेणीके ऊपर इस लवणके कार्यका भार सौंपा गया है। इनमेसे एक २ जनके अधीनमें इस लवणको लेजानेके लिये ४०००० बैल नियुक्त रहते हैं। सिन्धके किनारेसे लगाकर गंगाजीके किनारे तक भारत-वर्षके सभी स्थानोंमें यह लवण जाता है और यह सर्वसाधारणमें "सांभर–लवण" नामसे विदित है। यद्यपि भिन्न ह्रदका लवण भिन्न प्रकार है परन्तु लूनी नदीके बाहर देशके पचभद्राका लवण सबसे श्रेष्ठ है। ह्रदके भीतरी भागसे यह लवण स्वाभाविक भीतर से उठता है।

उस भूमिमें क्यारिये बनाते है, उसपर नकुलकी घास डाल देते है जिसके कारणसे लवण और भी शीघ्रतासे ऊपरको उठता है और फिर इसके द्वारा ह्रदको स्वाभाविक तरंगमालाके उठनेसे यह घास सरलतासे दूर होजाती है। ह्रदके बीचसे इसभाँति लवणके उठते ही समस्त लवणको तौलकर एक स्थानपर ढेर लगादिया जाता है। और क्षार विशिष्ट, पत्ते तिनके और सज्जी इत्यादि उसके ऊपर रखकर उसमें

अग्नि लगा दीजाती है। इस प्रकारसे उस खारके तापसे लवण ऐसा जम जाता है कि जल और वायुके द्वारा उसका कोई अनिष्ट नहीं होसकता ”।

इतिहासवेत्ता टाड् साहबने इससे पीछे मारवाड़के अत्यन्त प्राचीन कालके राजस्वके सम्बन्धमे एक सूचीको उद्धृत करके लिखा है “कि बहुत पुरानी हिसाबकी पुस्तकमें मारवाड़की आमदनीका सब मिलाकर प्रायः तीसलाख रुपयेका उल्लेख पायाजाता है, हम उसके सम्बन्धमें इस स्थानपर फिर व्याख्या करनेकी अभिलाषा करते हैं। किस २ अंशका कितना अतिरिक्त परिमाण धरा गया है इस समय उसका वर्णन करना कुछ सहज बात नहीं है। कारण कि उसमें अंतर आगया है।

१–खालसा अर्थात् नरपतिके निज अधिकारी १४८४ ग्राम और नगरोंकी आमदनी।	.... १५००००० रुपया।
२–वाणिज्यशुल्क	४३०००० ”
३–लवणह्रद	७१५००० ”
४–हासिल अर्थात् अन्यान्य कर जो सब समय ठीक स्थिर नहीं होसक्ता।	... . ३००००० ”
जोड़	२९४५००० रुपया।
सामन्त और मंत्री समाजकी आमदनी	५०००००० रुपया।
कुलजोड़	७९४५००० रुपया।

इस प्रकारसे देखा जाता है कि “ चिरकालसे मारवाड़पतिको निजका तथा अधीनके सामन्तोंका सब मिलाकर राजकीय कर प्रायः अस्सीलाख रुपया है। यद्यपि हमें इस विषयमें संदेह है कि आजकल इसका अर्द्धांश भी नहीं आता पर इसमे संदेह नहीं कि मारवाड़के प्राचीन मंत्री वंशोंमें तथा संघी परिवारमें बहुतसा धन है वह लोग अत्यन्त धनवान् गिने जाते हैं, उनका समस्त धन विदेशीय नगरोसे प्राप्त हुआ है, इस देशके मनुष्य स्वभावसे ही उस समस्त धनको गुप्तभावसे रखते हैं, रुपयेसे लेनदेनका व्यवहार भी नहीं करते; इसी लिये धनकी वृद्धि भी नही होती। जिस समय महाराज विजयसिंहने नागौरके कितने ही महलोंको तुड़वा दिया था उस समय उनको उनमेंसे बहुत धन मिला था। ”

मारवाड़के उस समयकी सेना बलके सम्बन्धमे अंतमें कर्नेल टाड् साहब लिख गये है, “ कि इस समय केवल राठौर जातिके युद्धके बलके सम्बन्धमें वर्णन करना शेष रहा है। उनकी आमदनीकी घटती बढ़तीके साथ ही साथ सेनाकी भी घटती बढ़ती होती रहती है। उपद्रवी सामन्तोको दमन करनेके लिये मारवाड़के महाराजने एक सम्प्रदाय वेतन भोगी सेना रक्खी थी। इस सेनामें प्रायः रुहेले और अफगानी पैदल अधिक थे, वह सभी बंदूकधारी थे। उनके साथमें तोपैं भी थीं, वे युद्ध विद्यामें विशेष पारदर्शी थे। इस समय वे लोग असीम साहसी राठौर अश्वारोहियोंके सम्मुख प्रति द्वन्दी होगये थे। कई वर्षके बीत जानेपर महाराज मानसिंहने इस प्रकार साढ़े तीन हजार पैदल पंद्रहसौ अश्वारोही और २५ तोपै इस सेनामें नियत की थीं। पानीपतके

एक निवासी हिन्दालखांको उस सेनाका नायक किया था। विजयसिंहके शासन समयसे वह मनुष्य मारवाड़ महाराज वंशके साथ मिलगया था, राजाके यहाँ उसकी वात अधिक चलती थी, उसके साथ राजाकी मित्रता होगई थी महाराज मानसिंह उसको बड़े सम्मानके साथ "काका" कहकर पुकारा करते थे। इस वेतनभोगी सेनाके अतिरिक्त मारवाड़में एक और भी योधाओका दल था, उसका नाम विष्णुस्वामी था और कायमदास नामके एक मनुष्यको उनके सेनापति पदपर वरण किया था। इस सेनामे सातसौ पैदल थे, तीनसौ अश्वारोही और एकदल धनुर्धारियोंका था। यह धनुर्धारी धनुष वाण लेकर युद्ध किया करते थे। विलायतमें वारूदके निर्माण होनेके आधी शताब्दी पहले भारतवर्षमे इस प्राचीन धनुष वाणका व्यवहार होता था। एक समयमें राजाका एक दल विदेशीय सेनामे नियुक्त था, अथवा वह लोग उनके अधीनमें नियुक्त थे, उनकी संख्या ग्यारह हजार थी। इसमेंसे आधी सेना अर्थात् दो हजार अश्वारोही थी, पचास तोपै और एकदल वनुपधारियोंका था। मासिक वेतनके अतिरिक्त भिन्न २ सेनादलके प्रधान २ नेताओको भूवृत्ति दीजातीथी, जिसकारणसे मारवाड़के सामन्त अत्यन्त उद्धत होगये थे; और राजाके साथ उनका घोर झगड़ा हुआ था, इससे पहले उसका वर्णन करचुके है। उन असंतुष्ट हुए सामन्तोको दमन करनेके लिये यह अतिरिक्त सेना नियुक्त की थी, इसीसे राज्यका नैतिक वल हीन होगया था, और देशके विध्वंस होनेकी भी वारी आगई थी। सामन्तोके साथ घोर झगड़ा होनेके कारण इसी अतिरिक्त सेनाका नियोग कियाथा। इसीसे परस्परका विश्वास नष्ट होगया।"

साधू टाड् सावकी इस कथाको हम पूर्ण सत्यरूपसे स्वीकार करते हैं। राजपूत जातिके पतनके समयमे केवल मारवाड़ ही नही वरन रजवाड़ेके सभी राजपूत राजाओं के साथ अधीनके सामन्तोकी विवादकी अग्नि भयंकर रूपसे प्रज्वलित होगई थी। हम देखते है कि राजपूत जातिके पतनके वहुत पहले सभी सामन्त अत्यन्त उद्धत हो राजाके विरुद्धमे अस्त्र धारण करनेमे कुछ भी भयभीत नहीं हुए थे, परन्तु इस प्रकारका झगड़ा सभी सामन्तोंने नहीं कियाथा, वरन उनमेसे ऐसे भी वहुत थे कि जिन्होने उन विद्रोही सामन्तोको दमन करनेके लिये राजाकी सहायताभी की थी। सारांश यह है कि यह सामन्त शासनकी रीति जिस देशमें प्रचलित थी, उस देशके राजा यदि स्वयं वलशाली ओर नीतिज्ञ होते तो उनके अधीनके सामन्त इस प्रकारसे विद्रोहकी आगको कभी प्रज्वलित न करसकते। राजाके ही वलहीन होनेसे सामर्थ्यवान् सामन्त सभी देशोंमें सरलतासे अपनी शक्तिको प्रवल करनेके लिये अग्रसर होते है। रजवाड़ेके सामन्तोंने हमारी इस उक्तिको समर्थन किया है। गवनमेण्टके शासनमे आजतक एक भी सामन्त राजाके विरुद्ध खड़े होने के लिये समर्थ न होसका।

उपसंहारमें साधू टाड् साहव उस समयकी सामन्त श्रेणीके सम्वन्धमें लिखते हैं, "मेवाड़के सांमन्तोंकी संख्या सोलह थी और जयपुरके सामन्तोंकी संख्या वारह थी। मारवाड़की प्रथम श्रेणीकी संख्यामें आठजने थे। नीचे सूचीमे उनके नाम लिखते हैं।

उनके नाम, उनकी सम्प्रदायके नाम, निवास स्थानके नाम और उनकी कितनी आमदनी थी उसका वर्णन भी नीचे करते है। उन्होंने राजाकी सहायताके लिये कितनी सेना दी थी, उससे वह उनकी आमदनीका निश्चय कर सकते हैं, वह लोग प्रति पाँचसौ रुपयेकी आमदनीपर एक २ अश्वारोही सेनाके देनेमें समर्थहुए थे। "

प्रथम श्रेणी.

नाम।	सम्प्रदायके नाम।	वासस्थान।	आमदनी।	मन्तव्य।
			रुपया	
१ केसरीसिंह	चापावत	अहोवा	१०००००	मारवाडके यही सबमें श्रेष्ठ सामन्त हैं। इनकी आमदनी अर्द्धांश इनके पिताकी पृथ्वीसे सग्रह की जातीहै; इन्होंनेही सम्प्रदायके नीची श्रेणीके सरदारोंकी भूवृत्तिको बलपूर्वक अपने अधिकारमें करलिया था, इसी कारणसे आधी आमदनी होती है।
२ बख्तावरसिंह	कूपावत्	आसोप	५००००	
३ सालिमसिंह	चापावत	पोकरण	१०००००	पोकरणके सामन्त मारवाडके सभी सामन्तोंमें अधिक सामर्थ्यवाले हैं।
४ सुरतानसिंह	उदावत	नीमाज	५००००	
५ *	मेरतिया	रियां	२५०००	समस्त राठौरजातिमें मेरतिया सबसे अधिक साहसी वीर हैं।
६ अजीतसिंह	मेरतिया	घाणेराव	५००००	पहले यह देश मेवाडके सोलह सामन्तोंमेंसे एकके अधिकारमें था अति बडा नगर भग्न होगया और कितनेही ग्राम राजपरिवारके अधिकारमें होगये।
७ *	करमसोत	खीमसर वा किमसर	४००००	यह शहर बहुत बडा था, पर अब वैसा नहीं है।
८ *	भाटी	खेजडला	२५०००	मारवाडके प्रथम श्रेणीके सामन्तोंमें यही एक मात्र विदेशी थे।

दूसरी श्रेणी।

			रुपया.	
१ शिवनाथसिंह	ऊदावत	कुचामन	५००००	यह अत्यन्त सामर्थ्यवान् थे।
२ सुरतानसिंह	जोधा	खारीकादेव	२५०००	
३ पृथ्वीसिंह	ऊदावत	चंडावल	२५०००	
४ तेजसिंह	ऐ०	खादा	२५०००	
५ ओनाड़सिंह	भाटी	आहोर	२१०००	निकालेगयेथे।
६ जीतसिंह	कूपावत	वगड़ी	४००००	
७ पद्मसिंह	कूपावत	गजसिंहपुरा	२५०००	
८ *	मेरतिया	मीटरी	४००००	
९ कर्णसिंह.	ऊदावत	मारोत	१५०००	
१० जालिमसिंह	चांपावत	मारोट	१५०००	
११ सवाईसिंह	जोधा	चापुर	१५०००	
१२ *	... ...	वूड़सू	२००००	
१३ शिवदानसिंह	चांपावत	कावटा (वडा)	४००००	
१४ जालिमसिंह	ऐ०	हरसोलाव	१००००	
१५ सांवलसिंह	ऐ०	दीगोद	१००००	
१६ हुकमसिंह	ऐ०	कावटा (छोटा)	१२०००	

महात्मा टाड् साहब सबसे पीछे लिखते हैं, "यही मारवाड़के प्रधान सामन्त हैं तथा राजाकी अनुगत्यता स्वीकार कर राजकार्यमें नियुक्त होकर भूवृत्तिको भोग करते है। मारवाड़के अधीनके सरदारोकी श्रेणी इनमें नहीं है। विशेष २ घटनाओंके उपलक्षमें यह राजाकी आज्ञा पालन करते हैं उन अनधीन सामन्तोकी श्रेणीमें

(१) मेड़तिया। (२) चम्पावत। (३) जेतावत "सही हैं"।

वाढ़मेर, कोटड़ा, जसोल, फलसूंद, वड़गांव, बांकड़ा, कालिन्दरी और वारूंदाके सामन्त प्रधान हैं। यदि राजा उनको संतुष्ट करके अपनी आज्ञा पालन करासकते तो वे अपनी प्रवल सेनाके साथ राज्यकी सहायता करनेके लिये इकट्ठे होकर आते। सामन्तोके अधिकृत जिन देशोंकी सूची लिखीगई है वह ठीक सत्य नहीं होसकती। उपरोक्त सूची एक अत्यन्त प्राचीन पुस्तकसे संग्रह कीगई है। इसका विश्वास करना सर्वथा संभव है। अराजकता विद्रोहिता इत्यादि, हम जिन शोचनीय घटनाओका वर्णन करते आये हैं उन घटनाओंमें से इस राज्यका प्रत्येक विषय जिस प्रकारकी शीघ्रतासे वदल गया है, राजस्व विभागके कर्मचारियोंने सरलतासे इस सूचीको त्यागकर नवीन सूची वनानेकी आवश्यकता स्वीकारकी है। पहले यह नियम प्रचलित था कि जिन २ सामन्तोकी जितनी २ आमदनी थी उसमे से प्रति पाँचसौ रुपये की आमदनीपर जो राजाकी सहायताके लिये देते थे उस धनसे एक अश्वारोही और दो पैदल सेना रक्खी जाती थी, परन्तु इस समय उनकी भूवृत्तिकी सीमा घटा दी गई है और उनके समस्त देशोका मूल्य भी घट गया है, इस समय उन पाँचसौ रुपये के स्थानमें एक हजार रुपया नियत किया गया है। अर्थात् हजार रुपयेकी आमदनीपर एक अश्वारोही और दो पैदल सेना सामन्त रखते हैं।"

१८८६ ईस्वीमे आचिसन साहबने अपनी पुस्तकमे लिखा है, "जोधपुर राज्यकी भूमिका परिमाण ३५६७२ वर्गमील है और प्रजाकी संख्या १७७३६०० है। राज्यकी आमदनी साढ़े सत्रहलाख रुपयेकी है। उसमें लवणदहसे प्रायः पाँचलाख रुपया राजस्व का आता है। महाराजने जो सेना रक्खी है उस सेनाकी संख्या ६००० से अधिक नहीं है। स्थानीय पोलिटिकेल एजेन्ट मारवाड़के वकील समितिमें सभापतिका कार्य करते हैं। मारवाड़के साथ बीकानेर, जैसलमेर, कृष्णगढ़, सिरोही और पालनपुरकी सीमासे लगाकर यदि कोई विवाद अथवा किसी प्रकारका उपद्रव उपस्थित हो तो, इस वकील समितिसे ही उसका विचार होता है, उस समितिमे उक्त राज्य, उदयपुर जयपुर, और सीकरके वकील इकट्ठे होते हैं। प्रतिवर्षमें एक एक वार अजमेर, नागार और आवू शिखर में इस समितिका अधिवेशन हुआ करता है।"

मिस्टर. जे. थैाम्सह्वीलर् अपनी पुस्तकमें १८१८ ईस्वीमें लिखा है कि "मारवाड़ की भूमिका परिमाण ३६६७० वर्गमील था, प्रजाकी संख्या प्रायः २०००००० जन थी और वार्षिक आमदनी २५००००० रुपया था"।

---

(1) Adchison's Treaties.

(2) Wheeler's Histery of the Imperial Assemblage.

(3) At Delhi.

वीसवाँ अध्याय २०.

आधुनिक विवरण, जोधपुरमें अंग्रेज रेसिडेन्सी स्थापन, ऋतुफल, शस्य, स्वास्थ्य, शासन-विभाग, फौजदारी विचारालय, जागीरदार विचारालय; अपील विचारालय; वकील विचारालय; वाणिज्य शुल्क, अफीमके वाणिज्यकी आय व्यय; ऋण सीमाका निश्चय; पूर्त्तकार्य; रेलवे; डकैतोंका दमन; मारवाड़की वर्तमान सेनाकी संख्या; उपसंहार।

इतिहासवेत्ता कर्नल टाड् साहब मारवाड़की जनसंख्या, आमदनी, राजस्व, कृषि, और विचार-विभाग इत्यादिके सम्बन्धमें अपने ग्रंथमें जो कुछ भी वर्णन करगये है पहिले अध्यायमें हमने उसे अविकल प्रकाशित किया है। यह हम पहले ही कह आये है कि समयकी विपरीततासे उनके सम्बन्धमे इस समय बहुत कुछ अदल बदल होगया है। हम इस विस्तारित इतिहासको समाप्त करनेकी इच्छासे उस परिवर्तन विवरणको प्रकाश करनेकी अभिलाषा करते है। सन् १८२४ ईस्वीसे गतवर्षतकके प्रत्येक वर्षका परिवर्तन प्रकाश कियागया है; ग्रंथके अधिक बढ़जानेकी संभावना जानकर हम उसके बदलेमे केवल गतवर्षके प्रयोजनीय समस्त विवरणको लिपिबद्ध करनेके लिये आगे बढ़े है। पाठकगण इस विवरणके साथ कर्नल टाड् साहबके वर्णित विवरणकी तुलना करके सरलतासे जानजॉयगे कि किस २ विषयमे किस २ प्रकारका परिवर्तन हुआ है; और कौन२ से विषयोमे मारवाड़की उन्नति हुई है। पश्चिम राजपूतानेके अंग्रेज रेसिडेण्ट लेफ्टिनेण्ट कर्नल पी. डवल्यू. पावलेटने सन् १८८३ ईस्वीकी १७ वीं अप्रैलको भारतवर्षकी गवर्नमेण्टके पास मारवाड़के शासनसंवन्धमें जो विस्तारित विज्ञापन भेजा था हम उसीके ऊपर विश्वास करके आगे वढ़े है, इस कारण यह जैसी विश्वासतासे संग्रह हुआ वैसे ही इसकी सभी कथा सत्यतासे पूर्ण है इसमे कुछ सन्देह करनेकी आवश्यकता नहीं है।

अंग्रेज रेसिडेण्ट.

समालोच्य वर्षमे अर्थात्-सन् १८८२-८३ ईस्वीमें लेफ्टिनेण्ट कर्नल पी. डवल्यू. पावलेट, मारवाड़के अंग्रेज गवर्नमेण्टके प्रतिनिधि अर्थात् रेसिडेण्ट पदपर नियुक्त थे। अंग्रेज रेसिडेण्ट इतने दिनोतक एरिनपुरा नामक स्थानमे अपना प्रधान कार्यालय स्थापन कर वहां रहे; परन्तु भारतवर्षकी गवर्नमेण्टने राजनैतिक उद्देश्यको भलीभाँतिसे साधन करनेके लिये उस कार्यालयको १८८२ ईसस्वीके जौलाई मासमे एरिनपुरासे जोधपुरमें स्थापित किया था।

ऋतुफल।

इस वर्षम जोधपुरमे कुल सब मिलाकर १२ इञ्च वृष्टि हुई थी; इस कारण वृष्टिके अभावसे राजधानीकी सभी प्रधान २ नदियां जनवरीके महीनेमें ही सूख गई; राज्यके अन्यान्य स्थानोमें उचित वृष्टि न होनेसे जलका कष्ट हुआ था।

सस्य।

जलके अभावके कारण राज्यमे जितना धान्य उत्पन्न होता था इस वर्षमे उसकी अपेक्षा कम धान्य उत्पन्न हुआ।

स्वास्थ्य।

इस वर्षमे किसी प्रकारकी भयानक महामारी नहीं हुई। राज्यमे देशीय प्रणालीके मतसे चिकित्साके अतिरिक्त अंग्रेजी रीतिके मतसे चिकित्सालय और चिकित्सक नियुक्त हुए। मारवाड़के महाराज राजभंडारसे चिकित्सा विभागकी सवप्रकारसे सहायता करते हैं।

वृटिश रेसिडेण्ट लेफ्टिनेण्टकर्नल पावलेट गत वर्षके स्वास्थ्य सम्बन्धी विवरणमे उल्लेख करगये है कि गतवर्षमे जोधपुर नगरमे कईएक पागल कुत्तोंने विशेप उपद्रव आरंभ किये थे। उन पागल कुत्तोके काटनेसे चौवालीस मनुष्योंसे भी अधिक मनुष्योकी मृत्यु हुई। महाराजने यह समाचार पाते ही कुत्तोको पकड़कर एक स्थानमे बाँध रखनेकी आज्ञा दी। परन्तु इस समाचारको पाते ही राजधानीके समस्त वणिक् और दूकानदार महा अप्रसन्न हुए और सभीने दूकानें वंद करदीं और दलकेदल बाँधकर नगरके प्रधान २ स्थानोमें जाकर राजकर्मचारियोको भय दिखानेलगे। पशु पक्षियोंके ऊपर मारवाड़के निवासी चिरकालसे दया प्रकाश करते आये है; अधिक क्या कहैं कालके पड़नेपर स्त्री पुरुष सभी पहिले पशु पक्षियोको भोजन कराकर पीछे आप भोजन करते है, इस कारण पाठक सरलतासे अनुमान कर सकते हैं कि यह वणिक्लोग राजाकी आज्ञासे क्यो इतने रुष्ट हुए थे। रेसिडेण्ट लिख गये है, कि तीन दिनके पीछे जिन वनियोंने नेता स्वरूपसे विद्रोहभाव प्रकाशित किया था राजकर्मचारी उनको पकड़कर राजाके सम्मुख लेगये; वहां जातेही राजाके दंडके भयसे अंतमे सव वनियोंने राजाकी आज्ञा माननी स्वीकार की।

शासन विभाग।

विगत अक्टूवरके महीनेमे महाराज प्रतापसिंह सी. एस. आई "मुसाहिवआला" की उपाधि पाकर राज्यके प्रधान मंत्रीपदपर नियुक्त हुए। महाराजने इस पदपर नियुक्त होनेके पहले कई महीनेतक विशेष परिश्रम करके राज्यमें डकैतीको रोककर वहुतसे अत्याचारियोको वंदी करके शांति स्थापन की। इसी कारण इनके द्वारा राज्यके अन्याय, अपव्यय सरलतासे दूर होजॉयगे यह विचारकर मारवाड़के महाराजने इनको प्रधान मंत्रीपदपर वरण किया। महाराज प्रतापसिंह एक प्राचीन कालके राठौरोंके समान असीम साहसी महावीर और नीतिविशारद हैं। इनके शासनके समयमे मारवाड़मे सुखशांतिकी विशेष आशा है।

महता विजयसिंह और पंडित शिवनारायण पूर्वपदपर स्थित होकर वड़ी प्रशंसाके साथ कार्य करते हैं। मारवाड़के दूसरे मंत्री खाँवहादुर फैज़उल्लाखाँ इस समय राज्यके पुलिस विभागमे हैं। पुरातत्वकी खोज करनेका भारभी उन्हींके ऊपर है।

विचार विभाग।

मारवाड़के महाराज यशवन्तसिंह बहादुरने राज्यमें सुविचार प्रचलित करनेके लिये विचार विभागकी ओर अधिक ध्यान दिया था। गतवर्षमें विचार विभागमे बहुत कुछ अदलबदल हुई। बड़े आनंदका विषय है कि बृटिश रेसिडेण्टने इस विचार-विभागका संस्कार करनेसे विशेष संतोष प्रकाश किया।

फौजदारी विचारालय।

अलवरके मुन्शी मखदूमबख्श जोधपुरके फौजदार अर्थात् मजिस्ट्रेट है। रसिडेण्ट साहब लिखते है, "मै विचार करता हूं कि इनके द्वारा यथार्थ रूपसे सफलता प्राप्त होगी"। मुन्शी मखदूंमबख्शने कार्यभारको ग्रहण करके देखा कि ३७४६ फौजदारीके मुकद्दमोका विचार करना बांकी है। गतवर्षमें उन्होंने उन सब मुकद्दमोका विचार किया, उनमेंसे केवल ७२ बाकी रहे थे, और इसके अतिरिक्त ८५० नवीन फौजदारीके मुकद्दमोका विचार किया था। देशीय राजा जिस प्रकारकी रीतिसे शीघ्रतासे विचार कार्य करते हैं, रेसिडेण्ट साहब लिखते है कि मुन्शी मखदूंमबख्शने उस प्रकारकी शीघ्रतासे विचार कार्य नहीं किया; वह सभी विषयोंको सुनकर न्याय-पूर्वक विचार करते हैं।

दीवानी विचारालय।

मेहता अमृतलालको दीवानीके विचारालयका भार प्राप्त हुआ है। पहले वर्षमें विचार के मुकद्दमें ५३४० थे और गतवर्षके सब मिलाकर ११४२ मुकद्दमे उपस्थित हुए। इनमेसे गततर्षके ४१०० मुकद्दमोंका विचार होगया।

जागीरदार विचारालय।

मारवाड़के जागीरदारोंके मुकद्दमोका विचार करनेके लियं गतवर्षमे "जागीदार विचारालय" नामका एक नवीन विचारालय स्थापित हुआ है। जोधपुरके जो सामन्त कार्योंके लियं आते है उनमेंसे उच्च सामन्तोको लेकर राजदरबारके एक कुटुम्बी मनुष्यने इस विचारालयके विचारकार्यको किया था। रेसिडेण्ट साहब लिखते हैं कि इस विचारालयका फल इस समय तक भी प्रीतिदायक नही हुआ। बृटिश शासित भारत-वर्षसे एक विद्वान् विचारपतिको इस विचारालयके प्रधान विचारपति पदपर नियत करनेका विचार हुआ है। इस कार्यके पूर्ण होनेसे सफलता प्राप्तिकी सम्भावना है।

अपील विचारालय।

पहले भी राजदरबारके द्वारा अपीलोंका विचार होता था, परन्तु दरबारके अनेक कार्योमें लगे रहनेके कारण अपीलका विचार बड़ी कठिनतासे होता था। इसी कारण गतवर्षसे एक स्वतंत्र अपीलका विचारालय स्थापित हुआ है। कविराज मुरारिदान इस अपीलके विचारपदपर नियत हुए है। रेसिडेण्ट साहब लिखते हैं कि विचार कार्य स्पष्टतासे कियाजाता है। कविराज मुरारिदानने पद ग्रहण करते ही

देखा कि १३८ मुकद्दमोंके अपीलका विचार करना बाकी है; फिर तिसपर गत मार्च महीनेके शेषतक के १६१ नये मुकद्दमें उपस्थित हैं, इनमेंसे विचारपतिने २७३ अपीलके मुकद्दमोंका विचार किया। मारवाड़के नाबालिग सामन्तोकी भूसम्पत्तिकी रक्षाका भार भी इन्हीं विचारपति कविराजके ऊपर था।

वकील विचारालय।

मारवाड़में जो वकील विचारालय है उसको हमारे पाठक पहले अध्यायमें पढ़ चुके हैं। पश्चिम राजपूतानेके वकील अर्थात् राजाकी ओरके प्रतिनिधि एकसाथ मिलकर सीमाके सम्बन्धके उपद्रवोंका तथा और भी अनेक प्रकारके उपद्रवोंका विचार करते थे। १८८२ ईस्वीकी पहिली अप्रेलसे १८८३ ईस्वीकी ३१ मार्चतक इस विचारालयमे कुल सब १२८ मुकद्दमे विचार करनेके लिये उपस्थित हुए थे, इनमे ९२ मुकद्दमोंका विचार होगया है और सब ७५५८ रुपया, दशआना, ८ पाई डिग्री हुई है। इसमे २३ मुकद्दमोंकी अपील हुई उनमेंसे ८ मुकद्दमोंकी राय बहाल रही और एक खारिज कियागया। विचार करनेके लिये ४ मुकद्दमे बाकी हैं।

उपरोक्त विचारालयके उक्त ९२ मुकद्दमोंमे निम्नलिखित अपराधोंके मुकद्दमोंका विचार होगया है:—डकैती १५, आघातके २, डकैती एवं हत्या ५, राजमार्गमें चोरीके १०; राजमार्गमे तस्कर एवं आघात २, राजमार्गमें दस्यु एवं हत्या ३, चोरी १९, चोरी और हत्या १, हत्याके ३, बलपूर्वक धन लेनेके २, चराईके पशु ग्रहण ६, सेंता चोरी २, अनेकभाँतिके अपराध १५, क्षतिसाधन १, एवं पशुचोरी ६, कुल ९२.

वाणिज्य शुल्क।

विचार एवं शांति रक्षा विभागके समान वाणिज्य शुल्कके विभागका भी गतवर्षमे मारवाड़पतिने सम्पूर्ण रूपसे संस्कार किया। मारवाड़से भिन्न देशको रवानगी, आमदनी, तथा देशमें एकदेशसे अन्यदेशकी रवानगी शुल्कके सिवाय और भी बारह प्रकारका वाणिज्य शुल्क मारवाड़में प्रचलित था। परन्तु वह बारह प्रकारका शुल्क सर्वत्र समभावसे ग्रहण नहीं कियाजाता था। अफीमका महसूल भिन्न स्थानोंमें लिया जाताथा दौलतपुरामे अफीमका महसूल २॥) रुपयेके हिसावसे लेते थे और नागौरमे उतनीही अफीमके ऊपर १७ रुपया महसूलका लिया जाता था। कोई २ वणिक् सम्प्रदाय महसूल देती थी और किसी किसीने एकवार ही छुटकारा पाया था। धान्यके ऊपर भी महसूल लिया जाता था, यदि नगरमें कोई काष्ठका बोझा लाता, अथवा बगीचेके मालीकी स्त्री एक टोकरी फल लाती तो नगरके द्वारपर ही उसको महसूल देना पड़ता था, परन्तु इस समय गवर्नमेण्टके प्रस्तावके मतसे मारवाड़राजने आमदनी, रवानगी तथा एक देशकी वस्तुको दूसरे देशमे भेजनेके अतिरिक्त और सभी वस्तुओंसे महसूल लेनेकी रीतिको एकवार ही रहित करदिया है। धान्यके ऊपर जो महसूल दिया जाता था वह भी रहित करदिया गया, तथा जागीरदारोंके जो देश अधिकारमें थे उन देशोपर जो "मापा" नामका शुल्क प्रचलित था इस समय वह भी छोड़

दियागया । यद्यपि इससे जागीरदारोंको हानि हुई परन्तु उस हानिके पूर्ण करनेकी भी व्यवस्था हुई है शुल्कके लेनेमें जो समस्त कर्मचारी नियुक्त थे, उनको तत्वविधान कार्यमें नियुक्त कियागया । अफीमके ऊपर अधिक महसूलको वढ़ाकर नित्यके प्रयोजनीय द्रव्योंके ऊपरका महसूल घटादियागया । गत २० वीं सितम्बरसे यह नवीन रीति प्रचलित हुई । वृटिश रेसिडेण्टने अपने विज्ञापनमें लिखा कि कई वर्ष व्यतीत होगये; कर्नल वेलडरने इस प्रकारके संस्कारका प्रस्ताव किया था परन्तु वह राजदरबारको आमदनी और रफ्तनोंके ऊपर महसूल वढ़ाकर और सभी वस्तुओंके ऊपरके महसूलको एकवारही छोड़ देनेको कहते थे सो ऐसा नहीं कियागया । इस समय गवर्नरजनरल एसिस्टेण्ट एजेण्ट मि. हिडसनने इस वाणिज्य शुल्कके संस्कारपर नियुक्त होकर इस अभिलपित फलके संग्रहका प्रारंभ किया । पहले वाणिज्य शुल्कसे मारवाड़पतिको समस्त खरचा वाद देकर ५ लाख रुपयेकी आमदनी होती थी । इसके पीछे सातलाख रुपये की आय होती थी । किन्तु इस समय जिस प्रकारका संस्कार होकर नवीन व्यवस्था हुई है, इससे मारवाड़के महाराजको पचासहजार रुपयेको हानि हुई है । वर्तमान वर्षमें वाणिज्य शुल्कद्वारा ९१४००० की आमदनीका अनुमान कियागया है । रसिडेण्ट साहव कहते हैं कि इन रुपयोंमेंसे महसूलके संग्रह भागका सभी रुपया खर्च होगया है, राजभंडारसे साढ़ेछः लाख रुपया दियाजायगा । जागीरदारोंकी हानि पूर्ण की जायगी और वर्तमान समयमें जो कितने ही प्रयोजनीय द्रव्योंके ऊपर अधिकतासे महसूल लिया जाता है वह कम कियाजायगा यह अनुमान सत्य और अवश्यही प्रीतिदायक होगा । यद्यपि इससे महाराजको आधेलाख रुपयेकी हानि हुई है, परन्तु इस समय महसूलके घटजानेसे वाणिज्यके वढ़नेके साथही अधिक आमदनीके वढ़जानेकी भी संभावना है । महाराजने इस वाणिज्य शुल्कके संग्रह विभागमें मि. हिडसनके द्वारा विशेष उपकार पाकर उनको इस विभागमे कुछ समयतक और रखनेके लिये गवर्नमेण्टसे प्रार्थना की थी ।

अफीमका वाणिज्य ।

महात्मा टाड़साहव वारम्वार लिखगये हैं कि राजपूतोंके श्रेष्ठ गुणोंके नाश करनेका कारण एक मात्र अफीमही थी । महावली दृढप्रतिज्ञ राजपूत अधिकतासे अफीम का सेवन कर एकवार ही कर्महीन होगये थे । इसी कारणसे उनकी जातीयशक्ति भी धीरे २ घटती जारही थी, राजपूत लोग जिससे अफीमका खाना छोड़ दें इसके लिये साधू टाड साहवने विशेष चेष्टा की थी । दुर्भाग्यके वशसे उनकी वह अभिलाषा सफल न हुई कारण कि वह इसके पहले ही राजस्थानको छोड़कर अपने देशको चलेगये । राजपूत वांधव टाड साहव रजवाडोंसे अफीमके लोप होजानेकी अभिलाषा करते थे, उन्हीं रजवाडोंमें इस समय अफीमका प्रचार प्रत्येक वर्षमें अधिकतासे वढ़ता जाता है । राजपूतानेके सभी राजपूत राज्यमें पहले जितनी अफीमका सेवन होता था इस समय उसकी अपेक्षा वहुतगुण वढ़ गया है । राजपूतानेमें जाकर गवर्नर जनरलके एजेण्ट

लेफ्टिनेण्ट कर्नल ई. आर.सी. ब्राडफोर्ड. सी. एस. आई. ने विगत १८८३ ईसवीकी २७ वीं अगस्तको राजपूतानेका शासन वृत्तान्त भारतवर्षकी गवर्नमेण्टके पास भेजा था, उन्होने उसमें लिखा था कि "राजपूतानेके प्रधान २ धनी महाजन मुण्डीके व्यापारको छोड़कर अधिक धन प्राप्तिकी आशासे अफीमके वाणिज्यकी ओर झुके ह। वड़े २ प्रधान महाजनोंने ग्रामके महाजनोको अग्रिम रुपया देदिया है। वह ग्रामके महाजन उस रुपयेको लेकर किसानोको ऋणस्वरूपसे देते हैं। किसान लोग उस रुपयेके वदलेमे अफीम तैयार करके ग्रामके महाजनोंको देते है और ग्राम्य महाजन उस अफीमको लेकर नगरके प्रधान २ महाजनोंको वांट देते हैं।" धीरे २ रजवाड़ेमे अफीमकी विक्री किस प्रकारसे वढ़गई हैं, उसके संवन्धमे वह लिखते है कि "अफीम के वाणिज्यके साथ समाजका न्यूनाधिक घनिष्ठ संवन्ध उपस्थित है। वर्तमान समयमें अफीमकी विक्री बड़ी शीघ्रतासे बढगई है, खाल एवं कुएके खोदनेकी वृद्धिके साथ ही साथ पोस्तकी डण्डीकी विक्री भी अफीमके वरावर ही वढ़ गई है। जो पृथ्वी पोस्तकी डण्डीके खेतीके लिये ठीक मानीगई है, तथा वम्बईके जानेके मार्गसे वहुत दूर है, इतने दिनोतक उसमे और वस्तुओकी खेती होती थी, राजपूताना मालवा रेलवेकी प्रतिष्ठासे उस समस्त भूमिमे इस समय अफीमकी खेती आरंभ हुई है।" लेफ्टिनेण्ट कर्नल ब्राडफोर्डने समस्त राजपूतानेके संवन्धमे इस प्रकारका मन्तव्य प्रकाश किया है। मारवाड़मे अफीमकी खेती और इसका वाणिज्य जो अन्यान्य रजवाड़ोंके अन्य राज्योंकी समान क्रमशः वढ़गया है इसका अनुमान वड़ी सरलतासे होसकता है। इस अफीमके वाणिज्यकी वृद्धिका केवल शुभ फल यही प्रत्यक्ष हुआ है कि इसकी खेतीके लिये सर्वत्र कुए खुदा दिये गये हैं। समयपर कुए और तालावोसे ईख आदिकी खेतीको बड़ा सुभीता होगा। लेफ्टिनेण्ट कर्नल ब्राडफोर्डकी यह आशा थी, परन्तु हम कहसकते हैं कि इस अफीमकी खेती और वाणिज्य वृद्धिसे किसान और महाजनोको धन प्राप्त होता है तथा राजाको भी राजस्वकी वृद्धि होती है। यह ठीकहै परन्तु इसके साथ राजपूत जातिमें अफीमके सेवनका प्रचार प्रवलतासे होता जाता है और इसका परिणाम बुरा है। वहुत थोड़े मूल्यकी सुराको पाकर जिस भाँतिसे मदिरा पीनेवालोंकी संख्या अधिक बढ़जाती है, इसका अनुमान पाठक सरलतासे कर सकते हैं। उसी भाँतिसे राजपूत भी प्रत्येक ग्राममें अल्प मूल्यमें अफीमको पाकर अधिक अफीमसेवी होगये। चीन इत्यादि देशोंमे रफ्तनीके लिये जो श्रेष्ठ श्रेणीकी अफीम तैयार होती थी, राजपूत गण उस अफीमका सेवन नहीं करते थे। यहां वट्टी नामकी एक प्रकारकी अफीम तैयार होती थी उसका मूल्य पहली अफीमकी अपेक्षा प्रति मनपर ४० वा ५० रुपये कम होगया था। राजपूत जाति इस कम मूल्यवाली अफीमका ही सेवन करती थी। कर्नल टाड् १८२३ ईस्वीमें जो ईस्टइण्डिया कम्पनीकी अफीम और लवणके वाणिज्यका एक चेटियाके कारण दृढ़ प्रतिवाद कर गये हैं, इस समय अंग्रेज गवर्नमेण्टने उन दोनों वाणिज्योंको उसी प्रकारसे एक चेटीया रक्खा है, इस कारण पहलेकी समान देशीय राजाओंको लवण और अफीमके वाणिज्यमे विशेष लाभकी संभावना नहीं रही।

आय व्यय ।

महात्मा टाड् साहबने मारवाड़की आमदनी और खर्चकी जो सूची प्रकाश की है उसको हमने यथास्थानमें वर्णन किया है । वर्तमान अंग्रेज रेसिडेण्ट लेफ्टिनेण्ट कर्नल पावलेट लिखते है * कि १८८२ ईस्वीकी १ ली जौलाईको जो वर्ष समाप्त होता है उस वर्षमें मारवाड़के महाराजको निम्नलिखित आमदनी हुई थी ।

राजस्व	....	....	...	३२५३२३९	रुपया ।
व्यय	...	...	...	३०५५७४६	"

जोधपुरशाखा रेलवेके निमित्त जो ४५४७७८ रुपया कर्जमे लिया था, वह खर्चकी सूचीमे नही लिखा है, ऐसा विदित होता है कि उस ऋणके रुपयेको छोड़कर शेष दो लाख रुपया उद्धृत हुआ है । कर्नल टाड् साहबने मारवाड़की जो अवस्था देखी थी इस समय उसकी अपेक्षा राजस्वकी अवस्थाने कैसी उत्कर्षता पाई है, इसको अवश्य मानना होगा । परन्तु ऐसे दीर्घ सुशासनमे राजस्वकी जैसी प्रीतिदायक अवस्था होनी चाहिये सो नही हुई । पहिलेकी अपेक्षा शासन–विभागमें जो अधिक खर्चा होगया था इसका अनुमान होसकता है, इसी कारणसे समस्त खर्चेको छोड़कर उद्धृत परिमाणसे विशेष वृद्धि नही जानी जाती ।

ऋण ।

मारवाड़के महाराज पर आजतक कुछ रुपया कर्ज है । अंग्रेज रेसिडेण्टने लिखा है, "कि यह तो निश्चय नहीं जाना जाता कि राज्यके ऋणका कितना रुपया है, परन्तु गत सन् १८८२ ईस्वीकी १ ली जौलाई तक १३७८००० रुपया कर्जका था, इसको मैं जानता हूं । वर्तमान वर्षकी समाप्तिमें यह ऋण कमती था अर्थात् १२ लाख रुपया था ।" गत वर्षमे मारवाड़के महाराजकी भगिनीके साथ बून्दीके एक राजकुमारका विवाह हुआ था उसमे जो तीन लाख रुपया खर्च हुआ है, वह इसी ऋणके अन्तर्गत है । रेसिडेण्टने आशा की थी कि वर्तमान समयके प्रधान मंत्री महाराज प्रतापसिंहके द्वारा सरलतासे यह ऋण चुक जायगा ।

सीमान्त निर्द्धारण ।

मारवाड़के आभ्यन्तरिक शासनके अन्यान्य अनुष्ठानोके समान सामन्तोंके साथ महाराजका जो सीमापर झगड़ा चलता था; उसके संवन्धकी मीमांसा करनेकी सुव्यवस्था कीगई है । सीमाका निश्चय करनेके लिये सन् १८८२ ईस्वीके जनवरी मासमे कप्तान लेक नियुक्त हुए थे । गत वर्षमें उन्होंने १३ परगनोकी सीमाका निश्चय करादिया था, कृष्णगढ़की सीमासे मारवाड़की शेष दक्षिण सीमातक अर्वली पर्वतोंके शिखरके पाददेशसे बीकानेर राज्यकी सीमातक सब ढाईसौ मील स्थानकी सीमाका निश्चय

* Report of the political Administration of the Rajpootana States for 1882–1885. P. 115.

कियागया है। इस प्रकार उनके द्वारा १३५ सीमाका निश्चय हुआ है। इसमें जो ३०००० रुपया खर्च हुआ है, रेसिडेण्ट साहब लिखते हैं कि उसके बहुतसे हिस्सेकी अभियुक्तोंके पाससे संग्रह होनेकी संभावना है। जिन सीमाके अन्तमें विवाद लेकर शोचनीय कांड उपस्थित होनेकी संभावना थी, कप्तान लेकने पहिले उन्हींका विचार किया है, संतोषका विषय है कि पंचायतियोंके मध्यमे होनेसे उनकी मीमांसा सरलतासे होगई है। रासके सामन्तोंकी सीमामे जो महाकांड उपस्थित करनेके पूर्ण लक्षण दिखाई दिये थे कप्तान लेकने सबसे पहिले उन्हींपर हाथ डालकर प्रीतिदायक विचार करदिया है।

पूर्त्तकार्य।

राज्यकी श्रीवृद्धि और सर्वसाधारण प्रजाका कल्याण साधन तथा अन्यान्य विषयोंमे राजाके यहाँसे अधिक धन खर्च होता था। कृषिकार्यकी सुविधाके लिये गतवर्षमे महाराजने अनेक स्थानोंपर बाँध-बंधनकार्यमे बहुत धन खर्च किया। रेसिडेन्टने इस बातको मानलिया है कि इससे विशेष उपकार होसकते हैं; क्योंकि राजधानी जोधपुरमें अधिकतासे जलके संग्रह करनेके लिये सुव्यवस्था होनेकी आवश्यकता है।

रेलवे।

बृटिशशासनके स्मरणीय प्रधान अनुष्ठान लौहवर्म है। सात समुद्रके पारवर्ती श्वेतद्वीपवासी अंग्रेजोने भारतके वक्षस्थल पर रेलरूप लोहेका हार अर्पण किया है। इस रेलवेके विस्तारसे जैसे एक ओर वाणिज्य व्यवसायका विशेष सुबीता हुआ है, प्रजाके एक देशसे भिन्न देशमे अत्यन्त अल्पव्ययसे बहुत थोड़े समयमे आनेजानेका यथेष्ट सुभीता होगया हैं, जिस प्रकार भारतके इस प्रान्तके निवासियोके साथ अन्य प्रान्तके साथ आलाप, परिचय, तथा घनिष्ट सम्बन्धमें विशेष सुभीता होगया है, उसी प्रकारसे दूसरी ओर बृटिशशासनशक्तिको दृढ़ करनेके लिये भी यह यथेष्ट सहायकारी हैं। पचीस करोड़ प्रजापूर्ण भारतवर्षमें सत्रह हजार अंग्रेज और अंग्रेजोके अधीनमे एक लाख पचीस हजार देशी यसेना बृटिश शासनशक्तिकी सहायता करती है। भारतके एक प्रान्तमें युद्धविग्रह अथवा विद्रोह उपस्थित होते ही गवर्नमेण्ट बड़ी सरलतासे एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्तको रेलमें बैठालकर सेनाको भेज विशेष उपकार कर सकती है। जैसे १८५७ ईसवीमे सिपाही विद्रोहके समय भारतकी अंग्रेज राजलक्ष्मीके ऊपर विपत्ति आई थी उस समय एक मात्र इस रेलके अभावसे गवर्नमेण्टके एक स्थानसे दूसरे स्थानको अल्पसमयमे सेनाकी सहायता न भेजसकी थी। परन्तु वर्तमान समयमें भारतके रेलविस्तारके साथही साथ अंग्रेज गवर्नमेण्टका वह अभाव भी दूर होगया है।

भारतवर्षके प्रत्येक प्रान्तमे रेलकी गति पहुँच गई है। इस रेलके विस्तारसे देशीय राजोंको जो उपकार प्राप्त हुआ है उसे अवश्य ही मानना होगा, राजस्थानके एक राजपूत राज्यसे अन्य राजपूत राज्यमें जानेके लिये कितना कष्ट पड़ता था, उसे हमारे

पाठकोने यथास्थान पढ़ा होगा। कर्नल टाड् साहबने मारवाड़में जाने के समय रास्तेमे कितना कष्ट उठाया था, वह उनके भ्रमण वृत्तान्तमें भली भाँतिसे प्रकाशित कियागया है। इस समय उसी राजपूतानेमें रेलका विस्तार होगया है, और प्रधान राजपूताना तथा मालवा रेलवेसे शाखा निकलकर भिन्न २ राजपूत राज्योंमे गई है। जोधपुर शाखा रेलवेके सम्वन्धमें भली भाँतिसे प्रकाशित हुआ है, कि "जोधपुरकी शाखा रेलवे जौलाई माससे पालीतक खोली गई है। गत मार्च मासकी समाप्ति तक इस शाखा रेलवेको जितनी आमदनी हुई है, उसकी समस्त आमदनी रेलमे ही लगगई है। और इसमे जो पाँच लाख रुपया खर्च हुआ है, उसका सैकड़ा पीछे दो रुपया करके अदा किया गया हे। यह निश्चय है कि लूनी नदीके किनारेसे चर्वा ग्रामतक इस शाखारेलवेका यथा संभव शीघ्र विस्तार किया जायगा। इस समय जितनी रेलें खोली गई है उनका परिमाण साढ़ेनौ कोशतकका है। चवाँतक विस्तार होनेसे इसका विस्तारित परिमाण साढ़ेवाईस कोशतक होगा। तव जोधपुरकी राजधानीसे नौ कोश दूरतक रेल आवैगी। हमै ऐसी आशा है कि वर्ष की समाप्तिमे इस रेलकी शाखा पूरे तौरसे वनकर खुलजायगी। मि० डवल्यू० होम इस शाखा रेलवेके मैनेजर और इञ्जिनियर पदपर नियुक्त है*"।

यह रेलवे महाराजने स्वयं अपने व्ययसे खुलवाई है इसके तयार होनेसे मारवाड़के वाणिज्यमे अधिक लाभकी संभावना है।

डकैती दमन।

कर्नल टाड् साहवकी उक्तिसे पाठक अवश्य ही जान गये होंगे कि डकैती और चोरी मारवाड़मे चिरकालसे प्रचलित थी। पर्वतकी सीमाके निवासी भील मीना इत्यादि सव जातिआं डकैती और चोरी करके ही अपना निर्वाह करती थीं, विशेष करके नीची श्रेणीके सामन्त भी वीच २ मे डकैती दलके नेता वनकर राज्यमे महा अशान्ति उपस्थित करदेते थे। इन डकैत और चोरोंके दमन करनेके लिये गतवर्ष मारवाड़के महाराजने विशेप प्रवन्ध किया था, और इसी कारण इस कार्यमें विशेष सफलता प्राप्त हुई थी, पर प्रतापसिहजी महोदयने तस्करोंको दमन करके उसके पुरस्कारमें प्रधान राजमंत्रीपद पाया था। भील मीना और वावरी चोरोकी जातिपर विशेष दृष्टि रखकर उनको कृपिकार्यमें शिक्षित करनेके लिये विशेष प्रवन्ध किया गया है। पुलिसके पहरेवालोकी संख्याकी वृद्धि पहरेवालोंके अफसरोका तत्वावधान करके प्राचीन रीतिका संस्कार और शांतिरक्षा विभागमें योग्य कर्मचारियोंको नियुक्त किया था, गतवर्षमे सव प्रकारसे डकैतोंको दमन करनेके निमित्त मारवाड़की सेनाकी संख्या वढ़ाई गई; महाराज प्रतापसिंहने वहुतसे डाकू और चोरोंको पकड़कर दण्ड दिया था, अंग्रेज रजिडेण्ट आशा करते है कि शीघ्रही डकैतोंके उपद्रव पूर्णरीतिसे शान्त होजॉयगे।

---

* Report of the political Administration of the Rajputana states for 1882-1883. P. 115.

मारवाड़की वर्तमान सैन्यसंख्या।

गोलन्दाज.									अश्वारोही और पैदल.									
									अश्वारोही.					पैदल.				
युद्धक्षेत्रकी तोपें.	कार्यकी उपयोगी तोपें.	अन्यान्य तोपें	कार्यके उपयोगी	जंगी तोपें.	जंगीकार्यके उपयोगी	गोलन्दाज सेना.	तोपोंके लेजानेवाले घोड़े	तोपोंके लेजानेवाले बैल	तोपोंके लेजानेवाले खच्चर	शिक्षित घुड़सवार.	सामन्तमंडली और जागीरदारोंके अधीनके अश्वारोही	अन्यान्य नियमित अश्वारोही.	अश्वारोही.	नियमित पैदल.	किलेकी रक्षामें नियुक्त पैदल.	नागा और अन्य जातिके पैदल	तहसीलके सिपाही और नाजिर.	पैदल.
५१*	४०	१२५	३५	१८०	२५	३२०	१२	२८	७	+१९६०	१८००	७३९	३८९९	१४७७	१२४०	८५२	२४८७	५९५४

कर्नल टाड् साहबने मारवाड़की सेनाकी संख्याकी जो सूची दी है उसको हमने यथास्थान प्रकाशित किया है हमारे पाठक गण उस सूचीके साथ इस सूचीको मिलाकर भलीभाँति समझ लेंगे कि इस समय मारवाड़की सामरिक अवस्था कैसी है एक समय मारवाड़ेश्वरके अधीनमे राठौरोंकी ५०००० पचास सहस्र सेनाने एकत्र होकर अनेक युद्धोंमे महावीरता प्रकाश करके अक्षय कीर्ति प्राप्त की थी। वही मारवाड़की अत्यल्पसेना संख्याको देखकर हृदय व्याकुल हो उठता है पर साथमे यह हर्ष भी है कि ५०००० सेनाके होते हुए भी जहाँ शान्ति न थी आज गवर्नमेण्टकी कृपासे अत्यल्प सेना होते हुए भी पूर्ण शान्ति विराजमान होरही है।

जिस अज्ञान अमेय शक्तिने राठौर राज्यकी मरुदेशमे प्रतिष्ठाके लिये सियाजीकी सहायता की थी, जिस शक्तिने एक समय राठौर जातिको महावीर रूपसे विख्यात किया था, जिस शक्तिने राठौर जातिके द्वारा एक समय भारतके गौरवको बढ़ा दिया था, आज उसी शक्तिने मरुक्षेत्रमे राठौर जातिकी वर्तमान भाग्यलिपिको विधिवद्ध करदिया है, यह राठौर जाति फिर कब गर्व सहित अपना मस्तक

* इनमें पांच तोपें इंग्लेण्डकी बनी हैं। + ५०० से कुछ अधिक पैदल हैं और ६० अश्वारोही। १८८१-८२ ई०के शीतकालमें चोरजातिके दमन करनेमें नियुक्त हुए थे। इनमें ६० ऊँटोंपर चढ़नेवाले योधा भी हैं।

उठाकर जननी भारतभूमिके अस्त हुए गौरवको उदय करनेमें समर्थ होगी? पर इस बातका निश्चय कोई नही करसकता कि वह अज्ञेय शक्ति राठौर जातिकी पुनः उन्नतिमें तथा उद्धारमें सहायक होगी या नही ? गवर्नमेण्टके सुशासनमें उन्नति करनेमें कुछ भी बाधा नहीं है ।

इस समयका वृत्तान्त ।

यह राज्य राजपूतानेमें सबसे बड़ा है इसके उत्तरमे बीकानेर और शेखावाटी हैं जो जयपुरराज्यका एक भाग है, पूर्वको जयपुर और किशनगढ़, अग्नि कोणमे अजमेर मेरवाड़ा और मेवाड़, दक्षिणमे सिरोही और पालनपुर, पश्चिममे कच्छका-रण और सिंध और वायु कोणको जैसलमेर राज्य है । २४ अंश ३६ कला, उत्तर अक्षांशसे लेकर २७ अंश ४२ कला उत्तर अक्षांशतक, और ७० अंश ६ कला पूर्व देशान्तरसे लेकर ७५ अंश २४ कला पूर्व देशान्तरतक फैलाहुआ है। ३७००० वर्गमीलमें इसका विस्तार है । राजधानी जोधपुरसे अर्वली पहाड़के बीचका देश उपजाऊ है, लूनी नदीसे बड़ी सहायता मिलती है, यहाँ रेतके टीले टीवे कहलाते हैं यहांका पानी खारी विशेष ह, कही कहींका पानी विपैला भी है, जिसके पीनेसे बहुत हानि होसकती है । यह वहां वेरावण पानी कहाता है । सांभर डीडवाना और पचधारा स्थानोमे नमक बहुत होता है । सांभरकी झीलसे सात आठ कोश पश्चिमको मकराना ग्राम है । यहां स्वच्छ श्वेतपत्थरकी खान है । इसे संगमरमर कहते हैं । गोड़वाड़ परगनेके घाणेराव स्थानके पास भी ऐसेही पत्थरकी दूसरी खानें है । जोधपुर राजधानी पहाड़पर बहुत ही दृढ़रूपसे बनी है । गरमीमे यहां पानीका कष्ट रहता है । नागौर जोधपुरसे ईशान कोणको पाली जोधपुरसे १८ कोश अग्निकोणको बसेहुए इस राज्यमें प्रसिद्ध नगर हैं । नागौरका तलभूमिका गढ़राजस्थानमें बहुत प्रसिद्ध है, जोधपुरसे ३५ कोश दक्षिणको जालौरका प्रसिद्ध गढ़ है, यह गढ़ मारवाड़मे सबसे विकट है । जोधपुरसे ४० कोश पूर्वको मेरताका प्रसिद्ध नगर है जहांके चकमें घूघी प्रसिद्ध हैं इसके सिवाय सोजत, पचपधरा, फलोदी, पोकरण, और बालोतरा आदि कई प्रसिद्ध स्थान हैं । कुचामन नीमाज रियां जयपुर अहवा आसोप मारोह जसोल बाढमेर और सांचोर आदि स्थान भी जाननेयोग्य हैं । बालोतरामें बड़ा मेला होता है ।

सन् १८९१ ईस्वीमे २५२४०३० मनुष्योंकी संख्या थी । लोग बहुधा गुम्बजरूपी घरोंमे रहा करते हैं । जोधपुरमें पगड़ी और पीतलके बर्तन बहुत बनते हैं, इसकी वार्षिक आमदनी ४१००००० इकतालीस लाख रुपया है । यह नगर ६ मील लम्बी चहार-दीवारीसे घिरा हुआ है । इस दृढ़ दीवारमें ७० फाटक है । नगरमें पाषाणके बनेहुए बहुत अच्छे २ घर और मन्दिर हैं और तालाबोंपर पक्के घाट बने हैं । सन् १८९१ की जन संख्यामें ६२००० मनुष्य थे । जोधपुरसे तीन मीलपर मंडोरके, जो पहिले पुराना मुख्य नगर था खण्डहर दिखाई देते है ।

सम्वत् १९४३ में महाराज प्रतापसिंहको सरकारकी ओरसे K. C. S. I. की उपाधि मिली, संवत् १९४४ में प्रतापसिंहजी महाराणी राजराजेश्वरीकी जुबिलीके

उत्सवमें इंगलेण्ड गये। वहां उनको लेफ्टिनेण्ट कर्नलकी उपाधि मिली। इन्हीं महाराज प्रतापसिंहजीने महाराज कुमार सरदारसिंहजीको शिक्षा दी है जिसके कारण वह सब प्रकारके कलाकौशल तथा राजविद्यामें चतुर और प्रवीण होगये हैं।

राज्यका काम कौन्सल, 'राजसभा' द्वारा सम्पादन किया जाता है। इसमें पोकरणके ठाकुर मंगलसिंहजी चाँपावत, कविराज मुरारिदानजी, पण्डित शिवनारायणजी. मुन्शी हरदयालसिंहजी मुख्य सभासद हैं। महाराज प्रतापसिंहजी महाराजा साहब जसवन्त सिंहके तीसरे भाई और महाराजा जालिमसिंहजी सबसे छोटे भाई हैं, हम परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि इस राज्यकी सब प्रकारसे वृद्धि हो और हमारे वर्त्तमान महाराजा साहब बहादुर धन सुत सम्पत्तिशाली होकर आनंद लाभ करैं।

जोधपुर राज्यके वर्तमान शासक श्रीमन् महाराजाधिराज श्री सरदारसिंह साहब बहादुरजी बड़े विद्वान और योग्य महाराजा हैं। इससमय जोधपूर राज्यकी शासन प्रणालीका प्रबंध राजपूतानेकी रियासतोंमें सबसे अच्छा है। दीवानी, फौजदारी, पुलिस, फौज आदि सब महकमोंका अच्छा प्रबंध है। प्रजावर्ग और जागीरदार सब प्रसन्न हैं। जोधपूर राज्यकी घुड़सवार फौज बहुत ही अच्छी है, इसवर्ष सन् १९०९ के दिसम्बर मासमे, गवर्नर जनरल लार्ड मिन्टो महोदय जोधपूरमे पधारे थे और हिजमजेस्टी सम्राट महोदयका आज्ञापत्र आपने जोधपुरमे ही सुनायाथा। तात्पर्य्य यह है की उक्त महाराजके सब भाँतिसे सुयोग्य और नीतिचतुर होनेसे अंग्रेज सरकार भी आपका बड़ा सन्मान करती है।

महाराज सरदारसिंहजी साहब बहादुरके दो महाराज कुमार हैं। उनमेंसे बड़ेका नाम महाराज कुमार श्रीसुमेरसिंह बहादुर है।

इस समय (जोधपुर) मारवाड़मे रेलका अधिक प्रचार व विस्तार होगया है जोधपुर बीकानेर रेलवे तथा मारवाड़ रेलवेने इतना विस्तार पाया है कि प्रायः मुख्य स्थानोंमें रेल होगई है. मारवाड़, जंकशन, पाली, केरला, लूनी-जंकशन, सालावास, जोधपुर, पीपाड़ मेरता, खजवाना, मूँडवा, नागौर, बालोतरा, पचपधरा, कुलेरा, कुचामन आदि स्थानोंमें रेल चल रही है, जिससे व्यापारमे बहुत उन्नति हुई है।

दोहा-सिया सहित श्रीरामके, चरणकमल हियलाय।
पूर्ण भयो इतिहास यह, जोधनगर सुखदाय॥ १॥
महावीरके चरण गहि, द्विज बलदेव प्रसाद।
चाहत पाठक जननके, रहै हिये अहलाद॥ २॥

जोधपुरका इतिहास समाप्त।

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस-बम्बई.

राजस्थान.

दूसराभाग.

बीकानेरका इतिहास.







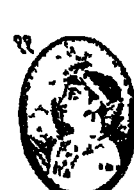













बीकानेर।

(१) राव बीका,
(२) „ नारा,
(३) „ लून करन,
(४) „ जैतसी
(५) कल्याणसिंह,
(६) राजा रायसिंह
(७) „ दलपतसिंह
(८) „ सूरसिंह
(९) „ करनसिंह
(१०) महाराजा अनोपसिंह,
(११) „ सरूपसिंह,
(१२) „ सुजानसिंह,
(१३) „ जोरावरसिंह,
(१४) „ गजसिंह
(१५) „ राजसिंह,
(१६) „ प्रतापसिंह,
(१७) „ सूरतसिंह,
(१८) „ रतनसिंह,
(१९) „ सरदारसिंह,
(२०) „ डूंगरसिंह
(२१) „ गंगासिंह

॥ श्रीः ॥

राजस्थानका इतिहास.

दूसराभाग २.

बीकानेरका इतिहास.

प्रथम अध्याय १.

बीकानेरकी राजसृष्टिका आदि विवरण-आर्य राजाओंकी दिग्विजयकी रीति-राज्यप्रतिष्ठता; तथा इन देशोंके आदिम निवासी जाटोंकी उस समयकी अवस्था-सिक्ख जातियोंकी संख्या-विस्तृति तथा पश्चिम राजपूताना और उत्तर भारतमें इन जाट कृषकोंकी संख्याकी अधिकता उनके कृषिका व्यवसाय-शासनविधान-धर्मप्रणाली-बीकाके अभ्युदयके समय बीकानेरमें स्थित जाटोंकी नगरावली-बीकाकी जयप्राप्तिका मूल कारण-जाटनेताओंका बीकाके समीप इच्छानुसार अधीनता स्वीकार करना-उनके सम्बन्धकी व्यवस्थाका निश्चय करना-बीका और उनकी जात प्रजाका जोहियोंपर आक्रमण-बीकाका जय प्राप्त करना-बीकाका भाटियोंके पाससे नागौर देशको छीनकर १४८९ ईस्वीमें उसके द्वारा बीकानेर राजधानीकी प्रतिष्ठा करना-उनके चचा कांधलका उत्तरांशको जीतना-बीकाकी मृत्यु-उसके पुत्र लूनकरणका अभिषेक-उसका भाटियोंसे कितने ही देशोंको जीतना-उनके पुत्र जैतसिंहका अभिषेक-बीकानेरमें शासनशक्तिका विस्तार-रायसिंहका सिंहासन प्राप्त करना-बीकानेरके जाटोंकी स्वाधीनताका नाश-राजशक्तिकी प्रबलता-अकबरके साथ रायसिंहका मिलन-उनका सन्मान और सामर्थ्य वृद्धि-जोहियोंकी विद्रोहिता और उनका दमन-जोहियोंके अधिकारी देशोंमें अलिकजण्डरके आक्रमणके चिह्न-राजभ्राता रामसिंहसे पूणियाके जाटोंकी पराजय-रायसिंहकी कन्याके साथ कुमार सलीमका परिणय-रायसिंहकी मृत्यु-उनके पुत्र करुणसिंहका अभिषेक-करुणसिंहके तीन पुत्रोंका यवनसम्राट्के कार्यमें प्राण त्यागना-सबसे छोटे अनूपसिंहको सिंहासनकी प्राप्ति-उनके द्वारा काबुलका विद्रोहनिवारण-उनकी मृत्युके सम्बन्धमें मतभेद-स्वरूपसिंहका अभिषेक-उनका हनन-सुजानसिंह, जोरावरसिंह, गजसिंह, और राजसिंहको क्रमानुसार सिंहासन प्राप्ति-विमाताका विषप्रयोग-राजसिंहका प्राणनाश-और उसका सामन्तोंके विरुद्ध सिंहासनपर अधिकार करना-सिंहासनके न्यायअधिकारी अपने भतीजेका प्राणनाश करना-आत्माविग्रह-जोधपुरपर आक्रमण-बीकानेरकी वर्तमान अवस्था-बीदावाटीका वृत्तान्त।

वर्त्तमान् विजित भारतकी पतित आर्य जातिके गौरव स्वरूप आर्य शासनके शेष स्मृति चिह्न स्वरूप दो प्रधान राजपूत राजाओंके इतिहासको वर्णन करके, हम इस समय राठौर वंशकी शाखा बीकानेरके इतिहासको वर्णन करते हैं। प्रकृतिकी अप्रिय-

स्थली, मरुक्षेत्रमे कान्यकुब्ज वंशीय सियाजीके आदि राज्यस्थापनसे मारवाड़के वर्तमान महाराजा यशवंतसिंहके शासन समयतक सम्पूर्ण जाननेयोग्य विषयोको पाठकोके संमुख भेट किया गया है। इस समय हमै आशा है कि गुणवान् पाठक उस राठौर राज्य-वंशरूपी वृक्षकी एक प्रधान शाखाके ज्ञातव्य इतिहासको पढ़कर अवश्य ही उसी प्रकारकी धीरताके साथ समय वितानेमे कातर न होंगे।

इतिहासवेत्ता टाड् साहब सबसे पहिले लिखगये है, कि "राजपूतानेके राजाओंमे बीकानेरका राज्य दूसरी श्रेणीका गिना जाता है। यह मारवाड़की एक शाखा है, इसके महाराज जोधपुरके वंशधर हैं। इनके आदि अधीश्वर मूलराज्यने मारवाड़की उत्तर सीमामें स्थित देशको जीतकर इस राज्यकी प्रतिष्ठा की थी और इस राजको ठीक मारवाड़के मध्यस्थलमें स्थापित करके इसकी स्वाधीनता की विशेष रूपसे रक्षा की थी"।

हमारे पाठकोने मारवाड़के इतिहासमें महावीर जोधाके शासन समय, सन् १५१५, संवत् १४५९ ईस्वीमें प्राचीन राजधानी मंडोरको छोड़कर जोधपुर-नामक नवीन राजधानीके स्थापित होनेके वृत्तान्तको पढ़ा है। जिस समय मारवाड़के महाराज जोधगिरिसे नवीन राजधानीमें आये उस समय उनके दूसरे कुमार बीका अपने चचा कांधलके साथ तीन सौ राठौरोंकी सेना लेकर मरुक्षेत्रमे पिताके राज्यको मारवाड़की सीमामें बढ़ानेके लिये बाहर हुए। बीकाके जानेके पहले ही उनके भ्राता बीदाने अत्यन्त प्राचीन निवासी मोहिलोंकी निवासभूमि पर आक्रमण कर उनको परास्त करके उनके देशोको जीतलिया। अपने भ्राता बीदाकी इस सम्पूर्ण फलदायक जय प्राप्तिसे उत्साहित हो बीकाजी दिग्विजयके लिये चले थे।

आर्य राजाओंमें दिग्विजयकी रीति भारतवर्षमें चिरकालसे प्रचलित थी। हमारे शास्त्र, पुराण और इतिहासोंमें इस दिग्विजयके सम्बन्धमें बहुत सी कथाएं पाई जाती है। चिर वीर व्रतधारी क्षत्रियोंके लिये दिग्विजयकी रीति वीरधर्मका प्रधान अंग गिनी जाती थी। वीरधर्म, वीरनीति, और राजनीतिके मतसे यह दिग्विजयकी रीति आजतक निन्दनीय नही गिनी गई थी। स्वाधीन भारतमें वीरताका महान् आदर था, इसीसे सत्युग, त्रेता, और द्वापर तथा कलियुगके आर्यराजा इस दिग्विजयके लिये बाहर जाकर अनन्त धन उपार्जन कर यश और सन्मानसे विभूषित हो अपनी वीरताकी ऊंची प्रशंसासे भारतवर्षको कंपायमान करते हुए अपने २ राज्यमें लौट आते थे। भारतवर्ष कभी भी एक आर्यमहाराजके अधीनमे नहीं रहा। जहाँतक जानाजाता है उसके पहलेसे ही चन्द्रवंश और सूर्यवंशने दो भागोमें विभक्त होकर भारतके भिन्न २ प्रान्तोमें राज्यका विस्तार किया था, और अन्तमे सबसे पहले आर्यावर्तके अधिकारमे होते ही क्रमशः दक्षिणतकको जीतकर सम्पूर्ण भारतमें अपनी शासनशक्तिका विस्तार कर लिया था। उस क्षत्रीवर्णके मूल सूर्यवंश और चन्द्रवंशसे धीरे २ अनेक शाखाएं निकल कर भारतवर्षके छोटे २ अगणित स्थानोंमे पहुंच गई;। इस सूर्यवंश और चन्द्रवंशके बीचमें जब जिस वंशमे कोई महावीर महा योधा जन्म लेता था,

तभी वह दिग्विजयके लिये बाहर जाकर अपने बाहुबलसे छोटे २ राज्योको जीतकर चक्रवर्ती महाराजकी उपाधि धारण करता था। यद्यपि वह चक्रवर्ती महाराज भिन्न २ राज्योको जीतकर अतुल धन और विवाहके योग्य सुन्दर २ स्त्रियोको हरण करके लाते थे, परन्तु वह किसी समय भी कूट राजनीति जालके विस्तारसे उन समस्त राज्योको अपने अधिकारमे नहीं करते थे। किसी राजवंशका एकवार ही लोप नहीं करते थे, न किसीका राज्य अपने हस्तगत करते थे। पूर्वकालमे जिस समय देशीय राजा दिग्विजयके लिये बाहर जाकर समरभूमिमे युद्ध करनेकी इच्छासे डटते थे, उस समय वह केवल उन्हींके साथ युद्ध करते थे जो समर चाहते थे। जो अपनेको असमर्थ जान बिना युद्धकिये अधीनता स्वीकार करलेते थे उनके साथ वे कभी युद्ध नहीं करते थे। दिग्विजयी राजा वीर धर्मके अनुसार युद्धमे प्रवृत्त होकर कभी किसी जातिका लोप तथा राज्यका नाश नहीं करते थे। उनमे कुछ ही समयके उपरान्त मित्रता होकर वैवाहिक सम्बन्ध हो जाता था। यद्यपि प्रधान २ राजवंशके वीर व्रतधारी कुमार स्वतंत्र राज्यके स्थापनकी अभिलाषासे अन्य देशोंपर आक्रमण कर उनपर अधिकार करलेते थे, परन्तु वह ऐसा कदापि नही करते थे कि उस देशको एक ही बार कठोर पराधीनतामे बाँधकर प्रत्येक प्रजाके राजनैतिक अधिकारको हरण कर प्रजाके सर्वस्व हरणकी इच्छा करते हो। वीर-धर्मके अनुसार वह युद्धभूमिमे जाकर देशको जीतकर वहाँके निवासियोंके साथ मिलकर उनमेसे एकको लेकर उस नवीन राज्यको शासन करते थे। वहाँके निवासी भी इनको अपनी ही समान जानकर नवीन शासनमें पूर्वकी नाई स्वाधीनता और सुख शान्ति संभोग करते, तथा किसी स्थानमें नवीन राजाके बल विक्रम और शिक्षा ज्ञानकी सहायतासे स्वदेश और जातिकी उन्नति करलेते थे। अतएव मारवाड़के राजकुमार बीकाने इस शेषोक्त श्रेणीकी समान दिग्विजयके लिये बाहर जाकर इस नवीन राज्यकी प्रतिष्ठा की थी। कर्नल टाड् साहब लिखते है कि बीकाने दिग्विजयके लिये बाहर जाकर सबप्रकारसे सर्व साधारणमें सफलता प्राप्तकी, विजयकी अभिलाषावाले यही प्रतिज्ञा करके घरसे चलते थे कि या तो मार डालेंगे या मर-जाँयगे, दूसरे जाति धर्मकी विधिके अनुसार शत्रु हो अथवा मित्र हो दिग्विजयके समय उनके हाथसे देशको छीन लेनेकी रीति वीरधर्मावलम्वी राजपूतोमे प्रबल थी, इसीसे सफलता प्राप्तिका और भी सुभीता हुआ।

मारवाड़के राजकुमार बीकाजी पहिले पहिल केवल तीनसौ राठौर वीरोकी सेना साथ लेकर दिग्विजयके लिये चले। उन्होने जाङ्गल नामक स्थानपर सांखला नामकी प्राचीन जातिपर आक्रमण किया। प्रबल युद्ध होनेके पीछे राठौरोने सांखलालोगोको परास्त करके मारडाला; बीकाजीके बलविक्रमसे राठौरोकी सेनाका दल साहस और वीरताके ऊंचे गौरवसे शीघ्र ही मरुक्षेत्रको प्रतिध्वनित करनेलगा। उस प्रथम युद्धमे सब प्रकारसे जय प्राप्त करके बीकाजीके साथ पुंगल देशमे भाटियोंका परिचय हुआ। पुंगलपतिने बीकाको महावीर पुरुष देखकर अपनी एक कन्याका विवाह उनके साथ करदिया। बुद्धिमान्

पुंगलपति इस वातको भलीभांतिसे जान गया था कि वीर वीकाके साथ युद्धके वदलेमें उसके साथ संवन्ध करके अपनी स्वाधीनताकी रक्षा करना ही कर्तव्य है। वीकाने देखा कि भाटी जातिके अधीश्वरने जव अपने वंशमे होकर कन्या दी है तव पुंगलपर अधिकार करना किसी भांति भी उचित नहीं; इस कारण उसने भाटियोंकी स्वाधीनतामे किसी प्रकार हस्ताक्षेप न करके कोड़मदेसर नामक स्थानमे नवीन किला वनाकर वहां निवास किया, और वह धीरे २ निकटवर्ती अन्यान्य प्रदेशोंको जीतकर अपने अधिकारमें करनेलगा। असीम साहसी राठौरोकी सेनाके विरुद्ध कोई भी स्थानी सम्प्रदाय जय प्राप्त करनेमें समर्थ न हुई, इस कारण वीका धीरे २ क्षुद्र देशोकी सीमा दवाकर प्रवल होगया। विजयी वीका धीरे २ राज्यकी सीमाको वढ़ाकर अंतमें वहांके प्राचीन निवासी जाटोंके अधिकारी देशोंकी ओर जा पहुँचा, जाट चिरकालसे ही इन देशोंमे निवास करते थे। इस समय वीकानेर राज्यके अधिकांश देशोंमें जाट लोग ही रहते थे; जोधपुरवंशीय वीकासे कृषिजीवी जाटोंमें सामन्त शासनकी रीति प्रवर्तित होनेके पहिले उनकी अवस्था किस प्रकार थी, महात्मा टाड् साहव उस विपयको प्रयोजनीय जानकर इस। स्थानपर वर्णन कर गये हैं। उन देशोके जाटोके प्राचीन ऐतिहासिक तत्त्वको लिखना उचित जानकर हम भी यहां प्रकाश करतेहै।

इतिहासवेत्ता टाड् साहव लिखते है " इस विख्यात् तथा सुविस्तारित जातिके संक्षिप्त विवरणको हमने इससे पहिले भी प्रकाशित किया है। टिमिरिस (Tomyris) तथा साइरस (Cyris) के समय लाहौरके वर्तमान जाट राजाके समयतक प्राचीन एशियाकी जातिमे इन जाटोकी संख्या सवसे अधिक थी, यह वात सभी इतिहासोंमे प्रसिद्धहै, वर्तमान लाहौरपतिके उत्तराधिकारी यदि इनकी समान उद्यम एवं प्रतिभाशाली होते तो जाटजातिके पुनर्वार उदयमें वह अपने प्राचीन पैतृक वासस्थानमे एशियाके सिंहासन पर एक दिन अवश्य वैठ सकते। उस मध्य एशियाकी ओरसे यह इतनेमे अनेक दूरतक आगे वढ़े हैं। ईसोकी चतुर्थ शताव्दीमे पंजावमे जट्ट वा जाट राज्य प्रतिष्ठित था, परन्तु इन्होंने कितने समय पहिले इस जाटजाति और इस देशके प्रथम उपनिवेशको स्थापन- कियां था, वह विषय हमैं ज्ञात नहीं है। मुसल्मान भारतवर्षमे अपनी शक्तिको विस्तार करनेके लिये जव उद्यत हुए थे तव इस जाटजातिने ही उनके विरुद्ध खड़े होकर विशेप वाधा दी थी। महमूदने जिस समय सिन्धु नदीके पार होनेकी चेष्टा की थी, उस समय इस जाटजातिने ही अपने वाहुवलसे उनके मार्गको रोककर अपनी रक्षा की थी, तथा कठोर हृदय तैमूरने जिस समय इन जाटोके विरुद्ध भयंकर संग्राम किया था

(१) कर्नल टाड् साहवने पंजावपति रणजीतसिंहको जाट कहकर इस टीकेमे लिखा है, " रणजीतसिंहने वहुत पहिलेसे पेशावर पर अधिकार किया है, और कावुलपर भी अधिकार करनेकी इच्छा की है। कावुलकी वर्तमान विशृंखलामें उनकी आशा पूर्ण होनेका विशेप सुभीता उपस्थित हुआ है।"

(२) प्रथम भागका परिशिष्ट देखो।

उस समय इन्होंने जैसा बल विक्रम प्रकाश किया था, उसको हम पहिले ही कह आये हैं। संम्राट बाबरने स्वयं लिखा है कि जब जब वह भारतवर्षमें अपनी शासनशक्तिको स्थापन करने के लिये अग्रसर हुआ तब तब जाटोंने ही उसके विरुद्ध हथियार पकड़े थे। पंजाबके किसान जिस समय मुसल्मानी धर्मसे आक्रान्त हुए, उस समय प्रधानतासे इस जाटजाति, और पंजाबके समर व्यवसाइयोंने नानकके द्वारा प्रचारित धर्मका अवलम्बन करके उस समय जाट नामको छोड़ कर सिक्ख नाम धारण किया"।

ईसके पीछे साधु टाड् साहब लिखते हैं, "कि इस बातका हमे निश्चय है कि इनके जूति, जिति, जित, जूट, वा जाट, यही नाम है, तीन शताब्दीके पहिले भारतवर्षमे अन्यान्य जातियोंकी अपेक्षा इनकी संख्या अधिक थी, और इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि रजवाड़ेके पश्चिमांश और उत्तरांशके किसानोंमे इनकी संख्या अधिक नहीं थी"।

पीछेसे इस बातको भी लिखा है, कि "किससमय इस जाटजातिने भारतवर्षके मरुक्षेत्रमे सबसे पहिले आकर निवास किया था। यह तो हम पहिले ही कह चुके हैं कि यह विषय हमै विदित नहीं है। परन्तु जिस समय राठौर गण इस जाट जातिको जीतनेमे प्रवृत्त हुए थे उस समय इसी जाटजातिमे जैसे आचारोंके व्यवहार करनेकी रीति प्रचलित थी उससे भलीभाँति जानाजाता है कि यह जाटजाति सीदियन जातिसे उत्पन्न है। यह लोग केवल खेती करके ही अपना जीवन निर्वाह करते थे, इनके नेताओंने कभी अपना प्रभुत्व इनके ऊपर नहीं प्रकाश किया, केवल उपदेश और सम्मति देते रहे। विश्वजननी भवानी एक जाटकी कन्यास्वरूपसे प्रगट हुई थी। इसीके विश्वाससे उन्होंने उस भवानीकी आराधनाके अतिरिक्त हिन्दू धर्मका और कोई विधान ग्रहण नहीं किया, अर्थात् हिन्दू धर्मके साथ उनका कोई सम्बन्ध नहीं था। सारांश यह है कि, जरकसीजसे पहिले जाट लोग जिस पौत्तलिक रीतिको भारतवर्षमे लाये थे, विख्यात मुसल्मान साधु शेख फरीदने उनकी उस पौत्तलिकताको नष्ट कर दिया, इस लिये धर्मके सम्बन्धमे उनका कोई एक निश्चित विधान न रहा। मरुक्षेत्रके जाट पौत्त-लिकता और मुसल्मानता दोनोंको पालन करते थे, और उन्होंने अपनेको एक स्वतन्त्र जाति विचार लिया था। एक पूनिया जाटने हमसे कहा कि "हमारा आदि वासस्थान

(१) बादशाह बाबरने लिखा है, कि "पहिली रबीवलकी १४ वीं तारीख शुक्रवारके दिन। २९ दिसम्बर १५२५ ईस्वीको मैं स्यालकोटमें गया। हिन्दुस्तानमें मैं जितनी बार आया" जाट और गूजर लोगोंने उतनी ही बार नियमितरूपसे पर्वत और झाडियोंमेसे बडी संख्याके सहित बैल और भैसोंको चुरा कर हमारे ऊपर धावा किए।"

(२) मिस्टर एलफिन्स्टन जिस समय अंग्रेज गवर्नमेण्टके दूत बनकर काबुलमें गये, उस समय कर्नल पिटमान उनके साथ गये थे, कर्नल पिटमानने लिखा है कि काबुलके जाट किसान मुसल्मान थे; वहाँ सिक्ख किसान बहुत थोड़े दिखाई देते थे, परन्तु वह जाट सिक्ख जातिके द्वारा एकबार ही परास्त होगये थे।

पंजाबके बाहर है" । अधिक क्या कहै । बीकाने मारवाड़के जो छः नामधारी जाटोकी सम्प्रदायका दमन करके केवल अपने अधिकारका किस्तार किया था । उसमे एक सम्प्रदायका नाम असिख देखा जाता है । अकसम एवं जक्षरेतीसतीसे जो चार जाटोकी सम्प्रदायने वेटरियाके ग्रीक राज्यका नाश किया था, उसी सम्प्रदायके नेताका नाम असि था इसी कारणसे दोनोंमें भलीभाँति सदशता विराजमान है । "

कर्नल टाड् साहव लिखते है ' कि ' तैमूर और वावरके भारतपर अधिकार करनेके मध्य समयमें राठौरोने जाटोको पराजित किया था । तैमूर चगताई वंशका आदि पुरुप है उसने जाटोंको भारतके मरुक्षेत्रमें ट्रून्स सक्तियानासे भगा दिया ।

इस कारण हम यह सिद्धान्त कर सकते हैं कि मध्य एशिया संसारकी सभी जातिका उत्पत्ति स्थान है । जाट गण वहांसे सिन्धुनदीके पूर्वप्रान्तकीओर भाग गये थे । वीकाजीने जिन जाटोंको परास्त किया था उन जाटोने बहुत शताब्दियोंके पहले यहां आकर निवास किया था ।

जाटोके अधिकारी देशोका विस्तार भी इस सिद्धान्तकी पुष्टि करता है, कारण कि वीकानेर राज्यकी सीमाके प्राय: सभी देश नीचे लिखी हुई छः सम्प्रदायोंके जाटोसे परिपूर्ण है;—

१ पूनिया ।	४ असिघ ।
२ गोदारा ।	५ वेनीवाल ।
३ सारन ।	६ जोया ।

यद्यपि शेपोक्त सम्प्रदायको वहुतोने भाटियोकी शाखा कहा है, परन्तु भाटियोके द्वारा पुत्र रूपसे परिपालित हुए जोया गण इस जाटजातिसे उत्पन्न नही थे यह भी सिद्धान्त है।

"वीकानेरकें जाटोकी प्रत्येक सम्प्रदायके नामसे एक २ विभाग है, और वह प्रत्येक विभाग जिलारूपमें विभक्त है । जाटोकी वस्ती छः विभागोके अतिरिक्त वागौर, खारी पट्टा और मोहिल नामके राजपूतोसे छीने हुए और भी तीन विभागोमे है । यह छः जाट विभाग वीकानेरके मध्य और उत्तरांशमे स्थित है और राजपूत विभाग दक्षिण और पश्चिमकी सीमामे स्थापित है ।

उस समयके छः विभाग इस प्रकार है ।

विभाग	ग्रामसंख्या	जिलेके नाम ।
१ पूनिया	३००	भादरां, अजितपुर, सीधमुख, राजगढ़, दादर, योह सांकू इत्यादि ।
२ वेनीवाल ।	१५०	भूखरखा सून्दरी, मनोहरपुर, कूई वाई, इत्यादि ।
३ जोया ।	६००	जैतपुर, कंवानो, महाजन; पीपासर, उदयपुर इत्यादि ।
४ असिघ ।	१५०	रावतसर, विरामसर, दादूसर, गुँडइलो, कोजर, फ़ुआग,
५ सारन ।	३००	वूचावास, सोवाई, वादनू सिरसिला इत्यादि ।
६ गोदारा ।	७००	पुन्दरासर, गोसेनसर, (बड़ा) शेखसर, गड़सीसर, गरीवदेसर,
जोड़ संख्या	२२००	(जाटोंके प्रदेश) रंगीसर काल्ू इत्यादि ।

७ भागौर	३००	वीकानेर, नार, किला, राजासर सतासर, चतरगढ़, रिलदीसर, वीतनख, भवानीपुर, जयमलसर इत्यादि।
८ मोहिला	१४०	चौपुरा (मोहिलोंकी राजधानी) सावन्ता, हीरासर, गोपालपुर, चारवास, वीदासर, लाडन्, मलसीसर, खरबूजारा-कोट इत्यादि।
९ खारीपट्टा अर्थात् खारी-नामकका देश।	३०	
सब जोड़	२६७०	

महात्मा टाड् साहबकी उक्तिका प्रतिवाद करना हम किसी प्रकार भी उचित नही समझते, परंतु सत्यके संमानकी रक्षाके लिये हम उनकी इस बातका प्रतिवाद करनेको बाध्य हैं कि भारतवर्षके जाट् मध्य एशियाके जट्ट जातिके वंशधर नही है। इसमें उनको चाहे दृढ़ विश्वास हो, परंतु हम उसका पोषण किसी भांतिसे नहीं कर सकते। इसी विश्वाससे उन्होने राजपूतोंको पोरसका राजवंशी कहा है। सारांश यह है कि जहाँ नामका कुछ भी सादृश्य रहै, जहाॅ आचार व्यवहारमे किञ्चित् भी समानता देखी है, वही पर टाड् साहबने अपनी विचित्र युक्तिमय कल्पनाओका विकाश किया ह। जैसे उनका यह अनुमान है कि जट्ट जातिने मध्य एशियासे भारतमे आकर जाट नाम धारण किया। इसी प्रकार उनका यह भी विश्वास था कि ब्राह्मण, क्षत्री इत्यादिने भी मध्य एशियासे भारतवर्षमें प्रवेश करके आदिमके निवासियोको जीत कर क्रमानुसार अपना राज्य विस्तार किया है। एलफिनिस्टन्, कोलब्रुक आदिने भी इसी मतका अनुमोदन किया है। आधुनिक मैक्समूलर इत्यादि विद्वानोका भी यही मत है। इन्हींके आदर्शसे विश्व-विद्यालयके शिक्षित देशियोंका भी यही विचार प्रबल होगया है। परन्तु हम इस मतके पक्षपाती नहीं हैं। हमारे शास्त्र, पुराण, इतिहास इत्यादिमे इसका कोई प्रमाण नहीं पाया जाता कि आर्य गणोने मध्य एशियासे भारतमे आकर राज्यका विस्तार किया है। वरन हमै महाभारत इत्यादिमे इस प्रकारके प्रमाण मिले है, कि भारतवर्षकी अनेक जातियां म्लेच्छ होकर मध्य एशियाकी ओरको चली गई थीं। हमारे देशके सम्बन्धमे, जातिके सम्बन्धमे देशके इतिहासके संबन्धमे साहबोके वचनोपर जिनका वेदवाक्यके समान विश्वास है, हम उनके उस भ्रामक विश्वासके विरुद्ध किसी बातके कहनेकी अभिलाषा नहीं करते। हां केवल इतना ही कह सकते हैं कि शास्त्र पुराण और इतिहासोको पढ़कर

(१) कर्नल टाड् साहबनें टीकेमें लिखा है कि पहिले जाटोंने अपनेको वियानाके यदुवंशका उत्तराधिकारी कहकर परिचय दिया था। उनसे इस प्रकार किंवदंती प्रचलित है कि उनका आदि वासस्थान कन्धारमें था।

इसके सम्बन्धमें अपना गठन प्रकाश करना कृतविद्य संप्रदायको उचित है और शास्त्रोंके देखनेसे यह भ्रांति सहजमे मिटजाती है।

खैर–महात्मा टाड् साहबने जो कुछ पीछे वर्णन किया है कि "इस समय राज्यकी वसती इतनी शीघ्रतासे पूर्ण हो रही थी कि वीकाजी अपने पिताके वासस्थान मंडोरको छोड़ कर कई वर्षके बीचमे ही २६७० ग्रामोंके अधीश्वर होगये। परन्तु इतने बड़े प्रदेश विजय करनेके लिये वीकाजीको अपनी प्रवल शक्तिके प्रयोग करनेकी आवश्यकता न पड़ी कारण कि वहांके निवासियोने अपनी इच्छानुसार, विना युद्ध किये ही उनकी अधीनता स्वीकार करके उनको अपना प्रभु वना लिया। वह जाटगण वीकाके अधीनमे एक राज्यकी प्रजारूपसे रहने लगे थे, परन्तु वर्तमान समयमें पूर्वोक्त संख्यक ग्रामोकी संख्या आधी भी नहीं रही।

वीकावंशके वर्तमान वीकानेरके अधिपति सूरतसिहके राज्यके ग्रामोका परिमाण १३०० खंड भी नही हुआ।"

वीकाजी मारवाड़के जिन अंशोंको अपने अधिकारमें करनेके लिये बाहर गये थे, उस उत्तरके गारा अंशके जाट तथा जोहिया गण अत्यन्त सामान्य अवस्थासे केवल पशुओंके पालनसे अपनी जीविका निर्वाह करते थे। उनकी धन सम्पत्ति और उनका सर्वस्व केवल पशु ही थे। वह दलके दल पशुओंको साथमें लेकर अतिरिक्त पशुओंको वेचा करते थे; और गाय भैस इत्यादिके दूधमेंसे घी निकाल कर, तथा भेड़ इत्यादिका रूआँ सारस्वत ब्राह्मणोंके हाथ वेचा करते थे। इस देशमें उपरोक्त याजन कार्यके अतिरिक्त वाणिज्य व्यवसाय भी करते रहते थे। जाट और जोहिया उक्त कई एक द्रव्योंके वदलेमे उन वणिक ब्राह्मणोंसे गेहूँ चावल इत्यादि आवश्यक पदार्थोंको लेते थे।

वीर श्रेष्ठ वीका जिस समय नवीन राज्यके प्रतिष्ठाकी इच्छासे इन जाट और जोहियोंके अधिकारी देशोंको जीतनेके लिये वीरताके गर्वसे आगे वढ़ा, उस समय उनकी उस कामनाके पूर्ण होनेके पक्षमें वहुत सा सुभीता मिलगया था। इस कारण उन्होंने बड़ी सरलतासे विना युद्ध किये एक विस्तीर्ण देशका राज्य प्राप्त करलिया। क्षीणहृदय दुर्वलशरीर बंगालीजातिने जिस भाँति सिराजुद्दौलाके घोर अत्याचार और उपद्रवोंसे पीड़ित हो अंतमें अंग्रेजोंके करकमलमें जननी जन्मभूमिको अर्पण किया था, इन जाटोंने भी उसी प्रकारसे विना युद्ध किये वीर श्रेष्ठ केशरी वीकाके हाथमें जननी जन्मभूमिके शासनका भार अर्पणकिया।

टाड् साहब लिखते हैं, कि "एक २ करके अनेक भिन्न कारणोंके समावेशसे वीकानेरकी राज्यसृष्टिमें विशेष सुभीता हुआ था; तथा उसी कारणसे जाटोंने प्राचीन सीदियोंके सरलभावको छोड़कर राजपूत सामन्त शासनकी रीतिके अनुसार नवीन प्रथाको धारण किया। यद्यपि वीकाके भाई बीदाने मोहिलोंको परास्तकरके और उनके देशोंपर अधिकार करके वीकाकी जय प्राप्तिका मार्ग साफ कर लिया था; परन्तु जिस पापसे संसारकी समस्त साधारण शासनरीतिका विध्वंस होगया है, यदि

जाटोंमें वह पापाग्नि प्रज्वलित न होती तो बीका कभी भी इस प्रकारसे विना युद्ध किये देशको नहीं जीत सकता था। जाटोंकी छः सम्प्रदायमेंसे जोहिया और गोदारा नामक अत्यन्त सामर्थ्यवान् जाट सम्प्रदायमे परस्पर विद्वेष अधिक बढ़ गया था, इसी कारणसे यह जोधाके वंशधर सरलतासे राजसिंहासनपर विराजमान हुए बीकाकी जयप्राप्तिका एक दूसरा कारण यह भी था कि इसके पहिले अत्यन्त कठिन स्वभाव मोहिल जातिके साथ इन जाटोंकी भयंकर शत्रुता थी, बीदाने राठौरोंकी सेना के साथ आकर उनका एकवार ही विनाश कर अपनी वीरता प्रकाश की थी, अस्तु जाट इनके भयसे बीकाकी शरण आये। और फिर इन्हीं देशोंकी सीमामें जैसलमेरका राज्य विराजमान था, उसी जैसलमेरमें भाटी लोग अत्यन्त प्रवल होकर जाटोंके ऊपर अन्याय उपद्रव और घोर अत्याचार करते थे, इस कारण जव उन्होंने उन अत्याचार करनेवालोंके हाथसे स्वजातिकी रक्षा होनी असंभव देखी, तव इन जाटोंने विना युद्ध किये बीकाकी अनुगत्यता स्वीकार करली। विशेष करके बीकाके आधीनकी महा-वली राठौर सेनाने दिग्विजयके लिये वाहर जाकर जिस भाँतिसे अपने बल विक्रमको प्रकाशित कर जंगलके निवासियोंका नाश करदिया था, इसीसे उन्होंने बीकाकी शरण जानेके अतिरिक्त अपनी रक्षाका दूसरा उपाय न देखा"।

तव गोदाराके जाटोंने घोर संशयमे पड़कर, बीकाको आत्म समर्पण करना उचित है अथवा नहीं, इसका निश्चय करनेके लिये शीघ्र ही एक जातीय सभा की। सबसे पहले गोदाराके नेताने उस सभामें आकर अनेक तर्क कुतर्क करनेके पीछे यह निश्चयकिया कि राठौर वीर बीकाको संतुष्ट करना परम कर्तव्य है।

गोदारा जाटोंके प्रधान नेता पाण्डु सेखासरमें निवास करते थे। पाण्डुको नीचे लिखे हुए रुनियाके नेतासे समान और मर्यादा प्राप्त हुई थी। इन जाटोंमे सब प्रकारसे सौम्यभाव प्रचलित था। सभी मनुष्य समभावसे भूसम्पत्तिको भोगकर पशुओंका पालन करके जीविका निर्वाह करते थे।

गोदाराके जाटोंने जातिकी साधारण सभामे एकताका अवलम्वन कर उक्त सेखासर और रुनियाके अधिनायकको राठौर राजकुमार बीकाजीके निकट भेजकर निम्नलिखित व्यवस्था कर उसके करकमलमें आत्म समर्पण करनेके लिये अनुरोध प्रकाशित किया।

प्रथम–जोहिया तथा जो अन्यान्य जाट गोदाराके साथ शत्रुता और अत्याचार करते हैं बीकाको उनकी ओरसे जोहिया आदिके विरुद्धमें खड़ा होना होगा।

---

(१) पाक पत्तनके मुसलमान साधु, शेख फरीदके नामके अनुसार इस गांवका नाम शेखा-सर रक्खा गया था। इस देशमें शेख फरीदकी एक दरगाह आजतक है। टाड् साहव लिखते हैं कि, "जाट भवानी देवी माताकी आराधनामें लिप्त होनेके पहले इसी शेख फरीदकी ओर विशेष भक्ति प्रकाश करते थे,। ऐसा जानाजाता है कि कर्नल टाड् साहवने यही विश्वास करके जाटोंको सिदियन जातिसे उत्पन्न माना है तथा उन्हें मुसलमानसे हिन्दू होना निश्चय किया था। उस समय भारतवर्षमें सर्वत्र ही वहुतसे हिन्दू मुसलमान पीरोंकी भक्ति और पूजा करते थे, इससे क्या वे मुसलमान समझेजाते हैं। इससे जाटोंको मुसलमान धर्मवाला कहना ठीक नहीं है।

द्वितीय–भाटीगण जिससे फिर आक्रमण न करसकै इस हेतु पाश्चात्यसीमाकी रक्षा करनी होगी।

तृतीय–यहांके निवासियोंके चिर–प्रचलित स्वत्व और अधिकारपर आप किसी प्रकारका हस्ताक्षेप न कर सकैगे।

दौंनो जाट नेताओंने वीकाके सम्मुख जाकर उपरोक्त तीनों प्रस्तावोंको कह सुनाया, नीति–विशारद वीकाने गोदारादिकोंके उस प्रस्तावमें तुरन्त ही अपनी संमति दी। जब कि विना युद्ध हुए वहां अपना अधिकार होता है, तब ऐसा कौन है कि जो अपनी संमति न देगा? वीकाके इस प्रकार संमति देते ही गोदारालेगोंने उसको तथा उसके उत्तराधिकारियोंको तुरन्त ही अपना अधीश्वर मानलिया। विजयी वीकाके साथ गोदारा वासियोंका यह नियम निश्चित हुआ कि वीका और गोदारावासियोंकी वास-भूमिमें जितने घर है उन सब घरोसे करका एक २ रुपया लिया जाय, और गोदारा-के अधिकारी भूभागो पर प्रत्येक सौ वीघे जमीन पर किसानोंसे दो रुपया करका लिया जायगा। राठौर वीकाने इसमे भी अपनी संमति देनेमें विलम्ब न किया। क्या इस समय कोई भारत जाति आत्म समर्पण करते समय अपने स्वत्वकी रक्षा करनेके लियें कुछ कह सकी है? कोई भी नहीं, क्लाइवके सम्मुख मीरजाफरसे कष्ट पाकर क्या आत्म समर्पण करते समय बंगाली कुछ कहसके थे। अहा एक सामान्य पशुपालक गोदाराके जाटने वीर श्रेष्ट वीकाके हाथमे आत्म समर्पण करके तथा उसको स्वजातिके अधीश्वर पद पर वरण कर, कर देनेमे अपनी सम्मति प्रकाशित करके भी अपने स्वजातिके स्वार्थ और अधिकारको विस्मृत न किया। उन्होंने निर्भय होकर स्पष्टरूपसे कहा "आप अथवा आपके भविष्य उत्तराधिकारी हमारे जातीय अधिकारके ऊपर किसी प्रकारसे हस्ताक्षेप न करैं इसमें प्रमाण क्या है? तथा इसका साक्षी कौन है?" धर्मनीतिके साथ राजनीतिका कहाँतक सम्बन्ध है? इस बातको वीका भली भाँतिसे समझता था, और वह यह भी जानता था कि कूट राजनीतिके चक्रको घुमाकर अपना स्वार्थ साधन करना किसी प्रकार भी उचित नही इसी कारणसे गोदाराके जाटोंने विना समर किये जब उसकी वश्यता स्वीकार कर ली तब उसने अपनी नवीन प्रजाके ऊपर किस प्रकार व्यवहार करना कर्तव्य है तथा किस प्रकारसे उनके भयको दूर किया जाय इसका निश्चय शीघ्र ही करलिया, और वह निश्चय जिस प्रकारसे एक पक्षके भयका दूर करनेवाला तथा गौरवका बढानेवाला था दूसरे पक्षमे भी वही मत राजनीतिज्ञताका चूड़ान्त परिचय देनेवाला था। वीकाने गोदारासे उसी समय कह दिया कि "मै तथा मेरे उत्तराधिकारी किसी समय भी तुम्हारे चिर प्रचलित अधिकारके ऊपर हस्तक्षेप नही करेंगे, उसकी साक्षी यही है कि तुमने जो विना युद्ध कियेहुए हमारे हाथमें आत्म समर्पण किया है, और मुझे अपने अधीश्वर पद पर वरण किया है, इसके स्मृति चिह्नस्वरूपमें हमारे उत्तरा-धिकारियोंके पक्ष और हमारे निज पक्षसे इस नियमका निर्धारण होगा, और इन नियमोके पालन करनेकी यह रीति बॉधते है कि, मै और मेरे उत्तराधिकारी तुम

और तुम्हारे दोनो नेताओंके वंशधरोंसे अभिषेकके समयमे राजतिलक ग्रहण किया करेगे। जबतक इस प्रकारसे राजतिलक न दिया जायगा तबतक राजसिंहासन सूना विचारा जायगा"। अहा कैसी सरल और उदार राजनीति है!

जिस प्रकार वीरश्रेष्ठ बीकाने विना युद्ध किये अत्यन्त सरलतासे एकमात्र अपने वल विक्रमका भय दिखा कर गोदाराके ऊपर अपना अधिकार किया था, इस प्रकार की घटनाएँ भारतवर्षके इतिहास में बहुत कम पाईजाती हैं। एक और भी विचित्र दृश्य हमारे नेत्रोके सम्मुख आया है? वह यह कि राजपूत वीरोने रजवाड़ो वा मारवाड़ के जिन देशोके प्राचीन निवासियोको राजनैतिक वलसे परास्त करके अपने अधिकारका विस्तार किया है और वहाँके प्राचीन निवासियोंने जिस भावसे उनकी अधीनता स्वीकार कर उन्हें अपना अधीश्वर स्वीकार किया है उसके स्मृति चिह्न–स्वरूप अनेक प्रथाएँ, आजतक मेवाड़, मारवाड़ और आमेर आदि राज्योंमे प्रचलित है! मेवाड़के आदि निवासी भील गणोने गहलोत वंशके आदि पुरुषको जिस भावसे राजपद पर अभिषिक्त कर उनको राजतिलक दिया था, उदयपुरके महाराणाके यहाँ आजतक उसी भावसे भीलनेताके द्वारा राजतिलक देनेकी रीति प्रचलित देखीजाती है। आज भी मेवाड़के महाराणाके अभिषेकके समय वह ओगना भील सम्प्रदायके नेता अपने हाथके अँगूठेको छेदन कर उस रक्तसे महाराजके मस्तकपर तिलक कर और महाराणाका हाथ पकड़ कर उनको सिंहासनपर बैठाते हैं। और उन्दरी नामक भील सम्प्रदायके नेता अपने पूर्वपुरुषोंके समान टीका देनेके समय, एक चाँदीके पात्रमे धान, दूर्वा और रुपये रख कर नजर देते है। आमेर अर्थात् जयपुरके आदिम निवासी मीना गण भी राजाके अभिषेकके समय इस प्रकार तिलक किया करते है। कोटा, और बूँदी-राज्य हाड़ौतीके आदिम अधीश्वरोंके नामसे आजतक पुकारा जाता है। महाराज बीकाने विना युद्ध किये जो जाटोंको अपने वशमे करलिया था, सो बीकाके उत्तराधिकारियोने भी दो प्रथाएँ उसके स्मृति चिह्नस्वरूप रक्खीथीं। पाण्डुने जिस प्रकार बीकाके मस्तकपर राजतिलक किया था, आजतक बीकानेरके अधीश्वरोके मस्तक-पर उसी पाण्डुके वंशधरोके सबमे प्रधान नेता उसी भाँति तिलक किया करते हैं। अभिषेकके समय महाराज पाण्डुके वंशधरोको भेटमें पच्चीस सुवर्ण मुद्रा दिया करते हैं। अहा! राजाकी प्रतिज्ञा–पालनका कैसा उज्वल निदर्शन है। पलासीके युद्धके पीछे क्लाइवने जालपत्रको प्रकाश कर अमीचन्दको वंचित किया था, और समरके प्रधान सहायकारी मीरजाफरको भी सिंहासनसे रहित करदिया था, परन्तु क्षत्रिय वीर बीकाने जो प्रतिज्ञा की थी उसके वंशधर भी आजतक उस प्रतिज्ञाको उसी प्रकारसे पालन करतेआते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि बीका स्वय इस बातको भलीभाँतिसे जानते थे कि राजाको किस प्रकारसे प्रतिज्ञा पालन करना चाहिये और किस प्रकारसे प्रजाके हृदय पर अधिकार करना उचित है। इसका एक और प्रमाण यह भी है कि बीकाने उसके निकट यह प्रस्ताव किया था कि "यह देश मुझे देदो, मैं इस स्थान पर राजधानी स्थापित करूँगा"। यदि बीका इच्छा करते तो

अपनी चतुरता तथा कूट राजनीतिके जालका विस्तार करके उस देशपर अधिकार कर सकते थे, परन्तु उन्होने ऐसा नही किया। उनके उस प्रस्तावके करते ही उस भूखंडके अधिकारीने कहा "मै इस देशको देनेके लिये तैय्यार हूं, परन्तु यह देश जो कि मेरे अधिकारमे था वह मैने आपको दिया, इसके स्मरणके लिये आपके नामके साथ मेरा नाम मिलाकर इस राजधानीका नाम रखना होगा"। बीकाने तुरन्त ही यह बात भी मानली। इसी कारणसे उस राज्यधानीका नाम बीकानेर हुआ। क्योकि उस जाटका नाम नेरा था।

दिवाली और होलीके समयमे शेखासर और रूणियांके वर्तमान प्रधान नेता आजतक बीकानेरके अधीश्वर और समस्त राठौर सामन्तोका तिलक करते है। रूणियांके नेता चांदीके पात्रमे टीका देनेके समय चंदनादि समस्त सामग्री हाथमें लेते हैं और शेखासरके नेता उसे हाथमें लेकर स्वयं महाराजके मस्तकपर तिलक लगाते है। महाराज तिलक पाकर उनको भेटमे एक सुवर्णकी मोहर और पांच रुपये देते है। इस प्रकार जाट नेताओके राजतिलक दे चुकनेपर पीछे सामन्त लोग अपने अपने पदके अनुसार एक २ करके महाराजका तिलक करते है। राजाकी ओरसे कुछ सुवर्णकी मुद्रा शेखासरके नेताको और चाँदीकी मुद्रा रूणियांके नेताको मिलती है।

विजयी बीकाने इस प्रकारसे गोदाराके जाटोपर अपने आधिकारका विस्तार करके प्रतिज्ञा की, कि वह और उनके उत्तराधिकारी किसी समयमें भी उनके पैतृक अधिकारपर हस्तक्षेप नही करैगे। गोदारागणोने तुरन्त ही उस प्रतिज्ञासे प्रसन्न हो महाबली राठौर राजा वीर बीकाकी आधीनता स्वीकार करली। इस प्रकारसे बीकाने गोदारा देशको जीतनेके लिये निकटवर्ती जोहियोके देशको जीतनेका संकल्प किया। जोहिया और जाटोके साथ गोदाराओंका बहुत समयसे वैमनस्य चलरहा था, इस कारण वीर व्रतधारी बीका असीम साहसी राठौर सेनाको लेकर नवजीत गोदारोके साथ मिलकर शीघ्रही जोहियोको जीतनेके लिये चले। थोड़े ही समयमें गोदारावासी बीकासे इतनी प्रीति करने लगे थे कि बीकाके प्रस्ताव करते ही उन्होने अस्त्र धारण करके रणभूमिमे जाकर जोहियो पर आक्रमण करनेमे कुछ भी विलंब न किया। इन्ही जोहियोंके संबन्धमे कर्नल टाड् साहब लिखते है कि "मरुक्षेत्रके समस्त उत्तरांशमे अधिक क्या सतलजतक इन जोहियोकी वस्तीका विस्तार था। उनके अधिकारी देशोमे ग्यारहसौ ग्राम थे, परन्तु तीन शताब्दियोके बीचमे अब जोहिया नामतक लोप होगया है।"

जोहियोंके सर्वप्रधान नेता शेरसिंह मरूपाल नामक स्थानमें निवास करते थे। विजयी बीका अपनी पराक्रमशाली सेनाको साथ लेकर शेरसिंह पर आक्रमण करने के लिये चले। शेरसिंहने भी समस्त जोहियोकी सेनाके साथ अपनी रक्षा करनेके लिये युद्धकी तैयारी की। बराबर कई युद्धोमे विजयी होकर इस बारके युद्धमे बीका सरलतासे जय प्राप्त न कर सके। शत्रुगण घोर पराक्रम दिखाकर आक्रमण करने वालोको निराश करने लगे। परन्तु कर्नल टाड् साहब लिखते है कि अन्तमे षड्यंत्र

द्वारा शेरसिंहके प्राण नाशकर, बीकाने फिर उत्साहके साथ आक्रमण करके मरूपाल पर अधिकार करलिया । यहाँतक कि अन्तमें विवश होकर उन्हें राठौरोंकी आधीनता स्वीकार करनी पड़ी ।

विजयी बीकाने इस प्रकारसे सामान्य सेनाके साथ एक २ करके एक सुविस्तृत प्रदेशको अपने अधिकारसे करलिया और अंतमें पश्चिमकी ओरको दिग्विजयके लिये कूच किया, पश्चिम सीमाके निकटवर्ती भाटीराज्यके अधीश्वरने बहुत दिनो पहिलेसे जाटोंके हाथसे वागर नामक देशको अपने अधिकारमें करलिया था । अस्तु बीकाने अपनी सेनाके साथ पहिले उसी देशपर जाकर भाटियोंके ग्राससे उस देशको छीन लिया । बीकाने इस प्रकारसे अपने पिताकी राजधानी मंडोरसे दिग्विजयके लिये बाहर जाकर तीस वर्षके पीछे चारोंओर अपना अधिकार करके इस वागोरदेशमें राजधानी स्थापित करनेका विचार किया और नेरा नामक जाटसे पूर्वोक्त भूखंडको लेकर संवत् १५४५ सन् १४८९ ईसवी की १५ मईको वैशाख मासमें] " बीकानेर " नामक नवीन राजधानी स्थापित की ।

हम पहिले ही एक स्थान पर वर्णन कर चुके हैं कि बीका अपने चाचा कॉंधलके साथ इस दिग्विजयके लिये बाहर गये थे । वीर श्रेष्ठ काँधलने अपनी वीरता और नीतिचातुरी द्वारा अपने भतीजे बीकाको इस नवीन राज्यके स्थापनमें विशेष सहायता की थी, बीकाने मंडोरको छोड़ कर क्रमानुसार तीस वर्षतक अपने अधिकारके विस्तार करनेमें लिप्त रह कर अंतमें जब नवीन राजधानीकी प्रतिष्ठा कर अपनी शासनशक्तिको भली भाँतिसे दृढ़ करलिया तब वीर श्रेष्ठ काँधलने अपने निकट-आत्मीय राठौरोंके साथ बीकानेरको छोड़कर उत्तर प्रान्तमें एक स्वतंत्र राज्यकी प्रतिष्ठा करनेके लिये यात्रा की । राठौर वीर कॉंधलने अपनी साहसी सेनाके साथ क्रमानुसार सियाग, वेनीवाल और सारण नामक जाटोंकी तीनों सम्प्रदायोंको परास्त कर अपनी शासनशक्तिको शीघ्र ही प्रबल करलिया । इन कांधैलजी के वंशधर अबतक बीकानेरके उत्तर प्रदेशमें पाये जाते हैं और वे इस समय काँधलोत् राठौर नामसे प्रसिद्ध हैं । यद्यपि उस समय यह तीनों देश बीकानेर राज्यके एक प्रधान अंशस्वरूप थे; परंतु इन कांधलोत् राठौरोंने बीकानेरके महाराजको सम्पूर्णरूपसे अपना अधीश्वर नहीं माना केवल कुटुम्बके सम्बन्धसे उनके गौरवका परिचय दिया। यदि उनसे बीकानेर राज्यकी ओरसे कोई कर माँगाजाता तो वे उत्तर देते कि क्या हमारे पूर्वपुरुष कांधल ही इस देशपर अधिकार नहीं करगये हैं ? क्या हमारे पूर्वज कांधलने ही बीकाको राज्यपदपर अभिषिक्त नहीं किया था और जबकि हमारे पूर्वपुरुष कांधलने ही बीकाको राजेश्वर बनाया है? तब बीकाजीकी संतान बीकानेरके महाराजको हमसे कर लेनेका क्या अधिकार है ?

जो हो ! वीर तेजस्वी कांधल एक स्वतंत्र राज्यकी प्रतिष्ठा करनेके पहिले ही इस संसारसे चले गये । जब वह हिसारके किले पर अधिकार करनेको गये तब उसी समय

दिल्लीके यवनसम्राट्के प्रतिनिधिने इनको मारडाला। इसमे कुछ भी संदेह नही कि यदि कांधल जीवित रहते तो और भी एक सुविस्तृत राज्यको स्थापित करजाते।

महाराज वीका नवीन राजधानी वीकानेरको स्थापित करनेके पीछे अधिक दिन तक राज्य न करसके। उन्होने भारतवर्षमे इस नवीन राज्यकी प्रतिष्ठा करके संवत् १५५१ मे इस मायामय शरीरको त्यागदिया। वीकाने पूंगलके जिस भाटियोके अधीश्वरकी कन्याके साथ विवाह किया था, उसके गर्भसे वीकाके लूनकरन और गड़सी नाम दो पुत्र उत्पन्न हुए, उनमेसे सबसे बड़े पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए और छोटे गड़सीने गड़सीसर और अड़सीसर नामक दो नगर स्थापन किये। उनके अगणित वंशधर इस समय गड़सियोत वीका नामसे पुकारे जाते है; और वह गड़सीसर अथवा गरीवदेसर नामक स्थानमें निवास करते है। इन दोनो देशोमे प्रत्येक देशके अधिकारमे चौवीस चौवीस ग्राम है। विजयी वीकाके बड़े पुत्र लूनकरणने राजपद पर अभिषिक्त होकर अपने राज्यकी पश्चिम सीमाको वढ़ानेके लिये एक एक कर भाटियोके अधिकारी अनेक देशोको जीतलिया। जिस समय लूनकरणने स्वयं अपने वाहुवलसे वीकानेर राज्यकी सीमाको वढ़ालिया था, उस समय इनके चारो पुत्रोमेसे वड़े पुत्रने महाजन नामक देश और १४४ ग्रामोंको लेकर स्वतंत्र भावसे रहनेकी इच्छा प्रकाश की। महाराजने तुरन्त ही अपने पुत्रकी इस इच्छाको पूर्ण किया। इस कारण वड़े पुत्रने उक्त महाजन देश और १४४ ग्राम लेकर सिंहासनका समस्त अधिकार अपने छोटे भाई जेतसीको देदिया। सम्वत् १५८९ मे लूनकरणकी मृत्यु होगई, तब जैतसी पिताके सिंहासन पर विराजमान हुए। उनके और भी दोनो भ्राताओंने दो स्वतंत्र देश और कुछ थोड़ी सी जमीन ले ली। जैतसीके तीन पुत्र उत्पन्न हुए–पहिले कल्याणमल, दूसरे शिवजी और तीसरे अश्वपाल। जैतासिंह भी वीकाके ही समान वीर थे; उन्होने स्वाधीन गिरासियाके अधीश्वरोंमेसे अन्यतर नारनोत नामक देशके अधिनायकको युद्धमे परास्त करके नारनोत पर अधिकार करलिया; और अपने दूसरे पुत्र सिरंगजीको उन देशोका अधिकार देदिया। वीका और कॉधलके इस मारवाड़में वैठनेके पहिले ही राठौर वीर वीदाने राठौर सेनाके साथ आकर वहाँ छावनी स्थापन की थी। वीर श्रेष्ठ जैतसीने भी उसी वीदावंशको परास्त करके उनको अपने आधीन कर उनसे वार्षिक कर लेनेका प्रस्ताव किया। और इस वार्षिक करके अतिरिक्त और भी कुछ कर उनसे ग्रहण किया।

संवत् १६०३ मे, जैतसीके परलोक वासी होने पर कल्याणमल पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। यद्यपि कल्यणमलके शासन समयमें वीकानेरकी कुछ उन्नति नही हुई और न कोई परिवर्तन हुआ, परन्तु इन्होने दीर्घकाल तक निर्विघ्नतासे राज्य किया। इनके

---

(१) महात्मा टाड् साहवने टीकेमे लिखा है कि " इन मरुक्षेत्रके दूरवर्ती देशोंका प्राचीन समयके युद्धका वृत्तान्त यथा रीतिसे वर्णन कियागया है (पर यहाँ उसके लिखनेका प्रयोजन नहीं है) कारण कि सभी युद्ध समान थे, केवल उनके नाम और स्थान भिन्न हैं।

तीन पुत्र उत्पन्न हुए-पहिले रायसिंह दूसरे रामसिंह और तीसरे पृथ्वीसिंह। कल्याणसिंहकी संवत् १६३० मे मृत्यु होगई, तब रायसिंहके मस्तकपर राजछत्र शोभायमान हुआ।

रायसिंहके शासन समयसे बीकानेरके गौरवकी सीमा बढ़नी प्रारंभ हुई। बीकानेर इतने दिनों तक अत्यन्त सामान्यरूपसे एक छोटा राज्य गिनाजाता था। परन्तु साहसी वीर और नीतिचतुर रायसिंहने अपने राज्यकी उन्नति करनेके लिये ही पिताके सिंहासनपर अभिषिक्त होकर बड़े राजनैतिक रंगभूमिमे चरण रक्खा था। इस समय दिल्लीके सिंहासनपर बादशाह अकबर विराजमान थे। रायसिंह यह भली-भाँतिसे जानगये थे कि भारतवर्षके राजपूत राजाओंने दिल्लीके बादशाहके आधीनमें रहकर जिस भावसे अपने गौरव और राज्यकी सीमाको बढा लिया है। युद्धभूमिमे जिस भावसे यवन बादशाह उनसे प्रसन्न हुआ है और जिस भावसे उन्होने अपना राज्य बढ़ाया है। इस समय हमें भी केवल बीकानेरके शासन कार्यसे ही संतुष्ट होकर समय बिताना उचित नहीं है वरन इस समयके बराबरवाले अन्यान्य देशी राजाओंके समान नाम और यश पानेकी चेष्टा करना उचित है। विशेष करके वह इस बातको भी जान गये थे कि ऐसा एक दिन अवश्य ही आवैगा कि जिस दिन दिल्लीके बादशाह बीकानेरपर अधिकार करके हमें अपनी आधीनतामें करनेका यत्न करेंगे इस कारण जब कि भारतवर्षके प्रधान २ राजा ऐसे प्रबल बलशाली होकर भी स्वाधीनताकी रक्षा न करसके तब मेरा उपेक्षा दिखाकर स्वाधीनताकी रक्षा करना अवश्य ही असंभव है। इस लिये इस समय यही उचित है कि मैं पहिलेसे ही बादशाहके साथ मित्रता करलूं। रायसिंहके सिंहासन पर बैठनेके समय तक इस देशके जाट अधिकतासे अपने प्राचीन स्वत्वकी रक्षा करते आये थे। परन्तु समयकी गतिसे राठौरोंकी संख्या क्रमानुसार बढ़ती जाती थी। और उन जाटोंको पहिलेके समान अपना स्वत्वपालन कष्टदायक होगया था इसीसे उनके राजनैतिक अधिकार घटते जाते थे। स्वाधीनता होनेके साथही साथ उनका वह साहस बल विक्रम इत्यादि भी एक २ करके लोप होते जाते थे। इसी प्रकारसे बीकानेर राज्य शक्तिशाली होगया, परंतु समयकी प्रबलताके कारण जाटोंकी स्वतंत्रता छीननेवाला वह राज्य भी शीघ्रही दिल्ली राज्यकी परतंत्रताका अनुगामी होनेपर विवश हुआ।

पिताके परलोकवासी होनेपर रायसिंह स्वयं पिता की भस्म सिरानेके लिये गंगाजीको गये। रायसिंहने जैसलमेरकी जिस कन्याके साथ पाणिग्रहण किया था बादशाह अकबरने भी उसी राजाकी एक अन्य कन्याके साथ विवाह किया था; इस कारण सम्राट् अकबरके साथ रायसिंहका पारिवारिक सम्बन्ध पहिलेसेही था। वह पिताकी भस्म और अस्थियोंको गंगाजीमे डालकर यवन बादशाहकी राजधानीको चलेआये। पहिले सम्बन्धके होनेसे बादशाह अकबरके समीप इनको अपना परिचय देनेमें बड़ा सुभीता मिला। आमेरके महाराज राजा मानसिंहने इस समय बादशाह अकबरकी सभामे विशेष प्रतिपत्ति प्राप्त की थी, उन्हीं राजा मानसिंहने बीकानेरके महाराज रायसिंहका परिचय सम्राट् अकबरके समीप करादिया। रायसिंहका भाग्य प्रसन्न

होगया था इस कारण वादशाह अकवरने अपने हिन्दू आत्मीय रायसिंहको वड़े आदर भावके साथ ग्रहण कर, उनको चार हजार अश्वारोही सेनाके नेता पदपर महाराजकी उपाधि और हिसारदेशके शासनका भार अर्पण किया। वीकाने सामान्य रावकी उपाधि लेकर नवीन राज्यकी प्रतिष्ठा की थी, इस समय रायसिंह सवसे पहिले राजाकी उपाधि धारण कर उस वीकानेर राज्यका गौरव वढ़ानेको अग्रसर हुए। वादशाह अकवरके इस प्रकार प्रसन्न होनेपर भारतके राजाओंमे वीकानेर और वीकानेरपतिका नाम विख्यात होगया। विशेष करके वादशाह इस समय मारवाड़ पर आक्रमण करने के लिये वाहर गये, और नागौर देशको जीतकर उसका अधिकार उन्होने रायसिंहको ही देदिया, इससे रायसिंहका सन्मान और भी वढ़गया। भाग्यवान् रायसिंह इस प्रकारसे वादशाह अकवरसे संमानित हो सामर्थ्य पाकर अपने राज्यको लौट आये, और विशेष करके यह वादशाहकी चार हजार अश्वारोही सेनाके नेतापदको प्राप्त हुए। इसीसे रजवाड़ोमे उनका गौरवरूपी सूर्य पूर्ण रूपसे उदय होगया। महाराज रायसिंहने वीकानेरमें आकर अपने छोटे भाई रामसिंहको एक सेनाके साथ भाटियोंके प्रधान स्थान भटनेर पर अधिकार करनेके लिये भेजदिया। रामसिंहने वड़ी सरलतासे वीर विक्रमी राठौरोंकी सेनाके साथ उन देशोपर अधिकार करलिया।

जोहियाके जाट सामान्य पशुपालन एवं कृषि व्यवसायमें नियुक्त होकर भी भारतकी वीर जातिके समान विशेष स्वाधीनताप्रिय थे। यद्यपि वीकानेरके महाराजने उनके उस स्वाधीनताके रत्नको हरण करलिया था; यद्यपि जोहियोंके अधिकारी देशोंपर राठौरोकी शासनशक्ति अत्यन्त प्रवल होगई थी, तथापि वह जोहिया जाटगण अपनी हरण की हुई स्वाधीनताको फिर संग्रह करनेके लिये फिर भी हत उद्योग नही हुए। रायसिंह जिस समय यवन वादशाहसे सन्मानित होकर अपनी राजधानीको जारहे थे उसी समयमें यह जोहिया जाति फिर स्वाधीनताको उपार्ज्जन करनेके लिये अग्रसर हुई। रायसिंहने तुरन्त ही जाटोंके उस जातीय उदयको अस्त करदेना कर्त्तव्य जानकर विजयी राठौरोंकी सेनाको फिर जोहियोकी वासभूमिमे भेज दिया। जिससे जोहिया गण फिर किसी प्रकारसे मस्तक न उठासकें, और न फिर राठौरोंकी शासनशक्तिके विरुद्ध खड़े होनेका साहस करै। राठौरोंकी सेनाने उसी अभिप्रायसे जोहियोंके अधिकारी देशपर भयंकर काण्ड उपस्थित करदिया। प्रवल समराग्नि प्रज्ज्वलित होगई; हजारों जोहिया जाटगण स्वाधीनताके लिये उस संग्रामभूमिमे प्राण त्यागने लगे। अंतमे रणवीर राठौरोकी सेनाने उस देशको यथार्थ मरुक्षेत्रके समान करदिया। महात्मा टाड् साहव लिख गये है कि तभीसे अवतक यह देश जनशून्य अवस्थामें पड़ा है. यद्यपि इस देशके वहुतसे नगर और ग्रामोमें जोहिया जाटोके अत्यन्त प्राचीन स्मृतिचिह्न विराजमान थे, परन्तु अव जोहियोंका नामतक यहांसे लोप होगया है।

जोहियोंके अधिकारी देशोंमें भारतविजेता विख्यात् सिकन्दर यूनानी अर्थात् मैसिडोनियाके महावीर एलिकजण्डरका नाम आजतक विख्यात होरहा है,

और उनके स्मृतिके चिह्न भी आजतक पायेजाते है। दादूसर नामक स्थानमें रंगमहल नामका एक प्राचीन महल टूटाफूटा विद्यमान है। सुनाजाता है, कि यही प्राचीन राजवंशकी राजधानी थी। महावीर एलिक्जण्डर जिस समय भारतवर्षको जीतनेके लिये आया था, उस समय उसने दादूसरपर आक्रमण करके वहांके अधीश्वरको परास्त कर राजधानीको विध्वंस करदिया था। कर्नल टाड् साहब लिखते हैं कि यद्यपि एलिक्जण्डरने जोहियोकी निवासभूमिके निकट पंजाबमे समराग्नि प्रज्वलित करदी थी, परन्तु इतिहासमे ऐसा कोई प्रमाण नही पायाजाता कि जिससे वह गारा मार्गकी ओरसे इन जोहियोंके जीतनेके लिये आए हो। साधू टाड् साहब अनुमान करते है कि महावीर एलिक्जण्डरके अधीनस्थ ग्रीक सेनापतिने समुद्रके किनारे जिस राज्यको स्थापित किया, विदित होता है, उसी राजाके किसी राजाने किसी समयमें आकर इस रंगमहलको विध्वंस किया होगा।

वीरश्रेष्ठ रामसिंह अपने अग्रजकी आज्ञासे जोहियोको सब भाँतिसे दमन कर, जिससे वह किसी प्रकार भी मस्तक न उठासके इस प्रकारसे अपनी शासनशक्तिको प्रबल करके, अंतमे विजयी राठौरोंकी सेनाके साथ पूणियाके जाटोके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये आगे बढ़े। बीकाके वंशधरोंने गोदारा और जोहियोको दमन करके अपने अधिकारका विस्तार कर तो लिया था, परन्तु वे पूणियाको परास्त नहीं करसके थे। पूणियाके जाट अबतक अपनी प्राचीन स्वाधीनताकी सब प्रकारसे रक्षा करते आये थे। महाराज रायसिंहने उनको दमन करके अपने राज्यकी सीमाको बढ़ानेके लिये अनुज रामसिंहको आज्ञा दी। रामसिंहने तुरन्त ही पूणियाके जाटोके विरुद्ध घोर युद्ध किया। भयंकर युद्ध होनेके पीछे अत्यन्त बलशाली राठौरोने जय प्राप्त करके पूणियाके अधिकारी देशको अपने हस्तगत करलिया। विजेता रामसिंहने नवीन अधिकारी देशमें राज्य स्थापित करके स्वयं वहाँ निवास करनेका विचार किया। परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि वीरश्रेष्ठ रामसिंह जयलक्ष्मी प्राप्त करके भी, स्वाधीनताकी रक्षाके लिये प्राणपणसे यत्न करनेवाले पूणियाके जाटोके हाथसे थोडे ही दिनोंमे मारेगये। रामसिंहके मारेजानेपर विजयी राठौरगण अधिकार स्थापन करनेमें फिर भी विचलित न हुए। समृद्धिशाली प्रधान २ सभी नगर राठौरोके आधीनमे होगये। यहाँके राठौरगण रामसिंहोत नामसे विदित हैं। कर्नल टाड् साहब लिखते हैं कि यद्यपि रामसिंहोतके द्वारा बीकानेरके राठौरोकी संख्या वृद्धि और उस पूणियाके अधिकारी देश बीकानेरके अधिकारमें होनेसे राज्यकी सीमा और भी बढ़गई थी। परन्तु काँधलोतगणोने बीकानेरके महाराजकी पूर्ण अधीनता स्वीकार नही की; और बीकानेरके महाराजको जिस भाँति कांधलोतोके द्वारा युद्धके समयमें विशेष सहायता नहीं मिली थी, यह रामसिंहोत राठौरगण भी बीकानेरके महाराजके साथ उसी प्रकारका व्यवहार करते आये थे। और बीकानेरके महाराज भी उसी प्रकारसे इनके बलसे अपने बलको प्रबल न जानसके। सीधमुख एवं सांखू रामसिंहोतो की दो प्रधान वासभूमि थी।

इस प्रकारसे पूणियाकी स्वाधीनता हरनेके साथही साथ मारवाड़के छः जाटोके अधिकारी देश भी बीकानेरके महाराजके अधिकारमें होगये । यह जाट इस समय खेती और पशुपालनके व्यवसायमे अपना समय व्यतीत करते थे । कर्नल टाड्र साहव लिखते है कि इन निरीह जाटोंने वर्तमान समयमे सम्पूर्ण वली राठौरोंके प्रमुको रीतिके अनुसार कर देनेमें किसी प्रकारकी भी आपत्ति न की ।

यद्यपि वीकाके वंशधर रायसिंहने यवन शासनके समय सबसे पहिले राजाकी उपाधि धारण कर, समयके अनुसार नीतिज्ञताके समान कार्यक्षेत्रमे विचरण करना प्रारंभ किया, परन्तु वह साहस वल और विक्रममें किसी अंशमें भी हीन नही थे । उस समय वीरतामय कार्यक्षेत्र, वीरलीलास्थान जितना ही विस्तारित होता था उन्हे उतने ही शूर वीरता प्रकाश करनेके अनेक साधन संघटित होते थे और उतना ही उनके गौरवका सूर्य अपनी पूर्ण मूर्तिसे मध्याह्न समयके सूर्यकी समान चारो ओर अपनी तीक्ष्ण किरणोके फैलानेमें समर्थ हुआ । रामचन्द्र और लक्ष्मणजीके वाहुवल प्रचार करनेका एकमात्र मूल लंकाका युद्ध था । यदि रावण सीताजीको हरण करके न लेजाता तो कभी भी दो सूर्यवंशी वीर-व्रतधारी वीरोंकी ऐसी प्रशंसा सुनाई न देती । लंकाके विजयके पीछे महाराज रामचन्द्र और लक्ष्मणजीका ऐसा गौरव युक्त युद्ध क्यों नहीं हुआ ? भीमसेन अथवा अर्जुन इत्यादि पाण्डवोंने अपने महान् वलविक्रमको प्रकाश कर महावीरकी उपाधि धारण की थी । मेवाड़के वंशधर इतने दिनोतक मरुक्षेत्रके सीमावद्ध देशमें अपने वल विक्रमको प्रकाश करते आये थे । परन्तु महाराज रायसिंहको दिल्लीके वादशाह अकवरकी अधीनता स्वीकार करनेके पीछे अपने पूर्वपुरुषोकी अपेक्षा अधिक गौरव संग्रह करनेमें विशेष सुभीता मिलनेलगा । उनका कार्यक्षेत्र विस्तृत होगया । वह भारतके अनेक प्रान्तोमे क्रमानुसार राठौरोंके वाहुवलका पूर्ण परिचय देने लगे । सम्राट् अकवरने अपने शासन समयमे भारतवर्पके जिस २ प्रान्तमे जिस जिस युद्धको उपस्थित किया रायसिंहने भी उसी २ समरभूमिमे जाकर असीम साहसके साथ अपने वाहुवलकी पराकाष्टा दिखलाई । रायसिंहने अहमदावादके शासनकर्ता मिरजा मुहम्मद-हुसेनके साथ वीर विक्रमशाली राठौरोंकी सेनाको ले युद्ध करके घोर वीरता प्रकाश कर उसका परास्त करादिया, और अहमदावादपर भी सीघ्रतासे अधिकार करलिया. इसी कारणसे यह वादशाहके सम्मुख वड़े वीर गिनेजाते थे, और इनका सन्मान भी सवसे अधिक होता था । सम्राट् अकवरकी, इन वीर विक्रमशाली हिन्दूराजाओंके साथ पारिवारिक सम्वन्ध करके, भारतमे यवन शासनको दृड़ करनेकी, विशेष इच्छा थी । इस लिये वह हिन्दूराजाओंमे जिसको वीर और असीम साहसी जानता था उसीको अपने हस्तगत करनेके लिये उसके वल विक्रमका ऊँचा पुरस्कार देकर उसके हृदयपर अधिकार करलेता था । रायसिंहके वल विक्रमको देखकर अकवर विशेष प्रसन्न हुआ, और उसने उनका अधिक सन्मान वढ़ाया । यद्यपि रायसिंहके साथ उसने सांसारिक संवन्ध पहिलेसे ही करलिया था, तथापि उस संवन्ध वन्धनको दृढ़ करनेके लिये उसने अपने पुत्र कुमार सलीमके (जिसने पीछे जाँहगीर नाम धारण किया)

साथ रायसिंहकी कन्याके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित किया। महाराज रायसिंह समयके सेवक और नीतिके जाननेवाले थे, इस कारण उन्होंने अन्यान्य राजपूत राजाओंका पहिलेसे यवन सम्राट् वंशके साथ वैवाहिक सम्बन्ध होता हुआ देखकर उस प्रस्तावमें कुछ भी आपत्ति न की। विवाहका कार्य बड़ी धूमधामके साथ समाप्त होगया। इस विवाहके फलस्वरूपमें अभागे कुमार परवेज़ने जन्म लिया। महाराज रायसिंहने इस प्रकार सबसे पहिले भारतवर्षमें वीकानेरका नाम और यश विस्तार करके, बादशाहके सम्मुख सन्मानित हो, संवत् १६८८ (१६३२ ईस्वी) में इस मायामय शरीरको त्यागदिया।

महाराज रायसिंहकी मृत्युके पीछे उनके एकमात्र पुत्र करणसिंह पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। करणसिंह पिताकी जीवित अवस्थामें ही दिल्लीके साम्राट्की अधीनतामें दो हजार अश्वारोहीके नेताकी उपाधि धारण कर दौलताबादके शासनकर्ता पदपर नियुक्त थे। करणसिंह सुलतान दाराशिकोहके विशेष अनुगत थे। दाराका भी प्रवेश जिससे बादशाहके यहाँ होजाय इस विषयमें करणसिंहने विशे सहायता की थी। इसी कारणसे दाराके प्रतिद्वन्दीके प्रधान सेनापति करणसिंह जिनके आधीनमें रहते थे, उन्होंने करणसिंहके प्राणनाश करनेके लिये गुप्तभावसे एक षड्यंत्र जालका विस्तारकिया। परन्तु बूंदीके महाराजने पहिलेसे ही करणसिंहको सावधान करदिया, इसकारण करणसिंहने बड़ी सरलतासे शत्रुओंकी उस पापकामनाको निष्फल करदिया। करणसिंहने कई वर्षतक अपने प्रबल प्रतापके साथ राज्यशासन करके निम्नलिखित चार पुत्रोंको छोड़कर शरीको त्यागदिया।

१—पद्मसिंह।
२—केशरीसिंह।
३—मोहनसिंह।
४—अनूपसिंह।

करणसिंहके चार कुमारोंमें से प्रथम दोने यवन सम्राटके कार्यमें अपने जीवनका बलिदान किया। जिस समय बादशाहकी सेना बीजापुरके युद्धमें नियुक्त थी, उस समय पद्मसिंह और केशरीसिंहने राठौरोंकी सेनाके साथ बादशाहकी ओरसे रणभूमिमें असीम साहस प्रकाश करके प्राण त्यागकिये। तीसरे पुत्र मोहनसिंहके जीवनके वियोगान्त अभिनयका जो वृत्तान्त फरिश्ताने दक्षिणके इतिहासमें वर्णन किया है। हमने इस स्थानपर उसका वर्णन करना उचित जाना है। क्योंकि इससे

(१) कर्णसिंह तो रायसिंहके पोते थे और रायसिंह सम्वत् १६६८ में मरे थे। उनके ४ बेटे दलपतसिंह सूरसेन किसनसिंह और भूपनसिंह थे रायसिंहके पीछे दलपतसिंह गद्दीपर बैठे और सम्वत् १६७० में शाही सेनासे लड़कर काम आये, तब सूरसेन राजा हुए। उनका देहान्त सम्वत् १६८८ में हुआ। उनके पीछे कर्णसिंह गद्दीपर बैठे थे। इस तरह ऊपर लिखे लेखमें दो राजाओं अर्थात् दलपत और सूरका हाल नहीं है।

प्रगट होता है कि अपने पद और सन्मानकी रक्षाके लिये क्षत्रियजाति किस प्रकारसे अपने प्राणतक देनेमें तैयार होजाती थी ।

जिस समय बादशाहकी सेना दक्षिणको विजय करनेके लिये जारही थी उस समय करणसिंहके चारों कुमार भी राठौरोकी सेनाके साथ गये थे । एक समय दक्षिणकी मुहिममें शाहजादे मोअज्जिमके डेरोंमे उनके सालेके साथ मोहनसिंहका एक मृगके वच्चेके लिये झगड़ा होउठा। धीरे २ वह झगड़ा इतना बढ़गया कि दोनो क्रोधके मारे उन्मत्त होकर कमरसे तलवारें निकाल परस्पर युद्ध करनेलगे । उस युद्धमे मोहनसिंहके गिरतेही यह शोचनीय समाचार शीघ्रही राठौरोंके डेरोंमें पद्म-सिंहके पास भेजागया। असीम साहसी पद्मसिंह अपने भ्राताके अपमान और मरणका समाचार पाकर क्रोधित सिंहके समान कंपायमान होते हुए नंगी तलवार हाथमे ले कितने ही राठौर सेवकोंके साथ उसके डेरोमे आपहुँचे। डेरोंमे जाते ही उन्होंने देखा कि भाई मोहनसिंहका सारा शरीर रुधिरसे सन रहा है, और प्राणपक्षी पयान करगये है, ऐसी अवस्थामे वह पृथ्वीपर अचेत पड़े है; और इस अवस्थामें भी शत्रु उनकी छातीपर बैठा है । यह देखकर राठौर कुमारके दोनो नेत्रोंसे मानो अग्निकी चिनगारियां निक-लने लगीं । पद्मसिंहकी उस संहारमूर्ति तथा प्रतिहिंसा दानार्थी आकृतिको देखकर हत्याकारी यवनोंके हृदयमें महाभय उत्पन्न हुआ । राठौरोके हाथसे निश्चय ही मृत्यु जानकर उन पापियोंने उसी समय अपने प्राणोंके भयसे कायरपुरुषोकी समान डेरोंसे भाग जानेकी चेष्टा की । परन्तु शाहजादेको भी डेरेमें बैठाहुआ देखकर पद्मसिंह कुछ भी शंकित न हुए, वरन् महाक्रोधित हो सिंहके समान गर्जन करके भ्राताकी हत्या-करनेवालेको मारनेके लिये उसके पीछे चले ।

तवारीख फारिस्तामे लिखा है कि " पद्मसिहने क्रोधसे उन्मत्त होकर इस प्रकार बलके साथ तलवारका प्रहार किया कि उस प्रहारसे एक स्तंभके दो टुकडे होगये और उसके साथ ही साथ हत्याकरनेवालेके देहके भी दो खण्ड होकर एक ओरको जापड़े । " उचित दंड देकर पद्मसिह अपने मृतक भ्राताका शरीर ले शाही डेरोंको छोड़कर अपने स्थानको चलेआये । जयपुर जोधपुर और हाड़ौती इत्यादि देशोंके जिन राजाओने सेनाके साथ उन डेरोंमें निवास किया था। उन सबको बुलाकर हृदयभेदी वक्तृतामें पद्मने सभीसे कहा कि पापात्मा यवनोंने मोहनसिंहका प्राण नाश करके समस्त राजपूत जातिका अपमान किया है, इस कारण यवन बादशाहके आधीनमें अब किसी भाँति भी रहकर रणभूमिमे उनकी सहायता करना राजपूतमात्रको उचित नहीं । उनके यह वचन सुनकर सभी राजपूतोने कहा " शीघ्रही इन डेरोंको छोड़कर हम सबको अपने२ राज्यमे जाना उचित है और वह सभी लोग सेना साथ ले डेरोंको छोड़ अपने २ राज्यमे जानेके लिये तैयार भी हुए । शाहजादे मोअज्जिमने उनको सावधान करनेके लिये एक बुद्धिमान् मुसलमान उमरावको भेजा । उमरावने राजपूत राजाओंको अनेक भाँतिसे समझाया, परन्तु उन्होंने उमरावकी बातपर कुछ भी ध्यान न दिया, उमरावने कहा, कि वीरश्रेष्ठ पद्मसिह मोहनसिंहके हत्या करनेवालेको मारकर निश्चिन्त होगये,

इससे शाहजादा इनके ऊपर कुछ भी क्रोधित न हुए, वरन् पद्मसिंहको इस कार्यके करनेमे उन्होंने अपनी सम्मति दी है। पर क्रोधित हुए राजपूतोंने किसीकी भी बातको न सुना और अपनी २ सेनाको साथ ले डेरोंको छोड़कर दशकोशकी दूरीतक चलेगये, अंतमे जब महाविपत्तिको सम्मुख आया देखा तब शाहजादेने स्वयं जाकर उनको धीरज दिया और उनकी हानिको पूरण करनेकी प्रतिज्ञा की, तब राजपूत राजा फिर लौटकर डेरोमे आये। इस घटनाके पीछे महाराज पद्मसिंह तथा केशरीसिंह बीजापुरके युद्धमें मारे गये। फरिस्ता के इतिहासमे केशरीसिंहकी वीरताका एक विशेष निदर्शन उल्लेख किया है। वह यह है कि एक समय केशरीसिंहने बादशाहके सम्मुख उनकी आज्ञासे राठौर जातिका बाहुबल दिखानेके लिये एक बड़भारी बलवान् सिंहके साथ तलवार हाथमें लेकर युद्ध किया था, और उसको मारकर उन्होंने केशरी नाम पाया था। इसके पहिले उनका क्या नाम था इसको हम नहीं जानते। केशरीसिंहने उस सिंहको मारकर ही बादशाहको संतुष्ट किया, इसके पुरस्कारमे बादशाहने इनको पचीस ग्राम दियेथे। उक्त इतिहाससे यह भी जानाजाता है कि केशरीसिंहने दक्षिण देशाधिपति एक राजाके हबशी जातके एक महाबलवान् सेनापतिको तलवारसे मारकर विशेष यश और गौरव प्राप्त किया था।

राजा करणसिंहके स्वर्गवासी होनेके पीछे उनके सबसे छोटे पुत्र अनूपसिंह संवत् १७३० (१६७४ ईस्वी) मे राजाकी उपाधि धारण कर पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। महाराज रायसिंहके समयसे लेकर बादशाहके यहाँ बीकानेरके राजाओंकी विशेष प्रतिष्ठा होगई थी। विशेष करके बीकानेरके राजवंशसे बादशाहको अनेक समयमे सहायता मिली थी, वह इसका उचित पुरस्कार देनेके लिये कातर नहीं थे। महाराज अनूपसिंह एक महावीर और असीम साहसी पुरुष थे। बादशाहने इनको पाँच हजार अश्वारोही सेनाका मनसब अर्थात् उसके अधिपतिकी उपाधि देकर देशकी भूमिका अधिकार, तथा बीजापुर और औरंगाबाद देशके शासनका भार अर्पण किया। अनूपसिंहने प्रबल प्रतापके साथ अपने राजशासनके समय सम्राट्के आधीनमें अनेकबार वीरता दिखाई, इससे इस वंशका गौरव दुगना बढ़ने लगा। जिस समय काबुलके अफ़गान दिल्लीके बादशाहके विपक्षमे विद्रोही होगये थे, उस समय मारवाड़पति उस विद्रोहको दमन करनेके लिये बादशाहके द्वारा भेजे गये। बादशाहकी आज्ञासे वीरश्रेष्ठ अनूपसिंहने भी बीकानेरकी सेनाके साथ काबुलमे जाकर विद्रोहके निवारण करनेमे विशेष सहायता की थी। विद्रोह शांत होजानेके पीछे वह अपने राज्यमे लौट आये, और फिर भी बादशाहके यहाँ रहकर उन्होंने अनेक युद्धोमे यश पाया था। उनकी मृत्युके सम्बन्धमे फरिस्ता और राजपूत इतिहासमे मत-भेद है। फरिस्ता लिखता है कि राजा अनूपसिंहने दक्षिणमें प्राणत्याग किये, परन्तु राठौरोके इतिहाससे जानाजाता है कि जिस समय राजा अनूपसिंह दक्षिणमें सेना सहित गये थे तब वहाँ उनके डेरा स्थापनके स्थानपर बादशाहके प्रधान सेनापतिके साथ कुछ झगड़ा होगया था, इससे वह अत्यन्त विरक्त होकर दक्षिणको छोड़कर अपने

राज्यमें चलेआये, और तुरन्त ही उन्होंने शरीर त्यागदिया। इसी शेषोक्त वृत्तान्त को हम सत्य मानते हैं। महाराज अनूपसिंह, स्वरूपसिंह और सुजानसिह नामक दो कुमारोंको छोड़कर परलोकवासी हुए।

इतिहासवेत्ता टाड् महोदय लिखते है कि स्वरूपसिंह,सम्वत् १७६५ सन् १७०९ ई० में पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए, परन्तु इन्होने अधिक दिनतक राजशासन नहीं किया। महाराज अनूपसिंहने जीवनकी शेपदशामे वादशाहकी सेनासे अपना सभी सम्वन्ध त्यागदिया था, इसीसे ओड़नी देश जो इनको वादशाहसे पहिले मिला था, इनसे वापिस लेलिया गया। स्वरूपसिहने अपनी सेनाको साथ ले उस ओड़नी देशपर फिर अधिकार करनेके लिये धावा किया। उसी युद्धमें यह मारेगये, कर्नल टाड् साहव लिखते है कि उनसे छोटे भाई सुजानसिंह राजसिंहासनपर विराजमान हुए, परन्तु इनके राज्यकालमें कोई स्मरणीय घटना नही हुई। सम्वत् १७९३ (१७३७ ई०)में जोरावरसिंह वीकानेरके अधीश्वररूपसे विख्यात हुए, परन्तु सुजानसिहके समान इनका शासनकाल भी स्मरणीय नही था।

दश वर्पतक राज्य करके जोरावरसिह इस असार संसारको छोड़गये। तव वीर-श्रेष्ठ गजसिह वीकानेरके सिंहासनपर विराजमान हुए। सुजानसिंह और जोरावरसिंह के शासनसमयमें वीकानेरमे किसी प्रकारकी घटना नही हुई। परन्तु गजसिहका शासन अनेक घटनाओंसे पूर्ण था। महाराज गजसिह वास्तवमे एक यथार्थ राठौर वीर थे, इस कारण उन्होने इकतालीस वर्पतक राज्य करके राजकी सीमा और अपने गौरवको वहुत वढ़ालिया था। वीकानेरकी सीमाके भाटियोंके साथ तथा भावलपुरके मुसल्मान राजाओके साथ वरावर कई युद्ध करके इन्होंने अपने वाहुवलका चूड़ान्त परिचय दिया था। महाराज गजसिंहने भाटियोके निकटसे राजासर, कालिया, रानियार, सत्यसर, वूझिपुरा, मुतालाई और अन्यान्य कितने ही छोटे २ प्रदेश तथा अन्य शत्रुओंके कितने ही छोटे २ देश और भावलपुरके अधिनायक खाँके साथ युद्ध करके अपने राज्यकी सीमामें स्थित विशेप प्रयोजनीय अनूपगढ़ नामक किलेको अपने अधिकारमे करलिया था। दाऊदके पोतड़ा जिससे सीमामे किसी प्रकारका उपद्रव न करसकें, अथवा अनूपगढ़पर फिर अधिकार करनेमें समर्थ न हो, इसलिये गजसिंहने अनूपगढ़की पश्चिम ओरकी भूमिको विध्वंस करके वहांके सभी कुओंको मट्टी भरवाकर पटवा दिया था।

---

(१) वीकानेरके गद्यकाव्यमे लिखा है कि महाराज अनूपसिंह सम्वत् १७५५ में ओडनी (दक्षिण) में स्वर्गधामको प्राप्त हुए थे, और उनके साथमें १८ रानियां सती हुई थीं।

(२) वीकानेरके इतिहासमे सम्वत् १७५५ है।

(३) सुजानसिंह सं० १७५७ में गद्दीपर वैठे थे।

(४) वीकानेरके इतिहासमें सं० १७९२ माघ वदी ५ लिखा है।

(५) भावलपुरके आदि अधीश्वरका नाम दाऊदखाँ था। उसके वंशधरोंको राठौर गण दाऊद पोतड़ा कहते थे।

राजा गजसिंहके औरससे ६१ पुत्र उत्पन्न हुए; परन्तु इनमेंसे केवल छः पुत्र विवाहिता स्त्रीसे उत्पन्न हुए थे। उनके नाम यह हैं।

(१) छत्रसिंह। (४) अजवसिंह।
(२) राजसिंह। (५) सूरतसिंह।
(३) सुरतानसिंह। (६) श्यामसिंह।

उपरोक्त छः पुत्रोंमेंसे छत्रसिंहकी मृत्यु बालकपनमें ही होगई थी और सूरतसिंहकी माताने विष देकर राजसिंहका प्राण नाश किया था, सुरतानसिंह और अजवसिंहने विचारा कि हम भी भाई राजसिंहकी तरह मारे जायंगे, इस कारण वे अत्यन्त भयभीत होकर पिताके स्थानको छोड़ जयपुरको चलेगये। इस प्रकार सूरतसिंह अत्यन्त घृणित उपायोसे पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। और श्याम सिंह बीकानेरके अन्तर्गत एक छोटे देशका अधिकार पाकर वहाँ निवास करते थे। महाराज गजसिंह अपने घोर पराक्रमके साथ इकतालीस वर्षतक राज्य करके परलोकवासी हुए। राजपूतरीतिके अनुसार संवत् १८४३ (१७८७ ई०)मे राजसिंह के मस्तक पर बीकानेरका राजछत्र शोभायमान हुआ, परन्तु उनकी साक्षात् पिशाचिनी सौतेली माताके हृदयमे हिंसा और विद्वेषकी अग्नि प्रबल होगई थी इस कारण वह पंद्रह दिन भी राजसिंहासनपर न बैठसके। गजसिंहके पांचवे पुत्र सूरतसिंहकी माताने स्वयं अपने हाथसे विप देकर राजसिंहके जीवनको समाप्त करादिया, इसी कारण से राजसिंह केवल तेरह दिनतक ही राजसिंहासनपर बैठे थे। माता जैसी पिशाच वुद्धि की थी पुत्रका हृदय भी उसी प्रकारका कठोर था। इस कारण राजसिंहकी मृत्युके पीछे सूरतसिंहने पिशाचमूर्ति धारण करके बीकानेरके राजवंशमे घोर कलंक लगानेका अभिनय प्रारंभ करादिया।

महाराज राजसिंहके प्रतापसिंह और जयसिंह नामसे दो पुत्र थे। सूरतसिंहकी पिशाचिनी माताकी इच्छा थी कि राजसिंहको मारकर अपने पुत्रको सिंहासनपर बैठाऊगी। परन्तु वुद्धिमान् सूरतसिंहने देखा, कि बीकानेरके वीर सामन्त और अमात्यगणोंके सन्मुख इस शोचनीय हत्याकाण्डके पीछे सिंहासनपर बैठना महा-विपत्ति कारक है, इस कारण उन्होंने अपनी इस पापिनी अभिलापाको मनहीमें रख-लिया, और प्रगटमें सौतेले भाईकी मृत्युसे शोक प्रकाश करके भविष्यतमे लोमहर्पण पैशाचिक कार्य करनेमे प्रवृत्त हुए। पिशाचवुद्धि सूरतसिंह सबसे पहिले अमात्य मडली और सामन्त तथा प्रजाक हृदयको आकर्पण करनेके लिये राजसिंहके बालक पुत्रको सिंहासनपर बैठाल कर स्वयं राजप्रतिनिधिरूपसे राज्य शासन करनेलगे। इन्होने क्रमानुसार अठारह वर्पतक विशेप चतुरता और बड़ी सावधानीसे राज्य किया, और प्रधान २ सामन्त तथा अमात्यगणोंको अपने हस्तगत करनेके लिये बहुत कीमती उपहार देकर उनको विशेप लोभ दिखाया। सामन्तोके हस्तगत करनेमे समर्थ होतेही अपनी अभिलापा सरलतासे पूर्ण होजायगी, यही विचार कर वह चतुर नीतिजालका विस्तार करनेलगे, परन्तु इन्होने अठारह महीनेतक अपने इस गुप्त अभिप्रायको किसीके

सम्मुख भी प्रकाश न किया। अठारह वर्षके बीतजानेपर जब उन्होंने देखा कि उनकी वाहरी दया और नम्रताके व्यवहारोसे सामन्त प्रसन्न होगये है, तब उन्होने सबसे पहिले अपने विशेष अनुगत महाजन और भादरां के दोनो सामन्तोसे अपने हृदयके पापी अभिप्रायको कह सुनाया, यद्यपि वह दोनों सामन्त इनके अनुगत थे, तथापि वह इस प्रस्तावको सुनकर महा दुखी और भयभीत हुए। परन्तु चतुर सूरतसिंहने उन दोनो सामन्तोको अधिकभूमि देकर सरलतासे उनको अपने वशमें करलिया । यद्यपि महाजन और भादरांके राजद्रोही दोनो सामन्तोने पिशाच बुद्धि सूरतसिंहको उस पापी अभिप्रायके पूर्ण करनेमें सहायता और अपनी सम्मति दी थी, परन्तु उनके उस पैशाचिक अभिनयके पूर्ण लक्षण सरलतासे प्रकाशित होगये । वीकानेरके दीवान वख्तावरसिंह सूरतसिंहकी इस पैशाचिक कल्पनाको जानकर अपने सुकुमार प्रभुके प्राणोंकी रक्षाके लिये भयभीत होकर आगे वढ़े। वख्तावरसिंहके ऊर्द्धतन चार मनुष्य इस दीवान पदपर नियुक्त थे, इस कारण उन्होंने राजसिंहके वालक कुमारकी जीवन रक्षा करना सब प्रकारसे उचित जाना । परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि, वख्तावरसिंहने ऐसे कुसमयमें अधिक देरीमें सूरतसिंहके षटचक्रका समाचार पाया कि वह उस समयमें किसीभाँतिसे भी उस जालको छिन्नभिन्न न करसके, वरन उसका विपरीत फल हुआ । सूरतसिंहने वख्तावरसिंहको अपना प्रधान शत्रु जानकर उसी समय उसे पकड़कर कारागारमें वंदी करदिया। सूरतसिंह इस वातको भली भाँतिसे जानते थे कि वख्तावरसिंह ही मेरी राज्यप्राप्तिमें कंटकस्वरूप है, इस कारण उसको वंदी करके समस्त विघ्न वाधाओंको दूर करनेके लिये भटिंडा इत्यादि भिन्न२ देशोंसे सेना संग्रह की। पाशविक वल प्रयोगके अतिरिक्त वह सरलतासे अपने मस्तकपर राजमुकुट धारण न करसकेंगे. इसको वह भलीभाँतिसे जानगये थे, इस कारण वह वड़ी सावधानीके साथ शीघ्रतासे रंगभूमिमें आपहुँचे। सूरतसिंहके पापकी कामनाके प्रकाशहोने के पहिले ही वालक महाराजकी वड़े गुप्तभावसे रक्षा होती थी। सूरतसिंहने अधिक सेना संग्रह कर वीकानेरके सभी सामन्तोके पास अपने नामसे यह आज्ञापत्र भेजा । वह सभी एक २ करके इनकी राजधानीमें आकर इनकी आज्ञा पालनमे नियुक्त हुए। महाजन और भादरॉ नामक दोनो स्थानो के दो राजद्रोही सामन्तोंने राजभक्तिके मस्तकपर पदाघात करके सूरतसिंहकी आधीनता स्वीकार की, उन दोनोंके अतिरिक्त और कोई सामन्त भी राजधानीमें आनेके लिये सम्मत न हुआ। परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि अन्य राजभक्त सामन्तोने सूरतसिंहकी पापलिप्साको जानकर भी अपनी २ सेनाके साथ राजधानीमें आकर उसकी जघन्य अभिलाषामें किसी प्रकार वाधा न दी। वे अज्ञानकी तरह अपने २ किलोमें वैठे रहे।

जव सूरतसिंहने सामन्त मंडलीको अपनी आज्ञापालनसे असम्मत देखा, तव उन्होने अपने मनमें निश्चय करलिया, कि यह लोग मेरा स्वत्व स्वीकार करनेको तैयार नही है। इस कारण वह सेनाको साथ लेकर सामन्तोको दमन करनेके लिये चले।

इन्होने सबसे पहिले नौहर नामक स्थानमें जाकर भूकरका देशके सामन्तोंको छलबल और बड़ी चतुरतासे अपने सम्मुख बुलाकर उनको नौहरके किलेमें बंदी करदिया। इसके पीछे अजितपुरा नामक स्थानको लूटकर सांखू नामक स्थानपर आक्रमण किया। सांखूके सामन्त दुर्जनसिंहने असीम साहस और वीरताके साथ अपनी रक्षा की, और जब अंतमें देखा कि हमारी सेनाका बल धीरे २ घट गया है तब उन्होंने शत्रुओंको आत्मसमर्पण न करके, अत्यन्त दुःखित हो आत्मघात करलिया। सूरतसिंहने शीघ्र ही विजय पाकर दुर्जनसिंहके पुत्रोंके हाथ पैर बाँध साँखू देशके प्रधान सरदारोसे दंडमें बारह हजार रुपये लिये। राजसिंहासनके लोभी सूरतसिंहने इस प्रकारसे पहिले उद्योगमें सफलता प्राप्त कर शेषमे बीकानेरके प्रधान वाणिज्यके स्थान चुरू नामक देशको जाघेरा। यह छः महीने तक इस प्रकारसे नगरीको घेरकर भी अपनी अभिलाषाको पूर्ण न करसका। परन्तु इस समय एक और उपायसे सूरतसिंहके सौभाग्यका द्वार खुलगया। भूखरकाके जिन सामन्तोको सूरतसिंहने नौहरके किलेमें बंदी कररक्खा था वही सामन्त बीकानेरके राज्यमे एक प्रबल और सामर्थ्यवान् ठाकुर गिनेजाते थे। उन्होने उसी बंदी अवस्थामे विचारा कि सूरतसिंहकी अभिलाषा अवश्य ही पूरी होजायगी। कारण कि सब सामन्त इस समय एकमत न होकर केवल अपने २ किलोकी रक्षामें नियुक्त हैं, तब सूरतसिंह सरलतासे एक२ को परास्त करनेमे क्यो असमर्थ होगे? इस प्रकारसे उसकी जय होजायगी और अंतमे उनके क्रोधसे अपनेभी प्राण नष्ट होनेकी संभावना है, यह विचार कर समस्त बंदी सामन्त अपने जीवन और स्वाधीनताकी रक्षाके लिये सूरतसिंहको सिंहासनपर बैठालनेको राजी होगये। सूरतसिंहने बंदी सामन्तोके वचन तथा उनकी प्रतिज्ञापर विश्वास करके उनको छोड़दिया। और दो लाख रुपये लेकर चूरू नगरकी लूट भी छोड़दी।

इस प्रकारसे सूरतसिंह अपने पाशविक बलकी सहायतासे बीकानेरके प्रत्येक प्रान्तमें अपने कठोर शासनका विस्तार कर और वहांके कई सामन्तोंको अपने हस्तगत करके अंतमें राजधानी बीकानेरसे लौटआया और फिर बीकानेरके बालक महाराजको संसारसे विदा करनेके उपायोकी खोज करने लगा। परन्तु उसकी उस घृणित आशाके पूर्ण होनेमे अनेक विघ्न उपस्थित होनेलगे। सूरतसिंह और इसकी माता यद्यपि हिंसक पशु बुद्धि की थी परन्तु इसकी भगिनीके कोमल हृदयकी कली दया और ममताके रससे परिपूर्ण थी। वह इस बातको भलीभांतिसे जानगई थी कि भाई सूरतसिंह किसी दिन अवश्य ही बालक महाराजके प्राण नाश कर निष्कंटक होकर राज्य करेंगे, इस कारण वह उस बालक भूपाल भाईको नित्य अपने पास रखती थी, किसी समय भी उसको आंखोकी ओट नहीं होने देती थी। सूरतसिंहने अनेक उपाय और छल कपटसे लोभ दिखाकर भगिनीको हस्तगत करनेके अनेक उपाय किये, परन्तु बलपूर्वक कुछ भी करनेका साहस न करसका। अंतमे उसने एक और उपाय सोचा। वह यह कि उक्त दयामयी भगिनी जो राजसिंहके छोटे पुत्रको अपनी गोदीमे रखती थी, अब तक कुमारी थी, अतएव सूरतसिंहने उसके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित करके उसको सुसराल भेज देना चाहा और तब

अपने भतीजेको मारना निश्चित किया। सूरतसिंहने नरवरके दरिद्री राजाके यहाँ कहला-भेजा कि आप हमारी भगिनीके साथ विवाह करनेके लिये तैयार होजाइये।

भारतवर्षमें विख्यात महाराज नलसे नरवरके राज्यवंश की सृष्टि हुई है। सूरतसिंह जिसको अपनी वहिन देनेके लिये तैयार हुए वह नरपति उसी नलके वंशधरोंमें थे। परन्तु दुष्ट सिन्धियाने उन नरवरपतिकी अत्यन्त दुर्गति करदी थी, इसीसे उनकी इस समय अत्यन्त हीन दशा होगई थी। सिन्धियाने नरवरके अभेद्य किलेपर अधिकार करके राजधानीकी समस्त धन सम्पत्ति लूटली थी, इसीसे महाराज नलके वंशधर धनके अभावसे इस समय घोर कष्ट पारहे थे। उन्होने सूरतसिंहका पत्र पाते ही उसी समय उनकी भगिनोके साथ विवाहका प्रस्ताव भेजदिया। राजभगिनी इस समाचारको सुनकर अत्यन्त दुःखी हो नेत्रोंमें आँसू भर सूरतसिंहके 'चरणोंमें गिर डरते २ बोली, भ्रात! इस समय मेरी अवस्था अधिक होगई है, मैं सर्वदा कुमारी अवस्थामें ही रहनेकी इच्छा करती हूँ, इस कारण आप मेरा विवाह न करें। और उधर वह राजा जिससे उसके साथ विवाहकी तैयारी न करें इस कारण बुद्धिशीला दयावती राजभगिनोने उनके पास भी समाचार भेज दिया कि मेवाड़के महाराणा अरिसिंहके साथ मेरा विवाह होगा, यह वात पहिलेसे ही निश्चय होगई है इस कारण आप वृथा उद्योग न कीजिये, वागदत्ता कन्याका विवाह करके सनातन आर्य धर्मका अपमान नहीं कियाजायगा। परन्तु हाय! कोमलहृदय राजकुमारीके उस हृदयभेदी रोदन, उस करुणापूर्ण वचन उस सविनय निवेदनसे क्या सूरतसिंहका पापाणहृदय पिघल सकता था? उसने किसी प्रकार भी उस अवलाके वचनोंपर ध्यान न दिया, उसका मुख्य अभिप्राय यह था कि चाहै जिस प्रकारसे हो यह कन्या घरसे वाहर चलीजाय तो मैं सरलतासे अपने भतीजेको मारकर निष्कंटक राज्य करूँ। फिर भला वह अपनी भगिनीकी वातको क्यों सुनने लगा था? दयावती राजकुमारीकी समस्त चेष्टा, समस्त प्रतिवाद तथा समस्त आपत्ति निष्फल होगई। राजप्रतिनिधि सूरतसिंहने नरवरके दीन महाराजको विवाहके यौतुकमे तीन लाख रुपये देनेका विचार किया, नरवरके महाराज अत्यन्त आनंदित हो शीघ्र ही विवाहके लिये आये। राजकुमारीने देखा कि अव मै अपने भ्राता की किसी भाँति भी रक्षा न करसकूंगी, तव वह अत्यन्त करुणा स्वरसे रुदन करने लगी। और विवाहके न होनेके लिये भी उसने अनेक यत्न किये परन्तु दृढ़प्रतिज्ञ पिशाच बुद्धि सूरतसिंहने वलपूर्वक विवाह कर ही दिया। इतने दिनोसे राजकुमारीने अपने मनहीमनमे सूरतसिंहकी वह पापकल्पना छिपा रक्खी थी। एक दिनके लिये भी साहस करके उनके सम्मुख इस वातकी चर्चा तक भी न की थी, परन्तु अंतमे जव देखा कि अव किसी प्रकारसे भी राजाके जीवनकी रक्षा नही करसकती, तव उसने अत्यन्त क्रोध और दुःखके वशीभूत होकर सूरतसिंहके सम्मुख कहा "भाई! मै इतने दिनोसे आपके गुप्त अभिप्रायको भलीभाँतिसे जानती थी। आप कुमार वीकानेरके प्राण नाश करनेके लिये मुझे घरसे निकालनेको तैयार हुए है।" चतुर सूरतसिंह भगिनीके यह वचन सुनकर कुछ भी लज्जित अथवा दुःखित न हुआ और प्रकाशमे वोला, "नही.

मेरे हृदयमे कभी ऐसी आशाका उदय नहीं हुआ।" यह सुनकर भगिनीने कहा, "यदि सत्य ही आपके हृदयमे उस घृणित पापकारी आशाको स्थान नहीं मिला है तब आप सबके सामने देवताका नाम लेकर शपथ करिये कि मैं अपने भ्रातृपुत्र कुमार महाराजका प्राण नाश नहीं करूंगा।" परन्तु हाय ! विचारी कन्याकी कौन सुनता था। दयावती राजकुमारीके सुसरालको चलेजाने पर कुछ ही दिन पीछे पाखंडी सूरतसिंहने महाजनके सामन्तोको बुलाकर आज्ञा दी कि "आप अपने हाथसे शिशु नरपतिके प्राणोंका नाश कर मेरे अभिषेकका मार्ग स्वच्छ करदे।" यद्यपि सामन्त राजद्रोही थे परन्तु इस कार्यमे हस्ताक्षेप करनेको किसी प्रकार भी सम्मत न हुए। अंतमें उस दुष्टने एक दिन स्वयं अपने हाथसे अपने भतीजे बीकानेरके बालक महाराजाके गलेमे तलवार मार कर उनका जीवन नष्ट करदिया ! !

भ्रातपुत्र हन्ता—राजहन्ता सूरतसिंहने इस प्रकारसे अपने सौभाग्य के प्रधान कंटकको उखाड़ कर बीकाके पवित्र सिंहासनपर बैठ बीकाके पवित्र रक्तको कलंकित किया। यद्यपि अत्याचारी सूरतसिंहके इस शोचनीय हत्या करनेके पीछे बीकानेरके राजछत्रको अपने मस्तकपर धारण करतेही राठौरजाति अगाध शोकसमुद्रमें डूब गई, परन्तु समस्त सामन्तोंमेसे कोई भी उसके विरुद्ध साहस करके खड़ा न होसका। राजसिंहके और दो भाई सुरतानसिंह और अजीवसिंह जो पहिलेसे ही अपने प्राणोंके भयसे जयपुरमें चलेगये थे, सूरतसिंहके इस पैशाचिक अभिनयका समाचार सुनते ही महा क्रोधित हो सूरतसिंहको इसका उचित फल देनेके लिये भटनेर नामक स्थानमे आ उपस्थित हुए। उन्होंने बीकानेरके समस्त असंतुष्ट सामन्त और भटनेरके समस्त सामन्तोको बुलाकर राक्षस बुद्धि सूरतसिंहको शीघ्रही सिंहासनसे उतारनेके लिये युद्धकी तैयारी की। यद्यपि सभी भाटीगण एक मनसे दोनो राजकुमारोंकी आज्ञापालनके साथ सूरतसिंहको दण्ड देनेके लिये तैयार होगये थे, परन्तु राठौर सामन्तोमे से बहुतसे सूरतसिंहके घोर अत्याचारोको स्मरण करके इच्छाके होतेहुए भी साहसमे भरकर योग देनेमे समर्थ न हुए। इधर चतुर सूरतसिंहने अनेक सामन्तोंको घूस देकर अपने दलमें भरती करलिया, इस कारण सुरतानसिंह और अजीवसिंहकी कामना पूर्ण होनेमें अनेक विघ्न उपस्थित होनेलगे। सूरतसिंहके भयसे राठौर सामन्तोमेंसे बहुतोंको पीठ दिखाते हुए देखकर भी उन्होंने केवल भाटियोंकी सेनाकी सहायता लेकर युद्धकी तैयारी की परन्तु चतुर सूरतसिंह ने विचार किया कि शत्रुओंका बल अधिक होनेदेना उचित नहीं, इस कारण तुरन्त ही साहसमें भरकर उसने सेनासहित उनपर आक्रमण किया। बागोर नामक स्थानमे भयंकर संग्राम उपस्थित होगया, दोनों ओरके शत्रुओंने घोर पराक्रमके साथ युद्ध करके रणभूमिमे रुधिरकी नदी बहादी। तीन हजार भाटियोकी सेनाके नाश होजानेपर अंतमे सूरतसिंहने विजय प्राप्त की। कालचक्रकी गतिसे अधर्मकी ही जय हुई। सूरतसिंहने इस प्रकारसे शत्रुओको परास्त करके निष्कंटक राज्य सिंहासनपर विराजमान हो सभी विघ्नोको दूर करदिया।

उस भयंकर युद्धके स्मृति चिह्नस्वरूपमें सूरतसिंहने उस रणभूमिमें जयदुर्ग फतहगढ़ नामका एक नवीन किला बनाया।

रणविजयी सूरतसिंह अपने देश और विदेशमें अपनी शासनशक्तिको प्रबल करनेकी इच्छासे एक प्रबल सेनादलके द्वारा वीरोचित कार्य करनेलगा। सबसे पहिले उसने अपने आत्मीय उद्धत स्वभाव बीदावतोंके अधिकारी देशपर आक्रमण कर वहाँसे दंडमें पचास हजार रुपये करमें लिये। पहिले यह सुना था कि चूरू नामक स्थानके सामन्त सुरतान और अजबसिंहकी सहायता करेंगे इस लिये सूरतसिंहने फिर उस चूरूदेशपर आक्रमण कर चूरूनगरीको जालूटा। विजयी सूरतसिंहने इस प्रकारसे धीरे २ अनेक देशोंपर आक्रमण कर तथा लूटमारकर अंतमें भादरां स्थानके निकट छानीदेशके सामन्तोंके किलेको घेरलिया। परन्तु वहाँके महाबली सामन्तोंने बड़ा पराक्रम करके सूरतसिंहकी सेनासे अपनी रक्षा की, क्रमानुसार सूरतसिंह छः महीनेतक किलेको घेरे रहे परन्तु किसी प्रकारसे भी विजय प्राप्त न करसके; अंतमे वह सेना सहित अपनी राजधानीको लौटआये।

राजा सूरतसिंह इस प्रकारके पाशविक बलकी सहायतासे अपनी शासन-शक्तिको दृढ़कर प्रबल प्रतापके साथ राज्य करने लगा। परन्तु सामन्त और प्रजाको अत्यन्त असंतुष्ट देखकर वह अन्य उपायोंसे उनको अपने हस्तगत करनेके लिये व्याकुल होगया। जिससे प्रजा इसके अन्यायाचरण करने पर भी सिंहासनके अधिकारके सम्बन्धमें किसी प्रकारका आन्दोलन न करसके, तथा कोई राजकीय प्रश्न लेकर कंहीं क्रोधित न होजॉय, इस लिये वह विशेष सावधान होनेलगा, इसके सौभाग्य बलसे उसी सम्बन्धमें एक और भी शुभ सुयोग उपस्थित होगया। बीकानेरकी सीमावाले भावलपूरके महाराजके साथ बहुत समयसे विवाद चलाआता था। उस सीमा सम्बन्धी विवादके उपलक्षमें बीकानेरके सामन्तोने कई वार युद्धभूमिमें जाकर वीरता प्रकाश की थी। इस समय भावलपुरके अधीश्वर भावलखांने अपने आधीनके तियारो नामक स्थानके किरणी जातीय खुदावख्श नामक एक यवन सामन्तपर आक्रमण किया। उस सामन्तने शीघ्रही सूरतसिंहकी शरण ली; और उन्हे अपने अधीश्वर भावलखॉके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये उत्तेजित करने लगा। सूरतसिंहने भी देखा कि वीर विक्रमशाली राठौर अवश्य ही युद्धमें प्रवृत हो जॉयगे; इस सुयोगपर वे मेरे अन्यायसे राज्य सिंहासन लेने और अपने भतीजेको मारडालने आदि कठोर आचरणोको भूल कर इस युद्धमें उन्मत्त हो जॉयगे,। इसकारण उसने शीघ्रही इस नवीन राजनैतिक कार्यका प्रबंध प्रारम्भ किया। जैसे ही तियारोके सामन्त खुदावख्शने बीकानेरका आश्रय लिया, कि वैसे ही राजा सूरतसिंहने उनको बीस ग्राम देदिये। और उनके प्रतिदिनके खर्चके लिये एकसौ रुपया रोज देनेकी आज्ञा दी। किरणीकी सम्प्रदाय भावलपुरमें सबसे अधिक प्रबल बलशाली और असीम साहसी थी। राजा सूरतसिंहने इन्ही किरणियोंको सहायतासे अपने राज्यकी समिाके बढ़ानेका विचार किया, और तियारोके महाराजने खुदावख्शसे कहा कि " मै आपकी सहायता करनेके लिये सब

प्रकारसे तैयार हूँ, परन्तु आपके द्वारा क्या मैं किसी प्रत्युपकारकी आशा करसकता हूँ? " खुदावख्शने शीघ्रतासे उत्तर दिया, कि " मैं आपके राज्यकी सीमाको समुद्रतक विस्तार करनेमें भलीभांतिसे सहायता दूंगा। " सूरतसिंहने इस प्रतिज्ञासे प्रसन्न हो वीर व्रतधारी राठौरोंकी सामन्त मंडलीके निकट तुरन्त ही युद्धका समाचार भेजदिया। यद्यपि वीकानेरके सभी सामन्त सूरतसिंहसे अप्रसन्न होगये थे, परन्तु इस समय रणभूमिमें अपना २ पराक्रम दिखानेके लिये वे अपनी २ सेनाको साथ लेकर राजधानीमें आनेलगे। नियारोके सामन्त पाँचसौ पैदल और तीनसौ अश्वारोही सेनाके साथ आये थे। इस समय उस सेनाके साथ वीकानेरकी निम्नलिखित सामन्तोकी निम्नलिखित संख्यक सेना आकर मिली थीं,–

	पैदल.	अश्वारोही.	बन्दूकधारी।
भूखरकाके सामन्त अभयसिंह	२०००	३००	
पूंगलके सामन्त रावरामसिंह	४००	१००	
रानेरके सामन्त हाथीसिंह	१५०	८	
सतीसरके सामन्त करणसिंह	१५०	९	
जसाना शारोहके सामन्त अनूपसिंह	२५०	४०	
इमनसरके सामन्त, खेतसिंह	३५०	६०	
जॉगलूके सामन्त बेनीसिंह	२५०	९	
वितनोके सामन्त भूमसिंह	६१	२	
जोड़	३६११	५२८	
मोजी पड़िहारके अधीनकी तोपै ..	—	—	२१
नरपतिके अधीनकी विदेशीय सेना या खासपायगाँ ..	.	२००	
गंगासिंहके अधीनकी मंडली ..	१५००	२००	४
दुर्जनसिंहके अधीनकी "	६००	६०	४
अनोकसिंह } सिक्खसामन्त गण		३००	
लाहौरीसिंह } सिक्खसामन्त गण		२५०	
बुधसिंह } सिक्खसामन्त गण		२५०	
अफगान सामन्त सुलतानखाँ तथा अहमदखाँके अधीनकी ..	..	४००	
	५७११	२१८८	२९

राजा सूरतसिंहने इस प्रकारसे अपनी प्रवल सेनाको इकट्ठा करके अपने दीवानके पुत्र वीरश्रेष्ट जैतराव महताके हाथमें प्रधान सेनापतित्वका भार अर्पण किया। सम्वत् १८५६ में माघमासकी तेरहवी तारीखको राठौरसेना भावलपुरके राज्यपर अधिकार करनेके लिये चली। प्रधान सेनापति जैतराव कुनसर राजसर केली रानेर होकर अनोहागढ़मे आकर

प्राप्त हुए और वहाँसे चलकर शिवगढ़ मोजगढ़ तथा फूलरामे क्रमशः डेरे डालेगये। हिन्दूसिह नामके एक भाटिया सरदारने साहसके साथ मोजगढ़पर अधिकार करके अपने नामको अक्षय किया। उसने अपने प्रवल पराक्रमसे मौजगढ़के किलेकी दीवारको लांघ कर और उसके भीतर जाकर वहाँके शासनकर्ता किरणी नामक यवन जातिके महम्मद मासफको सेना सहित विध्वंस करदिया, और अंतमे उसकी स्त्रीको बंदीकर वीकानेरमे भेजदिया। उस स्त्रीने पाँच हजार रुपये और चारसौ ऊंट देकर अपनी स्वाधीनता प्राप्त की। विजयी सेना वरावर कई सप्ताहतक उन तीनों किलोको घेरेरही, फिर जय प्राप्त करके फूलरासे एक लाख पचीस हजार रुपये और कितने ही मूल्यवान् द्रव्य और नौ तोपै अपने अधिकारमे करलीं।

विजयी राठौरोकी सेना इस प्रकारसे भावलपुरकी राज्य सीमामें अपना आतंक जमातीहुई सिधुसे डेढ़कोशके फासलेपर खैरपुर नामक स्थानमे आपहुँची। भावलपुरके अन्य असन्तुष्ट सामन्त भी इस समय जैतरावके साथ मिलगये, परन्तु बुद्धिमान् भावलखॉ अपने सम्मुख इस विपत्तिको आते देखकर तथा राठौर सेनाको पग २ पर विजय पाती हुई देखकर भयभीत हो अन्य उपायसे शत्रुओंकी गतिके रोकनेकी चेष्टा करनेलगा। यदि जैतराव शीघ्रतासे राजधानीपर आक्रमण करता तो निश्चय ही राठौरोकी विजयपताका भावलपुरके किलेपर फहराती परन्तु उसने अपना समय वृथा नष्ट किया, उस सुअवसरमे उस राज्यके जो सामन्त शत्रुओकी ओर जामिले थे, उन्हे भावलखाँ अनेक छल वल और चतुरता करके तथा लोभ दिखाकर अपने दलमे बुलाने लगा। इस कारण राठौरोकी सेनाका वल धीरे २ घटगया। तव राठौर सेनापतिने भावलपुरके अधिपतिको धमकाकर और उसे वहुत कुछ भलावुरा कह कर उससे वहुतसा धन दंडमे लिया और उसे वीकानेरको भेजदिया। और इसीसे संतुष्ट होकर उन्होंने भावलपुरका घेरा छोड़दिया। इससे सूरतसिहने अत्यन्त असंतुष्ट होकर उक्त सेनापति सामन्तका पद और मान घटा दिया।

राजा सूरतसिंह इस प्रकारसे वीकानेरका गौरव विस्तार करनेके लिये भावलपुरपर आक्रमण करनेके पीछे भी निर्विघ्नतासे अधिक समय तक शांति न भोगसके। वागोरके युद्धमें पराजित भाटिया लोग अपने घोर अपमानका वदला लेनेके लिये दो वर्षतक फिर भी युद्धके साजसे सजेरहे. और वीकानेरको जय करने और सूरतसिहको उसकी शठताका उचित फल देनेके लिये आगे वढ़े। परन्तु सूरतसिहने इस समय सब भाँतिसे प्रजाके हृदयपर अधिकार करके अपना वल वैभव खूब वढ़ा लिया था, इस कारण वह उनसे कुछ भी भयभीत न हुआ, वरन क्रोधित हो सेनाले भाटियोंके आक्रमणको रोकनेके लिये चला। फिर भी युद्धकी अग्नि भड़क उठी। फिर रणक्षेत्र मनुष्योके रुधिरसे भीगगया। और अंतमें फिर भी सूरतसिहने जय प्राप्त करके

---

(१) पहिले इस स्थानका नाम बुल्लूर था। मारवाड़मे जिस भाँति फूलरा एक अत्यन्त प्राचीन नगर है, यह भी उसी प्रकारसे प्राचीन स्थान था।

भाटियोंकी आशालताको भिन्नछिन्न करदिया। यद्यपि भाटीगण इस दूसरी वारके युद्धमे भी परास्त होकर भागगये थे, परन्तु महामान्य टाड्‌ साहब लिखते है कि संवत् १८६१ तक राजा सूरतसिहके साथ उनका बीच २ में संग्राम होता ही रहा। पीछे उक्त संवत् में सूरतसिहने भटियोको एकवार ही वलहीन करनेकी प्रतिज्ञा की, और भाटियोकी राजधानी भटनेरपर आक्रमण किया। भटनेरके यवन अधीश्वर जाव्ताखाँने क्रमानुसार ६ महीनेतक वड़े साहसके साथ अपनी रक्षा करके अंतमें राजा सूरतसिंहके करकमलमें सेना सहित सारी धन सम्पत्ति अर्पण करदी। राजा सूरतसिहने नवीन जीतेहुए भटनेर देशको बीकानेरमे मिलालिया और जाव्ताखां रहानियां नामक स्थानमे जाकर वहाँ निवास करनेलगा।

उपरोक्त घटनाके पीछे राजा सूरतसिहने अपने वल विक्रमको प्रकाश कर गौरव वढ़ानेके साथ ही साथ राज्यकी सीमाको बढ़ानेकी इच्छासे फिर भी रणभूमिमे पदार्पण किया। इस समय सवाईसिंहने धौंकलसिंहको मारवाड़के सिंहासनपर बैठालनेके लिये जयपुरके महाराजकी सहायतासे समस्त राठौर सामन्तोंके साथ मारवाड़पति मानसिहके साथ युद्ध करनेका विचार किया। राजा सूरतसिंहने सवाईसिंहकी प्रार्थनानुसार जिस भावसे अपनी सेना भेजी थी, अथवा जिस भावसे उसने जाकर युद्ध किया था, उसका वर्णन मारवाड़के इतिहासमे विधिपूर्वक कियाजाचुका है। प्रथम सूरतसिंहने अपना वल विक्रम प्रकाश करके जय प्राप्त कर मारवाड़के अन्तर्भुक्त फलोदी देशको अपने अधिकारमें करलिया, परन्तु अन्तमे जव देखा कि धौकलसिंहके पक्षमे जय प्राप्त करना कोई साधारण वात नहीं है तव वह शीघ्रही उनका पक्ष छोड़कर अपनी राजधानीको चलेआये। परन्तु मानसिह अपनी शासनशक्तिको प्रवल करके फलोदी देशपर फिर अधिकार कर वीकानेरपर आक्रमण करनेके लिये तैयार हुए तव सूरतसिहने अत्यन्त भयभीत होकर उनसे संधि करके और हानिके वहुतसे रुपये देकर अपनी रक्षा की। महामान्य टाड्‌ महोदय लिखते है कि राजा सूरतसिंहने अपनी दुर्वुद्धिवश मानसिंहके विरुद्ध धौकलसिंहका पक्ष लिया था। और अन्तमें अपमानके साथ भागकर अपने पहिले प्रभुत्व और गौरवको भी लुप्त करदिया था। इन्होंने इस समय धौकलसिहकी सहायताके लिये अपने छोटे राज्यकी प्रायः पांचवर्षकी आमदनी अर्थात् चौवीस लाख रुपया खर्च करके वडे छलवलके साथ युद्धका साहस किया था, परन्तु अंतमें इस युद्धमे परास्त होकर मानसिक वेदनासे दुःखित राजा सूरतसिंह कठिन रोगसे पीड़ित होकर रुग्णशय्यापर गिरपड़े। अपमान, आत्मघृणा और धनके नाश होनेसे वह मृतप्राय होगये थे, सभीने उनके जीवनकी आशा छोड़ दी। वैद्य डाक्टर सभी हताश होगये थे, आर्यरीतिके अनुसार मृत्यु समयके पहिले जो पारलौकिक कर्म किये जाते हैं, वह भी प्रारंभ होगये थे परन्तु अपने दुर्भाग्यवश तथा सौभाग्य वश राजा सूरतसिह मरे नहीं भयानक मृत्युके मुखसे निकल कर उन्होने शीघ्रही अरोग्यता प्राप्त की।

राजा सूरतसिहके पुनर्जीवन प्राप्त होनेके पीछे महात्मा टाड्‌ साहब अपने प्रिय राजस्थानको छोड़कर विलायतको चलेगये। इस कारण वे इसी स्थानपर राजा

सूरतसिंहके शासनके साथ ही साथ बीकानेरके इतिहासको भी समाप्त करगये हैं। हमने राजा सूरतसिंहके शेष शासनवृत्तान्तके साथ बीकानेरके वर्तमान समयतकके इतिहासको वर्णन करनेके पहिले साधू टाड् साहबके उपसंहारमें वर्णन कियेहुए, प्रबन्धको अनुवाद करना उचित समझा। साधू टाड् साहब लिखगये है, "कि सूरतसिंहने केवल खजानेको भरनेके लिये प्रजासे बलपूर्वक कर लेनेमे किसी प्रकारका संकोच नहीं किया। उन्होंने विचारा था, कि पुरोहितोंको धन देकर धर्मकार्य करनेसे मेरे सम्पूर्ण पाप दूर होजॉयगे; इस कारण हर समय उनको लोभी ब्राह्मण घेरे रहते थे। सूरतसिंहसे धन पाकर ब्राह्मण भी अत्यन्त प्रसन्न होकर समय व्यतीत करते थे। राजा सूरतसिंह जैसे लोभी थे उसी प्रकारके भीरु, अत्याचारी, और निष्ठुर भी थे। भूखरकाके सामन्तोंने अनेक समयमें उनके वहुतसे उपकार किये थे। परन्तु इन्होने उनके भी प्राण नाश किये, राज्यके सर्वप्रधान सामन्तोमें सीधमुखके नाहरसिंह, गुन्दाइलके गुमानसिंह और ज्ञानसिंह भी इसी प्रकारसे मारेगये। राजा सूरतसिंहके फिर चुरूपर तीसरी वार आक्रमण करनेसे, वहॉके सामन्त तथा वह देश भी इनके हस्तगत होगये"।

कर्नल टाड् साहब लिखगये है कि "इस प्रकारसे सभीको भयप्रद और कठोर शासनसे राजा सूरतसिंहके कुसंस्कार जितने २ बढ़ते गये वैसै २ ही राजकार्यके करनेमें भी इनकी अनिच्छा होती गई और उतनी ही प्रत्येक वर्षमें बीकानेर राज्यकी धन और जनसंख्या क्रमशः घटती गई। उत्तर प्रान्तके सामन्तोने उनकी आधीनता स्वीकार न की, और भाटी जातिके तस्कर भी क्रमानुसार बीकानेरके आदि भूस्वामी जाट और किसानो के ऊपर धावा करके उनके गौ आदि पशुओको हरण कर खेतपरसे समस्त नाज काटकर लेजाने लगे, इस कारण जाट लोगोंने विचारा कि अपने प्राण धनकी रक्षाके लिये यहॉसे भागजाना ठीक होगा. नही तो यहॉ भोजनके न मिलनेसे प्राण त्याग करने होंगे.। इस प्रकारसे अत्याचार और उपद्रवोसे पीड़ित होकर वहुतसे जाट किसान सीमामें स्थित वृटिश गवर्नमेण्टके अधिकारी देश हॉसी और हरियानाको चलेगये, वहॉ इनको वड़े आदरभावके साथ लिया गया। विशेष करके उसी समयसे अंग्रेज गवर्नमेण्टने वहादुरखॉके अधिकारी देश और अन्यान्य भूखंडको भी अपने अधिकारमे करलिया था, तभीसे वीकानेरके उत्तरप्रान्तवाले निवासियोको दुगना कष्ट मिलता था। कारण कि उसी वहादुरखॉकी ओरके मनुष्य इस समय तस्करवृत्तिका अवलम्बन कर उनके ऊपर घोर अत्याचार करने लगे। और फिर उनसे इन उपद्रवोंके दूर करनेका कुछ उपाय नहीं होता था। वीकानेरके किसी २ देशके जाटोने इस प्रकारसे तस्करोंके हाथसे अपनी रक्षा करनेके लिये स्वयं उपयुक्त उपायका अवलम्बन किया। प्रत्येक ग्रामके जाटोंने अपने ग्रामोंमें एक मट्टीका वड़ा ऊँचा टीला वनाकर उसपर एक पहरेदार रक्खा। यदि वह पहरा देनेवाला मनुष्य दूरसे ही किसी तस्करको आताहुआ देखता तो उसी समय सवको सावधान करनेके लिये वड़ी जोरसे डंका वजा देता था। उसी वाजेके शब्दको सुनकर सभी ग्रामवाले सावधान होजाते थे। एक ग्रामके शब्दको सुनकर दूसरे ग्रामवाले भी उसी भॉति वाजा वजा देते थे। क्रमानुसार उस

बाजेके शब्दको सुनकर सभी ग्रामोके मनुष्य इकट्ठे होकर तस्करोंको भगादेते थे। इन तस्करोंका भय इतना प्रबल होगया था कि सभी जाट और किसान अपनी रक्षा और धान्यकी रक्षाके लिये ढाल और बड़े २ भाले हाथमे लेकर खेती रखाते थे। बीकासे तीनसौ तेईस वर्षके पीछे सूरतसिंहने जाटोंकी प्रजासे परिपूर्ण उस राज्यकी ऐसी दीन हीन अवस्था कर दी।"

उपसंहारमे इतिहासवेत्ता टाड् साहब लिखगये हैं, कि "जो बीदावाटी इस समय बीकानेरका एक प्रधान अंशस्वरूप था और जिस देशमे राव बीदाके वंशधर वास करते थे, हम बीकानेरकी प्राकृतिक अवस्थाको वर्णन करनेके पहिले, उस देशके सम्बन्धमे कुछ कहनेकी अभिलाषा करते हैं। पाठकोको पहिले ही विदित होचुका है कि राव बीकाके दिग्विजयके लिये बाहर जानेके पहिले, उनके भ्राता बीदाने सबसे पहिले प्राचीन राजधानी मंडोरसे सेनासहित बाहरहो सबसे राठौरोका उपनिवेश स्थापन किया। बीकाने प्रथम राणाके अधिकारी गोड़वाड़ प्रदेशपर लडाईकी, और वहाँ अपनी छावनी स्थापन करनेके लिये तैयार हुए, परन्तु राणाकी प्रबल सेना उनके विरुद्ध खड़ी होगई, इस लिये वह शीघ्र ही उस देशको छोडकर उत्तरकी ओरको चलेगये। और मोहिलोंके अधीश्वरोके आधीनमें रहनेलगे। कोई २ ऐसा कहते हैं कि यही मोहिलजाति यदुवंशकी एक शाखा है, परन्तु अन्य लोग इनको क्षत्री जातिमेसे एक स्वतंत्र जाति बतलाते हैं। वे मोहिलोके अधीश्वर छापर नामक स्थानमे निवास कर ठाकुरकी उपाधि धारण कर एकसौ चौवालीस खड ग्राम और नगरोका शासन करते थे। बुद्धिमान् बीदाने देखा, कि संख्यावद्ध सेनाके साथ प्रगटरूपसे प्रबल पराक्रमी मोहिलपतिके साथ युद्ध करके अपने हृदयगत अभिप्रायका पूर्ण होना असंभव है, इस कारण वह अन्य उपाय सोच कर अपनी अभिलाषाको पूर्ण करनेके लिये अग्रसर हुए। चतुर राठौर राजकुमार बीदाने जो उपाय किया था उसपर मोहिल किसी प्रकारसे भी संदेह नहीं करसकते थे। बीदाने सबसे पहिले मारवाड़की एक राजकुमारीके साथ मोहिलपतिके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित किया। वीर राठौर वंशके साथ वैवाहिक सम्बन्ध बंधन स्थापन करना महा सन्मानका विषय जान मोहिलपतिने शीघ्र ही इस प्रस्तावमे अपनी सम्मति दी। कुछ ही दिन पीछे बीदाने विचित्र चातुरी जालका विस्तार कर राठौर राजकुमारीके पदोचित सज्जित सेनाको साथले, कन्यायात्री और कन्याको छापरमे लेआये। कन्यायात्रीगण और कन्या सवारीमे गुप्तभावसे आई, किसीको कुछ भी संदेह करनेका अवसर प्राप्त न हुआ, कन्या और कन्या यात्रिगणोको बड़े आदर-भावसे ग्रहण करनेके लिये मोहिलपतिने अपने राज्यके समस्त सामन्तोके साथ किलेमे डेरे दिये। कन्या और कन्याके कुटुम्बके लोग सभी एक २ करके सवारीमेसे उतरकर किलेके भीतर गये। परन्तु शीघ्र ही रथ और बहलियोंमेसे नंगी तलवारें हाथमें लियेहुए सैकड़ो राठौरो ने निकल कर मोहिलपति और सामन्तोके ऊपर भीम वेगसे आक्रमण किया। विवाहका अनुष्ठान समाधिमे बदलगया। बीदाकी चतुरता सफल होगई है, यह समाचार पाकर मारवाड़के

महाराजने शीघ्रही उनकी सहायताके लिये अधिक राठौरोकी सेना भेज दी। उससेनाकी सहायतासे साहसी बीदाने मोहिलोके शासनको एकवार ही लुप्त करके अपनी शक्तिको प्रवल करलिया। पिता जोधाने सेनाके द्वारा पुत्र बीदाकी सहायता की, बीदाने नवीन जीतेहुए राज्यके लाडणूं नामक देश और वारह खंड ग्राम पिताको देदिये। वह देश आजतक मारवाड़के अधिकारमें है। बीदाके परलोक जानेके पीछे उनके पुत्र तेजसिंहने अपने पिताके नामसे बीदासर नामकी नवीन राजधानीकी प्रतिष्ठा की। यही बीदावत सम्प्रदाय बीकानेरमें सबसे अधिक बलवान् थी। इसीसे बीकानेरके महाराज अपने राज्यमेंसे सभीसे इच्छानुसार कर लेते थे, परन्तु इस बीदावाटीसे कभी अपनी इच्छानुसार कर नहीं लिया। यह देश अच्छे विस्तारवाला था परन्तु पृथ्वी एकसार थी। वर्षाऋतुमे चारों ओरके वालुमय छोटे २ पहाड़ोपरसे जल निकलकर इस स्थानको तर करता रहता है। वहांकी पृथ्वी वंजर है, इस कारण इस स्थानके चारोओर अधिकतासे गेहूं उत्पन्न होते है। समस्त बीदावाटी देशके एकसौ चौवालीस खण्ड ग्रामोमें इस समय जो चौवालीस वा पचास हजार निवासी रहते है, इनमेसे तीन अंशोमेसे एक अंशके निवासी राठौर है, यह हमै निश्चय नहीं होता। यह देश वारह भागोमे विभक्त है, इनमेसे पांच श्रष्ठ है। इन देशोके आदि निवासी मोहिलोमेसे इस समय वीस परिवारसे अधिक सारी बीदावाटीमे नहीं दिखाई देते। और शेष निवासियोमेंसे प्रधानतः अधिकांश जाट किसान और वाणिज्यका व्यापार करनेवाली जातियां है।"

द्वितीय अध्याय २.

बृटिश गवर्नमेण्टके साथ सूरतसिंहके संधिवंधनकी चेष्टा करना–संधिके प्रस्तावमें बृटिश गवर्नमेण्टका असम्मति देना–राजा सूरतसिंहका इच्छानुसार शासन–राजद्रोह–बृटिश गवर्नमेण्टके साथ संधिवंधन–संधिपत्र–कर देनेसे छुटकारा पाना, शांतिस्थापन–राजा सूरतसिंहका परलोक जाना–उनके चरित्रोंकी समालोचना–रत्नसिंहका अभिषेक–पीड़ित सामन्त और प्रजाकी नवीन आशा–जैसलमेर राज्यके साथ विवाद–दोनो राज्योंमे युद्धकी तैयारी–जयपुर और मेवाड़पतिकी रणशय्या–राणा रत्नसिंहका सेना सहित जैसलमेरमें जाना–अंग्रेज गवर्नमेण्टका युद्धमे विघ्न करना–संधिपत्रके अनुसार रत्नसिंहके निकट प्रस्ताव भेजना–युद्धसे शान्ति होना–मेवाड़के महाराणाका मध्यस्थ होकर विवाद भंजन करना–दोनों राजाओंके द्वारा दोनोंकी क्षति पूर्ण करना–असंतुष्ट सामन्तोंका फिर विद्रोहके लक्षण प्रगट करना–उनका दमन करनेके लिये रत्नसिंहका अंग्रेज रेसिडेण्टके निकट सहायताकी प्रार्थना करना–सहायता देनेमे रेसिडेण्टकी प्रतिज्ञा करना–गवर्नर जनरलका उस प्रतिज्ञापालनमे बाधा देना–गवर्नमेण्टकी इच्छानुसार संधिपत्रका अर्थ करना–जैसलमेरपतिके साथ रत्नसिंहका फिर विवाद–गवर्नमेण्टका विवादकी मीमांसा करना–दोनों राजाओंमे मित्रता–रत्नसिंहका राज्यसीमा–वृद्धिकी चेष्टा करना–वाणिज्य–शुल्ककी नवीन व्यवस्था–राजा रत्नसिंहकी मृत्यु।

जिस समय महाराज सूरतसिंह मृत्युके मुखसे छुटकारा पाकर नवीन जीवन पा अपने राज्यमें फिरसे भयंकर राजनैतिक शासन करनेके लिये अग्रसर हुए। उसी समय महामाननीय टाड् साहब अपने प्रियस्थान रजवाड़ेको छोड़कर अपनी जन्मभूमि इंगलैन्डको चलेगये, इसी कारणसे उनको वीकानेरका इतिहास उसी समय समाप्त करना पड़ा था। प्रतिज्ञा पूर्ण करनेके लिये हम मेवाड़ और मारवाड़के समान बीकानेरके पीछेके इतिहासको भी लिखनेमें प्रवृत्त हुए हैं।

राजा सूरतसिंह जिस समय मारवाड़के महाराज मानसिंहसे परास्त होगये थे, उस समय विजयी बृटिशसिंहने भारतके अनेक प्रान्तोंमें अपना अधिकार करके भावी प्रवल शासनशक्तिको दृढ़ करलिया था। सूरतसिंहने अपनी दुर्बुद्धिके वशीभूत होकर मानसिंहके विरुद्ध धौकलसिंहके साथ मिलकर अपने राज्यकी पाँच वर्षकी आमदनीको वृथा खोदिया था, इसी कारणसे उनका आर्थिक वल और विक्रम घटगया था, मानसिंहकी सेनाके प्रवल दावानलके समान वीकानेरकी सीमामें आते ही सूरतसिंहका साहसपूर्ण हृदय कंपायमानं होगया, उन्होंने विचारा कि इस अगाध विपत्तिसागरसे उद्धार पाना तो दूर रहा वरन राज्यके भी नाश होनेकी सभावना है। इस हेतु उन्होंने उस समय भारतमें एकमात्र बृटिश गवर्नमेण्टको प्रवल वलशाली जानकर १८०८ ईसवीमें गवर्नमेण्टके निकट संधिका प्रस्ताव भेजदिया। गवर्नमेण्ट उस समय अपनी शासनशक्तिका विस्तार कररही थी अस्तु उस राजनीतिसे सूरतसिंहका पक्ष समर्थन न कियागया। और कहागया कि यमुनाके पारवाले किसी देशीय राजाको आश्रय न दिया जायगा न किसी देशी राजाके साथ रक्षण पीड़न तथा संधिस्थापन कियाजायगा।* मान्यवर टाड् साहब ने न जाने क्यो इस घटनाका वर्णन नहीं किया, इसका विचार करनेमें हम असमर्थ हैं।

राजा सूरतसिंहने कठोर रोगसे छुटकारा पाकर प्रजाके प्रति फिर उसी प्रकारके उपद्रव और अत्याचार करने प्रारंभ करदिये तथा सामन्तोंके प्रति भी कठोर व्यवहार करना प्रारंभ किया। राज्यकें प्रत्येक प्रान्तमें फिर भयंकर असंतोषकी अग्नि प्रज्वलित होगई। खाली खजानेको परिपूर्ण करनेके लिये अधिकतासे करकी वृद्धि की गई और प्रत्येक सामन्तोंके अधिकारी देशपर जाकर उनकी समस्त धन सम्पत्ति भी लूटी जाने लगी इत्यादि। इन्हीं सब दुरुपायोंका अवलंबन कर सूरतसिंह इस समय उस हानिको पूर्ण करनेलगे जो उन्हें मानसिंहके विमुख होनेसे हुई थी और इसोसे प्रजा तथा सामन्त लोग सूरतसिंहको राक्षस स्वरूप जानतेथे और उससे भयभीत होकर सभी उपद्रवोंको सहन करते थे। यद्यपि सब सामन्त एकमत होकर सरलतासे सूरतसिंहको राज्यच्युत करसकते थे, परन्तु उसके असह्य अत्याचारोंको स्मरण कर, वे यह सोचकर रहजाते थे कि कदाचित् पीछे सूरतसिंहकी जय होजाय तो यह हमारा सर्वनाश करदेंगे। इसी भयसे कोई भी साहसके साथ सूरतसिंहके विरुद्ध खड़े न होसके। अतः सूरतसिंहके अत्याचारोंका स्रोत समभावसे बहने लगा।

---

* Aitchison's Treaties Vol IV P. 146

यही नहीं कि सूरतसिंह केवल राजहन्ता ही हो, वरन् अनेक प्रकारके पापोंसे इनका जीवन महाकलंकित होगया था; इस कारण यह उन पापोके नाश होनेकी इच्छासे प्राय: ब्राह्मणोको बहुतसा धन देते थे; तथा दरिद्र ब्राह्मणोंको अपने यहाँ आश्रय देकर उनका अधिक संमान करते थे, और देवसेवा तथा धर्मकार्यमे भी लिप्त रहते थे। और जो दुराचारीगण उनके बालकपनके संगी थे, उन्होंने ही उस समय राज्यभारको ग्रहण करके चारों ओर इच्छानुसार उपद्रव करने प्रारंभ करदिये थे। यद्यपि राजा सूरतसिंह पापोंका प्रायश्चित्त करनेके लिये ब्राह्मणोंकी सेवा और देवकार्यमे लिप्त रहते थे, तथापि दुराचरण करनेसे भी कदापि न चूकते थे। तब एक ओर जो शासनकर्ताने अपने स्वार्थसाधन तथा राजभंडारको पूर्ण करनेके लिये लोहेका दंड धारण करके प्रजाको पीड़ित करना प्रारंभ करदिया, तब दूसरी ओर उसी भाँति अराजकताकी वृद्धि होनेसे चोरोका बल इतना प्रबल होगया कि लोग अपने धन और प्राण बचानेके लिये भी व्याकुल होगये। अन्तमें सामन्त लोग अधिक अत्याचार सहन न करसके। और वे प्रगट रूपसे सूरतसिंहके विरोधी होगये।

ब्राह्मणोको धन देकर पूजा होम इत्यादिसे पापोके नाशमें नियुक्त सूरतसिंह राज्येक चारो ओर प्रबल असंतोपकी अग्नि प्रज्वलित और सामन्तोंको विद्रोही हुआ देखकर अत्यन्त भयभीत होगये। उस समय न जाने उनके पुण्यसंचयकी वाञ्छा कहाँ भाग गई। उस समय वह अपने प्राणोंकी रक्षा सिंहासनकी रक्षा, और राज्यकी रक्षाके लिये व्याकुल होकर चारों ओर आश्रय पानेके लिये चेष्टा करनेलगे। इस समय पिंडारियोकी लड़ाई के पहिले १८२८ ईस्वीमे वृटिश सरकार रजवाड़ोंके सभी राजाओके साथ प्रथम संधिबंधन करनेके लिये अग्रसर हुई थी। गूढ़ राजनैतिक उद्देशको गुप्त रखकर अपनी भावी शासन-शक्तिका विस्तार करने और राजपूत राजाओकी स्वाधीनता लोप करनेके लिये ही वृटिश गवर्नमेण्टने हतवीर्य राजपूत राजाओंको संधिबंधन करनेके लिये बुलाया था, बीकानेरके महाराज सूरतसिंहने तुरन्त ही बड़े आनन्दके साथ गवर्नमेण्टके डेरोमे उपयुक्त प्रतिनिधिको दिल्ली भेजदिया। राजनीतिचतुर सरतसिंह भलीभांतिसे जानगये थे कि अंग्रेजोंकी सहायतासे अवश्य ही हम ऊधमी सामन्तोको वशमे करसकैगे। इस कारण उन्होने एकमात्र गवर्नमेण्टके साथ संधिबंधन करना ही अपने भावी मंगलका कारण निश्चय किया, और बड़े आग्रहके साथ शीघ्रही संधि कर ली। राजा सूरतसिंहको उस समय स्वप्नमे भी यह ध्यान नहीं था कि हमारे भावी प्रतिनिधि इसी संधिबंधनके वशीभूत होकर सदाके लिये गवर्नमेण्टके आधीन होकर रहेंगे।

राजा सूरतसिंहके प्रतिनिधि ओझा काशीनाथ दिल्लीमे गये और वृटिश गवर्नमेण्टके साथ निम्नलिखित संधिपत्र तैयार किया गया। -

सन्धिपत्र।

माननीय ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ बीकानेरके अधीश्वर महाराज सूरतसिंह बहादुरका यह संधिपत्र माननीय कम्पनीकी ओरसे महामहिमवर मार्किस आफ

हैसटिन्स भारतवर्षके गवर्नर जनरलसे सम्पूर्ण क्षमता प्राप्त मि० चार्लस थियोफिलास मेटकाफ और राजराजेश्वर श्रीमान् सूरतसिंह बहादुरको उनके द्वारा दिया गया, तथा सम्पूर्ण सामर्थ्यवान् ओझा काशीनाथ द्वारा निर्द्धारित हुआ।

पहिली धारा।

माननीय कम्पनीके साथ महाराज सूरतसिंह और उनके उत्तराधिकारी तथा जो इनके स्थान पर अभिषिक्त हो वह, चिर स्थाई मित्रता करके संधिबंधन करले, अपने अपने स्वार्थकी ओर दोनोहीका ध्यान रहै। जिस किसी पक्षके मित्र और शत्रु होगे वह दोनो ओरके मित्र शत्रुरूपसे गिने जायँगे।

दूसरी धारा।

वृटिश गवर्नमेण्टने बीकानेर राज्य और उसके अधिकारी देशोंको शत्रुपक्षके हाथसे रक्षा करनेका भार ग्रहण किया।

तीसरी धारा।

महाराज सूरतसिंह और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त गवर्नमेण्टकी अनुगतरूपसे सहयोगिता करै, और वृटिश गवर्नमेण्टका प्रभुत्व स्वीकार करते हैं, और वे अन्य किसी राजा अथवा राज्यके साथ किसी प्रकारका सम्बन्ध न करसकैंगे।

चौथी धारा।

वृटिश गवर्नमेण्टकी आज्ञानुसार और अनुमतिके अतिरिक्त महाराज और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त किसी राजा वा किसी राज्यके साथ संधिबंधन नही करसकैंगे; परन्तु अपने कुटुम्बी तथा मित्र राजाओके साथ नियमितरूपसे पत्रव्यवहार करसकैंगे।

पाँचवीं धारा।

महाराज और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त किसीके प्रति अत्याचार नहीं करसकैंगे; यदि दैवयोगसे किसीके साथ विवाद उपस्थित होजाय तो उसकी मीमांसा तथा दंडकी मध्यस्थताका भार वृटिश गवर्नमेण्टके ऊपर रखना होगा।

छठवीं धारा।

जिस कारणसे बीकानेर राज्यके कितने ही मनुष्योने राजमार्गपर लूटमार की है तथा समस्त धन सम्पत्ति लूटकर इस संधिबंधनमें आवद्ध हुए दोनो राज्योकी शान्तिप्रिय प्रजाके ऊपर अत्याचार किये हैं और अंग्रेजोके अधिकारी देशके निवासियोकी चोर और डकैतोने बहुत सी धन सम्पत्ति लूट ली है, उन सबको लौटा देनेके लिये तथा अंतमे राज्यसे चोर और चोरीको जड़से नाश करनेके लिये महाराज स्वीकार करते है। यदि महाराज चोर और डाकुओको निवारण करनेमे समर्थ न होंगे, तो उनके प्रार्थना करनेपर गवर्नमेण्टकी ओरसे उनको सहायता मिलेगी, और उस कार्यके लिये जो सेना रक्खी जायगी महाराजको उसका सब खर्चा देना होगा। यदि वह

इस खर्चेके देनेमे किसी प्रकारकी अरुचि करैगे तो उसके पलटेमे अपने राज्यके कई देश गवर्नमेण्टको देने होंगे; और वृटिश गवर्नमेण्ट उन देशोंकी आमदनीसे वह द्रव्य लेकर फिर वह देश राजाको लौटा देगी।

सातवीं धारा।

महाराजके राज्यके जो ठाकुर तथा अन्यान्य निवासी विद्रोही होगये हैं तथा जिन्होंने उनकी शासनशक्तिको अवमानता की है, महाराजके आवेदन करनेपर वृटिश गवर्नमेण्ट उनको दमन करेगी। इस कार्यके लिये जो सेना रक्खी जायगी, महाराजको उसका भी खर्चा देना होगा, यदि महाराज उस खर्चेके देनेको समर्थ न होंगे तो उसके बदलेमे वृटिश गवर्नमेण्टको अपने राज्यके कुछ देश देने होंगे और वृटिश गवर्नमेण्ट उन देशोंकी आमदनी लेकर उन्हें फिर महाराजको लौटा देगी।

आठवीं धारा।

वृटिश गवर्नमेण्टके अनुरोधसे बीकानेरके महाराज अपनी सामर्थ्यके अनुसार सेनाको सहायता करैंगे।

नवीं धारा।

महाराज और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त अपने राज्यको स्वाधीनभावसे शासन करते रहें; और उस राज्यमे वृटिश गवर्नमेण्टके शासनकी सीमाका विस्तार नहीं होगा।

दशवीं धारा।

वृटिश गवर्नमेण्टकी यह इच्छा और यह अभिलाषा है कि काबुल और खुरासान इत्यादि देशोसे जिससे वाणिज्य द्रव्य निर्विघ्नतासे आसकैं, इस कारण बीकानेर और भटनेर राज्यके मार्गकी रक्षा भलीभांतिसे कीजाय; इस निमित्त महाराज स्वीकार करते हैं कि वह अपने राज्यमें उक्त उद्देशको इस प्रकारसे सफल करनेकी चेष्टा करैं कि वणिक् लोग जिससे निर्विघ्नतासे आ जा सकै, और उनको चोर डाकू किसी प्रकारकी बाधा न देसकै, अथवा वाणिज्य महसूल इस समय जितना लियाजाता है उससे अधिक न बढ़ाया जाय।

ग्यारहवीं धारा।

यह ग्यारह धाराओसे युक्त संधिपत्र मि० चार्लस थियोफिलास मेटकाफ और ओझा काशीनाथके द्वारा तैयार होकर हस्ताक्षर करके इसपर मोहर लगा दीगई, और यह महामहिमवर गवर्नर जनरल तथा राजराजेश्वर महाराज श्रीमान सूरतसिंह बहादुरका स्वीकृत हुआ, आजकी तारीखसे लेकर बीस दिनके बीचमें परस्परमे लेन देन होजायगा।

दिल्लीमे आज सन् १८१८ ईस्वीकी ९ मार्चको लिखा गया.

(हस्ताक्षर) सी. टी. मेटकाफ

(हस्ताक्षर) ओझा काशीनाथ।

हस्ताक्षर हेसटिन्स ।

गवर्नर जनरलकी छोटी मोहर.

गोगराके किनारे पात्रास्याघाटके निकट डेरोके भीतर मान्यवर गवर्नर जनरलका यह सन्धिपत्र १८१८ ईस्वीकी २१ मार्चको तैयार हुआ ।

(हस्ताक्षर) जे.-आडाम ।

गवर्नर जनरलके सेक्रेटरी । *

राजा रायसिंहने अपनी इच्छानुसार बादशाह अकबरकी अधीनता स्वीकार करके और अपने गौरवको बढ़ाकर राज्यकी श्रीवृद्धि की थी । परन्तु सूरतसिंहने अपनी निर्बुद्धिताके दोषसे सामन्त और प्रजाके अप्रियपात्र होकर प्रबल बलशालिनी ईस्ट-इण्डिया कम्पनीसे सधिकर ली । परन्तु सूरतसिंहके संमानका विषय यह है कि मेवाड, मारवाड, तथा आमेर इत्यादि राज्यके प्रबल राजाओको उक्त कम्पनीके साथ संधिबंधन करके कम्पनीको जिस प्रकारसे वार्षिक कर देना पडा था, सूरतसिंहको उस तरहसे कर न देना पडा । कर देनेसे छुटकारा पानेका एकमात्र कारण यह है कि महाराष्ट्रोंके दलसे व्याकुल हो रजवाड़ोंके सब राजाओंने उनको चौथ स्वरूपसे कर दिया था। परन्तु उन्होने न तो कभी बीकानेर पर आक्रमण किया और न बीकानेरके महाराजसे एक पाई ली, अस्तु मेवाड़ और मारवाडके महाराज महाराष्ट्रोंको जो कर देते थे, अंग्रेज कम्पनीके साथ संधि होनेके समय इनको कम्पनीको भी उतना ही कर देना निर्धारित हुआ, परन्तु बीकानेरके महाराजने मरहठो को कर नहीं दिया, इसी कारणसे कम्पनी भी सूरतसिंहसे कर न लेसकी । यद्यपि बीकानेरके महाराज अंग्रेज गवर्नमेण्टके अधीनमे गिने गये, तथापि उक्त सधिके मतसे आजतक गवनमण्टको किसी प्रकारका कर नहीं दिया गया ।

अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ महाराज सूरतसिंहकी संधि होते ही जो सामन्त इनके विरुद्ध खडे हुए थे वह इस समय महा भयभीत हुए । प्रबल पराक्रमशाली अंग्रेजीसेना किसी दिन अवश्य ही बीकानेरमे आकर हमारा सर्वनाश करेगी, यह विचारकर उन्होंने चुपचाप सूरतसिंहके अत्याचारोंको सहन करनेका विचार किया । और शीघ्र ही बीकानेरमें अंग्रेजी सेनाने जाकर राजाकी आज्ञानुसार शांति स्थापन की, तथा चोर डाकुओके उपद्रवोंको निवारण करके वह चली गई ।

यद्यपि राज्यमें बाहरी शांति होगई थी तथापि सामन्त और प्रजाके हृदयमे भीतर ही भीतर पहिलेकी समान असंतोषकी अग्नि प्रबल होती रही ।

---

* Aitcheson's Treaties Vol IV P. 148

महाराज सूरतसिंहने सन् १८२४ ईस्वीमें इस मायामय शरीरको त्याग दिया। अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ संधि होनेके समय यद्यपि राज्यमें अधिकतासे शांति होगई थी, परन्तु उनकी मृत्युके पहिलेसे ही उन असंतुष्ट सामन्तोंने फिर विद्रोह उपस्थित करदिया। राज्यके चारों ओर फिर अराजकता उपस्थित होगई। अफ़ग़ानिस्तानसे बहुतसे वाणिज्यके द्रव्य इस बीकानेर राज्यमें होकर भारतके अनेक प्रान्तोंमे जाते थे। इसी लिये उस संधिमें एक यह धारा भी रक्खी गई थी कि जिससे बीकानेरके सामन्त इन वाणिज्य द्रव्योंसे भरे हुए छकडोंके साथ जानेवाले वणिकोंके ऊपर किसी प्रकारका अत्याचार न करे, परन्तु इस समय उस धाराके अनुसार कार्यकरनेमें महाराज सूरतसिंह निपट असमर्थ थे।

इस बातको महाराज स्वयं मानते थे कि मैं घोरपातकी हूँ। परन्तु अपनी सामर्थ्य तथा अपने गौरवको बढ़ानेके लिये उन्होंने कितनी ही बार युद्धभूमिमें जाकर प्रशंसनीय वीरता दिखाई थी। इनके राज्यकी सीमा जैसी सामान्य थी, उनकी सेनाका बल जैसा सामान्य था। यदि अपने कार्यक्षेत्रको भी उसी भांति सीमाबद्ध रखनेकी चेष्टा करते तो अंतसमयमें वह कभी भी आपत्तिग्रस्त तथा हीनबल नहीं होसकते थे। किन्तु वह अपनी दुर्बुद्धिवश मारवाड़पति मानसिंहके साथ ऐसे कुसमयमे युद्धमें लिप्तहुए कि वही युद्ध उनकी अवनतिका कारण हुआ। महाराज सूरतसिंहके मारवाड़पति मानसिंहका विरोधी होनेका यद्यपि टाड् साहबने कोई कारण नहीं लिखा परन्तु हमारे विचारवान् पाठक सरलतासे इसका अनुमान करसकते हैं कि सूरतसिंहके हृदयमें अवश्य ही एक गूढ़ और ऊँचा उद्देश छिपा हुआ था; उसी अभिप्रायको सिद्ध करनेके लिये यह धन और सेनाका नाश करनेमें प्रवृत्त हुए थे। अनुमान होता है कि उन्हें इस बातपर पूरा विश्वास था कि मानसिंहके परास्त होते ही धौंकलसिंह अवश्य ही मारवाड़के सिंहासन पर बैठेंगे, परन्तु जिस सूरतसिंहने अपने भतीजेको मारकर राज्यसिंहासन् पाया था उसकी आशा क्यों फलीभूत हो और इनका प्रताप और प्रभुत्व क्यों लोप न होजाय?

महाराज सूरतसिंहके परलोकवासी होनेपर उनके पुत्र रत्नसिंह राजसिंहासनपर विराजमान हुए। रत्नसिंहके सिंहासन पर बैठनेके साथ ही साथ बीकानेरके सामन्त और समस्त प्रजाके मनका भाव भी सहसा बदल गया। सभीने विचारा कि सूरतसिंहके परलोक जानेके साथ ही साथ उनके निग्रह भोग भी समाप्त होजांयगे, इस कारण वह नवीन राज्यके शासनमें मंगल और शांतिकी आशा करके नवीन २ आशाओंसे हृदयको शोभायमान करने लगे। महाराज सूरतसिंहकी मृत्युके पहिले राज्यमें जिस प्रकारकी अशान्ति, उत्पीड़न और अत्याचारोंके समुद्रकी तरंगमालाके विस्तारसे बीकानेर विध्वंस होगया था, चोर डाकुओंके घोर उपद्रवोंसे अराजकता अपनी पूर्णमूर्तिसे विभीषिकामय दृश्य दिखा रही थी, नवीन शासनके प्रारंभमें वह तरंगमाला और वह दृश्य न जाने कहाँ चले गये।

रत्नसिंह सिंहासनपर बैठते ही एक बडे भारी युद्धमे गये। जयसलमेरकी दुष्ट प्रजाने और राजकर्मचारियोंने वहांके राजाके अज्ञान होनेसे अराजकतासे पूर्ण बीकानेर राज्यकी सीमामें जाकर बीकानेरकी प्रजाके ऊपर घोर अत्याचार करने प्रारंभ करदिये थे। वह बीकानेरकी प्रजाकी सारी धन सम्पत्ति लूट कर लेगये थे। तब रत्नसिंहने अत्यन्त कुपित होकर जयसलमेरके महाराजके पास युद्ध करनेका प्रस्ताव भेजा और इधर जयपुर और मेवाड इत्यादिके राजाओंसे सहायता मॉगी। रत्नसिंहके इस युद्धके प्रस्तावको सुनकर जयसलमेरके महाराज कुछ भी भयभीत न हुए, वरन वह दुगुने उद्योगके साथ अपनी रक्षा और रत्नसिंहकी आशाको व्यर्थ करनेके लिये तुरन्त ही युद्धकी तैयारी करने लगे। बीकानेर और जयसलमेर दोनों राजाओंकी सेना जिस प्रकार सजने लगी, जयपुर और मेवाडकी सेना भी उसी प्रकारसे इस जातीय युद्धमे प्रवृत्त होनेके लिये जयसलमेर राज्यकी सीमामें आकर इकट्ठी हुई। बहुत दिन पहिलेसे दोनो राज्योंमे जो झगडा चल-रहा था, उसकी अन्तिम मीमांसा करनेके लिये ही दोनों राजाओंने युद्धके लिये तैयार होना आवश्यक समझा, परन्तु युद्धके प्रारंभ होनेके पहिले ही एक कारण विशेषने दोनों राजाओंको युद्धसे विमुख करदिया। वह यह कि बीकानेरके महाराज सूरतसिंहने पहिले ही अंग्रेजोंके साथ सधि करनेमे स्वीकार किया था कि किसी देशीय राज्यपर आक्रमण न किया जायगा, और उस समय महाराज रत्नसिंह उस संधिकी धाराको भंग करके जयसलमेरपर आक्रमण करनेके लिये गये, इनके इस आचरणसे बृटिश गवर्नमेण्ट अत्यन्त क्रोधित हुई, और महाराज रत्नसिंहसे कहला भेजा कि तुम सधिपत्र की धाराके अनुसार जयसलमेरपर आक्रमण नही करसकते। जिस कारणसे आपमे झगड़ा होरहा है उसकी परस्पर मीमांसाका भार मेवाडके महाराणाके हाथमे अर्पण करना होगा वही निवटेरा इसका कर देंगे। बृटिश गवर्नमेण्टके पाससे इस प्रस्तावके आते ही महाराज रत्नसिंहने शीघ्र ही युद्ध रोकदिया। और अंतमें गवर्नमेण्टकी सम्मतिसे मेवाडके महाराणाने इस झगड़ेमें मध्यस्थ होकर इसकी मीमांसा की। प्रजाके द्वारा दोनों राज्योंका जो अनिष्ट हुआ था, दोनों राजाओंने उनकी हानिको पूर्ण करदिया। और विवादाग्नि कुछ कालके लिये शान्त होगई।

महाराज रत्नसिंह उक्त विवादकी मीमांसा होनेके पीछे, पिछले वर्ष सन् १८३० ईस्वीमे राज्यके भीतरी झगडोंमें पड़े। महाराज सूरतसिंहके शासनकी शेष अवस्थामे बीकानेरके सामन्तोंने जिस भाँति प्रकाशरूपसे विद्रोही होकर उनको सिंहासनसे उतारने का सकल्प किया था, इसवर्षमें भी उसी प्रकारसे उन सामन्तोंने फिर राजद्रोही होकर भयकर काण्ड उपस्थित करदिया। उन सामन्तोंकी विद्रोहितासे महाराज रत्न-सिंह अत्यन्त भयभीत होगये, उनको इतनी सामर्थ्य न हुई कि वह विना सहायता पाये इस विद्रोहाग्निको शान्त करते, महाराज रत्नसिंहने इस समय संधिपत्रके बलसे अंग्रेज गवर्नमेण्टसे सेनाकी सहायता माँगी। संधिपत्रकी छठवीं और सातवी धाराके अनुसार महाराज रत्नसिंहने अंग्रेज गवर्नमेण्टसे बीकानेर राज्यकी रक्षा और विद्रोही सामन्तोंको दमन करनेके लिये दिल्लीमें अंग्रेज रेसिडेण्टके निकट उक्त सहायताकी

प्रार्थना भेजी । रेसिडेण्ट शीघ्र ही सेनाकी सहायता देनेके लिये सम्मत हुए। वृटिश गवर्नमेण्टने संधिपत्रका अर्थ सभी समयमे समभावसे नहीं किया है, सो हमारे पाठक इसे पहिले ही अनेक स्थानोमे पढ़चुके है। परन्तु रेसिडेण्टकी सहायताके लिये सेना भेजनेको तैयार होते ही अंग्रेज गवनर जनरलने असंतोप प्रगट करके रेसिडेन्टसे कहला भेजा कि "देशीय राजाओके घरेलू झगड़ोको शान्त करनेके लिये कभी सहायताके लिये सेना नहीं भेजी जायगी। यदि किसी विशेप कारणके उपस्थित होनेपर गवर्नमेण्ट आज्ञा देगी तो उस प्रकार सहायता दी जासकती है। इस समय बीकानेरकी अवस्था ऐसी नहीं है कि उनको सेनाकी सहायता दीजाय।" गवर्नमेण्टकी यह आज्ञा पाते ही रेसिडेण्टने फिर सहायताके लिये अपनी सेना नहीं भेजी। संधिपत्रका यथार्थ अविकल अनुवाद हम पहिले लिखचुके है, उसी संधिपत्रके मतसे अंग्रेज गवर्नमेण्टने राजा सूरतसिंहको सेनाकी सहायता देकर राज्यके विद्रोही सामन्तोका दमन किया था, परन्तु न जाने क्यों वृटिश गवर्नमेण्टने इस समय उस संधिपत्रका भिन्न अर्थ करलिया। जिस धाराके मतसे गवर्नमेण्टने एकवार ही बीकानेरके आभ्यन्तारिक उपद्रवोको शान्त करनेके लिये सेनाकी सहायता दी थी, इस समय उसी धाराका क्या अर्थ करलिया। एचिसन साहब अपने ग्रंथमे वर्णन करगये है कि "रेसिडेण्ट १८१८ ईस्वीके संधिपत्रकी छटवीं और सातवीं धाराका यथार्थ अर्थ नहीं समझसके। उपरोक्त दोनो धाराओके मतसे उस समय कार्य करना था। असंतुष्ट प्रजा और सामन्तोको दमन करनेके लिये बीकानेरके महाराजको परिणाममे उक्तधाराके अनुसार बृटिश गवर्नमेण्टके निकट कभी भी सेनाकी सहायताकी प्रार्थना करनेका अधिकार प्राप्त नहीं था"। परन्तु हम कह सकते हैं कि एचिसन साहबकी यह उक्ति यदि सत्य है, संधि पत्रकी उक्त दोनों धाराओका यदि इस प्रकारका अर्थ है तो १८१८ इस्वीमें बीदावाटीके सामन्तोके विद्रोही होनेसे वृटिश सेना क्यो उनको दमन करनेके लिये बीकानेरमे आई थी ? तब उक्त दोनो धाराओका दूसरा अर्थ क्यो हुआ ? सारांश यह है कि वृटिश कम्पनीने जिस समय जैसी आवश्यकता देखी उस समय वैसा अर्थ किया।

जब महाराज रत्नसिंहने सुना कि गवर्नमेण्टसे सहायता न मिलेगी, तब इन्होने शीघ्र ही अपनी सामर्थ्यके अनुसार अपने आधीनकी सेनाके द्वारा ही विद्रोही सामन्तोको वशीभूत करनेकी चेष्टा की। परन्तु इनकी यह चेष्टा सफल भी न होनेपाई थी कि बीचमे ही और एक विवादाग्नि प्रज्वलित होगई। यद्यपि जयसलमेरपतिके साथ महाराज रत्नसिंहके विवादकी एकबार मीमांसा होगयी थी परन्तु इस समय अर्थात् १८४५ ईस्वीमें दोनो राजेश्वरोमे वह विवाद इतना प्रबल होगया, कि वृटिश गवर्नमेण्टको फिर,शांति स्थापन करनेके लिये एक अंग्रेज राजपुरुषको मध्यस्थ करके भेजना पड़ा। उस अंग्रेज राजपुरुपने कार्यक्षेत्रमे आकर दोनों राजाओका विवाद इस प्रकार संतोपदायक रूपसे निपटादिया, कि दोनोहीमे जो दीर्घकालसे शत्रुता चली आरही थी उसे दोनो भूल-गये, और दोनोमे परस्पर मित्रताका सम्बन्ध स्थापित होगया।

कर्नल म्यालिसन साहब लिखगये हैं कि महाराज रत्नसिंहने उन उपद्रवोंके बीचमें ही हिसारकी ओरतक अपने राज्यकी सीमाके विस्तार करनेका दृढ़ यत्न किया था, परन्तु बृटिश गवर्नमेण्टने दृढरूपसे असंतोष प्रकाश कर कठोर नीतिका अवलम्बन किया इससे महाराजकी वह आशा दूर होगई।

वाणिज्यकी श्रीवृद्धिकी ओर बृटिश गवर्नमेण्ट विशेष ध्यान रखती थी। एक समय बीकानेरके वाणिज्यकी अधिक उन्नति थी। काबुलसे अनेक प्रकारके वाणिज्य द्रव्य बीकानेरमें होकर भारतमें आते थे। सन् १८१८ ईस्वीके संधिपत्रके मतसे बृटिश गवर्नमेण्टने ऐसी व्यवस्था कर दी कि जिससे यह वाणिज्य द्रव्य निर्विघ्नतासे बीकानेरमें होकर भारतके अन्यान्य प्रान्तोंमें पहुँच जायाकरें। १८४४ ईस्वीमें अंग्रेज गवर्नमेण्टने उस वाणिज्यकी श्रीवृद्धिके लिये महाराज रत्नसिंहके निकट एक नवीन प्रस्ताव उपस्थित किया। जो वाणिज्यके द्रव्य बीकानेरसे होकर सिरसा और भावलपुरमें जाया करते थे उन सभी द्रव्योंपरसे बीकानेरके महाराज अधिक महसूल लेते थे। इस वर्षमें बृटिश गवर्नमेण्टने वही महसूल घटा देनेका प्रस्ताव किया।

महाराज रत्नसिंहने इस प्रकारसे पचीस वर्षतक राज्य करके १८५२ ईस्वीमें इस मायामय शरीरको छोड दिया।

तृतीय अध्याय ३.

सरदारसिंहका अभिषेक—राजपूत जातिका साहस तथा बल विक्रम घटनेका कारण—यवन शासन और अंग्रेज शासनमें राजपूत जातिकी अवस्थाका भेद—बृटिश गवर्नमेण्टकी ओर सरदारसिंहकी अनुरक्ति—सिपाही विद्रोहके समयमें सरदारसिंहका बृटिश गवर्नमेण्टको सहायता देना—बृटिश गवर्नमेण्टका सरदारसिंहको पुरस्कार देना—अंग्रेज राजप्रतिनिधिका सरदारसिंहको दत्तकपुत्ररूपसे ग्रहण करके सनद देना—सनदपत्र—बृटिश गवर्नमेण्टका सरदारसिंहको इकतालीस खंड ग्रामोंका चिर स्वत्व देना—दानपत्र सीमान्तरपर उपद्रवकर—वृद्धिके पलटेमें सामन्तोंके साथ विवाद विसम्वाद—बृटिश गवर्नमेण्टके दियेहुए ग्रामोंपर करकी वृद्धि करना—उन ग्रामोंके निवासियोंका अनुयोग—ग्रामनिवासियोंके पूर्व अधिकारको अक्षत रखनेके लिये सरदारसिंहको अंग्रेज राजप्रतिनिधिका आदेश—करवृद्धि—बीदावाटीके सामन्तोंको नवीन सनद देना—महाराज सरदारसिंहकी मृत्यु—नवीन मंत्री समाजके द्वारा बीकानेर राज्यका शासनभार अर्पण—वर्तमान महाराज डूंगरसिंहका अभिषेक—मन्त्रीसमाज—अमरसिंहका महाराजके प्राणनाशकी चेष्टा करना—अमरसिंहके द्वारा महाराज डूंगरसिंहको दंड—तीर्थयात्रा—माननीय प्रिन्स आफ वेल्सके साथ महाराजाका साक्षात्—सामन्तोंके साथ राजपूत राजाओंका सम्बन्ध परिवर्तन—महाराज डूंगरसिंहका सामन्तोंकी कर वृद्धिके लिये प्रस्ताव करना—उसके सम्बन्धमें पंचायतका नियोग—जरीब बनाना—वर्द्धित कर देनेमें सामन्तोंकी असम्मति—बीदासरके सामन्तोंपर करवृद्धि—प्रधान२सामन्तोंका कर देनेमें असम्मति प्रकाश—सामन्तोंका तीन प्रस्ताव उपस्थित करना—कारागारसे अमरसिंहको छोड़देना—उनके पुत्र रावको राजाकी उपाधि

देना-नोरवादेशके सामन्तोंकी अवाध्यता-महाराजका उनके अधिकारको ग्रहण करना-नीची श्रेणीके सामन्तोंकी वर्द्धित कर देनेमें असम्मति-महाराज डूंगरसिंहके निकट उनका कर घटानेके लिये आवेदन-महाराजका उस आवेदनको ग्रहण न करना-एसिस्टेण्ट पोलिटिकल एजेन्ट कप्तान टालवटका सामन्तोंको राजधानीमें बुलाकर वर्द्धित कर देनेकी आज्ञा देना-सामन्तोंका असंतोष प्रकाश- उनका भागना-सामन्तोंको दंड देनेकी तैयारी-बीकानेरके प्रधान सेनापति हुकुमसिंहका सेनाके साथ सामन्तोंके विरुद्ध युद्धकी यात्रा करना-विद्रोही सामन्तोंकी युद्धके लिये तैयारी-हुकुमसिंहका महाजन, रावतसर और गान्धोली देशपर अधिकार करना-सामन्तोंका बीदासरके किलेका आश्रय लेना-उनकी युद्धके लिये तैयारी-विद्रोहियोंको दमन करनेके लिये महाराजकी गवर्नमेण्टसे सहायता मांगना-सेनाकी सहायता देनेमें गवर्नमेण्टकी सम्मति-अंग्रेजी सेनाका बीकानेरमें आगमन-अंग्रेजी सेना और महाराजकी सेनाका बीदासरके किलेको घेरना-सामन्तोंका युद्ध करनेकी प्रतिज्ञा करना-कप्तान टालवटका बीदासरके किलेके साथ आत्मसमर्पण करनेके लिये सामन्तोंके निकट दूत भेजना-सामन्तोंका उत्तर-घेरेहुए किलेपर गोलेकी वर्षा-सामन्तोंका आत्मसमर्पण-अंग्रेजोंकी सेनाका राव बीदाके प्राचीन दुर्गोंको समभूमि करना-विद्रोही सामन्तोंको कारागारमें भेजना-पार्लिमेण्टके हाउस आफ लार्ड का भारतवर्षके स्टेटसेक्रेटरीका उक्त समरके सम्बन्धमें मंतव्य-प्रकाश-बीकानेरके आभ्यन्तरिक शासनके सम्बन्धमें अंग्रेज एसिस्टेन्ट पोलिटिकल एजेन्टका असंतोष प्रकाश-शासनविभागका व्यक्तिगत परिवर्तन-शासन व्यवस्थाके सम्बन्धमें मंतव्य प्रकाश-शासनविभागके सम्बन्धमें वर्तमान पोलिटिकल एजेन्टका मन्तव्य-उपसंहार।

अपने पिताके परलोक जानेके पीछे सन् १८५२ ईसवीमें सरदारसिंह पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। सरदारसिंहके अभिषेकके समयसे बीकानेरकी राजशक्ति मानो क्रमशः हीनबल होनेलगी। जो बल विक्रम साहस शूरता आदि गुण राठौर राजाओंका अंग भूषण थे वे सब एकवार ही निर्जीवसे होगये। राजपूत जातिकी चिर वीरताका मानो एकवार ही लोप होगया। प्रतिवासी राजाओंके साथ युद्ध होनेसे यवनसम्राटके आधीन भारतके अनेक स्थानोंपर संग्राममें केवल राठौर ही नहीं वरन् चौहान इत्यादि सभी राजपूत युद्धके अभ्याससे पतित अवस्थामें भी जातीय धर्म पालनके साथ शूरवीरता और बल विक्रमकी अचल भावसे रक्षा करतेआये थे। परन्तु सरदारसिंहके समयमें उस जातीय धर्म पालनके भाव सहसा ह्रास होगये। एक सरदारसिंह ही नहीं, रजवाड़ा ही नहीं, समस्त भारतक्षेत्र ही मानो स्तम्भित होगया, सन्धिबंधन होते ही युद्धकी चर्चा न्यून होनेसे सब शांतिका सुख भोगनेलगे। जैसो सरकार अंग्रेजोंसे संधि कर रियासतोंको शांति मिली है यदि इस शांति समयमें गवर्नमेण्टकी समान बनावटी युद्धोंसे अपनी समर कुशलता भारतके राजा बनाये रखते तो उनकी सेनामें वीरता धीरता और प्रताप बराबर बना रहता, कारण कि जो विद्या पढ़कर उसका अभ्यास न रहे तो उसमें अवनति होजाती है, युद्धविद्या भी केवल सीखनेसे विना समर किये फलीभूत नहीं होती। हृदयमें दृढ़ताका आविर्भाव नहीं होता, चुप रहनेसे बल विक्रम साहस अवनतिको प्राप्त होजाता है, कोई भी वीरजाति यदि तलवार भाला हाथमें लिये सौ वर्षतक चुपचाप बैठी रहै तो क्या उसमें साहस रह सकता है? कभी नहीं,

हमारा इससे यह अभिप्राय नहीं कि देशीय राजा परस्पर युद्ध करते रहैं, पर हमारी यह इच्छा है कि वे आलस्य और विलासितामें अपना समय व्यतीत न करके बल विक्रम संपन्न रहें, सरकार अंग्रेजको बहुत स्थानोंपर सेनाकी आवश्यकता होती है यदि क्रमसे रियासतोंकी सेना इस कार्यमें ली जायाकरै तो उनमें वह गुण सदा वृद्धिको प्राप्त होते रहैं, यवनसम्राटोंने भी देशीय राजाओंकी सेनाके साथ ही साथ अपना प्रभुत्व संपादन किया था, इन सेनाओंसे कार्य लेनेसे उनका बल वीर्य साहस वृद्धिको प्राप्त होता रहेगा, साथमें ऐसी शिक्षाकी भी आवश्यकता है जिससे राजपूत जाति अपने आचार विचार और जातीय धर्मको भली प्रकारसे जानती रहे, इन बातोंके बनेरहनेसे राजपूत जातिमें जातीय गौरव बराबर बनारहेगा।

महाराज सरदारसिंह बीकानेरके सिंहासनपर विराजमान होकर भलीभाँति जानगये थे कि भारतवर्षके देशीय राजाओंका चिर–प्रचलित कर्त्तव्यकर्म केवल समयके गुणसे बदलगया है, इस कारण वह समयानुसार कार्य करनेका यत्न करनेलगे। सरदारसिंह समझ गये कि विश्वविजयी बृटिशसिंह भयंकर मूर्त्तिसे भीषण गर्जन कर भारतवर्षको कंपायमान कर रहा है इससे उसीकी आधीनता स्वीकार करके उसीका मन प्रसन्न करना उचित है।

नवीन महाराजको केवल पाच ही वर्ष राज्य करते हुए थे कि इसी समयमें प्रबल पराक्रमी अंग्रेजोंने प्रबलतासे अंतिम आर्त्तनाद उपस्थित किया। १८५७ ईस्वीमें सिपाही विद्रोहका जघन्य काण्ड उपस्थित हुआ। उस समय हजारों अंग्रेजोंके कुटम्बोंकी हत्याके समय–तथा महा विपत्तिके समय महाराज सरदारसिंह बड़े आग्रहके साथ सेनासहित बृटिश गवर्नमेण्टकी सहायताके लिये सन्नद्ध हुए। बीकानेरके समीप हांसी और हिसार देशपर बृटिश गवर्नमेण्टका अधिकार था, वहांकी अंग्रेजी सेनाने विद्रोह उपस्थित करके अंग्रेजोंपर आक्रमण करना प्रारंभ किया, उस समय बीकानेरके महाराजने बडे साहसके साथ उस विद्रोही दलको दमन किया, और अंग्रेजोंकी सेनाको सहायता देकर जो अंग्रेज अपने प्राणोंके भयसे भयभीत हो भागनेके लिये तैयार होगये थे उनको बडे आदर और यत्नके साथ अपनी राजधानीमें आश्रय दिया। महाराज सरदारसिंहने अंग्रेजोंको प्राणपणसे अपनी सामर्थ्यके अनुसार सहायता देनेमें कसर न की। जिस बृटिश गवर्नमेण्टने बीकानेरके विद्रोही सामन्त दलको दमन करनेके लिये रत्नसिंहको संधिपत्रके अनुसार सेनाकी सहायता नहीं दी थी, उसी गवर्नमेण्टसे विपत्तिके समयमें उस रत्नसिंहके पुत्रने कैसा व्यवहार किया, इसे हमारे पाठक भलीभाँतिसे स्मरण रक्खेंगे।

उस महा विद्रोहानलके शांत होजानेके पीछे सौभाग्य वश देशी राजाओंकी सहायतासे अंग्रेजोंकी शासनशक्ति भारतवर्षमें फिर स्थापित होनेके पीछे राजपूतानेके गवर्नरके एजेन्टने महाराज सरदारसिंहकी बड़ी प्रशंसा करके गवर्नरजनरलको पत्र लिखा, इसपर भारतवर्षके गवर्नरजनरल और प्रथम राजप्रतिनिधि लार्ड केनिंगने परम संतुष्टहो सहाय-

कारी अन्यान्य भूपालोके समान वीकानेरके महाराज सरदारसिंहके पास एक बहुमूल्य-उपहार भेजा, इसके पहिले देशी राजाओके हृदयमें ऐसा विचार हुआ था, कि यदि यह पुत्रहीन अवस्थामें प्राणत्याग करेंगे तो इनकी रानी आर्य रीतिके अनुसार पोष्यपुत्र वा दत्तकपुत्रको ग्रहण नहीं करसकैगी, तथा वह पोष्य वा दत्तकपुत्र सिंहासन प्राप्तिका अधिकारी नहीं होसकेगा, और वृटिश गवर्नमेण्ट उस राज्यको अपने हस्तगत करलेगी। परन्तु सिपाहीविद्रोहके पीछे वृटिश गवर्नमेण्टने देशीय राजाओंकी उस भीतिको दूर करनेके लिये सभीको इस भावकी एक सनद देदी, कि वह हिन्दूरीतिके अनुसार दत्तकपुत्रको ग्रहण करसकते हैं: उनका दत्तकपुत्र उनका उत्तराधिकारी हो-सकेगा, और गवर्नमेण्ट उसके राज्यको अपने हस्तगत न करेगी। महाराज सरदार-सिंहने वृटिश गवर्नमेण्टकी जो सहायता की थी उसके लिये अन्यान्य राजाओकी समान इस समय उनको भी सनद दीगई।

सनदपत्र।

महामान्या (रानी विक्टोरिया) की अभिलाषा है कि जो राजा इस समय अपने २ देशको शासन करते है वह सब देश चिरकालतक उनके वंशधरोके द्वारा शासित होते रहैंगे और उनके पद संमानको अक्षतभावसे रक्खाजायगा:उस अभिलाषाको पूर्ण करनेके निमित्त मै आपको इसके द्वारा सूचित करता हूं; कि यदि आपके पुत्र उत्पन्न न हो तो आप अथवा आपके राज्यके भावी शासनकर्ता, हिन्दूविधान और अपने वंशकी रीतिके अनुसार दत्तकपुत्रको ग्रहण करसकते है, इसमे गवर्नमेण्टकी भी सम्मति है।

जबतक आपके वंशधर राजभक्तरूपसे स्थित रहैंगे तथा जिस सन्धि आदिके द्वारा गवर्नमेण्टके साथ मित्रता स्थापित हुई है, उस सन्धि आदिपर जबतक विश्वासके द्वारा विशेष ध्यान रक्खाजायगा तबतक किसी प्रकार भी यह नियम भंग नहीं कियाजायगा।

(हस्ताक्षर केनिंग)
गवर्नर और वाइसराय, हिन्द

महाराज सरदारसिंहने वृटिश गवर्नमेण्टकी जिस प्रकारसे प्राणपणसे सहायता की थी, उसके बदलेमें केवल एक मूल्यवान् खिलत और उक्त सनदका देना उपयोगी न जानकर १८६१ ईसवीके पहिले महीनेमे राजप्रतिनिधि एवं गवर्नर जनरल बहादुरने महाराज सरदारसिंहको हिसार देशके ४१ ग्राम भी प्रदान किये। गो कि वे गांव कई वर्ष पहिले इनसे ही छीनकर हिसार प्रदेश सामिलित करलियेगये थे। निम्नलिखित सनदपत्रके द्वारा नीचे लिखेहुए ग्राम राजा सरदारसिंहको दिये गये।

वीकानेरके महाराज सरदारसिंहको ग्राम
दियेजानेका सनदपत्र।

हर्षका विषय है कि, जिस कारणसे राजपूतानेके गवर्नर जनरलके एजेण्टके विज्ञापनमे प्रकाशित हुआ, कि विद्रोहके समयमें महाराज सरदारसिंह बहादुर वृटिश

गवर्नमेण्टकी ओर राजभक्ति और उनकी अनुरक्तिके वश होकर स्वयं कार्यक्षेत्रमें उपस्थित हुए हैं। उन्होंने धन खर्च करके कितने ही अंग्रेजोंके जीवनकी रक्षा की है तथा गवर्नमेण्टके और भी अनेक प्रकारके उपकार किये हैं. इस लिये यह व्यवहार गवर्नमेण्टके पक्षमें विशेष सतोषदायक विचारागया, इस लिये उक्त महाराजको गवर्नमेण्टके निकटसे धन्यवाद लाभ और सन्मानसूचक खिलत प्राप्त हुआ है, गवर्नमेण्ट इस समय अत्यन्त सतुष्ट होकर सिरसाके जिलेके मध्यमें स्थित वार्षिक चौदह हजार दोसौ बानवे रुपयेकी आमदनीवाले ग्रामोंकी एक स्वतंत्रतालिका लिपि बद्ध करके उन ग्रामोंका सभी अधिकार महाराजको देती है। इससे वह ग्राम उनके राज्यके अन्तर्गत कियेगये उनके राज्यके साथ जो नियम प्रचलित थे इनके सम्बन्धमें भी वही नियम नियत किये गये। १८६१ ईस्वीके पहिले महीनेकी पहिली तारीखसे यह सनद मानीजायगी।

ग्रामोंकी सूची। ११ अप्रैल १८६१ ई०

सन् १८६१–६२

संख्या.	ग्रामोके नाम.	वार्षिक आमदनी.		मन्तव्य.
१	सावूरा	३००	रुपया.	
२	मानकटीवी	१७०	"	
३	खाडखाडा	४९०	"	१८६५–६६ ईस्वीमें इसकी आमदनी ५९० रुपया है।
४	उदियाखाडा	४०६	"	
५	कामपुरा	१३७	"	उक्तवर्पमें २३५ की आमदनी वढ़ी
६	सोलावाली	२३४	"	
७	मूलाकाखाडा	४५१	"	
८	वासीहर	५००	"	
९	गिलवाला	४१०	"	
१०	सहारन	३५०	"	
११	फूलचद	७५०	"	
१२	सुरावाली	९४८	"	
१३	चन्द्रवाली	७००	"	
१४	पीरकामडिया	७४०	"	
१५	पुन्यावाली उर्फजगरानी	२०७	"	
१६	फुल्लानी	४५१	"	
१७	मगरानी	५३४	"	
१८	मासानी	३४६	"	
१९	टिविवाराजेफा	८८९	"	
२०	रउआखाडा	१९९	"	

२१	रातिखाड़ा	१६ "	१८६५-६६ ई०में इसकी आमदनी २३५ रुपये वढ़ी
२२	किसनपुरा	१२० "	७०-७१ ई० मे ३०० रुपये वढ़े
२३	सलीमगढ़	१७ "	७०-७१ ई० मे १३० बढे
२४	धारुई	२१० "	६५-६६ ई० मे ३४० की वृद्धि हुई
२५	सिलवानाखुर्द	१९४ "	६५-६६ ई० मे २२६ की वृद्धि हुई
२६	वरवाला फल्यान	२८० "	
२७	सिलवाला कल्यान	२४१ "	६५-६६ ई० मे ३६६ की वृद्धि हुई
२८	तलवाराकल्यान	५५७ "	
२९	जलालाबाद	१७६ "	६५-६६ ई० मे २७६ की वृद्धि हुई
३०	मोहरवाला	४८२ "	६५-६६ ई० से ५५४ की वृद्धि हुई
३१	असितावाली	२०३ "	६५-६६ ई० में २६१ की वृद्धि हुई
३२	रामसर	२५८ "	६५-६६ ई० मे ३०८ की वृद्धि हुई
३३	दुवलीखर्द	३९४ "	६५-६६ ई० में ४५४ की वृद्धि हुई
३४	रामनगर	२०० "	
३५	दुवलीकल्यान	७३० "	६५-६६ ई० में ७८० की वृद्धि हुई
३६	मिर्जावाली	३५१ "	६५-६६ ई० मे ४२३ की वृद्धि हुई
३७	चाउवाली	३१० "	६५-६६ ई० मे ३६० की वृद्धि हुई
३८	वुरहानपुरा	१७४ "	६५-६६ ई० मे २२५ की वृद्धि हुई
३९	खैरवाली	१८१ "	६५-६६ ई० में २३१ की वृद्धि हुई
४०	शिवधनपुरा	४०३ "	
४१	खान्दानिया	२८५ "	

सब जोड़ १४२९१ रुपये.

बीकानेरके महाराज सरदारसिंह वहादुरने गवर्नमण्टके अनेक उपकार करके यह जो ४१ ग्राम पाये थे यह अवश्य इनके पुरस्कारके योग्य थे, परन्तु यवनसम्राटोंने ऐसे उपकार पाकर वहुतसे प्रत्युपकार किये है, जिनकी तुलनासे यह उपकार सामान्यमात्र होरहता है, परन्तु जहा धन्यवादका ही बड़ा मूल्य गिनाजाता है, वहां बीकानेरके महाराजको ४१ ग्रामोका मिलना अवश्य ही उच्चकक्षाका पुरस्कार गिनाजायगा।

महाराज सरदारसिंहके शासनसमयमे सीमाका विवाद फिर प्रवल होगया, १८६१ ई० मे मारवाड़के साथ बीकानेर राज्यकी सीमासे लेकर फिर संग्रामके पूर्वलक्षण दिखाई दिये! बीकानेरकी सीमावाले निवासियोने मारवाड़की सीमामें जाकर घोर

1. Aitcheson's Treaties Vol IV.

अत्याचार करने आरम्भ करादिये, अन्तमें वृटिश गवर्नमेण्टने मध्यस्थ होकर सब उपद्रवोंको शान्त करदिया।

यह हमने वारंवार इस लिये कहा है कि राजाके दुर्वल होनेसे ही अधीनस्थ सामन्त विरक्त होकर अपनी शक्तिके विस्तार करनेकी अभिलाषा करते हैं। महाराज सूरतसिंहके शासनसमयमे बीकानेरके सामन्त उद्धत होकर राजद्रोही होजाते थे। रत्नसिंहके साथ सामन्तोंका जैसा असद्भाव था, वह दूर न होकर सरदारसिंहके साथ भी वह सामन्त अनेक अप्रिय आचरण करने लगे। महाराज सरदारसिंहने बीकानेरके समस्त सामन्तोंपर करके वढ़ानेका विचार किया, इसीसे राज्यमें फिर उपद्रव उपस्थित होने लगे। विशेष करके इस समय गवर्नमेन्टके दियेहुए इकतालीस ग्रामोंपर भी कर वढ़ाया गयाथा, इसीसे उपद्रव प्रवल होगये। उक्त ग्रामोंके निवासी अवतक वृटिश गवर्नमेन्टके आधीनमें थे, इस समय नवीन शासनमें अपने अधिकारको नष्ट होताहुआ देखकर वह अत्यन्त असंतुष्ट हुए, और तुरन्तही वृटिश गवर्नमेन्टके समीप बीकानेरके महाराजके विरुद्ध आवेदन करनेको तैयार हुए। अंग्रेज राजप्रतिनिधिने उस आवेदनपत्रको पाकर महाराज सरदारसिंहके समीप विशेष असंतोष प्रकाश करके एक पत्र लिखभेजा कि इन ग्रामोंकी प्रजाको गवर्नमेन्टने जैसा अधिकार दिया है आपभी उसीके अनुसार कार्य करैं। और इन सब ग्रामोंमे अपने राज्यके सुशासनके लिये सब अंगोंमे योग्य मनुष्योंको शीघ्रही नियत कीजिये। महाराज सरदारसिंहने भारतवर्षके गवर्नर जनरल और राजप्रतिनिधिके इस पत्रको पाकर आवश्यक संस्कार और सुशासनके अनुष्ठान करनेमे जरा भी विलम्ब न किया। परन्तु राव बीका द्वारा संवत् १५४५ मे बीकानेर राज्यकी प्रतिष्ठाके समयसे संवत् १९२६ पर्यन्त जो सामन्तगण एकहारा राज्यकर देते आये है, अब उनपर कर वढ़ाकर राज्यकोषकी आय वढाये जानेका अनुष्ठान कियागया। बीकाजीके समयसे जो सामन्त प्रतिअश्वारोही सेनाका वार्षिक १००) रुपया प्रति ऊटपर५०) रुपया प्रतिपैदलपर पचीस रुपया देतेआये थे. इस समय महाराजके अधिक कर वढाये जानेसे प्रधान अप्रधान सभी सामन्त महा असंतुष्ट होगये, और उसीसे राज्यमे फिर अशान्तिके लक्षण दिखाई दिये। परन्तु मेजर पावलेट (इससमयके कर्नल) जो अंग्रेज पोलिटिकेल एजेण्ट थे,उन्होंने इन उपद्रवोंको निवारण करनेके लिये यह अहारा कर नियत करदिया कि सामन्तोंको प्रत्येक अश्वारोहीके प्रति वार्षिक २०० रुपया ऊँटके प्रति १०० रुपया और पैदलके प्रति५० रुपया देना होगा। पहिलेकी अपेक्षा इस समय दुगने करके वढ़ जानेसे सभी सामन्त विरक्त होगये थे, परन्तु वृटिश गवर्नमेण्टके प्रतिनिधि पावलेट साहबने भी जब यही स्वीकार करदिया, तब उनको गवर्नमेण्टके भयसे कुछ भी कहनेका साहस न हुआ। सभोंने एक साथ प्रतिज्ञा करके हस्ताक्षर करदिये और उपद्रवोंकी समाप्ति होगई।

हमारे पाठक पाठिकाओंने राव बीदा द्वारा अधिकार कीहुई बीदावाटीका वृत्तान्त पढ़ा होगा। यद्यपि यह बीदावाटी बीकानेर राज्यके अन्तर्भुक्त था, परन्तु यह एक छोटा राज्य गिनाजाता था। महाराज रत्नसिंहके पूरवर्ती बीकानेरके

महाराजने बीदावाटीके सामन्तोपर कर नही लगाया, राव बीकाके बीकानेर राज्यके स्थापन करनेके छः वर्ष पहिले अर्थात् संवत् १५४० मे उनके भ्राता बीदासिंहने, इस बीदावाटी राज्यको स्थापन किया था । बीका और बीदा दोनो ही सहोदर भ्राता थे । बीदाके साथ इनकी माताने आकर इस बीदावाटीमे निवास किया । बीकाने इसी लिये प्रतिज्ञा की थी कि जबसे माता बीदावाटीमे आकर निवास करेगी तबसे मै तथा मेरे वंशधर किसी समय भी बीदावाटीपर आक्रमण नही करेगे । रत्नसिंहने इस प्रतिज्ञाको पालन न करके बीदावाटीके सामन्तोसे नियमित कर ग्रहण किया । महाराज सरदारसिंहने भी उसी प्रकारसे संवत् १९२६ मे बीदावाटीके सामन्तोके निकटसे वार्षिक पचास हजार रुपया नियत कर ग्रहण किया ।

इस करके उपद्रवोके शांत होजानेके पीछे महाराज सरदारसिंह १८७२ ईस्वीके पहिले महीनेमे स्वर्गवासी हुए ।

महाराज सरदारसिंहकी पुत्रहीन अवस्थामे मृत्युहोनेसे बीकानेरका सिंहासन शून्य होगया । इसी कारणसे बृटिश गवर्नमेण्टकी आज्ञानुसार मंत्रिसमाजकी सृष्टि करके उस समाजके हाथमे शासनका भार सौंपागया । प्रधान राजनैतिक अंग्रेज कर्मचारी उस मंत्रीसमाजके सभापति होकर राज्य करने लगे । इस प्रकारसे कुछ काल-तक राज्य होनेके पीछे नवीन महाराजको नियुक्त करनेके लिये राजरानी और सामन्तोंने विचार किया कि राजहंता सूरतसिंहके वंश लोपहोनेसे शीघ्र ही मृतक महाराजके कुटुम्बमेसे किसी मनुष्यको दत्तकपुत्ररूपसे ग्रहण कर उनका अभिषेक करना उचित है । अतएव लालसिंह नामक एक बुद्धिमान् मनुष्यके पुत्र डूंगरसिंह को शेष दत्तक पुत्रस्वरूपसे ग्रहण करनेका प्रस्ताव किया गया । राजरानी और सामन्तोंने भी इसमें अपनी सम्मति दी । गवर्नमेण्ट पहिलेहीसे प्रतिज्ञाके पाशमे बँधगई थी कि महाराजकी यदि पुत्रहीन अवस्थामे मृत्यु होजाय तो राजरानी हिन्दूरीतिके अनुसार किसीको दत्तकपुत्रस्वरूपसे ग्रहण करै, इस कारण गवर्नणटने विना कुछ आपत्ति किये इनको बीकानेरका अधीश्वर स्वीकार करलिया और अभिषेकके प्रस्तावमे शीघ्र ही अपनी सम्मति दे दी । अल्पावस्थामे डूंगरसिंह राजाकी उपाधि धारण कर बड़ी धूमधामके साथ बीकानेरके सिंहासनपर शोभायमान हुए ।

महाराज डूंगरसिंह बहादुर अल्प वयस्क होनेके कारण राजकार्यको कुछ नहीं जानते थे, इसीसे इनके हाथमे सम्पूर्ण राज्यशासनका भार देना असंभव जानकर अंग्रेज गवर्नमेण्टकी रीतिके अनुसार एक स्वयं मंत्रीसमाज नियुक्त हुआ । महाराजके पिता लालसिंह उस मंत्रीसमाजके सभापतिपदपर विराजमान हुए, और महाराव, हरिसिंहराव, यशवन्तसिंह, मेहता मानमल और मंगनहीरालाल यह सब सदस्य पदपर नियुक्त हुए ।

१८७५ ईस्वीमे महाजनके सामन्त अमरसिंह महाराज डूंगरसिंह बहादुरका जीवननाश करनेको उन्हें विष देनेके लिये तैयार हुए । महाराजने उनके ऊपर अत्यन्त क्रोधित हो उनको प्राणदंडके बदलेमे बारह वर्षके लिये कारागारमें

रहनेकी आज्ञा दी। अमरसिंहके कारागारमे जाते ही उनके पुत्र रामसिंह पिताके पदपर नियुक्त हुए।

महाराज डूगरसिंह बहादुर अवस्थाके अधिक होनेपर भी मन्त्रीसमाजकी सहायतासे राज्यशासन करते थे। महाराज १८७६ ईसवीमे हरद्वार और गया तीर्थको गये, और वहांसे जब यह अपने राज्यको लौट रहे थे तब इन्होंने आगरेमे जाकर भारतके भावी सम्राट् प्रिन्सआफवेल्स बहादुरके साथ साक्षात् किया। महा माननीय प्रिन्स आफवेल्स बहादुरने महाराजको बडे आदरभावके साथ ग्रहण कर उनके सम्मान को बढ़ानेमे किसी भांतिकी कसर न की।

राजपूत राजाओको पूर्ण स्वाधीनता लुप्त होने और अवस्थाके परिवर्तनके साथ ही साथ सामत मण्डलीके सग उनका पूर्वसम्बन्ध भी बदलता गया। राजपूत राजा जिस समय सम्पूर्णरूपसे स्वाधीनताके अमृतमय फलको भोगते थे, अपने बाहुबलसे राज्यकी रक्षा तथा शासन करते, अंग्रेज गवर्नमेण्टकी रीति जाननेसे पहिले उन्होंने सामन्तोसे करस्वरूपसे नगद रुपया नही लिया था। जो सामन्त जितनी आमदनीवाली पृथ्वीको भोगते थे उनको उसी प्रकारसे निर्द्धारित रीतिके अनुसार युद्धके समयमे सेना देना, तथा वर्षमे कई महीनेतक राजाके यहां रहकर राज्यशासनकी सहायता करनी पडती थी। यवनशासनके समय देशीय राजाओने स्वाधीनताके हिमगिरिसे गिरकर भी सामन्तोसे नगद धन ग्रहण नही किया था। उस समय आधीनके सामन्त राजाओंके साथ मिलकर यवनसम्राट्की आज्ञानुसार भारतके अनेक प्रान्तोमें सेना सहित युद्ध करनेको गये थे, पर अंग्रेजी राज्यमे वह रीति बदल गई। इस समय चारो ओर शांतिमयी देवी विराजमान है, किसी देशी अथवा विदेशी राजाके द्वारा आक्रमणका भय नही है, और अंग्रेज गवर्नमेण्टकी आज्ञानुसार सेना सहित समरक्षेत्रमे भी जाना नहीं पड़ता, इस कारण सामन्त जो चिरकालसे सेनाकी सहायता करते थे उन्हे भी देशीय राजाओके पक्षमे सेनाकी सहायता देनेकी आवश्यकता नही होती है? विशेष करके बुद्धिमान् अंग्रेज गवर्नमेन्टने प्राय. प्रत्येक देशीय राज्यको निर्विघ्नतासे रखनेकी प्रतिज्ञा कर उन देशिय राजाओसे वार्षिक कई लाख रुपया ले स्वतंत्र सेनाकी सृष्टि करके उसे अपने आधीनमे रक्खा है, इस कारण राजाओको इसके लिये अधिक खर्चा देना पडा है, और सामन्तोने जो सेना रक्खी है इस समय उस सेनाके रखनेकी भी आवश्यकता नहीं होती इस कारण देशीय राजाओकी इस अवस्थाके बदलनेसे उन्हे अपने २ आधीनके सामन्तोसे उस सेनाके बदलेमे नगद रुपया लेना पडा है और इसी लिये देशीय राजाओके साथ विवाद विसवाद तथा युद्धतक भी होगया है।

बीकानेरमे स्थित गवर्नर जनरल एसिस्टैण्ट एजेण्ट ए इवलिड रिचार्ड्सने गत १८८३ ईस्वीकी ११ मईको बीकानेरके शासन विज्ञापनमे लिखा कि "१८७० ईस्वीमे दशवर्षके जो करदेनेकी व्यवस्था हुई थी, चार वर्ष बीत गये, वह नियमित समय समाप्त होगया है। १८८२ ईस्वीके अप्रेलके महीनेमे सामन्तोकी सम्मतिके अनुसार कार्य करना चाहिये कि उस करको अब किसी प्रकारसे बढ़ाया जाय, इस कारण उनके

अधिकारकी पृथ्वीको हस्तगत करना ठीक है, इस प्रस्तावके होजानेपर पाँच महीनेके पीछे सभी सामन्त बीकानेरमे इकट्ठे हुए, और उन्होने श्रीमान् महाराजके प्रति निवेदन किया कि एक पंचायतके हाथमें इस कार्यका भार अर्पण कियाजाय। उनके इस अनुरोधकी रक्षा की गई। अर्थात् चार सामन्त और चार राजपुरुषोंने उस पचायतमे नियुक्त होकर तीन महीनेतक घोरपरिश्रम कर उपस्थित प्रश्नोका विचार करदिया। इस समय ठाकुर (सामन्त सर्वसाधारणमे ठाकुर नामसे विख्यात थे) ऐसा कहते हैं कि १८७० ईस्वीमे जो २०० रुपयेका नियम हुआ था, वह लोग उससे अधिक कर नहीं देसकते; और उन्होंने अपने २ पट्टेको लौटा दिया है। नियमित करकी संख्या घटा देनेसे इन उपद्रवोके विचार करनेकी चेष्टा की गई है। ऐसी आशा होती है कि शीघ्र ही इसका विचार होजायगा * मेजर रिचार्ड्सनने यह आशा प्रकाशित की. अत्यन्त दुःखका विषय है कि थोड़े दिनोंमे ही उनको आशाके विपरीत फल फलनेके पूर्वलक्षण दिखाई देते हैं।

बीकानेरके महाराजने अन्यान्य साधारण सामन्तोकी समान बीदावाटीके सामन्तों के ऊपर एक बार ५० हजार रुपयेसे लेकर फिर ८६००० हजार रुपया नियत करदिये। यद्यपि महाराज रत्नसिंहके समान सरदारसिंहने भी इन सामन्तोसे ५० हजार रुपया कर ग्रहण करके सनद दे दी थी कि अबसे कभी कर नहीं बढ़ाया जायगा, परन्तु महाराज डूंगरसिंहने उस सनद पर विश्वास न करके उपस्थित अवस्थाको समझकर ही प्रस्तावित करके बढ़ादेनेकी आज्ञा दी। इस करके बढ़नेसे हो धीरे २ भयंकर उपद्रव होनेलगे।

महाराज डूंगरसिंहने प्रचलित करको दुगना बढ़ाकर राज्यके प्रधान २ सामन्तोंमे महा आपत्ति उपस्थित की, परन्तु अंतमे सामन्तोंने अंग्रेज पोलिटिकल एजेण्टको राजाका पक्ष लेते हुए देखकर शीघ्र ही उस करके देनेमे राजी होकर स्वीकारपत्रपर हस्ताक्षर करदिये। परन्तु उन्होंने इस वर्द्धित करके देनेके पहिले महाराजके निकट यह प्रस्ताव किया, कि महाजनके भूतपूर्व सामन्त समरसिंहने जो महाराजको विष देकर मारनेकी चेष्टा की थी, इस कारण उनको कारागारमे रक्खा गया था; इस समय उनको छोड़ देना चाहिये क्यों कि इसका कोई प्रबल प्रमाण नहीं पायाजाता कि जिससे यह जाना जाय कि वह निश्चय ही विष देनेके लिये तैयार हुए थे, और फिर १८७८ ईसवीसे अभीतक कारागारमे बंदी रहनेसे उनको भली भांतिसे फल भी मिलगया है। दूसरे रावतसरके सामन्तोको उनके अधिकारसे रहित कर महाराजने जो उनके अधिकारी देशोको अपने अधिकारमें करलिया है, वह देश उन सामन्तोंको देदिये जांय, और पहिले उनका जैसा सम्मान तथा पदमर्यादा थी इस समय वह भी करनी होगी।" तीसरे गान्धोली तथा जसानाके सामन्त मेघसिंहको

* Report of the Political Administration of Rajputana States for 1882-83.

भी उनका पूर्व अधिकार देना होगा" । महाराज डूंगरसिंहने सामन्तोकी इनसअभि-लापाओको तुरन्त ही पूर्ण करदिया और केवल कारागारके बंदी असरसिंहको छोड़ कर ही निश्चिन्त न हुए वरन् उनके पुत्र महाराव रामसिंहको "राव राजा" की उपाधि दी और इससे उनका और भी अधिक सम्मान बढ़ाया । जसानाके ठाकुर और इनके भ्राता जोरासरके ठाकुरोका पूर्व अधिकार भी दे दिया गया* । और नोखा नामक देशके सामन्तके कामदार अर्थात् प्रधान कर्मचारीके बीकानेर राजदरबारका अपराधी होनेसे महाराजने नोखाके सामन्तोको आज्ञा दी, कि उसको शीघ्रही राजदरबारमे भेज दें परन्तु सामन्तने राजाकी आज्ञा पालन न की और उक्त कामदारको लेकर उन्होंने भिन्न देशमे प्रस्थान किया । इसपर महाराजने उक्त नोखा देशपर अधिकार कर लिया था, इस समय उस अराजभक्त सामन्तको भी चले आनेकी आज्ञा दी गई परंतु सामंतने उस आज्ञाको पालन न किया ।

यद्यपि महाराज डूंगरसिंह बहादुरने सामन्तोको उक्त प्रार्थनाको स्वीकार किया था, तथा सामन्त गण, उस वर्द्धित करके देनेमे सम्मत भी होगये थे परन्तु नीची श्रेणीके सामन्त इस वर्द्धित करके देनेसे फिर भी असंतुष्ट रहे । वह किसी भांति भी उस वर्द्धित करके देनेमे राजी न हुए । अंतमे उन सबने मिलकर डूंगरसिंहके पास यह समाचार भेजा, कि इस करके देनेमे हम लोग सब प्रकारसे असमर्थ है । इस कारण हमें क्षमा किया जाय, महाराजने इसके उत्तरमे कहला भेजा कि राज्यके प्रधान २ सामन्त जब कि इस बढेहुए करको देरहे है तब मैं इस विषयमे आपकी कोई बात नही सुन सकता। तब तो वह नीची श्रेणीके सामन्त निराश हो राज्यमे असन्तोष दायक उपद्रव करनेलगे ।

इस समय मेजर रिचार्ड्स अन्य स्थानको बदले गये और कप्तान टालवट उनके पदपर नियुक्त होकर आये। कप्तान टालवटने बीकानेरमे आकर महाराजके मुखसे समस्त वृत्तान्त सुनकर जानलिया कि करके देनेमे जो गड़बड़ी होरही है इसका विचार सरलतासे नहीं होगा, इस कारण उन्होने सब सामन्तोको बुलाकर आज्ञा दी कि किसी २ स्थानपर दुगना और किसी २ स्थानपर तिगुना कर आपको देना होगा, और सभीको पहिले सन्धिपत्रकी पाँचवीं धाराके अनुसार एक सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर करनेहोंगे । सामन्तोने इस प्रस्ताव पर अत्यन्त असन्तुष्ट होकर कहा कि इस समय जो कर बढ़ा दिया गया है उसको घटा दिया जाय, और सब स्थानोपर समभावसे करके ग्रहण करनेकी व्यवस्था कीजाय । कप्तान टालवट भलीभांतिसे जानगये थे कि सामन्त

---

(१) महाजनके सामन्तोंके कर्मचारी लक्ष्मीचन्द महताने सिविल और मिलिटरी गजट नामके समाचारपत्रमे इसके सम्बन्धका जो पत्र प्रकाशित किया है, तथा १८८४ ईसवीकी तीसरी जौलाईको इन्डियनमिररमें जो पत्र उद्धृत हुआ है, हमने उसीसे इस अशको उद्धृत किया है ।

* Report of the Political Administration of Rajputana states for 1882–83

असन्तुष्ट होगये है, यह सरलतासे कर देनेमें राजी न होंगे, इस कारण उन्होने सबके सामने कहा कि यदि तुम लोग हमारा नियमित कर नही दोगे तो तुमको इसका उचित फल मिलेगा। सामन्त यह वचन सुनकर अत्यन्त क्रोधित हो उसी समय राजधानी छोड़कर चले गये।

इस प्रकारसे जब सामन्त राजाकी आज्ञा न मानकर और राजधानी छोड़ कर चले गये तब महाराज डूंगरसिंहने अत्यन्त क्रोधित हो सामन्तोको दमन करनेके लिये उचित उपाय सोचा। बृटिश एजेण्टने भी तुरन्त ही महाराजके इस प्रस्तावको समर्थन कर लिया। अन्तमे रेसिडेन्टकी सम्मतिके अनुसार बीकानेरके प्रधान सेनापति हुकमसिंह को महाराजने आज्ञा दी कि राज्यके प्रधान २ सामन्तोंके अधिकारी देशोपर शीघ्रही अपना अधिकार किया जाय। प्रधान सेनापति हुकमसिंह अपनी समस्त सेना साथ लेकर राजाकी आज्ञा पालन करनेके लिये चले। यह सुनकर सभी सामन्त अपने २ स्वार्थकी रक्षाके लिये राजाकी सेनासे युद्ध करनेके लिये अपनी २ सेना और कुटुम्बियोको साथ ले महाजन नामक ठिकानेमे इकट्ठे हुए। प्रधान सेनापतिने वहाँ सेना रखकर विद्रोही सामन्तोसे कहला भेजा, कि "महाराजकी ऐसी आज्ञा है कि तुमलोग अपने २ नगरो और किलोको हमें देदो। उपस्थित उपद्रवोका विचार होते ही फिर यह नगर और किले आपको देदिये जॉयगे"। सामन्तोने देखा कि इस समय महाविपत्ति उपस्थित है। महाराजकी सेनाके साथ युद्ध करनेकी हमारी सामर्थ्य नहीं है, और फिर दीर्घकाल तक यहां रहना भी असंभव है, इस कारण दुर्भेद्य किलेमे चले जाना उचित जाना और रावतसर तथा गन्धोली नामक तीनो ठिकानोके किलोको छोड़कर वे बीदावाटी देशके बीदासर नामक स्थानके दुर्भेद्य किलेमे गये। बीदावाटीके सामन्तोने भी वर्द्धित करको देना स्वीकार नही किया था इसीसे उन्होने विद्रोही सामन्तोके नेता पदकोही ग्रहण किया था; सामन्तोने वहाँ इकट्ठे होकर महाराजके साथ युद्ध करनेका विचार किया।

सामन्तोकी इस प्रकारसे विद्रोही व्यवस्था देखकर महाराज डूंगरसिंहने कप्तान् टालबटके सम्मुख यह प्रस्ताव किया कि अंग्रेजी सेनाको सहायताके अतिरिक्त इस विद्रोहकी अग्निके शान्त होनेका दूसरा उपाय नहीं है। कप्तान जनरलने राजपूतानेके गवर्नर जनरलके एजैण्ट कर्नल ब्रेड फोर्डके पास यह प्रस्ताव भेजा और गवर्नमेण्टकी सम्मतिके अनुसार उन्होने शीघ्र ही १८१८ ईस्वीके संधिपत्रके अनुसार अंग्रेजी सेनाको सहायता देनेकी आज्ञा दी। शीघ्र ही प्रबल अंग्रेजी सेना युद्धसाजसे सजगई। मेजर जनरल डबलिउ एम टारण बुलके आधीनमे एफ रायल आर्टलरी नामक गोलन्दाज दलकी तीन तोपै, मेजर क्यारिटनके आधीनकी के वार्सेस्टार रेजिमेट नामक सेनादलके दो कंपनी मेजरटांडिरोके आधीनकी आठ कम्पनी बंम्बईकी पैदलोकी एक शाखा, लेफटिनैण्ट कर्नल कोनसरके आधीनकी एक कम्पनी, सापार्स तथा मिनार्स मेंजर क्रिगरके आधीनमें मेरवाड़ा सेनाका दल, एवं मोजरप्सि सरके आधीनमें एरनपुरके पैदलोकी ४०० सेना, और दिल्लीइरेगडार सेनादलकी १५० सेना सजकर बीकानेरमे आ

पहुँची। जनरल जिलेसपि इस सेनाके प्रधान सेनापति पदपर नियुक्त होकर आये। पाठक गण! यह तो हम पहिले ही कह आये है कि अंग्रेज सरकारने सन्धिपत्रके अर्थको समयके भेदसे दूसरी प्रकारका कर लिया था। १८३० ईसवीमें जव महाराज रत्नसिहने इस प्रकारसे विद्रोही सामन्तोके दमन करनेके लिये वृटिश रेसिडेण्टके निकट सेनाकी सहायता मांगी थी और रेसिडेण्ट सेना देनेको तैयार हुए तब वृटिश गवर्नमेण्ट ने उस सेनाके देनेका निषेध किया, सन्धिकी धाराका इस प्रकारका अर्थ करालिया कि गवर्नमेण्ट बीकानेर राज्यके भीतरी झगड़ोमे अथवा विद्रोहको निवारण करनेके लिये सेनाकी सहायता नही देगी, केवल सन्धिवंधनके समम महाराज सूरतसिहको इस प्रकारकी सहायता देनेके लिये सम्मत होनेसे सहायता दी थी, परन्तु इस समय गवर्नमेण्टने सन्धिधाराकी उसी प्रकारकी व्याख्या करके बीकानेरके आभ्यन्तरिक उपद्रवोंको निवारण करनेके लिये सेना भेजी।

बीकानेर राज्यके प्रधान सेनापति हुकुमसिहने महाराजकी आज्ञानुसार सेना सहित शीघ्रही बीदावाटीमें जाकर बीदासरके किलेको घेरलिया। इस ओर अंग्रेजी सेना भी जनरल जिलेसपिके साथ आकर बीकानेरकी सेनाके साथ मिलगई। अंग्रेज पोलिटिकल एजेण्ट कप्तान टालवट भी शीघ्रतासे वहां पहुँच गये। राजाकी सेना और अंग्रेजी सेनाको आयाहुआ सुनकर बीदावाटीके सामन्त विद्रोही सामन्त तथा अन्यान्य सामन्त साथ मिलकर राठौरोका वाहुवल दिखानेको युद्धके निमित्त पहिलेसे ही सज गये थे। यद्यपि राठौरोका वल विक्रम लुप्त होगया है यद्यपि जातीय वल एकवार ही क्षीण होगया है, यद्यपि वीरोको सख्या रजवाडोमे नही रही है, किं वहुत. ऐसा कहनेसे भी अत्युक्ति नही होगी कि यद्यपि राजपूत जातिका वह विश्वविदित साहस शूरता इस समय प्रवाद वचनोमें परिणत होगई है, तथापि वह सम्मिलित विद्रोही सामन्त राजाकी सेना और अंग्रेजोकी युक्त सेनाके साथ युद्ध करनेको तैयार हुए। उन्होने इस कारण भी रणक्षेत्रमें जानेकी प्रतिज्ञा की, किं पीछे जयपुर, जोधपुर, जयसलमेर और मारवाड़ इत्यादि राज्यके सामन्त उनको भीरु और कायर पुरुष कहकर उपहासन करे।

इसको तो हम पहिले ही कहआये हैं कि विद्रोही सामन्तोके साथ कैसा व्यवहार किया गया। कप्तान टालवट्ने सव विद्रोही सामन्तोसे कहला भेजा कि किलेके भीतर उनका जो परिवार है उसको वे वहाँसे और किसी स्थानपर भेज दे, सामान्तोने तुरन्त ही यह आज्ञा पालन की। इस आज्ञासे सामन्त भली भाँति समझगये कि हमारे भाग्यकी परिक्षा सरलतासे समाप्त नहीं होगी। इसके पीछे कप्तान टालवटने यह भी कहलाभेजा कि तुम शीघ्रही बीदासरके किलेको हमें दे दो। कप्तान टालवटकी यह आज्ञा सुनकर सामन्तोने कहला भेजा कि, "बीकासिहने सवत् १५४५ में बीकानेर राज्यकी प्रतिष्ठा की है, उनके छोटे भ्राता बीदासिहने इससे पहिले अर्थात्

(१) १८८४ ईसवीके ३ जौलाईके इन्डियनमिरर देखो।

(२) १८८४ ईसवीके ३ जौलाईके इन्डियनमिररको देखो।

संवत् १५४० मे वीदासर राज्य स्थापन किया था । वीदासिहने अपनी माताके साथ निवास कर शपथ करके यह प्रतिज्ञा की थीं मै तथा मेरे उत्तराधिकारी किसी समय भी वीदासरपर आक्रमण नही करैगे, यह वीकानेरके इतिहासमे भली भाँतिसे प्रकाशित होचुका है, उसी समयसे इस वीदासरके ऊपर वीकानेरके किसी राजाने भी हस्ताक्षेप नहीं किया । जबतक करका विचार भली भाँतिसे न होजायगा, तभीतक हम निर्विघ्नतासे इस वीदासरमे रहैगे ।" सामन्तोके यह वचन सुनकर कप्तान भली भाँतिसे जान गये कि राठौर सामन्त अंग्रेजोंकी सेनाको आया हुआ देखकर कुछ भी भयभीत न हुए, वे अपने ओजस्वी स्वभावके वश युद्ध करनेके लिये तैयार है, इस कारण उन्होने शीघ्रही वीदाके वनायेहुए किलेको घेरनेकी आज्ञा दी । १८८३ ईसवी की १६ वी दिसम्वरको अंग्रेजी सेना और वीकानेरके महाराजकी सेनाने किलेको जा घेरा, और उसके मुँहपर तोप लगाकर गोलेंकी वर्षा करनेलगे । वहुत समयके पीछे आज फिर समरानलने प्रज्वलित होकर विचित्र दृश्य दिखाया । एक ओर प्रवल पराक्रमी अंग्रेजी सेना दूसरी ओर संख्यावद्ध क्षीणवल राठौर सामन्त केवल जातीय गौरव तथा राजपूतोके सम्मानकी रक्षाके लिये अपनेको वलहीन जानकर भी युद्धमे लिप्त हुए थे । निरन्तर गोलेकी वर्षा करके अंग्रेजी सेनाने उस प्राचीन किलेको विध्वंस करदिया । तव उन विद्रोही सामन्तोने अंतमे १८८३ ईस्वीकी २५ दिसम्वरको अंग्रेजी सेनाको आत्म समर्पण करदिया । विजयी अंग्रेजी सेनाने वीदासरके किलेके अतिरिक्त और भी कई एक किले एकवार ही तोड़ फोड़ डाले ।

वीदासरके सामन्तोके आत्मसमर्पण करते ही उनको राजनैतिक वंदीरूपसे देहलीके किलेमे भेजदिया गया । वह वहाँ वंदीभावसे रहने लगे । अन्यान्य सामन्त भी वंदीभावसे कारागारमे रक्खे गये । इन वंदी सामन्तोंके विपयमे उस समय कोई विचार नहीं हुआ, परन्तु ऐसी आशा की जाती थी कि वृटिश गवर्नमेण्ट शीघ्र ही वीकानेरके महाराजके साथ परामर्श करके अच्छी व्यवस्था करदेगी ।

उपरोक्त समयके सम्वन्धमे इंगलैण्डकी पार्लिमेण्ट, हाउस आफलार्डस नामक सभामें भारतवर्षके सेक्रेटरी आफस्टेटस् अर्लआफ किम्वर्लीने जो कहा था "वह प्रकाशित करते थे कि वीकानेरके महाराजके साथ विद्रोह उपस्थित हुआ, और वह उस विद्रोहको निवारण करनेमे समर्थ न हुए, तभी उन्होने भारतवर्षकी गवर्नमेण्टसे सहायता माँगी । भारतवर्षकी गवर्नमेण्टने इनकी सहायताके लिये जनरल जिलेसपिके आधीनमे प्रायः १८०० सेना भेजी । यह हमै संतोप है कि इस सेनाने वीकानेर राज्यमे जाकर एक मनुष्यका भी प्राणनाश नही किया और कईएक किलोको विध्वंस करनेके अतिरिक्त और कोई अनिष्ट नही किया । इस काण्डमे शेपतक यही वृत्तान्त है" ।

---

१ महाजनके सामन्तोके कर्मचारी, सिविल और मिलिटरि गजटमें यह प्रकाशित किया है । तथा १८८४.की ३ जौलाईके इन्डियनमिररमें यह उद्धृत हुआ है ।

२ लन्दनके टाइम्स नामक पत्रमे यह वृत्तात प्रकाशित हुआ है । १८८४ ईस्वीकी छटवी अगस्तको इण्डियनमिररमें यह उद्धृत होचुका है ।

अत्यन्त दुःखका विषय है कि महाराजके राज्यशासनके संबन्धमें साधारण प्रजा और सामन्तोंके समान बृटिश गवर्नमेण्टने भी संतोष प्रकाश नहीं किया। यद्यपि अंग्रेजी सेनाने पूर्वोक्त विद्रोहको निवारण करनेके लिये सब प्रकारसे महाराजकी सहायताकी थी, परन्तु भूतपूर्व पोलिटिकल एजेण्ट मेजर, एडवालिड रिचार्डस्ने १८८१–८२ ईसवीमें राजपूत राज्योंके शासन वृत्तान्तमें जो मन्तव्य प्रकाशित किया है उससे भलीभांति जानाजाता है कि उस समय बीकानेर राज्यकी उचित सुशासन व्यवस्था नहीं हुई थी। × परन्तु मेजर रिचार्ड्सने पिछले वर्षके अर्थात् १८८२–८३ ईसवीके शासन विज्ञापनमें बीकानेरके शासनके सम्बन्धमें लिखा है कि "अबतक जिस प्रकार मन्त्री समाज (कौंसिल) द्वारा शासनकार्य निर्वाह होता चलाआया है, उसमें इस समय केवल एक पुरुषका परिवर्तन हुआ है। महाराव हरीसिंह जो दरबारके पुरुषानुक्रमिक राजकर्मचारी थे, और जो अनेक वर्षोंसे मन्त्रीसमाजके प्रधान सेनापति थे, उन्होंने गत अक्टूबर महीनेमें प्राणत्याग किये हैं। वह शून्य पद कुछ दिनके लिये पूर्ण किया गया है, अर्थात् उनके भ्राता राव यशवन्तसिंह जो एक समय मन्त्रीसमाजके सदस्य थे, और जो अपने कर्त्तव्य पालनमें दृढ नहीं थे इसीसे वह १८७९ ईसवीमें पदसे रहित कियेगये थे, अब पुन. उसी पदपर नियुक्त किये गये हैं। गत मार्चके महीनेमें जिस समय गवर्नरजनरलके एजेन्ट बीकानेरमें आये, उस समयसे माननीय महाराज प्रति सोमवार और बृहस्पतिवारको प्रजाका आवेदन पत्र लेकर सुना करते हैं, एव ऐसी आशा कीजाती है कि वह इस भाँति आवेदन पत्रको सुनेंगे, कि जिससे मन्त्रीसमाज शासन विभागके किसी विषयमें विलम्ब न करै। इस लिये वह विशेष ध्यान रक्खेंगे। भूतपूर्व मृतक महाराज किसानोंके स्वार्थसाधनके लिये विशेष ध्यान रखते थे, और राजकर्मचारियोंके कार्यकी ओर अधिक ध्यान देते थे, परन्तु आजकलके माननीय महाराज राजकर्मचारियोंकी ओर अत्यन्त मृदु व्यवहार करते हैं।" – गवर्नर जनरलके राजपूतानेमें स्थित एजेन्ट लेफ्टिनेण्ट कर्नेल ई आर. सि. ब्राडफोर्ड सि. एस आई. ने १८८३ ईसवीकी २७ वी अगस्तको माननीय राजप्रतिनिधि गवर्नर जनरलके निकट लिखा कि बीकानेरके माननीय महाराज सब प्रकारसे स्वस्थ शरीर हैं परन्तु वह प्रजाके प्रति विच्छिन्न भावसे रहते हैं, और महलके बाहर क्या होरहा है, इसके सम्बन्धमें कुछ भी नहीं जानते, राज्यके सुशासनके लिये किस प्रकारके अनुष्ठानका प्रयोजन है, इसको कुछ भी स्थिर नहीं करसकतेहै, हमारे वहाँ रहनेके समय माननीय महाराजने स्वय प्रजाके आवेदनपत्रको ग्रहण कर सुननेका विचार किया, और इससे उन्होंने प्रजाके कल्याणकी अभिलाषाकी, इससे उनके सामान्य आभासमे भी प्रजामें सुफल उत्पन्न होनेकी सभावना है, परन्तु शासनके सम्बन्धमें इतना सामान्य संतोष दायक मन्तव्य प्रकाश किया जाता है। +

---

* Report of the political Administration of Rajputana states for 1882-83.

× Selections from the Records of the Government of India foreign Department No. CXCIII.

उपसंहारमे हमै केवल इतना ही कहना है, यद्यपि हम अंग्रेजी पोलिटिकल एजेण्ट की उक्तिके प्रति ऐसी आस्था नहीं दिखाते तथापि हम बीकानेरके शासन सम्बन्धमें अन्यान्य लक्षणोसे भली भाँति जानगये है, कि राज्यके आभ्यन्तारिक शासनके सम्बन्ध मे सुव्यवस्था करना कर्त्तव्य है, हम आशा करते है, कि महाराज बड़े उद्योगके साथ हमारी अभिलाषको पूर्ण कर सामन्तमंडली तथा प्रजाके हृदयको आकर्षित करनेमे समर्थ होंगे।

वर्तमान वृत्तान्त।

यह बीकानेर देश जोधपुरके उत्तरकी ओर है। पृथ्वीके हिसाबसे यह राजपूतानेका दूसरा और निवासियोंके हिसाबसे चौथा राज्य ठहरता है। इसमे २२३४० वर्गमील पृथ्वी है और ८३१२१० निवासी सन् १८९१ की गिन्तीमे पाये गये। इसकी वार्षिक आमदनी अठारह लाख १८००००० रुपये है। यहां नदियां नहीं कुओसे जल लियाजाता है। नगरके कुएं ३०० फुट तक गहरे है, बाहर२० फुट खोदनेसे पानी निकलता है। यहांके घोड़े गाय भैस बैल आदि जैसे होते हैं वैसे सब भारतवर्षमे नही पायेजाते। भीते यहांकी ऐसी ऊंची है और मुंडेरो तथा बुर्जोसे ऐसी विभूषित हैं कि दूरसे बड़ा नगर दिखाई देता है, सड़के तंग और तिरछी है इसमे पत्थरके चित्रित अनेक घर है, राज्यमे कालिजके सिवाय कितनी ही पाठशाला है संवत् १९४४ मे महाराज डूंगरसिंहके छोटे भाई।

महाराज राजराजेश्वर नरेन्द्र शिरोमणि श्रीगंगासिंहजी बहादुर।

गद्दीपर विराजमान हुए। इनकी अवस्था उस समय अनुमान दशवर्षकी की थी इस कारण राजपूतानेके पोलिटिकल एजेण्ट मेजर टालवट साहब C. I. E. के अधिकारमे कौसल द्वारा राजकाज होता था अब श्रीमान् कालिजसे विद्या पढ़ कर योग्यता प्राप्त करके अधिकार संपन्न हुए है। आपने विलायतकी यात्रा भी की है। भली प्रकार प्रजापालन करते है। इनके समय बीकानेरकी उन्नतिमे बहुत आशा है परमेश्वर महाराज को चिरंजीव रखकर प्रजापालनमे तत्पर रक्खे।

चतुर्थ अध्याय ।

बीकानेरकी प्राचीन और वर्त्तमान अवस्थाका भेद–बीकानेरकी भूमिका परिमाण–मनुष्यों की सख्या–जाटजाति–सारस्वत ब्राह्मण–चारण–उद्यानपाल–क्षौरकार–राजपूत–प्राकृतिक अवस्था–सस्य–फल–वृक्ष–कर्षणयन्त्र–जल–लवणह्रद–प्राकृतिक सौन्दर्य–खानिज पदार्थ–पशुपालक–वाणिज्य और शिल्प–पशम–लौहद्रव्य–मेला–राजस्व–खास भूराजस्व–धुआकर–अंगकर आमदनी और नगरके वाणिज्य पर महसूल–पुपार्येति अर्थात् कृषिकर, मालमा प्राचीन राजस्वकी सूची–धातूईकर–दड एव खुशियाली–सामन्तोंके आधीनके पूर्वतन सेनाकी सूची–पूर्वतन राजसेनाकी संख्या–बीकानेरके प्रधान २ सामन्तोंके नाम धाम–राजस्व और सेनाकी तालिका–पूर्वतन विदेशीय सेनाकी सूची–आधुनिक विवरण–राजस्व–स्वास्थ्य चिकित्सालय, राजस्व सम्बन्धी मुकदमें–दीवानी विचारालय–फौजदारी विचारालय–बन्दियोंकी सख्या–विद्यालय–

इतिहासवेत्ता टाड् साहब बीकानेर राज्यके प्राकृतिक वृत्तान्तको वर्णन करनेके पहिले लिख गये है, कि " अग्रेजोंके समीप यह देश अत्यन्त अपरिचित था, अग्रेज इस देशको सब प्रकारसे मरुक्षेत्र जानते थे । प्रवादियोंके मुखसे इस देशके अत्यन्त प्राचीन कालके उत्कर्षावस्थाके अनेक परिचय पायेजाते हैं, पर उनके साथ वर्तमान अवस्थाकी बराबरी नही की जासकती । जिस समयसे राजपूतोंने यहांके निवासी जाटोंके ऊपर अपने अधिकारका विस्तार किया उसी समयसे गत तीनसौ वर्षमे इस देशकी जो अवनति होगई है इसको देखकर हमारा अनुमान ठीक होता है, यह मरुक्षेत्र एक समय उर्वर और घनी बसतीसे पूर्ण था, यद्यपि इस देशमे इस समय बालू अधिक बढ गई है तथापि यह देश अब भी इतने धान्य उत्पन्न करनेमें समर्थ है कि इससे बहुतसे निवासियोका भोजन सग्रह होसकता है, यह अनुमान सभी सन्देहोंसे रहित है। बीकानेरके भूतपूर्व राजा रणक्षेत्रमें अपनी स्वजातीय दश हजार सेनाको इकट्ठा करनेमें समर्थ होते थे, यद्यपि वह प्रबल सेनादलके व्ययसम्पादन करनेके लिये यवनबादशाहोंसे कुछ अतिरिक्त भूवृत्ति भोग करते थे, परन्तु वे केवल अपने राज्यकी आमदनीसे भी उस सेनाके पालन करनेमे समर्थ थे । अधिक अनुर्वरताके अतिरिक्त इस राज्यकी शोचनीय अवस्थाके कुछ अन्य कारण भी देदीप्यमान थे । एक ओर जिस भाँति यहाँके निवासी चोर डकैतोंके द्वारा सतायेजाते थे, उसी प्रकारसे राज्यमे भी अत्याचारी राजाके अधिक कर बढानेसे प्रजा अत्यन्त पीड़ित होती थी, उस शासनके सम्बन्ध मे प्रजा इस करके देनेसे शान्ति नहीं पाती थी । यही बड़े आश्चर्यका विषय है कि इस अवस्थामे भी राज्यकी प्रजा अधिकतासे विध्वंस नहीं हुई । बीकाने जिन ग्राम और नगरोको बल पूर्वक अपने अधिकारमे किया था और जिन ग्राम निवासियोंने इच्छानुसार उनकी आधीनता स्वीकार की, पिछली तीन शताब्दियोंमे इस समय उन ग्रामोंके कोई चिह्न भी नहीं पाये जाते और जो ग्राम बचे थे वह भी क्रमानुसार उसी

दशाको पहुँच गये हैं। एक समय जिस भाँति वहुतसे वाणिज्यकी वस्तुओंसे पूर्ण छकड़े इस राज्यमें आयाकरते थे और उनपरसे महमूल लेकर राज्यकी आमदनी वढ़ती थी इस समय राज्यकी शान्ति नष्ट होनेसे और चोर डाकुओंकी वृद्धि होनेसे अव उस भाँतिसे वाणिज्य द्रव्य नहीं आते है, इससे वीकानेरके महारावको जिस भाँति हानि पहुचती है, उसी भाँति वाणिज्यके प्रधान स्थान चूरु, राजगढ़, और रेनी इत्यादिकी अवनतिसे प्रजाको भी यथेष्ट हानि पहुचीं है। एक समय इस वाणिज्य स्थानपर सिन्धुजात और गङ्गाजीके किनारेके देशोसे वहुतसे वाणिज्य द्रव्य आयाकरते थे। यही नही कि केवल वीकानेर राज्यकी ही यह शोचनाय अवस्था होगई है, जिस कारणसे वीकानेरकी यह दुर्गति हुई है उसी कारणसे जयसलमेर तथा और भी पूर्व सीमावर्ती राज्योंको ऐसी दुर्दशा होगई थी। वीकानेरके समान उन राव राज्योंमें सुशासनके अभावसे चोर और डाकू प्रवलतासे, वढ़गये थे। वीकानेरके वीदावत स्वयं जैसे अत्याचारी और तस्कर थे, वैसे ही जयसलमेरके मालदेवोत और जयपुरके सेखावत भी होगये थे। फिर इनके साथ अधिक पश्चिम मरुक्षेत्रके सराई, खोसा और राजड़गण राज्यके सभी स्थानोंपर चोर डाकू लूटते हुए फिरा करते है। यह भी जानागया है कि अरव देशके वद्दूगणोंके समान यह शेषोक्त कई एक जातियो समान आचार व्यवहारवाली कही जासकती है।" महात्मा टाड् साहवकी इस उक्तिको पढ़ कर हमारे पाठक सरलतासे अनुमान करसकैगे कि उस समय वीकानेर राज्यकी आभ्यन्तरिक अवस्था कैसी थी। यद्यपि अनेक वर्ष वीत गये है परन्तु हम अत्यन्त दुःखके साथ प्रकाश करते है, कि इस दीर्घकालमें वीकानेर राज्यकी अवस्था उचित रीतिमें नहीं वदल सकी थी। यद्यपि अधिकतर चोर और डाकुओंके उपद्रव निवारण होगये है यद्यपि आभ्यन्तरिक सुशासनके लिये अनेक उपाय होरहे है तथापि राज्यमें आजतक पूर्णरूप शांति विराजमान नहीं है। यद्यपि वाणिज्य और व्यापारमे अधिकतासे लाभ हुआ है, रजवाड़ोके अन्यान्य राजपूत राज्योंमें इस दीर्घकालमें वाणिज्यकी इतनी उन्नति होगई है पर वीकानेर उतनी उन्नति नहीं करसका है।

वीकानेरकी भूमिका परिमाण—महात्मा टाड् साहव लिखगये है कि "इस राज्यके पूंगलसे राजगढ़तक देश पूर्वकी अपेक्षा विस्तारवाले है और इसका परिमाण प्रायः नव्वे कोशतक है, और चौड़ाई उत्तरसे दक्षिण तक है। भटनेर और महाजन परगनेके मध्यस्थ भूमिका परिमाण अस्सी कोश तक है, सम्पूर्ण वीकानेर राज्यकी भूमिका परिमाण कोई ग्यारह सौ कोशसे अधिक नहीं होगा। पूर्वकालमें इन विस्तारित देशोमें दो हजार सातसौ नगर और ग्राम थे, परन्तु इस समय उससे आधे भी नहीं है।" "आचिसन साहवने १८७६ ईस्वीमे लिखा है कि वीकानेरकी भूमिका परिमाण १७६७६ मील है"।

मनुष्योकी संख्या—साधू टाड् साहव जिस समय रजवाडोमें उपस्थित थे उस समय वीकानेरके निवासियोंकी संख्या कितनी थी, उसके सम्वन्धमें लिखगये है, "इसके कुछ एक उदाहरणोंके विना दियेहुए मारवाड़ देशकी जनसंख्याकी

अनुमानिक सूचीको देखकर संतोषदायक विचार कर सकते हैं। जैतपुरके पश्चिमकी ओरके देश इस समय एकवार ही जनशून्य होगये हैं, और उस स्थानसे भटनेरतकके देशोंकी भी प्रायः इसी प्रकारकी दशा होरही है। उत्तर पूर्वके सीमाके देशोंकी जनसंख्या अत्यन्त स्वल्प है, अन्य पक्षमें बीकानेरको मध्य रेखासे जैसलमेर राज्यकी सीमातकके देशोंकी जनसंख्या भी उसी प्रकार है, इस स्थानसे आभ्यन्तरिक देशोंकी जनसंख्या सर्वत्र समान है और मारवाड़के उत्तर सीमाको समतुल्य है। विशेष करके कितने ही निवासियोंके राज्यके जो बारह प्रधान नगर हैं उनकी सूची दी है, उसे देखकर हम भलीभाँतिसे ठीक करके मनुष्योंकी संख्याकी सूची स्थिर करसकते है"।

"बारह प्रधान नगर हैं, और उन नगरोंके घरोंकी संख्या नीचे देते हैं—

प्रधान २ नगर।	घर संख्या.
बीकानेर.	१२०००
नोहर	२५००
भादरां.	२५००
नारैनी.	१५००
राजगढ़.	३०००
चूरू	३०००
महाजन.	८००
जैतपुर.	१०००
बीदासर	५००
रत्नगढ़.	१०००
देशनोक	१०००
सनथाल	५०
कुल	२८८५०

१००	ग्राम जिनके घरोंकी संख्या	२००	से.	२०००० तक है।
१००	ऐ ऐ.	१५०	से.	१५०००
२००	ए. ऐ.	१००	से.	२००००
८००	छोटेग्राम— ऐ.	३०	से.	२४०००

सबमिलाकर घरोंकी संख्या १०७८५० "

इतिहासवेत्ता टाड साहब लिखगये हैं "यदि प्रत्येक घरमेंके पाँच मनुष्य लिये जाँयें तो सबको मिलाकर ५३९२५० औसत जनसंख्या होती है। जो कि प्रतिवर्ग मील पीछे २५ मनुष्यकी आबादी बैठती है, इसके अतिरिक्त हम और नहीं विचार सकते। बीकानेरके आधीनकी मरुस्थलियोंको इसके साथ मिलानेसे स्काटलैण्ड

के समान जनसंख्या होगी।" इन निवासियोंमें चार अंशोंमेंके तीन अंश यहांके आदि निवासी जाट है; और शेष उनके विजेता वीकाके वंशधर है। इनमे सारस्वत ब्राह्मण, चारण कवि, और अन्यान्य कितनी ही जातियां हैं। समस्त निम्न जातियोके निवासियोंकी संख्या राजपूतोके दश अंशोमेंका एक अंश भी नहीं होगी। अधिक शांतिके होनेसे वीकानेरके निवासियोंकी संख्या इस समय बढ़गई है।

जाटजाति-बीकानेरके जाट निवासियोके सम्बन्धमें कर्नल टाड् साहब लिखगये है कि यहांके निवासियोमे जाटोकी संख्या समधिक है, और वह सबसे अधिक धनवान् भी है, जाटोके प्राचीनकालके समाजिक नेतागणोके समान इस समय सभी प्राचीन भूमिहार अर्थात् भूस्वामी है, वह विशेष धनवान् है, परन्तु उनका धन किसी भी कामका नही होता, कारण कि राज्यके भयसे वे सदा चिथड़ो लगेरहते है; केवल विवाह इत्यादिके समयमे वह लोग अधिकतासे धन खर्च करते है। अधिक क्या कहे वह लोग भोजन करानेके लिये राजमार्गपर मनुष्य रखकर अनिमंत्रित मुसाफिरोतकको बड़ी विनती से घर बुलाकर भोजन कराते है। इस प्रकारसे वह जितने मनुष्योंको भोजन करासकते है उनका गौरव उतना ही सौगुणा बढ़ता है।

सारस्वत ब्राह्मण-"इस देशमे प्राय: सारस्वत ब्राह्मण ही अधिक निवास करते है। वे लोग इस वातका गर्व करते है कि जाटगणोके इस देशमे उपनिवेशके स्थापनके पहिले उनके पूर्वपुरुष ही इस देशके अधीश्वर थे, वे लोग शांतिप्रिय और परिश्रम करनेवाले है। वे ब्राह्मण होकर कोई कुसंस्कार नही करते। परन्तु मांस खाते है, तमाखू सेवन करते, कृषिकार्य करते और अधिक क्या कहै वह लोग पवित्र गौओका व्यव साय भी करते है।"

चारणगण-"चारण गण इस देशके निवासियोमे सबसे पवित्र गिनेजाते है और वे पूजनीय भी है। वह वीरव्रतधारी राजपूत ब्राह्मणोके धर्मोदेशकी अपेक्षा चारण गणोके वीरगाथाके प्रति विशेष मान्य दिखाते है। चारणगणोका देशके सभी राठौर सम्मान करते है और प्राचीन गाथाके वलसे सभी भूवृत्तिको भोगते है. जैसलमेरके इतिहासमें इनका वर्णन विस्तारपूर्वक कियाजायगा।"

"प्रत्येक राजपूत परिवारमेमाली एवं नाई यही क्षौरकार्य करते है। यह लोग प्रत्येक ग्राममे पायेजाते है। ये लोग प्राय: राजपूतोके भोजन भी वनाते है।

चूहड़ एवं थोरी-कर्नल टाड् साहव लिखगये है कि "चूहड़ एवं थोरी यह प्रकृत चोरजाति है चूहड़गण लक्खो जगलके और शेपोक्त गण मेवाड़के निवासी है वीकानेरके प्राय: सभी सामन्तोने इस चूहड़ और थोरी जातिके कितनेही नेताओको वेतन देकर सेवकको भांति अपने यहां रक्खा है। किसी असाध्य कार्यके लिये इनको रक्खा जाता है। भादरांके सामन्तोंने अपने आधीनके सभी राजपूतोको विदा देकर केवल चूहड़ और थोरी जातिके मनुष्योंको अपने यहां रक्खा था। चूहड़ अत्यन्त विश्वासी गिनेजाते है। सीमान्त और नगरके द्वारकी रक्षाका भार उनके हाथमे रक्खा

जाता है। प्रत्येक शव दाह होनेपर यह एक २ आना करके दस्तूरी लेते है, इससे यह जानाजाता है कि यह यहांकें आदिम निवासी है "।

राजपूत-बीकानेरके राठौरोके सम्बन्धमें साधू टाड् साहबका यह मत है, "कि बीकानेरके राठौरोके वीरत्वमे कुछ भी परिवर्तन नहीं हुआ, भारतवर्षके अन्यान्य वीरजातियोके समान इन्होने भी वीर कहा कर यश प्राप्त किया था।जिस तरह मारवाड़ आमेर और मेवाड़के वीर राजपूत महाराष्ट्र और पठानोके द्वारा बहुत वर्षोंसे पीड़ित होते आये थे। बहुत दूरतक स्थित होनेसे बीकानेर राज्यके राठौरगण उनके द्वारा कभी पीड़ित नहीं हुए, परन्तु उन्हे उस तरह राज्यके भीतरी अत्याचारोसे विशेप दुःख भोगने पड़े हैं। पूर्वोश्चलवर्ती स्वजातियोको अपेक्षा राठौर इनसे अधिक कुसंस्कार युक्त नही है। वे लोग खानपानके विपयमे विशेप विचार नही रखते जिसके हाथका जल पीते है उसके हाथका भोजन भी करसकते है। वह लोग जैसे साहसी, सहनशील, सरलहृदय और अत्यन्त धीर है, वैसे ही यदि युद्धकी शिक्षा तथा शासनरीतिके वशी होते तो संसारमें वह सवसे श्रेष्ठ योधा होसकते थे। परन्तु इसके विरुद्ध वे इस देशके उपनिवेशके स्थापनको अवधिसे मादक सेवनमे अत्यन्त आसक्त होगये है। अफीम और गाँजेने वर्तमान समयके वंशधरोमे अपनी प्रवल शक्ति विस्तार की है"।

प्राकृतिक अवस्था-महात्मा टाड् साहबने बीकानेर प्रदेशकी प्राकृतिक अवस्थाके सम्बन्धमे लिखा है, कि इस राज्यमे कितने ही स्थानोके अतिरिक्त अन्य सभी न्यूनाधिक परिमाणसे वालुकामय है। पूर्वसे लेकर पश्चिमकी सीमातक जो अंश सवसे अधिक विस्तारवाले है, वह अंश भी वरावर वालुकामय है। यद्यपि वालुकामय छोटे २ शिखर राज्यके मध्यस्थलसे आरभ हुए है, परन्तु प्रधान भूधरमाला प्रत्येक ओरके छोटे २ पर्वतोको भेदकर जैसलमेरराज्यकी ओरको गई है, अन्य पक्षमे यही ठीक कहना होगा कि यह शिखरमाला समुद्रके पूर्ववर्ती देशोसे आरभ होकर बीकानेरके हृदयमे आकर शेप होगई है। उत्तर पूर्व प्रान्तमे राजगढ़से नोहर और रावतसर देशतककी मिट्टी उत्तम है। उस मिट्टीका रंग काला है, कुछएक वालुका मिलीहुई है, कृषिकार्यके उपयोगी है और वहां जल अत्यन्त निकट पायाजाता है, इस देशमे गेहूं चना और चावल भी अधिकतासे उत्पन्न होते है। भटनेरसे गाराके किनारेतककी मिट्टी भी इसी प्रकार है। मोहिलोके अधिकारी समस्त देश वालुकामय है, शिखरके शेप अंग इन्हीं देशोकी उत्तर सीमामें शेप होगये हैं। प्रत्येक वर्पकी वर्पाऋतुमे वर्पाका जल चारोंओर भरजाता है। यहाँ गेहूँ भलीभाँतिसे उत्पन्न होते हैं। यद्यपि मृत्तिकाके दोपसे यहाँ ऊँची श्रेणीका नाज उत्पन्न नहीं होता है। मोहिलके उर्वर क्षेत्रकी अपेक्षा इस मरुक्षेत्रका वाजरा बहुत उत्तम है, मेवाड़ और मारवाडके श्रेष्ठ धान्यके साथ मिलान करनेसे यहाँके निवासियोने अपने देशके वाजरेकी स्वयं प्रशंसा की है। जिस वर्पमे बहुतसा वाजरा उत्पन्न होता है उसी वर्पमे वहाँके निवासी दो वर्पके लिये उसे संग्रह करके रख लेते है, इस

बाजरेकी खेतीमे अधिक जलका प्रयोजन नही होता, परन्तु वर्षाके ठीक समयमें होनेसे ही बहुत धान्य उत्पन्न होता है" ।

"बाजरेके अतिरिक्त तिल और मोठ भी यहाँ उत्पन्न होते हैं । यह मनुष्य और पशु दोनोंके लिये उपयोगी और खाद्य हैं, तिलोंसे रंधन और जलानेका कार्य होता है। गेहूँ, चना, और जव उर्वरक्षेत्रमे उत्पन्न होते है परन्तु हमने केवल बीकानेरके प्रधान २ धान्योंका उल्लेख किया है" ।

जिस मिट्टीमे गेहूं उत्पन्न होते है वहाँ रुई भी उत्पन्न होती है। इस देशके कपासमें सात और दश वर्षतक फल लगते हैं। रुईके फल उतार कर वहाँके निवासी उन वृक्षोंकी शाखाको काट डालते हैं, और केवल जड़की रक्षा करते है । प्रत्येक वर्ष मे यह वृक्ष बढ़ते रहते है, और अन्तमे यही वृक्ष बड़े आकारवाले होजाते हैं, इस देशमें रुई अधिकतासे उत्पन्न होती है, इससे अन्य देशोंमे इतने बड़े बड़े वृक्ष नही देखेजाते" ।

मनुष्योंके आहारके लिये अनेक प्रकारकी शाक सब्जी उत्पन्न होती है। गौ आदि पशुओंके भोजनके लिये उत्तम धान्य बोया जाता है। ज्वार, कचरी, ककड़ी और बड़े २ तरवूज यहाँ बहुतायतसे उत्पन्न होते है,यह फल विशेष उपकारी है,कारण कि जिस समय दुर्भिक्ष होता है, अथवा जिस समय कोई फल नही मिलता उस समयके व्यवहारके लिये उन्हे खण्ड २ करके धूपमे सुखा रखते है । इन फलका वाणिज्य भी होता है, और जिस समय अन्यान्य फल भली भाँतिसे उत्पन्न होते है उस समय भी मनुष्य इन फलोंको बड़े आदरके साथ भोजन करते हैं । सूखेहुए तरबूजके आटेका पदार्थ स्वास्थ्यके लिये विशेष उपकारी है, समुद्रकी यात्राके समय सामुद्रिक रोगमे इसको अत्यन्त प्रयोजनीय जानकर ग्रन्थकारने कुछ थोड़ेसे पदार्थ कई वर्ष बीते कलकत्तेको भेजे थे। हमारे भारतके जहाज बहुतायतसे इन पदार्थोंको संग्रह करसकते हैं, कारण कि जितनी आवश्यकता होती है तरबूजकी उतनी ही खेती की जाती है, जिससे जहाजवाले और मारवाड़के निवासी दोनोंको अच्छा लाभ होसकता है । भारतवर्षके भीतरी देशोंमे जो तरबूज उत्पन्न होते हैं; उनकी अपेक्षा यहाँके तरबूज अत्यन्त श्रेष्ठ मानेगये है, और मरुस्थलमे यात्रा करनेवाले मुसाफिरोंका कथन है कि यहांकी वालूके शिखरपर जितनी जगह तरबूज उत्पन्न होते है उन तरबूजोंसे अश्वारोही और घोड़ेतककी तृषा दूर होसकती है" ।

"इस सूखे देशके निवासी लोगोंका सर्वस्व वर्षाके ऊपर निर्भर है। उन्हें प्रायः प्रतिसात वर्षके अन्तर दुर्भिक्षका संदेह रहता है, इस कारण जो द्रव्य मनुष्योंके

---

(१) कर्नल टाड् साहब अपने टीकेमें लिखगये है, "१८१२ ईसवीमे मैने मि० मोरक्राफ्टके पास परीक्षाके लिये भेजे कुछ द्रव्य थे परन्तु उसका फल क्या हुआ सो कुछ नहीं जाना जाता' ।

(२) मि० बारोने अपनी बनाई हुई दक्षिण अफरीकाकी विवरणी पुस्तकमे लिखा है कि वहा तरबूज स्वत बहुतायतसे उत्पन्न होते है ।

आहारके लिये उपयोगी हैं, यहाँके निवासी उन सवको बड़े यत्नके साथ संग्रह कर रखते हैं। गरीब लोग प्रायः भुरुट बूर हिरारू सेवन, इत्यादिके फलोंका चूर्ण करके उसे बाजरेकी मैदाके साथ मिलाकर भोजन करते हैं। वनबेर, खैर; और करीर आदिके छोटे २ फल भी बहुतसे नीची श्रेणीके मनुष्य संग्रह कर रखते है खेजड़ा वृक्षको छाल जो अति तिक्त है उसको भी संग्रह करते हैं और सुखाकर उसे मैदाकी तरह चूर्ण करके खाते हैं, तात्पर्य यह कि खानेके योग्य किसी वस्तुका संग्रह और उपयोग करनेमें वहाँके लोग कसर नहीं लगाते।

"फलवाले वड़े २ वृक्ष यहाँ नहीं पायेजाते, राजधानीके मुख्य २ स्थानोंमें आम और इमलीके वृक्ष लगाएजाते हैं परन्तु ववूल पीलू 'और जाल नामक छोटे २ फलवाले वृक्ष अधिकतासे उत्पन्न होते हैं, सेहुड़ा नामके एक प्रकारके वृक्ष और भी उत्पन्न होते हैं, उनकी उँचाई बीस फुट होती है।

वह घरोंके वनानेके काममे आते है। भारत विख्यात नीमके वृक्ष भी यहां उत्पन्न होते है। सक नामक एक और प्रकारके जो वृक्ष उत्पन्न होते हैं वह यहाँके लिये विशेष उपकारी हैं। यहाँके निवासी कुँएके चारोओर इसको फैलाकर कुँएमे रेतके गिरनेको रोकते हैं"।

वीकानेरमे मदार (आक) के वृक्ष वहुत होते हैं, यहांपर वे जैसे वड़े होते हैं वैसे ही मजवूत भी होते हैं, उनकी जड़से जो रस्सियां वनती हैं वे बड़ी कड़ी और खटाउ होती हैं और प्रायः मूंजकी रम्सियोंकी अपेक्षा उत्तम होती हैं सन मूज यहाँ वीदावाटीमे उपजती है।

कृपियत्र–"यहाँके कृपियत्र साधारण हैं, पर यहाँके कृपिक्षेत्रोके लिये उपयोगी हैं, हल केवल एक बैल या ऊटके द्वारा चलाया जाता है। दो बैल वा ऊंटका हल अकसर माली लोग उस समयमे चलाते हैं जव कि मिट्टी अधिक कठिन होती है। सभी चलनीका व्यवहार करते हैं, और उस चलनीसे एक ३ धान्य पृथक् और दूर २ वोयाजाता है"।

जल–"इस मरुदेशकी पृथ्वीमें वडे गहरेपर जल पायाजाता है, वीकानेरकी राजधानीके निकटवर्ती देश नख नामक स्थानमे दो तीनसौ फुट खोदनेसे जल दिखाई पड़ता है। थाल अर्थात् मरुक्षेत्रमे ६० फुटसे अधिक विना खोदेहुए मनुष्योंके पीने योग्य जल नहीं निकलता। ३० फुट खोदनेसे जो जल निकलता है, वह पशुओंके पीने योग्य होता है। प्रत्येक कुँएके चारोओर सक नामक वृक्षकी दीवारी वँधी रहती है।

(१) सभी प्रधान २ नगरोंमें माली जल वेचा करते हैं। इस जल वेचनेका कार्य उनकी एक चेटियासे होता है प्रायः सभी घरोंमें हौज वने होते हैं, वर्षा ऋतुमें इनमें खूब जल भरजाता है, यह जलधारा ईंट वा पत्थरकी वनी होती है और सव ढकी रहती हैं, केवल ऊपरके भागका एक द्वार खुला रहता है, उसमें पवन जाती है। उसके द्वार सभी वन्द करके रखते हैं इसमें जल एक वर्षतक उत्तम अवस्थामें रहता है।

हिन्दुस्तानके रेगिस्तानमे कई एक नमककी झीले एकमे मिलकर 'शिर' नामसे प्रसिद्ध है। परन्तु उनमेंसे कोई भी मारवाड़की झीलोंकी भांति नही है। उक्त झीलके किनारेपर 'सिरा' नामका एक वड़ाभारी नगर भी वसाहुआ है जिसका नामकर्ण झीलके ही नामसे संवन्ध रखता है। सिरा झीलका लंवान चौड़ान प्रायः छः मील होगा। दूसरी नमककी झील दो मील लंवी चौड़ी चौपूरके पास है। ये दोनो झीले सर्वत्र प्रायः पांच फुट गहरी होगी। गरमीके दिनोमे गरम वायुके संयोगसे लवण आपसे आप पानीके ऊपर जम जाता है। इसीमेंसे नमकके चैलेके चैले उतार लियेजाते हैं। उक्त दोनो झीलोका नमक दक्षिणी झीलसे कम दामका होता है।

प्राकृतिक सौन्दर्य—"इस देशमे प्राकृतिक सौन्दर्य कुछ भी नही है, और ऐसे दृश्य वहुत थोड़े है कि जिनको नेत्रोके लिये आनंददायक कहाजाय। परन्तु हमने यहांके ऐसे मनुष्य देखे है कि उन लोगोंको अन्य देशके उपादेय आहारकी अपेक्षा यहांकी रावड़ी और वाजरेकी रोटी ही अत्यन्त प्यारी होती है। वह मनुष्य हिममण्डित अचलराज हिमालयकी अपेक्षा यहांकी वालुकामय छोटी २ भूधरमालाको ही प्रीत पूर्वक देखते है। हमारे पाठक पाठिकागण अवश्य ही स्मरण करेंगे, कि जहां जन्म हो वही देश प्यारा लगता है।

खानिज पदार्थ—"यहां खानिज पदार्थोंकी उपज वहुत कम है। राज्यके कई प्रदेशोंमे शुद्ध पत्थरकी खाने है। विशेष करके वीकानेरकी राजधानीके तेरह कोश उत्तर पश्चिमको पूसियारा नामक स्थानकी खानसे दो हजार रुपया वार्षिक आय है, वीदासर और विरामसरमे तांवेकी खाने है। परन्तु विरामसरको खानसे तो लागतका भी खर्च नही निकलता और वीदासरकी खानोसे ३० वर्षतक तांवा निकाला जाचुका है इस लिये इस समय वहां भी लाभ होना असंभव है।

"कोलाद नामक स्थानके निकट एक खानसे एक प्रकारकी मिट्टी अधिकतासे तेलसे भीगी सी निकलती है, और वह वाणिज्यके अन्य द्रव्योकी तरह विदेशको भेजी जाती है, इसीसे राज्यको वार्षिक पन्द्रह सौ रुपयेकी आमदनी होती है। यह मिट्टी मनुष्योंके वाल और शरीरके साफ करनेके लिये विशेष काममे आती है। और ऐसा भी विदित है कि एक श्रेणीकी स्त्रियॉ अपने लावण्य और वृद्धिके लिये इस मिट्टीको खाती भी है"।

पशु—मरुक्षेत्रकी गौ अत्यन्त श्रेष्ठ है। ऐसेही यहांके ऊंट भी लादने और युद्ध क्षेत्रमे सवारीके काममें आते हैं, उनका मूल्य भी अधिक होता है, और भारतवर्षमे यह सव ऊंटोसे श्रेष्ठ गिने जाते है। इन ऊंटोंका सर प्रायः वड़ा सुन्दर होता है और यहाँ भेड़े भी वहुत होती है, और यहॉके स्वाभाविक उपजनेवाले घास पातसे उनके आहार में कुछ कमी नही होती नीलगाय तथा प्रत्येक जातिके हरिन भी यहॉ देखेजाते है। मारवाड़की लोमड़ीका गठन अत्यन्त चमत्कारक है। शृगाल और हरिन ही नहीं वरन् शेरतक वीकानेरके जंगलोमें पायेजाते है।

वाणिज्य और शिल्प—"बीकानेर राज्यमे राजगढ़ वाणिज्यमे प्रधान नगर है। और सब देशोसे इसी स्थानपर वाणिज्यके द्रव्योंसे भरेहुए छकडे आया करते हैं। पंजाब और काश्मीरके द्रव्य हाँसी हिसार होकर यहाँ आते है, और पूर्वाञ्चलके वाणिज्य द्रव्य भी अर्थात् पशमोनेके वस्त्र, नील, चीनी, लोहा, ताँबा इत्यादि दिल्ली रिवाडी और दादरीके रास्तेसे आते है। हाड़ोती और मालवेसे अफीम आती थी और फिर यहाँसे सम्पूर्ण राजपूत राज्योंमे उन वस्तुओंका आवागमन होता है, समुद्रदेशसे जैसलमेर होकर मुलतान और शिकारपुरसे शकटोंमे खजूर, गेहूँ, चावल और स्त्रियोंके लुंगी नामके वस्त्र फल इत्यादि और पाली समुद्रके किनारेके देशोसे टीन, औषधि, नारियल, हाथीदांत इत्यादि आते हैं, इन सब द्रव्योंमेसे कितने ही द्रव्य बीकानेरके निवासियोंके व्यवहारमें आयाकरते थे, और बहुतसे यहाँसे अन्य देशोंको भी जाते थे, इसी कारणसे यहाँ समधिक वाणिज्यका महसूल संग्रह होता है।

पशम—"मारवाडमे जो अधिक भेड़े उत्पन्न होती है, उनके ऊनके रोंएसे अनेक भाँतिके वस्त्र बनते हैं, और उनका भी वाणिज्य होता है। भेडोंके रोंएसे स्त्री पुरुषोंके पहिरने योग्य पोशाक बनती है जो धनी निर्धन सभीके काममे आती है, इस पशमके अच्छे निकृष्ट सभी श्रेणीके वस्त्र यंत्रोंके द्वारा बनायेजाते हैं। मोटी एक जोडी लोई तीन रुपयेकी बिकती है, और बढिया बारीक लोई ३० रुपयेकी बिकती है। शेषोक्त मोलकी लोई देखनेमें अधिक सुन्दर होती है बरन उसको एक प्रकारसे शाल कहसक्ते है। इनकी पगड़ी भी बनती है, जिनकी लम्बाई ४० से ६१ फुटतक होती है, इतनी लम्बी पगडीके शिरपर बांधनेसे कुछ भी बोझा नहीं मालूम होता, और न देखनेमे बड़ी ही लगती है—अर्थात् इतनी बारीक होती है"।

"भेस, बकरी, और गौ इत्यादिके दूधसे जो घी निकलता है वह भी यहांके वाणिज्यका एक प्रधान द्रव्य गिनाजाता है"।

लोहद्रव्य—' बीकानेरके शिल्पियोंने लोहेके अनेक भाँतिके द्रव्य बनाकर विशेष प्रशंसा प्राप्त की है। राजधानी और प्रधान २ नगरोंमे लोहेके कारखाने है। इन सब कारखानोंमे छुरी, तलवार, चाकू, भाले, बन्दूक इत्यादि बनते है, शिल्पीगण हाथीदांतके भी अनेक प्रकारके द्रव्य तैयार करते हैं, इनसे स्त्रियोंके पहिरने योग्य चूडी और कडे भी तैयार होते हैं"।

देशमें व्यवहार करनेके लिये पहरने योग्य माल बहुत अधिकतासे बनते है"।

मेला—' कार्तिक और फागुनके महीनेमे कोलाद और गजनेर नगरमे प्रत्येक वर्षमे मेला हुआ करता है; और इस मेलेमे आसपासके स्थानोंसे अनेक वणिक आया करते है। इस मेलेमे मारवाड़से ऊंट गाय तथा मुलतान और लक्खी जंगलके घोडे बिकनेके लिये आते है। परन्तु इस समय उस मेलेका अब वैसा गौरव नहीं रहा। सारांश यह है कि इस समय यहांका वाणिज्य एकबार ही लोप होगया है'।

राजकर–" पहिले बीकानेरके अधीश्वरका राजस्व कर कई प्रकारसे संग्रह किया-जाता था। खालसा अर्थात् राज्यके अधीनकी भूमिका कर, कृषि कर और दंड यह तीन आमदनीके प्रधान द्वार थे। परन्तु सब प्रकारसे राजाका राजस्व वार्षिक पाँच लाख रुपयेसे अधिक नहीं होता था। यदि रजवाड़ोंके अन्यान्य राजपूत राज्योंके साथ इसका मिलान किया जाय तो मालूम होगा कि जितना बीकानेरकी भूमिका परिमाण है उसके हिसाबसे वहाँके सामन्त अधिकांश पृथ्वीके अधिकारी हैं। रजवाड़ोंके अन्यान्य राज्योंके सामन्त उतनी परिमित भूमिके अधिकारी नहीं है। इसका कारण केवल यही है कि बीदावत और कांधलोतगणोंने सबसे पहिले इस देशको भूमिके अधिक भागपर अधिकार किया था, उन दोनो सम्प्रदायोंका भूभाग एकसाथ मिलानेसे बीकाके अधिकारी राज्यकी अपेक्षा बड़ा होगया। दूसरे बीदावत और काँधलोतगण बीकाको अपने अधिकारी देशमेंका कोई अंश देनेके लिये सम्मत नहीं हुए। वह बीकाको केवल नाममात्रका अधीश्वर मानते थे। राजगढ़ रेवी नोहर, गारा, रत्नगढ़, और चूरू यह कितने ही देश महाराजकी खास भूमि है। कुछ ही दिनोंसे चूरू राजाके अधि-कारमें होगया है "।

इतिहासलेखक टाड्ड साहब लिखते ह, कि " निम्नलिखित प्रकारसे छः प्रकारका कर संग्रह होता है;–खालसा अर्थात् खासभूमिकाकर, धुँआकर, अंगकर, चुंगी और आमदरफ्तीका महसूल, कृषिकर और छठा मालवा "।

१ खालसामें खास भूमिकरसे पहिले वार्षिक दो लाख रुपयेकी आमदनी थी परन्तु कुसंस्कार और फजूलखर्चीके कारण राजाओंने निजके कुल नगर और गांवोमेसे दो तिहाई उजाड़ दिये है। पहिले इन खास ग्रामोकी संख्या २०० थी परन्तु इस समय केवल ८० से अधिक नही है। और उन अस्सी ग्रामोका राजस्व कर एक लाख रुपयेसे अधिक नहीं है। सूरतसिंह अपनी इच्छानुसार चलते है। वे पात्र कुपात्र या कर्त्तव्य अकर्तव्यका कुछ भी विचार न करके जिसे जो जो चाहा सो बगस देते थे। वह चाहे ब्राह्मण हो चाहे एक उँटेरा उनकी नजरमे सब बराबर है।और खालसा अर्थात् खास भूमि में ही उनके सब खर्च चलते है। इसी लिये वह यथेच्छ दान करनेके लिये सर्वसाधारण प्रजासे मनमाना धन उगाहते। है

२ " धुँआकर—यद्यपि यह कर साधारणतः धूम्रका कर समझाजाता है परन्तु वास्तवमे इसको अग्निकर कहना चाहिये। सभी रसोई बनाना चाहे और और सभी कामकरना चाहै पर सबके घरमे आतिश दान या धुआँकस कहाँसे आया, सूरतसिहके सचिवने इसे राहगीर कर यह कर नियत करलिया, प्रत्येक घरसे इस करका एक रुपया लियाजाता था, प्रबल सामर्थ्यशाली सामन्त यदि इस करके देनेसे छुटकारा न पाते तो इससे अपार धन संग्रह हो सकता था. प्रधान २ सामन्तोके इस करके विना दिये भी इस समय इससे एक लाख रुपया आता है। राजा लूनकरणके वड़े पुत्र रत्नसिहने बीकानेरके सिंहासनको छोड़कर केवल महाजन देशको ग्रहण किया था वह, भी

इस धुएँके करको नहीं देते । अन्यान्य कर जिस प्रकारसे वढ़ाया जाता था तथा उसके बढ़ाये जानेकी सम्भावना रहती थी । वैसी इस करकी अवस्था नही थी, यदि किसी ग्रामकी वसती आधी घटजाती तो जो ग्राममें निवास करनेवालोंसेही समस्त कर नहीं सग्रह कियाजाता। यह धुएँका कर केवल जैसलमेर और बीकानेर राज्यमे प्रचलित है" ।

३ "अंगकर-यह देहकर राजा अनूपसिंहने प्रचलित किया था । यह एक प्रकारसे सम्पत्ति कर कहा जासकता है । प्रत्येक अवस्थाका मनुष्य एक अंगरूपसे विचारा जाता है और उसके प्रति चार आना कर नियत होता है, गौ, बैल, भैंस, इत्यादि भी अंगकरकी गणनामे सम्मिलित है, और इन सबके ऊपर भी कर लगता जाता है । दश बकरी और एक भैसका एक ही अंग नियत कियागया है परन्तु एक ऊँटको चार अंगकी समान गिना है, और उसपर एक रुपया कर लिया जाता है । राजा गजसिंहने इसको दुगना करलिया यह कर यद्यपि समय २ पर अनेक रूपसे वदलता गया है, तथापि इससे वार्षिक दो लाख रुपयेकी आमदनी होती है ' ।

४ "आमदरफ्ती-तथा नगरका वाणिज्य शुल्क-यह कर अधिक परिवर्तन शील है, परन्तु महाराज सूरतसिंहके शासन समयसे इस करको बहुत हानि पहुँची है । पूर्वकालमे एकमात्र राजधानीसे जो वाणिज्य शुल्कको आमदनी होती थी, इस समय समस्त राज्यसे आती है यह उतनी आय नहीं है । पहिले इसका परिमाण दो लाख रुपयेसे अधिक था, परन्तु इस समय एक लाख रुपयेसे भी कम है । इस एक लाखसे अधिक रुपयेमे बीकानेरके प्रधान वाणिज्य स्थान राजगढसे आधे लाख रुपयेकी आमदनी होती थी । चोर और डाकुओंके द्वारा अधिक अत्याचार और उपद्रवोंके होनेसे पंजाबके साथ वाणिज्य कार्य एकवार ही वद होगया । पहिले मुलतान भावलपुर और शिकारपुरसे वणिकलोग व्यापारी द्रव्योंको बीकानेरमें होकर पूर्वाञ्चलको लेजाते थे, इस समय वह व्यापार भी नष्ट होगया है । और राज्यमे स्थिर प्रकृष्ट नीतिका अभाव ही इसका कारण है । इस समय केवल प्रति सौमन विक्रीके धान्यके ऊपर सैकडा पर ४ चार रुपया कर संग्रह होता है । " कर्नल टाड् साहवने अंग्रेजो गवर्नमेण्टके साथ महाराज सूरतसिंहके सधिवंधनके पहिले बीकानेरके वाणिज्यका जो अवस्था थी, यहाँ उसका वर्णन भलीभांतिसे किया है, परन्तु हम यहाँ अत्यन्त आनंदके साथ प्रकाशित करते हैं कि इस समय बीकानेरके वाणिज्यकी अवस्थाकी अधिक उन्नति होगई है । और इसीसे राज्यकी आमदनी भी वढ़ गई है ।

५ कृपिकर-कृपिकार्यमें जितने हलोंका व्यवहार होता है, उनमेसे प्रत्येक हलपर पाँच रुपया कर लिया जाता है । पूर्वकालमे किसानोंके यहाँसे नाज संग्रह करलेते थे । खेतमें जितना धान्य उत्पन्न होता था, उसका एक चतुर्थांश राजा ग्रहण कर लेता था । राजा रायसिंहने इस करको तोड़दिया और एक और कर स्थापन किया, जिससे जाट अत्यन्त ही आनंदित हुए, कारण कि जिस समय धान्य ग्रहण करनेकी रीति थी उस समय राजाके यहाँके कर्मचारी इच्छानुसार किसानोंको

कष्ट देते थे। पहिले इसी कारणसे दो लाख रुपया राजस्वका दिया जाता था, परन्तु अन्यान्य विभागोके समान बीकानेरकी खेतीकी भी क्रमशः अवनति होगई, उसके साथ ही साथ इस करका परिमाण भी घट गया। बीचमे दो लाख रुपया दिया जाता था, इस समय एक लाख पचीस हजार रुपया संग्रह होताहै। इस स्थानपर हम अत्यन्त सन्तोषके साथ प्रकाशित करते है कि राज्यमे सम्पूर्ण शान्तिके होनेसे कृषिकार्यकी श्रीवृद्धिके साथ राज्यकी आमदनी भी बढ़गई है।

" ६ मालभा—इस देशके आदि निवासी जाट जिस समय बीका और उनके उत्तराधिकारियोंकी आधीनता स्वीकार करके बीकाकी अनुगत प्रजापदपर अपनी इच्छासे नियुक्त हुए; उस समय वह जाट स्वयंही करदेनेमे सम्मत होगये थे, इस कारण वह कर समभावसे प्रचलित है। मालशब्दका अर्थ भूमि है इसलिये यह भूमिकर नामसे विदित है। बीकानेर राज्यकी प्रजा जितनी पृथ्वीको जोतती है उसमे प्रतिसौ बीघे पृथ्वीके ऊपर दो रुपया इस करका नियत हुआ है। इस करसे इस समय पचास हजार रुपया भी संग्रह नही होता"।

राजस्वकी सूची।

१	खालसा*	२००००० रुपया.
२	धुआँकर	१००००० "
३	अंगकर	२००००० "
४	वाणिज्यशुल्क+	७५००० "
५	हलका कर	१२५००० "
६	मालभा (भूमिकर)	५०००० "
	जोड़	६५०००० रुपया हुआ.

* कर्नेल टाड साहवने अपने टीकेमें निम्नलिखित सूची प्रकाशित की है.

" नाहरजिलेके	८४	ग्रामोका राजस्व	१००००० रुपया.
रेनी "	२४	ऐ	१०००० "
राणिया "	४४	ऐ	२०००० "
जालोली "	१	ऐ	५००० "
सब आदिम खास भूमिका राजस्व कर			१३५००० रुपया.

जबसे राजगढ़, चुरु और अन्यान्य कई देश खास अधिकारमें होगये हैं।

+ प्राचीन समयके वाणिज्य शुल्ककी सूची।

नूलकरण ग्रामका वाणिज्य शुल्क		२००० रुपया.
राजगढ़ "	ऐ	१०००० "
सेखासर "	ऐ	५००० "
राजधानी बीकानेरके	ऐ	७५००० "
चुरु और अन्यान्य नगरके	ऐ	४५००० "
	सब आमदनी	१३७००० रुपया हुए.

उपरोक्त वार्षिक करके अतिरिक्त और भी कई प्रकारका कर संग्रह कियाजाता है, और उससे राजा सूरतसिंहका राजभंडार पूर्ण कियाजाता है।

"धातूई नामका कर प्रति तीन वर्षके भीतर लियाजाता है इस करका परिमाण पांच मुद्रा है, और प्रत्येक हलके ऊपर यह प्रचलित है, राजा जोरावरसिंहने इस करकी सृष्टि की थी, केवल आसियागतिके ५० ग्राम और चेगीवनके १० ग्रामोके अतिरिक्त इस करको और सभी देते हैं। उक्त वर्जित ग्राम निवासी सीमाकी रक्षामें नियुक्त रहते हैं, इसी कारणसे उनसे कर नहीं लिया जाता। प्रधान २ सामन्त भी इस करको नहीं देते, इसके द्वारा एक लाख रुपयेकी भी आमदनी नहीं होती।

कर्नल टाड् साहव लिख गये हैं, कि "उपरोक्त निर्द्धारित करके अतिरिक्त वर्त्तमान महाराज सूरतसिंहने अपनी इच्छानुसार अतिरिक्त करको अनेक उपायोसे संग्रह किया है, और राजाके यहाके कर्मचारी भी अपने उदर पूर्ण करनेके लिये कृषिजीवी और श्रमजीवियोंके ऊपर घोर अत्याचार करते हैं, और अनेक भांतिके कष्ट देकर उनसे धन सग्रह करते हैं, इस प्रकारके उपायोसे महाराज सूरतसिंहने निर्द्धारित राजस्वकी आमदनी दुगनी करली है"। अत्यन्त संतोषका विषय है कि वर्तमान महाराज डूंगरसिंह वहादुरने अपनी प्रजासे इच्छानुसार वलपूर्वक कोई कर संग्रह नहीं किया।

इतिहासवेत्ताने १८१३ ईस्वीमे लिखा है, कि "दंड और खुशाली नामके अन्य प्रकारके कर भी प्रचलित हुए थे। दडकर वलपूर्वक आज्ञा न माननेवाले अपराधी से ग्रहण कियाजाता था, और खुशाली कर प्रजाको सतोष प्रकाश स्वरूपसे 'प्रदान करनेकी आज्ञा देता था। सामन्तवृन्द वणिकदल और महाजनोके निकटसे सर्वसाधारणमे इस करके ग्रहण करनेकी रीति थी। नीची श्रेणी की प्रजा भी गुप्तभावसे इस करको देती थी। दडकरको ग्रहण करनेके लिये चौदह कर्मचारी नियुक्त थे। प्रत्येक जिलेमे एक २ कर्मचारी रहते थे। यह कर्मचारी अपनी २ इच्छानुसार दंडकरको निर्द्धारण करके संग्रह करते थे। गान्धोलीके सामन्त उक्त करके ग्रहण करनेवालेको इस आशयसे दो वर्षमें दश हजार रुपये देनेके लिये तैयार हुए थे, जिससे कि तीसरे वर्षमे उनको दंड न देना पड़े, परन्तु करलेनेवाला मनुष्य इस प्रस्तावमे सम्मत न हुआ, इससे सामन्तोंने अत्यन्त क्रोधित होकर करग्रहण करनेवालेको अपने नगरसे निकाल दिया, और आप स्वय स्वामीके विरुद्ध खड़े हुए। इच्छानुसार दंडकर किस प्रकारसे संग्रह किया जाता था उसके प्रमाण भलीभाँतिसे पायेजाते हैं"।

"सूरतसिंहने एक समय जिस खुशाली करको संग्रह किया था, उस वृत्तान्तको प्रकाशित करना हम अत्यन्त आवश्यक समझते हैं। राजा सूरतसिंहने जिस समय बीकानेरके समस्त राठौरोकी सेनाके साथ भटनेरको जीतकर अपने राज्यकी सीमाको वढाया था, उस समय उन्होंने विजयसे उद्दीप्तहो उस युद्धके खर्चेके लिये अपने राज्यमेके प्रत्येक घरसे १० रुपया देनेकी प्रजाको आज्ञा दी। सूरतसिंहने घोररूपसे अत्याचार करके प्रजासे जव इस प्रकारसे कर ग्रहण किया और प्रजाने उनकी विजयके

लिये जब रुपया देदिया तब उनके परास्त होनेसे मानो प्रजाके भाग्यमे कैसी दुर्घटना हुई इसका अनुमान इतिहासप्रिय हमारे पाठक स्वयं करसकते हैं।

सामन्तोके आधीनकी सेनाकी संख्या–कर्नल टाड् साहबने महाराज सूरतसिंहके शासनकालीन सामन्तोके आधीनकी सेनाकी संख्याके सम्बन्धमे वर्णन किया है कि "सामन्त शासनकी रीतिके मतमे देशको शासन करनेवाले राजाओ के चरित्रोके ऊपर सामन्तोसे सेना संग्रह कराना निर्भर है, यदि सूरतसिंह सर्वजन प्रिय होते, यदि किसी प्रबल समरके उपलक्षमे जातीय सेनाके समावेशकी आवश्यकता होती तो राजा सूरतसिंह समरक्षेत्रमे वीकाके वंशकी दश हजार राजपूत सेनाको इकट्ठा करसकते थे, विदेशीय सेनाके अतिरिक्त उनमें बारह हजार अश्वारोही उपस्थित होते। परन्तु इतना सन्देह है कि वर्त्तमान अवस्था और समाजके उद्देश्यमे प्रत्येक विषयकी अवनति होनेसे इस समय उपरोक्त संख्यामेसे आधी भी इकट्ठी नहीं सकती "राजाके निज आधीनकी सेनामें केवल एक दल विदेशीय पाँचसौ पैदल; ५ तोपै और ढाईसो अश्वारोही है। यह सभी विदेशीय सेनापतिके आधीनमे चलते है। इसके अतिरिक्त बीकानेरकी राजधानीके किलेकी रक्षाके लिये एक राजपूत सेनापति नियुक्त है। उन्होंने पुरीहर जातीय और उस किलेकी रक्षाके हेतु जो सेना नियुक्त रक्खी है उसको वेतन देनेके लिये राजाके यहाँसे पचीस खण्ड ग्रामोकी आमदनी मिलती है।

साथ् टाड् साहब उपरोक्त सामन्तोकी सूचीको प्रकाश करनेके पहिले लिखगये है कि यद्यपि वीकानेरके सामन्तोके आधीनमे अधिक सेना थी, परन्तु वर्त्तमान महाराज सूरतसिंहको इसकी चतुर्थांश सेना इकट्ठी करनी कठिन है।

महाराज सूरतसिंहके शासनसमयकी विदेशी सेना।

	अश्वारोही	पैदल	तोपै
सुलतानखाँ		२००	
अनोखेसिंह सिक्ख		२५०	
वुधसिंह देवड़ा		२००	
दुर्जनसिंह बटालियनके आधीनकी	७००	४	४
गंगासिंह बटालियनके आधीनकी	१०००	२५	६
जोड़ विदेशीय	१७००	६७९	१०
बड़ी तोपै			२१
	१७००	६७९	३१

बीकानेरके·पूर्वतन सामन्त श्रेणीकी सूची.

सामन्तोंके नाम	कुल	वासस्थान	तहसील उसूल रु०	सेनाकी संख्या		विशेष.
				पैदल	सवार	
वैरीशाल ...	बीका	महाजन	४००००	६०००	१००	राजा लूनकरण के उत्तराधिकारीने एकसौ चौवालीस ग्रामोंको पाकर सिंहासनके अधिकारको छोड़ दिया.
अभयसिंह ..	बनीरोत्	भूकरका	२६०००	५०००	२००	यह बीकानेरके सबमें प्रधान सामन्तहैं.
अनूपसिंह ...	बीका	जसाना	५०००	४००	४०	
पेमसिंह ...	ऐ०	बाई	५०००	४००	७५	
चैनसिंह ...	बनीरोत्	सावह	३००००	२०००	३००	
हिम्मतसिंह ...	रायोत्	रावतसर	२००००	३०००	३००	
शिवसिंह ...	बनीरोत	चूरु	२६०००	३०००	३००	
उमेदसिंह, जैतसिंह ...	बीदावत	बीदासर, साउनदवा	५००००	१००००	२०००	
बहादुरसिंह, सुर्यमल्ल, गुमानसिंह, अताइसिंह ...	नारनोत	मननसर, तिनदीसर, काटर, कुटचोर	४००००	४०००	६००	
शेरसिंह ...		निम्बाजी	६०००	५००	१२५	
देवीसिंह, उमेदसिंह, सुरतानसिंह, कर्णादान ...	नारनोत्	सीधमुख, कारीपुरा, अनंतपुरा, बिपासर	२००००	५०००	४००	
सुरतानसिंह	कच्छवाहा	नयनावास	४०००	१६०	३०	
पद्मसिंह ...	पँवार	जसीसर	५०००	२००	१००	यह दोनों विदेशी सामन्त हैं एक तो जयपुरके और दूसरे प्राचीन पँवार वंशके
किसनसिंह ...	बीका	ह्यादीसर	५०००	३००	५०	

सामन्तोंके नाम	कुल	वासस्थान	तहसील उसूल रु०	सेनाकी संख्या		विशेष.
				पैदल	सवार	
रावसिंह ...	भाटी	पूगल	६०००	१५००	४०	जैसलमेरके भट्टियों के समीपसे पूगलदेश-को छीन लिया है.
सुलतानसिंह ...	ऐ०	राजासर	२५००	२००	५०	
लखनेरसिंह ...	ऐ०	सनेर	२०००	४००	७५	
करनीसिंह ...	ऐ०	मतीसर	१०००	२००	९	
भूमसिंह ...	ऐ०	चङ्करा	१०००	६०	४	
बीकाके आदि अधिकृत देशके चारों सामन्त हैं ।						
१भानीसिंह ...	भाटी	विहचनाक	१५००	६०	६	
२जालिमसिंह...	ऐ०	गरवियाना	१०००	४०	४	
सरदारसिंह ...	ऐ०	सुरजीरा	८००	३०	२	
कायतसिंह ...	ऐ०	रनदिसर	६००	३२	२	
चंदसिंह ...	करमगांन्	नोरवा	११०००	१०००	५००	११ वर्ष हुए २७ ग्राम जोधपुरके महाराजसे लेकर इन्होंने यहां निवास किया था
सतीदान ...	रूपावत्	वदीलह	५०००	३००	२५	
भूमसिंह ...	भाटी	जांगलू	२५०००	४००	९	
कैतसी .	ऐ०	जामिनसर	१५०००	५००	१५०	
ईश्वरीसिंह ...	मॅडला	सारोंटा	११०००	२०००	१५०	ग्राम संख्या २६
पद्मसिंह ...	भाटी	कुदसू	१५००	६०	४	
कल्याणसिंह ...	ऐ०	नयानिय.ह	१०००	४०	२	
		सब जोड़———	३३१४००	४३५७२	५४०२	

आधुनिक विवरण ।

भूमिकर-कर्नल टाड साहबने महाराज सूरतसिंहके शासनसमयकी बीकानेर राज्यकी आमदनीकी जो सूची प्रकाश की है हमने उसे यथास्थान दिखलाया है। १८८२-८३ ईस्वीमे राजपूत राज्योंके शासनविज्ञापनमें बीकानेरके एसिष्टेण्ट पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है"कि दरबारका कथन है कि गत सम्वत्की आमदनी और खर्चका यथार्थ हिसाब जिलोंसे अबतक नहीं मिला, वह अधूरा रहगया है, इस कारण इस समय राज्यकी ठीक आमदनी और उसके खर्चकी सूची देनेमें दरबार असमर्थ है। गतवर्षमे राज्यकी आमदनीकी अवस्था उत्तम रही है। परगने हनुमानगढ़का भूमि-कर २५००० रुपया और टीवी परगनेका ७००० रुपया वार्षिक २० वर्षसे बढ़ादिया गया है। ऐसा विदित है कि इस समय राज्यकी आमदनी बारह लाख रुपयेकी थी और खर्च भी उतना ही था।" इसको पढ़कर हमारे पाठकगण सरलतासे अनुमान करसकते हैं कि बीकानेरकी आमदनी क्रमशः बढ़गई थी। विशेष करके वर्तमान वर्षमें सामन्तोंके कर बढ़ानेसे इसमें कुछ संदेह नहीं कि आगामी वर्षमे आमदनी अधिक बढ़ जायगी, तब हमें केवल यही कहना है कि जितने रुपयेकी आमदनी होती थी उतने ही रुपयोंका खर्च करदेना किसी प्रकार भी उचित नहीं था। राजभण्डारको धनसे परिपूर्ण करना उचित है। और यह भी सत्य है कि शासन विभागकी उन्नतिके साथ ही साथ खर्चकी भी वृद्धि हुई थी, परन्तु आमदनी देखकर उन्नति करना शोभा पाता है। पोलिटिकल एजेण्टको विश्वास था कि वर्तमान व्यय करनेपर दो लाख रुपया बचत है, यदि यह सत्य है तो अत्यन्त संतोषका विषय होगा।

स्वास्थ्य-मेजर स्वार्टस् उक्त शासन विज्ञापनमें लिखगये हैं कि गत "नवम्बर और दिसम्बर महीनेमे राजधानीमें चेचक रोगका प्रबलतासे प्रादुर्भाव हुआ था। सर्वसाधारण प्रजा टीका लगानेके फलको अनुभव करनेमे असमर्थ है। गतवर्षमे २७२ लोगोंके अंग्रेजी टीका लगाया गया, राजभरकी जनसंख्याके हिसाबसे यह अति अल्प परिणाम है। नगरके स्वास्थ्यके सम्बन्धमें कितने ही उन्नतिमूलक अनुष्ठान किये गये हैं"।

चिकित्सालय-समस्त बीकानेर राज्यमें अथवा राजधानीमे केवल एक चिकित्सालय है। गतवर्षमें वहां ५४ रोगियोंने जाकर चिकित्सा कराई थी और ३६७४ रोगियोंने केवल औषधी लेकर ही चिकित्सा की थी। चिकित्सकोंके वेतन और औषधीके मूल्यके हिसाबमें १४३४ रुपया खर्च हुआ था"।

राजसम्बन्धी मुकदमे—पोलिटिकल एजेण्ट लिखते है, "वर्षमे ३१६ मुकदमें आये थे, और पहिले वर्षके २२७ मुकदमोंका विचार करना बाकी था, इनमेंसे २७१ मुकदमोका विचार होगया है और १८८३ ईस्वीके ३१ मार्चतक ३१७ मुकदमोका विचार करना बाकी है"।

दीवानी विचारालय—" गतवर्षमें बीकानेरकी सदरदीवानी अदालतमें ५८८ नवीन मुकदमें आये थे। पूर्ववर्षके ४२१ मुकदमोका विचार करना बाकी था। इस प्रकारसे सव १०१० मुकदमोंमें गत वर्षमें ६४० मुकदमोंका विचार शेष होगया है बीकाके वंशधर किस प्रकार न्याय प्रिय थे वह इस सूचीसे जाना जाता है।

फौजदारी विचारालय—मेजर रिचार्ड्स लिखते हैं कि "फौजदारी विचारालयके कार्यका विवरण इस सूचीसे प्रकाशित है १२३१ मुकदमे आये इनमेंसे ७१७ मुकदमे कर दिये गये है और ५१४ मुकदमोंका विचार करना बाकी है। सब मिलाकर १०८० अपराधी पकड़े गये है।

कारागारसे दंडपानेवाले	३४० मनुष्य
अर्थ दंडवाले	२५५
छोड़दियेगये	२४६
भागगये	१५
जमानतपर छूटे	१३९
मरगये	१६
देशनिकालेवाले	८
जिनकी खोज होरही है	६१

छोटी कन्याकी हत्याका एक भी अपराध नही हुआ "।

" बीकानेरके कारागारमें निम्नलिखित अपराधी बंदी है।—

जन्मभरके लिये	१३ मनुष्य
१४ वर्षके लिये	५
१२ "	३
१० "	२
९ "	१
८ "	२
७ "	१३
६ "	७
५ "	१४
५ वर्षसे कमतो वर्षके लिये	९८
९ माससे कम समयके लिये .. .	३३
विचाराधीन	२१
	सव २१२ मनुष्य

उपरोक्त बंदियोंमेंसे १९६ पुरुष और १६ स्त्री है। सामन्तोके आधीनके देशोंके जो अपराधी विचार होकर कारागारमे भेज दिये गये थे उनको इस सूचीमे नही लिखा है। हमने नगरका कारागार दिखाया है, देखो कैसा साफ और परिमित है "।

विद्यालय-वीकानेरमें आजतक एक भी राज्यविद्यालय नहीं था। १८८३ ईस्वीमे २७ फर्वरीको राजधानीमे एक विद्यालय स्थापित हुआ है। उस विद्यालयका नाम वर्तमान महाराजके नामसे "डूंगरसिंहकालिज" रक्खागया है। हम कहसकते हैं कि राज्यमे जितना विद्याधन वितरण किया जायगा उतनी ही राज्यकी श्रीवृद्धि होगी, विद्या शिक्षाके विषयमे महाराजको भलीभाँतिसे धन खर्चना कर्त्तव्य है।

पंचम-अध्याय ५.

भटनेरकी आदि उत्पत्ति और उसका नामकरण-भटनेरकी जाटजातिकी ऐतिहासिक श्रेष्ठता-वरसीका छावनी स्थापन करना-मीरोको उत्तराधिकारकी प्राप्ति-उसका मुसल्मानधर्मावलम्बन-रावदुलीच-हुसेनखाँ-हुसेनमुहम्मद-इमाममुहम्मद-वहादुरखाँ-जावताखाँ, देशकी अवस्था-प्राकृतिकपरिवर्तन-प्राचीन प्रसादोंका ध्वसावशेप-पौराणिकखोजप्राणी और उद्भिजतत्व-प्राचीन नगरोंकी सूची-मरुक्षेत्रमें प्राप्त प्राचीनताम्र फलक।

इतिहास लेखक टाड साहवने वीकानेरके इतिहासको समाप्त करनेके पीछे भटनेर देशके सम्बन्धमे एक अध्याय लिखा है। हम उस अध्यायका अनुवाद करके वीकानेरके इतिहासको समाप्त करते हैं, कर्नल टाड साहव लिखते हैं, कि "भटनेर जो इस समय वीकानेरके सम्पूर्णतः अधिकारमें है वह देश बहुत पहिले एक श्रेणीके जाटोका स्वतन्त्र वासस्थान था। वह जाटजाति एक समय इतनी वलवान् थी कि राजाके साथ भी विरोध करके उनको घोर विपत्तिमे डालती थी; और राजाओपर जो शत्रु चढ़ाई करते उस समय उनकी भलीभाँतिसे सहायता करती थी। यह प्रसिद्ध है कि भाटीजातिने ही इस देशका उपनिवेश स्थापन किया था, इसीसे इसका नाम भटनेर हुआ। एक प्रवल वलशाली भाटी राजाने इस राज्यकी प्रतिष्ठा करके यह देश भाटियोंके वंशाधीनरूपसे प्रसिद्ध किया, इसीसे इसका नाम भटनेर रक्खा गया। जैसलमेरके इतिहासमे इस नामकरणके सम्बन्धमे और भी एक विवरण देखागया है। भाटियोंके इतिहाससे जानाजाता है कि भाटी जातिने यहाँ उपनिवेश स्थापन किया था, इसीसे इस समय इसका नाम भटनेर हुआ है, परन्तु भाटीजाति इस राज्यकी आदि प्रतिष्ठाता नहीं है। समस्त उत्तरांश "नेर" नामसे विख्यात हुआ है। यह 'नेर' शब्द मरुस्थलीका प्राचीन नाम विशेष है। जब भाटीजातिके कितने ही मनुष्योंने मुसलमान धर्म अवलम्बन किया तब उनको आदि भाटीजातिसे विभिन्न करनेके लिये भाटी नाम रक्खा गया"।

कर्नल टाड साहवने पीछे लिखा है, कि भटनेरके आधीनका भूखंड और उसके उत्तराँचलमे स्थित जो पृथ्वी गाड़ा नदीके किनारेतक गई है, वह भूमि इस समय जनशून्य अवस्थामें पड़ी हुई है, परन्तु पूर्वकालमें ऐसी जनशून्य नही थी, हमने यहांपर कितने ही प्राचीन समयके नगरोंकी सूची प्रकाशित की है वह नगर पूर्वकालमे

विशेष: प्रसिद्ध थे; और उनके पूर्वगौरवके चिह्न आजतक विराजमान हैं, उन नगरोंके इतिहासको विचार करनेसे अवश्य ही हमारे इस मन्तव्यके बहुतसे प्रमाण मिल सकते हैं"।

"इस भटनेर प्रदेशने मध्य एशियासे भारतवर्षके आक्रमणके मार्गमे स्थापित होकर विशेष प्रसिद्धि प्राप्तकी है। इस जाटजातिने गजनीके महम्मदके साथ सिन्धु-नदीमें जलयुद्ध करके उसके भारतमें प्रवेश करनेमे विघ्न डाला था, इस जातिके पूर्व पुरुषोंने उक्त समरके बहुत समय पहिले मारवाड़ और पंजाबमे उपनिवेश स्थापन किया था, हम जब उनको ३६ राज्यघरानोमेकी एकजातिरूपसे देखते हैं तब हम सरलतासे अनुमान करसकते है कि भारतविजेता गजनीके सुलतानसे बहुत शताब्दी पहिले इन जाटोंने प्रबल राजनैतिक सामर्थ्य प्राप्त की थी। शहाबुद्दीनके भारतवर्षपर अधिकार करनेके बारह वर्ष पहिले अर्थात् १२०५ ईसवीमें शहाबुद्दीनका स्थलाभिषिक्त कुतबउद्दीन स्वयं उत्तर मरुक्षेत्रके जाटोंके विरुद्ध युद्धभूमिमें गया था, कारण कि उस समय जाटोंने यवनोंके अधिकृत हासी देशको बलपूर्वक छीन लिया था। फीरोजकी उपयुक्त उत्तराधिकारिणी हतभागिनी महारानी रजिया बेगम जिस समय सिंहासन छोड़नेको बाध्य हुई थी उस समय वह जाटोकी शरण गई और जाटोंने इसको आश्रय दिया और प्राचीन टिमिरियोंके समान घाईकारियोके साथ मिलकर रिजियाके आधीनमें उसके शत्रुओंके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये वे अग्रसर हुए, परन्तु दुर्भाग्यका विषय है कि रजिया शत्रुओंको बदला देनेमे समर्थ न हुई, केवल वह रणक्षेत्रमें जीवन देकर अपने गौरवको बढ़ागई। फिर १३९७ ईसवीमें जिस समय तैमूरने भारतवर्षपर अधिकार किया, उस समय उसने अत्यंत क्रोधित हो भटनेरपर आक्रमण किया। आक्रमणका कारण यह था कि तैमूरने जिस समय मुलतानपर आक्रमण किया था उस समय जाटोंने उसके विरुद्ध विषम बाधा देकर उसको अस्तव्यस्त कर दिया था। तैमूरने उसी क्रोधसे स्वयं सेना सहित भटनेरपर आक्रमण कर जाटोंको भयंकररूपसे निगृहीत किया। सारांश यह है भट्टि और जाट इस प्रकारसे परस्पर मिले हुए थे कि उनको दो जाति कहना कठिन था। हमारी इस प्रश्नकी भाटियोंके इतिहासमे विशेष रूपसे समालोचना करनेकी इच्छा थी, पर जिस समय राठौर जातिकी शासनशक्तिका इस भटनेरपर विस्तार हुआ, हम उस समय भटनेरके उस समयके इतिहासको वर्णन करनेके लिये प्रवृत्त हुए हैं"।

कर्नल टाड् साहबने इतिहासके सम्बन्धमें लिखा है, "कि तैमूरके आक्रमण करनेके कुछ काल पीछे मरोठ और फूलरा स्थानकी एक सम्प्रदायने भाटियोंके नेता बैरसीहके आधीनसे बाहर होकर भटनेरपर अधिकार करलिया था, उस समय एक मुसल्मान भटनेरका शासनकरता था। वह तैमूरके आधीन था। या दिल्लीके बादशाहके आधीनमें यह कुछ विदित नहीं हुआ, परन्तु यह अनुमान है कि वह तैमूरके आधीन हो, इस यवन अधीश्वरका नाम चिगातखाँ था। इसने जाटोंके भटनेरपर अधिकार करलिया था"।

बैरसी सत्ताईस वर्षतक भटनेर पर राज्यकरके परलोकवासी हुए। उनके पुत्र भीरो भटनेरके अधीश्वर हुए। भीरोके शासन समयमे चिगातखाँके उत्तराधिकारीने दिल्लीके यवनसम्राट्की सहायता लेकर बरावर दो बार भटनेरपर आक्रमण किया, और दोनों बार वह भागगया; बैरसीके वंशधरोंने उसकी यथेष्ट हानि की ! परन्तु तीसरी बार प्रबलपराक्रमके साथ आक्रमण करके चिगातखाँके वंशधरोंने भटनेरको घेरकर भीरोको घोरविपत्तिमे डाला। भीरोने दीर्घ कालतक अपनी रक्षा करके अन्तमे जब देखा कि भोजनके अभावसे सेना सहित प्राण त्यागनेकी पूर्ण सम्भावना है तब उसने संधिकी सूचना देनेवाली सफेद पताका किलेपर लगादी, और अपने किलेकी रक्षाके लिये आक्रमणकारियोंके पास संधिका प्रस्ताव भेजा। आक्रमणकारियों ने कहलाभेजा कि यदि आप मुसल्मानधर्मको अवलम्बन करैं, अथवा अपनी कन्याको दिल्लीके बादशाहके करकमलमे समर्पण करै, तो आपका राज्य विध्वंश नही किया जायगा। भीरोने इस घोर विपत्तिमें पड़कर अपनी प्राणरक्षाका अन्य कोइ उपाय न देखकर शीघ्र ही यवनधर्मको स्वीकार करलिया। उसी दिनसे यवनधर्मी भट्टीजातीय भीरोके वंशको भट्टिजातिसे पृथक् करनेके लिये उनका भट्टी नाम रक्खा गया है। भीरो के पीछे और भी छः वंशधरोंने क्रमानुसार इस प्रकारसे यवन होकर भटनेरका शासन किया था। भीरोसे छठे पुरुष रावदुलिच उर्फ़हयात्खाँ जिस समय भटनेरके सिंहासनपर विराजमान थे, उस समय बीकानेरके अधीश्वर महाराज रायसिंहने भटनेरपर अधिकार करलिया। भटनेर बीकानेरके आधीन होगया। भीरोके वंशधरोंने खाँनगढ़ फतेहाबादमे जाकर निवास किया।हयात्खाँको मृत्युके पीछे हुसेनखाँ नामक उसके पोतेने राजा सुजनसिंहके पास फिर भटनेरको अपने अधिकारमे करलिया। हुसेनमुहम्मद और इमाममुहम्मदके समयतक यह देश उनके अधिकारमें था, शेषमें महाराज सूरतसिंहने बहादुरखाँके शासन समयमे इस भटनेरको फिर अपने अधिकारमें करलिया"।

साधू टाड साहबके समयमे जाबताखां इस देशका अधीश्वर था, महाराज सूरतसिंहने उनको विताड़ित किया, बीकानेरके इतिहासमे इसका वर्णन कियागया है। उसी जाबताखांके सम्बन्धमें महात्मा टाड साहब लिख गये हैं, जाबताखाँ जो इस समय रेनी नामक स्थानमे निवास करता है, इस समय केवल पचीस ग्रामोका भोक्ता है। बीकानेरके रायसिंहने अपनी रानीके नामसे इस रेनी नगरको बसाया था इमाममुहम्मदने इसको अपने अधिकारमें करलिया था। जाबताखांने इस ससय चोरी डकैती करके तीन लाख रुपया वार्षिक संग्रह करलिया था। इसके अत्याचार और लूटमारके भयसे समस्त दरिद्र जाट धन और प्राणके मारे सदा शंकित रहते थे, इसके अधिकारी देश वृटिश राज्यकी सीमामे स्थापित थे, इसको वहाँ चोरी करनेका साहस

(१) कर्नल टाड साहब अपने टीकेमें लिखते हैं सम्वत् १८५७–१८०१ ईसवी में विख्यात वीर जार्जटामसने तीन लाख रुपये पाकर कुछ दिनके लिये इस देशको भाटियोंके आधीनमें कर दिया था, परन्तु पिछले वर्षमें राठौरोंने फिर अपने अधिकारमें कर लिया"।

न हुआ, तब उसने उत्तरांशमें चोरी करनी प्रारम्भ की। उसी कारणसे उत्तरांश जनशून्य होगया है, एक समयमें इस देशके खेतोंमें बहुतसे पशु चरा करते थे। बीकानेरकी उत्तर सीमासे गाड़ नदीतकके देश अधिक उर्वर थे और इनके निकटही जलपानेका विशेष सुभीता था, इन विस्तारित खेतोंमें बालुकामय भूधरमालाका नामतक नहीं है, इसीसे यहाँ कृषिकार्यमे विशेष सुभीता था, अनेक शताब्दी बीतनेपर कगर और हाकड़ा नदी सूख गई, ऐसा विदित होता है कि इसी कारणसे यह देश जनशून्य होगया है और ऐसा भी लोग कहते है कि यह नदी पूर्वकालमें पश्चिमकी ओरको फूलरा होकर गई थी। उस फूलरामें नदीका चिह्न आजतक विराजमान है। फूलरा होकर वह नदी उच्च नामक स्थानमें सिन्धुनदीके साथ मिलगई थी। नेर अर्थात् मरुक्षेत्रकी बालुकामय भूधरावलीसे यह नदी घाटके अधीश्वर राव हमीरके शासनसमयमे लुप्त होगई थी; कविकी गाथामें उसकी ऐसी ही कीर्ति है। यदि कोई अंग्रेज भ्रमण करनेको इस भारतीय मरुक्षेत्रमें जाय तो वह अमरकोटेके निकटवर्ती चोर नामक स्थानके अत्यन्त प्राचीन सोढ़ाराजके वंशधरोको देखेगा और यदि उस राजवंशके कवि जीवित रहे तो उस कविके मुखसे इस स्मरणीय इतिहासके अनेक विवरण उक्त घटना सन् तारीखके हिसाबसे सरलतासे जाने जासकेगा, कि इस देशका उक्त प्राकृतिक और राजनैतिक परिवर्तन किस प्रकारसे हुआ था। अत्यन्त प्राचीन कालके प्रधान २ नगरोंका मूल चिह्न आज भी इस देशकी बालुकाके गर्भमें विराजमान है। उन सब चिह्नोंसे सरलतासे उक्त प्रवाद प्रमाणित होता है। और उस नगरमें भटनेरकी पश्चिमी सीमामे स्थित पूर्वोक्त रंगमहल इत्यादि जो भूगर्भमें स्थित कक्षादि आजतक श्रेष्ठ अवस्थामे थे जो सब ऐतिहासिक घटनासे पूर्ण थे वह भी सरलतासे जाने जासकते हैं, भटनेरके साढ़े बारह कोश दक्षिण सीमान्तवर्ती ढूंढूसर नामक स्थानके एक अत्यन्त वृद्ध निवासीने हमारे प्रश्नके उत्तरमे उक्त देशकी प्राचीन अवस्थाके सम्बन्धमें कहा है, कि जब पँवारवंशके महाराज इस समस्त देशको शासन करते थे, तब सिकन्दररूमीने आकर उनपर आक्रमण कर इस देशको विध्वंश करदिया था"।

कर्नल टाड् साहब लिखगये है, कि "हमारे राज्यकी पश्चिम सीमाके अन्तमे हांसी हिसारसे उसने इस देशमे गमन किया था। उपरोक्त सम्बन्धके प्रवाद वाक्य कहांतक सत्य है उनकी परीक्षा की जा सकती है। प्राचीन प्रमारजातिके महलोंके ध्वंसावशेषका अनुमान होसकता है परन्तु और भी पश्चिम प्रान्तके मरुक्षेत्रके सम्बन्धमें भी इस प्रकारके प्रवाद प्रचलित है, इस प्रकारके टूटेफूटे महल अबतक विराजमान है प्रवाद मुखसे प्राचीन राजधानीका नामतक सुनाजाता है, परन्तु उसका कोई चिह्न इस समय दृष्टिगोचर नही हुआ। उक्त देशमे बड़ी सरलतासे जाया जासकता है, मार्गमें जातेहुए कोई कष्ट नहीं होता। यह भ्रमण करनेवालोंके लिये अवश्य ही प्रीतिकारक है। इस स्थानमें जानेसे राजपूतानेके उत्तर मरुक्षेत्रके अनेक प्राचीन तत्व बड़ी सरलतासे ज्ञात होसकते हैं। और वहांके अनेक प्रकारके प्रवाद तथा भिन्न २ जातिके अनेक विधिके सामाजिक आचार व्यवहार खोजकरनेवालोंके लिये विशेष लाभकारी है।

यद्यपि इस देशमे उद्भिज और पशु अत्यन्त अल्प हैं, परन्तु यहांका कृषिकार्य बड़ी सरलतासे होता है, और गंगाजीके किनारेके देशोंकी अपेक्षा यह देश उद्भिद है; तथा प्राणियोकी श्रेणियां भिन्नतासे देखी जाती हैं. कहागया है कि अफरीकाके विश्वविदित मरुभूमिके साथ यहांके प्राकृतिक दृश्य और स्वभाव जाति द्रव्योंके अनेक अंशोकी तुलना यहांसे होसकती है। भट्टि, खोसा, राजड़ सराई. मांगलिया, सोढा और अनेक जातिकी श्रेणियां खोजकरनेवालोके लिये उपयुक्त हैं जीवतत्त्वज्ञाता मनुष्य यहांके मनुष्य समाजके आचार व्यवहार और प्रयोजनीय विवरणको संग्रह करनेके पीछे ग्राम्यपशुसे तत्त्वानुसंधान करसकते हैं। यहा वनैले गधे और प्रत्येक श्रेणीके हरिण आदि पशु हैं, यहाँकी भैंसे साधारण तृणका आहार करके डेढ़ महीनेतक जल नहीं पीती, यहाँ लवणह्रद है और अनेक श्रेणियोंके धान्य उत्पन्न होते हैं यहाँके मनुष्य विलासी नही है, और उनमे सभ्यताके अनेक चिह्न पायेजाते हैं। यहाँके वर्तमान निवासी वृक्षोकी शाखाओंसे कुटी बनाते हैं। कुटीका नाम झोंपड़ा है। कुटीको भीतरसे मिट्टीसे लीपते हैं। यह कुटी अफरीका निवासियोकी कुटीकी अपेक्षा श्रेष्ठ हैं"।

साधू टाड् साहबने इस देशके प्राचीन नगरकी निम्नलिखित सूची प्रकाशित की है,–

आभोर, वंजारे, वंजारेका नगर रंगमहल सोढ़ल वा सूरतगढ माचोतल, रायतीवंग, कालोवंग, कल्यानसर फूलरा मरोट तलवारा गिलवारा, बुन्नी, मानिकखर सूरसागर, भामेलो, कोरीवाला कालधरानी। फूलरा और मरोटतदेश आजतक प्रसिद्ध है; पहिले अत्यन्त प्राचीन और पवांरवंशियोके आदि शासनके समयमे इसकी गणना नाकोटी मारुकामें हुई थी। जैनियोंके प्राचीन शलाका मुख्य अक्षरोसे अंकित ताम्रफलक यहाँ बहुत मिलते हैं, मरुक्षेत्रके दुर्लभा नामक स्थानमे हमने इस प्रकारका एक तांबेका अनुशासन पत्र पाया था। नौ शताब्दीके बीत जानेपर वह देश विध्वंस होगया है। फूलरादेशमें लाखाफूलानी निवास करते थे, मरुक्षेत्रके इतिहासमे पाठकगणोके सम्मुख उनका नाम भली भाँतिसे विदित है। लाखाफूलानी अनहलवाराके सिद्धराय और धारके उदयादित्य एक समयके हैं"।

इतिहासवेत्ता टाड् साहबने भटनेरके जिस इतिहासका वर्णन किया है, हमने ऊपर उसका वर्णन किया। भटनेर देशकी सीमा यद्यपि वड़ी नहीं है, परन्तु इसमें कुछ भी संदेह नहीं कि यह एक अत्यन्त प्राचीन राज्य है। टाड् महोदयने सभी प्राचीन नगरोकी तालिकाको प्रकाश किया है, समयके प्रभावसे इस समय वह सब लुप्त होगया है, स्थान २ पर टूटेफूटे जो चिह्न विराजमान है, टाड् साहबके उपदेशके मतसे खोज करनेवाले यदि उन सब विध्वंस हुओकी परीक्षा करनेमे अग्रसर होंगे तो अनेक प्राचीन तत्त्व प्रकाश हो सकते हैं। मरुक्षेत्रमे राठौरोकी शासन शक्तिका विस्तार होनेके बहुत शताब्दीके पहिले प्रमरवंशीय राजा इस देशमें प्रवल प्रतापके साथ राज्य करते थे, और उनके बाहुबलने एक समय समस्त भारतवर्षको

कम्पायमान कर दिया था। मेसोडोनियाके भुवन विदित वीर अलिकजंडरने इस देशके अधीश्वरके साथ बाहुबलकी परीक्षा की थी, आज भी उसी प्रकार जनरव सुनाई देता है तब सरलतासे स्वीकार किया जा सकता है। कि इस देशके अधीश्वर सामान्य बलशाली नहीं थे। कर्नल टाड् साहबने इस बातको स्वीकार नही किया कि अलिकजंडर इन देशोंमें समरके लिये आये थे, परन्तु हम कह सकते हैं कि जब सहस्रों लोगोमें यह बात प्रचलित है कि "सिकन्दररूमीने रंगमहल इत्यादिको विध्वंस किया है, तब उस प्रवादमें कैसे अविश्वास कर सकते है?

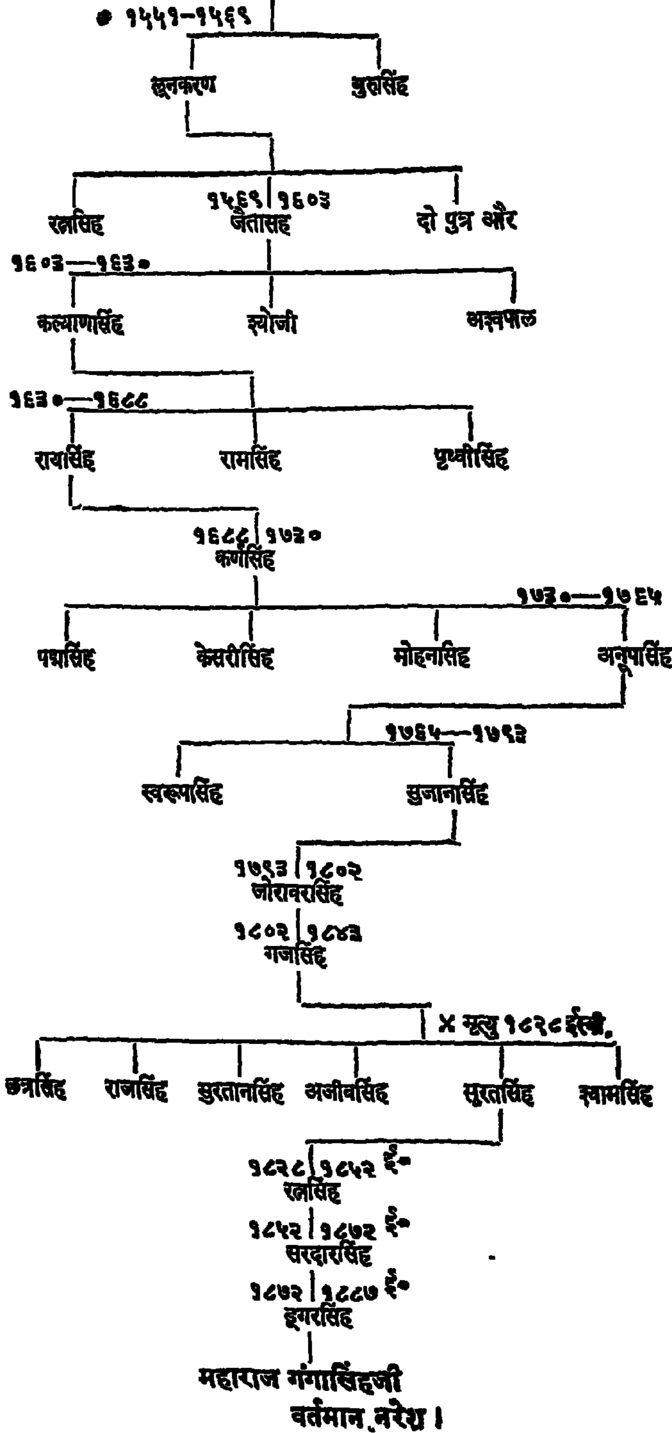
अलिकजंडरने भारतजयके अभिप्रायसे वीरसाजसे आकर जो वीरता दिखाई थी, उसका विस्तार इतिहासकी भिन्न पुस्तकमें पाया जाता है। उसने जो रंगमहल विध्वंस किये यह किसी इतिहासमे प्रकाशित नहीं किया इसीसे कर्नल टाड् साहबने इसके सम्बन्धमें सन्देह प्रकाश किया है। परन्तु हमें विश्वास है कि अलिकजंडर भारतविजयके लिये जिस मरुक्षेत्रमे आया था, उनमेसे प्रधान २ समरके अतिरिक्त अन्यान्य युद्धोका विवरण इतिहासवेत्ताने वर्णन नही किया। वे कट्टियाके जिस ग्रीक-वंशीयने रंगमहलपर आक्रमण किया था, उसका भी कोई प्रमाण किसी इतिहासमें नही पायाजाता। इस अवस्थामे हम किस प्रकार अनुमानके द्वारा सिद्धान्त कर-सक्ते हैं कि अलिकजंडरने रंगमहलपर आक्रमण नही किया? जब कि सैकड़ों वर्षसे यह बात प्रचलित है कि सिकन्दर रूमीने इस देशको जीतकर स्वयं अपने बाहुबलसे इस दृष्टान्तकी रक्षा की थी, तब अन्य प्रमाणोंके अभावमे वह प्रवाद ही ग्रहण कर-नेके योग्य है।

भटनेर इस समय वीकानेरके अधिकारमें है। यद्यपि इस देशकी अवस्था इस समय अधिकतासे वदल गई है, परन्तु ऐसी कोई विशेष राजनैतिक घटना नहीं हुई कि जिसके विस्तार सहित उल्लेख करनेका प्रयोजन हो; इस कारण हमने इस स्थानपर वीकानेर राज्यके इतिहासका उपसंहार किया।

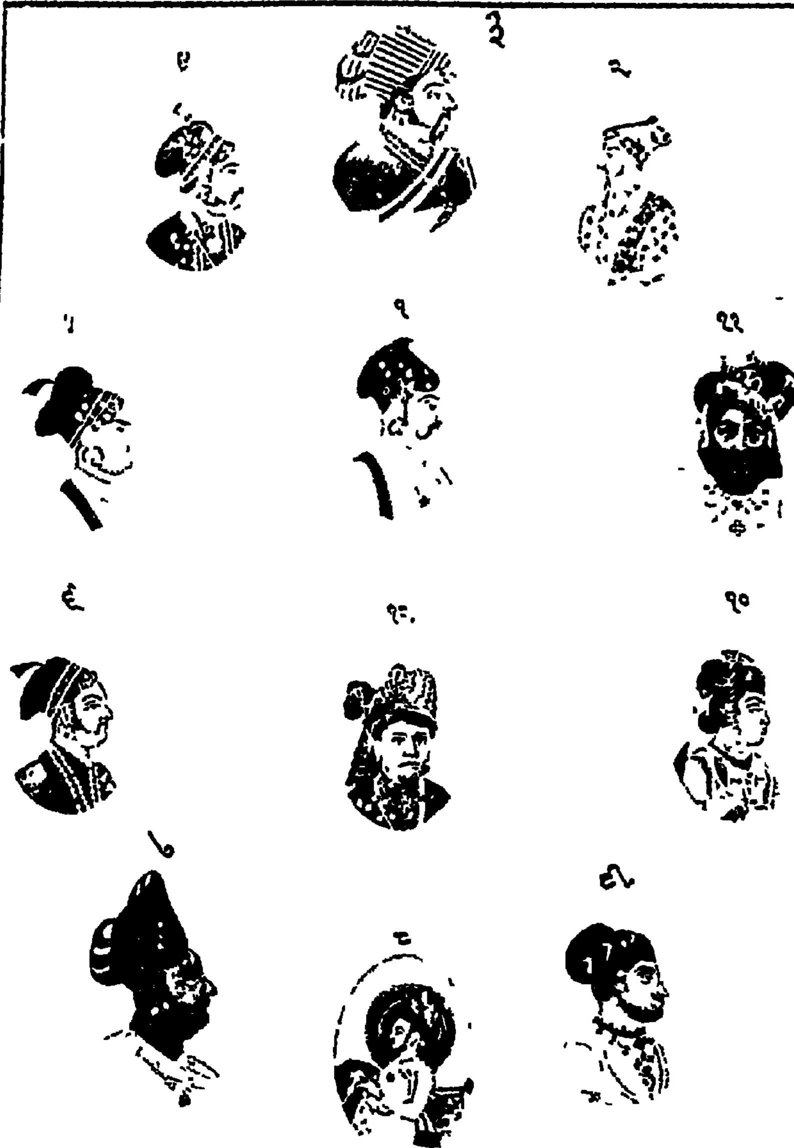
वीकानेरका इतिहास समाप्त।

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस-बंबई.

बीकानेरके राज्य वंशका कुरसीनामा.



* पहला संवत राज्याभिषेकका और दूसरा मृत्युका है. × यहासे सन ईस्वी आरंभ होता है.



जैसलमेर।

(१) भीमसिंह, सन नहीं मालुम
(२) सावलसिंह,—,,—
(३) अमरसिंह,—,,—
(४) जसवन्तसिंह, १७०२
(५) बुधसिंह, (बुधों राज राज दिया)

(६) तेजसिंह, (गुरुदर) यो शख्स कि जो विना अधिकार सिर्फ़ राज पाट छीन ले—
(७) अखैसिंह, १७२२
(८) मूलराज १७६१

(९) गजसिंह, १८७०
(१०) रणजीतसिंह, १८९६
(११) बैरीसाल, १८५९
(१२) महारावलशालि वाहन १८९१

राजस्थान.

दूसराभाग.

जयसलमेरका इतिहास.

॥ श्रीः ॥

राजस्थानका इतिहास.

दूसराभाग २.

जयसलमेरका इतिहास.

प्रथम अध्याय १.

प्रस्तावना-जयसलमेर राज्यके प्राचीन नाम-जयसलमेरके भाटी राजपूतोंका यदुवंश सम्भूत प्रमाण-भारतवर्षके अधीश्वर भरतसे इस वंशकी उत्पत्ति-प्राचीन भारती गणोंकी समुद्र यात्रा-यदुवंशका आदि नगर प्रयाग, मथुरा, और द्वारका, उनका अन्तर्जातिक समर-यदुवंशके नेता मथुरा द्वारकापति श्रीकृष्णवंशका विस्तार-उनके प्रपौत्र नाभ और खीरका द्वारकासे निकाले आकर, नाभ द्वारा मरुस्थलमें राज्य स्थापन करना जाडेचा और यदुभान-नाभके परलोक जानेपर मरुक्षेत्रमें प्रतिवाहुका अभिषेक-उनके पुत्र-सुबाहु राजा गज-उनके द्वारा गजनी स्थापन-सीरिया और खुरासानके दोनों अधीश्वरोंद्वारा राजा गजका आक्रान्तहोना-दोनों अधीश्वरोंकी पराजय-राजा गजका कश्मीरपर आक्रमण-उनका विवाह-खुरासानके पतिका दूसरी बार आक्रमण-गजकी मृत्यु-गजनीका अधिकार-कुमार शालिवाहनका पंजाबमें आगमन संवत् ७२ में उनके द्वारा शालिवाहन नगरका स्थापन-पंजाब विजय-दिल्लीके तूंवरवंशीय जयपालकी कन्याका पाणिग्रहण-फिर गजनीपर अधिकार-बालन्दका अभिषेक-उनके बहुत वंशधर-उनकी देशविजय-बालन्दको शालिवाहन नगरमें निवास-उनके पुत्र चाकितोंको गजनी देना-चाकितोंका मुसल्मान धर्म अवलम्बन-खुरासानके सिंहासनपर अभिषेक-चाकितोंसे एक सम्प्रदाय मुगलकी उत्पत्ति-बालन्दकी मृत्यु-उनके पुत्र भट्टीका राज्याभिषेक-यदुवंशके परिवर्तित भाटीवंशका नामकरण-मंगलरावको राज्यप्राप्ति-उनके भ्राता मनसूर राव और पुत्रोंका गारानदीके पार होना और लक्खी जंगलपर अधिकार-मंगलरावके पुत्रोंकी जातिका नाश-उनके राजपूत नामका लोप-उनके वंशधरोंको आभीरिया और जाटकी उपाधि प्राप्ति-तक्षक जाति-तक्षशीलकी राजधानीका आविष्कार, मंगलरावका मरुक्षेत्रमें आगमन-मरुक्षेत्रमें तत्कालीन जातिसमूह-मंगलरावके पुत्र मंडमरावके साथ अमरकोटके महाराजकी कन्याका विवाह-उनके पुत्र केहर-जालोरके देवराणोंके साथ मित्रता-तणोटकी प्रतिष्ठा केहरका अभिषेक-बाराह जातिका तणोटपर अधिकार-संवत् ७८७ में तणोट निर्माण समाप्ति-बाराह जातिके साथ संधिबंधन-समालोचना।

उद्दीप्तदिनमणिकी तीक्ष्ण किरणैं, शरदृतुके चन्द्रमाकी स्निग्ध चन्द्रिका, सुखशांति धनधान्यसे भरे भूलोकमें जिस प्रकार परिपूर्ण देह होकर महादेवकी अशेष महिमाकी घोषणा कर रही है एक समय इसी स्वर्णभूमि भारतवर्षमें उसी प्रकारसे उन चन्द्र सूर्यके वीरव्रतावलम्बी वंशधर क्षत्रिय नरपतियोंकी वीरता, उद्दीपना, साहस, शूरता और उन्नति ऊँचे शिखरपर पहुंच गई थी। परन्तु हाय! वह क्षत्रिय कुलका भारत, वह अर्जुन, कर्ण, दुर्योधनवाला भारत, वह दिलीप, अज, राम, लक्ष्मणका भारत आज अवनतिके नीचे पड़ाहुआ है। जो चन्द्रमा और सूर्य आकाशरूपी विमानमे वैठेहुए एक समय आनंदित नेत्रोंसे भारतक्षेत्रमें अपने २ वंशधरोंकी वीरलीलाको देखकर भीतर ही भीतर संतोप पाते थे, हाय! इस अनन्त शून्यमें वह चन्द्रमा सूर्य विराजमान है, इस भारतमें उनके वंशधर आज भी राजदंडको धारण कर रहे है, परन्तु हाय! कैसा हृदयभेदी विचित्र दृश्य है! जो सूर्य और चन्द्रवंशीय क्षत्रिय सैकड़ों वर्ष पहिले मध्याह्न सूर्यकी समान जगत्में विराजमान रहते थे, वही वीरवंशधर आज अस्त हुए दीपककी समान पड़े है। वाल्मीकि-वेदव्यासजी मधुर शब्दकारिणी वीणासे जिस चन्द्र सूर्यवंशकी कीर्तिगाथाको कीर्तन करगये है, जो गाथा आज भी इस अनन्त श्मशानमे परिणत हुए भारतमें पूर्व स्मृतिको जागरित करके मृतसंजीवन मंत्रके प्रचार करनेमें समर्थ है, हाय! उन्हीं दो वीरवंशोंके गौरवको गरिमा आज प्रवाद वाक्यसे परिणत है! जिस गौरव गरिमाका सोता उत्ताल तरंग मालाकी समान समस्त जगत्मे व्याप्त होरहा था, हाय! उसी विशाल गौरवगरिमाका सूर्य आज सूखा हुआ पड़ा है! अनन्त श्मशानमें वह वीर जाति मानो आज अनन्त निद्रामें सोरहा है। केवल मनोहारिणी आशा मानो क्षीण स्वरूपसे कहरही है प्रतीक्षा-और क्रिया-इसीको धारण करो।

विश्वविदित अत्यन्त प्राचीन दो वीर क्षत्रियवंशोंके इतिहासको वर्णन करनेके पहिले हम इस समय और भी एक प्राचीन पवित्र वीरवंशके भूपाल कुलका इतिहास वर्णन करनेमें प्रवृत्त हुए है। जिस पवित्र देववंशने एक समय समस्त भारतमे अपनी शासनशक्तिका विस्तार कर असीम गौरव उपार्जन किया था। जिस वंशके राजा इतिहासकी गोदीमें अपने २ अकथनीय वल विक्रम और नीतिज्ञता देकर धर्ममूलक अगणित कार्य कलापके विवरणको हीरेके अक्षरोंमे गूँथगये है वही चंद्रवंश इस समय हमारा अवलम्बन है। जिस पवित्र चंद्रवंशमें श्रीकृष्ण भगवानने जन्म लेकर भारतमें अनन्त लीला की थी; जिन हरिका नाम लेकर आज भक्तवृन्द मतवाले होरहे है, उन्ही हरिका वंश वर्णन करनेके लिये हम आगे बढ़े है नदियाकी निमाई जीने जिन हरिके नामसे एक समय केवल वंगविहार उडीसा ही नहीं वरन समस्त भारतवर्षमें प्रेमभक्तिका अनन्त सोता वहादिया था; विश्वजननीका भ्रातृभाव विस्तार करके पापी, तापी, साधु भक्तको एक प्रेमकी जंजीरमें बाँधकर भक्तिमंदार प्रफुल्लित किया था, शाक्त, शैव, म्लेच्छ; और मुसल्मानको भी जिस मधुर हरिनामके गुणने एक जातिमें परिणत किया था, आज उन्नीसवीं शताब्दीका निराकार उपासक दल, "जलमें हरि, स्थलमें हरि, अनन्त आकाशमें हरि" मानकर जिस विश्वजयी

हरि नामके माहात्म्य कीर्तनमे मग्न हैं, विधर्मी देशीय ईसाई परिणामके एकमात्र सार धन हरि नामका उच्चारण करनेके लिये ईस शब्दके साथ जिस हरि नामको मिलाकर "ईस् हरि" क ह खड़ताल बजाकर कीर्तन करते हैं, उन्हीं हरिके वंशावतंस राजकुलकी कथा इस समय हम वर्णन करते है । अंग्रेजी शिक्षक युवक पाठक!-तुम्ही कहो "कि ब्राह्म ईसाई दयानन्दी उन मोरमुकुटधारी वंशीधरका नाम दूसरी प्रकारसे लेते हैं वा नही ? हम इस वातको मस्तक झुकाकर स्वीकार करते हैं । वाल्मीकिने जिस भाँति नारदजीसे उपदेश ले अपनी मुक्तिका द्वार खोलनेके लिये "मरा मरा" शब्द उच्चारण करके गुप्तभावसे जंगलमे राम नाम कीर्तन किया था, हम इस वातको कहते हैं कि ब्राह्म ईसाई इसी प्रकार उस भावसे क्या हरि नाम कीर्तन नहीं करते है उस नामके गुणसे उनके परिणामका मार्ग स्वच्छ होता है । हरि स्वय कहगये हैं कि "मुझे जो जिस भावसे पुकारता है मैं उसको उसी भावसे दर्शन देता हू; उसी भावसे उसकी कामना पूर्ण करता हूं" । इसीसे कहता हूं कि सिख, ईसाई मुसलमानतक दयालु हरिके नामको जिस भावसे उच्चारण करते है हरि उसी भावसे उनकी कामनाको पूर्ण करते हैं ।

विजातीय भाषाके शिक्षित उन्नीसवी वीसवीं शताब्दीके दुहाई दाता अभक्त हिन्दू, मुसल्मान, ईसाई, ब्राह्म, नास्तिक-तथा अद्भुतजीव ! उन्हीं हरिका नाम लेकर शरीरको कंपित कर अवज्ञाके स्वरसे कहते है कि "श्रीकृष्ण लम्पट थे, यह कभी ईश्वरका अवतार नही हो सकते" । हम कहते है कि यह तुम्हारी विजातीयताकी भ्रान्ति है । ज्ञान कहता है कि इस ससारके प्रत्येक स्त्री पुरुष प्रकृतिके प्रतिकृतिस्वरूप हैं । पुरुष प्रकृति सर्वमय है । स्त्री पुरुषोके देहमे आत्मा पुरुष प्रकृतिका मंगलमय है-शांतिमय-पवित्रमय छायामे पड़ा है । स्त्री पुरुषोकी छोटी शक्ति उस अनन्त शक्तिके साथ जडित है । जो स्त्री पुरुष उस अनन्त शक्तिके साथ अपनी उस अत्यन्त छोटी "अस्तित्व" शक्तिको मिलाकर पृथ्वीमण्डलपर विराजमान करते है, वही स्त्री पुरुष देवता और देवी हैं, और जो मानव मानवी अपने शरीरमे आत्माकी उस महान् शक्तिके अस्तित्वको अनुभव करनेमे समर्थ न होकर अपनी छोटी "अस्तित्व" शक्तिका एक वार प्रवल कर कुमार्गमे चलते हैं, उसी महाशक्तिको लेकर वे मानव मानवी इस ससारमें दानव दानवी हैं । तुम यदि अपनी देहमे आत्मामे ईश्वरका अस्तित्व स्वीकार करते हो तव तुम किस प्रकारसे कह सकते हो कि ईश्वर सर्वव्यापी है ? ईश्वरकी व्यापकता क्या इससे सीमावद्ध नहीं होसकती, तुम अवतारवादको स्वीकार नहीं करतेहो, इसमे कुछ हानि नही है । परन्तु ज्ञान इस वातको कहता है, कि अनन्त शक्तिके साथ मनुष्यकी छोटी शक्ति पवित्रताके वलसे मिलकर मनुष्यको देवता करदेती है, इस लिये तुमको स्वीकार करना होगा कि महान् शक्तिके साथ श्रीकृष्णकी शक्तिने जटित होकर उनको देवतारूपसे ससारमें पूजित करदिया है । पर यह वात कुतार्कियोके निमित्त है हमारे सिद्धान्त और वैदिक मर्मसे श्रीकृष्ण साक्षात् ईश्वर हैं, और प्रेमिक भक्त साधु ज्ञानके नेत्रोसे देखते हैं कि, हरि सव जीवोंके आश्रय हैं हरिका नाम संसारमे सार धन है, हरि स्वयं ईश्वरके अवतार हैं ।

ईश्वरको न माननेवाले ! नास्तिक ईश्वरके अस्तित्वको सम्पूर्णरूपसे स्वीकार नही करते। जो कहते है कि सृष्टिसे यहां तक जिसको ईश्वर कहते है वह अज्ञात और अज्ञेय है। उनके गुरुदेवने बहुत (५) हजार वर्ष पहिले भारतमे यह बात कही थी; फिर उसका खण्डन भी नही होगया है, भक्तको हरि कह गये है-"मै दुर्ज्ञेय हूं प्रेम भक्ति ये ? और पवित्रताके विना कोई मुझे नही पासकैगा"। जब ऐसा है तब केवल युक्तिके प्रकाशसे उस दुर्ज्ञेय पदार्थको कौन जान सकैगा। प्रेम भक्ति योग साधना और पवित्रताके अतिरिक्त उस दुर्ज्ञेय हरिका दर्शन प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है, नई सभ्यतावाले! तुम्हारा गुरुदल उस प्रेम भक्ति योग साधन भजन पूजनसे रहित है, इसी लिये तुम्हारे शिक्षक गण केवल आधे मार्गमे जाकर अन्धकारमें घूमते २ फिर अपने स्थानको लौटआते है। तुम भी उनका अनुकरण करते हो। तुम अहंकारसे गर्जन करके कहोगे "कि क्या मिल, कौमल, कार्लाइल, स्पेन्स इत्यादि विश्वविदित गाढ़ पण्डित विख्यात वैज्ञानिक प्रशंसनीय नैयायिकोको भी भ्रांति हो सकती थी?" तो भक्त भी कहते है कि यदि पण्डित होकर अभ्रान्तता स्वीकार करै तो पूर्वतन ऋषि मुनि जो एक २ गाढ़ पण्डित थे उनका मत अभ्रान्त क्यो नहीं मानते, उन्हींके मतके अनुसार ईश्वरका अस्तित्व स्वीकार नही करते? तुम कहोगे कि "मुनि ऋषि असभ्य वनवासी और वर्वर थे, उस समयका मत इस समय नही चलसकता"। अच्छा तब तुम कार्लाइल प्सेन्सरकी समान विलायतकी ईसाई समाजमे जो गाढ़ पण्डित डिनविशप आर्टविशप, कार्डिनल इत्यादि विराजमान है, पश्चिमी विलायतवाले जिनको महान् विद्वान् मानते है, फिर वह क्यों शिक्षित होकर भी ईसाइयोको उक्तिके मतसे सूत्रधार पुत्र ईसूको ईश्वरका पुत्र और उसके भजनके अतिरिक्त निस्तारका उपाय न बताकर उसकी आराधनामे प्रवृत्त होते है? भक्त कहते है कि केवल पंडित होनेसे ही भक्त प्रेमिक और योगी नहीं हो जासकता, और भक्त प्रेमिक योगी विना हुए उन महा योगेश्वर हरिको कोई नही पासकता।

हमने विजित देशकी जातिमे जन्म लिया है। जातीय धर्म, जातीय आचार व्यवहार, जातीय व्यवस्था विधान सभी मृतभावसे पड़े हुए है। एकमात्र धनकी लालसासे उदरान्नके लिये इस समय मनुष्य इधर उधर भ्रम रहे है, बहुत थोड़े मनुष्य शिक्षित है ज्ञानकी खोजमे लगरहे हैं। हमारे जातीय धर्मकी शिक्षा तुलसीकृतरामायण और महाभारतमे भी बहुत मिल सकती है! पर विद्यालयमे शिक्षकके निकट गुरुजनोके निकट धर्मकी शिक्षा और नीतिकी शिक्षा हमको नहीं मिली। विजातीय भाषा शिक्षाके गुणसे विजातीय धर्मका मर्म हमै जहातक ज्ञात है उसके अनुसार हमको जातीय धर्ममे उसके शतांशका एक अंश भी विदित नहीं है। हम यह भी नहीं बतासकते कि दशरथजीके कितनी रानी और उनके पुत्रोका क्या नाम था। एकजातिके पतनसे जो हृदयभेदी दृश्य उपस्थित हुआ है, वही दृश्य हमारे नेत्रोके सम्मुख पड़ा है। तुम मिलकोमेतके शिष्य युवक हो। प्रश्न करनेपर तुम उसी मुहूर्तमे विजातीय ईसूके अमूल्य जन्मको वर्णन करसकते हो, लूथरको धर्म संस्कार

व्याख्या कर सकोगे, मिलकोमेतके मतकी व्याख्या करोगे, परन्तु यदि तुमसे श्रीकृष्णके जन्मका प्रश्न किया जाय तो तुम्हारी अन्तरात्मा सूख जायगी ? श्रीकृष्णने भगवद्गीतामें क्या कहा है, उसका यदि प्रश्न किया जाय तो तुम चारोंओर अन्धकार देखोगे?–और ईसाने पहाड पर बैठकर किस प्रकारकी उपासना की थी, उसको पूँछाजाय तो झट कहडालोगे ? तुम्हारी जन्मभूमिमें स्वजातिमें वेद, पुराण, उपपुराण, न्याय, स्मृति, दर्शन, विज्ञान इत्यादि सब कुछ है यह तुमने सुना है, पर उनको तुम भ्रमसे भी जाननेकी इच्छा नहीं करते कि वह सब क्या पदार्थ है उनके बीचमें क्या अनन्त महामूल्य रत्न विद्यमान हैं। उन रत्नोंके लेनेकी तुम चेष्टा नहीं करते, उनके लेनेकी न तुम्हारी इच्छा है, न यत्न है ! तुम्हारी जननी जन्मभूमि इस दुष्प्राप्य अनन्त धनसे धनवती है, और तुम इस विजातीय भाषाकी शिक्षित सन्तान हो, इस श्रेणीके धनके लिये सात समुद्र पार भिन्न जातिके द्वार पर स्थित होते हो ! तुम्हारे घरमें धन है या नहीं है एक वार भूलकर भी इनका अनुसन्धान नहीं करते, और मार्गके भिखारी बनकर नवीन धनसे–अत्यन्त अल्प धनसे धनी हुई भिन्न जातिके समीप तुम प्रार्थना करते हो ? धर्मसम्बन्धके प्रबन्ध लिखनेके समय तुम्हारे पूर्वगुरु मिलकोमेत् इत्यादिने अगणित मत उस प्रबन्धमें उद्धृत किये हैं, परन्तु तुम्हारे पितृ पुरुष जिस धर्मके आश्रयसे जीवन व्यतीत करगये हैं, उसी धर्मके उस सनातन हिन्दूधर्मके शास्त्रोंसे दो श्लोक उद्धृत करते हुए चारो ओर अन्धकार दिखाई देता है ? वेदसे दो बात लिखते हुए अध्यापक मोक्षमूलरके ऋग्वेदसंहिताके अंग्रेजी अनुवादके भिन्न तुम्हारी कार्यसिद्धिका अन्य उपाय नहीं है ? श्रीमद्भागवतके दो श्लोक उद्धृत करनेके समयमें भट्टाचार्यका आश्रय लेना पडता है ? तुम्हारा शास्त्र ज्ञान ही एकमात्र इसकी सीमा है। और तुम अंग्रेजी शिक्षक युवक हो। तुमसे यदि प्रश्न कियाजाय कि ४४९ ईसवीसे भारतेश्वरी महारानीके समय तक इंग्लेण्डके प्रधान २ विवरणोंका वर्णन करो तो तुम शीघ्रतासे महीना सन तारीखके साथ तुरन्त कहदोगे। यदि कहाजाय कि चन्द्रवंशकी प्रधान २ घटनाओंको लिखो तो तुम्हारी लेखनी एकवारही निश्चल होजायगी ? तुमसे यदि प्रश्न किया जाय कि भारतेश्वरी विक्टोरियाके प्रपितामहका नाम क्या था तो तुम एकमिनटमें ही बता सकोगे, यदि तुमसे पूछा जाय कि जहाँगीरके वृद्धपितामहका नाम क्या था तब उसे भी तुम उसी समय बतादोगे, और यदि तुमसे श्रीकृष्णके वृद्धप्रपितामहका नाम क्या था ? यह प्रश्न किया जाय, तो नासिकाको सकोड लेते हो ? हे शिक्षित शर्मन् महोदय ! यदि तुमसे पूछा जाय कि तुम्हारे वृद्धपितामहका नाम क्या है तो तुम्हारा मुखचन्द्र मलीन क्यों होजाता है? जब तुम्हारा जातीय धर्मज्ञान शास्त्रज्ञान कुछ भी नहीं रहा तब श्रीकृष्णके नामसे तुम्हारे हृदयमें विजातीय घृणाका जो सचार हो तो इसमें आश्चर्य ही क्या है ? और 'सत्य भी है भक्ष्याभक्ष्य मांस मद्यके निरन्तरसेवन तथा मुर्गवंशध्वंस करनेमें जिनकी जिह्वा सदा लपलपाती है उनमें धर्मभाव कहाँ ठहर सकता है।

हम आज देशवासी शिक्षित मनुष्योंको स्मरण कराते है,–कि इस तत्त्वके जाननेके लिये श्रीमद्भागवत देखो वहाँ क्या लिखा है।

"निगमकल्पतरोर्गलितं फलं शुकमुखादमृतद्रवसंयुतम्।
पिवत भागवतं रसमालयं मुहुरहो रसिका भुवि भावुकाः।"

हम हृदयसे प्रत्येक स्वजातीय भ्राताको अनुरोध करते है कि वह एक वार श्रीमद्भागवत और भगवद्गीताका अध्ययन करै। जो लोग संस्कृत भाषाको नहीं जानते हैं तो वह उनके अनुवादको पढ़े तव वह अवश्य जान जायँगे कि श्रीकृष्ण कौन थे? तभी श्रीकृष्णके सम्वन्धमे जो भ्रान्ति और अविश्वास हैं वह छिन्न भिन्न होजायगा; तव तुम लोग यह भली भांतिसे जानजाओगे, कि समस्त विलायतमें धर्मपुस्तक एवं मिलकोमेत् स्पेन्सर इत्यादिके धर्मकी व्याख्याको एकत्र करनेपर श्रीमद्भागवत और भगवद्गीताके शतांशका एक अंश भी उपदेशका देनेवाला न होगा, जिन्होने धर्म जगतमे दृष्टिकी रक्षा की है वह मुक्तकण्ठसे इस वातको स्वीकार करेगे कि प्रत्येक धर्म ही कालक्रमसे अज्ञानी अनभिज्ञ और मूर्खोंके दोषसे विकृतभाव युक्त होजाता है। और धर्मनेताओके चरित्र कालक्रमसे उपासकोकी रुचिके अनुसार भिन्न आकृति होजाते हैं, पर तत्व निकालनेवाले उसका तत्व जानते रहते है तो क्या हमारे शिक्षित युवक चिरकालतक हरिके प्रति कुसंस्कारापन्नभावसे ही रहेंगे? इस स्थान पर उन दयामय हरिके चरित्रोका आख्यान और हरि नामके माहात्म्यका प्रचार तथा श्रीमद्भागवत और गीता इत्यादि ग्रन्थोका स्थूल मर्मप्रकाश करना प्रसंगके विरुद्ध जानकर हम अपनी इच्छासे अत्यन्त दुःखके साथ विराम करते हैं। परन्तु हम देशके आशा भरोसा स्वरूप पुरुषोंसे कहते है कि इस अनंत श्मशानकी समान भारतवर्षमें जिस प्रकारकी महा शक्तिकी साधनाका प्रयोजन है, मृतसंजीवनमंत्रके प्रचार की शीघ्र ही आवश्यकता है, इसी प्रकारसे इस मरुक्षेत्रमे हरिनामरूपी अमृतसे सींचकर प्रेमभक्तिकी लहरका प्रवल आन्दोलन करना उचित है। इस अनैक्य समुद्रसे मग्न हुए देशमे अव हम शाक्त और वैष्णवोमे विवाद नही चाहते हम केवल योग ही चाहते-है। उन सर्वेश्वर हरि और योगमायाकी शक्तिको एकत्र मिलाना चाहते हैं; पुरुष और प्रकृतिका परिणय चाहते है। केवल विजातीय शिक्षाके वलसे जातीय उन्नति कभी नहीं होसकैगी। जातीय शास्त्रकी आलोचना-जातीय धर्मकी श्रेष्ठता साधनके सिवाय उन्नतिका और उपाय नहीं है-एकता साधन ही उन्नतिका मुख्य उपाय है, हे भारतवासी! इसीसे कहते है कि तुम अपने मिलकोमेत स्पेन्सरको इस समय दूर रख दो, तुम्हारे घरमें जिस अमूल्य धनका अनादर होरहा-है, जिस रत्नके आश्रयसे इस भवसागरके पार सरलतासे हो सकोगे उस रत्नकी ओर आँख उठाकर देखो। भाई! महाशक्तिकी भैरवी ध्वनिके संगमे विश्वविजयी हरि नामकी ध्वनिके संयोगका इस समय प्रयोजन है। भइया याद रक्खो कि अंतमे हरि नाम ही सार पदार्थ है।

वेदविभाजक महर्षि वेदव्यासने अपनी अमृतमयी लेखनीसे जिस पवित्र हरिवंशके वृत्तान्तको वर्णन किया है, जो हरिवंश महाभारतके परिशिष्टमें सव प्रकारसे गिना जाता है, जो हरिवंश आर्यधर्मावलम्वी आर्यमात्रके आदरका धन है, भारतके गौरव-

स्वरूप संस्कृतभापाके उज्ज्वल मणिस्वरूप उन्हीं हरिवंशावतंसके परिवर्ती नरपति कुलके वंशका वर्णन करनेको हम प्रवृत्त हुए हैं। सर्वजीवोके आधारस्वरूप दयामय हरिकी मानवलीला समाप्तिके पोछे वैकुंठधाममे जानेतकका वृत्तान्त कविकुलपति वेदव्यासके हरिवंशमे लिखा गया है। इस कारण उसके परवर्ती यदुवंशियेके राजाओके शासनका इतिहास इस समय वर्णन करना योग्य है। जिन आर्यसंतानोने हरिवंशके पर्वको पाठ किया है, जिन्होंने यदुवंशके विध्वंस वृत्तान्तको पढ़ा है उनके उस यदुवंशकी शेप अवस्था क्या हुई, वह हमे आजतक विदित नहीं है। यह वक्ष्यमाण इतिहास उनके इस कौतूहलको मिटा देगा, हमारी यही आशा है। जो दयामय हरि इस भारतवर्षमे अक्षय अवर्णनीय लीला करगये हैं उन हरिके कौनसे वंशधर इस समय भारतवर्षमे विराजमान हैं, पाठक उसको पढ़कर भलीभाँतिसे जानजाँयगे और इससे फिर वह अत्यन्त ही आनन्दित होंगे जो हरि भारतवर्षमे प्रेमभक्तिका पूरा परिचय करगये हैं जिन हरिने प्राणियोकी मुक्तिका मार्ग स्वच्छ करादिया है जिन्होने मित्रताका तथा राजनीतिका चूडान्त निदर्शन दिखादिया है जिन दयामय भगवानने भारतवर्षको पवित्र करदिया है उन्ही हरिके चरणकमलोका ध्यान कर हम इस समय इतिहासका आरंभ करते हैं।

अनुवादकर्ताकृत भूमिका समाप्त.

मारवाड़का जो अंश इस समय जैसलमेर नामसे विख्यात है वही जयसलमेर उक्त हरिके वंशधरोकी वर्तमान राजधानी है, जयसलमेर नाम आधुनिक है पहिले भारतीय मरुक्षेत्रके मध्यमे यह अंश प्राचीन भूगोलके अनुसार मरुस्थल नामसे विदित था। प्राचीन जनप्रवादके मतसे इसका नाम मरु है। मरु वा मरुका प्रादेशिक अर्थ भूधर है, रेतीले मरुक्षेत्रमे केवल यही देश पापाणमय उर्वर है। यह जिस प्रकार स्वाधीन हिन्दूराजवंशकी राजधानी है, इसी प्रकार इसके प्राकृतिक दृश्य, और स्वाभाविक अवस्थाएँ विशेप जानने योग्य है, इस देशके स्थानीय आचार व्यवहार, कृपि स्वभाव, वृक्ष और खेतीका विवरण बडा विचित्र और अवश्य जानने योग्य है, इस देशमें जो जाति निवास करती है उस जातिका विवरण और इतिहासकी अपेक्षा उसका तत्वसंधान विशेप उपयोगी और अत्यन्त प्रयोजनीय है।

भाटी यादव या जादववंशकी एक शाखा है जो कि अवसे तीन हजार वर्प पहिले समस्त भारतवर्पके धाता विधाता थे। इस समय देशके एक कोनेमें राज्य करनेवाले (वीकानेरके) महाराज अपनेको उसी महाराज मनुकी संतान वतलाते हैं जो किसी समय यमुनासे लेकर भूगोलकी अंतिम सीमातक शासन करते थे।

उन यदुवंशियोके संबंधमे इस समय ऐसे शृंखलावद्ध ऐतिहासिक प्रमाण पाना तो असमव है, जिससे यह निर्णय होजाय कि वे निसन्देह आदिवंशसम्भूत है। परन्तु

(१) श्रीकृष्णने जो द्वारकापुरी निर्माण की थी पहिले उसका जगत्कुण्ठ नाम हुआ, ग्रंथकारने जगत्कुण्ठका अर्थ जगतकी शेपसीमा लिखा है परन्तु इसका वास्तविक अर्थ भूस्वर्ग है [अनु०] मूल पुस्तकमे worlds end है।

जिस भावसे वे वंशावलीकी रक्षा करते आये है उससे प्रमाणित होता है कि वे आदिवंशसम्भूत है । यदुवंशियो (भाटियों) के इतिहासकी खोजकरनेसे हमारे मनमे दो एक अनुमान उदय हुए है और वे अवश्य मान्य भी होसकते है। पहला यह कि यदु भट्टि (भाटी) सिथियन वंशसे उत्पन्न है। दूसरा यह कि वे आर्य हैं । यदि हम अत्यंत प्राचीन कालके उस ऐतिहासिक समयकी ओर ध्यान देते है जब कि हिन्दू और सीथियन लोग एक ही थे तथा दोनोंने एक दूसरेसे पृथक् होकर दो भिन्न राष्ट्र स्थापित किये तो मालूम होता है कि कास्पियन समुद्रसे लेकर गंगाके किनारे तकके भिन्न भिन्न संप्रदायोके लोग उस एक ही सुवृहन् वंशकी संतान है जो किसी समय एक ही भाषा बोलते थे और एक ही धर्मके अनुयायी थे । उसी अतिप्राचीन कालमे सीथियन लोगोके मध्य साम्राज्यके अवशिष्ट अथवा विनष्ट होजानेपर बुधके पुत्र भरतने भारतवर्षमे अपनी साम्राज्य स्थापित किया–(इसीको इन्डोसीथियन राज्य कहा है) उसी सार्वभौम राजा भरतके संतानोद्भव यदु भाटी इस समय मरुस्थलके एक संकीर्ण कोनेमें शासन करते है ।

भारतवर्षके प्रथम उपनिवेशके संबधमें राजकुल (सूर्य्यवंश चन्द्रवंश) को यहांका

---

(१) ग्रंथकारने टीकामे लिखा है कि प्रसिद्ध कुवेरने प्राचीनमध्य साम्राज्यके अस्तित्व सम्बन्धमे इस प्रकार सन्देह किया है कि Ni Meisc ni Homere ne nous parlit d an grand empire dansla Haute A sie (Discours sur les Revolutions dela surface du globe P. 206.)

इजेकियेल कहता है कि जिसने मिसरको जीतकर बहुत कालतक वहां अधिकार किया था वह तोगरमाहके पुत्र किसके थे, ग्रंथकारका यह मत है कि तोगरमाहके पुत्रोने उक्त मध्य साम्राज्यसे जाकर मिसरपर अधिकार किया था ।

(२) इसपर ग्रंथकारका टिप्पण है कि निम्नलिखित क्षत्रिय जाति पवित्र विधिका पालन न करनेसे तथा ब्राह्मणोंकी सेवा न करनेसे क्रमश. नीच वर्ण अर्थात् शूद्रत्वको प्राप्त हुई वह पौंड्रक उड्र द्रविड कम्बोज यवन पारद पह्लव चीन किरात और शक कहलाई देखो मनु अध्या० १० श्लोक ४३ । ४४ वल्कियनके ग्रीकलोगोंका इस यवन मतका मानना भ्रांतिमात्र है कारण कि नहुषके तीसरे पुत्र ययातिके पंचम पुत्र यवनसे उत्पन्न थे आइयोनिया इस जातिके होसकते है, शक गण एशियाकी शकजाति है पह्लवगण प्राचीन पारस्कि जागृवेजाति है चीनी (चायना) चीन निवासी है, और खशगण प्रबल हिमानीमंडित भूधरके निवासी है खा अर्थात भूधर शब्दके साथ शक शब्दके मिलनेसे खोशाका शब्दकी उत्पत्ति है पोटेलमिन इसको कासिमासोन्टस कहा है खोशाका शब्दका अपभ्रंश काकेशश है ।

---

(१) ययाति नहुषके तीसरेपुत्र नहीं वरन् दूसरे भाग० स्कं० ९ अध्याय १८ अनु० ।

(२) ययातिके पाचवें पुत्रका नाम यवन नहीं था किन्तु यदु, तुर्वसु, द्रुह्यु, अनु और पुरु यह पांच पुत्र थे भाग० स्कं० ९ अ० १८ (अनुवादक)

आदि भूमियां अनुमान करना वृथा है। यह स्वयं सिद्ध है कि यहाँके आदि भूमियां गोडमोळ भीना आदि लोग हैं। वास्तवमें एक ही पूर्वपुरुषकी संतान हैं और राजनीति विहीन होनेसे विजेताओं द्वारा इस शोचनीय दशाको पहुँचाये गये है।

यद्यपि हमें ऐसा विश्वास है कि चंद्रवंश और सूर्यवंशके प्रादुर्भावके पहिले उक्त आदिम निवासी भारतवर्षमें रहते थे। परन्तु इसका कोई प्रमाण नहीं पायाजाता कि वे चंद्र और सूर्यवंशसे उत्पन्न थे, इस अत्यन्त प्राचीन हिन्दू जातिकी क्षमता और उस क्षमताके विस्तारके सम्बन्धमें मध्यकालके पुरातत्त्ववेत्ताओंने भ्रान्त और संकीर्ण मत संगठन किया है। बहुतोंका यह विचार है, कि मुसल्मानोंके भारतपर अधिकार करनेके समयसे हिन्दू जातिमें जो संस्कार प्रचलित हुए हैं, अर्थात् अटक नदीके पार या जहाज़ पर चढ़कर समुद्रमें जानेवाले हिन्दुओंको निषिद्ध बतलाया गया है, यह कुसंस्कार चिरकालसे हिन्दूसमाजमें प्रचलित है। नवीन और अभ्रान्तमत ग्रहण करनेकी अपेक्षा प्राचीन और भ्रान्तमतका छोडना यदि अधिक कठिन नहीं है तो सरलतासे ज्ञात हो सकता है। कि हिन्दुओंकी यह समुद्रयात्रा निषेधक रूढ़ि अतीव आधुनिक है। दूसरे हिन्दूगण स्मरणातीतकाल पहिलेसे जल युद्धमें निपुण और बल-सम्पन्न थे और उसीके बलसे उन्होंने अफ्रीका अरब और पारसके उपकूलमें आष्ट्रेलियाके आर्चीपेलागो द्वीपपुंजोंमें गमन किया था।

---

(१) ग्रंथकारने इसपर टिप्पण किया है कि काबा जातिका प्राय लोप होगया है श्रीकृष्णके समयमें यह जाति सौराष्टके वन्यनिवासी रूपसे विदित थी, जब वनके भीलने श्रीकृष्णको गुप्तरूपसे आहत कर "मैंने अनिच्छा और भूलसे ऐसा किया यह कहकर शोक प्रकाश किया" तब श्रीकृष्णने इसे यह कहकर क्षमा किया कि 'रामावतारमें मैंने तुम्हारा वध किया था इसी लिये तुमने इस जन्ममें मुझे आहत करके अपना बदला लिया है', इससे जानाजाता है कि रामचन्द्रने यहाँके निवासियोंको आधीनताकी शृंखलामें बाधकर मनुष्य करदिया था और यह भी जाना जाता है कि इसी काबा जातिने श्रीकृष्णकी मृत्युके पीछे उनके परिवारको हरण कर लूट लिया था।

(२) ग्रंथकार टिप्पणीमें लिखते हैं गाम्बिया और सेनिगल नदीके समीपके नगरका नाम तम्बाकुण्डा है वहा और भी बहुतसे कुण्ड पाये जाते है।

(३) मिमार्सडेनने हिन्दूसाहित्यके सम्बन्धमें तत्त्वकी खोज करनेके समय सर विलियम जोन्सके साथ इसका आविष्कार किया है कि सब द्वीपपुंज अर्थात् मेडगास्करसे पूर्व द्वीपतक जो मालियन भाषा प्रचलित है इस भाषामें बहुतसे संस्कृत शब्द पायेजाते हैं उनके मुसल्मान धर्ममें दीक्षित होनेके बहुत शताब्दी पहिले उस भाषाकी यह अवस्था थी उन्होंने विश्वास किया है कि गुजरातसे उक्त द्वीपपुंजकी गति चली है यहाके निवासियोंके अनेक प्रवाद और विवरण रामायण और महाभारतमें विद्यमान हैं एशियाटिक रिसर्चेजवाल्० ६ पृ० २२६.

मि० मार्सडेनने उक्त मतको प्रकाश करनेके पीछे उपरोक्त द्वीप पुंज वृटिश अधिकारभुक्त होनेसे वहाके प्राचीन स्थानोंमें प्रासादादिके, विशप तत्त्वपाये थे, कि उक्तद्वीपोंमें सूर्यवंशियोंने जाकर अपने महल बनाये इन मन्दिरोंसे जिस भावसे देवी देवताओंकी मूर्तियें खोदी गई है और—

हमारा यह अनुमान अत्यन्त हास्यजनक है कि हिन्दू लोग सदासे अपने इसी वर्त्तमान भारत सीमाके भीतर गुजर करते आये हैं। एक प्रकारके अपूर्ण और कल्पना-संपन्न ऐतिहासिक पुस्तक पुराण और मनुसंहिता आदि हिन्दुओंकी प्राचीन पुस्तकोंसे स्पष्ट प्रमाणित है कि पहिले आक्सस नदीसे लेकर गंगातक सब देशोंमे बराबर आते जाते थे। पुराणोंके रूपक वर्णनसे यह भी जाना जाता है कि एशियाके मध्य साम्राज्य इस समय म्लेच्छ गिनेजाते है वहाँसे हिन्दुस्थानमे अनेक विद्या और ज्ञानके स्रोत वहे थे। मनुजीने भी पुराणोके मतकी पुष्टि की है जिससे जानाजाता है कि अति प्राचीनकालमे शाकद्वीपसे लेकर गंगाके किनारे तक एक ही (सनातन धर्म) का प्रचार थो ।

—स्थानीय ग्रंथोंमे वीरोंकी वीरगाथाका कीर्तन हुआ है उससे उक्तमतके और भी प्रमाण पायेजाते हैं बहुत पुराने समयसे भारतवर्षके साथ मिसरवालोंका जो सम्बन्ध था, खोज करनेसे इसके संबन्धमें बहुत प्रमाण पायेजाते हैं इसमें हम आशाहीन नहीं हैं सिंहलद्वीपसे मिसरके साथ भारतवर्षका प्रथम सम्बन्ध उपस्थित हुआ था, लंकाविजयी रामचन्द्रके पास भी अपने पूर्वपुरुष सगरकी समान बहुत नौकाबल था इसमें सन्देह नहीं। मेरा बहुत दिनोंसे यह विचार था कि लंका ही प्राचीन इथोपियाका राज्य था, प्राचीन लेखकोने लिखा है कि इथोपीयगण भारतवर्षमे उत्पन्न है और इथोपियोंसे ही मिसरमें शिक्षा और सभ्यताकी वृद्धि हुई ।

(१) टिप्पणीमें टाड् साहब लिखते हैं, कि अग्निपुराणमे जो सृष्टिका विवरण है वहाँ सात द्वीपोका वर्णन कियागया है, उनमें शाकद्वीप भी एक द्वीप है, शाकद्वीपनिवासी भूपसे उत्पन्न हैं इसीसे उनका नाम शाकेश्वर है भूपके पुत्रोंका नाम जुल्दद सुकुमार मानीचक कुरम उत्तर दराविक और द्रुम है, इन प्रत्येकने अपने २ नामसे एक २ खण्ड स्थापन किया, यथा सुकुमारखण्ड इत्यादि यहाँके प्रधान २ पर्वतोंके नाम जुलूद रैवत श्याम इन्दक अमकीरीम और केसरी हैं। सात प्रधान नदी मग मगध अरवर्णा इत्यादि हैं यहाँके निवासी सूर्योपासक थे। संक्षेप तत्त्व ज्ञानके आधार पर हम विश्वास करते हैं कि शाकद्वीप ही प्राचीन सिथियन देश था, और शाकेश्वर मनु और विलायतके शाकि जातिके पुरुष ही पर्थियन लोगोंके आदि पुरुष थे, उनके आदि अधीश्वरका नाम अरशक था, अरवर्णा नामके साथ अरक्षस नामकी सादृश्यता देखी जाती है वह जक्षरतीसका अपभ्रंश है। दूसरे शाकद्वीपके प्रथम नरपतिके पुत्र जुलूदका नाम देखागया है तातारजातीय इतिहासवेत्ता अबुल गाजीने हिन्दुओंके समान ही उसको जुलूदस कहा है। उसका अर्थ शैल श्रेणी है पुराण और तातारके इतिहासमे इस प्रकारकी समानता क्यों हुई। *

एक ब्राह्मणोके नेताको विष्णुजीके गरुड़ शाकद्वीपसे जम्बूद्वीपमें लाये उसीसे शाकद्वीपके ब्राह्मण जम्बूद्वीपमें परिचित हुए देखो मि० कोलब्रुकका एशियाटिक रिसरचेज् पांचवाँ खण्ड पृ० ५२

---

* टाड् साहबकी इस युक्तिको हम पुराणसंगत नहीं मानते । उन्होंने पुराणका नाम लेकर जो लिखा है वैसा पुराणोंमें नहीं पायाजाता तथा नामोंमे भी बहुत गड़बड़ है, मार्कण्डेयपुराणमें लिखा है मनुके दश पुत्र हुए उनसे यह सब पृथ्वी व्याप्त होगई प्रियव्रतने अपने पुत्रोंको सब द्वीपोका राज्य दिया।

यदुवंशके नेता श्रीकृष्णजीके निज धाम पधारनेके उपरान्त यदुवंशियोंके भारतसे

प्रियव्रतोभ्यपिञ्चत्तान् सप्त सप्तसु पार्थिवान् ।
द्वीपेषु तेषु धर्मेण द्वीपांस्ताश्च निबोध मे ॥
जम्बूद्वीपे तथाग्नीध्रं राजानं कृतवान् पिता ।
प्लक्षद्वीपेश्वरस्यापि तेन मेधातिथिः स्मृतः ॥
शाल्मले तु वपुष्मन्तं ज्योतिष्मन्तं कुशाह्वये ।
क्रौञ्चद्वीपे द्युतिमन्तं हव्यं शाकाह्वये सुतम् ॥
पुष्कराधिपतिश्चैव सवनं कृतवान् सुतम् ।

प्रियव्रतने जम्बूद्वीपमें अग्नीध्रको, प्लक्षद्वीपमें मेधातिथिको, शाल्मलिमें वपुष्मान्को कुशद्वीपमें ज्योतिष्मान्को, क्रौञ्चमें द्युतिमन्तको, शाकद्वीपमें हव्य और पुष्करमें सवन पुत्रको स्थापित किया, भागवतमें इनके नाम अग्नीध्र इध्मजिह्व यज्ञबाहु, हिरण्यरेत, घृतपृष्ठ, मेधातिथि वीतिहोत्र लिखे हैं शाकद्वीपका वर्णन मत्स्यपुराणके १२२ अध्यायमें लिखा है ।

शाकद्वीपस्य वक्ष्यामि यथावदिह निश्चयम् ।
जम्बूद्वीपस्य विस्ताराद्द्विगुणस्तस्य विस्तरः ॥
तत्र पुण्या जनपदा चिराच्च म्रियते जनः ।
ऋज्वायताः प्रतिदिशं निविष्टा वर्षपर्वताः ॥
रत्नाकराद्रिनामानः सानुमन्तो महाचिताः ।
उभयत्रावगाढौ च लवणक्षीरसागरौ ॥
शाकद्वीपे तु वक्ष्यामि सप्त दिव्यान्महाचलान् ।
देवर्षिगंधर्वयुतः प्रथमो मेरुरुच्यते ।
प्रागायतः स सौवर्णः उदयो नाम पर्वतः ॥
तस्यापरेण सुमहाञ् जलधारो महागिरिः ।
स वै चन्द्रः समाख्यातः सर्वौषधिसमन्वितः ॥
नारदो नाम चैवोक्तो दुर्गशैलो महाचितः ।
तत्राचलौ समुत्पन्नौ पूर्वं नारदपर्वतौ ।
तत्रापरेण सुमहाञ् श्यामो नाम महागिरिः ॥
यत्र श्यामत्वमापन्नाः प्रजाः पूर्वमिमाः किल ।
स एव दुन्दुभिर्नाम श्यामपर्वतसन्निभः ॥
तस्यापरेण रजतो महानस्तो गिरिः स्मृतः ।
स वै सोमक इत्युक्तो देवैर्यत्रामृतं पुरा ॥
तस्यापरेचाम्बिकेय सुमनाश्चैव स स्मृतः ।
आम्बिकेयात्परो रम्य सर्वौषधिनिषेवितः ॥
विभ्राजस्तु समाख्यातः स्फाटिकस्तु महान्गिरिः ।
सैवेह केसरेत्युक्तो यतो वायुः प्रवाति च ॥

अर्थात् शाकद्वीपका जम्बूद्वीपसे दूना विस्तार है, वहाँ पुण्यात्मा पुरुष रहते हैं और ये बहुत कालमें मरते हैं, वहां भी प्रतिदिशामें सात पर्वत हैं जो लवण और क्षीरसागरसे मिलते हैं, देवर्षि

अन्यत्र चले जानेके विषयमें जो वृत्तान्त देशीय इतिहासोमें जिस भावसे वर्णन किया है

गन्धर्वोंसे युक्त' पहिला सुमेरु है यह सुवर्णका उदय पर्वत है, इसके आगेका पर्वत जलधारा नाम वाला है उसपर बहुतसी औषधियां है, इसको चन्द्र भी कहते है, अगला पर्वत नारद नामक है उसीसे नारदपर्वत नाम दो गिरि प्रगट हैं, इसके आगे श्यामपर्वत है, जहांकी प्रजा पूर्वकालमे श्यामत्वको प्राप्त हुई थी, वहीं दुंदुभी नामवाला श्यामपर्वतकी समान है उसके आगे अस्त वा रजत नामक पर्वत है, उसीको सोमक भी कहतेहै; इसके आगे अम्बिकेय है जिसको सुमना कहते हैं उसके आगे सब औषधियोंसे युक्त स्फटिकका विभ्राज नाम पर्वत है, उसे केशव भी कहते हैं; जहाँसे वायु चलते हैं। इसके आगे वर्षोंका। वर्णन किया है उनके नाम यह हैं।एक एकके पर्वतोंकी समान दो दो नाम हैं; उदयवर्ष वा गतभय, सुकुमार वा शैशिर, कौमार वा सुखोदय, श्यामपर्वतवर्ष, वा अनीचक, वा आनन्दक, कुसुमोत्कर वा आसितसोमक, मैनाक वा क्षेमक, ध्रुव वा विभ्राज। सात ही नदी दो दो नामवाली है। सुकुमारी वा शिवजला, सुकुमारी तपः सिद्धा, नन्दा वा पावनी, शिविका इक्षु वा कुहू, वेणुका वा अमृता, सुकृता वा गभस्ति, इत्यादि-हमारा पुराणोक्त शाकद्वीप और टाड् साहबका सीदिया एक ही देश है या पृथक् है यह पाठक गण सहजमें अनुमान करसकते हैं। अग्निपुराणमें भी शाकद्वीपके राजाका नाम भूप नहीं है, टाड् साहबने जो उसके पुत्र लिखे है वे नाम भी ठीक नहीं हैं, केवल एकाध नाम मिलता है।

शाकद्वीप निवासियोंको म्लेछत्त्व कैसे प्राप्त हुआ उस विषयमें ग्रन्थकारने लिखा है कि "उन्होंने ब्राह्मणोंको अपने देशमें न वसने दिया इसीसे वह म्लेच्छ होगये," परन्तु पुराण देखनेसे यह बात विदित नहीं होती। हम पहिले खण्डमें इस बातको दिखा चुके है, कि सगरने शकादिको यहाँसे निकाल दिया था वही म्लेच्छ होगये, कोलब्रुक साहबने जैसा अपने ग्रन्थमें लिखा है उसी मतको टाड् साहबने लिया इसीसे यह भ्रम पड़गया है। सहस्रों वर्षोंकी मीमांसा अनुमानसे नहीं लगाई जासकती, यह अंग्रेजी सिद्धान्त कि सूर्य तथा चन्द्रवंश मध्य एशियाकी सिदियन जातिसे उत्पन्न है मध्य एशिया ही सबका आदि निवास स्थान है आदि यह सर्वथा भ्रान्तिपूर्ण है। आर्य जातीय इतिहासपुराणमें ही इस गुरुतर प्रश्नकी मीमांसा हो सकती है। अनुमान लगानेसे बहुत भूल होती है।

'ग्रन्थकारने कहा है कि जो यह यदुवंश आदिसे उत्पन्न है उसका कोई प्रमाण इतिहासमे नहीं पाया जाता, हम इसपर कहते हैं कि महाभारत हरिवंश और श्रीमद्भागवतमें इसके अनेक प्रमाण है। वहाँ इनका धारावाहिक वृत्तान्त है, आगे इतिहासलेखकने लिखा है कि कारिका देखनेसे ज्ञात होता है कि यदुवंश आदि चन्द्रवंशसे उत्पन्न हैं, यदुवंशी सिदियन जातिके थे, यह बात भी भ्रान्तिपूर्ण है। हां यह हम मानते हैं कि पहिले सबकी एक ही भाषा थी, परन्तु सीदिया शाकद्वीप है, यह हम नहीं मानते,सीदिया शकजातिकी सृष्टिके पहिले शाकद्वीपकी सृष्टि हुई है, शकादिके म्लेच्छ होनेपर सर्वथा उनके साथ सम्बन्ध छुट गया था, इसको हम पहिले ही लिख चुके हैं, जब सगरके समय उनसे सम्बन्ध छूटा तब चन्द्रवंशके आदिपुरुष उस म्लेच्छ जातिसे कैसे उत्पन्न हैं, चन्द्रवंश-का वृक्ष देखनेसे ही विदित होता है कि शकजातिके साथ यदुवंशका कोई सम्बन्ध नहीं है, जब कि आदिकालसे आर्य नृपति यहाँके निवासी लिखे है, तब मध्य एशियासे उनका यहां आना भ्रान्ति मूलक है, अनुमानके सामने जातीय इतिहासका खण्डन नहीं होसकता। हाँ यहाँकी निकाली हुई

इस समय सबसे पहिले उसीकी ओर ध्यान देते है। वहाँ लिखा है कि यदुवंशी भारतवर्षके बाहर छिन्नभिन्न होकर चलेगये इस बातको हम प्रमाण करते है यद्यपि यदुवंशके आदिपुरुष बुधसे श्रीकृष्णजी तक पचीस पुरुष व्यतीत होगये, परन्तु

जातिने म्लेच्छत्वको प्राप्त हो पश्चिमी देशोंतक गमन कियाहो, यह सत्य होसकता है। ग्रन्थकारने लिखा है कि नहुषके तीसरे पुत्र ययाति थे उसके पांचवे पुत्र यवनसे यवन जातिकी उत्पत्ति हुई। परन्तु हम इसमें भी भ्रम देखते है कारण कि पुराणमें प्रमाण है कि-

"यदोस्तु यादवा जातास्तुर्वसोर्यवना सुता ।
द्रुह्योस्तु वै सुता भोजा अनोस्तु म्लेच्छजातय." मत्स्यपु० अ० ३४

यदुसे यादव, तुर्वसुके यवन, द्रुह्युके भोज और अनुके म्लेच्छ जाति हुई है। पिताने यदुको शाप दिया था कि तुम्हारे वंशमें चक्रवर्ती राजा न हों, मत्स्यपुराणके दशवें अध्यायमें लिखा है कि वैनके शरीर मथनेसे म्लेच्छ जाति प्रगट हुई, तथा यवनपतिके निस्सन्तान होनेसे उसकी स्त्रीसे गर्गका सम्बन्ध होनेसे कालयवन उत्पन्न हुआ, उसने म्लेच्छजातिका बड़ा संग्रह किया। विष्णुपुराण अंश ५ अ० २३ भिन्न २ समय भारतमे किस किस सम्प्रदायको म्लेच्छत्व प्राप्त हुआ यह बात इन प्रमाणोंसे भलीभाति जानी जाती है, इससे यह स्पष्ट है कि चन्द्र तथा सूर्यवंशी यहांके आदिम निवासी है तब सीदियासे उनका आगमन ग्रथकारका आनुमानिक सिद्धान्त है न कि प्रामाणिक

इस समय भारतवर्षकी जैसी सीमा है आदिमे इससे विशेष थी।यहाँ आर्यजनोंके निवासकी भूमि आर्यावर्त थी पहिले खण्डमें इसका वर्णन कर चुका हैं यहांके निवासियोंकी वृद्धिके साथ ही साथ भारतके अन्यान्य प्रान्तोंमें उनके निवासका प्रचार हुआ। महाराज भरतके समयसे इसका नाम भारतवर्ष हुआ पीछे इन्दुवंशकी प्रतिष्ठासे इन्दोस्थान और अब 'हिन्दोस्थान' कहाता है। सूर्य चन्द्रवंशीय क्षत्रिय और ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और संकरजातिकी उत्पत्तिके साथ साथ यहांके निवासियोंने धीरे धीरे दाक्षिणात्य इत्यादि स्थानोंमें उपनिवेश स्थापन किये। साम्राज्यभ्रष्ट और जातिसे पतित हुए मनुष्योंने भारतसे निकलकर अन्यान्य प्रान्त तथा मध्य एशियाका आश्रय लिया, इस कारण आर्यगण सिदियासे भारतमे आये और सिदियासे भारतमें ज्ञानका विस्तार हुआ। परन्तु शास्त्रके मतसे यह स्वीकार नहीं किया जासकता, हां यह ठीक है जो लोग भारतसे चले गये थे उनके साथ भारतके वैश्योंका वाणिज्यकार्य चलता था दोनोंमें आवागमन था, मध्य एशियावाले भारतवर्षसे ताडित होकर ही म्लेच्छत्वको प्राप्त हुए थे और आर्यजाति विस्तारको प्राप्त हो पश्चिम देशोंतक अर्चन धर्मका विस्तार करने लगी [अनुवादक.]

(१) टाड् साहबने एशियाटिक रिसर्चेजके तीसरे वालमें यदुवंशका वर्णन किया हैं अंग्रेजी पाठक उसे देखें और देशीय पाठकोंको हरिवंश और महाभारत देखनेका हम अनुरोध करते हैं। [अनुवादक]

(२) एक कारिकासे चन्द्रसे श्रीकृष्णतक ५२ पीढ़ी पाईजाती हैं (अनु०)

उस बुधने जिस मार्गसे भारतवर्षमें आकर सूर्यवंशकी कुमारी इलाके साथ विवाह किया थो [इलासे उसके वंशका विस्तार हुआ] उस मार्गको यदुवंशी भूले नहीं थे। पीछे ग्रंथकार जैसलमेरके इतिहासलेखककी पुस्तकसे उद्धृत करके लिखते हैं कि चन्द्रवंशीय यादवोंकी आदि निवासभूमि प्रयाग थी, पीछे पुरूरवाने मथुरामें राजधानी स्थापित की और बहुत समयतक वहीं राजधानी रही। इन्हीं यादवोंसे छप्पन कुलकी उत्पत्ति हुई है इसी विख्यात वंशमें हरिकृष्णने जन्म लेकर द्वारकाकी प्रतिष्ठा की।

कुरुक्षेत्रमें यदुवंशियोंके छप्पन कुलका जो भयंकर संग्राम हुआ था और उसके

---

(१) ग्रंथकार टिप्पणीमें लिखते हैं कि भागवतसे जानाजाता है कि बुध अपने पापोंको नष्ट करनेके निमित्त देवकार्य साधन करने तथा इलाके साथ विवाह करनेको भारतवर्षमें आये थे। इलाके गर्भसे बुधके पुरूरवा नाम पुत्र हुआ इसने मथुरामें अपनी राजधानी प्रतिष्ठित की: पुरूके और भी छः पुत्र उत्पन्न हुए वह भारतमें यदुवंशी नामसे विख्यात हैं, यह आयु ही भारतके आदि पुरुष थे, उनकी भाषामें आयु शब्दका अर्थ चंद्र है उनकी और राजपूतोंकी दोनों ही भाषा चन्द्र कहीगई हैं पहिलेके अनेक लक्षणोंसे जानाजाता है कि भारतमें यदुवंश सिदियन था, आयु शब्दका अर्थ संस्कृतभाषामें चन्द्र है *

(२) इस समय इसको इलाहाबाद कहते हैं, यहाँ गंगा यमुनाका संगम है ग्रीक इतिहासवेत्ताने इसको प्रासिक कहा है।

(३) कुरुक्षेत्रमें यदुवंशी छप्पन कुलोंका समर नहीं हुआ, परन्तु वहाँ कौरव पाण्डवोंका युद्ध हुआ था। पाण्डवोंका समर यदुवंश समर कहना भ्रान्ति है। ग्रन्थकारने छप्पन करोड़को छप्पन कुल माना है यह ठीक है।

(४) यादवोंका समर भी द्वारिकामें नहीं किन्तु प्रभासक्षेत्रमें हुआ था [अनु०]

---

* ग्रंथकारने जो बुधका वृत्तान्त लिखा है यह भी अन्यस्त है। भागवतके नवमस्कंधमें जहां बुधका वर्णन है वहाँ कहीं भी यह बात नहीं लिखी कि बुध अपने पाप दूरकरनेके निमित्त भारतवर्षमें मध्य एशियासे आये थे, और यह जो मत है कि श्रीकृष्णके पीछे यदुवंशी भारतको छोड़ मध्य एशियामें चले गये यह भी समीचीन नहीं। महाभारत और भागवत पढ़नेसे हमारे पाठक भलीभांति जानजांयगे कि यदुवंशियोंने परस्पर युद्ध करके ही रणक्षेत्रमें शयन किया था, उनमें कोई मध्य एशियाको नहीं गया। तथा भागजानेका कोई कारण भी नहीं था। जब कि उस युद्धमें समस्त यदुवंशका ध्वंस होगया. और एकमात्र वज्र बचा और कोई दूसरा शत्रु भी वहाँ न था तब मध्य एशियाको बचेहुए कैसे भाग गये। आयुशब्दका अर्थ संस्कृतभाषामें चन्द्र हो ऐसा किसी कोषमें नहीं पायाजाता, तातारीभाषामें आयुका अर्थ चन्द्र है, तो आयु उनका आदि पुरुष है इस बातको कौन मानेगा, और एकबात यह है कि आयुके पुत्र नहुषसे यदुवंशकी उत्पत्ति है। यह वंशकारिकोंमें कहा गया है, इससे तातारियोंके साथ यदुवंशका कोई सम्बन्ध दिखाई नहीं देता। अंग्रेजीमें बहुतोंके नाम कृष्णस्टीदि हैं तो क्या हम उनको श्रीकृष्णका वंशोत्पन्न कह-सकते हैं? [अनु०]

पीछे जो द्वारिकामें भयंकर समर हुआ था, हिन्दू इतिहासपाठकोसे वह छिपा नहीं है ईसासे ११०० सौ वर्ष पहिले इस घटनाकी गणना की जाती है। इस वंशके छिन्नभिन्न होजानेसे बहुतोंने भारतवर्षको छोड़ दिया, इनमे श्रीकृष्णजीके दो पुत्र भी थे। इन देवोपम यदुवशके नेता श्रीकृष्णजीकी आठ प्रधान रानियां थी इनमेंसे पहिली और सातवी रानीके वंशधर वे लोग है जिन्हे अव हम हिन्दू नहीं कह सकते।

सब रानियोंमे रानी रुक्मिणी ही प्रधान थी, उसके पुत्रोमे प्रद्युम्न सबसे श्रेष्ठ थे, इन्होने विदर्भकी राजकुमारीके साथ विवाह किया, उसके गर्भसे अनिरुद्ध और वज्र दो पुत्र उत्पन्न हुए, वज्रसे भाटियोंकी उत्पत्ति हुई वज्रके नाभ और खेर (क्षीर) नामके दो पुत्र उत्पन्न हुए।

---

(१) महाभारत और प्रभासक्षेत्रका समर द्वापरके अन्त और कलिकी आदिमें हुआ जिसको इस समय ५००० वर्षसे अधिक होते है इस बातको हम प्रथम खण्डमें लिख चुके हैं [अनु०]

(२) इसका शोधन आगे करेंगे।

(३) टीकामे ग्रथकारने लिखा है कि सातवीं रानीका नाम जाम्बवती था, जाम्बवतीके बड़े पुत्रका नाम साम्ब था, यह सिन्धुनदीके दोनो तीरवर्ती देशोंका अधीश्वर हुआ इससे सिन्धुमे साम्बवंशकी उत्पति हुई, उस वंशसे जाडेचागणोकी उत्पत्ति हुई, मीनगढ़मे जो साम्बजाति एलिकजंडरके विरुद्ध खड़ी हुई थी यह सम्भव हो सकता है कि वे श्रीकृष्णके पुत्र इन्ही साम्बसे उत्पन्न हो जाड़ेचा जातिके इतिहाससे जानाजाता है कि उनके पूर्वपुरुष साम वा सीरियासे आये थे, उनको अपना आदि वरण विदित नहीं था इसी कारण उन्होने ऐसा लिखा है।

(४) ग्रन्थकारको यहां भ्रम हुआ है। श्रीकृष्णके पुत्र प्रद्युम्न और प्रद्युम्नके अनिरुद्ध और वज्र लिखे हैं, यहाँ पिता पुत्र एक कर दिये है, वज्र अनिरुद्धके भ्राता नहीं वरन पुत्र थे यथाहि–

प्रद्युम्न आसीत्प्रथम पितृवद्रुक्मिणीसुतः।
स रुक्मिणो दुहितरमुपयेमे महारथः॥
तस्यां ततोऽनिरुद्धोभून्नागायुतबलान्वित।
स चापि रुक्मिण पौत्रीं दौहित्रो जगृहे ततः॥
वज्रस्तस्यामभवत्तु मौसलादवशेषितः।
प्रतिबाहुरभूत्तस्मात्सुबाहुस्तस्य चात्मज ॥ ३ ॥

भागवत० १० स्कन्ध ९० अध्याय

तथा च–अनिरुद्धात्सुभद्रायां वज्रोनाम नृपोभवत्।
प्रतिबाहुर्वज्रसुतश्चारुस्तस्य सुतोभवत्॥ गरुडपु०अ० १४४

अर्थात् श्रीकृष्णके बड़े पुत्र प्रद्युम्नने रुक्मीकी पुत्रीके संग विवाह किया उसके महाबली अनिरुद्ध हुए, उसने रुक्मकी पोतीसे विवाह किया उसका पुत्र वज्र हुआ, मौसल युद्धसे यही एक बचा इसका पुत्र प्रतिबाहु और उसका सुबाहु हुआ, गरुडपुराणमें भी यही लिखा है अनिरुद्धसे सुभद्रा [कदाचित् रुक्मकी पोतीका नाम है] में वज्र पुत्र हुआ वज्रका प्रतिबाहु उसका चारुपुत्र हुआ इन श्लोकोंसे जाना जाता है कि वज्र अनिरुद्धके छोटे भ्राता नहीं न वज्रके क्षीर नव नाम वाले दो पुत्र थे, किन्तु वज्रके प्रतिबाहु उनके सुबाहु उनके शातसेन उनके शतसेन हुए यहातक श्रीमद्भागवत और हरिवंशमें लिखा है इससे ग्रन्थकारका यह मत मान्य नहीं [अनुवादक]

ग्रंथकार लिखते है कि देशीय इतिहास लेखकने लिखा है कि जिस समय यादव-गण द्वारकाके युद्धमे विध्वंस होगये और कृष्णभगवान स्वर्गको चले गये, उस समय वज्र मथुराजीसे अपने पिताको देखनेके लिये जारहे थे, परन्तु वह वीस कोश गये होगे कि मार्गमें उनको समाचार मिला कि उनके सव कुटुम्बियोंका नाश होगया है तव इन्होने उसी स्थानपर प्राण छोड़ दिये, और नाभ राजसिंहासनपर अभिषिक्त हो मथुराजीमे आये और क्षीर द्वारकाको चलेगये।

यादवोंने समस्त भारतवर्षमे अपने प्रवल प्रतापसे शासनशक्तिका विस्तार कर जिन छत्तीस राजकुलोको निगृहीत और पीड़ित किया था, इस समय वे सव वदला लेनेमे प्रवृत्त हुए। अन्तमे नाभ पवित्र नगरी द्वारिका पुरीको भागगया, पीछे वह पश्चिम प्रान्तमे मरुस्थलीके राज्यपर अभिषिक्त हुआ, भागवतमे यहांतक इतिहास देखाजाता है। हमने भाटी जातिके परवर्ती इतिहासको मथुराके ब्राह्मण शुकधर्मके लिखे हुए इतिहाससे वर्णन किया है।

नाभके एक पुत्रका नाम प्रतिवाहु था। क्षीरसे जाड़ेचा और यदुभानुका जन्म हुआ, यदुभानु एक समय तीर्थयात्राको गये थे कुलदेवीने उनकी इच्छा जानकर उनको सोतेसे जगाकर कहा कि तुमको जिस वरकी इच्छा हो मांगो मै तुमको वही वर दूंगी, राजकुमारने कहा कि दे देवि! तुम मुझे एक राज्य दो कि मै वहॉ निवास करूँ देवी वोली तुम इस भूधरका शासन करो, यह कहकर अन्तर्द्धान होगई। जव सवेरे यदुभानु जागे और रात्रिके स्वप्नका स्मरण कररहे थे कि उसी समय दूरसे महा कोलाहल सुनाई देने लगा, इन्होने इधरउधर देखकर जानलिया कि इस देशके राजाने पुत्रहीन अवस्थामें प्राण त्याग किये है इस कारण राजपदपर किसीको वैठानेके

---

(१) यह कथा भी हमको मूल भागवतके अनुसार विदित नहीं होती। देशीय इतिहास लेखकने विना श्रीमद्भागवतके देखे ऐसा कैसे लिखा। मूलभागवतमे तो ऐसा है कि यदुवंश ध्वंस होने के पीछे वज्र मथुरामें आये और अर्जुनने उनको भलीभाँति समझा बुझाकर मथुराके राज्यपर अभिषिक्त करदिया।

यदि ग्रन्थकारने देशीय इतिहास लेखकका अविकल अनुवाद किया हैं तो ऊपरकी कथामें उसका भ्रम है अन्यथा ग्रथकार अनुवादकका भ्रममानना होगा, न वज्रने प्राण छोडे न नाभको राज्य मिला श्रीमद्भागवतकी सहस्रो पोथी हैं और सवमे ही एकसी वात है तव हम यह नही कह सकते कि यह भ्रम कैसे हुआ, पर जव वह इतिहास ही हमारा अवलम्वन है तव यहा उसीका अनुसरण करना होगा. (अनु०)

(२) शुकधर्मके ग्रंथसे भी शंका होती हैं कि वह कौनसी भागवत थी कि जिसमें नाभका भागना लिखा है (अनु०)

(३) ग्रंथकारने यदुभानके वदलेमे यदभान लिखकर भान शब्दका अर्थ हवाईवान् किया हैं, और कहा है, जव ऐसा हैं तव पूर्वकालमे हिन्दू अवश्य वारूद निर्माण करना जानते थे। यह अर्थ समीचीन नहीं, यदि वे यह विचारते कि भानुशब्दका अर्थ सूर्य हैं तो ऐसा न लिखते।

निमित्त आन्दोलन होरहा है। उधर प्रधान राजमंत्रीने कहा कि मैंने स्वप्नमे देखा है कि श्रीकृष्णके एक वंशधर इस वीहडमें आये है यह सुन बहुतसे मनुष्य राजतिलक देनेके लिये उनकी खोजमे बाहर निकले, और वे यदुभान को नगरमे ले आये, अस्तु सबकी सम्मतिके अनुसार यदुभानु उस गद्दीपर विराजमान हुए। वह अपने बाहुबलसे एक प्रबल सामर्थ्यवाले राजा गिने गये। क्रमश. उनके वंशधरोकी संख्या बढ़ती गई, उन्होने जहाँ राज्य किया वह स्थान "यदुगिरि नामसे विख्यात हुआ।

---

(२) ग्रंथकार टीकेमे लिखते है कि भाटीग्रंथमे जिस प्रकार प्राकृतिक भूगोलका वर्णन लिखा है, वह इतिहास अत्यन्त विश्वासके योग्य है। इस समय यदि जैसलमेरके निवासी किसी महोदयसे यह प्रश्न किया जाय कि यदुकाडांग यदुगिरि वा विहाड़ किस स्थानमें है, तो इसे कोई नहीं बता सकेगा, परन्तु बाबर बादशाहकी स्मारक पुस्तकका जिसका अनुवाद मिस्टर आर्सकिनने प्रकाश किया है उसके विना हम यदुगिरिका पता न पासकते। सन् १५१७ ई० १७ फरवरीको बाबरने सिन्धुपर आक्रमण किया। वहाँ कई नदियोके बीचमें विहड़ नगर है। यहाँ २५ पच्चीस सौ वर्ष पहिले श्रीकृष्णके वंशधरोंने राजस्थापन किया था। १९ तारीखको मैं यहाँ आया। उसने फिर लिखा है कि वहाँसे सातकोसपर एक पर्वत है। जाफरनामा [तैमूरका इतिहास] और दूसरी पुस्तकोंमें इस पर्वतको यदुगिरि लिखा है, सबसे पहिले हमको इसका नाम विदित नहीं था, किन्तु पीछेसे विदित हुआ कि इस पर्वतमें एक महानुभाव उत्पन्न हुए दो पुत्रोके वंशधर यहा निवास करते थे। एक सम्प्रदाय यदु नामसे, और दूसरी जनजूहा नामसे विख्यात थे। अत्यन्त प्राचीन कालसे वह इस पर्वतके निवासियोंको शासन करते थे। और उनकी शासनरीति नीलाबसे बहीरा तकके देशोंपर थी। वह भ्राता और मित्रभावसे देशको शासन करते थे। वह इच्छानुसार प्रजासे कुछ भी नहीं ले सकते थे। चिरकालसे जो नियम किये गये थे वह उसीके अनुसार प्रजासे केवल करमात्र लेते थे। इस समय यदुवंश अनेक शाखाओंमे बँट गया था और जनजूहाका वंश भी इसीके अनुसार विभक्त हुआ। इनमे जो प्रधान नेता थे उनको "राय" की उपाधि मिली"।

आरस्किन साहबकी अनुवादित बाबरकी स्मारक पुस्तकके, २५४ पृष्ठको देखो।

"इन हिन्दू उपनिवेशियोंने बाबरके समयतक अपने आचार व्यवहारोंकी जो समभावसे रक्षा की थी, यही इसका यथार्थ प्रमाण है। जनजूहा जातिका जो उल्लेख लिखा गया है, इसीसे जोहिया जाति सन्देह करनेके योग्य नहीं है, शतद्रुके किनारे यह जोहिया जाति विशेष प्रसिद्ध हुई थी। इसका वर्णन पीछे किया जायगा। इस जातिके इतिहास मूलक एक छोटे ग्रन्थको मैंने रायल एशियाटिक सुसायटीको अर्पण किया है। बाबरने कहा है कि यदुओंकी समान यह उनके एकवंशसे उत्पन्न है, यह भी सम्भव है कि यही भट्टियोंके भ्राता भूपतिके वंशधर हों। भट्टीने यदुवंशके बदलेमें अपने नामके अनुसार भट्टीवंश नाम प्रधान किया और इससे यह प्रसिद्ध होता है कि जब ज्येष्ठ वंशकी शाखा गजनीसे ताड़ित हुई थी, उस समय उन्होंने वहांसे यदुओंको अपने कुटुम्बियोंके साथ मिलाया। बाबर इस यदुगिरिकी अतुलनीय सुन्दरतासे युक्त उपत्यकाको देखकर एकबार ही मोहित होगया था। उसने लिखा है कि यही कश्मीरका अनुरूप है।"

" नाभके पुत्र प्रतिवाहुने मरुस्थलीके राजा होकर श्रीकृष्णके चिह्नस्वरूप विश्वकर्मा के बनाये हुए राजछत्रको शिरपर धारण किया। उनके वाहुवल नाम एक पुत्र उत्पन्न हुआ, वांहुबलने मालवेके राजा विजयसिंहकी कन्या कमलावतीके साथ विवाह किया। विजयसिंहने विवाहके यौतुकमे उनको खुरासान देशके एक हजार घोड़े, एकसौ हाथी वहुतसे हीरे मोती वहुत सा सुवर्ण, और पांचसौ सुन्दरी दासी रथ और कितने ही सुवर्णके वने हुए पलंग दिये। प्रमारवंशकी कमलावतीने प्रधान पटरानी होकर सुवाहु नामवाला एक पुत्र उत्पन्न किया "।

" वाहुने घोड़े परसे गिरकर प्राण त्याग किये। उसके औरससे सुवाहुने जन्म लेकर अजमेरके चौहान वंशके राजा नंदकी कन्याके साथ अपना विवाह किया। उस विवाहिता स्त्रीने विप देकर सुवाहुको मारडाला "।

सुवाहुके रज नाम एक पुत्र उत्पन्न हुआ था। इसने वारह वर्पतक राज्य किया। उसने मालवाके राजा वैरसीकी कन्या सौभाग्यसुन्दरीके साथ विवाह किया था, सौभाग्यसुन्दरीने गर्भावस्थामे एक स्वप्न देखा कि उसके एक हाथी उत्पन्न हुआ है। ज्योतिपियोने यह स्वप्नका वृत्तान्त जानकर कहा कि रानीके महा वलवान् पुत्र उत्पन्न होगा। पुत्रके उत्पन्न होते ही ज्योतिपियोकी आज्ञानुसार उसका " गज " नाम रक्खा गया। गजके युवा अवस्थामें पहुँचते ही पूर्वदेशके राजा यदुभानुने गजके साथ अपनी कन्याके विवाहका प्रस्ताव किया, और क्षत्रियोंकी सामाजिकरीतिके अनुसार उनके पास नारियल भेजा। इसी समयमे यह वात भी प्रगट हुई कि म्लेच्छोने पहिले सुवाहुको आक्रमण किया है

---

(१) पूर्वकालमे प्रमार गण मध्य भारतवर्पके प्रवल वलशाली राजा थे। सुन्दर दासी और सुवर्णके परंग हिन्दू राजकुमारियोंके विवाहके समयमे यौतुकरूपसे दियेजाते थे, उनके यहांकी यह रीति अखंड थी।

(२) टाड् साहवने लिखा है कि " अवुलफज़ल कहता है कि तातारियोंके आदि पुरुप उगज़खाने गासमिन और कश्मीरके राजा जोगाको मारा था।

(३) इतिहासवेत्ता टाड् साहवने लिखा है, कि " भट्टियोंके इतिहासके प्रथम अंशमे ही ऐतिहासिक तथ्यका मिलान दृष्टि आता है, और यह पाया जाता है कि यदुभाट्टियोंके लेखकने सीरिया और वेक्ट्रियाके ग्रीक और प्रथम मुसल्मानोने भारतविजेताओंके साथ संघर्पण होना वर्णन किया है।

सुवाहु, उनके पुत्र और पोते गजका यह शासन सम्बन्धी वृत्तान्त कितना ही असम्पूर्ण क्यो न हो, पर गज जो खुरासानके फरीद और उसके सहयोगी रूमके राजासे आक्रान्त हुआ है, हमें आण्टियोकसके इतिहासमें इसका प्रवल प्रमाण मिला है, उसने ईसाके जन्मके दोसौ चार वर्प पहिले वेक्ट्रिया और भारतवर्प पर आक्रमण किया था। सीरियापति जो इस युद्धमे आया था, इनसे भारतवर्पके राजा साफाग सेनूस(Sofhasusenus)के साथ संधि करके करस्वरूपमें हाथी लिये थे, यह वृत्तान्त आजतक पाया जाता है, और इसीका अनुमान भिश्रकी घटनावलीमे—

और वहीं समुद्रके किनारेसे आते है, खुरासानका फरीदशाह चार लाख घुड़सवारी

—मी वर्णन किया जा सकता है कि सोफागसेनस गजनीमें यदुवंशियोंके अधीश्वर थे। सुबाहु और गज नामसे ग्रीक गणोंने सोफागसेनस् नामकी सृष्टि की है मालवेकी राजनंदिनी सुभगा सुन्दरी का पुत्र कहकर गजको सोफागसेनम् कहा है इसकी मीमासा करनेका भार हमने विचार करनेवालों को ही दिया है।

(क) यह भी सम्भव हो सकता है कि ग्रीकराजको भारतीय राजाने कर स्वरूपमें हाथी दिया था, इसीसे उसका नाम गज हुआ।'

(ख) कर्नल टाड् साहबने लिखा है कि इस इतिहासके बीचमें मध्य एशियाके प्रान्तसे मुसल्मान जातिके आदिम अभ्युदयके सम्बन्धमें अनेक विषयोंका उल्लेख पाया जाता है, प्रेन्स साहबने खुलासतुलअहवरी नामक ग्रन्थसे अपने उत्कृष्ट इतिहासमें उद्धृत किया है कि "हिजाजको खुरासानके शासनका भार और अब्दुल्लाको सीस्तानके शासनका भार मिला। अब्दुल्लाको उसके स्वामी हिजाजने काबुल पर अधिकार करनेकी आज्ञा दी, इस समय रितेल वा रितपेल नामका एक मनुष्य काबुल पर राज्य करता था, ग्रन्थकारने ऐसा अनुमान किया है कि वह हिन्दू वा तातारी था।

(ग) उकराजाकी चतुराईसे पीठ दिखाते ही मुसल्मानोंकी सेनाका दल जैसे ही गिरि संकटमें पहुँचा कि वैसे ही उन्होंने इनका पीछा रोककर इनके जानेका मार्ग एकबार ही बंद करदिया। अब्दुल्ला महा विपत्तिमें पडा, उसने अपने उद्धारका कोई उपाय न देखा तब सात लाख दिरम नाम मुद्रा देकर छुटकारा पाया। ७८ हिजरी साल अर्थात् ६९७ ईसवीमें यह घटना हुई थी; इसके पीछे और जो घटना हुई उनसे जाना जाता है कि गजके पिता रज इस घटनाके नेता थे। फिर भी लिखा गया है कि—

"अब्दुला और अब्दुलरहमानने चालीस सहस्र सेना लेकर सीस्तान पर चढ़ाई की यद्यपि काबुलके राजाने छलका विस्तार किया था, परन्तु इस वार मुसल्मानोंने उसके उस चातुरी जालको—

(क) हमने श्रीमद्भागवतसे पहिले ही वर्णन किया है कि वज्रके पुत्र, प्रतिबाहु, उनके शांतसेन, शांतसेनके पुत्र शतसेन हुए। यदि हम यह स्थिर करलें कि भट्टियोंके इतिहास लेखकने भ्रममें पडकर लिखा है कि वज्रके पुत्र नाभ नामके प्रतिबाहु, प्रतिबाहुके बाहुबल, उनके पुत्र बाहु बाहुके पुत्र सुबाहु, सुबाहुके पुत्र रज, और रजके पुत्र गज हुए, और ऐसा होनेसे ही ग्रीकइतिहासके लेखक उक्तमतको हमारे पक्षमें समर्थन करते हैं।' सुभगा सुन्दरीसे कदापि सोभागसेनका नाम नहीं हो सकता। हमें ऐसा बोध होता है कि शांतसेन वा भद्रसेनको ही ग्रीक गणोंने सोफागसेनस् नामसे पुकारा है।

(ख) टाड् महोदयके इस अनुमानको हम बहुत अंशमें सत्य मानते है। टाड् साहबने जो भट्टी इतिहासदृष्टिसे जयसलमेरका इतिहास लिखा है, हमने उसकी बहुत खोज करी परन्तु वह नहीं मिला। यदि हमें वह मिलजाता तो हम जान सकते थे कि कर्नल टाड् साहबने उस इतिहासके अनुवादके समयमें कुछ गड़बड़ की है या नहीं। यह हमें विश्वास है कि यह गज ही शातसेन नामसे विख्यात् हुआ है। इसकी माताने स्वप्नमें गज उत्पन्न किया था, इसीसे इसका नाम जग रक्खा गया [अनु०]

(ग) हिन्दुओंका नाम रितैल वा रितपैल कभी नहीं होसकता। तव फिर जो मूलबातको विकृतरूपसे लिखा है, यह स्वतन्त्र बात है [अनु०]

सेनाको साथ लिये आ गये है, और सम्पूर्ण प्रजा मारेभयके चारोंओरको भागरही है। राजाने यथार्थ समाचार जाननेके लिये एक दूतको भेजा। और स्वयं आप भी शीघ्रता से सेना साथ ले शत्रुओंको दमन करनेके लिये हरियू नामक स्थानपर जा पहुँचा। उस समय शत्रुओंके दलने दो कोसकी दूरीपर कुंज शहरमें अपने डेरे डाले।

दोनों ओरसे भयंकर युद्धकी अग्नि भड़क उठी। आक्रमणकारी यवन इस युद्धमें तीस हजार सेनाके साथ विध्वंस होकर परास्त होगये। हिन्दुओकी केवल चार हजार

—छिन्नभिन्न करदिया। मुसलमानोंने काबुलके बहुतसे स्थानोंको जीतलिया और वहांकी समस्त धन सम्पत्ति लूटकर सीस्तानका ले आये। इससे हिजाज अत्यन्त सन्तुष्ट हुआ। अब्दुलरहमानने विभक्त होकर रितरेयेके साथ षड्यन्त्र किया, और वह हिजाज पर आक्रमणकर काबुलको कर देनेमे हटानेके लिये प्रवृत्त हुआ। अब्दुलरहमानकी मृत्युके उपरान्त मुगीरा खुरासानके अधिनायक हुए, और उसके पिता हलबने जहूके पार देशमें जाकर पेचिस रोगसे प्राण त्याग किये। उस देशके शासनका भार यजीदके हाथमें पड़ा।

खुरासानके शासनकर्त्ता मुगीरा जिस समय काबुलके हिन्दू राजाओंके विरुद्ध युद्ध करनेको तैयार हुए, उस युद्धमें उनकी मृत्युका जो विवरण प्रकाशित हुआ है, उस घटनाके साथ जावली स्थान (जावुलिस्तान) के नरपति रिकके साथ साम्राज्यकी अचानक मृत्युकी सादृश्यता देखीजाती है; इस समय यह मीमांसा स्थिर होती है कि मुसलमानोंके प्रथम अभ्युदयके समय हिन्दू राजा इन देशोपर सर्वत्र शासनशक्ति चलाते थे और अन्तमें बहुत शताब्दियोंतक फिर इन देशोंको जय करनेकी सर्वदा चेष्टा करते थे। इसके प्रमाणके सम्बन्धमें बाबरने गजनीके विवरणमे लिखा है कि " मैने एक और इतिहासमें लिखा देखा है कि जब हिन्दुओंके राजाने सुबुक्तगीनपर गजनीमे आक्रमण किया उस समय उसने कुएमें गोमांस आदि अपवित्र वस्तुओंके डालनेकी आज्ञा दी। उसके यह कहतेही हाड़ मांसकी वर्षा होने लगी, और ऊपरसे बरफ पड़ने लगा आँधी आई, इस सुअवसरमे सुबुक्तगीनने शत्रुको परास्त किया। ' बाबरने और भी लिखा है, "कि मैने गजनीमे उस कुएके विषयमे अनेक बार पूछा, परन्तु किसी प्रकार भी मुझे उसका भेद न मिला (१८० पृष्ठ) बाबरने जब भारतवर्षको जय किया तब उसको हिन्दुओंके आचार व्यवहार सब विदित होगये थे, उस समय वह अवश्य ही इस प्रवादके मूल कारणको प्रगट करनेमें समर्थ हुआ था, वह इस बातको भली भाँतिसे जानता था कि सुबुक्तगीनने केवल अपने शत्रुओंको धर्मसंस्कारके कारणही जय किया था। जिस कुएंका जल हिन्दू पीते हैं उसमे गोमांस आदि अपवित्र वस्तुओंके पड़नेसे वह कभी उसके जलको अपने व्यवहारमें नहीं लावेंगे, यही विचार कर उसने ऐसा किया था, और इसी लिये हिन्दू युद्धभूमिसे भागगये। और ऐसे ही उपायोंसे विख्यात् वल्ल गण परास्त हुए थे।"

(१) उर्दू तर्जुमेमें यों लिखा है कि इस अरसेमे खबर आई कि समुद्रके किनारेसे म्लेच्छ, जिन्होने पहिले सुबाहु पर हमला किया था, फिर फरीदशाह खुराशानवालेकी सरदारीमें चार लाख सवार लिये हुये लड़नेकी तैयारीसे चलेआते हैं।

(२) किसी मानचित्रमें भी उक्त दोनो नगरोंके नामका उल्लेख दिखाई नहीं देता. सरविलियम लिखते है कि " खुरासानमें कुंजरेसाख और बालखमें पिकेर नामका नगर है। "

सेना युद्धमे मारी गई। फिर यवनोंका दल वचीवचाई सेनाको साथ ले लड़नेको आया, नरेश्वर रजने इस समय भी पहिले ही की तरह अपने प्रवल वाहुवलसे समरसागरमे शत्रुओंको परास्त करदिया, परन्तु इस समय उनका पुत्र गज पूर्व राज्यके राजा यदुभानुकी पुत्री हंसावतीके साथ विवाह करके स्त्रीके साथ इस रणभूमिमे आया था, नरनाथ रजने विपक्षियोंके शस्त्रोंके आघातसे क्षतविक्षत होकर प्राण त्याग किये। इसके ऊपरके दोनों संग्रामोंमें ही खुरासानपति एकवार ही परास्त होगया, और अन्तमें उसने पौत्तलियोंके राज्यमें कुरानका प्रचार होने और मोहम्मदियोंकी व्यवस्थाके विधानको चलानेके लिये रूमके राजासे सेनाकी सहायता माँगी। जिस समय इस प्रकारसे यवन लोग दलवलको जुटाकर अपना वल प्रवल करने लगे उस समयसे ही राजा गज मंत्रियोंको बुलाकर इसका विचार करने लगे।

जिस देशमे यह समरानल प्रज्वलित हुई थी, उस देशमे कोई भी ऐसा वडा किला नहीं था कि जिस पर अगणित सेनाके विरुद्धमे खड़े होकर संग्राम किया जाय, सवकी सम्मतिसे उत्तरकी ओरवाले पर्वतके ऊपर एक वड़ाभारी किला वनाया गया, राजा गजने इसकी सहायताके लिये अपने मित्रोंको वुलाया और वह अपनी कुलदेवीकी उपासना करने लगे। देवीने राजासे कहा कि हिन्दुओंके शासनकी सामर्थ्य लोप होजायगी। परन्तु देवीने राजा गजको एक किला वनवाकर उसको गजनी नाम रखनेकी आज्ञा दी। जिस समय किला वनकर तैयारीपर आया उस समय राजा गजको समाचार मिला कि रूम और खुरासानके दोनो अधीश्वर अपनी सेना लेकर अत्यन्त निकट आगये है"।

रूमीपति खुरसानपति, हय गय पाखड़ पाय।
चिन्ता तेरे चित्त लगि, सुनियो यदुपतिराय ॥

भट्टी इतिहासवेत्ताने फिर लिखा है, "कि राजा गज यदुपतिकी जयका डंका वजाने लगा, सेनाके व्यूहकी रचना करके स्वयं सजगया, उपहारके द्रव्य पात्रोंमे दिये जाने लगे, और ज्योतिषियोंको इस प्रकारसे शुभ मुहूर्त देखनेकी आज्ञा दी, उन्होंने मूहूर्त देखकर कहदिया कि, इस शुभ मूहूर्तमे यात्रा करनेसे अवश्य विजय होगी"।

"माघ महीनेकी सुदि त्रयोदशी बृहस्पतिके दिन एक पहरके पीछे वह शुभ दिन था। उसी शुभ मूहूर्तमें शुभ यात्राकी सूचना देनेवाला वाजा वजने लगा। उस दिन महाराजने केवल आठ कोशपर ही जाकर अपने डेरे डालदिये, दोनो म्लेच्छ राजा भी अपनी (२) सेनाको एकसाथमे मिलाकर आगे वढ़नेलगे, परन्तु उसी रात्रिको खुरासानपतिने उदररोगसे प्राण त्याग किये। जव रूमके राजा शाहसिकन्दर रूमीके पास यह समाचार भेजा गया, कि शाह सामेराजकी मृत्यु होगई है, तव उसने महा

(१) उर्दू टाड् राजस्थानके पेज २५७ में यों लिखा है कि मशहूर मकामपलासी भी इसी तरकीवसे फतह हुआ था।

(२) उर्दू तर्जुमेमें शाहममरेज।

भयभीत होकर कहा, हम मरजाते तो अच्छा था; जिस समय इस महान् कल्पनाजालका विस्तार किया था उस समय भगवानने अन्य अभिप्रायसे न जाने हमें क्यों अलग कर दिया। परन्तु रूमीपति अत्यन्त भयभीत होकर भी प्रवल समुद्रकी तरंगके समान अपनी सेनाको साथ लेकर चला। हाथीकी पीठपर हौदा रक्खा गया, और शृंखलाबद्ध मनुष्योंके पैरोंकी ध्वनिके कानमें पहुँचते ही चारोंओर भयंकर रणभेरी बजने लगी। सचल और अचलकी समान सेनादल चलने लगा, धूलिके उड़नेसे आकाशमें अंधकार छागया, उज्ज्वल शास्त्रोंपर सूर्य भगवानकी उज्ज्वल किरणें पड़कर उनकी शोभाको और भी उज्ज्वल करने लगीं, जब दोनों पक्षकी सेनाका दल चार कोशपर पहुँच गया, तब राजा गज और उनके सामन्तोंने कुल देवताकी पूजा करके योगिनियोंको पीछे रक्षामें रखकर असीम साहसके साथ युद्धमें आगे गमन किया। क्रोधित हुए सिंहकी समान प्रत्येक योद्धा परस्पर एक दूसरेपर आक्रमण करने लगे, पृथ्वी कंपायमान होगई; आकाशमें अंधकार छा गया, उस गंभीर अंधकारमें वीरोंकी उज्ज्वल तलवारोंके अतिरिक्त और कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता था। समरका घंटा बजने लगा. घोड़ोंके विकट शब्दने रणक्षेत्रको कंपायमान करदिया. भादोंके महीनेकी अंधेरी रात्रिके समान सेनाकी श्रेणी परस्पर एक दूसरेसे टकराने लगी, योधाओंका सिंहनाद चारोंओर होने लगा, तलवारकी धारसे सैंकड़ों वीरोंके शरीर छिन्न भिन्न होकर पृथ्वीपर गिरने लगे और रुधिरकी नदी बह निकली। दोनों पक्षमें प्रवल युद्धकी अग्नि भड़क उठी। रणभूमिके, एक प्रान्तमें यदुराय और दूसरी ओर खॉ और अमीर गणोंने महावीरता प्रकाश करके अपने यशको उज्वल करदिया। प्रवल बलशाली वीरोंके शवोंसे युद्धभूमि ठसाठस भर गई। वीर अपने २ स्वामीके लिये असीम साहस करके प्राण त्याग करने लगे। अन्तमें हार मानकर शाहकी सेना भाग गई। उसमें की पचीस हजार सेना युद्धमें कट गई, वह हाथी और सिंहासन तकको छोड़कर प्राणोंके भयसे भाग गए। उस भयानक रणभूमिमें केवल सात हजार हिन्दुओंने अपने जीवनकी आहुति दी. शीघ्र ही हिन्दुओंकी सेनामें विजयका डंका बजने लगा और यदुवंशी राजा जयलक्ष्मीका आलिंगन कर गौरवके साथ अपनी राजधानीको लौट आये"।

महाराज गज इस प्रकारसे जय प्राप्त करके अपनी राजधानीमें आ राज-सिंहासनपर विराजमान हुए। यदुवंशियों (भट्टी) के इतिहासवेत्ताने लिखा है, कि धर्मराज युधिष्ठिरके ३००८ संवत्में वैशाख महीनेके तीसरे दिन रविवार रोहिणी नक्षत्रमें महाराज गज गजनीके सिंहासनपर विराजमान हुए, और यदुवंशियोंका शासन करने लगे।

इस जयप्राप्तिके कारण उनकी शासनशक्ति अत्यन्त ही प्रवल होगई, उन्होंने क्रम २ से सम्पूर्ण पश्चिमी देशोंको जीतकर अंतमें कश्मीरके राजा कंदर्पकेलिको

---

(१) कर्नल टाडने इस नियुक्त समयको भी भ्रान्ति पूर्ण कहा है, हम कहसकते हैं कि इतिहास वेत्ताकी यह युक्ति सत्य है।

अपने घरपर आनेके लिये कहला भेजा। परन्तु महाराज कन्दर्पकेलिने उनकी उस आज्ञाको पालन नहीं किया, उन्होंने कहला भेजा कि रणभूमिमें विना परास्त हुए यदि सम्पूर्ण ब्रह्मांड भी मेरे ऊपर पतित होजाय तो भी मैं दूसरे राजाके यहाँ नहीं जा सकता। राजा गज यह उत्तर सुनकर अत्यन्त ही क्रोधित हुए और शीघ्र ही वह कश्मीरको विजय करनेकी इच्छासे चले। उन्होंने घोर युद्ध करके कश्मीरको विजय कर कंदर्पकेलिकी कन्याके साथ विवाह किया। उस रानीके गर्भसे राजा गजके शालिवाहन नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ"।

जब इन राजकुमारकी अवस्था बारह वर्षकी थी उस समय यह समाचार आया कि म्लेच्छगण फिर खुरासानसे युद्ध करनेके लिये चढ़े चले आरहे हैं। यह समाचार पाते ही राजा गज अपनी कुलदेवीके मंदिरमें जाकर इकला तीन दिनतक देवीकी उपासना करता रहा, चौथे दिन देवीने महाराज गजको दर्शन दिया और कहा कि तुम्हारे हाथसे शत्रुदल अवश्य ही गजनीको छीनलेगा, परन्तु समय आनेपर तुम्हारे वंशवाले फिर इस गजनीको अपने अधिकारमें करलेंगे, पर हिन्दू स्वरूपसे नहीं वरन् मुसल्मान होकर। देवीने राजा गजको एक और आज्ञा दी कि अपने पुत्र शालिवाहनको पूर्वदेशकी ओर हिन्दुओंमें भेज दो, शालिवाहन वहाँ जाकर अपने नामसे नई राजधानी स्थापित करेंगे। देवीने और भी कहा कि उसके पन्द्रह पुत्र उत्पन्न होंगे और उस वंशका क्रमसे विस्तार होता रहैगा। यद्यपि आप गजनीकी रक्षाके समय रणक्षेत्रमें शयन करोगे, परन्तु परलोकमें आपको महान् गौरव देनेवाला पुरस्कार प्राप्त होगा।

"महाराज गजने देवीके मुखसे यह भविष्य वार्ता सुनकर शीघ्र ही अपने कुटुम्बी और मित्रमंडलीको बुलाकर ज्वालामुखी तीर्थके दर्शन करनेका बहाना कर अपने पुत्र शालिवाहनके साथ सबको पूर्वदेशमें भेज दिया"।

"कुछ कालमें ही शत्रुओंका दल गजनीसे पाँच कोश दूरी पर आ पहुँचा। राजा गज अपने चचा श्रीदेवको गजनीकी रक्षापर नियुक्त कर स्वयं सेनाको साथ ले शत्रुओंपर आक्रमण करनेके लिये आगे बढ़े। खुरासानके अधीश्वरने अपनी सेनाको पाँच भागोंमें विभक्त करके चारोओर रणकी अग्नि प्रज्वलित करदी, राजा गजने अपनी सेनाको तीन भागोंमें विभक्त करके शत्रुदल पर आक्रमण किया, क्रमसे विभीषण समरने अत्यन्त भयंकर मूर्ति धारण की। अन्तमें रणभूमिमें खुरासानपति और राजा गज दोनों ही मारेगये। पाँच पहर तक यह संग्राम हुआ। इस युद्धमें एक लाख म्लेच्छ और तीस हजार हिन्दुओंके जीवनका बलिदान हुआ। खुरासानपतिके पुत्रने गजनी पर आक्रमण किया। श्रीदेवने तीस दिनतक प्रबल आक्रमण करके गजनीकी रक्षा की और अन्तमें जौहरको किया, जिसमें नौ हजार वीर हिन्दुओंका संहार हुआ।

(१) ज्वालामुखी हिन्दुओंका पवित्र तीर्थ कहागया है। यह शिवलोक पर्वतपर स्थित है।

(२) जौहर वा जुहारकी रीतिका वृत्तान्त पाठक गणोंने प्रथम काण्डमें यथास्थान देखा होगा।

हमारे स्वदेशी इतिहासवेत्ताने फिर लिखा है कि जब यह हृदयभेदी शोचनीय संवाद शालिवाहनतक पहुँचा, तब वह महा शोकसमुद्रमे मग्न होकर बारह दिनतक पृथ्वीपर सोये। और अन्तमें उन्होने पंजाबमे आकर नद नदी और तड़ाग आदिसे पूर्ण एक देशमें सबको इकट्ठा किया और नवीन राजधानी स्थापित करनेके उपरान्त अपने नामके अनुसार उस नगरीका नाम शालिवाहनपुर रक्खा। उनकी नवीन राजधानीके चारोंओरके आदिभूमिहारोंने आकर उनको अपना अधीश्वर स्वीकार किया। महाराज विक्रमादित्यके प्रचलित किये संवत ७२ के भादोंके महीनेकी आष्टमी रविवारके दिन शालिवाहनपुर नामक राजधानी प्रतिष्ठित हुई थी।

" शालिवाहनने समस्त पंजाबके देशोको एक २ करके जीतलिया। उसके औरस से पन्द्रह पुत्र उत्पन्न हुए, और सभीको राज्यपदपर अभिषेक हुआ, उनमे तेरहके नाम इस प्रकार है—

१—बालचन्द्र।	७—लेख।
२—रसाल।	८—जसकर्ण।
३—धर्माङ्गद।	९—नीमा।
४—वच्च।	१०—मात।
५—रूपा।	११—नेपक।
६—सुन्दर।	१२—गांगेव।

१३—जंगव।

इन सभोंने अपने बाहुबलसे एक २ स्वाधीन राज्य स्थापित कर अपनी २ शासन-शक्तिका विस्तार किया।

देशीय इतिहासवेत्ताने फिर लिखा है, " बालन्दके युवा होते ही दिल्लीके अधीश्वर तंवरवंशी जयपालने अपनी कन्याके साथ बालंदका विवाह करदेनेके लिये प्रचलित-रीतिके अनुसार नारियल भेज दिया, उसे बालन्दने आदर सहित ग्रहण किया। बालन्द

---

(१) कर्नेल टाड् साहब अपने टीकेमे लिखते है कि, गजनीसे भागे हुए शेष यदुवंशी राजाके पञ्जाबमें इस शालिवाहनपुरके स्थापनके समय ७२ शकाब्दी अथवा १६ ईसवी निर्धारित होती है। शालिवाहनपुर पञ्जाबके ठीक किस स्थानमें था, उसका हम निश्चित निर्द्धारण करनेका कोई उपाय भी नहीं देखते, किन्तु ऐसा बोध होता है कि वह लाहौरके अत्यन्त निकट था।

(२) टाड् साहब अपने टीकेमें लिखते है कि इतिहासवेत्ताने प्राचीन और परिवर्ती घटनाको गोलमाल करके एक जगह मिला दिया है। उन्होंने कहा है कि इतिहास लेखक धारा वाहिक वृत्तान्तको इतिवृत्तमें न लिख सके। उनका कथन है कि दिल्लीके राजाका नाम जयपाल हो सकता है, परन्तु तूंवार राजवंश कारिकाओंकी ओर दृष्टि करनेसे शालिवाहनके सामयिक जयपाल नामवाला कोई भी दिल्लीका राजा नहीं था। टाड्का दूसरा मत यह है कि शालिवाहन गजनीसे ७२ सम्वत्में पञ्जाबमें न आकर उससे और भी पीछे आये थे।

दिल्लीपतिकी बेटीके साथ पाणिग्रहणके लिये बड़े समारोहके साथ गये। महाराज जयपालने आगे बढ़कर उनको अत्यन्त आदरके साथ ग्रहण करनेमें किसी प्रकारकी कसर न की। बालन्द नवविवाहिता वधूके साथ शालिवाहनपुरमे आये, महाराज शालिवाहनने अपने पिताकी मृत्युका बदला लेनेके लिये तथा शत्रुदलसे गजनीको अपने अधिकारमे करनेके अभिप्रायसे सेना सजायी। और शीघ्र ही वीरसाजसे सुसज्जित होकर उन्होंने म्लेच्छोका संहार और गजनीका उद्धार करनेके लिये अटक नदीके पार होकर शत्रुपक्षके नेता जलाल की बीस हजार सेनाके विरुद्ध रणभूमिमे दर्शन दिया, इस समरमे सम्पूर्ण म्लेच्छ मारेगये। महाराज शालिवाहनने जयलक्ष्मीका आलिंगन करके गर्वके साथ अपने पिताकी राजधानी गजनीको फिर अपने हस्तगत करलिया। कुछ समयतक गजनीमे रहकर अन्तमे महाराज शालिवाहन अपने बड़े पुत्र बालन्दको राज्यशासनका भार अर्पण करके आप अपनी राजधानी पंजावको लौट आये। परन्तु अब उन्हें अधिक समयतक इस संसारमे रहना नहीं बदा था, शीघ्र ही उनकी मृत्यु होगई। महाराज शालिवाहनने तेतीस वर्ष और नौ महीने तक राज्यछत्र धारण किया था।

"पिताकी मृत्युके उपरान्त बालन्द राज्यपर अभिषिक्त हुए। उनके अन्य भाइयोने इस समय पजावके सम्पूर्ण पर्वती देशोमें स्वतंत्र राज्य स्थापित किया था। परन्तु इस समय म्लेच्छ फिर प्रवल होगये। उन्होने फिर अपने आधिपत्यका विस्तार कर विशेष यत्नपूर्वक गजनीके चारो ओरके स्थानोंको अपने अधिकारमे करलिया। इस समय बालन्दका कोई भी प्रधान मत्री नहीं था, वह इकले ही समस्त राज्यके विभागोकी देखभाल करते थे, उनके सात पुत्र उत्पन्न हुए।

१-भट्टी।	४-झंझं।
२-भूपति।	५-सहराव।
३-कल्लूराव।	६-भैसड़ेच।

७-मगरेव।

बालन्दके दूसरे पुत्र भूपतिके औरससे चाकेता नामवाले एक पुत्रने जन्म लिया। उससे चाकेता जातिकी उत्पत्ति हुई"।

"चाकेताके औरससे निम्नलिखित आठ पुत्र उत्पन्न हुए,"।

१-देवसी।	५-जयपाल।
२-भैरो।	६-धरसी।
३-क्षेमकर्ण।	७-विजली खान।
४-नाहर।	८-साहसमन्द।

(१) ग्रन्थकार कहते हैं कि बाबरने यदुवंशसे उत्पन्न यदुगिरिकी जिस जनजूही जाति का उल्लेख किया है वही जोहियाका जदू जाति है, यह झंझ जोहिया जदू जातिके आदि पुरुष है।

"वालन्द अपने पौत्र चकेताके हाथमें गजनीके शासनका भार अर्पण करके शालिवाहनपुरमे लौट आया, परन्तु इस समय म्लेच्छ इतने प्रवल होगये थे और उनकी संख्या भी क्रम से इतनी वढ़ गई थी कि जिससे चाकितोने उन म्लेच्छोंकी सेनाको अपनी सेनामे युक्त करलिया, और कितने ही म्लेच्छोको सामन्तोके पदपर भी वरण किया, उस म्लेच्छ सामन्तमंडली और सारी सेनाने महाराज चाकेतोके सम्मुख यह प्रस्ताव उपस्थित किया कि यदि आप अपने पिताके धर्मको छोड़ दे तो हम आपको वलखवुखाराकी गद्दीपर विठलावेंगे। उस देशमे केवल उजवक जाति ही निवास करती थी, और वहाँके राजाके कोई पुत्र भी न था। केवल एक परम सुन्दरी कन्या थी"। चकेताने उसी लालचमे आकर वलखवुखारेके अधिपतिकी कन्याके साथ पाणिग्रहण किया, और अन्तमे यहाँके अधीश्वर पद पर अभिषिक्त हो अट्ठाइ हज़ार अश्वारोही सेना अपने अधीनमे की। वाल्हीक (वलखवुखारा) इन दोनो राज्योके बीचमे एक स्रोतस्वती नदी वहती थी। चकेता उस वाल्हीक (वलख) स्थानसे लेकर भारतप्रदेशके मार्गतक सुविस्तृत राज्यके अधीश्वर हो गये। उस चाकितोसे ही चगत्ता मुगलजातिकी उत्पत्ति हुई है"।

"वालन्दके तीसरे पुत्र कलूरावके आठ पुत्र उत्पन्न हुए, उनके वंशधर कलर नामसे विदित है। उनके नाम इस भाँति हैं,–

१–श्योदास।	५–समोह।
२–रामदास।	६–गंगू।
३–अस्सो।	७–जस्सू।
४–किसतन।	८–भागू"।

इन सभीने मुसल्मान धर्मको धारण किया, इस संप्रदायकी संख्या अधिक थी, यह नदीके पश्चिमी तीरपर स्थित पहाड़ी देशमे निवास करते थे और कालान्तरसें यही नामसे विख्यात हुएं"।

"चौथे पुत्र झुंझके औरससे सात पुत्र उत्पन्न हुए;–

---

(१) कर्नल टाडने लिखा है कि "प्राचीन भारतके सिंदियन यदुवंशियोंके राजाने इसी स्थान पर मुसलमान धर्मको स्वीकार किया है, इस समाचारमें कुछ संदेह करनेकी आवश्यकता नहीं है, कि मुसलमान इतिहासवेत्ताओका मत है कि चाकितोके नेता तमूचीन जो चंगेजखां नामसे विदित है उसे पौत्तलिक कहा है और मुहम्मदख्वारजमके पिता तकशका भी ऐसा ही वृत्तान्त लिखा है। इनमे एकको जट वा जूति जातीय और दूसरेको ताक वा तक्षक जाति लिखा है। दोनोंसे ही एशियाकी दो प्रधान जातियां उत्पन्न हुई है।"

(२) टाड महोदय लिखते है कि यह पहिले ही कहा जा चुका है कि वालन्दके पन्द्रह भाइयोंने पंजावके पर्वती देशोमे अपना राज्य स्थापित किया; और उनके पुत्रोंने सिन्धुनदीके पश्चिम (दामान) में अपने राज्यका विस्तार किया। सम्पूर्ण अफगानजाति नियूज अर्थात् यहूदी वंशसे उत्पन्न कही गई है ऐसा अनुमान होता है, इससे सर्व साधारणका कौतूहल वढता है। और–

१-चम्पू। ४-हंसा।
२-गोकुल। ५-भांदा।
३-मेघराज। ६-रासू।
७-जग्गू।

"इनके वंशधर भुज नामसे पुकारे गये, और इसीसे अन्यान्य पुत्र भी भिन्न जातिके नेता हुए"।

"बालन्दके ज्येष्ठ कुमार भट्टी अपने पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। भट्टीने अपने प्रबल पराक्रम और बाहुबलसे इकले ही चौदह राजाओंको जीतकर उनकी सारी धनसम्पत्ति अपने अधिकारमें करली, उनके धनका परिमाण इतना था कि चौबीस हज़ार खच्चरोंपर चला करता था। ६० हजार अश्वारोही और अगणित पैदल सेना उनके आधीनमें थी। महाराज भट्टीने सिंहासनपर बैठते ही अपनी सम्पूर्ण सेनाको लाहौरमें इकट्ठा करके कनकपुरके राजा वीरभानु बघेलके विरुद्ध युद्धकरनेकी तैयारी की। शीघ्र ही कनकपुरमें भयंकर समरानल प्रज्वलित होगई, और उस रणक्षेत्रमें वीरभानुकी चालीस हजार सेनाका नाश हुआ।

"भट्टीके दो पुत्र उत्पन्न हुए, एकका नाम मंगल राव और दूसरेका नाम मसूर वा महीसूर राव था। इन महावीर भट्टीसे ही भट्टी वंशका नाम चला। सैकडों वर्षसे यह वंश यदुवंशियोंके नामसे विख्यात था, परन्तु इस समयसे अब भट्टीवंश लोक प्रसिद्ध हुआ।

"भट्टीकी मृत्यु होनेपर उनके पुत्र मंगलराव पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। परन्तु यह अपने पिताकी समान भाग्यशाली नहीं थे। इसी समयमें गजनीके अधीश्वर धुन्धीने अपनी अगणित सेना ले शीघ्र लाहौरपर आक्रमण किया। परन्तु मंगल रावने उन म्लेच्छोंकी सेनाके विरुद्ध युद्धकी तैयारी नहीं की और अपने बडे पुत्रको लेकर वह नदीके

—जो अफगान इस समय शालिवाहनके वंशधरोंके द्वारा अधिकारके देशोंमें निवास करते हैं, वे भी संभव है कि यदुवंशी हो। इन्होंने मुसलमान धर्ममें दीक्षित होकर अपने प्राचीन वंशके गौरवकी रक्षाके लिये यदु शब्दको यहूदी शब्दमें बदलकर अपनी जातिका शेष विवरण कुरानसे ले लिया है, अफगानियोंका प्रधान वंश यूसुफजई अर्थात् यूसुफके वंशवाले विख्यात हैं, और काबुल और गजनी देशमें उनका आदि निवासस्थान है और आजतक उनके एक सम्प्रदायका नाम जादून रक्खा है बालन्दके वंशधरोंने सिन्धुनदीके पूर्वप्रान्तकी और पहाड़ी देशको विजय किया था, वह आजतक उसी देशमें निवास करते है। अफगान यहूदी नहीं हैं, वह यदुवंशी हैं यह हमें प्रमाण मिला है और वह वास्तवमें माननीय भी है।

(१) देशीय इतिहासवेत्ताओंकी उक्तिसे ऐसा बोध होता है कि लाहौर और शालिवाहनपुर एकही राजधानीका नाम था, परन्तु पीछे जाना गया कि यह दोनों नगर एक नहीं थे उस समय यह दोनो नगर पास पास थे, शालिवाहनपुर वा शालपुर पञ्जाबके किस स्थानमें था, इसका निश्चय नहीं हो सकता, टाड् साहबने ऐसा अनुमान किया है कि प्राचीन नगरोंके विध्वंस होनेके पीछे ही उसके ऊपर यह शालिवाहनपुर बनाया गया था।

तीरवाले वनमें भागगये । शालिवाहनपुरके जिन स्थानोमें राजाका कुटुम्ब रहता था उन्हे शत्रुदलने जा घेरा; परन्तु महीसुर राव वहाँसे भी भागकर लक्खी जंगलमे जा रहे । लक्खी जंगलमे केवल किसानलोग ही रहते थे, इस कारण महीसुर रावने बड़ी सरलतासे उन्हे पराधीनताकी शृंखलमे बाँधकर वहीं अपना राज्य जमाया। महीसुर रावके दो पुत्र उत्पन्न हुए उसमे एकका नाम अभयराव और दूसरेका नाम शारण राव था। बड़े अभय रावने अपने बाहुबलसे समस्त लक्खी जंगलके देशोमे अपनी शासनशक्तिका विस्तार किया । उस समय उनके वंशकी संख्या बढ़ने लगी; और वे आभोरिया भट्टी नामसे विदित हुए । शारण अपने भतीजेसे झगड़ा करके अन्य स्थानपर चलागया और वहाँ उसके वंशधर समयानुसार कृषकश्रेणीमे गिनेगये । वह सर्वसाधारणमे शारण नामसे प्रसिद्ध हैं "।

भट्टीके ज्येष्ट पुत्र मंगलराव जो म्लेच्छोंके भयसे अपने पिताकी राजधानी शालिवाहनपुरको छोड़कर भाग गये थे, उनके निम्नलिखित छः पुत्र थे–

१–मंडमराव ।	४–शिवराज ।
२–कलरसी ।	५–फूल ।
३–मूलराज ।	६–केवल ।

जिस समय मंगल राव अपने पिताके राज्यसे भाग गए, उस समय उनके पुत्रोकी रक्षा प्रजाने स्वयं गुप्तभावस की थी । तक्षक जातीय सतीदास नामका

---

(१) कर्नेल टाड् साहब बीकानेरके इतिहासमे लिखते हैं कि जाटोका वासस्थान कन्धार था । परन्तु जाट इस बातको स्वयं कहते है कि वहाँ यदुवंशी रहते थे । इस समय किसकी बातपर विश्वास किया जाय ? यहाँ देशीय इतिहासवेत्ताओंने प्रमाण दिये है कि शारणसे एक श्रेणीमे जाटोंकी सृष्टि हुई हैं और वही यदुवंशी हैं। कर्नेल टाड् साहबने हजारो बार मध्य एशियाके जिस नामके साथ जाट जातिके नामकी सादृश्यता अनेक स्थानोंमें दिखाई हैं कि जाटगण जट जातीय है । उन्होंने केवल यत्किंचित् नामकी सादृश्यता देखकर ही इस प्रकारका विचित्र सिद्धान्त किया हैं, उन्होने यहाँ लिखा हैं कि मैंने सुना था कि बियाना और भरतपुरके जाट कन्धारसे आये थे और वही यदुवंशी हैं, परंतु यह नहीं कह सकते कि शारणके वंशधर क्यो जाट नामसे पुकारे गये, इसको हम कह सकते है कि शारण अवश्य ही अपने बड़े भाईका कोई बड़ा अपराध करके समाजसे अलग हुआ था, और इसी कारणसे उसके वंशवालोंकी अवनति हुई ।

(२) इतिहासवेत्ता टाड् महोदयने इस स्थान पर अपने टीकेंमे लिखा हैं कि " इस घटना से एक जातिका उलेख पाया जाता है, और यदुवंशियोंके पंजाबके सिंहासन पर बैठनेके सम्बन्ध में यहाँ एक अत्यन्त प्रयोजनीय बात जानने योग्य है । मैंने इतिहासमें एक स्थानपर इस जातिका संक्षिप्त वृत्तान्त लिखा हैं; परन्तु उसे लिखनेके पीछे मैंने टाकजातिकी प्राचीन राजधानीका उद्धार किया हैं, और अलिक जंडरके मित्र तक्षशिलाकी राजधानीमें जो स्थान था उससे हमने अनुमान किया हैं कि ठीक उस स्थानकी भी खोज कर ली है । पहिले मैंने एक जातिका विवरण वर्णन किया था कि उस नगरका नाम किसी मनुष्यके नाम विशेषसे उत्पन्न नहीं हुआ । वहाँके–

एक भूमिया था । जिसके पूर्वपुरुषगण, पुरातन भट्टिराजगणोके द्वारा सामर्थ्यहीन हो अत्यन्त दीनदशामे पडे थे। उसने पिताका प्राचीन बदला लेनेकी इच्छासे विजय पाये-हुए म्लेच्छराजसे प्रगट किया, कि मंगल रावके कितने ही पुत्र और कुटुम्बके मनुष्य इसी नगरमे एक महाजनके घर रहते हैं । म्लेच्छराजने उनके यह वचन सुनकर शीघ्र ही अपनी सेनाको उसके साथ भेज दिया । सतीदास उस सेनाके साथ उक्त श्रीधर महाजनके घर गया और इसको पकड़कर राजाके सम्मुख ले आया । म्लेच्छराजने श्रीधरसे कहा "कि यदि तुम शालिवाहनके प्रत्येक राजकुमारको मेरे सम्मुख नही लाओगे तो याद रक्खो कि तुम्हारे कुटुम्बमे एकको भी जीता न छोडूंगा । इस पर महा भयभीत होकर महाजन श्रीधरने विनय करके म्लेच्छराजाके सम्मुख निवेदन किया कि "मेरे यहाँ राजाका एक पुत्र भी नहीं है । जो कई बालक मेरे यहाँ रहते हैं, वह एक भूमियाके पुत्र हैं। वह भूमिया मेरे ऋणसे बँधा हुआ इस युद्धके समय भागगया है । म्लेच्छराजने महाजनके इन वचनोंपर किंचित् भी ध्यान नही दिया, और शीघ्र ही बालकोंको अपने सम्मुख लानेकी आज्ञा दी । जब महाजन श्रीधरने देखा कि राजकुमारोंके प्राणोकी रक्षाका और कोई उपाय नहीं है, तब उनके प्राणोकी रक्षा करनेके लिये वह म्लेच्छराजाकी आज्ञानुसार कार्य करनेमें सम्मत हुआ । शीघ्र ही यदुवंशी राजकुमार किसानके बालकके वेषमे म्लेच्छराजाके सम्मुख लायेगये, और म्लेच्छराजाने उनके साथ भूमिहारोंकी कन्याका विवाह करदिया । इस प्रकारसे शालिवाहनके वंशसे उत्पन्न सम्पूर्ण राजकुमार जो श्रीधरके घरमे थे, उनमें कलोरके पुत्र भी कलोरिया जाट, मुंदराज और श्योराजके पुत्र मुंदाजत और शिवराजत नामसे विख्यात हुए । कुमार फूल और कुमार केवलाका नाई, और कुम्हारके पुत्र कहकर म्लेच्छराजाके सम्मुख परिचय दिया था, इस कारण उन दोनो जनोंके वंशवाले उन दोनो श्रेणियोंमें गिनेगये" ।

भट्टी इतिहासलेखकने फिर लिखा है, कि "मंगल राव जिस गाड़ा नदीके किनारेके बनैले देशोमे रहते थे, उन्होंने पीछे उस नदीके पार होकर एक नवीन देशपर अधिकार करके उसने अपना अलग राज्य स्थापित किया इस

—अधीश्वर तक्षक वा नागवंशके राजा थे, इसीसे उक्त नाम हुआ है । पुस्तक बाबरीकी सहायतासे मैं इसका उद्धार करनेको समर्थ हुआ हूं । बाबर तो देशकी सीमाके वर्णनमें बाबर लिखता है, कि "पश्चिममें एक जगल है जिसे बाजार या टाक भी कहते है" वहांके राजाका ताक नाम भी है" इस कथाको अनुवादकने यहां मिलाकर कहा है कि "तक नगर बहुत समयसे दामानकी राजधानी था ।" मि० एलफिन्स्टोनके मानचित्रमे जो बाजारताक नामक स्थान है जिसको बाबरने तक कहा है, वह बाजार ताक अटकसे कुछ ही कोश दूरीपर है । जो तक वा तक्षक अर्थात् नागवंश एक समयमें समस्त भारतवर्षमें विस्तारित हुआ था, निस्सन्देह यह नगर और नदीका नाम उसी तक्षकवंशके नामके अनुसार पड़ा है" ।

समय वराहाजाति उस नदीके किनारे निवास करती थी। उनसे पहिले वहाँ बूत गणोके बूता राजपूत राजा थे। पुगलदेशके प्रमार गण धातदेशके सोढा जाति लुद्रदेशके लुद्रराजपूतगण निवास करते थे। मंगलरावने इन राजाओंके निकट आश्रय लिया और सोढा जातिके अधीश्वरोंकी सम्मतिके अनुसार उन्होने लुद्र वराहा और सोढा जातिके मध्यस्थ भूखण्डोपर अपना वासस्थान वनाया। जव मंगलरावकी मृत्यु होगई तव उनका पुत्र मंडमराव पिताके पदपर विराजमान हुआ"।

मंडमराव अपने पिताके साथ शालिवाहनपुर भाग आया था। धोरेके राजाओंने उसको राजा मानकर उसके अभिपेकके समय महामूल्यवान् द्रव्य भेजे। अमरकोटके सोढा जातिके राजाने मंडमरावके करकमलमे अपनी कन्याको अर्पण करनेकी इच्छासे उसके पास यह समाचार कहला भेजा। मंडमरावने तुरन्तही इस वातको स्वीकार करलिया, इस शुभ विवाहके समयमे अमरकोटकी राजधानीमे वड़ी धूमधाम हुई। मंडम रावके औरससे तीन पुत्र उत्पन्न हुए,-

१-केहर।
२-मूलराज।
३-गोगेली।

"केहर अमित तेजस्वी और असीम साहसी पुरुष था। एक समय आरोरसे कई सौ वाणिज द्रव्यसे भरे हुए घोड़े मुलतानको जा रहे थे, उसने यह समाचार सुनते ही अपने कितने ही योधाओंको ऊँटोके व्यापारियोका भेष धारण कराकर उस वणिक दलके पीछे भेजा; उन्होने वडी सीघ्रतासे पञ्चनदके किनारे जाकर वणिकदलपर आक्रमणकर उनके सारे द्रव्योंको लूट लिया, और फिर अपने स्थानको लौटआये। इस प्रकारकी छल चातुरीके कार्यसे उसका नाम सर्वत्र विख्यात् होगया। पीछे जालौरके

---

(१) वराहा जाति राजपूतोंकी एक शाखा है। टाड् साहबने कहा है कि यही इस समय मुसलमान जातिमें गिने गये हैं।

(२) इस वूता राजपूत जातिका इस समय लोप होगया है।

(३) अत्यन्त प्राचीन कालसे प्रमारजाति पुंगलमे निवास करती आई है। स्मरणातीत कालसे अमरकोटके सोढ़ाराजवंश मरुक्षेत्रमे निवास करते आये है एलिकजंडरने जो सगदाजातिका उल्लेख किया है ऐसा बोध होता है कि वह जाती यही है।

(४) लुद्रभाका विवरण पीछे प्रकाश किया जायगा।

(५) मूलराजके तीन पुत्र उत्पन्न हुए। उनके नाम यह है राजपाल, लोहवा, चूवर, वड़े पुत्र राजपालके औरससे रेन्नू और गेगू नामके दो पुत्र उत्पन्न हुए। रेन्नूसे निम्नलिखित पाँच पुत्रोंने जन्म लिया, धोकर, पोहर; वुध, कलसू और जयपाल। इनके पुत्र भी एक २ सम्प्रदायके नेता हुए।

(६) टाड् साहब टीकेमें लिखते है कि "सिन्धुनदीके ऊपर उपत्यकामे इस अत्यन्त प्राचीन राजधानीको १८११ ईसवीमें पाकर मैं परम आनन्दित हुआ। अवुलफजलने जिस राजा श्रीधरकी राजधानी आलोरका उल्लेख किया है, यह वही राजधानी है।

आल्नसिंह देवराने, मंडमरावके वयप्राप्त पुत्रोके निकट नारियल भेजा। विवाहका कार्य बड़े समारोहके साथ समाप्त होगया। विवाह होजानेके उपरान्त यह अपने स्थानको चले आये, केहरने अपनी कुलदेवी तन्नोमाताके नामसे एक किलेकी दीवार स्थापित की परंतु किलेके विना तयार हुए ही मंडमरावकी मृत्यु होगई"।

केहर पिताके पदपर अभिषिक्त हुए। उनके राजसिंहासनपर बैठनेपर तनोट का किला वराहाजातिके अधीश्वर राज्यकी सीमामे बनाया गया है। यह कहकर वराहापति यशोरथ*ने सेना सहित तनोटपर आक्रमण किया। परन्तु मूलराजने बडे विक्रमके साथ तनोटकी रक्षा करके अन्तमे वराहियोको परास्त करके भगादिया"।

अन्तमे यदुभट्टीके इतिहासवेत्ताने लिखा कि "७८७ संवत् ७३१ ईसवी में माघमासकी पूर्णिमाको मंगलवारके दिन तनोटका किला बनानेका कार्य समाप्त होगया, और देवी तनोमाताका एक पवित्रमंदिर वहाँ स्थापित हुआ। कुछ ही दिनोके उपरान्त वराहाराजके साथ संधि होगई। और उस संधिका यह फल हुआ कि मूलराजकी कन्याके साथ वराहापतिका विवाह होगया"।

मुरक्षामे यदुभाटियोकी राजधानी स्थापित होनेतक ही हम उनकी प्राचीन वंशख्यातिका वर्णन करना आवश्यक समझते हैं। यद्यपि एक सुविस्तृत और विख्यात वंशका इतिहास इतर बहुत ही सक्षेपमे वर्णन किया गया है परन्तु इसके साथ ही साथ जो टीका टिप्पणी दिये गये है उनसे पाठकोको पूरी सहायता मिलना संभव है और वे इसीसे निम्नलिखित चार सिद्धान्तोंपर अपना विचार स्थिर कर सक्ते है। एवं निम्नबातोका निश्चय कर सकते हैं।

प्रथम-यदुवंशियोके पूर्व पुरुष श्रीहरिसे उत्पन्न है।

द्वीतीय। जो यदुवंशी भारतवर्षसे भाग गये, वा जिन्होने इच्छानुसार हरिकुल अथवा पांडवोंके साथ भारतवर्षको छोडकर सिन्धुनदीके पश्चिम देशोको गमन किया उन्होंने मरुस्थलीमे उपवेशन स्थापन किया, गजनी राज्यकी प्रतिष्ठाकी और रूम और खुरासानके बादशाहोंसे युद्ध किया।

तृतीय। वह लोग जाबुलिस्थानसे भाग गये और पंजाबमे उपनिवेश स्थापन किया, तथा उन्होंने शालिवाहनपुर नामक नवीन राजधानी प्रति ष्ठित की।

चौथा।-उनका पंजाबसे भागना, मरुक्षेत्रके पर्वतके ऊपर विराजमान होना और तनोट दुर्गका बनाना।"

साधू टाड् साहबने उपरोक्त प्रकारसे इतिवृत्तको चार अंशोमे विभक्त करके शेषमे

---

*(१) कर्नल टाड् साहबने लिखा है, "इससे ज्ञात होता है कि वराहाजाति (यदु) भट्टियोंकी समान एक धर्मका अवलम्बन करती थी। इस घटनाके बहुत काल पीछे भी मुसल्मानोने इस स्थानपर अपने अधिकारका विस्तार नहीं करपाया। -(२) उर्दू तर्जुमेमे जसरथ।

कहा है कि "इस यदुवंशके आदि इतिहासको अन्यत्र विशदरूपसे समालोचना की गई है इस कारण इस वंशके आदिमें इत्तिवृत्तके स्थान पर अधिक समालोचना करनेकी आवश्यकता नहीं है। छिन्नभिन्न सत्य घटनाये और भौगोलिक प्रमाणोंसे हम इस इतिहास का साधारणतः विश्वास करते है, अर्थात् यदुवंशी राजाओंका एशियामे राज्य होना; और मुसल्मानोंके अभ्युदयके साथही साथ उनका वहाँसे भागकर फिर भारतवर्षमे आना आदिमतोकी विशेप पुष्टि करते है। हम ग्रीक इतिहासवेत्ताओंकी पुस्तकमे इस प्रकारके प्रत्यक्ष प्रमाण देखते हैं, कि ग्रीक वीर आन्टियोकस् इस देशके सोफागसेन नामक भारतसिदियन राजाके द्वारा मारे गये थे। इसीसे यदुवंशिओने सीरिया और बैक्टिरयाके अधीश्वरके साथ युद्ध किया था। उसीसे कल्पना करके अनुमान करता होगा कि सुबाहु और उसके पुत्र गजसे इस नाम सोफागसेनसकी उत्पत्ति हुई है। और यह संभव भी हो सकता है क्योकि ग्रीक इतिहासमे यह भी प्रकाशित है कि गजनीके यदुवंशी राजाओने खुरासानके राजाओंके साथ युद्ध किया था।"

महात्मा टाड् महोदय फिर लिखते है "कि सेइस्तान और उपत्यकाके दोनों ओर आदि समयमे और एक शाखा बसती थी। सिन्दसंमावंश साम्बसे उत्पन्न है। और ग्रीक गणोने भी इस वंशको साम्ब कहा है। और इसी वंशके एक राजाने अलिकजंडर के भारतविजयके समय विषम विघ्न उपस्थित किया था, इस वंशकी राजधानीका नाम साम्बका कोट वा संबनगरी था, और आजतक सिन्धुके किनारे वह नगरी विराजमान हैं, ग्रीक गणोने उसके नामको बदलकर मीनगढ़ नामसे उल्लेख किया है।"

इतिहासवेत्ताका अन्तमे यह कहना है कि चगत्ताई गण यदुवंशसे उत्पन्न है, इस अनुमानका अत्यन्त प्रयोजन है। मेवारके राणा गणोंके आदि पुरुप बापा रावने इसी प्रकार चित्तौरमे अपनी राजधानी स्थापित कर, वंशकी रक्षाके पीछे, मध्य भारतवर्षको छोड़कर खुरासानको गमन किया था। इन प्रमाणोसे जाना जाता है कि

---

(१) कर्नल टाड् साहबने राएल एसियाटिक सुसाइटीकी पुस्तकके तीसरे वाल्यूममें यदुवंशियोंके इतिवृत्तकी समालोचना की है।

(२) इस भ्रमको हमने पहिले ही प्रगट करादिया है इस कारण उसका उल्लेख करनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है। [अनु०]

(३) कर्नल टाड् महोदयने अपने टीकेमें लिखा है "मि० विलसन 'को पोटालमी साहबके जुगराफियेसे सोगदियानाके सूबृत्तमे पांडु नाम मिला है और इबन हैकलके मतसे हिरात नगरको हारि नामसे कहा है।

इसके निकट मर्व वा मरुस्थली देश है। पांडु तथा हरिकुल भारतवर्षसे चलकर उक्त देश तथा मरुस्थलीमे चले गये। यदि इन दूर देशोंमे खोज कीजाय तो बड़ी सरलतासे बहुतसे शिलालेख प्राप्त हो सकते हैं। समरकन्दके तोरणद्वार पर जो हमीरी भाषामें वर्णबद्ध खोदी हुई लिपि है वह क्या है ? बौद्धोंके देवमंदिर और बामियाकी गुहाबलि तथा खोदी हुई अनुलिपि सभी अत्यन्त प्रयोजनीय और जानने योग्य बाते हैं"।

इतने दूरवर्ती देशोमे हिन्दूधर्म प्रचलित था; और मध्य भारतवर्ष तथा भारतवर्षमे गतिविधिसे वाणिज्यका व्यवसाय विलक्षणतासे चलता था। ट्रान्सकजियाना देश और पंजाब देशोमे इसके तत्वकी विशेष खोज करने और पुराने स्थानोकी खोज करनेमे नियुक्त होनेपर इस सबन्धमे अनेक आविष्कार पाये जा सकते है। शालिवाहनपुर कपिल्य नगरी, वहीरा, यदुका डाङ्गबूसी फालिया उसके सात नगर और तक्ष शिलाकी राजधानी पाई जा सकती है। खोज करनेवाले वनवासी अफ्रीकाके बदले यदि इन देशोकी खोजमे लिप्त होते तो, अनेक प्रयोजनीय ऐतिहासिक तत्व प्राप्त कर सकते थे, कारण कि यही स्थान सभ्यताकी जन्मभूमि है"।

द्वितीय अध्याय २.

इबूकुलीफा वलीदके समयमे राजा केहर, उनके वंशधरोंका भिन्नसम्प्रदायोका नेता होना और पहिलेके समतलक्षेत्रमें अपना राज्य बढ़ाना–उसकी हत्या–तनुको उस पदकी प्राप्ति–बराहा और लङ्गा दोनो जातियो पर आक्रमण–मुलतानके राजाने तनोटका किला घेरा जाना, उसकी हार–बूताकी राजकुमारीसे राव तनुका विवाह–उसके पुत्र गण–तनुमे गुप्तधनका आविष्कार होना–बीजनोट दुर्गका निर्माण–तनुकी मृत्यु–विजैरावको उस पदका मिलना–भट्टियोंके अधिपतिपर आक्रमण करनेके निमित्त लंगा जातिके साथ बराहा जातिका षड्यन्त्र और विजैरावका उनपर आक्रमण–विजैराव और उनके स्वजनोंको विश्वासघातसे मारना–एक ब्राह्मणसे देवराजकी जीवन रक्षा–तनोट अधिकार–वहांके निवासियोंको मारना–बूतानत नामक स्थानमे अपनी मातासे देवराजका मिलना–देरावर बनाना और बता जातिके स्वामीका उसपर आक्रमणके समयमे चकित होना, और देवराजसे उसका मारा जाना–एक योगीके साथ भट्टी राजाका मिलना और राजाका उसकी शिष्यता स्वीकार करना–रावसे रावल उपाधिका बदला जाना–देवराजसे लंगाहोंका मारा जाना, और उनका देवराजका आश्रय लेना–लंगाजातिका इतिहास–देवराजका लुद्र राजपूतोंकी राजधानी लुद्रवापर अधिकारकारके राजासे बदला लेना–स्वदेश हितैषिताका उत्कृष्ट प्रमाण–धारपर आक्रमण–लुद्रवामे फिर आना–रउाल नामक स्थानमे हाट लुटाना–उनकी हत्या–रावलमंधको पिताका सिंहासन मिलना–पिताकी मृत्युका बदला लेना–उनके पुत्र बाछरा अनहलवाड़ा पत्तनके बलभसेनकी लड़कीसे विवाह होना–गजनीके मह म्मदके सामयिक राजगण–घोडोंको तितर बितर करना–यों भट्टी गणोंसे मुगलके जोहियोंका हारना–दुसजका सोधियोपर आक्रमण–उसका तीन भाइयोंके साथ खेड प्रदेशमे जाना और गिहलोत राजाकी कन्याके साथ विवाह होना–बाछू रावकी मृत्यु–दुसजका सिंहासनपर बैठना–सोढा जातिके राजा हमीरका आक्रमण करना–हमीरके शासन समयमे मरुक्षेत्रमे कागार नदीका प्रवाह रुकना–जनप्रवाद–दुसजके पुत्रगण–कनिष्ट कुमार लाञ्जाविजय रावका अनहलवाड़ाके राजा सिद्धराज सोलंकीकी कन्यासे विवाह–दुसजके अन्यान्य पुत्र गण जयसल और विजैराव–लाञ्जाविजयरावके पुत्र भोजदेवके दुसजके मरजानेपर लुद्रवाका सिंहासन मिलना अपने भतीजे–भोजदेवके विरुद्ध जयसलका षड्यंत्र–गौरके सुलतानसे सहायता मांगना और

कोह नामक स्थानमें उसके साथ मिलना–सुलतानके साथ मित्रतापूर्वक समय काटना–भोजदेवको सिंहासनसे हटानेके लिये महमूदसे सहायता पाना–लुद्रवा पर आक्रमण और लूट लेना–भोजदेवकी हत्या जयसलने भाटियोंको रावल पद मिलना–लुद्रवा प्रदेशको छोड़ना–नूतन राजधानीकीप्रतिष्ठाका पूर्व आयोजन–ब्रह्मसरकुंडकी दैव स्तुति–जयसलमेर राजधानीकी प्रतिष्ठा–जयसलकी मृत्यु–और उसके शालिवाहनका सिंहासनपर बैठना।

पूर्वअध्यायमें जिन २ भिन्न घटनाओंका वर्णन हुआ है उन सबमें जो जो तारीख और सन् दी हुई हैं विचार करनेसे उनमें संदेह होता है परन्तु अब अन्तमें हम इस समय भट्टीजातिके इतिहासका सम्पूर्णतः विश्वास करने योग्य वृत्तान्त प्रकाश करनेमें प्रवृत्त होते हैं। यदुवंशी राजाने युधिष्ठिरके ३००८ वर्ष पीछे रूम और खुरासानके अधीश्वरोंको परास्त किया था: हम इस निश्चय की हुई अवधिको सत्य नहीं स्वीकार करते: और ७२. वीं विक्रमाब्दमें शालिवाहनने अपने कुटुम्बियोंके साथ जाबुली स्थानसे भागकर पंजाबमें निवास किया हम इसका भी विश्वास नहीं करते। परन्तु सम्भवतमें यदु भट्टियोंके उपनिवेश स्थापन, और संवत् ७८७ (७३१ ई०) में उनकी प्रथम शासनशक्तिके विस्तारके स्मारकस्वरूप तनोट

---

(१) बादशाह बाबरने लिखा है कि भारतवर्षके निवासी सिन्धुनदीकी पश्चिम सीमाके बाहर स्थित समस्त भूखण्डको खुरासान कहते थे।

(२) कर्नल टाड महोदयने टीकेमें लिखा है "यद्यपि ग्यारहवीं वर्षके दीवानगीर महीप– पंजाबसे भाग गये थे, और शालिवाहनके उत्तराधिकारियोंकी उस स्थानके त्यागनेके पीछे वर्ण, भाषा इत्यादिका अदलबदल होगया था; परन्तु आजतक उन देशोंमें भौगोलिक ऐसे अनेक प्रमाण विद्यमान हैं कि भट्टियोंका वहां अधिकार रहना प्रमाणित होता है, जहांपर शालिवाहनपुर था हम उसका अनुसंधान करें तो वहां "भट्टिकोपिंडि" और भट्टिकाचक इत्यादि देख सकेंगे।–और एल्फिन्स्टोनके मानचित्रको भी देख लो।

(३) हम साहब टाड महोदयकी इस बातको किसी प्रकार नहीं मान सकते हमारे स्वदेशी भट्टी इतिहास लेखक जब कि यदुवंशियोंके इतिहासमें, सन, तारीख, महीना, वार, तिथि और नक्षत्रतकको लिख गये हैं, तब उनकी बात किस प्रकारसे अविश्वास करनेके योग्य होसकती है। हमारे देशके प्रचलित युग और सम्वत्के सम्बन्धमें पश्चिमी पंडितोंको ऐसा विश्वास नहीं है, यह सभीको विदित है। और इसका अनुमान भी सहजहीमें हो सकता है कि कर्नल टाडने जिन कुसंस्कारोंके वश भट्टि इतिहास लेखकोंके लिखे हुए इतिहासके पहिले अंशमें सन् और तारीखका विश्वास नहीं किया। हमारे देशमें चिरकालसे भी पहिले अनेक समयमें अनेक नैतिक संवत् सन्, और शाके इत्यादि प्रचलित होते आये हैं, और उन २ सन्, संवत् वा शाकेका राष्ट्रविप्लव वा राज्यके बदलने कारण लोप होता चला आया है, और उनके स्थानमें नया संवत् दिखाई पड़ता है, इन अवस्थामें यदुभट्टियोंके इतिहासलेखकने जिन संवतोंका उल्लेख किया है, यदि वह धारावाहिक संवत्‌रूपसे प्रचलित रहते तो उनके संवत्‌में हम अपने मतको प्रकाश करनेमें समर्थ होसकते थे। पर युधिष्ठिरके संवत्‌में किसी प्रकारकी शंका नहीं है. टाड साहबने इसी कारणसे इसको नहीं माना है कि उससे उनके दूसरे अंशोंके माने वर्षों तथा उनकी सृष्टिके वर्षकी आधुनिकताका लोप होता है।

दुर्गके बनानेका जो समय निर्द्धारित हुआ है, वह इस इतिहासका प्रमाण अनेक स्थानोंमे सन्देहसे रहित प्रमाणित हुआ है "।

भाटी जातिके इतिहासमे जिस केहरका नाम विशेष प्रसिद्ध दिखाई पड़ता है और जिसके असीम साहस और वीरताका वर्णन पहिले हुआ है, वह अवश्यही प्रसिद्ध खलीफा वलीदका समकालीन था। सबसे पहिले भारतभूमिमे उसने ही अपना अधिकार किया। और उत्तरसिन्धुके देशोंमे अटरोड नगरमे उसने ही सबसे प्रथम अपनी राजधानी स्थापित की "।

"कर्नल टाड् साहबने जिस यदुभट्टी इतिहासलेखकके ग्रन्थसे भट्टीवंशके परवर्ती इतिहासको उद्धृत किया है, उस इतिहासमे यह प्रकाशित कियागया है कि केहरके पाँच पुत्र उत्पन्न हुए, तनू उतेराव, चहा, खाफरिया आथहीन इन सभीके पुत्र उत्पन्न हुऐ और वह अपने २ पिताकी उपाधिके साथ एक एक सम्प्रदायके नेता हुए। यह सभी वीर योधा थे, और इन्होंने चन्नराजपूतोंके अधिकारी बहुतसे देशोंको जीतलिया। राजपूतोंने इसी लिये केहरके साथ विलक्षणतासे इसका बदला लिया कि, जिस समय केहर शिकार खेलनेमे रत थे, उसी समय इन्होंने इनके प्राणोंका नाश किया।"

केहरकी मृत्युके उपरान्त तनू पिताके पदपर अभिषिक्त हुए। उन्होंने अपने प्रवल पराक्रमके साथ वराहा जाति और मुलतानकी लंगा जातिके अधिकारी देशोंपर चढ़ाई करके उनको विध्वस करदिया, परन्तु हुसेन शाह लोहेका वस्तर पहिनकर लंगोंके साथ दूंदी, खींची खोकर्र, मुगल, जोहिया, जद और सेद जातिके दश

---

(१) उतेरावके पांच पुत्र उत्पन्न हुए, सुरना, सेहसी, जीवा, चाको और अजो। इनके वंशधर साधारणतासे उतेराव नामसे पुकारे जाते हैं।

(२) चन्न जाति इस समय लुप्त होगई है।

(३) टाड् महोदय अपने टीकेमे लिखते हैं " कि यह हिन्दू सिथियन जाति पशुओंके नामसे भी पुकारी गई है जैसे–वराह शब्दका अर्थ शूकर है, और नूमरि शब्दका लोमड़ी, तक्षक शब्दका अर्थ सर्प है; अश्व शब्दका अर्थ घोड़ा है। " हमारे स्वजाति पाठकोंको पुराणादिसे इनके नामोंकी उत्पत्तिका कारण भलीभांतिसे विदित होसकता है।

(४) कर्नल टाड् महोदय लिखते है कि " लंगा गण अग्निकुलकी चार प्रधान शाखाओंमें सोलंकी राजपूतोंकी शाखासे उत्पन्न हैं। यह पीछे मुसल्मान होगये। और ऐसा भी संभव है कि वह लोग सिन्धुनदीके पश्चिम और गलमान देशमें रहते थे। '

(५) बादशाह बाबरने भारतपर अधिकार करनेके समय मार्गमे जिन जातियोंके साथ साक्षात् किया था, उसने उन सभीके नामोंका उल्लेख किया गया है। परन्तु उसने दूदी जातिके नामको नहीं लिखा। शायद डोढ हो।

(६) खींची जातिको भट्टी कविने लिखा है कि खिची जाति उत्तर प्रान्तमें रहनेवाली थी, और सिन्धु सागर अर्थात् पंजाबके दोआबेके बीचमे एक देश उनके अधिकारमें था।

(७) टाड् साहबने कहा है कि " यह भी सम्भव होसकता है कि यह खोकर जाति ही गक्कड जाति थी। बाबरने उसे घोकर लिखा है "।

हज़ार अश्वारोही वीरोंको साथ ले यादवों पर आक्रमण करनेके लिये आगे बढ़ा। इसके वराहा राज्यमें पहुँचते ही वराहा जातिने इसके साथ सम्मति की, और सभोंने वहाँ डेरे डाल दिये। वीर श्रेष्ठ तनूको असीम साहस और बलके साथ आया हुआ देखकर विजातीय गण अपने २ स्वजातियोंको इकट्ठा करके अपनी रक्षाकी तैयारी करने लगे। क्रमानुसार चार दिनतक यदुवंशपति तनूने अतुल पराक्रमके साथ अपनी रक्षा की। और पाँचवे दिन अपने रोके हुए किलेके द्वारको खोलदेनेकी आज्ञा दी। इनकी आज्ञानुसार किलेका द्वार खोल दिया गया। और वह अपने प्राणप्यारे पुत्र वीर विजैरावके साथ नंगी तलवारें हाथमें ले म्लेच्छोंके विरुद्ध सम्पूर्ण यादवोंकी सेना सहित शत्रुके सम्मुख हुआ। यदुवंशी क्षत्री वीरोंके प्रबल पराक्रमसे शीघ्र ही शत्रु परास्त होगये। सबसे पहिले वराहा जाति भाग गई, और उसके पीछे अन्य म्लेच्छ गण युद्धमें भंगा डाल - चारोंओरको भाग गये। रणमें जय प्राप्त कर तनूने शत्रुओंके डेरोंपर चढ़ाई कर उनके धन रत्नोंको लूट लिया। मुलतान और लंगहोंकी सेना जब परास्त होकर भाग गई तब वूतावानके वूता राजपूतोंके अधीश्वर जीजूने महाराज तनूजीके पास नारियल भेजा। और यह विवाह हो जानेके पीछे तनूजीकी मुलतानके अधीश्वरके साथ संधि होकर मित्रता होगई।"

तनूके औरससे निम्नलिखित पाँच पुत्र उत्पन्न हुए,–

१–विजैराव।	३–जयतुंग।
२–मुकुर।	४–आलन।

५–राखेचा।

"दूसरे कुमार मुकुरके औरससे माहपाने जन्म लिया. माहपाके औरससे महोला और दिकाउ उत्पन्न हुए। इस दिकाउने अपने नामसे एक विख्यात् ह्रद खुदवाया था, उसीके वंशधर सुतार हुए; और आजतक वह मुकुर सुतार नामसे पुकारे जाते हैं।"

"तीसरे पुत्र जयतुंगके रत्नसी और चोहर नामवाले दो पुत्र उत्पन्न हुए। रत्नसी बहुत प्राचीन समयके विध्वंस हुए बीकमपुर नगरमें जाकर रहे। और चोहरके कोला और गिरिराज नामवाले दो पुत्र हुए. इन दोनोंने कोलासर और गिरराजसर नामके दो स्वतन्त्र नगर प्रतिष्ठित किये।"

"चौथे पुत्र आलनके औरससे निम्नलिखित चार पुत्र उत्पन्न हुए।"

१–देवसी।	३–भवानी।
२–त्रिपाल।	४–राकेचो।

---

(१) मुकुरके जारज पुत्रोंकी गणना राजपूतोंमें नहीं हुई; उनकी गणना माताओंके वर्णानुसार हुई थी।

"देवसीके वंशवाले रेबारी अर्थात् उष्ट्रपालक हुए, और राकेचोंके उत्तराधिकारी वणिक हुए, और उनकी गणना इस समय ओसवाल जातिमें हुई।

"तनूको विजासनी देवीकी कृपासे एक स्थान पर वहुत सा गुप्त धन मिला, उसने उसी धनसे एक वड़ा भारी किला वनाया और उसका नाम विजनोट रक्खा, और उसी किलेमे उन्होने संवत् ८१३ (७५७ ई०) के माघमासकी त्रयोदशी तिथि रोहिणी नक्षत्रमे देवीकी मूर्ति स्थापित की और वह अस्सी वर्पतक अतुल पराक्रमके साथ राज्य करके स्वर्गको चलेगये"।

देशी इतिहासलेखकने फिर लिखा है कि "विजयरावजी सम्वत् ८७० सन् ८१४ ईस्वीमे पिताके राज्यपर विराजमान हुए थे; उन्होंने राज्यसिहासनपर वैठकर अपनी जातिकी प्राचीन शत्रु वराह (वरहा) जातिके साथ युद्ध करनेका प्रस्ताव किया, और शीघ्र ही युद्धमे उनको परास्त करके उनकी सारी धन सम्पत्ति लूटली, सवत् ८९२ मे वूता जातिकी रानीके गर्भसे एक कुमार उत्पन्न हुआ। उसका नाम देवराज रक्खा गया। वराह जाति और लङ्गागण शत्रुसे वदला लेनेके लिये एकसाथ मिलगये और उन्होंने भट्टिराज विजैरावपर आक्रमण किया। परन्तु असीम साहसी विजयरावने अपने पिताकी तरह वीरता प्रकाश करके उनको रणक्षेत्रमे परास्त कर भगादिया, जव वराह जाति और लंगाहोंने देखा कि रणभूमिमे इनका परास्त करना असम्भव है, तव अन्तमें उहोने पड्यन्त्रके साथ विश्वास दिलाकर उनके नाशका विचार किया। और वहुत कालसे प्रज्वलित हुई शत्रुताकी आगको वुझानेका वहाना कर वराह जातिके अधीश्वरने अपनी कन्याका विजयराजके पुत्र देवराजके साथ विवाह करनेका प्रस्ताव किया। भट्टिराजको इस पड्यन्त्रका समाचार कुछ भी विदित नहीं था, इस लिये वह अपने पुत्र देवराज और आठसौ स्वजातियोंको साथ लेकर वराहपति की राजधानी भटिण्डामें चले गये। उनके वहा पहुँचते ही दुराचारी वराहोंने उनपर सहार मूर्तिसे सहसा आक्रमण करके उन्हे और उनके प्रत्येक साथीको खंड २ कर दिया[२]। जव कुमार देवराजने देखा कि अव मृत्यु निकट ही है तव वह अपने प्राणोंकी रक्षाके

---

(१) भारतवर्षके वैश्योंमे यह ओसवाल जाति सवसे विशेप धनवान् थी और इनकी संख्या भी अधिक थी, यह पहिले ओसिया नगरमें आकर रहे थे इसी कारणसे ओसवाल नामसे प्रसिद्ध हुए। टाड साहवने कहा है कि यह विशुद्ध राजपूत हैं, परन्तु एक सम्प्रदायके नहीं है, इनमें पँवार सोलंकी भाटी इत्यादि सत्र सम्प्रदाय हैं। यह सभी जैनधर्मका अवलम्वन करनेवाले हैं भारतवर्पमें सर्वत्र ही यह ओसवाल वणिक वाणिज्यमें लिप्त रहते हैं। यह सर्वसाधारणमें माड़वारी नामसे पुकारे जाते है, वहुतोंका मारवाडसे ही मारवाड़ी नाम हुआ है, इसका अनुमान किया जासकता है परन्तु वास्तवमें ऐसा नहीं है।

(२) चारण रामनाथवाले राजस्थानमें लिखा है कि विवाह होगया था सोतेमे विजयराजजीको मारा। तव उनकी सासने देवराजको भगादिया, ऊँटपर वैठाकर भगाया था। सवेरे सांगीरतनके एक खेतमे पहुंचकर देवराजजीको उसे सौंपदिया और इनके साथ पीछेसे वक्त भोजनादि व्यवहार हुआ।

लिये वराहराजके पुरोहितकी शरणमे गये । वराहगणोंने इस शोचनीय अवस्थामे कुमारके मारनेकी इच्छासे पुरोहितके घरपर आक्रमण किया । पुरोहितने देखा कि इस समय भयंकर विपत्ति उपस्थित है राजकुमारका भागना भी असंभव बोध होता है इस कारण उसने अपने बुद्धिवलसे देवराजके गलेमें जनेऊ डालकर आक्रमण करने-वालोसे कहा कि " जिसको आप ढूंढ रहे है वह हमारे घर नहीं आया । इसके पीछे ब्राह्मणने उनके सामने ही एक थालीमे देवराजके साथ भोजन भी किया, यह देखकर शत्रुओंने विचारा कि जिसको हम देवराज विचारते थे वह मनुष्य देवराज नहीं निकला देवराज तो क्षत्री है, यदि जो यह मनुष्य क्षत्री होता तो ब्राह्मण पुरोहित किस प्रकारसे इसके साथमे भोजन करता ? यह विचार कर उन लोगोंने पुरोहितके घरको छोड़कर अपने दलके साथ भट्टियोंकी राजधानी तनोटपर आक्रमण किया और जितने मनुष्य किलेके भीतर थे उन सबको एक २ करके मारडाला । इस प्रकारसे कुछ दिनोके लिये भाटीजातिका नामतक लोप होगया । "

इस प्रकार प्राणोके भयसे भयभीत हो देवराज वहुत समय तक वराहा जातिके वीचमें गुप्तभावसे रहे । और अन्तमें भागनेका सुअवसर जान वहांसे चलकर अपने नाना वूतावनके राज्यमे चलेगये । देवराजने ननसालमे जाकर वहाँ अपनी माताके चरण-कमलोका दर्शन किया, जिस समय शत्रुओने तनोटके किलेको अपने अधिकारमे करके वहाके प्रत्येक स्त्री पुरुषोंके प्राणोका नाश किया था, उस समय देवराजकी माता अपने किसी पुरातन पुण्यकी सहायतासे प्राण लेकर शत्रुओंके ग्राससे निकल भागी थी, देवराजके मुखचन्द्रको देखकर दुःखिनी माताने अत्यन्त आनन्दके साथ कुंवरके मस्तक पर लवण लगाकर उसे जलमे डालकर कहा "कि हे पुत्र ! तुम्हारे शत्रुओका इसी भाँति लोप होजाय " । देवराज वहुत दिनतक पराधीन अवस्थामे रहे, अन्तमे अत्यन्त कातर हो उन्होंने अपने नानासे एक ग्राम माँगा । वूतानके अधीश्वरने पहिले ही इनको एक ग्राम देनेके लिये कह रक्खा था, जव उनके कुटुम्वियोने देखा कि महाराज इनको ग्राम देनेके लिये तैयार है तो वे लोग राजाको भय दिखाने लगे, और वोले कि यदि तुमने देवराजको अपने राज्यमें ग्राम दे दिया तो अन्तमे इस राज्यका महा अनिष्ट होगा, इस कारण आप किसी भाँति भी देवराजको ग्राम न दीजिये, वूतापतिने अपने कुटुम्वियोंके इन भयदायक वचनों पर शंकित हो देवराजको वहाँ ग्राम न देकर मरुक्षेत्रमे एक अत्यन्त सामान्य भूखंड दिया । देवराजने उसी पृथ्वीमें केकय नामक एक शिल्पीकी सहायतासे भटनेर नामका किला वनवाया । और फिर कुछ दिनोके

---

(१) कर्नल टाड् साहवने कहा है कि " भट्टियोंके नेताने दुर्ग वनानेके लिये जो प्रवञ्चना की थी वह भारतके अन्यान्य प्रान्तोंमे भी विदित है । भाटना अर्थात् विभागसे ही इसका नाम भटनेर हुआ । कलकत्तेके नामकरणका मूल भी इसी प्रकार है । यह खालकाटासे अंग्रेजीमें कल-कत्ता हुआ है इसका असल नाम खालकाटा है " ।

पीछे एक बड़ाभारी किला बनाकर अपने नामसे उसका देवगढ़ वा देवरावल नाम रक्खा। संवत् ९०९ के माघ महीनेकी पाँचवीं तारीखको सोमवारके दिनें इस किलेकी प्रतिष्ठा की गई थी।

" जब बूताके अधीश्वरने यह सुना कि मेरे दौहित्रने रहनेके लिये स्थान न बनाकर किला तैयार कराया है, तब उसने क्रोधित हो उस किलेको तोड़नेके लिये एक सेना भेजी। देवराजने यह समाचार सुनते ही किलेकी चाबी माताको देकर उसे नानाके पास भेज दिया, और जो सेनाके नेता थे उनको किला लेनेके लिये बुला भेजा। वह उस सेनामेंके एकसौबीस नेताओंको सुसम्मतिका बहाना करके किलेके भीतरीभागमें लेगया, और वहाँ लेजाकर एक २ करके सबको मारडाला, इस प्रकार से सब नेता मारेगये, बचीबचाई सेना नेताओंके अभावसे उसी समय भाग गई, देवराजने उन नेताओंकी लाशोंको किलेके बाहर फेंक दिया। "

देवराज जिस समय गुप्तभावसे वराहोंके राज्यमें रहता था, उस समय एक योगीने आकर उसके प्राण बचाये थे, कुछ ही दिनोंके पीछे यह योगी देवराजके सम्मुख आया और उसने देवराजको सिद्धपुरुषकी उपाधि दी। इस योगीमें ऐसी शक्ति थी कि प्रत्येक धातुको सुवर्ण कर सकता था। देवराजके पिता और कुटुम्बी लोग वराह राज्यमें मारेगये। देवराज जिस घरमें रहता था उसी घरमें यह योगी अपने रसके घड़ेको रखकर किसी कार्यके लिये चला गया। उस रसके घड़ेकी एक बूँद देवराजकी तलवारमें स्पर्श होनेसे सारी तलवार सुवर्णकी होगई। यह देखकर देवराज उस घड़ेको लेभागे और उस घड़ेकी सहायतासे ही यह देवरावल किला बनवाया था। योगीराजने बहुत दिनोंके पीछे आकर यह समाचार सुना कि देवराज इस समय राजसिंहासनपर विराजमान हैं। उन्होंने देवराजके साथ साक्षात् करके कहा कि " यदि तुम हमारे शिष्य होकर योगीका वेष धारण करो तो मैं उस घड़ेके ले आनेकी बात किसीके सम्मुख नहीं कहूँगा। " देवराजने, शीघ्र ही गुरुकी आज्ञाको मानलिया। देवराजने गुरुकी आज्ञानुसार गेरूये वस्त्र पहिने, कानोंमें मुंदरे धारण किये। इसके उपरान्त वह हाथमें कमंडल लेकर अपनी जातिके लोगोंके दरवाजोंपर भिक्षा माँगने लगा। उसका वह कमंडल सुवर्ण और मोतियोंसे भर जाता था। योगीद्वारा यदुवंशियोंमें चिरकालसे प्रचलित हुई रायकी उपाधिके बदले उसी समयसे रावलकी उपाधि दी गई। राजतिलक देनेके पीछे योगिराजने देवराजको इस प्रतिज्ञामें बाँधलिया कि जबतक यदुवंश रहैगा तबतक इसी रीतिके अनुसार राजतिलक हुआ करैगा। इसके पीछे योगी बावाँ अन्तर्द्धान होगए "।

(१) मि एलफिन्स्टोन जिस समय गवर्नमेण्टके दूत बनकर काबुलमें गये थे उस समय उन्होंने इस देवरावल नामक स्थानमें ही विश्राम किया था। बूता राजपूतोंका राज्य कहां था यह इस किलेसे प्रमाणित होता है।

(२) उर्दू तरजुमेंमें पुष्य नक्षत्र भी लिखा है।

(३) उर्दू तर्जुमेंमें बाबारत्त [रता उस योगीका नाम था] लिखा है।

" जव देवराजने देखा कि मेरी इस समय अवनतिसे उन्नति होगई है और क्रमशः मेरी सेनाका बल भी बढ़ गया है तब उसने यदुवंशियोको विध्वंस करनेवाली वराह जातिको उचित फल देनेकी प्रतिज्ञा की। और उस क्षत्रिय कुलतिलक देवराजने अपनी उस प्रतिज्ञाको शीघ्र ही पूर्ण भी करलिया। उन्होंने वराह जातिको इस भाँति परास्त किया कि इनके रनवासकी कुलवधुओका घूंघट तक अपने हाथसे खोला इस प्रकार वराह जातिको उचित फल देकर वह देवरावलमें चले आये। फिर उसने शत्रु लङ्गाहो पर आक्रमण करने और उनको उचित दंड देनेकी प्रतिज्ञा की। इस समय लङ्गाहोके युवराज अलीपुर नामक स्थानको विवाहके लिये सेनासहित जारहे थे, यह सुअवसर पाय देवराजने सेना सहित कुमारके ऊपर धावा किया, और बातकी बातमे एक हजार लङ्गाहोको मारडाला। लङ्गाहोने देवराजसे परास्त हो उसी समयसे इनकी आधीनता स्वीकार करली। लङ्गाह गण बड़े ही वीर राजपूत थे "।

कर्नल टाड् साहवने लङ्गाह जातिके सम्बन्धमे अपनी सम्मतिये प्रकाश की है कि " यदुभट्टीवंशके पंजाबसे विताड़ित होकर भागनेके समयसे लेकर मरुक्षेत्रमे उनकी शेष राजधानीके स्थापन तकके समयके पीछे पूर्व वर्णित समयसे यदुभट्टी-जातिके प्रत्येक अन्तर्जाति समरमे यह लङ्गाह जाति यदुभट्टियोकी सहायतामे नियुक्त थी तब इस जातिका आदिम विवरण और उसके शेप भाग्यके सम्बन्धमें कुछ कहना इस स्थान पर उचित जान पड़ता है। यह तो भली भाँतिसे प्रकाशित किया जा चुका है कि इस समय लङ्गाह गण राजपूत थे और वह वास्तविक अग्निकुलकी चार शाखाओमें चालुक्य वा सोलङ्की जातिसे संबंध रखते थे। उनका आदि वासस्थान नोकोटदेशमें था। इससे बोध होता है कि यह आबू शिखरसे आकर हिन्दूधर्मका अवलम्बन करनेके पहिले नौकोट देशमें रहथे थे।

संवत् ७८७ सन् (७३१ ईस्वी) में भट्टि उपनिवेशीदलके नेताद्वारा तनोट दुर्गके निर्माणसे लेकर संवत् १५३० सन् (१४७४ ईस्वी) तक ७४३ वर्ष सीमाके निमित्त भाटीजातिके साथ लङ्गाहोका विवाद और युद्ध चला था। परंतु युद्धोके कारण पूर्वमे दीर्घकालसे चली आई हुई इन दोनो जातियोकी विवादाग्नि एकवार ही बुझगई। इसके कुछ समयके पीछे बावरने भारतवर्षपर आक्रमण किया, और मुलतान उसके सामराज्यका एक अंशरूपसे गिना गया। उसी समय इस जातिका अधिकार लोप होगया। तारीख फरिस्ताने इस जातिको मुलतानके राजवंशी कहकर उल्लेख किया है, और इस वंशके जानने योग्य वृत्तान्तका भी वर्णन किया है। इस वंशके पाँच राजाओमे सबसे पहिले राजा ७४७ हिजिरी (१४४३ ईस्वीमें) अर्थात् रावल चाचककी मृत्युके तीस वर्ष पहिले राज्य करते थे। मुसल्मान इतिहासवेत्ताने कहा है कि जबतक खिजरखाँसैयद दिल्लीके तख्तपर आरूढ़ थे तबतक उन्होने शेख यूसुफको अपने प्रतिनिधिरूपसे मुलतानमे भेजा। शेख यूसुफने मुलतानमे

जाकर अपने उत्तम व्यवहारोंसे और पासके देशोंके राजाओंके मनको हरण करलिया। उन्हीं राजाओंमें लङ्गाह जातिके अधीश्वर राय सेहरा भी एक थे। राय सेहराने मुलतानमें जाकर शेख यूसुफको बुलाकर उनके करकमलमें अपनी पुत्री देनेकी इच्छा प्रगट की, और उनके आधीनमें रहकर कार्य करनेको भी कहा। शेख यूसुफ उनकी बातपर सम्मत होगया। सेवीसे मुलतान तक उस समय यह समाचार आनेजाने लगा, और राय सेहरने क्यों यूसुफका इतना सम्मान किया और क्यो उसके सम्मुख अपने मनका ऐसा भाव प्रकाशित किया था इसका मतलब छिपा न रहा। तात्पर्य यह था कि उसने इसी मित्रताके बहानेसे शेख यूसुफको बन्दी करलिया, और उसे दिल्ली भेजकर अपना नाम कुतुबउद्दीन रक्खा। फिर आप मुलतानके अधिष्ठाता पदपर प्रतिष्ठित हुआ।"

कर्नल टाड्र साहबने फिर लिखा है "फरिस्ताने, राय सेहरा और इनके स्वजातीय लङ्गाहगणोंको अफगान कहा है, सेवी देशके निवासी नूमरी जातिके थे यही नूमरी जाति अगणित जाट जातिकी एक शाखा थी। और विशेष करके इन्होने यवनधर्मके अवलम्बनके समयसे बिलोचकी उपाधि धारण की है। भट्टीवंशके इतिहासवेत्ताने लङ्गाहोंको एक स्थानमें पठान और दूसरे स्थानमें राजपूत कहा है। पठान और अफगान यह उस समय मुसल्मान थे। यह स्पष्ट प्रकाशित नहीं होता। एकमात्र रायकी उपाधि ही इस बातको साबित करती है कि यह जाति किसी समय हिन्दू थी। अफगान जाति यहूदी जातिसे उत्पन्न है, इस बातको मिष्टर एलफिन्स्टोनने बदल दिया है; उनका कथन है कि अफ़गानियोंकी पस्तोभाषा संस्कृत थी। तथा उसमें जुन्दभाषाके अनेक शब्द देखेजाते हैं, परन्तु हिब्रू भाषाका कोई शब्द भी उसमें नहीं था। परन्तु मैं यह प्रकट करचुका हूँ कि अफ़गानी यदुवंशसे उत्पन्न है, और यदु शब्दके बिगड़नेसे ही यहूदी वा जूर्जि शब्द हुआ है, इस मतको किसी भाँति नहीं बदला जा सकता। अब इसके प्रमाणकी आवश्यकता है कि यह यदुजाति यूति वा जट जातिसे उत्पन्न है या नहीं। "मि० एलफिन्स्टोनकी समान हम पहिले ही कह आये है कि अफ़गान जातिसे यहूदी जातिकी उत्पत्ति नहीं हुई।"

इस समय इतिहासका अनुसरण करते है। "देवरावलकी दक्षिण सीमामें लोद्र राजपूत निवास करते थे। उनकी राजधानीका नाम लुद्रवा था, और वह नगरी जिस भाँति विस्तारवाली थी उसी भाँति उसमें जानेके लिये बारह बड़े २ दरवाजे थे। लुद्रवाके राजपुरोहितने किसी कारण वश राजासे विवाद कर अन्तमें देवराजके पास आकर आश्रय लिया। और वह लुद्रवाके राजाको सिंहासनसे अलग करके उक्त राज्यको अपने अधिकारमें करनेके लिये देवराजको सम्मति देने लगा। देवराजने राजपुरोहितकी सम्मतिके अनुसार लुद्रवाराजके नृपभानुके पास यह सदेशा भेजा कि मैं आपकी कन्याके साथ विवाह करनेकी अभिलाषा करता हूँ। राजाने देवराजको अपनी कन्या देनेमें महा गौरव समझा और शीघ्र ही उनके प्रस्तावको स्वीकार करलिया। वीर श्रेष्ठ देवराज बारहसौ असीम साहसी अश्वारोही सेनाको

साथमे लेकर वरका भेष धरे लुद्रवाकी राजधानीमे आपहुँचे। शीघ्र ही नगरका द्वार खोल दिया गया। परन्तु देवराजने अपने सेवक और सेनाके साथ-नगरमे पहुँचते ही युद्ध आरम्भ करदिया। लोद्रगणोंके परास्त होते ही देवराज लुद्रवा के सिंहासन पर विराजमान हुए। और अन्तमे नृपभानुकी कन्याके साथ विवाह करके यादवोकी सेनाके एक दलको वहाँ छोड़ आप देवरावलको लौट आये। देवराज इस समय छप्पन हजार अश्वारोही और एक लाख ऊँटोके अधीश्वर हुए।"

"इस समय देवरावलसे यशोकर्ण नामका वैश्य धारानगरीमे जा रहा था। धारा-पति वृजभानु पँवारने उसे धनवान् जानकर वंदी करलिया और उसका समस्त धन छीन कर अन्तमे उसे छोड़ दिया। जब यशोकर्ण देवरावलमे आया तब देवराजके सम्मुख नेत्रोंमे आँसू भर विनती कर नम्रतासे कहने लगा, कि "महाराज! धारापतिने विना ही कारण मुझे वन्दी करके अनेक कष्ट दिए हैं, और मेरे पास जितना धन था वह छीन कर अब मुझे छोड़ दिया है। उन्होने मुझे जैसा कष्ट दिया है उसे आप देखिये कि मेरे गलेमे रस्सीके बाँधनेका चिह्न अबतक विद्यमान है।" देवराजने यशोकर्णके गलेमे रस्सीका चिह्न देखकर विचारा कि इससे तो मेरा बड़ा अपमान हुआ है, पँवार राजाने जो यशोकर्णका अपमान किया है सो मानो मेरा ही अपमान किया है यह विचार कर वह अत्यन्त क्रोधित होगये और उन्होने उसी समय. यह प्रतिज्ञा की कि मै अपने इस अपमानका वदला लिये विना जलपान भी न करूंगा।

"पाठक गण! आपने अंग्रेजी भाषामे लिखी हुई संसारकी प्रत्येक प्रान्तीय अनेक जातिके राजाओकी प्रतिज्ञाओको पढ़ा होगा, वह राजप्रतिज्ञा किस प्रकारसे पूर्ण होती थी और होती है वह आपसे छिपी नहीं है। परन्तु ऐसे वहुत थोड़े राजा हैं कि जिन्होने प्रतिज्ञा करके उसे पूर्ण किया है। परन्तु राजपूत राजा अपनी प्रतिज्ञाको किस प्रकारसे पालन करते थे वह आपने इस इतिहासके अनेक स्थानोमे पढ़ा है तदनुसार इस समय यदुवंशी देवराजकी प्रतिज्ञापूरणके वृत्तान्तको भी पढ़िये:-देवराजने प्रतिज्ञा की है कि यशोकर्णके अपमानका वदला लिये विना जलतक भी स्पर्श नही करूँगा। यह प्रतिज्ञा कोई साधारण प्रतिज्ञा नहीं है। धारानगरी वहुत दूर है एक दिनमे वहाँ

---

(१) टाड महोदयने टीकेमें लिखा है "कि यह हमें विदित नहीं है कि लुद्रगण राजपूत जातिके किस कुलमें उत्पन्न हैं, परन्तु एक समयमें जो पवाँर वा प्रमार जाति भारतवर्षमें सबसे पहिल मरुक्षेत्रकी अधीश्वर थी संभव है कि यह भी वही हो। भट्टी जातिके द्वारा वर्तमान राजधानी जयसलमेरके स्थापनके पूर्व तक लुद्रवा ही भट्टियोकी राजधानी थी। लुद्रवा अत्यन्त प्राचीन नगरी कही जाती है; परन्तु इस समय यह एकवार ही विध्वंस होगई है। इस समय गड़ेरियेही लुद्रवामें निवास करते है। मरुक्षेत्रके और भी अनेक प्राचीन नगर इस समय विध्वंस होगये हैं। और निरंतरके युद्धही इसका कारण है। मुझे लुद्रवामें व्रजराजके समयका अर्थात् दशमी शताब्दीका एक तांबेका अनुशासन पत्र मिला था। वह जैनभाषामें लिखा हुआ था। उससे यह जाना जाता है कि इस देशमें उस समय जैनधर्म प्रचलित था।"

(२) टाड साहबने कहा है कि लिखनेवालोंके दोषसे ही यह संख्या विशेषरूपसे गिनी गई है।

जाकर उसका जय करना किसी प्रकार भी सम्भव नहीं हो सकता, फिर जब प्रतिज्ञा की है कि विना धारानगरीको जीते हुए जल भी स्पर्श नहीं करूंगा ? तब क्या उपाय है? तिस पर फिर कई दिनतक विना जलपान किये हुए जीवित भी असंभवहै, और जब यह प्रतिज्ञा की है तो शरीरमें प्राण रहतेहुए प्रतिज्ञाको भंग नहीं कर सकते" ॥ अन्तमे मन्त्रियोंने यह सम्मति दी कि धारानगरीके निवासी पँवार है और वहाँका राजा भी पँवार है, आपकी सेनामें बहुतसे पँवार और प्रमार जातिकी सेना है। आप मट्टीकी एक धारानगरी तैयार करवाइये तलवार हाथमे लेकर आपकी सेनाके पँवार उसकी रक्षा करैं, और आप सेना सहित उस कृत्रिम धारानगरी पर आक्रमण कर विजयी हो अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण कीजिये। इस सम्मतिके अनुसार शीघ्र ही कार्य आरंभ होगया । देवराजको सेनामें जितने पँवार थे वह सभी अपने २ हाथमें तलवारें और भाले लेकर वीरसाजसे सजकर धारानगरीकी रक्षामे नियुक्त हुए। वीरश्रेष्ठ देवराजने सेना साथ ले उसपर आक्रमण किया। दोनो ओर भयकर समरानल प्रज्वलित होगई, इसी समयमे पँवारोकी सेनाने कहा,—

दोहा—जहाँ पँवार तहाँ धार है, जहाँ धार तहाँ पँवार।
धारक विना पँवार नहिं, नहिं पँवार विन धार ॥

इसका अर्थ यह है कि जिस स्थानपर पँवार है वह स्थान ही धार है और जिस स्थानपर धार है उसी स्थान पर पँवार हैं। पँवारके अतिरिक्त धार नहीं है और धारके अतिरिक्त पँवार नहीं है।

पँवारोकी सेना अपने नेता तेजसिंह और सारङ्गके आधीनमे बडे विक्रमके साथ उस कृत्रिम धारानगरीकी रक्षा करने लगी। भयंकर युद्धमे एकसौ बीस पँवार मारे गये और देवराजने उस कृत्रिम धारानगरीको जीतकर अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण किया। जिस पँवार सेनाने उस रणभूमिमें महा वीरता दिखानेके पीछे जीवन त्याग किया था, देवराजने उनकी असीम वीरतासे प्रसन्न हो उनके स्त्री पुत्रोंके भरण पोषणके लिये उचित वृत्ति नियत करदी। "किस देशके किस राजाने इस प्रकार अपनी प्रतिज्ञाको पालन किया है ? राजपूत राजा जो प्रतिज्ञा करते थे शरीरमे प्राण रहते हुए उसे किसी भाँति भी भग नही करसकते थे। क्षत्रियोकी यही रीति थी, उसी क्षत्रिय जातिको आजकलके अंग्रेजी पढोने जगली और वरवर बताकर उपहास किया है, परन्तु इस बातको हम दावेके साथ कह सकते हैं कि इस संसारमे जिस भावसे अपनी प्रतिज्ञाको क्षत्रिय जाति पूरा करगई है, शिक्षित सभ्य और उन्नतिवाले कोई राजा भी उनकी समान सहस्रों अंशोमेंके एक अंशकी भी प्रतिज्ञा पालनमें सामर्थ्य नहीं रखते।"

इतिहासवेत्ता पीछे लिखते हैं "कि देवराजने इस प्रकारसे अपनी प्रतिज्ञाको पूरा करनेके पीछे जल ग्रहण किया, और कुछ ही दिनोके पीछे अपनी बलवान् सेनाको सजाकर धारानगरीको जीतनेके लिये प्रस्थान किया। धारापति ब्रजभानुने इनकी गति रोकनेके लिये

(१) यह कुटेशनका लेख विशेष है.

पहिलेसे ही सीमापर सेना भेज दी थी, परन्तु अतुल पराक्रमी यादवोंकी सेनाने प्रलयकालीन मेघमालाकी समान उस प्रमारोंकी सेनाको न जाने कहां छिन्नभिन्न करदिया। देवराजने अन्तमें धारानगरीपर धावा किया। धारापति बृजभानु धन और प्राण तथा राज्यकी रक्षाके लिये पॉच दिनतक लड़ाई करते रहे, और अन्तमें आठसौ सेनाके साथ युद्धभूमिमे मारेगये। देवराजने अत्यन्त प्राचीन धारानगरीके किलेकी चोटीके ऊपर अपनी विजय पताका लगाई, और फिर आप लुद्रवानगरीको लौट आये"।

"देवराजके औरससे मंद और छेणो नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए। और शेषोक्त पुत्रोंके पांच पुत्र उत्पन्न हुए, वह लोग छेणोराजपूत नामसे विख्यात् है। जिस खदाल नामक देशमे देरावर स्थापित था उस देशमें देवराजने बहुतसे बड़े २ सरोवर खुदवाये तनोट नामक स्थानमे जो सरोवर खुदवाया था वह तनोटसर नामसे प्रसिद्ध है, और देवसर नामवाला एक बड़ा सरोवर अपने नामसे खुदवाया था। एक समय देवराज कुछ थोड़ेसे सेवकोको साथमे ले शिकार खेलनेको गये। ऐसे सुअवसरको पाकर छानिया जातिके वलोचोंने छब्बीस अनुचरोंके साथ देवराज पर आक्रमण करके उनको मारडाला। देवराजने ५२ वर्षतक अतुल पराक्रमके साथ राज्य किया।"

"देवराजके शरीर त्याग[1] करनेपर इनके बड़े पुत्र मूंदजी पिताके सिंहासन पर विराजमान हुए, उन्होंने वारह दिनतक अशौचमें रहकर पिताका श्राद्ध कार्य समाप्त किया तदनन्तर राज्याभिषेक हुआ ६८ कुओंके जल और एकसौ आठ भिन्न २ पवित्र वृक्षोके पत्तोंसे, मूंदने स्नान किया और एक उत्तम आचरणवाली सती स्त्रीने मूंदके मस्तक परसे सुगंधित द्रव्योंको उतारा, मून्दके सम्मुख पंचामृत रक्खा गया, सुवर्ण, चॉदी, मूंगा, मोती, राजछत्र, दूर्वा, और अनेक भॉतिके सुगन्धित पुष्प, दर्पण, एक राजकुमारी कन्या, एक रथ, एक पताका, एक वेलेका वृक्ष, सात प्रकारके खरगोश[2], दो मछली, एक घोड़ा, एक बैल, एक बड़ा शंख, एक कमल, एक पात्रजल, चामर, वत्सतरी, नारियल हरेवर्णकी मट्टी और नैवेद्य इत्यादिसे सुसज्जितकर रक्खी गई। शेरकी खालके ऊपर (उस खालके ऊपर सात द्वीपोंका चित्र खिंचा हुआ था) योगीभेषसे कुमार बैठाये गये उन शरीरमें विभूति लगाकर कानोंमें मुंदरे पहराये गये, उनके ऊपर सफेद चमर ढुलने लगा। वह अपने पिताके सिंहासनके ऊपर विराजमान हुए, पुरोहितने आशीर्वाद दिया और सामन्त गण उपहार देने लगे; मूंदने पिताके सिंहासनपर बैठते ही अपने पिताके मारनेवालेके विरुद्ध वदला लेनेके लिये युद्धकी तैयारी की। हत्या करनेवाले पहिलेसे ही अपनी रक्षाके लिये सज रहे थे; मूंदजीने उनको आक्रमण करके शत्रुओकी आठसौ सेनाका नाश कर उन्हे उचित फल दिया। रावलमूंदके वाछू नामक एकमात्र पुत्र

---

(१) पर दूसरा इतिहास कहता है इनकी अवस्था १३० वर्षकी थी। इतिहास चारण रामनाथ रत्नू.

(२) उर्दू तर्जुमेमें कागज,

उत्पन्न हुआ, जब कुमारवाछूकी अवस्था चौदह वर्षकी हुई उस समय (पातन) पट्टनके राजा सोलंकी जातके बल्लभसेनने उनके साथ अपनी कन्या व्याह देनेके लिये क्षत्रियोंकी रीतिके अनुसार, नारियल भेजा। वाछूरावने पातनमें जाकर सोलङ्की राजकुमारीका पाणिग्रहण किया।"

"राव मन्धजी (मूंदजी) के शरीर त्याग करनेपर वाछूराव संवत् १०३५ श्रावण कृष्ण द्वादशी शनिश्चरके दिन पिताके सिंहासनपर बैठे। इनका भी पूर्वोक्त रीति भांतिके अनुसार राज्याभिषेक हुआ। वेछूके औरससे निम्न लिखित पॉच पुत्र हुए।

"१–दूसाजी। २–सिंह।
३–वापेराव। ४–इनवे।
५–मूलअपसा।

"उक्त पाच पुत्रोके वंशधर अनेक शाखाओंमें विभक्त हुए।"

"एक अश्व व्यवसाई एकसौ घोड़े लिये जा रहा था, उसके घोड़ोंमे एक घोड़ा सबसे श्रेष्ठ था, और उसका मूल्य एक लाख रुपया रक्खागया था। सिन्धुनदीके पश्चिम सीमाका निवासी गाजीखां नामक पठान उस घोडेका अधीश्वर था। दूसाजीने अपने भ्राताके साथ मिलकर सेना साथमे ले उस देशमें जाकर गाजीखांके प्राणोका संहार किया, और उस घोड़ेको विजयके धनस्वरूपमें ले आया।"

सिंहके एक पुत्र उत्पन्न हुआ, उसका नाम सचाराय था। उसके पुत्र बल्लाके औरससे रत्न और जग्गा नामके दो कुमार उत्पन्न हुए। और वह मंडोरके अधीश्वर पड़िहार जातीय जगन्नाथपर आक्रमण करके उनके आधीनके पांचसौ ऊंटोको जीतकर ले आये। उसके उत्तराधिकारीगण सिंहराव राजपूत नामसे विदित है।"

"वापेरावके दो पुत्र उत्पन्न हुए, एकका नाम पाहुर और दूसरेका नाम मांदन था पाहुरके औरससे विरम और तोलर नामवाले दो पुत्र उत्पन्न हुए। उनके अगणित वंशधर पाहु राजपूत नामसे विदित है। पाहु राजपूतोंने उनके निवास स्थान वीकमपुरसे जाकर जोहियोंके जितने देश उनके अधिकारमे थे उनपर और देवी छालतक अपना अधिकार करलिया। और उन्होंने पुंगलमे अपनी राजधानी स्थापित करके वहाँ अगणित कुएँ खुदवाये। वह सभी पाहु कूप नामसे विख्यात है।"

"मारवाड़के आधीन नागौर देशके निकट खाटूनामक स्थानमे खिची जातिका यदुराय नामवाले एक महाबलवान् और असीम साहसी वीर निवास करता था। यह मनुष्य इतना साहसी था कि इसने पुंगलनगरीके द्वारतक जाकर वहाँ उनका सर्वस्व लूटकर जयतुंग भाटियोंका संहार किया। इन तस्करोंके नेताओंके उपद्रव दूर करने और उनको उचित दंड देनेकी इच्छासे दूसाजीने एक समय गंगाजीमे स्नान करनेका बहाना कर कितने ही साहसी वीर योधाओंको अपने साथमें ले दस्युनेताओंके अधिकारी देशमे जाकर उनके नेता और उनके आधीनके नौसौ मनुष्योंका एकबार ही नाश कर दिया"।

"गहिलोतोके अधीश्वर प्रतापसिंह जिस खेड़देशमें रहते थे दूसाजी अपने तीन भाइयोको लेकर वहाँ गया, और प्रतापसिंहकी तीन कन्याओके साथ अपना विवाह किया, उस खेड़देशमे यदुवंशियोने मुक्त हाथसे धन खर्च किया था। कितने ही दिनोके पीछे विलोचोने खड़ाल राज्यमे जाकर विषम अत्याचार करने प्रारम्भ कर दिये, उस कार्यसे भयंकर युद्धाग्नि प्रज्वलित होगई। इस युद्धमें पाँचसौ विलोच मारेगये, और शेष सब भाग गये, वाछूरावके प्राणत्याग करनेपर उसके पुत्र दूसाजी ११०० संवत्मे आषाढ़के महीनेमे यदुवंशके सिंहासनपर विराजमान हुए"।

"दूसाजीके मस्तक पर राजछत्र शोभित होनेके कुछही दिन पीछे सोढाजातिके अधीश्वर हमीरसिंहने अपना दल ले दूसाजीके राज्यपर आक्रमण किया। और वहाँ जाकर उसकी वहुतसी धन सम्पत्ति लूट लाये। हमीरको इस प्रकारसे आक्रमण करता हुआ देखकर दूसाजीने उनके पास एक दूतके हाथ कहला भेजा कि हम दोनो वहुत काल पहिलेसे सम्बन्धवन्धनमे वँधेहुए है इस कारण आप हमारे राज्यमे लूट न करै। परन्तु हमीरने इनके वचनो पर कुछ भी ध्यान न दिया, तव दूसाजी अत्यन्त क्रोधित होकर अपनी सेना साथले धाट राजधानीमे गया, और वहाँ प्रवल पराक्रम करके हमीरको परास्त करदिया। दूसाजीके जैसलदेव और विजैराव नामक दो पुत्र हुए उन्होने मेवाड़के राणाकी कुमारीके साथ विवाह किया था। दूसाजीकी वृद्धावस्थामें उस राजवालाके गर्भसे एक और पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम लांझाविजयराज रक्खा गया। दूसाजीके परलोकवासी होनेपर राज्यके सम्पूर्ण नेता और सामन्तोंने उसी तीसरे कुमार लांझाविजयराजको राज्यसिंहासनपर अभिषिक्त किया। लांझाविजयराजने राज्यसिंहासनपर वैठनेके पहिले सोलंकीवंशके सिद्धराज जयसिंहकी कन्याके साथ विवाह किया था। विवाहके समयमे जयसिंहकी रानीने लांझाविजयराजके माथेपर तिलक करनेके समय कहा "वत्स उत्तरांशके जो नवीन राजा प्रवल होकर इस राज्यसे शत्रुता करते हैं और पीड़ा देते हैं, उनसे आप ही हमारे राज्यके उत्तरप्रान्तकी रक्षा करो।, पैत्तनकी सौलंकिनी रानीके औरससे लांझाके एक पुत्र उत्पन्न हुआ उसका नाम भोजदेव रक्खा; भोजदेवके प्राण त्यागनेपर वह पचीस वर्षकी अवस्थामें लुद्रवा देशके अधीश्वर हुए दूसाजीके और भी पुत्र इसी समय योग्य होगये थे। इस समय जयसलकी अवस्था ३५ वर्षकी थी और विजैराज वत्तीस वर्षकी अवस्थाके थे।

"दूसाजीकी मृत्युके कितने ही वर्ष पहिले धारराजेश्वर उदयादित्यके वंशधर रायधवल पँवारकी तीन कन्याओमेसे एकके साथ शोलंकी वंशीय सिद्धराजके पुत्र जयपाल वा अजयपालने विवाह किया, और दूसरी कन्याके साथ भट्टीराजकुमार विजैराजने

(१) टाड् साहवने अपने टीकेमें लिखा हैं कि "कुमारपालचरित नामक जिस पुस्तकमे अनहलवाड़ा पत्तनके राजाओंके इतिहासका वर्णन हैं, उनमे सिद्धराजके शासनका समय सम्वत् ११५२ से १२०१ तक अर्थात् १०९४ से ११४५ ईसवी तक लिखा है।

और तीसरी कन्याका संबंध चित्तौरके राणाके साथ ठहर गया । भट्टीजातिके अधीश्वर सातसौ अश्वारोही सेना साथले लुद्रवासे धारानगरीको विवाह करनेके लिये गये। उस समय सीशोदिया और सोलङ्की राजा भी वहां पहुंच गये थे। भट्टीराज विवाह करनेके पीछे लुद्रवाको चले आये, और महादेवजीका एक वडाभारी मंदिर वनवाया, और उसके सम्मुख एक वड़ा सरोवर खुदाया, उस पवाँर राजकन्यासे राहड़ नाम वेटा पैदा हुआ, इनके नेतसी और केकसी नामवाले दो पुत्र उत्पन्न हुए।"

भट्टी इतिहासवेत्ताने लिखा है कि "भोजदेव वहुत दिनोतक लुद्रवाके सिंहासनपर निश्चिन्त न वैठसके, कारण कि कुछ ही समयमे इनके चचा जयसलदेवने इनके विरुद्ध भयानक षड्यन्त्रका विस्तार किया। परन्तु भोजदेव सदा पांचसौ सोलंकी राजपूत वीरोंसे रक्षित रहते थे इस कारण जयसल किसी प्रकार भी उनके शरीरपर हस्तक्षेप न करसके। इस समय पाटनके अधीश्वर भारतविजयकी अभिलाषासे गजनीके शहाबुद्दीनके साथ युद्धमें लिप्त थे, शहावुद्दीन उस समय ठट्टानामक देशको जीतकर पाटनके अधीश्वको परास्त करनेमें लगरहा था, चतुरनीतिविशारद जयसलने देखा कि भोजदेवको सरलतासे हस्तगत करके उनके सिंहासनपर वैठना कोई साधारण वात नही है, इस कारण वहुत चिन्ता करनेके पीछे अन्तमें उसने एक उपाय स्थिर किया। उसने अन्तमे शहावुद्दीनके साथ मिलकर अनहलवाड़ा पट्टनपर आक्रमण करनेका दृढ़ संकल्प किया। उसने यह विचारा कि जो सेना भोजदेवके शरीरकी रक्षा करनेके लिये स्थित है, अनहलवाड़ा पट्टनपर आक्रमण करते ही विपत्तिको सम्मुख देखकर वह अवश्य ही भाग जायगी। और हमारा मनोरथ सरलतासे सिद्ध होजायगा। नीतिविशारद जयसलने मनहीमन यह सिद्धान्त निश्चित कर अपने प्रधान २ कुटुम्बियोंके दोसौ असीम साहसी अश्वारोही सेनाके साथ पंजावको गमन किया। इसी समय शहावुद्दीन गौरी ठट्टेको जीतकर वहाँ एक दल यमनोंकी सेनाका रख सिंधुदेशकी प्राचीन राजधानी अरोड़ नगरको जा रहा था। जयसल यवनराजाके साथ साक्षात् करनेके लिये उसी अरोड़मे आये। शहावुद्दीनने जयसलको आया हुआ देखकर इनका भलीभांतिसे आदर सत्कार किया। जयसलने अपने मनका अभिप्राय कह सुनाया, इसपर शीघ्र ही दोनोंकी मित्रता होगई। शहावुद्दीनने करीमखाँ नामक एक प्रधान सेनापतिको कई हजार सेनाके साथ जयसलकी सहायताके लिये अर्थात् भोजदेवको परास्त करने और लुद्रवाराज्यको जयसलके हाथमें समर्पण करनेको भेज दिया। वीर श्रेष्ठ जयसलने इस प्रकार यवनोंकी सेना साथ ले लुद्रवापर आक्रमण कर प्रवल युद्धकी अग्नि प्रज्वलित कर दी। इस भयंकर युद्धमे भोजदेवके मरते ही उसकी वची वचाई सेनाने जयसलकी आधीनता स्वीकार करली। जयसलने लुद्रवाके निवासियोको अपनी २ धन सम्पत्ति अन्यत्र लेजानेके लिये दो दिनकी अवधि दी। तीसरे दिन यवनसेनापति करीमखाँ लुद्रवाको लूटकर भक्खरदेशको चलागया"।

"इस प्रकारसे वीरश्रेष्ठ जयसलने लुद्रवाके सिंहासनपर अपना अधिकार किया। उनके अभिषेकके विरुद्धमें और कुछ कहनेका साहस नहीं होता। परन्तु जयसलने राज्यपर बैठकर जब देखा कि लुद्रवा देश एक ऐसे स्थानमे स्थित है कि जहां शत्रु-दल बड़ी सरलतासे आकर विजयी होसकते हैं और ऐसे स्थानपर राजधानीकी रक्षा करना किसी प्रकार भी संभव नहीं होसकता, तब उसने अपनी रक्षाका एक स्थान निर्धारित किया। वह स्थान लुद्रवासे पाँच कोश दूर था। एक समय एक पत्थरके ऊपर जयसलने एक ब्राह्मणको बैठा हुआ देखा। ब्रह्मसर नामक कुंडके समीप उस ब्राह्मणकी कुटी थी। जयसलने उस पूजनीय ब्राह्मणको प्रणाम करके अपने आनेका समाचार कहा: ब्राह्मणने अभय देकर निभृत आश्रमके अत्यन्त समीप त्रिशृङ्गके शिखर पर आ[illegible] तिहासका वर्णन करना आरम्भ किया। ब्राह्मणने कहा त्रेतायुगमें कावा काग नामका एक योगी इस कुंडके निकट वास करता था। उसी योगीके नामके अनुसार उस कुंडसे निकलनेवाली तरंगिनी कागनदी नामसे विख्यात् हुई। पाण्डुकुल धुरंधर अर्जुन श्रीकृष्णके साथ एक समय इस कुंडकी यात्रा करनेके लिये आये थे। उस समय श्रीकृष्णने अर्जुनसे कहा कि बहुत कालके पीछे हमारे ही वंशका एक मनुष्य इस त्रिकूट पर्वत पर राजधानी स्थापित करैगा। श्रीकृष्णके यह वचन सुनते ही अर्जुनने कहा कि "हे मित्र! यदि यहाँ राजधा[illegible] नगई तो यहाँके निवासियोंको जलका अत्यन्त कष्ट होगा, कारण कि इस नदीका जल निर्मल नहीं है। यह वचन सुनते ही सर्वमय हरिने अपने चक्रसे उस पर्वतको संघर्षण किया जिससे अमृतके समान सुन्दर स्वादिष्ट जलकी नदी वह निकली। उस नदीके पार्श्वमे ही भविष्यद्वाक्य मूलक एक कविता पत्थरके ऊपर खुदी हुई थी, उक्त योगीने जयसलको वह भी पढ़ कर सुनाई;—उसका आशय नीचे लिखा जाता है।

१ "हे यदुवंशावतंस! नरपति। आप इस देशमें पधारिये, और इस शिखर-के ऊपर त्रिकोण किला बनवाओ।"

२ "लुद्रवा विध्वंस होगया है और जयसलदेश इस स्थानसे पाँच कोश दूर है। जो उससे मजबूत है।"

३ "हे यदुवंश सम्भूत! जयसल लुद्रवाको त्याग कर इस स्थानपर राजधानीकी प्रतिष्ठा करे।

"जिस नदीके पार्श्वमें उक्त श्लोक लिखे थे एकमात्र योगी ही उस स्थानको जानता था। उस योगीका नाम ईसाल था। उसने अपने स्वार्थ साधनके लिये जयसलसे इतना कहा था कि दुर्गके पश्चिम पार्श्वमें स्थित क्षेत्र मेरे नामसे ईसलक्षेत्र कहा जाय और उसकी रक्षा रहै, उसने गणनासे जयसलको यह भी प्रगट किया, कि आप जो दुर्ग बनानेकी अभिलाषा करते हैं वह दो वार अन्यान्य जातियोसे लूटा जायगा,

---

(१) उर्दू तर्जुमेमें त्रिकुटा पहाड.

और रुधिरकी नदी बहेगी, और कुछ दिनोके लिये, आपके उत्तराधिकारी गण सर्वस्व हार जांयगे।"

"संवत् १२१२ सन् (११५६ ईसवी) श्रावण कृष्णा द्वादशी रविवारके दिन जयसलमेर राजधानी प्रतिष्ठित हुई और थोड़े ही दिनोमे लुद्रवाके सब निवासी अपनी समस्त धन सम्पत्ति लेकर नवीन राजधानी जयसलमेरमे आकर निवास करने लगे। जयसलके औरससे केवल और शालिवाहन नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए। जयसलने अतुल पराक्रमी पाहुजातिके एक विद्वान पुरुषको अपने प्रधान मंत्री और उपदेष्टा पदपर नियुक्त किया। भट्टी जातिके प्राचीन शत्रु चन्ना राजपूतोने फिर लोद्री देशपर आक्रमण किया, परन्तु उनको इसके लिये उचित फल मिला, कारण कि जयसल इस घटनाके पाँच वर्ष पीछे तक जीवित थे। उनके प्राण त्याग करनेपर उनके छोटे पुत्र शालिवाहन (द्वितीय) पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए।"

तृतीय अध्याय ३.

जयसलके ज्येष्ठ पुत्र केलनजीको निर्वासन दंड-शालिवाहनका अभिषेक-काठी वा काथि देशके अधिपतिके विरुद्ध युद्धकी यात्रा-उनकी उत्पत्तिका विवरण-बद्रीनाथके यदुवंशी राजाकी मृत्यु होजानेपर उनके सिंहासनपर बैठनेके लिये एक यदुवंशी राजकुमारसे प्रार्थना करना-शालिवाहनके उपस्थित न होनेसे उनके पुत्र बीजलदेवको सिंहासनका अधिकार देना-शालिवाहका खड़ाल देशमें जाना और बलोचोंके साथ युद्ध करना-बीजलदेवका आत्मघात करके प्राण त्याग करना- केलनजीको फिर बुलाकर सिंहासनपर बैठालना-उनकी संतानोंसे सम्प्रदायकी सृष्टि होना-खिदरखांका फिर खडालपर आक्रमण-केलनका खिजरखांपर आक्रमण और अपने पिताकी मृत्युका बदला लेना-केलनकी मृत्यु-चाचकदेवको सिंहासनकी प्राप्ति-उनका चन्ना राजपूतोंको भगाना-अमरकोटके सोढा राजपूतोंको परास्त करना-राठौरोंका मरुक्षेत्रमें आना और उनका उपद्रव मचाना चाचककी मृत्यु-उनके पुत्र करणका सिंहासनपर बैठना-करणके जेष्ठ भ्राता जैतसिंहका जयसलमेरको त्यागना-करणकी मृत्यु-लाखणसेनका सिंहासनपर बैठना-उनकी उन्मत्तता-उनके पुत्र पुन्यपालका सिंहासनपर बैठना-पुन्यपालको गद्दीसे अलग करना-उनके पोते रणंगदेवका रोट और पूगलपर अधिकार करना-पुन्यपालको निर्वासन दंडके पीछे जैतसीको फिर बुलाकर सिंहासन देना-अलावद्दीनने जिस समय मंडोरके पड़िहार राज्यपर आक्रमण किया उस समय जैतसीको मंडोरराज्यका आश्रय देना-जैतसीके पुत्रोंद्वारा तथा और मुलतानसे भेजे हुए दिल्लीके बादशाहका अर्घ्य कर लूटना-यवन बादशाहका जैसलमेर पर आक्रमण करना-जैतसी और उनके पुत्रोंका युद्धके लिये उद्योग करना-जयसलमेरका घेरना-यवनोंका पहिला आक्रमण व्यर्थ करना-रणक्षेत्रमें भट्टी सैन्यकी रक्षा-जैतसीकी मृत्यु-जैतसीके पुत्र रत्नसिंहके साथ आक्रमणकारियोंके सेनापतिके साथ विचित्र मित्रता-मूलराजको सिंहासन प्राप्ति, फिर यवनोंकी राजधानी पर अधिकार करनेकी चेष्टा करना-उनकी दुबारा पराजय-दुर्गम पहुंची हुई सेनाको अत्यन्त कष्टकी प्राप्ति-युद्धके विचारकी सभा-जौहरकी रीति-रत्नके मुसलमान मित्रका उनके दोनों पुत्रोंके प्रति उदार व्यवहार-शेपमें आक्रमण-रावलमूलराज और रत्नके प्रधान यादवोंका रणभूमिमें प्राणत्यागना-यवनोंका जयसलमेर पर अधिकार करना-जयसलमेरका विध्वंस होना और उसका त्याग।

यदुवंशावतंस जयसल नवीन राजाधानी जयसलमेरकी प्रतिष्ठा होजानेके पीछे बारह वर्ष तक जीवित रहकर अपने प्रवल पराक्रमके साथ राज्य करते रहे। इस वीर श्रेष्ठ जयसलके नामसे ही जयसलमेर नामकी सृष्टि हुई। जयसलमेर आजतक यदुवंशियोंके अधिकारमें है, और उसी नामसे पुकारा जा रहा है, यह तो पहिले ही कह आये हैं कि पाहु जातिके कृतविद्य मनुष्यने जयसलमेरके प्रधान राजमंत्री पदपर नियुक्त हो भट्टीराज्यमे अपनी प्रवल सामर्थ्यका विस्तार किया था। यह मंत्री इतनी सामर्थ्यवाला होगया था कि इसके मन प्रसन्न रखनेके लिये सभी अपनी २ सामर्थ्यके अनुसार चेष्टा करते रहते थे। उसकी इच्छाके अनुसार ही राज्यशासन होता था। रावल जयसलके केलन और शालिवाहन नामवाले दो पुत्र थे, पाठकोंने पहिले अध्यायमे उनका वृत्तान्त पढ़ा होगा, प्रचलित नियमोंके अनुसार युवराज केलन पिताके सिंहासनपर बैठे–इनके सिंहासनपर बैठनेसे मंत्री पाहु अत्यन्त असंतुष्ट होगये। युवराजको सिंहासनसे अलग करनेपर भी उनके हृदयकी अग न बुझी, उसको एकवार ही निर्वासित कर दिया। इन युवराज केलनको निर्वासन होने पाठकगण सरलतासे समझ जायँगे कि पाहुमंत्रीमें कैसी सामर्थ्य थी। केलणके निर्वासित होते ही रावल जयसलकी मृत्यु होनेके पीछे उनके छोटे कुमार शालिवाहन सबकी सम्मतिसे संवत् १२२४ सन् (११६८ ईसवीमे राज्य सिंहासनपर विराजमान हुए।

यदुकुलादिवाकर पहिले शालिवाहनके समान इस दूसरे शालिवाहनने भी शीघ्र ही अपने वाहुवल और पराक्रमसे अपने नामको सर्वत्र विख्यात्त करदिया।

जालौर वा आराव्लीके बीचवाले देशोमे काटी वा काठी नामकी एक जाति निवास करती थी। जगभान नामका एक मनुष्य उस जातिका अधीश्वर था। शालिवाहनने राजदंड धारण करनेके पीछे सबसे पहिले उस जगभानुसे युद्ध करनेका विचार किया। काठी जातिके अधिपति उस समरमे परास्त होकर मारे गये। रावल शालिवाहनने विजयी हो काठी जातिके समस्त घोड़े और ऊँट अपने अधिकारमें करलिये और फिर वह अपनी नगरीको लौट आये। इस युद्धमे शालिवाहनके विशेष पराक्रमसे उनके यशका सूर्य अपनी पूर्णमूर्तिसे उदय हुआ, और सभी इनके वाहुवलकी प्रशंसा करने लगे। शालिवाहनके तीन पुत्र उत्पन्न हुए,—

१–बीजलदेवजी।

२–बानर।

३–हंसू।

यदुवंशी पहिले शालिवाहन, जिसने गजनीसे पंजाबमे आकर शालिवाहनपुरमे राजधानीकी प्रतिष्ठा की थी; उसीके पुत्रने वद्रीनाथके पर्वत पर एक स्वतंत्र और

(१) कर्नल टाड् साहबने टीकेमें लिखा है "एलिकजंडरके भारतपर अधिकार करनेके समयमें जिस काठी जातिने अपनी विषम वीरता प्रकाश करके उसमें विघ्न किया था, यह वहीकाठी जाति है। यह उस समय मुलतानमें रहती थी, सौराष्ट्रके अन्तर्गत काठियावार राज्यकी एक श्रेणीके मनुष्य उक्त स्थानमें आकर रहे थे और यदुभट्टिराजने उन्हींपर आक्रमण किया था।"

स्वाधीन राज्य स्थापन किया। वह यदुवंशी राजा पर्वत शिखर पर इतने दिनोंतक अपने प्रबल प्रतापसे राज्यशासन करते आये थे। जयसलमेरके सिंहासन पर जिस समय उक्त दूसरे शालिवाहन बैठे थे उसी समय उक्त बदरीनाथके यदुवंशी अधीश्वरने पुत्रहीन अवस्थामे प्राण त्यागकिये। वहांके मंत्री और सामन्तोंने मिलकर यदुवंशके सिंहासन पर एक यदुवंशीको बैठालनेके लिये यदुवंश धुरंधर शालिवाहनके पास कईएक सामन्तोंको भेजकर एक यदुवंशी राजकुमारकी प्रार्थना की। रावल शालिवाहनने अपने स्वजातीय राजोके सिंहासनको रक्षाके लिये अपने तीसरे कुमार हस्सूको बदरीनाथमे भेज दिया।परन्तु अत्यन्त दु:खका विषय है कि कुमारने बदरीनाथमें जाते ही प्राण त्यागदिये। हस्सूकी स्त्री गर्भवती थी वह उसी अवस्थामें बदरीनाथको जा रही थी कि मार्गमे ही उसे प्रसवकी वेदना उपस्थित हुई। उसने पलाश वृक्षके नीचे जाकर एक कुमार उत्पन्न किया। पलाश वृक्षके नामके अनुसार ही कुमारका नाम पलाश रक्खा गया। वही बालक कुमार बदरीनाथके राज्यपद पर अभिषिक्त हुआ; और उसीके नामके अनुसार उक्त राज्यका नाम भी पलासिया रक्खा गया और उसके उत्तराधिकारी वंशधर लोग पलासिया भाटी कहाये।

इस समय सिरोहीके देवरा जातीय मानसिंहने रावल शालिवाहनको अपनी कन्या देनेका प्रस्ताव करके उनके पास नारियल भेजा। शालिवाहन अपने ज्येष्ठ कुमार बीजलदेवको राज्यकी रक्षाका भार देकर आप विवाह करनेके लिये सिरोहीको गये। शालिवाहनके जानेके दो चार दिन पीछे बीजलकेधाभाई अर्थात् धात्री माताके पुत्रने राज्यमे यह बात उड़ा दी कि रावल शालिवाहन मार्गमे एक व्याघ्रके साथ युद्ध करके मारेगये। वह धाभाई इस जनरवको फैलाकर ही तृप्त न हुआ वरन उसने इस सुअवसरमें बीजलको पिताके सिंहासन पर नियमित रूपसे अभिषिक्त करनेके लिये विशेष प्रयत्न किया। बीजल अपने धाभाईकी सम्मतिसे ही सब कार्य्य करता था कुछ दिन पीछे रावल शालिवाहनने सिरोहीसे आकर देखा कि मेरा विश्वासहन्ता पुत्र सम्पूर्ण राजशक्तिको धारण करके सिंहासन पर दृढ़भावसे बैठा है। इस समय पुत्र बीजलने पिताके प्रति कुछ भी भक्ति न दिखाई वरन प्रकाशरूपसे यह कह दिया कि "जयसलमेरके सिंहासन पर अब आपका कोई अधिकार नहीं है, आप सिंहासनसे अलग होगये हैं इस कारण आपकी जहाँ इच्छाहो वहाँ जासकते है"। रावल शालिवाहनने अपनी सारी प्रजाको भी अपने पुत्रकी पक्षपाती जानकर जब देखा कि राज्यपर हमारा अधिकार किसी प्रकार नहीं होसकता तब वह शीघ्र ही देरावर नगरके अधीन खड़ाल देशको चलेगये। यद्यपि सिंहासनसे भ्रष्ट होकर शालिवाहनने प्राचीन राजधानी देरावरका आश्रय लिया था परन्तु वह इस शोचनीय अवस्थासे बहुत दिनोंतक जीवित न रहे। खिजरखाँ बलोचने वहाँ विद्रोह उपस्थित किया। रावल शालिवाहन उसको दमन करनेके लिये गये और तीनसौ सेवकोंके साथ वहींपर मारे गये। पिता शालिवाहनको राज्यसे निकाल कर बीजलने भी बहुत दिनोतक सुख न भोगा। एक समय किसी द्वेष विशेष

वश मनोरागसे बीजलने अपने धाभाई पर तलवार चला दी। उसने भी इस पर तलवारका वार किया। तब अत्यन्त लज्जित हो बीजलने आत्महत्या करके जीवनके दिन पूरे किये।

शालिवाहन और उनका पापी पुत्र बीजल इस संसारसे विदा होगये। अब सर्व साधारणमे यह प्रश्न उठा कि जयसलमेरके राज्यसिंहासन पर किसको बैठायाजाय। बहुतसे तर्क वितर्क होनेके पीछे यह निश्चय हुआ कि शालिवाहनके बड़े भाई केलन (जो कि मंत्रीसमाजसे निर्वासित हुए थे) उनको बुलाकर राज्यसिहासनपर बैठाया जाय। सभीने इस बातको मान लिया और इस समय (सन् १२०० ईस्वीमे) केलन फिर अपने पिताके राज्यमे आकर पचास वर्षकी अवस्थामे अभिषिक्त हुए। केलनके औरससे निम्नलिखित छः पुत्र उत्पन्न हुए,—

१–चाचकदेव।	४–पीतमसी।
२–पाल्हन।	५–पीतमचंद।
३–जयचंद।	६–ओसराड़।

दूसरे और तीसरे कुमारोके वंशकी संख्या अगणित हुई, और वह राजपूत वंश नन्ही नामसे विख्यात है।

इतिहाससे जाना जाता है कि इसी समय उक्त खिजरखाँने दूसरी वार पांच-हजार अश्वारोही सेनाके साथ सिन्धुनदीके पारसे आकर फिर खड़ाल पर आक्रमण किया। प्रथम वार इसी खिजरखाँने रावल शालिवाहनको परास्त किया था। अब जब केलनने सुना कि खिजरखाँ अपनी सेना सहित फिर खड़ाल देशपर आपहुँचा है तब उसने तुरन्त ही सात हजार यादवोंकी सेना सजाकर युद्धकी तैयारी की, और रणभूमिमे जाकर उससे घोर घमसान युद्ध किया; इस भयंकर युद्धमें खिजरखाँने पाँचसौ सेनाके साथ पीठ दिखाई। इस भाँति बड़ी वीरतासे शत्रुको परास्त करके वृद्धावस्थामे केलणने उन्नीस वर्षतक राज्य किया, और अंतमे इस अनित्य शरीरको त्याग कर वह सुरलोकको सिधार गये।

रावल केलणके प्राण त्याग करनेपर इनके ज्येष्ठ पुत्र चाचकदेव संवत् १२७५ सन् १२१९ ईस्वीमें जयसलमेरके राजसिंहासनपर बैठे। उन्होंने सिहासनपर बैठते ही चन्ना राजपूतोके साथ भयंकर युद्ध किया। उस समय यदुपतिने दो हजार चन्ना राजपूतोंका जीवन शेष करके उनकी चौदहसौ दूध देनेवाली गौओको अपने अधिकारमें करलिया, और चन्नाजातिको चिरकालके लिये उस देशसे निकाल दिया। चन्नाराजपूत अपने प्राणोके भयसे भयभीत हो शीघ्र ही जोहियोके अधिकारी देशमें जाकर रहे, विजयदर्पी रावल चाचकदेवने कुछ दिनोंके पीछे सोढ़ाके अधीश्वर राणा अमरसी[३]के अधिकारी देश पर आक्रमण किया। अमरसी रावल चाचकदेवको अकारण

(१) उर्दू तर्जुमेमे लिखा है कि उनकी औलाद जेसर और सीहाना राजपूत कहलाते हैं।

(२) उर्दू तर्जुमेमें १५ सौ।

(३) उर्दू तर्जुमेमें रोनसी।

अपने राज्यपर आक्रमण करता हुआ देखकर अत्यन्त विस्मित हुआ, परन्तु वह उसी समय चार हजार अश्वारोही सेनाको इकट्ठा करके रणभूमिमें भी आडटा। यादवोंके प्रबल पराक्रमसे पँवारराजपूत परास्त होकर अपनी निज राजधानी अमरकोटको भाग गये। और अन्तमें अपनी एक परम सुन्दरी कन्या चाचकदेवको देकर उन्होंने इस महा विपत्तिसे छुटकारा पाया।

इसी समयमें कान्यकुब्जके राठौर खेड़ मरुभूमिमें आकर धीरे २ अपनी शासन-शक्तिका विस्तार करते थे। राठौर गणोंने अपने बाहुबलसे चारोंओर अत्याचार करने प्रारम्भ करदिये थे, अतएव रावल चाचकने सोढा जातिके अधीश्वरकी सेनामें अपनी सेना मिलाकर उन उदय होतेहुए राठौरोंको दमन करनेका विचार किया। जशोल और बालोत्तरानामक दो देशोंपर राठौरोंने अपना अधिकार किया था अस्तु यदुपतिने उक्त सम्मिलित सेनाके साथ स्वय उस देशमें जाकर राठौरोंके साथ घोर युद्ध किया। परन्तु राठौर वीर छाडा और उसके पुत्र टीडाने रावल चाचकको एक साथ राठौर राजकुमारी देकर उनकी क्रोधाग्निको शान्त किया।

रावलचाचक प्रबल पराक्रमके साथ बत्तीस वर्ष तक राज्य करके सुरलोकको सिधारे उनके सम्मुख ही उनके इकलौते पुत्र तेजराव बयालिस वर्षकी अवस्थामें वसैन्त रोगसे ग्रसित होकर इस असार ससारको छोड़ गये थे। तेजरावके जैतसी और कर्णसी नामके दो पुत्र थे, कनिष्ट कर्णसीके ऊपर उनके दादा अत्यन्त प्रीति करते थे, मृत्यु शय्यापर शयन करके चाचकने समस्त सामन्त और कुटुम्बियोंको बुलाकर सबसे कहा कि "आप हमारे इन अंतिम वचनोंको मानो। मेरे छोटे पुत्र कर्णसीको मेरे उत्तराधिकारी रूपसे सिंहासन पर अभिषिक्त करो"।

रावलचाचककी मृत्युके उपरान्त उनकी अन्तिम आज्ञानुसार सामन्तमडलीने कर्णसीको जयसलमेरके सिंहासन पर बड़े समारोहके साथ अभिषिक्त किया। छोटेको राजमुकुट धारण करते हुए देखकर बड़ा पुत्र जैतसी अत्यन्त दुःखित और लज्जित हो अपनी जन्मभूमिको छोड़कर गुजरातमें जाकर वहाँके मुसल्मान अधीश्वरके आधीनमें रहने लगा। जिस समय रावल कर्णसी जयसलमेरके राजसिंहासन पर सुशोभित हुए उसी समय मुजफ्फरखाँ नाबौरमें पांच हजार सवारोंके साथ हिन्दुओंके ऊपर भयंकर अत्याचार करके उनको दुःखी कररहा था। इस समय नागौरसे पांच कोशपर वराहा जातिके अधीश्वर भगोतीदासके आधीन एक हजार पांचसौ अश्वारोही सेना थी। भगौतीदासकी एक कन्या अत्यन्त रूपवती सुनी जाती थी, दुराचारी यवन मुजफ्फरखाँने उसी कन्याके रूपलावण्यकी प्रशंसा सुन कर उसको लेनेकी इच्छासे उसके पास एक मनुष्यको भेजा। पापी म्लेच्छोंको अपनी कन्या देना किसी प्रकार भी उचित न जानकर भगौतीदासने स्पष्ट कह दिया कि मैं यवनको अपनी कन्या नहीं दे सकता। परन्तु भगौतीदास यह भी जानता था कि मुजफ्फरके साथ युद्ध करना मेरी सामर्थ्यसे बाहर है इस लिये उसने अपनी समस्त धनसम्पत्ति और

(१) चेचक। (२) उर्दूतवारीखमें १५ कोश।

कुटुम्बके लोगोंको लेकर जयसलमेरपतिकी शरणमें जानेका निश्चय कर लिया। जब भगौतीदास अन्तमें सपरिवार जयसलमेरकी ओरको चले और दुरात्माखाँने यह समाचार सुना तब वह भी शीघ्र ही अपनी सेना लेकर उसके पीछे पीछे चला। और मार्गमे उसे जालिया दोनों सेनाओंमें भयानक युद्ध होने लगा, यवनोंकी सेना अधिक थी इस कारण मुज़फ्फरखाँने बड़ी सरलतासे चारसौ वराहवंशी राजपूतोंको मारकर भगौतीदासको परास्त करदिया, और अन्तमे भगौतीदासकी परम सुन्दरी कन्या तथा उसके और भी कुटुम्बकी स्त्रियोंको वन्दी करके वह लेगया। इस महा अपमानसे अपमानित और परास्त हो भगौतीदासने शीघ्र ही जयसलमेरमें जाकर वहाँके अधीश्वरसे मुज़फ्फरखाँके अत्याचारोंको कह सुनाया। कर्णसीने पापाचारी यवनोके इन अत्याचारोको सुनकर शीघ्र ही अपनी बलवान् सेनाको साथ लेकर मुज़फ्फरखाँ पर आक्रमण किया। रावल-कर्णसीने घोरयुद्ध करके मुज़फ्फरखाँ और उसकी तीन हज़ार सेनाका नाश करके भगौतीदासकी हरी हुई समस्त धन सम्पत्ति और कन्याको लाकर फिर भगौतीदासको दे दिया, इस प्रकार कर्णसी अट्ठाईस वर्ष राज्य करके स्वर्गको सिधारे।

कर्णसीके पीछे उनके पुत्र लाखनसेन संम्वत् १३२७ सन् १२७२ इसवीमे पिताके सिहासन पर बैठे। यह बड़े ही भोले पुरुष थे परंतु उनको एक प्रकारका उन्माद सा रहता था। एक दिन रात्रिके समय गीदड़ बड़े ऊंचे स्वरसे चिल्ला रहे थे, लाखनसेनने सभासद्को बुलाकर पूछा कि यह इतनी जोरसे क्यों चिल्ला रहे है? इस पर सभासद्ने उत्तर दिया कि वे दारुण शीतसे पीड़ित होकर चिल्ला रहे है, यह उत्तर सुनकर राजाने आज्ञा दी कि प्रत्येक शृगालको एक २ वस्त्र तैयार करादो। कई दिनोके पीछे राजाने फिर उनके चीत्कार शब्दको सुना और फिर उसी सभासद्को बुलाकर पूछा कि क्यों इनको अभीतक कपड़े नहीं बनवाये? इसके उत्तरमें सभासद्ने कहा कि महाराज कपड़े तो सबको बनवाकर देदिये गये है। तब लाखनसेन बोले, फिर यह इतना शोर क्यों मचा रहे हैं, अच्छा इनके रहनेके लिये मकान बनवादिये जॉय. यह सब उसीबड़े भारी घरमें रहा करेगे। इतिहास लेखक इसको लिखगये है कि राजकर्मचारियोंने तुरन्त ही राजाकी इस आज्ञाका पालन किया। शृगाल इत्यादि पशुओंके लिये मकान बनवाये गये। टाड् साहबने कहा है कि उन पशुशालाओंमें आजतक कितने ही घर देखे जाते है। यह लाखनसेन, कानडदेव सोनगराका समसामयिक था उसकी जान लाखनकी रानीके सगुन जानने से बची थी.इसकी सोढा जातिकी रानी लाखनसेनके ऊपर अपना विशेष प्रभुत्व चलाती थीं। रानीने अपने पिताकी राजधानी अमरकोटसे अपने बहुतसे कुटुम्बियोंको जयसलमेरमे बुलाकर उनके हाथमें राज्यके एक २ विषयका भार अर्पण किया। परन्तु उसके उन्मादग्रस्त स्वामी लाखनसेनने उन सभीको मारकर उनकी लाशोको एक ओर डाल दिया। इतिहासमें लिखा है कि यह निर्बोध राजा चार वर्षतक यदुवंशियोके राजसिंहान पर स्थित रहा था।

लाखनसेनके पीछे उनके पुत्र पुण्यपालने जयसलमेरके राजमुकुटको अपने मस्तक पर धारण किया, परन्तु यह इतने क्रोधी थे, कि इनके रूखे व्यवहारोंसे समस्त सामन्तमंडली अप्रसन्न रहती थी इस हेतु सभोंने मिलकर सम्मति करके उनको सिंहासनसे उतार दिया। और जैतूसीजी जो पहिले ही निकल कर गुजरातमे यवनोंकी सेनाके नेताओंके साथ जा मिले थे, सामन्तोने उन्हींको बुलाकर उनके हाथमे राज्यशासनका भार अर्पण किया। अपने ही दोषसे सिंहासनसे अलग होकर पुण्यपालने जयसलमेरके राज्यसे कुछ दूर जाकर अपने रहनेके लिये एक स्थान बनवाया। कुछी समयमे लाखनसी नामक उनके एक पुत्र उत्पन्न हुआ। इसी लाखनसीके पुत्र राणिङ्गदेवजीने, खरल राजपूत जातिके एक मनुष्यके साथ परामर्श करके षड्यंत्रका विस्तार किया, और जोहियोसे मेल करके मरोट और थोरी नामक दस्यु जातिके अधिकारीसे पुंगल देश पर अपना अधिकार करलिया। उक्त दस्युदलके नेताने रावकी उपाधि धारण कररक्खी थी, राणिङ्गदेव उनको बंदी करके पुंगल नामक देशमे सकुटुम्ब रहते थे। राव राणिङ्गदेवके सादोल नामवाला एक पुत्र उत्पन्न हुआ। वह जैसा विषयविलासी था वैसा ही वीरतामे भी विख्यात हुआ।

जैतूसी सवत् १३३२ १२७६ ईसी मे जयसलमेरके सिंहासन पर अभिषिक्त हुए। उनके औरससे मूलराज और रत्नसी नाम दो पुत्र उत्पन्न हुए। मूलराजके पुत्र देवराजने जालौरके (सोनगड़े) जातिके अधीश्वर की एक कन्याके साथ पाणिग्रहण किया। जब मुहम्मद (खूनी) बादशाहने मंडोरके पड़िहार जातीय राणारूपसी जीके राज्य पर आक्रमण किया, तब राणारूपसीजीने उससे परास्त हो अपनी बारह कुमारियोंके साथ जयसलमेरपतिका आश्रय लिया। रावलने इनको अभय देकर वारू नामक स्थानमे रहनेके लिये एक स्थान देदिया।

सोनगड़े वंशकी रानीके गर्भसे देवराजके जघन, सिरवन, और हमीर नामके तीन पुत्र उत्पन्न हुए। यही हमीर एक महाबलवान् वीर थे, और यह महबोदवाले कम्पो-हसेनपर आक्रमण कर उनकी राजधानीकी बहुतसी धन सम्पत्ति लूटकर ले आये थे। हमीरके तीन पुत्र उत्पन्न हुए, उनमे बडेका नाम जैतू, दूसरेका नाम लूनकर्ण, और तीसरे पुत्रका नाम मीरो था। इस समय गौरी अलाउद्दीनने भारतवर्ष राजाओंके विरुद्ध घोर युद्धकी अग्नि प्रज्वलित करदी थी। मुलतान और ठट्ठा उस समय दिल्लीपति अलाउद्दीनके अधिकारमें थे। इन दोनो देशोंका राजधन इस समय पन्द्रहसौ अश्व और पन्द्रहसौ खिच्चड़ोकी पीठपर लादकर भक्खर नामक स्थानसे दिल्लीकी ओर बादशाहके निकट भेजा गया था। उस समस्त धनसम्पत्तिको लूटनेकी इच्छासे जैतरावके पुत्र अत्यन्त गुप्तभावसे रास्तेमे आ डटे। वे समस्त राजकुमार वैश्योंका वेष धारण कर सातसौ अश्वारोही और बारहसौ ऊँटोकी सेनाको साथ ले बाहर हुए; पञ्चनदमें एक नदीके किनारे जाकर उन्होंने देखा कि चारसौ मुगल और चारसौ पठान अश्वारोही उस समस्त धनको लिये हुए जा रहे हैं। भाटियोने उस सम्राट्सेनाके पीछे २ जाकर एक स्थान पर विश्राम लिया, दैवयोगसे मुगल और पठानोंने

भी उसी स्थान पर विश्राम करनेके लिये अपने डेरे डालदिये। जब रात्रि होगई और समस्त मुगल पठान निद्रित अवस्थामें हुए तब उसी समय भाटियोंने उस निद्रित यवन सेनापर जाकर धावा किया, और सबको मारकर सारे रत्न और धनको लूटकर वे जयसल्मेरमें ले आये। मुगल और पठानोंकी सेनामेंसे दो चार मनुष्य जो किसी तरह भाग्यवश बच गये थे वादशाहके सम्मुख जाकर रोये। उन्होंने भाटियोंके इस अत्याचारका सारा वृत्तान्त कहा, इस पर वादशाहने तुरन्त ही भट्टीराजकुमारोंसे इसका बदला लेनेके लिये सेना तैयार करनेकी आज्ञा दी। इधर यदुपति रावल जैतसीने भी जब सुना कि यवन सम्राट् जयसल्मेरपर आक्रमण करनेके लिये सेना सहित चलकर अजमेरके समीप सागर स्थानपर आ पहुँचा है, तब निश्चिन्त न रहकर उन्होंने भी प्रबल उद्योगके साथ शत्रुके करालगालसे रक्षाके लिये अपनी तैयारी की, उन्होंने किलेके भीतर बहुतसे धान्य रक्खे और किलेकी चारो ओरकी दीवारोंपर पत्थरके बड़े२ टुकड़े सजा कर रक्खे। उसने यह निश्चय किया कि शत्रुओंकी सेना जैसी ही किलेके समीप आवैगी वैसे ही उसके ऊपर पत्थरोंकी वर्षा करके उसका नाश करेंगे। और वृद्ध मनुष्य और कुटुम्बके मनुष्य तथा रनवासकी सभी स्त्रियोंको मरुक्षेत्रके भीतर भेजदिया। रावल जैतसी इस प्रकारसे अपनी रक्षाकी तैयारी कर अपने दो पुत्र और पांच हजार सेनाको साथ ले किलेमें रहने लगे। और देवराज और हमीरकी एक सेनाको साथ लेकर बाहरसे यवन सेनाके मोरचे तोड़नेको सन्नद्ध हुए। अलाउद्दीन तो स्वयं उस समरक्षेत्रमें न आकर अजमेरकी ओरको गया और भादोंके मेघोंकी समान लोहेके वस्तर पहरे हुए अगणित खुरासानी सेनाने जयसलमेरको जा घेरा। जयसलमेरके ५६ बुर्जकी रक्षाके लिये तीन हजार सात सौ योधा खड़े हुए थे, और दो हजार सैनिक आवश्यकता होनेपर किलेपर किलेके भीतर ही सहायताके लिये तैयार थे। पहिले सप्ताहमें जब कि यवन सेना अपनी रक्षाके लिये मोरचेबंदी तैयार कर रही थी कि भाटियोंकी सेनाके अस्त्राघातसे सात हजार यवन मारे गये परंतु मीर महबूबखाँ और अलीखाँ नामके दो यवन सेनापति बचीबचाई सेनाको साथ लिये रणभूमिमें डटे रहे। यवनसेनाको दो वर्षतक तो जैसलमेर पर विवश होकर घेरा डाले रहना पड़ा क्योंकि उनके लिये मंडोरसे जो रसद आती थी उसे उक्त देवराज और हमीर लूटलाट कर बराबर कर देते थे और किलेवालोंको बखूबी रसद पहुँचती जाती थीं, इसी प्रकार क्रमानुसार आठ वर्षतक दोनों ओरकी सेना युद्ध भूमिमें डटी रही। आठ वर्षके पीछे जयसलमेरपति जैतसी जी इस असार संसारसे। चलबसे उनकी दाह क्रिया किलेमें ही कीगई।

इस प्रकार दीर्घ कालतक स्थाई समर रहनेसे रत्नसी और यवन सेनापति नव्वाब महाबूबखांमें एक प्रकारकी मित्रता होगई और दोनों परस्पर इतने मित्र बनगये कि वे प्रतिदिन अपने डेरोंको छोड़कर मार्गमें जा एक खेजडाके वृक्षके नीचे मिला करते थे, उस समय उनके साथमें बहुत थोड़े सेवक रहते थे। वह प्रतिदिन उसी खेजड़ाके वृक्षके नीचे अनेक प्रकारकी वार्तालाप किया करते, परन्तु जिस समय युद्ध हुआ करता उस समय वे दोनो परस्पर अपनी विलक्षण वीरता प्रकाश करके अपनी अपनी रक्षामें

नियुक्त होजाते थे। इसी समय जयसलमेरके राजा जैतूसी अठारह वर्षतक राज्य करके पीछे स्वर्गधामको सिधार गये।

जैतूसीजीके प्राण त्यागने पर उनके पुत्र -मूलराज (तृतीय) ने संम्वत् १३५० (सन्१२९४ ई) मे शत्रुओंकी सेनासे घिरे हुए किलेके भीतर ही राजतिलक ग्रहण किया। उस समय यादवश्रेष्ठ रत्नसी, यवनयोद्धा नव्वाव महबूबखॉके साथ नियम पूर्वक उक्त वृक्षके नीचे बैठे हुए परस्पर वार्तालाप कररहे थे, कि उसी समय मूलराजका अभिषेक मूलक महोत्सव आरम्भ हुआ। नव्वाव महबूबखॉने विस्मित होकर रत्नसीसे पूछा कि किलेमे किसलिये आनद होरहा है ? उन्होने उसी समय किलेके आनन्दका यथार्थ कारण कह सुनाया। नव्वाव महबूबखॉने वह समाचार सुनकर कहा, कि मित्र! आपके साथ जो हमारी मित्रता होगई है, और इस प्रकारसे प्रतिदिन इस स्थान पर आकर परस्परमे वार्तालाप होती है इसकी खवर अलाउद्दीनको होगई है उन्होने कहला भेजा है कि तुम्हारे दोषसे ही जयसलमेरका किला अपने अधिकारमें नही हुआ है और उन्होने मेरे ऊपर अत्यन्त क्रोधित हो यथासम्भव शीघ्र ही किलेको अधिकारमे करनेकी आज्ञा दी है, हे मित्र! इस कारण मैं कल प्रातःकालहीसे अपनी सेना साथ ले किलेपर अधिकार करनेमे लगूँगा "।

नव्वाव महबूबखॉंके ऐसे वचन सुनकर रत्नसी किञ्चित् भयभीत न हुए। वह नियमित समय पर किलेमे लौट आये।

दूसरे दिन प्रभात होते ही यवनसेनापति महबूबखॉने समस्त यवनसेनाके साथ जयसलमेरके किले पर आक्रमण किया। उस आक्रमणके होते ही भयंकर संग्राम उपस्थित हुआ। एक पक्षमें यवनगण किलेपर अधिकार करनेके लिये प्रवल वल विक्रमके साथ प्रयत्न करने लगे, दूसरी तरफ यादवोंकी सेना किलेकी रक्षा करनेमें तत्पर हुई। इस भयानक युद्धमे नौ हजार यवनसेना मारी गई। तव नव्वाव महबूबखॉ अपने प्राणोके भयसे, वची हुई सेनाको साथ लेकर मैदानसे भाग गया। परंतु उसने वहुतसी सेना सहायताके लिये इकट्ठी करके फिरसे किलेको घेर लिया, जव एक वर्ष तक यवनोंकी सेना इस प्रकारसे किलेको घेरे रही और किलेकी भीतरकी सेनाको भोजनके न मिलनेसे अत्यंत कष्ट पहुँचने लगा। तव जयसलमेरपति मूलराजने अपनी रक्षा करना सव भाँतिसे असभव जानकर और शत्रुके व्यूहको छेदन कर भाग जानेमे भी अपनेको असामर्थ्य देखकर उन्होने अपने ज्ञाति वांधव कुटुम्बी और सरदारोको वुलाकर कहा, " कि कई वर्षोंसे हम अपनी राजधानीकी रक्षा करते हुए आये हैं, परन्तु इस समय हमारे पासकी भोजनकी सामग्री चुक गई है और यहांसे निकल कर भोजनके लानेका भी अव कोई उपाय नहीं रहा है क्योंकि शत्रुओंने प्रत्येक द्वारोको भली भाँतिसे घेर लिया है। अव हमे क्या करना उचित है सो सलाह दीजिये ? " राजाके यह वचन सुनकर सिहर और वोकमसी नामक दो सामन्तोंने कहा, " कि रनवासकी रानियां जौहर

व्रत अवलम्बन करे और हमलोग रणभूमिमे अपने २ जीवनका बलि देंगे। उधर जयसलमेरके किलेमें तो यादवगण यह गोष्ठी कर रहे थे इधर यवनसेनाको इस बातकी लेशमात्र भी आशा नही थी कि यादवोंकी सेनाको भोजनके न मिलनेसे बड़ा कष्ट उपस्थित है इस लिये वे उसी समय व्याकुल हतोत्साह और निराश हो किलेका घेरा छोड़कर चले गए। वे समझते थे कि यादवोकी सेना बहुत दिनोंतक किलेकी रक्षा करनेमें समर्थ है। इस कारण किलेको रोकना वृथा है।

सम्राट्की सेनाके भागते ही यवनसेनापतिके छोटे भाईको रत्नसीने जयसलमेरके किलेमें बुलाया और उसको मित्रका भ्राता जानकर उन्होने उसका बड़ा आदर सत्कार किया। नव्वाब महबूबखॉके भाईने किलेमे जाते ही देखा कि भोजनके अभावसे यादवोकी सेना महा कष्ट पारही है, तब वह किंचित् भी विलम्ब न करके वहॉसे निकल भागा और सम्राट्की, सेनाके साथ मिला। उसने अपने भाईको किलेकी भीतरी अवस्थाका सब समाचार कहसुनाया। नव्वाब महबूबखॉ इस शुभ समाचारको पाते ही उसी समय अपनी सेनाको साथ लेकर जयसलमेरकी ओरको चला, और बड़ी शीघ्रतासे जाकर उसने फिर किलेको घेर लिया। जब यदुपति मूलराजने देखा कि यवनोंने पुनः किला आ घेरा है तो वे अत्यन्त विस्मित हुए। बहुत सी छानबीन करनेसे जाना गया कि रत्नसीके अपराधसे ही जयसलमेरके भाग्यमें यह कालरात्रि उपस्थित हुई है।

मूलराजने अत्यन्त क्रोधित हो रत्नसीको बुलाकर बड़ी फटकार बतलाई और कहा;—" कि इस समय तुम्हारे दोषसे ही हमारा यह सर्वनाश उपस्थित हुआ है। तुमने पापात्मा यवनोंके साथ मित्रता करके अपने पैरमे जानबूझकर आप कुल्हाड़ी-मारी है अब इस समय क्या करना उचित है?—इस महा विपत्तिसे जयसलमेरका किस प्रकारसे उद्धार होसकता है? रनिवासकी रानियोंके सतीत्वकी रक्षा किस प्रकारसे होगी? यवनोंने इस समय दुगुने बलके साथ किलेको घेर लिया है, इस लिये हमै अपने कल्याणकी आशादृष्टि नही आती?।

बड़े भाईके ऐसे वचन सुनकर अत्यन्त उत्तेजित हो रत्नसी क्षत्रियोचित वचन बोले, उन्होंने कहा "हम इस समय जैसी अवस्थामें पड़े हैं, उससे स्वजातिकी रक्षा होनेका केवल एक उपाय है। पापी यवनोके हस्तगत होनेकी अपेक्षा मोक्ष मार्गका अवलंबन करनेसे यदुवंशियोका सन्मान रहेगा और यही हमारा कर्तव्य भी है। जबकि हम देखते है कि यवनोकी सैन्यसंख्या अधिक है, और हमारे पासका समस्त भोजन भी निबटगया है, तब जयकी आशा करनी वृथा है। अस्तु यवनोंकी आधीन-ताके बदले आत्मघात करके मरजाना कहीं अच्छा है। यदि एकबार भी यवनोकी सेना इस पवित्र जयसलमेरके किलेमे आकर अपना अधिकार करलेगी तो वह हमारे ऊपर अत्याचार करनेमे किसी भॉतिकी भी त्रुटि न करैगी। हमारी पवित्र साध्वी सती यदुवंशी स्त्रियोंके शरीर पर यवनोंका हाथ लगनेसे कुलमे घोर कलंक लगेगा; और यवनगण सबसे पहिले यही काम करेगे। इस अवस्थामे सबसे पहिले रानियोंको

जौहार व्रतकी आज्ञा दीजाय। अमरावतीको समान इस जयसलमेरमे जो सुन्दर २ महल बनवाये हैं, हमारे परास्त होते ही यह पापी उनमें सुखसे विहार करेंगे, इसको हम कभी नहीं सहन कर सकते, इस कारण इन सभी मकानोको तोड़फोड़ डालें और जितनी धनसम्पत्ति है उसे इसी समय नदीमे वहादे। इसके पीछे हम सभी यदुवंशी नंगी तलवारे हाथमें ले रणभूमिमे जाकर शत्रुओंका संहार करते हुए स्वर्गको सिधारें और इसीसे हमारे पवित्र यदुवंशके सम्मानकी रक्षा होगी"। वीरश्रेष्ठ रत्नसीके यह वचन सुनकर मूलराज अत्यन्त संतुष्ट हुए, और समस्त सामन्त तथा कुटुम्बी जनोको इकट्ठा कर उन्होंने उनसे यह वचन कहे "आप सभीका जन्म वीरवंशमे हुआ है, और आपके अधीश्वरोंने अपने स्वार्थ और सम्मानकी रक्षाके लिये प्रवल बाहुवल धारण किया है, आपलोग सदैव क्षत्रियोचित मार्गपर ही चलते आये है, किस क्षत्रिय जातिने आपकी समान इस प्रकार अपने कर्तव्यको पालन किया है? संग्रामभूमिमे महावलवान् हाथीतक भी आपके सम्मुख नहीं ठहर सकता। हमारे सम्मानकी रक्षाके लिये आपने तलवार हाथमे ली है अब आप इसी तलवारसे शत्रुओंका संहार करके जयसलमेरका सच्चा उद्धार करनेके लिये आगे हूजिये"।

यदुपति मूलराज इस प्रकारसे समस्त यादवोंको उत्तेजित कर अन्तमे रत्नसीको अपने साथ ले रनिवासमे गये सब रानी और कुटुम्बकी स्त्रियोंको इकट्ठा करके, दोनो यदुवंशी सबसे कहने लगे"कि हमने अपने पिताके धर्म और जातिके गौरवके सम्मानकी रक्षाके लिये इस महा विपत्तिमे जीवन उत्सर्ग किया है। इस समय हमारी जो अवस्था होरही है उससे उद्धार होनेका कोई उपाय समझमे नहीं आया तब हम हतउद्योग होकर यहाँ आये हैं। इसमे कोई भी सदेह नही है कि दुराचारी यवनोंकी जय होते ही वे पापी हमारे प्राण नाश कर, तुम्हारा सारा धन, त्रिविदत्त धन, और क्षत्रियोंकी स्त्रियोंका एकमात्र सार-धन, तुम्हारे पवित्र सतीत्व-धर्म धनको नष्ट करेंगे। इस अवस्थामें तुम सभीको सुहागव्रतका अवलम्बन करना उचित है। इस समय तुम सभी जौहर व्रत करके अपने प्राण त्याग दो। हम लोग शीघ्रही सुरलोकमें आकर तुमसे मिलेंगे। यदुपति मूलराजकी सोढा वंशीय ज्येष्ठा रानीने पतिके ऐसे वचन सुनकर विनीत भावसे हँसते हँसते कहा–नाथ! जौहरव्रतके अवलम्बनके लिये आज रात्रिमे ही हम सारी तैयारीं करलेगी और कल्ह प्रभात होते ही हम सब सुरपुरको चल-बसेगी"। पटरानीकी तरह और भी समस्त यादव कुल ललना और सामन्तोंकी स्त्रियोंने प्रज्वलित अग्निमे आहुति होनेका दृढ संकल्प किया।

अतएव! उसी कालरात्रिमे यदुवंशियोंकी समस्त स्त्रिया अपने सतीत्वकी रक्षाके लिये जौहरकी तैयारी करने लगी। प्रभात होते ही रनिवासके द्वार पर हृदय-भेदी भयंकर दृश्य दिखाई देने लगा बाला, प्रौढ़ा, और वृद्धा सब अवस्थापन्न

(१) स्वामीकी मृत्यु होनेके पहिले जो सती स्त्री प्रज्वलित अग्निमे दग्ध होती थीं उसको सुहागवल कहते थे, और स्वामीकी मृत्युके पीछे इस प्रकारसे दग्ध होनेको भी सुहागबल कहा है।

यदुवंशियोकी स्त्रियॉ स्नानकर रेशमी वस्त्रोंको पहिरे देवताओका पूजन करके हरिगुण गान करती हुई इकट्ठी हुई, तदनन्तर प्रत्येक स्त्रीने आत्मीय और जातिवर्गके लोगोको चरणवंदनाके उपरान्त जौहरव्रतका प्रारंभ किया। पर्वतकी समान प्रज्वलित अग्निशिखा मे वे राजकुल ललनाये अपने २ शरीरको स्वयं आहुति देने लगी। बालिकासे लेकर वृद्धातक इस भांति चौवीस हजार स्त्रियोने अग्निमे प्रवेश करके प्राण त्यागे। किसी किसीने तलवारसे ही अपने गले काट डाले। एक तो अग्निका तेज उसके ऊपर सती स्त्रियोंके सतीत्वके तेजने उसको और भी भयंकर करादिया। समस्त जयसलमेरमें उस अग्निका तेज प्रकाशमान होगया, उस समय यादवोंने स्त्रियोके बहुमूल्य वस्त्र और आभूपणोको भी उसी अग्निमे डालदिया। राजमहलकी प्रत्येक वस्तु भस्मीभूत होगई। शत्रुसेनासे स्पर्श किये जानेके लिये रनवासका एक तिनकातक शेष न रक्खागया। यदुपति मूलराज आज इतने दिनोंके पीछे श्रीहरिके वंशका लोप होता हुआ देखा, उस समय आप भी महा दुःखित हो प्रत्येक जाति और कुटुम्बियोके साथ स्नान करके कुलदेवताकी पूजा कर दरिद्रोंको वहुतसा धन दे रणशय्या सजाने लगे, सभीने वख्तर पहने, शिरपर तुलसीकी शाखा और गलेमें शालिग्रामकी मूर्ति बॉधी, और मस्तक पर टोप[1] धारण कर उन्होंने एक दूसरेसे अंतिम आलिगन किया। इसके पीछे वे संग्रामकी वाट देखने लगे; तीन हजार आठसौ यादव वीरोने इस भांति पैतृक धर्म और जातीय संमानकी रक्षाके लिये क्रोधोद्दीपित मुखसे राजाके साथ जीवन त्याग किया।

रत्नसीके घडसी और कानड़ दो पुत्र थे। इस समय घड़सीकी अवस्था बारह वर्षकी थी; रत्नसीने उन दोनो कुमारोके प्राण बचानेकी अभिलाषासे शत्रुओंके नेता महवूवखांके पास यह कहला भेजा कि आपको मेरे इन दोनो कुमारोंके जीवनकी रक्षा करनी होगी। मुसल्मान नेता महवूवखांने उस दूतके सम्मुख ही शपथ करके कहा कि मै अपने मित्रके दोनो पुत्रोके जीवनकी रक्षा करूंगा। इसके पीछे महवूवखांने अपने दो विश्वासी सेवकोंको रत्नसीके पास भेजदिया। रत्नसीने अपने दोनो कुमारोको हृदयसे लगा लिया, और उनके शिरपर हाथ धर कर आशीर्वाद दिया, इसके पीछे उन्होने अपने दोनो पुत्रोको महबूवखांके सेवकोंके साथ भेजदिया। घड़सी और कानड़के डेरोमे आते ही महवूवखॉने उन्हे बड़े आदर सम्मानके साथ लिया, और इनके शिर पर हाथ फेर कर धीरज दे भलीभाँतिसे अभय दान दिया। महवूवखाँने उसी समय दो ब्राह्मणोंको इन दोनो कुमारोकी सेवामें नियुक्त करीदिया।

इधर सूर्यदेवके उदय होते ही महवूवखांकी समस्त सेना साक्षात् कालरूप संहारमूर्तिसे जयसलमेरके किलेको जीतनेके लिये आगे वढ़ी। शत्रुओकी सेनाको आताहुआ

(१) रणभूमिमें मृत्यु होनेसे स्वर्गकी अप्सराओके साथ विवाह होता है-क्षत्रियवीरोका ऐसा विचार है। इसीसे वह विवाहके समयमे जिस भांतिका टोप (मौर) धारण करते हैं, रणभूमिमें प्राण त्यागका निश्चय संकल्प कर अप्सराओके साथ विवाह होनेकी आशासे इस समय भी उसी तरह टोप (मौर) धारण किया।

देखकर यदुपति मूलराज उन तीन हजार आठसौ वीर योधाओंके साथ समर सागरमें कूद पड़े। इस भयकर युद्धमें वीर श्रेष्ठ रत्नसी एकसौ वीस यवनोंका प्राणनाश करके महानिद्रामें सो गये, धीरे२ युद्ध बढता ही गया। यदुपति मूलराजने भी कईसौ यवन सेना का संहार करके अंतमें रणशय्यापर शयन किया। उनके साथ सातसौ यादव मारे गये, अन्तमें युद्ध शान्त होगया, विजयी यवन वीरनादसे जयसलमेरको कंपित करते हुए किलेमें जा पहुँचे। यवन सेनापति महबूबखाँने मूलराज और रत्नसीकी लाशको रणभूमिसे मंगाकर यदुवंशियोंकी रीतिके अनुसार उनकी दाहक्रिया करवाई। सम्वत् १३५१ (सन् १२९५ ईसवीमें) इस प्रकारसे यदुवंश फिर विध्वंस होगया, देवराज जो सेनाके साथ बाहर रहते थे, उन्होंने भी इस समय ज्वररोगसे प्राण त्याग किये। यवनोंकी सेना इस प्रकारसे यदुवंशको विध्वंस करके दो वर्षतक जयसलमेरके किलेमें रही। अन्तमें उस किलेकी दीवारें तोडकर और समस्त दरवाजोंमें ताले लगाकर नव्वाव वहाँसे चलागया। जयसलमेरका दुर्ग इस प्रकारसे बहुत समय तक शोचनीय अवस्थामें पड़ारहा। क्योंकि न तो यदुवंशियोंमें उस किलेके सुधरानेकी सामर्थ्य थी न उसकी रक्षा करनेकी।

चतुर्थ अध्याय ४.

विध्वस हुई जयसलमेरमें महोवेके राठौरोंका आगमन, और वहाँ उनका निवास–भट्टी सान्त दूदाजीका राठौरोंको पराभ करना–दूदाका रावलकी उपाधि धारण करना–तिलोकसीका सम्राट् फीरोजशाहके घोडेको चुराना–दूसरी बार जयसलमेर पर आक्रमण, और फिर जौहरका अनुष्ठान–दूदाका प्राण नाश–भट्टीराजके दोनो कुमारोंको स्वाधीनताकी प्राप्ति–रावलघडसीको जयसलमेरके राज्यकी प्राप्ति और उनका वहाँ निवास–देवराजके पुत्र केहर और उसके भाविष्य भाग्यका प्रकाश–जसहड़के पुत्रोंद्वारा घड़सीके प्राणनाश–घड़सीकी विधवा रानीका केहरको दत्तक लेना–केहरको राज्यसिंहासनकी प्राप्ति–विमला देवीका प्रज्वलित चितापर चढ़ना–हमीरके पुत्रोंको उत्तराधिकारी पदकी प्राप्ति–मेवाडके राणाका जैतसीके पास विवाहका प्रस्ताव भेजना–उनके प्रस्तावका त्याग–दोनों भ्राताओंका प्राणनाश–राव रणिगदेवका अनुताप–केहरके वंशधर बड़े पुत्र सोमका गिरायमें जाना और वहाँ निवास करना–पिताकी हत्याका बदला लेनेके लिये रणिगदेवके पुत्रोंका मुसलमान धर्म अवलम्बन करना–यदुराजका उनकी सारी धनसम्पत्ति और राजसंसारसे मुक्त करना–अमोरिया भट्टियोंके साथ उनका सम्मिलन–केहरके तीसरे पुत्र केलणका दुर्गवद्ध स्थानमें रहना–खडालसे दहियादिकोंको परास्त करके भगाना–ठट्ठा वा गारादेशपर केलणका कोहर नामक दुर्ग बनाना–अमीरखाँ कुरईके आधीनमें स्थित जोहिया और लंगाह राणोंका उनपर आक्रमण और उनकी पराजय–चाहिल और मोहिलोंको वशमें करना–पंचनद राज्यमें अपने राज्यका अधिकार–रावल केलणके समावंशकी एक कन्याके साथ पाणिग्रहण–समा जातिका विवरण–केलणका समाराज्य पर अधिकार–सिन्धुनदीको अपनी सीमामें करना–केलणकी मृत्यु–चाचकको राज्यसिंहासनकी प्राप्ति–मरोटमें राजधानीका स्थापन–मुलतानके

अधिनायक लोगोंका आक्रमण–दूसरी बार विजय प्राप्ति–पंचनदमें एक सेनाका रखना–दूंदीजातिके अधीश्वर महपालको परास्त करना–असनीकोट–उसके सम्बन्धमें प्रवाद–सातलमेरके साथ विवाद–उसका फल–हैवतखां–राव चाचकका पीली बॅंगादेशपर आक्रमण–खोडरका वृत्तान्त–लंगाहोंका उसकी सेनाको दीनापुरसे भगाना–राव चाचककी पीड़ा–मुलतानके अधीश्वरको युद्धके लिये बुलाना–दीनापुरमें गमन–चाचककी हत्या–कम्बोहका प्रतिहिंसा दान–वरसलका दीनापुरमें फिर राजधानी स्थापन करना–किरोर स्थानमें जाना–लंगाह और वल्लोचोंका आक्रान्त होना–उनको परास्त करना–रावल वरसीके साथ रावल वरसलकी साक्षात्–वावरका मुलतानको जीतना–परिवर्ती छः राजाओंका विवरण—

पूर्व अध्यायमें जो यदुवंशियोके वंशाविध्वंसका विवरण किया गया है, उसके कई वर्ष पीछे महोवाके नेता मालाजीके पुत्र जगमालने जयसलमेरकी राजधानीको विध्वंस अवस्थामें पड़ी हुई देख और यदुवंशियोंमेंसे किसीको वहां न पाकर स्वयं जयसलमेरपर अपना अधिकार कर वहाँ राजधानी स्थापन करनेका विचार किया। वास्तवमें यदुवंशका प्राय: एक बार ही लोप होगया था, इस कारण यदि राठौर सामन्त इस सुअवसरको विचार कर अनाथ भट्टियोंकी राजधानी जयसलमेरपर अपना अधिकार करके वहाँ रहनेकी इच्छासे आगे हुए तो इसमें आश्चर्य क्या है, जगमाल राठौरने सातसौ गाड़ी रसद और वहुत सी सेनाके तथा कुटुम्वी जनोको साथ लेकर जयसलमेरमे प्रवेश किया। पन्तु उसके मनकी कामना पूरी न हुई। इस समय भट्टी राजवंशीय जसहड़के दो पुत्र दूना और तिलोकसीजीने जव सुना कि एक राठौर हमारेवंशकी राजधानीपर अपना अधिकार करके वहां रहनेके लिये तैयार हुआ है तव वे अपने वंशके गौरवकी रक्षाके लिये समस्त कुटुम्वी और सेनाको साथ ले शीघ्रही जयसलमेरमें आपहुंचे। और उन्होने चढ़ी सवारी राठौरोंपर आक्रमण किया और भयंकर युद्ध करके अन्तमे उनकी सारी धनसम्पति लूटकर उनको अपने प्रवल पराक्रमसे भगादिया।

विजयी दूदाने इस भांति अपने प्रवल पराक्रम और वाहुवलसे राठौरोको भगादिया और फिर अपने वंशकी प्राचीन राजधानी अपने हाथमें करली. प्रजावर्गने भी संतुष्ट होकर उनको जयसलमेरका स्वामी स्वीकार कर रावलकी उपाधि देनेमे क्षणमात्रकी भी विलम्व न की। दूदाने जयसलमेरके राज्यासिंहासनपर वैठकर टूटे फूटे मकान और किलेको फिर वनवा लिया। और जयसलमेर आज फिर कई वर्षोंके पीछे अपनी पहिली मूर्ति धारण करके देखनेवालोके मनको आनन्दित करने लगा।

रावल दूदाके औरससे पांच पुत्र उत्पन्न हुए। दूदाके भ्राता तिलकसी महावीर विख्यात थे। उन्होने अपने वाहुवलसे वल्लोच मुसलमानो, माङ्गोलियो, देवराजाति और आवूशिखर तथा जालौरके सोनगड़ोंको परास्त करके अपनी वीरताकी पराकाष्ठा दिखाई थी। तिलोकसी वारम्वार विजयी होनेसे इतने साहसी होगये थे कि इसने सेना सहित अजमेरमे जाकर अपने वाहुवलका परिचय दिया, दिल्लीके वादशाह फीरोज शाहने अपने वहुतसे उत्तम २ घोड़े अजमेरसे आनासागरमे स्नान करानेके लिये भेजे थे; एक समय उसी वीरश्रेष्ठ तिलकसीने निर्भय हो उन सव घोडोको लूट लिया और फिर आप जयसलमेरमे चला आया। अलाउद्दीनके अप्रसन्न होनेसे यदुवंश जिस

भांति एक वार लुप्त होगया था, तिलकसीने भी उसी भांति बादशाह फिरोजशाहके घोड़ोंको लूट कर अपने भाग्यमें कालरात्रि बुला ली।

जब सम्राट् फिरोजशाहने सुना कि जयसलमेरके अधीश्वरके भ्राता तिलकसी असीम साहस करके हमारे बहुमूल्य घोड़े रक्षकोंके हाथसे छीनकर लेगया है, तब तो उसके क्रोधका ठिकाना न रहा; उसने शीघ्रही जयसलमेरके विध्वंस करनेके लिये एक बलवान् सेना भेजी। यदुभट्टियोंके इतिहास लेखक इस बातको लिखते हैं कि पहिलेकी समान इस वार भी जयसलमेरमें भयंकर घटना उपस्थित हुई। प्रबल पराक्रमी यवनसेनाके विरोधसे अपनी रक्षा होना कठिन जानकर यदुवंशियोंके अधीश्वर दूदा और तिलकसीने रनिवासकी सोलह हजार रानियोंको अग्निमें भस्म करके सोलहसौ स्वजातीय सेनाके साथ युद्धक्षेत्रमें प्राण त्याग कर अपने जातीयके गौरवकी रक्षा की। इतिहाससे जाना जाता है कि रावल दूदाने दश वर्ष तक जयसलमेरमें राज्य किया था, इस समय फिर जयसलमेरकी पहिलेकी समान अनाथ अवस्था होगई।

संम्वत् १३६२ सन् १३०६ ईसवीमें रावल दूदा रणभूमिमें कुटुम्बियों समेत मारेगये, उसी युद्धमें पूर्व कथित नव्वाब महबूबखाँकी मृत्यु होजाने से उसके मित्र रत्नसीके जो दोनो कुमार थे इस समय उनकी रक्षाका भार महबूबखाँके दो पुत्र गाजीखा और जुलफकारखाँके ऊपर पड़ा। इस समय कानड़ अत्यन्त गुप्तभावसे एक वार जयसलमेरमें आया और ज्येष्ठ घड़सीने जो देश पश्चिम प्रान्तमे मेहवाके अधिकारमें था वहाँ जाकर महवाके राठौर नेताकी भग्नी विमला देवीके साथ विवाह किया। जिस समय घड़सी विवाहकी धूमधाममें लग रहे थे उस समय उनके रिश्तेदार सोनिङ्गदेवने आकर इनके साथ साक्षात् किया।सोनिङ्ग देव जैसे भीमकाय थे वैसे ही बलवान् भी थे। विवाह होजानेके पीछे घड़सी उन महाबली सोनिगदेवको अपने साथ दिल्लीको लिवा ले गये।

दिल्लीके सम्राट्ने इस भीमकाय वीर पुरुषको देख कर इनके बाहुबलकी परीक्षा करनी चाही। खुरासानके अधीश्वरने दिल्लीके बादशाहको एक लोहेका बना हुआ धनुष भेटमें दिया था। उस धनुषकी प्रत्यंचा चढ़ाना कोई साधारण बात नहीं थी। बादशाहने विचारा कि हिन्दू वीर कभी भी इस धनुषके चढ़ानेमें समर्थ नहीं होगा परन्तु वीर श्रेष्ठ सोनिंगदेवने उस धनुषको इतना झुकाया कि उसके दो टुकड़े होगये, बादशाहने हिन्दूवीरके इस बाहु बलको देख कर उसको बड़े आदरके साथ घरके भीतर लेगया। इसी समय तैमूरशाहने दिल्लीपर आक्रमण किया। घड़सीने बादशाहकी ओरसे इतना बलविक्रम प्रकाश किया और सम्राट्की ऐसी सहायता की कि जिससे वह समस्त उपद्रव एक वार ही शान्त होगया। बादशाहने घड़सीके इस असीम बलविक्रमसे प्रसन्न हो पुरस्कार में उनके पिताकी राजधानी जयसलमेरके शासनका भार उनके हाथमें अर्पण करके रीतिके अनुसार उन्हें सनद भी लिखदी, और जयसलमेरके किलेको तैयार करनेकी आज्ञा दी।

---

(१) उर्दू तर्जुमेंमे १७ सौ लिखा है।

(२) उर्दू तर्जुमेंमे इतना और लिखा है कि विमलादेवी बेवा थी और देवड़ाको ब्याही जाचुकी थी।

यदुवंशके भाग्यका आकाश मानो फिर निर्मल होगया, घड़सी एकमात्र अपने बाहुवल और विक्रमसे सौभाग्य लक्ष्मीकी गोदमें बैठकर फिर जयसलमेरके यदुवंशियोंकी लुप्त हुई कीर्तिको प्रकाशमान करनेके लिये आगे बढ़े। उनकी जाति और कुटुम्बके मनुष्य अनेक स्थानमे रहते थे, घड़सीने उन सबको बुलाया, और महेवाके अधीश्वर अपने परम मित्र जगमालके आधीनकी सामन्तमंडलोकी सहायतासे शीघ्र ही बड़ी भारी सेना तैयार कर उन्होंने जयसलमेरमे जा चारोंओर शान्ति स्थापन करके अपनी शासनशक्तिका विस्तार किया। हमीर और उनके पक्षवालोने घड़सीको आया हुआ देखकर इनको यदुपतिरूपसे स्वीकार किया। परन्तु जसहड़के पुत्र घड़सीके सिहासन पर बैठनेसे संतुष्ट न हुए।

हमारे पाठकोने पहिले अध्यायमे वीरश्रेष्ठ देवराजके वृत्तान्तको पढ़लिया है। देवराजने मंडोरके अधीश्वर राणा रूपड़ाकी कन्याके साथ विवाह किया था। उसी राजकुमारीके गर्भसे और देवराजके औरससे केहर नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ था, जिस समय बादशाहकी सेनाने जयसलमेरको घेर लिया था उस समय उक्त केहर और उसकी माताको मंडोरको भेज दिया गया था। जिस समय केहरकी अवस्था बारह वर्षकी थी उस समय वह अपने नानाके यहाँ ग्वालोके साथ जंगलमे जाया करता था और बच्चोके साथ जंगलमें खेलता हुआ फिरा करता था, एक समय केहर खेलता २ जाकर एक सर्पके बिलके पास लेट रहा; केहरके निद्रित होते ही उस बिलमेसे सर्प निकला और केहरके मस्तक पर अपने फनसे छाया करके बैठा रहा, इसी समय उस मार्गसे एक चारण जा रहा था, उसने उस परम सुन्दर बालकके शिरपर सर्पके फनकी छाया देखकर उसी समय मंडोरपतिसे समस्त वृत्तान्त जा सुनाया, राणा शीघ्र ही उस स्थान पर गये और जाकर देखा कि दौहित्रके मस्तक पर सर्प अपने फनको फैलाये हुए बैठा है। उन्होंने जान लिया कि यह कुमारका शुभलक्षण है, यह केहार किसी समयमें अवश्य ही राजसिंहासनपर विराजमान होगा।

यद्यपि रावल घड़सी अपने प्रवल प्रतापके साथ राज्य करने लगे परन्तु विमला देवीके गर्भसे एक भी पुत्र न हुआ, इस कारण उनका मन अत्यन्त ही दु:खी रहता था, उन्होने रानीको एक पुत्र गोद लेनेकी सम्मति दी। रानीने स्वामीकी आज्ञासे पुत्रको गोद लेनेकी इच्छासे राज्यमे जितने बालक यदुभट्टियोके थे उन सभीको बुलाया, परन्तु केहरकी समान दूसरा बालक रानीके मनमे न भाया। घड़सी केहरको गोद लेते है, यह समाचार पाते ही जसहड़जीके दोनो पुत्र अत्यन्त ही असंतुष्ट हुए, और यह उपाय सोचने लगे कि किस प्रकारसे जयसलमेर पर हमारा अधिकार होजाय ऐसा षड्यन्त्र सोचने लगे, इसी समय घड़सीजी एक बड़ाभारी सरोवर खुदवा रहे थे उसको देखनेके लिये वह प्रतिदिन जाया करते थे, एक दिन घड़सी नियमितरूपसे उस सरोवरको देखनेके लिये जा रहे थे, इसी समयमे जसहड़जीके दोनो पुत्रोने इन पर आक्रमण कर इनके प्राणोका नाश किया।

---

(१) उर्दूतर्जुमेमें भाट लिखा है।

साध्वी विमलादेवीने जसहड़जीके दोनों पुत्रोके द्वारा स्वामीकी मृत्युका समाचार सुना, वह इस बातको भलीभांतिसे समझ गई कि इन पापियोंने राज्यके लोभसे ही मेरे स्वामीके प्राणोंका नाश किया है, अस्तु उसी समयमे रानीने केहरको जयसलमेरका अधीश्वर कहकर मनादी फिरावा दी, और उन दुराचारियोका मनोरथ सिद्ध न होने दिया। विमलादेवी अपने पतिके साथ ही क्षत्रियरीतिके अनुसार चिता पर चढ़ती, परन्तु कई एक कारणोंसे उसने कई महीनोके पीछे यह कार्य किया। उसके स्वामी जिस पुष्करणीको तैयार करा रहे थे उसका पूर्ण कराना था और बालक केहरकी रक्षाके लिये भी कुछ समयकी अपेक्षा थी। छ महीनेके पीछे वह सरोवर बनकर तैयार होगया। विधवा रानीने अपने स्वामीके नामसे ही उस सरोवरका नाम "घडसीसर" रक्खा। अब शत्रु लोग केहरके प्राणोंका नाश करनेकी चिंतामे हुए, यह जान कर विमलादेवीने प्रज्वलित चितामे अपने शरीरको भस्म कर सुरलोकको प्रस्थान किया। इतिहाससे जानाजाता है कि रानी विमलादेवी चलते समय यह कह गई थी कि हमीरके पुत्र ही केहरके दत्तकऔर उत्तराधिकारी हो।हमीरके दो पुत्रोंमेसे एकका नाम जैतसी और छोटेका नाम लूनकर्ण था।

जैतसीकी युवा अवस्था आनेपर चित्तौरके राणा कुंभाने उनके निकट विवाहका नारियल भेजा। भट्टीराजकुमार अपने बहुतसे सेवकोको साथ ले विवाह करनेके लिये मेवाड़को चले। आरावली शिखरसे बारह कोश दूर जाते ही उनको साकला मेहराज नामक प्रसिद्ध सालवनीके नेता मिले। उस दिन वहाँ विश्राम करके दूसरे दिन प्रभातकाल ही राजकुमार जैतसीने अपनी शुभयात्रा की। इसी अवसरमे घूघू पेक्षी चिल्लाता हुआ इनकी दाहिनी ओर गया, साकलाका साला पक्षियोंकी बोलीके शुभाशुभ फल जाननेमें विशेप विद्वान् था। उसने दाहिनी ओरको घूघू पक्षीके बोलनेका फल इस शुभयात्रामें अमगलकारी बतलाया। उसके यह वचन सुनते ही जैतसीने अपने घोड़ेकी लगाम रोक कर उस दिन वहीं विश्राम किया। इसी अवसरमे उस पक्षीको पकड कर देखा गया कि उसके एक नेत्र भी नहीं है। दसरे दिन प्रभात होते ही जैतसीने पुनः यात्रा प्रारम्भ की कि इसी समयमे कुछ दूर पर व्याघ्रीके चिल्लानेका शब्द सुनाई पड़ा, जैतसीने उसी समय सांकलाके सालेको बुला कर उसे व्याघ्रीके शुभाशुभ फलको बतलानेकी आज्ञा दी। उक्त मनुष्यने इसे न बताकर केवल इतना ही कहा कि आप इसी स्थानपर रहै, और एक नौ जवान युवकको नाईके भेपमे कूंमलमेरको भेजदे, वह मनुष्य वहॉ जाकर वहॉकी यथार्थ अवस्था जना आवे, इस प्रकारसे राणा कुंभाकी चतुरता का सरलतासे पता पड जायगा और यह भी विदित होजायगा कि यह अमंगलके लक्षण किस कारण दिखाई पडते है।

पहिली आज्ञाके अनुसार शीघ्र ही एक साहसी युवक नाईकी स्त्रीका भेप धारण कर कूंमलमेरको चला, उसने उस भेपसे रनिवासमे जाकर देखा कि अब मंगल नहीं है,

(१) उर्दू तर्जुमेमे यों लिखा है कि एक तीतर दाहिने हाथकी तर्फसे बोला।

उसने लौट कर अमंगलका समस्त समाचार कहसुनाया। जैतसीने उसके वचन पर विश्वास कर राणा कुंभाके ऊपर अत्यन्त कुपित हो सांकलाकी कन्या मारूसे विवाह किया, जैतसीने प्रस्तावकोंके मतसे कूमलमेरमें जाकर राणा कुंभाकी कन्याका पाणिग्रहण न किया, इससे राणा अत्यन्त क्रोधित होगये, परन्तु वह लज्जित होकर जैतसीको इसका वदला देनेमें समर्थ न हुए। राणा कुंभाने अन्तमें मनके क्रोधको मनहीमें रखकर अपनी कन्याको यागरोनके विख्यात खीची राज अचलदासके करकमलमें समर्पित किया। इसके पश्चात् जैतसी पूंगल देश पर अपना अधिकार करने गये; और इन्होंने यहाँ अपने भ्राता लूनकर्ण और सालेके साथ रणभूमिमें शयन किया। उस समय इनके एक सौ वीस सेवक मारे गये। पूंगलपति वृद्ध राणिङ्गदेवको नही जानते थे कि मैने जयसलमेरपतिके अत्यन्त निकट संवन्धी दो मनुष्योंके प्राण नाश किये है, जव यह जाना तव वे अत्यन्त दुःखित हो काले रंगके वस्त्र पहर संपूर्ण भारत-वर्षके प्रत्येक तीर्थोंमें गये। तव इनके पापोंका नाश होगया। फिर ये घरको लौट आये। रावल केहरने इनको क्षमा करके धीरज दिया।

केहरके औरससे निम्न लिखित आठ पुत्र उत्पन्न हुए।

१—सोम। इसके अगणित वंशधर सोमभाटी नामसे विदित है।

२—लखमन।

३—केलणजी। इन्होंने अपने वाहुवलसे वड़े भ्राताके अधिकारमे स्थित वीकमपुरको अपने अधिकारमें कर लिया। और सोमजी इसी लिये अपने वस्सी अर्थात सेवकोंके साथ गिराय स्थानमे जाकर रहने लगे।

४—कलकरन।

५—सातल। इसने अपने नामसे सातलमेर राजधानी थापित की।

६—वीजू—

७—तन्नू।

८—तेजसी।

नागोरके राठौरोंके अधीश्वरसे अपने पिताका वदला लेनेके लिये जिस समय राणगदेवके पुत्रोंने यवन धर्मका अवलम्बन किया उस समय वह पूंगल और मरोटके उत्तराधिकारसे वंचित हो आभारिया भाट्टीयोके साथ जा मिले और इनका नाम मोमन अर्थात् मुसलमान् भाटी रक्खा गया। इस समय रावल केहरके तीसरे पुत्र केलणने पूंगल और मरोड़पर अपना अधिकार करके विकमपुरको भी अपने अधिकारमे कर लिया। इसके आतिरिक्त यदुवंशकी शोचनीय दशामे दहिया राजपूतोने जिस प्राचीन राजधानी

---

(१) कर्नल टाडने यदुभट्टियोंके इतिहासमे अंग्रेजीमे जिस प्रकार लिखा है हमने वैसा ही अनुवाद किया है परन्तु जैतसीका भेजा हुआ नायन रूपधारी युवा कुंमलमेर मे क्या देख आया और राणा कुंभाने किस लज्जासे वदला नहीं लिया यह नहीं लिखा।

(२) इन्हीं राणंगदेवका वृत्तान्त पाठकोंके लिये प्रथम काण्डमे यथास्थान वर्णन किया गया है।

देरावल पर अपना अधिकार करलिया था, उस देशपर भी इन्होने अपना अधिकार करनेमे त्रुटि न की।

केलणने व्यासाके समीप अपने पिताके नामसे एक किला बनवाया। उसी कारणसे फिर जोहिया और लङ्गाहोंके साथ भट्टियोंमें विवाद और विसम्वाद उपस्थित होगया। लंगाहोंके नेता अमीरखाँ कुराईने केलणके ऊपर आक्रमण किया। परन्तु केलणने क्षत्रियोंकी समान साहस करके अमीरखाँको एकबार ही परास्त करदिया। केलण इस समय अपने बाहुबलसे इतना विख्यात् होगया था कि उससे चाहिल मोहिल और जोहिया गण भी भय मानते थे। केलणने धीरे २ पंचनद तक अपने बाहुबलका विस्तार किया। केलणने समाजाम नामक समावंशकी एक राजकुमारीके साथ विवाह किया, उस समावंशमे सिंहासन लेनेके लिये आपसमे भयंकर विवादानल प्रज्वलित होगई थी। केलणने मध्यस्थ होकर उस विवादाग्निको शान्त कर दिया। उन्होने सुजाअत जाम नामक जिस समावंशके नेताका पक्ष समर्थन किया था, वही सुजाअत केलणके साथ मरोटनामक स्थानमें गया। दो वर्ष पीछे सुजाअतने अपने प्राण त्याग दिये। तब केलणने समावंशके आधीनके सम्पूर्ण देशोंपर अपना अधिकार कर लिया। इसीसे सिन्धुनदी उनके राज्यकी शेष सीमारूपसे नियत हुई, केलणने ७२ वर्षकी अवस्थामें प्राण त्याग किये।

केलणके स्वर्गवासी होने पर चाचकदेव उनके पदपर अभिषिक्त हुए, भाटियोका अधिकार इस समय गाड़ानदीके किनारे तक होगया था, इससे मुलतानके यवननेता अत्यन्त क्रुद्ध होगये थे। परन्तु यवन नेता इस राज्य पर अधिकार करनेमे समर्थ न थे इसी कारण चाचकदेव मरोट नामक स्थानमें जा वहाँ राजधानी स्थापित करके रहने लगे थे। कुछ दिनोके पीछे मुलतानके अधीश्वरने फिर यदुवंशियोको विध्वंस करनेकी इच्छासे बड़ी भारी तैयारी की। लङ्गाह, जोहिया, खीची इत्यादि देशोके जिन २ जातियोके साथ भट्टियोकी शत्रुता चिरकालसे चली आती थी सब लोग मुलतानपतिके साथ जामिले। दूसरे पक्षमे वीरश्रेष्ठ चाचकदेव मुलतानपतिको युद्ध करनेके लिये तैयार देखकर सावधान हो सात हजार अश्वारोही और चौदह हजार पैदलोकी सेना इकट्ठी कर व्यासनदीके पास जाकर असीम साहससे डटगये। दोनो ओरकी सेनाके सम्मुख होते ही घोर युद्ध उपस्थित हुआ। इस युद्धमे यवनोके नेता परास्त होकर भाग गये। वीरश्रेष्ठ चाचक शत्रुओंके पड़ाव परसे बहुत सा सामान लूट लाए और पृथ्वीको कंपायमान करते हुए मरोट नामक स्थानमें आये, परन्तु इतने ही मे युद्धकी अग्नि शान्त न हुई। दूसरे वर्षमे मुलतानपतिने पहिली हारका बदला लेनेके लिये फिरसे बड़े जोरशोरसे लड़ाई ठानी। इस संग्राममे सातसौ चौवालीस भट्टी और तीन हजार मुलतानी मारे गए, मुलतान पतिके दूसरी

(१) उर्दतर्जुमेमें अमरखागोरी।

(२) उर्दूतर्जुमेमे ११.

बार परास्त होते ही चाचकके राज्यकी सीमा और भी बढ़ गई। उसने असनीकोट नामक स्थानमे किलेके भीतर एक सेना अपने पुत्रकी मातहतीमे रक्खी और आप पुंगलको लौट आये। इसके पीछे चाचकने बूंदीके अधीश्वर महिपाल पर आक्रमण कर उसको परास्त किया। इसके उपरान्त जयसलमेरमें आय अपने भ्राता लखमनके साथ साक्षात् किया। असनीकोटके किलेके आधीनमें जितने ग्राम थे उन सबकी आमदनी जयसलमेरमें लाकर राजसभामे खर्च करदी। चाचक जिस समय जयसलमेरसे अपनी राजधानीमे आ रहे थे उस समय वारू स्थानके जंजराजने उनके साथ साक्षात् किया। यह मनुष्य बहुतसे बकरी और भेड़ोको पाला करता था। बरजाङ्ग नामक एक राठौर तस्कर पासके एक ग्रामसे आकर वीच २ में इसके भेड़ और बकरोंको चुराकर लेजाता था।वीरश्रेष्ठ जंजने यह विचारा कि चाचककी सरण लेनेसे यह तस्कर मेरे बकरे और भैंसोंको न चुरा सकेगा, इस हेतु उसने बड़े २ मोलके बकरे और भैसे चाकक-को भेंटमें दिये। यह वीर असीम साहसी योधा था।इसने सातलमेर नामक वाणिज्यके प्रधान देशको एक भाटी सामन्तके पाससे अपने बाहुबलसे लेलिया था; बरजाङ्गका नाम सुनते ही मरुक्षेत्रके निवासी अत्यन्त भयभीत होजाते थे।राव चाचक जंजको अभय देकर चले गये और कह गये कि यदि बरजाङ्ग फिर अत्याचार करके तुमको पीड़ित करे तो मैं उसको उचित फल दूंगा। कुछ दिनोंके पीछे राव चाचक जंजके अधिकारी देशोंमे गये, और उससे साक्षात् किया। जंजने फिर उनके निकट बरजांगके अत्याचारोका वृत्तान्त कहकर अभय चाही। चाचकने जंजकी विनतीसे प्रसन्न हो सातलमेरके तस्कर नेताको दमन करनेके लिये अपनी सम्पूर्ण सेना इकट्ठी करके सीता जातिके अधीश्वरके साथ संधिबंधन करलिया।नवीन मित्रने तीन हजार अश्वारोही सेनाको साथ लेकर चाचकके साथ योग दिया। सातलमेरके राठौर तस्कर नगरके बाहर घोड़ोको रखकर, नगरीके सामन्त धन लेकर किस समय नगरके बाहर जाते है, इसको गुप्त भावसे देखते रहे, और अवसर पाकर उन नगरवासियोंकी सारी धनसम्पत्ति लूट ली,यह जानकर चाचकने अपनी चतुरतासे समस्त राठौर और नगरके बड़े बड़े धनी महाजन और वैश्योको पकड़ लिया। नगरके महाजनोने अपने छुटकारेके लिये बहुतसा धन देना चाहा परन्तु चाचकने उनसे कहा कि यदि तुम इस स्थानको छोड़कर जयसलमेरमे जाकर निवास करो तो छूट सकते हो। इस पर ३६५ बड़े २ धनवान चाचककी आज्ञा स्वीकार कर अपनी समस्त धन सम्पत्ति समेत जयसलमेरमे जाकर रहने लगे।

बरजांगके तीन पुत्र बन्दी किये गये थे। वीरश्रेष्ठ चाचकने उनमेसे मझले और छोटेकी अत्यन्त कम अवस्था देख कर उन दोनोंको छोड़ दिया परन्तु बड़े मेराको उसके पिता बरजंगकी सचरित्रताके बदलेमें बंदी कर रक्खा। चाचकने जिस सीता जातिके अधीश्वरके साथ इस घटनाके पहिले मित्रता की थी, उसकी पोती सालदेवीके साथ अपना विवाह किया। कन्याके पिताने विवाहके यौतुकमे चाचकको पचास घोड़े पैंतीस दास, चार सवारी और दोसौ ऊंट दिये, इन सबको लेकर चाचक मरोट नगरको आये।

उपरोक्त घटनाके दो वर्ष पीछे वीरश्रेष्ठ चाचकने पीलवंग स्थानके अधिपतिके साथ युद्ध आरम्भ किया, यह समर एक भट्टीसे एक मूल्यवान घोडेके छीन लेने पर हुआ था। चाचक पीलवंगेश्वरको परास्त करके उसकी राजधानीके समस्त धनरत्नोको लूटने लगे, किन्तु जिस समय चाचक इस भयानक युद्धमें लड़ रहे थे उसी समय यदुवंशके पुराने वैरी लंगाहोने सुभीता पाकर चाचकके दीनापुरके किले पर आक्रमण कर वहाँकी समस्त सेनाको हटा दिया।

इधर चाचक चिरकाल तक लड़ता रहा और अनेक देशोको दमन करके उसने वहा जय पाई। इसी प्रकार उसने पञ्जाव तक अपना अधिकार करलिया अन्त समय बुढ़ापेमे जब चाचक कठिन रोगसे पीड़ित हुआ और उसने जानलिया कि अब मेरा अन्त समय आ पहुँचा है और रोगसे मुक्त होनेकी आशा करनी वृथा है, तब उसने बहुत दिनोंतक कष्ट भोगकर प्राण छोड़नेके बदले क्षत्रियोकी भांति प्राण त्यागनेका संकल्प किया। समरभूमिमे शत्रुओंके भीषण अस्त्रोके आघातसे प्राण छोड़ने पर मरनेके पीछे प्राणी सुरलोकमें जाता है यही क्षत्रियोका परम धर्म है। इसी विश्वास पर क्षत्रिय जाति स्वर्ग सिधारनेकी इच्छासे जीवन पर्यन्त केवल तलवारकी सेवामें लगे रहते है। इसी विश्वासके बलसे क्षत्रियोंकी महिमा और गौरव संसारमे बढ़ी चढी है। वीरश्रेष्ठ चाचकने क्षत्रियोके शिरोभूषण पदको प्राप्त किया था, और वह जीवनपर्यन्त क्षत्रिय-धर्मके पालन करनेमें तत्पर रहा था। अतएव उसने अपने अन्त समयको सम्मुख देख क्षत्रियोंकी भाँति इस जगत्को छोड़नेकी इच्छा की तो इसमे आश्चर्य ही क्या हैं ?

चाचकदेवने इस भाँति शस्त्र हाथमे ले रणभूमिपर महा निद्रामे सोनेकी लालसासे अपने आसपासवाले देशोमे अपनी समान वीरशत्रुसे भिड़ना चाहा। अन्तमे उन्होने एक मनुष्यको दूत बनाकर मुलतानके लङ्गाह जातिके राजाके पास भेजा। वीर चाचकदेवके दूतने जाकर मुलतानपतिसे कहा कि "चाचकदेव रोगशय्या पर पड़े हैं जिसमे बहुत दिनोंतक रोगी रहकर उनका प्राणवायु पचमहाभूतोमे लय न हो जाय, इस कारण शत्रुकी तलवारके द्वारा वह क्षत्रियोंकी समान जीवन छोड़ सुरपुर जाना चाहते हैं, अतएव आपसे युद्ध करनेके लिये प्रार्थना की है"। मुलतानके राजाने दूतकी बातपर विश्वास नहीं किया और मनमे कहा ऐसा जानपडता है कि वीर चाचकदेव छलसे हमे समरभूमिमे बुला कर अपनी गुप्त अभिलाषाको पूर्ण किया चाहते हैं, इसीसे युद्ध करनेकी प्रार्थना कर भेजी है। राजा यह सोच कर प्रकाशमे दूतसे बोले "तुम्हारे स्वामी षड्यन्त्रसे मेरा अनिष्ट करा चाहते है-अतएव मैं युद्ध नहीं करूँगा" मुलतानके राजाका यह उत्तर सुन दूतने शपथ खाकर कहा "राजन् ! आप वृथा सन्देह करते है महाराज चाचकदेव निश्चय ही दुःसाध्य रोगसे पीड़ित होरहे है,

(१) कर्नेल टाडने टिप्पणीमें लिखा है कि ट्रान्सक्सियाके प्राचीन विजयी वीरगण अन्तमें रोगी होने पर तलवार हाथमे ले रणक्षेत्रमे प्राण त्यागते हैं यह रीति शेष जूटलैण्ड तक फैली है।

उनकी और किसी प्रकारकी इच्छा नहीं है, वह अन्त समयमें क्षत्रियोंकी समान गति पानेकी इच्छासे ही केवल सातसौ सेनाके साथ रणक्षेत्रमें आवैंगे। आप अपने चित्तको वृथा सन्देहसे चिन्तित न कीजिये और हमारे स्वामीकी मनोकामनाको पूर्ण करिये" मुलतानके महाराजने दूतके शपथ खानेपर विश्वास करलिया और शीघ्र ही प्रतिज्ञा की कि मैं चाचकदेवकी मनोकामनाको पूर्ण करनेके निमित्त युद्ध करनेको तैय्यार हूँ। दूतने यह बात जाकर जाचकदेवसे कह सुनाई। वीर शिरोमणि चाचकदेवने अपनी अभिलाषाको पूर्ण हुआ जान परम आनन्दके साथ अपने जातिके वीरोंको बुलाकर अपने हृदयके भावको कह सुनाया। सेनापति और सेनामें से जिन जिन वीर पुरुषोंने चाचकदेवके साथ प्रत्येक युद्धमें अपनी वीरतासे जय पाई थी, उनमेंसे सातसौ वीरोंको चाचकदेवने चुन लिया। उन सातसौ वीरोंने भी अपने स्वामी की अन्तिम कामना पूर्ण करनेके लिये अपने जीवनको उत्सर्ग करनेका दृढ़ संकल्प करलिया। चाचकदेवने रणभूमिमें जानेसे पहिले अपने राज्यकी व्यवस्था करदी। सीता जातिकी रानीके गर्भसे उत्पन्न हुए गजसिंह नामक पुत्रको चाचकदेवने सीतारानीके साथ ननसालमें भेज दिया। उनके सोढा जातिकी लीलावती रानीके गर्भसे, वरसल, कम्बोह, भीमदेव यह तीन पुत्र हुए थे और चौहान वंशकी रानी सूरजदेवीके गर्भसे रत्तू और रणधीर नामक दो पुत्र हुए थे. वीर शिरोमणि चाचकने इन पांच पुत्रोंके बीचमें बड़े पुत्र वरसलको अपने सिंहासनका उत्तराधिकारी निर्द्धारित कर खडाल (इसके प्रधान नगरका नाम देरावर) प्रदेश छोड़ कर उनको अपने समस्त अधिकारी प्रदेश दिये, और खडाल प्रदेश रणधीरको देकर दोनोंके माथे पर राज्य तिलक करदिया। वरसल सत्रह हजार सेनाको लेकर अपनी राजधानी किरो-हरको चला गया।

वीरवर चाचकने इस भांति अपना राज्य दो पुत्रोंको बाँट दिया, और स्वयं अपने जीवनको त्यागनेके लिये उक्त सातसौ वीर पुरुषोंके साथ दीनापुरके मैदानकी ओर चला। वहां पहुँच कर उसने सुना कि मुलतानका राजा यहाँसे दो कोशकी दूरीपर पड़ा हुआ है। इस बातके सुनते ही उसका हृदय मारे आनन्दके खिल गया। फिर चाचकने स्नान कर पवित्र चित्तसे अस्त्रोंका पूजन कर अपने इष्ट देवका पूजन किया; और दीन दरिद्रोको धन रत्नादि देकर इस मायामय संसारसे अपने चित्तको हटाकर परम पिता परमेश्वरके ध्यानमें लगाया।

थोड़ी देरके पीछे रणका बाजा सुनाई पड़ा। दोनों ओरकी सेनाके सामने होते ही वीरश्रेष्ठ चाचकने अपनी सातसौ सेनाको लेकर मुलतानके राजाकी कई हजार सेनाके साथ घोर युद्ध किया। बराबर लड़ते रहकर युद्ध क्षेत्रमें अपने प्यारे सातसौ

---

(१) उर्दूतवारीखमें ५ सौ।

(२) किरोहर नामक स्थानका बड़ा किला राव केलणका बनवाया भावलपुरसे बाईस कोश दूर था। किन्तु आजकल इसका कोई चिह्न नहीं मिलता।

वीर पुरुषोंके साथ चाचकदेवने दो घड़ी तक वीरता दिखाते हुए महा निद्रामें शयन किया। यदुभट्टी इतिहासके जाननेवालेने लिखा है कि उस युद्धमें उन सातसौ वीरोंने मुलतान की दो हजार सेनाको नष्ट किया। चाचकदेवने इस भांति संग्रामक्षेत्रमे अपने जीवनको विसर्जन किया, और मुलतानपति अपनी राजधानीको लौट गये।

जिस समय रणधीर देरावरमें अपने पिताका श्राद्धकर रहा था उस समय मृतक वीर चाचकका दूसरा पुत्र कुंभा पिताके शोकमे उन्मत्त होगया। अतएव उसने श्राद्धके मण्डपमें जाकर सबके सामने प्रतिज्ञाकी कि, "मुलतानपतिने मेरे पिताको अन्यायसे मारा है मैं उसका बदला उससे अवश्य लूँगा" कुम्भा उसी समय एक नौकरको अपने साथ लेकर मुलतानपतिके डेरेमे गया। डेरेके चारोओर बाईस हाथ चौड़ी एक खाई थी, कुंभाने रातमें घोड़े पर चढ़कर खाईको फाँद साहसके साथ घोड़ेको डेरेकी रस्सियोंसे बाँधा और आप मुलतानके राजा जैसे वस्त्रोको पहिना करते हैं, वैसे कपड़ोको पहिन संतरीके सामनेसे डेरेमे घुस गया, उस समय मुलतानका राजा सो रहा था, कुंभाने सोतेही में उसका शिर काट लिया और वह आकर देरावरमे अपने भाईसे मिला।

वरसल दीनापुरमे फिर अपना अधिकार स्थापन कर किरोहरमें चला गया। उसके पुराने शत्रु लंगाहोंने फिर हैबत्खाँकी सहायतासे उस पर आक्रमण किया, परन्तु वरसलने अपने अतुल पराक्रमसे उनको परास्त कर भगा दिया, उस युद्धमे कई हजार लंगाह खेत रहे। इसी समय हुसेनखाँने[1] भी वीकमपुर पर आक्रमण किया, वरसलने उसको भी परास्त किया।

संम्वत् १५३० सन् १४७४ ई. मे वरसलने वीकमपुरकी चहारदीवारी और किला बनवाया।

कर्नल टाडने यहीं पर यह अध्याय समाप्त किया है। भाट्टि इतिहासके लेखकने भी यहाँ पर कोई विशेष घटना नही लिखी। उसने केवल रावल केलणके वंश-वालोंके साथ पंजाबके सामन्तोकी सीमान्त सम्बन्धी छोटी २ लड़ाइयोका होना लिखा है। उसके पढ़नेसे जान पड़ता है उन लडायोमे एक वार यदि एक पक्षवाले जीते तो दूसरी वार वह हार गये। इस प्रकारके नीरस विवरणको हम प्रकाश करना नहीं चाहते। अन्तमें केलणके वंशजोंने बढ़ कर गारा नदीके दोनो किनारोके देशोंको बाँटकर स्वतंत्रतासे निवास किया। इस घटनाके कुछ समय पीछे ही दिल्लीके सम्राट् सुलतान बाबरले लङ्गाहोंसे मुलतानको छीनकर अपने अधिकारमे ले वहाँपर मुसल्मान प्रबन्धकर्त्ता नियुक्त करदिया। कर्नल टाड लिखते हैं कि इसी समय किरोहरकोट दीनापुर, पूँगल और मारोटके यदुवंशियोने यथासम्भव अपना अधिकार और अपना कब्जा बनाये रखनेके लिये मुसल्मानी धर्मको स्वीकार करलिया।

यदुभट्टी इतिहासलेखने पीछे जयसलमेरके प्रधान राजवंशका कुछ सामान्य विवरण लिखा है। उन्होंने केवल रावल जैत, नूनकरण, भीम, मनोहरदास और सुबलसिंहके वंशधरोकी नामावली लिखी है। रावल सुबलसिंहके शासन समयसे ही जैसलमेरकी राजनैतिक अवस्था बदल गई थी।

(१) उर्दूतर्जुमेमें हुसेनखाँ बलोच लिखा है।

पंचम अध्याय ५.



जयसलमेरके राज्यवंशका उत्तराधिकारी बदलना–सुबलसिंहका यवनसम्राट्द्वारा जयसलमेर का स्वामी होना–जयसलमेरके स्वामीका यवनसम्राट्की आधीनतामें रहना–बाबरकी दिग्विजयके समयमें जयसलमेरकी सीमाकी अवस्था–सुबलसिंहके स्वर्गवास होनेपर उनके पुत्र अमरसिंहका सिंहासनपर बैठना–अमरसिंहसे बल्लूच प्रदेशमें युद्ध होना–युद्धमें उनकी जीत होना–उनका अपनी लड़कीका विवाह करनेके लिये प्रजासे द्रव्यकी प्रार्थना करना–राजपूतमंत्री रघुनाथका उस विषयमें आपत्ति करनेसे मारा जाना–चन्ना राजपूतोंका विद्रोही होना–बीकानेरवासी राठौरोंके उपद्रव मचानेसे भट्टी सामन्तोंसे उसका सुधार होना–सीमा सम्बन्धी विवादका कारण–भट्टीगणोंकी जीत होना–आधीनतामें रहनेवाले सामन्तोंके बीचमें विवादके उपलक्षमें बीकानेर और जयसलमेरके स्वामियोंमें झगडा होना–बीकानेरके स्वामी अनूपसिंहका कलंक छुटानेके लिये अपने आधीन रहनेवाली सामन्त मंडलीको बुलाना– जयसलमेरपर आक्रमण करनेवाले राठौरोंकी पराजय–रावलका पुंगलपर फिर अधिकार करना–बाडमेरपतिको करद श्रेणीसे मुक्त करना–अमरसिंहकी मृत्यु–जसवन्तका राजसिंहासनपर बैठना–जयसलमेरका पतन–राठौरोंसे पूगल बाडमेर और फलोदीका निकलजाना–दाऊदके बेटोंका खडालसे गाढ़ातक अधिकार करना–अक्षयसिंहका अभिषेक–तेजसिंहका जयसलमेरके शासनको अपने हाथमें लेना–तेजसिंहको फिर राज्य मिलना–उनका चालीस वर्ष राज्यशासन–भावलखाँका खडाल पर अधिकार–रावल मूलराज–स्वरूपसिंह मेहताको राजमंत्रीका पद मिलना–भट्टीसामन्तोंपर उनकी घृणा होना–युवराज रायसिंहद्वारा स्वरूपसिंहका माराजाना–रावल मूलराज का बन्दी होना–रायसिंहका सिंहासनपर बैठनेमें अनिच्छा प्रगटकरना–एक राजपूत रमणीका मूलराजको कैदसे छुटाना–मूलराजको पुन राज्य मिलना–युवराज रायसिंहका निर्वासन–उनका जोधपुरमें जाना–भट्टीसामन्तोका विद्रोह करना–दंडमें उनके सब अधिकारी प्रदेश लेकर राज्यमे मिलाये जाना–और सब किलोका तुड़वाना–बारह वर्षके पीछे उनको फिर भूमिका अधिकार देना–रायसिंहद्वारा एक बनियेका शिर काटा जाना–उनका जयसलमेरमे फिर आना–उनको देवाके किलेमे भेजना–सालिमसिंहका मंत्री होना–उसका चरित्र–उसका शत्रुके हाथमे पड़ना–किन्तु जोरावरसिंहकी सहायतासे छूटना–उसकी भावजसे उसके मारे जानेकी इच्छा प्रगट होना–जोरावरको विष देना–मेहतासे उनके भाई और स्त्रीका माराजाना–देवाके किलेमें आग लगना–रायसिंहका आगमे जलकर मरना–उनके पुत्रोंका मारा जाना–गजसिंहको राज्य देना–मूलराजके छोटे लड़कोका बीकानेरमे भाग जाना–मंत्रीके द्वारा चिरकालतक राज्यका प्रबंध होना–भट्टी इतिहासकी समालोचना।

पाठकगण पहिले अध्यायमें जान चुके है कि जयसलमेरके स्वामी घड़सीके शोचनीय दशामे मरनेसे उनकी रानी विमलादेवीने केहरको दत्तक पुत्र लेकर उसीको जयसलमेरका सिहासन दिया था। किन्तु उसने जलती हुई चितामे बैठ कर मरनेके समय यह भी कहा था कि हमीरके दोनों बेटे जैत और लूनकरण केहरके पोष्य पुत्र और उत्तराधिकारी होगे। अतएव केहरके जयसलमेरके सिहासनपर बैठ जानेसे और उनके औरससे आठ संतानोके उत्पन्न होनेपर भी जैत् और लूनकरण ही केहरके उत्तराधिकारी कहे गये। किन्तु जैत राज्य पानेके पहिले ही पूँगलको

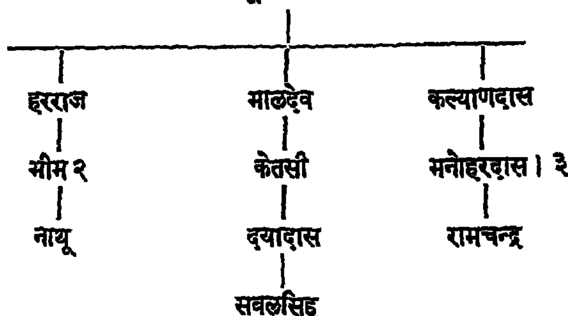
जीत लेनेकी इच्छासे लूनकरणके साथ समरक्षेत्रमें जाकर मृत्युको प्राप्त हुआ। जैतके कोई पुत्र मरते समयतक नहीं हुआ था अतएव लूनकरणके वंशधरोंको ही जयसलमेरका सिंहासन प्राप्त हुआ, लूनकरणके तीन पुत्र हुए,—

१–हरराज।

२–मालदेव।

३–कल्याणदास।

केहरके मरनेके पीछे लूनकरणके बड़े पुत्र हरराजको जयसलमेरके सिंहासनपर बैठना चाहिये था, किन्तु हरराज केहरके सामने ही मरचुका था; अतएव हरराजके एकमात्र पुत्र भीमही जयसलमेरके सिंहासनपर बैठा। भीमके राज्यसमयका कोई भी इतिहास कर्नल टाड् साहबने प्रकाशित नहीं किया है। परिवर्ती इतिहासको विस्तारके साथमें दिखानेकी अभिलाषासे हम यहाँ लूनकरणकी वंशावली प्रकाशित करते हैं।



भीमके मरनेके पीछे उनका बेटा नाथू जयसलमेरके सिंहासनपर बैठा। किन्तु नाथू सिंहासन पानेके कुछ ही समय पीछे बीकानेरमें एक राजकुमारीके साथ विवाह करने को गया विवाहके पीछे वह जिस दिन जयसलमेरके अन्तर्गत फलोदी देशमें आकर टिका उसी दिन कल्याणदासके पुत्र मनोहरदासने सिंहासन पानेके लोभसे एक स्त्री द्वारा विष दिलाकर उसे मरवा डाला। नाथूके मरजानेपर मनोहरदासने जयसलमेरके राजमुकुटको अपने शिरपर धारण किया। मनोहरदासने भाईके बेटेको मारकर कुछ समय तक राज किया; अन्तमें अपने मरनेके समय अपने बेटे रामचन्द्रको सिंहासन पर बैठानेके लिये उसने बड़ा परिश्रम किया किन्तु हत्यारेके वंशमें राजसिंहासन कोई नहीं पासका इससे उसकी आशा पूरी न होसकी। लूनकरणके मझले बेटे मालदेवका परपोता सुशील सच्चरित्र और वीर सबलसिंह अपने सौभाग्य एवं गुणोसे जयसलमेरके सिंहासनपर बैठा।

रामचन्द्र बड़ा ऊधमी और दुश्चरित्र था, पर सबलसिंहकी धीर और शान्त प्रकृति थी इस कारण साधारण प्रजाने सबलसिंहको राजा बनानेके लिये प्रार्थना की। विशेष कर सबलसिंहके सौभाग्य रूपी सूर्यके उदय होनेके औरभी कारण उपस्थित थे।

सबलसिंह महाराज आमेरका भानजा था, वह आमेर नरेशकी आधीनतामें यवनोकी राजधानी पेशावरके राज्य प्रबंन्धमें एक ऊंचे दरजेपर नियुक्त था। एक समय पहाड़ी अफ़गानी लुटेरोंने यवन सम्राट्का खजाना लूटना चाहा था परन्तु सबलसिंहकी असीम वीरतासे वह न लूट सके। इस कारणसे वह सम्राट्का भी अधिक प्यारा था। सबलसिंहने अपने सद्गुणोंसे सभी नरेशोंमें मान पालिया, मनोहरदासके मरनेपर यवनसम्राट्ने जोधपुरके राजा वीर जसवन्तसिंहको आज्ञा दी कि तुम शीघ्रही रामचन्द्रको हटाकर सबलसिंहको जयसलमेरके सिहासन पर बैठा दो। महाराज जसवन्तसिहने यह आज्ञा पाते ही प्रसिद्ध नाहरखाँके साथ एक सेना भेज कर सबलसिंहको जयसलमेरके सिहासनपर बैठानेके लिये कहा, नाहरखाँने जयसलमेर जाकर राजाकी आज्ञासे सम्राट्के आदेशको पालन किया। सबलसिहने जयसलमेरके सिहासनपर बैठकर नाहरखाँको इनाममे पोकर्ण देशका अधिकार चिरकालके लिये देदिया, तभीसे पोकर्ण देश जयसलमेरसे अलग होकर जोधपुरके राज्यमे मिल गया है।

रावल जयसल और उनके उत्तराधिकारीगण अबतक तलवारसे अपने राज्यको बढ़ाते आते थे, अबतक राज्यका कोई अंशभी दूसरेके अधिकारमे नही गया था। नाहरको दिया हुआ पोकर्णका अधिकार ही सबसे पहिले जयसलमेर राज्यका अंगभंग करनेवाला हुआ। इसके उपरान्त विस्तृत जयसलमेरके राज्यका अंग क्रमानुसार कटता आया है। बादशाह बाबरकी दिग्विजयके कुछ दिन पहिले जयसलमेर राजधानीकी सीमा उत्तरमें गाड़ा नदी तक थी, पश्चिममें मेहराण वा सिन्धुतक, पूर्व और दक्षिणमें बीकानेर और मारवाड़तक थी। बीकानेर और मारवाड़के राठौर राजा दोसौ वर्षसे क्रमानुसार जयसलमेरके अधिकारी प्रदेशोका बहुत सा अंश अपने अधिकारमे करते आते थे। रावल सबलसिहने यादवोंके सिंहासनपर बैठकर बड़ी प्रशंसाके साथ राज्य चलाया, जब वह स्वर्ग सिधारे तब उनके पुत्र अमरसिंहने बलोचोंके साथ युद्ध करके विजय पाई, उस युद्धक्षेत्रमे ही उसको राजतिलक मिला। अमरसिंहने पिताके सिंहासन पर बैठनेके कुछ दिन पीछे अपनी पुत्रीके लिये सर्वसाधारण प्रजासे द्रव्य की प्रार्थनाकी। राजपूत मंत्री रघुनाथने अमरसिंहके इसकार्यमें बाधा डाली, इसपर अमरसिंहने उसको मरवा डाला। कुछ दिनोंके पीछे चन्ना राजपूतोंने फिर पहिलेकी तरह राज्यके उत्तर और पूर्वकी और उपद्रव और अत्याचार करना आरंभ किये, तब रावल अमरसिंहने स्वयं सेना लेजाकर उनको पराजय कर ऐसा दबाया और अपने आधीन बनाया कि भविष्यमे उनकी सच्चरित्रताका कारण अमरसिंह ही हुए।

कुछ समयके उपरान्त जयसलमेरके और बीकानेरके सामन्तोके बीचमे विवाद होनेपर दोनो देशोंके राजा रणभूमिमें आ खड़े हुए। बीकानेरके कांधलोत राठौरगण बहुत दिनोसे जयसलमेरकी सीमापर बड़े २ अत्याचार करते थे। जयसलमेरके आधीन बीकमपुरके सुन्दरदास और दलपत नामक दोनों सामन्त उन कांधोलौतोंके दुराचरणोसे बिगड़ कर शेष कांधोलोतोंको यथार्थ रूपसे दमनकर उनके अत्याचारोंका

फल देनेके लिये सम्मत हुए । दलपतने कहा "आओ, हम लोग राठौरोकी भूमि पर आक्रमण करके जगत्मे कीर्ति बढावें"। अत: उन दोनो सामन्तोने अपनी अपनी सेना साथले बड़े साहसके साथ बीकानेर राज्यकी सीमाके अन्तमे जाजू नामक नगरपर आक्रमण किया, और उसको लूटकर जलादिया। कांधलोत गण इससे बड़े लज्जित हुए। फिर उन्होंने बड़े दलबलसे आकर जयसलमेरकी सीमापर आक्रमण कर अपना बदला लिया। इसी बातपर आपसमे बड़ा झगड़ा होगया और अन्तमे घोर संग्राम आरम्भ हुआ। इस संग्राममे भटीगणोंने दो सौ राठौरोको मारकर विजयलक्ष्मी प्राप्त की और राठौरगण हारकर भाग गये। अपनी आधीनतामें रहनेवाले सामन्तोंको विजयी हुआ देख रावल अमरसिंहने बड़ा आनन्द मनाया।

बीकानेरके राजा अनूपसिंह इस समय दक्षिणमे दिल्लीके सम्राट्की सेनामे नियुक्त थे, उन्होने जब सुना कि जयसलमेरके सामन्तोने राठौरोको परास्त करदिया है, तब उनके क्रोधका ठिकाना न रहा। उन्होने उसी समय डेरेमेंसे निकल कर अपने प्रधान मंत्रीके हाथ अपनी राजधानीमे यह संदेशा कहला भेजा कि समस्त राठौर जो शस्त्र धारण करसक्ते हों जयसलमेरके जीतनेके लिये धारण करके तैयार होजायँ। कान्धलोत्गण शीघ्रही बीकमपुरकी समान जयसलमेरको कर देवें नही तो विश्वासघाती कहावेगे। राजाकी आज्ञा पाते ही मंत्रीने शीघ्रतासे समस्त राठौरोमे यह ढिंढोरा फिरवा दिया। तब तो सम्पूर्ण राठौर तलवारे हाथमे ले जयसलमेरपर धावा करनेके लिये एकत्रित होने लगे। अपमानित राजा अनूपसिंहने राठौरोकी सहायताके लिये हिसारसे एक पठानोके सेनापतिको सेनाके साथ भेज दिया। इधर जयसलमेरके स्वामी रावल अमरसिंहने राठौरोको युद्धके लिये तयार होते देख उसी समय समस्त भाटीसेनाको एकत्रित किया। अमरसिंह चतुर और युद्धमें कुशल थे। उन्होंने विचारा कि उत्तेजित राठौरोको जयसलमेरकी सीमामे न आने दिया जाय, इस कारण बीकानेरके ही राज्यमें प्रवेश कर उनपर आक्रमण करना चाहिये। अमरसिंहने यह विचार कर बीकानेरके अन्तवाले नगरोपर आक्रमण कर उन्हे लूटना आरम्भ कर दिया। अन्तमें बहुतसे राठौरोको मारकर पूगल प्रदेशको फिर अपने राज्यमे मिलालिया। इसी समयमे बाड़मेर और कोतड़ा प्रदेशके दोनों राठौर सामन्तोंको अपनी अधीनताकी साकलमे बांधलिया। रावल अमरसिंहने इस भांति बडी शूरवीरताके साथ जयसलमेरका राज्य करके संवत् १७५८ (सन् १७०२ ई०) मे इस जगत्को छोड स्वर्गमे वास किया। अमरसिंहके आठ पुत्र हुए उनमेसे बड़े पुत्रका नाम यशवन्तसिंह था। बाकी सात लड़कोमेसे केवल हरीसिंहका नाम पाया जाता है। बड़े पुत्र यशवन्तसिंहकी एक कन्याके साथ मेवाड़के युवराजका विवाह हुआ। यदुभट्टी इतिहासके लिखनेवालेने अमरसिंहके मरनेतकका ही इतिहास लिखा है। इसके पीछे एक दूसरे मनुष्यने जयसलमेरका इतिहास लिखा है। टाड् साहबके सामने यह मनुष्य जीवित था। "कर्नल टाडने बड़ी खोज और परीक्षा करके उस इतिहासके अंशको सच्चा मानकर उसीके

आधार पर जयसलमेरके इतिहासका शेष अंश लिखा है । किन्तु यह इतिहासका अंश शोचनीय और हृदयभेदी चित्रोंसे अङ्कित है । इसमें श्रीकृष्णके वंशावतंस जयसल-मेरके राजाओंका पतन समाचार विशेषतासे देखा जाता है " ।

अमरसिंहके मरनेके उपरान्तसे ही जयसलमेरके गौरवका सूर्य वर्षा ऋतुके बादलोंसे ढक गया । जयसल और उसके उत्तराधिकारी गण अपनी भुजाओंके बलसे राज्यकी सीमाको भलीभाँति बढ़ा गये थे और अमरसिंहने भी अपने पराक्रमसे राज्यका सीमाके बढ़ानेमे कुछ कमी नहीं की, किन्तु बड़े दुःखका विषय है कि पराक्रमी अमर-सिंहके सुरलोक जानेके पीछे ही यादवोंके प्रधान शत्रु बीकानेरके राठौरोंने शुभ योग पाया । उन्होंने संहार मूर्तिको धारण कर जयसलमेरकी शोचनीय दशा करदी । उन्होंने पुरानी शत्रुतासे फिर संग्रामक अग्निको प्रज्वलित कर बड़ी शीघ्रतासे जयसलमेरके बीच-वाले पुंगल, बाडमेर, फलोदी और अनेक बड़े बड़े नगर तथा गाँवोको छीन कर बीका-नेरके राज्यमे मिला लिया । दूसरी ओर राठौरोंकी समान शिकारपुरके एक अफ़गान सेनापति दाऊदखाँने भी जयसलमेरके महाराज अमरसिंहके मरनेके पीछे विशेष सुभीता जान गाड़ानदीके समीपवाले जयसलमेरके अधिकारी प्रदेश जबरदस्ती छीनलिये । इस भाँति अमरसिहके मरजाने पर थोड़े ही दिनोंके बीचमे जयसलमेरके बहुतसे प्रदेश अन्य जातिवालोंके अधिकारमे होगये ।

अमरसिंहके मरनेके पीछे ही उनके पुत्र जसवन्तसिंह जयसलमेरके सिहासनपर बैठे । माननीय टाड साहबने उनके शासनके सम्बन्धमे कुछ भी नहीं लिखा किन्तु आगे पीछेके लक्षणोंको देखनेसे अनुमान होता है कि जसवन्तके:शासन समयमे जयसलमेरकी अवनतिके सिवाय उन्नति नहीं हुई । जसवन्तके नीचे लिखे पाँच पुत्र हुए:–

१–जगतसिंह–इन्होंने आत्म हत्या की ।

२–ईश्वरीसिंह ।

३–तेजसिह ।

४–सरदारसिह ।

५–सुलतानसिंह ।

आत्म हत्या करनेवाले जगत्‌सिहके नीचे लिखे तीन पुत्र हुए:–

१–अखैसिंह ।

२–बुधसिंह–इनकी वसन्तरोगसे मृत्यु हुई ।

३–जोरावरसिह ।

इतिहास बतालाता है कि। जसवन्तसिंहके मरनेके पीछे उनके पोते अखै-सिंहको सिहासन मिलना चाहिये था । किन्तु अखैसिहको छोटा बालक देख कर उनके चचा तेजसिंह जबरदस्ती राज्यसिंहासनपर बैठ गये । अखैसिह और जोरावरसिह दोनों भाई अपने प्राणोंके. भयसे दिल्लीको भाग गये । इस समय मरे हुए रावल जसवंतसिहके भाई हरीसिंह दिल्लीके सम्राट्‌के यहाँ राजकार्यमें नियुक्त थे

अखैसिंह और उसके छोटे भाईने हरीसिंहकी शरण ली। हरीसिंहने अपने भाईके दोनो पोतोंको शरणमें आया देख कर प्रतिज्ञा करी कि शीघ्र ही जयसलमेर जाकर तेजसिंहको सिंहासनसे उतार दूँगा। थोडे दिन पीछे हरीसिंह जयसलमेरको गये। जयसलमेरमें इस समय ऐसी एकरीति थी कि वर्षके अन्तमे जयसलमेरके महाराज एक दिन घडसीसरके किनारे सब सामन्त, कुटुम्बी मनुष्य,सेना और समस्त प्रजाको लेकर जातेथे। पीछे उस सरोवरमेसे सबसे पहिले राजा अपने हाथसे एक मुट्ठी रेत उठाकर फेंकता था इसके उपरान्त सामन्त लोग, कुटुम्बी जन, मंत्रीगण, फिर समस्त प्रजा एक २ मुट्ठी रेती निकाल कर बाहर फेंकते थे। इसको "ल्हास" कहते है। इसके द्वारा उक्त सरोवर वर्षके अन्तमे साफ होकर सुधर जाता था। हरीसिंहने जयसलमेरमे आकर विचारा कि तेजसिंह जिस समय उक्त ल्हासमे दत्तचित्त होंगे उसी समय उस पर आक्रमण करके कार्य सिद्ध करूँगा। हरीसिंहने उक्त प्रस्तावके अनुसार ल्हास खेलनेके दिन तेजसिंह पर आक्रमण किया, किन्तु दुःखका विषय है कि हरीसिंहकी आशा पूरी न हो सकी, वह भलीभाँति तेजसिंहको परास्त न करसके। इस प्रबल संग्राममें कितने ही मनुष्य मारे गये, और तेजसिंह भी ऐसे घायल हुए कि इन्हीं घावोंके होनेसे उनके प्राण निकल गये।

तेजसिंहके मारेजाने पर उनका तीन वर्षका बेटा सवाईसिंह जयसलमेरके सिंहासन पर बैठा। सिंहासनसे हटाये हुए अखैसिंहने इस समय बड़ा सुभीता जान जयसलमेरके रहनेवाले समस्त भट्टी सर्दारोंके पास यह सूचना पत्र भेजा, "कि न्यायसे जयसलमेरका सिंहासन मेरा है, तेजसिंहने बड़े अन्यायसे मुझे सिंहासनसे हटा दिया था, अब उनका जो बालक पुत्र इस समय सिंहासनपर बैठा है, देखा जाय तो उसका कोई अधिकार सिंहासनपर बैठनेका नहीं है। मैं अपनी तलवारके बलसे जयसलमेरके सिंहासनपर बैठनेकी फिर अभिलाषा करता हूँ। जो प्रजा राजभक्त है उसे मैं अपनी सहायताके लिये बुलाता हूं।" अखैसिंहके इस सूचनापत्रके प्रचार होते ही जयसलमेरके सैकड़ो भट्टीसर्दार आकर उनसे मिलने लगे। इस भांतिसे अखैसिंहने अपने बड़े दलके साथ जयसलमेरके किलो पर अधिकार करनेके लिये आक्रमण किया और असीम वीरता दिखाकर उन्होंने तीन किले छीन लिये। सुकुमार सवाईसिंहका जीवन थोड़े ही कालमे नष्ट होगया। अखैसिंह फिर सिंहासनपर विराजमान होगये।

रावल अखैसिंहने इस प्रकारसे बड़े कष्ट उठाकर सिंहासन पाया और चालीस वर्ष तक राज्य किया। यद्यपि उन्होंने इतने दिन राजकाजको सुखपूर्वक चलाया तो भी उनके शासनके समयमें दाऊदखाँके बेटे भावलखाँने जयसलमेरके आधीनके प्राचीन देरावर और भाटी गणोंने जो सबसे प्रथम खडाल देश अपने अधिकारमे किया था उस खडालका हिस्सा काढ़ कर अपनी राजधानी भावलपुरमे मिलालिया।

रावल अखैसिंहके चिरकालतक राज्य कर मृत्यु होनेपर संवत् १८१८ (सन् १७६२ ई०) में मूलराज जयसलमेरके सिंहासनपर बैठे। मूलराजके तीन पुत्र हुए,-

१-रायसिंह।
२-जैतसिंह।
३-मानसिंह।

मूलराज सिंहासन पर बैठ तो गये परन्तु इनके मंत्रीके दोषसे इस भट्टी राज्यकी नैतिक अवस्था एकसाथ ही बिगड़ गई। इनके मंत्रीका नाम स्वरूपसिंह था; यह जातिका वैश्य जैनधर्मका माननेवाला और मेहतावंशमें उत्पन्न था। यह स्वरूपसिंह बड़ा ऊधमी स्वेच्छाचारी और भाटी सामन्तोंसे बड़ा द्वेष रखनेवाला था; इसने मंत्रीके पदपर आतेही थोड़ेही दिनोंमें जयसलमेरकी बड़ी शोचनीय दशा कर दी। इसके स्वेच्छाचारी होनेसे जयसलमेरके चारोंओर अशान्ति और असन्तोषकी आग बल उठी और पुरानी राज-नीतिका लोप होने लगा। मानों भाटी सामन्तोंके भाग्य जलनेलगे। किस कारणसे भट्टीसामन्त गण स्वरूपसिंहके विषैले नेत्रोंमें गिरे इसके सम्बन्धमें एक बड़ी कलंकजनक घटनाका लेख दिखाई देता है। स्वरूपसिंह एक वेश्यापर आशक्त था किन्तु वेश्याने इसकी ओर कुछभी ध्यान न देकर अयाफ जातिके राजपूत सर्दारसिंहसे प्रेम करलिया। इसपर स्वरूपसिंह सर्दारसिंहका अनिष्ट करने लगा। सर्दारसिंहने दुःखी होकर अंतमें युवराज रायसिंहसे प्रार्थना की। स्वरूपसिंह पहिलेहीसे युवराजकी नित्यप्रतिकी आमदनीको कम किया करते थे इससे युवराज उस पर स्वयं बड़े खिन्न रहते थे, अब इन्होंने सर्दार-सिंहकी प्रार्थना सुन मंत्रीको उसका फल देनेका संकल्प किया। अन्तमें युवराजके आगे प्रस्ताव हुआ कि स्वरूपसिंहके मारे विना राज्यमें किसी भांतिसे मंगल होनेकी सम्भावना नहीं है। युवराज भी उसमें सन्मत होगये। एक समय मंत्री स्वरूपसिंह राजसभामें रावल मूलराजके सामने बैठेथे समस्त सामन्त सर्दार चारों ओर विराजमान थे। इसी समयमें रायसिंहने सभामें जाकर स्वरूपसिंहके मारनेके निमित्त तलवार म्यानसे निकाली। स्वरूपसिंहने इस अकस्मात् विपत्तिको देख मारेजानेके भयसे रावल मूल-राजसे सहायता करनेके लिये प्रार्थना की किन्तु रायसिंहकी तलवारने बड़ी शीघ्रतासे स्वरूपसिंहके मस्तकको धड़से अलग करदिया। सामन्तमंडली जानती थी कि स्वरूप-सिंह रावल मूलराजसे अधिकार लेकर ही स्वेच्छाचारी हुआ था अतएव इन्होंने इस समय सभामें बैठे हुए मूलराजके जीवनरूपी दीपकके बुझा देनेका प्रस्ताव उठाया। परन्तु युवराज रायसिंहने इस मर्मभेदी प्रस्तावको उसी समय तोड़दिया।

अपने पुत्रकी संहारमूर्ति और सामन्तोंकी हिंसक अभिलाषा देखकर मूलराज मारे जानेके भयसे अन्तःपुरमें चले गये। इधर सामन्तोंने विचारा कि रावल मूलराजके सिंहासन पर बैठे रहनेसे अब हमारा निस्तारा नहीं हो सक्ता। विशेष कर जब उनके सम्मुख ही हमने उनके मारनेका प्रस्ताव उठाया है, तब वह अवश्य ही वह हमको मरवा डालेंगे। ऐसा विचार कर सामन्तोंने उसी समय रायसिंहसे कहा कि आप राजसिंहासन पर बैठिये। आज ही हम लोग आपका राजतिलक किये देते हैं और यदि आप इसमें

राजी न होगे तो हम आपके भाईको सिंहासनपर बैठा देंगे। रायसिंहने समस्त सामन्तोको एकमत देखकर पिताको कैद करा लिया। और स्वयं राज्यभार ग्रहण करनेमे सम्मत होगए। थोड़े ही दिनोमे उनके नामसे सब राजकाज होने लगा। किन्तु सामन्तोके बहुत कहने पर भी रायसिंह सिंहासनपर नही बैठे उसके बदले वह दूसरे आसन पर बैठा करते थे।

रावल मूलराज सिंहासनच्युत होकर वन्दीदशामें तीन महीने चार दिन तक रहे, इसके पीछे उनकी भाग्यलक्ष्मी प्रसन्न हुई। उनको बन्धनसे छुटानेके लिये एक रमणीका हृदय व्याकुल हुआ। वह रमणी कौन है ? प्यारे पाठको ! यह रमणी षड्यंत्र दलके नेता और रायसिंहके प्रधान उपदेशककी स्त्री है। इसका जन्म माहेचा सम्प्रदायमे हुआ था जो राठौर राजपूतोमे सेएफ हैं। इसके स्वामी जयसलमेरके प्रधान सामन्त जिञ्झियालीके मालिक अनूपसिंह है, ऊंचे भावको हृदयमें धारण कर राठौर रमणी रंगभूमिमे विचित्र अभिनय करनेको उतरी। इसके स्वामी अनूपसिंहने प्रधानमंत्री होकर राजाको बंदीमे डलवा कर राजधानीमे जो अशान्ति फैलाई है आज अपने स्वामी अनूपसिंहके मारे जाने पर भी यदि राज्यमें शान्ति होजाय और रावल मूलराज बंधनसे छूट जाँय तो मेरा कर्तव्य पूर्ण होजाय, आज इसने इस कामके करनेकी अपने मनमें ठान ली है। उसने विचारा है कि रायसिंहने अपनी कम हिम्मतीसे पिताको बंदी करके बडा बुरा काम किया है, अतएव दुष्ट रायसिंहको भी सिंहासनसे उतार देना चाहिये। राठौर रमणीने क्यों अपने पतिके मरनेसे भी मूलराजको छुटानेका उद्योग किया इसका कोई विशेष कारण इतिहास नही बतलाता, तब राजभक्ति ही इसका मुख्य कारण ज्ञात होता है। जो हो राठौर रमणीने उक्त संकल्प करके अपने पुत्र जोरावर-सिंहको पास बुलाकर हृदयका भाव कह सुनाया। पुत्र जोरावरसिंहने माताकी बात मान ली, तब माताने कहा, "वत्स ! इस कामके करनेमें तुम्हारे पिता भी यदि कोई बाधा डाले तो तुम अपने पिताके भी मारडालनेसे न चूकना। उनके मरजाने पर मै उनके शवके साथ सती हो सुरलोकको चली जाऊँगी ; जोरावरसिंह भी माताके ऐसे भयानक आदेशके पालन करनेमे राजी होगया। राठौर रमणीने इस भांति पुत्रसे प्रतिज्ञा कराकर फिर अपने देवर अर्जुनसिंह और वारूके सामन्त मेघसिंहको बुला कर इन दोनोसे मूलराजके उद्धारके निमित्त प्रतिज्ञा कराई।

रावल मूलराज तीन महीने चार दिनतक बंदीघरमे रहकर विचारते थे कि मुझे अपने कुलांगार पुत्रके दोषसे ही इस भयंकर बंदीघरमे जीवनका शेष करना पड़ेगा। उनके हृदयसे कारागारसे छूटनेकी आशा एक साथ ही जाती रही थी। अनूपसिंहने मंत्री होकर जयसलमेरमे जैसी प्रशंसा और प्रभुता पाई थी। रायसिंह जैसी उनकी आज्ञा पालन करते थे उससे जयसलमेरमे कोई यह नहीं कह सकता था कि मूलराज अब जीते जी बंधनसे छूटेंगे। पांचवें दिन उस वीर नारी राठौर रमणीके प्रस्तावसे प्रतिज्ञावद्ध जोरावरसिंह, अर्जुनसिंह, और मेघसिंह बहुत सी सेना लेकर कारागारमे

घुसगये और मूलराजको बंधनसे छुटा लाये।. किन्तु रावल मूलराजने विचारा कि कुलांगार रायसिंह अब न जाने किस बुरे अभिप्राय वा छलके साथ जेलसे निकालता है, इस लिये उन्होने पंहिले निकलनेसे नाहीं की। अन्तमें जोरावरसिंहने अपनी माताके षड्यन्त्रको बताया तव मूलराज उस राठौर रमणीको धन्यवाद देते हुए कारागारसे वाहर निकल आये और राजसिंहासन पर बैठगये।

जिस समय जोरावरसिंह, अर्जुनसिंह और मेघसिंहने रावल मूलराजका उद्धार किया था उस समय रायसिंह राजशय्या पर निद्रा देवीकी गोदमें विराजमान थे। मूलराजके सिंहासनपर बैठते ही नगाड़े वजनेलगे। उस नगाड़के सव्दसे रायसिंहकी नींद जाती रही। उन्होंने उठ कर सुना कि पिताजी बंधनागारसे निकलकर सिंहासन पर बैठगये है।उसी समय मूलराजके दूतने रायसिंहके पास:निर्वासन दंडका आज्ञापत्र और राजपूत समाजमे प्रचलित निर्वासन दंडके चिह्न स्वरूप काले वस्त्र, काले म्यानकी तलवार. काली पगड़ी, काली ढाल, लाकर रायसिंहको शय्याके पास रखकर कहा कि काला घोड़ा नीचे खड़ा है। रायसिंहने हताश हो पिताकी आज्ञाका पालन किया। वह तुरन्त ही काले वस्त्रोंको पहिन काले घोड़ेपर सवार होकर जयसलमेरसे वाहर हुए। जो सामन्त मूलराजके विरोधी और रायसिंहके पक्षपाती थे उनको भी अपने नौकरोंके साथ रायसिंहके साथ ही जाना पड़ा। रायसिंहने सब सामन्तोंके साथ राजधानीसे निकल कोटराके सामने घोड़ा चलाया। जयसलमेरकी दक्षिण सीमाके अन्तमे उक्त कोटरा नगरमे जव सव पहुँचे तव सामन्तोंके प्रधानने रायसिंहसे कहा 'नगरको लूट लेना चाहिये'। किन्तु रायसिंहने राजी न होकर कहा, "जन्मभूमि हमारी जननी स्वरूप है; जो राजपूत जन्मभूमि पर अत्याचार करैगा वह मेरा शत्रु कहा जायगा"। यह सुन कर सामन्त गणोंने वहाँ लूट नही की।

अपने किये पापका यथार्थ फल पाकर रायसिंह जयसलमेरको छोड़ कर जोधपुरके राजाके पास आये। जो सामन्त उनके साथ आये थे वे भी श्यो कोटड़ा और वाढमेरमें रहने लगे। उनको इसी भाँति रहते हुए बारह वर्ष बीते। किन्तु पहिले तीन वर्षोंतक उन्होंने छिप २ कर जयसलमेरके बहुतसे गाँवोंको लूटकर द्रव्य संचय करलिया था। यही नहीं वरन उन्होंने जयसलमेरकी राजधानीके समीपवाले गाँव और नगर भी लूट लिये थे। उनके ऐसे अत्याचार और उपद्रवोको देख कर रावल मूलराजने उन समस्त विद्रोही सामन्तोके घरोको खुदवाकर उनके स्थानपर कुएँ वनवा दिये और उनके सव प्रदेशोको छीन कर राजधानीमें मिला लिया। सामन्तोके वारह वर्षलों निर्वासित दंड भोगनेके पीछे रावल मूलराजने उनके अपराधोंको क्षमा कर उनके देशको देदिया। सामन्तोंने भी शपथ खाकर तवसे राजसेवामें कोई आपत्ति नही की।

राज्यसे निकालेहुए रायसिंहने ढाई वर्ष तक जोधपुरके राजा विजयसिंहके पास निवास किया। महाराज विजयसिंहने रायसिंहपर अपने पुत्रकी समान स्नेह

किया। किन्तु दुर्भाग्यसे रायसिंहने जोधपुरमे वडे आदर और सत्कारसे रहने पर भी अपने ऊधमी स्वभावसे एक वडा अन्याय कर डाला। रायसिंहने जोधपुरके एक वनियेसे कुछ रुपया कर्ज लिया। एक समय जब विजयसिंहके साथ रायसिंह शिकार खेलने जाते थे उसी समय मार्गमे उक्त महाजनने रायसिंहके घोड़ेकी लगाम पकड़ महाराज विजयसिंहकी दुहाई दे रायसिंहसे अपने द्रव्यकी प्रार्थना की। रायसिंहने अपने पिताकी दुहाई देकर वनियेसे घोड़ेकी लगाम छोड़नेको कहा। किन्तु धनी वनियेने ऐंठकर कहा कि "मूलराज की दुहाईमें क्यों मानू?" रायसिंहने इतना सुनतेही क्रोधित होकर तलवारसे वनियेका शिरकाट गिराया और उसी समय जयसलमेरकी तरफ अपने घोड़ेकी वाग फेरी। उन्होने जाते समय कहा कि "पराये अन्नसे पेट भरनेवालेसे मोल लिये दासका भी सत्व अच्छा है"। रायसिंहके सहसा जयसलमेरकी राजधानीमे आजानेसे राजधानीकी समस्त प्रजा उनको देखनेके लिये आने लगी, मूलराजने अपने वड़े पुत्र रायसिंहको लौट आया देखकर दूतके द्वारा पूछा कि जयसलमेरमे क्यो आये हैं? रायसिंहने कहला भेजा "मै तीर्थयात्रा करने जाता हूं अतएव एक वार जन्म भूमिको देखने आया हूं" रावल मूलराजने अपने कुपूत वेटेकी यह वात सात्य नहीं मानी, उन्होने विचारा कि रायसिंह अवश्य ही फिर कोई षड्यन्त्र रचने आया है इस कारण उन्होने उसी समय रायसिंहके नौकरोंसे हथियार लेलिये और रायसिंहको भी राजधानीमे न आने देकर देवाके किलेमें रहनेको भेज दिया।

राजदरवारोमे यह रीति चिरकालसे चली आती थी कि ऊंचे दर्जेके कर्मचारीके मरने पर उसके पुत्रको ही वह पद दिया जाय। वस इसी रीतिके अनुसार मूलराजने अपने पुराने मंत्री स्वरूपसिंहके मारे जाने पर उसके वेटे सालिमसिंहको मंत्री वनाया था। जिस समय स्वरूपसिंह मारे गये थे, उस समय सालिमसिंहकी अवस्था ग्यारह वर्षकी थी। उस थोडी ही उमरसें सालिमसिंहके हृदयमे प्रतिहिंसाकी वृत्तिका अंकुर उत्पन्न हो लिया था, अव थोड़े ही दिनोंमे वह फल और फूलोसे शोभायमान होकर वडा विशाल वृक्ष हो गया था। कर्नल टाड् लिखते है कि राजपूतगण जैसे असीम साहस और वीरतामे प्रसिद्ध है यद्यपि सालिमसिंहमें वैसा साहस और वीरता नहीं थी तथापि वह चपौंतक सर्पकी समान क्रूरता और व्याघ्रकी समान क्रोधकी सहायतासे अपनी इच्छासे प्रत्येक विरोधी मनुष्यको विपैले डकसे मारता था। उसका शरीर तो स्त्रियोंकी समान कोमल था, वैसे ही वोल-चालमे उसका स्वभाव नरम था। वह आचार व्यवहारसे निरन्तर विनयपूर्वक प्रतिज्ञा करके सर्वसाधारणको आशा और धीरज देता था। यद्यपि वाहरसे तो वह सवको प्यार करता था किन्तु वह किसी वातकी प्रतिज्ञा करके उसे कभी पूर्ण नहीं करता था। यह प्रकाशरूपमें जितना नरम और सरल जान पड़ता था हृदयमें उतना ही क्रूर था। सालिमसिंह जैनमतावलंवी था किन्तु जातिके धर्मको किसी भाँति नहीं मानता था। जैनियोंके यहाँ यह रीति है कि रात्रिके समय अन्धेरेमे वैठ रहना अच्छा है किन्तु पतंग आदिके जलनेकी सम्भावनासे दीपक जलाना उचित नहीं, कारण कि दीपक जलानेसे पतङ्गादिकी हत्या होनी संभव है।

परन्तु सालिमका चरित्र ऐसा पिशाचरूप था कि वहुत दिनोंके वीचमे विदेशी

शत्रुओंसे जितने भट्टीगण मारेगये थे इकले इसके षड्यन्त्रसे थोड़े ही दिनोंमें उनसे अधिक भट्टियोंका संहार होगया। इतिहासके जाननेवालोंने लिखा है कि सालिमसिंहके बालकपनमें ही इसकी विचित्र घटनासे रायसिंहके साथ निकालेहुए सामन्तोंने फिर अपने २ देशको रावल मूलराजसे लेलिया। इसी समय मारवाड़के महाराज विजयसिंह के स्वर्ग पधारनेपर राजा भीमसिंह मारवाड़के सिंहासनपर बैठे। जैसलमेरके रावल मूलराजने नवीन मारवाड़ेश्वर राजा भीमसिंहका अभिनन्दन करनेके लिये मंत्री सालिमसिंहको अपने प्रतिनिधि स्वरूपसे मारवाड़को भेजा। सालिमसिंह मारवाड़में जाकर अभिनन्दन दे जिस समय जयसलमेरमें आरहे थे उसी समय मार्गमें निकाले हुए सामन्तोंने उनको पकड़ कर कैद कर लिया। उन सामन्तोंने उसी समय अपने सर्वस्व छिन जाने और दंड दिलानेके कारणस्वरूप सालिमसिंहको प्राणदण्ड देना निश्चय किया। परंतु उन्होंने जैसे ही सालिमसिंहके शिर काटनेको तलवार उठाई वसे ही मृत्युको समीप देख सालिमसिंहने आँखोंमें आँसू भरकर गिड़गिड़ाते हुए वचनोंसे अपने शिरकी पगड़ी उतार कर जोरावरसिंहके चरणोंमें धरके अपने प्राणोंकी भिक्षा माँगी। शत्रु भी अपनी शरणमें आकर आश्रय पानेकी इच्छा करे तो उसको आश्रय देना और अभय करना राजपूतोंका स्वाभाविक धर्म है,अतएव कुटिल चक्री सालिमसिंहने जिनका सर्व नाश किया था, जिनकी दुर्गतिका अंत करदिया था वह आज उन्हींके हाथोंमें पड़कर उन्हींसे अपने प्यारे प्राणोंकी भीख माँगता है। यह देख कर सामन्तोंने शीघ्रही उस आश्रय पानेवाले प्राणोंके भिखारी सालिमको छोड़ दिया। सालिमके शिर काटनेके लिये निकाली हुई तलवार फिर म्यानमें करली। किन्तु किसने इस नरपिशाच सालिमको निकट आई हुई मृत्युके हाथसे बचाया? जिस राजपूत राठौर रमणीने एकमात्र "समान धर्म" कहकर मूलराजको कारागारसे छुटानेके लिये अपने प्राणपतिके प्राणनाश करनेमें भी संकल्प कर लिया था,उसी राठौर रमणीके सपूत बेटे,उसी मूलराज को बंधनसे छुटाकर राज्यपर बिठानेवाले जोरावरसिंहने सालिमको अभयदान दिया। जोरावरसिंहने यद्यपि मूलराजको कारागारसे छुटाकर राज्यसिंहासनपर बैठाया था, यद्यपि रावल मूलराज जोरावरसिंहके असीम ऋणसे बँधेहुए थे तौ भी दुरात्मा सालिमसिंहने अपनी प्रधानता दिखानेके लिये मूलराजके उस असीम उपकारी जोरावरसिंहको जयसलमेरसे हटाकर निकाले हुए सामन्तोंके साथ बाहर कर दिया था। उस निरपराधी जोरावरसिंहने ही पत्थरके हृदयवाले सालिमसिंहके जीवनकी रक्षा की। सालिमसिंहके छोड़देनेसे उनको भी छुटकारा मिला। उसने निकाले हुए सामन्तोंके अधिकारके देश फिर उनको रावल मूलराजसे दिलवा दिये। सालिमसिंहने यद्यपि सामन्तोंके देश उन्हें दिलवा दिये, परन्तु उनको रावलसभामें पहिलेकी समान स्वाधीनता नहीं मिली। केवल जोरावरसिंहको ही पहिलेकी समान समस्त अधिकार प्राप्त हुए।

जिस समय रायसिंह देवाके किलेमें बंदी होकर रहते थे, उसी समय उनके बड़े

पुत्र अभयसिंह और धौंकलसिंह निकाले हुए सामन्तोंके साथ वाढमेरमें रहते थे। रावल मूलराजने निकालेहुए सामन्तोंसे वारवार दूत भेजकर अपने पौत्रोंको अपने पास भेजनेको कहा, किन्तु सामन्तोंने किसी भांतिसे नहीं माना। तव रावल मूलराजने अपनी सेनाको लेजाकर वाढमेरको चारोंओरसे घेरलिया।

निकाले हुए सामन्तोंने छः महीनेतक वडे पराक्रमके साथ किलेकी रक्षा करी, अन्तमें रसदके चुकजानेसे उन्होंने आत्म समर्पण करादिया। किन्तु इस नियमपर उन्होंने रावल मूलराजको उनके दोनों पोते दिये कि रावल वे उनके प्राणरक्षाकी शपथ करले। जोरावरसिंहने दोनों कुमारोंके जीवनकी जामिनी की तव दोनों कुमार मूलराज को देदिये गये। रावल मूलराजने दोनों वालकोंको देवाके जिस किलेमें रायसिंह कैद थे वहाँ रहनेके लिये भेजदिया। किन्तु कुछ दिनोंके पीछे ही देवाके दुर्गमें भयंकर आग लगी और उस जलती हुई आगमें रायसिंह और उसकी स्त्री दोनों जलगये। अभय-सिंह और धौंकलसिंहने वड़े सौभाग्यसे उस आगसे छुटकारा पाया। सालिमसिंहने स्वयं दोनों कुमारोंकी रखवालीमें जोरावरसिंहको करके मूलराजके राज्यशासनके विघ्न दूर करनेके लिये जयसलमेरके दूरवाले प्रदेश रामगढमें उनको भेज दिया था। अभयसिंह और धौंकलसिंहके राजधानीमें वा समीपके किसी स्थान पर होनेसे सामन्त गण उनको ले फिर किसी षड्यन्त्रको रचकर मूलराजको सिंहासनसे हटा देनेका विचार करेंगे, इस भयसे मेहता सालिमसिंहने उनको वड़ी दूर पर रक्षा करके निश्चिन्तता पाली थी। किन्तु जयसलमेरके सवमें प्रधान सामन्त जोरावरसिंह जो अभयसिंह और धौंकलसिंह के जीवनके जामिन हुए थे-उन्होंने सालिमसिंहकी इस आज्ञासे दोनों राजकुमारोंको राजधानीसे अनेक दिनके मार्गपर दूर चला देनेमें सन्देह किया। उन्होंने विचारा कि सालिमसिंहने अवश्य ही कोई षड्यन्त्र रचकर कुमारोंको इतनी दूर अन्य स्थानपर भेजा है। जोरावरसिंहने अन्तमें एक समय रावल मूलराजके सामने निर्भय होकर कह दिया कि " आपके सिंहासनके उत्तराधिकारी राजकुमार अभयसिंहके जीवनका मैं जामिन हुआ हूँ, राजकुमारको जव आगे राज्यपर वैठना होगा तव उसको दूर स्थानपर रखना किसी भांतिसे उचित नहीं है उसको राजधानीमें ही रखकर उसे राज्यकार्यकी शिक्षा देनाही आपका कर्तव्य है "।

जोरावरसिंहकी ऐसी सम्मति देखकर मेहता सालिमसिंहका हृदय कॉप उठा। उसने विचारा कि, जोरावरसिंहकी समान प्रतापशाली सामन्त राजसभामें खडा होकर ऐसी सम्मति दे तो इसमें हमारा मंगल नहीं होसकता, अतएव सालिमसिंह जोरावरसिंहके मारडालनेकी चिन्ता करने लगा। इसी समयसे सालिमसिंहको पिशाच मूर्ति धारण करते देख जयसलमेरमें वड़े २ हृदयविदारक दृश्य दृष्टि आनेलगे। जोरावरसिंहका खेतूसी नामक एक भाई था। उस खेतूसी की स्त्रीसे रजवाड़ेकी रीतिके अनुसार सालिमसिंहने भाई वहिनका सम्वन्ध जोड लिया। सालिमसिंहने अपनी पैशाचिक अभिलाषाको पूर्ण करनेके निमित्त अपने पापके उद्देश पूर्ण होनेके मार्गके कांटे

उखाड़नेके लिये उस खेतूसीकी स्त्रीकी सहायता लेनेका संकल्प किया। सालिमसिंहने उक्त स्त्रीको अपने घर बुलाकर, बहुतसी बातें करनेके पीछे उससे बड़ी चतुराईसे कहा "क्या तुम्हारी ऐसी इच्छा नहीं होसक्ती कि जिससे तुम्हारे स्वामी जोरावरसिंहके पदपर जयसलमेरके प्रधान सामन्त होजांय"। अबला स्त्रीने सालिमकी इस षड्यन्त्रकी बातको समझा नहीं, तब सालिमने स्पष्ट रूपसे अपने मनका भाव सुनाकर कहा कि तुम्हारे स्वामी राजसभाके प्रधान सामन्त होसकते हैं। इस बड़ी आशासे स्त्री सालिमका कार्य करनेको तुरन्त ही राजी होगई। किन्तु सालिमने उस समय उसको यह नहीं बताया कि जोरावरसिंह किस भाँतिसे मारा जाय। कई दिनके पीछे सालिमसिंह ने जब स्त्रीको कामके करनेमें उत्सुक देखा तब कहा "मैं अपने हाथसे प्राणघातक जहर दूँगा। तुम। उस विषयको लेकर जोरावरसिंहके भोजनमें मिला देना। जोरावरसिंह उस विषैले भोजनको खाकर निश्चय मर जाँयगे, तभी तुम्हारे स्वामीको प्रधान सामन्तका पद मिल जायगा।" हतभागिनी रमणीने अपने स्वामीका ऐश्वर्य बढ़ानेकी अभिलापा से समय पाकर वह विष जोरावरसिंहको खिलादिया, जिससे वह वीर सामन्त मायामय संसारको छोड़ कर परलोकको सिधारा। कृतघ्न सालिमसिंहने ऐसे वीर जोरावरसिंहको मारकर अपने पैशाचिक अभिनयके मार्गको स्वच्छ करलिया। और खेतूसी जिझिनियालीके प्रधान सामन्त होगये।

पापात्मा सालिमने इस भाँति जयसलमेरके सबमें श्रेष्ठ सामन्तको मारकर अंतमें संहारमूर्ति धारण कर क्रमानुसार हत्या करना आरम्भ की। उसने इस प्रकार विषसे और समयानुसार तलवारसे वारू और डाँगरी, आदिके सामन्तोंको एक २ करके मार डाला। खेतूसी भी अपने भाईके मारनेमें सरीक थे वा यह नहीं जाना गया।

उन्होंने यद्यपि सामन्त पद पालिया परन्तु दुरात्मा सालिमसिंहके समयमें ही उनका भी जीवन नष्ट होगया। खेतूसीसे सालिमसिंहका इस बातपर विवाद होगया कि जब सालिमसिंहने अभयसिंहको जयसलमेरके उत्तराधिकारसे एकवार ही वंचित करके मूलराजके छोटे पुत्र मानसिंहके बेटे गजसिंहको राज्यका स्वत्व देनेकी इच्छा की और खेतूसीने उस प्रस्तावमें किसी प्रकार सम्मति न दी तब अभयसिंह और धौंकलसिंहको विना मारे सालिमसिंहने अपनी इच्छा पूर्ण होनेका दूसरा उपाय न देखकर सबसे पहिले खेतूसीसे इस कार्यके करनेको कहा 'कि तुम दोनों कुमारोंको मारडालो' खेतूसीने इस नीच और घृणित कामके करनेसे क्रोधित होकर कहा कि, "अपने स्वामीके वंशधरोंके मारनेमें मैं सहायता भी नहीं दे सक्ता मारना तो एक ओर रहा"। सालिमने जब खेतूसीकी यह बात सुनी तब मनमें कहा कि तुम्हें भी अब जोरावरसिंहके पास भेजता हूं। कई दिनके पीछे खेतूसी अपने साले स्वरूपसिंहके साथ बालोतरा देशके अन्तर्गत फूलियो नामक स्थानमें विवाहके न्यौतेमें गये। सालिमसिंहने उसी समय खेतूसीके मारनेका निश्चय करलिया। खेतूसी और स्वरूपसिंह जब विवाहके पीछे जयसलमेरकी

---

(१) उर्दूतर्जुमेमें भाई।

सीमामे विजोराय स्थानपर लौटकर आये तब सालिमसिहके गुप्तचरने उन्हे बड़े आदरके साथ किलेमे लेजाकर दोनोंको मार डाला। थोड़ी देरके पीछे शव दाह करनेको उन्हे किलेमे से निकाला। खेतूसीकी स्त्रीने जब किसीके मुखसे सुना कि तुम्हारे स्वामीके मारनेका उद्योग कियागया है,तब वह स्वामीके घरपर न आनेसे सालिमसिंहको अपना परम हितू जान उसीकेघर चली गई, और साथ में अपने छोटे पुत्रको भी ले गई। दुरात्मा सालिमने उस स्त्रीको आश्रय तो दिया परन्तु उसे यह नहीं बतलाया कि मेरे ही षड्यन्त्रसे तेरा स्वामी मारागया है। स्त्री इसी प्रकार सालिमके स्थानपर रहने लगी। एक नौकर आकर प्रतिदिन स्त्रीको भोजन देजाता था, चार पांच दिनके बाद उस नौकरने एक दिन स्त्रीसे आकर कहा कि तुम्हारे स्वामी और भाई दोनो मारेगये। इस दारुण शोचकी बात सुन कर रमणीका शोकरूपी समुद्र उछलने लगा। थोड़ी देर पीछे उसके हृदयमे बदला लेनेकी इच्छा प्रबल हुई। दुराचारी सालिमने उसके स्वामीको मारा है यह जानकर वह उसी समय प्रतिहिंसा करनेको तैयार हुई। इतिहाससे जानाजाता है कि राक्षस सालिमसिहने चिरशान्तिके लिये स्त्रीके पास एक छुरी भेजी। वास्तवमे स्त्रीने स्वयं अपनी हत्या करली या सालिमने ही उसको मारा,यह इतिहाससे नहीं ज्ञात हुआ। रमणीने जैसे जोरावरसिंहको मारकर महा पातक किया था उसका उसको यहीपर उचित फल मिला।

नराधम सालिमसिंह एक २ करके अनेक भट्टी सामन्तोको मारकर पीछे राजवंशके ध्वंस करनेको आगे बढ़ा। जयसलमेरके आगे होनेवाले उत्तराधिकारी अभयसिंह अपने छोटे भाई धौंकलसिंहके साथ रामगढ़में रहते थे। नरपिशाच सालिमने अपने षड्यन्त्रसे विषद्वारा अभयसिंह, धौंकलसिंह, उनकी स्त्री और उनके छोटे २ बालकोंको भी मरवाडाला। इन भयकर हत्याओंके पीछे सालिमसिंहने रावल मूलराजके छोटे बेटेके तीसरे पुत्र गजसिंहको जयसलमेरके उत्तराधिकारी रूपसे प्रकाशित करदिया। गजसिंहके और पाँच भाई पिशाच प्रकृतिवाले सालिमसिहके विकराल ग्राससे अपने जीवनकी रक्षा करनेके लिये जयसलमेरको छोड़ बीकानेरमें जाकर वहांके राजाकी शरणमें रहने लगे। नीचे लिखी वंशावलीके देखनेसे पाठक गण सहजमे ही जान सकेंगे कि महा पातकी सालिमने राजवंशकी कैसी शोचनीय दशा करदी थी।

मूलराज।

- रायसिंह (आगमें जलेकर मरे)
  - अभयसिंह, (विषसे मरे)
  - धौंकलसिंह. (विषसे मरे)
- जैतसिंह (काना)
  - महासिह (काना)
- मानसिह. (घोड़ेसे गिरकर मरे)
  - तेजसिंह, (निर्वा)
  - देवीसिह, (निर्वा.)
  - गजसिह,
  - केशरीसिह, (निर्वा.)
  - फतेसिह. (निर्वासित)

(१) उर्दू तर्जुमेंमें जहर देनेसे मरे।

महासिंह काना था, हिन्दूशास्त्रके अनुसार कानेको राजसिंहासनका अधिकार नहीं है, अतएव महासिंहका स्वयं ही अधिकार जाता रहा, इसी लिये सालिमसिंहके कराल ग्राससे उनका जीवन नष्ट नहीं हुआ।

टाड् साहव इस अध्यायमें लिखते है कि "राजवाड़ेमें जिस समय मंत्रियोके सर्वाधिकारमें अखण्ड प्रभुता प्रकाश हुई है,हम केवल उसी समयमें उन मंत्रियोके खिलौने स्वरूप राजाओको चिरकाल तक राज्य करते देखते है। कोटा राज्यके भूतपूर्व महाराव भी पचास वर्षसे अधिक राज्यसिंहासन पर बैठे थे। और रावल मूलराज भी इस जयसलमेर के राजसिंहासन पर ५८ वर्ष तक रहे। इनके पिता ४० चालीस वर्ष तक राज्य करगये थे। जगत्के जिस किसी राज्यके इतिहासमें पिता और पुत्रमे एक शताब्दी राज्य रहा हो ऐसा लिखा है वा नहीं इस विषयमे मुझे सन्देह है। जिस शताब्दीमें यह पिता पुत्र राज्य करगये है उसी शताब्दीसे इस यदुवंशका घोर परिवर्तन और वड़ा पतन हुआ है। यदि हम रावल मूलराजके पितामह जसवन्तसिंहके शासन समय पर दृष्टि डाले तो हम इस जयसलमेरकी सीमाको बड़ी विस्तारवाली देखते हैं। उत्तरको सोना गाड़ानदी-तक, (जो नदी इस राज्यको मुलतानसे अलग करती है,) पश्चिममें पंचनद और सिन्धुका उपजाऊ प्रदेश इसके अन्तर्गत देखते है। उक्त समयके कुछ दिन पहिले इसकी सीमा और भी वड़ी थी। इसके दक्षिणमें धातराज्य है। दक्षिणके अंचलमे विराजमान स्योकोटड़ा और वाड़मेर देश इसके मध्यमें थे। किन्तु इस समय वह मारवाड़की राजधानीमे है। पूर्वसीमाके फलोदी, पोकर्ण और अन्यान्य नगर आदि भी वीकानेरमे मिलगये है। इस समय जो भावलपुर राज्य स्वतंत्र हो रहा है वह भी इसी जयसलमेरकी राजधानीका एक अंश है। राठौरोने जयसलमेरके पश्चिमी सीमाके वहुतसे प्रदेश अपने अधिकारमें करलिये हैं"।

छठवां अध्याय ६.

अंग्रेज गवर्नमेंटके साथ रावल मूलराजका सन्धि करना-संधिपत्रका लिखा जाना-मूलराजकी मृत्यु-उनके पोते गजसिंहका सिंहासनपर बैठना-उनका मंत्रीके हाथमें पड़कर खिलौना वन-जाना-संधिपत्रकी तीसरी धारा-राजनैतिक प्रश्नावली-सालिमसिंहका फिर शासन करना-सालिम-सिंहके अत्याचार और उपद्रवोका वढ़ना-जयसलमेरके प्रधानमंत्री पदको अपने उत्तराधिकारियोंको दिलानेका परिश्रम करना-वृटिश दूतसे वृटिश गवर्नमेण्टके पास दरख्वास्त भेजना-पल्लीवालोका स्वत. निर्वासन-जामिनस्वरूप वनियेके परिवारकी रक्षा करना-वलके साथ राज करलेना-सालिम-सिंहकी सम्पत्ति-चारूके मालदेवतोका इतिहास-वीकानेरके राठौरोंसे उनका ध्वंस होना-विश्वास-घातकता-वृटिश गवर्नमेण्टसे सहायता मांगना-सहायता मिलना-उसका फल-रावल गजसिंहका उदयपुरमे आना-रानाकी कन्यासे उनका विवाह होना।

श्रीकृष्णके स्वर्ग चले आनेपर यदुवंशकी जो दशा हुई उसे पहिले ही अध्यायमें लिख आये है। इस समय हम फिर यदुवंशकी आगेकी दशा दिखानेको तैयार हुए है। संवत् १८१८ मे रावल मूलराज' रावल जयसलके सिंहासनपर बैठ थे और १८१८ ईस्वीमें उन्होने ईस्टइंडिया कंपनीके साथ संधि करली। कालकी कैसी विचित्र गति है? पवित्र यदुवंशके स्वामी भगवान् श्रीकृष्णके वंशधर जो अबलो स्वच्छन्द थे, अब उनके वंशमे उत्पन्न हुए, मूलराजको अनेक शताब्दियोंके पीछे संधि स्थापन करनी पड़ी। इतिहाससे जानाजाता है कि भारतवर्षके प्रत्येक राजपूत राजाओने बृटिश गवर्नमेण्टके साथ संधि कर ली थी, उसके पीछे जयसलमेरके राजा मूलराजने संधि स्थापन की तो क्या ? जिस दिल्लीमें राजपूत राजाओने ईस्ट इंडियाकम्पनीके साथ संधिपत्र लिखा था उसी दिल्लीमे जयसलमेरके रावल मूलराजके दूतने भी संधिपत्र लिखा।

संधिपत्र।

माननीय अंग्रेज ईस्टइंडियाकंपनीके साथ जयसलमेरके मालिक श्रीयुत महा रावल मूलराज बहादुरका यह संधिपत्र माननीय कपनीकी ओरसे महामहिमवर मार्किस आव हेष्टिन्स के. जी भारतके गवर्नर जनरलसे प्राप्त पूर्ण शक्तिके अनुसार, मि०चार्लेस थियोफिलस मेटकाफ, और महाराजाधिराज महा रावल मूलराज बहादुरकी ओरसे प्राप्त पूर्ण शक्तिके अनुसार मिश्र मतिराम और ठाकुर दौलतसिंह मानते हैं।

पहिली धारा।

माननीय अंग्रेज कंपनी और जयसलमेरके मालिक महा रावल मूलराज बहादुर और उनके उत्तराधिकारियोंसे तथा अन्य जमीदारोंमे चिर स्थाई मित्रता, सन्धि-सम्बन्ध, और समान स्वार्थता रहे गी।

दूसरी धारा।

महा रावल मूलराजके वंशधर ही उत्तराधिकारी क्रमसे जयसलमेरके सिंहासनपर बैठेंगे।

तीसरी धारा।

जयसलमेर राज्यका पतन करनेके लिये यदि कोई राजा सेना लेकर आक्रमण करे अथवा उक्त राज्यके बीचमे कोई बडा भारी झगड़ा उपस्थित होजाय और जयसलमेरके राजाकेसे वह दूर न होसके तो बृटिश गवर्नमेण्ट उक्त राज्यकी रक्षाके लिये अपनी शक्तिपूर्वक सहायता देगी।

चौथी धारा।

महा रावल और उनके उत्तराधिकारीगण एवं स्थलाभिषिक्तगण अटल नियमके साथ आश्रितरूपसे बृटिश गवर्नमेण्टके सहायक होंगे, और बृटिश गवर्नमेण्टका आधिपत्य मानेंगे।

पाँचवीं धारा।

यह पाँच धाराओंसे युक्त संधिपत्र मुझ चार्लसथियोफिलस्मेटकाफ और मिश्र मतिराम एवं ठाकुर दौलतसिंहका निर्द्धारित और हस्ताक्षर युक्त तथा दोनो ओरकी मोहरोंसे भूपित है, महा महिम गवर्नरजनरल और महाराजाधिराज महा रावल मूलराजवहादुरके स्वीकार होनेपर आजकी तारीखसे छः सप्ताहोंके बीचमे दोनो ओरके लेने देनेका कार्य पूरा होजायगा।

दिल्लीमें आज सन् १८१८ दिसम्बर महीनेकी १२ वी तारीखको लिखा गया है।

(हस्ताक्षर) मतिराम मिश्र,
ठाकुर-दौलतसिह।
(हस्ताक्षर) सी. टी. मेटकाफ।

उक्त संधिपत्र लिखनेके पीछे रावल मूलराज दो वर्षतक जिये। उनकी १८२० ईसवीमें मृत्यु होगई। इस वातको पहिले ही कह आये हैं कि मूलराजने ५८ वर्ष तक राज्य किया था, किन्तु नाममात्रके राजा थे। सालिमसिहने और उसके पिताने ही इतने दिनोंतक अपनी इच्छानुसार जयसलमेरमें प्रबंध किया था। हम कहसकते हैं कि मूलराज केवल मंत्रीके हाथके खिलौने ही नहीं थे, वह एक तेजहीन पुरुप भी थे। जो समस्त गुण क्षत्रिय राजाओंमें होने चाहियें, उनमेसे एक भी मूलराजमें नही था। उनके जीते जी ही नरपिशाच सालिमसिहने उनके वंशधरोंकी जैसी दुर्गति की। जिस भांतिसे उनके वेटे और पोतोंको मारा उससे यही कहना वहुत है कि जितना साहस और तेज उस राजपूत रमणीमे था जिसने मूलराजको जेलसे छुटाया था इनमे उतना भी नही था। मूलराज इतिहासमे यादवकुल अवनति कारक कहे गये है।

मूलराजके मरनेके पीछे उनका पोता गजसिह जयसलमेरके सिहासनपर वैठा। पापी सालिमसिहने अपनी प्रभुता सदा वनाये रखनेके लिये ही गजसिहको अपना खिलौना जान मूलराजके वेटे ओर पोतोको मार और निकाल कर गजसिहको उत्तराधिकारी प्रसिद्ध किया था। गजसिह भी मूलराजकी समान सालिमसिहके हाथके खिलौने होकर जयसलमेरके सिहासनपर वैठे। जिसमे गजसिंह राज्यके किसी विपयमें हस्तक्षेप न करसके, जिस्से सामन्तो और प्रजाके साथ उनकी किसी भांतिसे प्रीति न होसके, जिस्से वह सालिमसिहके सेवक और आज्ञाकारी होकर सदा रहे। इसी उद्देशसे नीच सालिमसिहने गजसिहको वचपनसे ही लिखापढ़ा लिया था। दादा मूलराज जैसे सालिमसिहके हृदयमें ही आचरणोको देखकर मौन रहते थे, ऐसे ही यह नये राजा भी उन्हीं की समान रहने लगे। सालिमसिहने गजसिहको वालकपनसे ही सामन्त समाज और समस्त प्रजासे अलग रक्खा था, इसकारण वह किसी सम्प्रदायसेभी सहानुभूति नहीं प्रकाश कर सक्ते थे। नीच सालिमने गजसिहको ऐसी दशामे रखकर भी इतनी देखभालकी कि जिसमे यह किसी कामके करनेका साहस न कर सके। गजसिहके राजसिंहासनपर बैठनेसे चतुर सालिमसिंहने अपने सेवकोंको उनके पास नियुक्त किया। वह सेवक गजसिहसे

सालिमसिंह की वडी प्रशंसा किया करते, और उसको देवताके समान बताते थे। गजसिंह राज्यसिंहासनपर बैठकर किस समय क्या बात करते है, उनके मनका भाव किस २ भाँतिसे दिनमे वदलता है इन बातोपर लेवक विशेष रूपसे दृष्टि रखते और समय २ पर वे अपने स्वामी सालिमसिंहसे सब कहते थे। रावल गजसिंह उनकी रानियो और परिवारके मनुष्य सभी पूर्णरूपसे सालिमसिंहकी दयापर निर्भर रहते थे, किन्तु दुरात्मा सालिम समय पाकर गजसिंहपर भी निर्दयता प्रकाश करनेमे नहीं चूकता था, यदि कभी रावल गजसिंह किसी घोड़ेको मोल लेना चाहते तो उनको सालिमसिंहसे प्रार्थना करनी पडती, यदि कभी वह किसीको कुछ देना चाहते तो सालिमसिंहसे आज्ञा लेनी पड़ती थी। सालिमसिंह यदि रावल गजसिंहके दश रुपये माँगनेपर पाँच भी देदेते तौ इसमे गजसिंह अपना अहोभाग्य समझते थे। इन सब बातोंसे हमारे पाठक स्वय जान सक्ते हैं कि मलराजके मरनेके पीछे जयसलमेरके राज्यमे परिवर्तन तो अवश्य हुआ किन्तु सालिमसिंहकी प्रभुता कुछ कम नहीं हुई; वरन् दिनप्रति बढ़ने लगी।

इतिहासके लिखनेवाले टाड् साहबने यहाँ पर लिखा है कि जयसलमेरका सधिपत्र जिस तारीखमें समाप्त हुआ (सन् १८१८ई १२ दिसम्बर) उसके देखनेसे जानाजाता है कि केवल जयसलमेरके महा रावलने ही देशी राजाओमे सबसे पीछे वृटिश गवर्नमेण्टका आश्रय लिया था। मूलराजने सालिमसिंहकी सलाहसे बहुत दिनोंतक बड़े कष्टके साथ अपना राज्य चलाया था। इस पर विशेष कर सालिमसिंहकी पहिले यह इच्छा नहीं थी कि रावल मूलराज अंग्रेजोसे सधि करले, कारण कि उसने पहिले ही विचारलिया था कि सधि हो जानेसे उसकी शक्ति और प्रभुता कम हो जायगी।

किन्तु सालिमसिंहने जब बड़ी खोजके साथ देखा कि समस्त रजवाड़ेमे इकला जयसलमेर राज्य ही वृटिश गवर्नमेण्टके आधीन नही है। और हमारे अत्याचार और उपद्रवोसे पीडित राज्यमे शत्रुओंकी सख्या बढ़ी हुई है, इस कारण विना अंग्रेजोसे सधि किये शत्रुओंद्वारा अंग्रेजोसे मिलकर चढ़ाई होनेसे महा अनिष्ट होजानेकी सम्भावना है यही सोचकर सालिमसिंहने मूलराजको संधि करनेकी सम्मति दी थी। जब संधिपत्र लिख गया तब सालिमसिंहका यह भय जातारहा। सालिमसिंहको प्राय: इस बातका भी बडाभारी डर था कि मेरे अत्याचारोसे पीड़ित होकर गजसिंहके जो अन्यभाई जयसलमेरको छोडकर बीकानेरमे भाग गये थे शायद वेंही इकट्ठे होकर अपनी २ सेना सहित किसी न किसी समय राज्यपर आक्रमण करे। किन्तु अंग्रेजोके साथ संधि होनेसे उसकी तीसरी धाराके अनुसार सालिमसिंहका यह भय भी जाता रहा। "बाहरसे किसीके आक्रमण करनेपर वृटिश गवर्नमेण्ट अपनी सेनासे सहायता करेगी"। तीसरी धारामे ऐसे नियमके रहनेसे गजसिंहके भाई कभी मेरी इस अखंड प्रभुतामे बाधा नहीं डाल सकेंगे। प्रधान मंत्री सालिमसिंह वृटिश गवर्नमेण्टके साथ सन्धि होजानेपर भी शान्त नहीं हुआ, वरन दिन २ अपने अत्याचारोंकी अग्निको प्रज्वलित करता रहा।

टाड् साहबने फिर वृटिश गवर्नमेण्टकी उक्त सन्धिसम्बन्धी राजनैतिक उद्देशके सम्बन्धमें लिखा है, कि इस संधि होनेके कारण जयसलमेरका शीघ्र ही उपकार होगा, यही उपकार उक्त राज्यके लिये अत्यन्त प्रयोजनीय है । जयसलमेरका राज्य और आधी शताब्दीतक स्वाधीन दशामें स्वतंत्र रहसक्ता था वा नहीं यह सन्देहकी वात थी । अतएव जिस दिनसे वृटिश गवर्नमेण्टके साथ जयसलमेरके स्वामीकी संधि हुई उसी दिनसे जयसलेरकी स्थिति निश्चित होगई। जयसलमेरकी शासनशक्ति क्रमानुसार हीन होती चली आती थी, और राज्यकी सीमा क्रमानुसार घटकर अंतमें केवल राजधानीमात्र. शेष रहा चाहती थी। कारण कि समस्त भावलपुर राज्य ही एक ओर जयसलमेरके राज्यके उत्तरीय देशोंसे बनगया है; दूसरी ओर सिन्धु, बांकानेर और मारवाड़के तीन राजा क्रमानुसार जयसलमेरके वहुतसे देशोंको अपने आधीन करते आते थे । यह तीनों राजा जब जयसलमेरको निर्बल देखते तभी अपने राज्यको बढ़ा लेते थे और विश्वासघाती सालिमसिंहके दुराचरणोंसे ही अन्य राजाओंसे विवाद होता था । केवल अन्य राज्योंमें कई वर्षलों अराजकता फैल जानेसे जयसलमेरका राज्य नाममात्रकी स्वाधीनतामें रहगया था और उसीसे इस राज्यका अंग अधिक न्यून नहीं हो सका था । यदि वीकानेर और मारवाड़ प्रभृति राज्योंमें अराजकता न फैलजाती तो निस्सन्देह उन दिनोंमें ही जयसलमेरका राज्य वहुत ही थोड़े टुकड़ेमें पृथ्वीपर दिखाई पड़ता। अब वृटिश गवर्नमेण्टके साथ संधि होजानेसे सबने जान लिया कि जो कोई जयसलमेरपर आक्रमण करेगा तो जयसलमेरकी ओरसे वृटिश गवर्नमेंट उस आक्रमण करनेवालेके साथ युद्धमें तत्पर होगी । अतएव सिन्धव दाऊके बेटे और राठौरोंने जयसलमेरपर चढ़कर राज्यसीमामें से कुछ देश जैसे पहिले अपने राज्यमे मिला लिये थे वैसे मिलाना बंदकर दिया । यदि हम समस्त रजवाड़ेमेसे इकले जयसलमेरसे संधि नहीं करते तो जयसलमेर राज्यको अपने शत्रुओंकी असंख्य सेनाके मुखमें असहाय अवस्थामें गिरना पड़ता. उसमें भी फिर अत्याचारोंकी प्रबल अग्निने जयसलमेर जलकर दूसरी मूर्तिमें बदल जाता, और भट्टी जाते वेदौनियोंकी समान दस्यु जातिमे वदलकर मरुक्षेत्रके रेतमें मिलजाती । स्वाधीन देशीय राज्योंमें एक जयसलमेरहीने पहिले गंगा और सिन्धु नदीके किनारेवाले राज्योंके साथ वाणिज्य स्थापन किया था । किन्तु आत्मविग्रह और अशान्तिसे वह वाणिज्यका सोता एकबार ही रुकगया. अब चिरकालतक शान्ति और विश्वासको विना जमाये वह वाणिज्य नहीं चल सकता । केवल वाणिज्यकी उन्नतिके लिये ही हमने जयसलमेरके साथ मित्रता की है । किन्तु यदि हम भविष्यको देखें, यदि हम अन्यदेशवालोंका भारतपर आक्रमण करनेका अनुभव करें तो आनेवाले अरबसे जलमार्गद्वारा समुद्रके किनारेर सरलतासे आकर इस स्थानसे भारतको जीत सक्ते हैं । इन्हीं विदेशियोंका भारतपर आक्रमण दूर करनेके लिये हमको जयसलमेरका अधिकार वड़ाही सुखदाई होगा। कारण कि हम जयसलमेरमें प्रवेश करके उत्तर सिन्धुमें जाकर सहजहींमें अपनी सेनाको वहाँ तक लेजासक्ते हैं और भारतमें आनेवालेके मार्गको पहिलेसे ही भलीभाँति रोकसक्ते है।

अब इतिहासका अनुसरण किया जाता है। दुष्ट सालिमसिंह अंग्रेजोंसे सन्धि होजानेके पीछे अपने शत्रुओंका भय दूरहुआ जान, पहिलेकी समान भयानक मूर्तिसे संहार मूर्ति धारण कर जयसलमेरके राज्यको उजाड़ देनेको तैयार हुआ। कर्नल टाड् लिखते हैं कि "उक्त संधि होजानेसे बड़े लोभी और शठ सालिमसिंहको जैसी शक्ति प्राप्त हुई उस शक्तिको लिखना लेखनीसे बाहेर है"। पाठकगण इस लेखसे विस्मित हुए होंगे कि सालिमसिंहने इस समय संहारमूर्तिसे देशकी दशा कैसी करदी। कर्नल टाड्ने लिखा है " अन्य राज्योंसे आक्रमणका भय दूर होजानेसे महता सालिमसिंह क्षणमात्रको भी यह नही समझा कि मैंने अपने स्वामी और सामन्तोंके रुधिरसे स्नान किया है, अतएव कल्पित ही अनुताप करके सर्व साधारणमें अपना विश्वास जमा लूं। वनिये किसान और भ्रमणकारी सालिमसिंहसे इतने क्रुद्ध रहते थे कि सालिमको कसमका मूल्य मरुभूमिके रेतेके कणसे भी हीन समझते थे।

इतिहासवेत्ता टाड् साहबने लिखा है " संधिपत्रके लिखजानेके उपरान्त कुछ समयतक सालिमसिंहने प्रकाशमे राज्यके सभी प्रबंधोमे मन लगाया, किन्तु उसका यह भाव अधिक दिनलों नहीं रहा। जिस महापापके कीचडमें उसका हृदय सना हुआ था, वही पाप उसको सबके पाससे घृणा उपजाता था अथवा यों समझना चाहिये कि वह अपने स्वाभाविक महा पाप करनेके सिवाय जीवनको कष्टदायक जान जयसलमेरम बडा उधम मचाने लगा। कुछ दिनोंतक उसने शान्ति इस कारणसे धारण की थी कि जयसलमेरके रावलके साथ जो अंगरेजोंकी संधि हुई है, उस संधिपत्रमें १ धारा और नियत कराना उसका अभीष्ट था कि मेरे उत्तराधिकारीके सिवाय जयसलमेरके प्रधानमंत्री पदपर और कोई न बैठने पावै। उसने अपने मनमें सोचा कि मेरा ही वंश जयसलमेरको लूटता रहै इसीसे यह प्रस्ताव किया।

किन्तु जब उसने देखा कि बृटिश गवर्नमेण्टने उसकी यह अभिलाषा पूरी नहीं की तब अपने पिशाच वंशको मंत्रीपदपर न होता हुआ देखकर उसने अपनी संहारमूर्तिसे राज्यमे असहनीय और अकथनीय अत्याचारोंकी भयानक अग्नि प्रज्वलित करदी। बृटिश गवर्नमेण्टके दूतने सालिमसिंहके उस हृदयभेदी अत्याचारोको देख १८२१ ई १७ दिसम्बरको गवर्नमेण्टके पास सालिमसिंहके उक्त अत्याचारके संवादोको भेजकर लिखा कि विदित होता है कि जयसलमेरके रावलके साथ जो हमारा संधिपत्र लिखा गयाथा, वह अबहमारा सन्मान रखनेमे हानि करते हैं, कारण कि हमारे आश्रयमे रहकर प्रजा इतने

---

(१) सालिमसिंहके सम्बन्धमें बाबू लोकनाथघोषने अपनी बनाई पुस्तकमें लिखा है।

Salim was as unscrupulous as he was unprincepled. He put to death nearly all the relatives of the Rawal, interrupted the trade of the country by heavy extortions from the merchants depopulated the city of Jaisalmir by the cruelty. The Moden History of Indian cheeps Rajas Ac. Part I.

अत्याचार और कष्टोको सहै, यह घोर कलङ्कका विषय है "। महता सालिमसिहसे उन अत्याचारोके वारेमे कहनेसे कुछ नही हुआ। वह अत्याचारोसे दुःखी मनुष्योंको झूंठा कहकर अपने कहे हुए अपराधोंको छिपाने लगा है। वह चतुराईसे कहता है कि न्याय विचार और दया प्रकाशकी मैं सदासे इच्छा रखता आया हूँ। इसके पीछे उसने दूने उत्साहसे निरपराधियोको दूना दंड और प्रजाका सर्वस्वहरण करना आरम्भ किया है। महता सालिमसिहके इस लोमहर्षण अत्याचारसे समस्त रजवाड़ेके मनुष्य दुःखी हो रहे है। पलीवाल नामक धनवान्से मूलधनकी सहायता लेकर समस्त वनियें भारतमे वाणिज्य करते है। किन्तु महताके अत्याचारोसे इस धनवान् परिवारके प्रायः पाँच हजार मनुष्य जन्मभूमिको छोड़कर निर्वासित दशामें दूसरे स्थानपर वसते है। महाजन लोगोने भी जो दूरदेशोंमे जाकर धन उत्पन्न किया है वह उसको लेकर प्राणोंके भयसे जयसलमेरमें नही आसक्ते है। किन्तु उद्दंड सालिमसिहने उनके परिवारोको जामिन स्वरूपमे बाँध रक्खा है जयसलमेर राज्यकी खेती एक साथ जाती रही है। जामिनके अभावसे देशी और विदेशी व्यवसाय भी उठगया है। जवरदस्ती प्रजाका धन छीनकर राज्यकर लिया जाता है "।

कर्नल टाड्ने जिस समयकी वात लिखी है, उस समय वह रजवाड़ेमे विद्यमान थे, अतएव सालिमसिंहके उस अकथनीय अत्याचारोंके वह प्रत्यक्ष दर्शक थे। उन्होंने लिखा है, "प्रकाशमें मंत्री सालिमसिंहने दो करोड़की सम्पत्ति इकट्ठी करली है। यह धन सव भारतवर्षमें फैला हुआ था, महताने केवल जवर्दस्ती वनिये और महाजनोसे छीन कर इसको वारहवर्षके वीचमे इकट्ठा करलिया है। यह भी प्रसिद्ध है कि जयसलमेरके राजाके समस्त आभूषण जो हीरे जवाहरके वने वहुमूल्य थे, वह भी उसने अपनी चतुरतासे निकालकर दूसरे स्थानपर छिपा रक्खे है। वनियें महाजन अपने कुटुम्बको जयसलमेरसे दूसरे स्थानपर लेजानेके लिये प्रतिदिन वृटिश गवर्नमेण्टके पास परवानगीके लिये प्रार्थना करते हैं। किन्तु नरपिशाच सालिमसिहके भयसे कोई सहसा साहसपूर्वक अपने परिवारको दूसरे स्थानपर लेजानेका साहस नहीं करता। यद्यपि सालिमसिह वृटिश एजेन्टके प्रस्तावसे परवाना देते है किन्तु मार्गमे उन जयसलमेर छोड़नेवालोंको मारकर लुटवा लेते हैं "।

टाड् साहवने फिर लिखा है कि—" वृटिश गवर्नमेण्टके साथ रजवाड़ेके राजोसे निर्धारित संधिपत्रका मूल उद्देश यह है कि समस्त राजपूतानेमे परस्पर विवाद उपस्थित होजानेके समय वृटिश गवर्नमेण्ट मध्यस्थता करेगी; इस समय जयसलमेरकी सीमामे एक विवाद उपस्थित है जिस विवादकी मीमांसाके लिये वृटिश गवर्नमेण्ट प्रथम धाराका प्रयोग करेगी, हम यहाँपर उस विवादका सविस्तार वृत्तान्त लिखकर जयसलमेरके इतिहासको समाप्त करना चाहते हैं। वाल्प्रदेशके मालदेवतोका भयंकर विवाद उपस्थित हुआ है, और उस विवादसे दोनों राज्योंमे महा संग्राम होने और

(१) उर्दू तर्जुमेमें २० वर्ष।

राठोरोसे इस प्रकारके आक्रमणका भय उपस्थित होगया है कि जिसमें वृटिश गवर्नमेण्ट को मध्यस्थ बनना ही पड़ेगा। मालदेवोत जो बीकानेरियोकी विषदृष्टिमें गिरे हैं मन्त्री सालिमसिंह ही उसका मूल कारण है यह बात सहजमे नहीं जानी जासकी सालिमसिंहने केवल मालदेवोतोके जडसे नष्ट करनेके लिये ही उनसे कपटकी मित्रता कर अपनी इच्छा पूरी करी है। सालिमसिंहने क्यो इस चतुरतासे काम किया उसका विवरण नीचे लिखा जाता है"।

मालदेवोत, केलन, बरसङ्ग पोहर और तेजमालोतगण सभी भट्टीजातिवाले है, किन्तु एकमात्र लूटमार करनेसे विदौ अकुज्जाक और पिंडारियोकी समान यह भी दस्यु नामसे प्रसिद्ध होगये हैं। पहिले कहेहुए मनुष्यगण भी रावमालदेवसे उत्पन्न और बारूप्रदेश के अट्ठारह खण्ड गॉवोके अधिवासी हैं। यह बारूप्रदेश खारीपट्टा नाम स्थानके समीप है। बीकानेरके राठौरोने भट्टियोसे उक्त खारीपट्टा प्रदेश छीन लिया है।वास्तवमे भट्टीगण न्याय की दृष्टिसे उक्त राठौरोसे विशेष रूपसे बदला लेनेके अधिकारी हैं कारण कि राठौरों ने भट्टियोके बहुतसे देश बाहुबलसे छीन लिये है। पच्चीस वर्ष पहिल बीकानेरके उक्त राठौरोंने जिस समय अपनेको बलवान् देखा उसी समय बारूपर आक्रमण कर नीच पशुओके समान आचरण करनेमें कसर नहीं की। राठौरोंने बारूप्रदेशपर चढ़कर मनुष्य भक्षी राक्षसोंकी समान बारूप्रदेशके उक्त भट्टी जातीय आबाल वृद्ध वनिता प्रत्येकको मार कर गांव और नगरोको उजाड़ कर समस्त कूपोको बंद कराकर, गांव और नगरके पशुओ और धनको लूट लिया। जिन भट्टियोने अपने सौभाग्यसे राठौरोके हाथसे छुटकारा पाया वह मरुक्षेत्रके एक परम गुप्तस्थानमे जा छिपे थे। क्रमानुसार उनकी वहीपर वंशवृद्धि हुई। पीछे जब जयसलमेरमे वृटिश गवर्नमेण्का अधिकार फैला उसी समय उक्त भट्टीगण फिर साहस करके अपने छोडे हुए और नष्टभ्रष्ट हुए स्थान-पर आकर बसने लगे, पीछे जब यह प्रसिद्ध हुआ कि प्रधान मंत्री सालिमसिंह इसमे भट्टियोपर कुपित हुए और उन्होने देखा है कि उस बारूप्रदेशमे मालदेवोत फिरसे बसते हैं तो मालदेवोतोके प्रधान शत्रु बीकानेरके राठौरोंकी समान वह जल उठे और मालदेवोतोको फिर ध्वंस करनेकी अभिलापासे राठौरोंको बुलाया। मालदेवोत-गण दस्युवृत्ति (चोरी) से अपना निर्वाह करते है, अतएव उनको दमन करना दूषित नहीं है, सालिमसिंह सहजमें ही यह कह सक्ते थे किन्तु मूलबात तो यह है कि सालिम-सिंह उस विचारसे मालदेवोतोका नाश नही करता था। पाठकोको पहिले ही ज्ञात होचुका है कि नीच सालिमसिंहने जिस समय संहारमूर्तिसे विषके द्वारा और तलवारसे जयसलमेरके बहुतसे सामन्तोंको मारा है, उस समय वह बारूप्रदेशके सामन्तको भी उक्त हत्याकांडसे मार चुका था। बारूके सामन्त राजकुमार रायसिंहके बड़े अनुगत और रायसिंहकी शक्तिके बढ़ानेमे सहायक थे, उसीसे सालिमसिंहने उनके जीवनरूपी दीपकको बुझादिया। सालिमसिंहने केवल उक्त सामन्तको मारकर ही अपने कोपको दूर नहीं किया। वरन् बारूप्रदेशके प्रत्येक रहनेवालोको भी वह शत्रुकी दृष्टिसे देखने लगा। किस भांतिसे वह बारूप्रदेशको एक साथ उजाड़ दे केवल यही चिन्ता उसके

हृदयमें रातदिन उठती रहती थी । उसकी वह इच्छा पूरी होनेका यह एक सुयोग उपस्थित होगया । वारूके मालदेवोतोंने गुप्तरीतिसे वृटिश गवर्नमेण्टका एक उपकार किया था, वह उपकार ही सालिमसिंहको आशा पूरी होनेकी सीढ़ी बन गया । जिस समय पेशवाके साथ वृटिश गवर्नमेण्टका संग्राम हुआ था उस समय पेशवाका एक कर्मचारी ऊंट खरीदने जयसलमेरमे आया था जिस समय वह चारसौ ऊंट खरीद कर जयसलमेरकी सीमाको छोड वीकानेरके राज्यमे पहुँचा, उसी समय उक्त वारूप्रदेके अधिनायकने अपने दलवलसे उक्त कर्मचारी पर छापा मार ऊँट छीन लिये इस बातको देख वीकानेरके स्वामी अपनेको बड़ा अपमानित जान शीघ्र ही प्रवलसेनाको साथ ले उक्त मालदेवोतोको दमन करनेके लिये चले. टाड् साहव लिखते हैं "कि सालिमसिहके गुप्तभावसे वीकानेरके स्वामीको मालदेवोतोको दमन करनेके लिये उत्तेजित न करनेसे वह कभी इतनी शिघ्र सेना लेकर मालदेवोतोंपर चढ़ाई नहीं करते । सालिमसिहने यद्यपि गुप्तरीतिसे वीकानेरके स्वामीको उत्तेजित किया, किन्तु प्रकाशमें वह संग्राम करनेका प्रतिवाद ही करता रहा । सालिमसिंहने विचारा था कि चतुराईसे सहजमे ही वीकानेर के स्वामी मालदेवोतोको नष्ट करदेगें । किन्तु अन्तमे उसके विपरीत फल हुआ । वीका-नेरकी प्रवल सेनाने शीघ्र ही मालदेवोतोके प्रदेश नोखा और वारूमें आकर वहां एक साथ समान भूमि करदी, मालदेवोतोके सामन्तको मारकर ग्रामके सभी कुएँ वन्द करदिये । वह लोग इस प्रकारसे जीतकर अन्तमे वीकमपुरकी ओर शीघ्रतासे चले, और जयसल-मेरकी मुख्य भूमिपर रहनेवाली प्रजाका महा अनिष्ट करने लगे । तव सालिमसिंह चैतन्य हुआ । मालदेवोतोंका नाश होते देख उसने देखा कि अव राज्यका सर्वनाश होना आरम्भ होगया तव अपनी चतुरताको छोड़कर संधिपत्रकी धाराके अनुसार अंग्रेजोंकी शरणमें जाकर उसने सेनाकी सहायता माँगी। वृटिश गवर्नमेण्टने संधिपत्रके नियमानुसार जयसलमेरपर आक्रमण करनेवालेको अपनी सेना भेजकर हटा दिया । वीकानेरके स्वामी अंग्रेजी सेनासे न लड़कर अपनी राजधानीमे लौट आये जिस लिये वह युद्धमें प्रवृत्त हुये थे उसको पूण हुआ देख कर फिर समररूपी आगको प्रज्वलित करना आवश्यक नहीं समझा " ।

जिस समय गजसिंह जयसलमेरके सिंहासन पर विराजमान थे, उस समय सालिमसिंह अपनी इच्छानुसार ही काम करता था, टाड् साहव उसी समयमे रजवाड़ेको छोड़कर विलायतको चले गये । उन्होने नीचे लिखे अनुसार जयसलमेरके राजनैतिक इतिहासके अंशका उपसंहार किया है "प्रधान मंत्री सालिमसिंहकी घटनाओंके लिखनेके सिवाय हम जयसलमेरके रावलके सम्बन्धमे अब कोई बात नही कह सके । गजसिंह जो इस समय जयसलमेरके सिंहासनपर बैठे है, और जिनके बड़े भाइयोंने अपने प्राणोके भयसे भाग कर वीकानेरकी शरण ली है, प्रसिद्ध है कि वह मंत्री सालिम-सिंहके स्वार्थसाधनके पात्र है । वह अब केवल घोड़ेको लेकर चुपचाप निर्जन स्थानमें रहनेसे ही प्रसन्न है । चतुर सालिमसिंहने विचारा कि मेवाड़के राणाकी कन्याके साथ रावल गजसिंहका विवाह होजाय तो मेरा और भी सम्मान बढ़ेगा, साथ ही

लाभ भी अधिक होगा । सालिमसिंहने यह विचार कर मेवाड़के राणाके पास यह प्रस्ताव भेजा, राणाने शीघ्र ही प्रसन्न होकर गजसिंहके पास [1] राजपूतोकी रीतिके अनुसार नारियल भेजा, गजसिंहने उसको सादर ग्रहण किया । मेवाड़पतिने इस समय गजसिंहको जैसे कन्या देनेकी अभिलाषा की उसी प्रकार दूसरी कन्याको बीकानेरके स्वामीको और एक पोतीको कृष्णगढ़के. राजाको देनेका उद्योग किया; महा रावल गजसिंह अपनी सेना और सामन्तोके साथ जिस समय उदयपुरमे पहुँचे, बीकानेर और कृष्णगढ़के दोनो राठौर स्वामी भी उसी समयमें विवाहके निमित्त वहां गये । इस विवाहोत्सवपर सीशोदियोकी राजधानीमें महा महोत्सव हुआ । चार राजवशोमें इस समय फिर सम्मिलन हुआ । गजसिंह अपनी रानीके साथ परम सुखसे रहने लगे । उदयपुरकी राजकुमारीके एक पुत्र हुआ । सो रानावतजी (रानी) के ऊपर सबोंकी भक्ति बढ़ गई । सालिमसिंहको बड़ा सम्मान मिला और सब प्रजाने भी आनन्द मनाया, जिससे बड़े घरानेकी शोभा प्रकाश होती है, वह सहजमें ही हमारे पाठक जान सकते हैं । पीछे रानी और राजा दोनो ही सर्वसाधारण प्रजाको प्रेमभावसे चलाने लगे ।

सातवाँ अध्याय ७.

सूचना-जातिकी स्वाधीन और पराधीन अवस्थाका भिन्न दृश्य-देशी राजाओंकी वर्तमान अवस्था-सालिमसिंहके अत्याचार-दूसरे राजाओंके देश लेनेमें सालिमसिंहकी अभिलाषा करना-उसमें हाथ डालनेसे बृटिश गवर्नमेण्टका रोकना-सालिमसिंहके मारनेकी चेष्टा-सालिमसिंहका माराजाना-सालिमसिंहके दोनो बेटोंको मंत्रीपद मिलना-सालिमसिंहके बेटेसे अपनी सौतेली माता और उसके उपपतिका माराजाना-रावल गजसिंहसे उसको जेलखाना होना-उसके पक्षवालोका असतोष होना-छोड़नेमें गजसिंहकी असम्मति-इस सम्बन्धमें हाथ डालनेसे गवर्नमेण्टकी अनिच्छा-गजसिंहका अपने हाथमें राज्यके भारको लेना-राज्यमें शान्ति स्थापन-बृटिश गवर्नमेण्टके साथ परम मित्रता-बृटिश गवर्नमेण्टकी सहायता करना-बृटिश गवर्नमेण्टका रावल गजसिंहको धन्यवाद देना-पंजाबके युद्धमें गजसिंहसे गवर्नमेण्टको सहायता मिलना-गवर्नमेण्टका रावल गजसिंहको तीन किले देना-गजसिंहकी मृत्यु-रणजीतसिंहका सिंहासनपर बैठना-गवर्नमेण्टकी ओरसे उनको वंशके क्रमसे दत्तक पुत्रके लेनेमें सनद मिलना-रणजीतसिंहकी मृत्यु-जयसलमेरके वर्तमान राजा महा रावल बैरीशालका शासन विवरण ।

---

(१) टाड साहबने नोटमे लिखा है, 'मरुक्षेत्रकी इस रानीसे मुझे कई एक पत्र प्राप्त हुए जिनसे जाना गया कि सालिमसिंहकी समान मनुष्य जब उनके निजके और उनके स्वामीके भाग्य निर्द्धारक पदपर विराजमान है, तब वह उन्हें अपने पिता और मित्रोंको आश्रितरूपमें रहना पड़ता है ।

इतिहासलेखक टाड् साहब जहांतक जयसलमेरका इतिहास विस्तारपूर्वक अपने ग्रन्थमे लिख गये हैं, हमने पिछले अध्यायतक उसको उसी प्रकारसे लिखा है। वर्तमान अध्यायमें हम परिवर्ती समयसे वर्तमान समयतकके इतिहासका सारांश यहांपर प्रकाश करते है।

जातिकी स्वाधीन अवस्थामे राजा, सामन्तगण और सम्पूर्ण प्रजा जैसे अटल राजनैतिक व्यापारमे लगी रहती है, उस समयमे जिस भांतिसे राजनैतिक भिन्न २ घटनाएं उपस्थित होजाती हैं, जाति जिस प्रकारसे राजनैतिक आन्दोलनमें सजीविता दिखानेमें शान्त नहीं होती है, जातिकी पराधीन अवस्थामें उसी भांतिसे वह सब घटनाएं विपरीत भावसे दृष्टि आने लगती है। पराधीन जाति वा नाममात्रकी स्वाधीन जातिकी जीवनशक्ति एकसाथ क्षीण होजाती है। आलस्य, विलासिता, स्वजाति-विद्वेष, अनैक्यता और अनुद्यम आकर जातिको एक साथ निर्बल बना देते है। अतएव जातिकी उस पराधीन वा नाममात्रकी स्वाधीन अवस्थामे किसी प्रकारकी विशेष राजनैतिक घटना प्रायः दृष्टि नहीं आती। तब राजासे जातिके नीचे दरजेके किसान-तक केवल आहार विहारमे ही प्रसन्न रहकर दिन बिता देते है। तब मनुष्यत्व लोप होकर किसी विषयमें ही किसी प्रकार उद्यम, वा किसी प्रकारकी सजीविता उस जातिमे नहीं दृष्टि आती। जाति तब जैसे अनन्त निद्रामें सो रही है, उस पराधीन वा नाममात्र की स्वाधीन जाति उस समय स्वप्नमें भी अपनी जातिका पहिला गौरव स्मरण करके बाप दादोंकी समान जन्मभूमिके निकट, स्वजातिके निकट, समाजके निकट, स्वधर्मके निकट अपने २ दायके पालन करनेमें भी आगे नहीं बढ़ सक्ते। आर्य्यक्षेत्र भारतके वर्तमान देशी राजाओंके राज्यमे जो लोग दृष्टि उठाकर देखते है, वह लोग इस बातको अवश्य ही स्वीकार करेंगे कि वह सब देशी राजा, वह सब बड़े पराक्रमी सामन्त, वह सब असीम साहसवाली प्रजा इस समय सोई हुई है। पचास वर्ष पहिले प्रत्येक देशी राज्य सजीवता दिखलाता था, प्रत्येक प्रान्तमे राजनैतिक घटनामे प्रत्येक राजा और सामन्त गण उन्मत्त थे, किन्तु आज वे आनन्दकी निद्रामे शयन कर रहे है।

विधिके विधानसे ही छोटा द्वीप इंगलैंड आज भारतके भाग्यका निर्द्धारक है। विधिके विधानसे ही अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ संधि करके देशी राजा आनन्द भोगते है। इस समय देशी राजाओंके राज्यमे अब किसी प्रकारकी राजनैतिक घटना नहीं होती है। अतएव टाड् साहब जो रजवाड़ेके राज्योंकी पूर्ण स्वाधीन और आधी स्वाधीन दशाको लिख गये हैं, वर्तमानमें निद्रित हुए उन राजपूत राज्यके राजनैतिक घटनाहीन समयका इतिहास वर्णन करते हुए उस प्रकार समुत्तेजक और कीर्तिमूलक दृश्य पाठकोंके सामने उपस्थित नहीं करसक्ते।

दुष्ट सालिमसिंहने जिस समय जयसलमेरके सिंहासनपर महा रावल गजसिंहको बैठाकर अपनी इच्छानुसार सब काम कर लिये थे, टाड् साहब उस समयमे ही अपने प्यारे क्षेत्र रजवाड़ेको छोड़कर अपनी जन्मभूमि विलायतको चलेगये। अतएव

जयसलमेरका इतिहास गजसिंहके सिंहासनपर बैठते ही समाप्त होगया है। इस समय परिवर्ती इतिसाहसके पीछे चलना पडता है।

जिस समयमे महा रावल गजसिंहने अपने शिरपर राजमुकुटको धारण किया उस समय वह व्यवहार शून्य थे। नीच सालिमसिंह गजसिंहके राजतिलक हो जानेके पीछे चार वर्षतक और जिया, किन्तु उन चार वर्षोंमें उसके अत्याचार, क्लेश और भयानक स्वार्थने जयसलमेरको एक साथ ध्वंस कर दिया। उसने श्रेष्ठ भट्टीसामन्तोको और धनवान् वनियें महाजानोंको वडे कष्ट देकर लूट लिया,समस्त प्रजाको अपनी इच्छानुसार चलाया। कर्नल म्यालिसन अपने ग्रन्थमें लिखते हैं कि "वह सालिम दूसरे राजाओंकी राजधानीको अपने स्वामीके नामसे क्रमानुसार दवाया करता,यही नहीं वह उन सव देशोके लिये कलकत्ते जानेका भय भी दिखाता था। रावलको स्पष्ट भावसे समझाता कि और२ राजाओंके साथ जैसे संधि हुई है उसमे उन राजाओके अधिकारी देशोंपर संधिपत्रकी समान हाथ डालना सव प्रकारसे असंभव है।" दुष्ट*सालिमसिंह इस प्रकारसे जयसलमेरको भस्म करके अन्तमें अपने पापके भारसे दु.खी हुआ। यह वात प्रसिद्ध है कि उस नर पिशाचके हाथसे राज्यकी रक्षा करनेके लिये रावल गजसिंहने१८२४ई. मे उसके मारनेके लिये एक हत्यारेको नियुक्त किया। सालिमसिंह उस समय इतना डरा कि उसने अपने समस्त परिवारको अपनी जागीरमे भेज दिया। उसी वर्षमे दुरात्मा सालिमके पापी प्राण कलुषित शरीरको छोड़ गये। किन्तु कर्नल म्यालिसन लिखते हैं कि "सालिमसिंहने इसी विश्वाससे प्राण त्यागे कि मंत्रीके पदपर सदा मेरे वंशधर ही रहेगे।" सालिमसिंहके चरित्रके सम्वन्धमे यहाँ पर हम और अधिक नहीं कहना चाहते। यहाँ इतना ही कहना वहुत है कि पवित्र हरिवंशमे दुष्ट दस्युरूपसे सालिमसिंह प्रचंड प्रभुतासे सदाके लिये घृणित लीला करगया है।

जिसमें जयसलमेरका प्रधान मंत्रीपद अपने वड़े वेटेके पीछे उसके वंशधरोको ही मिले अपनी जीवित अवस्थामें ही सालिमसिंहने उसके लिये वडी चेष्टा की थी। वृटिश गवर्नमेण्टने यद्यपि उसके प्रस्तावके समान प्रतिज्ञा नहीं की किन्तु पापात्मा सालिमसिंहने गजसिंह और सव सामन्तोंसे जवर्दस्ती स्वीकार करालिया कि उसके वंशधरोंके सिवाय कोई भी प्रधान मंत्रीका पद न लेसकें, विशेष कर जो जयसलमेरके सव सामन्त और कर्मचारी थे वह सभी सालिमके भक्त थे, सालिमकी प्रत्येक आज्ञाका. पालन करनेसे ही वह भक्त हुए थे। उन्होने अपने स्वार्थके लिये सालिमके वंशधरोके हाथमे ही प्रधानमंत्री पद दिलानेका यत्न किया था। सालिमसिंहके मरनेके पीछे उनके अनुयायी नौकरोंने ऐसा षड्यन्त्र रचा कि जिसमे गजसिंहको सालिमके वड़े वेटेको ही प्रधान मंत्री वनाना पड़ा। किन्तु उस समयमे यह भी निश्चय हुआ कि उक्त वड़े वेटेके अतिरिक्त सालिमकी दूसरी स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न छोटे वेटेको भी मंत्री पद मिलै। सालिमका वड़ा वेटा पहिलेहीसे उक्त प्रस्तावके समान अपने सौतेले भाईके साथ

*Mallesan's Native states & India. Part I. chap XIV. Page 123.

मंत्रिका काम करने लगा। सालिमसिंह जैसा क्रूर था उसका बड़ा बेटा भी उसी भाँतिसे हुआ। कर्नल* म्यालिसन लिखते हैं, बडे बेटेने उक्त सौतेली माताको एक नौकरके साथ प्रेम करते देखकर अथवा संदेहहीसे अपनी कुलटा सौतेली माताको उसके उपपतिके साथ (दोनोको ही) मार डाला। इस+कारणसे महा रावल गजसिंहने जो अब व्यवहारमे कुशल होगये थे उसी समय सालिमके बड़े बेटेको कैदकर जेलमे भेजदिया। इस भाँति कैद होजानेसे सालिमके बेटेको ओर जो कर्मचारी थे उन्होने महा रावल गजसिंहका यह आचरण देखकर बड़ा उपद्रव मचादिया, किन्तु महा रावल गजसिंहने किसी प्रकारसे उसको जेलसे नहीं छोड़ा और न उसे मंत्रीके पदपर बैठानेको ही राजी हुए, वरन् जो अपनेसे अप्रसन्न सामन्त और कर्मचारी थे उनको बृटिश गवर्नमेण्टके पास भेज दिया, बृटिश गवर्नमेण्टने महा रावलकी आज्ञाको बहाल रक्खा। बृटिश गवर्नमेण्टके ऐसा करनेसे अप्रसन्न सामन्त गण पहिलेहीसे उपद्रवोंको छोड़कर चुप होगये।

जयसलमेरके कालस्वरूप महता स्वरूपसिंहके वंशधरोंके हाथसे मंत्रीपदको निकालकर इस समय व्यवहारमे दक्ष महारावल गजसिंहने अपने हाथमें राज्यके शासनका भार लिया, गजसिंहके राज्यशासनके भारको लेते ही जयसलमेरमें शान्ति स्थापित होगई। अत्याचार पीड़ा और असंतोषके स्थानमे शान्ति, न्याय विचार, और संतोष दिखाई देनेलगे, जयसलमेरकी सब प्रजा बहुत दिनोसे कष्ट भोग रही थी. सभी श्रेणीके मनुष्य धन और प्राणोको लेकर भयभीत रहते थे, इस समय स्वयं राजा गजसिंह राजदंडको अपने हाथमे लेकर पुत्र भावसे प्रजाका पालन और प्रजामें शान्ति स्थापन करने लगे। महारावल गजसिंह केवल राज्यकी उन्नति ही नही करते थे वरन् उन्होने अच्छी तरहसे जान लिया था कि चिरकालसे अराजकताके कारण स्वरूपसिंह और सालिमसिंहके स्वेच्छाचारीपनसे राज्य एकसाथ ध्वंस होगया है, समस्त प्रजाका धन हर लिया गया है, प्रजाकी जातीय जीवन शक्ति क्षीण होगई है, राज्यका बल जाता रहा है, अतएव समयकी गति देखकर अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ मित्रभाव रखना चाहिये, और जबतक वह जिये तबतक उन्होने मित्रताको भली भाँतिसे निभाया।

---

* This man possessed all the vices of his father. Baboo Loke Nath Ghose's Modern History of the Indian Cheefs, Rajas, Zimidars Ex. Part I. chep XIV.

+ बाबू लोकनाथघोषने अपने ग्रन्थमें उक्त घटनाका उल्लेख नहीं किया किन्तु उन्होंने लिखा है, कि—

He murdered his step brother who was associated with him in the ministry.

इसका अर्थ यह है कि उसका जो सौतेला भाई उसके साथ मंत्रीपद पर नियुक्त था उसने उसको मार डाला

सन्. १८३८-१८३९ ईसवीमे पजाबके युद्धमे बृटिश सेनाके नियुक्त होनेसे जयसलमेरके स्वामी महा रावल गजसिंहने ऊँट आदिकोंकी सहायतासे बृटिश गवर्नमेण्टका इतना उपकार किया, जिससे उक्त गवर्नमेण्टने महा रावल गजसिंहको अपना सच्चा मित्र जानकर वडा धन्यवाद दिया।

कर्नेलम्यालिसन लिखते हैं कि "सन् १८४४ ईस्वीमे सिंधुके जीतनेके पीछे शाहगढ़ घड़सिया और कोटरा नामक तीन किले जो बहुत दिनो पहिले जयसलमेरके राज्यसे दूसरे राजाओने छीन लिये थे वह सब फिर जयसलमेरके स्वामीको लौटा दिये। बृटिश गवर्नमेण्टकी आज्ञानुसार मीरअली मुरादने यह तीनों किले महारावल गजसिंहको दे दिये, किन्तु उस समय उसके सम्बन्धमें बृटिश गवर्नमेण्टने महारावलको कोई सनद* नहीं दी थी"।

महारावल गजसिंह जिस प्रकारसे बृटिश गवर्नमेण्टके प्रियपात्र हुए थे, उसी भाँतिसे शासनके गुणसे प्रजाके भी हृदयपर उन्होंने अपना अधिकार करलिया था, किन्तु बड़े दुःखका विषय यही हुआ कि उन्होने अधिक दिन राज्यके सुखको नहीं भोगा। सन् १८४६ ईसवीमें महारावल गजसिंहने मायामय शरीरको छोड़ परलोकवास किया, कर्नेल टाड् लिखते हैं कि गजसिंहके औरससे मेवाड़की राजकुमारीने एक पुत्र उत्पन्न किया, किन्तु परिवर्ती इतिहास लेखक लिखते हैं कि गजसिंह अपुत्रावस्थामें ही परलोकवासी हुए, इससे प्रत्यक्ष जान पड़ता है कि राणाकी कुमारीके जो पुत्र हुआ था वह बालकपनमें ही मरगया था।

महारावल गजसिंहके अपुत्रावस्थामे प्राण त्यागनेसे उनकी विधवा रानीने गजसिंहके भाईके बेटे रणजीतसिंहको गोद ले लिया। रणजीतसिंहके सिंहासनपर बैठनेसे बडी सावधानीके साथ राज्यशासन हुआ। इनके शासन समयमे भारतमें विख्यात सिपाही विद्रोह हुआ। रणजीतसिंहने उस विद्रोहके समयमे गवर्नमेण्टकी सहायता करनेमें किसी प्रकारकी त्रुटि नहीं की। सन् १८६२ ईसवीमे जिस समय भारतके देशी राजाओंको भारत गवर्नमेण्टने दत्तकपुत्र (पुत्रगोद) लेनेकी सनदें दीं. महारावल रणजीतसिंहको भी उसी समयमे उसी प्रकार एक सनदपत्र प्राप्त हुआ। रणजीतसिंहके शासन समयमें राजधानीमे किसी प्रकारकी विशेष राजनैतिक घटना नहीं हुई। सन् १८६४ ईसवीके जून महीनेमे रणजीतसिंह इस जगत्को छोड़कर परलोक सिधारे।

गजसिंहकी समान रणजीतसिंह भी अपुत्रावस्थामें मनुष्यलीलाको समाप्त करगये थे। अतएव रणजीतसिंहकी रानीने अपने देवर अर्थात् रणजीतसिंहके छोटे भाई बैरीशालको गोद लिया। उस समय महारावल बैरीशाल पंद्रह वर्षके थे।

रणजीतसिंहकी रानीने इनको गोद तो लेलिया किन्तु महारावल बैरीशालने किसी प्रकार भी उस समय सिंहासनपर बैठना नहीं चाहा सबोंके कहने सुननेसे इन्होने यह कहकर आपत्ति दिखाई कि "मुझे विश्वास है कि जयसलमेरका स्वामी

* Malleson's Native states of India. Part I. Chap. XIV P. 124.

हो कर मैं सुखी नही रहसकता "। महारावल वैरीशालने क्यों ऐसा कहा, पाठक सरलतासे उसका अनुमान कर सक्ते हैं। गजसिंह और रणजीतसिंह बहुत थोड़े दिनोमे ही सिंहासन छोड़कर चले गये थे अतएव हमको जानपड़ता है कि हिन्दूसमाजके प्रचलित संस्कारके समान यह ही विचारा हो कि राजा होनेसे अधिक दिन नही जीते हैं।महारावल वैरीशालके इस प्रकार सिंहासनपर न बैठनेसे सभी अप्रसन्न हुए।अंतमें बृटिश गवर्नमेण्टसे पूँछनेपर उसने कहा कि " इस समय इस प्रश्नको नहीं उठाना चाहिये कारण कि महारावल इस समय व्यवहारशून्य और बालक हैं, जब वह बड़े होंगे तब अवश्य ही उनकी बुद्धि बदल जायगी "। गवर्नमेण्टके इस प्रस्तावके अनुसार वह प्रश्न रुक गया और महारावल वैरीशालके पिता केसरीसिंह बेटेके नामसे राज्यशासन करने लगे।

महारावल वैरीशालकी बुद्धि पलटनेमें अधिक विलम्ब नहीं लगा। दूसरे ही वर्षमें अर्थात् १८६५ ईसवी अक्टूबरके महीनेमें उन्होंने कहदिया कि " मै सिंहासन पर बैठनेको तैयार हूँ "। इस बातको सुन राजधानीमें महा आनन्द होने लगा। बृटिश गवर्नमेण्टके पोलेटिकल एजेण्टने बड़े समारोहके साथ महारावल वैरीशालका राजतिलक करादिया। जयसलमेरके वर्त्तमान राजा श्रीकृष्णके वंशावतंस श्रीमन्महारावल वैरीशालसिंहबहादुर बड़ी बुद्धिमानी और धीरजके साथ राज्यका शासन करते है। राज्यके चारोंओर इस समय शान्तिमयी मूर्ति अविश्रान्तभावसे नृत्य कर रही है। स्वार्थपरायणता स्वजातिविद्वेष, असंतोष और अत्याचारोंकी पीड़ा इस समय एक साथ अदृश्य होगई है।

आठवाँ अध्याय ८.

जयसलमेरका भौगोलिक विवरण--परिमाण--ग्राम नगर संख्या--लवणहृद--कानोदसर--मृत्तिका--उद्भिजश्रेणी--कृषि--शिल्पवाणिज्य--वाणिज्यद्रव्य--राजकर--भूमिकर--एवं वाणिज्य शुल्क--किसानोसे इकट्ठा हुआ भूमिकर--धुँआकर--थाली वा आहार्य्यकर--दंडकर मंत्री सालिमसिंहका जबर्दस्ती सम्पत्ति संग्रह--राज्यका अपव्यय--अधिवासीश्रेणी भट्टिजाति, उसकी आकृति और वेश--अफीम और ताम्रकूटसे भट्टीगणोंके पूर्वका अनुराग--पालीवाल जाति--उसका इतिहास--उसकी संख्या--धनपरिमाण--कार्य--विचित्र पूजा पद्धति--पोकर्णा ब्राह्मण जाति--उपाधिसंख्या--जाटजाति--जयसलमेरके किलेकी अटारियां--आधुनिक विवरण।

टाड् साहब जयसलमेर राज्यके राजनैतिक इतिहासके वर्णन करनेके पीछे वहाँकी भौगोलिक, प्राकृतिक, सामाजिक और अन्यान्य जानने योग्य बाते विस्तारसे लिख गये हैं। हम वर्तमान समयके उन समस्त विवरणोसे पहिले टाड् साहबकी युक्तियां अनुवादित करना चाहते है। इतिहासके जाननेवाले टाड् साहब लिखते हैं " जयसलमेरकी पृथ्वी असरल है, इसका परिमाण अनुमानसे पंद्रह हजार वर्ग मील

है। इसके बड़े प्रदेशमे नगर, ग्राम, और छोटे २ कसबोंकी संख्या दोसौ पचाससे अधिक न होगी, कोई २ अनुमान करते हैं इसकी संख्या तीनसौ होगी, और कोई २ कहते हैं कि दोसौ होगी, पर पिछली वात सत्य जानपड़ती है। १८१५ ईस्वीमे जयसलमेरकी ठीक जनसंख्या कितनी थी, पाठकोके जाननेके लिये, उसकी हम आगे एक विश्वासजनक सूची*देते हैं।

टाड् साहबने लिखा है "ग्रेट् ब्रिटेनके दूसरे श्रेणीके एक नगरमें जितने मनुष्य वसते हैं इस सूचीके अनुसार इस पन्द्रह वर्गमीलमे राज्यके मनुष्योंकी संख्या उससे बहुत कम है। इस राज्यके आधे अंशकी वरावर तो भूमि राजधानीमे है; उस राजधानीकी आधी भूमिको छोड़ देनेसे हम देखते हैं कि प्रत्येक वर्गमें दोसे लेकर तीन मनुष्यतक वसते हैं"।

कर्नल टाड् लिखते हैं कि जयसलमेरकी पृथ्वीका परिमाण पन्द्रह हजार वर्गमील है। कर्नलम्यालिसनने सन् १८७५ईस्वीमे लिखा*है कि जयसलमेरकी पृथ्वीका परिमाण १२२५२ वर्गमील है। कर्नल + टाड्के कथनसे जानाजाता है कि सन् १८१५ ईस्वीमे जयसलमेरकी मनुष्य संख्या ७४४०० थी, मि० आचिसन् सन् १८६४ ईस्वीमे संख्या १३७०० और वावू लोकनाथ घोष सन् १८७९ ईस्वीमे ७५००० लिखते है। चिरकालसे शान्तिपूर्वक रहनेके पीछे भारतवर्षके अन्य २ देशी राज्योंकी जैसी मनुष्य संख्या वढ़ी है, उसके साथ मिलान करनेसे जयसलमेरकी जनसंख्या न वढ़कर समान भावसे ही है, इसका सहजमें ज्ञान होसक्ता है।

जयसलमेरके प्राकृतिक अवस्थाके सम्बन्धमें इतिहास जाननेवाले लिखते हैं, जयसलमेरका अधिक भाग थल वा रोही अर्थात् ऊजड़ वन्य प्रदेश है। जोधपुरके सीमास्तंभ लोवारसे सिन्धुप्रदेशके सीमाके पिछाड़ी खाड़ातक पृथ्वी केवल रेतीली और जल रहित है, इसके वीच २ मे वालुकास्तूप विराजमान है, और कोई २ अंश छोटे २ जंगलोसे पूर्ण है। लोवारसे खाडातक यह जो समान्तराल अंश है, इसीने जयसलमेर राज्यको दो भागोमें वाँटा है, और स्वभावसे ही यह अंश अनुर्वर है, और यहाँ कुछ उपजता भी नहीं है। उत्तरांश भी ऊजड़ प्रदेश है, दक्षिणांश मगरा और रोई नामक छोटे २ पहाडोंसे युक्त है। यह छोटी २ पर्वतमाला इस राज्यके भूतत्वकी विशेष दर्शनीय है। कच्छभुज प्रदेशसे पर्वतश्रेणी निककलर देशके प्राकृति अवस्थानुसार कहीं

---

(१) सन् १८९६ की छपी हिन्ददेशीय राजावली पुस्तकके मनुसार १६४४७ वर्ग मील भूमि लिखी है। सन् १८८१की जनसंख्यामें १०८१४३मनुष्य पाये गये और राज्यकी आमदनी १५८०००थी उत्तरमें महावलपुर राज्य, पूर्वमें बीकानेर और मारवाड़, जोधपुर दक्षिणमें मारवाड़ और पश्चिममें सिंध, २६ अंश ५ कला उत्तर अक्षांशसे लेकर २८ अंश २५ कला उत्तर अक्षांशतक ६९ अंश ३० कला पूर्व देशान्तरसे लेकर ७२ अंश ५० कला पूर्व देशान्तरतक जैसलमेर राज्य है।

* Mallessn's Native states of India Part I.

\+ Ghose's Indian cheefs Rajas U. Part I.

❀ जन संख्याकी सूची ।

नगरोंके नाम	खालसा और सामंत शासित	घरोंकी संख्या	मनुष्य संख्या	मन्तव्य ।
जयसलमेर	राजवानी	७०००	३५०००	
वीकमपुर	मामन्त शासित	५००	२०००	और भी २४ गाँव हैं।
सेहरो	,,	३००	१२००	आजकल वसनेवाली केलण भट्टी जाति।
नचना	,,	८००	१६००	रायोलोद् सामन्त।
कटोरी	,,	३००	१२००	
कावाह	,	३००	१२००	
कोलदर	,,	२००	८००	
नत्तोह	सामन्त शासित	३००	१२००	
जिजिनियाली	,,	३००	१२००	यहांके मालिक जयसलमेरके प्रधान मामन्त।
देवीकोट	मुन्न	२००	८००	
भाप		२००	८००	
बलना	सामन्त शासिन	१५०	६००	
नन्यामोह	,	१००	४००	
वाद	.	२००	८००	माल देवोतगण यहांके वसनेवाले हैं।
चान	.	२००	८००	
लोहरकि	,,	१५०	६००	
नानतके	.	१५०	६००	
लाहनी	,,	३००	१२००	
टांगरी	,,	१५८	६००	
विजोराय	मुन्य	२००	८००	
सुन्दाई	.	२००	८००	
रामगढ	,,	२००	८००	
वरसलपुर	सामन्त शासित	२००	८००	
गिगजसर	,,	१५०	६००	
सब जोड २४		१२३५०	५६८००	
दो हजार पच्चीस गांव २०२५ है, और भी छोटे छोटे मजरे है प्रत्येक ग्राम और कसबोंमे ४ से पचास तक घर है। प्रत्येक घर और गटमे जनसख्या चारके हिसावसे है।			१८०००	
कुलजोड़—			७४४००	

स्थूल और कहीं सूक्ष्म रूपसे दृष्टि आती है। चोहतन नामक स्थानकी समान किसी२ स्थानपर इसने वास्तवमें पर्वत रूपको भी धारण किया है, और फिर अगाड़ी जाकर अपनी छोटी २ पर्वत श्रेणीके ही रूपसे होगये हैं, कि उनको देखकर पर्वत नहीं कह सक्ते। यह छोटी २ पर्वतश्रेणी जितनी जयसलमेरके राज्यमें आई है उन सबने आकर पर्वतमूर्तिको धारण करलिया है। राजधानी जयसलमेरके बीचमें इस शिखरकी उचाई दोसौ पचास फुट है, और यह देखनेमें यथार्थरूपसे पर्वत प्रतीत होता है। भट्टियोंकी राजधानी जयसलमेर पर्वत मूलमें कही जाती है कारण कि उस स्थानसे साढ़ेसात कोश लों बराबर प्रदेशोंमें भिन्न भिन्न रूपसे पर्व्वत शृंगोंकी शाखाए गई हैं।एक जयसलमेरसे साढ़े सत्रह कोस उत्तर पश्चिमके प्रान्तमें रामगढ़ नामक स्थानतक गई है। और एक पूरबसे चलकर जोधपुर राज्यमें होती हुई पोकर्णतक मिल गई है, और फिर वहांसे उत्तरकी ओर फलोदीतक गई है और वहांसे अन्तमें छिन्नभिन्न भावसे होकर उत्तरकी ओर पचीस कोसतक जाकर गारियालातक गई है। यह शृंगश्रेणी रेतीले पत्थरोंसे पूर्ण है, उसमें अधिकतासे गेरू मट्टी उपजती है। जयसलमेरके रहनेवाले उस गेरू मट्टीमें अपने पहरनेके वस्त्रोंको रँगते हैं"।

टाड् साहब लिखते हैं कि "यह अनुर्वर शिखर श्रेणी और ऊँची तरंगाकार वालूकी स्तूपश्रेणी इस प्रदेशमें सर्वत्र कठिन भूमिस्वरूपसे विराजमान है, उसके विपरीत दृश्यको देखो! मार्गके थके मनुष्योंको आश्रय और छाया देनेके लिये कोई वृक्ष यहां नहीं उपजता है। यह प्राय. वडा सीमा रहित उजाड़ पृथ्वीखंड है, केवल किसी२ स्थान पर दो चार वटके वृक्ष दृष्टि आते हैं"।

समस्त जयसलमेर राज्यमें एक भी श्रोतस्वती नदी नहीं है, किन्तु वालुका पूर्ण शिखरमालासे वर्षा ऋतुमें जल गिरनेसे समय २ पर कई एक खारी तलइये कई महीनोंके लिये वनजाती हैं। मनुष्य उसके चारोंओरसे रेतेकी दीवाल बनाकर दो एक महीने तक उसे बनाये रखते हैं किन्तु वह तलइये अधिक दिनतक नहीं रहती कभी अधिक वृष्टि होनेके कारण कोई २ तलैया सालभर बनी रहती है। इनमेंसे एकका नाम कानोदसर वा ह्रद है, यह कानोदसे मोहनगढ़तक नौ कोस बड़ा है और इसमें सभी दिन जल रहता है। बरसातमें यह बड़ा ह्रद पूर्ण होजानेसे इसमेंसे एक छोटी नदी सी निकल कर पूरबकी ओर पन्द्रह कोशलों चली जाती है। मूलह्रदमें जबतक जल रहता है यह छोटी नदी भी तबतक नहीं सूखती। इस ह्रदमें जो नमक होता है वह राजकीय होता है, और उससे राजाको कुछ लाभ भी होजाता है।

खेती और उद्भिजके सम्बन्धमें टाड् साहबने लिखा है "यद्यपि इस रेतीले प्रदेशका बाहिरी अनुपजाऊ दृश्य दृष्टि आता है किन्तु प्रकृतिने इस प्रदेशकी उपजाऊ शक्तिका लोप नहीं किया है, वरन यह रेतीला प्रदेश एक प्रकारसे धान्यके उत्पन्न होनेमें बड़ा

(१) उर्दू तर्जुमेमें यों लिखा है कि इसमें पीले रंगकी मिट्टीका पत्थर है जिससे आदमी अपने मकानोंपर रंग करते हैं।

उपकारी है, विशेष कर बाजरा यहाँपर अधिक होता है। फसलमें बाजरा इतना होता है कि उसमें तीन वर्षका भोजन चलता है। यहाँके निवासी केवल सिन्धुप्रदेशसे गेंहू लाते हैं। जिन स्थानोंपर बाजरा होता है वहाँ पर दो तीन बार अच्छे पानी पड़जानेसे किसान लोग बाजरेका बीज बोदेते है। फिर स्वयं ही शीघ्र वह उत्पन्न होजाता है, धान्य होजानेपर यदि कही प्रबल वृष्टि हो जाती है तो उससे वह सब धान्य नष्ट हो जाता है। भारतवर्षके और स्थानोंकी अपेक्षा इस देशका बाजरा बड़ा अच्छा होता है जिस समय अधिक बाजरा होता है उस समय रुपयेका डेढ़मन बिकता है। किन्तु इस प्रकार वर्षोंतक नही होता है। यहाँके निवासी पाँच २ वर्षके पीछे अधिक बाजरा होनेकी आशा करते है। यहाँ ज्वार भी होती है किन्तु वह कही कही। छोटी २ श्रृंगमालाके अगल बगलमें अनेक प्रकारके डाल, तिल और गवार नामक एक प्रकारका फल होता है। यह फल बड़े स्वादिष्ठ होनेसे भारतके अनेक प्रदेशोंमें भेजे जाते हैं। जयसलमेरकी राजधानीके चारों ओर जिस २ स्थान पर पानी लेजानेका सुभीता होता है वहाँ पर बहुतायतसे श्रेष्ठ गेहूँ हरिद्रा और फलवाले वृक्ष उत्पन्न होते है यहाँ चावल नही होते परन्तु सिंधुदेशसे लाये जाते है"।

कर्षणयन्त्रके सम्बन्धमें टाड् साहब लिख गये है कि जहांकी मट्टी कोमल होती है वहांपर खेतीके काममें सामान्य यन्त्रका व्यवहार होता है। किसान लोग दो तरहके हलोंका व्यवहार करते है; एक प्रकारके हलमें केवल एक वा दो बैल लगते हैं, और दूसरे प्रकारके हलोमे ऊंट जोते जाते है"।

शिल्पके सम्बन्धमे प्रसिद्ध है कि "यहाँ कोई शिल्पका काम उत्तम नहीं होता, कपड़ा बुननेवाले एक प्रकारका मोटा वस्त्र बनाते है। शिल्पकार्यके उपयोगी जो रुई आदि होती है वह सभी बाहर भेजी जाती है। यहाँके प्रधान शिल्पकार्यके बीचमें जो भेड़ उत्पन्न होते है उनके रोमोंसे एक प्रकारकी लोई, कम्बल, उत्तरीय, घँघरा और नानाप्रकारकी पगड़ी बनाई जाती हैं। आचरी नाम खानकी काली मट्टीके अनेक पीनेके और भोजन करनेके पात्र बनते हैं। यहाँके जितने अस्त्र बनते है वह अच्छे नही होते"।

टाड् साहब लिखते है "वाणिज्य स्थलरूपसे जो जयसलमेरकी प्रसिद्धि सुनी जाती है। वह स्वयं जयसलमेरके भीतर वाणिज्यके विस्तारके लिये नही है। जयसलमेर केवल वाणिज्यकी संधि स्थलमात्र है, भारतके पूर्वप्रान्तसे वाणिज्यके समस्त द्रव्य जयसलमेर होकर सिन्धुके उपत्यका प्रदेश ओर सिन्धुके बाहरी देशोमें भेजे जाते हैं। दूसरी ओर हैदराबाद, रौड़ी भक्खर, शिकारपुर और उससे वाणिज्यके सम्पूर्ण द्रव्य इधरको लाते है। गंगाके समीपवाले प्रदेश और पंजाबसे भी समस्त वाणिज्यके

---

(१) टाड् साहब टिप्पणीमें लिखते हैं कि "मै कई जोड़े बिलायतको लेगया था, वहाँ वे बड़े पसन्द किये गये। इस देशमे शीतकालमें दुशालेकी समान सब व्यवहार करते हैं, यह देखनेमे भी बड़े सुहावने होते हैं"।

पदार्थ जयसलमेरमे आते हैं। दुआब कानील, कोटा और मालवेकी अफीम, बीकानेरकी प्रसिद्ध गुड़, और जयपुरके बनेहुए लोहेके द्रव्य जयसलमेर होकर शिकारपुर और नीचेके सिन्धुप्रदेशोंमे भेजे जाते हैं। वेहाँपरसे अफरीकासे आया हुआ हाथीदाँत, रंग नारियल, औषधि और चंदनकी लकड़ी इधरको लाई जाती हैं। भागलपुरसे सूखे मेवे आते हैं"।

राजस्व और करके सम्बन्धमे टाड् साहब लिखते है कि "जयसलमेरमें राजाकी आमदनी पहिले चार लाख रुपयेसे अधिक थी, तिसमे एक लाख रुपयेसे अधिक भूराजस्वमे जाते थे। पहिले एकमात्र वाणिज्य शुल्क ही इस राज्यकी निश्चित अधिक आमदनी थी किन्तु मंत्री सालिमसिंहके अत्याचारोसे और उसीसे भट्टीसामन्तोके दस्युताचरणसे साधारण वाणिज्य कम होजानेसे एक साथ ही वाणिज्य शुल्क जाता रहा। पहिले इस वाणिज्य शुल्कसे तीन लाख रुपयेकी आमदनी थी। इस शुल्कको दान और शुल्कसग्रह करनेवाले दानी कहते थे। राजधानीसे जो समस्त प्रधान २ मार्ग राज्यके चारोंओरको गये हैं उनके एक निर्द्धारित स्थानपर यह शुल्क संग्रह करनेवाले रहा करते है"।

"भूराजस्व-भूमिमे जितना धान्य उत्पन्न होता है किसान लोग उसमेंसे पांचवां हिस्सा और कहीं २ पर सातवां हिस्सा राजाको देते हैं। राजा कभी भी किसानोंसे पाँचवे हिस्सेसे एक हिस्सा कम वा सात अंशमेंसे एक हिस्सा कम धान्य कररूपमे नहीं लेते हैं। जिस खेतमे जो धान्य अधिक उपजता है राजा उसीको अपने नियमानुसार करमे लेते हैं राजाके कर्मचारी जिस समय किसानोंसे अपने करस्वरूपमे धान्यको लेते हैं, पल्लीवाल ब्राह्मण वा बानिये उसी समय नकद रुपया देकर उस धान्यको खरीद लेते है, फिर वह रुपयोंको राज्यके खजानेमे भेज देते है"।

"धुंआ-तीसरे करका नाम धुंआकर है. यही इस समय राज्यका निश्चित कर है। धुंआ शब्दसे रंधनकर जाना जाता है। इसको थाली नामसे भी पुकारते हैं। थाली शब्दका अर्थ है भोजनका पात्र अतएव यह आहारकर भी अनुमित होसक्ता है। इसकी आमदनी सालमे वीस हजार रुपए होती है। कोई भी घर इस करसे छूटा नहीं है"।

दंड-इस प्रदेशमे दंडके नामसे और एक कर प्रचलित है, यह प्रजाको कष्टदायक है। राजाको धनकी आवश्यकता होनेसे इस करसे उस करको पूरा किया जाता है। यह जयसलमेरमे संवत् १८३० सन् १७७४ ईसवीसे प्रचलित हुआ था है

(१) बीकानेरकी प्रसिद्ध मिसरी।

(२) टाड् साहब टिप्पणीमें लिखते हैं "सिन्धुनदीके पश्चिममें विराजमान सिन्धुप्रदेशके बीचमें शिकारपुर एक प्रधान वाणिज्यका स्थल है"।

(३) कर्नल टाड्ने लिखा है कि सामन्तोंकी आय कितनी थी इसको मैं ठीक २ नहीं जान सका। साधारण रजवाडेके अन्यान्य राज्योंके राजाओंको जितने रुपये भूमिकरके देने पडते थे यहां सामन्तोंकी आय उससे दुगनी अर्थात् दो लाख रुपये होगी। यह लोग आवश्यकता होनेपर सातसौ घुड़सवार राजाको दिया करते हैं।

उस समय यह अतिरिक्त धुँआ वा थाली करके नामसे पुकारा जाता था। महाजनलोग जो रुपये पर सूद लेकर अपनी आजीविका करते है केवल उनके ऊपर तो यह कर उस समयसे लगजाता है, इसमे २७०० सौ रुपये सालकी आमदनी होती है। महेसरी महाजन इस करको प्रसन्नतासे दिया करते है किन्तु ओसवाल वैश्य इस करके न देनेसे जवर्दस्ती जेलमें रहनेसे अपना कर चुका देते है किन्तु जेलसे छूटनेके पीछे सव मिलकर प्रतिज्ञा करते हैं कि अब आगेको कभी रावल मूलराजका मुख नहीं देखेंगे। वह लोग वहुत दिनोंतक इस प्रतिज्ञाका पालन भी करते रहते है। जयसलमेरके रावल मूलराज जिस समय राजधानीके प्रधान २ मार्गोमे होकर निकलते थे तब यह ओसवाल वनिये अपनी दुकानोको वंद करके घरोंमें जा वैठते थे। इस भाँति उन्होने कई वर्षलो राजाका मुख नही देखा। ओसवाल वनियोकी ऐसो प्रतिज्ञा देखकर जयसलमेरके रावल मूलराज अपने मनमे परिताप करते थे। जो राजधानीके श्रेष्ठ प्रतिष्ठित और धनी महाजन है वह मुख नहीं देखै इससे वढकर राजाको और क्या कष्ट होगा। तव मूलरावलने उन वनियोंको प्रसन्नकरनेके लिये सरल हृदयसे ओसवाल वनियोके प्रधान २ नेताओके घर विना ही वुलाये जाकर अपने शिरकी पगड़ी उतार उनके आगे पृथ्वीपर रख अपने अपराधोके क्षमाकी प्रार्थना[1] की और एक पत्र पर यह लिख कर अपने हस्ताक्षर करदिये कि वनिये यदि धुँआकर सदा दिया करें तो फिर कभी दंडकरका प्रचार नहि होगा। धनी ओसवाल वनियोने राजाको ऐसा पछतावा और प्रतिज्ञा करते देख मूलराजके कहनेको मानलिया। मूलराजने सम्वत् १८४१ और सन् १८५२ मे रुपयेकी आवश्यकता होनेसे उक्त महाजनोंसे पहिली वार तेतीस हजार और दूसरी वार चालीस हजार रुपया कर्ज लिया फिर वह कुछ कालके पीछे रीतिके अनुसार चुका दिया"।

टाड् साहवने लिखा है "गजसिहको सिहासनपर वैठनेके दो वर्ष पीछे अवतक सालिमसिहने दंडके कर स्वरूपमे चौदह लाख रूपया इकट्ठा किया है। वर्द्धमान नामक एक वड़ा धनी और प्रतिष्ठित पुरुष था जिसके पुरुषाओंका रजवाड़ेके वीचमे वड़ा सम्मान होता चला आया था, सालिमसिंहने अनेक समय पर क्रमानुसार उसका सव धन हरलिया है"।

टाड् साहवने जिस समय जयसलमेरका इतिहास लिखा है उस समयमें रजवाड़े का व्यय कैसा था उसकी सूची नीचे लिखी जाती है।

	रुपये
"वारे[2]	२००००

(१) इसको "पल्लापसारना" कहते हैं अर्थात् किसी मनुष्यसे क्षमा माँगनेपर अपनी शिरकी पगड़ी उसके सामने रखनेसे उससे नवनेका पूर्वलक्षण पाया जाता है।

(२) कर्नल टाड् टिप्पणीमें लिखते हैं, "राजाके निज अनुचर, भृत्य, शरीर रक्षक और खरीदे हुए दास इसके मध्यमें आगये। यह लोग वेतनस्वरूपमें सीधा पाते हैं और नगरमें मेहनत मजदूरी करके उस धनसे अपने और खर्चे करते हैं, इन लोगोंकी संख्या १००० होगी"।

रोजगार सरदार(१)	४००००
सेवन्दी वा वेतनभोगी सैन्यदल(२)	७५०००
राजाके निजके घोड़े, १० हाथी,	
२०० ऊँट और गाडी	३५०००
घुड़सवार पाँचसौ	६००००
रानीका व्यय	१५०००
परिच्छद (तोशाखाना)	५०००
दान	५०००
पाकशाला	५०००
अतिथिसेवा मिजमानी	५०००
पर्वोत्सव	५०००
वार्षिक ऊँट, घोडे, बैल इत्यादि खरीदना	२००००
सब जोड़	२९१००० रुपये

" मन्त्रियोंको और राज्यके कर्मचारियोंको भूवृत्ति भी मिलती है। केवल वाणिज्य शुल्कमे ही यह समस्त व्यय किसी २ सालमे पूरा पड़जाता है। उस वाणिज्य शुल्ककी आमदनी प्राय: तीन लाख रुपये होती है "।

जयसलमेरकी रहनेवाली भाटी जातिके सम्बन्धमे टाड् साहब लिखते हैं कि "जो सब भाटी जाति इस समय जयसलमेरकी वर्तमान सीमामे रहती है, वह सब हिन्दू है पर उत्तर और पश्चिम सीमाके अन्तमे बसनेवाले मुसल्मानोंके साथ वाणिज्यके व्यवहारमें बोलचाल और रहन सहनसे पुरानी रीति कुछ बदल गई है। जो सब भट्टी बहुत दिनोंसे फूलरा और गाड़ाकी ओर रहते हैं वह चिरकालसे जातिसे अलग होकर मुसलमान होगये हैं उनका सब व्यौहार भी मुसल्मानोके साथ होगया है। राठौर, चौहान और सीशोदियोंकी समान भट्टीजाति इस समय वीरजातिसे ही नही किन्तु कछवाहे वा बरूका और शेखावाटीके रहनेवालोंसे अधिक साहसी वीर कहकर प्रसिद्ध हैं। भाटी राजपूतगण राठौरोंकी समान बलवान् और कछवाहोंकी समान लम्बे चौड़े नहीं हैं किन्तु दोनो जातियोंसे देखनेमें सुन्दर और यहूदियोंकी समान लावण्य युक्त हैं। भाटीजातिका रजवाड़ेके समस्त राजपूतोंके साथ विवाह सम्बन्ध होजाता है "।

---

(१) जो सामन्त राजधानीमें रहकर राज्यका काम करते है उनके भोजनके व्ययका नाम रोजगार–सरदार है। पहिले जो सामन्त राजधानीमे आते थे तब उनका प्रतिदिनका व्यय उठानेके लिये शुल्क संग्रह करनेवालोंके यहाँसे मँगाया जाता था। किन्तु यह रीति दोनो ओरसे ओछी समझ कर उठादी गई। तबसे इस नित्य व्ययके खर्चके लिये सामन्तोंकी योग्यतानुसार ॥) आठ आनेसे लेकर ७) रुपये तक दिये जाते है। इसमें वार्षिक ४००००रुपया खर्च पड़ता है।

(२) " किलेमें जो तनख्वाह पानेवाली १००० सेना है उसको सेवन्दी कहते है "। उसका खर्च ७५००० है।

भाटीजातिके पहिनावेके सम्बन्धमें इतिहास जाननेवाले टाड् साहब लिखते है कि, भाटीगण सफेद वा छीटका जामा पहिनते हैं, वह जानुतक लम्बा होता है, कमरमे कमरबंद बांधते है। पाजामा घेरदार किन्तु पैरके हिस्सेके साथ दृढ़रूपसे लगा रहता है। शिरपर कुंकुममें रँगीहुई पगडी बांधते हैं। यह लोग कमरमे एक छुरी उरसते हैं, बाँई पीठपर ढाल और परतलेमें तलवार लटकाये रहते हैं। नीचे दरजेके आदमी धोती पहिनते और पगड़ी बांधते हैं। भाटीजातिकी स्त्रियॉ साधारण तौरसे३०फुट(१० गज)का लम्बा लाल रेशमी कपड़ेका घाँघरा पहिनती और उसी कपड़ेका दुपट्टा ओढ़ती हैं।वहांकी सब स्त्रियाँ अवस्थानुसार हाथीदाँतकी वा और किसी पशुकी हड्डियोंकी चूड़ियाँ पहिनती हैं कि जिससे उनकी भुजासे लेकर हाथके गट्टेतक बाँह ढक जाती है। एक जोड़ा चूड़ीका मूल्य १६ रुपयेसे ३५ रुपये तक होता है। स्त्रियाँ चाँदीके कड़े भी हाथोंमें पहिनती है जिस स्त्री के हाथोंमे चॉदीके कड़े नहीं होते वह अपनेको अभागिनी समझती है। नीच जातिकी स्त्रियां टहलनीका काम और खेतीके काममें बड़ी सहायता करती हैं।

"अन्यान्य राजपूतोंकी समान भाटीजाति भी अफीम खाती है अफीम और शर्बत पीनेके पीछे सब तमाखू खाते हैं। उस समय यह नसेमें इतने बेहोश हो जाते हैं कि इनके शरीरपर किसी भाँतिका आघात करनेसे भी इन्हें ज्ञात नही होता है"।

कर्नल टाड् साहब फिर लिखते हैं "कि हरिवंशावतंस भाटियोंकी समान यहाँ पर पालीवाल नामक एक श्रेणीके ब्राह्मण वसते हैं। इनकी संख्या प्रायः भाटियोंकी समान है परन्तु यह भाटियोंसे अधिक धनी हैं। राठौरोके मारवाड़मे वस्ती स्थापन करनेसे पहिले इन पालीवाल ब्राह्मणोंके पूर्व पुरुष पाली वा पाह्णी नामक स्थानमें वास करते थे। बारहवीं शताब्दीमें जिस समय सीयाजीने कन्नौजसे जाकर मारवाड़में पाह्णीको जीता है उसी समयसे इन पालीवाल ब्राह्मणोंका भाग्य पतित हुआ है। सीयाजी पालीवालोंको तो जीतलिया किन्तु उनको एक साथ नष्ट नहीं किया। जब एक मुसल्मान बादशाहने इस स्थानको जीता तब उसने मारवाड़के प्रत्येक रहनेवालोंसे कर माँगा, उस समय पालीवालोने कहा कि हम ब्राह्मण हैं इस लिये हमसे किसीने कर नही लिया और न हम कर किसीको देंगे। इतना सुन बादशाहने नाराज़ होकर इनके प्रधान २ नेताओंको कैद करलिया। परन्तु इन्होंने किसी प्रकारसे भी कर नही दिया तब बादशाहने इन्हे राज्यसे निकाल दिया। उसी समयसे पालीवाल अधिकतासे जयसलमेरमें आगये है। पीछे सबने बीकानेर, धाट, और सिन्धुके उपत्यकामें जाकर निवास किया। यह पालीवालगण जयसलमेरमें प्रधान वणिकरूपसे गिने जाते है। देशी और विदेशी समस्त वाणिज्य व्यवसाय यही लोग करते हैं। यह किसानोंको पहिले रुपया देकर उसका धान्य लेते हैं। यह लोग देशका सम्पूर्ण सूत रेशम खरीद कर विदेशको भेजते हैं"।

जयसलमेरमे पोकर्णा नामक ब्राह्मण और एक प्रकारके द्विज रहते हैं। इनकी संख्या दो हजार होगी। मारवाड़ और बीकानेरमें भी अनेक पोकर्णा ब्राह्मण हैं। यह लोग

खेती करते और पशुओको पाला करते है। वाणिज्यके व्यवसायको पहिले नहीं करते थे। इनके आदि विवरणके सम्बन्धमे यह कहावत प्रसिद्ध है कि यह पहिले खुदाई करते थे पीछे यह पवित्र तीर्थ पुष्कर ह्रद खोदने लगे तबसे ब्राह्मणोंने प्रसन्न होकर इनको पोकर्णा वा पुष्कर ब्राह्मण मान लिया है। यह कुदाल आकृतिवाली मूर्तिको पूजते है"।

"इस प्रदेशमे जाट आदि अनेक प्रकारकी जातियाँ भी बसती हैं"।

इतिहास लिखनेवाले टाड्र साहवने जयसलमेरके किलेके सम्बन्धमें नीचे लिखे हुए मन्तव्यको प्रकाश करते हुए जयसलमेरके इतिहासको समाप्त किया है। इस मरु-भूमिके राजाका किला एक असंयुक्त ढाई सौ फीट ऊँचे शिखर पर बनाहुआ है। एक अभेद्य दीवार शृंगके ऊपर बनी है। इस किलेके चार दरवाजे हैं, किन्तु किलेपर तोपैं बहुत कम हैं। राजधानी इसके उत्तरांशमे स्थापित है और चारोओर चहार दीवारोंसे घिरीहुई है। तीन तोरण और दो गुप्त दरवाजे हैं। राजधानीमे धनी महजनोके अनेक मनोहर मकान बने दृष्टि आते हैं किन्तु अधिकांश स्थानोमे कुटी बनी हुई है। राजभवन जितना बड़ा है उतना ही सुन्दर है। यदि सामन्तोके साथ राजाका प्रेम हो तो युद्धके समय अपने ऊँटपर चढ़कर लड़नेवाली सेनाके सिवाय पैदल और एक हजार घुड़सवार इकट्ठे हो सक्ते है"।

जयसलमेरका इतिहास समाप्त।

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस–बंबई.





जैपुर।

महाराजाधिराज सवाई सर माधवसिंहजी बहादुर जी. सी. एस. आई, जी. सी. आई ई. इत्यादि.











जैपुर।

(१) पृथ्वीराज, १५०३-२८
(२) पूरनमल, १५२८-३४
(३) भीम, १५३४-३७
(४) रतन, १५३७-४८
(५) आसकरन १५४८
(६) भारमल, १५४८-७४
(७) भगवानदास १५७४-८९
(८) मानसिंह १५८९-१६१४
(९) भाऊसिंह, १६१४-२१
(१०) जैसिंह १ १६२१-६७
(११) रामसिंह १ १६६७-९०
(१२) बिशनसिंह, १६९०-९९
(१३) जैसिंह २ १६९९-१७४३
(१४) ईश्वरीसिंह १७४३-५१
(१५) माधोसिंह, १ १७५१-६८
(१६) पृथ्वीसिंह, १७६८-७८
(१७) प्रतापसिंह १७७८-१८०३
(१८) जगतसिंह, १८०३-१८
(१९) जैसिंह ३ १८१८-३५
(२०) रामसिंह २ १८३५-८०
(२१) महाराजा सर माधोसिंह २ जी सी एस आई

[illegible]

राजस्थान.

दूसरा भाग.

जयपुरका इतिहास.

॥ श्रीः ॥

राजस्थानका इतिहास.

दूसराभाग २.

जयपुरका इतिहास.

प्रथम अध्याय १.

सूचना—जयपुरका प्राचीन नाम ढूंढाड तथा आमेर है—कछवाहा वा कछावा गणोंके हस्तगत होनेसे वह प्रदेश कछवाहा देश कहलाया—ढूंढाड़का वृत्तान्त—कछवाहे गणोंका आदि विवरण—राजा नलका नवर राज्यकी स्थापना करना—दूलेरायको नगरसे निकाल कर उनके द्वारा ढूंढाड़की प्रतिष्ठा—दूलेरायके सम्बन्धमें प्रवाद वाक्य—आश्रयदाता खोगांवके सम्बन्धमें मीनाके अधीश्वरके प्रति दूलेरायका दुष्ट व्यवहार—बड़गूजर जातिके अधीश्वरकी कन्याका पाणिग्रहण—उक्त अधीश्वरके उत्तराधिकारी पदकी प्राप्ति—राज्यसीमाका विस्तार—रामगढ़में राजधानीका स्थापन करना—अजमेरकी राजकन्याके साथ उनका विवाह होना—मीनोंकि साथ युद्धमें उनका प्राण त्यागना—उनके पुत्र काकिलका ढूंढाड़को जीतना—मेदलजीका आमेर और अन्यान्य स्थानोपर अधिकार—हणदेवकी देश विजय—कुंतलकी देश विजय—पजोनीको सिंहासनकी प्राप्ति—इस समयके अतिरिक्त आदिके निवासियोंका वृत्तान्त—मीनाजाति—पजोनीका दिल्लीके अधीश्वर पृथ्वीराजकी बहनके साथ विवाह करना—युद्धमें उनका बलविक्रम—कान्यकुब्जकी राजनन्दिनीके स्वयंवरके समयमें महा युद्धमें उनका प्राण त्याग करना—मलेसीजीको सिंहासनकी प्राप्ति—उनके उत्तराधिकारी गण—और पर्थ्वीराजका राजवंशको "बाराकोटरि" अर्थात् बारह सामन्तशाखामे परिणत करना—उनका हत्याकाण्ड—भारमल्लका मुसल्मान बादशाहके साथ प्रथम सम्बन्ध स्थापन—राजपूत राजाओंमें भगवानदासका यवनसम्राट्वंशको प्रथम कन्यादान—उनकी कन्याके साथ जहाँगीरका विवाह—उस कन्याके गर्भसे खुसरोका जन्म—मानसिंहको सिंहासनकी प्राप्ति—उनकी सामर्थ्य प्रताप प्रभुत्व—उनकी मृत्यु—रावभाव सिंहजी—महाराजा मान व भ्राता मिरजा राजा जयसिंहको सिंहासनकी प्राप्ति—अपने वंशका कलंक मोचन—यवन सम्राट्की विशेष सहायता करना—पुत्रके विषप्रयोगसे प्राण त्याग—रामसिंह—विशनसिंह—

साधू टाड् साहब जयपुरके इतिहासके वर्णन करनेके पहिले ही भारतीय अंग्रेजोंके एक विषम भ्रमका उल्लेख कर गये हैं, उन्होने लिखा है कि "भारतवर्षके अंग्रेजी राजपूतानेके राज्योंके यथार्थ नामोको बदल कर उनके स्थानमे राजधानीके नामके अनुसार राज्यको संवोधन करते हैं—जैसे मारवाड़ और मेवाड़ राज्यके नामके स्थानमे

---

(१) पजोनीको टाड् साहबने पजाने लिखा है।

(२) मिरजा राजा जयसिंह मानसिंहका भ्राता नहीं पोतेका बेटा था।

उन्होंने उक्त दोनों राज्योके प्रधान राजधानी जोधपुर और उदयपुरके नामसे राज्योका नामकरण किया है,जिस भूखंडको हाड़ौती नामसे कहना चाहिये उसे उन्होने कोटा और बूंदी नामसे प्रसिद्ध किया है वह लोग आजतक हाड़ौती नामका उल्लेख नही करते। अंग्रेजोंके निकट ढूंढाड़ नाम तो एकबार ही गुप्त था, उन्होंने ढूंढाड़ राज्यकी राजधानीको आमेर वा जयपुरके नामसे लिखा है।

कछावा वा कछवाहेगण जिस राज्यमे निवास करते है, इस समय सर्वसाधारणमे वही जयपुर नामसे विख्यात् है"। इन्ही कारणोंसे भारतवर्षके प्राचीन देशोंके नाम एकबार ही विस्मृतिके समुद्रमे डूब गये हैं। महाभारत और रामायण इत्यादिमें भारतवर्षकी सम्पूर्ण राजधानी और स्थानोंके नामोंका जो उल्लेख पाया जाता है, आज कल वे सभी निराकारण असंभव होगये है। यह तो ठीकही है कि राजनैतिक विप्लवमे और एक २ प्रवल परिवर्तनके मुखमे पतित् होनेसे यह इस प्रकारसे परिवर्तित हुए हैं, परन्तु भारतीय अंग्रेज तो विना कारण अपनी इच्छासे ही कई नामोका बदल करते आये है, इससे इतिहासका महा अनिष्ट होता है। अस्तु इस समय इतिहास ही को मानना होगा।

चौहान और राठौरोंने जिस भाँति भिन्न समयमें राजस्थानकी विभिन्न आदिम जातियोंको जीता तथा स्वाधीन राजाओंका शासन लोप कर एक २ राज्यको स्थापन किया, उसी भाँतिसे जयपुरका राज्य भी स्थापित हुआ है। समय २ पर भिन्न आदिम निवासियोंके हाथसे सम्पूर्ण देशोंको छेदन कर और स्थान २ पर छोटे २ राजाओंके शासनको लुप्त करके इस राज्यकी सृष्टि हुई है, इस कारण राज्यमें जो भिन्न जातियोकी समष्टि विराजमान है उसका अनुमान सरलतासे होसकता है। जो सुविस्तृत राज्य इस समय जयपुर नामसे विख्यात है, उसका पहिले ढूंढाड़ नाम था। ढूंढाड़ एक प्राचीन स्थानका विशेष नाम है, इस कारण एकमात्र ढूंढाड़ कहनेसे ही समस्त राज्य नहीं समझ सकते। टाड् साहब लिखते हैं कि पूर्वकालमे जो त्रनेर नामक स्थानके निकट ही ढूंढ नामका एक विख्यात् शिखर था। उसीसे ढूंढाड़ नामकी उत्पत्ति हुई है। उस ढूंढके शिखरके सम्बन्धमें चौहान जातिमें एक चरचा चली आती है वह यो है कि "चौहान जातिके विख्यात राजा अजमेरके अधीश्वर बीसलदेवने इसी शिखरपर तपस्या की थी, वह अपनी प्रजाके ऊपर अत्यन्त अत्याचार करते थे, इसीसे उनको राक्षसकी योनि मिली, वह राक्षस होकर भी पहिले ही की समान प्रजाका संहार करके उसको खाजाया करते थे पीछे वहांके मनुष्योने उसीके पोतेको उसके सम्मुख ला धरा। अपने पोतेके प्रेम भरे और कातर वचनोंसे बीसलदेव चैतन्य होगये। और उस चैतन्यताके आते ही उन्होंने यमुनाके किनारे जाकर प्राण त्याग दिये"। राक्षसयोनिसे परिणत चौहानराजका वह ढूंढ खुदवा डालना कर्तव्य है। यह हमें विश्वास है कि वही उनकी समाधिका मंदिर है"। इस प्रवाद और टाड् साहबकी युक्तिके सम्बन्धमे हमै केवल इतना ही कहना है कि यह प्रवाद जिस भावसे चल रहा है उसका बहुत सा अंश मिथ्या है। विद्वान्

लोग सरलतासे समझ जॉयगे, ऐसा वोध होता है कि महाराज वीसलदेव प्रजाके ऊपर अत्याचार करते थे इसी लिये उनको राक्षसकी उपाधि दी गई थी, क्या वह निश्चय ही प्रजाको मारकर उनकेशवोको खाजाते थे, क्या ऐसा कभी सम्भव होसकता है? अत्याचारसे प्रजाको पीड़ित करते २ जव वह चैतन्य हुए तव उन्होने इस ढूंढके शिखर पर पापोका नाश करनेके लिये तपस्या की थी और टाड् साहवकी युक्तिके मतसे यह ढूंढ शिखर वीसलदेवकी समाधिका स्थान हो यह वात असंगत नही. कही जासकती।

कर्नल टाड् साहवने लिखा है कि कौशलराज्य(जिसकी राजधानी अयोध्या है)के अधीश्वर महाराज रामचन्द्रके दूसरे पुत्र कुशसे कछवाह् वा कछवाहे वंशकी सृष्टि हुई है। यह जाना जाता है कि कुश अथवा उनके कई पीढी पश्चात् उन्हींके किसी वंशधरने पिताकी राजधानीको त्याग शोणनदके किनारे रोहतास नामका विख्यात किला वनवाया था। इसके कई पीढ़ी पीछे इस वंशके और भी एक राजा नलने संवत् ३५१ सन् २९५ ईसवी में इस स्थानको छोड पश्चिमकी ओर जाकर नरवर वा निषध नामकी राजधानी स्थापित की, इस विख्यात राजधानीके स्थापित होनेके पहिले प्रवादमूलक इतिहासमें देखा जाता है, कि और भी कई एक स्थानोमे कसवे स्थापित हुए थे, इनमे पहिलेका नाम लाहर[३] था यह इस समय कछवाहा–धार नामसे प्रख्यात है,

---

(१) विहारमें इस समय जो रोहतास गढ है, वह राजा हरिश्चन्द्रके पुत्र रोहिताश्वका निर्माण कियाहुआ है। टाड् साहवकी उक्तिकी अपेक्षा इसे ही सत्य कहनेमें हमें विश्वास होता है।

साधु टाड् साहवकी उक्तिमें हमे कितने ही सन्देहात्मक प्रश्न उपस्थित होते हैं, हमने जो पहिली संख्यामें सूर्यवंशकी कारिका प्रकाशित की उसको पाठकोंने पढ़ा होगा कि कुशके पुत्र अतिथि उनके पुत्र निषध और निषधके पुत्र राजा नल थे। अतिथि निषध और नल इन तीनो पुरुषोंके वीचमें रोहिताश्व लाहौर, ग्वालियर, और नरवर वा निषध यह कई राजधानी एकसाथ कैसे स्थापित होसकती हैं? फिर और एक वात टाड् साहवने कही है कि नरवरका दूसरा नाम निषध है, इस कारण उसके नामसे ही राजधानीका नामकरण हुआ था। नलने जो अपनी राजधानी स्थापित की थी वही नरवर नामसे विख्यात है (अनुवादक)

(२) साधु टाड् साहवने अपने टीकेमें लिखा है कि "नरवर राजधानीको एक ऐतिहासिक विवरणमें वर्णन किया है, कि राजा नलने संवत् ३५१ में नरवर राजधानीकी प्रतिष्ठा की; परन्तु उस समयकी अनुशासन लिपिको देखनेसे जानाजाता है कि इसमें कैसी झगड़ेलू वातें लिखीहुई हैं, उन्हें हम नहीं जानते; परन्तु नलसे दूलेराय तक ३३ पुरुष हुए इससे उनका विशेष समर्थन होता है। यदि प्रत्येक पुरुषने वाईस वर्ष तक राज्य किया, यह निश्चय किया जाय, तो७२६ वर्ष हुए। दूलेराय संवत् १०२३ मे निकाले गये इस कारण ७२६ को घटा देनेसे २९७ वर्ष वचे अर्थात् ५४ वर्षका अन्तर होता है। यदि हम प्रत्येकके शासनकालको २१ वर्ष तक निश्चय करें तो अति सामान्य भेद दिखाई पड़ता है, इस कारण राजा नलने जिस संवत् ३५१ में निषध राजधानी स्थापित की थी। इसको हम सरलतासे ठीक करसक्ते हैं"।

(३) उर्दू तर्जुमेमें लहर।

और दूसरेका नाम ग्वालियर है राजा नलके उत्तराधिकारियोंने "पाल" की उपाधि धारण की थी (यह उपाधि राजपूत राजाओंके पक्षमें मान्य सूचक कही गई है) राजा नलसे ३३ पुरुषोंके पीछे सोढ़ासिंहके पुत्र दूलेराव पिताके राज्यसे निकाल दिये गये थे और उन्होंने संवत् १०२३ (सन् ९६७ ईसवीमें) ढूँढाढ़ नामकी राजधानी स्थापित की"।

इतिहासवेत्ता टाड् साहबने फिर लिखा है कि जिस वंशमें कौशल राजाके राम, निषधके नल, और मारोमीके प्रिय ढोलाराव उत्पन्न है, वह वंश आपको अवश्य ही वीरताके गौरवसे गौरवान्वित मानना होगा। भारतवर्षमें कुशवंशसे उत्पन्न पुरुष अपने वंश और गौरवके स्मरणके निमित्त ही बड़े समारोहके साथ प्रति वर्ष एक दिन सूर्यदेवका उत्सव किया करते थे, उसी उत्सवके समयमे मन्दिरके भीतरसे एक परम सुन्दर रथ-जो सूर्यरथ नामसे विदित था-वाहर करके उसमे आठ घोड़े जोते जाते थे। रामचन्द्रके वंशधर कच्छवपति उसी रथपर चढ़कर राजधानीमें भ्रमण करते थे।

इस समय आमेर राज्यकी उत्पत्तिके सम्बन्धमे इतिहासकोही मानना होगा, इसको तो हमारे पाठक पहिले ही जान चुके है कि रामचन्द्रके पुत्र कुशसे कच्छव वंशकी सृष्टि हुई है; कुश वा उनके वंशधरोमेसे कोई एक मनुष्य अयोध्यासे कही अन्यत्रको चलागया। निषध वा नरवर राजधानीकी सृष्टि पीछे हुई है, नलसे सोढादेवजी तक २३ पुरुषोंने उस नरवरको शासन किया। यहां तक उस राजवंशके दो भेद नही हुए; सोढादेवके पुत्र दूलेरायसे नवराज्यकी सृष्टि हुई है. उसी समयसे वर्तमान कच्छव वा कछावावंशको स्वतंत्रता मिली है। साघू टाड् साहबने कछवाहोके प्रचलित इतिहासके विवरणको देखकर लिखा है, कि नलसे लेकर ३१ पीढ़ी तक नरवरके अधीश्वर सोढादेवने प्राण त्याग किये तब इनके भ्राताने बलपूर्वक अपने सुकुमार भतीजेको गद्दीसे अलग करदिया। दूलेरायकी माता देवरका ऐसा कठिन अत्याचार देखकर अत्यन्त ही दुःखित हो चिन्ता करने लगी उसने एक महा विपत्तिको सम्मुख जानकर कंगालनीका वेष बनाया और अपने पुत्र दूलेरायको एक झोलीमे बांधकर वह राजधानीसे बाहर हुई। उसने विचारा कि जब देवरने बल करके सिहासनपर अपना अधिकार कर लिया है तो वह निष्कंटक होनेके लिये अवश्य ही मेरे बालकको मारडालेगा। सोढादेवकी रानी यह विचारकर पुत्रकी प्राणरक्षाके लिये भिखारिनीका भेष धर राजधानीको छोड़ गई, वह कंगालवेषधारिनी रानी पुत्रको गठरीमे बॉधे शिरपर रखे हुए अकली कोशोंतक चली गई अन्तमें खोहगांव स्थानमें (जो जयपुर राज्यसे ढाईकोश दूर था) पहुँची। उस समय मीना जाति उस खोहगांवमें निवास करती थी। इस विपत्ति ग्रस्त अत्यन्त कातर हृदया रानीने मस्तक परसे पुत्रको उतारा, एक तो राजरानी, काहेको कभी इतना मार्ग चली होगी; तिस पर भी भूँख प्यासका कष्ट इस महा विपत्ति पड़नेसे रानी इस समय अत्यन्त अधीर होगई, चारोंओर विपत्तिकी भयंकर मूर्तिको देखकर उसका

(१) टाड् साहबने इनको सोरासिंह लिखा है।

हृदय कंपायमान होने लगा। अधिक क्या कहैं रानी, इस अवस्थामे पुत्रको रखकर एक वृक्षके नीचेसे कुछ फल लेनेके लिये गई, उसने आकर देखा कि एक सर्प पुत्रके मस्तक पर फन फैलायेहुए बैठा है, यह भयंकर दृश्य देखकर उसके हृदय पर मानो वज्र टूट पडा। वह विकल होकर रोने और चिल्लाने लगी। दैवयोगसे एक ब्राह्मण उसी रास्तेसे जा रहा था उसने रानीकी ऐसी अवस्था देख उसे धीरज बँधाकर कहा, "आप निर्भय होकर शान्त होजाओ, भयभीत होनेका कोई कारण नहीं है, वरन आपका पुत्र किसी समय राजा होगा। यह सुनकर रानी आनन्दित हुई।" फिर शान्त हो रानीने कहा, "कि भविष्यतमे क्या होगा इसकी तौ मुझे कुछ चिन्ता नहीं है, वालक इस समय बहुत भूखा है, इसके खानेके लिये कहां मिलै, मै इसी विचारमे पड़ी हूं।" तब उस ब्राह्मणने रानीको खोहगांवका मार्ग दिखाकर कहा कि आप खोहगाँवको चली जाओ, वहाँ तुम्हें आश्रय मिलेगा"। सर्प पहिले ही अपने स्थानको चला गया था, इस कारण रानी ब्राह्मणके वचनोसे धीरजधर वालकको मस्तक पर धर कर खोहगावकी ओरको चली। रानीने नगरीमे घुसते ही एक स्त्रीको देखकर उससे कहा, "यदि कोई मुझे अपने यहाँ दासीके कामपर रखले और भोजन देदिया करे तो मैं उसके यहाँ रहनेको राजी हूँ"। उक्त स्त्री खोहगांवके राजाके यहाँकी दासी थी, इस कारण उस कंगालिनी भेषधारिणी रानी को वह स्त्री रनिवासमे ले गई। मीना रानीने उस रानीको अभय देकर कहा, कि आजसे हमने तुम्हें अपनी दासीके पदपर नियुक्त किया, और अन्यान्य मोल लीहुई दासियोके साथ रहनेके लिये कहा। महाराज सोढादेवकी रानीने अपना परिचय किसी भाँति भी नहीं दिया। इस प्रकारसे कुछ दिन बीतगये-एक दिन मीनारानीकी आज्ञासे सोढा-देवकी रानीने भोजन तैयार किया, मीना राजा लालनसी उस भोजनको खाकर वोले,-"कि भोजन तो हम नित्य ही करते हैं परन्तु आजका भोजन बडा सुन्दर और स्वादिष्ठ बना है?" मीनाराजके इतना कहनेसे छद्मवेशी सूर्यवंशकी राजवधू उनके महलमें बुलाली गई, मीनाराजा इस परिचारिकाका परिचय पाते ही उसी समयसे रानीको अपनी भगिनी कहकर पुकारने लगे, और दूलेरायको भानजेके नातेसे उसका विशेष आदर सम्मानके साथ लालन पालन करने लगे वालक दूलेराय भी मीनाराजके आश्रयसे अवस्था बढ़नेके साथ ही साथ क्षत्रियधर्म सीखने लगे। इसी समयमे दिल्लीके सिंहासनपर तवरवंशके राजाने बैठकर समस्त भारतवर्षमे अपनी प्रबल प्रभुताका विस्तार किया था। सभी राजा उसे कर दिया करते थे। जब दूलेरायकी अवस्था चौदह वर्षकी हुई तब मीनाराजने इनको दिल्लीमे कर देनेके लिये भेजा।

दूलेराय दिल्लीमे पाँच वर्ष तक रहे। इस समय मीनाजातिके कविके साथ इनका विशेष परिचय होगया था, दिल्लीकी राजधानीमे रहनेसे और तंवरराजके प्रबल प्रतापको देखकर सूर्यवंशी दूलेरायके हृदयमें राजमुकुट धारण करनेकी इच्छा उत्पन्न होने लगी। विशेष करके यह युवा होनेके साथ ही इस बातको भी जान गये, कि उनकी नस २ में राजरुधिर वह रहा है, इस कारण उनके राज्यशासनकी जो इच्छा क्रमशः बलवती होती गई तो इसमे आश्चर्य ही क्या है।

उन्होंने अपने मनके भावको मीना कविसे कहा–और यह भी कहा कि किस प्रकारसे मेरी अभिलाषा पूर्ण होसकती है ? आप ऐसा कोई उपाय वता दीजिये"। कविने उत्तर दिया,' कि आप अपने आश्रयदाता मीनाराजको दमन करके उनके राज्यभारको अपने हाथमें लीजिये। दिवालीके पर्वके समयमें चिरकालसे प्रचलित रीतिके अनुसार समस्त मीना उस अमुक सरोवरमें स्नान किया करते है आप उसी समय अपना दल ले कर उनपर आक्रमण कीजिये, तव उनका वंश नष्ट होनेसे आपको सिंहासनकी प्राप्ति हो सकती है" । कविकी सम्मतिसे दूलेराय दिल्लीसे वहुत सी राजपूतसेना साथले दिवालीके पर्वके दिन खोहगांवमें जा पहुँचे, इस समय समस्त मीनागण सरोवरमे स्नान कररहे थे, दूलेरायने उसी समय उनपर आक्रमण करके उनके शवोसे सारे सरोवरको भर दिया। परन्तु जिस मीनाकविने यह सम्मति दी थी उसके प्राण भी न वचे; दूलेरायने अपने हाथसे ही उसको मारडाला । उसने कहा कि "जो मनुष्य अपने प्रभुके साथमे ही विश्वासघात करता है वह कदापि दूसरेका विश्वासपात्र नहीं हो सकता"। इस प्रकारसे दूलेरायने मीनाओंके शासनका लोप कर खोहगांवको अपने अधिकारमे करलिया। इस खोहगांवके अधिकारमें होनेसे ढूंढार, आमेर वा वर्तमान जयपुर राज्यकी उत्पत्ति हुई।

जो दूलेराय वाल्यावस्थामें पिताके सिंहासनसे उतारे जाकर जननीके शिरपर पिताकी राजधानीसे अनाथकी समान खोहगांवमें आये थे इस समय उन्हीं दूलेरायकी भाग्यलक्ष्मी प्रसन्न होगई, दूलेरायको खोहगांवपर अधिकार करनेके पीछे अपनी राज्यसीमा विस्तार करनेकी वड़ी उत्कंठा हुई उस समय वर्तमान जैपुरसे १५ कोश पूर्वकी ओर वाणगंगाजीके किनारे द्योसा नामक स्थानमे राजपूतोकी वड़गूजर सम्प्रदाय स्वाधीनभावसे निवास करती थी। दूलेरायने अपनी सेना साथले वड़गूजरोके किलेके समीप जाकर कहला भेजा कि तुम अपनी कन्याका विवाह हमारे साथ करदो। वड़गूजरपतिने यह सुनकर कहा भला "यह किस प्रकार होसकता है"? हम दोनों ही सूर्यवंशी है, अभी सौ पीढ़ी भी नही बीती है इस कारण विवाह किसी प्रकार नहीं होसकता ? वड़गूजरपतिके इस वचनको सुनकर दूलेरायने समझा दिया कि सौ पुरुष तौ वीत गये है तब वड़गूजरपतिने आनन्दित हो नव विजयी दूलेरायके करकमलमें अपनी कन्याको समर्पण किया और इनके कोई पुत्र नही था इसीसे इनको अपने राज्यका उत्तराधिकारी भी स्वीकार किया, और इनके हाथमें अपने राज्यका भार अर्पण करनेमें किंचित् भी विलम्व न किया। इस प्रकारसे दूलेरायकी सामर्थ्य और प्रभुता बढ़तीगई । उस सामर्थ्य बढ़नेके साथ ही साथ दूलेरायके हृदयमें राज्यकी इच्छा भी बढ़ने लगी। माची नामक स्थानमे राव नाटू नामक एक मीनाराज निवास करता था दूलेराय उसको भी परास्त करके अपना प्रभुत्व विस्तार करनेकी अभिलाषा की। प्राचीन मीनाराज अपनी रक्षा करनेके लिये समरभूमिमें उतरे परन्तु अतुल पराक्रमी दूलेरायकी सेनाने युद्धभूमिमे मीनाओंको सेना सहित परास्त करादिया। विजयी दूलेरायने नये अधिकारी माचीदेशमें जाकर देखा कि खोहगांवकी

अपेक्षा यह स्थान अत्यन्त सुन्दर और रमणीक है, यहां एक राजधानी स्थापन कर किलेका बनना भी यहीं ठीक होगा; इस कारण वह शीघ्र ही खोहगांवसे अपनी राजधानी उठा लाये, और एक नवीन किला बनवाया, और अपने विश्वविदित पूर्वपुरुष रामचन्द्रके स्मरणके लिये उस किलेका नाम रामगढ़ रक्खा।

इसके पीछे दूलेरायने अजमेरकी राजकुमारी भारोनीके साथ विवाह किया। एक समय दूलेराय रानीके साथ जमवाय माताके मन्दिरमें दर्शन करनेके लिये गये जब वहाँसे लौटे तो क्या देखते हैं कि इनके ही देशके ग्यारह हजार मीने इकट्ठे होकर अस्त्र शस्त्र लिये मार्ग रोके खड़े हुए हैं। वीरश्रेष्ठ दूलेरायने उन्हें इस प्रकारसे युद्ध करने के लिये तय्यार खड़ा देखकर निर्भय हो उनके साथ युद्ध किया। शत्रुओंकी सेना अधिक थी इसी कारण दूलेरायकी सेना विशेष विक्रम न करसकी। क्रोधित हुए सिंहके समान दूलेरायने अपनी तलवारसे सैकड़ो योधाओंके प्राण नाश किये, और अन्तमें आप भी चिरकालके लिये अनन्त निद्रामें सो गये। दूलेरायके मरते ही इनकी सम्पूर्ण सेना भी छिन्नभिन्न होकर भागगई, इस समय दूलेरायकी रानी गर्भवती थी इस कारण वह वहाँसे बडे कष्टसे भाग सकी, कछुवाहोंके आदि पुरुष दूलेरायकी जीवनीके सम्बन्धमें इतिहासमें यहीतक लिखा है। दूलेराय एक बडेवीर और साहसी क्षत्री थे, इसका अनुमान सरलतासे ही होसकता है।

दूलेरायकी मृत्युके पीछे उनकी विधवा रानीसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ। उसका नाम कांकिल रक्खा गया। इसीने पिताके सिंहासनपर अभिषिक्त होकर ढूंढाढ़ राज्यको जय किया। इनके पुत्र मेदल भी अत्यन्त वीर और पराक्रमी थे इस समय सुसावत मीनोंके राज्यमें आमेरके राव भत्तो निवास करते थे, उक्त राव मीना जातीय तथा समस्त मीनोंकी सम्प्रदायोंमें सबमें श्रेष्ठ राजा थे। मेदलरावने सेना सहित आमेर राज्यमें आकर मीनोंको पराजय कर आमेरको अपने अधिकारमें करलिया। मेदलरावने इस प्रकारसे पिताके राज्यको विस्तार करनेके पीछे कुछ दिनोंके उपरान्त नान्दला नामक मीनोको एक बार ही अधीनताकी शृंखलामें बाँधकर गतोर नामक देशको भी अपने अधिकारमें करलिया।

दूलेरायके वंशधरोका सौभाग्य सूर्य इस समय धीरे २ अपनी पूर्णमूर्तिसे उदय होने लगा। मेदलरावके स्वर्ग चले जाने पर उनके उत्तराधिकारी हणदेवने राजछत्र धारण किया। इस समय भी चारोंओरके मीनागण स्वाधीनभावसे राज्य करते थे। हणदेव भी अपने पूर्वपुरुषोकी समान पिताके राज्यका विस्तार करनेके लिये क्रमानुसार मीनालोगोंके साथ युद्धमें लिप्त रहते थे। हणदेवकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र कुंतलने राजदंड धारण किया, इन्होने अपनेही बलसे सम्पूर्ण पहाड़ियोंके ऊपर अपना शासन विस्तार किया, भूड़वाड नामक स्थानमें इस समय एक चौहान राजा निवास करते थे। कुन्तलके साथ उन चौहानपतिकी कन्याके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित हुआ, रावकुंतल अपनी समस्त सेना साथ ले भूड़वाड़ देशमें जानेका उद्योग करने लगे, उस समय उनकी समस्त

मीनोंकी प्रजाने पहिले भयंकर काण्डको स्मरण करा दिया कि यदि आप इस राज्यकी सीमाको उल्लंघन करके जाते हैं तो आप राज्यका चिह्न स्वरूप नगारा और पताका यहीं रख जाइये।" राजकुन्तलने मीनोंका यह प्रस्ताव स्वीकार न किया, इस कारण शीघ्र ही मीनोंके साथ भयंकर संग्राम उपस्थित होगया। उस संग्राममें बहुतसे मीना तो मारे गए और बहुतसे पराजित होगये; इस कारणसे राजकुन्तलका अधिकार दृढ़तासे स्थापित होगया।

कुन्तलके परलोकवासी होनेपर एक प्रबल धनुर्द्धर कछवाहा राजसिंहासन पर विराजमान हुआ; इसका नाम पजोनजी था। वीरविक्रमी राजपूत जातिमें इसका नाम प्रशंसित होकर विख्यात है. रजवाड़ेके प्रसिद्ध कवि चँदबरदाईने दिल्लीश्वर पृथ्वीराजकी गुणावलीको जिस मधुर काव्यमें वर्णन किया है उसी काव्यमें अन्तःकरणसे इस वीर श्रेष्ठके वीर विक्रमको भी वह कवि अक्षय कवितासे वर्णन करगये हैं।

इतिहासवेत्ता टाड इस स्थान पर लिखते हैं "कि हमने रजवाड़ेके इस विस्तारित इतिहासके पूर्वअंशको अनेक स्थानोंमें देखा है. कि वहाँके सम्पूर्ण आदिम निवासियोंने पराधीनता और दासत्वकी शृंखलासे मुक्त होनेके लिये विशेष चेष्टा की है. इस समय ढूंढाड़ देशमें कछवाहोंके उदय होनेसे आदिम निवासियोंकी वह चेष्टा भलीभाँतिसे प्रकाशमान हो रही है। ढूंढाड़की आदिम पवित्र आदिम मीनाजातिके पहिले पाँच नाम थे, और उनकी पाँच शाखा विभक्त थीं, अजमेरसे लेकर यमुनाजी तक विस्तारित भूधरमाला जो 'काली खो, नामसे विख्यात थी, मीना गणोंका वही आदिम वासस्थान था; उन्होंने वहाँ आमेरराज्यकी प्रतिष्ठाकी और अपनी कुलदेवी अम्बा मानाके नामसे उसका नाम आमेर रक्खा। मीनागण अम्बादेवीको "घाटारानी" अर्थात् पवित्र देवी भी कहते थे। उस शिखरकी श्रेणीमें भिन्न २ मीनाओंकी सम्प्रदायके अधीनमें खोहगांव माची और अन्यान्य प्रधान २ नगर भी थे। परन्तु बाबर और हुमायूंके समयमें और कछवराज भारमल्लके शासन समयमें भी मीना जाति अत्यन्त बलवान् थीः और इसके बलविक्रमको देखकर राजपूत सदा शंकित रहते थे। उन स्वाधीन मीनोंकी सम्प्रदायमें एक अत्यन्त प्राचीन नगरी नाहन थी, भारमल्लने मुगलोंकी सहायतासे उस नगरको विध्वंस करदिया। एक प्राचीन ऐतिहासिक कवितामें नाहनकी मीनाजाति की सामर्थ्य इस प्रकारसे वर्णन की गई है।

बावन कोट छप्पन दरवाजा।
मीना मरद; नाहनका राजा।
बूड़ो राज नाहनको।
जब भूसमें बाटो मांगो।

इस कविताका अर्थ इस प्रकार है. कि नाहनके राज. मीनाके ५२ किले और तोरणद्वार थे, जिस समय उसका शासन नाहनसे लुप्त होगया. उस समय उसने सामान्य भूसेके अंशको भी करखपसे ग्रहण किया था। यदि इस वर्णन अतिरिक्त रंगसे रंगा जाता तो ऐसा बोध होता है कि जिस समय दिल्लीके सिंहासन पर

प्रथम मुसल्मान बादशाह विराजमान हुए उस समय मीनागण अत्यन्त बलवान थे यह तो हमै निश्चय है कि दिल्लीपति पृथ्वीराजके अधीन कर देनेवाले नरपति पजोनीसे लेकर बावरके समसामयिक उस पजौनीके वंशधर भारमल्ल तक कच्छवाहे राजा अपनी अधिक सीमाको बढ़ानेमें समर्थ न हुए भारमल्लने नाहनके पचास द्वारोंको विध्वंस करके उस स्थानपर मलिवाण नामका नगर वसाया। इस समय वहीं राजावत सामन्तोकी वासभूमि है"।

महात्मा टाड् साहव फिर लिखते है "कि इस मीनाजातिकी भिन्न २ सम्प्रदायोके नाम उच्चारण और वर्णवद्ध पदोंमे एक विभिन्नता विराजमान है। मेना शब्दका अर्थ असल वा "अमिश्र" श्रेणी है। इस अमिश्रित श्रेणीमे इस समय केवल ओसारा नामकी एक सम्प्रदाय दिखाई पड़ती है। अन्य पक्षमे मीना शब्दका अर्थ मिश्र है, वही मिश्र जाति 'वारापाल' अर्थात् वारह सम्प्रदायोमे विभक्त हुई है, और वही चौहान, तूंवर यादव, पड़िहार, कछवाहे सोलकी, साकला, गिहलोत इत्यादि राजपूतोके औरससे मेना स्त्रियोंके गर्भसे उत्पन्न है। यही वर्णसंकर मीना जाति पॉच हजार दोसौ सम्प्रदायोंमें विभक्त हुई। जागा, धोली, वाड़ोम नामक उनके कारिका कारोने उन सभी सम्प्रदायोकी कारिकाकी रक्षा की है। अमिश्र उसारा सम्प्रदाय इस समय दिखाई नहीं पड़ती, अन्य पक्षमे मिश्र मीना सम्प्रदाय मध्य और पश्चिम भारतवर्षके सम्पूर्ण पर्वतों और दुर्गम देशोमे विस्तृत हुई है। यह भलीभाँतिसे जानाजाता है कि राजपूतगणोसे विदित इस समयकी जेट जाति और कोल, भील, मीना, गोण्ड, साईरिया, वा सार्जा जाति यहाके आदिम निवासी है। मीना जातिका धर्म, समाजिक नियम, और आचार व्यवहार एक अलग अध्यायमें वर्णन किया जायगा"।

पजौनी जिस भाँति महान् ऊंचे वंशमे उत्पन्न हुआ था, उसी भाँति वह अत्यन्त सुन्दर और अनन्त गुणोसे भूषित था; इसीसे दिल्लीके चौहान् साम्राट् पृथ्वीराजकी भगनीके साथ उसका विवाह हुआ था। वीर पृथ्वीराजने सिंहासन पर बैठते ही भारतवर्षके भिन्न प्रान्तोके एकसौ अस्सी राजाओको अपने यहाँ बुलाया, इनमे राव पजोनीको ही ऊंचा आसन दिया गया था, पृथ्वीराजने जिन २ स्थानोंमें युद्ध किया राव पजोनीने भी उनके साथ उन्हीं २ युद्धोमे अपने बलविक्रमकी पराकाष्ठा दिखाई, महावीर पजोनीने उन बहुतसे युद्धोमेसे दो युद्धोमे अपनी तलवारका चूडान्त परिचय देकर महान यश सचय किया था। जिस समय उत्तरांशसे शहाबुद्दीन भारतवर्षको विजय करनेके लिये आया उस समय वीर श्रेष्ठ पजोनीने अपनी सेनाको चलनेकी आज्ञा दी, पजोनीने इस प्रकारके असीम साहससे सेनाको चलाया कि जिससे शहाबुद्दीन एकवार ही परास्त हो गया और उसी समय समरसे भाग गया। विजयी पजोनी उसके पीछे २ गजनी तक गये। राव पजोनीने चँदेलोकी निवास-

(१) पजोनी था पज्जूनराय पृथ्वीराजका बहनोई नहीं वरन् साला था।

भूमि महोबाको अधिकारमें करनेसे ही अपने बलविक्रमकी प्रसिद्धि की थी और वह उस समय वहाँके प्रधान शासन कर्ताके पदपर प्रतिष्ठित हुए दिल्लीश्वर पृथ्वीराज कन्नौजपति जयचंदकी कन्या (संयोगिता) अनङ्ग मंजरीको हरण करके ले आये; उस समय दोनो राजाओमें जो भयंकर युद्ध हुआ था उस युद्धमें भी पृथ्वीराजकी ओरके चौंसठ राजा नियुक्त थे, इनमें एक पजोनी भी थे; पृथ्वीराजका जयचंदके साथ जिस समय पाँच दिन तक निरन्तर युद्ध हुआ था, उस युद्धमें नियुक्त होकर पृथ्वीराज जिस भाँतिसे कन्नौजकी राज नंदिनीको ले निर्विघ्नतासे चले जॉय, इसी अभिप्रायसे पजोनीने अपनी सेना सहित मार्गमे खड़े होकर शत्रुओके साथ अकथनीय समर करते २ अपने जीवनको त्याग दिया। पजोनीके साथमे मेवारके गहिलोत सामन्त भी जयचंदके साथ युद्धमे लिप्त था, और दोनोने एक ही साथ रणशय्या पर शयन किया। कविकुल केसरी चंदकवि वीरश्रेष्ठ पजोनीकी वीरता विक्रम और अन्तिम युद्धके अभिनयके सम्बन्धमे अपने काव्यमें लिख गये है जिस समय गोविन्द राय मारेगये उस समय शत्रु अत्यन्त प्रसन्न हो नृत्य करने लगे, परन्तु कुछ ही समयके पीछे पजोनी उस समरके आकाशमे गर्ज कर दिखाई दिये। वह शत्रुओके ऊपर दोनो हाथोंसे शस्त्र चलाने लगे। एक साथ चारसौ शत्रुवीर इनके ऊपर आ झुके, परन्तु एक मात्र केहरि, पीपा, 'बाहु' नरसिंह और कँचरराय नामके वीर भ्राता पजोनीकी सहायतामें आगे बढ़े। तलवार और भालेकी खटाखट चारों ओरसे होने लगी, रणभूमिमें सहस्रो शिर लुढ़कतेहुए दिखाई देनेलगे, रुधिरकी नदी वह निकली, पजोनीने एतमाद पर आक्रमण किया, परन्तु एतमादका कटाहुआ मस्तक जैसे ही पजोनीके पैरोके नीचे गिरा कि वैसे ही खाँनोके भाले विषम वेगसे पजोनीके हृदयमें घुसगये; कूर्म रणक्षेत्रमे पतित हुए, स्वर्गमें अप्सरा पजोनीको पतिरूपसे वरण करनेके लिये आपसमें झगड़ा करने लगी, जो उत्तर देशकी सेना युद्धमें थी उनके शवोसे रणभूमि भरगई, मनुष्योंके कटे हुए शिरोसे महादेवजीकी मुंडमाला बढ़गई; जिस समय पजोनी और गोविन्द युद्धमें मारे गये, उस समय केवल एक पहर दिन बाकी था। अपने आत्मीय वीरोंकी सहायताके लिये जंजीरसे

---

(१) मेवाड़से कोई भी पृथ्वीराजके साथ कन्नौजको नहीं गया।

(२) पीपा, अजानबाहु, नरसिंह, कच्चर पजूनरायके भाई नहीं थे अन्यान्य जातीय सामन्त थे।

(३) चंदकविके इस प्रकारके वर्णनसे ऐसा बोध होता है कि जिस समयमे दिल्लीपति पृथ्वीराजके साथ कान्यकुब्जपति जयचंदका शेष युद्ध हुआ था, उस समय जयचंदकी ओर एकदल यवनोंकी सेनाका भी था। परन्तु भारतवर्षके इतिहासमे इसका कोई उल्लेख नहीं पायाजाता, जयचंदके साथ पृथ्वीराजके उक्त समरके पीछे यवनोकी सेनाने भारतमे आकर दिल्लीको जय किया, इसके पहिले भारतवर्षमें यवनोंकी सेना नहीं थी यही इतिहासमें देखा जाता है।

(४) जयपुरके राजा जिस भाँति कच्छवा नामसे विख्यात थे उसी प्रकारसे कूर्मनाम भी हुआ था, कूर्म नाम क्यों हुआ; टाड् साहबने उसका कोई विशेष कारण प्रकाश नहीं किया। "पर एक स्थलमें लिखा है कि राजा कुसवादके पिताका नाम कूर्म था जिसके नामसे कछवाहे कूर्म वा कूर्मा कहे जाते हैं [अनु]

(५) उर्दू तर्जुमेमें १ घड़ी।

छूटेहुए सिंहकी समान वीरश्रेष्ठ पाल्हन महाक्रोधित हो रणभूमिमें आ पहुँचा। कन्नौजकी उस प्रबल सेनाने प्राणोके भयसे भयभीत हो पीठ दिखा दी। पजोनीके भ्राता पाल्हन अपने पुत्रके साथ कर्णकी समान वीरता दिखाने लगे। अंतमें युद्धभूमिमें दोनो ही अपने प्राण त्यागकर सूर्यलोकको चलेगये, सूर्यका रथ आगे वढकर इनको वड़े आदर सम्मानके साथ चढ़ाकर लेगया"।

कविचंदने फिर लिखा है कि गंगादेवीके भयसे भयभीत होकर, चन्द्र चंचल हुआ और दिकपाल गण अपने २ स्थानोंमें चीत्कार शब्द करने लगे। कन्नौजकी सेनाकी गति रुक गई, पजोनीने जैचंददेवकी ढालको खंड २ कर दिया था, उसके पुत्रने उसकी अन्त्येष्टि किया कर दी। पजोनी पृथ्वीराजके ढालस्वरूप थे, उन्होंने कन्नौजके वीरोंको विलक्षण अस्त्राघात स्वरूप उपहार दान किया था। कवियोकी भी उस वीरताकी कहानी को वर्णन करनेकी सामर्थ्य नहीं हुई, उन्होंने अंतमें वहुतसे वीरोंके शिर काट डाले और अगणित वीरोंके प्राण नाश किये, परन्तु महावली शत्रुगण साहस करके भी उनके सम्मुख नहीं होसके। पजोनीने उस रणभूमिमें पतित होकर कहा, "कि मनुष्यकी आयु सौवर्षकी है, जिसमें आधी तो निद्रा अवस्थामें जाती है, और इसका कुछ एक हिस्सा वालकपनमें नष्ट हो जाता है, परन्तु उस सर्वशक्तिमानने मुझे इस अस्त्राघातको सहन करनेकी शिक्षा दी है"। वह यमराजकी गोदमें बैठेहुए जिस समय यह कह रहे थे उसी समय उन्होंने देखा कि मेरा प्राणप्यारा पुत्र एक वीर पुरुषकी भाँति शत्रुओंके संहारमें प्रवृत्त होरहा है। यह दृश्य देखकर अंतमें उनकी आत्मा अत्यन्त सन्तुष्ट हुई। मलैसीजीके शरीरपर शत्रुओंने सात तलवारोंके आघात किये थे, उनका घोडा भी रुधिरमें भीज रहा था। पजोनीका पुत्र उस रणक्षेत्रमें अतुल वल विक्रम प्रकाश कररहा था"।

चंदकविने मलैसीके गुणोंकी महिमा की और उनके वलविक्रमकी बड़ी प्रशंसा की है। इतिहास कहता है, कि यही अपने पिता पजोनीके पदपर आमेरके सिंहासनपर विराजमान हुए। साधु टाड् साहवने जिस इतिहाससे इस विवरणको संग्रह किया है, उसमें मलैसीजीके शासन समयकी कोई विशेष घटनाका उल्लेख नहीं था परन्तु रजवाड़ेमें प्रचलित वहुतसी दंतकथाओ व गाथाओ और काव्योंमें पजोनीके उत्तराधिकारीके वहुतसे कीर्ति कलाप तथा राजपूतोंके धर्मपालनके विशेष उल्लेख दृष्टि आते है। एक स्थानमें ऐसा लिखा है कि मलैसीने मांडू नरपतिके साथ भयकर युद्ध करके रुत्राहि नामक स्थानमें विजयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त किया थी।

(१) एक काव्यमें निम्नलिखित कविता वर्णबद्ध हुई है"

पाल्हन पजूनी जीती महोवा कन्नौज लड़ाई
माहूमलैसी जीती रारुत्राहिका
राजा भगवानदास जीती मेवासी लाड
राजा मानसिंह जीती खोतनफौज टुवाकि—

नलसीजीके पीछे निम्नलिखित ग्यारह राजा आमेरके सिंहासन पर क्रमानुसार बैठे;—

१—बीजलदेवजी ।	६—उदयकर्ण ।
२—राज देवजी ।	७—नरसिंहजी ।
३—कल्हणजी ।	८—बनवीरजी ।
४—कुंतलजी ।	९—उद्धरणजी ।
५—जोणसीजी ।	१०—चन्द्रसेनजी ।
	११—पृथ्वीराजजी ।

उपरोक्त ग्यारह राजाओंके शासनके समयके विवरणका उल्लेख इतिहासमें नहीं हुआ है। केवल पृथ्वीराजके शासन समयमें आमेरराज्यका एक विशेष नवीन अनुष्ठान हुआ। पृथ्वीराजके सत्रह पुत्र उत्पन्न हुए, इनमेंसे पाँचकी तो अकालमें ही मृत्यु होगई, और बारह पुत्र स्थित रहे। पृथ्वीराजने उन बारह पुत्रोंको अपने राज्यके बारह अंशोंका भाग करके देदिया। उसीसे आमेरका राजवंश "बाराकोटरि" अर्थात् बारह पुत्रोंके परिवारोंमें विभक्त होकर प्रसिद्ध हुआ है, जिस समय पृथ्वीराजने इन बारह पुत्रोंको राज्यका भाग कर दिया, उस समय आमेर राज्यकी भूमि बहुत थोड़ी थी, इस कारण प्रत्येक राजकुमार जिस परिमित भूखंडको वंशानुक्रमसे भोगता था वह भूमि अत्यन्त सामान्य थी।परन्तु उस समय आमेरराज्यकी भूमिका जितना परिमाण था इस समय उक्त बारह वंशोंमेंके एक२ वंशधर उतनी२ भूमिको भोग करते हैं। पृथ्वीराजके बारह वंशधरोंके इस प्रकार राजभोग करनेमें मलसी और पृथ्वीराजके मध्यवर्ती समयमें राजपरिवारके साथ राजवंशकी कनिष्ठ शाखाओंमें विवाद उपस्थित हुआ था और उसी कारणसे,मूलराज्य की अपेक्षा और भी राज्यकी एक शाखा अधिक प्रबल होगई थी। यह घटना उदयकरणके शासन समयमें हुई थी.उनके पुत्र बालाजीने पिताका महल छोड़कर अमृतसर नाम नगर और छोटे २ देशोंपर अपना अधिकार करलिया। उस समय उनके पुत्र शेखाजीने उस देशके अधीश्वर होकर अपने बाहुबलसे राज्यकी सीमाका विस्तारकर एक प्रबल बल-शाली सम्प्रदायकी सृष्टिकर शेखावाटी नामक राज्यको स्थापित किया। शेखावाटीकी भूमिका परिमाण उस समय दशहजार मील था, शेखावाटीका वृत्तान्त टाड् साहबने अन्य स्थानपर विस्तार सहित लिखा है, हम भी यथास्थान उसे अपने पाठकोंके सम्मुख उपस्थित करेंगे।

पृथ्वीराजके सम्बन्धमें ऐसा जाना जाता है कि उन्होंने सिंधुनदीके किनारे स्थापित देवल नामक एक पवित्र तीर्थमें जाकर यश प्राप्त किया था, परन्तु शोकका विषय है कि वह अपनेही पुत्र भीमके द्वारा मारेगये। इस शोचनीय हत्याकाण्डका वृत्तांत इतिहासमें दिखाई नहीं देता। परन्तु ऐसा जाना जाता है कि उस पितृघातीको

—इसका अर्थ यह है कि पालन और पजोनीने महोबे और कन्नौजके युद्धमें जय प्राप्त की मलसीने खाहिके समरमें मांडूपर अधिकार किया, राजा भगवान्‌दासको मवासीने जय प्राप्त हुई, राजा मानसिंहने खतनके सेनादलको परास्त किया था, इससे जाना जाता है कि एक समय काबुलके बाहिरी देशोंमें भी राजपूत राजाओंने जय प्राप्त की थी।

एक और मनुष्यने उचित दंड दिया। भीम जिस प्रकारसे अपने पिता पृथ्वीराजको मारकर महान् पापमें लिप्त हुए उन भीमके पुत्र आसकर्णने भी उसी प्रकारसें उस पितृघाती पिताके जीवनका नाश किया। भीम पिताके मारनेसे सबके अप्रिय होगये थे और सभी इनको घृणाकी दृष्टिसे देखते थे, राजवंशधरोने भीमको संसारसे विदा करनेके लिये उनके पुत्र आसकर्णसे कहा "कि आप भीमको मारकर राजवंशके कलंकको दूर कीजिये। इसके पीछे तीर्थोंकी यात्रा करके आप अपने पापोंका नाश कीजिये"। आसकर्णने इस संमतिको उचित जानकर अपने पिताके जीवनरूपी दीपकको सर्वदाके लिये शान्तकर दिया। आमेरराजवंशके इतिहासमें इन दो महा पापियोके नाम नहीं लिखे गये है। इस प्रकारके कलंकियोका इस संसारसे नाम लोप होजाना ठीक ही है।

दूलेरायके समयसे लेकर पृथ्वीराजतक प्रत्येक राजा सम्पूर्ण स्वाधीनभावसे राज्यशासन करते आये। दिल्लीके तूंवरवंशीय पृथ्वीराज जिस समय अपने बाहुबलसे भारतके सम्राट् पदपर विराजमान थे, उस समय यद्यपि रावपजोनी उनके यहाँ आधीनरूपसे नियत थे परन्तु राज्यके आभ्यन्तरिक शासनसे तूंवर राजवंशपर किसी समय भी हस्ताक्षेप नहीं किया, विशेष करके पजोनीके साथ पृथ्वीराजका सांसारिक सम्बन्ध होगया था इसलिये वह दिल्लीमें बड़े सम्मानके साथ रहते थे, आमेरके राजाओंमेंसे भारमल्लने सबसे पहिले यवन शासनके निकट अपना मस्तक झुकाया, और उन्होने ही सबसे पहिले यवनसम्राट्के साथ सम्बन्ध बंधन किया; बाबरने जिस समय भारतवर्षमें अपनी प्रभुताका विस्तार किया उस समय भारमल्लने उनकी आधीनता स्वीकार करली। इसके पीछे पठानोंके अभ्युदयके पहिले भारमल्ल हुँमायूके निकटसे आमेरके अधीश्वरस्वरूप "पंचहजारीमनसब" अर्थात् पाँच सहस्र सेनाके नेता पदपर नियत हुए। इतिहासमें भारमल्लके शासनका अन्य कोई विशेष उल्लेख दिखाई नहीं देता।

भारमल्लके पुत्र भगवानदासने आमेरके सिंहासनपर बैठकर यवन सम्राट्के साथ एक और भी घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित किया। सम्पूर्ण भारतवर्षमें सम्पूर्ण वीर और पवित्र वंशीय राजपूतोंमे एकमात्र भगवानदासहीने सबसे पहिले पवित्र क्षत्रियोंके रुधिरको कलंककी स्याहीसें अनुलिप्त किया, भगवानदास बादशाह अकबरके परम मित्र तथा प्रियपात्र थे। नीतिविशारद अकबरने सिंहासनपर बैठकर इस बातको

---

(१) राजपूतोंके इतिहासमें लिखा है कि आसकर्ण पिताको मारकर अपने पापको नाश करनेके लिये तीर्थोंको गये, और जब वहासे लौटे तो यवन सम्राट् (हुमायू वा बाबर) ने इनको राजाकी उपाधिसें नरवरका राज्य दिया था, नरवरराज्यके वंशसे जिस आमेरराजवंशकी उत्पत्ति हुई है वह पाठकोको पहिले ही विदित होचुका है। नरवर- वा आमेर इन दोनो राज्योंमेंसे किसी राज्यके राजकी अपुत्र अवस्थामें मृत्यु होजाय तो आमेर राज्यकी मृत्यु होनेपर नरवर राजके राजकुमार-और जो नरवरराजकी मृत्यु हो तो आमेरके राजकुमार सिंहासनपर विराजमान होते हैं, जयपुरके राजा जयसिंहकी मृत्यु अपुत्रावस्थामे ही हुई थी, तब नरवरराजके एक राजकुमारको आमेरके सिंहासनपर बैठाया गया था।

(२) पृथ्वीराज तूंअरवंशी नहीं थे चौहानवंशी थे।

भलेभांतिसे जानलिया था कि भारतवर्षमें यवनशासनको दृढ़ और चिरस्थाई करना ही कर्त्तव्य है, इस कारण प्रजाके हृदयमें अधिकार करनेके साथ ही साथ भारतके प्राचीन राजाओंको भी अपने हस्तगत करनेके लिये उनके साथ मित्रता करनी अवश्य है। उसने यह भी समझ लिया था कि एकमात्र तलवारकी सहायतासे ही भारतपर अधिकार रखना दुराशामात्र है। भय, कठोर, शासनदंड, तलवारके बल, और इच्छासे जो सामर्थ्य, प्रभुत्व और प्रबलता प्राप्त कीजाती है वह चिर स्थायी नहीं है, और उसका फल विषमय होता है। परन्तु एक प्रसिद्ध शान्तिसंभोग, दया, और न्यायके विचारसे युक्ति पूर्वक अनेकभाषा भाषी अनेक सम्प्रदायोंमें बँधेहुए भारतवासियोंके प्रति जो शासन किया जायगा उससे जो फल उत्पन्न होगा वह स्थायी होगा और वही यवन साम्राज्यके पक्षमें मंगलमय होगा। अकबरने यही सब सोच समझकर भगवानदासकी भांति प्रशंसित राजाके साथ मित्रता की थी। टाड् साहबने लिखा है "कि किस उपाय और किस चतुरतासे अकबरने कछवाहोंके राजाको अपने हस्तगत किया था, यह मुझे विदित नहीं, तब ऐसा जाना जाता है कि उन्होंने कच्छवपतिको उच्च गौरवकी आकांक्षा वा सम्मानकी लालसासे ही भ्रम किया था"। भगवान्दास बादशाह अकबरके इतने अनुगत होगये थे कि वह अपने महान् पवित्र वंशकी पवित्रताकी रक्षा करना भी भूलगये थे। वह भारतके राजाओंमें सबसे पहिले यवनसम्राट्के साथ वैवाहिक सम्बन्ध करनेमें कुछ भी लज्जित न हुए। भगवानदासकी कन्याके साथ कुमारसलीमका (जिसने पीछे जहाँगीर नाम धारण किया) विवाह होगया उस विवाहके फलस्वरूपमें अभागे खुसरोका जन्म हुआ था।

---

(१) मुसलमान इतिहासवेत्ताने लिखा है कि ९९३ हिजरी सन् (१५८६ ई०) में यह विवाह हुआ था, इस समय आमेरराजके वंशमें स्वयं आमेरराज भगवान्दास * उनके दत्तक पुत्र मानसिंह और उनके पोते यह तीनोंजने सम्राट्की सेनामें अधिक सम्मान प्राप्त थे, विशेष करके मानसिंहने इस समय सबसे अधिक प्रसिद्धि प्राप्त की थी, जब बादशाहके भाई विद्रोही होगये, उस समय मानसिंहने उनके उस विद्रोहको शान्त करादिया, औरोंकी अपेक्षा राजा भगवानदास + जिस समय सम्राट्वंशीय सेनानीके आधीनमें कश्मीरके युद्धमें नियुक्त थे उस समय मानसिंहने खैबरके कठिन अफगानोंको दमन किया और उनके पुत्र काबुलके राजप्रतिनिधिके पदपर नियत हुए। फरिस्ताके इतिहासमें इसका वर्णन भलीभाँतिसे लिखा है [जिल्द २]

* यहां सब जगह भगवानदासका नाम गलत लिखा गया है और मानसिंह भी उसका दत्तक नहीं था और न भगवान्दासने शाहजादे सलीमको अपनी बेटी दी थी। टाड् साहबको सही इतिहास नहीं मिला जिससे ऐसी गलती हुई है असल बात यह है कि राजा भारमल्लने पहिले अकबरसे अपनी बेटीका विवाह किया। फिर उसके बेटे भगवन्तदासने शाहजादे सलीमको अपनी बेटी दी। मानसिंह भगवन्तदासका बेटा था, भगवन्तदासका भाई भगवान्दास था वह आमेरका राजा नहीं था, अकबरने उसको बांका कछवाहाकी पदवी दी थी उसकी औलादमें बांकावत कछवाहे लिवाणके राजा हैं।

+ यह भी लगत है भगवानदास नहीं भगवन्तदास है क्योंकि मानसिंह जगत्सिंहका बेटा नहीं राजा भगवंतदासका बेटा था और जगत्सिंह तो मानसिंहका बेटा था। माधोसिंह मानसिंहका भाई था, सूरतसिंह नहीं सूरसिंहभी राजा भगवंतसिंहका बेटा और मानसिंहका भाई था।

मानसिंहके सम्बन्धमें इतिहासवेत्ता टाड् साहब लिखते हैं कि भगवानदासके भतीजे उत्तराधिकारी मानसिंह अकबरकी सभामें उज्वल मणिस्वरूप थे । सम्राट्के सहकारी होकर उन्होंने बहुतसे कठिन २ कार्योंका भार लिया था, तथा खुतनसे समुद्रतकके समस्त देशोंको अपनी ही तलवारके बलसे यवनराज्यके अधिकारमें किया था । मानसिंहने उड़ीसाको अपने अधिकारमें कर तथा आसामको जीत वहाँके राजाको यवनसम्राट्के अधीन किया था, इनके बाहुबलसे भयभीतहो काबुलने भी आधीनता स्वीकार की थी वह क्रमानुसार बंगाल, विहार, दक्षिण और काबुलके शासनकर्ता हुए । सम्राट् अकबरने राजपूत राजाओंको सिंहासनके साथ सम्बन्धमें बांधकर जिस बलके बढानेकी चेष्टा की थी मानसिंहने अपने व्यवहारसे उसे प्रमाणित करदिया, वह निर्विघ्नताका देनेवाला नहीं है उस सम्बन्धसे ही साम्राज्यके ऊपर उन राजपूतोंकी अत्यन्त प्रभुता चलतीहुई दिखाई देती थी और उसी कारणसे सम्राट्के उद्देश-साधनमें नित्य उपद्रव होते रहते थे । राजा मानसिंह उस प्रभुतामें इतने प्रबल होगये थे, अधिक क्या कहैं, सम्राट् अकबर अपनी प्रबल सामर्थ्य और प्रतिपत्तिके समयमें भी उस वेगका ह्रास करनेके लिये—पाशुविक इच्छाचारी राजाओंने सचर और अचरके ऊपर जिसका प्रयोग किया था, उसी—विष प्रयोग करनेमें सन्नद्ध हुए, यह तो पहिले ही कह आये हैं कि सम्राट्ने मानसिंह पर विष प्रयोग करके किस प्रकारसे अपना नाश किया था"। "कर्नल टाड्की कथासे जाना जाता है कि मानसिंहकी उस प्रबल प्रभुताको असहनीय जानकर सम्राट् अकबरने अत्यन्त घृणित उपायसे अर्थात् विष प्रयोगके द्वारा मानसिंहके जीवनको नाश करनेकी चेष्टा की थी, परन्तु अपने दुर्भाग्यसे उस विषको अज्ञानतासे खाकर स्वयं ही प्राण हीन होगया, परन्तु अन्य किसी इतिहासमें हमें इसका कोई प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं मिला । सम्राट अकबरकी विषपान करनेसे मृत्यु नहीं हुई, अन्यान्य इतिहासोंसे तो ऐसा ही जाना जाता है"।

कर्नल टाड् साहब लिखते हैं, कि "सम्राट् अकबरने जिस समय मृत्युकी शय्यापर शयन किया, उस समय अपने भानजे खुशरोको भारतवर्षके सिंहासनपर बिठानेके

(१) टाड् साहब लिखते हैं, कि भगवानदासके और भी तीन भ्राता थे उनमें एकका नाम सूरतसिंह, दूसरेका माधोसिंह और तीसरेका जगत्सिंह था, मानसिंह इसी जगत सिंहके पुत्र थे"।

(२) यवनोंके इतिहास फारिश्ताने कहा है, कि मानसिंह जब उडीसाको जय करचुके तब सम्राट् अकबरने इनको १२० हाथी उपहारमें दिये थे।

(३) फारिश्ता इस बातको स्वीकार करता है । उसने लिखा है कि जिस समय मानसिंह केवल कुमार उपाधिधारी थे, उस समय विहार हाजीपुर, और पटनेके शासनकर्ता पदपर नियुक्त हुए और उसी वर्षमें अर्थात् १५८९ ईस्वीमें उनके बड़े चचा+राजा भगवानदासकी मृत्यु होगई; और उनकी नंदिनीके गर्भसे जहांगीरके औरससे खुसरोका जन्म हुआ, मानसिंहने बंगालेको जीतकर प्रतापादित्यको परास्त किया, बंगालेके पाठकोंसे यह बात छिपी नहीं है ।

+ बडे चचा नहीं राजा भगवन्तदास मानके पिता थे ।

हेतु राजा मानसिंहने षड्यंत्र जालका विस्तार किया था, यदि इस बातको बादशाह जानजांते तो समस्त राजनैतिक भविष्य उपद्रवोको शान्त करनेके लिये कुमार सलीमके मस्तक पर राजमुकुट अर्पण करनेके अभिलाषी होते। परन्तु कुछ ही कालके लिये इस समय उक्त षड्यन्त्र स्थित रहा और राजा मानसिंह बंगालके शासन पर भेज दिये गये परन्तु उस षड्यन्त्रका विस्तार बढ़ता गया, कुमार खुसरोको चिरकालके लिये कारागारमें रक्खा और इनके सेवकोंकी अत्यन्त शोचनीय रूपसे मृत्यु होगई। राजा मानसिंहकी बुद्धि अत्यन्त तीक्ष्ण थी, इस कारण उन्होंने उस समय प्रगटमें उस विद्रोहका बदला नहीं दिया, परन्तु छिपे २ भागिनेयके पक्षको समर्थन करते रहे, राजा मानसिंह बीस हजार राजपूतोंकी सेनाके अधिनायक होनेसे प्रबल बलशाली थे, इस कारण उनको प्रकाशमें दमन करना बादशाहकी सामर्थ्यसे बाहर था; परन्तु देशीय इतिहाससे जाना जाता है कि सम्राट्ने दश करोड़ रुपये रिश्वत देकर मानसिंहको अपने हस्तगत करलिया था। मुसल्मान इतिहासवेत्ताकी उक्तिके मतसे जाना जाता है कि राजा मानसिंहने १०२४ हिजरी (१६१५ ईस्वी) में बङ्गालमें प्राण त्याग किये, परन्तु इतिहाससे यह भी जाना जाता है कि उत्तराञ्चलमें खिलजी जातिके साथ युद्ध करनेको गये थे वहां इससे दो वर्ष पहिले मारे गये थे"।

राजा भगवानदासके स्वर्गवासी होनेपर मानसिंह जयपुरके सिंहासन पर बैठे। मानसिंहके शासन समयमें आमेर राज्यने भारतवर्षमें अन्यान्य राज्योंकी अपेक्षा अधिक प्रसिद्धि प्राप्त की, मानसिंहको सम्राट्के यहां जितना सम्मान मिलता था उतना ही यह अपने बाहुबलसे राज्यपर अधिकार करते जाते थे, और अनेक देशोंसे जो धनरत्न हरण कर २ के लाते थे, उससे उस छोटेसे आमेर राज्यकी क्रमशः धनसम्पत्ति भी बढ़ती जाती थी। दूलेरायके पीछे आमेर राज्य रजवाड़ेमें एक सामान्य राज्य गिना जाता था. परन्तु मानसिंहके समय उसी सामान्य राज्यकी सीमा वृद्धिके साथ ही साथ भारतवर्षमें उसकी प्रसिद्धि भी बढ़ गई। कच्छवगण अबतक भारतवर्षमें इतने वीर नहीं गिने जाते थे, परन्तु राजा भगवानदास और मानसिंहके समयसे कच्छवोंके दलने खतनसे समुद्रतक भारतके प्रत्येक प्रान्तमें अपने अतुल पराक्रम और बाहुबलसे अपनी जातिके गौरवको बढ़ा लिया था, राजा मानसिंहकी सेना बादशाहकी सेनासे अधिक बलवान् और साहसी तथा वीर गिनी जाती थी। राजा मानसिंह भारतवर्षमें यवनराज्यके शासनमें चिरस्मरणीय और प्रशंसनीय अभिनय करनेके पीछे स्वर्गको चलेगये. इसके पीछे उनके पुत्र रावभावसिंह आमेरके राजसिंहासनपर बैठे। स्वयं यवनसम्राट्ने उनका अभिषेक करके उन्हें सम्मान सूचक "पंचहजारीमनसब" की उपाधि दी। इतिहाससे यह जानाजाता है, कि यह अत्यन्त निर्बोध और मद्यपानमें

---

(१) राजपूत इतिहाससे जाना जाता है कि मानसिंह १६९९ संवत् अर्थात् १६४२ ईसवीमें स्वर्ग सिधारे।

(२) भगवन्तदास।

अधिक रत थे। कई वर्ष राज्य करनेके पीछे उसी अधिक मदिराके पीनेसे सन् १०३० हिजरीमें प्राण त्याग किये। उनके राज्यके समयमे कोई विशेष घटना नहीं हुई।

भावसिहकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र महासिह राजसिहासनपर बैठे, परन्तु यह भी पिताकी भी समान अत्यन्त इन्द्रियलोलुप और मदिरापानमें आसक्त थे, इस कारण बहुत थोड़े दिनोमे ही इस ससारको छोड़गये। राजा मानसिंह जैसे महावीर नीतिज्ञ और असीम साहसी थे, उनके पुत्र और पौत्र भी उसी भाँति उनके सम्पूर्ण गुणोके विपरीत हुए, आमेर राज्यकी प्रभुता और प्रताप इससे एकबार ही क्षीण होगई इस समय इस सुअवसरमें जोधपुरके अधीश्वरोने सम्राट्के यहाँ अपने प्रताप और प्रभुताईका विस्तार करलिया, इतिहाससे विदित होता है कि महासिहकी मृत्युके पीछे आमेरके सिंहासन पर कौन बैठेगा? यह बड़ाभारी प्रश्न उपस्थित था। विख्यात राजपूत-नन्दिनी जोधाबाईके साथ जहाँगीरका विवाह हुआ था उसे हमारे पाठक यथास्थान पढ़चुके होंगे, उस विख्यात जोधाबाईके अनुरोधसे सम्राट् जहाँगीरने जगत्सिहके पोते जयसिहको आमेरका सिंहासन देदिया। राजपूतोंके इतिहास लेखकने कहा है कि इससे सम्राट्की प्रियतमा रानी नूरजहाँ अत्यन्त सुतुष्ट हुई थी। उक्त देशीय इतिहासवेत्ता लिखगयेहैं कि आमेरका सिंहासन किसको दिया जाय रनिवासमें जोधाबाई बादशाहके साथ इसका निश्चय करले, जयसिह उस समय अतःपुरके नीचे थे। बादशाहने उस समय अन्तःपुरके आरामदेसे निम्नस्थ जयसिंहको आमेरका राजा स्वीकार कर अभिवादन पूर्वक कहा-कि "जोधाबाईको सलाम करिये, यही आपके राजपदप्राप्तिका मूल है"। परन्तु रजवाडेकी चिर प्रचलित रीतिके अनुसार राजपूत राजा कभी किसी राजपूत कुमारीको सलाम नहीं कर सकते, इस कारण बादशाहकी आज्ञा होने पर भी जयसिंह उस रीतिका तिरस्कार न करसके और बोले, "कि मै आपके रनिवासकी अन्यास्त्रियोको सलाम कर सकता हू परन्तु जोधाबाईको किसी भाँति भी सलाम नही करसकता"। परन्तु जोधाबाईने इससे अपना कुछ भी अपमान न समझा वरन मन्दमुसकानसे कहा "इससे कुछ हानि नहीं है, मैंने आपको आमेरका राज्य दिया"।

राजा मानसिंहके पीछे दो अयोग्य उत्तराधिकारियोसे कच्छवजातिके गौरवकी कांति अत्यन्त ही हीन-प्रभा होगई थी, राजा जयसिहने आमेरके सिंहासनपर बैठकर अपने बुद्धिबल, नीतिबल और बाहुबलसे उस कलकको दूर करके कई वर्षमे आमेर राज्यके लुप्त हुए गौरवको फिरि प्रकाशमान कर दिया। जयसिंह मिर्जाराजाके नामसे विख्यात थे, मानसिंहने जिस प्रकार अकबरके शासन समयमे राज्यका विस्तार तथा सामर्थ्य और सम्मानको बढ़ाया था, और बहुतसे युद्धोमे जिस भाँतिसे अपनी प्रबल सामर्थ्य और बाहुबलका परिचय देकर अक्षयकीर्ति प्राप्त की थी मिर्जा राजा जयसिंहने भी उसी प्रकार दुर्दान्त औरगजेबके शासन समयमे

(१) महासिंह भावसिंह बेटे नहीं थे मानसिंहके कुंवर जगतसिंहके बेटे थे।

यवन साम्राज्यके वहुतसे उपकार किये। औरंगजेव जिन संग्रामोमें नियुक्त थे, प्राय: जयसिंहने भी उन्हीं युद्धोंमें लिप्त होकर जयलक्ष्मीको आलिंगन किया। औरंगजेवने इनकी इस वीरतासे संतुष्ट होकर उन्हें छः हजारीमनसव पुरस्कारमे दिया। भारतवर्षके इतिहासमें पाठकोंने औरंगजेवके शासनकालीन इतिहासमें इन्हीं जयसिंहकी वीरताकी कहानी भलीभाँतिसे पढ़ी होगी। जो असीम साहसी महावीर शिवाजी महाराष्ट्रदेशके आदि नेता थे, जिन शिवाजीके नामसे सम्राट्की सेना कंपायमान होती थी, जिन शिवाजीके साथ युद्ध करके वादशाहकी सेना वारम्वार परास्त हुई थी, उन शिवाजीको यही आमेरपति महाराज जयसिंह वन्दी करके दिल्लीके वादशाह औरंगजेवके यहां ले आये थे। जयसिंहके शिवाजीको वंदी करके लानेका वर्णन भारतके इतिहासमें भलीभांतिसे लिखा हुआ है, इस कारण हमने उस विपयको यहां लिखना आवश्यक न समझा। यद्यपि राजा जयसिंहने विजातीय विधर्मी औरंगजेवकी आज्ञासे स्वदेशीय महावीर शिवाजीको वंदी किया था तथापि उन्होंने राजपूत वीरोंकी समान शिवाजीके सम्मुख यह शपथ की थी कि वादशाह आपका एक वाल भी स्पर्श नहीं कर सकैगा, इसका साक्षी मै हूं। शिवाजीने इस राजपूतकी प्रतिज्ञापर ही दृढ़ विश्वास करके अपनेको वंदी करा दिया था। परन्तु शिवाजीके आते ही औरंगजेव अत्याचार करके इनके जीवनके नाशकी चेष्टा करने लगा, तव राजपूत राजा जयसिंहने वादशाहका कुछ भी भय न करके अपनी शपथको पालन करनेके लिये शिवाजीको दिल्लीसे भगा देनेमें विशेष सहायता कर राजपूत नामके गौरवकी रक्षा की। इसी कारणसे वादशाह जयसिंहपर अप्रसन्न रहता था, यह हमारे पाठकोंसे छिपा नहीं है। दिल्लीके सिंहासन लेनेके समय राजकुमारोंमे महा विवाद उपस्थित हुआ, मिर्जा राजा जयसिंहने पहिले तो सुलतान दाराकी ओरका पक्ष लिया और फिर उसके साथ विश्वासघात किया, इससे दाराके सिंहासन प्राप्तिकी आशा एकवार ही जाती रही। जयसिंह वारम्वार नीतिज्ञताके वलसे कईएक कार्योंमे प्रधानता प्राप्त करके अत्यन्त गर्वित होगये थे, और इसी कारणसे नरराक्षस औरंगजेवने उनका अनिष्ट करनेके लिये प्रतिज्ञा की थी। देशीय इतिहासवेत्ता लिखगये है कि मिर्जा राजा जयसिंहके आधीनमे वाईस हजार अश्वारोही सेना थी, और वाईसजने प्रथम श्रेणीके संभ्रान्त करदेनेवाले देशी जागीरदार भी उनके आधीनकी सेनामें नियत थे। जयसिंहने उन महावीरोंसे युक्त हो राजदरवारमें वैठकर दो हाथोमें दो गिलास लेकर एकको दिल्ली और दूसरेको सितारा कहकर एकको तो वड़े वेगसे पृथ्वीमे गिरा दिया और दूसरेको चूर्ण २ करके कहा, सितारेके पतन होनेसे दिल्लीका भाग्य मेरे दहिने हाथमें रहा, मैंने विचारा है कि इसी भाँति सरलतासे दिल्लीके भाग्यको पतन कर सकता हूँ"। पाठकगण इस उक्तिसे सरलतासे जान सकैंगे मिरजा राजा जयसिंह किस प्रकारके दुर्दमनीय क्षत्रियतेजसे प्रकाशमान थे, उनके द्वारा ही सतारापति शिवाजीका पतन हुआ, और यदि वह विचारते तो औरंगजेवका भी पतन करसकते थे, महावीर और प्रवल प्रभुता युक्त मनुष्यके अतिरिक्त और कौन ऐसी स्पर्द्धा करसकता है परन्तु यह स्पर्द्धा ही उनका

कालस्वरूप हुई, क्रम २ से वादशाह औरंगजेवके कानोतक भी यह वात पहुच गई कि राजा जयसिंह इस प्रकारसे सबके सामने कहा करता है, यद्यपि औरंगजेव प्रवल पराक्रमी वादशाह था तथापि वह जयसिंहके अनिष्ट साधनमें प्रत्यक्ष रूपसे कोई उपाय करनेका साहस न कर सका। दुराचारी औरंगजेब अपने शासन समयमे केवल तलवार और विषकी सहायतासे भारतके प्रधान २ राजपूत वीरोके प्राण नाश करके निष्कंटक हुआ था, जिस उपायसे उसने जशवन्तसिंहके जीवनका नाश किया था, उसी घृणित उपाय से उसने जयसिंहको भी इस संसारसे विदा दी, उसने अन्य कोई उपाय न देखकर अंतमे राजा जयसिंहके कुटुम्बमे अपना षड्यंत्र चलाया, राजपूतोकी रीतिके अनुसार वड़े राजकुमारको ही पिताका सिंहासन प्राप्त होताहै, छोटेको कदापि सिंहासनकी प्राप्ति नहीं होसकती, परन्तु दुराचारी औरंगजेबने जयसिंहके छोटे पुत्र कीरतसिहको अनेक भाँतिके लोभ दिखाकर अपने वशमें करके कहा कि "यदि आप अपने पिता जयसिंहको मारडाले तो मैं राजपूतोकी रीतिके मस्तक पर लात मारकर आपके शिरपर आमेरका राजमुकुट अर्पण करूँगा, आपके वड़े भाई रामसिंह किसी प्रकार भी राजसिंहासनपर अपना अधिकार नही करसकते। अभागे निर्वोध कीरतसिहने पापात्मा ओरंगजेबके षड्-यंत्रमे फँसकर उसके मनोर्थको पूर्ण करनेमे कुछ भी विलम्ब न किया। राजपूत कुलांगार कीरतसिंहने अफीमके साथ विष मिलाकर अपने जन्मदाता जयसिंहको पिलाकर उन्हें मारडाला। जयसिंहने उस कुलकलकी पुत्रके हाथसे विप पानकर प्राण त्याग दिये। पितृहन्ता कीरत सिंह अपने महापापके पुरस्कारस्वरूप राजतिलक प्राप्तिके लिये अंतमे नरपिशाच औरंगजेबके सन्मुख गया, बादशाहने उसका मनोरथ पूर्ण न करके केवल कामा नामक एक देश उसे जागीरमें दे दिया।

महावीर जयसिंहके प्राण त्याग करने पर उनके वड़े पुत्र रामसिह आमेरके सिंहासनपर बैठे। जयसिहको छः हजारी मनसब प्राप्त हुआ था, परन्तु रामसिंह "चारहजारी मनसब" प्राप्त कर आसामके निवासियोके साथ युद्ध करनेको गये। संवत् १७४६ मे रामसिंहकी मृत्यु होनेपर उनके पुत्र विशनसिह आमेरके राजपदपर स्थित हुए, इस समय पुनर्वार आमेरका पूर्व गौरव दिन२ क्षीण होता आया था, अव बादशाहके यहाँ आमेर राजकी उस प्रकारकी प्रभुता और सम्मान नहीं था। इस कारण विशनसिंहको "तीनहजारीमनसब" मिला। परन्तु उन्होने वहुत दिनोंतक राज्यसुख नहीं भोगा। "वे संवत् १७५६ मे वहादुरशाहके साथ कावुलको गये थे वहीं उनकी मृत्यु हुई"।

द्वितीय अध्याय २.

प्राचीन और मध्य समयके क्षत्रिय राजगण-पश्चिमी और प्राच्य जगत्में भावी संमिलन, हिन्दू जातिमें भविष्य आलेख्य-सवाइ जयसिंहका राज्याभिषेक-आज़िमशाहके साथ उनका योगदान-सम्राट्का आमेर राज्यपर खालसा करना-जयसिंहका बादशाहकी सेनाको जयपुरसे भगाना-उनका स्वभाव और चरित्र-उनकी ज्योतिष विद्याकी अभिज्ञता-दिल्लीका तख्त पाकर गोलयोगके समयतक उनका आचरण-बहुत विवाहोंके विषमय फलकी एक प्रमाण सूचक घटना-जयसिंहकी गुणावली-जयसिंहके अश्वमेध यज्ञ करनेकी इच्छा-उनके संग्रह किये और लिखेहुए दुष्प्राप्य, और मूल्यवान् बहुतसे ऐतिहासिक और पौराणिक तथा वैज्ञानिकग्रन्थ-उनकी मृत्यु।

जिसने इस विशाल इतिहासरूपी समुद्रके भीतर प्रवेश किया है, उसके नेत्रोंके सम्मुख एक विशेष चित्ताकर्षक दृश्य आता है वीरमाता भारतभूमिकी गोदमें सूर्य और चँद्रवंशी क्षत्रिय जाति ही वीरनेता रूपसे चिरस्मरणीय अभिनय करती आई है, रामायण और महाभारत इत्यादि इतिहास-मूलक महा काव्योंमे हम उसी चँद्र और सूर्यवंशी वीरनेताओके अतुल बल विक्रम, अमित साहस और प्रबल प्रतापके वर्णन हैं उनकी अनुपम और अक्षय कीर्ति अद्यावधि स्थिर है। उन्हींके वंशधरोंका वर्णन जो इस इतिहासके पाठकोंने पढ़ा है क्या उससे यह प्रगट नहीं होता कि वे अपने ही पूर्व्व पुरुषाओंके समान यश भाजन होनेके योग्य है, यदि वे भारतकी स्वाधीन अवस्थाके समय अथवा वालमीक एवं व्यासजीके समयमे जन्मलेते तो वे केवल अंग्रेजोंद्वारा लिखित रजवाड़के इतिहासमें ही नहीं, एक राजपूत जातिमें ही नहीं, वरन् समस्त संसारमे प्रशंसनीय यश और गौरवके भागी होते। उनके यशरूपी सूर्यकी उज्वल किरणोंसे समस्त भूमण्डल जगमगा उठता । महात्मा व्यास और वाल्मीकजीकी अक्षय लेखनी उस अमृतमय काव्यमें उनके गुणोंको संग्रह करके भारतके गलेमें अनुपम उपहार दान करती, इसमें किंचित् भी संदेह नहीं। हम महाभारत और रामायणमें जिन क्षत्रिय वीरोंके प्रताप, प्रभुत्व, क्षमता, साहस, प्रतिभा, उद्दीपना और शूरवीताके स्रोते वहतेहुए देखते हैं, जिनका कार्य कलाप वीरविक्रम आजतक इस अन्तःसार शून्य पतित जातिके हृदयमें भी जातीय गर्वदर्पको उदित करदेता है, यदि उन वीरोंके साथ मध्य समयके राजपूत वीरोंको बराबरी करीजाय, तो सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये अवश्य ही स्वीकार करना होगा कि मध्य समयके एक २ राजपूत वीर उनकी अपेक्षा भी ऊँची प्रशंसाके योग्यपात्र होगये है। मेवाड़, मारवाड़-बीकानेर-जयसलमेर और जयपुरके इतिहासमें कठिन यवनशासनमे भी एक जन राजपूत अपने बाहुबलसे, तलवारके बलसे और राजनीतिके बलसे जिस प्रकार अक्षय कीर्तिको स्थापित कर यवनसम्राट्के ऊपर अपना आधिपत्य स्थापित करगये हैं, उसकी प्रशंसा नहीं की जासकती। यदि वह विचारते तो भारतवर्षसे यवनराज्यको लोप करसकते थे, परन्तु केवल

विधिकी वासनासे उनके हृदयमें ऐसी प्रेरणा नहीं हुई। जिन्होंने इतिहास पर ध्यान दिया है वही इस बातको मानेंगे कि यवन राज्यके शासनका जो प्रचड प्रताप फैला था,उसका कारण एकमात्र राजपूत राजाओंका बाहुबल था। बादशाह अकबरके समयमें देशीय राजा यवन शासनकी स्थापना दृढ़ता और गौरवसाधनके लिये एक दूसरेकी प्रति योगिता करदेनेमें लगे थे, यदि राजनीति चतुर अकबर इस प्रकारसे देशीय राजाओंको पद मर्यादा, सम्मान भूवृत्ति राजवंश धन पुरस्कार और अंतमे विवाहिक सम्बन्धमें बॉधकर अपना सिंहासनके साथ संयुक्त न करता तो उस समयमे यवनराज्यका वह प्रवल प्रताप और किसी भी उपायसे विस्तार न पासकता। यद्यपि औरंगजेबने अपनी चतुरताके बलसे ही भारतवर्षमे समस्त राज्योंकी अपेक्षा अपना प्रताप और अपनी प्रभुताका विस्तार किया था, परन्तु वह किसी देशीय राजाओंकी सहायता विना नहीं बढ़े। हॉ उसने अपनी कूटराजनीति, चातुरी, छलकपट, भयदंड और विषकी सहायतासे देशीय राजाओंको अपने हस्तगत कर तो लिया था परन्तु विचारवान् अपनी दिव्य दृष्टिसे देखते हैं कि उसीका फल स्वरूप यवनराज्यका विनाश साधन हुआ। उसका वह महान प्रताप और प्रभुता एक वार ही रसातलमे जाकर चूर्ण २ होगई। यदि औरगजेब भी अकबरकी समान मित्रता आत्मीयता आर्द्रता और प्रीतिके द्वारा देशीय राजाओंको हस्तगत करलेता तो उसकी मृत्युके उपरान्त यवनराज्यकी ऐसी दुर्दशा कभी न होती। औरंगजेबकी मृत्युके पीछे वह राजपूत राजा भारतवर्षसे यवनराज्यका नामतक लुप्त कर देते परन्तु इतिहासका एक महान कार्य सिद्ध होगा इसी कारण उस समय उनको उस आशाके विरुद्ध भिन्न २ बाधा इकट्ठी हुई, और उस भावी महान्कार्यके निमित्त ही महाराष्ट्र जातिने अपनी तलवारकी सहायतासे यवनराज्यके विरुद्ध और सम्पूर्ण प्राचीन राजाओंके विरुद्ध खड़े होकर उनके ऊँचे मस्तकोको झुका दिया।

वह महान कार्य क्या है? पश्चिमी और पूर्वी परिणय! जगत्के इतिहासकी ओर जिनकी दृष्टि गई है वही अपने ज्ञानके नेत्रोंसे देखते है कि एक अलौकिक ऐतिहासिक घटनाके निमित्त ईश्वरने विचित्र उपाय निर्देश करदिया था, यह भारत-भूमि ही सृष्टिकी बाललीलाका क्षेत्र है, धर्मशिक्षा सभ्यता विज्ञान यह इसी भारतकी सृष्टि है यहींसे जो दूसरे देशोमे विद्या गई है इसी विद्याने उन देशोंको उन्नत किया है, इसीने पश्चिमी देशोको ऊंचा बनाकर पूर्वदेशोको पूर्वावस्थामे रक्खा है, ज्ञानी पुरुषोका अनुमान है कि उसी पूर्व प्रकारसे सब शिक्षाएँ ज्ञान, और विज्ञान पश्चिमसे पूर्वमे आकर पुनः पूर्व्वीय देशोंके उन्नतिके शिखरपर पहुचावेगी अतएव उन सब महान् ऐतिहासिक घटनाओंके सयोगका भार एक मात्र अंग्रेजो के ही ऊपर रक्खा गया है। अंग्रेज देशियोके ऊपर चाहै कितने अत्याचार क्यो न करैं न्यायान्यायके उपायसे चाहैं भारतके समस्त धनको हरण करले, गवर्नमेण्ट चाहै कितनी ही स्वेच्छाचारी क्यो न हो परन्तु भारतभूमिमें या भारतकी भिन्न २ जातियोमे जितने पश्चिमके रत्न हैं वह सभी अंग्रेज जातिकी सहायता कल्याण और अनुग्रहसे प्राप्त हुए हैं। पश्चिम और प्राच्यके मिलन होनेसे यह प्राचीन आर्यक्षेत्र फिर

एक दिन ऊँचे आसनपर अधिकार करैगा। आर्यवंशधर फिर एक दिन नवीन लीलामें लीन होकर पश्चिमी शिक्षा और विज्ञानके साथ प्रशंसित होकर ज्ञानवुद्धिके संयोगसे इस जगत्‌मे नवीन अभिनय कर भाग्यके पूर्व दृश्यको दिखावेगे। वह दृश्य, वह अभिनय, वह पाश्चत्य और प्राच्यके संमिलनसे जव जगत् उन्नतिके ऊँचे मार्गपर जायगा तव आर्यवंशधरोंकी कीर्तिका गौरव आकाशमें जाकर कीर्तिमान होगा। आर्यवंशधर फिर नवीन युगमें नवीन जीवनमें, नवीन जातिरूपसे संसारमे अनन्त लीलाओंका अभिनय करेगे, इसको अपने हृदय पर अंकित करनेके लिये विचारवान ही समर्थ हैं। जिनको भीतरी दृष्टि नहीं है, वह अंग्रेजी राज्यमें किसी विषयका भी परिवर्तन वा कोई सुलक्षण नही देख सकते, वह केवल भारतके धननाश वलनाश और अंग्रेजोंके चरण प्रहारसे ही देशीयोंके जीवनका नाश होता हुआ देखते है, परन्तु जिन्होंने धीरज धरकर स्थिरभावसे अन्तर्दृष्टिसे देखा है, वही जान सकते है कि उस धननाश-वलनाश और प्राणनाशमें प्रकाण्ड पश्चिमी प्रकाशने आकर, प्रत्येक भारतवासीके नेत्रोंके सम्मुख उजेला किया है, अलक्ष्यमें एक महान गन्तव्य मार्गकी रेखा उनके नेत्रोंको प्रकाशित किये देती है। जो प्राचीन हिन्दूजाति, जगत्‌को शिक्षादाता दीक्षागुरुके पदसे रहित होकर आज अन्तःसारशून्य पराये मुखकी अपेक्षा करनेवाली परायी आशावाली दूसरेके चरणोंकी सेवा करनेवाली गिनीगई है, उस जातिके मंगल और उन्नतिके लिये ही पश्चिमी और पूर्व शिक्षाका संमिलन हुआ है। हिन्दूधर्म अभेद्य हिमालयकी समान अचल और अटल है, हिन्दूधर्मकी मूलभित्ति अक्षय पत्थरके अक्षय उपकरणसे वनी हुई है। यद्यपि आजकल चारोंओर भयंकर कोला-हल मच रहा है कि "हिन्दूधर्म गया, हिन्दूसमाज गई, अदलवदलके मुखमे समस्त ही हिन्दू समाज गई"। परन्तु विचारवान देखते हैं कि हिन्दूधर्म जानेवाला नहीं है। केवल उस पूर्व पश्चिमके सम्मिलनसे ही संसारके हितके लिये उस हिन्दूजातिकी सामाजिक रीतिनीति, आचार व्यवहार शिक्षा, सभ्यता, ज्ञान, वुद्धि, शिल्पविज्ञान, प्रतिभा उद्दीपना यह नवीन संस्कार और नवीन भावसे नवीन युगमें उपयुक्तरूपसे भविष्यतमें संगठित होगी, इस समय केवल वही आभासमात्रसे प्रकाश पारही है। उस नवीन युगमे हिन्दूधर्म नहीं जायगा, हिन्दूजाति नहीं जायगी, हिन्दुओका कुछ भी नही जायगा, सव यही रहैगा, नवीन जीवन पाकर नवीन उपकरणसे तथा नवीन रीतिसे समस्त नवीन वलसे वलवान होकर जातिको फिर ऊँचे शिखरपर पहुँचा देंगे। अधिकतर धर्मकी-समाजकी-तथा जातिके सम्पूर्ण दृश्य विजातीय, विदृश्य-विपरीत और प्रार्थना रहित वोध होती है, वह सभी उपद्रवोंके मुखमे पूर्ण होकर समयके उपयोगी रूपसे प्रयोजनीय रूपसे फिर तैयार होगी। समयके प्रखर स्रोतेको रोकनेकी किसकी सामर्थ्य है? सहस्र वलशाली राजा वा प्रवल सामर्थ्यवाली समाज कभी भी उस स्रोतेको निवारण नही करसकते। समय आनेपर समाज कार्यको अवश्य ही करैगी। एक देश-एक जातिकी अवस्था, कभी भी चिरकालतक समान नही रह सकती, यह वात कौनसे इतिहास लेखकको विदित नही है? जो हिन्दूजाति असंख्य उपद्रव और अनेक

भाँतिकी पीड़ाओको सहन करके आजतक भी भारतवर्षमे व्याप्त हो रही है,जो हिन्दूधर्म कठिन यवनसम्राट्के भयंकर आक्रमण और अत्याचारोसे किंचित् भी विचलित न हुआ, वह जाति, धर्म, फिर एकदिन अवश्य ही संसारमे शांतिमंगल और संतोपकी तरंगको प्रवाहित करेगा, इसका अनुमान करना चिन्ताशील मनुष्योपर ही निर्भर है।

उस पूर्व पश्चिमके सम्मिलन साधनके लिये ही अंग्रेजोका भारतमें आना हुआ, उस पूर्व पश्चिमके सम्मिलनके लियेही अग्रेजोद्वारा यवनशासनका विनाश साधन हुआ और पूर्व पश्चिमका शुभ परिणय सिद्ध करनेके निमित्त सम्पूर्ण सामर्थ्य और सत्व सम्पन्न होकर भी राजपूत राजा दिल्लीके सिंहासनपर बैठनेमे यत्नशील न हुए। उनमे सवाई राजा जैसिंह दूसरे थे उन्हीके सम्बन्धका इतिहास इस अध्यायमे लिखा जायगा, राजपूत राजवंशमे जयपुरपति सवाई जयसिंह सबसे ऊँचे सिंहासन प्राप्तिके योग्यथे, यही महाराज इतिहासके सम्मुख महा सम्मानके पात्र हुए, प्रवादियोके मुखपर सबसे पहिले इन्हींकी प्रशंसा होती थी, जिन्होंने भारतके इतिहासको पढ़ा है वे अवश्य ही इसके पूर्ण आभासको सग्रह करलेंगे। इस विशाल इतिहास कल्पद्रुममें पाठकोने जिन राजाओंके चरित्रोंको पढ़ा है उन सभी राजाओको केवल जातीय क्षत्री धर्मपालन और तलवारके बलसे भारतमे चिरस्थायी कीर्तिको स्थापित करते देखा है परन्तु सवाई महाराज जयसिंहने केवल जातिधर्म और बाहुबलको प्रकाश करके भारतवर्षमें अपने नामको विख्यात नहीं किया वरन शास्त्र और उसके नामको भी भारतमे अक्षय करके रक्खा। वे ज्योतिप शास्त्रकी उन्नति साधन थे हेतु नवीन संस्कार, नवीन रीति नियत करके भारतवर्षके चार प्रधान २ स्थानोमे मानमंदिर स्थापन कर गये हैं, वही आजतक उनकी अक्षय कीर्तिकी घोपणा कररहे है। विजित भारतके एकमात्र सवाई जयसिंहसे ही ज्योतिप शास्त्रका उद्धार हुआ है। ज्योतिप शास्त्रके वेत्ता उसे आजतक मुक्तकंठसे स्वीकार करते आये हैं। रजवाड़ेके राजपूतोकी गौरवकी कला केवल भारतमे ही विख्यात है परन्तु सवाई जयसिंहके यशका सूर्य इतना ऊंचा होगया था, कि उसने दूर २ तक अपनी किरणजालका उज्वल प्रकाश किया था, पश्चिमके ज्योतिर्वेत्तागण मुक्तकंठसे उस सवाई जयसिंहकी प्रशंशा करनेको तैयार हैं, परन्तु शोकका विषय है कि साधू टाड्र उपयुक्त प्रयोजनके होनेपर भी उपकरणावलीके अभावमे उस महापुरुषकी विस्तारित जोवनी इतिहासमे अंकित नहीं करसके, यदि वह सवाई जयसिंहके जीवनकी प्रधान २ घटनाऐं और उनके द्वारा अनुष्ठान किये विषयोका भली भाँतिसे वर्णन करते तो पृथक् एक बड़ा ग्रन्थ बन जाता, तथापि इस इतिहासमे उन महापुरुषकी जीवनी इतनी बड़ी है कि जिसको कर्नल टाड्र साहब नहीं देसके, विशेष करके सुविधाके अभावमे हम भी यथाशक्ति चेष्टा करके उनकी जीवनीको यहाँ भली भाँतिसे प्रकाशित नही करसके इससे हमको अत्यन्त दुःख है।

भूमिका समाप्त।

साधू टाड्र महोदय लिखते हैं कि "पहिले जयसिंह जिस भाँति मिर्जाराजा नामसे विदित थे, दूसरे जयसिंह उसी प्रकार सवाई नामसे विदित थे और संवत् १७५५

सन् १६९९ ई० में औरंगजेबके शासनके ४४ वर्ष बीतने पर अर्थात् उसकी मृत्युके छः वर्ष पहिले राजसिंहासनको प्राप्त हुए, उन्होंने दक्षिणके युद्धमें अपने बाहुबलका विशेष परिचय दिया था, और औरंगजेबकी मृत्युके पहिले जिस समय सिंहासन पानेको सम्राट् कुमारोंमें युद्धकी आग भड़क उठी थी, उस समय उन्होंने औरंगजेबके उत्तराधिकारी रूपसे विख्यात आजिमशाहके पुत्र कुमार वेदारबख्तका पक्ष लिया था और उसी कुमारकी सहायताके लिये वे धौलपुरके युद्धमें लिप्त हुए थे। दुःखका विषय है कि उस संग्राममें वेदारबख्त मारा गया, शाहआलम–बहादुरशाह–दिल्लीके तख्तपर बैठा। तब आमेरका राज्य खालसा करलिया गया क्योंकि सवाई राजा जयसिंह कुमार वेदारबख्तका पक्ष अवलम्बन करके शाहआलमके विपक्षमें थे सम्राट् शाहआलमकी तरफसे एक व्यक्ति विशेष आमेर राज्यका शासनकर्ता नियुक्त होकर भेजदिया गया। परन्तु वीरश्रेष्ठ जयसिंहने बादशाहका यह अन्याय देख सिंहको समान क्रोधित हो गर्जन करतेहुए कछवाहोंकी समस्त सेनाको सजा उन्होंने नंगी तलवारें हाथमे लेकर अपने पैतृक राज्यमेंसे सम्राट्की समस्त सेनाको भगाकर अपने महान् बाहुबलका परिचय दिया"। उसी समयसे जयसिंहके हृदयपर यवनसम्राट्के वंशकी ओर विजातीय क्रोध उपस्थित हुआ और उन्होंने यवनराज्यका नाश करनेके लिये मारवाड़के अधीश्वर महाराज अजितसिंहके साथ मित्रता करके संधि करली।

कर्नल टाड् साहब लिखते हैं, कि "यह विख्यात राजपूत जयसिंह चौवालीस वर्ष तक आमेरके सिंहासनपर स्थित होकर जबतब भयंकर युद्धोंमें लिप्त रहे। उन सब बातोंका फिर फिर वर्णन करना नीरस होगा। वह मेवाड़ और बूंदीराजके प्रबल शत्रु थे उसी मेवाड़ और बूंदीराजके वंशधरोंके इतिहासके साथ उनका वही वीर अभिनय जड़ित किया गया है, इस कारण उसका परिचय पाठकोंको होही जायगा। जिस समय भारतमें दीर्घकालतक अराजकता नृत्य कररही थी उसी समयमें तैमूरके वंशधरोंका सिंहासन शीघ्रतासे छिन्नभिन्न होकर पृथ्वीमें घुसनेका उपाय कररहा था। यद्यपि महाराज जयसिंह उस समय प्रत्येक युद्ध और विपत्तिमे पड़ेहुए थे, परन्तु वीर स्वरूपसे उनका यश कभी अक्षय नहीं होसका। वरन राजपूत वीरोंका साहस जैसा जलती हुई अग्निकी समान होता है उनका साहस वैसा नहीं था, परन्तु राज्यशासन और राज्यसंसारमे, और षड्यंत्रजालके विस्तारमें उनकी विशेष शक्ति थी"। अत्यन्त दुःखका विषय है कि हम साधु टाड् साहबकी शेष उक्तियोंके समर्थन करनेमें समर्थ नहीं होसकते। इतिहासवेत्ता टाड् इस विस्तारित इतिहासके प्रत्येक स्थानमें सत्य और सम्मानके रक्षा करनेकी विशेष चेष्टा करगये है, उसे हम शिर झुकाकर स्वीकार करते हैं, वह एक उदार हृदय देवस्वरूप और राजपूत जातिके यथार्थ मित्र थे, इस बातको राजपूत जाति भी स्वीकार करती है, परन्तु हम इतना कह सकते हैं कि वह यद्यपि रजवाड़ेके भिन्न २ राज्योंके इतिहासको समभावसे लिख गये हैं, परन्तु वह उनमें सबसे अधिक मेवाड़के अधीश्वर और मेवाड़के निवासियोंको अत्यन्त प्रिय जानते थे। मारवाड़, बीकानेर, जयसलमेर जयपुर, कोटा, और बूंदी राज्यके अधीश्वर और निवासियोंकी अपेक्षा

मेवाड़के अधीश्वर और वहांके निवासियोंके ऊपर उनका विशेष स्नेह प्रेम, दया और मित्रता थी। अभागिनी कृष्णाकुमारीके पिता महाराणा भीमसिंहके साथ उनकी प्रबल मित्रता थी. इसी लिये वह महाराणाके चरित्रोंको जिस भावसे वर्णबद्ध करगये है उसमें उनके प्रेमके अनेक परिचय पाये जाते है। यदि सवाई जयसिंहके साथ भी उनकी उसी प्रकार दया और मित्रता होती तो वह ऐसा कभी नहीं लिखसकते थे कि जयसिंहकी शूरवीरता तथा उनका साहस अन्य राजाओंसे हीन था। विशेष करके भारतके इतिहासमे और उन्हींके निर्माण किये इतिहासमे सवाई जयसिंहके बलविक्रमको हमने जिस प्रकारसे पढ़ा है, उससे कभी ऐसा सिद्धान्त नहीं किया जासकता कि सवाई जयसिंह राजनैतिक रंगभूमिमे विभिन्न युद्ध क्षेत्रमें जिस प्रकारका दृश्य दिखागये हैं, उससे उनकी कीर्ति कलापका स्मरण नहीं होसकता। यद्यपि महाराज मानसिंहकी समान वह दिग्विजयी और महान वीर नहीं थे, किन्तु वह अपने बराबरके वीरोंमे एक अग्रणीय पुरुष गिने गये थे, यह उनके चौवालीस वर्ष तक राज्य करनेसे ही विदित है।

टाड् महोदय फिर लिखते हैं, कि " राजनीति और न्यायके सम्बन्धमें श्रीसवाई जयसिंहकी जीवनी उच्च आसन पाने योग्य हैं। हम (अंग्रेज) ने प्रायः इन्हीं राजपूतानेके राजाओंकी कीर्ति और दक्षताके सम्बन्धमे अत्यन्त सामान्य विचार प्रगट किया है, उस सबके प्रकाश होते ही वह भी प्रमाणित होगा। जयसिंहने अपने नामसे जयपुर वा जयनगर नामकी नवीन राजधानी स्थापित की, वह राजधानी उनके

---

(१) कर्नल टाड साहब टीकेमें लिखते हैं " कि उस प्रकार पूर्णालेख्य कवितामें बहुतसे उपकरण आमेरराजके महलमें विराजमान थे, उन सबमें कल्पद्रुम नामका भी एक ग्रन्थ था। उसी ग्रंथमें सवाई जयसिंहके प्रधान २ कार्योंका उल्लेख है। " एकसौ नव गुण जयसिंह " नामक ग्रन्थमें कितने ही विवरण सुने हैं, और वर्णन किये हैं, सवाई जयसिंहने बराबरके सम्राट्, सम्राट् कुमार और देशीय राजाओंके जो अगणित पत्र लिखे थे, इस समय उन सबका अनुवाद करके परिश्रमको सफल विचारा। अंग्रेज बहुत सा परिश्रम करके, जिनके चरित्रोंके आचार व्यवहारोंको इतिहासमें लिख गये हैं उन सबके बदलेमें उन पत्रोंको पढनेसे ही उन स्वदेशियोंके आचार व्यवहार भलीभाँतिसे जाने जा सकते हैं। उनके समयके भारतवर्षके इतिहासमें एक प्रधान अर्थात् सम्राट् फर्रुखसियरके सिंहासनच्युतिके सम्बन्धमें सवाई जयसिंहके हाथका एक पत्र लिखा हुआ हमारे हाथ आगया है। इसमें उन्होंने राणाको लिखा है "।

कर्नल टाडने आशा की थी कि अवश्य ही कोई न कोई अंग्रेज रेसिडेण्ट जयपुर राज्यके सविस्तार इतिहासको प्रणयन करैगा, परन्तु दुःखका विषय है कि उनकी वह आशा आजतक पूर्ण न हुई। जयपुर राजके महान ऊंचे पदपर बहुत दिनोंसे अनेक सम्भ्रान्त शिक्षित बंगाली नियुक्त रहे। वे चाहते तौ अनायास ही इस इतिहासको अपनी मातृभाषा वा अंग्रेजी भाषामें लिखकर इसका प्रचार करके प्राचीन इतिहासके तत्वका उद्धार करसकते थे, परन्तु दुःखका विषय है कि विशेष सुविधा होनेपर भी वह उस विषयमें आजतक हस्ताक्षेप नहीं करसके। जयपुरके वर्तमान शिक्षित महाराज यदि ऐसा विचार करते तो वह सरलतासे अपने पूर्वपुरुषोंकी कीर्तिसे भरे हुए उक्त इतिहास और पत्रोंको प्रकाश कर सकते थे?

समयमें शिल्प और विज्ञानकी अधिष्ठान क्षेत्र होगई थी, और उसी नवीन नगरीने अत्यन्त प्राचीन आमेर राजधानीके प्रकाशको लुप्त करदिया। दोनों राजधानी एक दूसरीसे तीन कोश दूरी पर थीं, इसी कारणसे उस आमेर नगरीके साथ दुर्ग श्रेणीके योगसे नवीन राजधानीका परस्पर मेल होगया। समस्त भारतवर्षमें एकमात्र जयपुरकी राजधानी ही नियमितरूपसे बनी थी, और सभी राजमार्ग नियम सहित बनाये गये थे। सुना जाता है कि विद्याधर नामवाले एक बंगालीने कल्पना करके राजधानी जयपुरके शहरको बनवाया था। सवाई जयसिंह जो समस्त ज्योतिर्विद्या सम्बन्धी और इतिहास सम्बन्धी आविष्कार और श्रेष्ठता साधन करगये हैं उन सबमें उक्त विद्याधर उनका अत्यन्त प्रसिद्ध सहयोगी था, प्रायः सभी राजपूत ज्योतिष विद्या और सामुद्रिक विद्याको भली भाँतिसे जानते थे। परन्तु जयसिंहने विज्ञानके भीतर प्रवेश किया था। वह केवल वैज्ञानिक रीतिकी शिक्षा करके ही शान्त न हुए, वरन स्वयं एक यथार्थ कार्यसाधक वैज्ञानिक थे। वह ज्योतिष विद्यामें इतने बढ़गये थे कि दिल्लीके बादशाह मुहम्मदशाहने इन्हींके हाथमें पंचांगके संस्कारका भार अर्पण किया था, यह ग्रह नक्षत्र, गति विधि चंद्रमा सूर्यका उदय अस्त ग्रहण इत्यादि भली भाँतिसे देख लेते थे। उन्होंने निरीक्षण तथा आविष्कारके लिये अपने ज्ञानबलसे बहुतसे यंत्रोंकी रचना की थी, और दिल्ली जयपुर उज्जैन, बारानसी मथुरा आदि शहरोंमें बहुत करके बड़े २ मानमंदिर बनाकर उन समस्त यंत्रोंको वहाँ स्थापित करवाया था तथा उन्हीं सब यंत्रोंके द्वारा गणना करनेमें वे इतने पंडितहोगये थे कि बड़े २ ज्योतिषी भी आश्चर्यमें होजाते थे। महाराज जयसिंहने उक्त समस्त यंत्रोंका आविष्कार करनेके पहिले, समरकन्दके राजज्योतिषी उलगबेगके बनायेहुए यंत्रका व्यवहार किया था, परन्तु उन समस्त यंत्रोंसे उनको ईप्सित् फल प्राप्त न हुआ। क्रमानुसार सातवर्ष तक भिन्न २ मान मंदिरोंमें परीक्षा करनेके पीछे उन्होंने स्वयं नवीन यंत्र बनाये थे। जिस समय सवाई जयसिंह इस वैज्ञानिक आलोचनामें प्रवृत्त थे, उस समय पुर्तगालसे इमानुएल नामके एक पादरी भारतवर्षमें आये थे, जयसिंहने उनसे पुर्तगालराज्यमें ज्योतिष विद्याकी उन्नतिके विषयमें जानना चहा, और अपने कितने ही विश्वासी सेवकोंको इसी लिये उस पादरीके साथ पुर्तगालके अधीश्वर इमानुएलकी राजसभामें भेजा थो,। पुर्तगालके राजा ईमानुयेलने जयपुरपति जयसिंहके पास जेवियर डिसिलवा नामके एक प्रवीन ज्योतिषीको भेजदिया। जेवियर डिसिलवाने जयपुरमें आकर, पुर्तगालके डेलाहायर बनायेके हुए समस्त यंत्र जयसिंहको देदिये, महाराज जयसिंहने उन

---

(१) काशीके मानमंदिरको हमारे अनेक पाठकोंने अवश्य ही दर्शन किया होगा, आजतक भी वह समस्त यंत्र समस्त उपकरण सहित अव्यवहार अवस्थासे उस मानमंदिरमें पतित, तथा दीवारों पर लगे हुए हैं। उन सबको देखकर बहुतसे पश्चिमी ज्योतिषियोंने जयसिंहकी बड़ी प्रशंसा की है।

(२) टाड् साहब अपने टीकेमें लिखते हैं कि "पुर्तगालकी राजधानीमें लिसवनके राजमहलमें उस सम्बन्धके कोई कागजपत्र पाये गये या नहीं इसका विचार करना कर्तव्य है।

यन्त्रोकी परीक्षासे उनके सम्बन्धमे निम्नलिखित मन्तव्योको वर्णवद्ध किया, "यथार्थ परीक्षा करनेके पीछे इन सव यंत्रोंमे नियुक्त कोहुई गणना और सिद्धान्तोंको देखकर तथा उनकी वरावरी और समालोचनासे यही प्रकाशित होता है कि वह आधी डिग्री कम हैं, इस कारण वह अत्यन्त भ्रामक है, यद्यपि अन्यान्य ग्रहोके स्थानके सम्बन्धमें उतना भ्रम नहीं है, परन्तु मैं देखता हूँ कि इस मतमे सूर्य और चन्द्रमाके ग्रहणके सम्बन्धकी गणना ठीक नहीं हुई, ६मिनटका भेद पड़ता है" । "महाराज जयसिंह तुर्की ज्योतिषीके पीतलके वनायेहुए यन्त्र और तालिकाके सम्बन्धमे भी इसी प्रकारका मत प्रकाश करगये है, तथा उन्होने अनुमान किया कि था हिपारकस और पोटेलमी भी ऐसे ही यन्त्र बनाया करते थे, और उन्होने कहा कि डेलाहायरकी गणना केवल नीचेवाली श्रेणीके ग्रहोके लिये अविशुद्ध हुई है । राजपूत राजा अवश्य ही उस अपने बनाये यन्त्रके लिये अपनेको गौरववान् जाननेके अधिकारी है । हमारे स्वजातीय ज्योतिषी डाक्टर डवलिड हन्टर सवाई जयसिंहको गणना और यन्त्रादिकी सत्यताके सम्बन्धमे विशेष परीक्षा करके प्रसन्न हुए थे "।

"ज्योतिष शास्त्रके सम्बन्धमे वहुतसी चिन्ता वहुतसी गणना और वहुतसे श्रम, तथा मस्तिष्कश्रमके फलस्वरूप सवाई महाराज जयसिहने कितने ही नियमोंकी रीति और सकेतकी तालिका बनाई थी उसी रीति और सिद्धान्तोके अनुसार इस समय ग्रह नक्षत्रोकी गतिका सचार, ग्रहणादिकी गणना और पंचांग तैयार किये गए हैं "।

कर्नल टाड साहव सवाई जयसिंहके ज्योतिप शास्त्रकी दक्षताके सम्बन्धमें जिन मन्तव्योको प्रकाश करगये हैं? उनसे क्या प्रगट होता है? यह तो अवश्य ही संभव है कि जयसिंह भारतवर्पमे ज्योतिपशास्त्रका पुनरुद्धारकर इसको नवीन जीवन देकर एक वडाभारी कार्य साधन करगये हैं, वह ज्योतिष विद्यामे वड़े भारी पण्डित थे, यही नहीं उनका प्रकाश विलक्षण था और उसी प्रकाशके वलसे वह इस सम्बन्धमे सत्यका आविष्कार करगये हैं, एकमात्र उस प्रकाशके वलसे केवल भारतवर्षमे ही नहीं वरन् विलायतमे भी उनका सम्मान हुआ था । टाड साहवकी उक्त उक्ति उसे भी प्रमाणित करती है । उन्होने जव विलायतमें वड़े २ ज्योतिपियोंके भ्रम दिखाये थे, तव यह तो वड़ी सरलतासे जाना जाता है कि वह ज्योतिपशास्त्रमे वहुत वढ़े चढ़े थे । और वह केवल प्राचीन ज्योतिपशास्त्रके ग्रंथोको संग्रह करके ही शान्त न हुए, वरन् भारतवर्षके वाहिरी देशोमे मुसल्मानोमे तथा ईसाइयोमे जो ग्रंथ प्रचलित थे, उन सभीको वहुतसा धन खर्च करके वड़ी युक्तिसे संग्रह किया था, उन्होंने रेखागणितकी त्रिकोणमिति और नेपायरकी वनाई गणितकी पुस्तकोका संस्कृतमे अनुवाद किया था। इन्होने विलायतसे भी वैज्ञानिक यंत्र और ग्रंथोंका संग्रह किया था, सारांश यह है कि ज्योतिषशास्त्रके ग्रंथोको केवल धन व्यय करके ही नहीं पाया था, वरन् राजकाजमे रहकर भी एक वड़े भारी कार्यको पालन करके उन्होंने दीर्घ कालतक अपनी मस्तिष्क शक्तिको व्यय किया था । इस ज्योतिपशास्त्रके उन्नति करनेसे वह कीर्तिस्वरूप मुकुटकी उज्ज्वलमणि होगये हैं ।

प्राचीन तथा आजकलके सभी विज्ञानी नास्तिक कहे जाते हैं। वह अपने विज्ञान के बलसे ही इस अनन्त संसारके सुन्दर और प्राकृत पदार्थोंको संग्रह करके, तथा दृश्यावलीकी सृष्टि, प्रक्रिया-रीति कार्यकारण अवान्तर गुण इत्यादिकी गवेषणा करके संसारमें नये नये सत्य तत्त्वोंका प्रचार करनेसे सर्वशक्तिमान सर्वश्रेष्ठ परमेश्वरके अस्तित्वको एकवार ही लोप करनेमें यत्नवान् हुए है। आकाशमें अनेक रंगवाला रामधनुप निकला करता है, उसके मानस मोहनी दृश्य देखते ही मन प्रफुल्लित होजाता है, और उसी महान् विश्व मोहन दृश्यसे भावुक भक्तकी भक्ति उस महापुरुपकी और दौड़ती है, परन्तु विज्ञानके जाननेवाले नाक चढ़ाकर कहते हैं, "कि कुछ नही है, कुछ नहीं है! सूर्यकी किरण, और जलकी वर्षा इन दोनोका मिलन होनेसे रामधनुपका जन्म हुआ है, कितने ही रसायनिक पदार्थोंके संयोगसे ही ऐसे मनोहर दृश्यकी उत्पत्ति हुई बतलाते हैं और जगतगुद्ध मनुष्य कहते हैं कि यह रामधनुष नहीं है, वरन इसको रामचक्र कहना चाहिये। इसका आकार धनुपकी समान नहीं है वरन् चक्रकी समान है। यदि हम इसको आधा देखते तो धनु कह सकते थे परन्तु वास्तवमें इसका आकार चक्रकी समान है"। विज्ञानियोंको इस युक्तिमें प्रेम नही है, भक्ति नहीं है, महान् भाव नहीं है, ईश्वरके साथ कोई सम्बन्ध नही है, केवल एकमात्र रसायनका सम्बन्ध है। भावुक भक्त जिस दृश्यको देखकर अनन्त शक्तिमानकी अनन्त शक्तियांका स्मरण करते है, विज्ञानके जाननेवाले उस दृश्यमे केवल रसायनकी क्रीड़ा देखते है, इसी कारणसे उन्होंने ईश्वरकी उस अनन्त शक्तिको स्वीकार नहीं किया, पश्चिमी जगत्‌के टिंडाल इत्यादि आधुनिक विज्ञानी इस मतमें नास्तिकरूपसे संसारमें प्रसिद्ध है। टिन्डालने विज्ञानकी सहायतासे सम्पूर्ण जगत्‌के प्रत्येक पदार्थको अलग २ करके एक रसायन पदार्थको पाया है, अणुके ऊपर परमाणु परमाणुतककी विज्ञानके बलसे उन्होने परीक्षा करके कहा है कि "हमने अज्ञेय परमाणुतकको देखा, इसके अतीत यदि कुछ है तो उसको हम नहीं जानसक्ते। वही अतीत अज्ञेयपदार्थ यदि सृष्टिका मूल हो और यदि इसीको ईश्वरकहते हो तो कहो" यह प्रेमिक भक्तके हृदयकी उक्ति है? अर्थात् नही।

प्राचीन और आधुनिक विज्ञानियोंने इस अनन्त विश्वकी अनन्त ग्रह नक्षत्रादिकी गति-क्रिया इत्यादिकी खोजमें नियुक्त होकर कहीं भी उस सर्वशक्तिमानकी शान्तिमय मूर्तिका पता न पाया-परन्तु विज्ञानविशारद सवाई जयसिंहने उनकी समान एक ही मार्ग पर चलकर उन सम्पूर्ण ग्रह नक्षत्रोंमें पार्थिव पदार्थोंके दृश्यमें क्या देखा? गवेपणामे नियुक्त उनके हृदयका तंत्र किस सुरसे बजउठा है, इस अनन्त विश्वमय पुस्तकके प्रत्येक पत्रेमें उस अनन्त प्रेममयकी शान्ति शाखाका मुखकमल देखकर उनके हृदयने किस तानको लेकर प्रेमभक्तिका गान गाया था? विज्ञानविशारद सवाई जयसिंह अपने बनायेहुए ग्रन्थके मुखबंधमे लिखते हैं कि "जगदीश्वरकी अनन्त महिमाकी जय हो" गाढ़विज्ञानी तत्त्वदर्शियोंकी भिन्न २ रूपसे दृष्टि शक्तियुक्त प्रतिभा उन महेश्वरके अनन्त विश्वकी खोजमें अणुमात्र समर्थ होकर मानो उस ऊँची महिमाके कीर्तनमें अपनी

असामर्थ्यता स्वीकार करती है, और इसी प्रकार "उस महेशकी महान् शक्तिकी जय हो" जो सब ज्योतिषी हैं, जो अनन्त सौर जगत् और नक्षत्र जगत्‌के परिमाण कार्यमें नियुक्त हैं, उनकी वह गवेषणा वह आलोचना मानो उन महान् शक्तिकी कीर्तिके वर्णनमें अपनी अयोग्यता दिखा रही है और वह ज्योतिषी मानो उसी दृश्यको देखकर मोहित होना स्वीकार करते है। जिन महेश्वरकी अनन्त सामर्थ्य युक्त पुस्तकोंके अनन्त आकाशके मध्यमे प्रबल २ ग्रह मंडली केवल कई एक पत्रकी समान स्थित है और प्रभा करनेवाली तारकामंडली भी असीम आकाशके आँगनमे जिस अनन्त शक्तिमानके संसाररूपी राज्यके धनागारकी छोटी २ मुद्रास्वरूप हैं, उन्हींके पवित्र नामकी जयहो, और हम उन्हीं राजराजेश्वरके चरणोंमें भक्तिके वश होकर प्रणाम करते है।

भजन पूजन साधन हीन प्रेम भक्तिके आलिंगनसे रहित पश्चिमी प्राचीन और आजकलके विज्ञानी इस अनन्त विश्वकी खोजमे नियुक्त होकर कहीं भी उस मंडलमय देवादि देवके आविर्भावको न देखसके; किन्तु प्रेमभक्तिकी लीलाक्षेत्र भारतभूमिमे, जगत्‌के प्रत्येक पदार्थमे, ईश्वरके आस्तित्वको माननेवाले भारतके एकमात्र जयसिंहने उस गवेषणामे नियुक्त होकर भी केवल रसायनकी क्रीडाको न देखा, वरन उन्होने अनन्त शक्तिकी अपार लीलाको देखा, वह पश्चिमी नास्तिक विज्ञानियोंके सम्बन्धमे क्या लिख गये है? उन्होंने सबसे पहिले असीम साहसके साथ निर्भय हो अपने ग्रंथोमे वर्णन किया है, "कि जगदीश्वरकी सर्व मंगलमय अनन्त शक्तिका पीछा करनेमें असमर्थ होकर ही हिपारकसने (प्राचीन वैज्ञानिक) निर्बोध कृषककी समान विरक्ति उत्पन्न की है, और जगदीश्वरकी महान् सामर्थ्यकी कल्पनाके संबन्धमे, पोटेलमी उलूक स्वरूप है, वह कभी सत्यरूपी सूर्यके समुख नहीं होसकता, रेखागणित की व्याख्या केवल महान् सृष्टिके असंपूर्ण आलेख्यकी कल्पित रेखामात्र है"। प्राचीन प्रधान २ वैज्ञानिकोके अनीश्वरवादके विरुद्धमे जयसिंह जो यह अव्यर्थ वाण प्रयोग करगये है, क्यो नही उससे उनके साहसज्ञानकी ऊँची प्रशंसा की जाय? जयपुरपतिने फिर लिखा है कि "इस अनन्त ज्ञानमयकी इस असीम विश्वसृष्टिके विमुग्धदर्शक सवाई जयसिंह है। जिस दिन उनके हृदयमे ज्ञानका संचार हुआ है उसी दिनसे आरंभ करके वह ज्ञान जितने दिनोतक निर्मल होकर बढ़ा था, उतने दिनों-तक केवल गणित विज्ञानकी आलोचनामे यह सब प्रकारसे नियुक्त थे, और उनका चित्त उसी कठोर समस्याके पूर्ण करनेमे लग रहा था। महान् विश्वसृष्टाकी सहायतासे उन्होने इस विज्ञानके मूलसूत्र और रीतिको जानलियी"।

---

(१) हमारी सम्पूर्ण इच्छा होने पर भी बहुतसे ग्रथोंको प्राप्त कर तथा अन्य कई एक कारणोंसे हम जयसिंहके बनायेहुए वैज्ञानिक ग्रंथ और गणनाकी रीतिको यहाँ लिखनेमें असमर्थ है, इस कारण हमको महा दुःख है, विलायतके वैज्ञानिक डाक्टर हन्टर एसियाटिकरिसर्चेस, ५ वीं वाल्यूम १०७ पृष्ठमें महाराज जयसिंहके बनाये यंत्र, और अवलम्बित गणना प्रणालीके सम्बन्धमें एक प्रबन्ध लिख गये हैं, अंग्रेजी भाषा जाननेवाले पाठक उसे पढ़कर अपने संदेहोंको दूर कर सकते हैं, और उनको यह भी विदित होजायगा कि महाराज जयसिंह ज्योतिषशास्त्रके कितने पंडित थे।

सवाई जयसिंह केवल अनेक भाषाओंमें लिखे हुए ज्योतिषशास्त्रके संबन्धके तथा गणित संबन्धके ग्रंथोंको संग्रहकर और उनका अनुवाद संस्कृतमें कर उनको बहुत परिश्रमसे पढ़कर उनकी आलोचनासे महान् पंडित होगये थे और अनेक स्थानोंमें मानमन्दिर स्थापनकर बहुतसी खोज करके ज्योतिषके यंत्रोंको बनाय गणनाकी रीतिको नियत कर भारतवर्षमें ज्योतिष विद्याकी महान् उन्नति करगये हैं, इतना ही नहीं कि वह केवल उन्नति करके ही शान्त हुए हों, वरन् वह विलायतके प्रधान २ ज्योतिषियोंको अपने यहां बुलाते और उनका बड़े आदरभावके साथ अधिक सम्मान करते थे। प्रसिद्ध ज्योतिषशास्त्रके वेत्ता बंगालियोंको विद्याधरकी समान तथा अन्यान्य ज्योतिषियोंको भी अपनी राजधानीमें बुलाते और उनको बड़े आदरसे अपने यहां जागीरें देते थे। अब यह सरलतासे अनुमान किया जा सकता है कि भारतवर्षमें उन्हींके समयसे ज्योतिषविद्याकी अधिक उन्नति हुई और इसका प्रबल विस्तार हुआ है।

कर्नल टाड् साहबने फिर लिखा है, कि " विज्ञान सम्बन्धी उक्त मानमन्दिर बनानेके अतिरिक्त जयसिंहने यात्रियोंके निवास करनेके लिये अपने राज्यमें अनेक स्थानोंपर बहुतसा धनखर्च करके अनेक धर्मशालाएँ बनवाई हैं "। हम इस बातको कह सकते हैं, यद्यपि पूर्वतन देशीय राजा अपने २ राज्यमें अनेक स्थानोंपर अतिथि-शाला और धर्मशाला बनाया करते थे, परन्तु सवाई जससिंहने उस रीतिके सम्मानकी रक्षाके लिये धर्मशाला इत्यादि नहीं बनाये। उनका हृदय उदार था, पराये दुःखको देखकर वे दुःखी होते थे; उन्होंने संसारके हितके लिये इस व्रतका अवलम्बन किया था, उसी पराये दुःखसे दुःखी और हितसाधनके व्रतने ही उनको अनेक धर्मशाला एं इत्यादि बनानेमें बाध्य करदिया था।

कर्नल टाड् साहबने पहिले कहा है कि जयसिंहके साहसमें राजपूत वीरोंकी समान ज्वलन्त प्रकाश नहीं था, और वही टाड् फिर इस स्थानपर लिखते हैं, " कि जब हम विचार करते हैं कि जिस समय भारतवर्षमें अविश्रान्त युद्धकी अग्नि प्रज्वलित होरही थी, और सम्राट्की सभामें क्रमानुसार षडयंत्रके जालका विस्तार होरहा था,

---

(१) डाक्टर डबलिउ हन्टर जिस समय भारतवर्षमें आये थे,उस समय उन्होंने जयसिंहके बनवाये हुए मानमंदिर तथा यंत्रादिकी परीक्षा करके जयसिंहकी बुद्धिमानीकी विशेष प्रशंसाकी थी। वह जिस समय उज्जैनमें गये उस समय एक युवक पंडितके साथ उनकी बातचीत हुई। उस पंडितके पितामह महाराज जयसिंहके परममित्र थे, और उन्हें "ज्योतिषरायकी उपाधि दी गई थी। जयसिंहने उन ज्योतिषरायको पांच हजार रुपये सालकी जागीर भी दी थी। परन्तु दुर्भाग्य का विषय है कि अत्याचारी महाराष्ट्रोंके उपद्रवसे वह भूखंड एकबार ही विध्वंस होगया था। डाक्टर हन्टर उक्त युवकके साथ वार्तालाप करके ज्योतिषशास्त्रमें जो वह महान् पंडित थे इसको भली भाँतिसे जानगये थे, और प्रकाशमें भी उनको ज्योतिषका महान् पंडित विख्यात करगये हैं डाक्टर हन्टरके उज्जैनसे चलेजानेके कुछ काल पीछे अर्थात् सन् १७९२ ईसवीमें उक्त पंडितने प्राण त्याग किये थे।

" उस षड्यंत्रसे यह अपनेको न बचासके, उस भयंकर उपद्रवके बीचमें रहकर भी यह विज्ञानशास्त्रकी ऐसी उन्नति करगये हैं कि जब हम उसकी खोज करते हैं, कि राष्ट्रविप्लव, साम्राज्यका विध्वंस साधन, और धूम्रकेतुकी समान हठात् महाराष्ट्र जातिके प्रबल उत्थानमें उन्होने भयंकर विपत्तिमें अपनी ही निर्विघ्नतासे रक्षा न की वरन चारोओर अराजकतामें एकमात्र आमेर राजकी समस्त धन सम्पत्ति और उन्नतिमें अधिक रक्षा की थी, तब हम अवश्य ही इस बातको मानते हैं कि वह एक असाधारण मनुष्य थे। यह वह भली भाँतिसे जान गये थे कि मुगलराज्यका पतन शीघ्र ही होजायगा, यद्यपि उन्होने उस राज्यके पतनकी सुविधा प्राप्तिमें अपने राज्यकी उन्नति करनेका ध्यान रक्खा था, तथापि उन्होने सम्राट्के साथ विश्वासघात नही किया; कारण कि जिस समय फरुखेसियरके प्राणनाश और उनके हाथसे राज्य छीननेका षड्यंत्र होरहा था उस समय कईएक सामान्य राजाओने फर्रुखसियरका साथ दिया था, इनमें महाराज जयसिंह भी थे, जिस भाँति तैमूरके अन्यान्य वंशधर असीम साहस और बल विक्रमसे विभूषित थे, फर्रुखसियर भी यदि उन समस्त गुणोमेंसे एक कणमात्रके भी अधिकारी होते, तो यह जयसिंह इत्यादि अन्यान्य राजा उनके लिये अवश्य ही प्राण तक देदेते" । महात्मा टाड् साहबने यहाँपर सब प्रकारसे सत्यके सम्मानकी रक्षा की है। आमेरपति सवाई जयसिंह भी एक असाधारण मनुष्य थे, इसम किंचित् भी संदेह नहीं। यद्यपि रजवाड़ेके इतिहासमे राजाओंके बीचमे हम बहुतसे राजाओंको महाबलवान् असीमसाहसी, दृढ़प्रतिज्ञ तथा गाढ़नीतिज्ञ देखते है, परन्तु जयसिंहकी समान किसीको भी सर्वगुण विभूषितकी उपाधि नही देसकते।

साधू टाड्साहब फिर लिखते हैं, कि "मेवाड़के महाराणाके वंशधरोंके साथ जयसिंह जिस समय राजनैतिक और वैवाहिक सम्बन्धमे आबद्ध थे, उक्त राज्यके उस समयके इतिहासमें उनके प्रकाशमे जीवनकी बहुतसी घटनाओका वर्णन भलीभाँतिसे हुआ है, जिस समय सैयदके दोनो भ्राताओंने उनके स्वामी फर्रुखसियरको मारकर राज्यमे प्रबल सामर्थ्य दिखाई थी, उस समय उन्होने अपनी बुद्धिकी चतुरतासे अप्रयोजन दिखाकर अपने शत्रुओंके बढानेका अभिलाषा नहीं की, और महाराज जयसिंहभी स्वामी फर्रुखसियरको कायरपुरुषोंकी समान देखकर उनके उद्धारमें हतउद्योगहो अपने पिताकी राजधानीमे जाकर परम प्रिय ज्योतिषशास्त्र और इतिहासकी आलोचना मे लिप्त हुए । फर्रुखसियरकी मृत्युके पीछे राज्यमें जो राजनैतिक विप्लव होते रहते थे, तीन वर्ष पीछे सन् १७२१ ईस्वीमें सम्राट् मुहम्मदशाहके द्वारा वह प्रतिद्वन्दी सैयद दोनों भ्राता मारे गये, और बादशाहकी विजय होते ही उन उपद्रवोकी शांति होगई। प्रकाशमें तीन वर्षतक सवाई जयसिंह उन राजनैतिक उपद्रवोमें लिप्त न रहकर विश्राम पारहे थे, मुहम्मदशाहके जय प्राप्त करने पर उसने जयसिंहको ज्योतिषशास्त्रकी आलोचनाके लिये अपने यहाँ बुलाया, और इनको क्रमानुसार प्रतिनिधिके स्वरूपसे आगरे और मालवेके शासनकर्ता पदपर नियुक्त किया। इस स्थायी शान्तिके समयमें

जयसिंहने उक्त मानमंदिरोंको बनवाया था, वही भारतवर्षमें उस समयके कृष्णजलद जालसे पूर्ण इतिहासमें उज्वलतासे प्रकाशित होरहे है "।

यद्यपि सवाईसिंहने ज्योतिषशास्त्र और इतिहासकी उन्नतिका व्रत लिया था। परन्तु वह एक दिनको भी स्वजातिके स्वार्थकी रक्षा और आमेरके गौरव बढ़ानेमें हतउद्योग नहीं हुए। उन्होंने सम्राट्के यहां अत्यन्त ऊँचापद पाकर सम्राट्के यहां जो अत्यन्त घृणित जिजियाकर चिरकालसे चला आता था उसको उठादेनेका उद्योग किया, और इसमें उन्होंने सब प्रकारसे सफलता भी प्राप्त की, आमेरराज्यके निकट ही अत्यन्त बलवान् जाटोंकी सम्प्रदाय क्रमानुसार मस्तक उठाकर आमेरराज्यमें कंटक स्वरूप होगई थी, उन नवीन बलवानोंके दमन करनेमें भी इन्होंने अपनी विलक्षण नीतिज्ञता और चतुरता दिखाई। सन् १७३२ ईस्वीमें जिस समय जयसिंह फिर प्रधान शासनकर्तापदपर नियुक्त हुए, उस समय नवीन बलसे बलवान् हुए महाराष्ट्र संहार-मूर्ति धारणकर, दक्षिणसे निकले और अन्यान्य देशोंको विजय करतेहुए यवनराज्यके विनाशका उपाय करनेलगे। उस समय जयसिंह अपनी चतुरतासे इस बातको भली भाँतिसे जानगये थे कि महाराष्ट्र जातिसे भारत साम्राज्यकी रक्षा होनी असंभव है, इस कारण वह शीघ्र ही उस समय अपने राज्यकी स्वार्थरक्षामें दृढ़ प्रतिज्ञ होगये। कर्नल टाड् साहबने लिखा है, कि " हम नहीं जानते कि जयसिंहने महाराष्ट्रोंके नेता बाजीरावके साथ किस कारणसे संधि की थी। जयसिंहकी सामर्थ्य और सहायतासे ही बाजीराव मालवेमें सूबेदार हुए। देशीय सामयिक इतिहासवेत्ताने लिखा है कि " दोनों सद्धर्म अर्थात् एक ही धर्मके थे इसीसे उनमें ऐसी मित्रता उत्पन्न हुई, परन्तु हमारा ऐसा विचार है कि उक्त कारणके सिवाय अवश्य ही और कोई प्रबल कारण था अर्थात् जयसिंहके इसी आचरणसे महाराष्ट्रोंके साथ उनका विवाद न बढ़ा, बाजीराव जो मालवेकी सूबेदारीपर नियुक्त किये गये, इसमें स्वदेशीय स्पष्टतासे कहते हैं, कि महाराष्ट्रोंके हिन्दुस्थानके मार्गको महाराज जयसिंहने ही साफ कर-दिया है, परन्तु महाराज जयसिंहने उक्त आचरणोंसे महाराष्ट्रोंके ऊपर जिस प्रकारकी प्रभुताका विस्तार किया था इससे उस समय उनके स्वामी यवनसम्राट्के पक्षमें वह विशेष उपकारी होगया था, कारण कि एकमात्र उसीसे महाराष्ट्रोंके प्रबल प्रताप और देशपर अधिकार करनेका स्रोता कुछ दिनोंके लिये थम गया था, परन्तु पीछे वही स्रोता सम्राट्की राजधानी दिल्लीतक गया और कई वर्ष पीछे सन् १७३९ ई०में नादिरशाहने भारतपर आक्रमण किया। उस समय राजपूत वीरगण बुद्धिबलसे अपने स्वार्थकी और विशेष ध्यान देकर नादिरशाहके साथ सम्राट्के पक्षपाती होकर युद्धमें नहीं गये; कारण कि वह उस समय यह भली भाँतिसे जान गये थे कि एक

---

(१) टाड् साहब टीकेमें लिखते हैं, "राजा जयसिंहने कहा है कि मैंने सन् १७२८ ईस्वीमें ज्योतिष गणनाकी रीति और यन्त्र बनानेके कार्यको शेष किया, और इससे पहिले सातवर्ष तक इनकी खोजमें तथा इनकी आलोचनामें लगा रहा "।

तलवारके वलसे अथवा कूट राजनीतिके द्वारा नादिरशाहके उस आक्रमणको दूर करना सर्वथा असंभव है। राजपूत राजा उस समय बादशाहका विशेष सम्मान करते थे, परन्तु उस समयमे यवनराज्यकी रीति ऐसी अयोग्य और घृणित थी, कि उससे यवनसम्राट्के साथ देशीय राजाओंका सम्बन्ध बंधन एकदम दूर होगया था"।

महाराज जयसिंह एकसौ नौ गुणोंसे विभूषित होनेके कारण एक असाधारण पुरुष थे। इसीसे वह सारे रजवाड़ेमें प्रसिद्ध होगये थे। इसके सम्बन्धमे एक ग्रंथ भी लिखा है। साधु टाड्‌ साहबने उन एकसौ नौ गुणोंमेंसे जयसिंहके कईएक गुण-सम्बन्धी कहानी संग्रह की थी परन्तु दुःखका विषय है कि उन्होंने सबको प्रकाश नहीं किया। तथापि वह यहाँपर कईएक घटनाओंका उल्लेख करगये है, हमने उसके सम्बन्धमे विना कुछ कहे ही पहिले उन घटनाओंको अविकल प्रकाशित किया है। टाड्‌ साहबने इन घटनाओंको बहुविवाहका विषमय फलस्वरूप कहा है।

टाड्‌ साहब लिखते हैं, कि "महाराज विशनसिंहके दो पुत्र उत्पन्न हुए, एकका नाम जयसिंह और दूसरेका नाम विजयसिंह था दोनोंका जन्म भिन्न २ माताओंके गर्भसे हुआ था; अपने पुत्रका अमंगल होगा, इस पर बड़ी विपत्ति आवेगी यह विचारकर विजयसिंहकी माताने इनको अपने पिताके यहाँ भेज दिया। जब विजयसिंह नानाके यहाँ रहकर बड़े होगये तब उनकी माताने बादशाहकी दया और अनुग्रहके पात्र होनेके लिये इनको दिल्लीके बादशाहकी सभामे भेज दिया। माताने पुत्रको भेजनेके समय बादशाहके दरबारके प्रधान २ अमीर उमराव और राजकर्मचारियोंको हस्तगत करनेके निमित्त रिश्वतस्वरूपसे पुत्रके हाथमे अपने बडे कीमती जड़ाऊ कंगन और गहने पहरादिए, विजयसिंहने उन समस्त अलंकारोंको उपहारमे देकर बादशाहके प्रधानमंत्री कमरुद्दीनखाँको अपने हस्तगत करलिया। विजयसिंह बादशाहके यहाँ राजकार्यमे नियुक्त होनेके लिये तथा सेनामे नेता बननेकी इच्छासे दिल्लीमे नहीं गये थे। आमेर राज्यमे बसवा नामका जो देश अत्यन्त उपजाऊ था वह उस देशके समस्त अधिकारकी प्राप्तिके लिये चेष्टा करना चाहते थे। विजयसिंहके सौतेले भाई आमेरपति जयसिंहने अपने सौतेले भाईकी उस कामना पूर्ण करनेमें एक मुहुर्तका भी विलम्ब न किया। विजयसिंह यद्यपि भ्राताके इस स्नेह और दयासे अत्यन्त प्रसन्न हुए, परन्तु विजयसिंहकी माता और जयसिंहकी मातामे सौतियाडाह बढने लगा। उन्होंने पुत्रसे कहा, कि केवल "बसवा देशके लेनेसे क्या होगा, तुम प्रधान मंत्री कमरुद्दीनखाँसे कहो कि वह बादशाहसे कहैं जिससे कि जयसिंहको सिंहासनसे उतारकर आमेरके सिंहासन पर तुम्हारा तिलक करैं, तुम्हारा यह काम उनके द्वारा हो सकता है। यदि ऐसा होगया तो मै, तुमको पॉच करोड़ रुपये पुरस्कारमें दूंगी, और सम्राट् जिस समय आज्ञा देगे उसी समय पाँच हजार अश्वारोही सेना लेकर उनकी सेनाके साथ योग दिया जायगा"। विजयसिंहने माताकी इस आज्ञाक पालन करनेमे किंचित् भी विलंब न किया, उसी समय प्रधान मंत्री कमरुद्दीनके

पास जाकर सब समाचार कह सुनाया कमरुद्दीनने तत्काल ही यह वृत्तान्त बादशाहसे कहा । सम्राट्ने सुनकर कहा, "अच्छा जयसिंहको सिंहासनसे उतारकर विजयसिंहको आमेरका राज्य देदिया जायगा, तब जो विजयसिंह पाँच करोड़ रुपये देंगे, और पाँच हजार अश्वरोही सेना आवश्यकता होनेपर मदत देगी, इसका जामिन कौन है?" मंत्रीने कहा 'मैं ही इसका जामिन रहा' । अपने प्रधानमंत्री हीकी बातपर विश्वास करके सम्राट्ने उसी समय विजयसिंहको आमेरका राज्य देनेके लिये सनद तैयार करनेकी आज्ञा दी । सवाई जयसिंहने खॉन दौरानखॉ नामक एक चतुर मुसल्मान अमीरसे "पगड़ी बदल भाई" अर्थात् भ्रातृसम्बन्ध स्थापन किया था । उक्त खॉसाहब बादशाहके यहॉ ऊँचे पदपर स्थित थे, जिस समय उन्होंने गुप्तरीतिसे यह समाचार सुना कि जयसिंहको सिंहासनसे उतार कर विजयसिंहको आमेरके राजछत्रके नीचे बैठालनेकी तैयारी होरही है, तब उन्होंने कृपाराम नामक दूतको गुप्तभावसे यह सब समाचार कहसुनाया, दूत कृपारामने तुरन्त ही यह समाचार जयसिंहके पास भेज दिया । इस समय दिल्लीमें बादशाहकी सभामें कमरुद्दीनखॉ अपनी प्रबल सामर्थ्य विस्तार करनेके कारण बहुत ऊँचे पदपर पहुंच गया था । जयसिंह कृपारामके दियेहुए इस पत्रको पढ़कर अत्यन्त ही दुःखित हुए, फिर उन्होंने अपने विश्वासी नाजिरको बुलाकर उसको वह पत्र दिया । नाजिरने पत्र पढ़कर कहा " जिस प्रकारका भयंकर काण्ड उपस्थित है, उसमें किसी प्रकार भी तलवारकी सहायता नहीं ली जासकती, इसमें धन, बल यह सभी व्यर्थ जायगा, इसमें तो केवल राजनैतिक कौशलसे साम, दाम, दंड, भेद इत्यादिसे विजय होगी, और षड्यन्त्री विजयसिंहके द्वारा ही यह षड्यंत्र जाल छिन्नभिन्न होजायगा । नाजिरकी अनुमतिसे जयसिंहने अपने राज्यके प्रधान २ सामन्तोंको बुला भेजा । नाथावत् संप्रदायके प्रधान नेता सामन्त मोहनसिंह वांसखोंके सामन्त दीपसिंह कुंभानी, सुबरम, पोताके सामन्त जोरावरसिंह; नरूका सामन्त हिमतसिंह, झोलायके सामन्त कुशलसिंह, मोजाबादके सामन्त भोजराज, और माओलीके सामन्त फतेसिंह इत्यादि सभी इकट्ठे हुए, जयसिंहने उनके संमुख अपने ऊपर आनेवाली विपत्तिकी वार्ता सुनाकर कहा, कि " आपने मुझे आमेरके राज्यपर अभिषिक्त किया है, और मेरे भाई जो एकमात्र बसवाको पाकर ही संतुष्ट होगये थे. नवाब कमरुद्दीन उनको जबरदस्तीसे आमेरराज्यका सिंहासन देते है " । यह वचन सुनकर सभी सामन्तोंने एक स्वरसे आमेरपति जयसिंहको धीरज बँधातेहुए कहा, " कि आप कुछ भी चिन्ता न करिये " यदि आपने सरलभावसे यह स्थिर करलिया है कि बसवा देश विजयसिंहको देदेंगे, तो हम प्रतिज्ञा करके कहते है, कि हम स्वयं ही इन समस्त उपद्रवोंको शान्त करादेगे " । जयसिंहने तुरन्त ही सामन्तोंके विश्वासके लिये विजयसिंहको बसवादेशका समस्त अधिकार देनेके लिये दानपत्र बनवाकर उसे सामन्तोंको देदिया, और उन सबको प्रतिनिधि स्वरूपमें समस्त कार्य करनेके लिये कहा । आमेरमें जब यह पंचायत होगई तब सामन्त मंडलीने अपना एक २ मंत्री विजयसिंहके पास भेजा और जो कुछ कहना था वह सभी उससे

कह दिया। विजयसिंहने सामन्तोके प्रतिनिधियोसे मिलकर स्पष्ट कह दिया "कि मुझे अपने भाईकी प्रतिज्ञा तथा उनकी बातका कुछ भी विश्वास नहीं है"। परन्तु जो मनुष्य इनके पास आये थे उनमेसे "बाराकोटड़ी आमेरका" अर्थात् आमेर राजवंशके बारह प्रधान २ शाखाओंके नेताओने "सीताराम" नामका उच्चारण करके जामिन बनकर कहा, "यदि जयसिंह अपनी प्रतिज्ञासे हटजायगा तो हम सभी आपका पक्ष लेंगे और हमी आपको आमेरके सिंहासन पर बैठाल देंगे"।

"विजयसिंह बहुत समझाने बुझाने पर राजी हुए, सवाई जयसिंहने जो बसवाके समस्त अधिकारोका दानपत्र भेजा था उसको उन्होंने ग्रहण किया। विजयसिंह उसी सनदको लेकर अपने परम हितैषी कमरुद्दीनखाँके पास गये और जाकर सारा वृत्तान्त कह सुनाया, यह सुनकर खाँसाहब सतुष्ट न हुए। खैर उन्होंने खाँनदौरान और कृपारामको आज्ञा दी, कि आप दोनोजने विजयसिंहके साथ जाइये, और इस पर ध्यान रखना कि यह बसवादेशके अधीश्वर पदपर स्थित होते है। आमेरके सामन्त विजयसिंहको राजीहुआ देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए, और ऐसे उपाय करने लगे कि जिससे दोनो भ्राताओमे फिर सौहार्द प्रेम स्थापित होजाय, सामन्तोके प्रस्तावके अनुसार विजयसिंहने अपने भाईके साथ साक्षात् करनेसे नाही नहीं की, परन्तु उन्होंने कहा कि मै भाईसे मिलनेके लिये आमेरकी राजधानीमे नही जाऊँगा, आमेरके प्रधान सामन्तोकी इच्छा थी कि किसी न किसी तरह दोनों भ्राताओका साक्षात् होजाय परन्तु विजयसिंह किसी विशेष कारणसे चोमूं न गये और जयपुरसे पश्चिमको जो तीन कोश दूरीपर सागानेर नगरहै वहाँ जाकर डेरोमे रहने लगे।

इस ओर जयसिंह अपने सौतेले भाई विजयसिंहके साथ मिलनेके लिये सामन्तोके घरसे बाहर होरहे थे कि इसी समय पूर्वोक्त नाजिरने आकर सबके सामने जयसिंहके निकट कहा, कि "महारानी माताने मुझे आपके पास भेजा है। उन्होंने कहा है कि "लाल-जीमें जो दोनो भाइयोंका परस्पर मेल और सद्भाव स्थापित होगा सो ऐसे आनन्ददायक दृश्यको देखनेसे मुझे क्यो वञ्चित किया गया है?" यह सुनकर महाराज जयसिंहने कहा; कि सामन्तोसे पूछा जाय, "यदि वह महारानी माताके वचन माननेके लिये राजी है तो माता वहाँ जासकती है"। सामन्तोने तुरन्त ही इसके उत्तरमें कह दिया "कि इसमे हमै कुछ आपत्ति नही है, महारानी माता अवश्य ही जासकती है"।

"सामन्तोकी आज्ञा पाकर नाजिरने बड़ी शीघ्रतासे रानीके लिये पालकी सजानेकी आज्ञा दी। रानीकी अनुगामिनी अंत:पुरकी स्त्रियोंके लिये तनिसौ रथ सजाये गये। परन्तु पालकीके भीतर वृद्धा रानीके बदलेमें महावीर भट्टीसामन्त उग्रसेन स्वयं विराजमान हुए और प्रत्येक रथके भीतर स्त्रियोके बदले दो दो जने अत्यन्त विश्वासी "शिलहपोश" अर्थात् शस्त्रधारी सैनिक सुसज्जित होकर बैठे। सामन्तगण तो पाहिले ही महाराजके साथ चले गये थे। वे इस तैयारीका अनुभव स्वप्नमे भी न करसके,

---

(१) राजपूतोंकी माता पुत्रको "स्नेह सूचक शब्द" लालजी' कहकर पुकारती हैं।

एकमात्र जयसिंह और बुद्धिमान् नाज़िरकी ही सलाहसे यह तैयारी हुई थी।उग्रसेन और साधारण अस्त्रधारी वीरोंके अतिरिक्त प्रजामें इस वातकी और किसीको भी खबर नहीं थी;जिस समय पालकी और तीनसौ रथ महा धूमधामके साथ राजमार्गसे चलने लगे,उस समय रजवाड़ेकी प्रचलित रीतिके अनुसार राजाके सेवकोने पालकीके पीछे २ सुवर्णकी मुद्रा वर्षाई, सभीने मानों यह सिद्धान्त करलिया कि इस पालकीमे वृद्धारानी ही जारहीं हैं, और उन्हींके सेवक मुद्रा वर्षाते हुए जारहे हैं, अंतमें राजमार्गमें वहुतसी भीड़ होने लगी, दीनदरिद्र उन लूटीहुई मोहरोंको लेकर महाराजका गुणानुवाद गाने लगे और साधारण प्रजा दोनो भ्राताओके सम्मिलनको सुनकर आनंदके समुद्रमे मग्नहोगई।

"महाराज जयसिंह और सामन्त गण यह तो पहिलेसे ही साँगानेरमें आकर राजमाताकी वाट देख रहे थे, कि इसी वीचमें एक दूतने आकर कहा, कि रानी साहिवा साँगानेरके महलमे चली गई हैं। यह समाचार पाते ही महाराज जयसिंह घोड़े पर सवार हो महलकी ओर चले। रास्तेमें ही जयसिंहके साथ विजयसिंहका साक्षात् हुआ। दोनों भ्राता परस्पर आलिंगन करके मिले, और फिर स्नेह और प्रेम भरे वचन कहने लगे; जयसिंहने विजयसिंहको अत्यन्त हर्षित हो वसवा देशकी शासन सनद देकर कहा, "यदि विजयसिंह आमेरके सिंहासन पर वैठनेकी अभिलाषा करें तो मैं प्रसन्न होकर उनको आमेरका राज्य दे दूँगा और मैं वसवादेशमें ही जाकर राज्य करूंगा" विजयसिंहका हृदय जयसिंहके इस प्रेम भरे वचन सुनकर विचलित होगया, और वह तुरन्त ही वोले; "अव मेरी संपूर्ण आसा पूर्ण होगइ"। इस प्रकार दोनों राजभ्राता और सामन्तोमे कुछ कालतक वार्तालाप होनेके उपरान्त वे चलनेको हुए कि इसी समय महारानीकी ओरसे नाजिरने आकर कहा, कि यह सामन्त कुछ कालके लिये यदि यहांसे चले जाँय तो महारानी माता यहां आकर अपने दोनों पुत्रोंको देखेंगी, या आप ही महारानीके कमरेमे चलिये"। महाराज जयसिंहने यह सुनकर कहा. "कि आप सामन्तोंसे पूछिये यह जैसा कहैंगे वही हमारा मत है, यह सुनकर सामन्तगण दोनों भाइयोंको महारानीके आनेके लिये कहकर आप सव वहाँसे दूसरे कमरेमें चले गये। कुछ कालके पीछे जयसिंह उठकर जिस कमरेमें महारानी थी उसीमेको जानेके लिये विजयसिंहके साथ चले। कमरेके द्वारपर एक पहरेदार खोजा खड़ा था, जयसिंहने अपनी कमरसे तलवार निकाल ली, और विचारा कि माताके निकट जानेमें शस्त्रका क्या प्रयोजन है इस लिये तलवारको पहरेदारको देदिया, विजयसिंहने भी भाईका अनुकरण किया, इसके पीछे नाज़िरने कमरेका द्वार खोला। विजयसिंह उसके भीतर गये परन्तु माताके स्नेहालिंगनके वदलेमें विराट्काय भट्टीसामन्त उग्रसेनके प्रवल आक्रमणमें फँसगये। उग्रसेनने उसी समय विजयसिंहके हाथ पैर बाँधकर उन्हें पालकीके भीतर डालदिया; पालकी जिस भावसे साँगानेरमे आई थी उसी भावसे आमेरकी राजधानीकी ओरको चली; सभीने जाना कि वृद्धारानी महलसे जारहीं है। एक घंटेके उपरान्त जयसिंहके पास समाचार आया कि विजयसिंह वंदी होकर किलेमें आगये। कुछ कालके उपरान्त जयसिंह सामन्तगणोंके

साथ मिले, परन्तु जयसिंहको इकला ही अस्त्रधारियोंके साथ आताहुआ देखकर सभीने इधर उधर देखकर पूछा, विजयसिंह कहाँ हैं ? उसी समय जयसिंहने उत्तर दिया "मेरे पेटमें हैं"। हम दोनों ही विशनसिंहके पुत्र हैं उनमें मैं बड़ा हूँ यदि आपकी यह इच्छा हो कि वही आमेरका राज्य करैंगे तौ आप मुझे मारकर मेरे पेटसे उन्हें निकालिये। केवल आपहीके लिये मैं विश्वासघाती हुआ हूँ। विजयसिंह अवश्य ही आपके और मेरे शत्रुओंको आमेरमें बुलाते और उसी कारणसे आपका विनाश होजाता"। इनके यह वचन सुनकर सभी सामन्त मंडली विस्मित होगई, परन्तु अन्य कोई उपाय न देखकर सब चुपचाप उस स्थानसे चल दिये, साँगानेरके बाहर यवन सम्राट्की छ हजार अश्वारोही सेना विजयसिंहके आनेकी वाट देख रही थी; प्रधानमंत्री कमरुद्दीनखाँने उस सेनाको विजयसिंहकी सहायताके लिये भेजा था। विजयसिंहके आनेमे विलम्ब हुआ देखकर उस सेनाके नेताने पूछा "विजयसिंह कहाँ हे ? जयसिंहने उत्तर दिया, "तुम्हें इसके पूछनेका कुछ अधिकार नहीं है, तुम अपने २ स्थानको चले जाओ, नहीं तो मै तुम्हारे सभी अश्वोंको छीन लूंगा" सेना कुछ उपाय न देखकर लौट गई और इस प्रकारसे विजयसिंह वन्दी होगये"।

इतिहासवेत्ता टाड् साहब उपरोक्त घटनाओंको वर्णन करके अंतमें लिखते हैं, कि "आमेरराज ज्योतिर्षोके एकसौ नौ गुणोके आदर्श स्वरूप यही एक गुण है। (जो न्यायमत गुणोके बदलेमे अगुण कहा गया है) इस सम्बन्धमे नीतिवेत्ताने किसी प्रकारके मन्तव्यको क्यों नहीं प्रकाशित किया? परन्तु कोई भी नहीं मान सकता, कि विशेष चतुरताके साथ इन कार्योंको पूर्ण किया था, और ऐसे स्थानमें "चाल" अर्थात् चतुरता ही प्रधान उपाय स्वरूप थी, और यह जयसिंह भी नाज़िरकी बुद्धिको भलीभाँतिसे जानते थे। प्रकाशमे एकमात्र नाज़िर ही इस षड्यन्त्रजालके प्रधान सृष्टिकर्ता थे। विशेष करके इस प्रकारके घटना स्थलमें षड्यंत्रका विस्तार करना न्यायसंगत है, कारण कि प्रवल सामर्थ्यवान प्रधान मंत्रीकी सहायतासे विजयसिंह शीघ्रतासे अथवा विलम्बसे अपने भ्राताको सिंहासनसे अलग करते। विजयसिंहके भाग्यमे क्या होगा, यह नहीं जाना गया"। इस स्थानपर हमैं केवल इतना ही कहना है, कि महात्मा टाड् साहबने जय सिंहके "एकसौ नौ गुणोके" शब्दके अर्थको भली भाँतिसे नहीं विचारा। एकसौ नौ गुणोसे युक्त मनुष्य इस संसारमे कोई उत्पन्न नहीं हुआ, और न उत्पन्न होसकता है, यह कल्पना करनी भी असंभव है। दूसरे पक्षमें एकसौ नौ गुण कभी भिन्न नहीं होसकते। इस स्थानपर "गुण" शब्दका प्रकृत अर्थ गुणपरिचायक कार्य है। सवाई जयसिंह जिन कई प्रधान २ गुणोसे विभूषित थे, उन गुणोंके परिचायक एकसौ नौ प्रधान कार्योंको लेकर "एकसौ नौ गुण जयसिंहका" नामक ग्रंथमे लिखा गया है, यदि टाड् इस अर्थको विचार कर उक्त ग्रथसे कईएक घटनाओंको उद्धृत करते तौ एक २ घटनाका

(१) टाड् साहबने अपने टीकेमे लिखा है कि "मैंने इन गुणोंका आविकल अनुवाद किया है।" हम भी इस बातको कहते हैं कि हमने भी इन सब अंशोका अविकल अनुवाद किया है।

गुण परिचायक और एक कार्यको कभी भी एक गुण नहीं कह सकते; ऐसा करनेसे उक्त प्रकारसे उनको गुणके बदलेमें अगुणशब्दका प्रयोग करना नहीं होता; यथार्थ गुणका परिचय देनेकी इच्छा करके टाड् साहब अवश्य ही उस ग्रंथसे प्रशंसनीय घटनाओंका उल्लेख कर सकते थे, जब टाड् साहब स्वयं ही इसके पीछे स्वीकार करते हैं कि जयसिंहके उक्त कार्य न्यायसंगत थे तब इस विषयमें हमें अधिक कहनेकी आवश्यकता नहीं है। जयसिंह अपने पिताके बड़े पुत्र थे, राजपूतरीतिके अनुसार, राजधर्मके अनुसार और हिन्दू व्यवस्थाके मतसे यही पिताके सिंहासनके अधिकारी थे, और क्षत्रियोंकी रीतिके अनुसार इन्होंने अनेक उपाय करके शत्रुओंसे सिंहासनकी रक्षा की थी, इस कारण उनका यह कार्य कभी भी निन्दनीय नहीं होसकता; उन्होने इस गंभीर राजनैतिक जालको विस्तार कर रुधिरका एक बूंद भी न बहाकर अपने स्वार्थकी रक्षा की थी, यह काम अवश्य ही उनके एक गुणका परिचायक था।

कर्नल टाड् साहबने फिर लिखा है कि "कछवाहे राज्य और उस राज्यकी राजधानीकी प्रत्येक विधिकी उन्नति एकमात्र जयसिंहके द्वारा ही हुई है। उनके समयके पहिले जो कछवाह राजा आमेरपर अपना राज्य कर गये है, केवल उनमे व्यक्तिगत सामर्थ्य और मुगल बादशाहकी सभामें अपने मान प्रभुताईके बलसे कुछ एक राजनैतिकतामें विख्यात थे, नहीं तो इस राज्यमें अन्य विशेष राजनैतिक गुरुत्व और प्रभुत्व कुछ भी नहीं था। और यद्यपि सम्राट् बाबरसे औरंगजेबके समय तकके शासन समयमें आमेरके राजाओंके साथ सम्राट्के परिवारका घनिष्ट सम्बन्ध था, परन्तु दिल्लीके शेष राजपूत अधीश्वरके समान पजोनीसे यहाँतक जयपुरके कोई राजा भी अपने पिताके राज्यकी अतिसामान्य सीमाके विस्तार करनेमें समर्थ न हुए; औरंगज़ेबकी मृत्युके पीछे जिस समय भारतवर्षमें महा हलचल पड़गई थी, और समस्त राज्य खंड २ होकर विभक्त होगया था, उस समयके पहिले आमेर यथार्थमें राज्यस्वरूपसे नहीं गिना जाता था, औरंगज़ेबकी मृत्युके पीछे जिस समय राज्यके चारोंओर भयंकर उपद्रव होने लगे, उस समय सवाई जयसिंह बादशाहके प्रतिनिधिस्वरूपसे पिताके राज्यके निकट आगरेके शासनकर्ता पदपर नियुक्त थे, इस कारण उस समय उन्होंने राज्यको बढ़ाकर अपना बल भलीभाँतिसे प्रबल करलिया"।

टाड् साहबकी उपरोक्त उक्तिसे यह भलीभाँतिसे जाना जाता है कि दूलेरायके पीछे कई जनोंने आमेरपर राज्य किया, उनमें पजोनीके शासनसमय तकके नव सृष्टि कछवाहे राज्यका अंग कुछ एक बढ़ा गये थे, इसके पीछे कोई राजा भी अपने बाहुबलसे राज्यका सीमा बढ़ानेको समर्थ न हुआ। यद्यपि मिर्जाराजा जयसिंह वा मानसिंह दिल्लीके सम्राट् वंशके परम प्रिय थे परन्तु यह महावीर होकर भी पिताके राज्यको किसी भाँति भी न बढ़ासके, एकमात्र सवाई जयसिंहने ही आमेर राज्यकी सीमाको बढ़ाया।

सवाई जयसिंहने किस रीतिसे देवती और राजौर नामक दोनों स्वाधीन देशोंपर अधिकार किया था, कर्नल टाड् साहब इसका वर्णन नीचे करगये हैं। इस वर्णनसे राजपूत

जातिके चरित्र और विशेष करके सवाई जयसिंहके चरित्र पूर्णरूपसे वर्णन किये गये हैं। उन्होंने कहा है "कि जिस समय महाराज जयसिंह आमेरके सिंहासनपर विराजमान हुए। उस समय आमेर देवसा और बसाऊ यह तीनों परगने उनके अधिकारमें थे। इन्हीं तीनोंके समूहका नाम आमेर राज्य था। राज्यके पश्चिम प्रान्तके देश सम्राट्के अधिकारमें थे, और इनका मिलान अजमेरके साथ होगया था। शेखावाटी राज्य जो आमेरराज्यसे हुआ था, इस समय उस शेखावाटीके राज्यका अंग आमेर राज्यसे अधिक बढ़ाहुआ था। वह शेखावाटी राज्य निम्नलिखित प्रकारसे चार सीमाओंमें बँधा था, दक्षिणमे चातसू नामका राज दुर्ग था पश्चिममें सांभरकी झील पश्चिमोत्तरमें हस्तिना पूर्वमे देवसा और बसाऊदेश था। कोटरिवन्द अर्थात् बारह प्रधान सामन्त वंश इस समय इस परिमित भूमिके अधिकारी थे, उसका परिमाण अत्यन्त सामान्यथा।

"देवती नामक क्षुद्र और अत्यन्त प्राचीन राज्यकी राजधानीका नाम राजोर था। बड़गूजर जातिके राजा उसका शासन करते थे। कछवाहे जिस प्रकारसे रामचन्द्रके वंशधर कुशसे उत्पन्न थे। बडगूजर जाति भी उसी प्रकार रामचन्द्रके वंशधर लवसे उत्पन्न हैं। यह बड़गूजर जाति यवन सम्राट् वंशमें कन्यादान करना अत्यन्त घृणित और अपमानसूचक बात समझते थे इसलिये यह किसी प्रकारभी सम्राट् वंशको अपनी कन्या तथा बहन नहीं देते थे, उसी सूत्रसे उन्होंने जातिमे तथा राजपूतोंमे विशेष मान सम्मान और प्रसिद्धि प्राप्त की थी, जिस समय कछवाहे राजाने यवन सम्राट्के वंशमें कन्या देकर अपने वंशको कलंकित किया था और इस कार्यसे अपनेको अंतमें पद और मानसे युक्त जाना उस समय बड़गूजर जातिने स्वजातीय स्त्रियोंके सतीत्वकी रक्षाके लिये इन्हें जलतीहुई अग्निमें डालकर भस्मीभूत कर दिया था, इससे जातीय कविने उनकी अक्षय कीर्तिकी बड़ी प्रशंसा की है। जिस समय महाराज जयसिंह सम्राट्के प्रतिनिधि स्वरूपसे देशपर नियुक्त थे उस समय उक्त देवती राज्यके बड़गूजर जातिके अधिपति अपनी सेनाके साथ गंगाजीके निकट अनूपशहरमे सम्राट्की सेनाके आधीनमे थे, बड़गूजरपति जिस समय उस अनूपशहरमें उपरोक्त कार्यमें लग रहे थे, उस समय वह अपने अनुजको देवतीके राज्यका भार निर्विघ्नतासे दे सकते थे। बडगूजरपतिने एक समय वनमे शूकरका शिकार करनेका विचार किया, और शीघ्रतासे जानेके लिये भोजन करनेको अधीर होगये, उनकी भौजाई देवरकी इतनी व्याकुलता देखकर मुँह चढाकर बोली; "आप इतने अधीर क्यो होरहे है, ऐसा जाना जाता है कि आप जयसिंहके साथ समर करके उनके हृदयमे भाला मारनेके लिये जारहे हैं"। यह बात बड़गूजरवीरके हृदयमें लग गई। हमारे पाठकोको स्मरण होगा, कि कछवाहे राजवंशके आदिपुरुष दूलेरावने नरवरसे निकलकर इस देशमे सबसे पहिले बड़गूजरोंके अधिकारी चौसा नामक स्थानपर अधिकार किया था, यद्यपि स्त्रीने ताना मारकर कहा था, परन्तु बड़गूजरके भ्राताने उस बातको दूसरी ओर लेजाकर प्रतिज्ञा करी, कि मै इष्ट देवताका नाम लेकर सौगंध खाता हूँ, कि आपके हाथसे भोजन ग्रहण करनेके पहिले ही जयसिंहके

हृदयमें भालेका आघात करूँगा। प्रतिज्ञाकारी वीरने उसी समय दश शस्त्रधारी अश्वारोही वीरोंको साथले आमेरकी ओरको गमन किया। अंतमें आमेरके 'धूलकोट' अर्थात् मृत्तिका प्राकारके पार्श्वमें आकर डेरा डाला सप्ताह वीता, पखवाड़ा वीता, महीना गया, इस प्रकारसे कई महीने वीतगये परन्तु इनको अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करनेका अवसर न मिला। धीरे २ सब घोड़ोंको वेचकर उनसे जो धन मिला उसीसे वह अपनी जीविका करने लगे, अंतमें जब सब घोड़े भी विक गये और धन भी चुकता होगया, तब इन्होंने अपने अनुचरोंको विदा करदिया। और आप इकलेही उसी स्थानमें रहकर जयसिंहके वक्षस्थलमें भाला मारनेका अवसर देखने लगे। जो कुछ धन पास था वह भी समाप्त हो आया; तब उसने अपने पेट भरनेके लिये अस्त्रोंका वेचना आरंभ करदिया, सभी अस्त्र वेचडाले केवल अपने पास एक वस्त्र और एक भाला शेष रक्खा, जब इस धनको भी खालिया तब तीन दिनतक निराहार रहा और चौथे दिन अपनी पगड़ी वेचडाली, उस दिन उस धनसे क्षुधा निवारणकी। उसी दिन महाराज जयसिंह किलेसे बाहरहो पर्वती मार्गको न जाकर केवल मोरा नामक सरल मार्गकी ओरको जारहे थे, इसी समयमें एक भाला तीक्ष्ण वेगसे आकर इनके एक ओर गिरा, पहरेवाला उसी समय अपनी कमरसे तलवार निकाल इस पापात्माका शिर काटनेके लिये तैयार हुआ, परन्तु राजा जयसिंहने ऊँचे स्वरसे कहा, "इसको मार न डालना, राजधानीमें पकड़कर ले जाओ,। इसके पीछे राजसभामें महाराज जयसिंहके सामने वह दृढ़प्रतिज्ञ वंदी लाया गया, जयसिंहने प्रश्न किया, तुम कौन हो ? और किस लिये तुमने इस प्रकारसे भाला फेंककर मारा था ?" प्रतिज्ञाकारी वीरने साहसमें भरकर कहा, कि "मैं देवतीके वड़गूजरपतिका अनुज हूँ; मैंने अपनी भौजाईके साथ वातों वातोंमें आपके हृदयमें भाला मारनेकी प्रतिज्ञा की थी, इस समय यदि आपकी इच्छा हो तो मुझे मारडालिये, या छोड़ दीजिये। वड़गूजर वीर कई दिनतक आपकी राह देखता रहा है, फिर धीरे २ अपने सब घोड़े और शस्त्रोंको वेचकर जीविका निर्वाह की, और मैं इस अवस्थामें चार दिनतक विलकुल निराहार रहा, " चतुर नीतिज्ञ जयसिंहने विचार करके उसी समय प्रतिज्ञाकारीको छोड़ दिया, और मूल्यवान् वस्त्र उपहारमें देकर पचास घुड़सवारोंके साथ उसे उसके राज्यमें भेजदिया; दृढ़प्रतिज्ञ वीरने राज्यमें आकर अपनी भौजाईसे समस्त वृत्तान्त कह सुनाया, रानीने कहा "आपने सोतेहुए विषधर सर्पको जगाया है, अब तुम्हारे इस कार्यसे यह राज्य शीघ्र ही नष्ट होजायगा। रानी इस बातको जानती थी कि जयसिंह राज्यपर अपना अधिकार करनेके लिये किसी अवसरकी राह देख रहे है, इस समय अपने दुर्भाग्यसे वह अवसर उनके हाथ आगया। राजोरके वृद्धोंकी सम्मतिसे राजवंशकी स्त्री और बालकोंको अनूप शहरमें वड़गूजर राजके निकट भेज दिया और देवती राजोरके किलेमें युद्धकी तैयारी होने लगी "।

(१) टाड् साहब अपने टीकेमें लिखते है कि "उक्त नरपतिके वंशधर आजतक अनूप शहर की भूवृत्तिको संभोग करते हैं"।

टाड साहब लिखते हैं, "कि उक्त घटनाके तीन दिन पीछे सवाई जयसिंहने सम्पूर्ण सामन्तोको सभामे बुलाकर सबके सामने इस वृत्तान्तको कहा" कि "अब शीघ्र ही देवती पर अधिकार करना कर्तव्य है, मै यह बीड़ा रखता हूँ आपमेसे जिस वीरकी अभिलाषाहो वह इसे उठाकर देवतीके साथ युद्ध करनेको जाय"। आमेरके प्रधान सामन्त चौमूपति मोहनसिंहने जयसिंहको सावधान करके कहा कि देवतीके विरुद्ध युद्ध करना महाविपत्तिदायक है; कारण कि बड़गूजरपति सम्राट्की सभामे माननीय मनुष्य है, विशेष करके वह अपनी सेनाको साथ लिये सम्राट्के आधीनमे है"। आमेरके प्रधान २ सामन्तोके इस वचनसे अन्यान्य सामन्त भी भयभीत होगये, और किसीने भी साहसमे भरकर उस विपत्तिजनक युद्धका बीड़ा न उठाया, इस प्रकारसे एक महीना बीत गया। देवतीके साथ फिर युद्ध करनेका विचार उपस्थित हुआ, परन्तु सामन्तोमेसे कोई भी अपने प्रधाननेता मोहनसिंहकी सम्मति उल्लंघन करनेको सहमत न हुए। इस कार्यमे किसीको भी आगे हुआ न देखकर अंतमें डेढ़सौ भूमि अधिकारियोके आधिपति बनवीर पोता फतेहसिंहने उस बीडेको उठाया, यह देखकर महाराज जयसिंहने शीघ्र ही फतेसिंहके आधीनमे पाँच हजार अश्वारोही सेनाको इकट्ठा होनेकी आज्ञा दी। फतेसिंहने सेना साथ ले देवतीको ओर जाकर सुना, कि बड़गूजर राज्यके भ्राता राजोरको छोड़कर गगोर नामक परव (मेला) पर चले गये है, इस कारण इन्होने उसी ओरको प्रस्थान किया, और वहाँ पहुँच कर एक दूतके हाथ कहला भेजा कि सावधान! वीर पोता फतेसिंहका अभिवादन पहुँचे, मैं बहुत निकट आ पहुचा हूं। युवक बड़गूजर इस समयमे पर्वोत्सवके उत्सवमे महामतवाले होरहे थे। दूतने आकर उसके हाथमे पत्र दिया, पत्रको पढते ही उसने आज्ञा दी कि इस दूतका शिर काट डालो, परन्तु जयपुरकी सेनाने शीघ्र ही सेवको सहित बड़गूजर राज्यके भ्राताको वंदी करके उसके अन्य सब साथियोको खंड २ कर दिया। राजोरकी रानी उक्त चौमूके कछवाह सामन्तकी बहिन थी वह प्रसवकी पीड़ासे जिस समय सूतिकागारमे गई थी उसी समय फतेसिंहकी सेनाने राजौरपर आक्रमण करके उसको अपने अधिकारमें करलिया, प्रसववेदनासे कातर हुई राजोरकी रानीने नेत्रोमे आँसू भरकर विजयी फतेसिंहसे कहा, "भ्रातः! मेरे इस गर्भमे स्थित बालकके प्राणकी रक्षा करना"। परन्तु इतना कहते ही अकस्मात् उसको स्मरण होगया कि एकमात्र मेरे ही आक्षेपके वचनोंसे राजोरके भाग्यमे आज यह कालरात्रि उपस्थित हुई है, इस कारण उसने मनही मनमे कहा कि झगड़ेको बढ़ानेके लिये मुझे अब जीवन धारनेका क्या प्रयोजन है?" रानीने उसी समय अपने सुकुमार हृदयपर तलवार मारकर प्राण त्याग दिये। पराजित और निहत बड़गूजरनेताके कटे हुए मस्तकको एक कपड़े मे बाँधकर विजयी जयपुरी वीरगण जयशब्दसे पृथ्वीको कंपायमान करते अंतमे जयपुरमे आ पहुँचे, जयसिंहने सभामे बैठकर अपने जीवन नाशके अभिलाषी उस दृढ़प्रतिज्ञ बड़गूजर राजभ्राताके कटे मस्तकको लानेकी आज्ञा दी, मस्तक सभामे लाया गया आमेरके सबमें प्रधान सामन्त मोहनसिंह अपने आत्मीयका

कटाहुआ शिर देखकर नेत्रोंसे आँसू वर्षाने लगे, मोहनसिंहको इस प्रकारसे रोताहुआ देखकर जयसिंहको स्मरण हुआ कि इन सबमें प्रधान सामन्तने ही मुझे बदला लेनेमे विघ्न किया था यह अवश्य ही राजद्रोही और विश्वासघाती है, इस लिये उन्होंने कुछ कालके पीछे मोहनसिंहका तिरस्कार करतेहुए कहा; "जब मेरे प्राणनाशके लिये भाला फेंका गया था, तब तो किसीके नेत्रोंमें एक बूँद भी आँसू नहीं आये! यह कहकर शीघ्र ही चोमू देशको राज्यमें मिलाकर मोहनसिंहको राज्यसे निकालदिया, मोहनसिंह इस प्रकारसे आमेरसे निकाले जाकर उदयपुरके महाराणाकी शरणमें गये। और जयसिंहने इस प्रकारसे बड़गूजरोंके हाथसे देवती और राजोर देशपर अधिकार करके उसे अपने राज्यकी सीमामें मिलालिया। वह देश इस समय माचेरी नामसे विख्यात है ''।

टाड् साहबने फिर लिखा है, " कि जयसिंहके चारित्रदोषोंमें से एक दोष यह बड़ा भारी था कि वह मदिरा पीते थे। वह किस प्रकारकी मदिरा पीते थे मधुसंजात मदिरा अथवा चावलकी मदिराको पिया करते थे, आमेरके प्रवाहमूलक इतिहासमें इसको प्रकाशित नहीं किया गया। परन्तु टाड् साहबने लिखा है कि यद्यपि जयसिंहके चारित्रोंमें अनेक दोष थे तथापि उस समयसे अपनी जातिमें वह एक अत्यन्त ही प्रशंसनीय मनुष्य थे, उनका नाम चिरकाल तक इतिहासमें रहेगा यह बात भविष्यद्वाणीकी समान है।

सवाई जयसिंहके शासनके पहिले आमेरका राजमहल जो मानसिंहका बनाया हुआ था; वह नवीन राजधानीकी बस्तीकी अपेक्षा अनेकांश श्रीहीन था। मिर्जा राजा जयसिंहने उस महलमें कई एक कमरे बनवाये थे, परन्तु वह भी राजमहलके लिये उपयुक्त न थे इसीसे जयसिंहने उसीसे लगाकर ऐसा एक मनोहर और श्रीमान् महल बनवाया कि जिसको देखकर नेत्रोंको आनंद प्राप्त हो, संवत् १७८२ सन् १७२८ ईसवी मे सवाई जयसिंहने जयपुर नामकी नवीन राजधानी स्थापित की, जयपुरके देशी इतिहाससे जाना जाता है कि इस समय राजामल्ल सवाई जयसिंहके मुसाहब पदपर नियुक्त थे, कृपाराम जयपुरके दूतस्वरूपसे दिल्लीमें थे; और बुधसिंह कुम्भानी दक्षिणमें सम्राट्के डेरोंमें दूतरूपसे नियत थे, यह सभी विख्यात और ऊँची श्रेणीके थे। जयपुरके नगरका वर्तमान विवरण हम पीछे यथास्थान वर्णन करेंगे।

महाराज जयसिंह राजनीति, शासननीति, और समाजनीति तथा शास्त्रके विचार में भी महान् पंडित थे। इसका प्रमाण देनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है। रजवाड़ेमें कन्याके विवाहके समयमें और श्राद्ध इत्यादिकार्योंमें राजपूतोंके यहाँ बहुतसा

---

(१) इतिहासवेत्ता अपने टीकेमें लिखते हैं " कि राजोर एक अत्यन्त प्राचीन देश गिना जाता था, और इस स्थानमें बड़गूजर जाति बहुत पुरुषोंसे वास करती आई है। चंदकवि इस जाति की वीरताके सम्बन्धमें बड़ी प्रशंसा करगये हैं। इसने पृथ्वीराजके समय विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की थी"।

(२) मिर्जा राजा जयसिंहने इस स्थानपर तीन महल बनावाये थे, महाराज जयसिंहने उनको न तोड़कर उसीके बराबरमें नया महल बनवा दिया–हिन्दूराजा पूर्वपुरुषोंकी कीर्तिको लोप करनेकी अभिलाषा नहीं करते थे, इसीसे जयसिंहने प्राचीन महलोंको नहीं तुड़वाया।

धन खर्च होता था। और बहुतसे इस अधिक धनके भयसे छोटी २ कन्याओंको सूतिकागारमे ही मारडालते थे, और बहुतसी स्त्रियां इसी लियां आत्महत्या करके प्राण त्याग देती थी। जब महाराज जयसिंहने देखा कि इससे तो समाजका महा अनिष्ट होरहा है, तब उन्होने रजवाड़ेमे और समस्त राजपूत जातिमे ऐसा प्रबंध करदिया कि जिससे विवाह और श्राद्धके समयमे खर्च कम पडे। इस विषयमे उन्होने बहुतेरे नियम नियत करादिये, और उन नियमोको अपने राज्यमें प्रचलित करदिया था। हमारे पाठकोने राजस्थानके प्रथम काण्डमे इसका विस्तारित विवरण पढ़ा होगा, इसीसे हम यहाँ पर फिर उसका लिखना आवश्यक नहीं समझते। इसमे कुछ भी सदेह नहीं कि एकमात्र इस समाज संशोधक कार्यसे ही जयसिंहकी कीर्तिके गौरवका सूर्य सर्वदा तीक्ष्णतासे चमकता रहेगा। टाड् साहब लिखते है, "कि इस महापुरुषने समाज सम्बन्धी जो अनुष्ठान किये थे, उनके तत्त्वका अनुष्ठान करना अत्यन्त प्रयोजनीय है। महाराज जयसिंह भी हिन्दुओंकी समान सभी जातिके ऊपर दयावान थे। क्या ब्राह्मण क्या मुसलमान, क्या जैन सभीको समान भावसे देखते थे। जैनियोको ज्ञानशिक्षामे श्रेष्ठ जानकर जयसिंह उनके ऊपर अत्यन्त अनुग्रह करते थे। ऐसा भी प्रगट होता है कि जयसिंहने जैनियोके इतिहास और धर्मके संबन्धमे स्वय शिक्षा प्राप्त की थी। विद्याधर नामका जो मनुष्य उनके वैज्ञानिक तत्त्वकी आलोचनामें सबमे अग्रणी था, और उसीके प्रभावबलसे जयपुर राजधानीकी सृष्टि हुई, वह जैन धर्मावलम्वी विख्यात है। विद्याधर सुप्रसिद्ध सिद्धराज जयसिंहके प्रधानमंत्री और गुरु नहरवालाके विख्यात पडित हेमाचार्यके वंशधर थे।

सवाई जयसिंहने एक समय अश्वमेध यज्ञ करनेकी अभिलाषा की। कर्नल टाड् जयसिंहके पक्षमे इनकी इस अभिलाषाको ऊँची अभिलाषा बतागये है। उन्होने लिखा है, "पाडुवशीय जन्मेजयसे लेकर कन्नौजके शेष राजा जयचंदतक जिन२ ने अश्वमेध यज्ञ किया था उन सभीका नाश होगया है, इस यज्ञका प्रकृत उद्देश यह था कि समस्त राजाओंमे प्रधानता प्राप्तहो। यद्यपि महाराज जयसिंह दिल्लीके बादशाहके यहाँ प्रबल सामर्थ्यवाले थे, यद्यपि वह यज्ञके लिये उत्सर्ग किये घोड़ेको निर्विघ्नतासे गगाके किनारे तक स्वेच्छानुसार विचरण करा सकते थे, कोई भी राजा उनके उस घोड़ेके पकड़नेका साहस नहीं करता, परन्तु यदि उनकी वह अश्वावली मरुक्षेत्रकी ओर जाती तो निश्चय ही राठौर राजा उसको पकडकर अश्वशालामे रखलेते, अथवा वह अश्व चम्बलके किनारे जाता तो हाड़ाजातीय राजा निश्चय ही अपने जीवन और सिंहासनको विपत्तिमे डालकर भी उस घोडेको पकडते। सवाई जयसिंहने बहुतसा धन खर्च

(१) टाड महोदयने अपने टीकेमे लिखा है; कि जयसिंहने बहुत परिश्रम तथा धन खर्च करके राजपूतानेके भिन्न२ राजवशके प्राचीन इतिहासको संग्रह किया था; राजवाली और राजतरंगिनी नामकी प्राचीन कारिका संग्रह की थी, इसके अतिरिक्त मूल और अनुवादित ग्रंथ भी उन्होने संग्रह किये थे। यदि हम उनकी खोज करते तो सबका पता लगसकता था, विशेष करके वैज्ञानिक ग्रंथोंके प्रकाश करनेसे विज्ञानके अनेक उपकार होते"।

करके परम सुन्दर उज्ज्वल यज्ञशाला वनवाई थी, और उस यज्ञशालाके खंभ और ऊपरकी छत चाँदीसे मढ़वाई थी। परन्तु दुःखका विषय है कि जयसिंहके भ्रष्ट वंशधर मृत जगत्सिंहने उस चाँदीके पत्रको छुड़ा लिया; और जयसिंहने जिन ग्रंथोंको बड़े परिश्रम और धनव्ययसे संग्रह किया था तथा जो ग्रंथ विज्ञानके परिचयस्वरूप थे; उन सबको दो भागोंमें विभक्त कर उनका एक अंश जयपुरकी एक साधारण वेश्याको देदिया।

सवाई जयसिंहके सम्बन्धमें शेषमें टाड् साहवने कहा है कि संवत् १७९९ सन् १७४३ ईस्वी मे चौवालीस वर्षतक राज्य करके अंतमे महाराज जयसिंहने प्राण त्याग किये, उनकी तीन विवाहिता रानी और कितनी ही उपपत्नियां उनके शवके साथ सती हुईं; अधिक क्या कहें उनके साथ ही साथ उनके प्रिय विज्ञानका भी लोप होगया "।

समस्त रजवाड़ेके इतिहासमें सवाई महाराज जयसिंहके राज्यका अध्याय और सबकी अपेक्षा उज्ज्वलतासे प्रकाश पारहा है और यह चिरकालतक कीर्तित रहेगा भी; राजपूत राजाओंके राज्यके समयमे केवल रणभेरीकी भयंकर ध्वनि, रणटंकार, भैरवनाद, तलवारोंकी झनकार, कमानोंका गगनभेदी हुंकार और वीरोंकी जयध्वनि ही सुनाई देती थी, परन्तु सवाई जयसिंहके राज्यमे इन सबके अतिरिक्त, समाजमें शान्तिमूलक विधान लहरी, जातिके उन्नति सूचक अनुष्ठान, विज्ञानकी प्रकाशमान ज्योति, काव्यकी मधुरवाणी, इतिहासकी स्निग्ध आभा और जातीय गौरवकी प्रचंड प्रभा विराजमान थी। ऐसे राज्यको कौन भूल सकता है? ।

तृतीय अध्याय ३.

ईश्वरीसिंहका जयपुरके सिंहासन पर अभिषेक–बहु विवाहका विषमय फल–सवाई जयसिंहके दूसरे पुत्र माधोसिंहका आमेरपर राज्य करनेके लिये उद्योग करना–मेवाड़के राणाका ईश्वरी सिंहके पास दूत भेजना–उसका महान् विपत्तिमें पड़ना–ईश्वरी सिंहका महाराष्ट्र नेताका आश्रय लेना–आमेरका सिंहासन लेकर राणाके साथ ईश्वरीसिंहका युद्ध होना–ईश्वरीसिंहकी विजय–कोटा और बूंदीकी विजयके समयमें ईश्वरीसिंहका महाराष्ट्र नेताओंकी सहायता लेना–अपने भानजे माधोसिंहको आमेरके सिंहासन पर बैठानेके लिये राणाकी फिर युद्धके लिये तैयारी–उनका हुलकर का आश्रय लेना–ईश्वरीसिंहका विप खाकर प्राण नाश–माधोसिंहका आमेरपर अभिषेक–उदीयमान जाटजातिका विशेप विवरण–जाटराजका आमेरराज्यपर सेना चलाना–आमेरकी सेनाके साथ जाटोंका संग्राम–माचेरीके सामन्तका पुनः स्वत्वलाभ–माधोसिंहका प्राण त्याग–पृथ्वीसिंह–उनकी मृत्यु–प्रतापसिंह–माधोसिंहकी विधवा पटरानीकी फीरोजपर कृपा–माचेरीके सामन्तोंकी स्वाधीनता–खुशियालीरामके षड्यंत्रजालका विस्तार–फीरोजका प्राण नाश–पटरानीकी मृत्यु–महाराष्ट्रके साथ मतान्तर–प्रतापसिंहका राज्यभार ग्रहण करना–उनका तुंगाके समरमें जयलाभ–पाटनके समरमें शोचनीय घटना–प्रतापसिंहपर विपद्–महाराष्ट्र इत्यादिके द्वारा जयपुरपर आक्रमण–प्रतापसिंहकी मृत्यु.

सर्वगुणसम्पन्न महाराज जयसिंहके परलोक चलेजानेपर उनके ज्येष्ठ पुत्र ईश्वरीसिंह जयपुरके सिंहासन पर अभिषिक्त हुए। इस समयमे जयपुरका राज्य केवल रजवाड़ेमे ही नही वरन सारे भारतवर्षमे एक प्रवल वलशाली राज्य गिना जाता था, सर्वत्र कछवाहोकी सेनाका वीरस्वरूपसे सम्मान हो रहा था। इस समय जयपुर राज्यकी सीमा यथार्थरूपसे नियत थी। राजकोप धन रत्नोसे परिपूर्ण था, मंत्रीसमाजमे राजनीति चतुर प्राचीन सदस्य नियुक्त थे–और सेना भी संग्राम विद्यामें संपूर्णरूपसे दक्ष और चतुर थी। ईश्वरीसिंह अपने पिताके ज्येष्ठ पुत्र थे, इससे वही सिंहासनपर विराजमान हुए। इनके राज्यमे कईवर्ष तक कोई विशेष ऐतिहासिक घटना नहीं हुई। यह सन् १७४७ ईस्वीमें अपनी सेना साथ लेकर दुर्रानियोके साथ युद्ध करनेके लिये सतलजनदीके किनारे गये। इतिहाससे जानाजाता है कि उस समरमे उन्होने विशेष भीरुता दिखाई, और वह जिस पक्षमे नियुक्त थे उसी पक्षके प्रधान सेनापति कमरुद्दीनखाँके रणक्षेत्रमे मारे जाने पर वह अपनी सेना लेकर भाग आये। यद्यपि यह जानाजाता है कि उनका वह भागना एक राजनैतिक उद्देश्य था"। परन्तु उनके भागनेसे उनकी रानी अत्यन्त ही अप्रसन्न हुई। वीरवंशीय वीरपतिके कापुरुषोंकी भाँति संग्रामभूमिसे भाग आनेसे ऐसी कौनसी राजपूत वीरवाला है जो स्वामीके इस आचरणसे क्रोधित न होगी?

सर्वगुणमंडित असाधारण मनुष्य सवाई जयसिंहके औरससे जन्म लेकर ईश्वरीसिंह अपने पिताके नामकी रक्षा करनेमे उपयुक्तगुणोसे विभूपित न हुए। उन्हे यद्यपि सिंहासन पर स्थितहो अपने शासनसे प्रजाको प्रसन्न करनेका अवसर मिला, परन्तु उनका हृदय क्षत्रियतेजमे तथा पूर्ण साहस और प्रवल राजनीतिसे परिपूर्ण नहीं था। इसी लिये उन्होंने शीघ्र ही अपने भाग्यमें कालरात्रि बुलाली।

पाठकोंने मेवाड़के इतिहासके तेरहवे और चौदहवें अध्यायमे पढा होगा कि जिस समय दिल्लीके प्रवल सम्राट्वंशके विरुद्ध मेवाड़ मारवाड और आमेर इन तीनो राज्योंके सामर्थ्यवान् तीनो राजाओने एकत्र मिलकर परस्पर दृढ़ संधि की थी, उसी समयसे तीनो राजवंशोमे परस्पर वैवाहिक संवन्ध भी स्थिर होगया था। उस संधिका यह फल हुआ कि वादशाहके उन दुर्दिनोमे मारवाडपतिने जिस प्रकार गुजरातके समस्त देशोंपर अधिकार करके उन्हे अपनी राजधानीमे मिलालिया, दूसरी ओर आमेरराज्यके सवाई जयसिंहने भी इसी प्रकारसे आमेरके चारोओरके देशोपर अपना अधिकार करलिया, और उसो समयमे उन्होने शेखावाटीके अधीश्वरको कर देनेके लिये राजी कर लिया, यदि उस समय जाटजाति नवीन वलसे वलवान् होकर अपनी उन्नति कर सकती तो उस समय आमेरराज्यकी सीमाका सामर हृदसे यमुनातक विस्तार होजाता। एक ओर तो इस संधिका फल जिस प्रकारसे मंगलदायक हुआ, दूसरे पक्षमे उस वैवाहिक संवन्ध वधनने अत्यन्त विपैला फल उत्पन्न किया। आमेर और मारवाड़का राजवंश दिल्लीके यवन सम्राट् वशमे कन्या देकर पवित्र आर्य रक्तको कलंकित करता आया था। समस्त भारतवर्षमे एकमात्र मेवाड़के राणावंशने प्राणान्ततक भी यवनसम्राट्को अपनी कन्या

नहीं दी; इस कारण उन्हीं राणाका वंश आजतक भारतवर्षमें ऊँचा स्थान पारहा है, जिस समय उक्त तीनों राजवंशोंका संधिबंधन हुआ था उस समयके पहिलेसे यवन सम्राट्के वंशमें कन्या देनेके समयसे मारवाड़ और आमेरके राजवंशके साथ मेवाड़के राणावंशकी आदान प्रदानकी रीति एकबार ही दूर होगई थी । इस नवीन संधिबंधनके समयसे फिर उक्त तीनों राजवंशोंमें आदान प्रदानकी रीति प्रचलित होजाय इस कारण सवाई जयसिंहने इस समय राणाकी कुमारीका पाणिग्रहण किया था । परन्तु विवाहके पहिले ऐसे नियम किये गये कि मारवाड़पति वा आमेरराज मेवाड़की जिस राजकुमारीका पाणिग्रहण करैं उस कुमारीके गर्भसे यदि पुत्र उत्पन्न हो या मारवाड़ वा आमेरराजके औरससे अन्य किसी स्त्रीके गर्भसे पुत्र उत्पन्न हो, और वह पुत्र बड़ा हो तथा राणाकी कन्याका पुत्र छोटा हो तो चिरप्रचलित रीतिके अनुसार जो ज्येष्ठ पुत्रको ही राज्य प्राप्तिका अधिकार होना उचित है उसे उल्लंघनकर राणाकी बेटीके पुत्रको ही राज्यसिंहासन दिया जायगा । और यदि राजनंदिनीके गर्भसे कन्याका जन्महो तो वह कन्या कदापि यवनसम्राट्के वंशमें नहीं दीजायगी । सवाई जयसिंह और मारवाड़राजने इस विचारमें अपनी सम्मति दी । जयसिंहने जिस राजनंदिनीके साथ पाणिग्रहण किया था, उसके गर्भसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ, उस पुत्रका नाम माधोसिंह रक्खा गया, जयसिंहने अपनी जीवित अवस्थामें ही पुत्रके मान सम्मानकी रक्षाके लिये माधोसिंहके मामा राणा संग्रामसिंहकी सम्मतिसे आमेर राज्यके आधीन टोंक, रामपुरा, फागी, और मालपुरा नामके चार परगने कुमार माधोसिंहको देदिये । और इधर अपने दौहित्रको राणा संग्रामसिंहने मेवाड़के आधीन रामपुरा भानपुरा नामके दोनों देश देदिये । इन कई देशोंकी आय ८४ लाख रुपये थी ।

ईश्वरीसिंह पिताके ज्येष्ठ पुत्र होनेके कारण राजसिंहासनपर बैठे, प्रथम पाँच वर्षतक किसीने भी माधोसिंहके पक्षका समर्थन न नहीं किया । पाँच वर्षमें ही राज्यशासनमें अयोग्यता दिखाकर ईश्वरसिंह सामन्तोंके अप्रियपात्र होगये । इनके आचरणसे असंतुष्ट हो आमेरके सामन्तोंने बहुतसे षड्यंत्र किये, और इनको सिंहासनसे उतारकर माधोसिंहको आमेरके सिंहासनपर राजतिलक करनेकी अभिलाषा की । कुमार माधोसिंह अबतक संतुष्ट होकर अपने पिता और मामाकी दी हुई सम्पत्तिको भोग रहे थे उन्होंने भ्रमसे भी पिताके सिंहासन प्राप्तिकी इच्छा नहीं की, और राणाने भी माधोसिंहके सिंहासन प्राप्तिके लिये विशेष चेष्टा नहीं की परन्तु माधोसिंह और उनके मामा जगत्सिंहके निकट मंत्रियोंके द्वारा उपरोक्त प्रस्तावके उपस्थित होते ही ईश्वरीसिंहके भाग्यपतनके द्वार खुलनेकी तैयारी होने लगी । मेवाड़पति राणा जगतसिंहने आमेरपति ईश्वरीसिंहके पास दूतके द्वारा कहला भेजा, " कि सवाई जयसिंह मरते समय यह प्रतिज्ञा करगये हैं, कि अन्य पुत्रोंके अवस्थामें बड़े होनेपर भी हमारा भानजा माधोसिंह ही आमेरकी राजगद्दीपर बैठेगा । इस कारण आप माधोसिंहको सिंहासन देदीजिये " । यह समाचार सुनते ही ईश्वरीसिंहके मस्तकपर

मानो वज्र टूट पड़ा, वह मानो चारोओर अंधकार देखने लगे, उन्होने समझ लिया कि इतने दिनोके पीछे जब राणाने यह प्रश्न किया है तब सरलतासे इसका निवटेरा कभी नहीं होसकता, अंतमें. राज्यरक्षाका कोई भी उपाय न देखकर ईश्वरीसिंहने यह संकल्प किया कि अकेले राणाके साथ युद्ध करना अत्यन्त असंभव है इस कारण उन्होने उस समय उदीयमान् महाराष्ट्र जातिके नेता आपाजी सेन्धियाके साथ संधि करली; आपाजीने ईश्वरी सिंहके पक्षका समर्थन किया। इस ओर जब मेवाड़पति राणाने सुना कि ईश्वरीसिंह किसी प्रकारसे भी माधोसिंहको सिंहासन देनेको राजी नहीं हैं, वरन वह महाराष्ट्र नेता आपाजीके साथ मिलकर अपने अधिकारकी रक्षाके लिये यत्न कररहे हैं, तब उन्होने ईश्वरीसिंहके विरुद्ध युद्धका प्रस्ताव उपस्थित किया। कोटा और बूँदीके दोनो अधीश्वरोने भी माधोसिंहका पक्ष समर्थन करनेके लिये मेवाड़की सेनाका साथ दिया। राजमहल नामक स्थानपर दोनों पक्षकी सेना परस्पर सम्मुखहो भयंकर संग्राम करने लगी। सीशोदियोकी सेनाका बलविक्रम उस समय एक वार ही प्रभा हीन होगया था, इस कारण राणा विशेष चेष्टा करके भी विजय प्राप्त न करसके, नवीन बलशाली महाराष्ट्रोकी सेनाने अपना प्रबल पराक्रम दिखाकर मेवाड़ कोटा और बूँदीकी मिली हुई समस्त सेनाको परास्त करदिया। उसके साथ ही साथ माधोसिंहकी आशाका आकाश भी मानो अधकारसे ढक गया।

ईश्वरीसिंहने महाराष्ट्रोकी सहायतासे जय प्राप्त करके गर्वित हो आपाजीकी कुमकके साथ माधोसिंहकी सहायता करनेवाले कोटा और बूँदी दोनों राज्योंपर आक्रमण किया,। उस आक्रमणसे ईश्वरीसिंहका बदला देनेके अतिरिक्त और कोई अभिप्राय नही था परन्तु महाराष्ट्रनेता आपाजी भारत विजयके लिये बाहर गये थे, इस कारण वह कोटे और बूँदीमे अपने अधिकारका विस्तार करनेके लिये उस युद्धमे लिप्त हुए थे। यद्यपि कोटेके अधीश्वरने प्रबल पराक्रम करके दीर्घकालतक अपनी रक्षाके लिये बड़ी वीरताकी, यद्यपि उस समरमे आपाजीका एक हाथ कट गया, परन्तु अतमें कोटा और बूँदी इन दोनो राज्योंके राजा, पंग पालकी समान अगणित सेनाके समान महाराष्ट्रोसे परास्त होगये। आपाजी केवल जय प्राप्त करके ही संतुष्ट नहीं हुआ, उसने दोनों राज्योके अनेक ग्राम और नगर अपने अधिकारमें करके दोनो राजाओसे कर देना स्वीकार करालिया। यद्यपि इस ओर ईश्वरीसिंह आपाजीकी सहायतासे उस यात्रामे विजय प्राप्तकर फिर पिताके सिंहासनपर निर्विघ्नतासे बैठे, परन्तु शीघ्र ही घनघोर बादलोने आकर उनके सौभाग्य सूर्यको ढाक लिया।

ईश्वरीसिंहने जिस भाँति महाराष्ट्र जातिके नेता आपाजी सिन्धियाका आश्रय लेकर राजमहलके युद्धमे विजय प्राप्त की, मेवाड़पति राणा जगत्सिंहने भी इस वार उसी प्रकार उसी महाराष्ट्रजातिके अन्य नेता हुलकरका आश्रय लिया। राणाने हुलकर के साथ इस नियमपर संधि की कि तुम यदि ईश्वरीसिंहको समरमे परास्त कर सिंहासनसे उतार, माधोसिंहको आमेरके राज्यपर अभिषिक्त करो तो छयालीस लाख

रुपया मैं तुमको दूंगा । धनके लोभी हुलकर तुरन्त इस बातपर सम्मत होगये । शीघ्र ही युद्धकी तैयारी होने लगीं, परन्तु ईश्वरीसिंहने इस समाचारको पाते ही हुलकरके सामने अपनी विजय होनी असंभव जानकर कायरपुरुषोंकी तरह विषपान करके प्राण त्याग दिये । ईश्वरीसिंहकी मृत्युके पीछे माधोसिंह निर्विघ्न होकर पिताके सिंहासनपर बैठे । हुलकरने जो माधोसिंहका पक्ष समर्थन किया था इस कारण माधोसिंहने सिंहासन प्राप्तकर प्रतिज्ञा पूर्ण करनेकेलिये चौरासी लाखके कितने ही देश जो पिता और मामाके पाससे बालकपनमें मिले थे वे सब हुलकरको देदिये ।

माधोसिंह क्षत्रियोचित गुणोंसे विभूषित थे । साहस, वीरता, नीतिज्ञता, उच्च अभिलाषा और एकाग्रता इत्यादिके बलसे उन्होने शीघ्र ही सामन्त और प्रजाके प्रति असाधारण शासन करके उनके चित्तको आकर्षित करलिया । ईश्वरीसिंहके शासन समयमें आमेरका राज्य जिस प्रकार कान्तिहीन होगया था, माधोसिंहके सिंहासन पर अभिषिक्त होते ही राज्यमें फिर उसी प्रकारसे कान्तिके प्रकाशके पूर्वलक्षण दिखाई देने लगे । यद्यपि माधोसिंहको महाराष्ट्रनेता हुलकरकी सहायतासे पिताका सिंहासन मिला था, यद्यपि उन्होंने राजपूतजातिकी अवश्य प्रतिपाल्य अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करनेके लिये हुलकरको चौरासी लाख रुपयेकी सम्पत्ति दी, परन्तु इस बातको वह भली भाँतिसे जानगये थे, कि महाष्ट्र जातिका विना दमन किये अथवा उसे रजवाड़ेसे विना निकालेहुए किसी प्रकार भी हमारा मंगल नहीं होसकता । माधोसिंहने अपनी वीरता और नीतिज्ञताका बल शीघ्र ही प्रकाशित करदिया । उन्होंने किसी प्रकारसे भी महाराष्ट्र नेताओंको आमेर राज्यपर आक्रमण न करने दिया, कर्नल टाड़ साहब लिखते हैं कि " यदि इस समय उदीय मान जाट जातिके प्रति माधोसिंह कुछ भी हस्ताक्षेप न करते, यदि उनका जीवन और कुछ कालतक स्थायी रहता तो अवश्य ही वे राठौरोंके साथ मिलकर महाराष्ट्रोंकी शासनशक्तिको चूर्ण करसकते थे । परन्तु उनके प्रतिवासी शत्रुओंने समस्त कल्पनाये व्यर्थ करदीं । यद्यपि जाट जातिके इतिहासमें इस समय सब विदित है, परन्तु यह जाति किस प्रकार सामान्यकृषक अवस्थासे अर्द्धशताब्दीमें एक प्रबल जातिरूपसे मस्तक उठानेमें समर्थ हुई थी, उसका वर्णन करना इस स्थानपर असंगत होगा । भारतमे जितने अंग्रेज सेनापति नियुक्त थे; उनमें सर्वश्रेष्ठ वीर सेनापति अंग्रेजोंने अपनी फौजको रणक्षेत्रमे चलाया था; परन्तु उस जाट जातिने उस वाहिनीका उद्देश निष्फल करदिया " ।

भारतवर्षमे जाट जातिकी उन्नतिके सम्बन्धमें कर्नल टाड़ साहब लिखते है, कि " जाटजाति जिस प्रधान जट जातिकी शाखा थी उसका वर्णन इस पुस्तकमें अनेक स्थानोंमे हुआ है । यद्यपि वह एक समय भारतवर्षमे छत्तीस राजवंशोंमे अन्यतररूपसे सम्मान पाकर अंतमे अवनतिके मुखमे पतित हुई थी, परन्तु उसने एक दिनको भी जातिकी स्वाधीनताकी आशाको न छोड़ा, जाटजातिमे

जिस वीरपुरुषने सबसे पहिले अपने जातीय कृषिकार्य (हलचलाने)को न छोड़कर अपने को पीडित करनेवालोके विरुद्ध तलवार चलानेके लिये जाटजातिको उत्तेजित किया था, उसका नाम चूड़ामणि था। औरंगजेबके उत्तराधिकारियोंको राज्यके निमित्त जातीय जनोके साथ भयंकर युद्धमें लिप्त होते और सभीको रुधिरकी नदी बहाते हुए देख इस सुअवसरपर जो जाट सम्राट्के आधीनमे थून और सिनसीनी नामक ग्राममे खेती करते थे, उन्होने उन ग्रामोमें छोटे२ किलोंका बनाना प्रारंभ करदिया, और वह शीघ्र ही कज्जाक, अर्थात् तस्करनामसे प्रख्यात हो गये। वह इस उपाधिको धारण करनेमे किंचित् भी लज्जित न हुए; कारण कि उन्होंने शीघ्र ही दिल्लीके सम्राट् फर्रुखसियरके महलतक को लूटनेका साहस किया था, इस समय सैयदके दोनों भ्राता दिल्लीकी राजसभामे सबके ऊपर अपना अधिकार चलाते थे, जब उन्होने देखा कि इस समय जाट बहुत शिर उठा रहे हैं तब उन्होंने इनके दमन करनेके लिये आमेरराज सवाई जयसिंहसे कहा, जयसिंहने उस आज्ञाको पालन करनेके लिये शीघ्र ही सेना साथले थून और सिनसीनी को जा घेरा। परन्तु अंतमे जाटोने अंग्रेजोके साथ युद्ध करके असीम साहसके साथ वीरता और पराक्रम दिखाकर किलेकी रक्षा की थीं, वह लोग उनके इस प्रथम उत्थानके समय उसी प्रकार भयंकर विक्रमके साथ उन छोटे २ मट्टीकी दीवारोके किलोकी रक्षा करनेमे समर्थ हुए। आमेरराज जयसिंह क्रमानुसार एक वर्षतक उनके किलेको घेरकर विशेप चेष्टा करके भी किसी प्रकार उसपर अधिकार न करसके, अंतमे हताशहो किलेको छोडकर चलेआये "।

"इस घटनाके कुछ काल पीछे चूडामणिके छोटे भ्राता वदनसिंह जो जाटभूमिके आधे भागके अधिकारी थे, अनेक उपद्रवोके करनेसे चूडामणिके द्वारा वदी होकर कई वर्षतक उसी अवस्थामे रहे, अंतमे आमेरराज जयसिंहके मध्यस्थ होनेपर और कईएक भूमिहार जाटोको सम्मतिसे चूडामणिने अपने कनिष्ठ भ्राता वदनसिंहको छोड़ दिया। वदनसिंह छूटते ही जयपुरमे जा पहुँचा और थूनपर अधिकार करनेके लिये जयसिंहको आशादी, जयसिंहने तुरन्त ही वदनसिंहके कहनेसे अपनी सेना साथ ले जाटोकी भूमिपर जाकर थूनके किलेको घेरलिया। जाटपति चूडामणिने पहिलेहीकी तरह प्रवल पराक्रमके साथ छ. महीने तक अपनी रक्षा की, और अंतमें अपनेको हीनवल देखकर अपने पुत्र मोहनसिंहको साथ ले किलेसे भाग गया। आमेरराजने इस प्रकारसे थूनके किलेपर अधिकार किया, और वदनसिंहको जाटजातिके अधीश्वररूपसे डीगनामक स्थानपर अभिषिक्त कर यह घोषणापत्र प्रकाशित किया कि यह डीग इसी प्रकारसे अन्य कारणोसे भविष्यत्में विशेष प्रसिद्धि प्राप्त करेगा"।

"कर्नल टाड फिर लिखते है कि वदनसिंहके अनेक सतान उत्पन्न हुई, इनमे सूर्यमल, शोभाराम, प्रतापसिंह और वीरनारायण नामके चारपुत्रोने अपने वाहुवलसे विशेष यश प्राप्त किया। वदनसिंहने अपने पूर्ण शासनसे दिल्लीके वादशाहके अधिकारवाले कितने ही देशोपर अपना अधिकार करके वहाँ अपना आधिपत्य जमाया,

वदनसिंहने पहिले ही वेर नामक स्थानमें एक किला बनाकर अपने तीसरे पुत्र प्रतापको दे दिया; और अंतमें अपने बड़े पुत्र सूर्यमल्लको समस्त अधिकार दे दिया "।

"पूर्वपुरुषोने जिस कल्पना जालका विस्तारकर स्वजातिकी उन्नति करनेका विचार किया था, सूर्यमल्ल उस कल्पनाको कार्यमे परिणत करनेके लिये बलविक्रम साहस इत्यादि सभी गुणोसे विभूषित थे। सूर्यमल्लने पिताके पदपर स्थित हो सबसे पहिले भरतपुर नामक स्थान (जो स्थान पीछे जाटजातिकी विख्यात राजधानीरूपसे गिना गया और आजकल भी उसी अवस्थामे है) के अधिनायक अपने आत्मीय खेमाको युद्धमे परास्त कर भरतपुर पर अपना अधिकार करलिया "।

संवत् १८२० सन् १७६७ ईस्वी मे सूर्यमल्लने ऐसा साहस और ऊँची अभिलाषा प्राप्त की, कि उसने यवन सम्राट्की राजधानी दिल्लीतकके लूटनेका विचार किया, परन्तु उसका वह मनोर्थ पूर्ण न होसका; जिस समय यह शिकार खेलनेमे लग रहा था उस समय विल्लोचोके दलने आकर इसपर भयंकर आक्रमण किया; और उसके प्राणोका भी नाश किया। सूर्यमल्लके औरससे जवाहरसिंह रतनसिंह, नवलसिंह, नाहरसिंह और रणजीतसिंह नामवाले पॉच पुत्र उत्पन्न हुए, इसके अतिरिक्त सूर्यमल्ल एक समय शिकार खेलनेको गये थे। वहॉ मार्गमे इनको हरदेवबक्श नामवाला एक सुकुमार वालक मिला था, इन्होने उसको भी पुत्ररूपसे ग्रहण कर पालन किया था। उक्त पॉच पुत्रोंमें से पहिला और दूसरा पुत्र कुर्मीजातिकी विवाहिता स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न हुआ था। तीसरा पुत्र मालिनके गर्भसे उत्पन्न हुआ, और अन्यान्य दो पुत्र स्वजातीय जाटस्त्रियोके गर्भसे उत्पन्न थे।

सूर्यमल्लकी मृत्युके पीछे जिस समय जवाहिरसिंह पिताके पदपर अभिषिक्त हुए उस समयमे ही माधोसिंहके शिरपर आमेरका राजमुकुट शोभायमान हुआ। जवाहिरसिंहने सिंहासनपर बैठते ही माधोसिंहके साथ शत्रुता की। उस शत्रुताका पहिला उद्देश तो यह था कि जिससे माधोसिंह महाराष्ट्रोको परास्त न करसकै, और दूसरा उद्देश यह था, कि माधोसिंह जयपुरके अधीन माचेरीके सामन्तको निकाल कर उस देशपर अपना अधिकार करलें। माचेरीके सामन्तके पक्षका समर्थन करै। सन् ११८२ हिजरीमे जवाहिरसिंह आमेरपतिके निकट वारम्वार प्रार्थना करने लगे, कि कामा नामक देश उनको दियाजाय, परन्तु आमेरराज माधोसिंहने उस प्रार्थना पर कुछ भी ध्यान न दिया। तव जवाहिरसिंह आमेरपतिके साथ युद्ध करनेकी इच्छासे अवसरकी खोज करता हुआ शीघ्र ही जाटसेनाको सजाय गर्वमें भर जयपुर राज्यसे होकर पवित्र पुष्करतीर्थकी ओरको चला। राजाओमे ऐसा नियम प्रचलित है कि यदि एक राज्यका राजा अन्य राजाके राज्यमें होजाकर अन्यत्र जानेकी इच्छा करै तो पहिले उस राजाको समाचार देकर उसकी अनुमति लेनेके लिये प्रार्थना करनी होती है। परन्तु जवाहिरसिंहने इस समय इस नियमकी भी रक्षा न की, उन्होने आमेरराजके प्रति अवज्ञा प्रकाश कर विना ही आज्ञा लिये जयपुरसे पुष्करको गमन किया। जिस

समय जवाहिरसिंह पुष्कर तीर्थपर गये उस समय उस तीर्थमें मारवाड़पति राजा विजयसिंह भी उपस्थित थे। जवाहिरसिंहके साथ विजयसिंहका साक्षात् हुआ। यद्यपि जवाहिरसिंह जाटजातिसे उत्पन्न थे, तथापि सूर्यवंशधारी मारवाड़ राज विजयसिंहने जवाहिरसिंहके साथ जातीयरीतिके अनुसार पगड़ी बदलकर मित्रता की। इस समय आमेरेश्वर माधोसिंह रुग्नावस्थामें थे, उनके और दो भ्राता हरसहाय और गुरुसहाय इनकी आज्ञासे राजकार्य करते थे, जिस समय उन दोनों भ्राताओंने यह सुना कि जवाहिरसिंह अहंकारमें भरकर विना हमारी आज्ञा लिये जैयपुरराज्यसे चले गये हैं, तो दोनों भाइयोंने यह समाचार माधोसिंहसे कहा और पूँछा कि इस समय क्या करना उचित है? यह सुनकर माधोसिंहने अत्यन्त क्रोधित होकर कहा कि "जवाहिरसिंहको इस प्रकारका एक पत्र लिखो कि वह पहिलेकी समान हमारे राज्यमें फिर न आवे और सामन्तोंको सेना सजानेके लिये आज्ञादो। यदि जवाहिर गर्वित होकर पहिले हीकी समान फिर जयपुर राज्यमें आकर हमारा अपमान करै तो सामन्तगण सेना सहित उनपर आक्रमण करके उन्हे उचित दंड दें"। अतः तुरन्त ही माधोसिंहकी आज्ञानुसार कार्य कियागया। जवाहिरसिंह भी डरनेवाला मनुष्य नहीं था, वह माधोसिंहके साथ युद्ध करनेकी वह पहिलेहीसे राह देखरहा था, इस कारण माधोसिंहके पत्रपर कुछ भी ध्यान न देकर वह पहिलेहीकी तरह पुष्करसे जयपुरको चला, जवाहिरके इस आचरणसे संग्रामका उपयुक्त कारण उपस्थित होगया इस कारण आमेरके सम्पूर्ण सामन्तोंने शीघ्र ही माधोसिंहकी आज्ञानुसार स्वजातीय बलविक्रम प्रकाश करके वीर जवाहिरको दंड देनेके लिये प्रवल वेगसे आक्रमण किया। दोनों ओरसे भयंकर युद्ध होने लगा। यदि इस युद्धमें जाट नेता जवाहिरसिंह पहले ही भाग जाते तो भी इसी कारणसे आमेरराजकी विजय होजाती, परन्तु आमेरके प्रायः सभी प्रधान २ सामन्त इस रणभूमिमें मारेगये"।

इतिहास वेत्ता जाटजातिका शेष विवरण निम्नलिखित प्रकारसे वर्णन करगये हैं कि "जवाहिरसिंहके परलोक चलेजानेपर उनके छोटे भ्राता रत्नसिंह राजसिंहासन पर बैठे। वृन्दावनके एक 'गोस्वामीके साथ इन जाटराजका विशेष परिचय हुआ। गोस्वामीने रत्नसिंहसे कहा कि हम मंत्रोंके बलसे अनेक उपाय करके निकृष्ट धातुको भी सुवर्ण कर सक्ते हैं। जाटराजने इनकी बातोंपर विश्वास कर सुवर्णके लालचमें आ बहुतसे रुपये इनको दिये। गोस्वामीने इस प्रकार बहुतसे रुपये लेकर कहा कि अमुक दिन आपको यह सुवर्णके रुपये मिल जायँगे, क्रमानुसार जब उस पाखंडी गोस्वामीने अवधिका दिन निकट आया देखा तो उसने विचारा कि इस धोखेबाजीसे तो मेरेप्राणनाशकी संभावना है, इस कारण अंतमें उसने ही रत्नसिंहके हृदयमें छुरी मारकर उनके प्राण लेलिये। रत्नसिंह इस प्रकारसे मारेगये, उनके छोटे पुत्र केसरीसिंह पिताके सिंहासनपर बैठे; और केसरीके चाचा रत्नसिंहके अनुज नवलसिंह अपने भ्रातृपुत्रके नामसे राज्यशासन करते थे। केसरीसिंहके पीछे रणजीतसिंह जाटराजके पदपर अभिषिक्त हुए। इन रणजीतसिंहने अपने बाहुबलसे भारतमें विशेष प्रसिद्धि

प्राप्त की । अंग्रेजसेनापति लार्ड लेकने इनके विरुद्ध भरतपुर पर आक्रमण किया, इन रणजीतसिंहने अमित तेज और बलविक्रमके साथ अपना प्रबल प्रताप प्रकाशित किया; भारतके इतिहासमे इनकी प्रशंसा भलीभांतिसे हुई है और अंग्रेज सेनापति भी उस प्रतापको देखकर अत्यन्त आश्चर्यमें होगया था। रणजीतसिंहने सन् १८२५ ईस्वीमें अपने प्राण त्याग किये। रणधीरसिंह, बलदेवसिंह, हरदेवसिंह और लक्ष्मणसिंह नामवाले रणजीतके चार पुत्र थे; इनमे रणधीरसिंह पिताके सिंहासन पर विराजमान हुए। पीछे रणधीरसिंह के कनिष्ठभ्राताके संरक्षक होनेसे रणधीरके छोटे पुत्र भरतपुरके सिंहासनपर विराजमान हुए। अंग्रेजोंकी सेनाने उनको भगानेके लिये फिर बड़े समारोहके साथ भरतपुर पर आक्रमण किया; और बहुत समय तक किलेको घेरकर अंतमें विजय प्राप्त की; इसी कारणसे उस विजयी सेनाने भरतपुरके खजाने और प्रजाकी सारी धनसम्पत्तिको लूट लिया ”।

अब आमेरके इतिहासका अनुसरणकरते हैं, कर्नल टाड् जाटजातिके वृत्तान्तको वर्णन कर अंतमें लिखते हैं कि “ जाट नेताके साथ आमेर राज्यका उक्त समर ही माचेरी देशके परिणाममें सम्पूर्ण स्वाधीनता प्राप्तिका प्रत्यक्ष मूलकरण था, यह कईएक बातोंसे जाना जाता है। नरूका संप्रदायके प्रतापसिंह आमेरराजके अधीनमे माचेरीके सामन्त पदपर प्रतिष्टित थे, किसी बड़े अपराधसे आमेरपति माधोसिंहने प्रतापसिंहको निकालकर माचेरीको अपने हस्तगत करलिया था । प्रताप निकाले जाकर जाटराज जवाहिरसिंहकी शरणमें गये, उन्होंने इनको आश्रय देकर उनके पदोचित सम्मानकी रक्षाके लिये अपने राज्यमें थोड़ीसी जमीन देदी। माचेरीके निकालेहुए सामन्त प्रतापसिहके कार्याध्यक्ष पदपर खुसहालीराम नामका एक मनुष्य नियुक्त हुआ और जयपुर दरबारमें दूतके पदपर नंदराम नामका एक मनुष्य नियुक्त हुआ। प्रतापके निकलते ही इन दोनोंने उसके साथ जाटभूमिमें आश्रय लिया । यद्यपि प्रतापसिह खुसहालीराम और नंदराम जाटपतिकी कृपादृष्टिसे निर्विघ्न होकर भरतपुरमें रहते थे, और जाटराजकी दी हुई पृथ्वीसे अपना जीवन व्यतीत करते थे, परन्तु इनके हृदयमे उस समय भी जातीयगर्व इतना प्रकाशमान था, कि वह स्वजातिके सम्मानकी रक्षाके लिये सर्वदा उत्कंठित रहते थे, और स्वजातिके अपमानसे वह अपना ही अपमान जानते थे, यहाँतक कि जिस समय जाटपति जवाहिरसिंह अपनी सेना साथ लेकर आमेरसे पुष्करको जा रहे थे; उस समय उन्होंने जवाहिरसिंहके इस गर्वित आचरणसे अपना अधिक अपमान माना और वह शीघ्र ही जाटराजका आश्रय और भूवृत्तिकी ओर अवज्ञा प्रकाश करके फिर जातिके सम्मानकी रक्षाके लिये आमेरको चलेगये। जिस दिन आमेरकी सेनाके साथ जाटोंकी सेनाका घोर युद्ध उपस्थित हुआ था, प्रतापसिंह उसी दिन अपनी सेना साथ ले आमेरपतिकी ओर जाकर जाटोंकी सेनाका नाश करने लगे। युद्धमें जाटराज परास्त होगया। प्रतापसिहको आमेर पतिने बड़े सम्मानके साथ ग्रहण किया। यद्यपि आमेरपति उक्त समरके पाँच चार दिन बाद तक जीवित रहे थे, परन्तु उन्होंने प्रतापसिंहको स्वजाति वा वात्सल्य और राज्यभक्ति देखकर उन्हें क्षमा किया, और उनका पूर्व-

अधिकारी माचेरी देश फिर देदिया।" प्रतापसिंहके इस आचरणसे यद्यपि आश्रय दाता जाटोंके साथ उनका युद्ध होताहुआ देखकर किसी२ ने उनको अकृतज्ञकी उपाधि दी थी, परन्तु इस बातको हम कहसकते हैं कि स्वजाति वात्सल्य उनके हृदयमें इतना प्रबल था कि स्वजातिके अपमानसे वह अपना ही अपमान हुआ जानते थे, तथापि जन्मभूमिके उपयुक्त पुत्रके कर्तव्य पालनके लिये उन्होंने अकृतज्ञकी उपाधि धारण करनेपर भी दुःख न माना। प्रतापसिंहका ऐसा आचरण स्वजाति वात्सल्यका उज्वल निदर्शन है।

सत्रह वर्षतक राज्य करके माधोसिंह उदरामयरोगसे उपरोक्त युद्धके चारदिन उपरान्त परलोकवासी हुए। विजातीय राजनीतिज्ञ टाड् साहब लिखते हैं, "यदि माधोसिंह कुछ कालतक और जीवित रहते तो जो इस विषमय युद्धके पीछे आमेरके सिंहासनपर विराजमान हुए थे और उनको अनिष्ट फल भोगने पड़े, वह यथाशक्ति उस समरके शोचनीय फलको अवश्य ही दूरकर सकते थे, परन्तु उनके पुत्रकी शैशव अवस्था थी इस हेतु राजमें राजाके न होनेसे उनके उस मृत्यु समयसे कछवाह राज्यके शासनकी सामर्थ्य एकबार ही क्षीण होनेलगी। उन्होंने कई नगर बनाये थे, इनमेंसे सबसे श्रेष्ठ रजवाड़ेमें वाणिज्यका प्रधान स्थान रणथंभोरके प्रसिद्ध किलेके निकट अपने नामसे माधोपुर नामका एक रमणीक नगर स्थापन किया। उन्होंने ज्योतिष विद्यामें पारदर्शी अपने स्वर्गीयपिता सवाई जयसिंहके गुणोंमेंसे एक पर भी अधिकार नहीं किया। उनके राज्यके समयमें जयपुरमें अनेक देशोंसे इतने पंडित आया करते थे कि जिससे पवित्र वाराणसीके पंडितोंका गौरव भी प्रभाहीन होगया था"।

माधोसिंहके औरससे दोनों रानियोंके गर्भसे पृथ्वीसिंह और प्रतापसिंह नामके दो पुत्र उत्पन्न हुए। माधोसिंहके स्वर्ग चले जानेपर, व्यवहारोंको न जाननेवाले कुमार पृथ्वीसिंह जयपुरके सिंहासनपर विराजमान हुए। पृथ्वीसिंहकी माता छोटी रानी और प्रतापसिंहकी माता पटरानी थी। इस कारण प्रतापकी माता ही पृथ्वीसिंहके अभाविकास्वरूपसे राज्य करने लगी। साधु टाड् साहब लिखते हैं, "कि चन्द्रावतवंशमें उत्पन्न पटरानी प्रभुत्वके चलानेकी अभिलाषिणी तथा दृढ़प्रतिज्ञ भी थी, परन्तु वह फीरोजनामक महावतको उपपति पदपर वरण करके अत्यन्त कलंकित हुई। रानीने फीरोजको राजसभाके सदस्यपदपर नियुक्त किया इससे समस्त सामन्त विरक्तहो राजधानी छोड़कर अपने अपने अधिकारी देशोंको चले गये और वहीं रहने लगे। रानी उन सामन्तोंकी सहायता न लेगी यह विचार कर धनके लोभी विख्यात महाराष्ट्रोंने अम्बाजीके आधीनमें एक वेतनभोगी सेना नियुक्त की, और उसके द्वारा राजस्वका संग्रह किया। इस समय आरतराम नामका एक मनुष्य आमेरके दीवान वा प्रधान मंत्रीपदपर नियुक्त था और खुशहालीराम वोरा जो परिणाममें आमेरकी राजनैतिक रंगभूमिमें प्रस्थान हुआ था, वह उसी मंत्री समाजमें नियुक्त था, यद्यपि यह अति ऊंची श्रेणीका नीति जाननेवाला था, परन्तु फीरोजके प्रभुत्व और प्रबलताने इसको भी एकवार ही सामर्थ्यहीन करदिया। फीरोज उस

राजरानी और राज्यके ऊपर पूरा आधिपत्य रखता था। क्रमानुसार नौ वर्षतक आमेरका राज्य घृणितभावसे चला, नौ वर्षके उपरान्त आमेरपति पृथ्वीसिंह[1] घोड़ेपरसे गिरकर परलोकवासी हुए, परन्तु उस समय सर्वसाधारणके हृदयमें इस प्रकारका प्रवल सन्देह उपस्थित हुआ कि पटरानीने अपने पुत्र प्रतापसिंहको राज्यपर बैठालनेकी अभिलाषासेही पृथ्वीसिंहको विष देकर मरवाडाला है। यद्यपि यह रानी मृत माधोसिंहकी पटरानी थी, परन्तु पृथ्वीसिंहकी मृत्युसे जिनके स्वार्थके सिद्ध होनेकी संभावना थी उनको अविभाविका पदपर नियुक्त करनेसे सामान्य बुद्धिका भी अपमान किया गया था। पृथ्वीसिंह यद्यपि राजकार्यको नही जानते थे; यद्यपि वह पटरानीकी शासनशृंखलाको दूर नही करसके परन्तु उन्होने उस अज्ञान अवस्थामें ही बीकानेर और कृष्णगढ़की राजकुमारियोका पाणिग्रहण किया था। कृष्णगढ़की राजनंदिनीके गर्भसे पृथ्वीसिके औरससे मानसिंह नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ, वह शिशु मानसिंह बहुत दिनोंतक आमेर राजवंशके कंटकस्वरूप थे, पिताके मरजाने पर इनकी माता गुप्तभावसे इनको कृष्णगढ़ नानाके यहाँ भेज देती परन्तु उसने देखा कि यह वहाँ भी निर्विघ्नतासे न रह सकैगा इस कारण इनको अपने साथ लेकर वह सिंधियाके डेरोंमें चली गई, और उसी दिनसे यह सेंधियाके ग्वालियोंके द्वारा पालेगये "।

पृथ्वीसिंहके अकालमें ही स्वर्गवास होनेपर आमेरके सूने सिंहासनपर सरलतासे पटरानीके प्यारे पुत्र प्रतापसिंह बैठे। खुशहालीराम इस समय राजाकी उपाधि प्राप्तकर तथा आमेरके प्रधान अमात्य पदपर नियुक्त थे, उन्होंने अभिषेकके समयमें भलीभांतिसे सहायता की। राजा खुसहालीराम प्रधान मंत्रीपदको पाकर राज्यमें धीरे २ अपनी प्रवलताका विस्तार करता था, वह इस सुअवसरको पाकर क्रमक्रमसे अपने शत्रु फीरोजकी शासन शक्तिको एकवार ही लोप करनेके लिये विशेष चेष्टा करने लगा। वास्तवमें राजा खुसहालीराम अपना वह गुप्त मनोरथ पूर्ण करनेके लिये जिन २ उपायोंको करता था उन्ही उपायोंसे उसके पूर्वतन प्रभु माचेरीके सामन्तको सम्पूर्ण स्वाधीनताका सुअवसर उपस्थित करादिया। प्रतापसिंहके अभिषेकके समयमे आमेरके समस्त सामन्त यथानियम महलमे उपस्थित थे, केवल उक्त माचेरीके सामन्त उनमें नहीं थे, ऐसा विदित होता है कि राजा खुसहालीरामने फीरोज़की सामर्थ्य लोप करनेकी इच्छासे विशेप चेष्टा करके राज्यमे विप्लव उपस्थित कर दिया था, और उसने उक्त सामन्तको गुप्तभावसे अनुरोध किया था, कि वह इसीसे अभिषेककी सभामे नहीं आये। दूसरे पक्षमे धनके अभावसे जिससे प्रजामें कष्ट उपस्थित हो, इस अभिप्रायसे उक्त राजमंत्रीने गुप्तभावसे राज्यके जिमीदारोको यह अनुरोध कर भेजा, कि जिससे

---

(१) कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "इनके भाग्यमे दो या तीन वार आमेरके सिंहासनकी प्राप्तिका अवसर मिला सेन्धियाके साथमे रहकर अंग्रेज रेसिडेण्टने सन् १८१२ई०की २१ वीं मार्चको इण्डिया गवर्नमेण्टको जो पत्र लिखा था उसे देखो। सन् १८२० ई०मे जयपुरके सामन्त जिस समय राजा जगत्सिंहके आचरणोसे कुपित हुए थे उस समय तथा उक्त राजाकी मृत्युके समयमे मानसिंहको सिंहासन प्राप्ति होनेकी संभावना थी।

वह राजाको कर न दे, इतना करके भी खुसहालीरामको संतोष न हुआ, वह राजनीति मे चतुर था, इस कारण अपना मनोरथ पूर्ण करनेके लिये मुगल सिंहासनपर विराजमान बादशाहका आश्रय लेनेके लिये दिल्ली गया। इसने विचारा कि सम्राट्की सभामे अपना प्रभुत्व चलते ही तत्काल फीरोज़रूपी काँटा सरलतासे उखाड़ दिया जायगा।

इस समय नजफखां दिल्लीश्वर सम्राट्के प्रधान सेनापति थे। इस समय नवीन बलको पाकर जाटोंने अतुल पराक्रमके साथ आगरे पर आक्रमणकर अपने अमित तेजको प्रकाशित किया था। प्रधान सेनापति नजफखाँ बादशाहकी आज्ञासे उस कठिन जाटोंकी सेनाको आगरेसे भगानेके लिये बादशाहकी सेना लेकर महाराष्ट्रोंकी सेनाका संयोगकर रणभूमिमे गये। राजनीतिमें कुशल खुसहालीरामने यह सुअवसर देखकर शीघ्र ही अपने पूर्व प्रभु माचेरीके सामन्तसे कहला भेजा, वह उसी समय सेना साथ ले बादशाहके प्रधान सेनापतिके साथ मिलकर जाटोंके साथ युद्धकरने लगे। बादशाहकी सेना जिस समय महाराष्ट्रोंकी सेनाके साथ जाटोको आगरेसे भगा उनकी राजधानी भरतपुरपर आक्रमण कर रही थी उसी समय माचेरीके सामन्त राजा खुसहालीरामकी सम्मतिसे आवश्यकता न होनेपर भी सेना लेकर नजफखाँके साथ जा मिले। इस समय जाटोंके नेता पदपर नवलसिंह थे। मिलीहुई सेनाने जाटोंपर प्रबलवेगसे आक्रमण करके उन्हे एकबार ही परास्त करदिया। इसयुद्धमे माचेरीके सामन्तने प्रबल पराक्रम करके सम्राट्का विशेष उपकार किया इससे बादशाहने प्रसन्न होकर इनको रावराजाकी उपाधि दी, और जयपुरके राजाकी आधीनतामे न रहकर स्वाधीन भावसे सम्राट्के आधीनमे माचेरीके शासनके लिये एक सनद भी लिख दी, इस प्रकारसे माचेरीके सामन्त स्वाधीन राजपदपर प्रतिष्ठित हुए।

राजा खुसहालीरामने जो अपने प्राचीन प्रभुके सौभाग्यको बढ़ानेके लिये उपरोक्त प्रकारका मार्ग साफकर दिया था, उन्होंने भी अपने पूर्वतन प्रभुकी सफलता प्राप्तिके लिये उसी प्रकारके उपायसे अपने शत्रु फीरोजका नाश करनेके लिये संकल्प किया। राजा खुसहालीरामने आवश्यकता न होनेपर भी इस समय आमेरके समस्त सामन्तोके साथ सम्राट्की सेनाके साथ मिलनेकी तैयारीकी, पटरानीने राजा खुसहालीराम बोराके उक्त प्रस्तावमे कुछ भी आपत्ति न की वरन वह इस उपायसे सम्राट्को संतुष्ट करनेके लिये फीरोजमहावतका राजपद और सम्मानके बढ़ानेकी अभिलाषिणी हुई। सदस्य राजा खुसहालीरामने स्वयं आमेरकी सेनाके नेतारूपसे जानेकी इच्छा की थी, परन्तु पटरानीने उसके बदलेमें फीरोजको ही उस पदपर नियुक्त करके खुसहालीरामके साथ भेजदिया। अभागा फीरोज़ ही इस ऊँचे पदको पाकर उनका कालस्वरूप होगया। फीरोज़ आमेरके प्रधान सेनापतिरूपसे माचेरीके रावराजाके साथ समान सम्मान पाकर बादशाहके प्रधान सेनापतिके डेरोमे गया। माचेरीके रावराजा खुसहालीरामके साथ गुप्त षड्यंत्र करके जिस उपायसे फीरोजको दूर करके आप आमेरराज्यके सर्वमय कर्ताहोनेके अभिलाषी हुए थे, वर्तमान समयमे उनकी वह कल्पना सफल होती हुई

न देखकर माचेरीके अधिनायकने अपने सहयोगी खुसहालीरामके साथ परामर्शकर दूसरा उपाय शोचा, मधुर संभाषण, प्रीतिभरे वचन तथा सौजन्यता दिखाकर सबसे पहिले फीरोज़का विश्वासपात्र बनकर मित्र होनेकी चेष्टा करनेलगा, शीघ्र ही उसकी वह चेष्टा सफल होगई। फीरोज़ने रावराजाको अपना परम मित्र जाननेमें कुछ भी संदेह न रक्खा। रावराजाने इस प्रकारसे फीरोज़को अपने हस्तगत कर शीघ्र ही विष देकर उसके प्राण लेलिये, काँटा निकलगया; इसके उपरान्त माचेरीके अधीश्वर रावराजाने खुसहालीरामके साथ मिलकर आमेरके शासनकार्यका भार लिया।

फीरोज़की मृत्युके कुछ ही समयके उपरान्त हतभागिनी पटरानीने भी अपने प्राण त्याग दिये। प्रतापसिंहकी अवस्था इस समय बहुत थोड़ी थी, इस कारण वह बिना दूसरोंकी सहायताके राजकार्य नही करसकते थे। माचेरीके रावराजा और राजा खुसहालीराम यद्यपि पहिलेसे ही दोनों एक मत होकर एक कार्यको साधन कर अर्थात् अपने २ स्वार्थके लिये राजनैतिक रंगभूमिमें चातुरीजालका विस्तार करते आये थे, परन्तु दोनो ही उच्चशासनकी सामर्थ्यके लालची होनेसे शीघ्र ही महाविपत्तिमें पड़े, खुसहालीरामकी प्रार्थनासे शीघ्र ही विख्यात योधाहमदानीखाँके आधीनमे एक सम्राट्की सेना आमेरमें आयी, क्रमसे राज्यमे भयंकर आत्मविग्रह उपस्थित होता हुआ दिखाई दिया। बादशाहकी सेनाको आमेरसे भगानेके लिये अंतमे एक पक्षने महाराष्ट्रोंके साथ संधि करनेका विचार किया। एकदिन संधि होगई, दूसरे दिन दिन फिर वह संधि तोड़ दीगई। इस प्रकारसे कुछ समयतक राज्यमे महा अशान्ति अत्याचार और रुधिर वहता रहा, जब प्रतापसिंह समर्थ होगये तब उन्होंने राज्य अपने हाथमें लिया। महाराज प्रतापसिंहने राज्यभारको अपने हाथमें लेकर समस्त विपत्तियो को छिन्नभिन्न करदिया, और दोनों सम्प्रदायोंके पापकी आशा व्यर्थ करके महाराष्ट्रोंको दमन करनेकी दृढ़ प्रतिज्ञा की।

इस समय अत्याचारी महाराष्ट्रोंने भारतके प्रत्येक प्रान्तमे भयंकर अत्याचार करने आरंभ करदिये थे, उनके इस उपद्रव और अत्याचारोंसे समस्त भारतवर्ष कंपायमान होगया था। महाराष्ट्रोंने रजवाड़ेके राज्योंपर भी वारम्वार आक्रमण करके वहाँकी समस्त धन सम्पत्ति लूट ली थी, आमेरपति प्रतापसिंहने सिंहासन पर बैठते ही असीम साहसके साथ अपनी नीतिज्ञता दिखानी प्रारंभ की। वह इस बातको भली भांतिसे जानगये कि यह महाराष्ट्र किसी भांतिसे भी पंगपालको विध्वंस नहीं कर सकेंगे, परन्तु किसी प्रकार आमेर राज्यका नहीं वरन् अब समस्त रजवाड़ेका मंगल भी नहीं है। इस समय सन् (१७८७ ईसवी) मे मारवाड़के सिंहासन पर महाराज विजयसिंह विराजमान थे, प्रतापसिंहने मारवाड़राजके पास एक दूतके हाथ पत्र लिखकर भेज दिया–" यह भयंकर अत्याचारी महाराष्ट्र हमारे प्रति शत्रुस्वरूप अत्यन्त हृदयभेदी अत्याचारोंसे हमैं पीड़ित कर रहे हैं इस कारण उनको दमन करना हमारा परम कर्त्तव्य है, और उन शत्रुओंको दमन करनेके लिये सभी राजपूत राजा, मिलकर युद्धमें

उन्हे परास्त करके निश्चिन्ततासे राज्य करै। मैंने स्वयं रणभूमिमे जाकर महाराष्ट्रोंको उचित दंड देनेकी अभिलाषा की है, इस कारण आप यदि राठौर सेनाको हमारी सहायताके लिये भेज दे तो सरलतासे हम अपनी जातिके शत्रुदलके गर्वको एकवार ही चूर्ण करके रजवाड़ेको निष्कंटक करदें।" मारवाड़पति महाराज विजयसिंहने अपने स्वजातीय भ्राताका यह त्रप पातेही शीघ्रतासे उनकी सहायता करनेके लिये तैयारीकी, एक समय इससे पहिले विजयसिंहने महाविपत्तिमे पड़कर महाराष्ट्रोंके नेताको अपने अधिकारका अजमेर देश देदिया था। इस समय वह प्रतापसिंहको विशेष उद्योगी देखकर साहसके साथ उनकी सहायता करके महाराष्ट्रोंके हाथसे फिर अजमेरको छीननेके लिये आगे बढ़े, शीघ्र ही मारवाड़की सेना सजाई गई। महाबलवान् राठौर सामन्त जवानदासने मारवाड़की सेनाके नेतास्वरूपसे आमेरराजके अधीनस्थ चमूदलके साथ जाकरमेल किया।

तुंगानामक स्थानमे महाराष्ट्रोंके नेता सेंधिया और उनके शिक्षित फरासीसी सेनापति डिवाइनने प्रवल वेगसे मारवाड़ और आमेरकी मिलीहुई सेना पर आक्रमण किया। भयंकर समरानल प्रज्वलित होगई। एक ओर जिस भाँति राजपूतोंकी सेना स्वजातिके शत्रु महाराष्ट्रोंका नाश करनेके लिये प्राणपणसे युद्ध करने लगी, उसी प्रकार दूसरी ओर नवीन बलसे बलवान हुए महाराष्ट्र भी अपनी स्वभाव–सिद्ध तस्करता और लूटमारकी वृत्तिको अक्षयकरनेके लिये यथाशक्ति वरिता दिखाने लगे। बहुत देरतक युद्ध होनेके उपरान्त सेंधिया परास्त होगया, और समस्त अस्त्र शस्त्र तथा द्रव्योंको रणभूमिमे छोड प्राण लेकर भाग गयो। विजयी राठौर और कछवाहोंकी सेनाने आनंदित होकर उन समस्त द्रव्योंको परस्परमें बाँट लिया। महाराज प्रतापसिंहने स्वयं रणक्षेत्रमे सेना चलाई थी, इस कारण उनके पक्षमे यह विजय विशेष प्रशंसित विचारी गई। कर्नल टाड् साहब लिखते हैं कि सन् १७८९ ईस्वीमे इस तुंगाके युद्धमे विजय प्राप्तकर महाराज प्रतापसिंहने एक बडा उत्सव करके दीन दु.खियोंको २४ लाख रुपये दान किये थे।

इस तुंगाके समरमे विजय होनेसे आमेरराज प्रतापसिंहके यशका गौरव समस्त रजवाड़ेमे फैलगया, और वह अपने पूर्णप्रतापसे पिताका राज्य करने लगे, आमेरमे फिर शान्तिमती देवी नृत्य करने लगी, प्रजाने अत्याचारोंसे उद्धार पाकर निर्विघ्न हो संतोषके साथ प्रतापसिंहके न्यायमूलक राज्यमे फिर अपनेको उस शोचनीय अवस्थासे बदला हुआ देखा। परन्तु राजपूतजातिके भाग्यका चक्र एकवार ही बदल गया था, वह शान्ति अधिक दिनतक स्थिर न रहसकी यद्यपि माधोजीसेंधिया तुंगाके युद्धमें परास्त होकर भागगया था, परन्तु कईवर्षके पीछे वह फिरसे मारवाड़ेको विध्वंस करनेके लिये चला।

प्रतापसिंहकी सम्मतिसे मारवाडके राजा विजयसिंहने अपनी सेनाको तुंगारके युद्धमे भेजदिया था, इस समय माधोजी सेंधिया फिर बदला लेनेके लिये बहुतसी

(१) इस युद्धका वर्णन राजस्थानके प्रथम कांडके ३२ अध्यायमें लिखा गया है।

सेना साथ लेकर आ रहा है यह समाचार सुनते ही महाराज विजयसिंहने आमेरपति प्रतापसिंहसे सेनाकी सहायता पानेके लिये दूतके द्वारा कहला भेजा, वीर श्रेष्ठ प्रताप-सिंहने तुरन्त ही अपनी सेनाको महाराष्ट्रोंका दमन करनेके लिये मारवाड़को भेज दिया, परन्तु दुःखका विषय है कि मारवाड़ आर आमेरकी सेनाने यद्यपि मिलकर युद्ध किया, परन्तु राठौरोंके कवियोंने इस समय आमेरकी सेनाको निन्दनीय वताकर गीतोंमें रचना की इससे आमेरकी सेना स्वजातिका अपमान जान शीघ्रतासे राठौरोंकी सेनासे अलग होगई। उस संगीतके कारण राठौरोंके ऊपर आमेरकी सेनाका इस प्रकारसे जाति क्रोध उपस्थित हुआ कि वह उस समय जातिके परम शत्रु महाराष्ट्रोंको दमन करना भी भूलगये, और राठौरोंको विपत्तिमें डालनेके लिये तैयार हुए। इतिहाससे यह भी जाना जाता है कि आमेरका सेनापति गुप्तभावसे महाराष्ट्रोंके साथ मित्रता करके दूर रहने लगा था, रठौर इस समाचारको कुछ भी नहीं जानते थे। इसके पीछे पातन नामक स्थानमें जाकर राठौरोंकी सेनाने पहलेकी समान प्रवल विक्रमके साथ महाराष्ट्रोंपर आक्रमण किया। कछवाहोंकी सेना इनको सहायता न देकर इकली खड़ी रही। राठौर गण उस समय इस गुप्त रहस्यको जान गये थे, परन्तु वे युद्धसे विमुख न हुए, अंतमें महाराष्ट्र नेताको जयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त हुआ। यद्यपि इस पातनके युद्धमें कछवाही सेनाकी सहायताके विना राठौर परास्त होगये, परन्तु यह अवश्य ही मानना होगा कि महाराज प्रतापसिंह अपनी सेनाके ऐसे व्यवहारसे दुःखी हुए थे, यदि प्रतापसिंह पहिलेकी समान इस समय भी स्वयं रणक्षेत्रमें चले जाते तो आमेरकी सेना इस प्रकारके जातीय कलंकको न सहकर गौरव वढ़ा सकती थी।

इतिहास वेत्ता टाड् साहव लिखते है, " कि पातनके युद्धमें पराजय और राठौरोंके साथ संधि टूटनेपर सन् १७९१ ईसवीमें तुकाजी हुलकरने जयपुरपर आक्रमण करके प्रतापसिंहको परास्त किया और उनसे वार्षिक कर लेना स्वीकार कराया। वह कर अंतमें अमीरखाँको मिला। उस समयसे प्रतापकी मृत्युके समय अर्थात् सन् १८०३ ईसवी तक जयपुर राज्य वड़ी दुर्दशामें रहा, एक तरफ महाराष्ट्र दूसरी ओर फरासीसी अपने २ अधिकारके लिये परस्पर लड़कर प्रजाका सत्यानाश करते रहे।

कर्नल टाड् महाराज प्रतापसिंहके शासनके सम्बन्धमें लिखते हैं, " कि इनके राज्यकी प्रत्येक घटनाका विवरण वर्णन करनेमें यवनराज्यकी अंतिम अवस्थाका इति-हास फिर वर्णन करना होगा, प्रतापसिंहने पच्चीस वर्षतक राज्य किया। उस समयसे ही वह और उनका राज्य भिन्न अवस्थामें पड़ा। वह एक साहसी राजा थे उनका बुद्धिवल भी कुछ कम नहीं था, परन्तु इनके साहस और बुद्धिके विचारोंसे अगणित लूटप्रिय तस्कर और आभ्यन्तरिक अनैक्यताके विरुद्धमें इस सामान्य शक्तिके प्रयोग से कभी भी सफलता प्राप्त न होसकी। माचेरी देशकी स्वाधीनता प्राप्तिमें जयपुरके राज्यकी आमदनी वहुत घट गई थी, और प्रतापसिंहके पूर्व पुरुषोंने जो अगणित धन

हरण किया था, महाराष्ट्र इत्यादिकोको एक २ वारमें कई २ लाख रुपये देनेसे वह धन भी शीघ्र ही समाप्त होगया, महाराष्ट्रोंके तस्कर दलने उस समय जयपुरसे अस्सी लाख रुपये ग्रहण किये, परन्तु आमेरके खजानेमें इतना अधिक धन था कि माधोसिंहने पिताके सिंहासनपर बैठनेकी इच्छासे मुट्ठी भर २ कर धनकी वर्षा की थी परन्तु तब भी महाराज प्रतापसिंहने तुंगाके युद्धमें विजय पाकर आनंदित हो चौबीस लाख रुपये खर्च किये "।

पूर्वोक्त वृत्तान्तसे यह भलीभाँति प्रमाणित होता है कि दिल्लीके यवन राज्यका नाश करनेके समयमें महाराष्ट्र और जाटजाति नवीन बल पाकर भारतवर्षकी रंगभूमिमें नवीन राजनैतिकताका अभिनय कररही थी। उस अभिनयके फलस्वरूप यवनराज्यकी शक्ति एक साथ ही तेजहीन होगई, और उसके साथही साथ प्राचीन राजपूतराज्यके सुख शान्तिके मार्गको बंदकर राजपूत जातिके सौभाग्यका द्वार भी एक बार ही बंदकर दिया। कुछ समयके उपरान्त पिंडारोंके दलने फिर मस्तक उठाकर राज्यमें अराजकता बढानेके लिये रंगभूमिमें दर्शन दिया,परन्तु इसका अंतिम फल यह हुआ कि मुगलराज्यका एकबार ही लोप, महाराष्ट्रोंके प्रबल वेगकी गतिका रुकना, जाटजातिकी गतिरोध, पिंडारोंको उचित दंड, राजपूतोंकी जातीय जीवनी शक्तिकी कमी, और अंतमें क्षुद्रद्वीप वासी अंग्रेजोंकी विजय आदिसे भारतवर्षमें नवीन राज्यकी सृष्टि और नवीन युगका प्रारंभ हुआ। राजनीतिमें चतुर महात्मा टाड् साहब ठीक ही कह गये हैं, कि जब चारोओरसे अनेक जातियोंने लूटना पीटना आरंभ करदिया तब जयपुरकी समान छोटेसे राज्यके अधीश्वर कभी भी उनके वेगको निवारण न करसके। जातिकी अनैक्यता ही केवल आमेरके पतनका कारण नहीं थी, पिंडारे, जाट इत्यादिके निरन्तर आक्रमणसे रजवाड़ेके अन्यान्य राज्योंकी तरह आमेरकी भी अवनति होगई। यदि इस समय मेवाड़,मारवाड़, आमेर, बीकानेर, जयसलमेर इत्यादिके राजपूत राजा एकमत होकर जातीय प्रेमसे मतवाले हो रणभूमिमें सिंहनाद करतेहुए सम्मुख होते, तौ कभी भी महाराष्ट्र और पिंडारे रजवाड़ेकी ऐसी शोचनीय अवस्था नहीं करसकते थे। तुंगाके युद्धमें इकले प्रतापसिंहने ही केवल मारवाड़ सेनाकी सहायतासे महाराष्ट्रोंके नेताको परास्त करदिया था। तब यदि वह इस पातनके युद्धमें भी उपस्थित होते, यदि राठौरके कवि अपनी दुर्बुद्धिवश जयपुरकी सेनाके विरुद्धमें इस प्रकारके ग्लानिसे भरेहुए गीत बनाकर जातिमें विद्वेष उत्पन्न न करते, तो अवश्य ही सेंधियाका सर्वदाके लिये पतन होजाता।

यद्यपि ईश्वरीसिंहके राज्यके समयसे महाराष्ट्रोंके दस्युदलके साथ आमेरका प्रथम सयोग सूचित होता है, यद्यपि माधोसिंहके शासन समयसे महाराष्ट्रोंने आमेरसे बहुतसा धन संग्रह कर लिया यद्यपि प्रतापसिंहके शासन समयमें महाराष्ट्रोंको एकवार ही आमेरसे निकाल दिया गया था। परन्तु यह बात अवश्य ही माननी होगी कि प्रतापसिंहने तुंगाके युद्धमें सेन्धियाको परास्त करके विशेष प्रशसा प्राप्त की थी। प्रतापसिंह एक महावीर और बुद्धिमान राजा थे,टाड् साहबने इस बातको मानलिया है कि केवल कालके वशसे ही उनकी वह प्रतिज्ञा और वीरता आमेरकी निर्विघ्नतासे रक्षा करनेमें समर्थ न हुई।

चतुर्थ अध्याय ४.

महाराज जगत्‌सिंहका सिंहासनपर बैठना-महाराष्ट्रोंके अत्याचारोंसे राजपूत राज्यका निग्रह भोग-बृटिश गवर्नमेण्टके साथ महाराज जगत्‌सिंहका प्रथम संधिका प्रस्ताव-संधिबंधन-संधिपत्र-संधिभंगके लिये अंग्रेज गवर्नमेण्ट जनरलकी आज्ञादेना-हुलकरके विरुद्ध जगत्‌सिंहका अंग्रेज सेनापति लार्डलेकके साथ योग देना-जगत्‌सिंहके संधिपालन करनेपर भी अंग्रेज गवर्नमेण्ट का पूर्वसंधिका नाश करना-महाराज जगत्‌सिंहका दूसरा राजनैतिक अभिनय-मेवाड़के राणाकी कन्या कृष्णाकुमारीके साथ विवाह करनेके लिये जगत्‌सिंहका मेवाड़को उपहार द्रव्य भेजना-मारवाड़पति मानसिंहका उन समस्त द्रव्योंको लूटना-मानसिंहके आचरणसे जगत्‌सिंहका क्रोध-सेन्धिया-मानसिंहके विरुद्ध जगत्‌सिंहका युद्ध-पोकर्णके सामन्त सवाईसिंहका जगत्‌सिंह के साथ योगदान-जयपुरमें लक्षाधिक सेनाका संग्रह-मानसिंहके साथ युद्ध-मानसिंहका भागना-जगत्‌सिंहका जोधपुरकी राजधानीको लूटना-जोधपुरके किलेका घेरना-अमीरखांका जयपुरपर आक्रमण-जगत्‌सिंहका रणस्थल छोड़कर कलंकित होकर अपने राज्यमें भागना-महाराष्ट्रोंका जयपुर पर आक्रमण-चौथ ग्रहण-अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ दूसरी बार संधिका विचार-संधि करनेमें जगत्‌सिंहको आपत्ति-संधिबंधन-संधिपत्र-जगत्‌सिंहकी जीवनीके सम्बन्धमें टाड् साहबका मन्तव्य-जगत्‌सिंहकी मृत्यु-मोहनसिंह-मोहनसिंहके अभिषेक सम्बन्धी षड्यंत्रसे अंग्रेजोके योगदानका विषमय फल-राजसिंहासनाधिकारीका निर्णय करना-राजपूतरीतिके बिना जाने शोचनीय फल-मोहनसिंहको जयपुरके सिंहासन पर अभिषिक्त करनेसे राजपूतरीतिका अपमान-प्रचलित रीतिके नाशका कारण-उसके सम्बन्धमे बृटिश कर्मचारियोंका आचरण-मोहनसिंहके अभिषेकमे यथार्थ सिंहासनाधिकारीका आपत्ति करना-नाजिरका विपत्तिमें पड़ना-जातीय युद्धकी संभावना-जगत्‌सिंहकी विधवा रानीका एक पुत्र उत्पन्न करना-समस्त उपद्रवोंकी शान्ति-जयसिंहका जन्म—

महाराज प्रतापसिंहके स्वर्ग चले जानेपर जगत्‌सिंह आमेरके राजसिंहासन पर विराजमान हुए। इतिहासवेत्ता टाड् साहब आमेर राज्यवंशके प्रत्येक राजाके राज्यका इतिहास वर्णन करगये है, परन्तु अत्यन्त शोकका विषय है कि उन्होंने महाराज जगत्‌सिंहके राज्यको इतिहासमे वर्णन नहीं किया। उनके नेत्रोके सम्मुख जगत्‌सिंहका शासन अत्यन्त कलंकमय था, जगत्‌सिंहके चरित्र घृणित विचार कर ही उन्होंने अपने इतिहासमें उनका वर्णन नही किया। परन्तु हम उनकी इस नीतिका अनुसरण नही कर सकते, जब किसी राजवंशके इतिहासको लिखनेके लिये बैठते है तो उसके कैसे भी आचरण क्यों न हों इतिहास लेखकको उन सबका लिखना कर्तव्य है। लेखकका किसीके प्रति उपेक्षा दिखानी उचित नहीं। इसी कारणसे हमने जगत्‌सिंहके शासन समयके वृत्तान्तको इतिहासमें लिखना किसी भाँति भी अयोग्य न समझा। कर्नल टाड् साहब महाराज जगत्‌सिंहके शासनके सम्बन्धमे कई एक कथाएं लिख गये हैं, उन्हें हम सबसे पीछे वर्णन करेंगे। पहिले महाराज जगत्‌सिंहके ही शासन सम्बन्धी कई एक प्रधान २ घटनाओका वर्णन करते हैं।

सवाई महाराज जगत्‌सिंहने सन् १८०३ ई० मे अपने मस्तक पर आमेरका राजमुकुट धारण किया। इस समय एक आमेर ही नही वरन समस्त राजपूतराज्य अवनतिकी अवस्थाको पहुँच गये थे। यद्यपि दुराचारी औरंगजेबके शरीर त्यागनेके उपरान्त रजवाड़ेके समस्त राजाओने सुअवसर पाकर अपने राज्यकी सीमा तथा जातीय बलको बढ़ा लिया था, परन्तु यवनराज्यके पतनके साथ ही साथ महाराष्ट्रोंके उदयसे राजपूत राज्योंकी वह क्षणिक सुखशांति और राजनैतिक ख्याति अवनति अवस्थामे पलट गई।

यद्यपि एक २ यवन सम्राट् पिशाच स्वरूप धारण करके समय समयपर राजपूतराज्योंको विध्वंस किये देते थे, परन्तु उससे राजपूतोंकी जातीय शक्तिका लोप नहीं होता था, वरन एक २ यवन सम्राट्के आधीनमे रहकर आमेर मारवाड़ इत्यादिके राजपूत राजाओंने अपने जातीय गौरवके सूर्यको भलीभाँतिसे प्रकाशमान करलिया था और इसी कारणसे उन्होंने अपने २ राज्यमें धन सम्पत्ति सन्मान कीर्ति तथा बलके बढ़ानेमें भी कसर न की। महाराष्ट्रोंके लुटेरे दलने रजवाड़ेके प्रत्येक राज्यमे इस प्रकारसे लूटकी कि वहाँकी समस्त धन सम्पत्तिको हरण करके शून्य कर दिया, इससे प्रजामे सुख और शांतिका लेश भी न रहा। वाणिज्य व्यापार सब बंद होगये, किसानोंने खेती करनी छोड दी, इनके उपद्रवोसे रजवाड़ेके प्रत्येक राज्यकी अवस्था अत्यन्त ही शोचनीय होगई। हुलकर और सेन्धिया यही दोनो महाराष्ट्रोंके नेता थे तथा इनके आधीन अमीरखाँ इत्यादि पठान और लुटेरोंके यवन शासनसे भारतके प्रत्येक प्रान्तमे अराजकता उपस्थित होगई, और यह बराबर राजपूत जातिका विध्वस करनेके लिये तैयार होगये। यद्यपि तुंगाके युद्धकी तरह एक और युद्धक्षेत्रमे मिलकर राजपूतोंकी सेनाने सेन्धियाकी समान लुटेरोंके नेताका सर्वनाश किया था, परन्तु यह कार्य किसी विरलेकाही है। राजपूत जातिकी एकताके अभावमे महाराष्ट्रगण लोमहर्षण अभिनय करते है। जिस समय महाराज जगत्‌सिंह आमेरराज्यके छत्रके नीचे शोभायमान हुए उसके बहुत दिन पहिलेसे महाराष्ट्रोंने रजवाड़ेमे भयंकर अत्याचार करने आरंभ किये थे, परन्तु इस समय उनके अत्याचार भयकररूपसे प्रबल होगये थे, सौभाग्यका विषय है कि अंग्रेजोंकी ईस्ट इण्डियाकंपनी इस समय बंगालमें अपना पूर्ण अधिकार स्थापित कर धीरे धीरे भारतके अन्य प्रान्तोकी ओर बढरही थी। बृटिश सिंहने देखा कि महाराष्ट्रोंकी गतिको बिना रोकेहुए सम्पूर्ण भारतवर्षको पाना असंभव है, इस कारण इस समय बृटिशसिंहने महाराष्ट्रोंके दमन करनेके लिये कूटनीतिका विस्तार करना प्रारंभ किया, गवर्नमेण्ट इस बातको भलीभांतिसे जानगई थी कि महाराष्ट्र तस्करोंके दोनो नेताओंके भयंकर अत्याचार और उपद्रवोंसे राजपूत राजा अत्यन्त ही हानि उठाते आये है, इस कारण यदि वह राजा महाराष्ट्रोंके अत्याचारोंसे रक्षा करनेके अभिप्रायसे हमारे साथ स्थायी संधिबन्धन करले तो हमारे राज्यके पक्षमें विशेष सुभीता होजायगा। बृटिश गवर्नमेण्टने इसी अभिप्रायसे इस समय आमेरपति महाराज जगत्‌सिंहके साथ संधि करनेका प्रस्ताव उपस्थित किया। महाराज जगत्‌सिंहने

राजसिंहासनपर बैठकर देखा कि एक ओर तो जिस भांति सातसौ वर्षका यवनराज्य एकबार ही लुप्त होगया, उसी भॉति दूसरी ओर गवर्नमेण्टका राज्य धीरे २ अपनी उन्नति कर रहा है, उन्होंने यह भी विचारा कि यद्यपि महाराष्ट्र जाति सब श्रेणीके मनुष्योंको पीड़ित करतीहुई उनकी धन सम्पत्तिको लूटती हुई फिर रही है, और अनेक देशोपर अपना अधिकार करके नवीन राज्यकी सृष्टि कर रही है, परन्तु वृटिशसिंहने जिस प्रकार प्रबल बलशाली रूप धारण कर भारतवर्षमें दर्शन दिया है इससे तो वृटिशसिंहके साथ संधिबन्धन करनेमें अपना कल्याण है।

टाड् साहबने इस प्रथम संधिबंधनका कोई उल्लेख नहीं किया। हम विश्वस्त होकर उस विवरणको संग्रह करनेके लिये तैयार हुए है। आचिसन साहबने अपने बनायेहुए ग्रंथमें लिखा है कि "राजपूत राज्योंपरसे मुसल्मानोका प्रभुत्व लोप होनेके पीछे महाराष्ट्रोंके प्रभुत्वका विस्तार हुआ। सन् १८०३ ईसवीमें अंग्रेजोके साथ जयपुरके महाराजकी राजनैतिक सन्धि स्थापित हुई। उस समय जगत्सिंह जयपुरके महाराज थे। महाराष्ट्रोंके साथ युद्ध उपस्थित होनेके समय गवर्नमेण्टने जो साधारण राजनीति सूत्रका अवलम्बन किया, अर्थात् जिस राजनीतिके अनुसार राजपूत राजाओ को अपना मित्र ठहरा कर महाराष्ट्रोंको हिन्दुस्थानसे निकालना विचारा था उसी नीतिके अनुसार सन् १८०३ ईसवीमे जयपुरके महाराजके साथ गवर्नमेण्टका एक संधिपत्र तैयार किया गया"।

यद्यपि महाराज जगत्सिंह अंग्रेजोके साथ संधि करनेके लिये राजी होगये थे परन्तु गवर्नमेण्ट इस समय भारतवर्षपर अपनी प्रभुता तथा इनकी समान प्रतापका विस्तार न करसकी थी, इस कारण जगत्सिंहने अपने हस्ताक्षर न देकर केवल साधारण राजकीय मैत्रीका स्थापन सम्बन्ध करना स्वीकार किया। ईस्टइण्डिया कंपनीने शीघ्र ही इस प्रस्तावको स्वीकार कर लिया। इस प्रकारसे महाराज जगत्सिंहके साथ सन् १८०३ ई०में वगर्नमेण्टका निम्न लिखित संधिपत्र तैयार किया गया।

संधिपत्र।

माननीय अंग्रेज ईस्टइण्डियाकम्पनीके साथ राजराजेन्द्र सवाई जगत्सिंह-बहादुरका मित्रता और संधिसम्बन्ध मूलक यह संधिपत्र महिमवर मार्किस वेलेसली सेन्टपाटिक आदि महासम्भ्रान्त उपाधियोंसे विभूषित महा महिमवर वृटिश राजराजेश्वरके माननीय प्रिवीकौन्सिलर, समस्त वृटिशाधिकृत देशोंके अधीश्वर गवर्नर जनरल, और भारतवर्षमें स्थित समस्त वृटिशसेनाके कप्तान जनरलका अधिकार प्राप्त संधिबंधनके लिये सम्पूर्ण सामर्थ्यवान् महामहिमवर जनरल जिरार्डलेक, भारतवर्षमे स्थित वृटिशसेनाके प्रधान सेनापतिका माननीय अंग्रेज ईस्टइण्डियाकम्पनीके पक्षसे, और महाराजाधिराज राजराजेन्द्र जगत्सिंह बहादुरका उनके पक्षमें उनके उत्तराधिकारी और उनके भविष्य स्थलभिषिक्तोंके पक्षमें नियत किया गया।

प्रथम धारा-माननीय अंग्रेज ईस्टइण्डियाकम्पनी और महाराज जगत्सिंह बहादुर तथा उनके भविष्य उत्तराधिकारियोंमे दृढ और चिरस्थाई मित्रता तथा संधिका सम्बन्ध बंधन स्थापित हुआ-

दूसरीधारा-किसी कारणसे दोनो राज्योंमें मित्रता होकर भी किसी ओरके शत्रु और मित्र दोनों पक्षके शत्रु और मित्ररूपसे गिनेजाँयगे, और दोनो राज्य ही चिरकालके लिये इस व्यवस्थाकी ओर ध्यान रक्खैंगे।

तीसरी धारा-महाराजाधिराज इस समय जिस देशके अधिकारी है माननीय कम्पनी भी उस देशके शासनके सम्बन्धमें हस्ताक्षेप नहीं करैगी और न उनसे कर ले सकती है।

चौथी धारा-माननीय कंपनीने सम्पूर्ण हिन्दुस्तानके देशोपर अपना. अधिकार करलिया है, यदि माननीय कम्पनीका कोई शत्रु उन देशोंपर अधिकार करनेके पूर्वलक्षण प्रकाश करै तो महाराजाधिराज कम्पनीकी सेनाको सहायताके लिये अपने आधीनकी समस्त सेनाको भेजेगे, और उस शत्रुको भगानेके लिये वह स्वयं अपनी सामर्थ्य दिखावेगे, तथा वह अपनी मित्रताका यथार्थ परिचय देनेमे किसी प्रकारकी कसर न करैंगे।

पाँचवींधारा-जिस कारण वर्तमान संधिपत्रकी दूसरी धाराके अनुसार मित्रता स्थापित होकर-शत्रुओंके हाथसे महाराजाधिराजके अधिकारी राज्यकी रक्षाके पक्षमें माननीय कंपनी प्रतिभूस्वरूपसे कही जारही है, महाराजाधिराज इसे स्वीकार करते हैं, यदि उनके साथ अन्य किसी राजाका विवाद उपस्थित होजाय तो महाराजाधिराज सबसे पहिले गवर्नमेण्टके निकट उस विवादका कारण कहैं, और गवर्नमेण्ट प्रीतिभावसे उस झगड़ेके मिटादेनेकी चेष्टा करैगी। यदि विरुद्धपक्षके दोषसे किसी प्रकार उचित मीमांसा न कीजाय तो महाराजाधिराज कंपनीके निकट सैनिक सहायताकी प्रार्थना करसकते हैं। उपरोक्त अवस्था होने पर उस सहायताकी प्रार्थना ग्रहण की जायगी, और महाराजाधिराज इस बातको स्वीकार करते हैं, कि इस प्रकारसे सहायताका समस्त व्यय भारतवर्षके अन्यान्य राजाओंसे जिस भाँति लेनेकी व्यवस्था हुई है उसी प्रकार हम लिया जाय।

छठवींधारा-महाराजाधिराज इस बातको स्वीकार करते है कि यद्यपि वह यथार्थमें अपनी सेनाके प्रभु हैं परन्तु युद्धके समयमे और संग्रामकी पूर्व तैयारीके समयमे वह अपनी सेनाके साथ जहाँ अंग्रेज सेनाका दल नियुक्त रहैगा वह उसी अंग्रेजसेनादलके प्रधान सेनापीतके उपदेश और उसकी सम्मातिके अनुसार कार्य करैंगे।

सातवीं धारा-कम्पनी-गवर्नमेण्टकी सम्मतिके विना महाराज अपने राजकार्यमे किसी अंग्रेज वा फरासीसी वा यूरूपके अन्य किसी निवासीको नियुक्त अथवा अन्य किसी उपायसे उसकी रक्षा नही कर सकैगे।

ऊपर लिखा हुआ सात धाराओंसे युक्त संधिपत्र महामाहिमवर जनरल जिरार्ड लेकका अकवराबाद सुवार अधीन सराहिन्द नामक स्थानमे संवत् १८६० अर्थात् सन् १८०३

ईसवीके दिसम्बर महीनेकी बारहवी तारीखको तैयार किया गया और उसी दिन उस पर हस्ताक्षर करके मोहर लगादीगई । महामहिवर सकाउन्सिल गवर्नर जनरलके हस्ताक्षर होकर तथा मुहर लगाकर ऊपर लिखीहुई सात धाराओंसे युक्त संधिपत्र महाराजके हाथमें दिया गया, महामहिमवर जनरललेकका हस्ताक्षर और मोहर लगा हुआ यह वर्तमान संधिपत्र महाराजने लौटा दिया । (हस्ताक्षर) वेलेसली ।

कम्पनीकी मोहर.

सकाउन्सिल गवर्नर जनरल द्वारा यह सान्धिपत्र सन् १८०४ ईसवीमें जनवरीकी १५ तारीखको मान्य तथा स्वीकृत हुआ ।

(हस्ताक्षर) जी. एस. बारलो ।

जी० डडनि ।

इस संधिपत्रको देखकर पाठकगण सरलतासे जानजायँगे कि वृटिश गवर्नमेण्ट यथार्थ मित्रभावसे ही महाराज जगत्‌सिंहको प्रवल वृटिश शासनके आधीनमें बाहरी शत्रुओंके हाथसे रक्षा करनेके लिये सम्मत हुई । इस समय महाराष्ट्रगण अपने भयंकर अत्याचारोंसे जयपुरको क्षारखार कर रहे थे इस कारण अंग्रेज गवर्नमेण्टकी सहायतासे ही जयपुर राज्यकी रक्षा करना महाराज जगत्‌सिंहने कल्याणकर समझा, विशेष करके यद्यपि उक्त संधिसे आमेरराजने अंग्रेजोंकी आधीनता स्वीकार करली, परन्तु जब उन्होंने इस संधिसूत्रसे गवर्नमेण्टको एक कौड़ी भी करकी न दी और गवर्नमेण्टने आमेर राज्यके भीतरी शासनपर हस्ताक्षेप नहीं किया तब आपको भी अवश्य ही मानना होगा कि यह संधिपत्र गवर्नमेण्ट और महाराज जगत्‌सिंह इन दोनोंके लिये समान सम्मान दायक था ।

यद्यपि आमेरपति महाराज जगत्‌सिंहने अंग्रेज कंपनीके साथ संधि करली थी, और उस संधिपत्रपर हस्ताक्षर भी करदिये, परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि उनका वह मित्रभाव अधिक दिनतक स्थिर न रहसका । आचिसन साहब अपनी पुस्तकमें लिखते हैं, “ कि जयपुरके महाराज संधिपत्रमें लिखेहुए अपने कर्तव्य कर्मको पालन करनेमें त्रुटि करने लगे, और लार्ड कर्नवालिसने भी देशीय राजाओंके मित्रता सम्वन्ध बंधनको एकबार ही तोड़नेका विचार किया था । उन्होंने स्पष्ट प्रकाशित किया था कि जयपुर राज्यके साथके समस्त सम्वन्ध बंधन दूर किये जाँय, क्योंकि गवर्नमेण्ट जिस भावसे जयपुरके राज्यकी रक्षा करनेके लिये तैयार हुई है उस भावसे वह उक्त राज्यकी रक्षा न करसकेगी। ” यह तो लिखा किन्तु महाराज जगत्‌सिंहने संधिबंधन स्वीकार करके भी संधिपत्रकी किसी २ धाराका पालन नहीं किया । परंतु उन्होंने कौनसा अपराध किया था सो किसी इतिहाससे भी नहीं जाना जाता, हमारा ऐसा विचार है कि लार्ड कार्नवालिस जिस समय भारतवर्षके गवर्नर जनरल पदपर प्रतिष्ठित थे, उस समय उन्होंने देशीय राजाओंके सम्बन्धमें एक स्थायी मूलनीतिके अवलम्बन करनेका भी साहस नहीं किया, ऐसा विदित होता है कि उनके मतसे देशीय राजाओंके साथ मित्रता करना गवर्नमेण्टके पक्षमें मंगलकारी नहीं था, इसी लिये उन्होंने

देशीय राजाओंकी स्थिर की हुई पूर्वसंधिको भी व्यर्थ कर दिया, और इसी कारणसे महाराज जगत्‌सिंह पर संधिपत्रकी किसी धाराके उल्लंघन करनेका वृथा दोष लगा कर उक्त संधिको भी व्यर्थ करदिया था । हमारे इस अनुमानकी सत्यता आगे आप ही मालूम होजायगी ।

यद्यपि गवर्नर जनरल लार्ड कार्नवालिसने महाराज जगत्‌सिंहको संधिपत्र भंगकरनेवाला बताकर उनके साथ ईस्टइण्डियाकंपनीके समस्त बंधनोंको तोडनेकी आज्ञादी, परन्तु आचिसन साहब उक्त मन्तव्योंके पीछे वर्णन करगये हैं, "कि लार्ड कार्नवालिसकी उक्त आज्ञाको सुननेके पहिले ही महाराज जगत्‌सिंहने हुलकरके साथ युद्ध करनेके समय लार्ड लेकके साथ भलीभाँतिसे योग दिया और अपने पहिले सम्मानको फिर प्राप्त करलिया, इसी कारणसे लार्ड लेकने महाराजकी चिरकालतक सहायता करनेकी प्रतिज्ञा की । लार्डकार्नवालिस इनके सम्बन्धमे जिस मूलनीतिके सूत्रको नियुक्त करगये, सर जार्जबार्लोने भी उसीका अवलम्बन किया, परन्तु लार्डलेकके विशेष प्रतिवाद करनेपर सरजार्जबार्लोने साधारण राजनीति और सरल विश्वासकी रक्षाके लिये जयपुरराज्यके साथ सम्बन्ध बंधन दूर करदिया*"। हमारे पाठक इससे भलीभाँति जानगयेहोंगे कि ईस्टइण्डिया कम्पनी और महाराज जगत्‌सिंह इन दोनोमेंसे सन्धिभंग करनेका कौन अपराधी था । महाराज जगत्‌सिंह संधिपत्रकी किसी धाराका भी पालन नही करते इसीसे लार्ड कार्नवालिसने संधिबंधन तोडनेकी आज्ञा दी परन्तु जब कि उस आज्ञाके प्रचार होनेके पहिले ही महाराज जगत्‌सिंहने सेनापति लार्डलेकके साथ मिलकर गवर्नमेण्टके परम शत्रु हुलकरके साथ युद्ध किया, जब कि उन वृटिश सेनापतिके संधिमतके पूर्वसम्बन्धकी रक्षा की जाती थी तब सर जार्जबार्लोका उक्त आज्ञाका प्रचार करना अवश्य ही अन्याय मूलक था इससे स्पष्ट जाना जाता है कि कम्पनीने ही प्रतिज्ञा भंगकी । इस संधिके भंग होनेसे तो कम्पनीकी कुछ विशेष हानि न हुई, परन्तु अंतमे जयपुरपति महाराज जगत्‌सिंहका विशेष अनिष्ट हुआ ।

महाराज जगत्‌सिंह आमेरके सिंहासन पर विराजमान होकर गवर्नमेण्टके साथ राजनैतिक अनुष्ठानमे लगे परन्तु दुर्भाग्यका विषय है कि वृटिश गवर्नमेण्टने उनके साथ अकारण ही समस्त सम्बन्ध तोड़ दिये।जयपुर राज्यको फिर महाराष्ट्री लुटेरोंका दल भयंकर क्रोधाग्निसे भस्म करने लगा । जयपुरके महाराजने संधिपत्र पर पूर्ण विश्वास करके वृटिश सेनापति जनरल लेकके साथ मिलकर हुलकरके विरुद्ध शस्त्र धारण किये थे, इसी कारणसे महाराष्ट्र लुटेरोंके दलने महाराज जगत्‌सिंहका सर्वनाश करनेका संकल्प किया था ।

महाराज जगत्‌सिंहने राजछत्र धारण कर उपरोक्त राजनैतिक अभिनयके पीछे एक अत्यन्त शोचनीय कार्यमें हाथ डाला; आमेर राज्यका भाग्यरूपी आकाश इस समय काले २ घनघोर बादलोंसे छा रहा था, आत्मविग्रह, और स्वजातिमे द्वेष होनेसे

*Aitcheson's Treaties & Vol. IV.

समस्त रजवाड़ा इस समय अवनतिकी सीढ़ी पर पहुँच गया था, इसी कारण महाराज जगत्सिंहने इस शोचनीय काण्डमें हाथ डाला और प्रथम राजपूत वीरोंके योग्य शूरवीरता, तथा बलविक्रम और पंडिताई दिखाकर कार्य किया। यद्यपि वह इस अति ऊँचे यशके संग्रह करनेमे समर्थ भी थे, परन्तु अंतमे कलंकित होगये। इन घटनाओं का वर्णन राजस्थानके दो स्थानोमें पहिले होचुका है उन दोनों घटनाओंके साथ महाराज जगत्सिहका विशेष सम्बन्ध है इसीसे महाराज जगत्सिहके शासनवृत्तान्तको संक्षेपसे उल्लेख करना विचारा है।

जिस समय महाराज जगत्सिह आमेरके सिहासन पर विराजमान थे उसी समय मेवाड़के सिहासन पर महाराणा भीमसिंह और मारवाड़के सिंहासन पर महाराणा मानसिंहजी विराजमान थे। यह तीनों राजा बराबर थे। मानसिहके साथ उनके आधीनकी सामन्त मंडलीका मेल नहीं था। विशेष करके मारवाड़के प्रधान सामन्त पोकर्णके अधिपति सवाईसिहके साथ महाराज मानसिंहका इस समय घोर विद्वेष उपस्थित हुआ। सवाईसिंहने अपने स्वाभाविक क्रोधके वशीभूतहो मानसिहको किसी न किसी उपायसे सिहासनसे रहित करके अपना मनोरथ पूर्ण किया था। उनके उस मनोरथके सफल होते ही इस समय और भी कितने ही कारण उपस्थित होगये। मानसिंहके पहिले महाराज भीमसिह मारवाड़के सिंहासन पर विराजमान थे, उन भीमसिंहकी रानीने इनके स्वर्गवासी होनेपर इन्हींके औरससे एक पुत्र उत्पन्न हुआ। सवाईसिंह उस राजकुमार धौंकलसिंह को मारवाड़के सिहासनका अधिकारी बनाकर उसीके सहारे मानसिहको विपत्तिके जालमे डालनेको तैयार हुए। नीतिचतुर सवाईसिहने विचारा कि मैं इकला ही सरलतासे मानसिहको सिंहासनसे भ्रष्ट नहीं करसकूंगा, इस कारण उसने छिपे २ षड्यंत्र फैलाया। उन्होने विचारा कि इस समय आमेर और मारवाड़के अधीश्वरोंमें यदि किसी प्रकारसे झगड़ा होजाय तो इस उपायसे धौंकलसिहके सिंहासन प्राप्तिका मार्ग स्वच्छ होजायगा। क्रमानुसार उस कल्पनाकार्यके परिणत होते ही एक सुअवसर आपहुंचा। मेवाड़के महाराणा भीमसिंहके औरससे कृष्णकुमारी नामकी एक कन्याने जन्म लिया, और कुछ समयमें उस अनुपम रूपलावण्यतासे युक्त कन्याने समस्त रजवाड़ेमे "फलनलिनी" रूपसे प्रसिद्धि प्राप्त की। उस रूपवती कृष्णकुमारीके साथ मृत मारवाड़पति भीमसिहके विवाहका प्रस्ताव पहिले ही उपस्थित हुआ था, परन्तु भीमसिहकी मृत्यु अकालमे ही होगई, इसीसे वह प्रस्ताव भी दूर होगया। कुटिल हृदय सवाईसिह उस समय उस कृष्णकुमारीके ऊपर लक्ष्य करके समस्त रजवाड़ेमे भयंकर उत्पात मचाने लगे। इन्होंने प्रकाशमें तो मानसिंहके साथ मित्रता की और गुप्तभावसे षड्यंत्र करके आमेरपति महाराज जगत्सिहके पास यह प्रस्ताव भेजा, "राणा भीमसिहकी कन्या अत्यन्त रूपवती है इस कारण आप उसके साथ विवाह करनेके लिये राणाके निकट समाचार भेजिये सवाईसिह इस बातको भली भांतिसे जानते थे कि महाराज जगत्सिह अत्यन्त इन्द्रियपरायण पुरुष है, वह कृष्ण-कुमारीके रूपलावण्यको सुनकर अवश्य ही उस रमणी-रत्नकी प्राप्तिके लिये चेष्टा

करेंगे, और वास्तवमें ऐसा ही हुआ, महाराज जगत्‌सिंहने उसके मुखसे कृष्णकुमारीकी सुन्दरताको सुनते ही सवाईसिंहकी सम्मतिके अनुसार बहुतसा धन खर्च करके चार हजार सेनाको मेवाड़में भेजदिया। और विवाहका प्रस्ताव लेकर एक माननीय दूत भी उनके साथ भेज दिया।

इस ओर सवाईसिंहने जगत्‌सिंहको उत्तेजित करके जब सुना कि आमेरसे मेवाड़को उपटोकन द्रव्य भेजेगये है तब तुरन्त ही उसने मारवाड़पति मानसिंहकी सभामें जाकर मित्रभावसे कहा, "महाराज! मेवाड़पति राणा भीमसिंहकी रूपवती नंदिनी कृष्णकुमारीके साथ मृतक महाराज भीमसिंहके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित हुआ था, इस समय जयपुरपति जगत्‌सिंहने उनके साथ विवाह करनेके लिये उपहारका द्रव्य भेजा है। यदि जगत्‌सिंहको कृष्णकुमारी मिलगई, तो इस संसारमें आपके कलंककी सीमा न रहैगी। मारवाड़के अधीश्वररूपसे ही भीमसिंहके साथ कृष्णकुमारीके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित हुआ था, आप उसी मारवाड़के सिंहासनपर विराजमान है, इस कारण आपके बदलेमें यदि जगत्‌सिंह कृष्णकुमारीका पाणिग्रहण करनेमें समर्थ हों तो मारवाड़के सिंहासनके कलंककी सीमा न रहैगी?" जगत्‌सिंहके समान महाराज मानसिंह भी उन सवाईसिंहकी चतुरताके जालमें फँसगये। वह शीघ्र ही तीन हजार राठौरोंकी सेनाको साथ लेकर बाहर निकले। हीरासिंह नामक एक धनलोभी सैनिक भी सेनासहित मानसिंहके साथ आ मिला, जगत्‌सिंहने जो चार हजार सेनाके साथमें उपहार द्रव्य भेजा था, उसके मेवाड़में विना पहुँचे ही मानसिंहने उनपर आक्रमण करके वह समस्त द्रव्य लूट लिया, और जयपुरकी सेनाको छिन्नभिन्न करके भगादिया। सवाईसिंहकी कामनाके पूर्ण होनेका यही पहिला सूत्रपात हुआ।

मारवाड़पति मानसिंहने जो आमेरपति जगत्‌सिंहकी समस्त सेनाको छिन्नभिन्न करके उसके समस्त द्रव्य लूट लिये थे इससे जगत्‌सिंहके हृदयमें भयंकर क्रोधाग्नि प्रज्वलित होगई, इससे उन्होंने अपना अधिक अपमान जाना, और मानसिंहको इसका उचित दंड देनेके लिये और अपने सम्मान और गौरवकी रक्षाके लिये आमेरपति अत्यंत क्रोधित एव उत्तेजित होगये, परन्तु इसी समय वे एक भारी विपत्तिमें पड़गये। इस समय महाराष्ट्रोके नेता सेंधिया केवल रजवाड़ेके राजाओंमें आत्म विग्रहकी अग्नि प्रज्वलित करके किसी एक पक्षका अवलम्बन कर अगणित धन लूटनेमें लगरहे थे। मानसिंहके साथ जगत्‌सिंहके झगड़ेका समाचार पाते ही लुटेरोंने जगत्‌सिंहसे बहुतसा धन पानेकी इच्छा प्रगटकी, और उनसे यह कहला भेजा कि यदि तुम हमको इतना धन नहीं दोगे तो हम तुम्हारा भली भाँतिसे नाश करेंगे। परन्तु आमेरपति जगत्‌सिंहने सेन्धियाकी बातपर कुछ भी ध्यान नहीं दिया, इससे सेन्धियाने क्रोधित हो प्रतिज्ञा की कि मैं ऐसा उपाय अवश्य ही करूँगा कि जिससे कृष्णकुमारीका विवाह जगत्‌सिंहके साथ न हो। वास्तवमें सेन्धियाने ऐसाही किया भी उसने मेवाड़पर आक्रमण करनेके लिये एक महाराष्ट्रसेनाको उदयपुरकी ओर भेज दिया।

लुप्तप्रताप हतवल राणा भीमसिंह महाराष्ट्रोंके दलके आनेका समाचार सुनते ही अत्यन्त भयभीत हुए, और जगत्सिंहसे अपनी सहायताके लिये उन्होंनें प्रार्थनाकी, जगत्सिंहने सेन्धियाको युद्धकी तैयारीसे जाता हुआ देख और उसकी प्रतिज्ञाका समाचार सुनकर राणाकी सम्मतिके अनुसार एक दूतके साथमें कई हजार सेना मेवाड़को भेजदी। सीसोदिया और कछवाहोकी सेनाने मिलकर महाराराष्ट्रोंकी सेनाके मेवाड़में आनेका मार्ग रोकदिया। सेन्धियाने सबसे पहिले महाराणा भीमसिंहके पास यह प्रस्ताव भेजा "कि आप किसी प्रकारसे भी जगत्सिंहको अपनी कन्या नहीं देसकैगे। जयपुरकी जो सेना मेवाड़मे आई है, उस सेनाको और जगत्सिंहके दूतको आप शीघ्र ही मेवाड़से विदा करदे।" यद्यपि महाराणा भीमसिंह इस समय अत्यन्त हीनवल थे परन्तु उन्होंने साहसमें भरकर सेन्धियाके प्रस्तावको स्वीकार न किया, वरन इसके विरुद्ध वे कुछ ऐसा उपाय सोचने लगे कि जिससे सेन्धिया मेवाड़में न आसके। परन्तु महाराष्ट्रोंकी सेना अपने वाहुवलसे सीसोदिया और आमेरकी सेनाके द्वारा रोके हुए मार्गको स्वच्छ करके मेवाड़मे आ पहुँची, और उसके साथही साथ कालान्तक यमराजकी समान स्वयं लुटेरोके नेता सेन्धिया भी उदयपुरकी राजधानीमें आठ हजार सेना साथ लिये हुए आ पहुँचा। महाराष्ट्रोंके अत्याचार और उपद्रवोंको स्मरण करके महाराणा भीमसिंह अत्यन्त भयतीत होगये, और अपनी सामर्थ्य न देखकर सेन्धियाकी सम्मतिके अनुसार ही कार्य करनेको वे सम्मत होगये। सेन्धियाकी अनुमतिसे महाराणा भीमसिंहने आमेरपतिके दूत और उनकी सेनाको मेवाड़से विदा करदिया। जयपुरकी सेना जिस रास्तेसे आई थी उसी रास्तेसे होकर वापिस चली गई।

इस ओर महाराणा जगत्सिंह मानसिंहके विरुद्धमे युद्धका विचार कर, चतुर सवाई सिंह भीमसिंहके पुत्र धौकलसिंहको लेकर जगत्सिंहके साथ आ मिले। जगत्सिंहने धौकलसिंहको मारवाड़के सिंहासनके अधिकारीरूपसे स्वीकार किया, और वे शीघ्र ही एक लाख सेना सजाकर मारवाड़को विजय करनेके लिये चले। इतिहाससे जानाजाता है; कि जयपुरका कोई राजा भी इसके पहिले एक लाख सेना लेकर युद्धके लिये नही गया था, इस कारण जगत्सिंहका एक लाखसे भी अधिक सेनाका संग्रह करना अवश्य ही बड़ी सामर्थ्यका हेतु था। विशेष करके जयपुरका खजाना भी अतुल धनसे पूर्ण था। जगत्सिंहने उसी धनके वलसे महाराष्ट्रो और पठानोंको भी अपने दलमे मिलालिया। गांगोली नामक स्थानके पहिले युद्धमें मानसिंह एकवार ही परास्त होगये थे, और मारवाड़के सम्पूर्ण सामन्तोने सवाईसिंहकी उत्तेजनासे मानसिंहका पक्ष छोड़कर जगत्सिंहका पक्ष लिया। जगत्सिंह सरलतासे विजय प्राप्त करके अपनेको गौरवान्वित जानने लगे। मानसिंहके भागते ही जगत्सिंहके अन्यान्य नेताओने उनके डेरोंमें जाकर वहुतसी धन और सम्पत्तिको लूट लिया। मानसिंहके भागनेसे जगत्सिंहने विचारा कि यह स्वयं ही अव कृष्णकुमारीके विवाहका प्रस्ताव नहीं करैगे; परन्तु इतनेमें ही चतुर सवाईसिंहने वाधा देकर कहा, कि "मानसिंह अभीतक परास्त

नहीं हुए है, मानसिंहको भलीभाँतिसे परास्त कर मेवाड़मे जाकर कृष्णकुमारी का पाणिग्रहण करना आपको अत्यन्त कर्तव्य है।" जगत्सिंह सवाईसिंहकी चतुरताके जालमे पहिलेसे ही फँसगये थे इस कारण उन्होंने इस कार्यके करनेका भी निश्चय करलिया।

मानसिंह युद्धमे परास्त होकर अपनी राजधानी जोधपुरको चले गये।जयपुरके महाराजकी विजयी सेनाने शीघ्र ही जोधपुर राजधानी पर जाकर अपना अधिकार किया। तब मानसिंह किलेके भीतर चलेगये महाराज जगत्सिंहने भी तुरन्त ही किलेको जा घेरा। और विजयी सेना छः महीने तक बराबर किलेको घेरे हुए गोलोकी वर्षा करती रही परन्तु किला विजय न होसका, मानसिंह अतुल पराक्रम करके अत्यन्त सामान्य सेना साथ ले उस अभेद्य किलेकी रक्षा करते रहे,छ महीनेतक निरन्तर एक लाख सेना किलेको घेरे पड़ी रही, इसमे जगत्सिंहका बहुत धन खर्च हुआ, तौभी इनका वह परिश्रम सफल न हुआ। दुर्भाग्यवश छः महीनेके पीछे विजयी जगत्सिंहका भाग्य भयकर जलद् जालसे ढक गया। इनकी सेनामें अमीरखाँ नामका एक पठान नियुक्त था, उस अमीरखाँने-अपने अधीनकी सेनाको साथ लेकर स्वाधीनभावसे दूरदेशोमे जाकर मारवाडके अनेक स्थानोमे लूटमार करके बहुतसा धन इकट्ठा करलिया। इससे जगत्सिंह अत्यन्त ही अप्रसन्न हुए और उन्होंने अमीरखांको दमन करना आवश्यका विचारा। जब अमीरखाँने यह समाचार सुना तब वह डेरोंमे न आकर पहिलेकी समान जिधर तिधर लूटने लगा। इस आचरणसे जगत्सिंह और भी कुपित हुए, और उसके साथ युद्ध करनेके लिये अपनी एक सेना भेजी। अमीरखाँने ज्यों ही देखा कि महाराजकी सेना मेरे साथ युद्ध करनेको आ रही है त्योंही वह वहांसे भाग गया। अमीरखाँका भागताहुआ देखकर जयपुरकी सेना भी बहुत दूर तक उसके पीछे २ गई, और अतमे जयपुरके बाहर सेनाको रखकर सेनाके नेता स्वयं जयपुरमे चलेगये। इस सुअवसरको पाकर अमीरखाँने उक्त जयपुरकी सेनापर आक्रमण करके उसको एकवार ही परास्त करादियां, और अपनी सेना सहित जयपुरमें जाकर अरक्षित राजधानीको लूटलिया। जब जयपुरपति जगत्सिंहने यह सुना तो अपने राज्यकी रक्षा करना अवश्य कर्तव्य विचारकर वह जोधपुरसे चले आये। इनके जाते ही राठौरकी सेनाने इन पर आक्रमणकर समस्त द्रव्योंको लूट लिया। महाराज जगत्सिंह इससे महा अपमानित और कलंकित होकर अपनी राजधानीमे चले आये। इस युद्धमे महाराज जगत्सिंहका खजना बहुतसा खाली होगया, और इसी भांति अगणित सेना भी नष्ट होगई। जगत्सिंहके पक्षमे यह राजनैतिक अभिनय महा अपमान दायक हुआ, इसमें कुछ भी संदेह नहीं।

इस युद्धमे बहुतसा खजाना खाली होगया—बहुतसी सेना नष्ट होगई, विचारे जगत्सिंह इस समय अत्यन्त हीनबल होगये, जिस राजनन्दिनी कृष्णकुमारीके लिये उनका इतना उद्योग, इतना धनव्यय, और ऐसा भयकर युद्ध हुआ था, पर अपने दुर्भाग्यसे वह उस कृष्णाकुमारीको न पासके, उक्त युद्धकी इच्छाके पीछे महाराज जगत्सिंह

क्रमानुसार महाराष्ट्रो और पठानोंके द्वारा सताये गये । हुलकरकी सेनाने वारम्वार आमेर राज्यपर आक्रमण करके बहुतसे देशोपर अपना अधिकार करलिया; दुर्दान्त अमीरखाँ हुलकरके नामसे बहुतसे देशोपर अधिकार करके चौथस्वरूप उन समस्त देशोंकी आमदनीको स्वयं भोगता था। सारांश यह है कि पिछले कई वर्षोंतक आमेर-राज्यकी अत्यन्त ही शोचनीय दशा होगई थी।

महाराज जगत्सिंहके जीवनके शेषमें राजनैतिक अनुष्ठानसे वृटिश गवर्नमेण्टके साथ फिर संधिवन्धन स्थापित हुआ सो हमारे पाठकोंको पहिले ही ज्ञात होचुका है कि सन् १८०३ ईसवीमें लार्ड वेलेसली महाराज जगत्सिंहके साथ मित्रता स्थापित करके संधिबन्धनमे नियुक्त हुए, और महाराज जगत्सिंहने उस संधिपत्रके मतसे वृटिशसेना पति लार्ड लेकके साथ मिलकर महाराष्ट्रोंके नेता हुलकरके साथ युद्ध भी किया पर लार्ड कारनवालिस और उनके स्थलाभिषिक्तने अन्यान्य रूपसे उस मित्रताकी शृङ्खलाको छिन्न करदिया। वृटिश गवर्नमेण्टकी इस प्रतिज्ञाभंगसे जयपुरपति जगत्सिंह अत्यन्त हीनवल होनेसे अत्यन्त दुःखित विस्मित और परितापित हुए होंगे यह सहजमे ही अनुमान होसकता है। आचिसनसाहवने अपनी वनाईहुई पुस्तकमें लिखा है, "कि इस मित्रता और संधिवंधनका भंग करना कर्तव्य कर्म हुआ था या नहीं; होम, गमर्नमेण्ट (विलायतकी कोर्ट आफडाइरेक्टर्स) ने इसको विशेष सन्देह युक्त बताकर इसका विचार किया था, इस कारण सन्१८१३ ईसवीमें होम गवर्नमेण्टने यह आज्ञा प्रचार की कि जव अवसर आवैगा तव फिर जयपुरराज्यको अंग्रेजी रक्षाके आधीनमे ग्रहण किया जायगा। इस समय नैपालके साथ युद्ध उपस्थित है पर जिस समय पिंडारियोको दमन करके उनके साथ राजनैतिक वंदोवस्त किया जाय तवतक इस मामलेको मुलतवी रक्खा है। सन् १८१७ ई०में फिर जव संधिका प्रस्ताव उपस्थित हुआ तब यह प्रकाश किया गया कि जयपुर राज्यको नवीन संधि करनेमें इस समय आग्रह नहीं है, परन्तु इसके पीछे जिस समय जैपुरराज्यने अपने स्वार्थकी रक्षाके लिये संधि करना विशेष प्रयोजनीय जाना किं सम्पूर्ण निकटवर्ती राजा संधिबंधन करचुके है, इधर जयपुरराज्यके आधीन छोटे छोटे राजसमूह स्वतंत्रभावसे गवर्नमेण्टके साथ संधिबंधन करचुके है। तव अन्तमें जयपुर पति सन् १८१८ ई० मे दूसरी अप्रैलको संधि निर्धारण करनेपर वाध्य हुए।

इस संधिवंधनके सम्वन्धमें कर्नल टाड् साहव अन्य स्थानोंमे लिखते है, कि "भारतवर्षकी वृटिश गवर्नमेण्ट, राजपूतानेके जिन राजाओंको आश्रय देना चाहती है इनमें जयपुरराज्यने सबसे पीछे उनका आश्रय लिया है। इस रीतिके अवलम्वन करनेसे सर्वदाके लिये शान्तिनाशक शत्रुओंको भगादिया जासकता है; गवर्नमेण्टके प्रस्तावकी उस धारामें जयपुरराजने अपनी सम्मति देनेमें किंचित् भी विलम्व नहीं किया। जबतक भारतवर्षमें लूटनेवाली कई एक सम्प्रदायें एक २ करके हमारे चरणोंकी शरणमें न आवैगी, तवतक जयपुरके महाराज हमारे प्रस्ताव और

हमारी युक्तियोको ग्रहण नहीं करेगे । इस समय पिंडारीगण एकवार ही विदलित हुए हैं, पेशवा पूनासे बंदी होकर गगाजीके किनारे भेजे गये हैं और भोसलाकी अवनति हुई, सेधिया भयभीत हुआ, और हुलकरने जयपुरसे नियमित करलेनेके अतिरिक्त बहुतसे देशोको अपने अधिकारमे करलिया।मेदनीपुरके युद्धसे उसके शासनकी सामर्थ्यमे बहुत रोक टोक होनी आरम हुई है ।

यद्यपि राजपूत जाति अदृष्टवादी है परन्तु प्रायः दीर्घ सूत्रतासे अपने कार्यका उद्धार करती है । हुलकरके प्रतिनिधि जिस अमीरखॉने जायदादस्वरूपसे अर्थात् सेनादलके व्ययस्वरूपसे जयपुर राज्यके अनेक देश अपने अधिकारमे करलिये थे, और नियमित कर भी ग्रहण किया था, एकमात्र उस अमीरखॉने ही इस समय जयपुरराज्यकी समाजमे शान्तिका नाश कर भयको उत्पन्न किया था और अलक्ष्यमे उन जयपुरपति महाराजको हमारे साथ संधिबंधन करनेके लिये उत्तेजित किया । अधिक क्या वही अमीरखॉ स्वय इस समय माननीय मित्ररूपसे ग्रेटबिटेनके आश्रयमे वंशानुक्रमसे वधुताके भावमे आवद्ध होनेका उद्योगी हुआ । अमीरखॉने ठीक इसी मुहूर्त्तमे राजधानी जयपुरके अत्यन्त निकट माधोराजपुरा नामक स्थानपर गोले वर्षाये थे; और जिस भॉतिसे कछवाहेराज हमारे प्रस्तावमे तुरन्त ही अपनी सम्मति दे दें इस कारण, अमीरखॉने उक्त गोलोको वर्षाकर अप्रत्यक्षके उपाय स्वरूपसे हमे ग्रहण किया । आमेरराजने संधि करनेके लिये क्यो आनाकानी की थी, उसका वर्णन नीचे कियाजायगा" ।

"सन् १८०३ ईस्वीमे जिस समय हमने जयपुरराज्यके साथ पवित्र संधिबधन किया था, और हमारे पक्षमे जिसका होना अत्यन्त आवश्यक विचारा गया था । उस समय हमने जिस उपायसे उस संधिबंधनसे अपना उद्धार करलिया, अथवा हमारे मित्र उन जयपुरके महाराजको संधिभगके अपराधसे अपराधी वताकर वृथा दोष लगाया था वह जयपुर राज्यके हृदयमे भलीभॉतिसे अंकित था । उस विभिन्न राजनैतिक घटनापूर्ण समयमे जो मनुष्य राजनैतिक विषयोमे लिप्त थे जिस समय हमारे पूर्वराज्यके राजप्रतिनिधिका भेजाहुआ वह संधिभग सूचक पत्र जयपुरके दरवारमे हमारे दूतने अर्पण किया । उस समय जयपुरके महाराजने उसके सम्बन्धमे दृढरूपसे प्रतिवाद किया, और उस संधिभंगके कारणसे जिस विपत्तिके आनेकी सभावना थी उसे एक मुहूर्त्तके लिये भी न भूलकर वे अग्रेजजातिके प्रति उपयुक्त सम्मान दिखानेमे शान्त न हुए । परन्तु जयपुर राज्यका जो दूत वीरश्रेष्ठ लेकके डेरोमे स्थित था, उसने इसकी अपेक्षा और भी तीक्ष्ण शब्दोंका प्रयोग किया, और यथार्थ मनुष्यत्वके प्रकाशके साथ क्रोधित होकर कहा कि " अग्रेज गवर्नमेण्ट जबसे भारतमे प्रतिष्ठित हुई है, तभीसे जाना जाता है कि गवर्नमेण्ट अपनी सुविधा और स्वार्थके लिये ही सब कार्य करती है" ।

यह तो हम पहिले ही कह आये हैं कि वृटिश कम्पनीने स्वय ही सन्धिभंग की थी; और टाड् साहबकी उपरोक्त उक्ति इसकी पुष्टता भी कररही है । जयपुरके दूतने कहा था कि अंग्रेज गवर्नमेण्टने अपने सुभीतेके ऊपर विश्वास पालन किया है,

जयपुरके साथ संधिभंग करना यह उसकी प्रमाणमूलक प्रथम घटना है, परन्तु हम इतने दिनोके पीछे कहते है कि जब पलासीके युद्धमें अंग्रेजी राज्य भारतवर्षमे सबसे पहिले स्थापित हुआ, तभी क्लाइवने अमीचन्दके साथ उससे पहिले विश्वासभंग किया था, यही अंग्रेजोंके विश्वासपालनका पहिला चूड़ान्त निदर्शन है। कम्पनीने किस कारणसे जगत्‌सिंहके साथ निन्दनीयरूपसे संधि भंगकी उसके संबन्धमें टाड् साहबने लिखा है कि वह मार्किस आफवेलेसलीकी विस्तारित और उदार राजनीति थी-जिस राजनीतिके मतसे सम्पूर्ण देशीय राजाओंको भारतके लुटेरोंके विरुद्ध एकत्र संबन्ध करनेका प्रस्ताव हुआ था, लार्ड कार्नवालिसके मनके भावने और सामरिक राजनीतिने उसे एकबार ही व्यर्थ करदिया, लार्ड कार्नवालिसने हमारे इस प्रबल विस्तारसे एकमात्र हमारी भावी दुर्दशाको ही निरीक्षण किया था। महा माननीय लेकने (क्या देशीय और क्या यूरूपीय सभी जिनके नामको सम्मानके साथ स्मरण करते है) मध्यस्थ होकर देशीय राजाओंके साथ जो मित्रता और संधिबंधन किया था, यदि उस मित्रता और संधिबंधनकी रक्षा कीजाती तो वह समस्त देशीय राजा न जाने कितने कष्टसे उद्धार पाते, इसका निर्णय नही होसकता, कारण कि गत अर्द्ध शताब्दीमे रजवाड़ेका इतना अनिष्ट हुआ था कि समस्त राजोंने दुराचारी महाराष्ट्रोंके अत्याचारोंसे सन् १८०३ ई० से १८१८ ईसवीतक अर्थात् प्रथम संधिभंगसे दूसरे संधिबंधनके समयतक महान् कष्ट भोग किया था, और हमें यह भी संदेह है कि अर्द्धशताब्दीमे भी उनकी वह शोचनीय अवस्था बदलैगी या नहीं"।

इतिहासवेत्ता टाड् साहबने लिखा है कि "हमारे ऊपर इस विश्वासकी वृद्धिका और भी एक प्रबल कारण था, कि जब वज़ीरअली जयपुरराज्यकी शरणमें गया तब हमने बल करके उसको वहाँसे छीन लिया। अधिक क्या कहे यदि घोर अपराधी शत्रु भी राजपूत जातिकी शरणमें जावे तो वे उस शरणागत मनुष्यकी तन मन धनसे रक्षा करते है। शरणागतको आश्रय देना राजपूत लोग किस प्रकारसे अपनी जातिका परम धर्म मानते है, हम इस इतिहासके पहिले अध्यायमें उसका वर्णन करचुके है। जयपुरके महाराज उस समय हमारे आधीन अथवा करदेनेवाले मित्रराजाओंमेसे नही थे, परन्तु हमने बलपूर्वक उनको शरणागतको आश्रय देनेवाले जातीयधर्मको उल्लंघनके लिये विवश किया, वह आश्रित मनुष्य नरहत्याकारी होनेसे हमारे मतमे कृपापात्र नहीं होसकता; पर उस वजीरअलीको हमारे हाथमे अर्पण करनेके लिये प्रार्थना करनेकी हमारी कोई क्षमता नही थी"।

संधिके सम्बन्धमे अंतमे टाड साहब लिखते है, कि जयपुरराज्यको उपरोक्त कईएक आपत्तियोंके अतिरिक्त और भी कितनी ही गुप्त और व्यक्तिगत आपत्ति अंग्रेजोंकी संधिप्रस्तावके विरुद्धमे उठानी पड़ी थी। उसका उदाहरण देते है। एक अंग्रेज रेसिडेण्ट राजदरबारमे आया, और उसने दरबारमे चारोओर अपनी दृष्टि रक्खी, परन्तु अपनी सामर्थ्यका विस्तार होना कठिन जाना, तब उसने मंत्री समाजपर आपत्तिकी।

दूसरी ओर समस्त सामन्त, जो चिरकालसे प्रचलित रीतिके अनुसार मंत्रीस्वरूपसे राजसभामें पद सम्मानको सम्भोग करते आये थे, इस समय समझ गये कि अब उन्हे उस स्वभूमिसे अपना अधिकार हटाना पड़ेगा। जिसे इतने दिनोंतक छल प्रपंचसे अथवा बलप्रयोग तथा नरपतिकी कृपासे अपने अधिकारमें भागते आये है, इस कारण उन्होंने आपत्ति उपस्थित करनेमें त्रुटि न की। आमेरराज और बृटिश सरकार गवर्नरजनरलसे सधि स्थापनके समयमें कईएक प्रधान आपत्तियें उपस्थित हुई थीं, परन्तु लार्ड हेष्टिसने जिस साधारण राजनीतिका अवलम्बन किया था यदि वह उस नीतिके अनुसार जयपुरराज्यको अंग्रेजोंके आधीनमें न करते तो उनकी उस नीतिके अंगको हानि होती। इस समय जल्दी २ कितनी ही घटना हुई थीं। अमीरखाकी जयपुरमें उपस्थित–रजवाडेकी पनाकाको महाराष्ट्रोका लोप करना–और अजमेरके किलेके ऊपर पताकाका लगाना–अतमें शीघ्रतासे अनिच्छा युक्तभाव–सन् १८१८ ईसवीकी दूसरी अप्रेलको १० धाराओसे युक्त एक सधिपत्रपर जयपुरके महाराजने अपनी सम्मति प्रकाश की, और उसीसे कछवाहेराज अपने वशानुक्रमसे करदपदपर नियुक्त हुए।

महाराज जगत्सिंहने किस कारणसे अंग्रेजोंके साथ फिर संधि की थी, आचिसन साहबने कर्नल टाड साहबकी उस उक्तिको भलीभाँतिसे प्रकाशित करदिया है, इस कारण हम इसके सम्बन्धमे अब कुछ अधिक कहनेकी इच्छा नही करते। परन्तु महाराजा जगत्सिंहके पक्षमें यह दूसरी संधि पहिले सधिपत्रकी अपेक्षा विशेष हानिकारक हुई, अधिक क्या कहैं स्वयं सधिपत्रको पढकर ही पाठक भलीभाँतिसे समझ जॉयगे कि कम्पनीने आमेरराज्यसे पहिले एक कौड़ी भी करकी नही ली थी, परन्तु इस दूसरे सधिपत्रमें जयपुर महाराजको चिरकालके लिये कम्पनीको कर देना पड़ा, उस सधिपत्रको हम नीचे प्रकाशित करते हैं।

संधिपत्र।

"माननीय अंग्रेज ईस्टइण्डियाकम्पनी और सवाई महाराज जगत्सिंह बहादुर जयपुरके अधीश्वरमें यह सधिपत्र निश्चित हुआ। महामहिमवर मार्किस आफहेष्टिस के जी. गवर्नर जनरलके प्रतिनिधि पूर्ण सामर्थ्य प्राप्त मि०चार्लसथियोफिलास मेटकाफकी माननीय कम्पनीकी ओरसे और राजेन्द्र श्रीमहाराजाधिराज सवाई जगत्सिंह बहादुरके प्रतिनिधि पूर्ण सामर्थ्य प्राप्त ठाकुर रावल वैरीसाल नाथावत् उक्त महाराजकी ओरसे नियुक्त हुए"।

पहिली धारा–माननीय कम्पनी और महाराज जगत्सिंह उनके उत्तराधिकारीगण तथा स्थलाभिषिक्तोमें वशानुक्रमसे यह सधिसम्बन्धबधन सदा एकसा मानाजाय और किसी ओरके मित्र तथा शत्रु दोनो ओरके मित्र और शत्रुरूपसे विचारे जॉयगे।

दूसरी धारा–जयपुर राज्यकी रक्षा करने और उस राज्यके शत्रुओको परास्त करनेके लिये गवर्नमेण्ट तैयार रहेंगी।

तीसरी धारा–सवाई महाराज जगत्सिंह और उनके उत्तराधिकारीगण तथा स्थलाभिषिक्त। वृटिश गवर्नमेण्टकी अनुगतरूपसे सहयोगिता करै और जिन्होंने वृटिश गवर्नमेण्टकी अनुगत्यता स्वीकार की है वह अन्य किसी राज्य अथवा राजाके साथ किसी प्रकारका सम्बन्ध नही कर सकैगे।

चौथी धारा–माहाराज और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त गवर्नमेण्टकी विना अनुमतिके अन्य किसी राज्य अथवा राजाके साथ किसी प्रकारका संबन्ध स्थापन नहीं करसकैगे, परन्तु मित्र और आत्मीय राजाओंके साथ नियमित साधारण पत्र व्योहार करसकेंगे।

पांचवीं धारा–महाराज वा उनके उत्तराधिकारी अथवा स्थलाभिषिक्त किसी राजाके ऊपर अत्याचार अथवा आक्रमण नही करसकैंगे, किसी राजाके साथ कुछ झगड़ा उपस्थित होगा तो इसके विचारके लिये तथा दंडदेनेके लिये गवर्नमेण्टपर इसका भार रहैगा।

छठवीं धारा–निम्नलिखित व्यवस्थाके अनुसार जयपुरराज्यके वंशानुक्रमसे गवर्नमेण्टके दिल्लीके धनागारके लिये कर देना होगा–

जयपुरराज्यमे कई वर्षसे अवतक अत्याचार और लूट (महाराष्ट्रोंके द्वारा) प्रवलतासे होरही थी इस कारण इस सन्धिको तारीखसे पाहेले एक वर्षका कर छोड़ दिया जायगा।

दूसरावर्ष ...	...	चार लाख	रुपया।
तीसरा वर्ष ..	...	..	पांच लाख
चौथे वर्ष ...	..	...	छः लाख
पांचवे वर्ष ...	...	...	सात लाख
छठवे वर्ष ..	...	..	आठ लाख

पीछे जवतक राज्यकी आमदनी चालीस लाख रुपयेसे अधिक न हो तवतक प्रतिवर्ष आठ लाख रुपया करस्वरूपसे देना होगा।

और जिस समय राज्यकी आमदनी ४० लाख रुपयेसे अधिक हो उस समय नियमित आठ लाख रुपयेके अतिरिक्त वढ़ी हुई आमदनीके सोलहवे अंशका पॉचवां अंश देना होगा।

सातवीं धारा–गवर्नमेण्टको आवश्यकता होनेपर जयपुरराज्यको अपनी सामर्थ्यके अनुसार सेना देनी होगी।

आठवी धारा–महाराज और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त चिरस्थाई रीतिके अनुसार उनके अधिकारी राज्यमें और आधीनस्थोको संपूर्ण शासनकर्ता स्वरूपसे रहना होगा, और इस राज्यमे गवर्नमेण्ट अपनी फौजदारी और दीवानीको स्थापित नहीं करैगी।

नवमी धारा–महाराज यदि गवर्नमेण्ट पर विश्वास कर उसके साथ प्रीति प्रकाशित करेंगे तो उनकी उन्नति तथा कल्याणके लिये विशेप विचार किया जायगा।

दशवीं धारा–दश धाराओंसे युक्त यह संधिपत्र मि चार्लस थियोफिलास मेटकाफ एवं ठाकुर वैरीशाल नाथावत्का नियुक्त किया हस्ताक्षर और मोहर लगा हुआ तैयार होगया, महामहिम गवर्नर जनरल और राजराजेन्द्र श्रीमहाराजाधिराज' जगत्सिंह वहादुरका आजकी तारीखसे एक महीनेके भीतर परस्पर मित्रभाव होजायगा।

सन् १८१८ ईस्वीकी अप्रैल महीनेकी दूसरी तारीखको दिल्लीमें नियुक्त हुआ।

(हस्ताक्षर) सी. टी मेटकाफ
रेसिडेण्ट।

(हस्ताक्षर) ठाकुर रावल वैरीशालनाथवत्।

(हस्ताक्षर) हेष्टिस। *

यह सधिपत्र गवर्नरजनरलका तुलसीपुरके निकट डेरोंमे सन् १८१८ ईस्वीकी १५ अप्रैलको स्वीकृत हुआ।

(हस्ताक्षर) जे आडम।
गवर्नरजनरलके सेक्रेटरी"।

यद्यपि महाराज जगत्सिंह इस दूसरी वार सधिबंधनमे सम्मत होगये थे, परन्तु इससे जयपुरराज्याने चिरकालके लिये अपने स्वाधीन ऊँचे मस्तकको नीचा करलिया, और आठ लाख रुपया वार्पिक कर देना स्वीकार किया, परन्तु महाराज जगत्सिंहके शासनके दोपसे इस समय जयपुरराज्यकी जैसी शोचनीय अवस्था होगई थी इससे अंग्रेजोका आश्रय लिये विना इसका विशेप अनिष्ट होनेकी संभावना थी। महाराज जगत्सिंह इस संधिबंधनके पीछे वहुत दिनोतक राज्य करते रहे। सन् १८१८ ई०मे उक्त संधि-बंधनके कई महीने पीछे उन्होंने इस मायामय शरीरको छोड़दिया।

यह तो हम पहिले ही कह आये हैं कि महात्मा टाड्ने इन महाराज जगत्सिंहके शासन इतिहासको आदिसे वर्णन नहीं किया।वह इनके सम्बन्धमे कईएक कथाएं कहगये है, उन्हींको यहाँ पर अविकल प्रकाश करके महाराज जगतसिंहकी जीवनीको समाप्त करनेकी अभिलापा है। कर्नल टाड्ने लिखा है, कि जगत्सिंहने सन् १८०३ ईसवी मे सिंहासन पर विराजमान होकर सत्रह वर्पतक राज्य किया। अपने समय तथा अपने स्वजातीय राजाओंमे वह अत्यन्त भ्रष्ट पुरुप थे। उनके राज्यके समयमे जो घटनाएं वरावर होती रहती थीं यदि वर्णन करनेके योग्य होती तो वे एक विराटकाय वडे भारी ग्रन्थमे भी समाप्त न होती। उनके राज्यके समयमे विदेशियोके द्वारा आमेर राज आक्रान्तहुआ, शत्रुओने नगर घेर लिया, उन्होने आत्मसमर्पण करके लड़ाईका खर्च देना स्वीकार किया। जिस समय आक्रमणकारियोंने भ्रान्तिके वशहो असावधानता प्रकाश की थी, केवल उस समयमें ही उन्होंने वीच २ मे अपनी वीरता दिखाई थी,

* Aitcheson's Treaties & Vol IV.

और बीच बीचमें उसी षड्यंत्रसे दरबारमें भी तलवार और छुरीका प्रयोग किया था। बीच २ में रावला अर्थात् राजाके अन्तःपुरसे भी कलंकका समाचार पहुँचा था, और उस लम्पट नृपतिका रसकपूरनाम्नी स्त्रीके ऊपर आसक्त होना भी एक अत्यन्त निन्दनीय कार्य था। इन राजाके जीवनमें एक भी श्रेष्ठगुण दिखाई नहीं दिया, जो राजपूतोंकी विशेष घृणा कापुरुषकी उपाधिसे युक्त थे उनकी जीवनीको लिखकर हमारी इच्छा इतिहासको कलंकित करनेकी नहीं है। उदयपुरकी राजनंदिनी कृष्णकुमारीके सम्बन्धमें उन्होंने अत्यन्त ही निन्दनीय कार्य किया था, उसका वर्णन पहिले ही होचुका है, केवल इसीके करनेसे उनके चरित्र कलंकित नहीं हुए, उन्होंने कई लाख रुपये भी वृथा नष्ट किय थ। जयमंदिर नामक उज्वल मन्दिरकी महामूल्य वस्तुएँ अत्यन्त घृणितकार्यके लिये उन्होंने वृथा नष्ट की। कालीखो नामक स्थानमें मीनालोग वंशानुक्रमसे जयमंदिरके ऊपर विश्वासीरक्षक नियुक्त थे, प्रभु जगन्सिंहको उस मंदिरको विध्वंश करता हुआ देखकर वे लोग अत्यंत दुःखित हुए और किसी २ ने आत्मघात करके शरीर छोड़ दिया। सवाई जयसिंहके निर्माण किये अत्यन्त सुन्दर जयपुर नगरके चारोंओरकी ऊँची २ दीवारोंको प्रत्येक श्रेणीके तस्कर और लुटेरे घेरे रहते थे। वाणिज्य व्यापार एकबार ही बंद होगया, अराजकता फैलगई और राजा जगन्सिंहके आलसी होनेसे तथा राजकर्मचारियोंके द्वारा लूटमार होनेसे किसानोने खेती करनी भी छोड़ दी। एकदिन एक दरजीने राजसभामें प्रभुत्व कियो, दूसरे दिन एक बनियेंने और इसके पीछे एक ब्राह्मणने, इस प्रकारसे प्रभुत्व चलाकर पर्यायक्रमसे सभी राजधानीके निकटवर्ती नाहरगढ़ नामके किलेमें, कि जहाँ फौजदारीके अपराधी जाते है, वहाँ वे भेजे गये, करद सामन्तोंने उनके प्रति तथा उनकी आज्ञाके प्रति अत्यन्त घृणा दिखाई। जगन्सिंहने जो रसकपूरको लेकर घृणित कार्य किया उससे एक समय उनको सिहासनसे उतारनेके लिये एक बड़ाभारी आन्दोलन उपस्थित होगया था। उस प्रस्तावसे कार्य होनेके लिये समस्त तयारियां होगई. आमेरराज के अर्द्धाधिकारियोंने उस रसकपूरको नाहरगढ़के किलेमें भेजना चाहा पर वह प्रस्ताव भी व्यर्थ होगया। इस मुसलमान उपपत्नीके प्रेममें महाराज जब अत्यन्त आसक्त हुए, तब उसके प्रेमसे उन्मत्त हो उन्होंने अपने राज्यके आधे अंशपर अधीश्वरीरूपसे रसकपूरका अभिषेक किया, और वास्तवमें उनका राज आधे अंशपर ही था। अधिक क्या कहें महाराज जयसिंहने जिन अमूल्य ग्रन्थोंको संग्रह किया था उसका आधा भाग भी उसको देदिया, वह समस्त ग्रंथ विध्वंस होगये, और धन उस बार विलासनीके आधीन वाले कुटुम्बियोंने बाँट लिया। राजा जगन्सिंहने उस स्त्रीके नामसे सिक्का प्रचलित किया था, केवल उस स्त्रीके साथ एक बार वह घोड़ेपर चढ़कर भ्रमण करनेके लिये

---

(१) टाड् साहब लिखते हैं, " कि रोरजीखवाल नामका एक मनुष्य जातिका दरजी था हमें ऐसा अनुमान होता है कि यह मनुष्य बालकपनसे दरजीके कार्यको करता था, परन्तु वह मनुष्य जगत्सिंहके मुसाहिबोंमें प्रधान मुसाहिब था, ऐसा भी अनुमान है कि जगत्सिंहने लार्ड लेकके पास जो कईएक दूत भेजे थे वह मनुष्य भी उनमें दूतरूपसे गया था "।

गये थे, यथार्थ राजस्त्रियोंको जो समान प्राप्त होता है, उन्होने सामन्तोसे भी उस वेश्याके प्रति वैसा ही सम्मान दिखानेको कहा। परन्तु क्षत्री सामन्तोका हृदय गर्वसे पूर्ण होता है वह क्या इस आज्ञाको सहन कर सकते हैं? यद्यपि मिश्र शिवनारायण नाम ब्राह्मण जो दीवान और प्रधान मंत्रीपदपर नियुक्त था, वह उस वेश्याको कन्या कहकर पुकारता था, परन्तु दूनीके सामन्त असीम साहसी चाँदसिंहने क्रोधित होकर कहा कि " रसकपूरका जहाँ जो कार्य होगा मैं उसमें सहायता नही दूगा, उसके इस वचनको सुनकर जगत्सिंहने उसके ऊपर २००००० रुपया जुर्माना किया, यह दूनी देशके चारवर्षकी आमदनी थी "।

" मनुजी राजाको सिंहासनसे उतरनेकी व्यवस्था करगये है और आमेरके सामन्तोको भी उसी भाँति जगत्सिंहको सिंहासनसे भ्रष्ट करनेका यथार्थ कारण प्राप्त हुआ था। परन्तु दुर्भाग्यसे सामन्तोकी वह कल्पना प्रगट होगई। राजा जगत्सिंहके कितने ही बुद्धिमान मित्रोने इनके पद सम्मानकी रक्षाके लिये अनेक भांतिसे विचार किये, उस रसकपूरके चरित्रके सम्बन्धमे कितने ही घृणित वृत्तान्त राजाने सुने, राजा जगत्सिंहने सरलतासे उसपर विश्वास करलिया। उन्होंने जो रसकपूरको धनसम्पत्ति दी थी, शीघ्र ही उसके लेलेनेकी आज्ञा दी, और जिस किलेमे अन्य अपराधी रक्खे गये थे उसीमे इसको भी वंदी रखनेकी आज्ञा दी। उस कारागारसे वह स्त्री निकल कर भाग गई, जगत्सिंहने इस पर तीनक भी ध्यान न दिया, जगत्सिंहने इससे पीछे अपनी मृत्युके समयतक जयसिंहके पवित्र सिंहासनको कलकित किया था। सन् १८१८ ईसवीकी २१ वीं दिसम्बरको उन्होंने प्राण त्याग किये "।

"राजा जगत्सिंहने पुत्रहीन अवस्थामें प्राण त्याग किये थे। इनके कोई पुत्र नहीं था, और अपनी जीवित अवस्थामे इन्होने किसीको उत्तराधिकारी भी नहीं बनाया। राजपूतोमे यह रीति है कि यदि राजाके कोई पुत्र न हो तो राजाकी मृत्युके पीछे किसी बालक या युवकको दत्तकरूपसे नियुक्त कर लिया जाता है, और उस दत्तक पुत्रसे ही मृतक राजाकी दाहक्रिया कराई जाती है, इस कारण महाराज जगत्सिंहकी मृत्युके पीछे नरवरके भूतपूर्व एक राजाके पुत्र मोहनसिंह आमेरराजके अधीश्वररूपसे नियुक्त हुए "।

मोहनसिंहको आमेरराज्यपर निर्वाचन करनेके सम्बन्धमे इतिहासवेत्ता टाड्र साहब लिखते है कि "२१ वीं दिसम्बरको जगत्सिंहने प्राणत्याग किये, परन्तु चिर प्रचलित रीतिके अनुसार उनके उत्तराधिकारीको नियुक्त करनेके समय मंत्रीसमाज इस बातको भलीभांतिसे जानगया कि पुराने समयकी रीतिके अनुसार अपनी पूरी सामर्थ्यका अपने देशपर चलाना और अपने आधीनोपर वैसा वर्ताव करना इस समय सर्वथा असभव है, और इस बातका निश्चय संधिपत्रमे भी होगया था. हमारा काम राजा और प्रजाका विरोध मिटाना था, परन्तु उनकी पुरानी रीति भांतिसे अभिज्ञ होनेके कारण जब हमने उत्तराधिकारीके निर्णयमे हस्तक्षेप किया तो हमारा हस्ताक्षेप

करना आक्रमणके तुल्य हुआ, और जयपुरके सरदारोंको उस मेलमिलापपर अफसोस करना पड़ा जो इस समयकी चालाकीके लिये वहाँके सामन्तोंने उसे स्वीकार करलिया था " ।

"नवीन राजाके नियुक्त होनेके सम्बन्धमें राजपूतोंके राज्योंमे जैसी रीति प्रचलित है उसको यहाँ पर लिखना भविष्यमें राजाओंको नियुक्त करनेके संबंधमें विशेष लाभदायक दृष्टि आती है । बड़े पुत्रको उत्तराधिकारी पदपर अभिषिक्त करनेकी रीति समस्त राजपूतोंमे प्रचलित है; कहीं दो एक स्थानोंपरही इस रीतिका निषेध दिखाई पड़ता है, पर उनकी संख्या अति सामान्य है । इसके सम्बन्धमें मनुजी पूरी व्यवस्था करगये है, पर मध्यकालके राजपूत मनुकी कितनी ही व्यवस्थाओंका अनुसरण नहीं करते प्रचलितरीति और पूर्वदृष्टान्तके मतसे राजसिंहासनके सम्बन्धमे हो अथवा और किसी अधीन सामन्तके पदसे हो वड़ा पुत्र ही जो 'पाटकुमार' 'राजकुमार' अथवा 'कुमार' नामसे पुकारा गया है वही उत्तराधिकारीरूपसे नियुक्त किया जायगा । और दूसरी ओर राजकुमारके अन्यान्य भ्राता अपने २ नामके पहिले केवल कुमार शब्दका प्रयोग करते है । राजदरबारसे हो या सामन्त पदसे हो, सभीके यहाँ अवस्थाके अनुसार सम्मान दिखाया जाता है । सभीके यहाँ 'पटरानी' और "पाटकुमार" है । पटरानीकी सामर्थ्य और रानियोंकी अपेक्षा अधिक है, राजकुमारके अज्ञान होनेपर स्वयं पटरानी समाजिक रीतिके अनुसार राजकार्य करती हैं, भारतवर्षमे सबसे प्राचीन राजधानी मेवाड़की पटरानी ही महाराणाके साथ सिंहासन पर अभिषिक्त हुई थी । राजाने सबसे पहिले जिस रानीके साथ विवाह किया था, वही पटरानी हुई थी, और सतानके उत्पन्न होते ही उनको उक्त उपाधि प्राप्त हुई, उसी दिनसे वह पटरानी "माजी" नामसे पुकारी गई, उन्होंने जिस समय कार्य किया था, उस समय राज्यके कईएक देशोंके सामन्त उनकी सहायता करते थे, उन सामन्तोंने राजाके यहाँ कितने ही कर्मचारियोंके सहित उस प्रचलित वंशकी रीतिके अनुसार उस सम्मानको भोगा था " ।

यदि कोई राजा पुत्रहीन अवस्थामे मरजाय तो उनका जो अत्यन्त कुटुम्बी है अथवा सहोदर भ्राताके न होनेपर रजवाड़ेके प्रत्येक राज्यमे जो ऐसे राजवंशीय कितने ही परिवार है, वही उसी अवस्थामे राजपद पर नियुक्त होनेकी सामर्थ्य रखते हैं । राज्यसिंहासनके प्राप्तिकी संख्या सीमाबद्ध करनेके लिये प्रत्येक राज्यमे इस प्रकारकी विधि नियत हुई है; जिन प्रत्येक राज्योमें केवल कितनेही राजवंशियोंका परिवार उक्त निर्वाचन अधिकारको प्राप्त हुआ है । इसरीतिके अनुसार मेवाड़राज्यमे केवल राणावत सम्प्रदायोंके सबसे बड़ोंने " जो बाबा " की उपाधि धारण की है, केवल वही उपरोक्त अवस्थामें सिंहासन प्राप्तिके अधिकारी हैं । मारवाड़ राज्यमे जोधावंशीय ईडर राजवंशको उक्त अवस्थामे मारवाड़का सिंहासन प्राप्त होता था । बून्दीराज्यमे डुंगारिवंश, कोटाराज्यमे पलाइताका आपजीवंश, बीकानेरराज्यके महाजन गांवका सामन्तवंश, और जयपुरराज्यके राजा मानसिंहके वंशधर–शाखा राजावत

सम्प्रदाय व्यवस्थाके अनुसार उक्त अवस्थामे सिंहाशन प्राप्तिके अधिकारी है। परन्तु उस राजावत् सम्प्रदायमे जिन्होने मानसिंहके पहिले जन्म लिया है और जिन्होने पीछे जन्म लिया है उनमे भी भिन्नता है, प्रथमोक्त केवल राजावत्, वा समय२ पर 'मानासिंहोत्' नामसे, और शेषोक्त 'माधानी' नामसे पुकारे जाते हैं। राजवत् संप्रदायोमे वहुतसे वंशहै, इनमे झिलांयके सामन्तोका परिवार सवसे श्रेष्ठ है, और उस वशमें सवसे वड़ेके यदि शारीरिक अथवा मानसिक किसी अंगकी हानि अथवा शरीरमे किसी प्रकार का रोग न हो तो उपरोक्त अवस्थामे वही जयपुरके सिंहासनकी प्राप्तिके अधिकारी है, और चिरप्रचलित रीतिके अनुसार उस नियुक्त की हुई विधिका त्यागन करना अनुचित है।"

कर्नल टाड् साहव फिर लिखते है कि यद्यपि सधिपत्रकी आठवी धाराके अनुसार महाराज और उनके उत्तराधिकारी उनके राज्य तथा उनके आधीनके मनुष्योके ऊपर सव प्रकारसे राज्यके चलानेकी सामर्थ्य युक्त होकर राजा रहैगे इत्यादि और प्रत्यक्षमे अंग्रेज गवर्नमेण्टने कहा है कि किसी प्रश्नकी भी अन्याय रूपसे मीमांसा न होगी परन्तु उसने सवसे पहिले जयपुरके राजसिंहासन पर नवीन नरपतिके नियुक्त होनेके संवन्धमे जो व्यवहार किया है वह उक्त प्रतिज्ञा भगमूलक और चिर प्रचलित रीतिके विपरीत है। गवर्नमेण्टने इस प्रथम हस्ताक्षेपके समय ऐसा काण्ड उपस्थित कर दिया कि जिसका सामान्तोने पहिले कभी भी अनुमान नहीं किया था, "इससे भलीभांति प्रमाणित होता है, कि जयपुरके अधीश्वरने जो हमारे साथ आपने भाग्यको विजड़ित करनेमे आनाकानी की है, वह अवश्य ही न्यायसंगत है।" हम वर्तमान रेसिडेन्टोसे पूछते है उनमेसे ऐसा कौन है कि जो इस प्रकारसे टाड् साहवकी समान सत्यके सम्मानके रखनेकी सामर्थ्य रखता हो।

संधिपत्रकी छठवी और सातवी धाराके सम्वन्धमें महात्मा टाड् साहव लिखते है, "छठवी और सातवी धाराओसे ही अनैक्यताका वीज वोया गया है।आश्रितोको हृदयमे जव अविश्वाश उपस्थित हो अथवा आश्रयदाता स्वेच्छाचारी होते है तभी अनैक्यता देखी जाती है।इसीमे अविश्वास उपस्थित होता है कारण कि जयपुरके सम्पूर्ण सामर्थ्यवान् राजा हमारे रेसिडेण्ट ऐजेण्टके सामने अपने राज्यके राजश्वका वृत्तान्त प्रादेशिक समस्त वन्दोवस्तको प्रकाश करनेमे वाध्य हो गये हैं कि राज्यकी आमदनी चालीस लाख रुपयेसे अधिक नहीं है'।"

---

(१) महात्मा टाड् साहवने इस स्थानपर अपने टीकेमें लिखा है, कि "मेवाड़राज्यकी भी उन्नति और राजस्वकी वृद्धि होनेपर इस प्रकारके अतिरिक्त करको वढ़ादेनेकी व्यवस्था हुई थी, ग्रंथकारने वहुत भांतिसे चेष्टाकी कि इसके वदलेमें एक नियत कर देनेकी व्यवस्था हो परन्तु उनका वह मनोरथ सफल न हुआ, परन्तु यह सुनकर वह अत्यन्त आनंदित हुए थे कि मेवाड़ और आमेरके करदानके सम्वन्धमें परिवर्तन पूर्वक नवीन व्यवस्था हुई है, कई लाख रुपयोंसे भी अधिक खर्च करनेपर राजपूतानेका असंतोष दूर नहीं हुआ। जव कि हम उन्नति इत्यादि सभीको गवर्नमेण्टके—

साधु टाड्ने अंतमें निर्वाचनके सम्बन्धमें कहा है " कि जयपुरकी रीतिके अनुसार जिस बालकका अभिषेक होना निश्चित हुआ था उसके सम्बन्धमें तथा गोदके उपलक्षके मन्तव्य हम यहां प्रकाशित करना आवश्यक समझते है । इस समय जो कुछ अभिषेकके सम्बन्धमे लिखते है उससे इस विषयकी रीति नीतिका ज्ञान होनेसे भविष्यके लोगोंको सुविधा होगा ।

मोहनसिंह नामका जो बालक था , जगत्सिंहकी मृत्युके पीछे प्रभात होते ही जयपुरके सिंहासन पर अभिषिक्त हुआ । वह बालक नरवरराज्यके भूतपूर्व राजा मनोहरसिंहका पुत्र था, सैंधियाने उस मनोहरसिंहको सिंहासनसे च्युत कर राज्यसे निकाल दिया था, यह तो हम पहिले ही कह आये है कि जयपुरराज्यवंशके आठ सौ वर्ष पहिलेसे नरवरराज्यवंशकी शाखा चली थी । परन्तु आदिराज्य नरवरके अधीश्वर पुत्रहीन अवस्थामे स्वर्गवासी होगये, इस लिये नरवरवासी सामन्तोंने आमेरपतिके निकट एक पुत्रकी प्रार्थना की उसपर पृथ्वीराजने अपने एक पुत्रको नरवरके सिंहासन पर अभिषिक्त होनेके लिये भेज दिया, उक्त मोहनसिंहका अभिषेक आमेरके कुमारसे चौदह पीढ़ी पीछे हुआ था । हम पहिले ही कह आये है कि मोहनसिंहका यह अभिषेक प्रचलित रीतिके संपूर्णतः विपरीत था, कारण कि आमेरके महाराजके कोई पुत्र नहीं था, प्रचलित रीतिके अनुसार राजा मानसिंहके उत्तराधिकारीगण और माधोसिंहके उत्तराधिकारी जो सर्वसाधारणमे राजावत् नामसे विख्यात् थे, उनमे झिलॉयके सामन्त सबसे प्रथम आमेरराजके पदपर नियुक्त होनेके अधिकारी थे, उनके अयोग्य होने पर और भी कितने ही सामन्तवंश अभिषिक्त होनेकी सामर्थ्य रखते थे " ।

—अनुग्रह पर निर्भय करते हैं, तब हमने निर्भय होकर गवर्नमेण्टके निकट अपने मन्तव्यको प्रकाश किया, परन्तु जब कि उस गवर्नमेण्टके निकट हमारी आशा और भय कुछ भी नही है, तब हम अपने उस मन्तव्यको गुप्त नहीं रख सकते । यह देश गवर्नमेण्टके शासनका स्थायी है, और जिन राज्योंने हमारा आश्रय लिया है उन सब राज्योमें सुख शांति और स्वाधीनताकी वृद्धि होती रहै, यहा हमारी अभिलाषा है । जिन मनुष्योंने राजपूत जातिकी यथार्थ अवस्था और मानसिक भावको न जानकर उन राजपूतोंकी स्वाधीनताको और भी अधिक संकोचन करनेकी चेष्टा की वह इस देशके भयानक शत्रु है यह भलीभाँतिसे प्रमाणित होता है. औरंगजेबके साथ राठौरोंकी जो तीस वर्षसे बराबर शत्रुता चली आरही थी, इसे इतिहासमें पढ़िये; उन राठौरोके प्रति अत्याचार करनेवाले औरंगजेबका अ र वंश कहॉ है ? मानचित्रके प्रतिदृष्टि उठाकर देखो, उसके पीछे मरुक्षेत्र और सम्मुख ही अरवलीके शिखर खड़े हुए हैं; इस समय कौन शत्रु उन राठौरोंके ऊपर आक्रमण करनेके लिये तैयार है । घृणित व्यवहार करनेवाले तथा विश्वासघाती नव्वाबोके धनसे पलीहुई जिस सेनाने सरलतासे हमको जीत लिया था, उसकी अपेक्षा राजपूत जाति किस भयंकर रूपसे प्रमाणित होसकती है ! देशी सेनाके प्रति यत्न करो, राजपूतोको धीरज दो, पीछे शत्रुओके विरुद्धमें हँसना ! महात्मा टाड् साहब निर्भय होकर जो सार कथा कहगये है, बड़े दुःखका विषय है कि आज कलकी अंग्रेज राजनीति उसका सुननेके लिये भी तैयार नहीं है, इस समय महात्मा टाड् साहबकी उपरोक्त उक्ति विशेष शिक्षा देसकती है ।

परन्तु निम्नलिखित कारणोसे चिर प्रचलित रीतिभग की गई। जगत्सिंहकी मृत्यु के समय रनिवासमे मोहन नामक एक नाज़िर थाँ उसीके हाथमे उस समय राज्र शासनकी लगाम थी। वह नाजिर प्रवल बुद्धिमान् था, यद्यपि उसने अनेक चतुरता करके अपने आशयको पूर्ण करलिया इससे उसको राजभक्तकी अपेक्षा स्वार्थपरायण अनुमान कर-सक्ते हैं, पर यह वास्तवमें राजाके मंगलकी इच्छा करनेवाला एक नि.स्वार्थी मनुष्य था। इस समय मोहनसिंहकी अवस्था केवल नौ वर्षकी थी, इस कारण नाज़िरने उनके दीर्घकाल तक अप्राप्त व्यवहारकी अवस्थामें पूर्ण सामर्थ्य दिखानेकी इच्छासे उनको सिंहासनपर अभिपिक्त किया था। राज्यके श्रेष्ठ सामन्त गणोंके मध्यमें डिग्गीके मेघसिंह नाज़िरके एक प्रधान सहयोगी थे, मेघसिंहने अपनी चातुरी और वल प्रकाशसे राजाकी खास भूमिमे अपना अधिकार करने और उसे निर्विघ्न होकर भोगनेकी इच्छासे आमेरकी बारह बलवान सम्प्रदायोमे अपनी प्रवल सम्प्रदाय (खॉगारोत्) के प्रभुत्व और प्रावलताके साथ नाज़िरके उस प्रस्तावको समर्थ न किया था। पुरोहित और धाभाई इत्यादि राजदरवारमें कुटुंबके कर्मचारीगण तथा महलके आधीनके कर्मचारी सभी नाज़िर के स्वार्थमे अपना स्वार्थ जानते थे। राजाके अज्ञान अवस्था होनेपर नाजिरकी कृपासे वह कर्मचारी निर्विघ्नतासे अपने पदपर स्थित रह सकेगे। यदि दूसरे पक्षमे कोई मनुष्य राजपद पर प्रतिष्ठित होगा ता वह अपनी इच्छानुसार कार्य करैगा, और अपनी मित्रमंडलीको भी राजकर्मचारीयोके पदपर नियुक्त करगा, यही विचार कर राजकर्मचारी गणोने भी नाज़िरके पक्षको समर्थ न किया।

"मोहनसिंहके अभिपेकके सम्बन्धमे सामन्तोके साथ वा राजरानियोके साथ पहिले कुछ भी परामर्श न करके नाज़िरने केवल अपने दायित्वके भारको ग्रहण कर स्वामीकी मृत्युके पीछे दूसरे दिन प्रभातकाल ही वालक मोहनसिंहको सूर्यके रथपर चढ़ाया और जगत्सिंहकी प्रेतक्रिया करानेके लिये लेगया दाहक्रिया होजानेके पीछे मोहनसिंहने पवित्र स्नान किये और जितने मनुष्य इकट्ठे थे सभीने मोहनसिंहको कछवाहोका राजा स्वीकार कर उनका दूसरा नाममानसिंह रखकर सम्मान दिखाया। उपरोक्त घटनाके पीछे जयपुरकी राजधानीमे जयपुरके सामन्तोंमे जो प्रतिनिधिरूपसे रहते थे, नाजिरने मोहनसिंहके अभिपेकमे उनकी सपूर्ण सम्मति प्रकाशकपत्र पर

(१) यवन सम्राटोके अत.पुरके रक्षक प्रधान खोजे नाजिर कहाते थे, राजपूत राजाओंमे जयपुर और बूंदीके राजाओंने यवन सम्राटोका अनुकरण करके अपने अन्त.पुरके रक्षकोंको नाज़िर की उपाधि दी थी।

(२) टाड् साहबने लिखा है, कि खागारोत् सम्प्रदाय बाईस वंशोंके सामन्त वंशमें विभक्त थी, उन सबकी वार्पिक आमदनी ४०२८०६ रुपये थी। जयपुरपतिकी सहायताके लिये उनको ६४३ अश्वारोही सेना देनेका नियम था। यद्यपि मेघसिंह इस सम्प्रदायमे छठवाँ वा सातवां श्रेणीके पदके मनुष्य थे, पर वह अपनी बुद्धि और तेजस्विताके वलसे इस सम्प्रदायके नेता हुए थे, और राजदरवारमें इस सम्प्रदायके मुख्य यन्त्रस्वरूप थे।

हस्ताक्षर करके मोहर लगानेकी चेष्टा की। उक्त प्रतिनिधियोंने नाजिरके लिखेहुए प्रस्तावको स्वीकार करके सावधान होकर सम्मान दिखाते हुए ऐसा उत्तर दिया, कि जिससे न तो मोहनसिंहके अभिपेकके संवन्धमे कुछ उनकी सम्मति ही विदित हुई और न कुछ असम्मति ही जान पड़ी, वरन उसके सम्वन्धमे परस्परमे विचार करनेके लिये समय प्राप्त होगया; इससे उस समय कुछ दिनोंके लिये अभिपेक सम्वन्धी मीमांसा स्थिर न हुई। इस समय सभी अंग्रेजोंकी ओर दृष्टि उठाकर देखने लगे, अंग्रेजोंको प्रसन्न रखना नाजिरकी प्रथम चेष्टा थी इस कारण उसने शीघ्र ही दिल्लीमे अंग्रेज रेसिडेण्टके पास ऐसा अनुरोध प्रकाश कर भेजा, कि सरकारने तुरन्त ही अपने एक विश्वासी मुन्शीको जयपुरमे भेजदिया। रेसिडेण्टका भेजा हुआ मुन्शी जगत्सिहकी मृत्युके छः दिन पीछे दिल्लीसे जयपुरमे आ पहुंचा रेसिडेण्टने उक्त मुन्शीको निम्नलिखित कईएक प्रश्नोंका उत्तर संग्रह करनेके लिये आज्ञा दी थी " नरवरराजके पुत्रको आमेरके सिंहासन पर अभिपिक्त करनेका कारण क्या है? मोहनसिंहके वंशका विवरण, उनके वंशकी कारिका, सिहासनपर अधिकार पानेका उनका कोई स्वत्व है या नहीं और किसकी सम्मतिसे उनका अभिपेक हुआ है। इन ग्यारह प्रश्नोंके अतिरिक्त उक्त कईएक प्रश्नोंमे और भी पूछा गया कि इस आभिषेकमें रानी और सामन्तोंने संमति दी है या नही? रानी और सामन्तोके हस्ताक्षर सहित इस सम्वन्धका एक पत्र रेसिडेण्टके निकट लानेके लिये भी हुक्म दिया गया था।"

इतिहासवेत्ताने फिर लिखा है कि "नाजिर और रेसिडेण्टके विश्वासी मुन्शीने उक्त प्रश्नोंका इस प्रकारसे उत्तर भेजा कि, वृटिस गवर्नमेण्टने सन्तुष्ट होकर पहिली फरवरीको मोहनसिहके अभिषेकके समयमें एक अभिनदंन पत्र भेजा और इसी प्रकारका अग्रेज गवर्नरने भी इनके पास सम्मान सूचक एक पत्र भेज दिया। दरवारमे यह दोनो पत्र पढ़े गये, "फिर आज नरवरमे वाजावजने लगा,वालक मोहनसिंह प्रतापके महलसे चलकर राजसिंहासन पर विराजमान हुए"। वृटिश गवर्नमेण्टने इस प्रकारसे मोहनसिंहके अभिषेकमें अपनी पूर्ण सम्मति दी, जयपुरके राजदरवारमें जयपुरक सम्पूर्ण सामन्तोके प्रतिनिधि नाज़िरने उनसे पूछा, "कि आपके प्रभु सामन्तोकी इस सम्वन्धमें क्या सम्मति है?" प्रतिनिधियोंने तुरन्त ही उत्तर दिया, कि आपके इस प्रश्नके पूछने पर हम उत्तर देनेको प्रस्तुत हैं पर उन्होने उसके साथही साथ यह भी कह दिया, "कि जोधपुरके राजाकी भगिनी जो आमेरकी पटरानी है उन्हींके मतपर हमारे प्रभु सामन्तोंका मत निर्भर हुआ है"।पटरानीने यहाँतक प्रकाश्यरूपसे नाज़िर और उनके पक्षवालोंके विरुद्धमें अपना मत प्रकाश किया था कि मार्च,मासके पहिले अभिपेकके संवन्धमे सर्व साधारणमे असंतोपके प्रवल चिह्न दृष्टि आने लगे; और झिलॉयके राजावत् सामन्त जो सिहासन प्राप्तिके समान अधिकारी थे, उन्होने उस स्वत्वकी रक्षाके लिये अस्त्र धारण करनेका विचार किया, और शीघ्र ही सिवाड़ और ईसरदाके दो सामन्त जो उक्त सम्प्रदायके कनिष्ट थे, परन्तु उस शाखामें प्रवल वलशाली थे उनके साथ योगदेनेको सन्नद्ध हुए।

"इस उपद्रवके समयमे और भी एक सम्प्रदाय थी, पृथ्वीसिंहके पुत्र जिसके विषयमे हम पहिले वर्णन कर आये हैं, और जो इस सेधियाकी दयाके आश्रयविभूत होकर ग्वालियरमे रहते थे, उनको आमेरके सिंहासन पर अभिषिक्त करनेका उद्योग किया गया, परन्तु मूर्खता और कुचरित्रताका विषय प्रकाश होगया इस लिये माधोसिंहके पुत्रोकी ज्येष्ठ शाखासे राज्याधिकार नष्ट होगया।

कर्नल टाड्र साहबके उक्त मन्तव्यको पढ़नेसे भलीभाँतिसे जाना जाता है कि इस समय आमेर राज्यमे ऐसा एक भी राजनीतिका जाननेवाला वा साहसी वीर नहीं था, जो उपस्थित हुए उपद्रवोकी भलीभाँतिसे मीमांसा करता। नाज़िरने अपनी चिरकाल प्रचलित रीतिके हृदय पर लात मारकर अपनी गुप्त अभिलाषा पूर्ण करनेको राज्य पर दीर्घकालतक अधिकार चलानेके लिये नरवरराजके राजकुमारको आमेरको गद्दीपर बैठाल दिया, बडे आश्चर्यका विषय है कि सामन्त मंडलीने प्रकाशरूपसे सबसे पहिले ठीक समयपर इसके विरुद्ध कोई प्रतिवाद करनेका साहस नहीं किया। यह ठीक भी है कि इस समय नाज़िर आमेरमे अपनी अतुलनीय सामर्थ्यका विस्तार कर रहा था, किन्तु यदि सामन्तोंमे एक भी साहसी वीर होता तो नाज़िर कभी भी इस भाँतिसे इच्छानुसार अपनी सामर्थ्यका विस्तार नही कर सकता। टाड्र साहबकी उक्तिसे भलीभाँतिसे जाना जाता है कि अंग्रेज कंपनीने विशेष तत्त्वका अनुसंधान किये विना केवल एक नाज़िरकी उक्तिके ऊपर संपूर्ण विश्वास स्थापन करके चिर प्रचलित राजपूतरीतिका अपमान किया था। अंग्रेज रेसिडेण्टने सबसे पहिले अपने एक विश्वासी मुन्शीको जयपुरमे भेजकर कईएक प्रश्न किये थे, यदि उस बातको अटल रखकर वह यथार्थ तत्त्वको जान लेते तो किसी प्रकार भी अंग्रेज सरकार नाज़िरकी उक्तिके मतसे मोहनसिंहको अभिषेक करानेमे अपनी सम्मति नहीं देती। मुन्शीके परामर्शसे उन्होंने मोहनसिंहको आमेरके सिंहासनपर बैठाकर समस्त राज्यमे भयंकर अग्नि सुलगादी, अंग्रेजोंके विशेष खोज न करनेसे मोहनसिंह नाजिरकी चतुरताके जालमें फँसगये। एक ओर जिस भाति सामन्त श्रेणी उत्कंठित होगई, दूसरी ओर सिंहासन प्राप्तिके लिये राजावत् सामन्तोंकी सम्प्रदायने अस्त्र धारणकर मोहनसिंहके विरुद्ध समरकी तैयारी की। शीघ्र ही राज्यमे जातीय समरानलके प्रज्वलित होनेके पूर्वलक्षण दृष्टि आनेलगे। आमेरकी पटरानी जोधपुरपतिकी भगिनी[1] पहिलेसे ही नाज़िरके ऊपर अत्यन्त क्रोधित थी, उन्होंने पहिलेसे ही मोहनसिंहके अभिषेकमें अपनी सम्मति नहीं दी, इस कारण वह भी इस समय प्रवल आपत्ति करने लगी। चतुर नाजिर चारों-ओरसे अपनेको आपत्तिसे घिराहुआ देखकर उपाय सोचने लगा। नाजिरने देखा कि एकमात्र पटरानीके संतोष होते ही समस्त उपद्रवोकी शांति होजायगी। उक्त पटरानी मारवाडके राजा मानसिंहकी बहिन थी। इस कारण नाज़िर सबसे पहिले उन मारवाडपतिकी शरणमे जाकर अनेक प्रकारसे विनती करने लगा। नाज़िरने विचारा कि रानी अपने भाईकी आज्ञाको अवश्य ही मानेंगी, और मोहनसिंहके अभिषेकके

---

(१) भगनी नहीं पुत्री थी।

संवन्धमे यह अपनी सम्मति भी अवश्य ही देगी । चतुर नाज़िरने मानसिंहके समीप कहला भेजा कि महाराज अपनी मृत्युके समय कह गये हैं कि मोहनसिंह ही आमेरके सिंहासन पर अभिपिक्त हो अतः उनकी अंतिम इच्छाके अनुसार ही हमने मोहनसिंहको आमेरके सिंहासनपर अभिपिक्त किया है। इस समय आप अपनी भगिनीसे सम्मति देनेके लिये कह दीजिये; तभी सब उपद्रवोंकी शांति होसकती है। राजा मानसिंहने नाज़िरके छलमें न आकर यह उत्तर भेजा कि "जयपुरके सिंहासन पर अभिषिक्त होनेका किसको अधिकार है, इस विपयके पत्रपर हम या हमारी भगिनीके हस्ताक्षर होनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है इन प्रश्नोंकी मीमांसाका भार चिर प्रचलित रीतिके अनुसार वारह श्रेष्ठ सामन्तोंके वंशधरोपर निर्भर है; वह यदि मोहनसिहके सम्वन्धमें अपनी सम्मति देकर उस स्वीकारपत्र पर अपने हस्ताक्षर करदे तो आवश्यकता होनेपर हमारी भगिनी भी अपने हस्ताक्षर करसकती हैं"।

राजा मानसिंहके उक्त उत्तरसे नाज़िरको चारोओर अंधकार दिखाई पड़ने लगा। उसने समझा था कि गवर्नमेण्टके उसकी चतुरतासे भ्रांतिरूपी कुएँमें गिरते ही और गवर्नमेण्टके द्वारा भेजेहुए मुन्शीको उसके पक्षको भलिभाँतिसे समर्थन करते ही निर्विघ्नतासे मोहनसिंहको आमेरके सिहासन पर बैठाल सकैंगे। पर अब उसमें भी कठिनाई दीखी, तव बहुतसी चिन्ता करनेके उपरान्त उसने और भी एक षड्यंत्र जालका विस्तार किया। उसने विचारा जव कि गवर्नमेण्टने मोहनसिंहको आमेरके अधीश्वररूपसे स्वीकार करलिया है तव यदि कोई सामर्थ्यवान् राजपूत राजा मोहन-सिंहके पक्षमे लाया जाय तो आमेरकी सामन्तमंडली और पटरानीकी की हुई समस्त आपत्तियां दूर होसकैंगी। उसने इस प्रकारकी चिन्ता करके मेवाड़के राणाकी पोतीके साथ मोहनसिहके विवाहका प्रस्ताव एक दूतके हाथ उदयपुरमें भेजा। महाराणाने इस विवाहके प्रस्तावको सरलस्वभावसे स्वीकार करलिया; और राणाके जो प्रवल सामर्थ्यवान् प्रतिनिधि दिल्लीमें रहते थे वह भी इस प्रस्तावमे सम्मत होगये। परन्तु राणाके यहाँके और कितने ही सामर्थ्यवान मनुष्य इस प्रस्तावके विरुद्ध खड़े हुए। अतएव राणाको हताश होकर इस प्रस्तावमे अपनी असम्मति प्रकाश करनी पड़ी, कर्नल टाड् साहव लिखते हैं कि फिर यह सम्मति ठहरी कि राजा अपना विवाह जैपुर-राजकी वहनसे करले कि जिसकी सगाईकी रीति वारह वर्ष पहिले हो चुकी थी और उसमें वहुतसा रुपया खर्च हुआ और दिया गया था, और उस समय राणाकी इच्छा जयपुर नगरमें जानेके लिये अनेक आपत्ति दिखाकर रोक दीगई थी। किसी हिन्दू जातिके महाराजको प्रतिष्ठासे लेनेके लिये समस्त आमेरके सामन्त अपने शासित देशोंको छोड़कर परस्पर मानी गई और वनाई गई रीतोंके अनुसार वहाँ आवें कि जिसकी प्रसन्नताके स्वतत्र स्वयं ही संग्रह किये गये हैं, और जिन रीतोंको यह विवाह भलीभाँतिसे दृढ़ कर देगा। यद्यपि नाजिरने दृढतासे इस ग्रंथिको वाँधा था परन्तु न जाने परमेश्वरने मोहनसिंह और नाजिरके भाग्यमें क्या लिखा था कि एक ही उपायसे

दोनोंके भाग्यका चक्र पटला खागया । अचानक यह समाचार सुन पड़ा कि जगत्-सिंहकी भटियानी रानी गर्भवती हैं ।

महाराज जगतसिंहने सन् १८१८ ईस्वीके २१ दिसम्बरमें प्राण त्याग किये थे परन्तु सन् १८१९ ईस्वीकी २४ मार्चको यह समाचार प्रकाशित हुआ था कि भटियानी रानीको आठ महीनेका गर्भ है, इतने दिनोतक इस समाचारके छिपे रहनेसे सभीको आश्चर्य हुआ । परन्तु कई महीनेतक यह समाचार किसीने भी नाज़िरसे न कहा यह नहीं विदित हुआ । गर्भके समाचारको प्रकाशित होते ही इसका निर्णय करनेके लिये कि, क्या रानी निश्चय ही गर्भवती है अप्रैलको तीन घड़ी दिन चढ़े मृतक महाराज जगत्सिंहकी सोलह विधवा रानी और आमेर राज्यके प्रधान २ सामन्तोंकी भार्यायें सब मिलकर भटियानी रानीके महलोमे गई, और दूसरी ओर राज्यके समस्त सामन्त "जनानी ड्योढ़ी" अर्थात् अंतःपुरके तोरणसे लगे हुए कमरेमे जाकर उस रानीमण्डलीके निर्णयके फलकी वाट देखने लगे, तीन पहरसे भी अधिक दिन चढ़े तक उन रानियोंने विशेष परीक्षा करनेके पीछे स्थिर किया कि भटियानी रानी निश्चय ही गर्भवती है इसमें कुछ भी संदेह नहीं । सामन्त इस समाचारको पाकर अत्यन्त संतुष्ट हुए, और सम्मति करनेके पीछे वहांपर एक लिखाहुआ पत्र हस्ताक्षर करानेके लिये भेज दिया, "यदि रानीके पुत्र उत्पन्न होगा, तो हम उसको अपना प्रभु स्वीकार करेंगे, अन्य किसीके भी पक्षको ग्रहण न करेंगे ।" नाजिरके निकट शीघ्र ही वह प्रतिज्ञापत्र भेजा गया, उन्होंने एकपत्र पर हस्ताक्षर करके शीघ्र ही उसे दिल्लीमें वृटिश एजण्टके पास भेज दिया, और उनको इस प्रकारका अनुरोध किया, कि विशेष परामर्श करके राठौर रानीकी आज्ञासे नाजिरको पृथक् कर दिया जाय । नाजिर भटियानी रानीके गर्भके समाचारको सुनकर अत्यन्त भयभीत हुआ, यद्यपि वह इस समाचारसे निराश भी होगया था परन्तु अंतमे एक और भी उपाय करे विना न रहा । उसने समस्त सामन्त मण्डलीसे इस गर्भके एक स्वीकारपत्र पर हस्ताक्षर करानेकी चेष्टा की कि मृतक महाराज जगत्सिंहकी आज्ञासे ही मोहनसिंहको राज-सिंहासन पर अभिषिक्त किया गया है, परन्तु नाजिरके इस वचनको मिथ्या जानकर किसी सामन्तने उस पर हस्ताक्षर नहीं किये, इस कारण नाज़िरकी वह अन्तिम चेष्टा भी व्यर्थ होगई ।

राजरानीके गर्भका समाचार समस्त राज्यमे फैलगया, जो सम्प्रदाय सिंहासन लेनेके लिये तैयार हुई थी वह सभी शांत होगई । इस प्रकारसे जगत्सिंहकी मृत्युके चार महीने और चार दिन पीछे २६ अप्रैलको प्रभात होते ही भटियानी रानीके एक पुत्र उत्पन्न हुआ । राजकुमारने जन्म लिया है यह समाचार सुनते ही सामन्त मंडली महा आनंदित हुई, राजधानीमें भाँति भाँतिके उत्सव होने लगे, मोहनसिंह और नाज़िरके ऊपर मानो भयंकर वज्र टूट पड़ा । टाड साहब लिखते हैं कि सामन्तोंने अत्यन्त आनंदित होकर नवकुमारको कछवाहोंके अधीश्वररूपसे स्वीकार किया, और उसके साथ

ही साथ मोहनसिंह सिहासनसे उतार दिये गये,और जिस अवस्थामें वह पहिले थे उसीमें पहुँच गये। इस घटनासे एक समय रजवाड़ेमे महा आनंद होगया, जहाँ भयंकर युद्धकी तैयारी होरही थी वह एकवार ही शांत होगई। इस घटनासे जो सत्रने मीमांसा की थी वह सभीके पक्षमें मंगलकारी थी। इन नवीन राजकुमारके जन्म वृत्तान्तके साथ साधु टाड् साहवने जयपुरके इतिहासको समाप्त किया है हम भी जयपुर राज्यकी सृष्टिसे यहाँतक साधु टाड्का अनुसरण करते हुए आये, इन नवीन राजकुमारके शासनसे जयपुरके वर्तमान अधीश्वरके अभिषेक तकका इतिहास हमने स्वाधीनभावसे संग्रह यिया है, पाठक उसको अगले अध्यायमें भलीभाँतिसे पढ़ सकेंगे।

पंचम अध्याय ५.

भटियानीरानीका राज्यशासन–राजमंत्री पदपर ब्रटिश गवर्नमेण्टके मनोनीत रावल वैरीसालका नियोग–सामन्तोका अन्याय करके अधिकृत खास भूमिको ग्रहण करना–सामन्तोंका प्रतिज्ञा पत्र–विश्वासीरूपसे राजकार्य सँभारनेके लिये मुसद्दीगणोका प्रतिज्ञापत्र–आमेर राज्यमे फिर अशान्तिका आविर्भाव–भटियानी रानीके कृपापात्र झूतारामं–वैरीसालको पदच्युत करके झूतारामका मंत्रीपद ग्रहण करना–झूतारामका प्रवलप्रताप प्रभुत्व–उनके द्वारा राज्यमे फिर अराजकता अत्याचार और उत्पीड़न प्रारंभ होना–भटियानीरानीका प्राण त्याग–जयपुरके आभ्यन्तारिक शासन पर ब्रटिश गवर्नमेण्टके हस्ताक्षेपकी चेष्टा–महाराज जयसिंहका प्राण त्याग–उनकी अकालमृत्युके सम्बन्धमें संदेह–झूतारामका जयसिंहके विषप्रयोगका समाचार प्रचार करना–जयसिंहकी जीवनी–जयपुरके आभ्यन्तारिक शासन पर गवर्नमेण्टका हस्ताक्षेप–गवर्नर जनरलके एजण्टका जयपुरमे आगमन–वैरीसालको फिर मंत्रित्व पदकी प्राप्ति–उनके द्वारा शासनविभागकी नवीन व्यवस्था–झूतारामका षड्यंत्रजालका विस्तार–अंग्रेज एजेण्टके प्राण नाशकी चेष्टा–उनके सहायकका प्राण नाश–हत्याकारियोंका पकड़ाजाना–उनको प्राण दंड–झूताराम और उनके साथियोंका यावज्जीवन चुनारके किलेमें बंदी होना—

इतिहासवेत्ता कर्नल टाड् साहव जयपुरराज्यके वृत्तान्तको इतिहासमे जिस रूपसे वर्णन करगये है, हमने उन सभीको पूर्वाध्यायतक प्रकाश किया है, इस समय टाड्के लिखेहुए इतिहासके आगे शेष समय तकके अंशको लिखनेके लिये अग्रसर हुए हैं।

हमारे पाठक गण महाराज जगत्सिंहकी मृत्यु, मोहनसिंहका अभिषेक, जयसिंह का जन्म, और मोहनसिंहके सिहासनच्युतिके वृत्तान्तको पहलेही पढ़चुके है। जयसिंहके जन्मलेनेसे जयपुर राज्यकी राजनैतिक अवस्था फिर वदल गई, राजसिंहासन पर जो उपद्रव मचा था, नाजिरके षड्यंत्रसे राज्यमे जो भयंकर जातीय समरके पूर्व लक्षण दिखाई दिये थे, राजावत सामन्तोने असंतुष्ट होकर सिंहासन प्राप्तिके लिये घोर विवाद करके युद्धकी तैयारी की थी, गवर्नमेण्टने भी नाज़िरके चक्रमे फँसकर शोचनीय

राजनैतिक काण्डके झमेलेमे पड़ रही थी वह जयसिहके जन्म लेते ही एकवार ही शान्ति होगई। जयसिंहकी माता भटियानी रानी थी, इन्होने अपने पुत्रके नामसे राज्यशासन करना प्रारंभ करदिया, परन्तु गवर्नमेण्टने जयपुरके सुशासन, शान्ति, मंगल, न्याय-विचारसाघन और वालक महाराजकी स्वार्थ रक्षाके अभिप्रायसे रावल वैरीसाल नामक एक बुद्धिमान मनुष्यको जयपुरके मंत्रीपदपर नियुक्त करदिया। रावल वैरीसाल उस ऊँचे पदको पाकर अपने सुकुमार प्रभुकी स्वार्थरक्षाके साथ राज्यके मंगल साधनके निमित्त भटियानी रानीके राज्यशासनकी सहायता करनेमे प्रवृत्त हुए।

जयपुरराज्यके पतन समयमे मृतक महाराज जगत्सिहकी अंतिमदशामे आमेरके प्रवल वलशाली सामन्तोने छल कपट और अपनी चतुरता तथा वाहुवलसे राज्यकी खास भूमिको अपने अधिकारमे करलिया था, गवर्नमेण्टकी आज्ञासे महाराज जगत्-सिहने उस समस्त भूमिको फिर अपने अधिकारमे करलिया। आचिसन साहवने लिखा है, कि "संधिवंधनके समाप्त होनेके पीछे सवसे पहिले महाराजने यह आज्ञा दी थी कि आमेरके सामन्तोने अन्याय करके जिस पृथ्वीको अपने अधिकारमे करलिया है उस सवको लौटा लिया जाय, और उद्धत सामन्तोको उनके पूर्व नियत किये हुए अधीन पदपर नियुक्त करना ठीक होगा। सर डेविड अकटरलोनीकी मध्यस्थतासे उदय-पुरके सामन्तोंके साथ महाराणाका जिस प्रकारका चुक्तिपत्र नियुक्त हुआ था, आमेरमे भी उसी प्रकारका चुक्तिपत्र नियतहुआ, सामन्तोंने अन्याय करके जिस पृथ्वीको अपने अधिकारमे करलिया था, वह सभी सामन्तोसे छीन कर महाराजको फिर दे दी गई और सामन्त गण न्यायद्वारा चिरकालसे जिस अधिकारको भोगते आये थे, गवर्नमेण्टने उसी प्रकारका उनको प्रति भू प्रदान किया"। यद्यपि सामन्तमण्डली अंग्रेजोके साथ संधिके इस प्रथम फलको देखकर मनही मन भलीभाँतिसे असंतुष्ट हुई थी परन्तु उन्होने अन्यान्यरूपसे राजाकी खास भूमिपर अपना अधिकार किया था, इसीसे प्रकाशमे कुछ कहनेका साहस न करसके।

महाराज जयसिंहकी नावालिग अवस्थाके समयमे जिससे आमेरके सामन्त फिर किसी प्रकारसे खास भूमिपर अपना अधिकार न करसके, इस लिये वृटिश गवर्न-मेण्टके प्रस्तावके अनुसार भटियानी रानीने सव सामन्तोसे एक प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर करालिये। उस प्रतिज्ञापत्रको हम नीचे प्रकाश करते हैं।

प्रतिज्ञापत्र।

"समस्त ठाकुर (सामन्त) और मुसद्दियोकी ओरसे श्रीमती महारानी वाइ साहिवाको विदित किया जाता है कि जव तक महाराज जयसिहजी राजकार्यमे समर्थ न होजांय तव तक हममेसे कोई भी अपने व्यवहारके लिये खालिसा पृथ्वीके किसी अंशको भी अपने अधिकारमे नहीं करसकेगा और हमलोग सभी विश्वासके साथ अपने २ कर्तव्यको पालन करेंगे।

(हस्ताक्षर) रावल वैरीशाल।

वाघसिंह चतुर्भुजोत	
कृष्णसिंह।	चेतरामसाह।
बहादुरसिंह राजावत।	मंगलसिंह खूभानी।
कायमसिंह वलभद्रोत।	वॉशखो।
लक्ष्मणसिंह झुंजनूवाला।	सवाईसिंह कल्याणोत्।
उदयसिंह खांगारोत।	राय ज्वाला नाथ।
राजा अभयसिंह क्षेत्री।	दीवान अमर चँद।
राव चतुर्भुज।	वारहट स्वरूपसिंह।
मानसिंह खांगारोत्।	कूमावत मोहरवाला।
वैरीशाल थूकारोत।	दीवान नन्दीराम।
स्वरूपसिंह वनवीरपोता।	राय अमरचंद पल्लीवाल।
वख्शी श्रीनारायण।	सिंगी मन्नालाल।
भारतसिंह चाम्पावत।	वालमसिंह राणावत्।
अमानसिंह पचानोत।	रामलाल धाभाई।
शरत्सिंह चंपावत।	आड़तराम वढ़गी।
शार्दूलसिंह नरूका।	रावलवैरीशाले "।
कृपाराम वकायानवीस।	कृपाराम साह।

सामन्तमंडली और मुसद्दियोंने सन् १८१९ ई० की१२वीं तारीखको उस प्रतिज्ञा पत्रपर हस्ताक्षर किये· राय ज्वालानाथ और दीवान अमरचँदने एक पत्र जरनल अक्टर लोनीके पास भेज दिया।

मुसद्दी अर्थात् राज्यके कर्मचारी जिसमे विश्वासके साथ अपना २ कार्य साधन किया करें, और किसी प्रकार भी घूंस ग्रहण करके शान्तिको भंग न करें। इसी लिये उनसे भी उसी दिन राजमहिषी माताने एक प्रतिज्ञा पत्र पर हस्ताक्षर करालिये। वह प्रतिज्ञापत्र नीचे प्रकाशित हुआ है।

प्रतिज्ञापत्र।

सम्पूर्ण मुसद्दियोंके पक्षसे श्री श्रीमती वाई साहिवाको विदित किया जाता है कि महाराज श्री सवाई जयसिंह वहादुर जवतक राजकाजके व्यवहारोंमे समर्थ न होंगे, तव-तक दरवारका जो कारवार हमारे हाथमें अर्पित हुआ है उस समस्त कार्यसाधनके समयमे और समय २ पर जो समस्त आज्ञाएं प्राप्त हों, उन सम्पूर्ण आज्ञाओंके पालन करनेमे हम सव निम्नलिखित व्यवस्थाके अनुसार कार्य करेंगे।

प्रथम-हम विश्वासके साथ अपने २ कार्य करेंगे, और किसीसे भी घूंस ग्रहण नहीं करेंगे।

---

* Aitchisons Treaties Vol. IV.

दूसरा-प्रत्येक फसलके समयमें मुख्तारके द्वारा हम प्रत्येक राजदरवारमें एक २ हिसाव भेजेंगे।

तीसरा-अत्याचारी अपराधीके अतिरिक्त हम और किसीको दानका दंड नहीं देंगे।

चौथा-राज्यशासन संवन्धी कार्यमे हम आपसमें किसीके साथ भी प्रकाश्य वा अप्रकाश्य विवाद नही करेंगे।

(हस्ताक्षर) राव ज्वालानाथ।	चतुर्भुज।
मुन्शी दयाचँद।	दीवान नोनिधराय।
दीवान अमरचँद।	सिंगी मन्नालाल।
सोजीलाल।	घासीराम।
कृपाराम।	आढ़तराम।
जेतरामसाह।	श्रीनारायण वख्शी।
लछमन।	संपत्‌राम।
मदनचँद।	जीवनराम।
भीहराज नारायण।	रामलाल धाभाई।
राय अमृतराम।	ज्ञानचँद।
रूपचँद दरोगा।	देवराम दरोगा।
कृपा कपूर।	मुन्शी श्रीलाल।
	रावल वैरीशाल।

उपरोक्त दोनो प्रतिज्ञापत्रोने प्रकाशित करदिया है कि जगत्‌सिंहकी मृत्युके पीछे आमेर राज्यमे शान्ति और न्याय-विचार प्रवर्त्तनके लिये सवसे पहिले यथोचित आयोजन और अनुष्ठानमे कोई भी त्रुटि नही हुई, परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि वहुत थोड़े दिनोंमे ही आमेरराज्यकी अवस्था अत्यन्त शोचनीय होगई, यद्यपि भटियानी रानी अपने पुत्रके नामसे राज्यशासन करती थी परन्तु वह राजपूत स्त्रियोकी समान साहस प्रतिज्ञा ज्ञान और बुद्धिके वलसे उनकी समान वलवती न होकर जितने दिनोतक जीवित रही उतने दिनोंमे आमेरराज छारखार होगया। सुखशांति और मंगलमय विचार आमेरसे एकवार ही लोप होगये। आचिसन साहवने लिखा है, "कि रानीकी मृत्यु अर्थात् सन् १८३३ ईसवीतक जयपुर राज्य अराजकता और अविचारका क्षेत्रस्वरूप होगया था"। कर्नल म्यालिसनने लिखा है कि "शिशु राजाके नावालिग अवस्थाके समयमे जयपुरराज्य अराजकता और उपद्रवोका तो मानों क्षेत्रस्वरूप होगया था*"।

"साराश यह है कि भटियानी रानी अच्छे चरित्रवाली न थी। झूंताराम नामके एक मनुष्यने अपने कौशलमे रानीको फाँसकर आमेरराज्यमें अशान्तिकी अग्नि प्रज्वलित कर दी थी। गवर्नमेण्टने वैरीसालको दीवानके पदपर नियुक्त किया था,

* Atcheson's Treaties Vol IV,

परन्तु झूतारामने विधवारानीके हृदयपर अधिकारके साथ ही साथ उस पदपर भी कधिकार करालिया। झूतारामने धीरे २ राज्यमें अपने प्रभुत्वका विस्तार करादिया और अपनी स्वतन्त्रताका एक शेष प्रदर्शन दिखा दिया, राजदरबार और राजाके यहाँ सम्पूर्ण ऊँचे पदोंपर उनके अनुगत मनुष्य नियुक्त हुए+"। झूतारामने उस प्रबल सामर्थ्यको विस्तार करके स्वयं ही राज्यमें स्वेच्छाचारिताका एक शेष प्रदर्शन दिखाया था, यही नहीं किन्तु इसीकी समान इसके अनुगत नियुक्त हुए राजकर्मचारियोंने भी राज्यके प्रत्येक प्रान्तमें अत्याचार और उपद्रवोंके मारे भयंकर अग्नि प्रज्वलित् करदी। गवर्नमेण्ट संधिपत्रके अनुसार जो कर लेनेकी अधिकारी थी झूतारामके शासनसे वहकर भी वहुत कम रहगया। सन् १८३३ ईसवीतक झूतारामने इस भाँतिसे आमेर राज्यपर शासन करके एकाधिपत्यके साथ राज्यकी अवस्था अत्यन्त ही सोचनीय कर दी। इसके पीछे इसी संवत्में भटियानी रानीने भी प्राण त्याग किये। रानीकी मृत्युसे झूतारामके प्रतापपर भयंकर वज्रपात हुआ।

जबतक भटियानी रानी जीवित रहीं तबतक बृटिश गवर्नमेण्टके संधिपत्रके सम्मानकी रक्षा करती रहीं, और इसी कारणसे गवर्नमेंटका कर सालके साल दिया जाता रहा, इससे कोई विघ्न भी उपस्थित नहीं हुआ। परन्तु सन् १८३३ ईस्वीमें महारानीके मरते ही गवर्नमेंट भिन्नमूर्तिसे जयपुरकी रङ्गभूमिमें आ पहुँची। कर्नल म्यालिसनने अपने इतिहासमें लिखा है, "कि जिस प्रकारसे गवर्नमेण्टके स्वार्थकी रक्षा और नियमित करमें वाधा न पड़े उस अभिप्रायसे जयपुरकी राजधानीमें निवास करने और राज्यके भीतरी शासन पर हस्ताक्षेपके लिये सरकारने एक अपने कर्मचारीको नियुक्त कर उसके हाथमें संपूर्ण सामर्थ्यका देना अपना मुख्य कर्तव्य विचारा"। आचिसन साहबने अपने ग्रंथमें इस प्रकारका मत प्रकाश किया है कि इसको कौन नहीं स्वीकार करेगा कि बृटिश सरकारने अपने स्वार्थसाधनके लिये जयपुरके आभ्यन्तरिक शासन पर हस्ताक्षेप करके संधिपत्रका अपमान किया। गवर्नमेंट जब पहिलेसे ही प्रतिज्ञामें बद्ध हुई थी कि वह किसी प्रकारसे भी जयपुरके आभ्यन्तरिक शासन पर हस्ताक्षेप न करेगी तब केवल प्राप्य करको अदा करनेके लिये उस प्रतिज्ञाका भंग करना क्या न्याय संगत है?

जो कुछ भी हो कर्नल म्यालिसनने लिखा है सन् १८३४-३५ ईस्वीमें शेखावाटीमें शान्ति स्थापनके लिये बृटिश गवर्नमेण्टने इस समय एक अंग्रेजी सेना भेजी उस समय उस समरके व्यय चुकानेके लिये सांभरके लवण ह्रदपर जयपुरराज्यका जो अंश था, गवर्नमेण्टने अपनी सेनासे उस अंशपर अपना अधिकार करलिया। जिस समय शेखावाटीमें समर होनेकी मीमांसा हुई थी उस समय महाराज जयसिंहने जयपुरमें ऐसी अवस्थासे प्राण त्याग किये कि जिससे एक प्रकारका प्रबल सन्देह उपस्थित होता था, राजमंत्री झूताराम और राजमहलकी एक परिचारिका

+ Malleson's Native states of India. Chap II

बड़ारणके षड्यंत्रसे महाराजकी अकाल मृत्यु उपस्थित हुई थी" । आचसन साहबने अपने बनाये हुए ग्रंथमे लिखा है "कि युवक महाराज जयसिंहने सन् १८३५ ईस्वीमे वर्तमान महाराज रामसिंहको दो वर्षका छोड़ कर प्राण त्याग किये । उस समयका ऐसा विचार किया जाता है कि भटियानी रानीके समय जो झूताराम राज्यमे असीम सामर्थ्य विस्तार कर रहा था, और गवर्नमेण्टके मनोनीत मंत्री रावल वैरीशालको पदसे उतार कर स्वयं उस पदपर विराजमान हुआ था उसी मनुष्यने विष देकर राजाको मार डाला " । बाबू लोकनाथ घोषने अपने बनाये हुए ग्रंथमे लिखा है, कि "सन्१८३५ ई०मे महाराज जयसिंहने सत्रह वर्षकी अवस्थामे प्राण त्याग किये,यह भी विचारमे आता है कि झूताराम की आज्ञासे महाराजको विष दिया गया था "। *

अत्यन्त ही दुःखका विषय है कि महाराज जयसिंह यौवनकी सीमापर पैर धरते ही, नारकी झूतारामके हाथसे मारेगये, अधिक क्या, महाराज जयसिंहको राज्यशासनका भार प्राप्त नहीं ' हुआ ' झूताराम ही सर्वमय कर्ता स्वरूपसे राज्यको छारखार करता था, झूतारामने किसलिये महराज यजसिंहके नवीन जीवनका नाश किया, इस बातका विचार पाठक स्वयं करसकते है। थोड़े ही दिनो पीछे महाराज जयसिंह समस्त व्यवहारोको जानकर स्वयं राज्यको ग्रहण करते, इसी कारणसे नराधम झूतारामने विचारा कि इनके समर्थ होते ही मेरा प्रताप लोप होजायगा, और इस पापीके प्राणनाशकी भी सम्पूर्ण संभावना थी,इसीलिये पिशाचबुद्धि झूतारामने महाराज के जीवनका नाश करके निर्विघ्नतासे अपने पूर्व प्रतापको इच्छानुसार अखंड रखनेकी प्रतिज्ञा कि थी । इसीसे उस दुष्टात्माने यह पिशाची कार्य किया, परन्तु उस पापात्माने अपनी करनीका फल भी तुरन्त ही भोगलिया ।

भटियानी रानीकी मृत्युके पीछे यद्यपि वृटिश गवर्नमेण्ट जयपुरके आभ्यन्तरिक शासन पर हस्ताक्षेप करके आगे बढी थी; परन्तु इस समयतक सम्पूर्णरूपसे हस्ताक्षेप नहीं किया था । महाराज जयसिंहकी अकालमृत्यु होते ही गवर्नमेण्टने जयपुरमें प्रवेश किया । आचिसन साहबने लिखा है, कि " महाराजकी मृत्युके पीछे गवर्नर जनरलके एजण्टने महाराजकी मृत्युका कारण अनुसन्धान करने तथा राज्यके शासनविभागके संस्कार करने और शिशुकुमारके अविभावक पदको ग्रहण करानेके लिये जयपुरमे गमन किया" गवर्नर जनरलके एजण्ट कर्नल अलवीसने जयपुरमे जाकर शीघ्र ही झूतारामको पदसे उतार कर रावल वैरीशालको फिर मंत्री पदपर नियुक्त करादिया, और वह राज्यके चारोंओर शांति स्थापनका उद्योग करने लगे । कर्नल म्यालिसने लिखा है कि " उन्होंने जिस समय प्रबल विधिकी व्यवस्था करनी प्रारंभ की, उसी समय झूतारामने एक षड्यन्त्र जालका विस्तार किया, उसने एजण्ट कर्नल अलवीसके प्राणनाशकी चेष्टा की, और उनके सहकारी मि० ब्लेक उन षड्यंत्रियोके द्वारा मारे गये । परन्तु हत्याकारी

* Malleson's Native states of India Chap II

शीघ्र ही पकड़े गये, प्रधान मंत्री वैरीसालने उन्हें प्राणदंडकी आज्ञा दी, झूतारम और उसके षड्यंत्री चुनारके किलेमें जन्मभरके लिये वंदी होकर रहे। झूतारामको प्राण दंडकी आज्ञा दी जाती तभी उसको उसकी करनीका उचित फल मिलता।

छठा अध्याय ६.

महाराज रामसिंहका जयपुरके सिंहासन पर अभिषेक-जयपुरके आभ्यन्तरिक शासन पर वृटिश गवर्नमेण्टका हस्ताक्षेप-वृटिश पोलिटिकल एजण्टका महाराज रामसिंहका अविभावक पद ग्रहण करना-शासन समाज स्थापन-नवीन शासनसे जयपुरमें शान्ति और मंगलसाधन-महाराज रामसिंहका शिक्षालाभ-महाराज रामसिंहकी वयः प्राप्ति-उनका राज्याभिषेक-वृटिश गवर्नमेण्टका महाराजके हाथमें राज्यभार अर्पण-महाराजका पूर्वानुष्ठित शासनप्रणालीकी रक्षा करना-सन् १८५७ ईसवीमें सिपाही विद्रोहके समय महाराज रामसिंहका अंग्रेजी गवर्नमेण्टकी सहायता करना-विद्रोहकी शान्तिके पीछे अंग्रेजी गवर्नमेण्टका पुरस्कार स्वरूप महाराजको कोटकासिम नामक देशका स्वत्व देना-अंग्रेजी गवर्नमेण्टका महाराजको दत्तकपुत्रके ग्रहण करनेकी सामर्थ्य देना-महाराज रामसिंहका अपने राज्यमें मंगलमूलक नानाप्रकारके अनुष्ठान करना-प्रजासाधारणके स्वास्थ बढ़ानेके लिये समाज स्थापन तथा बहुतसे अनुष्ठान-राजधानीमें नये २ राजमार्ग बनाना-राजधानीमें यंत्रके द्वारा पानीका लाना-नगरमें सुधार-चित्रशाला-शिल्पशाला. नगरनिवास-नाट्यशाला-दातव्य-रोगीनिवास-और चिकित्सालय इत्यादिकी प्रतिष्ठा-वाणिज्यकार्यकी सुविधाके लिये राज्यके अनेक स्थानोंमें बड़े २ राजमार्गोका बनवाया जाना-कृषिकार्यके सुलभ करनेको अनेक देशोंमें खाल खुदवाना-राज्यमें रेलका विस्तार-शिक्षाके प्रचारके ऊपर महाराजकी पूर्णदृष्टि और बहुतसा रुपया खर्च करके अंग्रेजी कालिज, संस्कृत विद्यालय, साधारण विद्यालय और स्त्री-शिक्षाके विस्तारके लिये बालिका विद्यालयकी प्रतिष्ठा-शिक्षितवंगालियोंका जयपुरके राजकार्यमें नियोग-सन् १८६८ ईसवीमें जयपुरके दुर्भिक्षके समय महाराजका प्रजाको सहायता देना-और आभ्यन्तरीगण, शस्य वाणिज्य शुल्क ग्रहणसे रहित-वृटिश गवर्नमेण्टका महाराजकी सन्मान वृद्धि के लिये दो तोपोंकी सलामी बढ़ाना-अंग्रेज गवर्नर जनरल और राजप्रतिनिधियोंका कौन्सिल नामक समाजके सभ्य पदपर महाराजको दुवारा नियोग करना-अपनी सद्गुणावलीसे महाराजका वृटिश गवर्नमेण्टके हृदय पर अधिकार-बड़ौदा गायकवाड़ मल्हाररावके विचारके समय वृटिश गवर्नमेण्टका महाराज रामसिंहको दूसरे विचार पदपर नियुक्त करना-भारतके भावी सम्राट् प्रिन्स आफ वेलसकी अभ्यर्थनाके लिये महाराज रामसिंहका कलकत्तेमें जाना-कलकत्तेके महलमें महाराज के साथ भावी सम्राट्का साक्षात्-भावीसम्राट्का प्रतिसाक्षात् दान-भावीसम्राट्की अभ्यर्थनाके लिये महाराज रामसिंहका जयपुरमें नानाविधके अनुष्ठान-भावी सम्राट्का जयपुरमें जाना-महाराज रामसिंहका बड़े समारोहके साथ उनको ग्रहण करना-भावीसम्राट्का बड़े आडम्बरके साथ जयपुरकी राजधानीमें जाना-भावी सम्राट्का शिकारके लिये जाना-व्याघ्रोंका शिकार-जयपुरकी राजधानीका आलोकदान-भावीसम्राटके सम्मानके लिये महाराजका दीवानआम नामक सभागृहमें दरबार

Malleson's Native states of India Chap II

करना–राजभोज–वक्तृता–चंद्रमहलमें नृत्यगीतानुष्ठान–महाराजको भावी सम्राट्का बहुमूल्य उपहार देना–अग्निक्रीड़ा–भावीसम्राट्का आमेर देखना–भावी सम्राट्के स्मरणार्थ चिह्न बनानेके लिये "अलबर्टहाल" नामक साधारण आवासकी भित्ति बनाना–महाराज रामसिंहकी अभ्यर्थनासे भावीसम्राट्को महा आनंद प्रकाश–भावी सम्राट्का जयपुरसे जाना–सन् १८७७ ईसवीकी पहिली जनवरीमें वृटिश रानीकी दिल्लीमें "भारतकी राजराजेश्वरी" उपाधि धारणके उपलक्षमें महाराजका दिल्लीमें जाना–राजप्रतिनिधि लार्ड लिटनका महाराजको सम्मान सहित ग्रहण करना–पताका दान–भारतकी राजराजेश्वरीकी उपाधि धारणके लिये स्मारक पदक देना–महाराज रामसिंहके सम्मान बढ़ानेके लिये सलामी की इक्कीस तोपें नियत करना–"कौन्सिलर आफ दी एम्प्रेस" नामकी उपाधि देना–महाराज रामसिंहका स्वर्गवास।

महाराज जयसिंहने सत्रह वर्षकी अवस्थामें प्राण त्याग किये थे इस कारण उस समय उनके पुत्र रामसिंह अत्यन्त ही अल्प अवस्थाके थे। रामसिंहने सन् १८३३ इस्वीमे जन्म लिया था, अतः वे अपने पिताकी अकालमृत्युके समय दो वर्षकी अवस्थामें आमेरके सिंहासन पर विराजमान हुए। इस समय जयपुर राज्यकी जीवनशक्ति एकवार ही क्षीण होगई थी। सामन्तोंका पहिला प्रताप जाता रहा था। कछवाहोंकी जातिमे पुनः दीर्घस्थाई अराजकता फैलगई थी। अशान्ति अत्याचार उत्पीडन और लूटमारके होनेसे तथा विजातियोंके आक्रमणसे इस समय जयपुर निपट निर्जीव होगया था। सुअवसर और सुयोगको पाकर वृटिश गवर्नमेण्टने इतने दिनोंके पीछे जयपुर राज्यमे अपनी प्रचण्ड शासनशक्तिका प्रयोग किया। आचिसन साहब लिख गये है, "कि जयपुरराज्यमे दीर्घस्थायी अराजकताके कारण गवर्नमेण्टका बहुत कर रहगया था, और राज्यकी आमदनी भी एकवार ही न्यून होगई थी, इसी कारणसे गवर्नमेण्टने फिर आभ्यन्तरी शासनमे हस्ताक्षेप करना कर्तव्य विचारा"। हम कह सकते हैं कि आमेरके सामन्तोंमे यदि एक भी पहिलेकी समान साहसी बलवान् और राजभक्त, होता तो कभी भी वृटिश गवर्नमेण्ट इस कार्यसाधनके लिये अर्थात् अपने बाकी करको चुकानेके लिये बालक महाराजके अविभावक पदको ग्रहण करके राज्यमे अपनी शासनशक्तिको न चलाती। राजपूतरीतिके अनुसार बालक महाराजके अविभावक पदको राज्यके संभ्रान्त उच्चश्रेणीके सामन्त ही पासकते थे, उस पदमे विजातीय विधर्मी राजाओंके प्रतिनिधि कभी स्थित नहीं होसकते थे, क्या जयपुर राज्य इस समय एकवार ही बलहीन होगया था, राजलक्ष्मी क्या अन्तर्द्धान होगई थी? इसी लिये एक विजातीय शक्तिने आकर हिन्दू महाराजके अविभावक पदको अयाचित होकर ग्रहण किया। कर्नल ग्यालिसनने लिखा है कि "शिशुमहाराज रामसिंह वृटिश पोलिटिकल एजण्टके आधीनमे रक्खे गये, उस पोलीटिकल एजण्टके तत्त्वावधानसे एक प्रतिनिधि शासन समाज स्थापित हुआ, पाँच प्रधान सामन्त उस समाजके सदस्य हुए, और समस्त प्रयोजनीय भारी विषय उनके द्वारा नियत किये मन्तव्योंसे ही गृहीत होने लगे"। कर्नल ग्यालिसनकी उक्तिसे ऐसा बोध होता है कि मानो वह पाँच सामन्त ही जयपुर राज्यका शासन करते थे, परन्तु

वास्तवमें ऐसा नही था वृटिश पोलिटिकेल एजण्ट ही जयपुरके सर्वमय कर्ताधर्ता थे और पाँच सदस्य अपनी आज्ञाके अनुसार कार्य करने पर सम्मत किये गये थे। पोलिटिकल एजण्टने बड़ी खोज करके जयपुरकी अराजकता दूर की और शांति स्थापित होनेसे अनेक मंगलमय कार्य होनेलगे। इस बातको हम स्वीकार करते है कि वह नियुक्त हुई शासन समाज शीघ्रही जयपुरके चारोंओर शान्ति स्थापन करनेमें प्रवृत्त हुई। आचिसन साहब लिखते हैं, कि "सेनाकी संख्या एकवार ही घटा दीगई थी, राजकार्यके प्रत्येक विभागमे संस्कार हुआ। सतीदाह, क्रीत–दासव्यवसाय और शिशुकन्याके प्राणनाश आदि भी दूर होगये थे। देखा जाय तो राज्यकी जैसी आमदनी थी, गवर्नमेण्टका पहिला कर उससे भी अधिक होगया, इसी कारणसे सन् १८४२ ईस्वीमें गवर्नमेण्टने अपने पिछले करमेंसे ४६ लाख रुपया एकवार ही छोड़ दिया और ४ लाख रुपया वार्षिक देना नियत हुआ"।

महाराज रामसिंह जबतक अज्ञान रहे तबतक जयपुरराज्य इस भाति वृटिश पोलिटिकलएजण्ट और मंत्रीसमाजकी सहायतासे शासित होता रहा। जो दीर्घकालसे आमेरराज्यमें अराजकता और उपद्रवोंका सोता बराबर चला आता था इस समय वह एकवार ही दूर होगया। महाराज रामसिंह जिससे वीरोंकी समान शिक्षा प्राप्त करे; इस लिये यथासमय उपयुक्त अनुष्ठान किया गया। पण्डित शिवधन महाराज शिक्षकके पदपर नियुक्त होकर महाराजकी शिक्षाके विषयमें विशेष परिश्रम करते थे। संस्कृत और उर्दू भाषाकी समान महाराजने अंग्रेजी भाषामें भी शिक्षा प्राप्तकी।

सन् १८५७ ईस्वीमें महाराजने सर्वगुण सम्पन्न होकर सम्पूर्ण राज्य शासनका भार गवर्नमेण्टसे अपने हाथमे ले लिया। "परन्तु महाराजकी अवस्था उस समय बहुत थोड़ी थी, इसी कारणसे राज्यशासनके अनेक विषयोंमें पोलिटिकल एजण्टकी सम्मति लेकर कार्य करते थे। उसी पोलिटिकल एजण्टकी सम्मतिसे स्वभावसे आलसी और अधिक खर्चालू प्रधानमंत्री रावल वैरीसालको पदसे अलग कर सम्पूर्ण कार्योंमें कुशल और विशेष सावधान भ्राता लछमनसिंहको उनके पदपर नियुक्त किया और उस समय महाराजके पूर्वशिक्षक पण्डित शिवधन राजस्वविभागके सर्वाध्यक्ष पदपर नियुक्त हुए"।

महाराज रामसिंहने पूर्णसामर्थ्यके प्राप्त होनेपर भी स्वयं चिर प्रचलित इच्छानुसार शासनरीतिके सम्मानकी रक्षा नहीं की। वह भलीभाँति शिक्षित होगये थे; इस कारण सुशासनकी ओर स्वभावसे ही उनकी विशेष दृष्टि थी। इस कारण उनके अप्राप्त व्यवहारके समयमें राज्यशासनके लिये जिस कौन्सिलकी सृष्टि हुई थी उन्होंने आजीवन उसी कौन्सिल नामक मंत्रीसमाजकी रक्षा की, वह मंत्रीसमाजके द्वारा ही राज्यशासन करते थे। समस्त देशीय राजाओंमें एकमात्र इस जयपुरमें ही मंत्रीसमाजके द्वारा शासनकी रीति प्रचलित थी। यह रीति सब प्रकारसे ठीक थी। समय २ पर इसी रीतिने राज्यके बड़े २ उपकार किये। उनका अनुमान सरलतासे होसकता है।

जयपुरपति महाराज रामसिंह जिस वर्षमे पूर्णशासनकी सामर्थ्यको प्राप्त हुये थे उसी वर्षमें भारतवर्षके अंग्रेजी राज्यको जड़में भयंकर वज्रपात हुआ। इस वर्षमें

अर्थात् सन् १८५७ ईसवीमे भयंकर सिपाही विद्रोहानल प्रज्वलित होकर अंग्रेजी शासनके विलोपका पूर्णभास प्रकाश करने लगा। महाराज रामसिंहने उस महा कष्टमे यथार्थ मित्रकी समान गवर्नमेण्टकी भलीभांतिसे सहायता की, इन्होंने धनकी सहायतासे तथा सेनाकी सहायतासे विपन्न अंग्रेजोको आश्रयदानके साथ अपनी सेनाको अंग्रेजी पक्षमे नियुक्त कर यथार्थ मित्रकी समान अपना कर्त्तव्य पालन किया, आचिसन साहब लिखते हैं, कि "सिपाही विद्रोहके समयमे महाराज रामसिंहने गवर्नमेण्टके विशेष उपकार किये, और उसी कारणसे इनको पुरस्कारमें कोटकासिम परगना मिला, परन्तु उन्होंने इसको इस शर्तपर लिया कि यह देश जवतक गवर्नमेण्टके आधीनमे था तवतक गवर्नमेण्टने जो उक्त देशका राजस्व नियत किया था आगे उसी भी नियमसे चलना होगा। और उसे दत्तकेपुत्रके लेनेकी भी सामर्थ्य होगी"।

पवित्र रुचि और उदारचरित्र महाराज रामसिंहकी अवस्था वृद्धिके साथ ही साथ राज्यकी यथार्थ मंगलकामना उनके हृदयमें भलीभांतिसे दृढ़ होगई, महाराज यथार्थ हिन्दूधर्मके अनुसार चिरप्रचलित पैतृक कौन्सिल और सामाजिक रीतिके परिपोषक हुए, उन्होंने एकमात्र शिक्षाके वलसे ही सम्भ्रान्त अंग्रेज जाति और अंग्रेजी गवर्नमेण्टके आदर्शके अनुकरणसे अपने राज्यकी अवस्थाको अन्यरूपसे वदलनेका यत्न किया। जयपुरकी राजधानी यद्यपि पहिलेसे ही उत्तम प्रकारसे वनी थी परन्तु रामसिंहने अंग्रेजी आदर्शसे उस राजधानीकी सुन्दरता और भी वढ़ानेके लिये जितना अधिक रुपया खर्च किया था, इससे उनका प्रवल परिश्रम समझा गया। वृटिश और देशीय भारतवर्षमे जयपुरकी राजधानी ही इस समय सुन्दरतामे परम प्रसिद्ध हुई है, जयपुर नगरीके देखनेवाले इसकी सुन्दरताको देखकर ऊँचे स्वरसे उसकी प्रशंसा करते हैं, महाराज रामसिंह ही उसका एक मूलकारण थे, यह इतिहास मुक्तकंठसे कहरहा है, महाराज रामसिंहने इस जयपुर नगरीको भारतवर्षकी राजधानी कलकत्ते नगरीकी समान सर्वगुण संपन्न करदिया था।

यद्यपि अत्यन्त प्राचीन कालमे राजाओंने प्रजाकी साधारण स्वास्थ्यरक्षाकी और विशेष ध्यान दिया था, और प्रजाके स्वास्थ्यके ही लिये विशेष अनुष्ठान किये थे, ऐसे वहुतसे प्रमाण पाये जाते है, परन्तु मध्यसमयके देशीय राजाओसे इस प्रकारके किसी अनुष्ठानका प्रमाण नहीं पाया जाता। जलकष्टको दूर करनेके लिये यद्यपि उन राजाओने वड़े २ तालाव और कुएँ खुदवा दिये थे, और चलनेके सुभीतेके लिये राज्यमें वड़े २ लम्वे चौड़े मार्ग वनवा दिये थे, रास्तेके दोनो ओर वृक्ष लगवादिये थे, परन्तु इसके अतिरिक्त और कोई भी ऐसा स्वास्थ्यकर अनुष्ठान नहीं किया। महाराज रामसिंहने उन्नीसवीं शताव्दीमे प्रजाके साधारण स्वास्थ्यकी ओर विशेष दृष्टि करके वैज्ञानिकरीतिसे वर्तमान समयके अनेक उपयोगी अनुष्ठानके लिये, अंग्रेजी राजधानीमे

(१) पाठकोंने गवर्नमेण्टके दिये इस दत्तक ग्रहणकी क्षमतापत्रको मारवाड़ मेवाड़ इत्यादिके इतिहासोंमें पढा होगा।

जिस प्रकारकी मिउनिसिपैलिटी है उन्हींका आदर्श मिउनिसिपैलिटी अर्थात् स्वास्थ्यरक्षा और सौष्ठववर्द्धन समाजकी प्रतिष्ठा करके सब अंशोमे योग्यपात्रोको सदस्य पदपर नियुक्त किया। परन्तु अंग्रेजोंकी मिउनिसिपैलिटीने जिस प्रकारसे प्रजासे धन लेकर प्रजाके स्वास्थ्यकी रक्षाके लिये अनुष्ठान किये है, महाराजकी राजधानीकी मिउनिसिपैलिटीने उस प्रकार प्रजासे धन न लेकर सर्वसाधारणके लिये अपने खजानेसे कई लाख रुपया खर्च करके बहुतसे आवश्यकीय कार्य किये, और आजतक भी उसी प्रकारसे बराबर होते चले आते है।

यद्यपि जयपुर नगरके राजमार्ग पहिली अवस्थामें वैज्ञानिकरीतिसे बनाये गये थे, परन्तु महाराज रामसिंहके शासनके समयमें वह बहुत बढ़ गये थे, और इस समय सुन्दर श्रीको धारण कियेहुए है, राजधानीकी समान राज्यके अनेक स्थानोंमें प्रधान २ नवीन राजमार्ग बनकर प्रजाका अशेप उपकार कर रहे हैं। बड़े २ राजमार्गोंके अतिरिक्त नियमितरूपसे राजमार्गमें जलसेक जलग्रहणके स्थान स्वच्छ बने हुए हैं, जलकी निकासीके लिये बड़ी २ नालियां बनी हुई हैं। नगर निवासियोको जिससे सरलतासे अच्छा पानी मिलसके ऐसा सुभीता भी करादिया गया है। आजतक अनेक उच्चश्रेणीके देशीय राजाओंके राज्यमें गैसकी रोशनी नहीं है, परन्तु महाराज रामसिंहके बहुतसे परिश्रम और अधिक धन खर्चसे जयपुरकी राजधानी सूर्यकी कांतिकी समान प्रकाशमान होकर नगरीकी सुन्दरताको बढ़ारही है। यद्यपि प्राचीन ग्रंथोंमें हमने देशीय राजाओंकी राजधानी तथा राजउद्यानके आस्तित्वको जाना है, परन्तु प्रजाओंके साधारण स्वास्थ्य बढ़ानेके लिये वैज्ञानिक रीतिसे साधारण उद्यानोंके बनानेकी कथाको कहीं भी नहीं पढ़ा; परन्तु बुद्धिमान् महाराज रामसिंहने अंग्रेजी राजधानीके आदर्शके अनुसार रामनिवास नामक अत्यंत सुन्दर उद्यान बनाकर जयपुरकी राजधानीके निवासियोंका विशेप उपकार किया। सारांश यह है कि सर्व साधारणकी स्वास्थ्य वृद्धिके अथवा राजधानीकी सुन्दरताके लिये उन्नीसवीं शताब्दीमे महाराज रामसिंहने बहुतसा रुपया खर्च करके प्रजाके हितके लिये अनेक उपकार किये। राजधानीकी सुन्दरताको बढ़ानेके लिये और स्वास्थ्यकर अनुष्ठानोके अतिरिक्त शिक्षा और सभ्यताके विषयमें भी अनेक अनुष्ठान किये। चित्रशाला शिल्पशाला, टौनहाल वा नगर निवास, नाट्यशाला, दातव्य, रोगीनिवास, चिकित्सालय इत्यादि भी बनवाये—इस कार्यसे महाराज रामसिंहके कल्याणसे प्राचीन जयपुर भलीभाँतिसे नवीन जीवन पाकर नवीनभावसे नवीव मूर्तिसे देशीय अन्यान्य राज्योंकी राजधानियोंको तिरस्कारके साथ ही साथ मानो महाराजकी शिक्षा, रुचि, ज्ञान—और बुद्धिकी ऊँचे स्वरसे बड़ाई कर रहा है।

महाराज रामसिंह केवल राजधानीकी उन्नति करके ही शान्त न हुए थे। समस्त राज्यकी प्रत्येक श्रेणीकी प्रजाओंके मंगलकी ओर उनका पूर्ण ध्यान रहता था, इसी कारण उन्होंने राजधानीकी समान अपने राज्यमें सर्वत्र ही वाणिज्यकार्यकी

सुविधा और मार्गमे सुगमतासे जानेके लिये अगणित धन खर्च करके अनेक राजमार्ग वनवा दिये, तथा किसानोंके सुभीतेके लिये भी वहुतसा धन खर्च करके अनेक स्थानोमे सरोवर खुदवा दिये थे। इसके अतिरिक्त उन्नीसवीं शताब्दीमे वाणिज्यकार्यमें प्रधान सुविधासाधक रेलवेको अपने राज्यमें विस्तार करदिया, इन कामोंमे स्वयं महाराजने अपने ही खजानेसे रुपया लगाया था, आजतक प्रत्येक वर्ष उसी प्रकारसे वहुतसा धन खर्च होता है, इसका अनुमान हमारे विचारवान् पाठक स्वयं कर सकेंगे।

वुद्धिमान् महाराज रामसिंह राज्यभारको ग्रहण करके इस वातको भलीभाँतिसे जानगये थे कि इस संसारमे एकमात्र शिक्षासे ही अनेक जातियों और राज्योंकी उन्नति हुई है। जितनी शिक्षा वढ़ती जायगी उतनी ही राज्यकी उन्नति होती जायगी, और उन्नतिसे ही मंगल होगा, यही उनका विचार दृढ़तासे था,। सवाई महाराज जयसिंह यद्यपि एक उच्च अंगके शिक्षित मनुष्यथे, यद्यपि उन्होंने शास्त्रकी चर्चा और शिक्षाके विस्तारके लिये शिक्षित पण्डितमंडलीके सम्मानको वढ़ानेके लिये वहुतसा रुपया खर्च किया था, परन्तु हम इस वातको मुक्तकंठसे स्वीकार करते है कि उन्होंने अपने राज्यमे विश्वजननी शिक्षाके विस्तारका संकल्प नहीं किया था। महाराज रामसिंहने उच्च शिक्षाके वलसे राज्यमे उस विश्वजननी शिक्षाका विस्तार करनेके लिये वहुतसा धन खर्च किया था, उन्होंने राजधानी जयपुरमें संस्कृत विद्यालयके अतिरिक्त उर्दू विद्यालय और अंग्रेजी शिक्षाके लिये कालिज तक भी वनवा दिये थे। केवल इतना करके ही वह संतुष्ट नहीं हुए उन्होंने शिल्प शिक्षाके लिये भी एक स्वतंत्र विद्यालय वनवाया था। जयपुरका शिल्पकार्य भारतवर्षमे सवसे उत्तम गिनाजाता है, शिल्पविद्यार्थी फिर वैज्ञानिक रीतिके अनुसार नवीन शिक्षा पाकर उन प्रशंसित शिल्पकी अधिक श्रेष्ठतासाधन कर रहे हैं। महाराज रामसिंह प्रधान सहायक थे, अतएव राजधानीमें एक एक करके अनेक कन्या पाठशालाएं भी वनवाईं। इन सव कालिज और विद्यालयोंसे आज अमृतमय फल निकल रहा है। किसी समयमे यह अनेक विद्यालय जयपुरकी वड़ी प्रतिष्ठाको वढ़ावेंगे।

यद्यपि महाराज मानसिंह अपने हृदयमें विचार करते ही पूर्वपुरुषोंकी समान राज्यकी पूर्णसामर्थ्यको अपने हाथमें लेकर पहिलेकी समान स्वेच्छाचारकी रीतिसे सम्मानकी रक्षा कर सकते थे, परन्तु उन्होने ऐसा नहीं किया, प्रजाके कल्याणके लिये शासन विभागकी प्राचीन रीतिको भी वदल दिया, उनकी अज्ञान अवस्थामे जिस समय मंत्रीसमाजके द्वारा राज्यशासन होता था, इन्होंने अपने हाथमे राज्यभारको लेकर भी उसी रीतिको प्रचलित रक्खा। विशेष करके स्वयं सव विभागो पर दृष्टि रखनेका अवसर उनको नहीं मिलता था, इसीसे राज्यके एक २ विभाग पर सम्भ्रान्त शिक्षित मनुष्योंको नियुक्त करके उन २ विभागोंके कर्त्तृत्वभारको उन्हींको सौंप दिया। यह तो प्रथम ही कह आये हैं कि महाराज रामसिंहने जिस समय राज्यभारको अपने हाथमे लिया उस समय उनकी अवस्था वहुत थोड़ी थी, अंग्रेज पोलिटिकल एजण्टके साथ उन्होने अनेक विषयोमें राज्यकार्य्यके संवन्धकी सलाह की थी। परन्तु अवस्थाकी

वृद्धिके साथ ही साथ इनकी विद्या बुद्धि बलकी भी वृद्धि हुई, तब शीघ्र ही वृटिश पोलिटिकलएजण्टने महाराजके हाथमे संपूर्ण शासनका भार अर्पण किया।

आजकल अनेक विद्वान् बंगाली अनेक रयासतोंमे अधिकार पाकर देशीय राजाओंका मंगलसाधन करते हैं परन्तु हम इस बातको मुक्तकंठसे स्वीकार करते है कि जयपुर राज्यके शिक्षित बंगालियोंने जिस प्रकारसे ऊँचे पदपर नियुक्त होकर राजकार्य किया अन्य किसी देशीयराज्यके शिक्षित बंगाली उस प्रकारसे आजतक प्रबलताका विस्तार न करसके। कलकत्तेके विख्यात् बाबू रामकमलसेनके पुत्र बाबू हरमोहनसेन जयपुरराज्यमे अत्यन्त आदर सम्मानके साथ पधारे थे। हरमोहनबाबूके वंशधर इस समय उस जयपुर राज्यके अनेक पदोंपर नियुक्त होकर बंगाली जातिकी दक्षता और योग्यताका चूड़ान्त परिचय देरहे हैं। महाराज रामसिंह केवल सेनवंशकी ही और नहीं वरन शिक्षित बंगाली मात्रसे ही संतुष्ट हुए थे; इसी लिये अनेक बंगाली ब्राह्मण तथा कायस्थ भी महाराजके आश्रयसे राज्यके भिन्न २ उच्चपदोंपर प्रतिष्ठित हुए। इन शिक्षित बंगालियोंके कार्यसे महाराज रामसिंह इतने संतुष्ट हुए कि राज्यके एक २ विभागके कर्त्तृत्वभारको उनके हाथमे अर्पण करके उन्हे मंत्रीसमाजमें आसन दिया। गुप्तमंत्रीपदपर भी महाराजने एक विद्वान् बंगालीको नियुक्त किया; उच्च वंशोद्भव कृतविद्य बाबू संसारचन्द्रसेनने महाराज रामसिंहके गोपनीय मंत्री पदपर नियुक्त होकर महाराजकी मृत्युके समयतक बड़ी चतुरतासे कार्य करके जयपुरराज्यके कल्याणकी कामना की, इससे इनके ऊपर वर्तमान महाराज अत्यन्त प्रसन्न हुए, और बड़े आदरभावके साथ बाबू संसारचंद्रसेनको अपने गुप्तमंत्रीपदपर नियुक्त किया। और बाबू मतिलालको गुप्तसहकारी प्राइवेट सेक्रेटरी पदपर नियुक्त किया।

सन् १८६८ ईसवीमें रजवाड़ेमे भयंकर दुर्भिक्ष पड़ा, उस समय महाराज रामसिंह प्रजाके कष्टको दूर करनेके लिये स्वयं अपने यहांसे बहुतसा धन देते थे, और उन्होंने प्रजासे कर लेना एकबार ही छोड़ दिया और प्रजाके भोजनके सुभीतेके लिये बहुतसा सुभीता कर दिया। इससे महाराजका बहुत धन उठगया इस विषम दुर्भिक्षके समयमें महाराजको अधिक धन उठाता हुआ देखकर गवर्नमेण्ट अत्यन्त संतुष्ट हुई, और महाराजके सम्मान बढ़ानेके निमित्त दो सलामी तोपोंकी बढ़ादी गई। जयपुरके महाराजके सम्मान स्वरूप सत्रह तोपोंकी सलामी अंग्रेजीराज्यमे जानेके समय होती थीं, परन्तु गवर्नमेण्टने व्यवस्थाकी कि महाराज रामसिंह जबतक जीवित रहैंगे तबतक उन्नीस तोपोंकी सलामी हुआ करैगी।

देशीय राजाओंमे महाराज रामसिंह यथार्थरीतिसे राज्यशासन कर प्रजाके हितके लिये उन्नीसवीं शताब्दीके उच्च आदेशसे वैज्ञानिक रीतिसे राज्यसंस्कार और सुशासनकी व्यवस्थाके विषयमे सफल मनोरथ हुए। उनकी योग्यता देखकर गवर्नमेण्ट अत्यन्त ही संतुष्ट हुई। भारतवर्षके अंग्रेजी राजप्रतिनिधि और गवर्नर जनरल बहादुरने कौन्सिलके अवैतनिक माननीय सभ्यपदपर उनको नियुक्त किया। उस कौन्सिलमे

जानेके समय महाराजने विशेष दक्षता प्रकाश की, अंग्रेजी गवर्नमेण्टने फिर दूसरीवार उनको उस पदपर नियुक्त किया। महामान्या भारतेश्वरीने जिस समय भारतके देशीय राजाओंका सम्मान बढ़ानेके लिये भारत नक्षत्र उपाधिकी सृष्टि की, उस समय अन्यान्य राजाओंकी समान महाराज रामसिंह प्रथम श्रेणीके भारत नक्षत्र अर्थात् "नाइट ग्राण्ट कमाण्डरस्टार आफ इंडिया" नामक सबसे उच्च सम्मान सूचक उपाधि पदकको प्राप्त हुए, वास्तवमें जयपुरके विख्यात महाराजा मानसिंह, मिरजा राजा जयसिंह और गाढ़-पंडित सवाई महाराज जयसिंह यवनराज्य पर जिस प्रकार अपनी सामर्थ्यके बलसे सम्राट्की सभामें विशेष प्रसिद्धि प्राप्त कराये थे, अंग्रेजी शासनमें उसी प्रकारसे महाराज रामसिंहने सबसे पहिले अंग्रेजी दरबारमें कीर्ति यश और सम्मानको प्राप्त किया था। भारतवर्षके राजाओंमें एकमात्र महाराज रामसिंह ही गवर्नमेण्टके इतने प्रिय होगये थे कि सन् १८७५ ईसवीमें जिस समय बड़ौदेके हतभाग्य अधीश्वर मल्हारराव गायकवाड़, अंग्रेजी रेसिडेण्ट कर्नल फिरारको विष देनेके अपराधमें अपराधी हो अपने राज्यमें कुशासनके लिये बंदीभावसे विचारके लिये अंग्रेजी गवर्नमेण्टके द्वारा लाये गये उस समय उनके विचारके लिये जो कमीशन नियत हुआ उस समयके राजप्रतिनिधि लार्ड नार्थब्रुकने, महाराज रामसिंहको योग्यपात्र जानकर उस कमीशनके अन्यतर सभ्यपद पर नियुक्त कर गायकवाड़के विचारका भार उनके हाथमें दिया। तब भी महाराज रामसिंहने अन्यान्य विचारवानोंके साथ विचारासन पर बैठकर विचारके अंतमें गायकवाड़के अपराधके सम्बन्धमें निरपेक्ष भावसे अपना मत प्रकाश करके विशेष प्रशंसा प्राप्त की थी।

सन् १८७५ ईसवीके शेषांशमें भारतके भावी सम्राट् ग्रेट् ब्रिटेनके युवराज माननीय प्रिन्सआफवेल्स बहादुर भारतवर्षमें भ्रमण करनेके लिये आये। उन भावी सम्राट्की अभ्यर्थना और अभिनंदनके लिये सपूर्ण भारतवर्ष मानो एक मनुष्यकी भांति खड़ा होगया, और आनंदित हो महा उत्सवके मारे उन्मत्त होगया। भारतके भावी सम्राट्को अपने राज्यमें लाकर उनका विशेष सम्मान करनेको अनेक देशीय राजाओंने अपने मनोरथ प्रकाश किये थे, परन्तु सभी राजाओंके उस मनोरथका पूर्ण करना भावी सम्राट्के पक्षमें अवश्य ही असंभव था। परन्तु जयपुरपति महाराज रामसिंह स्वयं अशेषगुणोंसे गवर्नमेण्टके परमप्रियपात्र होगये थे, जयपुर नगर ही भारतवर्षमें रमणीक स्थान नहीं है, वरन वह एक दर्शनीय स्थान कहा गया है। इस कारण भारतवर्षमें युवराजके आनेसे पहिले ही महाराज रामसिंहके प्रस्तावसे निश्चय हुआ कि प्रिन्स आफवेल्स बहादुर जयपुरकी राजधानीमें आकर महाराजकी आतिथ्यता स्वीकार करें। महाराज रामसिंह बहादुरके साथ प्रायः सभी अंग्रेजोंके प्रतिनिधियोंकी विशेष मित्रता होगई थी। विशेष करके अर्ल आफ मेओ महाराज रामसिंहको अपना परम मित्र जानते थे। जिस समय अर्लमेओको एण्डमान द्वीपमें पापात्मा सेरअलीने मारा था उस समय महाराज रामसिंहने उनके वियोगसे यथार्थ शोक प्रकाश किया था, और प्यारे मित्रके स्मरणके निमित्त चिह्न स्थापनके लिये राजधानी जयपुरमें "मेओ

अस्पताल" स्थापन कर आर्लमेओकी एक धातुकी बनी हुई मूर्ति राजधानीमे स्थापित की। प्रिन्सआफवेल्सने जिस समय भारतवर्षमे आगमन किया था इस समय राजप्रतिनिधि पदपर लार्ड नार्थब्रुक विराजमान थे, लार्ड नार्थब्रुकके साथ महाराजकी विशेष मित्रता होगई थी, इस कारण भावी सम्राट्के आनेके पहिले ही उन्होंने महाराज रामसिंहको कलकत्तेमें बुलानेके लिये निमंत्रण भेजा था।

वृटिश गवर्नमेण्टके परम भक्त महाराज रामसिंह बहादुर ठीक समय पर सेवकों सहित कलकत्तेमें आये। राजप्रतिनिधि लार्डनार्थब्रुकने बड़े आदर सम्मानके साथ महाराजको राजमहलमे लेजाकर विशेष संतोष प्रकाश किया, और महाराज राजधानीके जिस स्थानमे रहे थे राजप्रतिनिधि वहाँ नित्यप्रति जाकर रोज साक्षात् कर आते थे। सन् १८१५ ईस्वी। २३ दिसम्बरको भारतके भावी सम्राट् प्रिन्स आफवेल्स बहादुर कलकत्तेमे आये। उस दिन उनको बड़े आदरमानके साथ ग्रहण करनेके लिये प्रिन्सपेसू घाटपर एक बड़ी भारी सभा हुई। उस सभामें बुलाये हुए देशीय राजा भी आये। अधिक क्या महाराज रामसिंह बहादुरने वहाँ ठीक समय पर जाकर युवराजके सम्मानके कार्यमे योगदान किया। राजप्रतिनिधि लार्ड नार्थब्रुकने अन्यान्य राजाओंकी समान महाराज रामसिंहका उस स्थानपर युवराजके निकट विशेप परिचय दिया। दूसरे दिन २४ दिसम्बरको १० बजेके समय आमेरपति महाराज रामसिंह युवराजके साथ साक्षात् करनेके लिये गवर्नमेण्ट हाउसमें गये। जैसे ही यह गवर्नमेण्ट हाउसकी प्रधान सीढ़ी पर चढ़े थे कि वैसे ही युवराजके पारिषद मेजर अण्डार्सने मेजर सारटारियस और दो एडिकागोने आगे बढ़कर महाराजको बड़े आदरसम्मानके साथ ग्रहण किया। महाराजके सीढ़ीपर चढ़ते ही दोनो ओरकी स्थित सेनाने सम्मान सूचक सलामी ली, और उसी समय किलेपरसे तोपै छूटी। भावीसम्राट् सिंहासनपरसे उतर कर कईएक पग आगे चलकर स्वयं उनका हाथ पकड़ कर लेगये और अपने पासके सिंहासन पर उन्हें बैठाला। परस्पर कुशलप्रश्न होनेके उपरान्त बहुतसी बातचीत होती रही, और सबसे पीछे प्रचलित रीतिके अनुसार अतर लगाकर ताम्बूल दिया गया, महाराजने पहिले सम्मानके साथ विदा ग्रहण की। भावी सम्राट् २९ दिसम्बरको महाराजके साथ साक्षात् करनेके लिये गये, महाराजने भी उसी प्रकार बड़े आदर मानके साथ उनको ग्रहण किया। भावी सम्राट्ने कई दिनतक नगरमे रहकर समस्त उत्सव देखे। महाराजके साथ निम्नलिखित सम्भ्रान्त राजपुरुष और सामन्त कलकत्तेमे गये थे, ठाकुर किशोरीसिंह, ठाकुर करतासिंह, ठाकुर जुझारसिंह, राव राजा संग्रामसिंह, दुर्जनलालसिंह, जोरावरसिंह, प्रतापसिंह, और करमसिंह। महाराज रामसिंह कलकत्तेके उत्सव समाप्त होजानेके पीछे अपनी राजधानीको आये।

भारतके भावी सम्राट् प्रिन्स आफवेल्स बहादुरको बड़े आदर मानके साथ जयपुरमे ग्रहण करनेके लिये महाराज रामसिंह बहादुरने बहुतसा धन खर्च करके अनेक भाँतिके अनुष्ठान किये। ४ फर्वरीको प्रिन्सआफवेल्स बहादुर जयपुरमें गये। "प्रिन्स

आफवेल्स वहादुरके सम्मानके लिये महाराजने बहुत पहिलेसे अनेक तैयारियाँ की थीं " युवराज जिससे संतुष्ट हो. जिससे उनके मानकी रक्षा हो इसमें महाराजने किसी प्रकारकी त्रुटि नहीं की। वे जिस प्रकारसे बहुतसा धन खर्च करते थे उसी प्रकारसे उनका सम्मान भी होता था। क्योंकि युवराज यहाँ कल चार वजे आवेंगे इससे उनके आनेके पहिले समस्त नगर आनन्दसे परिपूर्ण होगया; सम्पूर्ण प्रजा और सेना तथा जयपुरके सभी जिमीदारोने आनन्दोन्मत्त हो परम रमणीय दृश्य प्रकाश किया। जयपुरके महाराजने हिन्दूराजकी समान हिन्दू भावसे ही युवराजकी अभ्यर्थना की थी। आर्यपताका, आर्यवाद्य, आर्यसैन्य, आर्यआनन्द ध्वनि, आर्यपूजा, सभी काम आर्यरीतिके अनुसार हुए थे। यह दृश्य देखकर हृदय अधिक संतुष्ट होता था। जिस समय युवराजकी रेल जयपुरनगरसे ८२ मील दूर थी, उसी समय जयपुरकी राजपताका उठी और इनके सम्मानके लिये तोपें छूटी। जब रेल द्योसा स्टेशन पर पहुंची तो किलेपरसे तोपोंकी ध्वनि हुई। जयपुरके महाराज पहिलेसे ही अपने राजमंत्री और प्रधान २ सरदारोंके साथ जयपुरके स्टेशन पर युवराजको सम्मान सहित लेनेके लिये उपस्थित थे, स्टेशन वड़ी सुन्दरता से सजाया गया था। पताकावली, पत्र पुष्पमाला और राजचिह्न इत्यादिसे स्टेशनकी शोभा और भी अधिक गई थी। एक ओर तो पैदलसेना स्टेशन पर युवराजको मान दिखानेके लिये खडी हुई थी और वीच२ मे मधुर ध्वनिसे वाजा वजता जाता था। रेलके स्टेशनसे लेकर शिवपोल तक मार्गके दोनों ओर घुड़सवार खड़े हुए शान्तिकी रक्षा कर रहे थे, शिवपोल गेटसे जयपुरकी राजधानीके कृष्णपोल गेट तक मार्गके दोनों ओर राजपैदल और नागापैदलोंका दल खड़ाहुआ था। समस्त जागीरदार सजधजकर घोड़ोपर चढ़े हुए युवराजका मान दिखानेके लिये वाट देख रहे थे। शिवपोल फाटकके सम्मुख ही युवराजके लिये सजाहुआ हाथी खड़ा था "।

युवराजके स्टेशन पर आते ही जो सेना युवराजको आदर सम्मानके साथ लेनेके लिये खड़ी हुई थी उसने मान्य दिखाकर तोपध्वनि की। इसके पीछे युवराज स्टेशनसे चलकर सजेहुए घोड़ोंकी गाडी पर सवारहो शिवपोल गेट तक गये। उस समय अंग्रेजी अश्वारोही दल उनके पीछे २ चला और कितनी ही घुड़सवारी सेना उनके आगे २ चली। मार्गमें जिमीदार सरदार, और जागीरदारोंने देशीय रीतिके अनुसार युवराजका आदर सम्मान किया। युवराज शिवपोल गेटमें जाकर महाराजके साथ उस सुन्दर सजेहुए हाथी पर बैठे। युवराजके प्रत्येक सेवक और कर्मचारियोंने हाथीपर चढ़े हुए युवराजके पीछे २ गमन किया। अंग्रेज दाहिनी ओरको खड़े हुए, देशी वॉई ओरको खडे हुए इसके पीछे वीचमें हाथी चला। युवराजके शिवपोल गेटसे चलते ही फिर तोपोंकी ध्वनि हुई। मार्गमें जयपुरके प्रधान २ श्रेणीके ब्राह्मणोंने घंटा और शंख वजाकर युवराजकी आरती की। युवराजके आगे २ सेना, असंख्य पैदल असंख्य पताकाधारी, आसाधारी, और वल्लम लिये हुए जारहे थे, अगणित देशीय क्रीड़ा करनेवाले आनंदके मारे नृत्य करते आगे २ चले। यह दृश्य युवराजकी समान प्रत्येक दर्शकको मोहित करता था। युवराज भारतवर्षमें आकर आर्यरीतिके

अनुसार इस प्रकारके भावसे और कहीं भी सम्मानित नहीं हुए थे। इस समय राजमार्गमें लाखों मनुष्योंकी आनंदध्वनिसे आकाश पूर्ण होगया था; इस प्रकारसे इस पवित्र आनन्द और सम्मानको युवराजने और कहीं भी नहीं देखा। जयपुरके महाराजने इस सम्मानसे युवराजको इतना मोहित किया था श्रीमती महारानी भी उस सम्मानके विषयको सुनकर बहुत ही आनन्दित हुई। शिवपोल गेटसे निम्नलिखित प्रकारसे यात्रा आरंभ हुई:-

अश्वारोही जमादार	तलवारकी क्रीड़ा करनेवाले नागे
एकदलदेशीय पदाति	महाराजके खवास
अश्वारोही नगर कोतवाल	महाराज रामसिंह और प्रिन्स आफवेल्स
बृहन् राजपताकाधारी दो हाथी	हाथीपर चढ़े ढालधारी दो सामन्त
एक दल प्रासादरक्षक सैन्य	अश्वारोही खास चौकीके दो कर्मचारी
ऊंटोपर चढ़े गोलन्दाज दल	चार श्रेणियोंमें विभक्त हस्त्यारोही
राजपताकाधारी घुड़सवार	युवराजके सहचर अंग्रेजी कर्मचारी
अश्वारोही नगाड़ेवाले	देशीय सामन्त
अश्वारोही	
ताजीमी सरदारोंके पुत्रगण	अंग्रेजी सैन्यदल
खास चौकीके कर्मचारीगण	हाथीपर चढ़े वाद्यकगण
राजकर्मचारीगण	अश्वारोही नायब कोतवाल
बाजोंका दल	
महाराजके अश्वारोही नगाड़ावाद्यकदल	
राजपताकाधारीगण।	
बर्छाधारीदल।	
हलकारे।	
आसा सोटा आदि राजचिह्न धारीगण	

युवराजके कृष्णपोल गेटके पार होते ही समस्त सेना और अनुचर अंग्रेजी रेसिडेण्टीकी ओरको चले। युवराज भी उस समय महाराजके साथ सजे हुए हाथीपर चढ़े हुए रेसिडेण्टीकी ओरको चले। युवराजके वहाँ पहुँचते ही महाराजकी पैदल सेनाने सम्मान दिखाया और तोप ध्वनि की गई। युवराजको रेसिडेण्टीमें पहुँचाकर महाराज अपने स्थानको लौट आये, और कुछ कालके पीछे युवराजके साथ साक्षात् करनेके लिये गये। इस सम्मानके समयमें जयपुरकी समस्त सेना राजमार्गमें खड़ी हुई थी। सब आठसौ सजे हुए हाथियोंपर युवराजके सहचर और आमेरके सामन्त सवार थे अन्यान्य और भी बहुतसे हाथी थे।

युवराजके आनेके समय इस समय पोलिटिकल एजण्ट बेनन साहबने बहुतसा धन खर्च करके स्थानको सजाया था। बेनन साहबने युवराजके रहनेके स्थानको

भलीभाँतिसे सजाया था। प्रिन्स लुइस, व्याटनवर्ग, लार्ड साफिल्ड, और लार्डक्यारिटनने युवराजके साथमे ही रहना स्वीकार किया.और इनके अन्यान्य सेवक और और स्थानोपर चले गये, युवराजकी भक्ति दिखाने तथा मित्रता बढ़ाकर अपने सामने समस्त विषयो की खोज करनेके लिये महाराज रेसिडेण्टके निकट कलसे एक सामान्य स्थानपर रहे थे, इस लिये मृत लार्डमेओ भी इनके ऊपर अत्यन्त संतुष्ट हुए थे। और इसी कारणसे इस समय युवराजने महा सतुष्ट होकर महाराज रामसिंहकी गणना अपने प्रिय-बंधुओमे की थी, ४ फर्वरीको एक भोजनके अतिरिक्त और कोई प्रकाश करने योग्य घटना नहीं हुई "।

" कल प्रभात होते ही समस्त नगरमे यह समाचार फैल गया कि युवराज शिकार खेलनेको जायँगे। इस लिये जो उनको देखनेके लिये महलके संमुख खड़े हुए थे, वह लोग निराश होकर अपने स्थानको लौट आये। युवराज प्रातःकाल ही भोजन करके लार्ड आइलेसफोर्ड, लार्ड क्यारिटन, लार्ड आलफ्रेड, पेजेट, मेजर, ब्रेडफोर्ड जोधपुरके राजा प्रतापसिंह और किशोरसिंह नाम दोनो भ्राता महाराज रामसिंहके साथ शिकार खेलनेको गये, सभी मिजिकाबाग नामक स्थानपर गये, वहाँ जाकर भोजन किया। भोजन करनेके उपरान्त सभी वनमे गये। नगरसे छः मील दूरीपर झालाना नामक वनमे शिकार खेलना प्रारंभ हुआ। युवराज किशोरसिंह और अन्य एक सहचरके साथ ऊँचे स्थानपर घोड़ेपर चढ़कर गये, और महाराज मेजर ब्रेडफोर्ड, प्रतापसिंह और शिकारियोके साथ नीचेसे व्याघ्रको भगाने लगे। कुछ ही समयके उपरान्त एक बड़ी लम्बी चौड़ी आकरवाली व्याघ्रीने आकर दर्शन दिया। वह अपने भागनेका उद्योग करही रही थी कि महाराज और प्रतापसिंहने उसपर चोटकी। कुछ कालके पीछे वह शेरनी युवराजसे ४० हाथ दूर रहगई कि, युवराजने उसपर गोली चलाई। वह गोली उसके बाँये कंधेमे लगी गोली खाकर शेरनी जैसे ही भागनेको हुई कि वैसे ही युवराजने फिर एक गोली मारी, वह गोली उसकी पूँछमे लगी। गोली लगते ही शेरनी शान्त होगई, और युवराजकी तीसरी गोली खानेसे पहिले ही अबकी बार वह शेरनी दौड़कर छिप गई। चोट लगनेके कारण वह अधिक दूरतक न जासकी, एक पत्थरके ऊपर जाकर बैठगई प्रतापसिहने उसको ढूढ़ते २ युवराजको आकर समाचार दिया, युवराजने वहाँ जाकर कहा, यह शेरनी मरगई है, परन्तु प्रतापसिंहने कहा कि अभी मरी नहीं है, यह सुनकर युवराजने फिर एक गोली मारी, वह गोली भी खाली गई, युवराजने फिर और एक गोली मारी, तब व्याघ्रीने इस शेष आघातसे प्राण छोड़े। इसके पीछे प्रतापसिंह और युवराजने हाथीपरसे उतर कर व्याघ्रीके पास जाकर देखा, कि अब इसका जीवन नहीं रहा है, अंतमें व्याघ्रीको हाथी पर लाद कर रेसिडेण्टीको लेजानेकी आज्ञा दी। युवराजने भारतवर्षमे आकर यह प्रथम ही व्याघ्रीका शिकार किया था। इससे वह अत्यन्त ही प्रसन्न हुए थे। यह शेरनी देखनेमे अत्यन्त बड़ी थी। युवराजके रेसिडेण्टीमे आते ही महाराज रामसिंह समस्त परिषदोके साथ एकत्र

खड़े हुए, और शेरनीको उनके चरणोके नीचे रक्खा। इसके उपरान्त एक फोटो ग्राफरने फोटो ली "।

"युवराज कल पाँच फर्वरीको व्याघ्रोंका शिकार करके रेसिडेण्टके साथ जयपुरमें आये। मारे आनंदके जयपुर नगर प्रफुल्लित होगया, चारोओर ऊँचे २ पर्वतोंकी शोभा और भी अधिक बढ़ रही थी। राजप्रासाद और राजमार्ग अत्यन्त रमणीक होरहा था। जयपुर नगर देखनेमें चित्रपटकी समान था, इस पर लाखों दीपकोंके प्रज्वलित होनेसे उसकी और भी शोभा बढ़ गई थी, इसका अनुमान सरलतासे होसकता है। रेसिडेण्टीसे राजमहल ३ मील था। संपूर्ण मार्गोमे पताका लगी हुई थी, प्रकाशमान दीपकोसे बाज़ारकी शोभा और भी अधिक बढ़ गई थी, वन, नगर, बड़े २ आवास और राज-कार्यालयके प्रकाशमान होनेसे सभीके नेत्र मोहित होगये थे। युवराज इस परम प्रभामय दृश्यको देखकर अत्यन्त ही संतुष्ट हुए और महाराजको आनंद प्रकाश करके दिखाया। उस समय भारतवर्षमें वास्तवमें अन्यान्य देशीय राजाओंके राज्यकी अपेक्षा जयपुरका प्रकाश अत्यन्त ही चमत्कृत हुआ था, महाराजने रुपया खर्च करनेमे किसी प्रकारकी कसर नहीं की थी। दीपकोका प्रकाश भी उसी प्रकार मनोगत हुआ। महाराजकी इच्छा थी कि युवराज जबतक यहाँ रहै तबतक गैसकी रोशनी हो, परन्तु रेल और कम्पनीके दोषसे गैसका समान इकट्ठा न होसका, महाराज इस मनोरथके पूर्ण न होनेसे अत्यन्त दुःखित हुए थे। हमारा ऐसा अनुमान होता है कि एक महीनेमे जयपुरमें गैसकी रोशनी होसकती थी "।

"कल रात्रिके सात बजेके समय दीवान आम नामक बड़े सभागृहमें एक दरबार हुआ, यह गृह अत्यन्त साफ और सुन्दर २ वस्तुओसे सजा हुआ था। इसकी सुन्दरताको देखकर दर्शकोंका मन मोहित होता था। इस घरमे १२ सौ कुरसियां सजाई गई थी। युवराज और महाराजके बैठनेके लिये दो रत्नजड़ित आसन उनके बीचमें विराजमान थे। सन्ध्या होनेसे कुछ पहिले युवराज सभागृहमें आये। उस समय जयपुरके समस्त सामन्त जागीरदार, और प्रधान २ राजकर्मचारियोने वहाँ आसन ग्रहण किए। उस दरबारमे कितने ही सम्भ्रान्त अंग्रेज और देशीय मनुष्योने युवराजको अपना परिचय देनेके उपरान्त पीछे जोधपुरके महाराजके दोनो भ्राता महाराजा प्रतापसिंह और महाराजा किशोरसिंह इन दोनोको युवराजने भारतभ्रमणके स्मारकका पदक पुरस्कारमे दिया। जयपुरके प्रधान २ सामन्तोंने युवराजको नजरमे कितने ही रुपये दिये, परन्तु युवराजने उनको स्पर्श करके सबको लौटा दिये। दरबार समाप्त होजानेके पीछे जयपुरके महाराजने जयपुरके कितने ही शिल्प द्रव्य उपहारमे दिये। युवराजने उन समस्त द्रव्योको देखकर अत्यन्त संतोष प्रकाश किया। इसके पीछे युवराज और एक सौ सम्भ्रान्त अंग्रेज राजभोजमे विराजमान हुए, भोजन समाप्त होनेके पीछे युवराज अन्य कमरेमें गये। महाराज रामसिंहने उस कमरेमे जाकर हिन्दुस्तानी भाषामें महरानी विक्टोरियाके प्रति युवराजके प्रति और अंग्रेज गवर्नमेण्टके

प्रति भक्ति आनुरक्ति और सम्मान प्रकाशक एक वक्तृता दी। अंग्रेजी भाषाका अनुवाद और छपा हुआ पत्र अंग्रेजोंके हाथमें दिया गया, वक्तृताके समाप्त होजाने पर महारानी विक्टोरियाके स्वास्थ्यके निमित्त और युवराजके प्रस्तावसे महाराज रामसिंहके स्वास्थ्यके उद्देशसे सुरा पीगई, इसके पीछे महाराजने युवराजको उपहारमे बहुतसे द्रव्य दिये। बडी कीमती एक सुन्दर तलवार, आसे, बड़ी २ छुरी अतरदान इत्यादि बहुमूल्य द्रव्य दिखाकर युवराजका विशेप सम्मान किया, यह देखकर युवराजने अत्यत आनंद प्रकाश किया। महाराजने १४ हजार रुपयेके मूल्यका एक अतरदान भी उपहारमे दिया था, यह देखनेमे अत्यंत सुन्दर था"।

"इसके पीछे युवराज, महाराजके साथ चंद्रमहल नामक नृत्यवाटिकामें देशीय नॉचनेवालोका नृत्य देखनेके लिये गये। नॉचनेवाले बेशकीमती पोशाकें पहिरे हुए सुन्दर छविसे सभागृहको प्रकाशमान कर रहे थे। युवराज इस नृत्यको देखकर अत्यंत सतुष्ट हुए। अधिक क्या कहैं युवराज विश्रामगृहमे गये। वहाँ महाराजके साथ अनेक प्रकारकी वातचीत होनेके पीछे चुरट और अपने नामका खुदा हुआ एक दिवासलाईका वक्स महाराजको उपहारमे दिया। रात्रिमें अग्निक्रीडा भी बड़ी धूमधामके साथ कीगई थी। लदनकी ब्रुक कम्पनीने १० हजार रुपये लेकर आतिशबाजी तयार की थी। इसको देखकर सभी दर्शकोने अत्यंत आनदित हो जयध्वनि की। युवराज कोई दो पहर रात्रिके वीतनेपर रेसिडेण्टीमे लौट आये। कल जिस प्रकारसे जयपुर प्रकाश मान हुआ था, इस प्रकारसे इसकी शोभा और कभी नही हुई थी"।

"कल पॉच फर्वरी रविवारको प्रकाश करने योग्य कोई उत्सव नहीं हुआ। युवराज भोजन करनेके उपरान्त जयपुरका प्राचीन नगर आमेर देखनेके लिये गये। वहॉके प्राचीन कीर्तिस्तंभ और परम रमणीय दृश्यको देखकर युवराजने संतोप प्रकाश किया। आमेरको देखकर आगमनके समय युवराजने "एडवर्ड हाल" नामक अपने नामके असाधारण स्थानकी दीवारमे अपने हाथसे पापाण स्थापन किया। युवराजने जयपुर भ्रमणके स्मरणके निमित्त महाराज रामसिंहने वहुतसा धन खर्च करके यह स्थान वनाया था। कल दिनको और कोई घटना नही हुई। युवराज आज प्रभात होते ही जयपुरको छोड़ कर आगरेको चले गये। विदा होनेके समय राजमार्गमे अत्यन्त मनोहर दृश्य हुए थे, युवराजने यहाके शिकारियोंको सौ रुपये पुरस्कारमे दिये थे। महाराजने युवराजको जो द्रव्य उपहारमे दिये थे, उसके अतिरिक्त युवराजको एक अत्यन्त मनोहर अश्वयान उपहारमे दिया था, युवराज जयपुरके महाराजका आतिथ्य और अभ्यर्थना और उत्सवसे अत्यन्त ही प्रसन्न होगये थे। भारतवर्षके अन्यान्य राजाओकी अपेक्षा महाराज युवराजके विशेप प्रीतिपात्र हुए थे"।

यद्यपि भारतके भावी सम्राट् एडवर्ड प्रिन्स आफवेल्स वहादुरने भारतके अनेक देशीय राजाओंके राज्यमे सम्मान प्राप्त किया था, और उन-देशीय राजाओने

बहुतसा धन खर्च करके अनेक उत्सवों द्वारा उनका सम्मान बढ़ाया था, परन्तु पाठकगण उपरोक्त वृत्तान्तको पढ़कर सरलतासे समझ जाँयगे कि जयपुरपति महाराज रामसिंहने केवल इस प्रकारसे बहुतसा रुपया खर्च करके अनेक अनुष्ठानोंके द्वारा ही युवराजके मनको हरण नहीं किया था, वरन इन्होंने यथार्थ प्रीति, नम्रता और विनयके साथ पवित्र रुचिसे प्रिन्स आफवेल्सको अपना मित्र बना लिया था। जिन सम्पूर्ण श्रेष्ठ गुणोंसे शिक्षित अंग्रेज़ स्त्री पुरुषमात्रके हृदय पर वह अधिकार करनेको समर्थ हुए थे, उन्हीं समस्त गुणोंसे उन्होंने भावीसम्राट्को मोहित किया। शिक्षित अंग्रेज स्त्री पुरुषोंके साथ मित्रताके सूत्रमें बँधनेके लिये अत्यन्त अभिलाषी थे। कर्नल म्यालिसनने अपने ग्रंथमें लिखा है कि "महाराज रामसिंह अंग्रेजोंके साथ स्त्री पुरुषोंकी मित्रताका होना अत्यन्त श्रेष्ठ मानते थे।" महाराजके अंग्रेज़ मात्रही अत्यन्त भक्त थे पाठक ऐसा अनुमान न करें। महाराज रामसिंह स्वयं ही एक बुद्धिमान मनुष्य थे, इस कारण शिक्षित मनुष्यमात्रके साथ वह स्वभावसे ही प्रीति स्थापन करना अपना कर्त्तव्य जानते थे, केवल अंग्रेज़ ही नहीं वरन संपूर्ण देशीय समाज भी उनकी प्रीतिपात्र थी।

सन् १८७७ ईसवीकी पहिली जनवरीके ग्रेटब्रिटेन और आयरलैण्ड की अधिराज्ञी महारानी विक्टोरियाने भारतवर्षमें राजराजेश्वरीकी उपाधि धारणकी। भारतवर्षकी प्राचीन राजधानी दिल्लीमें इसके उत्सवमें राजसूय समिति की गई। यहांपर भारतवर्षके प्रत्येक प्रान्तके राजाओंकी तरह आमेरके महाराज रामसिंह भी निमंत्रित होकर अपने परिषद् और अनुचरोंके साथ सेना सहित वहाँ गये, इनके पहुँचते ही बड़े सम्मानसे राजप्रतिनिधिने इनको ग्रहण किया। सन् १८७६ ईसवीके २६ दिसम्बरको महाराज रामसिंह बहादुर अंग्रेज राजप्रतिनिधि लार्डलिटन बहादुरके साथ साक्षात् करनेके लिये उनके स्थानपर गये। प्रधान मार्गपर सबसे पहिले अंग्रेजी अश्वारोही कर्मचारियोंने महाराजका विशेष सम्मानके साथ अभिवादन किया। इसके पीछे राजप्रतिनिधिके निवासस्थान पर पहुँचते ही उस स्थान पर खड़ी हुई अंग्रेजीसेनाने अस्त्र दिखाकर उनका सम्मान किया। सवारी परसे उतर कर राजप्रतिनिधि वैदेशिक सेक्रेटरी परनटन साहबने आगे जाकर आदरमानके साथ ग्रहण कर परम रमणीक चन्द्र किरणोंसे शोभित सजे हुए अभ्यर्थनाके स्थानमें राजप्रतिनिधि लार्डलिटनके पास महाराजको उपस्थित किया, राजप्रतिनिधिने आनंदितहो सिंहासनसे उतरकर कईएक पग आगे जा महाराजको बड़े आदरसे लेजाकर दहिनी ओरके रत्नसिंहासनपर बैठाला और पीछे स्वयं सिंहासनपर बैठे। इसके पीछे बहुत देरतक वार्ता होती रही, महाराज रामसिंहने अपने राज्यमें जो हितकारी कार्य किये थे, उन सबका उल्लेख किया। गवर्नमेण्टने रामसिंहकी भक्ति प्रीति और अनुरक्ति देखकर उनकी विशेष सहायता करनी स्वीकार की, और महाराजके गुणोंकी प्रशंसा करने लगे। इसके पीछे दो हाईलैण्डके सैनिकोंने एक राजसूर्य पताका लाकर राजप्रतिनिधिके सामने रक्खी। इस पताकाके एक ओर "विक्टोरिया केसरीहिन्द" और दूसरी ओर जयपुरके राज वंशका चिह्न अंकित था। पताकाके ऊपर एक ओर

महाराज रामसिहका नाम और दूसरी ओर "विक्टोरिया एम्प्रेस, १ जनवरी सन् १८७७" लिखा हुआ था। राजप्रतिनिधि महाराज रामसिंहका हाथ पकड़ कर सिंहासनसे उतरकर पताकाके सम्मुख गये, और महाराजसे बोले।

"महामान्या भारत राजराजेश्वरीके उपाधिधारणके स्मरणमे उनके उपहार स्वरूप आपके पारिवारिक चिह्नसे अंकित यह पताका महिमवरको दी जाती है"।

"महामान्याका विश्वास है कि इंगलैण्डके राजसिंहासनके साथ आपके संभ्रान्त राजवंशका जो विशेष घनिष्ट संवन्ध है, केवल यही नही वरन प्रधान राजक्षमता (अंग्रेज गवर्नमेण्ट) जो आपके वंशकी उन्नति स्थापित्व और प्रबलताकी इच्छा करती है, इसको आप भुलाकर कभी इस पताकाको त्यागन करना उचित न समझेगे"।

राजप्रतिनिधिने महाराज रामसिंहके हाथमे उस पताकाको दिया, महाराजने मस्तक झुकाकर सम्मान सहित उसे ग्रहण किया।

पताका देनेका कार्य समाप्त होगया, भारतके राजराजेश्वरीकी उपाधि धारणके स्मरणार्थ एक सोनेका पदक भी राजप्रतिनिधिने महाराजके गलेमे डाला, उस पदकके एक ओर भारतेश्वरीका आनन और नाम तथा १ जनवरी, सन १८७७ ईसवी यह खुदा हुआ था, और दूसरी ओर अग्रेजीभाषामे "एम्प्रेस आफइण्डिया" और हिन्दी उर्दू भाषामे "कैसरहिन्द" खुदा हुआ था। राजप्रतिनिधिने उक्त पदक देनेके समय कहा.—

महारानी और भारतकी राजराजेश्वरीकी आज्ञानुसार मैने आज इस पदकसे आपको भूषित किया। यह पदक जिस शुभ दिनमे अंकित हुआ है उसके स्मरणके लिये आप इसको चिरकालतक धारण करैं। और आपके वशमे यह पुरुषानुक्रमिक अलंकाररूपसे रक्खा जाय"।

पताका और पदक देनेके पीछे राजप्रतिनिधिने महाराजको सूचित किया "इसके पीछे आपके सम्मान सूचक इक्कीस तोपोकी सलामी हुआ करेगी।" जयपुरके महाराजकी अग्रेज गवर्नमेण्टके साथ सधि करके सम्मानसूचक सत्रह तोपोकी सलामी हुआ करती थी। महाराज रामसिहने अपने न्याय सहित राज्यशासनके गुणसे पहिले ही उन्नीस तोपोकी सलामी प्राप्त करली थी, इस समय इक्कीस तोपैं नियत हुई। महाराज रामसिह राजप्रतिनिधिके द्वारा सम्मानित होकर उस दिन उस स्थानको त्याग कर आनदित हो अपने स्थानको लौट आये, उनके आते और जाते समय नियमितरूपसे तोपोंकी सलामी हुई।

दूसरे दिन (२१ दिसवरको) अपरान्हके समयमे राजप्रतिनिधि लार्ड लिटन बहादुरने महाराजके स्थान पर जाकर उनसे साक्षात किया। महाराज रामसिंहने बड़े आदर मानके साथ राजप्रतिनिधिको ग्रहण करके अपने श्रेष्ट गुणोका विशेष परिचय दिया।

सन् १८७७ ईसवीकी पहिली जनवरीको मध्याह्नके समय उस महान् विक्टोरिया समितिमें लार्ड लिटन द्वारा वृटिश रानीसे "भारतकी राजराजेश्वरी" की उपाधि धारण

करनेकी सूचना हुई। राजपूतानेके राजाओंके प्रतिनिधिस्वरूपसे "उदयपुर और जयपुरके दो अधिपतियोंने उठकर कहा कि, महामान्याके भारतमें राजराजेश्वरीकी उपाधि धारण करने पर राजपूतानेके सम्मिलित राजाओंने राजभक्तिके साथ जो अभिवादन किया है; यह समाचार महारानीको प्रगट करनेके लिये शीघ्रतासे भेजा जाय, राजाओंकी यही प्रार्थना है"।

उक्त उपाधिके उपलक्षमे भारतकी राजराजेश्वरीकी ओरसे "कौन्सिलर आफदी एम्प्रेस" नामक एक श्रेणीकी नवीन उपाधि नियत हुई। उस उपाधिकी सृष्टिका कारण राजप्रतिनिधिकी निम्नलिखित उक्तिसे प्रकाशित होता है,–"सम्मिलित राज्यकी महामान्यारानी भारतकी राजराजेश्वरीने समय २ पर प्रयोजनके अनुसार आवश्यकीय कार्य्योंमें भारतवर्षके राजा और सरदारोंकी शुभमंत्रणा ग्रहण करके और उससे प्रधानराज अंग्रेजी गवर्नमेण्टके साथ उनका सम्मानसूचक सम्मिलनसाधन, और उस उपायसे साम्राज्यके साधारण मंगलकी सुविधा स्थापनके लिये भारतवर्षके प्रधानमंत्रियों द्वारा हमै निम्नलिखित राजा और गवर्नमेण्टके उपरितन कर्मचारियोको कौन्सिलर-आफदी एम्प्रेस, (भारतकी राजराजेश्वरीके मंत्री) की उपाधि देनेकी सामर्थ्य दी है। और इससे हम उनके नाम और उनके पक्षसे उस महा सम्मानित उपाधिको देते है"। समस्त भारतवर्षमे जो आठ देशीय राजा उक्त महा सम्मानसूचक उपाधिको प्राप्त हुए है, इनमे जयपुरपति महाराज रामसिह भी एक है। इस प्रकारसे महाराजा रामसिह विक्टोरिया राजसमितिमे सम्मान पाकर ठीक समय पर अपनी राजधानीको लौट आये।

अत्यन्त दुःखका विषय है कि बहुत थोड़े समयके पीछे ही अर्थात् सन् १८८० ईसवीके सितम्बर महीनेमे सर्वमनरंजन महाराज रामसिंह बहादुरने प्राण त्याग किये। महाराज रामसिहकी जीवनीके सम्बन्धमे हमै अधिक कहनेकी आवश्यकता नही उपसंहारमे केवल इतना ही कह सकते है कि समस्त देशी राजाओमे महाराज रामसिह सबसे अधिक बुद्धिमान् थे, इनकी प्रकृति उदार थी, यह उन्नतिप्रिय, कुसंस्कारहीन और प्रजारंजन पुरुप थे। जयपुरराज्यकी जिस प्रकारसे अवनति होगई थी, इनके राज्यमे जयपुरने उसी प्रकारसे सबसे ऊँचे पदपर अधिकार प्राप्त किया था। इनके राज्यमें अत्याचार अशान्ति अराजकता इत्यादि सभी उपद्रव शांत होगये थे, जैसे २ प्रजाके हितकारी कार्य महाराज रामसिंहने किये थे पांच देशीय प्रधान २ राज्योमे आजतक वह कार्य नही हुए। उन सम्पूर्ण हितकारी कार्योंके अतिरिक्त देशीय राजा आजतक भी इस बातको स्वीकार नही करते कि बुद्धिमान् महाराज रामसिह पवित्र रुचि और सभ्यताके सम्मानकी रक्षाके लिये उन २ कार्योंको कर गये है। उन संपूर्ण कार्योसे राज्यमें जो भावी महान् मंगलका बीज बोया गया; और कहीं इतिहासमे अंकुरित और पल्लवित होकर मोहन सुखमाका अमृतमय फल उत्पन्न करते है, इसका अनुमान सरलतासे होसकता है। महाराज रामसिहजी और भी जीवित रहते तो उनसे जयपुरके राज्यकी और भी अधिक श्रीवृद्धि और उन्नति होती, इसमें किंचित् भी संदेह

नहीं। जयपुरराज्यका इतिहास महाराज रामसिंहके नामसे चिरकालतक हीरेके अक्षरोंसे ग्रथित रहैगा, जयपुरके प्रजापुंजके वंशधर एकमात्र महाराज रामसिंहको अपना नवजीवन और नवीन वलप्राप्तिका मूल, जयपुरराज्यका यथार्थ उद्धारकर्त्ता स्वीकार करते हैं-केवल राजस्थापनमे ही नही वरन समस्त भारतवर्षके प्रत्येक देशीय राजसिंहासनोंपर महाराज रामसिंहकी समान राजा विराजमान होवें तो भारतवर्षके दुर्दिन शीघ्र ही दूर हो जाते, इसको सभी मानलेंगे, राजपूत राजकुलके मार्तण्डस्वरूप महाराज रामसिंहकी अकालमृत्युसे जयपुरकी समस्त प्रजा गभीर शोकसागरमे निमग्न होकर हाहाकार करने लगी, उसके हाहाकारसे आकाश परिपूर्ण होगया, इनके वियोगसे वृटिश गवर्नमेण्टने भी तथा स्वजातीय और विजातीय मित्रमंडलीने भी महान् शोक प्रकाश किया था। सर्वगुणमडित महाराज रामसिंहके शोक और वियोगको ऐसा कौन मनुष्य है जो भूल सकता हो ?।

सातवां अध्याय ७.

महाराज माधोसिंहका आमेरके सिहासन पर अभिषिक्त होना-उनकी अज्ञान अवस्थामें वृटिश रेसिडेण्टका जयपुरके शासनभारको ग्रहण करना-शासन समाजका नियोग-कृष्णगढ़ और द्रागादडाकी दो राजकुमारियोंके साथ महाराजका विवाह-महाराज माधोसिंहका बम्बई और कलकत्तेको जाना-महाराजका जयपुरमें शिल्पशालाकी प्रतिष्ठा करना-महाराजका अभिषेक-वृटिश गवर्नमेण्टका महाराजके हाथमें राज्यभारअर्पण-महाराजका जयपुरमें शिल्प और प्रदर्शनीका अनुष्ठान-प्रदर्शनीका उद्देश-प्रदर्शनीकी प्रतिष्ठा-महाराजका अभिषेक-प्रदर्शनीकी सफलता-जयपुरमें प्रकृष्ट शासनकी रीति-मंत्रीसमाज वा कौन्सिल-कौन्सिलकी सामर्थ्य-राजदरबारमें नानापदों पर सामन्तों का नियोग-कौन्सिलके सभ्यगणोंके नाम-कौन्सिलके सभ्यगणोंका नियमित वेतन दानकी व्यवस्था का चलाना-सामन्तोंके साथ सम्बन्ध-शेखावाटीके सामन्तोका असंतोष-असंतोषका कारण-असतोष निवारण-वृटिश गवर्नमेण्टके साथ महाराजका अकृतिम सद्भाव-प्रतिवासी राजाओंके साथ महाराजका मैत्रीभाव-महाराज माधोसिंहके सम्बन्धमें वृटिश पोलिटिकल एजण्टका मन्तव्य-उपसंहार—

महाराज रामसिंहने पुत्रहीन अवस्थामें प्राण त्याग किये, परन्तु मृत्युके शय्यापर शयन करते समय गवर्नमेण्टने उनको दत्तकपुत्रके लेनेकी सामर्थ्य दी, उसी सामर्थ्यसे उन्होंने इकट्ठे हुए सामन्त और कर्मचारियोंके सम्मुख अपने कुटुम्बी ईशरदाके युवक सामन्त ठाकुर कायमसिंहको अपने उत्तराधिकारी पदपर नियुक्त किया। महाराज रामसिंहकी मृत्युके पीछे उनकी इच्छासे उनकी रानी और सामन्तोंने उक्त सामन्तको नियुक्त करनेकी सम्मति दी, पोलिटिकल एजण्टके प्रस्तावसे गवर्नमेण्टने भी अपनी पूर्ण सम्मति दी। ठाकुर कायमसिंहने चिर प्रचलित रीतिके अनुसार अपने पहिले नामको बदलकर माधोसिंह नाम रक्खा। और सन् १८८० ईसवीके सितम्बर महीनेमें वह आमेरके

सिंहासन पर विराजमान होकर राज्य करने लगे । महाराज माधोसिंह जिस समय आमेरके राजछत्रके नीचे विराजमान हुए उस समय उनकी अवस्था उन्नीस वर्षकी थी। जयपुरके रेसिडेण्ट मिस्टर जे०पी० स्टेटन सन् १८८३ ईसवीकी पहिली मईको, जयपुरके सन् १८८२-८३ईसवीके शासनके वृत्तान्तमें लिखते हैं "कि जिस समय महाराज राज्यपर नियुक्त नहीं थे उस समय इन्होंने कोई उपयुक्त शिक्षा प्राप्त नहीं की थी, इसी कारणसे दो वर्षतक जयपुर राज्य रेसिडेण्टकी सम्मतिसे एक कौन्सिल वा मंत्रीसमाजके द्वारा शासित हुआ, और युवक महाराज क्रम २ से शासनकी शिक्षा पाने लगे *। महाराज माधोसिंहने अप्राप्त व्यवहार अवस्थामें अपने हाथमें राज्यभार लिया था गवर्नमेण्टने अपनी अवलम्बित नीतिके मतसे महाराजके हाथमें प्रथम शासनकी सामर्थ्य न दी, जयपुरराज्य बहुत दिनोंसे जिस मंत्री समाजके द्वारा शासित होता आया था रेसिडेण्टने शीघ्रतासे उसी समाजके हाथमें शासनका भार अर्पण किया। वास्तवमें महाराज माधोसिंह पहिले एक साधारण प्रदेशके सामन्त थे। यह किसी दिन आमेरके सिंहासनपर विराजमान होंगे ऐसा किसीको भी अनुमान नहीं था,इस कारण उन्हें राज्यशासनके उपयुक्त कोई विशेष शिक्षा नहीं दी गई थी।यद्यपि वह उन्नीस वर्षकी अवस्थामें राज्यपर स्थित हुए परन्तु उस समय उनके पक्षमें पूर्णशासनकी सामर्थ्यका चलाना असंभव था, जबतक महाराज माधोसिंह अज्ञान अवस्थामें रहे तबतक रेसिडेण्टकी सम्मतिसे मंत्रीसमाज राज्यशासन करता था; और महाराजने इस सुअवसरमें राज्यशासनकी प्रयोजनीय शिक्षा प्राप्त करली ।

महाराज माधोसिंह बहादुरने आमेरके राज्यपद पर प्रतिष्ठित होनेके पीछे कृष्णगढ़ और काठियावाड़के अन्तर्गत ध्रांगध्राके राजाकी दो कन्याओंके साथ पाणिग्रहण किया, इस विवाहमें महाराजके २२७४५७रुपये खर्च हुए,यद्यपि बहु विवाहसे विषमय फल चिरकाल तक उत्पन्न होताहै, परन्तु अत्यन्त ही दुःखका विषय है कि देशीय राजा सुशिक्षा प्राप्त करके भी उस अनिष्ट मूलक रीतिको आज तक पूर्ण सम्मानसे रक्षा करते आये हैं। भारतवर्षके देशीय राजा स्मरणातीत कालसे बहु विवाहके अभिलाषी हैं, उन्होंने इस बहु विवाहके विषमयफलको प्रत्यक्ष करनेमें किसी प्रकारसे अनादर प्रकाश नहीं किया था, जबतक देशीय राजा भलीभाँतिसे ऊँची शिक्षाको न पासकें. तब तक बीचमें बहु विवाहसे शान्त होजाँयगे, हम ऐसी आशा नहीं कर सकते ।

महाराज माधोसिंह सन् १८८१ इसवीमें बम्बई कलकत्ते और गयाजीको गये। अपने राज्यमें लौटनेके पीछे उन्होंने जयपुर राज्यमें एक उन्नतिका परिचायक कार्य किया सन् १८८१ इसवी, २३ अगस्तको जयपुरमें एक इकानामिक और इण्डिष्ट्रियल मिउजियम नामक शिल्पकी द्रव्य शाला प्रतिष्ठित की महाराज और बहुतसे प्रतिष्ठित मनुष्योंके सामने कर्नल वाल्टरने इसकी प्रतिष्ठा की।इसके देखनेके लिये बहुतसे दर्शक गये थे।डाक्टर

---

*Report of the Political Administrations of the Rajputana states for 1882-188Z.

हिंडली इसके आवैतनिक सम्पादकथे।महाराज माधोसिहने इस हितकारी कार्यमे वहुतसा रुपया खर्च किया, इस मिउजियमकी प्रतिष्ठासे विशेष उपकार हुआ था।

सन् १८८२ इसवीके सितंबर महीनेमे वर्तमान महाराज माधोसिह वहादुरने वाईस वर्षकी अवस्थामे पदार्पण किया,इस कारण राजपूत रीतिके अनुसार इस वर्षमे ही यह सम्पूर्ण राज काजको जानगये, महाराज इतने दिनो तक राजकार्यमे अशिक्षित रहे इसीसे गवर्नमेण्टने उनके हाथमे राज्यके पूर्ण शासनका भार नही दिया था, परन्तु इस समय वह सर्व गुण सम्पन्न होगये, तव गवर्नमेण्टने शीघ्र ही वड़ी धूमधामके साथ सितम्वर मासकी ६ तारीखको महाराज माधोसिंहको आमेरके राज्यपर अभिषिक्त किया, और उनके हाथमे समस्त राज्यका भार अर्पण किया"।

इस अभिषेकके उत्सवके समयमें कितनी धूमधाम हुई थी इसका अनुमान हमारे पाठक सरलतासे करसैकेगे, यद्यपि महाराज माधोसिह पूर्ण शासनके भारको प्राप्त होगये थे, परन्तु राज्यके प्रधान २ वड़े कार्योंमे अव भी पोलिटिकल एजण्टकी सम्मति लेकर कार्यकरते थे। महाराजकी अवस्था अव भी वहुत थोड़ी है, अव कई वर्षके पीछे सर्वगुणसम्पन्न होगये हैं, और इसमे भी कुछ संदेह नहीं कि इस समय वह समस्त राजकार्योंमे निपुण होगये हैं। जयपुरके रेसिडेण्ट मिस्टर जे० पी० स्टेटन जयपुरके सन् ८२।८३ ईस्वीके शासन विवरणमे लिखते है कि "गत ६ सितवरको महाराज माधोसिह इक्कीस वर्षकी अवस्थामे राज्यकी सपूर्ण शासनसामर्थ्यको प्राप्त हुए थे, परन्तु उस समय आवश्यकता होनेपर यह व्यवस्था ठहरी कि जवतक महाराज संपूर्ण अभिज्ञता प्राप्त न करले तवतक वह सव विषयोमे रेसिडेण्टके साथ परामर्श करके राजकार्य करै। और उनके अप्राप्त व्यवहारके समय मंत्रीसमाजके द्वारा जिन कार्योंकी व्यवस्था नियत हुई है, उक्त रेसिडेण्टकी सम्मतिके अतिरिक्त वह उसके संवन्धमे कुछ भी अदलवदल नहीं करसँकेगे:-"।

राज्यके अनेक विषय और साधारण हितकारी अनुष्ठानके विषय जयपुरराज्यमे जो भारतवर्षके अन्यान्य देशीयराज्योको पीछे रखकर अग्रसर हुए है, सर्वसाधारण मनुष्य इसको मुक्तकंठसे स्वीकार करेंगे। वुद्धिमान् महाराज रामसिहने जिस प्रकारसे वहुतसा धन खर्च करके राज्यमे अनेक हितकारी और मगलदायक कार्य किये थे, अत्यन्त सतोषका विषय है कि नवीन युवक महाराज माधोसिह भी उसी प्रकार वहुतसा धन खर्च करके उन मंगलदायक कार्योंके करनेके लिये अग्रसर हुए। सन् १८८३ ईस्वीके जनवरी महीनेमे जयपुरमे एक अभूतपूर्व अनुष्ठान हुआ। ऐसा अनुष्ठान आजतक किसी देशी राज्यमे नही हुआ था। वह अनुष्ठान शिल्प प्रदर्शनीका स्थापन था। शिल्प प्रदर्शनीके द्वारा वाणिज्य शिल्प इत्यादिके जो उपकार होनेकी संभावना है, उसे शिक्षित मनुष्यमात्र स्वीकार करैगे।

---

* Report of the Political Administration of the Rajputana States for 1882-1383

"महाराज माधोसिंहने अपने राज्यमें उस विश्व विदित शिल्प और साधारण वाणिज्यकी उन्नतिके लिये कई लाख रुपये खर्च करके उस प्रदर्शनीकी प्रतिष्ठा की थी। प्रदर्शनीके उद्देशके सम्बन्धमें जयपुरके रेसिडेण्ट लिखते हैं कि प्रदर्शनीका यह उद्देश है कि राजपूताना और जो देश इससे लगे हुइ है उन सब देशोंमें शिल्पका प्रचार हो जाय"।

" इस राज्य (जयपुर) में और इसकी सीमामें स्थित देशोंमें कौन २ से द्रव्य उत्पन्न होते हैं, अथवा शिल्पियोके द्वारा बनाये जाते है, उनके सम्बन्धमे अभिज्ञता प्राप्त हो तथा उन सम्पूर्ण द्रव्योंको उत्पादन करनेवाले, निर्माण करनेवाले और क्रियताओंको एकत्र करके उसके सम्बन्धमे सर्व साधारणकी शिक्षाविधान और अभिज्ञता प्रदान ही इस प्रदर्शनीका उद्देश है "।

"जयपुरके इकानामिक और इण्डष्ट्रियल मिउज़ियममें जो जो द्रव्य संकलित हुए थे, इन सबके अतिरिक्त जिन २ का संग्रह नहीं किया था, इस प्रदर्शनीसे उन सबका संग्रह करना इसका उद्देश है "।

जयपुरके रेसीडेण्ट चिकित्सक डाक्टर हेण्डलीने सबसे पहिले इस शुभ प्रस्ताव को महाराजके निकट उपस्थित किया था। महदाशय महाराजने इस प्रस्तावको उत्तम जानकर शीघ्र ही इस कार्यको पूर्ण परिणत करनेकी आज्ञा दी, और इस प्रदर्शनीमें जितना रुपया लगा था वह सभी राजाके खजानेसे दिया गया। कई वर्ष हुए "अलवर्ट हाल " नामक प्रिन्स आफवेल्सके स्मरणके लिये जो वड़ा मनोहर स्थान बनाया गया था; उसी स्थानमें प्रदर्शनी होना निश्चय हुआ; जयपुरके एक जिक्यूटिव इंजीनियर मेजर जेकवने बहुत थोड़े समयमें उसके निर्माणका कार्य किया था, उन्होंने प्रदर्शनीको प्रतिष्ठाके योग्य कर दिया।

रेसीडेण्ट लिखते है, " कि जो प्रस्ताव किया गया उसक अनुसार सब द्रव्य इकट्ठे किये गये, क्रमानुसार दश सहस्र पदार्थोंका संग्रह किया गया। गवर्नर जनरलके राजपूतानेमें स्थित एजेण्ट कर्नल ब्राडफोर्ड और महामान्य महाराजके द्वारा सन्१८८३ईसवी की १ जनवरीको प्रदर्शनी खोली गई। और दूसरी मार्चको बंद हुई, उन दोनों महीनोमे ८५४ अंग्रेज और सब २३६९५४ दर्शक प्रदर्शनी देखनेके लिये गये थे, और बहुतसे रुपयोंकी चीज़े खरीदी भी गई थीं "।

"प्रदर्शनीके समस्त द्रव्योके गुणागुण और उत्कृष्टापकृष्टताकी परीक्षा और योग्यपात्रको पुरस्कार देनेके लिये बंबई, लाहौर कलकत्ता और इलाहावाद इत्यादि स्थानोसे मि०ग्रिफिथस् और मि०किपलि इत्यादि न्यायवेत्ता निरपेक्ष शिक्षित पुरुष जूरर अर्थात् परीक्षकस्वरूपसे आये थे। दोसौसे अधिक जनोंको पुरस्कार दिया गया। इस प्रदर्शनीमें जिस प्रकारसे महाराजने रुपया खर्च किया था उसी प्रकारसे वह पुरस्कार भी उनके द्वारा दियागया"।

राजपूतानेमें स्थित वृटिश एजण्टने इस प्रदर्शनीके सम्बन्धमें सन् १८८३ ईसवीकी २१ अगस्तको लिखा है "कि पहली जनवरीको मैं जयपुरमें गया, उस समय शिल्पकी

प्रदर्शनी भलीभाँतिसे खुली थी। इसको भलीभाँतिसे सफल करनेके लिये धनखर्च करने और परिश्रम करनेमें किसी प्रकारकी त्रुटि नहीं कीगई, प्रदर्शनीमें जो बहुतसे दर्शक आये थे, और जितनी वस्तुये बिकी थी ऐसी राजपूताने भरकी किसी प्रदर्शनीमें भी वस्तुओंकी बिक्री नहीं देखी गई, यही एक प्रकार अनुष्ठानकी उपकारिताका प्रत्यक्ष प्रमाण है।

पाठकमंडली! अंग्रेजी राजपुरुषोंके उक्त मन्तव्योंको भलीभाँतिसे जानगई होगी कि जयपुरकी इस प्रथम शिल्पप्रदर्शनीने किस प्रकारका शुभ फल उत्पन्न किया था। हम आशा करते हैं कि महाराज माधोसिंह बहादुरने राज्यभारको ग्रहण करके प्रथम इस शुभ अनुष्ठानमे अपना हस्ताक्षेप प्रारंभ किया था, उन्होंने जन्मभर इस प्रकारसे आग्रह, उत्साह, और धन खर्च करके इस प्रकारके बहुतसे हितकारी अनुष्ठानोंसे राज्यके और प्रजाके अनेक हितकारी कार्य किये।

यद्यपि महाराज माधोसिंह बहादुरको राज्यकी पूर्ण सामर्थ्य प्राप्त होगई थी, यदि वह विचारते तो अपने हाथमे समस्त राज्यभार लेकर पूर्वप्रचलित रीतिके अनुसार जयपुरमे फिर व्यक्तिगत यथेच्छाचारसे शासनकी रीतिको प्रचलित कर सकते थे; परन्तु अत्यन्त सतोषका विषय है कि गत कई वर्षोंमे जिस प्रकारके लक्षण प्रकाशित हुए थे उससे महाराज माधोसिंहने उस व्यक्तिगत यथेच्छाचारके शासनकी रीतिका अनुसरण न करके महाराज रामसिंहके द्वारा चलाई हुई शासन प्रणालीके पूर्ण सम्मानकी रक्षाकी। इसका अनुमान हम निर्संदेह कर सकते है, कि भारतवर्षके संपूर्ण देशीय राज्योंमे व्यक्तिगत यथेच्छाचारके शासनकी रीति प्रचलित है-केवल एकमात्र महाराज रामसिंह बहादुरने, प्रजा साधारणके कल्याणका विधान और राज्यकी उन्नतिसाधनके लिये मंत्रीसमाजकी सृष्टि करके उसके हाथमे प्रत्येक विभागके पूर्ण शासनका भार अर्पण किया था, इस रीतिसे जो सुशासन और न्याय विचार अधिकतासे सूचित होता है यह कहना बाहुल्यमात्र है, महाराज माधोसिंहने भी इस समय उस शासनरीतिका अवलम्बन करके अपनी पवित्र रुचि और प्रजानुरागिताका विशेष परिचय दिया।

जयपुरकी वर्तमानरीतिके संबन्धमें रेसिडेण्ट मिस्टर जे० पी० स्टेटन सन् १८८३ ईस्वीको १७ मईको लिखते हैं, कि अन्यान्य सामान्य राज्योकी अपेक्षा जयपुरकी शासनरीति अत्यन्त सुन्दररूपसे अनुष्ठित हुई है। यह कहा जासकता है, नरपतिकी इच्छासे अथवा किसी राजकर्मचारीके प्राबल्यसे यदि किसी विषयकी मीमांसा होनेकी संभावना न हो तो वर्तमान जयपुरकी शासनरीति अत्यन्त अल्पसमयमे उसे निर्धारित कर सकती है। और देशीयराजाओंमे जैसे एक जनके हाथमे शासनकी सामर्थ्य है, इस स्थान पर वैसा नहीं है।

"महाराजके अप्राप्त व्यवहार अवस्थामे स्वभावसे ही इस प्रकारके शासनकी व्यवस्था थी, और महाराजकी अल्प अवस्था तथा अनभिज्ञताके कारणसे यह रीति

"महाराज माधोसिंहने अपने राज्यमें उस विश्व विदित शिल्प और साधारण वाणिज्यकी उन्नतिके लिये कई लाख रुपये खर्च करके उस प्रदर्शनीकी प्रतिष्ठा की थी। प्रदर्शनीके उद्देशके सम्बन्धमें जयपुरके रेसिडेण्ट लिखते हैं कि प्रदर्शनीका यह उद्देश है कि राजपूताना और जो देश इससे लगे हुइ हैं उन सब देशोंमें शिल्पका प्रचार हो जाय"।

" इस राज्य (जयपुर) में और इसकी सीमामें स्थित देशोंमें कौन २ से द्रव्य उत्पन्न होते हैं, अथवा शिल्पियोंके द्वारा बनाये जाते हैं, उनके सम्बन्धमें अभिज्ञता प्राप्त हो तथा उन सम्पूर्ण द्रव्योंको उत्पादन करनेवाले, निर्माण करनेवाले और क्रियताओंको एकत्र करके उसके सम्बन्धमे सर्व साधारणकी शिक्षाविधान और अभिज्ञता प्रदान ही इस प्रदर्शनीका उद्देश है "।

"जयपुरके इकानामिक और इडणिट्रयल मिउजियममें जो जो द्रव्य संकलित हुए थे, इन सबके अतिरिक्त जिन २ का संग्रह नहीं किया था, इस प्रदर्शनीसे उन सबका संग्रह करना इसका उद्देश है "।

जयपुरके रेसीडेण्ट चिकित्सक डाक्टर हेण्डलीने सबसे पहिले इस शुभ प्रस्ताव को महाराजके निकट उपस्थित किया था। महदाशय महाराजने इस प्रस्तावको उत्तम जानकर शीघ्र ही इस कार्यको पूर्ण परिणत करनेकी आज्ञा दी, और इस प्रदर्शनीमें जितना रुपया लगा था वह सभी राजाके खजानेसे दिया गया। कई वर्ष हुए "अलबर्ट हाल " नामक प्रिन्स आफवेल्सके स्मरणके लिये जो बड़ा मनोहर स्थान बनाया गया था; उसी स्थानमें प्रदर्शनी होना निश्चय हुआ; जयपुरके एक जिक्यूटिव इंजोनियर मेजर जेकबने बहुत थोड़े समयमें उसके निर्माणका कार्य किया था, उन्होने प्रदर्शनीको प्रतिष्ठाके योग्य कर दिया।

रेसीडेण्ट लिखते हैं; " कि जो प्रस्ताव किया गया उसक अनुसार सब द्रव्य इकट्ठे किये गये, क्रमानुसार दश सहस्र पदार्थोका संग्रह किया गया। गवर्नर जनरलके राजपूतानेमें स्थित एजेण्ट कर्नल ब्राडफोर्ड और महामान्य महाराजके द्वारा सन् १८८३ईसवी की १ जनवरीको प्रदर्शनी खोली गई। और दूसरी मार्चको बंद हुई, उन दोनों महीनोमें ८५४ अंग्रेज और सब २३६९५४ दर्शक प्रदर्शनी देखनेके लिये गये थे, और बहुतसे रुपयोंकी चीज़े खरीदी भी गई थीं "।

"प्रदर्शनीके समस्त द्रव्योंके गुणागुण और उत्कृष्टापकृष्टताकी परीक्षा और योग्यपात्रको पुरस्कार देनेके लिये बंबई, लाहौर कलकत्ता और इलाहाबाद इत्यादि स्थानोंसे मि०ग्रिफिथस् और मि०किपलिं इत्यादि न्यायवेत्ता निरपेक्ष शिक्षित पुरुष जूरर अर्थात् परीक्षकस्वरूपसे आये थे। दोसौसे अधिक जनोंको पुरस्कार दिया गया। इस प्रदर्शनीमें जिस प्रकारसे महाराजने रुपया खर्च किया था उसी प्रकारसे वह पुरस्कार भी उनके द्वारा दियागया"।

राजपूतानेमें स्थित बृटिश एजण्टने इस प्रदर्शनीके सम्बन्धमें सन् १८८३ ईसवीकी २१ अगस्तको लिखा है "कि पहली जनवरीको मैं जयपुरमें गया, उस समय शिल्पकी

प्रदर्शनी भलीभाँतिसे खुली थी। इसको भलीभाँतिसे सफल करनेके लिये धनखर्च करने और परिश्रम करनेमे किसी प्रकारकी त्रुटि नहीं कीगई, प्रदर्शनीमें जो बहुतसे दर्शक आये थे, और जितनी वस्तुयें विकी थीं ऐसी राजपूताने भरकी किसी प्रदर्शनीमें भी वस्तुओकी विक्री नहीं देखी गई, यही एक प्रकार अनुष्ठानकी उपकारिताका प्रत्यक्ष प्रमाण है।

पाठकमंडली! अंग्रेजी राजपुरुषोंके उक्त मन्तव्योंको भलीभाँतिसे जानगई होगी कि जयपुरकी इस प्रथम शिल्पप्रदर्शनीने किस प्रकारका शुभ फल उत्पन्न किया था। हम आशा करते हैं कि महाराज माधोसिंह बहादुरने राज्यभारको ग्रहण करके प्रथम इस शुभ अनुष्ठानमे अपना हस्ताक्षेप प्रारंभ किया था, उन्होंने जन्मभर इस प्रकारसे आग्रह, उत्साह, और धन खर्च करके इस प्रकारके बहुतसे हितकारी अनुष्ठानोंसे राज्यके और प्रजाके अनेक हितकारी कार्य किये।

यद्यपि महाराज माधोसिंह बहादुरको राज्यकी पूर्ण सामर्थ्य प्राप्त होगई थी, यदि वह विचारते तो अपने हाथमें समस्त राज्यभार लेकर पूर्वप्रचलित रीतिके अनुसार जयपुरमें फिर व्यक्तिगत यथेच्छाचारसे शासनकी रीतिको प्रचलित कर सकते थे, परन्तु अत्यन्त संतोषका विषय है कि गत कई वर्षोंमें जिस प्रकारके लक्षण प्रकाशित हुए थे उससे महाराज माधोसिंहने उस व्यक्तिगत यथेच्छाचारके शासनकी रीतिका अनुसरण न करके महाराज रामसिंहके द्वारा चलाई हुई शासन प्रणालीके पूर्ण सम्मानकी रक्षाकी। इसका अनुमान हम निसंदेह कर सकते हैं, कि भारतवर्षके संपूर्ण देशीय राज्योंमें व्यक्तिगत यथेच्छाचारके शासनकी रीति प्रचलित है-केवल एकमात्र महाराज रामसिंह बहादुरने, प्रजा साधारणके कल्याणका विधान और राज्यकी उन्नतिसाधनके लिये मन्त्रीसमाजकी सृष्टि करके उसके हाथमे प्रत्येक विभागके पूर्ण शासनका भार अर्पण किया था, इस रीतिसे जो सुशासन और न्याय विचार अधिकतासे सूचित होता है यह कहना बाहुल्यमात्र है, महाराज माधोसिंहने भी इस समय उस शासनरीतिका अवलम्बन करके अपनी पवित्र रुचि और प्रजानुरागिताका विशेष परिचय दिया।

जयपुरकी वर्तमानरीतिके संबन्धमें रेसिडेण्ट मिस्टर जे० पी० ट्रेटन सन् १८८३ ईस्वीकी १७ मईको लिखते हैं, कि अन्यान्य सामान्य राज्योंकी अपेक्षा जयपुरकी शासनरीति अत्यन्त सुन्दररूपसे अनुष्ठित हुई है। यह कहा जासकता है, नरपतिकी इच्छासे अथवा किसी राजकर्मचारीके प्रावल्यमें यदि किसी विषयकी मीमांसा होनेकी संभावना न हो तो वर्तमान जयपुरकी शासनरीति अत्यन्त अल्पसमयमें उसे निर्धारित कर सकती है। और देशीयराजाओंमे जैसे एक जनके हाथमें शासनकी सामर्थ्य है, इस स्थान पर वैसा नहीं है।

" महाराजके अप्राप्त व्यवहार अवस्थामे स्वभावसे ही इस प्रकारके शासनकी व्यवस्था थी, और महाराजकी अल्प अवस्था तथा अनभिज्ञताके कारणसे यह रीति

प्रचलित रही है। महाराजके सभापतित्वके आधीनमें यह कौन्सिल अर्थात् शासन समाज सभारूपसे अनेक शुभकार्य कर रही है। महाराज जिस समय राजधानीमें स्वयं उपस्थित नहीं थे, उस समय भी शासन कार्य नियमितरूपसे होता था; और किसी भारी विषयमें महाराज जिस प्रकार कौन्सिलके परामर्श और सहायताका ग्रहण करना उचित जानते है कौन्सिल भी उसी प्रकारसे उन २ विषयोमें उनके मतकी अपेक्षा करती और संमति ग्रहण करती है"।

उक्त मन्तव्य केवल कौन्सिलके संवन्धमे ही प्रयोग नही होता, किन्तु कौन्सिल के अधीनमें जो २ विभाग है उन सबके कार्य सुन्दर रीतिसे होते है"।

"यद्यपि उपरोक्त प्रकारसे कौन्सिलकी सृष्टि सदसे पहिले असंपूर्णतासे कार्यमें परिणत हुई, परन्तु यह रीति इस राज्यमे वहुत दिनोसे प्रचलित है। अर्द्ध शताब्दीके पहिले मृत महाराज रामसिंहके अप्राप्त व्यवहारके समय इसकी सृष्टि हुईथी और इस समय यह पूर्ण अवयवोसे परिणत हुई है। उक्त महाराजकी मृत्युके पीछे यह कौन्सिल वास्तवमे यथार्थ रीतिसे स्वाधीनताके भावकार्यमे समर्थ हुई है। प्रत्येक विभागसे उपयुक्त संख्यावाले सदस्य नियुक्त है"।

"महाराजके अप्राप्त अवस्थामें रेसिडेण्टके अधीनमें कौन्सिल जिस प्रकारसे राजकार्य करती थी, इस समय महाराजके अधीनमे भी उसी प्रकारसे कार्य करतीहै। कौन्सिलके अधिवेशनके नियमित समय नियुक्त है, और उसी समयके अनुसार कार्य होता है"।

"इस राज्यमें और भी दो एक शुभ अनुष्ठान हुए है। यहाँके अनेक विभागोके कार्यमें राज्यके मैनेजरके पदपर, वकील पदपर, अन्यान्य कार्योमे सामन्तोको और उनके कुटुंबियोको नियुक्त किया गया है। अन्यान्य देशीय राज्योके सामन्त इस प्रकारके पदोंपर नियुक्त होनेसे घृणा करते है और राजा भी उनको विश्वास पूर्वक नियुक्त नही करते; इसी कारण अन्यान्य राज्योंमें राजकर्मचारी नामकी एक श्रेणी प्रवलहोकर अपने धन आगमन की चेष्टामें नियुक्त रहती है, प्रभुके कल्याणकी ओर दृष्टि नहीं रखती"।

देशीय राजाओके छिद्र देखनेवाले रेसिडेण्ट जव जयपुरकी शासन रीतिके संवन्धमे इस प्रकारका संतोषदायक मन्तव्य प्रकाश करते है। तव पाठक अवश्य ही सरलतासे इसका अनुमान कर सकते है कि जयपुरके शासनकी रीति वर्तमान समयमें अवश्य ही प्रीतिदायक है, और महाराज माधोसिंह वहादुर उस उदारनीतिके किस प्रकारसे दृढ़ परिपोषक है।

जयपुरकी कौन्सिल वा शासन समाज तीन प्रधान भागोमे विभक्त है। १ राजस्व विभाग, २ शासन विभाग ३ समर वैदेशिक और अन्यान्य विभाग। महाराज रामसिंहकी मृत्युके पीछे सन् १८८० ईसवीमें निम्नलिखित विभागोंमें नीचे लिखे हुए सदस्य नियुक्त हुए।

राजस्व विभाग-	१-डिगीके ठाकुर प्रतापसिंह
—	२-ठाकुर शम्भूसिंह
—	३-बाबू यदुनाथसेन

शासन विभाग– १–बगरूके ठाकुर सामन्तसिंह ।
– २–ठाकुर समन्दरकरन ।
– ३–मीरफुरवानअली ।
समर वैदेशिक– १–चौमूके ठाकुर गोविन्दसिंह ।
एवं– २–पुरोहित रामप्रसाद ।
अन्यान्यविभाग– ३–बाबू कान्तिचन्द्रमुखोपाध्याय ।

उपरोक्त सदस्योंमें पुरोहित रामप्रसादने सन् १८८३ ईसवीकी १३ वीं अगस्तको प्राण त्याग किये, और सन् १८८२ ईसवीमें बाबू यदुनाथसेन और ठाकुर समन्दरकरन ने पेन्सन लेकर पद त्याग किया; उक्त तीनों मनुष्योंके पदोंपर तीन नवीन सभ्य नियुक्त हुए हैं ।

रेसीडेण्टके मन्तव्यसे जाना जाता है कि महाराजने जिस समय स्वजातीय तीन सामन्तोंको सदस्य पदपर नियुक्त किया, उस समय यह सभी मूल्यवान जागीरोंको भोगते थे, परन्तु यह कौन्सिलके सदस्य पदपर नियुक्त होकर राजकार्य करेंगे, इससे परिश्रमके स्वरूपमें महाराजके निकटसे स्थाई वृत्तिकी प्रार्थना की, परन्तु स्थाई वृत्तिका देना असम्भव विचार कर, सन १८८३ ईसवीमें कौन्सिलके प्रत्येक सभ्योंको नियमित वेतन मिलनेकी रीति प्रचलितहुई ।

इस बृहत् इतिहासके अनेक स्थानोंमें पाठकोंने पढ़ा होगा कि जिस राज्यमें सामन्तोंके साथ अधिपतिका मतान्तर विवाद और झगड़ा होता है वह राज्य नष्ट हो जाता है । सामन्त शासित देशमें, सामन्त ही नरपतिके प्रधान बल और उपाय स्वरूप हैं । सामन्तोंके प्रति नरपतिका सद्भाव, और उनको चिरप्रचलितरीतिकी समान सगत स्वत्वरक्षा, और सन्मान प्रदर्शन जैसा अवश्य कर्तव्य है, सामन्तोंके पक्षमें भी उसी प्रकारसे अकृत्रिम राजभक्ति दिखानेके साथ अधीश्वर प्रभुकी आज्ञापालन करना उचित है । दोनोंमें व्यतिक्रम होनेसे वीर तेज राजपूत सामन्त और राजामें महा असंतोषदायक कार्य उपस्थित होता है।रजवाड़ेके राजपूत राज्योंमें प्रथमसे ही सामन्तोंके शासनकी रीति प्रचलित है, इस कारण सैकड़ों वर्षोंसे सामन्त ही समस्त राजनैतिक स्वत्वाधिकारको भोगते आते हैं । उन सम्पूर्ण राजनैतिक स्वत्वोंपर किसी प्रकारका हस्ताक्षेप होनेसे राज्यमें अनेक विपत्तियाँ आई हुई दृष्टि आती है, इस कारण राजपूत राजाओंके पक्षमें जिस भाँतिसे सामन्तोंके उस समस्त राजनैतिक स्वत्वको अक्षत रखकर राज्यशासन करना कर्तव्य विचारा गया है, सामन्तोंके पक्षमें भी उसी प्रकारसे अपनी निर्दिष्ट की हुई राजनैतिक सामर्थ्यकी सीमाका उल्लंघन करना उचित नहीं है । महाराज रामसिंहके शासनके समयसे आमेरके सामन्तोंमें किसी प्रकारका असंतोष वा अशांति आजतक दृष्टि नहीं हुई । वर्तमान समयके महाराज माधोसिंहने भी सामन्तोंके ऊपर विशेष दया करके राज्यके अनेक भागोंमें सम्भ्रान्त विश्वासी सामन्तोंको नियुक्त कर परोक्षमें उनके हाथमें राज्यके अनेक विषयोंके शासनका भार अर्पण किया

है, परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि आमेरके सामन्तोंमे बहुतसे अल्पबुद्धिवालेने बीच २ मे प्राय: एक अत्यन्त अप्रयोजनीय घटना उपस्थित की थी।

"जयपुरमे स्थित रेसिडेण्टके मतसे जाना जाता है कि जयपुरकी सीमाके अन्तमें पुलिसका बंदोवस्त और व्यवस्था प्रयोजनके अनुसार न होनेके कारण क्रमानुसार पंजाबसे उचित अनुयोग उपस्थित होता था। इसीलिये जयपुरके राजदरबारमे उक्त सीमामे स्थित सामन्तोंको इसके सम्बन्धमें यह दृढ़ आज्ञा दी गई कि उनकी इस आज्ञाका देना वास्तवमे अत्यन्त ही प्रयोजनीय था, पर दुर्भाग्यवश उस आज्ञापत्रकी भाषा कुछ कठोर होगई इस कारण शेखावाटीके सामन्तगण, और दूसरे सामन्तगणोंने समझा कि जिन छोटे२ विषयोंमे बहुतकालसे हमारी क्षमता चली आती है, अब महाराज हमारी सामर्थ्य लोप करनेमें प्रवृत्त हुए है। इससे भयानक घटना उपस्थित हुई, और उसी घटनासे उक्त सामन्त राज्यके अन्यान्य सामर्थ्यशाली सामन्तोंने एकसाथ मिलकर एक प्रबल प्रतिवाद उपस्थित किया"।

"सन् १८८३ ई०के गत जनवरी महीनेमें जिस समय गवर्ननर जनरलके एजण्ट यहाँ आये थे उस समय महाराजने उन सामन्तोंको जयपुरमे बुलाया और निष्कपटभावसे सब विषयोंको प्रकाश करके कहसुनाया, विशेष करके धीरज देकर सामन्तोंको सावधान करदिया जिससे यह झगड़ा शीघ्र ही मिटजाय, परन्तु एक समय इस झगड़ेसे भयंकर अनिष्ट होनेके लक्षण दिखाई देते थे* "।

गवर्नर जनरलके राजपूतानेमें स्थित एजण्टलेफ्टिनेण्ट कर्नल इ. आर ब्राडफोर्डने इसके संबन्धमें लिखा है, " कि हमारे उपस्थितिके समयमे शेखावाटीके सामन्त जयपुरमें आये, तथा दरबार और उनके मध्यमे किसी २ विषयमें जो झगड़ा उत्पन्न हुआ था, उससे दोनोंमें ही चिरकालतक झगड़ा रहनेकी संभावना थी, अत्यन्त संतोषका विषय है कि दोनों ओरका अमंगल करनेहारा झगड़ा दूर होगया "।

महाराज माधोसिंह जितनी दया सामन्तोके ऊपर करते हैं उतने ही वह उनके राज्यकी बढ़ती करते है, अधिक क्या कहै, जबतक सामन्त भलीभाँतिसे शिक्षा प्राप्त न कर सकै तबतक संपूर्ण मंगल और शान्तिकी आशा नहीं है। सामन्तोके पुत्रोंको विद्याकी शिक्षाके लिये यद्यपि राजधानी जयपुरमें उपयुक्त विद्यालय स्थापित है, और अनेक दिनोंसे बड़ी २ तैयारियाँ होरही हैं परन्तु जिससे सामन्तोंके कुमार विद्या पढ़नेमें भलीभाँतिसे मन लगावै, उस विषयमें भी महाराजका विशेष ध्यान है और कुमारोंको उत्साहित करना उनका एकान्त कर्तव्य है, राज्यकी प्रजा जितनी शिक्षित और बुद्धिमान होगी उतना ही राज्यका मंगल होगा।

इस बातको अवश्य ही स्वीकार करना होगा कि भारतके देशीय राजाओंके मंगलके निमित्त जगदीश्वरने गवर्नमेण्टके हाथमे भारतके भाग्यका भार अर्पण किया है।

---

* Report of the political Administration of the Rajputana state or 1882-1883.

जिन राजपूतराजाओंने सातसौ वर्ष तक यवन सम्राटोंकी अधीनता स्वीकार की थी। इस समय वही राजपूत वृटिश गवर्नमेण्टके अधीनरूपसे गिने जाते हैं, उन्हें उस वृटिश गवर्नमेण्टके साथ सद्भावकी रक्षा करना अवश्य ही कर्तव्य है। महाराज रामसिंह बहादुर सामयिक राजनीतिकी विद्यामें विशेष पारदर्शी थे, इसी कारणसे उन्होंने गवर्नमेण्टके परम प्रियपात्र होकर विशेष सम्मान प्राप्त किया था, वर्तमान महाराज माधोसिंह बहादुरने भी इसी प्रकारसे गवर्नमेण्टके साथ विशेष प्रीति करके अपने राज्यका मंगल साधन किया है। हम सरलतासे ऐसी आशा कर सकते हैं कि "वृटिश रेसिडेण्टने लिखा है कि गवर्नमेण्टके साथ जो सम्पूर्ण संधिका संबन्ध नियत हुआ था इस समय विश्वासके साथ उसका पालन किया जा रहा है, और महाराज भी उनके दरबारके साथ वृटिश रेसिडेण्टके संबन्धमें सम्पूर्ण प्रीति जनक हैं"। वृटिश रेसिडेण्टने जब कि स्वयं उक्त मंतव्यको प्रकाश किया है तब अवश्य ही यह मानना होगा कि महाराज माधोसिंहने महाराज रामसिंहकी अवलंबित नीतिका अनुसरण किया है।

भारतके पतनका कारण देशी राजाओंमें अविश्वासका होना है, अनैक्यता, विवाद निसम्वाद और स्वजातिविद्वेष है। यदि देशीय समधर्मका अवलवन करनेवाले राजा परस्पर विश्वास स्थापनके साथ साथ एकताके सूत्रोंमें बँधे रहते तो भारतका वर्तमान मानचित्र अवश्य ही भिन्नवर्णसे रगा जाता। वर्तमान वृटिश गवर्नमेण्टके शान्तिपूर्ण शासनसे देशीय राजा प्रतिवासी एक धर्मका अवलंवन करनेवाले राजाओंके साथ जितनी अकृत्रिम मित्रताके सूत्रमें बँधेंगे उतना ही भविष्यमें मंगलदायकबीज बोया जायगा। अत्यंत संतोपका विषय है कि आमेरराज माधोसिंहके साथ रजवाड़ेके अन्यान्य राजाओंकी विशेष मित्रता विराजमान है। जयपुरके रेसिडेण्ट मि० स्टेटनने लिखा है, "कि निकटवर्ती देशोंसे राजाओंके साथ इस प्रकारसे मैत्रीभाव साधारणतः विराजमान है। वास्तवमें उस मित्रतासे ही कितने राजाओंने जयपुरकी प्रदर्शनीमें बहुतमूल्य द्रव्योंको भेजा। यदि इनमें मित्रता न होती तो ऐसी आशा कहाँ थी*"।

वर्तमान महाराज माधोसिंहके सम्वन्धमें राजपूतानेके गवर्नर जनरलके एजण्ट कर्नल ब्राडफोर्डने लिखा है। हम इस स्थानपर उसको प्रकाश करनेके साथ जयपुरराज्यके इतिहासका उपसंहार करनेकी अभिलापा करते हैं। कर्नल ब्राडफोर्डने लिखा है कि "अभिपेकके पीछे महामान्य महाराजने स्वयं शासन कार्यमें भली भाँतिसे मन लगाया और उन्हें पहिले सम्पूर्ण विपयोंमें अभिज्ञता प्राप्त करनेका कोई सुअवसर नहीं मिला, वर्तमान समयमें शीघ्रतासे उन संपूर्ण विपयोंमें अभिज्ञता प्राप्त करके वह विशेष आग्रहअन्वित हुए। जयपुरका भविष्य मंगल किस प्रकारसे सूचित होगा, उस सबन्धमें मन्तव्य प्रकाश करना वर्तमान समयमें असामयिक है, परन्तु महाराज इस समय अपने राज्यके शासन संबन्धमें जिस प्रकारसे दृष्टि रखते हैं, यदि इसी

* Report of the political Administration of the Rajputan states for the 1882-83

प्रकारसे दृष्टि रखते रहे तथा प्रत्येक विभागकी कार्यकारिता संपादनके लिये उन्होंने जिस प्रकारका आग्रह प्रकाश किया है, यदि क्रमानुसार उसी प्रकारसे आग्रह प्रकाश करते रहे तो यह सरलतासे अनुमान किया जा सकता है कि अधिक उन्नतिशील अन्यान देशीयराज्योंके साथ जयपुर सबसे अग्रणीय होजायगा।" वृटिश रेसिडेण्टका यह मन्तव्य वर्तमान महाराजके संपूर्ण गुणोका परिचायक है। महाराज माधोसिंहके शासनसे जयपुरमे जो भविष्यमे उन्नतिकी संभावना है उससे मंगलकी निसंदेह आशा की जा सकती है, इसको हम मुक्तकंठसे स्वीकार कर सकते है, कि महाराज माधोसिंह दीर्घजीवन प्राप्त कर जयपुरके सिंहासनको उज्वलतासे प्रकाशमान और गौरवान्वित करैगे, भविष्यमें इतिहास लेखक उनके शासनवृत्तान्तको उज्वलतासे चित्रित करनेमे समर्थ हों, जगदीश्वरसे हमारी यही प्रार्थना है।

आठवाँ अध्याय ८.

जयपुरको चारो सीमाएं और भूपरिमाण–अधिवासी जनोंकी संख्या–जाति विभाग–सीमा–जाट–ब्राह्मण, कछवाहे, राजपूत–जयपुरकी मृत्तिका–कृषि उद्भिज–राजस्व–अन्य जातिकी बनाई आमेरके अधिकारी सत्रह प्रदेशोंकी सूची–प्राचीन राजकरकी सूची–वर्तमान राजकर–वाणिज्य–लवणविभाग–पूर्त्तकार्यका विभाग–शिल्प–रेलवे–टेलीग्राफ–स्वास्थ्यविभाग–चिकित्सा विभाग–शान्तिरक्षाका विभाग, विशेष शान्तिरक्षा विभाग–जयपुरका कालिज–चांदपोलविद्यालय–राजपूतविद्यालय–संस्कृतकालिज–प्रथम शिक्षाविद्यालय–सहायताकारी विद्यालय–मेओकालिज–स्त्रीशिक्षा–समरविभाग– सामन्तोंकी प्राचीन और आधुनिक सूची–जयपुरके कुछेक बड़े और प्राचीन ऐतिहासिक स्थान।

इतिहास जाननेवाले टाड् साहबने जयपुर राज्यके भौगोलिक और भीतरी अन्यान्य विवरण एक स्वतंत्र अध्यायमे लिखे है। हम उन सब विवरणोंको वर्तमान समयके कुछ जाननेयोग्य समाचारोंके साथ इस समय पाठकोंको विदित कराते है।

कर्नल टाड् साहब सबसे पहिले लिखते है "हम कछवाहे जातिकी सृष्टि और विस्तारका विवरण लिखते है। अवश्य ही यहां ऐसे कितने मनुष्य विद्यमान होंगे जो आठसौ वर्षोंमे पन्द्रह हजार वर्गमील पृथ्वीपर विस्तृत प्रत्येक कछवाहे वंशके इतिहास जाननेको और चालीस हजार कछवाहोंके नंगी तलवार हाथमे लेकर अपनी जन्मभूमि और राज्यकी रक्षाके लिये खड़े होनेके वृत्तान्तको न जानना चाहते हैं। "जन्मभूमि" यह शब्द इन्द्रजालके मंत्रकी समान राजपूतोके हृदयमें अपने प्रकाशसे प्रवल पराक्रम उत्पन्न कर देता है। राजपूत भ्रमसे भी अपनी स्त्रीका नाम मुखसे नहीं निकालते और जन्मभूमिके नामको सम्मानके साथ किसीके न लेनेसे उसी समय तलवारें खिंच जाती है। इस संबन्धके अनेक ज्ञातव्य विषय इस इतिहासके अनेक स्थानोंमें प्रकाशित

हुए है, किन्तु अनभिज्ञ परदेशी (विदेशीय) बड़े साहसके साथ कहते हैं कि राजस्थानमे स्वदेश हितैषिता और कृतज्ञता बोधक कोई शब्दप्रचलित ही नहीं है"। हम कहते है कि जो विदेशी राजपूतोंकी देशहितैपिता पर संदेह करते हैं उन्होंने राजपूतजातिका मर्म नहीं जाना।

चारों सीमाएं और भूमिका नाप।

टाड् साहब फिर आमेर राज्यकी सीमाके सम्बन्धमे लिखते हैं। आमेर और उसकी राजधानीके चारोओरकी सीमा मानचित्रसे भलीभाँतिसे जानी जासकती है। पश्चिममें मारवाड़की सीमाके अन्तमे साँभरहद्दतक, पूर्वमे जाटसीमाके उस पार क्रौथ-नगरतक, आमेर सबसे बड़ा प्रदेश है। यह गवर्नमेण्ट मीलसे एकसौ वीस मील चौड़ा और उत्तरसे दक्षिणमें शेखावाटी समेत एकसो अस्सी मील लम्बा है। इसकी आकृति एकसी नहीं है। हम अनुमान करसक्ते है कि खास आमेर राज्यकी पृथ्वी नापमे नौ हजार पांचसौ वर्गमील है, और उसके अधीनमें शेखावाटीकी पृथ्वीका नाप पाँच हजार चारसौ वर्ग मील है, समस्त पृथ्वीका नाप चौदह हजार नौसौ मील है। आचिसन साहबने सन् १८६४ ईस्वीमें लिखा है "जयपुरराज्यकी पृथ्वीका नाप१५००० वर्ग मील है। किन्तु वाबू लोकनाथ घोपने अपने बनाये ग्रन्थमे लिखा है कि आमेरकी पृथ्वीका नाप १५२५० वर्ग मील है।

अधिवासी।

आमेरराज्यकी भिन्न २ जातिके आदिनिवासियोंके सम्बन्धमे कर्नल टाड् साहबने लिखा है इस राज्यके रहनेवालोंकी संख्या ठीक २ कितनी है, उसका अनुमान करना सहज काम नहीं है, किन्तु विश्वाससे ऐसा जान पड़ता है कि आमेरके प्रत्येक मीलमे १५० और शेखावाटीके प्रत्येक मीलमें ८० मनुष्य वसते है।

दोनों प्रदेशोंकी संख्या मिलानेसे १२४ मनुष्यके हिसावसे १८५८७० मनुष्य होते हैं और जब हम विचारते हैं कि इस राज्यमे वहुत मनुष्योंसे भरेपूरे वडे २ मकान विराजमान है तव उक्त संख्यामे शंका होजाती है। सब चार हजार गाँव और नगर हैं और शेखावाटीके गाँव और नगरोंकी सख्या उससे आधी है। आचिसन साहव सन्१८६४ई० में और म्यालिसन साहबने सन् १८७४ ईसस्वीमें आमेरकी मनुप्य संख्या १९००००० वताई है ओर बाबू लोकनाथ घोपने उनके पीछे १९९५००० मनुष्य संख्या लिखी हैं। चिरकालसे रहने वाली शान्तिके सूत्रमें आमेरराज्यकी मनुप्य संख्या क्रमानुसार वढ़ी है यह सहजमें ही जाना जाता है।

जातिविभाग।

कर्नल टाड् साहबने लिखा है कि "उक्त निवासियोंमे भिन्न जातिकी सम्प्रदाय और उसकी संख्याका निर्णय करना अत्यन्त कठिन है. यद्यपि इसको हम विश्वासके साथ कह सकते हैं कि यथार्थ राजपूतोंकी संख्या अन्यान्य जातिकी समष्टिकी अपेक्षा

अत्यन्त थोड़ी है, परन्तु यहाँके आदि निवासी मीनाजातिके अतिरिक्त और अन्यान्य प्रत्येक जातिकी अपेक्षा राजपूत जातिकी संख्या अधिक है। बड़े आश्चर्यका विषय है कि आजतक मीनोंकी संख्या अत्यन्त अधिक है। निम्नलिखित कई एक जातिके प्रधान नाम लिखे गये है, पाठक उसके अनुसार इनकी संख्याका अनुमान कर सकते है।

१–मीना।	४–वैश्य।
२–राजपूत।	५–जाट।
३–ब्राह्मण।	६–धाकर वा किरार (किरात)
	७–गूजर"।

मीना–"मीना जाति भिन्न२ बत्तीस संप्रदाय वा श्रेणियोंमें विभक्त है,यदि उनकी प्रत्येक संप्रदायका विषय वर्णन किया जाय तो ग्रन्थ बहुत बढ़ जायगा। रजवाड़ेके प्रत्येक राज्यमें यह मीनाजाति बहुतायतसे निवास करती है, हमने एक स्वतंत्र अध्यायमे उसका वर्णन करना उचित समझा है। मीनागण आमेर राज्यमे सब राजनैतिक स्वत्वाधिकार और अनुग्रह भोग करते है, नरवरके निकाले हुए नरपति मीनोके द्वारा ही आमेरके अधीश्वर पदपर अभिषिक्त हुए थे, इसका प्रमाण पाया जाता है। मीना जो स्वत्वाधिकार भोगते थे, इससे यह भी निःसन्देह प्रकाशित होता है कि आदिमें कछवाहे राजाने इनको जीत कर इनपर अधिकारका विस्तार नहीं किया था, किन्तु मीना गणोने अपनी इच्छासे उनको अधीश्वर पदपर वरण करलिया था, कारण कि कालीखोह नामक स्थानके मीना, जयपुरके प्रत्येक नरपतियोंके अभिषेकके समयमे उनके मस्तक पर अपने शरीरसे रुधिर निकाल कर तिलक करते थे। वृद्धके पैरके अंगूठेमेंसे रुधिर निकाल कर उसीसे तिलक किया जाता था, यद्यपि इस प्रकारसे इस समय टीका देनेकी रीति और और भी अनेक प्राचीन व्यवहार और प्रथाएं (जैसे मेवारके राणाका भीलद्वारा अभिषेक) उठगई है, परन्तु यह दोनों ही निःसन्देह इसको प्रमाणित करते हैं कि वर्तमान समयमें पतित यह मीनागण आदिमे इस देशके अधीश्वर थे। मीनागण आजतक आमेरके अधीश्वरके यहां अत्यन्त विश्वासी पदपर नियुक्त हैं। जयगढ़के धनागार और राजकीय कागजपत्रोंके देखनेमे नियुक्त हैं, राजधानीमें यह आमेरराज्यके शरीरकी रक्षा अर्थात् प्रहारितामें नियुक्त है, और राजाके अन्तःपुरकी रक्षाका भार भी इन्हींके हाथमें सौंपा गया है। आमेरके कछवाहे राजवंशके प्रथम अभ्युदयके समय यह मीनागण राजकीय समस्त चिह्नोंका व्यहार करते थे, और आमेरपतिके जीवनकी रक्षाका भार भी उन्हींके हाथमें था, परन्तु परिणाममें इनकी उस राजकीय ध्वजा पताकाका व्यवहार अत्यन्त ही असंगत विचारा गया, और उनका वह स्वत्वरहित किया गया। अन्तमें मीनागणोंनें नक्कारा और पताकाके व्यवहार करनेके लिये अनुमतिकी प्रार्थना की। आमेरराजने उसको भी असंगत विचारा। इस कारण रक्तपातके पीछे उन उपद्रवोंकी मीमांसा हुई। मीना, जाट, किरार वा किरात जाति ही आमेरकी प्रधान कृषिव्यवसायी थी, और उनमें बहुतसी कृषिक्षेत्रकी अधिकारिणी थी"।

जाट-"जाटोंकी संख्या मीनाओंकी समान है, इनके अधिकारी देशोंकी संख्या भी प्रायः समान है, और सम्पूर्ण किसानोंमे यही सबसे अधिक श्रमशाली है"।

ब्राह्मण-"ब्राह्मण जाति अध्यापना, और पवित्र धर्मकार्यमें भी अनेक लगे हुए है। सम्पूर्ण रजवाड़ेमे आमेरके धर्मकार्यमे लिप्त ब्राह्मणोंकी संख्या अधिक है, परन्तु इससे हम ऐसा अनुमान नहीं करसकते कि आमेरके राजा सबसे अधिक धार्मिक हैं, वरन् इसके विपरीत सिद्धान्त है"।

"कछवाहे वा कछवाह राजपूत जातिके संबन्धमें इतिहासवेत्ता लिखते हैं कि यदि आवश्यक हो, यदि जातीय समरमें कछवाहे सामन्त-वृन्दके हृदय पर स्वजातिकी हितैपिता प्रकाशित होजाय तो रणक्षेत्रमे वह एक पिताके वंशीय, तीस हजार आत्मीय राजपूतोंको इकट्ठा कर सकते थे, इस समय ऐसा अनुमान होसकता है कि उस तीस हजारमे नरूका संप्रदाय और शेखावाटी सामन्तोंको भी लिया जायगा, यद्यपि कछवाहे गणोंने सर्वजनप्रिय पजोनी, राजा मान और मिरजाराजा इत्यादिकी समान राजाओंके अधीनमें अन्यान्य जातिकी सदृश वीरता प्रकाश करके अपनी प्रशसाको सग्रह किया था, परन्तु वर्तमान समयके राठौर जैसे साहसी और विक्रमी विख्यात हैं, वह उस प्रकारसे विख्यात नहीं हुए। मुगल बादशाहके साथ विशेष घनिष्ट सम्बन्ध और उन यवनो के कदाचारका अनुसरण करनेसे उनकी अवनति हुई तो थी, परन्तु महाराष्ट्रोके द्वारा उनकी सबसे अधिक अवनति हुई"। "कछवाहे राजपूत जातिके सम्वन्धमें साधु टाड् साहबने ऊपर जो मन्तव्य प्रकाश किया है, उनके पहिले अंशको हम समर्थन नहीं कर सकेत। मुगलसम्राट्के साथ घनिष्टताके कारणसे कछवाहोका पतन नही हुआ, वरन उन्नति हुई, महाराज मानसिंह, मिरजाराजा जयसिंह, और सवाई जयसिंह मुगलसम्राट्के अधीनमें अपनी सेनाको नियुक्त करके समस्त भारतवर्षमें कछवाहोकी सेनाके अतुलनीय बलविक्रमका चूडान्त प्रमाण दिखा गये है, जबतक बारम्वार दीर्घकालतक कठिन महाराष्ट्रोके दस्युदलने कछवाहोंकी जातीय जीवनशक्तिकी जड़में दारुण आघात न किया, और उससे कछवाहोकी जातिपूर्व वीरत्व और बलविक्रम तथा साहससे हीन न हुई, तबतक हमारा यही न्यायसंगत अनुमान है। अर्द्ध-शताब्दीके पहिले कर्नल टाड् कछवाहे जातिके सम्वन्धमें जो मन्तव्य प्रकाश कर गये है, इस समय हम उसकी अपेक्षा संतोषदायक मन्तव्य प्रकाशित करनेमे असमर्थ है। कछवाहोकी जाति विधाताकी गतिसे इस समय मानों अनन्तनिद्रामें मग्न है। राजपूत जातिका बलविक्रम साहस और शूरता मानों उनके हृदयमें चिरकालसे निद्रित होरही है। जगदीश्वर जाने किस समय वह निद्रित सद्गुणावली कछवाहजातिको फिर भारतके नवीन प्रशसनीय अभिनयसे उत्कृष्ट करेगी।

मृत्तिका, कृषि, उद्भिज-कर्नल टाड् साहब जयपुर राज्यके कृषिकार्यके संबन्धमें लिखते है कि ढूंढाड़ राज्यमे सब प्रकारकी मृत्तिका पाईजाती है, तथा खरीफ वा हैमन्तिक एवं रवी वा वसन्ती शस्य दोनों फसले ही समान अंशोमें उपजती हैं।

हैमन्तिक धान्यमें ज्वारकी अपेक्षा बाजरा अधिक होता है, और वसन्ती धान्यमे गेहूंकी अपेक्षा जौ अधिक उत्पन्न होते है। हिन्दुस्थानमे सर्वत्र जिस प्रकार अन्यान्य धान्य और फल मूलादि उत्पन्न होते है, आमेरराज्यमे भी वह वहुतायतसे उत्पन्न होते है, इस कारण उन सवके संवन्धमे विशदरूपसे वर्णन करनेका प्रयोजन नही है। पहिले ईख वहुत होती थी परन्तु कईएक कारणोसे विशेप करके अधिक लगानसे किसानोको इसमे वहुतसा नुकसान उठाना पड़ा। इस कारण अब ईखकी पैदावारी वहुत न्यून होगई है, पहिले ईखकी खेती पर फी वीघे४) चार रुपयेसे लेकर छः रुपये तक कर नियत हुआ था, परन्तु अब आग्रिम साठ रुपये लेकर ईखकी खेती करने देते है। आमेर राज्यके अनेक स्थानोमे रुई बहुतायतसे होती है, और भारतवर्पके नील इत्यादि वर्ण भी यहाँ यथेष्ट उत्पन्न होते है, रजवाड़ेके अन्य स्थानोमे जिस प्रकारके हलका व्यवहार होता है, यहाँके हल भी उसी प्रकारके होते है।

अर्द्ध शताव्दीके पहिले आमेरराज्यके राजस्वके संवन्धमे इतिहासवेत्ता टाड् साहव लिखते है, कि " इस देशके राजस्वकी अवस्था चिरकालसे समान नही रही है, कभी वढ़ जाती और कभी घट जाती थी, इस कारण राजस्वका ठीक हिसाव करना अत्यन्त कष्टसाध्य है, हमै अतीत और वर्तमान कालके राजस्वके संबन्धके कितने ही हिसावके पत्र मिले थे। राजदरबारकी जिन वड़ी पुस्तकोपर राज्यके प्रत्येक जिलेका नाम विवरण, राजस्व, नागरिक कर वाणिज्य शुल्क और अन्यान्य नाना प्रकार की आमदनीका वृत्तान्त लिखा हुआ था। परंतु वह सब हिसाव पाठकोंके पक्षमे सुख दायक न होगा, इस लिये हमने उसे प्रकाशित नही किया। ढूंढाड़ अर्थात् जयपुर राज्यका खास राजस्व, सामंतोकी अधिकारी भूमिका राजस्वकर, वाणिज्य शुल्क इत्यादिकी सव आमदनी एक करोड़ रुपयेकी थी परंतु जिस समय एक करोड़ रुपयेकी आमदनी सव मिलाकर होती थी, उस समय कठिन महाराष्ट्रो और माचेड़ीके नरूका सामंतोंने आमेरराज्यके सत्रह समृद्धिवान् ग्राम और नगर आमेरसे छीन लिये थे इसी कारणसे राज्यकी आमदनी वहुत घट गई थी।

आमेरके जो सत्रह प्रदेश महाराष्ट्रों तथा अन्य मनुष्योने छीन लिये थे, कर्नल टाड् साहवने नीचे उनकी सूची प्रकाश की है।

१ कामा २ खोरी ३ पहाड़ी	जनरल पीरनने अपने प्रभु सेंधियाके लिये यह तीन देश आमेर से छीन लिये थे, पीछे जाटोने इस पर इजारा किया था और उन जाटोने तीनों देशोपर अपना अधिकार करलिया।

४ कान्ति

५ उकरोद

६ पुन्दापुन

७ गाजीका थाना

८ रामपुरा (खिरदा) ... ... माचेड़ीके रावके अधिकारमें

९ गौनराई

१० राज्ञाई

११ पूर्वोनाई

१२ मौजपुर बरसाना

१३ कानोड़ वा कानौदं } डिवाइनने लेकर मुरतजाखाँ भड़ेचको दिये तथा लार्ड लेकने इसमे अपनी संमति दी ।

१४ नारनौल

१५ कोट पूतली सन् १८०३–४ ईस्वीके समरमें महाराष्ट्रीके निकटसे लार्ड लेकने छीन कर खेतरीके अभयसिहको देदिया ।

१६ टौंक } राजा माधोसिहने हुलकरको यह दोनो देश देदिये । लार्ड

१७ रामपुरा } हेष्टिंग्सने अमीरखाँको इन देशोका अधिपति किया ।

कर्नल टाडु साहब फिर लिखते हैं कि "यह अवश्य ही स्मरण करना उचित है, कि बहुत थोड़े समय पहिले यह देश ढूंढाड़राज्यके प्रधान अंशस्वरूप थे और इनमे अधिकांश यवन सम्राट्के अधिकारमें थे, आमेरके राजा यवनसम्राट्के प्रतिनिधिस्वरूपसे उक्त देशोको जायदाद अर्थात् सेनादलके वेतनके हिसाबसे भोगते थे। अर्द्धशताब्दी पहिले राजा पृथ्वीसिंहके शासन समयमें आमेरराज और उसके अधीनस्थ करद सामन्तोकी सब आमदनी ११ लाख रुपये थी, और राजा प्रतापसिहके शासनके शेष वर्षमे अर्थात् संवत् १८५८ सन् १८०२ ईस्वीमें आमदनीका हिसाब १९ लाख रुपया था, ऐसा अनुमान होता है ।

सवन् १८५८ में जिस समय महाराज जगत्सिह सिहासनपर विराजमान हुए साधु टाडु साहबने उस समयकी आमदनीकी निम्नलिखित सूची प्रकाश की है:—

"खालसा वा खास भूमिकी आमदनी ।

राजाके निज तत्त्वावधानसे रक्षित वा ।

जमाबंदी	२०५५०००	रुपया ।
टेवरी ताल्लुका, (राजअन्त.पुरके खर्चके लिये नियुक्त)	५०००००	,,
शागिर्द पेशा (राजदरबारके सेवकोंके लिये नियत की हुई देशोकी आमदनी)	३०००००	,,
राजमंत्री और दीवान आदि कर्मचारियोकी अधिकारी भूमिकी आमदनी	२०००००	,,
सिलहपोप नामक अश्वारी सेनाकी जागीरोकी आमदनी	१५००००	,,
दसदल पैदल और अश्वारोही सेनाकी जागीरोकी आमदनी	७१४०००	,,
खास आमदनी	३९१९०००	,,
जयपुरके सामन्तोके द्वारा शासित देशोकी आमदनी	१७०००००	,,

(१) आमेरके बारह प्रधान सामन्तोंमें अन्यतर अमरसिंह खांगारोत इन देशोंके अधीश्वर थे ।

ब्राह्मणोको दी हुई उदक वा ब्रह्मोत्तर भूमिकी आमदनी	१६०००००	„
डान और मौपा अर्थात् राज्यके भीतरी वाणिज्य शुल्क एवं कृषिशुल्क	१९००००	„
राजधानी जयपुरकी कचहरी (नागारिक शुल्क जुरमाना इत्यादि)	२१५०००	„
टकसाल	६००००	„
हुंडी भाड़ा, बीमा इत्यादि	६००००	„
फौजदारी (समस्त आमेरके वार्षिक जुरमानेकी आमदनी)	१२०००	„
फौजदारी, जयपुरराजधानीके जुरमानेकी आमदनी ...	८०००	„
विदत अर्थात् काछाविर (सामान्य २ जुरमानोकी आमदनी)	१६०००	„
सब्जीमंडी अर्थात् बाजारोकी आमदनी	३०००	„
कुल जोड़	७७८३०००	रुपया.
शेखावाटी देशकी आमदनी	३५००००	रुपया.
राजावत् और जयपुरके अन्यान्य सामन्तोंके निकटेकी आमदनी	३०००	„
हाड़ौतीके सामन्तो की आमदनी	२००००	„
शेखावाटीकी आमदनीका जोड़	४०००००	„
सब मिलाकर ...	८१८३०००	रुपया.

ऊपर लिखीहुई तालिका प्रकाशके साथ साधु टाड् साहब इस प्रकारसे अपना मन्तव्य प्रकाश करते है, कि "जगत्सिंह जिस समय सिंहासनपर विराजमान हुए, उस समय राज्यकी आमदनी अस्सी लाख रुपयेसे अधिक थी, उसको आधी खालसा अर्थात् राजाके निज अधिकारी देशोंकी आमदनी थी, रजवाड़ेके अन्यान्य समस्त राजाओंकी अपनी आमदनीसे यह प्रायः दुगनी थी। गवर्नमेण्टके साथ जब संधि हुई उस समय इनकी निज आमदनी ४० लाख रुपयेमेसे वार्षिक आठ लाख रुपया करस्वरूप अंग्रेजी गर्वनमेण्टको देना स्वीकार हुआ था और ४० लाख रुपयेसे जितनी अधिक होती जाय उसके सोलहवें अंशका पांचवा अंस अतिरिक्त करदेना निश्चय हुआ।

यह तो हम पहिले ही कह आये है कि इतिहासवेत्ता कर्नल टाड् आर्द्ध शताब्दीके अधिकाल पहिले जयपुरकी आमदनीके संबन्धमें उक्त मन्तव्य और तालिकाको प्रकाश कर गये है पर उक्त समयके पीछे जयपुरकी अवस्था अवश्य ही बदल गई। सन् १८६४ ईसवीमे आचिसन साहब लिखते है, "जागीर और धर्मसंबन्धी दानसूत्रसे राज्यकी आमदनी बहुतायतसे घटगई है, राजाको सब २६००००० रुपयामात्र प्राप्त होते हैं।

(१) बरबारा खीरनी सावर ईशरदा इत्यादि।

(२) बलवान और इन्द्रगढ़।

सांभर ह्रदका अधिकांश भी जयपुर नरेशके अधिकारमे है, उस ह्रदसे जो लवण उत्पन्न होता ह उससे राज्यको ४०००० रुपयेकी आमदनी होती है" *

कर्नल म्यालिसनने जयपुरपतिकी समस्त आमदनी ३६ लाख रुपया लिखी ह, और गवर्नमेण्टके सधिपत्रके मतसे वार्षिक आठ लाख रुपयेके वदले चार लाख रुपया कर निश्चय किया गया है। यह पाठकोंने इतिहासमे पढ़ा होगा। यह अत्यन्त संतोष का विषय है कि दीर्घस्थाई शान्ति और सुशासनके गुणसे जयपुरके महाराजकी आमदनी वर्तमान समयमे ४० लाख रुपयेसे भी अधिक होती है। सन् १८८१–१८८२ ईसवीके शासन विवरणसे प्रकाशित होता है कि "सन् १८८०–८१ ईसवीकी आमदनी ५२४२१७६ रुपये और खर्च ५५८६९३० रुपया हुआ, ऐसा अनुमांन किया जाता है, परन्तु ठीक आमदनी ५५०११६२ रुपया और खर्च ४९८५८६६ रुपये हुए इसमे ५१५२९६ रुपयेकी वचत हुई, प्रधान २ आमदनीके निम्नलिखित कईएक उल्लेख किये जाते है भूराजस्व (वेतनके परिवर्तनमें प्रदत्त भूमिकी

आमदनी	२७३४२४८	रुपया
लवणकी आमदनी	७१३६६०	,,
वाणिज्यकी आमदनी	७१२९८९	,,
सामन्तोसे जो करलिया जाता है ...	५१२४९६	,,

व्ययमें निम्नलिखित कईएक प्रधान–

पूर्तकार्य विभाग	४४९९०९	रुपया
सैन्यदल	८०९३७७	,,
शासन विभागका व्यय	३४९२७९	,,
शिक्षा विभाग	४८३११	,,
विशेष दातव्य और धर्म सम्बन्धी वृत्ति इत्यादि ..	२२६४६०	,,
राजदरबारमें विवाहका व्यय	२२७४५७	,,
वृटिश गवर्नमेण्टको देयकर..	४००००० +	,,

दूसरे वर्षमे अर्थात् सन् १८८१–८२ ईस्वीकी आमदनीके सम्बन्धमें रिपोर्टके वृत्तान्तसे जाना जाता है, कि इस वर्षमे कुल ४९५८७६३ रुपया आमदनी और ४८८५९९ रुपया खर्च हुआ। इस कारण ७२७६४ रुपया बचा। सन् ८०–८१ ई० की अपेक्षा सन् ८१–८२ ईस्वीमें राजस्वकी अवस्था अच्छी नही रही। सारांश यह कि राज्यकी आमदनी किसी देशमें किसी समय भी समान नहीं थी। अनेक कारणोंसे राज्यकी आमदनी घटती बढ़ती रहती थी, पाठक अवश्य ही इस वातको स्वीकार करेंगे कि महाराज जगत्सिंहके शासनके समयमें अथवा उसके पहिले राज्यकी समस्त आमदनी

* Report of Rajputana

+ Report of the Political Administration of the Rajputana states for 1882-1883.

जिस प्रकार राजाकी इच्छानुसार ही किसी कार्यमें व्ययहोती थी, वा स्थल विशेषमे रुपया अपव्यय होता था, वर्तमान समयमे ऐसा नही हुआ। मृतमहाराज रामसिंहके शासन समयसे राज्यकी आमदनी श्रेष्ठ और हितकारी कामोमे खर्च होती है। वर्तमान महाराज माधोसिंह भी महाराज रामसिंहका अनुकरण करके अनेक कार्य करते है।

वाणिज्य–सन् १८८१।८२ ईस्वीमे आमदनीके घटनेका दूसरा कारण यह था, कि महाराज माधोसिंहने अपने राज्यमें वाणिज्य कार्यकी वृद्धिके लिये सब प्रकारके द्रव्योंपर जो आभ्यन्तरिक वाणिज्य शुल्क बराबर लिया जाता था, अफीमके सिवाय उन्होने और समस्त वाणिज्य शुल्कको एकबार ही माफ करदिया। इससे शुल्कके हिसाबसे राजस्व यद्यपि घट तो गया परन्तु अन्तमे वाणिज्य वृद्धिके साथ २ आमदनीकी वृद्धिकी संभावना है। अन्यान्य वाणिज्य द्रव्योंका आभ्यन्तरिक शुल्क जिस प्रकारसे एकबार ही माफ किया गया, उसी प्रकारसे अफीमके ऊपर वाणिज्य शुल्ककी वृद्धि की गई। शासन रिपोर्टसे जाना जाता है कि "गत बारह महीनेके वाणिज्य शुल्ककी आमदनी ७३१०९५ रुपये हुई। पहिले वर्षमें ७२६५४१ रुपया आया था। इससे जाना जाता है कि वाणिज्यकी क्रमशः श्रीवृद्धि होती जाती है"।

रेल इत्यादिके विस्तारसे वाणिज्यकी उन्नति की और भी सम्भावना है, इसका कहना बाहुल्यमात्र है।

लवणविभाग–सांभर ह्रद अधिकांश जयपुर अधीश्वरके अधिकारमे है। वृटिश गवर्नमेण्टने महाराजके साथ एक नवीन संधिपत्र नियुक्त करके महाराजको वार्षिक कई लाख रुपया देना स्वीकार करके उक्त लवणह्रदको ठेकेमे लेलिया है, महाराज उक्त संधिपत्रके मतसे अपने राज्यके किसी स्थानमे भी लवण नही बना सकते, इस संधिपत्रसे और वृटिश गवर्नमेण्टको सांभरह्रद देनेसे महाराजको लाभके बदलेमे कितनी हानि हुई है इसका अनुमान करना असम्भव है। और हम इसका अनुमान सरलतासे कर सकते है कि इससे गवर्नमेण्टको ही अधिक लाभ हुआ है।

पूर्त्तकार्य विभाग। जयपुरके पूर्तकार्यविभागका नाम एक स्वतत्र विभाग है। राजपूतानेके सन् १८८२–८३ ईसवीके शासन विवरणसे जाना जाता है कि उक्त वर्षमे पूर्त्तकार्य विभागमें महाराजने ८ लाख रुपयेसे अधिक खर्च किया, इसके अतिरिक्त इमारतके विभागमें उक्त वर्षमे९६८४२रुपया खच हुआ था। इस विभागके हाथमे प्रासाद इत्यादिका बनाना राजमार्गका बनाना या सुधारना खाल खनन, जयपुरकी राजधानीमें जलकी कलका विस्तार, प्रासा लोकन साधारण उद्यानकी रक्षा और वनकी रक्षाका भार अर्पण हुआ है।

सन् १८८२–८३ ईस्वीमे एकमात्र सरोवरादिके, खुदवानेमे इस विभागमे २३८६२४ रुपया खर्च हुआ था। इस विभागमें उक्त वर्षसें सब १४०१५६ रुपया खर्च हुआ है। सन् १८६८ ईस्वीसे उक्त वर्ष तक खाल खननकार्यमे महाराजका सब १४८०७९४ रुपया खर्च हुआ था। सन् १८७१–७२ ईस्वीसे १८७१।

८२ ईस्वीतक सब ४४०१२३ रुपयेकी आमदनी हुई, इस खाल खननसे कृषिकार्यकी उन्नतिके साथ महाराजकी आमदनीके बढनेकी और भी अधिक संभावना है।

शिल्प–जयपुरके शिल्प द्रव्य समस्त भारतवर्षमें प्रसिद्ध हैं। दीर्घस्थाई शान्तिके कारण एव मृत और वर्तमान दोनो महाराजोके न्यय उत्साह, और अनुष्ठानसे उस प्राचीन शिल्पकी उन्नति क्रमश: होती गई, जयपुरके स्वतंत्र विद्यालयमें १८८२। ८३मे एक शिल्पशालाकी भी प्रतिष्ठा हुई थी। शिल्पविद्यालयमे सन् १८८२। ८३ ईस्वीमे१०३ विद्यार्थियोने शिक्षा प्राप्त की थी। इस विद्यालयमे उपयुक्त शिक्षकोके द्वारा अनेक प्रकारके शिल्पोकी शिक्षा दीजाती है। जिससे स्वराज्यमे शिल्पकी विशेष उन्नति हो, उसके प्रति वर्तमान महाराजकी विशेष दृष्टि है। सन्१८८२–८३ मे जयपुरके महाराजने बहुतसा रुपया खर्च करके शिल्प प्रदर्शनीका अनुष्ठान किया था, यह उनके शिल्प-प्रेमका प्रमाण आजतक विद्यमान है।

रेलवे–राजपूताना स्टेट रेलवेका जयपुरराज्यमे १०५ मीलतक विस्तार हुआ है। राज्यमे सब मिलाकर २२ स्टेशन हैं। जयपुरका स्टेशन बड़ा बना हुआ है; इस रेलके विस्तारसे जयपुरके राज्यमे अनेक प्रकारके असीम उपकार हुए है।

टेलिग्राफ–जयपुर राज्यके समस्त रेलके स्टेशनोके अतिरिक्त राजधानीमे भी एक टेलिग्राफ आफिस है।

स्वास्थ्य और पोष्ट विभाग–जयपुरराज्यमे वृटिश गवर्नमेण्टके अधीन२०पोष्ट आफिस है, इसके सिवाय राज्यके अधीनमें पृथक् पोस्ट आफिस है, उनका कार्य भली प्रकारसे चलता है प्रजा साधारणकी स्वास्थ्य रक्षाके प्रति महाराजका विशेष ध्यान है। राजधानी जयपुरमें एक मिउनिसिपैलिटी है, सम्पूर्ण वार्तोमे कुशल पुरुष इस मिउनिसिपैलिटीके सभापति पदपर नियुक्त है। राजधानीके स्वास्थ्यकी रक्षा,सौष्ठव वर्धन, गैसकी रोशनी, राजपथ–परिष्कार संस्कार इत्यादि समस्त कार्य सुन्दरतासे चलते है। मिउनिसि-पैलिटीके तत्त्वावधानसे जयपुरकी राजधानीका स्वास्थ्य दिन २ बढ़ता जाता है। कई वर्षोंसे केवल राजधानी जयपुरके निवासियोकी संख्या सब १२५२८५ जन थी सन् १८८२।८३ ईसवीमे राजधानीमे २०८५ पुत्र और१८१४ कन्यायें जन्मी। अतएव सबकी संख्या मिलाकर ३८३९ हुई। इस वर्षमे ११४० पुरुष ११४४ स्त्री और १४०७ शिशु सब ३५९१ मनुष्य मरे, निम्नलिखित तालिकाके पढ़नेसे जाना जाता है कि मिउ-निसिपैलिटीके द्वारा नगरमे किस प्रकारसे स्वास्थ्यकी वृद्धि हुई।

	जन्म	मृत्यु
" १८७९–८० ईसवी०		६६६६ मनुष्य।
८०। ८१ "	२३११	५३५० "
८२। ८३ "	३८३९	३५९१ "*

* Report of the political Administration for 1882-3.

जयपुरकी राजधानीके चारोओर बड़ी २ दीवारें बनी हुई हैं; मुर्दे फूकनेके लिये नगरसे बाहर भेजे जाते हैं। इस कारण उस नगरके द्वारसे मृत्युकी तालिका ग्रहण करनेका विशेष सुभीता हुआ है।

चिकित्सा विभाग—अंग्रेजी चिकित्साकी रीति तथा औषधिके व्यवहार करनेमें राजपूत जाति बहुत दिनोंसे वीतराग थी। परन्तु समयके गुणसे उनमेंसे बहुतसे आजकल अंग्रेजी शिक्षाके पक्षपाती हुए हैं। राज्यके निःसहाय दरिद्रोंके प्राणोंकी रक्षा तथा रोगनिवारणके लिये महाराजने प्रत्येक वर्षमे बहुतसा धन खर्च किया है। बृटिश रेसिडेण्टके चिकित्सक डाक्टर हेण्डली महाराजके चिकित्सा विभागमें अध्यक्ष पदपर नियुक्त है, भारतवर्षके भूतपूर्व मृतकराज्यके प्रतिनिधि अर्ल मेओ, जयपुरके मृतमहाराज रामसिंहके परम मित्र थे। लार्ड मेओकी मृत्युसे उनके स्मरण चिह्न स्थापन करनेके लिये महाराजने बहुतसा रुपया खर्च करके एक "मेओहास्पिटल" और चिकित्सालय स्थापित किया था। इसके अतिरिक्त कारागारमें और भी एक अस्पताल है, तथा सब मिलाकर २२ और चिकित्सालय है।

सन् १८८२।८३ ईस्वीमें समस्त अस्पताल और चिकित्सालयोंमे मिलाकर १२२६९ रोगियोंकी चिकित्सा हुई, पूर्व वर्षकी अपेक्षा इस वर्षकी संख्या १४९५५ अधिक रही। संख्याके बढ़नेका कारण यह था कि उक्तवर्षमे दो नवीन विभागी चिकित्सालय स्थापित हुए थे। और एक प्राचीन चिकित्सालय दुवारा स्थापित हुआ था, और प्रजा अंग्रेजी चिकित्साकी विशेष पक्षपातिनी हुई*।

अन्यान्य अनुष्ठानोंकी समान जयपुरमें चेचकका टीका देनेकी रीति भी प्रचलित हुई है। सन् १८८२।८३ ईस्वीमें सब ३०९९६ मनुष्योंको टीका दिया गया था, पूर्व-वर्षकी अपेक्षा इस वर्षमे ११४८५ मनुष्योंको अधिक टीका लगाया गया।

शांतिरक्षा विभाग।—जिस राज्यमे सब प्रकारसे शान्ति विराजमान होती है, उस राज्यमें प्रजाकी उन्नति सरलतासे होती है और उसीसे राज्यके मंगल सूचित होते हैं। अशांति, अत्याचार, उत्पीड़न, अराजकता जिस प्रकारसे राज्यको विध्वंस करने-वाले है, उसी प्रकारसे प्रजाके प्राणधनकी रक्षा, और वाणिज्य कृषिके व्याघात निवारणसे शान्ति होकर राज्यकी उन्नतिके द्वार स्वतः ही खुलजाते है। जयपुर महाराजकी प्रार्थनासे पंजावके लैफटिनेण्ट गवर्नर एकाग्र असिस्टेण्ट कमिश्नरने महाराजकिशन नामक एक योग्यपात्रको जयपुरमे शांति रक्षाके विभाग पर अध्यक्ष करके भेजा।

उन्होंने उस पदको ग्रहण करके आमेरमें शान्ति स्थापित की थी। शान्ति रक्षा विभागकी अवस्था इस समय संतोपदायक है।

---

* Report of Political Administration of the Rajputana states for the 1882-1883

गिराई वा विशेष शांति रक्षा विभाग–वृटिश भारतवर्षमें जिस प्रकार ठगी और डकैतीको निवारण करनेके लिये एक स्वतंत्र विभाग है। जयपुरके महाराजने भी अपने राज्यमें इसी प्रकारसे डकैती, राजमार्गमे तस्करता, और राज्यकी सीमाके अन्तमे उपद्रव इत्यादिको दूर करनेके लिये एक स्वतंत्र शांति रक्षाके विभागकी सृष्टि की। यह गिराई पुलिसके नामसे विख्यात् है। कँवर नारायणसिंह नामक एक साहसी कार्याध्यक्ष मनुष्य इस विभागके अध्यक्ष हैं, इसके शासनसे आमेरराज्यमे इस समय समस्त प्रजा निर्भय होकर वाणिज्य और कृषिकार्यमें लग रही है।

कारागार–जयपुरके कारागारकी अवस्था इस समय बहुत उत्कृष्ट है, पाठकोंने कर्नल साहबके लिखे हुए इस इतिहासके अनेक स्थानोंमें राजपूत राज्यके कारागारोंके शोचनीय वृत्तान्तको पढ़ा होगा। कारागारके अनेक स्थान यमालयस्वरूप थे। कैदी अनेक स्थानोंपर अनाहार दंड पाकर उसी कारागारमें बंद रहते थे। जयपुरके कारागारकी वर्तमान अवस्था उससे सम्पूर्ण विपरीत है। सभ्यरीतिसे इस समय कारागार बनाये गये हैं, और कैदियोंको इस समय शिल्प इत्यादि अनेक विषयोंकी शिक्षा दी जाती है, और कैदियोंकी स्वास्थ्यकी ओर भी विशेष ध्यान रहता है। जयपुरके गतवर्षके शासनवृत्तान्तसे जाना जाता है कि सन् १८८२। ८३ ईसवीमें वहाँके कारागारमे प्रतिदिन ६०० कैदी बंदी रहते हैं, पहिले "वर्षकी अपेक्षा इनकी संख्या बहुत कम है। उक्त वर्षमे कैदियोंने जिन शिल्प द्रव्योंको बनाया था उनको बेचकर १४१८ रुपयेकी आमदनी हुई।

सतीदाह–यद्यपि बहुत दिनोसे सतीदाहकी रीति एक साथही लोप होगई है, परन्तु इस समय बीच २ में अनेक राजपूत स्त्रियां मृतक स्वामीके साथ चितामे भस्म होनेकी चेष्टा करती हैं। यद्यपि सबकी वह चेष्टा सफल नहीं हुई, परन्तु एक दो स्थान पर अपने कुटुम्बियोंकी सहायतासे किसी २ स्त्रीने प्रज्वलित अग्निमें जीवन त्याग किया है। जयपुरके रेसिडेण्ट मिष्टर ट्राटनने लिखा है, सन् १८८२ ईसवी अकटूबर महीनेमे जयपुरके अधीनके देशमे एक ठाकुरकी विधवा स्त्रीने चिताकी अग्निमें जीवन विसर्जन किया। दरबारमें यह समाचार पहुँचते ही मनुष्य भेजा गया; जो लोग इस कार्यमें लिप्त थे नउको पकड़ कर ले आये, और विचार करके उसमेके प्रधान अपराधियोंको कठिन परिश्रमके साथ एक वर्षके लिये कारावासकी आज्ञा दी गई; और अन्यान्य अपराधियोंको तीन वर्षके लिये कारावासकी आज्ञा दी"।

"शिशुकन्याकी हत्या–रजवाड़ेमें बहुत समयसे शिशुकन्याकी हत्याकी रीति प्रचलित थी। योग्यपात्रके न मिलनेसे तथा विवाहमे अधिक धनके खर्च होनेसे असमर्थ पुरुष कन्याके जन्म लेते ही उसको मारडालते थे। इस समय वह रीति भी दूर होगई है। मिस्टर ट्राटनने लिखा है कि गत वर्षसे शिशु कन्याकी हत्या आजतक नही हुई"।

शिक्षाका विभाग–जो जाति जितनी शिक्षित होती है उसकी उन्नति भी उतनी ही होती जाती है। यही नहीं कि यह शिक्षा केवल मनुष्योंके मंगलके ही लिये हो,

परन्तु यह शिक्षा जाति विशेषकी और सम्पूर्ण जगत्‌की उन्नतिका कारण है। शिक्षाके विस्तारके साथ ही साथ मानवमंडलीको यथार्थ मनुष्यत्व प्राप्तिकी सुविधा प्राप्त हुई है। जयपुरके मृतमहाराज रामसिंह बहादुरने शिक्षाके शुभफलका अनुसंधान करके अपनी प्रजामें विद्याका प्रचार करना आवश्यक विचारा था, और उसीसे जयपुर राज्य में सर्वत्र शिक्षाके विस्तारका बीज बोया गया था; और थोड़ेसे ही समयमे उस अमूल्य शिक्षारूपी वृक्षका अमृतमय फल उन्होंने अपने राज्यमे उत्पन्न होता हुआ देखा। देशीय राज्योंमें जितना शिक्षाका विस्तार हुआ है उतनी ही उस जातिकी जीवनी शक्तिने पहिलेकी अपेक्षा दृढ़तासे प्रबल होकर राजपूतजातिकी नवीन मूर्ति संसारमें उपस्थित कर दी। विचारवान मनुष्य इसका अनुमान सरलतासे करनेमें समर्थ होंगे। मृत महाराज रामसिंहने केवल संस्कृत अंग्रेजी हिन्दी उर्दू इत्यादि भाषाओंकी शिक्षाके विस्तारके लिये प्रति वर्ष बहुतसा धन खर्च किया था, यही नहीं, वरन वे इसको भलीभाँतिसे जानते थे कि अंग्रेजी भाषाकी शिक्षाका अपने राज्यमें प्रचार होनेसे प्रजा विलायतकी शिक्षाको पाकर समय पर जन्मभूमिके बहुतसे उपकार करसकेगी। इसी कारणसे उन्होंने जयपुरमें अंग्रेजी पढ़नेके लिये बहुतसे कालिज बनवा दिये। सन् १८८२–८३ ईसवी की शासनप्रणालीके देखनेसे हमने जयपुरके शिक्षा विभागको निम्नलिखित संक्षिप्तता से संकलित किया है।

कालिज–राजधानी जयपुरमें "महाराज कालिज" नामका एक ऊँची श्रेणीका कालिज है। सन् १८४४ ईसवीमे यह कालिज स्थापित हुआ था। यह कलकत्तेके विश्व-विद्यालयके अधिकारमे है। इस कालिजके तीन भाग है, प्रथम अंग्रेजी भाग–दूसरा संस्कृत और हिन्दीभाग, तीसरा फारसी और उर्दू विभाग। सन् १८८२। ८३ ईसवीमे इसमें सब विद्यार्थी ९८२ थे। औसतसे प्रतिदिन ३३१ छात्र उपस्थित होते थे। इसके पहिले वर्षमे छात्रोंकी संख्या ८८६ थी। अंग्रेजी भागमे ८०९ विद्यार्थी पढ़ा करते है। अन्यान्य विभागोंमे छात्रोको अंग्रेजी शिक्षा भी दी जाती है। कालिजके सब भागोमे समस्त विद्यार्थियोमें तीन अंशोमेंसे दो अंशोंके विद्यार्थियोंको अंग्रेजी शिक्षा दी जाती है। कालिजमें उक्त वर्षमें सब २४३१५ रुपया खर्च हुआ था; इसमे विद्यार्थियोंको ३३४४ रुपया दिया गया, कालिजके विद्यार्थियोमे हिन्दू ७८१, मुसल्मान १९८ ईसाई २ और १ पारसी थे। कितने ही उपयुक्त शिक्षित बंगाली इस कालिजके अध्यापक पदपर नियुक्त ह। उनके यत्न, श्रम, और पढ़ानेसे कालिजकी उन्नति क्रमशः होती जाती है, गवर्नर जनरलके राजपूतानेमे स्थित एजैण्ट कर्नल ब्राडफोर्डने लिखा है कि "जयपुरके कालिजमे विद्यार्थियोंकी संख्या बढ़गई है। इस कालिजसे फर्स्टआर्ट अर्थात् कलकत्तेके विश्वविद्यालयमें प्रथम परीक्षा देनेके लिये नौ विद्यार्थी गये थे, जिनमेसे तीन पास हुए, और दश विद्यार्थियोने प्रवेशिकाकी परीक्षा दी थी, इनमेंसे एक पासहुआ+।

+ Report of the political Administration of the Rajputana states for the 1892-1883

चाँदपोल विद्यालय-जयपुर राजधानीके अन्तर्गत चाँदपोल नामक स्थानपर उक्त कालिजके अधीनमे एक शाखा पाठशाला है। यह शाखा सन् १८८२ ईसवीमें स्थापित हुई थी। उक्त वर्षमे उक्त विद्यालयके ४९ हिन्दू और पांच मुसलमान सब ५४ विद्यार्थी पढ़ा करते थे। इस विद्यालयमें हिन्दी, उर्दूकी शिक्षा दी जाती है इस विद्यालयका उक्त वर्षमे २८९॥) खर्च हुआ था।

राजपूत विद्यालय-राज्यके सामन्त इत्यादि उच्च राजपूतोके पुत्रोको विद्या प्राप्तिके लिये राजधानीमे सन् १८६२ ईसवी मे एक विद्यालय स्थापित हुआ है। सन्१८८२।८३ ईसवीमे उस विद्यालयमे ३५ विद्यार्थी पढ़ते थे। उसमें ३१ हिन्दू और चार मुसलमान थे उक्त वर्षमे औसत प्रतिदिन १५ विद्यार्थी पढ़ने आते थे। इस विद्यालयमे भी तीन दरजे हैं। उक्त वर्षमें इस विद्यालयमे कुल ४४३२॥) रुपये खर्च हुए।

संस्कृत कालिज-सन् १८४४ ईसवीमे राजधानीके बीच यह संस्कृत कालिज स्थापित हुआ है। इस कालिजमें संस्कृतके अतिरिक्त हिन्दी भाषा भी सिखाई जाती है। सन् १८८२।८३ ईसवीमे इस कालिजके छात्रोकी संख्या २६१ थी, पहिले वर्षमें छात्र संख्या २१२ थी। औसत प्रतिदिन उपस्थित १०० विद्यार्थी, उक्त वर्षमे कुल ७५१६) रुपया व्यय हुआ।

प्रथम शिक्षा विद्यालय-राजधानीके अतिरिक्त मुफस्सिल राज्यकीय प्रथम शिक्षाके विद्यालयोंकी संख्या सन् १८८२।८३ ईसवीमे ४६ थी। इसमे २६ मे उर्दू, और २० मे हिन्दी की शिक्षा दीजाती है। विद्यार्थियोकी संख्या कुल १०६५ है।

साहाय्य कृतविद्यालय-राजधानी जयपुर और राज्यके अन्यान्य प्रदेशोमें सन् १८८२।८३ ईस्वीमे राज्यसे सहायता पानेवाले विद्यालयोकी संख्या ४१० थी। इसमें ३०३ हिन्दी और १०७ मे उर्दू की शिक्षा दीजाती है, उक्त वर्षमे विद्यार्थियोंकी संख्या ८२२० थी।

मेओकालिज-देशीय राजकुमार ओर सामन्त कुमारोंके लिये अजमेरमे मेओ-कालिज स्थापित है। उस कालिजमे जयपुरके बारह राजकुमार और सामन्तोंकी पढ़ाईका खर्चा स्वयं महाराज ही देते हैं।

स्त्रीशिक्षा-बुद्धिमान् मृत महाराज रामसिंह स्त्रीशिक्षाके विशेष प्रेमी थे, इस कारण उन्होंने अपने राज्यमें स्त्री शिक्षाका प्रचार होनेके लिये विशेष यत्न किया था, और इस विषयमें वह सफल मनोरथ भी हुए थे। सन् १८८२।८३ ईस्वीमे राजधानी जयपुर और उपनगरमे १० और अन्यत्र तीन सब मिलाकर १३ कन्या पाठशालाएं थीं, कन्याओंको हिन्दी उर्दू भाषाकी शिक्षा और परिवारिक शिल्प शिक्षा भी दी जाती थी कन्याओंकी संख्या ७६२। औसत उपस्थितिकी संख्या ५४७, उक्त समस्त विद्यालयोंमें उक्त वर्षमे कुल ६१५० रुपया खर्च हुआ था।

शिक्षा ही मनुष्यको मनुष्यत्व प्राप्तिके मार्ग पर चलादेती है। आर्य्य राज्यमे साधारण लोकशिक्षा भलीभाँतिसे प्रचलित थी, इसका कोई प्रमाण नहीं पायाजाता। इस कारण

आर्यशासनसे जो श्रेणी शिक्षाके बलसे बलवान् थी केवल उसी श्रेणीके लोग मनुष्यत्व प्राप्त करके अपने स्वार्थसाधन करनेके लिये सब प्रकारसे समर्थ हुए थे। यदि आर्यराज्यमें साधारण लोकशिक्षा भली भाँतिसे प्रचलित होजाती तो सामन्त शासनकी रीतिके द्वारा देशीय राज्योमे जो भयंकर घटनाएं उपस्थित हुई थी वे इससे अवश्य ही दूर होसकती थी। उच्चश्रेणीके सामन्तोमें बहुतोंको शिक्षाका स्वाद आजतक नहीं मिला। अधिक क्या कहे वह अपने नामके हस्ताक्षर तक भी लिखने नहीं जानते। कईसौ वर्षके पहिले यूरूपमे जिस प्रकार उच्चश्रेणीके सम्मानित सामन्त और नाइटगण घोर मूर्ख थे, हस्ताक्षर करनेकी आवश्यकता पड़नेपर वह केवल अपने हाथसे अस्त्रका चिह्न पत्रमे अंकित करदेते थे, हमने देखा है कि सैकड़ों वर्ष पहिले रजवाड़ेके ऊंची श्रेणीके सामन्तोमे बहुतसे सामन्त इस प्रकारसे अस्त्रोंका चिह्न ही पत्रमें अंकित कर देते थे। संतोषका विषय है कि अब वह समय नही रहा है। यद्यपि इस समय शिक्षाकी ज्योतिका प्रकाश धीरे २ रजवाड़ेमें हो रहा है, परन्तु यह अवश्य ही कहना होगा कि यदि राजा और सामन्त इस बातको बिचारते तो इतनी शिक्षाका विस्तार कर सकते थे, कि जिसके कारण आज यह घटी न होती।

जयपुरके शिक्षाविभागकी व्यवस्था रजवाड़ेके सम्पूर्ण राज्योको अपेक्षा सबसे श्रेष्ठ और वर्तमान समयके लिये उपयोगी है। इसको सभी मुक्त कंठसे स्वीकार करते है। हमें ऐसी आशा है कि वर्तमान महाराजके शासनसे शिक्षाभागको क्रमशः उन्नति होती रहैगी।

समरविभाग–इतिहासवेत्ता टाड् साहब लिखते है कि "सन्१८०३ईस्वीमे आमेरराजने तेरह हजार विदेशीय सेना अपने अधीमें रक्खी थी, इनमें तोपखाने सहित दश कंपनी पैदल चार हजार नगासेना एकदल अलिगोल नामक सैनिक प्रहरी और सातसौ अश्वारोही सेना थी। इस सेनाके अतिरिक्त सामन्त प्रायः चार हजार शिक्षित अश्वारोही सेनाकी सरबराही करते थे,यह संख्या राज्यरक्षाके पक्षमें यथेष्ट थी,परन्तु किसी विजाति पर आक्रमण उपस्थित होनेपर कछवाहोकी जातिमे बीस हजार सेना इकट्ठी होसक्ती है" आचिसन साहब सन्१८६४ ईसवीमे लिखते है कि जयपुरकी रणकुशल सेनामे गोलन्दाज ४५२ पदाती ४६००, अश्वारोही ५१४२ और नागा ४०५६ थे* "।

वर्तमान सेनाकी संख्या ७६८ गोलन्दाज, १०५०० पैदल, ३५३० अश्वारोही ४०९६ नागा और ७८ तोपखाने है। समरविभागमे इस समय प्रत्येक वर्षमे औसत ८०१००० रुपये खर्च होते हैं।

गवर्नमेण्टके प्रतापसे इस समय भारतवर्षके चारोंओर शान्तिमतीदेवी नृत्य करती है; कोई विदेशी शत्रु आमेर पर आक्रमण करनेके लिये उपस्थित नही हुआ, इस कारण जयपुरकी सेना बहुत दिनोंसे कार्यहीन भावसे रहती थी, कोई वीरजाति क्यों न हो जहाँ बहुत समय तक सेनाने आलस्य भावसे समय व्यतीत किया, कि उसकी सामर्थ्य नष्ट होजाती है, इसका अनुमान सरलतासे होसकता है। सेनादल जितना समर क्षेत्रमें

* Report of the Political Administration for the Rajputana states 1882–1883

उपस्थित रहेगा उतना ही उसका उत्साह, बल और विक्रम बढ़ेगा । यवन राज्यमें जयपुरकी सेना तथा मानसिंह और मिरजा राजा जयसिंहके अधीनकी सेना भारत की सम्पूर्ण सेनाओंमें वीर और योधा गिनी जाती थी ? इसी जयपुरकी सेनाने एक समय बंगालको विजय किया था, देशीय राजोंकी सेनाको इस समय किसी प्रकारका कार्य नहीं है पर उसमें बल उत्साह ज्योका त्यो बना रहे इस प्रकारका उससे कार्य लेना उचित है ।

सामन्त श्रेणी—जयपुरपति पृथ्वीराजने अपने बारह पुत्रोंको बारह प्रधान सामन्त पदपर वरण किया था साधु टाड उन बारह पुत्रोंके नाम और उनके उस समयके सामन्तोंके नाम इत्यादि निम्नलिखित प्रकारसे वर्णन करकर गये है ।

पृथ्वीराजके पुत्र	पारिवारिक नाम	अधिकारी देशोंके नाम	वर्तमान सामन्तो के नाम	आमदनी	सैन्य संख्या.
चतुर्भुज	चतुर्भुजोत	पवार, बगरु	बाघसिंह	१८०००	२८
कल्यान	कल्यानोत	लटवाडा	गंगासिंह	२५०००	४७
नाथू	नाथावत	चौंमू	किसनासिंह	११५०००	२०५
बलभद्र	बलभद्रोत	अचरोल	कायमसिंह	२८८५०	५७
जगमाल उनके पुत्र सगार	सागारोत	टोडरी	पृथ्वीसिंह	२५०००	४०
सुरतान	सुलतानोत	चादसर	०	०	०
पचायन	पचानोत	सम्भूग	सलेसिंह	१७७००	३२
गोगा	गोगावत	बूनी	रावचान्दसिंह	७००००	८८
कायम	खूमानी	मामरवो	पद्मसिंह	२१५३५	३१
कुम्भो	कुंभावत	माहर	रावत स्वरूपसिंह	७७५३८	४५
सूरत	शिवबरन पोता	नैनदिर	रावत हरिसिंह	१००००	१९
बनवीर	बनवीरपोता	वाटको	स्वरूपसिंह	१९०००	३५

इतिहासवेत्ता टाड साहब पृथ्वीराजके द्वारा बनाई हुई उस " बाराकोटरी अर्थात बारह सामन्त वंशकी तालिका प्रकाश करके उनके उस समय आमेर राज्यमें कितने सामन्त थे, और उनमे एक २ सम्प्रदायके अधीनमें कितने सामन्त थे, उन सबको मिलाकर कितनी आमदनी होती थी; और उनकी राज सरकारमे कितनी अश्वारोही सेना युद्धके समय सहायता देती थी, उसकी एक तालिका प्रकाश कर गये हैं । हम उसको नीचे अविकल प्रकाश करते हैं ।

	सम्प्रदायोंके नाम.	प्रत्येक सम्प्रदायके अधीन सामन्तोकी संख्या.	सब मिलाकर आमदनी.	मिली हुई अश्वारोही सेना.
			रु०	मनुष्य
	चतुर्भुजोत	६	५३८००	९२
	कल्याणोत	१९	२४५१९६	४२२
	नाथावत	१०	२२०८००	३७१
	बलभद्रोत	२	१३०८५०	१५७
	खागारोत	२२	४०२८०६	६४३
+१२[1]	सुल्तानोत	—	—	—
	पचानोत	२	२४७००	४५
	गोगावत	१३	१६७९००	२७३
	कुँभानी	२	२२७८७	३५
	कुभावत	६	४०७३८	६८
	शिवबरनपोता	३	४९५००	७३
	वनवीरपोता	३	२६५७५	४८
+४ {	राजावत	१६	१९८१३७	३९२
	नरूका	६	९१०६९	९२.
	बांकावत	४	३४६००	५३
	पूर्णमलोत	१	१००००	१९
	भाटी	४	१०४०३९	२०५
	चौहान	४	३०५००	६१
	बडगूजर	६	३२०००	५८
	चन्दावत	१	१४०००	२१
*१०	सीकरवार	२	४५००	८
	गूजर	३	१५३००	३०
	रांगड	६	२९११०५	५४९
	खेतडी	४	१२००००	२८१
	ब्राह्मण	१२	३१२०००	६०६
	मुसल्मान	९	१४१४००	२७४

(१) प्रथम बारह प्रधान सामन्तोंकी सम्प्रदाय ।

(२) यद्यपि यह चार सम्प्रदाय कछवाहे, जातिकी थी परन्तु उन बारह सम्प्रदाओंके अधिकारमें नहीं थी यह बारह विदेशीय सामन्त हैं। इनमें अनेक जाति और वर्णन है।

(३) टाड् साहब लिखते हैं कि उक्त सम्प्रदायोंमें इस समय अवश्य ही अदलबदल होगई है, हम कहसकते हैं कि इस समय इसका और भी परिवर्तन हुआ है ।

आचिसन साहब सन् १८६४ ईसवीमें अपने ग्रन्थमें जयपुर राज्यके सामन्तोंकी श्रेणीकी निम्नलिखित तालिका प्रकाश करगये हैं, हमने टाड् साहबके लिखे हुए और आचिसन साहबकी प्रकाशित सामन्त श्रेणीकी तालिकाको प्रकाशित किया, अधिक क्या कहैं वर्तमान समयमें इस सामन्त श्रेणीकी अवस्थाका परिवर्तन होगया है।

सम्प्रदाय	अधिकारी देशोंके नाम	प्रधान सामन्तोंकी आमदनी रु०	वंशोंके उपवंशकी संख्या	सब आमदनी	रु०
पूर्णमल्लोत्	नीमेडा	१००००	१	१००००	
भीमपोता	लुप्त	०	०	२०००	
नाथावत्	चूरन	१००००	१०	२४७१०	
पचायेनोत्	साभर	१७७००	३	०	
सुलतानोत	सूरत	२२०००	०	१३००००	बारह प्रधान सामन्त.
खागारोत्	डिग्गी	५०००	२२	०	
राजावत्	चंदलाई	२००००	२६	२४५०००	
प्रतापजी	विलुप्त	०	०	१०००००	
बलभद्रोत	आचरोल	२८८५०	२	१६७९००	
सूरदास	विलुप्त	०	०	२३७८७	
कल्यानोत्	कालवार	२५०००	१८	४०७३८	
चतुर्भुजोत	बगरू	४००००	६	४९५००	
गोगावत	दूनी	७००००	१३	२६५७५	अन्यान्य राजवंश घर.
कुम्भानी	मानुक	२१०००	२	३००००	
कुम्भावत	महार	२७५३८	६	३४६००	
सुवर्णपोता	नीनधार	१००००	३	०	
वनवीरपोता	वाटको	११०००	३	०	
नरूका	वनियारा	२००००	६	०	
वाकावत	लवान	१५०००	४	०	

इतिहासवेत्ता टाड् साहबने निम्नलिखित मन्तव्यको प्रकाश करके जयपुर राज्यके इतिहासका उपसंहार किया है; आमेरराज्यके कितने ही अत्यन्त प्राचीन नगरोंके नाम प्रकाशित करके हम इतिहासका उपसंहार करते हैं, खोज करनेसे इस सब नगरोंके सम्बन्धमें अनेक प्राचीन प्रमाण मिल सकते हैं।

"मोरा देवशाहसे नौकोश पूर्वकी ओर स्थित मोरध्वज ? " मयूरध्वज नामक एक चौहान राजाने इसको बनाया था।

" आमानेर-यह लालसोठसे तीन कोस पूर्वकी ओर स्थित है; यह नगरी अत्यन्त प्राचीन है। यह पहिले एक चौहान राजाकी राजधानी थी।

मानगढ़-यह थोलाईसे पांच कोस दूर है इसके दुर्गके ऊपर बना हुआ एक प्राचीन नगरका ध्वंश स्तूप है, यह कछवाहोंके अभ्युदयके पहले ढूंढाड़के आदिम राजाने बनाया था।

अमरगढ़-खुशालगढ़से तीनकोस दूर है, यह नाग वंशियोंके द्वारा बनाया गया था।

बरोट-माचेरीके अन्तर्गत वर्त्तासे तीन कोस है, प्रवाद यह है कि पाण्डवोंके द्वारा बनाया गया है।

पाटन और गनीपुर-यह दोनो दिल्लीके प्राचीन तूंअर राजाओंके द्वारा बनाये गये थे।

खेरार व खण्डार-रनथँभौरके निकट है।

ओट गिर-चम्बलके तीरवर्त्ती है।

आमेर वा आम्बकेश्वर-प्राचीन आमेर राजधानीमें यहां देवादि देव महादेवके नामसे एक कुण्ड विशेष है, कुण्डके बीचमे एक शिवलिंग है। कुण्डका जल लिंगके आधे अंगतक ढका हुआ है। ऐसा मत प्रचलित है कि, जिस दिन कुण्डके जलसे सब लिग ढक जायगा उसी दिन जयपुर राज्यका पतन होगा। इस स्थानपर अनेक शिलालेख भी है*।

---

* सूचना-मूल पुस्तकमें आमेरके वर्णनके केवल ८ अध्याय हैं। प्रथम चार अध्यायोंमे वंशानुक्रमसे जैयपूर राज्यका इतिहास वर्णन करके तीन अध्यायोंमें शेखावाटीके इतिहासका वर्णन है तत्पश्चात् पुनः एक अध्यायमें जयपूरके भूगोलका वर्णन एवं उपसंहार है.

परंतु ध्यान रहै कि यह भाषा अनुवाद बंगला भाषासे हुआ है और बंगाली लेखकने केवल जयपुरके इतिहासको आठ अध्यायोंमें बढ़ाया है और जैपूरके शेखावाटीके इतिहासको समाप्त करके पुनः जयपुरके इतिहासका परिशिष्ट लिखा है। इस प्रकारसे कुल आठ अध्यायोंको बंगाली आलोचक महाशयेन १४ अध्यायोंमें खतम किया है परन्तु शेखावाटीके इतिहासमें अध्यायोंकी गणना पुनः एकसे आरम्भ होती है। इससे पाठकोंको भ्रम होना संभव है। अतः केवल भ्रम निवारणके लिये यहांपर उल्लिखित बातोंका ध्यान रहना आवश्यक है।

राजस्थान.

दूसरा भाग.

शेखावाटीका इतिहास.



शीकर (शेखावाटी.)

एच् एच्. राव राजा माधोसिंह बहादुर.

शेखावाटीका इतिहास.

प्रथम अध्याय १.

शेखावत् सम्प्रदायकी सृष्टिका आदि विवरण–आमेरराज्यके उदयकरणके तीसरे पुत्र बालूजीसे उक्त सम्प्रदायकी उत्पत्ति–मोकलजी–मुसलमान धर्मप्रचारक शेख बुरहान–उनके आशीर्वादसे मोकलजीको पुत्र लाभ–पुत्रको शेखाजी नामका प्रदान–शेखाजी द्वारा राज्यका विस्तार–रायमल्लजी, रायसाल, उसकी वीरताका प्रकाश करना–सम्राट् अकबरका शासनकी सनद देना–खन्डेला और उदयपुर लाभ–उनकी वीरता और चरित्र–गिरिधरजी–उनकी हत्याका विवरण–द्वारकादास–सिंहके साथ उनका विचित्र समर–खाँ जिहानलोदीके साथ समरमें उनका प्राणनाश–वरसिंहदेव–बहादुरसिंह–औरंगजेबका खन्डेलाके देवमंदिरको विध्वंस करनेकी आज्ञा देना–बहादुरका राजधानी छोड कर भाग जाना–देवमंदिरकी रक्षाके लिये सुजनसिंहकी प्रतिज्ञा–यवनसेनाके साथ युद्ध–मंदिरका विध्वंस करना–सम्राट्की सेनाका खन्डेलाराज्यपर अधिकार करना–केसरीसिंह और फतेसिंह दोनों भ्राताओंका खन्डेलाराज्यपर विभाग करना–फतेसिंहका प्राणनाश–दिल्लीके सम्राट्के विरुद्ध केसरीसिंहकी अवाध्यता प्रकाश–सम्राट्की सेनाके साथ केसरीसिंहका युद्ध–उनका प्राणनाश यवनसेनाका उनके पुत्र उदयसिंहको बंदी करना–उदयसिंहका बंदीभावसे अजमेरमें रहना–खण्डेला पर फिर अधिकार–उदयसिंहका मुक्तिलाभ और खण्डेलाकी प्राप्ति–मनोहरपतिके विरुद्ध उदयसिंह का समर–षड्यन्त्र–आमेरपति जयसिंहका खन्डेलाको घेरना–उदयसिंहको भागना–उनके पुत्र सवाईसिंहका खण्डेला प्राप्त करना–सवाईसिंहका आमेरराज्यकी अधीनता स्वीकार करना–खण्डेला विभाग करना, सवाईसिंहका प्राण त्याग।

इतिहासवेत्ता कर्नल टाड साहब मूल जयपुरराज्यके राजनैतिक इतिहासको वर्णन करनेके पीछे उस मूलराज्यसे उत्पन्न हुई शेखावाटी नामक एक स्वतंत्र सामान्तोंके अधिकारी देशके इतिहासको वर्णन कर गये हैं। इतिहासवेत्ताने लिखा है, "कि हम शेखावत् सामन्त सम्प्रदायके इतिहासको वर्णन करनेके लिये आगे बढे है। यह सम्प्रदाय आमेरकी बहुतसी सामन्त श्रेणीसे सृष्ट हुई थी और ऐसी कितनी ही घटनाओ और समयके गुणसे यह सामन्तोंकी सम्प्रदाय इस समय प्रबल सामर्थ्यको संचय कर रही है। इसका मूलराज जयपुरके समान है। यद्यपि इस सम्प्रदायमे किसी लिखी हुई शासनमूलक व्यवस्थाका प्रचार नहीं हुआ, स्थाई राजनैतिक सम्मिलित शासनकी सभा नहीं है, न इसका कोई प्रधान नेता नियुक्त है। परन्तु सामन्त साधारणकी स्वार्थरक्षाके लिये सभी एकताके सूत्रमें बँध रहे है, मानों इसका किसीने भी इस प्रकारका विचार नहीं किया. इस सम्मिलित सम्प्रदायमें कोई निर्दिष्ट राजनीति नहीं है, कारण कि जिस समय साधारण सामन्त अथवा किसी सामन्तके विशेष स्वार्थनाशके लिये कोई उद्योग हुआ उस समय शेखावाटीके समस्त सामन्तोंने उदयपुरमें इकट्ठे होकर किस प्रकारके उपाय अवलम्बन करके कल्याणके निमित्त एक मतसे कार्य किया था"।

इस शेखावाटी सामन्त सम्प्रदायकी उत्पत्तिके सम्बन्धमे टाड् साहब लिखते है, "आमेरके राजा उदयकरणके तीसरे पुत्र बालोजी संवत् १४४५ सन् २३८९ ईस्वीमे आमेरके सिहासन पर अभिषिक्त हुए, यह सामन्त उन्हींके वंशधर है। बालोजीके समयमें आमेरके समाजकी जैसी राजनैतिक अवस्था थी यदि उसकी ओर हम देखते है तो जाना जाता है कि वर्तमानके समस्त भूखंड शेखावाटीके सामन्तोंकी सम्प्रदायके अधिकारमें थे। वह चौहान और नवरराजवंशीय सामन्त इस देशको खंड २ में विभक्त करके शासन करते थे, तभी वह कठिन मुसलमानोंके अत्याचार और पीड़नसे शीघ्र ही समय २ पर वश्यता स्वीकार करनेको वाध्य होते थे।

इस समय शेखावत नामकी जो सामन्त सम्प्रदाय विशेपरूपसे प्रसिद्ध है, वास्तवमें बालोजी उन अगणित वंशधरोके आदि पुरुष थे। बालोजीके पोतेको अमृतसर नामक देशका अधिकार प्राप्त हुआ; परन्तु उन्होंने अपने बाहुबलसे उक्त देशपर अधिकार किया था, या और किसी उपायसे प्राप्त किया हो यह नहीं जाना जाता। उनके तीन पुत्र उत्पन्न हुए-(१) मोकलजी, (२) खेमराजजी (३) खारद। मोकलजी अपने पिताके पदपर अमृतसरके अधीश्वर हुए। दूसरे पुत्र खेमराजजीके वंशधर बालापोता नामसे विदित थे। इनमे एक आमेरके बाराकोटरी अर्थात् बाहर प्रधान सामन्तोंके अन्यतर है। खारदके औरससे लुमन नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ उसके उत्तराधिकारी कूमावत् नामसे विदित थे, परन्तु इस समय उनकी संख्या प्राय: लोप होगई थी।

"मोकलने दीर्घकालतक पुत्रहीन अवस्थासे समय व्यतीत किया, एक मुसलमान धर्मप्रचारक फकीरके आशीर्वादसे मोकलके एक पुत्र उत्पन्न हुआ; उस फकीरके सम्मानके लिये पुत्रका नाम सेखाजी रक्खा गया। राजपूतानेका एक प्रधान अंश जो वर्तमान समयमे सेखावत् नामसे विदित है, इस भूखंडमे अगणित सामन्त वंशधरोके आदिपुरुप यह सेखाजी थे। उस मुसल्मान धर्मप्रचारक फकीरका नाम सेख बुरहान था। उसकी दरगाह अचरोलसे तीन कोस और मोकलके स्थानसे सातकोस दूरीपर बनी हुई है। वह दरगाह इस समय भी विराजमान होरही है। यह घटना तैमूरके भारतजयके थोड़े ही कालके पीछे हुई थी। इस कारण यह भी संभव होसकता है, कि उक्त सेखबुरहान एक परमधार्मिक धर्मप्रचारक हो, वह वीर तेजस्वी राजपूत जातिको अपने धर्ममें दीक्षित करनेके लिये इस देशमें रहते थे, इस बातको वह भली भाँतिसे जान गये थे, यद्यपि वह अपने उद्देशको पूर्ण अर्थात् राजपूतजातिमे मुसल्मान धर्मका प्रचार करके सफल मनोरथ नहीं होसकते थे। परन्तु अतिथि और शरणागत पालक राजपूत गण अवश्य ही उनके प्राणोकी रक्षा करके उनका प्रतिपालन करते थे"।

शेख बुरहान भ्रमण करनेके लिये बाहर जाकर एक समय अमृतसरकी सीमाके एक विस्तारित प्रान्तमे पहुँच गये। दैवयोगसे मोकलजी भी उस स्थान पर

उपस्थित थे, शेखबुरहान मोकलजीके समीप जाकर अभिवादन करके बोले, क्या आप हमको कुछ भिक्षा देंगे ? " मोकलजीने नम्रतापूर्वक कहा, कि " आप जो इच्छा करैंगे वही मिलेगा। " शेखबुरहानने केवल थोड़ेसे दूधकी इच्छाकी। सेखावत् सामन्तोंको दृढ़ विश्वास था कि शेखबुरहान उक्त प्रार्थनाके पीछे एक असंभव कार्य दिखावैंगे इस कारण एक दो दूधवाली भैंस कि जिनका दूध कुछ ही समय पहिले दुहागया था, शेखजीके समीप लेआये। शेखबुरहानने कुछही समयके उपरान्त उन दुग्धहीन भैंसोंके थनोंमेंसे नदीकी समान प्रबल स्रोतेसे दुग्धको दुहलिया। इस आश्चर्यजनित कार्यको देखकर वृद्ध मोकलजीके मनमें दृढ विश्वास होगया कि यह मुसल्मान फकीर अवश्य ही दैवशक्ति सम्पन्न है, यह अवश्य ही इस प्रकारसे दैवशक्तिका कार्य दिखानेमें समर्थ है। उन्होने कुछही कालके पीछे उस फकीरसे आशिर्वाद माँगा कि मेरे एक पुत्र उत्पन्न हो। वास्तवमें मोकलजीकी यह अभिलाषा पूर्ण होगई, यथा समयमें उनके एक पुत्र उत्पन्न हुआ और बुरहानकी आज्ञासे उस पुत्रका नाम बुरहानकी जातिके नामके अनुसार "शेखा" रक्खा गया। बुरहानने और भी आज्ञादी कि " यह बालक मानों आजीवन मुसल्मान बालकोंके व्यवहारयोग्य बद्धी नामक माला धारण करेगा। जिस समय मालाके खोलकर रखनेका प्रयोजन होगा उस समय वह पीरकी दरगाहके किसी ऊँचे स्थानपर रखनी होगी और इस बालकको नीले वर्णका जामा और टोपी पहराई जायगी। किसी समय शूकरका मांस वा अन्य कोई मांस जिसमें उसका रुधिर रहै, बालकको आहार न कराया जायगा। शेखबुरहानने मोकलसे यह कहा कि शेखावत् वंशमें जिस समय कोई पुत्र उत्पन्न होगा, उस समय एक बकरेकी बलि दीजायगी। कुरानके कलमेका पाठ किया जायगा, और उस बकरेके रुधिरसे बालकको स्नान कराया जायगा "। यद्यपि इस बातको चारसौ वर्ष बीत गये परन्तु मोकलजीने शेखबुरहानसे उक्त नियमपालन करनेके लिये जो प्रतिज्ञा की थी वह बराबर मानी जाती है। मोकलजीके अगणित वंशधर दशहजार मीलकी भूमिमें निवास करते है, वह लोग आजतक धर्मविश्वासके साथ उस आज्ञाका पालन करते आते हैं। यद्यपि चिरकालसे प्रचलित हुई रीतिके अनुसार प्रत्येक राजपूत प्रत्येक वर्षमें एकदिन शूकरका शिकार करके उसके मांसको खाते हैं ऐसी विधि प्रचलित है, परन्तु शेखावतने किसी समय भी वराहका शिकार नहीं किया। यद्यपि समयके फेरसे शेखावत बालकोंको बद्धीपहराना, उसे दरगाहमें रखनेकी प्रथा इस समय प्रबल नहीं है परन्तु आजतक भी प्रत्येक शेखावतका बालक जन्म लेते ही दो वर्षतक नीले रंगके कुर्ता टोपी पहिरा करता है। शेखावतोंने उक्त शेखबुरहानके सम्मानके लिये और एक प्रबल चिह्नकी आजतक सम्मान सहित रक्षाकी है, अर्थात् शेखावतकी जातीय हरिद्रा वर्णकी पताकाके चारोंओर नीला फीता लगाया जाता है। शेखावतोंमें ऐसा प्रबल मन्तव्य प्रचलित है, कि शेखावत् चाहे दूरस्थान पर निवास करनेसे अथवा अन्य किसी कारणसे सेखकी दरगाहमें अपने २ बालकोंके गलेमेंकी बद्धीकी रक्षा नहीं करसकें, नहीं तो वह किसी समय भी सौभाग्यवान नहीं होसकैंगे, राजपूतजातिकी प्रतिज्ञापालनका एक चूडान्त निदर्शन यह है कि यद्यपि उक्त

अमृतसर और उसके निकटवर्त्ती देश आमेरराज्यके अधिकारमे थे, परन्तु उक्त शेख-बुरहानकी दरगाह आजतक स्वाधीनभावसे रक्षित है; और उसपर राजसामर्थ्यका प्रयोग नही किया जाता। जो कोई उनकी शरणागत जाता है, राजा उनको बलपूर्वक नहीं पकड़ सकता। दरगाहके निकट ताला नामक नगरमे उक्त शेखके सौसे अधिक वंशधर बसते हैं और वे जमीजोतका लगान नहीं देते।

शेखाजी पिताकी मृत्युके पीछे पितृपद पर विराजमान हुए, और अपने बाहुबलसे प्रतिवासियोके निकटसे तीनसौ साठखंड ग्रामोको उन्होने अपने अधिकारमे करलिया। शेखाजीके बाहुबल और प्रतापका समाचार शीघ्रही आमेरराज्यके अधीश्वरने सुना। तुरन्त ही आमेरकी सेनाने उनपर आक्रमण किया, पर उन्होने चूनी पठानोकी सहायतासे अपने अधीश्वर प्रभु आमेर राज्यकी सेनाको भगा दिया। इस समय इस देशके प्रत्येक सामन्त आमरपतिको अपना अधीश्वर मानते थे, इस देशमे जो घोड़ेका बच्चा उत्पन्न होता था, वह कर स्वरूपमे आमेरराजको दिया जाता था, परन्तु शेखाजीने अपने बाहुबल और प्रबल प्रतापसे आमेरराज्यके अधीन तानीगढ़ोको एकबार ही छीन लिया, और सम्पूर्ण स्वाधीनताको संग्रह कर लिया। इस कारण जिस आमेर राज्यसे यह शेखावाटी का राज्य बना था, इसी समयसे उस मूलराज्यके साथ परस्परमें सम्पूर्णतः विछिन्नभाव स्थापित हुआ। आमेरपति सवाई जयसिंहके समयतक दीर्घकालसे शेखावाटीके सामन्त इस प्रकारसे स्वाधिनताके अमृतमय फलको भोगते रहे। पीछे सवाई जयसिंहने दिल्लीके सम्राट्के अधीनमे ऊँचे पदपर नियुक्त होकर सम्राट्की सेनाकी सहायतासे इस शेखा-वाटीके स्वाधीन सामन्तोपर आक्रमण करके उन्हे युद्धमे परास्त किया। और इनको आमेर राज्यके अधीन सामन्त पदपर स्थापित कर रीतिके अनुसार उनसे कर लिया।

शेखावाटीके आदि नेता शेखाजीने दीर्घकाल तक प्रबल प्रभुता विस्तार करके अपने प्राण त्याग किये। उनके पुत्र रायमल्ल पिताके पदपर स्थित हुए रायमल्लके शासन और बलविक्रमका इतिहासमे कोई लेख दिखाई नही दिया। रायमल्लके पीछे सूजा अमृतसरके सिंहासनपर विराजमान हुए। उनके तीन पुत्र उत्पन्न हुए (१) नूनकरण (२) रायसाल और (३) गोपाल। बड़ापुत्र अमृतसर और उसके अधीनके ३६० ग्रामोका अधीश्वर हुआ, और रायसाल, लाम्बी नामक देशपर और गोपाल झाड़ली नाम देशके सामन्त पदपर स्थित हुए। दूसरे भ्राता रायसालसे एक घटनाके कारण शेखा-वाटीके सौभाग्यका सूर्य शीघ्रतासे उदित हुआ।

शेखावाटीके नेता नूनकरणका देवीदास नामका एक बनिया मंत्री था, वह बड़ा ही तेजस्वी और चतुर पुरुष था, एक समय देवीदासने अपने प्रभुके साथ तर्क करते

---

(१) कर्नल टाड् साहबने टीकेमे लिखा है कि " इस रीतिका पाठ करके पाठकोको स्मरण होसकेगा कि प्राचीन फारिसराज्यमे इस प्रकारकी रीति प्रचलित थी, दूरके शासनकर्ता इस प्रकारसे घोड़ोंके बचेको करमे भेजते थे। हेरोडाटसने कहा है कि एक आरमेनियाने करस्वरूपमें वर्षदिनमें बीस हजार घोड़े भेजे थे '।

हुए कहा "कि पिताकी सम्पत्ति पर अधिकार प्राप्त करनेकी अपेक्षा अपने ही वल और पराक्रमसे सौभाग्यका उपार्जन मनुष्यका कर्त्तव्य है, यही जगदीश्वरका अनुग्रह है। नूनकरणने इसका बिना ही समर्थन किये दृढतापूर्वक प्रतिवाद करके उत्तर दिया कि आपकी यह युक्ति कदापि न्यायसंगत नहीं है; वरन् अव आप हमारे भ्राता रायसालके समीप लाम्वींमें जाकर इस युक्तिकी सत्यताकी परीक्षा कीजिये। नूनकरणने सरलभावसे उसको पदसे उतार दिया, परन्तु देवीदासने किसी प्रकार भी अपने मन्तव्यको न बदला, और शीघ्र ही वह अमृतसरको छोड़कर अपनी धनसम्पत्ति और कुटुंवको साथ ले लांवीमे आपहुँचा। यद्यपि रायसालने उनको भलीभाँति आदर सत्कारके साथ ग्रहण किया परन्तु देवीदास तुरन्त ही इस वातको जानगया कि रायसालकी आमदनी वहुत थोडी है इस कारण यहाँ रहनेसे खर्च वहुत वढ़ जायगा, फिर जिस मन्तव्यको प्रकाश करनेके लिये पदसे अलग हुआ हूँ उस मन्तव्यकी परीक्षा करनेका यहाँ कोई विशेष उपाय नहीं है, अतएव उसने स्पष्ट शब्दोंमे कहा कि मै दिल्लीमें यवनसम्राट्के दरवारमे जानेकी अभिलापा करता हूँ। वरन इसने रायसालको भी अपने साथ वहाँ लेजाकर दरवारमे अपने भाग्यकी परीक्षा करनेका परामर्श दिया। रायसाल एक ऊँची अभिलापाका वीर पुरुप था यह केवल अपनी सामर्थ्यके वलसे वीस सवारोंको साथ ले दिल्लीको गया। इस समय अफगानियोंके आक्रमणको रोकनेके लिये सम्राट्के अधीनकी एक सेना सज रही थी। ऐसी घटना प्रायः हुआ ही करती है। रायसाल मना करनेपर भी अपने उन वीस सवारोंके साथ रणक्षेत्र पर गया, और इस भयंकर युद्धमे उसने असीम वलविक्रम प्रकाश करके वादशाही सेनाके प्रधान सेनापतिके सम्मुख रणक्षेत्रमें शत्रुपक्षके एक नेताका मस्तक काटकर विशेष प्रसिद्धि प्राप्तकी। उस दिन उसी नेताके मारेजानेसे युद्धमे विजय प्राप्त हुई थी। रायसाल कौन है, और कहाँ रहता है। यवनसेनापति इसको कुछ भी नहीं जानता था युद्ध समाप्त होनेके पीछे सेनापति उस अपरिचित वीरकी खोज करने लगा, परन्तु किसी विशेष कारणसे रायसालने स्वजातीय सेनाका संग त्याग दिया, यह पहिलेसे ही अन्य स्थान पर रहने लगे, इस कारण यवनसेनापतिको इसका कुछ पता न मिला। परन्तु उन्होने रायसालकी खोज कुछ विशेषतासे नहीं की। उसीसे देवीदासको उक्तिकी सत्यताकी परीक्षा सरलतासे न होसकी। तव प्रधान सेनापतिने शीघ्र ही यह समाचार प्रचारित किया कि सेनाकी प्रत्येक श्रेणीके सेनापति जो रणक्षेत्रमे, उपस्थित थे सवको "जियाफत्" नामक प्रमोदसभामे आना होगा और वह उस स्थानपर प्रधानसेनापतिके प्रतिसन्मान दिखावे। शीघ्र ही जियाफत नामक प्रमोदसमिति स्थापित हुई, प्रत्येक जातिके प्रत्येक श्रेणीके प्रधान२ सेनापति एकएक करके प्रधानसेनापतिके सम्मुख आ उपस्थित हुए, और उनको मान दिखाने लगे, रायसाल भी उक्त घोषणापत्रके अनुसार वहाँ गए इनके सम्मुख होते ही प्रधान सेनापतिने तुरन्त ही इनको पहिचान लिया, कि इसी असीम साहसी वीरके लिये इतनी खोज रही थी। शीघ्र ही उसका नाम और उसके वंशका वृत्तान्त पूछा गया। अमृतसरके महाराज नूनकरण भी अपनीसेनाके साथ इसी स्थानपर यवनसेनाके

अधिकारमें उपस्थित थे। उन्होंने रायसालको देखकर ईर्षावश हो तिरस्कार करते हुए कहा, कि मेरी विना आज्ञाके तुम इस स्थानपर क्यों आये? परन्तु नूनकरणके इस तिरस्कारसे रायसालकी कोई हानि नहीं हुई। प्रधानसेनापतिने वीर श्रेष्ठ रायसालको सम्राट् अकबरके निकट परिचित करादिया, और उसके वलविक्रमकी ऊँची प्रशंसा की। वादशाह अकवर सदैव गुणियोंको उचित पुरस्कार दिया करता था। उसने शीघ्र ही रायसालको "रायसाल दरवारी" की उपाधि दी, और अपनी कृपाके विशेष चिह्न स्वरूप उस समय चन्देल राजपूतोंके अधिकार भुक्त देवासो और कासली नामके दो देशोंका अधिकार उसको दिया। रायसालका अपने ही भाग्यसे उन्नति पानेका प्रथम सूत्रपात हुआ। उसने सम्राट्के दिये हुए नवीन देशोंपर अपना अधिकार किया था कि इतनेमे सम्राट् अकबरका वुलावा आनेसे उसे वहां फिर जाना पड़ा, इस समय भटनेरके विरुद्ध सम्राट्की सेना जारही थी। सम्राट् अकवरने रायसालको महावलवान् पुरुप जानकर उसको उस सेनाके साथ भेज दिया। युद्धक्षेत्रमे फिर इनके विशेप वल विक्रम प्रकाशसे सम्राट् अकबर और भी संतुष्ट हुए, और इसको खाण्डेला तथा उदयपुर नामक दो देशोंकी सनद दी। यह दोनो देश उस समय निरवाण राजपूतोंके अधिकारमें थे, परन्तु उन राजपूतोंने यवन-सम्राट्की अधीनता स्वीकार न की थी और क्रमानुसार अत्याचार उत्पीड़न और लूटमारमें लिप्त थे।

वीर श्रेष्ठ रायसालने देखा कि सम्राट्ने उनको जिन देशोंके अधिकारका स्वत्व दिया है उन दोनो देशों परसे राजपूतोंको भगानेकी किसीकी सामर्थ्य नही है; इस कारण वह कौशलजालका विस्तार करने लगे। रायसालने भटनेरके युद्धमें जानेके पहिले खण्डेलाके अधीश्वरकी एक कन्याके साथ पाणिग्रहण किया था। विवाहके समय कन्याके पिताने जो देहज दिया था वह अत्यन्त सामान्य था, इनके योग्य न था इसीसे इसने देहजको वढ़ानेके लिये कहा; निरवाण राजपूतने धीरज धरनेमे असमर्थ होकर कहा, कि "हमारे पास अव कुछ नही है, केवल यह शिखर प्रस्तुत है, यदि इच्छा हो तो ले लीजिये"। यह वात उस समय रायसालके हृदयमें चुभ गई थी, इस समय रायसाल उपयुक्त समरमें जाकर सेनासहित खण्डेलाकी ओर चला। वह इस वातको भली भाँतिसे जानता था कि आवश्यकता होने पर अपनी सेना इस विपयमे सहायता करैगी। रायसालको सेना सहित आताहुआ सुनकर जब खण्डेलाके अधीश्वरने अपनी रक्षाका कोई उपाय न देखा तव वह भयभीत हो नगर छोड़कर भाग गया। नगरनिवासियोंने भ्रमके वश हो रायसालकी अधीनता स्वीकार की, इसी समयसे यह खाण्डेलादेश शेखावाटीका एक प्रधान नगर मानागया। रायसालके उत्तराधिकारी रायसालोत् नामसे पुकारे जाकर शेखावाटीके समस्त दक्षिण देशमें निवास करते थे। परिणाममें सृष्ट और एक वंशकी शाखासे उत्पन्न सिद्धानी नामकी सम्प्रदाय उत्तर अंशमे निवास करती थी। रायसालने खण्डेला पर अधिकार करनेके बहुत

दिन पीछे उदयपुरको अपने अधिकारसे करलिया। उदयपुर पहिले निरवाण राजपूतोंके अधीनमें कसुंवी नामसे प्रख्यात थां।[1]

रायसाल अपने यथार्थ अधीश्वर आमेरराज मानसिंहके साथ मेवाड़के महाराणा प्रातपसिंहके साथ युद्ध करनेको गये थे। कावुलके अधीन कोहिस्थानके अफगानियोंके विरुद्धमे दिल्लीके सम्राट्ने जो सेना भेजी थी, रायसालको उस सेनाके साथ भी वहाँ भेजा था। रायसालने प्रत्येक युद्धमे बडी वीरता दिखाकर वादशाहसे वहुतसा पुरस्कार पाया था। इस विषयका हमै कोई समाचार नही मिला कि रायसालने किस समय प्राणत्याग किये। देवीदासने जो कहा था कि पिताके उत्तराधिकारित्व लाभकी अपेक्षा अपनी प्रतिभाके वलसे अपना सौभाग्य उपार्ज्जन करना ही आवश्यक है, और वही जगदीश्वरका प्रधान अनुग्रह है सो रायसालने सम्पूर्णरूपसे कर दिखाया।

वीरश्रेष्ठ रायसालने अपने सुशासनसे अपने अधिकारी देशोंमे सम्पूर्णरूपसे शान्ति स्थापन करके प्राण त्याग किये, वह जिस सुविस्तृत देशपर शासन करते थे उसे उन्होंने सात भागोंमें विभक्त कर अपने सातों पुत्रोंको देदिया। उन सात पुत्रोसे अगणित परिवार और संप्रदायोकी सृष्टि हुई; और वह पैतृक आदि पुरुषके नामके अनुसार भोजानी, सिद्धानी, लाड़खानी, ताजखानी, परशुरामपोता, हररामपोता, नामसे रजवाड़ोंमे सर्वत्र शेखावत् ख्यातिसे विदित हुए।

रायसालके निम्नलिखित सात पुत्रोंको निम्नलिखित यह सात देश मिले थे-

१-गिरिधर	खण्डेला और रेवासा।
२-लाड़खान	खाचरियावास।
३-भोजराज	उदयपुर।
४-तिरमलराव	कासली और ८४ ग्राम।
५-परशुराम	विवाई।
६-हररामजी	मून्दडी।
७-ताजखान	कोई देश प्राप्त नहीं हुआ।

ज्येष्ठ पुत्र गिरधरजीको जिस प्रकार पिताके अधिकारी देशोंका प्रधान अंश प्राप्त हुआ था, उन्होने उसी प्रकारसे पिताकी समान साहस शूरवीरता और वल विक्रमको प्रकाशित कर दिल्लीके यवनसम्राट्के द्वारा "खण्डेलाके राजा" की उपाधि प्राप्त की। इस समय भारतके यवन साम्राज्यमे वड़ी गड़वड़ होरही थी। मेवातके पहाड़ी देशोपर मेव जातिके पहाड़ी तस्कर लोगोने भारतवर्षकी राजधानीके निकट

(१) निरवाण सम्प्रदाय चौहान जातिकी एक शाखा विशेष थी। इन निरवाण राजपूतोंने इस देशमे बड़ा आधिपत्य विस्तार किया था, और उक्त कसुंवी जो इस समय उदयपुर नामसे प्रसिद्ध हैं, वहां उनकी राजधानी थी। इस उदयपुरमें ही शेखावाटीके समस्त सामन्त समयपर जातीय प्रश्नकी मीमासाके लिये इकट्ठे होते थे।

विशेष लूटमार करनी प्रारंभ की। यवनसम्राट्ने वीरवंशीय खण्डेलापति गिरधरजीको सब अंशोंमें योग्यजानकर उस दस्युदलके नेताके जीवित पकड़ लाने वा मारनेका भार उन्हींके अर्पण किया। गिरधर उस कार्यके पूर्ण करनेमें समर्थ भी हुए। गिरधर उक्त आज्ञाको मान विचारने लगे कि यदि एक बड़ी सेना साथमें लेकर उस तस्करदलके पकड़नेके लिये बाहर होंगे तो वे अवश्य ही भयभीत हो पहाड़की कन्दराओंमे छिप जाँयगे और कभी भी सरलतासे हाथ नही आवेंगे इस कारण उन्होंने असीम साहसके साथ निर्भय हो अत्यन्त सामान्य सेना साथ ले प्रत्येक पर्वत पर भ्रमण करनेके पीछे तस्करोंके नेताको एक स्थानमे पाकर उसपर आक्रमण किया। आक्रमण करते ही समर उपस्थित होगया, उस समरमें असीम बलविक्रम प्रकाश करके गिरधरने दस्युदलको परास्त करके उनके नेताका जीवन समाप्त करादिया। बादशाहने इससे अत्यन्त ही संतुष्ट हो उनको राजाकी उपाधि दी। अत्यन्त दुःखका विषय है कि गिरधर बहुत दिनोंतक इस संसारमें जीवित न रहसके। वह एक समय यमुनाजीमे स्नान कर रहे थे, इसी समयमें सम्राट्की सभाके एक उच्च पदाधिकारी दुश्चरित्र मुसलमानने अत्यन्त शोचनीय रूपसे उनके प्राणनाश किये। नीचे उसका वर्णन किया गया है।

एक समय खण्डेलाराज गिरिधरजीका एक अनुचर दिल्लीके एक लुहारकी दूकानमे बैठा हुआ अपने स्वामीकी तलवार बनवा रहा था। उस समय रास्तेमे एक मुसल्मान जारहा था। उसने इस राजपूतको अकेला खड़ा हुआ देखकर कोई असभ्य मनुष्य समझा और उसे चिढ़ानेकी इच्छासे उसने लुहारकी दूकान पर जाकर उस राजपूतको व्यंग वचन कहना और विद्रूप करना प्रारंभ किया। राजपूतने अपनी मातृ-भाषामे धीरभावसे उत्तर दिया। इसपर मुसल्मानने एक जलता हुआ अंगार उस राजपूतकी बड़ी पगड़ीके ऊपर डालदिया। राजपूत इससे भी कुछ कुपित न हुआ मुसल्मान आनन्दित होकर हसने लगा। परन्तु कुछ ही समयके पीछे पगड़ीमे आग जलने लगी। तब तुरन्त ही उस राजपूतने अपनी सानधरी हुई तलवारसे मुसल्मानके दो टुकड़े करदिये। वह मुसल्मान बादशाहकी सभाके एक प्रतिष्ठित अमीरका सेवक था। उक्त अमीर खण्डेलाराजके एक सेवकसे अपने सेवकके प्राणनाशकी वार्ता सुनकर अत्यन्त ही क्रोधित हुआ। वह अपने अनुचरोंके साथ खण्डेलाके राजाके निवासस्थानपर गया खण्डेलाराज गिरिधर उस समय वहां नहीं थे। वह उस समय इकले ही अस्त्रहीन अवस्थामें यमुनामें स्नान कर रहे थे। अन्तमें उक्त अमीरने यमुनाके किनारे जाकर कायर पुरुषोंकी तरह उस अस्त्रहीन वीर खण्डेलाराज गिरधरकी हत्या की।

खण्डेलाराज गिरिधरने कई एक पुत्र छोड़े थे, इनमें बड़े पुत्र द्वारकादास पिताके सिंहासन पर विराजमान हुए। परन्तु उनको सिंहासन पर बैठनेके कुछ ही दिन पीछे एक भयानक षड्यंत्रजालमे फँसना पड़ा। शेखावत् सम्प्रदायकी प्रधान शाखाके आदि पुरुष नूनकरणके एक वंशधर थे. जो उस समय मनोहरपुरके अधीश्वर पदपर प्रतिष्ठित

थे; उन्होंने जाति शत्रुताको चरितार्थ करनेके लिये द्वारकादासको उस महाविपत्तिमें डालनेकी गुप्तभावसे चेष्टा की। दिल्लीके बादशाह इस समय शिकार करके एक सिंहको पकड़ लाये। उन्होंने प्रचलित रीतिके अनुसार एक समय उस सिंहके साथ वीरोंसे युद्ध करनेका समाचार प्रकाशित किया गया, उक्त प्रचारके प्रकाश होतेही उल्लिखित मनोहरपुरपतिने सम्राट्के यहाँ जाकर कहा "हमारे जातिके रायसालोत द्वारकादास जो विख्यात वीर नाहरसिंहके शिष्य हैं वही इस पशुराजसिंहके साथ युद्ध करनेके योग्यपात्र हैं"। बादशाहने यह बात सुनकर द्वारकादासको सिंहके साथ युद्धकरनेकी आज्ञादी। द्वारकादास इसबातको भलीभांतिसे जान गये थे कि मनोहरपुरपतिनेही उनके प्राणनाशके लिये इस षड्यन्त्रजालका विस्तार किया है, परन्तु वे इससे कुछ भी विचलित वा भयभीत न हुए, वरन शीघ्र ही इस आज्ञाके पालन करनेमें सम्मत हुए। रंगभूमि मनुष्योंसे भरगई। द्वारकादास स्नान पूजाकर एक पीतलके पात्रमें पूजाकी समस्त सामग्री अर्थात् फूल नैवेद्य लेकर रंगभूमिमें जापहुँचे और उस भयानक सिंह पशुराजके सम्मुख हुए। मनोहरपुरपति विचार रहे थे कि द्वारकादास जिस समय निरस्त्र होकर उन्मत्तकी समान पूजनकी सामग्री लेकर महाबली सिंहके निकट जारहे हैं, तब तो इनकी मृत्यु अत्यन्त ही निकट होगी। इस रंगभूमिमें साधारण दर्शकोंके अतिरिक्त स्वयं बादशाह भी आये थे और द्वारकादासको उस भावमें बैठा हुआ देखकर अत्यन्त विस्मित हुए। परन्तु द्वारकादासने सिंहके सम्मुख जाकर सबसे पहिले सिंहके मस्तकपर चन्दनका टीका लगाकर उसके गलेमें माला डाली और आप आसन पर बैठ कर पूजा करने लगे, सिंह धीरभावसे आगे जा द्वारकादासके मुखकमलको अपनी जीभसे चाटने लगा। द्वारकादास यथार्थ भक्तकी समान अपनी अन्तर्हित शक्तिसे निर्भयहो अटलभावसे बैठा रहा। कुछ ही समयके पीछे द्वारकादास सम्राट्की आज्ञासे वहाँसे चला आया। सिंह किंचित् भी क्रोधित न हुआ, और न उसने उनपर आक्रमण करनेकी चेष्टा की। यह देखकर प्रत्येकदर्शक अगाध विस्मयके समुद्रमें निमग्न हुए। यवनसम्राट्ने विचारा कि द्वारकादास अवश्य ही दैवीमंत्रसे बलवान है, इस कारण उन्होंने इनको अपने निकट बुलाकर कहा, कि "आपकी जो इच्छा हो सो माँगो, मैं वही तुम्हारी इच्छा पूरी करूंगा।" द्वारकादासने केवल इतना ही कहा "कि मैंने इस विपत्तिसे अपने भाग्यबलसे ही उद्धार पाया है, आप ऐसी विपत्तिके मुखमें अब और किसी मनुष्यको न डालना, बस आपसे मेरी एकमात्र यही प्रार्थना है"।

मालूम होता है कि द्वारकादास उस समयके सुप्रसिद्ध महायोधा खां जिहानलोदी के द्वारा मारेगये। शेखावटीकी दंतकथाओंमें वर्णित है कि उक्त खांजिहान लोदी भी द्वारकादासके द्वारा मारागया था। उक्त प्रवादमें दोनो वीरोंकी वीरताकी कहानी जिस भावसे वर्णित हुई है, वह इस वीरजातिके इतिहासके पक्षमें अत्यंत प्रशंसा जनक है। खाँजिहान और द्वारकादास दोनों ही परम मित्र थे, एक समय दिल्लीके सम्राट् खाँजिहान्के प्रति अत्यन्त ही कुपित हुए और द्वारकादासको

आज्ञा दी कि शीघ्र ही खांजिहानके जीवित वा मृत शरीरको लाकर हाजिर करो। इस आज्ञाको सुनकर द्वारकादास महा विपत्तिमें पड़े। उन्होंने खांजिहानसे कहला भेजा कि हमारे ऊपर यह अत्यन्त घृणित कार्यके साधनका भार अर्पित हुआ है अतएव क्या तो आपही आत्मसमर्पण कीजिये नहीं तो आप भाग जाइये परन्तु उस वीरने कादरकी भांति भागनेकी अपेक्षा मित्रके हाथसे मरना ही श्रेष्ठ समझा। फरिश्तेसे यह खांजिहानकी जीवनी और वीरता मूलक कार्य कौतूहलका पूर्ण विवरण वर्णन पाया जाता है अधिक क्या कहें उसी कारणसे उक्त शेखावत्के नेताकी वीरताका वर्णन भी उसमे सम्बद्ध हुआ है। दोनो वीर संग्राम क्षेत्रमें जाकर एक दूसरेकी तलवारसे मारेगये।

द्वारकादासके पुत्र वीरसिंह देव अपने पिताके पदपर विराजमानहुए, वीरसिंहदेव सेना सहित यवनसम्राट्की आज्ञासे उनकी सेनाके साथ दक्षिण देशकी विजयमे नियुक्त थे। और उन्होने अपने बलविक्रमके बलसे बादशाहको संतुष्ट कर परनाला देशके शासनकर्ता पदपर प्राप्त हो प्रबलप्रतापके साथ उस देशपर अपना राज्य स्थापित किया। खण्डेलाके इतिहास लेखक लिखते हैं कि वीरसिंहदेव, उनके अधीश्वर प्रभु आमेरपतिके अधीनमें न रहकर स्वयं स्वाधीनभावसे कार्य करते थे। परन्तु कर्नल टाड् साहब लिखते है कि मिरजा राजा जयसिंह इस समय राजपूत राजाओमे सम्राट्की सभामे सबसे अधिक सम्मानित और प्रसिद्ध तथा सेनानीरूपसे प्रबल सामर्थ्यवान् थे और वीरसिंह उनके अधीनमें आज्ञा पालन करते थे।

वीरसिंहदेवके निम्नलिखित सात पुत्र उत्पन्न हुए, (१) बहादुरसिंह, (२) अमरसिंह (३) श्यामसिंह, (४) जगदेव (५) भूपालसिंह (६) मोकरीसिंह (७) पेमसिंह। वीरसिंहने जीवित अवस्थामे बहादुरसिंहको युवराज पदपर अभिषिक्त किया, और अन्यान्य पुत्रोंको राज्यका एक २ देश जागीरमे दिया। राजा वीरसिंहदेव, बहादुर-सिंहको अपनी राजधानीमे रखकर अपनी सेना सहित सम्राट्की सेनाके साथ दक्षिणको गये, उन्होने वहाँ जाते ही यह समाचार पाया कि उनके ज्येष्ठ पुत्र बहादुरसिंहदेव स्वय राजाकी उपाधि धारण करके राज्यशासन कर रहे है। वीरसिंह यह समाचार सुनकर पुत्रके आचरणसे अत्यन्त ही क्रोधित हुए। और चार सवारोंको साथ लेकर दक्षिणके डेरोंसे अपने राज्यकी ओरको चले आये। राजा वीर-सिंहदेवने खण्डेलासे दो कोशकी दूरीपर एक ग्राममे जाकर एक जाटकी स्त्रीके यहाँ डेरा लिया और उससे भोजन तैयार करनेके लिये कहा, और यह भी कहा कि हमारे घोड़ोको सावधानीसे रखना, कहीं चोर आदि न लेजॉय। यह वचन सुनकर जाटकी स्त्रीने कहा, कि क्या "बहादुरसिंह यहॉके राजा नहीं है? तुम राजमार्गमें सुवर्णकी मुद्रा फेक आओ कोई भी उनको नहीं छू सकता"। पुत्रके ऐसे युक्तिसंगत राज्यकी प्रशंसा सुनकर वृद्ध वीरसिंहदेव इतने प्रसन्न हुए कि वह जिस छद्मवेशसे आये थे उसीसे अपने डेरोको लौट गये। वीरसिंहदेवने दक्षिण देशमें ही प्राण त्याग किये।

पिताकी मृत्युके पीछे बहादुरसिंह पिताके पदपर नियमितरूपसे अभिषिक्त हुए । इस समय दिल्लीके सम्राट् औरंगजेब स्वयं सेनासहित दक्षिणके युद्धमें लिप्त थे । बहादुर-सिंह भी अपनी सेनाके साथ दक्षिणात्यमें जाकर बादशाहकी सेनाके साथ जामिले । परन्तु बहादुरखाँ नामक एक प्रतिष्ठित मुसल्मान ने बहादुरसिंहका घोर अपमान किया था, गौंड़ा मुसल्मानको बादशाहके निकटसे उस अपमान करनेका कोई फल न मिला इससे तेजस्वी राजपूत बहादुर अपने डेरे त्यागकर चले आये । इसी कारणसे मनसबदार सरदारोंकी तालिकासे इनका नाम काट दिया गया । इस कठिन समरमे नरपिशाच औरंगजेबने प्रत्येक हिन्दू प्रजासे जिजियाकर संग्रह करके राज्यके समस्त हिन्दूमात्रको एकवार ही समभूमि करनेकी आज्ञा दी ।

शेखावाटीके अधीश्वर राजा बहादुरसिंहके साथ जिस यवनसेनापति बहादुर-खाँकी शत्रुता होगई थी, दुराचारी औरंगजेबने उसी बहादुरखाँको खण्डेलासे जिजिया-कर संग्रह करने और खण्डेलादेशके समस्त देवमंदिरोंको तुड़वानेके लिये भेजा । बहादुरखाँके सम्राट्की सेनाके साथ खण्डेलाके सम्मुख पहुँचते ही खण्डेलाराज बहादुरसिंह कापुरुषोंकी तरह अपनी राजधानी छोड़कर भाग गये । सम्राट्की भयंकर सेनाके साथ जयकी आशा न देखकर यद्यपि वह भाग गये परन्तु जब जातीय धर्म जातीय विग्रह विध्वंस करनेके लिये विजातीय विधर्मी इकट्ठे हुए थे तब यथार्थ राजपूत वीरोंकी समान उनके लिये तो रणभूमिमें यथाशक्ति बल प्रकाश करके जीवनका बलिदान करना ही उचित था।सम्राट्की सेना खण्डेला राजधानीके दो कोशपर निर्विघ्नतासे आगई,समस्त शेखावत् देशमें यह समाचार फैलगया कि बहादुरसिंह खण्डेलासे भागगये । उसी समय यवन खण्डेलामें विग्रह मचाकर संपूर्ण मंदिरोंकी विध्वंस करने लगे । इस समय रायसालके दूसरे पुत्र भोजराजके वंशधर सुजानसिंह चापोली प्रदेशके अधिष्ठाता पदपर प्रतिष्ठित थे । सुजानसिंहने इस समाचारको सुनते ही यथार्थ राजपूत वीरोंकी

---

(१) पापात्मा औरंगजेबकी इस आज्ञाको किस प्रकारसे प्रबल आग्रहके साथ उसके सेवकों ने पालन किया था उसके प्रत्यक्ष उदाहरणस्वरूप प्रत्येक नगर और गाँवोंके अगणित देवालय एवं मंदिरोंके टूटे फूटे खंडहर और खंडित मूर्तियां आजलों हीनदशामें पड़ी हैं; लाहौरसे कन्याकुमारी तक इतने बड़े प्रदेशमें ऐसी एक भी प्राचीनमूर्ति नहीं है, जिसका कोई न कोई अंग औरंगजेबकी आज्ञा पालनेके लिये न तोड़ दिया गया हो । नर्मदाके एक छोटे द्वीपपर ओंकारजीकी मूर्ति है, इस मूर्तिने भारतकी मूर्तियोंके तोड़ते समय अपनी विचित्र शक्ति प्रकाशित की थी । नराधम औरंगजेबने कहा, कि-" यदि यथार्थ देवता हो तो अपनी शक्तिको प्रगट कर मेरी आज्ञा व्यर्थ करें " । इतिहास कहता है कि उक्त ओंकारजीके मस्तकमें लगुडका आघात लगते ही उनकी नाक और मुखसे रुधिर की धारा बह निकली, उसको देखकर पापी यवनोंने दूसरीवार मूर्त्तिमें कुल्हाड़ा मारनेका साहस नहीं किया । यद्यपि ओंकारजीने पापी औरंगजेबको प्रत्यक्षमें किसी प्रकारका दंड नहीं दिया किन्तु उक्त समयसे ओंकारजीके प्रति सर्वसाधारण हिन्दू मात्रकी प्रबल भक्ति होगई और उस देशकी समस्त मूर्तिमें ओंकारजीकी अधिक पूजाहोने लगी ।

समान महाक्रोधित हो उसी समय यह प्रतिज्ञा की "कि मैं अवश्य ही प्राणपणसे खण्डेलाके समस्त मंदिरोकी रक्षा करूँगा, यदि ऐसा न करूँ तो अपना जीवन दे दूँगा"। जिस समय खण्डेलामे वादशाहकी सेनाने प्रवेश किया उस समय सुजानसिंह मारवाड़की सीमामें विवाह करनेके लिये गयेथे, अतएव वह शीघ्र ही नवविवाहिता वधूके साथ अपने स्थानको लौट आये और उसको अपनी माताके समीप रखकर दोनोंसे अन्तिम विदा ले खण्डेलाकी ओर चले। इसी समय उनके समस्त कुटुम्बके लोग भी आकर उनको खण्डेलामे जानेके लिये मना करने लगे; और बोले कि "जब वादशाहकी सेना खण्डेलाके मंदिरोंको तोड़नेके लिये आई है तब खण्डेलाके राजा वहादुरसिंहही इसको रोकनेका उपाय करेंगे, आपको इस कार्यमे हस्ताक्षेप करनेका कोई प्रयोजन नहीं है"। इसपर क्रोधिताचित्त सुजानसिंहने उत्तर दिया था, कि क्या मैं रायसालके वंशधरोंमें नहीं हूँ, यवन ठाकुरजीके मंदिरोंको तोड़डाले और मैं उनको निवारण न करसकूँ झगड़ेके मिटानेका उपाय न करूँ!! भला यह कैसे होसकता है? राजपूत क्या कभी इस आक्रमणको सहन कर सकते हैं?" इस कार्यमें सुजानसिंहको दृढ़प्रतिज्ञ देखकर उनके कुटुम्बियोंमेसे ६० वीर और भी उनकी सहायता करनेके लिये चले। और उसी अल्पसेनाके साथ सुजानसिंहने खण्डेलामें प्रवेश किया,। यवनसेनापति वहादुरखाने यह नही विचारा था कि हमारे साथ लड़नेके लिये यह इस प्रकारसे आजायँगे इस कारण यह समाचार सुनकर वह अत्यन्त ही आश्चर्यमें हुआ। वह भली भाँतिसे जानगया कि जब राजपूत वीर किसी कार्यमें दृढ़प्रतिज्ञ हो जाते हैं तब वे महा भयंकर कार्य करडालते है, इस कारणसे अथवा यह स्मरण करके कि अत्यन्त सामान्य संख्यक राजपूत उसी प्रवल सेनाके विरुद्ध समर करके जीवन देनेके लिये आये हैं उसने दयाके वश हो सुजानसिंहके दो वुद्धिमान अनुचरोंको अपने डेरोंमे सलाह करनेके लिये वुला भेजा, तदनुसार इधरसे दो सम्भ्रान्त राजपूत वहादुरखाँके डेरोंमें जा पहुँचे, वहादुर खाँने उनसे कहा "यद्यपि वादशाहने खण्डेलाके देव मन्दिरोंके तोड़नेकी आज्ञा दी है परन्तु यदि आप नियमितरूपसे हमारी अधीनता स्वीकार करके मन्दिरोंके समस्त सुवर्णके कलशोंको हमे देदेंगे तो हम प्रसन्न होकर मन्दिरोंको नहीं तोड़ेगे। यह सुनकर राजपूत वीरोने वहादुरखाँसे अपनी सामर्थ्यके अनुसार वहुतसा धन देकर उक्त कार्य रोकनेका अनुरोध किया, पर वहादुरखाँने किसी भाँति भी इस बातको स्वीकार नहीं किया। वह वारम्वार कहने लगा "कि आपको कलशे ही तोड़ कर देने होंगे" इस वचनको सुनकर उक्त दोनो राजपूतोंमेंसे एक भी वीर धीरज धारण करनेको समर्थन हुआ, वह सिहकी समान गर्जने लगा "कलश उतार लेंगे!" उसके इतना कहते ही उसी समय उसने एक मिट्टीके पिंडका कलश वनाकर सम्मुख स्थापित कर क्रोधित सिंहकी समान लाल २ नेत्र करके कहा, "कलश तोड़ लागे? अच्छा, मैं कहता हूँ यदि तुममेंसे किसीकी भी सामर्थ्य है तो इस मट्टीके कलशको ही पहिले तोड़कर देखलो?" उस राजपूतके ऐसे क्रोध भरे वचन सुनकर शत्रु वहादुरखाँ भी मनही मनमें राजपूत जातिके साहसको धन्यवाद देने लगा। परन्तु वह कलश तोड़ लेनेकी प्रतिज्ञासे

विरक्त न हुआ। इसके पीछे वह दोनो राजपूत उसके डेरोंसे चले गये, और सम्मुख युद्ध करनेका प्रस्ताव पक्का करगए।

हम जिस समयकी बात लिख रहे हैं उस समय तक खण्डेलामे कोई किला नहीं था। उच्च शिखर पर स्थित खण्डेलाके राजप्रासाद और उक्त विग्रह मूलमंदिरके बीचोंबीच जो एक भोंहरा था, उसी मार्गके मध्यस्थानमे एक बड़ा तोरण (फाटक) था। सुजानसिंहने अपनी कितनी ही सेना उस तोरणमे रखी और आप स्वय कुटुम्बियोके साथ उस मंदिरकी रक्षापर नियुक्त हुए। यद्यपि वह इस बातको जानते थे, कि मुसलमानो की सेनाकी संख्या अधिक है, उनसे परास्त होनेकी संपूर्ण संभावना है, तथापि वह यथार्थ राजपूत वीरोंकी समान अपने धर्मकी रक्षाके लिये अटलभावसे शत्रुओंके आनेकी बाट देखने लगे, थोडेही समयके उपरान्त पापात्मा औरंगजेबकी सेनाने आगे बढ़कर तोरणद्वारकी रक्षा पर सन्नद्ध राजपूतोंके ऊपर गोलियोंकी वर्षा करनी आरंभकी। इसके उत्तरमे राजपूतसेनाने भी महापराक्रमसे आक्रमण किया। और शत्रुदलका संहार करते२ अंतमे उन सभीके प्राणोका नाश होगया। तब विजयी मुसल्मानोंका दल मंदिरके रक्षक राजपूतोपर आक्रमण करनेके लिये आगे बढ़ा; यह देखते ही सुजानसिंहके अनुचर राजपूत मंदिरमे स्थित प्रतिमाको प्रणाम कर नंगी तलवारें हाथमें ले कालान्तक कालकी समान शत्रुओंके सम्मुख आडटे। वे शत्रु सेनाका नाश करते२ अंतमें आप भी नाशको प्राप्त होने लगे। सबसे पीछे वीरश्रेष्ठ सुजानसिंह रणभूमिमे सर्वदाके लिये निद्रित हुए। रणविजयी यवनोंने तुरन्तही मंदिरोको तोड़फोड़ कर मूर्तियोंको चूर्ण २ करडाला। जहाँ मंदिर थे वहाँ मसजिदें बनवादीं। और उस मसजिदकी दीवारोंकी जड़मे उस पापीने मूर्तियोंके टुकड़े भरवा दिये। कर्नल टाड् लिखते हैं कि "समस्त रजवाड़ेमें ऐसा एक भी प्रसिद्ध नगर नहीं है कि जिसमे पापात्मा औरंगजेबने मंदिरोंके तोड़नेके लिये अपनी सेना न भेजी हो; और उन मंदिरोंकी रक्षा करनेमें इस प्रकारसे राजपूतोने अपने जीवनका बलिदान न किया हो"। यवनसेनापपि बहादुरखाँने खण्डेलाको जीतकर वहाँ एक दल बादशाही सेनाका छोड़ दिया। परन्तु खण्डेलाके राजा बहादुरसिंहके अधीनमे जो समस्त प्राचीन राजकर्मचारी नियुक्त थे विजयी बहादुरखाँने उन सबको शासन और राजस्वभागके कामोपर अपने अधीनमें रक्खा।

भागे हुए कायर बहादुरसिंह समीपहीके एक नगरमे निवास करते थे। कुछ ही दिन पीछे वहाँके दीवानकी सहायतासे उन्होंने बहादुरखाँसे उक्त देशकी पैदावारीका कुछ अंश और वाणिज्य शुल्कका कुछ अंश पानेकी अनुमति ली, अर्थात् उत्पन्न धान्यके मन पीछे एक सेर और वाणिज्य शुल्कके ऊपर रुपये पर एक पैसेके हिसाबसे उनको मिलने लगा। इस प्रकारसे राजा बहादुरसिंह अतिकष्टसे कुछ समय व्यतीत करते रहे, पीछे बादशाहने इनको बाग और महल दे दिये। इसके पीछे जिस समय सैयदके दोनों भ्राता दिल्लीके बादशाहकी सभामें अपनी प्रबल सामर्थ्य चलाते थे, उस समय बहादुर-सिंहने उनको संतुष्ट कर अपने समस्त राज्यको पालिया, परन्तु उस समय भी खण्डेला

(१) तहसील वसूलका महकमा।

में बादशाहकी एक सेनाका दल रहता था, और बहादुरसिंह उसका सारा खर्च देते थे। राजा बहादुरसिंहके तीन पुत्र थे। केसरीसिंह, फतेसिंह और उदयसिंह।

बहादुरसिंहकी मृत्युके पीछे केसरीसिंह पिताके सिंहासन पर अभिषिक्त हुए, और जिस प्रकारसे इनके बापदादे खण्डेलाको शासन करते थे अर्थात् वे जिस भाँतिसे सेनाके साथ दिल्लीके बादशाहकी सेनाके अधीनमें रहकर स्वाधीनभावसे खण्डेलाको शासन करगये है उसी भावसे शासन करनेके अभिप्रायसे केसरीसिंहने अपने समस्त अनुचर और सेना को इकट्ठा करके फतेसिंहके साहित बादशाहके डेरोमें जाकर सब प्रकारसे अधीनता स्वीकार कर बादशाहकी आज्ञामे रहनेकी अभिलाषा की। खण्डेला बहादुरसिंहके पतनके साथ ही साथ रायसालकी ज्येष्ठ शाखासे उत्पन्न मनोहरपुरके अधीश्वरने सम्राट्के यहाँसे नष्ट हुई सामर्थ्यका फिर उद्धार करलिया था। इस समय जब केसरीसिंह फिर सम्राट्के डेरोंमें आकर अपने वंशकी पूर्ण कीर्तिको संग्रह करनेके अभिलाषी हुए, तब उक्त मनोहरपुरपतिके हृदयमे ईर्षाग्नि प्रज्वलित होगई कि जिससे केसरीसिंह राजसभामें और स्वत्व प्राप्त न करसके। और वह ऐसे षड्यंत्रोंका विस्तार करने लगे कि उन्होंने फतेहसिंहको कलाकौशलसे हस्तगत करके कहा "आप भी तो बहादुरसिंहके पुत्र है. खण्डेला देशपर आपका भी तो हक है इकले केसरीसिंह ही क्यो राज्यसुख भोगैं? आप केसरीसिंहसे राज्यका आधा हिस्सा बँटालीजिये"। अज्ञानी फतेसिंहने मनोहर-पुरपतिके उक्त वचनोंसे उत्तेजित और ऊँची अभिलाषासे प्रदीप्त होकर भाईके साथ झगड़ा करना प्रारंभ किया। खण्डेलाराज्यके दीवानने इन दोनों भ्राताओंमे विवादकी अग्नि प्रज्वलित होते देखकर स्थिर किया, कि इससे तो सर्वनाश होनेकी संभा-वना है, इस कारण उसने शीघ्र ही खण्डेलाकी राजधानीमे जाकर राजमाताको समस्त वृत्तान्त सुनाकर दोनो भाइयोकी रक्षाके लिये और खंडेलाके कल्याण साधनके निमित्त दोनों पुत्रोंको राज्य बाँट देनेका अनुरोध किया। राजमाताने उस प्रस्तावमें अपनी सम्मति प्रकाशित की और केसरीसिंह और फतेसिंहने शीघ्र ही अपना २ भाग लेना स्वीकार किया तब खंडेला देशकी समस्त जनसंख्या भूमिको पांच हिस्सोंमें विभाजित कर दो भाग फतेसिंहको और राजा केसरीसिंह को तीन भाग दिये गए। इसी प्रकारसे राजधानी नगरके भी भाग करके विभा-जित किये गये। इसी समयसे दोनों भ्राताओंमेंसे परस्पर प्रेम तो एक बार ही दूर होगया वरन वे एक दूसरेकी सूरतसे घृणा करने लगे। राजा केसरीसिंह राजा खंडेलाको त्याग कर कवटा नामक स्थानमें रहने लगे। वह जब कभी२ राजधानी खण्डेलामें आते तब फतेसिंह वहाँसे चले जाते थे। दोनों भ्राताओंमे इस प्रकारसे भयंकर विद्वेष चला जाता था। मनोहरपुरपति इस समय शेखावत् सम्प्रदायके संपूर्ण रूपसे नेता बनगये। इस प्रकारसे कुछ दिन व्यतीत होगये, राजा केसरीसिंहसे उक्त दीवानने गुप्तभावसे प्रस्ताव किया कि फतेसिंहको मारकर मनोहरपुरपतिकी प्रबलताको दूर करना अवश्य कर्तव्य है परन्तु राजा केसरीसिंह इस बातपर सम्मत हुए, चतुर दीवानजीने प्रगटमे दोनों भ्राताओंमें मेल होनेकी इच्छासे कावटामे जानेकी तैयारी

की। फतेसिंहको इस वातका स्वप्नमे भी ध्यान न था कि मेरे प्राणनाशके लिये यह षड्यंत्र होरहा है। वह भाईके साथ प्रेम वढ़ानेकी इच्छासे कावटेमें आये और उसी समय तलवार मारकर उनके प्राण लेलिये गये। परन्तु इस हत्या करनेके मूलकारण दीवानजीने भी अपनी करनीका फल तुरन्त ही पालिया; उसने जो तलवार फते-सिंहजी पर चलाई थी वही तलवार दीवानजीके भी गलेमें जाकर लगी, जिससे वह तुरन्त ही इस संसारसे विदा होगये।

राजा केसरीसिंहने महापाप करके अपने भाईके प्राणोका नाश कर उसकी सम्पूर्ण सम्पत्ति और देशोंको अपने अधिकारमे करलिया और दिल्लीके वादशाहके ऊपर प्रवंचना भक्ति दिखाकर केसरीसिंहने इस प्रकारसे अपना मनोरथ पूर्ण किया। इस प्रकारसे संपूर्ण खंडेलाराज्यका पूर्ण स्वत्व प्राप्त करके रेवासो स्थानका कर जो अजमेरके खजानेमें और खण्डेलादेशका कर नारनोलके खजानेमें दियाजाता था उसे भी इस समय वंद करदिया। इस समय सैयद अब्दुल्ला दिल्लीके वादशाहके यहाँ प्रधानमंत्रीपदपर अभिषिक्त था, वह केसरीसिंहकी ऐसी अराजभक्ति देखकर अत्यन्त ही क्रोधित हुआ; और उन्हें इसका वदला देनेके लिये उसने खंडेलादेशपर एक सेना भेज दी। परन्तु राजा केसरीसिंहने इस समय अपनी सामर्थ्यको इतना फैला दिया था कि जिससे शेखावत्की समस्त सम्प्रदायोंमे उनका अधिकार फिर प्रवल होगया था, सम्राट्की सेनाके आनेका समाचार सुनकर केसरीसिंहने समस्त शेखावत् सामन्तोंको अपनी अपनी सेना सहित बुलाया—उनके उस बुलावे पर जातीय स्वत्व और सम्मानकी रक्षाके लिये प्रत्येक रायसालोत् इकट्ठे होने लगे। अधिक क्या केसरीसिंहके चिर शत्रु मनोहरपुरके सामन्त भी अपने धात्री पुत्रके अधीन वादशाहकी सेनाके विरुद्धमें केसरीसिंह की सहायता देनेके लिये आये। राजा केशरीसिंह इस प्रकारसे स्वजातीय सेनाके वलसे वलवान् हो वादशाहकी सेनाके साथ युद्ध करनेके लिये आगे वढ़े। सीमाके अन्तमें स्थित देवली नामक स्थानमें दोनों ओरसे भयंकर समरानल प्रज्वलित होगई, परन्तु अत्यन्त ही दुःखका विषय है कि उस युद्धमें राजा केसरीसिंहके भाग्यमे जयकी आशा शीघ्र ही असंभव होगई, शोचनीय जाति वैरने उनके भाग्यका द्वार तुरन्त ही वंद कर दिया। राजा केसरीसिंहकी जय होते देख उनके जातिशत्रु मनोहरपुरपतिकी सेनाका सेनापति उनका धाभाई केसरीसिंहका पक्ष छोड़ अपनी सेना सहित रणक्षेत्रसे इकवारगी हट। गया राजा केसरीसिंह इस समय और भी एक विपत्तिमें पड़े। कासलीके जिस महावीर सामन्तने इस समय राजा केसरी-सिंहके पक्षमें सेनासहित प्रवल युद्धमें प्रवल पराक्रम प्रकाश किया था, जिसके ऊपर केसरीसिंहको वड़ा भरोसा था, वह भी इस समय युद्धमें मारेगये। इस प्रकारसे केसरी-सिंहको विपत्तिमें पड़ा हुआ देखकर दांता वा दाता देशके लाड़खानी सम्प्रदायके सामन्त-नेताने इस सुअवसर पर अपना स्वार्थ साधन करना कर्तव्य विचारा। और कापुरुषोंकी तरह युद्धभूमि छोड़कर राजा केसरीसिंहके अधिकारी खासा देशपर अधिकार करनेके लिये सेना सहित वह उधरको चला गया।

इस समय युद्धभूमिमें चारोंओरसे राजा केसरीसिहकी जयध्वनि होरही थी परन्तु उन्होने स्वजातिके उक्त असत् व्यवहारको देखकर अत्यन्त विषादपूर्ण हृदयसे कहा, "हापाप ! यदि जो इस समय फतेसिह जीवित होते तो वे कभी भी इस प्रकारसे मुझे पीठ न दिखाते, यद्यपि उपरोक्त दोनो सामन्त केसरीसिह को छोड़कर चले गये परन्तु वे इससे कुछ भी विचलित नहीं हुए । यथार्थमे रायसालोत्ने वीरकी समान रणक्षेत्रमें अपने भाग्यकी परीक्षा करनेके लिये उन्होने दृढ़प्रतिज्ञा की । इस समय दोनो ओरकी सेना प्रबल पराक्रमके साथ अपनी २ वीरता दिखारही थी । उसी समय उन्होने युद्धमे विषम वीरता प्रकाश करते हुए अपने छोटे भाई उदयसिंहको बुलाया और उनको युद्धक्षेत्र छोड़कर अपनी रक्षा करनेके लिये अनुरोध किया । इस प्रकार राजपूत वीरोके पक्षमें अपमानकारी आज्ञा पालन करनेमे उदयसिहने सर्वथा सम्मति प्रकाशकी । परन्तु जब राजा केसरीसिंहने कहा कि "मैने अपने वंशके मस्तकपर कलंकका टीका देनेके लिये सेना सहित युद्धमेसे भागनेके लिये नहीं कहा मैं स्वयं रणक्षेत्रमें रहूँगा, तुम इस स्थानसे चले जाओ । यदि तुम भी मारे जाओगे, तो हमारा वंश एकवार ही नष्ट होजायगा । राजा केसरीसिंहके यह वचन सुनकर दूसरे सामन्त भी उदयसिंहको रणक्षेत्र त्यागनेका अनुरोध करने लगे, उन्होंने केसरीसिहको भी समरभूमिसे भागनेका आग्रह किया, परन्तु राजा केसरीसिहने कहा "नही अब हम जीवित रहनेकी इच्छा नहीं करते, मेरे मस्तकपर दो महापापोके कलंककी रेखा खचित होचुकी है । मैने अपने भाईके प्राणनाश किये हैं, और विवाहके समय बीकानेरके चारणकविको विवाहका उपहार नही दिया । इसी कारण उसने मुझे शाप दिया था । इन दोनो कलंकोके ऊपर कायर पुरुषोंकी समान भागनेका तीसरा कलंक अब संचय करना नहीं चाहता, यह कह कर राजा केसरीसिहने फिर भी उदयसिंहसे वही अनुरोध किया। तब उदयसिह इच्छा न होने पर भी भाईकी आज्ञानुसार रणभूमिसे चले गये ।

जिससे खण्डेलाका राज्य शत्रुओंके हाथमें न जाय । जिससे खण्डेला देशपर शेखावत् वंशका शासन प्रचलित रहै । उस महायुद्धमें स्थित राजा केसरीसिंहने इसी लिये प्रचलित रीतिके अनुसार "मेदिनी माताको" रुधिर मांस, और मट्टीके पिंड देनेका संकल्प किया । उन्होंने शीघ्र ही अपने शरीरमेंसे एक मांसका टुकड़ा काट डाला, किन्तु उस कटेहुए टुकड़ेसे प्रयोजनके अनुसार रुधिर न निकला । तब उन्होंने अपने दूसरे अंगको काटकर उसमेसे निकलेहुए रुधिरसे अपना संकल्प पूर्ण किया । कविश्रेष्ठ मंत्र पढ़ने लगे, पिंडदान समाप्त होगया, कविने कहा कि मेदिनीमाताने दान लिया है, आपके पीछे सात पुरुष खण्डेला पर राज्य करैगे ।

महाराज केसरीसिंह पृथ्वीमाताके निमित्त इस प्रकारसे रुधिर मांस और मट्टीका पिंडदान करके संहारमूर्ति धारण कर नंगी तलवार हाथमे ले युद्ध सागरमें कूद पड़े । मनोहरपुर और दांताकी सामन्त सेनाने विश्वासघातकता करके पीठ दिखाई और केसरी सिंहकी सेनाका बल भी अत्यन्त क्षीण होगया था, परन्तु उन्होंने फिर भी अतुल पराक्रमके

साथ संग्राम किया। अतमे यवनसेनाने विजय प्राप्त की और वीरश्रेष्ठ केसरीसिह जन्म-भूमिके निमित्त रणशैयापर अनंत निद्रामे सोगये। उदयसिह पहिलेसे ही खडेलाको चले गये थे। पर विजयी बादशाहकी सेनाने खडेला जीतकर उदयसिहको बंदी कर लिया। खडेलादेश बादशाहके अधिकारमे होगया; उदयसिह बंदीभावसे तीन वर्षतक अजमेरके किलेमे रहे। तीन वर्षके पीछे उदयपुर और कासलीके शेखावत दो सामन्तोने सम्राट्की सेनाको विध्वंस कर फिर खंडेलाको स्वाधीनता देनेकी अभिलाषा की। किन्तु अजमेरके किलेमे कैद राजा उदयसिंह परविपत्ति आपड़नेकी आशंकासे उन्होने गुप्तभावसे एक दूत को उदयसिहके पास भेजकर कहला भेजा, कि "हमने खंडेलापर फिर अधिकार करनेका उद्योग किया है। पीछे अजमेरमे स्थित बादशाहके प्रतिनिधि आपको भी इसमे सम्मिलित समझेंगे, इस कारण आप अपनी निर्दोषिता दिखानेके लिये उक्त राजाके प्रतिनिधिसे कह दीजिये जिससे कि हम खडेलापर अधिकार न करले। जब आप उनसे ऐसा कहदेगे तब वह कभी नहीं विचारेंगे कि आपहीके लिये हमने खडेलाको विजय करनेका उद्योग किया है तथा आप भी इसमे शरीक हैं।" वह दूत उदयसिहसे ऐसा कहकर लौट आया, उसी समय उदयपुर और कासलीके दोनों सामन्तोने अपनी प्रबल सेनाके साथ हठात् खडेलापर आक्रमण कर वहाँसे दिल्लीके बादशाहकी सेनाको परास्त करके और उसके सेनापति देवनाथको मारडाला। उदयसिहने उक्त दोनो सामन्तोके उपदेशसे पहिले ही अजमेरके यवनराजप्रतिनिधिको यह समाचार प्रगट कर दिया था, इस कारण राजप्रतिनिधिने उक्त दोनो सामन्तोका खंडेला पर अधिकार करके समस्त सेनाके विनाशका समाचार सुना तो उसने विचारा कि अब किस प्रकारसे फिर उसपर अपना अधिकार होसकता है, इसीलिये उसने उदयसिहके साथ सलाह की। उदयसिहने कहा कि "यदि आप मुझको कैदसे छोडदे तो मैं खडेलादेशको फिर बादशाहके अधिकारमे करा सकता हूं उनके यह वचन सुनकर राजप्रतिनिधिने कहा "कि मैं आपको छोड़ सकता हूँ परन्तु आप अपनी प्रतिज्ञाको पालन करेंगे इसका क्या प्रमाण है?" तब युवक उदयसिहने कहा, "मेरे बधु तथा कुटुम्बी कोई भी नहीं है, केवल एक वृद्धा माता है, मेरी साक्षीस्वरूपमे आप उनको बंदी रख सकते हैं"। वास्तवमे उदयसिंहकी वृद्धा माता अपने पुत्रकी साक्षीस्वरूप हो बंदीदशामे रहने लगी। अंतमे उदयसिहने इस प्रकारसे अपनी प्रतिज्ञाको पूरण किया कि जिससे राजप्रतिनिधि इनकी भक्ति और विश्वासको देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ। उदयसिहने उस राजप्रतिनिधिको बहुतसा धन भी दिया इससे राजप्रतिनिधिने अत्यन्त ही प्रसन्न होकर खंडेला देशका अधिकार इनको अर्पण किया।

उदयसिह इस प्रकारसे पिताके नष्टहुए राज्यका फिर उद्धार करके खण्डेलाके सिंहासन पर विराजमान हुए, और सबसे पहिले वह अपने समस्त स्वजातीय और अनुचरोकी सेनाको इकट्ठा करने लगे। मनोहरपुरके अधीश्वरकी विश्वासघातकतासे ही खडेलाका पतन हुआ था, इसको स्मरण करके उनको उचित दंड देनेके लिये उन्होंने शीघ्र ही प्रबल सेनाकी सृष्टिकी। मनोहरपुरपतिने उदयसिंहको अपने नगर पर

आक्रमण करनेके लिये आता हुआ देखकर अपने धाभाईके हाथमें सेनाका भार अर्पण कर उसीको युद्ध करनेके लिये भेजा। परन्तु वह तो मुकाबिला होनेके पहिले ही अपने प्राण लेकर भाग गया,इस कारण विजयी उदयसिंहने सरलतासे मनोहरपुरको जा घेरा। जब मनोहरपुरपतिने शत्रुओंसे अपनेको घेरा हुआ देखा तब वह अपने उद्धारका उपाय शोचने लगे, और षड्यंत्र करने लगे। कासलीके सामन्तः दीपसिंहने सेनासहित उदयसिंहके अधीनमें मनोहरपुरको घेर लिया था। अस्तु मनोहरपुरपतिने दो विश्वासी सामन्तोंके हाथ एक पत्र लिखाकर दीपसिंहको जनाया कि "उदय सिंह केवल मनोहरपुरपर ही अधिकार करके शान्त न होंगे यह हमें भली भाँतिसे विश्वास होगया है, वह मनोहरपुर पर अधिकार करनेके पीछे आपके अधिकारी देश कासलीको भी जीत लेंगे, यह आप निश्चय जानिये।" दीपसिंह इस पत्रको पाकर इस पर संपूर्णतः विश्वास कर दूसरे दिन प्रभात होते ही जिस समय मनोहरपुर पर अधिकार करनेके लिये रणभेरी बजने लगी, उसी समय उस सामंतने अपनी सेनासहित डेरोंको छोड़ दिया, और वह अपने देशकी ओरको चला गया। उदयसिंह इस षड्यंत्रको कुछ भी नहीं समझे, इस कारण दीपसिंहको उस भावसे भागता हुआ देख तथा उसी कारणसे मनोहरपुर पर अधिकार करके अपना बदला लेनेमें सफलता न देखकर वह मारे क्रोधके उन्मत्त होगये, और शीघ्रतासे सेना सहित दीपसिंहके पीछे चले। दीपसिंह भलीभाँतिसे जानगये कि यह किसी प्रकारसे भी उदयसिंहके आक्रमणको निवारण नहीं करसकेंगे, इस कारण वह कासलीको छोड़कर जयपुरके महाराजका आश्रय लेनेके लिये भागगये। यद्यपि उदयसिंहने कासलीपर अपना अधिकार करलिया। परन्तु मनोहरपुरपतिने उक्त षड्यंत्रजालके विस्तारसे शत्रुओंके हाथसे उद्धार पाया, महावीर जयसिंह इस समय आमेरके सिंहासनपर विराजमान थे, उन्होंने शरणागत दीपसिंहको अभय देकर कहा कि "यदि आप शपथ करके हमारी अधीनता स्वीकार कर हमको कर देनेमें सम्मत हो सामन्तोंकी श्रेणीमें नियुक्त हों तो मैं उदयसिंहसे कासली देशको छीनकर आपको देदूंगा, और उदयसिंहको इसका उचित दंड दूंगा।" दीपसिंहने इन धीरजदायक वचनों पर विश्वास करके शीघ्र ही आमेरराजके अधीनता-स्वीकार पत्रपर हस्ताक्षर करदिये, और जयपुरेश्वरको वार्षिक चार हजार रुपया कर देना भी स्वीकार करलिया।

इस प्रकारसे शेखावतके सामन्तोंकी सम्प्रदायके ऊपर बहुत दिनोंके पीछे जयपुरपतिके आधिपत्य विस्तारका फिर सूत्रपात हुआ, हमारे पाठकोंको यह तो भलीभाँतिसे स्मरण होगा कि जिस समय शेखावतके सामन्तोंकी संख्या बहुत सामान्य थी, और उनकी सेनाकी संख्या कई सौ थी, उस समय प्राचीन रीतिके अनुसार अमृतसरसे घोडोंके बच्चे करस्वरूप देनेमें शेखावतके नेता असम्मत हुए थे, और इसी कारणसे आमेरपतिके साथ प्रबल समर उपस्थित हुआ था। उसीके फलस्वरूपमें शेखावत् पतिने आमेरराज्यकी अधीनताकी शृंखला भंगकर सब प्रकारसे स्वाधीनताको संग्रह कर लिया था। पर आज इतने दिनोंके पीछे उस शेखावत

देशमे फिर आमेरराजवंशके आधिपत्यका विस्तार आरंभ हुआ। जब कासलीके सामन्त दीपसिंहने इस प्रकारसे वश्यता स्वीकार करके कर देनेमें अपनी सम्मति प्रकाश की, तब कई दिनोंके पीछे आमेरराज जयसिंह सूर्यग्रहणके समय गंगाजी पर स्नान करनेके लिये गये। उस समय दीपसिंह भी उनके साथ गये। जयसिंहने गंगाजीके निकट जा स्नानकर ब्राह्मण और दीन दरिद्रियोंको धन देनेके लिये उद्यत हो एक सेवकसे पूछा, "आज कौन दान लेनेके लिये उपस्थित है?" कसालीके सामन्त दीपसिंहने यह वचन सुनकर महाराज जयसिंहके सम्मुख अपने अँगरखेका दामन फैलाकर कहा, "मैं आपकी कृपाका प्रार्थी हूँ"। महाराज जयसिंहने हँसकर कहा, "इस दानको ब्राह्मण, संन्यासी और दरिद्री लेसकते हैं। आप क्या चाहते हैं?" दीपसिंहने उसी समय उत्तर दिया कि "आपकी कृपासे फतेसिंहके पुत्रको खंडेला देशके वह अंश जिनपर इनके पिताका अधिकार था मिलजाय, आपसे मेरी एकमात्र यही प्रार्थना है"। महाराज जयसिंहने गंगाजीके किनारे खड़े होकर प्रतिज्ञा की कि मैं आपकी इस प्रार्थनाको पूर्ण करूँगा।

सन् १७१६ ईसवीमे यह घटना हुई थी, इस समय जाटजाति नवीन बलसे बलवान् होकर मस्तक ऊँचा कर रही थी, और आमेरपति महाराज जयसिंह इस समय दिल्लीके बादशाहके यहाँ प्रतिनिधिस्वरूपसे अगणित सेनादलके ऊपर सेनापतिभावसे नियुक्त थे। और समस्त नीची श्रेणियोंके राजा उनके अधीनमें रहते थे। करौली भदावर, शिवपुर और अन्यान्य देशोंके तीसरी श्रेणीके राजाओंमें खंडेलाके राजा उदयसिंह भी इस समय अपनी सेना सहित जयपुरके महाराजके अधीनमे रहते थे, महाराज जयसिंहने जाट जातिके नवीन बलसे बलवान नेता चूड़ामणिके अधिकारी थून नामक किलेको इस समय घेर लिया; उक्त राजाओंके साथ खंडेलापति उदयसिंहने भी उनकी सहायता की। परन्तु उदयसिंह नियम सहित अपने कर्तव्यको पालन न करसके, इसपर जयसिंहने उनका महा तिरस्कार किया। जयसिंह उदयसिंहके निकटवर्ती उच्च कक्षाके प्रभु अधीश्वर और सम्राट् के प्रतिनिधि थे। उदयसिंह उनके ऊपर विशेष सम्मान दिखानेको बाध्य थे, तथापि वह न्यायके विरुद्ध इस तिरस्कारको न सहन कर क्रोधित हो उक्त स्थानको छोड़कर सेना सहित वहांसे चले गये। महाराज जयसिंहने दीर्घकालतक थूनक किलेको घेरकर जिस समय वह किलेको जीतनेकी सम्पूर्ण संभावना करने लगे, उस समय थूनपति चूडामनने गुप्तभावसे दिल्लीके बादशाहके मंत्री सैयदके साथ संधिबंधन कर लिया। इस कारण जयसिंह नव बलसे बलवान् हुए जाटपतिको उचित दंड देनेमें असमर्थने हो अत्यन्त व्यथित होगये, परन्तु खंडेला राज उदयसिंहको उस गुप्त संधिका एक नेता मानकर उसको उचित दंड देकर अपना बदला लेनेके लिये उद्यत हुए।

उदयसिंहने खंडेलाके शासनका अधिकार पाकर वहाँ उदयगढ़ नामक एक दुर्भेद्य किला बनवाया, इस कारण उन्होंने जयसिंहके खंडेला जयकी इच्छा जानकर सेनासहित उस किलेमें प्रवेश किया, और दृढ़भावसे वहाँ रहने लगे। इस ओर महाराज जयसिंहने वाजीदखाँके अधीनकी समस्त सामन्त सेना और जयपुरकी राजसेनाको

इकट्ठा करके उस उदयगढ़को जा घेरा। उदयसिंह अपने नामसे बनाये हुए, उस उदयगढ़मे एक महीने तक रहे। पर जब उन्होंने देखा कि भोजनकी समस्त सामग्री समाप्त होगई है, भूंखोके मारे सेनाके प्राण नाशकी संभावना है तब वह उसी समय किलेको छोड़कर मारवाड़के अन्तर्गत नारू नामक स्थानको चले गये। उदयसिंहके पुत्र सवाईसिंहने पिताको भागा हुआ देखकर विजयी जयसिंहके चरणोंमे आत्मसमर्पण करके किलेकी ताली उनके हाथमें दे कृपाकी प्रार्थनाकी। महाराज जयसिंहने उसको बड़े आदरसहित ग्रहण कर क्षमाकिया, और उसको आमेरकी अधीनता स्वीकार करने के लिये कहा। कासलाक अधीश्वरकी समान सवाईसिंह आमेरराजकी वश्यताके स्वीकार पत्रपर अपने हस्ताक्षर करके वार्षिक एक लाख रुपया कर देनेके लिये सम्मत हुए। समय पर उक्त करमे से पंद्रह हजार रुपया घटाया गया और फिर खंडेलापति आमेरराजको ६४ हजार रुपया प्रत्येक वर्षमे कर स्वरूपसे देने लगे। पीछे जब आमेरराजका प्रताप अत्यन्त हीन होगया और मरहठे तथा पठानोके तस्करदलने आमेरराजके चारोंओर अत्याचार करने आरंभ करदिये। तब जयपुरपति खंडेलासे नियमित करके संग्रह करनेमें असमर्थ होगये, और उस समय करका परिमाण भी पहिलेकी समान नही रहा। यद्यपि आमेरराज जयसिंहने सवाइसिंहको अभय देकर उनको खंडेलाके शासनका अधिकार और शेखावत् सम्प्रदायके नेताकी उपाधि दी थी, परन्तु उन्होंने गंगाजीके किनारे कासलीके अधीश्वरके सम्मुख जो प्रतिज्ञा की थी कि फतेसिंहके पुत्रको खंडेलाका पूर्व अधिकार दिया जायगा, उसको स्मरण करके इस समय उस प्रतिज्ञाके पालन करनेमें भी शान्त न हुए। फतेसिंह जिस प्रकार खंडेलाराजके दो अंशोंको भोगते थे उनके पुत्र धीरसिंहको वही अंश दिये गये। इस प्रकारसे सवाईसिहके दोनों जाति भ्राता खंडेलाका अधिकार पाकर अपने अधीश्वर प्रभु जयसिंहके अधीनमें सेना सहित चले गये। सवाईसिहके खंडेलाके छोड़ते ही इस सुअवसरको पाकर उदयसिहने लाड़खानी नामक स्वजातीय एक दल मंदस्वभाव राजपूतोंकी सहायताको लेकर हठात् उदयपुर पर आक्रमण कर उसे अपने अधिकारमें करलिया। पुत्र सवाईसिंहने पिताका यह आचरण जयपुरके महाराजको कह सुनाया, जयपुरपति महाराजने शीघ्र ही सवाईसिहके साथ सेनाको खंडेलामें भेजकर उदयसिंहको भगा देनेकी आज्ञा दी। सवाईसिंहने तुरन्त ही महाराजकी आज्ञानुसार जयपुरकी सेनाके साथ उदयगढ़पर आक्रमण कर वहाँसे अपने पिताको भगा दिया। सवाईसिहके उदयगढ़को घेरनेमें उदयसिंहने पहिले ही से विशेप बाधा दी थी और अंतमे फिर पहिलेकी समान नारूदेशको भाग गये। उन्होंने अपने जीवनके शेष अंशको उस नारूदेशमें ही व्यतीत किया और पुत्र सवाईसिंहने उनके खर्चके लिये प्रतिदिन पॉच रुपया नियत करदिया था, परंतु सवाईसिंहने पिताकी मृत्युके पहिले ही इस संसारको छोड़दिया। सवाईसिंहके तीन पुत्र उत्पन्न हुए, बड़ा वृन्दावन, विचला शंभु और छोटा कुशल था। बड़ा पुत्र खंडेलाके राजपद पर प्रतिष्ठित हुआ, मध्यम रानौली देश पर और छोटा धिपरौली देशपर स्थित हुआ।

द्वितीय अध्याय २.

वृन्दावनदास–उनका आमेरपति माधवसिंहकी सहायता करना–और माधवसिंहका वृन्दावनदासको सम्पूर्ण खंडेलाका राज्य देना–वृन्दावनदासके साथ इन्द्रसिंहका युद्ध–वृन्दावनका प्रजा और ब्राह्मणोंसे दंडस्वरूप कर लेना–उसके उपलक्षमें ब्राह्मणोंका आत्मनाश–माधवसिंहका पहिली आज्ञाका उल्लंघन करना–ब्राह्मणोंको धन देना–इन्द्रसिंहको फिर पिताके अधिकारका प्राप्त होना–खंडेलाके दोनों राजाओंमें झगडा–फिर समर–नजफ अलीखाँ पर आक्रमण–पापोंके नाश होने के लिये वृन्दावनका ब्राह्मणोंको भूवृत्ति देना–उनके पुत्र गोविन्ददास पर आपत्ति–वृन्दावनका खंडेला राज्यका अधिकार पुत्रके हाथमें देना–गोविन्दसिंहका हत्याकाण्ड–नरसिंहको पिताके पदकी प्राप्ति–शेखावाटी देशपर महाराष्ट्रोंका अत्याचार–महाराष्ट्रोंके द्वारा खंडेला पर आक्रमण करनेका उद्योग–संधिका प्रस्ताव–महाराष्ट्रोंके द्वारा खंडेलाके दो सामन्तोंकी हत्या–प्रतिहिंसा देनेके लिये इन्द्रसिंहका उद्योग–इन्द्रसिहका प्राण त्याग–प्रतापसिंह–महाराष्ट्रोंको कर देना–नरसिंह और प्रतापसिंह का खंडेला पर शासन–सीकरके सामन्तोंकी प्रबलताका विस्तार–सीकरके सामन्तोंके दमनके लिये नन्दराम हलदियाका सेना सहित आगमन–सीकरपतिके साथ विचित्र उपायसे संधि स्थापन–प्रतापसिंहका समस्त खंडेला पर अधिकार प्राप्त करना–रावल इन्द्रसिंह–चौमूके सामन्तको पदसम्मान प्राप्त होना–प्रतापका समस्त खंडेलापर अधिकार करनेकी चेष्टा करना–युद्ध–नरसिंहका फिर पैतृक स्वत्व प्राप्त करना–जातीय स्वाधीनताकी रक्षाके लिये शेखावाटीके समस्त अधीश्वरोंका एक साथ मिलना–नन्दराम हलदियाको पदसे अलग करना–राड़ाराम–शेखावाटीके अधीश्वरके साथ आमेरराजकी संधि–आमेरराजका संधिभंग–सामन्तोंका अपने बलसे अपने २ अधिकारी देशोंको ग्रहण करना–नरसिहकी आमेरराजको कर देनेमें असम्मति–आमेरराजका खंडेला राज्यपर अधिकार करना–कौशलद्वारा नरसिंहको बंदी करके उसे आमेरके कारागारमें रखना।

वृन्दावनदास जिस समय खंडेलाके अधीश्वर पदपर प्रतिष्ठित हुए, उस समय आमेरके सिंहासनको लेनेके लिये माधवसिंहने ईश्वरीसिंहके साथ भयंकर युद्धानल प्रज्वलित की थी। वृन्दावनदास पहिलेसे ही माधवसिंहका पक्ष समर्थन कर सामर्थ्यके अनुसार उनकी सहायता करते थे, जिस समय माधवसिंह आमेरके सिंहासन पर विराजमान हुए, उस समय उन्होंने उपकारी वृन्दावनदासके प्रति, उपकार करनेकी इच्छाकी। वृन्दावनदासने यह प्रार्थना करी कि खंडेलाका राज्य दो भागोंमे विभक्त होकर उसमे दो प्रतिवासी अधीश्वर स्थित हैं, इसलिये आपसमे वहुत दिनोसे झगड़ा और युद्ध चला आरहा है। इस कारण उस वृथा रक्तपातको दूर करनेके लिये एकके हाथमें खंडेलाका राज्य देना उचित है, ऐसा करनेसे फिर परस्परमें क्लेश नहीं होगा। इस समय फतेसिंहके पुत्र धीरसिंहके अग्र व्यवहार पौत्र इन्द्रसिंह खंडेलाके अन्यान्य अंशोंके अधीश्वर थे। आमेरपति माधवसिंहने वृन्दावनदासकी कामनाको पूर्ण करनेके लिये शीघ्र ही उसके अधीनमे पांच हजार सेना भेजकर इन्द्रसिंहको भगानेकी आज्ञा दी, वृन्दावनदास इस प्रकारसे उस पांच हजार सेनाके साथ शीघ्र ही खंडेलापर गये, और उसने इन्द्रसिंह पर आक्रमण किया। इन्द्रसिंह प्रवल पराक्रमके साथ कई महीनेतक

किलेमें रहे, और अंतमें प्रबल बलशाली शत्रुओंके कराल ग्राससे अपनी रक्षा करना असंभव विचार कर वह शीघ्र ही किलेको छोड़कर पारासोली स्थानको चले गये। वृन्दावनदासने फिर वहाँ जाकर इन्द्रसिंह पर आक्रमण किया, उन्होंने कुछ कालतक अपनी रक्षा करके अंतमें आत्म समर्पण करना ही कर्त्तव्य समझा। उस समय इनके सैाभाग्यसे ही एक विचित्र घटना हुई, उसीसे उन्होंने अपना उद्धार कर लिया। यही नहीं, वरन अपने पिताके अधिकारको भी फिरसे प्राप्त करलिया।

आमेरराज माधवसिंहने वृन्दावनदासके अधीनमें जो पांच सहस्र सेना भेजी थी, उसके वेतन देनेका भार वृन्दावनके ही ऊपर रक्खा गया था, परन्तु वृन्दावनके पूर्व पुरुष खजानेकी रक्षा भलीभांतिसे न करसके थे, उसी प्रकार वृन्दावनने भी शीघ्र ही उस सेनाका वेतन देनेके लिये अन्य उपायका अवलम्बन किया। वृन्दावनने सर्व साधारण प्रजासे और देवालयोंसे दंड लेना आरंभ कर दिया। उसने अन्याय करके ब्राह्मणोंके निकटसे कर ग्रहण किया था, इससे वे महा क्रोधित होकर वृन्दावनको धिक्कार देने लगे, परन्तु वृन्दावनने कुछ भी ध्यान नहीं दिया, कारण कि इस समय तो किसी उपायसे हो धनका संग्रह करना ही उसने आवश्यक समझा, इधर ब्राह्मणोंने वृन्दावनदासका अपमान किया और उसके कहनेपर भी कुछ नहीं सुना, तथा उसको बलपूर्वक कर ग्रहण करते हुए देखकर वे लोग शीघ्र ही रजवाड़ेमें बहुत समयसे प्रचलित रीतिके अनुसार आत्मघात करके वृन्दावनको ब्रह्महत्यारूपी महापापका भागी करनेके लिये उद्यत हुए। उनके दलके दल वृन्दावनके सम्मुख जाकर अपने २ शरीर पर अस्त्राघात करके अपने प्राणोंका बलिदान करने लगे। इस ब्रह्महत्याके कारणसे वृन्दावनदास अपनी जातिसे पतित होगये। इधर परम हिन्दू आमेरराज माधवसिंहने, वृन्दावनको बलपूर्वक ब्राह्मणोंसे दंड लेते हुए देखकर और इसीसे ब्राह्मणोंको आत्मघात करते हुए देखकर अपनेको भी अप्रत्यक्ष भावसे उस ब्रह्महत्या पापके अंशका भागी जानकर शीघ्र ही, उस भेजीहुई सेनाको आमेरमें बुला भेजा, और दंडित ब्राह्मणोंको अपनी राजधानीमें बुलाकर उनको बीस हजार रुपये दिये। इस प्रकार वृन्दावनदासके अन्यायकार्यसे सेना बलहीन होगई, और घोर विपत्तिमें पड़े हुये इन्द्रसिंह सहसा श्रेष्ठ उपायको प्राप्तकर अपने समस्त सेवकोंको फिर इकट्ठा करके आमेरपतिका अनुग्रह संग्रह करनेके लिये बाहर हुए। इसी समय माचेड़ीके राव आमेरराजके विषैले नेत्रोंमें पतित होनेसे, खुशालीराम बोहरा आमेरराजकी ओरसे समस्त सेना लेकर माचेड़ीके रावपर आक्रमण करनेके लिये जारहे थे, इन्द्रसिंह आयाचित होकर समस्त सेनाके साथ उस आमेरकी सेनाको लेकर माचेड़ीके रावके साथ युद्ध करनेके लिये चले। माचेड़ीके रावने देखा कि इस समय अपनी रक्षा करना असंभव है तब उसने तुरन्त ही जाटोंके अधीश्वरके निकट जाकर उसकी शरण ली। उक्त माचेड़ी पर बहुत समय तक इन्द्रसिंहने इस प्रकारस अपने बलविक्रमके द्वारा आमेर राजका उपकार किया, इससे आमेरपति इनके ऊपर परम प्रसन्न हुए, इस समय इन्द्रसिंहने भेंटमें आमेरपतिको पचास हजार रुपये भी दिये। तब आमेरराजने नियमित पट्टा देकर फिर उनको खंडेलाराज्यमें पिताका अंश देदिया।

यद्यपि इन्द्रसिंहको अपने स्वामी आमेरराजसे राज्यकी सनद मिल गई, परन्तु वृन्दावनदासके साथ उनकी बराबर शत्रुता चली आती थी। खण्डेलाके दोनों राजाओंने अपने २ किलोको भलीभाँति सेनासे पूर्ण करके आत्मविग्रहके समुद्रको बराबर मथन करनेमें त्रुटि न की। इस परस्परके झगड़ने धीरे धीरे ऐसी भयंकर मूर्ति धारण की, कि ऐसा द्रोह आजतक किसी जातिमें भी नहीं हुआ था। पिताके साथ पुत्र, चचाके साथ भ्रातृपुत्रने सांसारिक सम्बन्ध बंधनको भूलकर उस झगड़ेके मुखमें युद्धकी अग्नि प्रज्वलित करदी।

वृन्दावनदास जिस प्रकारसे सेनाके बलसे वीरता और बलविक्रमसे बलवान होगये थे, इन्द्रसिंहने भी उसी प्रकार प्रजाके ऊपर असीम प्रेम और भक्ति दिखाकर अपना पक्ष प्रबल करलिया था। इन्द्रसिंह एक समय अपनी सेना साथ लेकर वृन्दावनदासके उदयगढ़ नामक किलेपर अधिकार करनेके लिये चले, उनके विपक्ष वृन्दावनके छोटे पुत्र रघुनाथसिंहने आकर उस समय अपने जन्मदाता पिताके साथ युद्ध करनेके लिये इन्द्रसिंहका साथ दिया। वृन्दावनदासने अपने उक्त पुत्र रघुनाथको कुचोर नामक देशका अधिकार दिया था, परन्तु रघुनाथने पिताकी असम्मतिसे और भी तीन देशोंको अपने अधिकारमें करलिया था। इसीसे वृन्दावनने क्रोधित हो रघुनाथ पर अपना बल प्रबल करनेकी इच्छासे इन्द्रसिंहके साथ मेल किया था। वृन्दावनदास गुप्तभावसे इन्द्रसिंहके बलको घटानेके लिये कितनी ही सेना साथमें लेकर कुचोर पर आक्रमण करनेके लिये चले। तब रघुनाथने इन्द्रसिंहका साथ छोड़ कर उनके भानजे[1] रानोलीके सामन्त पृथ्वीसिंहको साथ लेकर कुचोरकी रक्षा करनेके लिये उधरका रास्ता लिया। परन्तु वृन्दावनदास पहिले ही कुचोरपर अधिकार करनेमें असमर्थ हो जिस समय खण्डेलाकी ओरको जा रहे थे, उस समय मार्गमें इन्द्रसिंह और रघुनाथने सेना सहित इनका मार्ग रोका। जिससे किसी ओरका भी मनुष्य नगरमें प्रवेश न करने पावे, इस लिये खण्डेला नगरके द्वारको बंद करदिया। जिस समय इन्द्रसिंहने वृन्दावनका मार्ग रोका उसी समय उदयगढ़ पर भी आक्रमण हुआ था। वृन्दावनके बड़े पुत्र गोविन्दसिंहने जिस प्रकार प्रबल विक्रमके साथ उदयगढ़की रक्षाकी थी, उसी प्रकारसे इन्द्रसिंहके शत्रु चिरानाके सामन्त नाहरसिंहने उदयगढ़पर अधिकार करनेके लिये विशेष चेष्टा की थी। क्रमानुसार कितने ही दिनोतक प्रतिदिन नगरके बाहर युद्ध होता रहा; उस युद्धमें पितापुत्र, पितृव्य, भ्रातृपुत्र और जातिके भ्राता परस्पर संहारमूर्ति धारण करके आक्रमण करने लगे। अंतमें दोनों पक्ष अत्यन्त हीनतेज होगये, वृन्दावनदास अन्तमें इन्द्रसिंहके पहिले अधिकार देनेको बाध्य हुए। इन्द्रसिंहने इस प्रकारसे अपने अधिकारको पाकर खण्डेलाका आत्मविग्रह शान्त किया।

यद्यपि खण्डेलाराज्यपर शान्तिकी वर्षा होगई, परन्तु शीघ्र ही और एक शत्रुने आकर शेखावाटीके देशोंपर अशान्तिकी अग्नि प्रज्वलित कर दी। इसी समयमें लुप्तप्रताप

(१) वर्तमानमें भतीजे।

और हीनवल दिल्लीके बादशाहकी सेनाका सेनापति नजफकुलीखाँ एकवार ही अंतिम वलके साथ अपने प्रभुत्वका विस्तार करनेके लिये बादशाहकी सेनाके साथ शेखावाटी राज्यमें आपहुँचा। माचेड़ीके विश्वासहन्ता राव उस यवनसेनापतिकी विशेष सहायताके लिये तत्पर थे। वही उसको शेखावाटीमें लाये थे, उसने प्रत्येक देशके अधीश्वरके ऊपर, अनेक भांतिके अत्याचार कर वलपूर्वक दंड संग्रह करना प्रारंभ कर दिया। नवलगढ़के नवलसिंह खेतड़ीके बाघसिंह, बसाऊके सूर्य्यमल इत्यादि सिद्धानी सम्प्रदायके अधीश्वर उस यवनसेनापतिके निरधारित दंडस्वरूप कई लाख रुपये देनेमे असमर्थ होगये। तब नज़फ़कुलीखाँने उनको वंदी करलिया। शेषमे शेखावाटीके दीनदरिद्री किसानोंसे कई लाख रुपये संग्रह करके वह समस्त धन यवनसेनापतिको दे दिया, इसके पीछे उक्त सामन्तोको मुक्ति प्राप्त हुई।

इस प्रकारसे खंडेलाराज्यमें आत्मविग्रह दूर होनेके पीछे धनके लोभी ब्राह्मण दिन प्रतिदिन वृन्दावनदासको जातिवध इत्यादि महापातकोंका भय दिखाकर उसे उन पापोंके नाशके लिये प्रायश्चित्त और भूसम्पत्ति दान करनेके लिय उत्तेजित करने लगे। वृन्दावनदास और उपाय न देख ब्राह्मणोकी शापसे प्रायः प्रतिदिन उनको राज्यके एक २ देशकी भूमिका अधिकार देकर अपने पापनाश करनेमें प्रवृत्त हुए। उनको इस प्रकारसे अपने भविष्य वंशधरोंका स्वत्व लोप करते हुए देखकर उनके वड़े कुमार गोविन्ददास महाविरक्त हो उनके इस कार्यमें प्रवल प्रतिवाद किये विना न रहसके। वृन्दावनदासने अन्तमें अपने वड़े पुत्र गोविन्दके करकमलमें खंडेलाराज्य देकर केवल अपने प्रतिपालन करनेके लिये पांच नगरोका भूस्वत्व और खंडेलाराज्यका कुछ कर नियुक्त कर सिंहासन छोड़ दिया।

यद्यपि पिताके वर्तमान समयमें ही गोविन्दसिंह खंडेलाके राज्यसिंहासन पर अभिषिक्त हुए थे, परन्तु उनको वहुत समय तक रायसालोन् गणोंके अधीश्वर पदका सम्मान भोग करनेका सौभाग्य प्राप्त न हुआ। वह जिस सालमें सिंहासन पर अभिषिक्त हुए उस वर्षमें वर्षाके न होनेसे राज्यमें प्रयोजनके अनुसार धान्य उत्पन्न न हुए इसीसे प्रजामें चारोंओर हाहाकार मचगया, और प्रजा करदेनेसे छुटकारा पानेके लिये प्रार्थना करने लगी। नारोली देशके अधीन सामन्तने खण्डेला-राज्यके गोविन्दसिंहको इस समय यह सलाह दी कि आप एकवार राज्यमें घूमकर, खुद अपनी आँखोंसे खेतीकी अवस्था देख आवे फिर आप इसपर विचार कर सकते है, कि इस समय प्रजासे कर लेना ठीक है या नहीं। गोविन्दसिंह अपने पिताकी अपेक्षा अधिक कुसंस्कारहीन थे, इस कारण ब्राह्मणोंने उनको पूस मासकी अमावस्या तिथिमे भ्रमण करनेके लिये वाहर जानेका निषेध किया, और कहा कि आपके जानेके लिये आज अच्छा दिन नहीं है, आज जानेसे अमंगल होनेकी संभावना है, परन्तु गोविन्द-सिंहने उनकी बात पर किंचित् भी ध्यान न दिया और खेतीकी अवस्था देखनेके लिये वह उसी दिन चले। काजरोली स्थानका निवासी एक सेवक गोविन्दसिंहके

साथ गया था। गोविन्दसिंहने उस सेवकके पास कितने ही बहुमूल्य द्रव्य रख दिये थे। उस सेवकने अपनी असावधानीसे उन सब द्रव्योंको खोदिया। परन्तु अधीश्वर गोविन्दसिंहने उन समस्त मूल्यवान् द्रव्योंके खोजानेसे उसका बहुत तिरस्कार किया, सेवकने अपनी निर्दोषिताके बहुतसे प्रमाण दिखाये, परन्तु राजा गोविन्दसिंहने किसी प्रकार भी सेवककी बातका विश्वास न किया। स्वामीको इस प्रकारसे अत्यन्त क्रोधी देखकर और अंतमें अपनेको किसी भारी दंड मिलनेकी संभावना विचार कर उस सेवकने रात्रिके समय अपने स्वामी गोविन्दसिंहके प्राण लेलिये। गोविन्दसिंहके औरससे पाँच पुत्र उत्पन्न हुए (१) नरसिंह, (२) सूर्यमल्ल (इन्हें दोदिया देश मिला था) (३) बाघसिंह (४) ख्वानसिंह और (५) रणजीत (इनसे प्रत्येक वंशका ही विस्तार हुआ था)।

पिताकी शोचनीय मृत्युके पीछे नरसिंह खंडेलाके सिंहासन पर विराजमान हुए। परस्परमें प्रबल आत्मविग्रहकी अग्नि प्रज्वलित होनेसे और निकटवर्ती राज्योंमें अनैक्यताके बढ़ जानेसे शेखावाटीके सम्मिलित अधीश्वरोंने अपने २ अधिकारी देशोंकी सीमाको बढ़ा लिया, और उनकी प्रजाकी संख्या भी क्रमशः बढ़ गई। अतुल बलशाली मुगलसम्राट्के वंशधर इस समय केवल नाममात्रके बादशाह थे, अन्य पक्षमें शेखावाटीके निकटवर्ती उपरितन प्रभु आमेरराज इस समय उनसे किंचित् कर, सम्मान और समय २ पर सेनाकी सहायता मिलनेसे अत्यन्त संतुष्ट हुए थे, उन्होंने सेखावत् नेताओं की जातीय स्वाधीनताके ऊपर इस समय हस्ताक्षेप करना उचित न समझा। परन्तु दुर्भाग्यसे इस समय और एक शत्रुदलने आकर दर्शन दिया। वह शत्रुदल समधर्मावलम्बी होनेपर भी अत्याचारी मुसल्मानोंकी अपेक्षा अधिक उत्पीड़क और विध्वंसकारी था। वह शत्रुदल नवीन बलसे उद्दीप्त महाराष्ट्रोंका दस्युदल था।

जब महाराष्ट्रोंके नेताके अधीनमें स्थित फरासीसी सेनापति डिबाइनने मेरताके युद्धमें विजय प्राप्त की, तब उनके अधीनस्थ कठिन महाराष्ट्रीदलने पंगपालकी समान कई दलोंमें विभक्त होकर शेखावाटीमें जाकर लूटमार करनी प्रारंभ की, और अंतमें वे प्रत्येक दुर्बल सामन्त और उनके पुत्रोंको बंदी करके लेजाने लगे। इन्हीं कारणोंसे उस नरघातक सर्वस्व लूटनेवाले महाराष्ट्रोंके तस्करदलके हाथसे छुटकारा पानेके लिये शीघ्र ही उन बंदी हुए सामन्तोंने अपना सर्वस्व बेचकर उनको धन देना स्वीकार किया, और किसी २ सामन्तको धन देनेमें असमर्थ होनेके कारण बंदीभावसे ही रहना पड़ा। पीछे उनकी रखवालीमें विशेष कष्ट होता हुआ जान कर तस्करोंके दलने अंतमें उनको भी छोड़ दिया।

महाराष्ट्रोंके तस्करदलका एक दिनके अत्याचारका वृत्तान्त पढ़नेसे पाठक सरलतासे इसका अनुमान कर सकते हैं कि इन दुराचारियोंके द्वारा शेखावाटी देशमें कैसा भयंकर लोमहर्षण काण्ड उपस्थित हुआ होगा। मेरताके युद्धके पीछे महाराष्ट्र दलने शेखावाटीमें जाकर सबसे पहिले बिवाई पर आक्रमण किया बिवाईके सम्पूर्ण निवासी तस्कर दलकी

संहारमूर्ति देख उसके हाथसे किसी प्रकार भी उद्धारका उपाय न देखकर अपनी २ धन सम्पत्ति लेकर प्राणोंके भयसे आसपासके प्रधान २ नगरोंमे भागने लगे। केवल अस्सी राजपूत वीर जातीय गौरवकी रक्षाके लिये विवाईके किलेके भीतर जाकर तस्करोंके दलकी राह देखने लगे। महाराष्ट्र तस्कर दलने वलवान होकर विवाईके किलेपर अधिकार करलिया, परन्तु उन अस्सी राजपूतोंमेंसे एक भी न भागा। तथा वरावर शत्रुओंके साथ युद्ध करते २ अंतमें वे सव मृत्यु शय्यापर शयन किए। वह तस्करोंका दल इस स्थानसे चलकर पीछे खण्डेलाकी ओरको वढ़ा। और जाते २ मार्गमें भी अत्याचार और उपद्रवोंके करनेमें उसने कसर न की।

महाराष्ट्र तस्कर-दलने खण्डेलासे दो कोस दूर होदीगांग नामक स्थानमे जाकर वहाँ अपने डेरे डालदिये। और खण्डेलाके दोनों अधीश्वर नरसिंह और इन्द्रसिंहसे दंड स्वरूप वीस हजार रुपया माँग भेजा। महाराष्ट्रोंके दूतने इन्द्रसिंहके पास जाकर अपने नेताका संदेश कहा कि आपको दंडमें वीस हजार रुपया देना होगा। तव नरसिंह और इन्द्रसिंहकी ओरसे दो वुद्धिमान् सामन्त शीघ्र ही उस पण्डितके साथ शत्रुओंके डेरोंमे गये, और दंड देनेके निमित्त संधि करनेके लिये तैयार हुए। उन दोनो सामन्तोंके नाम नवलसिंह और दलेलसिंह थे।

"उक्त दोनों सामन्त दो राज कर्मचारियोंको भी साथमें लाये थे और वह इस लिये कि जव तक करका अपेक्षित रुपया महाराष्ट्र नेताके पास न पहुँचजाय तवतक वे दोनों वहां साक्षीस्वरूपसे रहें। अतएव सामन्तोंने महाराष्ट्रनेतासे सव प्रकारकी वाते तय करके उक्त कर्मचारियोंको वहीं छोड़कर रुपया लेनेके लिये किलेको वापिस जाना चाहा। परन्तु महाराष्ट्रनेताने इसमे अपनी असम्मति प्रकाश करके कहा कि आपको स्वयं साक्षीस्वरूपसे यहां रहना होगा" इस वचनसे अपना अपमान हुआ जानकर एक सामन्तने कहा कि यह कभी नहीं होसकता। इसके पीछे वह अपने सेवकसे हुक्का लेकर तमाखू पीने लगा। यह देखकर एक असभ्य दक्षिणी महाराष्ट्रने वलपूर्वक उक्त सामन्तके हाथसे हुक्का छीन कर फेंकदिया। इस व्यवहारसे उस सामन्तने अपना विशेष अपमान जाना इसके पीछे जैसे ही वह अपनी कमरसे तलवार निकालकर इसका शिर काटनेके लिये उद्यत हुआ कि वैसे ही महाराष्ट्र नेताने दलेलसिंहके मस्तकको लक्ष करके पिस्तौल दाग दिया। जो सेवक दलेलसिंहके साथमे थे यह देखकर अत्यन्त क्रोधित हुए, तथा वदला देनेके लिये तैयार हुए पर वलवान् तस्करदलने एक २ करके सवके प्राणोंका नाश करदिया।

खंडेलाके एक अंशके अधीश्वर इन्द्रसिंह संधिके परामर्षका फल जाननेके लिये स्वयं उत्कंठित चित्तसे कितने ही सेवकोंके साथ शत्रुओंके डेरोंकी ओरको जारहे थे।

(१) महाराष्ट्र दस्युदलके मंत्री तथा दूतपदपर केवल ब्राह्मण नियुक्त होते थे। कर्नल टाड साहवने लिखा है कि यह श्रेणी जिस प्रकारसे चतुर है उसी प्रकारसे प्रयोजन होनेपर असीम साहस भी दिखाती है। दौत्यकार्यमें ब्राह्मण गण ही सवसे चतुर होते थे, विख्यात पश्चिमी नीतिज्ञ मेकिया वेलीने भी इनसे हारमान ली थी।

उन्होने डेरोके समीप जाते ही सुना कि दस्युदलने हमारे कुटुम्बियोंकी हत्या की है। इन्द्रसिहके सेवकोंने उनको उसी समय खंडेलामें लौटजानेकी सम्मति दी, परन्तु इन्द्र-सिहने कहा, "नही ऐसा कभी नहीं होसकता। जब कि हमारे कुटुम्बियोकी हत्याकी गई है तब उस हत्याका बदला दिये बिना अपमानित होकर मैं खडेलामे जानेकी अपेक्षा इस स्थान पर प्राण त्याग करना कल्याणकर समझता हूँ" इन्द्रसिंहने वीरपुरुषकी समान यह वचन कहकर उसी समय घोड़ेपरसे उतर कर उसे छोड़ दिया, इनके सेवक भी उसी समय इनकी आज्ञासे घोडोंपरसे उतर पडे। सभीने नंगी तलवारे हाथमे लेकर शत्रुओंके डेरोमे प्रवेश किया। और विषमवेगसे बदला लेनेके लिये उन्होने महाराष्ट्रोंपर आक्रमण किया। बड़े २ बुद्धिमान् महाराष्ट्र उस समय डेरोके भीतर थे, इस कारण साधारण थोडेसे सेवकोके साथ इन्द्रसिह विषमवीरता प्रकाश करके पीछे स्वय मारेगये। सबको मृतक हुआ देख दस्युदलने विचारा कि दलेलसिहके अपमानसे ही यह कार्य हुआ है और वह दलेलसिह भलीभाँतिसे घायल होकर भी जीवित हैं। इस कारण वह लोग इनको उसी अवस्थामे डेरोंके भीतर लेगये।

मुगलपठानोके स्थलाधिकारी, मुगलपठानोके समस्त असद्गुणोके अधिकारी सभ्यता और भद्रतासे अशिक्षित महाराष्ट्र दस्युदलने इस प्रकारसे सबसे पहिले शेखावाटीका वियोगान्त अभिनय आरभ किया। परन्तु नरपिशाच महाराष्ट्रोके पक्षमे वह सामान्य भूखंड शेखावाटी अभिनयका उपयुक्त पूर्णक्षेत्र नही विचारा गया। उन्होंने एक समय सम्पूर्ण भारतवर्षमें, सतलजसे समुद्रतक प्रत्येक देश, प्रत्येक नगर–और प्रत्येक ग्रामोपर इस प्रकारसे आक्रमण कर रक्तपात और लोमहर्षण काण्डद्वारा अपनी पैशाचिक वृत्तिका पूर्ण परिचय दिया था।

जिस समय राव इन्द्रसिह महाराष्ट्रोंके डेरोमे मारे गये, उस समय उनके पुत्र प्रतापसिंहने अपनी माताके साथ खण्डेलासे पाँच कोस दूर शिखर पर स्थित शिकराई नामक अभेद्य किलेमें निवास किया। प्रतापसिंह उस समय राजकार्यको कुछ भी नहीं जानते थे, इस कारण महाराष्ट्र दस्युदलके हाथसे नगर और अल्पवयस्क कुमारके जीवनकी रक्षाके लिये, प्रधान २ मनुष्योने शीघ्र ही समस्त धान्यके गालोंको खोलकर उनमेंका समस्त अन्न और सम्पूर्ण धन सम्पत्ति बेच डाला और इस प्रकारसे धन संग्रह करके महाराष्ट्रोकी अभिलाषाको पूर्ण किया। इस प्रकारसे तस्करोका दल खडेलासे धनसंग्रह करके पीछे संहारमूर्ति धारण कर सिद्धानी सम्प्रदायके अधिकारी देशोपर आ पहुंचा। उन्होंने सबसे पहिले उदयपुर पर आक्रमण कर वहाँकी समस्त धन सम्पत्तिको लूट उसपर अपना अधिकार कर लिया। उन्होंने पीछे नगरकी समस्त दीवारोको तोड़कर अतुल धन प्राप्तिकी आशासे दीवारोंके नीचे खोदकर क्रमानुसार चार दिनतक अत्याचारका स्रोता बहाया। और उदयपुरको एकवार ही विध्वंस कर उत्तर प्रदेशके सिंहाना झुंझुनू और खेतरी आदिके सामन्तोके देशोंको लूटनेके लिये गमन किया।

महाराष्ट्रोंके तस्करदलके चले जानेके पीछे प्रतापसिंह और नरसिंह खंडेलामें आकर राज्य करने लगे, परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि वह पूर्वोक्त संगात वेगको सहन न करसके। तब उनके अधीश्वर आमेरराजने उनसे असमयमें कर लेना चाहा। प्रतापसिंहने अपने राज्यमें जितना अन्न उत्पन्न हुआ था उसका चतुर्थांश देकर आमेरपतिको संतुष्ट किया, परन्तु नरसिंहने पूर्व पुरुषोंकी समान उद्धत स्वभावके वशीभूत हो आमेरपतिको कुछ भी न दिया। उन्होंने कहा कि इस प्रकारके कर देनेसे हमको सामान्य भूमिया जंमीदारके पदपर स्थित होना होगा "।

इस समय शेखावत वंशकी एक दूरवर्ती शाखामें उत्पन्न हुए एक सामन्तने अपने बाहुबल और विक्रमके साथ आशातीतरूपसे अपना मस्तक उठाया था। उसका नाम देवीसिंह था। वह कासलीके राव तिरमल्लका वंशधर था। और उसके अधिकारी देशका नाम सीकर था। देवीसिंहने शेखावतपति खंडेलाराजके अधीन सामन्त होकर भी अपने बाहुबलसे धीरे २ लोहागढ़ खोह इत्यादि पच्चीस नगर और किलोंपर अपना अधिकार करलिया। जिस समय उनके अधीश्वर प्रभु नरसिंह आमेरराजके क्रोधमें पतित हुए उस समय वह उपयुक्त सुअवसर जानकर रिवासो देशपर अधिकार करनेके लिये उद्यत हुए। परन्तु इस समय उनके प्राण वियोग होनेसे उनका वह मनोरथ अपूर्ण ही रहगया। देवीसिंहके आजतक पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ, इस कारण उन्होंने मृत्युके पहिले साहपुराके सामन्तके पुत्र लक्ष्मणसिंहको दत्तकरूपसे ग्रहण करके उसको अपने उत्तराधिकारी पदपर नियुक्त किया था। परन्तु देवीसिंहके शेखावाटीके दुर्बल सामन्तोंके प्रति बल प्रकाश करके ग्राम नगरोंको अपने अधिकारमें करलेनेके आचरणसे आमेरराजने महा क्रोधित हो अपने मंत्री दौलतरामके भ्राता नंदराम हलदियाको देवीसिंह पर आक्रमण करके राज्य कर संग्रह करनेकी आज्ञा दी। जिससे उसने शीघ्र ही लक्ष्मणसिंहपर आक्रमण करके उनको अधीन बनालिया। जयपुरके महाराजकी उक्त आज्ञाके प्रचार होते ही सीकरपति देवीसिंहने समस्त स्वजातीय सामन्तोंको निकालकर उनके अधिकारी देशोंपर बलपूर्वक अपना अधिकार करलिया था। वह सब जयपुरके महाराजकी कृपासे फिर अपने २ देशोंके पानेकी इच्छासे दलके दल सेना सहित उक्त कर संग्रह करनेवाले नंदराम हलदियाके डेरोंमें आने लगे। खण्डेलाके अधीश्वर स्वयं अपनी सेना सहित जाकर उस पक्षके साथ मिले। तिरमल्लके वंशके अन्यान्य शाखाके अर्थात् कासली बिलारा इत्यादिके पट्टावत् भी शीघ्र ही इनके साथ आ मिले। तथा जिससे सिद्धानीकी सम्प्रदाय किसी समय भी रायशालोत् पर उपद्रव वा आत्मविग्रह करनेमें किसी प्रकार भी हस्ताक्षेप न करसके इससे वह भी इस समय आनन्दित होकर अपने २ दियेहुए करको लेकर सेना सहित जयपुरके सेनापतिके डेरोंमें आनेलगे। सारांश यह कि सीकरपति देवीसिंहने इस समय शेखावाटीके समस्त अधीश्वरोंके ऊपर मस्तक उठाया था, इसीसे शेखावाटीके प्रत्येक अधीश्वर उनके दत्तकपुत्रके विरुद्ध एक मनुष्यकी समान सेना सहित खड़े हुए। परन्तु सीकरपति देवीसिंह सामान्य मनुष्य नहीं थे। उनमें चतुरता और नीतिज्ञता तथा

षड्यंत्रके विस्तारकी सामर्थ्य भलीभाँतिसे विद्यमान थी। इन्होंने सबसे पहिले आमेर-राजकी सभामे सदस्योंके साथ विशेष प्रीति स्थापन की थी, कारण कि वह इस बातको भलीभाँतिसे जानते थे कि राजसदस्योंके साथ विशेष सद्भावकी रक्षा करनेसे जिन समस्त देशोंपर बलपूर्वक अधिकार कर लिया है, इस समय उन सबको निर्विघ्नतासे उपभोग करनेमे समर्थ होंगे। देवीसिंहके साथ जयपुरके राजमंत्री और उनके भ्रातामें विशेष प्रीति उत्पन्न होगई थी। उस समय उस मित्रताकी परीक्षाका समय उपस्थित हुआ। जैसे ही नंदराम उस सम्मिलित प्रबल सेनादलके साथ सीकरपर आक्रमण करने के लिये पहुंचे कि वैसे ही एक चन्द्रावत् सामन्त सीकरके दीवान और एक धाभाईने लक्ष्मणके प्रतिनिधि स्वरूपसे नंदरामके निकट जाकर नम्रतायुक्त वचनोंसे मृत देवीसिंहके नामसे यह कहकर प्रार्थनाकी। कि जिससे वह देवीसिंहके अज्ञानी पुत्रको प्रतिहिंसा देनेके निमित्त क्रोधित हुए शेखावतोंके मुखमें अर्पण न करें। नंदरामने कहा कि "आपके अनुरोधकी रक्षाका मैं इस समय केवल एक उपाय देखता हूँ कि जिससे आप सरलतासे आक्रमणको निवारण करसकेंगे। और हम भी राजाकी आज्ञाको पालन करनेमें समर्थ होंगे। आप बहुत सी सेनाको इकट्ठा करके सीकरकी रक्षामें यत्नवान् हो तो कोई भी इस बातको नहीं जान सकेगा कि हमी गुप्त षड्यंत्र करके राजाकी आज्ञाको व्यर्थ करनेके लिये उद्यत हुए हैं"। देवीसिंह फतेपुरके अधीनके कई एक देशोंको लूटकर यहांसे बहुतसा धन लेगये थे,इस कारण लक्ष्मणसिंहकी ओरके मनुष्योंने शीघ्र ही बहुतसे रुपये खर्च करके बहुत थोड़े समयमें ही दश हजार सेना सजाली और वे सीकरकी रक्षा करनेमें नियुक्त हुए। इस ओर पूर्व गुप्त प्रस्तावके मतसे नन्दराम सम्मिलित सेनादलके साथ सीकरको घेरकर यथार्थ युद्धके बदले केवल बाहरी समर कौशल दिखाकर युद्ध करने लगे। कई दिनतक इस प्रकारसे कृत्रिम युद्ध और सीकरपर अधिकारकी चेष्टा दिखानेके पीछे नन्दरामने जयपुरमे अपने भ्राता राजमंत्रीके पास इस मर्मका एक पत्र भेजा कि "सीकरको विजय करना किसी भाँति भी सरलकार्य नहीं है और सीकरपति लक्ष्मणसिंह वश्यता स्वीकार करके दंडस्वरूपमे दो लाख रुपये देनेके लिये तैयार हुए हैं, हमारी सम्मतिसे उस धनको लेकर सीकरको छोड़ देना उचित है।" नंदरामने उक्तपत्रके उत्तरकी प्रतीक्षा न करके आमेरराजके निमित्त लक्ष्मणसिंहके पाससे दो लाख रुपया और अपने लिये रिश्वतमे एक लाख रुपया लेकर सीकरको छोड़ दिया। इस प्रकारसे सीकरपति लक्ष्मण सिंह निर्विघ्नतासे अधिकारी देशोंको भोगने लगे। विशेष करके इस समय खण्डेलाके दोनों अधीश्वर नरसिंह और प्रतापसिंहमे विसम्वादकी अग्नि प्रज्वलित होनेसे नंदरामके स्वार्थसाधनमे विशेष सुभीता होने लगा।

खण्डेलाके अन्यतर अधीश्वर नरसिंह पहिलेसे ही आमेर राजकी आज्ञाके अनुसार कर दान करनेमें असम्मत होनेसे उनकी क्रोधानलमें पतित होचुके थे, इस कारण खंडेलाके अन्य अधीश्वर प्रतापसिंह इस सुअवसरमें पिताके विवाद विसम्वादको एकवार ही निर्वाणके साथ नरसिंहको चिरकालके लिये खण्डेलाके अधिकारसे रहित

कर खण्डेला राज्यके सम्पूर्ण अधीश्वर होनेके लिये इस समय अपनी सामर्थ्यके अनुसार विशेष चेष्टा करने लगे। उन्होंने जयपुरके सेनापति उक्त नंदरामके निकट यह प्रस्ताव किया "कि जितनी आमदनी खण्डेलाकी है उसका सब कर मैं अकेला दूँगा, सब देशका अधिकार मुझे दिला दिया जाय । जिस समय महाराज आज्ञा देंगे तभी मै सेना सहित उनकी आज्ञाको पालन करनेके लिये हाजिर हूँगा, और मेरे अभिषेकके समय जयपुरपतिको वहुतसा धन भेंटमे दिया जायगा "। नंदराम प्रतापसिंहकी प्रार्थनाके मतसे उनको समस्त खण्डेलाराज्यके अधीश्वर पदपर वरण कर तथा शासनकी सनद देनेमे शीघ्र ही सम्मत हुए ।

नन्दरामके डेरोमे नाथावत् सम्प्रदायके नेता सामोदके सामन्त रावल इन्द्रसिंह निवास करते थे। उन्होंने नरसिंहका सर्वनाश होताहुआ देखकर उनकी ओर हो उनको अभय देनेके लिये खंडेलासे अपने शिविरमें आनेके लिये बुला भेजा।

रावल इन्द्रसिंहके बुलानेसे नरसिंहके आते ही इन्द्रसिंहने उनसे समस्त समाचार कह दिया कि "आपके प्रतियोगी प्रतापसिंहको समस्त खंडेलादेशका अधिकार देनेके लिये सनदपत्र तैयार हुआ है। आप शीघ्र ही पिताके अधिकारसे रहित होजाँयगे, इस कारण यदि आप इस समय भी आमेरराजकी आज्ञाके पालन करनेमे सम्मत होगे तौ भी हम आपके अधिकारकी रक्षाके लिये विशेष यत्न और उपाय कर सकैगे"। परन्तु नरसिंह किसी प्रकारसे भी उस प्रस्तावके अनुसार आमेरराजको कर देनेमें सम्मत न हुए, इसलिये इन्द्रसिंहने शीघ्र ही नरसिंहके जीवनकी रक्षाके लिये उनको उसी समय डेरोंको छोड़कर खंडेलासे भागनेकी सम्मति दी । उन्होंने कहा, कि "आपके यहाँ रहनेसे मैंने जो आपका पक्ष समर्थन करनेके लिये चेष्टा की थी वह प्रगट होजायगी, इस कारण इसमे हमपर अधिक विपत्ति आनेकी संभावना है। यदि आप इसमे सम्मत होजाते तो इस विपत्तिकी आशा न थी" उसी दिन रात्रिके समय इन्द्रसिंहने अपने ६० अनुचरोंके साथ अत्यन्त गुप्तभावसे नरसिंहको डेरोमेसे नवलगढ़में भेज दिया और नरसिंहने दूसरे दिन प्रभात होते ही अपने किले गोविन्दगढ़मे निर्विघ्नतासे प्रवेश किया। परन्तु इन्द्रसिंहने जो विचार किया था वही हुआ, उनकी उस सावधानीके अवलम्बनका कोई फल न देख पड़ा । कारण कि उन्होंने नरसिंहको डेरोमेसे नवलगढ़में भेजा था इससे नन्दरामने उनके ऊपर क्रोधित होकर उन्हे राजकोपका भय दिखाया । परन्तु वीरतेजस्वी राजपूत इन्द्रसिंहने कहा, कि "मैंने राजपूतोका कर्तव्य कार्य किया है, तथा उसका फल भोगनेके लिये मै कुछ भी भयभीत नहीं हूँ"। अत्यन्त दुःखका विषय है कि इन्द्रसिंह वास्तवमें ही आमेर-पतिके क्रोधमें पतित हुए।

नाथावत् सम्प्रदायमें सामोत और चौमू इन दोनों देशोंके दो सामन्त सबमें प्रधान थे, प्रथम शाखावाले सामोतके सामन्त सबसे अधिक सम्मानित थे, तथा रावल की उपाधि धारण करके नीचे पदपर स्थित अगणित सामन्तोंके ऊपर अपना अधिकार

चलाते थे। परन्तु चौमूके सामन्त बहुत दिनोंसे सामोतके सामन्तोंके उक्त पद सम्मान और सामर्थ्यकी हिंसा प्रकाशके साथ स्वयं उक्त पद और सम्मानकी प्राप्तिके लिये बीच २ मे झगड़ा करते थे, अधिक क्या इसी कारणसे रक्तपात भी हुआ था। सामोतके सामन्त इन्द्रसिंह जभी उपरोक्त प्रकारसे आमेर राजके क्रोधमे पतित हुए तभी शुभ अवसर पाकर चौमूके सामन्त शीघ्र ही जयपुरकी राजसभामें आये, और नाथावत सम्प्रदायके सबमें श्रेष्ठ सामन्त पद और उपाधि धारण करनेके लिये आमेरके महाराजको बहुतसे रुपये भेंटमे देनेके लिये तैयार हुए। आमेरके महाराज चौमूके सामन्तकी प्रार्थनापर शीघ्र ही उनकी अभिलाषा पूर्ण करनेके लिये सम्मत हुए। नन्दरामके समीप सामोतके सामन्त इन्द्रसिंह इस समय भी निवास करते थे। इन्द्रसिंहको शीघ्र ही आमेरराजके निकटसे इस मर्मकी एक आज्ञा हुई कि आपने जो अपराध किया है उस अपराधके दंडमे सामोत देशको आमेरराजने अपने अधिकारमें करलिया, इस निमित्त आप शीघ्र ही सामोतसे अलग होजाँय। सामोतके सामन्त इन्द्रसिंहने राजाकी उक्त आज्ञाको पाते ही उसमें किंचित्मात्र भी आनाकानी न की, वरन् यथार्थ राजभक्तकी समान उस आज्ञापत्रको मस्तक पर धारण करके शीघ्र ही उन्होंने सामोतको गमन किया। वहाँ इनकी जो कुछ भी धनसम्पत्ति थी उस सबको लेकर वह कुटुंबके साथ चिरकालके लिये सामोतको त्याग कर निर्वासित अवस्थासे मारवाड राज्यके आश्रयमें चलेगये। कुछ समयके उपरान्त सामोतके उसी अधीश्वरकी स्त्रीको आमेरराजकी सभासे पिपली नामक एक ग्रामका अधिकार मिला। इन्द्रसिंह वार्द्धक्यदशामे अपनी मृत्युको अत्यन्त निकट देखकर अन्तमे अपनी जन्मभूमिमे तथा स्वजातिमे प्राण त्याग करनेके लिये उस ग्राममें चले आये। इन्द्रसिंहकी इस राजभक्तिसे जानागया कि यह अत्यन्त ही प्रशंसनीय पुरुष है अधिक क्या कहैं इन्द्रसिंह स्वभावसे ही असीमसाहसी और वीर थे, यदि वह विचार करते तो अवश्य ही बहुत सी सेना संग्रह करके आमेरराजके उक्त अन्याय मूलक आचरणोके विरुद्ध खड़े होकर अपने पिताके राज्यखंडकी रक्षा कर सकते थे, परन्तु उन्होने केवल राजभक्तिके भावसे स्वार्थ त्याग किया था।

इस समय खण्डेलाकी ओर दृष्टि डालनी होगी। खण्डेलापति नरसिंह आमेरपतिके विषैले नेत्रोमे पड़े, आमेरके सेनापति नन्दराम हलदियाने खण्डेलाके अन्यान्य अंशोंके अधीश्वर प्रतापसिंहको जब खण्डेला प्रदेशके अधिकारकी सनद दी तब प्रतापसिंह अत्यन्त प्रसन्न होकर अपनी समस्त सेना साथ लेकर खण्डेलामें आये। उन्होंने खण्डेलापर अधिकार करके सबसे पहिले उस तोरणको तोड़कर एकसर करनेकी आज्ञा दी, जिसे नरसिंहने नगर रक्षाके लिये दुर्गस्वरूपसे बनवाया था और उसीके ऊपरसे प्रतापके पिताके महलोंपर गोले वर्षाते थे। उस तोरणके ऊपर गणदेवकी एक मूर्ति थी। गणदेवता सिद्धिदाता और सर्वमंगल विधातारूपसे पूजे जाते थे। दुर्घटनाके वश तोरणके टूटनेके समय वह गणदेवकी मूर्ति भी टूट फूट कर चूर्ण होगई। यह बात प्रतापके पक्षमे अवश्य ही भावी अमंगल अनुमान किया जासकता

है। जो कुछ भी हो प्रतापसिंह उस तोरणको एकसर करके राजधानी खण्डेलाके शासनका बंदोबस्त कर रेवासो पर अधिकार करनेके लिये गये। अपने वाहुवलसे रेवासो जीत कर प्रतापसिंहने नन्दराम हलदियाके अधीनकी कितनी ही सेनाके साथ उस गोविंदगढ़ नामक किलेको भी जा घेरा जिसमें नरसिंह रहते थे। गोविन्दगढ़से दो कोस और रानोलीसे चारकोस दूरीपर गोरानामक स्थानपर डेरे डाले, रानोलीके जो सामन्त इस समय तक अपने उपारितन प्रभु अधीश्वर हतभाग्य नरसिंहका पक्ष समर्थन करते थे उन्होने अपने मंत्रीको हलदियाके पास भेजकर यह समाचार कहला भेजा कि आमेरराजको जो कर नरसिंहके पाससे मिलता है हम उस सबको देनेके लिये तैयार है और यदि नंदराम नरसिंहको उनका पहला अधिकार अर्थात् खंडेलाके राजपद पर प्रतिष्ठित कर देंगे तो उनको यथेष्ट पुरस्कार दिया जायगा। इस प्रस्तावसे नंदरामने वहुतसे धनकी आशासे फिर कौशलजालका विस्तार किया। उसने थोड़ी सी सेनाके साथ खंडेलामें जाकर कहला भेजा कि "गोविन्दगढ़से नरसिंहकी सेना रात्रिके समय वाहर होकर हमारी सेनापर आक्रमण करै तो आक्रमण होने पर हम लोग सेना सहित परास्त होकर शीघ्र ही वहाँसे भाग जॉयगे। ऐसा करनेसे प्रतापसिंह कुछ भी नहीं जान सकैगे और कार्य सिद्ध होजायगा।" नन्दरामके उक्त गुप्त प्रस्तावसे सूर्यमल्ल और वाघसिंह नामक नरसिंहके दो भ्राता गोविन्दगढ़से डेढ़सौ अस्त्रधारी सेना साथ लेकर रात्रिके समय वाहर हुए। और उन्होंने हलदियाकी सेनापर वनावटी आक्रमण किया जिससे वह परास्त होकर उसी समय भाग गये और उस सुअवसरमे उक्त विजयी सेनाने खंडेला पर अधिकार करलिया। इस घटनासे प्रतापसिंह अत्यन्त ही क्रोधित हुए, और जिससे उक्त अधिकार व्यर्थ होजाय इस कारण वहुतसी सेनाको एक प्रवेश मार्गपर रखनेकी आज्ञा दी। परन्तु नरसिंहकी सेनाने पहिले ही उस स्थानपर अधिकार करलिया था, इस कारण प्रतापसिंहको वह कामना व्यर्थ होगई। नरसिहके ओरकी वहुतसी सेनाके दलके दल आकर खंडेलामे प्रवेश करने लगे, प्रतापसिंहने दूसरा कोई उपाय न देखकर शत्रुओंको पानीकी त्रास देनेके लिये कुओंको वंद करनेकी आज्ञा दी। इसी कारण वश नरसिंहकी सेनाके साथ प्रतापकी सेनाका एक प्रवल युद्ध उपस्थित हुआ, और दोनों पक्षकी वहुतसी सेना घायल हुई। शेपमें नन्दराम हलदियाने दोनो पक्षमे आमेरराजकी पचरंगी पताका उड़ाकर युद्ध रोक दिया। और नन्दरामके प्रस्तावसे शेपमे दोनो पक्षमें एक संधि नियत हुई। उस संधिके मतसे प्रतापसिहका रेवासो देश पर अधिकार हुआ और नरसिहको खंडेला राज्यके समस्त पैतृक अधिकार प्राप्त हुए।

यद्यपि उक्त संधिके अनुसार खंडेलादेशमें शान्ति स्थापित होगई, परन्तु दोनो वंशोंका झगड़ा एकवार ही समाप्त नही हुआ। वीच २ मे वहुधा दोनो पक्ष एक दूसरे पर आक्रमण करने लगे। गंगोर नामक पर्वोत्सवके समयमे एक वार वड़ा झगड़ा हुआ। अन्तमे और एक घटनाके उपलक्षमे समस्त शेखावाटीके सामन्तोंकी संप्रदाय सन्नद्ध होगई। रानोलीके सामन्त प्रतापसिहके अधीनमें स्थित एक सामन्तके वंदी

करनेसे शीघ्र ही समस्त शेखावतोंकी संप्रदाय चमक उठी। अन्तमें सभीने एकवाक्यसे अपने प्रभु अधीश्वर आमेरराजको मध्यस्थरूपसे नियुक्त किया। आमेरपतिके उस झगड़ेका विचार करने और अपराधी मनुष्योंको दण्ड देनेसे उसी समय समस्त उपद्रव दूर होगये।

शेखावाटीके उत्तर देशके सिद्धानी नामक सेखावत संप्रदायके सामन्त और रायशालोतोंके उक्त प्रकारसे अविश्रान्त जातीय विवादसे विषैला फल उत्पन्न हुआ, और उसी कारणसे शेखावाटी देशपर आमेरराजके अधिकारका विस्तार क्रमशः होता गया। आमेरपतिके कर उगाहक नन्दराम हलदियाको छल बल चतुरता और कौशलसे अनेक देशोंको अपने हस्तगत करके शेखावतोंकी स्वाधीनतापर हस्ताक्षेप करते हुए देखकर वे महा असंतोष प्रकाश करने लगे। इस समयके पूर्वतक यह सामन्त वा छोटे २ देशोंके राजा जयपुरपतिकी संपूर्ण वश्यता स्वीकार करके भी उनको किसी प्रकारका कर नहीं देते थे, केवल किसी सामन्तके प्राण त्याग करनेपर उसके उत्तराधिकारीके अभिषेकके समय आमेरराजको अपनेमें सबसे श्रेष्ठ सामर्थ्यवाला आत्मीय जानकर कुछ रुपये भेटमे दिये जाते थे। परन्तु इस समय आमेरराजकी सेनाका दल क्रमानुसार सीमाके अन्तमें इकट्ठा होगया, और कब कौन किस समय उनकी स्वाधीनताके हरण करनेको उद्यत होगा यह विचार कर सिद्धानी गणोंने अपने स्वार्थकी रक्षा करना एकान्त कर्तव्य विचार लिया। नंदराम हलदियाने इससे पहिले नवलगढ़के सामन्तोंके अधीनमे स्थित हुई नगरको घेर लिया, और रानोली देशपर प्रतापसिंहका अधिकार करनेके लिये उनको भी वंदी किया गया। इसी कारणसे समस्त सिद्धानी सामन्त महाक्रोधित होगये। यद्यपि वह लोग इतने दिनोंसे रायशालोतगणोंपर आत्मविवाद विसम्वादसे हस्ताक्षेप न करके निरपेक्षभावसे निवास करते चले आये थे। परन्तु उन्होंने देखा कि इस समय निरपेक्षभावसे रहना सर्वथा असंभव है। इस कारण वह लोग सम्पूर्ण शेखावाटी देशके प्रत्येक सम्प्रदायके भीतरी झगड़ेको एकवार ही दूर करके सब एक वाणी और एक मतहो शेखावाटीकी जातीय स्वाधीनता और चिर अधिकारकी रक्षा करनेके लिये आग्रहके साथ आगे बढ़े। पूर्वकालमें उदयपुर नामक जिस स्थानपर समस्त शेखावतके सामन्त किसी जातीय प्रश्नकी मीमांसा वा स्वार्थ रक्षाके लिये इकट्ठे होते थे, उसी उदयपुरमें सम्पूर्ण सेखावतोंके नेता और सामन्तोंके एकत्रित होते ही यह घोषणापत्र प्रचारित हुआ। जिससे किसीके मनमे भी किसी प्रकारका संदेह उपस्थित न हो जिससे कोई भी किसी प्रकारका षड्यंत्र न चलासके, जिससे उक्त जातिकी समितिके सूत्रमें कोई भी किसी प्रकारका अनिष्ट वा किसी प्रकारके पहिले झगड़ेको स्मरण करके उसका बदला देनेके लिये समर्थ न हो, इस लिये पहिलेसे ही ऐसा प्रस्ताव नियत किया गया कि जातिकी प्राचीन और पवित्र रीतिके अनुसार एकत्रित हुए समस्त अधीश्वरोंको सरलविश्वास प्रकाश करनेके लिये "लूनधाव" अर्थात् नमकमें हाथ डालकर परस्परमें सद्भाव प्रकाश करनेके लिये सौगंध खानी होगी।

शीघ्र ही प्रत्येक सिद्धानीके सामन्त अपने २ अनुचरोंके साथ नियत हुए समय पर उस उदयपुर स्थानपर आ पहुँचे। केवल खंडेलाके उक्त अधीश्वर दोनों प्रताप और नरसिंहदासके अतिरिक्त रायशालोतोंके प्रत्येक अधीश्वर भी उस जातीय महा समितिमे आ पहुँचे। नरसिंह और प्रतापसिंहमे परस्परमें जो झगड़ा चिरकालसे चला आता था, इसी कारणसे उनका अधिक अविश्वास होगया था; लोग किसी प्रकारसे भी उस समितिमे शामिल होनेका साहस न करसके। ठीक समयमे उस जातीय समितिमें सबकी सम्मतिके मतसे कार्य किया गया। समस्त शेखावाटी देशके सामन्तोंमें जो कुछ भीतरी झगड़ा था, उसे चिरकालके लिये सभीने छोड़दिया। अंतमे यदि किसी अधीश्वरके साथ अन्य अधीश्वरका झगड़ा उपस्थित होजाय तो वर्तमान समयमें जिस प्रकार आमेरराजको उस विवादके मीमांसा पदपर नियुक्त किया जाता है उस प्रकारसे अब नहीं किया जायगा। वरन विवादकी मीमांसाके लिये, वा जिस किसी प्रकारसे जातीय स्वार्थकी रक्षाके लिये इस उदयपुरमे जातीय सभाद्वारा हो उचित अनुष्ठान होगा। उस सभामें उस विवादका विचार किया जायगा, यदि आमेरराज बलपूर्वक हमारे जातीय स्वार्थमे हस्ताक्षेप करेंगे तो आवश्यकतानुसार प्रत्येक सामन्तकी सेना इकट्ठी होकर आमेरराजके विरुद्ध खड़ी होगी।

शेखावाटीके समस्त अधीश्वरोंको इस प्रकारसे एक मनुष्यकी समान खड़ा हुआ तथा दृढ़प्रतिज्ञ देखकर जयपुरपति महाराज अत्यन्त भयभीत हुए। नन्दराम हलदियाके ही अत्याचार और उपद्रवोंसे शेखावाटीके सामन्त इस प्रकारसे खड़े हुए हैं यह जानकर जयपुरेश्वरने शीघ्र ही नन्दरामको पदसे राहित कर रोड़ाराम नामक एक मनुष्यको उस पदपर नियुक्त किया, और उनको सेनासहित शेखावाटीमें भेजा। और नन्दराम हलदियाको बन्दी करके जयपुरमें भेजनेकी आज्ञा भी दी। नंदराम हलदिया जयपुरपातिकी इस आज्ञाका समाचार पाकर पहिलेसे ही भाग गया। उसने जान लिया कि पकड़े जाने पर अवश्य जयपुरके कारागारमे बन्दी किया जाऊंगा। जयपुर राजने, उक्त नंदराम और उनके भ्राता जो आमेरके प्रधान राजमंत्री पदपर नियुक्त होकर नन्दरामके अत्याचार और उपद्रवोंमें सहायता करते थे उनके भी समस्त अधिकारी देशोंकी धनसम्पत्तिको राजदरबारके अधिकारमे करलिया।

नव नियोजित सेनापति जातिका दरजी था, वह नंदराम हलदियाको बंदी करनेके लिये और उसके अधीनकी सेनाको विध्वंस करनेके निमित्त अनेक यत्न करने लगा। नंदराम हलदिया यद्यपि पहिले आमेरराजका सेवक था परन्तु आमेरराजके उसे पदसे उतार कर सारी धन सम्पत्ति छीन लेनेसे इस समय वह अपने पूर्वस्वामीको अपना दृढ़ शत्रु विचार कर चारों ओर अत्याचार करके गाँव २ में अग्नि लगाने लगा। नवीन सेनापतिने नन्दरामको पकड़ने और उसके अत्याचारोको निवारण करनेके लिये अंतमें शेखावाटीके सम्मिलित अधीश्वरोंसे सहायताकी प्रार्थना की। परन्तु शेखावाटीके सामन्त पहिलेसे ही इस भाँतिकी शिक्षा पाये हुए थे इस कारण वह सहसा उसकी

सहायता करनेमें सम्मत न हुए, और अपने स्वार्थकी रक्षाके लिये सबसे पहिले पदोप-युक्त संधि करने, और आमेरपतिके साथ भविष्य राजनैतिक सम्बन्ध निर्धारित करनेके लिये अग्रसर हुए।

संधिपत्र।

पहिली धारा—नन्दराम हलदियाने जो बलपूर्वक तुई और ग्वाला इत्यादि नगरो पर अधिकार करलिया है, वे नगर पूर्व अधिकारियोको लौटा देने होंगे।

दूसरी धारा—शेखावतोंकी सम्प्रदाय इच्छानुसार पहिलेसे ही जो कर देती आई है, आमेरराजको इसके अतिरिक्त और कर ग्रहण करनेकी सामर्थ्य न होगी। शेखावाटीके सामन्त अपने २ स्वीकार किये करको आमेरकी राजधानीमे स्वयं भेजते रहैंगे।

तीसरी धारा—जिस किसी कारणसे क्यो न हो आमेरराजकी सेना किसी समय भी शेखावाटीमे प्रवेश न करसकेगी, कारण कि उसी सेनादलकी उपस्थितिके कारण खण्डेलाके युद्धमे वृथा रक्तपात हुआ है।

चौथी धारा—उक्त सम्मिलित अधीश्वरगण आमेरपतिकी सहायताके लिये एक सेना भेजेंगे, परन्तु वह सेना जबतक आमेरराजके कार्यमें नियुक्त रहैगी उतने दिनोंतक उसका खर्चा आमेरके महाराजको देना होगा।

उक्त नवीन राजसेनापतिकी मध्यस्थतामें उक्त संधिपत्र आमेरराज और शेखावतोकी संप्रदायमे नियुक्त हुआ, उक्त संमिलित सामन्तगणोने सेनाकी सहायताके लिये व्ययस्वरूप अग्रिम दश हजार रुपया लेकर अपने २ अनुचरोंके साथ जयपुरमे जाकर अपने स्वामीको सम्मान दिखाया। जयपुरपतिने उनके संमानको उसी समय स्वीकार भी किया; और जिससे नन्दराम तथा उनकी सेनाका दल शीघ्र ही पकड़ा जाय इस लिये उनको शीघ्र ही कार्यक्षेत्रमें जानेके लिये आज्ञा दी। अनिरुद्ध शेखावतने तुरन्त ही कार्यक्षेत्रमें जाकर पहिले उन गावोंका उद्धार किया, जिन्हे नन्दरामने बलपूर्वक अपने अधिकारमें कर रक्खा था। परन्तु सामन्तगण शीघ्र ही जानगये कि यद्यपि वह संधिके अनुसार आमेरराजकी यथेष्ट सहायता करते हैं, परन्तु आमेरराज उस संधिके मतसे उनके स्वार्थकी रक्षामे प्रस्तुत नहीं हुए। उन्होने देखा कि उन लोगोंने नन्दरामकी सेनाको भगा दिया है, परन्तु इस समय रोड़ारामकी सेना निर्विघ्नतासे उन स्थानोंपर अधिकार कर रही है। जो सामन्तोकी सम्प्रदाय यहाँ इकट्ठी हुई थी वह महा दुःखित हुई—और शीघ्र ही उन्होने परामर्श करके अपने निज संधिपत्रकी धाराके कार्यको पूर्ण करनेका संकल्प किया। रोड़ारामकी सेनाका दल शेखावाटीके जिन ग्राम और नगरोको सामन्तोंकी सम्प्रदायकी सहायताके लिये नन्दरामकी सेनाके हाथसे लेकर वहाँ निवास कर रहा था, सामन्त सम्प्रदायोंने उन सब ग्राम तथा नगरोपर आक्रमण करके रोड़ारामकी सेनाको दूर करदिया। और उन सब ग्राम और नगरोको पूर्व आदि अधिकारियोके हाथमे अर्पण किया।

उक्त समयमें ही आमेरपतिने खंडेलाके राजा नरसिंहदासके निकट बाकी कर अदा करनेके लिये एक दूत भेजा, परंतु नरसिंहने उस दूतको मारपीट करके भगा दिया । वह दूत आमेरराजके मंत्रीके कुटुम्बका था; वह उक्त रीतिसे अपमानित और विताड़ित हुआ, तब वह जयपुरपति महाराजके निकट जाकर नेत्रोंमें जल भरकर उनके चरणोंमें अपनी पगड़ी रख यह वचन बोला, "नरसिंहदासने मेरा घोर अपमान किया है"। आमेरके महाराजने समस्त वृत्तान्त जानकर शीघ्र ही यह आज्ञा दी कि खण्डेलाराज्य आमेर राज्यके अधिकारमे रहै,और नरसिंहको बंदी करके शीघ्र ही जयपुरमें लाया जाय।

तुरन्त ही आशाराम नामक एक सेनापति सेना साथमें लेकर खण्डेलापर अधिकार करनेके लिये भेजा गया । नरसिंह गोविन्दगढ़मे जाकर अधीश्वर आमेरपतिके प्रति उपेक्षा दिखाने लगे । आशारामके खण्डेलामें जाते ही नरसिंह और प्रतापसिंह दोनोंको एक साथ एक ही समयमें पकड़नेके लिये षड्यंत्र जालका विस्तार करने लगा। नरसिह तो गोविन्दगढ़में ही रहते थे, परन्तु प्रतापसिंह अपनी किसी विपत्तिकी सम्भावना न विचारकर जयपुरकी सेनाके साथ खण्डेलामें ही निवास करते थे। प्रतापसिह विचार रहे थे कि नरसिंहके अपराधसे केवल उन्हीके हिस्सेके खण्डेलापर जयपुरराज्यका अधिकार होजानेकी सम्भावना है। इधर आशारामने प्रतापसिंहको किसी प्रकारका भय न दिखाकर केवल नरसिंहको पकड़नेके लिये सबसे पहिले कौशलजाल विस्तारा। आशारामने मनोहरपुरपति नरसिंहसे कहला भेजा कि उन्हें किसी प्रकारका कोई भी शारीरिक अनिष्ट नही होसकैगा। राजपूत प्रतिज्ञा और सौगंधके ऊपर चिरकालसे ही विशेष विश्वास स्थापन करते आये है। शरीरमें प्राण रहते हुए कोई भी अपनी प्रतिज्ञाको भंग नहीं करसकता, यही राजपूतजातिका स्वाभाविक धर्म है, मनोहरपुरपति आशारामके उपदेशसे ही उसके वचनोमें बँध गये, और उनके ऊपर सम्पूर्ण विश्वास स्थापित कर वह गोविन्दगढ़से बाहर हुए; और खण्डेलामें पहुँच गये। आशारामने उनको आदरसहित ग्रहण करके बाकी करके सम्बन्धमे सन्धिका प्रस्ताव उपस्थित किया । संधिपत्र तैयार होने लगा। नरसिहके डेरोंको छोड़ते ही आशाराम भी सेना सहित वहाँसे कितनी दूर चलागया। चतुर आशारामने इस प्रकारसे नरसिंहको असावधान और गाफिल कर दिया और फिर तीसरे दिन लौट कर मध्यरात्रिके समय उनके घरको घेरकर उनको उसी समय डेरोमे जानेकी आज्ञा दी । नरसिंह आशारामकी इस चातुरीजालसे अत्यन्त क्रोधित हो आत्महत्या करनेके लिये उद्यत हुए पर आशारामने उनका वह उद्योग व्यर्थ करदिया । तब नरसिंह शीघ्र ही कितने विश्वासी राजपूतोंके साथ आशारामके डेरोंमें चले गये ।

नरसिंहको हस्तगत करके उसने प्रतापको बुलाया और वह निर्भय होकर उसके डेरोंमें चले आये.। प्रताप विचार रहे थे कि अबकी बार वह अवश्य ही समस्त खंडेला देशके अधीश्वर होगे, परन्तु चतुर आशारामने उनको घोर विपत्तिमें डालनेकी तैयारी की इसका उन्है स्वप्नमें भी ध्यान नही था। दूसरे दिन प्रताप और नरसिंह जिस समय

भक्तिहीन होकर भोजन कर रहे थे, उसी समयमे आशारामकी आज्ञासे एक सेनादलने दोनोको एकवार ही बंदी करलिया। घोर अपराधियोंकी समान जंजीरोंसे बाँधकर बंद और एक सवारीमे चढ़ाकर पाँचसौ पहरेवालोंकी सेनाके साथ उनको जयपुरमे भेज दिया। जयपुरमे पहुँचते ही दोनो राजाके कारागारमे बंदी होगये, इस प्रकारसे दोनोके बंदी होजाने पर जयपुरके महाराज और उनके मंत्री अत्यन्त ही प्रसन्न हुए। और आशारामको धन्यवाद देने लगे। आशारामने राजाकी आज्ञासे शीघ्र ही समस्त खंडेलादेश पर आमेरराजका खास अधिकार करके शान्ति रक्षाके लिये वहाँ पाँचसौ सिपाही रख दिये। वह सब नीची श्रेणीके सामन्त खंडेलाके दोनों राजोके अधीनमे थे, आशारामने उनको पूर्व पदपर नियुक्त रख कर उनको रीतिके अनुसार कर देनेमें सम्मत करलिया, और उसने उनसे ऐसी प्रतिज्ञा भी कराली कि वह कभी किसी प्रकारसे भी शान्ति भंग अथवा किसी प्रकारका उपद्रव नहीं करेंगे। इस प्रकारसे खंडेलाराज्य फिर अवनतिकी अवस्थामें पतित होकर पराधीन होगया।

तीसरा अध्याय ३.

उप-आमेरपतिके विरुद्धमे बाघसिंहका अभ्युत्थान-बाघसिंहके साथ जार्ज थामसका योगदान-भयंकर युद्ध-बाघसिंहका खंडेलाके किलेमे आना-हनुमंतसिंहका उनकी सेना और अनुज लक्ष्मणसिंहके प्राण नाश करना-बाघसिंहका फिर खंडेलाके किलेको जीतना-आमेरराजद्वारा एक ब्राह्मणको खण्डेलादेशमें जमाबंदीके लिये भेजना-उक्त ब्राह्मणका आपमानित होना-संग्रामसिंह का अभ्युत्थान-गायोंका लूटना-उनकी मृत्यु-जोधपुरके विरुद्धमे आमेरराज्यके साथ शेखावाटीके सामन्तोंका मिलन-आमेरराजके साथ शेखावतोंका नवीन संधिबंधन-नरसिह और प्रतापसिंहका छूटना-मारवाड़के युद्धमें नरसिंहकी मृत्यु-अभयसिंहको पितृपदकी प्राप्ति-आमेरराजकी विश्वास घातकता-हनुमन्तका गोविन्दगढ़ और खंडेला इत्यादि पर अधिकार करना-खुशालीरामको मुक्तिलाभ और जयपुरमे मंत्रीपदकी प्राप्ति-खंडेलाके करद सामन्तोंको नवीन शासनकी सनद मिलना-अभय तथा प्रतापसिंहको पिताके अधिकारकी प्राप्ति-मोहम्मदशाहके विरुद्ध शेखावाटीके सामन्तों का सेनासहित गमन-आत्मविवाद-सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिंहका खंडेलापर आक्रमण-हनुमंतसिंहकी वीरताका प्रकाश करना-उनकी मृत्यु-लक्ष्मणसिंहका खंडेलापर अधिकार-खंडेलाके दोनों अधीश्वरोंका चिरकालके लिये पैतृक अधिकारसे वंचित होना-उनका निकाला जाना-राजमंत्रीके साथ लक्ष्मणसिंहका विवाद-विवादका फल-सिद्धानियोंका इतिहास-लाडखानी लोग-शेखावाटी का राजस्व—

दीनाराम बोहरा इस समय सन् १७९८-९९ ईस्वी में जयपुरके प्रधानमंत्री पदपर नियुक्त थे। आशारामको खंडेला विजय करते हुए देखकर वह शीघ्र ही राजधानी छोड़कर सिद्धानीके सामन्तोके पाससे कर लेनेके लिये शेखावाटीको चले। दीनाराम

उदयपुरमे आशारामकी सेनाके साथ मिलकर सिद्धानी सामन्तोंके अधिकारी देशोके वीचमें परशुरामपुर नामक नगरमें सेनाको लेगये। वहां जाकर इन्होंने सम्पूर्ण सामन्तोके पास आज्ञापत्र भेजकर शीघ्र ही अपने २ देय करकौ उपस्थित करनेके लिये कहा। इतना ही करके वह शान्त न हुए, जिससे शीघ्र ही कर अदा होजाय इस हेतु प्रत्येक देशमे एक २ अश्वारोही दल भी भेजदिया। इस सेना भेजनेका नाम थोस था। इसका मूल उद्देश यही था कि अश्वारोही सेनाका दल सामन्तोके यहां जाकर उनसे सरकारी कर मांगे। सामन्त जितने दिनोतक कर देनेमें विलम्ब करैगे सेना उतने दिनोंतक प्रतिदिन निर्द्धारित धन उनके निकटसे दंडमे लेती रहैगी। यदि सामन्त कर देनेमे राजी न हों तो उनके साथ युद्धका विचार किया जायगा। जब जयपुरके राजमंत्री उक्त अपमान कारक उपायसे कर लेनेके लिये उद्यत हुए, तब समस्त सिद्धानी सामन्तोंने अत्यन्त क्रोधित हो शीघ्र ही मिलकर एक पत्र पर हस्ताक्षर करके उनके पास भेज दिया। उन्होने उस पत्रमें लिख भेजा, कि दीनाराम यदि एक मुहूर्तका भी विलम्ब न करके उस भेजी हुई सेनाको बुलाकर स्वयं सेना सहित झुंझुनूमे न चलाजायगा तो उसे विलक्षण फल मिलैगा; वह यदि झुंझुनूमें चलागया तो सामन्तोके देय हुए करका जो दश हजार रुपया इकट्ठा हुआ है वह शीघ्र ही मिलजायगा। समस्त शेखावाटीके नेताओंने एक मत होकर उक्त पत्रको लिखा। परन्तु खण्डेलाके वन्दी राजाके भ्राता वाघसिंह किसी प्रकार भी उसमे सम्मत न हुए। शेखावत देशके समस्त अधीश्वरोने एक साथ मिलकर थोड़े ही दिनोंके पहिले आमेर राजके जिस प्रकारसे उपकार किये थे, नंदरामकी प्रवलता विनाश करनेके लिये आमेरकी सेनाकी जिस प्रकार सहायता की थी, तिस पर भी आमेरपतिके विपरीत पुरस्कार देनेसे वाघसिंह आमेरपतिके ऊपर अत्यन्त क्रोधित हुए थे। आमेरराजके साथ शेखावतोंकी पहिले जो संधि होगई थी, उसकी एक धारामें यह भी उल्लेख था कि शेखावत जितने दिनोंतक कर देते रहैगे उतने दिनोंतक आमेरराज किसी प्रकार भी शेखावत् देशपर सेना नही भेज सकेंगे, ऐसा प्रबंध सदा रहैगा। सारांश यह है कि संधिकी उस धाराको भंग करके आमेरकी सेनाने जब शेखावत् देशमे प्रवेश किया तब वाघसिंह अपने बाहुवलसे उसी समय जन्मभूमिकी रक्षाके लिये कृतसंकल्प हुए। वाघसिंहके उक्त मन्तव्यके प्रकाश होते ही खेतरीके पॉचसौ राजपूत आकर उनके साथ मिले। वाघसिंहने उस सेनादलके साथ सीकरके अधीश्वरके निकटसे सिहाना और फतेपुरका दंडस्वरूप धनसंग्रह करके इस समयके सुप्रसिद्ध जार्ज थामस नामक यूरूपीय सेनापतिको अपने पक्षमें नियुक्त करलिया। जार्जथामस स्वयं इस समय इस विवादमान राजपूत जातिके किसी एक पक्षमें नियुक्त होकर धन उपार्जनके लिये व्यग्र होरहे थे। जार्ज थामसने अपनी शिक्षित सामान्य संख्यक सेनाके साथ वाघसिंहके साथ मिलकर शीघ्र ही आमेरकी सेनाके साथ युद्धका प्रस्ताव किया। यद्यपि इस समय जयपुरराजकी समस्त वेतन भोगी सेना और उनके अधीनके सामन्तोकी सेना एकसाथ मिलनेसे उनकी संख्या वाघसिंह और थामसकी सेनाकी संख्याकी अपेक्षा अधिक होगई थी। परन्तु

जार्ज थामस अपनी उस सामान्य संख्यक शिक्षित सेनाकी सहायतासे इस समय समस्त रजवाड़ेमें सभीके भयके कारण स्वरूप होगये थे। इस कारण जब उन्होंने स्वयं अपनी सेनाके साथ वाघसिंहका पक्ष अवलम्बन किया, तब राजपक्षकी सेना संख्यामे अधिक होनेसे भी बलमे हीन होगई। जार्ज थामसने इस प्रकारसे बल विक्रमके साथ जयपुरकी सेनापर आक्रमण कियां, कि जयपुरके सेनापति रोड़ारामने उस आक्रमणके वेगको किसी प्रकार भी सहन न करके खेत छोड़ दिया। उसी समय जार्ज थामसने जयपुरके कितने ही तोपखानोंको लूट लिया। प्रधान सेनापतिकी भीरुतासे जयपुरके पक्षमे जो कलक लगा उसको दूर करने और तोपखानेको फिर अपने अधिकारमें करनेके निमित्त आमेरराजकी तरफसे चौमूके सामन्त रणजीतसिंहने सम्पूर्ण सामन्त सेनाको इकट्ठा करके प्रवलरूपसे दल बॉधकर स्वय जार्जथामस पर आक्रमण किया। उस प्रवल समरमे रणजीतसिंहकी ही विजय हुई, यद्यपि रणजीतसिंहने तोपखानेको छीन लिया। परन्तु वह अधिक घायल हुए और सेना भी बहुत सी मारीगई। खांगारोत सम्प्रदायके दो नेता बहादुरसिंह और पहाड सिंह भी गोलोके आघातसे हत हुए। परन्तु जार्जथामस शेषमें एकबार ही परास्त हो गये, और प्राणोके भयसे उनकी सारी सेना भाग गई।

उपरोक्त समरमें वाघसिंहके परास्त होनेसे आमेरराजने उनको खंडेलामें प्रवल बलशाली देखकर अपने हस्तगत करलिया, इधर जयपुरके कारागारमें बंदी दशामें पडे हुए खंडेलाके दो अधीश्वर नरसिह और प्रतापसिह वाघसिंहको उद्योगी और प्रभावशाली जान कर स्वय सरलतासे मुक्तिकी आशा करने लगे। और जिससे उनकी वह आशा पूर्ण होजाय इस लिये उनके पास उत्साहसूचक अनुरोध भी भेजा। जिससे रोड़ाराम उनके ऊपर अनुकूल होकर सहायता करैं इसलिये उनके साथ भी वह गुप्तभावसे प्रस्ताव चलाने लगे। रोड़ारामने कहला भेजा कि यदि एक दल प्रवल रायसालोत्की सेनाका मेरे साथ मिलजाय तो मैं आपकी आशाको पूर्ण करसकता हूं। इस प्रस्तावसे वाघसिंहको ही प्रतिनिधि नेतारूपसे नियुक्त किया गया। वाघसिंहने अपनी सामर्थ्यके वलसे विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की थी। जो राजपुरुष आमेरराजकी ओरसे इस समय खंडेलाको शासन करते थे, वे एकमात्र वाघसिंहके उस प्रभुत्वकी सहायतासे खंडेला देशका कर संग्रहकर भूमिके सम्बन्धमे नवीन विधिकी व्यवस्था करनेमें समर्थ हुए थे। इससे उनको हस्तगत कर रखनेके लिये शासकने खंडेलाके किलेमे रहनेकी आज्ञा दी थी। वाघसिंह बहुत थोड़ी सी सेनाके साथ खंडेलाके महलमे निवास करते थे। इस समय जयपुरके सेनापतिने वाघसिंहको एक स्वजातीय सेनादलके साथ मेल करनेकी आज्ञा दी, वाघसिंह अपने अनुज लक्ष्मणसिंहको अत्यन्त स्नेहके साथ खंडेलामे रखकर आप जयपुरके सेनापतिके साथ मिले।

खंडेलाके दूसरे शासक राज्यबंदी प्रतापसिंहके पुत्र हनुमन्तसिंहने जब सुना कि वाघसिह राजाकी सेनादलके साथ मिल गये हैं तब उन्होंने शुभ सुअवसर जानकर खंडेलाके किलेको जीतनेका विचार किया। रात्रि होगई थी, हनुमंतने कितनी ही

अस्त्रधारी सेनाके साथ खंडेलामें जाकर दुर्गकी दीवारोंको उल्लंघन करके किलेमें प्रवेश कर सावधानीसे समस्त सेना और लक्ष्मणसिंहकी हत्या करके किलेको जीत लिया। वाघसिंह इस समयमें रानोलीमें निवास कररहे थे। उन्होंने हनुमन्तसिंहको अपने अनुज लक्ष्मणसिंहकी हत्या और खंडेला पर अधिकार करते हुए सुनकर शीघ्रतासे खंडेलामें जाकर उसको घेर लिया। वाघसिंह वाहरसे ही अस्त्र चलाने लगे और हनुमन्तसिंहने किलेके भीतरसे गोला वर्षाना प्रारंभ किया। परन्तु हनुमन्तसिंहने वहुत थोड़ी अवस्थावाले लक्ष्मणकी हत्या की थी इससे नगरनिवासी उस हत्याकांडसे उनके ऊपर अत्यन्त क्रोधित हुए थे। इस कारण वे इस समय आग्रहके साथ वाघसिंहकी सहायता करने लगे। अधिक क्या कहैं, स्त्रियाँतक किलेको जीतनेके लिये सेनाकी विशेष सहायता करने लगीं। वाघसिंह प्रवल विक्रमके साथ किलेको जीतनेके लिये प्रवृत्त हुए। हनुमंतकी सेनाने अपने प्रभुपर भयंकर विपत्ति देखकर प्राण पणसे युद्ध किया। परन्तु जयकी आशा न देखकर अंतमें उन्होंने प्रचलित रीतिके अनुसार संधिका प्रस्ताव सूचक स्वेत पताका दिखा कर किलेका दरवाजा खोल दिया। वाघसिंह सानन्द किलेमें पैठ गये। वहां जाकर उन्होंने चाहा कि अपने सुकुमार भाईकी हत्या करनेवाले हनुमंतसिंहसे उचित्त वदला लें किन्तु वह पहिले ही किलेसे निकल भागा था। इस लिये वाघसिंहकी वह प्रतिहिंसक अभिलाषा मनकी मनमें ही रह गई।

उधर दीनाराम जयपुरके राजमंत्रीपदसे उतार दिये गये। और मानजीदास उस पदपर नियुक्त हुए। रोड़ाराम पूर्व कथित युद्धमें पराजित और कलंकित नहीं हुए थे। इससे वह इस समयतक शेखावाटी देशके करसंग्रहके पदपर नियुक्त थे। उन्होंने खंडेलादेशके एक ब्राह्मणो वार्षिक वीस हजार रुपयेकी जमावन्दी पर नियुक्त किया था। उक्त ब्राह्मणने प्रथम वर्षमें विलक्षण लाभ दिखाया। इसीसे उसे फिर दो वर्षका ठेका दिया गया। इस समय जयपुरराजकी सिलहपोश सेना उक्त ब्राह्मणके अधीनमें नियुक्त थी। वह ब्राह्मण उक्त सेनाकी सहायतासे खंडेलाके जो समस्त सामन्त अवतक स्वाधीनभावसे रहते थे; उनके पाससे भी वलपूर्वक करसंग्रह करनेमें प्रवृत्त हुआ। जो लोग कर देनेमे असम्मत हुए उसने सेना सहित उनपर आक्रमण करके उनके कितने ही किलोंपर अधिकार कर लिया। यद्यपि जयपुरपतिने नरसिंह और प्रतापसिंहको वंदी करके समस्त खंडेलाराज्य पर अधिकार करलिया था; परन्तु प्रताप और नरसिंहकी खास अधिकारी भूमिके अतिरिक्त अन्य सम्पूर्ण देशोंके सामन्तोंके साथ संधिवंधन करके उनसे नियमित कर लेते आये थे। इस समय उक्त ब्राह्मणने उन सामन्तों पर भी आक्रमण करके उनके ऊपर इस प्रकारके अत्याचार करने प्रारंभ किये। खंडेलाके रायसल वंशोद्भव समस्त सामन्त महाक्रोधित हुए, और वदला देनेके लिये संहारमूर्तिसे सेनासहित सुसज्जित हुए। उन्होंने नरसिंह और प्रतापसिंहके निकटसे यह समाचार पाया कि जयपुरके महाराजके निकटसे उनको कारागारसे मुक्त होनेकी अव कोई आशा नहीं है, इस कारण सामन्त और भी उत्तेजित हुए। राजपूत जाति समस्त आशाओंके लुप्त होते ही जिस प्रकार महाक्रोधित हो भयंकर काण्ड उपस्थित कर देती है, इस समय वह लोग उसी

प्रकारसे खंडेला देशपर लोमहर्षण काण्ड उपस्थित करनेके साथ बदला लेनेके लिये अग्रसर हुए। उन्होंने सबसे पहिले महा वेगसे उस ब्राह्मणके अधिकारी खंडेला नगर पर आक्रमण किया। और वहाँ भयंकर युद्धानल प्रज्वलित कर दी। ब्राह्मणकी ओर सात सहस्र दादूपन्थीसेना थी, तथापि सम्मिलित सामन्तोंने उस सेनाको विध्वंस कर ब्राह्मणको भगाकर नगरको लूट लिया। उन्होंने सबसे पहिले इस प्रकारसे जयलक्ष्मीका आलिंगन करके अंतमे गगनभेदी जयशब्दसे शेखावाटीको कंपायमान करके जयपुर राज्यमें जाकर ग्राम और अनेक नगरोंको लूट लिया। अधिक क्या जयपुरकी महाराणीके खास अधिकारी देशोंमें जाकर वे उनको विध्वंस करने लगे। इससे जयपुरके महाराज अत्यन्त क्रोधित हुए; और उनको दमन करनेके लिये उन्होंने फिर एक नवीन सेना भेजी, दोनो ओरमें महा संग्राम उपस्थित हुआ। अंतमे सामन्तोंकी सम्प्रदाय अत्यन्त हीनबल होगई। रानोली और अन्य कितने ही देशोंके सामन्तोंने अन्तमे जयपुर पतिके साथ संधि स्थापन कर वश्यता स्वीकार कर ली। परन्तु रायसालकी कनिष्ट शाखामे उत्पन्न हुए सामन्तोंने किसी प्रकार भी वश्यता स्वीकार न की। उन्होंने अपने देशको छोड़कर बीकानेर और मारवाड़मे जाकर वहाँके दोनो अधीश्वरोंकी शरण ली। प्रताप-सिंहके जाति भ्राता सूजावासके सामन्त संग्रामसिंह मारवाड़में और बाघसिंह और सूर्यसिंह बीकानेरमें चले गये, वहांके दोनो राजाओंने उनको अभय देकर उनके भरण पोषणके निमित्त उन्हें जगीरें लगा दीं। वे कुछ समयतक वहाँ इस प्रकारसे रहे, और फिर प्रबल दल बाँधकर जयपुरको विध्वंस करनेके लिय चले।

वीरश्रेष्ट संग्रामसिंह उस निर्वासित सामन्त वृन्दके नेता पदपर नियुक्त होकर शीघ्र ही आमेरमे गये। और उस राज्यके बहुतसे देशोंको लूटकर विध्वंस करने लगे। अनेक स्थानोंके निवासियोंसे दंडकर लेकरके जिस जिस स्थानपर जयपुरराजके छोटे २ किलोंमें सेना निवास करती थी, उन्हीं २ किलोंपर आक्रमण करके निर्दयीभावसे राज्यकी सेनाका विनाश करने लगे। उक्त सम्मिलित सामन्तोंने इस प्रकारसे चारो ओर अशान्ति स्थापित करते २ अन्तमे जयपुरकी राजधानीके बहुत ही निकट खोह नगरमें जाकर उस नगरको लूट वहांसे बहुतसे घोड़े चुराकर अपनी सेनाके लिये लेगये। नेता संग्रामसिंह इस समय क्रमानुसार जयप्राप्त करके इतने बलवान् होगये कि वह मनमे आते ही किसी असीम साहसके कार्यपर हाथ डालदेते थे। इनके इस उपद्रव और अत्याचारोसे प्रजाको महान् कष्ट उपस्थित हुआ, और अन्तमें जयपुरपतिके यहाँ लोग चारो ओरसे हाहाकार मचाने लगे। और उनके द्वारा अपना सर्व-नाश बताकर सहायताके लिये प्रार्थना करने लगे। इस समाचारसे जयपुरके महाराज भयभीत हो शीघ्र ही विद्रोही-नेता संग्रामसिंहके साथ संधि करनेके लिये अग्रसर हुए। बिसाऊदेशके सिद्धानी सामन्त श्यामसिंहने जयपुरके महाराजके प्रतिनिधिस्वरूपसे संग्रामसिंहके पास जाकर संधिका प्रस्ताव उपस्थित किया, और भविष्य जयपुरेश्वरका कोई अनिष्ट न करनेके लिये उन्होंने राजपूत रीतिके अनुसार संग्रामसिंहको वचन बद्ध करलिया। संग्रामसिंहने उक्त वचनोंपर विश्वास कर अन्तमे

जयपुरकी राजधानीमें जाकर जयपुरपतिके साथ साक्षात् करनेकी सम्मति प्रगट की। कई दिनोमे वीर तेजस्वी संग्रामसिंहने अपनी विजयी सेनाके साथ जयपुर नगरमें प्रवेश किया। नगरमे जाते ही अनेक सम्प्रदायोंके लोग इकट्ठे होकर उनके ऊपर तीक्ष्ण दृष्टि डालने लगे। विशेष करके वेतनभोगी सिक्खोंने देखा कि संग्रामसिंहने उनमेंसे किसीके घोड़े और किसीके ऊँट इत्यादि छीन लिये थे, उन्होंने उन सबको लेकर राजधानीमे प्रवेश किया है। परन्तु संग्रामसिंहने इस प्रकार बलविक्रमके साथ गर्वित हो राजधानीमें प्रवेश किया कि, उक्त सेना वा अन्य सर्व साधारण संग्रामसिंहकी सेना अपने २ घोड़े ऊँट वा अस्त्र देख कर भी प्रार्थना करने वा उनका दावा करनेका साहस न करसके।

राजमंत्री मानजीदासने मनही मन स्थिर किया था कि संग्रामसिंहके राजधानीमे प्रवेश करते ही किसी न किसी उपायसे उनको वंदी करके कॉंटेको उखाड़ दिया जाय और मंत्रीके अनुरोधसे ही जयपुरपतिने शपथ की थी, कि वह संग्राम-सिंहके शरीरपर हस्ताक्षेप नहीं करेंगे। परन्तु मानजीदासने जयपुरके महाराजकी प्रतिज्ञा भंग करनेसे महाकलंक लगेगा यह जानकर भी संग्रामको वंदी करनेके लिये उद्योग किया। श्यामसिंह जो राजाके वचनोपर विश्वास करके संग्रामसिंहके निकट वचनवद्ध हुए थे उन्होने मंत्रीके उस गुप्त अभिप्रायको जानकर तुरंत ही संग्रामसिंहसे समस्त समाचार कहदिया। ४८घंटेके पीछे जयपुरके महाराजने समाचार पाया कि संग्रामसिंह जयपुरको छोड़कर तंवरावाटीको चलेगये और तंवर और लाड़खानी भी उनके साथ मिल गए हैं। संग्रामसिंह इस समय एक हजार अश्वारोही सेनाके नेता हुए थे।

संग्रामसिंहने अपनी सेनाका बल बढ़ाकर असीम साहसके साथ जयपुरपतिके खास अधिकारी देशोंमें जाकर शीघ्र ही ग्राम और नगरोंको लूटना प्रारंभ कर दिया। वह सबसे पहिले दंडस्वरूपमें एक २ नगर और ग्राम निवासियोंके निकटसे कर मांगनेके लिये दूत भेजने लगा। जो लोग उसकी प्रार्थनाको पूर्ण करने लगे उनके ऊपर तो किसी प्रकारका अत्याचार नहीं किया। परन्तु जो कर देनेमे राजी नहीं हुए उनके प्रधान २ नेताओंको वंदी करके लेजाने लगा, शेषमे करके पाते ही उनको छोड़नेमें भी उसने किंचित् भी विलम्ब न किया। परन्तु जिन्होंने किसी प्रकारसे भी कर नहीं दिया उनके ग्राम और नगरोंको लूट कर समस्त धन रत्न ऊँटोपर लदवाकर वह लेजाने लगा। संग्रामसिंहने इस प्रकारसे जयपुरराजके खास पृथ्वीके अधिक स्थानोको लूटकर अंतमे जयपुरकी दूसरी रानीके अधिकारी माधोपुर नगरको जा घेरा। वहाँ भयंकर युद्धके समय अचानक एक गोली संग्रामसिंहके मस्तकमे आकर लगी,और इसी आघातसे उन्होने प्राण त्याग दिये। उनकी शव शीघ्र ही रानोलीमें लाकर भस्म किया गया। संग्रामके मारेजाने पर उनका पुत्र पिताकी मृत्युका वदला लेनेके लिये पिताकी समान महा तेजस्वी हो चारो ओर अत्याचार करके लूटमार करने लगा। अंतमे जयपुरपतिने उसके साथ संधि करके पिताका अधिकारी देश सूजावास उसको देदिया, और उक्त लूटनेवालोंका दल भंग कर दिया।

जिस समय यह घटना हुई थी उस समय आमेरके सिंहासन पर महाराज जगत्सिंहजी विराजमान थे, तथा रायचंद् आमेरके प्रधान मंत्री पदपर नियुक्त थे। इस समय रजवाड़ेमें फूलनलिनी कृष्णाकुमारीके जन्मलेनेसे समस्त राजस्थानमें महा युद्धानल प्रज्वलित होगया था। उसी युद्धके होनेसे शेखावाटीके अधीश्वरोंकी पूर्व शोचनीय अवस्था इस समय और भी बढ़ गई थी। इसी समय पोकरणके सामन्त सवाईसिंहने मारवाड़पति भीमसिंहके पुत्र धौंकलसिंहको अपने साथ लेकर जयपुरके महाराजका आश्रय लिया था। प्रधान मंत्री रायचंदने यथासाध्य इस बातकी चेष्टा की कि जिसमे जगत्सिंह कृष्णकुमारीका पाणिग्रहण करनेमे समर्थ होजॉय। उसने अपने प्रभुकी सेना-को बढ़ानेके लिये शीघ्र ही इस समय शेखावाटीके असंतुष्ट सामन्तोंको अपने हस्तगत करनेका यत्न किया। मंत्रीवर रायचंदने सबसे पहिले अपने भाईके पुत्र कृपारामको शेखावाटीके अधीश्वरोके निकट भेजा। कृपारामने वहाँ जाकर शेखावाटीके अधीश्वरो मे कृष्णसिंहको अपने प्रतिनिधि पदपर नियुक्त किया, और उन्हींके अधीनमें सब शेखा-वत् सेनासहित उदयपुरके मार्गमे इकट्ठे होने लगे।

इस शुभ सुअवसर पर आमेरराजकी विशेष कृपासे अपनी पूर्वस्वाधीनता प्राप्त करनेमे समर्थ होकर उक्त सामन्त वर्ग अपने सर्वश्रेष्ठ नेता खंडेलापति नरसिंह और प्रतापसिंहका बंदी अवस्थासे उद्धार करनेको विशेष चेष्टा करने लगे। महाराज जगत्-सिंहने अपने स्वार्थसाधनके लिये शीघ्र ही शेखावाटीके सम्मिलित अधीश्वरोंकी कामनाको पूर्ण करदिया। कृपारामने तुरन्त ही आमेरपति महाराज जगत्सिंहकी ओर से संधि करली। संधिपत्रके नियुक्त होते ही खंडेला राज्यके सम्मिलित अधीश्वर नर-सिंह और प्रतापसिंहको मुक्ति देकर उनका वह राज्य उन्होंको लौटा दियागया। उसी समय इस प्रकारकी संधि भी होगई कि जबतक दूसरे शेखावतोंके नेता आमेर-पतिको कर देते रहैंगे, तबतक आमेरराज किसी प्रकार भी उक्त देशके भीतरी शासन पर हस्ताक्षेप नहीं कर सकेंगे। कृपाराम और कृष्णसिंहने जयपुरकी राजधानीमें जाकर महाराज जगत्सिंहके सन्मुख वह संधिपत्र रक्खा; महाराजने तुरन्त ही उसपर हस्ताक्षर कर दिये, उक्त संधिपत्र पर हस्ताक्षर होते ही शेखावाटीके नेता दश हजार सेना इकट्ठी करके आमेरपतिके अधीनमे युद्ध करनेके लिये तैयार हुए। महाराजने यह भी स्वीकार किया कि जितने दिनोतक वे लोग रणक्षेत्रमे रहैंगे उतने दिनोतक महाराज ही उनको सब खर्च देते रहेंगे।

पोकरणके सामन्त सवाईसिंह धौंकलसिंहको लेकर पहिले ही खेतड़ी नामक स्थानमे आ गये थे। इस समय शेखावत् नेताओंके साथ संधिबन्धन समाप्त होगया तब पोकरणके सामन्तके भ्रातृपुत्र श्यामसिंह चाँपावत् कृपारामके साथ खेतड़ीमे जाकर वहांसे धौकलसिंहको ले उन सम्मिलित शेखावतोंके डेरोंमे आये। आमेरके भूतपूर्व महाराज प्रतापसिंहकी कन्या महाराणी आनन्दकुमारी और मारवाड़पति भीमसिंहकी रानी महारानी आनन्दकुमारीने अपने सेवकोके साथ उन्ही डेरोंमें जाकर धौंकलसिंहको अपने

दत्तकपुत्रस्वरूपसे गोद लेलिया। इसके पीछे सब लोग राजधानी जयपुरमें आ गये। और वहांसे एक लाखसे भी अधिक सेना संहारमूर्ति धारणकर मारवाड़को जीतनेके लिये रवाना हुई।

सम्मिलित सेनादल खण्डेलासे दशकोश दूर खट्टू स्थानमें पहुँचा वहाँ बीकानेरके महाराज तथा अन्यान्य योगदेनेवालोंके आनेकी बाट देखने लगे। इसी समयमें शेखावाटीके सम्मिलित नेताओंने आमेरके महाराजसे यह प्रार्थना की कि "हमारे यथार्थ स्वामी दोनों अधीश्वर नरसिंह और प्रतापसिंहको छोड़ दिया जाय। सम्मिलित अन्य ख्यातनामा वीरोंकी समान उन प्रसिद्ध वीर दोनो नेताओंके अधीनमें हम रहनेकी इच्छा करते है"। परन्तु सम्मिलित शेखावतोंके नेताओंकी उक्त प्रार्थनाको अस्वीकार करनेसे महा संकट उपस्थित होनेकी सम्भावना थी, इस कारण आमेरपतिने शीघ्र ही उनके मनोरथको पूर्ण करदिया। बहुत दिनोंतक बंदीभावमें रहकर नरसिंह और प्रतापसिंह मुक्ति प्राप्त करके अपनी सेनाके साथ आकर मिले। खण्डेलाके भूतपूर्व अधीश्वर वृन्दावनदास जो इतने दिनोंतक कई ग्रामोका अधिकार पाकर इकले रहते थे। इस जातीय युद्धको उपस्थित देखकर वृद्धावस्थामें वह भी तलवार हाथमें लेकर आमेरकी सेनादलके साथ योग देनेको सन्नद्ध हुए। महाराज जगत्सिंह इस समय इतने अधिक संख्यक "शेखाजी" के वंशधरोंसे युक्त हुए कि किसी समय भी कोई आमेरपति इस प्रकारके बहु संख्यक रायसालोत सिद्धानी, भोजानी, लाड़खानीको एकत्र करके अपने अधीनमें रखनेको समर्थ न हुए थे। शेखावतोंके सब अधीश्वर शीघ्र ही जगत्सिंहके साथ मारवाड़में जानेके लिये तैयार हुए। कृष्णकुमारीके लिये जगत्सिंहके साथ मारवाड़पति मानसिंहका जो युद्ध हुआ था, उसका वर्णन पाठकोंने मारवाड़ और जयपुरके इतिहासमें भलीभाँतिसे पाठ किया होगा। इस कारण अब यहाँ दुबारा उल्लेख करनेका प्रयोजन नहीं है। हम यहाँ केवल इतना कह सकते है कि इस युद्धमें शेखावतोंकी सेनाने जैसी वीरता प्रकाश की थी, जगत्सिंहके भागजानेसे अन्तमें उसी प्रकारका कलंक भी संचित किया। अत्यन्त दुःखका विषय है कि उस युद्धमें खण्डेलाराज नरसिंह और वृद्ध वृन्दावनदास दोनोने ही प्राण त्याग किये।

नरसिंहकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र अभयसिंह पिताके पदपर स्थित हुए, और उन्होने खण्डेलाकी सेना पर अपना अधिकार किया। अन्तमें महाराज जगत्सिंह मारवाड छोड़कर अपने राज्यकी ओरको चले आये। वह भी शेखावतोकी सेना लेकर खण्डेलामें लौट आये। परन्तु महाराज जगत्सिंह इस समय पहिली संधिको भंग करके अभयसिंहको खण्डेलाका राज्य देनेमें असम्मत हुए, तब अभयसिंहने दुःखित चित्तसे माचेड़ीके राजा बख्तावरसिंहके यहां आश्रय लिया। परन्तु बख्तावरसिंहने उनके ऊपर जैसा अप्रिय व्यवहार किया अभयसिंहने उससे अपना अधिक अपमान जानकर एक सप्ताहके पीछे माचेड़ीको छोड़ दिया। इस समय दिवसा स्थानमें महाराष्ट्रोंके नेता बापू सेन्धिया निवास करते थे, खण्डेलाके दूसरे अधीश्वर प्रतापसिंह अपने पुत्रके साथ उनके निकट

जाकर उनकी शरणमें हुए। इधर हनुमन्तसिंह राजपूत स्वभाव सिद्ध विक्रमसे इस समय फिर गोविन्दगढ़ पर अधिकार करनेके लिये उद्योग करने लगे। उन्होंने समस्त समाचार जानकर वीर तेजस्वी ६० अस्त्रधारियोंको संध्याके समय एक नदीके किनारे छिपा रक्खा, पीछे आधीरातके समय वे पहाड़ी मार्गसे एक एक करके किलेकी तरफ जाने लगे। और चुपकेसे किलेकी दीवारो पर चढ़कर उन्होने दुर्ग रक्षक सेनाका संहार करना प्रारंभ किया। थोडे ही समयके बीचमें किलेकी सेनाके जागते ही घोर युद्ध होने लगा। वीर विक्रमी हनुमंतसिंहने उस शत्रुदलकी सेनाका सहार करके शेष सेनाको भगाय शीघ्र ही गोविंदगढ़ पर अधिकार करलिया। किलेको जीतते ही उस गंभीर रात्रिके समय शेखावतोने आनंदित होकर नक्कारेको बजाया, लाड़खानी सीना और निकटवर्ती अन्यान्य जातीय राजपूत लोग जातीय शब्दसे आनंदित हो शीघ्रतासे किलेमें घुसपड़े। हनुमंतकी जयध्वनिसे गोविंदगढ़ कपायमान होगया। कई सप्ताहके पीछे महावीर हनुमंतने दो हजार सेना इकट्ठी करके आमेरके महाराजके साथ सब प्रकारसे सामना करनेका साहस किया। उन्होंने खडेला और निकटवर्ती अन्यान्य स्थानोंको एक २ करके अपने हस्तगत कर लिया। जयपुरके महाराजकी जो सेना किलेमे रहती थी वह विजयी हनुमंतके आनेका समाचार पाकर प्राणोंके भयसे चारो ओरको भागने लगी। खुशियाली नाम एक दरोगा प्रसिद्ध षड्यंत्रकारी इस समय खडेला पर शासन करनेके लिये आमेरपतिके द्वारा नियुक्त हुआ था। उसने प्राणोंके भयसे भयभीत हो. आमेरमे जाकर जयपुरके महाराजके सम्मुख अपनी पराजयका वृत्तान्त कह सुनाया। यद्यपि वह दरोगा खण्डेलाके किलेमें एकसौ सेना रखनेके लिये आमेरपतिके निकटसे वेतन लेता था, परन्तु वह तीस मनुष्योंकी रक्षामें रखकर बचेहुए समस्त धनको अपने अधिकारमें करता था। विजयी हनुमंतसिंहने इसी कारणसे सरलतासे विजय प्राप्त की थी।

हनुमंतसिंहने अपने बाहुबलसे ही खण्डेलाको विजय कर लिया है, खुशहाली दरोगाके मुखसे यह समाचार सुनकर आमेरके महाराज अत्यन्त ही क्रोधित हुए। और खण्डेला पर फिर अधिकार करनेके लिये रतनचँद नामक एक सेनापतिके अधीनमें दो दल पैदल सेना और एक दल गोलन्दाज खुशहाली दरोगाके साथ भेजे। महाराजने यह आज्ञा भी सुना दी थी कि यदि खण्डेलाको खुशहाली न जीत सके तो उसको उचित दंड दिया जायगा। खुशहाली इस समय नवीन सेनाके बलसे बलवान होकर मारे गर्वके आगे बढ़ा है यह सुनते ही महावीर हनुमन्तसिंहने प्रतिज्ञा की कि मैं अपने जीतेजी शत्रुसेनाको नगरमें न घसने दूंगा, और अपनी सजी हुई सेनाके साथ वह खुशहाली के आनेकी बाट देखने लगा। इसी अवसरमें खुशहालीकी सेनाका दल सम्मुख आया, हनुमन्तसिंहके अधीनकी सम्पूर्ण सेनाने प्रबल विक्रमके साथ युद्ध करते २ खुशहालीकी सेनाको भगादिया। अंतमे जिस समय हनुमंत सम्पूर्ण रूपसे विजय पानेके लिये उद्यत हुए, ठीक उसी समयमें उन्होंने दुर्भाग्यसे घायलहो शीघ्र ही अपनी सेनाको खंडेलाके किलेमें भेज दिया। खुशहालीराम दरोगाने सेनासहित किलेको घेर लिया और घायल हुए वीर हनुमंतने दूसरी बार शत्रुओंकी सेनापर आक्रमण करके सिलहपोस सेनाके ३०

मनुष्योंको मारडाला। यद्यपि खुशहाली किसी प्रकारसे भी किलेको न जीत सका था, परन्तु किलेमे जो पानी था उसके समाप्त होजानेपर हनुमंतसिंहने अन्तमे आत्मसमर्पण करना निश्चय करलिया, । परन्तु आत्म समर्पण करनेके पहिले ही जयपुरके महाराजकी ओरसे खुशहाली दरोगाने हनुमंतसिंहको पाँच ग्रामोंके अधिकार देनेका प्रस्ताव किया, हनुमंतसिहने शीघ्र ही उन पॉचग्रामोको पाकर किलेको छोड़ दिया।

विख्यात् खुशहालीराम बोहरा इस समयकी अर्द्धशताब्दीके पहिलेसे आमेरराजदरबारमें विलक्षण प्रताप और प्रभुत्वको चलाता आया था, राजा प्रतापसिंहने उसको अत्यन्त दुश्चरित्र जानकर जन्मभरतक कारागारमें रखनेकी आज्ञा दी, और उसके वंशके किसी बोहराके परिवारमेंसे किसी मनुष्यको भी राजमंत्री पदपर नियुक्त नहीं किये जानेकी इच्छाकी। हम जिस समयका वृत्तान्त लिखते है खुशहालीराम उस समय कारागारमें वृद्धावस्था बिता रहे थे इस समय सौभाग्यवश महाराजने इनको फिर छोड़ दिया, और वह राजमंत्री पदपर फिर स्थित हुए। शेखावाटीके अधीश्वरोकी सम्प्रदायने कितने ही प्रतिनिधियोको उनके पास भेज कर प्रार्थना की कि "आप कृपा करके हमारे पिताके अधिकारी देशोको हमै फिर देदीजिये।" सौभाग्य बलसे खुशहालीरामने सामन्तोंकी प्रार्थनाको पूर्ण करनेके लिये आमेरके महाराजके निकट यह प्रस्ताव उपस्थित किया कि "सामन्त ही राज्यके प्रधान बल है, उनके संतुष्ट रहनेसे ही राज्यका मंगल है। यद्यपि शेखावाटीके सामन्त बहुत समयसे अवाध्यता प्रकाश करके राज्यमें अनेक प्रकारके उपद्रव करते थे, परन्तु जब कभी जाति साधारणका अधिकार लेनेके लिये कोई झगड़ा होता है तभी वह महाराजकी वश्यता स्वीकार करके अपना पक्ष समर्थन करनेके लिये सेनाकी सहायता करनेमे भी त्रुटि नहीं करते। मारवाड़ विजयके समय शेखावाटीके सामन्तोंने दश हजार सेनाके साथ आमेरकी सेनामें मिलकर महाराजके अनेक उपकार किये थे। विशेष करके शेखावाटीके सामन्तोंके साथ महाराजका सद्भाव न होनेसे किसी कुअवसर पर कठिन महाराष्ट्रोका आमेरराज्यमे आकर अत्यन्त हृदय विदारक जघन्य उपद्रव करनेकी आशंका है, इस कारण हमारे मतसे इन सामन्तोको सब प्रकारसे संतुष्ट करके उनको अपने हस्तगत रखना ही उत्तम बात है"। खुशहालीराम बोहराके उक्त वचनोंको सुनकर आमेरके महाराजने कहा कि "आप जो अच्छा समझै सो करे"। राजाकी आज्ञा पाकर खुशहालीरामने शीघ्र ही शेखावत् सामन्तोंके साथ एक नवीन संधिपत्र नियुक्त किया। उस संधिपत्रके मतसे यह निश्चय हुआ कि रायसालोत्गण वार्षिक६० हजार रुपया करमे दिया करैं और इस समय भेंटमें ४० हजार रुपया दे। इसपर सब सामन्त सम्मत होगये; और खंडेला नगर तथा उनके अधीनके देशोके अधीश्वरोंको फिर नवीन शासनकी सनद दीगई। इस प्रकारसे निकाले हुए खंडेलाके दोनों अधीश्वर अभयसिंह और प्रतापसिंह फिर अपने पिताके अधिकारको पा गए।

यद्यपि नवीन शासन सनदपत्रपर आमेरके महाराज और उनके प्रधान मंत्रीने अपने हस्ताक्षर कर दिये, परन्तु इस समय जितनी नागा सेना खंडेलाके किलेमे

और शेखावत् देशकी सीमामें स्थित किलोपर अधिकार किये हुए थी वह किसी प्रकारसे भी अभयसिंह और प्रतापसिंहको उक्त देश देनेके लिये राजी न हुई। वीरश्रेष्ठ हनुमंतसिंहने विचारा कि ऐसा बोध होता है कि खुशहालीराम वोहरा ने चतुरतासे चालीस हजार रुपया भेंटमें संग्रह करके इस समय धोखा देनेके लिये गुप्तभावसे इस प्रकारकी आज्ञा दी है। तब हनुमन्तसिंहने विशेष चिन्ता करनेके पीछे खण्डेलाके दोनों अधीश्वरोंके निकट यह प्रस्ताव किया कि "आप हमको कितनी सेना देंगे? मैं जिस उपायसे भी होगा, उसी उपायसे खण्डेलाको अपने हस्तगत करलूंगा"। अभयसिंह और प्रतापसिंहके अधीनमें इस समय पाँच सौ अस्त्रधारी सेवक थे, हनुमन्तसिंह उनमेंसे बीस वीर तेजस्वी मनुष्योंको चुनकर उदयगढ़के द्वारपर जा पहुँचा। उसने अपनेको छिपाकर किलेमें कहला भेजा, कि मैं हनुमन्तसिंहका दूत हूं, और उन्हींके पाससे आया हूं। किलेके अध्यक्षने उसको बीस अस्त्रधारियोंके साथ किलेमें जाने दिया, पश्चात् बीस अस्त्रधारी उनके पीछे और आये। उन्होंने भी किलेमें प्रवेश करनेका अधिकार प्राप्त किया। कुछ समयके पीछे अभय और प्रतापसिंहके अन्य अस्त्रधारी उनके पीछे २ किलेके द्वारपर आकर इकट्ठे हुए। हनुमन्तने कुछही कालके पीछे दुर्गाध्यक्ष नागांके निकट अपना परिचय देकर आमेरके अधीश्वर और राजमंत्रीके हस्ताक्षर सहित नवीन शासनकी सनद दिखा कर उनसे कहा कि "यदि तुम इसी समय किलेसे न चले जाओगे तो इसी तलवारके बलसे मैं एक २ के प्राणोंका नाश करूँगा" वीर श्रेष्ठ हनुमन्तको इस प्रकारसे बलवान और दृढप्रतिज्ञ देखकर नागागण शीघ्र ही प्राणोंके भयसे किलेको छोड़ कर भाग गये। अभय और प्रतापने बहुत दिनोंके पीछे फिर अपने पिताके विध्वंस हुए देश पर अधिकार किया। जिस हनुमन्तसिंहके बल विक्रम और साहस तथा शूरवीरताके बलसे अभयसिंह और प्रतापसिंहको इस प्रकारसे पैतृक अधिकार प्राप्त हुआ, वह दोनों ही उन हनुमन्तसिंहके प्रस्तावके मतसे प्राचीन शत्रुताको छोडकर सरल स्वभावसे रहने लगे।

अभयसिंह और प्रतापसिंहको पैतृक राज्य मिलनेके कुछही काल पीछे विख्यात पठान दस्युनेता अमीरखाँ कालान्तक कालकी समान आमेरराज्यमें आया। महाराज जगत्सिंहने उसको दमन करनेके लिये अपनी सम्पूर्ण सेनाके साथ अधीन सामन्तोंकी सेनाको एक साथ मिलालिया। पूर्वसंधिके मतसे इस समय खंडेलापति अभय और प्रतापकी सेनाने भी उक्त सेनादलके साथ मेल कर लिया। अमीरखाँके प्रधान सेनापति मोहम्मदशाहखाँके विरुद्धमें शीघ्र ही वह सम्मिलित सेनादल दूनीके सामन्त राय चाँदसिंहके अधीनमें वीरदर्पसे अग्रसर हुआ। घोमगढ़में मोहम्मदशाह रहता था सेनाने उस किलेको घेर लिया। अन्तमें किलेको जीतनेकी सम्पूर्ण संभावना होगई पर एक सामान्य कारणसे ही राजपूत सेनाके सब प्रधान उद्देश व्यर्थ होगये।

शेखावत्सेनाके एकदलने इस समय टोंकके अधीनमें स्थित एक नगरको जीत कर लूट लिया। उसीमें एक गोगावत सम्प्रदायका निवासी निहत हुआ। विजयी शेखावतोंकी सेनाने उसकी सारी धन सम्पत्ति लूट ली। उन मारे हुए मनुष्योंके पुत्र

शीघ्र ही गोगावतोंके नेता प्रधान राय चँदसिंहके पास गये। और उनको समस्त वृत्तान्त सुनाकर उनसे सहायता मांगी। चाँदसिंहने उनको पैतृक सम्पत्तिपर फिर अधिकार करनेके लिये कितनी ही वर्मावृत्तिसेनाको उनके साथ भेजा। शेखावत किसी प्रकारसे भी उनकी सम्पत्ति देनेमे राजी नहीं हुए, और अपना दल प्रबल करलिया। इस समाचारसे चाँदसिंहने भी महा क्रोधित होकर उन बालकोंका पक्ष समर्थन करनेके लिये अपनी सेनाकी संख्याको वढ़ा लिया। इस प्रकारसे शेखावत् और गोगावतोंमें परस्पर युद्ध होनेकी संभावना होगई। शेखावाटीके दो अधीश्वरोंने समस्त शेखावत् सामन्तोंकी सेना लेकर विवाद स्थानमे आकर दर्शन दिया। चांदसिंहके साथ उस बालकका विशेप सम्बन्ध था, दूसरे यह चाँदसिंह उस समस्त सम्मिलित सेनाके ऊपर अध्यक्षरूपसे भेजे गये थे, इस कारण उन्होंने अपने सम्मानकी रक्षाके लिये किलेको घेरनेवाली सेनामेंसे वहुतसी सेनाको विवाद स्थल पर भेज दिया। तुरन्त ही आमेरके सम्पूर्ण सामन्तोंके अधीनमें स्थित सेनाने आत्मविग्रह उपस्थित करके महा समरानल प्रज्वलित करदी। केवल सीकरके सामन्त ही इस विवादसे दूर रहे। अंतमें झगड़ा अधिक वढ़ गया। तव खाङ्गारोत् सम्प्रदायके नेताने मध्यस्थ होकर कहा, कि जिससे दोनो ओरका सम्मान वना रहै ऐसा कार्य करना उचित है। यद्यपि खंडेलापतिने गोगावतोंकी सम्पत्ति लूटली, और वह उसे अपने राज्यमे लेगये है, पर वे समस्त संपत्तिको प्रधान सेनापतिके पास फिर भेजदे इससे दोनो ओरका सम्मान रह जायगा। शेखावत इसमे उसी समय सम्मत होगये। यद्यपि यह झगड़ा मिट गया, परन्तु चांदसिंह संतुष्ट न हुए। जो हो सम्मिलित सेनादलमें उक्त प्रकारसे आत्मविग्रह शांत हुआ, इसीसे भीमगढ़का अवरोध छोड़ दिया गया, सामन्त अपने २ देशको चले गये। सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिंह जो इस झगड़ेमें सामिल नहीं हुए थे; शेखावाटीके दोनों अधीश्वरोंको असरल मार्गसे खंडेलाके नगरकी ओरको जाता हुआ देखकर अच्छा सुअवसर जान शीघ्रतासे अपनी सेनाको सीकरमें ले जाकर फिर इस समय खंडेलाके अधीश्वर पदको पानेके लिये आगे बढ़े। इन्होंने सवसे पहिले सीसोह नामक स्थानको घेर लिया, और अनेक प्रकारकी चतुराई तथा छलवलसे उस पर अपना अधिकार करलिया। जिन पठानोंके विरुद्ध सीकरपति कितने दिनोंके पहिले युद्धमें नियुक्त थे, अन्तमे उसी पठानको दो लाख रुपया देनेकी प्रतिज्ञा कर उससे सहायता पानेके लिये उन्होंने कहला भेजा। भन्नू और महतावखाँ दो पठान सेनापति उस धन पानेके लिये शीघ्र ही सेना सहित सीकरपतिके साथ गये। सीकरपति लक्ष्मणसिंह खंडेलापर अधिकार करनेके लिये उद्यत हुए है. यह समाचार वीर श्रेष्ठ हनुमन्तसिंहने पहिले ही सुन लिया था। इस लिये उन्होंने इस भारी विपत्तिमे अभयसिंह और प्रतापसिंहके स्वार्थकी रक्षाके लिये पठान सेनापति महतावखाँको ५० हजार रुपये देनेको कहा कि वह किसी प्रकारसे भी खंडेलापतिके साथ युद्ध न करै, और न खंडेलामे जायँ। परन्तु दुराचारी महतावखाँ ने उस प्रतिज्ञाको भंग करके शीघ्र ही अधिक धन पानेके लिये लक्ष्मणसिंहके साथ मेल करनेमे कसर न की।

जानेके लिये अनुरोध किया, परन्तु वीर विक्रमी हनुमन्तने कहा, " जब कि खंडेला चिरकालके लिये शत्रुओंके हाथमें पड़ गया है, तब अब किलेके भीतर जानेका प्रयोजन क्या है ? " उन्होंने शीघ्र ही अपनी सेनाको राजपूतस्वभाव सुलभ तेजस्विताके साथ उद्दीपित करके कहा, " क्या तो आप शत्रओंका संहार करिये, और नहीं तो आओ अपने जीवनका बलिदान करें। " उसी मुहूर्त्तमें सेनासहित हनुमन्तसिंहने नंगी तलवारें हाथमें लेकर बड़े वेगसे शत्रुओंपर धावा किया और उन्हें परास्त कर दिया। और बाहिरी किलेको पुनः अपने हस्तगत कर लिया। पर भागीहुई शत्रुसेना फिर सहसा आगई और प्रभातकालसे लेकर संध्यातक दोनोंमें घोर युद्ध होता रहा। हनुमन्तसिंह ने अंतिम बलके साथ फिर प्रचंडवेगसे शत्रुदलके व्यूहको भेदकर सब सेनाको भगा दिया। असीम साहसी हनुमन्तसिंहने इस समय शत्रुदलको भागा हुआ देखकर उनका पीछा किया, किन्तु खेद है कि उनके तोपखानेके सम्मुख तक पहुँचते ही अचानक एक गोलेके आघातसे उसी क्षण उनके प्राण पखेरू पयान कर गये। हनुमन्तकी मृत्यु होते ही उसी समय शत्रुओंकी जय होगई। परन्तु नेताकी मृत्युसे उस अवरुद्ध सेनादलने शीघ्र ही बाहिरी किलेको छोड़कर भीतरके किलेका आश्रय जा लिया। उक्त समरसे पाँचसौ पठानों की सेना और सीकरपतिके अधीनकी सेनाके सिवाय हनुमन्तके अधीन में अधिक सेना नहीं थी, दूसरे दिन प्रभात होते ही हनुमन्तका शव संस्कार करने और घायल मनुष्योंको अन्य स्थानपर भेजनेके लिये किलेमें स्थित सेनादलने लक्ष्मणसिंहसे कुछ कालके लिये समरको स्थित रखनेकी प्रार्थनाकी ; लक्ष्मणने उसमें अपनी सन्मति प्रकाश की; और उसी अवसरमें अभय और प्रतापसिंहके साथ संधिका प्रस्ताव उपस्थित किया गया। परन्तु अभय और प्रतापसिंहने अवज्ञाके साथ उन प्रस्तावको अस्वीकार किया। हनुमंतके मारेजानेका समाचार पाते ही उदयपुरके अधीश्वर जो पहिलेसे ही अभय और प्रताप-सिंहका पक्ष समर्थन करते थे, उन्होंने फिर कितनी ही सेनाके साथ भोजनकी सामग्रीको किलेमें भेज दिया। खेतड़ीके सामन्त इस समय उपस्थित होते तो वह अवश्य ही सहायता करते, परन्तु वह इस समय जयपुरमें थे। यद्यपि उन्होंने अपने पुत्रसे कह दिया था कि बिसाऊ देशके सामन्तकी सम्मतिसे कार्य करना परन्तु बिसाऊ देशके सामन्तने लक्ष्मणसिंहसे घूंस लेने और अंतमें खंडेलाराज्यके कितने ही अंश पानेकी आशासे लक्ष्मणसिंहका ही पक्ष समर्थन किया था। इसी कारणसे खेतड़ीके सामन्तपुत्रोंने अपने पिताके कहनेके अनुसार अभय और प्रतापसिंहकी सहायता नहीं की। अभय और प्रतापसिंहके अधीनकी सेना कहीं भी सहायताके न मिलनेसे वीर स्वभाव राजपूतोंकी समान केवल साधारण बाजराकी रोटी खा करके और भी पाँच सप्ताहतक किलेकी रक्षा करती रही। अंतमें आहारके अभावसे किलेमें सेनाके प्राण नाशकी संभावना होगई। तब सब कोई आत्मसमर्पण करनेके लिये चिन्ता करने लगे। इसी समयमें अवरोधकारी लक्ष्मणसिंहने प्रस्ताव कर भेजा कि वह अभय और प्रतापसिंहको दश ग्रामोंका अधिकार देनेके लिये तय्यार हैं, इसी पर किलेमें की सेनाने आत्मसमर्पण कर दिया। प्रतापसिंहने तो पाँच

ग्रामोंका लेना स्वीकार किया, पर अभयसिंह अपने वंशगौरवको स्मरण करके पैतृक तेजके साथ उन पाँच ग्रामोंके लेनेमें राजी न हुए। यद्यपि प्रतापसिंहने पाँच ग्रामोंको लेलिया परन्तु कुछही दिनके पीछे दुराचारी लक्ष्मणसिंहने उनको उन ग्रामोंके अधिकारसे वंचित करदिया। इतिहासवेत्ता टाड् साहब सन् १८१४ ईसवीमें लिखते हैं कि जिस समय खण्डेलाके शेष शेखावत् दोनो अधीश्वर अभय और प्रतापसिंह झुंझुनू नामक स्थानमें अत्यन्त दीनभावसे थे। उस समय सिद्धानीके सामन्तोंने सभीसे चंदा संग्रह किया, और उस महाविपत्तिमें उनको वह प्रतिदिन पाँच रुपया दिया करते थे।

सन् १८१४ ईसवीमें जिस समय आमेरके राजमंत्री पदपर मिश्र शिवनारायण विराजमान थे, उस समय अफगान लोगोंने अमीरखाँ महाराष्ट्रनेताकी ओरसे जयपुरपतिके पाससे दंडमें नौ लाख रुपया माँगा। आमेरके राजाका खजाना इस समय एकवार ही खाली होगया था। राजमंत्रीने अन्य कोई उपाय न देखकर अंतमें सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिंहकी ओर दृष्टि डाली। लक्ष्मणसिंहने जयपुरपतिके मतको ग्रहण न करके बलपूर्वक खण्डेलापर अधिकार कर लिया था और इस समयतक जयपुरेश्वरके पाससे खण्डेलाके शासनकी सनद न मिली थी। उसने बहुत दिनोंतक शासनकी सनद संग्रह करनेके लिये भलीभाँतिसे चेष्टा की थी, इस समय विशेष सुभीता पाकर मिश्र शिवनारायणने लक्ष्मणसिंहके पास यह प्रस्ताव भेजा कि यदि वह स्वयं पाँच लाख रुपया दें और जयपुरकी सेनाकी सहायताके लिये सिद्धानीके सामन्तोंके पाससे चार लाख रुपया इकट्ठा करके अमीरखाँको देदें तो उनको खण्डेलाकी शासनसनद दीजायगी। लक्ष्मणसिंह उक्त प्रस्तावके अनुसार कार्य करनेको राजी होगये। इस समय अमीरखाँ रानोलीमें निवास करता था। लक्ष्मणसिंहने वहाँ जाकर उसके हाथमें नौ लाख रुपया देकर उसकी रसीद जयपुरपतिके यहाँ भेजदी, जयपुरके महाराजने भी लक्ष्मणको खण्डेलाका पट्टा देदिया।

लक्ष्मणसिंह पट्टेको पाकर महा आनन्दित हो जयपुर राजधानीमें गये और वहाँ जाकर खण्डेलाका एक वर्षका राजस्व उन्होंने अग्रिम देदिया, जयपुरपति महाराज जगत्सिंहने उनका दियाहुआ राजस्व वार्षिक ५७ हजार रुपया नियुक्त कर उन्हें खिलत अर्थात् (सिरोपा) पोशाक और आभूषण देकर उनको अपने हाथसे अभिषिक्त करदिया। इस प्रकारसे रायसलके शेष वंशधर अभय और प्रतापका पैतृक अधिकार सर्वदाके लिये लोप हो गया, खण्डेलादेश शेखावतोंकी एक नीची शाखामें उत्पन्न हुए लक्ष्मणके अधिकारसे होगया।

पाठकोंको स्मरण होगा कि एक ब्राह्मणने खंडेला देशको जयपुरपतिके पाससे जमाबंदीमें ले लिया था। उसने प्रजाको पीड़ित करके और निकटके देशोंके सामन्तोंपर आक्रमण करके अत्यन्त दुःख दिया था। इस समय उस ब्राह्मणने अपमानित होकर अपने भाग्यके उद्धारके लिये विशेष चेष्टा करके अपने पोषक राजमंत्री मिश्र शिवनारा-यणके पास जाकर आश्रय लिया। अंतमें चातुरी और षड्यंत्रजालका विस्तार करके

शिवनरायणको राजाके समीप इस प्रकारसे कलंकित किया कि अंतमें उसी कारणसे उन्होंने आत्महत्या करली। ब्राह्मणने पीछे असीम साहसके साथ षड्यंत्रके बलसे शेषमें आमेरके मंत्रीपद पर अधिकार करलिया। लक्ष्मणसिंह जिस समय आमेरकी राजसभामें आये तब इन्होंने अपनी बुद्धिमानीसे वहाँ अपनी प्रभुताईका विस्तार किया, वह ब्राह्मण उस समय मंत्रीपदपर प्रतिष्ठित था। उस चतुर ब्राह्मणने लक्ष्मणको इस प्रकारसे अपना प्रभुत्व बढ़ाते देख कर अपनी सामर्थ्य और अधिकारके लोप होनेकी आशंका की और शीघ्र ही उसने लक्ष्मणको किसी न किसी उपायसे राजकोपमें डालने की चेष्टा की। ब्राह्मणने यह स्थिर कर लिया कि कुछ ऐसा उपाय करना उचित है, कि जिससे लक्ष्मण राजाके विरुद्धमें खड़ा होजाय, उसने लक्ष्मणसिंहके नवीन अधिकार भुक्त खंडेलादेशपर आक्रमण करनेके लिये गुप्तभावसे आज्ञा दी। सिद्धानी राजपूत गणोंने फिर अपने पूर्व अधिकार प्राप्तिकी संभावना विचार कर शीघ्र ही उक्त ब्राह्मण राजमंत्रीके अधिकारमें स्थित जयपुरकी सेनाके साथ मिल कर खंडेलापर आक्रमण किया। ब्राह्मण मंत्री अपने उस आक्रमणकार्यमें नेतृत्व करने लगा परन्तु चतुर लक्ष्मणसिंहने इस समय इस प्रकारके राजनैतिक उपायका अवलम्बन किया कि जिससे ब्राह्मण सफलमनोरथ न होसका लक्ष्मणसिंह खंडेलाकी रक्षाके लिये स्वयं वहाँ न जाकर जयपुरमें ही रहने लगे। परन्तु उन्होंने अत्यन्त गुप्तभावसे पठान नेता जमशेदखाँके पास बहुतसा धन भेजा जमशेदने शीघ्र ही सेना सहित जाकर ब्राह्मणमंत्रीके डेरोंपर अधिकार करके और उसको महाभय दिखाकर उसकी सारी धन सम्पत्ति लूट ली। मंत्रीने अकस्मात् आई हुई विपत्ति देखकर शीघ्र ही अवरोधको त्याग महाक्रोधित हो राजधानी जयपुरकी ओरको कूच किया। क्रुद्ध हुए मंत्रीने राजधानीमें जाकर अपने शत्रु लक्ष्मणसिंहको पकड़नेके लिये पीछा किया लक्ष्मण सिंह शीघ्र ही प्राणोंके भयसे केवल पाँचसौ अश्वारोही साथ लेकर राजधानी छोड़कर शीघ्रतासे भाग गये। राजमंत्रीने कुछ दूरतक पीछा किया। अंतमें मंत्रीने राजधानीमें जाकर लक्ष्मणसिंह और उनके पक्षके समस्त सामन्तोंकी धन सम्पत्ति पर अपना अधिकार करलिया। इतिहाससे जाना जाता है कि उक्त ब्राह्मण मंत्री जमशेदके आक्रमणके भयसे डेरोंको छोड़कर भाग गया, और सम्मिलित सिद्धानी सामन्त अभयसिंहको नेता पदपर वरण करके उसने फिर अन्तिम बलके साथ खंडेलापर आक्रमण किया, परन्तु अंतमें परास्त होकर भागगया। इस प्रकारसे अभयसिंहकी शेष आशा एकबारही दूर होगई।

इतिहासवेत्ता टाड् साहबने लक्ष्मणसिंहके पूर्व पुरुषोंके विषयमें वर्णन किया है। वह लिखते है कि "यह स्मरण होसकता है कि शेखाजीके पुत्रोंमें सबसे बड़े राजा रायसलके सात पुत्र उत्पन्न हुए थे। इनमें चौथे पुत्र तिरमल थे, रावकी उपाधि पाकर उन्होंने कासली देश और ८४ ग्रामोंका अधिकार प्राप्त किया। तिरमलके पुत्र हरीसिंहने अपने बाहुबलसे फतेपुरके कायमखानियोंके पाससे बीलाड़ा नामक स्थान और उसके अधीनके १२५ ग्रामोंपर अधिकार करलिया।

और कुछही समयके पीछे रेवासोके और भी २५ ग्रामोपर बलपूर्वक अधिकार करलिया। हरिसिंहके पुत्र श्योसिंह कायमखानियोंके प्रधान स्थान उक्त फतेपुरको जीत कर वहाँ निवास करते थे। श्योसिंहके पुत्र चाँदसिंह सीकरनगरके स्थापनकर्त्ता थे। उन चाँदसिंहके वंशोत्पन्न देवीसिंहने अपने अत्यन्त कुटुम्बी साहपुराके ठाकुरके पुत्र उक्त लक्ष्मणको दत्तकपुत्ररूपसे ग्रहण किया था। लक्ष्मणसिंहने जिस समय सीकर पर अधिकार किया उस समय सीकरकी अवस्था बहुत अच्छी थी। लक्ष्मणसिंहने अपने बुद्धिबलसे देशकी अवस्थाको औरभी सुधारलिया था। लक्ष्मणने खण्डेलापर अधिकार करनेके पहिले ही अपने अधीनमे स्थित प्रत्येक करद सामन्तको हीन बल करने के लिये उनके प्रत्येक अधिकारी देशोंके किलोको विध्वंस करदिया। अधिक क्या कहैं, उसने अपनी पितृभूमि साहपुराके दुर्ग और बीलाडा भटौती और पासलीके किलोको भी गिराकर सम करादिया। लक्ष्मणसिंह इस प्रकार प्रचंड प्रतापसे शासन करते थे कि उक्त साहपुराके ठाकुर उनके जन्मदाता पिता भी अत्यन्त दुःखित होकर अपने अधिकारी देशोको छोड़कर जोधपुरको चले गये, और वहीं महाराणाके आश्रयमे रहने लगे।

साधु टाड् साहबने लिखा है, "लक्ष्मणसिंहके अधिकारी देश इस समय एकत्र सम्बन्ध और उन्नत अवस्थामे थे। ग्राम और नगरोकी संख्या पन्द्रहसौ थी, और उनसे वार्षिक आठ लाख रुपयेकी आमदनी होती थी। लक्ष्मणने अपने नामको अक्षय करनेके लिये "लक्ष्मणगढ नामका एक किला बनवाया तथा अन्यान्य अनेक स्थानोको दुर्गबद्ध किया। अधिकारी देशोकी रक्षाके लिये उन्होने अलोगोल नामके बन्दूकधारी आठदल सेनाकी सृष्टि की थी। प्रत्येक दलमे एक २ दल गोलन्दाज थे। इसके अतिरिक्त उनके अधीनमें एक हजार शिक्षित अश्वारोही सेना थी। इसमे पाँचसौ वेतनभोगी और पाँचसौ भूवृत्ति पानेवाले थे। लक्ष्मणसिंह जिस प्रकार प्रबल बलशाली थे, यदि जयपुरपति अंग्रेज गवर्नमेण्टके संधिबंधनके कारण उनकी लूटनेकी रीतिको दूर न करते तो लक्ष्मणसिंहने जिन पठानोके दस्युदलकी सहायतासे खंडेलापर अधिकार किया था उन्हींकी सहायतासे यह समस्त शेखावाटी पर अपना अधिकार कर सकते थे"।

अर्द्धशताब्दीके बहुतकाल पहिले कर्नल टाड् साहबने खंडेलादेशका जो इतिहास वर्णन किया है अत्यन्त दुःखका विषय है कि हम अनेक कारणोसे इससे आगे उसको यहांपर नही लिख सकते उन्होंने इतना ही लिखा है।

---

(१) कर्नल टाड् साहबने टीकेंमे लिखा है कि "संवत् १८६२ सन् (१८०६ ईसवी) में सबसे ऊंचे शिखर अर्थात् किसी प्राचीन किलेके ध्वंसे होनेसे बेच हुए शिखरके ऊपर यह लक्ष्मणगढ बनाया गया था, यह नगर भी जयपुरकी समान श्रेष्ठ रीतिसे बनाया गया था"।

(२) टाड् साहबने कहा है कि खोकर राजपूतोंसे खंडेला ग्रामकी उत्पत्ति हुई है खंडेला नगरमे ४ हजार घर हैं, और उनके अधीनके ग्रामोंकी संख्या ८० है,

खंडेलाके राजवंशका वर्णन करके इतिहासवेत्ताने अंतमें शेखावाटीकी और एक प्रवलशाखा सिद्धानियोंका संक्षिप्त वृत्तान्त यहाँपर वर्णन किया है। उन्होने लिखा है, कि "रायसालके तीसरे पुत्र भोजराजसे सिद्धानियोंकी उत्पत्ति हुई है। रायसालने जिस समय सातपुत्रोमे अपने राज्यको विभक्त करदिया था उस समय भोजराजको उदयपुर नगर और उनके अधीनके देश मिलगये थे। भोजराजके वंशधरो की संख्या अधिक थी, समयपर वह भोजानी नामसे विदित हुए, परन्तु किस कारणसे यह प्रकाशित नही हुआ कि वह उदयपुर अत्यन्त पूर्वकालसे शेखावतोंका प्रधान समिति स्थानरूपसे प्रसिद्ध होगया था। इसी उदयपुरमे अनेक समयपर शेखावत् नेताओं ने इकट्ठे होकर जातिकी एकता की थी"।

भोजराजकी कई पीढ़ियोंके पीछे जगराम उनके वंशधर उदयपुरकी गद्दीपर बैठे थे। उनके छः पुत्रोमे सबसे बड़ेका नाम साधु था। यह दशहरेके पर्वोत्सवके समय किसी कारणसे पिताके साथ झगड़ा करके पिताके राज्यको छोड़ कर अन्य स्थान पर सौभाग्य उपार्जन करनके लिये चला गया। इस समय सिद्धानी गण जिन समस्त भूखंडोंपर निवास करते थे। यह देश फतेपुर (प्राचीन नाम इसका झुंझुनू था) नासक देशके अफगान जातीय कायमखानी सम्प्रदाय नव्वावके आधीनमे था। वह नव्वाव दिल्लीके सम्राट्के अधीनमे कर देकर उस देशका शासन करते थे। साधु घरसे निकलकर उक्त नव्वावके पास गया। तब नव्वावने इनको अत्यन्त आदरके साथ ग्रहण करके अपने घरमे रक्खा। साधु अपने वाहुबल और वुद्धि बलसे शीघ्र ही इस प्रकारसे नव्वावका विश्वासभाजन और प्रियपात्र होगया कि जिससे नव्वावने इसको फतेपुरके समस्त कार्योंका भार अर्पण करदिया। इस विषयमें दो विवरण प्रकाशित हुए है और दोनों ही विश्वास योग्य है। एकसे जाना जाता है कि नव्वावके कोई पुत्र नही था, इसी कारणसे उन्होने साधुको दत्तक स्वरूपसे ग्रहण करके उसको उक्त झुंझुनूदेश और उसके अधीनके ८४ ग्राम देदिये। दूसरा यह कि नव्वावकी मृत्युके पीछे साधुका ही अधिकार हुआ था। इसके सम्वन्धमे एक प्रवाद प्रचलित है, उससे जाना जाता है कि साधुने उक्त नव्वावके अधिकारी देशोंपर अपना अधिकार भली भाँतिसे करके एक समय वृद्ध नव्वावसे कहा कि आपने मुझे जो शासनका भार अर्पण किया है उसको मै अपने हाथेम रखनेकी इच्छा करता हूँ। आपके निवासके लिये मैने जो अमुक ग्राम नियुक्त कर रक्खे है आप उनमें जाकर अपने पदोचित वृत्तिको भोग करते रहै। नव्वावने देखा कि साधूने जिस भाँतिसे अपने अधिकारोंको फैला लिया है इससे इस समय राज्यमें किसी प्रकार भी अपने पक्षका संग्रह करके साधुके विरुद्धमें खड़ेहोनेका कोई उपाय नही है।

(१) उदयपुरका प्राचीन नाम काइस है, और इसके अधीनमे चार भागोंमे विभक्त ४५ गांव हैं।

(२) कायमखानी अफगान नहीं है चौहान जातिके मुसलमान राजपूत हैं।

यह विचार कर नव्वावने शीघ्र ही झुंझुनूसे फतेपुरमें जाकर वहाँके निवासी अपने कुटुम्बियोंके अधीनके शासनकर्त्ताका आश्रय लिया। वह कुटुम्बी शीघ्र ही साधुको झुंझुनूसे भगानेके लिये अपनी सेनाको सजाने लगा। साधुने उस विपत्तिमें पड़कर अंतमें अपने पितासे सहायता माँगी। यद्यपि पिता इसके ऊपर अत्यन्त कुपित हुए थे, परन्तु उन्होंने पुत्रकी सहायता करना स्थिर किया। उदयपुरपति जगरामका और एक पुत्र इस समय मिरजा राजा जयसिंहके अधीनमें सेना सहित रहता था। जगरामने उस पुत्रको लिख भेजा कि वह तुरन्त ही आमेरके महाराजसे सहायताके लिये अपने साथ सेना लेकर साधुके साथ जामिलै। वह पुत्र उस पत्रको पाकर आमेरके महाराजके अनुग्रहसे कितनी ही शिक्षित सम्राट्की सेना और तोपखानेको साथ लेकर साधुके पास पहुँच गया। साधुने अपने भाईको आताहुआ देख शीघ्र ही फतेपुरतक अपना अधिकार करके झुंझुनूको अपने अधीनमें करलिया। साधुने इस प्रकारसे कायमखानी नव्वावको दूरकर अपने देशके समान मूल्य विशिष्ट उक्त फतेपुर और उसके अधीनके समस्त देश उक्तभ्राताको देकर दोनोंने ही पूर्व प्रस्ताव के अनुसार आमेरके महाराजको अपना प्रभु स्वीकार किया। और अपने वंशधरोंमें प्रत्येकके अभिषेकके समयमें भेटमें कर देना स्वीकार किया। वीरश्रेष्ठ साधुने कुछ काल के पीछे और एक सम्प्रदायके अधिकारी सिहाना देशको अपने बाहुबलसे अधिकारमें करलिया। इस देशके अधीनमें १२५ ग्राम थे। साधुने इसके पीछे गौड़ राजपूतोंके अधीनमें स्थित ८४ ग्रामोंमेंसे बचेहुये सुल्तानो नामक ग्रामपर अधिकार करलिया। अन्तमें साधूने दिल्लीके अत्यन्त प्राचीन सम्राट् तूंअरवंशमें उत्पन्न हुये खेतड़ीके अधिपतिके अधीनमें स्थित सम्पूर्ण ग्रामो को अपने हस्तगत कर लिया, इस प्रकारसे साधुके अधीनमें सहस्र से अधिक ग्राम और नगर होगये। मृत्युके कुछ काल पहिले साधुने उन समस्त देशोंको अपने पाँचों पुत्रोंमें बाँट दिया। पुत्रोंके नाम इस प्रकार थे (१) जोरावरसिंह, (२) किशनसिंह (३) नवलसिंह, (४) केसरीसिंह और (५) पहाड़सिंह। इनके वंशधर साधुके नामके अनुसार ही सिद्धानी नामसे विदित हुए"।

साधुके बड़े पुत्र जोरावरसिंहको पैतृक अंशके अतिरिक्त सबसे बड़े चोकेड़ी नामक नगर और उसके अधीनके बारह ग्राम तथा सर्वोच्च मंत्रमूलक चिह्नस्वरूप हस्ती और अनेक सवारी आदि प्राप्त हुई। परन्तु समयपर साधुके मध्यमपुत्र किशनसिंहके वंशधर ने जोरावरके वंशधरोको पैतृक अधिकारसे रहित करके उनके समस्त देशोंको अपने अधिकारमें करलिया। ज्येष्ठ शाखा जोरावरके वंशधर इस समय केवल सामान्य चोकेड़ी देशके अधिकारको भोग करते थे। यद्यपि किशनसिंहके वंशधर एकमात्र चोकेड़ीके अधीश्वर थे तथापि वह अपने वंश और पदमर्यादामें सबसे श्रेष्ठ गिने जाते थे।

"साधुके अन्य चार पुत्रोंके वंशधरोंमें निम्नलिखित सिद्धानी सम्प्रदायोंमें सबसे श्रेष्ठ सामर्थ्यवान् गिने गये—

१ खेतड़ीके अभयसिंह।	३ नवलगढ़के ज्ञानसिंह।
२ बिसाओंके श्यामसिंह।	४ सुलतानोके शेरसिंह"।

"साधुने अपने बड़े पुत्रको जिस भाँति कितने ही देश दिये थे, उसी प्रकारसे कनिष्ट शाखाके लिये सिहाना, झुंझुनू और सूर्यगढ़ (प्राचीन उडैछा) आदि कई एक देश दिये। खेतड़ीके अभयसिंहने उक्तसिहाना और उसके अधीनके १२५ ग्रामोंको अपने अधिकारमे कर लिया था। परन्तु उन कनिष्ट शाखाके वंशधरोंकी संख्या क्रमशः दिन २ बढ़ती गई थी, और अन्य देश तथा ग्राम भी क्रम २ से खण्ड २ में विभक्त होते गये"।

"सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिंहने जिस प्रकार अपने बाहुबलसे अनेक भाँतिके असत् उपायोसे रायसालोत् पर अपनी प्रधानता तथा प्रभुताका विस्तार कर लिया, उक्त अभयसिंहने भी उसी प्रकारसे अपने बाहुबलसे वा घृणित उपायोसे सिद्धानियोंमें उसी प्रकार मस्तक उठाया। सीकरके सामन्तने केवल खण्डेलाकी श्रेष्ठ शाखाको एकबार ही लुप्त करदिया, परन्तु खेतड़ीके सामन्त अभयसिंहने केवल साधुकी श्रेष्ठ शाखाको ही नहीं वरन साधुकी कनिष्ठ शाखाका भी सर्वनाश करनेमे कसर न की। शेरसिंहके वंशधर किस प्रकार सुलतानोंदेशके अधिकारसे उतार दिये गये? उस लोमहर्षण वृत्तान्त को पढ़नेसे पाठक सरलतासे जान सकैगे कि उस भूमिपर अधिकार करनेके लिये राजपूतोने कहांतक शोचनीय काण्ड उपस्थित किये थे"।

"वीरश्रेष्ठ साधुके सबसे छोटे पुत्र पहाड़सिंहके औरससे भूपाल नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ। भूपालसिंहके लुहारूकी विजयके समय निहत होनेसे पहाड़सिंहने अपने भ्राताके पुत्र खेतड़ीके सामन्त बाघसिंहके सबसे छोटे पुत्रको दत्तकरूपसे ग्रहण किया। पहाड़सिंहकी मृत्युके पीछे दत्तक पुत्रने सुलतानोके सामन्त पदको ग्रहण किया। परन्तु उसकी अवस्था उस समय बहुत थोड़ी थी, इसे वह शीघ्र ही पिताके घर जाकर निवास करनेलगा। परन्तु दुराचारी बाघसिंहने बारह वर्षके पीछे प्राण त्याग किये। जिस समय उसका शवदाह करनेके लिये बाहर किया गया उस समयमें भी उसके समस्त कुटुम्बियोंने उससे अत्यन्त घृणा की थी"।

इतिहासवेत्ता टाड् साहब रायसालोत् और सिद्धानियोके पूर्वोक्त विवरणको वर्णन करके अंतमे लाड़खानियोके सम्बन्धमें लिखते है कि "लाड़खानी शब्दका अनुवाद प्रियतम प्रभु है" परन्तु लाड़खानीगण राजपूतानेमे विख्यात् दस्युरूपसे विदित थे, इस नामका अप्रयोग किया गया है। लाड़ला शब्दका प्रयोग सर्वसाधारणमें बालकोपर स्नेह प्रकाशके लिये किया जाता है। रायसलके उक्त पुत्रके इस नामके साथ खाँशब्दका

---

(१) बाघसिंहने अपने बेटेको मारकर सुलतानोंको खेतड़ीमें मिलालिया। इसका फल भी उसको इस पापकर्मके अनुसार ही मिला। प्रत्येक कुटुम्बीने उससे घृणाकी उसके मुहँपर थूका उसके शिरपर धूल डाली यहां तक कि वह इस लायक नहीं रहा कि किसीको अपना मुहँ दिखावे। उसकी स्त्रीने भी उसका मुहँ देखना छोड़ दिया। तब उसने अपने बेटे अभयसिंहके नामसे जो विद्यमान है राज करना शुरू किया इसके पीछे बाघसिंह बारह वर्षतक जीता रहा मगर कभी खेतड़ीके किलेमें अपने मकानसे बाहर नहीं निकला।

क्यो संयोग हुआ और उनके कनिष्ठ पुत्रका नाम "लाडखां" क्यो रक्खा गया, यह जाना नहीं जाता। क्या अन्य एक मुसल्मान फकीरके संमानके निमित्त खां शब्दका संयोग किया गया था यह हमें विदित नहीं है। उक्त लाडखाँने मारवाड़ राज्यकी सीमामे स्थित आमेरके अधीन दाँतारामगढ़ नामक देशको अपने बाहुबलसे अधिकारमें कर लिया, उनके पिता बादशाहकी सभामे अधिक सम्मान पाते थे, इसी कारण उन लाडखाँको उक्त देशका मिलना सम्भव होसकता है। उक्त देशके अतिरिक्त उन्हें तप्पनोसल प्राप्त हुआ, सब मिलाकर ८० नगर इसके अधिकारमे हुए। इनमें कितने ही मारवाड़ और बीकानेरके दोनो राजाओंने अपने अधीनमें कर रक्खे थे। लाडखानी गण जिससे उक्त दोनो राज्योंके लूटनेमे नियुक्त न हो इस कारण यह देश उन्हें रक्षाके लिये दिये गये थे। लाड़खानीगण इस देशके पिंडारी आदिकी समान भयंकर तस्कर जाति गिने जाते थे। वह इच्छा करते ही पाँचसौ अश्व इकट्ठे कर सकते थे यह सभी भयके कारणस्वरूप थे; इनके अधीश्वर जयपुरके महाराज यद्यपि समय २ पर इनसे अपने २ करकी प्रार्थना करते थे परन्तु यह जिस देशमे निवास करते थे। वह अत्यन्त दुर्गम और इनके अधिकारी रामगढ नामका किला अत्यन्त दुर्भेद्य था। यह अनायास ही जयपुरके महाराजके निकट उस प्रार्थनाकी उपेक्षा करजाते पर समय २ पर अमीरखाँकी समान तस्करोका दल सेना सहित वहाँ पहुँचता तब इनको विवश होकर करका वार्षिक बीस हजार रुपया देना पड़ता था।" इतिहासवेत्ता टाड् साहबने उक्त सिद्धानी और लाडखानियोंके जिस विवरणको वर्णन किया है, इसका पाठकोको स्मरण होगा कि उन्होंने उसे सन् १८१४ ईस्वीमे लिखा है, इस कारण आजकलके समयमे उक्त दोनो संप्रदायोंकी अवस्था अत्यन्त परिवर्तित होगई थी।

कर्नल टाड् साहब शेखावाटी राज्यके इतिहासके उपसंहारमे उन देशोंके राजस्वी की एक तालिकाको प्रकाशित कर गये हैं। हमने भी यहाँ पर उस तालिकाको प्रकाशित किया है।

"सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिंहको खंडेलाकी आमदनी

सीकर सहित	८०००००	रुपये।
खेतड़ीके अभयसिंहको लार्डलेककी दी हुई कोटपूतलीकी आमदनी सहित	६०००००	"
बसाओंके श्यामसिंह और उनके भ्राता रणजीतसिंह जिन्होने उनकी हत्या की थी उनकी ४००० आमदनीके सहित	१९००००	"
नवलगढ़के ज्ञानसिंह मंडावाके ५० ग्रामों सहित... ...	७००००	"
मंदसरके लक्ष्मणसिंह	३००००	"
साधूके बड़े पुत्र जोरावरसिंहके २७ प्रपौत्रोके अधिकारी ताइन और उससे लगी हुई भूमिकी आमदनी ..	१०००००	"
उदयपुरवाटी	१०००००	"

मनोहरपुर[1]	३००००	रुपया.
लाड़खानियोंकी आमदनी	१०००००	,,
हररामजीगण	४००००	,,
गिरिधर पोताओंकी आमदनी	४००००	,,
छोटे सामन्तोंके अधिकारी देशोंकी आमदनी ...	२०००००	,,
	कुल २३०००००	रु०।

जयपुरके महाराजको निम्नलिखित देशोंसे नीचे लिखा हुआ कर मिला करता है।

सिद्धानीगण	२०००००	रुपया.
खंडेला	६००००	,,
फतेपुर	६००००	,,
उदयपुर और बवाई	२२०००	,,
कासली	४०००	,,
	३५००००	रुपया थी।

उपसंहारमे हम केवल इतना ही कहते है कि शेखावाटीके सामन्तोके उक्त राजस्व और करके सम्बन्धमें गत पचास वर्षोंमे अधिक परिवर्तन होगया है।

शेखावाटीका इतिहास समाप्त।

---

(१) मनोहरपुरके अधीश्वरके जयपुरपतिके विरुद्धमें उत्तेजित होनेसे महाराज जगत्सिंहने उनके प्राणोंको नाश करके उनके अधीनमें स्थित समस्त देशोंपर अपना अधिकार करलिया था, और शेखावाटीको अन्यान्य सामन्तोंमें विभाग करदिया था।

श्रीः ।

जयपुरके इतिहासका परिशिष्ट ।

जयपुरके इतिहासका भाषान्तर और इसके मुद्रित होनेके पीछे हमें जयपुरके दरबारके एक उच्च मनुष्यकी कृपासे "जयवंश" नामका एक महाकाव्य मिला; यह सीताराम नामक एक कविके द्वारा संस्कृत भाषामें रचागया है। इस काव्यमें कुशावह वा कछवाह राजवंशके आदि पुरुष सोढदेवसे तीसरे जयसिंहके शासनतकका वृत्तान्त प्रवाहित धाराकी समान वर्णन किया गया है। हमने आदिसे अंततक पढ़कर देखा कि कितने ही स्थानोपर इतिहासवेत्ता कर्नल टाड् साहबके लिखेहुए इतिहासके साथ उक्त काव्यके मतका भेद और असमंजस विराजमान है। इस बातको अवश्य ही स्वीकार करना होगा कि कर्नल टाड्ने अर्द्ध शताब्दीके अधिक कालके पहिले कछवाहोंके द्वारा लिखे हुए अत्यन्त प्राचीन अनेक ग्रंथोको देखकर जयपुरके इतिहासको वर्णन किया है। और "जयवंश"के प्रणेता कविश्रेष्ठ सीतारामने जयपुरके महाराजके तीसरे जयसिंहकी आज्ञासे सम्वत् १९४२ मे उक्त ग्रंथको वर्णन किया है। कविने भी अवश्य ही जयपुरके महाराजके महलमे स्थित प्राचीन ग्रंथ और राजकीय कागजपत्रोको देखकर अपने ग्रंथोको निर्माण किया है, यह भी मानना होगा, इस कारण इस प्रकारके स्थलोपर दोनोमे जिस २ स्थानपर मतभेद विराजमान है उस स्थानपर किसका वर्णन अभ्रान्त है इसका निसन्देह निर्णय करना कोई सहज बात नहीं है।

कर्नल टाड् साहबने यथार्थ इतिहासवेत्ताकी समान निरपेक्षभावसे जयपुरके राजनैतिक इतिहासका वृत्तान्त वर्णन किया है, परन्तु "जयवंशके प्रणेताने सोढदेवसे जयसिंहके शासनतकका वृत्तान्त वर्णन करके निरपेक्षभावसे समस्त अंशोको प्रकाशित नहीं किया। उनका काव्य भारतवर्षके प्राचीन कविकुलकी लेखनीसे निकलेहुए काव्यकी समान कल्पनासे जड़ित और ऊची प्रसंसासे परिपूर्ण है। अनेक प्रयोजनीय ज्ञातव्य राजनैतिक विषयोंको उसमे एकबार ही छोड़ दिया है। जयपुर राजवंशके साथ दिल्लीके सम्राट् वंशकी जो विशेष आत्मीयता और घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हुआ था, जयपुरके महाराजको जिस सम्राट्वंशकी अधीनता स्वीकार करनी पड़ी थी इस काव्यमे उसका कोई उल्लेख नही हुआ है। इस कारण कर्नल टाड् साहबने निरपेक्षभावसे जिन समस्त ऐतिहासिक सत्य और तथ्यको प्रकाशित किया है, उन सबको इस काव्यमें स्थान नहीं मिला। पर हम ऐसा भी निश्चय नहीं कर सकते कि यह सब काव्य भ्रान्तिसे परिपूर्ण है। तब दोनोने जिन २ विषयोंका उल्लेख किया है उसी२ स्थानपर सावधानीके साथ हमें किसी एक पक्षका अवलम्बन करना ही होगा।

कर्नल टाड् साहब संस्कृतभाषाके विद्वान् नहीं थे। उन्होंने अपने ग्रंथोमे अनेक स्थानोपर इस बातको स्वीकार किया है। उनके गुरु यति ज्ञानचंद्र प्राचीन ग्रंथोको

पढ़कर मुखसे उसकी व्याख्या करके अर्थ करते जाते थे,और वह उसी समय उन सबको अंग्रेजी भाषामे लिख लेते थे। यद्यपि यति ज्ञानचंद्र बड़े भारी पण्डित थे तथापि शीघ्रतासे व्याख्याके समय किसी स्थानपर उनसे कहीं भी भ्रम न हुआ हो अथवा उन्होंने भ्रमसे किसी स्थानको भी नहीं छोड़ा हो अथवा कर्नल टाड् साहबने भाषान्तर करनेके समयमें किसी स्थान विशेषका नाम वा किसी कविताका कोई अंश भ्रमसे विपरीत अर्थमें न लिखा हो यह असम्भव नहीं होसकता। मुनियोंको भी भ्रम होजाता है, सारांश यह है कि जती ज्ञानचंद्र वा कर्नल टाड् साहबको भ्रम न हुआ हो यह कदापि सम्भव नहीं होसकता। जयवंशके कर्ताको भ्रम न हुआ हो यह भी असम्भव नहीं है पर वह संस्कृतके एक विख्यात पंडित थे । उन्होंने स्वयं राजमहलके अनेक ग्रंथोको देखकर जयपुर-राजवंशके प्राचीन राजाओंकी संक्षिप्त जीवनीको संग्रह किया था, इस कारण इसके सम्बन्धमे उनके अल्पभ्रम होनेकी सम्भावना है ।

जिस २ स्थान पर दोनों मत और घटनाओंकी एकता नहीं है हम अत्यन्त संक्षेपसे उन कई एक घटनाओंके उल्लेख करनेकी अभिलाषा करते है। जयपुरके इतिहासके प्रथम अध्यायको पाठक पढ़कर भली भाँतिसे जान सकेंगे कि टाड् साहबने लिखाहै कि "राजा नलसे ३३ पुरुष पीछे नरवरके महाराज सूरसिंहके प्राण त्याग करने पर उनके भ्राताने बलपूर्वक सिंहासन पर विराजमान होकर कुमार भाईके पुत्र दूलेरायको अधिकारसे रहित करदिया" इत्यादि जयवंशकाव्यमे अन्य प्रकारका वर्णन देखा जाता है, कविने जो लिखा है उसका सारा मर्म यह है कि निषधदेशके अन्तर्गत वरेली राजधानीमें ईशसिंह राज्य करते थे । ईशसिंहके औरससे सोढदेव नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ । सोढदेवने युवा होकर अपने पिताकी आज्ञासे गुर्जर देशके अधीन योधानामक राज्यपर आक्रमण किया। प्रवल युद्धके समयमे उक्त राज्यको जीतकर उसने वहाँ अपनी आधिपत्यताका विस्तार कर अपने पिताको वहाँ जानेके लिये कहा, पिता ईशसिंह अपने कुटुम्बसहित नवजीत राज्यमें जाकर वहाँ निवास करने लगे। सोढसिंह कुछ समयके पीछे पूर्वाञ्चलके माचीके महाराजके साथ युद्ध करनेके लिये चले । माचीके राजा और उनके अधीनमें स्थित छोटे २ राजाओंके साथ सोढदेवका भयंकर युद्ध हुआ । सारेदिन संग्राम होनेके पीछे रात्रिके समय जब कुलदेवी प्रसन्न हुई तब देवीने साढदेवको प्रत्यक्ष दर्शन देकर अभय दी । दूसरे दिन प्रभात होते ही फिर प्रवल युद्ध हुआ, देवीके वरसे सोढदेवने विपक्षी माचीपतिके तथा अन्य राजाओंके जीवनको नाश कर जय प्राप्त की । माची नगरमे सोढदेवने देवीका एक मंदिर बनाया । माचीदेशके जीतनेके पीछे सोढ़देवने खोह नामक देशको जीतकर वहाँ अपना अधिकार किया । पिता ईशसिंहकी

---

(१) कर्नल टाड् साहबने सूरसिंह लिखा है। अंग्रेजी भाषामें "ढ" वर्ण नहीं है, इस कारण अंग्रेजीमें लिखनेके समयमें उन्होंने (R) (र) शब्दको ही प्रयोग किया हो ।

(२) पाठकोंको जयपुर इतिहाससे विदित हुआ होगा कि सोढदेवके पुत्र दूलेरायने आश्रय-दाता मीनाके अधीश्वरकी हत्या करके खोहगांवपर अधिकार किया। परंतु जयवंशकार कहते है कि सोढदेवने खोह देशका जय किया था। खोह शब्दकी दूसरी विभक्तिसे खोह हुआ। ऐसा जाना जाता है कि कविने ज्ञानचंद्रके मुखसे खोह शब्दको सुनकर भूलसे खोहगांव लिख दिया है।

आज्ञासे सोढ देवने उस नवजीत खोहदेशमें निवास किया। कुछही समयके पीछे उनके पिता ईशसिहने इस ससारसे विदा ली, तब सोढदेव सवत् १०२३ में पिताके राज्यपर अभिषिक्त होकर प्रवल प्रतापके साथ राज्य करने लगे।

इस समय देखा जाता है कि इतिहासवेत्ता टाड् साहवने सोढसिहके शासनका कोई उल्लेख नहीं किया, केवल उन्होंने उनके पुत्रके द्वारा खोहको जयका उल्लेख किया, परन्तु जयवशकार कहते हैं कि सोढसिहने स्वयं खोहको जय किया, हमें ऐसा अनुमान होता है कि यती ज्ञानचद्रके अनुवादके दोपसे ही टाड् साहवने इस प्रकार लिखा है, अथवा टाड् साहवने जिस ग्रंथसे सहायता ली थी उसीमें इस मतका वर्णन होगा।

कर्नल टाड् साहवने सोढदेवके पुत्र दूलेरायके सम्बन्धमें जो कुछ लिखा है जय-वंशकारने उसका समर्थन नहीं किया। पहिली वात यह है कि टाड् साहवने सोढदेव के पुत्रका नाम "दूलेराय लिखा है, परन्तु कविने उनका नाम दुर्लभ लिखा है दुर्लभ के वदलेमें दूले होना कभी सभव नहीं होसकता, तव टाड् साहवने अनेक स्थानोंमे नामोंका अदलवदल किया है, जयवशकारने लिखा है कि सोढदेवके प्राण त्याग करने पर उनके पुत्र दुर्लभसिंह पिताके राज्यपर विराजमान हुए। दुर्लभ अतुल विक्रमके साथ राज्यशासन करते थे, टाड् साहवने जिन दूलेरायकी विपत्तिका विवरण और उनके द्वारा खोह देशके मीनाके अधीश्वरका आश्रय ग्रहण करना तथा मीनापतिके प्राणनाशका वृत्तान्त वर्णन किया है, कविने उसका कोई उल्लेख नहीं किया। टाड् साहव लिखते हैं कि "दूलेरायकी मृत्युके पीछे उनकी विधवा रानीके एक पुत्र उत्पन्न हुआ उसका नाम कांकिल रक्खा गया।" परन्तु जयवंशके प्रणेताने लिखा है, कि "दुर्लभसिंहके औरस से काकिल नामवाला पुत्र उत्पन्न हुआ। जव काकिल स्याना हुआ तव राजा दुर्लभ-सिहने उसको भांडारेजको जीतनेके लिये भेजा। कुमार काकिलने अपनी प्रवल सेनाकी सहायतासे भांडारेजपतिको परास्त करके वहाँ अपने पिताके अधिकारका विस्तार कर फिर पिताकी राजधानीमे लौट आये। इस स्थान पर दोनोंके मतका भेद फिर दृष्टि आता है। किस ओरकी वात ठीक है इसका निणय करना कोई सरल वात नहीं है।

इतिहासवेत्ता टाड् साहवने लिखा है, कि उन्होंने काकिलका भ्रमवश हो (कंकाल लिखा है) पुत्र माईदल अथवा मादल पिताके सिंहासन पर विराजमान हुआ, इसके पीछे उनके पुत्र हनूने राजसिंहासनको प्राप्त किया। जयवशकाव्यमें माईदल वा मादल नामका आजतक कोई उल्लेख नहीं है। कविने काकिलका पुत्र हनूदेव लिखा है।

साधु टाड् साहव लिखते हैं कि हनूदेवके पुत्र कुण्डलको पीछे राज्य प्राप्त हुआ, जयवशके प्रणेताने लिखा है कि हनूदेवके पुत्र ज्ञानदेव थे। यहांपर फिर भेद देखाजाता है।

महामान्य टाड् महोदयने लिखा है कि पीछे पंजन वा पजून कछवाहोंके सिंहासनपर विराजमान हुए। कविने उस नामको "प्रजोन" लिखा है। पर हमको पजवन ज्ञात हुआ है। यहां भी भ्रम है।

टाड् साहबने मलेसीके पीछे जिन ग्यारह राजाओंकी नामावली प्रकाश की है, उसके साथ जयवंशके प्रणेताके ग्रंथमे मलेसीके परिवर्ता जो १० नाम लिखे है, हमने क्रमानुसार उनकी नामावलीको प्रकाशित किया है,-

टाड् साहबकी लिखी।	जयवंशके प्रणेताकी लिखी हुई।
(१) बीजल	...(१) बीजर।
(२) राजदेव	...(२) राजदेव।
(३) कल्याण	...(३) कीलन।
(४) कुन्तल	...(४) कुतिलक।
(५) ज्वानसिंह	...(५) जूनसी।
(६) उदयकरण	...(६) उदयकरण
(७) नरसिंह	...(७) नृसिंह।
(८) वनवीर	...
(९) उद्धारण	...(८) उद्धरण।
(१०) चन्द्रसेन	.(९) चन्द्रसेन।
(११) पृथ्वीराज	..(१०) पृथ्वीराज।

उपरोक्त दोनो तालिकाओंमे किस प्रकारका भेद पड़ा है, यह तो सरलतासे ही जानाजासकता है। टाड्ने जिन ११ जनोंके नाम लिखे है कविने दशहोंके नाम लिखे हैं। कविने वनवीरके नामको आजतक प्रदान नही किया। उसने अपने ग्रंथमे स्पष्ट लिखा है कि नृसिंहके औरससे उद्धरणका जन्म हुआ परन्तु हम कभी यह अनुमान नहीं करसकते कि कर्नल टाड् साहबने इच्छानुसार ही नृसिंहके पुत्रको वनवीर लिख दिया हो, उन्होंने जिस ग्रंथके आश्रयसे इस तालिकाको प्रकाश किया है उस ग्रंथमें अवश्य ही वनवीर नाम होगा।

जयवंशके प्रणेताने पृथ्वीराजके एकमात्र पुत्र भारमल्लका वर्णन किया है। टाड् साहबने पृथ्वीराजके सत्रह पुत्रोंकी कथा लिखी है, परन्तु उक्त कविने उसको नही लिखा। पृथ्वीराजके भारमल्लके अतिरिक्त और भी पुत्र थे, उनके अनेक प्रमाण विराजमान है। पृथ्वीराजने आमेरराज्यको बारह अंशोमे विभाग करके उन बारह पुत्रोंको देदिया, इसको सभी जानते है, और उसीके अनुसार आमेर "बाराकोटरि" अर्थात् बारह प्रधान सामन्तोंकी सम्प्रदायमें विभक्त है। हमै ऐसा बोध होता है कि जयवंशकारने इस ऐतिहासिक तत्थ्यको इच्छानुसारही छोड़ दिया था।

कर्नल टाड् साहबने लिखा है कि पृथ्वीराजके दूसरे पुत्र भीमने अपने पिता पृथ्वीराजके प्राण नाश किये। जयवंशकारने इसको नही लिखा। उन्होंने पृथ्वीराजकी स्वाभाविक मृत्युका उल्लेख किया है, हमै ऐसा विदित होता है कि कविने राजवंशके कलंकको गुप्त रखनेके लिये ही उक्त दुःखदाई घटनाका उल्लेख नहीं किया।

राजवंशके प्रणेताने लिखा है कि भारमल्लके पुत्र भगवतदास थें टाड् साहबने इनके नामको भगवानदास लिखा है " परन्तु साधु टाड् साहबने भगवानदासके साथ

दिल्लीके बादशाह अकबरकी मित्रताके विषयमे जो उल्लेख किया है, उस विषयमें जयवंशकार तो एकवार ही मौन रहे। कविने भूलसे भी किसी स्थानमें एक पंक्तिमें भी यह नहीं लिखा कि यवन बादशाहके साथ जयपुरके महाराजकी मित्रता थी, या आत्मीयता वा करदका कोई सम्बन्ध था। भगवान्दासकी कन्याके साथ कुमारसलीमके विवाहका वृत्तान्त केवल कर्नल टाड् साहबने ही नहीं वरन अन्यान्य इतिहास लेखकोने भी लिखा है, परन्तु कविने उसका कोई उल्लेख नहीं किया।

"इतिहासवेत्ता टाड् साहबने लिखा है कि भगवान्दासके चचाके पुत्र और उत्तराधिकारी मानसिंह थे"। "परन्तु जयवंशकारने लिखा है कि मानसिंहने भगवान्दासके औरससे जन्म लिया। यहांपर केवल टाड् साहबका ही भ्रम विदित होता है। टाड् साहबने लिखा है, कि भगवान्दासके अन्य तीन भ्राता थे, उनके नाम सूरतसिंह, माधोसिंह और जगत्सिंहके पुत्र थे।" कविने लिखा है, कि मानसिंहके औरससे कनकावती रानीके गर्भसे जगत्सिंहका जन्म हुआ।" हमें ऐसा बोध होता है कि टाड् साहबने भ्रमसे ही जगत्सिंहको मानसिंहका पुत्र न लिखकर मानसिंहको जगत्सिंहका पुत्र लिख दिया था। जगत्सिंह मानसिंहके पुत्र थे इसका वृत्तान्त अनेक स्थानोंमें पाया जाता है।

जयवंश प्रणेताने लिखा है, "कि राजा भगवन्दासने अपने पुत्र मानसिंह और पौत्र जगत्सिंहके साथ भारतवर्षके अनेक देशोके युद्धमे जयप्राप्त की। मानसिंहकी समान जगत्सिंह एक महाबलवान धनुर्द्धारी थे। वह पिताके साथ अनेक स्थानोपर जय प्राप्त करके विशेष यशस्वी हुए। परन्तु अकालमें ही वह संसारसे विदा होगये, भगवन्दास और मानसिंह महान् शोक सागरमें निमग्न हुए, कुछ दिनोंके पीछे मानसिंह गुर्जर देशको जीतनेके लिये गये; राजा भगवान्दास उस समय ससार छोड़ गये। इसके पीछे मानसिंह आमेरके सिंहासन पर विराजमान हुए और अपने पोते (जगत्सिंहके पुत्र) महत्सिंहके साथ अनेक देशोको जीतनेके लिये गये। दुर्भाग्यसे महत्सिंहकी मृत्यु अकालमे होगई, इस प्रबल शोकसे थोड़े दिनोके पीछे ही मानसिंहने भी अपने प्राण त्याग किये।" टाड् साहबकी अपेक्षा कविकी यह उक्ति सत्यतासे पूर्ण विदित होती है।

अंतमे टाड् साहबने लिखा है, कि जगत्सिंहके पोते जयसिंह आमेरके सिंहासनपर विराजमान हुए। कविने भी इस बातको माना है, उनके पुत्र रामसिंह आमेरके राजछत्रके नीचे शोभायमान हुए, यह दोनों ग्रंथोसे प्रकाशित होता है। टाड् साहबने लिखा है कि "रामसिंहकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र विशन वा विष्णुसिंह आमेरके सिंहासनपर प्रतिष्ठित हुए।" परन्तु जयवंशकारने लिखा है कि रामसिंहके पुत्र कृष्णसिंह थे। उनका वर्ण काला था, इसीसे उनका नाम कृष्णसिंह रक्खा गया। रामसिंहने अपने पुत्र

(१) जयपुरके इतिहासकी टिप्पणी १ अध्यायकी देखो।

(२) टाड् साहबने लिखा है कि महासिंहके पुत्र भावसिंह थे, परंतु कविने भावसिंहके नाम का उल्लेख नहीं किया।

कृष्णसिंहके साथ दक्षिणके युद्धमें गमन किया। रणभूमिमे रामसिंह शत्रुओंके आघातसे घायल हुए, कृष्णसिहने आघात करनेवालेकी ओरको महाक्रोधित हो अस्त्रोंकी वर्षा की। इसी कारणसे शत्रुओंके आघातसे कृष्णसिंह रणभूमिमें मारे गये। उन्हीं कृष्ण-सिहके पुत्र विष्णुसिंह हैं। रामसिंहके प्राण त्याग करने पर उनके पोते उक्त विष्णुसिंह आमेरके महाराजा हुए।" विष्णुसिंहके पुत्र जयसिंह और विजयसिह थे। यह दोनो ग्रंथोंमे प्रगट है। टाड् साहवने लिखा है कि जयसिंह अश्वमेध यज्ञ करनेके लिये गये थे, परन्तु कवि सीतारामने लिखा है कि उन्होंने महा समारोहके साथ अश्वमेध यज्ञको पूर्ण किया था। इसके उपलक्षमे महाराजने वहुतसा धन खर्च किया था।

कर्नल टाड् साहवने लिखा है कि जयसिहके वड़े पुत्र ईश्वरीसिहने शत्रुओंके भयसे विषपान करके आत्महत्या की, परन्तु कवि लिखते हैं कि ईश्वरीसिहने मल्लारी देशको जीत कर वहांके महाराजको पैरोंसे प्रहार किया, उसी मल्लारीपतिने उनको विष देकर मारडाला। कवि सीतारामने अपने काव्यमें सब प्रकारसे जयपुर राजवंशकी हीनताकी कथाको प्रकाशित नहीं किया था, इसी कारणसे उसने ईशरीसिहके गौरवकी रक्षाके लिये उक्त विवरणको प्रकाशित नें किया हो ऐसा अनुमान करना असंगत नहीं है। जयपुरका सिहासन लेकर ईश्वरीसिहके साथ माधवसिंहका प्रवल विवाद और संग्राम हुआ था; कविने उसका भी कोई उल्लेख नहीं किया।

ईश्वरीसिंहके पीछे माधवसिंह जयपुरके सिंहासनपर विराजमान हुए, यह दोनो ग्रंथोंमें प्रकाशित है, माधवसिंहके दोनो पुत्र पृथ्वीसिंह और प्रतापसिंह हुए। कविने लिखा है कि पृथ्वीसिहने एक वर्ष ही राज्य करके शरीर त्याग दिया, तव प्रतापसिंह राजा हुए, प्रतापसिंहके पुत्र जगत्सिंहके विषयमे कविने कुछ भी नहीं लिखा है। अंग्रेजी गवर्न-मेण्टके साथ जगत्सिंहका जो संधिवंधन हुआ है कविने उसका उल्लेख नहीं किया। जगत्सिहके पुत्र जयसिंह थे कवि सीतारामने इन्हींकी आज्ञासे "जयवंशक" नामक एक महा काव्यको निर्माण किया है।

तीसरे जयसिंके पुत्र रामसिह और उनके दत्तक पुत्र वर्तमान महाराज माधोसिंह है।

जयपुरका इतिहास समाप्त।

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस-बंबई.

राजस्थान.

दूसरा भाग.

बूँदीराज्यका इतिहास.


बून्दी ।

H. H Maharao Raja Sir Raghubir Singh Bahadur,

G. C. I. E., K. C. S. I.

of Bundi.

॥ श्रीः ॥

राजस्थानका इतिहास.

दूसराभाग २.

बूँदीराज्यका इतिहास.

हाड़ौतीप्रदेश–अग्निकुलकी उत्पत्तिका वृत्तान्त-आबूपर्व्वत-चौहान जातिको मैहकावती(मैकावती) गोलकुंडा और कोकनदेशकी प्राप्ति–अजमेरकी प्रतिष्ठा–अजयपाल–माणिकराय–प्रथम बार यवनोंका आक्रमण–अजमेरपर अधिकार–संभरके लवणह्रदकी उत्पत्तिका विवरण–माणिकरायका वंश–चौहानोंका राजपूतानेमें प्रवेश–मुसल्मानोंके साथ युद्ध–अजमेरका वीलनदेव–गोगाकी वीरता–मैडीका चौहान–महमूदका उभयकी हत्या करना–उनके अधीन राजाओंका सेना सहित इकट्ठे होना–उनका समय निश्चय करना–हाड़ा जातिकी उत्पत्ति–अनुराजका आसेर देशको प्राप्त करना–उनका राज्य नाश–अस्थिपालका आसेरदेशको प्राप्त करना–रावहमीर–रावचन्द–अलाउद्दीनका आसेर पर अधिकार–वहाँ निवास–उनके पुत्र कोल्हनका पठार देशपर अधिकार करना–रावबागा–उनका मयनालपर अधिकार करना–बंबावदाके किलेका बनवाना–दिग्विजय–रावदेवा–बूँदीकी राजधानीकी स्थापना।

राजस्थानके जो अंश हाड़ौती नामसे प्रसिद्ध हैं, उन अंशोंमें दो राज्य स्थापित है, एकका नाम बूंदी और दूसरेका नाम कोटा है। बूँदी कोटा पहिले एक ही राज्य था, तीनसौ वर्षसे इसके दो भाग हो गये है। चम्बल नदी इन दोनों राज्योंके बीचमें बहती है,इस कारण इस तरंगिनीने दोनो राज्याका सीमा नियत कर दी है। हाड़ा वंशीय राजपूत इस देशके निवासी हैं, उन्हींके नामके अनुसार इस देशका नाम हाड़ौती हुआ है। इसी हाड़ौती देशमें, बूँदीराज्यके इतिहासको लिखनेका हम आगे बढ़े हैं।

चौहान राजपूतोंकी चौबीस शाखाओंमे यह हाड़ा नामकी शाखा ही श्रेष्ठ गिनी गई है। अजमेरके अधीश्वर माणिकरायके पुत्र अनुराज इस शाखाके आदिपुरुष हैं। माणिकरायने सम्वत् ७४१ सन् ६८५ ई. मे सबसे पहिले भारतीय राजाओंके साथ भारतके विजयकी इच्छासे मुसल्मानोंके साथ महायुद्ध किया था।

इतिहासलेखक कर्नेल टाड् साहबने चौहान जातिकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें विख्यात कवि चन्दका आश्रय लिया है। चंदकविने अपनी अमृतमयी लेखनीसे अग्निकुलकी

उत्पत्तिके सम्बन्धमे जो कुछ वर्णन किया है, उसकी सत्यताके सम्बन्धमें वर्तमान समयमे संदेह उपस्थित होनेपर भी यहाँपर उसका वर्णन करना हमने अत्यन्त आवश्यक समझा है। चंद कवि लिख गये है कि "वीर तेजस्वी क्षत्री राजा अनाचार युक्तहो परशुरामके क्रोधमें निमग्न हुए। परशुरामने इक्कीस वार पृथ्वीको क्षत्रिय हीन किया, उस समय बहुतसे क्षत्रियोने अपने जीवनकी रक्षाके लिये अपनेको क्षत्री न बताकर उसके बदलेमे कवि जातिका परिचय दिया था, और बहुतोने स्त्रियोंका स्वरूप धारण कर परशुरामके हाथसे छुटकारा पाया। इस प्रकारसे बहुतसे क्षत्रियोने अपने प्राणोकी रक्षा की। परशुरामने समस्त राज्य ब्राह्मणोको शासन करनेके लिये अर्पण किया। नर्मदानदीके किनारे माहेश्वर नगरके हैहय जातिके राजा सहस्राज़ुनने,परशुरामके पिताका संहार करके शेष युद्ध उपस्थित किया था।

"ब्राह्मणोंके प्रधान अस्त्रोमे केवल अभिशाप और आशीर्वाद ही सबसे प्रधान। राज्यपालन शान्तिरक्षा, और दुष्टोको दमन करनेमें किसीकी भी सामर्थ्य न थी, इसी कारणसे राज्यमे शीघ्र ही अराजकता विराजमान होगई। अशान्तिरूपी भयंकर अग्नि प्रज्वलित होगई। राज्यमे सर्वत्र मूर्खता और अधार्मिकता फैल गई, पवित्र धर्मग्रन्थोको मनुष्य पापमार्गसे दलन करने लगे, और तस्कर असुर चोर तथा दानव मनुष्योंके ऊपर घोर अत्याचार करने लेगे। आयुध-गुरु महर्षि विश्वामित्रने उस अशान्ति और अत्याचारोंको देखकर दु:खित हो, मनही मन विचार किया कि फिर क्षत्रियोकी सृष्टि करना कर्तव्य है। आवू शिखरके जिस स्थान पर ऋषि मुनि निवास करते थे और तप योग यज्ञ तथा योगके साधनसे जिस शिखरको पवित्र किया था; महर्षि विश्वामित्रने उस स्थानमें जाकर क्षत्रियोकी सृष्टिके लिये यज्ञ करनेका विचार किया। पीछे समस्त ऋषि मुनि क्षीरोद समुद्रके किनारे जाकर सृष्टिकर्ताकी आराधनामे नियुक्त हुए। सृष्टिकर्ताने उनको फिर वीर क्षत्रिय जातिकी सृष्टि करनेकी आज्ञा दी। ऋषि मुनि उस आज्ञाको पाते ही इन्द्र, ब्रह्मा रुद्र, विष्णु और अन्यान्य देवताओंके साथ आवू शिखरपर आये। शीघ्र ही यज्ञ प्रारम्भ होगया। पवित्र गंगाजीके जलसे यज्ञकुंडको पवित्र कर यज्ञकार्य होनेके पीछे देवताओंने आपसमें सलाह की। देवराज इन्द्रने नवीन दूवसे एक पुतली बनाकर उसकी प्राणप्रतिष्ठा कर उसे उस प्रज्वलित यज्ञकुंडमें डाल दिया। इसके पीछे संजीवन मंत्रका पाठ करते ही उस कुंडमेंसे दहिने हाथमें गदा धारण किये एक वीर पुरुष " मारमार " शब्द करता हुआ बाहर निकला। उस वीर पुरुषका नाम प्रमार रक्खा गया, और देवताओंने उसको आवू धार, तथा उज्जयिनी देश शासन करनेके लिये दिये"।

---

(१) कर्नल टाड साहबने इस स्थानपर लिखा है। कि कविचंदने जिन चोर और तस्कर जातियोंका उल्लेख किया है, यह उत्तर पश्चिमांचलकी भारतकी सीदियन जाति होगी। यह ब्राह्मणोंके ऊपर किसी प्रकारकी दया नहीं करती थी"। परन्तु हमारा ऐसा अनुमान है कि कविने इस स्थानपर भारतवर्षकी बन्यमीना इत्यादि जातियों पर ही लक्ष्य किया है। त्रेता युगमे परशुरामके समयमें भारतमें सीदियन" जाति थी, इसका प्रमाण शास्त्रमें नहीं पाया जाता।

"इसके पीछे सभी मिलकर पितामह ब्रह्माजीसे अपने अंशसे एक क्षत्रियकी सृष्टि करनेकी प्रार्थना करने लगे। तब पद्मासन ब्रह्माजीने सभीके अनुरोधसे दूर्वाकी एक पुतली बनाकर अग्निकुंडमे डाली। पुतली कुंडमे डालते ही उसमेंसे एक वीर पुरुष निकला। इसके एक हाथमे खड्ग और दूसरे हाथमे वेद शोभायमान थे। उसका नाम चालुक वा सोलंकी रक्खा गया। अनलपुर पत्तनदेशका उसको राज्य मिला"।

"देवादिदेव रुद्रने उसके पीछे और भी एक वीर पुरुषकी सृष्टि की। देवादिदेव महादेवने दूर्वादलकी बनीहुई पुतलीको पवित्र गंगाजलमे स्नान कराकर यज्ञकुंडमे डाल दिया; और आप मंत्र पढ़ने लगे, मंत्रके पढ़ते ही धनुष बाण हाथमे लिये कृष्णवर्ण भयंकर मूर्तिका एक वीर पुरुष सम्मुख आया। असुरोंके साथ युद्ध करनेको जानेके समय उस वीर पुरुषका पदस्थल न हुआ इसीसे उसका नाम प्रतिहार रक्खा गया, उसको देवतारूपसे नगर तोरणकी रक्षाका भार मिला, और मरुस्थलीके नौ देश उसको दिये गये"।

"सबसे पीछे विष्णु भगवानने चौथे वीरको उत्पन्न किया, विष्णु भगवानके दुर्वादलकी बनीहुई पुतलीको अग्निकुण्डमें मंत्र उच्चारण करडालते ही उनके अवयव स्वरूप चार हाथ युक्त अस्त्रधारी एक वीर पुरुषने जन्म लिया। चार हाथ होनेसे उसका नाम चतुर्भुज चौहान हुआ। समस्त देवताओंने आशीर्वाद देकर उसको मैहकावती नगरीका राज्य दिया। इस समय जो स्थान गढ़ामंडला नामसे विख्यात् है द्वापरयुगमें वह मैहकावती नामसे प्रसिद्ध था"।

चंदकवि इसके पीछे लिखते हैं कि "जिस समय यज्ञकार्य समाप्त हो रहा था उस समय असुर और दानव उसकी दृढ़ दृष्टिसे देख रहे थे, उनके दो नेता अग्निकुंडके बहुत धोरे खड़े हुए थे, परन्तु यज्ञकार्यके समाप्त होते ही क्षत्रियोंकी सृष्टिका कार्य भी समाप्त होगया। वह चारो वीरक्षत्री उन दानव और असुरोंके साथ युद्ध करनेके लिये भेजे गये। दोनों ओरसे भयंकर समरानल प्रज्वलित हो गई, परन्तु जैसे २ वह क्षत्रिय वीर अस्त्राघातसे असुरोंको मारते जाते थे वैसे २ उन मृतकोंके रुधिरसे फिर नवीन असुर जन्म लेकर युद्ध करते जाते थे। इस प्रकार किसी भाँति भी दानवोंकी सेनाकी घटती नहीं हुई। अंतमें उस नवीन सृष्टिके चारों वीरोंकी कुलदेवी अनुचरोंके साथ रणक्षेत्रमे जाकर उन निहत असुरोंका रक्तपान करने लगी। इस कारणसे उस रुधिरसे उत्पन्न होनेवाले असुरोंकी संख्या एकवार ही समाप्त होगई"।

उन चारों देवियोंके नाम इस भाँति चंदकविके ग्रन्थमे लिखे गये हैं,—

चौहानोंकी कुलदेवी . . . . .. आशा पूरा।
पड़िहारोंकी कुलदेवी .. . .. गाजनमाता।
सोलङ्कियोंकी कुलदेवी .... . खींवजमाता।
प्रमारोंकी कुलदेवी ... . सिचियायमाता।

इसके पीछे कवि लिखते हैं कि "समस्त दैत्योंके निहन होते ही जयध्वनिसे आकाशमंडल कम्पायमान होने लगा। स्वर्गसे देवता फूलोंकी वर्षा करने लगे; और उस जयप्राप्तिसे महा संतुष्ट होकर देवता अपनी २ सवारी पर चढ़ कर रणभूमिमें जा विजयी वीरोको धन्यवाद देने लगे"।

चौहानोंके प्रधान कविचंद वरदाईका शेष कहना यह है कि "छत्तीसकुली क्षत्रियोमे अग्निकुल सबसे श्रेष्ठ है; शेष सभी स्त्रियोंके गर्भसे उत्पन्न है, ब्राह्मणोके द्वारा सृष्टि हुए चौहानोंमें गोत्रोचार यथा सामवेद सोमवश माध्यंदिनी शाखा, वत्स गोत्र, पंच प्रवर जनेऊ, चन्द्रभागा नदी, भृगु निशान, अम्बिकाभवानी, वालनपुत्र, कालभैरव आबू अवलेश्वर महादेव चतुर्भुज चौहानें"।

"इतिहासवेत्ता टाड् साहवने चंदकविके महाकाव्यसे उक्त अंशको उद्धृत करके कहा है, कि जिस समय भारतवर्षमे सर्वत्र व्याप्त धर्म–द्रोहियोंको दमन करनेके लिये भारतकी वीर जातिकी पुनः सृष्टिकी अभिलाषासे आबूके शिखर पर देवताओकी महा समिति हुई; उस समय हिन्दूजातिका दूसरा युग होगया था, इसके सम्बन्धमे हम किसी प्रकारका तर्क करनेकी इच्छा नही करते। इतिहासका अनुसरण करनेके पहिले यहाँ पर इसकी खोज करनी होगी कि ब्राह्मणोके पक्षको समर्थन करनेके लिये इस नवीन जातिकी सृष्टि हुई, और हिन्दूसमाजमे ग्रहण की गई, यह वीर किस जातिके थे। या तो वह लोग अवश्य ही यहाँके आदिम पतित निवासी होगे और ब्राह्मणोंने उनको फिर हिन्दूजातिमें ग्रहण किया होगा, या वह लोग विदेशी होगे और ब्राह्मणोंने उनको बलवान् देखकर अपने धर्ममें दीक्षित करलिया होगा। यदि यहाँकी आदिम पतित जाति और विदेशियोंकी आकृतिकी तुलना कीजाय तो इस प्रश्नका विचार सरलतासे हो सकता है। यहाँके आदिम पतित निवासी काले शरीरके होते हैं, खर्व और श्री हीन होते है, अन्य पक्षमे अग्निकुली क्षत्री प्राचीन राजाओंकी समान सवल, सुन्दर और वीर मूर्तियुक्त थे। अतीव पूर्वकालमें सिदियोमें जिस प्रकार वीररसका स्रोत वहता था, अग्निकुल सम्भूत क्षत्रियोके हृदय भी उसी रसमे प्रवल है"। कर्नल टाड् साहव उक्त मन्तव्यको प्रकाश करनेके साथ ही साथ यह सिद्धान्त कर गये है कि जब परशुरामने क्षत्रियोंको विध्वंस कर दिया तब कुछ दिनोके लिये ब्राह्मणोने राज्य किया था, परन्तु वह लोग अत्यन्त दुर्वल थे। इस कारण भारतवर्षके सिदियोंनें

---

(१) कविचंदने रासोमें एकमात्र गोत्रके सिवाय वेद प्रवर आदि किसीका वर्णन नहीं किया है रासोंमें केवल इतना ही लिखा है।

आसापूर कहै मो नामं, पुज्जै पुत्र पौत्र धन धामं
कुलह गोत्र मुझ थप्पै नामं, अप्पो ऋद्धि अचल्लह तामं

किन्तु चाहुआणोंका सही शिखासूत्र इस प्रकारसे हैं:–वत्सगोत्र सामवेद–कौथमीशाखा–गोलिमसूत्र,–आप्रवान, यामदग्नि, च्यवन, भार्गव और्व, पांचप्रवर,–आशापूरा कुलदेवी–श्री कृष्ण कुलदेवता–चंद्रभागा नदी,–मयूरपक्षी,–वामशिखा, वाम पाद–ध्वजरक्षक गरुड़, और आयुध खड्ग।

ब्राह्मणोंके ऊपर घोर अत्याचार किये थे। ब्राह्मणोंने उस महा विपत्तिमें पड़कर भारतसिदियोंके एक दलको हिन्दूधर्ममे दीक्षित कर उनको राज्यशासनका भार दिया, और वही चौहान पड़िहार, सोलंकी और प्रमार नामसे गिने गये।

इस समय इतिहासका ही अनुसरण करना होगा। चौहान पड़िहार सोलंकी और प्रमार इन चारों अग्निकुल राजवंशोमे चौहानोंने सबसे अधिक विस्तारित राज्य पाया था। प्रमार राजवंशका आधिपत्य सर्वत्र फैलरहा था, यह प्रवाद वाक्य आजतक विख्यात् है, परन्तु चौहानोंका आधिपत्य जैसा अधिक था वह कठिनाईसे जाना जा सकता है, क्योंकि जिस समय प्रमारवंशियोंकी गौरव गरिमा मध्याह्नकालके सूर्यकी समान भारतके प्रत्येक प्रान्तमे विभासित होरही थी, उस समय चौहानोंके गौरवका सूर्य धीरे२ अस्ताचलकी ओरको चलने लगा था।

चौहानोंके जातीय इतिहासमे देखा जाता है कि एक समय उन्होंने सबके ऊपर अतुल सामर्थ्य और प्रभुत्वका विस्तार किया था, परन्तु वह अधिक कालतक स्थाई नहीं रहा। मैहकावतीसे माहेश्वरीपुरी तक नर्मदाके दोनों किनारोंके उत्तर और दक्षिणमें

---

(१) हम इस बातको कह सकते है कि कर्नल टाड् साहबने भ्रममें पड़कर यह सिद्धान्त किया है। जब कि वर्तमान कलियुगमें हिन्दूधर्मकी शोचनीय दुर्दशा होनेपर भी कोई विधर्मी विजातीय हिन्दूधर्मको ग्रहण कर हिन्दूसमाजमें युक्त होनेके लिये समर्थ नहीं हुआ; तब अत्यन्त प्राचीन समयमे हिन्दूधर्म परमपवित्र रूपसे प्रबलताके साथ भारतवर्षमें फैलरहा था, उस समय विश्वामित्र आदि ऋषि अथवा ब्राह्मणोंने भारतवर्षके बहिस्थित भारतसिदियोंको अपने धर्ममें दीक्षित कर उनके हाथमें राज्यभार अर्पण किया हो यह कभी संभव नहीं होसकता। कहीं किसी जातिके किसी मनुष्यने जगत्के किसी धर्ममें प्रवेशका अधिकार प्राप्त किया हो परन्तु हिन्दूधर्ममें विजातिय किसी मनुष्यको भी प्रवेश करनेका अधिकार नहीं है। यदि कहो मुसल्मान इत्यादि विजातिय मनुष्योंने वैष्णवधर्म स्वीकार किया था। परन्तु वह वैष्णवधर्मावलम्बी कोई मुसल्मान भी हिन्दू समाजमे भुक्त नहीं होसका था। इस कारण भारतसे विताड़ित हुए विजातियोंको ब्राह्मणोंने हिन्दूओंके धर्ममें दीक्षित कर लिया होगा, यह कभी सम्भव नहीं होसकता। और दूसरी बात यह है कि चंदकविने जिन चार नवीन क्षत्रियश्रेणीकी उत्पत्तिका विषय वर्णन किया है यदि हम उसको सब प्रकारसे कविकी कल्पना भी मानें तो भी यह ठीक ही है कि पितामह ब्रह्माजीने प्रथम सृष्टिके समय ब्राह्मण-क्षत्रिय वैश्य और शूद्रकी सृष्टि करनेके पीछे परिणाममें फिर किसी जातिकी सृष्टि की हो, हमने इस प्रकारका उल्लेख किसी शास्त्रमें नही पाया। हमें अनुमानसे भी यही विदित होता है कि परशुराम किसी प्रकारसे भी एक ही समय प्रत्येक क्षत्रियको संहार करनेमें समर्थ नहीं हुए थे। यद्यपि उन्होंने बराबर युद्धोंमें अनेक क्षत्रियोंका प्राण नाश किया था, तथापि भारतके प्रत्येक प्रान्तोंमें अनेक क्षत्रिय राजा उस समय जीवित थे इसका भी प्रमाण है, उस अंशसे भारतके असभ्य जंगली जातियोंने ब्राह्मणोंके ऊपर घोर अत्याचार कर हिन्दूधर्मको विशेष हानि पहुँचाई हो और ब्राह्मणोंने जीवित बचे हुए क्षत्रियोंके वंशधरोंमेंसे चार प्रधान वीरोंको नवीन यज्ञमें दीक्षित कर चार देशोंका राज्यभार दिया हो तो इसमें क्या आश्चर्य है अथवा मन्त्रबलसे भी चार वीरोंको उत्पन्न होना तो हिन्दूशास्त्रके अनुसार असंभव नहीं है"।

स्थित समस्त देशोंमें चौहानोका आदि राज्य था। राजवंशधरोकी संख्या प्रबल होनेसे क्रमशः समस्त द्वीपोमे माण्डू आसेर गोलकुंडा और कोकन तक तथा उत्तरमें गंगाजीके किनारे तक उनके राज्यकी सीमा फैल रही थी। कविश्रेष्ठ चंद्चौहानोके राज्यके सम्बन्धमे लिख गये है कि " राजधानी मैहकावतीके ५२ किलोंमे चौहानराजके अनुकूल शपथ सुनाई जाती थी। चौहानोने अपने बाहुबलसे ठट्टा, लाहौर, मुलतान, पेशावर आदि देशोंपर अधिकार कर अंतमे भारतके शिखर तक अपना अधिकार कर लिया था। विधर्मी असुर चौहानराजके भयसे भाग गये थे। दिल्ली और काबुलमे चौहानराजका शासन स्थापित था, तथा उनकी जय विघोषित होती थी। चौहानराजने ही नैपालका राज्य माल्हनको प्रदान किया था। देवताओसे वर और आशीर्वादको पाकर चौहान-राज अपनी राजधानी मैहकावतीको लौट आये। " और माल्हनको साथ न लाये।

कर्नल टाड् साहब लिखते हैं, कि यह तो पहिले ही जाना गया है कि गढ़मंडलाका प्राचीन नाम मैहकावती था। उस मैहकावतीके राजा बहुत कालसे "पाल" उपाधिधारी थे। ऐसा विख्यात् है कि वह लोग पशुओंका पालन करते थे इसीसे इनको यह उपाधि दी गई थी। अहीर-लोगोने एक समय समस्त मध्य भारतपर अधिकार किया था। वे परिणाममे केवल एकमात्र "अहीरवाड़ा" अपना चिह्न छोड़ गये हैं। यह अहीरशब्द पाल शब्दके अन्य अर्थका बोधक है, और यह अहीरजाति उक्त जातिको एक शाखामात्र है। पाल अथवा पालियोंके द्वारा जो समस्त प्राचीन नगर प्रतिष्ठित हुए थे, उनमें भेलसा, भोजपुर, दीप, भूपाल, आइरण; गार्सपुर यह कितने ही प्रधान हैं।

---

(१) कर्नल टाड् साहब अपने टीकामें लिखते है कि मुसलमान इतिहासवेत्ताने इस घटनाकी सत्यताको स्वीकार किया है। संवत् ७४६ में मुसलमान जिस समय प्रथम भारतवर्ष पर अधिकार करनेको आये थे उस समय लाहौर और अजमेरके हिन्दू राजा इसी चौहानजातिके थे। वह अपने प्रबल पराक्रमके साथ यवनोंके विरुद्ध युद्ध करनेको सन्नद्ध हुए थे। यह हम निस्संदेह जानते हैं कि उस समय अजमेर चौहानोकी प्रधान राजधानी थी "।

(२) टाड् साहब लिखते हैं, कि " माल्हन चौहानोकी एक शाखा है। अलिकजेंडरके भारतपर आक्रमण करनेके समय समुद्रके किनारे मल्लारी नामके जिस राजाने उसपर आक्रमण किया था, ऐसा बोध होता है कि वास्तवमे वही माल्हन होंगे। इस शाखाका इस समय लोप होगया है। पाँच शताब्दी पहिले इसके अस्तित्वको कोई नहीं जानता था। हाड़ा जातीय बूंदीके एक अधीश्वरने एक माल्हन स्त्रीका पाणिग्रहण किया। परन्तु अन्तमें एक चतुर भाटने प्राचीन ग्रन्थसे प्रमाणित किया कि उक्त माल्हन स्त्री उसकी स्वगोत्रिया थी। तब बूंदीके महाराजने उस स्त्रीको त्याग दिया था।

(३) टाड् महोदयने अपने टीकेमें लिखा है कि कितने ही नगर, विशेष करके दीय भोजपुर और भेलसामें बहुतसे प्राचीन स्मृति चिह्न विराजमान थे; बीस वर्षके पहिले हम भ्रमण करनेके लिये आईरन नगरमे गये थे; उस नगरीमें दो नदियोंके मुहानोपर एक बड़ा भारी खंभ स्थित देखा। यह तीस फुट ऊंचा था, इसके ऊपर एक मनुष्यकी मूर्त्ति विराजमान थी। उस मूर्त्तिके शिरपर मुकुट शोभायमान था; और खंभके नीचे एक बैलकी आकृति खुदी हुई थी;-

"अजयपाल नामक मैहकावतीके एक राजवंशधरने अजमेर राज्य स्थापन कर वहाँ तारागढ़ नामवाला एक अभेद्य किला बनाया । प्राचीन राजाओंमें अजयपालका नाम आजतक भलीभाँतिसे प्रसिद्ध है, वह राजा चक्रवर्ती अर्थात् बहुत राजाओंके अधीश्वर थे, यह भी उसी सूत्रसे जाना जाता है, वह किस समय राज्यशासन करते थे, उसका निश्चय करना कठिन है ।

"पालीभाषामें लिखे हुए ताँबेके अनुशासनपत्रोंमें और पत्थरके स्तंभोंपर खुदी हुई अनुलिपियां पाई जातीहैं परन्तु वह भाषा जबतक हमारे हस्तगत न हो तबतक उक्त समयका निश्चय करना कोई साधारण बात नहीं है । मैहकावतीसे कुमार पृथ्वी पहाड़ अजमेरमें आये यद्यपि यह निश्चय नहीं कहा जा सकता कि वह किस कारणसे आये थे परन्तु ऐसा जाना जाता है कि राजाके पुत्र नहीं था इसीसे वह पृथ्वीपहाड़ अजमेरमें आये थे । उनकी एकमात्र स्त्रीके गर्भसे (इस समय इस जातिमें अनेक विवाह प्रचलित नहीं थे) चौबीस पुत्र उत्पन्न हुए, उनमेंसे एकके वंशधर माणिकराय। संवत् ७४१सन् ६८५ ई० में अजमेर और सांभरके अधीश्वर हुए "।

कर्नल टाड् साहबने इसके पीछे लिखा है, कि माणिकरायके समयसे चौहान जाति के इतिहासने घोर अंधकारसे मुक्ति प्राप्त की। इसी समय संवत् ७४१ हिजरी सन् ६३ में सबसे पहिले मुसलमानोंने राजपूतानेमें सेना सहित प्रवेश किया था । अजमेरके सिंहासन पर इस समय दुर्लभ वा दूलेराय विराजमान थे। यवनोंके साथ युद्ध करके अजमेरपति दुर्लभ मारेगये । इनका इकलौता सात वर्षकी अवस्थाका पुत्र किलेकी छत्तपर खेल रहा था, वह भी शत्रुओंके आघातसे अकालमें ही मृत्युको प्राप्त हुआ । दुर्लभराय ने रोशनअली एक मुसल्मान धर्मप्रचारकके प्रति घोर अत्याचार किये थे, इसीसे यवनो ने सिन्धुदेशसे अजमेरमें जाकर यह युद्ध उपस्थित किया और इसी कारणसे मुसल्मानो में यह धर्मयुद्ध कहकर विदित हुआ है । ऐसा भी प्रसिद्ध है कि उक्त रोशनअलीके अंगूठेको काटा गया था, वह अंगूठा देकर मक्केको चला गया, और राजपूत पौत्तलियो के विरुद्धमें इस अत्याचारका बदला चाहा, शीघ्र ही यवनोंकी सेना अश्व व्यवसाईरूपसे भेष बदलकर अजमेरमें आई।उसने दुर्लभराय और उनके पुत्रोंका प्राण नाश कर गढ़बीटली और महलो पर अधिकार कर लिया । " कर्नल टाड् साहबने कहा है कि " यद्यपि

—उसी समय मिस्टर कोलब्रुकके पास हमने उसकी प्रतिमूर्तिको भेज दिया परन्तु इस समय हमारे पास उसकी कोई अनुलिपि नहीं है "।

(१) कर्नल टाड् साहबने टीकामें लिखा है कि " यह स्थान अन्यरूपसे अजयमेर अर्थात् अजेयशिखर और अजयगढ़ अर्थात् अजेय दुर्ग नामसे विदित हुआ है । परन्तु ऐसा विख्यात् है कि राजपूतानेके प्रवेशके द्वारस्वरूप इस स्थान पर युवक चौहान-राज अजयपाल निवास करते थे इसीसे इसका नाम अजमेर हुआ।" परन्तु देशियोंका यह विचार है कि पुराणोक्त विख्यात् राजा अजमेरसे इसका नाम अजमीढ़ हुआ और इस समय उसीका अपभ्रंश अजमेर हुआ है ।

यह समर सम्बन्धी प्रवाद बालककी उक्तिकी समान जाना जाता है, परन्तु दूसरी प्रकृत सत्यताके द्वारा यह घटना प्रमाणित हुई है। खलीफा उमरने ठीक उसी समय सिन्धुदेशमें एक सेना भेजी थी। उस सेनादलके नेता अतुलआस प्राचीन राजधानी आलोरपर अधिकार करनेके समय मारे गये; ऐसा जाना जाता है कि उस सेना दलने स्वजातीय धर्म प्रचारकके उक्त अपमानसे महा क्रोधित और धर्मके नामसे उत्तेजित होकर मरुक्षेत्रमें जाकर अपमानकारी राजपूतोंपर आक्रमण किया था "।

जिस कारण वा जिस उपायसे अजमेरके अधिकारी दुर्लभराय मारे गये, और अजमेर छीना गया, वह घटना चौहानोंके हृदय पट पर भलीभाँतिसे अंकित होगई। चौहान उक्त समरके स्मृति–चिह्न स्वरूप दुर्लभरायके मृतक पुत्र लोंठको आजतक देवता की समान पूजा करते हैं। अधिक क्या कहैं लोंठ अपने पैरमे जिन घूंघरूओंको पहिने हुए था चौहान उन्हींकी देवालंकाररूपसे पूजा करते हैं, और उन्हीं लोंठके सम्मानके लिये वह अपने २ बालकोंके पैरोंमे और घूंघरू नहीं पहिनाते।

कविश्रेष्ठ चंदकवि लिख गये है कि " चौहान जातीय दुर्लभरायके उत्तराधिकारी लोंठदेव, शिवकी इच्छानुसार ज्येष्ठ मासकी बारहवीं तिथि सोमवारके दिन स्वर्गवासी हुए "।

इतिहासवेत्ता टाडू साहबने फिर लिखा है कि चौहानोंकी स्त्रियाँ आजतक जिन लोंठदेवकी पूजा करती हैं उन्हीं लोंठदेवके चाचा माणिकराय यवनोंके अजमेर पर अधिकार करनेसे, सम्वत् ७४१ मे स्वर्गवासी हुए थे। माणिकराय उस विपत्तिमें पड़कर देवीके वरसे निर्भय होगये, राजपूत कविने यहाँपर इस प्रकार वर्णन किया है, कि माणिकराय निर्दयी शत्रुओंके हाथसे प्राणरक्षा करनेके लिये भाग गये। उस समय शाकम्भरी देवीने दर्शन देकर माणिकरायसे कहा कि हे वत्स ! मैंने तुमको यहाँपर दर्शन दिया, तुम इस स्थानपर अपना राज्य स्थापन करो, आज तुम घोड़े पर सवार होकर जितनी दूरतक जासकोगे उतनी ही दूरतक तुम्हारे राज्यकी सीमाका विस्तार

---

(१) पृथ्वीराज रासोमें इस बातका कहीं भी कोई जिक्र नहीं आया। कहीं अन्यत्र कविचंदने इस विषयमें कुछ लिखा हो तो कह नहीं सकते। मीर रोशन अलीके कारण मुसलमान और चौहानोंके युद्धके विषयमें मीरां समय नामसे एक पद्य पुस्तक और भी है जिसे महा कविचंदवरदाईकृत पृथ्वीराजरासोका एक अंग कहा जाता है क्योंकि उसमें इस घटनाका होना पृथ्वीराजके समयमें वर्णन किया गया है परन्तु यह किसी अन्य कविकी कपोल कल्पना मालूम होती है क्योंकि कन्नौज समयमें उसी घटनाको पृथ्वीराजके परपिताके समयमें होना बतलाया गया है।.

(२) राजपूत कविकी निम्नलिखित कवितासे प्रमाणित होता है कि माणिकराय वास्तवमें संवत् ७४१ में सांभरको गये थे।

(३) बूंदीराज्यवंशावलीमें लिखा है कि देवीने यह वरदान दिया था कि घोड़ेपर चढ़कर तुम जितनी पृथ्वीका परिक्रमा कर आवोगे वह सब चांदीकी होजायगी परन्तु दुर्भाग्यवश—

होगा, परन्तु जवतक तुम यहाँ न लौट आओ तवतक घोड़ेपर चढ़कर जानेके समय कभी पीछा फिर कर न देखना "। "माणिकरायने अपने घोड़ेको अधिक बलशाली और बहुत दूर तक जानेमें समर्थ देखकर देवीकी आज्ञानुसार शीघ्रतासे भ्रमण करना प्रारम्भ किया। कुछही दूर चलनेके पीछे वह देवीकी आज्ञाको भूल गये, जैसे ही उन्होने पीछे फिरकर देखा कि वैसे ही इनको महा आश्चर्य हुआ कि समस्त प्रदेश ऊसर होगया है। रजवाड़ेके विख्यान् लवणहृदकी उत्पत्तिका यही कारण है। माणिकरायने देवीकी आज्ञानुसार उक्त हृदयका नाम शाकम्भरी हृद रक्खा, और उस हृदके निकट ही एक छोटेसे द्वीपमे देवीकी प्रतिष्ठा की। वह प्रतिमा आजतक वहाँ विराजमान है। प्रतिमाका शाकम्भरी नाम विगडते २ इस समय सांभर होगया है "।

माणिकराय जिनको हम उत्तर देशके चौहानोंके आदिपुरुष मानते हैं, उन्होंने समय पर फिर अजमेर पर अधिकार करलिया। उनके अनेक सन्तान उत्पन्न हुई। उनके वंशधरोंने पश्चिम रजवाड़ेमें फैलकर बहुतसी सम्प्रदायोंकी सृष्टि की है, अधिक क्या कहें सिन्धुतक एक २ सम्प्रदायका विस्तार होगया है। खीची, हाड़ा, मोयल, निरवान, भदौरिया, भूरेचा, धनेरिया (धुंधेरिया) और वागड़ेचा इत्यादि समस्त सम्प्रदाय इन्ही माणिकरायसे उत्पन्न हुई हैं। खीची सम्प्रदायने बहुदूरवर्ती दोआव नामक स्थानमे जो सर्वसाधारणमें सिन्धु सागर नामसे विख्यात् है, वहाँ जाकर वास किया, इस देशकी भूमिका परिमाण वेतवासे लेकर सिन्धुतक६८ कोस परिमित है और उनकी राजधानीका नाम खीचीपुर पाटन था। हाड़ा सम्प्रदायने हरियानादेशके मध्यस्थ असि वा हांसी देशको जीतकर वहाँ निवास किया, और एक सम्प्रदाय गोवाल कुंड जो इस समय गोलकुंडा नामसे विदित है वहाँ गई, और अन्तमे वहाँसे चलकर आसेर नामक स्थान पर अधिकार करलिया। मोयलोको नागौरके चारो ओरके देश मिले। भदोरियो को चम्बलके किनारेका एक देश प्राप्त हुआ। वह देश उन्हींके नामके अनुसार भदावर नामसे विदित है, और आजतक वह देश उन्हींके अधीनमे है। धुंधेरियोंने शाहावाद

—माणिकरायने देवीकी आज्ञा भंग करके जो पीछेको देखा तो चांदीके स्थानमें सारी भूमि नमककी होगई थी।

(१) "संवत् सातसौ एकतालिस, मालौत वाली वंश। सांभर आयो तुतिसरस, माणिकराय नरेश॥ टाड् साहवने अपने टीकामें लिखा है "कि दिल्लीमें फीरोजशाहके मकानके निकट इस वंशके एक राजाका स्मृतिस्तंभ है, उसके गात्रमें शाकम्भरी शब्द खुदा हुआ है। सरविलियम जोन्स, मि० कोलब्रुक और कर्नल विलफोर्डने इसमें कितने ही भ्रान्त अनुमान किये है "।

(२) वंशभास्करके आधारपर लिखित बूंदी राज्य वंशावलीमें लिखा है कि चाहुआणवंशके आदि पुरुषसे १३३ वीं पीढ़ीमें माणिकरायजीका जन्म हुआ। उनके १० पुत्र थे। तीसरे हरीसिंह जीने सिन्धुदेश जीत कर वहां राज्य किया, और उनकी संतानके लोग धुन्धेरिया चाहुआण कह लाये। परन्तु आजकल धुंधोरिये चाहुआण अधिकांश बुन्देलखण्ड और चंवलके किनारे मालवेमें ही अधिक पाये जाते हैं। बुन्देलखण्डके धुंधेरिये धंधेरे नामसे प्रसिद्ध है और उनका व्यवहार बुन्देलोंमें है (पर यह भी तो होसकता है कि सिन्ध पर मुसलमानी आक्रमण होनेके समय ही ये लोग वहांसे भगाकर शाहावादमें आ रहे हों)।

नामक स्थानमें जाकर निवास किया, परन्तु समयके फेरसे वह देश कोटेकी हाड़ा सम्प्रदायके हस्तगत होगया, और एक सम्प्रदायने नारोलमें निवास किया, परन्तु उनका चौहान नाम कभी भी परिवर्तित नहीं हुआ।

टाड् साहब लिखते हैं कि इस वंशके बहुतसे वीर पुरुष मरुक्षेत्रके अनेक स्थानोंमें फैल गये थे। अनेक स्थानोंमें उन्होंने अपने २ बाहुबलसे देशोंपर अधिकार करनेके साथही साथ स्वाधीनता संभोग की थी, और बहुतसे अपनी अपेक्षा बलवान् स्वजातियोंके अधीनके देशोंको शासन करनेमें नियुक्त हुए। उनका इतिहास विशेष प्रयोजनीय होनेपर भी यहाँ उसका प्रकाश करना अप्रसंगिक विचारा गया है। जागा ग्रन्थमें माणिकरायसे बीसलदेव तक ग्यारह राजाओंके नाम लिखे हैं। उन ग्यारहोंमेंसे हर्षराजके विषयका उल्लेख करनेका इस स्थानपर विशेष प्रयोजन है,कारण कि उक्त जागा ग्रन्थमें तथा हमीररासा ग्रंथमें हर्षराजके विशेष बल विक्रमकी कहानी ऊंची प्रशंसाके साथ वर्णन की गई है। वीरश्रेष्ठ हर्षराजका आधिपत्य अरवलीके शिखरसे आबूके शिखर तक तथा पूर्वमें चम्बल तक विस्तारित था। उन्होंने सम्वत् ८१२से८२७ तक हिजरी १३८से १५३ तक राज्यशासन किया। यह रणभूमिमें शत्रुओंका संहार करके " अरिमर्दनकी उपाधि प्राप्त कर अन्तमें रणभूमिमें ही मारे गये। तवारीख फरिस्तामें लिखा है कि सन् १४३ हिजिरीमें मुसल्मानोंकी संख्या अधिकतासे बढ़ गई थी। उन्होंने पर्वतों परसे उतरकर किरमान,पेशावर और और भी आसपासके सभी देशोंपर अपना अधिकार करलिया। अजमेरके राजाके स्ववंशीय लाहौरके राजाने उक्त अफगानोंके विरुद्धमें

---

(१) कर्नल टाड् साहबने टीकामें लिखा है, कि नाडोल एक समय अत्यन्त समृद्धिशाली देश था, स्थानीय इतिहास और उक्त देशकी तांबेकी अनुशासन पत्रावलीसे इसका प्रमाण मिला है। आठवीं शताब्दीमें उक्त राज्यकी प्रतिष्ठाके समयसे बारहवीं शताब्दीतक उस देशके पतन समयके मध्यमें वहांके सिंहासन पर संवत् १०३९ सन् ९८३ ईसवी में राव लाखनसी विराजमान थे, उन्होंने नहरवालाके अधीश्वरके साथ घोर विक्रम प्रकाश करके युद्ध किया। निम्नलिखित कविता उस भावको प्रकाश करती है।

संवत् दश सौ उनचालीस, वारद्खोता पाटन।
दानचौहान अगावी, मेवाड़दानी दण्डभारे॥
तिसवार राव लक्ष्मण थप्पी, जो आरंभै सो कारे।

इसका अर्थ यह है कि संवत् १०३९ मे पाटन नगरके शेष तोरनद्वारमें चौहानराजने वाणिज्य शुल्क संग्रह किया और मेवाड़पतिसे भी उन्होंने कर ग्रहण किया। उनके मनमें जो अभिलाषा होती उसको पूर्ण करनेमें वह समर्थ होते।

सुल्तुकतगीन और उसके पुत्र महमूदने लक्ष्मणके शासनकालमें नाडोलको आक्रमण करके उसे लूटा और किलेको विध्वंस कर दिया, किन्तु समय पर नाडोलराजने फिर अपने लुप्त प्रतापको संग्रह कर लिया। तेरहवीं शताब्दीमें इस वंशकी बहुतसी सेना अलाउद्दीनके साथ समर करके नष्ट हुई थी, शहाबुद्दीन जिस समय भारत जय करता था, उस समय नाडोलपति भी कर देकर उसके अधीन हुए।

अपने भ्राताको युद्ध करनेके लिये भेजा, उस राजभ्राताके साथ कावुलकी खिलजी और गौरी जातिने उसके साथ मिलकर युद्ध किया, पर पीछे उनको मुसल्मान धर्म स्वीकार करना पड़ा। इतिहासवेत्ता लिखते हैं कि पाँच महीनेके बीचमें सात युद्ध हुए। इसीसे राजपूतगण एकवार ही परास्त होकर भाग गये। परन्तु शीतकालके व्यतीत होते ही राजपूत फिर नवीन सेनादलके साथ पेशावरके मध्यस्थानोंमें आपहुंचे। फिर भयंकर समरानल प्रज्वलित होगई। उस युद्धमें कभी तो राजपूत विजयी होकर मुसल्मानोंको भगा कर कोहिस्थान तक अधिकार करलेते, और किसी समय मुसल्मान नवीन सेनाका संग्रह कर वाणोंके आघतसे उनको फिर भगा देते थे"।

इतिहासवेत्ता टाड् साहव लिखते हैं कि "अजमेरके अधीश्वर स्वयं उन दूरवर्ती देशोंके युद्धमें लिप्त हुए थे या नहीं, राजपूतोंके इतिहाससे यह कुछ नहीं जाना जाता। हमीररासेसे जाना जाता है कि हर्षराजके पीछे दुजगनदेव वा दुर्जदेवने राजमुकुटको अपने शिरपर धारण किया। उनकी अग्रगामी सेनाके डेरे भटनेर तक स्थापित हुए थे। दुजगनदेवने नासिरुद्दीन नामक मुसल्माननेताको युद्धमें परास्त करके उसके, वारह सौ अश्व वलपूर्वक छीन लिये, इसीसे उन्हें "सुल्तानग्राह्" अर्थात् राजाको बंदी करनेवालेकी उपाधि प्राप्त हुई। विख्यात महमूदके पिता सुबुक्तगीनका ही नाम नासिरुद्दीन था, अलप्तगनिके पन्द्रह वर्ष तक शासनके समयमें सुबुक्तगीन क्रमानुसार भारतपर अधिकार करनेके लिये आया।

महात्मा टाड् साहवने अजमेरके अन्यान्य राजाओंके शासन वृत्तान्तको छोड़कर अन्तमें एकवार ही वीसलदेवके शासन समयके इतिहासका वर्णन करना आरम्भ किया है। छोड़ेहुए राजाओंके शासन समयमें केवल मुसल्मानोंके साथ संग्राम हुआ, इसके सिवाय और कोई वृत्तान्त नहीं है, यही उन्होने कहा है अजमेरपति वीसलदेवके सम्बन्धमें टाड् साहवने लिखा है, कि हाड़ा जातिकी कारिकाकारोंके मतके अनुसार वीसलदेवके पिताका नाम धर्मगज था, परन्तु जागाकी कारिकामें वीर वेलनदेव लिखा गया है। इससे ऐसा वोध होता है कि उनका वीरवेलनदेव ही यथार्थ नाम था। वह अत्यन्त धार्मिक थे; इसीसे उनको "धर्मगज" की उपाधि मिली थी; दिल्लीके विजयस्तम्भमें जो खोदी हुई लिपि है, उससे भी इसी अनुमानका समर्थन होता है। वीर वीलनदेवके शासन समयमें सुल्तान महमूदने पिछली वारमें भारतवर्षपर आक्रमण किया था। वीलनदेव उस समय दुर्द्धर्ष वलशाली थे, उन्होने विजेता महमूदको एकसाथ ही परास्त कर अजमेरसे भगाकर अतुल यश प्राप्त किया था, परन्तु उस समरमें वह भी स्वयं मारेगये।

वीसलदेवके शासन वृत्तान्तको वर्णन करनेके पहिले इतिहास लेखक टाड् साहवने इस स्थानपर एक चौहान वीर पुरुषकी वीरताकी कहानीको वर्णन किया है। जव सुलतान महमूद पहिली वार भारतको लूटनेको आया, उसी समय इस चौहान

(१) महमूद गजनवी जिसने सन् १०१० ई० से सन् १०२४ तक हिन्दुस्तान पर वारह हमले किये और कादातिक मुसल्मानी दीनका प्रभाव डाला था। महमूद गजनवीके वारह हमले हिन्दुस्तानके इतिहासमें प्रसिद्ध हैं।

वीरने महा वीरता प्रकाश करके अपने नामको अक्षय किया था। टाड् साहबने लिखा है कि विख्यात् चौहान राजा वाचाके गोगा नामवाला एक पुत्र था। उस राजा गोगाने सतलजसे हरियानेतकके विस्तारित्त देशोंके समस्त "जांगल देश" को शासन किया। सतलजके किनारे महलावा "गोगाकी मैडी" नामकी उसकी राजधानी थी। वीरश्रेष्ठ गोगाने सुलतान महमूदके करालग्राससे अपनी राजधानीकी रक्षाके लिये भयंकर युद्धसागरमें निमग्न हो अतुलनीय वीरता प्रकाश करके पीछे अपने ४५ पुत्र और ६० भतीजोंके साथ उस युद्धमें प्राण त्यागन किये। रविवार नौमी तिथिमें गोगाने इस चिरस्मरणीय लीलाको समाप्त किया था, समस्त राजस्थानकी छत्तीस राजपूत संप्रदाय उस तिथिको परम पवित्र जानकर गोगाके समाधिमंदिरमें इकट्ठे होते है, विशेष करके मरुक्षेत्रके निवासियोंने गोगाको सबसे अधिक भक्तिके साथ स्मरण किया है। मरुस्थलीमें "गोगाका थल" आजतक विराजमान है। गोगाके "जवादिया" नामका रणाश्व था, इसीसे राजपूत अपने २ पराक्रान्त समरके घोड़ोंको आजतक 'जवादिया' नामसे पुकारते है।

साधु टाड् साहबने ऐसा अनुमान किया है, "कि यह सम्भव होसकता है कि महमूदके शेष भारतको जयकरनेके समय उक्त युद्ध हुआ हो, उस समय महमूद सुलतान बराबर मरुक्षेत्रमे होकर अपनी सेनाको लेगया होगा। महमूदके अजमेर पर आक्रमण करते ही चौहानराज उस स्थानको छोड़कर भाग गये, यवनोंकी सेनाने अजमेर और उसके आसपासके सभी देशोंको लूट कर विध्वंस करदिया। परन्तु राजपूतराजने प्रबल पराक्रमके साथ गढ़बीठली नामक किलेकी रक्षाकी। उसीसे महमूद परास्त और घायल होकर अन्य चौहानराजके अधिकारी नाडोलको भाग गया, परन्तु भागनेके समय महमूदने नाडौलको लूटकर समभूमि कर नहरवाला

---

(१) कर्नेल टाड् साहब अपने टीकामें लिखते हैं कि राजपूत इतिहासलेखकने कहाहै कि गोगाके पहिले एक भी पुत्र नहीं था इस लिये वह अत्यन्त दुःखित होकर समय व्यतीत करते थे। एक समय उनकी कुलदेवीने प्रसन्न होकर गोगाको दो जव प्रदान किये, गोगाने उनमेंसे एक जव अपनी रानीको और दूसरा अपनी घोड़ीको दिया, उस जवके खानेसे युक्त घोड़ीने एक बछेड़ा दिया। जव खानेसे उत्पन्न होनेके कारण गोगाने उस बछेड़ेका नाम "जवादिया" रक्खा। उदयपुरके राणाने ग्रंथकारको (कर्नेल टाड्को) काठियावारका एक रणास्व उपहारमे दिया था, उसका नाम भी जवादिया था। यद्यपि वह घोड़ा देखनेमें बिलकुल सीधा सादा था, परन्तु सवारी होने पर वह अपनी प्रचंड शक्तिको भली भाँतिसे प्रकाश करना जानता था। इस समय शिक्षित अश्व दिखाई नहीं देते। टाड् महोदय उस जवादिया और मृगराज नाम एक अश्वको अपने देशमे लेजानेके लिये उदयपुरसे समुद्रके किनारे तक लेआये, परन्तु समुद्रकी यात्राके समय घोर अनिष्ट होनेकी आशकासे उन्होंने मृगराजको एक मित्रको उपहारमें भेज दिया, और जवादियाको छः सौ मील मार्गकी दूसरीसे उदयपुरके राणाके पास यह कहकर भेजा कि दशहरा अर्थात् विजयादशमी तिथिको जो रणोत्सव होता है उस उत्सवमें इस जवादियाकी सबसे पहिले पूजा कीजाय। यह मैं (ग्रन्थकार) आशा करता हूँ राणाने उनकी इस आज्ञाको पालन किया होगा।

राज्यपर अधिकार करलिया। सुलतान महमूदने अधिकारी देशोंके निवासियोके ऊपर घोर अत्याचार करने प्रारम्भ किये,इससे सभी जातियां इसके विपरीत होगई;तब महमूद प्राणोंके भयसे मरुक्षेत्रके पश्चिम ओर होकर समुद्रकी उपत्यकाकी ओरको भागा।

दिल्लीपति पृथ्वीराजके सर्व प्रधान कवि चंदवरदाईने अपन विख्यात् रासाकाव्यमे राजा वीसलदेवकी वीरताकी कथाको भली भाँतिसे वर्णन किया है।—

कविचन्दने वीसलदेवका शासन समय सम्वत् ९२१ मे लिखा है परन्तु महात्मा टाड् साहब उसे भ्रान्त कहते हैं।

वीसलदेव उस समयके हिन्दू राजाओंके सर्वप्रधान नेतारूपसे माने जाते थे। कविचन्दने लिखा है; कि "वीसलदेवको हिन्दू जातिके नेता जानकर यवन लुटेरे महमूदके साथ युद्ध करनेके लिये आये राजाओंने उनके अधीनमे सेना सहित गमन किया था। उस समय राजाओंमे एकमात्र अनहलवाड़ेके चालुक्य राजाके अतिरिक्त और सभी राजा उस जातीय महासमितिमें गये थे, अनहलवाड़ेके अधिपति वीसलदेवके अधीनमे कौन २ राजा सेना सहित आये थे, सो कविचन्दके लिखे हुए काव्यमे भलीभाँतिसे इसका वर्णन हुआ है।

कविकुल केसरीचंदवरदाईने लिखा है कि "जयतके हाथमें वीसलदेवने अजमेरकी रक्षाका भार अर्पण करके कहा कि "मैंने आपको विश्वास पालनके ऊपर निर्भर किया। अनहलवाडेका राजा चालुक्य भागकर कहा जायगा?" वीसलदेवने यह कहकर अपनी सेनाके साथ अजमेरनगरीको छोड़दिया और वीसलताले नामक सरोवरके किनारे जाकर वहाँ डेरे स्थापन कर अनुमत और ऋणिराजाओंको सेना सहित शीघ्र इकट्ठे होनेके लिये भेजा। मोहनसी मण्डोरके पड़िहारने सेनादलके साथ आकर उनके चरणोंकी वंदनाकी। इसके पीछे वीरोंके अलंकारस्वरूप गहिलोत एवं तुंवारके (१) साथ पावासरके, एवं मेवातके अधीश्वरके मेवके (२) साथ गौडजातिके राम (३)

---

(१) यद्यपि वीसलदेवने सहस्र वर्ष पहिले यह बहुत बड़ा सरोवर तैयार करवाया था, परन्तु आजतक यह वीसलताल नामसे विख्यात् है। बादशाह जहाँगीरने इस "वीस ताल" के किनारे एक बड़ाभारी मकान बनवाया था, और इगलैंडराज प्रथम जेमसके भेजेहुए दूतको उन्होंने इसी महलमें ग्रहण किया था।

(२) इससे जाना जाता है कि पडिहारजाति अजमेरके चौहान अधीश्वरोंके अधीनमें थी।

(३) चंदकविने चीतोड़के महाराजको "वीरेन्द्रोंका अलंकार" कहकर उल्लेख किया है। यह गहिलोत जाति चीतोड़राज अजमेरपतिके समीप मित्ररूपसे सेना सहित यवनोके विरुद्धमें आये थे। कर्नल टाड् साहब लिखते है कि वीसलदेवके साथ चीतौडके महाराज तेजसिंहका जिस प्रकारसे मित्रता मूलक सम्मिलन हुआ है, बारहवीं शताब्दीमें उसी प्रकार वीसलदेवके वंशधर दिल्लीके महाराज पृथ्वीराजके साथ तेजसिंहके पौत्र समरसिंहका संमिलन हुआ था, तथा दोनों महाराजोंने उसी प्रकार सेना सहित अनहलवाड़ेके अधीश्वरके विरुद्ध युद्ध किया था। कर्नल टाड् साहब लिखते हैं कि उक्त तेजसिंह संवद् ११२० (सन् १०६४ई०) मे चीतोड़के राजसिंहासन पर विराजमान हुए, वे वीसलदेवके साथ मिलकर यवनोंके साथ युद्धमें मारे गये। कविचंदकी एक सूचीमे उदयादित्यके नामका उल्लेख पाया जाता है। कर्नल टाड् साहबने उक्त तौंबेके—

उपस्थित हुए। द्रोनपुरके मोयल (४) ने अधीश्वरके पास करको भेज कर उपस्थित न होनेके कारण क्षमा माँग भेजी। वाल्लोच राज (५) ने हाथ जोड़कर दर्शन दिया। वामनीके अधीश्वर (६) सिन्धुको छोड़कर वहाँ आये। पीछे भटनेर (७) से कर, और ठट्टा (८) और मुलतान (९) से नालवनी उपस्थित हुए। देरावरके भूमिया भट्टीगण (१०) वीसलदेवकी आज्ञा पाते ही इकट्ठे होगये। मालनवासके दो जादव (११) भी तुरन्त ही उपस्थित हुए। मोरी (१२) वड़गूजर (१३) अन्तर्वेदके कछवाहे (१४) योग देनेमे शान्त न हुए। मेरगण वीसलदेवके चरणोंकी पूजा करते हुए आये (१५) इसके पीछे जयतके अधीनमें तारुतपुरकी सेना उपस्थित हुई (१६) निरवाण (१७) डोडे (१८) चंदेला (१९) एवं दाहिमाके अधीश्वरोंके (२०) साथ उदय प्रमार आदि राजालोग (२१) घोड़ो पर चढ़चढ़ कर शीघ्रतासे आ पहुचे।

—अनुशासन पत्रोंको देखकर उनका जो समय स्थिर किया है वह रायल एसियाटिकसोसाइटीके १ वाल्यूमके ३२३ पृष्ठमें प्रकाश होचुका है।

(१) टाड् साहवने ऐसा अनुमान किया है कि यह तूवर राज अवश्य ही दिल्लीके तुंवर सम्राट्के अधीनके कोई राजा होंगे।

(२) मेवातके मेवजातिका विषय सर्वत्र विख्यात है, इस जातिने पीछे मुसल्मानी धर्म ग्रहण किया था।

(३) गौड़जाति विशेष प्रसिद्ध थी, और चौहानके करद राजाओंमें महार्चार गिनी जाती थी।

(४) मोयलोंका विषय भलीभाँतिसे कहा गया है।

(५) टाड् साहवने कहा है कि इस वल्लोचजातिने पीछे मुसल्मान धर्म ग्रहण किया है।

(६) वामनी देशका अन्यत्र वा मनवासा नाम कहा गया है, इसका मूल नाम ब्राह्मणवाद, वा देवल था। उसी स्थानपर ठट्टा नगर स्थापित है।

(७) जयसलमेरके इतिहासको देखो।

(८-९) उक्तदेशके सोढा समा और सोमरा इत्यादि जातिके ऊपर चौहान अधिकार करते थे,

(१०) इसका विषय यथास्थान पर पहिले ही वर्णन हो चुका है।

(११) मलनवास कहां था टाड् साहव इसको नहीं जान सके।

(१२-१३-१४) पाठकोंको इसका वर्णन यथास्थान विदित हो चुका है।

(१५) मेरगण आड़ावलाके शिखर पर निवास करते थे।

(१६) इस स्थानका वर्तमान नाम टोंटा है, यह टोंकके निकट स्थापित है, इस स्थान पर अनेक प्राचीन कीर्तिस्तंभ विराजमान हैं।

(१७) शेखावाटीके इतिहाससे जाना जाता है कि निरवाण अजमेरके महाराजाओंको कर देते थे।

(१८-१९) डोड एवं चन्देल जाति प्रसिद्ध है। चन्देलोंने एक समय पर पृथ्वीराजके साथ युद्ध किया था। पृथ्वीराजने उनसे महोवा और कालिंजर तथा समस्त बुन्देलखंड छीनकर अपना अधिकार करलिया था।

(२०) दाहिमा वियानाके अधीश्वरका नाम है। वह धरणीधर नामसे भी पुकारे जाते थे।

(२१) उदयादित्यने समस्त भारतवर्षमे विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की थी।

चँदकवि भारतवर्षके शेष चौहान राजा पृथ्वीराजकी सभामे "राजकवि" थे। उनके रचेहुए प्रसिद्ध काव्यमे पृथ्वीराजके गुण भलीभाँतिसे परिपूर्ण हैं। कविचंदने पृथ्वीराजके पूर्व पुरुषोंकी नामावली और कारिकाको प्रकाश करके उक्त सूचीको सवसे पहिले संग्रह किया था। अत्यन्त प्राचीनकालके कवियोंके ग्रन्थोंसे कविचंद इत्यादिने राजपूत कवियोंके उक्त श्रेणीके जिन इतिहासोंको उद्धृत किया है, वह सब राजपूतानेके प्राचीनकालके राजाओंके वंशकी सूचीके निर्णय करनेमे विशेष सुभीता देनेवाले हैं।

कर्नल टाड् साहव कहते हैं कि मेवाड़के अत्यन्त प्राचीनकालके एक इतिहास मूलक काव्यसे उक्त प्रमार वंशकी कारिकाको उद्धृत कर मुसल्मानोंके आक्रमणके वृत्तान्तको उद्धृत किया है। महात्मा टाड् साहवने इसके पीछे माणिकरायसे चौहान सम्राट् पृथ्वीराजतकके जिन प्रधान २ राजाओंके नाम लिखे हैं, उनमे सवसे अधिक तेजस्वी वीर वीसलदेवके समयका निर्णय करना इस स्थानपर विशेष प्रयोजनीय हुआ है। उन्होंने सवसे पहिले आनलसे लेकर लाखनसीतककी जो सूची प्रकाश की है हमने यहां पर उसीको ग्रहण किया है।

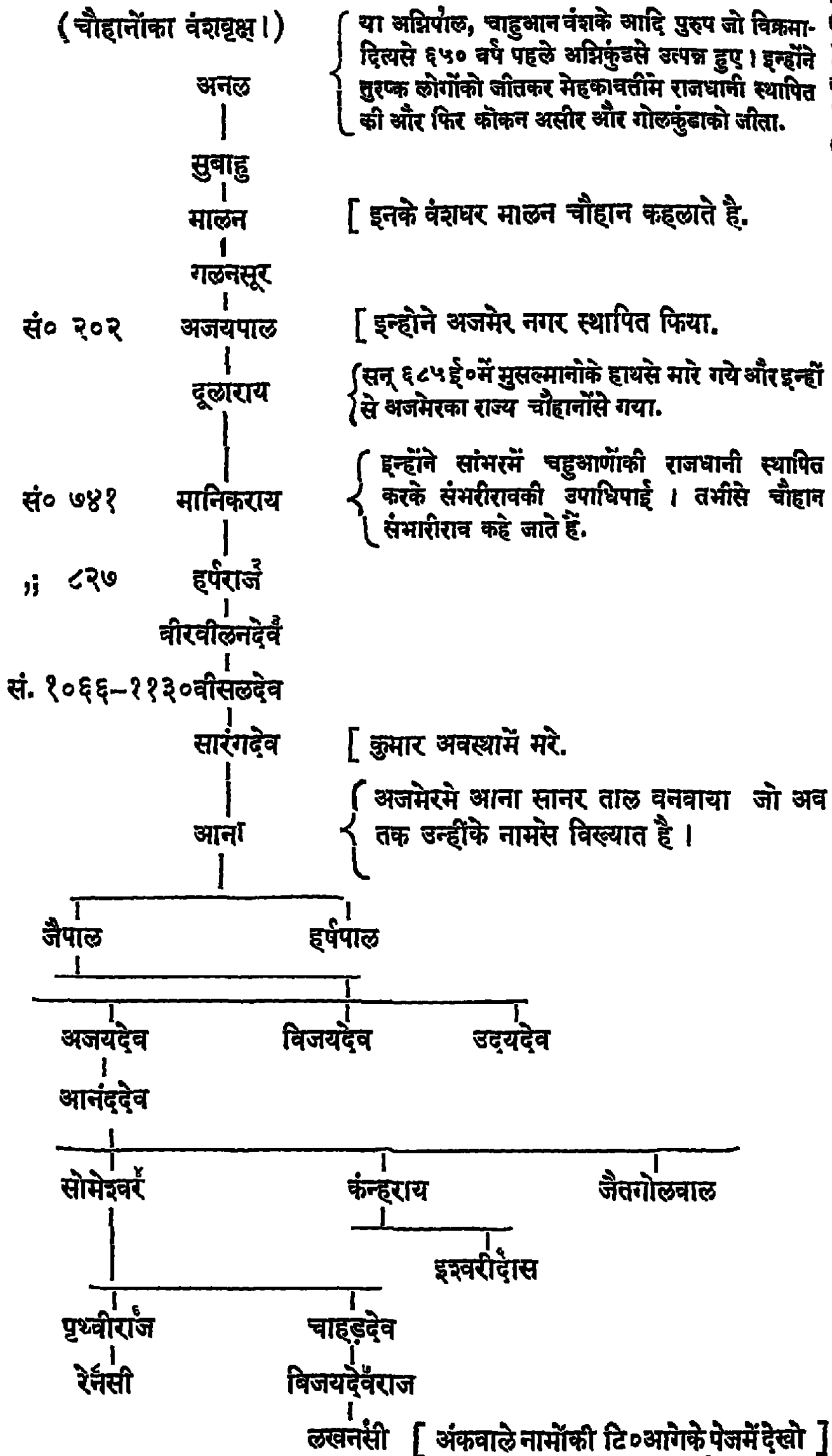
महाकविचदने वीसलदेवके शासनका समय ९२१ लिखा है परन्तु टाड् साहवने इसको उनकी भूल कहकर इस स्थानपर अनेक प्रमाणोंका प्रयोग कर सिद्ध किया है कि वीसलदेवने सम्वत् १०६६ से ११३० तक राज्य किया, इसके सम्वन्धमें उन्होंने जिन युक्तियोंका प्रयोग किया है हमने सवसे पहिले उन्हींको प्रकाशित किया है। चंद-कविने अपने ग्रथमे लिखा है कि चौहानराज वीसलदेवकी वीरताके स्मरण करनेके निमित्त निगमवोध स्थानमे एक कीर्तिस्तंभ स्थापित किया गया था। टाड् साहव कहते हैं यह निगम वोध दिल्लीसे थोड़ी दूर यमुनाके किनारे है। उन्होंने कहा कि "दिल्लीके फीरो-जशाहके महलके सम्मुख जो विख्यात् कीर्तिस्तभकी चोटी पर विशालदेव वा वीसलदेव का नाम खुदा हुआ है, यही स्तंभ कवि श्रेष्ठ चन्द लिखित निगम्वोध नामक स्थानका कीर्तिस्तंभ है, यह अवश्य ही उस निगमवोधसे उखाड़कर इस स्थानपर स्थापित कियो गया है।

---

(१) यहापर कविचंदका भ्रम नहीं है वरन टाड् साहवका स्वयं भ्रम नाश नहीं हुआ है। वह ९२१ नहीं संवत् ९३१ है उसमें यदि ९१ जोडे जायं तो १०२२ होते हैं और यह संवद् वीसलदेवजीके पाट बैठनेका है रासोमें आगे लिखा है कि "चौसठि वरस वर राज कीन" इससे १०२२ में ६४ जोड़ देनेसे वीसलदेवजीका समाप्तिकाल १०८६ निश्चित होता है।

मूल संवतमें ९१ जोड़नेसे यह मतलव है कि पृथ्वीराज रासोमें जितने संवद दिये हैं वे अमन्द शक हे यथा एकादशसं पंचदह, विक्रम शाक आनद (१००-९-९१)

(२) एसियाटिकरिसर्चेज पहिला वालम ३७९ पृष्ट और ७ वालम् १८० पृष्ट और पहिलावालस् ४५३ पृष्ट, कर्नल टाड् साहवने इसके सम्बन्धमें जो मन्तव्य प्रकाश किया है वह देखने योग्य है।


(चौहानोंका वंशवृक्ष ।)
अनल
{ या अग्निपाल, चाहुआन वंशके आदि पुरुष जो विक्रमादित्यसे ६५० वर्ष पहले अग्निकुंडसे उत्पन्न हुए। इन्होंने तुरुष्क लोगोंको जीतकर मेहकावतीमें राजधानी स्थापित की और फिर कोकन असीर और गोलकुंडाको जीता.
सुबाहु
मालन
[इनके वंशधर मालन चौहान कहलाते है.
गलनसूर
सं० २०२　अजयपाल
[इन्होने अजमेर नगर स्थापित किया.
दूलाराय
{ सन् ६८५ ई०में मुसल्मानोके हाथसे मारे गये और इन्हीं से अजमेरका राज्य चौहानोंसे गया.
सं० ७४१　मानिकराय
{ इन्होंने सांभरमें चहुआणोंकी राजधानी स्थापित करके संभरीरावकी उपाधिपाई । तभीसे चौहान संभारीराव कहे जाते हैं.
;; ८२७　हर्षराज२
वीरवीलनदेव३
सं. १०६६-११३०वीसलदेव
सारंगदेव
[कुमार अवस्थामें मरे.
आर्ना
{ अजमेरमे आना सानर ताल वनवाया जो अव तक उन्हींके नामसे विख्यात है ।
जैपाल
हर्षपाल
अजयदेव
विजयदेव
उदयदेव
आनंददेव
सोमेश्वर४
कंन्हराय
जैतगोलवाल
इश्वरीदास
पृथ्वीराज६
चाहड़देव
रेनसी
विजयदेव५राज
लखनसी
[अंकवाले नामोंकी टि०आगेके पेजमें देखो]

इतिहासवेत्ता टाड् साहब फिर लिखते हैं कि "उक्त कीर्तिस्तंभके गात्रमे अंकित श्लोकके पहिले और अंतमे एक प्रकारका सन् और तारीख लिखी गई है, यथा–१५वैशाख संवत् १२२० यदि अनुलिपि शुद्ध है तो वीसलदेवके साथ इसका कोई संसर्ग नहीं। केवल इतना ही संसर्ग है कि विशालदेव (वीसलदेव) चौहान तिलक शाकम्भरी पृथ्वीराजे भूपतिके आदि पुरुष थे, पृथ्वीराजने संवत१२२०मे दिल्ली को शासन किया, और संवत् १२४९ मे मारे गये। दूसरी कविताकी ओर देखनेसे हम अवश्य ही इस स्मृतिस्तंभके गात्रमे प्रथम जो समय अंकित हुआ है, उसको भ्रामक कह सकते हैं। संवत् १२२० के बदलेमें संवत् ११२० पढना न्याय सिद्ध है, और उसी समय ही वीसलदेवनें आर्यावर्तसे यवनोको भगाया था, संस्कृत भाषामे एक दो अंक प्रायः एकसे हैं, इसी लिये सरलतासे भूल होनेकी संभावना है। परन्तु अन्य पक्षमे यदि यह निश्चय हुआ कि सवत् १२२० है, ऐसा माना जाय तो यह केवल चौहानपति पृथ्वीराजके स्मरणका स्तंभमात्र है"।

वीसलदेवसे पृथ्वीराजके शासनसमयके मध्यमे और भी छ.राजाओके नाम लिखे हैं। स्तंभके गात्रमे प्रथम जो कविता वर्णन की गई है ऐसा बोध होता है कि वह पृथ्वीराजके पूर्व पुरुषोने वीसलदेवके नामके उल्लेखके लिये ही वर्णन की है और उस पर खुदी हुई तारीख भ्रमवश ठीक नहीं लिखी गई"।

इसके पीछे इतिहासवेत्ता टाड् साहब लिखते है, कि "हमारी समझमे पहिले कवितामें (वीसलदेव) विशालदेवके सम्बन्धमे लिखा है, और दूसरीमे उनके वंशधर

---

(१) अग्निपाल प्रमार कुलके आदिपुरुषका नाम था। चाहुआण कुलके आदि पुरुषका नाम चतुर्बाहुमानजी या चुहाणजी था। इसके बाद जो सुबाहु और गिलनसूर दो नाम दिये हैं वे भी गलत हैं। इसमें रासोके आधार पर नाम लिखे गये हैं पर रासोके छन्द समझमें न आनेसे ऐसा हुआ है। यह कारिका न तो रासासे ठीक मिलता है न वंशभास्करके आधारपर बनी हुई बूँदी राज वंशावलीसे मिलती है। (२) इन्होंने नाजिमुद्दीन या सुबक्त दीनको शिकस्तदी। (३) महमूद गजनवीके विरुद्ध अजमेरकी रक्षामे मारे गये। इनका दूसरा नाम धर्म गज भी है। (४) दिल्लीके तूंअर राजा अनंगपालकी बेटी रूकाबाईसे व्याह किया। (५) इन्होंने दिल्लीका राज्य प्राप्त किया और सन् ११९३ में शहाबुद्दीनके द्वारा मारे गये। (६) मुसल्मान होगये। (७) दिल्लीकी रक्षामें काम आये। (८) पृथ्वीराजके दत्तक पुत्र इनका नाम दिल्लीके एक स्तूपपर खुदा हुआ है। (९) लखनसीके २२ पुत्र हुए जिनमें ७ असली थे, उनसे चाहुवाणोंके सात वंश प्रख्यात हुए, नीम राणाके सरदार नन्दसिंह उक्त लखनसीसे २६ वी पीढीमें हैं यही अजैपाल या पृथ्वीराजके मूलवंशधर है।

(१) कर्नेल टाड् साहब लिखते हैं कि "चौहानराजका आदि वासस्थान हासी, वा असि था। इस स्थानके ध्वंसावशेषसे संवत् १२२४ की खुदी हुई अनेक अनुशासन लिपियोंको संग्रह किया था।" इसके सम्बन्धमें टाड्ने रायल एसियाटिकसोसाइटीके पहिले वाल्यूमके १३३ पृष्ठमें जो कुछ लिखा है वह द्रष्टव्य है।

(२) प्राचीन नाम विशालदेव ही ठीक मालूम होता है और वीसलदेव उसका अपभ्रंश मात्र है।

पृथ्वीराजके सम्बन्धमें लिखा है। ऐसा विदित होता है कि पृथ्वीराजने अपने पूर्वपुरुष वीसलदेवके वार्षिक जयोत्सवके समयमे उक्त स्मरण स्तंभमें अपनी कीर्तिकी कविताको अंकित करवाया था। पृथ्वीराजने अवश्य ही वीसलदेवकी समान भारतवर्षमे यवनोंको अपने बलविक्रमसे बारम्बार परास्त किया। अधिक क्या कहैं यवन इतिहासवेत्तागणोंने स्पष्ट ही लिखा है कि उत्तर भारतवर्षको सब प्रकारसे जय करनेके पहिले शहाबुद्दीन बारम्बार युद्धमें परास्त हुए थे"।

"मै जिस प्रकारका अनुमान करता हूँ कि यही प्रथम कविता वीसलदेवके सम्बन्धमें लिखी गई है, और वीसलदेवने सम्वत् ११२० सन् १०६४ ई०मे कविचंदके द्वारा लिखेहुए मतसे यवनोंको भगानेके लिये बहुतसे वीरोंको इकट्ठा किया था, और उसी घटनाके स्मरणके लिये उक्त स्तंभ स्थापित हुआ है"।

वीसलदेवके अधीन जो राजा सेनासहित इकट्ठे हुए थे कविचंदके ग्रन्थोंमें उनकी नामावली प्रकाश की गई है; उनमेसे चार राजाओंके समयका निर्णय हुआ है, पर हम प्रत्यक्षरूपसे एक ही नामके समयको यथार्थ निर्णय कर सकते है, और तीन नाम समयके निश्चय करनेके पक्षमें अप्रत्यक्षतामें सहायता करते है। पहिले राजा भोजके पुत्र धारनगरके अधीश्वर प्रमार उदयादित्य थे। मैंने बहुतसे ताम्रानुशासने लिपियोसे प्रमाणितकिया है कि उदया दित्य ११०० संवत ११४० के मध्यमे थे, इस कारण उदयादित्य जिस समय वीसलदेवके साथ सेना सहित आये थे वह उसके शासनके समय थे। और भी दो अप्रत्यक्ष अथवा प्रबल प्रमाण हैं—

प्रथम 'देरावरके भूमियाभट्टी लोग आये' ऐसा लिखा है। कविचंदकी उक्तिसे ही यह प्रमाण सिद्ध हुआ। तथा भाटियोंकी वर्तमान राजधानी जयसलमेरका उल्लेख भी दृष्टि गत हुआ है।

द्वियीय–यमुना और गंगाजीके मध्यवर्ती अन्तरवेदसे कछवाहे आये, ऐसा लिखा गया है। कारण कि नरवरसे कछवाहोंने आमेरमे जो राजधानी स्थापन की थी वह इस समय प्रसिद्ध नहीं हुई थी।

तीसरा प्रमाण–मेवाड़की खुदीहुई अनुशासनालिपि। उन अनुशासन पत्रोमे अंकित हुई है, समरसिंहके पितामह तेजसिंह वीसलदेवके मित्र थे। ऐसा जाना जाता है कि वीसलदेव ६४ वर्षतक जीवित रहे। यदि ऐसा अनुमान कियाजाय कि उक्त संवत ११२० उनके शासनका मध्य समय था, तो यह स्थिर किया जाता है कि वह संवत् १०८८ से संवत् ११५२ तक अर्थात् १०३२ ई० से १०९६ ई० तक जीवित थे, किन्तु जब यह प्रकाश हो चुका है कि वीसलदेवके पिता धर्मगज वा वीर वीलनदेव, हमीर रासाग्रन्थमें इनका नाम मालनदेव लिखा है, महमूदके शेष आक्रमणके समय अजमेरकी रक्षामें मारे गये, तब अवश्य ही वीसलदेवके जन्मका समय (उक्त

(१) टाड् साहबने वीसलदेव और विशालदेव दोनों ही नाम लिखे हैं।

युद्धके समय वह बालक थे ऐसा अनुमान होसकता है, और भी दश वर्ष पहिले अर्थात् संवत् १०७८ निश्चित होता है"।

इसके पीछे टाड साहब कहते हैं कि "वीसलदेव दिल्लीके तुंअर राजा जयपाल, गुजरातके राजा दुर्लभ और भीम, धारके दोनों अधीश्वर भोज और उदयादित्य, मेवाड़के दोनो महाराणा पद्मसिंह और तेजसीके समसामयिक थे, और वह जो प्रबल-सेनादलके नेतारूपसे यवनोंके विरुद्धमे खड़ेहुए वह यवननेता अवश्य ही महमूद था। वीसलदेवने उस महमूदको राजपूतानके उत्तरांशसे निकाल दिया था, तभीसे आर्यावर्तमें फिर आर्यधर्मकी रक्षा हुई। महमूद पिछली वार भारतवर्षसे सिन्धुदेशको भागा और उसके विरुद्धमे जो वीरमदेव अजमेरके अधीश्वरोंके साथ मिलकर उनके विरुद्धमे खड़े हुए वह युद्ध हिजरी ४१७ सन् १०२६ ईसवी वा सम्वत् १०८२ में हुआ। परन्तु चँदकवि लिखते है कि संवत् १०८६ मे हुआ था"।

इतिहासवेत्ता फिर लिखते हैं कि वीसलदेवने गुजरात राजके विरुद्धमें समर उपस्थित कर उसमे जो जय प्राप्त की थी, और अपने बाहुबलसे शत्रुओके साथ जिस स्थान पर विजय प्राप्त की थी, उस स्थान पर जयचिह्नस्वरूप वीसलनगर की प्रतिष्ठा की, हम उसे इस स्थान पर विस्तारसहित वर्णन करते परन्तु जगत्विख्यात् पृथ्वी-राजके शासन-वर्णनके समय उस सबका वर्णन किया जायगा, इसीसे यहाँ उस प्रसंगको नही कहते। कालिक जुहनेर स्थानमे जो वीसलदेवका धोंध अर्थात् तपस्या का स्थान था उसके विषयमें हमारे पाठक इतिहासके कितने ही स्थानोंमें पढ़ चुके होगे।

हाडाजातिके राजकवि गोविन्दरामके बनाये हुए "राजग्रन्थ" मे लिखा है कि वीसलदेवके पुत्र अनुराजसे हाड़ाजातिकी उत्पत्ति है। परन्तु खीची राजवंशके कवि मगजीने अपने ग्रंथमे लिखा है कि अनुराज माणिकरायके पुत्र थे और वह खीची वंशके आदिपुरुष थे। हाड़ा कविने गोविन्दरामका अनुसरण किया होगा।

गोविन्दराम कहते है कि अनुराजको सीमान्तवर्ती असि (सर्वसाधारणमें विख्यात हाँसी) नामक देशका अधिकार प्राप्त हुआ था। अनुराजके पुत्र अस्थिपाल एवं सिन्धुसागर देशके अन्तर्गत खीचीपुर पाटनके आदि प्रतिष्ठाता और अजयराजके पुत्र अगनराज दोनों मिलकर अपने सौभाग्यके उपार्ज्जनकी इच्छासे गोलकुंडाके चौहान-राज रणधीरके अधीनमे नियुक्त होनेके लिये सजे। परन्तु दुर्भाग्यसे इस समय कजलीवनके बर्बरोंने एकसाथ ही असि और गोलकुंडापर आक्रमण किया। उस समय चौहानराज रणधीरने पुत्रोके साथ असीम बलविक्रम प्रकाश करके रणक्षेत्रमे प्राण त्याग किये। उनके वंशमें केवल एकमात्र सूराबाई एक कन्या प्राणरक्षामें समर्थ होकर शत्रुओके हाथसे अपनी रक्षा करनेके लिये गोलकुंडाको छोड़ कर आश्रयके निमित्त असिकी ओरको भागगई। परन्तु उक्त वनवासी बर्बरोंने इस समय उस असिप्रदेश पर भी महाविक्रम प्रकाश करके आक्रमण किया। शत्रुओंके आगमनका समाचार पाते ही असिपति अनुराज भी भाग गये, परन्तु उनके उक्त पुत्रोने शत्रुओंके आक्रमणकी

प्रतीक्षा न करके वीरपुरुषोंकी समान असीम साहससे आगे बढ़ सेना सहित उन पर आक्रमण किया। भयंकर समरानल प्रज्वलित हो गयी, उस घोर युद्धमें शत्रुपक्षके नेता अस्थिपाल अस्त्रोंके आघातसे घायल हुए, तुरन्त ही शत्रुओंकी सेना प्राणोंके भयसे भागने लगी यह क्षत विक्षत देह उस शत्रुओंकी सेनादलके पीछे २ चले। परन्तु बहुत दूर चलनेके पीछे मार्गमें ही अचेतन होकर गिर गये। इस ओर सूरावाई भी आश्रय पानेके लिये इकली असिकी ओरको चली, अंतमें थकित होकर मार्गमें ही संज्ञा हीन (क्षुधा तृष्णासे कातर और जीवनकी आशासे वंचित) होकर एक वृक्षकी जड़के नीचे गिर गई। उस समय सूरावाई अपनी मृत्युको अत्यन्त समीप देख रही थी। जिस समय वह अश्वत्थ वृक्षकी जड़में गिरी थी, उसी समय उस वृक्षके दो खंड होगये और उसमेंसे चौहानोंकी कुलदेवी आशा पूरामाताने वाहर निकल कर उसको दर्शन दिया। देवीका दर्शन पाते ही सूरावाई विचलित हृदयसे नेत्रोंमे जलभर कर देवीके चरणोंमें हृदयको भेदन करनेवाली अपनी विपत्तिको वर्णन करने लगी। कजलीवनके वनवासी वर्वरोंके हाथसे राजधानी गोलकुंडाकी रक्षाके लिये किस प्रकारसे उसके पिता और वारह भ्राता युद्धमें मारेगये और किस प्रकारसे वह इकली भाग कर आई, उसने एक २ करके सभी वातोंको निवेदन किया। तब देवीने उसको अभय देकर कहा, "हे वत्से! अब तुम्हें कुछ भय नहीं है, तुम्हारे स्वजातीय एक चौहान वीरने उस शत्रुपक्षके नेताको अपने हाथसे मार डाला है, और वह वहुत ही समीप स्थित है।" यह कह कर देवी उस सूरावाईको अपने साथ ले, घायल हुए अस्थिपाल जिस स्थान पर अचेत अवस्थामें पडे थे वहां लेगई, देवीके वरसे उनका शरीर ज्योंका त्यों होगया और फिर वल पाकर चैतन्य हो अस्थिपाल अन्तमें चौहानोंके विख्यात पैतृक अभेद्य किले आमेरगढ़को चले गये[1]।

इस स्थान पर कर्नल टाड् साहव लिखते है कि "हाड़ा जातिके आदि पुरुष अस्थिपालको सम्वत् १०८१[2] १०२५ ई० में असिका किला मिला था। अब जाना जाता है कि सुलतान महमूद भारतपर शेष आक्रमण करनेके लिये मुलतान होकर मरुक्षेत्रको मध्यमे, छोड़ अजमेरमें, हिजिरी ४१७, सन् १०२२ ईसवीमे आया था, तव हम अवश्य ही इस वातको स्थिर कर सकते है कि अस्थिपालके पिता अनुराजने गजनीके महमूदके साथ युद्ध करके अपने जीवन और असि नगरको खोदिया था। इसी समयमें मुसल्मान विजेता महमूदने अजमेरको भी विध्वंस किया।

---

(१) टाड् साहव अपने टीकेमें लिखते हैं कि "इस प्रकारकी गप्प प्रचलित हैं कि सूरावाईने अस्थिपालके छिन्नभिन्न हाथ पैर यथास्थान जोड़े और देवीने अभिमंत्रित जल छिड़क कर अस्थिपालको प्राणदान दिया। उक्त प्रकारसे सब हाड़ोंके एकत्र होनेसे अस्थिपालको जीवन प्राप्त हुआ, इसीसे उनके वंशधरोंको हाड़ाकी उपाधि प्राप्त हुई। परन्तु इसीकी अपेक्षा यह भी संभव होसकता है कि उन्होंने असिराज्यको खोदिया था इसीसे हारा नाम प्राप्त हुआ हो।"

(२) हाड़ा जातिके कविने अपने ग्रन्थमें उक्त घटनाका समय संवत् ९८१ लिखा है, परन्तु टाड् साहवने कहा है कि वह भूल है।

हिन्दू कविने इसको "कजलीवनका असुर" कहकर अपने काव्यमे लिखा है। यद्यपि कर्नल टाड् साहबने इस मन्तव्यको प्रकाशित किया है, परन्तु मुसल्मान इतिहासवेत्ताने भ्रमसे भी इसका उल्लेख नहीं किया कि सुलतान महमूद सेना लकर किस समय दक्षिणमे आया था, और किस समय उसने गोलकुंडेको जय किया था। परन्तु कवि गोविन्द-रामने जो कजलीवनकी वर्वरजातिका उल्लेख किया है, सुलतान महमूद उसी कजली-वनका वर्वरनेता था, यह विश्वास सरलतासे नहीं हो सकता। यद्यपि यदुवंशीय राजा गजसे गजनीकी सृष्टि हुई है, परन्तु महमूदके दक्षिणात्यमे जानेपर मुसल्मान लेखको-मेंसे कोई न कोई अवश्य ही उसका उल्लेख करता। हमारा ऐसा विचार है कि दाक्षिणके किसी पर्वतीदेशका कजलीवन नाम हो। वह कजलीवन कहां था, इसका निर्णय करना सामर्थ्यसे बाहर है। टाड् साहबने इस स्थान पर और भी एक मन्तव्य प्रकाशित किया है कि "उत्तर और दक्षिण देशके जो समस्त राजपूत राज्य थे, उन्हीं राजवंशधरोने वहाँके आदिम निवासियोके साथ मिलकर नूतन मिश्र महाराष्ट्र जातिको जन्म दान किया, महाराष्ट्रोंने राजपूताका समान वीरविक्रमी होकर भी जादव तुवर पंवार इत्यादि प्राचीन राजपूतवंशके नामकी रक्षा न करके जिस देशमे जन्म ग्रहण किया उसी देशके नामसे वह निमालकर, फालकिया और पाटनकर इत्यादि नामसे परिचित हुये।

अस्थिपालके औरससे चन्द्रकरण नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ। चंद्रकरणके पुत्रका नाम लोकपाल था। लोकपालके दो पुत्र हुए, एकका नाम हमीर और दूसरेका गंभीर था। यह दोनो महापुरुष थे। दिल्लीपति पृथ्वीराजके शासनसमयमें यह उनके अधीनमे थे उस समय इन्होंने अनेक युद्धोमे महावीरता प्रकाश की थी। दिल्लीपति पृथ्वीराजके अधीनमे जो १०८ करद राजा थे, इन दोनो वीर भ्राताओंने उन सबोमेसे विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की थी। इससे हमें ऐसा अनुमान होता है कि असिदेश यद्यपि दिल्लीके बादशाहके सब प्रकारसे अधीनमे न था तथापि चौहानवंशीय असिदेशके अधी-श्वर उनका अधिक सम्मान करते थे।

चौहानवंशके शिरोमणि राजा पृथ्वीराज जिस समय कान्यकुब्जपति जयचंदके साथ घोर सग्राम कर उनकी कन्या अनंगमंजरी (संयोगिताको) वलपूर्वक हरण करके ले आये थे, चन्दकविने अपने ग्रन्थमे उसका विवरण भलीभांतिसे वर्णन किया है, उन्होंने उसमे वीर श्रेष्ठ हमीर और गंभीरके वल विक्रमकी ऊँची प्रशंसा करनेमे त्रुटि नहीं की है।

---

(१) कर्नल टाड् साहब लिखते है, "कि कजलीवनका अर्थ हस्तीका जंगल है। राजपूत कहते हैं कि गिजनीका प्रकृत नाम गजनी है, और वह यदुवंशीय राजा गजके द्वारा स्थापित हुई। हमने रायलएसियाटिक सुसाइटीको एक प्राचीन हिन्दू भूवृत्तान्त प्रदान किया है, उस भूवृत्तान्तसे गंगाजीके तीरवर्ती समस्त पहाडी देश 'कजलीवन' वा गजलीवू' नामसे लिखे गये हैं। उसका अर्थ हाथीका जंगल है। अबुलफज़ल लिखते हैं बजौर अंचल पर गजलीगढ़ नामका एक देश है वहाँ सुलतानो यादो और योसुफ़ज़ई जाति निवास करती है"।

कविचंदकी उक्ति है कि "इसके पीछे हाड़ाराव हमीर अपने अनुज गंभीरके साथ रण तुरंगिनीपर चढ़कर अपने अधीश्वर पृथ्वीराजके सम्मुख जाकर बोले, "जंगलेश! हम जयचंदकी सेनाको विध्वंश करनेमें प्रवृत्त हुए हैं, आप निर्विघ्नतासे चलिये। नौका जिस प्रकारसे सागरके वक्षस्थलको विदलित करती हुई चलती है उसी प्रकारसे हमारे रणतुरंगोंके खुरोंसे युद्धक्षेत्र कर्षित होगा"।

कविकी पिछली उक्तिसे जाना जाता है कि "जयचंदके अधीनमे इकट्ठे हुए महा बली राजाओंमें जो काशीराज सेनासहित उपस्थित थे, उक्त दोनों वीर भ्राताओंने उनपर आक्रमण किया। वीर श्रेष्ठ हमीरने वीरगर्वसे आगे बढ़कर इस प्रकार सिंहनाद किया कि कैलाशके शिखर पर भगवती दुर्गाजीका सिंहासन तक उच्चस्वरसे कंपायमान हो गया।" कविचंद लिखते हैं कि उन दोनो वीर भ्राताओंने अतुल वल विक्रम प्रकाश करनेके पीछे उस समरभूमिमें प्राण त्याग किये।

हमीरके कालकर्ण नामक एक पुत्र था। शहावुद्दीनने जिस समय कग्गरोंके युद्धमे भारतकी स्वाधीनताको हरण किया उस समय वह वीर श्रेष्ठ कालकर्ण पृथ्वीराजके अधीनमें उनके विपक्षमें नियुक्त होगये थे। कालकर्णके पुत्रका नाम महासुग्ध था। उनके औरससे राववाचाने जन्म ग्रहण किया। उनके पुत्रका नाम रावचंद था।

कठिन यवनअलाउद्दीनने चौहान जातिके समस्त स्वाधीन राजाओके शासनको लुप्त कर दिया, उन्हींमें यह रावचंद भी एक थे। आसेरगढ़का किला अत्यन्त अभेद्य गिना जाता था, इसीसे अलाउद्दीनने वलपूर्वक उस किलेको फतह कर रावचंदको वंश सहित निहत किया। केवल रावचंदके ढाई वर्षकी अवस्थाका रैनसी नामका एक पुत्र था। वह बालक चीतौड़पति महाराणाका भानजा था इस कारण अलाउद्दीनके किलेको जीतनेके पीछे वह बालक चीतौड़के महाराणाके निकट भेज दिया गया। रैनसी मामाके यहाँ जाकर सब व्यवहारोको जान गये; एक समय इन्होंने अपनी सेना सहित जाकर भेसरोड़ नामक देशके विध्वंस हुए किले पर आक्रमण करके वहाँके दूंगानामक भील नेताको वहाँसे भगा दिया।

यह भैंसरोड़ पहिले मेवाड़के अधीनमे था, अलाउद्दीनने चित्तौड़पर आक्रमण करनेके समय इस देशको विध्वंस कर दिया था, और उक्त दूंगाने सुविधा पाकर उस स्थान पर अपना अधिकार कर लिया।

रैनसी वा रैनसिंहके औरससे कुलन और कनकल नामके दो पुत्र उत्पन्न हुए। बड़ा पुत्र कोल्हण दुरारोगसे ग्रसित होकर गंगाजीके किनारे केदारनाथकी तीर्थयात्रा करनेको गया, इससे उसे शीघ्र ही आरोग्यता प्राप्त हुई, केदारनाथका बहुत दिनोका मार्ग था, परन्तु यह न तो पालकी की सवारी पर चढ़ कर गये और न घोड़े पर ही गये, यह देवादिदेव केदारनाथ, जिससे अधिक प्रसन्न हो इससे किसी सवारी पर

(१) पृथ्वीराजकी एक उपाधि जंगलेशकी भी थी।

(२) वंशभास्करमें रतनसिंह लिखा है।

न चढ़ कर केवल साष्टांग दंडवत करते हुए राजधानी भैंसरोडसे केदारनाथके मंदिरतक गये। इस वातको तो सभी जानते हैं कि यह तीर्थयात्रा महा कठिन है। इसी रीतिसे छः महीने तक बराबर चलनेके पीछे वह बूंदीके समीपमें आपहुँचे। उस स्थान पर एक पर्वतके शिखरसे निकली हुई बाणगंगा नदीमे जाकर इन्होने स्नान किया, और स्नान करते ही समझ गये कि मैं आरोग्य होगया। उस स्थान पर ही देवादिदेव केदारनाथने उनको आज्ञा दी कि हे वत्स ! मैं तुम्हारी भक्तिसे अत्यन्त प्रसन्न हुआ हूँ तुम अब सव भाँतिसे अयोग्य हो गये हो। आजसे तुम पठार देशके अधीश्वर हुए"। उक्त समस्त पठारदेश पहिले चित्तौड़के राणाके अधिकारमे था, परन्तु दुराचारी अलाउद्दीनने उस विख्यात किलेको लूट कर वहाँके अगणित गेहिलोतोंको निहत कर इस देशसे राणाकी प्रभुता घटादी, यहाँके आदिम निवासी मेरगणोने इस सुअवसरमे अपने इस आदिम पर्वतके स्थान पर अपना अधिकार करलिया।

यह प्रसिद्ध है कि पूर्वकालमे प्रमारजातिके राजा हूँन इस पठारदेशके अधिपति थे, और मैनाल नामक स्थानमे उनकी राजधानी थी। उक्त मैनाल नामक स्थानमें उस प्राचीन हूंणाराजाके अनेक स्मृति चिह्न विराजमान हैं। ऐसा प्रगट है कि आठवीं शताव्दीमे जिस समय चीतौड़ पहिले पहिल आंक्रात हुआ था उस समय हूनपति अंगतसीने अपनी सेनाके साथ इन महाराणाकी सहायता की थी और ऐसा कहा जाता है कि विख्यात वारौलीका मंदिर इन्हीं हूंस राजका वनवाया हुआ है।

कोल्हनके पुत्र राव वांगाने उस पुराने मैनालपर अधिकार करलिया उन्होने पठारके पश्चिमकी ओर एक शिखर पर वंबावदा किला वनाया, पूर्वमे भैंसरोड़ पश्चिममें वंबावदा और मैनाल यह सव पठार देश हाड़ाजातिके अधिकारमे होगये, इसके पीछे मांडलगढ़ विजोलिया वेगूं रत्नगढ़ और चौराइतगढ़ इत्यादि पर अधिकार करनेसे राज्यकी सीमा क्रमशः बढ़गई।

राव वांगाके बारह पुत्र हुए उन सभींने पठार देशका विस्तार करके अपने वंशको वढ़ाया, राव देवा राव वांगाके पीछे राजसिंहासन पर विराजमान हुए। राव देवाके हरराज हथेजी और समरसी यह तीन पुत्र हुए।

हाडानेरेशोंने उक्त प्रकारसे अपने अधिकारको स्थापन कर प्रसिद्धि प्राप्त की। तव दिल्लीके वादशाहका ध्यान इनकी ओर गया। सिकन्दरलोदी इस समय दिल्लीके सिहासन पर स्थित थे। उन्होने हाडा नरेशको दिल्लीमे वुलाया। रावदेवा दिल्लीश्वरकी आज्ञा

---

(१) मध्य भारतवर्षका नाम पठार था, कवि लिखते हैं कि कोल्हणको जो देश मिले थे उनके दश अंशोंमेका एक अंश उन्होंने अनुजको देदिया था।

(२) हरराजके बारह पुत्र जन्मे, हावुके वीरताका वर्णन टाड् साहवके दूसरे भ्रमण वृत्तान्तमें प्रकाशित होगा यह हांवु सबमें वड़ा था। वंबावदाका अधिकार इसे ही मिला था।

(३) ये गलत लिखा है क्योंकि सिकंदरलादी तो देवायतजीके समय में२०० वरस आसर पीछे हुवा है और उस समय देवायतजीकी ओलादम राव नारायणदास वूंदीके राजा थे।

को शिरपर धारण कर अपने ज्येष्ठ पुत्रको बंबावदाके सिंहासन पर अभिषिक्त कर छोटे पुत्र समरसीके साथ दिल्लीको गये। हाड़ाजातीय कविने लिखाहै कि राव देवा बहुल दिनतक दिल्लीमे रहे, अन्तमे जब रावदेवाके घोड़ा लेनेकी दिल्लीपतिकी प्रवल इच्छा हुई और राव देवाने किसी प्रकार भी उसको देना न चाहा और अपने देशको जानेकी तैयारी की। उस घोड़ेका वृत्तान्त इस प्रकार है कि सम्राट्के मन्दोराका एक अश्व था, "वह नदीके पार होजाता परन्तु उसके पैरमें एक बूंद जल भी नहीं लगता था, रावदेवाने सम्राट्के प्रधान अश्वपालको रिश्वत देकर वशीभूत किया, और पठारदेशकी एक अश्वनीके गर्भसे उक्त अश्वद्वारा एक बछेड़ा उत्पन्न कराया। वह अश्वका बच्चा धीरे २ वढ़कर पूरा घोड़ा होगया। बादशाहने उस घोड़ेको लेनेके लिये अत्यन्त अभिलाषा प्रगट की। रावदेवाने बादशाहकी अभिलाषाको जानकर धीरे २ दिल्लीसे अपने परिवार और परिषदोंको एक २ करके सभीको गुप्तभावसे विदा दी, और अन्तमें आप तलवार हाथमे ले उसी श्रेष्ठ घोड़े पर चढ़कर बादशाहके महलके सम्मुख पहुँचे। बादशाह उस समय वरामदेमें विराजमान थे। रावदेवाने नीचेसे ही उस घोड़े पर चढ़े रहकर बादशाहको अभिवादन करके कहा, "जहाँपनाँह! यह शेष अभिवादन जानिये। मेरा यह निवेदन है-कि आप राजपूतोसे तीन वस्तुओंकी इच्छा न करै, प्रथम उनका अश्व 'दूसरा उनकी स्त्री' और तीसरी उनकी तलवार।" यह कहते ही रावदेवाने बड़ी शीघ्रतासे अश्वको चलाया, और शीघ्र ही निर्विघ्नतासे वह पठारमें आपहुंचे।

रावदेवा बंबावदा देशका समस्त अधिकार अपने बड़े पुत्र हरराजको पहिले ही देगये थे, इस कारण उन्होंने वहाँ न जाकर, बुंदानाल नामक जिस स्थान पर उनके पूर्व पुरुषोने कठिन रोगसे आरोग्यता प्राप्त की थी उसी स्थानपर आपहुँचे। इस देशमे मीना और उसाराजाति उनके अधीश्वर जेताके अधीनमें निवास करती थी। उस समय उस देशमें एक भी रीतिके अनुसार नगर नहीं था, केवल उपत्यकी बाहरी सीमाके अन्तर चारों ओर पाषाण प्रकार और तोरणसे युक्त था, एवं उसके मध्यवर्ती किसी स्थानमे इच्छानुसार मीनागणोंने कुटी बनाई थीं उसीमें आप निवास करते थे। यहाँके निवासी चित्तौड़के विध्वंस होनेके पहिले महाराणाकी अनुगत्यता स्वीकार कर उनके अधीनमे वास करते थे; परन्तु इस समय राणाकी सामर्थ्य घट गईथी इसीसे रामगढ़के खीचीजातिके अधीश्वर राव गांगा इस देशमे जाकर अपने बाहुबलसे प्रत्येक निवासियोंके निकटसे बलपूर्वक कर लेते थे। रावगांगाके उत्पीड़न और अत्याचारोंसे अपनी रक्षा और बुंदादेशकी रक्षाके लिये उसारा और मीना जाति शीघ्र ही रावगांगाके साथ इस प्रकार संधिबंधनमे आवद्ध होगई कि वह प्रति दो महीनेके बीचमें पूर्णिमाके दिन बुंदाकी सीमाके बाहर करस्वरूप चौथ दिया करते थे। उन्होंने इस संधिके मतसे अनेक दिनतक चौथ दी। अंतमें रावदेवा उक्त समयमें वहाँ पहुँच गये, सब बात जानकर उन्होंने मीना और उसारा-

(१) "थल" और "नाल" शब्दका अर्थ उपत्यका है। नाल शब्दमें गिरि-संकटको समझना।

दिकोको रावगांगाके उत्पीड़नसे उद्धार और कर देनेसे रहित करनेकी प्रतिज्ञा की। रावदेवाको वीर पुरुष जानकर उसारा और मीनागण उनके ऊपर विशेष विश्वास स्थापन कर उनके द्वारा रावगांगाके हाथसे अपने उद्धार प्राप्तिके लिये प्रतीक्षा करने लगे।

यथासमयमे रावगांगा सेनासहित बुंदी देशकी सीमामे पहिलेकी समान कर ग्रहण करनेके लिये पहुँचे। ठीक समय पर करको आयाहुआ न देखकर वह अत्यन्त विस्मित हुए अन्तमे उन्होंने दूरसे सेनासहित रावदेवाको उस श्रेष्ठ घोड़ेपर आताहुआ देखकर पूछा, "कौन आरहा है?" कुछही समयमे उत्तर आया "पठारके महाराज आरहे हैं"। राव गांगा जिस अश्वके ऊपर सवार थे वह अश्व भी राव देवाके उक्त अश्वकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट नही था, कवि लिखते है कि रामगढ़के निकटवर्ती पार्वती नदीके किनारे खीचीराज रावगांगाकी एक घोड़ी एक समय विचरण कर रही थी, इसी अवसरमें पहाडी नदीके गर्भसे एक घोड़ेने आकर उस घोड़ीको गर्भाधान कराया, उसीसे उस अश्वका जन्म हुआ, रावगांगा उसी घोडेपर चढ़कर गये थे। वह घोड़ा जैसा अद्भुत सामर्थ्यवान् था वैसा ही सुशिक्षित भी था। राव गांगा उस घोड़े पर चढ़कर महावेगसे पठारपति राव देवाकी ओरको चले।

शीघ्र ही दोनो ओर भयंकर युद्धानल प्रज्वलित होगई। उस युद्धमे पठारपति रावदेवाकी विजय होनेसे राव गॉगा युद्धभूमि छोड़कर भाग गये। पठारपति राव गांगाके अश्वके बल और उसके गुणकी परीक्षाके लिये उसके पीछे२ गये। राव गांगाने उपत्यका को छोडकर शीघ्र ही चम्बल नदीमे प्रवेश किया। रावदेवा अत्यन्त विस्मित होकर चारो ओरको देखने लगे, कुछही समयमे राव गांगा चम्बल नदीके पार होगये हैं। यह देखकर रावदेवाने अत्यन्त विस्मित होकर कहा, "राजपूत तुम धन्य हो! आपका नाम क्या है?" तुरन्त ही उत्तर आया "गांगारखींची" राव देवाने कहा "हमारा नाम देवाहाड़ा है, हम दोनो जातिके भ्राता है, हममे परस्पर कभी शत्रुता नहीं होसकती, यह चम्बल नदी हम दोनोके राज्यकी सीमा है"।

कर्नल टाड साहब लिखते है "कि संवत् १३९८ (सन् १३४२ ई०) मे मीना और उसारादिकोके अधीश्वर जैतने रावदेवाको अपना अधीश्वर राजा स्वीकार किया। रावदेवाने उस बुंदानाल नामक देशके मध्यस्थलमे बून्दी नामके एक नगरकी प्रतिष्ठा की, और अंतमे वही हाड़ाजातिकी राजधानीके नामसे परिणत हुई। पूर्वोक्त घटनासे यद्यपि चम्बल नदी उस समय इसकी पूर्वसीमारूपमे निश्चित हुई थी, परन्तु शीघ्र ही बीचमे हाड़ाजातिने बलविक्रमसे उस सीमाको लांघकर चम्बलके उस पारके बहुत देश बूँदीके अधीनमे कर लिये। कुछही कालके पीछे हाड़ाजातिका बलविक्रम दिल्लीके बादशाहने सुना, बादशाहके सेनापतिके साथ मिलकर हाड़ाजातिने अपना अधिकार यहॉतक फैला दिया, और बादशाहसे इतनी भूमि प्राप्तकी कि बूँदीराज्यकी सीमाका विस्तार मालवेतक होगया। यही विस्तृत समस्त देश पीछे हाड़वती हाडोती नामसे विख्यात हुआ है।

द्वितीय अध्याय २.

रावदेवाका बूँदीमें राजधानीकी प्रतिष्ठा करना–उसारा जातिकी हत्या–रावदेवाका राज्य-त्याग–समरसीका अभिषेक–चम्बलके पूर्वांञ्चलतक उनके शासनका विस्तार–कोटिया भीलपर आक्रमण और उसका माराजाना–कोटेकी उत्पत्तिका वृत्तान्त–नापाजीका अभिषेक–टोड़ासोलंकीराजके साथ विवाद नापाजीका हत्याकाण्ड–हामाका अभिषेक–पठारदेशमें चीतौड़-पति राणाका अपने अधिकारके विस्तारनेकी चेष्टा करना–हामाका राणाकी सम्पूर्ण अधीनता स्वीकार करनेमें असम्मति-हामाका राणापर आक्रमण-राणाकी प्रतिज्ञा–प्रतिज्ञापालनमें विचित्र प्रवाद वरसिंह–वैरीसाल रावभांडा दुर्भिक्ष–इनके सम्बन्धमें प्रवाद–बंदूके भांडाके दोनों भाइयोंका समर और अमरका बूँदीपर अधिकार–नारायणदासका यवनधर्माक्रान्त चाचाके साथ समर और अमरकी हत्या–नारायणदासका बूँदीपर अधिकार–उनके चरित्रोंके सम्बन्धमें झगड़ा–नारायणदासका चीतौड़के राणाकी सहायता करना–नारायणदासकी विजय–राणा रायमलकी भतीजीके साथ नारायणदासका विवाह–उनकी मृत्यु–राव सूर्यमल–राणा रत्नसिंहकी भगिनीके साथ उनका विवाह–मृगया–राणा रत्नसिंहका सूर्यमलके प्राणनाश करना–सूर्यमलकी प्रतिहिंसादान–राव सुरतान–उनको सिंहासनसे उतारना–राव अर्जुनका अभिषेक–उनकी प्रशंसनीमृत्यु–बूंदीके सिंहासन-पर राव सुरजनका अधिरोहण—

"रावदेवाने सम्वत् १३९८, सन् १३४२ई० में मीनादिकोंसे बुंदी नामक उपत्यका लेकर वहाँ बूंदीनामक राजधानीकी प्रतिष्ठाकी । इसी समयसे समस्त देश हाड़ोती नामसे विख्यात हुआ हाड़ाजातिके राजकवि लिखगये हैं कि इसी समय रावदेवाकी हाड़ाजातीय प्रजाकी अपेक्षा मीना प्रजाकी संख्या बहुत अधिक थी यद्यपि मीनागण रावदेवाको अपना अधीश्वर मानते थे, परन्तु उनके राजकी सामर्थ्यको घटानेका यत्न होरहा था । दूसरी ओर मीनाजातिके नेताने रावदेवाकी एक कन्याके साथ विवाह करनेके लिये बड़े साहसके साथ उनके समीप यह प्रस्ताव उपस्थित किया । असभ्यनीच जाति मीनानेताको यह अनुचित प्रस्ताव उपस्थित करते हुए देखकर राव देवाने महा-क्रोधित हो मीनोंको उचित दंड देनेका विचार किया । इसी कारणसे मीनोंके साथ उनका विवाद होगया । रावदेवाके अधीनमें इस समय जो बहुत सी हाड़ाजातीय सेना थी, उसकी अपेक्षा निवासी मीनोंकी संख्या अधिक होनेसे रावदेवाने शीघ्र ही बंबावदासे हाड़ाजातिको और टोड़ासे सोलंकीजातिको बुलाकर ओसाराजाति और मीनोंको एकबार ही विध्वंसकर दिया । प्रायः सभी मीना इस कारण मारेगये "।

"कविने लिखा है, कि मीनावंशध्वंसके पीछे बूँदीराज देवाने दूसरीवार अपने पुत्रके हाथमें यह दूसरा राज्यभार अर्पण किया । वे पहली बार अपने बड़े पुत्र हरराजके हाथमें बंबावदाराज्यको अर्पण कर दिल्लीको चले गये थे । फिर वे बंबावदामें नहीं आये इस समय उन्होंने यह नवीन राज्यबूंदी देश अपने छोटे पुत्र समरसीको देदिया । राव देवाने किस कारणसे दूसरीवार राज्यको त्याग किया इसका कोई

विशेप भेद नहीं पाया जाता तब केवल इतना अनुमान होसकता है कि मीनोंके वंशको विध्वस करके राव देवाका हृदय अत्यन्त व्यथित हुआ था; और इसी कारणसे उनको फिर राज्य करनेकी अभिलापा नहीं हुई" पुत्रको राज्यपर अभिपिक्त करनेपर राजपूत राजा फिर उस राजधानीमे नहीं रहते। कारण कि उस समय वृद्ध राजाको राज्यशासनकी कोई सामर्थ्य नहीं रहती है। पुत्र ही प्रकृत राज्यरूपसे समस्त शासन शक्तिका प्रयोग करता है। ऐसी अवस्थामे वृद्धराजा शासन शक्तिका त्याग कर राजधानीमें प्रजारूपसे रहना न्याय संगत नहीं समझता। उसी प्राचीन रीतिके अनुसार राव देवा बूँदी छोड़कर वहाँसे पाँच कोशकी दूरीपर अमरथूनं नामक एक ग्राममे रहने लगे फिर वह कभी बूँदी वा वंबावदामे नहीं गये। राजपूत जातिमें इस प्रकारकी रीति प्रचलित है कि राजा वृद्ध होने पर पुत्रको राज्यभार देकर राजधानीमे चले जाते है क्षत्रियोंमे जिस भाँति बारह दिनतक अशौच रहता है, उन्ही बारह दिनोंके पीछे उस शासनशक्तिसे रहित वृद्ध राजाकी एक प्रतिमा निर्माण कर रीतिके अनुसार उसकी दाह क्रिया कीजाती थी। रावदेवाके छोटे पुत्र समरसीके हाथमे बूंदीका राज्यभार अर्पण किया गया, बूँदी और वंबावदा यह दोनों देश स्वतंत्र दोनों राजाओंके द्वारा शासित होते थे।

समरसीके तीन पुत्र उत्पन्न हुए ज्येष्ठ नापाजी,यह बूँदीके सिंहासन पर विराजमान हुए, (२ हरपाल) यह जजावर गांवको प्राप्त कर वहीं रहने लगे, और इनके अगणित वशधर हरपालपोता नामसे पुकारे गये, तीसरे जैतसिंह इन्होंने सबसे पहिले चम्बलके बाहर हाड़ाजातिके प्रताप और प्रभुत्वका विस्तार करदिया। कवि लिखते हैं "कि जैतसिंहने एक समय अस्त्रधारी अनुचरोंके साथ केनून देशके तुंवर अधीश्वरके साथ साक्षात् करनेके लिये, आनेके समय मार्गमे नदीके पार्श्वमें स्थित गिरिसंकटवासी भीलोंके अधिकारी देश पर सहसा आक्रमण किया और उनको परास्त कर दिया। हाड़ाजातीकी सेनाके महा विक्रमके सम्मुख बहुतसे भीलोंका जीवन नष्ट होगया। उक्त गिरिसकट प्रवेशके मार्गमे बाहर एक किला था, जैतसिंहने उसी स्थानपर भीलोंके नेताके प्राण संहार किये। उनके स्मरणके अर्थ उन्होंने इस स्थान पर रणदेव भैरवके उद्देशसे एक विराट्काय पत्थरका हाथी स्थापन किया। वह हाथी कोटा-राजधानीके किलेके चार झौंपरा नामक स्थानके निकट स्थापित है। कोटिया नामक एक श्रेणीके भीलसे कोटा नामकी उत्पत्ति हुई है।

---

(१) इतिहासवेत्ता टाड् साहब अपनी टीकामें लिखते हैं कि "जैतसिंह और उनके वशधरगणोंके कई एक पुरुषोंने जब उक्त किले और आसपासके देशपर अधिकार करलिया था। पंचम पुरुष भोनंगसीके शासन समयमे बूँदीके राव सूर्यमल्लने उसपर अधिकार किया। जैतसिंहके सुरजन नामका एक औरस पुत्र उत्पन्न हुआ। उसने भीलोंके आदि वासस्थान उक्त देशका नाम कोटा रक्खा, और चारों ओर उसके दीवारें बनवादीं। सुरजनके पुत्र धीरदेवने बड़े २ बारह सरोवर खुदवाये, और नगरके पूर्व प्रान्तमें बाँध बंधनसे एक बड़ाभारी हृद तैयार—

समरसीके स्वर्ग चले जानेपर नापाजी बूंदीके राजसिंहासन पर विराजमान हुए। राजपूतकविने अपने ग्रंथमे नापाजीकी वीरताकी कथा बहुतसी वर्णनकी है। नापाजीने टोड़ा देशके सोलंकी अधीश्वरकी एक कन्याके साथ विवाह किया। वह सोलंकी राज अन्हलवाड़ाके अत्यन्त प्राचीन राजाओंके वंशधर थे। एक समय नापाजी टोड़ा राज्यमे

—करवाया। यद्यपि वह इस समय किशोर सागर नामसे पुकारा जाता है परन्तु यह सभीको विदित है कि वह किसके द्वारा बनाया गया है। धीरसिंहके पुत्र खंधल खंधलके पुत्र भोनंगसी थे; भोनंगसीने कोटाराज्यको खोकर फिर उसपर निम्नलिखित उपायोसे अधिकार कर लिया। धाकर और केसरखॉ नामके दो पठानोने कोटेपर आक्रमण किया, भोनंगसी इस समय अफीम अधिकतासे सेवन करता था और मदिरा भी पीता था इसीसे उसे उन्माद होगया, इस कारण उसको बूंदीसे निकाल दिया, उसकी स्त्री अपने स्वामीकी समस्त सेनाके साथ केतून देशको चली गई। उस केतूनदेशके निकट ३६० ग्राम हाडाजातिके अधिकारमें थे। भोनगसी निर्वासित अवस्थामें कुछ दिन रहकर क्रमानुसार चैतन्यता प्राप्त होने पर अधिक नशा सेवन करनेसे अत्यन्त दुःखित हुए; अंतमें उन्होने कहा कि अब हम अफीम और मदिराका पान नहीं करेंगे और मैं इसी समय केतूनमें स्थित अपनी स्त्री, तथा अपने कुटुम्बीजनोंके साथ मिलनेकी इच्छा करता हूं। भोनंगकी स्त्री अपने स्वामीके ज्ञान प्राप्ति होने और उनका आगमन सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुई। बुद्धिमती राजपूतस्त्रीने उस समय एक विचित्र उपायसे कोटाराजधानी पर अधिकार करनेका विचार कर अपने स्वामीको उस कार्यमें लिप्त होनेकी सलाह दी। सेनाबलके द्वारा पठानोंके हाथसे कोटेपर अधिकार करते ही जड़से नष्ट होना होगा, यह निश्चय जानकर भोनंगकी रानीने केवल साहस और चतुरतासे अपने मनोरथको सिद्ध करनेका विचार किया। वसन्तऋतुमे फाल्गुनोत्सवके समीप आते ही जिस उत्सवके कुछ दिनके लिये क्षत्रिय राजपूत समाजमे सामाजिक रीति भीति एकबार ही दूर हो जाती है, जिस उत्सवमे स्त्री पुरुष सभी स्वाधीनभावसे स्वेच्छाचारका एक शेष प्रदर्शन किया करते है। अश्लीलता की श्रद्धासे उस उत्सवके उपलक्षमें भोनंगकी रानीने केतूनकी समस्त राजपूत युवतियोंको अपने यहॉ बुला भेजा कि "हम सभी कोटेके पठानोंके साथ होली खेलेंगी"। अन्य पक्षमें भोनंगरानीने पठानोंसे भी कहला भेजा; कि वह समस्त राजपूतोंकी स्त्रियोंके साथ मिलकर होलीक्रीडा करें पठानोंने कोटेकी भूतपूर्व रानीके इस आमंत्रणसे अत्यन्त प्रसन्न होकर किंचित् भी विलम्ब न करके उस आमंत्रणको स्वीकार कर लिया। इधर भोनंगकी रानीने अत्यन्त गुप्तभावसे तीनसौ अत्यन्त सुन्दर हाड़ाजातिके अल्प अवस्थावाले युवकोंको स्त्रीवेशसे सजाकर वृद्धाधात्रीके साथ भेज दिया। ठीक समय पर वह तीनसौ छद्मवेशीयुवक अबीर हाथमें लेकर ताली बजाते हुए होली खेलनेके लिये आगे बढ़े। जिस समय वह छद्मवेशी युवक कोटेमे जाकर पठानोंके मुख और शरीर पर अबीर छिड़कने लगे, उस समय वृद्धाधात्रीने भोनंगको लेकर पठाननेता केसरखांके निकट उपस्थित किया। छद्मवेशी भोनंगने पठाननेताके निकट आते ही अपने हाथमेंके अबीर पात्रको उनके मस्तक पर देमारा। उसी समय पूर्वसंकेतके अनुसार वह तीनसौ हाडायुवक घाघरेमेंसे तलवार निकाल कर पठानोका संहार करने लगे। कुछही समयके पीछे पठाननेता और उनके अधीनके समस्त पठान यमराजके यहॉ पहुंच गये और भोनंगने कोटेपर अधिकार करलिया। पठाननेता केसरखॉने नगरमें जो मसजित बनवाई थी आजतक वह विद्यमान है। भोनंगकी मृत्युके पीछे डूंगरसी कोटेके अधीश्वर हुए। बूंदी अधीश्वर राव सूर्यमल्लने उनको शासनकी सामर्थ्यसे रहित कर कोटेको बूंदीराज्यके अन्तर्गत कर लिया।

गये वहाँ इन्होने एक अत्यन्त सुन्दर सगमर्मरके पत्थरका स्तंभ देखा । तब उसको लेनेके लिये अपनी स्त्रीको आज्ञादी कि तुम अपने पितासे इसको मांगलेना । हाड़ाराजरानीने अपने पिताके निकट उक्त कामनाको प्रकाशित किया, सोलंकी राजने उसकी आशा पूर्णकरना तो दूर रहा, वरन उसको विशेप अपमान कारक उत्तर दिया । उन्होंने कहा, " कि यो तो एक दिन हाड़ाराज नापाजी हमारी स्त्रीतकको मांगलेगे । " वह केवल इतना कहकर ही शान्त न हुए, वरन जामाता नापाजीको टोडा छोड़ जानेके लिये आज्ञा दी । यद्यपि नापाजी इस अपमानसे अत्यन्त ही क्रोधित हुए, परन्तु उन्होंने प्रगटमें अपने श्वशुरके साथ झगड़ा करना न विचारा, इसलिये वह अपने राज्यको चले आये, और तभीसे सोलकी रानीका तिरस्कार कर उससे घृणा करने लगे; अधिक क्या उन्होंने रानीको अपने शयनागारमें आनेतकका निपेध कर दिया । सोलंकी रानीने इस प्रकारसे अपने स्वामीके क्रोधमे पड़कर कुछ दिनके पीछे अपने पिताके निकट समस्त वृत्तान्त कहला भेजा ।

श्रावणमासकी तृतीया तिथि राजपूतोंमे कजलीतीज नामसे विदित है । इस दिन प्रत्येक राजपूत निश्चय ही अपनी २ स्त्रियोंके निकट विहार करनेके लिये जाते है । हमारे देशमे जिस भांति षष्ठीदेवी परम आराध्य है, उक्त कजलीतीजको राजपूत जनक जननी उसी प्रकार षष्ठीदेवीकी पूजा करती है । बूँदीराज नापाजीने चिर प्रचलित रीतिके अनुसार उस तिथिमे अपने अधीनमें स्थित समस्त सामन्तोंको अपने अपने देशमे स्त्रियोंके पास जानेकी अज्ञा दी, और उनको विदा किया । इस कारण उसी दिन बूँदीराजधानी एकवार ही सामन्तोसे शून्य होगई, इस शुभ सुअवसरको पाकर उक्त सोलंकी रानीके भ्राता टोड़ा राजकुमार अपने कितने ही विश्वासी अस्त्रधारियोंके साथ रात्रिके समय अत्यन्त गुप्तभावसे बूँदीकी राजधानीमें आये और महलके भीतर जा अपनी तीक्ष्ण तलवारसे नापाजीके शरीरको खडखंड करके उनके जीवनको समाप्त कर बूँदीसे भाग गये । उस दिन जितने सामन्त बूँदीराज्यसे विदा हुए थे उनमेसे एक सामन्तकी स्त्री अत्यन्त पीड़ित थी, इस कारण उस सामन्तने ऐसी अवस्थामें स्त्रीको देशमें लेजाना उचित न जाना और वह बूँदी नगरके बाहर राजमार्गमे बैठकर अफीम सेवन कर रहा था । इसी समयमे टोड़ाके राजकुमार नापाजीका जीवन समाप्त कर अपने सेवकोंके साथ उस मार्गसे हँसते २ जारहे थे और जिस भाँतिसे उनका प्राण हरण किया था, उसकी सब वार्तालाप करते जाते थे । बूँदीके उक्त सामन्तने उसी समय इस वृत्तान्तके सुनते ही अपनी कमरसे तलवार निकाल कर नापाजीके जीवन हननकारी टोड़ाके राजकुमारके ऊपर वार किया । राजकुमारका एक हाथ तलवारके आघातसे कटकर राजमार्गमे गिरपड़ा सोलंकी राजकुमारके सेवकोंने राजकुमारको लेकर उसी समय बड़ी शीघ्रतासे घोड़ा चलाया । सामन्त राजकुमारके कंकणसहित कटेहुए हाथको ले अपने दुपट्टेमें बाँधकर उसी समय बूँदीकी राजधानीमे आये ।

सामन्तने बूँदीमें आकर देखा कि सर्व नाश होगया है नापाजी मारे गये हैं, तथा राजमहलमें हाहाकार मचरहा है । सोलंकी रानी जिसके भ्राताने उसके स्वामीका

प्राण नाश किया है वह शीघ्र ही राजपूतरीतिके अनुसार स्वामीके मृतक शरीरको लेकर चितापर चढ़नेके लिये तैयार हुई। परन्तु उन्होंने जिस वीरवंशमें जन्म लिया था, उसी वीरवंशके उग्रतेजके बलसे इस महाशोकके समयमें भी वह अपने भ्राताको महावीर कहकर उसकी ऊँची प्रशंसा करने लगी। उनके भ्राताने तलवारके आघातसे नापाजीके शरीरमे सहस्रों घाव करदिये थे। सोलंकी रानी उस प्रत्येक स्थलको नापाजीका मुख जानकर उस प्रत्येक मुखमें जिससे ताम्बूल देसके इसे निमित्त देवतोंसे प्रार्थना करने लगी। सोलंकनी जिस समय पतिके शवके साथ चितापर चढ़नेके लिये सज रहीं थीं उसी समय उक्त सामन्तने आकर हत्याकारी जो टोड़ा राजकुमारका कंचन सहित कटाहुआ हाथ कपड़ेमेंसे निकाल कर उनके हाथमें अर्पण किया। सोलंकनी कंकनको देखते ही तुरन्त पहचान गई कि यह उसके भाईका हाथ है। इससे वह कुछ भी शोकित न हुई, और चितापर चढ़नेके पहिले कलमदवात लेकर अपने भ्राताको इस मर्मका एक पत्र लिखा कि आपके हाथ कटजानेसे आपके वंशमें महाकलंक लगा है। आप जिस भांतिसे हो इस कलंकको, दूर करनेका उद्योग करिये। नहीं तो आपके वंशधरोका सभी एक हाथवाले सोलंकीके वंशधर कहकर उपहास करेंगे। कवि लिखते है टोड़ा राजकुमारने अपनी सती भगिनीके उक्त मंत्रको पढ़कर उस कलंकको दूर करना असंभव जान शीघ्र ही थंभपर अपना मस्तक बड़ वेगसे दे मारा उसीसे उनका मस्तक चूर्ण २ होगया। और वह इस संसारसे विदा हो गये।

नापाजीके तीन पुत्र उत्पन्न हुए (१) हामाजी, (२) नौरंग, वा नवरंग और (३) थर संवत् १४४० मे हामाजी पिताके सिहासनपर विराजमान हुए। नवरंगके वंशधर नवरंग पोता और थरके उत्तराधिकारी थरु हाड़ा नामसे विदित हुए।

यह तो हम पहिले ही कह आये हैं कि रावदेवाने जिस समय बूँदी राज्यकी प्रतिष्ठा की उसके पहिले उन्होंने पटार देश और बंबावदाका किला बड़े पुत्र हरराजको दे दिया था। हरराजके बड़े पुत्र हालूहाड़ा पिताके वियोगके पीछे पठारके अधीश्वर हुए परन्तु हालूके साथ चीतौडके महाराणाका विवाद उपस्थित हुआ, महाराणाने उक्त पटार देशको बलपूर्वक अपने अधिकारमें कर बंबावदाके किलेको एकसा करादिया। इस प्रकार स्वतंत्र स्वाधीन पठार राज्य एकबार ही लुप्त होगया।

अलाउद्दीनके द्वारा चीतौड़ विध्वंस होकर राणाके प्रबल प्रतापके लुप्त, होनेके पीछे राणाओंने बहुत समय तक हीनवीर्य होकर चीतौड़का शासन किया था। चीतौड़के अधीनके सामन्त और छोटे २ राजाओंने राणाके इस दुःखमय समयमें मस्तक उठाकर स्वाधीताको संग्रह कर पिताके देशोपर अधिकार कर लिया। कुछही दिनोंके पीछे चीतौडके महाराजका बलविक्रम पहिलेकी समान बढ़गया, वह सबसे पहिले उक्त सामन्त और

---

(१) उर्दू तर्जुमेंमे यों लिखा है कि वे यह प्रार्थना करतीं थीं कि जितने जखमके मुंह उसके भाईने पतिके शरीरमें बना दिये हैं उतने ही हाथ उसके होजावें तो एक एक हाथसे एक एक मुहमें पान-देवे।

छोटे २ राजाओंको दंड देने और उनको अधीनताकी जंजीरमें बाँधनेके लिये अग्रसर हुए। चीतौड़के महाराजने सबसे पहिले बूँदीके अधीश्वर हामाजीकी ओर तीक्ष्णदृष्टिसे देखा। महाराणाने हामाजीसे कहला भेजा कि जिस देशमें बूँदीराजधानी स्थापित हुई है वह देश राणाके अधिकारमें है, इस कारण बूँदीराजके राणाकी वश्यता स्वीकारकर नियमित कर देकर राणाकी आज्ञा पालन करनेके लिये नियमित समयपर चीतौड़में उपस्थित होना होगा। राणाके निकटसे उक्त पत्रको पाकर बूँदीराज हामाजीने कहला भेजा "मैं किसी समयमे भी किसी प्रकारसे चीतौड़पतिके अधीनका सामन्त नहीं हू। यद्यपि मै चीतौड़पतिके प्रभुत्वको स्वीकार करनेमे नित्य तैयार रहता हूं, परन्तु अपने अधीनके देशोंका हमने राणाके अनुगत रूपसे पट्टा ग्रहण नहीं किया, हमने तलवारके बलसे पठारके मीनोंके निकटसे इस राज्यको जीता है"। वास्तवमें महाराणा और हामाजी इन दोनोंकी उक्ति कहाँतक सत्य है, यह विचारकी बात है। हामाजीके पूर्वपुरुष रणसीवा रायसी असीरगढ़से निकाल-दिये गये थे, उस समय चीतौड़पति राणाने ही उनको आश्रय दिया था और उन्होंने भैसरोड़पर अधिकार करनेमे सहायता की थी,तथा अलाउद्दीनके चीतौड़पर आक्रमण करनेके पहिले समस्त पठार देश सिसोदीया राजमहाराणाके अधिकारमे था। अलाउद्दीनके चीतौड़को जयकरनेके पीछे राणाका प्रताप और प्रभुत्व एकवार ही लुप्त होगया। और उसी सुअवसरमें भूमियाँ आदिम मीना इत्यादि जातिने अपने पिताके देशपर अधिकार करलिया, और शेषमें उनसे हाड़ाजातिके पठारदेशको हस्तगत करनेका संकल्प किया।

यद्यपि हामाजीने कहला भेजा था कि उनके पूर्वपुरुषगण तलवारके बलसे बूँदी राज्यको स्थापन कर गये हैं, परन्तु महाराणाने कहा, कि कुछ समयके लिये हमारा शासन रहित होगया था, पर कोई भी बलसे हमारे पूर्वाधिकारी देशोपर अधिकार करने में समर्थ नहीं है। राणाने फिर हामाजीसे कहला भेजा, कि वे तुरन्त ही बूँदी राज्यके कारण वश्यता स्वीकार करें। हाड़ाराज हामाजीने बहुतसी चिन्ता करनेके पीछे स्वीकार किया कि वह प्रत्येक दशहरा तथा होली पर्वके समय सेनासहित चीतौड़में जाकर राणाकी आज्ञा पालन करेंगे और अभिषेकके समय राणासे राजतिलक ग्रहण करनेके लिये तैयार हैं, परन्तु वह नित्य चीतौड़मे जाकर सामान्य सामन्तोकी समान कभी नहीं रह सकते। हामाजीके इस उत्तरसे महाराणा किसी प्रकार भी संतुष्ट न हुए। और उन्होने उनको एकवार ही अधीनताकी जंजीरमे बाँधने वा रावपेवाके वंशको पठारसे एकवार ही दूर करनेका विचार किया। बूँदीराज हामाजी राणाके अभिप्रायको जानकर कुछ भी भयभीत न हुए, वरन् उन्होने यह स्थिर किया कि इस समय प्राणपणसे स्वाधीनताकी रक्षा करना कर्तव्य है।

चीतौड़के महाराणाने शीघ्र ही अपनी सेना और सामन्तोके साथ बूँदीको जय-करनेके लिये बाहर जाकर बूँदीसे कई कोश दूर निमोरिया नामक स्थानमें अपने डेरे डाले। महाराणाके आगमनकी वार्ता सुनकर हामाजीने शीघ्र ही स्वजातीय पाँचसौ बल-वान् सेनाको सुसज्जित किया। नेता हामाजीके अधीनके वीर लालवर्णके वस्त्र धारण

करके संहारमूर्तिसे आगे बढ़े। घोर रात्रिके समय अत्यन्त संतापित हो उन पांचसौ वीर पुरुषोंने निमोरिया नामक स्थानमें राणाके डेरोंमें जाकर बिना सावधान हुई सिसोदीय सेनाका संहार करना प्रारंभ कर दिया। राणा अचानक एकाएक शत्रुदलसे अपनेको घिराहुआ देखकर प्राणोंके भयसे चीतौड़को भाग गये, और हाड़ादलकी तीक्ष्ण तलवारसे अगणित सिसोदियासेना और बहुतसे सामन्त मारे गये। हाड़ाजी विजय प्राप्तकर महा आनंदितहो बूंदीकी राजधानीको लौट आये।

इसके पीछे कविने लिखाहै कि हिन्दूकुलतिलक महाराणा उस अति सामान्य सेनासे परास्त और अपमानित होकर राजधानीमें आ बूंदीराजसे बदला लेनेके लिये महा क्रोधसे उन्मत्त चित्त हो सेनाका संग्रह करने लगे, और यह प्रतिज्ञा की कि जबतक मैं उसको न जीत लूंगा तबतक अन्न जल नहीं ग्रहण करूंगा। राजपूत महाराजने एकबार जो प्रतिज्ञा की है प्राण रहते हुए वह प्रतिज्ञा किसी प्रकार भी अधूरी नहीं होगी। चीतौड़के महाराज बिना बूंदीको जय किये हुए अन्नजल नहीं करेंगे ऐसी प्रतिज्ञा की है, यह सुनते ही मंत्री समाज और सामन्त अत्यन्त उत्कंठित हुए। उनकी उत्कंठाका कारण यह था कि बूंदी राजधानी चीतौड़से ३० तीस कोश दूर है, और महा पराक्रमी हाड़ाजाति प्राणपणसे बूंदीकी रक्षामें नियुक्त है। इस कारण सरलतासे बूंदीको जय करना असंभव है. इसलिये राजाकी प्रतिज्ञा पालन करना भी अत्यन्त दुष्कर है। इसी निमित्त मंत्री और सामन्त महाराजको ऐसी कठिन प्रतिज्ञा पालन करनेके लिये वारम्वार निषेध करने लगे, परन्तु चीतौड़के राजाने जब इस प्रकारकी प्रतिज्ञा की है तब अब किसी प्रकारसे भी वह प्रतिज्ञा रहित नहीं होसकते बिना प्रतिज्ञाका पालन किये महाराज किसी भाँति अन्नजलको ग्रहण नहीं करेंगे। अंतमें कुटुम्बियोंने एक विचित्र उपायसे चीतोड़के महाराजको उस कठोर प्रतिज्ञाके पाशसे मुक्त करलिया। मंत्रियोंने महाराजके समीप प्रस्ताव किया कि चीतौड़में हम एक कृत्रिम बूँदी दुर्ग बनाये देते हैं आप सेनासहित उस किलेपर अधिकार कर अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण कर लीजिये। सामन्तोंकी सम्मतिसे महाराज शीघ्र ही सम्मत हुए। शीघ्र ही चीतौड़में कृत्रिम बूँदी दुर्ग तैयार होगया सच्चे बूँदीके किलेमें जितने अंश तथा वह जिस नामसे पुकारा जाता था तथा जो स्थान जिस नामसे स्थित थे शिल्पीदलने अविकल ठीक ज्योंका त्यों किला बना कर तैयार करदिया। चीतौड़के महाराजके यहाँ पाथर हाड़ा कठार हाड़ाजातिकी सेनाका एक दल था कुंभावैरसी उस दलके प्रधान नेता थे। वैरसी शिकार खेल कर लौट रहेथे कि मार्गमें उस कृत्रिम किलेको बनता हुआ देखकर कौतूहलके वशीभूतहो उसके निकट गये वैरसीने सुना कि इस कृत्रिम बूँदीके बिना जय किये हुए महाराणा अन्न जल ग्रहण नहीं करेंगे। यह सुनते ही वैरसीके हृदयमें जातीय गौरवकी कामना उदय हुई: उन्होंने कहा कि बूँदीके किलेके कृत्रिम होनेसे भी हम इसकी महाराणाके हाथसे रक्षा करेंगे।

किलेका बनना समाप्त होगया, राणाके पास समाचार भेजा गया। राणा सेना लेकर उस कृत्रिम किलेपर अधिकार करके अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेके लिये आगे

बढ़े। महाराणाने आज्ञा दी थी कि किलेमें सभी सिसोदिया सेना रहकर खाली बंदूको का फैर करै, और वह बल प्रकाश करके किलेकी रक्षा करनेमे नियुक्त रहै। परन्तु जैसे ही महाराणा किलेके समीप गये कि वैसे ही उस शब्दके बदलेमें सन् सन् शब्द करती हुई यथार्थ गोली किलेके भीतरसे निकल कर राणाकी सेनादलके ऊपर गिरने लगी। राणाने इस आश्चर्यदायक घटनाकी खोज करनेके लिये किलेके भीतर एक दूतको भेजा। वैरसीने उस मट्टीके बनेहुए किलेके द्वारपर दूतके आते ही उससे कहा "कि तुम राणासे जाकर कह दो कि हाड़ाजातिके इस कृत्रिम किलेको भी सरलतासे जय करके हाड़ाजातिके मस्तक पर कलंकका टीका नहीं देसकते।" हाड़ाजातिके नेता वैरसीने महाराणाके प्रति सम्मान दिखा कर शीघ्र ही उस छोटे किलेके द्वारपर अपनी पगड़ी बिछाकर किलेपर अधिकार करलेके लिये बुला भेजा। शीघ्र ही प्रबल समर उपस्थित होगया। जातिके सम्मानकी रक्षा करनेके लिये वैरसी और उनके अधीनकी सेनाने घोर पराक्रमके साथ युद्ध करके अन्तमें सभीने उस अगणित सिसोदिया सेनादलके द्वारा आक्रान्तहो अपनी जातिके गौरवकी रक्षाके लिये जीवन त्याग कियो।

कविने लिखा है कि हिन्दूपति राणाने उक्त प्रकारसे कृत्रिम बूँदीको जय करनेके पीछे फिर यथार्थ बूँदीपर अधिकार कर हामाजीको दंड देने वा पठारसे हाड़ाजातिको दूर करनेकी अभिलाषा नहीं की, कारण कि उन्होंने यह निश्चय जान लिया था कि हाड़ाजाति अत्यन्त बलशाली और असीम साहसी है इससे यह विपत्ति आनेपर भली भाँतिसे सहायता करैगी, इसीसे हाड़ाजातिको असतुष्ट न किया। वरन हामाजी जहांतक वश्यता स्वीकार करनेको सम्मत हुए उसीसे महाराणाने भलीभाँतिसे तृप्त होना अपना कर्तव्य जाना।

वीरश्रेष्ठ हामाजी सोलह वर्षतक बूंदीके सिंहासन पर बैठकर स्वर्गको चले गये। हामाजीके दो पुत्र उत्पन्न हुए नरसिंह और लाला। लालाको खुटकड़ नामवाला देश मिला, लालाके नोवर्म और जैता नामवाले दो पुत्र उत्पन्न हुए, उनके अगणित वंशधर नोवर्मपोता और जैतावत् नामसे विख्यात हुये। हामाके बड़े पुत्र वरसिंहने बूँदीके राजछत्रके नीचे पंद्रह वर्षतक बैठकर राज्य किया। उनके तीन कुमार उत्पन्न हुए वैरीसाल जवद् और तीसरे नीमा। जवद्से तीन शाखाओंकी उत्पत्ति हुई, और नीमाके वंशधर नीमावत नामसे विख्यात हुए। वीरसिंहके बड़े पुत्र वैरीसालने एकादि क्रमसे पचास वर्षतक राज्य करके पीछे संवत् १५२६ में प्राण त्याग किये। उनके औरससे निम्नलिखित सात

---

(१) इतिहासवेत्ता टाड् साहब इस स्थान पर लिखते हैं कि फ्रांसके एक बादशाहका इतिहास इस घटनासे बहुत मिलता जुलता है। "फ्रांसमें बाइसड़ी बलुगन" स्थान है उसे मडरिड कहते हैं। जब कि फ्रांसिस १ को राजधानीको लौटनेकी आसा हुई तो उसने "मडरिड" का सर्व नाश करनेकी प्रतिज्ञाकी, परन्तु सौभाग्य वश उसका पैरिसमें आजाना ही बड़े आनन्दकी बात थी; अतएव उस समय इसके मंत्रियोंने उसे ऐसी ही सलाह दी थी जैसी कि राणाके मंत्रियोंने राणाको दी।

पुत्र उत्पन्न हुए। (१) राव भांडा, (२) राव सांडा, (३) अखैराज, (४) राव ऊधो, (५) राव चूड़ा (६) समरसिंह और (७) अमरसिंह। टाड् साहब लिखते हैं कि पहिले पांच वीरोंसे पाँच वंशोंकी शाखाओंका विस्तार हुआ। परन्तु समर और अमरसिंहने हिन्दू धर्मको छोड़ कर यवन धर्मको अवलम्बन किया था।

राव भांड दान वीरता और चतुराईके बलसे समस्त रजवाड़ेमें अपना नाम अक्षय करगये हैं। उनकी समान निःस्वार्थ दाता इस समय रजवाड़ेमें दूसरा नहीं था। संवत् १४४२, सन् १४८६ ई० में जिस समय समस्त राजस्थानमें दुर्भिक्षकी अग्नि प्रबलतासे प्रज्वलित होकर अगणित जीवोंका प्राण संहार करती थी, राव भांडाने उस समय मुक्तहाथसे अन्न और धन दान करके अपनी अक्षय कीर्त्तिको उज्ज्वल किया था। कविने लिखा है, किं उस समस्त भारतवर्षव्यापी दुर्भिक्ष होनेके एक वर्ष पहिले बूँदीराज रावभांडा स्वप्न देखकर जान गये थे, अर्थात् उन्होंने स्वप्नमें महाकाल पड़ा हुआ देखा था। उन्होंने स्वप्नमें देखा कि अत्यन्त काले वर्णके भैंसे पर सवार हुआ काल आकर उनके सम्मुख उपस्थित हुआ। रावभांडाने कालको स्वप्नमें देखकर उसी समय ढाल तलवार लेकर कालपर आक्रमण किया। कालने कहा, " धन्य भांडा! मैं काल हूं मेरे शरीरमें तुम्हारी तलवारका आघात नहीं लगेगा सृष्टि भरमें एकमात्र तुम्हींने साहसमें भरकर मुझपर आक्रमण किया है। इस समय मै जो कहता हूं उसे श्रवण करो। मैं सम्वत् १५४२ में दर्शन दूंगा, समस्त भारतवर्ष मरुभूमि होजायगा; तुम पाहिलेसे ही धन धान्यका संग्रह करना प्रारंभ करना और जब दुर्भिक्ष पड़ैगा उस समय उस धान्यके द्वारा सबकी सहायता करना, कभी तुम्हारा धान्य समाप्त नहीं होगा। " यह कहकर काल उसी समय अन्तर्ध्यान होगया। राव भांडाने कालकी इस आज्ञापालन करनेमे शीघ्रतासे यत्न किया। उन्होने आसपासके प्रत्येक राज्योंसे बहुतसा धान्य संग्रह कर लिया। इस प्रकार एक वर्ष बीतगया। फिर इसी प्रकारसे दूसरा वर्ष व्यतीत हुआ, परन्तु इस वर्षमे वर्षा न हुई इससे शीघ्र ही समस्त भारतवर्षमे महा दुर्भिक्षने आकर दर्शन दिया। राव भांड़ा पहिला संग्रह किया हुआ धान्य जौ गेहूँ, चावल इत्यादि नाज बराबर अनाहारी प्रजाको दान करने लगे। अन्तमें भारतवर्षके दूरवर्ती देशके राजाओंने राव भांडाके निकटसे धान्यकी सहायता माँगी। राव भांडाने उनकी वह कामना पूर्ण करनेमें किंचित् विलम्ब नहीं किया। यद्यपि उस महा दुर्भिक्षके समयमें भारतके अगणित देशोंके बहुतसे मनुष्योने प्राण त्याग किये परन्तु बूंदी राज्यके सब श्रेणीके मनुष्य राज्यकी सहायतासे दुर्भिक्षके प्रबलकोपसे अपनी रक्षा करनेमे समर्थ हुए। राव भांडाके स्मरणके अर्थ आजतक " लंगरका गूघरी " नामसे बूँदीमे दीन दुःखियोंको धान्य वितरण किया जाता है।

यद्यपि राव भांडा परम दयाशील और परोपकारी पुण्यवान राजा थे; परन्तु विधाताने उनके भाग्यमें अन्तसमयमें अत्यन्त दुःख भोगना लिखा था। राव भांडाके

दो भाई इनसे छोटे थे समरसिंह और अमरसिंह, यह मुसल्मान धर्मका अवलम्बन करनेसे दिल्लीश्वरके प्रियपात्र होकर दिल्लीश्वरकी सहायतासे बूंदीराज्यको जय करनेमें अग्रसर हुए। राव भांडा प्रवल वलशाली होकर भी सम्राट्की शिक्षित सेनाके अधिक होनेसे कुछ न करसके। शीघ्र ही समर और अमरने बूँदीराज्यको जयकर लिया। यवन धर्मावलम्वी दोनो भ्राताओंके हाथमें बूँदीके पड़ते ही अन्तमें राव भांडाने मातोदा नामक स्थानमें जाकर पर्वत शिखर परसे गिरकर प्राण त्याग दिये, उन्होंने सव मिलाकर इक्कीस वर्षतक राज्य किया था। उक्त समर और अमरने यवन होकर समरकंदी और अमरकंदी नाम धारण कर एक साथ मिलकर ग्यारह वर्षतक बूँदीका राज्य किया था।

राव भांडा दो पुत्र छोड़ गये थे, एकका नाम नारायणदास था और दूसरेका नाम नरवद था। नरवद अन्तमें मातोदा ग्रामके अधीश्वर हुए। नारायणदास उस मातोदा गाँवमें रहकर जव अवस्था पर पहुँचे तभी इनके वीर हृदयमें पिताके राज्यके उद्धार करनेकी कामना प्रवल होगई। नारायणदासने शीघ्र ही पठार देशकी समस्त हाड़ाजातिको इकट्ठा करके कहा, कि हम क्या तो बूँदी राज्यपर अधिकार करेंगे, और नहीं तो रणभूमिमे अपना प्राण त्याग देंगे। सभी हाड़ा-जातिके प्रत्येक वीरने नारायणदासकी समान उक्त प्रतिज्ञाके करनेमें किंचित् भी विलम्ब नहीं किया। थोड़े ही दिनोंके पीछे नारायणदासने उक्त बूँदीपति दोनों यवन चचाओंके पास कहला भेजा, " कि मैं आपसे साक्षात्कर आपके चरणवंदन करनेकी अभिलाषा करता हूं। " नारायणदास अशिक्षित है, और एक सामान्य देशमे रहकर इतने वड़े हुए हैं, इस कारण उनसे कुछ अनिष्टकी संभावना नहीं है, यह विचार कर दोनो चचाओंने नारायणदासको बूँदीके महलमें चले आनेमे सम्मति देदी।

दोनो विधर्मी चचाओंकी अनुमति पाकर नारायणदास अत्यन्त अल्प संख्यक परम विश्वासी और महावली कितने ही अस्त्रधारी अनुचरोंके साथ बूँदी नगरके चौकमें आकर दिखाई दिये। वह अपने सेवकोको वहाँ ही गुप्तभावसे रखकर इकले महलकी ओरको चले। नारायणदासके दोनो चचा विपत्तिकी कुछ भी आशंका न करके अस्त्र-हीन हुए एक कमरेमे वैठे थे। नारायणदासके हृदय पर प्रतिहिंसाकी अग्नि भयंकर-रूपसे प्रज्वलित होरही थी। इस कारण खड्ग हाथमें लिये हुए उसकी संहारमूर्तिको देखते ही उनके दोनों चचा प्राणोके भयसे सुरंगके रास्तेसे भाग जानेके लिये वड़ी शीघ्रतासे कमरेसे चल दिये। नारायणदासने दोनो विधर्मी चचाओंके अभिप्रायको जानकर उसी समय क्रोधित हुए सिंहकी समान छलांग मारकर आगे वढ़. खड्गके प्रहा-रसे अपने चचा समरको पृथ्वीपर गिरादिया। उस अवसरमे अमर दूसरे कमरेमे न जासका था कि इसी अवसरमे नारायणदासने अपने तीक्ष्णभालेसे अमरके शरीरको वेध दिया। उसी समय वीर नारायणदासने अपने खड्गके आघातसे दोनोंका शिर काट कर उस रुधिरसे भीगेहुए शरीरको बूँदीमें लेजाकर देवीके मंदिरमे देवीके सन्मुख मुंडोका

उपहार दिया और जयशब्दका उच्चारण कर चौकमे स्थित अपने अनुचरोंको बुलालिया। अनुचर गण पहिले इशारेसे नारायणदासके बुलाते ही नंगी तलवारे लिये हुए नगरमें आये और उन्होने वड़ी शीघ्रतासे यवनोका विध्वंस करना प्रारंभ कर दिया । इस समय नगरवासी प्रत्येक हाड़ाजातिकी प्रजाने नारायणदासके साथ मिलकर बूँदीमें रहनेवाले प्रत्येक यवन वीरका प्राण नाश करके अवज्ञाके साथ उनके शवोको नगरकी हद्दसे दूर फेंक दिया । राव नारायणदासने अतुल वीरताके साथ यवनोका संहार करके अपने पिताकी राजधानी बूँदीपर अधिकार करलिया था, इसके स्मरणार्थ हाड़ा गण राव नारायणदासने महलके भीतर जिस कमरेमें समरके मारनेके समय खड्गका आघात किया था, तथा उस हत्याके समय कमरेमें स्थित जिस पत्थर पर वह खड्गके आघातसे गिरे थे। दशहरा पर्वोत्सवके समयमें उस आघात चिह्न युक्त रुधिरसे सने हुए पत्थरकी पूजा की जाती है[1] ।

कविके वर्णनसे जानाजाता है कि नारायणदास एक विराट्काय महा वलवान् वीरपुरुष थे । प्राचीन राजपूत वीरोंमे वहुतसे वीर भय किसको कहते हैं; इसको जानते ही नहीं थे नारायणदासके साथ भी भयका इसी प्रकारका सम्बन्ध था । वह कहाकरते थे, कि मै वड़ा हूँ, विपत्ति छोटी है । वास्तवमें नारायणदासने यौवन समयसे मृत्युतक जैसे असीम साहससे अपने वलविक्रमको प्रकाशित किया था इससे उनका वह गर्व-पूर्ण वचन सत्य वोध होता है, परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि वह असीम साहसी वीर पुरुष होकर भी एकमात्र अधिक अफीमके सेवन करनेसे समय २ पर अपनी सद्गुणावलीको भली भाँतिसे प्रकाशित न कर सके। वरन उनके उसी व्यसनके कारण एक २ समय पर अत्यन्त अप्रीतिदायक कारण उपस्थित होजाते थे । नारायणदासके समयमें समस्त रजवाड़ेमे अफीम सेवनकी रीति अत्यन्त प्रवल होगई थी । सर्वसाधारण राजपूत एक पैसेके मूल्यकी अफीमको सेवन करते थे । अनभ्यासियोंके पक्षमें उस बूँदी राज्यमें प्रचलित एक पैसेकी अफीमसे प्राण नाश होजाते थे परन्तु वीर तेजस्वी नारायणदास एक दफेमें सात पैसेकी अफीम खाते थे । इसी कारण अधिक अफीमके सेवन करनेसे अनेक प्रकारके अप्रार्थनीय काण्ड उपस्थित होजाते थे, इसीसे बूँदीमें आजतक नाना भाँतिके प्राचीन प्रवाद प्रचलित देखे जाते हैं ।

नारायणदासके सम सामयिक राणा रायमल्ल जिस समय चीतौड़के सिंहासन पर विराजमान थे, उस समय मांडू देशके पठानोंने चीतौड़पर आक्रमण कर किलेको घेर लिया, पूर्वसंधिके मतसे चीतौड़ पतिने नारायणदासको सेनासहित सहायता करनेके लिये वुला भेजा, वीर वपु नारायणदासने हाड़ा सेनादलके मध्यमेंसे ५०० वीरोको चुन लिया और उन्हींके साथ आप चीतौड़की ओरको चले । बूँदीसे चलकर पहिले दिन मार्गमे विश्राम करनेके लिये नारायणदास एक वृक्षके नीचे नित्त नियमानुसार

---

(१) कर्नेल टाड् साहब लिखते है कि बूँदीके प्राचीन महलमें सीढ़ीवाले कमरेके पार्श्वमें उन्होने वह पत्थरका टुकड़ा देखा था ।

अफीम सेवन कर नेत्रोंको मूँद कर सोरहे थे, और मक्खियाँ आ आ कर उनके मुखमें घुसरही थी। इसी अवसरमें एक तेलीकी स्त्री कुएँसे जल भरनेके लिये उसी वृक्षके नीचे आकर खड़ी हुई। उसने नारायणदासको देखकर एक सेवकसे पूछा कि "यह कौन है ?" उत्तर मिला कि "यही बूँदीके महाराव हैं, चीतौड़पतिकी सहायताके लिये वहाँ जारहे हैं।" इस पर उस रमणीने नारायणदासकी उस अवस्थाको देख कर कहा कि "हा भाग्य ऐसा बोध होता है कि महाराणाको और किसीकी सहायता न मिली जो कि इस नशेखोरकी सहायता माँगी है।" रजवाड़ेमें इस प्रकारका प्रवाद प्रचलित है. कि अफीमके सेवन करनेवाले नेत्र मूँदे रहते है. पर जो कुछ बात उनके कानमें कही जाती है उसको वह बडी जल्दी सुन लेते हैं। वास्तवमें उस स्त्रीकी उक्त उक्तिको सुनते ही अधखुले नेत्रोंसे मुख फैलाये हुए उस वीर श्रेष्ठ नारायणदासने शय्यासे उठकर उस स्त्रीके पास जाकर गंभीरस्वरसे पूछा "कि तुम क्या कहरही हो ?" तब वह नारायणदासकी भयकर मूर्तिको देखकर भयभीत हो क्षमा मागनेके लिये उद्यत हुई, नारायणदासने कहा कि "कुछ भय नहीं है, क्या कह रही थी सो कहो"। अब उस स्त्रीके हाथमें एक दीर्घ कठिन लोहेका दड था, नारायणदासने उस दंडको लेकर दोनो ओरसे पकडकर थोडे बलसे ही झुकाकर उस स्त्रीके गलेमें अलंकारकी समान पहरा दिया, वह अत्यन्त कठिन लोहेका दड दोनो ओरसे परस्परमें मिलकर स्त्रीके गलेमे हारकी समान पड़ गया, वीरश्रेष्ठने उसी समय स्त्रीसे कहा कि "मै जब तक राणाकी सहायता करके न लौट आऊं तवतक तुम उस लोहेके अलंकारको पहिरे रहना। यदि यवनोंमे ऐसा कोई वीरहो जो कि तुम्हारे गलेमेसे इसे निकाल सकै तो उससे इसको निकलवा लेना।" वास्तवमें तेलीकी स्त्रीके उस लोहके अलंकारको निकालनेका योग्य पात्र एक नारायणदासके अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं था।

जो हो, पठानगणोंने इस समय सेनासहित चीतौड़को चारोओरसे इस प्रकारसे घेर लिया था कि चीतौडसे एक प्राणीको भी बाहर होनेकी आशा नहीं थी। बूँदीके रावनारायणदासने पठारके गिरिसंकटमे होकर पाँचसौ वीर सेनाले रात्रिके समय हठात पठानोंके डेरोंमे जाकर शत्रुओका संहार करते २ पठानोके सेनापतिके डेरोमें प्रवेश किया। उनकी उस विराट्मूर्ति और हाड़ासेनादलका वह भयंकर हुंकार और संहारमूर्ति देखकर पठानोंकी सेना महाभयभीत हो डेरोंको छोडकर चारोओरको भागने लगी। वीर नारायणदास और उनके अधीनके हाड़ादलने उस समय मनकी साधसे पठानोका संहार करनेमे कसर न की। पाठानोंने चीतौड़के घिरते ही भागना प्रारंभ कर दिया, बूँदीके राजमे नगारे बजने लगे, चीतौड़के राजा रायमल्लने दूसरे दिन प्रातःकाल ही चीतौडके किलेकी दीवार परसे देखा कि समस्त पठान भाग रहे हैं, और राव नारायण दास सेना सहित आ पहुँचे हैं। महाराणा रायमलने महा आनंदित होकर उसी समय चीतौड़से बाहर जा नारायणदासको बड़े आदरभावके साथ ग्रहण कर जयजयकार करते हुए चीतौड़में प्रवेश किया। बूँदीके अधीश्वर नारायणदासके केवल पाँचसौ हाड़ा

सैन्यकी सहायतासे पठानोंको भगानेसे राणाके अधीनके सिसोदिया वीरसामन्त प्रगट रूपसे उनकी वीरताकी ऊँची प्रशंसा करने लगे । शीघ्र ही महलमें नारायण दासके सम्मानके लिये एक बड़ी भारी सभा हुई । उस सभामें मेवाड़के सभी सामन्तोंने बूँदीके महारावके प्रति सम्मान दिखाया, जिन महावीरकी सहायतासे चीतौड़की रक्षा हुई उन वीरको देखनेके लिये राणाके रानिवासकी स्त्रियां परदेके भीतरसे उनकी उस विराट्मूर्तिको देखने लगी । यद्यपि नारायणदास अफीमको अत्यन्त सेवन करते थे, और अफीम सेवन करनेमें अधिक प्रसिद्ध होगये थे, यद्यपि उनकी मूर्ति यथार्थ भीमकी समान थी, परन्तु राणाके भाईकी कन्याने उन महावीरको पतिरूपसे वरण करनेके लिये सखियोंके सामने अपनी अभिलाषाको प्रकाशित किया। दूसरे दिन यह समाचार राणाके कानमें भी पहुँचा । वीरश्रेष्ठ नारायणदासके द्वारा जिस प्रकारके उपकार हुए हैं, उनकी कृतज्ञता प्रकाश करनेके लिये अपनी भतीजीको उनके करकमलमें अर्पण कर उनका सम्मान बढ़ाना अवश्य कर्त्तव्य है, राणाने यह सिद्धान्त करलिया । इधर बूँदीके महाराज नारायणदासने भी महाराणाके वंशसे कन्या लेनेमे अधिक सम्मान जानकर शीघ्र ही उस विवाहमें अपनी सम्मति दी, बड़ी धूमधामके साथ विवाह होगया । नवीन विवाहिता बहूके साथ वीरश्रेष्ठ नारायणदास गौरवके साथ बूँदीको लौट आये । ऐसा भी प्रसिद्ध है कि वीरश्रेष्ठ नारायण दास दिनपर दिन अधिक अफीम सेवन करते थे, और इसी कारणसे नशेकी तरंगमें एक समय उन्होंने रात्रिको मेवाड़की राजकुमारीके अंगको क्षत विक्षत करके उसके अनुपम सौन्दर्यको नष्ट करदिया था । जब दूसरे दिन प्रातःकाल उन्हे चैतन्यता हुई तो देखा कि मेवाड़की राजकुमारी कुछ भी दुःखित नहीं हुई है, और उसने मेरा कुछ भी तिरस्कार नहीं किया है, तब उन्होंने स्वयं अपनेको धिक्कार दिया, और जिस पात्रमे अफीम थी उस पात्रको स्त्रीके हाथमें देकर कहा कि अब मैं कभी इस प्रकारसे अधिक अफीम सेवन करके ऐसा कुकर्म नही करूँगा । इस प्रकारसे वीर तेजस्वी नारायणदासने अपने पिताके राज्यको अधिक बढ़ा लिया था, और शांति स्थापन कर बत्तीस वर्षतक उस राज्यको शासन करके आप स्वर्गको चले गये।

नारायणदासके स्वर्ग चलेजाने पर उनके एकमात्र पुत्र सूर्य्यमल संवत् १५९० सन् १५३० ईसवीमें बूँदीके सिंहासन पर विराजमान हुए, कवि कर्णीदानने इस बातको भलीभाँतिसे लिखा है कि सूर्यमल भी अपने पिताकी समान दृढ़ बलिष्ठ और असीमसाहसी पुरुष थे, कवि लिखते हैं कि रामचन्द्र और पृथ्वीराजकी जिस भाँति जानुतक लंबी भुजा थी सूर्यमलकी भी दोनों भुजाएं उसी प्रकारसे महावीरोंकी समान जानुतक लम्बी थी ।

सूर्यमल राजछत्रके नीचे शोभायमान हुए; मेवाड़के राणाके वंशके साथ फिर एक वैवाहिक सम्बन्ध बंधन स्थापित हुआ । राव सूर्यमलने सूजाबाई नामकी अपनी एक भगिनीको चीतौड़के महाराज राणा रत्नसिंहके करकमलमें अर्पण किया, और राणा

(१) इस प्रकार लंबी भुजाओंवाले पुरुषको आजानुबाहु कहते हैं ।

रत्नसिंह भी अपनी वहिनको राव सूर्यमलके करकमलमे अर्पण कियो। इस दोनो ओरके विवाह होनेसे मेवाडके महाराजके साथ बूँदीराजकी दृढ़ आत्मीयता स्थापित होगई। परन्तु अत्यन्त दु:खका विषय है कि यह आत्मीयता अन्तमें महा शत्रुतामे परिणत हुई। कवि लिखते हैं कि राव सूर्य्यमल अपने पिता नारायणदासकी समान अत्यन्त अफीमची थे। एक समय राव सूर्यमल चीतौड़की राजधानीमें जाकर राजसभामे अधिक अफीम सेवन करनेसे नेत्रोको मूँदे हुए बैठे थे। कि इसी समयमे मेवाड़के पूर्वदेशके एक सामन्तने सूर्यमलको सोया हुआ जान कर हँसीसे इनके कानमे एक तिनका कर दिया। तुरन्त ही सूर्य्यमलने अपने दोनो नेत्र खोले और क्रोधित हुऐ सिंहकी समान उठकर अपनी तलवारके एक ही आघातसे उस सामन्तके शिरके दो खंड कर दिये। उस मृतक सामन्तके पुत्रके हृदयमे बदला लेनेकी अग्नि प्रबलतासे भड़क उठी। परन्तु सूर्यमलके अत्यन्त बलशाली वीर और महाराणाका परम आत्मीय जानकर उस समय उसने किसी भांति भी बदला लेनेका साहस न किया,परन्तु उसी समयमे उसके मनही मनसे प्रतिहिंसाकी अग्नि प्रबल होने लगी। मृतकसामन्तके पुत्रने सबसे पहिले सूर्यमलके प्रति महाराणा रत्नसिंहके विजातीय कोपको उत्तेजित करनेके लिये चेष्टाकी।उसने राणा रत्नसिंहसे कहा कि "सूर्यमल केवल अपनी भगिनी सूजावाईके साथ साक्षात् करनेकी इच्छासे आपके रनिवासमें नहीं गये हैं, उनके हृदयके भीतर अवश्य ही अन्य कोई दुरभिसंधि है।" पिछली एक घटनासे राणाके हृदयमे वह कथा प्रबलरूपसे अंकित होगई।

सुन्दरी सूजावाईने अपने स्वामी और भ्राताको परितोषरूपसे भोजन करानेके लिये स्वयं अनेक भांतिके व्यंजन बनाकर दोनोंको भोजन करनेके लिये रनिवासमे बुला भेजा। राणा रत्नसिंह, और सूर्य्यमल रनिवासमे भोजन करनेके लिये गये, सूजावाई दोनोको भोजन परोसकर स्वयं व्यंजन करनेके लिये बैठी।राजपूतानेमें नारी कुलमें सभीने जिस वंशमें जन्म लिया है वह पतिके वंशकी अपेक्षा उस पिताके वंशके गौरव और सम्मानकी रक्षा करना मुख्य जानती है। पिताके कुलकी यदि कोई निन्दा करने लगे, तौ वह उसको कदापि सहन नहीं करसकती। इसीसे पहिलेसे ही राजवाड़ोंमे अनेक अनिष्ट होते आये हैं। जब राणा और राव दोंनो भोजन करचुके तब सूजावाईने व्यंग वचनसे कहा, कि "हमारे भ्राताने सिंहके समान भोजन किया है, परन्तु मेरे स्वामीने तो मानों बालककी समान अन्न और व्यंजन लेकर खेल किया है"। जैसे ही राणाने यह वचन सुने कि वैसे ही वह अपने मनमे अत्यन्त क्रोधित हुए। उन्होंने समझा कि मानो उनके

---

(१) यह बात असंगत मालूम होती है। पहिले तो जब कि राणारायमलकी भतीजी नारायणदासको व्याही गई थी तब नारायणदासकी पुत्री सूजावाईका व्याह राणा रत्नसीके साथ होना अनुचित है फिर हिन्दूशास्त्रका राजपूतरीतिके अनुसार यह तो और भी अयोग्य संबंध है कि राणा रत्नसी भी अपनी बहिन सूर्य्यमलको व्याह दें। इसमें कवियोंकी कुछ गढ़ंत अवश्य है और विदेशी होनेके कारण टाड् साहब इस बातको समझ नहीं सके।

अपमानके लिये ही रानी सूजावाई और राव सूर्यमलने इस प्रकारसे व्यंग किया है। यह अनुभवकर वह प्रतिहिंसाका वदला लेनेके लिये उत्तेजित हुए। परन्तु राजपूतजातिके पक्षमें अतिथिके प्रति अभद्र आचरण वा उसका जीवन नाश करना महाकलंककारी जानकर राणाने उस समय उनसे वदला नही लिया। कुछही दिनके पीछे इस रहस्यसे ही सूजावाई अकालमे इस लोकको छोड़कर परलोकवासिनी हुई, और राव सूर्यमल भी मारे गये। और इसी काण्डकी प्रतिक्रियास्वरूपमें राणा रत्नसिंहने स्वयं भी प्राण त्याग किये।

राव सूर्यमल चीतौड़से विदा होकर वूँदीको जानेके लिये तैयार हुए तव राणा रत्नसिंहने सूर्यमलसे कहा कि " आगामी वसन्तऋतुमें फाल्गुनोत्सवके समयमे हम वूँदीके वनमे शिकार खेलनेके लिये आवैगे। " राव सूर्यमलने यह सुनकर आनंद प्रकाश कर राणाको निमंत्रण भेजा। कुछ दिनके पीछे फाल्गुनोत्सवके आनेपर राणा रत्नसिंह अपनी सेना और सामन्तोके साथ पठारके मार्गसे वूँदीकी ओरको चले। चम्वल नदीके पश्चिम किनारे नान्दता नामक स्थानके गहनवनमें मृगयाकी जायगी पहिले यह निश्चय होगया था। उस वनमे अगणित पशु थे सिंहसे लेकर सामान्य खरगोश तक रहते थे। राणाके वहाँ पहुँचते ही वूंदीके अधीश्वर राव सूर्यमल भी सेनासहित उनसे आमिले। तुरन्त ही दोनो महाराज सेनासहित मृगया करनेके लिये वाहर चले। सवसे पहिले सेनादल दो भागोमे विभक्त होकर आगे २ भयंकर नादसे चीत्कार करते हुए जंगलमे जाने लगे। उनके उस भयंकर स्वरसे तथा ताड़नासे सिंह व्याघ्र, भालू अनेक जातिके मृग, नीलगाय, शृगाल, खरगोश, और छोटे २ वनके कुत्ते शीघ्र ही व्याकुल होकर चारों ओरको भागने लगे।राजपूतवीर उस भयंकर हिंसकजन्तुओ से युक्त गहन वनमे जाकर महा आनंदित हुए।

उसी सघन वनमे कापुरुप राणा रत्नसिंहने अपनी पहिली प्रतिहिंसाको सफल करनेकी चेष्टा की। दोनोके अधीनकी सेना दो भागोमे विभक्त होकर वनके दोनों ओरसे पशुओको भगाने लगी। और दोनों राजा वनके अन्य प्रान्तमे इस प्रकारके स्थानमें घोड़े पर खड़ेहुए कि भागेहुए सभी पशु उनके सम्मुखसे निकलै। उस समय दोनो राजाओके साथ केवल दो दो चार २ सेवक थे; पाठकगणोको स्मरण होगा कि वूँदीके रावके कानमे तिनका देनेसे उन्होंने मेवाड़के पूर्वदेशके एक सामन्तकी हत्या की थी और उससामन्त पुत्रने वदला लेनेके लिये मनही मनमें दृढ़ की प्रतिज्ञा थी। इस घटनास्थलमें राणा रत्नसिंहके साथ वह सामन्त पुत्र भी उपस्थित था। राणा रत्नसिंह उस सामन्तपुत्रको वुलाकर वोले कि "समय आगया है वराहका शिकार करिये "। कुछही समयके पीछे उस सामन्त पुत्रने धनुप खैचकर तीव्र वेगसे राव सूर्यमलकी ओरको एक वाण छोड़ा,परन्तु तीक्ष्ण दृष्टि राव सूर्यमलने उसकी ओरसे वाण आता हुआ देखकर उस वाणको अपने धनुपसे वाण छोड़कर व्यर्थ करदिया। उन्होने उस समय भी यह नही विचारा कि वदला लेनेके लिये राणा और उक्त सामन्त पुत्रने

षड्यंत्र करके इस बाणको छोड़ा है। परन्तु प्रथम बाणको व्यर्थ हुआ देखकर राणाके धाभाई (धात्री) पुत्रने सूर्यमलकी ओर दूसरा बाण छोड़ा,तब तो सूर्यमल चैतन्य होगये, और उन्होंने समझा कि हमारा प्राण नाश करनेके लिये इस षड्यंत्र जालका विस्तार हुआ है। राव सूर्यमलके उस दूसरे बाणको व्यर्थ न करते २ कापुरुष राणा रत्नसिंहने घोड़ेको शीघ्रतासे आगे बढ़ा बूंदीके अधीश्वर राव सूर्यमलको खांड़ेके आघातसे पृथ्वीपर गिरा दिया। भलीभाँतिसे घायल होकर राव सूर्यमलने पृथ्वीपरसे उठ अपने घावो पर पट्टी बाँधी, बदला भलीभाँतिसे लेलिया है यह विचार कर राणा उसी समय उस स्थानको छोडनेके लिये उद्यत हुए, राव सूर्यमल उसी अवस्थामे सिंहकी समान शब्दसे बोले "भागते क्यो हो ! निश्चय जानलो कि अब मेवाड़का पतन बहुत पास आगया है।" राणाने इनकी बातपर कुछ भी ध्यान न देकर शीघ्रतासे घोड़ा चला दिया, पूर्वोक्त सामन्तपुत्रने उनके पीछे २ जाकर कहा "अभी कार्य सम्पूर्णतासे शेष नहीं हुआ है, राव सूर्यमल अभी जीवित हैं। तुरन्त ही कायर पुरुषोंकी समान राणा रत्नसिंहने घोड़ेपरसे गिरेहुए सूर्यमलकी ओरको अपना घोड़ा चलाया। राणाने सम्मुख आकर जैसे ही फिर सूर्यमलके प्राण नाश करनेके लिये दूसरी बार खड्ग उठाया कि वैसे ही क्रोधित हुए सिंहकी समान घायल सूर्य्यमलने अन्तिम बलके साथ उठकर राणाके पिछले भागको पकड कर बड़ी शीघ्रतासे उनको घोड़े परसे पृथ्वीपर गिरा दिया, बहुत देरतक दोनो वीरोंकी कुस्ती होती रही फिर कुछही समयके पीछे राणाके वक्षस्थल पर बैठकर वीर तेजस्वी सूर्यमलने एक हाथसे तो राणाका गला पकड़ा और दूसरे हाथसे अपनी कमरमेसे तलवार निकाली, देखो, कैसा बदला लिया कि कुछही समयके बीचमे घायलहुए राव सूर्यमलने हत्याकी अभिलाषा करनेवाले राणा रत्नसिंहके हृदयमे अपनी उस तीक्ष्ण धारवाली तलवारको घूँस दिया। राणाका प्राणपक्षी तुरन्त ही उड़गया। यद्यपि वीर सूर्यमलकी प्रतिहिंसा सफल होगई थी, परन्तु उन्होने उसी समय शत्रुके मृतक शरीरके ऊपर गिरकर प्राण त्याग कर दिये।

कवि लिखते हैं कि "शीघ्र ही यह हृदयभेदी शोचनीय संवाद बूंदी नगरके रनिवासमे जा पहुचा। वीरश्रेष्ठ राव सूर्य्यमलकी माता पुत्रके मृतक होनेका समाचार सुनकर वीरांगनाओंकी समान बोली, "क्या सूर्य हतहोगया है? क्या वह इकला ही मृतक हुआ है, अवश्य ही किसी शत्रुके प्राण लेकर वह इस संसारसे विदा हुआ होगा।" रानी-जिस समय वीरमाताकी समान यह वचन कहने लगी थी, इस समय असीम मातृस्नेह उद्वेलित होगया, और उसके दोनो स्तनोसे दूध निकल कर प्रबलवेगसे पृथ्वीको प्लावित करने लगा"।

रानी केवल पुत्रके मारे जानेका समाचार सुनकर अधीर होगई थी और पुत्र शत्रुका संहार न करसका यह विचारकर स्वामीवंशको कलंकित होता हुआ देखकर अपने मनमें अत्यन्त दुःखित हुई थी, परन्तु उसी समयमें एक मनुष्यने रनिवासमें जाकर वृद्धारानीसे कह दिया कि राव सूर्यमलने अपने शत्रु राणा रत्नसिंहके प्राण

नाश कर अपना बदला लिया है। यह सुनते ही वीर माताका हृदय उसी समय आनंदसे भरगया। कुछही समयके पीछे बूंदी राज्य और चीतौड़के राज्यमें फिर शोचनीय वियोगान्त अभिनय होगया। राव सूर्यमलने राणा रत्नसिंहकी भगिनीका पाणिग्रहण किया था। उन दोनों राजबालाओंने मृतक पतियोंके साथ प्रज्वलित चितानलमें अपने जीवनकी आहुति दी। बूंदीके महाराज और चीतौड़के महाराज जिस स्थानपर मारे गये, थे उसी स्थानपर दोनोंके समाधि मंदिर बनाये गये, तथा सूजाबाईका समाधिमंदिर शिखरके ऊपर स्थापित हुआ। इस स्थानका दृश्य जैसा परम रमणीय है, उक्त समाधिमंदिर भी उसी प्रकारसे हृदयमें इस वियोगान्त अभिनयकी विचित्र स्मृतिको जागृत करता है।

वीर तेजस्वी सूर्य्यमलके मारे जाने पर उनके पुत्र सुरतान सम्वत् १५९१, सन् १५३५ ई०में बूंदीके सिंहासन पर विराजमान हुए। मेवाड़के शक्तावत् सम्प्रदायके आदिपुरुष शक्तसिंहकी एक कन्याके साथ सुरतानका विवाह हुआ था। इसी समयमें बूँदीराज्यमें तांत्रिक शैवियोका भयानक प्रादुर्भाव हुआ। बहुतसे राजपूत उन तांत्रिकोंके दलमें नियुक्त होकर रणदेव महाकालभैरवकी, उपासनामें नियुक्त हुए। तांत्रिक अनुष्ठानावली जिस प्रकार महा भीतिदायक और लोमहर्षणकारी थी, उसी प्रकारसे वह नरबलिदानका एक साक्षात् नरपिशाचकी समान समाजके भयस्वरूप गिनेजाते थे। राव सुरताननने स्वयं तांत्रिकदलमें मिलकर महाकाल भैरवके मंदिरमें अपनी प्रजाका बलिदान करना आरंभ किया, इससे सामन्त तथा उनकी प्रजावर्ग सभी उनसे अप्रसन्न होगये, और सभीने एकताका अवलम्बन करके शीघ्र ही उनको सिंहासनसे रहित करदिया। सूरतानको चम्बलके किनारे एकमात्र छोटासा ग्राम रहनेके लिये मिला, उन्होंने उस ग्रामका नाम सुरतानपुर रक्खा। राव सुरतानके कोई पुत्र नहीं था, इस कारण बूंदीके सामन्तोंने परामर्श करके बूँदीके पूर्वतन अधीश्वर राव भांड़ाके दूसरे पुत्र नरबुधके ज्येष्ठ तनय अर्जुनको मातोंदासे बुलाकर बूँदीके सिंहासन पर अभिषिक्त किया।

राव अर्जुन बूँदीके सिंहासन पर अभिषिक्त होकर नियम सहित राज्य पालन करने लगे। हाड़ाजातिके पूर्ववर्ती राजाओंकी समान राव अर्जुन भी महाबलशाली और असीमसाहसी वीर पुरुष थे। राजपूतोंमें एक समय कैसा महानुभाव विराजमान था। यदि भारतवासियोंमें किसी कुटुम्बके साथ अन्य परिवारकी शत्रुता होगई, तब हम वंशानुक्रमसे उस शत्रुताको पोषण कर एक दूसरेका अनिष्ट करनेमें किसी प्रकारकी त्रुटि न करेंगे। परन्तु चीतौड़के महाराणा रत्नसिंह और बूँदीके महाराज राव सूर्यमल परस्परके वैरभावसे ही एक दूसरेके द्वारा मारेगये। राव अर्जुन और रत्नसिंहके पुत्र नवीन राणा परस्परकी उस शत्रुताको भूलकर सद्भावके सूत्रमें बँध गये। गुजरातके बहादुरशाहने जिस समय चीतौड़को घेर लिया था, उस समय जिस हाड़ाजातिके अधीश्वर चीतौड़पतिकी सहायताके लिये सेनासहित उस युद्धमें लिप्त थे, और जो सेना चीतौड़के

किलेके एक बुर्जकी रक्षामें नियुक्त होनेके समय शत्रुओंकी गोलीसे भस्मीभूत होगई थी, मेवाड़के इतिहासमें उसका वर्णन होचुका है। यह राव अर्जुनही वह असीम साहसी हाड़ाराज थे। यह राव अर्जुनही जिस समय प्रबल पराक्रमके साथ चीतौड़के एक बुर्जकी रक्षामें नियुक्त थे, उस समय बहादुरशाहने बुर्जके नीचेके भागमें सुरंग लगवाई, और उसके भीतर बारूद भरकर आग लगादी। राव अर्जुनने सम्मुख विपत्तिको आया हुआ देखकर कहीं न जाकर नंगी तलवार हाथमें ले वहीं प्राण त्याग दिये। हाड़ा कविने वीरश्रेष्ठ अर्जुनकी वीरताकी अत्यन्त ही प्रशंसा की है। मेवाड़के कवियोंने भी उस वीरकी कीर्तिको कीर्तन करनेमें त्रुटि नहीं की है। कवि लिखते हैं,–

सोर(१) कियो बहुजोर। घर परबत आड़ी सिला ॥
तैं काटी तलवार। अधिपतिया हाड़ा अजो(२) ॥

इसका अर्थ यह है कि अर्जुनने उस सुरंगसे निकलीहुई अनलराशिमें एक पत्थर को रख उस पर बैठकर तलवार निकाली, समस्त जगत्‌में उनका वह स्वर्गारोहण, अत्यन्त आश्चर्यके साथ देखा।

अर्जुनके चार पुत्र उत्पन्न हुए, इनमें सबसे बड़े सुरजन संवत् १५९८, सन् १५५५ ई० में पिताके सिंहासन पर विराजमान हुए।

तीसरा अध्याय ३.

राव सुरजनको रणथंभौरके किलेकी प्राप्ति–बादशाह अकबरका उक्त किलेको घेरना–विचित्र उपायसे अकबरका उक्त किलेमें प्रवेश–राव सुरजनका बादशाहको उस किलेका देना–राव सुरजनका अकबरकी अनुगत्यता स्वीकार करना–संधिबंधन–अकबरका सुरजनको राव राजाकी उपाधि देना–गोड़वालाको जय करनेके लिये सुरजनका जाना–जयप्राप्ति–बादशाहका सम्मान प्रदान–राव भोजका अभिषेक–अकबरका गुजरातको जय करना–हाड़ाराज भोजका सूरत और अहमदनगरको जीतनेके समय महावीरता प्रकाश करना–भोजका अपमान–राव रतन–सम्राट् जहाँगीरके

(१) सोर शब्दका अर्थ "बारूद" है।

(२) कविने छन्दके सुभीतेके लिये अर्जुन * शब्दको अज कह कर लिखा है।

* अर्जुनके दूसरे पुत्रका नाम रामसिंह था, इनके वंशधर राम हाड़ानामसे विख्यात थे। चौथे पुत्रका नाम अखैराज था, इनके वंशके अखैराज पोता नामसे विख्यात हैं छोटे कुमारका नाम कांदल था उनके वंशज जसाहाड़ा नामकी सम्प्रदायसे विख्यात है।

विरुद्धमे विद्रोह–राव रतनका विद्रोहियोंको पराजित करना–हाड़ावतीका विभागकरण–माधवसिंहको कोटेराज्यकी प्राप्ति–राव रतनका प्राणनाश–उनके उत्तराधिकारी गोपीनाथकी हत्याका वृत्तान्त–राव छत्रशालका अभिषेक–छत्रशालको आगरेके शासनकर्त्ताकी पदप्राप्ति–दक्षिणमें गमन–दौलतावादके किले पर अधिकार–गुलवरगा–धामूनी–शाहजहांके पुत्रोंमें युद्ध–हाड़ाराजका विश्वासपालन–उज्जयनी और धौलपुरका युद्ध–छत्रशालकी विषम वीरताका प्रकाश करना–छत्रशालकी मृत्यु–राव भावसिंहका अभिषेक–बूंदीपर आक्रमण–बादशाहकी सेनाकी पराजय–राव भावसिंहका फिर बादशाहकी कृपापाना–उनका औरंगाबादके शासनकर्ता पदपर नियोग–उनकी मृत्यु–राव बुधसिंहका जाजौ नामक स्थानमें समर–कोटाराजकी मृत्यु–राव बुधसिंहका वीरता प्रकाश करना–बहादुरशाहके पक्षमें जयप्राप्ति–बूंदीराजकी राजभक्ति–भागजाना–आमेरराजके साथ विवाद–विवादका कारण–आमेरराजकी ऊंची आशा–आमेरराजका षड्यंत्र–समर–रावबुधसिंहका भागना–कोटेराजका बूंदीके बहुतसे देशोंको अपने अधिकारमें करना–बुधसिंहकी मृत्यु–उनके दो पुत्र।

राव सुरजनसिंहके अभिषेकके समयसे बूंदीकी राजनैतिक अवस्था बदल गई। बूंदीके महाराज इतने दिनोतक अपने राज्यमे सब प्रकारसे स्वाधीनताको भोगते आये थे; कोई भी किसी राजाके अधीनकी जंजीरमें नहीं बँधा, केवल स्वजातीय और आत्मीय जानकर उन्होने मेवाड़के महाराणाके प्रति सम्मान दिखाया था, और महाराणाके विपत्तिमें पड़ने पर वे सेनासहित उनकी सहायता करते थे। परन्तु राव सुरजन पिताके सिंहासन पर विराजमान होकर अपने पूर्वपुरुषोंकी समान केवल बूंदीराज्यमें ही नहीं, एक मात्र रजवाड़ेमे ही नहीं, वरन समस्त भारतसाम्राज्यमे राजनैतिक अभिनय करनेके लिये सबसे पहिले अग्रसर हुए। उनके समयसे बूंदीके राजवंशने यवनशासनके समयमे भारतसाम्राज्यके राजनैतिक क्षेत्रमे ऊंची प्रशंसाके साथ अपने वंशके गौरवकी गरिमाको और बूंदीके सामर्थ्यकी प्रतिपत्तिको धीरे २ बढ़ालिया था।

बूंदीके राजवंशकी कनिष्ट शाखामे उत्पन्न सामन्तसिंह नामक एक सामन्त इस समय बूंदीराज्यका विशेष विख्यात मनुष्य था। सेरशाहका शासन लुप्त होनेके पीछे उक्त सामन्तने वेदलाके चौहान सामन्तके साथ मिलकर रणथंभोर नामक अत्यन्त प्रसिद्ध किलेके अफगान शासनकर्ताओंके किलेको छोड़ देनेके लिये पत्र लिखा। अफगान शासनकर्ताने विशेष चिन्ता करनेके पीछे शीघ्र ही उस किलेको सामन्तसिंहके हाथमें अर्पण करदिया। सामन्तसिंहने राव सुरजनसिंहको वह किला देदिया। बूंदीराजके अधीनमें ऐसा अभेद्य और प्राचीन प्रसिद्ध किला उनके अधीनके भूखंडमे दूसरा नहीं था। उस कारण राव सुरजनसिंहने उस देश और किलेको पाकर सामन्तसिंहसे विशेष संतुष्ट हो उनको नगरके निकट भूवृत्तिदान की। सामन्तसिंह एक महाबलशाली वीर थे उनके वंशधर उनके नामसे सामन्त हाड़ा नाम प्रसिद्ध है।

वेदलाके जिन चौहान सामन्तोंने उक्त किलेको लेनेके समयमें विशेष सहायता की थी, उन्होंने राव सुरजनके समीप यह प्रस्ताव किया कि राव सुरजनको मेवाड़के अधीन रूपसे उक्त किलेकी रक्षा करनी होगी। राव सुरजनने इसमें सम्मत होकर रणथंभोरके किलेपर अधिकार करलिया। यह रणथंभोरका किला और उसके

अधीनके देशके बहुतसे पुरुष अजमेर राज्यके अधीनमें थे, चौदहवीं शताब्दीमें बीसलदेव के वंशमें उत्पन्न महावीर हमीरके शासन समयमें यह किला उनके पाससे प्रबल युद्धके पीछे छीन लिया गया था। इस समय वही किला उक्त प्रकारसे उस चौहानजातिके हस्तगत होगया।

मुगल कुलतिलक अकबरने भारतके सिंहासन पर विराजमान होकर इस प्राचीन किले तथा रणथंभोरपर अधिकार करनेके लिये विशेष अभिलाषा कर स्वयं सेना सहित उस किलेको जाघेरा। वीर तेजस्वी सुरजनने अपने असीम बलविक्रमको प्रकाश करके यवन बादशाहकी अगणित सेनाके आक्रमणसे उस किलेकी रक्षा की थी। बादशाह अकबर कुछ कालतक सेनासहित उक्त अभेद्य किलेकी दीवारोंको विध्वंस करते रहे, अंतमें जब देखा कि इसमें प्रवेश करनेका कोई उपाय नहीं है और राव सुरजनने भी आत्म समर्पण करनेके कुछ चिह्न न दिखाये, तब यह हतउद्योग होगये। और कुछ दिन इस प्रकारसे व्यतीत किये; तब आमेरके महाराजा भगवान् दासने तथा उनके पुत्र मानसिंहने इस समय दिल्लीके बादशाह अकबरकी अनुगत्यता स्वीकार की, और इसी समय भगवान्‌दासने अकबरको अपनी एक कन्या देकर राजपूतजातिके पवित्र रुधिरको कलंकित करदिया।

बादशाह अकबर किसी प्रकार भी रणथंभोरपर अधिकार न करसके। मानसिंह अन्य उपायसे राव सुरजनको चीतौडपतिकी अनुगत्यता छुटा कर उक्त किलेको बादशाहको अर्पण करनेके लिये तैयार हुए। यदि प्रबल शत्रु भी आतिथ्यकी प्रार्थना करता तो राजपूत जाति प्राणतक देकर उसके अतिथिसत्कारमें तथा आश्रय देनेमें किसी प्रकार की कसर न करती। मानसिंहने राव सुरजनसे आतिथ्यकी प्रार्थना की, बूँदीके महाराजने उनको स्वजातीय राजपूत और राजवंशधर जानकर विना कुछ कहे सुने रणथंभोरके किलेमें बुलालिया। बादशाह अकबरने कपटभेष धारण कर साधारण अनुचरोंकी समान सोटा हाथमें लिये मानसिंहके साथ विना बाधाके उस किलेमें प्रवेश किया। मानसिंह किलेमें जाकर जिस समय राव सुर्जनके साथ बातचीत कररहे थे, उस समय राव सुर्जनके चाचाने कपटभेषधारी अकबरको पहिचान लिया और तुरन्त ही उनके हाथसे सोटा छीन कर उनको एक ऊंचे सिंहासन पर बैठाया। धीरचेता अकबरने उसी समय सुरजनको बुलाकर कहा, "राव सुरजन! इस समय क्या करना उचित है?" राजा मानसिंहने राव सुरजनसे कहा कि "आप चीतौडपति राणाकी अधीनता छोडकर रणथंभोरके किलेको बादशाहके करकमलमें अर्पण कीजिये। आपको बादशाहकी

---

(१) प्रसिद्ध चंदकविके एक वंशधरने उक्त हमीरकी वीरता प्रकाशक एक महाकाव्य लिखा है, वह काव्य हमीररासा नामसे विदित है।

(२) हाडा जातिके कविने इस स्थानपर मानसिंहको कलियुगकी प्रतिकृतिरूपसे वर्णन किया है, वह लिखते हैं कि मानसिंहने यवन सम्राट्‌की अनुगत्यता स्वीकार की थी, और उनके साथ वैवाहिक सम्बन्ध बंधन होनेसे राजपूतोंके पवित्र चरित्र और सामाजिक आचार व्यवहार बदल गये थे।

वश्यता स्वीकार करते ही महा ऊंचा सम्मान प्राप्त होगा। आपको ५२ देशोंके शासन कर्ताका पद दिया जायगा, आप उन सबदेशोकी समस्त आमदनीको उपभोग करैंगे, बादशाह उस आमदनी और खर्चका कोई .हिसाब आपसे नहीं लेंगे, परन्तु नियमित रूपसे आपको समस्त सेनाके साथ बादशाहकी आज्ञापालन करनी होगी। इसके अतिरिक्त आप और जो कुछ न्यायसंगत प्रार्थना करैंगे, बादशाह उसको पूर्ण करनेके लिये तैयार है" वास्तवमे राजा मानसिहने बादशाहकी ओरसे जो अनेक प्रकारके लोभ दिखाये उनको अवश्य ही ऊंचा कहना होगा। शीघ्र ही उस स्थानपर संधिपत्र लिखना प्रारंभ हुआ। बादशाह अकबरने उस संधिपत्रपर हस्ताक्षर कर दिये। उस संधिपत्रका सारामर्म नीचे लिखा गया है, पाठक इसको पढ़कर भली भांतिसे जान जांयगे कि राव सुर्जनने किस प्रकारके उपायसे जातीय स्वाधीनता और अपने स्वत्वकी रक्षा की थी।

संधिपत्रकी पहिली धारा—कि बूंदीके राजा किसी समय भी दिल्लीके साम्राट् वंशको कन्या नहीं देंगे।

दूसरी धारा-जिजियाकर नहीं दिया जायगा।

तीसरी धारा-बूंदीके महाराजको बादशाह कभी भी अटकके बाहर युद्ध करनेके लिये न भेज सकैंगे।

चौथी धारा-नौरोजा पर्वके उपलक्षमें दिल्लीके बादशाहके महलमें जो मीना बाजार नामकी सामिति है, और उस समितिमें जो राजपूत राजा तथा सामन्तोंकी अंत:पुरवा-सिनी स्त्रियोंको भेजनेंकी विधि है, बूंदीके अधीश्वर, और उनके अधीनके सामन्तोंकी अंत:पुरवासिनी स्त्रियोंको उस मीनाबाजारमें नहीं बुलाया जायगा।

पाचवीं धारा-बून्दीके महाराज दीवान आथमे हाथियारोंसे सजे हुए जासंकेंगे।

छटवीं धारा-उनके पवित्र देवस्थोंपर कोई व्याघात न किया जायगा।

सातवीं धारा-बूंदीके अधीश्वर और उनके अधीनके सामन्त किसी समय सेनाके साथ किसी हिन्दूराजाके अधीनमे नियुक्त नहीं होसकैंगे।

आठवी धारा-सम्राट्के अधीनस्थ राजाओंकी अश्वारोही सेनादलके अश्वोंपर जो बादशाहका चिह्न अंकित किया जाता है बूंदीके अश्वारोहियोंके अश्वोंपर उस प्रकारका चिह्न नहीं दिया जायगा।

नौवी धारा-जब बूंदीके महाराज दिल्लीमें जांयगे तो दिल्लीके राजमार्गसे तथा महलके लाल दरवाजे तक नगाड़े बजनेके साथ २ जासकैंगे।

दशवी धारा-बूंदीके महाराज जिस समय बादशाहके सम्मुख जांयगे उस समय वह घुटने झुकाकर सम्मान नहीं दिखावैंगे।

उपरोक्त संधिपत्रके तैयार होजाने पर बादशाह अकबरने राव सुरजनको पुरस्कारस्वरूपमें हिन्दुओंके पवित्र तीर्थक्षेत्र काशीधाममे एक महल बनानेकी आज्ञा

---

(१) कर्नल टाड् साहबने बूंदीके रावराजाके द्वारा लिखेहुए जिस इतिहासको पाया था। उन्होंने उसीका अविकल अनुवाद इस स्थानपर किया है, पिछले समस्त अंश रावराजाके द्वारा लिखे हुए हैं।

दी। हिन्दूराजाओंके पक्षमे तीर्थक्षेत्रमे रहनेके लिये अज्ञानकी प्राप्ति कोई सामान्य नहीं थी। राव सुरजनके पितृपुरुष अवतक मेवाड़पति राणाकी अनुगत्यता स्वीकार करते आये थे, राव सुरजनने इतने दिनोके पीछे उस अनुगत्यताकी जजीरको खोल कर यवन वादशाहकी अधीनता स्वीकार की। वास्तवमें इस समय प्रवल प्रताप-शाली अकवरके प्रचंड शासनसे मेवाड़पति वीरोंमें शिरोमणि महाराणा प्रतापसिंह, राज्यसे रहित होकर वनमे निवास करते थे। इस कारण राव सुरजनने उनकी उस दुर्गतिको देखकर मुगलवादशाहकी सहायतासे अपने भाग्यके सूर्यको उदयकर भविष्यके वंशधरोंके गौरवकी गरिमाका मार्ग साफ करदिया, बूँदीके अधीश्वरगण यहाँतक केवल "राव" की उपाधि धारण करते आये थे। किन्तु इस समय वादशाह अकवरने सुरजनको "रावराजा" की उपाधिसे विभूषित किया। राव राजा सुरजन इसी समयसे राजनैतिक क्षेत्रमे प्रशंसनीय अभिनय करनेके लिये प्रवृत्त हुए।

सम्राट् अकवरने सवसे पहिले रावराजा सुरजनको सेनासहित सेनापति पदपर वरणकर गौड़पतिको दमन करके उनके वासस्थान गोंड़वाना देशको जय करनेके लिये भेजा। वीरश्रेष्ठ सुरजनने वलशाली हाड़ादलके साथ प्रवल युद्धके पीछे गोंड़वाना पर आक्रमण कर गोड़ोंकी राजधानी वाड़ीपर अधिकार करलिया। उस गोंडवानाके जयके चिह्न स्वरूपमें राव सुरजने उक्त राजधानीमे अपने नामसे "सुरजनपोल" नामका एक वड़ा दरवाजा वनवा दिया। वह आज भी उसी नामसे पुकारा जाता है। गोंडवानाकी जयके पीछे राव सुरजन गोंडोंके प्रधान २ नेताओंको वंदी करके सम्राट् अकवरके सामने लेगये। परन्तु उन्होंने दयालुचित्तसे उनको मुक्तिदान तथा राज्यके कितने ही अंग प्रदान करनेके लिये वादशाहसे अनुरोध किया, शीघ्र ही उनकी प्रार्थना पूर्ण की गई। राव सुरजनने उक्त पहिले युद्धमे प्रशंसनीयरूपसे जय प्राप्त की इससे वादशाह अकवरने उनसे अत्यन्त संतुष्ट होकर उनको पवित्र तीर्थ वाराणसी और चुनार यह दो स्थान त॰ः और भी पाँच देशोका अधिकार दिया। सवत् १६३२, सन् १५७६ ई० मे अर्थात् जिस वर्षमें मेवाड़के राणा प्रतापने शाहजादा सेलीमके विरुद्ध हलदीघाटीपर चिर स्मरणीय महा युद्ध उपस्थित किया था, उसी वर्षमें राव सुरजनको यह पुरस्कार मिला।

रावराजा सुरजनने नव प्राप्त वाराणसीधाममे रहकर इस प्रकारके नियमसे शासनकार्य चलाया कि क्या प्रशंसा करें, ऐसी दया, ऐसे विचार और उदारताके साथ शासनकार्यकी रीति नियत की कि उससे समस्त हिन्दूजातिका महा उपकार हुआ। एक ओर तो हिन्दूधर्मके प्रति अत्याचार लोप होगये और दूसरी ओर हिन्दू निश्चिन्त भावसे रहने लगे। पहिले इस देशमें चोर और डॉकुओंका भयानकरूपसे प्रादुर्भाव था,

(१) शाहजादा सलीम इस लड़ाईमें नहीं था। उस समय उसकी अवस्था केवल छः वर्षकी थी।

धन प्राण लेकर सभी शंकितभावसे रहते थे, परन्तु राव सुरजनके शासन गुणसे वह चोर तस्करोंका भय एकबार ही दूर होगया और चारोंओर स्थायी शान्ति स्थापित होगई। राव सुरजनने वाराणसी नगरमे और विशेष करके वाराणसीके जिस स्थानमे वह रहते थे, उस स्थानमें अत्यन्त रमणीय महल और सर्वसाधारणका उपयोगी ८४ भिन्न स्थान वना दिये, तथा गंगाजीके किनारे स्नान करनेके लिये २० घाट वनवाये। इससें उनका वहुत धन खर्च हुआ अधिक क्या कहै, राव सुरजन अपने शासनगुणसे सभीके प्रियपात्र होगये। उन्होने उसी वाराणसी धाममे प्राण त्याग किये उनके तीन पुत्र उत्पन्न हुए (१) राव भोज, (२) दूदा, सम्राट् अकबर इनको लकड़खां नामसे पुकारा करते थे, और (३) रायमल। रायमलको पलायता नगर, और उसके अधीनके देश प्राप्त हुए और किसी समयमे उनके अधीनमे कोटा राज्य होगया।

पूर्वोक्त समयमे बादशाह अकबर दिल्लीसे राजधानी उठाकर आगरेमें लेगये। अकबरने आगरेको विस्तारित और शोभायमान करके अपने नामके अनुसार उसका नाम अकवरावाद रक्खा। अकवरावादमें जानेके पीछे बादशाह अकवरने गुजरातको जीतनेका विचार किया, और वहां वहुतसी सेना भेजी। पीछे स्वयं कितनी ही निर्वाचित ऊंटपर चढ़ीहुई सेनाके साथ वहां गये। मरुक्षेत्रके राजपूत राजगण जिस प्रकारकी रीतिसे एक २ ऊंटकी पीठ पर दो २ आसन स्थापन कर, दो २ जनोंके साथ सेनाको बैठाल कर लेजाते हैं, अकबर उसी रीतिसे पांचसौ सेना प्रधानतः राजपूतसेनाको भी ऊंटोंपर चढ़ाकर लेगये, और उसी सेनादलके नेतापदपर रावभोज और उनके भ्राता दूदा नियुक्त होकर गये। बादशाहकी प्रधान सेनाने पहिले आगे बढ़कर सूरतको घेर लिया था। परन्तु वादशाह भी उक्त सेनाके साथ शीघ्रतासे वहां जाकर प्रधानसेनाके साथ मिल गये। क्रमानुसार भयंकर युद्ध उपस्थित होगया। उस युद्धमे राव भोजने असीम साहस करके शत्रुओंके प्रधाननेताओंका मस्तक काटलिया। वादशाहने सरलतासे जयलक्ष्मीका आलिंगन पाकर संतुष्ट हो राव भोजसे पूछा कि "आप क्या पुरस्कार चाहते है?" राव भोजने कहा, कि "प्रतिवर्षमे वर्षा ऋतुके आनेपर म जिससे अपनी राजधानी बूंदीमे जाकर वर्षाऋतुको वहाँ व्यतीत करसकूँ ऐसी आज्ञा चाहता हूँ।" बादशाह अकवरने राव भोजकी वह प्रार्थना तत्काल पूर्ण की।

इतिहाससे जाना जाता है कि महावली अकवरने एक २ करके अनेक राज्य जीते, और अपने अधिपत्यका विस्तार करताथा साम्राज्यकी शक्तिको वढ़ानेके लिये पहिलेसे जिस २ स्थानपर युद्ध उपस्थित किया, उसी २ युद्धमें राजपूतराजाओंने नियुक्त होकर अपने वल विक्रमको प्रकाश करनेके साथही साथ अपने गौरवकी गरिमाको बढ़ा लिया। उनमें बूंदीके महाराज राव भोजने भी वहुतसे युद्धोमे अतुलनीय विक्रम प्रकाश कर बड़ा ऊंचा पद पाकर सम्मान प्राप्त किया था। अहमदनगरके प्रसिद्ध युद्धमें चांदाबेगमने सातसौ अस्त्रधारिणी स्त्रियोंके साथ बादशाहकी अगणित. सेनादलके विरुद्धमे भली भांतिसे वीरता प्रकाश कर और उस युद्धमे जीवन दानकर भारतके इतिहासमे अपनी

अक्षय कीर्तिका परिचय दिया है। उस अहमदनगरको जीतनेके लिये बादशाहने राव भोजको प्रधान सेनापति पदपर नियुक्त करके भेजा। वीरश्रेष्ठ भोजने असीम साहसके साथ अहमदनगरके किलेकी दीवारको लांघकर सेनासहित उसमे प्रवेश कर किलेको जीत लिया। बादशाह अकबरने इससे महा संतुष्ट होकर राव भोजके पदसम्मान बढ़ानेमे और उनको पुरस्कार देनेमें कुछ भी विलम्ब न किया। विशेष करके अहमद नगरके युद्धमें राव भोजने अतुलनीय वीरता प्रकाश करके जिस किलेके बुर्जपर आक्रमणकर अधिकार कर लिया था, बादशाह अकबरने भोजके सम्मानके लिये उसी स्थानपर एक नवीन बुर्जबनाकर उसका "भोज बुर्ज" नाम रक्खा।

हम इतिहासमें देखते हैं कि बूँदीके राव राजाभोजने सम्यक् प्रकारसे बादशाह अकबरके अनेक उपकार किये थे। और इसी कारणसे वह उनके अत्यन्त प्रियपात्र होगये थे। तोभी वह एक समय बादशाहके भयंकर कोपमे गिरे। जब अकबरकी राजपूत रानी जोधबाईकी मृत्यु होगई तब बादशाहने समस्त राजपुरुष और देशीय राजाओंको उस रानीके अशौच ग्रहण तथा उसके शोकचिह्न धारण करनेकी आज्ञा दी। बादशाह अकबरने राजपूत राजाओंकी समान मुसल्मान और अमीर इत्यादियोंको भी आज्ञा दी कि तुम सभीको मृत रानीके सम्मानके लिये डाढ़ी मुड़वानी होगी। जिससे सभी बादशाहकी इस आज्ञाको पालन करैं, इसलिये बादशाहकी हजामत करनेवाला नाई बादशाहकी आज्ञासे उक्त मनुष्योंकी हजामत करनेमे नियुक्त हुआ। राजाका नाई अंतमें बादशाहकी राजधानीमे स्थित बूँदीराजके यहाँ जाकर बादशाह की आज्ञापालन करनेके लिये उद्यत हुआ। राजाके सेवकोने उस नाईको मारकर भगा दिया। रावभोजके शत्रुओंने शीघ्र ही यह समाचार बादशाहतक पहुँचा दिया। राव भोजके विरुद्धमे यह अनुतयोग उपस्थित किया कि "राव भोजने केवल नाईको मारकर ही शान्ति नहीं पाई है वरन उन्होने मृतक महारानीको भी अनेक प्रकारके कटु वचन कहे हैं" शोकसे आतुर हुए अकबरने यह समाचार सुनते ही उसी समय राव भोजके समस्त गुणग्रामोको भूलकर तुरन्त ही आज्ञा दी कि "राव भोजको बाँधकर बलपूर्वक उनकी डाढ़ी मूँछेको मुड़वा दो।" बादशाहकी इस आज्ञाको सुनते ही राव भोज और उनकी सेना क्रोधित हुए सिहकी समान उन्मत्त होकर शीघ्र ही तलवार निकालकर भयंकर काण्ड उपस्थितके पूर्वलक्षण प्रकाश करने लगे, परन्तु बादशाहने उक्त आज्ञा देनेके पीछे जब समझा कि हमने अत्यन्त अन्यायकी आज्ञा दी है तब वह स्वयं शीघ्रतासे हाथी पर चढकर राव भोजके यहां गये। यदि बादशाह इस समय न जाते तो निश्चय ही हाड़ाराज भोज और उनके सैनिक राजधानीमें रुधिरकी नदी बहादेते, इसमे कुछ भी सदेह नहीं। बादशाह हाथीपरसे उतरकर राव भोजके विक्रमकी भलीभाँतिसे प्रशंसा करके उनको धीरज देने लगे और रावभोजने स्वय बादशाहके सम्मुख आकर विशेष विचारके साथ कहा, कि " अपने स्वर्गीयपिताके नामसे मै क्षमा प्रार्थना करता हूँ। मैं अत्यन्त निर्बोध हूँ, मृतरानीके सम्मानके लिये क्षौरकर्म करानेके योग्यपात्र भी मै नहीं हूँ।" बादशाह

अकबर यह वचन सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुए, और राव भोजको साथ लेकर अपने स्थानको लौट आये। बादशाह अकबरकी मृत्युके पीछे राव भोजने अपनी राजधानी बूँदीमे जाकर कुछ कालतक वहाँ रहनेके पीछे प्राण त्याग किये। राव राजा भोजके तीन पुत्र उत्पन्न हुए (१) राव रतन (२) हिरदेव नारायण और (३) केशवदास।

अकबरकी मृत्युके पीछे जहाँगीर मुगल राजछत्रके नीचे शोभायमान हुए। वह अपने पुत्र परवेजको दक्षिणके शासन कर्ता पदपर नियुक्त कर बुरहानपुरमे शासनकी सनद देकर उत्तरकी ओरको चले आये। परन्तु जहाँगीरके दूसरे पुत्र कुमार खुर्रमने भ्राताके सौभाग्यसे वैरभावके वश हो षड्यंत्रजालका विस्तार करके उनके प्राण नाश करनेमे किंचिन्मात्र भी त्रुटी न की। कुमार खुर्रम अपने सौतेले भाईका प्राण संहार कर अपने जन्मदाता सम्राट् जहाँगीरको सिंहासनसे रहित करके स्वयं भारतके साम्राज्यका भार ग्रहण करनेके लिये तैयार हुए। कुमार खुर्रम राजपूत राजनंदिनीके गर्भसे उत्पन्न थे। इस कारण उन पितृद्रोहीकी सहायताके लिये बाईस राजपूत राजा मिलकर जहांगीरको सिंहासनसे उतारनेके निमित्त उनके अधीनमे सेनासहित इकट्ठे हुए। परन्तु एकमात्र बूँदीके अधीश्वर राव रतनने उस दुःखके समयमे बादशाह जहाँगीरके पक्षका अवलम्बन कर राजभक्तिकी पराकाष्ठा दिखाई थी।इसके सम्बन्धमें हाड़ा कविने लिखा है।

"सरवर फूटा जल वहा, अब क्या करो यतन्न ?
जाता घर जहाँगीरका, राखा राव रतन्न"।

इसका अर्थ यह है कि सरोवरका जल उबलकर प्रबल तरंगोसे वहरहा है, इस समय अब क्या यत्न करना होगा ? जहाँगीरका शासन लुप्त होगया था, राव रतनने उसकी रक्षा की है।

बूँदीराज रतनसिंहने माधवसिंह तथा हरिसिंह नामक दोनो पुत्रोके साथ सेनासहित जहाँगीरके उस महादुःखसमयमे बुरहानपुरमें जाकर, पितृद्रोही खुर्रम और उनके अधीनके राजपूत राजाओके साथ प्रबल संग्राम करके उनको एकवार ही परास्त करदिया। बूँदीके इतिहाससे जाना जाता है कि संवत्[३] १६३५ सन् १५७९ई०मे कार्तिक शुक्ल मंगलवारके दिन यह स्मरणीय संग्राम हुआ था, और उसी रणक्षेत्रमे राव रतनके उक्त दोनों पुत्र भयंकररूपसे घायल हुए। बुरहानपुरके युद्धमें राव रतन और उनके दोनों पुत्रोने घोर वीरता प्रकाश की थी और बादशाहके अनुकूल विजय प्राप्त की।

---

(१) हिरदेवनारायणको बादशाहसे कोटेराज्यके शासनकी सनद मिली थी इन्होंने १५ वर्षतक इसे शासन किया।

(२) इन्हे चाम्बलके किनारे ढीपरी नगर और उसके अधीनमें २७ ग्रामोका अधिकार मिला।

(३) वर्दूतर्जूमेमें संवत्१६८१सन् १६२५ लिखा है और येही सही है क्योंकि सं.१६३५ मे तो अकबरबादसाह था, जहांगिर सम्बत् १२६२ मे बादशाह हुआ था।

इससे दिल्लीके महाराजने प्रसन्न होकर पुरस्कार स्वरूपमे राव रतनको बुरहानपुरके शासनकर्ता पदका भार अर्पण किया और उनके दूसरे पुत्र माधवके कोटानगर और उनके अधीनके समस्त देशोके अधिकारकी सनद वंशानुक्रमसे साक्षात् दिल्लीश्वरके अधीनमें संभोग करनेकी प्राप्त हुई । इसी समय हाड़ोती देश रीतिके अनुसार दो भागोंमें विभक्त होगया । राव रतनने बादशाहके अनेक उपकार किये थे, इससे इसका अनुमान तो सरलतासे होसकता है कि उनको कितना पुरस्कार मिला था ।

टाड् साहब लिखते हैं कि जहाँगीरने एक प्रबल गुप्त राजनैतिक कारणसे इस प्रकारके अन्यायका कार्य किया था । वह राव रतन और उनके पुत्रको अत्यन्त बल-शाली योधा देखकर अपने मनही मनमें भलीभाँतिसे जान गये कि यदि यह दोनो वीर पिता पुत्र एक साथ मिलकर असीमसाहसी स्वजातीय सेनादलका नेतृत्व करेंगे तो यह दोनों एक मत होकर जिस किसी विषयमें सरलतासे प्रधानताका विस्तार और राजनैतिक विपत्तिको उपस्थित करनेमें समर्थ होजांयगे,इस कारण पिता पुत्रमें भेद साधन करके प्रबल सामर्थ्यको विभक्त करदेना उचित है । बादशाहने उसी अभिप्रायसे राव रतनको केवल बुरहानपुरके शासनका भार देकर उनके पुत्रको स्वाधीनभावसे कोटा राज्य देदिया । शाहजहाँने माधवसिंहको जिस प्रकार कोटेके राज्यसंभोगकी सनद दी उसका वृत्तान्त कोटेके इतिहासमे वर्णन किया जायगा ।

राव रतन जिस समय बुरहानपुरके शासन करनेमे नियुक्त थे, उस समय उन्होंने वहां एक नगर स्थापन कर अपने नामके अनुसार उसका नाम "रतनपुर" रक्खा । बूँदीके जातीय इतिहाससे जाना जाता है कि राव रतनने फिर एक ऐसा कार्य किया कि जिससे एक ओर तो दिल्लीके बादशाह प्रसन्न हुए और दूसरी ओर बूँदी राजवंशने पहिले जिन मेवाड़पति राणाओंकी अनुगत्यता स्वीकार करके उनसे विशेष शांति प्राप्त की थी वे भी प्रसन्न हुए ।

दरियाखां नामक एक मुसल्मान अमीरने बादशाहकी आज्ञा न मान कर मेवाड़राज्यमे जाकर सेनासहित प्रजापुञ्जके ऊपर अत्यन्त अत्याचार किये थे । राव रतन सेनासहित वहां जाय दरियाखांपर आक्रमण कर युद्ध होनेके पीछे उसको पकड़कर बादशाहके सम्मुख लेगये । दरियाखां कठिन वीररूपसे प्रसिद्ध था, इस कारण उसको पकड़नेसे राव रतनका बल विक्रम विशेपरूपसे विदित होगया । बादशाहने उनकी उस वीरतासे महासंतुष्ट होकर पुरस्कारमें उनको एक दल नौबतके बाजेका दिया और रतनके स्थानपर लालपताका उड़ानेकी आज्ञा दी । तथा वह जिस समय सेनासहित बाहरहो उस समय एक बड़ी पीले वर्णकी पताका उनके समीप उड़ाई जाय । राव रतनके उत्तराधिकारी आजतक उस राजसम्मानसूचक पताकाको रखते आये हैं । राव रतनने केवल स्वजातिके निकटसे ही महा ऊंचा सम्मान नहीं पाया था वरन भारतवर्षकी समस्त ,हिन्दूजाति हिन्दूधर्मके रक्षकस्वरूपसे उनके प्रति सम्मान दिखाती थी । बादशाहके यहाँ उन्होंने जिस प्रकारकी सामर्थ्य और प्रतिपत्ति प्राप्त की

थी, उससे उनकी हिन्दूजातिकी मुसलमानोके अत्याचारोंसे सरलतासे रक्षा होसकी थी। वह जिस किसी स्थानमे भी रहते मुसल्मानोंको किसी प्रकारसे उस स्थानपर गोहत्या करनेका साहस नही होता था। बूँदीके इतिहाससे जाना जाता है कि राव रतनने युद्धमें वहुतसी वीरता प्रकाश कर प्रशंसनीय यश संग्रह किया था, केवल हाड़ा-जाति ही नही वरन समस्त हिन्दूजातिमे महा ऊंचा गौरव संग्रह करके अंतमे बुरहान-पुरके एक भयंकर युद्धमे वह मारे गये। हाड़ाजाति आजतक सवसे पहिले राव रतन-सिंहके नामको स्मरण करती है।

राव रतनके चार पुत्र उत्पन्न हुए (१) गोपीनाथ, (२) माधवसिंह, (३) हरिजी और (४) जगन्नाथ। यह तो हमारे पाठकोंको पहिलेहीसे ज्ञात होगया है, कि माधवसिंहने कोटेराज्यको पाकर उसे स्वाधीनभावसे शासन किया था। तीसरे पुत्र हरिजीको गूँगेर नामक देश प्राप्त हुआ। कर्नल टाड् साहवके समयमे हरिजी वंशोत्पन्न प्राय: पचास आदमियोका कुटुम्ब नीमोदा नामक स्थानमें रहता था। चौथे जगन्नाथने पुत्रहीन अवस्थामे प्राण त्याग किये। सवसे वड़े और उत्तराधिकारी गोपीनाथ पिताकी मृत्युके पहिले ही मारे गये। युवराज गोपी-नाथकी मृत्युका वृत्तान्त पढ़नेसे राजपूतोके चरित्रोंका और भी एक विचित्र निदर्शन पाया जाता है।

युवराज गोपीनाथ बूँदीके वलदिया जातीय एक ब्राह्मणकी अत्यन्त सुन्दरी स्त्रीके प्रेममे मोहित होकर अत्यन्त गुप्तभावसे अपनी प्रेमपिपासाकी निवृत्ति करते थे। गोपीनाथ प्रतिदिन रात्रिके समय उस ब्राह्मणके घर दीवार लाँघकर जाया करते थे। और चुपचाप अपनी कुप्रवृत्तिको चरितार्थ कर आते थे। कुछ दिन इस प्रकारसे व्यतीत हुए, एक समय उक्त ब्राह्मणने उनको रात्रिके समय अपने घरमे आया हुआ देखकर अत्यन्त क्रोधित हो उनके हाथ पैर बाँधकर घरमे रखलिया, और राजमहलमें जाकर राव रतनके सम्मुख निवेदन किया, कि " एक चोरने हमारे यहा रात्रिमे आकर हमारी स्त्रियोके सतीत्व नाश करनेकी चेष्टा की थी। हमने उसको पकड़ लिया है। " उसको क्या दंड दिया जायगा सो आप निश्चय कीजिये। " बूंदीराज रतनसिहने उसी समय कहा कि " उसको जानसे मार डालना ही उचित दंड होगा "। ब्राह्मणने तुरन्त ही अपने घर आकर एक खड्ग लेकर युवराज गोपी-नाथका मस्तक चूर्ण करदिया। गोपीनाथने उस दारुण आघातसे प्राण त्याग किये, ब्राह्मणने युवराजकी लाशको राजमार्गमे फेक दिया। शीघ्र ही राव रतनके पास यह समाचार गया कि युवराज गोपीनाथ मारे गये है। यद्यपि राव रतनने इस समाचारसे पहिले तो भयंकररूपसे क्रोधित हो हत्याकारीको पकड़कर उसको उचित दंड देनेकी आज्ञा दी थी, परन्तु जव उन्होने सुना कि उनकी आज्ञा-नुसारही ब्राह्मणने गोपीनाथकी हत्या की है तव राव रतनने बिना कुछ कहे सुने पुत्रशोकको सहन किया।

युवराज गोपीनाथके बारह पुत्र उत्पन्न हुए थे। राव रतनने उन सबको एक २ देश दिया, वह राज्यके प्रधान सामन्त श्रेणीमे गिने गये। उन बारहमेसे गोपीनाथके सबसे बड़े पुत्र छत्रशालको बूंदीका राजसिंहासन प्राप्त हुआ, और वे नीचे लिखे हुए चार देशोके अधीश्वर हुए:-

१-इन्द्रसिंह- इन्होंने इन्द्रगढ़को स्थापन किया-

२-वैरीशाल- इन्होंने बलवान और फिलोदी नामक दो नगरोंको स्थापन किया, और करवर तथा पिपलोदा दो देश भी इनको मिले।

३-मोखिमसिंह- इनको आंतरदा ग्राम प्राप्त हुआ।

४-महासिंह- इनको थानां ग्राम प्राप्त हुआ।

गोपीनाथके अन्य कईएक पुत्रोका वंश लोप होगया है, यहां पर उनके नामोका उल्लेख करना निष्प्रयोजन है।

राव रतनके स्वर्ग जानेपर गोपीनाथके बड़े पुत्र शत्रूशाल (छत्रसाल) पिताके सिंहासन पर विराजमान हुए। बादशाह शाहजहांने स्वयं बूँदीकी राजधानीमें जाकर शत्रूशालका अभिषेक किया और उनका सम्मान बढ़ानेके लिये उन्हे दिल्ली राजधानीके प्रधान शासनकर्ता पदपर नियुक्त किया। शाहजहांने जितने दिनोतक राज्य किया था, राव शत्रूशाल उतने दिनोतक उक्त पदपर नियुक्त रहे। बादशाह शाहजहांने जिस समय अपने विस्तारित भारतसाम्राज्यको चार भागोमे विभक्त कर अपने चारपुत्रो दारा औरंगजेब सुजाय और मुरादको चार भागोके राजप्रतिनिधि पदपर नियुक्त करके भेजा, उस समय राव शत्रूशाल औरंगजेबकी एक प्रधान सेनाके सेनापति पदपर नियुक्त होकर दक्षिणको गये। औरंगजेबने दक्षिण प्रान्तके भिन्न २ प्रान्तोमे प्रबल समरानल प्रज्वलित करके कई किलोंको घेर लिया तथा उन्हे आक्रमण कर अपने अधिकारमे कर लिया। विशेष करके दौलताबाद और बीदर नामक किलेपर अधिकार करनेके समय हाड़ाराज शत्रूशालने अतुल बल विक्रम प्रकाश कर अपने बाहुबलका चूड़ान्त बल दिखा दिया। वीर श्रेष्ठ शत्रूशालने स्वय सेनासहित बीदरके किलेपर आक्रमण कर तथा उसको जीत शत्रुकी समस्त सेनाको तलवारसे नाश करके यमराजके यहाँ भेज दिया। सम्वन् १७०९,

---

(१) इन्द्रगढ बलवन और आन्तदा यह तीन प्रधान देश कोटेके जालिमसिंहने अपने षड्यंत्रसे बूँदीसे छीन लिये थे।

(२) उर्दूतर्जुमेमें "थानवा" लिखा है।

(३) टाड् साहब अपनी टीकामें लिखते हैं कि "यह थाना ग्राम पहिले युजावर नामसे विदित था। गोपीनाथके बारह पुत्रोंमें केवल थानाके अधीश्वर आजतक बूँदीके अधीश्वरकी अनुगतता स्वीकार करते आये थे; महासिंहके वंशधर महाराज विक्रमसिंह इस समय इसी थानाके अधीश्वर हैं, यदि वह जीवित होते तो हम कह सकते हैं कि इस संसारमे उनकी समान सम्माननीय साहसी और सरलचित्त राजपूत दूसरा नहीं था, वह अपने अधीश्वरके अत्यन्त प्रियपात्र और हमारे सच्चे मित्र थे, इनका सिंहके साथ युद्धका वृत्तान्त हमारे भ्रमण वृत्तान्तमें पाया जायगा।

सन् १६५३ ई० में प्रबल युद्धके पीछे कलवर्णका पतन हुआ, और शत्रूशालने फिर असीम साहसके साथ किलेकी दीवारको लांघकर उसको जीत लिया। धामूनीनामक स्थानके किलेको जीतनेके पीछे दक्षिणमें पूर्णरूपसे शांति विराजमान होगई।

बूँदीके राजमहलमे स्थित ग्रंथके देखनेसे जाना जाता है कि "जिस समय दक्षिणमें यह सब घटनाएँ हुई उसी समय यह जनरव हुआ कि सम्राट् शाहजहां ने प्राण त्याग किये हैं। विशेष करके बादशाहके बराबर बीस दिनतक सभामे न बैठनेसे उस समाचारको सभीने सत्य मान लिया था। बादशाहके पुत्रोंमें एकमात्र दाराशिकोह इस समय राजधानीमें रहते थे। उनके अन्य भ्राताओंने जब यह समाचार सुना तब वह सिंहासन पानेके लिये बड़े आग्रहके साथ राजधानीकी ओरको गये। जिस समय शुजाने बंगदेशसे यात्रा की, उस समय औरंगजेबने भी दक्षिणको छोड़नेके लिये तैयार होकर मुरादको सेनासहित योग देनेके लिये अनुरोध किया। औरंगजेबने मुरादसे यह कहला भेजा कि :"मैं एक उदासीन विरागी हूं सिंहासन वा संसारके किसी भी सुखकी मुझे लालसा नहीं है, केवल निर्जनमें रहकर मोहम्मदकी आज्ञानुसार धर्मका साधन करना मेरे जीवनका मुख्य उद्देश है। दारा एक नास्तिक है, मै उदासीन हूँ, इस कारण बादशाह शाहजहाँके पुत्रोंमें एकमात्र आपही सब अंशोमे योग्यपात्र हैं। आपहीको राजसिंहासन पर बैठालनेके लिये हम विशेष रूपसे तय्यार हैं'।

"बादशाह शाहजहाँने औरंगजेबकी पापकामनाको जानकर गुप्रभावसे हाड़ाराज शत्रूशालको राजधानीमे सेनासहित आनेके लिये बुलाभेजा। शत्रुशालने बादशाहकी यह आज्ञा पाकर विशेष विचार कर यह कार्य किया, कि मै जब बादशाहके अनुगत अधीन हूँ, तब उनकी आज्ञापालन करना ही मुझे सबसे पहिले कर्तव्य है। अतः शत्रूशाल शीघ्र ही दक्षिणके डेरोंके छोड़नेकी तैयारी करने लगे। राव शत्रूशाल डेरोंको छोड़नेके लिये उद्यत होगये है, औरंगजेबने यह समाचार पाते ही पूछा कि "इतनी शीघ्रतासे डेरोंको छोड़नेका कारण क्या है कुछ दिन और ठहरिये; हम सभी एक साथ राजधानीमें चलेगे। बूँदीके अधीश्वर शत्रुशालने सिंहासन पर बैठे हुए बादशाहकी आज्ञाका पालन करना हमारा प्रथम कर्तव्य कार्य है।" यह कहकर बादशाह शाहजहाँने उनके निकट जो आज्ञापत्र भेजा था; उसे औरंगजेबके हाथमे अर्पण किया। परन्तु पापाचारी औरंगजेबने उस आदेशपत्रको पढ़ते ही शत्रुशालको आज्ञा दी, कि आप किसी प्रकारसे इस समय डेरोंको न छोड़िये'। दूसरी ओर औरंगजेबने आज्ञा दी कि "राव शत्रुशालके डेरोंको जिस प्रकारसे होसके उखड़ने न दो"। परन्तु बुद्धिमान् शत्रुशालने ऐसा होगा जानकर पहिलेसे ही अपने समस्त द्रव्य संभार और कितनी ही सेनाको आगे भेज दिया था। उन्होने इस समय औरंगजेबकी

---

(१) राजपूत इतिहास लेखकने औरंगजेबकी इस उक्तिको प्रकाशित किया है, अन्यान्य इतिहासवेत्ताओंने भी अविकल इसी भावको लिखा है।

आज्ञाको अग्राह्य करके अपनी बची बचाई सेना और जो राजा शाहजहाँके पक्षावलम्बी थे, उनको एकत्र दलबद्ध करके वीर तेजसे डेरोको छोड़कर नर्मदाकी ओरको गमन किया । यद्यपि, औरंगजेबकी सेना उनके पीछे २ गई परन्तु किसी प्रकारसे भी उन असीम साहसी और महाबली राजपूतोको आक्रमण करनेका साहस प्राप्त न हुआ। इस समय प्रबलवर्षाके उपस्थित होनेसे नर्मदा नदीने भयंकरी मूर्ति धारण की थी। राव शत्रूशाल उस नर्मदा नदीके किनारेके कितने ही देशोके सोली राजाओकी सहायतासे उस भयंकर तरंगोसे समायुक्त नर्मदानदीके पार होगये। तब भी औरंगजेबने निराश होकर शत्रुशालका पीछा करनेमे त्रुटि न की । राव शत्रुशाल निर्विघ्नतासे अपनी राजधानी बूँदीमे चलेआये । राव शत्रुशालने अपनी राजधानीमे कई दिन तक रह कर राज्यके अनेक विषयोकी प्रयोजनीय व्यवस्था कर दिल्लीकी ओरको सेनासहित गमन किया। वृद्ध बादशाहके पुत्रोको कुलांगारकी समान उनकी जीवितदशामे ही राजसिंहासन ग्रहण करनेकी इच्छासे बादशाहके करसे राज दंड छीनने और उनके जीवनमे हस्ताक्षेप करनेको अग्रसर हुआ देखकर राव शत्रुशालने उस वृद्ध बादशाहकी विपत्तिमे सहायता करनेके लिये शीघ्रतासे दिल्लीको गमन किया।

“टाड् साहब लिखते हैं, कि पितृद्रोही पापात्मा पिशाच औरंगजेब छलना, चातुरी और षड्यंत्रजालका विस्तार कर फतेहाबादमे जा पहुँचा। मारवाडके महाराज जसवन्तसिंह बहादुरने सेनादलके साथ उस फतेहाबादमें भयंकर समरानल प्रज्वलित कर दी। परन्तु कूट षड्यंत्रजालका विस्तार कर औरंगजेबने सरलतासे उस युद्धमे जयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त कर भारतके सिंहासन पर चढ़नेका मार्ग साफ करलिया। राव शत्रूशालको हमने उस युद्धमे बादशाहके पक्षमे नियुक्त होता नहीं देखा, बादशाह अकबरके साथ बूँदीके अधीश्वर राव सुरजनका जो पहिला संधिबंधन हुआ था, उस संधिबंधनके अनुसार वह वा उनके भविष्य उत्तराधिकारी किसी हिन्दूराजाके अधीनमें किसी रणभूमिमे गमन नही करेंगे ऐसा नियम था। बोध होता है कि उस संधिके मतसे राव शत्रुशाल महाराज मानसिंहके अधीनमे फतेहाबादके रणक्षेत्रमे न गये। परन्तु बूँदीके राजवंशोत्पन्न कोटेके अधीश्वर अपने चार भ्राताओके साथ सेनासहित उस फतेहाबादके संग्राममें बादशाहकी ओरसे नियुक्त होकर आये थे विषमवीरता प्रकाश करनेके पीछे चारो भ्राताओने उस संग्राममे अपना प्राण देकर राजभक्तिकी पराकाष्ठा दिखाई।

दुराचारी औरंगजेबने पिताके सिंहासन पर अधिकार करनेके पहिले अपने बड़े भ्राता दाराके साथ धौलपुरमे फिर युद्धकिया। उस धौलपुरके युद्धमें बूँदीके अधीश्वर राव राजा शत्रुशालने कुंकुमवर्णके भेष और विवाहके समयका जिस प्रकार पहरावा राजपूतजातिमे व्यवहार किया जाता है, उसी प्रकार पहरावा धारणकर क्या तो नंगी तलवार हाथमे लेनी होगी नहीं तो जीवन त्याग दिया जायगा, यह दृढ़प्रतिज्ञा करके वीरदर्पसे दाराके समस्त सेनादलमे सबसे आगे जाकर औरंगजेबके साथ भयंकर

समरानल प्रज्वलित कर दी । प्राच्य जगत्‌की चिर प्रचलित रीति यह थी कि युद्धके समय दोनों ओरके राजा वा प्रधान सेनापति रथ वा हाथीपर चढ़कर जब युद्धभूमिमे जाते थे तब सेनादल उस राजा अथवा सेनापतिको जबतक युद्धसे जाता हुआ न देखते तबतक प्राणोंकी वाजी लगाकर दुगने उत्साहके साथ युद्ध करते रहते थे । उसी रीतिके अनुसार दारा एक हाथी पर चढ़कर उस भयंकर रणभूमिमे जाने लगा । यदि वह और कुछ समयतक साहसमे भरकर उसी भावसे वहाँ विराजमान रहता तो अवश्य ही शाहजहाँ वादशाहको वृद्धावस्थामें कुलांगार पुत्र औरंगजेबके द्वारा वन्दी होकर राज्यसे च्युत होना नहीं पड़ता, दाराके हठात् रणभूमसे जाते ही उसकी समस्त सेना संग्रामको छोड़कर चारों ओरको भागने लगी । वीर तेजस्वी शत्रुशालने भीरु कापुरुप दाराको भागता हुआ और उसी कारणसे उसकी सेनाको भी भागता हुआ देखकर अपने अधीनके सामन्त और सेनासे गर्वपूर्ण यह वचन कहे "कि जो कोई युद्धभूमिसे भागेगा वह नरकको जायगा । मैं वादशाहके अधीन हूँ, मैने युद्धभूमिमें चरण रक्खा है, यह चरण मेरा अटल है, क्या तो इस समय विजय ही होगी, और नहीं तौ प्राण त्याग दूँगा" । इन प्रकाशमान वचनोसे सामन्त और सेनाको उत्साहित करके, शत्रूशाल अपने हाथीपर चढ़कर अपने आदर्शसे जिस समय सेनाको शत्रुपक्षकी ओरको चलारहे थे, उसी समय शत्रुओंकी ओरसे एक जलता हुआ गोला आकर उनके हाथोके ऊपर गिरा । हाथीने घायल होनेसे उन्मत्त हो रण-क्षेत्रको छोड़कर भागना प्रारंभ करदिया, परन्तु महावीर शत्रुशाल तुरन्त ही उस भागते हुए हाथीकी पीठ परसे छलांग मारकर कूद पड़े, और घोड़े पर चढ़ कर अपनी समस्त सेनाको चक्राकारमे मिलाकर जयस्वरसे रणभूमिको कम्पायमान कर कुमार मुरादके साथ संग्राम करनेके लिये उसकी ओरको चले । राव शत्रुशाल मुरादके अत्यन्त निकट जाकर अपने विपन्न भालेसे मुरादके वाहुवलकी परीक्षाके लिये जिस समय उद्यत हुए उसी समय शत्रुओंकी ओरसे एक गोली आकर उनके समस्तकमें लगी । राव शत्रुशालने उसी गोलीके आघातसे अपने जीवनकी लीला समाप्त की । राव शत्रुशालके छोटे पुत्र भारतसिंह उस रणभूमिमे उपस्थित थे । पिताके मरनेसे वह महा क्रोधसे उन्मत्त हुए और केशरीकी समान मुरादके साथ प्रवल संग्राम करने लगे; शत्रुशालके भ्राता मोखमसिंहने अपने दोनों पुत्र और उदयसिंह नामके भतीजे सहित संहारमूर्ति धारण कर युद्ध करना प्रारंभ किया; प्रवल युद्धके पीछे वहुतसे शत्रुओका संहार करके भारतसिंह और उक्त कई जने राव शत्रुशालकी समान युद्धभूमिमे प्राणदान दे सूर्यलोकको चले गये । कर्नल टाड् साहव कहते हैं कि "उज्जैनी और धौलपुर इन दो

---

(१) राजपूत वीर किसी युद्धमें जयका सदह होनेपर, अथवा किसी प्रकारसे भी हो शत्रुसे जय प्राप्त करना अथवा शत्रुका संहार करना कर्त्तव्य है ऐसी प्रतिज्ञा करने पर उक्त प्रकारका वर वेश धारण कर युद्धमें प्रवेश किया करते हैं। और युद्धभूमिमें मरते ही सूर्यलोकको या अप्सराओंकी सभामें होजायँगे, इसी विश्वाससे वह उक्त वर वेशका व्यवहार क.ते हैं ।

स्थानोंके संग्राममें वारह राजपूत राजवंशीय और हाड़ा सम्प्रदायके प्रत्येक नेताने अपना जीवन त्याग कर राजभक्तिकी पराकाष्ठा दिखाई थी, हमने ऐसा दृष्टान्त और कहीं नहीं पाया ? "।

बूँदीके इतिहासमे पीछे वर्णन किया गया है कि राव शत्रुशाल समस्त जीवनमे ५२ युद्ध करके असीमसाहसका चूडान्त निदर्शन और विश्वासकी अक्षय कीर्ति स्थापन करगये हैं। राव शत्रुशालने बूँदीके राजमहलका विस्तार कर "छत्रमहल" नामका एक अंश निर्माण किया था, पाटन नामक स्थानमें "केशवराय भगवान्" का एक रमणीक मंदिर उन्हींके व्ययसे वना है। संवत् १७१५ मे राव शत्रुशालने प्राण त्याग किये। राव शत्रुशालके औरससे चार पुत्र उत्पन्न हुए,–(१) राव भावसिंह, (२) भीमसिंह, (३) भगवन्तसिंह, (४) और भारतसिंह। भीमसिंहको गुगोर नामक देशका अधिकार प्राप्त हुआ, भगवन्तसिंह मऊनामक स्थानके अधिकारी हुए, भारतसिंह धौलपुरके युद्धमे मारे गये, इसका वर्णन पहिले ही करचुके है। राव शत्रुशालकी मृत्युके पीछे बूँदीका राजमुकुट उनके बड़े पुत्र राव भावसिंहके मस्तक पर शोभायमान हुआ "।

हिन्दूजातिके परम शत्रु औरंगजेवने दिल्लीके सिंहासन पर विराजमान होकर बूँदीश्वर राव शत्रुशालके प्रति उसका जो कुछ कोप क्रोध और शत्रुता थी उसे उनके पुत्र राव भावसिंहके प्रति प्रयोग करनेमे कसर न की। शिवपुरदेशके राजा आत्मारामको बुलाकर औरंगजेवने उनको आज्ञा दी कि "उद्धत स्वभाव और सदा असन्तुष्ट हाड़ा जातिको भलीभांतिसे दड देकर बूँदीराज्यको रणथम्भोरके अधीनमें स्थापित करो। बूँदीको जय और हाड़ाजातिको दड देते ही दक्षिणमें जानेके समय बूँदी राज्यमें प्रवेश करके इस जय प्राप्तिसे आपको सम्बन्धित करूंगा।" राजा आत्मारामने वादशाहकी आज्ञानुसार शीघ्र ही वारह हजार शिक्षितसेनाके साथ हाड़ौती देशमे जाकर तलवार तथा अग्निकी सहायतासे चारोंओर अत्याचार कर देशका सर्वस्व विध्वंस करना प्रारंभ करदिया। जैसे ही राजा आत्मारामने बूँदीके सवमे प्रधान सामन्तके अधीन इन्द्रगढ़के मध्यमे स्थित खातौलीनगरको घेरा कि वैसे ही हाड़ाजातिने चुपचाप दल वांधकर गोठड़ा स्थानमे राजा आत्मारामके अधीनमें स्थित उस वारह हजार शिक्षित सेनाके साथ भयंकर युद्ध करना प्रारभ किया, उस युद्धमें राजा आत्माराम एकवार ही परास्त होकर प्राणोंके भयसे भाग गये। विजयी हाड़ासेनाने उस भागेहुए राजा आत्माराम और वादशाहकी सेनापर फिर आक्रमण करके समस्त युद्धके द्रव्य तथा वादशाहकी चिह्नात्मक पताका आदि छीन ली। हाड़ाजातिने इससे भी संतुष्ट न होकर हतभाग्य राजा आत्मारामसे अत्याचारोंका वदला लेनेके लिये उसके शिवपुरको जा घेरा। परास्त और अपमानित राजा आत्माराम कलंकका भार शिरपर लेकर वादशाह औरगजेवके निकट गये और जाकर हाड़ाजातिका वलविक्रम तथा अपने उद्धत स्वभावका नवीन परिचय दिया। औरंगजेवने राजा आत्मारामसे अत्यन्त घृणा प्रकाश की। और इनका उचित तिरस्कार किया।

कपटी औरंगजेबने हाड़ाजातिके वीर विक्रमका विशेष परिचय पाकर हाड़ा राजको अपने हस्तगत करनेके लिये प्रकाशमें हाड़ाजातिकी वीरतासे संतोष प्रकाश करतेहुए उनको सब प्रकारसे क्षमाकर अपनी राजधानीमें आनेके लिये बुला भेजा। राव भावसिंह, पहिले किसी प्रकारसे भी कुचक्री औरंगजेवकी बातपर विश्वास करके दिल्ली जानेके लिये सम्मत न हुए, परन्तु बादशाहने बारम्बार प्रतिज्ञा पूर्ण पत्र भेजकर "मुझसे आपका कोई अनिष्ट नहीं होगा इस बातकी" शपथ की इसी कारणसे वीरतेजस्वी राव भावसिंह अन्तमें सेनासहित दिल्लीको गये। बादशाह औरंगजेव ने राव भावसिंहको बड़े आदरभावके साथ ग्रहण कर कुमार मोअज्जिमके अधीनमें उनको औरंगाबादके प्रधान शासनकर्ता पदपर नियुक्त करदिया।

हाड़ाजातिके इतिहाससे जाना जाता है कि राव भावसिंहने औरंगाबादके महा ऊँचे पदपर प्रतिष्ठित होकर स्वजातीय राजपूतोंकी औछड़ा एवं दतियाके बुन्देला सेनादलके साथ बहुतसे युद्धोमें अतुलनीय बलविक्रम प्रकाश किया था। बांकानेरके राजा करणके प्राणनाश करनेके लिये इस स्थान पर जो षड्यंत्रजालका विस्तार हुआ था, राव भावसिंहने ही अपने असीम साहससे उस षड्यंत्रजालको नष्ट कर बीकानेरके महाराजके जीवनकी रक्षाकी। राव भावसिंहने औरंगाबादमें सर्वसाधारणके हितकारी बहुतसे महल बनवाये। उक्त इतिहासके पढ़नेसे जाना जाता है, कि उन्होंने अपने साहस, वीरता दया; और अपने पवित्र स्वभावके बलसे औरंगाबादकी सब जातियोके हृदयपर इस प्रकारका अधिकार करलिया था कि इनके ऊपरपूर्ण विश्वास और भक्तिके बलसे ही बहुतसे असाध्य रोगियोने इनके द्वारा पूर्ण आरोग्यता प्राप्त की थी। सम्वत् १७३८, सन् १६८२ ई० में राव भावासिंहने इसी औरंगाबादमें प्राण त्याग किये।

राव भावसिंहके कोई पुत्र नही था। इस कारण उनके भ्राता भीमसिंहके पुत्र अनिरुद्धसिंह बूँदीके सिंहासनपर विराजमान हुए। भीमसिंहको गुगोर नामक देशका अधिकार प्राप्त हुआ था। उन्हीं भीमसिंहके पुत्र किशनसिंह थे। दुराचारी औरंगजेबने पहिले ही इन किशनसिंहका प्राण नाश किया था। उनकी मृत्युसे उनके स्थलाभिषिक्त राव अनिरुद्धसिंहको राजसम्मान दिखानेके लिये अभिषेकके समय मूल्यवान् ही उपहार और अपना एक अति उत्तम हाथी सजाकर उनके पास भेजा राव अनिरुद्धसिंहने बूँदीके सिंहासन पर अभिषेकके कुछही समय पीछे दिल्लीमें जाकर बादशाहके प्रति सम्मान दिखाया, कुछ दिन पीछे बादशाह औरंगजेबने जब सेनासहित दक्षिणमें युद्ध करनेके लिये गमन किया, तौ राव अनिरुद्धसिंह भी सेनासहित उनके साथ गये। दक्षिणके एक प्रबल युद्धमें एक समय शत्रुपक्षकी सेनाने, बादशाह औरंगजेवके महलकी बेगमे जिन डेरोंमें निवास करती थी, उन डेरोंपर आक्रमण किया तब राव अनिरुद्धसिंहने विषम वीरता प्रकाश करके उन शत्रुओंको विताड़ित कर राजरानियोंका उद्धार किया। इससे औरंगजेबने उनके प्रति अत्यन्त संतुष्ट होकर उनसे पूछा, "कि आप क्या पुरस्कार चाहते हैं?"

वीरश्रेष्ठ अनिरुद्धने कहा, "मैं अन्य कोई पुरस्कार नहीं चाहता, मैं इस समय आपके पीछे चलनेवाली सेनादलके अधिनायक पदपर नियुक्त हुआ हूँ, आप उसके वदलेमें मुझे सबके आगे सेनादलके नेताका पद दीजिये। औरंगजेवने तुरन्त ही उस वीरकी वह प्रार्थना पूर्ण की। वादशाह औरंगजेव वीजापुरके जीतनेमे नियुक्त हुए, राव अनिरुद्धने उस समय भी अतुलनीय वलविक्रम प्रकाश कर वड़े साहसके साथ वादशाहको संतुष्ट किया था।

बूँदीके इतिहासमें फिर लिखा गया है कि बूँदीके प्रधान सामन्त दुर्जनसिंहके साथ विवाद होनेसे राव अनिरुद्धसिंह विपत्तिके मुखमें पड़े। विवादके पीछे दुर्जनसिंहने शीघ्रतासे दक्षिणके डेरोंको छोड़ अपने अधिकारी देशमें आकर स्वजातीय सेनाको सजाकर बूँदीकी राजधानीमे आय वलवन्तसिंहके मस्तक पर बूँदीका राजतिलक दिया। वादशाह औरंगजेवने यह समाचार पाकर शीघ्र ही राव अनिरुद्धसिंहके अधीनमें एक शिक्षित सेनाको भेजकर दुर्जनसिंहको भगाने और उनके अधिकारी देशोंको बूँदीराजके अधिकारमे करनेके लिये भेजा। अनिरुद्धसिंहने सेनासहित बूँदीमें आकर दुर्जनसिंहको उचित दंड दे तथा वलवन्तको सिंहासनसे भ्रष्ट करके उनके अधिकारी देशोंको राज्यके अधिकारमें करलिया, इसके पीछे राव अनिरुद्धसिंहने राज्यशासनकी सुव्यवस्था की। वादशाहके पुत्र शाहआलम भारतसाम्राज्यके उत्तरविभागके शासनकर्तारूपसे नियुक्त होकर लाहौरको गये। राव अनिरुद्धसिह वहाँ शान्ति स्थापन करनेके लिये गये। आमेरके महाराज विष्णुसिंह भी उसी कार्यके लिये वहाँ भेजे गये थे। राव अनिरुद्धसिहने वहाँ कुछ काल निवास करके पीछे प्राण त्याग किये।

उक्त इतिहास लेखकने लिखा है कि "राव अनिरुद्धसिंहने बुधसिंह और जोधसिंह नामवाले दो पुत्र छोड़े, वड़े पुत्र बुधसिंह थे, इन्हींको पिताका राज्य सिंहासन प्राप्त हुआ। वादशाह औरंगजेव बुधसिंहके अभिषेक होनेके कुछ ही दिन पीछे औरंगावाद नामक जिस स्थानमे रहते थे, वहाँ घोररूपसे पीड़ित हुए, यहाँतक कि उस रोगसे इनके जीवनमें भी सन्देह हुआ। इनकी मृत्युकी सम्भावना जानकर राज्यके सभी सामन्त राजपुरुष तथा अमीर उमराओंने वादशाहसे विशेष आग्रहके साथ कहा कि आपके सिंहासन पर उत्तराधिकारी स्वरूपसे कौन वैठेगा, उसको आप इसी समय नियत कर दीजिये। मृत्युके मुखमे पड़ेहुए वादशाह औरंगजेवने कहा, कि किसके मस्तक पर राजमुकुट शोभायमान होगा, यह जगदीश्वरकी इच्छा है! मैं जगदीश्वरकी इच्छानुसार ही इच्छा करता हूँ कि मेरा पुत्र वहादुरशाह आलम मेरे सिंहासनका उत्तराधिकारी हो, परन्तु मुझे ऐसा अनुमान होता है कि कुमार आजिम भी अपने शस्त्रवलसे भारतके सिंहासन पर वैठनेकी चेष्टा करैगा। वास्तवमें वादशाहने जो वात कही थी अन्तमे वही हुआ। आजिम शाह दक्षिणी सेनादलकी सहायतासे अपने वलको प्रवल जानकर सिंहासन लेनेके लिये अपने वड़े भ्राताके साथ सामना करनेके

लिये तैयार हुआ। इसने अपने बड़े भाईको रणभूमिमे राजमुकुट लेकर भाग्यकी परीक्षाके लिये धौलपुरमें बुला भेजा। जो हिन्दूराजा बहादुरशाहकी ओर थे उन सभी राजाओंको बुलाकर राजनैतिक व्यवस्थाको सुनादिया। उन आयेहुए राजाओमे बूँदीके राव बुधसिंह भी थे। उस समय बुधसिंहकी अवस्था बहुत थोड़ी थी, परन्तु उस समय यह अपने अनुज जोधसिंहकी मृत्युसे अत्यन्त शोकित थे।(१) जोधसिंहकी मृत्युका समाचार पाते ही बादशाह बहादुरशाह आलमने बुधसिंहको अपनी राजधानी बूँदीमें जाकर श्राद्ध करनेकी आज्ञा दी, राव बुधसिंहने कहा, " बादशाहकी ऐसी अवस्थाके समय मुझे बूँदीमें जाना किसी प्रकार भी उचित नहीं है; धौलपुरके रणक्षेत्रमे-कि जहाँ बहुतसे युद्धोमें अनेक वीरोंने अपना बलविक्रम प्रकाश करके प्रसिद्धि प्राप्त की थी, जिस रणभूमिमे मेरे पूर्वपुरुष शत्रुशालने जीवन त्याग किया था, उसी पवित्र रणभूमिमे जाकर बादशाहकी विजय प्राप्तिके लिये मै अस्त्र धारण करके अपने पूर्वपुरुषोकी कीर्तिकी रक्षा करूँगा, इस समय मै अपना यही कर्तव्य समझता हूँ।"

" शाह आलम सेनाके साथ लाहौरसे और आजिम अपने पुत्र बेदारबख्तके साथ युद्ध करनेके लिये आगे बढ़े। दोनों ओरकी सेना शीघ्र ही धौलपुरके समीप जाजौ नामक स्थानमे सम्मुख हुई; तत्काल भयंकर युद्धकी आग भड़क उठी, भारतवर्षके इतिहासमें इस प्रकारका लोमहर्षण घोरयुद्ध और कभी नहीं हुआ था। यदि केवल एकमात्र बादशाहके कुमार ही सिंहासनप्राप्तिके लिये मुसल्मानोकी सेनाकी सहायतासे रणभूमिमे उपस्थित होते तो ऐसे युद्धका अंतिम फल जैसा होना उचित था वैसा ही होजाता, अर्थात् प्रबल युद्धके पीछे एक ओरकी सेनाका दल विश्वासघातकताका कार्य करके युद्धको विध्वंश करदेता, परन्तु इस युद्धमे ऐसा नहीं हुआ। राजपूतानेके प्रत्येक राजा ही अपनी २ सेनाके साथ शाहआलम और आजिम इन दोनोंके सिंहासन प्राप्तिमे एक एककी सहायता करके परस्पर स्वजातीय सेनादलके साथ युद्ध करनेमें नियुक्त हुए। दोनो मुसल्मानोको सिंहासन पानेकी आज्ञाको पूर्ण करनेके लिये राजपूत राजाओंने आपसमें ही युद्ध करके अपना नाश करनेसे कुछ भी कसर न की। दतिया और कोटा राज्यके दोनो राजा दीर्घकालतक कुमार आजिमके अधीनमे दक्षिणके युद्धमे नियुक्त थे। कुमार आजिम उनके ऊपर विशेष संतुष्ट रहते थे, इस कारण उक्त दोनो राजाओंने बादशाह औरंगजेबकी अन्तिम इच्छाकी ओर दृष्टि न रखकर अन्यायके साथ छोटे कुमारको सिंहासनपर बैठालनेके लिये आजिमके पक्षका अवलम्बन किया। बूँदीके महाराजके साथ दतियाके अधीश्वरकी विशेष मित्रता थी, और दोनोंने ही दक्षिणके युद्धमें विशेष वीरता प्रकाश करके प्रशंसा प्राप्त की थी, परन्तु इस समय दतियाके महाराज अपने प्यारे मित्र अनिरुद्धके पुत्र बुधसिंहके विरुद्धमें खड़े होते हुए कुछ भी लज्जित न हुए।(२) कोटेके

(१) जोधसिंहकी मृत्युका वृत्तान्त कर्नल टाड् साहबके दूसरी बारके भ्रमण वृत्तान्तमें वर्णन किया जायगा।

(२) मित्रके पुत्रके सम्मुख शस्त्र धारण करनेमें लज्जा कैसी? राजपूत जिस पक्षका अवलम्बन करते है उसके लिये सगे पिता पुत्र भी एक दूसरेके सम्मुख शस्त्र धारण करते हैं आलो—

महाराज रामसिंहने एक गुप्तकार्यके वशीभूत होकर शाहआलमके विरुद्ध आजिमके पक्षका अवलम्बन किया। बूँदीके महाराजने चिरकालसे हाड़ाजातिके सबमें प्रधान नेतारूपसे वादशाहकी सभा तथा सभी स्थानोंमें सबसे ऊँचा सम्मान प्राप्त किया था। उसी कारणसे कोटेके महाराजके हृदयमे भयंकर विद्वेषने आश्रय लिया था। कोटेके महाराज रामसिंहने हाड़ाजातिके शिरस्थानीय पदको प्राप्त करने तथा सम्मानपानेकी आशासे ही आजिमका साथ दिया। बुधसिंह शाह आलमके पक्षमे नियुक्त थे, इस कारण आजिमकी विजय होते ही बुधसिंहको दंड दिया जायगा, और उनको अपना प्रार्थित फल मिल जायगा, इसी कारणसे उनके हृदयमे अनेक शंकाएँ उदय होती थी। वास्तवमे जय प्राप्तिके पहिले ही, आजिमने कोटेके महाराज रामसिंहको हाड़ाजातिका शिरमौर कह कर उनको पद और सम्मान दिया था। युद्ध होनेके पहिले कोटेके महाराज रामसिंहने बुधसिंहके निकट इस मर्मका एक पत्र लिखा कि जिससे वह शाहआलमका पक्ष छोड़कर आजिमकी ओर आ मिलै, उस पत्रको पाते ही राव बुधसिंहने अत्यन्त क्रोधित होकर यह उत्तर दिया, कि "हमारे पूर्वपुरुषोंने रणक्षेत्रमे असीम वीरता प्रकाश करके प्राण त्याग किये हैं, उसी युद्धभूमिमे मैं अपने न्यायके अनुसार वादशाह शाह आलमका पक्ष छोड़कर अपने वशमें कलंकका टीका लगाना नहीं चाहता। इसीसे जाजौके रणक्षेत्रमे दोनो वादशाह कुमारोंकी समान राजपूत राजाओंने भी एक २ के पक्षका आश्रय ले भविष्यमे अपने भाग्यकी उन्नति करनेके लिये नंगी तलवारें हाथमें ले महासंग्रामकी अग्निको प्रज्वलित कर दिया"।

"राव बुधसिंहने रणभूमिमें वादशाह शाहआलमके द्वारा एक प्रधान सेनाके नेता पदपर नियुक्त हो इस प्रकारका अतुलनीय साहस और शूरवीरता प्रकाश की कि उसीसे वादशाह वहादुरशाह आलम रणमें विजय पाय शत्रुओंसे शून्य होकर भारतके राज्यसिंहासन पर शोभायमान हुए। दोनो ओरकी राजपूत सेनाओंने इस युद्धमे विशेष आघातोंको सहन किया। कोटेके हाडाजतिके अधिराज रामसिंह और बुन्देलोंके अधिपति दतियाके दलीप यह दोनों ही उस रणभूमिमे आजिमके स्वार्थकी रक्षाके कारण मारेगये। आजिम और वेदारवक्त इन दोनोंने भी मृत्युके साथ ही साथ सिंहासनकी आशाको छोड़ दिया"।

"जाजौके युद्धमे हाड़ावीर बुधसिंहने विशेष वीरता प्रकाश की थी, इसी कारणसे वादशाह वहादुर शाह आलमनें उनको राव राजाकी उपाधि दी, और उनको अपना परममित्र बनालिया। वादशाह जितने दिनोंतक जीवित रहे उतने दिनों-तक उनकी वह मित्रता अचल रही। वादशाह वहादुरशाहकी मृत्युके पीछे सिंहासन लेनेके लिये राज्यमे फिर हलचल पड़गई। उसी कारणसे औरंगजेबके सभी पोते मारे गये। पीछे फर्रुखसियरके दिल्लीके सिंहासन पर बैठते ही वाराके

—चक महाशयने आलोचना अच्छी की पर खेद है कि उन्होंने फिर भी राजपूत जातिके धर्म और स्वभावके मर्मको न जाना।

सैयद दोनो भ्राताओंने उनके अधीनमें असीम शासन सामर्थ्य प्राप्त करके राज्यमें घोर अत्याचार कर धन आदिको लूटकर राज्यको नष्ट भ्रष्ट करदिया। सैयदके दोनों भ्राताओने जिस समय बादशाह फर्रुखसियरको सिंहासनसे उतार कर उनको मार डालनेके लिये जिस षड्यंत्रजालका विस्तार किया था, उस समयमें स्वयं बूँदीके महाराज यथार्थ राजभक्तकी समान बादशाह फर्रुखका उन नराधम दोनों सैयदोंके हाथसे उद्धार करनेके लिये आगे बढ़े। उस उद्धार करनेवाली सेनाके जाते ही हाड़ा सेनादलके साथ दोनो सैयदोंकी सेनानें दिल्लीकी राजधानीमे घोर युद्ध किया। और उस घोरयुद्धमे बुधसिंहके चचा जंयतसिंह तथा और भी बहुतसे सामन्तोंने अपने जीवनका बलिदान किया।"

"जाजौंकी युद्धभूमिमे कोटा और बूँदी दोनो देशोंके राजाओंमें जो शत्रुता उत्पन्न हुई, और जिस संग्राममे कोटेके महाराज रामसिंह मारे गये; उसी युद्धके समयसे दोनो राजवंशोमें वही शत्रुता प्रवल होगई थी। विशेष करके कोटेके महाराज भीमसिंह पिताका बदला लेनेके लिये अपने मनही मनमें बहुत दिनोंसे उपाय सोच रहे थे। इस समय सैयदके दोनो भ्राताओंको क्रोधित होताहुआ देखकर भीमसिंह दोनो सैदयोंको संतुष्ट करनेके साथ बदला देनेके लिये राजपूत जातिके जातीय धर्मको भूलकर अत्यन्त कापुरुषोकी समान अभिनय करनेको तय्यार हुए। राव राजा बुधसिंह इस समय दिल्लीकी राजधानीके बहिर्देशमे स्थित अपने घोड़ोंको शिक्षा दे रहे थे। उस समय कोटेके महाराज भीमसिंह ठीक समय विचारकर अपने अनुचरोके साथ वहाँ जाय राव राजा बुधसिंहको पकड़ कर उन्हें दोनो सैयदोके हाथमे देनेके लिये तैयार हुए। यद्यपि उस समय बुधसिंहके साथ बहुत थोड़े सेवक थे तथापि उन्होने बुधसिंहको घिरा देख कोटाके महाराजके साथ युद्ध करते २ निर्विघ्नतासे उनकी रक्षा की थी। राव बुधसिंहने देखा कि इस समय दोनो सैयद अत्यन्त बलवान् होगये है, बादशाह फर्रुखसियरके उद्धारका अब कोई उपाय दृष्टि नहीं आता, तब अन्तमे वह अपनी रक्षा करनेके लिये राजधानी छोड़कर भाग गये। बहुत थोड़े दिनोंके पीछे ही बादशाह फर्रुखसियरको दोनों सैयदोंने मार डाला, राज्यके चारोंओर अशान्तिका राज्य होगया, इस समय उन पिशाच बुद्धि दोनो सैयदोंका यह लोमहर्षण कार्य देख कर अपने २ प्राणकी रक्षा करनेके लिये एक २ करके सभी देशीय राजा अपने २ राज्योंको चले गये।"

उक्त इतिहासमें वर्णन किया गया है कि "इस समय आमेरके महाराज जयसिंहने बूँदीके महाराज बुधसिंहको सिंहासनसे उतारनेके लिये चेष्टा की। राव बुधसिंह इस समय आमेरके महाराजके यहाँ आतिथ्यता स्वीकार कर उनके यहाँ स्थितिकर रहे थे। आमेरके महाराजके साथ बुधसिंहके झगड़ेका कारण यह था कि राव बुधसिंहने जयसिंहकी एक भगिनीके साथ विवाह किया था। और पहिले यह बात स्थिर हो चुकी थी कि जयसिंहकी उसी भगिनीके साथ बादशाह बहादुरशाह आलमका विवाह होगा। परन्तु जाजौंके युद्धमें बुधसिंहके अतुलबल प्रकाश करनेसे

वादशाह शाहआलम अपने मित्र वुधसिंहसे अत्यन्त ही संतुष्ट हुए, और अपने साथ उस सुन्दरी राजकुमारीका विवाह न करके वुधसिंहके साथ उसका विवाह करनेके लिये कहा। जयसिंहने शीघ्र ही वादशाहकी आज्ञानुसार वुधसिंहके साथ अपनी वहिनका विवाह करदिया। दुर्भाग्यसे जयसिंहकी भगिनीके कोई पुत्र नहीं हुआ। पहिले वुधसिंहने मेवाड़के सोलह प्रधान सामन्तोंमे वेगूंके काला मेघकी एक कन्याके साथ विवाह किया था। उस रानीके गर्भसे वुधसिंहके दो सन्तान उत्पन्न हुई थीं उन छोटे २ सौतेले लड़कोंको देखकर जयसिंहकी भगिनीके मनमें ईर्षाकी आग भड़क उठी। वुधसिंहके परदेश चले जाने पर जयसिंहकी उस भगिनीने अपनेको गर्भवती कहकर प्रकाशित किया। और एक छोटेसे लड़केको गुप्तभावसे लेकर, मेरे गर्भसे यह कुमार जन्मा है, यह सबसे प्रगट कर दिया। जब राव वुधसिंह अपनी राजधानीमे आये तब तुरन्त ही उनको वह पुत्र खिलानेके लिये दिया। वुधसिंह यह समस्त वृत्तान्त जान गये, और रानीके इस आचरणसे महा क्रोधित हुए। अपने उन दोनों पुत्रोंके इससे अनिष्ट होनेकी संभावना विचार कर उन्होंने यह समस्त समाचार जयसिंहको लिख भेजा। महाराज जयसिंह यह समाचार सुनकर महा क्रोधित हो अपनी सौतेली वहिनका तिरस्कार करने लगे। परन्तु उनकी वहिन उनके इस तिरस्कारसे कुछ भी लज्जित न हुई, वरन उसने समझा कि स्वामी महाराज वुधसिंह और भ्राता जयसिंहने मेरे सतीत्वमें सन्देह किया है अथवा इसने छल करके दूसरेके पुत्रको अपना पुत्र वनाया है उनको यह दृढ़ विश्वास होगया है, यह अनुमान करके वह उसी समय अपने भाई जयसिंहकी कमरसे तलवार निकाल कर उन्हींका संहार करनेके लिये तैयार हुई। तब जयसिंहने तुरन्त ही वहाँसे भागकर अपने प्राणोंको वचाया"।

बूँदीके इतिहासमे आगे लिखा है कि वुधसिंह तथा उक्त भगिनीके द्वारा अपमानित होकर आमेरके महाराज जयसिंहने राव वुधसिंहको बूँदीके सिंहासनसे उतारनेके लिये दृढ़ प्रतिज्ञा की। जयसिंहने सबसे पहिले बूँदीके प्रधान सामन्त इन्द्रगढ़के अधीश्वर देवसिंहको बूँदीके सिंहासन पर अभिषिक्त करनेका प्रस्ताव उपस्थित किया। इसमे राजभक्त देवसिंहने सब प्रकारसे अपनी असम्मति प्रगट की। पीछे जयसिंहने करवरके सामन्त सालिमसिंहको बूँदीका राजपद देना चाहा, उन्होंने उसके ग्रहण करनेमे कुछ भी असम्मति प्रगट न की। सालिमसिंह बूँदीके राव वुधसिंहके अधीन सामन्त तथा तारागढ़के शासनकर्ता पदपर नियुक्त थे।

कर्नल टाड साहव लिखते हैं; कि महाराज जयसिंह अपने वहिनोई बूँदीराज राव वुधसिंहको सिंहासनसे उतारनेके लिये तैयार हुए थे, यह उनका और भी एक चिर अभिलाषित राजनैतिक षड्यंत्रका अंशमात्र था, इस समय महाराज जयसिंह मुगल-वादशाहके प्रतिनिधिस्वरूपसे मालवा अजमेर और आगरेके शासनकर्ता पदपर नियुक्त थे। उन्होने उस महान् ऊँचे पदपर स्थित होकर आस पासके निवासी अन्यान्य

राजाओंके ऊपर अपनी प्रबल सामर्थ्यका विस्तार कर उनको अपने अधीनमे करनेकी अभिलाषा की, विशेष करके दिल्लीका सिंहासन लेनेसे इस समय मुगल सम्राट् वंशमें आत्म विग्रह उपस्थित होनेके कारण महाराज जयसिंहने इस सुअवसरमें अपनी बहुत दिनोंकी इस अभिलापाको पूर्ण करनेका विचार किया। शीघ्र ही बादशाह फर्रुखसियरके सिंहासनसे रहित होते ही महाराज जयसिंहने अपने उस आशयको सफल करनेका यथार्थ अवसर जानकर दिल्लीसे अपने राज्यमें आकर कार्य करना प्रारंभ किया "।

इस समय आमेरराज्यकी भूमिका परिमाण बहुत थोड़ा था, सबसे पहिले महाराज जयसिंहने अपने राज्यकी सीमाके जितने भी देश थे उन सबको अपने अधिकारमे करनेका विचार किया। और दूसरी ओर जिन छोटे २ राजाओंकी सेना मुगलबादशाहकी आज्ञानुसार महाराज जयसिंहके अधीनमे नियुक्त थी, जयसिंहने उनको अपने अधीन पदपर वरण कर लिया।

पूर्व वर्णित युद्धमें आमेरराजकी सीमामें लालसोढ़के पचवाना चौहान, गोरा, नीमराणा इत्यादि अनेक अनधीन सामन्त थे। वह जयपुरके महाराजको न तो कर देते थे और न उनके अधीनमें कोई कार्य करते थे, परन्तु आवश्यकतानुसार उस प्रत्येक सम्प्रदायमें अपनी २ सेनाके साथ आमेरके अधीनमें मिलकर रणभूमिमे जाते थे, परन्तु सेखावाटीके सामन्त उस प्रकारसे सेनाके साथ आमेरके महाराजके साथ नहीं मिलते थे। राजौरके बड़गूजर और बियानाके जादौ इत्यादि प्राचीनकालके सामन्त गण भी पहिलेकी समान स्वाधीनभावसे रहते थे, परन्तु मुगलोके शासनके पतन समयमे उन्होने शत्रुओंके कराल ग्राससे रक्षा करनेमे अपनेको असमर्थ जानकर अन्तमे अपने २ उन प्राचीन स्वाधीन देशोंको आमेर राजके अधीनमें स्वीकार कर उनकी आज्ञा पालन और आवश्यकतानुसार सेनाकी सहायता करना स्वीकार किया था। यद्यपि महाराजने उक्त अधीश्वरोंको अपने हस्तगत करलिया था, परन्तु उन्होंने उसी प्रकार सरलतासे बूंदीके महाराजको हस्तगत कर अपनी अनभिज्ञताका परिचय दिया। बिना रुधिर बहाये बूंदीके महाराज राव बुधसिंहको अपने अधीनताकी जंजीरमे बांधना कठिन जानकर महाराज जयसिंह बुधसिंहको सिंहासनसे उतारकर उनके पदपर अपने अभिलाषित मनुष्यको अभिषिक्त करनेमें प्रवृत्त हुए।

जिस समय महाराज बुधसिंह अपने साले जयसिंहकी राजधानी आमेरमें उनकी आतिथ्यता स्वीकार करते थे, उस समय जयसिंह गुप्त षड्यंत्रजालका विस्तार करके बुधसिंहके सर्वनाश करनेकी चेष्टा कररहे थे। सबसे पहिले जयसिंहने बुधसिंहके निकट यह प्रस्ताव किया, "कि आप जो आमेरराज्यमें निवास करते रहे, तो मैं प्रतिदिन आपको तथा आपके सेवकोंके लिये पाँचसौ रुपया देता रहूँगा।" बुधसिंहके चचा जयतसिंह जो आगरेके चौकमें सैयदोंकी सेनाके साथ संग्राममे मारे गये थे, और जिन्होंने अपना जीवन देकर बुधसिंहके प्राणोंकी रक्षा की थी, उनके

एक भ्राता इस समय बुधसिंहके साथ जैपुरमें निवास करते थे। जयसिंहने जो यह प्रस्ताव उपस्थित किया, उसका गुप्त उद्देश क्या था इसको वह भलीभाँतिसे समझ गये। उन्होंने शीघ्र ही इस भावका एक पत्र बूँदीको भेजा, कि बेगूवाली रानी (बुधसिंहने बेगूके जिस सामन्तकी कन्याके साथ विवाह किया था) शीघ्र ही अपने पुत्रोंके साथ अपने पिताके यहाँको चली जायँ। कुछ दिनोंके पीछे उन्होंने बुधसिंहके समस्त अनुचरोंको अत्यन्त गुप्तभावसे जैपुरके बाहर इकट्ठा करके बुधसिंहकी समस्त विपत्तियोंका समाचार कह सुनाया। राव राजा बुधसिंह जयसिंहकी विश्वासघातकता और मारनेकी चेष्टा जानकर शीघ्र ही तीनसौ हाड़ा सेनाको साथ ले जैपुरके बाहर हुए। यद्यपि उनके साथ उस समय केवल तीनसौ सैनिक थे तथापि उस वीरके हृदयमें इस समय इस प्रकारकी प्रबल आशा विराजमान थी कि इस तीनसौ सेनाकी सहायतासे ही मैं इस महाविपत्तिसे अपना उद्धार करसकूगा। राव राजा बुधसिंहने उन तीनसौ अनुचरोंके साथ अपनी राजधानी बूंदीकी ओरको यात्रा प्रारंभ कर दी। परन्तु उनके पंचोला स्थानमे जाते ही आमेरराज जयसिंहकी पूर्व आज्ञानुसार जैयपुरके प्रधान पाँच सामन्तोने सेनासहित राव राजा बुधसिंह पर आक्रमण किया। वह तीनसौ सैनिक शीघ्र ही शत्रुओंकी सेनाके द्वारा घेर लिये गये। राव बुधसिंह उस विपत्तिसे कुछ भी भयभीत न हुए। उस बहुत थोड़ी सेनाके साथ उन्होंने युद्ध करना प्रारंभ किया। उन राजपूतोंने युद्धमे अपनी २ वीरताकी पराकाष्ठा दिखानेमे किसी भाँतिकी कसर न की, परन्तु राव राजा बुधसिंह असीम साहसी केवल तीनसौ हाड़ासेना साथ लेकर इस प्रकार महा पराक्रमके साथ युद्ध करने लगे। जैपुरके उक्त ईसरदा, सेवाड़ और भावर इत्यादि स्थानोके पाँच सामन्त और उनके अधीनकी नीची श्रेणीके बहुतसे सरदार मारे गये। आजतक उन सामतोंके समाधिमदिर उस स्थानमें विराजमान होकर बुधसिंहकी प्रतिहिंसाकी साक्षी देरहे हैं। परन्तु उपरोक्त युद्धमे राव बुधसिंहके उक्त चचा भी मारे गये। इस समय बुधसिंहकी सेनाकी संख्या बहुत घट गई थी, इससे वह उस थोडीसी सेनाकी सहायतासे शत्रुओंकी सेनामेसे निकल बूँदीमे न जासके, इसीसे वह निर्विघ्नतासे पहाड़ी रास्तेसे चले गये। जयसिंहने इस प्रकारसे राव बुधसिंहको भगाकर कारड़के सामन्त दलेलसिंहके साथ अपनी कन्याका विवाह करके उनको बूँदीके सिंहासनपर अभिषिक्त कर दिया।

"इसका वर्णन तो पहिले ही करचुके हैं कि कोटाराजवंशके साथ बूँदीके राजवंशकी घोर शत्रुता होगई थी। यद्यपि दोनों राजवंशोका जन्म एक ही मूलसे हुआ था, और बूँदीका राजवंश श्रेष्ठ तथा कोटेका राजवंश छोटा था, यद्यपि दोनों राजाओंकी नाड़ियोमें एकही रुधिर बहता था, परन्तु जातिसे वैरभावके कारण एक दूसरेका विनाश करनेमे विशेष तत्पर थे। राव बुधसिंहको महाविपत्ति ग्रस्त देखकर कोटेके महाराज भीमसिंह इस समय अत्यन्त आनन्दित हो मारवाड़के अधीश्वर महाराज अजितसिंह और दिल्लीके बादशाहके दोनो सैयद मन्त्रियोंके साथ दृढ़ मित्रता करके उनकी सहायतासे भरवार, हाड़ोती इत्यादि देशोमें अपनी प्रधानता विस्तार करनेमें लगे। उन्होंने इस

समय निर्भय हो चम्बलनदीको अपने राज्यकी सीमामें निर्देश करके उक्त नदीके पूर्व तीरवर्ती बूँदी राज्यके खास अधिकारी देशके पृथ्वीके भागोंको शीघ्रतासे कोटेके राज्यके अधिकारमें करलिया " ।

राव बुधसिंहको इस प्रकारसे चारोंओरसे शत्रुओंने घेर लिया, यह महाविपत्तिके समुद्रमे मग्न होकर राजपूत जातिके स्वाभाविक पराक्रमके साथ अपने पिताकी राजधानी पर फिर अधिकार करनेके लिये बारम्बार चेष्टा करने लगे । अधिक क्या, इसी कारणसे बारम्बार युद्ध हुआ और उन युद्धोंमें बहुतसी हाड़ा सेना मारी गई । परन्तु अभागे बुधसिंहका किसी प्रकार भी मनोरथ सिद्ध न हुआ । अन्तमें मनके दुःखको मनहीमें रखकर सुसरालमे ही निवास करनेके पीछे उन्होंने प्राण त्याग दिये । राव बुधसिंहने दो पुत्र छोड़े, बड़ेका नाम उमेदसिंह और छोटेका नाम दीपसिंह था ।

राव बुधसिंहके परलोक जानेके पीछे उनके दोनों कुमार भी महाविपत्तिके मुखमे पड़े । उनके वंशके शत्रु आमेरके महाराज जयसिंहकी आज्ञानुसार मेवाड़के महाराणाने बेगूदेशको अपने अधिकारसे करके उमेदसिंह और दीपसिंहको मामाके यहांसे निकाल दिया । निःसहाय आश्रयहीन विपत्तिमे पड़ेहुए राजकुमार दोनों बालक उमेदसिंह और दीपसिंह एकमात्र साहसमें भरकर निर्भयहो अपने पिताके कितनेही वीश्वासी सेवकोंको लेकर पुचैल नामक गहन देशको चले गये । कुछ दिनोंके उपरान्त कोटेके महाराज भीमसिंहके प्राण त्याग करते ही राजा दुर्जनशाल कोटेके सिंहासन पर अभिषिक्त हुए । अनाथ उमेदसिंह और दीपसिंहने उस विपत्तिमें पड़कर कही भी सहायताकी आशा न जान अन्तमें अपनी जातिके उक्त दुर्जनशालके निकट अपनी वह शोचनीय अवस्था सुनाकर उनसे सहायताकी प्रार्थना की । कोटेके महाराज दुर्जनशाल अत्यन्त उदार और दयालु हृदय थे उन्होंने जातिके वैरभावको भूलकर उमेदसिंह और दीपसिंहका उद्धार किया, वरन वह इतना करके भी शान्त न हुए जिससे इनको फिर बूँदीका राज्य मिलजाय, इसमें भी उनकी सहायता करनेमें तत्पर हुए, ।

चतुर्थ अध्याय ४.

उमेदसिंहका जयपुरकी सेनाको परास्त करना-डबलाना नामक स्थानमे युद्ध-उमेदकी पराजय और भागना-उनके घोड़ेकी मृत्यु-चम्बलके ध्वंसस्तूपमें उमेदका आश्रय लेना-उमेदका बूँदीको जय करना-फिर बूँदीसे उमेदका भागना-उनकी विमाताका उमेदके साथ साक्षात् होना-उक्त विमाताका हुलकरसे सहायता मांगना-हुलकरका उमेदको बूँदीके सिंहासन पर अभिषिक्त करनेकी प्रतिज्ञा करना-युद्धके लिये तैयार होना-जयपुरके महाराजका उमेदको बूँदीका महाराज कहकर स्वीकार करना-उमेदको बूँदीके राज्यकी प्राप्ति होना-महाराष्ट्रोंका अत्याचार करना-इन्द्रगढ़के अकृतज्ञ सामन्तोंका प्राण नाश-उमेदका राज्य त्याग करना-अजितसिंहका अभिषेक-पितामह

उमेदसिंहके प्रतिपोते विष्णुसिंहका अविश्वास प्रकाश करना–फिर परस्परमें मिलन होना–हाड़ोती राज्यको छोड़कर अंग्रेजी सेनाका भागजाना–उमेदका उस सेनाकी सहायता करना–उमेदसिंहकी मृत्यु–बूंदीके महाराजके साथ गवर्नमेण्टका संधिबंधन–संधिपत्र–विष्णुसिंहके प्रति गवर्नमेण्टका अनुग्रह प्रकाश करना–विष्णुसिंहकी मृत्यु–इनके चरित्रोंकी समालोचना करना–राव राजा रामसिंहका अभिषेक—

संवत् १८९० सन् १७४४ ईस्वीमें जिस समय उमेदके पिताके शत्रु महाराज जयसिंहने प्राण त्याग किये थे, उस समय उमेदसिंहकी अवस्था केवल तेरह वर्षकी थी–जब उमेदसिंहने जयसिंहकी मृत्युका समाचार पाया तब उस बालावस्थामे ही उन्होंने असीम साहसके साथ अपनी जातिके बहुत थोड़े अनुचरोंके साथ बाहर जाकर सबसे पहिले पाटन और गेनोली दोनो देशोंपर आक्रमण करके अपना अधिकार करलिया। जब इस बातका सर्वत्र हाड़ोती देशमें प्रचार होगया कि बूँदीके मृतक महाराज बुधसिंहके बालक पुत्र उमेदसिंह अपने पिताके अधिकारको संग्रह करनेके लिये बाहर हुए है, तब प्राचीन हाडाजातिके दलके दल चारोंओरसे आकर उमेदकी विजय पताकाके नीचे इकट्ठे होने लगे। कोटेके उदारचित्त अधीश्वर दुर्जनशालको जब यह समाचार ज्ञात हुआ कि एक तेरह वर्षका बालक उमेदसिंह राजपूतवीरकी समान राजनैतिक रंगभूमिमे आकर वीरता दिखारहा है, तब उन्होने तुरन्त ही महा आनदित होकर उमेदकी सहायताके लिये अपनी सेनाको भेज दिया।

जयसिंहकी मृत्युके पीछे महाराज ईश्वरीसिंह जयपुरके सिंहासन पर विराजमान होकर पिताकी निर्दिष्ट राजनैतिक नीतिको चलानेमें प्रवृत्त हुए। उन्होंने विचार किया कि हाड़ाजातिकी श्रेष्ठशाखा बूँदीके राजवंशकी समान छोटीशाखावाले कोटेके राजवंशको भी अवश्य ही जैपुरकी अधीनता स्वीकार करनी होगी। कोटेके महाराज दुर्जनशाल जयपुरके महाराज ईश्वरीसिंहकी उस अन्यायकारी ऊँची अभिलाषाके प्रति घृणा दिखाकर उमेदकी सहायता करनेमें प्रवृत्त हुए, ईश्वरीसिंहने शीघ्र ही कोटेके महाराजके विरुद्ध युद्ध करनेका विचार कर कोटेराज्यपर आक्रमण किया। इस कोटेके आक्रमणका शेष फल क्या हुआ, वह इस बूँदीके इतिहासमें प्रकाशित नहीं किया गया, वह हमारे पाठकोंको कोटेके इतिहासमे मिलेगा।

ईश्वरीसिंहने कोटेसे भागनेके समय एक दलवृद्ध लोहारी नामक पन्थी सेनाका नामक जिस स्थानमे उमेदसिंह जारहे थे वहां उनपर आक्रमण करनेके लिये भेजा उस लोहारीनामक स्थानके मीनाजाति उक्त पहाडी देशके आदिमनिवासी थे, यद्यपि हाड़ाजातिने उनकी स्वाधीनता हरण करली थी तथापि उन मीनागणोंने हाड़ाराजके अनेक समय पर बहुतसे उपकार किये थे तथा वे उनके साथ युद्धोंमे भी गये थे।बालक उमेदसिंह की विषम वीरता और साहसको देखकर तथा उनकी शोचनीय दुर्दशा देखकर उस मीना जातिका हृदय भी इनकी ओरको खिच गया। पाँच इजार धनुषधारी मीना उमेदसिंहका पक्ष समर्थन कर उनकी सहायता करनेके निमित्त इकट्ठे होकर उमेदसिंहके अधीनमें युद्ध-

भूमिमें जानेके लिये विशेष आग्रह प्रकाश करने लगे। वीर बालक उमेदसिंहने उस मीना सेनाकी सहायतासे महा पराक्रमके साथ अग्रसर त्रिचोरीनामक स्थानमें शत्रु-ओंके साथ समरानल प्रज्वलित कर दी। मीनाजाति अपने प्रवल पराक्रमसे शत्रुओंके ऊपर जाकर जिस समय उनके डेरोंको लूटनें लगी उस समय उमेदसिंह नंगी तलवार हाथमें लेकर हाड़ासेनाको सहायतासे जयपुरकी सेनादलपर आक्रमण करके उसका संहार करने लगे। उस समय अगणित शत्रुओंकी सेना मारी गई। उमेदसिंहने रण डंके और राजपताका पर अधिकार कर लिया। अंतमे जयपुरका सेनादल उस बालक वीरसे परास्त होकर अपने प्राणोंके भयसे भाग गया।

जैपुरके महाराजने उस वीर बालक उमेदसिंहकी वीरताका समाचार सुनकर तथा अपनी सेनाकी पराजय सुनकर उमेदसिंहको एकवार ही परास्त करनेके लिये नारायणदास खतरीके अधीनमें फिर अठारह हजार सेनाको भेजा। विचोरीनामक स्थानके युद्धमे जय प्राप्त करके उमेदसिंह भविष्य आशाको अलक्ष्यमे देखने लगे। जिस हाड़ाजातिके सामन्त वीरोंने अबतक सहायता नही की थी उमेदसिंहकी जयप्राप्तिसे वही इस समय महा आनंदित होकर दलके दल उनके साथ आकर मिलने लगे। उमेद-सिंह इस समय पिताके सिंहासनको पानेके लिये इतने उत्तेजित हुए थे कि उन्होने उस महा युद्धमें प्राणतक भी उत्सर्ग कर देनेकी प्रतिज्ञा की थी। इस समय जयपुरके महा-राजकी भेजीहुई अठारह हजार सेना डबलाना नामक स्थानमें आकर इकट्ठी हुई। युद्धकरनेके पहिले उमेदसिंह कुलदेवी आशापूरा माताके मंदिरमे गये और भलीभांतिसे पूजा तथा प्रार्थना करके लौट आये, परन्तु मंदिरसे लौटते समय यह प्रतिज्ञा की कि क्या तो बूंदी पर ही अपना अधिकार होगा और नहीं तौ मै रणभूमिमें अपने प्राण खो दूंगा।

असीमसाहसी हाड़ा दलने भी उमेदकी समान प्रतिज्ञा की कि क्या तो विजय ही होगी नहीं तो युद्धक्षेत्रमे प्राण त्याग करैंगे। दिल्लीके बादशाह जहाँगीरने बूँदीके अधीश्वर राव रतनको जो राजपताका दी थी; उमेदसिंह इस समयके युद्धमें उस पताकाको लेआये थे, हाड़ा सेनादल बूँदीकी उस प्राचीन राजपताकाके अधीनमे शीघ्र ही इकट्ठा हुआ; सम्मिलित हाड़ादलने संहारमूर्तिसे डबलाना सीमाको लांघते ही देखा कि प्रवल शत्रुओंकी सेना उनको आक्रमण करनेके लिये आगे आरही है। वीरश्रेष्ट उमेद-सिंह शत्रुओंकी सेनाको अधिक देखकर कुछ भी भयभीत न हुए, वरन अपनी सेनाको चक्राकारसे सजाकर भाला हाथमें लेकर शत्रुओंके व्यूहको भेदनेके लिये आगे बढ़े। शीघ्र ही दोनों सेनाओंका परस्पर मुकाबला होगया। परन्तु हाड़ादलने इस प्रकार असीम साहसके साथ अपना अंतिम बल प्रकाश करके शत्रुओंके व्यूहपर आक्रमण किया कि वह प्रवल शत्रुओंकी सेना दृढ़ दल बाँधकर भी इस समय छिन्न भिन्न होगई, परन्तु कुछही कालके पीछे शत्रुओंकी सेनाने फिर एक दल बाँधा, और उमेद-सिंहके जानेके मार्गमें भयंकर गोले वर्षाने लगी, परन्तु उमेदने उन गोलोंकी वर्षापर

कुछ भी ध्यान न दिया फिर नंगी तलवार हाथमे लेकर शत्रुओंके व्यूहको भेद डाला। हाडासेनाने केवल तलवारसे ही शत्रुओंकी सेनाका संहार किया। परन्तु हाड़ादलने जितनी वार जयपुरकी सेनापर आक्रमण किया, उतनी ही वार उसकी अधिक हानि हुई। प्रथम आक्रमणमे उमेदसिंहके मामा पृथ्वीसिंह मारे गये। इसके पीछे मोटराके महाराज मर्जादसिंह नामक हाड़ाजातिके अधीश्वरके जिस समय जयपुरके सेनापति नारायणदास खतरीके मस्तकको काटनेके लिये चक्रमे भेजा था, उन्होंने भी उसी समय रणभूमिमें जाकर शयन किया। सारलके सामन्त प्रागसिंह तथा अन्यान्य नीचीश्रेणीके वीर भी धीरे २ प्राण त्याग करने लगे। अपने प्रधान २ वीरोंके मारे जाने पर भी वह अल्पवयस वालक वीर उमेदसिंह कुछ भी भयभीत न हुए। वरन अपना अतुल वल विक्रम प्रकाश करते हुए शत्रुओंका सहार करने लगे। परन्तु अंतमे अपने दुर्भाग्यसे उमेदसिंहका घोड़ा गोलोंके आघातसे घोररूपसे घायल हुआ, उसकी देहसे रुधिरकी धारा वहने लगी। बूँदीके इतिहासलेखकने लिखा है कि यद्यपि उमेदसिंह तथा उनकी सेनाने घोररूपसे वलविक्रम प्रकाश किया था परन्तु अन्तमे शत्रुओंकी सेनाके अधिक होनेसे शीघ्र ही इनकी पराजय होगई। वीर सामन्तोंने उमेदको शत्रुओंके मुखमे पडाहुआ देखकर कहा, कि "यदि आपका प्राण रहैगा तो किसी न किसी समय अवश्य ही बूँदी पर अपना अधिकार होजायगा, और यदि अपने ही इस रणभूमिमे अपने प्राणोंका वलिदान किया तो सभी आशाए लोप होजायँगी, इस लिये आप युद्ध करना छोड दीजिये।

इतिहासलेखकने लिखा है कि वीरश्रेष्ठ उमेदसिंहने महाशोकित और दु खित होकर शीघ्र ही युद्धभूमिको छोड दिया। उमेदसिंह हताश होकर अपनी वचीवचाई सेनाको साथ लेकर सवाली नामक घाटी मार्गसे आये, इन्द्रगढको वहुत पास जानकर उस घायल हुई घोड़ीको विश्राम करानेके लिये आप उसपरसे उतर पड़े। परन्तु जैसे ही इन्होंने उसका साज खोला कि वैसे ही उसने प्राण त्याग दिये। वीरश्रेष्ठ उमेदसिंहका हृदय शोकके आघातसे चलायमान हुआ; विचारे उमेद उस घोड़ीके सिरहाने बैठकर रुदन करने लगे। उस घोड़ीका नाम हुंजा था, वास्तवमे वह घोडी अधिक सम्मानके योग्य थी। यह घोडी ईरान देशकी थी, दिल्लीके वादशाहने उमेदके पिता वुधसिंहको वह घोडी उपहारमे दी थी और वुधसिंहने उस पर चढकर वहुतसे युद्धोमें विजय प्राप्त की"। फिर जो उस घोडीका शोक हाड़ाराज उमेदसिहने इस प्रकारसे किया तो इसमे कुछ आश्चर्य नही? कर्नल टाड् साहव लिखते हैं कि "भविष्यतमे उमेदसिंहने बूँदीके सिंहासनको प्राप्त कर सवसे पहिले इस घोड़ीकी एक सुन्दर पत्थरकी मूर्ति वनवा कर बूँदीकी राजधानीके चौकमे स्थापित की। प्रत्येक हाडाजातिके वीरने ही उस मूर्तिका महान् ऊँचा सम्मान किया था"।

(१) कर्नल टाडू साहवने अपने टीकामें लिखा है कि "मैंने हुंजाकी मूर्तिको देखकर उसको सलाम किया था। यदि मै हाडाजातिमें निवास करता तो राजपूतोंके प्रत्येक युद्धके उत्सवके समय में हाड़ाजातिकी समान मै भी उस मूर्तिके गलेमें माला पहराता"।

महा दुःखित हो उमेदसिंह इन्द्रगढ़में आये। यह इन्द्रगढ़ बूँदीके प्रधान सामन्तों के अधिकारमें था। इन्द्रगढ़पति उमेदके पिताके आज्ञावाहक अधीन सामन्त थे, इन्होंने राजभक्तिके मस्तक पर कुठाराघात करके विश्वासहन्तास्वरूपसे आमेरके महाराजकी अधीनता स्वीकार की थी। उमेदसिंह इनके पास गये, इन्द्रगढ़के महाराजका सम्मान दिखाना तो दूर रहा वरन उन्होंने अत्यन्त नराधमकी समान उमेदसिंहकी प्रार्थनानुसार उनको एक घोड़ा भी नहीं दिया, वरन उनको शीघ्र ही इन्द्रगढ़ छोड़देनेके लिये कहा। उमेदसिंह इन्द्रगढ़के अधिपतिके इस व्यवहारसे अत्यन्त दुःखित और क्रोधित हो मनका क्रोध मनहीमें रखकर इन्द्रगढ़में जलतकको भी ग्रहण न करके करवान देशकी ओरको चले गये। उस देशके अधीश्वर इन्द्रगढ़के महाराजकी समान अराजभक्त विश्वासहन्ता नहीं थे। वह उमेदसिंहके आनेका समाचार सुनते ही बड़ी प्रसन्नतासे आगे बढ़ उनको बड़े सम्मानके साथ ग्रहण करके अपने यहां लिवा लाये, और एक घोड़ा दकर वह अपनी सामर्थ्यके अनुसार उनकी सहायता करनेके लिये भी तय्यार हुए। उमेदसिंहने उस समय देखा कि इस समय शीघ्र ही जयपुरकी सेनाके साथ युद्ध करना असंभव है तो जितने विश्वासी हाड़ाजातीय वीर इनके पास थे उन सबको यह कहकर विदा दी कि "इस समय अपने२ स्थानको जाओ फिर सुअवसर आनेपर आपकी सहायता ग्रहण करूंगा।" उमेदसिंह इस प्रकारसे सबको विदा करके चम्बलके किनारे रामपुरा नामक स्थानके प्राचीन विध्वंस्त महलमें जाकर रहने लगे।

परन्तु वीरतेजस्वी उमेदसिंहको उस भावसे अधिक दिनतक रहना नहीं हुआ। कोटेके महाराज उदार हृदय दुर्जनशालने कि जिन्होंने अपने प्रबल पराक्रमसे आमेरके महाराज ईश्वरीसिंह और उनके सहयोगी महाराष्ट्रनेता आपाजी सेधियाके करालग्राससे कोटेराज्यकी रक्षा तथा अंतमे ईश्वरीसिंह और आपासिधियाको परास्त कर भगादिया था इस समय उन्होंने सबसे अधिक उमेदसिंहकी सहायता की। इधर हाड़ावतीके एक ऊंची श्रेणीके कविने उस बालक उमेदसिंहका पराक्रम और साहस देखकर अत्यन्त मोहित हो जिससे वीरश्रेष्ठ उमेदसिंहको उनके पिताका सिंहासन मिलजाय इसमें विशेष यत्न किया। राजपूतकविके हाथमें केवल लेखनी ही शोभा नहीं पाती थी वरन तलवार भी भलीभाँतिसे उसके करकमलमे शोभायमान होती थी। लेखनीकी समान तलवारके चलानेमें भी राजपूत कवियोको अभ्यास था! वह राजपूतकवि एक ओर तो लेखनीके बलसे इस प्रकार हृदयको उत्तेजित करनेवाली वीर गाथावलीमें उमेदकी वीरताका अभिनयरूपी काव्य बनाकर हाड़ाजातिको उत्तेजित करने लगे, और दूसरी ओर वह उसी प्रकारसे स्वयं अपनी तलवारके बलसे उमेदके सौभाग्यके सूर्यको उदित करनेके लिये आग्रहके साथ कार्य क्षेत्रमे चले। उन कविकी प्रार्थना पर कोटेके महाराज दुर्जनशालने शीघ्र ही अपनी सेनाको उन कविश्रेष्ठके अधीनमें बूँदीको जीतनेके लिये भेजा। वीरतेजस्वी उमेदसिंहने फिर अपने भाग्यकी परीक्षा करनेके लिये अपने कुटम्बी जनोंके साथ कोटेकी सेनाका योग देकर नवीन अवस्थामें संहारमूर्तिसे शत्रुओंका पीछा किया।

निरन्तर घोरयुद्ध होनेके कारण बूँदीके नगरकी दीवारें एक प्रकारसे विध्वंस होगई थीं। विश्वासघाती अराजभक्त दलेलसिंह जिनको जयसिंहने बूँदीके सिंहासन पर अभिषिक्त किया था, वह उमेदसिंहके आनेका समाचार सुनकर नगरकी रक्षा करनेके लिये वाहर हुए तो थे परन्तु किसी प्रकारसे भी सफल मनोरथ न हुए, वीरश्रेष्ठ उमेदसिंहने बड़ी सरलतासे नगर पर अधिकार करलिया। अंतमें दलेलसिंह अपनी रक्षा करनेके लिये बूँदीके प्रधान किले तारागढ़में चलेगये। उमेदसिंहने तारागढके घेरनेमें किंचित् भी विलंब नहीं किया, जिस वीरकविके कल्याणसे उमेदसिंहने इस भाग्यकी परीक्षा की थी अत्यन्त ही दुःखका विषय है कि जिस समय सेनादल तारागढ़पर अधिकार करनेके लिये उद्यत हुआ, उस समय उक्त कविश्रेष्ठ अपने जातिके एक विश्वासघाती मनुष्यके द्वारा मारेगये। उनकी मृत्युका समाचार गुप्त रक्खा गया, इनके शिरके ऊपर एक सफेद चादर उढ़ादी जिससे कोई जान न सके। अन्तमें उमेदसिंह घोर पराक्रमके साथ किलेपर अधिकार करनेके लिये तत्पर हुए, दलेलसिंह महा भयभीत होकर किलेको छोड़कर भागगये और उमेदसिंह किलेके जीतनेके पीछे पिताके सिंहासन पर विराजमान हुए।

दलेलसिंहने भागकर शीघ्रतासे जयपुरमें जा ईश्वरीसिंहको अपनी पराजयका समाचार सुनाया। जयपुरके महाराज उस समाचारको सुनकर अत्यन्त क्रोधित हुए; और शीघ्र ही विख्यात वीरश्रेष्ठ खत्री केशवदासके साथ एक सेनाको फिर बूँदीपर अधिकार करनेके लिये भेजा। उमेदसिंहने उस विध्वंस हुए नगरकी दीवारो तथा किलेकी मरम्मत करानेका अवसर न पाकर आमेरकी सेनाके आनेका समाचार पाकर महायुद्ध आरंभ किया। यद्यपि उमेदसिंह बड़े कष्टसे बूँदीको जयकर पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए थे परन्तु वह समयके न मिलने पर उचित तैयारी न करसके, इसी कारण सरलतासे आमेरकी शिक्षित सेनाने उस युद्धमें जय प्राप्त की। यद्यपि आमेरकी राजपताका फिर बून्दीके किलेके शिखरपर उड़ी परन्तु आमेरके महाराजकी ओरसे जब दलेलसिंहको फिर बूँदीके सिंहासन पर बैठालेका प्रस्ताव उपस्थित हुआ, तब दलेलसिंह पहिले कलकको स्मरण करके फिर राजसिंहासनपर बैठनेके लिये किसी प्रकार भी राजी न हुए।

उमेदसिंह फिर दुर्भाग्यरूपी अगाध समुद्रके जलमें निमग्न हुए। इन्होंने पिताके सिंहासन पर अधिकार करनेके लिये मारवाड़ और मेवाड़के महाराजसे सहायता माँगी। परन्तु किसीने भी इनको सहायता न दी, जिन विश्वासी सेवकोंने इस समय तक उमेदसिंहका साथ नहीं छोड़ा था उमेदसिंह उन्हींका दल बाँधकर निरन्तर गतिसे बूँदीके सिंहासन पर अन्यायसे बैठेहुए मनुष्यका अनिष्ट साधन करने लगे। ग्रामोंको लांघते हुए अंतमे अपने पिताके राज्यमें जा पहुँचे। जिस समय यह उस कार्यमें दत्तचित्त हो विनोदियानामक ग्राममे आये। इसी ग्राममे इनके पिता तथा इनकी सम्पूर्ण विपत्तियोंको पहुँचाने वाली सौतेली माता

जयसिंहकी भगिनी निवास करती थी । उक्त कछवाही रानीने अपने दोषसे अपने स्वामी और सौतेले पुत्रका सर्वनाश किया, इस दुःखसे महा दुःखित होकर मनके दुःखको मनहीमें रखकर समय व्यतीत करती थी । उमेदसिंहने माताका वहाँ निवास सुनकर शीघ्र ही उनके साथ साक्षात् कर चरणवंदना की । उमेदको देखते ही महारानीके मनमें अनुतापकी अग्नि भयंकररूपसे प्रज्वलित होगई । उमेदकी ऐसी शोचनीय अवस्था तथा ऐसा कष्ट देखकर रानीके हृदयमें स्वभावसे ही दुःख और सहानुभूति उत्पन्न होनेलगी । रानीने इतने दिनोंके पीछे परितापानलसे विदग्ध हुये हृदयमें चिन्ता करनेके पीछे स्थिर किया कि एकमात्र उसीके व्यवहारसे जिस प्रकार बूँदीके राजवंशका सर्वनाश हुआ है उसी प्रकार अपनी सामर्थ्यके अनुसार बूँदीके राजवंशकी अवस्थाका परिवर्तन करना उनके पक्षमें एकान्त कर्त्तव्य है । रानीने उमेदसिंहके साथ बहुतसी बात चीत करनेके पीछे निश्चय किया कि तुम स्वयं दक्षिणमें जाकर महाराष्ट्रनेतासे सहायता मांगो । और जिससे उमेदसिंहको महाराष्ट्रोंकी सहायतासे पिताका सिंहासन प्राप्त हो, इसके लिये यथेष्ट चेष्टा करनी होगी । रानी शीघ्र ही उक्त प्रस्तावके अनुसार दक्षिणकी ओर चली, थोड़े दिनोके पीछे ही रानी अपने पुत्रके साथ दक्षिणके महाराष्ट्रनेता मल्हारराव हुलकरके डेरोंमें जा पहुँची । निकाले हुए उमेदसिंहके भाग्यको बदलनेके लिये जयसिंहकी भगिनी उक्त बुधसिंहकी रानीने मेषपाल जातिके हुलकरकी शरणमें जाकर उनसे सहायता मांगी और जिससे हुलकर बूँदीका उद्धार करदें रानीने इसीके लिये हुलकरके साथ भाई बहिनका सम्बन्ध स्थापित किया ।

यद्यपि मल्हारराव हुलकरने नीच वंशमें जन्म लिया था परन्तु ऊँचे वंशमें उत्पन्न हुए मनुष्यकी समान उसमें अनेक गुण थे, इस कारण वह रानीकी इच्छानुसार बूँदीपर अधिकार करनेके लिये तय्यार हुए । [बूँदीके इतिहाससे जानाजाता है कि पहिले वृद्धारानी हुलकरके साथ सेनासहित बूँदीका उद्धार किये बिना ही पहिले उसको जयपुरमें लेगई । आमेरके महाराज ईश्वरीसिंहको युद्धमें परास्त किया जायगा तो वह स्वयं अपने वंशधर तथा प्रतिनिधियोंके पक्षसे बूँदीका अधिकार एकबार ही छोड़कर संधिपत्र पर हस्ताक्षर करदेंगे। इसी लिये रानी सबसे पहिले महाराष्ट्र नेताको जयपुरमें लेगई । आमेरके महाराज ईश्वरीसिंह महाराष्ट्रोंके आनेका समाचार पाकर युद्ध करनेके लिये सेनासहित राजधानीको छोड़कर आगे बढ़े । ईश्वरीसिंहने इससे पहिले अपने मंत्री केशवदासकी हत्या की थी । केशवदासके दो पुत्र हरसहाय और गुरुसहाय थे । अंतमें यही दोनों भ्राता पिताके हत्या करनेवाले ईश्वरीसिंहको उचित दंड देनेके लिये इस समय गुप्त षड्यंत्रमें लिप्त होकर, ईश्वरीसिंह जिससे प्रबल महाराष्ट्रोंके साथ युद्धमें प्रवृत्त हों उसकी चेष्टा करते थे । दोनों भ्राताओंने ईश्वरीसिंहसे कहा कि महाराष्ट्रोंकी सेनाकी संख्या अत्यन्त सामान्य है इस कारण आप युद्धभूमिमें जाकर उनको परास्त करिये । परन्तु वास्तवमें महाराष्ट्रोंके सेनाकी संख्या सामान्य नहीं थी उन दोनो भ्राताओंने केवल ईश्वरीसिंहको विपत्तिमें डालनेके लिये ही उनसे शत्रुओंकी सेना–संख्याको सामान्य बताया था । विचारे ईश्वरीसिंह उक्त दोनो

भ्राताओंकी बातपर विश्वास करके आमेरके अधीनमें बगरू नामक स्थानतक गये तब जाना कि हम धोखेमे आगये हैं, हरसहाय और गुरुसहायके प्रति उन्हें जो विश्वास होगया था, उसके उचित फलको निकटवर्ती हाड़ाजातिके एक कविने इस स्थानपर लिखा है,—

मंत्री मोटो मारियो, खतरी केशोदास ।
जबहीं छोड़ी ईशरी, राज करनकी आस ॥

इसका अर्थ यह है कि ईश्वरीसिंहने जिस दिन मंत्री केशवदासका प्राण नाश किया उसी दिनसे उन्होंने राज करनेकी संपूर्ण आशा छोड़ दी थी ।

ईश्वरीसिंह बहुत थोड़ी सेना लेकर युद्ध करनेके लिये गये थे; इस कारण शत्रु-पक्षकी सेनाकी संख्या अधिक देखकर उनके साथ युद्ध करना असमव जान आमेरराजने उक्त बगरूदेशके सामन्तके अधिकारी किलेका आश्रय लिया । महाराष्ट्रनेता मल्हारराव हुलकरने शीघ्र ही बगरूके किलेको जा घेरा, ईश्वरीसिंह दशदिन तक किलेमें रहे, अन्तमें अपनी रक्षा असंभव जानकर शत्रुके साथ संधि करनेको राजी हुए । मल्हाररावके प्रस्तावके अनुसार ईश्वरीसिंहने अपनी और भविष्यके उत्तराधिकारियोंकी ओरसे बूँदीराज्य पर अपना सब प्रकारसे अधिकार छोड़कर बूँदीके संपूर्ण अधिकार उमेदसिंहको देदिये । उन्होंने केवल उसी त्याग स्वीकारपत्रको देकर छुटकारा नहीं पाया वरन उस स्थानपर उन्होने उमेदसिंहको बूँदीका महाराज भी स्वीकार किया । हुलकर उक्त त्याग स्वीकारपत्र और कोटेकी सेनादलके साथ शीघ्र ही उमेदको साथ लेकर बूँदीमें आ पहुँचे । जो विश्वासघाती बूँदीके सिंहासन पर विराजमान था उस मनुष्यको भगानेमे किंचित्‌मात्रका भी विलंब नहीं किया । थोड़े ही दिनोंके पीछे बूँदीकी राजधानीमें बड़ी धूमधामके साथ उमेदसिंहका अभिषेक किया गया । इस अभिषेकके समयमे रावराजा उमेदसिंहने समाचार पाया कि उनके शत्रु आमेरके महाराज ईश्वरीसिंहने महा अपमानके कारण आत्मघृणासे विषपान कर प्राण त्याग किये है ।

इस प्रकारसे संवत् १८७५, सन् १७४९ ईसवी मे उमेदसिंह क्रमानुसार चौदह वर्षतक वन वन पर्वत २ पर भ्रमण कर अनेक कष्टोंको सहन करनेके पीछे पिताके सिंहासन पर विराजमान हुए । मल्हारराव हुलकर, जिसने बुधसिंहकी विधवा रानीकी प्रार्थनासे उमेदसिंहके इस सौभाग्यरूपी सूर्यको चमकाया, उसने इसके पुरस्कारमे उमेदसिंहसे चम्बलनदीके किनारेवाले पाटन देश और उसके अधीनके सामन्त ग्रामोंको मांगा, उमेदसिंहने तुरन्त ही रीतिके अनुसार दानपत्र लिखकर वह ग्राम उसेको दे दिये ।

---

(१) कर्नल टाड् साहबने टीकामें लिखा है कि सन् १८१७ ईसवीमें अंग्रेजी गवर्नमेण्टने महाराष्ट्रोंसे यह देश लेकर फिर बूँदीके महाराज (उमेदके पौत्र) को देदिये, बूदीके महाराज इससे अत्यन्त संतुष्ट हुए । कर्नल टाड् साहबने बड़े यत्न और घोर परिश्रम करके यह कार्य किया था ।

-बूँदीका राज्य जो चौदह वर्षसे दूसरेके हस्तगत था, उस दीर्घसमयमें निरन्तर युद्ध होनेसे तथा अनेक कारणोंसे श्री भ्रष्ट होगया था। दलेलसिंहने उस दीर्घयुद्धमें केवल राजमहलमें और तारागढ़ नामक किलेके चारों ओर दीवारें बनवादी थीं, वही उस दीर्घ कालमें एकमात्र उन्नतिका कारण हुई। उमेदसिंह पिताके सिंहासन पर विराजमान होकर सबसे पहिले राज्यकी श्रीवृद्धि और सर्वसाधारण प्रजाका कल्याण करनेके लिये नियुक्त हुए, परन्तु जो कि वह महाराष्ट्र जातिकी सहायतासे पिताके सिंहासन पर बैठनेमें समर्थ हुए थे, इस समय समस्त रजवाड़ेमें उस महाराष्ट्रदलके प्रबल प्रादुर्भाव होनेसे उमेदसिंहके समस्त उद्योग उद्दीपना, तथा मंगल आशामें भयंकर आघात लगने लगा। राजपूतजाति इस समय विचारने लगी कि बीच बीचमें जो पंगुपालकी समान महाराष्ट्रदल इनके राज्यमें आकर अत्याचार और लूटमार करते हैं चिरकाल तक यह व्यवहार नहीं रहैगा। उन्होंने इस महा भ्रान्तिरूपी कुएँमें पड़कर अपना सर्वनाश किया। विशेष करके राजपूत जाँति आत्मविग्रहके समय उस महाराष्ट्र दलका आश्रय लेनेसे और भी बलहीनताको प्राप्त हुई, और उन्होंने सरलतासे अपने प्रताप और प्रभुत्वका विस्तार करलिया। समस्त राजपूतजातिमें बूँदीकी हाड़ाजातिकी महाराष्ट्रोंके प्रादुर्भावसे अधिक हानि हुई थी। यदि वीरश्रेष्ठ उमेदसिंह जन्मभरतक अपने स्वाभाविक साहस और पराक्रमके साथ बूँदी राज्यका शासन करते, यदि वह असमयमें अपनी इच्छासे राज्यशासनका भार न छोड़ देते तो कभी भी महाराष्ट्रगण हाड़ाजातिके प्रति इस प्रकारकी प्रबलताका विस्तार नहीं करसकते थे।

कर्नल टाड् साहब लिखते हैं, कि " उमेदसिंह स्वभावसे ही धार्मिक थे, परन्तु एक प्रतिहिंसाके करनेसे उनके निर्मल चरित्रोंमें कलंक लग गया था, यदि उनमें वह कलंक न होता तो हम राजपूतजातिके इतिहासमें उनको अत्यन्त साहसी ज्ञानी और निर्मल चरित्रोंवाला लिखसकते थे।" " परन्तु हम टाड् साहबके उक्त मन्तव्यको सब प्रकारसे समर्थन नहीं करसकते। इसको हमारे पाठक पहिले ही पढ़ चुके हैं, उमेदसिंह डबलानाके अधीश्वर देवसिंहके पास गये, देवसिंहने इनके साथ किस प्रकारका घृणित व्यवहार और कैसा अराजपूत–उचित कायर पुरुषोंकी समान व्यवहार किया। उमेदसिंह बूँदीके सिंहासन पर बैठकर विचार करते तो बड़ी सरलतासे उस कायरपुरुष देवसिंहको उचित दंड देसकते थे। परन्तु उन्होंने आठ वर्षतक उस हिंसाकी बातको भूल कर भी मनमें न आने दिया। इससे सरलतासे जाना जासकता है कि उमेदसिंहने सामर्थ्यवान् होकर भी जब आठवर्ष बदला न लिया तब तो वह अवश्य ही एक ऊंचे हृदयवाले पुरुष थे, परन्तु अन्य पक्षसे यह भी जाना जाता है कि जिन इन्द्रगढ़पति देवसिंहने अपने अधीश्वर प्रभुको महाविपत्तिमें भी आश्रय नहीं दिया, अथवा उनको एक घोड़ा भी नहीं दिया और आत्मघृणा तथा अनुताप प्रकाशके बदलेमें अत्यन्त कायरपुरुषोकी समान व्यवहार करता रहा, उमेदसिंहने अपने अभ्युदयमें उस देवसिंहको क्षमा करके

उससे बदला नहीं लिया, इसीको स्मरण करके वह मनुष्य अपने मनही मनमें उमेदकी ओर घृणा करता था। वह इतना करके ही शान्त न हुआ, वरन किस प्रकारसे उमेद-सिंहका अनिष्ट साधन करूँ इसी चिन्तामें नित्य लिप्त रहता था। इतिहाससे जाना जाता है कि उमेदसिंहने सिंहासन पर बैठनेके आठ वर्ष पीछे जयपुरके महाराज माधोसिंहके साथ अपनी भगिनीके विवाहका सम्बन्ध स्थिर करनेके लिये अपनी जातीय रीतिके अनुसार नारियल भेजा। माधोसिंहने राजसभामें अपने सामन्त और कुटुम्बियोंके साथ बड़े सम्मानसे उस नारियलको ग्रहण किया। दैवयोगसे उस समय उक्त इन्द्रगढ़पति देवसिंह आमेरमें जा पहुँचे। आमेरराज माधोसिंहने उनसे पूछा कि बुधसिहकी कन्या किस प्रकारकी सुन्दरी है और उसके गुणोंकी प्रशंसा किस प्रकार है?" नीच बुद्धि देवसिंहने उचित सुअवसर पाकर उमेदसिंहके अनिष्ट साधनकी इच्छासे ऐसा घृणित अनृतपूर्ण उत्तर दिया कि वह केवल एकमात्र उनकी समान कायर पुरुषोंके पक्षमे ही शोभा पाता है। देवसिंहने कहा कि वह कन्या बुधसिंहके औरससे उत्पन्न नहीं हुई है। जो राजपूत राजा विवाहका प्रस्ताव स्वीकार कर फिर उस नारियलको कन्याके पक्षवालोंके पास फेरकर भेज दे तो राजपूतोंके लिये इससे अधिक अपमान दूसरा नहीं है। माधोसिंहने देवसिंहके मिथ्या वचनोपर विश्वास करके बूँदीमे नारियल फिरवाभेजा, उस समय उमेदसिंहके हृदयमें कैसा बाण लगा था, उसका अनुमान सरलतासे होसकता है, परन्तु अत्यन्त संतोषका विषय है कि मारवाड़के अधीश्वर महाराज विजयसिंहनें शीघ्र ही उमेदसिंहकी उस भगिनीका विवाह करके देवसिंहकी उक्तिको असत्य कर दिया।

कर्नल टाड् साहब लिखते हैं, कि "संवत् १८१३, सन् १७५७ ई०मे उमेदसिंह करवरके समीप विजयसेनी माताके मंदिरमे पूजा करनेके लिये गये। यह स्थान इन्द्रगढ़के समीप था इस कारण उमेदसिंहने आकर इन्द्रगढ़पति देवसिंहको पुत्रोंसहित इकट्ठे हुए सामन्तोंसे मिलनेकी आज्ञा दी। औरोके निषेध करनेपर भी देवसिंहने उमेदकी आज्ञानुसार अपने पुत्र और पोतेके साथ उपस्थित होनेमें किंचित्मात्रका भी विलम्ब नहीं किया। वहाँ उन्होंने प्रत्येकका संहार करके देवसिंहके वंशको लोप करदिया, उनके चिताके धुँएसे जिससे आकाश कलंकित न हो इस कारण उमेदसिंहकी आज्ञासे उनके शव नदीमें डाल दिये गये। उमेदसिंहने इन्द्रगढ़ देवसिंहके भाईको दे दिया।

इतिहासवेत्ता टाड् साहबने उक्त घटनाको ही उमेदसिंहके चरित्रोंमे महाकलंक बताकर वर्णन किया है। परन्तु जब हम विचार करते है कि प्रतिहिंसा दान वीर तेजस्वी राजपूत जातिका स्वाभाविक धर्म है, बिना प्रतिहिंसा दान किये वह कायर पुरुष समझे जाते है तब उमेदसिंहका यह प्रतिहिंसा दान महा कलंकदायक नहीं समझा जाता।

"देवसिंहने प्रथमसे ही उमेदके साथ जैसा व्यवहार किया संसारमे इनकी समान सामर्थ्यवान् राजा बहुत कम पाये जाँयगे कि जो उमेदकी समान आठ वर्ष तक प्रतिहिंसा देनेमें शान्त रहसके। दूसरी बात यह है कि जो राजपूत स्त्री सती नामसे

गिनीजानेके लिये प्रज्वलित चितानलमें प्राण त्याग करती थी" उस राजपूत स्त्रीके सतीत्वमें दोषारोपकी अपेक्षा महापापका विषय और क्या होसकता है? देवसिंहने जब सबके सम्मुख सभामें कहा कि उमेदसिंहकी भगिनी वास्तवमें बुधसिंहकी औरस-जात कन्या नहीं है तब उमेदसिंहकी माताके सतीत्वके ऊपर भयंकर वज्रपात हुआ। संसारमें ऐसे कितने राजा हैं जो अपने अधीनके सामन्तोंको अपनी माताके सतीत्व पर कलंक लगाते हुए देखकर चुप रह सकते है। उमेदसिंहने जो उसे प्रतिहिंसा दान की तौ उन्होंने अवश्य ही वह वीर राजपूतोंके उचित कार्य किया। वह कभी कलंकदायक नहीं होसकता। तब यह बात अवश्य ही कही जासकती है कि देवसिंहके अपराधके कारण उनके पुत्र और पोतेके प्राणोंका नाश करना उचित नहीं हुआ। परन्तु उक्त कारणसे उमेदसिंहने अंतमें जिस मार्गका अवलम्बन किया उसीसे उनके समस्त पापोंका प्रायश्चित्त होकर उनके यशकी चंद्रिकाको निर्मल कर उनके चरित्रोंको संसारमें प्रकाशित करदिया।

एक एक करके अनन्तकालके समुद्रमे पंद्रहवर्षरूपी उपद्रवकी धारा वही। वीर तेजस्वी उमेदसिह उस पंद्रहवर्षतक राज्यके अविश्रान्त संघटित नानाप्रकारसे राजनैतिक उपद्रवोंको निवारण तथा सुशासनमें लिप्त रहकर वर्षोंको लाँघने लगे। परन्तु वह राजनैतिक विप्लव वह शासनके गोलयोग, उस विभिन्न विभ्राटमे उमेदसिहके हृदयमे वह एक घटना, उस देवसिंहके प्राण नाश करनेका विचार दिन २ जागरित रहकर उनके हृदयको वेधने लगा। यद्यपि सभीने उस घटनाको विस्मृतिके जालमें डाल दिया था, यद्यपि किसीने भी उस घटनाके विरुद्धमें किसी प्रकारका असंतोष प्रकाश नहीं किया, यद्यपि उमेदसिह जानते थे कि दुराचारी देवसिंहने जो अपराध किया था उससे उनको प्राणदंड देना ठीक ही हुआ था, परन्तु तौभी उनका उदार और साहस पूर्ण हृदय उस हत्याकांडके लिये अत्यन्त व्यथित होता था। उन्होंने अपनेको उस हत्याकाण्डके सम्बन्धमें महा अपराधी जानकर उस पापनाशके लिये पंद्रह वर्षके पीछे इच्छानुसार पायेहुए पिताके राज्यको छोड़नेकी अभिलाषा की। उमेदसिहने सिंहासन छोड़कर तीर्थयात्राके लिये भारतवर्षके प्रत्येक तीर्थोंमें जाकर जीवनके शेष कईएक वर्षोंको केवल धर्माचरण और अनुतापसे उक्त पापके प्रायश्चित्त करनेका संकल्प किया।

संवत् १८२७ सन् १७७१ ई० मे उमेदसिहका राजनैतिक अस्तित्व लुप्त होगया। राजपूत राज्यकी चिरप्रचलित रीतिके अनुसार शीघ्र ही समस्त अनुष्ठान होने लगे। उमेदसिंहके पुत्र अजितसिहने अपने पिताकी एक मूर्ति बनाकर जिस नियमसे चितामें दाह किया जाता है उसी नियमसे उस मूर्तिको अग्निपर रखकर प्रज्वलित चितानलमें भस्म कर दिया, और पिताके वियोगमें जिस प्रकार अशौचकी व्यवस्था है उसी प्रकार अशौचको ग्रहण किया। राजाके अंतपुरमें हाहाकार मचगया, सभी जगह रोनेका शब्द सुनाई आने लगा। नियतहुए अशौचकालके बीतने पर अजितसिंहनें क्षौरकर्मके पीछे पिताकी

श्राद्धक्रिया समाप्त की। सारांश यह है कि यथार्थ मृत्युके होनेसे जैसा कार्य किया जाता है, वह सभी कियागया, श्राद्धके होजानेके पीछे अजितसिंह बड़ी धूमधामके साथ बूँदीके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए।

उमेदसिंह राज्यभारको छोड़कर एकमात्र श्रीजी। (वह जितने दिनोंतक जीवित रहे उतने दिनोंतक श्रीजी नामसे पुकारे गये) उपाधि धारण कर उक्त अनुष्ठानके पहिले ही बूँदीकी राजधानीको छोड़कर, पठारके आदिम प्रधान अधीश्वरने जिस तीर्थमें विचित्ररूपसे आरोग्यता प्राप्त की थी, उसी केदारनाथ तीर्थमे जाकर वहा वास करने लगे। उन्होंने राज्य छोड़नेके समय विचारा था कि एकमात्र योगीभेषसे तीर्थोंमें भ्रमण करने और इष्टदेवताके ध्यानसे सब प्रकारसे शान्ति प्राप्त होगी, और जो हमने हत्या करके पापसंग्रह किया है उस अपराधसे भी छुटकारा मिल जायगा। उमेदसिंहने वीर राजपूत वेशको त्याग कर तीर्थयात्रीका वेश धारण किया था, यह जिस महान् ऊंचे वंशमें जन्म लेकर महा ऊंचे पदपर प्रतिष्ठित थे उस वंशका गौरव और पदोचित महा ऊंचा मानसिक भाव उनके हृदयसे दूर नहीं हुआ। उन्होने धर्मकी खोजमें भारतके जिस २ प्रान्तके जिस २ तीर्थमें संन्यासी योगी, यति ब्रह्मचारी इत्यादि पवित्रचेता साधुओंके साथ मिल कर शास्त्रकथा और धर्मोपदेश सुने थे, उन्हीं २ साधु भक्तवृन्दोंके सम्मुख यह परम विज्ञानी पूर्वचेता साधु और महात्मारूपसे माने गये और उन्होंने इनका महान् सम्मान किया था। उमेदसिंहने स्वदेशी और विदेशी राज्यके इतिहासको पढ़ा था कि "राज ऐश्वर्य और आडम्बर सम्मान केवल आत्माके विनाशका कारण स्वरूप है। जो राजा सुअवसरमें ऐश्वर्य आडम्बरको छोड़कर देवाराधना और पुण्य संचय करनेमे नियुक्त होते हैं वही यथार्थ सुखी हैं"। बुद्धिमानी और सामाजिकरीतिके वशीभूत होकर उमेदसिंह भलीभाँतिसे जानगये थे कि केवल श्रीकृष्णजीके मंदिरमें वा गंगाजीके किनारे रहनेकी अपेक्षा समस्त भारतवर्षमे भ्रमण करके भगवान्की अनन्त महिमा और सृष्टिका वृत्तान्त निदर्शनके साथ ज्ञानका संचय करना श्रेष्ठ है, इस कारण जातीयशास्त्र पुराण और महा काव्योंमें भारतके जिन पुण्यतीर्थ और पवित्र स्थानों का वर्णन पढ़ा था उन्होंने उन सबको अपने नेत्रोंसे देखनेका दृढ़ संकल्प किया। परन्तु उमेदसिंहका अतीत जीवन केवल वीर रसके सोतेसे ही आजतक सींचा गया था, इसी कारण वह भारतके तीर्थयात्री व्रतको ग्रहण करके भी सम्पूर्णरूपसे संन्यासीवेश करके बाहर नहीं गये। वह उस तीर्थयात्री वेशसे ही वीरोंकी समान अस्त्रोंके आभूषणोंसे सुसज्जित होकर बाहर गये थे। उस समय तीर्थकरनेवाले मनुष्योंको मार्गमे अनेक प्रकारके विघ्न होते थे। इस कारण उमेदसिंहने अस्त्र लेकर अपने बाहुबलसे उन विघ्नोको दूर करके अपने मनोरथको सिद्ध करना कर्तव्य विचारा। तीर्थोंमे भ्रमण करनेके समय अनेकप्रकारके शारीरिक कष्टोंको भोग करना अधिक पुण्यदायक विचारा। तीर्थयात्रामें उमेदसिंहने जो बड़े २ भारी अस्त्र शस्त्र धारण किये थे, दो राजपूतवीर उन अस्त्रोंको बड़े कष्टसे धारण कर सकते थे। इन्होंने सबसे पहिले अस्त्राघातको रोकनेके लिये रुई पूर्ण अँगरखेसे शरीरढका उसके पीछे

बड़ीभारी ढाल, बन्दूक एक भाला, एक तलवार एक छोटी तलवार और उस समयके उपयोगी एक बड़ी भारी छुरी, और छोटी २ युद्धके उपयोगी पूर्ण खलीते बारूद पूर्ण बड़े शृंग रण कुठार, बर्छी, कटारी, तीक्ष्णधारवाले लोहेके चक्र, धनु और वाण तूणसे अपने शरीरको शोभायमान किया। उस समय ऐसा देखा गया कि सत्तर वर्षकी अवस्थावाले वीर उमेदसिंहने इन बड़े २ भारी अस्त्रोंको ढालमें रखकर खेल करतेहुए उसको एक हाथसे उठा लिया हो, यही नहीं वरन वह कितनी ही देरतक उसको अपने हाथमे लिये रहे थे।

वीर तीर्थयात्री उमेदसिह बहुत थोड़े विश्वासी सेवक साथ लेकर कई वर्षतक तो उत्तरमें गंगोत्तरी स्थान, दक्षिणमें सेतुबंधरामेश्वर और अराकानमें गरम सीताकुंड तथा उड़ीसासे भारतकी शेष सीमा द्वारकातक घूमते रहे। यही नहीं कि वह केवल हिन्दुओंके ही तीर्थमे गयेहो वरन प्राकृतिक सौन्दर्य पूर्ण प्रत्येक प्रसिद्ध स्थान और पंडितोंके रहनेके स्थानमें भी वह गये। बीच २ मे एक २ देशमे भ्रमण करनेके पीछे वह अपने पैतृक राज्यकी सीमामें आ पहुँचे, उस समय उनके स्वजातीय नहीं वरन प्रत्येक राजा, तथा रजवाड़ेके प्रत्येक राजपूतोंने उनको बड़े सम्मानके साथ अभिनंदन किया था। वीर तीर्थयात्री उमेदसिंह भ्रमण करतेहुए जिस राजाके राज्यमे जाते, वही राजा इनके आनेसे अपनेको पुण्यवान् मानता था, और उमेदके आनेसे ही राजमहलको पवित्र मानता था। इस समय संसार और राज्यसे विरागी हुए उमेदसिंहको रजवाड़ेके सभी मनुष्य भविष्यत्वक्ता देवताकी समान जानते थे, तथा उमेदके ज्ञान शिक्षा और अभिज्ञताको अतुलनीय जानकर सभी उनके उपदेशके अनुसार कार्य करते थे। उमेदसिंह जिसको जिस विषयमें उपदेश करते थे वह प्राणपणसे उसको अभ्रान्त जानकर पालन करता था। उमेदके प्रत्येक उपदेशके वचनोंको सभी वर्णवद्ध करके रखते थे। उमेदसिंहकी जीवित अवस्थामे उनके साथ हाड़ाजातिके प्रत्येक राजपूतने जिस प्रकारका ऊँचा सम्मान दिखाया और उनकी देवताकी समान भावसे पूजा की उनके वियोगमे भी हाड़ाजातिने उसी प्रकारसे उनके प्रति महान् ऊँचा सम्मान दिखाया।उमेदसिह जिस समय जो बात कहते थे हाड़ाजाति उसको धर्मविधानकी समान पालन करती थी, और उनके स्मृति चिह्नस्वरूपमें हाड़ाजातिने जो कुछ पाया था उसको देवाताके द्रव्यस्वरूपसे भक्तिसहित रखती आई थी। उमेदसिह सबसे पीछे भारतवर्षकी सीमाके बाहरे मकरानके तीरवर्ती हिङ्गलाजनामक स्थानमें गये; और अग्नि-देवके तीर्थमे जाकर फिर द्वारकाको गये, जब यह वहाँसे लौट रहे थे तब रास्तेमें एक कावा नामक चोरोंके दलने इनको घेर लिया। परन्तु वीरश्रेष्ठ उमेदसिहने उन चोरोंके दलके साथ अपना बाहुबल दिखाकर उनको एकाबार ही परास्त करके चोरोंके सरदारको बंदीकर लिया, चोरोके सरदारने अपनेको छुटानेके लिये सौगंधकी कि मै आजसे कभी भी द्वारकाके यात्रियोंपर आक्रमण नही करूंगा।

यद्यपि वीर वेशधारी उमेदसिंहने उपरोक्त प्रकारसे दीर्घकालतक तीर्थोंमे भ्रमण करके पुण्यके साथही साथ ज्ञानको भी संचय किया था, यद्यपि उन्होने अपने मनमें इस

बातका निश्चय कर राजसिंहासनको त्याग किया था कि हम अब कभी राजसिंहासनको ग्रहण नहीं करेंगे। परन्तु एक वियोगान्त घटनासे वह उस तीर्थभ्रमणसे कुछ कालके लिये वंचित हुए। वह घटना यह थी कि उनके इकलौते पुत्र रावराजा अजितसिंहकी मृत्यु होगई, तब उमेदसिंह अपने अज्ञानी पोतेको शिक्षा देने और प्रतिनिधिरूपसे राज्य चलानेको बाध्य हुए। हमने जो शोचनीय वियोगान्त घटनाकी बात कही वह मेवाड़ और हाड़ाजातिके इतिहासमें लिखी गई है। और बहुत शताव्दीके पहिले बम्बावदाकी सती रानीने प्रज्वलित चिताकी अग्निसे प्राण त्याग करनेके समय जो निषेध वाक्य कहे थे वह इस प्रकार थे कि "यदि राव और राणा कभी भी वसन्ती उत्सव (अहेरके) होनेके पहिले परस्परमें एकसाथ मिलेंगे तौ अवश्य ही दोनोंकी मृत्यु होगी।" उपरोक्त घटना उस सती साध्वीकी उक्तिका सामर्थन करती है। वह घटना अवश्य पढ़नेके योग्य है।

बीलहठा नामक ग्राममें एक मीनाओंकी सम्प्रदाय रहती थी और वहाँ आमके वृक्षोंमें बहुतसे उत्तम आम लगते थे, वही इस झगड़ेका मूलकारण हुए बूँदीके महाराज अजितसिंहने उस बिलहठा नामक ग्रामको अपने राज्ययुक्त जानकर अथवा राज्यमें युक्त करनेके लिये उसके चारोंओर किला बनवा दिया। मेवाड़के बहुतसे सामन्तोंके भड़कानेसे एक चोरोंका दल उस ग्रामपर आक्रमण करनेके लिये तय्यार हुआ। अजितसिंहने उनको भय दिखानेके लिये उस किलेमें एक सेना रख दी। राणाने यह समाचार पाकर महाक्रोधित हो अपने समस्त सामन्त और वेतनभोगी सैन्धवी सेनाके साथ उक्त विवादके स्थानमें जाकर बूँदीके महाराज अजितसिंहको अपने डेरोंमें बुलाभेजा। अजितने आते ही अपने व्यवहार और मधुरवचनोंसे तथा सच्चरित्रता और उदारतासे राणाको ऐसा मोहित किया कि राणा बिलालाइताकी बातको एकबार ही भूलगये। सम्मुख ही वसन्तकाल उपस्थित था, मधुर फाल्गुणके महीनेमे राजपूत वीर गौरीदेवीके आशयसे वराहका शिकार करते थे। युवक हाड़ाराज अजितने राणाके निकटसे सदय व्यवहार पाकर उसके बदलेमें राणाको यह कहकर बुला भेजा कि बूँदीके रक्षित राजवनमें जो उत्सव होगा उसमें आप अवश्य ही आवैं। राणाने उसी समय उस आमन्त्रणको स्वीकार किया। सीसोदियोंके अधीश्वर राणा प्रचालितरीतिके अनुसार दूसरे दिन सामन्तोंको हरे वर्णके वेशसे सजाकर बूँदीके अधीनमें स्थित नन्दता नामक पहाड़ी देशमें आमंत्रणकी रक्षा करनेके लिये जा पहुँचे।

इस समय उमेदसिंह बदरीनाथसे लौटेहुए आरहे थे, जब उन्होंने यह सुना कि राणाके साथ उनके पुत्र अजितसिंहने शूकरके शिकार करनेका विचार किया है, तब इन्होंने तुरन्त ही पुत्रके पास एक मनुष्य भेजकर उस सती स्त्रीकी उक्तिको स्मरण कराकर राणाके साथ मिलनेको मना करा भेजा। अजितसिंहने उसके उत्तरमें कहला भेजा कि इस समय मैं कायर पुरुषोंकी समान आचरण कभी नहीं करसकता। क्रमानुसार निश्चित उत्सवके दिन प्रभाकर भगवान्ने पूर्वकी ओरको दर्शन दिया। राणा युवक राव अजितके साथ मित्रभावको प्रकाश कर एकसाथ शिकार खेलनेके लिये चले। परन्तु इसके पहिले दिन तीसरे पहरके समयसे मेवाड़के राजमंत्रीने राव अजितके सम्मुख जाकर अत्यन्त

अपमानकारक वचनोंमें राव अजितसे कहा कि " बीलहठा राणाको लौटा देना होगा, और यदि ऐसा न करोगे तो मैं एक सिन्धी सेनाको भेजकर आपको बंदी करूंगा।" मंत्रीने अजितसे यह भी कहा कि मैंने राणाकी आज्ञानुसार तुमसे समस्त समाचार कहा है, राव अजितने मेवाड़के मंत्रीके उन अपमानकारक वचनोंको सुनकर उसके इस व्यवहारसे मनही मनमें समस्त रात्रिमें घोर क्रोध संचय किया था। दूसरे दिन उक्त मृगयाका कार्य समाप्त होते ही राणाने अजितको विदा किया कि इसी अवसरमें अचानक अजितके मनमें राणाके मंत्रीका वह अपमान याद आया, यद्यपि वह राणासे विदा होकर कुछ दूरतक चले गये थे, परन्तु हमें राणा वंदी करैंगे यह विचार कर वह फिर राणाके सम्मुख गये। अजितको फिर आयाहुआ देख कर राणा किसी प्रकार भी स्थिर न रहसके उन्होंने हँसते हुए फिर अजितको विदा कर दिया। दोनोंने फिर परस्पर भें साक्षात् किया। अजित उस समय भी क्या करैं इसका कुछ भी स्थिर न करके राणाके दयालु व्यवहारसे मोहित हो फिर राणाके सम्मुखसे चले आये, परन्तु अजित के फिर कुछ दूर आते ही उनके हृदयमे प्रतिहिंसाकी अग्नि भयंकररूपसे प्रज्वलित हो गई। अजितने उसी समय तीक्ष्ण भालेको हाथमें लेकर बड़े वेगसे वलपूर्वक राणाके ऊपर भाला चलाया। उस भालेने राणाकी देहको भेदकर उनके घोड़ेको भी जा भेदा; दारुणरूपसे घायल हुए राणा जिस अजितको अपना परमप्यारा मित्र जानते थे उसको प्राणघाती देखकर केवल इतना ही कहकर प्राण त्याग किये, "ओह हाड़ा! क्या किया?" घायलहुए राणाके घोड़े परसे गिरते ही इन्द्रगढ़के सामन्तने तलवारके आघातसे राणाका जीवन एकवार ही समाप्त कर दिया। हाड़ाराज अजित इस कार्यसे अपना महान् गौरव जानकर मेवाड़के महाराजकी " छत्रझांगी " अर्थात् गोलाकार मोरकी पूँछके चक्रमें सुवर्णके सूर्याङ्कित राजचिह्नोंको लेकर अपनी राजधानी बूँदीमें चले आये। वह मेवाड़के राजचिह्न बूँदीके महलमें रक्खे गये। उमेदसिंहने जो देवसिंहके प्राण नाश करनेके लिये राज्यसुखको छोड़कर संन्यासीकी समान अनेक देशोंमें भ्रमण कर अपने पापोंका नाश किया था उन्होंने जब यह समाचार सुना कि हमारे पुत्र अजितने मेवाड़के महाराजके प्राण नाश किये हैं तव उनके हृदयमें प्रवल आवेग उछलने लगा। उन्होंने अपने वंशमे फिर महापाप संचय होताहुआ देखकर अत्यन्त दुःख प्रकाश किया, उन्होंने उसी समय यह प्रतिज्ञा की कि अब जन्मभर पुत्रका मुख नहीं देखूंगा।

बूँदीके जातीय इतिहासमे लिखा जा चुका है कि कृष्णगढ़के राजाओंकी दो कन्याओंके साथ राणा और बूँदीराज अजितका विवाह हुआ था, इसीसे दोनों दृढ़सांसारिक सम्बन्ध वन्धनमे वॅधरहे थे, बूँदीराज अजितसे उनका कुछ अमंगल होगा राणाके हृदयमे यह विचार भूलसे भी उदय नहीं हुआ। परन्तु राणाकी स्त्रीने अपने स्वामीको यह कहकर पहिलेसे ही सावधान करदिया कि जिससे वह किसी प्रकारसे भी अजितके ऊपर विश्वास न करै। कई पीढ़ी पहिले मेवाड़ और बूँदी दोनो राज्यके राजा जो परस्परमें आक्रमण करके इस मृगयाक्षेत्रमें मारेगये थे, उस वृत्तान्तके

हमारे पाठक पहिले ही पढचुके हैं परन्तु इस घटनाके होचुकने पर दोनों राजवंशोंमें प्राचीन शत्रुताका एकबार ही लोप होगया था। जिस दिन अजितसिंहने राणाके प्राणनाश किये, उसके पहिले दिन मेवाड़के राजमंत्रीने एक भोजदान किया था। उस भोजसभामें दोनों राजा और उनके सामन्तोंने उपस्थित होकर अकपट मित्रताके साथ परस्परमें साक्षात् किया था। परन्तु इतिहाससे जानाजाता है कि मेवाड़के सामन्त अपने अत्याचारी अधीश्वर राणाके ऊपर अत्यन्त क्रोधित हुए थे। उनके सिखानेसे ही यह शोचनीय वियोगान्त अभिनय हुआ था, ऐसे बहुतसे प्रमाण विराजमान हैं। मेवाड़के राजमंत्रीने भी अजितको महाभय दिखाकर अपमान करनेवाले बहुतसे कटु वचन कहे थे, इसका वर्णन भी पहिले होचुका है। जिस समय अजितसिंहने भालेके आघातसे राणाका प्राण नाश किया उस समय एकमात्र नीचे पदवाले अनुचरके अतिरिक्त मेवाड़के किसी सामन्तने भी राणाके प्राणोंकी रक्षा करनेके लिये चेष्टा नहीं की थी, मेवाड़के सामन्तोंने राणाके जीवनकी रक्षा न की न अजितको पकड़ा, और राणाके घायल होते ही सभी अपने २ प्राणोंके भयसे राणाके मृतक शरीरको छोड़कर अपने२ डेरोंमें भाग गये। इससे यह जाना जाता है कि राणाके प्राणनाशके सम्बन्धमें मेवाड़के सामन्तोंकी भी गुप्तभावसे सम्मति थी।

राणाके मृतक होते ही केवल राणाकी एकमात्र उपपत्नी राणाकी उर्द्ध्व दैहिक क्रिया करनेके लिये उस समय वहाँ विद्यमान थी। वह बहुतसा धन खर्च करके चिता सजानेकी आज्ञादे स्वय राणाके शवके साथ भस्म होनेके लिये स्वर्गमार्गमें जानेको तैयार हुई। प्रज्वलित चिताकी अग्निमें राणाका शव आलिंगन करके उस स्त्रीने यह शाप दिया कि "अजितसिंहने यदि अपने स्वार्थसाधन करनेके लिये षड्यंत्र करके राणाका प्राण नाश किया है तो उस हत्या करनेवालेको दो महीनेके भीतर उचित फल मिल जायगा, और यदि प्राचीन वंशसे परस्परमें चली आई हुई शत्रुताका वदला लेनेके लिये यह कार्य किया है तो मेरा शाप उसको नहीं लगेगा"। बूँदीके हाड़ाजातीय इतिहासवेत्ताने लिखा है कि "उस स्त्रीके इस प्रकार शाप देते ही उसके वचनको समर्थन करनेके लिये उसके पासके वृक्षकी सहसा एक शाखा टूटकर पृथ्वीपर गिर पड़ी, तथा राणा और सतीकी चिताभस्मसे विलाईता सफेद वर्णका होगया"।

हाड़ाकविने लिखा है कि सती स्त्रीके शापके अनुसार दो महीनेमें ही उसकी भविष्यद्वाणी पूर्ण होगई, बूँदीराज अजितके शरीरसे आपसे आप मांसके टुकड़े २ होकर गिरने लगे, इस प्रकारसे महान् कष्टको भोगकर सबमें घृणाके योग्यहो उन्होंने अंतमें प्राण त्याग किये।

अजितसिंहके एकमात्र पुत्र विशनसिंह इस समय अज्ञान बालक थे। उमेदसिंहको अन्तमें राज्यमें सुशासन स्थापन करनेको बाध्य होना पड़ा। उमेदसिंहने बूँदीकी राजधानीसे चिरकालके लिये विदा ग्रहणकी थी। सारांश यह है कि उन्होंने राजधानीमें विना गये ही दूरही रहकर एक बुद्धिमान् धाभाई अर्थात् धात्री पुत्रीको राज्यके प्रधान तत्त्व विधायक

---

(१) चिता भूमिका नाम।

पदपर नियुक्त करके यह बता दिया कि किस रीतिसे राज्यशासन होना चाहिये। सुशासन स्थापन होजानेके पीछे उमेदसिंह फिर तीर्थ करनेके लिये चले गये। एक२ समयमें उन्होंने बराबर चार वर्षतक बूँदीमें न जाकर अनेक तीर्थोंमे भ्रमण करना प्रारंभ किया। अंतमें उनका शरीर वृद्धताके आनेसे अत्यन्त क्षीण होगया, मृत्युके कई वर्ष पहिले यह केदारनाथ तीर्थमें निवास करनेको बाध्य हुए।

अत्यन्त ही दुःखका विषय है कि उक्त घटनाके कई वर्ष पीछे उमेदसिंह जिस समय अत्यन्त वृद्ध होकर संसारसे जानेकी बाट देखरहे थे, उस समयमें उनके पोते विशनसिंहने उनको राज्यका लोभी और विश्वासघाती जानकर उनके साथ अत्यन्त ही शोचनीय व्यवहार किया उमेदसिंहके पीछेही विशनसिह युवा अवस्थापर पहुँचे तब उस समय राज्यके कितने ही दुश्चरित लोभी मूर्ख सामन्त और राजकर्मचारियोंने उमेदके विरुद्धमें षड्यंत्रजालका विस्तार किया। वह भलीभाँतिसे जानगये थे कि उमेदसिंहकी समान नीतिज्ञ और शासनज्ञाता तथा बुद्धिमान मनुष्यकी यदि विशन-सिहके ऊपर दृष्टि रही तो अवश्य ही यह उमेदसिंहकी परामर्शके अनुसार चलेंगे, तब हमारा मनोरथ किसी प्रकार सिद्ध नहीं होसकेगा, इस कारण वह सभी इकट्ठे होकर उमेदकी और जिससे विशनसिंहको अविश्वास और अभक्ति उत्पन्न होजाय विशनसिंह जिससे उमेदको बूँदीसे निकालदें। वह यही उपाय करने लगे। नवयुवक विशनसिह ऐसे बुद्धिमान् वा शिक्षित नही थे वह उन पापियोंके वचनोंपर विश्वास करके अपने पितामह उमेदसिंहके साथ घृणित व्यवहार करनेके लिये आगे वढ़े। विशनसिहने अपने एक सेवकके हाथ दादासे यह कहला भेजा "कि आप बूँदीको छोड़कर वाराणसीमें जाकर रहिये"। जो सेवक उस पत्रको लेकर गया था उसने उमेदसिहको नये शहर जानेमें तत्पर देखकर कहा कि "आपकी शवभस्म आपके पूर्व पुरुषोंकी शवभस्मके साथ नही रक्खी जायगी"। परन्तु उमेदसिंहका रजवाड़े में बड़ा सम्मान था तथा इनकी देवताकी समान पूजा होती थी, कारण कि इन्होंने बहुत समय तक तीर्थोंमें भ्रमण किया था इसी कारणसे सर्वसाधारण मनुष्य इनको साधु मानकर सम्मान करते थे। विशनसिहकी इस आज्ञाके प्रचार होते ही रजवाड़ेके प्रायः सभी राजा बड़े आग्रहके साथ उमेदसिहको अपनी २ राजधानीमें सम्मानके साथ लानेके लिये तैयार हुए। उमेदके युवा अवस्थाकी वीरताने बुढ़ापेके पुण्यपवित्रताने आमेरराज प्रतापसिंहके हृदयपर महा ऊँचा सम्मान सूचकभाव प्रकाश किया था। महाराज प्रतापसिंहने श्रीजी उमेदसिंहके समीप पुत्र और सेवकरूपसे अपना परिचय देकर उनके चरणदर्शन करनेके लिये कछवाहोंकी राजधानी जयपुरमे लेजानेके निमित्त प्रार्थना की। श्रीजी (उमेदसिंह) तुरन्त ही आमेरमे जानेके लिये राजी होगये। परन्तु प्रतापसिहने जो उनको वड़े सम्मानके साथ ग्रहण करना चाहा था वह उस सम्मानके ग्रहण करनेमें राजी न हुए।

उमेदसिहके आमेरराज्यमें जाते ही महावीर प्रतापसिहने वड़े आदरभावके साथ इनको ग्रहण किया। उमेदसिहके साथ विशनसिहने जो कुव्यवहार किया था उससे

प्रतापसिंहके हृदयमे ऐसा क्रोध उदय हुआ कि उन्होंने उमेदसिंहसे कहा कि "यदि आपके हृदयमे इस समय भी कोई संसारकी वासना वा राज्यकी कामना हो तो कहिये, मैं अपने बाहुबलसे इसी समय आमेरकी समस्त सेना दलके साथ आगे बढ़कर बूँदी और कोटेको जीतकर आपके करकमलमे अर्पण करसकता हूँ।" बुद्धिमान् श्रीजीने कहा "यह दोनो राज्य तो हमारे ही हैं, एकमें मेरे पोते और दूसरेमें भतीजे राज्य करते हैं। पवित्र चित्त श्रीजीके यह वचन सुनकर मुक्तकंठसे सभी इनको धन्यवाद देने लगे।

उमेदसिंहने अपने अबोध पोतेके द्वारा इस प्रकारसे अपमानित होकर आमेर-राज्यमे जानेके समय कोटेके प्रसिद्ध नीतिज्ञ राजमंत्री जालिमसिंहने मध्यस्थ स्वरूपसे कार्यक्षेत्रमें दर्शन दिया। उसने बूँदीमें जाकर विशनसिंहने जो उमेदसिंहसे अपने स्वार्थनाशका भय किया था उसको उनकी भूल बताकर खंडन किया। जालिमसिंहकी उक्तिसे विशनसिंह सब प्रकारसे समझ गये कि स्वार्थपरायण अबोध सामन्त और राजपुरुषोंके कहनेसे उन्होने अपने पितामहकी ओर अविश्वास कर उनका तिरस्कार करके महा कलंक संचय किया है। जालिमसिंहके प्रस्तावके अनुसार उन्होंने अपने दादाके चरणोंमें क्षमा प्रार्थना की। जालिमसिंहने विशनसिंहको अनुतापित और क्षमा प्रार्थना करते हुए देखकर शीघ्र ही वृद्ध उमेदसिंहको आमेरसे बुलानेके लिये लालजी पंडितको भेजा।

उदार हृदय उमेदसिंह स्नेहाधार पोतेके समस्त अपराधोंको विस्मृतिके जलमें डालकर तुरन्त ही बूँदीमे चले आये। शीघ्र ही परस्पर दोनोंका मिलन होगया। उस मिलनसे जैसे दृश्य देखनेकी संभावना हुई थी। वैसा ही हुआ सभीका हृदय उफन उठा, सभीके नेत्रोसे झर २ आँसुओंकी धारा बहने लगी। प्राणप्यारे पोते विशनसिंहको आलिंगन करके वृद्ध उमेदसिंहने सजलनेत्रोंसे उसके हाथमें तलवार देकर कहा कि "यह तलवार लो, मैं तुम्हारा अनिष्ट करनेवाला नहीं हूँ, यदि तुमको विश्वास है कि तुम्हारा अशुभ चिन्तक हूँ तो तुम अपने हाथसे इसी तलवारसे वृद्धके निर्वाणोन्मुख जीवनको समाप्त कर दो, मुझे वृथा कलंकित न करना।" युवक विशनसिंह ऊँचे स्वरसे रोते २ नेत्रोमे जलभरकर पितामहके चरणोको पकड़कर क्षमा प्रार्थना करने लगे। उमेदसिंहने क्षमा करनेमे किंचित्मात्रका भी विलम्ब न किया, विशनसिंहने वारम्वार उनसे बूँदीके राजमहलमें रहनेके लिये प्रार्थना की, पर उमेदसिंह इसमे किसी प्रकार भी राजी नहीं हुए। इस प्रकारसे पितामह और पोतेमें फिर सद्भाव स्थापित होगया, षड्यंत्रियोंके पापकी आशा व्यर्थ हुई यह देखकर मध्यस्थ जालिमसिंह अत्यन्त ही प्रसन्न हुए। उक्त घटनाके पीछे आठ वर्षतक उमेदसिंह जीवित रहे, उनकी मृत्युका समय सम्मुख आते ही विशनसिंहने विनय पूर्वक उनके चरणोंमे यह प्रार्थना की कि "आप बूँदीके महलमें चलिये, उसी स्थानपर आपके पूर्वपुरुषोंकी शय्या बिछी हुई है उसी पर शयन करके आप स्वर्गको जाँय"। उमेदसिंहने स्नेहके वशीभूत होकर विशनसिंहकी प्रार्थनाको पूर्ण किया, सुखपालपर

चढ़कर उमेदसिंह बूँदीके महलमे चले गये। और उसी रात्रिमे महावीर महाज्ञानी महापुण्यवान् पवित्र चित्त उमेदसिंहका शरीर बूँदीके राजमहलमें छूट गया। सम्वत् १८६० (सन् १८०४ ईसवी) में उमेदसिंहके जीवनका सूर्य सर्वदाके लिये अस्त होगया। बूँदीराजके भाग्यका आकाश घनघोर मेघजालसे ढक गया। उमेदसिंहने तेरह वर्षकी अवस्थाके समयमें जिस दिन प्रज्वलित उत्साहसे सामान्य संख्यक अनुचरोंके साथ अतुलनीय बलविक्रम प्रकाश करके पिताके हरेहुए राज्यको उद्धार करनेके लिये पाटन और गेनोलीको अपने अधिकारमे किया, उस समयसे वह साठ वर्ष तक इस संसारमे रहे थे। उमेदसिंहकी समान वीर नीतिज्ञ और साधु राजा इस संसारमें बहुत थोड़े उत्पन्न हुए हैं, इस बातको हम मुक्तकंठसे स्वीकार करते है।

जिस समय उमेदसिंह इस संसारसे विदा होगये उस समयके हाड़ाजातिके इतिहासको एक घटना पूर्ण युग कहना होगा। कर्नल टाड् साहब लिखते हैं कि "इसी समयमें एक दल अंग्रेजी सेनाका मॉनसनके अधीनमें इस देशमें पहिले गया था, समस्त राजपूतजातिके और विशेप करके बूँदीके प्रधान शत्रु हुलकरको परास्त और निर्मूल करनेके लिये गया था, परन्तु उस समयमें वृद्ध उमेदसिंह जीवित थे या नहीं, अथवा उन्हींकी परामर्शके अनुसार यह कार्य हुआ था या नहीं इस बातको हम नही कह सकते। परन्तु हमने बूँदीके लिये कुछ किया या नहीं बूँदीराजने भी तो सेनाकी सहायता करनेमें कसर नही की थी। जिस समय हमारी सेना जयकी इच्छासे उत्सांहित होकर वृटिश पताकाको उड़ातीहुई आगे बढ़ रही थी, उसी समयमें नहीं, वरन जिस समय हमारी सेना प्राणोंके भयसे भागनेको वाध्य हुई उस समय बूँदीके महाराजने केवल हमारी सेनाको अपने राज्यमें होकर जानेकी आज्ञा दी हो, इतना ही नही, वरन उन्होंने अपनी भविष्य विपत्ति और अनिष्टकी संभावना जानकर यथाशक्ति हमारी सेनाको सहायता दी थी। वास्तवमें बूँदीके महाराज हमारी सहायता करनेके कारण ही महाराष्ट्रनेता हुलकरसे आक्रान्त हो घोर विपत्तिमे पड़े थे, परन्तु अपनी उस समयकी संकीर्ण राजनीतिके कारण हमको उसका कुछ भी पता न मिला, और न उसकी ओर कुछ ध्यान दिया"। कर्नल टाड् साहबने लिखा है कि कर्नल मानसन जिस समय हुलकरके आक्रमण करनेसे प्राणोंके भयसे सेना सहित भागे उस समय उमेदसिंहने उनकी और उस भागीहुई सेनाकी सहायता की थी या नहीं। यह उन्हे ज्ञात नही हुआ। परन्तु हमने आचिसन साहबके ग्रन्थमें इसके सम्बन्धमें जो कुछ वर्णन हुआ है इस स्थानपर उसका अनुवाद करते हैं पाठक उसको पढ़कर उसके यथार्थ मर्मको जानसकैगे। आचिसन साहबने लिखा है कि "बूँदीमे पहिले जिस राजाके साथ वृटिश गवर्नमेण्टका प्रथम संबन्ध स्थापित हुआ उसका नाम उमेदसिह है। सन् १८०४ ईस्वीमें कर्नल मानसनके अधीनकी सेना जिस समय हुलकरसे परास्त होकर भागी थी, उस समय उमेदसिहने अपनी सामर्थ्यके अनुसार हमारी सहायताकी, और इसी कारणसे हुलकर उनके ऊपर महाक्रोधित हुआ था। उन्होंने पचास वर्षसे अधिक समय तक राज्यशासन

करनेके पीछे सन् १८०४ ईस्वीमे प्राण त्याग किये।" * आचिसन साहबकी उपरोक्त उक्तिसे यह भलीभाँति प्रमाणित होता है कि उमेदसिंहने वृटिश गवर्नमेण्टको उस महा विपत्तिके समयमे यथेष्ट सहायता की थी। परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि बूँदीके महाराज जो अंग्रेजोकी सहायता करनेके लिये गये इसी कारणसे उस समय महाराष्ट्र नेता हुलकर और सेन्धियाके महाकोपमें पतित हुए, जिस समय महाराष्ट्रोंने बूँदीराज्यमें जाकर सर्वस्व लूटकर राज्यके समस्त करोंको अपने हस्तगत किया था, जिस समय बूँदीके किलेकी चोटीपर महाराष्ट्रोंकी पताका उड़ीथी, और बूँदीके महाराजको उन्होंने अत्यन्त हीन दशामें डाला था, वृटिश गवर्नमेण्टने उस समय बूँदीके महाराज विशनसिंहकी सहायता करनेके लिये एक पग भी नहीं बढ़ाया।

कर्नल टाड् साहब लिखते हैं, कि "इतना ही कहना बहुत होगा कि सन् १८१७ ईसवीमे जिस समय अत्याचार और उपद्रवोको दूरकरनेके लिये समस्त राजपूत जातिको सेनासहित अग्रेजोने मिलनेको बुलाया था। उस समय सबसे पहिले बूँदीके महाराजने ही आगे बढ़कर हमारे साथ मित्रताकी डोरी बांधी थी। ऐसा होना भी उनके पक्षमे उचित ही था, कारण कि इस समय महाराष्ट्रोकी विजयपाताका बूँदीकी राजपताकाके साथ मिलकर किलेकी चोटी पर उड़ रही थी, तथा दूसरी ओर बूँदीके महाराज प्रजासे इस समय जितना कर लेनेके अधिकारी थे, वह उनकी आत्मरक्षाके किसी प्रकार भी उपयुक्त नहीं था। सन् १८०४ ईसवीमे जिस समय बूँदीके महाराजने यथाशक्ति हमारी सहायताकी, इस समय महाराष्ट्रोंने उस सहायता देनेवाले बूँदीके महाराजपर आक्रमण किया। पर हमने बूँदीके महाराजकी कुछ भी सहायता न की इसीसे बूँदीके अधीश्वरकी यह शोचनीय दुर्गति हुई थी। सन् १८११ ईसवीके युद्धके समयमे बूँदीके महाराज सब प्रकारसे हमारी आज्ञा और इच्छानुसार कार्य करते थे, बूँदीके महाराज और उनके अधीनके सभी अस्त्रधारी वीर हमारी आज्ञाको पालन करते थे और जिस समय सब ओरसे हमने विजय की उसके पीछे शान्ति स्थापित होते ही हम राव राजा विशनसिंह को नहीं भूले। महाराष्ट्र नेता हुलकरने बूँदीराज्यके जिन देशोको बलपूर्वक अपने अधिकारमे करलिया था, जो देश प्रायः आधी शताब्दीसे अधिकतक उनके हस्तगत रहे थे, हमने उसी हुलकरको युद्धमे जीतकर उन सब देशोंको अपने हस्तगत कर लिया, और वह समस्त देश एकबार ही बूँदीके महाराज विशनसिंहको देदिये। और भी महाराष्ट्रदलके अन्यतर नेता सेन्धियाने बलपूर्वक जो देश बूँदीसे छीन लिये थे, हमने मध्यस्थ होकर वह सब देश भी बूँदीके महाराजको फिर दिलवा दिये, परन्तु उन सब देशोंके लिये बूँदीके महाराजने हमारे द्वारा वार्षिक निर्द्धारित कियेहुए रुपये जो पिछले दश वर्षोंकी आमदनीके थे, सेंधियाको दिये, इसके निमित्त महाराज विशनसिंहजीने पवित्र हृदयसे असीम कृतज्ञता प्रकाश की। उन्होंने कहा मैंने एकवार ही जो प्रतिज्ञा की है वह प्रतिज्ञा किसी समय भी भंग नहीं होगी। आप

* Aitchison's Treaties & Vol IV

जब आज्ञा देंगे तभी उस आज्ञाको पालन करनेके लिये मैं अपना मस्तक देदूँगा। यह बातें अर्थशून्य कृतज्ञताकी प्रकाश करनेवाली उक्ति नहीं थी, वास्तवमें यदि हम उनके विश्वासकी परीक्षा लेते तौ निसन्देह वह और उनके अनुगत सामन्त सभी हमारी आज्ञा पालन करनेके लिये अपने प्राण देदेते। यद्यपि बूँदीके महाराजके ऊपर बहुतसे उपकारोंकी वर्षाकी गई थी; यद्यपि उनके लिये बूँदीके महाराजने गंभीर कृतज्ञता प्रकाश की थी, तथापि उनमेंसे एक विषयका भी सुविचार नहीं किया गया। कोटेके वृद्ध राजमंत्री जालिमसिंहने राजा विशनसिंहके पहिले अपनेको अंग्रेजी सरकारके क्रीतदास नामसे परिचित इन्द्रगढ़ बलवान आनरदा और खातोली इत्यादि बूँदीके प्रधान २ सामन्त शासित देशोको कोटाराज्यके अधीनमें करनेका विचार किया।

वास्तवमें जालिमसिंहके बूँदीके अधीनवाले उक्त देशोंको अधिकारमें करनेसे राव राजा विशनसिंह अत्यन्त ही संतापित हुए। कर्नल टाड् साहबने इसके सम्बन्धमें लिखा है कि "गवर्नमेण्टने जालिमसिंहके करकमलमें उक्त कई देशोंको अर्पण करनेकी जो व्यवस्था की, इससे साहसी और सरलचित्त राव राजा विशनसिंहने अत्यन्त व्यथित होकर निष्कपट भावसे कहा कि "इस व्यवस्थाके द्वारा हमको पक्षहीन किया गया"। वास्तवमें ही यह व्यवस्था ठीक नहीं हुई, न्यायविचार और राजनैतिक मंगलसाधन करनेके लिये इस व्यवस्थाका परिवर्तन करना श्रेष्ठ था। गवर्नमेण्टके पक्षमें उक्त अनुगत छोटे राज्यके प्राप्त उक्त देशोंको लौटा देना ही उचित है"।

आचिसन साहबने अपने ग्रंथमें इसके सम्बन्धमे जो कुछ लिखा है, हम यहाँ पर उसका प्रकाश करना उचित जानते हैं; उन्होंने लिखा है, कि "बूँदीराज्य जिस स्थानमे स्थापित था उससे सन् १८१७ ईस्वीके युद्धमें पिंडारोंके पलायन् निवारणके लिये वह बूँदीराज्य विशेष प्रयोजनीय स्थान विचारा गया है, और यथेष्ट उपकारी दृष्टि आता है, बूँदीके महाराव राजा विशनसिंहने सबसे पहिले बृटिश गवर्नमेण्टके साथ मित्रता की और सन् १८१८ ईस्वीकी १० दशमी फर्वरीको दोनोंका संधिबंधन हुआ। यद्यपि बूँदीके महाराजकी सेना–संख्या अधिक नही थी परन्तु इन्होंने अंतःकरणसे उक्त समरके समयमें बृटिश गवर्नमेण्टकी सहायता की थी। महाराष्ट्रोंने बूँदीके महाराजको जो अत्यन्त ही शोचनीय दशामें डाला था बृटिश गवर्नमेण्टके साथ संधिबंधन होते ही गवर्नमेण्टने बूँदीराजको उस शोचनीय दशासे उद्धार कर दिया।" कर्नल टाड् साहबकी समान आचिसन साहबने भी जिस भावसे मुक्तकंठसे बूँदीराज विशनसिंहके द्वारा बृटिशसिंहकी सहायता करनी स्वीकार की थी, उससे अवश्य ही स्वीकार करना होगा कि बूँदीराज सब प्रकारसे गवर्नमेण्टके अनुग्रहका अधिकारी हुआ था।

बृटिश गवर्नमेण्टके साथ बूँदीके महाराज महाराव राजा विशनसिंहका जो संधिबंधन हुआ था हमने इस स्थानपर उस संधिपत्रको प्रकाशित किया है। उदार-

हृदय कर्नेल टाड् साहबने (उस समय कप्तान थे) अंग्रेजोंकी ओरसे यह संधिपत्र तैयार कराया ।

संधिपत्र ।

महामहिमवर मार्किस अफ़ हेष्टिंस के० जी० गवर्नर जनरल बहादुरकी दी हुई सम्पूर्ण सामर्थ्यकें अनुसारमें कप्तान जेमसटाड् माननीय अंग्रेजी कम्पनीकी ओरसे और बूँदीके महाराजकी दी हुई पूर्ण सामर्थ्यके अनुसार उक्त राजाकी ओरसे वोहरे तुलारामके द्वारा माननीय अंग्रेज ईस्टइण्डियाकम्पनी और बूँदीके राजा महाराव राजा विशनसिंहकी संधि हुई ।

प्रथम धारा–एक ओर वृटिश गवर्नमेण्ट और दूसरी ओर बूँदीके महाराजा और उनके उत्तराधिकारी और स्थलाभिषिक्तोमे चिरस्थाई मित्रता समस्वार्थता और आत्मीयता विराजमान कीजाय ।

दूसरी धारा–वृटिश गवर्नमेण्ट बूँदीके राजाके अधीनमें स्थित समस्त राज्यको शत्रुओंके द्वारा आक्रमणसे रक्षा करनेका भार लेगी ।

तीसरी धारा–बूँदीके महाराजाने चिरकालके लिये वृटिश गवर्नमेण्टकी प्रभुता स्वीकार की है,और वृटिश गवर्नमेण्टकी चिरकालके लिये सहकारिता मानी है, वृटिश गवर्नमेण्टकी अनुमतिके अतिरिक्त बूँदीके अधीश्वरका और किसीके साथ किसी प्रकारका संधिबंधन नहीं होगा । यदि दैवात् अन्य किसी राजाके साथ विवाद अथवा मनान्तर उपस्थित होगा तो उसकी मध्यस्थताका भार अथवा दंड देनेका भार वृटिस गवर्नमेण्टपर होगा राजा अपने राज्यके सब प्रकारसे अधीश्वर रहैंगे, और उक्त राज्यमे वृटिश गवर्नमेण्टके शासनकी सामर्थ्यका विस्तार नहीं होसकैगा ।

चौथी धारा–राजा, महाराज हुलकरको जो कर देते आये हैं, महाराज हुलकरने वृटिश गवर्नमेण्टको उस करके लेनेका अधिकार एकबार ही देदिया है।वृटिश गवर्नमेण्टने अपनी इच्छानुसार राजा और उनके उत्तराधिकारियोंको उस करके देनेसे छुटकारा दिया महाराज हुलकरने बूँदीराज्यके जिन देशोंको अपने अधिकारमे किया था, उनसे मिलेहुए प्रथम सूचीके अनुसार उन सब देशोंको वृटिश गवर्नमेण्टने बूँदीके महाराजको देदिया ।

पांचवीं धारा–बूँदीके राजा इतने दिनोंतक महाराज सेंधियाको जो कर और राजस्व देते आये हैं उन सबके साथ दूसरी सूचीके अनुसार वह कर और राजस्व वृटिस गवर्नमेण्टको देनेके लिये, बूँदीके महाराज स्वीकार करते हैं ।

छठवीं धारा–वृटिश गवर्नमेण्टके अनुरोधसे बूँदीके महाराज अपनी सामर्थ्यके अनुसार वृटिश गवर्नमेण्टको सेनाद्वारा सहायता करैंगे ।

सातवीं धरा–यह सात धाराओ युक्त संधिपत्र बूँदीमे निर्द्धारित हुआ और कप्तान जेमस टाड् और वोहरा तुलारामके हस्ताक्षरसहित तथा मोहरांकित होकर महामान्यवर गवर्नर जनरल और बूँदीके महाराव राजा आजकी तारीखसे लेकर एक महीनेके बीचमें इसको निर्द्धारित करके परस्परमें परिवर्तन करलेंगे ।

बूंदी, आजकी तारीख १० वीं फर्वरी, सन् १११८, चौथी रविउलसानी हि०सन् १२२३,५ माघ; सम्वत् १८७४।

यह संधिपत्र महामान्यवर गवर्नर जनरलके आदेशसे कानपुरके निकट डेरोमें आज १८१८ ईसवीकी मार्च महीनेकी पहिली तारीखको स्वीकार किया गया।

गवर्नर जनरलकी मोहर	हस्ताक्षर हेष्टिंग्स "।

प्रथम सूची।

संधिपत्रकी चौथी धाराके अनुसार जो देश वृटिश गवर्नमेण्टने राव राजा विशनसिंहजीको दिये थे उनकी सूची इस प्रकार है।

परगना	बामणगांव
"	लाखेरी।
"	कारवरका अर्द्धांश
"	वरोंधनका अर्द्धांश
"	पाटणका अर्द्धांश

बूंदीका चौथ अर्थात् राजस्वके चार अंशोंमेंका एक अंश।

दूसरी सूची।

महाराज सेन्धिया अवतक बूंदीके राज्यसे जो राजस्व और कर लेते है, बूंदीके संधिपत्रकी पांचवीं धाराके अनुसार इसके पीछे वह सब बूंदीके महाराज वृटिश गवर्नमेण्टको देंगे उसकी सूची इस प्रकार है,-

दिल्लीके सिक्केका .... ८०००० रुपया

परगने पाटनके तीन अंशोंमेंका दो अंश राजस्व ... ४०००० "

परगना उर्सिला।

ऐ. समेदी।

ऐ. करवरका अर्द्धांश।

ऐ. वरूंधनके तीन अंशोंमेंका एक अंश।

बूंदी और अन्यान्य स्थानोंका चौथ .... ४०००० रुपया।

राजाकी मोहर	जेमूस टाड् बोहरा तुलाराम।"

उदार हृदय कर्नल टाड् साहबने अंग्रेजी गवर्नमेण्टकी ओरसे बूंदीके महाराज राजा विशनसिंहके साथ उस संधिपत्रको तैयार कर लिया, उन्होंने अपने आप इसके

सम्बन्धमे अपने ग्रंथमें एक स्थानमे लिखा है कि सन् १८१८ ईसवीके फर्वरी मासमे बूँदीके साथ संधिबंधन समाप्त करके ग्रन्थकारने (टाड् साहबने) अत्यन्त आनंद अनुभव किया "।

आचिसन साहबने उक्त सधिबंधनके सम्बन्धमे अपने ग्रन्थमे लिखा है कि "बूँदीके महारावराजाने इतने दिनोतक हुलकरको जो कर दिया था,तथा हुलकरने बूँदीराज्यके जिन देशोंको अपने अधिकारमे कर लिया था, सन्१८१८ ई०के संधिपत्रके अनुसार महाराजको उस कर देनेसे छुटकारा मिला, और हुलकरके अधिकारी समस्त देश भी महाराजको लौटा दिये गये। इधर महाराज इतने दिनोसे सेंधियाको जो कर देते थे वह कर वृटिश गवर्नमेण्टके देनेको राजी हुए। वह देय करका ८०००० रुपया निश्चय किया गया। इसमे सेन्धिया पाटन देशके जो तीन अशोमेसे दो अशोंके अधिकारी थे, उन देशोके कारण उन रुपयोमेसे आधे रुपये निश्चित हुए,अथवा पाटन देशके बचेबचाये तीन अंशोमेसे जो एक अंश हुलकरके अधिकारमे था वह संधिपत्रकी चौथी धाराके अनुसार बूँदीके महाराजको लौटा दिया। वृटिश गवर्नमेण्टकी ऐसी इच्छा थी कि सेन्धिया और हुलकरने बलपूर्वक बूँदीके जिन समस्त देशोपर अधिकार करलिया था वह सभी महाराजको लौटा दिये जाँय और सेंधियाने पाटन देशके तीन अशोमेंके जो दो अंश बलपूर्वक अपने अधिकारमे कर लिये हैं वह गवर्नमेण्टकी धारणाके अनुसार संधिपत्रकी संलग्न सूचीमे सन्निवेशित किये जायँ। उस समय गवर्नमेण्ट नहीं जानती थी कि नाना फडनवीस जिस समय व्यवहारोको नहीं जानते थे, उस समय अन्य जिस मनुष्यने वून्दीके सिंहासन पर अधिकार किया था, उसको भगाकर वून्दीके यथार्थ अधीश्वर (उमेदसिंह) को वून्दीके सिंहासन पर बैठाल दिया। बूंदीके महाराजने समस्त पाटन देश पेशवाको देदिया, और पेशवाने उस पाटन देशके तीन अंशोमेसे दो अंश सेंधियाको और बचेहुए अंश हुलकरको देदिये। अंतमे यह यथार्थ विवरण प्रकाशित होगया, और पाटन देशके तीन अंशोंके दो अंशोंका कारण जो ४०००० रुपया कर ठहरा था वह बूदीके महाराजसे कभी नहीं लिया गया। पाटनदेशके जो अंश हुलकरके अधिकारमे थे, उनके उस अधिकारका नाश होगया, और वृटिश गवर्नमेण्टके द्वारा उन्हें वार्षिक ३०००० रुपया कर मिलना निश्चय होगया "।

इतिहासलेखक टाड् साहबने लिखा है कि वून्दी राज्यका कल्याण करनेके लिये हमने जिस आग्रहके साथ यत्न किया है वह सम्पूर्ण सफल होगया। अन्य राज्य जिस प्रकार किसी न किसी कारणको उपस्थित करके गवर्नमेण्टको क्रोधित कर कष्ट उत्पन्न कर लेते ह। परन्तु बूँदीके महाराजने अन्य किसी राज्यके साथ किसी प्रकारका उपद्रव न करके चुपचाप उपयुक्त उन्नतिकी ओर दौड़कर अपनी स्वाधीनताका सुख भोग किया था। राव राजा विशनसिंह फिर अपनी लुप्तहुई स्वाधीनताकी प्राप्तिके पीछे बहुत थोड़े समय अर्थात् चार वर्ष तक जीवित रहे। उस कुछ समयके पीछे ही विशनसिंहने कालरामार्बस (chalera morbus) गोला रोगसे जर्जर

होकर प्राण त्याग किये। इस भयंकर रोगके नामसे दृढ़ वली और असीम साहसी मनुष्य भी कम्पित और भयभीत होजाते है, यह वहुत शीघ्र मनुष्यको हीनवीर्य करदेता है इसी रोगसे आक्रान्त होकर विशनसिहने परलोक यात्रा की, और अपनी स्त्रीसे सती होनेका निषेध कर अपने अजानवालकपुत्रके अभिभावक पदपर वृटिश गवर्नमेण्टको प्रातिनिधि करनल टाड्को नियुक्त किया विशनासिंहने युवावस्थामें ही प्राण त्याग न किये, उन्होंने सत्रह वर्पतक राज्य किया। सन् १८२१ ईसवी १४ जौलाईको इनका स्वर्गवास हुआ।

कर्नल टाड् साहवने निम्न लिखित मन्तव्य प्रकाशके साथ महाराव राजा विशनासिहके शासन इतिहासका उपसंहार किया है, दो चार वातोसे विशनसिहके चरित्रोंकी समालोचना होसकती है, वह एक अकपटचित्त और अंशोमें यथार्थ राजपूतोंकी समान मनुष्य थे। यद्यपि इनका राज्यशासन उज्वल नहीं था, तथापि इनका हृदय उदारतापूर्ण और चित्त उद्यमशील था। उनकी अभिज्ञतासे शक्तिका अभाव दृष्टि नही आता था और उनका शुभाशुभ वा हिताहित ज्ञान विलक्षण था। जिस समय महाराष्ट्रोंनें धीरे २ उनके राज्यका समस्त राजस्व ग्रास कर उनकी शासन सामर्थ्य और सुखस्वच्छन्दताको घटा दिया था, उस महाविपत्तिके समयमे भी उन्होने भलीभाँतिसे प्रमाणित करदिया कि उन्होने किस प्रकार सरलतासे अपनी सुखस्वच्छन्दता और स्वार्थके प्रति उपेक्षा देखाई थी। उस समय इन्होंने एकमात्र वीर राजपूतोंकी समान मृगया करके अपने चित्तमे संतोप प्राप्त किया था। वह अत्यन्त मृगया प्रिय थे, और क्या कहै वह सिंहकी खोजमे वाहर जाकर वरावर तीन चार दिनतक सिंहके विवरके पास पड़े रहते और जवतक उस सिहका वध न करलेते तवतक उस स्थानको नहीं छोड़ते थे। वह प्रधानता पशुराजसिहको ही अपने शिकारका उपयुक्त पात्र जानते थे, अन्य पशुकी ओर उनकी दृष्टि नहीं थी, उन्होने इकले ही समस्त जीवनमें अपने हाथसे सहस्रों सिंहोका शिकार किया था, इसके अतिरिक्त अगणित हिंस्र व्याघ्रोंको भी अपने वछेंके आघातसे मारा। इस वीर श्रेष्ठके संकटापन्न तथा आनन्ददायक मृगयामे लिप्त रहनेके कारण इनका एक पैर टूट गया था उसीसे चिरकालतक वह लँगड़े रहे थे, और छोटे दिखाई पड़ते थे। जव घोड़ेपर सवार होकर वीरमूर्तिसे अपने मस्तकके ऊपर भाला घुमाया करते थे, उस समय वलविक्रम और शूरवीरता पूर्णरूपसे उनके मुखपर दिखाई पड़ती थी। उस दृश्यको देखकर सरलतासे जाना जाता है कि विशनासिंहके महावीर पूर्वपुरुषोने जिस प्रकार एक समय जहाँगीर और शाह आलमके लिये रणक्षेत्रमें महावीरता प्रकाश की थी, उसी प्रकारसे विशनसिह भी हमारे लिये तलवार धारणकी सामर्थ्य रखते थे। वह इसी कारणसे अपने इस छोटेसे राज्यमें अधिकतासे इच्छानुसार विचरण करते थे, कारण कि वह इस वातको जानते थे कि शासित होनेवालोंके निकटसे और विशेप करके राजकर्मचारियोंसे सम्मान संग्रह करनेमे स्वेच्छा चारिताका प्रयोजन है"।

साधु टाड् साहवने यहांपर महाराव राजा विशनसिंहजीके चरित्रके सम्बन्धमे एक प्रवाद कथा लिखी है कि राजाके यहाँ एक स्वतत्र धन संग्रहका भंडार था । बूँदीके राजमंत्रीको प्रतिदिन उस भंडारमें १०० मुद्रा डालनी होती थी । मंत्री यदि अन्य किसी कार्यमें अवहेला कर जाते तो राजा चाहै उस अवहेलाके कारणकी साधारण पूछपाछ करते पर यदि भंडारमें सौ मुद्रा न पड़ती तो मंत्रीको इन्द्रजितका भय दिखाकर अपमानित कियाजाता । यह इन्द्रजित् किसी देवताकी मूर्ति नहीं थी वरन एक बड़े आकारके काष्ठकी पादत्रानकी समान था, भंडारके स्थानमे एक लोहेकी कीलके ऊपर यह इन्द्राजित टँगा रहता था, अन्य राजाके वहाँ आनेपर उस स्थानमे राजदंड रक्खा जाता था, विशनसिंहने मत्रीको डरानेके लिये ही यह रख छोड़ा था, यह प्रवाद कहाँतक सत्य है हम सरलतासे इसका विश्वास नहीं कर सकते, राजमंत्रीके लिये पादुका प्रहारके भयकी अपेक्षा और अपमान क्या होसकता है ।

साधू टाड् साहवने फिर लिखा है कि दूसरे राजपूत राज्योकी समान विशेष कर बूँदी राज्यके राजपुरुपोकी संख्या भी वहुत सामान्य है । नीचे लिखे चार पुरुषोके हाथमे शासनकी सामर्थ्य रहती है (१) दीवान वा मुसहिव, (२) फौजदार वा किलेदार, (३) वख्शी, (४) रिसाले वा हिसाव विभागके तत्त्व विवेचक । दिल्लीके वादशाहके साथ जो बूँदीके महाराजोंका संमिलन हुआ था, जैसे जयपुर नरेशने वादशाहके दरवारकी समान अपने यहाँ कितने ही नियम चलाये थे इसी प्रकार बूँदी नरेशने भी अपने यहाँ वैसे ही नियम चलाये । प्रधान मंत्री दीवान वा मुसाहिवके नामसे पुकारे जाते थे, उनके हाथमे ही राज्यका समस्त शासन, और राजधनका भार था । फौजदार वा किलेदार बूँदीके किलेका अध्यक्ष था, इस पदपर कोई और राजपूत नियुक्त नहीं होता, बूँदीके राजाका कोई दृढ़ सम्बन्धी वा धाई भाई इस पदपर नियुक्त होता है, वह राजसेना, वेतनभोगी सेना और सामन्तोकी सैन्य समूहका सेनापति होता है, वख्शी साधारणतः सब विभागोकी जांच करता है हिसाव देखता है, रिसाले और राजदरबारके हिसावकी जांच करता है । मृतराजा विशनसिंह अपने धनागारको केवल जमा न करके उस धनसे व्यापार करते थे, उस वाणिज्यसे जितनी आमदनी होती राजा उसका अंश ग्रहण करते । यद्यपि मंत्री उसका हिसाव करके सैकडे पीछे पन्द्रह रुपयेकी वढ़ती दिखाते थे, पर वास्तवमे वीस रुपये सैकडा आमदनी होती थी, इस वाणिज्यकी आमदनीसे सेना तथा राजअनुचरोंको वेतनके हिसावसे अन्न तथा दूसरे पदार्थ मिलते थे । राजा स्वयं इस वाणिज्यके अशभागी थे इस कारण मत्रीने जिस पदार्थका जो मूल्य निश्चय करदिया वह चाहै ठीक न हो पर वही निश्चित रहता, यदि सेना वा सेवक उस पर विनयपत्र देते तो राजाके स्वयं अंश भागी होनेके कारण उसका कोई फल नही होता और इसीसे मंत्री सब प्रजाके प्रियपात्र न होसके ।

कर्नल टाड साहवने निम्नलिखित उक्तिसे बूँदीराजके इतिहासका उपसंहार किया है, " विशनसिंह दो पुत्र छोड़ गये, इनमे सवसे वड़े राव राजा रामसिंह थे, यह

सन् १८२१ ईसवी अगस्त मासमे ग्यारह वर्षकी अवस्थामे पिताके सिंहासन पर अभिषिक्त हुए। छोटे महाराज गोपालसिंह राव राजा रामसिंहकी अपेक्षा कई महीने छोटे थे। राव राजा रामसिंह अपने पिताकी समान मृगयामे रत रहते थे, अधिक क्या कहै इस छोटी अवस्थामें ही इन्होंने सबसे पहिले वनैले वराहका शिकार किया, उसके लिये उनके सामन्तोने महा प्रसन्नता प्रकाश करके उनको नेजरें दी थीं। इसके पहिले यह छोटीसी तलवार लेकर बकरे और भेडोंका वध करते थे। इनकी माता कृष्णगढ़की राजकुमारी थी, यह जिस भांति बुद्धिमान और सुलक्षणा थी उसी प्रकारसे पुत्रके मंगलकी कामना करती रहती थी। यह विशेष आशा होती है कि जिस गवर्नमेण्टने इस बूंदीराज्यका शोचनीय दशासे उद्धार किया था उसी गवर्नमेण्टके आश्रयसे यह बूंदी राज्य पूर्वकालकी समान श्रीवृद्धियुक्त होगा। हम शुद्ध अंतःकरणसे हाड़ाजातिके मंगल और उन्नतिकी कामना करते है"।

पंचम अध्याय ५.

महाराव राजा रामसिंह–कर्नल टाड् साहबका महारावके अविभावक पदको ग्रहण करना–राज्यके सुशासनकी व्यवस्था करना–मंत्री कृष्णराम–रानीके साथ महाराजके अन्यान्य व्यवहारोको निवारण करनेके लिये जोधपुरसे सामन्तोंका आना–कृष्णरामकी शोचनीय मृत्यु–खंडसमर–हत्याकारियोंका प्राण नाश करना–जोधपुरके महाराजके साथ समरकी सूचना करना–बृटिश गवर्नमेण्टकी मध्यस्थतासे उसका निवारण करना–महाराव राजा रामसिंहका अपने हाथमें राज्यभार ग्रहण करना–पाटनदेशके सम्बन्धमें नवीन व्यवस्था–सन् १८५७ ईसवीमे सिपाही विद्रोहके समय महाराव राजा रामसिंहका बृटिश गवर्नमेण्टकी सहायता करनेमें असम्मति देना–बृटिश गवर्नमेण्टके साथ महाराव राजा रामसिंहका राजनैतिक सम्बन्ध छेदन होना–फिर सद्भाव स्थापन–बृटिश गवर्नमेण्टका महारावको दत्तक पुत्र ग्रहण करनेकी अनुमती देना–दिल्लीके दरबारमें महाराव राजा रामसिंहका जाना–प्रथम श्रेणीके भारत नक्षत्र और भारतेश्वरीके भारत साम्राज्यमंत्री की उपाधि प्राप्त करना–सलामीकी तोपोंकी संख्या वृद्धि–बूंदीका शासन समाज–प्रजाके जलकष्टको निवारण करनेके लिये अनुष्ठान करना–बूंदीके राजकुमारोंका विवाह–विवाहमे व्यय–यौतुक–राजकुमारोंके शिक्षाकी अवस्था–महाराव राजा रामसिंहके चौथे पुत्रका जन्म–बूंदीराज्यकी आमदनी और खर्चेकी सूची–शासनविभागकी उन्नति–शान्तिरक्षाका विभाग–वाणिज्य शुल्कसंस्कार–बूंदी-राजका प्रजाकी शिक्षाकी व्यवस्था करना।

---

(१) विशनसिंहने मृत्युके समय कर्नल टाड् साहबको अपने पुत्रके अविभावक पदपर नियुक्त किया। कर्नल टाड् साहब जितने दिन रजवाड़ेमें थे उतने दिनोंतक इन्होंने अपने कर्त्तव्यको संतोषसे पालन किया। साधु टाड् साहबने राव राजा रामसिंहको भतीजा कह कर पुकारा था, और इसी प्रकारसे चचा भतीजेका सम्बन्ध स्थापित किया। साधु टाड् साहबने राव राजा रामसिंहको भतीजा कहकर पुकारा तथा इसी प्रकारसे स्नेह दिखानेमें भी कसर न की। उक्त प्रथम मृगया—

महात्मा टाड् साहबने जहाँतक बूँदीराज्यके इतिहासको अपने ग्रंथमें संग्रह किया था, उसको चौथे अध्यायतकमें लिखकर इस समय उसके पिछले समयके इतिहासको हम विश्वासी प्रमाणोंसे सकलन करके पाठकोंको आदरपूर्वक बड़े सम्मानके साथ उपहार देनेके लिये अग्रसर होते हैं।

जो महाराव रामसिंह जी० सी० एस० आई० सी० आई० ई० बहादुर इस समय बूँदीके सिंहासनको उज्ज्वल कर रहे है वह अपने पिता महाराव विशनसिंहकी मृत्युके समय केवल ग्यारह वर्षके थे। महाराव विशनसिंह बहादुरने उदारहृदय महदआशय कर्नल टाड् साहबको अपने अप्राप्त व्यवहार कुमारके शिक्षातत्त्वविधायक और उनके अविभावक पदपर नियुक्त किया था, उनकी मृत्युके समय कर्नल टाड् साहब मेवाड़की राजधानी उदयपुरको गये थे। वह महाराव विशनसिंहकी मृत्युका समाचार पाकर और विशनसिंहकी विधवा रानीके बुलानेका पत्र पाते ही शीघ्रतासे बूँदीराज्यकी ओरको चले गये। कर्नल टाड् साहबने बूँदीमें जाकर विधवा रानीके साथ भाई बहिनका सम्बन्ध स्थापन करके बालक रामसिंहकी शिक्षा और तत्त्वावधानका भार और बूँदीराज्यमें सुशासन स्थापनका भार अपने हाथमे लिया। राजपूतजातिके परम मित्र कर्नल टाड् साहबने अपनी स्वाभाविक दयाके वश होकर विधवा रानीको बहिन कहकर रामसिंहको अपना भानजा माना मृतक महाराज रामसिंहकी अतिम आज्ञा पालन करनेमे किंचित्मात्र भी विलम्ब न किया। इन्होंने शीघ्र ही अपने भानजे महाराव रामसिंहके मंगलकी इच्छासे बूँदीकी राजधानीमे सर्वत्र सुशासन स्थापन करनेके लिये अच्छा प्रबन्ध करदिया और कुछ समय तक आपने स्वयं बूँदीमें रहकर सब विषयोंपर ध्यान दिया, और उन सब विषयोंको स्थिर सिद्धान्त करनेमें किंचित्मात्रका भी विलम्ब न किया। कर्नल टाड् साहब जबतक भारतवर्षमे रहे तबतक बराबर महाराव रामसिंहका कल्याण साधन करते रहे। और यह अपने देशमे जाकर भी अपने भानजे महाराव रामसिंहके कल्याणकारी विचारोंमे लगे रहे।

महाराव विशनसिंहके स्वर्ग चले जानेके पीछे उच्च आशय, विद्वान् बुद्धिमान् कृष्णराम नामके एक मनुष्य बूँदीके प्रधान मंत्री पदपर नियुक्त हुए। जबतक कर्नल टाड् साहब रजवाडेके बृटिश एजेण्ट पदपर नियुक्त थे, कृष्णराम उतने दिनोंतक उनके परामर्शके अनुसार समस्त भारी प्रश्नोंकी मीमांसा कर लेते थे-। साधु टाड् साहबके अपने देशको जाते ही मंत्री श्रेष्ठ कृष्णरामने अपनी चतुराई और नीतिज्ञताके बलसे बालक महाराव रामसिंहका स्वार्थ साधन किया। कर्नल म्यालिसन अपने ग्रंथमे लिखते हैं, कि "जब साढ़े छःवर्षतक कृष्णराम शासनकर्ता पदपर नियुक्त थे उस समय बूँदीके राज्यका समस्त बाकी ऋण चुका दिया गया, उन्होंनें नियमपूर्वक

—के उपलक्षमें सामन्तोंकी समान साधु टाड् साहबने भी राजा रामसिंहको सम्मान सूचक उपहार दिया था।

(१) इसका विवरण कर्नल टाड् साहबके दूसरे भ्रमण वृत्तान्तमें देखो।

हिसाब किताब रक्खा, और राजस्वका एक रुपया तक वसूल कर कोशागारमें दे दिया। उन्होने राजस्वके हिसाबसे तीन लाखसे पाँच लाख रुपया बढ़ा दिया, उनके शासनमें खर्च करके दो लाख रुपया बचता था, उन्होंने राजकार्यके प्रत्येक विभागकी अवस्था संतोषदायक कर दी, और वह सेनाको नियमसहित बराबर वेतन देते गये"।

अत्यन्त दुःखका विशय है कि वह सर्व गुणसम्पन्न मंत्री कृष्णराम अधिक दिनतक बूँदीराज्यका कल्याण न करसके। उनके शासन भारको ग्रहण करनेके साढ़े छः वर्ष पीछे एक घोर घटनाके होनेसे वह अत्यन्त शोचनीयरूपसे मारे गये, उनके वियोगसे समस्त राज्यको जो कष्ट हुआ उसका लिखना लेखनीकी शक्तिसे बाहर है।

कर्नेल म्यालिसनने लिखा है कि "महाराव रामसिंहका कोई नौ वर्ष राजसिंहासन पर बैठे हुए होंगे कि इसी बीचमें एक ऐसी घटना हुई कि यदि वृटिश गवर्नमेण्ट मध्यस्थ होकर अपनी शक्तिका प्रयोग न करती तो बूँदीके साथ जोधपुर राज्यका युद्ध उपस्थित होजाता। राव (रामसिंहने) जोधपुरकी राजनंदिनीके साथ विवाह किया था, बीचमें ऐसा जाना जाता है कि उन्होंने उस स्त्रीके साथ अत्यन्त निठुर व्यवहार किया था, जिससे वह जोधपुरकी राजकुमारीके साथ इस प्रकारके व्यवहार न करसकें, उसका उत्तम प्रबंध करनेके लिये सन् १८३० के पहिले महीनेमें जोधपुरसे बहुतसे सामन्त सेवकोको साथ लेकर बूँदीकी राजधानीके पास आ पहुँचे। उनके आनेके तीसरे दिन उन आयेहुए जोधपुरियोमेंसे एक सामन्तके द्वारा अत्यन्त बुद्धिमान निष्कलंक चरित्र बूँदीके राजमंत्री कृष्णराम मारेगये, युवक राव रामसिंहने इससे महा क्रोधित होकर हत्या करनेवालोको उचित दंडदेनेका दृढ़रूपसे विचार किया। जोधपुरके जो मनुष्य किलेके भीतर बंदीभावसे रहते थे उस स्थान पर क्रमानुसार गोलोंकी वर्षाहोने लगी, और जिससे उनको पानी न मिलसकै ऐसे उपाय भी किये गये। उस जोधपुरकी सेनाके दो नेता और जिन मनुष्योंके कुपरामर्शसे हत्याकाण्ड हुआ था, वह लोग भागनेके समय पकड़े गये। रावराजाकी आज्ञानुसार उनको प्राणदंडकी आज्ञा दीगई। अंतमें नीचे पदपर स्थित मनुष्योंके क्रमसे आत्म समर्पण करते ही उनको बूँदीराज्यकी सीमासे निकाल दिया गया। छः दिनमें जोधपुरके एक सामन्त बभूतसिंहे जिसने बूँदीके मंत्रीको मारडाला था वह भी युद्धमे मारागया। उस बभूतसिहके और दो नेताओके प्राण नष्ट होते ही बूँदीके अधीश्वरने अपने मंत्री श्रेष्ठके प्राणनाशका उचित बदला होगया, यह मानलिया।

"उपरोक्त कारणसे ही जोधपुरके साथ युद्ध होनेकी सम्पूर्णतः संभावना थी, परन्तु गवर्नमेण्टने वहाँ अपने एजेण्टको भेजकर युद्धमे असम्मति प्रकाश कर सरलतासे शान्ति स्थापित की।" आचिसन साहबने लिखा है कि "महाराज रामसिंहके सुदीर्घ अप्राप्त व्यवहारके समयमें वृटिश गवर्नमेण्टको एक साथ ही अधिकतर बूँदीराज्यके आभ्यन्तरी शासनके विपयमें हस्ताक्षेप करना पड़ा था"।

---

(१) गाँव बाजोली मारवाड़के मेड़तिया ऐठोड़ था।

मंत्री श्रेष्ठ कृष्णरामके वियोग होनेके कुछही दिन पीछे महाराव रामसिंहने अपने हाथमें बूँदीका राज्य लिया, और आजतक बराबर उसको शासन करते रहे "।

आचिसन साहबके ग्रंथमें लिखा है कि "गवर्नमेण्टकी रक्खीहुई सेनाका खर्चा देनेके लिये सन् १८४४ ईसवीमे महाराज सेन्धियाने पाटनदेशके तीन अंशोमेसे यह जिन अंशोंके अधिकारी थे वह अश गवर्नमेण्टको देदिये, उसी कारणसे बूँदीके महाराजने उक्त देशके अंशोंकी प्राप्तिके लिये प्रश्न उपस्थित किया। सेंधिया उक्त देशके अधिकार देनेके लिये राजी न हुआ, परन्तु, सन् १८४७ ईसवीमे ग्वालियरके महाराज सेन्धियाकी सम्मतिके अनुसार जो नवीन संधि की हुई उसके अनुसार बूँदीके महाराजने ग्वालियरके महाराजको वार्षिक ८०००० रुपया कर देना स्वीकार किया था, इसी कारणसे उक्त देश चिरकालके लिये बूँदीके महाराजका समझा गया, सन् १८६० ईसवीमे सेन्धियाके साथ जो संधि हुई थी उसीके अनुसार पाटनदेशका राजस्व भी गवर्नमेण्टको मिलता था। इस प्रकार बूँदीके महाराजने उस पाटन देशको गवर्नमेण्टके अधीनमे भोग किया था, बूँदीके महाराज सन् १८१८ ईसवीकी संधिके अनुसार बूँदी और अन्यान्य देशका चौथस्वरूप गवर्नमेण्टको जो वार्षिक ४०००० रुपया करका देते थे, उक्त देशके कारण उसके सिवाय और भी ८०००० रुपया करस्वरूपमे दिया करते थे।

इस बातको हमारे पाठक पहिले ही जान चुके हैं कि भारतवर्षके देशीय राजाओमे बूँदीके महाराज उमेदसिंहने सबसे पहिले गवर्नमेण्टकी मित्रभावसे सहायता की थी और सन् १८१८ ईसवीमें महाराव विशनसिंहने गवर्नमेण्टके साथ सधिबंधन करके मित्रभावका चूडान्त परिचय दिया था। परन्तु अत्यन्त ही दु:खका विषय है कि सन् १८५७ ईसवीमे जिस समय भारतवर्षके प्रत्येक प्रान्तसे विद्रोहकी आग भडक उठी थी उस समय विपत्तिका समुद्र अपनी तरगमालाको विस्तार करता हुआ भारतसे अंग्रेजी राज्यको लुप्तकरनेके लिये तैय्यार हुआ, उस महाविपत्तिके समयमे बूँदीके महाराज रामसिंह बहादुरने सन् १८१८ ई० के संधिपत्रके अनुसार गवर्नमेण्टको सेनाकी सहायता नही दी। जो राजवंश गवर्नमेण्टका परम मित्ररूपसे प्रसिद्ध था, महाराव रामसिंहने उसीके वंशधर होकर उस वंशके गौरवकी रक्षा न की। इससे गवर्नमेण्ट अत्यन्त दु:खित हुई, और तुरन्त ही गवर्नमेण्टने क्रोधित होकर बूँदीके महाराजके साथ समस्त सम्बन्ध तोड दिये। परन्तु संतोषका विषय है कि बूँदीके महाराजको इस भावसे अधिक दिनतक बृटिश गवर्नमेण्टका अप्रियपात्र होकर न रहना पड़ा। सन् १८६० ईसवीमे फिर बूँदीके अधीश्वर महाराव रामसिंहके साथ गवर्नमेण्टका राजनैतिक सम्बन्ध स्थापित हुआ और उसी समयसे वर्तमान समयतक महारावके साथ गवर्नमेण्टकी पूर्ण प्रीति रही है।

'यद्यपि वर्तमान समयके महाराव रामसिंह बहादुरने सिपाहियोके विद्रोहके समय गवर्नमेण्टकी सहायता नहीं की थी, परन्तु विद्रोह वासनाके पीछे बृटिश गवर्नमेण्टने अन्य राजाओकी समान महारावको वंशानुक्रमसे दत्तकरूपसे पुत्र ग्रहण करनेकी सनद दी थी।

सन् १८७७ ईसवीकी पहिली जनवरीको ग्रेट ब्रिटेन और आयर्लैण्डकी अधिराज्ञी विक्टोरियाने दिल्लीके प्रकाश्य महान् दरबारमे जो भारतकी राजराजेश्वरीकी

उपाधि धारण की, महाराव रामसिंह वहादुरने उस दरवारमे आमंत्रित होकर वहां जाकर राजप्रतिनिधि लार्ड लिटनके द्वारा अन्यान्य राजाओंकी समान स्वयं सम्मान ग्रहण किया। अन्यान्य भूपालोंकी समान महारावको उक्त उपाधि धारण करनेकी स्मारक पताका और स्मारक पदक भी मिला था, महाराव रामसिंहके साथ गवर्नमेण्ट की जो इस समय महा मित्रता हुई है उसका दूसरा प्रमाण यह है कि वृटिश गवर्नमेण्ट ने "ग्रान्डकमान्डारस्टारआफ इण्डिया" नामकी जो ऊँची श्रेणीकी भारत नक्षत्र उपाधिकी सृष्टि करके देशीय राजाओको उस उपाधिका पदक दिया था, बूँदीपति महाराव रामसिंह वहादुरको भी गवर्नमेण्टने उक्त दरवारमें उस प्रथम श्रेणीके भारत नक्षत्रकी उपाधि और कौन्सिलरआफदि एम्प्रेस, नामक भारतेश्वरीके मंत्री नामकी नवीन उपाधिके भूषणसे विभूषित किया, और महारावका सम्मान बढ़ाकर तोपोंकी सलामी की संख्या भी वढ़ा दी थी। महारावको इस समय वृटिश शाशित देशमे जाने आनेके लिये सत्रह तोपोकी सलामी होती थी। वृद्ध महाराव रामसिहके साथ गवर्नमेण्टका यह प्रीति पूर्ण सम्वन्ध अवश्य ही आनंददायक हुआ।

आजकल भारतवर्षके प्रत्येक देशीय राज्यमे गवर्नमेण्टके प्रतिनिधि रेसिडेण्टकी उपाधि धारण करनेवाले अंग्रेज निवास करते है। वृटिश शासनकी राजनीतिके अनुसार वह रेसिडेण्ट ही इस समय देशीय राज्योके यथार्थ शासनकर्ता रूपसे विदित है। राजालोग स्वाधीन होकर भी उन्हींके अधीन है और उन रेसिडेण्टोके द्वारा उनकी स्वाधीनता वहुतायतसे घट गई है, वह रेसिडण्ट प्रत्येक वर्षमे देशीय राजाओंका एक शासन विवरण तय्यार कर गवर्नर जनरलके एजेण्टके पास भेजते है। एजेण्ट एक २ विस्तारित देशके राजाओके ऊपर राजनैतिक कर्मचारी होते है। वह उन समाचारोंको पाकर उसमे अपना मन्तव्य मिलाकर राजप्रतिनिधिके यहाँ उसको भेजते हैं। भारतवर्षकी गवर्नमेण्टके विदेशिकमंत्री उसे पुस्तकाकार छपाकर सर्वसाधारणमें उसका प्रचार करदेते है। राजपूतानेके पोलिटिकेल एजेण्टने सन् १८८१ ८२ ईस्वीमें बूँदीके इतिहासमे जो कुछ लिखा है उसकी समालोचना सन् १८८३ ईस्वीकी १८ मईके इण्डियन मिरर नामक अंग्रेजी दैनिकपत्रमे निम्नलिखित प्रकारसे प्रकाशित हुई थी।

गतवर्ष बूँदीके महाराव राजा अत्यन्त रोगी होगये थे, अधिक पीड़ाके होनेसे महाराव राजाने राज्यका समधिक शासनभार कामदार पंडित गंगासहायके हाथमें सौंप दिया था। महारावने राज्य शासन करनेके लिये एक मंत्रीसमाज तय्यार किया। उसमें छः सदस्य नियुक्त थे। उक्त पंडितजी उस समाजके सभापति हुए। एक पुरुष समरविभागमें, एक मनुष्य साधारण विभागमे, एक एजेन्सीविभागमें एक शान्तिरक्षा विभागमें और एक अपीली मुकदमोके विभागमें नियुक्त हुआ। महाराव राजानें अपने राज्यकी प्रजाके जलकष्टको दूर करनेके लिये यथेष्ट तय्यारी की और महारानीने भी हिन्दूस्त्रियोंकी समान प्रजाको जल देनेके लिये एक

बड़ा अनुष्ठान किया है । उनके व्ययसे दो कुण्ड तैयार हुए महाराव राजा भारतवर्षके अन्य राजाओंमे अत्यन्त रक्षण शील मतके है । निज राज्यमे अंग्रेजीशिक्षाके विस्तारकी ओर उनका ध्यान नहीं गया उन्होंने एक छोटासा विद्यालय स्थापित किया, उसमे१२०विद्यार्थी पढ़ते हैं । परन्तु हमें ऐसा विश्वास है कि महाराजने संस्कृत शिक्षाका प्रचार करनेके लिये बहुत यत्न किया है, इस कारण इस प्रकारके राजा हमारे अधिक सम्मान योग्य हैं:- ।

वृटिश पोलिटिकल एजेण्टने सन्१८८३ ईसवीकी ३ तीसरी मईको बूंदीके शासन सम्बन्धी विवरणमे जिस मन्तव्यको राजपूतानेके गवर्नर जनरलके एजेण्टके पास भेजा था। और जो भारतवर्षीय गवर्नमेण्टके द्वारा सन् १८८२–८३ ईसवीमे *गजवाड़ेकी शासन वृत्तान्त पुस्तकमे प्रकाशित हुआ है, हमने उन सबके अंशोंका भाषान्तर किया है पाठक इसको पढकर बूंदीराज्यके वर्तमान शासनका आयव्यय और शिक्षा उन्नतिकी विशेष अवस्थाको जान सकैंगे।

एजेण्टने लिखा है, कि "हम बड़े आनंदके सहित कहते है कि महामान्य महाराव राजाने विशेष स्वस्थता प्राप्त की है। मारवाड़की राजवंशीय तीन स्त्रियोंके साथ महाराव राजाके तीनों पुत्रोंका विवाह करनेके लिये गत वर्षमे अधिक तैयारी करनेमे मन लगाया गया, गत वर्षके विज्ञापनमे लिखा गया है कि यह विवाहका कार्य शीतकालमें होगा। यह निश्चय हो गया है। महामान्य महाराव अपने पुत्रोंसे इतना स्नेह करते हैं कि दिसम्बर महीनेके पहिले जब मैंने उनसे साक्षात् किया तब यह जाना गया कि विशेष वृद्धावस्था और अस्वस्थ शरीर होकर भी वह स्वयं पुष्करजीतक पुत्रोंके साथ जाकर वहाँ उनके लिये अपेक्षा करते रहे और जो व्यवस्था वहाँ रहनेकी स्थिर की उस व्यवस्थासे उनके दो उद्देश सिद्ध हुए ।

प्रथम पुत्रका साथ बहुत थोड़े समयमे विच्छिन्न होजायगा, दूसरे तीर्थस्थानमें जाकर कुटुम्बके मगलकी इच्छासे देवताकी पूजा भी कर सकैंगे । परन्तु मारवाड़के महाराजके दृढ़रूपसे वारम्वार अनुरोध करने पर महाराव राजा रामसिंह बहादुर अंतमे कुटुम्बसहित छठी जनवरीको बूंदी छोडकर २५ जनवरीको जोधपुर पहुँचे, पिछले दो दिनोंमें बड़े उत्सवके साथ विवाहकार्य किया गया । महारावके बड़े पुत्रके साथ मारवाड़पतिकी एक भगिनीका और मध्यम तथा तीसरे पुत्रसे मारवाडके महाराजकी दो भतीजियोंका विवाह हुआ, इसके अतिरिक्त महाराव राजा रामसिंहने अपने मृतपुत्र भीमसिंहके पुत्रके साथ महाराज बख्तसिंहकी पोतीका विवाह किया । मारवाड़के महाराजने जिस प्रकार बड़े आदरभावके साथ महाराव राजा रामसिंहकी सम्वर्द्धना और

* Report of the poletecal Adminition of the Rajpootana states for the 1882–83

(१) यह बात बिल्कुल गलत लिखी गई है क्योंकि न तो भीमसिंहके कोई बेटा था और न महाराजा बख्तसिंहकी पोती थी, न कोई ऐसा विवाह उस समय हुआ था।

अभिनंदन किया उससे वह अत्यन्त प्रसन्न हुए, परन्तु उस समय मारवाड़के महाराज अस्वस्थ थे, इसीसे उन्होंने असुख माना। ठीक ५८ वर्ष बीते कि महाराव रामसिंह बहादुरने चौदह वर्षकी अवस्थामें जोधपुरमें जाकर अपनी मृत पहली रानी जोधपुरके मृत महाराज मानसिंहकी कन्यासे विवाह किया था, उसी रानीके गर्भसे कुमार भीमसिंहने जन्म लिया, परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि सन् १८६८ ईसवीमें कुमार भीमसिंहकी मृत्यु अकालमें होगई, सारा बूँदीका राज्य शोकके समुद्रमे डूबगया था। महाराव राजाके जोधपुरमें जाते ही उसी समयमे महाराजको " द्वारका नाथ " नामक बागके महलमें उतारा गया। महाराव राजाने कृष्णगढ़के राजाके साथ इस समय साक्षात् किया। विवाह होजानेके पीछे वह ११ फर्वरीको जोधपुर छोड़कर कुटुम्बसहित अजमेरको चलेगये और वहाँ राजपूतानेके स्थित गवर्नर जनरल एजेण्ट कर्नल ब्राडफोर्डके साथ साक्षात् कर पुष्कर तीर्थका दर्शन करनेके पीछे पहिली मार्चको अपनी राजधानी बूँदीमें चले आये "।

" इस विवाहमे और आनेजानेमें बूँदीके महाराजका ढाई लाख रुपया खर्च हुआ था; और विवाहके यौतुकमें अनेक प्रकारके द्रव्य और अश्वादि सब मिलाकर डेढ़ लाख रुपया मिला था "।

राजकुमारोंकी शिक्षाके सम्बन्धमे उक्त विज्ञप्ति प्रकाशित हुई है कि " महामान्य महाराव राजा रामसिंहके तीनों कुमारोंकी अवस्था क्रमसे इस समय साढ़े तेरह वर्ष ग्यारह वर्ष और नौ वर्षकी है। प्राचीन कालकी हिन्दूरीतिके अनुसार बड़े यत्नसे राजकुमारोंको शिक्षा दीगई है, ऐसी आशा की जाती है कि बड़े राजकुमार इस समय संस्कृत विद्यामे इतने विद्वान् होगये है कि इसके दो वर्षके पीछे उन्होंने संस्कृतको समाप्त कर उर्दूभाषा का पढ़ना प्रारंभ किया। परन्तु इसी अवसरमे उनको राजकार्यके शासनकी शिक्षा करनी पड़ी है। तीनों राजकुमारोने शारीरिक व्यायाम और युद्धकी शिक्षा भी प्राप्त की है, एक समय हमने महारावके साथ साक्षात् करनेके लिये महलमे जाकर देखा कि महाराव स्वयं महलके एक कमरेमें बैठे हुए पिस्तौल चलानेकी शिक्षा राजकुमारोंको देरहे है। मध्यम और तीसरे राजकुमारोके कारण इतिहासमें बूँदीराज्यकी प्रचलित रीतिके अनुसार वार्षिक २०००० हजार रुपयेकी आमदनीकी भूमि नियत करदी है, और उन दो जनोके लिये जो दो महल बनाये जानेका विचार हुआ था उनमेंसे एक तो बनकर तैयार होगया है और दूसरेके बनानेकी समस्त सामग्री तैय्यार धरी है "।

" गत जौलाई मासकी चौथी तारीखको महाराव राजा रामसिंहके और एक पुत्रने जन्मे लिया; इनका नाम रघुवरसिंह रक्खा गया।[1]" यह महाराजके चौथे पुत्र है।

बूँदीराज्यके वर्तमान आयव्ययके सम्बन्धमे अंग्रेज पोलिटिकल एजेन्टने लिखा है कि " महारावने जो राज्यके आय व्ययकी सूची हमै दी है। प्रकाशमें तो यह संवत्

---

(१) यह भी गलत लिखा है चौथा पुत्र कोई नहीं हुआ रघुवीरसिंह नाम बड़े पुत्रका हैं जिसकी शादी जोधपुरमें हुई थी वही अब बूँदीके रावराजा हैं।

१९३८ (जो गत १ पहिली जौलाईको समाप्त हुआ है) की अभ्रान्त अनुमान की हुई सूची है यथार्थ आयव्ययकी सूची और भी कई एक महीने वीतने पर तैयार होगी। महाराव राजाके पुत्रोंके विवाहमें वहुतसा धन खर्च हुआ है, महारावने ऐसा अनुरोध प्रकाशित किया है कि गवर्नमेण्टको जो नियमित वार्षिक कर दिया जाता है वह रुक गया है। उन्होने उस करको कईवार करके दो तीन वर्षके भीतर ही विना सूद चुकानेको कहा है। उनका यह प्रस्ताव विचारके अधीनमे ग्रहण किया गया है।" सम्वत् १९३८ अर्थात् (१८८२-१८८३ ईसवीमे) बूँदीराज्यके आयव्ययकी सूची नीचे दीगई है।

आमदनी।

भूराजस्व और अनेक छोटी २ तहसीलोंकी आमदनी	४७५००० रुपया।
कापरेन और अन्यान्य देशोंके जागीरदारोंके समीपसे आया हुआ कर	२८००० "
जेला, विल्ला, अर्थात् वाणिज्य शुल्क, वन विभाग, उद्यान, कोटपाला, टकसाल इत्यादिकी आमदनी	९०००० "
नाना प्रकारकी छोटी २ आमदनी ...	३५००० "
सव	६२८००० रुपया।

खर्च।

महाराव राजका स्वकीय और कुटुम्वका खर्च ...	४५०९० रुपया।
पुण्य वा दातव्य व्यय	२२००० "
सेनादलका खर्चा	८८००० "
राजकर्मचारी और— परिवारिक कुटुम्वियोके नौकरोंका वेतन .. .	७२००० "
रथ-घोडे खाना तथा राज्यके- अन्यान्य कार्यालयोका व्यय	७२००० "
हवाला और तहसील खर्च	५५००० "
और भी अनेक प्रकारका खर्च	७८००० "
अंग्रेज गवर्नमेण्टको देयकर-तथा पूर्तकार्य विभाग विचारालयमें पुरस्कारादि देना इत्यादि	१२८००० "
फुटकर	३८००० "
	५९८००० "
उद्धृत	३०००० "
सव जोड़	६२८००० रु०

वृटिश एजेण्ट कर्नल ब्राडफोर्डने लिखा है कि "महारावने परिवारके अनेक विषयोंमें भलीभाँतिसे मनलगाया है। इससे महामहिमवरके राज्यके आभ्यन्तरीय शासनके सम्बन्धमे कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ"।

"खालसा भूमि समूहकी जमाबंदीके विषयमें विशेष उन्नति नहीं हुई। गतवर्षमें केवल पचास ग्राम जमाबंदी किये गये है। पहिले वर्षके साथ मिलान करनेसे इनकी संख्या केवल १५० हुई है। इसका फल अधिक असंतोष दायक नही हुआ"।

"प्रकाशमें कहागया है कि शान्तिरक्षा विभागकी अवस्था पहिलेकी समान असंतोषदायक रही है परन्तु संतोषका विषय यह है कि महामान्यवर महारावने १०० मीनोंको विशेष शांति रक्षक पदपर एक जमादार और दो उपजमादारोंके अधीनमे नियुक्त करके डकैती निवारण करने पर ध्यान दिया है"।

गतवर्षके विज्ञापनमें बूँदीके शुल्कविभागके साधनका जो उल्लेख हुआ है इस वर्षमे उसका फल यह हुआ है, कि इससे राज्यकी आय ८०००० रुपया वढी है। यह एक जानने योग्य वात है, राज्यके वाणिज्य शुल्कके संस्कारसे, प्रजा और राजा दोनोंहीकी सुभीतेके साथ आमदनी वढ़ी है।

बूँदीराज्यकी पृथ्वीका परिमाण २३०० मील है, प्रजाकी संख्या २२४०००, सेनामे पैदलोंकी संख्या १३७५, अश्वारोहियोंकी संख्या १०० और तोपोंकी संख्या ८८ है।

बूँदीराज्यकी सर्वसाधारण प्रजामें शिक्षा विस्तारके सम्बन्धमें बूँदीमें स्थित पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है कि "राजधानीमे जो राजविद्यालय स्थापित है; मै दुःखित होता हूँ कि मैं उन विद्यालयोंके सम्बन्धमे उन्नतिमूलक विवरणको प्रकाश करनेमें असमर्थ हूँ, उन विद्यालयके विद्यार्थियोंकी संख्या उपयुक्त नहीं है। प्रायः १२० विद्यार्थी पढ़ा करते हैं। जो वारह हिन्दू विद्यालय विभिन्न ग्रामोंमें स्थापित है उन सबमेंके विद्यार्थियोंकी संख्या ४२९ है।" सारांश यह है कि रजवाड़ेके अन्यान्य राजाओंकी प्रजामे जिस भाँति शिक्षाका विस्तार हुआ है, अत्यन्त दुःखका विषय है कि बूँदीराज्यमे आजतक शिक्षाके विस्तारके विषयमे ऐसा यत्न नही किया गया। कर्नल ब्राडफोर्ड लिखते हैं कि बूँदीराज्यकी शिक्षा इस समय शैशव अवस्थामे है, परन्तु जव शिक्षा विस्तारकी सूचना हुई है तव ऐसी आशा की जाती है कि किसी समय इसके द्वारा अवश्य ही सफलता प्राप्त होगी।

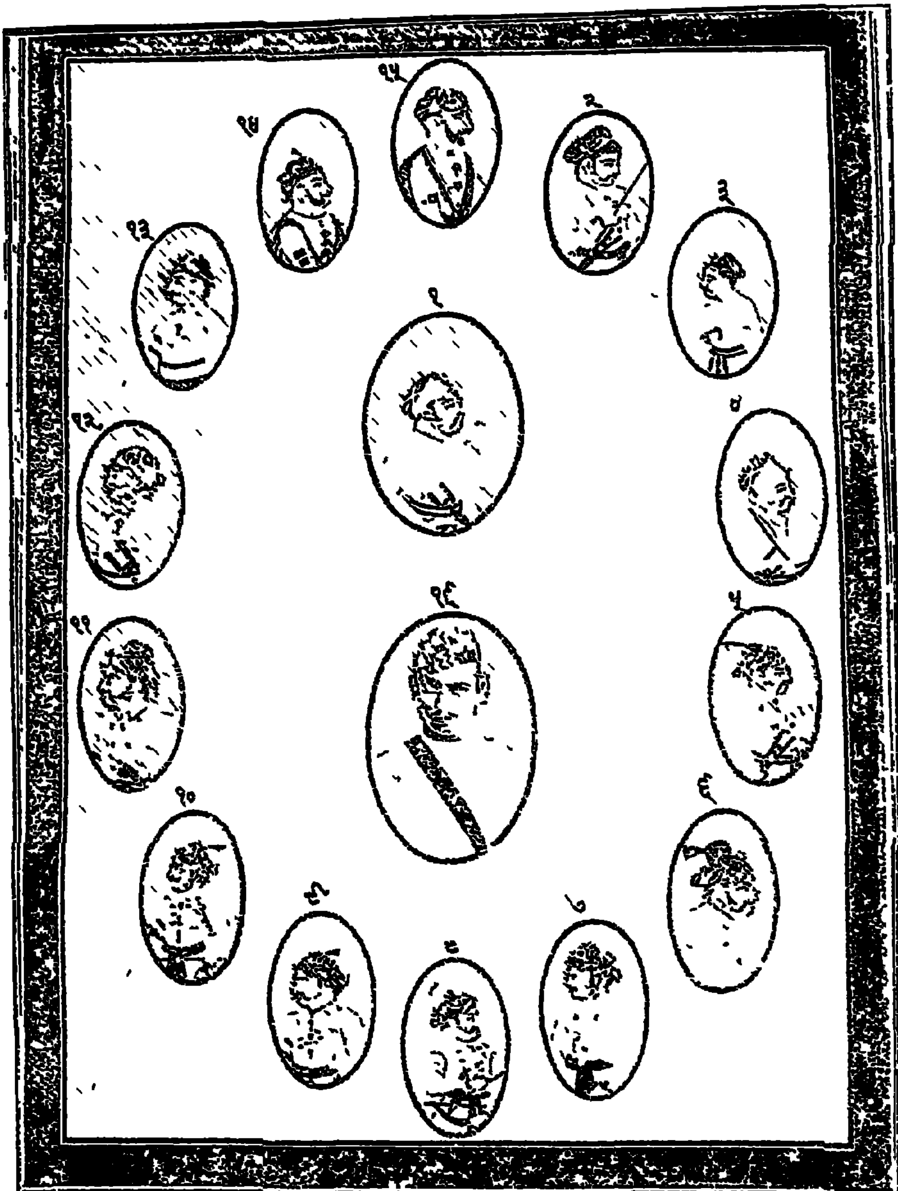
बूँदीराज्यका इतिहास समाप्त हुआ।

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस–बंबई.



कोटा।

एच्. एच् महाराव मेजर सर उमेदसिंहजी बहादुर
जी. सी. आइ. ई. के सी. एस. आइ



कोटा।

(१) माधोसिंह, १६२५	(५) रामसिंह, १६९६	(११) गुमानसिंह. १७६६
(२) मुकुंदसिंह. १६३१	(६) भीमसिंह. १७०८	(१२) उम्मेदसिंह. १७७१,
(३) जगतसिंह, १६५८	(७) अरजुनसिंह. १७२०	(१३) किशोरसिंह १८२०,
प्रेमसिंह, १६७२, (तसवीर नहीं है)	(८) दरजनसाल १७२४.	(१४) रामसिंह, १८२८
(४) किशोरसिंह, १६७०	(९) अजीतसिंह १७५७,	(१५) छत्रसिंह. १८६६
	(१०) चतरसाल. १७५८.	(१६) महाराव उम्मेदसिंह १८८९.

राजस्थान.

दूसराभाग.

कोटाराज्यका इतिहास.

॥ श्रीः ॥

राजस्थानका इतिहास.

दूसराभाग २.

कोटाराज्यका इतिहास.

प्रथम अध्याय १.

बूँदीसे कोटाराज्यका भिन्न होना-कोटिया भील-भील जाति-कोटेके प्रथम राजा माधोसिंह-कोटाराज्यमें सामन्त मडलीका स्थापित होना-माधानी-राजा मुकुन्द-रणभूमिमें चारों भाइयोंका सम्राट्के लिये प्राण देना-जगत्सिंह-प्रेमसिंह-उनका सिंहासनसे उतरना-किशोरसिंह-अरकाटमें उनका मारा जाना-रामसिंह-जाजवमें उनकी मृत्यु-भीलोंका आधिपति चक्रसेन-ऊमटवश भीमसिंह-भीमसिंहका निजामुलमुल्कपर आक्रमण-भीमसिंहका माराजाना-भीमकी सचित्र समालोचना-बूँदीके राजाके साथ उनकी शत्रुता-राव अर्जुनका सिंहासन पर बैठकर कुमियोंसे कलह-श्यामसिंहका माराजाना-महाराव अर्जुनशाल-महाराष्ट्रोंका प्रथम अभ्युदय-कोटेपर आक्रमण-हिम्मतसिंह झालासे कोटेकी रक्षा-जालमसिंहका जन्म-महाराष्ट्रोंको कर देना-दुर्जनशालका माराजाना-उनके चरित्रकी समालोचना-उनकी शिकार-उनकी रानियोंकी शिकार-हिम्मतसिंहका व्याघ्रकी शिकार-महाराव अजित-राव छत्रशाल-जयपुरके राजा माधोसिंहका कोटेपर आक्रमण-भटवाड़का समर-जालिमसिंह झाला-हाड़ाजातिका जय पाना-आमेरकी सेनाका भागना-कोटेका स्वाधीन होना-छत्रशालका माराजाना ।

कोटेका हाड़ा राजवंश बूँदीराज वंशधरोंकी छोटी शाखा है, अतएव कोटेकी हाड़ा जातिका पहिला इतिहास बूँदी राज्यके इतिहासके साथ मिला हुआ है। बादशाह शाहजहाँ जिस समय भारतवर्षके सिंहासन पर बैठा था उस समयमें बुरहानपुरके समरमें बूँदीके राव राजा रत्नसिंहके दूसरे पुत्र माधोसिंहने अपने प्रबल पराक्रमसे बादशाहकी ओरसे जयप्राप्त की, तब बादशाह शाहजहाँने प्रसन्न होकर उक्त कोटा प्रदेश और उसके अधीनवाले सब गांव नगर उनको देदिये। इसी समयसे माधोसिंह पिताके बूँदीराज्यको छोड़कर स्वाधीनभावसे कोटेराज्यका शासन करने लगे। तबसे कोटा और बूँदी दो पृथक् २ राज्य गिने गये। हाड़ाजातिके इतिहासमें लिखा है कि माधोसिंहका जन्म सम्वत् १६२१ सन् १५६५ ई० में हुआ था, चौदह वर्षकी अवस्थामें माधोसिंहने बुरहानपुरकी लड़ाईमें अपने साहस और पराक्रमसे ऐसी विजय पाई कि जिससे प्रसन्न हो बादशाह शाहजहाँने उनको तीनसौ साठ नगर और

गांवोसे पूर्ण कोटाराज्य पुरस्कारमें देदिया। पहिले यह कोटाराज्य बूँदीराज्यके प्रधान सामन्तोके अधीनमे था और उसका राजकर दो लाख रुपये मिलते थे। माधोसिंहने बादशाहसे "राजा" की उपाधि प्राप्त की और वह उक्त कोटेराज्यका स्वाधीनभावसे शासन करने लगे।

बूँदीराज्यके इतिहासमें पाठक पढ़चुके है कि अमिश्र आदिम कोटिया भीलका सबसे पहिले इस प्रदेश पर अधिकार था। उन प्रथम निवासी भीलोंके हाथका जलतक राजपूत नही छूते थे। जिस समय कोटे पर अधिकार किया गया उस समय उस प्रदेशके स्थान २ मे केवल कुटी ही थीं। कोटाके राजा कोटेसे पाँच कोश दक्षिणमें इकेलगढ़ नामक वड़े पुराने किलेमें रहते थे। किन्तु जिस समय माधोसिंहने दिल्लीके बादशाहसे कोटाप्रदेशकी शासनसनद प्राप्तकी उस समय कोटाराज्यकी सीमा चारो ओरसे बढ़ाई गई। उस समय कोटेके दक्षिणमें गागरौन और घाटौली प्रदेश था। खीची जातीयगण उस प्रदेशके स्वामी थे। पूर्वीय सीमामे गोंड़जातिके अधीनमे मांगरोल और राठौड़ राजपूतोके स्वामीके अधिकारमे नाहरगढ़ था। नाहरगढ़के अधिपति राजपूत होनेपर भी वह अपने अधिकारी प्रदेशकी रक्षा करनेके लिये मुसल्मानी धर्मका अवलम्बन कर नव्वाबकी उपाधिसे भूषित थे। उत्तरमें कोटेकी सीमा चम्बल नदीके किनारे किनारे सुलतानपुरतक थी, चंवल नदीके पारमें नाशता नामक एक स्वतंत्र छोटा राज्य विराजमान था। इस चारोओरकी सीमामे बँधे प्रदेशके वीचमे ३६० नगर और गॉव थे और बहुत सी नदियोके द्वारा पृथ्वीकी उपजाऊ शक्ति भी बड़ी थी।

कोटेके राजा माधोसिंहने बादशाहके वलसे वलवान् होकर थोड़े ही दिनोंमे कोटेकी राज्यसीमा बहुत बढ़ाली। माधोसिंहके मरनेके समय मालवा और हाड़ौतीकी सीमातक उनकी शासनशक्तिका विस्तार था। माधोसिंह संवत् १६८० मे पांच योग्य पुत्रोंको छोड़ परलोक सिधारे। उनके चार पुत्र कोटाराज्यके चार प्रधान सामन्त पदोंपर नियुक्त थे। बूँदीके प्रधान हाड़ा शाखाके साथ उक्त माधोसिंहके उत्तराधिकारी गणोंकी पृथक्ता दिखानेके लिये दोनो राजवंशोंके आदि पुरुषोंके नामसे दोनों वंश प्रसिद्ध होते है। माधोसिंहके वंशधरगण माधानी नामसे परिचित है।

माधोसिंहके पांच पुत्रोंके नाम।

१ मुकुन्दसिंह; कोटेके अधीश्वर हुए।

२ मोहनसिंह, इन्होंने पलायता प्रदेशको प्राप्त किया।

३ जुझारसिंह इन्होंने कोटड़ा और उसके पीछे रामगढ़ रेलावन प्राप्त किया।

४ कनीराम, इन्होने कोयलाप्रदेशको प्राप्त किया। इसके सिवाय दिल्लीके बादशाहसे स्वतंत्र शासनपत्र प्राप्त देह और जोरा प्रदेश प्राप्त किया।

५ किशोरसिंह इन्होंने सांगोप्रदेश प्राप्त किए।

माधोसिंहके मरनेके पीछे उनके बड़े बेटे मुकुन्दसिंहके मस्तक पर राज्यमुकुट शोभित हुआ। इतिहास कहता है कि जिस सीमाके अन्तमे स्थित पहाड़ी मार्ग

हाड़ोतीसे मालवेको अलग करताहै वहीं इन मुकुन्दसिंहने एक घाटा बनाया और इन्हींके नामानुसार इसका नाम " मुकुन्ददर्रा " वा " मुकुन्दद्वार " हुआ है । इसी मार्गसे सन् १८०४ ईसवीमें ब्रिगेडियर मानसूनकी आज्ञाकारी बृटिश सेना रणमेंसे मुँह छिपाकर प्राणोंके भयसे भागी थी कोटेके जातीय इतिहासमें मुकुन्दसिंहकी कीर्तिकी प्रशंसा पाई जाती है । उन्होंने अपने राज्यके अनेक स्थानोंपर अनेक अभेद्य किले और सर्वसाधारणके उपकारी तालाव बनवाये हैं । आणता नामक स्थानकी मनोहर दीवारें आरै " पेट्रा " उन्हींने बनवाई है ।

राजा मुकुन्दसिंह अपने पिताके समान ही प्रवल पराक्रमी और असाधारण साहसी थे । राजवाड़ेकी राजपूत जाति पहिलेसे ही दिल्लीके मुसलमान बादशाहोंके बीच न्यायसे सिंहासनके अधिकारियोंके अधिकारके लिये जिस भांति अनेक वार सेनाके साथ जीवन-दान करके राजभक्तिकी पराकाष्ठाको दिखा गई हैं मुकुन्दसिंह भी उसी भाँति इतिहासमें पूर्वजोंकी समान राजभक्तिकी प्रज्वलित ज्योति दिखा गये है । जिस समयमें पापात्मा औरंगजेबने अपने जन्म देनेवाले पिताको कैद किया और राज्यसिंहासनसे हटानेके लिये पिशाचकी मूर्ति धारण कर सेनाके साथ आगे बढ़कर अपने षड्यन्त्रके जालको फैलाया, उस समय प्रायः प्रत्येक राजपूत राजाओंने अपनी २ सेनाके साथ बुड्ढे बादशाह शाह-जहांके अधिकारकी रक्षा करनेके लिये तलवार पकड़ी थी । उनमें राठौर जाति,बूँदी और कोटेकी हाड़ा जाति सबमें आगे हुई थी । कोटेके स्वामी माधोसिंहके पुत्रोंने बादशाह शाहजहांको उस महाविपत्तिके समयमें विलक्षणतासे स्मरण किया, कि अब बादशाह शाहजहांके पक्षको लेना चाहिये, केवल राजभक्तिसे ही नही वरन बादशाह शाहजहांके अनुग्रहसे ही पिता माधोसिंहने कोटेका राज्य स्वाधीनभावसे पाया है। अतएव माधोसिंहके पांचों पुत्र बादशाह शाहजहांके सिंहासनकी रक्षाके लिये जीवन देनेमें विमुख नहीं हैं । संवत् १७१४ में उज्जयनीके समीपवाले प्रदेशमें नरपिशाच औरंगजेबके साथ राजपूत गणोंने बादशाह शाहजहांकी सेनामें मिलकर भीषण समरकी आगको प्रज्वलित करदिया। उस संग्राममें औरंगजेबने जय पाई, और उस स्थानका नाम फतेहाबाद रक्खा गया । इतिहास बतलाता है कि राजपूत वीरगण यातो समरमें जय प्राप्त करेंगे; नहीं तो अपना जीवन देंगे,परन्तु किसी भाँति कोई राजपूत युद्धसे भागेगा नहीं; ऐसी प्रतिज्ञा करके युद्ध-क्षेत्रमें जाते समय प्रत्येक राजपूतने अपने शिरपर विवाह समयका मौर धारण कर वरके भेषसे गमन किया; माधोसिंहके उक्त पांचों पुत्र उसी प्रकार अपने शिरपर मौर धरकर नंगी तलवारें हाथमें ले सेनासहित युद्धक्षेत्रमें उतरे । किन्तु चतुरोंमें श्रेष्ठ राठौर सेना-पतिके दोषसे उक्त पाँचों भाई यद्यपि समरमें जय न पासके किन्तु रणक्षेत्रमें जीवन विसर्जन करके उन्होंने असीम वीरताके साथ अपने प्रणको रक्खा । युद्धके अन्तमें सबसे छोटे किशोरसिंहको उस समरभूमिसे लौटना पड़ा, यद्यपि उनके समस्त शरीरमें सांघातिक क्षत अनेक थे, किन्तु विशेष यत्नसे चिकित्सा होनेपर वह पुनः जीवित हुए । इन किशोरसिंहने ही अन्तमें दक्षिणके समरमें विशेष कर बीजापुरको अधिकारमें करते समय राजपूतोंके बीच सबसे बढ़कर वीरता प्रकाश कर युद्ध

कौशलमे प्रतिष्ठा और सम्मान पाया । किन्तु दुर्भाग्यसे किशोरसिंहकी समान सिंह विक्रमी वीरोंसे किस भाँति आचरण करना चाहिये उसको बादशाहके कुमार नहीं जान सके अतएव अन्तमें बड़ा शोचनीय दृश्य उपस्थित हुआ ।

राजा मुकुन्दसिंह रणक्षेत्रमें मारेगये । उनके पुत्र जगत्सिंह कोटेके राजसिंहासन पर बैठे और दिल्लीके बादशाहकी अधीनतामें दो हजार सेनाके "मनसबदार" अर्थात् सेनापतिके पदपर नियुक्त हुए । संवत् १७२६ तक जगत्सिंह दक्षिणके समरमें नियुक्त थे । उक्त संवत्मे ही वह अपुत्रावस्थामे स्वर्गवासी हुए, तब माधोसिंहके चौथे पुत्र कनीराम जिन्होंने कोइला प्रदेशका अधिकार पाया था, उन्हींके पुत्र पेमसिंह कोटाके राजसिंहासन पर शोभित हुए । किन्तु छः महीने भी उन्होंने राज्यकार्यको नहीं चलाया था कि इतनेहीमें पेमसिंह अपने निन्दनीय कार्यसे प्रजाकी दृष्टिमें घृणित हुए । कोटाके पंचायत समाजने उनको सिंहासनसे उतार कर फिर पिताके प्रदेश कोइलामे भेज दिया । उनके वंशधर अभीलों उसी प्रदेशमे विराजमान हैं । माधोसिंहके पंचम पुत्र किशोरसिंह जो रणक्षेत्रमें बड़े घायल होकर दैवयोगसे बच गये थे, सामन्त समाजने उन्हींको कोटाके राजसिंहासन पर बैठाया । जिस समय औरंगजेबने दिल्लीके सिंहासन पर अधिकार करलिया, उसी समय कोटेके राजा किशोरसिंह औरंगज़ेबकी सेनाके साथ अपनी सेना लेकर दाक्षिणात्यमें मरहटोंको दमन करनेके लिये नियुक्त हुए । मरहटोंके साथ युद्धमें उनके बलकी और साहसकी सभीने मुक्तकंठसे प्रशंसा की थी । अन्तमें संवत् १७४२ में अरकाटगढ़ किलेके अधिकारके समय किशोरसिंह मारेगये । किशोर सिंह हाडाजातिके आदर्श वीर पुरुषस्वरूप थे; कहा गया है कि अनेक समरोंमे उनके शरीरमें पचास घावोंके चिह्न अङ्कित होगये थे । वह मरते समय तीन पुत्रोंको छोड़ गये। (१) विशनसिंह, (२) रामसिंह, (३) हरनाथसिंह , ।

राजपूतोंकी रीतिके अनुसार बड़े पुत्र विशनसिंहको कोटेका राज्यसिंहासन प्राप्त होना चाहिये था किन्तु किशोरसिंह जिस समय दक्षिणात्यमे सेना लेकर गये थे उस समय विशनसिंहको पीछेसे आनेको कहा था, परन्तु विशनसिंहने उनकी आज्ञा नहीं मानी, वह न गये तब किशोरसिंहने क्रोधित होकर उनको भविष्यमें राज्य पानेसे हटा दिया । विशनसिंहने उत्तराधिकारीके अधिकारसे हीन होकर केवल आणता नामक स्थानको पाया । विशनसिंहके औरससे पृथ्वीसिंहने जन्म लिया । वही पीछे आणता प्रदेशके सामन्त हुए । उनके पुत्रका नाम अजीत हुआ, अजीतसिंहके तीन पुत्र हुए (१) छत्र साल, (२) गुमानसिंह (३) राजसिंह ।

किशोरसिंहके दूसरे पुत्र रामसिंहने अपने पिताके साथ दाक्षिणात्यमें जाकर मरहठों के प्रत्येक युद्धमे लिप्त रहकर अपने पिताकी समान प्रशंसा पाई थी । पिताके मरजाने पर वही पिताके पद सम्मानको प्राप्त हुए।औरंगजेबके मरने पर जिस समय दिल्लीके सिंहासन के लिये उसके उत्तराधिकारियोंमें झगड़ा हुआ उस समय कोटेके स्वामी रामसिंहने बड़े शाहजादे मोआजिमके विरुद्ध दाक्षिणात्यके राजप्रतिनिधि कुमार आजिमका पक्ष अवलम्बन

किया और संवत् १७६४में जाजव नामक स्थानके समरमे इन्होने प्राण गँवाये। उक्त समरमे बूँदीके राजाने कुमार मोआजिमके पक्षको लिया था, पाठकगण बूँदीके इतिहासमें उसको पढ़ चुके हैं। उस समय उसी युद्धमें रामसिंहने अपनी ज्ञातिवाले बूँदीके राजाके साथ युद्ध किया। रामसिंहके हृदयमें ऐसी प्रवल कामना उदय हुई थी कि बूँदीके राजाको परास्त करनेमे प्रतिष्ठा पाई और उसीसे उन्होंने बूँदीके राजाके अनिष्ट साधनमे त्रुटि नहीं की, किन्तु दुर्भाग्यसे जाजव नामक स्थानके समरमे ही गोलेके आघातसे वह मारे गये।

रामसिंहके मरनेके उपरान्त भीमसिंह कोटेके राजा हुए। हाड़ाजातिके इतिहासमे लिखा है कि भीमसिंहके शासन समयसे ही कोटाराज्य धन, सम्मान, सामर्थ्य और प्रभुतामे भारतवर्षके प्रथम श्रेणीके राज्यकी योग्यताको प्राप्त होगया था। अभीतक कोटा तीसरी श्रेणीके राज्योंमे गिना जाता था। किन्तु चतुर बुद्धिमान् भीमसिंहके अभ्युदयके साथ ही साथ कोटा राज्यकी भी उन्नति होगई। बादशाह बहादुरशाहके मरने पर फर्रुखसियरके दिल्लीके सिंहासन पर बैठते हुए जिस समय दोनों सय्यद भाई प्रवल शक्तिसे भारतका शासन करते थे, कोटेके राजा भीमसिंहने उन दोनों सय्यदोंके पक्षका अवलम्बन किया और उनकी ही नीतिका पालन करतेहुए अपनी उन्नतिके दरवाजेको खोल लिया। माधोसिंहके समयसे कोटेके राजा तीसरी श्रेणीके राजाओ में दिल्लीके बादशाहके अधीनमे दो हजार सेनाके मनसबदार होते आये थे। किन्तु उक्त दोनो सय्यद भीमसिंह पर ऐसे प्रसन्न हुए कि उन्होंने भीमसिंहको भारतवर्षके प्रथम श्रेणीके राजाओको प्राप्त सम्मान सूचक "पाँच हजारी" अर्थात् पाँच हजार सेनाके मन्सबदारका पद देदिया। हाड़ाजातिकी श्रेष्ठ शाखासे उत्पन्न बूँदीके राजा बादशाह फर्रुखसियरके पक्षका अवलम्बन करके उक्त अत्याचारी दोनो लड़कोंकी सर्वसंहारिणी नीतिके विरुद्धमे खड़े हुए, अतएव छोटी शाखासे उत्पन्न कोटेके राजा भीमसिंह उक्त दोनो मन्त्रियोंके पक्षको लेकर जाजवके समरमें दोनो राजवंशोके बीच शत्रुताकी आगमें जलने लगे। बूँदीके इतिहासमें पाठक भलीभाँतिसे पढ़ चुके हैं कि कोटेके राजा भीमसिंहने किस प्रकार कायरपुरुषोंकी समान घृणित उपायसे बूँदीके राजा बुधसिंहका जीवनरूपी दीपक बुझानेकी चेष्टा की थी। राजा भीमसिंहने उक्त सय्यद मंत्री और आमेरके राजा जयसिंहसे मिलकर सभी निन्दित कामोंमें सलाह दी थी, अतएव जयसिंहने जिस समय बूँदीके राजा बुधसिंहका सर्वनाश किया उस समयमें भीमसिंहने उनकी सब प्रकारसे सहायता की, इसका भी वृत्तान्त पाठक पढ चुके हैं। दोनों सय्यदोंके प्रियपात्र होकर भीमसिंहने उनके अनुग्रहसे पश्चिममे कोटेसे और पूर्वमे अहीरवाड़ेसे पठारकी समस्त पृथ्वीका सनदपत्र पालिया। उस बडे भूखण्डके बीचमे खीचीं जातिकी और बूँदी राज्यकी बहुतसी भूमि थी। उन्होने उक्त उपायसे हाड़ौती प्रदेशके बीच सबसे श्रेष्ठ गांगरोनका किला प्राप्त किया; और अलाउद्दीनके आक्रमणके विरुद्धमे बड़े साहस और बलसे उस किलेकी रक्षा कर उसकी कीर्तिको बढा लिया। मऊ, मेदाना, शेरगढ़, बारां, माङ्गरौल और बड़ोदा आदि चम्बलके पूर्ववाले किले भी अपने अधिकारमे करलिये।

हाड़ौती राज्यकी दाहनी सीमामें विराजमान कुछ एक गिरिसंकट प्रदेशोंपर, अमिश्र आदिम भीलोंने अपनी पैतृक सम्पत्ति स्वरूप मानकर, अपना अधिकार प्राप्त करलिया। उन सब देशोंके बीचमें मनोहर थाना अब भी कोटेराज्यके शेष दक्षिण सीमा स्वरूप है, उसमें भीलोंने अपनी राजधानी बनाई,और भीलोंके राजा चक्रसेन वहाँपर रहकर राज चलाते थे। भीलोंके राजाके अधिकारमें पाँचसौ घुड़सवार और आठसौ धनुषधारी सेना थी, मेवाड़से लेकर शेष सीमातक सभी स्थानोंके भील उनको अपना स्वामी मानते थे। यह आदिम अधिवासी भील धारके राजा भोजके समयसे कोटेके राजा भीमसिंहके समय तक राजनैतिक विप्लवोंमें अपनी जातीय स्वाधीनताकी रक्षा करते आये थे,किन्तु कोटेके राजा भीमसिंहने उनके अधिकारी देशोंपर चढ़ाई कर भीलवंशको ध्वंशकर उनके सब देशोंको अपने कोटेराज्यमें मिलालिया। नरसिंहगढ़ पाटनको भी लेलिया। राजा भीमसिंह यदि और कुछ दिन जीवित रहते तो कोटे राज्यकी सीमा पर्वत मालाके बाहर तक निःसंदेह बढ़ा लेते। अनारसी डिग पड़ावा और चंद्रावतोंके अधिकारी प्रदेश भी कोटाराज्यमें मिलाये, किन्तु भीमसिंहके परलोकवासी होनेपर वह सब प्रदेश कोटाराज्यसे निकल गये।

कोटेके इतिहाससे जाना जाता है कि प्रसिद्ध कुलीचखाँ जिसने पीछे इतिहासमें निजामुलमुल्क नामसे प्रगट होकर दक्षिणमें स्वाधीनभावसे हैदराबाद राज्य स्थापन किया। उसने दिल्लीके बादशाहकी अधीनता न मान जिस समय अपनी सेनाके बलसे बादशाहके विरुद्धमें खड़े हो स्वाधीनभावसे दिल्लीके अधिकारी देशोंको लूटकर पलायन किया उस समय दिल्लीके बादशाहने अपने प्रतिनिधि स्वरूपमें आमेरके राजा जयसिंह, कोटेके राजा भीमसिंह और नरवरके राजा गजसिंहको यह आज्ञा दी कि तुम सब भागेहुए कुलीचखाँको कैद करके लाओ। उक्त निजामुलमुल्कके साथ भीमसिंहने आपसमें पगड़ी बदलकर भाईका सम्बन्ध स्थापित किया था, कुलीचखाँने जयसिंहसे पूर्वोक्त बात सुनकर भीमसिंहको मित्रभावसे एक पत्र लिखा दिया कि मैंने बादशाहका किसी प्रकारसे धन रत्नादि नहीं लूटा है, अतएव मेरे विरुद्धमें जो सब अन्याय और अपवादकी बातें उठ रही हैं आप उन सबको मिथ्या जानो, यहीं मेरा अनुरोध है, जयसिंह एक षड्यन्त्री है, वह हमारे नाश करनेकी निरन्तर चेष्टा करते है। इस लिये आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप उनकी बातका विश्वास न करना, और मेरी दक्षिण यात्रामें रोक टोक नही करना। निजामुलमुल्कका यह पत्र पाकर हाड़ा राज भीमसिंहने यह उत्तर लिख भेजा कि "स्वामीकी आज्ञाका पालन और मित्रताकी रक्षाके बीचमें एक रेखा है वह मै जानता हूँ, आपके मार्ग रोकनेको मुझे आज्ञा मिली है और उसीसे मैं इतनी दूर सेना लेकर आया हूँ, इसको बादशाहकी आज्ञा जानो, आपके साथ हमको अवश्य युद्ध करना होगा और कल प्रातःकाल मै आपपर आक्रमण करूँगा"।

"कल आपपर आक्रमण करेंगे" यह बात वीर तेजस्वी भीमसिंहने लिख कर मित्रको सावधान करदिया, और अपने वीरभावको भी प्रकाश कर दिया,चतुर मुसलमान कुलीचखां स्वामिभक्त राजपूतको राजभक्तिसे मित्रताका बलिदान करते देख कर छलबल

और कौशलसे अपनी रक्षाके लिये युद्ध करनेको तैयार हुआ। निजामने सिंध–नदी प्रदेशके कुरवाई भौंरासा नामक नगरके समीपवाले गिरिसंकटके मार्गमे अपना डेरा डाला। यदि इस समय कुलीचखाँ पर आक्रमण किया जाय तो उसी एक पहाड़ी मार्गसे होकर जाना होगा नहीं तो राजपूत लोग ढूँढ़कर चले जॉयगे। और पता नहीं लगेगा वह अवश्य ही इसी मार्गसे आवैंगे, इस बातको निश्चय जान निजामने उस गिरिसंकटके सामने तोपे लगाकर उन्हे वृक्षोंकी लताओंसे ऐसी तरह छिपा दिया कि सम्मुखसे कोई तोपोंका अनुमान भी न करसके और भीतरसे तोपका गोला सीधा चलाजाय।

दूसरे दिन प्रातःकालही वीरवर भीमसिंह अपने अधिकारकी सब सेनाको कच्छवाही सेनादलके साथ मिलाकर अफीमखानेके पीछे निजाम पर आक्रमण करनेके लिये एक दल बाँधकर भालेको हाथमे ले बाहर निकले। वह निजामकी सेनाके साथ भिड़ने ही वाले थे, यदि और कुछ आगे बढ़ जाते तो राजपूतोंका नाम भी न रहता। राजपूतोंको अपनी सेनाके पास आतेहुए देख निजामने तोपोंमें बत्ती लगवा दी, गोलोंकी ऐसी वृष्टि हुई कि उसके द्वारा हाथी सहित राजा भीमसिंह और राजा गजसिंह दोनों ही मारे गये। दोनोंके मारेजानेसे सब पैदल और घुड़सवार इधर उधर भाग निकले। कुलीचखॉने इस भाँति जय पाकर दक्षिणकी ओर कूच किया, और निसन्देह स्वाधीन भावसे जाकर हैदराबादमें राजकार्य करने लगा। हैदराबाद आजतक कुलीचखॉके वंशधरोंके शासनमे चला आता है।

इतिहासमे लिखा है कि उस समयमें कोटेकी हाड़ाजातिपर दो विपत्तियां पड़ीं; एक तो राजा भीमसिंहका मरना दूसरे कोटेके राजवंशियोंके पूज्य विग्रह बृजनाथका अन्तर्धान होना। प्रत्येक राजपूत राजा ही सदासे प्रत्येक समरक्षेत्रमे अपने इष्टदेवकी मूर्ति लेजाते हैं, यह मूर्ति तर्कसमे रक्षित रहती है। युद्धके आदिमे राजासे लेकर सामान्य दरजेके सैनिक तक उसी देवविग्रहके नामसे जयध्वनि करके शत्रुपर आक्रमण करते हैं। कोटेराजवंशके उक्त बृजनाथजीकी मूर्ति स्वर्ण निर्मित और छोटे आकारकी थी और उस विग्रह (मूर्ति) ने अनेक युद्धोंमें जय लाभ और असंख्य मनुष्योंका विनाश देखा था। कोटाराज्यकी सेनाने "जयबृजनाथ" की इस शब्दसे चारों दिशाओंमे गुंजारकर शत्रुकी सेनापर आक्रमण किया था, परन्तु उस समय बृजनाथ जाने कहाँ अदृश्य होगये उनका कुछ पता नहीं चला। इतिहासमें लिखा है बहुत समय तक खोजनेके पीछे उस मूर्तिकी समान और एक मूर्ति प्राप्त हुई उनको महा समारोहके साथ कोटेकी राजधानीमे लाये। कोटावासियोंने वह मूर्ति पाकर बड़ी खुसी मनाई। जोहो भीमसिंह १५ वर्ष तक राज्य करके संवत् १७७६ मे (सन् १७२० इसवीमे) उक्तरीतिसे मारेगये। किन्तु उन १४ वर्षोंमे भीमसिंहने जिस रीतिसे राज्यके कार्यको चलाया उसीसे उसकी अवस्था बदली थी, यह निश्चय उनकी वीरता और राजनीतिज्ञता मानी गई।

दोनोके एकवंशमें उत्पन्न होनेपर भी बूँदीके राजा बुधसिंहके साथ कोटेके राजा रामसिंहकी जो लड़ाई हुई सो धौलपुरके रणक्षेत्रमे हाड़ा जातीय दोनों राजाओंनें एक दूसरे पर आक्रमण करके जातिकी विद्वेषताको चारेतार्थ करदिया। कोटेके राजा भीमसिंह ने समय पाकर बूँदीके राजाका सर्वनाश करनेमे त्रुटि नही की थी । राजा भीमसिंहने बादशाह फर्रुखसियकी ओरसे राजा बुधसिंहके मारनेके लिये जो कायरपुरुषोंकी समान उनपर आक्रमण किया था पाठकमंडली उसको पहिले ही जानचुकी है । उसी लड़ाईके कारण हाड़ाजातिकी श्रेष्ठ शाखासे उत्पन्न बूँदीका राजवंश निधन होकर महाविपत्तिमें पड़ा। राजा भीमसिंहने दोनों सय्यदोंकी सहायतासे बलवान होकर अपने कुटुम्बी बुधसिंहको मारनेमें कोई त्रुटि नही की थी, आमेरके राजा जयसिंहसे जिस समय बुधसिंह सिंहासनच्युत और विताड़ित हुए, ऐसे शुभ योगको पाकर राजा भीमसिंहनें बूँदीपर आक्रमण किया,और वहाँ पर छिपे हुए राजचिह्न,बूँदीराज्यका नगाड़ा और प्राचीन समयका संचित प्रसिद्ध रण शंख प्रभृति लूटकर कोटेराज्यमें लेआये । बादशाह जहाँगीरने बूँदीके राजा रत्नसिंहको जो पीली राजपताका दी थी, जिस पताकाके मूलदेशमे हाड़ासेनाके अनेक वार समरमे बड़े पराक्रम प्रकाशके चित्र अंकित थे; भीमसिंहने उस राजपताका तकको बूँदीके राजमहलोमेसे लाकर अपने यहाँ उसका व्यवहार किया। बूँदीके इतिहासमे लिखा है कि कोटेसे बूँदीराज्यके उक्त समस्त राजचिह्न फिर प्राप्त करनेके लिये बूँदीके राजाने बारंबार चेष्टा की किन्तु किसी प्रकारसे भी वह नहीं पासके,बूँदीके राजाने कोटेके प्रधान दरवाजे और किलेमें प्रवेश होनेवाले दरवाजेकी भी ताली बनवा कर पहरेदारको लालच देकर गुप्तभावसे उन चीजोके लानेकी चेष्टा की, किन्तु प्रकाश हो जानेसे उनकी चेष्टा निष्फल हुई । कर्नल टाडने लिखा है कि "उस समयसे आज तक प्रति दिन सायंकालके उपरान्त कोटेका नगर द्वार बंद होजाता है और यहाँ तक कि स्वयं कोटेके राजा यदि संध्याके उपरान्त आना चाहैं तो उनके लिये भी दरवाजा नही खुलता । इसके सम्बन्धमें कोटाके हाड़ा जातीय कविने लिखा है कि एक दिन कोटेके राजा दुर्जनशाल युद्धमें परास्त होकर थोड़ेसे सेवकोंके साथ आधीरातके समय नगरके दरवाजे पर आये और द्वाररक्षक पहरेदारसे बोले कि दरवाजा खोलो, परन्तु पहिले उन्होने ही आज्ञा दे रक्खी थी कि किसी प्रकारसे भी किसीको रात्रिके समयमें दरवाजा नही खोलना, अतएव पहरेवालेने उनकी आज्ञाका पालन किया, तव राजा दुर्जनशालने स्वयं दरवाजेपर आकर अपना परिचय दे पहरेदारसे द्वार खोलनेको कहा उस समय पहरेदारने समझा कि कोई दूसरा राजा आकर द्वार खुलाना चाहता है, अतएव पहरेदारने द्वारके भीतरसे कहा कि राजाको इस रात्रिके समय दूसरे स्थान पर रहना चाहिये, यह सुनकर राजाने फिर कहा तब पहरेदारने बन्दूक दिखाकर कहा चले जाओ, हम नही खोलेंगे, यदि आप नहीं मानेंगे तब हमै विवश हो गोली चलानी पड़ेगी । दुर्जनशालने अपनी प्रथमकी आज्ञाके अनुसार पहरेदारको बन्दूक चलानेमें उद्यत देखकर दरवाजेसे हटकर दूसरे स्थानपर जाय शेष रात्रि बिताई । दूसरे दिन प्रातःकाल दरवाजा खोला गया, जो पहरेदार रात्रिमें द्वार रक्षक था वह

रात्रिका समाचार अपने जोड़ीदारसे कहही राहा था कि सामनेसे राजा दुर्जनशाल आतेहुए दृष्टि पड़े। राजाको देख वह पहरेदार विस्मयके साथ डरने लगा, और धीरे २ चलकर अपने हाथकी वन्दूकको राजाके चरणोके आगे धरकर दोनो हाथ जोड़ घुटने झुकाय पृथ्वीपर मस्तक रख दंड पानेके लिये उसने निवेदन किया। तव राजा दुर्जनशालने उसका हाथ पकड कर उठाया और अपनी पूर्व आज्ञाके पालन करनेसे उसकी विशेष प्रशंसा करते हुए स्वयं जो कुछ उत्कृष्ट वस्त्रादि पहरे हुए थे वह सव उतार पुरस्कार स्वरूपमे उसे देदिये।

हाड़ा इतिहासके जाननेवालेका लेख है कि राजा भीमसिंहके समस्त शरीरमें शस्त्रो के आघातके चिह्न थे, उनके शरीरको देख मनुष्य कुरूपीकहेंगे इस कारण वह किसीके सामने अपने शरीरपरसे वस्त्रोंको नही उतारते थे। कुरवाईके युद्धक्षेत्रमे जिस समय कुलीचखाँके गोलेसे घायल हुए थे केवल उसी समयमें उनके शरीरमे अगणित शस्त्रोके चिह्न देख एक नौकरने उनसे पूछा, तो भीमसिंहने उस अवस्थामे उसको उत्तर दिया "जो हाड़ाजातिके शासनके लिये जन्मा है,और जो पैतृक राज्यकी रक्षा करनेके अभिलाषी हैं उनको इसी प्रकारसे अस्त्रशस्त्रोके चिह्न धारण करने पड़ेंगे। कोटेके राजाओमे राजा भीमसिंहने सवसे पहिले दिल्लीके वादशाहसे वड़े सम्मान सूचक "पञ्चहजारी मनसवदार" अर्थात् पाँच हजार सेनाके नायकके पदको धारण किया। उसी प्रकार उन्होने सवसे पहिले "महाराव" की उपाधि पाई। उक्त उपाधि यद्यपि दिल्लीके वादशाहने उनको नहीं दी थी किन्तु राजपूत जातिके मुकुटमणि हिन्दूकुलपति मेवाडके महाराणाने दी थी। और दिल्लीके सम्राट्ने भी उस पदवीको स्वीकार किया था। वूँदीके गोपीनाथके वंशवाले हाड़ौतीके प्रधान सामन्तोमे गिने जाते थे, उनके सम्मान सूचक "आपजी" शब्दका व्योहार होता था, किन्तु जिस समयमे इन्द्रशाल उदयपुरमें गये उस समय उनको महाराणाकी ओरसे अपने भाइयोमें सम्मानके लिये "महाराज" की पदवी व्यवहारमे लानेकी आज्ञा हुई। उस समयसे उक्त सम्मान सूचक आपजी शब्द केवल कोटेके दूसरी श्रेणीके माधानी सामन्तोंके सम्मानके अर्थ व्यवहारमें चला आता है। राजा भीमसिंह अपने तीन पुत्रोको छोड़ परलोक सिधारे, उनके पुत्रोके नाम इस भाँति हैं (१) अर्जुनसिंह (२) श्यामसिंह (३) दुर्जनशाल।

महाराव अर्जुनसिंहका विवाह कोटाराज्यके भविष्यमे होनेवाले मंत्री जालमसिंह झालाके पूर्वपुरुष माधोसिंहकी वहिनके साथ हुआ। किन्तु अर्जुनसिंह चार वर्षतक कोटेका राज्य करके निःसन्तान अवस्थामें ही परलोक सिधारे। अर्जुनसिंहके मरनेके पीछे कोटेके राजसिंहासनके लिये श्यामसिंह और दुर्जनशाल दोनो भाइयोमे युद्धरूपी अग्नि प्रज्वलित हुई। उस जातीय विवादमें कोटेकी सामन्त मंडली भी दोनो पक्षकी ओर होनेसे महा दुःखी हुई। उदयपुरके रणक्षेत्रमे दोनो राजभाइयोंने अपने २ पक्षकी सेना और सामन्तोके साथ आपसमे राजसिंहासनके लिये रुधिरकी नदी वहादी। भयानक युद्धके पीछे श्यामसिंहके मारे जानेसे लड़ाई शांत हुई। हाड़ा जातीय

कविने अपने ग्रन्थमें लिखा है कि श्यामसिंहके मरनेपर दुर्जनशाल भ्रातृ वियोगके शोकमें मग्नहो रोताहुआ हाहाकार करने लगा। मै बुरे मुहूर्तमें अनुचित आशाके वश होकर सिंहासनके लिये भाईके साथ युद्धकर उसकी मृत्युका कारण हुआ, ऐसा हृदयसे अनुताप करने लगा। जिस समय कोटेराज्यमें यह दुर्घटना हुई इसी समय कोटेके राज्यमें एक और हानि हुई। दिल्लीके बादशाहने जो भीमसिंह पर प्रसन्न होकर पुरस्कारस्वरूपमें रामपुरा, भानपुरा, और कलापति नामक तीन धनशाली प्रदेश वहाँके आदिम राजाओंसे छीन कर दिये थे सो कोटेमे आपसकी लड़ाईके समय उन २ प्रदेशोंके स्वामियोने अपने २ देशोको अपने राज्यमें मिला लिया।

दुर्जनशाल संवत् १७८० (सन् १७२४ इसवी) मे कोटेके राजा हुए। इस समयमें तैमूरवंशके शेष सम्राट् मोहम्मदशाह दिल्लीके सिंहासन पर विराजमान थे। दुर्जन शालको उन्होने सम्मानके साथ दिल्लीमें बुलाया और खिलत दी। दुर्जनशालकी प्रार्थनासे बादशाह मोहम्मदशाहने उस आज्ञाका प्रचार किया कि हाड़ा जाति यमुनाके तीर २ जिन २ स्थानो पर बसती है उन स्थानो पर गोहत्या न होने पावे। दुर्जनशाल अपनी जातिके इतिहासकी अनेक घटनाओंके समयमे राजसिंहासन पर विराजमान थे। उन्हींके शासन समयमे सबसे पहिले बाजीरावने अपनी मरहटोकी सेनाके साथ उत्तर भारतवर्ष पर अधिकार करनेके लिये चढ़ाई की। उस स्मरणीय घटनाके समयमें [illegible]रावने हाड़ौती देशकी पूर्वीय सीमाके अन्तमें तारजपास नामक पर्वती मार्गमें जाते समय नाहर-गढ़के किलेको जीतकर दुर्जनसिंहको देदिया। उक्त किला और उसके अधिकारी प्रदेश एक यवनके पास थे। संवत् १७७५ (सन् १७२९ ईसवी) में यही प्रथम मरहठोंके साथ हाड़ा जातिका पहिला सम्मिलन हुआ। हाड़ाराज दुर्जनशालने उक्त किलेको पाकर उसके बदलेमें पेशवा बाजीरावकी सहायताके लिये तथा उनके पक्षमें उस समय विशेष प्रयोजनीय सामरिक द्रव्यावली और सेनाके लिये भोज उपहारस्वरूपमें दिया। महाराष्ट्रपति बाजीरावके साथ दुर्जनशालकी वह जो मित्रता हुई, दुःखका विषय है कि कई वर्षके पीछे वह मित्रता महाराष्ट्रपतिने एक साथ विस्मृतिके जलमें बहा दी।

बूंदीराज्यके इतिहासमें पाठक पढ़चुके है कि आमेरके राजा जयसिंह दिल्लीके बादशाहके प्रतिनिधिस्वरूपसे असीम शासनशक्तिको पाकर अपने राज्यकी सीमा बढ़ाने और शासनशक्तिको प्रबल करनेके लिये बूंदी आदि नरेशोंको राज्यसे हीन बल बना-कर सामन्त पदपर नियुक्त करनेका विचार करने लगे। उनके उत्तराधिकारियोंने भी उसी ऊंची आशाके वश होकर बूदीके राजा बुधसिंहको सिंहासन च्युत करके निकाल दिया। बुधसिंहने वृद्धावस्थामें राज्यके शोकमे अपने प्राण छोड़ दिये। किन्तु आमेर-नरेशने अन्तमें महाराष्ट्रोंके दलसे परास्त होकर अपनेको धिक्कारकी अग्निमें जलाकर

(१) कर्नल टाड्ने टिप्पणीमें लिखा है कि "इस वर्षमें जिस समय बाजीराव हाड़ोती प्रदेशमें होते हुए हिन्दुस्तान पर अधिकार करनेको आये उस समय हिम्मतसिंह झाला कोटाराज्यके फौजदार थे। इस वर्षमें शिवसिंह और अगले वर्षमें जालिमसिंहका जन्म हुआ"।

आत्महत्या की। यह भी पाठकोंको स्मरण होगा। उस आमेर नरेशने बुधसिंहको बूंदी से निकाल कर अपने एक सामन्तको बूंदीके सिंहासन पर बैठाया था और उसे कर देनेको कहा। उसी समय वह विजय पानेके गर्वसे कोटाराज्यमें अधिकार बढानेके लिये आगे बढ़े। इस समय दुर्जनशाल कोटेके सिंहासन पर बैठ थे। संवत् १८०० मे आमेर नरेश ईश्वरीसिंहने कोटेको जीतनेकी इच्छासे तीन महाराष्ट्र वीर नेता और जाटपति सूर्य्यमल्लको सेनासहित बुलाकर अपनी २ सेनाके साथ कोटेपर अधिकार करनेकी तय्यारी की। कोटड़ी नामक स्थानमे महा समरके पीछे जयपुरके राजाने सेनाके साथ कोटेकी राजधानी घेर ली। क्रमानुसार तीन महीने तक राजधानी घिरी रहने पर उसके जीतनेके लिये अनेक उपायोंको अवलम्बन करनेपर भी वीरश्रेष्ठ दुर्जनशालने उनकी उस अभिलाषाको पूर्ण न होने दिया। अन्तमे निराश होकर आमेर नरेश ईश्वरीसिंह उस नगरके वृक्षोंको और राज्यके उद्यानको ध्वंस करके अपने राज्यको लौट गये। इसी समय महाराष्ट्रदलके दूसरे नेता जयआपा सेंधियाका एक हाथ गोलेसे उड़ गया।

शत्रुदलने जिस समय कोटेको घेरा था उस समय झाला जातिके राजपूत हिम्मतसिंह जो कोटेके फौजदार अर्थात् प्रधान सेनापतिके पदपर नियुक्त थे, उन्होंने अपनी वीरता और युद्धकौशलसे कोटेके राजा दुर्जनशालके साथ स्वामिभक्तिकी पराकाष्ठा दिखाई। उनके ही परामर्शसे और मध्यस्थ होनेसे दुर्जनशालको बाजीरावसे नाहरगढ़का किला मिला था। संवत् १७९५ से १८०० के बीचमे पूर्वोक्त दोनों घटनाओंके समय जालिमसिंहका जन्म हुआ। जालिमसिंहने इतनी कीर्ति प्राप्त की कि उनके साथ कोटे राज्यके इतिहासका इतना घनिष्ट सम्बन्ध हुआ कि कर्नल टाडने कोटाराज्यके इतिहासमे उनकी बड़ी प्रशसा की है।

जयपुरनरेश ईश्वरीसिंहके कोटेके जीतनेमे समर्थ होकर लौटाते समय वीर तेजस्वी दुर्जनशालने पैतृक लड़ाईकी शत्रुताको विस्मृतकर बुधसिंहके पुत्र उमेद-सिंहको उसके पैतृकराज्य बूंदीके सिहासन पर बैठानेके लिये बड़ी सहायता की। महाराष्ट्रनेता हुलकरकी सहायताके विना ईश्वरीसिंहको परास्त करके बूंदीके अधिकारको न पाते देख दुर्जनशालने उमेदको हुलकरका आश्रय लेनेकी सलाह दी। संवत् १८०५ सन् १७४९ में जिस समय उमेदसिंहने हुलकरकी सहायतासे बूंदीका राज्यसिंहासन पाया तब पाटणप्रभृति प्रदेश महाराष्ट्रनेता हुलकरको दिये, उस समय उन्हीं हुलकरने कोटेके राजा दुर्जनशालसे भी कर लेना आरम्भ करदिया। उमेदसिंहका उपकार करनेको गये हुए दुर्जनशाल स्वयं बलशाली हुलकरको कर देनेके लिये बाध्य होगये।

वीरश्रेष्ठ दुर्जनशालने अपनी भुजाओंके बलसे अनेक प्रदेशोंको जीतकर कोटाराज्यमे मिला लिया, खीचीजातिके अधिकारी फूलबरोद नामक प्रदेशको भी उन्होंने अपने राज्यमे मिला लिया था। गूगोर नामक किलेको जीत कर हाड़ाजातिके साथ खीची जातिका भयानक युद्ध आरम्भ हुआ। गूगोरके स्वामी बलभद्रने

असीम साहससे उस किलेकी रक्षा की, इतिहासमें लिखा है कि वलभद्रपुरा रामपुरा और शिवपुर प्रभृतिके सामन्तोको अपने दलमे मिलाकर हाड़ाजातिके विरोधमें खड़े हुए थे । संवत् १८१० में चौहानवंशसे उत्पन्न हाड़ा और खीची यह दोनो जाति उस समररूपी अग्निमे जलने लगी । बूंदीके राजा महावीर उमेदसिंहने इस समय कोटेके राजा दुर्जनशालके पक्षमे वड़ी वीरता प्रकाशकी । एकमात्र उमेदसिंहकी ही वीरतासे कोटेकी राजपताकाका उस रणक्षेत्रमें विपक्षी खीची गणोके हाथसे उद्धार हुआ । उससे तीन वर्ष पीछे दुर्जनशालकी प्राणवायु पंचभूतमें लय होगई । कर्नल टाडने लिखा है कि वह एक साहसी राजा थे, और जिन गुणोंकी राजपूतोमें आवश्यकता होती है वह सभी गुणमे विराजमान थे । अमायिकता उदारता और साहस आदि किसीकी भी उनमे कमी नही थी । वह शिकार वड़े चावसे खेलते थे, अधिक करके शेर और वाघकी शिकार उनको प्यारी लगती थी । उनके राज्यके प्रत्येक प्रान्तमे शिकार खेलनेके लिये सिह व्याघ्रादि भयानक जानवरोसे वन परिपूर्ण रहता, और उन सभी वनोंमे शिकार खेलनेका स्थापन पड़ाव, वना हुआ था ।

जिस समय दुर्जनशाल शिकार खेलनेको निकलते थे इतिहास कहता है कि उस समय वह अपनी रानियोको भी साथमें ले जाते थे । वह राजपूत वीराङ्गनाएं भी उत्तम रीतिसे वन्दूक चलानेकी शिक्षा पाये हुए रहती थीं । शिकार खेलनेके मञ्चपर सवसे ऊपरके दरजे पर गोली भरीहुई वन्दूक हाथमे लेकर वह वैठती थीं । जिस समय शिकार खेलनेवाले वनमें से सिह व्याघ्रादिकोको घेरकर उस मंचपर लाते तभी वह वीराङ्गना वन्दूककी गोलीसे इस सिंह व्याघ्रादिका वध करती थीं ।

कोटेके इतिहासमे लिखा है कि एक दिन शिकार खेलते समय फौजदार हिम्मतसिंह झाला शिकार खेलनेके मंचके नीचे पृथ्वीपर खड़े थे; उसी समय एक व्याघ्र सेनादलसे और शिकारी लोगोंसे महा क्रोधित होकर मुंह फैलाये वहाँ आकर खड़ा हुआ, किन्तु राजा दुर्जनशालने तव भी उसको गोलीसे मारनेकी आज्ञा नही दी, किसीने विना राजाकी आज्ञा उसके मारनेका साहस भी नहीं किया। अवसर पाकर विकट आकारवाले वाघने वड़ी तेजीसे हिम्मतसिहपर आक्रमण किया। तव उन्होने ढालसे अपनी रक्षा की और तुरन्त ही तड़प कर वाघके समीप जाय अपनी तलवारसे उसके मस्तकके दो खण्ड कर दिये। ऐसे असीम साहस और वीरताको देख दुर्जनशाल और सामन्त मण्डलीने हिम्मतसिंहकी वड़ी प्रशंसा की ।

दुर्जनशालने अपुत्रकावस्थामें प्राण त्यागे । उन्होने मेवाड़के राणाकी एक कन्याके साथ विवाह किया था। दुर्भाग्यसे अपने कोई पुत्र न होताहुआ देख हताश होकर मरनेके तीन वर्ष पहिले वह रानीसे वोले कि " देखो भगवानकी इच्छासे जो मेरा औरसजात कोई पुत्र कोटेके सिंहासन पर नही वैठेगा, तो इस समय एक पुत्रको गोद लेना चाहिये । " पाठकोंको स्मरण होगा कि कोटेके भूतपूर्व राजा महाराव राम-

सिंहके बड़े पुत्र विशनसिंह अपनी माताकी आज्ञासे दक्षिणकी लड़ाईमें न जानेके कारण कोटेके राजसिंहासनसे च्युत होकर केवल चम्बलके किनारेवाले आणता नामक प्रदेशमें शासन करते थे। जिस समय दुर्जनशालने दत्तक पुत्रके लेनेकी इच्छा प्रकट की, उस समयमें उक्त आणता प्रदेशमें उपरोक्त विशनसिंहके पौत्र वृद्ध अजीतसिंह विद्यमान थे। अजीतसिंहके तीन पुत्र थे। उनमें सबसे बड़े छत्रशालको दुर्जनशालने दत्तक स्वरूपमें लेकर महारानीकी गोदमें बैठा दिया। इतिहासमें लिखा है कि यद्यपि दुर्जनशालने छत्रशाल को अपने पुत्र और भविष्यमें उत्तराधिकारी स्वरूपसे राज्यमें प्रकाशित करदिया, यद्यपि सामन्तमंडली और समस्त प्रजाने छत्रशालको भविष्यमें अपने राजा स्वरूपसे मानलिया किन्तु दुर्जनशालके मरनेपर फौजदार हिम्मतसिंह झालाने अपनी प्रबलशक्तिसे उस व्यवस्थाको व्यर्थ कर दिया, उस समय आणताके वृद्ध राजा अजीतसिंह जीते थे। हिम्मतसिंह उनके पक्षको लेकर सबके सामने बोले कि "पुत्रको राजसिंहासन पर तिलक हो और पिता अधीन प्रजाके समान आज्ञा पालन करे, यह कभी नहीं हो सकता है। यह प्रकृतिके विपरीत बात है।" जो कुछ हो झाला हिम्मतसिंह अपने किसी गुप्त स्वार्थसाधनसे हो अथवा छत्रशालके प्राप्त व्यवहारकी अवस्थामें राज्यकी कोई होनहार नैतिक अनिष्टकी आशंकासे हो, उन्होंने उन अजीतसिंहको ही राजसिंहासन पर बैठा-लनेका उद्योग किया। किसीने उनकी बातके विपरीत खड़े होकर कुछ न कहा। उन्होंने उन वृद्ध अजीतसिंहको कोटेके राजसिंहासन पर शोभित कर दिया। ढाई वर्ष तक राज्यको चलाकर अजीतसिंह स्वर्गको सिधारे। उनके तीन पुत्रोंके नाम यह है (१) छत्रशाल (२) गुमानसिंह (३) राजसिंह।

अजीतसिंहके स्वर्गपधारने पर सबसे बड़े पुत्र छत्रशालको कोटेका राजसिंहासन मिला। विख्यात हिम्मतसिंह झाला इसके प्रथम ही मरचुके थे, अतएव फौजदारके पद-पर उनके भतीजे जालिमसिंह नियुक्त हुए।

इसी समय अपने सौतेले भाई ईश्वरीसिंहकी आत्महत्या करके माधोसिंह जैपुरके सिंहासन पर बैठे। किन्तु ईश्वरीसिंहने ऊंची आशाके अनुसार हाड़ा जातिपर प्रताप और अधिकार एवं बूँदी और कोटा राज्यको जय करनेके लिये जो चढ़ाई की थी उसका फल यह हुआ कि स्वयं युद्धमें परास्त और अपमानित होकर उनको आत्महत्या करनी पड़ी, इसको देखकर भी माधोसिंहके नेत्र नहीं खुले वह फिर कोटाराज्यपर अधिकार करनेके लिये तैयार हुए। राजपूत राजपूतोंके साथ युद्ध, तथा एक ओरसे दूसरे पर अधिकार करने और दूसरी ओरसे अपनी रक्षा करनेके लिये तैयार हुए। माधोसिंह बोले कि आमेरनरेश जिस समय दिल्लीके बादशाहके प्रतिनिधि स्वरूपसे शासनकर्ताके पदपर नियुक्त हैं तब बूँदी और कोटेके राजाओंको हमारी स्वाधीनता माननी होगी। किन्तु हाड़ा जातिने इस बातसे घृणा दिखाई और जातीय स्वाधीनताकी रक्षाके लिये दूने उत्साहके साथ आपसमें बाहुबल दिखानेके लिये उन्होंने बड़ी शीघ्रतासे तैयारी की।

आमेरके राजा माधोसिंह संवत् १८१७ सन् १७६१ ई० मे अपनी संपूर्ण सेनाको सजाकर हाड़ाजातिपर अधिकार करनेके लिये उद्यत हुए। इस समय अबदालीके आक्रमणसे महाराष्ट्र वीर एक साथ तेजहीन और उत्साहरहित होगये थे, अतएव कछवाहे और हाड़ाजाति निर्भय होकर जातीयसंग्रामके लिये प्रबल बलके साथ आगे बढ़ी। माधोसिंहने हाड़ौती प्रदेशपर सेनासहित चढ़नेके लिये यात्रा करनेके समय सबसे पहिले उनियारा प्रदेश पर आक्रमण और अधिकार कर उसे अपने राज्यमें मिलालिया। उसके पीछे उन्होंने लाखेरी प्रदेशमें जाकर हतबल मरहट्टोंको भगाकर उसको भी अपने राज्यमें करलिया। इस भाँति विजय पाकर हृदयमें प्रसन्न हो पार और चम्बल नदीके बीचमे पालीघाटपर उतरे। सुलतानपुरके हाड़ा जातिके सामन्त पर उक्त नदीके प्रदेशकी शत्रुओंसे रक्षा करनेका भार समर्पित था, किन्तु माधोसिंहने शीघ्रतासे उन पर आक्रमण कर अपना अधिकार कर लिया। सुलतानपुरके रक्षकने बड़ी वीरतासे किलेसे बाहर निकल कर अपने कुटुम्बियोंके सहित प्रबल समररूपी अग्निमें जल जीवनरूपी आहुतिको दे पराजयके कलंकसे छुटकारा पाया। जिस समय सुलतानपुरके स्वामी युद्धक्षेत्रमें गिरे. उस समय उन्होंने अपने दोनों हाथोसे पृथ्वीको पकड़ा, विजेताओंमेसे कोई २ इसको देखकर हँसे किन्तु विचारवानोका कथन है कि राजपूत मरते समय भी जन्म,भूमिका आलिङ्गन करते हैं।

फिर जय प्राप्त करके महा दर्पित और उत्साहित होकर विजयी कछवाहादल कोटाराज्यके बीच माधोसिंहकी जय शब्दसे आकाशको गुंजारता आगे बढ़ा। अन्तमें भटवाड़े नामक स्थानमें जाकर देखा कि एक वंशमें उत्पन्न पाँच हजार हाड़ा जातीयसेना उनकी गति रोकनेके लिये संहारमूर्तिको धारे खड़ी हुई है। कोटाराज्यकी सेनाकी संख्या माधोसिंहकी सेन–संख्यासे यद्यपि कमती थी, परन्तु वह वीरपुरुष राजपूत राजपूतजातिकी परम प्रिय स्वाधीनता की और जन्मभूमिकी रक्षा करनेके लिये जीवन उत्सर्ग करनेको ही खड़े हुए थे। सबसे पहिले कछवाहेराजकी अगणित घुड़सवारसेनाने हाड़ाजातिकी सेना पर आक्रमण किया। कोटाराज्यकी घुड़सवारसेना अवश्य कमती थी कछवाही सेनाके सम्पूर्ण घोड़े पहिलेसे ही थके हुए थे, तिस पर भी उन्होंने समरमें निश्चय जीतेंगे यह विचार कर :बिना विश्राम लिये ही आक्रमण किया। थोड़ी संख्यावाली हाड़ासेनाने उनके उस प्रबल आक्रमणको अनायास ही सहलिया और किसी भाँति भी अपने व्यूहको भंग नहीं होने दिया। तुरन्त ही माधोसिंहने रणभूमिमें नई सेना खड़ीकी। तब घुड़सवारोंके साथ पैदल भिड़जानेसे रणक्षेत्रमें रक्तकी नदी वह निकली। ठीक इसी समयमें कोटेके फौजदार जालिमसिंहने चतुराईसे राजनैतिक जाल फैलाया इस समय जालिमसिंहकी अवस्था इक्कीस वर्षकी थी, हिम्मतसिंहने उनको पोष्य पुत्रके रूपसे ग्रहण किया था, अतएव जालिमसिंह इस समय हिम्मतसिंहके पदपर विराजमान हो कोटेके फौजदार हो रणक्षेत्रमें उपस्थित हुए थे। जिस समय क्रमानुसार युद्ध प्रबल होगया, उस समय

वीरश्रेष्ठ जालिमसिंह घोड़ेसे उतर पैदल ही अपनी सेनाके साथ असीम साहस और वीरताके साथ शत्रुओंपर आक्रमण करने लगे। जालिमसिंहका जिस बुद्धिमानीके कारण जीवन प्रसिद्ध हुआ था, इन्होंने सबमें पहिले महा संकटके समय उसी चतुराई को दिखाया।

महाराष्ट्रनेता मल्हारराव हुलकर इस समय उक्त रणक्षेत्रके समीप ही थे, किन्तु पानीपतके समरके पीछे वह ऐसे बलहीन होगये थे कि किसी प्रकारसे दोनो ओरमे किसीकी ओर भी नहीं होसक्ते थे। जिस समय माधोसिंहकी सब प्रकारसे जीत होनेकी सम्भावना हुई उसी समय चतुर जालिमसिंहने अपने घोडे पर चढ़, बड़ी शीघ्रतासे हुलकरके डेरोंमे जाय यह प्रार्थना की कि आप यदि युद्ध करनेको राजी नहीं हैं तो एकबार अपनी सेनाको लकर इस सुयोग पर माधोसिंहके डेरोंको लूट लीजिये। हुलकरने यह बात बडे प्रेमसे मानली।

डेरोंपर आक्रमण होते ही कछवाही सेनाका दल मारे भयके रणभूमिको छोड़ भाग निकला। हाड़ाजातीय कविने लिखा है कि "हाड़ाजातिकी सेनाने अपनी नंगी तलवारको शत्रुओंके रुधिरमे स्नान कराकर संग्रामरूपी तीर्थकी क्रियाको समाप्त किया।

माचेड़ी ईशरदा, वातका, वारोल, अचरोल प्रभृति जयपुरके अधिकारी प्रदेशोंके समस्त सामन्त उस पाच हजार हाड़ाजातीय सेनासे परास्त होकर भाग गये। बूँदीकी सेनाका दल कोटेकी सेनाके साथ मिलनेको आया था किन्तु इस समय तक उसने, आमेर नरेशने जो बूँदीके प्रदेशोंको जीत लिया था, उनका उद्धार नहीं करने पाया था। जो हो उक्त संग्राममे कछवाही जातिकी पंचरंगी पताका कोटेकी सेनाके हाथमे आगई कोटेके कविने उक्त हाड़ाजातिकी सेनाकी जीतमे और जालिमसिंहकी वीरता मूलक कविता मालाके गूथनेमें विलम्ब नहीं किया। हाड़ाजाति आजतक गौरवके साथ उस कविताका गान करती है। कवितामें एक स्थान पर लिखा है,

"जङ्ग भटवाड़ारोजीत। नारोजालिमझाला।
रङ्ग एक रङ्ग चढ़ा। रङ्ग पँचरंगका।

इसका अर्थ यह है कि भटवाड़ाके युद्धमें जालिमसिंहका सौभाग्यरूपी सितारा उदय हुआ। उस रणक्षेत्रमे (रङ्ग) एक रंगा रहा, पचरंग पताकाको दाव दिया, अर्थात् आमेरकी राजपताका रुधिरसे रँग गई।

उक्त भटवाडेकी लड़ाईसे ही आमेरनरेशकी प्रभुता जाती रही। इतने दिनोंसे वादशाहके प्रतिनिधि स्वरूपमे कछवाहे नरेश जिस प्रभुताको पाये चले आये थे, इस समय वह प्रभुता एकसाथ जाती रही। इस लड़ाईके पीछे आजतक आमेर नरेशोंमे हाड़ाजातिके ऊपर अपना अधिकार करनेका साहस नहीं हुआ, कर्नेल टाडने लिखा है

टिप्पणीमें लिखा है कि "यह विचित्रता है कि जिस वर्षमें नादिर. शाहने भारत पर आक्रमण किया, जालिमसिंह उसी वर्षमें जन्मे और अबदालीके आक्रमणके समय उन्होंने राजनैतिक रणभूमिमें प्रथम प्रवेश किया"।

कि जातीय स्वाधीनता और जन्मभूमिकी रक्षाके लिये हाड़ाजातिने भटवाड़के रणक्षेत्र में जिस असीम वीरतासे जय प्राप्त की प्रतिवर्षमें उसके स्मरणार्थ एक सामरिक महोत्सव होता है, हाड़ाजाति एकत्रित होकर एक कृत्रिम आमेरका किला वनाय जय जय करके उस किलेपर अधिकार करके उसको ध्वंस करती है " । उपरोक्त लड़ाईके पीछे छत्रशाल वहुत दिन नहीं जिये । उनके कोई पुत्र न होनेसे उनके भाई कोटेके राजसिंहासन पर बैठे ।

द्वितीय अध्याय २.

महाराव गुमानसिंह-जालिमसिंह-उनका जन्म और वंशविवरण-जालिमसिंहका पद-उनका सम्मान पाना-झालावंशके फौजदारपदको वंश परम्परासे पाना-जालिमसिंहके अन्यायसे प्रभुता करने पर महाराव गुमानसिंहको असंतोष होना-जालिमसिंहका पदसे च्युत करना-महारावका जालिमसिंहकी सब सम्पत्तिका हरलेना-जालिमसिंहका कोटेको छोड़देना-मेवाड़में जाना-राणाकी अधीनतामें रहना-राणासे उनको " राजराणा " उपाधि और भूसंपत्ति मिलना-मरहटोंके विरोधमें युद्ध-रणभूमिमें जालिमसिंहका घायल होकर बंदी होना-उनका फिर कोटेमें आना-मरहटोंका कोटेराज्यपर आक्रमण करनेकी चेष्टा-वुकायनीका युद्ध-प्रशंसनीय वीरताका प्रकाश-जालिमसिंहपर फिर गुमानसिंहका दयालु होना-जालिमसिंहके द्वारा महारावकी ओरसे मरहटोंके साथ संधि करना-जालिमसिंहका मनोरथ सफल होना-मृत्युशय्यामें पड़ेहुए गुमानसिंहका जालिम सिंहके द्वारा अपने पुत्र उमेदसिंहके लिये राज्यसिंहासन देनेको कहना-महाराव गुमानसिंहकी मृत्यु-उमेदसिंहका राज्यतिलक होना-टीका दोड़कैलवाड़े पर अधिकार-जालिमसिंहके विरोधमें षड्यंत्र-षड्यन्त्रभेद-हाड़ाजातिके सामन्तोंका निकालना-मेसिनके सामन्तका षड्यन्त्र-षड्यन्त्र, भेद-वहादुरसिंहकी मृत्यु-राजभाइयोंका कारागार भोगना-जालिमसिंहके विरोधमें वहुतसे षड्यन्त्र-वीराङ्गनाओंका वीरभेषसे जालिमसिंहके मारनेकी चेष्टा करना-जालिमसिंहका उद्धार पाना-जालिमसिंहकी सावधानता ।

संवत् १८२२ सन् १७६६ ईसवींमें गुमानसिंह पिताके सिंहासनपर बैठे । गुमान सिंहके मस्तक पर जिस समय कोटेका राजछत्र शोभित हुआ; उस समय वह पूर्ण युवक वड़े साहसी और बुद्धिमान थे । इसी समयमें दक्षिणके महाराष्ट्रदलने पङ्गपालकी समान राजपूतानेमे आकर राजपूतजातिके जो सर्वनाश करनेका उद्योग किया था, गुमानसिंह उनके उस आक्रमणसे अपने राज्यकी रक्षा करनेमें सव भाँति समर्थ थे, किन्तु दुर्भाग्यका विषय है कि थोड़े ही दिनतक राज्यका सुख भोगने पर उनको एकवालकके हाथमें राज्यका भार दे देना पड़ा । गुमानसिंहकी उस शासनप्रणालीको वर्णन करनेके प्रथम हम और चिरस्मरणीय महानीतिज्ञ मनुष्यको उपस्थित करना चाहते हैं । वह राजपूत नीति शास्त्रके जाननेवालोंमें प्रधान जालिमसिंहकी जीवनी ही कोटेके भविष्य इतिहासका

स्वरूप है; जालिमसिंहको लेकर ही कोटा है, और कोटेके इतिहासके प्रत्येक पत्रेमें हरएक राजनैतिक घटनाके साथ ही नहीं वरन आधी शताब्दीतक समस्त राजपूतानेके इतिहासके साथ जालिमसिंहका पवित्र नाम मिला है। " माननीय टाडूने लिखा है कि " जालिमसिंह भारतके जिस स्थान पर रहे वह उस स्थानकी श्रेष्ठनीतिको जानते थे, उनकी उस नीतिकी प्रतिभाके प्रकाशके लिये वह सीमा बद्ध प्रदेश कभी योग्य नहीं था, सुभीता और अवसर पानेसे वह किसी एक महादेशकी महान् जातिका शासन निःसन्देह कर सक्ते थे। " वास्तवमें कर्नेल टाडका यह कथन आगेके इतिहासको विलक्षणतासे प्रमाणित करता है।

जालिमसिंह झालाजातिके राजपूत थे। संवत् १७९६ सन् १७४० ईसवीमें भारतवर्षकी एक चिरस्मरणीय घटनाके समय जब विजयी नादिरशाहने अपनी प्रबलसेना दलके साथ भारतमें आकर दिल्लीके सिंहासन पर बैठे हुए तैमूरके शेष-वंशधरोंके शासनके विरोधमें अन्तिम युद्ध किया था, उस समयमें जालिमसिंहका जन्म हुआ। यद्यपि उस समय तैमूरके वंशधरोंकी शासनशक्ति प्रबल प्रतापसे बढ़नी असम्भव थी, यद्यपि दुरात्मा औरंगजेबके कठोर शासनकी नीतिसे यवन बादशाहीकी जड उखाडनेका बीज बोया जाचुका था, किन्तु इस समयमें नादिरशाहके भारतपर अधिकार करनेके लिये न आने पर दिल्लीके बादशाहकी शासनशक्ति और भी कुछ दिनतक प्रबल रहसक्ती थी। नादिरशाह जिस समय भारत विजय करनेको आया, उस समयमें महम्मदशाह दिल्लीके सिंहासन पर और महावीर दुर्जनशाल कोटेके राज सिंहासन पर बैठे हुए थे। जालिमसिंहके जन्म लेनेके समयसे क्रमा अनुसार पाँच राजा कोटेका राज्य करके परलोक सिधारे, और छठवें राजाके सिंहासनपर बैठने तक जालिमसिंह जीवितथे। उक्त राजाओंके बीचमें एक महाराव किशोरसिंहने अवश्य ५० वर्ष तक राज्य किया था। यद्यपि जालिमसिंह एक नेत्रसे हीन थे किन्तु भटवाडेके रणक्षेत्रमें उन्होने सबसे पहिले जैसी असीम नीतिज्ञता और वीरता दिखाई थी उनकी राजनैतिक दृष्टि चिरकाल तक वैसी ही बनी रही।

जालिमसिंहके पूर्व पुरुष सौराष्ट्र देशके अन्तर्गत झाला प्रदेशके बीच हलवद नामक स्थानके सामान्य शक्तिवाले सामन्त थे। भावसिंह नामक उस परिवारके छोटे पुत्रने कुछ विश्वासी सेवकोंके साथ अपने सौभाग्यकी परीक्षा करनेके लिये पिताकी भूमिको छोड़ विदेश यात्राकी। इस समय औरंगजेबके वंशधरोंमें दिल्लीके सिंहासन पानेके लिये लड़ाईकी आग प्रज्वलित होरही थी, उस समय अनेक स्थानोंसे अनेक वीर आ आकर दोनों ही की ओर हो हो कर अपने भाग्यकी परीक्षा करनेमें लगे हुए थे। भावसिंहने भी उनमें से एकका पक्ष लिया। जिस समय महाराज भीमसिंह कोटेके सिंहासन पर बैठे हुए दोनों सय्यद मन्त्रियोंको सहायतासे बड़े पराक्रमसे शक्तिको बढ़ा रहे थे, उस समय उक्त भावसिंहके पुत्र माधोसिंह कोटेमें आये। यद्यपि उस समय माधोसिंहके साथ केवल पचीस घुड़सवार थे, किन्तु महाराज भीमसिंह उनको माननीय

झाला वंशी जान बड़े आदरसे ग्रहण किया और पीछे मित्रता ही नहीं जोड़ी वरन अपने पुत्र अर्ज्जुनके साथ माधोसिंहकी भगिनीका विवाह करके उन्हें अपना सम्बन्धी बना लिया। थोड़े ही दिन पीछे कोटाराज्यके भीमसिंहने माधोसिहके रहनेके लिये नाणता प्रदेश देदिया और उन्हें कोटेकी समस्त सेनाका प्रधान सेनापति बनाया एवं कोटानरेश जिस किलेके महलोमें रहते थे, उसी किलेके अध्यक्ष पदपर उनको सुशोभित किया। माधोसिहने कोटाराज्यमें बड़ी शक्ति और सम्मान पाया, उनके मरनेपर मदनसिह नामक उनके पुत्रने अपने पिताके पद अनुसार कोटेके फौजदारका पद पाया। उनके दो पुत्र हुए (१) हिम्मतसिह और (२) पृथ्वीसिह। हम यहाँ भावसिंहके वंशकी कारिका लिखते हैं।

भावसिह [इन्होने २५ घोड़ोंके सहित हलवद छोड़ा]
|
माधोसिह
|
मदनसिंह
|
हिम्मतसिह — पृथ्वीसिंह
|
(पृथ्वीसिंहके पुत्र) शिव—सिंह [सं०१७९५में जन्म हुआ] — जालिमसिह [जन्म संवत् १७९६]
|
माधो—सिह
|
(२) नाना लाल [आयु २१ वर्ष]

राजपूतोंके राज्योमें प्रधानमन्त्री, दीवान, प्रधानसेनापति आदिके प्रत्येक पदको उनकी सन्तान क्रमानुसार पाती है, अतएव मदनसिंहके मरनेपर हिम्मतसिंह झाला कोटाराज्यके फौजदार हुए। हिम्मतसिंह जैसे महावीर नीतिमें कुशल और शक्तिसम्पन्न मनुष्य थे पाठकोंको वह पहिले ही ज्ञात हो चुका है। जिस समय जयपुरके राजाने महाराष्ट्र दलके साथ मिलकर कोटेपर आक्रमण किया, उस समय इन्ही हिम्मतसिंहने अपनी वीरताको दिखाकर कोटेके किलेकी रक्षा की, किन्तु चारों ओरसे विषमविपत्तियोंको देख इन्होने पहिले ही मरहटोंसे संधिकरके उनको कर देना स्वीकार करलिया। महाराज दुर्जनशालके मरनेके पीछे इन्हीं हिम्मतसिंहने अपनी शक्तिसे अजीतसिंहको कोटेके सिंहासनपर बैठा दिया। हिम्मतसिंहके कोई पुत्र नहीं था, इस कारण उन्होंने अपने भतीजे जालिमसिंहको गोद लेलिया था। हिम्मतसिंहके परलोक सिधारने पर

(१) यह वर्तमान झालावाड़ राज्यके प्रथम राजा हुए।

जालिमसिंह कोटेके फौजदार हुए। जालिमसिंहने युवा अवस्थामें भटवाड़ेके रणक्षेत्रमें जिस वीरता और साहससे कोटाराज्यको आमेर नरेशकी अधीनताकी सांकलसे चिरकालके लिये छुटा लिया। राजनैतिक रंगभूमिमे वही उनका सबसे प्रथम प्रशंसनीय अभिनय हुआ। किन्तु परितापका विषय है कि उक्त घटनाके थोडे ही दिन पीछे जालिमसिंहका प्रकाशित यशरूपी सूर्य हठसे घोर वादलोसे छिप गया।

गुमानसिंहके राजासिंहासन पर बैठनेके कुछ दिन पीछे जालिमसिंह कुछ अधिक शक्ति और प्रभुता दिखानेके कारण उनकी आखोमें खटके। महाराज गुमानसिंह उसीसे जालिमसिंह पर इतने क्रुद्ध हुए कि नान्दता प्रदेश जो महाराज भीमसिंहने जालिमसिंहके प्रपितामह माधोसिंहको दिया था, वह उनसे प्रदेश छीन लिया। उक्त नान्दता प्रदेश चम्बल नदीके किनारे है, और अब भी वह झाला परिवारके अधीन है। उस समय कोटेका राजवंश बूँदाके अधीन सामन्तोसे शासित देशके रूपमें गिना जाता था। महाराज गुमानसिंहने उक्त फौजदारका पद और नान्दता प्रदेश जालिमसिंहके मामा वाकड़ोत जातीय भूपतसिंहको दे दिया।

अपने स्वामी गुमानसिंहके अधीनमें फिर अपना पूर्वपद और नान्दता प्रदेश जाता देख जालिमसिंहने अपने उस अपमान स्थान कोटाराज्यको छोड़ अन्यत्र भाग्योदयकी कामना की। वह किस मार्गका अनुसरण करें, अधिक दिनतक उनको विचार करना नहीं पड़ा। आमेरराज्यमें उनका प्रवेश द्वार भटवाड़ा की लड़ाईसे पहिले ही वंद होगया था, दूसरे मारवाडराज्य उनको स्वयं उपयुक्त नहीं जान पड़ा। इस समय जालिमसिंहके जाति और वर्णका एक प्रधाननेता मेवाड़के राजा महाराणाकी सभामें विराजमान था। मेवाडके सामन्त दोदलोंमें बटकर एक दल महाराना अड़सी और दूसरा दल एक अन्य मनुष्यके सिंहासनकी अभिलाषासे पक्षको लेकर अड़सीको सिंहासन पर नहीं बैठने देता था। मेवाड़के पहली श्रेणीके सोलह सामन्तोंके बीचमें जालिमसिंहके उक्त स्वजातीय देलवाडाके झाला सामन्तने अडसीके पक्षको लेकर उनको मेवाड़के सिंहासन पर बिठा दिया। अड़सीने उन सामन्तोंकी सहायतासे पिताके सिंहासनको पाय उन सामन्तोंके प्रताप और प्रबलशक्तिके विरोधमें कुछ बाधा नहीं दी। झाला सामन्तोंने राणाके ऊपर इतना प्रभाव डाललिया कि उन्होंने वेतनभोगी विजातीय सेनाके दलको राणाकी शरीररक्षाके लिये नियुक्त किया दूसरी ओरसे जो सब शक्तिसम्पन्न मनुष्य थे वे भी उनकी ओरसे नीतिको समर्थ न करते थे। झाला सामन्त राणाके मतको न लेकर अपनी ही इच्छानुसार उन सब मनुष्योंको जागीरें देते थे, सो राणाने अपनी खास भूमि और जो सामन्त अपने विरोधी थे वा अपने विपरीत करनेवाले थे उनके अधिकारी प्रदेशोंको छीन कर अपने राज्यमें मिला लिया। इस कारण राज्यकी आमदनी बहुत बढ़ गई, और कोई साहससे उन झाला सामन्तोंकी उस इच्छाके विरोधमे किसी भाँतिकी आपत्ति भी नहीं करसका।

---

(१) बूँदराज्यमें बालावद।

जिस समय झाला सामन्तोंने मेवाड़के महाराणाकी सभामें उक्त प्रकारसे अपने प्रबल प्रतापको बढ़ाया था उस समय कोटेके पदसे गिरे हुए फौजदार युवक जालिमसिंह अपने सौभाग्यकी परीक्षाके लिये मेवाड़में आये। जालिमसिंहकी प्रबलवीरताकी सूचना पहिले ही महाराणा अड़सी पाचुके थे। इस कारण जालिमसिंहके आते ही महाराणाने उनको सम्मानपूर्वक ग्रहण किया। साहस, नीतिज्ञता, वीरता और प्रतिभासे जालिमसिंह शीघ्र ही महाराणाके प्रियपात्र और विश्वासभाजन हो गये। महाराणा झाला सामन्तोंके खिलौने बन रहे थे; किन्तु किसी प्रकारसे वह उनके हाथसे अपना उद्धार न पाते देख मनही मनमें विषम वेदनाका अनुभव भी करते रहते थे। इस समय युवक जालिमसिंहको पाकर उनको भलीभांतिसे योग्यपात्र जान महाराणाने उनके हाथमें अपने उद्धारका भार दिया, जालिमसिंहने अपनी चतुरता साहस, नीतिज्ञता और वीरता से शीघ्र ही सामन्तों पर आक्रमण कर महाराणा अड़सीको उस विपत्तिके मुखसे निकाल दिया। झाला सामन्तोंने उस युद्धमें अपने प्राण त्याग दिये। महाराणाने जालिमसिंहकी सहायतासे पूर्ण स्वाधीनता पाली, और अधीन सामन्तोंके अन्यायको अपनी प्रभुतासे दूर करके सन्तोषित हो जालिमसिंहको "राजराणा" की उपाधि और मेवाड़के दक्षिणसीमावाला चित्र खाड़िया नामक प्रदेश पुरस्कारस्वरूपमें दिया। उस समयसे जालिमसिंह मेवाड़के दूसरी श्रेणीके सामन्त हुए। यद्यपि झाला सामन्तोंके मरजानेसे महाराणा अनेक प्रकारसे निष्कंटक होगये थे किन्तु उनके प्रधान शत्रु जो वंशधर सिंहासनके अभिलाषी थे वह कुछ सामन्तोंके साथ उनको वध करनेके लिये यत्न करते थे। उन्होंने इस समय पूर्वकी समान विद्रोह उपस्थित कर शेषमें मरहठोंकी सहायतासे सिंहासनपर अधिकार करनेका उद्योग किया। जालिमसिंहकी सम्मतिसे महाराणाने शीघ्र ही एकदल प्रबल सेनाको एकत्रित कर उन्हीं मिलेहुए विद्रोही और मरहठोंके साथ समररूपी अग्निको प्रज्वलित कर दिया, उस समरका हाल पाठकोंको विदित ही है। जिस समय जय लाभकी सम्पूर्ण आशा हुई उसी समय दुर्भाग्यसे शत्रुओंके जीतजानेसे जालिम घायल होकर मरहठोंके द्वारा कैद होगये। सुविख्यात महाराष्ट्र सेनानी अम्बाजी इंगलियाके पिता त्र्यंबकरावने जालिमसिंहको कैद कर लिया। अन्तमें दोनोंने परस्पर मित्रता करली और उस मित्रतासे अन्तमें जालिमकी राजनैतिक अभिनयके अनेक उपकार हुए।

उपरोक्त संग्राममें पराजय पानेसे महाराणा अड़सी औरसम्पूर्ण मेवाड़राज्य विजेताओंकी दयाके अधीनतामें आये। विजेताओंके उदयपुर घेरनेपर राजपूतोंने अपनी वीरता दिखाकर आत्मसमर्पण करनेकी मनमें ठानी। अन्तमें सन्धिके हाजानेसे वह गोलयोग जाता रहा। घायल जालिमसिंहने आरोग्यता प्राप्त कर विशेष विचार करके यह निश्चय किया कि लुप्तप्रताप हीनबल महाराणाके अधीनमें रहकर भाग्योदयकी

(१) उर्दूतरजुमेमें जनेरड़ा—

(२) मेवाड़के इतिहासमें अड़सीकी शासनप्रणाली देखो।

इच्छा नहीं करनी चाहिये, अतएव वह उदयपुरमे अधिक दिन न रहकर अपने भावी सौभाग्य सहचर पण्डित लालाजीवल्लालके साथ फिर कोटेमे आये। वुकायनीकी लडाईमें बहुत सी महाराष्ट्र सेनाके मारे जानेसे महाराष्ट्र नेता मल्हारराव हुलकर अत्यन्त साहस-हीन होगये थे। किन्तु और भी एक लड़ाईमें समस्तरूपसे जीतनेको समर्थ होकर वह महा दर्पके साथ कोटेपर अधिकार करनेके लिये आगे बढ़े। विपत्तिको शीघ्र ऊपर आते देख कोटानरेश गुमानसिंहने अपने पक्षको निर्बल जान कर हुलकरसे सन्धिकर विपत्तिरूपी समुद्रसे पार होनेका एक यही उपाय निश्चय किया। राजा गुमानसिंहने शीघ्र ही वाक्कड़ोत फौजदारको सन्धि करनेके लिये मरहठोंके डेरोंमे भेजा। किन्तु वह विफलमनोरथ होकर लौट आये।

जालिमसिंहके कोटेमे आने और आगे होने वाली घटनाके सम्बन्धमे इतिहास कहता है कि नीतिके जाननेवाले जालिमसिंहने जिस समय देखा कि कोटाराज्यके भाग्यरूपी आकाशमें घनघोर राजनैतिक बादल छाये हुए हैं। इस कारण कोटेके क्षेत्रमे राजनैतिक अभिनयका वास्तवमें समय उपस्थित है, जालिमसिंह अपनी नीति वीरता और साहससे कोटेके उस दुर्दिनको हटावेंगे इसी आशासे वह कोटे राज्यमे आये हैं।

जालिमसिंह यद्यपि कोटेमें आते गये किन्तु महाराज राजा गुमानसिंह उस समयतक जालिमसिंहसे इतने क्रुद्ध थे कि वह जालिमसिंहके अपराध क्षमा कर राजसभामे आनेके लिये राजी नहीं हुए। उन्होने, भाग्यसे एकवार किसी भाँति से हो, गुमानसिंहसे मिलनेकी मनमें ठान ली। सौभाग्यसे इसी अवसर पर यह घटना हुई कि जिस कारणसे कोटानरेश गुमानसिंहने क्षमा ही नहीं किया वरन उनको अपने अधीनमें नियुक्त करलिया।

इस समय महाराष्ट्रदलने कोटाराज्यकी दक्षिणसीमामें आकर वुकायनी प्रदेशके किलेको घेरलिया। सामन्त हाड़ा सम्प्रदायके नेता माधोसिंह चारसौ असीम साहसी हाड़ा सेनाके साथ उस किलेकी रक्षा करनेमें नियुक्त थे। मरहटोंने किलेको घेर कर उसे जय करनेकी वारम्बार चेष्टा की परन्तु किसी भाँतिसे भी वह किलेकी दीवारको लांघ कर भीतर नहीं जासके। किलेको तोडनेके लिये जिन २ वस्तुओंकी आवश्यकता होती है मरहटोंके पास इस समय वह कुछ भी नहीं थी। तब एक बड़े हाथीके द्वारा किलेकी दीवारको तोड महरटोंने किलेको ध्वंस कर अपना अधिकार करलिया। वुकायनीके किलेके दरवाजेको तोड़नेके लिये महरठोंने अन्तमें यही उपाय किया। हाड़ासेना नायक माधोसिंहने जब देखा कि अब किलेकी रक्षा करना असंभव है, और शीघ्र ही हाथीके विषम आघातसे दरवाजा टूट जायगा तब वह अमानुषिक वीरता दिखानेको उद्यत हुए। जिस समय शत्रुका हाथी किलेके दरवाजे पर प्रबलवेगसे अपने मस्तककी टक्कर लगाकर फाटक तोड़ने लगा। उस समय माधोसिंह नंगी तलवार लेकर किलेपरसे हाथीकी पीठपर कूद पड़े और तुरन्त ही फीलवानको मार गिराया। पीछे हाथीके टुकडे २ कर डाले। माधोसिंह इकले जिस समय शत्रुओंमें किले परसे

कूदे तव निश्चय ही उनके जीवनकी आशा नहीं थी, किन्तु किलेकी हाड़ासेनाने अपने नायकको ऐसी वीरता दिखाते देख फिर विलंब नहीं किया। हाड़ासेना उस समय किलेका दरवाजा खोल प्रवलसागरके तरंगोंकी समान महा वेगसे शत्रुसेनाके संहार करनेको प्रवृत्त हुई। किन्तु शत्रुसेनाके अधिक और प्रवल होनेसे शीघ्र ही हाड़ा सेनाने प्रशंसनीय वीरताको दिखाय अपने जीवनको विसर्जन किया. किन्तु हाड़सेनाने बिना शत्रुसेनाको संहार किये अपने जीवनको नहीं छोड़ा। जो हो, मरहटोंने अन्तमें विजय लक्ष्मीको पाकर कोटाराज्यकी सीमामें अत्याचार करते पीड़ा देते और लूटते हुए सुकेत नामक किलेको घेर लिया। कोटानरेश गुमानसिंहने उक्त सम्वादको पाकर सुकेत किलेके रक्षकको लिख भेजा कि "सेनाके साथ अपनी रक्षा करनी चाहिये। मातृभूमि की रक्षाके लिये वीरता प्रकाश करते हुए जीवन विसर्जन करना ही श्रेष्ट है; बुकायनी के समरमें हाड़ाजातिकी सेनाने विलक्षणरूपसे वीरता दिखाई है, कोटेकी रक्षा करना ही परम धर्म और प्रयोजनीय है।" राजाकी इस आज्ञासे किलेके रक्षकने कोटाराज-धानीमे जानेके लिये आधीरातके समय गुप्तरीतिसे समस्त सेनाके साथ किलेमेंसे निकल कर यात्रा की। किन्तु दुर्घटनासे हो वा षड्यन्त्रसे हो जिस मार्गसे यह सव चले उस मार्गके दोनों ओर सूखे तिनकोंमें आग वल रही थी तिस पर महाराष्ट्र सेनाने जागकर उन पर आक्रमण किया। अगणित शत्रुसेनाको भेदकरते हुए जो वहुतसी हाड़ासेना गई उसका कहना वाहुल्यमात्र है।

राजा गुमानसिंहके इस महाविपत्तिके समय जालिमसिंह अपने नष्ट भाग्यके उद्धारके लिये गुमानसिंहके पास विना बुलाये ही पहुँचे। जालिमसिहने जाकर इस समय गुमानसिंहको निश्चय करादिया कि इकले जालिमसिंहके ही भुजवलसे और राज-नीतिसे भटवाड़ेकी लड़ाईमें हाड़ाजातिको सेनाने जय पाई थी और उनकी ही राजनीति के द्वारा कोटाराज्य आमेरनरेशकी अधीनताकी सांकलसे चिरकालके लिये वचा था। एवं जो हुलकर मल्हारराव आजदिन कोटेपर अपना अधिकार करनेके लिये वीररूपसे आगे वढ़े हैं उन्हीं हुलकरकी सहायतासे वह कोटेराज्यकी रक्षा कर चुके हैं। राजा गुमान-सिंहने समझ लिया कि इस विपत्तिरूपी सागरसे उद्धार पानेका उपाय एक जालिमसिंह ही मल्लाहस्वरूप है। अतएव उन्होंने जालिमसिंहके सब अपराधोंको क्षमा कर उन्हींके हाथमें परस्पर सन्धि स्थापन करानेका भार अर्पण करके उन्हें मरहठोंके डेरोंमें भेजा। चतुरनीति शास्त्रके जाननेवालोंमें श्रेष्ठ जालिमसिंहने शीघ्र ही मल्हाररावके पास सन्धिका प्रस्ताव उपस्थित कर संतोष जनक फलको प्राप्त करलिया अर्थात् कोटानरेश गुमानसिंहके छः लाख रुपये देने पर हुलकर मल्हारराव अपनी सेना सहित लौट जायगे। इस संधिको होता हुआ देख जालिमसिंहके द्वारा कोटेकी रक्षा हुई, यह जान गुमानसिं-हने प्रसन्न होकर उनके जो अधिकारी प्रदेश छीन लिये थे वह शीघ्र ही उनको दे दिये। और वाङ्कड़ोतके सामन्त संधि स्थापन करनेमें असमर्थ हुए थे, इस कारण उनको पदसे हटा कर जालिमसिंहको ही उनके पैतृक कोटाके फौजदारका पद देदिया, किन्तु जालि-मसिंहने जिस समय अपने पैतृक पदको पाया उससे कुछकाल पीछे कोटानरेश गुमान-

सिंह रोगसे ग्रसित हुए, और सब जनोने उनके जीवनकी आशा छोड दिया। मृत्युकी शय्यापर पड़ेहुए गुमानसिंहको यह चिन्ता हुई कि इस समय अपने पुत्रोका भार किसके हाथमे दिया जाय परन्तु इस चिन्तासे उनको कष्ट नहीं हुआ; उन्होंने तुरन्त ही यह विचारा कि दो वार जालिमसिंहके हाथसे कोटाराज्यकी रक्षा हुई है इस कारण गुमानसिंहने उनको एक विश्वासी और योग्यपात्र जान अपने सब सामन्तोंको बुलाय दशवर्षके कुमार उमेदसिंहको जालिमसिंहकी गोदमे बैठा दिया। और सबके सम्मुख जालिमसिंहको ही अपने पुत्रके अविभावक पदपर नियुक्त कर दिया।

राजा गुमानके मरनेसे संवत् १८२७, सन् १७७१ ईसवी मे उमेदसिंह कोटेके राजसिंहासन पर बैठे। सदासे राजपूत जातिमे यह रीति चली आती है कि कोई नवीन राजा यदि राज्यसिंहासनपर बैठे तो उसको शीघ्र ही दिग्विजयके लिये जाना पड़ता है और वह समरमे जय पाकर अभिषेककी क्रियाको समाप्त करता है। उसी पुरानी रीतिके अनुसार उमेदसिंहने राजतिलकके पीछे अपनी सेनादलके साथ नरवर राजवंशीय कैलवाड़ेके स्वामीके साथ युद्ध करके उक्त प्रदेशको कोटाराज्यमे मिला लिया। जालिमसिंहने उमेदसिंहके अविभावक रूपमें जो सबसे पहिले यह प्रशंसनीय काम किया, उसके आगेके शासनमें इसी भांति उनकी ऊंची प्रतिभाका पूर्ण परिचय पाया जाता है। जालिमसिंह अप्राप्त व्यवहार कोटाराज्यके अविभावक पदको ग्रहण करनेके कुछ समय पीछे भयानक विपत्तिके जालमे पड गये। जालिमसिंह एक ऊचे दरजेके कूट राजनीतिके जाननेवाले थे, उसी कूटनीतिके वलसे उन्होने अपनी प्रवलशक्तिको जीवनपर्यन्त वनाये रक्खा। जालिमसिंह मृत महाराज गुमानसिंहके वड़े विश्वासी मित्र स्वरूपमे गिने जाने पर भी कोटेके संपूर्ण सामन्तोंके प्रियपात्र नहीं थे। उनका अभ्युदय और प्रताप प्रतिपत्ति अनेक सामन्त एवं राजपुरुषोंके नेत्रोंमें खटकता था। इस कारण जालिमसिंह महाराजके अविभावक पदको पाकर जिस भाँति धीरे २ सबके ऊपर अपने प्रतापको फैलानेमें प्रवृत्त हुए इसी प्रकारसे सामन्त समाज उनकी उस शक्ति और प्रतिपत्ति संचयके विरोधमें अनेक विघ्न और वाधाओंको डाल शत्रुता करने लगे। जालिमसिंह जो पहिले कोटेके फौजदार थे। वह केवल सामरिक शक्ति मूलक पद था उस पदसे यद्यपि जालिमसिंह किलेके महलोके अध्यक्ष थे और उसमे उमेदसिंह रहा करते थे, किन्तु कुछ दिन पीछे जालिमसिंहके साथ दीवानी विभाग अर्थात् राज्यके शासन विभागके मन्त्री समाजके साथ उनका किसी २ विषयमें एक ही कार्य हो जाता था, परन्तु ऐसा होने पर भी जालिमसिंहको प्रचलित व्यवस्थाके अनुसार किसी प्रकारसे भी शासन विभागमे हस्तक्षेप वा वाधा डालनेका अधिकार नहीं था। दीवानी विभागमे राय अखैराम नामक एक मनुष्य सब भाँतिसे योग्य और ऊचे दरजेकी शासननीतिको जाननेवाला नियुक्त था। अतएव जालिमसिंह जिस समय फौजदारके पदपर नियत हुए, उस समयमे भी अखैराम प्रधानमन्त्री थे। इतिहासमे लिखा है कि धीर अखैरामके सुपरामर्शसे और सुशासनके गुणोंसे कोटाराज्यने वड़ी क्षमता; प्रताप, शान्ति और उन्नति पाई।

किन्तु परितापका विषय है कि अखैरामसे राज्यकी उन्नति होने पर भी वह गुमानसिंहके मरनेके उपरान्त थोड़े ही दिनोंमें अन्यायसे मारेगये । जालिमसिंहकी सलाहसे अखैराम मारे गये वा नहीं इसका निश्चय नहीं हुआ। इन अखैरामके मरनेके उपरान्त जालिमसिंह कोटाराज्यके सामरिक और शासन विभागमें सबके ऊपर अधिकार करनेको जब उद्यत हुए तब उनके विरोधी बहुत ही कम थे। किन्तु तब भी जालिमसिंह विषम विपत्तियोंको बिना दूर किये अपनी अभिलाषाको पूर्ण नहीं करसके ।

जालिमसिंहने गुमानसिंहके मरनेके पीछे ही अपनेको राजप्रतिनिधिरूपसे प्रकाशित किया, और समर तथा शासनविभागके सब अधिकारोंको स्वाधीन करनेको वह उद्यत होगये । इसपर जो सामन्त जालिमसिंहके विरोधी थे, वह बोले कि स्वर्गवासी गुमानसिंहने जालिमसिंहके हाथमे इतने अधिकार नहीं दिये है उन सामन्तोंमें महाराज स्वरूपसिंह और बाङ्कड़ोतके सामन्त भी थे । पाठकोंको स्मरण होगा कि इन बाङ्कड़ोतके सामन्तको पदच्युत करके जालिमको फौजदारका पद मिला था। इन दोनों मनुष्योंको छोड़ राजा उमेदसिंहके धाभाई जशकर्ण भी जालिमसिंहके विपक्षमें थे। जशकर्ण चतुर और नीतिके जाननेवाले थे। वह बालक महाराजके समीप रहते थे और उसी कामके लिये नियुक्त थे। जो सब मनुष्य जालिमसिंहके विरोधी हुए उनको उस धाभाईकी सहायतासे अपने मनोरथके पूर्ण होनेमे विशेष सफलता प्राप्त हुई। जालिमसिंहने अविभावक पद पाकर पूर्णशक्तिसे कार्य चलाना आरंभ किया, तो वह सबसे पहिले उक्त विरोधियोंके मुखमें पतित हुए। किन्तु विपक्षियोंके षड्यन्त्र बिना बढ़े ही जालिमसिंहने अपनी चतुराई और कूटराजनीतिके बलसे उस षड्यन्त्रको छिन्न भिन्न करदिया। धाभाई जशकर्णके द्वारा ही महाराज स्वरूपसिंह मारेगये; बाङ्कड़ोतके सामन्त अपने प्राण बचाकर भाग गये और बाकी हत्या करनेवालोंको धाभाई अपने साथ लेगये । जालिमसिंहने इस भाँति शीघ्रतासे इस अभिनयको कर डाला कि उसको देख राज्यके चारोंओरके मनुष्य डर गये। जालिमसिंहने कांटेसे ही काँटेको उखाड़ डाला। महाराज स्वरूपसिंह धाभाई पोकर्ण और बाङ्कड़ोतके सामन्त यह तीनों ही जालिमसिंहके प्रधान शत्रु थे । जालिमसिंहने सबसे पहिले धाभाईको हस्तगत कर उन्हींसे अपने उद्देशको पूरा कराया और पीछेसे उसे भी निकाल देनेपर सभी विस्मित हुए और जालिमसिंहके असीम साहस और चतुराईको देख महा व्याकुलहो अन्य शत्रुगण अपने महा अनिष्टकी सम्भावना कर डर गये ।

महाराज स्वरूपसिंहके साथ धाभाईके विवादका ऐसा कोई भी कारण नहीं था जिसके लिये धाभाई उनका प्राणले, किन्तु जालिमसिंहकी कूटनीतिसे युद्ध होकर धाभाईने एकदिन बृजविलास नामक राज उद्यानमें महाराज स्वरूपसिंहपर आक्रमण किया, और अपनी तलवारसे उनका शिरकाट डाला । जालिमसिंहने धाभाई पर

स्वरूपसिंहको मारडालनेके अपराधमें बड़ा क्रोध प्रकाश किया और उसी अपराधमें उसको कैदकर अन्तमें हाड़ौतीसे एक साथ ही निकाल दिया । जालिमसिंहने इस भाँति अपने मनका भाव प्रगट किया कि जिससे यह जाना गया कि वह इस हत्याकाण्डमें सम्मिलित नहीं थे. यही नहीं वरन उनकी सलाह भी नहीं थी, किन्तु पापकर्म किसी प्रकारसे भी छिप नहीं सक्ता अतएव शीघ्र ही यथार्थ बात प्रकाशित होगई । धाभाई जशकर्णने निकल कर अपमानके होनेसे जयपुरमें प्राण त्यागे । अन्तमें प्रगट हुआ कि जालिमसिंहने ही धाभाईसे कहा था कि महाराज स्वरूपसिंह राजसिंहासन पर अपना अधिकार किया चाहते हैं इसीसे वह विरोध करते हैं और अप्राप्त व्यवहार महाराज उमेदसिंहके मारडालनेका उनका मुख्य उद्देश है । धाभाईने इसकी विशेष खोज न करके जालिमसिंहकी उसी बातको सत्य मान महाराज स्वरूपसिंहको राज्यका अभिलाषी जान उनका वध कर डाला । इस विषयमें कुछ भी हो जालिमसिंहने जिस नियतसे वह वियोगान्त अभिनय किया शीघ्र उनका वह उद्देश पूरा हुआ । उक्त हत्याकाण्डके पीछे ही कोटेके जो सामन्त जालिमसिंहके विरोधी थे उन सबने विरोधको छोड़दिया उसी समय कोटेके बहुतसे सामन्त और धनियोंने अपने प्राणभयसे जन्मभूमि एवं अपने २ अधिकारी प्रदेशोंको छोड़ कर दूसरे राज्योंमें जाकर वास किया । जालिमसिंहने उन सामन्तोंके भाग जानेमें कोई बाधा नहीं दी, वरन भागनेके समय यह कह-गये कि इसका दंड हम जालिमसिंहको अवश्य देंगे । वह भागेहुए सामन्त जयपुर और जोधपुरमें जाकर वहाँके अधीश्वरोंका आश्रय लेने लगे, और जाकर उन्होंने रज-वाडेके अन्य राजाओंसे मिलकर जालिमसिंहके अन्याय और अत्याचारोंको रोकनेके लिये तथा जालिमसिंहकी सामर्थ्यको रोकनेके लिये विशेष चेष्टाकी, परन्तु उसी समयमें महा-राष्ट्रोंके दलने रजवाड़ेके समस्त राज्योंमें जाकर जिस प्रकारके उपद्रव करने प्रारंभ किये थे, उससे कोई राजा किसी प्रकार भी अपनी इच्छानुसार जालिमसिंहके विरुद्धमें जानेके लिये तैयार न हुए । इधर चतुर जालिमसिंहने सुअवसर पाकर जयपुर और जोधपुर इत्यादि जिन राजाओंके यहाँ जाकर कोटेके सामन्तोंने आश्रय लिया था उनसे कहला भेजा कि यह सामन्त कोटेराज्यके विपक्षी विद्रोही हैं इस कारण विद्रोहियोंको आश्रय देना किसी प्रकार उचित नहीं है । ऐसा होते ही वह भागेहुए सामन्त सब निराश हो गये । किसी २ सामन्तने तो विदेशमें जाकर अत्यन्त दुःखितहो प्राण त्याग कर दिये और किसी २ ने विदेशी राजाओंके आश्रयमें रहकर उनके अन्नसे जीवन धारण करनेकी अपेक्षा अपने देशमें चला आना अच्छा माना । तब उन्होंने जालिमसिंहसे कहला भेजा कि हम लोगोंको जन्मभूमिमें आनेका अधिकार दीजिये । जालिमसिंहने उनकी इस प्रार्थनाको पूर्ण करनेमें असम्मति प्रगट न की, परन्तु उनके कोटे राज्यमें आते ही अपने अधीश्वर और जन्मभूमिके छोड़नेसे उनकी गणना विद्रोहियोंमें की गई, जिस समय सामन्त भाग गये थे उस समय उनके समस्त अधिकारी देश जालिमसिंहने अपने अधि-कारमें करलिये थे, इसीसे इस समय उनको वह समस्त देश नहीं दिये, और दयाके वशीभूत हो उनके जीवन धारण करनेके लिये सामान्य भूखंड दिये गये । इस प्रकारसे

जालिमसिंहने कोटाराज्यके सर्वमय कर्तृत्व पर अधिकार कर सबसे पहिले इस प्रकारसे असीम साहस कर कूटनीति और चातुरी जालका विस्तार कर शत्रुओंके चक्रको भेदन कर अपनी प्रबलताका विस्तार कर लिया, परन्तु उनके इस राजनैतिक अभिनयसे कोटेकी उद्धत सामन्त समाज किसी प्रकार भी नम्र नहीं हुई वरन यह सब उपद्रव जालिमसिंहके ही हैं यह जान कर वह सबके शंकित भावसे रहने लगे। परन्तु शीघ्र ही फिर उनके मनका भाव बदल गया।

जालिमसिंहके विरुद्धमें जो दूसरी बार षड्यन्त्रजालका विस्तार हुआ वह पहिलेकी अपेक्षा अत्यन्त प्रबल और दुर्भेद्य था। आयून देशके सामन्त देवसिंहने इस षड्यंत्रीदलके प्रधाननेतापदको ग्रहण किया। वह सामन्त छः हजार रुपयेकी आमदनीवाले देशके अधीश्वर थे। देवसिंह जालिमसिंहकी सामर्थ्यको देख कर उनके विरुद्धमें शीघ्र ही शत्रु होकर खड़े हुए। इन्होंने अपना बहुतसा रुपया खर्च करके किलेको भलीभाँतिसे सजाया था जो कि समस्त सामन्त जालिमसिंहके ऊपर महा विरक्त हुए थे; वह शीघ्र ही आकर देवसिंहके साथ मिले। चतुर जालिमसिंहने सब सामन्तोंको एक स्थानपर खड़ा देखकर जाना कि केवल राजकी सेनासे उनको परास्त करना सहज बात नहीं है, अतएव दूसरे उपायसे इस विपत्तिको हटाना चाहिये। इस समय दिल्लीके बादशाहका प्रभाव लोप हो जानेसे चारों ओर अशान्ति फैली हुई थी। मरहठोंके दल अपने अभ्युदयके साथ ही साथ फरासीसी पठानजातिका एक वीर एक सेनाका दल लेकर राज्यके किसी प्रदेश पर आक्रमण कर सर्वस्व लूटलेते और कभी किसी दो राज्योंमें झगड़ा होनेसे एकके पक्षको लेकर द्रव्यसंग्रह करलेते थे। मोसेज नामक एक फ्रेंचके एक मनुष्य नेताको जालिमसिंहने बुलाकर उसको आयूनके किलेपर अधिकार करनेके लिये और विद्रोही सामन्तोंके दमन करनेको नियुक्त किया। मोसेजने द्रव्यके लोभसे शीघ्र ही आयूनके किलेको घेर लिया। वहाँके सामन्त गणोंने किलेमेंसे निकलकर शत्रुओंपर आक्रमण किया, परन्तु जय लाभ नहीं करसके। इसी प्रकारसे कई महीने तक मोसेजके प्रबल पराक्रमसे किलेके घिरे रहनेके कारण किलेमें जितना भोजनका सामान था वह सब चुकगया तब सब सामन्त मिलकर प्राण बचानेके लिये चेष्टा करने लगे। जालिमसिंहकी सम्मतिसे मोसेजने घिरेहुए सामन्तोंकी प्रार्थनासे उनको किलेमेंसे सुखपूर्वक बाहर निकलजाने दिया। उन सामन्तोंने हताश होकर अपनी सेनाके साथ कोटा राज्यको छोड़ दूसरे राज्यमें प्रवेश किया। इस भाँति चतुर जालिमसिंहने इस दूसरे षड्यन्त्रको भी छिन्नभिन्न करदिया। कोटेके सब सामन्तोंके चलेजाने पर जालिमसिंहने उनके अधिकारी प्रदेशोंको कोटेराज्यमें मिला लिया। विरोधियोंके प्रधान नेता देवसिंहने विदेशमें जाकर दुःखसे प्राण छोड़ दिये। देवसिंहके पुत्रने कई वर्षोंके पीछे विदेशसे आकर अन्तमें जालिमसिंहसे अपनेको निरपराधी बता आश्रय पानेकी प्रार्थना करी, तब जालिमसिंहने उसपर दया

(१) दूसरे मतमें १० हजार।

प्रकाश कर उसको पैतृक सब प्रदेश तो नहीं दिये परन्तु वार्षिक पन्द्रह हजार रुपयेकी आमदनी वाला नामोलिया प्रदेश देदिया। बीचके और नीचे दरजेके जो सामन्त विद्रोही हुए थे, जालिमसिंहने उनके प्रति क्षमा प्रकाश की। और कोटे राज्यमें उन्हे पुन. वसनेकी आज्ञा तो दी; परन्तु उनकी शक्ति इतनी घटा दी कि जिसमें वह फिर किसी प्रकारका अनिष्ट न करसकें, इन दोनों घटनाओंसे जान पड़ता है कि जालिमसिंह कैसे चतुर और राजनीतिके जाननेवाले थे, और किस प्रकारसे उन्होंने कोटे राज्यमें अपना अखंड प्रताप फैलाया था।

उपरोक्त प्रकारसे उभरे हुए शत्रुदलके विरोधमें समर और उनके षड्यन्त्रके भेदन करनेमें एवं अपनी शक्तिके फैलानेमें जालिमसिंहका अधिक समय लगा। जालिमसिंहने मेवाड़के महाराणाके वंशकी दूरवाली एक शाखाकी कन्यासे विवाह किया था। उस कन्याके गर्भसे जालिमसिंहके पुत्र एवं उत्तराधिकारी माधोसिंह उत्पन्न हुए। जालिमसिंहने कोटेके शासन करते समय चारोंओरकी विपत्तियोंसे घिरे रहनेपर भी मेवाड़के दु:समयमे दृष्टि रखते हुए मेवाड़की मंगलकामनाका सदा ध्यान रक्खा था। संवत् १८४७ सन्(१७९१ ई०)में जिस उद्देशसे जालिमसिंहने कोटेकी अपेक्षा मेवाड़के स्वार्थ साधन और उन्नतिका विशेष व्रत किया था, वह पाठक मेवाड़के इतिहासमे पढ़ चुके हैं। जालिमसिंहने अपने राजनैतिक स्वार्थके लिये कोटेकी सेना सामन्त और राजभण्डारको जिस मेवाड़के लिये वृथा नियुक्त करके कोटेके अलक्षमे अनिष्ट साधन किया, पाठक उसको भी पढ़चुके हैं। सम्वत् १८४७ से १८५६ तक जालिमसिंहने जो राजनैतिक अभिनय किया वह मेवाड़के उक्त इतिहासमे लिखा जाचुका है, इस कारण हम यहाँपर उसको फिर लिखना उचित नहीं समझते।

संवत् १८५६ में कोटेके सामन्तगणोंने जालिमसिंहके उस शासन और स्वेच्छाचारको न सहकर फिर उनके मारनेके लिये षड्यन्त्र किया। जालिमसिंहके जीवनरूपी दीपकके बुझानेके लिये अनेक समय पर गुप्तरीतिसे बहुतसी चेष्टाएँ हुई, किन्तु जालिमसिंहके सदा सतर्क रहनेके कारण मारनेवालोंकी आशा किसी समय भी पूरी न हुई। संवत् १८३३ में आथूनके सामन्त जालिमसिंहके विरोधमे हुए, अन्तमें उनको देशसे निकाल देनेके पीछे फिर २० वर्षतक किसीने जालिमसिंहके मारनेकी चेष्टा नहीं की। बीस वर्षके पीछे संवत् १८५६ मे दस सहस्रकी आयुवाले मोसेन् देशके सामन्त बहादुरसिंहने जालिमसिंहके विरोधमें षड्यन्त्र रचा।जालिमसिंहके प्रबल प्रतापसे कोटेके जिन सामन्तोंकी सब सम्पत्ति छीनी गई थी अब वह सब सामन्त बहादुरसिंहके साथ मिल गये। उन्होंने बडे गुप्तभावसे षड्यन्त्रको चलाया, कि जिससे उसकी पवनको भी कोई स्पर्श न करसके, जिस दिन उन्होंने अपने उस षड्यन्त्रके कार्यको पूरा करनेका संकल्प किया, उस दिन दोपहरके समय केवल जालिमसिंहको उसकी खबर मिल गई। षड्यन्त्र रचनेवाले किस२ को मारेंगे, अति गुप्तभावसे उनके नामोंकी एक सूची बनाली। उसमें सपरिवार जालिमसिंहको,उनके मित्र और उपदेष्टा पण्डित लालाजीको मारडालनेके

सम्बन्धमें लिखा था। षड्यन्त्री गणोका विचार था कि जिस समय जालिमसिंह दरवारमे बैठे हों उसी समय सबके सामने यह हत्याकाण्ड हो। कहाजाता है कि जिस समय जालिमसिंह दरवारमें बैठे थे उसी समय उन्होंने षड्यन्त्र रचनेवालोंके गुप्तभेदको पाकर क्षणमात्रमे ही अपनी रक्षाके लिये उपाय कर लिया। जो पहेरेदार उनके शरीरके रक्षक थे उन सबोको हटाकर उन्होने "पायेगा" नामक प्रबल पराक्रमी अश्वारोही सेनाको बुलाकर अपनी रक्षाके लिये नियुक्त किया। अतएव हत्याकी अभिलाषासे षड्यन्त्र रचनेवालोंने जिस समय दरवारपर आक्रमण किया उसी समय वह दरवारमें शस्त्रधारी घुड़सवार-सेना देखकर हताश होगये। तव घुड़सवारोंने शीघ्र ही उनपर आक्रमण किया, और वह भाग निकले, तिसपर भी बहुतोंको पकड़ लिया और बहुत भाग गये। षड्यन्त्रके नेता बहादुरसिंहने भागकर चम्बल नदीके किनारे पाटननामक स्थानके बीच हाड़ा-जातिके कुलदेव केशवरायके मंदिरमे शरण ली। उन्होने विचारा कि पुरानी रीतिके अनुसार जव केशवरायके मंदिरमें आश्रयलेता हूं तव जालिमसिंह कभी बूंदीराजके बीच इस मंदिरमें बलपूर्वक आकर मुझे नही पकड़ेगा। किन्तु उनकी वह आशा शीघ्र ही भ्रान्तिके रूपमें वदल गई। उग्र प्रतापी जालिमने सरलतासे मंदिरकी पवित्र प्रथाको नष्ट कर उसमेंसे बहादुरसिंहको पकड़वाकर मरवाडाला।

इतिहाससे जाना जाता है कि जालिमसिंहके अनुकूल पक्षको लेनेवालोका कथन है कि जालिमसिंहने अपनी रक्षा वा अपने स्वार्थके लिये बहादुरसिंहको नही मारा, उनके हाथमे जो गुरुभार अर्पित था उस गुरुभारको पालन करने अर्थात् कोटाके महाराव उमेदसिंहके स्वार्थ और जीवनकी रक्षाके लिये ही उन्होने इस कठोर व्यवहारको किया था। षड्यन्त्र करने-वालोका यह आशय था कि हत्याकाण्डका अभिनय करके महाराव उमेदसिंहको सिंहासनसे हटाकर महाराजके एक छोटे भाईको कोटेके राजसिंहासन पर बैठा दें। यह बात कहॉंलों सत्य है, इसका विशेष प्रमाण नहीं मिलता। किन्तु जालिमसिंहने जैसे कठोर शासनके दंडको चलाकर सामन्तोके हृदयको चूर्ण किया था और महाराव उमेदसिंहको जैसे अपना खिलौना बनाया था उससे यह बात सत्य कही जासक्ती है। इस समय कोटाके राजपरिवारके बीच महाराव उमेदसिंहके चचा राजसिंह, और दोनों भाई गोवर्द्धन सिंह एवं गोपालसिंह जीते थे। आथूनेके सामन्त गण जिस समय महा षड्यन्त्रके जालको फैला कर जालिमसिंहके विरोधमे खड़े हुए थे, उसी समय गोवर्द्धन और गोपालसिंह सिंहासन पानेकी इच्छासे उस षड्यन्त्रमें लिप्त थे, इस वातके प्रकाश होनेसे जालिमसिंहने तुरन्त ही उन दोनो भाइयोंको भी कैद करलिया। बडे गोवर्द्धन दशवर्षतक कैदमें रहकर परलोक सिधारे, और छोटे गोपाल भी बहुत दिनोंतक कैदमें रहकर परलोकवासी हुए। महारावके चचा राजसिंह वृद्ध होकर बहुत दिनोंतक जीते रहे किन्तु राजनैतिक किसी षड्यन्त्रमें, किसी गोलयोगमे युक्त नही होते थे, इसीसे जालिमसिंह उनकी ओर नेत्र उठाकर नहीं देख सक्ते थे। राजसिंह नगरके बीच देव मन्दिरकी श्रेणीके बाहर कभी नही जाते थे।

कर्नल टाड् लिखते हैं कि "जालिमसिंहकी शक्तिको हटाने और उनके जीवनको नष्ट करनेके लिये अनेक प्रकारके उपाय उनके विरोधियोंने किये। सब मिलाकर अठारह वार उनके मारनेके लिये षड्यन्त्र रचे गये, किन्तु प्रत्येक वारमें जालिमसिंहके बुद्धिवलने विरोधियोंके उद्देशको व्यर्थ कर दिया। कहा जाता है कि प्रकाशमें और गुप्तरीतिसे बलसे, विषसे और अस्त्र शस्त्र आदिसे उनके मारनेके उपाय रचे गये। किन्तु राजमहलोंमे राजपूतोंकी स्त्रियोंने जो जालिमसिंहके वध करनेकी अभिलाषा की थी, वह षड्यन्त्र बड़ा भयानक था। जालिमसिंहके रूप सौन्दर्य्यपर मोहित राजमहलमें रहनेवाली एक रमणी यदि अपनी चतुराईसे सहायता न करती तो जालिसिंह अपनी रक्षा उस समय नहीं करसते थे। एक समय की वात है, छोटे राजकुमारकी माताने जालिमसिंहको राजमहलमें बुलाया। जालिमसिंह राजमाताके बुलानेसे उनके महलके समीपवाले घरमें पहुँचे, इस समय बहुतसी राजपूत रमणीगणोंने नंगीतलवार लिये अनेक अस्त्र शस्त्रोंसे सजीहुई अवस्थामें जालिमसिंह पर आक्रमण किया। और शीघ्र ही जालिमसिंहको बाँधकर कैद कर लिया। राजपूत रमणी कैसी वीर नारी हैं अस्त्र चलानेमें कैसी चतुर है, कैसे साहस और वलशालिनी है जालिमसिंह इसको भलीभाँति जानते थे। अतएव उन शस्त्रधारिणी महाशक्तियोंसे जालिमसिंह बँध गये, और उन्होने जाना कि अब किसी भाँतिसे भी यहाँसे छुटकारा नही मिल सक्ता। सौभाग्यसे जालिमसिंहको एक साथ न मारा और जालिमसिंहसे उनके प्रधान २ जीवनचरित्रोको पूँछने लगी। उनकी यही इच्छा थी कि जालिमको प्रश्नोंके उत्तर देते समय अचानक मारडालेंगी। वीरबालागण जालिमसे एक२ करके पूँछती थीं, इसी समय प्रधानरानीकी अत्यन्त वलशालिनी प्रधानदासीने महाकालभैरवीकी मूर्त्तिसे आकर जालिमसिंहको अनेक तिरस्कार और कटुवचनोंसे धिक्कार कर वलके साथ उन सब वीरनारियोंको क्रमसे निकाल दिया। जालिमसिंहने उस महा विपत्तिसे उद्धार पाया और जाना कि प्रधानदासी यदि इस चतुराईसे मेरी सहायता न करती तो अवश्य ही आज प्राण त्यागने पडते।

"इतिहास जाननेवाले टाड् साहबने लिखा है कि जालिमसिंहके विरोधमें जैसे क्रमानुसार षड्यन्त्र रचे गये उसमें शत्रुओंको विफलमनोरथ कर यदि अन्य मनुष्य होता तो निश्चय ही उन्मत्त होकर प्रत्येक शत्रुसे बदला लेता, किन्तु जालिमसिंहने कभी किसीके साथ अपने बदला लेनेकी इच्छा नहीं की। यद्यपि वह रात्रिके समय एक बडे मंदिरमें शयन करते थे परन्तु कभी अप्रयोजनीय भयजालमे नहीं फँसे। अपनेको वह सभी प्रकारसे छोटा मानते थे एवं सरलतासे इस बातको जान लेते थे कि कौन उनका स्वार्थ नष्ट करनेकी इच्छा रखता है, अतएव वह पहिले ही सावधान हो जाते थे। उनके अधिकारमें पुलिस अर्थात् शान्तिरक्षा विभाग इतना चतुर था कि अनेक स्थानोंमे वैसी पुलिस नहीं थी। वह कर्म्मचारियोंको उचित तनख्वाह देते और काम करनेवालोको बड़ा पुरस्कार देते थे। वह अपने सब विभागोंके ऊपर बड़ी दृष्टि रखते थे। किसी पर भी वह पूर्ण विश्वास नहीं करते थे। वह अपनी चतुरता,

नीतिज्ञता और विलक्षणताके साथ राज्यके सब विभागोंमें दृष्टि रखते थे, इसीसे चारोंओर अत्याचार, उपद्रव, राजनैतिक गोलयोग, षड्यन्त्र और बड़े २ युद्ध होनेपर भी उन्होंने आधी सदीतक अपने प्रबल प्रतापसे और अतुल शक्तिसे राजकार्यको चलाया।" कर्नल टाडकी यह युक्ति सत्य पूर्ण इतिहासको प्रमाणित करती है।

तीसरा अध्याय ३.

जालिमसिंहकी शासननीति–मेवाड़के सम्बन्धमें जालिमसिंहके राजनैतिक गुप्त उद्देश–मेवाड़के कल्याणके लिये जालिमसिंहसे कोटेका स्वार्थ नाश होना–जालिमसिंहके अत्याचार–जालिमसिंहका राजमहलोंको छोड़ राज्यमें घूमना–बस्त्रावासमें रहना–नवीन शिक्षित सेनाको तैयार करना–सेनाके दलको विलायती अस्त्र देना, और शिक्षा देना–कोटेकी राजप्रणालीका संस्कार–पटैलकी रीति–करलेनेकी रीतिको बदलना–पटैलोंको पुन पद मिलना–पटैल समिति–उनके शासनकी शक्ति–बोहारागण–नूतनपटैलोंसे किसानोंको कष्ट पहुंचना–पटैलोंको कैद करके उनको अर्थ दंड देना एवं पदसे हटाकर पटैलकी रीतिको तोड़ देना।

हम कोटाराज्यके जिस समयके इतिहासको वर्णन करते है वास्तवमें महाराज राणा जालिमसिंह ही उस समय कोटेके स्वामी थे, और महाराव उमेदसिंह उनके खेलके खिलौनेस्वरूप सिंहासन पर विराजमान थे। जालिमसिंहके राजनैतिक अभिनयका कुछ विवरण हम पहिले अध्यायमें लिख आये है, उन्होंने शासनकर्त्ता एवं विधानकर्त्ताके रूपसे किस प्रकार अभिनय किया अब उसका ही वर्णन करते है। जालिमसिंहने कोटाराज्यके ऊपर अपनी महान् राजनैतिक ऊंची अभिलाषाको पूर्ण करनेके लिये कोटाराज्यकी धन-सम्पत्ति और सेनाकी शान्ति सभीको नष्ट किया। संवत् १८२१ मे जिस समय मेवाड़के महाराणाके साथ जालिमसिंहकी बातचीत हुई उसी समयसे संवत् १८५६ तक राज-राणा जालिमसिंहने कोटाराज्यपर जिस भाँति अपना प्रताप फैला रक्खा था, मेवाड़-राज्यके ऊपर भी उसी प्रकारसे अपना प्रबल प्रताप और अधिकार बढ़ानेके लिये वह दृढ़ चेष्टा करते थे। उन्होंने उस महान् नैतिक आशाको पूरा करनेके लिये कोटाराज्यका सर्वनाश कर किसानोंको खरीदे हुए दासकी समान करडाला। संवत् १८४० में अत्या-चार और पीड़ा भयङ्कर रूपसे बढ़गई, सब कुछ लेकर भी किसानोंपर जालिमसिंहने उनकी आमदनीके ऊपर जो कर बांध रक्खा था उसके देनेमें स्वभावसे ही किसान असमर्थ थे। तिस पर जालिमसिंहके नौकर जब कर वसूल करनेजाते और किसानों से न पाते तो उनके हल, गऊ आदि उस करके नामसे ले आते थे, इस कारण किसान लोग एक साथ अपने जीवनकी आशा छोड़ चुके थे। बहुतसे किसान

भूखो मरने लगे, कोई २ भागगये किन्तु उस समय रजवाड़ेके चारोंओर विपत्तियोंका सोता बहनेमे वह किसका आश्रय लें? राजराणा जालिमसिंहने उन किसानोंके जो पिताके क्षेत्र थे, उनको और हल इत्यादि खेती करनेकी सामग्री और बैल आदि पशुओंको छीन लिया था, इससे बहुतसे किसान दूसरा उपाय न देखकर कुछ सामान्य वेतन लेकर दासस्वरूपसे अपने पासके पहिले ही खेतोंमे उन हल आदिसे खेती करनेमे सम्मत हुए! कोटेके प्रायः सभी किसानोंके भाग्यमे इस प्रकारका शोचनीय व्यापार हुआ, इस कारण राजराणा जालिमसिंहने महाराव राजा उमेदसिंहकी ओरसे कोटेराज्यके समस्त कृषि क्षेत्रोंके अधीश्वर होकर जो पृथ्वी अवतक परित्यक्त भावसे पड़ी थी उस सबमें कृषिकार्य करना प्रारंभ करदिया और आप स्वयं कृषकपति पदपर प्रतिष्ठित हुए।

यद्यपि जालिमसिंह मेवाड़राज्य पर आधिपत्य विस्तार करनेके लिये बराबर कई वर्षसे चेष्टा करते आये थे, और उसी उद्देशको पूर्ण करनेमें उन्होंने कोटेका सर्वनाश किया था, परन्तु अंतमे एक भयकर घटनाके होनेसे उनकी उस ऊंची अभिलाषाकी जड़में भयंकर आघात लगा। महाराष्ट्र नेता इंगलिया परिवारके साथ जालिमसिंहकी अधिक मित्रता थी। उसी इंगलियाके वंशधर बालाराव मेवाड़के महाराणाके द्वारा बंदी होकर उदयपुरके कारागारमे रक्खे गये, जालिमसिंह उन्हीं बालारावका उद्धार करनेके लिये गये, उसीसे महाराणाका कोप इनके ऊपर हुआ इस कारणसे उन्होंने महाराणाको अपने हस्तगत करके मेवाड़में अपनी प्रबलता विस्तार करनेके अपने हृदयरूपी बगीचेमें जिस आशाके वृक्षको यत्नरूपी जल सींचकर बढ़ाया था, वह एकबारही चिरकालके लिये जड़से उखड़ गया। तबतो जालिमसिंहको चैतन्यता हुई, वह यह समझ गये कि अपने स्वार्थ-साधन करनेके लिये काल्पनिक भ्रान्त आशाको पूर्ण करनेके लिये उन्होंने अन्याय और अकारणसे कोटेकी प्रजा और कोटेके अधीश्वरका सर्वनाश किया है। चतुर राजनीतिज्ञ जालिमसिंह सावधान हो पूर्वोक्त हानिको पूर्ण करनेके लिये शीघ्र ही नवीन अनुष्ठान करनेमे प्रवृत्त हुए।

संवत् १८५६ मे मोसेनके सामन्तके द्वारा षड्यन्त्र जालका विस्तार होनेके पूर्वतक जालिमसिंहने किलेके महलमें निवास किया था परन्तु संवत् १८६० सन् (१८०३-४ ई०) में उन्होंने झाला रावको छोड़कर मेवाड़से लौटते ही उस महलमे निवास न कर अन्यत्र वास करनेकी इच्छा की। उस समय वृटिश सेनाने सम्मिलित महाराष्ट्र दलके विक्रम और प्रतापकी जड़मे विषम आघात किया और महाराष्ट्रोंके अधिकारी बहुतसे देशोको छीन लिया, तब महाराष्ट्र शीघ्र ही दल भंग करके भारतवर्षके अनेक प्रान्तोमे जाकर लूटमार और अनेक प्रकारके अत्याचार करने लगे। जालिमसिंह अपनी तीक्ष्णबुद्धिके बलसे समझ गये कि महाराष्ट्रोंके इस प्रकारके अत्याचारके समयमें राजधानीके महलोंमें न रहकर जिस स्थान पर उनके द्वारा आक्रमण होनेकी संभावना है उसके ही निकट रहना इस समय उचित है। उनके उस महलके छोड़नेमें

दो प्रधान उद्देश थे-पहिला तो कोटेकी राजस्वरीतिका संस्कार साधन, दूसरा महाराष्ट्रोंका दल कोटेराज्यके जिस प्रान्तमे जाकर पड़ैगा उसी प्रान्तमें जाना। यद्यपि हमारा यह विश्वास था कि बुद्धिमान जालिमसिंहने उन दोनों उद्देशोंके वशवर्ती होकर महलको छोड़नेका आग्रह किया था, परन्तु कोटेके जातीय इतिहाससे जाना जाता है कि एक समय रात्रिमे महलके ऊपर बैठकर एक(पेचक) उल्लूने विकटस्वरसे चीत्कार किया था, जालिमसिंहने राजधानीके समस्त गणक और ज्योतिपियोंको बुलाकर पूछा, उन्होने गणना करके कहा कि "इस महलमे निवास करना अब किसी प्रकार भी उचित नही, अब इसमे निवास करनेसे आपके भविष्यतमे अमंगल और अनिष्ट होनेकी पूरी संभावना है।" जालिमसिंहने ज्योतिषियोंके उस उपदेशसे महलको छोड़ दिया, झाड़ाजातिके इतिहास लेखककी यही उक्ति है, परन्तु हमारा यह विश्वास नहीं है कि जालिमसिंहने महलके ऊपर कुलक्षण युक्त पेचकके चीत्कार करनेसे ही महलको छोड़दिया था।

गणकाचार्योंने महलकी अपवित्रताके विषयमे एक वाक्य प्रकाशित किया था इससे राजराणा जालिमसिंह शीघ्र ही महलको छोड़कर अनुचरोंको साथले कोटेराज्यमें भ्रमण करने और इतने दिनोंके पीछे उस राज्यमें अपनी राजनैतिक ऊंची अभिलापाको बांध रखनेमें प्रवृत्त हुए। जालिमसिंह भ्रमण करनेके समय भलीभांतिसे जानगये, और उन्होंने स्वयं अपने नेत्रोंसे देख लिया अपने स्वार्थसाधनके लिये मेवाड़के निमित्त जो कुछ अनुष्ठान किया था उससे कोटेराज्यका किस प्रकारका अनिष्ट साधन हुआ और प्रजा किस प्रकारकी शोचनीयदशामें पड़ी है, वह और भी जानगये कि उनकी कठोर राजनीतिके दोषसे कोटेराज्यके तीन अंशोंमेंसे एक एक अंशको बराबर किसान एकबार ही सर्वस्वांत हो गये हैं, तथा और भी दो अंश एकबार ही भरोसाहीन और घोररूपसे असंतुष्ट हुए हैं। इस समय कोटेके राजस्वकी अवस्था भी जैसी शोचनीय होगई है उससे भी उनको अपने पूर्वानुष्ठित नीतिके कुफलका भलीभांतिसे परिचय मिलगया। इस समय वैश्य और महाजन समाजमें उसकी प्रतिपत्ति कुछ भी नहीं थी, कोई वैश्य वा महाजन उनकी बात अथवा उनके हस्ताक्षरकी हुंडीपर विश्वास नहीं करता था। इतने दिन कोटेकी सर्वसाधारण प्रजा किसी विषय पर कुछ भी अभियोग उपस्थित करती थी कारण यही था कि वह उसपर कुछ भी ध्यान नहीं देते थे, जिस उपायसे हो धनका संग्रह करनाही उनका मुख्य उद्देश था, इस कारण वह किसीकी कुछ सुनते न थे, प्रजाके अतिरिक्त कर देनेमें असमर्थ होते ही यह उनका सर्वस्व छीन लेते थे। परन्तु शीघ्र ही प्रकाशित होगया कि कठोर और अन्याय राजनीतिकी प्रबलतरंगके निवारण न करने पर समयपर राज्यकी विपत्तिके समयमें प्रजासे सहायता प्राप्त करना अत्यन्त कठिन होगया है, इस कारण ऊंची प्रतिभाशाली जालिमसिंह शीघ्र ही उस प्रबल राजनैतिक रोगका प्रतिकार साधन करनेके लिये अनेक प्रकारकी औषधियोंका अविष्कार करनेमें प्रवृत्त हुए। वह सबसे पहिले गागरौलके अभेद्य किलेके निकट एक स्थायी डेरा स्थापन करके वहाँ रहने लगे, किसी महलमें न रहकर उन्होंने केवल उसी डेरेके ऊपर एक सामान्य शामियाना

बना लिया। इनको इस भांति सामान्य भावसे रहता हुआ देखकर अन्यान्य सम्भ्रान्त सामन्त और राजपुरुष भी उसी भावसे रहने लगे। उन्हीं सामान्य डेरोमें समस्त राज-कार्य भी होने लगे।

चतुर जालिमसिंहने जिस स्थानपर डेरे स्थापन किये थे वह स्थान भी उनके राज-नैतिक उद्देश साधनके लिये सम्पूर्ण रूपसे उपयुक्त था। दक्षिणाञ्चलसे कोटेराज्यमे जानेके लिये जो दो प्रधानमार्ग है उन स्थानोके वह ठीक बीचमे था, और दूसरी ओर कोटेके अधीनके जिन देशोमें कठिन भील जाति वास करती थी वह स्थान भी निकटही थे, शेरगढ़ और गागरौल नामक दो प्रबल किलोंके कुछही दूर होनेसे उनको अपनी रक्षा करनेका विशेष सुभीता होगया था। जालिमसिंहने अपनी समस्त धनसम्पत्ति और सामरिक उपकरण शेषोक्त किलेमें रख लिये और अपनी सामर्थ्यके अनुसार दोनो किलोंको अभेद्य करनेमें भी कसर नहीं की। इन्होने शीघ्र ही एक नवीन सेनाकी सृष्टि करके अंग्रेजी रीतिके अनुसार उनको शिक्षादान और अस्त्रदान करके एक एक सेनादलको एक एक जन " कप्तान की उपाधिकारी सैनिक पुरुषोंके अधीनमें रक्खा। अन्य पक्षमें " राज-पल्टन " नामक राजकीय सेनाको भी उन्होंने इस प्रकारसे शिक्षा दी कि उसने अनेक युद्धोंमें विशेष वीरता और असीम साहस प्रकाश किया। जालिमसिंहने सेनादलको इस भावसे शिक्षित और सजाकर रक्खा कि वह दल आज्ञा पाते ही एक मुहूर्त्तमे जिस प्रान्तमें शत्रु आते उसी प्रान्तमे जाकर युद्ध उपस्थित करसकता था, इस भावसे सेना तैयार रहती थी। राजधानामें राजमहलोंके भीतर रहनेसे इसके सम्बन्धमें अधिक विलम्ब होनेकी जो सभावना थी, इस स्थान पर वह सब विलम्बके कारण भी दूर होगये।

जालिमसिंहको अपने जीवनके इस समयतक राजनैतिक षड्यन्त्ररूपी समुद्रकी प्रबल तरंगोंमें निमज्जित होनेसे भूमिकी अवस्थाके सम्बन्धमें और राजस्वके सम्बन्धमें कोई विशेष अभिज्ञता प्राप्त करनेका अवसर नहीं मिला था। वह अबतक चिरकालसे प्रचलितरीतिके अनुसार राजस्वके बदलेमें क्षेत्रोत्पन्न द्रव्य निर्द्धारित परिमाणके अनुसार ग्रहण करते आये थे। परन्तु वह इस समय भली भाँतिसे जानगये कि यह रीति सभी अंशोंमे असुविधा जनक थी, एक ओर इस रीतिसे राजस्व संग्रह करनेवालोंने जिस प्रकार प्रजाके ऊपर अत्याचार और उपद्रव किये थे, अधिकतासे द्रव्यको ग्रहण करके अपने उदरको पूरण किया था, दूसरी ओर किसी २ प्रजाने भी इसी कारणसे राज प्राप्य राजस्वदानके समयमें भी वंचना की थी, इसी रीतिको राजाके पक्षमें सम्पूर्ण अहितकारी जान कर उसे केवल कर संग्रह करनेवाले पटेलोके उदर पूर्णका उपायस्वरूप देखकर वह शीघ्र ही उस प्रजाका अनिष्ट मूलक तथा राजको क्षति मूलकरीतिको एकवार ही दूर करनेमें प्रवृत्त हुए।

राजमंत्री जालिमसिंहने सबसे पहिले बटाई अर्थात् राजस्व कर और शुल्कके बदलेमें क्षेत्रमे उत्पन्न हुए द्रव्य ग्रहणका समस्त तथ्य, एवं विवरण संग्रह किया, और किस उपायसे पटेलोंने प्रजाके ऊपर अत्याचार करके अपना पेट भरा था, उसको अत्यन्त गुप्तभावसे

जानकर कोटेराज्यके समस्त देशके पटेलोंको अपने यहाँ बुला भेजा। पटेलोंके आते ही उन्होंने प्रत्येक पटेलको उनके अधीनमें कितनी भूमि है? कितने किसान कर आदि देते हैं? किस प्रकारके उपायसे कर लिया जाता है, और उनकी निजकी अवस्था कैसी है? आमदनी कितनी है? संगत कहाँतक है? इसको लिखकर सरलतासे जानलिया कि समस्त राज्यमें कितने किसान और कितने कृपिक्षेत्र हैं, और कितना राजस्व संग्रह होता है, जालिमसिंह समस्त ज्ञातव्य विवरणको संग्रह करके देशमें भ्रमण करनेके लिये बाहर हुए। भ्रमणकरनेके समयमे प्रत्येक ग्राम चकबन्दी अर्थात् भूमिका परिमाण निर्द्धारण करके-उस भूमिमें किस २ नदीसे खेती होती है, और किस २ भूमिकी खेती वर्षाके ऊपर निर्भर करती है, किस २ भूमिमें खेती सरलतासे होती है, किस २ भूमिमे खेती कठिनतासे होती है, और कौन २ भूमि पहाड़ी है तथा किस २ भूमिमें पशु आदि-चराये जाते है उसको वह स्वतन्त्र २ रूपसे विभक्त करने लगे। उन्होंने पिछले कई वर्षोंका हिसाब देखकर भूमिकी सब आमदनी कितनी होती थी उसका अनुमानसे एक २ का हिसाब कर दिया। उसके पीछे पूर्वप्रचलित रीतिके अनुसार और राजस्वके बदलेमे प्रजासे धान्यादि उत्पन्न अनाज नहीं लिया जायगा सभीको उसके बदलेमे नगदरुपया देना होगा यह निर्धारण किया।

नीतिविशारद जालिमसिंहने इस प्रकारसे समस्त भूमिका कर नियत करके अन्तमें कर संग्राहक पटेलगणोंको परिश्रम स्वरूपसे प्रत्येक पटेलके अधीनमें जितने बीघे जमीन होगी पटेलको उस जमीनके प्रत्येक बीघेके ऊपर डेढ़ आना कर देना होगा इस प्रकारका नियम निश्चय करदिया, परन्तु पटेलोंको यह भी विदित कर दिया कि उनसे अपनी अधिकारी भूमिका साधारण प्रजाके कर देनेकी अपेक्षा बहुत कम कर लिया गया है। तब जो कोई पटेल प्रजासे प्राप्त उस डेढ़ आनेके अतिरिक्त और कुछ ग्रहण करेगा तो उसके अधिकारकी भूमि राजा अपने अधिकारमे कर लेगा। इस नवीन व्यवस्था के अनुसार किसी पटेलको वार्षिक५रुपये१५रु० सहस्र मुद्रा कर संग्रह करनेके परिश्रम स्वरूपसे मिलेगी। यह जाना जाता है कि पहिले पटेलोंने फिर अपने २ पदपर अभिषिक्त होनेके लिये विशेष चेष्टा की और एक एक जनने जालिमसिंहको नजरमे दश २ बीस २ इस प्रकार करके पचास हजार रुपया दिए, इस उपायसे जालिमसिंहने नजरानामें दश लाख रुपया पाया और उसको अपने शून्यराजभण्डारमें मिला लिया।

उक्त प्रकारसे नवीन व्यवस्थाको देखकर किसानलोग आशा करने लगे, और इतने दिनोंके पीछे समझा कि उनके सुखका सूर्य उदय होगया, कारण कि जो कर दिया जाता था उसके बढ़नेसे यह जान गये कि पटेलोंके अत्याचार उत्पीड़न और अन्याय कर दानके हाथसे अब एकबार ही छुटकारा मिलेगा। परन्तु उनकी उस आशाके साथ ही साथ और एक भयंकर कारण दिखाई दिया। जालिमसिंहने यह आज्ञा प्रचार कर दी, कि पहिले जिस भाँति किसी २ जमीन पर वर्षाके न होनेसे प्रायः और किसी नैसर्गिक कारणसे फसलके न होनेसे उसका कर घटाया जाता

था; इस समय वह नहीं होगा, और जिस जमीनको किसानोने अबाद नहीं किया है पटैल उस जमीनको अन्य मनुष्यको नवीन व्यवस्थाके अनुसार खेती करनेके लिये देदें, यदि कोई उस जमीनको न ले तो वह जमीन जालिमसिंहकी खास जमीन रूपसे परिणत होगी और दूसरी ओर जालिमसिंहने राजस्वके लेने न लेनेका समस्त भार एकमात्र पटैलोंके ऊपर ही अर्पण किया।

इतने समय तक पटैल लोग किसानोके ऊपर इच्छानुसार व्यवहार करते, और केवल वार्षिक वा त्रिवार्षिक पटैलवराके नामसे कर देते थे, इस समय जालिमसिंहने उस करको दूर करनेकी आज्ञा देदी, यदि पटैल प्रजाके ऊपर किसी प्रकारके अत्याचार न करके कर देते हों तो राजदरबारसे इनको आश्रय देकर सम्मानित किया जायगा। इस प्रकारसे पटैल लोग ग्राम समारोहके प्रतिनिधि और प्रजाके रक्षकरूपसे राजकीय कर्मचारीरूपमे गिनेगये। इन पटैलोंको सतुष्ट करके राज्यके अभ्यन्तरिक उत्कर्षसाधनमें उनको उत्साहित करना जालिमसिंहका आभ्यान्तरिक उद्देश था, इस कारण इस नवीन व्यवस्थासे उस उद्देशके पूर्ण होनेके विशेष लक्षण प्रकाशित होने लगे। जालिमसिंहने नव नियोजित पटैलोको सम्मानस्वरूपमे सुवर्णके कंगन और पगड़ी देकर सबको यथास्थान पर भेज दिया।

इतिहाससे जाना जाता है कि जालिमसिंहने उन बहुतसे पटैलोमेसे चार बुद्धिमान चतुर पटैलोंको एक समितिके सदस्य पदपर नियुक्त करके अपने यहाँ रक्खा था। सबसे पहिले वह चारो पटैल एकमात्र राजकीय विषयक कार्योंमे नियुक्त हुए, शीघ्र ही शान्तिरक्षा अर्थात् पुलिस विभागके कार्य भी उनके हाथमे सौंपे गये, सबसे पीछे जालिमसिंह राज्यके भीतरी विषयमे भी उनका परामर्श लेकर कार्य करते थे। ग्राम समाहार, नगर समूह और राजधानीके पंचोसे जिन विषयोकी मीमांसा होती थी जो सब विचार निष्पन्न होते थे, उन सबके पुनर्विचार होनेका भार तक उसी समितिके हाथमे अर्पण किया गया।

इस प्रकारसे कुछही समयमे उस समितिका राजस्व, विचार, और शान्तिरक्षा तीन विभागोपर अधिकार होगया। कर्नल टाड् साहबने लिखा है कि "समस्त जगत्में जालिमसिंहके शान्तिरक्षा विभागकी समान अन्य किसी राज्यमे शान्तिरक्षाका विभाग किसी समय भी नही था, कोटेराज्यमे सभी जगह गुप्तचरित्र रूपी जालका विस्तारित था, और उस जालके बाहर कोई नहीं भाग सकता था।

यथार्थ पक्षमे उक्त नवनियोजित पटैलोंने सर्व साधारण प्रजाके स्थानीयप्रभू होकर भली भाँतिसे जान लिया कि प्रजाके ऊपर अर्थ दंड वा बलपूर्वक प्रजासे जो कुछ लेते थे वह सरलतासे प्रकाशित होजायगा फिर प्रजाके ऊपर उत्पीड़न कैसे करै इस कारण वह अर्थ पिशाची पटैलगण अन्य उपायसे अपने उदर पूर्ण करनेके लिये उद्यत हुए, और विचारने लगे कि इस उपायके करनेसे उनके अत्याचार और उपद्रव शान्त नहीं होगे और कार्य सिद्ध होजायगा। रजवाडोमे वोहरानामक एक श्रेणीके

वनिये है, वही दीन दुःखी किसान और प्रजाको समय समय रुपया कर्ज देकर उनकी सहायता करते है, पटैलोंने अनेक चिन्ता करनेके पीछे उन्हीं महाजनोंसे कार्य-कराना प्रारम्भ किया।

रजवाडेके वोहरोंके सम्बन्धमें महात्मा टाड् साहवने लिखा है कि "वोहरागण किसानोंके कृषिकार्यको समाधान करनेके लिये जिस किसी प्रयोजनीय द्रव्य अर्थात् गो कर्षण यन्त्र बीज आदि देते थे, और जवतक धान्य न उत्पन्न हो और वह न कटै तवतक सहायतादेते रहते थे। परन्तु इस प्रकारसे सहायता करनेके पहिले किसानोके साथ वोहरोंका यह नियम निश्चय होता था कि धान्यके उत्पन्न होते ही वोहराने जो कुछ धनकी सहायता की है उसको सूद सहित रुपया मिलैगा। इन्हीं वोहरोंसे किसानोंको विशेष सहायता मिलती थी इसका अनुमान सरलतासे हो सकता है। विशेष करके वोहरागण किसी समय भी अपने प्राप्त धनके अतिरिक्त ग्रहण वा किसानोंके प्रति किसी प्रकारका उपद्रव नहीं करते थे, और किसान भी वोहरोंको असंतुष्टके लिये चेष्टा नहीं करते थे, कारण कि बोहरा इस वातको भलीभाँतिसे जानते थे कि अत्याचार और उत्पीड़न करनेसे कोई किसान भी फिर उनसे सहायता नही लेगा, और इस बातको किसान भी जानते थे कि एक वोहराको ठकानेसे फिर और कोई बोहरा उनकी सहायता नहीं करेगा, इस कारण दोनों ही सावधानीके साथ कार्य करते थे, अधिक क्या कहैं एक २ ग्रामका वोहरा सदा एक २ किसानको सहायता देता आया था, किसान भी ग्रामके वोहरोंको छोड़कर अन्य किसी ग्रामके वोहरोंका आश्रय नहीं लेता था"।

राजराणा जालिमसिंहके कोटाराज्यसे पूर्वरीतिके अनुसार किसानोंसे कर स्वरूप उत्पन्न हुए धान्यका अंश ग्रहण करने की रीति एक वार ही दूर करके उसके बदलेमें नगद रुपया ग्रहण करनेकी रीति प्रचलित करनेके पूर्वतक किसान उसी उपायसे खेतीका कार्य करते थे। नवीन नियोजित पटैलोंने इस समय देखा कि एकमात्र नियमित कर ग्रहण करनेके अतिरिक्त अन्य किसी उपायसे कुछ धन किसानोंसे ग्रहण करने पर प्रधान मंत्री जालिमसिंह सर्वनाश साधन करेंगे, इस कारण वह सव लोग षड्यंत्र करके उक्त बोहरोंका नाश करके आप स्वयं महाजनोंका कार्य करनेके लिये तैयार हुए। प्रकाश्य रूपसे वोहरोंके कार्यमे बाधा देनेसे राजराणा जालिमसिंह महाक्रोधित होंगे यह जानकर उन्होने एक मध्यवर्ती उपायका अवलम्बन किया। क्षेत्रमें धान्यके पकजाने पर जिस समय किसानोने धान्यको काटनेके लिये पटैलोंके समीप अनुमतिकी प्रार्थना करनी आरंभ की उसी समय पटैलोंने कहा, "पहिली पहल राजाका कर देदो पीछे धान्य काटना।" दीन किसान धान्य काटकर विना वेचेहुए कहाँसे रुपया दें? इस कारण वह महा विपत्तिमें पड़े और उन्होंने जाकर वोहरोंका आश्रय लिया। परन्तु चतुर पटैलोंने वोहरोंसे जतादिया कि "जिन किसानों पर राजाका प्राप्त कर वाकी है तबतक वह किसानोंको किसी प्रकार भी ऋण न देसकेंगे।" वोहरागणने पटैलोंके इस निषेध वचनोंसे भयभीत होकर किसानोंको आगे ऋणदान नहीं किया,

इस कारण किसान अन्य उपाय न देखकर अंतमें उन पटैलोकी शरणागत हुए, किसानोने अपने २ उत्पन्नहुए धान्यके कितने ही अंश पटैलोके समीप बँधकर रक्खे। पटैलोंका उद्देश भी यही था, वह अपनी २ इच्छानुसार उत्पन्न हुए धान्यका मूल्य निर्णय करके उनको राज्य प्राप्य कर मिलगया है इसकी रसीद देने लगे। दूसरी ओर किसानोंने पटैलेके प्रस्तावके अनुसार इस मर्मके एक पत्रमें हस्ताक्षर करदिये, कि "राजप्राप्य कर देनेके लिये यथेच्छ द्रव्य न होनेसे और उस अर्थके अन्यत्र संग्रह करनेका कुछ सुभीता न होनेसे मैं अपनी इच्छानुसार धान्यका उपयुक्त मूल्य निश्चय करके धान्यके कितने अंश अमुक पटैलके समीप रेहन रख कर रुपया लेता हूँ"।

किसानोसे इस प्रकारके भावसे लिखवा लेनेका कारण यह है कि जालिमसिंह उक्त पत्रको देखकर समझ लेंगे कि किसानोंने अपनी २ इच्छानुसार पटैलोंकी सहायता ग्रहणकी है, पटैलोने अपनी इच्छानुसार किसी प्रकारका अत्याचार वावल प्रयोग नहीं किया है? इस भांति पटैल उक्त उपायसे वोहरोंके कार्यका नाश करके बहुतसा धान्य प्रतिवर्षमें संचय करने लगे। राजवाड़ोमे कोटाराज्य ही धान्यका प्रधान स्थान गिना गया है, पटैल उस समस्त धान्यको वेंचकर बहुतसा धन उपार्जन करने लगे। इधर किसानोंकी अवस्था दिन २ शोचनीय होने लगी। यद्यपि थोड़े ही समयमे पटैलोंका यह अत्याचार संवाद राजराणा जालिमसिंहके कान तक पहुँचा, तथापि चतुर पटैलोंने यथासमय पर्याप्त करको संग्रह करके राजभंडारको पूर्ण करादिया, और बहुतसे खेतोंको जप्त करके जालिमसिंहके अधिकारमे करा दिया; जालिमसिंहने पहिले इन अत्याचार और उपद्रवोकी ओर ध्यान न दिया था। संवत् १८६७ (सन् १८११ ई०) तक इस भाँति कार्य चलता रहा। इसके पीछे सहसा विना मेघके वज्र पातकी समान जालिमसिंहने कोटेराज्यके प्रत्येक पटैलको बंदी करनेकी आज्ञा दी और प्रत्येक पटैल बंदी होकर इनके समीप आये। जितने पटैलोंने इतने दिनोंतक असत् उपायसे बलपूर्वक प्रजाका सर्वनाश करनेके साथ बहुतसा धन उपार्ज्जन किया था उस सबको जालिमसिंहने खजानेमें मिला लिया। विचार होजानेके पीछे बहुत रुपया जुर्माना किया गया। केवल एकमात्र पटैलने अपना उपार्जित सात लाख रुपया अन्यराज्यमे भेज दिया। इस एक मनुष्यके दृष्टान्तसे ही हमारे पाठक इतना अनुमान कर सकते है, कि पटैलोने इतने दिनोंमे किस भावसे किसानोका सर्वनाश किया था।

जालिमसिंहने नवीन प्रचलित पटैलरीतिसे अनिष्ट कारक फल उत्पन्न होता हुआ देखकर फिर कोटे राज्यमे पूर्वकालकी प्रचलितरीतिका अवलम्बन किया, और उसके साथ हीसाथ वह अपने कृषिकार्य करनेमें लगे। उस बाहुल्य जनक कृषिकार्यसे उनको निजकी जो बहुतसी आमदनी हुई थी उसका वर्णन पिछले अध्यायमें किया गया है।

चतुर्थ अध्याय ४.

जालिमसिंहकी कृषिप्रणाली-कृषिकार्यका विस्तार-कृषिविभागकी उन्नति-उसका विवरण-कोटेका कृषिक्षेत्र-उत्पन्न धान्यका परिमाण-मूल्य-खलिहान-सुभिक्ष और दुर्भिक्ष-समयके धान्यका मूल्य-जालिमसिंहका एक वर्षके बीचमें एक करोड़ रुपयेका धान्य बेचना-रवानगी धान्यके ऊपर शुल्क स्थापन-शुल्क संग्राहक-उस शुल्कके प्रचार होनेसे अत्याचार और उपद्रवोंका होना-कोटेराज्यकी सब आमदनी-जालिमसिंहका अफीमका एक चेटिया व्यवसाय-विधवा विवाहके ऊपर कर स्थापन-संन्यासियोंके ऊपर कर स्थापन-समाज्जनीके ऊपर करका प्रचार करना-जालिमसिंह और कवि-जालिमसिंहके शासनमें कोटेकी अवस्थाकी समालोचना।

जालिमसिंहके आभ्यन्तरी शासनकी रीतिको उनके एक चेटिया कृषि व्यवसायको वर्तमान अध्यायमें वर्णन किया है । एक मात्र एक चेटिया कृषि कार्यसे जालिम सिंहने समस्त प्रसिद्धि प्राप्त की। जिस समय जालिमसिंहने कृषिकार्य करके कोटेके क्षेत्रोंकी अवस्थाको बदल लिया उस समय किसी पर्यटन करनेवालेने कोटे राज्यमें जाकर सर्वत्र श्यामल शस्य पूर्ण क्षेत्रोंको देखकर विचारते कि कोटेकी प्रजाकी अवस्था अवश्य ही प्रीतिपूर्ण है । परन्तु किसी कारणसे ही कोटेके कृषि विभागके इस प्रकारके रूपका रूपान्तर हुआ, तथा उस कृषिकार्यका प्रधान फलभोगी कौन था इसका यथार्थ तथ्य जाननेसे अवश्यही उसके मनका भाव बदल जाता। सबसे पहिले जालिमसिंहने मेवाड़का मंगल साधन किया और मेवाड़में अपनी प्रबलता विस्तार करके कोटेका सर्वनाश किया, इसीसे उन्होंने कोटेके किसानोंके ऊपर अत्याचार और उपद्रव करके उनके ऊपर कर स्थापन करके किसानोके रुधिरको सुखा दिया था, इसीसे किसानोंके कुलका नाश होगया, कृषिक्षेत्र सब बेजुते बोये छोड़ दिये गये और अन्तमें समस्त प्रजाने दूसरे देशोंमें जाकर आश्रय लिया। जालिमसिंहने जब देखा कि प्रजाका नाश करनेके लिये उन्होने भयानक अमंगल किये हैं, जब यह जान लिया कि उनकी अवलम्बित अर्थशोषक नीतिने राजभंडारके भविष्यका अनिष्ट किया है तब उन्होंने करस्वरूप जो किसानोंके हल और अन्यान्य कर्षणके यंत्र तथा किसानोंकी पैतृक भूमि पर अधिकार करलिया था, उस समस्त उपकरणसे आप स्वयं उन क्षेत्रोंमें कर्षण करनेके लिये प्रवृत्त हुए, उसीसे कोटेराज्यका कृषिकार्य इतना अधिकतासे साधित हुआ कि पहिलेकी समान किसी समय भी दिखाई नहीं आया, जालिमसिंहने कोटेराज्यके प्रत्येक प्रान्तकी जिस किसी भूमिमें खेती होना संभव था उसी प्रत्येक भूमिमें ही अधिक क्या गहलवनको भी कृषिक्षेत्र कर दिया, और जिस पथरीले देशमें हल चलाना असम्भव था उस कठोर पहाड़ी भूमिमें भी कुदालके द्वारा खेती करना प्रारंभ करदिया, इस कारण बहुत थोड़े समयमें समस्त कोटाराज्यमें बहुतायतसे धान्य उत्पन्न हुए थे।

संवत् १८४०, सन् १७८४ ई०मे जालिमसिंहके निजके तीन वा चार सौ हल थे, परन्तु कई वर्षोंसे उनकी संख्या आठसौ थी, जालिमसिंहने जिस समय प्रचलित रीतिको रहित करके नवीन पटैलोकी रीतिको चलाकर उत्पन्न हुए द्रव्यके बदलेमें नगद रुपया राजस्व स्वरूपसे ग्रहण करना आरंभ किया, उस समय उक्त हलोंकी संख्या एक हजार छ' सौ थी, और कर्नल टाड् साहबने लिखा है कि सन् १८२१ ईसवीमें जालिमसिंहके निजके व्यक्तिगत सम्पत्ति स्वरूप क्षेत्रोंमें चार हजार हल चलते थे और उनमे सोलह हजार बैल नियुक्त थे। इससे हमारे पाठक समझ सकते है कि जालिमसिंहने कृषि विभागमे किस प्रकारका श्रेष्ठ उपाय किया था । जालिमसिंहके निजके उक्त संख्यक हल और बैलोके अतिरिक्त कोटेके अधीश्वरोंके निजके और राजवंशके निकट आत्मीयोंकी स्वतंत्रताके सब मिलाकर एक हजार हल और चार हजार बैल कृषिकार्यमे नियुक्त थे।

राजराणाजालिमसिंहने जिस रजवाड़ेमें यश प्राप्त किया वह केवल एकमात्र विस्तारित कृषिकार्यके कारण ही इतने यशस्वी हुए थे, और उन्होने इसी उपायसे कृषिक्षेत्रसे बहुतसा धन उपार्ज्जन किया था, जिस समय रजवाड़ेमें प्रधान २ राज्य महाराष्ट्रोंके अभ्युदय और उत्पीड़नसे एकबार ही उन्नतिके ऊँचे शिखरसे अवनतिके अगाध जलमें गिरे थे, उस समय एकमात्र जालिमसिंहके कल्याणसे ही यह अवश्य संभव था कि कोटाराज्य उस ध्वंसताके हाथसे अवश्य छुटकारा पालेता परन्तु जालिमसिंहके प्रबल-शासनसे यद्यपि कोटेमें धनधान्यकी रक्षा भली भाँतिसे हुई थी परन्तु उसके अतीव कठोर शासनसे राज्यके सम्भ्रान्त सामन्तोंसे दीन किसानतक सभी उत्पीड़ित होकर उनके ऊपर अत्यन्त विरक्त होगये थे, और उनके शासनके विनाशकी कामना स्वभावसे ही सब श्रेणीके मनुष्योके हृदयमें प्रबल होगई। वीर विक्रमी हाड़ासामन्तोकी अधिकारी भूमिको अपने अधिकारमे कर कठोर शासन और रक्तशोषक कररूप रुधिरके ग्रहण करनेसे किसानोंकी श्रेणीने अन्य उपाय न देखकर सर्वस्वान्त हो अपने पैतृक कृषि क्षेत्रोंको छोड़ दिया, और उन पर जालिमसिंहने अपना अधिकार करके स्वयं कृषिकार्यका विस्तार किया था, जो किसान चिरकालसे चिर प्रचलित रीति नियम और विधानके अनुसार पैतृक भूमिपर अधिकार और उसमें खेती करते आये थे, जिन खेतोंमें कृषक कुलका अविनाशी अधिकार था वह समस्त किसान उन सब क्षेत्रोंके कारण जालिमसिंहके विधानके अनुसार महान् ऊंचा कर देनेमें असमर्थ थे, जालिमसिंहने वह प्राचीन रीति, नियम और विधान भंग करके इच्छानुसार उस सब भूमिपर अधिकार करलिया।

इतिहाससे जाना जाता है कि वह जिस क्षेत्रको अत्यन्त उपजाऊ जानते थे उन्हींको छलबल और चतुरतासे उसके यथार्थ अधिकारीके अविनाशी स्वत्वाधिकारको लोपकर उस पर अपना अधिकार करलेते थे। यद्यपि कोटेके कृषिकार्यकी उन्नति एक पक्षमे प्रीतिदायक थी, परन्तु जब हम विचारते हैं कि दीन किसानोंकी मंडलीका सर्वनाश करके जालिमसिंहने उन किसानोंके पैतृक अविनाशी स्वत्वको अन्यायसे नाश

करके उस क्षेत्रपर अपना अधिकार कर लिया तब उन किसानोंको पैतृक अधिकारको खोकर क्रीतदासकी समान जालिम सिंहके अधीनमें रहकर उन क्षेत्रोंमें कृषिकार्य करके सामान्य परिश्रमिक धान्य मिलने लगा, तब हम इस उन्नतिको कभी मंगलकारक नहीं कह सकते।

समस्त राजस्थानमें जो स्वदेशानुराग और भूमिके ऊपर विशेष अनुरक्ति चिरकालसे अत्यन्त प्रवल थी। इसीसे किसानोंने क्रीत दासस्वरूपसे पैतृक भूमिमें खेती करना स्वीकार किया, परन्तु अन्यत्र जाकर सुख भोग करनेकी इच्छा नही की। जालिमसिंहने अत्याचार और उपद्रव करने प्रारंभ कर दिये, समस्त प्रजा अनेक कष्ट जानकर यद्यपि अन्य देशको चली गई थी परन्तु इस समय राजस्थानके चारोंओर महाराष्ट्रोंके अत्याचार और उपद्रवोंका स्रोता अत्यन्त प्रवल होगया कहीं भी उनको आश्रय ग्रहण करनेकी आशा नहीं रही, इस कारण वहुतोंने जालिमसिंहके उपद्रवोंको सहन करके स्वदेशमें ही अपनी पैतृक क्षेत्रमें क्रीतदासस्वरूपसे कृषिकार्य करने आरंभ किये थे। और महाराष्ट्रों इत्यादिके उपद्रवसे अन्य निकटके स्थानोंमें वहुतसे किसान जो प्राणोंके भयसे भाग गये थे, वे फिर कोटेमें आकर जालिमसिंहके अधीनमें नियुक्तहो कृषिकार्य करने लगे।

इतिहास लेखक टाड् साहवने अपने नेत्रोंसे जालिमसिंहके कृषिकार्यको देखकर जो वृत्तान्त लिखा है हमने इस स्थान पर उसीको ग्रहण किया है। वह लिखते है, कि " कोटेके कृपिक्षेत्रकी मट्टी निम्न मालवेकी मट्टीकी समान उर्वर और कठोर है, एकमात्र हलसे उस क्षेत्रकी पीठको विदीर्ण करना वड़ा कष्ट साध्य है, इस कारण जालिमसिंहने कोकनदेशमें प्रचलितरीतिके अनुसार दो हलोंको एक साथ व्यवहार किया था। उनके वैल आदि पशु प्रथम श्रेणीकी समान श्रेष्ठ और उनके हलकी समान तोपैं चलाने में भी समान उपयुक्त थे। उन्होंने पासके वाजारोसे प्रधानतः अपने राज्यमेंसे इन सव पशुओंको मोल लिया था,और उनके प्रियस्थान झालरापाटन पर जो वार्षिक मेला होता है उसमेसे अनेक पशु खरीदे थे। मारवाड़ और अन्यान्य स्थानोंके मरुक्षेत्रके स्थानोंमें जो सव वल श्रेष्ठ जातिके माने जाते थे जालिमसिंहने उनको भी मोल लेकर कृषि-

---

(१) वूंदीराज्यमें किसानोंका भूस्वत्व अविनाशी था। किसी कारणसे भी राजा वा अन्य कोई मनुष्य भी किसानोंके उस अधिकारको नाश न करसके। किसानलोग अपनी २ इच्छानुसार अपने २ क्षेत्रको गिरवी रख सकते अथवा वेच सकते थे। ऐसा भी सुना जाता है कि पूर्वकालमें वूँदीके एक अधीश्वरने समस्त भूस्वत्वको वेचकर एकमात्र कर ग्रहण करके अपने स्वत्वकी रक्षा की थी उसीसे भूमिके ऊपर किसानोंका अविनाशी अधिकार उत्पन्न हुआ। यदि वूँदीमें कोई किसान नियमित कर देनेमें असमर्थ होता तो राजा उस भूमिपर अपना अधिकार नहीं कर सकता था, किसान दूसरेको वह भूमि देदेता था। यदि कोई किसान किसी अपराधसे निकाल दिया जाता तो भी भूमिके ऊपर उसका जो अधिकार था वह विनष्ट नहीं होता, और दूसरा उस पर अधिकार कर लेता था।

कार्यमे नियुक्त किया था, परन्तु वह समस्त पशु बालुमय क्षेत्रके उपयोगी होने पर भी कोटेके क्षेत्रोके उपयुक्त नहीं थे। इसीसे उनको त्याग दिया था"।

पीछे टाड् महोदय लिखते है कि "प्रत्येक वर्षमे दो बार करके खेती होती थी। प्रत्येक हलसे एक सौ वीघेकी भूमिमें खेती होती थी, इस कारण ४००० हलोसे प्रत्येक बारमे ४००००० बीघा खेती होनेपर प्रतिवर्ष दो बारमें ८००००० बीघा जमीन अर्थात् अंग्रेजी प्रायः ३००००० एकड़ जमीन जोती जाती थीं, जिस जमीनमें प्रत्येक वीघेके प्रति सातसे दशमन तक गेंहू और पाँचसे सातमन तक बाजरा उत्पन्न न हो तो उस जमीनकी मट्टी अच्छी नहीं मानी जाती। इस कारण अत्यन्त कम करनेसे यदि हम प्रत्येक बीघे प्रति चारमन गेंहूंके उत्पन्न होनेका हिसाव करैं तो इसका दुगना हिसाव करनेपर भी अतिरिक्त नहीं होगा"। तब ३२००००० मन गेंहू और बाजरा उत्पन्न होना यह ठीक होगा। इसका मूल्य उस समय कितना था उसका निश्चय करना होगा जिस वर्षमें अधिकतासे धान्य उत्पन्न हुआ है उस वर्षमें एक मानी गेंहूका मूल्य वारह रुपया होता है।

अन्य वर्षमें १८ रुपया करके एक १ मानी बेची जाती है, यदि हम गढ़मे सभी समयमें धान्यका मूल्य १२ रुपया करते तो इससे वार्षिक ३२ लाख रुपयेकी आमदनी होती है"।

कर्नल टाड् साहब कहते है कि कृषिकार्यमें जालिमसिंहका निम्न लिखित खर्चा होता था,-

गौ आदि पशुओका आहार, किसानोका वेतन क्षेत्रकी सफाई हलआदिके संस्कारमे व्यय	४००००० रुपया।
बीजके खरीदनेमे	६००००० "
गौ आदिके अव्यय हार्यहोनेपर नवीन गौ आदिके मोल लेनेमें	८०००० "
फुटकर खर्च...	२०००० "
कुल	११००००० रुपया।

ऊपर लिखी हुई सूचीसे जाना जाता है कि कृषिकार्यसे जालिमसिंहको जितनी आमदनी होती थी, खर्चा उसका सब मिला कर उसके कुल तीन अंशोंमेंका एक अंश भी दिखाई नहीं पड़ता।

हमारे देशमें जिस प्रकार खलिहान (खत्ते) मे धान्यादिकी रक्षा होती है कोटेमें भी उसी प्रकारसे धान्यादिके रक्षा करनेकी रीति प्रचलित है, परन्तु वहाँका खत्ता अन्य प्रकारसे बनता है। कर्नल टाड् साहब लिखते हैं कि प्रधानतः ऊंची और सूखी भूमिके ऊपर खत्ता अनेक आकारसे बनाया जाता है। वेष्टनीके नीचेके भागमे एक प्रकारसे घास पत्ते वहाँ जला कर फिर इसके पीछे भूसा लगाया जाता है, तब इसके

(१) राजपूतानेमें ४३ सेरका १ मन, १२ बारह मनकी एकमानी १०० मानीका एक मनासा होता है।

ऊपर धान्य रखकर उसके ऊपर भूसा रखकर चारोंओर बन्द कर दिया जाता है। उसके ऊपर एक इञ्च चौड़ी मट्टीका लेहसन देकर उसको मट्टी और गोबरसे लीपकर वह खत्ता ऐसा दृढ़ होजाता है कि प्रबल वर्षा भी धान्यका कुछ अनिष्ट नहीं कर सकती; और कई वर्ष तक रखने पर भी धान्यका कुछ अनिष्ट नहीं होता। जालिमसिंहने प्रायः इस प्रकारसे राज्यके अनेक स्थानोंमें ५० लाख मनका अनल्प धान्य संचित रक्खा रहता है, और जिस वर्षमें अन्न अधिक उत्पन्न नहीं होता उस वर्षमें आवश्यकतानुसार यह सब धान्य बाहर किये जाते हैं, उस समय एक २ मानी परिमित मूल्य ४०, रुपया था और दुर्भिक्षके समयमें वह ६० रुपयेको वेचा जाता है। यह सब खत्ते उस समय स्वर्णखानकी तुल्य गिने जाते थे। जालिमसिंह प्रायः प्रत्येक वर्षमें ६० लाख मन धान्य वेचा करते थे। संवत् १८६०, सन् १८०४ ई० में जिस समय हुलकर भरतपुरराज्यमें आया और सर्वस्व लुन्ठनकारी महाराष्ट्रदल रजवाड़के प्रत्येक प्रान्तमें विस्तीर्ण होगया, और उसीसे समर और दुर्भिक्षने एकसाथ मिलकर रजवाड़ेको विध्वंस किया था, उस समय एकमात्र कोटेराज्यके ही उत्पन्न हुए अन्नसे समस्त रजवाड़ों और उक्तदलने जीवनधारण किया था, उस समय धान्यका मूल्य मानी प्रति ५५ रुपये था, जालिमसिंहने धान्यको वेचकर एक करोड़ रुपया प्राप्त किया"।

राजराणा जालिमसिंहने कोटेराज्यमें जो अनेक प्रकारके बड़े २ कर प्रचलित करके प्रजाका रुधिर सुखा दिया था, उसके सम्बन्धमे कर्नल टाड् साहबने अपने इतिहासमें लिखा है, कि "एकमात्र जमाके कागद पत्रोंको देखनेसे जाना जाता है कि कोटेराज्यमें राजाको करस्वरूपमें जो समस्त उत्पन्न हुआ द्रव्य मिलता है, उसका परिमाण केवल २५ लाख रुपया है। जालिमसिंहने कहा है कि एकमात्र किसानोंको उन्होंने अपने व्यक्तिगत सम्पत्तिस्वरूपसे जो सब जमीन देदी थी उससे उनको उक्त परिमित रुपया मिलता था"।

"संवत् १८६५ में जालिमसिंहने कोटेराज्यसे जितने धान्य रवाना होते थे, उसके ऊपर एक नवीन कर प्रचलित किया, प्रत्येक मानी धान्यके ऊपर डेढ़ रुपया कर नियत हुआ। इसी करसे अत्याचार और उपद्रव अत्यन्त प्रबल होगये। पहिले पहल यह शस्योत्पादनकारियोंके ऊपर ही स्थापित हुआ था, परन्तु अप्रत्यक्षमें यह मोल लेनेवालोंके ऊपर भी जाकर पड़ा। शुल्क संग्राहकोंके प्रधान अध्यक्षने इस करके प्रचालित होनेसे महा संतुष्ट हो जालिमसिंहको यह परामर्श दी कि किसान और क्रेता दोनोंके ऊपर ही यह कर स्थापित करना कर्त्तव्य है, तथा जालिमसिंहने शीघ्र ही उस प्रस्तावके अनुसार कार्य करना प्रारंभ किया। इससे एक साथ ही दश लाख रुपयेकी प्राप्ति हुई। उस नवीन करके प्रचलित होनेसे एक अनाजके ऊपर अनेक स्थानोंमें तीन चार पाँच वार तक कर लिया जाता था और तब वह क्रेताके घर लाया जाता था। यद्यपि कोटेराज्यमें अधिकतासे धान्य उत्पन्न होता था तथापि इस करकी अधिकतासे ही प्रजा बड़े कष्टसे अपना समय व्यतीत करती थी, कोटेराज्यके

सामन्त उनके अधीनके मनुष्य वा किसान किसीको भी कर देनेसे छुटकारा नहीं मिला था प्रधान शुल्क संग्राहकोंने अपनी २ इच्छानुसार प्रत्येकके ऊपर ही वह कर नियत कर दिया, और उस करके नियमके विरुद्धमें किसीकी कुछ भी आपत्तिको न सुना। जिस समय वृटिश गवर्नमेण्टके साथ कोटेराज्यके मैत्री बन्धनकी सूचना हुई थी उसी समय उस करके ग्रहण करनेसे अत्याचार और उपद्रव अत्यन्त प्रवल होगये थे, उन कर संग्राहकोंने जालिमसिंहकी आज्ञा उल्लंघन करके लोगोंका इतना उत्पीड़ित किया था कि जालिमसिंह यदि किसी समय भी कहते कि "एक लाख रुपया चाहिये" कर संग्राहक उसी समय कहते जो आज्ञा और तुरन्त ही उसे संग्रह कर देते। कर संग्राहक उक्त आज्ञाको पाते ही उसी समय बाकी करकी एक सूची बनाकर शीघ्र ही क्या मित्र क्या शत्रु, क्या राजकर्म चारी, क्या महाजन, क्या वैश्य, क्या व्यवसायी क्या किसान, प्रत्येकके समीपही एक आज्ञापत्र भेज देते थे। कोई भी उस आज्ञाके विरुद्धमें आपत्ति नहीं करता था, कारण कि आपत्ति करनेपर यही नहीं कि वह ग्राह्य नहीं होता वरन उनका विशेष अनिष्ट होता था। किसीको भी उस करके देनेसे छुटकारा नहीं मिलता था, अधिक क्या कहैं जालिमसिंहके प्राचीन मित्र पंडित वेलालने उस सूचीके अनुसार एक समयमे २५ लाख रुपया, एक विश्वासी सामन्तके अधीनवाले एक मनुष्यने पाँच हजार रुपया, उनके विदेशिक मन्त्रीने पांच हजार रुपया और नगरके महाजनोंमेंसे बहुतोंने प्रत्येकको चार पांच और दश लाख रुपया दिया था, इसी करके ग्राहण करनेसे इस प्रकारके उपद्रव और अत्याचार प्रवल होगये, प्रत्येक मनुष्य ही जालिम सिंहके ऊपर इतने विरक्त हुए कि जिससे जालिमसिंहके शासनके लोप होनेकी संभावना होगई, कारण कि सर्वसाधारण प्रजाके असंतोष प्रकाश करते ही कोटेके महाराज अत्यन्त विरक्त होकर जालिमसिंहके अधीनमे अपनी रक्षा न करके स्वाधीनता उपार्जन करनेके लिये व्याकुल होगये"।

इतिहास वेत्ता टाड् साहवने लिखा है कि "जिस समय अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ रजवाडेका राजनैतिक सम्बन्ध वंधन उपस्थित हुआ था उस समय गवर्नमेण्टके मूलशासनकी नीतिके उद्देशके अनुसार जव मत प्रचलित हुआ तव क्या प्रजा क्या शासक सभीको अंग्रेज गवर्नमेण्टने समान दृष्टिसे देखा था उस समय बुद्धिमान् जालिमसिंह भलीभांतिसे समझ गये कि अब प्रजाके ऊपर अत्याचार न करके प्रजाकी अवस्थाको सुधारना कर्तव्य है, यदि ऐसा न किया जायगा तो अंग्रेज गवर्नमेण्ट विरक्त होजायगी इस कारण उन्होने उस रक्तशोषक करको एकवार ही घटाकर किसान विक्रेता और क्रेताओंके ऊपर उचित कर लेनेकी व्यवस्था करदी, परन्तु तव भी उक्त करसे पाँच लाख रुपये संग्रह होते थे"।

"इस प्रकार जालिमसिंहकी कठोर रीतिसे क्षेत्रोंसे सबमे पंद्रह लाख रुपया लिया जाता था। इसके अतिरिक्त उसके कुटुम्बी स्वजन और कोटेराज्यके क्षेत्रोंसे और भी पाँच लाख रुपयेकी आमदनी होती थी, और उसीसे उनके घरका खर्चा चलता था"।

सत्यप्रिय टाड् साहब इस स्थानपर स्वदेशी किसानोंको सम्बोधन कर कहते है " विलायतके बहुतसी सामर्थ्यवाले एवं अभिज्ञ किसानोंने जालिमसिंहके चौवालीस वर्ष-तक इस कठोर और राजनैतिक उपद्रवोंके समयमें कृषिकार्यको सावधानीसे करते हुए देखकर क्या विचार किया होगा ? जालिमसिंहकी प्रवल मानसिक शक्तिके सम्बन्धमें कि जिस जालिमने अस्सी वर्षकी अवस्थामें भी एकाक्ष और गति शक्ति हीन होकर उक्तरीतिसे सावधानता की थी उसके सम्बन्धमें वे क्या मन्तव्य प्रकाश करेंगे ? कि जालिमसिंहकी स्मरणशक्ति प्रस्तरांकितकी समान उनके चित्तपर अंकित है जिसने राज्यके प्रत्येक प्रान्तके प्रत्येक कृषिक्षेत्र, प्रत्येक शस्याधार गोलेकी अवस्था स्मृति दर्पणमे नियत प्रतिविम्बित कर रक्खी थी, जिसको किसी विपयमें भी भ्रम नहीं होता था। और जो उस वृद्ध अवस्थामें भी नेत्र हीन होकर राज्यके जिस प्रान्तके जिस क्षेत्रमें जिस प्रकारका धान्य उत्पन्न होता है उसे अनायास ही स्थिर कर सकता था उसी जालिमसिंहके सम्बन्धमे उन्होंने क्या कहा " ?

" यही नहीं कि एकमात्र कोटेराज्यके कृपिकार्यमें ही जालिमसिंहका समस्त समय व्यतीत होता हो, वरन उनके कार्योंमेंसे यह उनका एक अंशमात्र था। उन्होंने जिस भावसे राज्यशासन किया उसमें प्रवल शक्ति और विशेष सावधानताका प्रयोजन था, बीस हजार सेनाकी सृष्टि, उसका पालन और शिक्षादान तथा किलोकी सावधानी अस्त्रादिका संग्रह एवं निर्माण और समर विभागके प्रत्येक विषयमे दृष्टि रखना इसमें शासनकर्ताका समस्त समय लगता था, राज्यके कई सौ पुलिस कर्मचारियोंके निकटसे प्रतिदिन प्रयोजनीय गुप्त और सत्य सम्वाद संग्रह करना एवं राज्यके प्रत्येक जिलेके एक शासनकर्ताके निकटसे आये हुए वृत्तान्तका सुनना और उसके सम्बन्धमें आज्ञा देना इस विचारमें अन्य किसी शासनकर्ताके विचारकी शक्ति अवश्य विकृत होजाती। परन्तु इस समय जाना जाता है कि उक्त कठोर श्रमसाध्य कार्य करनेके अतिरिक्त जालिम सिंह वाणिज्यकार्य भी करते थे, महाजनी कार्यमें लिप्त थे और शिल्प कौशलका उत्साह दिलाते थे, विदेशी वैश्योंको भी उत्साह देते थे, और क्या कहैं अनेक प्रकारके फलवान वृक्षोंकी भी खेती करते थे। तव उनके साथ किसकी तुलना की जासकती है ? साहित्य, न्याय, दर्शन और ऐतिहासिक पुराणोंके सुननेमें वह अपना समय व्यतीत करते थे। उन्होंने जिस राज्यके अन्नका भाव जैसा देखा अपने यहाँके अनुसार निकटके वाजारोंका भी कर लिया उससे केवल कोटेके धान्यका मूल्य उनके द्वारा घटता बढ़ता था, यह नहीं वरन समीपके राज्योंमें धान्यका मूल्य भी इसी कारणसे घट वढ़ जाता था। गवर्नमेण्टने जिस समय समस्त मालवादेशमे अफीमकी खेतीकी सव पैदावारको अपने अधीन कर लिया उस समय जालिमसिंहने भी उस अफीमके क्रय विक्रय कार्यमें लिप्त होकर अपनी इच्छानुसार इसका मूल्य घटा वढ़ा दिया था। कोटेराज्यके अनेक स्थानोंमें उन्होंने बहुतसे वाग वनाये थे, और उन वगीचोंके अनेक भाँतिके फल मूल कोटेके अनेक स्थानोंके वाजारोंमें वेचेजाते थे

और उनके रक्षित वनसे काष्ठ संग्रह होता था उसको सर्वसाधारण प्रजाके ईंधनके लिये बेचा जाता था "।

साधू टाड् साहवने जालिमसिंहके द्वारा स्थापित अन्यान्य करके सम्बन्धमें लिखा है कि " जालिमसिंहने इस भावसे कर स्थापन किया था कि किसी विषयमें भी कोई छुटकारा नहीं पासकता था, जो कोई विधवा पुनर्विवाह करैगी उसको कर देना होगा। जो संन्यासी भिक्षा वृत्तिसे जीवन व्यतीत करते हैं जालिमसिंहने उनको भी अपने कर लेनेसे न छोड़ा। गिरि कन्दरमें अथवा जिस २ स्थानमें संन्यासी वास करते थे, जालिमसिंहके मनुष्य प्रत्येक वर्षमें वहाँ जाकर उनसे यह पूछा करते कि भिक्षावृत्ति करनेसे तुम्हें कितना धन प्राप्त हुआ है, उसका यथार्थ पता लगाकर उस पर कर स्थापित कर आते। एक वर्ष तक सन्यासियोंके ऊपर कर प्रचलित रहा, अंतमें मित्रोंके कहने सुनने से जालिमसिंहने उस करको उठा दिया, जालिमसिंहने " झाडूवराके " अर्थात् सम्मार्जनीके ऊपर भी कर स्थापित करनेमें लाज न मानी थी। कोटेके भाटोंने जालिमसिंह के ऊपर व्यङ्ग व्यञ्जक अनेक गीत बनाये, जालिमसिंहके पुत्र माधोसिंहने अंतमें इस घृणित करको उठा दिया "।

रजवाड़ेके प्रत्येक राजा, प्रत्येक सामन्त अधिक क्या प्रत्येक श्रेणीके प्रत्येक मनुष्य ही भाट चारण और कवियोंका विशेष सम्मान करते थे। और विवाह श्राद्ध इत्यादिके समयमें उनको यथाशक्ति धन देते थे। वे उस धनको पाकर मनमोहनी कविता बनाकर दाताका यश गान करते थे, वह सब गीत वंशानुक्रमसे रजवाड़ेके अनेक स्थानोंमें गाये जाते थे। टाड् साहवने कहा कि जालिमसिंह भाट चारण वा कवि श्रेणीके प्रियपात्र नहीं थे। कवि भी जालिमसिंहकी प्रशंसा कीर्तन नहीं करते थे। टाड् साहवने एक उदाहरण दिया है " कि एक दिन एक प्रसिद्ध कविने जालिमसिंहके सामने प्रशंसा व्यंजक गीत गाया। परन्तु जालिमसिंहने उससे सन्तोष न प्रकाश करके आग्रहके साथ कहा कि कविलोग केवल मिथ्या वर्णन करते हैं, यदि सत्य वर्णन करते तो मैं आनन्दके साथ उसको सुननेकी इच्छा करता। " कविने यह सुनकर उसी समय उत्तर दिया कि " बाजारमें सत्यका आदर बहुत थोड़ा है, मैं कितनी ही सत्य विवरण पूर्ण कविता जानता हूँ, उसको भी सुनाता हूँ। " कविने अन्तमें जालिमसिंहके समीप अभय और क्षमाकी प्रार्थना करके जालिमसिंहके चरित्रोंके सम्बन्धमें इस प्रकार सत्य पूर्ण विषमय तूलिका चित्रित कविताकी आवृत्तिकी, कि जालिमसिंहने इससे महाक्रोधित हो उस कविके समस्त पैतृक भूसम्प्रदायको जप्त कर लिया, और उसी दिनसे किसी कविको फिर अपने यहां न आने दिया "।

राजस्थानके राजा और शासनकर्तागण हिन्दूधर्मके अनुसार ब्राह्मण इत्यादि उच्चवर्णके प्रति अधिक दया दिखाना और ब्राह्मणके किसी अपराधसे अपराधी होनेपर उसको अनेक परिमाणसे बहुत थोड़ा दंड देते थे। परन्तु साधु टाड् साहब लिखते हैं, " यद्यपि जालिमसिंह हिन्दूधर्मानुमोदित प्रत्येक कार्य और

प्रत्येक अनुष्ठान करते और प्रत्येक कर्म विधानको ग्राह्य करके चलते परन्तु तौ भी उन्होंने ब्राह्मण इत्यादि उच्चवर्णके प्रति राजनैतिक व्यापारमे कभी भी दया प्रकाश नहीं की। जो कोई मनुष्य ब्राह्मणहो अथवा अन्य वर्णका मनुष्य हो राजाके विरुद्धमें यदि अपराध करै तो किसी प्रकारसे भी उसको छुटकारा नहीं मिलसकता था, एवं वह ब्राह्मण क्षत्रिय वाणिज्य व्यवसायमें नियुक्त होता तो ब्राह्मण बताकर उसके ऊपर सर्वसाधारणकी समान शुल्क स्थापनसे क्षमा नहीं होता था"।

इतिहासवेत्ता टाड् साहबने निम्न लिखित मन्तव्य प्रकाशके साथ वर्तमान अध्याय का उपसंहार किया है, "राजप्रतिनिधि जालिमसिंहके कोटे राज्यके आभ्यन्तरिक शासन की व्यवस्था ही इसका संक्षिप्त चित्र थी। जिस समय जालिमसिंहको कोटेके शासनका भार मिला था, उस समय कोटेराज्यकी सीमा पूर्वप्रान्तसे कैलवाड़े तक विस्तारित थी, परन्तु उन्होंने पीछे उसी सीमाको पहाड़ी उपत्यका तक विस्तीर्ण कर लिया, और जो दुर्ग श्रेणी उस सीमान्तसे रक्षित थी उसको महाराष्ट्रोंके बलसे उद्धार करके कोटेमें मिला लिया था। उन्होंने राज्यभार पाते ही देखा कि राज्यका खजाना शून्य है और राज्यपर ३२ लाख रुपया ऋण है दूसरी ओर उन्होंने देखा कि विदेशिक आक्रमणसे राजरक्षाके पक्षमें केवल कितने ही टूटे हुए किले और सामन्तोंके अधीनमें बेकाबू वीर सेना है। तब बहुतसा रुपया लगाकर टूटे हुए किलोंका फिरसे संस्कार करके कितनी ही तोपोंसे उसको सजादिया। उन्होंने चार हजार अश्वारोही सेनाके स्थानमें बीस हजार सेना संग्रह करके उसको शिक्षित किया था; और १०० तोपे संग्रह की थी। इसके अतिरिक्त सामन्तोके अधीनमे बहुतसी सेना थी"।

यद्यपि जालिमसिंह हाड़ाजातिमें एक विख्यात पुरुष है, परन्तु जैसा अन्न कोटेमें पदा होता है जो उनकी आराजीमें है उससे कोई सूरत उत्तमताकी दृष्टि नहीं आती और न सेना ही वैसी सजधजकी गिनी जाती है, कारण कि उनके हृदयके भावमें विकार उत्पन्न होगया है। हिस्सेवालोंको भाग नहीं मिलता है। जबतक यथायोग्य विभाग उन भागवालोंको न दियाजायगा तबतक जो यह सब प्रबन्ध दृष्टि गोचर होता है यह सब ऐसे मूलपर नियत हुआ है कि जिससे आगेके विशेषमे विपत्तिकी आशंका है।

पंचम अध्याय ५.

जालिमसिंहकी राजनैतिक प्रणाली–उनकी वैदेशिक राजनीति–रजवाड़ेमें उनकी प्रबलता–अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ उनका पहिला सम्बन्ध–मानसनका भागना–कोयेलाके सामन्तों की महावीरता दिखाना–उनका प्राण त्यागना–जालिमसिंहका अंगरेज गवर्नमेण्टकी सहायता करना–हुलकरका क्रोध–हुलकरका कोटेमे आना–राजधानीपर आक्रमणका उद्योग–जालिमसिंहके साथ हुलकरको मुलाकात होना–दोनोंमे सन्धि होना–जालिमसिंहका विदेशीय राजाओंकी सभामें दूत नियुक्त करना–अमीरखां और पिण्डारे नेताओंके साथ जालिमसिंहका सद्भाव–जालिमसिंहकी गुप्तराजनीति–महाराव राजा उमेदसिंहका चरित्र–महारावके साथ जालिमसिंहका आचरण–पठान दुलेलखाँ–झालरापाटन नगरका स्थापन–मेहरावखा।

इतिहासको जाननेवाले टाड्ने कहा कि जालिमसिंह बड़े चतुर और परम राजनीतिके जाननेवाले थे। यदि जालिमसिंह विलायतमें पैदा होते तो अपनी राजनैतिक कार्यावलीसे अक्षय कीर्ति पाते। वास्तवमे टाड् साहबकी यह कहावत ठीक है क्योंकि टाड् साहब जालिमसिंहकी राजनैतिक ऐतिहासिक घटनाओको लिख गये हैं। वह इतिहास दो हिस्सोमे बटा हुआ है पहिला वैदेशिक और दूसरा आभ्यन्तरिक। राजनीतिके सुभीतेके लिये ही टाड् साहबने जालिमसिंहके राजनैतिक अभिनयको दो भागोमे बाँटा है।

जालिमसिंहकी शासन–प्रणाली प्रायः भेदनीति पर स्थिर थी, वह अपने अधीनस्थ दरबारियो था राज कर्मचारियोको इस बातका अवसर नही देते थे कि वे एक दूसरेसे मिलकर किसी प्रकार शक्तिसंपन्न होसके। जालिमसिंह इस तरहसे स्वयं प्रत्येक कर्मचारी पर अपनी ही प्रभुत्व रखते थे और इसीसे उनमे यह सामर्थ्य थी कि यावत् अनुगत लोगोको अपने पक्षमें रखते और लकड़ीके बल बंदर नचाते थे।

कोटाराज्य भारतके ठीक हृदय स्थानमें स्थापित है। कई वर्षसे जबतक इस कोटेके चारोओर राज्यमे अत्याचार उत्पीड़न, विद्रोह, राजशक्तिका नाश एवं प्रजाशक्तिका विप्लव होता था। यद्यपि उन सब देशोंकी समान इस कोटेराज्यकी धनसम्पत्तिसे आकृष्ट होकर महाराष्ट्र एवं पिंडारे इत्यादि लूटनेवाले व्यवसायी अत्याचारी दलोने कोटेके लूटनेका उद्योग किया। परन्तु जालिमसिंहने अपने विरोधित उग्र तेजसे इस प्रकार शासनदंड चलाया कि उन्होंने नसींसे अर्द्धशताब्दीतक सबको भय उत्पन्न करनेवाली उन मरहठोंकी उस आशाको व्यर्थ करदिया। इस कारण उस अर्द्धशताब्दीमे कोटेराज्यमें कोई डॉकू चोर लूटनेवाला साहसके साथ प्रवेश न करसका। यद्यपि दीर्घकालसे अबतक राजपूतानेके समस्त राज्योंमें राजनैतिक विप्लव, राजनैतिक परिवर्त्तन, सेना विनाश, क्रमानुसार शासनशक्तिका लोप, दुर्भिक्ष महामारी और

नैतिक बल क्षयके साथ शोचनीयकाण्ड उपस्थित हुए और रजवाड़ा विध्वंस हुआ परन्तु उस दीर्घकालमें ही एकमात्र जालिमसिंहने पच्चीस वर्षकी अवस्थासे प्रायः नव्वे वर्षकी अवस्थातक अपनी विज्ञता वीरता, उद्यम और विवेचना शक्तिसे अपने हाथमे समर्पित हुई राज्यनौकाको उस भयंकर विपद संकुल घोर राजनैतिक तरंगावर्त्तमें जरा भी न डगमगाने दिया।

साधू टाड् महोदय लिखते हैं " कि रजवाड़ेमें ऐसा कोई भी राजा नहीं था, अधिक क्या लुटेरोमें भी इस प्रकारका नेता नहीं था जिसने कि किसीन किसी प्रकारसे जालिमसिहके परामर्शके अनुसार और मन्तव्यके अनुसार कार्य न किया हो। प्रत्येक राजाकी सभामें उनका एक २ दूत रहता था। जहाँ उनके किसी प्रकारके स्वार्थ साधन की संभावना होती उसी स्थानपर वह किसी न किसी प्रकारसे उस स्वार्थको सिद्ध करलेते। दुर्वल शून्य सम्मानकी अभिलाषा करनेवाला जो कोई मनुष्य भी होता उसको यह तुरन्त ही अपने पक्षमें मिलालेते, इन्होंने राजसिंहासन पर बैठेहुए मनुष्यसे लेकर पिंडारी-दलके नेतातक सभीके साथ पिता, चचा वा भ्राताका कोई न कोई सम्वन्ध वंधन आवद्ध कर लिया था। सारांश यह है कि अपने राजनैतिक उद्देशको साधन करनेके लिये इन्होंने अनेक उपाय किये थे "।

इतिहाससे जाना जाता है कि यद्यपि जालिमसिंह एक क्रूर स्वभाव अत्यन्त क्रोधी और अहंकारी थे, परन्तु एक २ समयमे कार्यगतिसे इन्होने यथेष्ट अवनत भाव भी प्रकाश किया था। वह जहाँ देखते कि विनीतभावके विना प्रकाश हुए कार्यके उद्धार होनेका उपाय नहीं है उसी स्थान पर अपनी पदमर्यादा और सामर्थ्यके विस्तारित होनेसे वह उसमें विनीतभाव प्रकाश करते। और क्या कहें सामान्य पिंडारी इत्यादिके नेताके निकट भी समय २ पर वह अत्यन्त विनीतभावसे पत्र लिखकर नम्रताके साथ वातचीत करके कार्य करलेते। और यह जहाँ देखते कि यहाँ युद्ध होनेके अतिरिक्त इस विवादके विचार होनेका उपाय नहीं है, उस संस्थान पर जो वीर अथवा जो कोई सामर्थ्यवान् राजा होता उसीके साथ युद्ध करनेको आगे वढ़ते थे। रजवाड़ेके चारोंओर जव अशान्ति और समर इत्यादि होते रहते थे उस समय यह कोटेराज्यके शासन करनेमें नियुक्त हुए, इस कारण उनको उस समय अन्यान्य विवाद मान राजाओंके साथ शीघ्र ही राज-नैतिक चातुरीमूलक व्यवहार करना होता था। सन् १८०६ एवं १८०७ इसवीमें जिस समय जोधपुरके साथ समरानल प्रज्वलित हुई उस समय तीन अन्य राजाओंने इनसे सहायता मांगी, इसी कारण तीनोंको संतुष्ट करना एकवार ही असम्भव होगया। इन्होंने तीनोंके पास दूत भेजकर तीनों जनोंकी ओरसे विवादकी मीमांसा होनेकी चेष्टा की, और किसीको भी किसी प्रकारसे सेनाकी सहायता न दी, यह सामान्य नीतिज्ञताका परिचय नहीं है।

जालिमसिंहके विदेशिक राजनीतिके इतिहासके संग्रहको सव भांति निष्फल जानकर साधु टाड्ने उससे एकबार ही शान्त हो, सन् १८०३। ४ ईसवीमें बृटिश

गवर्नमेण्टके साथ उनको जो पहिला साक्षात् सम्बन्ध स्थापित हुआ था उसीको वर्णन किया है। इतिहासवेत्ता टाड् साहब लिखते हैं कि "हुलकरको आक्रमण करनेके लिये जिस समय जनरल मानसन एक वृटिश सेनादलको साथ लेकर मध्य भारतवर्षकी ओरको गये, उस समय जालिमसिंह अंग्रेजोंकी सामर्थ्यको अजेय जानकर उस सेनाके कोटेराज्यमे आते ही इन्होंने उस सेनादलके आहार्य सरवराह और अनुचरोंको संग्रह करनेमें कुछ भी विलम्ब नहीं किया। परन्तु जिस समय वह वृटिश सेनादल दुर्भाग्य वश समरमें परास्त होकर भाग गया; उस समय वृटिश सेनापति जनरल मानसनने पूर्वमतसे कोटेराज्यमें होकर जानेके लिये प्रार्थनाकी, जालिमसिंहने निम्नलिखित उक्तिसे एकवार ही असम्मति प्रकाश की। उन्होंने कहा कि "हमारे शान्ति पूर्णराज्यमें शांति संभोगकारी प्रजामें आप अपनी छिन्नभिन्न सेनाको लावेंगे तो अराजकता उपस्थित होजायगी। आप अपनी सेनाको हमारे राज्यकी सीमामे ठहराइये मैं सब रसद संग्रह कर दूंगा और मेरी जितनी सेना है सब सेनाको लेकर आपको आपके शत्रुदलमेंसे लेजाऊंगा और आपका शत्रुदल यदि मेरे ऊपर आक्रमण करेगा तो मैं इकला ही उस आक्रमणको सहलूंगा।' मानसनने जालिमसिंहके कथानुसार कार्य नहीं किया वह बून्दी और जयपुरराज्यमें होकर चले गये, किन्तु अन्तमें उस समस्त सेनामें एकमात्र इकले ही बचकर जनरल लेकके पास गये, और अपनी शोचनीय पराजयका समाचार कहा। अपमानित निगृहीत, पराजित और पलायित जनरल मानसनने अपने उपरितन प्रभुके निकट उस घोर कलंकदायक पराजयका समाचार देनेके समय, अपने अपराधको थोड़ा करनेके लिये अन्य मनुष्योंको भी उसी अपराधसे अपराधी और उस भागनेका कारण स्वरूप बताकर घोषणाकी। यह कुछ आश्चर्यकी बात नहीं है। जनरल मानसनने जालिमसिंहके विरुद्धमें दृढ अनुयोग उपस्थित करके उनके शिरपर भारी कलंक लगानेकी चेष्टा करके कहा कि जालिमसिंहने शत्रुदलके साथ षड्यन्त्र करके हमारे भागनेके समयमे कुछ भी सहायता न की? दुःखका विषय है कि वृटिश कर्तृपक्ष गणने दीर्घकालतक मानसनकी इस उक्तिको सत्यमात्र माना था। परन्तु जालिमसिंह तो सम्पूर्ण निर्दोषी थे, उन्होंने जनरल मानसनकी प्राण रक्षाके लिये विशेष चेष्टा की थी उनकी ही आज्ञानुसार मुकुन्दराकी घाटीसे कोयेलाके सामन्त लखन महाराष्ट्र दलकी गतिको रोकनेके लिये जाकर सेनासहित मारेगये, उनका प्रत्यक्ष उदाहरण आजतक विराजमान है"।

साधु टाड् साहबने पीछे लिखा है कि "जनरल मानसनके भागनेकी सुविधाके लिये जो हाडा सेनाने महाराष्ट्रदलके साथ युद्ध किया, कोयेलाके सामन्तके अतिरिक्त अन्य अनेक सेनाने भी उस समरमें निहत होकर बखशी अर्थात् प्रधान सेनानायक उस युद्धमे विपक्षी महाराष्ट्रोंके द्वारा बंदी होगये, जालिमसिंहके अधीनकी उस सेनाने वृटिश गवर्नमेण्टकी उक्त प्रकारसे सहायता की थी, इसीसे महाराष्ट्रनेता हुलकरने उस बखसीके निकटसे दश लाख रुपयेका एक खत लिखकर बखशीको मुक्ति देकर कहा कि शीघ्र ही दश लाख रुपया न देनेसे समस्त कोटे देशको तलवार और तोपोंके मुखसे विध्वंस करदूंगा, पराजित बखशीने जालिमसिंहके समीप जाकर जब

उक्त दश लाख रुपयेके खतका उल्लेख किया तब उन्होंने उसको सामनेसे हटाकर कहा, " कि तुम जो दश लाख रुपयेका खत लिखकर दे आये हो, उसके हम देनदार नहीं हैं। " जालिमसिंहने उसके पीछे वखशीको फिर हुलकरके समीप भेजनेके लिये कहा वह जिस प्रकारसे करसकै उस प्रकारसे वखशीके पाससे दश लाख रुपया लेकर उनको छोड़ दे। हुलकर जालिमसिंहके उस व्यवहारसे उस समय केवल भय दिखाकर ही शान्त न हुआ वरन, पीछे सुभीता होनेपर कोटेराज्यमें जाकर उसने राजधानीके बहुत पास ही डेरे डालदिये "।

वीर तेजस्वी जालिमसिंह हुलकरको उपस्थित देखकर कुछ भी भयभीत न हुए, उन्होंने नगरकी दीवारोंके ऊपर समस्त तोपें सजाकर सेनाको सजानेकी आज्ञा दी। उन तोपोंकी श्रेणीके इस भावसे सजते ही गोलोंकी वर्षा होनी आरंभ होगई, नगरके बाहर स्थित समतलक्षेत्रके समस्त आवास ही एकवार समभूमि होजाते। उधर जालिम-सिंहकी गुप्त आज्ञाके अनुसार पहाड़ी भी हुलकरके डेरोंके पिछले भागपर आक्रमण करने और समस्त द्रव्य लूटने तथा रसद प्राप्तिमें व्याघात देनेके लिये तैयार हुए। हुलकरने डेरोंको स्थापित करके वखशीके द्वारा हस्ताक्षर युक्त उस दश लाख रुपयेके खतको फिर जालिमसिंहके पास भेजादिया, जालिमसिंहने शीघ्र ही उस खतके लेखानुसार रुपया देनेमें असम्मति प्रगट की। तब समरका होना अनिवार्य विचारा गया, उस समय दोनों ओरके मंत्रियोंने यत्नवान होकर परस्परमें साक्षात् करनेके लिये प्रस्ताव उपस्थित किया। परन्तु जालिमसिंह महाराष्ट्र नेता हुलकरका सब प्रकारसे अविश्वास करते थे, इस कारण उन्होंने कहला भेजा कि अपनी अभिलाषित व्यवस्थाके अतिरिक्त अन्य प्रकारसे वह साक्षात् करनेके लिये तैयार नहीं हैं। जालिमसिंहकी वह मनोगत व्यवस्था अत्यन्त विचित्र थी। उन्होंने कहला भेजा कि युद्ध वा संधि सम्बधी प्रस्ताव चम्बलनदीके ऊपर नौकाके वक्षमें उपस्थित करने होंगे, हुलकर इसीमें सम्मत हुए। जालिमसिंह उक्त उद्देशसे दो नौका सजाकर प्रत्येक खानेमें २० अस्त्रधारी सैनिक रखकर आप स्वयं एक छोटी नौकामें चढ़कर चम्बलनदीके मध्यस्थलमे जा पहुँचे। हुलकर भी शीघ्र ही अपनी कितनी शरीर रक्षक सेनाके साथ नदीके किनारे आकर एक नौका पर चढ़कर उस नदीके मध्यस्थानमे जालिम सिंहके समीप जा पहुँचा। शीघ्रतासे नदीके ऊपर सुन्दर गलीचा बिछाया गया, वह दोनों अद्भुत पुरुष जिनमें केवल एक आँख थी असीम सामर्थ्यवान राजनीतिज्ञ शान्ति स्थापन करनेके लिये प्रस्तावका आन्दोलन करने लगे। हुलकरने जालिमसिंहको 'काका' और जालिमने हुलकरको 'भ्रातृपुत्र' कहकर पुकारा। परन्तु दोनोंके पक्षमें तटस्थ सेनाका दल इस प्रकारके भावसे तैयार था कि जो कोई एक ओरसे विश्वासघातकता का

---

(१) कर्नल टाड साहब अपने टांकेमें लिखते हैं कि इस अभागे वखशीने अपमानसे अत्यन्त दुःखी होकर विषपान करके आत्महत्याकी ऐसा अनुमान होता है।

(२) टाड साहबने यहाँ जालिमसिंहको अंधा और हुलकरको एकाक्ष समझ कर दोनोंमें एक आँखवाला कहा है।

लक्षण देखता तो तुरन्त ही आक्रमण करनेके लिये उद्यत होता। हुलकर इस समयमे जितनी जल्दी कोटेको त्याग देगा उसके लिये उतना ही सुभीता होगा, इस कारण जालिमसिंहके प्रस्तावके अनुसार शेपमे हुलकरको तीन लाख रुपया लेकर जाना पड़ा"। बुद्धिमान् जालिमसिंहने इस प्रकारसे तीन लाख रुपया देकर हुलकरके आक्रमणके हाथ से राज्यकी रक्षा करली।

इतिहासवेत्ता टाड साहब लिखते है कि जालिमसिंहका समस्त समय कोटेके शासन कार्यमे व्यतीत होता था, उनको प्रतिवासी राजाओंके राज्यकी ओर दृष्टि रखनेका अवसर नहीं मिलता था, यह सरलतासे अनुमान किया जासकता है, परन्तु उन्होंने कोटेराज्यके प्रत्यक्ष स्वार्थ साधनके लिये हुलकर और सेन्धियाके अधिकारी देश जो कोटेकी दक्षिण सीमाके साथ लगे हुए थे उन देशोंमे कृपिकार्यसे विशेप प्रतियोगिता दिखाई थी जालिमसिंहने सेन्धियासे पॉच महल नामक देश, और हुलकरके निकटसे डिग पिड़ावा इत्यादि चारजिले जमामे ग्रहण किये। जिस समय बृटिश गवर्नमेण्टने हुलकर और सेन्धियाके साथ युद्धमें जय प्राप्त की उस समय बृटिश गवर्नमेण्टने उक्त देशको एकवार ही कोटेके अधीश्वरको देदिया। जालिमसिंह उक्त दोनों जने महाराष्ट्र नेताओके साथ सद्भाव स्थापन और स्वार्थ सम्बन्ध स्थापन करके ही शान्त न हुए, वरन उन दोनों महाराष्ट्र नेताओके विश्वासी मन्त्रियोंके प्रति गुप्तभावसे तीक्ष्ण दृष्टि रखनेके लिये उन्होंने एक दूत नियुक्त करदिया था। उस दूतने मन्त्रियोंके प्रत्येक कार्यको गुप्तभावसे देखकर जालिमसिंहसे कह दिया। इधर जालिमसिंहने भी कितने ही प्रथम श्रेणीके नीतिज्ञ महाराष्ट्र पंडितोंको अपने यहाँ नियुक्त कर रक्खा था, और उनके द्वारा ही महाराष्ट्र जातिके जिस किसी राजनैतिक अनुष्ठानको वह जान सकते थे। जो जैसा मनुष्य होता जालिमसिंह उसके साथ उसी प्रकारका व्यवहार करते थे। विख्यात अमीरखांके साथ जालिमसिंहने विशेप सद्भाव स्थापित करके उसको अपने हस्तगत कर रक्खा था। लुटेरा अमीरखाँ भी आवश्यकतानुसार जालिमसिंहके पाससे समरके उपकरण लेलेता था। विशेप करके अमीरखांके रहनेके लिये जालिमसिंहने शेरगढ़ नामक किला देदिया था, अमीरखॉ सन्तुष्ट चित्त होकर जालिमसिंहका शुभ साधन करता था, जालिम सिंह समझ गये थे कि अमीरखाँको विना हस्तगत किये उससे विशेप अनिष्ट होनेकी सभावना थी, इस कारण उन्होने उसको हस्तगत किया था, जालिमसिंहके हस्तगत हुआ मनुष्य कोटेराज्यका कुछ भी अनिष्ट नहीं करसका।

पिंडारी नामक लुटेरोंका दल भी चतुर जालिमसिंहकी ओर विशेप सद्भाव प्रकाशित करता था। प्रधान २ पिंडारे नेताओंके प्रति सम्मान दिखानेसे वे कोटेराज्यका कुछ भी अनिष्टसाधन नहीं करते थे। पिंडारियोंके अनेक नेता जालिमसिंहसे भूवृत्ति पाकर कोटेमें निवास करते थे, इन पिंडारियोंके साथ जालिमसिंहका यहांतक सद्भाव स्थापित हुआ था, कि सन् १८०७ ईसवीमें जिस समय संधियाने विख्यात पिंडारी नेता करीमखाँको बंदी करके ग्वालियरके किलेकी रक्षा की, उस समय जालिमसिंह उस करीमखाँकी

मुक्तिके लिये केवल बहुतसे रुपये देकर ही शान्त नहीं हुए थे, वरन करीमखाँके भविष्यम सच्चरित्रताके लिये वह उसके साक्षी भी हुए। यद्यपि उनके साक्षी होनेके समयमें उनकी अविवेचकताने प्रकाश पाया परन्तु उसीसे सेंन्धियाने जो यथेच्छाचार किये थे उसका फल उसने पाया।

शरणागतका प्रतिपालन करना राजपूत जातिका परम धर्म है। अधिक क्या शत्रुके भी शरण आनेपर राजपूत जाति तन मन धनसे उसको आश्रय देकर उसकी रक्षा करती थी। अन्यान्य राज्योंके प्रधान २ सामन्त अथवा माननीय मनुष्य भी विपत्तिमे पड़कर कोटेमे आय जालिमसिंहके शरणागत होकर आश्रय लेते थे। जालिमसिंह किसी प्रकारसे भी आश्रय देकर शान्त नहीं होते थे। इतिहाससे जाना जाता है कि जालिमसिंह अपनी सामर्थ्यसे भी परे शरणागतका प्रतिपालन कर उसको आश्रय देते थे। मारवाड़ और मेवाड़के बहुतसे सामन्त उसी राज्यके राजकोटमें पड़कर जालिमकी शरणागत हुए, जालिमसिंहने उनको इस प्रकारसे भूवृत्ति दानकी कि वह सामन्त अपने २ देशमें जितनी भूवृत्तिको भोग करते थे वह उसकी अपेक्षा समधिक थी। जिस जातिमें शरणागतका प्रतिपालन करना तथा आश्रय देना महान् धर्म और पुण्यदायक विचारा जाता था, उस जातिमें जालिमसिंहके इस व्यवहारसे वह जितने अधिक प्रशंसित होंगे इसका अनुमान सरलतासे होसकता है। यही नहीं था कि जालिमसिंह उन शरणागतोंको केवल अभय देकर ही ग्रहण करते हो वरन वह अभयप्रार्थियोंके साथ उनके राज्यके विवाद विसम्वादोको भी मिटादेते थे। इसी कारणसे वह रजवाड़ेके सर्वसाधारण मनुष्योंमें "मध्यस्थ" और "शान्ति स्थापक" नामसे विख्यात हुए थे। सद् उपदेशके वशसे हो या किसी राजनैतिक उद्देशके अनुवर्ती होनेसे हो जालिमसिंहने उस मध्यस्थताको करके विशेष यश प्राप्त किया था। इतिहाससे जाना जाता है कि जालिमसिंह कहते हैं, "कि सभी मनुष्य वृद्ध जालिमसिंहके समीप विपत्तिमें पड़कर गये, उनका यह विचार था कि जालिमसिंह इस सामान्य भूखंड कोटेसे सरलतापूर्वक सबकी पालना करनेमें समर्थ है।

इस समय जालिमसिंहके आभ्यन्तरीय राजनीतिके सम्बन्धमें कुछ कहना है। जालिमसिंहके आभ्यन्तरिक शासनकी नीतिको यथास्थानमें वर्णन किया गया है, उसी शासन नीतिको पढ़कर हमारे पाठक अनेक प्रकारसे उनकी आभ्यन्तरीय राजनीतिका परिचय पाचुके हैं। हम यहाँतक जालिमसिंहके दीर्घ शासनके इतिहासको वर्णन करते आये है, उसमें एकवार भी कोटेके अधिराज महाराव उमेदसिंहके नामका उल्लेख करनेका अवसर प्राप्त नहीं हुआ। इसका प्रधान कारण यह था कि यद्यपि महाराव राजा उमेदसिंह कोटेके सिंहासनपर विराजमान थे, परन्तु मूलतः जालिमसिंह सर्वमय कर्तास्वरूपसे अतीत दीर्घकालतक कोटेको शासन करते आये थे। कहा गया है कि राजा उमेदसिंह कोटेके नाममात्रके अधीश्वर थे वह जालिमसिंहके खिलौने या साक्षी गोपालस्वरूप थे—और चतुर चूड़ामणि जालिमसिंहही कोटेके अधीश्वर थे। जालिमसिंहकी आभ्यन्तरी

राजनीतिका उल्लेख करते हुए यहाँपर फिर महाराव राजा उमेदसिंहको उपस्थित करनेकी आवश्यकता होती है।

पाठक गण! महाराव राजा गुमानसिंहने मृत्युके समय अप्राप्त व्यवहार उमेदसिंह को कोटेके सिंहासन पर बैठाल कर जालिमसिंहको उनके अविभावक स्वरूपसे स्थापित किया था, हम जिस समयके इतिहासको इस समय लिखते है वह इसके परवर्ती अर्द्धशताब्दीके अधिक कालकी कथा है। इस दीर्घकालके पीछे भी हम उसी महाराव राजा उमेदको उस अप्राप्त व्यवहारकी समान उन जालिमसिंहके रक्षणावेक्षणपर स्थित देखते हैं। जिस दिन मृत्युशय्यापर शायित गुमानसिंहने जालिमसिंहकी गोदीमें उमेदको स्थापन कर उनको उमेदका अविभावक पद दान किया। उसी दिनसे चतुर चूड़ामणि जालिमसिंह उमेदकी ओर जैसा व्यवहार करते आये थे, और उमेदसिंहके चरित्रोंकी प्रकृति जैसी थी उससे वह एक दिनके लिये भी जालिमसिंहके उस प्रभुत्वको लुप्त करनेके अभिलाषी नहीं हुए। सारांश यह है कि जालिमसिंह जैसी प्रकृतिके मनुष्य थे उसी उच्च क्षमता और स्वाधीनताके साथ राज्यशासन करनेके अभिलाषी थे। उमेद-सिंह भी उनके ठीक उसी प्रकार मनोगत पात्र हुए थे। यद्यपि जालिमसिंह राजकीय प्रत्येक विषय पर महाराव उमेदसिंहका मत ग्रहण करते और उनसे परामर्श करते थे। परन्तु ऐसा होनेपर भी जालिमसिंह अपनी इच्छानुसार ही समस्त-कार्य करते थे, साधु टाड् साहब लिखते हैं कि महाराव उमेदसिंह एक ऊँची श्रेणीके चिन्ताशील मनुष्य और राजपूत स्वभाव सुलभ अनेक गुणोसे विभूषित थे। इनको शिकार खेलनेका अधिक शौक था और श्रेष्ट घोड़ेपर चढ़कर बंदूक चलानेमें अच्छी सामर्थ्य रखते थे। जालिमसिंहने इनके प्रति यहांतक आधिपत्यका विस्तार किया और उनको यहांतक अपने हस्तगत किया कि वह कभी भी जालिमसिंहके हाथसे अपने उद्धार करनेके अभिलाषी हुए थे या नहीं इतना संदेह है। जालिमसिंह किसी प्रकारसे भी किसी विषयमें महाराव उमेदसिंहके ऊपर कभी बल प्रकाश नहीं करते थे, इधर उमेदसिंहकी भी जितनी अवस्था बढ़ती जाती थी उतने ही वह धर्मके अनुशीलनमें लिप्त होते जाते थे, इस कारण उन्होंने कठोर राजकार्यसे छुटकारेकी अधिक चेष्टा की। बुद्धिमान महाराव उमेदसिंह इस बातको भलीभाँतिसे जान गये कि सम्पूर्ण स्वाधीनभावसे राज्यशासन करनेमें ऐसा विशेष प्रयोजन नहीं है, इस कारण उन्होंने शीघ्र ही उस आशाको छोड दिया। उमेदसिंह जितना ही राज्यशासनसे वैराग्य दिखाते थे इतना ही जालिमसिंहकी अनुगत्यता स्वीकार करते जाते थे, जालिमसिंहकी 'क्षमता तथा प्रतापका अधिपत्य उतनी ही अधिकतासे बढ़तागया"।

बुद्धिमान् जालिमसिंह महाराव उमेदसिंहके साथ कैसा व्यवहार करते थे उसके सम्बन्धमें इतिहाससे जाना जाता है कि यदि किसी भिन्नराज्यसे कोई राजदूत कोटेमें चला आवै तो सबसे पहिले उसको महाराव उमेदसिंहके समीप जाना पड़ता था। दूत उमेदसिंहको अपना परिचय देकर उन्हींसे उत्तर पाता था, परन्तु वह उत्तर उमेदसिंह

अपनी इच्छानुसार नहीं देते थे। मंत्री जालिमसिंह जो कुछ लिख देते थे वही दिया जाता था। रजवाड़े वा अन्य किसी स्थानका कोई उच्च सामन्त निकाली हुई अवस्थामें यदि कोटेमें आकर आश्रय अथवा सहायता मांगता तो महाराव उमेदसिंहही उसको आश्रय वा सहायता देते थे, परन्तु सहायताका परिमाण जितना जालिमसिंह नियत करदेते थे उमेदसिंह उसको नही वढ़ा सकते थे। इधर जालिमसिंहका पुत्र अपनी भूवृत्तिको वढ़ानेके लिये प्रार्थना करता तो महाराव उमेदसिंहके विशेष अनुरोध न करनेपर जालिमसिंह उसे नही देसकते थे। वुद्धिमान् जालिमसिंह सभी विपयोंमें महाराव उमेदका मत यहांतक ग्रहण करते कि वह अपने निजका व्यय वढ़ाने पर भी महाराव उमेदसिंहके वारम्वार अनुरोध प्रकाश करने पर भी वह उस व्ययको पूरा करनेके लिये अपनी आमदनीको वढ़ाते थे। यदि परदेशसे कोटेकी राजधानीमें व्यापारीगण वेचनेके लिये घोड़े लाते तो जालिमसिंह सवसे पहिले सर्वोत्तम घोड़ेको खरीद कर महाराजा और उनके पुत्रको देदेते। चिरप्रचलित रीतिके अनुसार राजयकीय समस्त कागज पत्र पुस्तक मोहर और सव प्रकारके राजचिह्न महलके भीतर महारावके निजके सेवकोंकी सावधानीमें रक्खे जाते थे, परन्तु जालिमसिंहकी अनुमतिके विना कोई भी उसे प्रियोग वा व्यवहार नहीं करसकता था। एक दिन महाराव उमेदसिंहके पुत्र कुमारकिशोरसिह जालिमसिहके एकमात्र पुत्र माधोसिंहके साथ एक क्षेत्रमें जिस समय अपने २ घोड़ोंको शिक्षा देरहे थे उस समय किशोरसिंहके प्रति माधोसिंहने अनादर दिखाया, जालिमसिंहने दंडस्वरूपमें अपने पैतृक देश नाणतामें माधोसिंहको भेज दिया। जालिमसिहके इस व्यवहारसे अवश्य ही उनके सुविचार और राजभक्तिने प्रकाश पाया। महाराव उमेदसिहके वारम्वार अनुरोध करने पर उन्होंने पुत्रको क्षमा नही किया।

जालिमसिंहने महाराव उमेदसिंहके साथ प्रकाशमें जिस राजभक्तिको प्रकट किया था उसके सम्वन्धमे वहुतसे प्रवाद प्रचलित हैं। एक समय जालिमसिंह महलमे वैठे हुए राजकीय देवमंदिरमें पूजा कररहे थे। इसी समयमें महाराव उमेदसिंहके पुत्र वहाँ गये। वह यह नहीं जानते थे कि जालिमसिंह वहाँ पूजा कररहे हैं। उस समय शीतकाल था मंदिरकी जमीन कुछ एक भीग रही थी। जालिमसिंह जिस रजाईको कंधेके ऊपर रक्खे हुए पूजा कररहे थे उसी रजाईको पृथ्वीपर आसनकी जगह उन्होने विछा दिया, और राजकुमारको उस पर वैठकर पूजा करनेके लिये कहा। जव पूजा समाप्त होगई तव राजकुमार चले गये जालिमसिंहका जो सेवक उस स्थान पर था उसने विचारा कि जव राजकुमार इस रजाईके ऊपर वैठ गये है तो हमारे स्वामी इसको अपने व्यवहारमें नहीं लावेंगे। इस कारण वह उस रजाईको निकम्मी जानकर एक कोनेमें फैंक देनेके लिये उद्यत हुआ, परन्तु जालिमसिंहने उसके मनके भावको जानकर उसी समय उस रजाईको उसके हाथसे लेलिया, और अपने शरीरपर डालकर "राजकुमारके चरणोंसे यह पवित्र होगई" भक्तिके साथ यह वात कही। इसका सरलतासे अनुमान होसकता है कि अत्यन्त सामर्थ्यवान् मनुष्य यदि ऐसा आचरण

करै तो अत्यन्त विचित्रता है। जालिमसिंहने जिस प्रकार विनय और नम्रता प्रकाश करके अपने प्रवल आधिपत्यका विस्तार किया, ऐसा अन्यत्र दृष्टिमे नहीं आता । सारांश यह है कि चतुरता और नीतिज्ञता ही इसका मूल है ।

जालिमसिंह जैसे परम ज्ञानी विख्यात थे अपने यहाँ सेवक और कर्मचारियोंके रखनेमे भी उसी प्रकारसे विशेष प्राज्ञता दिखाते थे । उनमें इस प्रकारकी एक शक्ति थी जिससे उन्होंने अपने कर्मचारी और सेवकोंको अपने वशीभूत कर रक्खा था । और वह कर्मचारी और सेवकोंके ऊपर विशेष दया प्रकाश करते थे, और उनके साथ मित्रता होजानेसे कोई भी इनका किसी प्रकारका अनिष्ट नहीं कर सकता था, यद्यपि जालिम उन कर्मचारी और सेवकोंके प्रति प्रयोजनीय समस्त अभावको पूरण कर देते थे, और न्यायके साथ उनको प्रत्येक विषयमे सीमावद्ध स्वाधीनता देते थे । परन्तु उनको किसी प्रकार भी स्वेच्छाचारी नही होने देते थे । वह उन कर्मचारियोंको उनके आत्मीय स्वजनोंके प्रतिपालन करनेके समस्त अनुष्ठान करदेते थे, पर्वोत्सवमे, विवाहमें जन्म और मृत्युके समयमे मुक्तहाथसे उनको रुपया देते थे, परन्तु कभी भी उनको इच्छानुसार वलसे वा अन्यायसे धन उपार्जन नहीं करने देते थे । इतिहाससे जाना जाता है कि पठान और महाराष्ट्र पंडित ही उनके यहां सवसे अधिक विश्वासी कर्मचारी थे । इन्होने पठानोंको सामरिक पदपर नियुक्त किया और मरहठोंको राजनैतिक कार्यपर नियुक्त किया। यह अपने स्वजातीय मनुष्यको किसी कार्यमे नियुक्त नहीं करते थे । उनके शासनके शेष समयमे एक मात्र शक्तावत् सम्प्रदायके विशनसिंह कोटेकी फौजदारी पदपर नियुक्त थे। दलेलखाँ और महरावखाँ नामक दो मनुष्य जालिमके अत्यन्त विश्वासी कर्मचारी और मित्र थे । कोटेका विराट किला आगरेके किलेके अतिरिक्त भारतवर्षमे जिसकी वरावर दूसरा नहीं है वही किला दलेलखाँने वनवाया था । उसी दलेलखाँने झालरापाटन नामका अत्यन्त रमणीक नगर वनवाया । कोटेके अन्यान्य समस्त किलोंका भी संस्कार इसी दलेलखाँने करवाया था, जालिमसिंह दलेलखाँको इतना प्यार करते थे वह कहा करते थे कि "दलेलखाँकी मृत्युके पहिले मानो हमारी मृत्यु होजायगी" । महरावखाँ कोटेके पैदल दलके नेता थे । इन्होंने अपनी सुशिक्षासे उस सेनाको अत्यन्त ही रण निपुण कर दिया था । कर्नल टाड्‌ साहव लिखते हैं कि "वह सेनादल प्रत्येक मासमें वीसरोज अर्थात् वीस दिनका वेतन पाता था, और दो वर्षके शेष होनेपर वाकी सव वेतन मिल जाता था" ।

---

(१) कर्नल टाड्‌ साहवने इस स्थानपर टीकेमें लिखा है कि हमारे अधीनमें जालिमसिंहने एक सेनादल इस महरावखाँके अधिनायकत्वमे दिया, उस सेनादलने आठ दिनमें हाड़ौतीसे लगे हुए हुलकरके अधिकारी समस्त देशोंपर अधिकार करलिया था । उस सेनादलने जनरल सरजान मालकामके अधीनमें स्थित सेनादलके साथ मिलकर "सौदी" किलेकी दीवारको लांघकर विशेष वीरता दिखाई थी ।

छठवां अध्याय ६.



कोटेराज्यकी नवीन राजनैतिक अवस्थाका परिवर्तन-बृटिश गवर्नमेण्टके साथ कोटेराज्यकी संधिका सूत्रपात-संधि स्थापनमें जालिमसिंहका अभिमत-पिंडारियोंको दमन करनेके लिये संधिका प्रस्ताव-संधिबंधन-संधिपत्र-महाराष्ट्रनेता कोटेराज्यसे जो कर लेते थे, अंग्रेजी गवर्नमेण्टका वह ग्रहण करना-करकी सूची-पिंडारियोंका युद्ध-उस युद्धमें जालिमसिंहका सहायता करना-उसके पुरस्कारमें कोटेराज्यको बृटिश गवर्नमेण्टका कईएक देश देना-जालिमसिंहके वंशानुक्रमसे कोटेके शासनकर्ता पदपर नियोगपत्रमें गवर्नमेण्टकी सम्मति देना और उसपर हस्ताक्षर करना-उसके सम्बन्धके नियोगपत्र-गवर्नमेण्टके द्वारा कोटेराजको प्रदत्त देशकी राजसनद-दानपत्र-कोटाराज्यके महाराव राजा उमेदसिंह-कोटाराज्यका परिवार-किशोरसिंह-विशुनसिंह-पृथ्वीसिंह-राजकुमारोंके स्वभाव और चरित्र-जालिमसिंहके दो पुत्र माधोसिंह और गोवर्धनदास-दोनोंके स्वभाव और चरित्र-भ्रातृविच्छेद-पिताकी सामर्थ्य घटानेके लिये गोवर्धनदासकी चेष्टा करना-किशोरसिंहके साथ पृथ्वीसिंह और गोवर्धनदासका मिलन-षड्यंत्र-माधोसिंहको फौजदारपदकी प्राप्ति-महाराव उमेदसिंहकी मृत्यु-कर्नल टाड्का कोटेमें आगमन-कर्नल टाड्का राजदरबारमें षड्यंत्रका समाचार पाना-जालिमसिंहको भयंकर पीड़ा होना-आरोग्यप्राप्ति-कर्नल टाड्के द्वारा जालिमसिंहको षड्यंत्रका सम्वाद ज्ञात होना-राजनैतिक विभ्राट-कर्नल टाड्का राजनैतिक आचरण-जालिमसिंहकी सामर्थ्यको लोप करनेके लिये प्रकाशरूपसे चेष्टा करना-कोटेके राजा किशोरसिंहको कर्नल टाड् और जालिमसिंहके प्रस्तावके अनुसार सेनाके द्वारा महलमें बंदकरना-किशोरसिंहका महलको छोड़कर बाहर जाना-कर्नल टाड्का महाराव किशोरसिंहको फिर महलमें लाना-गोवर्धनदासको कोटेसे निकलवाना-कर्नल टाड्के उद्योगसे महाराव किशोरसिंहके साथ जालिमसिंहका फिर संमिलन-महाराव किशोरसिंहका अभिषेक-जालिमसिंहका कोटेसे दंड नामक करको रहित करना ।

इस समय हम कोटेराज्यके इतिहासका एक नवीन अध्याय अंकित करनेके लिये आगे बढ़े है । यवन शासनके पीछे मरहठे पिंडारी इत्यादि अत्याचारी लुटेरे भारतवर्षके शांति-नाशकोंके प्रबल प्रतापके समय चतुर नीतिज्ञ जालिमसिंह कोटेराज्यकी किस भावसे रक्षा करते आये हैं, पहिले अध्यायमें उसका वर्णन भलीभांतिसे किया गया है । जिस समय सामान्य वाणीकीवेशी ईस्टइण्डियाकम्पनीने जगदीश्वरकी कृपासे समस्त भारतमें अपने प्रबल प्रभुत्वका विस्तार कर शासनशक्तिको दृढ़ कर लिया, और देशीय राजाओंकी अवस्थामें अन्तर उपस्थित करादिया इस समय हम उसी समयके इतिहासको वर्णन करनेमें प्रवृत्त हुए है । जिस कार्यसे रजवाड़ोंके राजा एक समय प्रबलप्रतापसे राज्य-शासन कर अक्षयकीर्ति संचय करगये हैं, जिन राजपूत राजाओंने अप्रमेय वीरता, असीम साहस अनुपम शूर वीरता और प्रबल पराक्रम प्रकाश करके अफगानिस्थानतकको जीत लिया था, जिन राजपूतराजाओंने एक समय एक २ पराक्रमी यवन बादशाहकी शासनशक्तिको विचलित किया था, जिन राजपूतराजाओंकी सहायतासे अकबर, शाहजहां औरंगजेब इत्यादि बादशाहोंने भारतके प्रत्येक प्रान्तमें अपनी शासनशक्तिको फैला

दिया था, जिन राजपूत राजाओंसे यवन वादशाह मनही मनमें अधिक भयकरते थे,जिन राजपूतराजाओंके प्रचंड वाहुवलसे भारतवर्षकी अन्य सभी जातियां थर २ कांपती थी वही राजपूतराजा वही राजपूतजाति, विना युद्ध और विना रुधिर वहाये तथा विना आपत्ति किये किस प्रकारसे वृटिश गवर्नमेण्टकी आज्ञा पालनके लिये तैयार हुए, हमारे वुद्धिमान् पाठक कर्नल टाड् साहवकी उक्तिको पढ़ कर इसका अनुमान सरलतासे करसकेंगे'।

कर्नल टाड् साहव लिखते है, कि "सन् १८१७ ईसवीमे जव कि भारतवर्षके गवर्नर जनरल मार्किस आफ हेष्टिंगसने पिंडारियोंके साथ युद्ध करनेकी घोषणा की उस समय घोषणापत्रमे लिखा था कि, पिंडारी लुटेरे दस्युदलके नेता तथा लूटमारकी प्रथा चलानेवालोंका यह उदय हुआ है, यह प्रकाश किया जाता है कि कोई भी इस युद्धके समयमें निरपेक्षभावसे नहीं रह सकैगा" और यह भी घोषणा किया गया कि भारतवर्षके समस्त देशीय राज्योके सर्वसाधारणकी मंगल कामनाके लिये जब उन लुटेरे पिंडारियोंके नाश करनेकी आवश्यकता हुई है, तव जो कोई अंग्रेजोंको सहायता न देगा उसे अंग्रेजोंका शत्रु समझा जायगा। राजपूत राजा हमारी समान शांति और सुशासन स्थापन करनेके विशेष अभिलाषी थे, इस कारण उनको हमारे साथ रक्षण, पीड़न संधि स्थापन करनेके लिये इस प्रकारसे वुलाया गया। और इस संधिवंधनसे वह चिरकालके लिये लूटनेवाले तस्करोंके हाथके छुटकारा पासकेंगे यह भी उनको सूचना दीगई, और इसी उपकारके वदलेमें वे हमारी शासनशक्तिकी अधीनता स्वीकार करैं, और हम उनके राज्यकी रक्षाका भार ग्रहण करते है, इस कारणसे उनको राज्यकी आमदनीके कितने ही अंश कर स्वरूपमें देने होगे,यह भी कहा गया"।

कर्नल टाड् साहवकी उक्त उक्ति भलीभाँति प्रकाश कररही है कि राजपूत राजाओंकी अवस्था शोचनीय होगई थी, इसीसे राजपूत जातिका वह जगत्‌विख्यात साहस, शूरता वीरता पराक्रम एकवार ही लुप्त होगया था। उन्ही राजपूतोंके सिंहासनो पर राजपूत राजाकी वीरता पर दोष लगानेवाले वैठे थे। गवर्नमेण्टने विना युद्ध किये इसीसे उन सवको वड़ी सरलतासे अपनी अधीनतामें वॉध लिया। राणा प्रताप-महाराज जसवन्त महाराज जयसिंह इत्यादिकी समान चिरस्मरणीय राजपूत राजा यदि उस समय जीवित होते तो पिंडारियोंके भयसे ऐसी अधीनताको न स्वीकार करते।

सरकारके वुलानेसे राजपूत राजाओंने एक एक करके वृटिश गवर्नमेण्टके साथ सन्धिबंधनसे आवद्ध होकर करद पदको ग्रहण किया। राजस्थानके अन्य राज्यके इतिहासमें पाठक उसको पढ़चुके हैं। उक्त आवाहन पत्रको पाकर जालिमसिंहने किस प्रकारका व्यवहार किया, उसके सम्वन्धमें कर्नल टाड् साहव लिखते हैं कि "सूक्ष्म दृष्टि जालिमसिंह शीघ्र ही समझ गये थे कि वृटिश गवर्नमेण्ट उस प्रस्तावको पूर्ण करनेमें यथेष्ट उपकार दिखावैंगी, और उस प्रस्तावके पूर्ण करनेमें सम्मान भी अधिक प्राप्त होगा। उसीके अनुसार उनके दूतने सवसे पहिले अंग्रेजी गवर्नमेण्टके साथ संधि-वंधन स्थापित कर लिया। शीघ्र ही समस्त रजवाड़े भी वृटिश गवर्नमेण्टके साथ मिलगये।

"उस संधि बंधनके सम्बन्धमें आचिसन साहबने अपने ग्रंथमें लिखा है, कि सन् १८१७ ईसवीमें पिंडारियोंका नाश करनेके लिये जिन समस्त राजपूत राजाओंने बृटिश गवर्नमेण्टकी सहयोगिता की थी। जालिमसिंहके द्वारा सन् १८१७ ईसवीके दिसम्बर मासमें कोटेके अधीश्वरके साथ एक संधिबंधन तैयार हुआ।उस संधिमें बृटिश गवर्नमेण्टने बाहरी शत्रुओंके आक्रमणसे कोटे की रक्षाका भार ग्रहण किया, कोटेसे मरहठोंको जो कर पहिले मिला करता था अब वह कर बृटिश गवर्नमेण्टको मिला करैगा। यह नियत किया गया। सेंधियाको कोटेसे जो करांश मिलता था बृटिश गवर्नमेण्टने उसके सम्बन्धमे उसके साथ स्वतंत्र व्यवस्था की, और महाराव आवश्यकतानुसार अंग्रेजगवर्नमेण्टको सेनाकी सहायता देंगे, यह भी निश्चय हुआ"। ❋

हमने आचिसन साहबके ग्रन्थसे इस संधिपत्रको नीचे प्रकाशित किया है,।

संधिपत्र।

पहली धारा-एक ओर बृटिश गवर्नमेण्ट और दूसरी ओर महाराव उमेदसिंहबहादुर और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिशिक्तोंमें चिरस्थाई मित्रता संधि सम्बन्ध और समस्वार्थ विराजमान किया जायगा।

दूसरी धारा-इस संधिपत्रमें हस्ताक्षर करनेवालोके शत्रु मित्र एक दूसरेके शत्रु-मित्ररूपसे गिने जांयगे।

तीसरी धारा-बृटिश गवर्नमेण्ट कोटाराज्य और उनके अधीनके देशोंसे अपने अधीनमें रक्षण वे क्षणका भार ग्रहण करनेके लिये तैयार हुई है।

चौथी धारा-महाराव और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त चिरकालतक बृटिश गवर्नमेण्टकी प्रभुता स्वीकार करैगे और इससे पहिले कोटाराज्यका जो अन्य सब राज्योके साथ सम्बन्धबन्धन था वह सब राजा अथवा राज्य इसके पीछे कोई सम्बन्ध नहीं रख सकेंगे।

पांचवी धारा-बृटिश गवर्नमेण्टकी सम्मतिके अतिरिक्त महाराव और उनके उत्त-राधिकारीगण तथा स्थलाभिषिक्तगण अन्य किसी राजा वा राज्यके साथ किसी प्रकारका संधिबंधन स्थापन नहीं करसकेंगे। परन्तु वह अपने मित्र और कुटुम्बी राजाओंके साथ सांसारिक पत्रव्योहार करसकेंगे।

छठवी धारा-महाराव और उनके उत्तराधिकारीगण तथा स्थलाभिषिक्तगण किसी राज्यपर अत्याचार वा आक्रमण नहीं करसकेंगे, और यदि दैवात् किसीके साथ कुछ झगड़ा उपस्थित होजाय तो वह झगड़ा चाहै महारावकी ओरसे हो चाहै अन्य किसी राजाकी ओरसे उस विवादकी मध्यस्थताका भार बृटिश गवर्नमेण्टको ही रहेगा।

सातवी धारा-कोटेराज्यसे इतने दिनोंतक जो कर महाराष्ट्र राजाओंको अर्थात् पेशवा, सेंधिया, हुलकर और पवारों देते थे,इसके पीछे चिरकालके लिये वह समस्त कर दिल्लीमें बृटिश गवर्नमेण्टके उसके साथ लगी हुई सूचीके अनुसार देने होंगे।

❋ Aitchisonr?s Treaties

आठवीं धारा-अन्य कोई राजा कोटेराज्यसे और किसी प्रकारके करका दावा नहीं करसकेगा, और यदि अन्य कोई राजा उस प्रकारके करके लिये दावा करेगा तो वृटिश गवर्नमेण्ट उस दावीको उत्तर देगी ऐसा निश्चय होचुका है।

नववीं धारा-वृटिश गवर्नमेण्टके अनुरोधके अनुसार कोटेको यथाशक्ति सेनाकी सहायता करनी होगी।

दशवीं धारा-महाराव, उनके उत्तराधिकारी और स्थलाभिषिक्तगण उनके राज्यमें पूर्ण शासक क्षमता युक्त अधीश्वररूपसे रहेंगे, और वृटिश गवर्नमेण्ट अपनी दीवानी और फौजदारीकी शासनशक्ति कोटेराज्यपर नहीं फैला सकेगी।

ग्यारहवीं धारा-ग्यारह धाराओंसे युक्त यह संधिपत्र दिल्लीमें लिखा गया और एक ओर मिष्टर चार्लस थियोफिलास मेटकाफ और दूसरी ओर महाराज शिवदानसिंह, साह जीवनराम, और लाला फूलचंदके हस्ताक्षर सहित यह मोहरांकित हुआ। और यह महामहिमवर गवर्नर जनरल, और महाराव उमेदसिंह और उनके शासनकर्ता राजराणा जालिमसिंहके स्वीकार करने पर आजकी तारीखसे एक महीनेमें लिया जायगा।

दिल्ली
२६ दिसम्बर सन् १८१७

(हस्ताक्षर) सी टी. मेटकाफ।
रेसिडेण्ट।
महाराज शिवदानसिंह।
फूलचँद।
रावराजा उमेदसिंहबहादुर।
राजराणा जालिमसिंह।
(हस्ताक्षर) हेष्टिंग्स्।

सन् १८१८ ईसवीकी २६ जनवरीको ऊचरनामक स्थानके डेरोंमें महामान्यवर गवर्नर जनरलसे यह संधिपत्र स्वीकृत हुआ।

(हस्ताक्षर) जे० आडाम।
गवर्नर जनरलके सेक्रेटरी।

ऊपर लिखा हुआ संधिपत्र प्रकाशित करता है कि सन् १८१८ ईसवीकी २६ वीं जनवरीसे कोटेराज्यने उमेदसिंहके वंशानुक्रमसे अंग्रेज गवर्नमेण्टकी अधीनता स्वीकार करली, और इतने दिनसे जो महाराष्ट्रदल बलपूर्वक उनके राज्यपर अत्याचार और उपद्रव करता था, और उनसे कर लेता था, इतने दिनोंमें उसकी शान्ति होगई, सेन्धिया हुलकर पँवार और पेशवा यही चार प्रधान नेता कोटेराज्यसे जो कर ग्रहण करते थे कोटाराज उस करको नवीन प्रभु अंग्रेज गवर्नमेण्टको देनेके लिये तैयार होगा। महाराष्ट्रगण कोटेराज्यसे कितना कर लेते थे हम आचिसन साहबके ग्रन्थसे उसकी सूची नीचे प्रकाश करते हैं।

(महाराष्ट्रोंको इससे पहिले जो कर दिया जाता था—उसकी सूची।)

(१) कोटा, (२) ७ काटडियों और (३) शाहाबाद इन तीन परगनोंके लिये स्वतंत्र करदेना होता था।

कोटेका कर।

नगद मुद्रा	२००००० रुपया।
द्रव्यादि	१००००० ,,
जोड़	३००००० ,,
द्रव्यके हिसावसे घटाकर मूल्य	२०००० ,,
नगद बचत	२८०००० रुपया।
दो लाख अस्सी हजार, चांदोड़ी उज्जयनी, एवं इन्दोरी रुपयेके कारण प्रतिसैकड़ा ८ रुपया वट्टेके हिसावसे घटत	२२४०० रुपया।
शेष वचा	२५७६०० रुपया।

दो लाख सत्तावनहजार छः सौ गुमानसाही रुपया, दिल्लीका दो लाख चौवालीस हजार सातसौ रुपयेकी समान।

उक्त रुपया निम्नलिखित प्रकारसे विभक्त होता था।

सेन्धियाका अंश।

नगद	७७००० रुपया।
द्रव्य	३८५०० ,,
जोड़	११५५०० ,,
द्रव्यके हिसावसे रुपये करनेम कमी	७७०० ,,
नगद	१०७८०० ,,
एक लाख सात हजार और आठसौ उज्जयनी चांदोड़ी एवं इन्दौरी रुपया। उक्त रुपया आठ रुपया सैकड़े वट्टे पर वना	८६२४ ,,
वाकी गुमानसाही रुपया	९९१७६ रुपया।

हुलकरका प्राप्त कर उक्त प्रकारसे सेन्धियाकी समान था।

पँवारका अंश।

नगद	४६००० ,,
द्रव्य	२३००० ,,
	६९००० ,,
द्रव्यहिसावसे रुपया वनानेमें घटी	४६०० ,,
नगद	६४४०० ,,
प्रतिसैकड़ा आठ रुपया घटीसे देशी रुपया वनानेमें घटी।	५१५२ ,,
शेष गुमानशाही	५९२४८ रुपया।

सातोकोटड़ियोंका देय कर।

नगद	बूँदीका	२२१५८ रुपया।
घटी सैकड़ा ५ के हिसावसे		११०८ ,,
		२१०५० रुपया।
	गुमानसाही	२११०५० ,,
	दिल्लीके सम तुल्य	१९९९७॥० रुपये।

विशेष विवरण।

प्रथम कोटरि

आंतरदाका कर . .. .बूँदीका	३८०० रुपया।
घटी (५ सैकड़ा हि०)	१९० ,,
बाकी गुमानसाही रुपया	३६१० ,,

उक्त रुपया निम्न लिखित दो वरावर अंगोमे विभक्त होता था,

सेन्धियाका अंश	१८०५ रुपया.
हुलकरका अंश	१८०५ ,,
	३६१० ,,

दूसरी कोटरि

वलवानका कर .... बूँदीका	१००० रुपया.
घटी	५० ,,
गुमानसाही	९५० ,,

उपरोक्त रुपया निम्नलिखित तीन भागोमे विभक्त होता था,

सेन्धियाका अंश	४०० रुपया.
हुलकरका अश	४०० ,,
पवारका अंश...	१५० ,,
	९५० ,,

३,४, एव पांचवीं कोटरि

करवर गैंता और पीपलादाका कर ... बूँदीका	३५६० रुपया.
घटी ५ सैकड़ा हिसाबसे...	१७८ ,,
गुमानसाही रुपया	३३८२ ,,

उक्त रुपया निम्नलिखित अंशोमे विभक्त होता था,

सेन्धियाका अश	१५२० रुपया.
हुलकरका अंश	१५२० ,,
पॅवारका अश	३४२ ,,
	३३८२ रुपया.

छठवीं और सातवीं कोटरि

इन्द्रगढ़ और खातोलीका कर	....	....	...	१३७९८ रुपया.
५ सैकड़ा हिसाबसे बट्टा	....	...	....	६९० ”
			गुमानसाही	१३१०८ ”

सेंधिया और हुलकर उक्त रुपया बराबर दो अंशोंमें विभाग करलेते थे।

शाहबाद देशका कर।

पेशवाको उक्त परगनेसे ठीक कितना रुपया कर मिलता था इसका निश्चय नही जाना जाता परन्तु ऐसा अनुमान है कि वे २५००० रुपये लेते थे, उसका आधा अंश नगद और अपरार्द्धांश द्रव्य लिया जाता था।

(हस्ताक्षर) सी० टी० मेटकाफ।
राव राजा उमेदसिंह।
राजराणा जालिमसिंह।
महाराज शिवदानसिह।
फूलचँद।

ऊपर लिखेहुए संधिपत्रको पढ़कर पाठक भलीभाँतिसे जानगये होंगे कि सन् १८१८ ईसवीके शेष भागमें रजवाड़ेके अन्यान्य राज्योंकी समान कोटेके भाग्यका चक्र भी बदल गया था।

मरहठे, पठान और पिंडारियोकी अधीनताकी जंजीरको तोड़कर जालिमसिंह बृटिश गवर्नमेण्टके अधीन हुए। यद्यपि सरकारने देशीय राजाओंको मरहठे और पिंडारियोंके हाथसे उद्धार कर लिया था परन्तु इतिहास इसको प्रमाणित करता है कि गवर्नमेण्टने केवल अपनी सेनाके द्वारा ही नही वरन अपनी राजनीतिके बलसे देशीय राजाओंकी सेनाकी सहायता लेकर पिंडारियोंका नाश करके अपना प्रताप प्रबल करलिया था जो राजपूत राजा गवर्नमेण्टके साथ संधि करके उनकी अधीनताके पाशमें बँधगये; और चिरकालतक उनकी अधीनतामें रहना स्वीकार किया; उनकी अवस्था शोचनीय होने पर भी वह यदि एकता अवलम्बन करके महाराष्ट्र और पिंडारियोंपर आक्रमण करते तो सरलतासे महाराष्ट्र और पिंडारोंका प्रताप और प्रभुत्व लुप्त करसकते थे, पर इनके लिये एकता होना असम्भव था। जैसे भी हो इस समय इतिहासका ही अनुसरण करना होगा।

कर्नल टाड् साहबने उक्त संधिबंधनका उल्लेख करके लिखा है; कि इस समय अवसर पाकर समस्त भारतवर्ष हाथमें अस्त्र लेकर उठा। दो लाख मनुष्य एक उद्देशसे एक साथ मिलकर भारतवर्षसे लुटेरे अत्याचारी और पीड़ित करनेवालोकी रीतिको जड़से उखाड़नेके लिये धावमान हुए। हाड़ौती देशकी सीमामें ही सबसे पहिले पहिल समर होनेकी सम्भावना थी, इस हेतु जालिमसिंहके समीप एक अंग्रेज एजेण्टका भेजना अत्यन्त आवश्यक हुआ, कोटेके राज्यसे सेना सामन्त और रसद आदि जहाँतक मिल

सके उसको संग्रह करके शत्रुके साथ उन सबका प्रयोग कर शत्रुओको कोटे वा उसके आसपासके देशोंसे भगानेके लिये उक्त एजेण्ट तैयार हुआ, कोटेसे उक्त एजेण्टको इतनी सहायता मिली कि उसने जालिमसिंहके डेरोमे पहुँचते ही पांच दिनमे कोटेराज्यके प्रत्येक घाट वा प्रधान २ मार्गके मुखपर सेनाके डेरे स्थापित किये, इसी समयमे जनरल सर जान मालकम नर्मदाके पार होकर दक्षिणसे बहुत थोड़ी सेनाले अगणित शत्रुओसे घिर-कर भी उत्तरकी ओरको जारहे थे, कोटेसे पांच सौ पैदल अश्वारोही और चार तोपैं उक्त जनरलकी सहायताके लिये गई थी, वृटिश भारतके शासन इतिहासमें इस उज्वल और घटनापूर्ण समयमे जब गंगाजीके किनारेसे समुद्रतकके विस्तारित देश रणमदसे उन्मत्त होगये थे, उस समय एकमात्र जालिमसिंहके डेरोमे ही समर चलानेका प्रधान केन्द्रस्थल होगया, उस समय जालिमसिंहने अंग्रेज गवर्नमेण्टकी यथाशक्ति सहायता करनेमें कसर नहीं कि। सेनासे घोडोसे और रसदआदिके द्वारा उन्होंने उस समय पिंडारियोंका नाश करनेके लिये सब प्रकारसे सरकारकी सहायता की"।

इतिहाससे जाना जाता है कि यद्यपि जालिमसिंहने प्रतापशाली वृटिश गवर्नमेण्टके साथ कोटेका भाग्य विजडित किया था परन्तु उनके अधीनमे जो मरहठे मंत्री और कर्मचारी नियुक्त थे उन सभीने एक मुखसे अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ मित्रताके न करनेका अनुरोध किया। परन्तु जालिमसिंह भलीभांतिसे जानगये थे कि अंग्रेजोकी शासनशक्ति क्रमशः जिस भावसे प्रबल होगई है उससे अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ मित्रता किये विना अन्तमे अनिष्ट होनेकी सम्भावना है। इसी लिये अपनी तीक्ष्णबुद्धिसे भारतवर्षकी राजनैतिक अवस्था परिवर्तनोन्मुख देखकरही उन्होंने पिंडारियोका नाश करनेमे सम्पूर्ण सहायता की। पिंडारियोका नाश करनेके पीछे गवर्नमेण्टने जिन देशोंपर अपना अधिकार करलिया था उनमें हुलकरके अधिकारी चार देश जो जालिमसिंहने हुलकरसे जमामें लिये थे, उन चारो देशोका राजस्वत्व जालिमसिंहको गवर्नमेण्टने देदिया। परन्तु नीतिज्ञ जालिमसिंहने अपने पुरस्कार स्वरूप उन चारों देशोंको किसी प्रकारसे भी न लेकर अपने प्रभु कोटापति महाराव राजा उमेदसिंहके नामसे उनको देनेके लिये कहा। गवर्नमेण्टने जालिमसिंहके इस विश्वासी व्यवहारको देखकर अत्यन्त संतुष्ट हो शीघ्र ही उनकी कामनाको पूर्ण करदिया।

सन् १८२७ ईसवीके २६ दिसम्बरको गवर्नमेण्टके साथ जिस समय कोटेराज का संधिबंधन समाप्त होगया। उस समय जालिमसिंहके मंत्रित्व पक्षमे गवर्नमेण्टने

---

(१) महात्मा टाड् साहब ही अंग्रेजोंके एजेण्ट होकर कोटेमें भेजे गये थे, वह इस स्थानपर अपने टीकेमे लिखते हैं कि "इस इतिहासके लेखक उस समय सेन्धियाकी सभामें एसिसृण्ट रेसिडेण्ट पदपर नियुक्त थे, लार्ड हेष्टिंगसने उनको राजराणा जालिमसिंहके निकट भेजा। वह (टाड्) सन् १८१७ ईसवीकी १२ वीं नवम्बरको ग्वालियर छोड़कर २३ तारीखको कोटेसे बारह कोश दक्षिणके पूर्वमें रेवता नामक स्थानमें जालिमसिंहके डेरोंमें गये"।

किसी प्रकारका भी हस्ताक्षेप नहीं किया, ऐसी विधि, वा संधिमें ऐसी कोई धारा नहीं रक्खी गई। परन्तु जालिमसिंहके द्वारा गवर्नमेण्टने विशेष सहायता पाकर सन् १८१८ ईसवीकी २६ फरवरीको उक्त संधिपत्रमें निम्नलिखित धाराको और भी नियुक्त किया।

"संधि बंधनमें आवद्ध होकर दोनों पक्ष इस बातको स्वीकार करते हैं कि कोटेराजके अधीश्वर महाराव उमेदसिंहके परलोक जानेके पीछे कोटाराज्य उनके बड़े पुत्र और उत्तराधिकारी महाराज किशोरसिंहके वर्तमानमें और अवर्तमानमें उनके वंशधर उत्तराधिक्रमसे चिरकालतक उस राज्यको भोगते रहेंगे, और कोटेराज्यकी समस्त विभागकी शासन सामर्थ्य राजराणा जालिमसिंहके ही हाथमें रहेगी, और उनके परलोक जानेके पीछे उनके बड़े पुत्र कुमार माधोसिंह और उनके पीछे उनके वंशधर उत्तराधिकारी क्रमसे उक्त शासन सामर्थ्यको पावेंगे।

दिल्ली,
२० फरवरी सन् १८१८ ई०

(हस्ताक्षर) सी. टी. मेटकाफ।
महाराव राजा उमेदसिंह बहादुर।
राजराणा जालिमसिंह।
महाराज शिवदानसिंह।
फूलचंद।
गोविन्दराम।

मन्तव्य—यह अतिरिक्त धारा महामहिमवर गवर्नर जनरलसंन्स१८१८ईसवीकी १ मार्चको लखनऊमें स्वीकृत हुई।

(हस्ताक्षर) जे. आडाम.
गवर्नर जनरलके सेक्रेटरी.*

इस अतिरिक्त धाराने जितनी अधिकतासे कोटेराजका महान् अनिष्ट किया, पाठकगण उसको यथास्थान पढ़ेंगे।

पिंडारियोंके नाश करनेके सम्बन्धमें विशेष सहायता करनेसे गवर्नमेण्ट जालिमसिंहको चार परगनोंका राजस्वत्व एक वार ही देनेके लिये तय्यार हुई थी, उसे हमारे पाठक पहिले ही पढ़ चुके हैं।

परन्तु जालिमसिंहके स्वयं उस पुरस्कारको ग्रहण करनेमें असम्मत होनेसे उनकी कामनाके अनुसार कोटेराज उमेदसिंहको वह पुरस्कार दिया गया, हमने यहांपर उसकी सनद प्रकाश की है।

सनद।

"जिस कारणसे गवर्नमेण्ट और कोटेके अधीश्वर महाराव उमेदसिंहमें मित्रता स्थापित हुई है, और उक्त महारावने अंग्रेज गवर्नमेण्टसे जो विशेष सहयोगिता की है वह सर्वसाधारणमें विशेषरूपसे विदित है। उस मित्रताके चिह्न स्वरूप महामहिमवर मार्किस आव हेष्टिंगस सकोन्सिल गवर्नर जनरल बहादुरने कप्तान टाड्के द्वारा निम्नलिखित

* Aitchison's treaties Vo IV.

परगनोका राजस्वत्व ऊपर लिखे हुए महारावको दिया है और उसके साथ सन् १८१८ ईसवी २६ दिसम्बरको दिल्लीमे जो संधिबंधन होगया है उसीके अनुसार महारावके समीपसे शाहावाद परगनाका जो कर मिलता है उस करके देनेसे उनको छुटकारा मिलगया है, वह और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त गण उसे वंशानुक्रमसे भोग करैं।

इसके पीछे महाराव उक्त स्थानोके प्रभूस्वरूपसे अपनेको विचारैगे, और दयालुताके व्यवहारसे वहांकी प्रजाके अनुराग भाजन होकर उनको अपने शासनके अधीनमें रक्खैंगे। अन्य कोई भी उसमे हस्ताक्षेप नहीं करसकेगा।

परगना	डींग।
”	पचपाड़।
”	अहवार।
”	गंगरा।

सन् १८१९ ईसवीकी २५ वीं सितम्बरको सकौन्सिल गवर्नर जनरलके द्वारा हस्ताक्षर सहित और मोहरांकित हुआ ”।

यद्यपि गवर्नमेण्टके साथ मित्रता होनेके पहिले राजराणा जालिमसिंह कोटेराजकी समस्त राजशक्तिको अपने हाथमे रखकर एकाधिपत्य करते आये थे, परन्तु ऐसा होनेपर भी महाराव उमेदसिंह वहादुर अपनेको जालिमसिंका खिलौना नहीं जानते थे, परन्तु वृटिश गवर्नमेण्टके साथ संधिबंधन समाप्त होनेपर जिस दिन महाराज उमेदसिंहको कोटेका नाममात्रका अधीश्वर और जालिमसिह तथा उनके वंशधरोका कोटेकी समस्त शासनशक्ति युक्त अधीश्वर कहकर स्वीकार करलिया उसी दिनसे महाराव उमेदसिंह मानो प्रकृत क्रोड़ामे विघोषित हुए, वृद्ध महाराव उमेदसिंहने यद्यपि उसी कारणसे किसी प्रकारका उपद्रव वा आपत्ति उपस्थित नहीं की, तथा अपना तिरस्कार जानकर किसी प्रकारसे भी असंतोष प्रकाश नहीं किया, और अपने भविष्यके उत्तराधिकारियोपर महा अनिष्टकारक बीज बोताहुआ देखकर किसी प्रकारका प्रतिवाद भी नहीं किया, परन्तु अन्तमे उसी सूत्रसे कोटेराज्यमे महा विभ्राट उपस्थित हुआ।

कर्नल टाड् साहब लिखते हैं कि “ सन् १८१९ ईसवीके नवम्बर मासतक सम्पूर्ण शांति विराजमान रही, परन्तु उसके पीछे महाराव उमेदसिंहकी मृत्यु होनेपर सिंहासनके अधिकारियोंके हृदयमे नवीन भावका उदय होनेसे राजराणा जालिमसिह ऐसी शोचनीय अवस्थामें पड़े कि वह ठीक समयमे अंग्रेज गवर्नमेण्टकी सहायता न पाकर एकमात्र अपनी चतुरबुद्धिके बलसे किसी प्रकार भी उस विपत्तिसे उद्धार प्राप्त न कर सके।” महाराव उमेदसिंहकी मृत्युके समयमें कोटेराजके परिवारकी अवस्थाके सम्बन्धमें साधू टाड् साहब लिखते हैं, “ समय महाराव उमेदसिंहके तीन कुंमार (१) किशोरसिंह (२) विशनसिंह और (३) पृथ्वीसिंह जीवित थे। युवराज किशोरसिहकी अवस्था इस समय चौवालीस वर्षकी होगई थी। उनके सभाव चरित्र

मृदु और नम्र थे, यद्यपि उन्होंने बाल्यावस्थासे ही उत्तम शिक्षा पाकर मनुष्य समाजसे पृथक् हो सरलतासे स्वजातीय धर्म कर्म पद्धतिके सम्बन्धमें अद्वितीय ज्ञान प्राप्त किया परन्तु मनुष्य समाजके सम्बन्धमें वैसी अभिज्ञता प्राप्त करनेमें समर्थ न हुए। वह अपने एक महोच्च पैतृक वीरवंशके इतिहासके एक गाढ़ पंडित थे, और जातीय गौरव और जातीय महोच्चभाव उनके हृदयमें इस प्रकारसे भर रहा था कि वह सरलतासे अपने वंशके पूर्व गौरवको स्मरण कर गर्व कर सकते थे, परन्तु वह स्वभावसे ही नम्रतादि गुणों और शिक्षासे विभूषित हो अपने धीरस्वभाव पिताकी समान शान्त बुद्धि होगये थे, इस कारण उन्होंने गौरवगरिमाकी सामर्थ्य और प्रभुत्वकी ओर ध्यान न देकर कोटा राजको जालिमसिंहके द्वारा शासित होनेमें कोई आपत्ति न की।

दूसरे राजकुमार विशनसिंह किशोरसिंहकी अपेक्षा तीन वर्ष छोटे थे, और वह भी बड़े भाईकी समान नम्र प्रकृति विद्वान् और सीधे थे। वह भी जालिमसिंहकी भाँति सरल और श्रद्धालु थे पर तीसरे राजकुमार पृथ्वीसिंह जिनकी तीस वर्षकी अवस्था से कम थी, वह वीर तेजा हाड़ाजातिके आदर्शस्वरूप और राजपूतस्वभाव सुलभ शस्त्र भक्त थे।

महाराव उमेदसिंहके तीनों कुमारोंमें एकमात्र पृथ्वीसिंह ही जालिमसिंहको राज्यका सर्वमय कर्ता हर्ता देख कर और पिता उमेदसिंहको क्रीड़नस्वरूपसे जालिमसिंहकी आज्ञापालनमें नित्य तत्पर देखकर मन ही मनमें महा असंतुष्ट हुए; और वह अपने नेत्रोंमें उनको तुच्छ देखने लगे। इस लिये उन्होंने जालिमसिंहके हाथसे अपना और अपने वंशका उद्धारसाधन करने वा उनके लिये जीवनतक देनेका संकल्प किया। तीनों राजकुमार परस्पर परम शोभाकी शृंखलामें बँधकर प्रीति और स्नेहसे अपना समय व्यतीत करते थे। परन्तु दूसरे राजकुमार विशनसिंह जालिमसिंहके पुत्र और उत्तराधिकारियोंके प्रति अधिक सद्व्यवहार करते थे, बहुतोंके मनमें इस प्रकारके संदेह उपस्थित होते थे कि इनमें अवश्य ही कोई भीतरी भेद है। प्रत्येक राजकुमारको वार्षिक पचीस हजार रुपये आमदनीवाली भूमिका अधिकार मिला था, वह अपने २ कर्मचारियोंको उन देशोंमें सावधानीसे रखते थे।

राजराणा जालिमसिंहके दो पुत्र थे। माधोसिंह और गोवर्धनदास। बड़े माधोसिंह उनकी विवाहिता स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे और गोवर्धनदास एक जार स्त्रीसे थे। परन्तु गोवर्धनदाससे जालिमसिंह अधिक स्नेह करते थे, और उन्होंने अपने भविष्य उत्तराधिकारी माधोसिंहकी समान उनको भी अधिक सामर्थ्य दी थी। हम जिस समयका वृत्तान्त लिखते हैं उस समय माधोसिंहकी अवस्था ४६ वर्षकी थी। माधोसिंहकी मूर्तिको देखकर उनको प्रतापशाली कहनेका बोध नहीं होता था बरन् आलसी और गर्वित कहना ठीक होता था। विशेष करके महाराव उमेदसिंह माधोसिंहको बालकपनसे ही अधिक श्रेष्ठ जानते थे, और माधोसिंहकी प्रत्येक प्रार्थना बिना बाधा दिये पूर्ण करते थे, इसीसे उनके चरित्र इस प्रकारके हुए, विशेष करके

थोड़ी अवस्थामे ही माधोसिंह शासनशक्तिको प्राप्त होकर अर्थात् जिस समय जालिमसिंह मेवाड़से चलकर महलको छोड़ कोटेराज्यमे भ्रमण करनेके लिये गये उस समय माधोसिंहको कोटेका फौजदार पद दिया गया था, इससे वह अधिक गर्वित होगये । उनके उस फौजदार पदपर नियुक्त होते ही समस्त सेनाके वेतन आदि देनेका भार उनके हाथमे सौंपागया । उसी कारणसे वहुतसा धन उन्होने अपने हाथमें रक्खा, परन्तु राज्यके अन्यान्य कर्मचारियोंके ऊपर जैसी शासन दृष्टि थी माधोसिंहके ऊपर वैसी दृष्टि नहीं थी । कोई भी साहस करके माधोसिंहके विरुद्ध कुछ कह नहीं सकता था । इधर माधोसिंहने वहुतसा धन अपने हस्तगत देख उस साधारण धनका जिस भाँति अपव्यय किया उस कारणसे इनके ऊपर वहुतोंको संदेह हुआ । इन्होने उस धनसे अत्यन्त सुन्दर रमणीक वगीचा वनवाया, उत्तम घोड़े मोल लिये, जलविहार करनेके लिये सजीहुई नौकाएं वनवाई, राजकुमार यह देखकर अपनी उन सब विषयोंमें हीनता मानते थे । उधर माधोसिंह भी जैसे महा मूल्यवान् वस्त्रोंका व्यवहार करते थे, महाराव उमेदसिंह भी उस प्रकारके वस्त्र नहीं पहरते थे । ऐसा जानाजाताहै कि माधोसिंहके पिता जालिमसिंह अपने पुत्रको इस प्रकार विलासी और अधिक खर्चालू देखकर नित्य उपदेश देते थे परन्तु उनके इस उपदेशका कुछ फल नहीं हुआ ।

उस समय गोवर्द्धनदासकी अवस्था सत्ताईस वर्षकी होगई थी । गोवर्द्धनदास एक चतुर, साहसी, बुद्धिमान् और चंचल पुरुष थे । माधोसिंह राजपरिवारके साथ जैसा असद्व्यवहार करते थे उसी भांति गोवर्द्धनदास राजपरिवारके प्रति भक्ति प्रीति और स्नेहपूर्ण व्यवहार करते थे, उसीसे गोवर्द्धदासके साथ राजकुमारोंकी विशेष मित्रता होगई । विशेष करके वीरतेजस्वी पृथ्वीसिंहके चरित्रोंके साथ गोवर्द्धनदासके चरित्रोंकी ऐक्यता होनेसे दोनोंमें विशेष मित्रता उत्पन्न हुई, गोवर्द्धनदास जालिमसिंहकी वृद्ध अवस्थाके पुत्र थे, इस कारण जालिमसिंह स्वभावसे ही माधोसिंहकी अपेक्षा गोवर्द्धनदाससे अधिक स्नेह करते थे । इसी कारणसे उन्होंने गोवर्द्धनदासको " प्रधान " पदपर नियुक्त किया और गोवर्द्धनदास राज्यके कृषि विभागके कर्ता हुए । गोवर्द्धनदासके उस पदपर प्रतिष्ठित होते ही राज्यका समधिक धन उनके हाथमें प्राप्त हुआ । अधिक क्या कहैं माधोसिंह और गोवर्द्धनदासमे परस्पर कुछ भी सद्भाव नहीं था। वरन वे सदा परस्परमे शत्रुता और झगडा करते रहते थे।कर्नल टाड् साहव लिखते हैं कि जालिमसिहने चतुर और राजनीतिज्ञ होकर भी दोनो पुत्रोंको रीतिके अनुसार शिक्षा न दी इसीसे अतमे उनको वहुत दु.ख उठाना पड़ा था।

हमने ऊपर जिस समयके राजपरिवार और जालिमसिहके परिवारका वृत्तान्त वर्णन किया है, उस समय अर्थात् सन् १८१७ ईसवीके नवम्वर मासमें कोटेके अधीश्वर महाराव उमेदसिंह वहादुरने प्राण त्याग किये । उनके स्वर्ग चले जानेके पहिलेसे राजपरिवारमे अति गुप्तभावसे जो राजनैतिक षड्यन्त्रका वीज वोया जाकर

अंकुरित हुआ था वह इस समय प्रकाशित होगया, और इसीसे अत्यन्त शोचनीय राजनैतिक घटना हुई। महाराव उमेदसिंह जिस समय इस संसारसे विदा हुए उस समय राजराणा जालिमसिंह गागरौनके डेरोंमें थे, इन्होंने मृत्युका समाचार पाते ही जिससे महारावकी प्रेतक्रिया यथारीतिसे होजाय और युवराज किशोरसिंह कोटेके राजपदपर अभिषिक्त हों, उनकी सुव्यवस्था करनेके लिये शीघ्र ही राजधनीको कूच किया।

कर्नल टाड् साहब लिखते हैं कि " जिस समय पोलिटिकल एजेण्ट (कर्नल टाड्) मेवाड़से मारवाड़मे गये थे उस समय उन्होंने उक्त मृत्युसंम्बाद पाकर इस सम्बन्धमें क्या करना कर्तव्य है इसको जाननेके लिये गवर्नमेण्टके निकट एक प्रार्थना पत्र भेजा। इसी अवसरमें इन्होंने कई दिनतक उदयपुरमें विश्राम कर कोटेके राजपरिवारकी आभ्यन्तरिक अवस्था और राजकुमारोंके मनही मनमें जो गुप्त राजनैतिक उद्देश बदल गये थे, और जिस उद्देशको अनिष्टकारक विचारा था, उसका विशेष तत्त्व जाननेके लिये वह कोटेकी राजधानीको गये। टाड् महोदयने कोटेम जाकर देखा कि वृद्ध जालिमसिंह उस समय तक महलके निवास सुखको छोड़कर राजधानीसे आध कोश दूरीपर अपने विश्वासी सेवकोंके साथ डेरोंमे जारहे हैं, उनके पुत्र और उत्तराधिकारी माधोसिंह रात्रिके समय अपने महलमें रहते है। उन्होंने और भी देखा कि कोटेके नवीन महाराव और उनके दोनो छोटे भ्राता पहिलेकी समान किलेके महलमें निवास करते है, और गोवर्धनदास तथा पृथ्वीसिंह नवीन अधीश्वरको अपनी इच्छानुसार सलाह देकर अपने हस्तगत कर रहे हैं, और कुमार विशुनसिंहको उस चक्रसे बाहर कर दिया है। यदि महाराव उमेदसिंहके प्राण त्याग करनेसे पहिले जालिमसिंहके दोनों पुत्रोंमें बहुत दिनोंसे ठनाहुआ झगड़ा प्रकाशित होजाता और उससे महलमें ही दोनोंके साथ समर होना संभव था; परन्तु जालिमसिंह उस समय तक उस झगड़ेको अंशमात्र भी न जानसके।

---

(१) सन् १८१९ ईसवीकी २१ वी नवम्बरको राजराणा जालिमसिंहने जिस पत्रमे अपने स्वामीकी मृत्युका समाचार कर्नल टाड् साहबको भेजा था उसी पत्रका अनुवाद इस स्थानपर दिया गया है।

" रविवारके दिन अपराह्न समयतक महाराव उमेदसिंहका स्वास्थ्य सबप्रकारसे उत्तम था। सूर्यास्तकी एक घड़ीके पीछे वह श्रीव्रजनाथजीके दर्शन करनेके लिये गये। महाराव भी मूर्तिके समीप छः बार साष्टांग प्रणाम करके सातवीं बार जैसे प्रणाम करनेके लिये चले कि वैसे ही मूर्छित होकर अचेत होगये, उस अवस्थामें उनको महलमें लाकर शय्यापर लिटा दिया। उस समय यथाशक्ति चिकित्सा करनेमें भी कसर न की गई परन्तु सभी चेष्टाएं विफल होगई; रात्रि दो घड़ी जानेपर महाराव स्वर्गवासी हुए।

शत्रुको भी ऐसा महाशोक प्राप्त न हो, परन्तु भगवानकी इच्छाके विरुद्धमें क्या होसकता है? आप हमारे बंधु हैं, और महाराव जिन राजकुमारोंको छोड़ गये हैं उनका सम्मान और मंगल भार आपके हाथमें अर्पित है, मृत महारावके बड़े पुत्र महाराव किशोरसिंह सिंहासनपर अभिषिक्त हुए हैं। मित्रकी अवगतिका कारण प्रकाश किया "।

जिस समय महाराव उमेदसिंह परलोकवासी हुए उसके कुछही दिनों पीछे जालिमसिंह भयंकर रोगसे पीडित हुए। राजदरबारमे जो जालिमसिंहकी शासनशक्ति को लुप्त कर महाराव किशोरसिंहके हाथमे राज्यका समस्त भार अर्पण करनेके लिये गुप्तरूपसे तैयारियाँ कर रहे थे, वह लोग जालिमसिंहकी उस कठोर पीडासे मनही मन अत्यन्त प्रसन्न हुए, और अपनी आशाको सरलतासे पूर्ण हुआ जानकर बहुत प्रसन्न होरहे थे, परन्तु कुछ दिनके पीछे जालिमसिंहने सम्पूर्ण आरोग्यता प्राप्त की। तब वह परम दुःखित हो शोकसागरमे निमग्न हुए, परन्तु उस पीडाके अवसरमें उन्होंने अपनी अभिलाषित कार्य सिद्धिके समस्त अनुष्ठान तैयार कर लिये। उनकी वह कामना उनके वह अनुष्ठान सर्वसाधारणमे विदित होनेपर भी वृद्ध जालिमसिंह उस समयतक उसको बिन्दुमात्र भी नहीं जान सकते थे। बृटिश पोलिटिकल एजेण्ट कर्नल टाड् साहबने सबसे पहिले यह समाचार वृद्ध जालिमसिंहसे कहा, उन्होंने कहा "कि आपके दोनों पुत्र परस्परमे अनिष्ट साधन करनेके लिये समरकी तैयारी कररहे हैं और महाराव किशोरसिंहकी अभिलाषा है कि भगवानकी इच्छानुसार आपकी मृत्यु होते ही आपका शासन दण्ड भी आपकी चिताके साथ भस्मीभूत होजाय।"

शीघ्र ही कोटेमें भयकर राजनैतिक विभ्राट उपस्थित हुआ। राजराणा जालिमसिंह साठ वर्षतक अपने कठिन प्रतापसे कोटेको शासन कर अतुलसामर्थ्यवान् होकर रहे थे, परन्तु इस समय उनके उस प्रताप और उस सामर्थ्यकी जड़मे विषम आघात लगना आरंभ हुआ। बृटिश गवर्नमेण्टने राजराणा जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे कोटेके सर्वमय शासनकर्ता पदपर नियुक्त कर जिस अतिरिक्त सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर किये उसका विषमय फल इस समयसे प्रारंभ होने लगा। गवर्नमेण्टने उस नवीन संधिकी धारापर हस्ताक्षर कर जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे सर्वमय कर्तापद भोग करनेकी सामर्थ्य दान की। यह किस प्रकार अविवेकता और कैसी अविचारिता दिखाई गई। इसी समयसे यह प्रमाणित होने लगा।

"कर्नल टाड् साहबने जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे कोटेके सर्वमय शासनकर्ता पददान सम्बन्धी अतिरिक्त संधिपत्रको दृढ़तासे समर्थन किया है। उनके मतसे गवर्नमेण्टकी ओरसे यह कर्त्तव्य कर्म हुआ है, उन्होंने इस कार्यसे केवल इतना ही कारण दिखाया कि पिंडारियोंके युद्धके समयमे जालिमसिंहने बृटिश गवर्नमेण्टके अनेक उपकार किये थे, इस कारण उन कार्योंके पुरस्कारमें उक्त वंशानुक्रमसे उपभोग्य पद देना अन्याय कारक नहीं है। अत्यन्त दुःखका विषय है कि हम कर्नल टाड् साहबके इस मतको पोषण नहीं करसकते। हम पूछते हैं कि भिन्न स्वाधीन राज्यके राजमंत्री वा प्रधान शासन कर्तापदको एक मनुष्यको वंशानुक्रमसे भोग करनेके लिये सनद देनेकी क्या बृटिश गवर्नमेण्टको सामर्थ्य थी? कभी नहीं। महाराव उमेदसिंह यदि [illegible] समय अपने भविष्य उत्तराधिकारियोंके मंगलकी ओर दृष्टि रखते, यदि वह यथार्थ [illegible] समान वीर तेजस्वी और नीतिज्ञ होते तो क्या गवर्नमेण्ट जालिमसिंहको उक्त अधिक[illegible] दे सकती थी?

उमेदसिंहके आपत्ति करने पर क्या बृटिश गवर्नमेण्ट फिर भी वलपूर्वक जालिमसिंहको न्यायके अनुसार वंशानुक्रमसे कोटेका हर्ता कर्ता विधाता पद देनेमें समर्थ होती ? गवर्नमेण्ट विलायतके किसी राज्यके किसी अमात्यको क्या इस प्रकार वंशानुक्रमसे कोई पद देसकती थी ? विलायतकी बात तो दूर जाने दो इस भारतवर्षमें हैदराबाद, हुलकर, सेन्धिया इत्यादि राज्यके किसी प्रधानमंत्रीको क्या इस प्रकार वंशानुक्रमसे कोई पद देनेमें समर्थ होती ? हम इसको कह सकते हैं कि जालिमसिंहको उस भावसे उक्त पद देनेकी सरकारको कोई सामर्थ नहीं थी, केवल महाराव उमेदसिंहको अत्यन्त निरीह देखकर कौशलतासे पूर्ण उस प्रकार कार्य हुआ था । मानते हैं कि जालिमसिंहने गवर्नमेण्टकी विपत्तिके समयमें विशेष सहायता की थी परन्तु इन्होंने जो सेना सामन्त रसद धनादि दिया था वह किसका था ? क्या वह महाराव उमेदसिंहका नहीं था ? अवश्य ही मानना होगा कि कोटेके अधीश्वरकी सेना सामन्त लेकर जालिमसिंहने गवर्नमेण्टकी सहायता की थी। चतुर राजनीतिज्ञताके बलसे जालिमसिंह कोटेके प्रवल सामर्थ्यवान् प्रधानमन्त्री होकर भी उस समय महाराव उमेदसिंहके वेतनभोगी सेवक थे, उस अवस्थामें भविष्यत्‌की ओर दृष्टि न करके गवर्नमेण्टने जालिमसिहको वंशानुक्रमसे कोटेका समस्त शासनशक्ति युक्त अधीश्वर पद देकर महाराव उमेदसिंहको वंशानुक्रमसे नाममात्रका राजपद रहने देकर अत्यन्त ही अज्ञताका कार्य किया था । इसके फलस्वरूपमें थोड़े दिनोंमें ही कोटेराज्यमें जो अत्यन्त शोचनीय काण्ड संघटित हुआ । पाठक पीछे उसको भलीभांतिसे पढ़ चुके है ।

उपस्थित राजनैतिक विभ्राटमे कर्नल टाड्ने जिस राजनीतिके अनुवर्ती होकर जिस भावसे कार्य किया उससे हम अत्यन्त प्रसन्न नहीं, उन्होंने पहिलेसे ही जालिमसिंहके स्वार्थकी रक्षाके लिये प्राणपणासे चेष्टा की । उन्होने उस संधिपत्रकी अतिरिक्त धाराको सम्पूर्ण प्रबल करनेके लिये अपनी समस्त शक्तियोका प्रयोग किया था; परन्तु उन्होंने इसके सम्बन्धमे जो एक बात कही है वह अवश्य ही विचारने योग्य है। वह लिखते है कि बृटिश गवर्नमेण्टने जव जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे कोटेका सर्व शक्तियुक्त शासनकर्ता पद देकर दानपत्र पर हस्ताक्षर किये थे। तव किसी प्रकारसे उसे प्रबल रखना गवर्नमेण्टका प्रधान कर्म था । यदि ऐसा न करती तो राजपूत राजा कभी गवर्नमेण्टकी उक्ति और प्रतिज्ञा पर विश्वास नहीं करते। सारांश यह है कि इससे गवर्नमेण्टके गौरवकी हानि होनेकी सम्पूर्ण संभावना थी । इस लिये जालिमसिंह का पक्ष समर्थन करना अवश्य कर्तव्य होगया। कर्नल टाड् साहबने अवश्य ही सरलभावसे इस कथाको लिखा है। वृटिश गवर्नमेण्टको प्रतिज्ञा पालन करनेके लिये ऐसा करना अवश्य ही प्रशंसनीय और प्रार्थनीय था, परन्तु कर्नल टाड् यदि आजतक जीवित रहते, वह यदि भारतेश्वरीके सन् १८५७ ईसवीके विख्यात घोषणापत्रकी प्रत्येक प्रतिज्ञाको देखते तो वह कभी भी उस प्रतिज्ञाकी रक्षाकी दुहाई देकर अज्ञानता मूलक पक्षका समर्थन नहीं कर सकते थे ।

इस समय यथार्थ घटनाका ही अनुसरण करना ठीक होगा, राजकुमार पृथ्वीसिंह और मंत्रीपुत्र गोवर्द्धनदास दोनो ही क्षत्रिय स्वभाव सुलभ वीरता वल विक्रममें बलवान दोनों ही साहसी और दोनों ही राजनीति विद्यामे पारदर्शी थे। उन्होंने नवीन महाराव किशोरसिंहको भलीभांतिसे समझा दिया कि वृद्ध जालिमसिंहने अन्यायसे राजनैतिक स्वाधीनताको संग्रह करके राज्यके यथार्थ अधीश्वर पदको ग्रहण किया है और इसी प्रकार अन्याय वृटिश गवर्नमेण्टकी सहयोगिता कर एक अतिरिक्त संधिधारा पर हस्ताक्षर करके बड़े पुत्र माधोसिंहको वंशानुक्रमसे सर्वशक्ति सम्पन्न शासनकर्ता पद दिया है। अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ महाराव उमेदसिंहका पहिला जो संधिपत्र नियत हुआ था, उन्होंने उसी संधिपत्रको उपस्थित करके महारावको उसका समस्त अर्थ व्याख्या करके समझा दिया, और उसी कारणसे भलीभांतिसे उनके हृदय पर इस भावको अंकित कर दिया। मूलसधिपत्रके अनुसार राजराणा जालिमसिंह किसी प्रकार भी कोटेके सर्वशक्ति सम्पन्न शासनकर्ता पद वंशानुसार भोग नहीं करसकते थे। उन्होने महाराव किशोरसिंह से कहा कि आप गवर्नमेण्टके समीप यह प्रस्ताव करिये कि जिससे गवर्नमेण्ट मूल संधिपत्रके अनुसार कार्य करनेको तैयार हो। उन्होंने मूलसंधिपत्रकी दशमी धाराका उल्लेख करके कहा कि इस धारामें लिख रहा है कि " महाराव और उनके उत्तराधिकारी गण तथा स्थलाभिषिक्त अपने राज्यके पूर्ण शासन क्षमतापन्न अधीश्वररूपसे रहेंगे। इस कारण गवर्नमेण्ट मूलसंधिपत्रमे इस प्रकार लिखकर उसके पीछे किस प्रकारसे अतिरिक्त धारासे जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे कोटेके पूर्ण शासनशक्ति सम्पन्न मंत्रीका पद देसकती ? उन्होने और भी कहा कि मूलसंधिपत्रमें महाराव उमेदसिंह और गवर्नमेण्ट सभीके हस्ताक्षर और मोहर लगी है, परन्तु अतिरिक्त धारामें यह नहीं है, और महाराव उमेदसिंह उस अतिरिक्त धाराके अस्तित्व तकको नहीं मानते।

नवीन महाराव किशोरसिंहके साथ राजराणा जालिमसिंह और उनके बड़े कुमार माधोसिंहके शीघ्र ही साक्षात् होनेसे रहित मित्रताकी जंजीर छिन्नभिन्न होजायगी। कर्नल टाड्र साहबने वृटिश गवर्नमेण्टके पोलिटिकल एजेण्टरूपसे इस समय विचित्र अभिनय आरंभ किया। उन्होंने इस समयसे जालिमसिंहके अनुकूल पक्षका अवलम्बन करके, जिससे जालिमसिंह वंशानुक्रमसे उक्त सामर्थ्यको संभोग करसकें और जिससे किशोरसिंह और उनके उत्तराधिकारीगण चिरकाल तक नाममात्रके कोटेके अधीश्वर पदपर स्थित रहें, वह इस लिये अपनी समस्त शक्तिको प्रयोग करने लगे। उन्होंने दोनों पक्षोंमे राजनैतिक विवादानलको प्रज्वलित देख कर प्रकाशरूपसे महाराव किशोरसिंहसे कह दिया कि " जब कि हमने जालिमसिंहके समीप प्रतिज्ञा की है तब हम नाममात्रके राजाकी उपाधि धारण करनेवाले कोटेके अधीश्वरकी कोई भी ऊँची अभिलापाका पक्ष समर्थन नहीं कर सकते। एकमात्र जालिमसिंह ही कोटे-राज्यके यथार्थ अधीश्वररूपसे गिने जाते हैं आप केवल नाममात्रके राजा हैं। कोटेके शासनकर्ता नहीं हैं। " यह सरलतासे जाना जासकता है कि कर्नल टाड्रने केवल अपने प्रभु वृटिश गवर्नमेण्टकी अवलम्बित नीतिका पक्ष समर्थन करनेके लिये कहा था।

परन्तु महाराव किशोरसिंहने टाड् साहबकी उस उक्तिकी ओर इस समय तक ध्यान नही दिया । कर्नल टाड्ने जालिमसिंहके प्रति महाराव किशोरसिंहको उस भावसे दृढ़ प्रतिज्ञ होते देखकर, अंतमें स्थिर किया कि पृथ्वीसिंह और गोवर्द्धनदासकी परामर्शके अनुसार महारावने यह राजनैतिक विभ्राट् उपस्थित किया है, उन दोनोंको अन्य स्थानपर बिना भेजेहुए किसी प्रकार भी शान्त प्रकृति महाराव किशोरसिंहको हस्तगत नहीं कर सकते, इस कारण उन्होने पहिले उस उद्देशको सिद्ध करनेका यत्न किया ।

कर्नल टाड् और जालिमसिंहने उस अत्यन्त निन्दनीय और अप्रयोजनीय उद्देशको साधन करनेके लिये सबसे पहिले स्थिर किया। जिस किलेमें पृथ्वीसिंह और गोवर्द्धनदास महाराव किशोरसिंहके साथ रहते हैं, उस किलेकी दीवारको लांघकर दोनोंको बंदी कराजाय। परन्तु वह उसी समय समझ गये कि ऐसा करनेसे महा गड़बड़ होगी, और अन्तमें युद्ध होनेसे महाराव किशोरसिंह तक मारे जायँगे, इस कारण उन्होंने इस प्रस्तावको छोड़कर अन्तमें यही निश्चय किया कि सेनासे किलेकी दीवारोंको चारोंओरसे घेर रक्खो और जिससे किलेमे भोजनकी सामग्री न पहुँच सके ऐसा उपाय करो ऐसा होनेसे जब भोजनके अभावसे महा कष्ट होगा तब महाराव किशोरसिंह अवश्य ही आत्मसमर्पण करेंगे । वास्तवमे कर्नल टाड् और जालिमसिंहकी उक्त परामर्शके अनुसार शीघ्र ही वह उपाय किया गया । कोटेके न्यायसंगत अधीश्वर किशोरसिंह बृटिश गवर्नमेण्टकी राजनीतिके मानकी रक्षाके लिये अपनी राजधानीमें अपने महलमें अपनी ही सेनाके द्वारा परिवेष्टित हुए। बृटिश राजनीतिकी कैसी विचित्र महिमा है । परन्तु कर्नल टाड् और जालिमसिंहकी आशा पूर्ण न हुई, भोजनके अभावसे आत्मसमर्पण न करके महाराव किशोरसिंह प्रजाके ऊपर विश्वास स्थापित कर अपने पैतृक राज्यकी पूर्ण शासन सामर्थ्यको प्राप्त करनेकी आशासे पॉच सौ अश्वारोही हाड़ासेनाके साथ अपने कुलदेवताको तूणमें रखकर विजयपताका उड़ाय रणबाजेके शब्दसे चारों दिशाओंको कंपायमान करतेहुए साहसमे भरकर किलेसे बाहर हुए। जिस सेनाने कर्नल टाड् और जालिमसिंहकी आज्ञासे किलेको घेर रक्खा था उसने किसी प्रकारकी भी बाधा न देकर भयभीत हो मार्ग छोड़ दिया, और महाराव किशोरसिंह विना बाधा दिये किलेको छोड़कर उस पॉच सौ सेनाके साथ दक्षिणकी ओरको चले गये ।

कर्नल टाड् साहबने अपने परवर्ती घटनाके सम्बन्धमें लिखा है "कि महाराव किशोरसिहके बाहर जानेकी वार्ता सुनते ही एजण्टने शीघ्रतासे जालिमसिंहके डेरोमें जाकर देखा कि महा गोलमाल उपस्थित हो रहा है, तब उन्होंने वृद्ध जालिमसिंहसे पूछा कि राज्यमें अशान्तिके विस्तारको रोकनेके लिये तुमने किस उपायका अवलम्बन किया है अथवा क्या करनेकी इच्छा करते हो ? इस समय जालिमसिंहने जैसा व्यवहार किया वह अत्यन्त ही कष्टदायक था । सत्य हो वा काल्पनिक हो सन्देहसे चलायमान जालिमसिंहके मुखसे एजेण्टने इस समय कृत्रिम

न होकर असामयिक राजभक्तिको प्रकाश करनेवाली उक्तिको श्रवण किया। जालिम सिंहने कहा, मैं महारावके अधीनमें रहकर राजकर्म करूँगा, नाथद्वारेके मंदिरमें जाकर जीवनके शेष दिनोंको व्यतीत करूँगा, तथापि अपने प्रभुका विश्वासहन्ता होकर कलंकका टीका नहीं लगाऊँगा।" एजेण्टने जालिमसिंहके यह वचन सुन कर विचारा कि इससे हमारे राजनैतिक उद्देशमें कोई विघ्न नहीं होगा, इस कारण उन्होंने बड़े आग्रहके साथ कहा कि "आपका उद्देश साधनके विरुद्धमे इस राज्यमे कोई बाधा नहीं है"। परन्तु उपस्थित राजनैतिक विभ्राट्के समय दो भावसे कार्य करने पर महा अनिष्ट होनेकी संभावना है, यह उन्होंने जालिमसिंहसे कह दिया। महाराव किशोरसिंहके साथ जो पाँच सौ अश्वारोही सेना गई थी, वह जिससे राज्यमें सर्वत्र विस्तार कर महा विभ्राट् उपस्थित न कर सके, इसके लिये जालिमसिंहसे विदा लेकर घोड़े पर सवार हो टाड् साहब महाराव किशोरसिंहका पीछा करनेके लिये बाहर चले। इन्होंने राजधानीसे तीन कोश दक्षिणमें "रंगवाडी" नामक ग्रामके महलमे जाकर देखा कि महारावके अनुचर और सवार श्रेणीदलके दलमें विभक्त होकर बागकी दीवारके बाहरको जारहे हैं, और महाराव किशोरसिंह, अपनी सामन्तमंडली और उपदेष्टा महलमें भविष्यत्मे क्या करना कर्त्तव्य है इसके सम्बन्धमें परामर्श कर रहे हैं यथारीतिसे पहिलेसे समाचार देनेका अब समय नहीं था, इस कारण वह शीघ्र ही सभास्थानमें जा पहुँचे। उस सम्भावित विवादमें मान्य दिखा कर अभिवादन की रीतिको भंग नहीं किया, यद्यपि बहुत थोड़ी देर सम्मानके साथ वार्तालाप हुई, परन्तु टाड् साहबने बड़े आग्रहसे महाराव किशोरसिंह और सामन्तोंको बुलाकर उपस्थित अवस्थाको समझा दिया। उन्होंने सामन्तोसे कहा कि "आपने जिस पक्षका अवलम्बन किया है, उससे आप प्रकाशमें गवर्नमेण्टके शत्रु हुए हैं, और इससे आपके अधीश्वरका कोई मगल नहीं होगा वरन इससे आपके विध्वंस होनेकी सभावना है,। सामन्तोंने प्रीति और सतोषके बदलेमे यह अत्यन्त कष्टदायक तिरस्कार पाया और एजेण्टने गोवर्द्धनदासकी ओर आगे बढ़कर कहा कि "आप ही अपने पिताके विश्वासहन्ता शत्रु हैं, और आपसे महारावका किसी प्रकारका अमंगल प्राप्त नहीं होगा, आपने केवल स्वार्थ सिद्ध करनेके लिये इस विभ्राट्को उपस्थित किया है, इस कारण इसके फलमें आपको यथेष्ट दंड मिलैगा। तुरन्त ही गोवर्द्धनदासने अपनी तलवार निकाल कर हाथमे लेली, परन्तु एजेण्टने कुछ एक हँसते हुए उनकी ओर अवज्ञा दिखाकर गोवर्द्धनदासके गर्वित उत्तरकी ओर कुछ भी ध्यान न देकर महाराव किशोरसिंहके समीप आगे बढ़कर उनसे कहा कि "महाराव इस समय भी समय है। इस समय भी विशेप करके भविष्यतकी चिन्ता करनेका समय है आप जिस मार्गपर अग्रसर हुए हैं वह किसी प्रकार भी मंगलकारक नहीं है, मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि न्यायसंगत और आपके पदोचित जिस किसी प्रार्थनाको पूर्ण कर दूँगा, परन्तु केवल जालिमसिंहकी सामर्थ्यको लोप नही करसकता, कारण कि सर्वसाधारणके विश्वासकी रक्षाके लिये हम उनकी उस शासनसामर्थ्यको अक्षत रखनेमें

बाध्य हैं,परन्तु आपके पद सम्मान और सुखस्वच्छन्दताकी ओर हम सम्पूर्ण दृष्टि रखते हैं, । एजेण्टके यह वचन सुनकर महारावका जिस समय इधर उधर कर रहे थे, उस समय एजेण्टने ऊँचे स्वरसे "महारावका घोड़ा ले आओ" यह कहकर महाराव किशोरसिंहकी बाहु पकड़ी और दोनो सभाके कमरेसे बाहर हुए । महाराव किशोरसिंहने कुछ भी आपत्ति नहीं की । अंतमें उन्होंने घोडोंकी पीठ पर चढ़कर एजेण्टसे केवल इतना कहा, कि " मैं आपकी ही मित्रताके ऊपर सब प्रकारसे निर्भर हूँ, । महारावके भ्राता पृथ्वीसिंहने भी उस समय अपने मनके भावको प्रकाशित किया था, परन्तु सामन्त मंडली मौन रही, गोवर्द्धनदास और उनके दो एक राजपरिपदोंने उस समय जो एक बात कही एजेण्टने उसपर कुछ भी ध्यान नहीं दिया । एजेण्ट (टाड्) अपने परिषदोंसे युक्त होकर महाराव किशोरसिंहके साथ घोड़े पर चढ़कर चले । सभी चुपचाप थे, कोई कुछ न बोल सका, इस प्रकारसे उन सबने किलेमें प्रवेश किया । एजेण्टने महाराव किशोरसिंहको राजसिंहासन पर बैठाकर पूर्व प्रतिज्ञाकी पुनरावृत्ति करके कहा कि " वर्तमान संकटावस्थामें महाराव विशेप सुविचारके साथ कार्य करे, उन्होंने और भी महारावसे कह दिया कि " महारावके भ्राता पृथ्वीसिंह और गोवर्धनदास दोनों ही महारावके पाससे अलग रहेंगे । गोवर्द्धनदासको हाड़ौतीसे एक बारही बाहर करना होगा । इसी निश्चयके अनुसार जून मासमें गोवर्द्धनदास राज्यविद्रोहके अपराधमें दोषी ठहराकर निर्वासितरूपसे दिल्लीमे रख दिये गये । और सपरिवार उसके भरण पोपणका प्रबंध रयासतसे कर दिया गया । उसी समयसे महाराव किशोरसिंह और राजराणा जालिमसिंहमें फिर पूर्ववत् सद्भाव स्थापित होगया ।

" महाराव किशोरसिंह और राजराणा जालिमसिंहमे फिर सद्भाव स्थापन करनेके लिये महामहोत्सवकी तैयारी की गई । उसके उपलक्षमें सर्वसाधारण प्रजा स्वत' प्रवृत्त होकर महा आनन्द ध्वनि करती थी । महलमे गन्तव्य मार्गसे सब दलके दल इकट्ठे होकर जालिमसिह और उनके पुत्रको अभिवादन करते थे । पूजनीय जालिमसिंह इस संमिलन स्थानमें पितृ स्थानीय रूपसे गये, और राजकुमार अपराधी सन्तानकी समान क्षमा मांगनेके लिये अग्रसर हुए । उन्होंने आगे बढ़कर जालिमसिंहकी जानु आलिंगन करनेके लिये चेष्टा की, जालिमसिंहने उस सन्मान प्रदर्शनको रहित करनेमें वृथा चेष्टा की । और उस प्रकार नम्रभावसे अपने अधीश्वरके प्रति सम्मान दिखानेमें कसर न की । पीछे परस्परके प्रति विश्वास विज्ञापन और सद्भाव प्रकाशक वार्तालाप होने लगी ।

एकमात्र कर्नल टाड्के राजनैतिक कौशल यत्न और उद्योगसे महाराव राजा किशोरसिंह, पृथ्वीसिंह और गोवर्द्धनदासके न्यायसंगत उद्योगके व्यर्थ होजानेपर निरीह स्वभाव महाराव किशोरसिंह फिर साक्षी गोपालस्वरूपसे राजसिंहासन पर विराजमान होनेके लिये तैयार हुए । वीर तेजस्वी गोवर्द्धनदासके निकाले जाने पर कर्नल टाड्ने जालिमसिंहके साथ महाराव किशोरसिंहका सद्भाव स्थापित करा दिया, ऐश्वर्य आडम्बर

और राजसम्मान दिखाकर किशोरसिंहको जालिमसिंहने हस्तगत करनेका उद्योग किया। सत्यप्रिय साधु टाडूने एकमात्र वृटिश राजनीतिके मानकी रक्षाके लिये कोटेके क्षेत्रमें यह विचित्र अभिनय किया। उन्होंने आत्मविवेक बुद्धिका अपमान करके कूट राजनैतिक कौशल जालका विस्तार कर महाराव किशोरसिंहकी संमान स्वत्व स्वाधीनता और क्षमताको लोप कर जालिमसिंहका पक्ष समर्थन किया। जो हो कर्नल टाडने किशोरसिंह और जालिमसिंहमें सद्भाव स्थापित कराके प्रकाशरूपसे महाराव राजा किशोरसिंहके राज्याभिषेककी तैयारी की। सन् १८२० ईसवी अगस्त मासकी सत्रह तारीखको बड़ी धूमधामके साथ वह अभिषेक कार्य किया गया। राजपुरोहितने सबसे पहिले महाराव किशोरसिंहके मस्तक पर राजतिलक दिया, राजटीका देते ही कर्नल टाड् साहबने सबसे आगे बढ़कर राजाके मस्तक पर राजतिलक देकर महाराज किशोरसिंहको अनेक भांतिके हीरोंका अलंकार पहरा कर उनकी कमरमें राजदंडस्वरूपसे तलवार बांध दी। महारावने भेटमें गवर्नमेण्टको एकसौ सुवर्णकी मोहर उपहारमें दी। इस समय भारतवर्षके गवर्नर जनरलके नामसे कर्नल टाडूने राजराणा जालिमसिंहको महामूल्यवान राजवेश खिलत दिया। जालिमसिंहने उस वेशको पाकर उपयुक्त उक्तिसे कृतज्ञता प्रकाशके साथ नजरमें गवर्नमेण्टको पचीस सुवर्णकी मोहरे और भी दान की।

इस प्रकारय अभिषेकके उत्सव अनुष्ठानका एक गुप्त उद्देश था। कर्नल टाडूने इस समय उस उद्देशको सिद्ध कर लिया। पहिले प्रस्तावके अनुसार माधोसिंहने आगे बढ़कर कोटेके फौजदाररूपसे महाराव किशोरसिंहके मस्तक पर राजतिल देकर कमरमें तलवार बांध दी, और नजर दी, प्रचलित रीतिके अनुसार महारावने उस भेंटको लौटा कर माधोसिंहको खिलत देनेके साथ उनको वंशानुक्रमसे कोटेके फौजदारी पदकी सनद दान की। इस सनदके लिये ही इतनी तैयारी और उद्योग था। वह उद्योग इतने दिनोंमें सफल हुआ। कर्नल टाड् साहबने लिखा है "कि सबमें जो सद्भाव पुनः स्थापनका सूत्रपात हुआ, उसको बढ़ानेके लिये एजेण्ट (टाड्) उक्त अभिषेकके उत्सवके पीछे और एक महीने तक कोटे राज्यमें रहे। उन्होंने इस समय महारावको समझा दिया कि वह जैसी अवस्थामें पडे हैं उसीके अनुसार कार्य करना सब प्रकारसे कर्त्तव्य है, और उधर उन्होंने माधोसिंहको समझा दिया, कि पवित्र संधिपत्रसे उनके ऊपर जो भारी दायित्व अर्पित हुआ है वह जिससे दुर्व्यवहार और निर्बुद्धिता वा असावधानतासे उस संधिको भंग न करैं। कोटेको छोड़नेके पहिले ४ सितम्बरको एजेण्टने फिर सबको एक समितिमें इकट्ठा किया, और उसीमें सबने अकृत्रिम सद्भाव स्थापित किया। जालिमसिंह महाराव और माधोसिंह परस्परमें अतीत घटनाके लिये परस्पर एक दूसरे क्षमा करके भविष्यत्‌में मित्रभावसे रहैं ऐसी प्रतिज्ञा की"।

---

(१) कर्नल टाड् साहबने अपने दूसरी बारके भ्रमणवृत्तान्तमें इस अभिषेकके उत्सवको वर्णन किया है। वह भ्रमणवृत्तान्तमें देखो।

"सत्यकी जय अवश्य ही होगी। यद्यपि कर्नेल टाड् साहबने प्रबल वृटिश शक्तिकी सहायतासे कोटेके न्यायमत अधीश्वर महाराव किशोरसिंहकी सामर्थ्यको लोप कर जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे राजशक्ति दी, परन्तु भविष्यत्में उस अन्याय और असत्यकी पराजय भली भाँतिसे होगई।

कर्नेल टाड् साहब लिखते हैं, कि "उपरोक्त साक्षात् शेप होनेके समय राजराणा जालिमसिंहने अपने राजनैतिक जीवनके शेप अभिनय स्वरूप दो उपयुक्त कार्य किये, उन कार्योंसे उनके अधीश्वर प्रभु और कोटेकी प्रजाके प्रति उनकी विलक्षण सज्जनताने प्रकाश पाया। अपनी मृत्युके पीछे अपने प्राचीन विश्वासी सेवकोंके लिये उन्होंने एक प्रतिभू पत्र तैयार करके महाराव किशोरसिंह, पुत्र माधोसिंह और एजेण्टसे यह कहकर उनको हस्ताक्षर करनेका अनुरोध किया कि "यदि हमारे उत्तराधिकारी प्राचीन कर्मचारियोंको कार्यमे नियुक्त करनेमें असम्मत हों तो उनको सम्पूर्ण स्वाधीनता देनी होगी, और उसके अतीत किसी कार्यके लिये भी उनसे जवाबदेही नही ली जायगी; और वह अपनी उच्छानुसार निवास कर सकेंगे।" महाराव और माधोसिंहने उस पत्रपर हस्ताक्षर करके जालिमसिंहकी अभिलाषाके अनुसार वृटिश एजेण्टने भी उस पत्रके मतसे जिससे भविष्यत्मे कार्य हो उसके प्रतिभू स्वरूप हो स्वयं उस पर हस्ताक्षर करादिया"।

जालिमसिंहके और शेष कार्योंके सम्बन्धमे कर्नेल टाड् साहबने लिखा है, "कोटे राज्यमें जालिमसिंहने जिस अत्यन्त कष्टदायक दंड नामक करका प्रचार किया था उस करको एक वार ही दूर कर दिया।" इस रक्त शोपक करके रहित होनेसे जालिमसिंह एक और जैसे कोटेकी सर्व साधारण प्रजासे वृद्धावस्थामें प्रशंसाको प्राप्त हुए, उधर गवर्नमेण्ट भी उसी प्रकारसे इस कार्य द्वारा जालिमसिंहसे अत्यन्त संतुष्ट हुई। जालिमसिंहने अपनी कीर्त्तिकी रक्षाके लिये "दंडकर" रहितके स्मरण करनेके अर्थ कोटेराज्यके प्रत्येक प्रधान २ नगरमें पत्थरका स्तंभ स्थापित करके उसपर कर रहित की आज्ञा लिखवादी।

सप्तम अध्याय ७.

राजनैतिक विभ्राट्में कर्नल टाड्का व्यवहार-बृटिश गवर्नमेण्टका जालिमसिंहका पक्ष समर्थन-गोवर्धनदासको निर्वासन दंड-मालवादेशमें गोवर्धनकी उपस्थिति-कोटेमें फिर राजनैतिक महा विभ्राट्-महाराव किशोरसिंहके साथ सेनाका योगदान-जालिमसिंहका महलके ऊपर गोले वर्षाना-महाराव किशोरसिंहका किलेको छोडकर बाहर जाना-महारावका बूँदीमें जाना-राजभ्राता विशनसिंहका जालिमसिंहके साथ योगदान-गोवर्धनदासका महारावके साथ योगदेनेकी चेष्टा करना-उसका व्यर्थ होना-महारावका बूँदीको छोड़ना-महारावके प्रति हाडाजातिका सहानुभूति प्रकाश करना-महारावका वृन्दावनमें आगमन-गोवर्धनदास और बृटिश गवर्नमेण्टके अधीन में स्थित राजपुरुषोंका षड्यन्त्र-महारावका सेना सहित कोटेकी ओरको जाना-महारावका घोषणापत्र प्रचार करके हाडाजातिको अपने पक्षमें योग देनेके लिये बुलाना-महारावका बृटिश गवर्नमेण्ट के निकट अपना प्रस्ताव भेजना-जालिमसिंहका आचरण-महारावके विरुद्ध जालिमसिंहकी सेनाके साथ बृटिश सेनाका अग्रसर होना-सम्मिलित सेनाका महाराव पर आक्रमण करना-महारावकी सेनाका जालिमसिंहके व्यूहको भेदन करना-अंग्रेजी सेनाका उस कार्यमें बाधा देना-अंग्रेजोंके विरुद्ध समर करनेकी अनिच्छासे महारावका सेनासहित रणक्षेत्र त्याग करना-अंग्रेजी सेनाका फिर महाराव की सेना पर आक्रमण करना-महारावकी सेनाका उस आक्रमणको व्यर्थ करना-महारावका सेनासहित प्रस्थान-अंग्रेजी सेनाका महारावके पैदलदलका नाश करना-कुमार पृथ्वीसिंहकी मृत्यु-दो वीरोंका वीरता दिखाना-कर्नल टाड्का महारावके साथ संयुक्त सामन्तोंके साथ क्षमा प्रदर्शन मूलक घोषणापत्रका प्रचार करना-सामन्तोंका अपने २ स्थानको चले जाना-समरका फल-आनुसंगिक घटनावली-महारावके साथ फिर संधिबंधनकी चेष्टा करना-नूतन सन्धिपत्र-महारावके लिये निर्द्धारित वृत्तिकी सूची-कर्नल टाड्की व्यवस्था-व्यवस्थापत्र-महारावके कोटेमें आनेके समय व्याघातमूलक घटना-महारावका फिर अपने राज्यमें चलेजाना-विश्नुसिंहका राजधानीसे दूसरे स्थानको भेजना-जालिमसिंहके साथ महाराव किशोरसिंहका संमिलन-माधोसिंहके साथ महाराव की प्रीति स्थापन-जालिमसिंहकी मृत्यु-उनकी जीवनीकी समालोचना।

कर्नल टाड्की समान राजपूत बान्धव अंग्रेज यहाँतक भारतमे कोई भी नहीं आया। यह पाठकोंको मुक्तकंठसे स्वीकार करना होगा। राजपूतजातिके प्रति साधु टाड्का यहाँतक अनुराग, प्रीति और स्नेह था कि उन्होंने सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये समय २ पर एकमात्र उस अनुराग, प्रीति और स्नेहसे परिचालित होकर अपने प्रभू गवर्नमेण्टके द्वारा अनुष्ठित राजपूत जातिके अपकारमूलक कार्यका प्रतिवाद, निन्दा और कठोर समालोचना करनेमें भी कसर न की। देशियोंके पक्षका अवलम्बन करनेसे किसी अंग्रेज कर्मचारीको भी आजतक उस भावसे सत्यके सम्मानकी रक्षा करनेका साहस नहीं देखा। हम प्रत्येक पगपर इस इतिहासमें यथास्थान कर्नल टाड् साहबके साधु व्यवहार, उदार आचरण और निरपेक्ष न्याय विचार और श्रेष्ठ अनुष्ठानकी मुक्त कंठसे ऊँची प्रशंसा करते आये हैं। परन्तु अत्यन्त दुःखित हृदयसे वर्तमान प्रबन्धमें उनके एकमात्र राजनैतिक अभिनयका विषमय फल देखकर हम यहां दुःखी हुए है।

यद्यपि हम भलीभाँतिसे जान गये है, कि कर्नेल टाड्र अपने उपरितन प्रभू भारतवर्षके गवर्नर जनरलकी आज्ञासे अंग्रेज गवर्नमेण्टकी राजनीतिकी आज्ञापालन करनेके लिये यह शोचनीय अभिनय करनेके लिये बाध्य हुए,तथापि हमारा ऐसा विचार है कि वह स्वयं जिस कार्यमें मध्यस्थ थे और स्वयं ही जिस कार्यके एक प्रधान नेता थे वह चाहते तो अवश्य ही उस शोचनीय अभिनयको अन्य प्रकारसे रहित कर सकते थे।

महाराव -राजा उमेदसिंहके साथ बृटिश गवर्नमेण्टका संधिबंधन जिस समय हुआ था, उस समय राजराणा जालिमसिंहने कोटेके सर्वमय प्रभू स्वरूपसे असीम सामर्थ्य चलाई थी, इसको कौन नही मानेगा ? परन्तु तब उन जालिमसिंहको कोटेमें सर्वमय प्रभू स्वरूपसे वंशानुक्रमसे रहनेका अधिकार देनेमें बृटिश गवर्नमेण्ट किसी प्रकार भी सामर्थ्यवान् न हुई, इस बातको कौन नहीं मानैगा ? जालिमसिंहने पिंडारियोंके युद्धके समयमें और उससे पहिले अंग्रेज गवर्नमेण्टकी सम्पूणरूपसे सहायता की थी, परन्तु कोटेके प्रकृति राजशक्ति सम्पन्न उमेदसिंहको वंशानुक्रमसे साक्षी गोपाल स्वरूपमें रखकर उनकी वंशानुक्रमसे समस्त शासनशक्तिको हरण कर जालिमसिंहको उस शासनशक्तिका देना कौन राजनीतिक संगत था ? कौन धर्मशास्त्र संगत था ? कौन सभ्यता-विधि संगत था ? जालिमसिंह तो महाराव उमेदसिंहके वेतनभोगी भृत्यमात्र थे, उन्होंने जो सेनाकी सहायता, रसदकी सहायता और जो आर्थिक सहायता की थी, वह सभी उमेदसिंहकी थी, जालिमसिंहकी निजकी कुछ भी नही थी, इस अवस्थामें उन जालिमसिंहको बृटिश गवर्नमेण्टने पुरस्कार स्वरूपमें किस प्रकार यथार्थ नरपतिकी शक्तिको हरण करके उनको उसे वंशानुक्रमसे भोग करनेके लिये दिया था? किसी राज्यके इतिहासमें हमने ऐसी घटनाका दूसरा प्रमाण नही पाया। एक राज्यके प्रधान मंत्रीद्वारा अन्य राजाको उपकार प्राप्त हुआ है इसीसे क्या उस अन्य अन्य नरपतिके न्यायके वक्षस्थल पर, धर्मकी छातीपर, सत्यके वक्षस्थल पर पदाघात करके उस प्रधानमंत्रीको एक राज्यकी शासन सामर्थ्य वंशानुक्रमसे उपभोग करनेके लिये दी जा सकती है, जालिमसिंहके द्वारा कोटेराज्यके बहुतसे उपकार हुए थे यह उन्होंने वेतनभोगी कर्मचारी स्वरूपसे अपने कर्त्तव्यको पालन किया था, उसके लिये वह कोटेकी शासनशक्तिको वंशानुक्रमसे भोग करनेके अधिकारी नही होसके, गवर्नमेण्टने न्याय न करके बलपूर्वक महाराव उमेदसिंहको अत्यन्त निरीह और नम्र देखकर जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे कोटेका प्रकृत अधीश्वरपद प्रदान किया,इसको कौन नहीं मानेगा। यदि एकमात्र जालिमसिंहको ही जन्मभर तक उक्त शासनशक्ति चलानेकी सामर्थ्य देते तो इतनी हानि नहीं होती, वंशानुक्रमसे उस शासनशक्तिका देना किस प्रकार युक्ति संगत होसकता था ? जालिमसिंह बुद्धिमान् नीतिज्ञ और शासनकार्यमें सुदक्ष थे, इससे उनके उत्तराधिकारी भी इनकी समान होंगे यह गवर्नमेण्टने किस प्रकार स्थिर किया था ? और जालिमसिंहकी समान उनके उत्तराधिकारी भी केवल शासनशक्तिको पाकर संतुष्ट होंगे, कोटेके यथार्थ अधीश्वरकी कभी भी अनिष्ट कामना नहीं करैंगे, यह किस प्रकारसे विचार हुआ था ? राजनीतिज्ञ कर्नेल टाड्र साहबने अवश्य ही जालिमसिंहको

उक्त अधिकार देनेके समय यह विचार लिया था। परन्तु उन्होंने ऐसा विचार करके भी न्यायसंगत कार्य नहीं किया। वरन वृटिश गवर्नमेण्टके उस विचारहीन अनुष्ठानके कार्यको परिणत करनेके लिये अपनी समस्त शक्तियोको प्रयोग कर इतिहासमे अपनी एकमात्र पक्षपातकी रेखाको अंकित किया है।

जालिमसिंहको अन्यायरूपसे कोटेकी शासनशक्तिको वंशानुक्रमसे उपभोग करनेका अधिकार देकर जो विषैला फल फला था वंशानुक्रमसे उसीसे कोटेकी शोचनीय अवस्था हुई। वह हमारे पाठकोंको परवर्ती इतिहाससे विदित होसकैगा। उस शोचनीय अभिनयके लिये हम इतने दुःखित नहीं हैं, परन्तु इसी एकमात्र अनुष्ठानसे अंतमे कोटाराज दो भागोमें विभक्त होजायगा, कोटेके मूलराजकी शक्ति एकवार ही हीन होजायगी, जालिमसिंहके उत्तराधिकारी कोटेके प्रायः आधे अंशके अधीश्वर होंगे। वृटिश गवर्नमेण्टकी राजनीतिकी फलस्वरूप हाड़ावती देशके सामान्य झालापरिवार भी महान ऊँचे राजपद पर प्रतिष्ठित होंगे यह कौन जानता था।

पूर्व अध्यायमे वर्णन कर आये हैं कि वृटिश पोलिटिकल एजेण्ट कर्नल टाड्ने मध्यवर्ती होकर वृटिश गवर्नमेण्टकी प्रतिज्ञाकी रक्षाके लिये महाराव किशोरसिंहको सम्मत कराकर उनको साक्षी गोपालस्वरूपसे कोटेके सिंहासन पर बैठाल कर जालिमसिंहको कोटेके हर्ता कर्ता पदपर दृढरूपसे नियुक्त कर दोनोमे प्रीति स्थापन करके कोटेराज्यको छोड़ दिया। कर्नल टाड् साहबने विचारा था कि वृटिश गवर्नमेण्टने इस कार्यको जब न्यायमूलक कहकर उसे प्रवल रखनेमे यत्न करना चाहा है तब महाराव किशोरसिंह भी अवश्य ही उस कार्यको न्यायमूलक विचार कर अपने समस्त स्वार्थके नष्ट होनेपर भी जालिमसिंहके साथ चिरकाल तक सद्भावसे रहैंगे, परन्तु शीघ्र ही उनका वह अनुमान व्यर्थ होगया। शीघ्र ही फिर किशोरसिंहके न्यायसंगत स्वार्थके साथ जालिमसिंहके अन्यायमूलक स्वार्थका भयंकर संघर्षण हुआ।

जालिमसिंहके पुत्र गोवर्द्धनदासको समस्त षड्यन्त्रका मूल और उसके द्वारा परिचालित होकर महाराव किशोरसिंहको जालिमसिंहकी शक्ति लोप करनेके लिये उद्यत जानकर कर्नल टाड् और जालिमसिंहने उस गोवर्द्धनदासको कोटेराज्यसे एकबारही निकाल दिया। गोवर्द्धनदासने राजनैतिक बंदीस्वरूपसे दिल्ली और इलाहाबाद इन दोनो नगरोंमेसे दिल्लीमे रहनेकी इच्छा की इस कारण उसकी प्रार्थनाके अनुसार उसको दिल्लीमे ही बंदीभावसे रक्खा गया। कर्नल टाड् साहबने लिखा है "कि दिल्लीमें वह अपने कुटुम्बसहित रहे थे, और उनका भरण पोषण करनेके लिये उचित वृत्ति नियत करदी गई थी, वह जिस स्थान पर रहे वहाँ उनके भ्रमण और व्यायाम करनेके लिये विस्तारित स्थान दिया गया। और उस स्थानपर अंग्रेजोने उनकी ओर दृष्टि रखनेके लिये कितनी ही अश्वारोही सेनाको नियुक्त रक्खा था"।

इसके पीछे कर्नल टाड् साहबने लिखा है कि "जाबुआके महाराजकी एक जारज कन्याके साथ विवाह करनेके लिये निकालेहुए गोवर्द्धनदासको सन् १८२१

ईसवीमें मालवादेशमें जानेकी आज्ञा देकर अत्यन्त अज्ञानताका कार्य किया गया। गोवर्द्धनदासके उस नगरमें पहुंचते पहुंचते सब प्रकारसे 'शांतिके बदलेमें कोटेराज्यमें उत्तेजनाके लक्षण प्रकाशित होगये। कोटे और बूँदीराज्यमें षड्यंत्रमूलक पत्रादिके प्रकाशित न होते २ जालिमसिंहके प्राचीन विश्वासी वीरोंमें विद्रोह और उत्तेजना दिखाई दी। सैफअली नामक तीस वर्षके पुरातन सेनानायक जो "राजपलटन" अर्थात् नरपतिके खास सेनादलके नेता थे, और जो विश्वासी वीरता और दक्षताके लिये विशेष विख्यात थे ऐसा जाना जाता है कि पहिले उन्होंने अपने नाममात्रके अधीश्वर (किशोरसिंह) का पक्ष अवलम्बन किया था। पहिले इस सम्बादको मिथ्या अनुमान किया गया, परन्तु ज्ञानी जालिमसिंहने इसमें विश्वास न करके वह असंतुष्ट सेनादल जिससे महलमें स्थित महारावके साथ न मिलसके, इस कारण दोनोंके मध्यस्थलमें एक सेनाको रक्खा। शीघ्र ही महाराव जलमार्गसे जाकर सैफअली और उनके अधीनमें स्थित कितनी ही सेनाको महलमें ले आये, इस समाचारके प्रचारित होते ही एक नेत्र हीन जालिमसिंहने तामयानपर चढ़कर अपनी सेनाके साथ सैफअलीकी शेष सेनापर आक्रमण किया, और दो बड़ी २ तोपोंको ऊँचे स्थानपर इस भावसे रखकर गोलोंका चलाना प्रारंभ किया कि उससे एकमात्र राजधानी ही नहीं वरन चम्बल नदीके दोनों किनारोंके देश और मकानोंके ऊपर गोलोंकी वर्षा होने लगी। इस गोलोंकी वर्षासे महाराव, उनके भ्राता पृथ्वीसिंह और उनके अनुचर नौकापर चढ़ कर नदीके पार हो बूँदीको चले गये। इस ओर बचीबचाई सेनाने अस्त्र छोड़ कर आत्मसमर्पण किया। प्रबल उद्योगके साथ इस अनुष्ठानको करके जालिमसिंहने महारावके द्वारा अपने प्रभुत्वके नाशकी चेष्टा व्यर्थ करदी, और हाड़ाजातिका राजसिंहासन शून्य होगया। उस युद्धके समय विशनसिंहने दोनो भ्राताओंसे अलग होकर जालिमसिंहके साथ मेल किया, जालिमसिंहने इस समय विशनसिंहके साथ गुप्तभावसे जैसा सम्मान करते हुए व्यवहार किया उसी प्रकारका मन्तव्य प्रकाश किया, वह सरलतासे जाना जाता है"।

कर्नल टाड् साहबकी उक्त उक्तिसे पाठक भलीभांतिसे जान गये होंगे कि चतुर चूड़ामणि जालिमसिंह कैसे पुरुष थे, और उन्होंने विश्वासघातीके समान कैसा कार्य किया था। जो किशोरसिंह न्यायके अनुसार धर्मके मतसे जालिमसिंहके अधीश्वर थे जालिमसिंहने उन्हीं अधीश्वर किशोरसिंहके विरुद्धमें "तोपैं चलानेमें एक मुहुर्त्तमात्रका भी विलम्ब नहीं किया।" [illegible]स कोटेराज्यमें सूचीके अग्रभागमात्र भूमिमें जालिमसिंहका न्यायके अनुसार कोई भी अधिकार नहीं था, जिस कोटेराज्यके अधीश्वरकी करुणादयासे जालिमसिंहने कोटेमें प्रवेशका अधिकार प्राप्त कर फौजदार पदको प्राप्त किया, जिस कोटेराज्यसे जालिमसिंह एक समय सर्वस्वान्त होगये थे, जिस कोटेराज्यके अधीश्वरने फि[illegible] [illegible]नको क्षमाकर उनको ग्रहण किया और अपने पुत्रका अभिभावक पदका प्रदान किय[illegible] [illegible] [illegible]ो जालिमसिंह उन नरप[illegible]के पोते[illegible] विरुद्धमें तोपैं चलाकर अपने स्वार्थ साधन क[illegible] [illegible]ये अग्रसर हुए। यह क्या विचित्र राजनीति नहीं कही जायगी, यह

बात क्या अत्यन्त अन्याय अत्यन्त अधर्ममूलक नहीं समझी जायगी। जालिमसिंहने जो आचरण किया वह सरकारके बलपर ही किया। जालिमसिंह किशोरसिंहको कोटेसे निकाल करही शान्त न हुए, वरन उन्होंने महारावके भ्राता विशनसिंहको कि जिन्होंने राजसिंहासन प्राप्तिकी इच्छासे जालिमसिंहका पक्ष अवलम्बन किया था, धर्मके मस्तक पर पदाघात करके वृटिश एजेण्ट करनल टाड् महोदयके सम्मुख उन विशनसिंहको कोटेके अधीश्वरपदपर अभिषेक करनेक लिये प्रस्ताव किया। परन्तु साधु टाड् साहबने किसी प्रकारसे भी जालिमसिंहके उस घृणित प्रस्तावमें अपनी सम्मति नहीं दी। कर्नल टाड्के विषयमें अवश्य ही यह प्रशंसाकी बात कहनी होगी। परन्तु महाराव किशोरसिंहने अपने पैतृक अधिकारको प्राप्त करनेके लिये यह दूसरी बार उद्योग किया। यद्यपि जालिमसिंहका पक्ष समर्थन करनेके लिये इससे पीछे कर्नल टाड्ने जो राजनैतिक अभिनय किया उस अनुष्ठानसे जालिमसिंहका मत अन्याय क्षमताके लोभसे विश्वासहन्ता हो सकता था, परन्तु उदार हृदय सत्यप्रिय टाड्के पक्षमें यह कभी शोभा नहीं देता।

महाराव किशोरसिंह वृटिश गवर्नमेण्टके हस्ताक्षर सहित पहिले सधिपत्रके मतसे कोटेकी सम्पूर्ण शासनशक्ति सम्पन्न राजशक्तिको पानेके लिये वीर तेजा हाड़ा-जातिके समीप प्रतिवासी राजाओंसे सहायता लेनेको गये। इसके पीछे जालिम-सिंहके परामर्शके अनुसार कर्नल टाड् और गवर्नमेण्टने उस महाराजके विरुद्धमें जैसा अनुष्ठान किया उसके सम्बन्धमें कुछ कहनेके पहिले कर्नल टाड्ने अपने हाथसे इतिहासमें जो वर्णन किया है हम इस स्थानपर सबसे पहिले उसको प्रकाश करना उचित जानते हैं। कर्नल टाड् साहब लिखते हैं कि "उपस्थित उपद्रवोंके निवारणके पक्षमें एकमात्र सधिकी धारासे कार्य परिणत कर सर्व साधारणमें दृढ़रूपसे शांति रखनेका उपाय था। बूँदीके अधीश्वरके निकट यह कहकर पत्र लिखा गया कि भागेहुए किशोर-सिंहको अतिथि स्वरूपसे ग्रहण कर उनके साथ कुटुम्बियोंकी समान व्यवहार करनेका कुछ निषेध नहीं है, परन्तु यदि जालिमसिंहके विरुद्धमें किशोरसिंह समर करनेके अभिप्रायसे सेना इकट्ठी करैं तो बूँदीराजको उसके लिये सम्पूर्ण दायी होना होगा, उस समय नीमच नामक स्थानपर जो वृटिशसेनादल रहता था उस सेनादलके अंग्रेज सेनापतिको यह आज्ञा दीगई, कि जावुआ और बूँदीराज्यके मध्यस्थ मार्गमें एक सेना स्थापित करो। गोवर्द्धनदास महाराव किशोरसिंहके साथ मिलनेकी चेष्टा करैं तो वह दल गोवर्द्धनदासको मृत वा जीवित अवस्थामें वंदीकर ले। उसको पकड़नेके लिये जो उत्तम अनुष्ठान किया गया, गोवर्द्धनदासने गिरिसंकटसे गुप्त पन्थद्वारा भागकर उस अनुष्ठानको व्यर्थ करदिया। किन्तु बूँदीराजको उस समय भयभीत और इधर उधर करतेहुए देखकर वह बराबर मारवाड़ राज्यमें भाग गये। किन्तु मारवाड़पति गोवर्द्धन-दासको किसी प्रकार भी आश्रय देनेमें सम्मत न हुए, तब वह शीघ्र ही दिल्लीमें आनेको बाध्य हुए, गोवर्द्धनदास दिल्लीमें गये तब उनको दृढ़रूपसे वंदीभावसे रक्खा गया। परन्तु ऐसा जाना जाता है कि पहिले गुप्त षड्यन्त्रके मतसे ही

गोवर्द्धनदासने दिल्लीमें आकर आत्मसमर्पण किया था; कारण कि शीघ्र ही महाराव किशोरसिंह बूँदीको छोड़कर वृन्दावनकी ओरको तीर्थयात्रा करनेके लिये गये और उस समय ऐसी आशा की थी कि हमको अपने पैतृक कुलदेवता व्रजनाथजीके मंदिरमें अवश्य शांति और संतोष प्राप्त होगा, इसीसे उन्होंने जीवनके शेष समयको धर्मकी आलोचनामें व्यतीत करनेकी अभिलाषा की थी । वह जितने दिनोंतक बूँदीमें रहे थे उतने दिनोंतक सर्व साधारणमें किसी प्रकारके राजनैतिक उपद्रव होनेकी सम्भावनाका अनुमान नहीं था। कोटेसे बूँदी बहुत पास थी, इस कारण सबने विचारा कि महाराव क्रोधके वश यद्यपि बूँदीमें गये हैं पर फिर शीघ्र ही लौट आवैंगे। परन्तु महाराव किशोरसिंहके बूँदीको छोड़कर उत्तरकी ओरको जाते ही सरलतासे प्रकाशित होगया कि बूँदीसे न सही वह अन्य देशसे अपने स्वार्थसाधनके लिये सम्पूर्णरूपसे सहायता पालेंगे। रजवाड़ोंके प्रत्येक राजा प्रत्येक प्रधान २ सामन्तने महारावको उस विपत्तिके समयमें सहानुभूति प्रकाश करनेवाला पत्र लिखकर धीरज दिया था, और वह जिस जिस राज्यमें होकर गये थे उसी राज्यके अधीश्वरने महाराव किशोरसिंहको कोटेके अधीश्वर रूपसे महा आदरसे ग्रहण करके उनके प्रति यथेष्ट सम्मान दिखाया था, “ केवल जो भरतपुरराज्य कोटे राज्यके अत्यन्त समीप था, उस राज्यके अधीश्वरने ऐसा ऊंचा सम्मान नहीं दिखाया। विख्यात् भरतपुरके अधीश्वरने कितने ही प्रतिनिधियोंको महाराव किशोरसिंहके समीप भेजकर क्षमा प्रार्थना की, उन्होने कहा कि वह अत्यन्त वृद्ध और दृष्टिशक्ति हीन होनेसे महारावके निकट स्वयं नहीं आसके हैं । जाट जमींदारने सौभाग्यबलसे ऊंचा पद पाया है, इस कारण उनके निकट जिस प्रकारका सम्मान प्रकाश करना उचित था जाटपतिको उसे न करते देखकर महाराव किशोरसिंहने अवज्ञाके साथ उनके प्रतिनिधिको विदा देकर उपहार द्रव्य फेर दिये। महारावके इस गर्वित आचरणके कारण जाटपतिने शीघ्र ही महारावको भरतपुर राज्यकी सीमा छोड़नेकी आज्ञा दी । महाराव किशोरसिंहने कुछ समय तक वृन्दावनधाममें “व्रजकुंजमें” निवास किया। उस समय भलीभांतिसे प्रकाशित होने लगा कि जयदेवकी मधुर पदावलीने महारावके हृदयमें सामन्य राजमुकुटकी असारताको प्रतिपादित किया है और राधाकृष्णकी विचित्र लीलाके स्थानमें वीर कविचंदकी उत्तेजक वीरगाथा और चौहानकुलकी वीरताकी कहानी और गौरवगरिमा स्मृति महारावके हृदयसे एकवार ही निकल रही है, इस कारण महारावने इस समय इच्छानुसार ठहरनेकी इच्छा प्रगट की । सर्व साधारणके पहिले अनुमानके मतसे महाराव शीघ्र ही अपने जीवनकी अतीत और वर्त्तमान अवस्थाको समझगये, उन्होंने अपनेको विदेश भूमिमें केवल धनके लोभियोंके द्वारा घिरा हुआ देखा। परन्तु महाराव अप्रैल मासमें वृन्दावनसे कोटेको जानेके लिये फिर तैयार हुए । उनको शैतानस्वरूप गोवर्द्धनदासने स्थिर कर दिया कि महाराव यहां इस भावसे नहीं रहसकेंगे । गोवर्द्धनदासके प्रति तीक्ष्ण दृष्टि रखी गई थी यह सत्य है, पर उन्होंने अपराधीकी समान कारागारमें बंद होकर भी महोच्चपदपर स्थित देशीय कर्मचारियोंद्वारा महारावके समीप अत्यन्त गुप्तरीतिसे पत्रव्यवहार किया था। यह बात पीछे प्रकाश हुई”।

क्रमश: राजनैतिक विभ्राट् प्रवल होगया। कर्नल टाड् इसके पीछे लिखते हैं "कि क्रमानुसार षड्यंत्रजालका विस्तार और महारावके दुष्टचरित्र चरोंके द्वारा वृथा आश्वास, वृद्धिको प्राप्त होने लगे। महारावने अतिरिक्त सेना और अनुचरोंको इकट्ठा करके हाड़ौतीकी ओरको यात्रा की। वह जिस २ राज्यमें जाने लगे उसी २ राज्यके अधिपतिसे कहने लगे कि गवर्नमेण्टकी इच्छाके अनुसार अपनी राजशक्तिको फिर ग्रहण करनेके लिये जाता हूँ। ऊँचे पदवाले कितने ही देशीय-राजकर्मचारियोंके कितने ही चिह्नित अनुचर और दिल्लीके कोषागारमें देशीय धनरक्षक जिन्होंने महाराव को धनकी सहायता दी थीं, उनका एक एजेण्ट इस समय महारावके साथ गया। सर्वसाधारणने इसका अनुमान सरलतासे करलिया, कि महाराव निश्चय ही गवर्नमेण्ट-की इच्छानुसार जा रहे हैं, इस कारण सर्वसाधारणने इस समय महारावकी जिसके आशा पूर्ण हो, ऐसी कामना प्रकाश की। महाराव जितने आगे बढ़ने लगे उतने ही उनकी सेनाकी संख्या भी बढ़ने लगी। सन् १८२२ ईसवीकी वर्षाऋतुके शेष भागमें प्राय: तीन हजार सेना साथ लेकर चम्वल नदीके किनारे महाराव किशोरसिंह जा पहुँचे। नदीके पार होकर महाराव किशोरसिंहने इस प्रकारकी स्वजाति भाषासे अपनी प्रजामें घोषणा प्रचार कर दी कि राजपूत सरलतासे उसका अर्थ समझलें और कोई महारावके उस आह्वानपत्रके अग्राह्य करने और महारावके पक्षका अवलम्बन करनेमें असम्मत न हों। महाराव किशोरसिंह संधिपत्रके अनुसार न्याय विचारकी आशा करनेके लिये उतारू हैं, इसीसे सबको उसमें योग देनेके लिये बुलाया है, प्रत्येक हाड़ा-राजपूत आमंत्रणके अनुसार आने लगे। राजपूतजाति कैसी विश्वासी राजभक्त थी। महाराव किशोरसिंहकी वर्तमान अवस्थामें उसका प्रवल प्रमाण दिखाई दिया। जालिम-सिंहके साथ जो मनुष्य समरक्त सम्बन्ध बन्धनमें बँधे थे, जिन्होंने जालिमसिंहके द्वारा बहुतसे उपकार प्राप्त किये थे, उन सबने इस समय जालिमसिंहको छोड़कर न्यायके अनुसार अपने अधीश्वर महाराव किशोरसिंहके साथ योग देनेको गमन किया। उनमेंसे बहुतोंने तो महाराव किशोरसिंहको नेत्रोंसे भी नहीं देखा था और बहुतसे मनुष्य उनके विषयमें कुछ भी नहीं जानते थे।" यहाँ पर हमारा यह प्रश्न है कि एकमात्र जाटराजके अतिरिक्त समस्त रजवाड़ेके प्रत्येक राजा प्रत्येक सामन्त प्रत्येक राजपूतने किस कारणसे महाराव किशोरसिंहके प्रति सहानुभूति दिखाई थी ? किस कारणसे प्रत्येक हाड़ाजातीय वीरने महारावका साथ देकर उनका पक्ष समर्थन किया था ? किस कारणसे जालिमसिंहके आत्मीय अनुगत मनुष्योंने भी उनको छोड़ कर किशोरसिंहका साथ दिया था ? किस कारणसे वृटिश गवर्नमेण्टके अधीनस्थ देशीय उच्चपदवाले कर्मचारियोंतकने महारावका साथ दिया था ? कर्नल टाड्ने स्वयं इस बातको स्वीकार किया है कि महाराव किशोरसिंहको कोटेका न्यायके अनुसार शासनशक्ति युक्त अधीश्वर जानकर ही सबने महारावका पक्ष अवलम्बन किया। तभी यह प्रश्न उठता है कि रजवाड़ेके प्रत्येक मनुष्यने जब कि किशोरसिंहको न्यायके अनुसार अधीश्वर जानकर उनका पक्ष अवलम्बन किया था, तब गवर्नमेण्टने उस न्यायके अनुसार

अधिकारकी शासनशक्तिको एक वहिस्थ मनुष्यको देकर क्या उस न्यायके वक्षस्थल पर पदाघात नही किया ? ।

महाराव किशोरसिंहने अपने पैतृक अधिकारको पानेके लिये स्वजातिसे सहायता माँगी, सभी उचित आशाकी संभावनासे सहायता करने लगे। महाराव किशोरसिंहको कुछ भी इच्छा नही थी, कि गवर्नमेण्टके साथ विवाद विसम्वाद करके अपने पूर्वअधिकार पर बलपूर्वक अधिकार करलिया जाय । गवर्नमेण्टने जिस महा भ्रममें पड़कर अत्यन्त अविचारसे उनके पैतृक अधिकारको लोप करनेके लिये एक मनुष्यको वह अधिकार दे दिया और उस दानको प्रबल रखनेके लिये पक्षपातसे उस मनुष्यका पक्ष समर्थन किया है। उस गवर्नमेण्टको समझानेके लिये किसी प्रकारसे कसर न की। महारावने सरलतासे उन उपद्रवोंका विचार करानेके लिये यथाशक्ति चेष्टा की । पर गवर्नमेण्टके साथ समस्त सद्भावकी रक्षाके लिये महाराव किशोरसिंह यथाशक्ति यत्न करके भी कृतकार्य न होसके। सन् १८२२ ईसवीकी १६ वीं सितम्बरको महाराव किशोरसिंहने बृटिश एजेण्ट कर्नल टाड्के पास एक पत्र भेजकर संधिका प्रस्ताव उपस्थित किया। उसे पढ़कर महारावके मनका भाव भलीभांतिसे जाना जाता है। उस पत्रको हम इस स्थानपर प्रकाशित करते है, ।

"हमारे मनका भाव क्या था उसको प्रकाश करनेके लिये कवि चांदखांने वारम्वार जाननेकी इच्छाकी। अपने दो वकील मिरजा मुहम्मद अलीवेग और लाला शालिग्रामके द्वारा मैंने अपनेको परिज्ञान कराया है। मैंने फिर आपके पास संधिकी धाराको भेजा है। आप उसीके अनुसार कार्य कीजिये। यही हमारी इच्छा है। गवर्नण्टके प्रतिनिधिस्वरूप होकर आप हमारे प्रतिन्याय विचार करिये। प्रभू, प्रभुकी समान, सेवक सेवककी समान रहे, सर्वत्र ही ऐसा हुआ है, और यह आपसे कुछ छिपा नही है"।

१–महाराव उमेदसिंहके समयमें दिल्लीमें जो संधिवंधन हुआ है, मे उस संधिपत्रके मतसे समस्त कार्य करूंगा ।

---

(१) महाराव किशोरसिंहके उक्त पत्रसे क्या प्रकाशित होता है ? गवर्नमेण्टके साथ सम्पूर्ण सद्भावकी रक्षा करके उस गवर्नमेण्टके निकट उन्होंने जिस न्याय विचारकी प्रार्थना की वह क्या न्यायसंगत नही थी? "प्रभू, प्रभूकी समान और सेवक सेवककी समान रहै, यह सर्वदाही सम्मत उक्ति कौन सी सरकार अग्राह्य कर सकती है। सब जगत् महारावके इस न्याय और धर्मयुक्त कथन को समर्थन कर सकता है। महाराव किशोरसिंहने न्याय विचारकी प्रार्थना करके कर्नल टाड्के निकट जो संधियोंकी धाराओंको भेजा था, उसके प्रति दृष्टि रखनेसे महारावके उदारहृदयका चूड़ान्त प्रमाण पाया जाता है। महाराव संधि धाराको प्रबल रखनेके लिये अपनी अनेक स्वार्थोंमें हानि स्वीकार करके भी राजराणा जालिमसिंहको पूर्णपद पर रखनेके लिये सम्मत हुए। उद्धतस्वभाव गर्वित और दुर्विनीत माधोसिंहको लेकर यह राजनैतिक विभ्राट् उपस्थित हुआ है, इसी लिये महाराव उक्त माधोसिंहको उपयुक्त जमीन देकर उनको दूसरे स्थान पर भेजना चाहते हैं, और उनके पुत्रको अपने यहाँ रखकर वंशानुक्रमसे रक्षा करनेके लिये सम्मत हैं। सभ्य बृटिश गवर्नमेण्ट की राजनीतिने उसे ग्राह्य नहीं किया। महारावने जो संधिपत्रकी धारा भेजी थी वह आगे लिखी है।

२-नानाजी जालिमसिंहके ऊपर हमें सम्पूर्ण विश्वास है। वह महाराज उमेदसिंह के अधीनमे जिस भावसे कार्य करते थे, हमारे अधीनमें भी उसी भावसे कार्य करेंगे उनके हाथमें राज्यशासनका भार अर्पण करनेके लिये मैं सम्मत हूं, परन्तु मुझे माधोसिंहपर सदेह और संशय उपस्थित हुआ है, हम किसी समय भी एक मत नहीं हो सकते, इस कारण मैंने उनको एक जागीर दी है वह वहाँ रहैंगे। उनके पुत्र वाप्पालाल मेरे निकट रहैंगे, और अन्यान्य मंत्री जिस प्रकार राजाके समीप रहकर राजकार्य करेंगे वह भी उसी प्रकार मेरे निकट काम काज करेंगे। मैं उनका प्रभू हूँ और वह मेरे भृत्य स्वरूप रहेंगे, और यदि वह भृत्यकी समान कार्य करेंगे तो यही वंशानुक्रम उसी भावसे चलता रहैगा।

३-अंग्रेज गवर्नमेण्ट अथवा अन्यान्य राजाओंके समीप जो पत्रादि भेजने होंगे वह हमारी सम्मति और उपदेशके अनुसार लिखने होंगे।

४-अंग्रेज गवर्नमेण्ट हमारे और उनके जीवनके लिये अवश्य ही प्रतिभू रहेंगे।

५-पृथ्वीसिंहको मैंने एक जागीर दी है और वह वहाँ निवास करैंगे, उनके साथ और मेरे अन्य भ्राता विशनसिंहके साथ जो मनुष्य नियुक्त रहैंगे मै उनको मनोनीत करदूँगा, इसके अतिरिक्त मेरे स्वजाति और कुटुम्बियोंको उनकी पद मर्यादाके अनुसार जागीरदान की जायगी, और चिर प्रचलित प्राचीन रीतिके अनुसार वह मेरे समीप रहैंगे।

६-मेरे शरीर रक्षक खास तीन हजार सेनाके साथ वाप्पालाल (जालिमके पोते) मेरे समीप उपस्थित रहैंगे।

७-राज्यका समस्त राजस्व प्रथमत. साधारण कोषागारमें जमा करना होगा, इसके पीछे वहांसे समस्त खर्चा किया जायगा।

८-समस्त किलेदार अर्थात् दुर्ग रक्षक मेरे द्वारा नियुक्त होंगे और सारी सेना मेरी आज्ञामें रहैगी। वह राजकर्मचारियोंको उनकी आज्ञा पालनके लिये अनुमति देते रहैंगे परन्तु उसमें मेरे उपदेश और सम्मतिका प्रयोजन होगा।

मैं इन धाराओंका प्रस्ताव करता हूँ, और इसी राजनीतिका अनुयायी हूँ। आसौज पंचमी संवत् १८७८ सन् १८२२ ई०।

महाराव किशोरसिंहने सरकारके निकट जो ऊपर लिखा हुआ प्रस्ताव भेजा था कोई साधारण पुरुष भी इसको अनुचित नहीं कह सकता, परन्तु उनका प्रस्ताव सरकारने स्वीकार नही किया एक महीना इस प्रस्तावकी प्रतिज्ञाके बीच गया, परन्तु वृटिश सरकारने एकमात्र जालिमसिंहके स्वार्थकी रक्षामे दृष्टि देकर मन्त्रीके प्रस्तावके अनुसार शोचनीय राजनैतिक दृश्य आरंभ कर दिया। उदारचित्त सत्यप्रिय, टाड साहबने भी अपने प्रभुकी आज्ञानुसार उस कार्यमे सब प्रकारसे योगदान करनेमें कसर न की। कर्नल टाडने अपनी परिवर्ती घटनाका जो वृत्तान्त वर्णन किया है, हम यहाँ पर उसीको प्रकाश करना उचित जानते हैं। कर्नल टाड साहब लिखते हैं, कि

" जालिमसिंहको उनकी विश्वासी सेनाके ऊपर भी निर्भर नहीं किया जाता, उन्होंने स्वयं ही कहा है कि सेनाके ऊपर उनका सम्पूर्ण विश्वास नहीं है। उनका शासनकार्य किस प्रकार कठोरताके साथ होता था इस समय उसकी विलक्षण साक्षी मिली है। जिस जालिमसिंहने स्वदेशी और विदेशी प्रत्येक सेनाका अपने हाथसे पालन किया था, उसी सेनादलके प्रत्येक पुरुष उनके विरुद्धमें न्यायके अनुसार अधिकारियोंका पक्ष अवलम्बन करनेके लिये तैयार होते देखा। इस राजनैतिक उपद्रवोंके समयमें सभोको उन्होंने यहांतक अविश्वासका आविर्भाव दिखाया, कि उन्होंने विपत्तिसे मुक्त होकर कहा " कि मेरे शरीर पर पहिरे हुए वस्त्रोंतकमें मानो षड्यंत्रकी गंध आगई है"। जालिमसिंह चारोंओर उस अविश्वासताको देखकर विरक्त हुए, और सहज ही ऊँची सामर्थ्य प्राप्तिकी आशाको छोड़नेके लिये उद्यत होते, तो उससे बृटिश गवर्नमेण्ट भी अत्यन्त कष्टदायक विपत्ति ग्रस्त अवस्थासे उद्धार पानेमें समर्थ-होती। जालिमसिंहके समीप इस राजनैतिक कठोर ग्रंथिको छेदन करनेके लिये यथेष्ट सुअवसर दिये थे, और इशारोंसे यह विदित किया था कि यदि वह विचारेंगे तो इस ग्रंथिको काट सकेंगे, नहीं तो तलवारसे अवश्य ही यह राजनैतिक विभ्राट् ग्रंथिछेदन की जायगी। परन्तु सभी चेष्टाएँ निष्फल होगईं; जालिमसिंहने संधिपत्रके मतसे कार्य करने और स्वयं शासनकी सामर्थ्यको जिस प्रकारसे ग्रहण करनेकी प्रतिज्ञा की, जालिमसिंहके नाममात्रके प्रभु महाराव किशोरसिंह भी उसी प्रकारकी भित्ति पर खड़े हुए, और अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ निर्द्धारित पूर्व संधिपत्र की एक लिपिको एजेण्टके निकट भेजकर पूँछा कि वह सन्धिपत्र स्वीकार होगा या नहीं ? जालिम सिंहको वंशानुक्रमसे शासनशक्तिको देनेके लिये जो अतिरिक्त संधिधारा नियुक्त हुई थी वही धारा यदि मूलसंधिपत्रमें नियुक्त कीजाती तो यह समस्त उपद्रव सरलतासे दूर होसकते थे। ऐसा होनेसे संधिपत्रका मूल मर्म और अर्थ कभी भी दो भावोंसे ग्रहण नहीं किये जाते, और गवर्नमेण्टने अविचारका कार्य किया है इसकी कोई विवेचना नहीं कर सकता। वास्तवमें कोई भी उस विश्वासघातके दोषसे कलंकित नहीं होते. कारण कि जिन्होंने आदि संधिपत्र पर हस्ताक्षर किये हैं अतिरिक्त संधिपत्र पर भी उन्हींके हस्ताक्षर थे। एक राज्यमें एक मनुष्यको नाममात्रके राजा और दूसरेको समस्त शासनशक्तियुक्त राजा कह कर हमने जिस बातको स्वीकार किया है; उसके बदलेमें जालिमसिंहके द्वारा उपकृत होकर हमारे उस उपकारके लिये किसी प्रकारका पुरस्कार देना उत्तम नहीं होसकता, इस विवादसे यह प्रश्न उपस्थित हुआ है। बड़े सौभाग्यकी बात है कि नाममात्रके अधीश्वर (किशोरसिंह) ने इस समय जिस प्रश्नको उपस्थित किया है वह गवर्नमेण्टके प्रस्तावमें सम्पूर्ण विपरीत दिखाई पड़ा और वह आदि और अतिरिक्त संधिपत्रके मूल उद्देशके मतसे काम करनेमें प्रायः प्रकृत पक्षमें असम्मत हुए। महाराव किशोरसिंहने प्रस्ताव किया कि उनके स्वजातीय तीन हजार शरीर रक्षक उनके पास नियत रहै, और वह अपनी इच्छानुसार सामन्तोंको जागीरें देंगे, और सेनादलके नेता पदपर स्वयं नियुक्त रहैंगे। यह सब प्रस्ताव

मित्रतामूलक संधिके प्रत्येक मौलिक नियमके विपरीत हुए; और अन्य पक्षमे जालिमसिंहके उत्तराधिकारियोंके राज्यकी शासनशक्तिकी प्राप्ति की आशा केवल उनकी दयाके ऊपर निर्भर रहैगी" ।

शीघ्र ही रणभेरी बाजा बजा !—वृटिश गवर्नमेण्टने जालिमसिंहके द्वारा उपकार पाकर उस उपकारका पुरस्कार देनेके लिये भारतवर्षके एक प्राचीन उच्च राजपूत राजदरबारकी शासनशक्तिको लोप करके वह शक्ति जालिमसिंहको देनेकी इच्छा की और महारावके विरुद्धमें शीघ्र ही सेनाको चलाया। महाराव किशोरसिंहके पितामह महाराव गुमानसिंहके द्वारा प्रतिपालित आश्रयप्राप्त अनुग्रहीत जालिमसिंह भी अपनी राजभक्तिका चूडान्त परिचय देनेके लिये सेनासहित महाराव किशोरसिंहके साथ युद्ध करनेके लिये चले। कर्नल टाड् साहबने लिखा है कि "हतबुद्धि महाराव किशोरसिंहको कुचक्री और कुमन्त्रणदाताओंके हाथसे उद्धार करनेके लिये, एवं प्रतिदिन उनकी पताकाके नीचे जो समुत्तेजित राजपूत वृन्द इकट्ठे होते थे, उनके हाथसे उनको उद्धार करनेके लिये उनकी समस्त चेष्टाएं व्यर्थ और निराश करनेके जो अंग्रेजी सेना का दल संधिको प्रबल रखनेके लिये बुलाया गया था, वह जालिमसिंहकी सेनाके साथ मिलकर आगे बढ़ने लगा। सेनादल कालीसिन्धुनामक स्थानमें इकट्ठा हुआ, वह स्थान दोनों रणोन्मत्त सेनादलके मध्यवर्ती था। सेनादलके वहां पहुँचते ही कई दिनतक बराबर घोर वर्षा होनेसे जलके द्वारा समस्त स्थान प्लावित होगये, सेनाको उस नदीके पार होना असम्भव था, इस कारण कई दिनका विलम्ब होनेसे महारावको उपस्थित सर्वनाशसे उद्धार करनेके लिये मित्रता और सुमंत्रणसे, यथेष्ट सुभीता मिलनेका अवसर मिला भी परन्तु वह सभी व्यर्थ होगया। सामने घोर विपत्तिको देखा पर निराशाके साथ उस विपत्तिके आगमकी प्रार्थना करने लगे, और उन्होंने वृटिश गवर्नमेण्टके सम्मुख अत्यन्त अनुगत्य घोषणा करके गवर्नमेण्टके प्रतिनिधिकी मित्रता और श्रेष्ठ उपदेशके ऊपर अपना पूर्ण विश्वास स्थापित किया, परन्तु प्रत्येक प्रतिवादके समय वह यह उत्तर देते जाते थे कि सम्मानशून्य जीवनका क्या प्रयोजन है ? शासनशक्ति हीन राज्यका क्या फल है ? क्या तो मृत्यु ही होजाय और या पूर्णतया: पैतृक राजशक्ति मिल जाय" ।

इसके पीछे कर्नल टाड् साहबने लिखा है, कि जालिमसिंहके आचरण भी इस समय महारावके आचरणोंकी अपेक्षा कुछ अल्प विरक्तिके नहीं थे, कारण कि एक ओर तो वह प्रगटमें यद्यपि महारावके प्रति राजभक्ति प्रकाश करते थे, और अपने सफेद बालोंपर कलक लगानेकी उनकी अभिलाषा नहीं थी, परन्तु आत्मस्वार्थ साधन करनेके लिये संधिपत्रके धारा स्वरूप को भी अपने सामने रक्खा था, उन्होंने आशा की कि संधिपत्रकी धारा पालन करनेके लिये उनको स्वयं किसी विशेष दायित्वका भार ग्रहण करके कोई प्रबल तैयारी नहीं करनी होगी। इस समय उस प्रकारसे दायित्व विहीन होनेकी चेष्टा किसी प्रकार भी सहन नहीं हो सकती।

उन्होंनें प्रकाश किया कि उनको सेनादलके ऊपर विश्वास नहीं है. सेनादल समरके समयमें अवश्य हमारे विरुद्ध अस्त्र चलावेगी। इससे हम उससे कहे देते हैं कि हम उस विपत्तिको सहन करनेके लिये तैयार हैं। उसने और भी कहा कि हमको वंशानुक्रमसे जो अधिकार भोगनेके लिये दिया गया है, उस अधिकारकी किसी प्रकारसे रक्षा करनी ही होगी इससे उसको रक्षण पीडन दोनों प्रकारके कार्योंमें योगदान करना होगा कि जिससे किशोरसिंहके प्रति राजभक्ति प्रकाशके साथ शांतिके सहित अपनी सामर्थ्यकी रक्षा प्राप्त रहे। चतुर जालिमसिंहने उस समय कहा कि हम गवर्नमेण्टके साथ मित्रता होनेसे जो कुछ सहायताकी आशा करते हैं, हमारी उस शासन सामर्थ्यको अक्षत रखनेके लिये सहायता करनी होगी। एजण्ट (टाड्) ने शेष मुहूर्त तक आशा की थी कि जालिमसिंह जो सब मनुष्योंके रक्षकस्वरूप हैं वे उनको रणके मुखमें डालनेसे जगत्में कलंक, और तिरस्कारको संचय और सद्गुणके नाशसे अपमानका संचय न करेंगे, परन्तु वह पृष्ठपद होकर अपनी शक्तिकी स्वत्वता साधन करनेके लिये अग्रसर हुए. उनके क्रमशः इधर उधर करनेसे और मनमें एकभाव तथा प्रकाश्यमें अन्यभाव प्रकाश करनेसे उसमें केवल विपत्तिहीकी वृद्धि होती थी इस कारण ऐजेण्टकी वह आशा शीघ्र ही लुप्त होगई, यद्यपि उस समय जालिमसिंहके भीतर ही भीतर विषम संशय विराजमान था परन्तु राज्यप्राप्तिकी इच्छासे अंतमें उन्होंने सभीको दूर कर दिया"। कर्नल टाड् साहबकी उक्त उक्तिसे भलीभांति जाना जाता है कि केवल जालिमसिंहको संतुष्ट करनेके लिये इसके पीछे यह शोचनीय राजनैतिक अभिनय प्रारंभ हुआ। कर्नल टाड् यदि इस समय सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये जालिमसिंहको समझाकर महाराज किशोरसिंहके पक्षका अवलम्बन करते तो जालिमसिंह कभी सुअवसर पाकर संधिकी धाराका उल्लेख करके वृटिश गवर्नमेण्टको उसके पालन करनेके लिये उन्हें अन्यायके युद्धमें लिप्त नहीं करसते थे।

इतिहासलेखकने फिर लिखा है कि "जालिमसिंह और उनकी सेना आगे और अंग्रेजसेना उनकी सेनादलके पीछे होकर युद्धके सम्मिलनका प्रस्ताव उपस्थित किया गया और जिससे दोनों सेना एकभावसे कार्य करसकें उसके लिये जालिमसिंहके अनुरोधसे अंग्रेजी सेनापतिको उनकी सेनादलपर नियुक्त किया गया। अक्टूबर मासकी १ तारीखको सेनादल आक्रमण करनेके लिये अग्रसर हुआ। जालिमसिंहकी सेनामें ८ दलपैदल ३२ तोपें और चौदह रिसाले प्रबल अश्वारोही सेनाके थे, उस सेनादलमें पाँच दल पैदल, १४ तोपें और दश दल अश्वारोही दल सबसे आगे चलो। और बाकी समस्त सेनाके साथ जालिमसिंह उसके पीछे हजार हाथ दूरी पर चलने लगे, वृटिश सेनामें दो दल पैदल और छः दल अश्वारोही और एक दल अश्ववाहित (गोलन्दाज) महारावकी सेनादलके निकटवर्ती होकर जालिमसिंहके

---

(१) पांच रजमट देशी पदाति दलके मालिक लफटिनेण्ट मि० मिलन थे और उन साहसी वीरसे जैसे कार्यकी आशा थी वैसा ही उन्होंने किया।

दक्षिण ओर जाने लगा। सेनादल सबसे पहिले एक विस्तारित क्षेत्रमे जाकर शेषमें एक छोटी नदीके किनारे ऊँची भूमिपर जा पहुँचा। महाराव किशोरसिंहकी सेनाका दल नदीके दूसरे पारसे कुछ दूर एक ऊँचीसी भूमिपर इकट्ठा हुआ था। शत्रुओंकी सेनाके आनेसे महारावने नदीके पारसे अपने डेरोंको पूर्वमतसे रक्षित रखकर अपनी सेनाको नदीके इस पार लाकर इकट्ठा किया था। "राज पलटन" नामक सेनाको उसके नेता सैफअली कि जिसने अपने प्राचीन प्रभू जालिमसिंहको छोड़कर महारावके साथ योग किया था, उसकी सेनाको बाँईओर रखकर महाराव किशोरसिंह स्वयं सामन्तोंके साथ पाँचसौ हाड़ा अश्वारोही लेकर दक्षिण भागको गये, और मध्यभागमे समरमे अशिक्षित अस्त्रधारी राजपूत रक्खे गये। युद्ध वा भागनेका विन्दुमात्र भी चिह्न न दिखाकर अंग्रेजी सेना और जालिमसिंहकी सेना शत्रुओंसे चारसौ हाथके समीप अपने २ डेरोंसे निकलकर स्थित हुई। इस समय एजेण्टने कुछही समय पाकर हतबुद्धि महाराव और उनके अनुरक्त अनुचरोंको सम्मुख विपत्तिसे उद्धार करनेके लिये अन्तिम चेष्टा करनेकी कामनासे वृटिश सेनापतिको अनुरोध किया कि समस्त सेनादलको विश्राम करनेकी आज्ञा दीजाय। एजेण्टने दोनों ओरकी सेनाके मध्यस्थान तक जाकर पहिले जिस संधिका प्रस्ताव किया था। उसी प्रकारके प्रस्तावसे सबको क्षमा करैंगे, यह मत प्रकाशित किया और महाराव किशोर सिंहको फिर राजधानीमे लेजाकर उनको पिताके सिंहासन पर अभिषिक्त करैंगे यह भी कह दिया। परन्तु महाराव अपने नेत्रोंके सम्मुख केवल भावी सर्व नाशको देख रहे थे, तथापि उन्होंने अपने पहिले जो संधिका प्रस्ताव किया था उसकी एक धाराको भी त्यागन करना नहीं चाहा, वह अपने प्रस्तावोंको ऊपर ही अधिक हठ करने लगे, और तीन हजार स्वजातीय हाडा राजपूतोंके साथ यदि कोटेमे प्रवेश करसकै तो वह कोटेमें चलेगे नहीं तो नहीं जायँगे, यह बात प्रगट करदी। सुविचारके लिये उनको आधे घंटेका समय देने पर पीछे दोनो ओरकी सेना युद्धके लिये आगे बढ़ने लगी। महारावकी निर्वाचित सेना दहिनी ओरको इकट्ठी होकर जालिमसिंहके आगे जानेके मार्गमे खड़ी हुई, दूसरी ओर वृटिश सेनादल उनका दल भंग करनेके लिये उसी भावसे उस ओर इकट्ठा हुआ"।

"पूर्वोक्त आधे घंटेका समय वीतने पर और महारावके अन्यायकी आकाक्षाकी कुछ भी निवृत्ति न होनेसे पूर्व प्रस्तावके मतसे सकेत करते ही जालिमसिंहके अधीनकी सेनाने अस्त्र चलाकर तोपोंके द्वारा गोलोंकी वर्षा करनी प्रारंभ करदी, और उसके पीछे अश्वारोही सेनाका दल आक्रमण करनेके लिये आगे बढ़ा। फतेहाबाद और धौलपुरके विख्यात समरमें हाड़ाजातीय सेनाने जैसी विषम वीरता दिखा कर यश संग्रह किया था, महारावकी सेनादलने उसी प्रकारके बल विक्रमसे जालिमसिंहकी सेना पर प्रबल वेगसे आक्रमण किया, और उसी कारणसे कितनी ही हाड़ासेना तोपोंके मुखमे पड़ी, परन्तु उस समय यदि तीन दल वृटिश सेनाके आगे बढ़कर महारावकी उस सेनापर आक्रमण न करते तो अवश्य ही महारावकी वह सेना जालिमके वाम भागकी सेनाको

भगाकर जालिमसिंह स्वयं जिस स्थान पर सेनादलके साथ ठहरे थे वहाँ आपहुँचती। परन्तु अंग्रेजी सेनादलके आनेसे उनकी वह चेष्टा व्यर्थ होगई; और अंग्रेजी सेनादलके साथ समर करना असम्भव जानकर वह शीघ्र ही भागनेके लिये तैयार हुई। और महाराव किशोरसिंह स्वजातीय चारसौ अश्वारोही वीरोंके साथ नदीके पार होकर आधकोश दूर उस ऊँची भूमिपर स्थित हुए। इस ओर उस युद्धमें उनकी पैदल सेनादल भंग करके चारोओरको फैल गई, बृटिश सेनादल शीघ्रतासे नदीके पार होगया, और पैदल सेनाने जिस समय महारावकी सेनादलके दाहिनी ओरके भागनेका मार्ग घेरा था उस समय अन्य और दो सेनादलोंने महाराव पर आक्रमण किया। इस समय भी महाराव बृटिशसेना पर आक्रमण नहीं करेंगे यह स्थिर कर इस महा विपत्तिके समयमें भी वह अपनी पूर्व प्रतिज्ञाको दृढ़ रखनेके लिये खड़े रहे, और बृटिश सेनादल शीघ्रतासे प्रबल वेगसे आक्रमण करनेके लिये आगे बढ़ रहा है यह देखकर भी महारावकी सेनाके दलने भागने वा आत्म समर्पणके कुछ भी चिह्न न दिखाये, और सब इकट्ठे होकर अचल पर्वतकी समान खड़े रहे। एक बृटिश सेनापति प्रत्येक सेनाको चलाकर आक्रमण करनेके लिये आगे बढ़ने लगा, उन सेनापति और बृटिश सेनादलने भारतके अनेक स्थानोके युद्धोंमें शत्रु पक्षको नित्य बृटिशके आक्रमणसे भागता हुआ देखा था; परन्तु राजपूत नहीं भागे बरन पिंडारी ही भाग गये थे। राजपूत अभेद्य विराट् पर्वतकी समान खड़े रहे, और हमारी सेना उस हाड़ासेनादलपर आक्रमण करनेके लिये जाकर प्रत्येक संघातसे पीछेको हटगई, और दोनों साहसी अंग्रेज सेनानायक उसी कारणसे रणभूमिमें मारे गये। उसी सेनादलके साहसी प्रधान अंग्रेज सेनापति संघातके समयमें अत्यन्त आश्चर्य रूपसे जीवनकी रक्षा करनेमें समर्थ हुए। शत्रुपक्षके एक वीरके भयंकर अस्त्रके आघातसे जिस समय उन प्रधान सेनापतिका शिरस्त्राण भेद कर दूसरी बार अस्त्रका आघात करनेके लिये उद्यत हुए, उसी समय प्रधान सेनापतिके एक परिषद्ने पिस्तौलके आघातसे उन आक्रमणकारियोंका प्राण विनाश कर दिया। एक मुहूर्त्तके बीचमें ही यह कार्य हुआ था, महाराव किशोरसिंहने विचारा था कि बृटिश सेनाके विरुद्धमें अस्त्र नहीं चलावैंगे, उन्होंने उसी विचारसे केवल बृटिश सेनादलके आक्रमणको व्यर्थ करके संतोष चित्तसे रणक्षेत्रसे धीरतापूर्वक अपनी सेनाको चलाया। परन्तु बहुत थोड़ी देरके पीछे घुड़सवारी गोलन्दाज दलने फिर महारावकी सेनाके समीप जाकर उनकी

---

(१) टाड् साहबने अपने टीकेमें लिखा है कि "जालिमसिंहकी सेनाके दो भाव प्रकाशित थे, या तो समर करैगी या भाग जायगी, इस चिन्तासे इधर उधर करते हुए देखकर जिससे वह भाग न सके उसके लिये टाड् साहब स्वयं जालिमकी वाहनीके सबसे पीछे खड़े थे। मेजरकेनेडिके इस समय अग्रसर होते ही महारावकी सेनाका वह आक्रमण व्यर्थ होगया"।

(२) यह लफटिनेण्ट क्लार्क और रीड ४ चौथे अश्वारोही दलके नेता थे।

(३) मेजर लफटिनेण्ट करनल जे. रिज. सी. बी.

सेनाके ऊपर गोलोंकी वर्षा प्रारंभ कर दी, महारावकी सेना शीघ्रतासे चलने लगी, और कुछही समयके पीछे नूतन बृटिश सेनादल फिर आक्रमण करनेके लिये तैयार हुआ कि महारावकी सेना मक्काके दीर्घाकार शस्यपूर्ण क्षेत्रमें जाकर अदृश्य होगई।

कर्नल टाडू साहबकी लेखनीने इसके पीछे निम्नलिखित हृदयभेदी घटनाको वर्णन किया है। महाराव किशोरसिंहके कनिष्ठ भ्राता पृथ्वीसिंहने हाड़ाजातिके स्वभाव सिद्ध बल विक्रमकी उत्तेजनासे उत्तेजित होकर और अब जीवित दशामें हाडौतीके डेरोंमें निवास नहीं कर सकेंगे यह जान कर उस मातृभूमिमें जीवन त्याग करनेका विचार किया। पृथ्वीसिंह केवल पच्चीस जन सेनाके साथ मृत्युके मुखमें निश्चित पतित होनेके लिये फिर लौट कर बृटिश सेनापर आक्रमण करनेको चले। बृटिशसेना जिस समय आगे बढ़ रही थी उस समय एक बाजरेके खेतमें पृथ्वीसिंहको घायल अवस्थामें पड़े हुए देखा। उनको एक नरयानमें स्थापन कर अश्वारोही सेनादलके कितने ही सैनिकोंके द्वारा डेरोंमें भेज दिया। बृटिश डेरोमें लेजाकर इनकी भलीभांतिसे शुश्रूषा की गई परन्तु उनकी रक्षा किसी प्रकार भी न होसकी, उन्होंने दूसरे दिन प्राण त्याग दिये। उस अंतिम समयमें उन्होंने यथार्थ वीरकी समान आचरण किया, और उन्होने अपने भाग्यके ही ऊपर समस्त दोष रक्खा, अपने जीवनके लिये एकवार भी आशाको प्रकाश नहीं किया और डेरोंके समीप एक वृक्ष देखकर कहा कि हमारी प्रेतात्मा इस वृक्षका आश्रय पाकर अपने पैतृक राज्य को देखकरही संतुष्ट रहैगी। एक सैनिकने उनकी तलवार और अगूठी लेली, किन्तु उनकी छुरी, मोतियोंकी माला और अन्यान्य मूल्यवान् अलंकार उन्होंने एजेण्टके हाथमें सौंप दिये, और उनके हाथमें ही पृथ्वीसिंहने अपने पुत्रकी रक्षाका भार दिया, एकमात्र उन्हीं पृथ्वीसिंहके पुत्र कोटेराजसिंहासनके क्षमता शून्य नाममात्रका नरपति पद पानेके भावी अधिकारी थे"।

वीर तेजस्वी पृथ्वीसिंहकी मृत्युके सम्बन्धमें महात्मा टाडू साहब लिखते हैं कि "अंग्रेजी सेनाके किसी सैनिकके हाथसे पृथ्वीसिंहके वह सघातिक अस्त्रका आघात नहीं लगा, किन्तु भालोंकी वर्षाके द्वारा ही वह आघात लगा था, और वह आघात पीछेसे इस भावसे बड़े वेगसे लगाया गया था कि जिससे पृथ्वीसिंहकी पीठ भेदकर वक्षस्थलपर्यन्त विदीर्ण होगया था। पृथ्वीसिंहने कहा कि किसी शत्रुने प्रतिहिंसा सफल करनेके ही लिये यह अंतिम आघात लगाया था, कारण कि उन्होंने कहा कि बर्छा हमारे शरीरको भेदकर इस भावसे चलाया गया है और वह बर्छा हमारे शरीर में इस प्रकार घुमाया गया है कि जिससे हमारे जीवनकी कोई आशा नहीं है। यद्यपि जालिमसिंहकी सेनाने अंग्रेजी सेनाके साथ मिलकर महारावकी सेनादलका पीछा किया था, परन्तु उन जालिमकी सेनादलमें एक भी महारावकी सेनाके समीप जानेका साहस न करसकता था, इसी कारणसे अनुमान किया जाता है कि किसी विश्वासहन्ता मनुष्यने महारावकी सेनाके साथ मिलकर पृथ्वीसिंहको उस भावसे सांघातिक अस्त्राघात कर जालिमसिंहके पुत्र और उनके उत्तराधिकारियोंको आगेके

लिये निश्चिन्त करदिया।" यद्यपि हम इस वातको मानते है कि किसी अंग्रेजी सैनिकने पृथ्वीसिंहका प्राणनाश नहीं किया तथापि टाड्की उक्तिसे अवश्य ही अनुमान कर सकते हैं कि जालिमसिंहकी ओरके किसी विश्वासहन्ताने ही इस वीरके जीवनका नाश करके जालिमका स्वार्थ साधन किया था, इस हत्याकारीकी समान जालिमसिंह भी अपने प्रभू भाईका प्राणनाश करके उस पापके भागी हुए थे, इसमें किञ्चित्मात्र भी संदेह नहीं है।

सत्य और न्यायकी जय अवश्य होगी। पाशविक वलके द्वारा चाहै कितना ही धर्मके वक्षस्थल पर न्यायकी छातीपर पदाघात क्यो न हो, कितना ही न्यायको और धर्मको पाप पदसे विदलित क्यों न किया जाय, परन्तु समय पर उस धर्म और न्याय की जय अवश्य ही होगी। लोभी विश्वासहन्ता जालिमसिंह चिर दिनसे जिस प्रभूके अन्नसे प्रतिपालित हुए थे, उन ही प्रभुवंशीय और प्रभुस्थानीय किशोरसिंहके साथ उन्होंने यह संग्राम उपस्थित कर दिया, परन्तु टाड्की उक्तिसे जाना जाता है कि यदि विक्रान्त वृटिश गवर्नमेण्ट न्याय और धर्मकी परवाह न करके जालिमके अन्याय पक्ष को समर्थन करनेके लिये सेनाके द्वारा सहायता न करती तो इस समरक्षेत्रमें भाला जालिमसिंहको स्ववंश सहित विध्वंस होकर धर्मके समीप उचित दंड मिलता, इसमें कुछ भी संदेह नहीं। परन्तु हम यह भी कहते हैं कि महावलशाली वृटिश वाहनी जो जालिमसिहका पक्ष समर्थन करनेके लिये गई थी इसीसे उस प्रकार केवल चारसौ हाड़ाजातीय सेनाके द्वारा परास्त होकर पीछा दिखा गई यह घटना जिस प्रकार उस सेनाको कलंककारक हुई उसी प्रकारसे किशोरसिहको न्यायसंगत कामनाका समर्थन करती है। और एक वात हम वड़े दुःखके साथ कहते हैं कि इसमें संलिप्त होकर कर्नल टाड् साहवने जो अभिनय किया कि जिससे जालिमसिंहकी सेना न भाग जाय उस अभिप्रायसे उसके समीप रहकर अत्यन्त ही अन्याय पक्षका समर्थन किया। उन्होंने जो वारम्वार कहा था कि दोनों पक्षमे संधिवंधन स्थापन करनेके लिये यथाशक्ति चेष्टा की गई, हम इस वातको कह सकते हैं कि वह भी निर्मल थी। उन्होंने महारावके प्रस्तावोंमेंसे एक वातको भी नही सुना। जव जालिमकी प्रार्थनाके अनुसार वृटिश गवर्नमेण्टकी ओरसे अतिरिक्त संधिकी धाराको प्रवल रखनेकी चेष्टा की थी, तव हम किस प्रकारसे मानलें कि वास्तवमें ही उन्होंने प्रकृत मध्यस्थकी समान दोनों ओरके स्वार्थकी ओर दृष्टि रक्खी थी। इसी लिये हम कह सकते है कि राजपूतजातिके अकृत्रिम वांधव कर्नल टाड्के जीवनमें यह जालिमसिंहके सम्वन्धका एकमात्र अभिनय ही अनुचित कार्य है"।

इस समय पिछली घटनाका ही अनुसरण करते हैं। कर्नल टाड् लिखते हैं कि महाराव किशोरसिंहने एकमात्र घनघोर मकईसे परिपूर्ण क्षेत्रमें आश्रय लेकर इस विपत्तिके हाथसे छुटकारा पाया। वह मकईके वृक्ष इतने घने और वड़े थे कि उनमें महारावका हाथीतक नहीं दिखाई देता था। पांच मील तक यह खेतों खेत वरावर चले गये थे। महाराव

कोटेराज्यके बाहरी भागमें भाग गये है उनका पीछा न करना ही उचित है कारण कि एकमात्र कोटेमें ही उनका जाना विपत्तिकारक गिना गया था। महारावकी पैदल और अन्य देशकी सेनादल भंग करके चारोओरको भाग गई, और हमारी अश्वारोही सेनाके द्वारा उनमेंसे बहुतसे मारेगये "।

कर्नल टाड् साहबने इस बातको स्वय ही स्वीकार किया है कि महाराव किशोरसिहने पहिलेसे ही बृटिश सेनाके विरुद्धमें अस्त्र नहीं चलाया था, वह ऐसा विचारते थे और अंततक अपनी उस प्रतिज्ञाको पालन भी किया था। इस कारण हम सरलतासे अनुमान कर सकते हैं कि केवल चारसौ हाड़ा सेनाने बृटिश गोलन्दाज, पैदल अश्वारोहियोंको जब प्रथम सघातमें ही विताड़ित कर दिया था, तब उनके वीर विक्रमसे रणभूमिमें उस वाहनीके विरुद्धमें राजपूत स्वभाव सुलभ तेजसे समर करने पर बृटिश वाहनीके भाग्यमें अवश्य ही शोचनीय घटना होसकती थी। महात्मा टाड् साहबने इस स्थानपर महारावकी वीरताके सम्बन्धमें लिखा है कि "महाराव और उनके स्वजातियोंकी धीरता और निर्भीकता और वीरता देखकर इनके शत्रुओंकी ओरके वीरोंने भी ऊँची प्रशंसा की थी, और उस दिन महारावके विपक्षमें जो सब सेना नियुक्त हुई थी उनमेंसे बहुत थोड़ी सेनाने जाना था कि महाराव और उनके अधीनकी सेना किस प्रकार नैतिक बलसे बलवान हुई थी। उस नैतिक बलने किस प्रकारसे उनको अभेद्य जंजीरसे बाँध रक्खा था।

कर्नल टाड् साहबने इस स्थानपर दो राजभक्त वीरोंकी विचित्र वीरताकी कहानी प्रकाश की है, उन्होंने लिखा है कि "हाड़ा जातिके इतिहासमें जो समस्त बल विक्रम की कहानी वर्णन की गई है, और एकमात्र जो बल विक्रम ही हाड़ाजातिकी पैतृक सम्पत्ति इस समय गिना गया था, महाराव किशोरसिह और उनके स्वजातियोंने इस समय पूर्वपुरुषोंके मतसे उस प्रकार बल विक्रमको प्रकाश किया, परन्तु इस समरमें दो राजपूतोंने राजभक्तिकी जो पराकाष्ठा दिखाई, हम इस स्थान पर उसका उल्लेख किये विना नही रहसकते। वह राजभक्ति ग्रीस और रोमके प्राचीन वीरोंकी वीरताकी कहानीकी अपेक्षा हीन नहीं है। जिस स्थान पर उक्त युद्ध हुआ था उस स्थानका भौगोलिक विवरण इसके पहिले प्रगट होचुका है। वह स्थान समतलक्षेत्र है परन्तु शेषमे जिस स्थानमें नदीके किनारे वह स्थान शेष हुआ है वह स्थान सकीर्ण और नदीके पारस्थ भूमि और क्रमशः ऊँचा होकर भूधराकार दृष्टि आता है। जालिमसिंहकी सेना उस संकीर्ण स्थानसे होकर जिस समय जारही थी उस समय नदीके परपारवर्ती ऊँची भूमिसे अचानक कितनी ही गोलियां आकर उनके ऊपर गिरी, विना अनुमतिके समस्त सेना अचानक उन गोलियोंके शब्दसे चलनेसे रुककर खडी होगई, और देखा कि दो मनुष्य उस ऊँची भूमिके ऊपर बंदूक हाथमे लिये हुए गोली चला रहे हैं। सभी दो मिनटतक चुपचाप विसमय चित्त होकर खड़े रहे फिर सेनाको आगे बढनेके लिये आज्ञा दी परन्तु उस आज्ञाके न देते २ अग्रवर्ती सेनाके कई जने उस गोलीके आघातसे घायल

होकर पिछले भागमें भाग आये। और उस समय वह दोनों मनुष्य बिना श्रमके घन २ गोली चला रहे थे। हमारी सेना एकवार भी जितने समयमें गोली न चला सके उतने समयमें वह बीस बार गोलियोंकी वर्षा करने लगे। उन दोनों वीरोंकी बड़ी २ बंदूकोंसे घन २ गोलियें निकलकर हमारी विस्तारित सेनादलके ऊपर गिरने लगीं, परन्तु वह मानो इन्द्रजालके बलसे सरलतासे अपने शरीरकी रक्षामें समर्थ हुए। हमारी गोलियें भी उनके चारों ओरसे विस्तीर्ण होकर गिरने लगीं; उनके शरीरमें वह स्पर्श तक भी न करसकीं, इन दोनों वीरोंमें एक मनुष्य बंदूकको फिर भरने लगा और अव्यर्थ निशानेसे छोड़ने लगा। अन्तमें हमारी दोनों तोपोंसे उन दोनों वीरोंको लक्ष्य करके गोलोंकी वर्षा की गई समस्त गोले उनके घेरे होकर निकल गये, वह दोनों जने उस ऊंचे स्थानपर खड़े होकर व्यंगभावसे हमें सलामी करके शेषमें अपने पूर्वमतसे सेनादलके ऊपर गोलियोंकी वर्षा करने लगे। हमारी समस्त सेना उसी कारण उन दोनों व्यक्तियोंद्वारा अविकल्प्यगतिसे जाने लगी। यद्यपि उक्त दोनों वीरोंद्वारा हमारी अनेक सेना घायल हुई तथापि उनके बल विक्रमको देखकर उनके प्राणोंकी रक्षा करनेकी अभिलाषा उत्पन्न हुई। सेनाको गोलियें वर्षानेका निषेध किया गया, और आज्ञा दी कि आगे बढ़ो और सेनादलके बीचमें यदि कोई दो साहसी वीर अग्रसर होकर उन दोनों वीरोंपर आक्रमण करना चाहें तो आक्रमण करसकेंगे, इस शेष आज्ञाको पाते ही दो रुहेले नंगी तलवारें हाथमें लेकर दोनों वीरोंके सन्मुख होनेके लिये आगे बढ़े। सभी कौतूहल चित्तसे प्रतिज्ञा करने लगे। उन दोनों वीरोंका शारीरिक बल बहुत थोड़ा था, या यह समझो कि वह गोलोंके आघातसे पहिले ही हत तेज होगये थे, या वह जिस स्थान पर स्थित थे वह द्वन्द्वयुद्धके योग्य नहीं था, वह अंतमें दोनों रुहेलों के हाथसे मारे गये। बड़े आश्चर्यकी बात है कि केवल इन्हीं दोनों हाड़ा वीरोंने जालिमसिंहके इस दल पैदल और बीस तोपोंके साथ गोलन्दाजकी गतिको रोक लिया था। यह दोनों हाड़ावीर जालिमसिंहके द्वारा सौभाग्यलक्ष्मीकी गोदीसे रहित होकर प्रतिहिंसा देनेके लिये इस प्रकारकी वीरता प्रकाश करके परलोकगामी हुए थे "।

कर्नल टाड साहबने इस स्थान पर लिखा है कि हाड़ौतीके समस्त सामन्त और समस्त निवासियोंने महाराव किशोरसिंहका पक्ष समर्थन करनेके लिये जो सम्पूर्ण, योगदान किया उसीके द्वारा राजपूत जातिके प्रधान गुण और स्व धर्मकी रक्षाका दृष्टान्त प्रमाण पाया जाता है, और उसके साथ ही साथ यह भी जाना जाता है कि जालिमसिंहका शासन कहाँतक कठोर था, और वह सर्व साधारणको कितने अप्रिय थे। जिस सामन्तने संधिकार्यकी मध्यस्थता की थी और जालिमके अनुग्रहसे भूवृत्ति भी पाई थी, जिसका एक पुत्र इस युद्धमें घोररूपसे घायल हुआ, जालिमसिंहके साथ वैवाहिक सम्बन्धबंधनसे बंधकर भी उसने महारावका पक्ष समर्थन किया, " कर्नल टाड साहबने कोटेके सैकड़ों स्थानोंमें स्वीकार किया है कि जालिमसिंहके कठोर शासनसे समस्त कोटेके प्रत्येक ग्रामके प्रत्येक मनुष्य ही महाविरक्त और असंतुष्ट थे, तथापि उन्होंने बृटिश गवर्नमेण्टकी ओरसे उन जालिमसिंहको अन्याय

रूपसे वंशानुक्रमसे शासनकी सामर्थ्य देनेके लिये महाराव किशोरसिंहके साथ युद्ध किया। राजनीतिकी कैसी विचित्र महिमा है"।

टाड् साहब लिखते हैं कि-" महाराव किशोरसिंह पर्वती नदीके किनारे जाकर सन्तरणसे उस नदीके पार होगये, उनके घोड़ेने नदीके पार जाते ही पहिली गोलीके आघातसे प्राण त्याग दिये।" (इससे समझा जाता है कि महाराव किशोरसिंहका जीवन नाश करनेके लिये सेनाने गोली चलाई थी। उधर इन महारावने यह प्रतिज्ञा की थी कि मैं अंग्रेजी सेनाके विरुद्धमें तलवार नहीं चलाऊंगा, इसी लिये यह रणभूमिसे चले आये) टाड् फिर लिखते हैं कि " प्राय: तीन सौ अश्वारोही सेनाके साथ महाराव किशोरसिंह बड़ोदाको चले गये, हमारी प्रतिहिंसा देनेका और कोई प्रयोजन नहीं था, उसी कारणसे जिन सब साहसी वीरोंने राजभक्ति प्रकाश कर समधर्म पालन करनेके लिये अपनी वासभूमि अपना आवास और अपने परिवार तकको त्याग कर महारावके पक्षका अवलम्बन किया था।

हमने अपने प्रबल शत्रु महाराष्ट्रोंकी समान उन हाड़ावीरोंके पीछे धावमान होकर उनका विनाश करना कर्त्तव्य न जाना, यह बात सत्य है कि वह रणभूमिमें हमारे सम्मुख हुए थे, परन्तु आक्रमणके लिये नहीं वरन अपनी रक्षाके लिये सम्मुख हुए थे, और उनका वह कार्य अवश्य ही सम्पूर्ण नीतिसंगत है।" कर्नल टाड्का यह मन्तव्य अवश्य ही प्रीतिदायक है। अन्य अंग्रेजके होनेसे उन सामन्तोंके विनाशमें कुछ भी विलम्ब नहीं होता।

कोटेराज्यके न्यायसंगत अधीश्वर महाराव किशोरसिंहको भगाकर कर्नल टाड् साहब लिखते है कि " मूलसंधिपत्रके विरुद्धमें इतने दिनोंसे जो अन्यायरूपसे उत्तेजना प्रकाश की गई थी, उसने एकवार ही दूर होकर ऊँची आकांक्षाको विध्वंशकर दिया। इस विद्रोहके प्रधान षड्यन्त्री दोमें से एक पृथ्वीसिंह मारे गये, और दूसरे गोवर्द्धनदास निकाल दिये गये। उधर जालिमसिंहका शिक्षित नियमित सेनामें जिन्होंने जालिमसिंहका पक्ष त्याग कर महारावका पक्ष अवलम्बन किया था, उनको इस प्रकार दंड मिला कि जिससे जालिमके अधीनमें स्थित बचीहुई सेनाके पक्षमें उस प्रकारसे जालिमसिंहका पक्ष त्यागनेकी कामना अवश्य ही विलुप्त होगई। उस दिनके युद्धमें उस प्रकारकी पराजय होगी, सामन्तोंने पहिले इस प्रकारका अनुमान नहीं किया था, इसी कारण उन्होंने उसके लिये पहिले कोई तैयारी नहीं कर रक्खी थी। इस समय हमारी आज्ञा होनेपर समस्त रजवाड़ेमें उनको कहीं भी आश्रय नहीं मिलता, परन्तु उनकी समस्त धनसम्पत्ति छीन कर उन सबका नाश करना हमने कर्तव्य नहीं जाना, कारण कि हम जानते हैं कि उन्होंने अनेक कारणोंसे महारावका साथ दिया था, इन सब कारणोंको निवारण करना उनकी सामर्थ्यसे बाहर था। महारावके डेरोंमें अरक्षितभावसे रहनेके कारण हमने

(१) कर्नल टाड् साहबने टीकेमें लिखा है कि " कितने ही प्रधान २ सामन्तोंने एजेण्टके द्वारा जालिमसिंहके पासको जो पत्र लिखे थे इसमें उन्होंने कहा है कि महारावके विश्वासी मंत्रीके उपदेशके अनुसार उन्होंने महारावकी आज्ञानुसार योगदान किया था "।

उनके समस्त गुप्त कागज पत्र अपने हस्तगत करलिये । उन कागज पत्रोंके पढ़नेसे जाना जाता है, कि ऐसे प्रवल पड्यन्त्र जालका विस्तार कर ऐसी शठता मूलक तैयारी की थी, उसी कारणसे महाराव और उनके समस्त साहसी वीरोंनें उनकी ऊंची आकांक्षा को पूर्ण करनेमें सहायताके लिये जाकर पूर्ण हानि उठाई और वह प्रत्येक ही कठोर दंडके उपयोगी हुऐ " ।

साधू टाड् साहव भली भांतिसे जान गये थे कि एकमात्र संधिकी धाराको प्रवल रखनेके लिये यह जो राजनैतिक अभिनय किया गया है यह अत्यन्त ही अन्याय मूलक और शोचनीय है। टाड् साहवने इस स्थान पर लिखा है, कि "इस विशद्-रूपसे वर्णित हुई घटनाओंमें ग्रंथकार (टाड्) ने शोचनीय कर्तव्यको पालन किया वह हाड़ा जातिके अतीत इतिहासको जानते थे, ओर विभिन्न घटनाओंके प्रकृत मूलकी अवस्थाको जानते थे, उनके उस कर्तव्य पालनके समय एक और जैसे उस अभिन्नताके बलसे सहायता प्राप्त थी, दूसरी ओर उसी कारणसे उसको विव्रत होना हुआ था। वास्तवमें उस अभिज्ञताका न होना ही अच्छा था– केवल मूल संधिपत्रकी धाराका मर्म जानकर दृढ़तापूर्वक उस धारासे कार्य परिणत करनेमे दृढ़ यत्नवान् होने पर कोई उपद्रव नहीं होता। किसी पक्षके प्रति सहानुभूति वा न्याय विचार करना सर्व-साधारणकी राजनीतिका उद्देश नहीं था, इस कारण यहाँपर अवस्थान अभिज्ञताके द्वारा अनेक उपकार देखे जाते थे। परन्तु कठोर कर्तव्य पालनमें दृढ़ आज्ञाके प्रति दृष्टि रखकर भी उन्होंने विचार किया कि वृटिशके प्रभुत्वकी रक्षाके लिये जिससे अत्याचार और उपद्रव किसी प्रकार न हो, और हाड़ाजातिकी जो कुछ भी जातीय स्वाधीनता है, वृटिश राजनीति वा वृटिश गवर्नमेण्टके भयसे जालिमसिंह उस स्वाधीन ताके भारपर हस्ताक्षेप नहीं करसकैं और वह स्वाधीनता भी जिससे नष्ट न हो। उन्होंने इसीसे उक्त समरके कुछ दिन पीछे अपने ऊपर समस्त दायित्वका भार लेकर समस्त सामन्तोंके ऊपर क्षमा दिखाकर उनको अपने २ स्थानो पर जानेके लिये घोपणपत्रका प्रचार किया। उन्होंने जालिमसिंहसे कहा कि सामन्तोंके ऊपर यह तो साधारण क्षमा दिखाई है, यदि किसी प्रकारसे उस क्षमाके दिखानेमे कसर होगी तो गवर्नमेण्ट अत्यन्त असन्तुष्ट होगी। सामन्तमंडली इस घोपणापत्रको पाकर शीघ्रतापूर्वक अपनेर स्थानोंको लौट आई। इस प्रकार सब ओर उस क्षमाका प्रचार पर संतोपदायक फल उत्पन्न किया गया तथा सर्व साधारणमें जो उस घोर विभ्राट्से महा संकटके कारण तथा राजनैतिक संघर्पणसे जो घाव पहुंचा था इस क्षमाको दिखानेसे घोषणारूप अव्यर्थ औपधीने उस घावको सब प्रकारसे भरदिया। टाड् साहब जिस कठोर कार्यसाधनमे वाध्य हुए थे इसके मध्य भी अनेक स्थानोंमें वह अभिनंदित हुए

---

(१) कर्नल टाड् साहवने लिखा है कि " दिल्लीके जो देशीय धन रक्षक इस पड्यन्त्रमें लिप्त थे, बड़ी खोज करनेके पीछे उनको पदसे रहित किया गया। और गवर्नमेण्टके प्रधान कार्य स्थानके फारसी भाषाके सेक्रेटरीमुनशीके भाग्यमें भी वह दंड प्राप्त हुआ था।

थे उसके सम्बन्धमें उन्होंने राजपूतोंके चरित्रोंको प्रकाश करनेवाली एक घटनाका इस स्थानपर उल्लेख किया है। सन् १८०७ ईसवीमे जिस समय ग्रंथकार (टाड् साहबने) राजनैतिक कार्यमे सबसे पहिले प्रवेश किया था उस समय वह इकले ही इस कोटे-राज्यके अनेक स्थानोमें भ्रमण करनेके लिये बाहर जाकर हाड़ौतीके भूवृत्त और इतिहासको सग्रह करनेमें प्रवृत्त हुए। वह (टाड्) राहतगढ़से सेंधियाके डेरोको छोड़ अत्यन्त सामान्य अनुचरोको साथले चन्देरीके गहन बनसे युक्त देशमें होते हुए समान पश्चिमकी ओरको आगे बढ़कर बेतवा और चम्बल नदीके मध्यवर्ती समस्त नदियोके उत्पत्ति स्थानको ढूंढते हुए गये। बारा नामक स्थान पर जाकर इन्होने अपने डेरे डाल दिये। हाड़ौती देशसे साढ़े आठकोश दूर कालीसिन्धु नामक नदीके किनारे जाकर अपने सेवकोकी इच्छानुसार विश्राम करके आनेके लिये कहा, और आप शीघ्रतासे घोड़ेपर सवार होकर लौटने लगे। वह बमोलिया नामक नगरसे होकर जिस समय जा रहे थे, उस समय एक मनुष्योके दलने बड़ी शीघ्रतासे बाहर होकर उनको पकडा। उन्होंने कहा कि आपको अधीश्वरके निकट अवश्य ही जाना होगा। यद्यपि उस समय वह अत्यन्त क्लान्त होगये थे, तथापि उस समय उनके उन वाक्योंकी रक्षा न करनेसे अत्यन्त ही अविवेचकताका कार्य होगा। इससे टाड् साहब उनके वाक्यकी रक्षा करनेमे सम्मत होकर एक बगीचेमें गये। उश बगीचेके मध्यस्थलमे एक सघन पल्लव समाकीर्ण वृक्षोंकी छायासे ढकेहुए स्थानमे एक ऊँचे मचानको देखा। उस मचानके ऊपर मनोहर गलीचे पर बमोलियाके अधीश्वर परिषदोंके साथ बैठे थे। उन्होंने ग्रथकार (टाड्) को बड़े सम्मानके साथ ग्रहण किया। सबसे पहिले ग्रंथकारने बूँट (जूतेके) खोलनेकी चेष्टा की, परन्तु उस समय वह अत्यन्त क्लान्त थे इससे उनकी वह चेष्टा सफल न हुई, इससे पीछे उनके सम्मुख खाद्यादि रक्खा गया, और उनके हाथ मुँह धोनेके लिये एक ब्राह्मण जल ले आया। यद्यपि वह उस समय राजपूत जातिके आभ्यंतरिक आचार व्यवहारको भली भाँतिसे नही जानते थे, वह उसके पालनमें वीतरागी थे, तथापि एक घडी तक वहाँ बड़े आनन्दसे निवास किया, और उस समय वार्तालाप होनेमे एक बार भी विश्राम नहीं मिला। शीघ्र ही वह स्थान मनुष्योसे भर गया, और अनेक सुन्दरी कृष्णनयना रमणी निर्भय होकर मुस्कुराती हुई उनकी ओरको देखने लगी, टाड् साहब यह देखकर अत्यन्त विस्मित हुए, कारण कि वह स्त्री जातिकी सामाजिक अवस्थाके सम्बन्धमें कुछ भी नहीं जानते थे। टाड् साहब की घोड़ी लगड़ी होगई थी। बमोलियाके अधीश्वरने उसे देखा और जिस समय टाड् साहब जानेके लिये तैयार हुए उस समय उन्होने देखा कि उनके लिये एक उत्तम घोडा सजासजाया तैयार खडा है, परन्तु उन्होंने उस घोड़ेको ग्रहण नहीं किया। ग्रंथकारने अपने डेरोमे आकर कितनेक ही छोटे २ द्रव्य सम्मानसे उपहार स्वरूपमे उन सामन्तोंके पास भेजे। उस घटनाके चौदह वर्ष पीछे मांगरोलमे जिस दिन महा-राव किशोरसिंहके विरुद्धमे युद्ध हुआ था उसके दूसरे दिन बमोलियाके सामन्तोंकी

माताके समीपसे उनको एक पत्र मिला। सामन्त जननीने उस पत्रपर उनको आशीर्वाद लिखकर पूर्व मित्रताको स्मरण कराकर उनसे यह प्रार्थना की थी कि हमारे पुत्रने अपने सम्मानकी रक्षाके लिये महारावका साथ दिया था, हमारी सन्तानकी रक्षा करनी होगी। ग्रंथकारने बड़े सन्तोषके साथ सामन्त माताके निकट उस पत्रका उत्तर भेजा। पत्रवाहकके तुम्हारे पास न पहुँचते २ आपका पुत्र आपके पास पहुँच जायगा। स्मरण होगा, कि जालिमसिंहको जब सबसे पहिले कोटेके शासनकर्ताका पद मिला था उस समय आथूनके जो सामन्त जालिमसिंहके प्रधान शत्रुरूपसे उनके विरुद्धमें खड़े हुए, यह बमोलियाके सामन्त उनके ही उत्तराधिकारी थे"।

कर्नल टाड् साहब लिखते है कि "महाराव किशोरसिंह इसके पीछे मेवाड़के अन्तर्गत नाथद्वारेमें गये, इससे प्रमाणित होता है कि ऊँची आकांक्षाके स्थानपर एकमात्र धर्म भाव ही अधिकार कर सकता है। जो मनुष्य अपने घृणित उद्देशको साधन करने के लिये कुसम्मति देकर महारावके भाग्यको विध्वंश करनेके लिये उद्यत हुए थे, इस समय वह उनको छोड़कर चले गये, महारावके नेत्रोसे आवरणके उतरते ही उन्होंने देखा, कि यह कैसी अवस्थामें पड़ कर किस भावसे जीवन व्यतीत कर रहे है। मूल संधिपत्र और अतिरिक्त धाराके विरुद्धमें जो सब आपत्ति और उपद्रव होरहे थे, थोड़े ही समयमे उन सभीको महारावने छोड़ दिया। उस समय जालिमसिंहकी सम्मतिके अनुसार महारावके निकट एकपत्र भेजा गया, और कैसी व्यवस्थाके करनेसे वह फिर कोटेराज्यमे आसकेंगे वह भी उस पत्रमें लिख दिया गया। उस व्यवस्थामे महारावकी सम्मतिसे उत्तर भेजने पर, एजेण्टने मूल संधिपत्रको तैयार कर दिया, उस संधिपत्रमे केवल महाराव और जालिमसिंहका प्रकृतपद निर्द्धारित हुआ हो यही नहीं—वरन भविष्यत्‌में जिससे किसी प्रकारका संघर्षण न हो उसके लिये केवल नाममात्रके राजाके उपाधिधारी महारावके साथ जालिमसिंहकी क्षमता और सत्वाधिकार निर्देश करदिया गया था। मूल प्रधान उद्देश महारावके पदकी मर्यादा शांति और आत्मरक्षाकी उपयुक्त व्यवस्था करना था, सो उसका अत्यन्त उदारभावसे निश्चय किया गया था। महारावके पिता वा कोटेके भूतपूर्व किसी राजाको वृत्ति प्राप्त नही हुई पर उनको वृत्ति देनी होगी। समस्त राजपूत जातिके प्रकृत शिरस्थानीय मेवाड़के महाराणाके दरबारमे जो व्यय नियत हुआ है; महारावके लिये भी इसी प्रकारका व्यय नियत किया जायगा"।

(महात्मा टाड्‌ने अपने इतिहासमें महाराव किशोरसिंहके इस शेष स्वाधीनता विनाशक संधिपत्रको प्रकाशित नहीं किया है, हमने आचिसन साहबके ग्रन्थसे संग्रह करके उसको यहांपर प्रकाशित किया है)।

सन्धिपत्र।

"मैं महाराव किशोरसिंह—गत दो वर्षतक विशेषतः सम्प्रति जो समस्त कांड उपस्थित हुआ है, उस सबका फल विशेषरूपसे अनुसंधान कर और उस प्रकारके आचरणसे अत्यन्त कुफल फला है, उसीसे बृटिश गवर्नमेण्ट असन्तुष्ट हुई है कोटे राज्यका

अमंगल हुआ है और हमारे निजकी सुखशांतिमे आघात लगा है। इसको भलीभांतिसे जानकर मैंने आजकी तारीखसे निम्नलिखित धाराओंसे युक्त सधिपत्र पर हस्ताक्षर किये और उसको मोहरांकित करदिया। इस संधिपत्रके मतसे मै भविष्यत्मे सब कार्य करूंगा। मेरी मानसिक श्रेष्ठ इच्छाके श्रीनाथजी साक्षी रहैंगे। यदि मै भविष्यत्मे इस संधिपत्रकी किसी धाराको भंगकरूं तो मैं बृटिश गवर्नमेण्टके निकटसे भविष्यत्में किसी प्रकारका अनुग्रह नहीं पासकूंगा।

पहिली धारा- बृटिश गवर्नमेण्ट जिस प्रकारकी आज्ञा देगी मै आनदित होकर उस सबका पालन करूंगा और मेरे भविष्यत्मे सुख शान्ति स्वच्छन्दता तथा सांसारिक विपयके सम्बन्धमे आपकी (टाइ) मध्यस्थतामे जो निर्द्धारित होगा, मै उसके विरुद्धमें किसी प्रकारकी आपत्ति नही करूंगा।

दूसरी धारा-मेरे पिता राजा उमेदसिंहकी जीवित दशामे नानाजी जालिमसिंह जिस प्रकार राज्यके समस्त राज्यकार्यको निर्वाह करते आये हैं, दिल्लीके संधिपत्रके मतसे हमारे नामसे तथा हमारी ओरसे और हमारे उत्तराधिकारीकी ओरसे नानाजी जालिम-सिंह और उनके उत्तराधिकारियोंको उसी प्रकारसे शासनका भार प्राप्त होगा, अर्थात् राज्यशासन, राजस्व, सेनादल, दुर्गसमूह, कर्मचारी नियोग, कर्मचारियोके पदच्युतिकी सामर्थ्य उन्हींके हाथमे रहैगी, सभी विपयोमे उनकी सामर्थ्य चूडान्तरूपसे गिनी जायगी, उसके सम्बन्धमे हम हस्ताक्षेप नही करेंगे।

तीसरी धारा-शांति भंग करनेवालोको उचित दड प्राप्त होगा। मेरे सभी कुपरामर्श देनेवाले चले गये है, वा आपकी आज्ञानुसार मैंने उनको निकाल दिया है। गोवर्द्धनदास, सैफअली, महाराज बलवन्तसिंह, काजी मिरजामोहम्मद अली, सेखहबीब और अन्यान्य व्यक्तिगण, जिनकी कुपरामर्शसे मै चला था। मैं उनके साथ भविष्यत्मे अब किसी प्रकार सम्बन्ध वा उनके साथ पत्रव्यवहार नहीं करूंगा।

चौथी धारा-हमारे शरीरकी रक्षाके लिये जो सेना नियत होगी, उसके अतिरिक्त हम किसी समयमे भी अतिरिक्त सेनाके रखनेकी चेष्टा नहीं करेंगे। जो मनुष्य शासनकर्ताके विपक्षी वा अन्य सब मनुष्य उन सब मनुष्योंके साथ किसी प्रकारका सम्बन्ध रक्खेंगे, मैं अपने दरबारमे उनको नही आने दूंगा।

नाथद्वारा, २२-नवम्बर, सन् १८२१ ईसवी "।

(हस्ताक्षर) महाराव किशोरसिंह *।

जो महाराव किशोरसिंह प्रकृत राजपूत वीरकी समान जालिमसिंहके विरुद्धमे खड़े हुए थे। पैतृक शासनस्वत्वकी स्वाधीनता पानेके लिये समरमे अवतीर्ण हुए थे उन्हीं महाराज किशोरसिंहको इस समय संधिबधनमे बंधा हुआ देखकर और उनको बृटिश गवर्नमेण्टके क्रीतदास स्वरूपसे वश्यता स्वीकार करते हुए देखकर किसीने उनको कायर पुरुष विचारा था। परन्तु हम कह सकते हैं कि जो महाराव

* Aitchison's treaties Vo IV.

किशोरसिंहको इस प्रकारकी उपाधि देनेमें अग्रसर हुए थे वह इस समय भ्रान्त थे। महाराव यदि अपना पैतृक अधिकार और स्वाधीनता प्राप्तिके लिये वीर पुरुषोंकी समान खड़े न होते तो हम उनको यथार्थ कापुरुष कह सकते थे। वह गवर्नमेण्टको जालिमसिंहका सब प्रकारसे पृष्टपोषण करतेहुए देखकर जिस जातीय अभ्युत्थानको उपस्थित करके वह समरसागरमें कूदे थे, उसके लिये वह अवश्य ही प्रशंसाके पात्र हुए। कौन कह सकता है कि प्रबल बलशाली बृटिशसिंहको जालिमसिंह का पक्ष समर्थन करते हुए देखकर और भावी फल क्या होगा; महारावने इसका अनुमान न किया था, तब युद्धका न करना ही उचित था। हम कह सकते हैं कि महाराव यद्यपि जानते थे कि गवर्नमेण्ट विपुल विक्रमशाली है तथापि उन्होंने नहीं विचारा था कि जगत्में सर्व प्रधान बृटिश गवर्नमेण्ट वास्तवमें ही उस भावसे न्यायके मस्तक पर धर्मके मस्तक पर राजनीतिके मस्तक पर पदाघात करके जालिमका पक्ष समर्थन करनेके लिये उनके विरुद्धमें सेनाको चलावैगी। उन्होंने विचारा था कि समस्त हाड़ा-जाति तथा जालिमसिंहके कुटुम्बी तकको जालिमके विरुद्धमें खड़े होते देख बृटिश गवर्नमेण्ट अवश्य ही अपना कार्य अनुचित जानकर हमारे पक्षको समर्थन करेगी। पर यह न हुआ बृटिश गवर्नमेण्टके साथ उनकी कोई शत्रुता नहीं थी, इसी लिये मांगरोलके समरमें बृटिश सेनादल उनको आक्रमण करनेके लिये धावमान हुआ, पर उन्होंने केवल अपनी रक्षाके लिये ही उस बृटिशसेनाके आघातको व्यर्थ करके रणक्षेत्र को छोड़ दिया। उक्त संधिपत्रसे भलीभाँति प्रमाणित होता है कि महारावने अत्यन्त अनिच्छासे उस संधिपत्र पर हस्ताक्षर किये थे, उन्होंने उपस्थित अवस्थाको समझ कर बृटिश एजेण्टको अत्यन्त ही अविचार करते हुए देखकर भविष्यत्में अपना उद्देश साधनके लिये किसी उपायको न जानकर उस संधिपत्रपर हस्ताक्षर करदिये। परन्तु बृटिश सरकारने एक राज्यमें एक नाममात्रके राजा और एक जनेको शासनशक्तिशाली राजाकी उपाधिसे हीन अधीश्वर नियुक्त रखकर अत्यन्त अविचारका कार्य किया, संधिके ऊपर संधि करके स्वपक्षके उस अनुचित कार्यको चिर दिनतक प्रबल रखनेके लिये जो चेष्टा की, समय पर वह सब प्रकारसे व्यर्थ होगई, और उस अज्ञानताका चूड़ान्त प्रमाण प्रकाशित होगया।

इस प्रकार महाराव किशोरसिंहको फिर शासनक्षमता हीन नरपति पदपर प्रतिष्टित करके उनके लिये जो अर्थ नियत हुआ था कर्नल टाडने उसे प्रकाशित नहीं किया, इतिहासके अंगको पूरण करनेके लिये हम उन सूचियोंको आचिसन साहबके ग्रंथसे लेकर यहाँ लिखते हैं।

पहिली संख्याकी सूची।

महाराव किशोरसिंहको उनके दरबार और कार्यकारक वर्गोंके लिये निम्नलिखित वृत्ति सन् १८२२ की ८ वीं जनवरीसे आरंभ करके प्रत्येक महीनेमें समय पर कोटेके शासनकर्ताके द्वारा मिलैगी।

		वार्षिक ।
१	श्रीव्रजराजजीकी सेवामें	४८०० रुपया ।
२	महारावका दान दातव्य	२२०० ,,
३	रसोई १५) रोजाना	५४०० ,,
४	राजमहलका व्यय	९३०६॥-॥।
५	रानियोंके अलंकार	१२०००
६	महाराव और महारानियोकी पौशाक वेश और दातव्य वस्त्रक्रय	१८००० ,,
७	हाथखर्च वा गुप्तव्यय	२४००० ,,
८	राजसेवकादिका वेतनादि	१२००० ,,
९	तवेला	६७९६॥ ,,
१०	फीलखाना (हस्तीशाला)	३२७६॥- ,,
११	रथगाडी, नरयान इत्यादि	१४०३।-॥ ,,
१२	पाल्कीके कहार	१२३९ ,,

प्रासादरक्षक सेनाका व्यय ।

१३	-१०० अश्वारोही (प्रत्येकको २५) हिसावसे... ...	३०००० रुपया ।
	पैदल २०० (सूबेदार २ प्रत्येकको २० मासिकके हिसावसे २ जमादारको मासिक १२) पताकाधारी मासिक ८) पदातिको ७ के हिसावसे	१७५८० ,,
१४	ऊंट ५	३१७ ,,
१५	सांडनी ४	४८८=॥। ,,
१६	ईंघनकी लकडी	७२० ,,
१७	घास	८५० ,,
१८	रोसनाई तेल वत्ती काली आदि	१८०० ,,
१९	रंग	२०० ,,
२०	इमारत सस्कार	३००० ,,
२१	घोडा गाय बैल ऊँटकी खरीददारीके वास्ते .	६००० ,,
२२	फराशखाना अर्थात् पर्दागलीचे डेरावगैरा ...	१००० ,,
२३	चिकित्सालय औपधीकी खरीददारी	४०० ,,
२४	लंगरखाना	३०० ,,
	वार्षिक जोड़	१६४८७७॥=)
	वा मासिक १३७३९॥।)॥	

इस्ताक्षर माधोसिंह ।

दूसरी सूची।

पृथ्वीसिंहके पुत्र नानालाल और उनके कुटुम्बके भरण पोषणके लिये कोटेके शासनकर्ता द्वारा सन् १८२२ ईसवी आठ ८ जन्वरीसे प्रत्येक महीनेमें निम्नलिखित वृत्ति दीजायगी।

वार्षिक कोटेशाही रुपया	१८०००	"
वा मासिक	१५००	"

हस्ताक्षर माधोसिंह *

कर्नल टाड् साहबने मध्यस्थ होकर किशोरसिंहकी वृत्ति नियत कर राज्यमें उनकी जो क्षमता और शक्ति निर्द्धारण करके उसे लिपिवद्ध कर कुमार माधोसिंह जिससे चिरकाल तक उसी नियमके अनुसार कार्य करै, इसके लिये उनसे हस्ताक्षर करालिये। उस पत्रको इतिहासमें प्रकाशित नही किया है। हमने उसे भी विशेष प्रयोजनीय जानकर आचिसन साहबके ग्रंथसे इस स्थानपर प्रकाशित किया है।

"पहिली धारा—कोटेकी राजधानी और उनके निकट प्रासाद विश्राम स्थान और उद्यान समूह यथा राजधानीके मध्यस्थ महल, उमेदगंजस्थ महल, रंगवाड़ी जगपुरा मुकुन्दरा व्रजराजजी नामक उद्यान, गोपालनिवास, और व्रजविलास नामक उद्यान महारावके अधिकारमें रहैगे, महाराव उन सबके सम्बन्धमे जो कोई आज्ञादान वा कार्य करेंगे, शासनकर्ता उन पर किसी प्रकारका हस्ताक्षेप नहीं कर सकेंगे।

राजधानीके मध्यस्थ राजमहलके जिन अंशोंके कितने ही हर्म्य राजराणा जालिमसिंहके परिवार और सेवकोंके निवास करनेके लिये नियत हैं, वह मूलमहलसे प्रथक् कर दिये गये हैं, नव्यवजे किलेसे खेतर द्वार तक जो गली गई है उन दोनों मार्गोंमे सीमा चिह्न स्वरूप होरही है। उस सीमाके बाहर कोई पक्ष भी नही जा सकेगा। शासनकर्ता उक्त हर्म्य और उससे लगेहुए स्थानोकी रक्षाके लिये ५० जनोंसे अधिक चौकीदार नियुक्त नही करसकेगे।

दूसरी धारा। प्रथम संख्यक तालिकाके मतसे महाराव और उनके परिजनोके भरण पोषणके लिये वार्षिक कोटाशाही एक लाख चौंसठ हजार आठसौ सत्तर रुपया दश आना तीन पाई वा मासिक १३७३९।।।)।।। १ᵨ— देना होगा। राजराणा जिस महाजनको स्थिर कर देंगे, उनको उक्त प्रतिमासका रुपया मध्य समयमे मिलैगा, महाराव उस रुपयेकी प्राप्तिपदपर हस्ताक्षर करदेंगे, और हिसाबकी रक्षाके लिये उनको एक अनुलिपि वृटिश गवर्नमेण्टके निकट भेजनी होगी।

प्रथम संख्याकी सूचीका जो निर्देश किया गया है वह महारावके अंतःपुरका व्यय है, राजदरबारके सेवकादिका वेतन और प्रासाद रक्षक सेनाके वेतनके सम्बन्धमें महाराव अपनी इच्छानुसार समस्त व्यय करेंगे।

---

* Aitchison's Treaties Vol IV.

तीसरी धारा–राजग्रहमे विवाह और जन्म इत्यादि उत्सवके समयमें जो कुछ व्यय आवश्यक है, शासन कर्ताके द्वारा वह प्राचीनरीतिके अनुसार राजपदोचित रूपसे दिया जायगा। यदि महारावके कोई उत्तराधिकारी जन्म लेगा तो अवस्थानुयायी और प्राचीन रीतिके अनुसार भरण पोषणके लिये और भी अतिरिक्त वृत्ति नियत करदेनी होगी।

चौथी धारा–दशहरा, जन्माष्टमी इत्यादि साधरण उत्सवोंके समयमे महाराव और उनके परिवारको अवतक जिस भावसे सम्मान मिलता है उसी भावसे सम्मान मिलेगा, कर्तृत्व करेंगे, और दान पुण्य इत्यादि जो समस्त व्ययजनक कार्य सांसारिक गिने जाते हैं उन सबके ऊपर भी महाराव कर्तृत्व करेंगे और समस्त राजचिह्न इतने दिनोंतक जिस भावसे रहते आये है इसके पीछे भी उसी भावसे रक्खे जाँयगे।

पाँचवीं धारा–जिस समय महाराव वायु सेवन करनेके लिये बाहर जाँयगे उस समय पूर्वकी समान राजचिह्न सभी उनके साथ भेजे जाँयगे, और राज्यका एक सेनादल भी उनके साथ जायगा।

छठवी धारा–प्रथम सख्यक सूचीके अनुसार १०० अश्वारोही एव २०० पैदल जो उनके शरीर रक्षक और प्रासाद रक्षकरूपसे निर्दिष्ट हुए हैं वह सम्पूर्ण रूपसे महारावके अधीनमे रहैंगे। अन्य कोई भी उनके ऊपर किसी प्रकारका कर्तृत्व नहीं कर सकैगा। उक्त सेनादलके और राजदरबारके अन्य किसी प्रकारके भृत्य वा परिषद जो तालिकाके निर्दिष्ट अर्थमें प्रतिपालित और रक्षित होंगे महाराव उनके एकमात्र प्रभूस्वरूपसे रहैंगे।

सातवी धारा–पृथ्वीसिंहके पुत्र नानालालजी और उनके कुटुम्बके तथा उनके पिताके और कुटुम्बियोंके भरण पोषणके लिये वार्षिक १८००० रुपयेकी जो वृत्ति नियत हुई है, महारावकी वृत्ति जिस समय जिस नियमसे दीजाती और स्वीकृत होती है, वह भी उसी समय उसी नियमसे दी जायगी और स्वीकार की जायगी। उनके प्रथम विवाहके समयमें कोटेके शासनकर्ता उनके पदके उपयोगी समस्त व्यय प्रदान करेंगे।

आठवीं धारा–कोटेके शासनकर्ता जो समस्त सिपाही और मुसद्दीको पदसे रहित करेंगे वा जो अपनी इच्छानुसार पद त्याग करेंगे, महाराव उनको अधीनमे नियुक्त अथवा आश्रय नहीं देसकेंगे। दूसरी ओर कोटेके शासनकर्ता उसी प्रकारसे महारावके निकाले हुए उन श्रेणीके किसी मनुष्यको अपने अधीनमें नियुक्त वा आश्रय नहीं देसकेंगे।

नौमीं धारा–गवर्नर जनरलके एजेण्टकी ओरसे एक विश्वासी मनुष्य नित्य महारावके समीप हाजिर रहैगा और उसके द्वारा पत्रादि भेजकर कथोपकथन चलैगा।

दसवीं धारा–पिछले उपद्रवोंके समय महारावने जिस प्रकारका ऋण किया है

अथवा इसके पीछे जो कोई ऋण करेंगे उस ऋणके चुकानेको खजानेसे किसी भाँति भी रुपया नहीं दिया जायगा।

(हस्ताक्षर) माधोसिंह।

फाल्गुन सम्वत् १८७६।७ वी फर्वरी सन् १८२२ ई०

"जो लिखा गया है उसमें कुछ भी व्यतिक्रम नहीं होगा* "।

भविष्यत्में जिससे अब किसी प्रकारका उपद्रव न हो इसके लिये टाड् साहबने यह व्यवस्था कर दी थी। परन्तु दुःखका विषय है कि उन्होंने एक ऊंची श्रेणीके राजनीतिज्ञ होकर भी इस स्थान पर परिणामकी चिन्ता नहीं की। एक राज्यमें एक नाममात्रका राजा, और एक पूर्ण शासन शक्ति युक्त व्यक्ति वंशानुक्रमसे व्यवस्था न करै। यह व्यवस्था कभी भी चिर दिनतक नहीं चल सकती, इस बातका टाड् साहबने विचार नहीं किया। कर्नल टाड् साहब लिखते हैं कि "संधिकी पूर्व व्यवस्था संतोषदायक होने पर भी जिस संधिपत्रकी धाराको भंग करके उनकी उससे अधिक दुर्दशा हुई है उस संधिपत्रकी रक्षाके लिये जिसमें दृढ़तासे मन लगाया जाय उसके मंगल और सुख शांति के लिये उसी प्रकार विशेष मन लगाना होगा। कुपरामर्श पाये हुए महारावके हृदयमें उस विश्वासका प्रबल करना आवश्यक होगया है, उन्होंने पहिले जो व्यवहार किया उसके अनेक कारणोंमें यह एक कारण दिखाया कि उन्होंने अपने जीवनके भयसे ही यह किया था, वास्तवमें यही उनके भयका कारण था, और इसी लिये उनके उस भयके दूर करने और मंगल साधन करनेके लिये चेष्टा की गई है। अधिक क्या कहै, जिस दिन उन्होंने समस्त पूर्व भीति और अविश्वासको दूर कर नाथद्वारेको छोड़ कर कोटेमें जानेका उद्योग किया उस दिन उनको फिर सिंहासन पर अभिषिक्त करनेकी इतनी चेष्टा और व्यवस्था की गई थी, उस चेष्टाको व्यर्थ करनेके लिये एक भयानक षड्यंत्र प्रकाशित हुआ। एक दुश्चरित्र लॅगड़ेने अपनेको महारावके भ्राता विशनसिंहके नामसे परिचय दिया' और प्रकाशित किया था कि जालिमसिंहके पुत्रकी आज्ञासे मुझको लॅगड़ा किया गया है"। वह दुराचारी महारावके वासस्थानके एक कोश निकट तक जानेका साहसी हुआ था, विशन सिंहकी आकृतिके साथ उसकी आकृतिका अत्यन्त सामान्य सादृश्य था इसीसे उसकी चातुरी सरलतासे प्रकाशित होगयी और उसकी वह प्रतारणा शीघ्रतासे जानी गई, परन्तु जिस उद्देशसे वह मनुष्य इस कार्यको करता था उसके सफल होनेमे कुछ विलम्ब नहीं हुआ। महाराव माधोसिंहके द्वारा अपने प्राणनाशके भयसे भयभीत होगये। अन्तमें बड़े कष्टसे उनका वह भय दूर कियागया। उदयपुरके महाराणाने महाराव किशोरसिंहकी भगिनीके साथ विवाह किया था जिससे किशोरसिंहको फिर अपना सिंहासन मिलजाय इसके लिये उन्होने विशेष यत्न किया। उन्होंने उक्त समाचारको पाकर समस्त चेष्टा और यत्न व्यर्थ होता हुआ देखकर शीघ्र ही उस प्रतारकको पकड़वाकर उदयपुर राजधानीमें मंगवा लिया उस प्रतारकके उस व्यवहारसे सर्वत्र

* Aitchison's Treaties Yol IV.

महा उत्तेजना दृष्टि आई। किसलिये उस मनुष्यने ऐसा कार्य किया था, किसी प्रकार भी वह प्रकाशित न हुआ, इस षड्यंत्रका मूल क्या था, वह चिर दिनके लिये गुप्त रक्खा गया, और शीघ्र ही उसको प्राण–दंड दिया गया। उसके सम्बन्धमें केवल इतना ही प्रकाशित हुआ है, कि वह मनुष्य जयपुर राज्यका निवासी था और किसी घोर अपराधके करनेसे उसको दंडमें लगड़ा कर दिया गया था।

" उक्त शेष अभिनयके समाप्त होते ही महाराव कन्हैयाजीके मंदिरको छोड़कर अपने पिताके राज्यकी ओरको चले। वर्षके शेष दिनमें जालिमसिंह एजेण्ट (टाड़) के साथ महारावको राजधानीमें बुलानेके लिये आगे बढ़े। महारावके जानेके समय सर्वसाधारण प्रजाने महा आनंद प्रकाश किया। यह देखकर जाना जाता है कि अन्य प्रकारसे कोई भी व्यवस्था करनेपर मंगल नहीं होसकता था। दो वार जिस सिंहासनको छोड दिया था उस दिन महाराव फिर उसी सिंहासन पर बैठे, परन्तु अबकी वार उनके हृदयसे समस्त ऊँची आकांक्षाएँ या उपद्रवोंके बँधानेकी आशाएँ एकवार ही लोप होगईं "।

महारावको अपने व्ययके सम्बन्धमें जो सम्पूर्ण एकाधिपत्य मिला है, उसके अतिरिक्त राजभंडारके अर्थसे जो सब अनुष्ठान होते हैं, अर्थात् दानपर्वोत्सवमें उपहार देने और सामरिक उत्सवोंके प्रति भी उनका कर्तृत्व हुआ। जिस प्रकार चिरकालसे राजमहलमें समस्त राजचिह्न रहते थे, इस समय भी उसी प्रकारसे वहाँ रहेंगे, वाद्यकदल प्रधान तोरणके ऊपर रहेंगे यह नियत होगया। महारावके भ्राता विशनसिंह जो अपने आचरणके दोषसे महारावके कोपमें पतित हुए थे महारावके संतोष साधनके लिये उनको राजधानीसे निकाल कर उनके परिवारिके वासस्थान राजधानीसे दश कोश दूर अणता नामक स्थानमें रक्खा गया। उसी समयमें महारावने भी अपनी इच्छानुसार उनकी जागीर बढादी "।

किशोरसिंहके साथ जालिमसिंहका पहिली वार राजनैतिक विभ्राट् उपस्थित होनेपर कर्नल टाड्ने जिस प्रकार कोटेराज्यमें एक महीने तक रहकर दोनोंके बीचमें सभ्यता स्थापित की, इस दूसरी वार शोचनीय और कष्टदायक राजनैतिक अभिनयके पीछे वह उसी प्रकारसे चिरस्थायी सभ्यता स्थापन करनेके लिये एक महीने तक कोटेकी राजधानीमें रहे। टाड् साहब लिखते हैं कि " उन्होने किशोरसिंह और माधवसिंहमें पुन. सद्भाव स्थापित किया था। उस संमिलनके समय महारावने विशेष बुद्धिके साथ अत्यन्त शोचनीय घटनाओंके समस्त अपराध ग्रहण किये। दोनोने दोनोका करस्पर्श करके भविष्यमें मित्रताके लिये शपथ की, और महारावने जिन माधोसिंहको अपने दुर्भाग्यका एकमात्र कारण बताकर अनुयोग किया था, उन्हीं माधोसिंहको अयोचित रूपसे आलिंगन किया। इसी समय महारावकी सुख स्वच्छन्द और पद मर्यादाके प्रति और किसीको क्षमता चलानेका कुछ अधिकार नहीं था। जिससे महारावको किसी विषय पर कुछ भी कष्ट न हो, अथवा किसी प्रकारकी त्रुटि न हो इस निमित्त

ध्यान रखनेके लिये एक अभिभावकको नियुक्त किया। इस पुनः संमिलन और सख्यता स्थापनसे वृद्ध जालिमसिंह सन्तुष्ट हुए। अथवा इस प्रकारका संतोष प्रकाश करनेवाला भाव प्रकाशित किया। जालिमसिंहके आचरणसे जो नैतिक कलंक लगा था उसके लिये वह मनही मनमें अत्यन्त दुःखित हुए और उन्होने उसीके लिये माधोसिंहको बुलाकर कहा, "तुम्हारे पापसे हमै दंड भोगना होगा"।

साधू टाड् साहबने इस स्थानपर लिखा है "कि ६० वर्ष पहिले भटवाड़ेके रण-क्षेत्रमें जिन जालिमसिंहका प्रबल अभ्युदय हुआ, उसी रणक्षेत्रके निकट मांगरोलमें जालिमसिहने अपने जीवनका यह शेष राजनैतिक अभिनय किया, यह अत्यन्त विचित्र घटना हुई। जालिमसिहके मनमें अपने उस अभ्युदयके दिनकी घटनाको स्मरण कर इस शेष स्मरणीय घटनाका विषय विचारनेसे कैसे दो भिन्न भावोंका उदय हुआ था। अपनी जिस तलवारसे जालिमसिंहने आमेरराजकी अधीनताकी जंजीरको काटकर कोटेका उद्धार किया था, उसी कोटेराज्यके अधीश्वरने उनको पुरस्कारमें राज्यका सबसे श्रेष्ठ पद प्रदान किया,जालिमसिंहने उसी राजाके पोतेके ऊपर अपनी तलवार चलाई।" टाड् साहबने उस भावसे उन बातोंको क्यों न कहा, हम कह सकते है कि सुसभ्य बृटिशगवर्नमेण्ट यदि जालिमसिंहका पक्ष समर्थन न करती तो जालिमसिंह कभी भी महाराव किशोरसिंहके विरुद्धमें खड़े नहीं हो सकते थे। महाराव किशोरसिंहके विरुद्धमें तलवार चलाकर जालिमसिहने जो अन्याय किया इतिहासमें चिरकालतक पाठक उसे स्मरण करेगे।

यह अत्यन्त शोचनीय राजनैतिक अभिनय होनेके पीछे फिर शांति स्थापित हुई। टाड् साहबने लिखा है कि "इस शोचनीय समाप्तिके कुछही समयके पीछे जालिमसिह अपने निर्दिष्ट छावनीमें आकर राज्यके चारोओर जो अशान्ति, उपद्रव, और शासन विशृंखला उपस्थित हुई थी उसके दूर करनेके लिये फिर एक वार राज्यमें भ्रमण करनेके लिये गये। वह शीघ्र ही प्रार्थनीय शांतिकी शृंखला स्थापित करनेमे समर्थ हुये और जो राजनैतिक विभ्राट् समाजको एक वार ही विध्वंस करने और राज्यमें रक्तकी नदी वहानेके लिये उद्यत हुआ था शीघ्र ही उसके चिह्न दूर हो गये। उक्त घटनाके पीछे जालिमसिंह और पॉच वर्षतक जीवित रहे थे।"

कर्नल टाड् साहबने पीछे जालिमसिहकी जीवनीकी समालोचना करते हुए निम्नलिखित मन्तव्य प्रकाशित किये है "यदि इस असाधारण मनुष्यके चरित्रकी समालोचना वा वर्णना करनेको इतिहासमें तैयार होते तो हम उसको किस दृष्टिसे देखते? हमने उसके जीवनके जिन कार्योंको अंकित किया है उससे वहुतोंका कौतूहल निवृत्त हो सकता है परन्तु अपने चरित्रोके समस्त चित्रोंको अंकित करनेका उन्होंने कुछ सुभीता दिया हो ऐसा नही हुआ। उनके हृदयका गुप्तभाव एकमात्र सर्वान्तरयामी जगदीश्वरके अतिरिक्त और किसीको भी ज्ञात नहीं था। कोई मनुष्य किसी समय राजस्थानमें इनकी समान विश्वासपात्र नही हो

सका। जालिमसिंह अपने राजनैतिक जीवनकी उषासे, उस राजनैतिक जीवनके विनाश तक अस्सी वर्षसे भी अधिक काल तक नित्य कहा करते थे कि हमारे हृदयकी कथा हमारे मनके भावके वल हमीं जानते है। उनके चरित्रोंमे एकमात्र यही गुण उनके नाना विपदोंसे युक्त जीवनमें उनके चरित्रोकी मौलिकता प्रमाणित कर रहे है। सुख विलासके आवेगसे, सफलता वा सहानुभूतिके उद्योगसे अत्यन्त कठोर स्वभावके मनुष्य भी बीचर मे अपने हृदयकी बात प्रकाशित कर देते हैं परन्तु जालिमसिंह ऐसा नहीं करते थे और हठात् मनके उल्लाससे, आनन्दसे, शोकसे आशा व प्रतिहिंसाके समयमे भी जालिमसिंह के मनकी बात बाहर नहीं होती थी। यदि उनकी कोई कल्पना निश्चय सिद्ध होगी तो भी उसकी प्रवल धारना करते थे। यद्यपि वह अत्यन्त ही उग्रभाव युक्त थे' परन्तु उन्होंने अपने स्वाभाविक दोषको सरलतासे बंद कर रक्खा था, वह धीरचित्तसे अपने कल्पनाके फलकी प्रतीक्षा करते थे, अधिक क्या कहैं उन्होने युवा अवस्थामे भी अपने जीवनको निजाधीन कर रक्खा था, उन्होंने पहिलेसे ही शिक्षा और सावधानतासे अनेक षड्यन्त्र जालोसे अपने जीवनकी रक्षा की थी और उनकी विपत्तिकी राशि जिस भाँति क्रमशः वढ़ गई थी, उन्होंने उसी भाँति कार्यमे सफलता प्राप्त की।ऐसा कौन सा कार्य था, ऐसा कोई भी अवनत भावको प्रकाश करनेवाला कार्य नहीं था जिसे वह करनेके लिये कातर होते, वह बाहरी सरलता जो प्रकाशित करते उससे नम्र भावका ही प्रकाश होता था और आवश्यकतानुसार वह उस चातुरीसे सहाय लेते उधर वह अपने स्वजातीय धर्म-विधानके प्रत्येक अंगको पालन करते थे। वह जिस किसी विषयमे शपथ करते मनुष्य उस विषयमे सदेह नहीं कर सकतेथे उनकी गंभीरता उनके मन्तव्य और विचार वहुतायतसे वढ़ हुए थे और सुशीलताके द्वारा वे सरलतासे अपने अधीनके कर्मचारियोका सम्मान संग्रह कर सकते थे, और वह तोषा मोदक कार्यमें भली भाँतिसे निपुण थे, इस कारण वह जिस प्रकारकी चतुरतासे तोषामोद करते इससे उनके ऊपरवाले मनुष्य मोहित होजाते सारांश यह है कि उन्होने गुप्त कितनी ही वातोसे मनके भावको इस भाँति प्रकाशित किया कि वातचीतके समयमे भी श्रोता उनको धन्यवाद देते थे। सुमन्तव्य पुरस्कारके सग्रहके विषयमे इन्होंने विशेष चेष्टा की थी और उसको अत्यन्त प्रयोजनीय जानते थे। उपरोक्त घटनाके पूर्व समयतक उन्होने अपने आचार उत्पीड़न और प्रतिहिंसा मूलक कार्यके ऊपर चातुरीजालका आवरण फैला दिया था। जिस समय उन्होने हाड़ा सामन्तोंके अधिकारी देशोंपर अधिकार किया, उस समय उन्होने सभी पृथ्वीको धान्यसे परिपूर्ण कर दिया, अनेकता और परिश्रमका फल क्या होता है, उसके द्वारा प्रकाश कर अपनी प्रशसाको सग्रह किया। जिस समय उन्होने राजशक्ति तक पर अधिकार किया उस समय उन्होंने राजगौरवरके सूर्यके कमनीय मंडलको प्रकाश कर उसकी सुन्दरताको प्रकाश करदिया, जिस प्रकार उन्होंने अपने गौरवको प्राप्त किया था, इस प्रकार उनके पूर्व पुरुषोको कभी प्राप्त नहीं हुआ, उनके प्रत्येक कार्यसे ही प्रमाणित हुआ है कि मनुष्य चरित्र और उनके लक्षण ज्ञानके सम्बन्धमे उनकी चूड़ान्त वुद्धि उत्पन्न हुई थी, वह धूर्त महाराष्ट्रियोंको धोखा देसकते थे, वीर तेजस्वी राजपूतोंको शान्त और

दमन कर सकते थे, और अंग्रेज एशियावासी जो किसीके गुणको स्वीकार नहीं करते उन्हीं अंग्रेजोंके निकटसे उन्होंने प्रशंसा संग्रह की थी। उन्होने स्वजातीय सामाजिक और धर्म विषयोंको भलीभाँतिसे पालन किया था, इसीसे अपने समाजमें माननीय थे परन्तु विचित्रता यह है कि उन्होंने जिन विधानोंको भंग किया उनका ऐसे अलक्ष्यमें भंग किया था कि वहुत थोड़े लोगोंने उनको जान पाया। एक ओर दाता दूसरी ओर कृपण एक ओर अत्याचारकारी और दूसरी ओर आश्रयदाता रूपसे वह खड़े रहते थे। एक हाथसे यह सुवर्णके अलंकार दान करते, और दूसरे हाथसे संन्यासियोंके भिक्षा लब्ध धनका दशमा अंश ग्रहण करते थे; इधर वह कोटेके प्राचीन सामन्त वंशको निकालकर उनके सर्वस्व पर अधिकार कर लेते दूसरी ओर यदि परदेशी कोई सामन्त आश्रयकी प्रार्थना करता तो उसको बड़े आदर भावके साथ ग्रहण करके उसे यथाशक्ति सहायता देकर आश्रय देते थे"।

इसके पीछे कर्नल टाड् साहवने लिखा है कि "हम पहिले ही वर्णन कर आये है कि कवियोंके ऊपर उनका भलीभाँतिसे विराग था और रसायनिक वा जादूगरोके ऊपर भी इनकी बड़ी शत्रुता थी, उन्होंने दोनों संप्रदायोको ही कोटेराज्यमें अपना २ व्यवसाय नहीं करने दिया, परन्तु जालिमसिंहके शत्रुओंने कहा है जालिमसिंहने उक्त सम्प्रदायोंका कार्य अच्छा नहीं माना था, इसीसे उनके साथ ऐसा व्यवहार नहीं किया गया, यह बात नहीं थी वरन वह एक जादूगरके मन्त्रोसे छलनामें आये थे, और दूसरी ओर कवियोंकी सत्यता पूर्ण गीतावलीके द्वारा निन्दित हुए थे, इसीसे उन्होंने ऐसी शत्रुता की। उन्होने "डॉकन वा डायनोंके ऊपर जैसा अत्यन्त कठोर व्यवहार करके दंड दिया उसकी अपेक्षा प्राणदंड अच्छा था। तापित लोहेका गोला उनके हाथमें अर्पण किया गया, पर सर्वसाधारण जानते थे कि डॉकन ऐसे द्रव्यका व्यवहार करती थी कि जिससे वह लोहेका गोला उनके हाथको दग्ध नही कर सकता था उनको जलमें डालकर एक और प्रकारकी परीक्षा लीजाती थी; यदि वह जलमें डूबजॉय तौ निर्दोष गिनी जाती थी अर्थात् उनको डॉकन नही कहा जाता था, और वह जो जलमेंसे ऊपरको उठ आती तौ उनको डॉकन वताकर दंड दिया जाता। जिसको डॉकन वताया जाता तो उनकी परीक्षाके लिये चनौंके थैलेसे मुख वॉधा जाता, यदि उनका श्वॉस न रुका तौ उन्हे डॉकन गिना जाता। उधर सर्व साधारण मनुष्य उनके नेत्रोमें सूखीमिर्चपीस करडालते यदि उससे उनके नेत्रोमेंसे जल न निकलता तौ उनको डॉकनरूपसे दंड मिलता, और ऐसा जाना जाता है कि यह डॉकन जव अपनी शक्तिको मनुष्योंके अस्त्रोंके ऊपर प्रयोग करती तो वह अपने जादूके मन्त्रोंसे धीरे २ उनके अस्त्रोंको क्षय कर देती थी। सर्वसाधारण मनुष्योंको यह विश्वास था कि डॉकनोंने यदि एक वार भी देखलिया तौ अवश्य ही मृत्यु हाजायेगा परन्तु कोटेराज्यमें ऐसी डॉकन कोई भी नहीं थी। किसी २ वृद्धने भी अपने

(१) डायनोंकी परीक्षा इसी प्रकार करते हैं।

दुर्भाग्य वशसे मनुष्योंके द्वारा ऐसी डॉकनोंकी उपाधि पाई थी।" अबुलफजलने इसको जिगरखोर लिखा है कि सुबहके समय यह बालकोंका कलेजा चाटती हैं।

" जिस समय तक जालिमसिंहकी अवस्था ८५ वर्षकी होगई थी उस समय भी वह यह नही जानते थे कि आलस्य किसको कहते हैं, वह इस बातको जानते थे कि राजपूतोंको सिंहासनकी नित्य अपने घोड़ेके पीछे रक्षा करनी होती है। जिस समय उनकी दृष्टिशक्ति एकबार ही लुप्त होगई, तब वह एक साथ अंधे होगये और घोड़े पर चढकर शिकार करनेमें असमर्थ होगये, तब वह पालकी पर सवार होकर मृगया करनेको जाते और उनके पीछे कई हजार सेना जाती। शिकारके समयमे वह अपने अधीनके सामन्तोंकी लज्जा और भय सबको दूर कर देते थे, और उस आनन्दके समयमे वह बहुतसी बातें किया करते थे। उस शिकारके समयमे अनुचरोंके परस्परमें सम्भाषणके समय मनकी कथाको सुना करते, और जिस राजपूत जातिके पक्षमें मृगया एक प्रधान आनंददायक व्यापार गिना गया था, और जिस मृगयाके अतिरिक्त उनका जीवन विषाद्-मय होता है, यह उसी मृगयाका अनुष्ठान करके उन राजपूतोंकी प्रीति सग्रह करनेमे समर्थ होते। मृगया करनेके पीछे वह उस सघन वनमे सैकड़ो सेवकोंके साथ बैठते थे, और मृगयाके समयकी अनेक घटनाओंका वर्णन कर हास्य परिहाससे सबको संतुष्ट करते थे, इस मृगयाके समयमे ऊँटोंपर बहुतसी मेदा, घी, चीनी, तरकारी और अन्यान्य अनेक प्रकारके द्रव्य इस स्थानमे लाये जाते थे; और उन सबका भोजन बनाकर परमानन्दसे भोजन करते थे, उस उत्सव और आनन्दमें भी जालिमसिंह अपने राजकार्यके अनेक विषयोंका आन्दोलन-वाणिज्य नीति-विदेशिक नीतिका आलोचना और कृषिविभाग, शांति रक्षाविभाग और समरविभाग इत्यादि अनेक कार्य इस स्थान पर करते और हमारे एलफ्रेड्यार्फ्रैंकके एसटीलोयसकी समान जिस समय मृगयाका प्रबल उत्साह उद्वेलित होता था, जिस समस चारोंओर बाणोंके ऊपर बाणोंकी प्रबल वर्षा होती थी, उस समय किसी एक पीपलके नीचे बैठ कर जालिमसिंह विचार कार्य करके अपराधीको दंड देते थे। इसी तरह सारा दिन मृगयामें व्यतीत होता था पुराणका पाठ वा धर्मसम्बन्धी गीत भी होते थे। पर वह सब कार्य कर-नेका अवसर पाते थे किसी समय भी किसी विषयमें शीघ्रता नहीं करते थे, उनकी दृष्टि शक्ति एकबार ही दूर होगई थी वह उस समय अपने हाथसे अपना नाम नहीं लिख सकते थे, उस समय उन्होंने अपने हस्ताक्षरके अनुरूप अपने नामके अक्षर खुद वा लिये थे। वह एक विश्वासी मनुष्यके निकट रहते थे, और वह जिस समय आज्ञा देते तौ वह किसी पत्रमें अंकित कर देते थे। परन्तु उनकी एक इन्द्रियके एक साथ नष्ट होनेसे उनकी इससे अधिक और कोई हानि नहीं हुई, और कोई भी उनको किसी प्रकारका धोखा नहीं देसका, कारण कि जिस समय वह अन्धे होगये तब उनको किसी प्रकारका दुशाला वा कपड़ा भले बुरेकी परीक्षाके लिये दिया जाता, तो वह हाथसे देख कर ही उसे अच्छा बुरा बता देते थे"।

कर्नल टाड् साहबके सम्मुख जालिमसिंहने जो कार्य और गुण दिखाये गये थे वह उनके किसी भी उल्लेखको नहीं भूले। उन्होंने फिर लिखा है, कि देशके जिस स्थान पर कभी भी धान्य उत्पन्न नहीं हुआ, उस स्थान पर जो मनुष्य धान्यको उत्पन्न करनेमें समर्थ हों, वही देशके यथार्थ धन्यवादके पात्र हैं। यह कहना यदि सत्य है तौ जालिमसिंहने कोटेराज्यके जिन २ स्थानोंमे कभी भी तृण उत्पन्न नहीं हुए थे उन्ही २ स्थानोतकमे वहुतसे अनेक प्रकारके स्वादिष्ट फल मूलोंसे पूर्ण वृक्ष लगाए थे, राजधानी के चारोंओर कठोर पर्वतोंके ऊपर मट्टी डलवा करके सिंहल, तथा पश्चिम महा सागरके द्वीपोसे अनेक प्रकारके फलवान् वृक्ष मँगाकर लगाये थे, और यह प्रमाणित कर दिया था, कि यह वृक्ष इन देशोंमे लगानेसे अवश्य ही फल उत्पन्न करेंगे, इस कारण उनकी प्रशंसा जिस प्रकार हो सकती है? जालिमसिहके वागमें कावुलके सेव मारवाड़के विख्यात काँगेके वागके अनार और सिलहटकी सब प्रकारकी नारंगी, मँाऊ गाँवके आम, और राजपूतानेके समस्त प्रधान २ फलोंके अतिरिक्त दक्षिणकी स्वर्णकदलीतक (चम्पा केला) पाई जाती थी। उन वागोंमें उन वृक्षोंमें जल देनेके लिये जो पर्वतोंके वक्षस्थलको विदीर्ण कर उन्होंने कूप खुदवाये थे, उन प्रत्यक कुएँको खुदवानेमे एक २ में तीस तीस हजार रुपये खर्च हुए थे, वह भी अपने मित्रोंको भी अपना अनुकरण करनेकी परामर्श देते, वह भी कार्य करते रसायन विद्यामे भी वह भलीभाँतिसे प्रसिद्ध होगये थे। वह स्वयं अतर, गुलाव जल, केतकी और केवड़ा तैयार करते थे वह इतर सर्वसाधारणमें प्रचलित अतर इत्यादिकी अपेक्षा श्रेष्ट होते थे। इन्होंने कश्मीरसे पशम वुननेके यन्त्र और वुनानेवालोको कोटेराज्यमें लाकर श्रेष्ट दुशाले तैयार कराये थे। अपने विचारसे तलवार और अन्यान्य अस्त्रोंके वनवानेमे भी उन्होंने विशेप प्रशंसा प्राप्त की थी"।

"जेठी नामका जो एक दल व्यायाम क्रीड़क वा पहलवानोंका उनके अधीनमें नियुक्त था उसके लिये उन्होंने एक ओर जैसी प्रशंसा की थी, दूसरी ओर उसी प्रकारसे कलंक भी संचय किया था, इसके लिये उनका वार्पिक पचास हजार रुपया खर्च होता था, परन्तु उनके अधिनमे स्थित उन पहलवानोंने रजवाड़ो के समस्त राजदरवारोके पहलवानोको परास्त किया था। अन्यान्य राज्यके पहलवान कोटेमें आते ही इनके द्वारा परास्त होजाते थे, जालिमसिह जिस समय युवक थे, उस समय यह केवल अपने पहलवानोंको एकमात्र अपने वाहुवलसे परस्पर परास्त करके संतुष्ट नहीं होते थे उन्होंने उस समय पहलवानोंके हाथमे वाघनख, नामक यथार्थ व्याघ्रनखके द्वारा वना एक प्रकारका अस्त्र विशेप दिया था और इसीसे युद्धमें उनके अंग क्षतविक्षत होजाते थे, वूँदीके विख्यात वीर महाराज उमेदसिंह वहादुरने इस अत्यन्त लोमहर्षण करनेवाली रीतिको एकवार ही दूर कर दिया था। महाराज उमेदसिंह एक समय द्वारकाजीसे होकर लौटते समय कोटेराज्यमें आये उस समय जालिमसिंह अखाड़ेमे वैठेथे, और दो दीर्घाकार पहलवान उस "वाघनख" को हाथमें लेकर परस्पर युद्ध कर रहे थे, महावीर उमेदसिंहको हठात् उस स्थान पर आयाहुआ देख कर वह

रक्ताक्त युद्ध कार्य निवारण होगया। उमेदसिंहने क्रोधित होकर जालिमसिंहको विलक्षण भर्त्सना करके कहा कि इस रुपयेको ज्ञातिभाइयों वा दीन दरिद्रोंमें खर्च न करके इन लोगोंको देते हो फिर इस प्रकार इनका अकारण रक्त पात करना अत्यन्त अन्यायकी बात है, जालिमसिंहने उनकी बात पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया, परन्तु उमेदसिंह ऐसे क्रोधित होगये थे कि वह उसी समय अपनी ढालको पृथ्वीपर रख कर अपने शरीरमें जितने अस्त्र थे उन सबको एक २ करके ढालके ऊपर रख दिया, अर्थात् उन्होंने स्वभाव से तलवार, बंदूक, छुरी, रणकुठार इत्यादिका व्यवहार किया था, उन सबको स्थापन कर उन इकट्ठे हुए पहलवानोंको बुलाकर कहा, कि तुममेंसे किसमें इतना बल है जो एक हाथसे इस ढालको उठाले, महाराज उमेदसिंहके बुलानेसे समस्त पहलवान एक २ करके आगे बढे, और उस ढालको पृथ्वीपरसे उठानेकी चेष्टा करने लगे, परन्तु कोई भी उठानेको समर्थ न हुआ, शेषमें साठ वर्षकी अवस्थाके महाराज उमेदसिंहने सबके सामने एक हाथसे उठा लिया और कितनी ही देरतक उसे लिये खड़े रहे। सभी हाडा-जाति उस वृद्धस्वजातीय महावीरके उस कार्यसे महा आनंदित हुए, और पहलवानोंने लज्जासे नीचेको मुख करलिया। जालिमसिंहने उसी दिनसे वह दृश्य देखकर उन पहलवानोंके प्रति फिर पूर्वकी समान सदय दृष्टि नहीं की। परन्तु उनके यह सब दोष उनकी युवा अवस्थामें ही थे वृद्धावस्था तक नहीं रहे ”।

कर्नल टाड् साहबने यह कह कर, जालिमसिंहकी जीवनीके उपसंहारके साथ ही साथ कोटे राज्यके इतिहासका उपसंहार किया है जालिमसिंहने एकमात्र अपने सम्मानकी रक्षा और शासनशक्तिकी रक्षाके लिये उस वृद्धावस्थामें भी राजकार्यको नहीं छोडा। उन्होंने एकाधिक्रमसे एवं विदेशीय समस्त शत्रुओंका नाश किया था, और हाडौती राज्यके सम्बन्धमें उनके मनमें जो सब अभिलाषाएँ थीं वह सभी पूर्ण होगई थीं। शासनशक्तिके त्याग करने पर सर्व साधारणको यह विदित होगा कि वह निकाले गये है, यही विचार कर उन्होंने उस शक्तिको हाथसे अलग नहीं किया। वृद्धावस्थामें जिस समय उनका स्वास्थ एकबार ही नष्ट होगया, उस समय भी विश्रामकी इच्छा और धर्मधनकी वासनाका उनके मनमें उदय न हुआ, यदि उस समय वह अपनी शासनशक्तिको हाथसे अलग करदेते तो यथेष्ट सम्मान पासकते थे।

अष्टम अध्याय ८.

माधोसिंहको कोटेके पूर्ण क्षमता युक्त शासनकर्ता पदकी प्राप्ति–उनके सम्बन्धमें महाराव किशोरसिंहका सुव्यवहार–महाराव किशोरसिंहकी मृत्यु–महाराव रामसिंहको सिंहासन की प्राप्ति–माधोसिंहकी मृत्यु–उनके पुत्र मदनसिंहका कोटेकी शासन क्षमताका ग्रहण करना–महाराव रामसिंहके साथ मदनसिंहका मनान्तर–मदनसिंहके व्यवहारमें कोटेकी सर्वसाधारण प्रजा का महाक्रोध–उनको निकालनेके लिये जातीय अभ्युत्थानका उद्योग–बृटिश गवर्नमेण्टका कोटेराज्यके सत्रह परगनोंको छीनकर झालावाड़ नामक नवीन राज्यकी सृष्टि करके उसे मदनसिंहको देना–महाराव रामसिंहकी उसमें अनिच्छासे सम्मति देना–नवीन संधिपत्र–सत्रह परगनोंकी सूची–बृटिश गवर्नमेण्टका व्यवहार–कोटेके महाराजके साथ बृटिशके अधीनमें सेनाकी रक्षा और उसके व्यय देनेके लिये बृटिश गवर्नमेण्टका प्रबल आदेश–अत्यन्त अनिच्छासे महाराव रामसिंहका उस व्यय देनेमें सम्मति देना–सन् १८५७ ईसवीके सिपाही विद्रोहके समय उस नवीन सृष्टिसेनादलका अभ्युत्थान–पोलिटीकल एजेण्ट और उनके दोनों पुत्रोंका प्राण नाश–महारावके प्रति अंग्रेज गवर्नमेण्टका असंतोष प्रकाश करना–अंग्रेज राजप्रतिनिधिका महारावको वंशानुक्रमसे पोष्य पुत्रके ग्रहण करनेकी सनद देना–महाराव रामसिंहकी मृत्यु–उनकी रानियोंका प्रज्वलित चितामें प्राण त्यागकी चेष्टा करना–पोलिटिकल एजेण्टका इस विषयमें व्याघात देना–महाराव छत्रशालसिंहका अभिषेक–सामन्तोंके ऊपर शासनभार डालना–बृटिश गवर्नमेण्टका कोटेके शासन भारको ग्रहण करना–

महात्मा टाड्‌ साहबने अपने विस्तारित ग्रन्थमें कोटेराज्यके जिस समय तकके इतिहासको प्रकाशित किया है हमने पहिले अध्यायमें उसका वर्णन किया है, इस समय इतिहासके अंगको सम्पूर्ण करनेके लिये हम परिवर्ती समयके इतिहासको संग्रह करनेमें प्रवृत्त हुए हैं।

जिस जालिमसिंहको बृटिश गवर्नमेण्टने कोटेके प्रकृत अधीश्वररूपसे स्वीकार किया। जिस जालिमसिंहके स्वार्थसाधनके लिये सबकुछ किया उन्हीं जालिमसिंहने सन् १८२२ ईसवीकी २५ वीं जूनको प्राण त्याग किया। महाराव किशोरसिंहने पहिलेहीसे वचन देदिया था। उन्होंने माधोसिंहको पितृपदपानेके विरुद्धमें किसी प्रकारका उपद्रव व बाधा उपस्थित न की, यद्यपि माधोसिंह पितृपद पानेके लिये सम्पूर्ण अयोग्य थे, तथापि महाराव किशोरसिंहने इस समय किसी प्रकारकी आपत्ति उपस्थित न की। आचिसन साहबने अपने ग्रन्थमें लिखा है कि "जालिमसिंहने सन् १८२४ ईसवीमें प्राण त्याग किये, और उनके पुत्र माधोसिंह उस पदपर विराजमान हुए। माधोसिंह उस पदकी अयोग्यतामें भलीभाँतिसे विख्यात होगये थे; तथापि उन्होंने संधिपत्रके अनुसार बिना किसी बाधाके शासनभारको प्राप्त किया *। कर्नल म्यालिसनने इसके सम्बन्धमें अपने ग्रन्थमें मन्तव्य प्रकाश किया है, "यह मनुष्य (माधोसिंह) शासनकर्तृत्व पदके अयोग्य है, यह भलीभाँतिसे विख्यात है।

* Aitchison's Treaties VolV.

परन्तु सन्धिकी धारा अवश्य ही पालन करनी होगी, इसी कारणसे उनको उस पद पानेमें किसीने कुछ बाधा नहीं दी +" किसी राज्यके किसी एक मनुष्यको वंशानुक्रमसे मंत्रित्व वा शासन कर्तृत्वका भार देना अत्यन्त अविचारका कर्म है इस व्यवस्थासे जैसा बुरा फल होता है यह जान कर भी किस प्रकारसे जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे शासनकर्ताका भार दिया था, हम इस विचारको भी स्थिर नहीं कर सकते । इस समय देखा जाता है कि माधोसिंह शासनकार्यके लिये सम्पूर्ण अयोग्य रूपसे सर्वसाधारणके निकट परिचित थे, तथापि उनके हाथमे कोटेका शासनभार अर्पण किया गया ।

माधोसिहके सब प्रकारसे अयोग्य होने पर भी वह जानते थे कि वृटिश गवर्नमेण्टने जब संधिबधनमे आवद्ध होकर उनको और उनके भविष्यत् वंशधरोंको सदा उस पदपर स्थित करनेका विचार किया है तब अब भय क्या है ? इस कारण माधोसिंहने निर्भय होकर अपनी इच्छा-शासनके द्वारा अपनी अयोग्यताका चूडान्त परिचय देकर राज्यके अनिष्टसाधन में कसर न की । वृटिशगवर्नमेण्ट भी उस स्वेच्छाचारसे कोटे राज्यका अनिष्ट होता हुआ देख मौनभाव किये रही । संधिपत्रमें माधोसिंहका पक्ष समर्थन करनेके लिये वृटिश सरकार वचनवद्ध थी। इस कारण किसी बातके भी कहनेकी सामर्थ्य उसकी नहीं थी ।

महाराव किशोरसिंहने देखा कि वृटिश गवर्नमेण्टने माधोसिंहको सब प्रकारसे अयोग्य देख कर भी जब चुपचाप स्थिति की है, एव कोई भी प्रतिविधान करनेमें लिये तैयार नहीं है, और किसी प्रकारका अनुयोग उपस्थित करनेसे फिर संधिका उल्लेख करके भय प्राप्त होगा । तब मौन रहनाही कर्तव्य जाना, इस कारण वह हृदय की ज्वालाको हृदयमे ही सहन करते थे, परन्तु उनको अब अधिक दिनतक अपने पैतृक राज्यकी ऐसी दुर्दशा नहीं देखनी पडी, महाराव किशोरसिंहने सन् १८२८ईसवीमें प्राणत्याग किये । उनकी जीवनीके सम्बन्धमें हम अधिक कुछ कहनेकी इच्छा नहीं करते । वह जैसे विद्वान् धीर और नम्र थे, उसी प्रकार प्रबल पराक्रमशाली वृटिश सरकारके भक्त थे । जालिमसिंहका दृढ पक्ष समर्थन करने पर भी उन्होंने उसके विरुद्धमें सेनासहित खडे होकर अपने साहसका चूडान्त परिचय दिया था, और सामयिक अवस्थाको विचार कर अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ फिर संधिबधनमें आवद्ध हो राजनीतिज्ञताका भी अल्प परिचय नहीं दिया ।

कोटेपति महाराव किशोरसिंहने अपुत्रावस्थामे प्राण त्याग किये थे, इस कारण कुमार पृथ्वीसिंहके एकमात्र पुत्र नानालाल रामसिंहके नामसे पुकारे जाकर कोटेके सिंहासन पर अभिषिक्त हुए ।

महाराव रामसिंहके अभिषेक कार्य होनेके कुछही दिन पीछे राजराणा माधोसिंहने प्राण त्याग किये । माधोसिंह जैसे विलासी, अयोग्य और अहंकारी थे उसी प्रकार उनकी स्वेच्छाचारिताके कारण कोटेके वहुतसे अनिष्ट हुए थे । एकमात्र

+ Maleson's Native states.

माधोसिंहकी उत्तेजनाके अनुरोधसे जालिमसिंहने अपने वंशानुक्रमसे फौजदार वा कोटेको समस्त राजशक्तिको अपने हाथसे ग्रहण करनेकी दृढ़ प्रतिज्ञा की, और उसीसे कोटेराज्यका सर्वनाश हुआ । इस स्थान पर उसके पुनर्वार उल्लेख करनेकी आवश्यकता नहीं है, माधोसिंहकी मृत्युके साथही साथ कोटेकी सुख शांतिका विषम कंटक उखड़ जायगा । पाठकगण ऐसा विचार न करैं, माधोसिंहकी मृत्युके पीछे बृटिश गवर्नमेण्टके संधिपत्रके अनुसार उनके पुत्र मदनसिंह राजराणाकी उपाधिको पाकर पिताके पदपर प्रतिष्ठित हुए । जालिमसिंह और माधोसिंह यद्यपि कोटेराज्यकी केवल राजशक्तिको ही हरण करके संतुष्ट हुए थे, परन्तु मदनसिंहके शासन समयमें कोटेराज्यके चिरस्थाई महा अनिष्ट हुए, किन्तु एक ओर उस सर्वनाशके होनेसे कोटेके अधीश्वर चिरकालके लिये उस हानिकारक संधिपत्रके हाथसे अपना उद्धार करनेमें समर्थ हुए। कर्नल म्यालिसनने लिखा है,कि "इस प्रधानमंत्री और महाराव (रामसिंह) में किसी समय भी सद्भाव नहीं था, एवं सन् १८३४ ईसवीमें दोनोंके बीचमे ऐसा विवाद प्रवल होगया कि प्रधान मंत्री पदके सम्बधमे फिर नवीन व्यवस्था करना कर्तव्य होगया।" आचि-सन साहवने अपने ग्रन्थमे लिखा है कि सन् १८३४ ईसवीमे रामसिंह और उनके मंत्री माधोसिंहके पुत्र और उत्तराधिकारी मदनसिंहमे फिर विवाद उपस्थित हुआ । मंत्री को निकालनेके लिये सर्वसाधारण प्रजाके अभ्युत्थान होनेसे महा विपत्ति होनेकी संभा-वना होगई, और इसी कारणसे कोटेके अधीश्वरकी सम्मतिके अनुसार कोटेराज्यको दो खण्डोंमें विभक्त करके जालिमसिंहके उत्तराधिकारियोंका भरण पोषण करनेके लिये झालावाड़ नामक एक स्वतंत्र नूतन राज्यकी सृष्टि करना उचित विचारा गया । वार्षिक वारह लाख रुपयेकी आमदनीवाले सत्रह परगने मदनसिंहको दिये जॉयगे । इस नवीन वन्दोवस्तके अनुसार कोटेराज्यके साथ फिर नवीन संधिवंधन हुआ "।

एक राज्यमें एकभाव राजा और एक समस्त शासन शक्ति युक्त मनुष्य वंशानुक्रम से नहीं रह सकता, अंग्रेज़ गवर्नमेण्टने इसको भलीभाँतिसे जान कर भी कोटेके शास नकर्ताका पद वंशानुक्रमसे उपभोग करनेको दिया इस कारणसे विषमय फल उत्पन्न होता हुआ देख कर भी गवर्नमेण्टने अपनी समस्त शक्तियोंको प्रयोग करके अव तक उस वात को सिद्ध रक्खा, परन्तु इतने दिनोंके पीछे सरकारने कार्यद्वारा स्वीकार किया कि जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे शासनशक्ति देकर भूलका कार्य किया है । उसके लिये इस समय गवर्नमेण्टने फिर एक नवीन कार्य किया । कोटेराज्यके सत्रह परगनोंको छीन कर जालिमके उत्तराधिकारी सब अंशोंमें अयोग्य सर्व साधारणके अप्रिय मदनसिंहको देकर नवीन झालावाड़ राजके सिंहासन पर उनको वैठाल दिया । जालिमसिंहने गवर्न-मेण्टके वहुतसे उपकार किये थे इस कारण वह उनके समीप कृतज्ञताके ऋणमें वँधी थी कोटेराजसे यह परगने लेकर उस कृतज्ञताका ऋण चुकाया गया ।

जब कि शरीरके किसी अंगमें घाव होजाय और उसकी चिकित्सा करनी कठिन होजाय, और उससे समस्त शरीरके नाश होनेकी सम्भावना होजाय,तब शरीरकी

रक्षाके लिये उस अंगको कटवा देना ही उचित है। महाराव रामसिंहने जालिमके वंशधरोके द्वारा कोटेरूपी कमलको भीतर ही भीतर अंतःसार शून्य होते हुए देखकर शीघ्र ही वृटिश गवर्नमेण्टके प्रस्तावके अनुसार अपने पैतृक राज्यके वह सत्रह परगने छोड़ दिये। शीघ्र ही सुसभ्य न्यायपरायण सरकारकी कृतज्ञताके ऋण चुकानेमें सहायताके लिये उस त्यागको स्वीकार किया। परन्तु उसके उपलक्षमे नवीन संधि वंधनके समय महाराव रामसिंहके मस्तक पर और एक भारी भार अर्पण किया गया।

वृटिश गवर्नमेण्ट और महाराव रामसिंहमें संस्थापित संधिपत्र।

१ दिल्लीके संधिपत्रकी अतिरिक्त धारासे राजराणा जालिमसिंह उनके उत्तराधिकारी और स्थलाभिषिक्तोको कोटेराज्यकी जो शासनशक्ति दीगई है, राजराणा मदनसिंहने उसी शासनशक्तिको छोड़कर महाराव रामसिंहकी उक्त अतिरिक्त धाराके रहित पक्षमें सम्मति दी है।

२-वृटिश गवर्नमेण्टकी सलाहसे महाराव सूचीके अनुसार समस्त परगने राजराणा मदनसिंह उनके उत्तराधिकारी और स्थलाभिषिक्त गणको प्रदान करनेमें सम्मत हुए है।

३-इस सूचीके अनुसार इन परगनोके पृथक् करनेको हस्तान्तर करनेकी व्यवस्थामें जो धन व्यय होगा उसको महाराव और उनके उत्तराधिकारी गण तथा स्थलाभिषिक्त गण पूरा करेंगे।

४-राजधानी कोटेसे अभीतक जो कर दिया जाता था, महाराव अपने उत्तराधिकारी गणोंके साथ तथा स्थलाभिषिक्तोंके साथ सम्मत हुए हैं, कि उस करमेंसे वार्षिक ८०००० रुपये छोड़ कर शेष सब कर सरकारको हम देंगे, वृटिश गवर्नमेण्ट उक्त ८०००० रुपये करस्वरूपसे राजराणा मदनसिंह तथा उनके उत्तराधिकारियोंसे लेनेमे सम्मत है। राजराणाने संवत् १८९५ के पहिले उक्त कर देना। प्रथम आरम्भ किया। संवत् १८९४ के प्रथम वर्षके कारण वर्तमान देय कर १३२३६० रुपये कोटा राज्यसे दिये जाते थे।

५-महाराव अपनी ओरसे और उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्तोंकी ओरसे कहते है कि एक दल नवीन सेनाका रखना होगा और वृटिश गवर्नमेण्ट यदि कर्त्तव्यको विचार करैगी तो वह सेनादल एक वृटिश सेनापतिके अधीनमें रक्षित होगा-इस स्थान पर इसको स्पष्टरूपसे प्रकाशित करना उचित है कि इस प्रकार सेनाकी रक्षा होनेसे महाराव और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्तोके कोटेराज्यमे आभ्यन्तरिक शासनशक्तिको चलानेके पक्षमे किसी प्रकारका हस्ताक्षेप नही होगा।

६-उस सेनादलका व्यय किसी समय भी वार्षिक तीन लाख रुपयेसे अधिक नहीं होगा।

७–यदि उस सेनादलकी सृष्टि हुई तो उस सेनादलका व्यय महाराव और उनके उत्तराधिकारी स्थलाभिषिक्त गवर्नमेण्टको जो कर देते है उसके साथ प्रति छः मासके भीतर सरकारको देंगे। और किस समयसे प्रथम अर्थ दान आरंभ होगा। वृटिश गवर्नमेण्ट उसे स्थिर करदेगी।

८–यह भी स्पष्टरूपसे प्रकाशित रहै कि सन् १८१७ ईसवीकी २६ वीं दिसम्बरमें वृटिश गवर्नमेण्टके साथ महाराव उमेदसिंह वहादुरका दिल्लीमें जो संधिपत्र नियत हुआ है. वर्तमान संधिपत्रके द्वारा उस संधिपत्रकी जिन २ धाराओंसे कोई संश्रव नहीं रहा है वह २ धाराएँ प्रवल रहैगी।

९–वृटिश गवर्नमेण्ट और कोटेके महाराव रामसिंहमें इस संधिपत्रकी उपरोक्त धाराओका निर्णय होने पर इसमे एक ओर तो अफिसिएटिंग पोलिटिकल एजेण्ट कप्तान जान लाडलो, एवं राजपूतानेमें स्थित गवर्नर जनरलके एजेण्ट लेफटिनेण्ट एल आलवीसके हस्ताक्षर और मोहर लगा कर महाराव रामसिंहके भी हस्ताक्षर सहित मोहर लगादी गई; और आजकी तारीखसे दो महीनेमे महा महिसवर गवर्नर जनरल द्वारा प्रत्यर्पित होगा।

(हस्ताक्षर) जे. लाडलो।
कोटा, १० वी अप्रैल, सन् १८३८ ईसवी।
अफिसिएटिंग पोलिटिकल एजेण्ट।

महाराव रामसिंहकी मोहर.

एन. अलवीस।
गवर्नर जनरलके एजेण्ट।

सूची।

राजराणा मदनसिंह उनके उत्तराधिकारी और स्थलाभिषिक्तोंके कारण संधिपत्रके मतसे झालावाड़ नामक जो नवीन स्वतंत्र राज्यकी सृष्टि होगी; उसके लिये निम्नलिखित परगने निर्धारित हुए।

१–चॉईहाट
२–सकेत
३–चोमहला
पचपाड़
अवहोर
डिग
गंगराड
४–झालरा पाटन,
५–रमचवा
६–कोटड़ाभट्टा
७–सुरेरा।

८-रखाई ।

९-मनोहर थाना ।

१०-फूलवड़ोद

११-चाचुरणी ।

१२-कंकुरनी ।

१३-छीपावड़ोद ।

१४-शेरगढ़के कुछ अंश पूर्वमें ।

१५-परवन. ।

१६-निवाजके पूर्वांश ।

१७-शाहाबाद ।

यह प्रकाशित रहे कि नरपतिसिंह झालावाड़ राज्यसे महारावके राज्यमें उठ आवेगा और उनकी समस्त भूमि राजराणाको प्राप्त रहेगी ।

कोटा, १० अप्रैल सन् १८३८ ईसवी ।
जे लाडलो ।
अफिसिएटिंग पोलिटिकल एजेण्ट ।
एन अलवीस गवर्नर जनरलके एजेण्ट ।

राजराणा मदनसिंहकी मोहर ।

विदेशी विधर्मी यवन सम्राट् शाहजहाँने जिस कोटे राज्यकी सृष्टि करके हाड़ा राजपूत माधोसिंहको दिया था, सुसभ्य वृटिश गवर्नमेण्टने अपनी कृतज्ञताका ऋण चुकानेके लिये उसी राज्यको दो खंडोंमें विभक्त कर दिया-जालिमसिंहके अयोग्य उत्तराधिकारीने वार्षिक बारह लाख रुपयेकी आमदनीका स्वतंत्र नवीन राज्य पाया, और कोटेके यथार्थ अधिकारीको केवल वह वार्षिक बारह लाख रुपया नहीं वरन सरकारके अधीनमें रक्षणावेक्षणके लिये सेनाको रखकर वार्षिक तीन लाख रुपया और देना पड़ा । इससे वार्षिक पन्द्रह लाख रुपया चिरकालके लिये कोटेपतिका चला गया।

वृटिश गवर्नमेण्टके साथ कोटेके महाराज उमेदसिंहका जब प्रथम संधिबंधन हुआ था,तब उक्त प्रकारसे सेनाके व्यय दानका कोई उल्लेख नहीं था, परन्तु इस समय सुअवसर पाकर उक्त सेनाकी सृष्टिके विषयमे महारावको सम्मत कर लिया गया । सेनादलका व्यय महाराव देंगे, परन्तु वह महारावकी आज्ञा पालन नहीं करेगी । अंग्रेज सेनापतिके अधीनमें अंग्रेज गवर्नमेण्टकी सेनारूपसे रहेगी । यद्यपि महारावने इस नवीन संधिके समयमे वार्षिक ८०००० रुपया कर देनेसे छुटकारा पाया, परन्तु उस स्थान पर वार्षिक तीन लाख रुपया विशेष देनेको तैयार हुए। महाराव रामसिंह भलीभांतिसे जान गये थे कि विचार करानेसे अब कुछ न होगा विशेष चेष्टासे कदाचित् शेष अंशमें भी हानि पड़े, इस कारण वह उस प्रबल पक्षकी आज्ञा पालन करके पैतृक राज्यके नामकी रक्षा

करनेको आश्रय हुए। परन्तु थोड़े ही समयमें महाराव जानगये कि अंग्रेज गवर्नमेण्टको नियमित 'वार्षिक कर देनेके सिवाय सेनाके लिये वार्षिक तीन लाख रुपया देना सब प्रकारसे असम्भव है, इस कारण उन्होंने शीघ्र ही दीनभावसे अंग्रेज सरकारके समीप इसके सम्बन्धमें प्रार्थना की। कर्नल म्यालिसन लिखते है कि "पहिले भी अत्यन्त अनिच्छासे महाराव इस सेनासृष्टिके विषयमें असम्मत हुए थे और वारम्वार अनुयोग उपस्थित करनेके कारण सन् १८४४ ईसवीमे उक्त सेनादलके व्ययमेंसे एक लाख रुपया क्षमा करके दो लाख रुपया नियत किया गया। उसी समय यह विचार हुआ कि यदि इस रुपयेसे सेनादलके व्ययकी पूर्त्ति न हो सकैगी, तो कोटेके करमेंसे वह रुपया दिया जायगा और उस समय महारावको सावधान करना होगा कि, यदि वह ठीक समय पर रुपया न देसकेंगे, तो उक्त सेनाके लिये जो रुपया दिया गया है वह और करके निमित्त जो कितने ही ग्राम हैं उनको प्रति भूस्वरूपसे रखना होगा।" * महाराव रामसिंहने इस शेष व्यवस्थासे अपनेको सौभाग्यवान् जान लिया।

वृटिश गवर्नमेण्टने कोटेपतिके पाससे समस्त व्यय लेकर उपरोक्त सेनादलकी सृष्टिकर उसको अपने अधीनमें रक्खा। सन् १८५७ ईसवीके विख्यात सिपाही विद्रोहके समय उस सेनाने अंग्रेज गवर्नमेण्टके विरुद्धमें खड़े होकर पोलिटिकल एजेण्ट और उनके दोनों पुत्रोंको मारडाला। अंग्रेज इतिहासवेत्ताने कहा है कि महाराव रामसिंहने उस विद्रोही सेनाको दमन करनेके लिये किसी प्रकार सहायता नहीं की परन्तु हम कह सकते हैं कि प्रभुता हीन महाराव रामसिहमे उस प्रबल विद्रोहके निवारण करनेकी कुछ सामर्थ्य थी या नही इस विषयमें हमै सन्देह है। वृटिश गवर्नमेण्टने उनसे असंतुष्टहोकर उनके सम्मानके लिये जो सत्रह तोपें नियत की थीं उनमेंसे चार घटा कर तेरह तोपोंकी सलामी नियत की। परन्तु उदार हृदय अंग्रेज राजप्रतिनिधि लार्ड क्यानिगने सिपाही विद्रोहके पीछे जिस समय भारतवर्षमे प्रत्येक देशीय राजाको वंशानुक्रमसे पुत्रके अभावमे दत्तक पुत्र ग्रहण की सामर्थ्य दी थी- उस समय महाराव रामसिहको भी उस सनदके देनेमें त्रुटि न की।

महाराव रामसिंह बहादुरने सन् १८६६. ईसवी २७ मार्चको अपराह्न समयमें ६४ वर्षकी अवस्थामें प्राण त्याग किये। कर्नल म्यालिसनने लिखा है कि जब सर्वसाधारणमें प्रचार होगया कि महारावकी मृत्यु निकट है, तब सर्वत्र यह जनरव उठा कि उनकी विधवा रानियोंमेंसे एक रानी महाराजके साथ सती होनेकी अभिलाषा करती है। जिससे ऐसी घटना न हो उसके लिये पोलिटिकल एजेण्टने उसी समय उपयुक्त व्यवस्था की, उन्होंने राजमहलका द्वार बंद करके ताला लगा दिया और उसकी रक्षाके लिये सेना नियुक्त कर दी, और यह आज्ञा दी कि जहाँतक सम्भव होसके

---

* Malleson's Natve states.

(१) दत्तक पुत्रकी सनदप्राप्तिका वृत्तान्त मेवाड़ और मारवाड़के इतिहासमें देखो।

वहाँतक महारावकी मृत्युका समाचार रनिवासमें मत जाने दो। रानियां चार घंटे तक महारावकी मृत्युका समाचार न जान सकी। इसके पीछे एक रानीने कहला भेजा कि मै स्वामीके साथ चितामें जलूँगी और उन्होने यहाँतक वल प्रकाश किया कि उस बंद दरवाजेको भी तोड डाला, परन्तु उनको किसी प्रकारसे भी राजमहलसे वाहर न होने दिया। दूसरे दिन प्रभात होवे ही निर्विघ्नतासे महारावका मृतक कार्य किया गया। समयकी कैसी विचित्र महिमा है, एक समय जो राजपूत रानियां स्वामीका अनुगमन कर अपने सतीत्वकी पराकाष्ठा दिखाती थीं, भारतके गौरवकी रक्षा करती थीं, आज उस सती कुलकी स्वर्गीय आशाकी जड़मे दारुण कुठाराघात लगा।

महाराव रामसिंहकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र भोमसिंह छत्रसालसिंह नामसे कोटेके सिहासन पर अभिषिक्त होकर आजतक उस सिंहासनकी शोभाको उज्ज्वल कर रहे है। महाराव छत्रसालसिह सिंहासन आरूढ़ होनेके समयमें बहुत थोडी उमरके थे। वृटिश गवर्नमेण्टने महाराव रामसिंहसे असंतुष्ट होकर सन् १८५७ ईसवीके पीछे उनकी जो तोपोकी सलामी घटा दीथी इन नवीन महारावके सिंहासनपर आरूढ होनेके समय फिर संतुष्ट हो पहिलेकी समान सत्रह तोपे नियत करदीं।

महाराव छत्रशालसिंह अप्राप्त व्यवहार थे, इससे महाराव रामसिंहकी मृत्युके पीछे राज्यका शासनभार प्रथमकी समान कई एक उच्च सामन्त और राजकर्मचारियो के ऊपर पड़ा, परन्तु अंग्रेज इतिहासवेत्ताने लिखा है कि उनके शासनमे राज्यमे अनेक शोचनीय घटनाएँ उपस्थित हुईं। राज्यकी आमदनीका घटना, ऋणवृद्धि इत्यादि होनेसे अन्तमें वृटिश गवर्नमेण्टको राज्यके आभ्यन्तरिक शासनकार्यमे हस्तक्षेप करना पड़ा। कोटाराज्य उस समयतक वृटिश गवर्नमेण्टकी सावधानतासे शासित होता रहा। सन् १८७४ ई० में जयपुर राज्यके भूतपूर्व प्रधानमंत्री नवाव सर मुहम्मद फ़ैज़अलीखाँ के. सी, एस. आई. कोटेके प्रधानमन्त्री और सर्वशक्ति सम्पन्न कर्ता पदपर नियुक्त हुए। उन्होंने सभी विषयोंमें गवर्नर जनरलके एजण्टके मन और परामर्शके अनुसार कार्य किया।

अंग्रज गवर्नमेण्टकी सावधानीसे कोटेके आभ्यन्तरिक शासनमें विशेष परिवर्तन होगया है। सभी विभागोंमे अच्छे बंदोवस्त और न्याय विचारकी सुव्यवस्था कीगई है। वर्तमान महाराव छत्रशालसिंह बहादुर इस समय केवल वार्षिक १५०००० रुपया पाते हैं। उनको शीघ्र ही राजकाज जानने पर अपने राज्यके सम्पूर्ण शासनका भार मिल जायगा।

नवम अध्याय ९.

कोटेके वर्तमान शासनकी रीति-शासन समिति-आयव्ययकी व्यवस्था-आयव्ययकी सूची-राजऋण-राजसमृद्धिके सम्बन्धमें नवीन बन्दोबस्त-विचार विभाग-फौजदारी अपराधकी सूची-उसके सम्बन्धमे पोलिटिकल एजेण्टका मन्तव्य-कारागारविभाग-शिक्षाविभाग।

कोटाराज्य इस समय गवर्नमेण्टकी सावधानीसे अंग्रेजी रीति और अंग्रेजी व्यवस्थाके अनुसार अंग्रेजीभावसे शासित होता है, कोटेराज्यके हर्ता कर्ता विधाता असीम सामर्थ्यशाली इस समय अंग्रेज पोलिटिकल एजेण्ट है। महाराव छत्रशालसिह इस समय अप्राप्त व्यवहार हैं, इसी कारण वह राज्यशासनके किसी विपयको भी अपनी इच्छानुसार पूर्ण सामर्थ्यसे नहीं चलाते हैं। महाराव सामर्थ्यको पाकर अवश्य ही पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त करेंगे। अवश्य ही आभ्यन्तरिक शासनकार्यमें उस समय अंग्रेज पोलिटिकल एजेण्ट फिर हस्ताक्षेप नही करेंगे।

हम अवश्य ही इस बातको मानते हैं कि वर्तमान समयमें अंग्रेजोके अधीनमें कोटेराज्यने शासित होकर अनेक विपयोंमें बहुतसे उपकार प्राप्त किये हैं। विचार विभाग राजस्व-विभाग शांतिरक्षा-विभाग स्वास्थ्यविभाग इत्यादि इस समय सम्पूर्णरूपसे यथायोग्य व्यक्तियोंके तत्त्वावाधानसे उत्तम रीतिसे परिचालित होते है।

कोटाराज्य प्रधानतः एक कौन्सिल वा समितिके द्वारा शासित होता है। कई जन उच्च मनुष्य राज्यके एक २ विभागका शासनभार लेकर उस समितिके सभासद् पदपर नियुक्त रहते है। अंग्रेज पोलिटिकल एजेण्ट उसी समितिके सभापति हैं, उन्हींकी परामर्श और सम्मतिके अनुसार कौन्सिलके सभ्य गण कार्य निर्वाह करते है। राजपूतानेके सन् १८८२। १८८३ ईसवीके शासनविज्ञापनमे राजपूतानेमें स्थित गवर्नर जनरलके एजेण्ट लफटिनेण्ट कर्नल ब्राड्फोर्डने लिखा है कि "इस राज्यका शासनकार्य पूर्व कार्यके समान लेफ्टिनेण्ट कर्नल सी. ए. वेलीके सभापतित्व पर एक कौन्सिल द्वारा शासित होता है *"। उक्त विज्ञापनमें पोलिटिकल एजेण्टने स्वयं लिखा है कि "कौन्सिलके सभ्यगणोंके सम्बधमें किसी प्रकारका परिवतर्न नही हुआ है, सभ्यगण अपने कार्यको संतोपके साथ पूरा करते हैं, और राज्यके शासन सम्बन्धमे परामर्श दाता स्वरूपसे हमारी यथेष्ट सहायता करते है+"।

राज्यकी आयव्ययकी व्यवस्थाके जानते ही उस राज्यकी आभ्यन्तरिक अवस्था भलीभाँतिसे जानी जा सकती है। राजराणा जालिमसिंहके शासनसमयमे कोटेराज्यकी

* The report of the Political Administration of the Rajputana states 1882-83.

+ The report of the Political Administration of the Rajputana states 1882-83.

आमदनी किस प्रकार थी–वह हमारे पाठकोंको यथास्थानमें ज्ञात हुई है। वृटिश राजनीतिसे कोटाराज्य दो भागोंमें विभक्त हुआ, इस कारण वार्षिक बारह लाख रुपयेकी आमदनी सरलतासे लुप्त होगई, इस समय वृटिश सरकारकी सावधानतासे राज्यकी आमदनी और खर्चा किस प्रकारसे होगया है सो परवर्ती सूचीमें उसे प्रकाशित करते हैं।

कोटेराज्यके आयव्ययकी सूची।

संवत् १९३८।

(आमदनी)

	प्रकृत आमदनी सन् १८८१–८२ ई० रु०	आनुमानिक आमदनी सन् ८२–८३ ई० रु०
भूराजस्वचालित	१७७३२१७॥–११पा०	१८५००००
बकाया	५१४७८॥=११पा०	५००००
लवणका शुल्क वृटिश गवर्नमेण्ट के समीपसे प्राप्त क्षतिकी पूर्ति		१६०००
कोटाराज्य जागीरदारगण		३१७५
छूट	६१५५३॥।)	९००००
कानूनगो	९५४०॥–) ७ पा.	१००००
उद्यानविभाग	४२९०।≡)५ पा.	३५००
(वनिविभाग)		
तृण	८६५३॥≡)९ पा.	६०००
काष्ठ	१४४४१≡) ९ पा.	१३०००
कर	५६४८०।=)	६००००
तलवाना	३३५८६४॥≡)५पा.	२७५०००
आवकारी	१२६२८।=)	१२०००
टकशाल	१३०५।=)५ पा.	३०००
जुरमाना	१२१४५॥) ३ पा	१५०००
फीस	७२३=) १०पा.	१०००
स्टाम्प	२०६४९।)	२००००
तकावी	३७६॥≡)६पा.	१०००
नानाविध	४४५६४॥।–)९पा.	१०००
वार्तावह विभाग	४१९।–) ९ पा.	५००
काराविभाग	१९३३॥।)८पा.	१५००
वेतन बचा हिसाव	१८९२२।) ७पा.	१५००

विनिमय एवं सूद	२०९२७॥=)५पा.	२००००
विविध प्रकार	४६०९२॥=)८पा.	५०००
जोड़ साधारण आमदनी	२४९७१६६॥)५पा.	२५२७१७५

अतिरिक्त आमदनी।

सन् १८७९ ईसवीकी पहिली अगस्तसे सन् १८८२ ईसवी ३१ जौलाई तक लवणका शुल्क रहित करके उसके बदले-में बृटिश गवर्नमेण्टके निकटसे क्षति पूर्ण प्राप्ति-	४८०००	
२० वर्षके कारण जागीरदारियोंको माफ करके उक्त गवर्नमेण्टके निकट से क्षति पूर्ण प्राप्ति-	१५९०५	
सन् १८८१ ईसवीकी पहिली अगस्तका जेर	४४४८०७-)७ पा.	६३९०५
सब मिलाकर आमदनी	२९४१९७३॥=)	२५९१०८०

(व्यय)

	प्रकृत। ८१-८२ ईसवी	अनुमानिक ८२-८३
बृटिश गवर्नमेण्टको देय कर	३८४७२०	३८४७२०
जयपुरके महाराजको देयकर	१४३९७॥।-)	१४३९७॥।-)
महारावकी निज वृत्ति और रानवासका व्यय	१५७०००	१५७०००
पोलिटिकल एजेन्सी	३०२२२॥=)५ पा.	३०५९४
अश्वशाला	३३१६८) २ पा.	३९१००।-)
हस्तीशाला	१७३८९=) १ पा.	१४९७७॥)
गोशाला	७६६०॥=) ३ पा.	९८९३।-)
उष्ट्रशाला	९०१२	१०३६०
रांस खाना	६६७८।-	५२७९
खड़, घास, काष्ठ	६१४॥।=) ३ पा.	७८७॥)
अन्यान्य विभाग	६४५५॥) ३ पा.	८०२८=
कौन्सिलके-सभ्यगणोंका वेतन	१८०४८	१८०४८

आफिस खर्च और कर्मचारि-		
थोका वेतन	४६२६=)६ पा.	४८०५
(राजस्व विभाग)		
माल सरदार	१७२०९।।।)९ पा.	१७६९।।=
विजामत	१०११९२।≥	११३९०६
वनविभाग	४४९५।।।-)६पा.	६५५५=
छूट	७५३०५=	९००००
कानूनगो हक	३१२४।।।)५ पा.	४५००
शुल्कसग्रह विभाग	१६७०१≡)९ पा.	१९८८४
वार्तावह विभाग	५१९७≡	५२७३।।।)
हिसाव रक्षा विभाग	७०२६	७५९६
धनागार रक्षाविभाग	३९५८	५५२४
अम्वर	३५४४	३६०८।।)
टकशाल	८२१	१३२
अपील अदालत	६२१८	६५१६
दीवानी	४११५	४११९
फौजदारी	३९७६	४०८६
पुलिस विभाग	१३४०५।।।)१पा	१३५२७।)
थानासमूह	१४७४७।।।≡	१०५२८
ष्टाम्प विभाग	५४३।=)१प.	७००
(समरविभाग)		
कार्यालयका विभाग	८०७१।-	८१६०
गोलन्दाज दल	६०२६६।-)९ पा.	६१८९९।।
दुर्ग रक्षक सेनादल	३०८१६।) ६ पा.	२९१८९।।
नियमित अश्वारोहीदल	७३८९४।।।≡)९पा.	७५४२०
अनियमित अश्वारोहीदल	३१०४९≡	३१०५६
नियमित पैदल	७८४८१।।=	६९०६७
अनियमित पैदल	१३६५१७) १ पा.	१४१९८०।
वृत्ति	५००५।-	५६७४।।।=
पूर्वकार्य विभाग	३३०२२	२९११९६
काराविभाग	१४५६५।।)१ पा.	१५२२४।।
उद्यानविभाग	७२५४।=	८००७=
वन्दोवस्ती विभाग	४९०२९	३९५२८।।

वकीलोंका वेतन	८१७५॥=)१०पा.	८७०९।
धर्मसम्वन्धी और दातव्य	१३१११७) ९ पा.	५५००
पर्वोत्सव	६३०९॥	६६०३।=
विवाहका व्यय	५४१२।-)९ पा.	५५००
श्राद्धमें सहायता देना	३९५८।॥)	४००००
अतिथिसत्कार	१८३१= ९ पा.	२०००
नानाविध	३४८५।=) ६ पा.	३५००
सरंजाम	८९८९) १ पा.	९३७६
तकावी	१०	५००
अन्यान्य खर्च	४८०॥) ८ पा.	५००
शिक्षाविभाग	३९०४।≡	५४५५
चिकित्सा विभाग	१०२३८॥=)८ पा.	१०४६२
विनिमय शुल्क और सूद	८८२।-) ८ पा.	१०००
वकीयत	१२४८	१२४८
इजलाईका व्यय	१५७०	१९०८
जुरमाना प्रतिप्रदान	३३४६।=(३ पा.	२५००
लवणका कर नहीं लेनेसे सामन्तोंकी क्षति पूर्ण ...	... .	३१७५
भत्ता	६०००	७०००
अनेक प्रकारका व्यय	२५७५५=) ९ पा.	३५०००
घरका संस्कार	१००००=)	१००००
मेउ कालिजका वोर्डिंगहौस	२५०१४॥) ६ पा.	२५००
कुल साधारण व्ययका जोड़	२०५५३२२।-) २ पा.	२०५०७०२।-)
अतिरिक्त व्यय अजमेरका कैसरबाग उद्यानके वृक्ष वावड़ीकेबनानेका व्यय	६२२७॥-)९ पा.	
२०वर्षके कारण लवणके माप रहित करनेमें जागीरदारोंकी क्षति पूर्णऋणशोध	३३५११८) ७ पा.	१५९०५)
कुल व्यय	३३९६६६६=)६ पा.	२०६६६०७।-)
सन् १८८१ ईसवी ३१ जुलाई तक	५४५३०५।=)६पा.	
कुल	३९४१९७१॥=)	

जिस दिनसे बृटिश गवर्नमेण्टने कोटेराजधानीके दो भाग कर झालावाड़की राजधानी बनाई है, जिस दिनसे कोटेराजके वार्षिक पन्द्रह लाख रुपये आमदनीमेसे घट गये। उसी दिनसे कोटेके राजा महाराव रामसिंहजी अपने पैतृक पदके सम्मानकी रक्षा करनेसे ऋणी होगये। उनकी मृत्युके पीछे सामन्त मंडलीने जिस समय कोटेके शासन भारको लेकर राज्य चलाया उस समयमे भी ऋण बढ़ता गया। वर्तमान समयमें वह ऋण प्राय: दिया जाचुका है, यह बड़े संतोषकी बात है। पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है कि "ऋण चुकानेमें जो रुपये दिये जाते हैं वह व्ययके बीचमे नहीं गिने जाते। सन् १८८० और १८८१ ईसवीमे ऋण देनेवालेको असल और सूदके हिसाबसे ३३५११८) रुपये दिये गये हैं। आगामी ३१ जुलाईमे वर्तमान वर्षका जो शेष होगा उसमें ऋणके हिसाबमें चार लाख रुपये दिये जाँयगे। अतएव राज्यका ऋण चुकनेमें और प्राय: तीन लाख रुपये बाकी रहैंगे। राज्यको ऋणसे मुक्त करके अवश्य ही गवर्नमेण्ट धन्यवादकी पात्र होगी।

राज्यकी आमदनी बढ़ानेमे वर्तमान शासकोकी दृष्टि हो रही है। राज्यकी भूमिका नाप मानचित्र बनाकर उसके द्वारा पृथ्वीपर कर बढाया जाता है, पोलिटिकल एजेण्ट लेफटिनेण्ट कर्नल बेली साहब उक्त विषयके सम्बन्धमें लिखते हैं, कि "इस विषयका यथोचित उत्कर्ष साधित होता है, यह मैं खुशीके साथ सूचित करता हूँ; दश निजामत वा परगनोका नवीन राजकर निर्द्धारित हो चुका है, एवं उनमें नौ परगनोंसे नवीन राजकर वसूल होता है, दूसरे दो निजामत् वा परगनोका राजकर निर्द्धारित करनेका कामचल रहा है उसके समाप्त होनेपर और ३ परगनोका नूतन कर निर्द्धारित करना शेष रहैगा। उपरोक्त नौ परगनोके नूतन बन्दोबस्तसे वार्षिक ६४१६०) रुपयेका राजकर अर्थात् ५॥ रुपये सेकड़ा बढ़ाया हुआ आता है।" पंडित शिवबक्स इस बन्दोबस्ती विभागके अध्यक्ष हैं, उनके निरीक्षणमें पोलिटिकल एजेण्टको बड़ा संतोष है, इस नये बन्दोबस्ती विभागके व्ययके सम्बन्धमें पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है, कि" गत मार्चके अखीर तक इस बन्दोबस्ती कार्यमें कुल ३२७४१५) रुपये खर्च हुए हैं इसमेसे जरीफके कार्यमें ९३४८८) रुपये उठे हैं, जरीफका काम समाप्त होगया है"।

समस्त प्रजाके साथ न्यायका विचार हो इस बातपर बड़ा ध्यान रक्खा गया है सैयद जाफर हुसेन कोटेके सबसे प्रधान विचारपति है। उनके सम्बन्धमें पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है, " पहिली रिपोर्टमें मैंने सैय्यद जाफर हुसेनके सम्बन्धमे जो मन्तव्य प्रकाश किया था वर्तमान रिपोर्टमे भी उसी प्रकार संतोषके साथ प्रीति जनक मन्तव्य प्रकट करता हूँ।

× The Report of the political Administration of the Rajputana states 1882—83-

(१) वर्तमान अध्यायमें उद्धृत समस्त अंश सन् १८८२-८३ ईसवीके राजपूतानेकी शासन रिपोर्टसे लिये हैं।

वह बड़ी सावधानी और न्यायसे कोटेके सामन्तोंके अभियोगकी मीमांसा करते हैं। वह कोटेकी अपील अदालतके जजका काम भी करते हैं "।

पुलिस विभागकी रिपोर्ट देखनेसे राज्यके भीतरी शासनका यथार्थ हाल जाना जाता है। हम इसी स्थलपर कोटेराज्यके फौजदारी अपराधोंकी सूची प्रकाशित करते है।

कोटा राज्यके फौज़दारी अपराधोंकी सूची।

सन् १८८२–८३ ईसवी

अपराध	संख्या	अभियोग उपस्थित	पकड़े गये	दंड	मुक्ति	हरणकीहुई संपत्तिका मूल्य.	आदाय		
							पशु.	रुपये.	पशु.
हत्याकांड	२	१	६	१	५	...			
हत्याचेष्टा	४	३	३	१	२	...	३५	२१५)	०
अन्यभांति	२७	८	२१	७	१४	१५३१।=)।	१६	१७३।।।–)॥	१
पशुचोरी	७६	५२	१०२	७६	२६	...	४७४	०	३३५
अन्य विधचोरी	२६२	१५२	३०४	१८२	१२२	२१७५४।≡)॥	०	१९५०॥≡)।।।	०
आत्म हत्या	४७	२६	४७	३१	१६	...	...	...	...
विष प्रयोग	५	५	५	३	२	...	...	...	...
विशेष आघात	१७	११	१३	९	४	...	...	..	...
मनुष्य विक्रय	२	२	६	५	१	...	...	...	...
मनुष्य चोरी	२८	२१	५२	३०	२२	४५९)	...	...	...
भ्रूण हत्या	६	५	११	४	७	...	...	...	...
शिशुकन्या हत्या	१	१	१	१	०	...	...	...	..
जेलसे भागना	५	४	५	५	०	..	...	...	...
चोरीका माल लेना	१४	८	९	४	५	...	...	६२।–)॥	...
घरमें आग लगाना	३	२	३	२	१	...	...	...	...
अन्य अपराध	६२४	३११	५२७	३८४	१४३	१०२४।	१७	२५८॥)	१०
डकैती	७	१	१	१	०	२४९०।)।	...	...	..
	११३१	६१३	१११६	७४५	३७१	२७२५९।=	५४२	२६६९।=)।	३४६

लेफटिनेण्ट कर्नल बेलीने लिखा है, सन् " १८८२। ८३ ईसवीमे जो अपराध हुए है उन सबकी संख्या ११३१ है, अतएव पहिले वर्षके सब अपराधोकी संख्या १००७ के साथ मिलाई जाय तो इस सालकी कुछ अधिक जान पड़ती है। विशेष कर पशु और सामान्य चोरीके अपराध अधिक हुए हैं। पहिले वर्षोंकी अपेक्षा इस वर्षमे अनाज कम हुआ, इसीसे ऐसा हुवा, कारण लुटेरोंके दलने उक्त दशामें अधिक अपराध किये, इस राज्यकी सीमाके अन्तमे जैसे घोर भयानक और बड़े जंगल हैं उसमे ऐसे अपराधोंका एक साथ दूर करना कठिन है "।

गत वर्षमें डकैती हुई। पहिले वर्षमे नौ डाके पडे, यदि इसके कई वर्ष पहिलेके डांकोंकी संख्याके साथ तुलना की जाय तौ यह फल अवश्य ही संतोष जनक होगा, कारण कि पूर्व वर्षोंमें हिसावसे ५० से भी अधिक डाँके पड़े है "।

" ८ डॉकोमेसे ५ तो सामान्य हैं कारण कि उनमे अति सामान्य मूल्यकी सम्पत्ति नष्ट हुई है "।

हम इस वातको मुक्तकठसे कहते हैं कि कोटेराज्यकी डकैतीके दमन करनेमे पुलिसने वड़ी प्रशंसाका काम किया है। पहिले धनवान् प्रजा शंकित रहती थी अब पुलिसके कठोर शासनसे सब प्रजा निर्भय रहती है।

वर्तमान शासन समितिके तत्त्वावधानमे अन्य विभागोकी समान कोटेके जेल खानेकी अवस्था बहुत सुधर गई है। पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है, " नया जेलखाना वडा सन्तोषदायक वना है और आगरेके सेटलजेलके तत्त्वावधायकसे जो एक दारोगा प्राप्त हुआ है उसके द्वारा जेलखानेके समस्त कार्य वड़ी उत्तमताके साथ चलते है। कैदियोंका स्वास्थ्य अच्छा रहता है।

सन् १८८१ ईसवीमें इस नये जेलमे कैदियोंके आने पर उनका स्वास्थ्य जो अच्छा हुआ है वह नीचे लिखी सूचीसे जाना जासकता है।

सन्	१००० पर मृत्यु संख्या।
७९–८० ईसवी	९१
८०–८१	६२
८१–८२	२९–९६
८२–८३	१०

प्रतिदिन जेलमे औसतसे निम्न लिखित कैदी थे.

दण्ड प्राप्त कैदी–	२८४
विचाराधीन	२१

शिक्षा विभाग सम्बन्धमें उक्त रिपोर्टमे लिखा है कि वाबू यदुनाथ घोषके प्रबंधसे कोटेके विद्यालयने क्रमशः उन्नति पाई है। प्रतिदिन औसत २४६ विद्यार्थी उपस्थित होते है पहिले वर्षोंसे इनकी संख्या बढ़ी है, इससे राज्यसे मिले हुए गवर्नमेण्टके अधिकारी

प्रदेशोंके रहनेवाले मनुष्य शिक्षा विषयमें जितना मन लगाते हैं वैसा कोटेके रहनेवाले मन लगा कर नही पढ़ते ।

" कोटेराज्यके बीच एक प्रधान नगर बारनमें एक नया विद्यालय खुला है और साधारण मनुष्योंके लिये उसी भांति जिलास्कूल बनाये जारहे हैं " ।

"कोटेके विद्यालयके विद्यार्थी और शिक्षकोंकी संख्या नीचे लिखी जाती है " ।

	अंगेरजी विभाग	फारसी विभाग	संस्कृत विभाग	हिन्दी विभाग	कुल
विद्यार्थी	३८	१५२	२६	२०२	४१८
शिक्षक	२	४	१	४	११

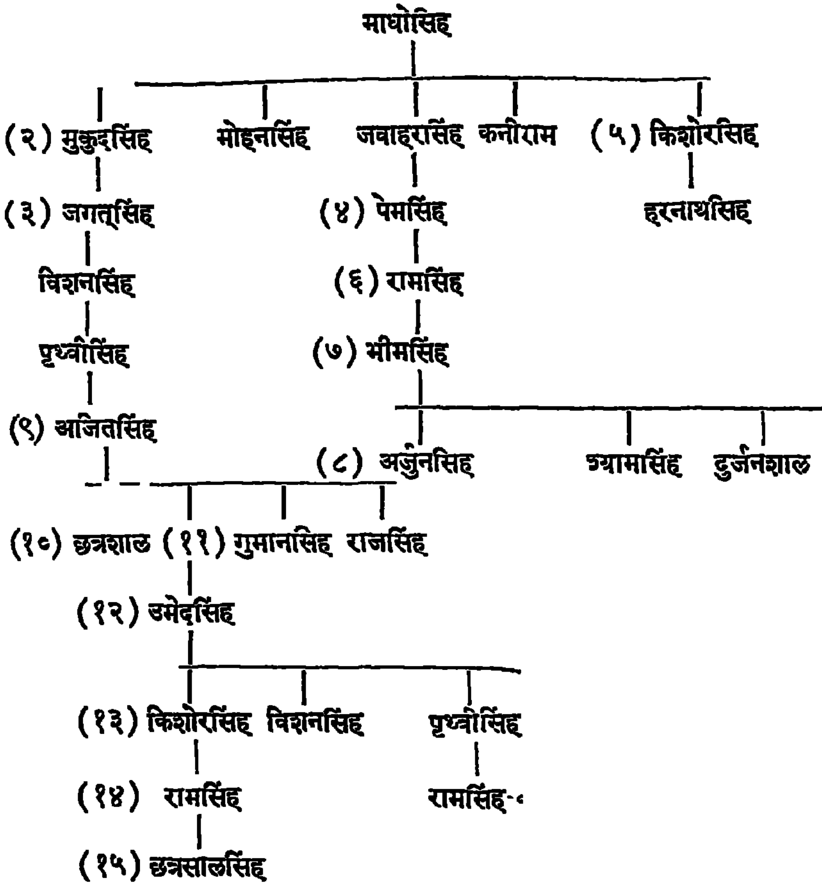
कोटेके पोलिटिकेल एजेंटकी यह बात यद्यपि हम मानते है कि कोटेके रहनेवाले मनुष्योका विद्योपार्जनमे बड़ा अनुराग नही है तो भी हम कहसकते है कि वर्तमान शासन समिति राज्यके भिन्न विभागके लिये जैसा व्यय निर्देश करती है, उसके, साथ मिलान करनेसे जान पड़ता है शिक्षा विभागका व्यय बहुत ही कम है। जातिकी उन्नति शिक्षा पर ही निर्भर है । उस स्थाई यथार्थ उन्नतिका साधन करना यदि वर्तमान शासन-समितिका वास्तवमे उद्देश हो तो शिक्षा विभागका व्यय शीघ्र ही बढ़ा देना चाहिये ।

कोटेराज्यका परिमाण पॉच हजार वर्ग मील है, अधिवासियोकी संख्या कुछ कम पॉच लाख है । सेनामें ४६०० पैदल, ७७०० घुड़सवार और ११९ तोपें है । सम्पूर्ण सेना आजकल महारावके तत्त्वावधानमें है ।

(कोटेराज्यका इतिहास समाप्त

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस-बंबई.

कोटेका राजवंश ।



---

* महाराज किशोरसिंहके बाद गद्दीपर बैठे ।

राजस्थान.

दूसरा भाग.

कर्नल टाडका भ्रमणवृत्तान्त.

॥ श्रीः ॥

राजस्थानका इतिहास.

दूसराभाग २.

कर्नेल टाडका भ्रमणवृत्तान्त ।

प्रथम अध्याय १.

उदयपुरसे यात्रा–खैरोदाका सर–मानदेश्वरका प्राचीन मंदिर–भारतीवार–वहांके जैनमंदिर–खैरोदा–मेवाडके आत्म विद्रोह सम्बन्धकी कहानी–संग्रामसिंहकी वीरता–उनका खैरोदा लाभ–संग्राममें दत्तकपुत्र जयसिंह–विलायतमें राजनैतिक संधिबंधनके समय दोनों ओर धीरता प्रकाश करना–खैरोदाके कृषिवाणिज्यका विवरण–हिन्ता–धर्मके आशयसे बहुत विस्तारित पृथ्वीका देना–देवताके निमित्त अर्पित पृथ्वीमें हिन्ता और दूदियाका स्थापन–राजा मान्धाता–उनके सम्बन्धी प्रवाद–अश्वमेध यज्ञ–उनके द्वारा ऋषियोंको माहूनाद देश मिलना–महाराष्ट्रोंके विरुद्धमें राजसिंह की वीरता प्रकाश करना–मेवाड़के राज्यकी सीमा–मसवन–कर्नेल टाड साहबके हृदयकी कथा—

कर्नेल टाड् साहबने राजस्थानके समस्त इतिहासको वर्णन करनेके पीछे स्वयं अपने भ्रमण वृत्तान्तको भी वर्णन किया है, और उसी भ्रमण वृत्तान्तकी समाप्तिके साथ यह बड़ाभारी इतिहास भी समाप्त किया गया है। दयालु पाठकगण धीरे २ हमारा अनुसरण करके इस समय इस विशाल इतिहासके शिखरकी अंतिम चूड़ापर पहुँच गये हैं। इस अंतिम स्थानमें हमारा अंतिम अनुरोध यही है कि पाठकगण किञ्चित् धैर्य धारण करके इतिहासरूपी कल्पवृक्षके शिखरपर पहुँच कर अमृतमय संतोषरूपी फलको प्राप्त करनेमें समर्थ होंगे और उसके साथहीसाथ हमारा भी परिश्रम सफल होगा, और पाठक भी अपने समयको सफल हुआ जानेंगे—हमारा यही आन्तरिक अनुमान है।

राजस्थानके प्रथम कांडमें कर्नेल टाड साहबने तथा मारवाड़में जाकर वहाँसे लौटकर रजवाड़ेके अनेक देशोकी प्राकृतिक, सामाजिक, ऐतिहासिक, राजनैतिक और शासन सम्बन्धी कहानी पाठकोंको विदित कराई थीं। इतिहासवेत्ता कर्नेल टाड् साहब उक्त भ्रमण समाप्त करनेके पीछे सन् १८२० ईसवीकी २९ जनवरी तक उदयपुरकी राजधानीमे रहकर विशेष राजनैतिक घटनाओंके होनेसे बूँदी और कोटेराज्यको चले गये। बूँदी और कोटा इन दोनो राज्योंके राजनैतिक विषयोंके देखनेका भार गवर्नमेण्टने

इनके हाथमें सौंप दिया था। कोटा और बूँदीराज्यमें कर्नल टाड् साहबके पहले और कोई अङ्गरेज नहीं गया था। इस स्थानसे हम कर्नल टाड् साहबके अनुगामी हुए।

" उदयपुर—२९ जनवरी सन् १८२० ईसवीमें यद्यपि हम उदयपुरमें जाकर वहाँ एक महीने भी विश्राम न करसके, तथापि शीतऋतुके आते ही भारतवर्षकी प्रकृतिने अत्यन्त आनन्ददायक मूर्ति धारण की, हमारे हृदयमें उसी समय भ्रमण करनेकी अभिलाषा हुई। अंग्रेज लोग भारतके प्रचंड ग्रीष्ममें तथा कष्टदायक वर्षाऋतुके विशेष क्लेश भोगनेके पीछे, शीतऋतुको स्वास्थ्यके लिये उपयोगी और सुखदायक मानते हैं।

खैरोदा–२९ जनवरीको हमने तूप शिखरसे चलकर छः कोशपर जाय खैरोदाके विस्तारित्त हृदके किनारे डेरे डाल दिये, हम जिस मार्गसे होकर आये थे वहाँकी भूमि उत्कृष्ट और भलीभांतिसे जलयुक्त थी। परन्तु बहुत समयसे वहाँ खेती नहीं हुई। दुवोंक नामक स्थानसे डेढ़ मील दूरीपर हम वैरस नदीके पार हुए, दोरौली नामक ग्राममें उस नदीसे एक स्रोता निकल कर एक झील अथवा तालाबके आकारकी समान हो गया है। उस नदीके किनारे मानदेश्वर नामक महादेवका एक अत्यन्त प्राचीन मन्दिर विराजमान है। उस मन्दिरके गठनकी रीति देखनेसे उसकी प्राचीनताका अनुभव किया जा सकता है। यह आबू शिखरके समीप चन्द्रावतीके प्रसिद्ध मन्दिर के सामने बना हुआ है, और इससे यह प्रवाद वाक्य प्रमाणित होता है कि पूर्व-कालमें सर्वत्र ही मन्दिर एकभावसे बना करते थे और यह रीति अचल थी।

हम दक्षिणसे आध कोश दूर सूरजपुराकी सरायको लांघ कर भारतीवारके दल-दलमें फँस गये, यह नगर चारोंओर जलभूमि पूर्ण है, मेवाड़के सोलह जनोंमें सबमें प्रधान कनोराके सामन्त इस नगरके अधीश्वर है; और यह नगर अत्यन्त प्राचीन कह-कर विख्यात है। ऐसा प्रगट है कि राजा विक्रमाजीतके बड़े भाई भर्तृहरिने इस नगर की प्रतिष्ठा की थी। यहाँ ऐसा प्रवाद प्रचलित है कि एक समय इस नगरमें सातसौ पचास (७५०) जैन मन्दिर थे, और एक साथ ही सबमें घंटा बजता था। मन्दिरोंमेंसे टूटे फूटे कुछेक मन्दिर पाये जाते है और उनको देखनेसे उनकी प्राचीनताका सरलता से अनुभव होता है, परन्तु साबित मन्दिर कोई भी नहीं है। खैरोदाके आधकोश पीछे हम खेरसना नामक ग्राममें गये, वह ग्राम ब्राह्मणोंके अधिकारमें था इसीसे यह ब्रह्मोत्तर कहाता है।

खैरोदा एक समृद्धिशाली स्थान है; चारोंओर गढ़ किला है, तथा उस गढ़के बाहर दो खंदक हैं, उन दोनों खातोंमें इच्छानुसार नदीका जल भरा जा सकता है। मेवाड़की प्राचीन राजधानी चीतौड़ और नवीन राजधानी उदयपुर इन दोनोंके सम मध्य स्थानके ऊपर यह खैरोदा और किला स्थापितहै, मेवाड़के आत्मविद्रोहके समय इसी स्थान पर विवाद विसम्वाद हुआ करता था। सन् १७४८ ईसवीमें जिस समय मेवाड़में भयंकर आत्मविद्रोहकी आग भड़क उठी थी, उस समय शक्तावत् संग्रामसिंहके पोष्य पुत्र और लावाके रावत जयसिंह जो उस विद्रोहके एक प्रधान नेता थे, उन्हींके अधीनमें

यह देश था। इस देशको विशेष आय मूलक जानकर और विशेषप्रयोजनीय स्थानमें स्थापित होनेके कारण इस देशको किसी सामन्तके हाथमें विश्वास पूर्वक अर्पण करना उचित न विचार कर अब यह महाराणाके ही अधीनमें है। परन्तु लावाके सामन्तने ४ मईके संधिपत्रमें * बहुतसी आपत्तियों के पीछे हस्ताक्षर करके यह खैरोदाका किला जो उनके कुटुम्बियोंके रक्तपातसे उनके हस्तगत होगया था वह महाराणाको अत्यन्त अनिच्छासे लौटा दिया।

खैरोदाके इतिहासमें मेवाड़के आत्मविवादका उत्कृष्ट चित्र अंकित पाया जाता है। उस आत्मविवादमे मेवाड़की श्रेष्ठ सम्प्रदायके शक्तावत् संग्रामसिंह और चन्द्रावत् भैरोंसिंहकी ओरके बहुतसे वीर मारेगये। सन् १७३३ईसवीमें संग्रामसिंह जिस समय अल्प वयस्क युवक थे उनके पिता श्योगढ़के रावतलालजी उस समय जीवित थे, उस समय उन्होने अपने अधीश्वर राणाके अधिकारसे खैरोदाको छीन लिया और क्रमानुसार ६ वर्ष तक अपने शासनके अधीनमें रक्खा। सन् १७४० ईसवीमें देवगढ़ आमोत कोरावर, इत्यादि शत्रुपक्षकी सम्प्रदाय सामन्त अपने नेता सालूंवरके सामन्तोंके अधीनमें जाकर महाराणाके दीपरा मंत्रीके साथ शक्तावत्को उक्त खैरोदासे भगानेके लिये इकट्ठे हुए। शक्तावत् नेताने चार महीनेतक उन आक्रमणकारियोके हाथसे किलेकी रक्षा कर अन्तमे एक समय किलेकी चोटीपर एक संधि प्रार्थनाकी सूचना देनेवाली सफेद् पताका उड़ा दी, इस प्रकारसे वह किलेको समर्पण करनेके लिये तैयार हुए। वह अपने सेवक और कुटुम्ब तथा धन सम्पत्तिको लेकर शक्तावतोकी राजधानी भींदर नामक स्थानको चले गये। शत्रु उनका कुछ भी अनिष्ट न करसके, अवरोधकारियोंके उक्त प्रस्तावमें सम्मत होते ही श्योगढ़के उत्तराधिकारी संग्रामसिंह भींदरमें जा पहुँचे। इन्होंने वहाँ जाकर अपने शत्रुओंका नाश करनेके लिये संहारमूर्तिसे चारोंओर महा उपद्रव और अत्याचार करने प्रारम्भ करदिये। उसके सम्बन्धमें मेवाड़मे बहुतसे प्रवाद और गल्प आजतक प्रचलित हैं। इन्होंने एक समय गुरलीनामक स्थानमें जाकर वहांके समस्त पशु और निवासियोंको बन्दी करालिया। कोरावरके सामन्तके पुत्र जालिमसिंह उक्त स्थानके निवासियोंकी सहायताके लिये गये। परन्तु संग्राममें भयंकर भालोंके आघातसे उनके प्राण नष्ट होगए। उनकी इस मृत्युका बदला लेनेके लिये उस देशके प्रत्येक चाँदावत सालूंवरके सामन्तोंकी पताकाके नीचे इकट्ठे होनेलगे। महाराणाने स्वयं उन चन्दावतोंके पक्षका अवलम्बन कर अपनी वेतनभोगी सेन्धवीसेनाको शीघ्र ही भेजा और उसने तुरन्त ही भींदरको जा घेरा। जिस समय भींदरपर आक्रमण किया था, उस समय कोरावरके सामन्त अर्जुन सिंहने अपने पुत्रनाशका बदला लेनेके लिये अचानक वहाँसे श्योगढमें जाकर वहाँ अधिकार कर किलेमें रहनेवाले प्रत्येक स्त्री पुरुषका प्राण नाश किया। खैरोदा कई वर्षतक महाराणाके खास अधीनमें था, अन्तमें उन्होंने परिणामको न विचार कर झगडेका मूल कारणस्वरूप वह किला मदेसरके चंदावत सामन्त सरदारसिंहको देदिया।

(१) प्रथम काण्डमें यथास्थान प्रकाशित होचुका है।

संवत् १७४६ में चंदावत् सरदार महाराणाके विरुद्धमें विद्रोही होनेसे उनकी कोपदृष्टिमे पड़कर पग २ पर अपमानित हुए। उनके चिरशत्रु शक्तावत् उस अवसरमें भींदरके सामन्तोंके नेताके अधीनमें अपनी २ सेनाके साथ हो जो सेन्धवांसेना उस किलेमें रक्खी थी उसके निकालनेके लिये इकट्ठे हुए। कोरावरके सामन्त अर्जुनसिंह, उस समय सेन्धवीदलके नायक कुलीखांके साथ किलेमेंकी सेनाकी सहायता करनेके लिये गये। किलेके समीप ही प्रबल समरानल प्रज्वलित होगई। उस संग्राममे अपने हाथसे कोरावरके दो अधीन सामन्त सीकरवाल गोमान और राणावत् भीमजीका प्राण नाश किया गया। परन्तु अंतमें चांदावतोने ही रणक्षेत्रमें जयलक्ष्मीका आलिगन किया, शक्तावत् शीघ्र ही भींदरसे चले गये। इस समय कोटेके जालिमसिंह जिन्होंने इन दोनों सम्प्रदायोमे वैरभावको भलीभांतिसे प्रज्वलित करादिया था, जिन्होने इस विवाद करती हुई दोनों सम्प्रदायोके हाथसे अन्तमें स्वयं उस किलेको अपने हस्तगत करनेका विचार किया था, उन्होंने इस समय शक्तावतोंकी सहायता करनेके लिये एक दल अश्व सेनाका भेज दिया। शक्तावत् उनके साथ मिलकर फिर चांदावतोंपर आक्रमण करनेके लिये धावमान हुए। चांदावत इस समय अकोलाके समतलक्षेत्रमें स्थित थे, वह शीघ्र ही रणक्षेत्रमे जा पहुँचे, परन्तु अंतमें परास्त होगये। उस समय सैन्धवी सेनाके नायकके मरते ही सेना छत्रभंग होकर भाग गई। संग्रामसिंह शत्रुओके विरुद्ध में उस समर तथा अन्यान्य युद्धोमे नायक वने इसीसे उनके शरीरमें तीन स्थानोंमे भयंकर आघात लगे। परन्तु वह उस भयंकर आघातोसे किञ्चित् भी दुःखित न हुए, वरन उन्होंने राणाके समीपसे अधिक सम्मान पाया, और शत्रु चांदावतोंको भगा दिया। इस प्रकारसे उस युद्धके पीछे खैरोदाका किला संवत् १७५८ सन् (१८०२ई.) तक महाराणाके अधीनमें था, इसके पीछे संग्रामसिंहने दशहजार रुपया महाराणाको भेटमें देकर उस किलेको अपने अधिकारमे कर लिया। सन् १८१८ ईसवीमें जिस समय हम (गवर्नमेण्ट) महाराणा और उनके सामन्तोंमें संधि स्थापन और मध्यस्थता करनेमे नियुक्त हुए उस समय तक उक्त खैरोदाका किला शक्तावतोंके असीम साहस, वीरता और जयचिह्नस्वरूपसे उनके अधीनमे था। संग्रामसिंहके पोष्य पुत्र लावाके रावत जयसिंहने उस समय खैरोदाके किलेको महाराणाको देनेमें असम्मति प्रकाश की, यह कुछ आश्चर्यकी वात नहीं है। वह यहाँतक आगे वढ़े कि उन्होने किलेकी दीवारके नीचे सेनाको इकट्ठा करनेकी आज्ञा दी। और जिससे उनमें का कोई भी मनुष्य किलेके वाहर महाराणाकी ओरके किसी मनुष्यके साथ वात चीत न करै, ऐसा भी प्रवन्ध किया गया। अत्यन्त सूक्ष्म कारणके उपस्थित होनेपर दुर्गके घेरने और अधिकारके उद्योगसे उस समय मेवाड़के समस्त चांदावत् आनन्दित हो इनके समीप सहायक हो आये थे। और जिस समय महाराष्ट्रोंके अत्याचार उत्पीड़न तथा राज्यग्रासके मुखसे मेवाड़का उद्धार किया था उस समय फिर प्राचीन शत्रुताकी अग्नि प्रज्वलित होगई थी।

परन्तु जिस समय यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया था, उस समय खैरोदाके अधीश्वर जयसिंह आप उदयपुरकी राजधानीमें महाराणाके यहाँ उनके अनुचर स्वरूप

से रहते थे। यदि जयसिंहका कोई सेवक किलेके बाहर जाकर महाराणाकी ओरके मनुष्यके साथ साक्षात् करता तो जयसिंहकी सेना अवश्य ही उसकी हत्या करदेती। यद्यपि हमारे विचारसे जयसिंह उस समय महाराणा और वृटिश गवर्नमेण्टके समीप विद्रोही रूपसे गिने जाते थे परन्तु उस समय कोई कार्य भी विद्रोहकी सूचना करने वाला नहीं हुआ तथा राणा और रावत दयालु अधीश्वर एवं राजभक्त सामन्त भावसे रहते थे, अन्य किसी प्रकारका विरुद्धभाव दिखाई नहीं देता था। उक्त खैरोदाके किलेको हस्तगत करनेका कार्य सरलतासे होजाय, इस प्रस्तावसे मीमांसाका भार राणा और रावतके पक्षके कामदार वा प्रतिनिधियोंके हाथमें सौंपा गया। उन प्रतिनिधियोमेंसे किसी प्रकारका विरुद्ध ज्ञापक व असंतोषदायक आचरण दृष्टि नहीं आया, वरन सरलता से मीमांसा होनेकी आशा दृष्टि पड़ी थी। एशियाके निवासी सूचना और उसकी परिणतिमें समयको विवादवाला नहीं जानते, परन्तु शीत प्रधान देशके मनुष्य उसे वैसा जानते है। किसी प्रकारके विवाद विसम्वादकी मीमांसाके समय एशियावासी अधिक धीरता प्रकाश करके अपनी मर्यादाकी रक्षा करनेमे खूब शिक्षित है।

खैरोदादेश मेवाड़की प्रथम श्रेणीके खालिसा विभागका एक पट्टा वा उपविभाग है। छोटे २ ग्रामाके अतिरिक्त इसमें १४ शहर भी हैं इन सबके उप विभागका वार्षिक १४५०० रुपया राजकर है, एकमात्र खैरोदाका वार्षिक राजस्व ३५०० रुपया है।

यहाँकी भूमि साधारणत. तीन श्रेणियोंमें विभक्त है (१) पेविल भूमि, कूपोदकसे इसका कृपिकार्य होता है, (२) गुरसाभूमि, इसमे भी जल सींचा जाता है (३) मार वा मालभूमि, इसमें खेती वर्षाके जलके विना नहीं होती। यहाँ केवल दो ऋतुओ मे धान्य उत्पन्न होते हैं। पहिले उनालू, अर्थात् ग्रीष्म कालीन धान्य, दूसरे शीयालू वा शीतकालीन धान्य। प्राचीन हिन्दूशासनकी समान महाराणा यहाँका भी कर स्वरूपमे उस उत्पन्न हुए धान्यमेंसे अपना भाग लेते हैं। ग्रीष्मकालमे गेहूं, जौ, चना उत्पन्न होते है। सौ सौ मन करके रीति अनुसार उसका भाग कर खलिहानमे जमा होता है पीछे उसे २५ मनसे चार भागोमे विभक्त किया जाता है, उन चारो भागोमेंसे प्रथम ग्रामके समस्त मनुष्योको जो मिलता है वह उनसे मनके ऊपर एक २ सेर करके लेते है। (१) पटेल वा ग्रामाध्यक्ष (२) पटवारी वा हिसावरक्षक (३) साना वा प्रहरी (४) वुलाई वा सम्वाद वाहक एवं साधारणतः पशु पालके, (५) काछी सूत्रधर (६) लुहार वा कर्मकार (७) कुंभकार (कुम्हार) (८) रजक (धोबी) (९) चमार और (१०) नाई इन दश मनुष्योंको मन पीछे एक सेरके हिसावसे प्रत्येकको २॥ मन करके धान्य मिलता है, तव मूल चार अंशोमेंका एक अंश उठ जाता है। शेष तीन अंशोंमेका एक अंश (२५ मन) राजमे करस्वरूपसे लिया जाता है। बाकी दो भागोमेसे युवराजके नामका दो मन दिया जाता है, और शेष समस्त धान्य

(१) जो मनुष्य समस्त ग्रामके पशुओंको चराता है, तथा जिससे पशु खेतका अनिष्ट न करें वह उस विपयमें दृष्टि रखता है।

किसानको मिलता है, उक्त ग्रामके दश मनुष्योंको जो धान्य मिलता है अल्पकालसे उसके ऊपर भी हस्ताक्षेप किया गया है, प्रत्येक मनके ऊपर तीनसेर काट लिया जाता है। युवराजके नामका एकसेर राणाके प्रधान अश्वपालके नामका एक सेर, एवं मोदी अर्थात् शस्यरक्षा विभागके अध्यक्षके नामका एक सेर लिया जाता है। वह समस्त धान्यही राजाके यहां भुक्त होता है। इसके पहिले जैसा चार अंशोंमेंका एक अंश राजाको मिलता था, इस समय उसके वदलेमें दश अंशोंमेंका तीन अंश मिलता है, परन्तु धान्य कटनेके पहिले ग्रामके मनुष्य और एक वार धान्य ले जाते हैं, जो धान्य वोते हैं वह भी दो तीन सेर लेते हैं।

शीयालू वा शीतकालमें मकाई, ज्वार, और वाजरा उत्पन्न होता है उसके विभाग का कार्य निम्नलिखित प्रकारसे किया जाता है। प्रति सौमन पर ४० मन राजाका करस्वरूप रखकर उक्त ग्रामके दश मनुष्योंको मनपर एक २ सेर देकरवाकी जो वचता है वह सव किसानको मिलता है।

गन्नो, रुई, नील, अफीम, तमाखू, तिल इत्यादिकी खेती भी यहां होती है, इस परसे नियमित रुपया करस्वरूपमें लिया जाता है। प्रति वीघेके ऊपर दो रुपयेसे दश रुपयेतक कर लिया जाता है।

हिन्ता–३१ जनवरी। जिस माल शब्दसे इस देशका नाम मालवा हुआ है। उसी माल नामक श्रेष्ठ कर्षण की हुई भूमिके ऊपरसे होते हुए तीन कोश लांघकर हम आगये। हम सूर्य भगवानके उदय होनेसे वहुत पहिले घोड़े पर सवार हो वाहर हुए,

वह प्रभात कालीन पवन जैसी शीतल थी वैसी ही आनन्ददायक थी इस समय किसान खेतमें गेहूँ, जौ, चनें इत्यादि नवीन श्यामल शस्यको देखकर हँसते हुए विचार रहे थे कि अवकी वार भगवानने दयालु होकर खेती वहुत अच्छी की है; अव इसका कोई कुछ अनिष्ट नहीं करसकेगा। ग्रामकी कुटियां सव नवीनतासे छागई थीं। नवीन दीवारें इत्यादि निकले हुए ग्रामवासियोंके फिर आगमनका परिचय देरही थीं। उससे हमारे अभिनन्दनके साथ हमारे कल्याणकी कामना तथा हर्ष और विषादित नेत्रोंसे देख रही हैं। खैरोदाके उपविभागके अधीन हम अमरपुरा नामक छोटे ग्राममें गये। हमारी वांई ओरको मानियास नामक शहर दिखाई पड़ा। एक सम्प्रदायने ब्राह्मणके अनुशासनपत्रके

---

(१) इस प्रान्तमें गन्नेकी खेती वड़ी अनिश्चित है और इससे किसानोंको लाभके वदले हानि होती है। अव्वल तो इसकी फसल पूरे सालभरमें तैयार होती है यानी जिस जमीनमें अफीम या साधारण अनाजकी दो फसलकी पैदावार होजाती है वहॉ गन्नेकी केवल एक फसल तैयार होती है दूसरे सरकारी मालगुजारीके ठेकेदारोंके ऊपरी लागान और जमीजोतके महसूलके कारण गन्नेकी खेतीमें किसानको सदा हानि उठाना पड़ती है। यानी एक वीघा पर लगान जमीन निंदाई गुडाई वीज, वैल और किसानकी खवाई, खुराक, गन्नेकी कटाई आदिका कुल खर्च २३८ रु० होता है तो प्रति वीघा ज्यादासे ज्यादा २० मन गुड़ तैयार होनेपर फी रुपया १० सेरके हिसावसे कुल २००) की आमदनी होती है।

अनुसार उस नगर पर अधिकार किया है। यह स्थान मेवाड़के राणावंशके " पूर्व पुरुषोंके न्यायदान सोण्डताका " उत्तम रूपसे प्रमाण देता है। राणाके अधिकारकी पांच हजार वीघा श्रेष्ठभूमि समाजके अकर्मियोंको वंशानुक्रमसे भोगनेके लिये दी है। यद्यपि ऐसा जाना जाता है कि त्रेतायुगमे राजा मान्धोताने पवित्र उपनिवेशमें ब्राह्मणोंको स्थापन किया था, एवं उस सम्प्रदायमें केवल २५ परिवार विराजमान हैं, परन्तु वह कुटुम्ब आजतक उस भूमिमे कृषिकार्य नहीं करता, वह खाली पड़ी है, परन्तु वह सब भूमि जप्त नहीं होसकती ऐसा करनेसे साठ हजार वर्ष नरकमें रहना होगा, यह वास्तवमें सुखकी बात नहीं है, और जो मनुष्य इस पर विश्वास करते हैं उनके जीसे यह बात हटानी बड़ी कठिन है, देवोत्तर भूमिग्रहणके महापापसे मुक्तिलाभ करना राजपूत आत्माके पक्षमे बड़ी ही कष्टदायक बात है ?

परन्तु मैं देखकर अत्यन्त आनन्दित हुआ कि शक्तावत् सम्प्रदायके कई परिवारोंने अपने वंशकी वृद्धि होनेसे स्थानके न मिलनेसे विदेशमे वास करनेके लिये जानेके बदले मे उक्त नरक वाससे भयभीत न होकर उक्त देवोत्तर भूमिके ऊपर हिन्ता और दूंदिया नगर स्थापन किये हैं[२]।

"प्रत्येक सम्प्रदायके प्रत्येक प्रकारके स्वार्थ रक्षा करनेके अभिलाषी होकर मैंने यह प्रस्ताव किया कि यदि महाराणा ब्राह्मण परिवारके प्रयोजनके अनुसार भूमि इनके अधीनमें रखकर शेष सब भूमिको राज्यके अधिकारमें कर लेते तो उसका जो कुछ पाप है अथवा भविष्य दंडके भारको मैं अपने शिरपर ग्रहण करनेको तैयार हूँ। मैंने प्रस्ताव किया कि उत्कृष्ट एक हजार वीघा भूमि उन ब्राह्मणोंको दीजाय, उनको केवल गौ आदि पशु देकर ही काम न चल सकेगा वरन उनको खेती करनेके लिये प्राचीन कूपोंके समस्त संस्कार और नवीन कुएँ भी खुदवा देने होंगे। इस समय एक ज्योतिषीजी राणाकी सभामे बैठे थे और वह कुछ वैद्यक भी जानते थे, ब्राह्मण वंशमे इनका जन्म हुआ था इसी कारण उन्होंने मानियार कारके स्वजातीय ब्राह्मणोंके स्वार्थ की रक्षामें दृढ़ सहायता की परन्तु मानियारके ब्राह्मण उक्त भूमिके दानके कारण प्राचीन ताम्रके अनुशासन पत्रको उपस्थित न करसके"।

कर्नेल टाड् साहबने इसके पीछे लिखा है, कि राजा मान्धाता जिनका नाम इस देशमे अक्षय वर्तमान है वह प्रमार जातीय और मध्य भारतवर्षके राजा थे। धार और उज्जयनी उनका राजधानी थी। यद्यपि किसी समयमे कोई मनुष्य उनको नहीं जान सके थे परन्तु प्रवादसे सबने उनको विक्रमादित्यका पूर्ववर्ती कहा है। विक्रमा-

(१) राजा मान्धाता युवनाश्वके पुत्र थे। यह त्रेतायुगके आरंभमें हुए, इनका दूसरा नाम त्रसदस्यु भी था। इनको लवणासुरने मारा.

(२) विजातीय टाड् साहबने इसमें आनन्द प्रकाश किया तो था, परन्तु यथार्थ हिन्दू इससे व्यथित हुए थे। जिन शक्तावतोंने देवोत्तर भूमिको अपने अधिकारमें करलिया था उन्होंने कभी क्षत्रीधर्मका पालन नहीं किया, इससे वह अवश्य ही ब्राह्मणस्व हरणके अपराधी हैं।

जीतका संवत् समस्त भारतवर्षमें प्रचलित है । नर्मदाके किनारे बहुतसे स्थानोंमें उनकी अधिक कीर्ति विराजमान है । प्राचीन कालमें चित्तौर और उनके अधीनके समस्त देश धारराज्यके अन्तर्भुक्त थे । इन देशोंके समस्त स्थानोमें उन प्रमारोंके एकाधिपत्यके बहुतसे प्रमाण विराजमान है । और जिस देशसे होकर मैं यहाँतक आया हूँ , पुरातन तत्त्वके जाननेवाले यहांके बहुतसे प्राचीन ऐतिहासिक तत्त्वको सरलतासे संग्रह कर सकेंगे । हिन्ता और दूदा इन्ही दोनों देशोंके साथ मान्धाता नामका संश्रव देखा जाता है । महाराजा मान्धाताने ढूंढिया नामक स्थानमें बड़ी धूमधामके साथ अश्वमेध यज्ञ किया था। उस स्थानपर आजतक वह यज्ञकुण्ड देखा जाता है । हिन्ता के दो ऋपि उस यज्ञकार्यमें नियुक्त हुए थे । राजाने पहिले उनको धन दिया, उन्होंने धन लेना स्वकिार नहीं किया । परन्तु उन्होंने जिस समय राजासे विदा ली उसी समय राजाने बड़ी चतुरताके साथ विदाईके ताम्बूलके साथही साथ मीनारदेशका अनुशासन पत्र उन ऋषियोके हाथमे दिया । यद्यपि ऋपियोने अयाचित होकर भी उस दानपत्रको ग्रहण किया था, परन्तु उस दानके लेते ही उनकी पवित्रता एक वार ही नष्ट होगई और इतने दिनोंतक उन्होंने जिस पवित्रताके वलसे इन्द्रजालिक कांड किया था उनकी वह सामर्थ्य भी लोप होगई । पाठक गण क्या आप उस इन्द्रजाल सम्बन्धीय किसी विवरणके जाननेकी इच्छा करते है ऋपियोंने स्नान करनेके पीछे अपनी धोतीका जल निचोड़ कर उसे मस्तकके ऊपर शून्यमार्गमें वायुके ऊपर फैला दिया था। वह उसी भावसे रहकर सूर्यकी किरणोंसे उनकी रक्षा करती थी । उक्त दोनों ऋपियोंके उस सामर्थ्यके लोप होते ही उनके वंशधर कृषिकार्य करने लगे । उनके उत्तराधिकारी आजतक उक्त मीनारदेशके स्वत्वाधिकारीरूपसे रहते है । और वड़े चौवीसा अर्थात् वड़े चौवीस नामक स्थानोंमें विस्तीर्ण हुए हैं " ।

कर्नल टाड् साहबने जो इन्द्रजाल इत्यादिका उल्लेख किया है उसके सम्बन्धमें कुछ कहनेकी आवश्यकता नही है । कारण कि यहांके शिक्षित मनुष्य जव योगकी वातोंपर हंसते हैं तथा योगवलसे जिन ऋपि मुनियोंने अनेक असाध्य कार्य साधन किये है उस पर वह विश्वास नहीं करते तव विजातीय टाड् महोदयने जो उस विपयमें उपहास कर योगक्रियाको इन्द्रजाल कहा तो इसमे क्या आश्चर्य है? परन्तु कर्नल टाड् साहवने जो प्राचीन अविश्वास प्रवादको सुनकर उक्त मन्तव्यको वर्णन किया है, उसमें कुछ संदेह नहीं । दोनो ऋपियोने अयाचित होकर ताम्बूलके साथ भूमिका दानपत्र ग्रहण किया था इसीसे उनका तप और योगवल नष्ट होगया, इसका कौन विश्वास करसकेगा ? हमारे टाड् महोदय अनेक स्थानोंपर इस प्रकार प्रवादके ऊपर विश्वास करके महा भ्रममे पड़े है ।

---

(१) मान्धाता नामके दूसरे राजा प्रमारवंशमें होगये हैं । इनका वर्णन धार देवासकी वंशावलीमें लिखा है । धारके अधीश्वर प्रमारवंशी क्षत्री हैं और वे अपनेको शकाब्द राजा विक्रमादित्यकी ही शाखामें प्रमाणित करते हैं । धारराज्यके व्यवस्थापकका नाम सावूसींग प्रमार था.

इतिहासवेत्ता टाड् साहबने इसके पीछे लिखा है कि "आज प्रातःकालकी यात्राके समय हम वामोनियो नामक ग्राममें गये। उस ग्राममे एक परम रमणीक सरोवर है उसके चारोंओर पत्थरकी दीवारोंकी कतार लग रही है। उस ग्रामके अधीनमे चार हजार वीघे जमीन है। पहिले यह राणाके खास अधिकारमें थी। परन्तु महाराष्ट्रोंके आक्रमण तथा राणाकी सामर्थ्य घटनेके समय यह दूसरोंके अधिकारमे चली गई और यह स्थान अत्याचार और उपद्रवोंके होनेसे जनशून्य होगया था, इसकी ओर देखातक नहीं जाता था। इस समय यह मोती पाशवान नामकी राणाकी एक प्रिया उपपत्नीके अधिकारमें है। मोतीने कहा है कि वह उसके पास गिरमी रक्खा गया है। परन्तु कौन आईन मत वंधक दानका अधिकारी है जो उसको वह नहीं दिखा सकती।

यह हिन्तादेश आत्मविद्रोहके समय एक विख्यात स्थान था। यह स्थान इस समय अधीनस्थ शक्तावत् सामन्तोंके अधिकारमें है। संवत् १८१२ मे जिस समय 'सत्वा' नामक महाराष्ट्रनेता दश हजार महाराष्ट्रोंकी सेना लेकर मेवाडपर अधिकार करनेके लिये आये थे। उस समय इस हिन्तादलके वीरश्रेष्ठ राजसिंहने महावीरता प्रकाश की थी। राजसिंह झाला जातीय एवं सादरीके सामन्त थे। राजपूतानेके राजाओंमे शिरोमणि राजा प्रतापसिंहकी जिन राजपूत वीरोंने पहिले रक्षा की थी यह राजसिंह उन्हींके वंशधर हैं। राजसिंह जिस समय राजधानीसे सादरी देशको जानेके लिये इस हिन्तामे आये थे उस समय उन्होंने सुना कि शत्रु महाराष्ट्रोंका दल डेढ कोश दूर सानाई नामक स्थानमें आगया है। शत्रुदलके आनेका समाचार पाकर उनके किसी पारिषदने कहा कि सोजामार्गसे सादरीमें जातेहुए महाराष्ट्रोंके साथ साक्षात् होनेकी सम्भावना है, इस कारण कुछेक घूमकर भींदरमें जाना उचित है। परन्तु राणा राजसिंहने कुछ भी विपत्तिकी आशंका न करके वरावर पहिलेकी समान यात्रा की। उनके कुछही दूर पहुँचने पर महाराष्ट्रोंने प्रवल आक्रमण करके राजसिंहके उन अल्पसंख्यक अश्वारोहियोंको लूटनेका उचित पात्र जान लिया। उनके दलने वड़ी शीघ्रतासे उनको पकड़ कर उनके समस्त वस्त्राभूषण उतार कर उनका धन छीन लिया आर उन्हे घोड़ो परसे उतरनेकी आज्ञा दी। इस प्रकारसे महाराष्ट्रोंके हाथमे आत्मसमर्पण वा समस्त द्रव्य देनेकी अपेक्षा मृत्युका होना श्रेष्ठ है, वीर तेजस्वी राजसिंहने यह निश्चय करके अपनी केवल तीनसौ सेनाले उस दश हजार महाराष्ट्रसेनाके साथ युद्ध करना प्रारम्भ कर दिया। राजसिंह और उनकी सेनाने घोर पराक्रम करके शत्रुदलके साथ संग्राम करते हुए शत्रुओंके व्यूहको भेद डाला। राजसिंह अकथनीय वीरता प्रकाश करके शत्रुओंसे छुटकारा पाय अपनी वचीवचाई सेनाको साथ लेकर हिन्ताके किलेमें आ पहुँचे। भींदरके सामन्त खुशियालसिंहके साथ राजसिंहका वैवाहिक सम्बन्ध वंधन और मित्रता थी, वह इस समाचारको पाते ही राजपूत जातिके स्वभावके अनुसार वलविक्रमसे उत्तेजित हो शीघ्र ही एक विश्वासी सेनाको संग्रह करके अपने वन्धुराजसिंहका उद्धार करनेके लिये वाहर हुए। उस सेनाकी संख्या केवल पांच सौ थी; और वह समी शक्तावत् सम्प्रदायके राजपूत थे। सेनादलके

चार अंशोंके तीन अंश पैदल और एक अंश अश्वारोही था। पैदल सेना रात्रिके समय मशाल बालकर एक दल बांधकर चली और अश्वारोहीदल दोनों ओर उसकी रक्षा करता हुआ चलता था। खुशियालसिंह सबसे आगे नेता बनकर सेनाको ले चले। जो मनुष्य दलभंग करके चलैगा उसे बिना पूछे बंदूकसे उड़ा दिया जायगा, इस आज्ञाका प्रचार किया गया। असीम साहसी वह पांचसौ राजपूतोंकी सेना दश हजार महाराष्ट्रोंके कराल ग्राससे स्वजातीय राजसिंहका उद्धार करनेके लिये चली। उसके इस प्रकारसे कुछही दूर बढ़ने पर महाराष्ट्रोंके अश्वारोही दलने पंगपालकी समान आकर चारोंओरसे घेर लिया। परन्तु वह सामान्य राजपूतोंकी सेना कुछ भी भयभीत न हुई, और भींदर तथा हिन्ताके बीचसे विस्तारित क्षेत्रमें जाकर हिन्ताके नगर द्वारपर जापहुँची। जब महाराष्ट्रोंने देखा कि राजपूत हमारे ग्राससे निकले जाते हैं तब उन्होंने " वर्छी दे " शब्दसे प्रान्तको कम्पायमान किया। उस शब्दसे शीघ्र ही बारह फुट लम्बे सैकड़ो बर्छे शक्तावतोंके ऊपर पड़ने लगे। खुशियालसिंह अपनी सेनाको वहाँ खड़ा करके अपने अश्वारोही और पैदलदलोंके पीछे आये। महाराष्ट्रदलके समीप आते ही राजपूत अश्वारोही दलने इस प्रकारसे उसपर आक्रमण किया कि जिससे महाराष्ट्रोंका दल स्तंभित होकर भंग होगया। इस अवसरमें राजपूत अश्वारोही फिर अपने पूर्वस्थानमें आकर वन्दूकोंमें गोली भरकर महाराष्ट्रोंके आनेकी प्रतिक्षा करने लगे। इसी अवसरमें पैदल दल हिन्ताके किलेके द्वारपर जा पहुँचा, इसके आते ही सादरीके सामन्त बड़ी प्रसन्नतासे मिले। अपना मनोरथ सफल हुआ जान विजयी हो महाराज खुशियालसिंहने स्थिर किया कि शत्रुओंके द्वारा बंदी होकर हिन्ताके किलेमें रहना और अन्तमें आहारके अभावसे आत्मसमर्पण करनेकी अपेक्षा शत्रुके व्यूहको भेदकर चले जाना उचित है। समस्त राजपूतोंने महाराजके इस मन्तव्यको समर्थ न किया और तदनुसार वह लोग तुरन्त ही सामान्य हानि उठाकर भींदरमें आ पहुँचे। यह वीरताकी कहानी समस्त रजवाड़ेमें प्रसिद्ध है। और शक्तसिंहके उत्तराधिकारी अगणित वीरोंमें भी यह अतुलनीय गौरवजनक वार्ता कहकर प्रसिद्ध हुए थी। शक्तसिंहके वंशधरोंमें महाराज खुशियालसिंहकी वीरता और उनकी योग्यता प्रशंसनीय थी "।

"मोरवन वा मोरौ—३१ जनवरीके शेष दिन हम मेवाड़की शेष सीमाके अन्तमें आपहुँचे, मेवाड़की वह उत्कृष्ट उपजाऊ भूमि दूसरेके अधिकारमें थी, तथा नीच बुद्धि महाराष्ट्र और निष्ठुर पठानोंका राजपूत सामन्तोंके स्वत्वपर अधिकार देखकर मैं अत्यन्त ही शोकित हुआ। राजवाड़ेके पूर्ववीरोंकी अपेक्षा इस समयके वीरोंको अयोग्य देखकर अत्यन्त हताश और विरक्त होनेपर भी मुझे उनके पूर्वपुरुषोंकी ओर श्रद्धा उत्पन्न हुई, यद्यपि वर्तमान वंशधर पूर्व पुरुषोंकी अपेक्षा अयोग्य थे, परन्तु सम्पूर्णतः असार और अयोग्य नहीं थे उदयपुरके राणाकी सभामें वर्तमान वंशधरोंमें कोई एक शिथिल स्वभाव कोई २ कदाचारी षड्यंत्री थे और सब सभी उद्योग रहित थे—इस विचारसे अचेतनताके कारण मेरा स्वास्थ्य भलीभांतिसे नष्ट होगया। मैं मेवाड़के राज्यको अपनी जन्मभूमिस्वरूप जानता हूँ, और इसी

मेवाड़के साथ हमारे योवनके जीवनकी आशावली विजड़ित है, और वह समस्त आशा प्रकृतरूपसे पूर्ण हुई है, उससे मै मेवाड़के वीर और उनकी अवाध्य सन्तानोंके सम्बन्धमे केवल यही कहनेके लिये तैयार हुआ हूँ।

Mewar with all faults, I love thee still.

मेवाड़! तुममे हजार दोष होनेपर भी मै तुम्है स्नेह करता हू।

एक मेवाड़का ही नहीं वरन समस्त राजपूतानेके वर्तमान सामन्त सम्प्रदायकामे भली भांतिसे ऋणी हूँ, और यह आशा करता हूँ कि होनेवाले उदीपमान वशधर जन्मभूमिकी रक्षामे तीक्ष्ण दृष्टि रक्खकर अफीम, और महुआके सेवनके वदलेमे उद्योगी हो, और पानदोषकी और अनाशक्ति दिखावैं। वृथा गप्प, गीत वाजेके वदलेमे युद्धकी शिक्षाका अभ्यास करैं। मैंने इस प्रकारसे कई प्रकारकी अनिष्ट मूलकरीतिका नाश,अफीम सेवन और मद्यपान दोष इत्यादिके निवारण करनेकी चेष्टा की। राजसिंहासनके भावी अधिकारोंसे तथा एक चरख परिमाण भूमि भी जिनकी है, जिनको भविष्यत्में अधिकार पानेकी आशा है. उनतकसे यह प्रतिज्ञा कराली है। वह कभी भी इस अनिष्टकारी अफीमका सेवन न करेंगे। उनमेसे किसीने तो उस प्रतिज्ञाको भंग किया, परन्तु बहुतोंने विशेप करके जिनके अप्राप्त व्यवहारके समयमे हमारे द्वारा उनके स्वार्थ और सम्पत्तिकी रक्षा हुई है। अर्थात् चुसाइयोंके युवक सामन्त अर्जुनसिंह और चंदावत् सम्प्रदायके संगावत श्रेणीके सामन्तोंने अवश्य ही उस प्रतिज्ञाकी रक्षा की। अर्जुनसिंहके पितामह वख्तसिंहने इनके पिता पहिले मरगये थे) महाराष्ट्रोंके द्वारा वारम्वार विशेप रूपसे आक्रान्त होने पर भी अपने किले और महलकी उनके करालग्राससे रक्षा की थी, परन्तु उन्हींकी सम्प्रदायके नेता सालूंवरके सामन्त भीमसिंह किसी कारणसे उनके ऊपर क्रोधित हुए, उन्होंने समस्त देशोंपर अधिकार कर, सवत् १८४६ मे चुसाइयोंकी एक छोटी शाखाके एक मनुष्यको दे दिया। परन्तु उद्यमशील तख्तसिंह फिर अपने हरण किये हुए स्वत्व पर अधिकार करके मेवाड़मे आत्मविद्रोह और विदेशीय शत्रुओंके आक्रमण समाप्तिके पीछे सन्१८१८ ईसवीमे, जिस समय वृटिश गवर्नमेण्टके साथ मेवाड़का सम्बन्ध बंधन स्थापित हुआ था उस समय तक उसी स्वत्वकी रक्षा करते रहे। उस संधिबंधनके होजानेके पीछे जिस समय मेवाड़के सामन्त मिलकर महाराणाकी ओर सम्मान दिखाने के लिये गये। वीर तेजस्वी तख्तसिंह भी उस समय वहाँ गये थे। सेनाकी दशा और प्राचीन शत्रुताके लिये सालूंवरके सामन्त वरोदसिंहको जो तख्तसिहके पदपर प्रतिष्ठित किया था उनकी वह आशा पूर्ण नहीं हुई, मेवाड़के सवमें प्रधान सामन्त सालूंवर के सामन्तने हमारे साथ मित्रता करके अपने आज्ञाकारी सेवक वरोतसिंह (वर्तसिंह) के स्वार्थकी रक्षा के लिये चेष्टा करके, वृद्ध तख्तसिंहने जिस प्रकार अपने पोते अर्जुनको हमारे पास नियमितरूपसे भेजा था, उन्होंने भी इसी प्रकारसे वरोतसिंहको हमारे पास भेजा था। उस समय अर्जुन और वरोतसिंह इन दोनोंकी अवस्था बरावर थी। वरोत सिंह देखनेमें श्रीमान् और वलवान् थे-अर्जुनसिंह दुर्वल और कृष्ण वर्ण थे परन्तु

बुद्धिमान् थे। गुण और न्याय एक पक्षमें, एवं निर्बुद्धिता और शक्ति अन्य ओर दीखती थी। कर्तव्य कर्म अवश्य ही पालन करना होगा। वृद्ध ठाकुर तख्तसिंहकी प्रार्थना निष्फल नहीं हुई। वृद्ध सामन्तने अपनी तलवार पर हाथ रखकर कहा, "सम धर्म और यह तलवार यहाँ तक हमारे स्वत्वकी रक्षा करती हुई आई है. परन्तु इस समय यह बालकके स्वार्थके लिये महाराणा और आपके हाथमें अर्पित है। परन्तु राणाकी सभामे धनसे विचार मोल लिया जाता है,तथा राजाकी कृपापर स्वत्व निर्भर होते हैं"। राणाने यद्यपि सालूंबरके सामन्तके मतमे ही अपनी सम्मति दी परन्तु अंतमे इसकी मीमांसाका भार हमारे ही हाथमें अर्पण किया गया। दोनों पक्षको अपने समक्ष उपस्थित कर उनके सम्मुख उनकी उक्तिके अनुसार उनका एक वंश वृक्ष तैयार किया।वरोतसिंह बहुत दूरवर्ती शाखासे उत्पन्न है जिससे राणा किसी सम्प्रदायके चक्रमें न पड़ उसी प्रकार यह सुविचार किया। इस कारण उन्होंने तीन वर्ष पहिले अर्जुनसिंहको जो शासनसनद दी थी उसीको मानकर अर्जुनकी कमरमें तलवार बाँधकर अभिषेक कर दिया। यह स्वत्व सम्बन्धीय झगड़ा अर्जुनके पक्षमें विशेष हितकारी हुआ। उनके पितामह तख्तसिंह सीमापर स्थित जिहाज पुरके किलेकी रक्षाके लिये नियुक्तसेनादलके नेता स्वरूपसे भेजे गये थे, उन्होंने उस कार्यको बड़ी चतुरताके साथ पूर्ण किया। उस समय उनके पोते अर्जुनसिंह भी उनके साथ गये थे। तख्तसिंह प्रायः बीच २ मे अपने अधिकारी देशोंमे आया करते, अर्जुनसिंह भी सेनापतिका कार्य करते, यह दोनो ही जने चीतौड़में मेरे साथ साक्षात् करनेके लिये आये। अर्जुनसिंह जब दो वर्षतक अपने पिताके वासस्थानमें नहीं गये तब उन दो ही वर्षोंमें इन्होंने विशेष उन्नति प्राप्त की थी, और जिस सम्प्रदायमे उन्होंने जन्म लिया था उनके द्वारा अंतमे उस सम्प्रदायका जैसा सम्मान रहैगा उसके पूर्ण लक्षण भी उन्होंने प्रकाशित किये थे। मैंने उनसे अनेक प्रश्न करके पूछा "आपने अमल (अफीम) का सेवन किया है क्या?" उन्होंने उसी समय उस प्रश्नका उत्तर दिया; आपने जिसका निषेध किया था और जिसकी हमने प्रतिज्ञा की थी, उस प्रतिज्ञाके भंग होते ही अवश्य हमारा सौभाग्य नष्ट होगा।

कर्नल टाड् साहबने वर्तमान अध्यायके उपसंहारमे लिखा है कि, ग्रामकी समस्त पंचायत आधे घंटेतक इस बड़ेभारी वटवृक्षके नीचे बैठी हुई मेरे आनेकी बाट देख रही थी। मेरे जाते ही उसने सरल सत्य भाषामें कहा, "खुश है कंपनी साहबके प्रतापसे" मै जिस प्रकार हजार वर्षतक जीवित रहूँ, ऐसी इच्छा भी प्रकाश की। इस स्थानको मै उपन्यास कहसकता हूँ। मैंने बड़ी धीरतासे रात्रितक उस पञ्चायतमें बैठकर हृदयको भेदन करनेवाले उपजाऊ क्षेत्रसमूहका वृत्तांत, धननाश, और निकालेहुओंका आगमन, और पार्वत्य भीलोंके द्वारा उपद्रव मचानेका समस्त वृत्तान्त सुना था।

द्वितीय अध्याय २.



हिन्ताके सामन्त-राणाके खास अधिकारसे हिन्ताको छीन कर उसके सम्बन्धमें राजनैतिक वाधा-शक्तावत् मानसिंह-उनका इतिहास,-नथाराके लालजी-रावत वूदिया (वूंदिया) वंशका आदि विवरण-मेवाड़के राणा जगत्सिंह-चन्द्रभानु राजसिंह-और सरदारसिंह-सरदारसिंह को तीन दिनके लिये राणाकी पदप्राप्ति-अन्तमें लावादेशका पद प्राप्त होना-दूदिया देशका पतन-मानसिंहकी प्रार्थना-सीमामें भीलोंके द्वारा हत्याकाण्ड-उसका फल।

कर्नेल टाड् साहबने पञ्चायतमें बैठकर बातचीत होनेके पीछे उसके फलके सम्बन्धमें लिखा है, " कि रात्रि अधिक होनेपर भी मैं अपने कई दर्शकोंको अपने पाठकोके सम्मुख परिचित करनेकी अभिलाषा करता हूँ। हिन्ता देशके सामन्त जो छप्पन नामक शिखरके ऊपर अपने पिताकी वासभूमि कून नामक स्थानमें इस समय रहते थे, उन्होंने स्वयं न आकर अपने भ्राता और कर्मचारियोको मेरा अभिनन्दन और अभिवादन प्रकाश करनेके लिये भेज दिया, अथवा आप स्वय आकर हिन्तामें मेरी अभ्यर्थना न कर सके थे इससे उनको दु ख प्रकाश करनेके लिये भेज दिया। हिन्ता हमारा ही देश है, उन्होंने यह कहला भेजा। वास्तवमें यह वात केवल प्रचलित सौजन्यता की प्रकाश करनेवाली नहीं थी। संवत् १८२४ मे मेवाड़में आत्मविग्रहके उपस्थित होते ही शक्तावतोंने इस हिन्तापर अधिकार करलिया था। सन् १८१८ ईसवीके मई महीनेकी चौथी तारीखको साधारण व्यवस्थापत्रके अनुसार इस हिन्ता देशको शक्तावतोके हाथसे राणाके अधिकारमें करनेका प्रस्ताव किया। यद्यपि हिन्ताके सामन्तोंने भलीभांतिसे प्रमाणित करदिया कि उन्होने पिछली अर्धशताब्दीतक हिन्तादेशपर अधिकार किया है, तथापि जिस मूल व्यवस्थासे इस समय कार्य किया उस मूल व्यवस्थाको विना भङ्ग किये हुए सामन्तोका हिन्तादेशका अधिकार देना असंभव है।

हिन्ताके सम्बन्धका प्रस्ताव बडे आग्रहके साथ उठा था। शक्तावत् संप्रदायके नेता भींदरके सामन्त जोरावरसिंह अन्य दश अच्छी आमदनीवाले नगरोके अधिकारको छोडनेसे वह इतने दुःखित नहीं हुए थे कि जितने दुःखित प्राचीन विवाद् विसम्वादके चिह्न स्वरूप उन देशोके ग्रहण करनेके प्रस्तावसे हुए थे। अधिक क्या कहैं उनके सहोदर भ्राता फतेसिंहके द्वारा जो बहुतसे उपजाऊ गांव स्वजातीय वीरोके रक्तपात होनेसे उनके हस्तगत हुए थे उन देशोंको राणापर लौटा देनेसे भी वह ऐसे दुःखित नहीं हुए जैसे इस हिन्ताके विषयमें दुःखी हुए। उक्त प्रस्तावके आन्दोलनके समयमें भींदरके सामन्तने कहा, " हिन्ता देश भींदरके प्रदेशका द्वार हे "। उनके भ्राताने कहा, "बहुत समयसे इस पर शक्तावतोंका अधिकार है "। फिर एक मनुष्यने कहा, " राणावत्ने अन्याय करके इस पर अधिकार किया है, । भींदरके सामन्तने हृदयको

आकर्षण करने वाला वचन कहा, "हिन्ता देश हमारा बापोता है,अर्थात् हमारे पिताकी भूमि है, ऐसी अवस्थामें इन प्रश्नोंकी मीमांसा करनी कोई सरल बात नहीं थी। विशेष करके अन्य पक्षमें व्यवस्थापत्र की प्रधान धारामें लिखा है कि संवत् १८२२, सन्१७६६ ईसवी में मेवाड़के आत्मविद्रोहके समयसे राणाके अधिकारी जितने किले जितने देश, सामन्तोंने अनेक उपायोंसे अपने अधिकारमें किये थे वह सभी पूर्ण ग्रहण पूर्वक राणाको लौटा देने होंगे। शान्ति स्थापन करनेके लिये जो अनुष्ठान विचारा गया था विशेष सावधानी और धीरताके साथ उस अनुष्ठानका करना कर्तव्य विचारा गया। शक्तावत स्वदेश हितैपिताके वश होकर आदिसे अंततक विशेष धीरताके साथ उस व्यवस्थापत्रके अनुसार प्रत्येक प्रयोजनीय किले और देश राणाको लौटानेमे सहायता करते हैं; इसीसे अन्तमें यह व्यवस्था की गई थी। उक्त हिन्ता देश एक वर्षतक राणाके खास अधिकारमें रहै और फिर उसे जोरावरसिंहको देदिया जाय; परन्तु हिन्ताके साथ जो दूदिया देश तथा उससे लगी हुई बारह सौ एकड़ परिमित भूमि है वह प्राचीन सूचीके अनुसार एक स्वतंत्र विभिन्न देश कहाकर प्रमाणित होगई, उसे हिन्तासे पृथक करलिया जायगा। सामन्त जोरावरसिंहने दश हजार रुपया भेंटमें राणाको दिया, राणाने उनके अभिषेक स्वरूपमें कमरमें तलवार बाँधकर उनके पिताकी भूमि उन्हे देदी। तब शक्तावतोंने सर्व साधारणके सम्मुख महा आनन्द प्रकाश किया।

पाठ्य पुस्तकमें हिन्ताका मूल्य सात हजार रुपया निश्चय हुआ था। हिन्तादेशकी आमदनीसे सामन्त चौदह अश्वारोही और चौदह पैदल सेना रखकर आवश्यकतानुसार राणाको वह सेना सहायता करनेके लिये भेजते थे, परन्तु इस देशकी आमदनीके घटजानेसे सामन्तोंको उसके बदलेमें पॉच अश्वारोही और आठ पैदल सेना रखनेका अवसर आया। हिन्ताके वर्तमान सामन्त कून नामक देशके सामन्तके पुत्र थे। हिन्ता के भूतपूर्व सामन्तने इनको गोद लेलिया था। राजपूतरीतिके अनुसार दत्तक पुत्र कभी भी अपने जन्मदाता पिताकी सम्पत्तिको नही पासकता। परन्तु यह उस रीतिके प्रबल स्वत्वपर भी कून और हिन्ता दोनों देशोंके सामन्त पदपर प्रतिष्ठित थे। इस देशके सामन्त पदपर प्रतिष्ठित होनेसे कून देशके सामन्त स्वरूपसे यह गोल नामक तीसरी श्रेणीके सामन्तरूपसे गिने गये, और इसी कारण यह प्रतिदिन राणाके सम्मुख जाकर उनकी आज्ञाका पालन करते थे। हिन्ताके सामन्त होनेसे यह स्वदेशमें अथवा विदेशमे केवल सेनाकी सहायता करते थे। सामन्तोको प्रतिदिन राणाके यहाँ जाना होता था, हिन्तादेशके देय सेनादलके नेतृत्वका भार मानसिंह नामवाले शक्तावत सम्प्रदायके एक नीची श्रेणीके सामन्त पर आया, और बनैले भील जिससे मालवाकी सीमाके अन्तमें अत्याचार और उपद्रव न करसकैं इसके लिये उन्होंने वहांके छोटे सादिरके थानेको भेज दिया। परन्तु मानसिंहने अपने कर्तव्यकार्यको भलीभांतिसे साधन नहीं किया। तब राणाने मेरे द्वारा कहला भेजा, कि यदि तुमने इसके पीछे अपने कर्तव्य पालनमें विलम्ब किया तो उस देशको फिर राणा अपने अधिकारमें कर लेंगे। मुझे जिस कर्तव्यका भार मिला है उससे मैं इस स्थानके बहुतसे शोचनीय वृत्तान्त

जान गया हूँ। यह मानसिंह किस कारणसे अपना कर्तव्य न पालसके,यह भी विदित है। वह विवरण मेवाड़के सामन्त शासनकी रीतिसे उस सामन्त श्रेणीकी सृष्टिका शोचनीय फल प्रकाश करता है।

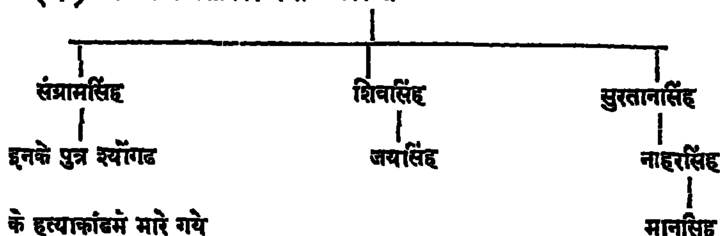
मानसिंह शक्तावत् लावाके सामन्त परिवारकी छोटी शाखामे उत्पन्न थे। कोरावरके सामन्तोके साथ जिस समय भयंकर शत्रुता हुई, तथा कोरावरके सामन्तोने उसी कारणसे श्योगढ़के किलेमे जाकर लालजी रावत तथा अन्य समस्त परिवारकी हत्या करके प्रतिहिंसा सफल की। उस हत्याकांडसे जिन कई बालकोंके प्राण बचे थे उन्हांमेंसे एक मानसिंह भी हैं। मानसिंहके स्वत्वका निर्णय तथा दावाके स्थिर करनेमे हमको और भी पूर्ववर्ती समयकी अर्थात् जिस समय लालजी रावत नथारादेशके सामन्त थे उस समय तककी बात कहनी होगी। किसी अपराधके कारणसे हो अथवा राणाकी सभाके षड्यन्त्रसे हो, उक्त नथारादेश राणाने लालजीसे लेकर प्रतिद्वंद्वी चांदावत् सम्प्रदायके एक नेताको देदिया था। लालजी भींदरके सामन्त वंशके प्रथम उपवंशीय थे,इसीसे उन्होने अपने कुटुम्बको पालन करनेके लिये भूवृत्ति पाई थी। यह नथाराके अधिकारसे अलग होते ही डूंगरपुरके सामन्तके निकट गये। वहांके अधीश्वर रावलने लालजीको दो राज्योके मध्यस्थ सीमान्तमे दुर्गम श्योगढ़ देश देदिया। इस प्रकारसे लालजी शत्रुओंके द्वारा निकाले जाकर अन्यत्र चले गये। उन्होंने राजभक्तिके मस्तकपर पदाघात करके अपने पुत्रोंके साथ बरवटिया अर्थात् दस्युकी समान मेवाड़ राज्यमे जाकर अत्याचार करने प्रारम्भ करदिये। वह अपनी सम्प्रदायके नेता भींदरके सामन्तको अपना प्रभु जानकर उनके साथ जा मिले और उनके प्रतिद्वादियोंके अधिकारी देशोंमें जाकर सारी धन सम्पत्तिको लूटते थे। पीछे जिस समय उनके प्रतिद्वंद्वी राणाकी सभामें प्रताप प्रतिपत्तिसे हीन हो गये, एवं उसी कारणसे जिस समय शक्तावत् सम्प्रदायने राणाके प्रियपात्र होकर सामर्थ्य प्राप्त की तो, लालजी उसी समय फिर अपनी सम्प्रदायके नेताके साथ मिलकर राजसिंहासनकी रक्षाके लिये गये। उन्होंने इस प्रकारसे एक समय अराजभक्त और अन्य समयमें राजभक्तरूपसे अपना समय व्यतीत किया था, शेषमे श्योगढके हत्या कांडमे कोरावरके सामन्तनें उन्हें मारडाला।

लालजीके बड़े पुत्र संग्रामसिंहने अपने भतीजे जयसिंह और नाहरसिंहके साथ श्योगढ़मे न जाकर प्रतिहिंसा दानार्थी कोरावरके सामन्तोंके हाथसे प्राण रक्षा पाई थी।

---

(१) इसका वृत्तान्त राजस्थानके प्रथम काण्डमें वर्णन किया गया है।

(२) लालजीकी वंशावली यथा—लालजी



परन्तु कोरावरके सामन्तने श्योगढ़में जाकर संग्रामके वृद्ध पिता, माता, भ्राता और उनके पुत्रोंका संहार किया । संग्रामसिंहको समय पर श्योगढ़का किला मिल गया। पिताकी शत्रुताको भी वह नहीं भूले थे । खेरोदाकी रक्षाके लिये वीरता प्रकाश करके लावाके किलेकी दीवारको लांघ एवं उसपर अधिकार कर वह संग्राममें नियुक्त हुए थे, उनके भतीजे नाहरसिंह आदि सभी जने उनके साथ गये थे । संग्रामसिंहने लावाके किले पर अधिकार करलिया, राणाने केवल उनको क्षमा ही नहीं किया वरन उन्होंने संग्रामके शत्रुओंकी अपेक्षा अपनी सभामें इनको विशेष पद सम्मान दिया था।

शक्तावत् संग्रामसिंहने दूदिया संग्रामसिंहके निकटसे लावाके किलेपर अधिकार कर लिया। दूदिया प्राचीन राजपूत जाति थे, परन्तु अन्यान्य राजपूत श्रेणीकी समान सर्व साधारणमे परिचित नहीं थे । हम इस समय जिस समयकी एक लिखित घटनाको वर्णन करनेके लिये आगे बढ़े हैं, केवल उसी समयसे कुछ कालके लिये यह दूदिया जाति यश गौरवसे प्रभावशाली हुई थी । इस दूदियावंशके अकस्मात् अभ्युदय होनेसे मेवाड़के कविने परम रमणीक गाथा तैयार करके अपने इतिहासमें अंकित की है। चन्द्रभानु नामक एक मनुष्यके नाहरमृग अर्थात् व्याघ्र पर्वतकी उपत्यकामे कई बीघे जमीन थी। चन्द्रभानु केवल दोही बैल लेकर उस जमीनमें खेती करते थे । उस क्षेत्र और दोनो बैलोके अतिरिक्त और कुछ सम्पत्ति नहीं थी। चंद्रभानुके उस खेतके समीप ही राणाका रक्षित वन था। राणा उस वनमे व्याघ्रादिका शिकार करनेके लिये जाया करते थे। एक समय हैमन्तिक शस्यकी खेती करके दूदिया चन्द्रभानु समस्त दिनके पीछे दोनों बैल लेकर जिस समय अपने घरकी ओरको आरहे थे, उस समय वनमेंसे एक मनुष्यके बुलानेका शब्द उनके कानमें सुनाई पड़ा। दूदिया चन्द्रभानु उत्तर देकर जिस ओरसे वह स्वर आया था उसी शब्दकी सीधपर गये और जाकर देखा कि एक अपरिचित उच्च मनुष्य वहां खड़ा हुआ है और उसका घोड़ा बहुत परिश्रम करनेके कारण जल्दी २ श्वांस ले रहा है। उस अपरिचित मनुष्यने दूदियासे पूछा, "तुम कौन जाति हो?" चन्द्रभानुने गर्वसहित उत्तर दिया "राजपूत है" तब अपरिचित मनुष्यने विनयपूर्वक कहा 'मै बड़ा प्यासा हूँ' मुझे थोड़ासा पीनेके लिये जल लादो। अतिथिका सत्कार करना राजपूत जातिका परम धर्म है, इस कारण उस दीन हीन किसान राजपूतने शीघ्र ही एक पात्र जलका लाकर उस पुरुषके सामने रख दिया, और अपने मलीन वस्त्रमेंसे दो रोटी मक्काकी और चनेकी दाल और कुछ घी लाकर उनके हाथमें शुद्ध अन्तः कारणसे अर्पण किया। उदार मनुष्यने कुछ घृणा न करके आनन्द प्रकाश करते हुए उसे ले लिया। दूदिया अतिथिसेवा करनेके पीछे उस अपरिचित मनुष्यको अभिवादन कर वहांसे जानेका उपाय करने लगा, कि इतनेमें ही में एक अश्वारोहीदल तीक्ष्णगतिसे अपनी ओरको आताहुआ देखकर खड़ा होगया। अश्वारोही आकर सभी उस अपरिचित मनुष्यके निकट महा सम्मान दिखाने लगे, यह देखकर चन्द्रभानुने अपने मनमें विचारा कि यह मेरा अतिथि कोई साधारण मनुष्य नही है।

वास्तवमें वह अतिथि और कोई नहीं था, वह स्वयं मेवाड़ेश्वर महाराणा जगत्-सिंह बहादुर थे। वह उस दिन शिकारसे महा आनन्दित हो इसके नाहर मगरा नामक शिखर पर महा संकटमे पड़े थे, और अन्तमे दूदिया किसानके समीप आये थे। पीछे जिस समय दूदिया चन्द्रभानुने महाराणाके समीप अपना परिचय दिया, चन्द्रभानु उस समय कुछ भी विस्मित वा आनन्दित नहीं हुआ। उस समय चन्द्रभानुसे जो प्रश्न किया जाता था, राजपूत स्वभाव सुलभ गर्वसहित उन सब प्रश्नोंका उत्तर वह गौरवके साथ देता जाता था, वास्तवमें राजपूत जातिमें चाहे कैसी ही दीनदशा क्यो न हो परन्तु जातीय गौरव सभीके हृदयमे सरलभावसे पूर्ण रहता है। महाराणा उस निरीह किसानके आचरण और सरल वचनो से अत्यन्त प्रसन्न हुए, और शीघ्रतासे एक घोड़ेको लानेके लिये आज्ञा दी। घोड़ेके आते ही उन्होने दूदि-या चन्द्रभानुसे कहा कि, यहाँसे पॉच कोश दूर तक हमारी राजधानीमे तुमको चलना होगा। किसान वेषधारी चन्द्रभानु शीघ्र ही घोड़े पर चढ़ गये, वह मनुष्य घोड़ेपर चढ़-नेमे कैसा दक्ष था यह भी विदित होने लगा, दूसरे दिन दूदिया चन्द्रभानु महाराणाकी सभामें आये। महाराणाने अपनी एक बड़ी कीमती पोशाक उनको राजप्रसाद स्वरूपमे दी। वास्तवमे राणाकी व्यवहार की हुई पोशाकका मिलना अत्यन्त सौभाग्य और बड़े सम्मानका चिह्न माना जाताहै। इसके पीछे महाराणाने कोआरियो नामक देश और उसके लगेहुए समस्त भूखंड वंशानुक्रमसे भोगनेके लिये चन्द्रभानुको दिये"।

कर्नल टाड् साहब फिर लिखते हैं कि "चंद्रभानु और उसके हितकारी प्रभु महाराणा जगत्सिंहने एकही समयमें प्राण त्याग किये। राणा राजसिंह मेवाड़के राजसिंहासन पर विराजमानहुए, चंद्रभानुके पुत्र सरदारसिंह कोआरिओके सामन्त भावसे उनके समीप नित्य जाकर उनकी आज्ञाका पालन करते थे। दोनो ही की अवस्था छोटी थी इसी कारणसे दोनोंमे अधिक प्रीति होगई थी। वह अल्प अवस्थाके महाराणा राजसिंह अपनी बराबरके सामन्तको साथले राजधानीसे एक कोश दूर सुहेलियाकी बाड़ी नामक एक अत्यन्त रमणीक बगीचेमे गये, और वहाँ कुंडमें स्नान कर विशेष आनन्दित होरहे थे। उसी वनविहारके समयमें राणाने सब प्रकारसे सामन्तको स्वाधीनता दी, सभी परस्परमे मस्त होकर आमोद प्रमोद कर रहे थे। अल्पवयस दूदिया सरदारसिंहके कोई शारीरिक कुलक्षण था उसे देखकर राणा

---

(१) कर्नल टाड् साहब अपनी टिप्पणीमे लिखते हैं कि "जिस समय मैं इन देशोके सम्ब-न्धमे अज्ञानी था, जिस समय मैं इकला किसी अपरिचित स्थानमें जाता उस समय किसानसे रास्ता पूछनेकी अभिलाषा होती, मेरे विना कुछ पूछे पाछे किसान उत्तर दे देता "मैं राजपूत हूं" इससे मैं अत्यन्त आनन्दित होताथो और उसके प्रति सम्मान दिखाता तब वह बारम्बार उसी शब्द का प्रयोग करते। उसका यथार्थ अर्थ यह है "कि मैं राज वंशीय हूं"। वास्तवमें उन मनुष्योंके किसान होनेपर भी उनके कार्य की रीति अन्य जातियोंकी अपेक्षा विभिन्न थी और उनका व्यवहार सम्मान सूचक था।

तथा अन्य सभी मनुष्य हँसने लगे। निम्नलिखित घटना उस हासपरिहासका कितना आभास प्रकाश करती है।

एक समय वात २ में यह वात आई कि सरदारसिंह जब कुंडमें नीचे उतरे तब उन्होंने अपनी पगड़ीको नहीं खोला, इस कारण सभीने अनुमान किया कि अवश्य ही सरदारसिंहके शिरपर वाल नहीं हैं। यह वात सत्य है या नहीं इसको जाननेंके लिये, एकें दिन महाराणा राजसिंहने सरदारसिंहके समीप यह प्रस्ताव किया किं आओ हम तुम दोनों जने जलमें मल्ल युद्ध करें। शीघ्र ही राणाके प्रस्तावके अनुसार जलक्रीड़ा प्रारम्भ हुई, सरदारसिंहके शिरपरकी पगड़ी खुलकर जलमें गिरपड़ी, सरदारसिंहका केश हीन शिर देखकर सभी लोग एक साथ हँस पड़े। परन्तु वह इस हंसीसे अपने मनमें कुछेक क्रोधित हुए। राणाने हँसते हुए पूछाकि "आपके शिरपरके वाल क्यां हुए" सरदारसिंहने धीरेसे उत्तर दिया कि पूर्व जन्ममें मैं महा राणाका चेला था और आप योगी थे। वदरीनाथके शिखर पर जिस समय आप तपस्या करते थे उस समय यज्ञ कुण्डके लिये लकडी शिरपर रखकर मैं लाया करता था पूर्व जन्ममें उस काष्टभारके शिरपर रखनेके कारणसे ही मेरे वाल सव लयको प्राप्त हो गये। सरदारसिंहके इस उत्तरसे.महा राणा कुछ एक क्रोधित हुए और विचारनें लगे कि सरदारसिंहने स्वाधीनता लेकर अपमानसूचक उत्तर दिया है। इस कारण उन्होंने शीघ्र ही कहा, कि "या तो सरदार इस वातका प्रमाण दे और नहीं तो इनको दंड मिलैगा"। युवक सामन्त सरदारसिंहने इसके उत्तरमें काहा, "कोआरिओके मंदिरमें जो देवता है वही मेरे इस उत्तरकी सत्यता प्रमाणित करदेंगे"। सामान्तने देवताको शाक्षी वनाया महाराणाने फिर कोई वात नहीं कही, इस कारण उन्होंने प्रमाण लानेके लिये सामन्त सरदारसिंहको विदा किया।

को आरियोदेशके अन्तर्गत गोपालपुर ग्राममें वागरावत नामकी एक सम्प्रदाय रहती थी। उनके जातिय देवताका एक मंदिर उस ग्राममें था। देवताका मुख व्याघ्रकी समान था। सामन्त सरदारसिंहने उसी देवताके समीप जाकर आराधना की, इससे देवताने प्रसन्न होकर उनके हाथमें एक फूल दे देववाणी द्वारा आज्ञा दी "कि तुम इस फूलको लेकर महाराणाके हाथमें दो यही तुम्हारे वाक्यका प्रमाण देगा"। सामन्तने देवताकी आज्ञानुसार वह फूल लेकर महाराणाके हाथमें दिया राणाने देवताके दिये हुए उस फूलको लेकर तथा और मनुष्योंके मुखसे उस फूल देनेका वृत्तान्त जान कर फिर कोई सन्देह नहीं किया। सरदारसिंह पूर्व जन्ममें उनके चेले थे, इस वातका विश्वास राणाको भली भाँतिसे होगया, उन्होंने प्रसन्न होकर सरदारसिंहको पुरस्कार देनेकी अभिलापासे उनसे कहा, "आप क्या पुरस्कार चाहते हैं"? सामंतने कोआरियोदेशसे लगाहुआ लावादेश और उसके समीपकी भूमि माँगी।

राणा उस समय तक वालक थे, उनकी माता ही उस-समय उनके नामसे राज्यशासन करती थीं इस कारण वचनवद्ध होकर उस ऋणको चुकानेके लिये शीघ्र ही माता

के समीप जाकर उन्होंने समस्त वृत्तान्त कहदिया, दुर्भाग्यवश लावादेश उस समय महाराणीकी खास भूमि स्वरूप था। यद्यपि महाराणीने सरदारसिंहकी उस पूर्वजन्मकी बातपर तथा देवताके दिये हुए पुष्पपर कुछ भी अविश्वास नहीं किया, तथापि पुत्रसे कहा कि दूदिया सरदारसिंह हमारी खास भूमिको न लेकर और किसी भूमिको लेसकते है तुम्हारी इच्छा हो तो समस्त मेवाड़राज्य उनको दे दिया जाय"। माताके यह वचन सुनकर महाराणाने असंतुष्ट होकर उसी समय कहा "अच्छा! मैंने उनको मेवाड़ राज्य दिया"। राजाकी प्रतिज्ञा कभी भंग न होगी, उन्होंने शीघ्र ही सरदारसिंहको बुलाकर कहा मैंने तीन दिनके लिये समस्त मेवाड़का राज्य आपको दिया, उन तीन दिनमे आपकी जो इच्छा हो सो करिये। मेरा सिलहखाना, अस्त्रागार, मेरा खजाना, मेरी अश्वशाला, मेरा सिंहासन, और मंत्री यह तीन दिनके लिये सभी, आपकी इच्छाके अधीन हुए।

तीन दिनके लिये राणाके पदपर अभिषिक्त हो कर असीम सामर्थ्य प्राप्त कर सरदारसिंहने समस्त द्रव्य और सम्पत्ति अपने अपने देश कोआरिओको भेज दी। उन तीन दिनोंमें सरदारसिंह यथार्थ राणीकी समान शून्यसिंहासनके एक ओर बैठ कर समस्त सामन्तोसे व्याप्त होकर सभाका कार्य करते थे। तीसरे दिन राणाकी माताने लावादेश के शासनकी सनद अपने पुत्रके समीप भेज दी। चौथे दिन दूदिया सरदारसिंहने राजशक्तिको फिर राणाके हाथमे देदिया।

कोआरिओके परम सौभाग्यवान् सामन्त सरदारसिंहने इस प्रकारसे धन प्राप्त किया। इसमे नौ लाख रुपया खर्च करके इन्होंने अपने नवीन अधिकारी देश लावामे एक किला बनाया और उसमे एक बडाभारी महल भी उपवन। किलेमें एक परम रमणिक कृत्रिम ह्रद बनाया और एक लाख रुपया खर्च करके किलेमे एक उपवन भी बनाया। इन्होंने जो उत्कृष्ट महल बनाया था उसमेके दर्पणागार इत्यादिकी आजतक प्रशंसनीयरूपसे कीर्ति छारही है। परन्तु अन्तमें एक दिन बारूद गुदाममे आग लग जानेसे आधा किला विध्वंस होगया था। यद्यपि बहुतसा धन खर्च करके फिर उस किलेकी मरम्मत कराई गई, परन्तु महाराष्ट्रनेता हुलकरने तोपोंसे उसकी अधिक शोभाको नष्ट करदिया। लावाके महल समस्त मेवाड़मे आजतक एक श्रेष्ठ महल गिने जाते है"।

"जगन्मंदिरके आदर्शसे उदयपुरकी राजधानीमें ह्रदके किनारे जो महल श्रेणी बनी हुई है, सरदारसिंहको उसमेंसे एक महलमें वास करनेकी सनद मिली। यद्यपि इस समय उस महलमें आमायतके सामन्त रहते थे परन्तु वह आजतक दूदियाका महल कहलाता है, इस समय उस महलके कमरेमे चिमगादड़ और उल्लू निवास करते हैं, और उसमे बटका वृक्ष कमरेको भेदकर निकला है। लावामे महल बनानेके पीछे सरदारसिंह बीसवर्षतक जीवित रहे। उन्होंने अपने एकमात्र पुत्रको छोड़कर संवत १८३८, सन् १७८२ई०मे प्राण त्याग किये। उन्होंने युवा अवस्थामे जिस प्रकारका सम्मान प्राप्त किया था शेष जीवनमे भी उनका वैसा ही सम्मान और पद अक्षत था। परन्तु

इनकी मृत्युके साथही साथ उनके वंशके गौरवकी कीर्ति भी लुप्त होगई थी। शक्तावत् संग्रामसिंहने उन सरदारसिंहके पुत्र संग्रामसिंहको निकाल कर लावापर अधिकार कर-लिया, सरदारसिंहके पुत्रने अनाश्रय होकर अति दीनदशामें प्राण त्याग किये, चंद्र-भानुके प्रपौत्र, सरदारके पोते एवं संग्रामके पुत्र इस समय मेवाड़के वर्तमान युवराज जवानसिंहके समीप रहकर मासिक वृत्ति पाकर जीवन व्यतीत करते है, उनके पास अपनी निजकी भूमि कुछ भी नहीं है"।

इतिहासवेत्ता फिर लिखते हैं, कि "शक्तावत् सरदारसिंहको महाराणाके यहांसे उक्त लावादेशका वार्षिक २४ हजार रुपया राजस्वकरका स्थिर कर रीतिअनुसार शासन सनद मिली। और कोआरिओदेश फिर राणाके अधिकारमें होगया। लावादेशके दीर्घ ह्रदके जलसे कई कोसतक खेती करनेका विशेष सुभीता था, इसी लिये उस एक ही कारणसे यह स्थान मेवाड़में दूसरी श्रेणीका देश गिना जाता है। संग्रामसिंहकी समस्त संतान श्योगढ़के शोचनीच हत्याकांडमें मारी गई थी, उनकी मृत्युके पीछे उनके मध्यम भ्राता श्योसिंहके पुत्र जयसिहने लावाके सामन्त पदको प्राप्त किया। संग्रामसिंह जितने दिन तक जीवित थे, उतने दिनोंतक उनके लिये किसी प्रकारकी सम्पत्तिका भाग नहीं मिला। सभी एक अन्नसे समय व्यतीत करते थे। संग्रामसिंहके छोटे भ्राता सुरतानसिंहके पुत्र नाहरसिंह, (मान-सिंहके पिता) जिन्होंने संग्रामसिंहके साथ प्रथम अनेक वीराभिनय किये थे उन्होंने अपने वाहुवलसे वनवल देश पर अधिकार करलिया। इसीकारणसे उस विषयमें विभाग करनेका कोई प्रयोजन नहीं हुआ परन्तु वनवलदेश पहिले राणाके खास अधिकारमें था इसीसे सन् १८१८ ईसवीमे वह फिर खालसा होगया, नाहरके पुत्र मानसिहने शीघ्र ही अनन्य उपाय होकर लावाके राणा जयसिंहसे यह वचन कह कर लावाके अंशकी प्रार्थना की कि लावादेश जब कि सभीके वाहुवलसे प्राप्त हुआ है, तब मै भी उसका अंशले सकता हूँ तिसपर फिर मै संग्रामसिंहके छोटे भ्राताका पुत्र हूँ, इस कारण मेरा अधिकार अवश्य ही सामाजिक रीतिके अनुसार प्रवल है। मानसिंहकी इस प्रार्थना पर पहिले जयसिहने कुछ भी ध्यान नहीं दिया। परन्तु अन्तमें सामाजिक रीतिके अनुसार इन्होंने वार्षिक पॉचसौ रुपयेकी आमदनीवाले जैतपुरका अधिकार नाहरसिंहके पुत्र मानसिंहको दे दिया। मानसिंहने जबतक अपने अधीश्वर लावाके सामन्तकी आज्ञा पालन की तबतक लावाके ऊपर उनका स्वत्वाधिकार किसी प्रकार भी लोप न होसका। एकमात्र अपने कर्त्तव्य पालनमें ढील होनेसे उनके उस स्वत्वके लोप होनेकी सम्भावनाथी। जयसिंहने मानसिंहको जो सनद दी थी वह सनद पत्र उक्त उक्तिका समर्थन करती है। सनदपत्रमें जैसे "महाराव श्री जयसिंह वचन वद्ध होकर कहते है धर्मको साक्षी देते है"।

इस समय भतीजे मानसिंह मैने तुम्है इच्छानुसार जैतपुरा नामक ग्राम और उसके आधीनकी समस्त भूमि दान की। तुम्हारे वंशधर सुपुत्र हों अथवा कुपुत्र हों, इसे वह भोग करेगें, मेरे इस दानकार्यमे चतुर्भुजा देवी साक्षी हैं। तुम मेरे भतीजे हो

इस समय जिस स्थान पर मैं तुमको जो कुछ आज्ञा दूँगा तुम्हे उसको पालन करना होगा, यदि तुम उसे नहीं करोगे तो उसका फल तुम्हें भोगना होगा"।

"मानसिंह अपने कर्तव्य पालनमें असमर्थ होगये थे इससे हो अथवा अन्य किसी कारणसे हो, जयसिंहने फिर जैतपुरादेश अपने अधिकारमे करलिया। मानसिंहने मंत्रियो के द्वारा उसे प्राप्त करनेकी विशेष चेष्टा की परन्तु सफलता न हुई। अन्तमे उन्होंने मेरे समीप आकर इस विषयमे सुविचार करनेकी प्रार्थना की। खैरोदादेश व लावाके अधीश्वर जयसिंहके समीपसे लेकर राणाके अधिकारमें किया गया था, इससे जयसिंहकी आधी आमदनी घट गई थी, ऐसा अनुमान किया जाता है, इसी कारणसे जयसिंहके सामान्य अपराध पर जैतपुराको अपने अधिकारमे करलिया। सन् १८२० ईसवीमें मैं जब मेवाड़ मे गया उस समय उन्होंने पत्र द्वारा मुझे विदित किया कि "जयसिंहने मुझे जैतपुरा लौटा देने की आज्ञा दी है"। मै इसका उत्तर चाहता हूँ एकमात्र राणा ही इस विषयमे विचार कर सकते हैं। मेरे ऐसा कहनेपर वह फिर राणाकी सभामे गये। परन्तु वहाँ जाकर सफलमनोरथ न होसके, अन्तमें उन्होने फिर मेरा ही अनुसरण किया। मानसिंहने फिर मेरे वचनानुसार सादरीकी सीमान्तमे सेनादलके नेतृत्व पदको प्राप्त किया था, परन्तु उन्होने विशेष मन लगाकर अपने कर्तव्यको पालन नहीं किया, इसीसे मैंने उनको उस प्रकार आग्रहके साथ ग्रहण नहीं किया। उसी कारणसे वह आत्मसमर्पण करनेके लिये और भी आग्रह युक्त होगये और कहा कि वह प्रबल व्यक्ति गत कारणसे मीमांसाके अंतमे अपने कर्तव्य पालनमे समर्थ नहीं हुए। पचीस वर्षके अवस्थावाले वीरकी समान दीर्घाकार बलिष्ठ साहस प्रकृति और स्वाधीनताकी तेजपूर्ण मूर्तियुक्त मानसिंह अपने सनदपत्रको पढ़नेके लिये मेरे हाथमे देकर बोले— मैं लावा के अधीश्वर के निकट जिस बाध्यताकी जंजीरमे बंध रहा हूँ यदि उसको तोड़ डालूं तौ यह अवश्य ही जैतपुराका ग्रहण करनेमे न्यायसहित समर्थ होगें; बनवल देशको मेरे हाथसे छीननेके लिये जयसिंहके इशारेके अनुसार मेरी सेनाकी संख्या उनकी बराबर कीगई है, इस कारण जैत पुराको प्रतिग्रहण करनेकी उनको क्या सामर्थ्य है? जिस समय संग्रामसिंहने प्राणत्याग किये थे, उस समय लावा हमारे ही हस्तगत था यदि मेरी इच्छा होती तौ मै लावाको सरलता से अपने आधीनमे रख सकता था, उस समय मेरे हाथसे लावा लेने की किसको सामर्थ्य थी? जयसिंहके आधीनके सामन्तोंने कभी नही देखा था। वह जयसिंहके बदलेमे मुझको अधीश्वर माननेके लिये तैयार होजाते। यद्यपि इस समय तक बलपूर्वक मेरे अधिकारको लोप नहीं करसकते थे, तथापि उस समयमे ही उनको लावाका अधीश्वर मान उनके स्वत्वका अधिकार मान्य करके चला, जब आमाइतके ठाकुरने राजधानीमे जानेके समय लावाकी सीमामे नगाड़ा बजाया, तब क्या मै सेनादलको इकट्ठा कर आमाइतके सामन्तो द्वारा अपने अधीश्वर जयसिंहका अपमान जानकर उस ठाकुरको उसका फल नहीं देता? मेरा मस्तक जयसिंहके हाथसे लावाके किलेकी दीवारके ऊपर स्थापित है। यदि लावाके सामन्तके ऊपर राणाके ऊपर और आपके ऊपर हमारी भक्ति न होती तो वह कभी बल पूर्वक जैतपुराको अपने अधिकारमे नहीं कर सकते थे केवल आपके ऊपर मेरी प्रबल

भक्ति है, इसी कारणसे मैं चुपचाप सब कुछ सहन कररहा हूँ । आप मुझे जैतपुराके ग्रहण करनेकी आज्ञा दीजिये यदि मैं आज ही उसको अपने अधिकारमें न करलूं तौ मैं नाहरसिंहका पुत्र नही। इसी हाथसे जैतपुराका जो छोटा किला बनाया था । उस किलेमे मेरे स्त्री पुत्रोंको आश्रय मिला था, इस समय उन्होंने हमारी उस पितृभूमिसे निकलकर अन्यत्र आश्रय लिया है। वनबलके बदलेमें मुझे जो भूमि दी है वह वनपूर्ण पतित देश है उस भूमिसे यदि मैं एक रुपयेकी भी आमदनी की इच्छा करूं तो उस भूमिमे मुझे पहिले रुपया खर्चना होगा। एकमात्र जैतपुरासे मैंने उस भूमिको उत्कर्प साधनके लिये, धन संग्रह करनेके लिये आशा की थी, उसी आशासे मैने उक्त देशके कारण पट्टा द्वारा लिखित ढाई हजार रुपया दिया, और जबतक उस पतितभूमिसे आमदनी न हो तबतक मै जैतपुराकी आमदनीसे परिवारका पालन करूंगा ऐसी आशा की थी । जब जैतपुरा हमारे हाथसे छीन लिया गया तब मेरे ऋणदाता महाजनोंने ऋण चुकानेके लिये मुझपर आक्रमण किया, और मेरे पास जितने मूल्यवान् द्रव्य थे वह सब और मेरी स्त्रीके समस्त आभूषण तक और जिस घोड़ेपर चढकर गंगापुरमें मै आपके साथ साक्षात् करनेके लिये गया था, उस घोड़े तकको वेंचकर अपना ऋण चुका दिया। मैंने इस शोचनीय अवस्थाको पृथ्वीनाथ महाराणाके निकट निवेदन किया, उन्हों ने सब वृत्तान्त सुनकर मेरे अनुकूल सम्मति दी । मेरे पाससे पट्टेके कारण पाँच हजार रुपया मांगा मैने कहा मेरी आशा सफल होगी, इस प्रकार वचन बद्ध होकर मै वह भी उसी समय देनेके लिये तैयार हुआ था।

बीकानेरीजीके नामसे वह वचन दिया था, परन्तु लावाके सामन्त पर जितनी धन सम्पत्ति थी, जैतपुराके सामन्त पर उतनी नही थी, इस कारण लावाके सामन्तने एक हजार रुपया देकर उनकी प्रार्थनाको पूर्ण किया। इसी कारण अन्त:करणके दु:खित होनेसे मै सीमान्तकी रक्षा उस प्रकार न कर सका । उसी सूत्रसे पठानोंने उत्तेजित होकर सालाइराह नामक स्थानके खेतमें मेरा जो कुछ धान्य उत्पन्न हुआ था, उस सबको हरलिया, और बन्येरा भेरावी नामक ग्रामको भी अधिकारमें करालिया है । मेरी यह अवस्था है; यदि मैनें अन्यायसे मांगा है, यदि रीतिके विरुद्ध कोई प्रार्थना की है तो आपके विचारमें जो दंड हो उसे दीजिये" । यह वचन कहकर ठाकुर मानसिंहने अपने मनकी बात समाप्त की । मानसिह केवल अपनी जातिके नही-यह मनुष्यसमाजमें ऊंचे आदर्शके मनुष्य थे, इन्होंने जो प्रार्थना की वह अकाट्य थी। जो लोग उनकी भाषा नहीं जानते, वह भी उनके उस समयके मानसिक भाव और आग्रहको देखकर अवश्य ही विचलित हुए थे । परन्तु मैं सहसा कोई प्रतिज्ञा करके ही शान्त न हुआ- वरन जिससे मैं राणाके समीप उनका पक्ष समर्थन करनेके लिये सरलतासे समर्थ हूं, उसके लिये मैंने उनसे कहा कि " आप शीघ्रतासे सीमान्तमें अपने कार्य स्थानमे जाइये, और

(१) राणाकी एक रानी-बीकानेरके राजाकी कन्या थी ।

(२) मानसिंहने वनबलके बदलेमें सालाइरोह भैरवी नामवाले दो ग्राम पाये थे।

आपके न होनेसे वहाँ जो एक शोचनीय हत्याकांड होगया है, आप उस हत्याकांडके नेताको उचित दंड देकर राणाके कृपापात्र होनेकी चेष्टा करिये। मैंने उनको एक पिस्तौल उपहारमे देकर विदा ग्रहण की।

सीमान्तकी उस शोचनीय हत्याकांडके सम्बन्धमें इतिहासलेखकने लिखा है, "छोटी सादरीकी सीमान्तमे–जैसे सेनादलके साथ मानसिंह सीमान्त रक्षामें नियुक्त थे–उस सीमान्तमे गंभीरवन जंगल पूर्ण एक पहाड़ी देश है, आधेमें मीना और भीलगण वहाँ वास करते हैं, उस पहाड़ी देशसे लगेहुए कितने ही देशोमे वहुतसी नीची श्रेणीके सामन्त वास करते हैं, जिससे भील और मीना अत्याचार व किसी प्रकारके उत्पाव न करसकें, उन सामन्तों पर इस प्रकारका भार सौंपा गया है। परन्तु हम जिस समयकी वात कहते है, उस समय वह सामन्त भीलोंको दमन न करके वरन उनके आसपासके देशोंमे चोरी और लूटमार कार्यसे उत्साहित करके उस लूटीहुई धनसम्पत्तिमेंका एक अश आप लेते थे। उन उत्साहदाताओंमें कालाकोटाके सामन्तोके घरके प्रधान कर्म कर्ता एक प्रधान नेता थे। चम्पान नामक वनकी ओर गिरिसंकटके ऊपर बिलोई नाम एक खंडभूमिमें एक राठौर राजपूत निवास करते थे। उन्होने कई वीघे पर्वती भूमि लेकर कई कुएँ खुदवाये और उनसे उसी भूमिमें खेती करते थे। राजपूत राठौरने घोर परि- श्रमसे उस कठोर भूमिमे नाज उत्पन्न कर उससे अपनी स्त्री और उस भूमिके एकमात्र उत्तराधिकारी अपने पुत्रके निमित्त अन्न संस्थापन किया था। एक दिन वह राठौर राजपूत कृपिकार्य करनेके पीछे अपने घरकी ओरको जारहे थे कि इसी समयमे उनकी स्त्रीके रोनेका शब्द उनको सुनाई पडा, स्त्रीने नेत्रोमे जलभर कर अपने स्वामीसे कहा कि वनैले भीलोने आकर तुम्हारी कुटीको लूटलिया। सारे पशुओको लेकर एकमात्र पुत्र और उस पुत्रके सहचर एकमात्र युवक योगीको भी वांधकर ले गये हैं। राठौर राज- पूतने महा शोकित हो विना कुछ कहे सुने वन्दूकमें गोली भरी, और वंदूक लेकर आप कालाकोटकी ओरको गये। अत्यन्त दुखका विषय है कि राठौरराज जिस समय काला- कोट ग्राममें गये उसी समय उस ग्रामके प्रवेश मार्गपर अपने प्राण धन पुत्र और उस योगीका शिर शून्य देह उनके पैरोंके नीचे आया। उन्होंने वहुत खोज करके जाना कि कालकोटके सामन्तोंके अनुगत भीलोंने यह कार्य किया है। भील तस्कर जिस समय उस पुत्र और योगीको पशुओंके साथ यहां लाये उस समय उस पुत्रने कालाकोटके कर्माध्यक्षको देखकर कातरस्वरसे कहा, " मामा मेरी रक्षा करो, मेरे प्राणके वदलेमे जितना रुपया तुम चाहोगे वावा मेरे उतना ही तुम्हें देंगे। " वास्तवमें राठौर राजपूतके निकटसे रुपया लेनेके लिये ही पुत्रको वांधकर लाये थे। परन्तु जव समाचार फैल गया कि यह पाखडी कर्माध्यक्षही इस कांडका मूल है, तव अपनी रक्षाके लिये उस पुत्र और योगीके प्राण नाश किये गए। राठौर राजपूत यह समाचार पाते ही उस नर घातीकी खोज करनेके लिये कालाकोटेमे गये। उस शोकसे संतापित हुए पिताको देखकर उस पातकीने कहा, मैं इस हत्याकांडको कुछ नहीं जानता। अन्तमें राठौरके दुःखमें शोक प्रकाश करके उसने कहा कि तुम्हारे जितने पशु चोरी गये हैं उनका चौगुणा

मूल्य और जो तुम्हारी धन सम्पत्ति नष्ट हुई है उसका दुगुना मूल्य तथा इसकी खोज करनेमे जितना रुपया तुम्हारा खर्च हुआ है उससे दुगुना मैं तुम्हे देता हूँ। शोकित और दुःखित पिताने कहा, " तुम जीवित अवस्थामें मेरे पुत्रको देसकते हो ? मै न्याय विचारसे प्रतिहिंसा चाहता हूँ, रुपया नहीं चाहता। मुझे अब धन लेकर जीवन धारण करनेका क्या प्रयोजन है " ?

कर्नल टाड् साहब फिर लिखते है, " कि किसी भाँति भी धीरजके वचनोंसे उन राठौर राजपूतका शोक दूर नही हुआ। उन्होने यही प्रतिज्ञा करी कि प्राणघातीका प्राण लेकर ही मेरा मन शांत होगा, उस विषयमे आशा देकर उनको मानसिंहके हाथमे सौप कर कहा कि यदि हत्या करनेवालेको आप बंदी करसकें तौ आपका मनोरथ भी इसी कारणसे पूर्ण होगा। इस वचनको सुनकर राठौर राजपूतने कितनी वार धीरज प्राप्त कर मुझसे विदा ली। वह मेरे डेरोंको छोड़कर अपने घरको जाने नही पाये थे कि इतनेहीमें यह समाचार आया कि उस शोचनीय हत्याकाण्डके प्रधाननेता कालाकोटके सामन्तको उस कर्मका सबके दंडदाता भगवानने दंड दिया है। कालाकोटेके सामन्तने उस हृदयभेदी शोकसे विचलित होकर उक्तकर्मकर्ताकी भलीभाँतिसे भर्त्सना कर वह जिस २ महापापका भागी है, उसे २ स्वीकार करनेको कहा। परन्तु उस मनुष्यने प्रतिज्ञा करके कहा, कि " भगवानका नाम लेकर कहता हूँ। कि मैं अपराधी नहीं हूँ अन्तमें वह देवताके मंदिरमें जाकर शपथ करनेके लिये तैयार हुआ। उसकी बात पर सम्मत होकर उसको सामन्तने देवताके मंदिरमे शपथ करानेके लिये भेजा। वह पापी घोड़ेपर चढ़कर देव मंदिरके सामने पहुँचा ही था, कि वैसे ही उसकी मृत्यु होगई। उसकी अचानक मृत्यु को देखकर सभी कहने लगे कि देवताने स्वयं ही इससे बदला लेलिया। इस समय उस हत्याकाण्डमें और भी जितने सहायक थे, उन सबको पकड़ कर उक्त राठौर राजपूतको संतोषके कारण जिससे कोई फिर आगेको ऐसा कार्य न करसकै इससे उनको उस बीलिओके गिरिसंकटमार्गमें फाँसी पर लटका दिया। इससे मै अत्यन्त आनन्दित हुआ "।

तृतीय अध्याय ३.

मोरवन-उस देशकी जनशून्यता-महाराष्ट्रोंके द्वारा अत्याचार और उत्पीड़न-महाराष्ट्रोके प्रति अन्याय-दया प्रकाश-मोरवनका प्राचीन इतिहास-खोदित लिपि-जैन मंदिर-व्याघ्र का एक बालक पर आक्रमण-देवताके मंदिरके सम्बन्धका प्रबाद-प्रयोजनीय खोदित लिपि-चारण रमणियोंके द्वारा कर्नल टाड्की अभ्यर्थना-उस अभ्यर्थनाके सम्बन्धकी प्राचीन रीति-मेवाड़में चारणोंके आगमनका इतिहास-सती वाक्य।

कर्नल टाड् साहबने पहिली फरवरी शनिवारको मोरवन वा मरवन नामक स्थानमे जाकर लिखा है कि " लावाके विवाद् विसम्वाद् और उसके सम्बन्धकी घटनावलीको, वर्णन करनेके उपलक्ष्यमे गत दिनको मानसिंहने मेरे सभी समयको ग्रहण किया था। इस स्थानके आसपासके जो कितने ही देश राणाके खास अधिकारसे छिन गये थे उस विषयमे विशेष खोज करनेके लिये मुझे इस स्थानपर विश्राम करना पड़ा। मोरवन वा मरवन पहिले एक समृद्धिशाली नगर था, तथा यह जिलेमे एक प्रधान उपविभाग रूपसे गिना जाता था। इसका वार्षिक राजस्व सात हजार रुपया था। यह नगर रमणीक ऊचे शिखर पर स्थापित है और इसके पश्चिम ओर जो एक बडा भारी कृत्रिम हौद है, वह देखनेमे अत्यन्त सुन्दर है। और उसके दोनो ओर किनारों पर बड़े २ इमलीके वृक्ष लगरहे हैं। यहाँकी भूमि भी उपजाऊ है, विशेष करके खेतीके लिये जलका भी बड़ा सुभीता है, परन्तु हाय! इस समय खेती करनेके लिये यहां मनुष्य नहीं है। नगर सभी ओरसे विध्वंस होकर मनुष्योसे हीन होरहा है।

जिन वर्वर पठानोने इस रमणीक नगरको विध्वंस किया है, उन्हींके हाथमें फिर यह देश जायगा! मेरे मनही मनमे महा दुःख हुआ। युद्धके समय व्यय वा दंडस्वरूपसे जिन सब देशोको राणाके निकटसे गिरवी स्वरूप शत्रुओने अपने हाथमे रक्खा था यह मोरवन देश भी उन्हींमेंसे एक है। अन्यान्य भूमिके साथ यह भी महाराष्ट्रोके अधीनमे हो गया था। और धनके लोभी महाराष्ट्र सेवकोने इस देशपर अपनी इच्छानुसार अत्याचार किये थे। यह अत्यन्त शोचनीय विषय है। अपने परम शत्रु महाराष्ट्रो की ओर हमने अन्यायसे उदारता दिखाई, नहीं तो यह सभी देश न्यायके अनुसार मूल अधिकारियोको लौटा देने होते, विशेष करके उन्होंने भी हमारे न्याय अत्याचर और चोरी लूटके रोकनेमें विशेष सहायता की। यदि महाराष्टोको मध्य भारतवर्षसे एकवार ही निकाल दिया जाता तो न्यायविचार सुराजनीति और सहृदयता भलीभाँतिसे प्रकाश पाजाती। जब मैंने इस छिनेहुए देशके साथ उदयिमान उन्नतिके चिह्न युक्त राजपूत देशकी वरावरी करी तब मैंने मनही मनमें इस कारणसे आनन्दका अनुभव किया था कि अत्याचारी अधिकारी लोग इन सब देशोसे कुछ भी लाभ न उठा सकेंगे, इन वडे खेतोमे घास और वृक्षोंके सिवाय कुछ न होगा"।

इतिहासवेत्ता मोरवन देशके प्राचीन इतिहासके सम्बन्धमें लिखते है कि मोरवनदेश प्राचीन ऐतिहासिक देश गिना जाता था। मोरी जातिसे इसका नाम मोरिवन हुआ है। मोरीजाति चित्तौरको जीतनेके पहिले इस स्थानमें शासनकार्य करती थी, चित्राङ्ग प्रासाद् नामवाला एक प्राचीन टूटा फूटा किला इस समय तक विराजमान है चित्तौर नगर स्थापन करनेके पहले उस किलेमें मोरी जाति वास करती थी; ऐसा प्रकाशित होता है। इसके सम्बन्धमे आजतक यह वात विख्यात है कि चित्राङ्गधार राज्यका एक प्रधान करद स्वरूप मोरवन और उससे लगे हुए देशका शासन करते थे। चित्राङ्गकी

एक जन प्रजा एक समय खेती करती थी, हठात् उसके लाङ्गलके फलपर एक कठिन द्रव्यका संघात हुआ, उन्होंने उसी द्रव्यको उठाकर देखा कि इसके स्पर्शसे उसका हल एक वार ही सुवर्णका होगया है। वह कठिन द्रव्य और कुछ भी नहीं है—पारस पत्थर है। वह किसान शीघ्र ही उसे अपने स्वामी चित्रांगके पास ले गया, और जाकर स्वामीको दिया। चित्रांगने उस पारस पत्थरकी सहायतासे बहुतसा सुवर्ण पाकर उस धनसे मोर-वन नगरमें बड़े २ महल बनवाकर अन्तमें चित्तौरकी राजधानीको निर्माण किया। धौल-कोट वा मोरिकापट्टन नामक जो राजधानी वर्तमान मोरिवनके पश्चिम दूर पर थी. उसके चिह्न भी इस समय तक देखे जाते हैं; परन्तु उक्त स्थानके निवासियोंकी निर्बुद्धिता के कारण उसमें अग्नि लगनेसे वह विध्वंस होगये हैं, कारण यह था कि वहाँ एक ऋषि धोरेके वनमें तपस्या कररहे थे; बहुतसे मनुष्य उनके शिरपर एक प्रकारका जंगली वृक्षोंके जड़का बोझा रखकर उनको बाजारमे बलपूर्वक लेआये। उस ऋषिके क्रोधसे नगर विदग्ध होगया। परन्तु इस वचनसे यही अनुमान होता है कि इस देशमे पहिले भूग-र्भसे अग्नि निकलती थी। मोरवनमें इस समय तीन प्राचीन मंदिर विराजमान हैं, इनमे एकमें शेषनागकी मूर्ति है। उस सहस्र शिर देवताने पृथ्वीको अपने मस्तक पर धारण किया है। पहिले केवल कुंकुम ही उस देवताको चढ़ाया जाता था, परन्तु इस समय उसके बदलेमें उनकी देहमे चंदन लगाया जाता है।

इस स्थानके दक्षिण पश्चिममें ढाई कोश दूरी पर उनेर नामक ग्राममे एक प्राचीन खोदी हुई लिपि है। यह सुनते ही मैंने उस प्राचीन गुरुको वहाँ भेजकर उस लिपिको लानेकी आज्ञा दी। वह उसको लेआये, उसके देखनेसे जाना गया कि उस खोदी हुई लिपिमें यह लिखा था कि कालीन और उनेरके ग्राम ब्राह्मणोंको दिये गये हैं। राणा संग्रामसिंहने संवत् १५७० सन् १५१४ ईसवी में ग्राममें जो चतुर्भुजाका मंदिर बन-वाया था, उसमे वह रक्खी हुई है। राणा जगत्सिंहने उस खोदी हुई लिपिके नीचे अपना नाम खोद कर यह लिख दिया कि जिससे कोई भी इस ब्रह्मोत्तरकी ओर हस्ता-क्षेप न करै। उस मंदिरके और एक खंभ पर ग्रामकी पंचायतकी इच्छानुसार प्रत्येक नवीन धान्य काटनेके समय वासन्तिक और हैमन्तिक धान्यमेंसे प्रत्येक खेतसे ढाई सेर धान्य देवताको दिया जाय, यह भी उसमे खुदा हुआ है।

संवत् १८४५ में जिस समय मेवाड़के चारोंओर युद्ध हुआ था ऐसा जाना जाता है कि उसी समय पंचायतने उक्त दानको नियत किया था। चतुर्भुजादेवीके मंदिरके ठीक सामने एक जैनमंदिर है। संवत् १७७४ में यह बना था, जिस स्थान पर यह मंदिर बना था वहाँकी भूमि खोदनेके समय एक पारसनाथकी मूर्ति निकली थी। उसी मूर्तिकी स्थापना उस मंदिरमें हुई। यहांके अनेक स्थानोंमें प्राचीनकालके बहुतसे स्मृतिचिह्न पाये जाते हैं।

इस दिन कप्तान वा साहब शिकारको गये, और नील गायके पीछे घोड़ा दौड़ाया पर यह एक जंगलमें घुस गई, और साहबके कुछ चोटआई, उस दिन हमने बड़ा चीतर देखा, यह जानवर बहुत खूबसूरत होता है।

२ फर्वरी-फिर कर्नेलटाड् साहब लिखते है कि "आज प्रातःकाल ही हमारे वार्षिक समस्त विलायती द्रव्य आये। हम भोजन करनेके पीछे एक बोतल वरांडी पान करते थे कि इसी समयमे ग्रामकी ओरसे एक भयकर चीत्कार शब्द सुनाई आया, जिसको सुनकर हम विचलित होगये। हम उसी मुहूर्तमें खडे होगये, और जिस स्थानसे चिल्लानेका शब्द आरहा था उसके सम्बन्धमे खोज करने लगे, कि इसी समयमें दो हलकारे और एक बालक शिरपर दूधका घड़ा लियेहुए मेरे सामने आये, उन्होंने मेरी वह उत्कठा दूर की। प्रतिदिन दूध संग्रह करनेके लिये वह कई कोश दूरतक ग्राममे जाते थे। वह वहाँसे लौटते समय हमारे डेरोके समीप आये, दोनो हलकारे कुछ आगे बढ़गये थे, और बालक पीछे था। उस बालकने सहसा ऊंचे स्वरसे कहा "मामा मुझे छोड दो, मैं तुम्हारा भानजा हूँ, मामा छोड दो, मामा छोड़ दो।" यह कहताहुआ चिल्ला रहा था। उन दोनों हलकारोंने समझा कि यह बालक पागल है। विशेष करके उस समय उन दोनों जनोने अंधे होकर बालकसे शीघ्र ही आनेके लिये कहा। परन्तु बालक पहिलेकी समान क्रमानुसार भयंकर चीत्कार करता था, तब उन्होने दौड़ कर जाकर देखा कि एक बड़ाभारी व्याघ्र बालकके अँगरखेको पकड़ रहा है। तब इन दोनो हलकारोने शीघ्र ही एक लोहेसे मढ़ीहुई लकडीसे उस व्याघ्रको मारा उसके भयंकर चीत्कार शब्दसे सारे ग्रामवासी मनुष्य अस्त्र शस्त्र हाथमे लेकर वहाँ आगये। उनके चिल्लानेसे मेरी निद्रा भी भंग होगई।

मोरवन और सुगरवार नामक स्थानके मध्यस्थ काले पहाड़ नामक शिखर पर वह प्राचीन व्याघ्र वास करता था। इस प्रदेशमें यह बहुत समयसे रहता था, और वह किसानोंके पशुओका नाश करता था, परन्तु अभीतक इसको कोई भी न मार सका था। दो दिन पहिले वह व्याघ्र मोरवनके एक तेलीके बैलको मारकर भाग आया था। व्याघ्रको कभी कोई बंदूक वा किसी प्रकारके अस्त्रसे नहीं मारता था, सभी उस पर दयाभाव रखते थे, और ऐसा जाना जाता है कि वह कभी किसी मनुष्य पर आक्रमण भी नहीं करता था, और यदि करता भी तौ "मामा मुझे छोड़ दो" इतना कहते ही वह उसको छोड़ देता था, वह बालक यह जानता था इसीसे उसने 'मामा, कहकर इस प्रकारकी प्रार्थना की थी। परन्तु अज्ञान हलकारोने विचारा कि वास्तवमे ही इस बालकको मामाने पकड़ लिया है, और इसीलिये वह पहिले उसकी सहायताके लिये न गये"।

३ री फर्वरी-आज कुहरा बहुत था हमारे साथी साहबकी तबियत खराब थी, इससे हम यहीं रहे।

४ फर्वरी-हमारे बन्धु पालोदसे लौट आये। मैने उनको वहांके देवमंदिरमेसे एक खोदित स्तंभकी लिपिको लानेके लिये भेजा था उन्होने आकर जो कुछ कहा वह नीचे लिखते हैं।

वह मंदिर पहिले एक धनवान जैनका बनाया हुआ था। जैनोंने उस मंदिरमे अपने इष्टदेवताकी मूर्ति स्थापन करनेकी अभिलाषा प्रगट की, परन्तु मंदिरके तैयार होते ही

मानवदेव (देवजननी) ने स्वयं उस जैनके सम्मुख जाकर कहा कि इस मंदिरमें मैं वास करनेकी इच्छा करती हूँ । जैन यद्यपि हिन्दूधर्मका विरोधी था परन्तु माताकी इस इच्छाको अपूर्ण न करसका, जैनने कहा कि मैं कभी आपकी मूर्तिके सामने अपने हाथसे किसी पशुका वलिदान नहीं करूंगा देवीके मंदिरमें निवास होनेके समाचारको सुनकर संतुष्ट हो कहा कि " तुम चित्तौड़के सौनगड़ेके पास जाओ, वही वलिदानादि कार्यको निर्वाह करेंगे । जैनदेवीकी आज्ञानुसार वह सोनगड़ेके निकट गये और पीछे उस मंदिरके निकट पार्श्वनाथका एक मंदिर बनवादिया । मेरे वृद्ध वन्धुने माताजीके मंदिरमें एक अत्यन्त प्रयोजनीय ऐतिहासिक तत्थ्यका आविष्कार किया । उन्होने एक प्राचीन खोदीहुई लिपिको पढ़ा उसकी जो अनुलिपि लाये थे उससे सौलङ्की राजवंशके समयके निर्द्धारणके सम्बन्धका प्रमाण पाया जाता था । मुझे पीछे चित्तौड़से एक खुदा हुआ पत्र मिला उसके साथ इस पत्रका समय सम्पूर्णत: एक हो गया। उन दोनों पत्रोंसे भलीभांति जाना जाता है कि सौलङ्की राजाने एक समयमें वास्तवमें ही गिहलोतकी राजधानीको अपने अधिकारमें करालिया था । पालोदसे जो खुदाहुआ पत्र मिला था उसमें केवल यही लिखा हुआ देखा कि कुमारपाल संवत् १२०७ में पूसके महीनेमें पालोद माताजीके मंदिरमें पूजा करनेके लिये आये । परन्तु शीशोदियोंने अपनी जातिके गौरवकी रक्षाके लिये कहा था; सदराजने जिस समय कुमारपालको निकाल दिया था, उस समय कुमार पालने चित्तौड़में आकर आश्रय लिया, और दिल्लीके चौहानपृथ्वीराजके वहनोई राणा समरसिंह जो चित्तौड़के अधीश्वर थे अन्तमे उनके अधीनमे मन्त्रीके पदपर नियुक्त हुए। छठीफर्वरी मार्गमे व्यतीत हुई ।

भ्रमणाकारी कर्नल टाड् साहव ७ वीं फर्वरीको निकुंपनामक स्थानसे चलकर ८ तारीखको मुरलानामक स्थानमें आये । वह लिखते है, "कि मुरला एक श्रेष्ठ ग्रामहै, यहाँ कूचौलिया जातिके चारण लोग निवास करते हैं। यद्यपि वह लोग भाटवंशके है परन्तु इस समय वह वाणिज्य द्रव्य रक्षकके कार्यसे अपना निर्वाह करते है । यह चारण इस देशमें सभी श्रेणी और सव वर्णोंके समीप पूजनीय है, और सभीकी भक्तिके पात्र हैं, इसी कारणसे कोई भी इनके प्रति किसी प्रकारका हस्ताक्षेप नहीं कर सकता, और इसी कारणसे वह निष्कर भूमि सम्भोग और निर्भय हो चोरोंसे भरे हुए मार्गमें वाणिज्य द्रव्य भेजते है । चोर डाकू भी इनके रक्षित किये हुए द्रव्योंको मार्गमे नही लूटते । यह समस्त राजपूतानेमें एकमात्र स्वाधीन होकर वाणिज्य करते है, कारण कि राजा भी इनसे वाणिज्य पर कर नही लेता हैं । यह चारण सम्प्रदाय हमारी जिस प्रकारसे अभ्यर्थना करती है उससे हम अत्यन्त आनन्दित हुए । उन्होंने नगरसे दलवद्ध होकर आगे बढ़ हमारा अधिक सत्कार किया । सवसे आगे ग्रामके वाजा वजानेवाले मनुष्योंका एक दल वाजा वजाता हुआ चला । इसके पीछे सुन्दरी चारणी स्त्रियाँ धीरे २ समीप आकर अंगके उत्तरीय समान्दोलनसे हावभाव कटाक्ष करती हुई धीरे २ नृत्य करती थीं । अन्तमें मुझे मुरलाकी उन स्त्रियोने वंदी कर लिया, तव वह शान्त हुई । यह दृश्य जैसा नवीन था उसी प्रकारसे चित्तको हरनेवाला था । वीरवपु चारणोंने सुन्दर वस्त्र पहर कर शिरपर पगड़ी

बाँध और उसमे माला लटका कर दर्शन दिया था। नायक वा नेता गणोंके गलेमे सुवर्ण के अलंकार थे और उनमें पृथ्वीश्वरकी मूर्ति अंकित थी, उनकी वह धीर गंभीर मूर्ति स्त्रियोंका हृदय प्रकाश करती थी। सभी स्त्रिये पाटल वर्णका घॉघरा और कुरता पहर रहीं थीं, उनके वह भ्रष्टवाल घन कृष्ण जलधि जालकी समान थे, अंगमें रमणीय आभूषण थे, हाथमें चूड़ी अतुलनीय शोभाको प्रकाश कर रही थीं। ससारके अनेक चित्रकारोंके पास इस चित्रकी समान योग्य चित्र दूसरा नहीं था। स्त्रियोकी मण्डली जिस भाँति अपने हावभाव कटाक्ष फेंकती थीं– जिस भाँति मधुरभावसे अंगको चलाती हुई अभ्यर्थना करती थी, उससे भलीभाँति विदित होता है कि वह उस अभ्यर्थनाकी ओरसे कुछ पुरस्कारकी आशा करती हैं।

"अपराह्नके समय नायक मेरे डेरोंमे फिर आये–उनके आते ही मैं जानगया कि मैंने सुन्दरी स्त्रियोंके द्वारा वंदी होकर उनके हाथसे जो उद्धार पाया है उस उद्धारका मूल्य किस प्रकार है, पिछले पांच सौ वर्ष पहिले मेवाडसे कोई राणा गुरलामे गये थे, इन चारणियोकी सम्प्रदायने उनको इसी प्रकारसे वंदी किया था, और जबतक राणाने उन सुन्दरी चारण कामिनियोंको भोजन न दिया, तबतक उन्होंने वंदीदशासे किसी प्रकार भी छुटकारा नहीं पाया। जिस जजीरने उनको वंदी किया–वह जजीर जैसी अमृतमय है वंदीको भी उसी प्रकारसे उस अवस्थामें अधिक दिनतक रहना नहीं होता। चारणियोंके प्रधान नेताने मुझसे कहा कि, मै राणाका प्रतिनिधि स्वरूप होकर यहाँ आया हूँ मैं उन चारण स्त्रियोंके द्वारा वंदी होनेके समय महा विपत्तिमे पडा था। उसने और भी कहा कि मै इस चिरप्रचलित रहस्यको किस भावसे ग्रहण करू, क्रोधित होगी या प्रसन्न होगी, यह स्थिर न करसका, इसी समय स्त्रियोंने मुझे छोड दिया। उसी कारणसे उनको भोज्य भी न मिलसका। परन्तु मैंने उन नायकसे कहा कि प्राचीन रीतिकी रक्षा करके मै अत्यन्त प्रसन्न हुआ हूँ, और तुरन्त ही मैंने उस चारण कामिनियोंके समीप प्रत्यभिनन्दन वचनोके साथ भोजके लिये रुपये भेज दिये। प्रधाननेता एवं अन्यान्य नायकोंने अपने पुत्रोंको लेकर बहुत समय तक मेरे साथमे प्राचीन कालके अनेक विषयोंकी बातचीत की थी"।

कर्नल टाड् साहब चारणोंके सम्बन्धमें फिर लिखते हैं कि "इस छोटी चारण सम्प्रदायके आदिपुरुष राणा हमीरके शासनकालके प्रथम समयमे उनके साथ गुजरातसे यहाँ आये थे। यद्यपि उस समयसे अबतक पाँच सौ वर्ष व्यतीत हुए है, तथापि चारण गणोंने अपनी जातिका कोई लक्षण रीति अधिक क्या आचार व्यवहार और पहरावेमे भी किसी प्रकारका अदल बदल नहीं किया। वह इस समय जिस जातिमें वास करते है, उस जातिका उनका किसी विषयके साथ कुछ भी सादृश्य दिखाई नहीं पड़ा। वास्तवमे वह सभी भारतवासियोंसे विपरीत दिखाई पड़े, यद्यपि उन्होंने हिन्दुओमे ऊंचा सामाजिक पद प्राप्त किया था, तथापि पारस राजवासियोंके साथ उनकी सदृश्यता विराजमान है। उन पारसवासियोका मेल चाल–ढाल, पहरावा ऊंची पगड़ीको देखकर

गुवरेसके मंदिरके उपासकोंकी समान जाना जाता है, इसको देखकर हिन्दुओंके चारों वर्णोंमेंसे किसी एक वर्णके कहनेका बोध नही होता; वह लोग किस कारणसे और किस प्रकारसे मेवाड़में आये और यहाँ आकर निवास किया था; इस स्थान पर मै उनके विस्तारसहित इतिहासको प्रकाशित करनेकी अभिलाषा करता हूं। मेवाड़के इतिहासमें ख्यात नामा–राणा हमीरके एक हाथके एक स्थान पर कुष्टरोगका चिह्न था, वह उस रोगसे आरोग्यता प्राप्त करनेके लिये मेकराणाके किनारे हिंगलाज तीर्थमें गये। यह कच्छभुजदेशकी सीमामें जाकर टांड़में चारणोंके वासस्थानके निकट जैसे ही घोड़े परसे उतरे कि वैसे ही एक चारणी युवती रसोई करनेसे उठकर आगे बढ़ राणाके घोड़ेकी रक्षाकार्यमें नियुक्त हुई। युवतीको अयाचित होकर उस भावसे अपनी सहायता करते हुए देखकर राणा हमीरने उसे धन्यवाद देकर कहा, आपने जो रसोई बनाई है, मेरे सेवक इसको पाकर भलीभांतिसे तृप्त होंगे। युवतीने उसी समय कहा, मैंने जो रसोई तैयार की है उसके देनेके लिये तइयार हूं। यह सुनकर राणाने कहा, हम लोगोमेंसे सभी भूँखे हैं, इस सामान्य अन्नसे किसीको भी शान्ति नही होगी। युवतीने उसी समय कहा कि "हिंगलाजोके आशीर्वादसे सबकी क्षुधा निवृत्त होजायगी" यह कहकर राणा और उनके सेवकोंको बैठाल कर उसने भलीभांतिसे सबको भोजन कराया, सभी भोजन कर तृप्त होगये। बहुत ही पास युवतीने जो एक छोटासा कुँवा खुदवाया था उसका जल पीते ही सभीकी तृष्णा दूर होगई। इससे सर्वसाधारणको विश्वास हुआ कि हिंगलाज तीर्थकी अधिष्ठात्री देवीने ही इस चारणी रमणी द्वारा राणा हमीरके ऊपर दया प्रकाश की है। वास्तवमें राणा हमीरने उस तीर्थके जलमें स्नान कर शीघ्र ही आरोग्यता प्राप्तकी। आरोग्य प्राप्तिके पीछे राणा हमीर उक्त चारणी स्त्रीके पिता माता और कुटुम्बियोंको साथ लेकर मेवाड़में आये। और उन चारणोंके रहनेके लिये यह मुरलादेश देदिया। चारणोंके पाससे किसी समय भी वाणिज्य पर महसूल नहीं लिया जाय यह आज्ञा भी देदी। चारणस्त्रीने राणा हमीरको इस प्रकारसे भोज दिया था, इसीसे उनके स्मृति चिह्न स्वरूपसे व्यवस्था कीगई है कि जो कोई राणा मुरलामें आवैगा चारणोंकी स्त्रियें उसको इसी प्रकारसे बंदी करके उसके समीपसे भोज पासकेगी।

इतिहासवेत्ता टाड् साहब फिर लिखते है कि " इस मुरलादेशमें इस समय कई हजार नरनारी वास करते हैं। यद्यपि इन चारणोंकी वासभूमिके चारोंओर कही कृषिकार्यका कुछ भी चिह्न दिखाई नहीं पड़ता तथापि वह लोग कैसे सुख स्वच्छन्दतासे जीवन व्यतीत करते है, इसको देखकर महान् आश्चर्य होता है। जितनी २ चारणोंके वंशकी वृद्धि होतीहै उतनी २ उस कच्छेदेशकी प्रचलित रीतिके अनुसार खंडरमें चारणोंके परिवारमें भी विभक्त होती है। अन्तमें उसीसे एक समय चारणोमें उसके लेनेमें महा झगड़ा उपस्थित हुआ, उसीसे आपसमें विद्रोह दिखाई दिया। उस जातीय युद्धमें बहुतसे चारण मारे गये; उनकी स्त्रिये प्रज्वलित चितामें चढ़कर जिससे आगेको फिर ऐसा समर उपस्थित न हो इसलिये यह निषेध वाक्य कह गई कि इस मुरलामें कोई भी खेती न करे। उसी समयसे सती स्त्रियोके निषेध वाक्यके अनुसार मुरलामें आजतक खेती

नहीं होती है, कहीं कोई क्षेत्रको कर्षण नहीं करता। जिस सती दाहकी रीति इस समय इस ससारसे दूरहोचली है उन सतियोके निषेध वाक्यकी ओर चारणोकी आजतक किस प्रकारसे भक्ति विराजमान है ? चारणोमे सती नामकी शपथ अर्थात् " महा सतियोकी आन, शपथ सबसे अधिक श्रेष्ठ है। राजकीय सनदपत्रमें यह शपथ वाक्य अधिकतासे प्रयुक्त होता है" ।

यहाँसे सात मील निम्बेरा है, यहाँसे रानी खेडेमे गये यह शहर बहुत बडा है, यहाँकी रानीने बहुत रुपया खर्च करके यह शहर बनवाया था, तथा मंदिर बावली बनवाये थे, वहांके लोगोने भंगीके सरावनकी शिकायत की कि उसने एक सुअर मारकर बावडी में डाल दिया जिससे लोग उसका पानी नहीं पीते और उनको दूर जाना पडता है, यह काम एक भगीने अपने कर्ज देनेवालेको दिक करनेको किया था, और वह भींदरको चला गया, उसको यह सजा मिली थी कि काला मुंह करा गधेपर चढाय जूतियोंका हार उसके गलेमे डाला गया और उस बावडीका जल निकाल कर उसमे गंगाजल डाल कर और ब्रह्मभोज कराकर उसको शुद्ध किया गया, हमने रानीखेड़ेको देखा हमारे पास लोग नकाशीके कामकी चीजें लाये, पीछे वहाँके एक रईस खान साहबसे मुलाकात हुई, वह हमको अपने स्थान पर ले गया और खातिरदारीके साथ हम उससे विदा हुए, शामको वह अपने डेरोमे आए और हमसे अपनी इच्छाये प्रगट कीं जिसका उत्तर हमने यथोचित दिया।

निम्बेरा बड़ा शहर है, इसकी दीवारें बड़ी दृढ़ है, यहाँका व्यापार अच्छा है, यहाँकी आमदनी तीनलाख रुपया है।

चतुर्थ अध्याय ४.



ऊपरमार देश-पाठारके शिरोभागसे रमणीय दृश्य दर्शन-नहर खुदवानेका प्रस्ताव करना-शुकदेवका मंदिर-दैत्यका हाड़-वीरस्तम्भ-अफीमकी खेती-बाबर अकबर और जहाँगीरका विदेशसे भारतमें विविधप्रकारके फल फूल और वृक्षोका लाना-अफीमकी खेतीकी रीति-अफीमसे राजवाड़ेका अनिष्ट साधन-वृटिश गवर्नमेण्टका अफीमका एक चेटिया व्यवसाय-एक चेटियाका विषमय फल।

भ्रमणकारी कर्नल टाड् साहब फर्वरी महीनेकी १२ वीं तारीखको कनेरो नामक स्थानमें जाकर लिखते हैं कि " आज मेवाड़राज्यका एक नवीन दृश्य मेरे नेत्रोंके सामने आया। कई कोश्श जानेके पीछे मैं मेवाड़के पूर्व सीमानेके स्वाभाविक दुर्ग प्राकारस्वरूप मध्य भारतके पाठार नामक स्थानमें पहुँचा। जितना मैं पाठारके सम्मुख जाता था, उतनी

ही आरावली शिखरकी अपेक्षा उसकी ऊंचाई घटती जाती थी, इसको दूसरी श्रेणीका शिखर वा ऊंची समतल भूमिके कहनेका अनुमान होता था। यद्यपि यह पश्चिमको भूपृष्ठसे चारसौ फुटसे अधिक ऊंचे नहीं थे, तथापि इसके ऊपरके भाग पर खड़े होनेसे नैतिक, राजनैतिक और प्रकृतिके सन्मुख ऐसा रमणीय दृश्य दिखाई देता था कि मैंने पहिले कभी ऐसा हृदयको हरण करनेवाला दृश्य नहीं देखा। इस स्थान पर खड़े होते ही मेवाड़के इतिहासकी समस्त प्रधान रंगभूमि मनके सन्मुख दिखाई पड़ती है। हमारे दक्षिणभागमें समस्त हिन्दू जातिके गौरवका स्थान चित्तौड़ विराजमान है। पश्चिमकी ओर आकाशको भेदन करनेवाले पहाड़ खड़े होकर नवीन राजधानी उदयपुर और उसके वीरोंकी रक्षा कररही है, और इस स्थान परके हम जिस स्थान पर खड़े हुए है, उसके चरणोके नीचे जावदा, जीरण, नीमच, निम्बेड़ा, खेरी और रत्नगढ़ इत्यादि देशोंको देखा जो पठान और महाराष्ट्रोंके द्वारा छीने जाकर उनके हस्तगत होगये हैं; इस रमणीक देशके निमित्त यथार्थ राजपूतके समान चित्तवालेके हृदयमे किस प्रकारके भावका उदय होसकता है—किस प्रकारकी आकांक्षाका उदय होगा सो पाठक स्वयं जान सकते हैं। मैं तो अंग्रेजी सत्तर मील एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्तमे घूमता आया हूँ। वह परम सुन्दर प्रदेश कहाता है। मृदुल नादिनी वहुतसी नदियां पहाड़ोंके शिखर पर नृत्य करती हुई चारों ओरको वह रही है, चारोंओर प्राचीन सौधावलीसे व्याप्त होकर ग्राम और नगरकी सुन्दरताको प्रकाश कर रही है। एक समय यह समस्त ग्राम और नगर मनुष्योंसे परिपूर्ण थे, परन्तु हाय! इस समय वह मनुष्योंसे शून्य हो रहे हैं। परन्तु किसी २ स्थान पर मानो फिर भी शक्ति और समृद्धिके पूर्व लक्षण दिखाई पड़ते हैं। इस ऊंचे स्थान पर खड़े होकर मुझे एक विशेप प्रयोजनीय कल्पनाका आन्दोलन हुआ था। मेवाड़की प्राचीन राजधानी उदयपुर तक एक विस्तारित नहर खुदवानेका प्रस्ताव मेरे मनमें उदय हुआ, उस नहरे खुदवानेके कामसे मेवाड़के समस्त क्षेत्रोंमे दश गुणा अधिक धान्य उत्पन्न होगा और यह दुर्भिक्षकी रीति सर्वदाके लिये दूर होजायगी। मुझे ऐसा विचार हुआ। परन्तु इस अभिप्रायके सिद्ध होनेका उपाय क्या है? धन कहॉ है? उस धनके अभावसे हमारी इस प्रकार अनेक आशाएं मनकी मनमें ही लीन होगई है। परन्तु हमारा इस समय भी यही विचार है कि यदि यह नहर खुदाई जायगी तो राणा जो केवल अपना देय करदेते हैं वह वचैगा यही नहीं वरन वह अपनी प्रजाके ऊपर विशेप

---

(१) कर्नल. टाड् साहव सर्वदाके लिये राजस्थानको छोड़कर अपने देशमें आये और आकर इतिहासको प्रकाश करनेके समय इस स्थानपर अपने टीकेमें लिखते हैं, "इस समय मैं अपनी स्मारक पुस्तकको देख कर इस इतिहासको लिखता हूँ मैं इस समय भी (इतिहासका छपना समाप्त होनेपर) कई वर्षके लिये इस सुखदाई उपत्यकायमें जाकर इस नहरके खुदवाने का समस्त दाहृत्व भार ग्रहण करनेके लिये तैयार हूं। यद्यपि मैं मेवाड़में एक दिनके लिये भी स्वस्थ नहीं था, तथापि मैं जानेके लिये तैयार हूं" राजपूतोंके वांधव टाड् साहवकी उदारता कैसी अद्वितीय है।

दया करेंगे, प्रजाके मंगल साधन करनेके लिये विशेष चेष्टा करना हमारा प्रधान कर्तव्य है "।

"यह पाठार नामक सम उच्च देशका शीर्षस्थल उपजाऊ और सजल मट्टीसे पूर्ण है, यहाँ आम, महुआ, और नीम बहुतायतसे उत्पन्न होते हैं, इस ऊंचे विस्तारित देशके अनेक स्थानोंमें धर्मसम्बन्धीय बहुतसे प्राचीन स्मृति चिह्न विराजमान हैं। जहाँ कहीं स्वाभाविक झरने उपत्यका पर दृष्टि आते हैं, उसी स्थान पर महादेवका लिंग स्थापित देखा जाता है, मैं जिस ऊंचे पर्वत पर चढ़ा था उसके एक कोश दूरीपर अंधकारमय पहाड़ी मार्गमें शुकदेवका आश्रम है; मैं इस मार्गको नही जानता था, तिस परमेरे साथमें घोर परिश्रम करनेवाला ब्राह्मण रामगोविन्द भी उस समय नहीं था इसी कारणसे मैं शुकदेवके आश्रमको न देखसका। परन्तु मैंने और २ मनुष्योंसे उस आश्रमके सभी जानने योग्य विषय पूछ लिये। शुकदेवका आश्रम जिस भाँति जन मानव शून्य और निराला है, उसी प्रकार अनेक भांतिके पुष्पोंसे शोभायमान है, पहाड़ोंके शिखरोंसे निकली हुई अनेक तरंगिनी आश्रमकी ओर बह रही हैं। उस पहाड़के शिखर पर शुकदेवजीकी मूर्ति स्थापित है, उस नदीकी एक ओर "दैत्यका हाड" नामवाला एक ऊंचा श्रंग है। यात्री किसी एक विषयका विचारकर अथवा पारलौकिक पुण्यका विचार कर उस ऊंचे दैत्यके हाड़परसे नीचे नदीमें कूदते हैं। उसको वीर कूदना कहते है यद्यपि उस परसे कूदकर सभीकी मृत्यु होजाती है परन्तु कोई २ बच भी जाता है। अधिकतर बहुतसी स्त्रियोंने पुत्रकी इच्छासे इस प्रकार नदीमें गिरकर प्राण त्याग किये हैं। एक मनुष्यने मुझसे कहा कि एक स्त्रीने शपथ की थी कि यदि मेरे पुत्र हुआ तो उसको गोदीमें लेकर मैं नदीमें गिरूँगी। ईश्वरकी इच्छासे उसके पुत्र होगया तब वह पुत्रसहित उस नदीमें गिरगई थी। आश्चर्यकी बात है कि दोनोंहीके प्राण बच गये। एक तेली कूदा था वह भी बच गया, इसी प्रान्तमें ओंकार नाथका मंदिर है।

कर्नल टाड् साहब फिर लिखते हैं कि "६०वर्ष वीते हैं कि चम्बल तक यह समस्त पाठार देश मेवाड़राज्यके अन्तर्गत था, परन्तु इस समय कुनेड़ोंके अतिरिक्त और सभी अंश सेंधियाके हस्तगत होगये है। बाईस गामोंमें कनेरी एक प्रधान नगर है, सौभाग्य वश वह किसी कारणसे फिर राणाके हस्तगत हो गया है। परन्तु बड़े कष्टसे महाराष्ट्रोंके कराल ग्राससे इसका उद्धार हुआ है। पहिले इसको अधिकारमें करके शेषमें स्वत्वके लेनेका विचार किया गया। हम इस प्रकारसे समस्त पाठारदेशको प्राप्त करते तो अच्छा होता परन्तु दुर्भाग्य वश उन समस्त अंशोको वृद्ध जालिमसिंहके मित्र और शान्तिप्रिय लाला जीवेलालने जमा कर लिया है। मैं फिर कहता हूं कि सेन्धियाने इन समस्त देशोंको केवल युद्ध व्ययके प्रतिभूस्वरूपमें राणासे अपने अधिकारमें करलिया था, यद्यपि वह सामरिक व्यय बारम्बार चुका दिया था तब भी सेन्धियाने इस देशको नहीं छोड़ा। सुभीता मिलने पर चम्बलके समस्त पश्चिमांसके पाठार प्रदेश फिर मेवाड़के महाराजको देदिये जायँगे "।

राजस्थानके परम हितैषी टाड् साहबने राजपूत किसानोंमें अफीमकी खेतीकी अधिक वृद्धिको देखकर महा दुःखित होकर कहा था, " विशेष प्रयोजनीय धान्यके बदलेमें अफीमकी जो खेती क्रमशः बढ़ती जाती है, प्रवल कानूनके द्वारा इसकी गतिका रोकना अवश्य कर्तव्य है। जब इस देशमें प्राचीन राजाकी प्रजामें पिता पुत्र सम्वन्ध मूलक रीतिके अनुसार शासनकार्य होता था, उस समय कृपिकार्यसे राजाका प्रधान कर लिया जाता था, और राजा इसका निश्चय स्वयं करदेते थे कि किस२ भूमिमें किस२ चीजकी खेती होगी। मेवाड़के प्राचीन कृपक विधानके सम्बन्धमें एक व्यवस्था यह भी थी कि प्रत्येक किसानकी भूमिमें एक बीघा (पोस्त) अफीमकी खेती होगी। परन्तु हमारे (अंग्रेज गवर्नमेण्ट) द्वारा इस अफीमका वाणिज्य एक चेटिया कर लेनेसे अफीमकी खेती सब जगह वहुतायतसे बढ़गई है, अधिक क्या कहैं जिस देशके किसान किसी समय भी अफीमकी खेती नहीं कर सकते थे इस समय वह भी अफीमकी खेतीकी ओर भलीभांतिसे मन लगाते है। हमारी राजनीतिका फल ऐसा नही पर इसीसे किसान प्रकृत आहार्य धान्यकी ओर ध्यान न देकर धनके लोभी होकर आप अपने स्वार्थका नाश करते हैं "।

साधु टाड् साहब फिर लिखते है " कि महामारी और युद्धके द्वारा इस देशके निवासियोंकी जितनी शारीरिक और नैतिक अवनति हुई है, एकमात्र इस अफीमके द्वारा उससे भी अधिक वहुत अंशोंमें अनिष्ट हुए हैं। इस कारण किस प्रकारसे वह सर्वनाश करनेवाली अफीम इस देशमें प्रचलित हुई, और किस प्रकारसे उसकी खेती हुई, इस स्थान पर उसके वर्णन करनेकी आवश्यकता नहीं है। वावर, अकवर, एवं जहांगीर इत्यादिकी समान अपनी जीवनीके लिखनेवाले वादशाहोंकी उस आत्मजीवनीको पढ़ कर हम जान गये हैं कि देशदेशान्तरोंसे अनेकभांतिके फलफूलोंके वृक्ष तथा वृक्षोंकी लता इस भारतवर्षमें वही लाये थे। उनके इस उपकारसे हम उन वादशाहोके निकट अवश्य ही ऋणी हैं। यद्यपि तैमूरके वंशधर अपने जन्म और शिक्षाके दोषसे अत्यन्त स्वेच्छाचारी थे, और उन्होंने राजपूतानेका महान् अनिष्ट साधन किया था, तथापि उनको हम सच्चरित्र, इतिहासलेखक, नीतिके जाननेवाले तथा योधासरूपसे जगत्‌में अपने सम सामयिक समस्त राजाओंकी प्रशंसाको संग्रह करते हुए देखकर अवश्य ही उनकी कीर्तिका कीर्तन करके गौरवका अनुभव करते है। मनुष्य जीवनके सुख, स्वच्छन्दता और विलासिता सम्बन्धी सब विपयोंमें तैमूरके वंशधरों ने राजपूतोके ऊपर सम्पूर्ण विधानता विस्तार की थी। राजपूत केवल कुसंस्काररूपी वेष्टनीमें पड़कर इसके सम्बन्धमे कोई उत्कर्प साधन करनेमे समर्थ न हुए। समरकंदकी राजसभाके साथ करगणाके राजाओंकी विशेष मित्रता थी, उस समरकंदके राजाओने अवश्य ही ऐश्वर्य आडम्वर और तीक्ष्ण वुद्धिके विपयमें संसारमें विशेष प्रधानता प्राप्त की थी। परंतु भारत विजेता अवश्य ही उस स्थानसे वंशगत शिक्षा प्राप्तिके ऊपर देश भ्रमण और जगत्‌के अन्यान्य प्रान्तोंके साथ क्रमशः वार्तालाप परिचय और संश्रव द्वारा अपनी उस सम्पूर्ण शिक्षाको भली भाँतिसे वढ़ाकर अभिज्ञताके वलसे विशेप

बलवान हुए थे। और इसीसे जिस समय वह प्रतिज्ञाके द्वारा हिमानी मंडित काकेशससे हिन्दुस्थानके समतलक्षेत्रमें आये, उस समय हजरत तैमूरके वंशधर बाबरने अपनी डायरी (दैनिक पुस्तक) में भारतवर्षका कोई दृश्य अथवा कोई घटना उनके नेत्रोंके सम्मुख नवीन बोध होती तो उसीको वह अपने हाथसे लिख लेते थे, किसी लिखनेको वह नहीं भूले थे। उन्होंने मध्य एशियासे इस सुवर्णभूमि भारत वर्षके समस्त विषयोंको भलीभांतिसे देखकर अपनी निरन्तर लेखनी चलाई थी। पृथ्वीके जिस किसी राजाने अपने हाथसे किसी ग्रन्थको निर्माण किया है तो उसमें बाबरका वह आत्मभ्रमण वृत्तान्तरूप साहित्य ही संसारमें अत्यन्त प्रशंसनीय है। इसमें कुछ संदेह नहीं कि प्राणीके सम्बन्धसे हो अथवा उद्भिज सम्बन्धसे हो जो उनके नेत्रोंके सम्मुख नवीन जचता था, उसके सम्बन्ध तकको वह इस पुस्तकमें वर्णन कर गये हैं। बाबरने जिस प्रकार वह भ्रमण वृत्तान्त और व्याख्या लिखी है, उस प्रकारसे किसी देशकी किसी पुस्तकमें भी वह सरलभाव और थोड़ेसे स्थानमें प्रयोजनीय समस्त विषयोंकी रचना दूसरी पुस्तकमें नहीं देखी गई, विशेष करके उन्होंने जिस देशके वृत्तान्तको वर्णन किया ठीक वैसा ही लिखा। उस समय लेखको अतिरंजित करके वर्णन करना एक चिर प्रचलितरीतिरूपसे गिना जाता था। पर उसने वैसा न किया। बाबरने जिस २ समय युद्ध किया उसी समयमें उनके जीवन और भविष्य उन्नतिके वक्षस्थल पर आघात हुआ, और जिस २ युद्धमें उन्होंने भारतवर्षके सिंहासन पर अधिकार पाया था उन सभी युद्धोंका वृत्तान्त उसमें वर्णन किया गया है"।

बादशाह बाबरके गुणोंके वंशको कीर्तन करनेके पीछे टाड् साहब लिखते हैं कि "अकबर बाबरके बताये हुए मार्ग पर चले थे, तथा फारिस और तातारदेशके किसान और उद्यानपालकोंको भारतमें लाकर उनके द्वारा फारिस और तातारदेशके पिश्ता, शफतालू बादाम, इत्यादि अनेक प्रकारके स्वादिष्ट फल उत्पन्न किये थे वह सब फल रजवाड़ेमें आजतक नहीं थे। बादशाह जहाँगीरके द्वारा लिखीहुई आत्मजीवनीको पढ़नेसे जाना गया है कि उनके शासन समयमें भारतवर्षमें तमाखू व ताम्रकूट आया था परन्तु सबसे पहिले पोस्तकी खेती किसके द्वारा भारतवर्षमें प्रथम आरम्भ हुई और इससे फिर अफीम बनकर तैयार हुई इसका हमनें कहीं भी कुछ वर्णन नहीं पाया। इसका औषध रूपमें व्यवहार बताकर कितनी ही प्राचीनता प्रकाशित कीजाय, किन्तु थोड़े दिनोंसे

(१) बहुतसे लोग कहते हैं कि अफीम, बाबर, अकबर व जहाँगीर सम्राटोंके द्वारा भारतवर्षमें लाई गई, सो यह उनका भूल है, प्राचीन समयमें भारतमें अफीमकी खेती होती थी, आयुर्वेदके मतसे इसका औषधि स्वरूपमें व्यवहार होता था, संस्कृतभाषामें इसको "अफेनम्"! खसखस रसम्" "निफेणम्" और "अहिफेणकम्" कहते हैं, इसका गुण राजनिघन्टु नामक प्राचीन पुस्तकमें लिखा है, "सन्निपात नाशित्वं" शुक्र, बल, मेह कारित्वञ्च।" यह अफीम चार प्रकारकी होती है, जैसे शुभ्रेत वर्ण ? अन्नजीर्णता कारक इसको जारण कहते है (२) कृष्णवर्ण-यह मृत्यु कारक है, और इसको स्मारण कहते हैं (३) पीतवर्ण। यह वय स्तंभन कारक है, इसको "धारण" कहते हैं; (४) करबूवर्ण-यह मलसारक है, और इसको "सारण" कहते हैं।

संसारमें बुरे व्यवहारोंमें वर्ती जाती है, तीन सौ वर्षके पहिले यह संसारमें नशेके लिये नही व्यवहार होती थी, हिन्दुस्थानके किसी प्राचीन वीर इतिहास, वा, काव्यके बीचमें इस अफीमका कोई लेख नहीं मिलता। आमंत्रित गणोंको पहिले "मनौआ का प्याला" नामक पान पात्र दियाजाता था, किन्तु उसमें अमल पानी वा अफीम नही दी जाती थी, मनौआ वा मनोहर प्याला अथवा पीनेके पात्रमें पहिले फूलका अर्क वा पुष्पका मधु ही पीनेको दिया जाता था, आजकल उसके स्थानपर अफीम दीजाती है। वर्तमान समयके अनुसार अफीम शुद्ध करनेकी रीतिके पहिले पोस्तकी डंडीके द्वारा जलके योगसे पीते थे। सभी लोग उसको तिजारो कह कर पुकारते थे–राजपूतानेके दूरदेशोंमें अव भी मनुष्य कुसंस्कार वशसे वर्तमान रीतिको न जानकर उक्त प्राचीनरीतिसे अफीम खाते हैं। अफीमकी खेतीके सम्बन्धमें कर्नल टाड् लिखते है, "पहिले चम्बल और सिप्राके बीचवाले भूखंडमे दोनों नदीके उत्पत्ति स्थानसे मिलनेके स्थानतक जो प्रदेश दुआव नामसे पुकारा जाता है, वहाँ अफीमकी खेती होती थी। यद्यपि पुरानी कहावतसे हम मध्य भारतके उक्त स्थानको अफीम का आदि क्षेत्र कह सक्ते हैं किन्तु अवतो केवल वही नहीं वरन समस्त मालवे और राजपूतानेके अनेक स्थानोपर विशेष कर मेवाड़ और हाड़ोती प्रदेशके वहुतसे भागमें अफीमकी खेती होती है। कुम्भी, जाट; वनियें और ब्राह्मण यह सभी अफीमकी खेती करते है। परन्तु कुम्भियोंसे और सव लोग इसमें हार जाते है, कारण कुम्भी ही पहिले पहिलके अफीमकी खेती करनेवाले है, इसीसे वह अफीमकी खेतीकी रीतिको भली भांतिसे जानते है अतएव वह अन्य अफीमकी खेती करनेवालोंसे अफीमके वृक्षसे पांच अंशका एक अंश अधिक अफीम निकालते है"।

यह एक आश्चर्यका विषय है कि जैसे २ रजवाड़ेमें सुख और शांति दूर होती जाती थी, वैसे २ अफीमकी खेती भी वढ़ती जाती थी। युद्ध और महामारी और दुर्भिक्ष ने जितना अपना प्रताप फैलाकर रजवाड़ेको जनशून्य कर दिया, इस सर्वनाशक अफीमकी खेतीसे भी उतना ही उत्कर्ष साधन हुआ था। मुगलशासनके सूर्यास्त होनेके पीछे जिस प्रकार महाराष्ट्रोंने भारतवर्षमें अपना वल विस्तार करके राजपूतानेको विध्वंस करदिया था, उसी प्रकार किसान लोग धीरे २ अन्य खेतीके वदलेमे केवल गेहूँ, जौ, और चनेकी खेती करनेमें प्रवृत्त हुए थे; अन्तमें जब मरहठे पठान और पिंडारियोंके अत्याचार इतने बढ़ गये कि किसानोंने सव खेतीको छोड़कर केवल अपने कुटुम्वको पालने योग्य गेहूँ आदिककी खेती की, और सव प्रकारकी खेती छोड़ कर एकमात्र अफीमकी खेतीमे मन लगाया। अफीमकी खेती वहुत थोड़ी भूमिमें होजायगी, और महाराष्ट्रोंके अत्याचार और उपद्रवोंसे इसकी रक्षा भलीभांतिसे कर सकैंगे, जव लूटनेवाले पठान इसको लूटनेके लिये आवेगे, तव इसके वदलेमें कुछ थोड़ासा रुपया देदिया जायगा, परंतु गेहूँ इत्यादिकी खेती करनेमें उसकी रक्षाके लिये वहुतसे मनुष्योका प्रयोजन है और जव महाराष्ट्रोंकी अश्वारोही सेनाका दल एक साथ ही खेतमे आ जायगा, तव समस्त धान्यके नष्ट होनेकी सम्भावना होगी, इसीसे किसानोने एकमात्र अफीमकी

खेतीको ही महाराष्ट्रोंके उपद्रवके समयमें उपयोगी जाना था। मेवाड़की सर्वसाधारण प्रजा पर जितने अत्याचार आरम्भ हुए थे आश्चर्यका विषय है कि मालवेमें उस प्रकारसे अफीमकी अधिक खेती होती थी। संवत् १८४० सन् (१७८४ ईसवी) में अत्याचार और उपद्रवोंके आरंभ होनेसे प्रजाने अन्यत्र भागना प्रारम्भ किया; संवत् १८५७ सन् १८०० ई० में प्राणभयसे अन्य देशमें भागनेवाले मनुष्योंकी संख्या अत्यन्त वढगई एव क्रमसे संवत् १८७४ सन् १८१८ ई० में सारा देश एकवार ही जनशून्य होगया। जितनी अफीम तैयार होती थी उतना ही उसका व्यवहार भी वढ़ता जाता था। विशेष करके विदेशमें भी इस अफीमकी खानगी वहुतायतसे वढ़ गई"।

"भागनेवाले मनुष्योंने चम्वलके किनारे मन्दसोर खाचरोदा नील और अन्यान्य निम्न मालवेदेशमें गमन किया। उन्होने वहाँ जाकर आपासाहव और उनके पिताके आश्रयमें शान्ति सहित निवास किया, आपा साहवने उस उपजाऊ मालवेमें स्वयं जाकर खेती की थी। आपा साहवने पहिले जो सव कूपादि खुदवा कर समस्त कृषि क्षेत्रका उत्कर्ष साधन और उन सव कूपादिसे कृषि कार्य किया था; नवीन किसानोंको उन सव क्षेत्रोंमें खेती न करने दी थी तव इन्होंने उनको रुपया दिया, और जिस भूमि पर उपजाऊ न होनेके कारण उसमें किसान खेती नहीं करते थे वही सव भूमि उनको खेती करनेके लिये दी। उन्होंने उसी धनसे कुएँ खुदवा कर खेती करनी प्रारम्भ करदी। इन उपनिवेशी किसानोंने गेंहू जौ इत्यादिकी खेतीको एकवार ही छोड़कर केवल मकईकी खेती की थी, और उसी खेतमें अफीम और गन्नेकी खेती आरम्भ करनी करदी"।

किस प्रकारसे अफीमकी खेती होती है उसके सम्वन्धमें साधू टाडू साहव लिखते हैं "खेतमें मकई तथा सनकी खेतीके होचुकने पर उसकी जड़ें उखाड़ कर पहिले जलादी जाती हैं। और पीछे सव खेतमें जल देकर उसको भली भांतिसे सींचते हैं, तव उसमें हल चलाया जाता है।

गोवरके खादको वहुत दिन पहिले तैयार कर रखते हैं। वर्षाऋतुमें एक वड़ा भारी गड्ढा खोदकर उसमें गोवरको रखते हैं, और वीच १ में वाँससे उस गोवरके छूछड़ोंको मिला देते हैं। जव उस गोवरका रस वनजाता है तव उसको खेतमें देते है, जिन किसानोंके गौ नहीं होती और जो गोवर मोल लेनेको समर्थ नहीं होते वह खाद देनेके लिये पशुपालकोंके साथ वंदोवस्त करके एक २ दल वकरी भेड़ोंका रात्रिके समय खेतमें वाँध रखते है। इसी कारण नियमित आहारसे पशुपालकोको पैसा देते हैं। वह पशु खेतमें जो मल त्याग करते हैं उसीका खादरूपसे व्यवहार होता है। छ सात वार हल और मोया दिया जाता है। जिससे जल सुभीतेके साथ जासकै इस लिये कुछेक ऊँचा करके मट्टीकी खाद दीजाती है। पीछे उसमें वीज वोकर जल देते हैं। उक्त जलदानके सातवें दिन पीछे या ग्यारहवें दिन वीज अंकुरित होता है, और पचीस दिनमें नये २ पत्ते निकल कर शोभायमान होजाते हैं, और जव सूखी हुई देखते तभी उसमें फिर जल देते हैं।

मट्टीके कुछेक दूर होने पर किसान अपने कुटुम्बसहित खेतमें आकर प्रत्येक वृक्षको उखाड़ कर श्रेणी वद्धभावसे आठ इञ्च अलहदा एक २ वृक्षको लगाते हैं। और वृक्षोंके चारोंओर मट्टी लोहेकी शलाकासे भर देते हैं। इस समयमें वृक्षोंका परिमाण तीन इञ्च ऊंचा होता है। एक महीनेके पीछे कुछ थोड़ा २ जल देना प्रारंभ करते हैं, मट्टीके सूखते ही फिर वृक्षोंके चारोओरकी मट्टी गोड़दी जाती है, दस दिनके पीछे फिर एक वार जलसे सींची जाती है, दो चार दिनके उपरान्त वृक्षके दो एक स्थानों पर कलियें निकल आती हैं। कलियोंके निकलने पर फिर एक वार वृक्षकी जड़में जल दिया जाता है। जल देनेके २४ वा ३६ घंटे पीछे वृक्षके समस्त फूल खिल जाते हैं फूलकी आधी पखड़ियोंके गिरते ही किसान फिर वृक्षकी जड़में जल देते हैं। जल देनेके पीछे सभी फूलोंकी वची बचाई पखड़ियें गिर पड़ती हैं, तथा फूलके नीचेका वीजाधार क्रमशः शीघ्रतासे वढ़जाता है। थोड़े ही समयमें उन सव फूलोंके गिरिजाने पर उस बीजाधारके गात्र पर एक प्रकारका सफेद चूर्ण दिखाई देता है, किसान उसको देखकर जान जाते हैं कि अव शीघ्र ही पोश्तकी डंडीको भेदन करना होगा।"

उस डंडीको तीन भागोंमें विभक्त करते हैं। एक भागमें तो उस प्रकारसे वीजके आधारका गात्र वेधन किया जाता है। जिस अस्त्रसे छेदन करते हैं वह छोटा त्रिमुखा और शलाकाकी समान होता है। जिससे वह अस्त्र भलीभाँतिसे वीजाधारमे प्रवेश न कर सकै और जिससे सार रस वीजाधारमें न रहने पावै, इस कारण वह वड़ी सावधानीसे उस भेदनकार्यको समाप्त करते है। वीजाधारके नीचेसे ऊपरके भागतकको जव चीर डालते है तव दूधकी समान रस निकल कर वीजाधारके ऊपर जमता जाता है। क्रमानुसार तीन दिनकत सूर्यके उत्तापके समय प्रत्येक वृक्षमें तीन वार करके उपरोक्त प्रकारसे भेदन कार्य करते हैं। प्रातःकाल ही उस रसको छुरीसे उस वजिाधर परसे छुटाते हैं। चौथे दिन प्रत्येक वीजाधार पर फिर एक वार पूर्व प्रकरणके अनुसार भेदन करके देखते हैं कि इसमें और भी रस है या नही। वह जमाहुआ रस जिससे सूख न जाय, इस लिये प्रतिदिन प्रातःकाल ही मसीनाके तेलके वर्तनमें भिगोकर रखते हैं, वीजाधारसे समस्त रस जब बाहर होजाता है तव उसमे केवल वीज ही रहजाता है। उस समय समस्त बीजाधारके वृक्षोंको उखाड़ कर किसान अपने २ घर लेजाते हैं और मट्टीमे रख कर उसके ऊपर कुछ एक जल सींच एक वस्त्रसे ढक कर उस भावसे प्रातःकाल तक रखते हैं। पीछे प्रातःकाल ही पशुओंके पैरोंसे उन सव वीजाधारोंको दबाया जाता है, तब उसमेंसे सब वीज वाहर निकल आता है। किसान उसें बीजको पोश्तका तेल तय्यार करानेके लिये तेलीके घर भेज देते है, और वीजका अन्य पतित अंश जला डालते हैं, कारण कि पशुओंके उस विषैली वस्तुके खानेसे घोर अनिष्ट होनेकी सम्भावना है। मेवाड़के अन्य तेलोंकी अपेक्षा वह तेल अधिक प्रकाश देता है। किसानों ने जो हिसाब किया है कि एक मन बीजसे दो सेर अफीमका रस तैयार होता है, एकसौ बारह मन बीजका मूल्य इस समय १२५) रुपया है"।

कर्नल टाड् साहब फिर लिखते हैं कि मालवेकी एक वीघा जमीनमें पावसे पौन-सेर तक अफीमका रस बनता है। किसान इस प्रकारसे रस संग्रह करके व्यापारियोको प्रचलित मूल्यके अनुसार अफीम वेचते हैं। वह व्यापारी उस अफीमके रसको कपड़ेकी थैलीमे रख कर घर लेजाते हैं, खरीदनेवाले पहिले पोस्तके पत्तोका संग्रह कर लेते हैं, दो तीन इञ्च पोस्तके पत्ते विछाकर उस पर पोस्तके डोरोंमेंसे अफीमको विछा कर उन पत्तोंको मोड़कर ढक देते हैं, और पाँच महीने तक इसी अवस्थामें रहने देते है, यदि रस पतला है, वा तेल मिला है तो दश अंशका सात अंश सार पदार्थ रह जाता है, और यदि शुद्ध रस हो तो उसमें सार पदार्थ आठ अंश निकलता है। व्यापारी लोग पीछेसे उस सार पदार्थको राजपूतानेमे से खरीदते और विदेशमे लेजाकर वेचते है। मध्यम दरजेकी अफीमके सम्बन्धमें टाड् साहबने पीछेसे लिखा है कि "माही नदीके किनारे कन्थल नामक प्रदेशमें (जिसमें प्रतापगढ़ देवलिया शामिल है) बहुतायतसे अफीम होती है, और वहांके किसान लोग उसमें एक वस्तु मिलाते हैं, वह मिलीहुई अफीम चीनमे मालवेकी अफीम कहा कर विकती है, और उसका मूल्य भी कम मिलता है, नीचे लिखी हुई रीतिसे वह द्रव्य मिलाया जाता है, उत्तम गुड और गोंद बराबरले, उससे आधी उसमे अफीम मिलाय चूल्हे पर चढाते और नीचे भलीभांतिसे अग्नि प्रज्वलित करते हैं, उन सब वस्तुओके भलीभांतिसे मिलजाने पर कढ़ाईको उतार लेते है, ठंढी होने पर उसको पोस्तके बीचमे रखकर तेलकी हांड़ीमे रखते हैं, यह अफीम अत्यन्त हानिकारक है, राजपूतानेके लोग इसका कभी सेवन नहीं करते" । संवत् १८५७ मे अफीमका बाजार १६ से इक्कीस रुपये सलीमशाही एक ओलियन था संवत् १८७६ में ३८ वा ३९ रुपये तक है।

टाड् साहब फिर लिखते हैं, "पिछले चौवालीस ४४ वर्षसे इस हानिकारक अफीमकी खेती जो इस देशमे प्रबल हो चली है, ऊपर जिसका विवरण लिख आया हूं वही अनिष्टकारक अफीमका विवरण है, वृटिश गवर्नमेण्ट इस समय अपनी इस अफीम की खेतीको वढाना चाहती है, किन्तु उसमेसे इस रीतिको छोड एक कानून बनावें और उसके जरियेसे यह महाहानिकारक अफीम तैयार न होसके ऐसी व्यवस्था करदे। ४४ वर्षोसे विना मिलावकी अफीम जिस भांति बनती आई है इस रीतिके चलानेकी धारा जारी करै तौ आगे होनेवाले राजपूत इसका सेवन न करेंगे । और सद्व्यवहार और सुन्दर व्यवस्थाके होजानेसे अवश्य ही मेरी प्रशंसा करेंगे।

हमारी खमेलमें अफीमके व्यवसायको छोड़ देनेसे हानि होगी, यह नहीं मानना चाहिये, वरन इस कामको करना हमारा धर्म है यह मानना चाहिये, अफीमके सेवन करनेसे प्रजाकी शारीरिक और आर्थिक हानि होती है, और प्रतिदिन अवनति ही होती जाती है, इस खेतीके बदले रुई नील, ईख और उत्तम फसलकी खेतीके बढ़ानेमें सहायता करनेसे सर्व साधारणकी आयु, धन, और बलकी वृद्धि हो सकैगी। मै राजपूतानेको राजनैतिक पतनके मुखसे उद्धार किया चाहता हूँ-किन्तु केवल

राजपूतानेकी स्थाई रक्षा करनेसे क्या होगा, उसके नैतिक बल और उसके अन्य स्थानों मे भी इसकी खेती रोकनी चाहिये, कविवर बैरन साहबने ग्रीसके सम्बन्धमे कहा है ।

"T' is Greece but living Greece no more"

इसको ग्रीस कहते है-किन्तु जीवित ग्रीस अब नही है, हम भी उन्हीके समान रजवाड़ेके सम्बन्धमें कह सकते है कि यह रजवाड़ा कहा जाता है, परन्तु यह जीवित रजवाड़ा नहीं है ।

अफीमके सेवनसे युवा अवस्थामे ही मन और बुद्धिको स्फुरणशक्तिकी हानि होती है- शरीर आलसी और असाहसी होजाता है, मैं अपनी बुद्धिके अनुसार जो इस विषयमें कहता हूँ उसको अपनी शक्तिके अनुसार पूर्व कहीहुई बातको काममे लानेकी चेष्टा भी करता हूँ । मैंने सिंहासन पर विराजमान राणासे लेकर सामान्य दरजेके मनुष्य तकसे इस बातकी शपथ कराली है कि वह कभी भी अपनी प्यारी संतानको इस प्राणनाश करनेवाली अफीमका सेवन न करावें । किन्तु केवल शपथ करा लेनेसे ही क्या होगा जब तक कि वह अफीमकी खेतीका करना न छोड़ेंगे ।

यदि किसान लोग इस जमीनमें इस खेतीके बदले अन्न गेहूँ आदिकी खेती करे तो इसमें बड़ा लाभ हो ।

पंचम अध्याय ५.

धारेश्वर-रत्नगढ़ खेरी-चारणोंका उपनिवेश-छोटा अतवा-डूंगरसिंह-शिवसिंह-कालामेघ-उमेदपुरा-वहांके सामन्त-सिंझोली-भवानीका मंदिर-राणा मुकुलकी स्मारक लिपि-हाड़ाजातिका प्रवाद वाक्य-आलूहाड़ा ।

महात्मा टाड् साहबने १४ फर्वरीको धारेश्वर नामक स्थानमें जाकर लिखा है कि " कुनेरोंसे धारेश्वरतक डेढ़ कोशका रास्ता क्रमानुसार नीचेको आया है, उस डेढ़ कोशके रास्तेमें आधे स्थानकी मट्टी उपजाऊ है, और आधे स्थानमे पत्थरोंके बड़े २ टुकड़े पाये जाते है । धारेश्वर ग्राम एक अत्यन्त सुन्दर रमणीक स्थानमें बसा हुआ है, सामने ही निर्मल जलवाली नदी बहरही है, इसके दाहिनी ओर ऊंचे २ वृक्षोंका शोभायमान वन है । कितने ही कछवाहे राजपूत यहांकी पृथ्वीके अधिकारी है । परन्तु वह करस्वरूपसे बहुतसा रुपया कुनेरोंके अधीश्वरको देते है । सूर्योदयके होते ही हम बहुतसी छोटी २ कुटियोंसे पूर्ण ग्रामको लांघ कर आये, देखा कि बहुत सी हरिणियां हमारी ओरको देखती हुई धीरे २ जारही हैं, वह मार्ग इतना पथरीला है कि उस पर घोड़ेपर सवार होकर हरिणियोको शिकार करना असम्भव है " ।

रत्नगढ़ १५ फर्वरी—रत्नगढ़ खेरी, यहांसे साढ़े आठ कोश दूर है। धारेश्वरसे एक कोश दूर कुनेरोकी सीमाका अन्त हुआ और खैरीके चौरासी ८४ ग्रामोकी सीमा आरम्भ हुई है, यहांसे खेरी तक मार्ग क्रमानुसार धीरे २ ऊँचा होगया है, परन्तु उसकी ऊंचाई मेवाड़के आभ्यन्तरिक समतल क्षेत्रमें एकसौ फुट ऊंची नहीं होगी। मार्गके चारोंओर जंगल है, और पत्थरोंके टुकड़े उसमें विराजमान हैं, परन्तु स्थान २ पर मार्गके आस-पास काले रंगकी श्रेष्ठ मट्टी पाई जाती है। हम बराबर धारेश्वर "नाला" नामक एक छोटी नदीके किनारे होकर गये, वह नदी एक ऊचे शिखर परसे बड़े तीक्ष्ण वेगसे नीचेको गिरकर अद्भुत दृश्य दिखा रही है, कितने ही छोटे२ ग्रामोमे होते हुए हम अन्तमें चारणोंके एक उपनिवेशमें जा पहुँचे। वहाँ मुरलाके रहनेवाले कितने ही बन्धुओंके साथ हमारा साक्षात् हुआ। जो चारण वंदी करनेके स्वत्वसे स्वत्ववान थे, वह लोग उसको नहीं भूले केवल यहांको चारण स्त्रियोमे सभीको वृद्धा कहकर उनके द्वारा उस प्रकार संगीत करते हुए वह हमको वंदी न करसके—इसीसे वह उतने प्रसन्न नहीं हुए। मै यहाँकी वृद्धाचारण स्त्रियोके कलशेमे पाँच रुपये भोजन करनेके लिये देकर इस स्थानसे चला आया खेरीके किमासदार शिखर परके रहनेवाले अपने किलेमेंसे दोसौ अश्वारोही और पैदल सेना लेकर हमारा सत्कार करनेके लिये आगे बढ़े, वह वृद्धलाल-जीवेलालके कुटुम्बी थे, वह जैसे बुद्धिमान् थे उसी प्रकार भद्र मनुष्य थे। हमारे सब डेरे नगरके पास ही पड़े हुए थे। वह पंडित मुझे बड़े आदर सत्कारसे वहाँ लेगये। हमारे परम मित्र लालजीने तथा उनके अधीश्वर प्रभुने सेधियाके प्रतिनिधि स्वरूपसे (जिन सेन्धियाके डेरोमें हम बारह वर्षतक रहे थे) अभ्यर्थना करके विदा ली। और जानेके समय वह मुझे किलेमें आनेके लिये कह गये, परन्तु उस किलेमे प्राचीन कोई वस्तु देखने योग्य नही थी, और इनका निमन्त्रण स्वीकार करनेसे इनके अधीश्वर मनही मनमे विरक्त होंगे, इस कारण मैंने उस निमन्त्रणको स्वीकार नही किया"।

"रत्नगढ़ खेरीके चौरासी ग्राम हैं संवत् १८२८ सन् १७७२ ईसवीमें युद्धके खरचे के पलटेमें माधोजीने सेन्धियाको यह देश दिया था, संवत् १८३२ तक उनके राजस्व की रीतिके अनुसार हिसाब किताब रक्खा गया। इसके पीछे वह देश सेन्धियाके जामाता बरजी तापको देदिया, इसी कारणसे वह मेवाड़से सर्वदाके लिये छीना गया है मेवाड़के सोलह सर्वप्रधान सामन्तोंमेंसे वेगूके सामन्तकी विश्वासघातकताके कारण यह देश राणाके अधिकारसे निकल गया। यह स्थान उक्त वेगूके सामन्तके अधिकारी देश से लगाहुआ था, सामन्तनें राजभक्तिकी जड़में पदाघात करके इसको अपने अधिकारमे कर लिया, राणाने सेंधियाके उक्त सामन्तको निकाल कर चौरासी पर अधिकार करनेके लिये सहायता करनेको कहा। महाराष्ट्रनेता सेन्धियाने उस सुअवसरमे केवल चौरासी पर ही नही वरन वेगू देशतकको अपने अधिकारमें करलिया। और अन्तमें वेगूके सामन्तसे बहुतसा धन ग्रहण किया, और सामरिक व्यय करनेके लिये वेगू देशके ४० ग्राम गिरोरूपसे अपने हाथमें कर लिये। इस स्थानसे प्राकृतिक दृश्य अत्यन्त रमणीक दिखाई देता है। पंडितजीने ऊँचे शिखर परसे खड़े होकर नीचेको खेरी तक देखा (वह

कह सकता था कि मैं उन सबका राजा हूं जो मेरी दृष्टिके नीचे है) यदि सफल होनेकी संभावना होती तौ इस देशमे उसका कैसा अधिकार है उसके सम्बन्धमें मैं विवाद कर सकता था"।

कर्नेल टाड् साहब चार कोश दूर छोटे अतवा नामक स्थानमें जाकर लिखते हैं, "कि यहांका किला पर्वतकी जड़में वना हुआ है, और भलीभांतिसे उत्तम रीतिसे वना हुआ दिखाई आता है। किलेके जिस ओर सरलतासे जाया जाता है, उसी ओर फिर नवीन गठन हुआ है। राज्यकी साधारण शांतिके भंग होनेके समय इसका गठन कार्य स्थापित था। परन्तु वास्तवमें यदि दो तोपोंसे इस किलेके ऊपर क्रमानुसार गोलोंकी वर्षा की जाती तो यह संदह होता है कि २४ घंटे तक इस किलेकी रक्षा होसकती है या नहीं; कारण कि किलेके वहुत घेरे ही शिखरके ऊपरी भागसे किलेके बीचका हिस्सा सव दीखता था। हम पथ प्रदर्शकसे पूछते हैं कि यह किला किसी समय शत्रुओसे घिरा था, या नहीं, उसने कहा कि नहीं, यह किला तो कुमार है जवतक कोई किला शत्रुओंसे न घेरा जाय तवतक वह किला क्वारा रहता है।" हमने शिखरके ऊपरी भागपर खड़े होकर प्रकृतिका परम रमणीय दृश्य देखा।

"उस किलेसे दो कोश दूर पर हम और एक ऊंचे शिखर पर स्थापित अमरो नामक ग्राममें गये, वहांसे वांई ओरको तारागढ़ देखा। उस किलेमें एक प्राचीन खुदी हुई लिपि है यह जानकर एक पण्डितको उस लिपिके लानेके लिये भेजा। आधे कोशसे चलकर हमने और भी कुछ एक ऊंचे शिखरको देखा, और सुना कि उस शिखरसे क्रमशः पठारकी सीमा चम्बलके किनारे तक समाप्त हुई है"।

"छोटा अतवा देश भी वेगूके मेघावत सम्प्रदायके अधिकारमें था, अधीश्वरका नाम डूंगरसिंह है। यह भी मेरे साथ यहाँ आकर मिले। यही कुछ काल पहिले पाठारमें सर्व प्रधान दस्युरूपसे गिने जाते थे। उन्होंने अत्यन्त तस्करता करनेके लिये यद्यपि इस समय कुछ गर्व नहीं किया, परन्तु उस कामसे मनुष्य उन पर घृणा करेंगे यह भी नहीं विचारा। यद्यपि वह उस देशके एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्ततक सर्वोपर छापा मार लूटते रहते थे, परन्तु विशेष कर मरहठों पर ही अधिक अत्याचार और उपद्रव करते थे। उनके पूर्व पुरुष 'कालामेघ' कहला कर प्रसिद्ध हुए थे। इन्होंने भी उसी भांति कीर्ति पाई। इनके नामसे आजलों इस प्रदेशके मनुष्य काँपते है—"डूंगरसिंह आया" इस शब्दसे सभी व्याकुल हो अपने धन और प्राणोंकी रक्षाके लिये उद्योग करते है। मरहठोंके साथ इन डूंगरसिंहके विवादका विशेष कारण था, मरहठोंने ही उनके पितासे नादोला और उक्त चौरासी गांव छीन लिए थे। और सेन्धियाने उनके पहाड़ी देश अपने हस्तगत करलिये थे, इसी प्रकारसे अन्तमें हुलकरके हस्तगत हुए। परन्तु डूंगरसिंहके पिताने हुलकरको ऐसा भड़का दिया कि उसने अपने नौकरोंके साथ मिलकर प्रजापर घोर अत्याचार करने प्रारंभ करदिये। अंतमें हुलकरने उनको चारोंग्रामोंका अधिकार वंशानुक्रमसे देदिया। वीस वर्षके

बीतने पर वह चारोंग्राम फिर छीन लिये गए तब वह अस्त्र शस्त्र धारण कर अपने पुत्र डूंगर सिंहको लेकर सुसज्जित हुए। यह अपने कुटुम्बकी निर्विघ्नतासे रक्षा करनेके लिये महापुराके राजाके समीप जाकर नंगी तलवार हाथमें लिये शत्रुओंसे बदला लेनेको प्रवृत्त हुए। पिता श्योसिंह, पुत्र डूंगरसिंह, और भी अनेक वीर तेजस्वी राजपूत संहारमूर्ति धारण कर बदला देनेके लिये प्रत्येक ग्रामको लूटते हुए अंतमें मालवेके भीतर जा घुसे। और वहाँकी समस्त धन सम्पत्तिको लूटकर अपनी पार्वत्य वासस्थली छोटे अतवामें ले आये। परन्तु श्योसिंह घोर शत्रुओंसे घिर रहे थे। उनके शत्रु उनको विपत्तिमें रखनेकी सर्वदा चेष्टा करते थे। एक दिन श्योसिंह अपने पुत्रसहित बहुतसे श्रेष्ठ बैल लिये अपने ग्राम-को जा रहे थे, कि इसी अवसरमें महाराष्ट्र नेता भाउसिंहने गुप्तभावसे रक्खी हुई एक अश्वारोही सेनादलके साथ अचानक आकर इन पर आक्रमण किया। पिता पुत्र दोनों ही उत्तम घोडो पर सवार थे, इस कारण शत्रुसेनाकी सख्या अधिक देखकर बड़ी शीघ्रतासे घोड़ा चलाकर मडलगढ़ नामक ग्रामकी ओरको चले। उस महाराष्ट्री घुड़सवारी सेनाने भी उनका पीछा किया। परन्तु पिता पुत्र दोनोंने ही एक नालेके भीतरको घोड़े चला दिये, पिता श्योसिंहका घोड़ा जलमें डूबगया। इस कारण वह महाविपत्तिमें पड़े, यह वारवार जलमेंसे उछलते कूदते थे कि इसी अवसरमें एक महाराष्ट्रने एक बड़ा तीक्ष्ण भाला इनकी कमरमें मारा, जिसके लगते ही इनका प्राणपक्षी उड़गया। युवक डूंगर-सिंह अपने पिताकी अपेक्षा सौभाग्यशाली थे इस कारण वह शत्रुओंका तिरस्कार करतेहुए सबके देखते देखते नालेके पार होगये। महाराष्ट्रोंको उस प्रकारसे नालेके पार होनेका साहस न हुआ। अन्तमें डूंगरसिंहने नालेसे अपने पिताकी ल्हाशको निकालकर एक कपड़ेमें बांधकर घोड़े पर रख लिया, और आधी रातके समयमें वहांसे चल कर अपनी पितृभूमि नदोवाईमें आकर उन्होंने पिताके शवका सत्कार किया। यद्यपि मरहठोंने वीर तेजस्वी शिवसिंहके प्राणनाश किये थे परन्तु उससे अशान्तिकी कुछ भी घटती न हुई, वरन डूँगरसिंहके हृदयमें प्रतिहिंसाके प्रज्वलित होते ही वह अशान्ति और भी बढ़ गई, अंग्रेज गवर्नमेण्टके इस शांति स्थापनके पूर्व कालतक डूँगरसिंहने उसी प्रकारसे घोर अत्याचार मरहठों और प्रजापर किये। जब डूंगरसिंहसे टाड् साहबने कहा कि नादोवाईके प्रधान कर्मचारी गणोके साथ आप अनेक प्रकारके कठोर उपद्रव करते हैं, तब उन्होंने बड़ी सरलतासे उत्तर दिया कि जैसे होगा वैसे हमें अन्त तो संग्रह करना होहीगा? महाराष्ट्रगण हमारी पितृभूमि पर अधिकार किये है, इसी कारण उन्होने चोरी करनी प्रारंभ की है। मैंने महाराष्ट्रोंसे कुछ थोड़ी सी भूमि लेकर फिर डूंगरसिंहको देदी"।

साढ़े चार कोश दूर सिङ्गोली नामक स्थानमें १७फर्वरीको जाकर कर्नल टाड् साहब ने लिखा है "कि यह आंतरी नामक जिलेका एक उपविभागका पट्टेका प्रधान नगर है। इसके चारोओर पर्वत शोभायमान हैं। भामूनी नदी इस देशमें बहती है। यहाँकी भूमि उपजाऊ है इस कारण अनेक प्रकारका धान्य यहाँ उत्पन्न होता है। पाठार ग्रामकी कुटियोंकी दीवारें मट्टीकी बनी हुई बड़ी ऊँची हैं, और उनकी छतें फूससे छाई

हुई हैं। अधिक क्या कहैं उमेदपुरा नामक जिस ग्राममें स्थानीय सामन्तके चचा रहते हैं, उनके रहनेका स्थान भी सर्वसाधारणकी समान है। जिस कुटीमें विलायतके दीन दरिद्री किसान तक भी नहीं रह सकते। अत्यन्त दीनदशा और शोचनीय अवस्था होने पर भी स्थानीय सामन्त अपने अधीश्वर प्रभू वेगू सामन्तके सहित वृटिश एजेण्टकी ओर सम्मान दिखानेके लिये अपने पुत्र भतीजे और पन्द्रह कुटुम्बियोके साथ आये, इतनी शोचनीय अवस्था क्यों थी वह यही कि ऊंचे वंशमें जन्म था, और वंशका ऊंचा भाव किसी प्रकार भी लुप्त नहीं होसकता, यह वात उमेदपुरावाले पहाड़ी सामन्तोंके द्वारा विलक्षणरूपसे प्रमाणित हुई है। राजपूत मृगयाके समयमें जिस प्रकार शब्जरंगका अंगरखा और उसी रंगकी पगड़ी वाँधते थे, उमेदपुराके सामन्त भी उसी वेशसे वर्छी हाथमें लेकर एक वलवान घोड़े पर सवार होकर आये थे। घोड़ेका पहरावा भी उनके प्रभुकी समान आडम्वर शून्य था। उन सामन्तके नौकर भी उनके साथ पैदल आये, वे सव पाठारकी वनैली हरिणियोकी समान सदा प्रसन्न चित्त थे, और विचार उनका चिन्ता हीन था, इस वातको वह कुछ भी नहीं जानते थे कि विलासिता किसको कहते हैं, वह डेरोंतक हमारे साथ आये, तव मैंने सामन्त और उसके पुत्र और भतीजेको वहुत सुन्दर लालरंगकी पगड़ी और कितनी ही विलायती वारूद उपहारमें देकर उसको विदा किया। उन्होंने भी महा प्रसन्न होकर मुझसे विदा ग्रहण की। वीचौरसे जो मार्ग मेवाड़के मैदानसे पाठारको जाता है उसका यह कालामेघ वेगूवाला अधीश्वर है।

"सिङ्गौली जैसा स्थान है अथवा यह जिस भावसे स्थापित हुआ है; इससे इसको एक अच्छा नगर कहा जासकता है। इसके चारोंओर अभेद्य दीवारें है, यहां पन्द्रह सौ मनुष्योंके घर वने हुए हैं। यहांके अधीश्वर पंडित है। सुशासनके प्रभावसे इस देशके चारोंओर अराजकताके विराजमान होने पर भी इन्होंने अपने अधीनके देशको सर्व गुण सम्पन्न कर दिया था। नगरके वीचोंवीचमें आलूहाड़ाका वनाया हुआ किला विराजमान है। पण्डितजीने उसीकी दीवारसे लगाकर एक नवीन सुन्दर महल वनाया उस महलके चारों ओर ऊँची २ दीवारें हैं। इसका व्यास प्रायः एक कोशका है। उत्तर पश्चिम प्रान्तसें आध कोश दूरी पर विजयसेनी भवानीका मंदिर टूटा फूटा दिखाई पड़ता है। मैने एक खुदी हुई पत्थर पर लिपिको देखा, उसमें मेवाड़के अधीश्वरका निम्नलिखित दान खुदा हुआ है, संवत् १४७७, सन् १४२१ ई० आश्विन भृगुवारको महाराज श्रीमुकुलजीने विजय सेनी भवानीके मंदीरमें प्रकाश करनेके लिये तथा उनका निर्वाह करनेको डेढ़ वीघा जमीन दी। जो कोई मनुष्य इस भूमिको लेगा देवी उसका विध्वंस करेंगी, मेवाड़के प्रसिद्ध राणा मुकुलजीने देवीके मंदिरमें दीपक जलानेके लिये यह भूमि दी थी, मुकुलजीने शीशोदियोंके कुलमें विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की थी। रायपुर नामक स्थानके घोर युद्धमें इन्होंने दिल्लीके वादशाहके एक पुत्रको मारडाला था। विख्यात लालवाई इनकी कन्या थी"।

" इस पाठार देशमें हाड़ाजातिके वल विक्रम तथा शासनके सम्बन्धमे बहुतसे प्राचीन वाक्य आजतक सुनाई देते हैं। बहुत पहिले हाड़ाजातिने इस पहाड़ी देशमे निवास करके इस राज्यकी रक्षा करनेके लिये स्थान २ पर बारह किले बनाये थे, उन सब किलोंके टूटे फूटे अस आजतक दिखाई देते हैं। यद्यपि हाड़ाजातिके राजा, " पाठारके अधीश्वर " नामसे पुकारे जाते थे तथापि मेवाड़के राजाको अपना प्रभू जान कर वे उनकी आज्ञाका पालन करते थे; उन बारह किलोंमेंसे रत्नगढ़ नामका किला एक वार भी विध्वंस नहीं हुआ, पाठारके दिलवार गढ़ नामक किलेका टूटा फूटा अंश इस समय तक भी दिखाई पड़ता है। उसी किलेको लेनेके लिये एक समय बेगूके मेघावत सम्प्रदायके साथ ग्वालियरके शक्तावतोका भयंकर विवाद और युद्ध हुआ था। परा नगर वा पारोली नामका किला उस स्थानसे कुछही दूर है। इन किलोंमे बमोदाका किला सब-से अधिक प्रसिद्ध है, वह पश्चिमकी सीमामें स्थापित है, उस किलेके ऊपरसे मेवाड़के समस्त समतल देश दीखते हैं। यद्यपि कईसौ वर्ष पहिलेसे हाड़ा जाति इस पाठार देशसे भाग गई थी, किन्तु तौ भी बमौदाके आलूहाड़ाका नाम आजतक यहाँ विख्यात है, और जो वनके भील पशुओंकी समान केवल जंगलके वनके फल मूलादिका आहार करके समय व्यतीत करते थे। उनमे भी आलूहाड़ाका नाम भली भांतिसे विदित है। हमारी यह इच्छा है कि अन्य मार्गसे होकर आनेके समय पाठारके आलूहाड़ाका वासस्थान देखैं इसी कारणसे मैंने आलूहाड़ाके बलविक्रमकी एकमात्र कहानी इस स्थानपर वर्णन की है।

" एक समय आलूहाडा मृगयासे लौट कर आरहे थे कि इसी अवसर पर मार्गमे एक चारण इनको मिला और उसने इनको आशीर्वाद दिया। परन्तु उस आशीर्वादके बदलेमे चारणने कहा कि " आपके शिरपर जो पगड़ी बँध रही है वह मुझे दीजिये और कुछ मुझे नहीं चाहिये "। आलूहाड़ा उसके यह वचन सुन कर महा आश्चर्यमे हुए परन्तु कविके क्रोधित होनेसे पाठारमें बड़ी निन्दा होगी, इस भयसे उन्होंने उसी समय अपने मस्तकसे पगड़ी खोल कर चारणको देदी। चारणने बड़ी शीघ्रतासे उसे अपने शिरपर बाँधकर आशीर्वाद दिया कि " आप हजार वर्ष तक जीवित रहैं " यह आशीर्वाद देकर विदा हुआ। चारण शीघ्र ही मरुदेशकी राजधानी मंडोरमें आया। मंडोरपतिके निकट आकर चारणने राठौर जातिकी जय उच्चारण कर बाँये हाथसे उस पगड़ीको उतार अपनी बगलमें रखकर दहने हाथसे मंडोरपतिको आशीर्वाद दिया। चारणको इस प्रकार अनियमित रूपसे दहने हाथसे अभिवादन करते हुए देखकर मंडोरपतिने कारण पूछा, यह क्या? चारणने कहा, ' आलूहाड़ाकी पगड़ी संसारमें किसीके निकट नहीं झुक सकती मेवाड़के पहाडी देशके एक अत्यन्त सामान्य अपरिचित सामन्तके प्रति चारणको ऐसा सम्मान दिखाते हुए देख कर मरुदेशके प्रभुने अत्यन्त क्रोधित होकर चारणके हाथसे वह पगड़ी लेकर सभाके कमरेसे बाहर डालदी। आलूहाड़ाने चारणको जो पगड़ी दी थी वह बात वह एक बारही भूलगये थे। वह एक समय विश्रामके लिये सुखभोग रहे थे कि इसी समयमे सूने मस्तक तथा उस कमरेमेसे पगड़ीको लेकर वह चारण उनके पास आकर खड़ा होगया। और वीरश्रेष्ठ आलूहाड़ाके निकट जाकर मंडोरके राठौर अधीश्वरने

जिस प्रकार अपमान किया था वह सभी समाचार कह सुनाया। आल्हूहाड़ा जिससे शीघ्र ही राठौरपतिको इसका बदला दे इसके लिये बारम्वार जिद करने लगा "।

" वीर श्रेष्ठ आल्हूहाड़ा चारणके प्रति महाक्रोधित हुए। चारणने अपनी बुद्धिके दोषसे इस महा अपमानकारक समुद्रमें उनको डुबोदिया, उन्होंने क्रोधित होकर कहा " क्या मैंने आपसे यह नहीं कहा कि आप मुझसे भूमि मॉगें गाय इत्यादि पशुकी प्रार्थना करै; अथवा धन मॉगे इन सबको मैं देनेके लिये तैयार हूँ आप मेरे मस्तक परके इस सामान्य वस्त्रके टुकड़ेके अतिरिक्त और कुछ भी लेनेको तैयार न हुए किसीसे भी संतुष्ट न हुए । इस समय इस वस्त्र खंडकी अवमाननाके लिये मुझे अपना मस्तक देना होगा। मारवाड़के ठाकुर तक भी मेरी इस पगड़ीके, ऊपर इस प्रकारका अपमान करनेकी सामर्थ्य नहीं रखते, फिर विचारे मंडोरपति तो कौन चीज है? वीरश्रेष्ठ आल्हूहाड़ाने शीघ्र ही अपनी सम्प्रदायके समस्त वीर और अपनी सेनादलको बुला भेजा। शीघ्रतासे एक वंशके पांचसौ वीर वमौदाके किलेमें इकट्ठे होगये; और उन्होंने यह कहा कि हमै आल्हूहाड़ाके अधीनमे किस युद्धमे जाना होगा ? आल्हूहाड़ाने उन आये हुए सामन्तोंको समझा दिया कि, मंडोरपतिके साथ युद्ध करनेके लिये जाना कोई साधारण बात नहीं है-असीम साहस और अतुल पराक्रमके प्रकाश करनेका प्रयोजन है, फिर भी उस युद्धसे लौटनेकी आशा नहीं है । परन्तु सभी आल्हूहाड़ाके सम्मानकी रक्षा करनेके लिये युद्धमे जाकर जीवन देनेके लिये तैयार हुए। शीघ्र ही जौहर व्रतका अनुष्ठान हुआ । उस जौहर व्रतसे समस्त वीरवृन्द अपना २ जीवन देनेके लिये तैयार हुए, युद्धयात्राका दिन निश्चय होगया। आल्हूहाड़ाके कोई पुत्र नहीं था, इससे इन्होंने अपने भतीजेको गोद लेलिया था । उस भतीजेकी रक्षाके लिये उन्होंने उसको वमौदाके किलेके सात द्वार पार होकर इन सबके बीचमें जो महल था उस महलमें रख दिया। कुछ काल तकके लिये भोजनकी उपयोगी सभी सामग्री भी संग्रह करके उसके भीतर रखदी एक एक करके सातों द्वारोंपर ताला लगाकर आप स्वयं उसकी चावी लेगये। मंडोरपति तथा अन्य कोई शत्रु सहसा किलेमें आकर जिससे उक्त पुत्रका प्राण नाश न करने पावै, इस कारण आल्हूहाड़ाने भलीभांतिसे प्रबंध करादिया"।

मंडोरके अधीश्वर भी जानगये थे कि उन्होंने आल्हूहाड़ाकी पगड़ीके प्रति अपमान करके आल्हूहाड़ाकी क्रोधाग्निको प्रज्वलित करादिया है, परन्तु पर्वती वीर आल्हूहाड़ाके द्वारा भविष्यत्में किस प्रकारका कांड होगा इसका कुछ भी विचार न करसके, पर उसने यह प्रचार कर दिया कि आल्हूहाड़ाकी सेना राज्यके जिन अंशोसे होकर आवैगी वह सभी ग्राम ब्राह्मणोंको दिये जाँयगे। परन्तु आल्हूहाड़ा वीर साजसे सुसज्जित हो अपने पहाड़ी देशसे बाहर होकर शेषमें कौशल करनेके लिये अपने अनुचर और सेनादलके शस्त्र शकटोंमें रखकर घोड़ोंको बेचनेके लिये जिस भावसे लेजाया करते हैं उसी भावसे लेकर मंडोरकी राजधानीमे आवे । यह कोई भी न जानसका

कि आलूहाड़ा इस प्रकारके कपट वेषसे आ रहे है। आलूहाड़ा रात्रिके समय राजधानीमे आये, और विश्राम करके तरुण अरुणोदयके साथही साथ नगाड़ा बजाकर सेनाको रणसाजसे सजाय वीररूपसे बाहर हुए, नगाड़ेके बजते ही सोते हुए मंडोरपतिकी निद्रा भंग हुई, वह महा क्रोधसे उन्मत्त होकर परिषदोंसे बोले " किस हतभाग्यने साहस करके मंडोरमे नगाडा बजाया है ? " उत्तर मिला " वमोदाके आलूहाड़ा हैं " ।

राजा मारूकी माता (चौहान स्त्री) ने आलूहाड़ाको कपट वेषसे आता हुआ देख कर अपने पुत्रसे पूछा, " वत्स ! तुमने जो प्रतिज्ञा की थी कि आलूहाड़ा मंडोरके जिस ग्रामसे होकर आवेगे वही ग्राम ब्राह्मणोको दान करदूँगा, इस समय किस प्रकारसे उस प्रतिज्ञाका पालन करोगे ? आलूहाडा कपटवेष धारण कर न जाने किस मार्गसे होकर आये है और कौन २ सा ग्राम इनके रास्तेमे पडा है, यह तो कुछ भी नहीं जाना जाता ? " मंडोरपतिने उस प्रतिज्ञामे बाधा हुई देखकर अन्तमे स्थिर किया कि अन्य उपायसे प्रतिज्ञा पालन की जायगी, उन्होंने कहा कि यद्यपि शत्रु आलूहाड़ा पॉचसौ सेना साथमे लेकर आये है तथापि मै बहुतसी सेना लेकर उनके साथ युद्ध न करूँगा। मंडोरपतिने शीघ्र ही प्रस्ताव करके आलूहाड़ाके समीप कहला भेजा कि दोनो ओरकी बराबर सेना तलवार लेकर युद्ध करेगी। आलूहाड़ाने शत्रुके इस दयालुताके व्यवहारसे महा आनन्दित हो मंडोरपतिको धन्यवाद देकर अपनी सेनासे कहा कि " हमलोग जय प्राप्त कर सकेंगे। अब पाँचसौ राठौरोंकी सेनाका संहार करके अपना बदला लेसकेंगे ! " शीघ्र ही पाँचसौ राठौरोकी सेना पॉचसौ हाड़ासेनाके साथ तलवार लेकर युद्ध करनेके लिये रणवेषसे सुसज्जित होकर मंडोरपतिके सम्मुख आई। इधर श्योजी राठौर सैफ हाथमे ले पाँचसौ सेनाके साथ तैयार हुए। उस सहस्र सेनाके तैयार होनेपर दोनो ओरके दोनो प्रधान नेता जैसे ही युद्ध आरम्भ करनेके लिये घोड़ा बढ़ानेके लिये अग्रसर हुए कि वैसे ही अचानक कहींसे बड़ी शीघ्रतासे घोड़ा चलता हुआ एक युवक उस स्थान पर आ पहुँचा। उस युवकको सभी विस्मित होकर देखने लगे, तब उस वीर युवकने राठौर नेताके साथ युद्ध करनेकी प्रार्थना की। उस युवककी वह प्रार्थना दोनो ओरके नेताओंकी अवनतिका कारण थी। परन्तु कुछही समयमें आलूहाड़ाने युवकको देखकर कहा, हाय ! न मारने योग्य युवक ! तुम क्या हाड़ावंशको लोप करनेके लिये यहाँ आये हो ? युवकने उसी समय उत्तर दिया, "काका ! जब आप विपत्तिमे पड़े है उस विपत्तिमे यदि मै आपके निकट उपस्थित न हो सकता तो वंश लोप हो सकता था " । पाठक ! यह वही युवक वमोदाके सामन्त आलूहाड़ाके भतीजे है। युवककी सगर्व वीरोचित वाणी सुनकर तथा उनको भाला हाथमें लिये युद्धके लिये तैयार देखकर वीर राठौर नेताके अधरोपर हंसीकी रेखा दिखाई दी। हाड़ा युवक भी उसीकी समान हँसते हुए युद्धके लिये आगे बढ़े। थोड़ेही समयमें युवककी तलवारके आघातसे राठौर नेताने प्राण त्याग किया; शीघ्र ही फिर एक राठौर योधाने हत वीरके स्थानमें आकर युवकके साथ संग्राम करना प्रारम्भ करदिया, पहिले वीरकी समान इस दूसरे राठौरके भी युवककी तीक्ष्ण तलवारसे दो टुकड़े होगये फिर एक और राठौर युद्ध करनेके लिये तैयार हुआ

हाड़ा युवकने उसका भी प्राण नाश कर दिया। इस प्रकारसे एक २ करके पचीस जने राठौर उस हाड़ा युवकके हाथसे मारेगये. परन्तु उसकी देहमें कुछ भी आघात न लगा। ऐसा बोध होता था कि विजयसेनी माता जिनकी प्रतिमूर्ति बमोदाके किलेकी रक्षामें नियुक्त हैं, उन्होंने ही इस किलेके सातों द्वारोंको खोलकर युवकको मुक्ति देकर उसके गलेके अतिरिक्त और सभी शरीरको आच्छादित कर दिया था, उसको आलूहाड़ाकी सहायताके लिये भेजकर युवकको हाड़ा जातिका गौरव बढ़ानेकी आज्ञा दी। प्रबल युद्धके पीछे अंतमें एक राठौर वीरकी तलवारसे युवकका शिर दो टुकड़े होगया आलूहाड़ाने देखा कि मेरा प्राणप्यारा भतीजा सर्वदाके लिये पृथ्वीपर सोरहा है। राठौरकी राजमाता स्वयं इस द्वंद युद्धको देख रही थी, उन्होंने विचारा कि युवककी मृत्युसे जीवनकी आशासे निराश हो हाड़ागण उन्मत्त होकर भयंकर कांड उपस्थित कर सकते हैं, इस कारण उन्होंने अपने पुत्र मंडोरपतिको आज्ञा दी कि अब शीघ्र ही युद्ध करना छोड़ दो, और पाठारपति आलूहाड़ाको संतुष्ट करनेके लिये एक राजकन्या विवाह करनेंको दीजायगी। राजमाताकी आज्ञानुसार शीघ्र ही कार्य होगया, आलूहाड़ाके समानकी रक्षा हुई। विवाह करके आलूहाड़ा अपनी नवीन वधूको लेकर बमोदाको चले गये। उस विवाहके फलस्वरूपमें उनके एक कन्या उत्पन्न हुई। उस कन्याकी युवा अवस्था होनेपर बड़ी धूमधामके साथ उसके विवाहकी तैयारी की गई। विवाह होजानेके पीछे आलूहाड़ाकी कन्या तथा मित्र बंधु बांधव और समस्त कुटुम्बके साथ देवमंदिरमें गये वहाँ बड़ा उत्सव होता था, अनेक स्थानोंसे बहुतसे संन्यासी यती, दंडी और भिक्षुक आकर इकट्ठे हुए। एक वृद्धाभिखारिन भी इस मंदिरमें घुसनेके लिये तैयार हुई, पहरे वालेने उसको भगाकर मंदिरमें न घुसने दिया; वृद्धाने बारंबार कहा कि आलूहाड़ाने स्वयं मुझे निमंत्रण देकर बुलाया है, इसी लिये मैं आई हूं, मुझे द्वार छोड़ दो। द्वारपालने इस वृद्धाकी वातपर कुछ भी ध्यान न दिया और उसको वहांसे भगादिया, वृद्धा महा क्रोधित होकर आलूहाड़ाको शाप देती हुई चली गई, ऐसा विदित होता है कि यह वृद्धावेषधारी स्वयं विजयसेनी माता ही कपट वेष धारण करके आई थीं। उनके उस शापसे आलूहालाका वंश लोप होगया।

तारीख१८जनवरी मुकाम डूंगरमऊ आठ मील यद्यपि कई मार्ग यहांसे थे पर हम भिसरौरके मार्गसे चले, यह मार्ग आंतरी और भामूनी नदीके मध्यका था यहां बहुत जंगल और बड़े बड़े नाले हैं एक स्थान रानीवोरका खाल कहलाता है।

डूंगरमऊ बरांव यह बारह मौजेका छोटा पट्टा है। १५००० सालाना पैदावार और कर है, यह अब विभक्त होगया है। डूंगरमऊ वाला कोटेके अधीन है, अभी उसको तलवार बँधाई गई है, भामूनी नदी इसके किलेकी दीवारके नीचे बहती है यहाँ हरियाली बहुत है। यहांके पर्वतों पर मेघोंकी भाँति भाँति की आकृति दिखाई देती है।



षष्ठ अध्याय ६.



भिंसरोरगढ़-रघुनाथसिंह-भिंसरोर दुर्गप्रासाद-भिंसरोर नामकी उत्पत्तिका विवरण-मेहोवके युवक सामन्त-जयसलमेरके महाराजके विरुद्धमें उनका युद्धके लिये आना-जयसलमेर के महाराजका मुंडच्छेदन-उक्त युवक सामन्तस्त्रीकी शोचनीय आत्महत्या-उक्त सामन्तका निर्वासन दंड-भिंसरोरदेशके प्रमार सामन्त-प्रमार सामन्तवंशका शासनलोप-नाथजीकी हत्या करना-लालसिंह चान्दावतको भिंसरोरकी प्राप्ति-देवाकी तबाही-सन्तरा-उत्सव होली-कोटा-उसका वर्णन।

कर्नल टाड् साहब १९ फर्वरीको भिंसरोरगढ़ नामक स्थानमें जो डूंगरमऊसे १० मील चार फरलांग था, जाकर लिखते हैं. कि " मैं डूंगरमऊसे तीन कोश दूरीपर एक मुसलमान साधूके समाधि मंदिरके समीप गया। जीवित अवस्थामें ही उस साधुने समाधि ली थी। वह समाधि मंदिर ऊंचे स्थान पर बना हुआ था; उस स्थान परसे चारों ओर प्रकृतिका परमप्रिय दृश्य दिखाई पड़ता था। उस समाधि मंदिरके पास ही एक कुंड है; इस कुंडके चारोओर अनेक सुन्दर २ वृक्ष विराजमान है। वहां प्रतिसप्ताहमें एक दिन मेला हुआ करता है। वहां हिन्दू मुसलमान सभी जातिके मनुष्य आते हैं। फिर हम भामूनी नदीका शब्द सुनते आगे बढे और अम्बार संगपर पहुँचे और मीना जाति करारकी रहनेवालेके स्थान पर गये, उनका एक प्रसिद्ध पुरुष यहां मारा गया था, प्रत्येक पथिक यहा एक पत्थर रखता है और हमने भी वहां एक पत्थर रखदिया।

मेवाड़के सोलह प्रधान सामन्तोमे रघुनाथसिंह भी एक हैं। यही भिंसरोरके सामन्त हैं, इन्होंने यहां राजपूतानेमें बहुत समयसे प्रचलित रावतकी उपाधि पाई थी। भिंसरोर देश मेवाडमें श्रेष्ठ देश गिना जाता है। इसका वार्षिक भूराजस्व एक लाख रुपया है। चम्बल, मालवा, हाड़ावती और मेवाड़के वाणिज्यका कार्य भी सभी इस देशमें होता है। वैश्य लोग इस भिसरोरसे ही होकर आते जाते हैं। इसी कारणसे वाणिज्य महसूलकी यहाँ विशेष आमदनी होती है। यहाँका किला एक बडे ऊंचे शिखर पर स्थापित है, वह स्थान जैसा रमणीक है युद्धके समय उसी प्रकार अभेद्य भी है। भिंसरोरकी सृष्टिके सम्बन्धमे एक प्रवाद वाक्य आजतक प्रचलित है, यह भी सम्भव होसकता है कि विक्रमाजीतकी दूसरी शताब्दीमें इसकी सृष्टि हुई हो, और कोई २ ऐसा भी कहते हैं कि विक्रमाजीतके राजत्वके पहिले इसकी सृष्टि हुई थी, इस भिसरोरकी सृष्टि-सम्बन्धीय प्रवाद वचनोंसे यह प्रमाणित होता है कि यहाँके चारण वा कवि जिस भाँति विना महसूलके वाणिज्यका आमदरफ्त कर सकते हैं; उस समय भी वह उसी प्रकारसे करते थे। भिंसरोरदेशकी सृष्टि किसी बलवान राजासे नहीं हुई। भिंसियाशाह नामक एक वणिक और रोरा नामका एक चारण दोनों ही मिल-कर वाणिज्य कार्य करते थे। वह वाणिज्य द्रव्योंसे शकटोंको भरकर जिस समय इस देशमे होकर जाते उस समय पहाड़ी लोग चोर डकैत जिससे इसको न लूट सकें

इसका भलीभांतिसे प्रवंध कर लेते थे। उस भिंसा और रोरा नामके संयोगसे इस देशका नाम भिंसरोर हुआ है, यह पाठारदेश हाड़ा जातिके आनेके कितनी ही समय पहिले तक उक्तभावसे था, यह नहीं जाना जा सकता; परन्तु प्रमार, दूदिया राठौर शक्तावत, तथा चांदावतोंके स्मृति चिह्न यहाँ अधिकतासे विराजमान है, दूदिया लोगोंके पीछे राठौर सामन्तोको इस देशका आधिपत्य प्राप्त हुआ। मरुक्षेत्रके लवणह्रदके किनारे महौवदेशके एक राठौर सामन्त मंडोरके राठौर अधीश्वरके अधीनमें थे, इनको कान्यकुब्जके सम्भ्रान्त राजवंश जानकर मेवाड़के राणाने उनकी भगिनीका पाणिग्रहण किया। उस नव विवाहिता राठौर नन्दिनीके साथ उनके छोटे भ्राता चित्तौरमें आये। उस विवाहके कुछ दिन पीछे जयसलमेरके अधीश्वर, राजपूत जातिके शिरमौर मेवाड़की महाराणाके विरुद्धमें उठे। जयसलमेरपतिको दमन करनेके लिये शीघ्र ही मेवाड़के सेनाके सामन्त सजकर तैयार हुए। महाराणाने वीड़ा अर्थात् ताम्बूल हाथमें लेकर सामन्तसमितिमें प्रस्ताव किया कि आप लोगोमेंसे कौन साहस करके जयसलमेरके महाराजके साथ युद्ध करनेको तैयार है, जो तैयारहों वह आगे वढ़ै। राणाके इस वचनको सुनकर महोवके थोड़ी अवस्थावाले सामन्त राणाके नवीन सालेने वीर गर्वसे अग्रसर होकर सेनापतिके पदको ग्रहण करनेके लिये उस ताम्बूलको ग्रहण किया। उसकी अवस्था उस समय केवल पंद्रह वर्षकी थी, इस कारण उस अल्प अवस्थावाले राठौरको इस युद्धमे जानेके लिये उस भावसे उत्तेजित देखकर सभीने निषेध किया, परन्तु राठौर युवकने किसी भांति भी न माना। युवकने महाराणाके समीप प्रार्थनाकी कि " हमारे दोनो मित्रोंको हमारे संग करो। और मैने जो अपनी पाँचसौ अश्वारोही सेना नियत की है उसको मेरे साथ युद्ध करनेके लिये भेजिये। वह थोड़ी अवस्थावाला राठौर कुमार किस प्रकारसे मरुभूमिके पार होकर जयसलमेरमें गया था और किस भांतिसे भट्टीजातिके शीर्षस्थानीय जयसलमेरके राजाके सम्मुख खड़ा हुआ था उसका कुछ वृत्तान्त नही जाना जाता, परन्तु ऐसा विदित होता है कि उस राठौर युवकने जयसलमेरके महाराजका छिन्न मस्तक लाकर चित्तौरके महाराणाको उपहारमें दिया। महाराणाने युवककी इस वीरतासे प्रसन्न होकर तथा उसको प्रतिहिंसा देनेमें सफल देखकर उसको सालूंवरदेशका अधिकार देदिया। उस समय किसी एक देशका अधिकार किसीको भी सदाके लिये नही दिया जाता था, इस कारण कुछ समयके पीछे राणाने उस राठौर सामन्तको सालूंवरके वदलेमें यह भिंसरोर देश देदिया, राठौर युवक क्रमशः अपने वलविक्रमको प्रकाश करनेसे राणाके परम प्रियपात्र होगये। अंतमें राणा उनके ऊपर इतने संतुष्ट हुए कि अपनी भतीजीके साथ उसका विवाह कर दिया। परन्तु उस विवाहका फल परिणाममें वियोगान्त लीला करके समाप्त हुआ। एक समय युवक सामन्त अपने इष्टमित्र और कुटुम्बियोंके साथ कमरेमें बैठे हुए नृत्य देख रहे थे, कि इसी समयमें उनकी स्त्री किवाड़की ओटसे नृत्य देखनेके लिये उद्यत होरही थी, सामन्तने उस सभामें यह व्यवहार देखकर ऊंचे स्वरसे एक सेवकसे कहा " ठकुरानिसे जाकर कहदो उनको यहाँ आनेकी इच्छा है तौ वह चली आवै

हमलोग चले जाँयगे "। सेवकने इनकी आज्ञाको पालन किया। सामन्तकी स्त्रीने महादुःखित होकर कहा, मैं नृत्य देखनेके लिये नहीं गई थी, मेरी एक सेविका गई थी, मैं इस प्रकारसे तिरस्कार करनेके योग्य नहीं हूँ, पर ठाकुरको विश्वास नहीं हुआ, तब रानीने दुःखके मारे अत्यन्त ही व्याकुल हो भिसरोरकी दीवार परसे चम्बल नदीमें गिरकर प्राण त्याग दिया, वह स्थान आजतक रानीगता नामसे विख्यात है। किसी प्रकारसे यह समाचार चित्तौरके महाराज तक पहुँच गया, उन्हों ने छानबीन करके कि राठौर सामन्तने विना कारणसे रानीके चारित्रोपर अपवाद लगाया था, इसीसे मेरी भतीजीने आत्महत्याकी है, इसके दंडमे राठौर सामन्तको मेवाड़से सर्वदाके लिये निकाल दिया। परन्तु राठौर सामन्तने अपने बल विक्रमसे राणाके पहिले अनेक उपकार किये थे, अन्तमे उस कठोर दंडके बदलेमें उसको भिसरोरके अधिकारसे रहित करके उक्त स्थानके निकटवर्ती पाठार देशके मध्यस्थ नीमरी नामका बीस ग्रामवाला एक छोटा देश देदिया। उसी राठौर युवकके वंशधर विजयसिंहने आज यहाँ आकर मेरे साथ साक्षात् किया "।

"उक्त राठौर सामन्तके पीछे एक सामन्तको भिसरोर देशका अधिकार मिला। परन्तु प्रमार वंशीय सामन्तने कबतक भिसरोरदेशको शासन किया, इसका कोई विशेष वृत्तन्त नहीं जाना जाता, परन्तु अंतमें प्रमार सामन्त किस कारणसे मारेगये, और भिसरोर देश प्रमारवंशके हाथसे निकल गया, घटना जातीय चरित्रका और एक निदर्शन दिखाती है। अन्तमे भिसरोरके प्रमार सामन्तने अपने प्रतिवासी बेगू सामन्तकी एक कन्याके साथ विवाह किया। उस सामन्तने स्त्री सहित कइ वर्षतक परम सुखसे जीवन व्यतीत किया था, अन्तमे एक दिन दोनों पचीसी क्रीड़ामे मतवाले थे; सामन्तने उस क्रीड़ाके समयमे विवाद करते २ अपनी स्त्रीके वंशकी निन्दा की, राजपूत स्त्री उससे अत्यन्त क्रोधित हुई, और दूसरे दिन अपने पिताके निकट उसने समस्त समाचार लिख कर भेज दिया। बेगूके सामन्तने अपनी पुत्रीका पत्र पाते ही सेनाको बुलाया और अपने जमाईका वह आचरण सबको सुना दिया, इसका बदला लेनेके लिये सभी तैयार होगये। शीघ्र ही बेगूके सामन्तने उस सेनादलको साथले, अंतरीदेशके वनमे होते हुए भिसरोर देशसे कुछ दूर पर आकर अपनी उस सेनाको दो दलोंमें विभक्त किया। बेगूके सामन्त भामूनी नदीपर होकर गये और उनके पुत्र सोजाके मार्गसे भिसरोरकी ओरको गये। परन्तु बेगूके सामन्त भिसरोरमे पहुँचने भी न पाये थे कि उनके पुत्रने भिसरोर पर आक्रमण करके रणभूमि में अपने बहनोईका मस्तक काट डाला। अन्तमे मेघावत् सामन्त नन्दिनीने अपने पतिके मृतक शवको गोदमें ले भामूनी और चम्बल नदीके संगममे चिता प्रज्वलित करके अपना प्राण त्याग किया। उसके स्मरणके चिह्न जो स्थापित हुए थे मैंने उनसे कुछही दूर अपने डेरे डाले थे "।

कर्नेल टाड साहब फिर लिखते हैं कि "बेगूसामन्तके उक्त छोटे कुमार अपने बहनोईका प्राण नाश कर पिताके सम्मानकी रक्षामे समर्थ हुए। बेगूके वृद्ध सामन्त

इससे इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने रजवाड़ेकी चिर प्रचलित रीतिके अनुसार बड़े पुत्रके अधिकारको लोप करके उस छोटे पुत्रको अपने भावी उत्तराधिकारी पदको देदिया। मेवाड़के राणाने भी उस उत्तराधिकारीके परिवर्तनमें अपनी सम्मति दी थी, वेगूके सामन्तके बड़े पुत्रको चिथाना जिसमें वर्तमान जादो देश संयुक्त था दिया गया।

"प्रमारोंके पीछे कृष्णावत् सम्प्रदायके एक चन्द्रावत् लालजी जो सालूंवरके सामन्तक छोटे पुत्र थे वही भिंसरोरके अधीश्वर हुए। लालजीको अपने प्यारे मित्र नाथजी जो राणाके चचा थे उनका ही प्राण नाश करके भिसरोर मिला था। मेवाडके अधीश्वर महाराणा संग्रामसिंहके अनेक पुत्रोंमेसे महाराज नाथजी भी एक पुत्र हैं। मेवाड़के राणा जगत्सिंहके भाई थे। जगत्सिंहकी मृत्युके उपरान्त उनके पुत्र राजसिंहको संदेह करके मनुष्योंने जारज कहा था, इससे लालजी मेवाड़के सिंहासन पर अधिकार करनेके लिये तैयार हुए, परन्तु राजसिंहकी मृत्यु होनेसे नाथजीकी आशा व्यर्थ होगई।राजसिंहके छोटे पुत्रने मेवाड़के सिंहासनकी प्रार्थना की। उनके चचा (अरसी) अरीसिंहने कैसा राजनैतिक षड्यंत्र जाल विस्तार करके मेवाड़में भयंकर आत्मविग्रह उपस्थित कर दिया था, उसका वर्णन मेवाड़के इतिहासमे भलीभांतिसे किया गया है। (आरसी) अरिसिंहने सिंहासन पर अधिकार करके अपने चचा नाथजी पर संदेह प्रगट किया था। नाथजी उनके शत्रु है, तथा उन्होंने ही मेवाड़के राणा पदको ग्रहण करनेके लिये गुप्तरीतिसे उद्योग किया है। यह विचार कर अरिसिंह नाथजीकी कामनाको व्यर्थ करनेके लिये तैयार हुए। नाथजीने जिस दिन सुना कि अरिसिंहने मेरे ऊपर संदेह किया है वह उसी दिन सिंहासनकी आशा छोड़कर वागोर नामक देशमे जा एकान्तमे वास करने लगे, और शास्त्रका विचार कर प्रियकार्य कविता रूपी मालाको गूँथने लगे। नाथजीका वह धर्मभाव, वैराग्यभाव तथा उदारभाव ही उनके विध्वंसका कारण होगया। नाथजी घोर रात्रिके समय एक मात्र अपने सेवकको साथले मट्टीका कलश ले सरोवरमेंसे जल लाकर उस जलसे अपने कुलदेवता जगन्नाथजीकी पूजा करते थे। शीघ्र ही राणा अरिसिंहके निकट परिषदोंने कहा कि नाथजी कठोर धर्मानुष्ठान करके देवताको प्रसन्न कर रहे है, इससे मेवाड़का सिंहासन अवश्य ही उनको मिल जायगा। अरिसिंह यह सुनते ही महा भयभीत हुए और एक दिन उसकी सत्यताकी परीक्षा करनेके लिये वेश वदलकर एक विश्वासी सामन्तको साथले वागोरके उक्त देवमंदिरकी सीढ़ियोंपर आकर अपेक्षा करने लगे। शीघ्र ही नाथजी कलश हाथमें लिये हुए पूजा करनेके लिये वहाँ आये, अरिसिंहने अपनेको प्रगट करके कहा "इतनी धर्ममे बुद्धि और इतनी पवित्रता क्यों है? चाचा! यदि आप सिंहासनकी इच्छा करते है तो इस सिंहासनको ग्रहण कीजिये"। नाथजीने शीघ्रतासे उत्तर दिया, "तुम मुझे पुत्रकी समान हो, मै देवताकी पूजा केवल तुम्हारे कल्याणके लिये करता हूँ।" यद्यपि इस सरल उत्तरसे राणाके मनके समस्त संदेह दूर होगये, परन्तु सामन्तोंके भड़कानेसे इन्होंने अंतमें अपने चचा नाथजीके प्राण नाश करनेका संकल्प किया। नाथजीका प्राण नाश करना सरल वात न जानकर अरिसिंहने दूसरा उपाय निश्चय किया। पूर्वोक्त लालजीके साथ महाराज नाथजीकी विशेष मित्रता थी।

दोनोंने ही देवताके मंदिरमें जाकर देवताके सम्मुख मित्रता स्थापित की थी। एक दूसरेके प्रति दोनोको दृढ़ विश्वास था। अरिसिंह उस लालसिंहके द्वाराही नाथजीके जीवनको नाश करनेके लिये उद्यत हुए। एक दिन नाथजी मध्यरात्रिके समय देवमंदिरमें पूजा करनेके लिये बैठे थे, इसी समयमें नाथजीके मित्र उक्त लालजीने मंदिरके द्वारे आकर नाथजीको बुलाया। इस समय इस प्रकारसे नाथजीको किसी मनुष्यने बुलानेका साहस नहीं किया था नाथजीने मित्र लालजीका स्वर पहचान कर उसी समय कहा, "क्यो भाई लालजी? आओ, इतनी रात्रिमे क्या विचार कर आये हो?" परन्तु हाय! नाथजीने यह बात कह कर जैसे ही देवताको प्रणाम करनेके अभिप्रायसे मस्तक झुकाया कि वैसे ही परम मित्र लालजीकी तीक्ष्ण तलवारने नाथजीके शिरके दो टुकड़े करदिये! नाथजीके रुधिर से महादेवजीके विग्रहने स्नान किया! लालजी उस मित्रताका चूड़ान्त निदर्शन करके राणा अरिसिंहके परम प्रियपात्र होगये। राणा अरिसिंहने लालजीके उस कार्यसे संतुष्ट होकर उनको भिंसरोरदेश दिया और उनको मेवाड़के सोलह प्रधान सामन्तोंमे ग्रहण किया। मेवाड़मे बहुत दिनोसे सोलह जने प्रधानरूपसे गिने जाते थे, इसके अतिरिक्त होनेका नियम नहीं है। अरिसिंहने वंशीदेशसे शक्तावत् सामन्तको उस प्रधान श्रेणीसे च्युत करके लालजीको उस श्रेणीमें मुक्त कर लिया। परन्तु नाथजीके इस हत्याकाण्डसे मेवाड़में भयंकर समरानल प्रज्वलित होगई, चन्द्रावत् और शक्तावतोमे फिर प्राचीन सम्प्रदायिक शत्रुताकी अग्नि प्रज्वलित होगई इस अग्निने मेवाड़को छार खार करदिया। परन्तु महापापी दुष्ट लालजीने अंतमें कुष्टरोगसे महा व्याकुल हो अपार कष्ट भोगा था पीछे इनका पुत्र मानसिंह भिंसरोरकी गद्दीपर बैठा, यह एक युद्धमे मरहटोंका बंदी हुआ। पर उसको नाच देखनेके समय एक राजपूत आहत अवस्थामें अपनी कमर पर धर लाया और दूसरा पुरूप उस स्थान पर सोगया जब यह अपने स्थानमें पहुँच गया तोपै सर हुई तब मरहटोंको सुधि आई। इसकी छतरी चम्बल भामूनी और खालके संगममें अद्भुत बनी है।

मानसिंहके पीछे रघुनाथसिंह गद्दीपर बैठे, पर इन पर बहुत आक्रमण हुए इससे इनको भिंसरोर छोड़कर भागना पड़ा। जब महाराज वा रईसोंकी सालगिरह होती तो हम भी उसमें शामिल होते थे और वहाँका नाच गाना देखते सुनते थे। एक दिन नाथजीके अधिकारी महाराजा श्योदानसिंहके यहाँ इस उत्सव पर बैठे थे रीतिके अनुसार जो आता उसका नाम लिखा जाता था पर इस बात पर हमको बड़ा आश्चर्य हुआ कि जब चोबदारने ऊंचे स्वरसे कहा कि महाराज सलामत रावत रघुनाथसिंहजीका मुजरा लीजो। हमको बड़ा आश्चर्य हुआ कि जिसके दादाने जिस वंशके प्रसिद्ध पुरुषकी जानली उसके पोतेको यह मुजरा कैसा, पर पीछे समझमे आया कि यह न्यायकी बात है जिससे ऐसा हुआ और यही एक मनुष्यका दयाभाव है, आगे भिंसरोरमें हमने क्रूरमूर्ति अलाउद्दीनकी चढ़ाईके चिह्नखोज किये, पर हमें कुछ न मिले केवल दो पत्थर और मिले जिन पर संवत् ११७९ खुदा था अक्षर जैन सम्प्रदायके थे और दूसरेमें लिखा था पर्वश्यो रात्रिमें महाराणा नवरायसिंह देवने रामेश्वरके नाम

मौजे तितागढ़ पट्टनमें दिया, जो इस वचनको स्थित रक्खेंगे वह इसका फल पांयगे वह वचन यह है।

जिस्ता जिस्ता जिव ह्वो भूमि तिस्ता तिस्ता नथो फलंग।

संवत् १३०२ में यह रीति प्रचलित थी और यह प्रमारधारका जागीरदार था आगे गतेश्वर महादेवके मंदिरको देखनेके लिये हमने वहाँ अपने गुरूको भेजा।

२० जनवरी-मुकाम दानी, २० मील इसके रास्तेमें जंगल और साखूके पेड़ बहुत हैं। हम एक नालेको पार कर चले यह नदी गिरनेका उत्तम दृश्य है। दानी बूंदीकी रयासतमें हैं यहां पत्थरकी एक चारनकी बर्छी हाथमें लिये भयंकर मूर्ति देखी जो कभी उस स्थानमें मारा गया था, हमारे साथीने कहा पहिले कोई इस मार्गसे नहीं जाता आता था। परन्तु अब यह मार्ग स्वच्छ होगया है।

मुकाम करीपुर-२१ फरवरी, साढ़े नौ मील इसका पहाड़ी रस्ता बड़ा कठिन है हम इसमें होकर गये, फिर सन्तरा नगर देखा, इसमें कई खोदित लिपि मिली। एक संवत् १४२२की देवलाने जो भूमि ब्राह्मणोंको दी थी, एक संवत् १४४६ आपाढ़ वदी पड़वाको प्रमार ऊदां और कोलाके भूमिदानकी लिपि थी, तीसरी संवत् १४६६ आपाढ़ वदी पड़वा संतराके चावड़ाका दानपत्र था, एक पत्थर पर संवत् १३७० में आपाढ़ शुदी पड़वाका लिखा है कि बादशाह अलाउद्दीनने तीन हजार हाथी दश लाख सवार जंगी रथ असंख्य प्यादोंको लेकर सांभर मालवा कर नाटक कनौड़ा झालौर जैसलमेर देवगढ़ तैलंग चंद्रपुरी आदिको जय किया, संतरामें एक बड़ा दृढ़ किला है।

२२ फरवरी-कोटासे ११ मील किनारा चम्बल-यहांसे मार्गमें बड़ा कोहरा पड़ा जंगलमें भीलोंके देवताका मंदिर है यहां प्रार्थनाके चीर चढ़ाये जाते हैं, होलीका त्यौहार इस वर्ष अच्छा नहीं रहा, एक बल्ली पर घासका बोझा बांध कर उस पर झंडा लगाते हैं और उत्सव मनाते हैं; कोटेकी आकृति मनोहारिणी है। दृढ़ दीवार बुरजों सहित चारों ओर हैं। किलेके भीतरका शहर इससे अलग है। नदीके दोनों ओर वहांके निवासी अपने काम धन्देमें लगे रहते हैं।

सप्तम अध्याय ७.

कोटे राज्यमें महामारी-नन्दता-बूंदीमें जाना-बूंदीका राजमहल-सीतुरका कर्नेल टाड् साहब की मृत्युके मुखसे उद्धार पाना-मंगलगढ़की उत्पत्तिका वृत्तान्त।

इतिहास लेखक टाड् साहबने छः महीने तक कोटेराज्यमे रहनेके पीछे,सन् १८२१ ईसवीकी १० सितम्बरको लिखा है कि " हमारे कोटेमें रहनेके शेष चार महीनेमे केवल हैजा महामारी और प्रबल ज्वरने भयंकर विक्रम प्रकाश किया। कोटेमे ऐसी भयंकर महामारी कभी पहिले हुई थी या नहीं, यहांके मनुष्योंको इसका स्मरण नहीं है हम इन दिनों इधर उधर कई स्थानोंमे घूमते फिरे पर बीमारीने हमारा पीछा न छोड़ा। हमको बीमारीने बहुत सताया पीछे हम जालिमसिंहके पास गये और उनसे रुखसत हुए, रास्तेमें जिस हाथीपर सवार थे वह बहुत विगड़ा पर परमात्माने कृपा की "। कोटेको छोड़ कुनारो नामक स्थानमें आकर लिखा है कि " राजराणा जालिमसिंहके आत्मीय राजा गुलाबसिंहके अधिकारमें कुनारो नामका देश होगया है, जिसमे हम आये हैं। यह स्थान अत्यन्त रमणीक है, ऊंचे २ महलोंकी शोभाको देखनेसे नेत्रोंको अपार आनन्द प्राप्त होता है "।

जालिमसिंहके पिताके वासस्थान नन्दता नामक स्थानमें आकर टाड् साहबने लिखा है कि राजपूत सामन्तोंके रहनेके स्थानेमे नन्दता एक अत्यन्त ही श्रेष्ठ आदर्शका स्थान है। मैं एक तोरणमे होकर नन्दतामे गया। उस तोरणके ऊपर नौबत बज रही थी। तोरण (फाटक) से उतरकर चारोंओर स्थूलकाय स्तंभोसे शोभायमान एक विस्तारित कमरेमे गया, वहॉ सरदारोंको इकट्ठा हुआ देखा, इसके पीछे महलसे अलग मनोहर सभामंदिरमें गया, वहॉ चारोंओर तोपें और बंदूकोंका शब्द होरहा था। अभिवादन और प्रत्याभिनन्दन करनेके पीछे मैंने आसनको ग्रहण किया, दो सारंगी बजानेवालोंने आकर पंजाबी टप्पा गीत गाना प्रारम्भ किया "।

११ सितम्बरको तेरामे गये, १२ सितम्बरको नौगांव देखा ।

१३ वीं सितम्बरको बूँदीराजधानीमे जाकर इतिहास लेखकने लिखा है कि मैं हाड़ाजातिकी राजधानीके समीप गया, दूरसे ही धूलि उड़ती हुई दिखाई दी जिससे चारोंओर अंधकार होगया, उसको देख कर मैंने जाना कि कोई राजा आरहे हैं। शीघ्र ही बाजोंका शब्द भेरीका शब्द तथा घोड़के खुरोंका शब्द सुनाई आया। कुछही समयके पीछे सांड़नी सवारने राजाके आनेका समाचार कहा। राजा घोड़ेपर चढ़े हुए आ रहे थे, मैं भी हाथी पर सवार था, परन्तु राजाके घोड़ेपर सवार होनेसे मुझे हाथीपर सवार होना शोभा नहीं देगा, इसी कारणसे मैं उग्रतेजस्वी घोड़ेपर सवार होकर आगे बढ़ा। महाराजके साथ शाक्षात् होते ही दोनोंने घोड़ोंकी

पीठसे उतर कर परस्परमें आलिंगन किया और २ सामन्तोंको भी मैंने उसी प्रकारसे आलिंगन किया, इसके पीछे महाराजने मुझसे कहा, कि " यह आपहीका राज्य है इतने दिनोके पीछे आप यहाँ आये। " यह कह कर सम्बर्द्धना करनेके पीछे विदा लेकर आगे बढ़े। मै अपने डेरोंको चला आया " ।

बूँदीके महलोंके सम्बन्धमें टाड् साहबने लिखा है, कि " समस्त भारतवर्षके महलोंमें बून्दीके राजमहल सबसे अधिक श्रेष्ठ है। महलोंके निर्माणकार्यके अतिरिक्त जिस स्थान पर यह बना है उस स्थानके योगसे इसकी शोभाने और भी वृद्धि पाई है। यद्यपि बूँदीके भिन्न २ समयोंमें अनेक राजा इस महलके अंगको बढ़ागये है, परन्तु एक ही रीति और एक ही भावसे बने होनेंके कारण इसकी शोभाकी वृद्धि कमती नहीं हुई। छत्रमहलका अंश राजा छत्रशालका बनाया हुआ है वह जैसा विस्तारित है उसी प्रकारसे सुन्दर भी है। "

एक सप्ताह तक रहनेके पीछे बून्दीको छोड़कर २६ वीं सितम्बरको मैंज नदीके किनारे आकर टाड् साहबने लिखा है कि "आज मैंनें आतिथेय मित्र राव राजासे विदा ली। मैने डेरोंको छोड़ते ही देखा कि थानोंके महाराज एक अश्वारोही सेनाके साथ मेरी बाट देख रहे है। मुझे सीमातक पहुँचानेके लिये वह सजकर आये थे। " सतूर नामक स्थानमे जाकर लिखा है कि " हाड़ा जातिके इतिहासमें सतूर देश एक पवित्र देश गिना जाता है। यह स्थान हाड़ा जातिकी कुलदेवी आशापूर्णाका अधिष्ठान क्षेत्र है। हाड़ा जातिने सतूर देशका अत्यन्त प्राचीन और पवित्र कह कर उल्लेख किया है। यहाँ के प्रधान मंदिरमें भवानीकी एक मूर्ति है। उस मंदिरके समीप बहुतसे योगी और संन्यासी निवास करते है।

२७ सितम्बर मुकाम थानेमें रहे, यहाँके महाराज सावन्तसिंहसे भेंट हुई।

२८ सितम्बरके सुबहको जहाजपुरके लिये रवाना हुए, यहाँ मीना रहते है हाड़ा-जाति विशेषरूपसे निवास करती है यह मेवाड़का द्वार कहलाता है। दूसरा नाम इसका जिला चौरासी है, इसमें चौरासी शहर हैं, तीन सौ साठ मौजे है वास्तवमे सौ शहरसे विशेष इसमें न होंगे यहाँके निवासी वीर हैं, जालिमसिंह इसका परिचय पाचुके हैं रानाके इसमें दो तालाब बूद लुहारी हैं। हमारी मुलाकातको यहाँ सोभाराम आया। अब हमारा यह इरादा है कि हम कुछ दिन यहाँ निवास कर शरीरको स्वस्थ करें।

अष्टम अध्याय ८.

टाड् साहब पर रोगका आक्रमण-मंगलगढ़-करार किला-अमीरगढ़-मानपुरा-मंगलगढ़में जाना-उसका ऐतिहासिक वृत्तान्त-स्थान बजेठा-हमीरगढ़-सोनवार-पार्श्वनाथका मंदिर-करेराभोली नहर-अंगरा-मेरताकी ऊँचाई-समाप्ति भ्रमण दूसरेकी।

पहली अक्टूबर वरको जिहाजपुर नामक स्थानमे जाकर साधू टाड् साहबने लिखा है "कल दिन हमारे प्राण निकलना ही चाहते थे कि डंकन और केरी साहब पोडित अवस्थामे शय्यापर लेटे थे. हमारे सम्बन्धी कप्तान वाह् मेरे साथ भोजन करनेके लिये बैठे थे किन्तु ज्वर और क्रान्तिके होनेसे मुझे बिलकुल भूँख नहीं थी, इस कारण मैं कुछ भी न खा सका। मैंने उसमेंसे केवल मकईकी रोटीके दो एक ग्रास खाये कि मेरे शरीरमे मानो भयंकर आन्दोलन होने लगा। मुझे ऐसा बोध हुआ कि मेरा मस्तक धीरे २ भयानकरूपसे पीड़ित होरहा है, मानो समस्त माथेमें सूजन भरी आरही है। मेरी जिह्वा और होठ सूख कर काठकी समान होगये। यद्यपि मैंने कुछ भी भय नही माना और इससे मेरी चैतन्यता कुछ भी लोप नहीं हुई, तथापि इतना स्मरण हुआ कि कई वर्ष पहिले इस प्रकारसे मैंने एक वार मृत्युके मुखसे रक्षापाई थी। मैंने कप्तान वाह्को अपने पाससे जानेके लिये कहा, परन्तु वह जाने भी न पाये थे कि इसी अवसरमे मेरा कंठ सूख गया। मैंने विचारा कि मेरी मृत्यु अब निकट आगई, मै उसी समय उठा और तम्बूके खंभोंको पकड़ कर खड़ा होगया। शीघ्र ही मेरे उक्त मित्र चिकित्सकको ले आय, मैंने उनसे कहा कि मुझे आप विरक्त न करिये। मैं स्थिर होनेकी इच्छा करता हूँ परन्तु उन्होने मेरी बात पर कुछ भी ध्यान न दिया, और कुछ औषधी मेरे मुखमें डाली। मैंने तुरन्त ही भयंकर उल्टी करदी। फिर तुरन्त ही शय्याका आश्रय लेकर अचेत होगया। कोई दो घंटे रात्रि जानेके समय नींद टूटी तो देखा कि मेरे सारे शरीरमें पसीना आरहा है, किन्तु पीड़ाका फिर कोई चिह्न दिखाई नहीं पड़ा। इसका विचार और निर्णय करना कठिन होगया कि ऐसा क्यो हुआ? चिकित्सकने अनुमान किया कि किसीने मुझे विष खिलाया था, परन्तु मैने इस बात पर विश्वास नहीं किया, यदि मैने विष खाया था तो अवश्य ही उस ११ रोटी में विष था यह स्थिर होता तौ इस अवस्थामे शीघ्र ही पाचकको विदा दी जाती, मेरे मेवाड़मे आनेके समयसे अबतक चार बार मेरी यह दशा हुई। मुकाम खजूरी ता० २ अक्टूबरको मुझे ज्वरने बहुत पीड़ित किया था इस कारण पालकीमें सवार होकर मैं चला। मीना अपना सत्व मिलनेसे प्रसन्न होगये थे, उनके अफसर हमारे पास मिलने आये हमने उनको सुर्ख पगड़ी और रूमाल पुरस्कारमें दिये, हम घाटीके मार्गसे खजूरीमे पहुँचे, यहाँ ब्राह्मणोको धर्मार्थ दी हुई बहुत सी जागीर है।

३ अक्टूबरको मुकाम कचोरा-इसका मार्ग दुस्तर है इसके आधे मार्गमे अमरगढ़का किला है, यहाँके रावत दुलेलसिंह जहाजगढ़में कारगुजारी करते है. उनका साथी

पहाड़सिंह हमसे साक्षात् करनेको आया। बीमारीके कारण मैं उसके दुरूह दुर्गको देखने न जासका, उसका मार्ग बड़ा पेचदार है, इस मार्गमें अनियमित पर्वतोंकी शोभायमान पंक्तियां हैं, मुझे पहाड़सिंहने सलामी दी। यहांके भूमिया प्रशंसाके योग्य है।

यह कचोरा शहर छः हजार रुपये वार्षिककी आयका है। पहिले यह बड़ा शहर होगा, हमने इस मुल्कको मरहटोंके अधिकारसे बचा दिया है। मुकाम दामीनो ९ अक्टूबर--कचौरामें हम इस समय तक जाड़ा बुखारके कारण ठहरे रहे नौ अक्टूबरको दमीनोमें आये यहाँ एक सप्ताह ठहर कर पन्द्रह तारीखको मानपुरामें आये। यह वनास नदीके किनारे है, यहाँके सब प्रतिष्ठित पुरुष हमसे मिलने आये। मैं सबसे मिला परन्तु तबियत आज भी खराब थी। यहाँसे तीन कोश मंडलगढ़ है, १७ तारीखको यहाँसे चलकर शहरसे आधकोश पर डेरेडाले, यहाँके हाकिम मुझसे मिलने आये और आज विजयादशमी है, बीमारीके कारण हमारा निमन्त्रण भी व्यर्थ गया, नौ दिनसे भोजन नहीं किया है कप्तान वाह आज मेरे पास आगये, मेरे सभी साथी अलील थे। आज मैंने पसली पर जोक लगाई थी, मंडलगढ़को वालनोतके एक सामन्तने वनवाया था "सौलङ्की वा चालुक्य जातिसे उत्पन्न बालनोत नामक सम्प्रदायके एक सामन्तने इस मंडलगढ़की पुनः प्रतिष्ठा की। उसी सौलङ्की वा चालुक्य वंशसे अनहलवाड़ेसे राजवंशकी उत्पत्ति है। वह राजवंश दशसे चौदह शताब्दी तक पश्चिम भारतवर्षके समुद्रके किनारे वाले देशको अपने प्रवल-प्रतापके साथ शासन करते रहे। वुनास नदीके किनारे वाले देशको अपने प्रबल प्रतापके साथ शासन करते रहे। वुनास नदीके किनारे टंकथोदा नामक स्थानके राजवंशसे वालनोतसम्प्रदायने उत्पन्न होकर अपनेको तक्षक वंशीय कहकर परिचय दिया। यद्यपि इस प्रवाद वाक्यसे जाना जाता है कि थोदासे सौलङ्की जाति बारह शताब्दीके धर्मयुद्धके समय पाटन देशको छोड़ कर अन्यत्र चली गई, परन्तु यह भलीभांतिसे जाना जाता है कि वालनोतकी सम्प्रदाय इससे पहिले गई थी। पंजाबके अन्तर्गत लोकोत् नामक देश उनके आदि सुख समृद्धि प्राप्तिका स्थान कहा जाता था। मंडलगढ़के वालनोत सम्प्रदायके आदि पुरुषोंने सबसे पहिले लालपुरा नामक एक अत्यन्त प्राचीन देश पर अधिकार किया। उस आदि वीरके अधीनमें एक भील सेवक था। एक समय उस भीलने वनैले शूकरोंके उत्पात निवारण करनेके लिये ईखरके पहरेमें नियुक्त होकर देखा कि एक वनैला शूकर एक पत्थरके टुकड़ेके सहारे सोरहा है। भीलके हाथमें जो वाण फलवाला था वह तेज धारवाला नहीं था, इस कारण उस पर धार धरनेके लिये उसको पत्थर पर घिसा, घिसते ही वह समस्त लोहमय बाणकी फलक सुवर्णकी होगई! भील सेवकने तुरन्त ही अपने प्रभुके पास जाकर समस्त वृत्तान्त कह दिया, प्रभुने उसी समय बड़ी शीघ्रतासे सेवकके साथ उस स्थान पर जाकर देखा कि वह पत्थर उसी प्रकार रक्खा है, और शूकर भी उसी भावसे सो रहा है। प्रभुके पत्थरके टुकड़े लेनेके लिये उपाय करते ही शूकरकी निद्रा भंग होगई, वह जागते ही तुरन्त भाग गया, प्रभुने उस पत्थरको लेकर उस पत्थरके गुणसे बहुतसा सुवर्ण तैयार किया, और बहुतसा रुपया खर्च करके एक नवीन राजधानी

निर्माण की और उस भीलके नामके अनुसार ही उसका नाम मंडलगढ रक्खा। परन्तु एक अत्याचारके होजानेसे वह अन्तमे चिरकालके लिये मंडलगढ़से रहित होगये। मंडलगढकी प्रजामें एक योगी प्रजा थी, उस योगीके एक अत्यन्त शीघ्र चलनेवाला घोड़ा था, अधिक क्या कहैं वह घोड़ा मृगकी समान महावेगसे जाता था। मंडलगढके महाराजने उस योगीसे वह घोड़ा बलपूर्वक छीन लिया, योगीने उसके नाम पर राजाके यहाँ अभियोग उपस्थित किया। राजाने एक सेनाको भेज कर उस वालनोतके सामन्तको मडलगढ़से निकाल दिया। उस सामन्तके उत्तराधिकारी आज तक जावोन और वाकरोद् नामक स्थानमे नीची श्रेणीके सामान्य भूमियारूपसे निवास करते हैं; परन्तु तौभी वह अपनी प्राचीन पैतृक "राव" की उपाधिका व्यवहार करते हैं"।

बादलीसे हमको दो खोदित लिपियां मिली, जिनमे सोलंक्की वंशका कीर्तन था, उसमे राजा भीम तथा उनके पुत्र वर्ण अनहलवारका वर्णन है उससे कई वश निर्गत हुए हैं; उसमे अर्जुनसे दो वर्ण वैश्य और शूद्रोके प्रगट होनेका भी वर्णन है, उससे वघेलवाल महाजन जिन्होने जैनमत स्वीकार किया था उत्पन्न हुए तथा गूजर सून्ती कवांरे व सुनार कोकन भील अग्नि पनोरा और मह्न मैदानप्रान्त कोटाके हुए, वघेलवाला महाजनोकी साढ़े वारह जातिमेंसे हैं, पर यह सब राजापूतोंसे उत्पन्न है।

संवत् १७५५ मे निर्दयी औरंगजेबने मंडेलगढ़को पिसानगढ़के रईस दूदाजी राठौर को देदिया, उसने इस इलाकेको अपने भाइयोंमे विभक्त कर दिया और भूमियां भाइयो पर काम चलानेको कुछ कर नियत किया। पर रानाने उस पर अधिकार किया और प्रत्येक पाँचसौ रुपये पर एक सवार और एक पैदल की वेतन नियत की और बहुत थोड़ा रुपया अपना अधिकार जतानेको रक्खा, रानावत् कनावत और शक्तावतो पर जिन्हों ने इस पर स्वत्व किये थे, बादशाहके नियमकी समान उनसे भेट चाही, जिनके पास एक ग्राम था उनसे एक वर्षका जिनके पास एकसे अधिक ग्राम थे उनसे तीन वर्षमे कर लिया जाता था, अमरगढ़ २५०० रुपये पर, अमलदा १५०० और तिन्तरो १३०० सौ पर झूंजराल्ल् १४०० सौ पर नियत हुआ और जो कुछ नहीं देते थे घटनाके समय उनको सहायता देनेका नियम था। इसी समय दूसरे राजसिंहके समयमे उमेदसिंह शाहपुरा वालेको पाँचवे हिस्सेका मंडलगढ़का इलाका ३२५० वार्षिक ५०० भेट नायब और २०० रुपये भेट चौधरी पर मिला, संवत् १८४३ तक इनके वंशवालोके पास यह इलाका रहा, पीछे सोमजी दीवानने सहायता प्राप्त होनेसे उनको चन्दावतोके साथ युद्ध करनेसे देदिया, और दुगामऊ तथा पुरावा दो जागीर पृथक् नियत की और ४०० अश्वारोही समय पर उनसे लेनेका नियम किया, पर अब इसमे बहुत परिवर्तन होगया है रईस ऐसे निर्धन होगये कि अब एक घोड़ा भी नही देसकते।

मुकाम वजीत १८ तारीख फासला ८ मील-यह वेरस नदीके किनारे एक ग्राम है यहाँ घास बहुत होती है। १९ तारीखको वरसलवास पहुँचे यहाँके महाराज हमारी मुला-- कातको आये, यह रानावतवंशके बड़े योग्य पुरुष है इनके पास पाँच मौजे है, राना

अमरसिंहके वंशधर जो शाहजहाँकी सहायतामें औरंगजेबके द्वारा नियत हुए थे उस समय उनका नित्यका स्वत्व जाता रहा उनके पुरुषाओंकी छतरी यहां बनी है।

२१ तारीख अम्बाह-दूरी साढे छः मील यहां कई एक खोदित लिपिकी नकली हमने मंगाई बहुधा लोग हमारी भेंटको आये. पर ज्वर जाड़ेने हमको तंग कर दिया है हमारी डायरी बाबू महेश रखता है और उसकी चतुराई पर हमको विश्वास है।

हमीरगढ़ १२ तारीख-यह शहर वीरमदेवके अधीन है जो रानावत सम्प्रदायका है। तथा धीरजसिंहका पुत्र है जो संवत् १८४३ के समय साल्वारके सामन्तोंका सम्मति दाता था, उसको यह मिला था, इस समयका अधिकारी कुछ जनूनी है और जो कि उसने एक दरजीको अपनी सेवासे पृथक् नहीं किया इसीसे ७००० रुपयेकी आयवाले दो शहर उससे छीन लिये गये, इसमें ८०० घर सक्षी जातिके हैं। छींट दुपट्टे यहांके विख्यात हैं, एक उमदा तालाब है उसमें बहुत सी बतकें हैं उनको कोई नहीं मारता सिंवाड़े बबूले उसमें बहुत होते हैं।

२२ तारीख मुकाम सियानो दूरी आठ मील तीन फरलांग-हम अब बीच मेवाड़मे हैं, यहाँ मैदान ही नजर आते हैं, यहाँ बड़ा कौतूहल दिखाई देता है, यहाँ एक मरिाज जानवर बड़ा सुन्दर होता है, यहाँके लोग हमारी भेंटके लिये आये, हमने पूछा तुम इतरनी दूर अपने स्थानसे आये. उत्तर जब आप यहाँ पहिले आते थे तो सारे शहरमें २०० घर भी आबाद न थे. अब बारह सौ घर आबाद हैं।राना हमारा राजा है आप हमारे परमेश्वरके बराबर हैं व्यापार उन्नति पर है, हमसे महाराजा विवाहके समय कर भी वसूल नहीं करते हैं. हम बहुत प्रसन्न हैं जो आपने हमारे साथ सलूक किया है, उसके सामने पाँच कोश क्या पांचसौ कोश भी कोई वस्तु नही है। मैंने उनको उपदेश किया और वे प्रसन्नतासे विदा हुए, उनके चले जाने पर बाबा संगरौतवाला और ठाकुर रावरदोवाला हमसे बातचीत करते रहे इस ठाकुरके पुत्रको हमने अजमेरके किलेसे छुटाया था, वह बहुत देर तक बातचीत करके विदा हुए।

रस्मी २३ अक्टूबर रास्ता साढ़े १३ मील-हम फेरके रास्तेसे चले, इस कारण हमें १५ मील जाना पड़ा, मार्गमें मरोली स्थान देखा यह जंगलमें बसा हुआ है। पहिले यहां बीस घर थे और अब सत्तर घर हैं यह रस्मी बहुत सुन्दर स्थान है इसको राजा चंदसे निर्मित मानते हैं, पर यह विदित नहीं कि यह चन्द्र कौनसे हैं, यहाँके लोगोंने एक तख्त लगाई है उसका विषय यह है कि मुहरा व्यापारी महाजन नकाश और रस्माकी सब पंचायत नियत करती है कि तहसीलदारने पाकरके व्यापार पर और अन्न पर अधिकतर महसूल लगा दिया, इससे उन्होंने यह स्थान छोड़ दिया। पर जो कि रयासतके अहलकारने इस प्रकारकी कसम खाई कि आगेसे वह ऐसा न करेंगे तब उसको फिर लाकर आबाद किया और ईश्वरकी साक्षी की, इससे हम सबने यह तख्ती लगाई कि यादगार रहै। मिती आषाढ़ वदी तीज संवत १८१९।

जसैमू तारीख २४ फेरसे मार्ग चौदह मील सीधे रास्तेसे बारह मील–पहिले यह विख्यात नगर था, पानी खोरे है पहिले यहां कुछ भी आवादी न थी अब यहाँ अस्सी घार आवाद हैं हमारा गमन मसका न्हाय स्थान दरीबेमे हुआ पर यहाँकी सब लिपियां पानीमे डूबी हुई हैं।

मुकाम शनिवार तारीख २५ सीधा रास्ता लोनीसे साढ़े बारह मील हम फेरके मार्गसे इस लिये गये कि वह स्थान देखैं कि जहाँ रावल समरसी चित्तौड़वाले और भोला भीम अनहलवाड़ेसे युद्ध हुआ था इस मैदानमे ढाका बहुत है, इसका वर्णन लोगोंने कवितामे किया है।

उसने लिखा है कि युद्ध करेराक्षेत्रमे हुआ था और सोलंकी पराजित होकर नदी पार होगये यहां जहां बनास और बेरसका संगम है वहां एक महादेवजीका मंदिर है।

करेरा यहाँ एक मदिर तेतीस अवतार जैनियोका है यहाँ कई लिपियां हैं कोई संवत् ११०० कोई १३०० और कोई १३५० का बना हुआ इसको प्रगट करती हैं पुजारी यहाँके निर्धन हैं पर मंदिर बहुत सुन्दर है स्तम्भोंपर जैन सम्प्रदायोंके अक्षर खुदे हैं शिखर तीस ३० फुट ऊंचे हैं, चालीस फुट ऊंचे शिखरमें पार्श्वनाथकी मूर्ति है दूसरे स्थानोंमें उनके शिष्योंकी मूर्तियें हैं। ३० वर्ष हुए कि पहिले यहाँके मैदानोंमें ज्वारकी खेती होती थी कि उसमे हाथी भी समाजाय। मार्ग सर्वथा लुप्त है हमारी पालकी कठिनाईसे चली यहाँ पहिले छः सौ ६०० घर थे, अब ६० घर हैं यहाँकी स्त्रियाँ पानीके साथ हमको धन्यवाद देने आई, रसमीसे करारा तक सात मीलका मार्ग बडा कटीला है वहांसे सुन्वार तक नौ मील है। सुन्वार एक मेवाड़के वंशधरके अधिकारमें है महाराज दौलतसिंह कमलमेरवालेके अधिकारमे हैं, यहाँ एक किला भी है, यहाँ संवत् १८२६ में तमाखूका व्यापार बंद होगया था। मादली २६ तारीख साढ़े सात माल पहिले यह सात हजार रुपये वार्षिक की आमदनी वाला बड़ा शहर था अब उसमे सात सौ भी नहीं बैठते। इसमे अब ८० अस्सी घर हैं अब यहाँ खेती होती है प्रबन्धकर्ता उत्तम नहीं है यहाँ वाईजी अर्थात् इस समयकी राजमाताने एक सुन्दर संगमरमरका स्थान बनवाया है, संवत् १७३७ की जैनधर्मकी खोदित एक लिपि है।

तूस और मेहता, २७ तारीख चौदह मील–आज बड़ी कमजोरी है इस जंगलमें नाहर पाये जाते हैं, हमारे राजाके घोड़ेने जो हमारे साथ था समझ लिया कि अब हमारी यात्रा पूर्ति पर है इसी स्थान पर हरत दानाने मार्गने जादूकी माल ग्यारह सौ वर्ष हुए शिशोदियाके मारी थी। एक बड़ा शूकर हमारे मार्गसे निकल गया, हम आराम चाहते थे यहाँके मनुष्य हमारी अगौनीको आये उनके आगे नगाड़े बजते थे, स्त्रियाँ, अपना लोटा लिये हुए आई। हमें धन्यवाद दिया, हमने उनके लोटोमे एक एक रुपया डाल दिया और विश्राम स्थान पर आये हमारा मिस्तरी बड़ा कमजोर होगया है, उसकी अस्थिमात्र शेष हैं।

नवम अध्याय ९.



कर्नल टाड् साहबकी अपने देशमें जानेकी इच्छा-स्वदेशमें जानेको रोक कर बूँदीराज्यमें जाना-बूँदीके महाराजका प्राण त्याग करना-उनका कर्नल टाड् साहबको अपने पुत्रके अविभावक पद पर नियुक्त करना-हैजा-पौहाना-भीलवाड़ा-जहाजपुर-कर्नल टाड्का बूँदीमें आना-राजपरिवारके साथ साक्षात् करना-राजपरिवारके साथ आत्मीयता।

निरन्तर घोर परिश्रम करने तथा-रजवाड़ेकी राजनैतिक-आर्थिक एवं नैतिक उन्नति साधन करनेकी निरन्तर चिन्ताके करनेसे सन् १८२१ ईसवीमें कर्नल टाड् साहब का स्वास्थ एकवार ही भंग होगया। इस समय उनकी वीरता एकवार ही दूर होगई। इस समय उन्होंने चिकित्सकके परामर्शके अनुसार अपनी प्राणरक्षाके लिये "प्यारी जन्मभूमिमें जानेकी अभिलाषा प्रगट की। परन्तु रजवाड़ेकी ओर २ राजपूत जातिकी ओर उनकी कैसी माया और अकृत्रिम स्नेह उत्पन्न हुआ था, कि वह अपने शरीरकी ओर तथा अपने जीवनकी ओर ध्यान न देकर केवल राजस्थानकी शान्ति और राजपूत जातिके मंगलसाधनमें लिप्त हुए। देशदेशोंमें जाकर किसी न किसी एक घटनाने उनको बाँध रक्खा। रजवाड़ेके समस्त राजवंश और सामन्त वंशोंके साथ उनका भाई मामा, और चाचा इत्यादिका सम्बन्ध स्थापित हुआ था, इसी कारण वह किसी प्रकार भी माया ममताको छोड़ कठोर हृदय साधारण अंग्रेजकी समान राजस्थानको न छोड़ सके। सन् १८२१ ईसवीके जौलाई मासमे उन्होंने उदयपुरमें जाकर लिखा है कि वर्षाऋतुके समाप्त होने पर अपने देशमें जानेका निश्चय किया था। परन्तु डंकन साहबकी भविष्य वाणी कि तुम अभी स्वदेश न जा सकोगे पूरी हुई कि उसी समय बूँदीके महाराजकी अचानक मृत्यु होगई; इस लिये उनके वह मनकी आशा मनहीमें लोप होगई, वह लिखते है कि " कई दिन वीतने पर मुझे बूँदीका समाचार मिला कि मेरे प्यारे मित्र बूँदीके महाराजने प्राण त्याग किये हैं, और अपनी मृत्युके समय मुझे अपने शिशुपुत्रके अविभावक पदपर नियुक्त करके उस पुत्र और बूँदीराज्यके मंगल साधनका भार मेरे ऊपर अर्पण कर गये हैं।" उदार हृदय राजपूत बांधव टाड् अपने राजपूत मित्रकी मृत्युसे कातर हृदय होकर उनकी उस अंतिम आज्ञाको पालन करनेके लिये दुःखित होकर शीघ्र ही बूँदीकी ओरको चले।

इस समय यहाँ महामारी हैजा फूट निकला था, बड़े २ यत्न किये जाते थे हमने देखा कि यंत्रशास्त्री मन्त्र पढ़ते और हवन करते थे शहरसे बाहर दक्षिणकी ओर गंगाजल टपकाया जाता था लोग व्याकुल थे ऐसे समय हमने अपनी यात्रा वर्षामें ही आरम्भ की।

स्थान पोहांना, २५ जौलाई-यह वड़े दुःखका दिन था, हम उदयपुरसे वर्षाकालमें चले थे, मेहता और वादलीके बीच मार्गमें हमने देखा कि हमारा हाथी मरा

पड़ा है, इस दिन बड़ी ठंढी हवा थी जिससे बड़ा कष्ट हुआ। हमारी इच्छा भीलवाड़ा देखनेकी थी इससे उसी मार्गसे चले।

२६ जौलाई भीलवाड़ा–दो दिनसे इन्द्रदेवने कृपा की है धूप निकलती है, यहाँके पुरुष और स्त्रियाँ, कलशोंमे जल लेकर हमारी अगौनीको आये, यह लोग हमै शहरमे लेगये बाजार सजाया गया था। हम उसे देखकर लौट आये, भोजन किया फिर लोग हमारे पास आये, हमने इतर इलायची देकर उनको विदा किया, थोड़े ही दिनसे यहाँ मंडी जुड़ी है और तीन हजार घरोंमेंसे बारह सौ घर व्यापारी जनोंके हैं। सब स्थानोंकी वस्तु यहां मिलती है। यदि कोई कुप्रबन्ध न हुआ तो इसकी बड़ी उन्नति होगी, २८ तारीखको भी लोगोने हमको वहीं रक्खा २९ तारीखको बहुत थोड़ा असबाब लेकर यहाँसे चले मार्ग सब बिगड़ गये थे, पानी वर्ष रहा था साथी लोग गिर २ पड़ते थे इस प्रकार जहाजपुर जाकर पहुँचे।

कर्नल टाड् साहब बिना विश्राम किये बराबर चलते ही गये और ३० तारीख को बूँदीमें पहुँच गये। उन्होंने लिखा है कि "मैं जिस पथिकके वेषसे बूँदीमें गया उसी वेषसे शोकसे संतापित हुए राजपरिवारको धीरज देनेके लिये सबसे पहिले राजमहलमे गया और वहां जाकर सबको धीरज दिया। मैंने महलमें जाकर नवीन महाराज और उनके अनुज गोपालसिंहको परिषद मंडलीसे व्याप्त देखा। जाते समय दोनो ओर शोकसे संतापित होकर भी मेरे प्रति सम्मान दिखानेके लिये आग्रह करते हुए सेवकोंको देखा"।

"मृतक महाराजके वियोगसे मेरे हृदयमें जो अपार शोक उपस्थित हुआ था मैने उसे प्रकाश करके कहा, और साथमें यह भी विदित किया कि भारतवर्षके गवर्नर जनरल बहादुर भी महाराजके वियोगसे दुःखित हुए हैं और नवीन महाराज जबतक राजकार्यमें समर्थ न होंगे, गवर्नर जनरल बहादुर तबतक उनके पिताकी जगह होकर उनके कल्याणकी कामना करेंगे। राजकार्यमे अज्ञान नवीन महाराजने धीर और गंभीरभावसे उत्तर दिया कि मेरे पिता मुझे आपकी गोदमे बैठाल गये है, उन्होंने मेरे मंगलका भार आपके हाथमे दिया है"। मै भी इसी प्रकारसे धीरज दे सामन्तोंके साथ वार्तालाप करनेके पीछे अपने ठहरनेके लिये जो मकान महलसे कुछही दूर पर था वहाँ गया। मैने बैठ कर देखा कि मुझे जिन २ प्रयोजनीय वस्तुओंकी आवश्यकता थी वह सभी वस्तुये तैयार रक्खी हैं, और मैंने बिना पोशाक उतारे ही देखा कि मेरे लिये भोजनकी सभी सामग्री तैयार रक्खी हैं। राजमाताने वह भोजन भेज दिया था, और मेरे प्रति सम्मान दिखानेके लिये एक ब्राह्मणके हाथ महलसे यह सब सामान भेजा था, उसके आगे २ एक ब्राह्मण गंगाजल छिड़कता हुआ आया था। पीछे किसीकी दृष्टि न लगै, अथवा कुछ अशुभ न हो यह काम इसीलिये किया गया था"।

दशम अध्याय १०.

राज्याभिषेक–राजभ्राताओंकी योग्यता–राजमाताका समाचार–बलवन्तराव–राज्यका प्रवन्ध करना–रानीसे साक्षात्–बूँदीकी आय–कोटेमें गमन–रावता–

कर्नल टाड् साहबने ५ पांचवीं अगस्तको लिखा है, " कि मुझे बूँदीमे आया हुआ सुन कर राजमाताने नवीन महाराजका राजतिलक देने वा अभिषेक कार्य करने का निश्चय किया, और श्रावणमासकी तृतीयाको महापर्वको निकट जान उसके दूसरे दिन अभिषेक होनेका निश्चय किया। राजमाताने मेरे समीप एक लेखकके द्वारा यह कहला भेजा कि तृतीया तिथिको जो जातीय पर्व होता है, उस दिन मुझे नवीन महाराजके साथ राजयात्रा करनी होगी। राजमाताने मेरे समीप यह भी कहला भेजा कि रज-वाड़ेमें ऐसी रीति प्रचलित है कि बूँदीके राजाकी मृत्यु होनेपर उनके कुटुम्बी तथा सम्बन्धी वा प्रतिवासी बारह दिन अशौचके पीछे नवीन महाराजको अशौच चिह्न छोड़ कर शुद्ध होनेके लिये आग्रह करते है। उनके वचनानुसार मैंने शीघ्र ही महाराजके लिये रँगेहुए कपड़े और पगड़ी तथा हीरोके लगे हुए शिरपेच मोल लेकर राजमहलमें भेज दिए। उन्होंने अशौच चिह्नस्वरूप सफेद वस्त्रको त्याग कर इन रँगेहुए वस्त्रोंको धारण किया। मेरे उस अनुरोधके अनुसार बारह दिनके पीछे नवीन शिशु महाराज मेरे दियेहुए कपड़ोंको पहर कर शुद्धहो बाहर हुए, मै उनके साथ बूँदीके प्राचीन महलमें गया। उसी स्थान पर समस्त क्रिया कर्म हुए थे "।

" दूसरे दिन महाराजका अभिषेक किया गया–राजमहल नामक महलमें जहां बूँदीके राजाको अभिषेक होता है मैं वहीं गया। मै जिस रास्तेसे गया, उसी रास्तेसे सुन्दर वस्त्रधारी अगणित प्रजा इकट्ठी होकर मेरा अभिनन्दन करती थी महलके साम-नेके भागमे इसी भांति अगणित राजपूतोंने चारोओर इकट्ठे " जयजय " स्वरसे महा आनन्द प्रकाश किया, महलके भीतर जिस स्थान पर महाराज अभिषेक यज्ञमें नियुक्त थे वहां भी बहुतसे सामन्तादि इकट्ठे हुए थे। मै वहाँ जा पहुँचा और उन सामन्तोंसे बातचीत करने लगा, उसके पासहीके एक कमरेमें पूजा और हवन होरहा था पूजाके समाप्त होते ही आज्ञानुसार मैंने नवीनमहाराजको उस यज्ञ स्थानसे बुलाकर दूसरे कमरेमे एक आसन पर बैठाया, उस स्थान पर फिर पूजादि हुई, महाराजने अपने पुरोहितके माथे पर टीका लगाया। उक्त कार्यके समाप्त होजाने पर सबकी आज्ञानुसार मैं प्रसन्न हो सभास्थानके एक ऊंचे मञ्चान पर स्थित राजसिंहासनकी ओरको महाराजको लेगया। मंचान ऊंचा था, इस कारण सुकुमार महाराज उसके ऊपर चढ़नेमें समर्थ न हुए, मैंने उनको उसके ऊपर चढ़ा दिया। इसके पीछे पुरोहितने चंदन लगाया, मैने मध्यमा उगली से नवीन महाराजके मस्तकपर तिलक दिया। इसके पीछे उनकी कमरमें तलवार बाँधकर अपनी गवर्नमेण्टके नामसे महाराजको अभिनन्दन कर, जिससे सभी सुन सकें

ऐसे ऊचे स्वरसे कहा कि बृटिश गवर्नमेण्ट सदाके लिये बूँदी राज्य और राजदरबारके मंगलकी कामना करैगी। मेरे इस वचन पर सुन्दर वस्त्रधारी हजारों मनुष्य महा आनन्द प्रकाश करने लगे, और उसी समयमें तारागढ़के किलेसे तोपें छूटनेका शब्द हुआ। इसके पीछे मैंने महाराजके शिरपर पगड़ीमें हीरोंका शिरपेच, गलेमें मोतियोंकी माला, हीरेजड़े खँडुए देकर राजपूतोंमे प्रचलित रीतिके अनुसार इक्कीस दुशाले, तथा बड़े कीमती मूल्यवान् अनेक प्रकारके वस्त्रादि उपहारमें दिये। चाँदीके आभूषणोंसे सजा हुआ एक हाथी और दो काले घोड़े भी लाकर उपहारमें दिये गये। उपहार दानकार्यके समाप्त होजाने पर मैं अपने नवीन महाराजके पिताके मित्र और उनके अभिभावकत्व-रूपसे उनका अभिनन्दन और मंगल कामना करके महाराजसे कुछ दूर जाकर खड़ा हुआ, उस समय राजाके प्रधान २ सामन्त उपहार देकर अभिनन्दन करने लगे, इस समय राजभ्राता गोपालसिंहने आकर मुझसे कहा कि आपके अतिरिक्त मेरा और कोई अभिभाविक नहीं है"। समस्त सामन्त भी एक २ करके महाराजको अभिनंदन कर मेरे पास आये, और मेरे पास आकर मेरे इस अभिषेक कार्यमें मिले और इस कार्यको स्वयं करके आनन्द प्रकाश करते हुए बृटिश गवर्नमेण्टके प्रतिनिधि स्वरूपसे उन्होंने मुझे नजरें दीं। पीछे मैं महाराज और सामन्तोंको अभिवादन कर वहाँसे चला आया। नवीन महाराज इसके पीछे सेना और सामन्तोको साथ लेकर नगरमे घूमते हुए सीतर की भवानीके मंदिरमे पूजा करनेके लिये गये"।

दूसरे दिन राजमाताका समाचार हमारे पास आया। हमने उनके कहनेके अनुसार सब प्रबन्ध कर दिया। उनको बलवन्तसिंहकी ओरसे कुछ शंका थी, एक समय बारह वर्ष हुए कि इसने आक्रमण किया था। रानी साहिबा अपने दीवान भूरा शंभूनाथसे भी राजी न थीं, इससे बड़े धर्मंमे विश्वासी गोविन्दराम वकील, तथा धाभाई किलेदार तारागढ़ तथा चन्द्रभान नायक यह जो बड़े ईमानदार थे भूराके ऊंपर दृष्टि रखनेके लिये नियत हुए।

मैंने सब प्रबन्ध करके आज्ञा दी कि जो रुपाय आमदनीका हो वह सब महलके खजानेमें रक्खा जाय, और ऊपर लिखे पुरुषोंको रसीद तथा हिसाबका उत्तर दाता किया, और बलवन्तसिंहको भी विदा करनेका प्रबन्ध किया।

इसी समय श्रावणी पूर्णिमा पर राखीका त्योहार आया। रानी साहिबाने मुझे भाई मान कर अपने गुरुके हाथ मेरे पास राखी भेजी, इस सम्बन्धसे ग्यारह वर्षके कुमार मेरे भानजे हुए, तब मैंने दीवानकी मारफत कुछ प्रबन्ध विषयक बातचीतकी इच्छा की, और विश्वासी सेवकोंके साथ महलमें गया। कई घंटे तक बातचीत हुई, रानी साहिबा एक परदेके बीचमें थीं उनकी बातचीतसे राज्यप्रबन्ध विषयक उनकी बड़ी योग्यता प्रतीत हुई, हमने उनको समझा दिया कि तुम पृथक् लिखा पढ़ी न करना, और हर किसीसे अपने मन की बात न कहना। हमारी गवर्नमेण्ट सदा तुम्हारी सहायक रहैगी। फिर रानीने एक सहेलीके द्वारा हमारे पास इत्रपान भेजे, और बार २ यही कहकर विदा किया कि लालजी को भूल मत जाना।

मै आनन्दपूर्वक लौट आया; और रानीकी योग्यतासे मैं बड़ा प्रसन्न हुआ। मुझे और रानियोंसे इनमें विशेष योग्यता प्रतीत हुई।

हम अगस्त तक रयासत बूँदीमें रहे, जब चलने लगे तब यही उपदेश दिया कि हम आप सब लोगोंको इस रयासतका प्रबन्ध कर्त्ता नियत करते हैं, यदि हम प्रतिवर्ष हिसाब माँगैं तो आप इस पर आश्चर्य न करै और भूराको भी समझाया कि वह आगे से उन्नतिका मार्ग स्वीकार करैं जिसको उसने साथियो सहित स्वीकार किया।

सफरमें हमारे पास उनके समाचार आते रहे, तथा देवनागरी और फारसीमे महाराज बालकका लिखा पत्र भी हमारे पास आता रहा। जब हम वहीं थे तभी बालक महाराज डेरेके सामने अपनी चातुरी दिखाते हुए घोड़े फेरते थे; एक समय महारानीने हमको धन्यवाद दिया कि आज बालक महाराजने शूकरका शिकार किया है। इस रीतिपर बड़ा दान पुण्य किया गया। यह वह समय था कि जबतक जंगली शूकर न मारा जाय तब तक वीरोंसे प्रतिष्ठा नहीं मिलती थी।

हम जहां कहीं रहते पुरानी खोदित लिपियोंकी खोज करते थे, बूँदीके राजपुरुषोंको इसमें बड़ा आश्चर्य होता था।

बूँदीकी खालिस आमदनी तीन लाखसे विशेष नहीं थी, अब थोड़े ही समयमें पाँच लाखसे विशेष होगी और खालसे इलाकोंको सिवाय ८०००० हजार रुपये वार्षिक जो सरकार अंग्रेजको दिया जाता है जो पहिले सेंधियाके अधिकारमें था, जो उसने सन् १८१८ ई० के नियम पत्रके अनुसार छोड़ दिया था उसके सिवाय महाराजके पास सातसौ सवार सजातीय, फौज किलेदारीके सहित तथा गोलन्दाज बारह तोप और २७०० पैदल तनख्वाहदार थे तथा किलेदारी और प्रान्तोंकी सेना इससे पृथक् थी जिसकी आमदनी उनके खर्चको पूर्ण थी।

१९ नवम्बर स्थान रोहता–चौदह अगस्तको हम कोटेको चले। बूँदीकी प्रजा तथा हम भी उस समयके ज्वर जाड़ेसे पीड़ित होगये थे। सन् १८१७ और १८ में हमने इसी स्थान पर शत्रुओंके साथ संग्रामको सेना सजाई थी और यह युद्ध पिंडारोंके साथ हुआ था, और उनकी लूटका जो रुपया आया उससे लार्ड हैसस्टिंगसके नामसे पुल बनानेका विचार हुआ था उसमें प्रति देशका अस्बाब था। अनेक प्रकारसे४००० पशु थे और हमारी इच्छानुसार एक पुल १५ महराबका कोटेके पूर्वकी ओर बनाया गया, यह एक सहस्र फुट लम्बा था एक वीर सिपाही जिसने उस युद्धमें महा सहायता की थी तथा दूसरे साहबोंकी मानो यह स्मृति चिह्न है।

जो कि हम हाड़ौतीके मुख्य मार्गके समीप थे, उस समय राजरानाने कहा कि वह हमको यह स्थान दिखाता है जहाँ बड़ा शिकार होता है। जहाँ पर्वतोंकी श्रेणी बराबर चली जाती है, वही स्थान इसके लिये निश्चित हुआ। जो हाड़ौतीको मालवेसे पृथक् करता है, तीसरे पहरको हम शिकारको चले। शिकारियोंके शब्दसे जंगलके जीव जन्तु हरिण आदि कूदते फांदते चलने और भागने लगे। लाल दागदार बारहसिंगे

जंगली सुअर भागते दीखने लगे। जानवरोंका भयसे भागता एक अद्भुत दृश्य दिखाता था, इस दिन हमारे डेरोंपर हरिण मार कर लाये गये थे।

कहा जाता है कि रियासतका शिकारमें दो लाख रुपया खर्च होता है। २५ सवारी २०० हाँकनेवाले और ५०० शिकारी समय पर कामके लिये रक्खे जाते हैं, पर विशेष व्यय शिकारके उपरान्त भोजमें होता है। लोगोंको इनाम बाँटा जाता है, यह काम राजरानाने हाड़ा जातिके प्रसन्न करनेको किया था पर तौ भी इतने समय तक राजकाज करने तथा कठोर व्यवहार करनेवाले परसे विरक्तता किसीकी न देखी गई।

जबतक महाराव मेवाड़से लौट कर आवें तबतक हम मालवेमें दौरा करेंगे, जहाँ भितराकम जंगलमें चम्बल गिरती है।

एकादश अध्याय ११.

मुकन्दरामें जाना–चम्बलका दृश्य–बंजारोंके लगानेके चिह्न–जोगियोंके स्थान–टाड् साहबका एक जोगीका शिष्य होना–शिशोदियाका वृत्तान्त–योगियोंके सरदारका वर्णन–बरौली और उसके मंदिरोंका वर्णन।

बूँदीके नवीन महाराजका अभिषेक होजाने पर वहां कुछ दिन रहकर शांति स्थापन और सुशासनकी व्यवस्था करके महात्मा टाड् साहब बूँदीसे चले गये, उन्होंने मुकन्दराके पास जाकर लिखा है " मैं बहुत सवेरे प्रसिद्ध मुकन्दरा नामक पहाड़ी मार्गसे होकर आया और दूरसे ही मालवेके अत्यन्त रमणीक समतलक्षेत्रको देखा। मैं पीछे बाई ओरको जाकर जो पर्वत हाड़ावतीको मालवेसे विच्छिन्न करते हैं उनकी एक ओर होकर गया। मेरे पर्वतोंपरसे उतरते ही नवीन सूर्य कमनीय मूर्तिसे उदय हुए। वहाँ एक स्थान पहला भीलोंके राजाके कर ग्रहणका है जिसको बंजारोंने चिह्न स्वरूप मान लिया है देखा मैं क्रमश नीचे उतर कर भिसरोरके सामन्तके स्थापित अतीत नामक स्थानके झलका नामक मंदिरमें गया। उस मंदिरके सामने जटाजूटधारी विभूति लगाये हुए अनेक संन्यासी दिखाई पड़े; उन सन्यासियोंमेंके प्रधान नेताकी अवस्था ६० वर्षकी होगी, उन्होंने आगे बढकर मुझे आशीर्वाद दिया। सबसे पहिले उन्होंने मेरे मस्तक पर विभूतिका टीका लगाया, और मुझको अपना चेला बना लिया। मैंने उपयुक्त संमान दिखानेके साथही साथ उस टीकेको ग्रहण किया। यह वृद्ध संन्यासी प्राचीन विवाद तथा इतिहासको बहुत कुछ जानते थे। उन्होंने आदिसे देवता दैत्योंके युद्धकी कथा कहते सब रामायणकी कथा कही। मेवाड़के राजपूतोंका नाम शिशोदिया क्यो हुआ, इसके सम्बन्धमें उन्होंने एक विचित्र कहानी कही। उन्होंने कहा कि इस पहाडी वनके देशमें एक समय चित्तौड़के महाराणा मृगया करनेके पीछे भोजन करने बैठे उस समय

वह क्षुधासे व्याकुल थे। बड़ी शीघ्रतासे उन्होंने एक मांसका टुकड़ा मुखमें डाला उसमे एक वनैला डाँस कहींसे प्रविष्ट होगया। उस डाँसने मांसके साथ राणाके उदरमें जाकर भयंकर वेदना उत्पन्न की। राणाकी आज्ञासे वैद्य आये उनसे सब समाचार कहा गया, वैद्यने राणाके प्राणोंकी रक्षा करनेके लिये एक उपाय स्थिर किया, और राणाके सेवकसे गुप्तभावसे कहा कि एक गौके कानका थोड़ा माँस काट कर लाओ, सेवकने उस आज्ञाको पालन किया, वैद्यने उस माँसको एक कपड़ेमें बाँध कर उसे बड़े डोरेमें बाँध राणाको गलेमें डालनेके लिये कहा। राणाने इसी प्रकार कार्य किया, वह उदरमेका डाँस इस गोमाँससे बंध गया, वैद्यने डोरेको खैंच कर बाहर किया, राणाके प्राणोंकी रक्षा हुई। राणाने महा संतुष्ट होकर वैद्यको यथेष्ट पुरस्कार दिया परन्तु किस उपायसे वैद्यने हमारे प्राणोंकी रक्षाकी इसको वह बारंबार पूछने लगे, तब वैद्य ने समस्त वृत्तान्त कह दिया। राणाने जब सुना कि मेरे उदरमें गोमांस डाला था तब कहा कि यहतो महा पाप किया है— इसका मैं प्रायश्चित्त अवश्य ही करूँगा। अज्ञानतासे गोमाँस खाया था इस महापापका दंड निश्चय हुआ कि महाराणाको जलता हुआ शीशा निगलना होगा। शीघ्र ही प्रज्वलित शीशा तैयार हुआ महाराणाने निर्भय होकर उसको पी लिया। उससे कुछभी क्लेश न हुआ, उसी दिनसे वह राजपूत राजवंशधर आहारियोंके बदलेमें शिशोदिया नामसे पुकारे जाते हैं। यह प्रवाद वाक्य सर्वदा सत्य है प्राचीन योगीको ऐसा दृढ़ विश्वास था। योगीके साथ इस प्रकार वार्तालाप करते २ मैं आगे बढ़ा, दूरसे ही वृक्षोंसे घिरी हुई बारौलीके विख्यात मंदिरका शिखर मुझे दिखाई पड़ा। वह दृश्य नेत्रोंको आनन्द देनेवाला था। मैं एक छोटीसी नदीके किनारे होकर उस मंदिरकी ओरको गया। मैं जैसे ही उस पवित्र मांदिरके समीप पहुँचा कि वैसे ही देखा कि बड़े २ आमके वृक्ष मानो आकाशको भेदन कररहे हैं, वह वृक्ष अत्यन्त प्राचीन थे। मै शीघ्र ही घोड़ेपरसे उतरकर मंदिरके आंगनमें आया। उस बड़े लम्बे चौड़े मंदिरकी शोभाका वर्णन करना सम्पूर्ण असम्भव था। एकमात्र चित्रकार ही इसमे चित्र लिखनेकी सामर्थ्य रखते थे, शिल्पियोंने इसमे अपनी शिल्पशक्तिका चूड़ान्त दिखा दिया था, इसको देखकर पहिले मेरे मनमें इस बातका उदय हुआ कि प्राचीन हिन्दुओंके मंदिरोंमें यह शिल्पकार्य जैसा रमणीय है, उसी प्रकार अतुलनीय भी है। खंभोंकी पंक्तिके ऊपर और नीचेका भाग एवं छत्त सभी मानो एक २ आदर्शमंदिरके स्वरूप थे सबसे ऊपर सुवर्णका कलश हमारी दृष्टिको आकर्षण करता था। प्रत्येक खंभ और शीर्ष भागके वर्णन करनेमें एक बड़ी पुस्तक तैयार हो जायगी; यद्यपि यह मंदिर बहुत पुराना था, तथापि आजतक इसका चमत्कार भलीभांतिसे विराजमान है। इसकी दीर्घस्थाइताके दो कारण जाने जाते हैं। पहिला प्रत्येक पत्थर बड़े पत्थरसे खोदकर बनाया गया है, इस कारण वह जैसा कठिन है उसी प्रकार उसका शिल्पकार्य भी अत्यन्त श्रमसाध्य है। और दूसारा मंदिर पिसे हुए पत्थरसे रँगा हुआ था, इस कारण बहुत समयकी वर्षाके होनेसे उसका रंग किसी २ स्थानका दूर होगया था—और उसके सब अंश श्रेष्ठ अवस्थामें हैं"।

"बारोलीके इस महान् मंदिरमें महादेवजी विराजमान हैं। केवल एक ही स्थानमे नहीं, वरन मंदिरके अनेक स्थानोमे शिवलिंग विराजमान हैं। लगभग पांच सौ हाथकी चौकोर भूमिमे यह मंदिर बना हुआ है, इसके चारोओर पत्थरकी दीवारें हैं। उन दीवारोके बाहर बडे २ वृक्ष हैं, और छोटे २ मंदिर विराजते हैं। मंदिरके आंगनमे जाते ही सबसे पहिले एक स्तम्भ मुझे दिखाई पड़ा, एक सर्प उस स्तम्भको पकड़ रहा था। जानेका द्वार अवश्य ही अत्यन्त रमणीक था परन्तु वह इस समय नष्ट होगया है, कारण कि उसके कुछेक अंश इस समय भी विद्यमान थे, जो देखनेसे अत्यन्त ही चमत्कारिक बोध होते थे। मंदिरमें प्रधान विग्रह महादेवजी पार्वती और उनके अनुचरके थे। महादेवजी एक कमलके ऊपर खड़े हुए है, और एक सर्प मालाकी समान उनके गलेमे पड़ा हुआ शोभा पारहा है, उनके दांये हाथमें डमरू और बांये हाथमे मनुष्योंकी खोपड़ी है। दुःखका विषय है कि मुसलमानोंने उनके दोनों हाथ खंडित् कर दिये हैं, मुसलमानोने जो इस मूर्तिको सब नहीं तोड़ा इससे जाना जाता है कि वह पाषाण हृदय यवन भी इस मंदिर और विग्रहके शिल्पकौशलको देख कर मोहित होगये थे। पार्वतीजीकी मूर्ति शिवजीके बाई ओर स्थापित है वह एक कूर्मके ऊपर खड़ी हुई है, मंदिरमे और भी बहुत सी मूर्तियें हैं। शृंगके ऊपर एक प्रकारके सिंहकी मूर्ति दिखाई देती है, उसका नाम ग्रास है। अन्यान्य मूर्तियोंमेंसे बहुत सी टूटफूट गई थीं। एक स्थान पर एक योगी वीणा बजा रहा है, और दो हिरनिये ऊपरको कान उठाये धीरभावसे मानो वीणाकी झंकारको सुनरही है, इस भावसे वह खुदी हुई थी"।

"प्रधान मंदिरके बहुत ही पास और एक छोटा मंदिर विराजमान है। उसमे चतुर्भुजा देवीकी प्रतिमूर्ति स्थापित हैं, परन्तु मुसलमानोने उसके भी दोनों' हाथ तोड़ दिये, भील उनकी दो भुजा रूपसे पूजा करते हैं। भीलही इस मूर्तिके परम भक्त हैं।

"प्रधान मंदिरकी बाईं ओरको ३० फुट ऊंचे एक मंदिरमें अष्टमाता अर्थात् अष्टभुजा देवीकी मूर्ति है। परन्तु मुसलमानोंने देवीके सात हाथ एकवार ही तोड़ दिये हैं, केवल जिस हाथमे उनके ढाल थी उसीको नहीं तोड़ा है। अन्य पक्षमे देवीके मस्तक को एकबार ही चूर्ण करदिया है। वह मूर्ति महादेवकी छातीपर खड़ी हुई है, परन्तु महादेवजीकी मूर्तिका टूटा हुआ मस्तक दूरसे ही दृष्टि आता है। योगिनी और अप्सराओंकी मूर्तियां पर यवनोंने हस्ताक्षेप नहीं किया है। दहिनी ओर त्रिमूर्तिका मंदिर है, इसमे एक मूर्तिमें ब्रह्मा, विष्णु और महादेव इन तीनों देवताओंका मस्तक लगा है, महादेवजीके अतिरिक्त ब्रह्मा और विष्णुजीका मस्तक भी यवनोंने भंग करडाला है, इन तीनो मूर्तियोंपर जो बड़ा एक मुकुट था वह आज तक विराजमान है, और उसका शिल्प कार्य अत्यन्त मनोहर और प्रशंसनीय है। ऐसा चमत्कार ओर शिल्पकार्य अब नहीं होसकता"।

"हमने पीछे प्रधान मंदिरमें जाकर देखा कि यह ५८ फुट ऊंचा है इस मंदिर के बाहरी भागमें तथा भीतरी भागमे सर्वत्र देवी देवताओंकी मूर्तियां खुदी हुई थीं

मंदिरके बाहर दाहिनी ओर एक गुम्मठमें महादेवजीकी मूर्ति है, उसके गलेमें मुंडोंकी माला तथा सात हाथोंमें सात ही प्रकारके अस्त्र हैं। उनके शिरपर नृकपाल युक्त सर्प विजड़ित मुकुट हैं, उसके बाईं ओर एक योगिनी रुधिर पान कर रही है और उनके दाईं ओर नीचेके आसन पर मृत्युकी मूर्ति है उसका शरीर जीर्ण शीर्ण है।

पश्चिमकी ओर महादेवजीकी और एक प्रकारकी मूर्ति है, वह मूर्ति जैसी धीर और सुन्दर है उसी प्रकार रमणीक है पार्वतीका विवाह करनेके लिये जिस संमतिसे गये थे यह वही मूर्ति है। महादेवकी मूर्ति जैसी भयंकर है उसी भाँति मनुष्योंके मुंडोंकी मालासे शोभायमान है, उसके पास ही मृत्यु मुखमें पड़ी हुई दो मनुष्य मूर्ति है; वह मूर्ति दोनों अविकल समंकित हुई है"।

उत्तरमें एक मूर्ति है जो काल और उसके साथियोंकी है, देहाती उसको भूका माता कहते हैं, वह वृद्धा और खोपड़ियोंका हार पहिरे हैं, दो मनुष्य उसके साथ हैं, जो टेढ़ी आकृतिके है। मृतक होनेसे उनकी आँखें बंद है मुखकष्ट पाये हुए सा प्रतीत होता है। और एक मांसाहारी पशु उनके समीप आरहा है।

मंदिरका सभामंडप कई फुट आगे तक है, दोनों ओर चौकोन स्तम्भे वने हुए हैं, इन स्तम्भोमें स्त्री पुरुषोंकी वहुत सी मूर्तियें है। महरावें बड़ी अद्भुत हैं। मूर्ति खड्ग हाथमें लिये ऐसी बनी हैं कि ऊपर पैवस्त होगई है, यहाँ एक हाथीकी मूर्ति है। हम कह सकते है कि हमने ऐसी मूर्ति कहीं नहीं देखी.

इसकी छत बड़ी मनोहर है हमारे घासीने उसका मानचित्र लिया है, पवित्र स्थान पर देवताकी मूर्ति है जिसको यहाँवाले रोरी व रोली कहते हैं; दूसरा नाम इनका वालनाथ है, पंडे इनकी स्तुति श्लोकोंसे करते हैं, यहाँ एक पत्थर चम्बलके रगड़से गोल होगया है, इसीके समीप मंदिर है। एक महापुरुषने इनके समीप पार्वतीकी मूर्ति बना कर स्थापित की है पर देवताको यह स्वीकार न हुआ उसको बड़े कष्ट पड़े उसकी भार्या मरी पुत्र मरा और उसका दिवाला होगया।

इस मंदिरके समीप वीस गजपर एक और स्थान सिंगार चोरी है। इसका यह चालीस फुट मुरब्बा है। बड़े २ स्तम्भों पर स्थापित है सब ओरसे खुला है उसमें भी बहुत मूर्तियाँ है। सहनमें बारह फुटका एक चौतरा है यहाँ राजा हूनका विवाह एक राजपूत की पुत्रीसे हुआ था उसीकी यादगारमें यह बना है।

मंदिरके बीचमें एक स्थान नंदेश्वरका बना हुआ है, एक पुरुष ईश्वरकी प्रार्थना करता है, महादेवजीके समीप छोटे २ मंदिरोमें महादेवजी तथा अन्य देवताओंकी मूर्तियां हैं; उत्तरकी ओर गणेशजी तथा दूसरे देवताओंकी हैं, परन्तु यवनोंने इन मूर्तियोंको भंग कर दिया है; आगे दो स्तम्भ हैं एक खड़ा है दूसरा गिरा है शायद नारायणके पालनेके निमित्त हो; यहाँ एक जलपानके लिये बावली बनी है, यहाँसे चलकर हम एक कुंड पर पहुँचे, यह कुंड साठ फुट लम्बा चौड़ा है इसमें पानी लबालब भरा रहता है, इसके समीप एक मंदिर जलके देवताका है। कुंडके निकट जो मंदिर हैं उनमें भी

अद्भुत शिल्प हैं, एक मंदिरमें पानीमें तैरती हुई नारायणकी मूर्ति देखी। नारायण शेषनगार पर शयन करते हैं वह सहस्र फनोंसे उन पर छाया किये हैं, चरनोंमें लक्ष्मी बैठी हैं, मत्स्य और नराकार पुरुष नारायणका सिंहासन उठाये हुए हैं। उनके बीचमें एक घोड़ा खड़ा है उसके समीप सिंह है, पलंग बना हुआ है। ऊपरके भागमें देवताओंके चित्र हैं। एक स्थान पर नरसिंहजीका चित्र है तथा और भी बहुत सी मूर्तियां हैं।

नारायणकी मूर्ति शयन किये हुए हैं। एक हाथ शिरके नीचे है शंख चक्र गदा पद्म लिये हैं। यह शंख दक्षिणावर्त कहाता है उनकी नाभिसे एक कमल निकला है और उस पर ब्रह्माजी बैठे हुये हैं। लक्ष्मीजी चरण दाब रही है,यह सब वस्तुएं बड़ी शिल्प-चातुरी प्रगट करनेवाली है। शेषनागके बीच शरीरसे सोती हुई मूर्ति यह बड़ी अद्भुत है, और शेषजी तो असली सर्प ही विदित होते हैं, उनके शरीरके दाग तथा दरयायी घोड़े अद्भुत हैं, नारायण जिस पलंग पर सोते हैं वह आठ फुट लम्बा और दो फुट चौड़ा तीन फुट ऊचा है, और वह मूर्ति मुकुटसे चरणोतक चार फुट है, हमारी इच्छा इनको दूसरे स्थानमें लेजानेकी हुई।

कुंडके आसपास १२ मंदिर हैं, यहाँ एक स्त्री पुरुषकी मूर्ति अद्भुत है। यदि कुछ कारीगर छः महीने परिश्रम करैं तो कुछ खाका इस बरौलीके अद्भुत शिल्पका खैंच सकते।

बरौलीके नामकरणका कोई इतिहास नहीं मिलता, पर राजा हूनजो अंगदसीके नामसे विख्यात हैं उनका इससे सम्बन्ध पाया जाता है। ऐसा विदित होता है कि जब यूनानी बादशाह सल्यूकसने फौज भारतमें उज्जैनको भेजी थी उनके आनेसे विदित होता है कि कमलमेरका मंदिर उन्होंने बनाया हो, हमको दो खोदित लिपियोंसे पता लगता है कि सात आठ सौ वर्ष पहिले वह यहाँ आये थे, उसमें एक नाम बलनसीके पुत्रका है जो वहाँ बल नगरीसे आया था, 'दूसरा जैन भाषामें उसकी तिथि सवत् ९८१ इसमें सिद्धेश्वर महादेवकी प्रार्थनाके पांच श्लोक हैं, हमारे गुरू अपना व्याकरण उदयपुर छोड़ आये थे इससे वह इनका पूरा अर्थ नहीं करसके। यह एक समयकी आमदनीसे नहीं बना कारण कि इसका व्यय राजपूताने भरके एक सालकी आय होगी।

यहाँ पत्थरकी दो छतरी बनी हुई हैं, बरौली उस भागमें बसा हुआ है,जो चम्बल-नदी और घाटीके बीचका भाग है जिसमें सदेहात भिंसरोरके समीप तीन मीलकी दूरी पर पश्चिमकी ओर आबाद है, और यह बड़ा विचित्र स्थान है।

द्वादश अध्याय १२.

चम्बलका घूर्णित जल-रमणीय प्रकृतिका हृदय-जलप्रपात-विहारभूमि-उसका रमणीय हृदय-नावलि-धूमारकी गुहावली-गुहाश्रेणीका वर्णन-विग्रह समूहका वर्णन-जैनविग्रह चिह्न-भीसका बाजार-जसवन्तराव हुलकरकी छतरी-ताकाजीका कुंड।

कर्नल टाड् साहबने ३ सितम्बरको लिखा है कि "बरौलीके मंदिरके अनुपम सौन्दर्यको भलीभांतिसे देखनेके लिये मैं वहाँ कई दिन तक रहा, और स्वभावसे एक महान् दृश्य चम्बलके भँवरवाले जलको देखनेके लिये गया। डेढ़ कोश चलने पर बड़ी प्रबलतासे जलके गिरनेका शब्द सुनाई आया, अन्तमें मै नदीके किनारे गया, वह शब्द वहांसे भलीभांति सुनाई पड़ता था। मेरे छोटे २ डेरे एक ऊंची जमीनके ऊपर गड़े थे, वहांसे जो दृश्य दिखाई देता था, वह स्वभावतः परम रमणीय दृश्य था, उस दृश्यको वर्णन करनेकी मनुष्यमे सामर्थ्य नहीं है। हमारे डेरोके पीछे सघन वन था; सम्मुख ही पहाड़ोंके शिखर दिखाई पड़ते थे, वांई ओर नदी विस्तारित होकर मानो एक हौदकी समान होगई थी, उसके चारोंओर वेलें छा रही थीं, इससे कुछेक दहिनी ओर एक प्रसिद्धा नदी वह रही थी। उसका पाट इतना छोटा था, कि मनुष्य छलांग मारकर सरलतासे उसके पार होसकता था। डेरोंमेंसे वह विस्तारित तरंगकी क्रीड़ा भली भांतिसे दिखाई पड़ती थी। मैने हौदके प्रथम मुहाने पर जाकर देखा कि उस नदीका तीक्ष्ण चलनेवाला जल पहाड़ोको भेदन करता हुआ जा रहा है, इस स्थानसे जलके गिरनेका आरम्भ हुआ। जल राशि उस चम्वलसे महा तीव्र वेगसे पत्थरको भेदन करके नीचेको विकट शब्दसे गिर कर नदीके आकारमे नक्षत्र गतिसे चल रही है। अन्तमें वह कुछही दूर जाकर स्वतंत्र चार तरंगनीरूपसे चारोंओरको चली गई है। इसीके मध्यस्थलमें एक ऊंचा पत्थरका स्थान है इसके ऊपर सफेद सूर्यकी किरणे विचित्र क्रीड़ा कररही हैं। इस स्थान पर चार नदियां चार खाड्योमे गिरकर उस पत्थरके देशको संघर्षण करती हुई भयंकर शब्दसे फिर एक स्थान पर जाकर चारों एक रूपमें होगई है। जिस स्थान पर वह सम्मिलन हुआ है उसका जैसा विस्तार है उस स्थान पर घूर्णित जलकी ध्वनि भी उसी प्रकार भयंकर है। उस स्थानसे फिर दो स्वतंत्र तरंगिनीरूपसे दो तरफको चल कर उक्त पत्थर देशको पकड़ कर उत्तरांशमे फिर अंग २ मे मिलकर एक मूर्तिहो प्रबल तेजीके साथ फिर एक स्थान पर विचित्र सौन्दर्य प्रकाश कररही है"।

"तरंगनियोंसे वेष्टित उक्त पत्थरके स्थान पर जानेके लिये एक पुल वनवा दिया है, उस पाषाण प्रदेशका नाम भिंसरोरके ठाकुरकी विहार भूमि है। वह ठाकुर ग्रीष्मऋतु के समय उस परम रमणीय देशमें प्रीतिभोजानुष्ठान और विहार किया करते है। यह स्थान भोज विहारके लिये अत्यन्त उपयोगी है। इसका अनुमान तो सरलतासे होसक्ता है। इसके चारोओर जलके गर्जनका शब्द सुनाई पड़ता है,-प्राकृतिक रमणीय दृश्यको कौन भूल सकता है? यद्यपि यह देश वनमें है परन्तु बड़ाभारी है। यदि मेवाड़ राज्यमे हमें कोई यह देश देदेता तो हम इस भिंसरोरको पाकर अत्यन्त आनन्दित होते, अथवा चम्वलके इस जलप्रपात घूर्णितजल प्राकृतिक दृश्य पूर्ण इस स्थानमें निवास कर प्रीति भोजन कर महा आनन्द सम्भोग करते"।

तारीख चौथी दिसम्वर-कुछ दिनोंसे व्यापारी इस मार्गको स्वच्छ करते है जो गंगा मेवा स्थान स्वच्छ किया जाता है, यह जंगल है और यहां वस्ती नहीं है। यहां एक

स्थान रानाकोट भी खाली पड़ा है। सवेरे ही हम खेरली ग्राममे पहुँचे यहाँसे हम दक्षिण पश्चिमकी ओर चले। यह मार्ग सर्वथा झाड़ी और पहाड़ोंमे था गंगा भेव यात्रियोंके आराम करनेका स्थान है।

यहाँ त्रिकोन मंदिर नजर आते हैं, जो छतरियोकी समान वने है और इनमे भी वड़ी कारीगरी है। असली मदिरको तोड फोड़ कर एक और मंदिर सदा वनाया गया है इसका केवल जगमोहन अच्छा है, इसमे एक स्थानसे पानी निकल कर वहता रहता है इसीसे इसका नाम भेवगंगा पड़ा है। इस पानी पर फूल वहुत चढ़ाये जाते हैं और वह कामधेनु नामवाले कमलके फूल है।

असल मंदिरका ढॉचा वरौलीके मंदिर कैसा है। महादेव पार्वतीजीकी इसमे मूर्ति है जोगिनी नागिनी आदि सव बने हुए हैं इसके फर्समें एक यात्रीका नाम खुदा देखा जिसमे संवत् १०११ खुदा था। इसकी छत मीनारदार वहुत अच्छी है। इस स्थानके कोनोमे पाँच मंदिर वने हुए है, पर वे सव टूट फूट गये हैं, चहारदीवारीमात्र शेप है वड़े मंदिरमे एक चवूतरा है जिस पर महादेवजी स्थित हैं, यद्यपि वरौलीकी वरावर कारीगरी नही पर इस समयकी कारीगरीसे कहीं अधिक है, इस समय यह स्थान वनैले जन्तुओंके रहनेका होगया है, वहॉ वड़े २ वृक्ष हैं। मंदिरमें होनेसे उनकी जड़ोने वहुत स्थान खिला दिये है, एक वृक्ष यहा सहस्र वर्षका विदित होता है एक ही वृक्षने सव मंदिरो पर अपनी छाया करदी है, इसमे वाहर और भीतरकी ओर दो होते है। भीतर भी वृक्ष है उनपर अमरवेल चढ़ी हुई है, यह महादेवजीको पसंद है। यहॉ केतकी वहुत होती है, वानर ही वहाँके निवासी हैं, यहाँ सतियोकी छतरी भी हैं उनकी संख्या भी इनसे विदित होती है, यहाँकी सव जाँचमे एक महीना लग जाय, पर हमने अपना मार्ग स्वच्छ करनेकी आज्ञा दी।

नावली यहाँसे वारह मील है मार्ग वरावर जंगलका वड़ा कठिन और दुस्तर है।

५ वीं दिसम्वरको नावली नामक स्थानमे जाकर कर्नल टाड् साहवने लिखा है कि "नावली एक अत्यन्त सुन्दर ग्राम है, इसके पश्चिम अंशमें एक प्राचीन किला टूटा फूटा हुआ है। तीसरे पहरके समयमे तक्षकजीके कुंडको देखनेके लिये गया, यह कुड नावलीके एक कोश पूर्वमे स्थापित है। वहॉ दो मंदिर हैं एकमे तक्षककी मूर्ति है। और दूसरेमे धन्वन्तरिजीकी मूर्ति प्रतिष्ठित है। दक्षिणको कुंड विराजमान है, यहाँके मनुष्य कहते है कि यह अतल है"।

पश्चिमकी ओरसे एक नदी निकलती है, इसको तखेली कहते है यह कई मील तक पेचखाती हुई सौ फुट नीचे पठारके हिंगलाजगढ़के पूर्वी भागको धोती है। पीछे इमजारमे मिल जाती है, हमारे घासीने यहाँके चित्र लिये हैं, और जिसकी प्रशंसा लार्डलेकने की है, हम किला हिंगलाज देखते हैं जिस पर कप्तान हिंचस साहवने तोपखानेके साथ अधिकार किया था।

भानुपुरा ६ दिसम्बर ८ मील–यह स्थान बहुत रमणीक है। दो मील जंगलमें चलकर घाटी द्वारा भानुपुराके समीप पहुँचे। यहाँ एक घाट पर एक दुर्गके चिह्न पाये जाते है, जिसको इन्दौरगढ़ कहते है यह किला चन्द्रावतोके अधिकारके समयका होगा यहाँ कोई खोदित लिपि न मिली पर अब भी यहाँ कुछ बसीकतके चिह्न पाये जाते है। इसकी हमको प्रसन्नता है।

भानुपुराके समीप हम एक नदीके पार हुए जो अलवा कहलाती है और एक घाटीसे निकलती है। यहाँ भी जसवन्त राव हुलकरकी एक छतरी है। यहाँ उसने सरकार अंग्रेजसे युद्धकी तैयारी की थी, इसमें दृढ़ताके सिवाय कोई शिल्प नहीं है इसमें इस निर्भय हुलकरकी मूर्ति बैठी हुई बनी है एक स्थान यहाँ गुम्मजदार धर्मशाला सा है जहाँ जसवन्त रावका शव रक्खा गया था।

वहाँकी छतरीसे सीधी दूर पर एक और छतरी उसकी बहिनकी है जो जसवन्त रावके मरनेके बहुत दिन पीछे मरी थी, इसके दरवाजे पर काली नामक एक तोप रक्खी है,एक और थोड़े दिनोंके बने मकानमें जसवन्त रावके निमित्त निरन्तर पूजा होती है। एक मूर्ति श्वेत वस्त्र धारण किये यहां खड़ी है, उसके पीछे दीवार पर जसवन्त रावका चित्र है जो अपने विख्यात मीहू घोड़े पर सवार है। एक पुरुष उसपर चंवर करता है दोनों ओर दो सेवक खड़े हैं और ब्राह्मण कुछ पढ़ रहे है।

हमने यहांके अधिपतिका घोड़ा देखा तो छूते ही उसने कनौती दबाई, यह महु-आरंगका कुम्मैत है और अपने स्वामीकी समान महाराष्ट्र देशका रहनेवाला है, इसके शरीरकी गढ़न बहुत सुन्दर थी सब चौदह विलस्त था, चेहरा नमूनेके अनुसार था असी लखेत, कान छोटे नोकदार, आंखें बड़ी उभरी हुई और थूथना इतना छोटा था कि चाहके प्यालेमें पानी पीसकता था। हमने कहा कि इसीके अनुसार इसकी पोशाक होनी चाहिये जिसको उसके स्वामीने स्वीकार कर लिया।

भानुपुरेमें ५००० घर हैं प्रबन्ध नरम है दीवान हुलकरका काम करते हैं। यहांके बड़े व्यापारी आदि सब अपने स्वामीके साथ हमारी मुलाकातको आये और ऐसी योग्यतासे मिले कि मेवाड़के निवासी इससे अधिक योग्यता नहीं दिखा सकते, पुरानी रसम रीति सब होती है और यहांका अधिपति सामर्थ्यवान है।

स्थान गरोट सात दिसम्बर फासला १३ मील–अब हम ठोकर खानेके मार्गसे मालवेमें आये इससे प्रसन्नता हुई गरोटमें बारह सौ घर है। यहाँ पुरानी कोई वस्तु नही है, पर बीच मार्गमें मीलीका किला हमारी पुस्तकके लिये कुछ सामान दे सकता है, जिसके टूटे फूटे खंड सातल पातल नामक राजाका कुछ पता देते है, यह राजा पांड़वोंके समयका था यहांके मैदानमें अब्री हरे स्याह प्रकाशमान कितने ही प्रकारके पाषाण दृष्टि गोचर होते है। पर पहाड़ कहीं नहीं है थोड़ा भी खोदनेसे पाषाण खंड निकल आते हैं।

कर्नल टाड् साहबने आठ ८ वीं दिसम्बरको धून्नार नामक स्थानमें परम रमणीक गुहा और मंदिरोंको देखकर लिखा है कि इस देशकी उपजाऊ और श्रेष्ट मट्टीको देखकर मुझे मेवाड़का स्मरण होआया।

हमारा प्रधान लक्ष्य धूम्रारकी गुहाके निकट जानेका था। मै ढाके तथा वन्यपादप पूर्ण एक पाषाणमय देशमें होताहुआ अन्तमें धूम्रार पर्वत पर जा पहुँचा । मैंने देखा कि पर्वतके मूलमे उत्तरकी ओर एक सुन्दर सरोवरके किनारे मेरे डेरे लगे हुए हैं। परन्तु उस समय रमणीय दृश्यको देखकर नेत्रोको तृप्ति नहीं होती थी और अपार कौतूहलं उत्पन्न होता था, मैने भोजनके लिये न बैठकर पहिले गुहा देखनेके लिये कहा"।

"धूम्रार पर्वतकी वेष्टनी प्रायः डेढ़ कोश थी, इसका उत्तरांश चौड़ा क्रम २ से शृङ्ग परको ऊंचा होगया था। इसकी ऊंचाई एक सौ चालीस फुट थी । सबसे ऊंचा शिखर ऋजुभावसे ३० फुट ऊंचा और उसके ऊपरका भाग समतल था । उस समतल क्षेत्रमें बहुतसे वट वृक्ष विराजमान थे, इसके दक्षिण ओर घोड़ोंके खुरोंकी आकृतिके समान, तथा ऊपरके भागके चारोओर स्वाभाविक अभेद्य दीवारें बनी हुई थीं। प्राय दीवारोमे सर्वत्रही गुहा बनी हुई थीं, मैने गिनती करके देखा कि गुहाओंकी संख्या एक सौ दश है । इन गुहाओंके प्रधान मंदिरोंका प्रवेश द्वारस्वरूप था, अथवा यहाँ प्राचीन सन्यासी लोग निवास करते थे। दीवारोमें छेद होरहे थे परन्तु दीवारें लोहेकी समान कठिन और चिकनी थीं, यहाँ पर प्राचीन वस्तीके चिह्न भी पाये जाते हैं, परन्तु वह किस समयके हैं यह नहीं जाना जाता, यहां जो एक फुट चौड़ा प्राचीन दीवारो का कुछ टूटा हुआ हिस्सा देखा। यह एक बडे पत्थरके टुकड़ेकी समान था, पत्थर पत्थर पर जोड़ा नहीं गया है, इस कारण मेरा यह विचार हुआ कि यहाँ संसारियोंकी वस्ती नहीं थी, केवल योगी और संन्यासी ही निवास करते थे"।

"मै शिखरके ऊपरके अंश पर चढ़ा, चारोओर भ्रमण करनेके पीछे एक अंशमे जानेका मार्ग देखा। वह नीचेसे ऊपरतक कटा हुआ और खुला था। वह मार्ग दोसौ हाथ चौडा और चार सौ हाथ लम्बा था मै उसके एक चौकोने स्थानमें आया । इसकी ऊँचाई प्राय.३५फुट थी। यह एक बड़ी भारी गुफा है। यह गुफा पत्थरको खोद कर बनाई गई है। इसके मध्य स्थान पर एक बड़ा पत्थर काट कर उससे एक मंदिर बनवाया है और उसमे चतुर्भुजाकी मूर्ति विराजमान है, गुहाके उत्तर पश्चिममें खुदी हुई सीढ़ियां दिखाई दीं। वह सीढ़ी पर्वतके शिखर तक लगी हुई थी। उस शिखर देशपर यद्यपि मट्टी नहीं है तथापि मैंने वहाँ बहुतसे प्राचीन पीपल और वट तथा इमलीके वृक्ष देखे"।

"उक्त मंदिर साधारण मंदिरकी आकृति युक्त चाड़ा–मंडप है। इस मंदिरकी गठन रीति जैसी सरल है वैसी ही मजबूत भी है, स्तम्भोकी श्रेणी नक्कासीके कामका चमत्कार दिखाती थी, अनेक प्रकारकी सुन्दर प्रति मूर्तियां भी खुदी हुई है। एक बड़े भारी पत्थरके टुकड़ेको खोद कर यह मंदिर बनाया गया है, इसका स्मरण करनेसे इस मंदिरकी प्रशंसा नही की जासकती"।

"एक वेदीके ऊपर चार हाथकी बराबर विष्णुजीकी मूर्ति विराजमान है। विष्णुके पहिरे हुए वस्त्र सभी पीले रंगके हैं। इस कारण इस मूर्तिका दूसरा नाम पाँडुरंग है प्रधान मंदिरके चारोओर निम्नलिखत देव देवियोंकी मूर्तियाँ हैं। पहिले प्रवेश

द्वारके ऊपर द्वारपाल देवताकी मूर्ति है दक्षिणमें गणदेवकी मूर्ति है, उनके निकट वाग्देवी सरस्वतीकी प्रतिमा विराजमान है, बाईओर कालभैरव और गौरा भैरवकी मूर्ति है। उससे कुछ ही दूर पंच महावेदीकी मूर्तिका मंदिर है। प्रत्येक मूर्तिका स्वतंत्र वाहन दिखाया गया है। बैल, मनुष्य, हाथी, भैंसा, और मोर यह पाँच प्रकारके वाहन भी खुदे हुए हैं"।

प्रधान मंदिरके पीछे तीन छोटे २ मंदिर और हैं, उनके बीचके मंदिरमें अनन्त शय्यापर शयन किये हुए नारायणकी मूर्ति, और चरणोंके धोरे लक्ष्मीजीकी मूर्ति है"। लक्ष्मीजीकी मूर्तिके धोरे दो विकट काय दैत्य मानो परस्परमें आक्रमण कररहे हैं। नारायणके चारोंओर छोटे २ देवताओंकी मूर्ति कोई वंशी कोई वीणा और कोई मृदंग बजा रही हैं, इन बाजोंकी ध्वनिसे मानो अनन्त आनन्दसे अनन्त फल विस्तार कर रहे हैं। छोटे २ मंदिर भी प्रधान मंदिरोंकी समान बड़े २ पत्थरोंके टुकड़ोंको खोद कर बनाये गये है, परन्तु उनमें विग्रह सिंहमर्मरके पत्थर पर खुदे हुए हैं, मंदिरके ऊपर महादेवजी की मूर्ति विराजमान होरही है"।

"मैं पर्वतकी सीढ़ियों परको होता हुआ दक्षिण ओरसे बाहर हुआ। वह स्थान खुला हुआ था, और वहांसे चम्बल बहुत दूर थी, तथापि उसका तथा मन्दसोर और सुन्दवाराके देशका रमणीय दृश्य देखा। वहांसे सीढियोंपरसे उतर कर मैं बाई ओरकी गुफामें गया, उस गुफाका तलछत केवल स्तंभोंसे रुका हुआ था। यह स्तंभ जैन आकारसे बने हुए थे। आश्चर्यका विषय है कि इन मंदिरोंके एक अंशमें जिस भांति शिव और विष्णुजीकी मूर्ति विराजमान थी, इसी प्रकार और अंशोंमें भी दक्षिणांशोंमें जैनियोंके विग्रह चिह्न विराजमान थे। इनके पास ही गुफामें जैन व बहुत सी बौद्धोंकी मूर्ति थीं–कोई खड़ी थी, कोई बैठी थी, परन्तु इसकी दक्षिण ओर महाभारतमें विख्यात पांचों पांडवोंके स्मृति चिह्न पाये जाते थे। एक दश फुटकी लम्बी मूर्ति यहाँ निद्रित अवस्थामें थी, ऐसा सुना जाता है कि यह मूर्ति महावीर भीमके पुत्रकी है और इसकी यह अवस्था केवल एक ही घंटेकी बताते हैं, इसके अतिरिक्त पाँचों पांडवोंकी मूर्तियां दिखाई आई जो मनुष्य उन पांचों पांडवोंके सेवकभावसे रहते थे वह उनकी मूर्तियें थीं; कहते हैं बनवासके समय पांडव यहाँ ही आकर रहे थे"।

"सौभाग्यसे मेरे साथमें जैन गुरू थे, उन्होंने कहा कि यह पंचमूर्ति जैनियोंके पंच तीर्थकरोंकी हैं। ऋषभदेव प्रथम, सन्तनाथ षोड़श नेमनाथ बाईसमें, पार्श्वनाथ, तेईसमें, महावीर और चौबीसमें यह पंचजैन देवताकी पंचमूर्ति हैं, यह पंच पांडवोंकी मूर्ति नहीं हैं। चन्द्र प्रभुकी मर्ति भी वहाँ दिखाई दी। सभी मूर्ति दश ग्यारह फुट ऊंची थी"। वास्तवमें यह पंच जैन देवताकी मूर्तियां हैं वा पांच पांडवोंकी मूर्ति हैं, इस स्थान पर इसका विचार करना हमें असंभव होगया।

उस गुफाके धोरे ही धून्नारमें एक और बड़ी गुफा है। पहिली गुफाके भीतरसे ही उस गुफामे जानेका रास्ता है। वह सर्व साधारणमें भीमके राजके नामसे विदित

है। इस गुफाकी लम्बाई सौ१०० फुट है और८० फुट चौड़ाई है। गुफाका प्रधान कमरा भीमके अस्त्रागार नामसे पुकारा जाता था, एक बाहरकी कोठरीके रास्तेसे इसमें जाना होता है, वह कोठरी २० फुटकी है, अस्त्रागारकी गुफाके भीतर एक घर है। वह घर ३० फुट लम्बा और १५ फुट चौड़ा है, उस कमरेके चारोओर धर्मशाला बनी हुई है। तीर्थयात्री लोग यहां आकर ठहरते हैं। यद्यपि यह भी भीमके नामसे विख्यात है, परन्तु अन्यान्य लक्षणोंसे जैनियोंकी जानी जाती है। अस्त्रागारके पास ही राजलोक नामका एक कमरा है, यह पहाड़ आदिनाथके नामसे विख्यात है। इससे यह भी विश्वास होता है यहां आदिनाथकी पूजा होती होगी, एक स्थानमें पार्श्वनाथकी भी दो मूर्तियां हैं।

" और भी दक्षिण वा दक्षिणपश्चिममे गुफा और कमरे हैं, उन कमरोंके चारों ओर योगियोंके ठहरनेके लिये घर बने हुए हैं। यहाँ एक बहुत बड़ा वृक्ष है, यहाँ भी एक बहुत बड़ी मूर्ति है.

धूम्रारकी गुफाओंका विस्तार सहित वर्णन करनेकी अब लेखनीमे सामर्थ्य न रही। यद्यपि यह इलोरा, कारलि, वा सालसेटीके प्रसिद्ध प्राचीन गुफाओंकी समान श्रेष्ठ नहीं, परन्तु इसमे कुछ भी सन्देह नहीं कि यह उन सबकी अपेक्षा अत्यन्त प्राचीन हैं। मैंने इन गुफाओंके चारोओर खोज की परन्तु कहीं भी किसी प्रकारकी खुदी हुई लिपि वा अनुशासनपत्रको न पाया। यह गुफा दर्शन करनेके योग्य ही थी; इनको देखकर अनेक प्रकारका कौतूहल उत्पन्न होता था, और इनमें बहुतसे अद्भुत पदार्थ हैं "।



त्रयोदश अध्याय १३.

झालरापाटन-कर्नल टाड्की अभ्यर्थना-झालरापाटन नगर-मंदिरोंकी श्रेणी-झालरापाटनकी उत्पत्ति-झालरापाटनकी सृष्टिके सम्बन्धका विवरण-स्वायत्व शासन-कर्नल टाड् साहबके साथ नगरके सब श्रेणीके प्रतिनिधियोंका साक्षात्-प्राचीन नगरी चन्द्रावतीका वृत्तान्त-उसकेस म्बन्ध का प्रवाद वाक्य-प्राचीन मंदिर श्रेणी-कर्नल टाड्का देवताओंकी मूर्तियोंको संग्रह करना--

स्थान पंच पहाड़-१०दिसम्बरको हम गिरोटसे चलकर इस मुकाम पर आये। गिरोटसे मानसन साहबका आगमन हुआ था, यह एक ऐतिहासिक स्थान है। जब हुलकर प्रताप गढ़में था और उसने अंग्रेजी फौजका आगमन सुना तब वह अपनी सेनासहित मन्दसोरको गया और चम्बलके पार होकर गिरोटकी तरफ चला, जो वहाँसे पचास मीलके लगभग दूर था, मानसन साहबको इसकी कुछ खबर न थी वह उस समय चन्द्रवासाको जाते थे, पर ज्योंही उन्होंने हुलकरका समाचार सुना कि उन्होने मुकन्दरा घाटीको जाकर रोका और ल्यूकन साहबको कोटेकी हाड़ा फौजके साथ वही छोड़ा। हुलकरके १००००सहस्र अश्वारोही चार गोलें बाँधकर चले यह खान बंगशके अधीन थे और इन्होंने

दक्खिनसे ल्यूकन साहब पर आक्रमण किया। पर ल्यूकन साहबने उसको पराजित किया, पर साहबके पाँवमें उन्हींके सिपाही द्वारा चोट आई, एक पुरुष जो उस युद्धमें सम्मिलित था उसने हमको वह वृक्ष दिखाया जिसके नीचे साहब गिरे थे।

कोटेकी सेना कोइलाके सामन्तके अधीन थी। अमरसिंह पर ज्यों हीं आज्ञा पहुँची वह तैयार हुआ। पीपली ग्रामके सम्मुख वह अपने घोड़ेसे उतरा और जीनपोशके ऊपर बैठ गया और, उसके चारोंओर एक सहस्र सिपाही थे, उसने अमजारके मार्गसे आक्रमण करना चाहा पर उसकी सेना साहस हीन होगई थी, तथापि उन्होंने शत्रुओंके शवोंसे नदीको भर दिया। पीछे एक गोली अमरसिंहके माथे और एक छातीमें लगी जिससे वह भूमि पर गिरा परन्तु तत्काल उठकर एक कोल्हूके सहारे खड़ा होगया। और सेनाको साहस बँधाया पर वह शत्रुकी ओर तलवार उठाकर गिर गया और मरगया, साढ़े चार सौ सैनिक उसके साथ मारे गये और कोइलाका भावी अधिकारी सामन्त पलैटिया भी मारा गया, और कोटेकी सेनाका बखशी वन्दी हुआ जिसको दशलाखका तमस्सुक लिखनेसे छुटकारा मिला जिसका वर्णन पीछे हो चुका है।

यहाँ एक सादी छतरी बनी है। जहाँ यह हाड़ा वीर मारा गया था। एक चौंतरा यहाँ बना है इसको जुझार कहते हैं, इस पर घोड़े सहित उस सवारका चित्र है, हमको कोटेके नायब पर यहाँ उसकी वे परवाईसे क्रोध आया कि उसने कोई दृढ़ स्मारक यहाँ नही बनवाया था, पर वह ऐसा क्यों करता कारण कि वह हाड़ा जातिका तौ है ही नही बल्कि ऐसा करनेसे तौ उसे इर्षा होती। तथापि यह कच्ची छतरी भी एक प्रतिष्ठा की वस्तु है, जो दृढ़ छतरियोंको प्राप्त नही है, ल्यूकन साहबकी छतरी ऐसी भी नहीं है, वह जो मारेगये वह छतरी बननेका कुछ स्वत्व रखते थे वा नही, यह भी विदित नहीं हुआ परन्तु रहने वाले उस पीपलीके वृक्षको जहाँ साहब गिरे थे ल्यूकनका जुझार कहते है। यही स्मृति है और छतरीकी मरम्मत करते रहते है।

इतने मनुष्योंका वध कराकर अंग्रेजी कमानियरने मुकन्दराघाट पर अधिकार किया और शत्रुसे भेंट न हुई। यदि साहब पांच कम्पनी पैदल छोड़ जाते और थरमोपलीको चले जाते तो नामवरी रहती–कारण कि वह स्थान ऐसा है कि उसके चारों ओर भ्रमणमें एक सप्ताह लग जाता है और पैदलके सिवाय वहाँ किसीकी गुजर नहीं है पर कमानियर साहबको अपनी सेनापर विश्वास न था हम कहते हैं यदि ऐसा था तो उन्होने सेनाकी अफसरी क्यों की थी। पर ऐसा नही था प्रत्येक सिपाही युद्धके लिये तैयार था जब कमांडरने पांच कम्पनी युनासके घाट पर छोड़ी तब उन्होंने कैसा काम किया जबतक उनके पास युद्धका थोड़ा सामान भी रहा बराबर लड़ते रहे और शत्रुको हरादिया। एक समय सेंधियाकी फौजके एक जिमानखो रूहेलेने हमसे कहा कि मैंने शनैः २ एक स्थान बनाया जहांसे एक अंग्रेजको पिस्तौलसे मारा। उसने यह भी कहा कि मरहठे पैदल कभी आक्रमण नहीं करते। जसवन्त राव दीवानेकी समान अपने हाथ भूमिपर देमारता था। और अपने अश्वारोहियोंमेंसे वीरोंको पुकारता था अन्तमें

उसके सवारोंके हाथसे संकलेर साहब और उनके साथी मारे गये। हम इससे यह उपदेश लेते हैं कि ऐसे पुरुषको किसी प्रकार अफसरी न देनी चाहिये । जो अपने सिपाहियो पर विश्वास न करता हो।

पंचपहाड़ एक आवाद शहर है, इसमें चार जिले हैं, जिनको हमने युद्धमे हुलकरसे लेकर नायबको दिया है। यद्यपि अभी उनमें ५०००० रुपयेकी आय नहीं होती, पर उनमे इस्से दूनी आय होसकती है इस शहरमें २००० घर हैं। बाजार चौड़ा है जिसमें व्यापारी महाजन रहते हैं । यहाँके आदमी हमारी भेटको आये यहां लाल पत्थर भी बहुत है।

कुनवारा ११ दिसम्बर-उत्तर पूर्व १३ मील हमारा गमन बहुत अच्छे मार्गसे हुआ यहाँ ज्वार गेहूं बहुत होते हैं। यद्यपि युद्धके स्थानोंमें खेती विशेषतः कम होती है पर गेहूंकी खेती विशेष होनेसे कुनवारा यथानाम तथा गुण होगया है। यहांसे चार मील ओतला ग्राम होकर हम चले। हम उस मुकाम पर पहुँचे जो उज्जैनसे सीघा हिन्दुस्थानके द्वारको जाता है- यहासे सोनेल बड़ा शहर है, तीन मील हमारे दहनी ओर है।

महात्मा टाड् साहबने १२ वीं दिसम्बरको दश मील चलकर झालरापाटनमे जाकर लिखा है, "कि में चन्द्रभागा नदीके पार होकर गया, इस नदीकी उत्पत्तिका स्थान यहाँसे दो कोश दूर है। उसके पास ही रेलीत्यो नामक पर्वत विराजमान है । पहिले उस पर्वती देशमें एक सम्प्रदाय भीलोंकी वास करती थी और एक समय यहाँसे चार हजार भील मालवेमें जाकर वहाँके वीचके देशोकी समस्त धन सम्पत्ति लूट लाये थे । कोटेके प्रधान मन्त्री जालिमसिंहने ही उस भील सम्प्रदायका विनाश किया था"।

झालरापाटन नगर कोटेके प्रधान मन्त्री जालिमसिंहने बसाया था। मै नगरके आधकोश घोरे पहुँचा उसके पूर्वदेशकी समान नगरके प्रधान विचारक, पंचायत समाज समस्त प्रधान २ धनवान् निवासियोंने आगे वढकर मुझे वड़े आदर सम्मानके साथ ग्रहण किया। समस्त भारतवर्षके वीचमें केवल इसी नगरमें इस समय मिउनिसिपलके स्वायत्त्व शासनकी रीति प्रचलित देखी। यहाँके निवासियोंने ही स्वयं आत्मशासन विधिको प्रणयन करके स्वाधीनताके साथ स्वायत्वशासन कार्य किया था । भारतवर्षमें सबसे अधिक यथेच्छाचारी शासन कर्ता जालिमसिंहके समीपसे इन्होने स्वायत्व शासनकी स्वाधीनता पाई थी, यह अवश्य ही आश्चर्यकी बात है, कि जालिमसिंहने राजनैतिक अभिप्रायके सफल होनेकी आशासे इनको यह स्वाधीनता दी थी।

मैं उपस्थित सभी मनुष्योके साथ अभिवादन कर तीसरे पहरके समय सबके सहित अपने डेरोंमें आया, मैंने इस युक्तिसे विदा ली कि सभी मेरे साथ बातचीत करके संतुष्ट हुए, उसने विदा होकर नगरमे आया। जानेके समय किले परसे तोप छूटनेका शब्द हुआ। यह नगर चौकोर है चारोंओर वड़ी २ दीवारें और उनके ऊपर तोपोंकी कतार सज रही है। नगरका भी तरीभाव सरल और सहजभावसे गठा हुआ है। दो

प्रधान राजमार्गोंने भिन्नप्रान्तसे बाहर होकर परस्परमें अतिक्रम किया है। सबसे प्रधान मार्ग दक्षिणसे उत्तरकी ओरको गया है। मैं इसी मार्गसे बड़े बाजार होता हुआ गया अन्तमें जो रास्ता दोनों रास्तोंसे परस्परमें अतिक्रम करके गया है। उस संगम स्थानमें जा पहुँचा। उस संगम स्थानमें सम मध्यस्थलमें नव्वे फुट ऊंचा एक मंदिर था। उसमें चतुर्भुजा देवीकी मूर्ति विराजमान थी। पाषाण मय चूड़ा-मंडप इत्यादि मेरी दृष्टिको आकर्षण करता था यद्यपि यह सब भाँतिसे तैयार तो होगया था। किन्तु श्वेतही रंगसे रंगा हुआ था, मैंने इसे आज कलका जान कर विचारा कि इसमें कोई प्राचीन ऐतिहासिक तत्त्व नहीं पाया जायगा, इससे उसके देखनेकी इच्छा न करके सीधा चला आया इस स्थानसे उत्तरकी ओर तोरणद्वार तक मार्गके दोनों ओर एकभावसे बने हुए सौध और आलयकी श्रेणी दिखाई दी। यह मार्ग आध कोश था, इसकी शेष सीमामें जालिम-सिंहद्वारा प्रतिष्ठित द्वारकानाथका मंदिर स्थापित है, यह मूर्ति प्राचीन नगरके टूटे स्थान खोदनेके समयमें निकली थी और यह कोटेके जालिमसिंहके पास भेजी गई। उन्होंने इसका नाम गोपालजी रखकर इस रमणीक और विस्तारित सरोवरके किनारे उसे मंदिरमें स्थापन किया "।

उत्तरांशमें जैनियोंके सोलह देवताओंके निवासका रमणीक मंदिर है, वह मानो इस समय भी असम्पूर्ण अवस्थामें हैं अंतमें मैं जानगया कि यह बहुत पुराना है, और यहाँ एक सौ आठ जैनमंदिर थे, उन्हींमेका एक यह भी है। प्राचीन नगरमें इन एकसौ आठ मंदिरोंमें बराबर एक साथ घंटा घड़ियाल बजते थे। इसी कारणसे इसका नाम झालरा पाटन अर्थात् घण्टेका सहर हुआ है झालरा पाटन अर्थात् झालावंशीय जालिमसिंहके नामसे इस नगरका नाम हुआ है, इसीसे यह प्रचलित वाक्य सत्य नहीं है, मै कई मुहूर्तके लिये प्रधान मजिस्ट्रेट साहब मनीरामके घर गया नगरीकी जो कुछ सुन्दरता देखी उसीके लिये उनके समीप संतोष प्रकाश कर तुम्हारे शासनसे नगरकी अधिकतासे श्रीवृद्धि होगी, यह आशा प्रकाश कर उनके समीप से विदा मॉगी साह मनीरामके घरके ठीक सामने एक स्तंभ देखा, और झालरा पाटनके निवासियोंको जो स्वयं शासनत्व प्राप्त हुआ था उस स्तंभ पर उसका विस्तार-सहित वर्णन खुदा हुआ देखा। उस सरल विवरण पूर्ण सत्वदानकी रीतिको पढ़कर हँसी आती थी "।

" कोटेके राजमंत्री जालिमसिंहने राष्ट्रविप्लव और अराजकताके समयमें सुअवसर पाकर पार्श्ववर्ती अनेक देशोंके धनवान निवासियोंको इस स्थानमें इस नगरमें वाणिज्य स्थानमे वास करनेके लिये बुलाया, उन्होंने उनकी सुखशांतिके लिये जो प्रतिज्ञा की, उस प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेके लिये उक्त स्वत्वको दान करके, उस स्तंभके ऊपर उसे खोद दिया, जिस्से यह किसी समय भी नष्ट न होसके इस कारण वह उनके चित्तपर दृढ़ता-पूर्वक भलीभांतिसे अंकित होगया। उस स्वायत्वदानके साथही साथ नगरके चारोंओर दीवारें बनवाकर एक माननीय और सुयोग्य सेनापतिके अधीनमें एक सेनाको भी उस

स्थान पर रख दिया। उसने कुएँका खुदवाना प्राचीन ह्रदोंका बांध बांधन, और अपने खर्चेसे यहांके सब जाति और सब वर्णोंके प्राचीन देवालयोका संस्कार करा दिया। और जिससे सभी जने यहाँ स्थाईरूपसे निवास कर सकैं इस लिये आवासादिके बनानेके निमित्त प्रत्येकके खर्चेका आधा खर्चा अपने यहाँसे अग्रिम देदिया। इस प्रकारसे सबको यहाँ निवास कराकर उन्होंने स्थाई शासनका भार तथा आभ्यन्तरी शांतिरक्षाका भार यहांके निवासियोंके ही हाथमें सौंपदिया।

पंचायत समाजने उस शासनके भारको पाकर कार्य किया। विचारादि कार्य करके यहाँके निवासियोंसे जो कुछ भी दंडमे धन मिलता है, उसको और किसी कार्यमे खर्च न करके केवल द्वारकानाथजीकी सेवामें लगाना होता है"।

"यहाँ पर यह भी अवश्य कहना होगा कि यहांके प्रधान मजिस्ट्रेट मनीरामने स्वयं वैष्णव होकर यहाँके वैष्णवोंका विचारकार्य जिस भांति निर्वाह किया था। उसी भांति यहाँके ओसवाल जातीय जैन धर्मावलम्वी निवासियोके विचारकार्यको करनेके लिये गुमानीराम एक जैन मजिस्ट्रेट नियुक्त हैं। यद्यपि दोनो जने पृथक् २ रूपसे विचारकार्य करते हैं परन्तु आवश्यकता होनेपर किसी असाधारण प्रश्नकी मीमांसाके लिये दोनों पंचोको इकट्ठा होना होता हैं, दोनों जने अत्यन्त प्रीतिके साथ कार्य करते हैं, और दोनों जनोने ही अपने अपने पुत्रोंके नामसे उपनगर स्थापन किये हैं। जातीय प्रधान सभाके सभ्यगण बडी चतुरतासे सर्वसाधारण प्रजाके द्वारा चुलाये जाते हैं। पिछले वीशवर्षमे इस नगरीमें छः हजार उत्तम घर बने थे, और कुछ कम पचीस हजार निवासी रहते थे, इस देशके सब ही पट्टे वंशगत थे, इस कारण साह मनीराम और गुमानीरामके न होनेपर उनके पुत्र ही मजिस्ट्रेटका कार्य करते है। परन्तु यदि वह पुत्र इनकी समान दक्ष और न्याय विचारक न होते, तो स्वायत्व शासन नाममात्रको रहजाता। जालिमसिंहके पक्षसे केवल सेनापति और वाणिज्य शुल्क संग्राहकने यहाँ निवास किया है"।

"नगरके सभी श्रेणीके मनुष्य और प्रतिनिधियोंने मेरे डेरोमे आकर मुझसे साक्षात किया। पाहिले वैश्य, पीछे वैष्णव सम्प्रदायके पंडा एक२ करके सभोंने अपना२ परिचय दिया। इसके पीछे उसी रीतिसे ओसवाल वाणिक मंडलीने अपना परिचय दिया। मैंने सभीको अपने२ पदानुसार वैठनेके लिये कहा इसके पीछे व्यवसाइयोंके प्रतिनिधिने आकर मुझे भेंट दी। उसके पीछे शिल्पकार स्वर्णकार, काँस्यकार, हलवाई और अन्तमे क्षौरकार इत्यादि नगरकी सभी सम्प्रदायके प्रतिनिधियोंने आकर परिचय दिया। प्राचीन मंडलमें पाटलियोके प्रतिनिधि भी आये। साह मनीरामने स्वयं वाहर खडे होकर शान्तिकर रक्षा और उनको प्रणाली बद्ध कर दिया। और उनके सहयोगी गुमानीरामने परिचय देनेका कार्य किया। स्वर्णकार सम्प्रदायके प्रतिनिधिने अपनी सम्प्रदायके नामसे एक रमणीय चाँदीका पात्र उपहारमे दिया। उसका शिल्पकार्य अत्यन्त चमत्कारक था। प्रतिनिधि जिस प्रकार परिचय क्रमसे आये थे, उसी भांति पर्याक्रमसे विदा होकर वाहर जा राजमार्गमें भूरि भूरि, जयका डंका वजाते हुए और पताका उड़ाते हुए नगरको गये"।

उत्तर मालवेमें एक झालरापाटन ही वाणिज्यका प्रधान स्थान है। इन्दौरसे इस स्थान तक मध्यस्थके सभी देशोंमें वाणिज्य कार्य होता है।

"हम आधुनिक नगर झालरापाटनके सम्बन्धमें बहुत कुछ कह आये हैं। इस समय झालरापाटन वा घंटाशहरके सम्वन्धमें जो चन्द्रावती नामसे प्रसिद्ध है और जिस नगरमें होकर चन्द्रभागा नदी बही है उस प्राचीन चंद्रावतीके सम्बन्धमे इस समयमें कुछ कहनेकी इच्छा करता हूँ। ऐसा सुना जाता है कि राजा हूनने इस चन्द्रावती नगरकी प्रतिष्ठा की थी। और यह भी विख्यात है कि मालवेके प्रमार वंशीय राजा चन्द्र. सेनकी एक कन्या चन्द्रावती तीर्थयात्रा करनेको गई थी, यात्राके समय उसके इसी स्थानपर एक कन्या उत्पन्न हुई, उन्होंने ही इस नगरकी प्रतिष्ठा की है। और ऐसा भी सुननेमें आया है, प्राचीन निकृष्ट और जातिका एक जस्सू लकड़हारा जिस समय वनसे लकड़ी काटकर ला रहा था। उस समय रास्तेमें पारस (पत्थरके) ऊपर उसकी कुल्हाड़ी गिरपड़ी,गिरते ही वह सुवर्णकी होगई। उस मनुष्यने स्वर्णराशिकी सहायतासे इस चंद्रावती नगरकी प्रतिष्ठा की। और जस्सू ओरका तलाव नामका एक बड़ा सरोवर खुदवा दिया। वही इस चंद्रावती नगरीका प्रतिष्ठाता हुआ, कोई कहते है कि वनवासके समय पांच पांडवोंमेंसे भीमने इसकी प्रतिष्ठा की, एक दैत्यने इसमें विघ्न किया, भीमने उसे बाणसे मारा; वह भागा जहाँ बाण लगा वहाँसे चन्द्रभागा निकली। हमारा यह विचार है कि मालवेके राजा उदयादित्यके उस प्रवाद वाक्यको उस लकड़हारेमे परिणत कर दिया है, यही नहीं कि उसी राजाके नामकी खुदी हुई लिपि यहाँ दिखाई देती है। मध्य भारतवर्षके प्रत्येक प्रधान२ नगरोंमें ही उनके नामकी खुदी हुई लिपियां पाई जाती हैं। विक्रमाजीतके संवत्से १३ सौ वर्ष तक इस वंशने घोर पराक्रमके साथ इस देशमें राज्य किया था"।

"नदीके दोनोंओर बहुतसे प्राचीन मंदिर टूटे फूटे पडे हैं। नदीके किनारे तक बराबर घाट और सीढ़ियाँ बनी हुई हैं वहाँ बहुतसे देव देवी दैत्य और दानवोंकी बहुत सी मूर्ति पड़ी हुई हैं; इनमें बहुतसे लिंग मट्टीकी वेदीके ऊपर स्थित हैं। और सवलकार अलस गोस्वामी उस वेदीके नीचे बैठ कर धूपमें अपने शरीरको सुखा रहे। मैने विचारा कि यदि उन मूर्तियोंको मैं उदयपुर भेज दूँ तौ अच्छा होगा, यह विचार कर मैने अनन्त-शय्या शाइत नारायण, एक, पार्वती एक त्रिमूर्ति तथा और भी बहुत सी मूर्तियोंको गाड़ीमें रखकर उदयपुरको भेज दिया। वह सब एक वट वृक्षकी जड़में पड़ी थी। उसी स्थान पर गणेशजीकी एक बड़ी सुन्दर मूर्ति पड़ी हुई थी किन्तु मैं उस मूर्तिको किसी प्रकार भी न उठा सका। तब गोस्वामी मुसकाये"।

"चंद्रावतीके एक सौ अट्ठासी देवमंदिर प्रायः सभी विध्वंस होगये हैं। केवल दो तीन मंदिर आज तक उत्तम अवस्थामें हैं वह प्राचीन कालके सौन्दर्यकी पराकाष्ठा दिखा रहे हैं। मंदिरोंका शिल्पकार्य अत्यन्त रमणीक है"।

"और सागरके बांधके निकट जैनपासकोंके निसिया नामक बहुतसे समाधि चिह्न विराजमान हैं। एकमें लिखा है कि ३ माघ संवत् १०६६ इस दिन आचार्य

श्रीमन्यदेवके चेले श्रीमन्तदेवने इस संसारको छोड़ा। पिछली समाधिकी तारीख ११८० संवत् लिखी है तथा वह देवेन्द्र आचार्यकी समाधि है। इस प्रकारसे अनेक समाधियोंके स्तभ देखे परन्तु उनमें कोई ऐतिहासिक ज्ञातव्य विवरण नहीं पाया।" ऊपरकी समाधिके पास एक सन्दूक वना हुआ है,वह ऐसा है जैसे कोई पुस्तक देखता है, एक पुस्तक और एक धोती आचार्यके सम्मुख धरी है जैन छतरियोका ऐसा ही चिह्न होता है एक और कुमार देवकी छतरी है इन्होंने१२८९में इस असार संसारको त्याग किया था।

हमारा धासी दो मंदिरोका मानचित्र लेरहा है,इनमेके एक मंदिरमे अवतक सिंगार चोरा विद्यमान है, इनमें वह शिल्प है जो यूरुप निवासी भी तैयार नहीं कर सकते प्रत्येकमे एक सादा मंदिर है जो वीस फुट लम्वा चौड़ा है, उसके आगे सभा मंदिर है जिसे जगमोहन कहते हैं स्तंभों पर सबमें नक्कासी है, द्वार भी प्रशंसाके योग्य है उसका शिल्प भी एक मुख्य प्रकारका है उसके (गिलवर्ग) वहुत ही श्रेष्ठ हैं, हमको दुःख है यूरूपवालोंने इस पूरे शिल्पका कोई खाका तैयार नहीं किया, नहीं वह इसमें और योग्यता प्रगट कर सकते और इस भवानी भूमिका यह नाम वदल देते। जव तक हमारा चित्रकार चित्र लेता रहा हमने पण्डितोंको और भी खोजके लिये भेजा यहाँ सहस्रों मूर्तियां हैं कितनी मूर्तियें दीवारोमें लगा दी गई हैं पर उनकी खोज निरर्थक नहीं हुई

सवसे पुरानी खोदित लिपि संवत् ७४८ सन् ६९२ई० की है जिसमे राजा दुर्गा अंगलका नाम है। यह वेल वूँटेदार अक्षरोंमें लिखी है, उसमें वह नियम जो पांडु अर्जुन-के सम्बन्धमे है लिखा है कि यहाँ उसने एक वाराहको मारा जहाँ उसका रुधिर गिरा था वहा एक आकृति प्रगट हुई। कारण कि यह वाराह एक वरोदा दैत्य था। उस आकृतिका वंश खेतरी कहा है या कृष्णवंश खेतरी उसी वशमे था। जिसके पुत्रतक एक था किस्से उसकी उपमा दे जिसे समस्त भूमंडलका फल प्राप्त था। उसने अपने सव शत्रुओं पर विजय पाई थीं। इसका एक पुत्र क्याक नामवाला था। यह पृथ्वीको उठानेवाले देवता की समान था। वुद्धिमानीमें महादेवकी समान उसके नामसे शत्रुओंके वालक छिप जाते थे। वह वुद्धका अवतार विदित होता था। और जैसे चन्द्रमासे सागर वढ़ता है इस प्रकार उससे हमारी वुद्धि वढ़ती है जव उसकी दृष्टि हमारी योग्यता पर पडती है। उसकी दृष्टिमें अमृत है चैत्रसे चैत्र तक वर्षभर उसके यहाँ हवन होता रहता है। इन्द्र उसके यहाँ कृपादृष्टि रखता है उसकी सरलता संसारमे छा गई है। इसके शत्रुओंके चढ़नेके हाथियोंके दाँतोंमें जो प्रकाश था वह जाता रहा और जो आगे वढ़नेको हाथ उठाता था वह स्तंभित हो जाता था। भूमिमे कोई स्थान ऐसा न था जहाँ उसकी आज्ञाका प्रचार न हो इस प्रकारके श्री क्याक जी थे। जव वह दूसरोके नगरोंमे जाते तौ शत्रुओंकी स्त्रियोंके मनोसे प्रसन्नता दूर होजाती थी, उसकी सव इच्छाएं पूर्ण हो।

संवत् ७४८ जेष्ठ शुदी पूर्णमासीको यह लिपि इस मंदिरमे वनेरा घाट गणेश्वर मंडलवालेने जो हरगुप्तका पुत्र है लगाई और यह लेख महाराज दुर्गा अंगल राजाके निमित्त हुई, उनको हमारा प्रणाम पहुँचै। ऐसा कोई मस्तक नहीं जो देवता गुरू और स्त्रीके सामने नहीं झुकता यह लिपि ओलिक शिल्पकारने खोदी है।

हमको इस खेतरी वंशपर यह भी अनुमान होता है कि यह वंश बड़े हिन्दू वंश से है, जो उत्तरसे आये थे और वाराह नाम इन्दोसीदियनका भी है, इतिहास जैसलमेरमें कई जगह आया है कि जिस रयासतके आरंभ इतिहासमें पद्भट्टीके तक्षक और क्याकसे युद्धका वर्णन हैं तक्षक और क्याक तातारी नाम है, तक्षक सर्प क्याक नाम आकाशका है, अर्थात् पूर्वमें यहाँके निवासी सर्प पूजक थे; इसीसे इस जातिका नाम तक्षक हुआ। वैसे ही इनके अक्षर हैं; जो पश्चिमी भारतमें पाये जाते हैं, यदि हम इस विषयको राजा हूनके जो भद्रावतीवाले और अंगदसी है जिन्होंने राजा चित्तौरकी सेवा की थी। प्रविष्ट करैं तो हमको स्पष्ट प्रतीत होगा कि यह स्मारक सिथिर और तातार राजाका है। जो राजा जैतसाल्पुरवालेके सहित हिन्दू जनोंमें सम्मिलित हुए थे।

एक लिपि जैन मंदिरसे संवत् ११०३ ज्येष्ठ तृतीयाको मिली पर इसमें केवल एक दर्शक यात्रीका नाम है।

मुकाम नरायनपुरा १३ दिसम्बर ग्यारह मील–सवेरे ही यहाँसे चले; यहाँ एक गंदौर स्थान है, पहिले यह घाटीरावकी जागीर थी, आधकोश आगे आंतरीका मार्ग था इस घाटीसे हम उत्तरकी ओर चल रहे थे, और उत्तर पश्चिमकी ओर गागरौन शहर था, हमारी इच्छा इसके देखनेकी बहुत थी, समय थोड़ा था इससे हम इसको न देख सके, यह खीची वंशकी राजधानी है, हम उसी मार्गसे चले जिस पर अलाउद्दीन गौरी होकर गया था जब उसने अचलदा पर आक्रमण किया। यह घाटी तीन मील चौड़ी है, यहाँका दृश्य देखने योग्य है, मोर तीतर मुर्गे शब्द कर रहे है। मानो सूर्यके निकलनेकी प्रसन्नता प्रगट कर रहे हैं। इस घाटीमें नायव जालिमसिंहने अपनी छावनी डाली है। और तीस वर्ष तक वह यहाँ रहा। इस घाटीने अब शहरियतमें अपना स्वरूप बदला है। बड़े २ मकान बन गये हैं चहारदीवारी बनानेका प्रवन्ध हो रहा है पर उसकी तैयारी तक उनके जीवित रहनेकी आशा नहीं है। यह स्थान असजोरके किनारे है जिसको नायवने खूब पसंद किया है, झालरा पाटनके मार्गके मध्यमें है, कुछ ही दूर पर पिंडारोंकी छावनी है जहाँ करीमखाँके पुत्रादि रहते हैं जो उस पिंडारीदलके अधिपति थे यहाँ एक ईदगाह भी बनाई जाती है कि यहाँके क्रूर कर्मालोग भी जो जघन्यकर्ममे तत्पर है पाँच समयकी नमाज पढ़ैं और कदाचित् उनके चरित्र सुधरैं।

जब तक गागरोंनके समीप न पहुँचो तब तक शहर और किला मिला हुआ सा दीखता है, पर यहाँ ऊपर चढ़नेसे वह पृथक् दृष्टिगोचर होता है, जलके प्रवाहसे ऊंचाई तक पहाड़ कट गया है; और पर्वतकी चढ़ाई ऐसी क्रमानुसार है कि उसको देखकर हमको आश्चर्य हुआ। हमने उत्तरकी ओर निगाह की, काली और सिन्धु किले और शहरके उत्तरकी ओर टकराती दीखी हमारे शहरके निकट होते ही तोपोंकी सेलामी हुई शहरके लोग हमारी मुलाकातको आये, किलेका अधिपति हमको साथ लेगया, अलाउद्दीन खूनी और जानवरने पांचसौ वर्ष हुए कि इस स्थानको खीची और अचलूसे लेलिया था, नदीको गो रुधिरसे अपवित्र कर दिया था, हम पर्वतके मार्गसे फिर चले

फिर अंतरीघाटीमें उतरे और ठीक पश्चिमकी ओर होकर नरायनपुर पहुँचे, यह घाटी चारसौसे छः सौ गज तक चौड़ी है, यहाँका दृश्य सुहावना है, नायवने शिकारके निमित्त यहाँ खंदक किये हैं, पर्वत काटे है, जिन पर हिरन वा वनैले शूकर नहीं जा सकते, हम कई छावनियोमे गये जो पर्वतमें हैं, यहाँ नायव अच्छी सेना इकट्ठी कर सकता है, इनमें कुएँ और सरोवर भी विद्यमान हैं, जिनको पौ कहते हैं ।

स्थानमुकन्दरा १४ दिसम्बर १० मील—हम प्रभात ही चल घाटीपर एक ऊजड़ किला देखा इसकी ऊंचाई बहुत है, मालवेके सब मैदान यहाँसे दीखते हैं । खीची महाराजके यहाँ चिह्न है जब उन्होने यवनोंपर आक्रमण किया था । यहाँ बहुतसी मृतकोंकी छतरियाँ हैं । मंदिर भी शिव पार्वतीके हैं । एक लिपि हमको मिली जिसमें महाराजका नाम नहीं है वह लिपि यह है कि विष्णुकी स्थापनाके समय चार पीढ़ी विद्यमान थीं ।

संवत् १६५७ शाके १५२२ सौम्य सवत्सर दक्षिणायन शरदृतु आसौज कृष्ण रविवार दिनमान ३६ घड़ी इस समय चौहान वंश महाराज श्रीरावत नृसिंहदेवने अपने पुत्र श्रीरावतमेहराज और उनके पुत्र श्रीचन्द्रसेन तथा उनके पुत्र कल्यानदासने यहाँ शिवालय बनाया । उनको शुभ हो । मुहरा जैसरमन कम्मानें लिपि खोदी महेशके पुत्र कृष्णगुरुकी उपस्थितिमें लिपि बनाई ।

हम देशके निमित्त प्राण देनेवाले वीरोका वर्णन न करके केवल एक पुरुषका वृत्तान्त यहाँ लिखते है । अर्थात् गुमानसिंह सामन्त हाड़ाका वर्णन करते हैं । वह उस समयका है जब दुर्जनशाल कोटेका शासन करते थे और उस समय जैसिंहगागरोनी वाला एक राठौर राजपूत फौजदार था इस फौजदारके कारण गुमानसिंह इस घाटोके अधिकारकी प्रतिष्ठासे व्याकुल होगया था । उसकी जागीर भी छीन ली गई थी । वह राजदरबारसे लौट कर घर आरहा था । उसका जी बहुत खट्टा होगया था । मार्गमे वह उस फौजदार (सेनापति) से जो अपने सेवको सहित आरहा था मिला। रात अंधेरी थी एक मशालची उसके आगे था । गुमानसिंहने मशालचीको देमारा और अपनी फ़ौलादकी तलवारसे राठौरको पालकीमे ही समाप्त करदिया और वहाँसे द्वार पर आकर कहा कि रावसाहवका हुक्म है कि जवतक वह लौट कर न आवें उस समय तक कोई उस मार्गसे न जाय । यह कहकर जब वह अपने इलाकेमें पहुँचा तो अपने बाल बच्चे और सब सामग्री लेकर उदयपुर चला गया और राणाकी शरण हुआ । रानाने उसको कुछ देश उसके पोषणके निमित्त दिया । गुमानसिंह उस समय तक उदैपुरमें रहा जब कि ईश्वरीसिंह जैपुरेश्वरने कोटेपर आक्रमण किया । उस समय उसने कोटेकी रक्षाके लिये रानासे आज्ञा मागी । और उदयपुरसे रवाना होकर पठारके मार्गसे चला । पर कोटा चारोओरसे घिरा था । इससे उसने विचारा यातो कोटे पहुँचूँ या यहीं प्राण देदूँ यह विचार कर उसने नगाड़े पर चोट लगानेकी आज्ञा दी । और शत्रुसेनाके बीच होकर चला। जैपुरनरेशने कहा ऐसा कौन बली है जो हमारे डेरेके समीप नगाड़े पर चोब देता

हुआ जा रहा हूं । समाचार मिला कि रावत घाटीवाला है, उदयपुरसे आरहा है। नरेशने पितासे सुना था कि इस रावतने विना किसीशस्त्रके सिंहको मारडाला था इससे नरेशने इसके साथ साक्षात् करना चाहा । हाड़ापर समाचार पहुँचा तब उसने कहा मैं अपने साथियोंसहित मिलसकता हूं । मिलने पर जैपुरनरेशने बड़ा सत्कार किया और कहा यदि तुम हमारे साथ रहो तौ जैपुरमें एक बड़ी जागीर तुमको दीजायगी. और राजाके फूफा ईश्वरीसिंहने कहा उसका भाग्य उसको कोटेमें लिये जाता है. और कोटा इतने समयमें ले लिया जायगा. जितने कालमें कोई पानखाता है यह सुनकर गुमानसिंहने कहा महाराज मेरा जुहारलें । वीश सहस्र हाड़ा वंशियोंके शिर कोटेके साथ हैं । राजाने आज्ञा दी कि कोई इनसे 'मोरचे पर या सेनामें कुछ न कहै । जब रावत नदीपर पहुँचे तब ऊँचे स्वरसे कहा कि रावत घाटीका एक नाव चाहता है। वह अपने राजाके पास जायगा । जब वह राजाके समीप पहुँचा तौ उसने देखा कि राजा एक दीवारकी छायामें बैठे हुए अपनी सेनाकी वीरता वढ़ा रहे है । इसी समय समाचार मिला कि एक स्थानकी दीवार टूट गई है । उसने राजाको इतना भी समय न दिया कि स्वामी उसके धर्मकी प्रशंसा करता । वह प्रणाम करके अपने साथियों-सहित उस टूटे स्थान पर गया । और वहाँ जाकर अपनी लोहेकी सांग गाड़दी । पहिले हाड़ा रावत ऐसे वीर थे अब उनके वंशधर वहुत गरीव है। उनकी भूमि छिन गई है और बड़ी कठिनाईसे अब उनको भोजन मिलता है ।

हम इस घाटीसे जो राजपूतोंके रुधिरसे तर रहती थी आगे वढ़े और दुर्रे स्थानमें पहुँचे; दुर्रेके बाहर नायवकी स्थिति थी। पर वहाँ हमको यह समाचार मिला कि यहाँसे थोड़ी दूर एक भीमका चौरा नामक स्थान ऊजड़ पड़ा है उसमें शिल्पकारी वेड़ी कौशल से की गई है, जैसी कहीं नहीं है, उसमें भारतीय और मिसर देशीय दोनों प्रकारकी बनावटें है, कहा जाता है कि राजा कोटाने इसका सब असबाब अपने रंगमहलमे ले लिया है । जो उसने एक भीलनी वेश्याके लिये बनवाया था यहाँके स्तंभ अद्भुत है जो चौराके समीप जहाँ पाँडु भीमने अपना विवाह किया था दो स्तम्भ हैं उनसे किसी स्थानका चित्र विदित नही होता कि केवल स्तम्भ ही स्थित है । उनके शिरोंपर मट्टी और घास उत्पन्न होगई है और समीपमें छतरियां दृष्टिगोचर होती हैं और जो कि यह मार्ग दक्खिन और उत्तरी भारतका था इस्से यह विख्यात स्थान होगा और निश्चय यहाँ कोई नगर वस रहा होगा। यहाँ हाड़ावंशके बहुत चिह्न पाये जाते हैं। जब नायबने अपना एक स्तंभ बनाया जिसमें उसने अपनी कार्यवाहीसे पृथक् रहना स्वीकार किया तो भी उसको कुछ नियम ऐसे मिले जिनको उसे मानना ही पड़ा ।

उन नियमोंकी हम एक लिपि यहाँ प्रगट करते हैं जो मुकन्दरासे हमको मिली है और जो भीतरी राज्यमें विख्यात है ।

महाराज महारावजी किशोरसिंह आज्ञा देते हैं महाजन व्यापारी किसान व मुकन्दरामें रहनेवाली दूसरी जातियोंके प्रति–

इस समय विश्वास रक्खो महाजनी व्यापार बटाई ऋणका लेना तथा खेती करो और अच्छी दशासे रहो। कारण कि सभी दंड सरकारने क्षमा कर दिये अपराधके अनुसार दंड दिया जायगा. सब कार्यकर्ता विश्वासी रहैंगे, पटैल पटवारी रात्रिको पहरा देनेवाले चौकीदार मुसद्दी सुसेवाका पुरस्कार पावेंगे, अपराधी होनेपर दंड पावैंगे, व्यौपारियोंको सताने वा उनसे रिश्वत लेनेकी कार्यवाही न होगी. इसके माननेके निमित्त उस वस्तुकी शपथ है, जो हिन्दू मुसलमानोमें पवित्र समझी जाती है यह आज्ञा महाराजके श्रीमुखकी है। और नानाजी जालिमसिंह और उनके पुत्र माधोसिंहकी साक्षी है।

मिती १० आसौज दिन चंद्रवार संवन् १८७७।

कुछ दिन रहकर हम कोटेको पंचपहाड़ और आनन्दपुरके मार्गसे आये, यह दोनो बडे नगर उक्त नदीके किनारे पर बसे हैं।

माधोसिंह छः तोपोंके साथ दो मीलतक हमारे साथ आया और हमारे पुराने बागके स्थान तक हमारे साथ रहा। यह शहरसे पूर्वकी ओर है हमने यहाँ हैजेके दूर होनेकी कुछ विधि निकाली। हमने मुरगावी और हिरनोंका शिकार यहाँ किया। कभी हम नायबके चीतोंसे शिकार करते थे। एक बार हम अखिलगढ़के किलेके समीप शिकारको गये, यह दक्खिनकी ओर छः मील है। यहाँके पर्वत तीनसौ फुट ऊंचे हैं यहाँ हम लकड़ियोंका बेड़ा बनाकर उतरे नायबके शिकारियोंके चिल्लानेसे एक वृद्ध रीछ निकला, कप्तानसाहब और डाक्टर साहबने इस पर गोली चलाई मगर दोनों गोली खाली गई, वह रीछ क्रोधकर मेरे ऊपर टूट पड़ा, जब दश कदमका फासला रहा तब मैंने उस पर गोली चलाई, जो उसके आगेके हाथमे लगी जिससे वह गिर पड़ा और फिर उठ कर खडा हुआ और मुँह खोल कर मेरी ओरको झपटा, हमारे एक साथीने उसके एक सांग मारी और हमें बचा लिया। गोली और सांग खाकर वह एक गुफामे भाग गया, फिर हम शेष दिनतक अखिलगढ़मे रहे, यहाँ बहुत पत्थर हैं अनुमान होता है कि यह भीलोंका किला होगा. यहाँ एक स्थान जापुर(१) महादेवका है, एक पानीका नाला है जो चम्बलमे गिरता है यहाँ चम्बलके किनारे ६०० फुटसे अधिक ऊंचे हैं, जैसे कोटेसे भिंसरोरतकके स्थान प्रशंसाके योग्य हैं भारतमें ऐसे स्थान बहुत कम हैं।

हमने खोदित लिपियोंकी यहाँ बहुत खोज की परन्तु वे ऐसे अक्षरोंमे मिली जिन को अब कोई नहीं पढ़ सकता। राजा जितकी एक लिपिका वर्णन प्रथम खंडमे लिखा है।

चतुर्दश अध्याय १४.

बिजौलीका वृत्तान्त-माई नाल वा महानाल-खुदीहुई लिपि-हाड़ावशके विवरण पूर्ण खुदीहुई लिपि-बामोदा-आलूहाड़ाका विध्वंस्त किला और महल-अंधेरी कुटी-एक प्रवाद कहानी।

(१) कोई गयापुर कोई जैपुर महादेव भी कहते हैं।

कई स्थानोमें घूमनेके पीछे महात्मा टाड् साहब कई दिनतक कोटेमें रहकर अन्तमे उदयपुर राजधानीकी ओर गये । रास्तेमें बूँदीमें होकर गये । देखा कि यहॉका शासन-कार्य भलीभॉतिसे होरहा है । फिर माईनाल नामक प्रसिद्ध स्थानके दर्शन करनेके लिये पाठार देशको गये । इसमें होते हुए दश मील उत्तरको बिजौली नामक स्थानमें पहुँचे । बिजौली मेवाड़का एक प्रधान देश है । प्रमार जाति रावकी उपाधि धारण करनेवाले एक सामन्त बिजौलीके अधीश्वर है । यह सामन्त वंश पूर्वकालमें बियानाके समीप जगनेर देशके अधीश्वर थे । पीछे अमरसिंहके शासनसमयमें प्राय: दोसौ वर्ष बीतने पर इस सामन्त वंशने कुटुम्ब सहित मोल लिये हुए सेवकोंके साथ यहाँ आकर निवास किया । राव राणाने अशोककी एक कन्याके साथ विवाह किया था । उन्होंने ही उन राव अशोकको बार्षिक पॉच लाख रुपयेकी आमदनीवाले इस बिजौलीदेशका समस्त अधिकार देदिया था" ।

विजौलीया विजयावाली–ध्वंसस्तूपके ऊपर संस्थापित है, यहॉकी अगणित प्राचीन खोदीहुई लिपिमें इस देशके प्राचीन दो नाम, अहिचपुर या मोरकरो यह खुदेहुए दिखाई दिये; उन दोनों नामोंमें पहलेके बदलेमें दूसरा ही यहॉका प्रकृत प्राचीन नाम जानाजाता है । मेवाड़के इस प्राचीन सीमान्त देशके साथ चौहानोंके अनेक प्राचीन प्रवाद इतिहासमे लिखे हुए है, इन देशोंके पहिले अजमेर राजवंशके अधीनमें था, ऐसा अनुमान करनेके अनेक कारण भी विद्यमान है, कारण कि उस राजवंशके बीशलदेव, सोमेश्वर पृथ्वीराज इत्यादि नामकी बहुतसी लिपियां यहॉ विराजमान है । मोरकुरोके अरन्राज तथा उनके पुत्र वहिरराज और कुन्तपालकी वीरता प्रकाश करनेवाले बहुतसे स्मृति चिह्न वहॉ बिराजमान है । यह दिल्ली और अजमेरके बादशाह पृथ्वीराजके समकालीन थे । "

एक खोदित लिपिमें चीतौड़का ऐसा युद्ध लिखा ह कि इसके द्वारा यह अन्तर करना कठिन होजाता है कि यह गहिलोत वंश वा चौहानोंका युद्ध है, इसकी आरंभ प्रणाली शाकम्भरी मातासे है, जो वंश साकमदुर्ग और पर्वतकी अधिष्ठात्री देवी है, उसमें वत्सगोत्र चौहानका वर्णन करके, श्रीमत् वाप्पा राजाविन्ध्या त्रिवेनी या वापा राजा विन्ध्याचलका वर्णन किया है–जो राणा मेवाड़के वंशका:प्रतिष्ठाता था परन्तु उसके आगे जो नामावली है वह उसके वंशसे नहीं मिल सकती इससे हम विचार कहते हैं कि उस समय चौहान और परमार चित्तौरके अधीन थे. विशेष इस पर लिखना हम उचित नहीं समझते केवल इतना लिखना ही उचित जानते है कि यह वर्णन कुन्तपाल वनैड़ा अरन्राजका है जिसने जाबलापुरको जीतकर नष्ट भ्रष्ट किया था, जिसके युद्धका वर्णन देहलीद्वारके वलभी द्वारपर खुदा हुआ है । इसके बड़े भाईका पुत्र पृथ्वीराज था, उसने ढेर सुवर्णका एकत्र करके उसको दान किया और मोरकरोमें पार्श्वनाथका मंदिर बनवाया, और सम्बत्सवारमें जो उसे राजाई योग्यता प्राप्त हुई इस्से उसका नाम संवत्स वार विख्यात् हुआ । उसके स्मरणार्थ यह मंदिर बनाया गया और रेवाके किनारेका रेवाना ग्राम इसके व्ययके निमित्त निर्धारण किया गया । संवत् १२२६ ।

इससे विदित होता है कि चौहानोने बलपूर्वक तौर वंशसे देहली लेली थी और हमें यह भी साबित होता है कि जो विख्यात कविचंदने लिखा है कि–जो लिपिस्थान असि (हांसी) और दिल्लीके स्तम्भोंपर है वह इसीके समयमें खोदी गई है परन्तु जब वल्लभी द्वारकी ओर जो तिलोनोंकी पुरातन राजधानी सौराष्ट्रमें थी, विचार किया जायतो अद्भुत बात विदित होती है, और उस समयकी वह दशा विदित होती है कि जब पृथ्वीराजने अपने पिता सौमेश्वरके वधका बदला लिया जो राजा सौराष्ट्र और गुजरातके युद्धमे मारा गया था, कुन्तपालने इस अवसरको अच्छा जाना और दिल्लीकी जीतमे अपना भाग प्राप्त करके उसने गुजरातकी जीत भोलाभीमसे की।

हम यहाँ यह भी कहते हैं कि पुरातन मोरकरो नाम बिजौलीका था और दूसरे यह कि वहॉ राजा चौहान जैनमतावलम्बी था, चन्दकविके कथनमें यह कोई मुख्य बात न थी, कारण कि उसके लेखसे यह बात प्रगट होती है कि उसने अपने पुत्र सारंगदेवको इस कारण अजमेरसे पृथक् कर दिया कि उसने बुद्धमत स्वीकार किया था।

"यहॉकी खोदी हुई लिपिमें चित्तौरके राजवंशका शासन और वीरताका विवरण खुदा हुआ पाया गया। बिजौलीका प्राचीन नाम जिसे मोरकुरो कहते है उसकी खोदीहुई लिपिको पढकर हमने जाना कि मोरकुरो वर्तमान बिजौलीसे आधकोश पूर्वमे स्थापित था, वह इस समय एक बार ही विध्वंस होगया है। नौचौकी नामक प्राचीन महलका एक अश था, यहॉ पार्श्वनाथके पॉच मंदिर थे, और तेरह जैन देवाताओंके जैनमंदिर टूटे फूटे अबतक भी विद्यमान हैं। महल और मंदिरोंके बनानेकी रीति और कारु कार्य अत्यन्त ही रमणीक है। मंदाकिनी नामकी एक छोटी नदी इसके बीचमें होकर निकली है। पार्श्वनाथके मंदिरके पास एक प्राचीन कुंड और दो बड़े २ जलाशय है। नगरके पास ही महादेवजीके तीन मंदिर हैं और"।

बिजौली, वर्तमान महलोंके प्राचीन विध्वस्त मंदिरकी श्रेणीके उपकरणसे बनी हुई है। उन मंदिरोंके लिंग इस समय उखड़े हुए एक साथ पड़े है। हमने अनेक स्थानोंमे मूर्तियोंको इसी प्रकारसे पड़ेहुए देखा, इससे यह भलीभांतिसे जाना जाता है कि हिन्दू इन मूर्तियोंकी देवताओंमें गिनती नहीं करते हैं, वह इन्हे केवल देवताका चिह्न स्वरूप जानते हैं। लिंगकी पवित्रताके दूर होने पर फिर उसे सामान्य पत्थरकी समान मानते है। मैंने इस नगरके चारोओर बहुतसे टूटे फूटे चिह्न देखे"।

स्थान दरौली जो चार मील दक्खिनकी ओर है वहाँ एक शिलालेख संवत् ९०० का है, पर वह कुछ कामका नहीं है और तिलसवा जो उससे भी दो मील दक्खिनको है, वहॉ चार मदिर एक कुंड एक और तोरन है, पर वहॉ कोई शिलालेख नहीं है। जारौली वहॉसे सात कोश है। उसमे सात मंदिर हैं। सब टूटे पड़े है और भी टूटे फूटे किलेके चिह्न पाये जाते हैं। यहाँ और भी टूटे फूटे मन्दिर हैं जिनको वहॉवाले अलाउद्दीन खूनी और औरंगजेबकी करतूत कहते हैं, यहॉवाले पहिले बादशाहको खूनी और दूसरेको कालयवन नामसे पुकारते हैं।

बिजौलीके सामन्तकी आय अब बहुत न्यून होगइ है। यदि उसकी जागीरको संभाला जाय तो५००००रुपया वार्षिक आय हो सकती है पर वह कर नही सकते। जब-तक वह उसके चारोंओर बड़ी मूर्तियोंको जीवित न करसकै। उसकी बेटी राजा अमरासे व्याही गई थी। उसके स्वामीकी जब मृत्यु हुई तो उसकी अवस्था सत्रह वर्षकी थी। परन्तु हजार समझानेसे भी वह सती होगई, हमने बहुत सी युक्ति उसके पास कहाई, और कहा हम उसके इलाकेको विशेष करादेंगे पर उसने एक न माना और अपने स्वामीके पाप मिटानेमें दृढ़ रही। हम वहाँ दो तीन दिन रहकर शिलालेखोकी खोजमें फिर चले।

माईनाल २१ वीं फरवरी—महानल शब्दके विगड़नेसे इस स्थानका नाम माईनाल हुआ है। पाठारके पश्चिम प्रान्तसे चारसौ फुट गहरे एक खातका नाम महानल है इस घाटीमें प्रवेश करना मृत्युके बराबर है। उसी महानलके किनारे प्राचीन मंदिर और हर्म्य देखे गये। मंदिर और महलके एक अंशमें दिल्लीपति पृथ्वीराज और अन्य प्रान्तोंमे पृथ्वीराजके भग्नीपति चित्तौरके राणा समरसीका नाम खुदा हुआ है, समर सिंहने पृथा बाईका विवाह किया था। कविचंदने उनके बलविक्रमकी कहानीको अपने महाकाव्यमें भली भाँतिसे विनारण किया है"।

उस स्थान पर जो बड़ा कुरो है वहाँ दोनों वंश आकर भारतके विषयकी बात चीत करते थे, और अपने बालबच्चोंके सहित आनन्दसे रहते थे। यदि चन्द्रकवीश्वरका यह कहना सत्य हो कि यदि महाराजा पृथ्वीराज समरसी महाराणाके साथ यहाँ सम्मति करते तो यवनोके हाथमें किसी प्रकार भी भारतका शासन न जाता, पर पृथ्वी राजकी बेपरवाई वीरता और सरगरमीने सबको डुबा दिया, और उस युद्धमें समरसी तथा पृथ्वीराज दोनों ही निहत हुए, यह घग्गरके किनोरका घोर युद्ध था, कवीश्वरने इसको प्रलय कहा है, वास्तवमे भारतकी स्वाधीनताका यह प्रलय ही था, अब भी यह स्थान भयंकर है। प्रत्येक वस्तु यहाँकी उस बातको दिखाती थी, यहाँके वृक्ष भी मानो उस समयके वीरों अधिकारियोंका शोक करते हुए दृष्टिगोचर होते थे।

हमने बहुतसी खोदी हुई लिपियां देखी, उनमें खुदीं हुई हाड़ाजातिके वंशकी कहानीके बहुतसे तत्थ्य पाये जाते हैं, हमने इस स्थान पर केवल एक लिपिका अविकल अनुवाद प्रकाश किया है।

कुलदेवी आशा पूर्णाकी कृपासे इस वंशके बहुतसे चौहान राजाओंने अपने प्रबल प्रतापसे पृथ्वीको शासन कर रणभूमिमें जय प्राप्त की थी, जिनके वंशमें मौरधन हुए, जिसने युद्धमे पूरी जय पाई। उसी वंशके हाड़ाजातीय कोलनका यश चंद्रमाकी समान निर्मल था। उनसे जैयपाल उत्पन्न हुए, उन्होंने पूर्व जन्मके सुकृतिके फलसे इस

---

(१) यही रैनसीके पुत्र थे, और यही केदारनाथ तीर्थमें १३५३ संवत्में गये थे, हाड़ाजातिके इतिहासमें इसका वर्णन भलीभाँतिसे किया गया है।

(२) इसीको यगातग्नसे इतिहासमे बंगू कहा है, यह कोलनका पुत्र था जिसने माइनालको लिया था।

राजवंशमें जन्म लेकर परमसुख शान्ति प्राप्तकी। उनकी प्रजाने ईश्वरके समीप उनके अमर होनेकी प्रार्थना की उनके पुत्र देवराज महादाता थे और मनुष्य समाजकी सुख शांतिका वृद्धि करना ही उनका एकमात्र अभिप्राय था। उनके पुत्र हरराज देखनेमें प्रज्वलित अग्निकी समान तीव्र तेजस्वी थे, और उन्होंने अपने बाहुबलसे भूमीश्वरोको परास्त कर यश और अतुल धन प्राप्त किया था"।

"उनसे वामोदाका अधिराज वंश उत्पन्न हुआ। देवराजसे ऋतुपाल उत्पन्न हुए उन्होंने अपने बाहुबलसे विद्रोहियोंको परास्त कर कपिलमुनिने जिस भांति सगरकी संतानको भस्मीभूत किया था, इन्होंने भी उसी प्रकारसे उनको परास्त किया।

इनके पुत्र कल्हन हुए। उनके पुत्र कुंतल धर्मराजकी समान थे, उनके छोटे भ्राताका नाम देहा था। कुंतलकी रानी राजल देवीके गर्भसे चन्द्रमाकी समान महादेव नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ, और रणभूमिमें सुमेरुकी समान अटल और दानमें इन्द्रके कल्पपादपकी समान था। उन्होंने अरातियोंके रुधिरसे रणभूमिमें घोड़ोंके खुरोंसे उठी हुई धूलिको कर्दमाक्त करदिया था। इन्होने रणभूमिमें अपनी लम्बी भुजामें तीक्ष्ण तलवार विपक्ष नेता उमीशाहके मस्तक पर उठाकर मेदपाटके अधिपतिके प्राणोंकी रक्षा की, चंद्रमा जिस भांति राहुके कराल ग्राससे उद्धार पाता है कैथियाका इसी प्रकार उद्धार किया[3] बैल जिस प्रकार अपने पैरोंसे नाजको पीसता है महादेवजीने भी उसी प्रकारसे अपने पैरोसे शत्रुओंकी सेनाको विध्वंस करदिया और समुद्र मथनेकी समान महादेवने इस समरके मथनेमें विजयरत्नको संग्रह कर कैथियाके अधिपतिको प्रदान किया। समस्त पृथ्वीमें उनके यशकी ध्वनि गुंजार उठी थी। उनके पुत्रका नाम दुर्जन था उसने अना उपनाम जीवराज रक्खा। युवतसाल और कुंभकर्ण नाम उसके दो भाई थे।

इस महा अग्निमें भूमीश्वर महादेवने यह मंदिर निर्माण किया, और उसको भली भांतिसे सजाकर इस खोदीहुई लिपिको सम्बद्ध किया। महादेवका यह महादेव स्थापित है, गंगा और सुमेरु जबतक है तबतक यह स्थिर रहै, और चीतौड़के निवासी ब्राह्मण धनेश्वरके द्वारा इसकी प्रतिष्ठा हुई थी"।

अनल नन्द इन्द्र चन्द्र
३ ९ १ १

"शिल्पविद्यामें सुशिक्षित वीरधवल शिलीने वैशाख मासकी सप्तमी तिथिको यह मंदिर बनाया।

---

(१) यह देव बंगूके पुत्र हैं, संवत् १३९८ बूंदीमें थे।

(२) हरराज देवराजके बड़े पुत्र थे, और उन्होंने वामौदामें वास किया जिसे उसके पिताने दिया था जो पीछे बूंदीमें लगा। टाड् साहब कहते हैं कि हरराजके बारह पुत्रोंमेंसे बड़ा पुत्र आलू-हाड़ा हुआ यह वामौदाका अधिपति हुआ।

(३) कर्नेल टाड् साहबने कहा है कि ऐसा बोध होता है कि यह उमीशाह पठान बादशाह हुमायूं होंगे। महानलके हाड़ा अधीश्वर महादेवके साथ युद्धके समयमें मेवाड़के राणाके किसी प्रधान सेनापतिने इस कैथियासिंहका उद्धार किया था"। (४) सन् ११३९.

बेगू–माईनाल वा महालमें भ्रमण करनेके पीछे साधु टाड् साहबने बेगू नामक स्थानमें जाकर लिखा है कि मै पाठारके शिखर पर अत्यन्त ही प्रभातकालमें गया। परन्तु रास्तेमें बहुतसे वृक्षोंके होनेसे हम दोनों ओरके समतलक्षेत्रको न देख सके, अन्तमें जिस स्थान पर आल्हाड़ाका किला स्थापित था, वहाँ जा पहुंचे । परन्तु वामौदाका किला बिलकुल टूट गया था वरन वहाँकी जमीन भी एकसार होगई थी। महावीर आल्हाड़ाका यह किला और महल किस प्रकारकी आकृतिका वना हुआ था । मैंने उसको विध्वंस अवस्थामें भी अनुमान कर लिया था यहाँ शिवजी, हनूमान, और धर्मराजके तीन मंदिर है "।

अंधियारी कोठरी–नामक एक गुप्त अंधकारमय कमरा है। ऐसा सुना जाता है कि आल्हाड़ा जिस समय मंडोरपतिके साथ युद्ध करनेके लिये गये थे उस समय अपने भतीजेको इसीमें वंद कर गये थे। भूधर पार्श्वमें योगिनीमाताकी एक वड़ी भारी मूर्ति है। आल्हाड़ाके इस अभेद्य किलेको किसने विध्वंस किया था इसकी विशेष खोज करने पर भी इसका पता न चला। शायद् मेवाड़के महाराणाने ही इसको विध्वंस किया हो। यहाँ एक जोगनी माताकी मूर्ति है। यह इस समय वेगू सामन्तके अधीनके देशके अन्तर्भुक्त है। हमने यहाँ आल्हाड़ाके सम्वन्धका एक और वृत्तान्त जाना, पाठकोको इस स्थान पर वह उपहारमें देते है।

वामौदाके किलेके चौवीस किलोंमेंसे एक किलेमे आल्हाड़ा और उसी जातिके लालजी एक पुरुप निवास करते थे। उनके एक कन्या थी। लालजीने चित्तौरके राणाके साथ उस कन्याके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित कर राजपूत रीतिके अनुसार:राणाके समीप कन्याके नामका नारियल भेजा। परन्तु राणा उस प्रस्तावमें किसी प्रकार भी सम्मत न हुए, उन्होंने नारियलको लौटा दिया। लालजीके पुरोहित जो उस नारियलको लेकर गये थे वह आंतरी देशसे होंते हुए आरहे थे । इसी समयमें राणाके वड़े पुत्रको मृगयासे लौटकर आते हुए देखा । उससे पुरोहितने सव वृत्तान्त कहा युवराज पुरोहितके मुखसे समस्त वृत्तान्त जानकर लालजीके सम्मानकी रक्षाके लिये स्वयं उस नारियलको ग्रहण कर विवाह करनेके लिये राजी हुए। उन्होंने पुरोहितको विदा करके कहा कि मैं शीघ्र ही विवाहके लिये आता हूँ। कुछ दिनके पीछे चीत्तौड़के युवराज अपने अनुचरोसहित राणासे साक्षात् करनेके लिये उपस्थित हुए। और पिताकी आज्ञानुसार एक कविके साथ विवाह करनेके लिये वामौदामें गये।

उक्त कविका नाम भीमसेन था, यह वाराणसी निवासी थे। इस समय मेवाड़के समस्त कवि मेवाड़से निकाल दिये गये थे। भीमसेन कच्छभुज देशमें जानेके समय राणाके पास भी गये। मेवाड़के कवियोंके निकालनेके सम्वन्धमें यह कारण जाना गया है कि मेवाड़के एक प्राचीन सरोवर बनानेके सम्वन्धमें एक परम रमणीय नेत्रोको आनंद देनेवाला एक विग्रह आविष्कृत हुआ। यद्यपि वह मूर्ति अत्यन्त चमत्कारिक थी, परन्तु हाथका भंगीभाव अत्यन्त विचित्र था; एक हाथ ऊपरको और एक नीचेको और

तीसरा सम्मुख दर्शकोंकी ओरको फैल रहा था। यह तीनों हाथ तीनों ओरको फैले हुए देखकर सभी विस्मित हुए, ऐसी मूर्ति पहिले कभी नहीं देखी थी, इस भाँति तीन ओर को हाथ फैलानेका अर्थ क्या है, इसको कोई भी स्थिर न करसका, राजाकी आज्ञासे देशके जितने कवि, चारण, भाट, और वेदके जाननेवाले ब्राह्मण पंडित थे सभी बुलाये गये, और उनसे इसका कारण बतानेके लिये कहा गया। परन्तु किसीने भी संतोष-दायक उत्तर नहीं दिया। अन्तमे उक्त झारिजाके कवि भीमसेनने आकर इसकी मीमांसा करदी। उन्होंने कहा कि ऊपरको जो हाथ फैला हुआ उंगली दिखा रहा है, उसका अर्थ यह है कि ऊपर अर्थात् स्वर्गमें एकमात्र इन्द्र है और नीचेको इस भावसे हाथ फैलाकर उंगली दिखा रहा है, इसका यह अर्थ है कि नीचे पातालके अधीश्वरको बता रहा है, और सम्मुख राणाकी ओरको जो हाथ फैल रहा है, इसका अर्थ यह है कि इस संसारमे एकमात्र राणा ही संसारके अधीश्वर हैं। भीमसेनकी इस व्याख्यासे राणा हमीर अत्यन्त ही प्रसन्न हुआ, और उनको अपने प्रधान कवि पदपर वरण किया। उस भीमसेनकी ही आज्ञासे निकाले हुए कवि मेवाडमें बुलाये गये। परन्तु भीमसेन राणाके अतिरिक्त और किसीसे किसी प्रकारका दान नहीं लेते थे। वह कवि श्रेष्ठ भीम-सेन चीतौड़के युवराजके साथ विवाहसभामें गये। उनके जाने पर लालजीके किलेमें महा महोत्सवका अनुष्ठान हुआ। अनेक देशोंसे कविलोग आकर लालजीका जय-गान करते थे। प्रचलित रीतिके अनुसार लालजीने कवियोंको बड़े २ मूल्यवान् द्रव्य उपहारमें दिये, लालजीने भीमसेनको एक श्रेष्ठ घोड़ा मूल्यवान् पोशाक वस्त्र और एक तोड़ा रुपयोंका उपहारमे दिया। परन्तु भीमसेन किसी प्रकार भी लेनेको राजी न हुए, अन्तमें विशेष लोभके त्यागने पर इतना बोले कि इन उपहार द्रव्योंको यहाँ रख जाओ। उन उपहारके द्रव्योंको लेनेके कुछही समय पीछे उन्होंने अपने मनको सैकडों वार धिक्कार दिया, और तुरन्त ही अपनी तलवार निकाल कर प्राणघात किया। चीत्तौड़के प्रधान कवि मारे गये हैं, शीघ्र ही यह शब्द चारोंओर गुंजार उठा। इस समय युवराज विवाहके स्थानमें बैठे थे, और वर कन्याकी गाँठ बंधनेका उपाय होरहा था। युवराज उस कविकी आत्महत्याका समाचार सुनते ही आसनसे उठ खड़े हुए, और प्रतिहिंसा देनेके लिये तैयार हुए। युवराजको इस प्रकार से विवाहका आसन छोड़ते हुए देखकर कन्याके पिता अत्यन्त दुःखित हुए। अन्तमें युवराज विवाह करनेमे असम्मत हो बामौदाके बाहर चले गये। कुछही समयके पीछे उन्होंने सेना और सामन्तोंके साथ आकर वामौदा पर आक्रमण किया और वह अपना बदला लेकर चले गये। अन्तमे फाल्गुण मासमे अहेरके समय कन्याके पिता लालजी जातीय रीतिके अनुसार शूकरका शिकार करनेके लिये गये, उस समय चीतौड़के युवराजने आकर दलसहित उन पर आक्रमण किया। दोनों जने परस्परसें भाले हाथमें लेकर भिड़े भालोंके आघातसे दोनोंहीके प्राण गये। वामौदामें दोनोंकी चिता सजी गई। एकमें युव-राजका और दूसरीमें लालजीका शव स्थापित होकर चिता प्रज्वलित हुई, युवराजके साथ लालजीकी वह कुमारी कन्या और लालजीके साथ उनकी स्त्रीने प्राण त्याग

किए। " और इस अवसरमें वह यह नियम करगई कि राना और राव किसी प्रकार भो अहेरके स्थानमे वसन्त ऋतुमें कभी एकत्र न हों। नहीं तो उसका परिणाम वध होगा हमने ऐसी दो घटना हाड़ाजातिके इतिहासमें लिखी है, और चौथा पद पूर्ण करनेको मुकलका वर्णन किया है, जो कम्भूने कहा है।

हाम् मु, कल माचा, लाला खतयारान ।
सोजा रतन संहारया, आमल अरसी रान ।

इस दोहेको पाठ करके आल्हहाड़ाके वंशधर कुछ अपने हृदयके दुःखका आवेग न्यून करते होंगे, जो दुःख वमौदाके उजाड़ और उसके चौविस किलोंके निकल जानेसे होता होगा जिनमे अब एकमें भी हाड़ाका नाम लेनेवाला नहीं है।

हाड़ाजातिकी इस वातको हम उन् चिट्ठियोंसे प्रमाणित कर सकते है जो पिछले अक्टूबरमें हमारे पास आई थी, जब घटीरानीकी आज्ञाके अनुसार एक समूह उनके मंदिर पर उपस्थित हुआ कि जो उनकी आज्ञा हो वह काम किया जाय।

बूँदी १८ अक्टूबर सन् १८२०का विज्ञापन-समाचार पत्रद्वारा सब रईसोंके पास आज्ञापत्रका प्रचार किया गया कि दशहरे पर सब रईस और जिमींदार राजधानीमे उपस्थित हों उनके आनेपर वरंके ठाकुर जसजीने कहा कि वमौदाकी भयानीने मुझे एक आज्ञा दी है कि रानीकी भूमिमें आगेको खेती न करो और अपने घोड़े पशु आदि वेचकर उस द्रव्यके ६४ भेड़े और ३२ बकरे खरीद कर माताजीके वलिके निमित्त भेज दो। ऐसा करनेसे वामोदा दूसरी वार हमारे अधिकारमें आजायगा, यह समाचार फैलते ही बूँदी कोटेके बहुतसे पुरुष वहाँ उपस्थित हुए। ठाकुरवरने २०० मनुष्योंका भोजन श्रीमाताजीके प्रसादरूपमें तैयार कराया था पर वहाँ ५०० मनुष्य आगये पर माताजीका यह प्रभाव हुआ कि उन्होंने भली प्रकार भोजन किया और फिर भी वच रहा लोगोंको विश्वास होगया कि माताजीकी आज्ञा ठीक थी।

यह वृत्तान्त हमको बूँदीसे मिला परन्तु नीचेकी घटनाका वर्णन हमारे सच्चे मित्र वालगोविन्दने मुझसे कहा, जो उस घटनाके समय वहाँ विद्यमान था। कार्तिकके पहले दिन माईनालमें कुछ दिन हुए एक बड़ा वलिदान हुआ, जोगनिमाताके निमित्त इकतीस भेड़े और ५३ बकरोंकी वलि हुई पर तीन हाड़ा वीरोंने दो बकरों पर बड़े वेगसे अपनी तलवारें मारी, तथापि उनका बालबाँका न हुआ, यह देखकर सबको बड़ा आश्चर्य हुआ। वह बकरे यथेच्छ चरनेको छोड़ दिये गये और लोग उनको अमर कहने लगे।

वालगोविन्दके इस कथन पर किसीने तर्क न की। ज्ञानजी उसके साथ था वात सत्य थी, पर इन पाँचसो एकत्र हुए हाड़ा राजपूतोंके विषयमें यह विचार हुआ कि यह भवानीके वाक्य पर उपस्थित हुए और विश्वास कर रहे हैं, हमने राजाको इसकी सूचना भेजी कि वह यह प्रगट करदे कि हमने वैसा ही किया है इससे यह प्रगट है कि उन वीरोंके हृदय पर यह बात शीघ्र ही कैसी प्रभाव डालनेवाली थी।

हम यहाँसे फिर आगेको चले हम वमौंदाकी दीवारें देखना चाहते थे। हम पर्वतके नीचे फेरके मार्गसे चले और जोगिनी माताके ऊपर भी एक दृष्टि डाली और घाटीके मार्गसे थोड़ा चलकर वेगूके एक अच्छे बागमें ठहरे। यहांका रावत कालामेघका वंशधर हमसे मिलनेको आया, पर अबतक वह उस श्रेष्ठ कार्यवाहीसे अजान था जो उसके निमित्त होनेवाली थी, अर्थात् उसको उस आधे देशसे कुछ अधिक देश प्राप्त होगा, जो सन् १७९१ ई० मरहठे सेंधियाके अधिकारमें था।

पंचदश अध्याय १५.

वेगू-कर्नल टाड् साहबका हाथीपरसे गिरकर चोट खाना–वेगूके सामन्तकी सहानुभूतिके चिह्न–महाराष्ट्रोंको वेगूसे निकालनेका वृत्तान्त–वेगूदेशको राणाके अधिकारमें करना–सामन्तोंको वेगूदेशको पुन प्रदान–चीतौड़–अकबरका द्वीप–चित्तौर नगरका वर्णन–नगर भ्रमण–चाघ रावत सम्प्रदायकी सृष्टिका विवरण–खुदी हुई लिपि–उदयपुरसे लौटना–कर्नल टाड्का स्वदेशमें जाना–उपसंहार।

कर्नल टाड् साहबने२६ वीं फरवरीको लिखा है कि "तीन वर्षसे वेगूके सामन्त जो भूस्वत्वसे रहित हुए थे। उनको फिर उस विस्तारित देशका अधिकार देनेके लिये दो दिनसे मैं उस घटनाके उपयोगी बड़ी धूमधामके साथ वेगूके किलेकी ओरको गया। मेरे जानेका समाचार जानकर कालामेघके वंशधर अनेक देशोंसे आ आकर इकट्ठे हुए। वेगूके प्राचीन किलेके चारोंओर बड़ी २ खाई हैं, एक काठका पुल महलमें आने जानेके लिये बना हुआ है। उस सेतुके सामने एक तोरण है, मेरे सैनिक और एक सम्वाद वाहक हाथीकी पीठपर चढ़कर बृटिश पताकाको स्थापित कर उस तोरणके नीचेसे पुलके पार होगए। मैंने भी इसी प्रकार हाथी पर चढ़कर तोरणमें जानेकी इच्छा करी, परन्तु महावतने भलीभाँतिसे निपेध करके कहा कि तोरणके भीतर हौदे समेत हाथी नहीं जासकता कारण कि तोरण छोटा है, इस प्रकार जानेमें तोरणमें उसका ठसका लगेगा। परन्तु मैंने उसकी बातपर कुछ भी ध्यान न दिया। और उसको चलनेके लिये आज्ञा दी और कहा कि यदि तुम हाथी पर न बैठसको तो उतर आओ। काठके पुलका कठोर शब्द और दोनों ओर गहरी खाइयोंको देखकर हाथी भयभीत हो महावेगसे पार होनेके लिये ऐसा दौड़ा कि वह किसी प्रकार भी सावधानतासे तोरणके पार न होसका। महावत विशेष चेष्टा करके भी किसी प्रकार उसको स्थिर न करसका। तोरणके पास जाते ही मैंने देखा कि अब रक्षा नहीं है, तोरणके भयंकर आघातसे हौदेके चूर्ण होनेकी भलीभाँतिसे सम्भावना थी। इस कारण मैंने उछलकर तोरणको दोनों हाथोंसे पकड़ा। परन्तु तुरन्त ही हाथमेंसे तोरणके छूटते ही मैं हौदेसे बाहर आकर गिर पड़ा,हाथी महा भयभीत होकर तोरणके पार

होगया, और मैं हाथी परसे गिरकर अचेत हो सेतु पर पड़ा रहा। जो लोग उस समय वहाँ उपस्थित थे, उन्होंने तुरन्त ही मेरी भलीभाँतिसे सेवा की अन्तमें मुझे एक पालकीमें चढ़ाकर मेरे डेरोंमें लेगये। यद्यपि मेरे शरीरके अनेक स्थानोंमें चोट लगी थी तथापि मैंने शीघ्र ही आरोग्यता प्राप्त की। मैंने अपने सौभाग्यवलसे ही इस विपत्तिसे उद्धार पाया। यदि एक इञ्च भी उस जगहसे वचकर गिरता तौ अवश्य ही खाईके जलमें डूव जाता। शीघ्र ही वेगूके सामन्त रावतजी और उनके कुटुम्बी भाई बन्धुओंने डेरोंमें आकर उस दुर्घटनाके कारण विशेष शोक प्रकाश किया। वड़े कष्टसे मैंने उनको अपने डेरोंमेंसे भेजा। मैं जब इस घटनाके दो तीन दिन पीछे फिर उसी अभिप्रायसे सामन्तको भूमिका अधिकार देनेके लिये गया, तब देखकर महान् आश्चर्य हुआ, काला मेघने वह जो रमणीक तोरण निर्माण किया था, वह टूट कर एक सार होगया है। मैं उसी टूटे हुए मार्गसे किलेके भीतरी महलमें गया, एक विस्तारित स्थान पर सामन्तोंको पारिषदोंसे घिरे हुए देखा। रावतजीने आगे वढ़कर किलेके महलकी चावी मेरे हाथमें दी। मैंने उसके अधीश्वर प्रभुके नामसे फिर उन्हींके हाथमें देदी। समस्त तोरणके विध्वंस होजाने पर मैंने शोक प्रकाश किया, और कहा कि मेरी ही दुर्वुद्धिसे यह दुर्घटना हुई थी, इस कारण तोरणका टूटना अच्छा नहीं हुआ। सामंतने उत्तर दिया कि आप हमारे जीवन दाता हैं, इस कारण जिस तोरणसे आपके प्राण नाशकी सम्भावना हुई थी हम लोग किसी प्रकार भी उस तोरणको नहीं रखसक्ते"।

"सामन्तोंकी जो भू सम्पत्ति उनको दी गई थी, यह सम्पत्ति सामरिक व्ययके कारण सेन्धियाके निकट गिरमी थी। रावतने सेन्धियासे इस मर्मका पत्र लिखालिया था कि उक्त युद्धमेंका जितना खर्चा है वह रुपया सव देकर फिर अपनी सम्पत्ति लेलेंगे जिस समय इस अंचलमें वृटिश गवर्नमेण्टके मध्यस्थ होनेसे फिर शान्ति स्थापित हुई उस समय उक्त सामन्तने वह खत उपस्थित करके सब हिसाव किताव करादिया, सेन्धियाको जो मिलता था रावतने उससे दुगना धन उसको दिया था। सामन्तने वृटिश ऐजेण्टके द्वारा सेन्धियासे उक्त सम्पत्तिको पानेके लिये फिर प्रार्थना की। इसीसे अनेक पत्रोंके द्वारा लिखा पढ़ी हुई। परन्तु कुछ भी फल न देख कर एक दिन रावतजीने अपनी सेनासहित आक्रमण करके महाराष्ट्रोंको भगा दिया, और महाराष्ट्रोंने जो एक छोटा किला बनाया था उस पर अधिकार करलिया। रावतजीने अपने वलसे इस पर अधिकार किया था, इसीसे यह अपराधी हुए, इस कारण उनको दंड देना उचित जानकर उक्तवेगूदेश राणाने अपने अधिकारमें करलिया था। वेगूके किलेपर राणाकी पताका उड़ा दीगई। राणाके इस प्रकारसे दंड देने पर वेगूके सामन्तने किसी प्रकार भी असंतोष प्रगट न किया वरन सब प्रकारसे राणाकी आज्ञा पालन की, परन्तु राणाका यह अभिप्राय नहीं था कि वास्तवमें वेगूदेश सदाके लिये राज्यके अधिकारमें रहै। केवल सामन्तने राणाकी विना आज्ञा लिये महाराष्ट्रोंको भगाया। नाममात्रका उस देशपर राणाका अधिकार था। अंतमें मैंने सेन्धियाके दावेके विरुद्धमें विशेष प्रमाण उपस्थित किये, सिन्धियाने वहुतसे

कागज पत्र और खतोंका उल्लेख किया, और अपने दावेको प्रवल करना चाहा, परन्तु उन कागज पत्रोंको उपस्थित करनेमें वह समर्थ न हुए। अन्तमें कई महीनोके वीतने पर मैंने वेगूदेश उक्त सामन्तको फिर देदिया। इस कार्यसे मैं अत्यन्त आनन्दित हुआ, कारण सन् १८१८ ईसवीके मई मासमें जब मैंने मेवाड़की वश्यता स्वीकार पत्रमें हस्ताक्षर करानेका प्रस्ताव किया, तव इन्हीं सामन्तने पहिले उसपर हस्ताक्षर किये थे"।

महात्मा टाड् साहवने वीरक्षेत्र चीतौड़में जाकर लिखा है कि " शीशोदियोंकी प्राचीन राजधानी चीत्तौड़के ऊच किलोंकी प्रत्येक दीवारों पर पत्थरखंड है, जिनमें असीम गौरवकी गरिमा लिखी हुई थी, मैं दूरसे जैसे २ उस राजधानीकी ओरको वढ़ता गया, मेरे हृदयमें उतना ही आनन्द होता था । मैं जिस रास्तेसे चीतौड़की ओरको आगे वढ़ा, उसी मार्गसे वादशाह अलाउद्दीन और सम्राट् अकबर अपनी प्रवल सेना और सामन्तोंके साथ रामचन्द्रके वंशधरोंको परास्त करनेके लिये आगे वढ़े थे। चीतौड़के महाराज किस भांति सम्राट्के विरुद्धमे खड़े हुए थे, राणा अरीसिंह (अरसी) राणा प्रतापसिंहने कैसा वल-विक्रम प्रकाश किया था उसका वर्णन यथास्थान किया गया है। चीतौड़के उस अंतिम युद्धका स्मृतिचिह्न आजतक यहाँ विराजमान है, आज प्रभातकाल ही मैंने उसका दर्शन किया। जिस स्थान पर भारतके सवमें प्रधान वादशाह (अकवर) ने अपनी हरे रंगकी विजयपताकाको उठा कर डेरे डाले थे, और अपने प्रधान वीर सेनापतियोंको इकट्टा करके चीतौडपर अधिकार कर उसको विध्वंस करनेकी परामर्श की थी उसी स्थान पर एक स्मरण चिह्न विराजमान है, इन चिह्नोंने इस स्थानको अक्षय कर रक्खा है, यह एक ऊंचे खंभाकारमें है और यह "चिरागदान, वा अकवरका दीप" नामसे विदित है। यह वड़े २ पत्थरके टुकड़ोंके द्वारा वनाया गया था और ३५ फुट ऊंचा है। इसका नीचेका भाग विशेष स्थूल और ऊपरका भाग क्रमशः सूक्ष्म होता गया है। शिर पर एक वड़ा भारी दीपक वलता था, उसको देखकर सर्वसाधारण जान सकते थे कि उक्त स्थानमें वादशाहके डेरे पड़े हुए थे। इसके भीतरी भागसे सीढ़ियॉ है, उन सीढ़ियोंके द्वारा ऊपरको चढ़ाजाता है। वादशाह अकवर अवश्य ही उन सीढ़ियोंपर चढ़कर ऊपरको गये थे, यह विचार कर मैंने भी एक वार इन्हीं सीढ़ियोंपर चढकर ऊपरको जानेकी इच्छा की, परन्तु शरीर स्वस्थ नहीं था इस कारण मेरे मनकी आशा मनहीमें रहगई। नीचेके नगरके अंगको अतिक्रमण कर मैं सवारी परसे उतरा। और घोड़ेपर सवार हो पांच किलोंको लॉघकर चीतौडमें गया। सूर्यकुंडके पासही मेरे डेरे पड़े थे; इस कारण वहाँ जाकर चीतौडके चारोंओर उस प्राचीन ऐतिहासिक विध्वस्त चिह्नोंको देखकर चिन्ताको भगा दिया। अस्ताचल चूडावलम्बा प्रभाकरकी शेष किरणोंका जाल जवतक चीतौडके स्तंभके ऊपर पड़ता रहा, मैं तवतक विषादित, स्मृति विचलित हृदयसे एक दृष्टिसे उसे देखता रहा"।

"विध्वस्त प्राचीन चीतौड़को देखकर मेरे मनमें जो समस्त भाव उदित होने लगे, पाठकोंको उन सवको विदित कराकर विरक्त करना नहीं चाहता, मैं इस समय उन

विध्वंस्त दृश्योंको देखकर अपनी सामर्थ्यानुसार कितने ही विवरणोंको विदित करनेमें प्रवृत्त हुआ। खुमानरासा ग्रन्थमें चीतौड़के सम्बन्धमें लिखा है कि विख्यात दुर्गम और अभेद्य चौरासी किलोंमें छत्रकोटका किला सबमें प्रधान है; समतल क्षेत्रसे जो भूधर उठा है, उस भूधरके ऊपर यह छत्रकोटका किला बना है, वह मानो पृथ्वीके मस्तक पर तिलक स्वरूप विराजमान होरहा है। कोई शत्रु भी उस किले पर अधिकार करनेको समर्थ नहीं हुआ, और इस दुर्गके अधीन सामन्त मंडली भयके नामतकको नहीं जानती थी। इसके ऊपरसे गंगा अपनी तरंगें दिखाती बहती हुई चली हैं। और इस पहाड़परका मार्ग इस प्रकारसे बना हुआ है कि यद्यपि कोई इसमें जानेके लिये समर्थ हो सकै, परन्तु यहाँसे बाहर होनेकी कुछ आशा नहीं है। एक बुर्ज पत्थरके ऊपर बना हुआ है, और उस बुर्जमें रहनेवाली सेना रात्रिमें सोते हुए शत्रुओंसे भय नहीं मानती इसके धान्यागार धान्यसे पूर्ण है, और जल कुण्ड फुआरे और कुएँ निर्मल जलसे भरे पुरे हैं। स्वयं महाराज रामचन्द्रजी इस स्थानमें १२ वष तक रहेथे. नगरमें ८४ बाजार, बालिकाओंके लिये बहुतसे विद्यालय, और प्रत्येक प्रकारकी शास्त्रिय शिक्षाके लिये पाठशाला और अठारह प्रकारके शिल्पविद्यामें निपुण शिल्पकार यहाँ रहते है।" छत्तीस प्रकारकी राजपूत जाति यहाँ निवास करती है, सेना अश्वारोही असंख्य है।

"खुमानरासा अर्थात् रावत खुमानका उपाख्यान नामक ग्रन्थ ९ नौमी शताब्दीमें लिखा गया था और मेरा विश्वास है कि कविने चीत्तौड़का वर्णन कल्पनासे नहीं किया है सब सत्य लिखा है कारण कि चीतौड़के विध्वंस होनेके पाहिले भारतवर्षकी कोई राजधानी ही उसके समान नहीं थी, पठारकी समान चीत्तौड़की राजधानी पहाड़ पर स्थित है, पहाड़ श्रेणी चीत्तौड़से डेढ़ कोश तक चली गई है। चीतौड़के और पाठारके बीचमें उर्वरके ऊपर विजैपुरा, गुआलियर, और बेगूके कुछ अंश विराजमान हैं, उनके बीच २ में कुंज कानन वृक्ष समूह है, किन्तु वह प्रदेश चिरकालकी अराजकतासे इस समय वनकी समान होगये है। चितौड़के ऊपरीभागका अंश लम्बाईमें तीन मील दो फर्लांग और चौड़ाईमें चोवसि सौ हाथ है। जिस पर्वत पर चीतौड़ स्थापित है उस पर्वतके नीचेका व्यास चार कोश है। उसके नीचेसे ऊपर तक घने २ पेड़ और झाड़िये है तिनमें व्याघ्र, हरिन, सुअर ही नहीं किन्तु सिंह भी आजलों रहते हैं। तुगाइति नामक चीतौड़के नीचेका भाग दक्षिणके अंशमें स्थापित है और वहां विजयस्तंभ चतरङ्ग मोरी राणा रायमल्लका महल, राणा मुकुलका विराज मंदिर गहिलोतके शतचूड़ा विशिष्ट दुर्ग और जयमल्लका सौध प्रभृति रमणीय स्मृति चिह्न समूह स्थापित हैं, चीत्तौड़से पृथक् एक स्थान ४०० सौ फुट उत्तरको हैं, इसके चारोंओर दीवारे हैं, शत्रुको इसीसे लाभ हुआ था। माधोजी सेंधियाने इसी पर अपना तोपखाना स्थापित किया था इसी स्थानसे अलाउद्दीन तातारीने आक्रमण किया था, लोग कहते हैं यह चीत्तौड़ी टीला वही है जिसके लिये प्रत्येक टोकरी मट्टीपर एक पैसेसे लेकर एक मोहरतक दी गई थी इसके निर्माणमें बारह वर्ष लगे होंगे"।

माननीय टाड् साहवने प्राचीन चीतौड़के देखने योग्य स्थानोंको देखकर जो वर्णन किया है, हमने उसका अविकल अनुवाद प्रकाश किया। टाड् साहव लिखते हैं, कि ठीक उत्तरी ओरसे ऊपर चढ़ना होता है, चढते समय जो दरवाजे वीचमे पड़ते हैं, उनमे सवसे पहले द्वारको "फूटाद्वार" और चौथे द्वारको "हनुमान् पोल" कहते हैं। यह हनुमान पोल चीतौड़के इतिहासका एक चिरस्मरणीय स्थान है यहीं पर प्रसिद्ध वीर जयमल्ल और फत्ता महावीरता दिखाकर परलोक सिधारे थे। जयमल्लके स्मरणार्थ यहाँ पर एक छोटासा स्मारक चिह्न विराजमान है, और एक पत्थरके घोड़ेपर वीर वेपी भाला हाथमे लिये जयमल्लकी मूर्ति स्थापित है। कहा जाता है कि मेवाडके देवता स्वरूप माननीय वीर शिरोमणि राखोड़ीकी यादगारीमें यह वनाई गई है। यहाँसे फिर तीन वेष्टनी उतर कर हम रायपोल नामक वडे दरवाजे पर गये। इस स्थानसे विख्यात 'दरीखाना' वा वारहद्वारी जिस सभाग्रहमे प्रधान २ उत्सवोंके समयमे चीतौडके राणा इकट्ठे होते थे उसी स्थान पर गये। वह सभागृह ही चीत्तौड़की प्रतिभा, राणा अरसीको विदित करती थी कि उनके गौरवका सूर्य अस्त होता चला है। रामपोलके एक कमरेमें हमने खोदी हुई लिपिको देखा। सालूंवरके विख्यात् सामन्त भीमसिंहने इस खोदी हुई लिपिकी प्रतिष्ठा की थी, कारण कि उनका ही नाम नीचे लगा हुआ है। भीमसिंह एक समयमे चीतौड़के राजमुकुटको अपने शिर पर धारण करनेके लिये उद्यत होकर विद्रोही होगये थे, मेवाडके इतिहासमे उसका वर्णन भलीभाँतिसे हो चुका है। भीमसिंहने जिस वंशमे जन्म लिया था, उस वंशके आदिपुरुपोने भीमके जन्म लेनेके कई सौ वर्ष पहिले एक समय इस राजमुकुटको अकृत राजभक्तकी समान छोड दिया था। सालूंवरके सामन्त उक्त भीम जिस समय राजभक्त थे, ऐसा जाना जाता है कि उसी समय उन्होने इस खोदी हुई लिपिको स्थापन किया। इस खोदी हुई लिपिमे लिखा था " नगर निवासियोंको वल पूर्वक किसी श्रमसाध्य कार्यमे नियुक्त नहीं किया जायगा, और नगर निवासियोसे दंडस्वरूप कर नहीं लिया जायगा। दूसरे गोइन्दा नामक स्थानके एक सूत्रधरने अपने व्ययसे रामपोलके नवीनद्वारको तैयार कर दिया, वहाँ एक मूर्ति गाय और शूकरकी विद्यमान है, उसको जो एक खंड भूमि दी गई थी इस खोदी हुई की लिपिमे उसका भी उल्लेख है "।

"मैं उस स्थानसे दक्षिणकी ओरको कुछ दूर गया वहाँ एक अत्यन्त प्राचीन मंदिर देखा। उस मंदिरका तोपखाना चोराके समीप स्थापित था और वहाँ तुलसी भवानीका मंदिर है। वह तोपखाना चोरानामक स्थानमे पहिले तोपोंकी श्रेणीसे सजा रहता था। इस समय वहाँपर चीतौडके लूटनेके चिह्न स्वरूप कई एक प्राचीन तोपें पड़ी हुई हैं। इसके पीछे राणाके प्रधान पुरोहितका एक वड़ा और सुन्दर घर दिखाई दिया। इसके पीछे मुसानिवा अश्व शालाध्यक्ष और राजदरवारके अन्यान्य विभागोंके प्रधान २ कर्मकर्त्ताओंके घर हैं परन्तु सवमे पहला जो मनोहर महल चित्तको आकर्षण करता है उसका नाम नोलखा भंडार है। यह एक छोटा दुर्ग स्वरूप है। इसकी दीवारें

बड़ी २ सौध श्रेणी जैसी ऊंची है, तथा उसी भाँति उन्नत है । यह प्राचीन विध्वस्त उपकरणसे बनाया गया है । भंडार शब्दका अर्थ धनागार है ।

इस कारण इसके नामसे ही इसका परिचय पाया जाता है; किन्तु ऐसा जाना जाता है कि जिन वनवीरका वर्णन इस इतिहासमें किया है वह यहीं निवास करते थे । उत्तर पूर्वकी ओर एक छोटा सा मंदिर है, उसका चित्र कार्य अत्यन्त रमणीक है उसका नाम सिंगारचोरा है "।

"उक्त स्थानसे हम राणाके महलकी ओरको गये, यद्यपि यह जाना जाता है कि राणा रायमल्लने उक्त महलको बनाया था परन्तु इसके गठनकी रीति इसकी अपेक्षा अत्यन्त प्राचीन महलोकी समान थी । इसका गठन सरल आकृति पर विस्तारित है । केवल बुर्जोंमें महान् कारीगरी है, और महलमें कोई विशेष कारीगरी नहीं है । मुसल्मानोंके आनेके पहिले राजपूतोंके महल किस रीतिसे बनते थे, इसको देखकर यह भलीभाँतिसे जाना जाता था । महलके चारोंओर प्राङ्गणभूमि है । उस प्राङ्गणभूमिकी एक ओर देवजीका मंदिर है । राणा सांगाको उसी मूर्तिकी कृपासे चारोंओरसे जयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त हुआ था । इन अपरिचित मूर्तियोंके ग्यारह कुल वा महाविद्याओंमें एकके नामसे विदित थे । विख्यात वीर भोज जिनके पिता एक चौहान और माता गूजरी जातिकी थी, और जिसके मिलनेसे वगरावत सम्प्रदायकी सृष्टि हुई थी, ऐसा जाना जाता है कि वही भोजदेव शक्ति युक्त होकर इस विग्रहरूपसे प्रतिष्ठित है इन देवताके सम्बन्धमें एक प्रवाद प्रचलित है । उक्त दैव शक्तियुक्त वगरावत वीर जिस समय प्राचीन शत्रुताका बदला देनेके लिये रणविजय नामक स्थानके परहारियोंके विरुद्धमें गये थे, उस समय उनके चीतौड़के समीप आते ही चीतौड़पति राणासांगाने उनके आनेका समाचार पाया तब उनको दैवशक्ति युक्त जानकर भक्ति और श्रद्धाके साथ बड़े सम्मानसे उनकी पूजा की । देवजीने राणाकी भक्तिसे प्रसन्न होकर राणाको एक देव पदार्थ (तवीज) दिया, उस देवपदार्थके ही बलसे तथा देवजीकी निर्दिष्ट व्यवस्थाके मतसे राणा जितने दिन चले उतने ही दिन उन्होंने विजय प्राप्त की । देवजीने उस दैवपदार्थ (तवीज) को छोटेसे कपड़ेमें रखकर राणा सागाके गलेमे बाँध दिया, और कहा कि यह किसी प्रकारसे भी पीठकी ओरको न जाने पावै । उक्त देवजीकी इस प्रकारकी देवशक्ति थी, कि वह मृतक मनुष्यको जीवित कर सक्ते थे । उस शक्तिको दिखानेके लिये उन्होंने अपने हाथमें एक मोरका पंख लेकर उस समय चित्तौरमें जो मनुष्य मरगये थे उनका शव स्पर्श करके ही उनको फिर जीवित कर दिया ! राणा सांगा देवजीका वह दैव शक्तिका चूड़ान्त प्रमाण पाकर दिग्विजयके लिये बाहर हुए । उन्होंने अनेक युद्धोंमें जय प्राप्त करके अन्तमें बियानाके किलेतक पर अधिकार करलिया था, इसी समयमें पोला खानमें स्नान करते समय उनके गलेमेंसे दैवी पदार्थ जलमे गिर पड़ा । उसी समय यह शब्द उठा कि एक भयंकर शत्रु तुम्हारे समीप आपहुँचा है ! शीशोदीया इस प्रवाद वाक्य पर इतना विश्वास स्थापन करते थे कि उक्त देवजीने उनके देवताओंमें

स्थान पाया, और यद्यपि उनकी अवस्था अत्यन्त ही शोचनीय होगई थी परन्तु तौ भी वह देवजीकी उस मूर्तिके सम्मुख दिन रात दीपक प्रज्वलित करते रहते थे, देवजीकी मूर्ति अश्वारोही वीरकी समान गठित थी। हाथमें बर्छो और घोड़ा नीले वर्णका था। आजतक भी सब उनकी पूजा करते हैं । सबका मन्तव्य सग्रह करनेके लिये मैंने तीन रुपये बाबरके उपयुक्त प्रतिद्वंदी महावीर सांगाके नामसे उक्तदेवजीकी प्रतिमाके सामने अर्पण किये "।

राणा रायमल्लके महलको छोड़ कर मैं दो बड़े मंदिरोमें गया। उन दोनों मंदिरोमेंसे एकमे वृजराज श्रीकृष्णजीकी मूर्ति स्थापित थी। उसे राणाकी विख्यात् रानी मीराबाईने बनवाया था और उसमे श्यामनाथकी मूर्ति स्थापित थी। मीराबाईको कविता करनेकी भी शक्ति थी। इसका वर्णन इतिहासमें होचुका है। उन्होने जयदेवकी विख्यात् गीतगोविन्दकी टीका तैयार की थी ऐसा जाना जाता है। मीराबाईकी कृष्ण-भक्ति इतनी प्रबल थी कि वह कृष्णके प्रेमसे व्याकुल हो इस मंदिरमे नृत्य करती थी, और मीराबाईकी मृत्युके सम्बन्धमे जाना जाता है कि एक समय मीराबाई प्रेममे व्याकुल होकर नृत्य कररही थीं कि इसी समयमे राधानाथने मूर्तिमेंसे प्रगट हो-कर कहा। "मीरा आओ! हृदयसे लगो। श्रीकृष्णने जैसेही मीराको आलिंगन किया कि मीराकी मानवी लीला भी उसके साथ ही साथ समाप्त होगई"।

"परन्तु यह दोनो मंदिर अत्यन्त प्राचीनकालके कितने ही टूटे मंदिरोंकी समान बने हुए हैं। चीतौड़से तीन कोश उत्तरकी ओर एक स्मरणातीतकालके निगर नगरका ध्वंस स्तूप पड़ा है। वहाँके टूटे हुए मंदिरोकी सामग्री लाकर यह बनाये गये हैं। उक्त दोनों मंदिरोके समीप एक बडाभारी जलाधार विराजमान है। प्रत्येककी लम्बाई एक सौ पचीस फुट ह विस्तार पचास फुट हे और गहराई पचास फुट है। ऐसा जाना जाता है कि मेवाडकी राजनंदिनीके साथ गागरौनके खीची वंशीय अचलका जब विवाह हुआ तब राणाने इन दोनोको खुदवाकर आमंत्रित हुओंके लिये एकमें घी और एकमे तेल भरवा दियाथा"।

"हम पीछे कीर्त्तिस्तंभके समीप पहुँचे, राणा कुंभाने मालवा और गुजरातकी समस्त सेनाको पराजय करके उस विजयके चिह्न स्वरूप यह स्मरण स्तंभ स्थापित किया था। समस्त भारतवर्षमे एकमात्र दिल्लीकी कुतब मीनारके साथ इसकी तुलना हो सकती है परन्तु यह उसकी अपेक्षा ऊंचा है. तथापि इसका शिल्पकार्य वैसा उत्तम नहीं है। यह स्तंभ एकसौ बाईस फुट ऊंचा है। और इसके मूलदेशके प्रत्येक खंडका परिमाण ३५ फुट है। शिर देशका गुम्बज साढ़े सत्रह फुट है। यह ४२ फुट वेदीके ऊपर स्थापित है। यह नौतल युक्त है और प्रत्येकके नीचे ही द्वार और झरोखे विराजमान हैं। चारोओर स्तंभोंसे युक्त बरामदोकी श्रेणी बनी हुई है। इनकी सुन्दरताके लिखनेकी

---

(१) हमारी समझमें यह वही तक्षक नगर है जिसकी हम खोजमें थे और जिसके लिये हरबर्ट साहबने यह लिखा है कि चीतौड़ टकसेल पोरस (पवार) का था।

कलममें सामर्थ्य नहीं है। इसके ऊपर हिन्दुओंके समस्त देवी देवताओंकी मूर्त्ति खुदी हुई है। इसका सबसे ऊंचा वल अर्थात् नौसंख्यक तल साढ़े सत्रह फुट चौड़ा है, अनेक भांतिके पाषाणोंसे यह बना हुआ है वहाँ अगणित स्तम्भ श्रेणीके ऊपर गुम्बज स्थापित है। इनमें कन्हैयाजीका रासमंडल अंकित है, चारोओर गोपियाँ बाजे हाथमें लियेहुए नृत्य कररही है. मध्यस्थलमें राधाकृष्ण विराजमान है उस कमरेमें चित्तौड़के राणाका वंश विवरण पत्थर पर खुदा हुआ है। किन्तु दुरात्मा यवनोंने उन सबको विध्वंस कर दिया है। केवल निम्नलिखित दो श्लोक आजतक पूर्व अवस्थामें हैं।

१७२ श्लोकार्थ–गुर्जर खंड तथा मालवादेशके अधीश्वरने अपार समुद्रकी समान विस्तारित सेनाके साथ पृथ्वीको कंपायमान करके मेरपति पर आक्रमण किया। कुम्भाने जगत्को उज्वल किया उसके अशेष यशका वर्णन कहां तक किया जाय? उन्होंने अपनी विपक्षी सेनामें व्याघ्रस्वरूपसे अथवा शुष्क गहन वनमें अग्निस्वरूपसे गमन किया था।

१८३ श्लोकार्थ–जब तक सूर्य भगवान् इस संसारमें अपनी किरणजालका विस्तार करेंगे तबतक राणा कुंभका यश फैला रहेगा। जब तक उत्तरमें हिमालय पहाड़ ऊंचे भावसे खड़ा रहेगा। जब तक वारिधि मालाकी समान मेदिनीके गलेको पकड़े रहेगा तबतक कुंभका यश अक्षय रहैगा। उनके शासन समयके अनेक घटनाओंसे पूर्ण इतिहास और उनके गौरकी गरिमा सर्वदा अक्षयभावसे विराजमान रहैगी। एक हजार पाँचसौ सात संवत्में राणा कुंभने कहा चीत्तौड़के ललाट पर मुकुटरूप यह स्तम्भ निर्माण किया। उदय हुए सूर्यकी उज्वल किरणोकी समान यह तोरण चीतौड़के नवीन वरकी समान उठा था"।

संवत् "१५१५ में ब्रह्माके मंदिरकी प्रतिष्टा हुई और वर्तमान वर्षके माघ मास पुष्य नक्षत्र दशमी तिथि बृहस्पतिवारको अक्षय छत्र कोटेमें यह कुंभाका कीर्तिस्तंभ निर्माण हुआ। अब इस स्तंभकी तुलना नहीं होसकती इस स्तंभको धारण करके चीतौड़ आज मेरुका उपहास कररहा है। अब इस छत्र कोटकी उपमा कहां है?–इसके शिखरसे झरने निकल कर अविकल शब्द करते हुए बहरहे है। चारोंओर देवता और देवियोंकी मूर्तियां विराजमान हैं। चारोंओर उज्वल कुञ्जवन और भौरे गुंजार करते हुए प्रेमसे क्रीड़ा कररहे हैं। इस अभेद्य अचल किलेको महाइन्द्रने अपने हाथसे बनाया था।

उक्त श्लोकाकी संख्या १८३ थी परन्तु और भी कितने ही श्लोक इस स्थान पर लिखे हुए थे। इनका अनुमान सरलतासे होसकता है"।

कर्नल टाड् साहब लिखते हैं कि इस ऊंचे स्थानसे जो दृश्य देखा जाता है वह अत्यन्त मनोहर है। मालवेके समतलक्षेत्र तक यहाँसे दृष्टि पहुँचती है। कई वर्षके बीतने पर इस स्तंभके सबसे ऊंचे बुर्ज पर वज्रपात हुआ था और उसीसे बहुतसे बुर्ज टूट गये थे, परन्तु सर्वसाधारणमें यह स्मरण स्तंभ, आजतक अक्षतभावसे खड़ा हुआ है। केवल जिस स्थान पर वज्रपात हुआ था उस स्थान पर कई एक पीपलके वृक्ष जम गये हैं, ऐसा जाना जाता है कि स्मरण स्तंभके बनानेमें नौ लाख रुपया खर्च हुआ था। राणा कुंभाने जो अगणित सौधमंदिर निर्माण किये थे उन्हींमें का एक यह भी है।

श्रीकृष्णका मंदिर और कुंभसागर नामका एक बड़ा सरोवर है, तथा महादेवका मंदिर और कृत्रिम निर्झर राणा कुंभाके द्वारा बना था। राणा कुंभाने कमलमेरे नामक विराट-काय किला और उसमेंके महलको बनाया था। उस कमलमेरके किलेमें वह शासन कार्य करतेथे, ऐसा जाना जाता है कि महम्मद बेगने जिस समय कमलमेर पर आक्रमण करके इस पर अधिकार किया था उस समय उसको उस किलेमेंसे गुजरातकी राजकुमारीका कई लाखके मोलका हीरोंका एक हार मिला था, और उसने चालीस हजार मनुष्योंको यहाँ बंदी कर लिया था।

"उक्त कीर्तिस्तंभके निकट ही ब्रह्माका एक बड़ा मंदिर है, राणा कुंभाने अपने पिता राणा मुकुलके स्मरणके लिये इस मंदिरकी प्रतिष्ठा की है। और यह उन्हींके नामसे विदित है, यह राजा बड़ा ईश्वरभक्त था। इस मंदिरके समीप विख्यात चारबाग नामक स्थान है। वहाँ बाप्पासे उदयपुर राजधानीकी प्रतिष्ठाता तक शीशोदीय वंशके प्रत्येक राणाका समाधि मंदिर है। उस मंदिरमें केवल भस्म राशि रक्खी हुई है उस समाधि मंदिरके भीतरी भागोंमे बहुतसे ऐतिहासिक तथ्य विजड़ित हुए हैं। हम अपने लेखको भी यहाँसे संक्षेप करते हैं कि हमारे इतिहास बतानेवालेने संसारसे विदा की"।

"उस सनमान समाधिक्षेत्रमें होकर मैं पर्वतके एक निर्जन स्थानमें गया। भूधरका वह स्थान स्वभावसे ही विदीर्ण होगया है और उसके एक अंशसे 'गोमुख' नामका स्वाभाविक झरना एक बटवृक्षके नीचे होकर निकला है। पर्वतके उस गुहाकी एक ओर एक गुप्त सुरंग पर्वतके भीतरीभागमें चली गई है, उसको रानी मींदर कहते हैं। उसी सुरंगमें होकर बराबर भीतरी भागमेंको कई एक कमरे चले गये हैं। बादशाह अला-उद्दीनने जिस समय चित्तौडपर अधिकार करके लूट की थी उस समय इस स्थान पर जौहर वृत्तका अनुष्ठान किया गया था। भुवन मोहिनी पद्मिनी और चीत्तौड़की अन्यान्य राजरानी और राजनन्दनियोंने इसी स्थान पर प्रज्वलित अग्निमें प्राणत्याग करके अपने सतीत्वकी रक्षा कर पापात्मा अलाउद्दीनकी पाप कामनाको व्यर्थ किया था, उसी समयसे यह गुप्त सुरंग बंद करदी गई"।

"मैंने और भी ऊपर चढ कर जयमल और पत्ताके नामके मंदिर देखे। वहां कालकादेवीके मंदिरकी प्राचीन अर्थात् चीत्तौड़के गहिलोत वंशके आधिपत्य विस्तारित होनेके कईसौ वर्ष पहिले प्राचीन मोरिराजवंशके शासन समयमें प्रतिष्ठा हुई थी। मैंने वहाँ निम्नलिखित खोदी लिपियें देखीं।

"सम्वत् १५७४ माघ सुदी पचमी रेवती नक्षत्रमे पत्थर खोदकरलिपि अंकितकी कालू. कैमर शिल्पीने तथा और अन्य छत्तीस जनोंने (यहाँ पर उनके नाम वर्णन किये हैं कालकादेवीके मंदिरसे लगे हुए विस्तारित कुंड बनाये"।

"उक्त स्थानसे मैं चन्द्रावत् सम्प्रदायके आदिपुरुष चंडके समाधि मंदिरकी ओर गया। वहांसे कुछही दूर भीमसिंह और पद्मिनीका महल विराजमान है उसके पीछे एक स्थानके चारोंओर पत्थरकी दीवार दिखाई दी। ऐसा जानाजाता है कि राणा

कुंभाने मालवेके राजाको युद्धमें परास्त करके वंदीभावसे इसी स्थानमें लाकर रक्खा था उसी स्थानसे लगाहुआ रामपुराके राववंशियोंका महल विराजमान है "।

"और भी दक्षिणकी ओर प्राचीन चीतौड़के प्राचीन पँवार अधीश्वर चतरङ्ग मोरीकी पुष्करणी और महल विराजमान हैं। यह स्थान विशेष ऐतिहासिक विवरणोंसे भरा हुआ है। पुष्करणीका भीतरी भाग भिन्न २ अंशोंमें विभक्त है। चीतौड़के किलेके दक्षिण बुर्जके चारसौ हाथ समीप जाकर मै इस स्थानसे चीतौड़की प्राचीन सामन्त श्रेणी अर्थात् सिरोही; वून्दी सन्तलूना वारा इत्यादिके अधीश्वरोंकी महल श्रेणीके भीतरको होताहुआ चौगान नामक स्थानमें जा पहुँचा। यह स्थान सामरिक उत्सवों का क्षेत्र है। आजतक भी दशहरेके पहिले चीतौड़में संख्या वद्धसेना प्राचीन रीतिके अनुसार वहाँ सामरिक उत्सव करती है। उक्त स्थानके समीप ही एक वड़ा जलाशय विराजमान है। यह एक सौ तीस फुट लम्वा है, चौड़ाईमें ६५ फुट है, और इसकी गहिराई ४७ फुट है। इसके चारोंओर रमणीक अत्यन्त सुन्दरतासे खुदेहुए आभ्यन्तरी भाग जलसे पूर्ण हैं "।

इसके और भी ऊपर प्रायः सम मध्यस्थानमें एक चमत्कार चौकोना स्मरण स्तंभ विराजमान है। यह ऊंचा साढ़े७५ फुट है। इसका मूलदेशका व्यास३० फुट है। शिरका व्यास १५ फुट है। और उसके गात्रपर जैनियोंकी मूर्तियां खुदी हुई है। यह स्मरण स्तंभ अत्यन्त प्राचीन है। इसके मूलदेशमें मैने जो खोदी हुई लिपि देखी उनसे जाना गया कि यह पहिले जैनगुरू आदिनाथके नामसे उत्सर्ग की गई थी, उक्त मूलदेशके नीचे इस भाँति खुदा हुआ है।

"श्रीआदिनाथ और चौवीस जैनेश्वर। पुंडरीक। गणेश। सूर्य और नवग्रह। अनुग्रह करके तुम रक्षा करो। संवत्९५२,सन्८९६ ई०में वैशाखशुक्ला पूर्णिमा गुरुवार"।

कोकरेश्वर महादेवके अत्यन्त प्राचीन मंदिरके समीप मैंने निम्नलिखित लिपि पाई,—

" संवत् ८११। माघ शुदी पंचमी वृहस्पतिवार को। सन् ७५५ ई. राजा कोकरेश्वरने इस मंदिरकी प्रतिष्ठा करी और यह जलाशय खुदवाया "।

"यहाँ अनेक जैनियोंकी खुदी हुई लिपियाँ हैं; परन्तु टूट फूट जानेके कारण मै उनमेंसे किसी विशेष प्रयोजनीय लिपिको अपने दुर्भाग्यसे न निकालसका। शान्तिं (सन्त) नाथके मंदिरपर निम्नलिखित खोदी हुई लिपि देखी।

संवत् १५०५, सन् १४४९ ईसवी श्रीमहाराणा मुकुलके पुत्र कुंभाके धनाध्यक्ष साह कोला, उनके पुत्र वदरीरत्न और स्त्री श्रीविलनदेवीने शांतिनाथका यह मंदिर प्रतिष्ठित किया, और खरताके सामन्त कछकाछत राजपुरा और उसके गोत्री राजश्री जिन चन्द्रसूरिजीने यह लेख लिखा था "।

"पूर्वकी ओर मध्यांशमें सूर्यपोल नामक तोरणके समीप चांदावत् सम्प्रदायके नेता सहीदासका समाधि मंदिर विराजमान है। सम्राट् वहादुरशाहने जिस समय

चीतौड़ पर आक्रमण किया था उस समय उक्त सहीदासने उस सूर्यपोलके समीप जाकर भयंकर वीरता प्रकाश करनेके पीछे शत्रुके हाथसे उसी स्थान पर प्राण त्याग किये थे"।

"उत्तर पश्चिमके अंशमें एक किला है, और उसमे महल विराजमान है, उसकी दीवारें और ऊंचाईको देखनेसे यह वोध होता है कि यह वहुत प्राचीन कालका वना हुआ है। ऐसा जाना जाता कि मोरी राजवंश और चीतौड़के प्रथम राणा इसी महलमे रहते थे। कोई पुरुष एक पग भी ऐसे स्थानमें नहीं रख सकता जहाँ कोई न कोई वस्तु पुराने समयकी उसके पैरके नीचे न आवै"।

इस स्थान पर चीतौड़का वर्णन समाप्त करते हैं। परन्तु इसकी समाप्तिके पहिले मैंने एकसौ साठ वर्षकी अवस्थावाले एक फकीरको देखा। उसका उल्लेख विना किये हुए नहीं रह सकता। यहाँके वहुत २ पुराने मनुष्य कहते हैं कि यह फकीर यहाँके मदिरमे चिरकालसे निवास करता है। यहाँके एक नव्वे वर्षसे अधिक अवस्थावाले सूत्रधरने कहा है कि "वालकपनसे मैंने इनको इसी प्रकारसे वृद्ध देखा है। जव इन अत्यन्त वृद्ध महात्मा निकट मैंने अपना परिचय दिया, उस समय वह एक नगरवासीके साथ चौंसर खेल रहे थे। उन्होंने एक मुहूर्तके लिये मेरी ओरको देखकर "यह मनुष्य क्या चाहता है?" कह कर फिर क्रीड़ामे मन लगाया। क्रीड़ाके समाप्त होनेपर मैंने उनको भेटमे रुपये दिये। वह उनको लेकर अपने समीप खड़े हुए मनुष्यको दे वड़ेवेगसे उस टूटेहुए मंदिरकी ओरको चले गये। एक मनुष्यने उनको एक वहुत वढ़िया दुशाला दिया था, शीघ्रतासे चलनेके कारण उनका वह दुशाला जमीन पर गिरता हुआ जा रहा था। परन्तु उन्होंने उस दुशालाको वही छोडा और आप वहाँसे चल दिये। इनका ऐसा स्वभाव देखकर कोई भी इनके साथ किसी प्रकारका अत्याचार नहीं करता था। इनको जव भोजनकी इच्छा होती तव तुरन्त ही भोजन करनेका उपाय करते थे। मैं एक मात्र एक मुहूर्तके लिये उनकी पूर्वस्मृतिको जागरित करनेमें समर्थ हुआ था। उस समय उन्होंने एकमात्र अदीनावेग और पंजावके सम्वन्धमें कुछ एक वातें कही थीं। ऐसा जाना जाता है कि वह पंजावके रहनेवाले थे मुझे उनकी अवस्था सत्तर वर्षकी विदित होती थी"।

कर्नल टाड् साहव प्राचीन चितौड़को देखनेके पीछे८ मीं मार्च सन् १८२२ ई० को उदयपुरमे आये, महाराणा भीमसिंहने उनको वड़े आदरभावके साथ ग्रहण किया। करनल टाड् साहवने उदयपुरमे जाकर लिखा है कि "मै फिर हिन्दूपतिकी इस राजधानीमे आया। जवतक मैं अपनी जन्मभूमिको नहीं जाऊंगा। तवतक किसी उपद्रवके वशसे भी इस स्थानको नहीं छोड़ूंगा। मेरे लिये इस समय विश्राम करना आवश्यक है, कारण कि मेरे जीवनके गत पिछले पन्द्रह वर्ष कठोर परिश्रम करनेमें व्यतीत हुए है (जिसका कुछ एक अंश इतिहासमे वर्णन किया गया है। मैंने कई दिन तक भैरतामे विश्राम किया, और देखा कि मेरे घर वननेका कार्य प्रायः समाप्त हो चुका है, और वगीचा रमणीय शोभा को प्रकाश कर रहा है। आड़ू, सेव संतरे,

नारंगी, अनेक जातिके नींबू इत्यादि वृक्षोंमें कलियें खिली हुई देखीं । श्रेष्ठ फल, अनार केला, इत्यादि फलवान् वृक्ष भी फलके भारसे झुके हुए देखे, यह सब फलवान् वृक्ष लखनऊ आगरा और कानपूरसे आये थे । किन्तु प्रधानतः श्रेष्ठफलवाले वृक्षोंके बीजमैं ग्वालियरसे लाया था, मैंने ग्वालियरके समस्त वृक्षोंको अपने हाथसे लगाया था। सन् १८१७ ईसवीमे जिस समय मैने ग्वालियरको छोड़ा उस समय मैं वहांसे कितनेही फलोंके बीज ले आया था, और उन सबको मैने उदयपुरके रंग प्यारी नामक भवनसे लगेहुए बागमें बोया था । यह जैसे स्वादिष्ट और मीठे थे ऐसे फल मैंने और कभी नही देखे । उन सब वृक्षोंके बीजको मैंने फिर इस मेरताके बागमें बोया, और इस समय देखता हूँ कि, उन सबमें फिर मधुर २ फल लग रहे हैं । शाक सबजी भी विशेष वृद्धिको प्राप्त होगई है । उदयसागरसे मैं जलविहार करनेके लिये एक छोटी नहरको भी यहाँ लाया । कितनेही दिनों तक मैने आनन्दित होकर नाव पर चढ़कर यहाँपर भ्रमण किया, और किनारे पर बैठकर मत्स्य धारण किया । परन्तु हाय ? सभी कुछ वृथा था, अभागा केरिसाहव मट्टीके गर्भमें विलीन होगया है, उन डंकन रोगसे पीड़ित स्वास्थ हीन अवस्थामें केप आफ गुड़ होपमें जानेके लिये तैयार हुए हैं । वह जिस वख्त साहबको कोटेमें छोड़ आये थे उन्होंने उनकी रुग्ना अवस्थाका समाचार मुझे पत्रमें लिखा था और मैं जो कुछ था अब वह नहीं हूँ । मुझमें अस्थिमात्र शेप है । मेरे स्वास्थभंगको देखकर चिकित्सकने मुझे स्वदेशमें जानेके लिये परामर्श दी है । राणा मेरे जानेकी वार्तासे अत्यन्त दुःखित हुए है।उन्होंने मुझे केवल तीन वर्षके लिये स्वदेश जानेकी विदा दी है और उनकी भगिनी चॉदजी बाईने कहा था कि जिससे मै अबकी बार देशसे विवाह कर अपनी स्त्रीको ले आऊं तो, वह अपने अन्तःकरणसे मेरे स्त्रीसे प्रेम करैगी "।

"मैने उदयपुरसे चुपचाप जानेकी अभिलाषा की थी । परन्तु राजपूतोंकी रीतिके अनुसार स्वास्थभंग अवश्य ही अवनत होता है । इस कारण मै उदयपुरकी ओरको गया राणा भीमसिंह युवराज ज्वानसिंह और समस्त शीशोदीया सामन्तोंने आगे बढ़ बड़े आनन्दसे मुझे ग्रहण किया । "आप मेरे घर आये है , केवल इन्हीं कितने ही सरल हृदयहारी प्रीतिपूर्ण वचनोंसे राणाने मुझे ग्रहण किया । परन्तु वह उसी समय इधर उधर देखकर मेरे सहायक वाह साहब और डाक्टर केरीसाहबको न देख कर अत्यन्त दुःखित हुए, और अन्तमें उन्होंनें मुझे जो बाजराज नामका अश्व उपहारमें दिया था उस घोड़ेके विना देखे हुए अत्यन्त विस्मित हुए । और जब सुना कि वह घोड़े कोटेमें मृतक होकर समाधिमें धरा गया है तब कह उठे। हाय ! (बड़ा सोचपन भला मनुष्यचा) बड़ा सोच है वह तौ अत्यन्त भला मनुष्य था । मै जब तक सूर्यपोलके समीप पहुँचा तब तक उसी बाजराजके गुणोंके सम्बन्धमें बहुत सी बातचीत होती रही ।

"वास्तवमें बाजराजका जैसा नाम था उसके गुण भी उसी प्रकार थे । वह सर्व साधारणको इतना प्यारा था कि उसकी मृत्युसे सभीने शोक प्रकाश किया था । इस देशमें अपने प्रभुकी समान वह भी सर्वत्र विदित था। उसकी मृत्युके समय मेरी समस्त

सिपाही सेना और कर्मचारियोंने जो दुःख प्रकाश किया था वह हृदय विदारक था। बाजराजके समाधिस्थानमें सबने इकट्ठे होकर रुदन किया था और जब अश्वको कपड़ेमें लपेट कर समाधिमें स्थित करके उसके ऊपर मट्टीडाली थी। उस समय उसके सहीसने उसको समाधि पर शोक प्रकाश करते हुए महा रुदन किया था। मैंने उसकी यादगारीके लिये उसके बाल काटकर रखलिये थे। ऐसा श्रेष्ठ घोड़ा मैंने कभी नहीं देखा था। कुछ दिन पीछे मैंने देखा कि कोटेके राजमन्त्री जालिमसिंहने उसकी समाधिके ऊपर २० फुट विस्तारित और चार फुट ऊंची एक पाषाण वेदी तथा उसके ऊपर एक बड़ा पत्थरका टुकड़ा रखकर बाज राजकी मूर्तिको स्थापित किया था, नायबने हमसे कहा था कि इस घोड़ेकी योग्यताको मैं जानता हूँ, इससे मैं इसका ऐसा समाधि मदिर बनवाऊंगा कि उसके स्वामीको वैसा ध्यान भी न होगा, कोटेके रईस ही घोड़ोंके विषयमें सबसे अधिक अभिमानी थे, पाँडुके समयसे देववांगो बूंदी वालेके समय तक घोड़ोंके विषयमे बहुत युद्ध हुए हैं और हाड़ा जातिके एक वीरने लोधी बादशाहसे कहा था, हम और विशेष कुछ नहीं कहते राजपूतोंसे तीन वस्तु मत माँगना, उसका घोड़ा स्त्री, और उसकी तलवार।

उदारचरित्र राजपूत बाँधव महात्मा टाड् साहब निम्नलिखित कई एक बातै लिखकर हृदयसे इस रजवाड़ेके विस्तारित इतिहासका उपसंहार कर गये हैं। "बहुत थोड़े दिनोके पीछे हम राजधानीको छोड़ कर कोटेराजकी भगिनी कि जिनके दिये हुए जुगत् मैंने भ्रातृ चिह्न स्वरूपसे अपने पास रख छोड़े हैं, उन हाड़ा रानीके स्थानमें जाँयगे, राजपूतजातिके समस्त सामयिक सामाजिक आचार व्यवहार, उनकी सहानुभूति और वहांके सब मनुष्योंका मेरे साथ दया और नम्रतासे व्योहार करनेके कारण यह राजवाड़ा हमारा जन्मस्थान सदृश सुखद हो गया है अब मैं उस भूमिसे विदा माँगता हूँ, किन्तु यह विदा अन्तिम विदा है वा नहीं इसको परमात्मा जाने। मैं जहां भी जाऊ, मैं जबतक जीता रहूंगा तबतक मेरे हृदयसे इस उदयपुरकी स्मृतिका लोप होना तो दूर रहा वरन किसी समय भी कम नहीं हो सकेगी।

---

(१) टाड् साहब अपने बड़े ग्रन्थकी टिप्पणीमें लिख गये हैं "यह विचित्र बात है कि जिस महीनेकी जिस तारीखमें यह भ्रमणका कार्य समाप्त हुआ, इस बड़े ग्रन्थको जिसके सम्पादन करनेसे मुझे यथेष्ट आनन्द और सन्तोष प्राप्त हुआ उसी महीनेकी उस तारीखमें अन्तिम लेखनी उठाई गई अर्थात् सन् १८२२ ईसवीकी आठवीं मार्चको मैं भ्रमण समाप्त करके उदयपुरमें गया, और सन् १८३२ ईसवीकी ८ मीं मार्चको अपने इस भ्रमण वृत्तान्तको समाप्त करता हूं। मार्चमास में ही मेरी पुस्तक छपी तथा मार्च मासमें ही मेरी इस पुस्तकका सर्व साधारणमें प्रचार हुआ (क) मेरा जन्म भी मार्च महीनेमें हुआ था; मार्च मासमें ही इग्लैंण्डसे भारतवर्षकी ओर गया, अंतमें भारतका दर्शन कर सिंहलका उपकूल दर्शन मार्च मासमें ही हुआ। परन्तु यह निरतर घूमनेवाला संसारचक्र कैसा परिवर्तन करता है जिस हाथसे इस ग्रंथके चित्र तैयार हुए हैं वह इस समय मृतक है! मुझे यह दृढ विश्वास है कि समयके अनुग्रहसे वन हिंदुओंके शिल्प स्मृति चिह्न आजतक भी विराजमान हैं, उन सबके साथ ही साथ उनकी कीर्ति अक्षय रहैगी। मेरे भारतवर्षके छोड़नेके छ.—

"इस बड़े इतिहासरूपी पर्वतकी अन्तिम चोटीके अन्तिम स्थलमें खड़े होकर हम अपने पाठकोंसे विदा माँगते हैं। माननीय टाड् साहबके दिखाये मार्गमें हम अपने पाठकोंको लेचल कर इस अन्तिम लक्ष्य स्थानमें केवल उस अज्ञात–अज्ञेय शक्तिसे और पाठक मंडलीकी सहायतासे खड़े होनेको समर्थ होते हैं। इस अन्तिम विदाके समय हमारा हृदय आवेग पूर्ण है अतएव क्या कहें? क्या प्रार्थना करें? जो महोदय इस बड़े इतिहासके सम्पादक हैं, आओ आज हम अपने पाठकोंसमेत साधुचरित्र राजपूतोंके भाई उदार हृदय कर्नल टाड्की आत्माके मंगलके लिये सर्व मंगलमय परमेश्वरसे प्रार्थना करें"।

परिवर्तनशील समयका प्रभाव कैसा विचित्र है। मनुष्यके हृदयका वह प्रभाव वह उमंग वह तरंग वह चाव यह समय एकबार ही शान्त करदेता है। इस बड़े विस्तारित ग्रन्थके पाठमात्रसे पाठक समझ जाँयगे कि यह देश क्या था और क्या होगया, इस देशके निवासी क्या थे क्या होगये। विदेशी टाड् साहब जैसे उदार हृदय भारतके प्रेमी अब कहां हैं। भारतमहिलाओंके साथ भ्रातृभावका सम्बन्ध जोड़नेवाले अंग्रेज अब कहां हैं वह भरापूरा देश कैसे दरिद्र होगया किस प्रकारसे इसको रोग शोकने ग्रास लिया, समय तुमने ही सब कुछ किया और तुम हीं सब कुछ करोगे हाय! काल जिस विख्यात नाम बलदेवप्रसादमिश्रने बड़े उत्साहसे इस महान् ग्रन्थके अनुवादमें लेखनी उठाई थी, जो रजवाड़ेसे किसी प्रकार उपकार न पाकर भी रजवाड़ेके लिये प्राण देते थे जिन्होंने कई प्रकारके इतिहास लिखकर देवनागरीके भंडारको ऐतिहासिक ग्रन्थावलीसे पूर्ण करनेकी इच्छा की थी जो देवनागरीके प्रचारके तथा शुभाचिन्तकोंके लिये निरन्तर धन्यवाद करते थे तथा जिनकी सरल ओजस्विनी लेखनी बहुत कुछ कर दिखानेमें समर्थ हुई थी। काल तुमने उनको अकालमें ही ग्रास करलिया। तुम बड़े निर्दयी हो तुमको कच्चे पक्के फलोंका विचार नहीं है अथवा तुम बालस्वभाव हो जैसे बालक कच्चे फलोंको

—महीने पीछे कप्तान वाह इंगलैण्डको आये, उस समय उनका स्वास्थ बहुत बिगड़गया था। हम दोनों जने मिलकर लंदनमें, बिलजियममें और फ्रांसमें एक जगह रहे, किंतु उस समय बात २ में राजपूतानेकी बात चलती थी। जब वह फिर भारतमें लौट कर आये और मेजर हुए तब १० वीं घुड़सवार पलटनके नेता बनकर जिस समय मथुरासे मऊ जाने लगे उस समय मैं जिस प्रदेशमें बहुत दिनों रहा था वहाँके निवासी दूनीके सामन्तने इनको भोज दिया था। यद्यपि उस समय वह हृष्ट पुष्ट थे तोभी मेरे वह जाति भाई बड़े दुःखमें पड़े। उनके साथ जो घुड़सवार थे वह भी भोजमें सम्मिलित हुए। वह पर्वत पर चढ़ते समय घोड़ेसे गिर गये और इतनी चोट आई कि उसके लिये डाक्टरी चिकित्साका प्रयोजन हुआ। उस चिकित्सासे वह इतने आरोग्य हुए कि दो दिनके पीछे उन्हें डोलीमें बैठनेकी शक्ति हुई। किन्तु जब वह जानेके लिये डोलीमें बैठे तब मित्रोंने टोलीके परदेको उठाकर उनसे बात करनी चाही तो जाना गया कि उनकी प्राणवायु पंचत्त्वमें लय होगई। उस समय उनका शव मेवाड़में दफनाया गया और उनके साथी सवारोंने अपने पाससे उनकी कबर पर एक स्मृति चिह्न बनवा दिया। वह हमारे परिश्रमका अन्तिम फल है, इनसे बीस वर्ष हमारी मित्रता रही। क्या कहैं। वह इस ग्रंथकी समाप्तिको नहीं देखसके। ८ मार्च सन्१८३२ ई.।

विशेषरूपसे तोड़ते हैं वैसे ही तुम नव्य अवस्थावाले प्राणियोका संहार करते हो। इसीमें तुमको स्वाद है। विदित होता है कि तुम जगत्का रोना देखकर हँसते हो। विगाड़में तुमको रस आता है। यदि यह समग्र ग्रन्थ इस महानुभाव पुरुषकी लेखनीसे निर्गत होता तौ पाठक और भी प्रसन्न होते, पर हरि इच्छामें किसकी सामर्थ्य है जो कुछ कहसके दूसरा खण्ड आधा भी न होने पाया कि अपने आपने इष्टमित्रोंको भ्राता माताको और जिनका लालन पालन करते थे उन सबोंको सदाके लिये शोकित छोड़ कर संसारसे विदा ली और इसका भार मुझ जैसे हिन्दीके मर्मके अभिज्ञके हाथमें सौंप गये। उनके मनमे यही रहा कि कब इस ग्रन्थको मुद्रित हुआ देखूँ पर कालने यह न होने दिया, उस उमंगको मनमें ही लीन कर आप संसारसे विदा हुए अच्छा हमारा वस क्या है हम आपकी इस लेखनीसे निकली हुई वाणीको आपका स्वरूप समझेंगे। हम तो आपके लिये यावज्जीवन इसी प्रकारके वाक्य कहैंगे पर हम आपकी इस दोहावलीके साथ इस महान् ग्रन्थकी पूर्ति करते है।

दोहा–सुमरि राम लछमन सिया, मारुतसुत हनुमान।
किंयो पूर्ण शुभ ग्रन्थ यह, हिन्दीराजस्थान॥ १॥
जैम्स टाड् कृत ग्रन्थका, हिन्दीमें अनुवाद।
कियो यथामति शोधकर, द्विज बलदेव प्रसाद॥ २॥
पढहिं सुनहिं करि प्रेम जो, पुरुषनके इतिहास।
देशभक्ति, आचारमें, प्रगट करहिं उल्लास॥ ३॥
निज पुरुषनकी रीतिको, ग्रहण करो सब कोय।
उनके शिष्टाचारसों, भारत उन्नत होय॥ ४॥
अति उदार गुणिजन विदित, विश्व विदित गुणखान।
हिन्दी उद्धारक विमल, चित्त भक्त भगवान॥ ५॥
वेंकटेश यन्त्राधिपति, खेमराज सुखरास।
तिन हित हिन्दीमें कियो, यह अद्भुत इतिहास॥ ६॥
छाप २ कर ग्रन्थ बहु, कीनों जग उपकार।
कवि कोविद नित करत हैं, जिनकी जय २ कार॥ ७॥
जगदीश्वर तिनपर सदां, करैं कृपा भरपूर।
द्विज बलदेवप्रसादकहि, रोग शोक हो दूर॥ ८॥
संवत शर ऋतु अंक विधु, मार्गशीर्षशशिवार।
पूनोतिथि पूरण कियो, ग्रंथ सुमंगल सार॥ ९॥
वसत रामगंगा निकट, नगर मुरादाबाद।
भजन करत हरिको जहां, द्विज ज्वालापरसाद॥ १०॥
हरिको भजन न त्यागिये, भजिये सीताराम।
यही सार सब जगतमे, दायक अभिमत काम॥ ११॥

सम्पूर्ण.

चिट्ठी.

चिट्ठी अम्बरवाले जैसिंहकी ओरसे राना संग्रामसिंह मेवाड़ाधिपतिके पास ईडरके विषयमें ।

श्रीरामजी ।

श्रीसीतारामजी ।

जब मैं दरबार उदयपुरमें था, आपने हुक्म दिया था कि मेवाड़ मेरा घर है और ईडर स्थान मेवाड़का द्वार है उसके प्राप्त करनेके निमित्त काबूमें रहना चाहिये उस समयसे मै काबूमें था । आपके नायब मैयारामने फिर उसके विषयमें लिखा है और दलपतरायने चिट्ठी मुझको पढ़कर सुनाई सुनकर मैंने बातचीत इस विषयमें महाराजा अभयसिहके साथ की और वह आपके सबप्रबन्ध विषयोंके साथ अनुकूलता करके उस परगनेको आपकी भेंटकरते है और उनका लेख इस विषयमें भलीभांति प्रमाण होता है।

महाराजा अभयसिंहकी प्रार्थना यह है कि आप ऐसा प्रबन्ध करें कि अनन्दसिंह जो इस समय अधिकारी है जीवित न रहैं कारण कि विना उसके मरे तुम्हारा अधिकार उचित न होगा और यह आपके अधिकारमें हैं और मेरी इच्छा भी यह है कि आप स्वयं वहाँ जॉय । और यदि आपके समीप उसकी आवश्यकता न हो तो वहाँ भाई निगो-को आज्ञाहो और उसकी आज्ञामें यथोचित सेना रक्खी जाय और सब मार्ग रोककर आप उसका बध कर सिद्धान्त यह है कि वह जीवित भाग न जाय इसका ध्यान अवश्य रहै इति । आषाढ़ वदि ७ संवत् १७८४ ।

विवरण ।

यह पंक्ति हांसियेपर है मेरा मुजरा पहुंचे जब दीवानके पास उपस्थित था तो उसने आज्ञा दी थी कि ईडर और स्थान चौथन मेवाड़के द्वार हैं और उनका लेना अवश्य है मैंने इसको मनमें रक्खा और दीवानजीके सौभाग्यसे यह काम पूर्ण होगया ।

परगना ईडर महाराज अभैसिंहकी जागीरमें है और वह श्रीमान्की भेट करते हैं यदि वह किसी औरको दिया जाय तो इसका ध्यान रहै कि मनसबदार अधिकार न पावे । ८ संवत् १७८४ ।

इसके पीछे टाद् साहबने जो चार पांच संधिपत्र लिखे हैं वह हमने उन उन राज्योंके यथास्थानमें लिख दिये हैं इस कारण उनका दूसरी वार लिखना उचित नहीं है ।

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस-बंबई.

राजस्थान.

दूसरा भाग.

मरुभूमिका वर्णन.

॥ श्रीः ॥

राजस्थानका इतिहास.

दूसराभाग २.

मरुभूमिका वर्णन.

प्रथम अध्याय १.

मुझको स्वयं कभी मरुभूमिके मध्यमे मंडोरसे आगे प्रवेश करनेका मौका नहीं मिला है। मंडोर मरुस्थलीकी प्राचीन राजधानी है और हिसारका पुराना किला इसके ईशान कोणमें, और आबू नहरवाला और भुज दक्षिणमें है। सविस्तार वर्णन करनेके पहिले यह आवश्यक है कि मैं अपनी ढिठाई, अयोग्यता या अक्षमताके लिये क्षमा मांग लूं और मैं प्रार्थना करता हूं कि पाठकोंको यह बात ध्यानमें रखना चाहिये कि मेरी अनुसन्धान करनेवाली मंडलियोंने प्रत्येक दिशामें भ्रमण किया है और उनकी यात्रासंबन्धी दैनिक वृत्तान्त पुस्तकें उनकी शुद्धता या यथार्थताकी पुष्टिमें अकाट्य प्रमाणोसे भरी पड़ी है। और वे मेरे पास भटनेरसे अमरकोट और आबूसे अरोर तकके प्रत्येक थलके निवासियोको भी लाये हैं। मैं चाहता हूं कि लोग मेरे यथार्थभावको समझलें इसलिये मैं इस कार्यको सिर्फ ढांचा ही समझता हूं और आशा करता हूं कि इस कार्यको देखकर भविष्यतमे नवीन २ खोज करनेको लोग उत्साहित हों; परन्तु प्रमाणाभावके कारण इस विषयमें यद्यपि असम्भावनीय अशुद्धियां होंगी तौभी मैं इस कार्यको प्रकाशित करनेमे नहीं हिचकता हूं न पसोपेश करता हूं क्योंकि मुझे इस बातसे परम संतोप है कि विस्ताररूपसे यथार्थ ज्ञान संपादन करनेवालोंका मै मार्ग द्रष्टा बनूंगा।

इतनी भूमिका बांधनेके बाद हमको सविस्तार वृत्तान्त लिखना चाहिये। और यदि उपरोक्त कथित कारण न होते तो यह वृत्तान्त इस पुस्तकके भूगोल संबन्धी

---

(१) इन मार्गोंको वर्णन करनेवाली पुस्तकें, मध्य और पश्चिमी भारतके मार्गोंको वर्णन करनेवाली पुस्तकोंके सहित ग्यारह भागोंमें विभाजित हैं जिनसे इन देशोंकी मार्ग निरूपण पुस्तकें तैयार की जा सकती हैं। मेरा विचार था कि इन पुस्तकोंकी सहायतासे एक बड़ा और दोष रहित नकशा तैयार करू, परन्तु मेरी अस्वास्थ्यता इस काममें बाधक होती है। ये पुस्तकें अब कम्पनीके दफ्तरोंमे रखदी गयी हैं और यदि बुद्धिमत्तासे काम लिया जाय तो भारतके विशाल नकशोंकी न्यूनताको पूर्ण करनेमें इनका उपयोग होसकेगा।

भागमें संमिलित करादिया जाता। यह वृत्तान्त ऐतिहासिक दृष्टिसे अप्रसंगिक होनेपर भी इतना सुन्दर है कि विस्तारपूर्वक वर्णन करना अधिक श्रेयस्कर होगा। मैं यहां पर यह अवश्य कहूँगा कि जो नतीजा या परिणाम मैंने स्वयं निरीक्षण या अनुभव करनेके बाद परन्तु, विशेष कर उपरोक्त लिखित मार्गसे निकाले हैं उनकी पुष्टि या (समर्थन) महाशय एलफिन्सटोन (Elphinstone) ने राजदूत बनकर उत्तरीय मरुभूमिमें होकर काबुलको जातेहुए अपने मार्गका जो सुन्दर वर्णन किया है उसके द्वारा होती है और यह वर्णन मेरे पूर्वविचारोंको सन्तोषजनक दृढ़ता प्रदान करता है। इस जगह यह कहना अनुचित न होगा कि आगेके वर्णनमें हमको कहीं २ पर एक बात को दुबारा लिखना पड़ेगा क्योंकि हम बीकानेरके इतिहासका वर्णन करते हुए इस मरुभूमिकी अनेक विशेष २ बातोंका उल्लेख करचुके हैं। क्योंकि इस राज्य की स्वाभाविक स्थिति मरुभूमिमें होनेके कारण उनका उल्लेख करना बहुत जरूरी था। प्रकृतिदेवीने स्वयं अपने हाथोंसे भारतके इस महान् मरुभूमिकी सीमाओंको नियत किया है। और हमारा केवल इतना ही काम है कि हम सीमा स्थित रेखा पर ठीक ठीक चले जॉय जिसमे हमारी बात लोगोंके ध्यानमें ठीक २ आजावे, इस कारण हम मरुस्थली पदका पुनः पदच्छेद करनेको बाध्य है—इसका मूल अर्थ है "मृत्युकादेश" यह शब्द यौगिक है और संस्कृत धातु "मृ" मरना और "स्थली" "सुष्कभूमि" के योगसे बना है और अन्तिम पद "स्थली" इन देशोंकी बोलीमें बिगड़ते २ "थल"में परिणत होगया है—थल अनउपजाऊ भूमिको भी कहते हैं प्रत्येक थल किसीन किसी नामसे प्रसिद्ध है। उदाहरणार्थ 'काबुलकाथल' 'गोगाका थल और खेती करनेके योग्य भूमि इन थलोंकी अपेक्षा संख्या और आकारमें इतनी न्यून है कि प्राचीन रोमन अलंकारके एवजमें जिसमें अफ्रीकाको चीताकी खालसे उपमा दी गयी है, मैं भारतकी मरुभूमिको व्याघ्रचर्मसे उपमा देना अधिक संयुक्तिक समझता हूं। जिस व्याघ्रकी लम्बी २ काली धारियां 'विस्तीर्ण रेतके' कटिबन्धके समान प्रतीत होती हैं। और केवल न्यूनतर रेतके मैदानकी सतहपर इन रेतके कटिबन्धोंके समान असंख्यक आबाद नगर और गांव तितर बितर या छिटके हुए स्थित हैं। मरुस्थलीके उत्तरमें गरहकी सीमाको छूताहुआ एक समतल मैदान है। दक्खिनमें महान् नमकका दलदल 'रिन' और कोलीवरी हैं, पूर्वमें अरवली, और पश्चिममें सिन्धकी घाटी विराजमान है। अन्तिम दो सीमाएँ बहुत प्रसिद्ध हैं—विशेष कर अरवली-यदि अरवली पहाड़ रेतका मार्गावरोधक न होता तो मध्य भारत कभी रेतके नीचे दबगया होता। यद्यपि यह ऊंची और अवच्छिन्न श्रेणी समुद्रसे दिल्लीतक चली गयी है तो भी जहां कहीं दरार या रास्ता मिल गया है ये रेतके उड़ते हुये बादल इन मार्गोंसे प्रवेश कर उर्वराभूमिके मध्यमें छोटा सा 'थल' जाकर निर्माण कर देते हैं। जिस किसी को टोंकके निकट बुनासको पार करनेका अवसर हाथ आया है जहाँ कि रेत कोशोंतक लहरोंके सदृश प्रतीत होती है वह इस कथनको बहुत ही अच्छीतरहसे समझ सकेंगे। इसकी पश्चिमी सीमा सिन्धकी घाटीमें यात्रा या प्रवास करनेका जिस अंग्रेज यात्रीको

सौभाग्य होवे उसे नेपोलियनके वे उद्गार स्मरण आवेगे जो उसने लिबियन मरुभूमिके विषयमें अपने मुखसे निकाले थे। मरुभूमिको छोड़कर संसारका कोई भी पदार्थ समुद्रके समान नहीं प्रतीत होता है या किनारे नाइलकी घाटीके समान हैं। यहां पर नाइलके स्थान पर सिन्धुको रखते हैं जहाँसे कि हैदराबादसे ओचतक इसके किनारे २ उत्तरकी तरफ यात्रा करनेवालेको जहाँतक उसकी दृष्टि पहुंचेगी पूर्वकी तरफ रेतके दुर्गके दुर्ग दिखलाई पड़ेगे जिनकी ऊँचाई प्रायः नदीकी सतहसे दो सौ फीटतक है। तब उसके हृदयमें यह कल्पना उत्पन्न होगी कि वह दरार या छिद्र जिसमें रमणीक दरारी सुशोभित है काकेशस पहाड़के संपूर्ण सघन तुषारपुंजके एकाएक पिघलजानेसे उत्पन्न हुई होगी जिसके एकत्र भूत पानीने मरुस्थलीकी अविच्छिन्नतामें अन्तर डाल दिया है नहीं तो वह अरचोसियाके मरुभूमियोंसे संमिलित होगया होता। हम यहाँ पर मरुभूमिके विषयमे भूगोल सम्बन्धी वंश परम्परानुगत कथनको दोहराते हैं अर्थात् प्राचीन समयमें प्रमर वंशके राजा इस देशपर शासन करते थे और इस बातकी पुष्टि भट्ट कविकी कविता करती है जिसमे उसने नौ दुर्गोंके नामोंका उल्लेख किया है और ये दुर्ग बड़ी सुन्दरता और बुद्धिमानीसे भाकके स्थानोंपर निर्माण किये जानेके कारण इस देशके ऊपर आधिपत्यताको दृढ़ करते हैं। पूंगलका किला उत्तरमे है। मंडोर समस्त मारुके मध्यमे, आबू खेरालू और परकर दक्षिणमें चोटन अमरकोट अरोर और लुद्रावा पश्चिममें हैं, और जिसके हाथमें ये नौ दुर्ग हैं मरुभूमिके ऊपर उसके आधिपत्यमे कोई भी हस्ताक्षेप नहीं कर सकता है। इस कथाकी प्राचीनता समस्त अर्वाचीन नगरोंके-भाइयोकी वर्त्तमान राजधानीका नामोच्चारतक नहीं किया गया है-नामोंको उड़ादेनेसे कायम रक्खी गयी है। यद्यपि लुद्रवा और अरोर नामके नगर प्राचीनकालसे खंडहर या भग्न दशाका अनुभव कर रहे हैं, तौभी इनके नाम उन्हीं लोगोंको विदित हैं जो कभी २ मरुभूमिकी सैर करते हैं और चोटन खेरालू इत्यादिका नाम निशान भी नक्शेमें न पाया जाता यदि वह वंश परम्परानुगत भट्टकविका छन्द हमको खोज करनेके लिये न उभाड़ता।

हमारा अभिप्राय देशके प्राकृतिक विभागोंका अथवा एतद्देश निवासियोंकृत विभागोका जैसा कि पूर्व कह आये हैं। जिनको वे 'थल' कहते हैं। वर्णन करनेका है। और इनका सविस्तर वर्णन करनेके बाद हम इस देशकी भिन्न श्रुतियों और उन प्रसिद्ध नगरोंका वर्णन करेंगे-जो अबतक वर्त्तमान हैं या नाश होगये हैं। इसके बाद जैसलमेरसे अन्य स्थानोंको जानेवाली या जैसलमेरको आनेवाली खास २ रास्तोंका वर्णन करके इस लेखको समाप्त करेंगे। समस्त बीकानेर और अरवलीके उत्तरमें स्थित शेखावाटीका वह भाग इस मरुभूमिमें शामिल है। यदि पाठक कनोड़ (Kanoh)नगरको जो अंग्रेजी राज्यके सीमाके अन्तर्गत है नक्शेमें देखे तो वह मालूम करेंगे कि मि०एलफिंस्टोनके कथनानुसार मरुभूमिका प्रारम्भ या श्रीगणेश यहांसे ही होता है। 'दिल्लीसे

---

(१) यह चोटनसे १५ मील उत्तरमें है।

(२) उन्होंने १३ अकटूबर सन् १८०८ को दिल्लीसे कूच किया था.

कनोड़ (मेरे नकशेका कनौड़) तककी दूरी अंग्रेजी राज्यमें करीब सौ मीलके हैं और इसके वर्णन करनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है। सिर्फ इतना कहना काफी है कि यह देश रेतीला होनेपर भी खेतीके योग्य है । कनौड़ पहुँचने पर हमने पहिलेपहिल मरुभूमिका नमूना देखा जिसके देखनेके लिये हम बड़े ही उत्सुक और व्यग्र थे । कनौड़से तीन मील पहिले ही हमको रेतकी पहाडियां दृष्टिगोचर हुई जो पहिले तो झाड़ियोसे आच्छादित थीं परन्तु पीछेसे धसकती रेतकी नग्न या पुष्प पत्र विहीन राशिकी राशि समुद्रके लहरोंके समान उठती हुई दिखलाई पड़ी । जिनकी सतह पर वायुने वर्फके ढेरके समान चिह्न बना दिये थे इन पहाड़ियोंमें होकर सड़कें भी बनी हुई थीं जो जानवरोंके चलनेसे पुख्ता होगई थीं, परन्तु मार्गसे हटते ही हमारे घोड़े घुटनोंतक रेतमें धस जाते थे। यह पहिला दृश्य था। और राजपूत सिंगाना, झुंझनू होते हुए चुरू पहुँचा जब कि वे बीकानेरमें घुसे। शेखावाटीके बारेमें जिसको उसने छोड़ दिया था मि० एलफिस्टोन लिखते हैं कि इसकी पश्चिमी सीमा और बहावुलपुरके बीचवाला दोसौ अस्सी मील लम्बे मैदानसे मुकाबिला करते हुए भी यदि यह मरुभूमिमें शामिल किया जाय तो अपनी पदवीको खोताहुआ मालूम पड़ता है क्योंकि इस मैदानके अन्तिम सौ मीलमें मनुष्यके दर्शन भी नही होते हैं।न जीवनाधार जल है और न हराभरा वृक्ष नेत्रको आनन्द देनेके लिये मिलता है। शेखावाटीसे पूगुलतक हमारा मार्ग पहाड़ियों ओर धसकती और भारी रेतकी घाटियोंमें होकर था। ये पहाड़ियां ठीक २ उन पहाड़ियोंकी मानिन्द थीं जिनको बाजेवक्त हवा समुद्रके किनारे बनाती है। परन्तु इनकी (मैदानवालोंकी) ऊंचाई अत्यन्त अधिक है जो बीस फुटसे लेकर सौ फुटतक थी लोग कहते है कि इनके स्थान और आकारमें वायुद्वारा परिवर्तन भी हुआ करता है।और गर्मीके दिनोंमें इन पहाड़ियों में होकर चलना कठिनहै,या यह पहाड़ी मार्ग,उड़तेहुए रेतके बादलोंके कारण अधिक भयानक होजाता है,परन्तु शीतऋतुमें जब मैंने उनको देखा था तब वे बहुत कुछ अंशोमें अचल प्रतीत होती थी। क्योंकि फोक बबूल और बटके वृक्षोंके अलावाँ उनके ऊपर घास भी उगी हुई थी। जिसके कारण दूरसे उनपर हरित चद्दर सी पड़ी हुई मालूम पड़ती थी। ऐसे भयानक रेतके पहाड़ियोंके बीचमें कभी२ गॉव दिखलाई पड़जाता है, नाजकी छोटी राशिके समान, नीची दिवालें और गोपुच्छाकार छतवाले घास फूसके कुछ झोपड़ोंको यदि गांवका नाम दिया जासके"। तोपर भी महाशय एलफिन्स्टोन द्वारा जो यथार्थ और आडम्बर शून्य वर्णन करनेके लिये प्रसिद्ध है उन्हींका लिखा हुआ मरुभूमिके उत्तरी भागका यह वर्णन आगे पाठकोंको यथार्थ विचार बाँधनेमें अधिक सहायता देगा।

---

(१) मि. एलफेन्स्टोन लिखता है "हम कभी भी लम्बी; सफर नहीं करते थे। अधिकसे अधिक छवीस मील और कमसे कम पन्द्रह मील हम लोग चला करते थे,परन्तु मार्गके चलनेसे जो थकावट हमको मालूम पढ़ती थी उसका और दूरीका कुछ सम्बन्ध हो नहीं होता था। हमारी श्रेणी या कतार दो मील लम्बी होती थी जब कि हम बहुत ही मिलकर चलते थे। रेतकी पहाड़ियोंको बचानेके अभिप्रायसे हमको मार्गमें बहुत घूमकर जाना पड़ता था या चक्कर काटना पड़ता था।—

इतना भी कथन करनेके अनन्तर और इस देशकी वाह्याकृति देखकर जो कुछ अवतक कहा है उसको स्मरण रखतेहुए हम इस मृत्युभूमिके भिन्न २ थलोका और इसमें उपस्थित यत्र तत्र उर्वराभूमिका विशेषरूपसे वर्णन करते हैं। मेरे विचारमे हिन्दुओंके प्राचीन भूगाल संवन्धी विभागको छोड़ देना लाभदायक था अधिक उपयुक्त होगा, जो मंडोरको मरुस्थलोकी राजधानी बनाते हैं, क्योंकि समस्त मरुभूमिके मध्यमे होनेके कारण और उसके चिह्न या लक्षण और स्थानकी विवेचन करते हुए जैसलमेरको ही मरुस्थलीकी राजधानी कहना उपयुक्त जंचता है। वास्तवमें यह उर्वराभूमि प्रत्येक दिशामें वड़े २ थलोंसे आवृत है, जिनमेंसे कुछ चालीस मील चौड़े है। जहां कि मनुष्य और उसके खाद्य पदार्थके दर्शन तक दुर्लभ हैं। हम जैसलमेरसे मारवाड़ जायँगे और लूनीको विना पार किये हुए झालौर और सेवाचीका वर्णन करेंगे, फिर पाठकोको पर-कर और वीरवहके सज्ञात राजमे लेजायँगे जो रानाकी उपधि धारण करनेवाले चौहान वशके राजाओके अधीन हैं। अर्वाचीन राजपूतानेकी राजकीय सीमाओंके निकट रहतेहुए वर्त्तमान समयमें सिन्धसीमान्त,धात और ओमुरसुमराके देशोका वर्णन करके हम दाऊद पुत्र और सिंधुनदी गत घाटीका किंचिन्मात्र वर्णन करतेहुए इस लेखको समाप्त करेंगे।

"जिसोहै (जैसलमेर) की पहाड़ीसे इधर उधर छिटकेहुए प्रत्येक नगर या गाँवकी चर्चासे इस सविस्तर वृत्तान्त पर अधिक प्रकाश पड़ेगा। त्रिकूट पर्वतके पश्चिम की ओर इस रेतीले समुद्रसे आरपार सिन्धु नदीके नील जलतक दृष्टि डालता हुआ या दृष्टिको फेकता हुआ यदि कोई दर्शक हैदरावादसे ओचतक इस नदीके संपूर्ण प्रवाह मार्गको दृष्टिगोचर करसके तो उसको इन रेतकी पहाड़ियोंके वीचमें उन स्थानोंपर जहाँ कहीं पानी सुगमतासे मिल सकता है। छोटी २ वस्तियां वसीहुई दिखलायी पड़ेगी। इस समस्त प्रदेशमें जिसकी लम्वाई चारसौसे पांचसौ मील है और कोणगामी चौड़ाई एक सौ मील है तितर वितर झोपड़ेवाले छोटे २ गांव हैं। जिनमे मरुभूमिके गड़रिये अपनी भेड़ोके झुण्डको चराते हुए या अन्नके लिये छोटे २ उर्वराभूमिके टुकड़ोंको जोतते हुए रहते हैं। उसको शयद ऊँटोंकी एक लम्वी कतार देखपडेगी यह शब्द इस देशमें काफिला या काखानामसे अधिक प्रसिद्ध है। जो प्राय अनिश्चित रास्तेमे चिन्तासहित गमन करतेहुए दिखलाई पड़ें और चारून हांकनेवाला हर एक मंजिल पर अपनी पगड़ीको शिरमें गांठ लगाता है। वह कदाचित् घोड़ो या ऊँटोपर सवार सेहरीस हमारे मरुभूमिके यासहाराके वद्‌दू-के झुंड या समूहको देखे, वह या तो कारवांके लूटनेके घातमे बैठा हो या ,तुर, या वावके निकट शान्तिपूर्वक अपने भेड़ोके चारनेवाले राजूर या मंगुलियाके गड़रियोके झुंडको हांकनेके कम भयानक काममे लगे हो। या निरन्तर हरित

—रास्ता इतनी तंग थी कि दो ऊंट साथ २ या कगे २ नहीं चल सकते थे; और यदि कोई ऊंट जरा भी नियमित राखेसे हटा कि वर्फके समान रेतमें धस जाता था"। काबुल राज्यका वर्णन भाग प्रथम।

(१) जिस पहाड़ी पर जैसलमेर स्थित है उसे त्रिकूट कहते हैं।

"झलके" झोपड़ेमें रखनेके लिये जो एक साथ ही अन्न भरने और धूपसे बचानेका डबल काम देते हैं। अन्न लूटते हो' उसको एक ऐसा गिरोह दिखलाई पड़े जो नवीन चरागाहकी तलाशमें अपने भेड़ोंके झुंडको लेकर उस स्थानसे जिसको उसने रस चूस लिया है या अन्न उत्पन्न करनेके अयोग्यहोगया है चलपड़ा हो।

"यदि सौभाग्यवश दूसरे दिन उनको नवीन आहार या अनास्वादित झरना मिल जाय तौ वे अपने ग्रह या दिनदशा अच्छी समझें और उसको भोग विलासकी सामग्री ख्याल करेंगे।"

या वे राबड़ी–यह भोजन उनके नूमिदी भाइयोंके हौसकौस (honskou) भोजनके सदृश है– पकाते हुए देखे जायँ या अपने छोटे उर्वराभूमिके 'वाह' से प्यास बुझाते हुए दृष्टि पड़ेंगे जिनको (भूमिकी) वे अपने अधिकारमें दृढ़तापूर्वक रखते हैं जबतक वह हरा भरा रहै या पशुओंके चरानेके योग्य बना रहै या जबतक कोई दूसरा ही प्रबल गिरोह आकर उनको अधिकार रहित न करदे।

हमको यहाँपर इस बातका विचार करनेके लिये ठहरना चाहिये या ध्यानपूर्वक विचार करना चाहिये कि भारतके मरुभूमिके 'वाह, बावा या वह' में कहीं यूनानियोंके 'ओसिस'–'एलवह ,(Elwah)का अपभ्रंश–या एलोह(Flloah)जैसा कि बल जोनीने (लिबियन मरुभूमिके वृत्तान्तमें जब कि वह अम्मन (Ammin) का मन्दिर तलाश कर रहा था) लिखा है–का पता न लगजाय। असंख्य शब्दोंमेंसे जो पानीके लिये इन शुष्कदेशोंमें व्यवहृत किये जाते हैं उदाहरणार्थ 'पार, रार तिरदे वाह बावा, वह अनेक शब्द खासकर झरने या तालके लिये ही व्यवहारमें आते हैं। जब कि अन्तिम शब्द वाह यद्यपि प्रायः उसी अर्थमें इस्तेमाल किया जाता है तौ भी अधिकतर बहते हुए पानी या नदीके लिये वहाँके लोग बोलते हैं या कहते हैं 'एलवह (Elwah) सर्वरूपसे पानीके लिये ही व्यवहृत होता है। 'दे' शब्द सामान्यरीतिसे तालके लिये इस्तेमाल किया जाता है। परन्तु प्रायः बड़ी २ नदियाँ गरमीके ऋतुमें वह जानेपर महान् अचल राशि जलको छोड़ जाती हैं उसको हमेशा 'दे' कहकर पुकारते है। राजपूतानामें ऐसे ताल रखनेवाली अनेक नदियाँ हैं, इनमेंसे एक तालका नाम 'हाथीदे, है जो इस बातको प्रकट करता है कि इसमें हाथी बुड़ाऊ तक पानी है। अब जलके लिये सामान्यरूपसे प्रचलित शब्द वाह में 'दे' को जोड़नेसे 'वादी' बन जायगा, अरबके लोग बहतेहुए पानी या नदीको वादी शब्द इस्तेमाल करते है और साधारणतः आधुनिक यात्रियोंके द्वारा अफ्रीकामें रहने योग्य स्थानके लिये व्यवहृत किया जाता है यदि यूनानियोंने 'वादी' शब्द किसी हस्त लिखित प्रतिसे लिया तब तो स्थान विपर्ययका कारण सुगमतापूर्वक बतलाया जासकेगा 'वादी' उर्दूमें इस तरह लिखी जावेगी और एक नुक्ताके लगानेसे 'वाजा' आसानीसे 'ओसेस' में

---

(१) जब मैं इस शब्दकी व्युत्पत्ति अनुमानसे लिख रहा था, मैं नहीं जानता था कि किसी दूसरेने भी इस शब्दपर कुछ लिखा था। मुझे पीछेसे मालूम पड़ा है कि स्वर्गवासी एम कें गिल्सने अर्बी शब्दरागसे ओसिस यूनानियोंने इसको कई तरहसे लिखा है जैसे auasis, Iasis, huasis,–

रूपान्तर होसकेगी दुहरानेकी जोखिम उठालेने पर भी हमको यहांपर इस रेतके समुद्रको पृथकत्व प्रदान करनेवाले कुछ महान् चिह्नोंका वर्णन करना चाहिये और 'रो' और थलका अन्तर जिनसे पाठकोंको यात्रा वर्णन या वृत्तान्तमे वारंवार काम पड़ेगा वतलाकर हम तुरन्त ही मध्यमे कूद पड़ेंगे।

हम पूर्वमे ही किसी स्थानपर कगर नदीके लय या सूख जानेकी वंशपरम्परागत वार्ताका उल्लेख कर आये हैं जिसमें हमने यह कहा है कि उत्तरी मरुभूमिके तहसनहस होनेका एक भी कारण है। इस घटनाका वर्णनात्मक छंद या मिसरा मुझे याद नहीं आता, और न सोढ़ा नरेश हमीरका ही, जिनके राज्यकालमे यह चमत्कारिक घटना हुई है, कुछ वृत्तान्त मिलता है। इस प्राचीन वंशपरंपरागत कविताकी उपयोगिताकी तरफ मैंने अनेक वार पाठकोंका ध्यान आकर्षित किया है। और सौभाग्यकी वात है कि उसका एक नवीन उदाहरण पाठकोंको भेट करता हूँ क्योंकि भट्टीके इतिहासमे पारस्परिक वैवाहिक सम्बन्धी घटनाका जो उल्लेख किया गया है उसमें हमीरका नाम पाया जाता है। हमीरका समकालीन जैसलमेरका दूसौज था जो संवत्१०१० या सन्१०४४ ई. म राजसिंहासन पर वैठा था, इस लिये जिन हमीरका ऊपर उल्लेख होचुका है उनका ठीक २ काल निर्णय करनेमें कुछ संशय नहीं है। कगर नदी—जो सेवलकसे निकल कर हांसी हिंसारमे वहती है—एक समय भटनेरकी दीवालोके नीचे वहती थी, और वहांके लोग अव भी उसके प्रवाहमार्गमें कुँआ खोदते हैं। भटनेरके वाद कगर नदी रंगमहल वुल्कर, फूलरा, और खदलके समतल मैदानोमे होकर वहती हुई किसीके मतानुसार ओचके नीचे; परन्तु अवूवरकरके (जिसको मैंने सन् १२०९ ई. में नवीन स्थानोको खोजनेको भेजा था और उसने शाहगढ़के निकट नदीके सूखे प्रवाह मार्गके जिसको

—की व्युत्पत्ति वतलाई। डाक्टर वेट अत्यन्त रोचक व्युत्पत्तियोंकी सूचीमें (एशियाटिक जनरल मई सन्१८१२ देखो) (वाई) से वतलाते हैं और वसि शब्द (वस्) धातु (रहना) से वना है। वसि Nası और euası करीव एकसी सादृश्यता रखते हैं। मेरे दोस्त सर डवलू ऊसलेने करीव २ वादी का वही अर्थ मुझे वतलाया जैसा कि रिचर्डसनके द्वारा प्रकाशित कानसनकी पुस्तकमें मिलता है—घाटी, मरुभूमि, नद्दाका प्रवाहमार्ग—नदी; wadey at-kalııs वादी—अल—कवीर—वडीनदी विगड़कर ग्वाडसक्यूवरमें परिणत होगया है, यह उदाहरण ढिहरवोहरमें दिया गया है (Seeadı Gehennem) और कामसनने भी, जो दिया है जो जिसने यूरोपकी समस्त भाषाओं में (अंग्रेजी शब्द पानाक लय) water वाटरका पता लगाया है—The sason wolter, the greek hudor the ıskındsıcudr, the Salvanıc wod (इस लिये वोदर या ओदरके अर्थ नदी) इन सव उपरोक्त शब्दोंकी व्युत्पत्ति वह नदी या संस्कृत वहसे होसकती है, और यदि डाक्टर डवल्यू यात्रा वर्णन या७९ Hıneraıy का ३४१ सफाको देखेगा तो उनको वड़ा ही आश्चर्य होगा कि (वस) bas शब्द उनकी व्युत्पत्तिको दृढ़ता प्रदान करता है—(वस) शब्द निवास करके योग्य स्थानके लिये व्यवहृत होता है। (वस्ती) शब्द जो प्राय उस वर्णनमें आया है (वसना) से वना है, (वासी) रहनेवाला वस स्थान शायद वह शब्दस निकले हैं जो ओसिसके लिये अपरिहार्य हैं।

सगर कहते हैं पार किया था) मतानुसार जैसलमेर और रोरीवेसरके दरमियानमें नाशको प्राप्त होती है। यदि यह बात सत्य प्रमाणित होजाय तो हम तुरन्त कह सकेंगे कि कगर नदीने ढूराकी एक शाखसे मिलकर सांगराको अपना नाम दिया–यानी सागरा नदी कगरमें मिलगयी और आगे चलकर कगर नामसे प्रसिद्ध हुई। छोटी छोटी नदियोंका यही हाल होता है–जो (सांगरा) लूनीसे मिलकर सिन्धु नदीके डेल्टाके नदीके मुखपर त्रिभुजाकार भूमिकी डेल्टा कहते हैं पूर्वीय शाखाको वढ़ाती है दूसरी ओर शायद सबसे बढ़कर वर्णन करने योग्य बात मरुभूमिमें लूनी या खारी नदी है जो अपनी अनेकों सहायक नदियोंके साथ अर्वली पर्वतके झीलों या झरनोंसे निकलती है। मारवाड़में लूनी नदी उर्वराभूमि और मरुभूमिकी सीमा है–लूनी नदी मारवाड़के मरुभूमि और उर्वरा भूमिको विभक्त करती है–और जैसे ही इस देशको छोड़कर चौहानोंके थलकी तरफ बढ़ती है यह चौहान समाजको विभाजित करती है और सीमास्थित भूगोल संवन्धी रेखा बनाती है,–और स्वयं इस थलकी भोगोलिक सीमा बनती है। पूर्वीय भाग शिव वाहका राज्य कहलाता है, और पश्चिमी हिस्सा पारकर हम आगे चलकर फिर चौहानोके देशका वर्णन करेंगे जिसके दक्षिणकी तरफ मरुभूमिके अद्भुत २ चिह्न या आकार पाये जाते है। इस पुस्तकके आरम्भमें भौगोलिक वृत्तान्तके वर्णनमे ' रन ' या ' रिन ' के वारेमें किंचिन्मात्र चर्चा होचुकी है। यह विस्तीर्ण नमकका दलदल जो चौडाईमें डेढ़सौ मीलसे अधिक है, खासकर लूनी नदीके द्वारा निर्माण किया गया है। जो लोमन झील बनानेवाली लूनी नदीके सदृश आगेके निकास पर फिर अपना वही नाम धारण करती है, और नारायणका मन्दिर इसके मुखपर; जहां यह समुद्रसे संगम करती है, बना हुआ है और ब्रह्माका मन्दिर इसके उद्गमस्थान पुष्करमें है, इस कारण इसके दोनों ही उद्गम और संगम स्थान पवित्र चिह्नोसे विभूषित है। ' रन ' या ' रिन ' 'अरण्य' शब्दका अपभ्रंश है, और कीचड़से संतप्त मरुभूमिकी अपेक्षा गर्मीकी ऋतुमें इस संसारमें कोई भी वस्तु अधिकतर भयानक या निर्जन नहीं है, और इस अनोखे स्थानमें खर (गदहा) या जंगली गदहा निवास करते है जिसका एकान्त प्रेम श्रेष्ठ कवियोंकी अमर कविताके द्वारा लोगोंके दिलमें अबतक जीवित है। यह विस्तीर्ण नमककी कोठी आधुनिक कालकी रचित या रचना नहीं है, क्योंकि यूनानियोके, लेखोंमें हमको इसका पता मिलता है जिनकी दृष्टिसे यह उस समय भी न बचसका और हमारे (अंग्रेजोंके) ' रन ' या 'रिन' शब्दकी अपेक्षा यूनानियोंका ' एरीनोस , मूलशब्द 'अरण्य' से अधिकतर घनिष्ठ सादृश्यता रखता है। यद्यपि विशेष करके यह दलदल नमकके लिये लूनीका ऋणी है, जिसका और उसकी सहायक नदियोंका प्रवाह मार्ग(bed) नमककी तहोसे परिपूर्ण है तौ भी सिन्धनदीके बाढ़से नमक इसमे प्रचुर परिमाणसे मिलता है, और अपने अथाह पानीके लिये शायद यह महान् नदी सिन्धुकी ऋणी होवे। सिन्धु और नाइल नदीकी घाटियोंके बीचमें एक और भौतिक सादृश्यता है। जिसको नेपोलियनने एक बार ही प्रकृतिका साधारण

व्यापार कहा है। मेरा संकेत मौरिस झीलके जन्मकी तरफ है। यह काम मनुष्यकी शक्तिके बाहर है।

क्योंकि पाठकोंको थल और रो शब्दोंसे प्रायः सामना करना पड़ेगा इस लिये इनके अन्तरको जानना उनके लिये नितान्त आवश्यक है। थल शुद्ध और ऊसर मैदानको कहते है। और रो उस मरुभूमिके लिये व्यवहृत होता है जिसमे स्वाभाविक तृणादिक उत्पन्न होते हो, वास्तमें मरुभूमिका जंगल।

लूनीका थल-यह थल नदीके दोनो किनारों परके देशको सम्मिलित करता है जिसमे झालौर और उसके अधीन राज्य स्थित हैं। यद्यपि नदीके दक्षिण तरफका देश इसमें नहीं शामिल किया जा सकता है तो भी इसका इससे इतना घनिष्ठ सम्बन्ध है कि हम अपने हाथमें आयाहुआ इसके वर्णन करनेका अवसर न खोवेंगे।

झालौर-यह प्रदेश मारवाड़के उत्तम भागोंमेंसे एक भाग है। सुक्री और खारी नदिया जो झालौरको सोवाचीसे पृथक् करती हैं। अनेक छोटी २ नदियोंके सहित अर्वली और आबू पहाड़ोंसे निकलकर इन प्रदेशोंमें होकर बहती हुई इनके तीनसौ साठ नगरो और गांवोंकी उपजाऊ शक्तिको बढ़ाती हैं। जिनसे मारवाड़को कुछ अंश राजस्वका मिलता है। झालौर उस भौगोलिक पदके अनुसार जो प्राय. उद्धत किया गया है मरुके नौ दुर्गोंमेंसे एक दुर्ग था। जब कि मरुस्थलीमें प्रमारवंशका आधिपत्य था। झालौर कब प्रमारोंसे छीन गया था इस बातका पता लगानेके लिये हमारे पास कोई साधन नहीं है। परन्तु यह बहुत दिनोंतक चौहानोंके अधिकारमे बना रहा। और जो प्रसिद्ध युद्ध चौहानोंने अपनी राजधानीके रक्षार्थ अलाउद्दीनके साथ सन् १३०१ ई. मे किया था उसका वर्णन फरिस्ता और उनके भाटोंके ग्रन्थोंमें पाया जाता है। चौहान वंशकी यह शाखा मल्लिनी नामसे प्रसिद्ध थी। और यहाँ तथा हाड़ौतीके इतिहासमें इस का उल्लेख फिर किया जायगा। इसमे चौहान राज्यका वह हिस्सा शामिल था जो इथ राजके नामसे विख्यात था जिसकी राजधानी जूनाचोटन थी, और अजमेरसे परकर तक लूनीके किनारेके देशोमे इस वंशका राज्य था, और जिससे यह मालूम पड़ेगा कि चौहानोंने अपने अग्निकुलोत्पन्न प्रमार भाइयोका नाश करके खारी नदीके किनारे किनारे परकरतकका देश अपने अधीन कर लिया था।

---

(१) नीलनदीकी घाटीकी अधिकसे अधिक चौड़ाई चार योजन है और कमसे कम एक योजन (League) है बस सिन्धकी घाटीका तंगसे तंगभाग नील नदीके बड़ेसे बड़े भागके बराबर है। अकेले मिश्रमें ही अस्सी लाख जन संख्या कही जाती है; तब सिन्धमें कितनी होसकती है। किसानोंकी हालत जैसा कि बानरिंम लिखा है राजपूतानाके किसानोंके हालतके अनुरूप है, गांव किसी न किसीकी जागीर है जिनको राजाने प्रसन्नतापूर्वक उनको देदिया है; किसान अपने स्वामीको लगान अदा करते हैं और भूमिपर उनका अधिकार सदा चला जाता है। और संसारमें कैसी ही राज्यक्रान्ति या उलट पलट क्यों न हो परन्तु इनके हक या स्वत्वका बाल भी नहीं बाका होता है। यह स्वत्व अब भी है। यूसफने छीन लिया था परन्तु सिसोस्ट्रिसने उनको पुनः प्रदान करदिया है।

सोनगिर या स्वर्णगिरि इस दुर्गका अति प्राचीन नाम है और पुरानी पदवी ' मल्लिनी ' का सोनिगुरोंके निमित्त परित्याग करके, निज जातिके चिह्न स्वरूपमें या पृथक्त्व सूचनार्थ, चौहानोंने इस उपाधिको शिरोधार्य किया था। यहाँ उन्होंने अपने रक्षक देव मल्लिनाथ मालीके देवका मन्दिर बनवाया था, जो शिवजीके पुत्रोंके इस देशमें प्रवेश करनेतक अपने स्थान पर बने रहे, कि जब सोनगिरका नाम बदल कर झलन्दर नाथ रक्खा गया, जिनका मन्दिर दुर्गसे पश्चिमकी तरफ एक कोश पर है। यह बात अब तक निश्चित नहीं हुई है कि झलन्दरनाथ गंगाके प्रदेशोंमेंसे लाये गये थे या झलन्दरनाथ और मल्लिनाथको लड़ाकू भलनिस छोड़ गये थे, परन्तु यदि यह सिकन्दरके शत्रुओंको शेष चिह्न प्रमाणित होजाय जिनको उसने तब मुलतानसे निकाल दिया था। क्योंकि उनके पड़ोसमें झलन्दरकी (जो बाबरके समयमें हिन्दुओंका प्रसिद्ध तीर्थ स्थान था) गुफाएँ होनेके कारण इस सम्भावनाको कुछ दृढ़ता प्राप्त होती है। अस्तु जो कुछ हो राठौरोंने, रोमन जेताओंके समान इन प्राचीन देवोंको अपने देवताओंमें संमिलित कर लिया। माल्लिनाथका चित्र मंडोरके पत्थर पर खुदी हुई मूर्तिको देखकर खींचा गया था। निर्वासित सोनिगुरोंके वंशज अब चित्तलवाना प्रदेशमें वास करते हैं जो लूनीके डेल्टाके निकट है।

भद्राजून मेहवो–जैसोल और सिन्द्रीकी बड़ी २ जागीरोंके अलावा, सेवाची भीनमल सांचोर मोरसेनके निकृष्ट और खालसा जिले झालौरके अन्तर्गत है। जिस प्रदेशकी भूमि उपजाऊ, पानी सतहके निकट, और लम्बाई, चौड़ाई नव्वे मील है, उसको एकमात्र सुराज्यकी आवश्यकता है जो इस प्रदेशको इसके समान आकारवाले दूसरे प्रदेशोंके बराबर उत्पादक बना सकें, और जिसकी आमदनीसे जोधपुर नरेशका निजी खर्च भरपूर चल सकता है, परन्तु राजधानीकी अराजकता; प्रबन्धकर्ताओंकी बेईमानी, और मरुभूमिके सेहरोस और आब अरवलीके मीनाओंके लूटके कारण इसकी भयंकर अवनति हुई है। इस देशमें अनेक पहाड़ियां (इनमेंसे एकपर दुर्ग बना है) पायी जाती हैं। परन्तु यद्यपि इनमेंसे एक भी मेवाड़की ऊंची भूमिसे संलग्न नहीं होती हैं, वौ भी आबूतक इसके खंड पाये जाते हैं। सिर्फ एक बातमें यह मरुभूमिकी सादृश्यता रखता है अर्थात् उद्भिज पैदावारमें, क्योंकि झाई बबूल, करील, और थलके

---

(१) मुलतान और जूला चोटनके अर्थ चाहान तान के एक ही अर्थ है अर्थात् प्राचीन स्थान और दोनोंहीमें माली या मालिनी जातिकी थी जिनको लोग चौहानके वंशज बतलाते हैं; और यह आश्चर्यकी बात है कि झालौर (प्राचीन झलन्दरनाथ) में वेही देवता पाये जाते हैं जो पंजाबमें उनके रहनेके स्थानोंमें मिलते हैं यानी मल्लिनाथ, झलन्दरनाथ, और बालनाथ। अब्बुलफजल कहता है (वे. १०८ भाग दूसरा) " बालनाथकी गुफा सिन्ध–सागरके मध्यमें है; " पर बाबर " सिन्ध नदीके पूर्वमें पांच मंजिल जुदकी पहाड़ीके नीचे बालनाथ जोगीकी गुफा नियत करता है " और यह वही स्थान है जिस पर यदुवंशियोंका अधिकार था जब कि भारतके बाहर उनका नायक बलदेव या बलनाथ जो देवता समझ कर पूजे जाते हैं–उनको ले गया था।

दूसरे प्रकारकी झाड़ियों या छोटे २ वृक्षोंके सिवाय किसी किस्मकी लकड़ी इसमे नहीं पायी जाती है।

झालौरका उत्तम दुर्ग मारवाड़की दक्षिणी सीमाकी रक्षा करताहुआ उस श्रेणीके सिरे पर अपना मस्तक उन्नत कियेहुये खड़ा है जो उत्तरकी तरफ सिवानातक चली गयी है। यह तीनसौसे चारसौ फीटतक ऊंचा है और वाल और वुर्जे जिनपर तोपें चढ़ी हुई हैं इसके अधिक सुदृढ बना रही हैं। इसमें चार फाटक हैं, शहरकी तरफवाला फाटक 'सूरजपोल' के नामसे प्रसिद्ध है, और वायव्य कोणका फाटक 'बालपोल' कहलाता है जहां जैनियोंके धर्म गुरु परसनाथका मन्दिर विद्यमान है। किलेके अन्दर बहुतसे कुएं और दो बड़ी २ बावड़ियां हैं, और उत्तरकी तरफ पहाड़ी नदियोको बांधकर छोटीसी झील बनायी गयी है, परन्तु छै महीनेसे अधिक कभी भी इसका पानी नहीं चलता है। नगर जिसमे तीन हजार और सत्रह मकान हैं किलेके उत्तर और पूर्वकी तरफ बसता है, और सुकरी नदी करीव एक मील इससे पूर्वमे वहती है। इस नगरके चारो तरफ दीवाल खिंची हुई है और एक दुर्ग है जिसपर इसके रक्षाके लिये तोपें चढ़ी हुई हैं, और नगरमे भिन्न २ जातियोंके मनुष्य निवास करते हैं, परन्तु यह आश्चर्यकी वात है कि इस रंग विरंगी आवादीमे सिर्फ राजपूतोंके पांचही वंश या घर पायेजाते हैं निम्नलिखित मनुष्य गणना सन् १८१३ ई० में मेरी एक मंडलीके द्वाराकी गई थी।

नाम जाति.	मकानोकी संख्या.
माली	१४०
तेली या घाची	१००
कुम्हार	६०
ठठेरा	३०
धोवी	२०
सौदागर	११५६
मुसल्मान	९३६
खटिक	२०
नाई	१६
कुलाल	२०
जुलाहे	१००
रेशमके जुलाहे	१५
जैन पुरोहित	२
ब्राह्मण	१००
गूजर	४०
राजपूत	५
भोजक	२०

मीना	....	६०
भील	... ...	१५
मिठाईवाले या हलवाई	... ...	८
लुहार और बढ़ई	... ...	१४
मनिहार	....	४

इस मनुष्य गणनाकी सत्यता प्रमाणित हो चुकी थी लूनी और सुकरांके बीचका देश सेवांची कहलाता है और जिस पर्वतश्रेणी पर झालौर स्थित है उसी श्रेणोके एक शिखरपर सिवाना नामका एक दुर्ग वना हुआ है जो इस प्रदेशकी राजधानी है। इस देश-का विशेष रूपसे वर्णन करनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है क्योंकि इसकी प्राकृतिकदशा वैसी ही है जैसी कि अभी वर्णित होचुकी है। प्राचीन कालमें यह नागौरके सहित मार-वाड़के युवराजकी जागीर थी; परन्तु धौकलसिंहको गद्दी देनेके वाद राज्यमें शामिल करली गयी है। वास्तवमें मारुका कोई भी उत्तराधिकारी नहीं है फरिस्ता अलाउद्दीनके प्रतिकूल सिवानाके वचावका वर्णन अपनी पुस्तकमें करती है।

माचोल और मोरसेन दो राजा लूनीके अन्दर झालौरके आश्रित है मीनाओंकी लूट और उपद्रवसे वचानेके लिये माचोलकी आग्नेय सीमापर एक दुर्ग स्थित है। मोर-सेन झालौरके पश्चिमी शिरेपर है और इसमे एक दुर्ग और पांचसौ घरोंका नगर है।

भीनमल और सांचोर दक्षिणकी तरफ दो प्रसिद्ध उपभाग है। दोनो मिलकर करीव शेष सूवेके समान आकारमें है। प्रत्येक उपभागमें आठ गाँव है। कच्छ और गुजरातको जानेवाले राजमार्ग पर ये नगर होनेके सववसे अति प्राचीन कालसे व्यापा-रके लिये प्रसिद्धहै। भीनमलमे पन्द्रहसौ घर कहे जाते है और सांचोरमें करीव आधे के बड़े २ धनी महाजन यहां रहा करते थे। परन्तु भीतर वाहर दोनों ओरसे अरक्षित रहनेके कारण या भीतरी और वाहरी अशान्तिसे इन शहरोंको वहुत कुछ धक्का लगा है। जिनमेंसे पहिला अपने वाजारके धनके कारण "माल" नामसे प्रसिद्ध है।

वहां वाराहका मन्दिर है (शूकरावतार) जिसमे शूकरकी मूर्ति पत्थरमें खोदकर वनाई गयी है। सांचोर दूसरी ही वातके लिये प्रसिद्ध है, क्योंकि यह सांचोरा नामक ब्राह्मणोंका जन्मस्थान है। जो इन देशोंके अत्यन्त प्रसिद्ध मन्दिरोके पुरोहित नियत किये जाते हैं। उदाहरणार्थ, द्वारका, मथुरा, पुष्कर इत्यादि सांचोर सतीपुराका अपभ्रंश है और वहुत प्राचीन वतलाया जाता है।

भद्राजून–संक्षिप्त वर्णन झालौरकी प्रसिद्ध जागीर तथा उसके अधीन राज्यका आवश्यकीय है। भद्राजून पांचसौ घरोका शहर (तीन चतुर्थांश मीनाओंके है) पहा-ड़ियोंके झुंडके वीचमें वसता है और इसमें एक किला भी है। सरदार जोधाजातिका है, उसकी जागीर झालौरकी गोड़वारमें पालीसे मिलती है यानी उसकी जागीर झालौ-रसे पालीतक चलीगयी है।

मेह्वा-लूनीके दोनो किनारोपर प्रसिद्ध प्रदेश है और पहिलेपहिल राठौरोंने जिन देशोंपर अधिकार प्राप्त किया था उनमेंसे एक है। वास्तवमें यह सेवाचीमें है जिसको वह आवश्यकता पड़नेपर कर दियाकरता है। सेवाके अलावा मेह्वाके सरदारको रावल की पदवी है और वह प्रायः जेसोल नगरमें रहा करता है। सूरतसिंह वर्तमान नरेश है। इनका समधी सूरजमल भी रावल पदवीसे विभूषित है और जैसोलसे वाइस मील दक्षिणमे लूनीके किनारे पर सिद्रीका किला और जागीर उसके अधिकारमे है। इनमें आपसमें कलह चला आता है, वे बराबरीके हकका दावा करते हैं और इसका परिणाम यह है कि दोनोंमेंसे कोई भी राज्यकी राजधानी मेह्वामे नहीं रहसकता है दोनों ही डाकूके कर्मको अप्रतिष्ठा जनक नहीं समझते थे जब कि यह वृत्तान्त सन् १८१३ ई. मे लिखा गया था। परन्तु आशा की जाती है कि उन्होने इस कार्यके खतरेका (यदि गलती या चूकको नहीं) जान लिया है तो खारी नदीके किनारेके उपजाऊ प्रदेशोको जोतेंगे जिनमें प्रचुर परिमाणमें गेहूँ ज्वार और बाजरा पैदा होता है। भलोत्रा तिलवारा इस देशके भूगोलमे दो प्रसिद्ध नाम हैं और इनमें एक वार्षिक मेला लगता है जो राजपूतानामें उतना ही प्रसिद्ध है जितना कि जरमनीमें लेपसिकका मेला है। यद्यपि यह मेला भलोत्राके नामसे प्रसिद्ध है तौभी यह मेला कई मील दक्षिण लूनीके एक टापूके निकट भी नगरा और उसके राजाओंको 'सम्त्रा' मे परिणत कर दिया। इस वर्णनसे मालूम पड़ता ह कि सोढ़ाओंने अरोर बेखरके या सिन्धके ऊपरीभागमें शासन किया और सम्माओंने नीचेवाले भागमें जब कि सिकन्दर इन देशोंमें होकर गया था। झारियोंमे और सौराष्ट्रमे नौ नगरके जामोंने सुम्माओंसे उत्पन्न होनेका स्वत्व पेश किया है, और इसी कारण कहींपर अबुलफजल 'सिंध-सुम्मावंशका' लिखता है, परन्तु मुसलमानोंसे मिलजानेके कारण और हिन्दुओंके द्वारा धर्मबहिष्कृत होनेपर उन्होंने सम्मा-यदुकुलमें उत्पन्न होनेके बातको छिपानेकी इच्छा की और जमशेदके वंशज अपनेको कहते हुए उन्होंने सम्मा उपाधिको त्यागकर जामकी पदवी धारण की। हम इस बातको यहां मानलेते हैं कि सोढा जातिके नरेश महान् और राज्यके उस भागपर अधिकार किये हुए थे, जिसकी राजधानी अरोर था बेखरका द्वीप था जब कि सिकन्दर सिन्धु नदीके मुखकी तरफ गया था, यह सम्भव है कि वह सेना-जिसको अबुलफजल ईरानी लिखता है-जिसने अरोर पर हमला किया, और सेहरीके राजाको मारडाला, अपोलोडोटस था मीननदेरके अधीनतामें यूनानी और बकाटिरियाकी सेना थी, जिसने (Appithdttu) सेहरोस नरेशसे प्रतिपालित देशसे लेकर सोरों या सौराष्ट्र देशतक यात्रा की जहां कि यूनानी

---

(१) प्राचीन हिन्दू इतिहासमें लिखा है कि अग्निकुलके चारवंशोंने यदुवंशको सर्वत्रसे बाहर निकाल दिया है। दो उत्तम मुसलमान इतिहासज्ञोंके लेखोंमें इनके आपसके कलह होनेका प्रमाण मिलता है, जिन्होंने प्राचीन ऐतिहासिक पुस्तकोंको देखकर जिनमेंसे कुछ हमको प्राप्त हुई हैं, वे लेख लिखे थे। यह स्मरण रखना चाहिये कि सोढ़ा, ओमुर सुमुरा प्रमर वंशके थे (ग्रामीण पतार) जब कि सुम्मा यदुवंशोत्पन्न थे। इनकी उत्पत्तिके लिये जैसलमेरका इतिहास देखो।

इतिहासलेखकके अनुसार जब कि उसने दूसरी शताब्दीमें लिखा था । उनकी कीर्ति मुद्रायें (Medal) वर्तमान थीं । विस्तारपूर्वक उपरोक्त वर्णित इतिहास हमको सचा और संशयातीत प्रमाण देता है कि दहीर और उसका पुत्र रायसा, जो कासिमके अधीनतामें पहिले मुसलमानी सेनाके शिकार बने थे, उसी वंशमें उत्पन्न हुए थे जिस वंशकी शोभाको राजा सेहरोसने बढ़ाया था, और भट्टी इतिहास इस सत्यताको प्रमाणित करता है कि इस समय-रेगिस्तानमें उनके वसनेके समय-सोढा जाति अधीश्वर थी और स्थानों और नामोंमें घनिष्ठ सादृश्यता होनेके कारण जो परिणाम हमने निकाला है उसमें सन्देह करनेको स्थान नहीं है कि पौरवंशकी सोढा जाति उस समय उत्तरी सिन्धमें शासन कररही थी जब कि सिकन्दर, नदीमुखेनेवे समुद्रमाविसत्, और भाग्य चक्रके उलटपुलट होतेहुए भी वह अबतक अधिकारके लिये अपने प्राचीन यदुवंशी सम्मासे लड़ते हुए अपने प्राचीन राज्यके कुछ भागपर अपना अधिकार कायम रखसकी है । हम पाठकोंको इस भागका कुछ हाल बतलावेंगे और जिस अलौकिक संलग्नशीलता या दृढ़ताके प्रतापसे ये लोग विदेशी शत्रुओंको-चाहे यूनानी, मुसलमान या बैक्टरियाके क्योंन हों-तुच्छ समझते हुए और प्राकृतिक दुःखोंको-अकाल महामारी, भूकंप इत्यादिके दुःखोंको-सहते हुए दो हजार दोसौ वरषतक जीवित रह सके हैं । जिन्होंने इस देशपर समय २ पर प्रचंड प्रलय मचा दिया है और आखिरकार इस देशको उजाड़ दिया है, उसकी हम अत्यन्त प्रशंसा किये विना न रहेंगे । क्योंकि लोग परंपरासे कथन करते आते हैं कि मिश्र देशके रेगिस्तानके सदृश यह रेगिस्तान सिन्ध और यमुना नदियोंकी घाटीकी तरफ विस्तारमें उत्तरोत्तर उन्नति करता चला जाता है

---

(१) बड़े ही सौभाग्यसे इन मुद्राओंमेंसे एक सिक्का मेननदेर और तीन अपोलोडोटस इस ग्रन्थ कर्ताके हाथ लगे । जिनके कि अस्तित्वमें इसके पूर्व सन्देह था । अपोलोडोटसके तीन मुद्राओंमेंसे एक सुरपुरीके खंडहरमें जो मेनू और ऐरियनके सूरसेनीकी राजधानी थी, मिला; दूसरा सिक्का प्राचीन अवन्ती या उज्जैनमें मिला जिसका सम्राट् जस्टिनके कथनानुसार अगस्टसके पत्र-व्यवहार रखता था; और तीसरा आगराके निकट हिन्दू सिथिया और बेंकटियांके सिक्कोंसे भरा हुआ घड़ेके साथ मिला, जो (घड़ा) एक अधिकतर प्राचीन नगरके स्थानको खोदते हुये कई वरस हुए निकाला गया था । यह संभव है जैसा कि पूर्वमें लिखचुका हूँ कि यह स्थान अग्र ग्रामेश्वरकी राजधानी हो जो ऐरियनके कथनानुसार उत्तरी भारतका सबसे बढ़कर शक्तिशाली सम्राट् था, और पोरस या पुरुके मृत्युके अनन्तर सिकन्दरके आगे बढ़नेको रोकनेके लिये तैयार था । हमको आशा करना चाहिये कि पंजाबके इतिहासमें कुछ भूतकालकी बातोंका दर्शन होजाय या पता लगजाय । इन मुद्राओंके वर्णनके लिये रायल एसियाटिक सोसायटीकी पुस्तकें देखो भाग प्रथम पे. ३१३.

(२) कप्तान पार्टिंजर (जो अब कर्नल है) ने " मुजमूद गारिदाल " नामक फारसी पुस्तकसे जो वाक्य अपनी पुस्तकमें उद्धृत किया है, जो पुस्तक उन्होंने सिन्ध और बिलोचिस्तानके वर्णनमें लिखी है, उसमें वह प्राचीन सिन्धकी राजधानी ' वलैार ' लिखता है और " सहीर " वंशके नाश होनेका भी उल्लेख करता है,-जिनके पुरखे दो सहस्र वरस तक सिन्धमें राज्य करते रहे ।

अमरकोट-यह ओमुरोंका किला, कुछ वर्ष पहिले सोढा राजकी राजधानी थी और यह राज दो शताब्दी व्यतीत हुई सिन्धकी घाटीमें और लूनीके पूर्वमें फैला हुआ था, परन्तु मारवाड़के राठौरोंने और सिन्धके वर्त्तमान राजवंशवे मिलकर सोढाओंके महान् राज्यको इतना कम किया कि सोढाओंके हाथमें केवल एकमात्र नियमित भूमि रहगयी, और सेहरीसके वंशजोंको अमरकोटसें (मारुके नवदुर्गोंमेंसे अन्तिम दुर्ग) निकाल बाहर किया जो अरोर राजधानीसे कश्मीरसे समुद्रपर्यन्त विस्तीर्ण राज्यपर शासन करते थे । दुःखके साथ लिखना पडता है कि अमरकोट अपने प्राचीन महत्त्वको खो बैठा, और सोढा नरेशोंके वैभवकालमे पांच हजार मकानोंके वजाय अव अमरकोटमे सिर्फ दोसौ पचास मकान हैं जिनको झोपड़ा कहना अधिक सयुक्तिक होगा । प्राचीन दुर्ग नगरके वायव्यकोणमें है । यह ईटका वना हुआ है और बुर्ज जो संख्यामें अठारह हैं पत्थरके निर्माण किये गये हैं । नगरके भीतर एक किला या सुदृढ और सुरक्षित महल बना हुआ है । दुर्गसे उत्तरकी तरफ पुरानी नहर है जिसमें पानीसालके कुछ महीनोतक बना रहता है । जब राजामानने अमरकोटको जीता तव उसने समाचार लेने देनेके लिये कई गांव वहाँपर बसाये । जवतक तालपुरियोंको किसी प्रकारका भय या खटका अपने कन्दहारके सम्राट्से वना रहा तवतक उन्होने राठौर राजाको प्रसन्न रखना अपने लिये हितकारी समझा, परन्तु मारवाड़के सदृश जव कन्दहारमें आपसमें ही युद्ध ठन गया तव एकसे भय न रहनेके कारण दूसरेको प्रसन्न रखनेकी इच्छाको अर्द्धचन्द्र मिला, और अभाग्य वश अमरकोट सिन्धके कुलारो और राठौरोके राज्यके वीचमें पड़ गया और प्रत्येक इस सीमास्थित स्थानको अपने राज्यकी उचित सीमा समझकर उसका अधिकार प्राप्त करनेके लिये लड़ने लगा । हम इन प्रतिद्वंदियोंके आपसमें कलहका वर्णन करेंगे जिसने अन्तमे सोढानरेशका सत्यानाश किया, जिससे चाहे कुछ सिद्धहो वर्त्तमान राजवंशका इतिहास-जिससे हम पूर्णतया परिचित नहीं हैं जाननेमे सहायता मिले ।

जब विजयसिंह मारवाड़का शासन करता था, सिन्ध राज्यकी वागडोर मोहनूर महमूद कुलोरके हाथमें थी । परन्तु कन्दहारी सेनासे निकाले जाने पर वह जैसलमेरको भाग गया जहां कि वह इस असार संसारके झगडोंसे सदाके लिये छूट गया । ज्येष्ठ पुत्र उन्तरखां अपने भ्राताओंसहित वहादुरखां कैरानीकी शरणमें प्राप्त हुआ, जब कि वेश्या पुत्र गुलामशाह हैदरावादकी मसनद पर बैठनेमे कृतकार्य हुआ । दाऊदपुत्रके राजाने उन्तरखांका पक्ष लिया और राज्यापहारोको निकालनेके लिये तैयारी करने लगा । वहादुरखां, सवजुलखां, अलीमुराद महमूदखां कायमखां, अलीखांने-कैरानी सरदारोंने उन्तरखांके साथ हैदराबाद पर चढाई की, गुलामशाह इन लोगोंसे युद्धके लिये निकला और "ओबरा" स्थान पर भाइयोंमें घनघोर युद्ध हुआ जिसमें उन्तरखां पराजित हुआ करीव २ समस्त कैरानी सरदार इस लड़ाईमें काम आये और उन्तरखां गुलामशाहके हाथ पड़ा जिसने उसको हैदरावादसे सात कोश दक्षिणमें गुजके कोटमें-सिन्धनदीमें एकद्वीप है-जीवनभरके लिये कैद किया । गुलामशाहने "मसनद" अपने पुत्र सरफराज को दे डाली, जिसकी मृत्युके वाद अब्दुलनवी तख्त पर बैठा । शिवदादपुरसे सातकोश

अभयपुर नगरमें तालपुरी जाति (बलोचकी शाखा है) का सरदार रहता था, जिसका नाम गोरम था और उसके विजूर और सुबदान नामक दो पुत्र थे।

सरफराजने गोरमकी लड़कीका पाणिग्रहण करना चाहा, परन्तु इस प्रस्तावके अस्वीकृत होने पर सरफराजने गोरम वंशका समूल नाश कर दिया, केवल एकमात्र बिजूरखाँ बच रहा जिसने अपनी जातिको बदला लेनेके लिये उकसाया और अत्याचारीको उतारकर स्वयं हैदराबादकी गद्दीपर विराजमान हुआ। कुलोर लोग इधर उधर भाग गये, परन्तु विजूर जिसका स्वभाव उग्र और क्रोधी था अमरकोटके अधिकारके बारेमें राठौरोसे लड़ पड़ा लोग कहते है कि केवल उसने मारवाड़से करलेना न चाहा परन्तु राठौर नरेशकी कन्यासे विवाह करना चाहा और इस बातके समर्थनमें यह नजीर पेश की कि विजयके पितामह अजीतने फेरोशरको अपनी कन्या दी थी। इस उपमर्दकारक बातसे जलकर राठौरोंने धरणीधरसे पांच कोश पर उगरानामक स्थान पर विजूरके प्रतिकूल तलवार उठाई आर इस युद्धमें बलोचसेना राठौरोंके द्वारा पूर्णरूपसे पराजित हुई, परन्तु विजयसिंहने इस विजयसे संतुष्ट न होकर अपने दिलमें चुभनेवाले कांटोंको उखाड़ डालनेको पक्का निश्चय करलिया। भट्टी और चन्द्रावतने सहायता देना स्वीकार किया, और उनके वंशजोंकी जागीरें मिलजाने पर वे दूतके भेषमें इस खतरनाक कार्यको पूर्ण करनेके लिये चलदिये। जब वे विजूरके सामने पेश किये गये उसने अभिमानपूर्वक पूछा कि राजाने उसकी बातका ध्यानपूर्वक विचार किया तब चन्द्रावतने विजयसिंहका पत्र उसके हाथमें देदिया जैसे ही विजूरने शीघ्रतापूर्वक अपनी दृष्टि उसपर दौड़ाई और 'डोलाका उल्लेख नहीं है' यह शब्दके निकलनेकी देर थी कि चन्द्रावतका कटार उसकी छातीमें प्रवेश कर गया। 'यह डोलाके एवजमें' उसने कहा और यह करके एवजमे उसके दूसरे साथीने दूसरा प्रहार करते समय कहा।

विजूर गतप्राण होकर गद्दीपर गिर पड़ा और हत्यारे जो भागना असम्भव जानते थे चारों तरफ घूम कर कटार चलाने लगे, उनके शरीरके टुकड़े २ होनेके पहिले चन्द्रावतने पचीस और भट्टीने पांच मनुष्योंको मार गिराया। बिजूरका भतीजा और सोवदानका पुत्र फतेहअली गद्दीके लिये चुनागया और कुलोरका प्राचीनवंश भुज और राजपूतानेमें भागगया। जब कि उनका प्रतिनिधि कन्दहारको चला गया। शाहने उसको पचीस हजार सेनाका अधिपति बनाया, जिसकी मददसे उसने फिर सिन्ध देशको विजय किया और ऐसे २ निर्दयताके काम किये जिनका उल्लेख इतिहासमें नहीं है। फतेहअली जो भुजको भाग गया था, उसने अपने साथियोंको फिर एकत्र करके शाहकी फौजपर आक्रमण किया, जिसको उसने हराकर शिकारपुरके उस तरफ तक कतल करतहुए उसका पीछा किया। और वह शिकारपुरको अधिकारमें कर विजय शंख बजाता हुआ हैदराबादको लौट आया। निर्दयी और पराजित कुलोरा फिर एक बार शाहके सम्मुख गया। परन्तु शाहने अपनी फौजकी अत्यन्त अपमानकारक हारपर क्रोधित होकर उसको अपने सम्मुखसे भगा

दिया, और इधर उधर घूमनेके बाद वह मुल्तानसे जैसलमेर होताहुआ अन्तमें पोकरनेमें निवास करने लगा जहाँ कि उसको इस नश्वर शरीरसे सम्बन्ध त्यागना पड़ा। पोकरननरेशने अपनेको उसका उत्तराधिकारी बनाया और सिन्धके निर्वासित राजाके असंख्य धन भंडारको पाकर पोकरननरेश मारवाड़मे अगुआ बननेको समर्थ हुए निर्वासित राजाकी स्वर्ग्द नगरके उत्तरकी तरफ बनी हुई है।

यह कथा जो वास्तवमें मारवाड़ या सिन्धके इतिहाससे सम्बन्ध रखती है सोडा नरेशोंके भाग्यपर सिन्धवालोंका क्या प्रभाव पड़ा सिर्फ इस बातको दिखलानेके अभिप्रायसे यहाँपर इसका उल्लेख किया गया है। बिजूरने, जो विजयसिंहके दूतोंके हाथसे मारा गया था सोड़ा नरेशको अमरकोटसे निकाल दिया था, और अमरकोटका अधिकार मिलनेपर सिन्धवालोंको तुरन्त ही भट्टियों और राठौरोंसे लड़नेको विवश होना पड़ा। बिजूरके मारेजाने पर और सिन्धीसेनाके हार खानेपर अमरकोटकी गद्दी पर सोडानरेशको फिर विजयसिंहने बैठाया। परन्तु वह बहुत दिनोंतक अमरकोटको अपने अधिकारसे न रखसका क्योंकि कन्दहारी सेनाके आक्रमण करनेपर इस दरिद्र देशके निवासियोंको अफगानोंने कतल किया और लूटा और अमरकोट पर हमला करके उसको छीन लिया। जब फतेहअली कन्दहारी सेनाके सम्मुख हुआ और राठौरोंकी मददसे उसको पराजित करनेमें समर्थ होनेपर उसने इस मददके बदलेमें अमरकोट राठौरोंके अधिकारमें देदिया जिसकी दीवालपर राठौरोंका झंडा फहराता रहा जब तक कि सिन्धवालोने आपसकी लड़ाईसे फायदा उठाकर उनको नहीं भगा दिया। यदि राजा मान अपने सरदारोंकी शुभेच्छासे लाभ उठाना जानते होंवे तो इस दूरस्थित स्थानको लेनेके लिये और कुछ असंतुष्ट मनुष्योंसे पिंड छुड़ानेके लिये उन उपायोंको काममें न लाना पड़ता जिनके कारण उनके नामपर कलंकका धब्बा लग गया है।

---

(१) नगरके उत्तरकी तरफ फतेहअलीके बाद उसका भाई वर्तमान नरेश गुलामअली मसनद पर बैठा और फिर उसके पुत्र करमअलीने मसनदको रौनक बख्शी! डा. बर्नकी "सिन्ध दरबारके प्रतिगमन करनेका वृत्तान्त" नामक पुस्तकके द्वारा इस वर्णनकी सत्यता प्रमाणित होती है। यह पुस्तक बड़ी ही रोचक और उत्तम है और इस नोट या 'टिप्पणीके लिखनेके ऐन वक्तपर यह पुस्तक मेरे हाथ लगी है। बीजूरखाँ, सिन्धके कलोरा शासकोंका मंत्री था और जिसकी क्रूरताके कारण आखिरकार सिन्धका राज्य मंत्रीके कुटुम्बके हाथ लगा या कुटुम्बमें चला गया। इस बातका मुश्किलसे विश्वास होसकता है कि राजा विजयसिंह गुप्त हत्यारोंको कलोराके लिये मुहैया करे जो इनको बड़ी ही सुगमतासे सिन्धमें पा सकता था, तौभी जिस अपमान कारक बापके मुँहसे निकालने पर विजूरको प्राणसे हाथ धोना पड़े वह सम्भव है कि उसके मालिकसे कही गयी हो यद्यपि वह उसको इसके लिये कुछ प्रायश्चित न करना पड़ा। यह बड़े दुखकी बात है कि डा. बर्न अमीरके साथ रुहतन (जिसका वृत्तान्त मुझको बीस बरस पहिले मिल चुका था) तक नहीं गया। डा बर्नके भाई लफ्टेंट बर्नने बड़ी ही योग्यता पूर्वक "रिन" (खारी झील) का वृत्तान्त और नकशा चित्रित किया है जिसने भारतके इस सुन्दर और महत्व पूर्ण भागके भूगोल और इतिहास-

द्वितीय अध्याय २.



चौहानराज–चौहानराज राजपूतानेके सुदूर कोनेमें स्थित है और प्रथम वारही इसके अस्तित्वका उल्लेख किया गया है। क्योंकि महत्त्व और सुन्दरताका नाम किसी दूसरे ही चीजको माप (Standard) मानकर किया जाता है इसीलिये इस दृष्टिसे विचार करनेपर चौहानराज रेगिस्तानके छोटे २ राज्योंके मुकाबिलेमें साम्राज्य प्रतीत होगा। चौहानराजके उत्तर और पूर्वमें मारवाड़ राज्यकी भूमि है जिसका वर्णन हम अभी करचुके है। इसके आग्नेय कोणसे कोलीवारा (Koliwarra) है, दक्षिणमें 'रिन' या 'नमककी झील' है और धात (Dhat) का रेगिस्तान पश्चिमी सीमा पर है। चौहान राज्य दो प्रसिद्ध राज्योंमें विभक्त है, पूर्वीयराज्य 'वीरवाह' (VirBah) नामसे विख्यात है और पश्चिमी राज्य लूनीके पार होनेके कारण 'परकर' (parkur) नाम धारण किये हुए है। और दोनों ही नगर (Nuggur) और राजधानी पृथकत्व सूचना करनेके लिये सरनगर (Sir-Nuggar) के नामसे परिचित है–परकरकी पदवीसे विभूषित हैं। यह प्रसिद्ध रेनल Rennel का नगर–परकर Negar Parkre है जिसको साहसी और उद्योगी विटिङ्गटन Whiteington नामक अंग्रेजने उस समय देखा था। जब कि इन देशोसे हमारे सम्बन्धका सूत्रपात ही हुआ था। इस रेगिस्तानके चौहानोंको अपने राज्यके प्राचीनपनका तथा उच्चकुलमें जन्म लेनेका गर्व है। पिछली वातको प्रमाणित करनेके लिये मानिकराव अजमेरके वीसलदेव और दिल्लीके अन्तिम हिन्दू सम्राट् महाराज पृथ्वीराजको अपना पूर्वपुरुष वतलाते हैं, परन्तु पहिले नामोंको कल्पना और भट्ट कवियोंके कविताके हवाले कर हम निर्भयतापूर्वक कहनेका साहस करते हैं कि वे सोढ़ा Sodas और प्रमारजातिके दूसरी शाखाओंसे पीछे हुए थे, जो इस देशमें जव कि

—पर नया ही प्रकाश डाला है। मेरी यह इच्छा है कि इस अपरिचित और अप्रसिद्ध प्रदेशको अनुसन्धान करनेका भार एक ऐसे पुरुषको सौंपा जाय जो सव तरहसे इस कामको करनेके लिये सुयोग्य हो। इस मरुभूमिमें जैसलमेरसे ओचतक यात्रा करनेकी इच्छा बहुत दिनोंतक मेरे मनमें वनी रही. और फिर आजसे जलमानसे मनसुराको जाते हुए रास्तेमे अरोर, सेहवान, सम्मा नगरी और वासुनवासीको देखू। सन् १८२० मे सिन्धसे युद्ध छिड़नेकी आशंकासे मेरे मनोरथके सफल होनेके लक्षण दिखाई पड़ने लगे, और मैंने मरुभूमिमें होकर सेना लेजानेके मार्गका नक्शा खींचकर लाट हेस्टिंगके पास भेज दिया था; परन्तु उस समय उनको शान्ति रखना ही अभीष्ट था। अपर सिन्धके गवर्नर मीर सोहरावसे भी मेरा उस समय पत्र व्यवहार चल रहा था और इसमें सन्देह नहीं है कि वह मेरे विचारोंसे सहमत होजाता।

(१) परके अर्थ 'पार' है और करयासरलूनी या खारी नदीका समानार्थक है। लूनीके अलावा राजपूतानेमे हमने अनेक खारी नदियां देखी हैं। समुद्र (लूनापानी) या (खारापानी) के नामसे प्रसिद्ध है परन्तु यह नाम अव (कालापनी) में रूपान्तरित होगया है जो किसी तरहसे निरर्थक नहीं है।

सिकन्दरने सिन्धु नदीके मुखकी तरफ गमन किया था। शासन कररहे थे। यह सम्भव है कि माली या मालिलीने, जिनको सिकन्दरने पंजावके कोनेसे निकाल दिया था सोढ़ाओसे खेरकी भूमि छीनली हो। अस्तु इतना निस्सन्देह ठीक है, कि आठवीं शताब्दीसे लेकर तेरहवीं शताब्दी तक चौहानराज अजमेरसे सिन्धकी सीमातक फैला हुआ था। जिसकी राजधानियां, अजमेर, नादौल, झालौर, सिरोही, और जुना चोटन थी। और यद्यपि प्रत्येकका इतिहास इनको स्वाधीन बतलाता है तौ भी वे किसी न किसी प्रकारकी अजमेरकी अधीनता स्वीकार किये हुए थी। इस वातको प्रमाणित करनेके लिये हमारे पास ऐतिहासिक लेख मौजूद हैं। गजनीके जगद्विजयी महमूदके समयसे अलाउद्दीन द्वितीय सिकन्दरके समयतक इनमेंसे प्रत्येक मुसलमानी इतिहासमे प्रसिद्ध रहचुकी थी। अपने वारहवे हमलेमे मुलतानसे अजमेरको जाता हुआ (फरिश्ता कहता है कि जिसका किला महमूद शत्रुओंके हाथमें छोड़नेको विवश हुआ था) महमूद नादौलके पाससे गुजरा और उसको लूटा, और रेगिस्तानके निवासी महमूदके जुना-चोटनमें आगमनको, वंशपरपरानुगत कथाके द्वारा जीवित रखसके है और वे उन सुरंगोंको वताते है जिनके द्वारा वहांका पहाड़ी किला उड़ायागया था। इस वातको जाननेके लिये हमारे पास कोई साधन नहीं है कि यह घटना उसके आगमन और नहरवलके नाशके वाद हुई थी या जव कि वह यात्रा कररहा था परन्तु जव हम इस वातका स्मरण करते हैं कि अपनी अन्तिम चढ़ाईमे उसने सिन्धमे होकर लौटनेका प्रयत्न किया था, और इस रेगिस्तानमे अपनी सम्पूर्ण सेनासहित वह नाश होनेके निकट ही था कि तव हमको इस वातको ख्याल करनेकी जगह मिलजाती है कि उसके जुनाचोटनके नाश करनेके दृढ़ निश्चयने उसको इस खतरेमे डालदिया था। क्योंकि 'काफिरों' को नाश करने या उनको मुसलमान वनानेके सर्वव्यापक उद्देशके अलावा सभव है कि नहरवलके निर्वासित राजे खेरधरके रेतके पहाड़ियोके बीचमें वसनेवाले चौहानोके शरणमें प्राप्त हुये हों और इस तरहसे उसके हाथमे पडे हो। यद्यपि नाममात्रको एक राज्य है, तौ भी 'परकर' नरेश वीरवाहकी वड़ी गद्दीकी किसी प्रकारकी अधीनता नहीं करता है। दोनों ही रानाकी प्राचीन हिन्दू पदवीसे विभूषित हैं और लोग कहा करते हैं कि वीरत्व इनका पुस्तैनी गुण है-यानी इनके घरानेमें सदासे वीरपुरुष उत्पन्न होते चले आये हैं-क्योंकि वीरता और चौहान समानार्थक शब्द हैं। इस राजके थलकी वर्गमीलमे लम्बाई चौड़ाई या आवादी जो निरन्तर घटा वढ़ा करती है, वतानेकी कोई आवश्यकता नहीं है, परन्तु हम प्रसिद्ध नगरोंका संक्षिप्त वर्णन करेंगे जिससे हमको मरुस्थलीकी मनुष्य सख्या कूतनेमें सहायता पहुंचेगी। हम पहिले भागका वर्णन आरम्भ करते हैं। चौहानराजमे प्रसिद्ध २ नगर शिव, वह धरणीधर वंकसर थेराड़ हितीगाव और चीतल हैं। राना नारायण राव ओसरा ओसरीसे शिव और वह में रहता है। दोनों ही वड़े नगर हैं और इनके चारोतरफ ववूल या दूसरे किसमके कांटेदार वृक्षोका परकोटा खिंचा हुआ है जो इन देशोंमें 'काठकाकोट' कहलाता है और शत्रुओंके आक्रमणको रोकनेके लिये भलीभांति दृढ़ हैं। इस रेतीले देशसे नारायण रावकी आमदनी

तीन लक्ष रुपया वार्षिक है। जिसमेंसे एक तृतीयांश एक एक लक्ष रुपया जोधपुरको करके रूपमें और सो भी विना युद्धके नहीं दियाजाता है जिसको लेनेके लिये जोधपुरका किसी प्रकारका भी स्वत्व नहीं पहुँचता है। देशके उन भागोंमें जो लूनीके द्वारा सींचे जाते हैं। अच्छे अन्तकी पैदावार होती है। और यद्यपि गर्मीके ऋतुमें नदी सूख जाती है तौ भी उसके प्रवाहमार्गमें bedकुएँ खोदकर प्रचुर परिमाणमें मीठा पानी प्राप्त हो सकता है परन्तु लोग कहते हैं कि यद्यपि नदीका प्रवाह वन्द होजाता है तौभी रेतमेंसे छन २ कर filter उन पृथक् तालोंमें मन्द २ गतिसे वहती हुई धार दिखलाई पड़ती है। ऐसा ही चमत्कारिक दृश्य कोहरी नदीके प्रवाहमें bed (ग्वालियरके जिलामें कई मीलके पूर्णतया सूखीभूमिके वाद हमारे नेत्रगोचर हुआ है। (पानीके उस हिस्सेमें जो कुछ दूर चलकर पड़ा है) ।

नगर या सर नगर परकरकी राजधानी है और १५०० घरोंकी वस्ती है जिसमेंसे सन्१८१४ई.में आधे आवाद थे। नगरके नैऋत्यकोणमें एक छोटासा पहाड़ीपर किला है जिसकी ऊँचाई २९ फीट कही जाती है। कुँए और वावड़ियाँ अनगिनती हैं। नगरसे सात कोश दाक्षिणमें नदी लूनी नामसे प्रसिद्ध है। जिससे हम यह परिणाम निकालें कि इसका प्रवाह मार्ग (bed) अवश्य ही रिनके वीचमेंसे होगा । परकरनरेश अपने वीरवहके स्वामीके समान रानापदवीसे अलंकृत हैं । यद्यपि हम इस वातसे अपरिचित है कि उनका आपसमें क्या सम्बन्ध है तौ भी परकरनरेश वीरवह नरेशके प्रति अपने कर्त्तव्यके लिये विख्यात है। दोनों ही हथ राजावंश जात है जिनकी राजधानी जुना चोटन थी। वंकसिर सरनगरसे दूसरे नंवरका है। यह कुछ काल पूर्वरेगिस्तानके लिहाजसे वड़ा और समृद्धिशाली नगर था। परन्तु सन्१८१४ई. में इसमें सिर्फ ३६० मकानोंकी वस्ती है। नगर नरेशका पुत्र यहां रहता है जो अपने पिताके समान राना पदवीसे विभूषित है। हम यहांपर छोटे २ नगरोका उल्लेख नहीं करेंगे क्योंकि यात्रा वर्णनमें वे फिर मिलेंगे।

थेरड़ लूनीके चौहानोंका दूसरा भाग है, जिसकी राजधानी शिवसे कुछ ही कोश पर थेरड़ नामसे प्रसिद्ध है और जो परकरके सदृश नाममात्रके लिये शिव–वह की अधीन है। इस वर्णनके साथही हम वीरवहके विषयको समाप्त करते है जिसमें हम फिर दुहराते है अवश्यही अनेक अशुद्धियां होंगी।

चौहानराजका मुख या आकृति–क्योंकि "यात्रा वर्णनमें देशकी हालातका सविस्तर वर्णन आवेगा। इसलिये यहाँपर उसका सूक्ष्मवर्णन व्यर्थ होगा । वही ऊसर पहाड़ी जैसा कि हम कह आये है, चोटनसे जैसलमेर तक फैली हुई है । वंकसिरके दो कोश पश्चिममें पायी जाती है और यहाँसे नगरतक पृथक् २ पिंडमें चली

---

(१) मेरे एक भ्रमण वृत्तान्त पुस्तकमें लिखा है कि लूनीकी एक शाखा वीर–वहकी राजधानी शिवके निकट वहती है जहां यह चारसौ वारह कदम चौड़ी है मैं समझता हूँ कि यह अशुद्धि है।

गयी है। लूनीके दोनो किनारोंकी भूमिमे गेहूं और अच्छे अन्नोंकी फसल उत्पन्न होसकती है। और यद्यपि वीरवहमे अनेक थल हैं तौ भी शिवसे १७ कोश विशेपकर रांधूपुरकी तरफ एक सपाट मैदान है। लूनीके पार थल ऊंचे टीबो मे उठता गया है और वास्तवमें चोटनसे वंकसर तक सपूर्ण देश ऊसर हैं और ऊंचोर रेतकी पहाड़ियोसे परिपूर्ण हैं। और प्राय: रेतसे ढकीहुई टूटी फूटी ऊची भूमि दूरतक चली गयी है।

पानी–पैदावार–सम्पूर्ण चौहानराजमें या कमसे कम उस भागमें जहां आवादी अच्छी है पानी सतहसे औसत दर्जेकी गहराई पर मिलजाता है। कुंओंकी गहराई १० से २० पुरुसा है या पैंसठके एकसौ तीस फीट और जो धातके कुओंकी गहराईके मुकाविलेमे जो कभी २७०० फीट तक होती है किसी गिन्तीमें नहीं है। लूनीके किनार गेहूं, तिल, मूंग, मौथ अनेक प्रकारकी दालें, वाजरा वहाँके लोगोंकी आवश्यकता दूर करनेके लिये काफी परिमाणमे पैदा होते हैं, परन्तु इस सम्पूर्ण देशमे लूट ही खास रोजगार है जिसमे चौहान राजा और नीचकोली चालाकी और फुर्तीमे एक दूसरेकी स्पर्धा करते हैं। जहाँ कहीं भूमि खेती करनेके अयोग्य समझी गयी है वहाँ खासकर ऊंटोंके लिये अच्छी जगह चरनेको निकल आती है जो (ऊंट) अनेक प्रकारकी कांटेदार झाड़ियां खाकर जीवन निर्वाह करते हैं, भेड वकरियां अधिक संख्यामें पायी जाती हैं और बैल और घोडे–सुन्दर और अच्छी जातिके तिलवाराके मेलेमे विकने आते हैं।

निवासी–यह नितान्त आवश्यक है कि हम सिकन्दरके शत्रु मल्लिके वंशजोंको या वीरवर पृथ्वीराजके वंशजोको चोरोंकी सनाज कहकर वर्णन करें। ये लोग जो२ हानियां राजके अभावमें उठाये या जो अत्याचार उनको जोधपुरवालोंके हाथसे सहने पड़ते थे, जो उनपर अपना प्रभुत्व और लूटनेका हक्क वतलाते थे, उनका वदला लेनेके लिये सर्व साधारणको लूटनेके गरजसे सिन्ध गुजरात और मारवाड़ तक धावा करते थे। चौहानराजमे सर्व प्रकारकी जातियां पायी जाती हैं, परन्तु सवसे शक्तिशालिनी जातियां सहरी, खोसा कोली और भील हैं जिनके नाम डॉकू शब्दके समानार्थकवाची हैं। चौहान यहांके अधीश्वर होनेपर भी प्रत्येक गांवमें अल्प संख्यामे पाये जाते हैं, परन्तु कोली भील और पिथिलकी संख्याएँ अधिक हैं पिथिल नीच जातिके होनेपर भी, केवल उद्योग द्वारा इस देशमें अपना जीवन निर्वाह करते है। खेतीके अलावा वे गोंदका व्यापार करते हैं जिसको वे प्रचुर परिमाणमे भिन्न वृक्षोंसे जिनका नाम पहिले वतला चुके हैं एकत्र करते हैं। चौहान लोग दूसरी प्राचीन राजपूत जातियोंके सदृश द्विजत्वसूचक चिह्न जनेऊको नहीं धारण करते हैं और जिन लोगोंको ब्राह्मणोकी संगीतने लोहके जंजीरसे जकड़ रक्खा है उन लोगोंके आचार विचारको वे (चौहान) पालन करनेके लिये पूर्णतया वाध्य नहीं हैं। परन्तु संस्कार सम्वन्धी शिथिलताको सुधारनेके लिये पुरविया चौहानोंकी अपेक्षा

(१) पुरुसा मरुभूमिके नापनेका माप है। यदि औसत दर्जेका ऊचा आदमी शिरके ऊपर हाथोंको सीधा उठाकर खडा हो तो अंगुलियोंकी नोंकसे लेकर पदपर्यन्तकी ऊंचाई पुरुसा कहलाती है यह (पुरुष) शब्दसे निकला है।

इन्होंने अपने नैतिक गुण या स्वभावमें अच्छी उन्नति करली है। क्योंकि यद्यपि इनके पड़ोसी झाड़ियोंमें बालहत्या भयानकपनसे प्रचलित है तौ भी वे (चौहान) इस अस्वाभाविक वार्तासे (बालहत्या) पूर्णतया अपरिचित हैं। भोजन करनेमें इनको किसी प्रकारका विचार नहीं है, वे चौका नहीं लगाते हैं और इनके रसोइयाँ नाई, होते है। उच्छिष्ट भोजन बांधकर रखदिया जाता है जो दुबारा भोजन करनेके समय उपयोगमें आता है। कोली और भील-कोली इस देशमें बहुतायतसे पाये जाते हैं और मानव जातियोंमें अत्यन्त अधोगतिको प्राप्त हुई जातिसे इनकी तुलना की जा सकती है। यद्यपि वे हिन्दुओंके सब देवोंका और विशेषकर ' भयानक ' माताकी पूजा करते हैं तौ भी वे किसी प्रकारकी कानूनका-मानवीय या ईश्वरीय-गौरव या प्रतिष्ठा इनके हृदयमें नहीं वास करती है अर्थात् वे घृणाकी दृष्टिसे देखते है और वनके पशुओंसे किसी बातमे वढ़कर नहीं हैं। इनको किसी प्रकारकी वस्तु खानेमें कुछ परहेज नहीं है, गाय, भैंस, ऊँट, हिरन,सुअर इनके खाद्यपदार्थोंमेंसे हैं और वे मुर्दा खानेतकमें कुछ बुराई नही समझते हैं। दूसरी अधम या नीच जातियोंके समान वे राजपूतवंशराज होनेका दम्भ दिखलाते है और चोहान कोली,राठौरकोली, पुरिहारकोली इत्यादि नामोंसे अपना परिचय देते है जो केवल उनके प्राचीन कोली वंशमें अशास्त्रीय-रीतिसे उत्पन्न होनेकी वार्त्ताको पुष्टि करती है करीब २ सम्पूर्ण भारतमें कपड़ा बिनने वाले कोली जातिके हैं और यद्यपि वे अपनी असलियतको झुलाहा नाम धारण करके जो मुसलमान कपड़ा बुननेवालोंको हिन्दुकोलीसे पृथक् करता है,छिपानेका यत्न करते हैं। भील लोगोंमें कोलियोंकी सब बुराइयां मौजूद है और शायद मानवीय दृष्टिसे विचार करने पर एक दर्जे नीचे गिरे हुए हैं,क्योंकि वे सर्व प्रकारके कीड़े लोमड़ी,सियार चूहे, सांपोंको खाकर जीवन व्यतीत करते हैं,और यद्यपि उन्होंने भोजनकी सूचीमेंसे ऊंट और मुर्गेका-क्योंकि मुर्गा माता या देवीको जिसको वे पूजते हैं चढ़ाया जाता है-त्यागकर दिया है तौभी उनकी नैतिक अवनति अन्तिम सीमातक पहुंच गयी है। कोल और भील आप-समे वैवाहिक सम्बन्ध नहीं करते है। और न एक दूसरेके साथ भोजन करेंगे-सिर्फ यही उनका जातिबन्धन है, तीर और कमान इनके शस्त्र हैं और वे कभी २ तलवार बाँधते है पर बन्दूक कभी नहीं।

पिथिल इस देशमें किसानीका काम करते हैं और बनियोंके समान प्रतिष्ठित जाति ह। वे गाय बैल, भेंड, इत्यादिका झुंडका झुण्ड रखते हैं और खेतीका काम करते हैं। और लोग कहते है कि इनकी संख्या कोलियां या भीलोंके समान है। हन्दुस्थानके कुर्मी मालवा और दक्षिणके कोलम्बी और पिथिल तुल्यार्थवाचक हैं। इस देशमें और भी जातियां रहती हैं जैसे रेवारी ऊंटके पालनेवाले जिनका वर्णन रेगिस्तानके संपूर्ण जातियोंके साथ होगा।

घात और ओमुरसुमरा-अब हम राजपूतानेको छोड़कर सिन्धके रेगिस्तानका या उस भूमिका वर्णन करेंगे जो पश्चिममें राजपूतानेकी सीमासे सिन्धु नदीकी घाटीतक

और उत्तरमें दाउदपोतरासे 'रिन, के किनारे बुलारी तक फैली हुई है। यह भूमि करीब दो सौ बीस मील लम्बी है और अधिकसे अधिक इसकी चौड़ाई अस्सी मील है। यह सारा देशका देश थलरूपमें विद्यमान है और इस थलमे बहुत कम गाँव पाये जाते हैं, यद्यपि गड़रियोंके अनेक छोटे २ गांव इधर उधर दृष्टिगोचर होते हैं तौभी क्षणस्थायी होनेके कारण नकशेमें स्थान नहीं पासकते हैं। जहां कि पानी सुगमतासे साल भरतक मिल सकता है वहाँपर इनमेंसे कुछ पुरप और 'वसर' का कुछ न कुछ नाम रख लिया जाता है, परन्तु इनकी यदि अधिक संख्या गिनाई जाय तो पाठकोंको भ्रम होजायगा। कारण कि रेगिस्तानके घास पातके समान इनका जीवन भी क्षणभंगुर है। यह संपूर्ण देश रेगिस्तान है जिसमें पचास मीलतक पानीका एक बूँद भी नहीं मिलता है, और विना बड़ी सावधानीके इसका पार करना असम्भव है। रेतकी पहाड़ियाँ छोटे २ पहाड़ोंमें परिणत होगयी है। और कुएँ इतने गहरे हैं कि बड़े काफिलेके अनेक मनुष्य इस असारसंसारसे कूच करजायँ पेस्तर कि उन सबकी तृषा शान्त होसके। इनमेंसे कुछ कुंवोंकी गहराई बतलादेनेसे पाठकोंको इस बातका अनुमान होजायगा कि मरुदेशमेंसे यात्रा करना कितना सकट-मय है। इनकी गहराई ग्यारहसे पचहत्तर पुरुसावक या सत्तरसे पांचसौ फीट तक है। जयसिंह देसिरका तक एक कुंआँ पचास पुरुसा गहरा है, धोतकी वस्तीका साठ, गिरपका साठ, हमीर देवराका सत्तर, और जिञ्झिनियालीका पचहत्तरसे अस्सी पुरुसातक गहरा है।

इतिहासवेत्ता फरिश्ता भगेहुए सम्राट् हुमायूं और उसके नमकहलाल साथियोका इनमेंसे एक कुएँपरकी दुर्गतिका कैसा हृदयविदारी चित्र खींचता है। जिस देशमे होकर वे भागे जाते थे वह अपार रेतका समुद्र है, मुगल पानीके मारे अतीव कष्ट-मय दशाका अनुभव करते थे, कुछ प्यासके मारे पागल होगये, कुछ सज्ञाविहीन होकर भूतलपर शयन करने लगे। लगातार तीन दिन पानीके दर्शन तक न हुए चौथे दिन उनको एक कुंआ मिला जो इतना गहरा था कि बैल हाँकनेवालेको ढोल बजाकर इस बातकी सूचना दीजाती थी कि डोल मनकेपास आगया, परन्तु हुमायूँके अभागे साथी पानी पानक लिये इतने उत्सुक होरहे थे कि ज्योही पहिले पहिल डोलकी सूरत दिखलाई पड़ी और पेस्तर कि वह जमीन पर रक्खा जाय बहुतेरे डोलपर टूटपडे और इस तरहसे कुँएमे गिरपड़े। दूसरे दिन उनको एक छोटा नाला मिला और ऊट जिन्होंने कई दिनसे पानी चक्खा भी नहीं था, पानी पीनेके लिये छोड दिये गये, परन्तु अधिक पानी पीनेके कारण उनमेंसे कुछ मरगये। हुमायूँ अपूर्व आपदाओंको भोगता हुआ अपने कुछ साथियों समेत आखिरकार अमरकोट पहुँचा। राजाने जो रानाकी पदवीसे सुशो-भित है, हुमायूंके इस दुःखपर दया की और अपनी तरफसे कोई बात न उठा रक्खी जो हुमायूंकी वेदनाको शांत करसके या उसको इस दु.खमे दिलासा दसके।

हम अब उस देशमे है जहाँ हुमायूंने इन आपदाओंको भोगा था। और उस देशकी प्रसिद्ध राजधानी अमरकोटमें अकबरने जन्म ग्रहण किया, जिससे बढ़कर अबतक

कोई महान् सम्राट् नहीं हुआ है, हमको उस पर्देको हटादेना चाहिये जो हुमायूंको रक्षककी जोतिके इतिहासको छिपाता है, और यद्यपि वह नाममात्रका अमरकोटका सम्राट् है और चोरगांवका स्वामी है तौभी हमको भारतवर्षपर सिकन्दरकी चढ़ाईके समय उसका स्थानीय निवास और नाम बतलाना चाहिये। धात (Dhat) जिसकी राजधानी अमरकोट है, मरुस्थलोंके भागोंमेंसे एक भाग था जो प्राचीनकालसे प्रमारोंके अधीन चला आता था। इस देशकी पैंतीस जातियोंमेंसे अग्निकुल वंशकी जातियोमें सोढा ओमुरू और सुमुरो अधिक संख्यामें पाई जाती थीं, और पिछले दोनों नामोंके मिलनेके कारण उत्तरी थलका प्रसिद्ध नाम ओमुरसुमरा पड़गया है—और अबतक वह इसी नामसे विख्यात है—यद्यपि कई शताब्दी पूर्व इसका अधिकार उन्हींके हाथमें था।

अरोर जिसके आविष्कारका अभी उल्लेख होचुका है सिन्धुनदीके पार बेखरसे छः मील पूर्व नकशेमें विराजमान है, और यह ओमुर-सुमरानामक देशमें वर्तमान था ओमुरसुमरा सम्भव है किसी समय अधिक व्यापक शब्द हो, जब कि सुमराजाति के छत्तीस राजाओंका वंश पांचसौ वर्ष व्यतीत हुए इन देशोंपर राज्य करता था। उनकी शक्ति या प्रभुत्व नष्ट होनेपर और उनके प्राचीन प्रतिस्पर्धी सिन्धा तुम्भा राजाओंको दुवारा राज्य मिलने पर और कालचक्रके फेरसे इनके भट्टियोंके द्वारा पराजित होनेपर इस देशका नाम भट्टियोह प्रसिद्ध हुआ; परन्तु प्राचीन और प्रमाणिक नाम ओमुरसुमरा अबतक बना है और गड़रियोके छोटे २ गाँव—ओमुरा और सुमरामें—रेतकी पहाड़ियोंके बीचमें अब भी स्थित है। उनके बड़े भाई सोढाओंका वर्णन करनेके वाद उनका उल्लेख किया जायगा। इन संपूर्ण देशोंमें, मध्य और पश्चिमी राजपूतानेके भट्टियों चावड़ाओं, सोलंकियों गिहलौतों और राठारोंकी वस्तियों या उपनिवेशोंका चिह्न पाते हैं, और जहॉ कहीं हंम जाते है और कोई भी नवीन राजधानी स्थापित की जाती है तो वह हमेशा प्रमर राज्यमें ही आकर पड़ती है। पृथ्वीत्याना प्रमरकी यह वाक्य राजपूत संसारको लागू करनेसे मै दुहराता हूँ, मुश्किलसे अतिशयोक्ति पूर्ण होगी।

अरोर या अलोर जैसा कि अबुलफजलने लिखा है, और प्रसिद्ध भूगोलवेत्ता इवनहैकलने "महलमें मुलतानकी स्पर्धा या होड़ करता हुआ" वर्णन किया है, "मारुके नौ भागों" मेंसे एक भाग था। और प्रमर जातिके क्षत्री, जिनकी अनेक प्रसिद्ध शाखाओंमें एक सोढ़ा शाखा थी—इस पर शासन करते थे। बेखर या भानसूराका द्वीप (सलीफा अलमुनसूरके लफ्टिनेण्टने ऐसा नामकरण किया) अरोरसे कुछ मील पश्चिमकी तरफ स्थित है और सोदगीकी राजधानी ख्यालकी जाती है जब कि सिकन्दर सिन्धु नदीके मुखकी तरफ गया था, । और यदि हम नामकी सादृश्यताको इस देशके प्राचीन इतिहास सिद्ध राज्यके साथ मिलावें तो हमपर यह आक्षेप नहीं हो सकता है

---

(१) जातियोंकी सुची और प्रमरोंका वृत्तान्त देखो भाग प्रथम।

(२) फरिश्ता अब्बुल फजल।

कि हमने केवल जातपर विश्वास करके सोदगी और सोढ़ा एकही है ऐसा कहनेका साहस किया है। सोढ़ा राजे रेगिस्तानके पैतृक शासक थे जब कि भट्टी उत्तरसे निकलकर यहां चले आये थे, परन्तु इतिहास इस बातका उल्लेख तक नहीं करता है कि भाट्टियों से सोढाओंने अरोर और लोडोखाँको छीन लिया था नहीं। यह सम्भव है कि सोढा शाखाके समकालीन या सम्पद होनेके बजाय ओमुर और सुमरा उनके उपभागमात्र हों। यह आवश्यक है कि प्राचीन सिन्ध और इन जातियोंके संक्षिप्त इतिहास वर्णन करनेमे हम फरिस्ता और अब्बुफजलका अनुसरण करें। अब्बुलफजल कहता है-"प्राचीनकालमें सेहरीस नामका राजा अलोर राजधानीमें राज्य करता था और इसके राज्यका विस्तार उत्तरमें कश्मीर पश्चिममें मेहरान और दक्षिणमें समुद्रपर्यन्त था। ईरानी सेनाने इस राज्यपर आक्रमण किया। राजा युद्धमें खेतरहा और ईरानी फौज प्रत्येक वस्तुको लूटनेके बाद स्वदेशको लौटगयी। रायसोही राजपुत्र रायसा या (सोढ़ा) राजसिंहासनपर विराजमान हुआ। यह वंश वालीदके खलीफाके समय तक राज्य करता रहा। जब कि इराकके गवर्नर हिजौजने सन् ७१७ ई. में महमूदकासिमको

---

(१) मैं पाठकोंको विश्वास दिलाता हूं कि मैं नाममात्रकी सादृश्यता पर कोई अनुमान या परिणाम नहीं निकालता हूँ जबतक कि स्थानोंसे पूरा २ पता न लगजाय, क्योंकि हमने अन्यत्र इस बातका उल्लेख किया है कि प्रसिद्ध राजा पुरुयो पोरसको उत्पन्न करनेका गौरव पजाबके यदुवशियोंको है, यद्यपि पौर साधारण प्रमर शब्द इसी तरह उच्चारण किया जाता है-और पोरसमें अधिक सान्निध्यता है।

(२) कर्नल ब्रिगस अपने अनुवादमें इसको हुलीसा (Hull) sa) लिखते हैं, और उसी स्थान पर इस बातको लिखते हैं कि "प्राचीन मुसल्मान लेखकोंने हिन्दू नामोको इतना तोडमरोड़कर लिखा है कि वे प्राय पहिचान भी नहीं पड़ते हैं, या हम 'हुली' में जो सा शब्द संमिलित किया गया है-हुली सेहटियोंका पुत्र था-इसको हम कदाचित् उसकी जाति-सोढाकी पदवी ख्याल करें। अब्बुलफजलका रायसाही या रायसाके अर्थ (राजा सा) या सोढोंका राजा है। उसी वंशमें दहीर उत्पन्न हुआ था जिसकी राजधानी ८० हिजरीमें (अब्बुलफजल कहता है) अलोर या देविल थी, और जिसमें इतिहासवेत्ता भूगोल सम्बन्धी गलती करता है, अलोर या अरोर ऊपर सिन्धकी राजधानी है और दोवेल (शुद्ध देवल-मन्दिर-) या तत्ता नीचले सिन्धकी राजधानी है। संभव है कि दोनो ही दहीरके अधिकारमें थीं। हम मेवाड़के इतिहासमें प्रकट करचुके हैं कि मुसलमानोंके प्रथम आक्रमणसे मेवाड़की रक्षा करनेवालोंमें एक विदेशी राजा दहीर भी था। और हमने यह अनुमान किया था कि यह हमला सिन्ध प्रदेशको जीतनेके बाद महम्मदकासिमने अवश्य ही किया होगा। बापा चित्तौरका अधिपती, राजा मानमोरीका भांजा था इसलिये कासिमके विरुद्ध चीतौरकी रक्षार्थ शस्त्र उठानेमें दहीरके निर्वासित पुत्रके दो हेत थे। मोरी और भौर सोढा प्रमार वंशकी शाखाएं है (देखो भाग प्रथम सूचीपत्र) यह महत्वकी बात है कि हम पाठकोंका ध्यान उस कथनकी तरफ खींचें जो जाबुलिस्तानके हिन्दू राजाओंके बीचमें खोरासानके हिजूज (जिसने कासिमको सिन्धपर भेजा था) के हलचल मचाने पर अन्यत्र कहीं पर किया जाचुका है, वास्तवमें कुछ प्रमाण नहीं है परन्तु इससे केवल यह महत्वकी बात सिद्ध होती है कि महम्मदके आनेके पहिले राजपूतोंका राज्य चारोंतरफ दूर २ तक फैला हुआ था।—

भेजा, जिसने हिन्दुराजा दुहीरको मारकर विजय प्राप्त की । इसके अनन्तर अनसेरीका वंश इस देशपर शासन करता रहा फिर सुमराके वंशकी ध्वजा फहराई, और अन्तमें सीमा वंशके हाथमें इस राज्यकी शासन डोर गयी, जिन्होंने अपनेको जमशेदका वंशज समझ कर जामकी उपाधि धारण की । फरिश्ता भी इसी प्रकारका वर्णन करता है 'महमूदकासिमके मृत्युके अनन्तर, एक जातिने जो अनसेरीके वंशमें होनेका दावा करती है, सिन्धमें राज्य स्थापनकिया, इसके बाद जमींदारोंने राज्यको अपने अधिकारमें किया और पांचसौ वर्षतक स्वतंत्रतापूर्वक शासन किया । सुमराओंने सुमना नामके वंशका राज्य उलटदिया । जिनका सरदार जामकी[2] पदवी धारण करता था, । यूनानी और ईरानी लेखकोंके अशुद्ध लेखके कारण इन जातियोंके सादृश्यताको प्रस्थापित करनेकी कठिनताका उदाहरण फरिस्ताके दूसरे भागमें इसी वंशके वर्णनमें पाया जाता है । फरिश्ता इस वंशको सोमुना और अब्बुल फजल सुमा कहता है।"साहूनाकी जाति अप्रसिद्ध कुलोत्पन्न मालूम पड़ती है और सिन्ध-देशमें बेखर और तत्ताके वीचकी भूमिपर प्रथमतः निवास करती थी और जमशेदके वंशज होनेकी वात वताती है । इस जातिके निवासस्थानका पता ठीक २ लिखनेके कारण हम उसकी अक्षरकी अशुद्धी क्षमा करते है, सोमुना सेहना या सीमा लिखे जानेपर भी यह महान् यदुवंशकी सुम्मा या सम्मा जाति है, जिसकी राजधानी सुम्माका कोट या सुम्मा नगरी था जिसको यूनानी लेखकोके निकट लगता है जिसमें मल्लिनाथका मन्दिर बना हुआ है जैसा कि पहिले कह आये है; राठौरोंके अब कुल रक्षक देव है । महवो घरानेके दूसरे संवन्धीकी जागीर तिलवारा है, और भलोत्रा, जिसपर राज्यका अधिकार होना चाहिये, मारवाड़के प्रसिद्ध सरदार अहवाके पास पूर्वकालमें वतौर जागीरके थी और शायद अब भी हो । परन्तु भलोत्रा और सिन्द्री दूसरे ही वातके लिये प्रसिद्ध है । क्योंकि दुनेरकी रियासतके साहित ये दोनों दुर्गादासकी जागीरेथीं जो मरुके इतिहासमें सबसे वढ़कर विख्यात पुरुष है और जिसके वंशज अब भी सिन्द्रीपर अधिकार रखते हैं । महवोके जागीरकी वार्षिक आय पचास हजार रुपया कूती जाती है जिसमें यह सब प्रदेश शामिल है । पटैल (या सरदार) अपने आश्रित जनोके साथ कभी २ दरबारमें उपस्थित होते है परन्तु विपत्ति समय या कठिन प्रसंगके सिवाय वे राज्यकी सेवा करनेके लिये वाध्य नहीं है वे विशेषकर सीमाकी रक्षाके लिये बुलाये जाते हैं जिस कारण वे सोमेश्वर नामसे पुकारे जाते है या प्रसिद्ध है। इन्दुवती—यह प्रदेश, इन्दुजातिके राजपूतोके

—उत्तम हस्तलिखित प्रतियोंके नाश होजानेसे पूर्वीय साहित्यकी जो हानि हुई है उसकी पूर्ति कठिनतासे होसकती है ये प्रतियां अनेक वर्षोके परिश्रमसे कर्नल ब्रिग्सने एकत्रित की थी और उनका अभिप्राय प्राचीन मुसल्मानोके कारगुजारीका साधारण इतिहास लिखनेका था ।

(१) वह पिछले वंशके सत्रह राजाओंके नामकी सूची देता है । ग्लैडविनका आईन अकबरीका अनुवाद भाग सफा १२२.

(२) देखो ब्रिगसका फरिश्ता भाग ४ सफा ४११-४२२.

वसनेके कारण, जो पुरिहारोंकी प्रसिद्ध शाखा है, (मंडोरके प्राचीन राजे थे) इन्दुवती कहलाता है। और यह मंलोत्रासे उत्तरकी ओर और जोधपुरकी राजधानीसे पश्चिमकी तरफ, फैला हुआ है। और गोगाका थल इसको उत्तरकी तरफसे घेरे हुए है। इन्दुवतीका थल करीब २ तीस कोशकी परिधिमें है।

गोगादेवका थल-गोगाका थल जो चौहानोके वीररसपूर्ण इतिहासमे प्रसिद्ध है। इन्दुवतीके ठीक उत्तरमें है, और एक ही वर्णन दोनोके लिये लागू होसकता है। इस प्रदेशमें रेतके टीले बहुत ही ऊंचे हैं। आवादी बहुत ही कम है, चन्द गांव पाये जाते हैं, पानी सतहसे बहुत दूर पर है और बड़े २ जंगलोंसे परिपूर्ण है॥ "इस रो के" प्रसिद्ध नगर थोव Thobe फूलसुन्द और बीमसिर हैं। यहांके लोग "टंकों" मे बरसाती पानी एकत्र करते हैं जिसको वे बड़ी ही किफायतके साथ खर्च करते हैं और अकसर पानीके सड़जानेसे उन्हें रतौन्धकी बीमारी उत्पन्न होजाती है।

तिर्रूरोका थल गोगादेव आर जैसलमेरकी वर्त्तमान सीमाके बीचमे स्थित है और पूर्वकालमें यह जैसलमेर राज्यके अधिकारमें था। पोकर्न न सिर्फ तीर्रूरोका, वरञ्च मरुस्थलीके दो प्रसिद्ध राजाधानियोके बीचमें स्थित संपूर्ण मरुभूमिकी राजधानी है। इस थलका दक्षिणी हिस्सा उस भागसे भिन्न नहीं है जिसका वर्णन अभी होचुका है परन्तु उत्तरी हिस्सेमें और अधिकतर कोकर्न नगरके चारोंतरफ सोलहसे वीस मील तक, नीची असंयुक्त ढीली चट्टानोंकी श्रेणियां पायी जाती हैं। और यह उसी श्रेणीका हिस्सा है जिस पर भट्टियोंकी राजधानी बनी हुई है और इन चट्टानोंकी श्रेणियोके कारण इस भूमिका नाम मेरे या चट्टानी या चन्द्रानी या चन्द्रान युक्त पड़गया है। 'तीर्रूरो' 'तीर' शब्दसे निकला है। जिसका अर्थ गीलापन झरनेकी अद्रिवा या झरना है जो इससे 'रो' निकलते हैं।

पोकर्न नगर जिसमे सलीमसिंह निवास करते हैं (जिनके वंशका हम सविस्तर वर्णन मारवाड़के इतिहासमे कर आये हैं) दो हजार घरोंकी वस्ती है और पत्थरकी दीवालसे चारों तरफसे परिवेष्टित है, और किलेपर पूर्वकी तरफ कितनी ही तोपे चढ़ी हुई है। नगरसे पश्चिमकी तरफ इस देशके लोगोकी केवल वरसातहीमें बहते हुए पानीका आश्चर्य जनक वा अद्भुत दृश्य दिखलाई पड़ता है, क्यों कि रेत शीघ्र ही इस पानीको सोखलेती है। कुछ लोग कहते हैं कि यह पानी कलोड़के "सर" से आता है कुछ पहाड़के झरनों या चश्मोसे आता हुआ बतलाते हैं; कुछ भी क्यों न हो, पर वहांके निवासी उसके प्रवाह मार्गमें कुण्डा खोदकर सुस्वादु और प्रचुर परिमाणमें जलको प्राप्त करते हैं पोकर्नका सरदार चौवीस गाँवोंके अलावा, लूनी और वान्दी नदियोंके बीचमे स्थित भूमिका स्वामी है जिसकी कीमत करीब २ लक्ष रुपयेकी है। दूसरा और मंजिल जो

---

(१) यहांके निवासी कहा करते हैं कि इस रोगकी उत्पत्ति एक छोटेसे तागेके समान कीड़ेके द्वारा होती है, जो घोड़ेके आंखमें भी होजाता है, मैंने घोड़ेके आंखमें इसको बडे ही वेगसे फिरते देखा है। यहांके लोग उसको छेदकर कीचरके साथ या आंसूके साथ निकाल देते हैं।

राजभक्त दुर्गादासकी जागीरें थीं। अब देशद्रोही सलीमके अधिकारमें है। पोकर्नसे तीन कोश उत्तरकी तरफ रामदेवरा नामक गाँव है-रामदेवका मंदिर होनेके कारण गाँवका नाम रामदेवरा पड़गया है जहां भादोंके महीनेमें मेला लगता है जिसमें चारों तरफका अदमी आता है। कराचीबन्दर यहाँ मुलतान शिकारपुर और कच्छके व्यापारी यहां पर भिन्न २ देशोंकी वस्तुओंका विनिमय करते हैं। घोड़े ऊँट बैल यहां अधिक संख्यामें पाले जाते हैं। परन्तु सन् १८१३ ई.के अकाल अराजकता राजा मानके गद्दीपर बैठनेके समयसे चली आई हुई और राठौरों और भट्टियोंकी असीम कलहने इस अभिलषित व्यापारको बन्द करादिया है जिसके कारण कभी २ मरुभूमिके मध्यमे आनन्द और कर्मण्यताका दृश्य दिखलाई पड़ता था। खावरका थल यह (थल) जो जैसलमेर और बरमेरके बीचमें स्थित है और गिरोपके पास धातके मरुभूमिसे जाकर संलग्न होता है, मारवाड़के सुदूरकोणमें स्थित है। मनुष्य संख्या कम होनेपर भी अनेक विस्तीर्ण-स्थान है जो इस मृत्यु (यमालय) में नगर पदवी धारण करनेके योग्य है। इनमेंसे शिव और कोटरा बहुत बड़े हैं और उन पहाड़ियोंकी चोटियों पर स्थित है जो भुजसे जैसलमेरतक पायी जाती है। शिवमें तीनसौ घर हैं और कोटरामें पांचसौ ये दोनों नगर राठौर सरदारोंके हाथमें हैं जो जोधपुरके राजाकी नाममात्रकी अधीनता स्वीकार करते है। कुछ काल पूर्व अन्हलवाड़ा पत्तन और इस देशके बीचमें व्यापार होता था, परन्तु सेहरीसे डॉकुओंने इतने काफिलाओंको लूटा कि आखिरकार यह व्यापार बन्दही होगया। इस स्थलमें असंख्य भेड़ें और भैसोंके चरनेके लिये हरित भूमि मौजूद है।

मल्लिनाथका थल या बरमेर-पूर्वकालमें इस संपूर्ण देशमें मल्लि या मालिनी जाति निवास करती थी, जिनको यद्यपि कुछ लोग राठौर वंशका बतलाते है तौभी निसन्देह ये चौहान है और उसी वंश या कुलके है जिस कुलको जुनाचोटनके स्वामीने उजागर किया है। पिछले अकालके पड़नेके पहिले बरमेर बारहसौ घरोंकी बस्ती कूती गयी थी, जिसमें सब जातियोंके मनुष्य निवास करते थे, और चौथाई आबादी सांचोर ब्राह्मणोंकी थी। बरमेर उसी पहाड़ी पर स्थित है जिसपर शिव-कोटरा बसते हैं और यह पहाड़ी यहाँ पर दोसौसे तीनसौ फीटतक ऊंची है। शिवसे बरमेरतक एक बड़ा समतल मैदान चलागया है जिसमें कहीं २ पर नीचे रेतके 'रीले' पाये जाते हैं जो अच्छी ऋतुमे खानेके लिये काफी अन्न पैदा करते है। पद्मसिंह बरमेर सरदार उसी वंशकी शोभाको बढ़ाते हैं जिस वंशमें शिवकोटरा और जैसोल नरेशोंने जन्म ग्रहण किया है; वे सब जैसोल नरेशके वंशज है. और पद्मसिंहके जागीरमें चौतीस गांव हैं। पूर्वकालमें (दानी) annil यहाँ यात्रियोंसे कर वसूल करनेको नियत किया गया था; परन्तु सेहरीसकी लूटने इस पदको वेतन युक्त या विना कामका कर दिया है, और बरमेर सरदार जो कुछ वसूल कर पाते है उसको स्वयं ही लेलेते है वे भट्टियोंसे, जिनसे यह प्रदेश जीता गया था सलाह करना अपने अधिपतिकी अपेक्षा अधिक उपयोगी समझते हैं, जिसके अधिकारियोंसे वे प्रायः युद्ध करते हैं विशेष कर जब हिन्दकी

माँग उनपर होती है। ऐसे अवसरों पर वे मरुभूमिके सेहरीसोंसे मदद लेना घृणास्पद नहीं समझते हैं। इस संपूर्ण देशमें लोग अच्छी जातिके ऊंट पालते हैं जिनकी भारतके संपूर्ण बाजारोंमें अधिक माग रहती है।

खेरधूर-इन राज्योंके इतिहासमें अनेक बार खेरका उल्लेख किया गया है। राठौरोंने पहिले पहिल गोहिला जातिको निकाल कर इस दूरस्थित कोणमें अपने रहनेका निवासस्थान बनाया था। गोहिल जाति इस स्थानको परित्याग करके खम्भातकी या आखातकी तरफ चली गयी थी। और अब गोगा और भावनगरके स्वामी हैं। और ऊंटोंपर काफिलाको लूटनेके बजाय हिन्दमहासागरमें अति गर्हित दासोका व्यापार करते हुए उन्होंने सोफलाके स्वर्णतट तक यात्रा की। यह जानना कठिन है कि वे खेरकी भूमिको किस अक्षांश रेखापर नियत करते थे, जो गोहिलोंके समयमें लूनीके निकटतक चली गयी थी। और न यह आवश्यक है जरा २ सी नुक्ताचीनीमें हम उलझे रहें क्योंकि वर्णन करनेके अभिप्रायसे ही हमने उन नामोंका व्यवहार किया है। बहुत सम्भव है कि वह संपूर्ण देश इसमें शामिल हो, जिसमें बादके मह्लिनी या चौहान जाति निवास करती थी। जिन्होंने जुना-चोटनकी नींव डाली थी, इसलिये हम इसको खेरधूरमें संमिलित करेंगे। राजधानी खेरल मारुके नवदुर्गोंमेंसे एक दुर्ग था, जब कि प्रमार उसके अधीश्वर थे। आज वह ह्रास होके २ गांवसा रहगया है, जिसमे चालीस घरसे अधिक नहीं हैं, और चारों तरफसे 'श्यामरंगकी' पहाड़ियोंसे परिवेष्टित है जो भुजसे आनेवाली श्रेणीका एक भाग है। जुनाचोटन या प्राचीन चोटन संयुक्त नाम होनेपर भी, पृथक् २ दो स्थान हैं. और लोग उनको अति प्राचीन और हृप्प राज्यकी राजधानियां बतलाते हैं। वंश परपरा गत-वाली इस विषयमे चुप है कि हथराज क्या था। हम केवल इतना ही जानते हैं कि उसके राजे चौहान थे। उन नगरोंके प्राचीन चिह्नके देखनेसे मालूम पड़ता है कि किसी समय ये बड़े २ नगर होंगे, और विशेषकर जुना प्राचीन चारों तरफसे पहाडियोंसे परिवेष्टित होनेके कारण इसमें भीतर घुसनेके लिये पूर्वकी तरफ सिर्फ एक छिद्र या मार्ग है, जिसके मुखपर एक छोटा सा किला भग्नावस्थामें अब भी विद्यमान है। इसी प्रकार पर्वतके शिखर पर दो और किलोंके चिह्नमात्र दिखलाई पड़ते हैं।

भग्नावशेष मंदिर। बन्द बावड़ी प्राचीनकालमें इस नगरकी विस्तीर्णताकी साक्षी देती है। जिसमें बारह सहस्र मकान बतलाये जाते हैं। अब इस स्थानपर दोसौसे अधिक झोपड़े नहीं हैं जब कि चोटन अब केवल छोटासा गांवमात्र रहगया है। धोरिमनमें

---

(१) बहुत समव है कि जिस वृक्षको खेर और धर (भूमि) कहते हे उस वृक्षकी मरुभूमि में विपुलता होनेके कारण इसका यह नाम पड़ा है। यह 'खेरलू' भी कहलाता है, परन्तु 'खेराल' खेरका स्थान अधिक उपयुक्त नाम है इन प्रदेशोंमें यह जड़ी बड़ी ही लाभदायक है। इसके सिकुड़नेवाले छिलकेको जिसकी शक्ल लिबरनम Liburnam से मिलती है। वे भोजनके काममें लाते हैं। इसका गोंद व्यापारके लिये एकत्र किया जाता है, ऊंट उसकी शाखाओंको खाते हैं और उसकी लकड़ी झोपड़े बनानेके काममें लायी जाती हैं।

जो उस पर्वत श्रेणीके दूसरे शिरेपर स्थित है जिस पर जुना और चोटन विद्यमान है एक अद्भुत पूजनीय स्थान है जहां श्रावण शुदी तीजको यहांके निवासी एकत्र होते हैं। रक्षक सन्ट अलनेदेवके नामसे प्रसिद्ध हैं, जिनके द्वारा या प्रभावसे मल्लिनी एक महान् विजय प्राप्त करनेको समर्थ हुए थे। अलनदेव पर्वतके शिखर पर एक श्रेणीमें घोड़ेके मुखकी आकारवाली कुछ पीतलकी मूर्तियाँ रक्खी हुई है जिनकी पूजा की जाती है इन मूर्तियों से चाहे भविष्यतमें यह बात सिद्ध होजाय कि मल्लिनीके मध्य एशियाकी अश्ववंशकी एक शाखा–पूर्वपुरुष सिदियनथे, परन्तु इस समय अनुमान या अटकलके शिवाय इस बातके समर्थनमें कोई ऐतिहासिक आधार नहीं है । नागर–गुरु–बरमेर और नागर गुरुके बीचमे लूनी नदी पर एक अपार अविच्छिन्न थल या विशेष करके 'रो''स्थित है, जिसमें खैर केजरी करील क्षेप फोकके घने जंगल है, जिसके गोंद और बेरसे दक्षिणी जिलोंके कोली और भील लाभ उठाते है। नागर और गुरु लूनीके किनारे दो बड़े २ नगर हैं सो वह चौहानराजकी सीमापर स्थित हैं, और पूर्वकालमें दोनों इसके भाग थे। इस स्थानपर हम मारवाड़के पश्चिमी थलोंका वर्णन समाप्त करते हैं एक तो प्रकृति ने स्वयं ही मारवाड़को ऊसर या धनधान्य विहीन रचा है, तिसपर संवत् १८६८के जिसको तीन वर्ष व्यतीत हो चुके हैं–भयंकर दुर्भिक्षने जिसने संपूर्ण देशोंमें हाहाकार मचादिया था, मारवाड़की दुर्वस्थाको अन्तिम सीमातक पहुँचादिया था । गत तीस वर्षोंसे पूर्वोक्त वर्णित अव्यवस्थाका राजधानीमें अधिकार होनेके कारण ये दूरस्थित देश मरुभूमिकी जातियों अथवा वहांके लुटेरे स्वामियोंके पूर्णतया हाथमें हैं और वे चाहें जो कुछ करें इसके लिये कुछ भी अवरोध नहीं है।

जब हम इस बातका विचार करते है तब हमारे आश्चर्यका वारापार नहीं रहता है कि मनुष्य कैसे ऐसे देशमें अपने प्राणोंकी रक्षा कर सकता है, जिसमें चन्द नमककी झीलोंके, और ऊँटोंके लिये सुन्दर चरागाहोंके सिवाय ऐसी कोई वस्तु नही है जिससे उसके मालिक कुछ लाभ उठासके। ये चरागाह विशेषकर दक्षिणी प्रदेशोंमें हैं जहांके ऊंटोंसे बढ़कर ऊंची जातिका ऊंट मरुभूमिमें नहीं पैदा होता है।

---

(१) अब सन् १८१४ हैं। मैं इन प्रदेशोंसे मेरी खोजकरनेवाली मंडलियोंमेंसे एकके लौटनेके बाद ही मैं उस दिनके भ्रमण वृत्तान्तकी पुस्तकोंसे लिखरहा हूं। मेरी मंडली अपने साथ थातके निवासियोंको लायी थी जो अपनी सीधी बोलीमें कहा करते थे कि मरुभूमिका नाप उनके हस्तामलक है, क्योंकि वे तीस वर्षतक कासिदका काम करनेमें नियत किये गये थे। बादको उनमेंसे दो अपने कुटुम्बको देशसे जाकर लेआये थे और पांच बरससे अधिक मेरे आश्रय या सेवामें बने रहे, । वे नमकहलाल लायक और ईमानदार थे और मेरा बताया हुआ डाककी जमादारीका काम बड़ी ही योग्यतासे संपादन करते थे, और यह काम मेरे सुपुर्द बहुत दिनतक रहा जब कि शिन्दे (सेन्धिया) के दरबारम नियत था, और किसी समय जब कि काम अधिक था भारतके भयानक और अपरिचित प्रदेशोंमें होकर गंगाके किनारेसे बंबई तक पत्र भेजने पड़ते थे। परन्तु ऐसे खोजके कामोंमें जिन आदमियोंको मैंने सिखाया था, उनकी सहायतासे मुझको ऐसी कोई आपत्ति नहीं मिली जिसको मैं पार न करसका।

चोर-क्योंकि अमरकोट सोढाओंसे छीन लिया गया है इस लिये निर्वासित राजा जो अब भी रानाकी उपाधि धारण करता है अपनी प्राचीन राजधानीसे पन्द्रह मील ईशान कोणकी तरफ चोर नगरमें निवास करता है। जिस वंशके पूर्वपुरुषोंने सिकन्दर, मेननदेर (Menander) और कासिमका सामना किया, और भारतवर्षके सिंहासनाच्युत शरणागत प्राप्त हुए, हुमायूकी रक्षाकी, आज उन्हींका वंशज विवाहमें मिले हुए धनसे या देहेजसे अपनी प्राण रक्षा करता है, या अपने मरुभूमिस्थित राज्यके चन्द्भूमिके टुकड़ोंकी उपजसे जीवन निर्वाह करता है। जिनको सिन्धके राजाओंने अपनी ओरसे उनको दे रक्खा है। उसके आठ भाई हैं जो जीविका प्राप्त करनेको कुछ भी उद्योग नहीं करते है और ये इन राज्योंके कोषकी न्यूनताको पूर्ण करनेवाली लूटसे अपनी उदरपालना करते हैं।

सोढा और झारीजा, हिन्दू मुसलमानोको जोड़नेवाली जंजीर है, क्योंकि हम जितना ही पश्चिमको तरफ वढ़ते हैं उतनी ही अधिक शिथिलता या ढिलाई राजपूतोंके आचार विचारमें दृष्टि आती है। तौभी एकमात्र स्थानकी अपेक्षा कोई दूसरा ही अधिकतर प्रवल कारण है जिसने उनके हृदयमे जातीय अधिकारोसे हानि करानेवाली भावनाको उत्पन्न किया है जिसके कारण सोढा और सिन्धी परस्पर वैवाहिक सम्बन्धके वन्धनमे पड़ते हैं क्षुधा ही एकमात्र कारण है, और कोई पुरुष इस वातसे इन्कार नहीं कर सकता है कि मनुजीकी आज्ञाओंकी अपेक्षा उसका प्रभाव अधिक वलशाली है। प्रत्येक तीसरे वर्ष दुर्भिक्ष पड़ता है, और जिनके पास उससे लड़नेका सन्मान नहीं होता है वे अपने पड़ोसियोकी शरणमे प्राप्त होवे हैं। और विशेष कर सिन्धुकी घाटियोमे भाग जाते हैं। प्रत्युपकारमे वे अपने प्राण वचानेवालोको अपनी कन्याका हाथ पकड़ा देते है, परन्तु वे अपनी प्राचीन रीति अब भी इस दृढ़ताके साथ पालन करते है कि विवाहिता स्त्रीको फिर अपने घरमे नहीं आने देते हैं, या ग्रहण नहीं करते हैं। अपनी कन्याएँ मीर-गुलामअली मीर सोहराव, और दादरसरदार खोसाको देकर सोढाओंके वर्त्तमान राना दूसरोंके लिये उदाहरण स्वरूप वनचुके है, इस लिये जैसलमेर वह परकरके राजे-रानाके भाई-यद्यपि सोढा राजकुमारीका पाणिग्रहण करना स्वीकार करलेंगे (क्योकि उनको उसकी लोहूकी पवित्रतापर विश्वास है) तौ भी वदलेमे अपनी कन्या रानाको नहीं देंगे क्योंकि संभव है उसकी संतान वलौचकी अन्तःपुरकी शोभाको वढ़ावें। परन्तु मारवाड़के राठौर न अपनी कन्या घातको देंगे और न उसकी कन्या लेंगे। इस देशकी स्त्रियां अपनी सुन्दरताके लिये प्रसिद्ध होनेके कारण व्यापार-वैवाहिक व्यापारकी वस्तु समझी जाती है और यह कहाजाता है कि (धतियानी) की सुन्दरताकी चर्चा, यदि सिन्धीके कानोंतक पहुँचती है तो वह उसके पिताके पास उतना अन्न भेज देता है जितना वह उसके वदलेमें लेना स्वीकार करता है, और सौदा पटजाता है।

हम यहाँ पर सोढा जातिकी रीति व्यवहार या दूसरी ही वैशिष्ठ्यवातोंका अधिक वर्णन न करेगे यद्यपि हम इस लेखके अन्तमें इस देशकी जातियोंका सामान्य वर्णन

करते हुए फिर सोढाओंकी रीतिका वर्णन करदेंगे । जातियां-भिन्न २ जातियां ही मरुभूमि और सिन्धकी घाटीमें रहनेवाली नवीन खोज करनेवालोंके लिये बड़ी भारी सामग्री उपस्थित करदेंगी और संभव है कि इस खोजमें कुछ महत्त्वपूर्ण और ऐतिहासिक वार्तोंका पता लगजाय अनुसंधान कर्त्ता उन जातियोंकी वंशावलीमें जिन्होंने इसलाम धर्मको स्वीकार करलिया था, उन नामोंकी पता लगावेगा जो एक समय इतिहासमें प्रसिद्ध थे परन्तु अब नवीन धर्मरूपी चादरसे ढके हुए हैं और संभव है कि वह उन नामोंकी मददसे उनकी ऐतिहासिक उत्पत्तिको ढूंढ़ निकालें । अनुसंधानकर्त्ता सोढा कहीं और मालिनी जातिको पावेगा जो इतिहास, स्थान और नाममात्रकी सादृश्यताके कारण इस बातका अनुमान करनेको वहुत जगह देती हैं कि सोदगी, काठी और मालिनीके वंशज हैं जिनके पूर्वपुरुषोंने सिन्धु नदीके मुखकी तरफ जाते हुए सिकन्दरका सामना किया था, गेटी या यूतिके टिड्डी दलके अलावा जिनमेंसे वहुतेरोंने वलौचकी साधारण पदवीको धारण करलिया है या प्राचीन खास-दूसरी पदवी नहीं है-नूमरी पदवीको अवतक वचाये हुए हैं, जव कि दूसरोंने प्राचीन 'जहित' नामको अवतक जीवित रख छोड़ा है । हमारे पास जोहिया और दाहिया वंशके विशेष चिह्न मौजूद हैं जिनके वारेमें जैसलमेरके इतिहासमें और अन्यत्र स्थान पर भी वहुत कुछ कहा जाचुका है, जो गेटी जित और हूनके सहित प्राचीन भारतकी "छत्तीस राजपूत वंश" में शामिल है ये वाराह और लोहानाके सहित कौरवका प्रसिद्ध नाम, भारतमें कृष्णके शत्रुको अवतक जीवित रखते हुये धारण करते हैं । वाराह और लोहाना जो कई शताब्दी पहिले अगणित दलसे पंजाबमें आये थे, अव "यमालय" में केवल अल्पसंख्यामें दिखलाई पड़ेंगे । सेहरी-हमारे पश्चिमी मरुभूमिका वड़ा लुटेरा मनुष्य समाजका शत्रुके लूट और आद उसकी आदतोंके विषयमें वहुत कुछ कहा जा सकेगा । परन्तु हम पहिले पहिल उन जातियोंका वर्णन करेंगे जिनमें कुछ भी हिन्दूपन शेष है और वाद करके उनकी विशिष्टताओंका कथन किया जायगा । भट्टी राठौर, जोधा, चौहान, मालिनी, कौरव, जोहा, सुलतान्, लोहाना, अरोरा, खुमरा सिन्दिलु मैसुरी, वैष्णवी जाखर शैगया अशैग पुनिदा ।

मुसलमानोंमें सिर्फ दो जातियां कुल्लोरा और सेहरी है जिनकी उत्पत्तिमें कुछ संदेह है, और दूसरी जातियां जिनके नाम हम गिनावेंगे न्याद है अर्थात् राजपूत या हिन्दुओंकी दूसरी जातियां थीं जिन्होंने स्वधर्मको त्यागकर किसी कारणवश इसलाम धर्मका स्वीकार किया था, जूत; राजूर, ओमुरा, सुमरा, मेर मोर या मोहर बलौच; लुमरिया, याल्का, सुमैचा, मंगुलिया, वागभ्रिया, दाहिया, जोहिया, कैरो, मगुरिया; ओडुर; बेरोवी वावुरी, तावुरी, चरेन्दी, खोसा, सुदानी लोहाना । इन जातियोंकी आदतोंका वयान करनेके पहिले हम न्यादकी एक विशिष्टताको कहना चाहते हैं जिन्होंने अपने

(१) न्याद नवीन शब्द है और ख्याल करता हूँ कि याद (प्रथम) और नौ (नवीन) के संयोगसे बना है ।

पुराने धर्मका त्याग करते समय उस धर्मके सर्वश्रेष्ठ नैतिकगुण और सहनशीलताका भी बायकाट किया और जिस मुसलमानी धर्मको उन्होंने स्वीकार किया था उसका तास्सुब उनकी नसोंमे द्विगुणितरूपसे फैलगया। इस नैतिक रूपान्तरका कारण क्यों? मुसलमानी धर्मका स्वाभाविक गुण है या स्वधर्म त्याग करनेका परिणाम बुद्धि भ्रष्टता है क्योंकि इस संसारमे उस राजपूतकी अपेक्षा जिसने इस्लाम धर्मको स्वीकार किया है, कोई भी खूंखार या असहनशील नहीं मिलेगा। सिन्ध प्रदेश और मरुभूमिमें हम एकही जातियोंको एकही नाम धारण किये पाते हैं परन्तु इनमेसे एक हिन्दू है और दूसरी मुसलमान पहिली अपने प्राचीन रीति व्यवहार पालन करती है, जब कि दूसरी असहनशील कायर और अतिथि द्वेषी हैं। यह संभव है कि मालदोत लाड़खानी, मुर्रो या तातुरिये शैतानके सन्तानोके हाथोंसे कमसे कम जान शायद कुछ मालका भाग बच जाय, परन्तु खोसा सेहरी या भट्टियोंके हाथसे छुटनेकी आशा मृगतृष्णावत है। ये इतने अज्ञान और क्रूर होते हैं कि यदि मुसाफिर दैवयोगसे रस्ता या रस्ता शब्दका उच्चारण करे तो वह बड़ा ही भाग्यवान होगा यदि इन पशुओंके हाथोंसे लाठीसे पीटकर जीता जागता बच जाय, जो (सेहरी) इन शब्दोंमें रसूल शब्दकी सादृश्यता पाते है, वह पहिले (रस्साके लिये किलबर या रूनडोरी और पिछलेके लिये डुगरा या डगे " शब्दको व्यवहृत करे। जिन्होंने पार्क, देनहम, और क्रूयटत–जो अनुसन्धानके इतिहासमें हमेशा अमर रहेंगे) के हृदयको उभाडनेवाले उनके साहसिक कर्मोंको पढ़ा है वे इस बातको जानकर आश्चर्यके समुद्रमें डूब जायेंगे कि किस तरह पूर्णतया सात्विक, दयायुक्त अतिथिसेवी हविषी इन गुणोमे राजपूतके समान हैं जो ला अल्लाह इल्लिलाह महमूद रसूल अल्लाके उच्चारण करते हुए वन्य–पशुकी वृत्ति स्वीकार करलेते हैं जब कि मध्य एशियाके देशोंमें बुद्धका अहिंसा परमोधर्मका सिद्धान्तके प्रचलित होनेसे तातरजातियोंके बीचमें आश्चर्य जनक तबदीली हुई है।

हम काफी तौरसे भट्टियों, राठौरो चौहानो और उनके वंशज मालिनी और सोढाओका वर्णन करचुके हैं, परन्तु सोढा जातिकी कुछ विशिष्टताओंका वर्णन शेष रहगया है।

सोढा–सोढा जो अबतक हिन्दूनाम धारण करते हैं, प्राचीन आचार विचारको यहाँतक परित्याग किया है कि वह उसी वर्तनमें पानी पीलेगा जिससे मुसलमानने पिया है और मुसल्मानके हुक्केसे तमाखू पीलेगा केवल उस निगालीको निकाल कर अलग रख देगा जो मुंहसे लगाई जाती है।

निर्धनताके कारण सोढाका जगप्रसिद्ध साहस लोप होगया है तौभी चोरी करनेमे फुर्तीलेपनके लिये वह अब भी विख्यात है और यह सेहरीस और खोसाके समूहमें शामिल होता है जो दाऊद पोतरासे गुजरात तकका धावा लगाते हैं सोढा विशेषकर तलवार और ढाल बांधते हैं और उनकी कमरबन्दसे एक लम्बा छुरा

---

(१) मार्गके लिये ' डुगरा ' राजपुतानामें अधिक प्रचलित शब्द है, परन्तु मैं ' किलबर ' या रूनडोरी शब्दसे परिचित नहीं हूं जो (रसाके) लिये व्यवहृत हुआ है।

लटकता रहता है जो शत्रुओंको घायल करने या गोस्तके टुकड़े २ करनेके काममें आता है, कुछके पास बन्दूक होती है, परन्तु प्राचीन साधारणता आक्रमण करनेका शस्त्र है जिसके चलानेमें वे बहुत ही प्रवीण या कुशल होते है उनका पहिनावा भट्टी और मुसल्मानोंसे मिलता है, परन्तु उनकी पगड़ीमें एक ऐसी विशिष्टता होती है जिससे सोढा हमेसा पहिचान लिया जाता है सोडा मरुभूमिमे तितरवितर पाये जाते हैं और इस जातिकी शाखाएँ मूलवंशकी अपेक्षा अधिक संख्यामें पायी जाती हैं जिसमेंसे सुमाचा शाखा-इसमें हिन्दू मुसलमान दोनों ही शामिल है-अधिक प्रसिद्ध हैं। कौरव-यह राजपूतोंकी जाति असंख्यामें धातके 'थलमें' पायी जाती हैं और लूटपाटके होते हुये भी यह पूर्णरूपसे परिभ्रमणशील है।

उनके वास करनेका कोई नियत स्थान नहीं है, परन्तु अपने भेड़ोंके वृन्दको साथ लेकर इधर उधर फिरा करते है और जहाँपर पानीका सुपास या गोरुओंको चरानेके लिये हरितभूमि मिलजाती है, वहांपर वे डेरा जमादेते हैं, और यहांपर थोड़े दिनोके लिये वे 'पीलू' (Peeten) की सजीव-वृक्षमें लगी हुई-शाखाओंको मिलाकर झोपड़े निर्माण करलेते हैं, जिनकी चोटोकी पत्तियोंको ढांक देते है और अन्दर मट्टीका पलस्तर लगादेते हैं और इस चतुरताके साथ वे इसको बनाते है कि बाहरसे देखने पर कुछ चिह्नतक नहीं दिखलाई पड़ता है तौभी घूमते हुए सेहरीसे वनमें बने हुए इन सुरक्षित स्थानोंकी हमेशा खोजमें रहते हैं जिसमें गड़रियेका स्वल्प अन्न रक्खा रहता है जो उनके चारों तरफ छोटे २ टुकड़ोंसे उत्पन्न हुआ है। जो अपने निरन्तर घूमनेवाले भाइयांके बीचमें खासकर परिभ्रमणशीलताके लिये प्रसिद्ध है अथवा परिभ्रमणता इनके ही बांट पड़ी है उन कौरवोंकी चंचल प्रकृतिका कारण शाप मेरे घातीने कहा है जो उनको प्राचीनकालमें मिला था।

ऊंट गाय भैंस और बकरियोको पालते हैं जिनको वे चारुन और दूसरे व्यापारियोंके हाथ बेंच देते हैं। वह बड़ी ही शान्तिप्रिय जाति है,और अपने समस्त राजपूत भाइयोंके समान अफीमके नशेमें जो समस्त नैतिक और शारीरिक रोगोंको दूर करनेवाली एक मात्र औषध है मनके लड्डू बांधा करते हैं जिसमें वे समस्त मरुभूमिको अपनी इच्छामात्र ही बनाकर जनपूर्ण कर सकते है। महल धोते या धोती कोखोके समान अल्पसंख्यामें घातमें निवास करती हैं। इनका स्वभाव कौरवोंसे मिलता है, और पूर्णरीतिसे गडारियेका जीवन व्यतीत करते हुए कुछ भूमिको जोतलेते है जिसमे अन्नका पैदा होना मेघराजकी कृपापर अवलम्बित है। वे अन्न और जीवनकी आवश्यक वस्तुओंके बदलेमें घीको देते है। राबरी और छांछ मरुभूमिका उत्तम भोजन है बाजरा ज्वार और कैजरी का दो सेर आटा कई सेर छांछमें मिलाकर आंच पर रख कर किंचिन्मात्र गरम करलिया जाता है और यह भोजन एक बड़े खान्दानके लिये काफी होगा।

भारतवर्षके मैदानोंकी अपेक्षा यहांकी गांए बहुत बड़ी होती है और प्रतिदिन आठसेरसे लेकर दश सेरतक दूध देती हैं। चार गाओंसे उत्पन्न हुए घीकी बिक्रीसे एक

घरका या कुटुंबका जिसमे दश आदमी हो अच्छी तरहसे जीवन निर्वाह होसकेगा और हर गायोंकी कीमत दश रुपयेसे पन्द्रह रुपये तक दूधके परिमाणके अनुसार होती है। यह रावरी जो अफ्रीकाके होसकौषके सदृश होती है प्रायः ऊंटके दूधसे बनायी जाती है जिसमेंसे घी नहीं निकाला जासकता है और जो तुरन्त ही अलग रखने पर सजीव ढेरसा होजाता है। सिन्धकी घाटीसे सूखी मछली ऊंटों या घोडो पर लदकर आती हैं और पूर्वमें बरमेरतककी समस्त जातियां इसको खरीदती हैं। सूखी मछली दो टुकराकी एकसेर मिलती है घातियोंके प्रत्येक गावँ या पुरमें दश झोपड़े होते हैं यह कौरवोंके झोपड़ाके समान होता है और थोड़े दिनके लिये निर्माण किया जाता है।

लोहाना यह जाति धात और तालपुरामें अधिक संख्यामे पायी जाती है। पीहिले वे (लोहाना) राजपूत कहलाते थे परन्तु व्यापार करनेके कारण वैश्य जातिमें परिणत होगये है। वे लेखक और दुकानदार होते है और किसी किसका रोजगार करनेमें जिससे उदरपालन होसके उनको एतराज नहीं है और 'बुभुक्षितः किं न करोति पापं' उक्तिके अनुसार वे बिल्ली और गायको छोड़कर प्रत्येक वस्तु भोजनीय समझते है।

अरोरा-यह जाति लोहाना जातिके समान हरपेशा जैसे व्यापार, खेती, करनेको तैयार है, और मेहनती चालाक, और अक्लमन्द होनेके सबबसे सिन्धराज्यमें नीचे पदों-पर नियत किये गये हैं। मितव्ययी अरोरा और इन्हीके समान अनेक जातियोंकी क्षुधा शान्त करनेके लिये ठंढे पानीमें मिलाहुआ थोड़ासा आटा काफी है। हम इस बातसे अपरिचित हैं कि अरोरमें रहनेके कारण इस जातिका नाम अरोरा पड़गया है। भाटिया जातिने अश्वारोही काम छोड़कर वैश्यवृत्ति स्वीकार करली है और इस विनिमयसे उनको बहुत ही लाभ हुआ है।

इनका स्वभाव अरोराके सदृश है और कर्मण्यता और संपत्तिमें अरोरासे उतरकर इनका ही नंबर है। शिकारपुर, हैदराबाद, सूरत और जैपुरमें अरोरा और भाटियोंके व्यापार करनेके लिये कोठियां बनी हुई है।

ब्राह्मण-मरुभूमि और सिन्धके ब्राह्मण वैष्णव धर्मका छलन करते हैं। ये ब्राह्मण मनुकी आज्ञाएं वहाँतक ही शिरोधार्य करते हैं जहाँतक इस मरुभूमिमे वे कष्टप्रद न हों। यहां वे (ब्राह्मण) स्वतः ही कानून या स्मृति हैं। वे जनेऊको पहिनते है परन्तु यहां पर यह धर्मसंबन्धी कृत्य करानेवाला या पुरोहितीका चिह्न नहीं समझा जाता है। क्योंकि व्यर्थ कालक्षेप करनेवाले मनुष्यकी यहां कुछ प्रतिष्टा नहीं है। वे खेती करते हैं और अनेक आवश्यक वस्तुओंको बचा हुआ घी देकर बदलेमे खरीदते हैं। वे धातमे बहुतायतसे पाये जाते है अकेले सोढा रानाका निवास स्थान चोर ही वैष्णवसंप्रदायके सौदार हैं और अमरकोट धारला और मित्तीमे इनके कई घर हैं। वे मछली नहीं खाते हैं और न हुका पीते हैं, परन्तु माली या नाईका बनाया हुआ भोजन करलेंगे, वे चौका नहीं लगाते हैं अधिक सभ्य देशमे अपरिहार्य है या जिसके विना काम चलही नहीं सकता है। वास्तवमें सिन्ध देशमे रहनेवाली हिन्दुओंकी सब जातियां भटियारिनके

हाथका बना हुआ सरायमें भोजन करलेंगे। वे बिना किसी भेदाभेदके विचारके हर एकके वर्तन व्यवहृत करते हैं जो केवल थोड़े रेत और पानीसे साफ किये जाते हैं। वे मुर्देको जलाते नहीं हैं परन्तु देहरीके निकट पृथ्वीमे गाड़ देते हैं, और समियाईवाले या धनी छोटासा चबूतरा बनादेते हैं जिसपर शिवकी प्रतिमा और जलका भराहुआ कलश रखदेते हैं। इस देशमें कोली और लोहानोंको छोड़कर सब जातियां जनेऊको पहिनती हैं जिसको हिन्दुस्तानमें केवल द्विजातिमात्र धारण करती है। इस प्रथा की मूल उत्पत्ति यहांके गवर्नरोंसे है जिन्होंने उत्तम और अत्यन्त निकृष्ट काम करनेवालोंके पहिचानके लिये यह प्रथा जारी की थी।

रेवारी-समस्त हिन्दुस्तानमें लोग इस शब्दसे परिचित हैं और यह शब्द ऊंटोंका पालन पोषण करनेवालोंके लिये व्यवहृत होता है परन्तु हिन्दुस्तानमें इस कामको करने वाले सदासे मुसलमान होते हैं। मरुभूमिमें यह एक अलग जाति है और हिन्दू है जिनका एकमात्र व्यवसाय ऊंटोंका पालना या उनका चुराना है। इस पिछले काममें वे असामान्य दक्षता या फुर्ती दिखलाते हैं। और वे भट्टियोंके साथ दाऊदपोतरा तक ऊंटोंके चरानेके लिये धावा मारते है। जब उनको ऊंटोंका चरता हुआ वृन्द मिलता है तब सबसे बढ़कर पराक्रमी और अनुभवी अपना भाला उस ऊंटके मारता है जिसके पास वह पहिले पहिल पंहुचता है और ऊंटके खूनमें कपड़ेको भिगोकर वह भालेके नोकपर रखकर दूसरे ऊंटके नाकके पास लेजाता है और फिर उलटे पांव बड़ी शीघ्रगतिसे भागता है और अपने नायकके उदाहरण और खूनके सुगन्धसे लुभाया हुआ समस्त ऊंटोंका वृन्द इसके पीछे जाता है।

जाखूर, शियाध, पुनिया संपूर्ण नाम जीतवंशके है और इनमेसे कुछ लोगोंनें उपविभागोंमें बटे हुए होने पर भी प्राचीन व्यवहार और धर्मको नही छोड़ा है परन्तु अधिकांश भागने इसलामधर्मको स्वीकार कर लिया है और जातीय नामको अबतक जीवित बनाये हुए हैं। ये लोग जिनको पहिले गिना चुके है सीधे और मेहनती है और मरुभूमि और घाटीमें पाये जाते है। उनको छोड़कर कुछ तितरवितर प्राचीन घराने पाये जाते है जैसे सुलतांन और खमरा जिनके इतिहासिक वृत्तान्त हमको विदित नही है, जोहिया सिन्दिल इत्यादि अनेक हैं जिनकी उत्पत्तिका उल्लेख मरुस्थलीके इतिहासमें होचुका है।

अब हम हिन्दू जातियोंके साधारण वृत्तान्तको छोड़देंगे जो (हिन्दु) समस्त सिन्धदेशमें मुसलमानोंके इच्छानुकूलचलते है जो अपनी असहन शीलताके लिये, जैसा कि पहिले कहचुके प्रसिद्ध हैं।

---

(१) अब्बुलफजल विजौरके सूबेका वर्णन करते हुए जिसमें यूसफजाई रहा करते थे, लिखता है कि "सुलतान जाति जो अपनेको सुलतान सिकन्दर जुलकरनैनकी लड़कीके वंशज कहते हैं, मिर्जा उलघबेगके समयमें काबुलसे आयी और इस देशपर अपना अधिकार जमाया"। मि० एल फिण्स्टोनने सिकंदरके वंशजोंका पता लगानेको व्यर्थ ही कोशिश की।

प्रसिद्ध है कि हिंदुओका नम्बर हमेशा दूसरा है कुँआपर हिन्दूको मुसलमानके पानी भरलेने तक धैर्य पूर्वक ठहरना चाहिये या भोजन बनाते समय यदि कोई मुसलमान आगको मांगे तो उसी समय उसको देना चाहिये नहीं तो हिन्दूके शिरपर चमरछत्रकी वरसा होगी।

सेहरी, कोस चन्दी सुदानी मरुभूमिकी मुसलमानजातियोंमे सेहरीकी प्रथम गणना है और कहा जाता है कि जड़में यह हिन्दू है और प्राचीन अरोराके वशके कुलजात कहेजाते हैं परन्तु इनकी उत्पत्ति चाहे सेहरीसे पार्टिजरने साहिर लिखा है वंशमे हो या अरवी शब्द सेहरा मरुभूमि जिसके वह हुआ है इसकी व्युत्पत्ति हो कुछ बड़े महत्वकी वात नहीं है।

कोसा या खोसा सेहरोकी शाखा हैं और इनकी आदते भी वैसी ही है । इन्होने अपने लूटके तरीकेको अव नियमवद्ध करदिया है और कौरी एक किस्मका कर जो रक्षार्थ डाकुओंके आदमियोको दिया जाता है-नामक कर नियत किया है जिसमें हल पीछे एक रुपया और पांच धड़ी अन्न लिया जाता है और यह कर गांवके गडरियो तकसे वसूल किया जाता है। इनके वृन्दके लोग विशेषकर ऊंट पर चढ़ा करते हैं यद्यपि इनमेसे कुछ घोड़े पर होते हैं सेल या साँग तलवार और ढाल इनके शस्त्र हैं परन्तु वन्दूक किसीके ही पास होती है। वे लूटनेके लिये चारो तरफ सौ कोस और जोधपुर और दाऊदपुराके राज्योंमे भी चले जाते थे।

परन्तु राजपूतके संग युद्ध करना वे वरादेते है जो (राजपूत) सेहरिके वारेमें कहता है कि युद्धके नक्कारा वजातेही सेहरी रणभूमिमें अवश्यही शयन करेगा। मरुभूमिके दक्षिणी भागमें वे खासकर रहते हैं, और नवकोट भित्तीके निकट वुलेरीतक इनमेसे वहुतेरे उदयपुर जोधपुर और शिववहके राज्यमे नौकरी करलेते थे परन्तु वे कायर और नमकहराम हैं।

सोढावंशसे जिन्होने इस्लामधर्मको स्वीकार कर लिया था सुमाचा उनमेसे एक है, और दोनो ही थल और घाटीमे अधिक संख्यामें पाये जाते हैं जहाँ उनके वहुतसे गांव हैं। उनकी आदतें घातियोंसे मिलती है परन्तु उनमेंसे वहुतेरे सेहरीकी संगति करते हैं और अपने भाइयोको लूटा करते थे। वे अपने शिरके वाल नही मुंडवाते हैं इस लिये मनुष्यकी अपेक्षा वे अधिकतर पशु दिखलाई पड़ते ह। वे किसी जानवरको रोगसे नहीं मरने देते हैं परन्तु जव उसके आरोग्य होनेकी कोई आशा नहीं रहती है तव वे उसको मारडालते हैं इनकी स्त्रियां वड़ी कर्कशा होती हैं और अपने मुखको झाँपती नहीं हैं। राजूर-वेवे कुलके कहेजाते है और भट्टी केवल मरुभूमि या जैसलमेरकी सीमाओंतक जैसे रामगढकेला, जारियाला इत्यादि तक-और जैसलमेर और ऊपरी सिन्धके वीचवाले थलतक अपना गमनागमन करते हैं। वे खेती करते है, भेड़ चराते हैं और चोरी करते हैं और जिन लोगोने इसलाम धर्मको स्वीकार किया है उनमे सवसे निकृष्ट समझे जाते हैं।

ओमुर और सुमरा प्रमरवंशके हैं और अब खासकर मुसल्मानी धर्मके पैरोकार हैं यद्यपि जैसलमेर और ओमुरसुमराके थलमें अल्पसंख्यामें पाये जाते है । इनका वर्णन हम काफीतौर पर करचुके हैं ।

कुलोरा और तालपुरी सिन्धदेशमें प्रसिद्ध जातियां हैं। सिन्धदेशके पिछले शासनकर्त्ता कुलोरा जातिके थे और वर्त्तमान शासन कर्त्ता तालपुरी जातिके है, और यद्यपि एकने ईरानके अब्बशैदसे अपनी उत्पत्ति कहनेका साहस किया है और दूसरेने पैगम्बर महम्मूदसाहिबसे पैदा होनेका दावा पेश किया है तौभी यह कहाजाता है कि दोनों ही बलौचके समान हैं जो विशेषरूपसे जीतवंशके कहेजाते हैं ।

तालपुरियोंकी आवादी लोहरी सिन्धकी आवादीकी चतुर्थांश है और वे हैदरावादके राज्यको लोहरीसिन्धकी अयथार्थ नाप रखते है । वे थलमें नही पाये जाते है।

नुमरी लुमरी या लुक्का—यह बलौच वंशका महान् उपविभाग है और अबुलफजलके कथनानुसार कुलमानीसे उतरकर है और रणक्षेत्रमें तीनसौ सवार और सात हजार पैदल उपस्थित करनेकी सामर्थ्य रखते हैं। लैड़विन और रेनल साहिबोंने नुमरीका नोसुर्दी करदिया है नुमरी या लुमरी जो लुक्का भी कहलाते हैं—लुक्का शब्द लोमड़ीके लिये विशेष प्रसिद्ध है, जीतवंशके हैं। जातीय शब्द बलौचकी जिसको वे धारण करते हैं क्या व्युत्पत्ति है, भविष्यतमें इन विषयोंका अनुसन्धान करनेवाला चाहे इसका पता लगावे कि यह नाम उन्होंने बलूचिस्तानसे लिया था उसको दिया ।

जीहूत जूत या जित अत्यन्त प्राचीन जाति, जो समस्त राजपूत जातियोंकी एकत्रित संख्यासे अधिक है। अब भी समस्त सिन्ध देशमें समुद्रसे दाऊदपूतरातक अपने प्राचीन नामको वचाये हुये है। परन्तु थलमें यह नहीं पायी जाती है । इनकी आदते अपने पड़ोसियोंकी आदतोंसे कुछ ही भिन्न हैं। सबसे पहिले इसलाम धर्म स्वीकार करने वालोंमेंसे वे एक है ।

मैर या मेर—हमको यह कदापि आशा न थी कि सिन्धकी घाटीमें मेरा या पहाड़ीजाति मिलेगी; परन्तु मेर शब्द काफी तोरसे इस बातको प्रमाणित करता है कि वे भट्टी वंशके हैं ।

मोहर या मोर—भट्टी वंशके कहे जाते हैं।

जताबुरी चोरीया ही एकमात्र भूतकी प्रसिद्ध पदवीको धारण करते है और शैतानके पुत्र की प्रबलतर उपाधि भी इनके ही बांटमें पड़ी है। इनकी उत्पत्ति संदेहजनक है परन्तु इनकी गिन्ती बातुरी खेनगर और समस्त राजपूतानामें फैले हुये दूसरे चौरवृत्ति करनेवालोंमें हैं जो तुम्हारे शत्रुका शिर या उसकी पगड़ी लादेंगे। वे दाऊदपोतरा विजनौत, नोक नवकोट और ओदुरके थलोंमें पाये जाते है। वे अपने ऊंटोंको किराये पर चलाते हैं और कारवाँ की रक्षा करनेके लिये भी नियुक्त किये जाते है।

जोहिया, दहिया, मंगुलियोंने पूर्वकालमें राजपूत होनेपर भी अब इसलाम धर्मको स्वीकार करलिया है। और घाटी या मरुभूमिमें अल्पसंख्यामें पाये जाते है। वैरीवी—

वेरीवी-वलौचकी एक शाखा,खैरोवी, जनमी, ओंदुर बाघी नामकी अनेक जातियाँ पायी जाती हैं जिनके पूवपुरुष प्रमर और शांकला राजपूत थे। परन्तु संख्यामे अल्प या अप्रसिद्ध होनेके कारण हमको इनके वर्णन करनेकी कुछ जरूरत नहीं है। दाऊदपोतरा-यह छोटासा राज्य, यद्यपि हिन्दूधर्मकी सीमासे वाहर है, तौभी मुश्किलसे मरुस्थलीकी सीमाके अन्तर्गत है और जिसकी रचना जैसलमेरके भट्टी राज्यका कुछ अंश काटकर आधुनिक समयमें हुई है। उस वंशके विषयमें हम कुछ नहीं जानते है जिसने इसकी नीव डाली, और हम सिर्फ इसी वातका वर्णन करेंगे जिसका उल्लेखतक मि. एलफिन्स्टोनने नहीं किया है-जिनका इस राज्यके अधिपती और राजधानी भावलपुरका रोचक वृत्तान्त पाठकोंके पढ़नेके योग्य है जव वह् कावुलको जातेहुए यहांपर ठहरे थे।

दाऊदखाँ दाऊदपोतराकी नीव डालनेवाला सिन्धुनदीके पश्चिममे शिकारपुरका निवासी था जहाँ उसने प्रजाकी हैसियतसे कई गुना अधिक शक्ति संपादन की उसके स्वामी कन्दहारके सम्राट्ने अपनी सेना इसको दमन करनेको भेजी। शाही फौजका सामना करनेमें नाकाविल होनेकी वजहसे उसने अपनी जन्मभूमिका परित्याग किया, और अपने घर गृहस्थी और जंगम संपत्तिको लेकर सिन्धुनदीके इस तरफकी मरुभूमिमे चला आया। शाही फौज वरावर पीछा करती हुई सूतीअल्लाह स्थानपर उसके निकट आ पहुँची। दाऊदके लिये दो वातोंमेंसे एकको किये विना छुटकारा न था कि यातो वह स्वयं अपनेको शत्रुओंके अधीन करदे या अपने घरवालोंको मारडाले जो उसके पलायन या वचावमें वड़ी भारी वाधा डालते थे उसने राजपूतोंके समान व्यवहार किया और अपने दुश्मनोसे लोहा लिया जो इस साहसिक कर्मसे भयभीत या धैर्यच्युत होकर और दाऊद पर आक्रमण उचित न समझकर भागगये। दाऊदखाँ अपने साथियों समेत सिन्धके समतल मैदानमे या 'कच्छी' मे वसगया और धीरे २ उसने अपने राज्यकी सीमा थल तक वढ़ायी। दाऊदके वाद मुवारकखा मसनदपर वैठा, फिर उसका भतीजा भावुलखां सिंहासनासीन हुआ जिसका वेटा सादिक महम्मदखा भावलपुर या दाऊदपोतराका वर्तमान अधिपती है। दाऊदपोतरा की उपाधि दोनोंहीके लिये देश और उसके स्वामी-लागू है। मुवारकखाने ही भट्टियोंसे खादल जिला छीन लिया था, जिसका जिक्र जैसलमेरके इतिहासमे कईवार होचुका था, और जिसकी राजधानी देरावल है जिसकी नींव आठवीं शताव्दीमें रावल देवराजने डाली थी, और यहांपर दाऊदके वंशजोंने अपना निवासस्थान नियत किया था। उस समय देरावलमे भट्टियोंकी एक शाखा रहती थी जिसने अतिप्राचीन समयमे मूलवृक्षसे अपना सम्वन्ध तोड़डाला था। इसके सरदारको रावलकी पदवी है और उसके वंशज अपने देशनिकालेके वाद गुरियालामें जो वीकानेरके अधीन है, पांच रुपया दैनिक वेतनपर जो उनके जीतनेवालोने नियत किया है रहते हैं।

"दाऊद पुत्रकी राजधानी भावलखाँने गरहके दक्षिणी किनारेकी तरफ वसायी और उसका नाम अपने नामपर रक्खा, उस स्थानपर प्राचीन भट्टी नगर था जिसका नाम मै

नही जाना सका, । तीस वरस बीते कन्दहारी सेनाने दाऊदपोतरापर आक्रमण किया और देरावलको घेरकर अपने अधिकारमें करालिया, और भावलखांको वीकमपुरके भाइयोंसे रक्षा मांगनेके लिये विवश किया ।

एक संधिपत्र लिखागया जिसके द्वारा देरावल उसको लौटादिया गया और भावलखाँने फिर एकवार अवदाली शाहकी अधीनता स्वीकार करली और अपने पुत्र मुवारकखांको रुपया बटानेके लिये वतौर जामिनके भेजनेपर शाही सेना चली गयी । मुवारक तीन वरस तक कावुलमे रहा और आखिरकार फिर स्वतंत्र किया गया और भावलपुत्रखांकी उपाधिसे विभूषित हुआ, राज्य पानेके उद्योगमें देखकर भावलखांने अपने पुत्रको कैदकर किंजरके किलेमे डाल दिया जहां वह भावलखांके मृत्यु पर्यन्त उसी हालतमें पड़ा रहा भावलखांकी मृत्युके कुछ पहिले दाऊदपोतराके सरदारोंने–बुद्धिपर खैदानी ओजगढ़वाला तिररोहके खुदावक्स गुरहीके इरितयारखां और ओचके हाजीखां–मुवारकखांको किंजरके किलेसे निकाला और भावलखांका मृत्युसंवाद उनको मुरारमें मिला जव कि वे वहाँ पहुँचे । वह राजधानीतक वरावर चला आया परन्तु नासिरखांने आलमखां गुरग या कावलीच पुत्र अपने पिछले अपराधोंकी सजासे डरकर उसको छलसे मरवा दिया और वर्तमान नरेश अपने भाईको सादिकखां मसनदपर बैठादिया जिसने तुरन्त ही मुवारिकके पुत्रोंको अपने छोटे भाई समेत देरावलके किलेमें बन्द करदिया । वे भाग गये और उन्होने राजपूतों और पुरवियोंकी सेना एकत्रकर देरावलको हस्तगत करालिया; परन्तु स्तदिक किलेकी दीवालपर चढ़ गया पुरविआओंने कुछ रक्षा न की और उसके दोनों भाई और एक भतीजा इस युद्धमें काम आये । दुसरा भतीजा दीवाल पर चढ़गया परन्तु पासके सरदारने उसको पकड़ कर सादिकके हवाले कर दिया जिसने उनको मरवा डाला और यह अनुमान किया जाता है कि यह सब उपाय सादिरखांने रचे थे ताकि उनके खून करनेका बहाना हाथ लगे । सादिकखांने जिस नसीरखांकी मददसे गद्दीको पाया था उसको ही मरवाडाला जव कि उसकी ताकत रैयतकी है सियतसे ज्यादा वढ़ गयी थी । खैरानी सरदार हमेशा ही कुछनकुछ षड्यन्त्र अपने स्वामीके विरुद्ध रचा करते हैं, जिसका एक उदाहरण वीकानेरके इतिहासमे दिया गया है जव कि तीरारोह और भोजगढ़ जप्त करलिये गये थे और उनके सरदार किंजरके किलेमें दाऊदपुतराका राजकारागार–कैदकर भेज दिये गये थे गुरही अव भी हाजीखांके पुत्र अवदुल्लाके अधिकारमें है, परन्तु इसमें कोई भी राज्य संलग्न नही है । सादिक महम्मदखांमें अपने पिताके समान कोई गुण नहीं है जिसको मारवाड़के विजयसिंह अपना भाई कहा करते थे । दाऊदपोतराके सरदार आपसमें ही लड़ा करते हैं, और भट्टीलोग जिनसे अब भी लूटनेके ऐवजमें वे कर वसूल किया करते हैं, इनको वड़ी ही घृणासे देखते हैं ।

---

(१) यह स्मारक टिप्पणी संनू १८११ या १८१२ में लिखी गयी थी ।

भावलपुरके सरदारको अब कन्धारसे कुछ डर नहीं है और वह ऊपरी सिंधमें अपने पड़ोसीसे सलाह रखता है, यद्यपि उसको लाहौरके रनजीतसिंहकी धमकियोंसे प्रायः भयभीत होना पड़ता है जो ' दाऊदके सन्तानो ' पर अपना प्रभुत्व बतलाता है।

रोग–अनेक प्रकारके रोगोंसे जिनसे यहांके निवासी स्वास्थ्य और उदरभर भोजन न मिलनेके कारण या सड़ा हुआ स्वास्थ्यको हानिकारक जल पीनेके कारण पीड़ित रहते हैं ' रतौन्ध' नारू और वेरीकोसने इस देशको अपना घरही बना लिया है। रतौन्ध और वेरीकोस विशेष कर दीन दुखियाको सताती है, और जिनको वेवशी-में वहुत दौड़ धूप करनी पड़ती है जब कि रेतमें धसे हुए आगेको निकालनेके लिये अत्यावश्यक श्रमके कारण जिससे उनके रगोंपर बड़ा ही जोर पड़ता है, उनके अग अकसर टूट जाते हैं। तौभी अभ्यासका वल ऐसा होता है कि मेरे अधीन घातके निवासी जो मरण पर्यन्त (क़ासिद) का काम सिन्धुनदी और राजपूतानेके नगरोंके बीचमें करते रहते थे। इस वातकी शिकायत किया करते थे कि हिन्दुस्तानके मैदानकी कठोर भूमि उनको अधिकतर थका डालती है बनिस्वत कि उनके देशकी रेतकी पहाड़ियां।

परन्तु मैंने कभी भी धातीकी इस वातका विश्वास नहीं किया,वावजूद कि उसके भोलेपन या सिधाईके, यद्यपि यह उनकी गर्वोक्ति थी, उसकी फूली हुई नसें जिनकी उपमा पिंडुली पर वन्धी हुई पटोसे दीजासकती थी। यदि उसके कथनको झूंठा नहीं करती थीं कमसे कम इतना तौ भी सावित करती थी कि मरुभूमिमें पैदल चलनेका ही यह फल उसको भोगना पड़ता था। राजकुमारसे किसान पर्यन्त कोई भी इस नारुरोगसे नहीं छुटा है, और वह मनुष्य बड़ा ही सौभाग्यवान है जिसको यह रोग एकही वार हुआ है यह रोग केवल मरुभूमि और पश्चिमी राजपुताना और मध्यस्थित राज्योंमें नहीं होता है, परन्तु अर्वली पर्वतके उसपार इस रोगसे आक्रान्त इतने मनुष्य हैं कि आपसमें मिलने पर " तुम्हारा नारु कैसा है " यह उनका कुशल प्रश्न पूछनेका साधारण वाक्य होरहा है। यह सामान्यता पर और जोड़ोंके चमड़ेमें होता है और इसकी वेदना सहन करनेकी सामर्थ्यके वाहर है। यहांके निवासी इस वातमें संमत नहीं हैं कि यह रोग रेत या पानीके अन्तास्थित अति क्षुद्र जन्तुके द्वारा उत्पन्न होता है या सूक्ष्मातिसूक्ष्म अणु-ओंके जिनमें संजीवता या चैतन्यता (Vital preiciple) गुप्तरूपसे वास करती है। शरीरमें छिद्रोंके द्वारा घुस जानेपर होता है। खालके नीचे और उससे चिपटे हुये स्थान पर पहिले पहिल यह रोग एक दाग उत्पन्न करता है जो धीरे २ बढ़कर और फूलकर आखिरका तमाम शरीरमें जलन और सूजन पैदा करदेता है। कीड़ा तब चलने लगता है और जब यह कुछ अंशमें इसके छुटकारेके लिये आवश्यकीय सजीवता प्राप्त करता है तब इसकी गति रुकती ही नहीं है और रात दिन अभागे रोगीको काटा करता है, जो पतले चमड़ेके कटने पर अपने शत्रुके थिरकी प्रतिदिन देखनेकी एकमात्र आशासे ही

प्राणको नहीं छोड़ता है। दवाके लिये यही समय अति लाभदायक है, कुशल नारु वैद्य बुलवाया जाता है जो कीड़ेका शिर पकड़ कर उसको सूईके चारों तरफ लपेट देता है. इस प्रकारसे निश्चित समय पर सूईको गति प्रदान कर टूटनेके खौफके बिना जहांतक होसकता है उसको सूईके चारों तरफ लपेटता जाता है। वह मनुष्य बड़ा ही अभागा है जिसका तागा टूटजाता है। जब वह ज्वरके नींदमें लात मारकर सजीव तागाको तोड़ डालता है तब दशगुणा सूजन जलन पककर पीव निकलने लगता है। यदि धैर्य और होशियारीसे उसके खोचलेनेमें समर्थ हुये तो रोगी आरोग्य होजाता है।

जब कि उनका पैतृक शासकरहता है, मेरा मांस कीड़ोंसे परिपूर्ण है मेरी खाल टूट गई है और घृणा करनेके योग्य है मै लेटा हुआ कहा करता हूं कि कब रात समाप्त होगी और मैं उठूंगा ? तब मैं इस बातकी कल्पना करूं कि वह अवश्य ही नारुसे आक्रान्त हुआ है जिससे बढ़कर कोई रोग मनुष्यके लिये यंत्रणापूर्ण नहीं है।

भारतकी तरह यहाँ पर भी बच्चों और वयप्राप्त मनुष्योंके रोग विद्यमान है। इनमेंसे शीतला या तिजारीका अधिक प्रकोप है। शीतलाका सामोपचार वे उतना ही करते हैं कि रोगीको शीतला माताके ऊपर छोड़ देते है; और दूसरे रोगोंके प्रतीकारार्थ वे सुकोड़नेवाली दवा देते हैं जिसका एक अंग अनार (यदि मिलसका) के छिलकेका काढ़ा है। अमीर दूसरे देशोंके अनुसार नीमहकीमके पल्ले पड़ते है जो घात संबन्धी विष देकर जिनके असरसे वे स्वयं ही अज्ञात है उनको कातिल बीमारियोंका शिकार बनाते है। इन बुखारोंके प्रभावसे अकसर तिल्ली बढ़जाया करती है और जिसकी दवा उनके पास एकमात्र गर्म लोहेसे दग्ध करना है।

दुर्भिक्ष इन देशोंका महान् प्राकृतिक रोग है। इन देशोंमें अत्यन्त प्राचीन कालसे एक कल्पित कहानी प्रसिद्ध चली आती है जिसमें यह कहा गया है कि भूखा माताके आगमनसे अकाल पड़ता है। एक अकाल ग्यारहवीं शताब्दीमें पड़ा था और बारह बरस तक रहा था, जिसका उत्कृष्ट प्रमाण कई राज्योंके वंश परंपरागत बातोंमें विद्यमान है। भूलसे इस अकालका संबन्ध लाखा फूलनीके नामसे जोड़ दिया गया है, जो शिवजी राठौरका पहिला जिसने कन्नौजको त्याग किया था—शत्रु था और जिसने मरुभूमिके इस Rabin Hood राबिनहुडको संवत् १२६८ या सन् १२१२ ई० में मारडाला था। करीब २ एक शताब्दी पहिले हमीरके समयमें कगरनदीका लुप्त होजाना अवश्यही इस

(१) मेरे दोस्त डाक्टर जोसफ डंकन) जब मैं उदयपुरमें पोलेटिकल एजेंट था तब यह रेसीडेन्सीमें एक पदपर सुशोभित थे) पर 'नारू' ने भयंकररूपसे आक्रमण किया। यह Ancle joint में निकला और इसके निकालनेके उद्योगमें इसके टूट जानेके कारण उन सब बुराइयोंका सामना मेरे दोस्तको करना पड़ा जिनको मैं वर्णन करचुका हूं जिससे वह लंगड़े होगये, और स्वास्थ्य बिगड़ जानेके कारण वह उसके पुनः प्राप्त करनेके लिये उनको केटाके जानेके लिये बाध्य होना पड़ा, जहाँ कि मैंने अठारह महीनबाद स्वदेशको जाते हुए देखा था, परंतु तब भी पूर्णतया उनका लंगड़ापन नहीं गया था।

दुर्भिक्षका कारण रहा होगा। उनकी गणनानुसार हर तीसरे साल कुछ न कुछ अकालका कोप सहना पड़ता है और सन् १८१२ का अकाल तीन या चार बरस तक रहा और जिसके अधिकारकी सीमा भारतके मध्य रियासतों तक पहुच गयी थी जहांसे गरीबोंके यूथके यूथ अपने देशको छोडकर गगाके मैदानमें चले गये थे और उन्होंने अपने प्यारे बच्चोंको और अपने स्वतंत्रताको मुट्ठीभर अन्नके लिये बेंचा था।

फसल, पशु और वृक्ष-ऊट "मरुभूमिका जलयान" का वर्णन प्रथम ही करना आवश्यक है। यहां इसके विना काम नहीं चलसकता है-मरुभूमिवासियोंके यह अपरिहार्य वस्तु है, वह हलमें जोता जाता है, कुँआसे पानी खीचता है। अपने स्वामीके लिये मरुभूमिके रास्तेमे पीनेको लिये मशकोमें पानी लेजाता है और कई दिनतक यह विना पानीके रह सकता है। उपरोक्त गुण, उसके पैरकी बनावट, जो भूमिके अनुसार सिकुड़ने और फैलनेका गुण रखती है, और उसका सख्त मुह जिसमें वह अपनी जीभसे बाबूल खैर और जवासकी शाखायें रखलेता है जिनमें सूईके समान नुकीले सख्त और लम्बे काँटे लगे होते हैं, सब इस बातकी साक्षी देते हैं कि ईश्वरने इसके उत्पन्न करनेमे मनुष्यों पर बड़ी ही कृपा और उपकार किया है। यह बड़े ही आश्चर्यकी बात है कि अरबी पैतृक शासक जो भिन्न २ पशुओकी-पालतू और जंगली-आदतोंका ठीक२ वर्णन करता है और जो स्वयं तीन सहस्र ऊटोंका प्रभु था। ऊंटके इन गुणोंका कुछ भी उल्लेख न करे, यथार्थ हल चलानेमें गेंड़ेकी अनुपयोगिताका वर्णन करते हुए वह पर्यायसे इस बातको कबूल करता है कि इस काममे बैलके अलावा दूसरोका भी उपयोग हो सकता है। मैदानके ऊटोकी अपेक्षा मरुभूमिके ऊट अधिक उत्तम होते है और धात और बरमेरके थलोके ऊंट समस्त संसारमें प्रथम गिने जाते है। जैसलमेर और बीकानेरके राजाओंके पास लड़ाईके लिये सीखे हुए युद्धके योग्य ऊंटोकी पलटन है। जैसलमेरकी सेनामे दो सौ ऊंट हैं जिनमेसे अस्सी महाराजके हैं, बाकी सरदारोंके बीचमें बटे हुए हैं, परन्तु मैंने इस बातके पूछनेका कभी विचार नहीं किया कि और राज्योंके सवारोंसे यहांके ऊट सवार क्या निस्बत रखते हैं या किस परिमाणमें हैं हर ऊटपर दो मनुष्य बैठते है एकका मुहँ ऊंटके मुखकी तरफ और दूसरेका पूछकी तरफ, और सेनाके पीछे हटनेके समय वे बड़े ही कामके होते हैं, परन्तु जब वे शत्रुके अत्यन्त निकट आजाते हैं वे ऊंटोंको घुटनोके बल बैठाते हैं, उसकी टांगे बाँध देते हैं और पीछे जाकर ऊंटके शरीरका ही मोर्चा बनाते हैं छातीतक ऊंचो भूमि मोर्चेका काम देती है और ऊंटकी काठीपर अपनी बन्दूक रखते हैं। मरुभूमिकी हर किस्मकी झाड़ी या वृक्ष ऊंट अपने खानेके काममे लाता है।

(खर) गदहा, गोरखर या जंगली गदहा मरुभूमिका निवासी है परन्तु धातके निकट दाक्षिणी हिस्सामे, और बरमेरसे बंकसिर और बुलारी तक महान् रन या नमककी मरुभूमिके उत्तरी किनारे २ फैले हुए बने'रो'मे बहुतायतसे पाया जाता है।

नीलगाय सिंह इत्यादि-हिरन और नीलगायकी उत्तम किस्में मरुभूमिके अनेक भागोमें पायी जाती हैं और यद्यपि मैदानमे रहनेवाले राजपूतोंने उसको अदण्डता मान

रक्खा है जो उसको शायद् आखेटमें मारे परन्तु उसका मांस नहीं खाते हैं, पर मरुभूमिमें उसकी खाल और मांस दोनों ही वड़े काममें आती हैं। यहां व्याघ्र लोमड़ी शृगाल और सिंह भी पाये जाते हैं पालतू पशुओंमें घोड़ा बैल, गाय, भेड़, बकरी, गदहाकी कुछ कमी नहीं है और गदहा यहाँ हल जोतनेमें भी व्यवहृत किया जाता है।

बकरी और भेड़-भेड़ और वकरियोके वृन्दके वृन्द मरुभूमिमें असंख्य संख्यामें चरते हुए दिखाई पड़ते है। लोग कहते है कि वकरी कार्तिकसे चैत तक विना पानीके जिन्दा रहसकती है जो विलकुल असंभव या गप्प है,यद्यपि यह प्रसिद्ध है कि वे छ हफ्तेतक जव कि घासकी विपुलता होती है पानीको छोड़ सकती हैं। दाऊद्पोतरा और भट्टीपोहके थलोंकी वकरियॉ और भेड़ें गर्मीके प्रारम्भमें सिन्धके समतल मैदानमें चली जाती हैं। गड़रिये अपने वृन्दोंके समान पानीकी जगह छांछ पीकर रहते है जिसमेंसे मक्खन निकाल लिया जाता है और जिसका घी वनाकर अन्न या दूसरी आवश्यक वस्तुओके वद्लेमें बेच देते हैं। ऊंटोंके चरानेवाले उनका दूध पीकर एक मात्र जीवनकी रक्षा करते है और जंगली फलोंके सिवाय उनको कभी रोटी तक मवस्सर नहीं होती है।

वृक्ष और फल-हम अनेक अवसरोंपर करली या खैरका उल्लेख करचुके हैं, 'खैजरी' के छुलकेको सुखाकर आटा वनाया जाता है जिसको सांग्री कहते है, झल जिसमें गड़रिये अपने झोपड़े वनाते है जेठ और वैशाखमे उनको फल प्रदान करते है पीलू भोजनके काममें आता है, 'ववूर' से एक प्रकारका गोंद मिलता है जो दवामे काम आता है, वेरमे भी सुस्वादु फल लगते हैं, ऊंट इन सवको भक्षण करते हैं और ये सब अत्यन्त विपुलतासे पाये जाते है और वहुत ही लाभदायक हैं, 'जवासके' स्वच्छ रसका गोंद बनाया जाता है जो दवामें काम आता है, फोककी शाखोसे वे अपने कुएँ ढांकते है, 'सजी' का पौधा वे राखके लिये जलाते है। इनमेसे प्रथम और अन्तिमका साविस्तर वर्णन अत्यावश्यक है।

करील या खैर हिन्दुस्तान और मरुभूमिमें प्रसिद्ध है, हिन्दुस्तानके लोग उसका अचार डालते है परन्तु यहां यह भोजनकी उत्तम सामग्री ख्याल करके इकट्ठा किया जाता है। इसकी झाड़ीकी उंचाई दश फीटसे पन्द्रह फीटतक है और इसके चारोतरफ खूब फैलती है इसकी निरन्तर हरित शाखाएँ पत्र विहीन होती है जिनमें लालरंगका फूल निकलता है, और फल काले करेट एक किसमका फलके समान होता है। जव इकट्ठा करके उसको चौवीस घंटेतक पानीमें भिगोते है; यह पानी फेक दिया जाता है, और इसके वाद दो वार फिर उपरोक्त क्रिया कीजाती है तव उसके प्राणान्तक गुण दूर होजाते हैं; वे फिर उवाले जाते हैं और नमकके साथ खाये जाते है अथवा अमीर आदमी इनको घीमें तैयार कर रोटीके साथ खाते है। अनेक घरोंमे यह वीस २ मनतक मिलता है।

सज्जी एक छोटासा पौधा है और खासकर उत्तरी मरुभूमिमें पैदा होता है, परन्तु जैसलमेरके उन प्रदेशोंमें जो खदल कहलाते है। और अव दाऊद्पोतराके अधीन हैं विपुलतासे पाया जाता है। पूगलसे देरावलतक और फिर यहाँसे मुरीदकोट इरितयारखाँकी

गढ़ी होते हुए, खैरपुर तक एक विस्तीर्ण थल है, जिसमे अनेक नीचे सख्त और समतल प्रदेश पाये जाते हैं जो यहाँ 'चित्रम्'¹ नामसे प्रसिद्ध हैं जिनकी रचना बरसातके बाद जो पानी एकत्र होता है उसके द्वारा हुई है और इन्हीं स्थानोंमे सज्जीका पौधा उत्पन्न होता है।नमक जो (subcarbonate of soda) है, जलेहुए पौधेकी राखके नीचे लिखी हुई रीतिसे प्राप्त होता है। गढ्ढे खोदकर पौधेको उनसे भरदेते हैं फिर आगलगा देनेपर एक किस्मका द्रव पदार्थ निकलता है जो तलीमें बैठ जाता है। जलते समय वे ढेरको लम्बे बांसोसे चलाते है या उसपर रेत डालते हैं जब बड़ी ही शीघ्रता पूर्वक जलता होता है। जब पौधेके गुण निकल जाते हैं, गढ्ढा रेतसे भरकर तीन दिन तक ठढा होनेके लिये छोड देते हैं, सज्जी फिर निकाली जाती है और किसी दूसरे उपायसे इसमेका मैल दूर कर देते है। स्वच्छ सज्जी रुपयेकी एक सेर बिकती है, और अस्वच्छ रुपयेकी चालीस सेरसे भी अधिक मिलती है। राजपूत और मुसलमान दोनों ही इस व्यवसायको करते है। और एक पैसा रुपया कर अपने अधीश्वरको देते है। चारूं और मारवाड़ नगरोंके रहनेवाले इसको खरीदकर भिन्न २ बाजारोंमें लेजाते हैं जहाँसे यह समस्त भारतमे भेज दीजाती है। सिन्धदेशमें इसका बड़ा ही व्यापार होता है और समस्त काफिले इसको वेखर तत्तार और कच्छमे लेजाते हैं।सज्जीके गुण पाकक्रिया जानने से छिपे नहीं है और सख्त पानीमें थोड़ी सी सज्जी मिलाकर दालमे डालनेसे उसको हलका बनादेती हैं, तमाखू बेचनेवाला अपने व्यापारमें इसका प्रचुर परिमाणमें उपयोग करता है, क्योंकि यह कहाजाता है कि इसमें फिर तमाखूके पौधेके गये हुए गुणोंको वापिस लानेकी शक्ति विद्यमान है।

अनेक प्रकारके घास यहां पाये जाते हैं परन्तु वृक्षाविद्या सम्बन्धी चित्रके विना इनके वर्णनमे कुछ रोचकता न होगी। यहा बड़ी २ घास कुश नामक पैदा होती है और इसीके नाम पर रामके प्रथम पुत्रका नाम कुश रक्खा गया था और उसके वशज कुशवाह या कछवाह कहलाते हैं। यह प्राय आठ फीट ऊँची होती है, अंकुरदशामे इसको पशु चरते है और जब कुछ प्रौढ़ होजाती है तब झोपड़े छानेके काममे आती है जब कि उसके जड़की रेसेकी जुलाहे कूची बनाते हैं जो उनके व्यवसायके लिये अपरिहार्य वस्तु है। सरकंडा घामून धचू और अनेक प्रकारके दूसरे घास यहां पर पाये जाते हैं जिनमेंसे गोकरा पापरी और भूरुत कपडोंमें चिपटनेके कारणसे यात्रीको बहुत ही कष्ट पहुंचाते हैं।

---

(१) चित्रम् नाम यहाके समतल और कठोर भूमिवाली प्रदेशोंके लिये व्यवहृत होता है (मि० एलफिंस्टोन लिखता है कि यह प्रदेश घोडेके सुमके शब्दसे गूज उठते है) पर मूल अर्थ इसका 'चित्र' तसवीर है, और चित्रम् नाम पड़नेका कारण यह है कि सदा सर्वकाल 'मृगजलका चित्र दृष्टिगोचर होता है। यहाँ की भूमि जवाखारसे परिपूर्ण होनेपर कहातक इस दृश्यको यदि यह इसकी मूल उत्पादक नहीं है उन्नति प्रदान करती है, और इसका उल्लेख हम उत्तरी भारतके भिन्न २ भागोंके मृगतृष्णाका वर्णन करते हुए करचुके हैं।

खरबूजा–बड़ा खरबूजा चिपरा, और वामन, गोवर ३ यहां पर वहुतायतसे होता है। (तोमाता) जिसका हिन्दुस्तानी नाम मुझे मालूम नहीं है, इन प्रदेशोमेंका निवासी है और भारतके दूसरे भागोमें भी यह पाया जाता है। हम इस वातको लिखकर इस लेखको समाप्त करते है कि इनके–वृक्षों झाड़ियों या अन्नके–वृक्षविद्या सम्वन्धी नामोंको इस पुस्तकके सूचीपत्रमें देदेवेंगे।

यात्रावृत्तान्त।

जैसलमेरसे सिन्धु नदीके दक्षिण तटपर सिवाना और हैदरावाद तक और हैदरावादसे अमरकोट होते हुए जैसलमेरको लौट आया कुलदूरी (पांचकोश)–इस गांवमें पालोवाल ब्राह्मण रहते है, दो सौ घर कुल गुजियाकी वस्ती (२ कोश)– साठघर खास कर ब्राह्मण कुएं।

खावा ३ कोश–तीनसौ घर, खासकर ब्राह्मण एक छोटासा दुर्ग चारवुर्जवाला नीची पहाड़ी पर स्थित है जिसमें जैसलमेरकी सेना रहती है।

कुनोही (५कोश) और सुम (५ कोश)–कुनोंही और सुमसे करीव एक मीलकी दूरी पर एक स्थानपर चार या पांच झोपड़ोंवाले गांवोंका वृन्द है जो सुम नामसे प्रसिद्ध है। इसकी रक्षाके लिये एक वुर्ज है जिसमे जैसलमेरकी सेना रहती है कई कुएँ हैं जिनको यहाँवाले 'वैरिया' कहते है। यहांके निवासी खासकर भिन्न २ जातिके सिन्धी है जो अपने भेड़ोंके झुंडोको चराते है और देव चन्द्रेश्वरसे 'खारा' लाते हैं जो वतौर दावनके रंग पका करनेके काममें लाया जाता है। सुम और मूलनोहके वीचोंवीच जैसलमेर और सिन्धकी सीमा पड़ती है।

मूलनोहे–२४ कोश दश झोपड़ेका गांव है, निवासी विशेपकर सिन्धी ऊंची २ रेतकी पहाड़ियोंके मध्यमें स्थित है। सुमासे आधामार्ग १२ कोश पारी पारी से रेतकी

(१) मूलनोहसे सिवानाको दो मार्ग गये है। धाती पानी मिलनेके कारण दूरकी रास्ते गया। दूसरी सुकरून्द होकर है जैसा कि नीचे लिखा है।

पैरी ...	५ कोश.		
वादशाहकी वस्ती ...	६ "	सुकरून्द ...	३ कोश.
ओदानी ...	५ "	नूह्रा ...	३/२ "
मिन्नाओ ...	१० "	मुकरून्द ...	४ "
मीरकाखोल ...	६ "	काकाकी वस्ती	६ "
सुपुरी	५ "	सिन्ध	१० "
कुम्वरका नाला ...	९ "	सिवानां	३/२ "

ऊपर (ऊपरी) सिन्धसे लावर (नीचे) सिन्धको सड़क गई है।

पहाड़ियो पर्वत श्रेणियों और कभी २ मैदानमें होकर है। (यहां पर्वत श्रेणी ' मुगरा ' कहलाती हैं) आगेके तीन कोशमे केवल रेत और पर्वतकी श्रेणियां पड़ती है, और शेष नौ कोशमें लगातार एक ऊंचा टीला चलागया है। इस चौवीस कोशकी यात्रामें न कोई कुँआ पड़ता है और न वर्षाऋतुके सिवाय पानीका एक वून्द भी दिखलाई पड़ता है, जब कि पानी पुराने तालावो या बावड़ीमे एकत्र होता है। यहाँ नदीको तावा कहते हैं, जो अर्द्ध मार्गपर स्थित है जहां कि प्राचीन कालमें एक नगर वसता था। लोग कहते है कि सिन्धको इन देशोके मुसलमान द्वारा विजय किये जानेके पहिले घाटी और मरुभूमि पर प्रमर और सोलंकी जातिके राजपूतोंका अधिकार था। प्राचीन ताल और मन्दिरोके भग्नावशेष यद्यपि रेतकी राशिसे वहुत कुछ दव गये हैं। तौ भी वे इस वातकी साक्षीभूत हैं कि समस्त ' थल ' किसी समय आवाद–चाहे अधिक था कम था। वंशपरंपरा गत वार्तासे विदित होता है कि वारहवीं सदीमें लाखा फूलनीके समयमे वारह वरसका अकाल पड़ा था। जिसने इस देशको उजाड़ दिया और अकाल मृत्युसे वचेहुए प्राणी सिन्धके समतल मैदान या कूर्चा को भाग गये। इस मरुभूमिमे अनेक खेतीके योग्य स्थान हैं जिसके आगे पशुओके चरानेवाले चाहे सोढा राजूर या सुमैचा क्यों न हों –ग्रह वह रर,रिर मेंसे किसीको लगादेते हैं। उपरोक्त शब्द मरुभूमिमे पानीके लिये व्यवहृत होते हैं।

मारे	२ कोश	ये सव दश २ झोपड़ोंके गांव हैं जिनमें राजूरा निवास करते जो इस थलमे खेती करते हैं या गाय ऊंट भैस वकरियोके झुंडको चराते हैं। इन गावोंमे अनेक ताल हैं। राजूरकी वस्तीका ताल'महादेवका दे' कहलाता है।
पलरी	३ "	
राजूरकी वस्ती	२ "	
राजूरका गांव	२ "	

देवचन्देश्वर महादेव (२कोश) सोढा राजाओके राज्यकालमें यहांपर एक नगर था और महादेवका मन्दिर सूरजकुंडके किनारे पर निर्माण किया गया था जिसके खंडहर अव भी विद्यमान हैं। मुसलमानोंने मन्दिरको तोड़ डाला और तालका नाम वदलकर ' दीन-वाह ' रख दिया। यह छोटासा कुंड ईटोका वना है और खजूर और अनारके वृक्ष उसके तटकी शोभाको वढाते हैं, और मुल्ला–सिन्धसे आया हुआ–यहांपर रहता है जिसको सव मुसलमान भेट देते हैं। इस स्थानके चारोंओर वारह कोश तक असंख्य ताल ही ताल चलेगये हैं जहां कि राजूर अपने पशुओंको चराते हैं और खेती करते है। इनके झोपड़े गोपुच्छाकार होते हैं और इनकी चोटीपर खंभे बांध दिये जाते हैं जिनको घास और पत्तियोंसे आच्छादित करते हैं। और प्रायः ऊंटके वालोका वड़ा कम्मल खंभोंपर फैलादेते है।

चन्दिकाकी वस्ती–(२ कोश) गांवमें चन्दी जातिके मुसलमान रहते हैं। ये यात्रियोके दान पर अपना जीवन निर्वाह करते हैं।

राजूरकी वस्ती	२	कोश		इन गाँवोंमें गड़रिये सुमैचा, राजूर और दूसरे लोग निवास करते हैं जो अपने पशुओंको लेकर एक स्थानसे दूसरे स्थानको चलेजाते हैं जब कि हरित भूमि उनको आश्रय देनेके लिये असमर्थ होजाती हैं। इस स्थानमें उनकी आवश्यकताको पूरा करनेके लिये विदानीकी प्रचुरता है।
सुमैचाका दो	२	"		
राजूरका "	१	"		
" "	२	"		
" "	२	"		
" "	२	"		
" "	२	"		
" "	२	"		

ओधनिया–७ कोश वारह झोपड़े, राजूरकादो और इसके वीचमें पानीका नाम निशान नहीं है।

नल्लाह–(५कोश) (थल) था मरुभूमिका ढालूपन नालेके एक मील पूर्वकी ओर समाप्त होजाता है, और लोग कहते है कि यह वही नाला हैं जो रोरीवेखरके ऊपर डूराके निकट इन्दूरसे निकलता है, रोरीवेखरसे यह सोहराव और खैरपुरके पूर्वमें वहता हुआ निकलता है और जिजर होते हुए बैरसीकाहरको चलाजाता है जहाँसे अमरकोट और चीरके लिये इसमेंसे नहर काटी जाती है।

मित्रा ४ कोश साठ घरका गांव है, जिसमें वलोच रहते हैं हैदरावादका थाना यहाँ है कहीं २ पर नीची रेतकी पहाड़ियाँ है।

मीरकाकू–६कोश दश २ झोपड़ेके तीन गांव पृथक् २ है जिनमें अरोरा रहे हैं। शिवपुरी ३ कोश एकसौ वीस घर हैं, निवासी अरोरा; नैऋत्यकोणमें छः बुर्जवाला एक छोटासा किला है जिसमें हैदरावादकी सेना रहती है।

कुमैरका नाला–६ कोश, यह नाला काकुरकी वस्ती और सुकसनूके वीचसे निकलकर पूर्वकी तरफ वहता है संभव है कि यह प्राचीन नहरका प्रवाहमार्ग हो जिसके जाल संपूर्ण देशमें फैले हुए थे।

सुकरुन्द–२कोश एकसौ घर, एक तृतीयांश हिन्दू, खेतीके योग्य भूमि, असंख्य अनंपेच्छितनाले; झौ और खैजटीके जंगलसे हर तरफ परिपूर्ण है। नालोंके किनारे पर रूई, नील, चावल, गेहूँ जौ, चना, इत्यादि पैदा होते हैं जूतू–२कोश साठ घर सुकरुन्द और जूतूके वीचमें एक नाला है।

काजीका सहर–४ कोश, चारसौ घर दो नाले एक दूसरेको काटते है। मखैरो ४ कोश, साठ घर एक नाला मखैरो और जूतूके वीचमें है। काकुरकी वस्ती –६ कोश साठ घर अर्धमार्गमें प्राचीन किलाके खंडहर तीन नहरे या नाले एक दूसरेको काटते हैं गांव सिन्धुसे चार मील एक पुस्ता या वांध पर वसता है। जिसका पानी वर्षा ऋतुमे गांवके भीतर आजाता है। पुर –१ कोश उतारा या घाट।

सिन्धुनदी--१ कोश नावपर वैठकर उस तरफ उतर कर सेवानमे पहुँचे । सेवाने १, $\frac{1}{2}$ दक्षिण किनारेपर वारहसौ घरका एक नगर जो हैदरावादके अधीन है ।

---

(१) नदीसे कुछ दूरपर एक ऊंचे टीलेपर सेवानका नगर वसा हुआ है और खासकर दक्षिणमें कई कुंज हैं । मकान मट्टीके वने हुए प्राय॰ तीन मंजिल ऊचे हैं और छतको साधनेके लिये खम्भोंका उपयोग किया गया है । नगरके उत्तरकी ओर एक प्राचीन और विस्तीर्ण दुर्गके खंडहर विद्यमान हैं और जिसके सातबुर्ज अब भी दृष्टि गोचर होते हैं; मध्यभागमें राजमहलके चिह्न दिखलाई पड़ते हैं। जो अब भी भरतरीका महल कहलाता है, लोग कहते हैं कि उज्जैनसे अपने भाई विक्रमादित्यसे निकाले जाने पर यहां भरतरी राज्य करते थे । यद्यपि कई शताब्दी वीत गई जब कि इन देशोंमें हिन्दुओंका राज्य था तौ भी वंशपरंपरा गत वाकी अब भी वच रही है । वे कहते हैं कि गंधर्वसेनका ज्येष्ठ पुत्र भरतरी अपनी स्त्रीमें इतना अनुरक्त था कि उसका मन राज्यकार्यमें नहीं लगता था । विक्रमने अपने भाईकी राज्यकार्यमें प्रमादता देखकर उसको वहुत समझाया । ज्योंही यह वात रानीके कर्णगोचर हुई उसने विक्रमको देश निकालेका दंड दिलवानेका हठ किया । कुछ दिनोंके वाद एक प्रसिद्ध योगीने राजसभामें आकर राजाको ' अमरफल ' प्रदान किया जिसको उसने शंकरकी कठिन तपस्या करके प्राप्त किया था । राजाने वह फल रानीको दे दिया, रानीने अपने जार महावतको दिया; उसने निज वेश्याको दिया; वेश्या गहरे इनाम पानेकी आशासे उसे राजाके पास लेगयी॥ राजा मनहीमन अपनी रानीके कुलटापन पर क्रोधित होकर रंगमहल को गये और रानीसे फल मागा । उत्तर मिला " वह खोगया है " । राजाके दिखाने पर रानी मारे कायलीके भाग गयी, और अपने महलके नीचे कूदकर उसने आत्महत्या करली । राजा अपनी दूसरी रानी पिंगलासे मन वहलाने लगा और थोड़े ही दिनोंमें उसके रूपके वशीभूत होगया । परन्तु पिछले अनुभवके कारण उसको रानी पर सन्देह वना रहता था । एक दिन राजा शिकार खेलने गया । वनमें उसके एक शिकारीने एक हिरन मारा । हिरनी उस स्थान पर आई जहाँ कि हिरन पड़ा हुआ था, और कुछ कालतक पतिका ध्यान कर उसके शरीर पर गिरकर प्राणको वाहर निकाल दिया । सांपने उसी शिकारीको काटखाया जिसके सोते ही सोते प्राण पखेरू उड़गये । उसकी स्त्री उसको तलाश करती हुई वहां आयी और पहिले तो उसने अपने पतिको सोता समझा, परन्तु जब उसको यथार्थ वात मालूम हुई तब उसने वनकी लकड़ियोंको एकत्र कर चिता वनाई और अपने पतिका शव उसपर रक्खा, कुछ देर परिक्रमा करनेके वाद चितामें आग लगाकर पतिके साथ भस्म होगयी । राजाने इन वातोंको देखकर घर पहुचकर पिंगलासे कहा कि शिकारी की स्त्रीसे वढ़कर संसारमें कोई स्त्री सती नहीं है । रानीने कहा शिकारीकी स्त्री दु खके मारे सती होगयी कि प्रेमसे, और यदि प्रेम होता तब चिता वनानेकी कुछ आवश्यकता न होती । कुछ दिनोंके वाद राजा फिर शिकार खेलने गया और रानीकी वात याद करके उसने हिरनको मार अपना वस्त्र उसके खूनमें रंगकर अपने विश्वासी नौकरके हाथ रानीके पास भेज दिया और आज्ञा दी कि रानीसे कहना कि राजा सिंहके शिकार करनेमें मारा गया । पिंगला इस वातोंको सुनकर न रोयी न बोली पर भूमिमें पड़कर सूर्यको दंडवत कर उसने प्राणको छोड़ दिया ।

चिता वनायी गयी, और रानीका शव नगरके वाहर जलाया जा रहा था जब कि राजा शिकार खेलकर लौटा । स्मशानभूमिमें जाकर जब राजाने अपने कपटका यह फल देखा तब उसने राजसी वस्त्र फेंक कर फकीरी वस्त्र धारण किया और विक्रमको उज्जैनका राज्य देकर वनमें चला गया ।

सेवानसे हैदरावाद ।

जूटकी वस्ती (२ कोश) यहांके लोग जीत या जूतका उच्चारण जीहूत करते है यह गांव सिन्धुनदीसे आध मीलकी दूरीपर तीस झोपड़ों वाला है, गांवके निकट ही पहाड़ी है ।

इधर उधर भ्रमण करते हुए उसके मुखसे केवल " हाय पिंगला ! हाय पिंगला " के सिवाय कुछ नहीं निकलता था । आखिरकार राजाने सेवानको अपना निवासस्थान नियत किया; यद्यपि वे उस स्थानको बतलाते हैं जिसको मुसलमान भरतरीका आमखास कहते हैं तौभी किला अधिकतर प्राचीन है । भरतरीका मन्दिर नगरके दक्षिणमें है । इस मन्दिरमें मुसलमानोंने लालपीर शाहाजका शव दफन किया है और वे कहते हैं कि इन्हींकी कृपासे हमलोग (मुसलमान) सिन्धको विजय करनेमें सफलीभूत हुए । इस सन्तके स्मारक मन्दिरके मध्यमें चारों तरफ लकड़ियोंसे घिरा हुआ बना है और लोग कहते हैं कि यह सन्त हिन्दूधर्मको मानता था । यह बड़ा ही आश्चर्य जनक दृश्य है कि दोनों ही हिन्दू और मुसलमान एक ही स्थानमें पूजा करते हैं, और यद्यपि हिन्दू पीरके स्मारकके पास नहीं जाने पाते हैं तौभी दोनों ही ताखमें रक्खे हुए सालिगराम की बड़ी मूर्तिका पूजन करते हैं । वास्तवमें यह बात अत्यन्त अद्भुत है कि इस और बातको प्रमाणित करती है कि यहाँके लोग तलवारके जोरसे मुसलमान बनाये गये थे, वह मुसलमान जो पहिले हिन्दू था प्रायः बड़ा ही आग्रही और असहनशील होता है । मेरे नमकहलाल और बुद्धिमान दूतोंने–मदारीलाल और घातीने मुझको सेवानके किलेके खंडहरकी एक ईंट लाकर दी । इसकी लंबाई चौड़ाई और मुटाई एकघन थी, अत्यन्त अच्छी तरहसे पकी हुई थी और बजाने पर घंटाके समान बजती थी । वे मेरे पास कुछ जले हुए गेहूँ लाये थे जो बिलकुल साबित थे परन्तु (कार्वन) में परिणत होगये थे । वंशपरंपरागत कथन प्रमाणित करता है कि वे वहाँ हजारों बरससे पड़े हैं । इसमें बहुत ही कम सन्देह है कि यह स्थान सिकन्दरके शत्रु मुख–सेवानके अधिकारमे था । निसन्देह यूनानियोंने सिन्धुके मुखकी तरफ जाते हुए अपने मार्गमें उतने ही अत्याचार किये थे जितने कि पिछले समयमें महमूद गजनवीनने और जो कुछ वे अपने नावोतक न लेजासके उसको उन्होंने फूक दिया । सिक्खोंके गुरु नानकका बाड़ा नदी और किलेके मध्यमें है । सेवानमें हिन्दू और मुसलमानोंकी आवादी बराबर है, हिन्दुओंमें जैसलमेरसे आई हुई व्यापारकरनेवाली मैसुरी जाति अधिकतासे पायी जाती है और कई पीढ़ियोंसे यहां रहती है । पोकरन(१)जातिके यहां अनेक ब्राह्मण सुनार और दूसरे प्रकारके कारीगर रहते हैं । मुसलमानोंमें सैयदोंकी संख्या ज्यादे है हिन्दू अमीर है । रुई, नील, और धान जो अधिक परिमाणमें सेवानके समीपमें होते हैं, रहा और कराचीबन्दरके बन्दर गाहोंकी बड़ी (२)नावोंमें जिनको मुसल मान खेते हैं भेजा जाता है । सेवानका हाकिम हैदराबादसे भेजा जाता है ।

पर्वतोंकी श्रेणी जो रहासे फैलती है सिन्धुनदीके समानान्तर रेखामें सेवानसे तीन मीलके करीब पहुँचकर वायव्य कोणकी तरफ मुड़ती है । इन सब पहाड़ियोंमें मेकरानके किनारे हिंग–लाज माता (३) के मन्दिरतक लुमरी या नुमरी जाति निवास करती है जो यद्यपि अपनेको बलौच कहते जीतवंशके हैं ।

---

(१) जैसलमेका इतिहास देखो ।

(२) यह प्रसिद्ध मन्दिर रहासे कराची बन्दर होते हुए नौ दिनकी रास्ता पर है और समुद्र तटसे करीब ९ मील है असंख्य हिन्दूयात्री इसके दर्शनार्थ जाते हैं ।

(३) ये रेनल (Rennel) के नोमुर्दी हैं ।

सुमैचाकी वस्ती (२ ½ कोश) छोटासा गांव।

लूखी (२ ½ कोश) साठ घर नदीसे डेढ़कोश पर गांवसे उत्तरकी तरफ-तहर-तट धान्यसे परिपूर्ण दो मील पश्चिमकी तरफ पहाड़ियोमे एक स्थान पर महादेव पार्वतीका मन्दिर है, जहांपर अनेक ताल हैं जिनमेंसे तीन गर्मपानीके हैं।

ऊमरी-९ कोश नदीसे आधमीलकी दूरीपर पचीस घर हैं; एक कोश पश्चिम नीची पहाड़ियां हैं।

सूमरी-३ कोश नदीके पहाड़ियोपर पचास घर, डेढ़ कोश पश्चिम।

सिन्दू-४ कोश नदीसे दोसौ गजपर एक बजार है, गांवमें दोसौ घर हैं. डेढ़ कोश पश्चिमकी ओर।

मजेन्द-४ ½ कोश नदी तटपर दोसौ पचास घर, व्यापार अधिक दो कोश पश्चिमकी तरफ पहाड़ियां।

ओसुरकी वस्ती-३ कोश नदीके निकट थोड़ेसे झोपड़े।

सैदयकी वस्ती ३ कोश।

शिकारपुर-४ कोश नदी तटपर पूर्वकी तरफ पार उत्तर। हैदरावाद ३ कोश सिन्धुनदीसे डेढ कोश हैदरावादसे नूसूरपुर नौ कोश शिवदादपुर ग्यारह कोश शिवपुरी सत्रह कोश रोरीवेरूरु छः कोश कुल जोड़ तेंतालीस कोश।

हैदरावादसे अमरकोट होते हुए जैसलमेरतक सिन्धुखांकी वस्ती ३ कोश, फुलेती नदीका पश्चिमीतट ताजपुर ३ कोश, बड़ानगर हैदरावादके ईशान कोणमे कुत्तरैल २ ½ कोश एकसौ घर।

नूसुरपुर १ ½ कोश ताजपुरके पूर्वमे बड़ा शहर है।

अलिपरका टंडा-४ कोश नूसूरपुरके अग्निकोणमे अलियरखांने, जो स्वर्गवासी गुलाम अलीका भाई था एक विस्तीर्ण नगर वनवाया था। नगरके दो कोश उत्तरमें

---

(१) मार्गके अनेक संकट और आपत्तिओंको पार करके इन तालोंमें स्नान करनेके लिये असंख्य दूसरे हिन्दू यात्री आते हैं। इनमेंसे दो गर्म हैं और सूर्य कुंड और चन्द्रकुंड कहलाते हैं और एक प्रकारके विशिष्ट गुणोंसे संपन्न हैं। इन कुंडोंके पवित्र जलमें स्नान कर अक्षय पुण्य प्राप्त करने के पूर्व यात्री अपने समस्त जीवनमें इसने जो कुछ पुण्य वा पाप किया है उसको पुरोहितके कानमें कह देता है, जो महादेवके सामने मध्यस्थ बनकर उसको मोक्ष देनेकी सामर्थ्य रखता है। लोग कहते हैं कि यदि पापी विना अपनी पाप कहानी कहे कुंडमें कूद पड़े तो निकलनेपर उसका समस्त शरीर फोडोंसे आच्छादित दिखाई पड़ता है। रामचन्द्रके समयसे हिन्दुओंमें पापकहानी कहने की प्राचीन रीति चली आती है।

(२) महमदशाह और नादिरशाहके वीचमें जो संधि हुई थी उसके अनुसार ' संकरा ' भारत और ईरानकी सीमा नियत किया गया था, और इसी सबबसे सिन्धकी घाटीका समस्त उपजाऊ भाग उसके अधिकार मैं चला गया था जो सिंधुनदीके पूर्वमें था। लोग कहते हैं कि वह यह ' संकरा ' है परंतु दूसरे कहते हैं वह रोरीवेखरके ऊपर दूरासे निकलता है।

सांगराका नाला है, जिसके बारेमें लोग कहते है कि हाला और मुकरुन्दके बीचमे सिन्धुनदीसे निकला है और जंडलिके पाससे गुजरता है।

मीरवह ५ कोश चालीस घर, वह, टंडा, गोट, पुरवा, गांव शब्दके लिये समानार्थक हैं।

सुनारियो–७ कोश चालीस घर।

दिनगानो–४ कोश सिन्धके समतल प्रदेशकी सीमा यह गांव है। उत्तरकी तरफ पांच और छः मीलकी दूरीपर रेतकी पहाड़ियां हैं। दिनगानोके नीचे एक छोटीसी नदी बहती है।

कोरसानो ७ कोश सौघर। कोरसानोके पूर्व दो कोशकी दूरी पर एक प्राचीन नगरके खंडहर दृष्टिगोचर होते हैं। ईटके मकानात कुआँ और बावड़ी अबतक विद्यमान है। उत्तरकी तरफ दो या तीन कोश पर रेतकी पहाड़ियाँ हैं।

अमरकोट ८ कोश हैदराबादसे अमरकोटतक एक विस्तीर्ण मैदान चलागया है जो मरुभूमिकी रेतके पहाड़ियोंके शिरे पर नीची भूमिपर बनाया गया है। इस समस्त देशमे जिसका रकवा कच्चा चौवालिस कोश है और सुनारियोतककी भूमि अत्यन्त उत्कृष्ट है और सिन्धुनदीके नहरों द्वारा साम्यकतया सींची जाती है। गांवोंके चारों तरफ खूब खेती होती है और यहांकी भूमि स्वभावतः उपजाऊ होनेपर भी विशेपकर बवूल निरन्तर हरित झल और झो के जंगलसे परिपूर्ण है। सुनारियोसे अमरकोटतक लगातार एक जंगल चला गया है जिसमें खेती करनेके योग्य कुछ भूमिके टुकड़े है जहाँकी खेती दैवाधीन है। यहांकी भूमि इतनी अच्छी नहीं है जितनी कि प्रथम मार्गकी है।

कत्तार–४ कोश अमरकोटके पूर्वमें एक मीलकी दूरीसे रेतकी पहाड़ियां प्रारम्भ होती हैं जिनकी ऊँचाई डेढ़सौ फीटसे दोसौ फीटतक है। कुछ झोपड़े सुमैचा जातिके हैं जो यहां अपने पशु चराते है, दो कुएँ हैं।

धोतकी बस्ती–४ कोश कुछ झोपड़े, एक कुआँ, धोते सोढा और सिन्धी यहाँ खेती करते हैं और पशु चराते हैं।

धारना–८ कोश सौ घरकी बस्ती है जिसमें पोकरन ब्राह्मण और बनिया रहते हैं जो गड़रियोंसे घी खरीदकर भुज और घाटीको भेजते है। यह व्यापारकी मंडी है, पूर्वके कारवां यहाँ अपनी वस्तुओंके बदलेमें घी लेलेते है जो यहां पर ' रो ' में भेड़ोंकी बहुतायतके सबबसे बहुत ही सस्ता है।

खैरलूका पर तीनकोश, इस समस्त प्रदेशमें तितर वितर अनेक गॉव और ताल ' पर ' हैं।

लनैलो १½ कोश सौघर, पानी, खारी. खैरलूसे पानी ऊंटोंपर आता है।

भोजका पर ३ कोश झोपड़े खेतीके योग्य भूमिभू ६ कोश, झोपड़े।

गरिदी १० कोश-तीनसौ घरका छोटासा नगर है जो शोभासिंह सोढाके अधिकारमें हैं [1] इसके अधीन कई गांव हैं। घाट और जैसलमेरके राज्योकी यह सीमा है। घाट पूर्णतया सिन्ध देशमे संमिलित करदिया गया है। यात्रियोसे कर वसूल करनेके लिये यहाँ पर एक 'थानी' रहता है।

हरसानी १० कोश तीनसौ घर, निवासी खासकर भट्टी। यह भट्टी जातिके राजपूतके अधिकारमें है जो मारवाड़को कर देता है।

जिनजिनियाली १० कोश तीनसौ घर-यह जैसलमेरके प्रधान सरदारकी जागीर है इसका नाम केतसी भट्टी है। यह नगर जैसलमेरकी सीमा पर है। एक छोटासा भट्टीका दुर्ग है और अनेक ताल हैं जिनमे नौ महीनेतक पानी बना रहता है, और रेतकी पहाड़ियोंकी घाटियोमें खूब खेती होती है। जिनजिनियालीके उत्तरमे करीब छै कोश पर चारुनका एक गांव है।

गजसिंहकी वस्ती २ कोश पैतीस मकान। पानीकी कमी चारुनगांवसे ऊंटोंपर लाया जाता है।

हमीर देवरा-५ कोश दो सौ घर। करीब १ मील उत्तरकी ओर कई ताल हैं और गांवका पानी खारी होनेके कारण इन तालोंसे पानी ऊंटोंपर आता है। जैसलमेरकी पर्वत श्रेणीकी यहांपर इतिश्री होजाती है।

चैलक ५ कोश अस्सी घर, कुएँ, चैलक पहाड़ी पर है।

भोपा ७ कोश चालीस घर, कुआँ, छोटासा ताल है।

भाऊ २ कोश दो सौ घर, पश्चिमकी ओर ताल, छोटे २ कुएँ है।

जैसलमेर ५ कोश-इस चक्कारदार मार्गसे अमरकोटसे जैसलमेर साढ़े पचासी कोश है। जिनजिनियालीसे छवीस कोश, गिरपसे सात मील वासे बारह और अमरकोटसे पचीस, सब मिलाकर पक्का सत्तर कोश है ऊंटोका कारवां चारदिनमे इस मार्गको आक्रमण कर सकता है और कासिद रात दिन चलते हुए साढ़े तीन दिनमें पार करते हैं। अन्तिम पचीस कोशका मार्ग पूर्णतया मरुभूमिमें होकर है, हैदरावादसे अमरकोटतक चौवालिस कच्चे कोशकी दूरी उपरोक्त कोशमे संमिलित करने पर उसका जोड़ १२९ $\frac{1}{2}$ कोश होता है। बिलकुल सीधा मार्गकी दूरी १०५ पक्का कोश कूती गयी है। जो सर्पाकार मार्गके वजा करनेपर भी करीब करीब १९५ अंगरेजी मीलके होती है। इस मार्गका जोड़ ८५ $\frac{1}{2}$ कोश।

वैसनौ होते हुए जैसलमेरसे हैदरावाद।

कुलदार ५ कोश।

खावा ५ कोश।

लाखागंज ३० कोश तमाम मार्ग मरुभूमिमें होकर, न गांव न पानी।

---

(१) इस सरदारके मारजानेके वृत्तान्तको जाननेके लिये जैसलमेरका इतिहास देखो।

वैशनौ ८ कोश।

वैरसीका रार १६ कोश कुँएँ।

शीप्रो-३ कोश

मीतका घैर ७ कोश अमरकोट २० कोशकी दूरीपर

जेन्दीला-८कोश

ऊलियरका टंडा-(१०) कोश सांकरा नाला

ताजपुर ४ कोश जामकाटंडा २ कोश हैदराबाद ५ कोश	प्रथम मार्गसे नूसुरपुर होतेहुये ऊलियरका टंडाकी दूरी १३कोश है या २ कोश इससे अधिक अन्तिम पांच कोशमें पॉच नहरें मिलती हैं। इस मार्गका जोड़ १०३ कोश।

जैसलमेरसे शाहगढ़ होते हुए मीर सोहरावसे खैरपुरतक

अना सागर २ कोश

चन्दा १ कोश

पानीका तर ३ कोश तर या "तिर" या ताल

पानीकी कुचरी ७ कोश कोई गांव नहीं।

कोरियाले ४ कोश

शाहगढ़ २० कोश तमाम मार्गमें 'रो' शाहगढ़ सीमा है। छः वुर्जवाला एक छोटासा दुर्ग इसमें है और ऊपरी सिन्धके शासकका यह स्थान है

गुरसेह ६ कोश

गुरहर २८ कोश संपूर्ण मार्गमें 'रो' या मरुभूमि, पानीका एक वुन्द भी नहीं। गुरहरसे दो रास्ताएँ फूटती हैं एक खैरपुरको दूसरी रानीपुरको।

वलौचकी वस्ती ५ कोश सुमैचाकी वस्ती ५ कोश	वलोचां और सुमैचाके गांव हैं।

नल्ला २ कोश यहॉ वही नदी है जो दूरा और प्राचीन नगर अलोरमें होकर वहती है यह नदी मरुभूमिकी सीमा है। खैरपुर १८ कोश ऊपरी सिन्धका शासक और हैदरावाद के राजाका भाई यहॉ रहता है। वारह वुर्जोंका उसने एक पत्थरका किला निर्माण किया है, जिसका नाम नवकोट है। नालासे खैरपुरतक १८ कोशकी दूरीमें एक समतल प्रदेश है और यहाँकी घाटीकी चौड़ाई १८ कोश है। निम्न लिखित नगर अत्यन्त महान् है।

---

(१) शेख अव्दुल वरकत शाहगढ़से कोरियालाकी दूरी सिर्फ नौ कोश वतलाता है और कोरियालासे ५ कोश पश्चिमको और (कगर) नदीके शुष्क मार्गको पारकरनेकी अत्यन्त महत्व पूर्ण वातका उल्लेख करता है। पानी प्रचुर परिमाणमें उसका प्रवाहमार्ग खोदने पर मिलता है। असंख्य वैरा मिलते हैं जहाँ कि गडेरिये अपने पशुओंको लेजाते हैं।

खैरपुरसे लुधाना-सिन्धुसे वीस कोस पश्चिममे है और हैदरावादके राजाके पुत्र कुरंमअलीके अधिकारमे है।

खैरपुरसे लुखी- वीस कोश है।

खैरपुरसे शिकारपुर-२० कोश है

गुरहरसे रानीपुर।

फरारो १० कोश पचास घरका गांव, निवासी सिन्धी और कुरार चारोंतरफ कई गांव, और मीरसोहरावकी तरफसे यहांपर 'धानी' रहता है, इस मार्गसे ऊटके 'कतार' वहुत निकलते हैं। दूराका नाला फरारोके पूर्वमे दो कोश पर वहता है, फरारो मरुभूमिके सिरेपर है तकुरकी श्रेणी फरारोके पांच कोश पश्चिमसे आरंभ होकर रोरी-वखर-जो (फरारोंसे सोलह कोशकी दूरीपर है) तक चली गई है। फरारोसे सिन्धु तककी घाटीकी दूरी १८ कोश है।

रानीपुरे १८ कोश।

जैसलमेरसे रोरीवेखर।

कोरियाली १८ कोश पिछला मार्ग देखो।

वन्दो ४ कोश उन्दुरजातिके मुसलमान यहां रहते हैं।

गटरू १६ कोश जैसलमेर और ऊपर (सिन्धकी) सीमा एक छोटेसे किलेमें मीर सोहरावकी सेना रहती है, दो कुएँ एक आदर, सुमैचा और उन्दुरके तीस झोपड़ोका गांव है, 'टीवा' भारी या ऊंचे।

गोदत ३२ कोश गड़रियोके तीस झोपड़े एक छोटा भट्टीका किला समस्त प्रदेश मरुभूमिमय पानी नहीं।

संकराम या संगराम १६ कोश आधी दूरीमे रेतकी पहाड़ियां शेषमे ज्वारके लकड़ियोके वने असंख्य झोपड़े है जो थोड़े दिनोके लिये वनालिये जाते हैं कई नदियां।

नालासंग्रा $\frac{1}{2}$ कोश, यह नाला शेरविखाके उत्तरमे ढाईकोश पर है यह नाला सिन्धमें दूरासे आता है, खेती बहुत रेतकी पहाड़ियोंके शिरे तिरगाती $\frac{1}{2}$ कोश, बड़ा नगर महाजन बनियां वसते है जो यहाँ कितर कहलाते हैं और सुमैचा।

पर्वतकी निम्न श्रेणी तखरसे ४ कोश-यह छोटी पथरीली श्रेणी उत्तरसे दक्षिणको चली गई है, नवकोट इन श्रेणियोंके पदमे स्थित हैं वे फरारोके उस पार भी चली गयी हैं जो रोरीवेखरसे १६कोश दूर है। गोमूत, नव कोटसे ६ कोश पर है।

---

(१) ऊपरी सिन्धसे नीचे सिन्धको जानेवाले मार्गपर अनेक नगर हैं।

रोरी ४ कोश
बेखर ½ ,,
सेखर ½ ,,
} सिन्धु नदीके बाँए किनारेवाली पर्वत श्रेणी पर है। नदीको पार कर बेखरको गये नदीका पाट करीब एक मील है। बेखर द्वीप है सेखरको जानेवाली सिन्धुकी दूसरी शाखा एक मीलसे अधिक है। यह परिवेष्टित

पर्वत "साईलेक्स" का है जिसका नमूना मेरे पास है।

प्राचीन दुर्ग मनसूरके खंडहर यहां विद्यमान हैं इसका नाम मनसूर कखलिफा अलमलसूरके यादगारमें रक्खा गया है जिसके लफ्टिनेण्टने अपने विजयके बाद इसको सिन्धकी राजधानी बनाया था।

सिकन्दरके सोदगीकी राजधानीके नामसे यह अधिक प्रसिद्ध है। बहुत संभव है कि सोदगी सोढाका अपभ्रंश है और सोढाजाति प्राचीन कालसे शासन करती चली आती है और जिसके अधिकारमें कुछ दिन हुए अमरकोट था।

नोट-कासिद जैसलमेरसे रोरी बेखरतक पत्रोंको ४ ½ दिनमें लेजाते हैं, यह दुरी एकसौ बारह कोशकी है।

बेखरसे शिकारपुर तक.

लूकी या लूकीसर १२ कोश

सिन्धुनल्ला ३ ½ कोश

शिकारपुर ½ कुलजोड़ १६ कोश

बेखरसे लुधाना २८ कोश

शिकारपुरसे लुधाना २० कोश

जैसलमेरसे दैरअलीखैरपुर.

कोरिवालो १८ कोश

खारों-२० कोश संपूर्ण मार्ग मरुभूमिमय। जैसलमेर और जो अपर सिन्धकी सीमा दोहद है और भट्टीका छोटासा दुर्ग है जिसमें उपरोक्त दोनों राज्योंकी सेना रहती है। बीस झोपड़े और एक कुँआ। सुतियाला२० कोश-तमोम रास्तेमें 'रो' छः कुँए, कर बसूल करनेके लिये डंड, खैरपुर दैरअली २० कोश (रो) और निरन्तर हरित् लावो और झलके पत्ते जंगल सुतियालासे खैरपुरतक। कुल जोड़ ७८कोश।

खैरपुर (दैरअली) से हैदराबाद

मीरपुर ८.कोश सिन्धुसे चार कोश।

मतैलो ५ कोश सिन्धुसे चार कोश।

गोतकी ७ कोश सिन्धुसे दो कोश।

रोरीबेखर २० कोश, इस समस्त प्रदेशमें असंख्य गांव, सीचनेके लिये अनेक नदियाँ और थोड़े कालके लिये निर्माण किये हुये गांव हैं।

खैरपुर, सोहरावका } ९ कोश
गोमूत ८
रानीपुर २
गुरहरसे रानीपुरकी रास्ता देखो।
हिंगोर ५
मिरलपुर ५
हुलियानी १
कुंजरो २
नौशियारा ८
भोरा ७
शाहपुरा ३
दौलतपुरा ३

सिन्धुसे छः कोश
इस मार्गमे कोशकी लम्बाई दो कोश पक्के और डेढ़ कोश कच्चेके जोड़के अर्ध भागके बराबर है। पौने दो मीलमेसे उसीका दशवाँ भाग घटा देनेसे चक्कर वगैरः के कारण कोशका परिमाण निकल आवेगा। अपर सिन्धके देशोंमें यही कोशका परिमाण या नाप व्यवहृत किया जाय)

भीरपुर ३–सिन्धुपुर। यहांसे मदारी सिन्धु उतरकर सेवानको गया और फिर भीरपुरको लौट आया।

जोड़ १४५ कोश

लाजीका गोट ९
सुकरुन्द ११
हाला ७
खुरदा ४
मुतारी ४
हैदराबाद ६

कोश करीब दो मीलका होता है, और इसमेसे इसका दशवाँ भाग चक्कर वगैरः के लिये भी निकाल दिया जाय।

जैसलमेरसे इतियारखांकी गढ़ी।

त्रिमसर ४ कोश
मोरदेसर ३ कोश
गोगादेव ३ ”
कायमसर ५ ”

इन गांवोंमे पालीवाले ब्राह्मण रहते हैं और इस प्रदेशमे कुंडल या खादल कहलाते हैं, जिसकी कटोरी जो जैसलमेरके उत्तरमें आठकोश पर है, करीव चालीस गांवोंकी राजधानी है। (जिन नगरोंके नामके आगे ‘ सर ’ लगा है उनमें ताल अवश्य हैं)।

नोरकी गढ़ी २५ कोश यह समस्त प्रदेश मरुभूमिमय। नोरका दुर्ग ईटका बना है। और दाऊदपोतराके अधिकारमें है जिसने जैसलमेरके भट्टियोसे छीन लिया था। करीव चालीस झोपड़ेके और खेती कम। यहांपर ऊंटोंके कारवांसे कर लियाजाता है प्रत्येक ऊंटपर लदेहुए घीके लिये दो रुपये और चार शक्करके लिये और आठआना हर ऊंटके लिये और अन्नसे लदे हुए वैलके लिये पांच आना।

मुरीदकोट २४ कोश ‘रो’ या मरुभूमि। इससे चार कोशकी दूरीपर रामगढ़ है।

इस्तियारकी गढ़ी–१५कोश ‘रो’ अन्तिम चारकोश छोड़ कर यहाँसे रेतकी पहाड़ियोका ढालूपन सिन्धुकी घाटीतक चला गया है इस मार्गका जोड़ ७९ कोश है।

इख्तयारसे अहमदपुर	... ...	१८ कोश
„ „ खांपुर	... ...	५ कोश
„ „ सुल्तानपुर	... ...	८ कोश

जैसलमेरसे शिवकोटरा खेरलू चोटन, नगर परकर भित्तीतक और–

जैसलमेरको लोटना।

दबला ३ कोश तीस घर पोकरन ब्राह्मण

अकुली २ कोश चौहानोंके तीसघर कुएँ और छोटे २ ताल

चोर ५ कोश साठ घर मिश्रिते जातियां

देवकोट २ कोश दोसौ घरका छोटासा नगर जैसलमेरके अधीन जागीर या खालसा छोटासे दुर्गमें सेना पालीवालोंका खोदा हुआ एकताल है जिसमें पानी अधिक बरसातके बाद सालभरतक बना रहता है।

सनगुर ६ कोश यह रास्ता चीचावाली राहसे पूर्वमें और भलोत्राके लिये सबसे सीधा मार्ग है और प्रायः यात्री इसी राहसे जाते हैं परन्तु मार्गके गाँव उजाड़ हैं

बसिर२कोश चालीस घर–ताल विजूराव दो कोश है। मेड़ी सीमा २ $\frac{1}{2}$ कोश ढाई सौ घर। साहिबखां सेहरी सौ सवारोंके सहित यहाँ रहता है, यह नगर खालसा है और जैसलमेरका अन्तिम नगर है मंडीवाली इस मार्गपरके समस्त स्थानोंसे जैसलमेर वाली पहाड़ी निकट है।

गुंगा ४ $\frac{1}{2}$ कोश जोधपुरका थाना।

शिव २ कोश तीनसौ घरका बड़ा नगर है; परन्तु अनेक अकालसे उजाड़ होगये हैं। जिलाका प्रधान जोधपुरकी तरफसे हाकिम यहां रहता है। यात्रियोंसे कर उगाहता है और सेहरियोंकी लूटसे देशकी रक्षा करता है।

कोत्तोरा ३ कोश पांचसौ घरका नगर, जिसमेंसे दोसौ आवाद हैं। वायव्य कोणमें एक पहाड़ी पर दुर्ग है। राठौर सरदार यहां रहता है। शिवकोणिरका जिला जोधपुरके राठौरोंने जैसलमेरके भट्टियोंसे छीन लिया था।

बीसलाड़ ६ कोश प्राचीनकालमें बड़ा स्थान था, अब केवल पचास घर, दक्षिण या पश्चिमके कोणमें पहाड़ी पर जो करीब दोसौ फीट ऊंची है, एक किला है, यह पहाड़ी जैसलमेरवाली पहाड़ीसे संयुक्त होती है परन्तु प्रायः रेतके टीलोंसे आच्छादित है।

खेरल ७ कोश खेरदपुरकी राजधानी, मरुस्थलीके प्राचीन भागोंमेंसे एक।

बीसलाड़के दो कोश दक्षिणमें।

चोटन १० कोश प्राचीन नगर खंडहर दशामें अस्सीके करीब घर जिसमें सेहरी रहते हैं।

वांकासर ११ कोश पूर्वकालमें बड़ा नगर था अब सिर्फ तीन सौ साठ घर है।

भीलकी वस्ती ५ कोश }
चौहानका पुरा ६ कोश } प्रत्येकमें कुछ झोपड़े

नगर ३ कोश-यह बड़ा नगर परकरकी राजधानी है। इसमें डेढ़ हजार घर, कुल आधे आवाद।

कायमखाँ सेहरीकी वस्ती १८ कोश थलमे तीस पर, कुएँ जिनमे सतहसे नीचे पानी, पूर्वमे तीन कोश पर सिन्ध और चौहानराजकी सीमा।

घोतकापुरा १५ कोश गाँव, राजपूत भील और सेहरी।

भट्टीका ३ कोश-धात्तमें छःसौ घरका नगर है या अमरकोटका भाग है जो हैदरावादके अधीन है, उस राजाका सम्बन्धी जिसको नव्वावका खिताव है यहाँ रहता है, व्यापारकी मंडी और यहाँपर कारवांसे कर लिया जाता है। दक्षिण पश्चिमके कोणमे एक सुदृढ़ महल है। जब कावुलका शाह सिन्ध देशपर हमला करता था तब हैदरावादका राजा अपने कुटुम्ब और अमूल्य वस्तुओंके सहित यहाँ भाग आता था। यहांकी रेतकी पहाड़ियाँ बहुत ऊंची और भयानक हैं।

चैलसर १० कोश-चारसौ घर, निवासी सेहरी ब्राह्मण विजुरैन और वनिया, व्यापारके लिये उत्तम स्थान।

सुमैचाकी वस्ती १० कोश चैनसिरसे थल।

नूरअली पानीका तिर ८ कोश-साठ घर, निवासी चारून सुलतान् राजपूत और कोरिया, थलमें पानीकी विपुलता है।

रोल ५ कोश वारह गाँव-जो यहाँ 'वस' कहलाते हैं कई कोश तक तितर वितर चले गये हैं, निवासी सोढा सेहरी, कोरिया, ब्राह्मण वा वनिया, सुतार, और जिस गांवमें जो जाति रहती है उसीके नामसे वह गांव प्रसिद्ध है।

दायली ७ कोश-एकसौ घर धानी यहांपर रहते हैं।

गुरिरी १० कोश-इसका वर्णन अमरकोटसे जैसलमेरवाले मार्गमे हो चुका है। रैदनो ११ कोश चालीस घर पानी वांधकर झील वनायी गयी है। नमककी झील या आगर।

कोत्तोरा ९ कोश

शिव ३ कोश-नगरसे शिवकोत्तोरातक लगातार ऊंची २ रेतकी पहाडियां चली गयी हैं, तितर वितर गांव, अनेक स्थानोंपर हरित भूमिकी विपुलता है। जहां भेड़ वकरी भैंस और ऊटके वृन्दकेवृन्द चर सकते हैं, 'थल' नवकोस और वुलवारके दक्षिणतक फैला हुआ है, और पहिलेसे करीव दश कोश और दूसरेसे दो कोश नवकोटके वांई तरफ तालपुराके समतल मैदान हैं।

जैसलमेरसे शिवकोत्तोरा, वरमेर नगर गुरू और शिववाह धूनो ५ कोश-पालीवालोंके दोसौ घर ताल कुएँ पहाड़ी दोसो तीनसौ फीटतक ऊंची है, पहाड़ियोंके वीचमें खेती होती है।

चींचा ७ कोश-छोटासा गांव आधकोश सिरोह पहाड़ी नीचा थल खेती जूसोरन २ कोश पालीवालोंके तीस घर आध कोश दाहिनीतरफ किला ओदा १ कोश पालीवाल और जैनराजपूतोंके पचास घर, कुएँ और ताल सांगुर २ कोश साठ घर

केवल पन्द्रह आबाद शेषके निवासी १८१३ के अकालमें सिन्धको भागगये। चारून विस्तीणी थल आरम्भ होता है। सांगुरका ताल ~२ कोश प्रायः पानी तालमें आठ महीने रहता है और कभी २ साल भरतक।

बीजूरा १ कोश
खोरैल ४ कोश } इनके बीचमें जैसलमेर और जोधपुरकी सीमा है। बीजूरामें एकसौ बीस पालीवालोंके घर हैं दोनों स्थानमें कुएँ और ताल हैं

राजरैल १ कोश–सत्तर घर अकालके समयसे उजाड़ पड़े हैं।

गोगा ४ कोश–बीस झोपड़ेका गांव छोटे कुएँ और ताल यहाँपर पहाड़ी और थल आपसमें मिलते है।

शिव २ कोश ,जिलाकी राजधानी

नीमलाह ४ कोश, चालीस घर ऊजड़

भदको २ कोश, चारसौ घर, ऊजड़

कुपसरी ३ कोश, तीस झोपड़े ऊजड़, कुंएं।

जुलेपा ३ कोश, बीस झोपडे ऊजड़

नगर गुरु २० कोश लूनी नदीके पश्चिमी किनारे पर यह बड़ा नगर स्थित है और इसमें चारसौसे पांचसौ तक मकान हैं, परन्तु बहुतेरे अकालके कारण उजड़ गये हैं जिसने इस देशका कटीवट सत्यानाश करडाला है।

सन् १८१३ मे यहांके निवासी गंगानदीतक भाग गये थे जहां कि उन्होंने अपने शरीर और अपने वचोंके जान बचानेके लिये बेच दिया था। बरमेर छः कोश बारहसौ घरका नगर।

गुरु २ कोश–लूनीके पश्चिम तरफ सातसौ घर चौहान जातिके सरदारका पदवी राना है।

बत्तो ३ कोश–नदीके पश्चिम तरफ

पुत्तरनो १कोश
गादलो १कोश } नदीके पश्चिम तरफ

रूनाश ३ कोश नदीके पूर्व तरफ

चारुनी २ कोश सत्तर घर पूर्व तरफ

चीतलवानो २ कोश–तीनसौ घरका नगर नदीके पूर्वमें चौहाने सरदार रानाकी पदवीवालेके अधिकारमें है। सांचोर सातकोश दक्षिणमें है।

रुतोरो २ कोश नदीके पूर्वमें, ऊजड़

होतीगांव २ कोश–नदीके दक्षिणमें फुलमुदेश्वरमहादेवका मन्दिर

घुतो २ कोश
ताप्पों २ कोश } उत्तरमें पश्चिमकी तरफ थल बड़ाभारी है पूर्वमें मैदान दोनों तरफ खूब खेती होती है।

लालपुरा २ कोश पश्चिममें

सूरपुरा १ कोश–नदीको पारकीया

सनलोती २ कोश नदीके पूर्वमे अस्सी घर
मौतेरू २ कोश पूर्वमें रानाका सम्बन्धी रहता है।
नरके ४ कोश नदीके दक्षिणमें मील और सोनीगुरी
काटो ४ कोश सेहरी
पितलनो २ कोश वड़ी गांव, कोली पिथिल
धरनीधर ३ कोश सात या आठसौ घर करीव २ ऊजड़ शिववादके अधिकारमें
वाह ४ कोश वीरवाहके चौहान राजा राना नारायणरावकी राजधानी।
लूना ५ कोश एकसौ घर
शिव ७ कोश चौहान सरदारका निवास स्थान।
लूनी नदीपर स्थित भलोत्रासे पोकरन और जैसलमेरतक।

पंचभद्र ३ कोश भलोत्राका मेला माघकी एकादशीको होता है-दश दिन तक रहता है। भलोत्राके सेवाची नामक स्थानमें चारसौसे पांचसौ घर हैं पहाड़ी झालौर और सिवानौसे जाकर मिलती है। पंचभद्रमें दोसौ घर हैं और अकालके समयसे सव ऊजाड़ पड़े हं। यहांपर एक अगर था नमककी झील है जिससे राज्यको वहुत आमदनी होती है।

गोम्री २ कोश चालीस घर ऊजाड़ इसके उत्तरमे एक कोश परसे वड़ा थल आरंभ होता है।

पतोदे ४ कोश व्यापारकी वड़ी मंडी, चारसौ घर, रुई विपुलतासे होती है।

सिवी ४ कोश दोसौ घर, करीव करीव ऊजाड़।

सिरुरो १ कोश साठघर। पतोदेतकका प्रदेश सेवांची कहलाता है, वहांसे इन्दु-वतीका आरंभ होता है और इसका नाम इन्दु जातिके नामपर रखागया है।

वुनगुरों	३ कोश	पहिलेमें सत्तर घर, दुसरेमें चारसौ, तीसरेमें साठ। समस्त प्रदेशमे रेतकी पहाड़ियाँ। इस प्रदेशका नाम तुलैचा है और यहांके राठौर तुलैचा राठौर कहलाते हैं।
सोलंकीतुला	४ कोश	
पोगुली	५ कोश	

जित या जाटजातिके अनेक मनुष्य यहां पर खेती करते हैं। पोगुलीमे चारुन रहते हैं।

वाकुरी ५ कोश सौ घर, निवासी चारुण।

धौलसर ४ कोश साठघर, निवासी पालीवालब्राह्मण।

पोकरन ४ कोश वाकुरीसे पोकरनका जिला आरंभ होता है, समतल भूमि यद्यपि रेतीली, पहाड़ियाँ नहीं।

ओधनिओ ६ कोश पचास घर, दक्षिणकी तरफ ताल।

लहर्तो ७ कोश तीनसौ घर, पालीवाल ब्राह्मण।

सोदाकुर	२ कोश	सोदाकुरमे तीस घर और चन्दनमें पचास पालीवाल, चन्दनमें सूखा नाला, इसके प्रवाहमार्गमें खोदनेपर पानी मिलता है।
चन्दन	४ कोश	

भोजक ३ कोश एक कोश बाई तरफ पर बासुकीको जानेवाला सीधी रास्ता है जो चन्दनसे सात कोश है।

बासुकीका तलाव ५ कोश एकसौ घर, पालीवाल ब्राह्मण।

मोकलैत १ $\frac{१}{२}$ कोश बारह कोश, पोकरन ब्राह्मण।

जैसलमेर ४ कोश पोकरनसे ओथनिओंतकका मार्ग नीचा पहाड़ीके ऊपर होकर है वहांसे लहतीतक शस्यपूर्ण मैदान है, पहाड़ी बाईं तरफ है।

एक छोटासा थल सोदाकुरके पास मिलता है, और फिर चन्दनतक बराबर मैदान चलागया है। चन्दनसे बासुकीतकका मार्ग एक नीची पहाड़ीको पार करके जाता है, और यह पहाड़ी ऊंची होती हुई जैसलमेरतक चलीगयी है। कहीं २ पर खेती भी होती है।

बीकानेरसे इख्तियारकी गढ़ीतक सिन्धुतट पर

नादकी बस्ती	४ कोश	रेतीलेमैदान, इन सब गावोंमें पानी। गिराजसरसे जो जैसलमेरकी सीमाहै रेतकी पहाड़ियां प्रारंभ होती है और बीकमपुरतक चलीजाती हैं।
गुजनैर	५ कोश	
गुर	५ कोश	
बीतनोक	५ कोश	
गिराजसर	८ कोश	
नरराये	४ कोश	
बीकमपुर	८ कोश	बीकमपुरसे मोहनगढ़तकका मार्ग मरुभूमिमय और इसमें अनेक जंगल और रेतकी पहाड़ियां हैं।
मोहनगढ़	९ कोश	

नातचना १६ कोश इस प्रदेशभरमे रेतकी पहाड़ियां है।

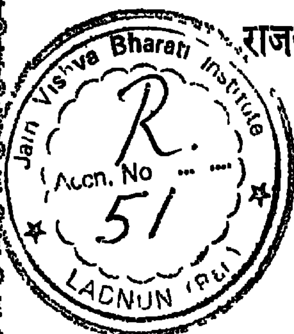
नारराई ९ कोश ब्राह्मण ग्राम।

नाहरकी गढ़ी २४ कोश मरुभूमि या 'रो' सिन्धुकी सीमा स्थित सेना रहती है। गढ़ी हादजीखांके अधिकारमें है।

मुरीदकोट २४ कोश 'रो' ऊंची रेतकी पहाड़ियां।

गढ़ी इख्तियारखांकी १८ कोश इसका सबसे उत्तम भाग घाटीके समतल मैदानमें होकर है। गढ़ी सिन्धु तटपर

जोड़ १४७ कोश २२० – $\frac{१}{२}$ मील, कोश करीब २ डेढ़ मीलके बराबर हो।



राजस्थान इतिहासका दूसराभाग

समाप्त हुआ।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना–

खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना, खेतवाडी–बम्बई.

शीघ्र छपेगा.

राजस्थान इतिहासका तृतीयभाग.



बड़े यत्नसे उद्योग होरहाहै कि कर्नल जेम्स टांड साहबके पीछेका राजस्थानका इतिहास तथा वर्तमान नरेशोंका वृत्तान्त तीसरे भागमें छापाजावे, आशाहै कि भगवान्‌की कृपासे शीघ्रही यह भाग मुद्रित होजायगा।